

ॐ ठेकाधुः
भा. प्रवे. स्थानकुवासी
शाओद्धार समिति,
कुवा रोड, श्रीन हॉल
राजकोट, (सौराष्ट्र).

Published by :
Shri Akhil Bharat S. S.
Jain Shastroddhara Samiti,
Garedia Kuva Road, RAJKOT,
(Saurashtra), W. Ry, India.



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यत्नः ।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्दः



करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥

भूख्यः ३. ३५=००

आवृत्ति : प्रत १२००
संवत् : २४८८
संवत् २०१८
३१सन् १८६३

: मुद्रक :
मण्डिपाल छगनपाल शाह
नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस,
धी कंटा रोड, अमदावाद.

श्री भगवती सूत्र भा. चौथे की विषयानुक्रमणिका

अनुक्रमाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
पाँचवे शतकका पहला उद्देश		
१	पाँचवेंशतक के उद्देशों की संग्रहार्थ गाथा	१-२
२	सूर्यके स्वरूपका निरूपण	३-१०
३	रात्रीदिवसके स्वरूपका निरूपण	११-५२
४	ऋतुविशेषादिके स्वरूपका निरूपण	५२-७७
५	लवणसमुद्र के स्वरूपका निरूपण	७७-९७
दूसरा उद्देश		
६	दूसरे उद्देशका विषयों के विवरण	९८-९९
७	वायुके स्वरूपका निरूपण	१००-१२३
८	ओदनादि द्रव्य का निरूपण	१२४-१४०
९	लवणसमुद्र के विष्कम्भ का निरूपण	१४०-१४७
तीसरा उद्देश		
१०	अन्यतीर्थिकों के मिथ्याज्ञान पने का निरूपण	१४८-१६८
११	नैरयिकादिकों के आयुष्यका निरूपण	१६८-१८१
चतुर्थ उद्देश		
१२	चौथे उद्देशके विषयोंका विवरण	१८२-१८५
१३	छद्मस्थों के शब्दश्रवण का निरूपण	२८६-२००
१४	छद्मस्थ केवली के हासादि निरूपण	२००-२१६
१५	हरिनैगमिपिदेव की शक्तिका निरूपण	२१६-२२४
१६	अतिमुक्त अनगार के स्वरूपका निरूपण	२२४-२३८
१७	महावीर स्वामीके प्रति दो देवों की शिष्यविषयक वक्तव्यता निरूपण	२३८-२६२
१८	नोसंयत के स्वरूपका निरूपण	२६२-२६८
१९	देवों की भाषाका निरूपण	२६८-२७०
२०	केवली छद्मस्थ के स्वरूपका निरूपण	२७१-२७९
२१	प्रमाण के स्वरूपका निरूपण	२७९-२९०
२२	केवली के चरम कर्मका निरूपण	२९०-२९४

મળવાનું ઠેકાણું :
શ્રી અ. બા. શ્વે. સ્થાનકવારી
નેન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ,
ઠે. ગરેડિયા ફૂવા રોડ, શ્રીન લોન્
પાસે, રાજકોટ, (સૌરાષ્ટ્ર).

Published by :
Shri Akhil Bharat S. S.
Jain Shastroddhara Samiti,
Garedia Kuva Road, RAJKOT,
(Saurashtra), W. Ry, India.



ये नाम केचिदिह नः प्रपयन्त्यवतां,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यत्नः ।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्दः



करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥

મૂલ્ય: રૂ. ૩૫=૦૦

પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧૨૦૦
વીર સંવત્ : ૨૪૮૯
વિક્રમ સંવત્ ૨૦૧૯
ઇસવીસન ૧૯૬૩

: સુદ્રઢ :
મણિલાલ છગનલાલ શાહ
નવપ્રભાત પ્રિન્ટીંગ પ્રેસ,
ધી કાંડા રોડ, અમદાવાદ.

श्री भगवती सूत्र भा. चौथे की विषयानुक्रमिका

अनुक्रमाङ्क

विषय

पृष्ठाङ्क

पाँचवे शतकका पहला उद्देश

- | | |
|---|-------|
| १ पाँचवेंशतक के उद्देशों की संग्रहार्थ गाथा | १-२ |
| २ सूर्यके स्वरूपका निरूपण | ३-१० |
| ३ रात्रीदिवसके स्वरूपका निरूपण | ११-५२ |
| ४ ऋतुविशेषादिके स्वरूपका निरूपण | ५२-७७ |
| ५ लवणसमुद्र के स्वरूपका निरूपण | ७७-९७ |

दूसरा उद्देशक

- | | |
|-----------------------------------|---------|
| ६ दूसरे उद्देशका विषयों के विवरण | ९८-९९ |
| ७ वायुके स्वरूपका निरूपण | १००-१२३ |
| ८ ओदनादि द्रव्य का निरूपण | १२४-१४० |
| ९ लवणसमुद्र के विष्कम्भ का निरूपण | १४०-१४७ |

तीसरा उद्देश

- | | |
|---|---------|
| १० अन्यतीर्थिकों के मिथ्याज्ञान पने का निरूपण | १४८-१६८ |
| ११ नैरयिकादिकों के आयुष्यका निरूपण | १६८-१८१ |

चतुर्थ उद्देशक

- | | |
|---|---------|
| १२ चौथे उद्देशके विषयोंका विवरण | १८२-१८५ |
| १३ छद्मस्थों के शब्दश्रवण का निरूपण | २८६-२०० |
| १४ छद्मस्थ केवली के हासादि निरूपण | २००-२१६ |
| १५ हरिनैगमिपिदेव की शक्तिका निरूपण | २१६-२२४ |
| १६ अतिमुक्त अनगार के स्वरूपका निरूपण | २२४-२३८ |
| १७ महावीर स्वामीके प्रति दो देवोंकी शिष्यविषयक वक्तव्यता निरूपण | २३८-२६२ |
| १८ नोसंयत के स्वरूपका निरूपण | २६२-२६८ |
| १९ देवों की मापाका निरूपण | २६८-२७० |
| २० केवली छद्मस्थ के स्वरूपका निरूपण | २७१-२७९ |
| २१ प्रमाण के स्वरूपका निरूपण | २७९-२९० |
| २२ केवली के चरम कर्मका निरूपण | २९०-२९४ |

भणवानुं ठेकाछुं :

श्री अ. भा. श्वे. स्थानध्वारी
नैन शाश्वद्वार समिति,
ठे. गरेडिया कृपा रोड, श्रीन हॉल
पासे, राजकोट, (सौराष्ट्र).

Published by :

Shri Akhil Bharat S. S.
Jain Shastroddhara Samiti,
Garedia Kuva Road, RAJKOT,
(Saurashtra), W. Ry, India.



ये नाम केचिदिह नः प्रययन्त्यवशां,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यत्नः ।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालो क्षयं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतचन्द्रः



करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥
जनमेगा मुक्षसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥

मूल्यः ३. ३५=००

प्रथम आवृत्ति : अत १२००
वीर संवत् : २४८६
विक्रम संवत् २०१६
धसवीसन १९६३

: मुद्रक :

भगिनुलाल छगनलाल शाह
नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस,
घी कंदा रोड, अमदावाद.

श्री भगवती सूत्र भा. चौथे की विषयानुक्रमिका

अनुक्रमाङ्क

विषय

पृष्ठाङ्क

पाँचवे शतकका पहला उद्देश

- | | |
|---|-------|
| १ पाँचवेंशतक के उद्देशों की संग्रहार्थ गाथा | १-२ |
| २ सूर्यके स्वरूपका निरूपण | ३-१० |
| ३ रात्रीदिवसके स्वरूपका निरूपण | ११-५२ |
| ४ ऋतुविशेषादिके स्वरूपका निरूपण | ५२-७७ |
| ५ लवणसमुद्र के स्वरूपका निरूपण | ७७-९७ |

दूसरा उद्देश

- | | |
|-----------------------------------|---------|
| ६ दूसरे उद्देशका विषयों के विवरण | ९८-९९ |
| ७ वायुके स्वरूपका निरूपण | १००-१२३ |
| ८ ओदनादि द्रव्य का निरूपण | १२४-१४० |
| ९ लवणसमुद्र के विष्कम्भ का निरूपण | १४०-१४७ |

तीसरा उद्देश

- | | |
|---|---------|
| १० अन्यतीर्थिकों के मिथ्याज्ञान पने का निरूपण | १४८-१६८ |
| ११ नैरयिकादिकों के आयुष्यका निरूपण | १६८-१८१ |

चतुर्थ उद्देश

- | | |
|--|---------|
| १२ चौथे उद्देशके विषयोंका विवरण | १८२-१८५ |
| १३ छद्मस्थों के शब्दश्रवण का निरूपण | २८६-२०० |
| १४ छद्मस्थ केवली के हासादि निरूपण | २००-२१६ |
| १५ हरिनैगमिपिदेव की शक्तिका निरूपण | २१६-२२४ |
| १६ अतिमुक्त अन्तगार के स्वरूपका निरूपण | २२४-२३८ |
| १७ महावीर स्वामीके प्रति दो देवों की शिष्यविषयक वक्तव्यता निरूपण | २३८-२६२ |
| १८ नोसंयत के स्वरूपका निरूपण | २६२-२६८ |
| १९ देवों की मापाका निरूपण | २६८-२७० |
| २० केवली छद्मस्थ के स्वरूपका निरूपण | २७१-२७९ |
| २१ प्रमाण के स्वरूपका निरूपण | २७९-२९० |
| २२ केवली के चरम कर्मका निरूपण | २९०-२९४ |

२३ केवली प्रणीत मनोवचनका निरूपण	२०५-२०४
२४ अनुत्तर देवसंगन्धी प्रश्नोत्तर	२०५-२१५
२५ केवलीके ज्ञानके स्वरूपका निरूपण	२१५-२१८
२६ केवलीके हस्तादि न्यासका निरूपण	२१८-२२४
२७ चौदह पूर्वधरकी शक्तिका निरूपण	२२५-२३०

पाँचवां उद्देशक

२८ पाचवे उद्देशके विषयोंका निरूपण	२३१-२३२
२९ छद्मस्थ के सिद्धयमात्र का निरूपण	२३२-२३५
३० एवंभूत और अनेवंभूत वेदनाके विषयमें अन्यतीर्थियों के मतका निरूपण	२३५-२५०
३१ कुलकर और तीर्थकर आदि के वक्तव्यताका निरूपण	२५०-२५७

छठा उद्देशक

३२ छठे उद्देशके विषयोंका विवरण	२५८-२५९
३३ कर्म बंधके स्वरूपका निरूपण	२६०-२७३
३४ गृहपति को भाण्ड-और अग्रिकाय के स्वरूपका निरूपण	२७३-२९९
३५ पुरुषकी धनुर्विषयक क्रियाका निरूपण	२९९-४१६
३६ अन्यमतवादियों के मतका निरूपण	४१६-४२०
३७ नैरयिकों की विकृष्टता के विषयका निरूपण	४२१-४२४
३८ आधाकर्मादि आहार आदि के स्वरूपका निरूपण	४२५-४३५
३९ आचार्य और उपाध्यायका सिद्धिगमनका निरूपण	४३६-४३९
४० मृषावादि के कर्मवन्धका निरूपण	४३९-४४४

सातवां उद्देशक

४१ सातवे उद्देशके विषयोंका विवरण	४४५-४५०
४२ परमाणु-पुद्गलके स्वरूपका निरूपण	४५०-४६२
४३ परमाणुपुद्गल आदि के विषयमें असिधरा आदिका निरूपण	४६२-४७२
४४ परमाणु-पुद्गलआदिके विभाग का निरूपण	५७२-४८१
४५ परमाणु-पुद्गलके परस्पर में स्पर्शनाका निरूपण	४८१-५०४
४६ परमाणु-पुद्गलों आदि की स्थिति एवं अन्तरकालका निरूपण	५०४-५२८

४७ पृथ्वी द्रव्यके अल्प बहुत्वका निरूपण	६२८-६४४
४८ नैरयिकों के असुरकुमार आदिकों के और एकेन्द्रियादिकों के आरंभ अनारम्भ आदिका निरूपण	६४४-६५५
४९ हेतु के स्वरूपका निरूपण	६६९-६८२

आठवां उद्देशक

५० आठवें उद्देशक के विषयका विवरण	५८३-५८४
५१ पृथ्वी के स्वरूपका निरूपण	५८५-६३६
५२ जीवोंके वृद्धिहार आदिका निरूपण	६३७-६७७

नववां उद्देशक

५३ नववें उद्देशक के विषयों का विवरण	६७८-६८०
५४ राजगृह नगरके स्वरूपका निरूपण	६८०-६८७
५५ प्रकाश और अन्धकार के स्वरूपका निरूपण	६८८-६९९
५६ नैरयिक आदि जीवोंके समयादि ज्ञानकानिरूपण	६९९-७०९
५७ पार्श्वपत्योय स्थचिर और महावीर स्वामीका संवाद	७१०-७३१
५८ देवलोक के स्वरूपका निरूपण	७३१-७३५

दसवां उद्देशक

५९ चन्द्रके स्वरूपका निरूपण	७३६-७५१
-----------------------------	---------

छठे शतकके पहला उद्देशक

६० पहले उद्देशके विषय का संक्षिप्त विवरण	७५२-७५५
६१ उद्देशके विषय संग्राहक गाथा	७५५-७५६
६२ वेदना निर्जराके स्वरूपका निरूपण	७५७-७८२
६३ करण के स्वरूपका निरूपण	७८३-७९६
६४ वेदना और निर्जराके साहचर्यका निरूपण	७९६-८०१

दूसरा उद्देशक

६५ आहार के स्वरूपका निरूपण	८०२-८०३
----------------------------	---------

तीसरा उद्देशक

६६ तीसरे उद्देशके विषयोंका विवरण	८०४-८०८
६७ महाकर्म और अल्पकर्मके स्वरूपका निरूपण	८०९-८३२

६८ जीवके कर्मका निरूपण	८३२-८३९
६९ कर्म पुद्गलके उपचयका निरूपण	८४०-८६०
७० कर्मके भेद और उनकीस्थितिका निरूपण	८६१-९६२
७१ वेदक जीवके अल्प बहुत्वका कथन	९१३-९३८

चौथा उद्देशक

७२ चौथे उद्देशकके विषयों संक्षिप्त विषयविवरण	९३९-९४३
७३ जीवके समदेश और असमदेशके स्वरूपका निरूपण	९४४-१०१५
७४ प्रत्याख्यानादिके स्वरूपका निरूपण	१०१६-१०३१

पांचवां उद्देशक

७५ पांचवे उद्देशकके विषयोंका संक्षिप्त विवरण	१०३२-१०३६
७६ तमस्काय के स्वरूपका निरूपण	१०३७-१०७८
७७ कृष्णराजिके स्वरूपका निरूपण	१०७७-११०४
७८ लोकान्तिक देवके विमान आदिका निरूपण	११०५-११२८

समाप्त

ખા. પ્ર. શ્રી વિનોદમુનિનું સંક્ષિપ્ત જીવનચરિત્ર

આ પરમ વૈરાગી અને દયાના પુંજ જેવા આ પુરુષનો જન્મ વિક્રમ સંવત ૧૯૯૨ પોર્ટમુદાન (આફ્રિકા) માં કે ન્યાં વીરાણી કુટુંબનો વ્યાપાર આજ દિવસ સુધી ચાલુ છે, ત્યાં થયો હતો.

શ્રી વિનોદકુમારના પુણ્યવાન પિતાશ્રીનું નામ શેઠશ્રી દુર્લભજી શામજી વીરાણી અને મહા ભાગ્યવાન માતૃશ્રીનું નામ મણિબેન વીરાણી, બન્નેનું અસલ વતન રાજકોટ (સૌરાષ્ટ્ર) છે. બેન મણિબેન ધાર્મિક ક્રિયામાં પહેલેથી જ રૂચિવાળા હતા, પરંતુ શ્રી વિનોદકુમાર ગર્ભમાં આવ્યા પછી વધારે દૃઢધર્મી અને પ્રિયધર્મી બન્યા હતા.

પૂર્વ જીવના સંસ્કારથી શ્રી વિનોદકુમારનું લક્ષ ધાર્મિક અભ્યાસ અને ત્યાગ ભાવ તરફ વધારે હોવા છતાં તેઓશ્રીએ નૌનમેટ્રીક સુધી અભ્યાસ કરી વ્યવહારિક કેળવણી લીધેલી અને વ્યાપારની પેઢીમાં કુશળતા બતાવેલી. તેઓશ્રીએ યુનાઇટેડ કિંગડમ, ફ્રાન્સ, બેલ્જિયમ, હોલેન્ડ, જર્મની, સ્વીઝર્લેન્ડ, તેમજ ઇટાલી, ઇજિપ્ત વગેરે દેશોમાં પ્રવાસ કરેલ. સં. ૨૦૦૬ ના વૈશાખ માસ, સને ૧૯૫૩ માં લંડનમાં રાણી એલીઝાબેથના રાજ્યાદેહણ પ્રસંગે તેઓશ્રી લંડન ગયા હતા. કાશ્મિરનો પ્રવાસ પણ તેમણે કરેલ, દેશ પરદેશ ફરવા છતાં પણ તેમણે કોઈ વખતે પણ કંદમૂળનો આહાર વાપરેલ નહીં.

ઉગતી આવતી યુવાનીમાં તેઓશ્રીએ દુનિયાના રમણીય સ્થળો જેવાં કે કાશ્મિર, ઇજિપ્ત અને યુરોપનાં સુંદર સ્થળોની મુલાકાત લીધી હોવા છતાંએ તેઓને રમણીય સ્થળો કે રમણીય યુવતીઓનું આકર્ષણ થયું નહીં. એ એના પૂર્વજીવના ધાર્મિક સંસ્કારોનો જ રંગ હતો અને એ રંગે જ તેમને તે બધું ન ગમ્યું અને તુરત વતન પાછા ફર્યા અને સાધુ-સાધ્વીજીનાં દર્શન કરવાને ઠેકઠેકાણે ગયા અને તેમના ઉપદેશનો લાભ લીધો અને વૈરાગ્યમાં જ મન લાગ્યું. હુંડા કાલ અવસર્પિણિના આ દુપમ નામના પાંચમા આરાનું વિચિત્ર વાતાવરણ જોઈ તેમને કંઈક હોલ થતો કે તુરત જ તેનો ખુલાસો મેળવી લેતા અને ત્યાગ ભાવમાં સ્થિર રહેતા. દેશ-પરદેશમાં પણ સામાયિક, પ્રતિક્રમણ, ચોવિહાર આદિ પચ્ચક્ષણે તેઓ ચૂકયા નહીં. ઉચ્ચ કોટિની શૈયાનો ત્યાગ કરી તેઓ સૂવા માટે માત્ર એક શેતરંજી, એક ઓસીકું અને ઓઢવા માટે એક આદર ફક્ત વાપરતા અને પલંગ ઉપર નહીં પણ ભૂમિ

પર જ શયન કરતા અને પહેરના માટે જોક ખાદીનો લેખા અને અમો વાપરતા, કોઈ વખતે કળજો પહેરતા, બહુ ઠંડી હોય તો વખતે શાદો ગરમ કોટ પહેરી લેતા અને મુકપત્તિ, પાથરણું. રત્નેશ્વરજી અને જે ચાર પાર્શ્વિક પુસ્તકની ઝોળી સાથે રાખતા, સંઘાસમાં નર્દી પણ જંગલમાં એકાંત જગ્યામાં ઘણે લાગે શરીરની અશુચિ દૂર કરવા જતા, દાલતાં ચાલતાં, સંઘાસ અને પેશાબ સંબંધીમાં છવધ્યાની ધરાધર જતના કરતા.

દેશમાં કે પરદેશમાં જ્યારે તેમને કોઈની સાથે મળવાનું થતું ત્યારે તેમની સાથે અહિંસામય ગ્રીન ધર્મનું સ્વરૂપ પ્રકટ થયું વગર રહેતા નહીં.

દીક્ષાર્થીઓને જલદી દીક્ષા લેવાની પ્રેરણા કરતા અને એમ જ કહેતા કે છંદગીનો કોઈ ભરોસો નથી. “અસંલયં જીવિયં મા વમાયય” આગુધ્ય તૂટતાં વાર લાગતી નથી, તૂટ્યું છવન સંધાતું નથી. માટે ધર્મકરણીમાં સમયમાત્રનો પ્રમાદ ન કરવો જોઈએ.

ગોંડલ સંપ્રદાયના ઘણાખરા પૂ. મુનિવરો અને પૂ. મહાસતીજીઓનો તથા બોટાદ સંપ્રદાયના પૂ. આચાર્યશ્રી માણેકચંદ્ર મહારાજ અને દરિયાપુરી સંપ્રદાયના શાંત-શાસ્ત્રજ પૂ. મુનિશ્રી લાયચંદ્ર મહારાજ, શ્રમણ સંધના મુખ્ય આચાર્યશ્રીજી આત્મારામજી મહારાજ તપોમય જ્ઞાનનિધિ શાસ્ત્રોદ્ધારક બા. પ્ર. પૂ. આચાર્ય મહારાજ શ્રી ધામીલાલજી મહારાજ વગેરે અનેક સાધુ-સાધ્વીઓના ઉપદેશોનો તેમણે લાભ લીધેલ. મુંબઈમાં સં. ૨૦૧૧ સાલમાં શ્રી ધર્મસિંહજી મહારાજના સંપ્રદાયના પંડિતરત્ન શ્રી લાલચંદ્રજી મહારાજનો પરિણય થયો. લાલચંદ્રજી મહારાજ પે.તે, સંસારપંથનાં ત્રણ પુત્રો અને જે પુત્રીઓ એમ કુલ ૬ બલકે આખા કુટુંબે સંયમ અંગીકાર કરેલ, તે બધી તેમને અદ્ભૂત ત્યાગ ભાવના પ્રગટ થઈ કે જે કદી ક્ષય પામી નહીં.

આ પહેલાં તેઓ જ્યારે માતા-પિતાની સાથે પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી માણેકચંદ્રજી મહારાજના દર્શને બોટાદ ગયેલા ત્યારે તેમના ઉપદેશની જે અસર થઈ તે પણ મુખ્ય અસર પહેલી હતી અને બીજી અસર તે પૂજ્ય લાલચંદ્રજી મહારાજના સહકુટુંબની દીક્ષા એ હતી. આ બેઉ પ્રસંગોએ પૂર્વ ભવની બાકી રહેલી આરાધનાને પૂરી કરવાના નિમિત્તરૂપ હોઈને વખતો વખત તેઓ માતા-પિતા પાસે દીક્ષાની આજ્ઞા માગતા હતા અને તેનો જવાબ તેમના પિતાશ્રી તરફથી એક જ હતો, ‘જે હજી વાર છે સમય પાકેવા દીક્ષા જ્ઞાનાભ્યાસ વધારો.

સં. ૨૦૧૨ ના આપાડ શુદ્ધ ૧૫ થી શ્રી વિનોદકુમારે ગોંડલ સંપ્રદાયના શાસ્ત્રજ્ઞ પૂ. આચાર્યશ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજ સાહેબ પાસે વેરાવળ આતુર્ભાસ દરમ્યાન ખાસ નિયમિત રીતે દીક્ષાની તૈયારી કરવા માટે તેમની પાસે જ્ઞાનાભ્યાસ કર્યો તેની સાથે પૂ. આચાર્ય શ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજના સંસાર પદ્ધતિ કુટુંબી, દીક્ષાના ભાવિક શ્રી જસરાજભાઈ પણ જ્ઞાનાભ્યાસ કરતા હતા. તેઓએ ત્યાં એવો નિર્ણય કરેલો કે આચાર્ય શ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજ પાસે આપણે બન્નેએ દીક્ષા લેવી, પહેલાં વિનોદકુમારે અને પછી શ્રી જસરાજભાઈએ દીક્ષા લેવી, શ્રી જસરાજભાઈની દીક્ષા તિથિ પૂ. શ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજ સાહેબે સં. ૨૦૧૩ ના જેઠ શુદ્ધ ૫ ને સોમવારે માંગરોલ મુકામે નક્કી કરી. શ્રી જસરાજભાઈ વિનોદકુમારને રાજકોટ મળ્યા. શ્રી વિનોદકુમારે શ્રી જસરાજભાઈની યથાયોગ્ય સેવા બજાવી, માંગરોલ રવાના કર્યા અને પોતે નિશ્ચય પૂર્વક દીક્ષા માટે આજ્ઞા માગી પણ તેઓના પિતાશ્રીની એકને એક વાણી સાંભળીને તેમને મનમાં આઘાત થયો અને દીક્ષા માટેના તેમણે બીજા રસ્તો ચોધી કાઢ્યો.

પૂજ્યશ્રી લાલચંદજી મહારાજ અને તેમના શિષ્યોનો પરિચય મુંબઈમાં થયેલ હતો અને ત્યારબાદ કોઈ વખત પત્રવહેવાર પણ થતો હતો. છેલ્લા પત્રથી તેમણે જાણેલ હતું, જે પૂ. શ્રી લાલચંદજી મહારાજ, ખીચન ગામે પૂ. આચાર્ય શ્રી સમર્થમલજી મહારાજ સાહેબ પાસે જ્ઞાનાભ્યાસ અર્થે ગયા છે. પોતાને પિતાશ્રીની આજ્ઞા (દીક્ષા માટે) મળે તેમ નથી અને દીક્ષા તો લેવી જ છે. આજ્ઞા વિના કોઈ સાધુ મુનિરાજ દીક્ષા આપશે નહીં અને સ્વયંમેવ દીક્ષા સૌરાષ્ટ્રમાં લઈને આચાર્ય શ્રી પુરુષોત્તમજી મહારાજ પાસે જવામાં ઘણાં વિઘ્નો થાશે, એમ ધારીને તેઓએ દૂર રાજસ્થાનમાં આદ્યા જવાનું નક્કી કર્યું.

તા. ૨૪-૫-૫૭ સં. ૨૦૧૩ ના વૈશાખ વદ ૧૦ ને શુક્રવારના રોજ સાંજના માતૃશ્રી સાથે છેલ્લું જમણું કર્યું. ભોજન કરી, માતૃશ્રી સામાયિકમાં ષેડી ગયા. તે વખતે કોઈને જાણ નહોતી કે વગર દીક્ષાના વિઘ્નોમાંથી બચવા માટે ઘર, કુટુંબ, સૌરાષ્ટ્ર, ભૂમિ અને ગોંડલ સંપ્રદાયનો પણ ત્યાગ કરી તેઓ ખીચન તરફ રવાના થયા.

શ્રી વિનોદમુનિના નિવેદન પરથી માલુમ પડ્યું કે તા. ૨૪-૫-૫૭ ના રોજ રાત્રે આઠ વાગે ઘેરથી નીકળી, રાજકોટ જંકશને જોધપુરની ટિકિટ લીધી. તા. ૨૫-૫-૫૭ ના સવારે ૮ વાગ્યે મહેસાણા પહોંચ્યા. ત્યાં અઢી કલાક ગાડી પેડી રહે છે, તે દરમ્યાન ગામમાં જઈને લોચ કરવા માટેના વાળ રાખીને બાકીના કઢાવી નાખ્યા અને ગાડીમાં બેસી ગયા. મારવાડ જંકશન

પર જ શયન કરતા અને પહેરવા માટે જોક ખાદીનો લેવો અને ઝરોળ વાપરતાં, કોઈ વખતે કબજો પહેરતા, બહુ ઠંડી હોય તો વખતે સાદો ગરમ કોટ પહેરી લેતા અને મુકપત્તિ, પાથરલું, રનોડરલું અને બે ચાર ધાર્મિક પુસ્તકની ઝોળી સાથે રાખતા, સંઘાસમાં નહીં પણ જંગલમાં જોકાંત જમ્યામાં ઘણે ભાગે શરીરની અશુચિ દૂર કરવા જતા, હાલતાં ચાલતાં, ચંદાગ્ર અને પેશાબ સંબંધીમાં શુભદયાની બરાબર જતના કરતા.

દેશમાં કે પરદેશમાં જ્યારે તેમને કોઈની સાથે મળવાનું થતું ત્યારે તેમની સાથે અહિંસામય નૈન ધર્મનું સ્વરૂપ પ્રકટ થયું વગર રહેતા નહીં.

દીક્ષાર્થીઓને જલદી દીક્ષા લેવાની પ્રેરણા કરતા અને એમ જ કહેતા કે છંદગીનો કોઈ ભરોસો નથી. “ભસંસ્યં જીવિયં મા વમાય” આયુધ્ય તૂટતાં વાર લાગતી નથી, તૂટ્યું શુભ સંધાતું નથી. માટે ધર્મકરણીમાં સમયભાવનો પ્રમાદ ન કરવો જોઈએ.

ગોંડલ સંપ્રદાયના ઘણાખરા પૂ. મુનિવરો અને પૂ. મહાસતીશ્રીઓના તથા બોટાદ સંપ્રદાયના પૂ. આચાર્યશ્રી માણેકચંદ્ર મહારાજ અને દરિયાપુરી સંપ્રદાયના શાંત-શાસ્ત્ર પૂ. મુનિશ્રી ભાયચંદ્ર મહારાજ, શ્રમણ સંઘના મુખ્ય આચાર્યશ્રીશ્રી આત્મારામશ્રી મહારાજ તપોમય જ્ઞાનનિધિ શાસ્ત્રોદારક બા. ધ્ર. પૂ. આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલશ્રી મહારાજ વગેરે અનેક સાધુ-સાધ્વીઓના ઉપદેશનો તેમણે લાભ લીધેલ. મુંબઈમાં સં. ૨૦૧૧ સાલમાં શ્રી ધર્મસિંહશ્રી મહારાજના સંપ્રદાયના પંડિતરત્ન શ્રી લાલચંદ્ર મહારાજનો પંચિત્રય થયો. લાલચંદ્ર મહારાજ પે.તે, ‘સંસારપંક્તનાં ત્રણ પુત્રો અને બે પુત્રીઓ એમ કુલ ૬ બલકે આખા કુટુંબે સંયમ અંગીકાર કરેલ, તે બધી તેમને અદ્ભુત ત્યાગ ભાવના પ્રગટ થઈ કે જે કદી ક્ષય પામી નહીં.

આ પહેલાં તેઓ જ્યારે માતા-પિતાની સાથે પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી માણેકચંદ્ર મહારાજના દર્શને બોટાદ ગયેલા ત્યારે તેમના ઉપદેશની જે અસર થઈ તે પણ મુખ્ય અસર પહેલી હતી અને બીજી અસર તે પૂજ્ય લાલચંદ્ર મહારાજના સહકુટુંબની દીક્ષા એ હતી. આ બેઉ પ્રસંગોએ પૂર્વ ભવની બાકી રહેલી આરાધનાને પૂરી કરવાના નિમિત્તરૂપ હોઈને વખતો વખત તેઓ માતા-પિતા પાસે દીક્ષાની આજ્ઞા માગતા હતા અને તેનો જવાબ તેમના પિતાશ્રી તરફથી એક જ હતો, ‘જે હજી વાર છે સમય પાંકવા દીઓ, જ્ઞાનાભ્યાસ વધારો,

સમય માત્રનો પ્રમાદ કરવો ઠીક ન લાગ્યો, તેથી શ્રી અરિહંત ભગવંતો તથા શ્રી સિદ્ધ ભગવંતોની સાક્ષીએ મારા શુરુ મહારાજ સમક્ષ પ્રવચ્ચાનો પાઠ લાણીને મારા આત્માના કડયાણુ માટે મેં દીક્ષા અંગીકાર કરી છે. સમાજને જોટો ખ્યાલ ન આવે કે મારી દીક્ષા ક્ષણિક બુદ્ધિથી અગર ગેરસમજથી થઈ છે તેથી તથા સમાજમાં નૈનશાસનની પ્રભાવના થાય તે હેતુથી મારે મારો વૃત્તાંત પ્રગટ કરવો ઉચિત છે.

ઉત્તરાધ્યયનજી સૂત્રના ૧૯ માં અધ્યયનપરથી મને લાગ્યું કે મનુષ્ય જીવનનું ખૂંડું કર્તવ્ય મોક્ષકળ આપનારી દીક્ષા જ છે.

હેવટ સુધી મેં મારા બાપુજી પાસે દીક્ષા માટે આજ્ઞા માગી અને તે વખતે પણ પહેલાંની જેમ વાત ઉડાવી દીધી અને અનંત ઉપકારી એવા મારા બાપુજી સમક્ષ હું તેમને કડક ભાષામાં પણ કહી શકતો ન હતો અને બીજી બાજુથી મને થયું કે આયુષ્ય અશાશ્વત છે અને આવા ઉત્તમ કામ માટે મારે જરાપણ પ્રમાદ કરવો ઉચિત નથી. તેથી મેં વિચારીને આ પગલું ભર્યું છે અને મને પૂર્ણ વિશ્વાસ છે કે, શ્રી વીરપ્રભુ મહાવીર સ્વામીનો સંકળ સંઘ મારા આ કાર્યને અનુમોદશે જ “ તથાસ્તુ ”.

રાજકોટમાં શ્રી વિનોદકુમારના ગયા પછી પાછળથી ખગર પડી કે વિનોદકુમાર કેમ દેખાતા નથી, એટલે તપાસ થવા માંડી, ગામમાં કયાંય પત્તો ન લાગ્યો એટલે બહારગામ તારો કયાં, કયાંયથી સંતોષકારક સમાચાર સાંપડ્યા નહીં, અર્થાત્ પત્તો મળ્યો જ નહીં. આમ વિમાસણના પરિણામે પિતાશ્રીને બે મહીના પહેલાંની એક વાતની યાદી આવી. તે એ હતી કે તે વખતે શ્રી વિનોદકુમારે આજ્ઞા માગેલી કે “ બાપુજી ! આપની આજ્ઞા હોય તો આ આતુમોસ ખીચન (રાજસ્થાન) જઈ, કારણ કે ખીચનમાં પૂ. શુરુમહારાજ શ્રી સમર્થમલજી મહારાજ કે જેઓ સિદ્ધાંત વિશારદ છે અને એકાંતવાદના પૂરા જાણકાર છે, તેઓ ત્યાં ત્રિરાજમાન છે. જેઓશ્રી પાસે શાસ્ત્રાભ્યાસ કરવા માટે પૂ. શ્રી. લાલચંદજી મહારાજ આદિ ઠાણા ૪ જવાના છે. તો મારી ઈચ્છા પણ ત્યાં તેમની પાસે જવાની છે. ”

આ વાતચીતનું સ્મરણ પિતાશ્રીને આવવા સાથે તેઓએ પં. પૂર્ણચંદ્રજી-દકને પોતાની પાસે બોલાવ્યા અને વિનોદકુમાર માટેની પોતાની ચિંતા વ્યક્ત કરી. પડિતજીનું આ વાતને સમર્થન મળ્યું, તેઓશ્રીએ જણાવ્યું કે થોડા સમય પૂર્વે વિનોદકુમારે મારી પાસે જાણવા માગ્યું હતું કે, ખીચનમાં કેવા

તથા ભેધપુર જાહેશન યધને તા. ૨૬-૫-૫૭ ની વહેલી સવારે જાં પામ્યે ફલોદી પહોંચ્યા ત્યાંથી પગે ચાલીને ખીચન ઉપાશયમાં પહોંચ્યા અને ઉપાશયમાં બિરાજતા મુનિવરોના દર્શન કર્યો, વંદના નમસ્કાર કરી મુખગ્રાતા પૂછી, બહાર નીકળ્યાં અને પોતાના સામાયિકના કપડાં પહેર્યાં અને પછી પૂજ્ય શ્રી મુનિવરોની સન્મુખ સામાયિક કરવા બેઠા, તેમાં “જાપ ત્રિપદા પચ્ચુવાસામિ દુર્લભં તિવિદેહં” ના બદલે “જાપ લીય પચ્ચુવાસામિ તિવિદેહં” બોલ્યા તે શ્રી લાલચંદ્ર મહારાજે સાંભળ્યું અને તેઓશ્રીએ પૂછ્યું કે “વિનોદકુમાર ! તમે આ શું કરો છો, તેનો જવાબ આપવાને બદલે “અવ્વાણં વોસિરામિ” બોલી પાડ પૂરો કર્યો અને પછી વિનયપૂર્વક બે હાથ ભેડીને બોલ્યા કે “સાહેબ ! એ તો બની ચૂક્યું અને મેં સ્વયંજેવ દીક્ષા લઈ લીધી ધરાબર જ છે અને તેમાં કંઈ ફેરફાર થઈ શકે તેમ નથી. આ સિવાય આપશ્રીની બીજી કંઈ પણ પ્રકારની આજ્ઞા હોય તો ફરમાવો.”

તે જ દિવસે બપોરના સાઅર પૂ. મુનિશ્રી સમર્થમલજી મહારાજ સાહેબે શ્રી વિનોદકુમાર મુનિને પોતાની પાસે બોલાવ્યા અને સમજાવ્યા કે “તમે એક સારા ખાનદાન કુટુંબના વ્યક્તિ છો. તમારી આ દીક્ષા અંગીકાર કરવાની રીત ધરાબર નથી કારણ કે તમારા માતા-પિતાને આ હકીકતથી દુઃખ થાય અને તેથી મારી સંમતિ છે કે રમેહરણની હાંડી ઉપરથી કપડું કાંદી નાખો જેથી તમે શ્રાવક ગણાવ અને જરૂર પડે તો શ્રાવકોનો સાથ લઈ શકો, એમ ત્રણવાર પૂ. મહારાજશ્રીએ સમજાવેલા પરંતુ તેમણે ત્રણેય વખત એક જ ઉત્તર આપેલો કે “જે થયું તે થયું, હવે મારે આગળ શું કરવું તે ફરમાવો.”

શ્રી વિનોદમુનિના શ્રી સમર્થમલજી જેવા મહામુનિના પ્રશ્નના જવાબ પછી ખીચનનો અતુર્વિધ સંઘ વિચારમાં પડી ગયો અને મુનિશ્રીઓ પર સંસારીઓનો કંઈ પણ પ્રકારનો આ નિષ્કારણ હુમલો ન આવે તે માટે શ્રી વિનોદમુનિને જણાવવામાં આવ્યું કે “અમારી સલામતી માટે તમારે બહાર નિવેદન બહાર પાડવાની જરૂર છે” ત્યારે શ્રી વિનોદમુનિએ પોતાના હસ્તાક્ષરે નિવેદન થી સંઘ સમક્ષ પ્રગટ કર્યું, તેનો સાર નીચે મુજબ છે:-

મારા માતા-પિતા મોહને વશ થઈને દીક્ષાની આજ્ઞા આપે તેમ ન હતું અને “અસંસ્લયં લીવિયં મા પમાંયય” ને આધારે એક ક્ષણ પણ દીક્ષાથી વંચિત રહી શકું તેમ નથી, એમ મને લાગ્યું. શ્રી લાલચંદ્ર મહારાજ સાહેબ-વગેરેએ મને મારી દીક્ષા માટે વિચારી પછી કરવાનું કહેલ પરંતુ મને

દીક્ષા પછી અદી મહિનાને આંતરે ફોલોલી ચોમાસા દરમ્યાન શ્રી વિનોદમુનિને હાજરે જવાની સંજ્ઞા થઈ અને તે માટે જવા તૈયાર થયા એટલે તેમના ગુરુએ કહ્યું કે બહુ ગરમી છે, જરાવાર થોભી જાવ એટલે શ્રી વિનોદમુનિએ રમેહરણ વગેરેની પ્રતિવેષના કરી તે દરમ્યાન ન રોકી શકાય એવી હાજત લાગી તેથી ફરી આજ્ઞા માગતાં, જણાવ્યું કે મને હાજત બહુ લાગી છે તેથી જાઉં છું, જલદી પાછો ફરીશ. કાળની ગહન ગતિને દુઃખદ રચના રચવી હતી. આજે જ હાજરે એકલા જવાનો બનાવ હતો, હંમેશાં તો બધા સાધુઓ સાથે મળીને દિશાએ જતા.

હાજતથી મોકળાં થઈ પાછા ફરતા હતા, ત્યાં રેલ્વે લાઈન ઉપર બે ગાયો આવી રહી હતી. બીજી બાજુથી ટ્રેન પથ આવી રહી હતી, તેની બિંહસલ વાગવા છતાં પણ ગાયો ખસતી ન હતી. શ્રી વિનોદમુનિનું હૃદય થરથરી ઉઠ્યું અને મહા અનુકંપાએ મુનિના હૃદયમાં સ્થાન લીધું હાથમાં રમેહરણ લઈ જાનના જોખમની પરવા કર્યા વગર ગાયોને બચાવવા ગયા. ગાયોને તો બચાવી જ લીધી; પરંતુ આ ક્રિયામાં છકાય છૂતરી દયાના સાધનભૂત રમેહરણ કે જે વિનોદમુનિને આત્માથી વધારે પ્યારો હતો, તે રેલ્વે લાઈન ઉપર પડી ગયો અને શ્રી વિનોદમુનિએ તે પાછો સંપાદન કરવામાં જડવાદને બિદલ કરતાં રાક્ષસી એન્જિનને બપોટે આળ્યા અને પોતાનું બલિદાન આપ્યું. અરિહંત....અરિહંત...એવા શબ્દો મુખમાંથી નીકળ્યા અને શરીર તૂટી પડ્યું. રક્ત પ્રવાહ છૂટી પડ્યો અને થોડા જ વખતમાં પ્રાણાંત થઈ ગયો. બધા લોકો કહેવા લાગ્યા કે ગૌરક્ષામાં મુનિશ્રીએ પ્રાણ આપ્યાં અતિમ સમયે મુનિશ્રીના ચહેરા પર લબ્ધ શાન્તિ જ દેખાતી હતી.

હંમેશાં તેઓ જે તરફ હાજરે જતા હતા તે તરફ ફોલોલીથી પોકરણ તરફ જવાની રેલ્વે લાઈન હતી. આ લાઈન ઉપર રેલ્વે સત્તાવાળાઓએ ફાટક મૂકેલ નથી અને ત્યાં રસ્તો પણ છે, એટલે પશુઓની અવરજવર હોય જ છે અને વખતો વખત ત્યાં ઢોરો રેલ્વેની હડફેટે ચડી જવાના પ્રસંગ બને છે.

ફોલોલી સથે આ દુર્ઘટનાના ખગર રાજકોટ, ટેલીફોનથી આપ્યા. જે વખતે ટેલીફોન આળ્યો તે વખતે વિનોદમુનિના પિતાશ્રી બહાર ગયા હતા અને માતૃશ્રી મણિબેન સામાયિક-પ્રતિક્રમણમાં બેઠાં હતાં, માત્ર એક નોકર જ ઘરમાં હતો કે જેણે ટેલીફોન ઉઠાવ્યો પણ તે કાંઈ ટેલીફોનમાં હકીકત સમજી શક્યો નહીં અને સાચા સમાચાર મોડા મળ્યા. સ્પેશલ પ્લેનથી ફોલોલી પહોંચે તે પહેલાં અગ્નિસંસ્કાર થઈ ગયો. સૂચનાનો ટેલીફોન અડધી કલાક

પ્રકારની સગવડ છે ? આમ મારી સાથે પણ વાર્તાતાપ થયો હતો. બન્નેનો આ પ્રમાણે એકમત થતાં પિતાશ્રીએ ખીચન તાર કરવા શુભના કરી. તા. ૨૬-૫-૫૭ ના રોજ પૃથ્વીરાજજી માતૃ ખીચન (રાજસ્થાન) ઉપર તાર કર્યો.

તા. ૨૮-૫-૫૭ ના રોજ જવાબ આપ્યો કે શ્રી વિનોદભાઈએ ખીચનમાં સ્વયમેવ દીક્ષા ગ્રહણ કરી છે. એટલે તેમના પિતાશ્રીએ રાવજદાદુરશ્રી એમ. પી. સાહેબ, શ્રી કેશવલાલભાઈ પારેખ અને પંડિતજી પૂર્ણચંદ્રજી દસ એમ ત્રણેયને શ્રી વિનોદકુમારને પાછા તેડી લાવવા માટે ખીચન મોકલ્યા. તા. ૨૮-૫-૫૭ ના રોજ રવાના થઈ તા. ૩૦-૫-૫૭ ના રોજ સવારે ફ્લોદી સ્ટેશને પહોંચ્યા. એલગાડીમાં તેઓ ખીચન ગયા કે ત્યાં સ્થવિર મુનિશ્રી મહારાજ પૂણ્ય પંડિતરત્ન શાસ્ત્ર વિશારદ શ્રી સમર્થમતજી મહારાજ આદિ ઠાણા ૮ તથા પૂણ્ય તપસ્વી મહારાજ શ્રી લાલચંદજી મહારાજ આદિ ઠાણા ૪ બિરાજતા હતા. કુદરે સાધુ-સાધ્વીની સંખ્યા અઘ્ઘાનીસથી ત્રીસની હતી.

પૂછપરછના જવાબમાં શ્રી વિનોદમુનિએ કેશવલાલભાઈ પારેખને કહ્યું કે “ મેં તો દીક્ષા અંગીકાર કરી લીધી છે, તેમાં કંઈ ફેરફાર થાય તેમ નથી તમે અમારા વીરાણી કુટુંબના હિતૈષી છો, અને જો સાચા હિતૈષી હો તો મારા પૂ જા અને બાપુજીને સમજાવીને મારી હવે પછીની મોટી દીક્ષાની આજ્ઞા અઠવાડીઆની અંદર અપાવી દો એટલું જ નહિ પણ “ સવિ જીવ કહું શાસન રસી ” ની લાવનામાં અને આજ દિવસ સુધીના મારી ઉપરના ઉપકારના બદલામાં આગમને અનુલક્ષીને મારી એ લાવના હોય જ અને છે કે, મારી દીક્ષા તેઓની દીક્ષાનું નિમિત્ત બને અને મારા માતા-પિતા સદ્-ગતિને સાધે. અર્થાત્ મારી સાથે દીક્ષા લીએ.

આવા દૃઢ જવાબના પરિણામે તે જ સમયે શ્રી વિનોદકુમારને પાછા લઈ જવાની લાવનાને નિષ્ફળતા સાંપડી અને તા. ૩૧-૫-૫૭ ની રાત્રિના રવાના થઈ, તા. ૨-૬-૫૭ ના સવારે મહા પરીપહરૂષ ક્ષેત્રનો અનુભવ કરી, શ્રી વિનોદકુમારના પિતાશ્રીને તમામ વાતથી વાકેફ કર્યો.

થોડા વખતમાં ફ્લોદીના શ્રી. સંઘ પૂ. શ્રી. લાલચંદજી મહારાજને ફ્લોદીમાં ચોમાસુ કરવાની વિનંતી કરી તેનો અસ્વીકાર થવાથી સંઘ ગમગીન બન્યો એટલે નિર્ણય ફેરવ્યો અને અષાઢ શુદ્ધ ૧૩ ના રોજ ખીચનથી વિહાર કરી ફ્લોદી આવ્યા.

શ્રી વિનોદમુનિના જીવનના જે પ્રશ્નો ઉપરિચિત થાય છે તેનો ખુલાસો કરવામાં આવે છે.

પ્રશ્ન ૧—તેમણે આજ્ઞા વગર સ્વયમેવ દીક્ષા કેમ લીધી ?

ઉત્તર:—પાંચમાં આરામાં ભદ્રા શેઠાણીના પુત્ર એવંતા (અતિમુક્ત) કુમારને તેની માતૃશ્રીએ દીક્ષાની આજ્ઞા આપવાની તદ્દન ના પાડી એટલે તેણે સ્વયમેવ દીક્ષા લીધી. ત્યારબાદ ભદ્રા શેઠાણીએ પોતાના કુમારને ગુરુને સોંપી દીધા. તે જ રાત્રે તેણે બારમી વીજીયુની પડિમા અંગીકાર કરી અને શિયાળાણીના પરિપક્વ થી કાળ કરી નહીનગુદમ વિમાનમાં ગયા તેવી જ રીતે શ્રી વિનોદકુમાર સ્વયં દીક્ષિત થયા.

પ્રશ્ન ૨—આવા વૈરાગી જીવને આવો ભયંકર પરીપક્વ કેમ આવે ?

ઉત્તર—કેટલાક ચરમ શરીરી જીવને મરણાંતિક ઉપસર્ગ આવેલ છે. જુઓ ગજસુકુમાર મુનિ, મેતારજ મુનિ, કૌશલ મુનિ, કારણ કે તેમની સત્તામાં હજારો ભવનાં કર્મ હોવા એકઠાં, ત્યારે તેમને એકદમ મોક્ષ જવું હતું, તે મરણાંતિક ઉપસર્ગ આવ્યા વગર એટલાં બધાં કર્મ કેવી રીતે ખપે ? બા. પ્ર. શ્રી વિનોદમુનિને આવો પરીપક્વ આવ્યો, જે ઉપરથી એમ અનુમાન થાય છે કે તે એકાવતારી જીવ હોય.

શ્રી વિનોદમુનિનું વિસ્તૃત જીવનચરિત્ર જુદા પુસ્તકથી ગુજરાતી ભાષા તથા હિન્દી ભાષામાં છપાયેલ છે તેમાંથી અહીં સાર રૂપે સંક્ષેપ કરેલ છે.



શેરો પહેંચ્યો. જા સંદેશો સમયસર પહેંચ્યો હોત તો માતા-પિતાને શ્રી વિનોદમુનિના સમક્ષે પણ ચહેરો જોવાનો અને અંતિમ દર્શનનો પ્રસંગ મળત. પરંતુ અંતરાય કંઈ તેમ જન્મ નહીં.

આથી પ્લેધનનો પોઆગ પડતો મૂવામાં આવ્યો અને માતા-પિતા તા. ૧૪-૮-૫૭ ના રોજ ટ્રેઇન મારફત દ્વોદી પહેંચ્યા, શ્રી દુર્લભજીભાઈ અને મણિજીને પૂજ્ય તપસ્વીશ્રી લાલચંદજી મહારાજ સાહેબના દર્શન કર્યા.

આ પ્રસંગે શ્રી લાલચંદજી મહારાજ સાહેબે અવગરને પિછાળીને અને ધૈર્યંતું ઐકાએક ઐક્ય કરીને, શ્રી વિનોદમુનિના માતા-પિતાના સાંત્વન અર્થે ઉપદેશ શરૂ કર્યો જેનો દૂંકામાં સાર આ પ્રમાણે છે.

“ હવે તો એ રત્ન ચાલ્યું ગયું ! સમાજનો આશાદીપક બોલવાઈ ગયો ! ઝટ ઊગીને આથમી ગયો ! હવે એ દીપ ફરીથી આવી શકે તેમ નથી ”

શ્રી વિનોદમુનિના સંસારપક્ષના માતૃશ્રી મણિજીને મુનિશ્રીએ કહ્યું કે, બેન ! ભાવિ પ્રબળ છે. આ બાબતમાં મહાપુરુષોએ પણ હાથ ધોઈ નાખ્યા છે અને સૌને મરણને શરણ થવું પડે છે. તો પછી આપણા જેવા પામર પ્રણીતું શું ગણું છે ? હવે તો શોક ફર કરીને આપણે એમના મૃત્યુનો આદર્શ જોઈને માત્ર ધીરજ ધરવાની રહી.

પૂ. શ્રી સમર્થમહાજી મહારાજ સાહેબનો અભિપ્રાય:—

પ્રાથમિક તેમજ અંત્યકાળના પરિચયથી મને શ્રી વિનોદમુનિના વિશે અનુભવ થયો, કે તેમની ધર્મપ્રિયતા અને ધર્માભિલાષા ‘ અદ્વિમિજા વેમાણુ-રાગરત્તે ’ નો પરિચય કરાવતી હતી. પ્રાસ સાંસારિક પ્રચર વૈભવ તરફ તેમની રુચિ દષ્ટિગોચર થતી ન હતી. પરંતુ તેઓ વીતરાગવાણીના સંસર્ગથી વિષય-વિમુખ ધર્મકાર્યમાં સદા તત્પર અને તદ્દલીન રહેતા હતા. પ્રાસ પરિચયના અભાવે વૈરાગ્ય પણ તેમની ધારાથી તેમની ધર્માનુરાગિતા તથા જીવનચર્યાથી કઠિન કાર્ય કરવામાં પણ ગભરાટના સ્થાને સુખાનુભવની વૃત્તિલક્ષમાં આવતી હતી.

શ્રીવીતરાગાય નમઃ

જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર-પૂજ્યશ્રી-ઘાસીલાલ-વ્રતિ-વિરચિતયા

પ્રિયદર્શિન્યાલ્યયા વ્યાલ્યયા સમલક્ષ્ણં

વ્યાલ્યયાપ્રજ્ઞપ્યપરનામકમ્

શ્રી-ભગવતીસૂત્રમ્

ચતુર્થો ભાગઃ

પચ્ચમશતકસ્યોદ્દેશકાર્થસંગ્રહગાથેયમ્—

‘ ચંપ-રવિ-અનિલ-ગંઠિય-સદ્દે, છડમાઽઽડ ઇયણ નિયંઠે,
રાયગિહં ચંપા-ચંદિંમા ય દસ પંચમમ્મિ સયે ॥

છાયા—ચમ્પા-રવિરનિલો ગ્રાન્થિકા શબ્દઃ, છડમસ્યાઽઽયુરેજનં નિર્ગ્રન્થઃ ।

રાજગૃહં ચમ્પા-ચન્દ્રમાશ્ર દશ પચ્ચમે શતકે ॥

ટીકા—ચતુર્થશતકાન્તે લેક્ષ્યાયા નિરૂપિતત્વેન પચ્ચમશતકે પ્રાયશો લેક્ષ્યા-
વર્તા નિરૂપણાર્થ દશોદ્દેશકાર્થસંગ્રહો ગાયથા ક્રિયતે—“ ચંપ-રવિ-અનિલ-”
ઈત્યાદિ । તત્ર ચમ્પાનગર્યાં સૂર્યવિષયકપદનસ્ય સમાધાનાત્મક-નિર્ણયઃ પચ્ચમ-

પંચમ શતક કા પહિલા ઉદ્દેશક પ્રારંભ

ચતુર્થ શતક કે અન્ત મેં લેક્ષ્યાઓં કા નિરૂપણ કિયા ગ-
યા હૈ । સો અબ હસ પંચમ શતક મેં પ્રાયઃઽન લેક્ષ્યાઓં સે યુક્ત જો
હેં ડન કા નિરૂપણ કિયા જાતા હૈ । હસ શતક મેં દશ ઉદ્દેશો હેં ।
ચંપ રવિ ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા ડન દશ ઉદ્દેશકોં મેં કયા ૨ વિષય કહા
હેં યહ વાત સંગ્રહ કર પ્રકટ કી ગઈ હૈ । ગાથાકા અર્થ હસ પ્રકાર હૈ-
ચંપાનગરી મેં ઇન્દ્રભૂતિ ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે સૂર્ય કે વિષય મેં જો પ્રશ્ન

પાંચમાં શતકનો પહેલા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

ગાથા શતકમાં લેક્ષ્યાઓનું નિરૂપણ કરાયું છે. હવે આ પાંચમાં શતકમાં, એ
લેક્ષ્યાઓથી યુક્ત એ છવે છે તેમનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. આ શતકમાં દસ
ઉદ્દેશકો છે. તે દસે ઉદ્દેશકોમાં આવતા વિષયનો “ ચંપ રવિ ” ઇત્યાદિ. ગાથામાં
સંશ્લેષ કરવામાં આવ્યો છે—આ ગાથાનો અર્થ નીચે મુજબ છે.

चेइए होत्था, वण्णओ सामीसमोसइहे, जाव-परिसा पडिगया, तेणं कालेणं, तेणं समएणं, समणस्स भगवओ महावीरस्स जेहे अंतेवासी इंदभूई नामं अणगारे, गोयमगोत्तेणं जाव-एवं वयासी-जंबुदीवे णं भंते ! दीवे सूरिया उदीण-पाईणमुग्गच्छ पाईण-दाहिण मागच्छंति, पाईण-दाहिण मुग्गच्छ, दाहिण पडीण मागच्छंति, दाहिण-पडीण मुग्गच्छ, पडीण-उइण-मागच्छंति, पडीण-उइणमुग्गच्छ, उदीची-पाईण मागच्छंति ? हंता. गोयमा ! जंबुदीवेणं दीवे सूरिया उदीची-पाईण मुग्गच्छ जाव-उदीची-पाईण मागच्छंति ॥ सू० १ ॥

छाया—तस्मिन् काले, तस्मिन् समये खलु चम्पा नाम नगरी आसीत्-वर्णकः, तस्यां चम्पायां नगर्यां पूर्णभद्रं नाम चैत्यम् आसीत्, वर्णकः, स्वामी समवसतः, यावत्-पर्यत् प्रतिगता, तस्मिन् काले, तस्मिन् समये श्रमणस्य भगवतो

(तेणं कालेणं तेणं समएणं) इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय में (चंपानामं नयरी होत्था) चंपा नाम की नगरी थी । (वण्णओ) वर्णक (तीसे णं चंपाए नयरीए पुण्णभदे णामं चेइए होत्था) उस चंपा नगरी में पूर्णभद्र नाम का चैत्य था । (वण्णओ) वर्णक (सामी समो सइहे) वहां महावीर स्वामी पधारे (जाव परिसा पडिगया) यावत् स्वप्ना अपने २ स्थान पर वापिस गई । (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय में (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान्

“तेणं कालेणं तेणं समएणं” इत्यादि

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) ते काले अने ते समये, (चंपा नामं नयरी होत्था) चंपा नामे नगरी હતી. (વણ્ણઓ) તેનું વર્ણન કરવું. (તીસે ણં ચંપાએ નયરીએ પુણ્ણભદ્રે નામં ચેહાએ હોત્યા) તે ચંપા નગરીમાં પૂર્ણ-ભદ્ર નામનું એક ચૈત્ય હતું. વણ્ણઓ તેનું વર્ણન કરવું. (સામીસમોસહાએ) ત્યાં મહાવીર સ્વામી પધાર્યો. (જાવ પરિણ પડિગયા) પરિણ પાતાને સ્થાને પાછી ફરી, ત્યાં સુધીનું વર્ણન કરવું. (તેણં કાલેણં તેણં સમएणं) તે કાળે અને તે સમયે (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના

શતકસ્ય પ્રથમે ઉદ્દેશકે વિહિતઃ, દ્વિતીયે વાયુવિષયકપ્રશ્નસ્ય નિર્ણયઃ કૃતઃ, તૃતીયે જાલગ્રન્થિકાક્ષાપનોપાર્થવિષયકો નિર્ણયઃ પ્રતિપાદિતઃ, ચતુર્થે ચન્દ્રવિષય-પ્રશ્નોત્તરયોર્નિર્ણયઃ, પચમ્હે છદ્મસ્ય વક્તવ્યતા પ્રતિપાદિતા. ષષ્ઠે આયુષોઽલ્પતા-દીર્ઘત્વાદીનાં પ્રતિપાદનં કૃતમ્, સાતમે પુદ્ગલનાનામેજનાપયંપ્રતિપાદનં કૃતમ્, અષ્ટમે નિર્ગ્રન્થિપુત્રાભિધાનાનગારવિહિતઃ ચાતુરવિચારસારનિર્ણયઃ, નવમે રાજગૃહ-નગરવિષયકો વિચારો વિહિતઃ, દશમે ચ ચમ્પાનગર્યાં ચન્દ્રવિષયિણી વક્તવ્યતા પ્રતિપાદિતેતિ ગાયાર્થઃ ॥

સૂર્ય વક્તવ્યતાં પ્રસ્તાવઃ—

મૂલમ્—“તેજં કાલેજં, તેજં સમર્ણં, ચંપા નામં નયરી
હોત્થા, વણ્ણઓ, તીસે જં ચંપાપ નયરીયે પુણ્ણભદ્દે જામં

ક્રિયા હૈ, હસકા સમાધાન હસ પંચમ શતક કે પ્રથમ ઉદ્દેશક મેં પ્રકટ ક્રિયા મેંયો હૈ । દ્વિતીય ઉદ્દેશક મેં વાયુ વિષયક પ્રશ્ન કા સમાધાન પ્રકટ ક્રિયા ગયા હૈ । તૃતીય ઉદ્દેશક મેં જાલગ્રન્થિકા કે ઉદાહરણ ઉપર સે વિવક્ષિત અર્થ વિષયક નિર્ણય કો પ્રકટ ક્રિયા હૈ । ચતુર્થ ઉદ્દેશક મેં શબ્દ કે ઉપર ક્રિયે ગયે પ્રશ્નોં કા ઓર ઉત્તરોં કા નિર્ણય પ્રકટ ક્રિયા ગયા હૈ । પંચમ ઉદ્દેશક મેં છદ્મસ્ય કી વક્તવ્યતા પ્રતિપાદિત હુઈ હૈ । છઠ્ઠે ઉદ્દેશક મેં આયુ કી અલ્પતા ઓર દીર્ઘતા આદિ કાં કથન ક્રિયાં ગયા હૈ । સપ્તમે ઉદ્દેશક મેં પુદ્ગલોં કેં કંપન કા વિચાર ક્રિયાં ગયા હૈ । આઠવે ઉદ્દેશક મેં નિર્ગ્રન્થ નામ કેં અનગાર ને પદાર્થોં કા વિચાર ક્રિયા હૈ । નવમે ઉદ્દેશ મેં રાજગૃહ નગર કા વિચાર હુઆ હસ વાંતકો કહા ગયા હૈ । તથા દશવે ઉદ્દેશ મેં ચંપા નગરી મેં ચન્દ્રવિષયક વક્તવ્યતા પ્રતિપાદિત હુઈ હૈ । હસ પ્રકાર સે હસ ગાથા કા અર્થ હૈ ॥

અર્થપાનગરીમાં ઇન્દ્રભૂતિ જીતમે સૂર્યના વિષયમાં બે પ્રશ્નો કર્યો છે, તેનું મહાવીર પ્રભુએ પાંચમાં શતકના પહેલા ઉદ્દેશકમાં સમાધાન કર્યું છે. બીજા ઉદ્દેશકમાં વાયુ વિષયક પ્રશ્નનું સમાધાન કરાયું છે. ત્રીજા ઉદ્દેશકમાં જાલગ્રન્થિકાના ઉદાહરણથી વિવક્ષિત અર્થ વિષયક નિર્ણય પ્રકટ કર્યો છે. ચોથા ઉદ્દેશકમાં શબ્દ વિશે પૂછાયેલાં પ્રશ્નોના ઉત્તરોનું પ્રતિપાદન કરાયું છે. પાંચમાં ઉદ્દેશકમાં છદ્મસ્યની વક્તવ્યતાનું પ્રતિપાદન કરાયું છે, છઠ્ઠા ઉદ્દેશકમાં આયુની અલ્પતા દીર્ઘતા આદિનું કથન કરાયું છે. સાતમાં ઉદ્દેશકમાં પુદ્ગલોનાં કંપનનો વિચાર કરાયો છે, આઠમાં ઉદ્દેશકમાં નિર્ગ્રન્થ નામના અણુગારે પદાર્થોનો વિચાર કર્યો છે. નવમાં ઉદ્દેશકમાં રાજગૃહ નગર વિષે અને દસમાં ઉદ્દેશકમાં ચંપા નગરીમાં પૂછાયેલા ચન્દ્ર વિષયક પ્રશ્નોનું સમાધાન કર્યું છે. આ પ્રકારનો ગાથાનો વિસ્તૃત અર્થ થાય છે.

ટીકા—શાસ્ત્રકારઃ—સૂર્યસમ્બન્ધિવત્તત્ત્વતામાદ—‘તેણં કાલેણં’ ઇત્યાદિ । તસ્મિન્ કાલે ‘તેણં સમયેણં’ તસ્મિન્ સમયે ચલુ ‘ચંપા ણામં નયરી’ ચમ્પા નામ નગરી ‘હોત્યા’ આસીત્, ‘વણ્ણઓ’ વર્ણકઃ ચમ્પાર્ણનાપ્રતિપાદક ઔપપાતિકસૂત્રોક્તપદસમુદાયો વિજ્ઞેયઃ ‘તીસે ણં’ તસ્યાઃ ચલુ ‘ચંપા’ ચમ્પાયામ્ ‘નયરી’ નગર્યામ્ ‘પુણ્ણમહે ણામં’ પૂર્ણમદ્રં નામ ‘ચેહ્ણ’ ચૈત્યમ્ વ્યન્તરાયતનમ્ ‘હોત્યા’ આસીત્, ‘વણ્ણઓ’ વર્ણકઃ, તસ્ય વર્ણનં પૂર્વવદ્ બોધ્યમ્, તત્ર ‘સામી સમોસહ્ણે’ સ્વામી મહાવીરઃ સમવસ્રુતઃ ‘જાવ-પરિસા પહ્ણિગયા’ યાવત્-પર્યત્ પ્રતિગતા । યાવત્કરણાત્ પ્રભોઃ ધર્મોપદેશં શ્રોતું પર્યત્ દ્વીપ મેં સૂર્ય ઉત્તર ઔર પૂર્વ દિશા કે અન્તરાલ ઈશાન મેં ઉદય હોકર યાવત્ ઈશાન મેં ધસ્ત હોતે હેં ॥

ટીકાર્થ—શાસ્ત્રકાર ને હસ સૂત્ર ધારા સૂર્ય સંબંધી વત્તવ્યતા કા પ્રતિપાદન ક્રિયા હૈ । (તેણં કાલેણં તેણં સમયણં) ઉસ કાલ ઔર ઉસ સમય મેં (ચંપા ણામં નયરી) ચંપા નામકી નગરી (હોત્યા) થી । (વણ્ણઓ) હસકા વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્ર મેં ક્રિયા ગયા હૈ । (તીસે ણં) ઉસ (ચંપા નયરી) ચંપા નગરી મેં (પુણ્ણમહે ણામં ચેહ્ણ) પૂર્ણમદ્ર નામ કા ચૈત્ય વ્યન્તરાયતન (હોત્યા) થા । (વણ્ણઓ) હસ વ્યન્તરાયતન કા મી વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્ર મેં ક્રિયા ગયા હૈ । (સ્વામી સમોસહ્ણે) મહા-વીર પ્રભુ કા વહાં પર સમવસરણ હુઆ (જાવ પરિસા પહ્ણિગયા) યા-વત્ પરિપદાં અપને ૨ સ્થાન પર વાપિસ ચલી ગઈ । (યાવત્) શબ્દ સે યહાં (પ્રભોઃ ધર્મોપદેશં શ્રોતું) પ્રભુ કે ધર્મોપદેશ કો સુનને કે લિયે

ઉદય અને અસ્ત થતો રહે છે—જૂનૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં સૂર્ય ઈશાનમાં ઉદય પામીને (યાવત્) ઈશાનમાં અસ્ત પામે છે

ટીકાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા સૂર્યની વત્તવ્યતાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે (તેણં કાલેણં તેણં સમયણં) તે કાળે અને તે સમયે, “ચંપા ણામં નયરી હોત્યા” ચંપા નામે એક નગરી હતી. “વણ્ણઓ” તેનું વર્ણન ઔપ-પાતિક સૂત્રમાં કર્યો પ્રમાણે સમજવું. “તીસેણં ચંપા” તે ચંપા નગરીમાં “પુણ્ણમહે ણામં ચેહ્ણ હોત્યા” પૂર્ણમદ્ર નામે ચૈત્ય (વ્યન્તરાયતન) હતું (વણ્ણઓ) તે ચૈત્યનું વર્ણન પણ ઔપપાતિકસૂત્રમાં કર્યો મુજબ સમજવું. ૨ “સામીસમોસહ્ણે ત્યાં મહાવીરસ્વામીનું સમવસરણ થયું.” “જાવ પરિસા પહ્ણિગયા” પ્રભુને ધર્મોપદેશ સાંભળવાને માટે પરિપટ નીકળી. ધર્મોપદેશ સાંભળીને પરિપટ. (જન સમૂહ) વિખરાઈ ગયો. (જાવ) પદ્ધતિ ઉપરને

મહાવીરસ્ય જ્યેષ્ઠોઽન્તેવાસી ઇન્દ્રભૂતિર્નામ અનગારઃ, ગૌતમગોત્રો યાવત્-પૃથ્વ
અવાદીત્-જમ્બૂદ્વીપે સ્વલુ મદન્ત ! દ્વીપે સૂર્યો ઉદીચીન-પ્રાચીનમ્ ઉદગત્ય, પાચીન
દક્ષિણમ્ આગચ્છતઃ, પ્રાચીન-દક્ષિણમ્ ઉદગત્ય દક્ષિણ-મતીચીનમ્ આગચ્છતઃ,
દક્ષિણ પ્રતીચીનમ્ ઉદગત્ય પ્રતીચીન-ઉદીચીનમ્ આગચ્છતઃ, મતીચીન-ઉદી-
ચીનમ્ ઉદગત્ય સદીચી-પ્રાચીનમ્ આગચ્છતઃ ? હન્ત, ગૌતમ ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે
સૂર્યો ઉદીચી-પ્રાચીનમ્ ઉદગત્ય યાવત્-ઉદીચી-પ્રાચીનમ્ આગચ્છતઃ ॥૫૦॥

મહાવીર કે (જેઠ્ઠે અંતેવાસી ઇન્દ્રભૂતિનામ અનગારે ગૌતમગોત્રે જાવ પ-
થં વયાસી) જ્યેષ્ઠ અંતેવાસી-શિષ્ય ઇન્દ્રભૂતિ નામ કે અનગાર ને જો
ગૌતમ ગોત્ર કે થે, યાવત્ હસ પ્રકાર સે પૃથ્વા-(જંબુદ્વીપે જાં મંતે ! દીવે
સૂરિયા ઉદીણ-પાર્શ્વમુગ્ગચ્છ પાર્શ્વ-દાહિણ-માગચ્છંતિ, પાર્શ્વ-દાહિણ
મુગ્ગચ્છ દાહિણ-પટ્ટીણમાગચ્છંતિ) હે મદન્ત ! જંબુદ્વીપ નામ કે દ્વીપ
મેં દો સૂર્ય હેં । વે ઈશાન દિક્ષોણ મેં ઉદય હોકર આગ્નેયદિક્ષોણ મેં અસ્ત
હોતે હેં-અથવા અગ્નિદિક્ષોણ મેં ઉદયહોકર નૈઋત્યદિશા મેં અસ્ત હોતે
હે ? (દાહિણ-પટ્ટીણમુગ્ગચ્છ પટ્ટીણ ઉદ્દાણમાગચ્છંતિ) યા નૈઋત્યકોણ
મેં ઉદય હોકર, વાયવ્ય કોણે મેં અસ્ત હોતે હેં ? (પટ્ટીણ ઉદીણ મુગ્ગચ્છ
ઉદીચિ પાર્શ્વમાગચ્છંતિ) અથવા વાયવ્યકોણ મેં ઉદય હોકર ઈશાન
કોણ મેં અસ્ત હોતે હેં ? (હંતા ગોયમા ! જંબુદ્વીપે જાં દીવે સૂરિયા ઉદીચી
પાર્શ્વ મુગ્ગચ્છ જાવ ઉદીચપાર્શ્વમાગચ્છંતિ) હાં ગૌતમ ! હસી તરહ સે
સૂર્યો, કા ઉદય હોના ઓર અસ્ત હોના હોતા રહતા હે જંબુદ્વીપ નામકે

(જેઠ્ઠે અંતેવાસી ઇન્દ્રભૂતિ નામ અનગારે ગૌતમગોત્રે જાવ યં વયાસી) જ્યેષ્ઠ અંતેવાસી
(શિષ્ય) ઇન્દ્રભૂતિ નામના અણગાર હતા. તેઓ ગૌતમ ગોત્રના હતા, 'યાવત્'
તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પૂછ્યું-(જંબુદ્વીપે જાં મંતે ! દીવે સૂરિયા ઉદીણ
પાર્શ્વમુગ્ગચ્છ પાર્શ્વ-દાહિણમાગચ્છંતિ, દાહિણ-પાર્શ્વમુગ્ગચ્છ દાહિણ-પટ્ટીણમાગ
ચ્છંતિ) હેમદન્ત ! જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપમાં બે સૂર્ય છે. તેઓ ઇશાનકોણમાં
ઉદય પામીને અગ્નીકોણમાં અસ્ત પામે છે ? અથવા અગ્નિકોણમાં ઉદય પામી
નૈઋત્ય કોણમાં અસ્ત પામે છે ? (દાહિણ-પટ્ટીણમુગ્ગચ્છ પટ્ટીણ-ઉદ્દાણમાગચ્છંતિ)
અથવા નૈઋત્ય કોણમાં ઉદય પામીને વાયવ્યકોણમાં અસ્ત પામે છે ? (પટ્ટીણ
-ઉદીણમુગ્ગચ્છ ઉદીચિ પાર્શ્વમાગચ્છંતિ) અથવા વાયવ્યકોણમાં ઉદય પામીને
ઇશાન કોણમાં અસ્ત પામે છે, (હંતા ગોયમા ! જંબુદ્વીપે જાં દીવેસૂરિયા ઉદીચી
પાર્શ્વમુગ્ગચ્છ જાવ ઉદીચપાર્શ્વમાગચ્છંતિ) હા, ગૌતમ ! બે જ પ્રમાણે સૂર્યોને

ટીકા—શાસ્ત્રકારઃ—સૂચ્યસમ્બન્ધિવક્તવ્યતામાહ—‘તેણં કાલેણં’ હયાદિ । તસ્મિન્ કાલે ‘તેણં સમયેણં’ તસ્મિન્ સમયે સ્વલુ ‘ચંપા નામં નયરી’ ચમ્પા નામ નગરી ‘હોત્યા’ આસીત્, ‘વણ્ણઓ’ વર્ણકઃ ચમ્પાવર્ણનાપ્રતિપાદક ઔપપાતિકસૂત્રોક્તપદસમુદાયો વિદ્યેયઃ ‘તીસે ણં’ તસ્યાઃ સ્વલુ ‘ચંપાણ’ ચમ્પાયામ્ ‘નયરીણ’ નગર્યામ્ ‘પુણ્ણભદ્દે નામં’ પૂર્ણભદ્રં નામ ‘ચેહણ’ ચૈત્યમ્ વ્યન્તરાયતનમ્ ‘હોત્યા’ આસીત્, ‘વણ્ણઓ’ વર્ણકઃ, તસ્ય વર્ણનં પૂર્વવદ્ વોધ્યમ્, તત્ર ‘સામી સમોસહ્દે’ સ્વામી મહાવીરઃ સમવસૃતઃ ‘જાવ-પરિસા પહિગયા’ યાવત્-પર્યત્ પ્રતિગતા । યાવત્કરણાત્ પ્રભોઃ ધર્મોપદેશં શ્રોતું પર્યત્

દ્વીપ મેં સૂર્ય ઉત્તાર ઔર પૂર્વ દિશા કે અન્તરાલ ઈશાન મેં ઉદય હોકર યાવત્ ઈશાન મેં અસ્ત હોતે હેં ॥

ટીકાર્થ—શાસ્ત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા સૂચ્ય સંબંધી વક્તવ્યતા કા પ્રતિપાદન કિયા હૈ । (તેણં કાલેણં તેણં સમયણં) ઉસ કાલ ઔર ઉસ સમય મેં (ચંપા નામં નયરી) ચંપા નામકી નગરી (હોત્યા) થી । (વણ્ણઓ) હસકા વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્ર મેં કિયા ગયા હૈ । (તીસે ણં) ઉસ (ચંપાણ નયરીણ) ચંપા નગરી મેં (પુણ્ણભદ્દે નામં ચેહણ) પૂર્ણભદ્ર નામ કા ચૈત્ય વ્યન્તરાયતન (હોત્યા) થા । (વણ્ણઓ) હસ વ્યન્તરાયતન કા મી વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્ર મેં કિયા ગયા હૈ । (સ્વામી સમોસહ્દે) મહા-વીર પ્રભુ કા વહાં પર સમવસરણ હુઆ (જાવ પરિસા પહિગયા) યા-વત્ પરિપદાં અપને ૨ સ્થાન પર વાપિસ ચલી ગઈ । (યાવત્) શબ્દ સે યહાં (પ્રભોઃ ધર્મોપદેશં શ્રોતું) પ્રભુ કે ધર્મોપદેશ કો સુનને કે લિયે

ઉદય અને અસ્ત થતો રહે છે—જ્યુદ્ધદ્વીપ નામના દ્વીપમાં સૂચ્ય ઈશાનમાં ઉદય પામીને (યાવત્) ઈશાનમાં અસ્ત પામે છે

ટીકાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા સૂચ્યની વક્તવ્યતાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે (તેણં કાલેણં તેણં સમયણં) તે કાળે અને તે સમયે, “ચંપા નામં નયરી હોત્યા” ચંપા નામે એક નગરી હતી. “વણ્ણઓ” તેનું વર્ણન ઔપ-પાતિક સૂત્રમાં કર્યા પ્રમાણે સમજવું. “તીસેણં ચંપાણ” તે ચંપા નગરીમાં “પુણ્ણભદ્દે નામં ચેહણ હોત્યા” પૂર્ણભદ્ર નામે ચૈત્ય (વ્યન્તરાયતન) હતું (વણ્ણઓ) તે ચૈત્યનું વર્ણન પણ ઔપપાતિકસૂત્રમાં કર્યા મુજબ સમજવું. ૨ “સામીસમોસહ્દે ત્યાં મહાવીરસ્વામીનું” સમવસરણ થયું.” “જાવ પરિસા પહિગયા” પ્રભુને ધર્મોપદેશ સાંભળવાને માટે પરિવ્રજ નીકળી. ધર્મોપદેશ સાંભળીને પરિવ્રજ. (જન સમૂહ) વિખરાઈ ગઈ. (જાવ) પહોંચી ઉપરનો

નિર્ગच्छति ' इति संप्राप्तम् । ततः ' तेषं कालेण ' तस्मिन् काले ' तेषं समपणं ' तस्मिन् समये खलु ' समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी ' श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य ज्येष्ठः सर्वप्रथमोऽन्तेवासी शिष्यः ' इंदुभूई ' इन्द्रभूतिः ' णामं ' नाम ' अणगारे ' अनगारः ' गोयमगोत्तेणं ' गौतमगोत्रः खलु ' जाव एवं वयासी-' यावत्-एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्, यत्तस्य विषयमाह- ' जम्बूद्वीपेणं भंते ! ' हे भदन्त ! जम्बूद्वीपे खलु ' दीवे ' द्वीपे ' सुरिया ' सूर्यो, जम्बूद्वीपे द्वयोरेव सूर्ययोः सदभावेन सूर्यो इत्युक्तम्, ' उदीण-पाईणमुगच्छ ' उदीचीन-प्राचीनम् उदगत्य, उदगेन उदीचीनम्, उत्तरदिक् प्रागेव प्राचीनम् पूर्वदिक् उदग्रपत्त्यासन्नं दिगन्तरालं क्षेत्रदिगपेशया पूर्वोत्तरदिगन्तरम् ईशान-कोणम् उदगत्य तत्रोदयं प्राप्य ' पाईण-दाहिणभागच्छति ' प्राचीन-दक्षिणं दिग-

(पर्यत् निर्गच्छति) जनसमूहानिकला इस पाठ का संग्रह हुआ है । (तेषं कालेण तेषं समपणं) उस काल और उस समय में (समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी) श्रमण भगवान् महावीर के ज्येष्ठ सर्व प्रथम शिष्य (इंदुभूई) इन्द्रभूति (णामं) नामके (अणगारे) अनगारने (गोयमगोत्ते णं) जो कि गौतम गोत्रीय थे (जाव एवं वयासी) यावत् इस प्रकार से प्रछा- (जंबूद्वीपे णं भंते ! दीवे) हे भदन्त ! जंबूद्वीप नामके द्वीप में (सुरिया) दो सूर्य (जंबूद्वीप में दो सूर्य और दो चंद्रमा हैं ऐसा सिद्धान्त का कथन है इसीलिये यहां पर (सुरिया) ऐसा पाठ कहा गया है) (उदीण पाईण उवगच्छ) उदीचीन उत्तरदिशा और प्राचीन पूर्वदिशा इन दोनों के अन्तरालरूप क्षेत्र में ईशानकोण में उदय को प्राप्त होकर (पाईणदाहिणभागच्छति) प्राचीन पूर्वदिशा और द-

ભાવાર્થ શ્રદ્ધા કરાયો છે " તેણં કાલેણં તેણં સમપણં " તે દાખે અને તે સમયે " સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ જેટ્ઠે અંતેવાસી " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના જ્યેષ્ઠ અંતેવાસી પટ્ટશિષ્ય-" ઇંદુભૂઈ ણામં અણગારે " ઇન્દ્રભૂતિનામના શિષ્યગાર હતા. " ગોયમગોત્તેણં " તેઓ ગૌતમ ગોત્રના હતા. " જાવ એવં વયાસી " તેમણે વંદણા નમસ્કાર કરીને મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પૂછ્યું " જંબુદ્વીપે ણં ભંતે ! દીવે " હે ભદન્ત ! જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપમાં ' સુરિયા " એ સૂર્યો (જંબુદ્વીપમાં એ સૂર્યો અને એ ચન્દ્રમા છે, અર્થ સિદ્ધાન્તનું કથન છે, તેથી અહીં " સુરિયા " પ્રદત્તો પ્રયોગ કર્યો છે " ઉદીણ-પાઈણઉવગચ્છ " ઇશાન કોણમાં ઉદય પ્રાપ્તિને (' ઉદીચીન ' એટલે ઉત્તર દિશા ' પ્રાચીન ' એટલે પૂર્વદિશા, તે બન્નેની વચ્ચેના ઇશાન કોણમાં.) " પાઈણ-

નતરાલમ્-અગ્નિકોણમ્ આગચ્છતઃ, ક્રમેણૈવાસ્તંગચ્છતઃ ? ' પાર્ષ્ણ દાહિણમુગ્ગચ્છ ' પ્રાચીન-દક્ષિણમ્ અગ્નિકોણમ્ ઉદ્ગત્ય ત્રા ' દાહિણપટ્ટીણમાગચ્છંતિ ' દક્ષિણ-પ્રતીચીનમ્ દિગન્તરમ્ નૈઋત્યકોણમ્ આગચ્છતઃ ? અથવા ' દાહિણપટ્ટીણમુગ્ગચ્છ ' દક્ષિણ-પ્રતીચીનમ્ નૈઋત્યકોણમ્ ઉદ્ગત્ય ' પટ્ટીણમુદીણમાગચ્છંતિ ' પ્રતીચીન-ઉદીચીનં દિગન્તરં વાયવ્યકોણમ્ આગચ્છતઃ, ક્રમેણૈવાસ્તં પ્રાપ્નુતઃ ? અથવા ' પટ્ટીણ-ઉદીણમુગ્ગચ્છ ' પ્રતીચીન-ઉદીચીનં દિગન્તરમ્ વાયવ્યકોણમિતિ યાત્રત્ ઉદ્ગત્ય ' ઉદીચિ-પાર્ષ્ણ માગચ્છંતિ ' ઉદીચીનપ્રાચીનમ્ દિગન્તરાલમ્, ઈશાનકોણમ્ આગચ્છતઃ ? અસ્તં પ્રાપ્નુતઃ કિમ્ ! મગવાન્ તત્સ્વીકુર્વન્ આદ- ' હંતા ગોયમા ! ' इत्यादि । हे गौतम । हन्त, सत्यं त्वत्कथनम् , यत् ' जम्बूद्वीपेणं दीवे ' जम्बूद्वीपे

ક્ષિણદિશાં કે અન્તરાલરૂપ ક્ષેત્ર મેં અગ્નિકોણ મેં ક્રમ સે અસ્ત હોતે હેં કયાં અંધવાં (પાર્ષ્ણ દાહિણમુગ્ગચ્છ) પ્રાચીન, દક્ષિણ કે અન્તરાલરૂપ ક્ષેત્ર અગ્નિકોણ મેં ઉદિત હોકર (દાહિણપટ્ટીણમાગચ્છંતિ) દક્ષિણદિશા ઓર પ્રતીચીનદિશા (પશ્ચિમ) કે અન્તરાલરૂપ ક્ષેત્ર નૈઋત્યકોણ મેં અસ્ત હોતે હેં કયાં ? અથવા (દાહિણપટ્ટીણમુગ્ગચ્છ) નૈઋત્યકોણ મેં ઉદિત હોકર (પટ્ટીણમુદીણમાગચ્છંતિ) વાયવ્યકોણ મેં ક્રમ સે અસ્ત હોતે હેં કયા ? અંધવાં (પટ્ટીણ, ઉદીણમુગ્ગચ્છ) પ્રતીચીન ઉદીચીન દિશાકે અન્તરાલરૂપ ક્ષેત્ર વાયવ્યકોણ મેં ઉદિત હોકર (ઉદીચિ પાર્ષ્ણમાગચ્છંતિ) ઉદીચીન પ્રાચીન દિશાઓં કે અન્તરાલરૂપ ક્ષેત્ર ઈશાન કોણ મેં ક્રમ સે અસ્ત હોતે હેં કયા ? इन प्रश्नों का स्वीकारात्मक उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि ' हंता गौयमा । ' हा, गौतम । जैसा तुमने प्रश्न किया है वह वैसा ही है अर्थात् सत्य है- जम्बूद्वीप में दो

દાહિણમાગચ્છંતિ " અગ્નિકોણમાં (પૂર્વ અને દક્ષિણ વચ્ચેના ખૂણામાં) શુ. અસ્ત પામે છે ? અથવા " પાર્ષ્ણ-દાહિણમુગ્ગચ્છ " શુ અગ્નિકોણમાં ઉદય પા-મીને " દાહિણ પટ્ટીણમાગચ્છંતિ " નૈઋત્ય કોણમાં (દક્ષિણ અને પશ્ચિમ વ-ચ્ચેના ખૂણામાં) અસ્ત પામે છે ? અથવા " દાહિણપટ્ટીણમુગ્ગચ્છ " નૈઋત્ય કોણમાં ઉદય પામીને " પટ્ટીણમુદીણમાગચ્છંતિ " શુ વાયવ્ય કોણમાં અસ્ત પામે છે ? અથવા " પટ્ટીણ, ઉદીણમુગ્ગચ્છ " શુ વાયવ્ય કોણમાં ઉદય પામીને " ઉદીચિ પાર્ષ્ણમાગચ્છંતિ " ઈશાનકોણમાં અસ્ત પામે છે ?

આ પ્રશ્નોના હકારમાં જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે- " હંતા, ગોયમા ! " હા, ગૌતમ ! એવું જ બને છે-જંબૂદ્વીપમાં બે સૂર્યો છે. તેઓ ઈશાનકોણમાં (પૂર્વ અને ઉત્તર દિશા વચ્ચેના ખૂણામાં) ઉદય પામીને

ચલુ દ્વીપે 'સુરિયા' સૂર્યો 'ઉદીચી-પાર્ણ મગચ્છતિ' ઉદીચીન-પ્રાચીનં દિગ્-
 ન્તરમ્ ईशानकोणम् उद्गत्य उदयं प्राप्य 'जाव-उदीच-पार्ण मगच्छन्ति'
 यावत्-उदीचीन-प्राचीनम् आगच्छतः क्रमेणास्तं यावः विम्, यावत्करणाम्-
 'प्राचीन-दक्षिणम्' अग्निकोणम् 'आगच्छतः प्राचीन-दक्षिणम् उद्गत्य (उदयं
 प्राप्य) दक्षिण-प्रतीचीनम् (नैऋत्यकोणम्) आगच्छतः दक्षिण-प्रतीचीनम्
 उद्गत्य (उदयं प्राप्य) प्रतीचीन-उदीचीनम् (वायव्यकोणम् आगच्छतः, प्रती-
 चीन-उदीचीनमुद्गत्य ' उदयं प्राप्य ' इति संप्राप्तम् ।

અત્રોદ્ગમનમસ્તગમનચ સૂર્યસ્ય દ્રષ્ટનનાપેક્ષયા યોગ્યમ્ તથાચ યેષાં
 દ્રષ્ટૃણામ્ ઉપર્યુક્તૌ સૂર્યો અદૃશ્યો મૃત્યા દૃશ્યો મયતઃ, તે દ્રષ્ટારઃ તૌ ઉદ્ગતૌ
 સૂર્ય હૈં । વે ઉદીચીનપ્રાચીન દિશા કે અન્તરાલરૂપ ईशान कोण में उदय
 को प्राप्त होकर 'जाव' यावत् 'उदीणपार्ण मगच्छन्ति' उदीचीन
 प्राचीन दिशा के अन्तराल रूप क्षेत्र ईशानकोण में क्रम से अस्त होते हैं
 यहां (यावत्) शब्द से (प्राचीनदक्षिणमगच्छतः, प्राचीन दक्षिण
 मुद्गत्य दक्षिणप्रतीचीनमगच्छतः दक्षिणप्रतीचीनमुद्गत्य प्रतीचीनं
 मुदीचीनं आगच्छतः, प्रतीचीनउदीचीनमुद्गत्य (इस पूर्वोक्त पाठ का
 ही संग्रह किया है । उत्तर दिशा के पास का जो प्रदेश है वह उदीचीन,
 पूर्वदिशा के पास का जो प्रदेश है वह प्राचीन, उत्तर औ पूर्वदिशा के
 बीच का जो भाग है वह ईशानकोण, पूर्व और दक्षिणदिशा के बीचका
 जो भाग है वह अग्नेयकोण, दक्षिण और पश्चिम के बीच का जो भाग
 है वह नैऋत्यकोण है तथा पश्चिम और उत्तरदिशा का जो बीच का
 भाग है वह वायव्यकोण है । अमुक समय में सूर्य उदित होता है और
 अमुक समय में वह अस्त होता है ऐसा जो सूर्य के उदय और अस्त

“जाव” यावत् “उदीणपार्णमगच्छन्ति” ક્રમશઃ ईशानकोण पर्यन्तना क्षेत्र-
 માં અસ્ત પામે છે. અહીં ‘જાવ’ (યાવત્ પદથી નીચેના પૂર્વોક્ત પાઠને
 સમાવેશ કરાયો છે. “પ્રાચીન દક્ષિણમગચ્છતઃ, પ્રાચીનદક્ષિણમુદ્ગત્ય દક્ષિણ પ્રતીચી-
 નમગચ્છતઃ, દક્ષિણ પ્રતીચીનમુદ્ગત્ય પ્રતીચીનમુદીચીનં આગચ્છતઃ, પ્રતીચીન ઉદીચી-
 નમુદ્ગત્ય” ઉત્તરદિશાની પાસેના એ પ્રદેશ છે તેને (ઉદીચીન.) અને પૂર્વદિશાની
 પાસેના પ્રદેશને (પ્રાચીન) કહેવામાં આવેલ છે. ઉત્તર અને પૂર્વદિશા વચ્ચે
 ઇશાનકોણ છે, પૂર્વ અને દક્ષિણ દિશા વચ્ચે અગ્નિકોણ છે, દક્ષિણ અને
 પશ્ચિમ વચ્ચે નૈઋત્ય કોણ છે અને પશ્ચિમ અને ઉત્તર દિશા વચ્ચે વાયવ્ય કોણ છે.

(અમુક સમયે સૂર્ય ઉગે છે અને અમુક સમયે સૂર્ય આથમે છે, આ
 પ્રમાણે સૂર્યના ઉદય અને અસ્ત વિષેનું એ કથન છે, તે કથન સૂર્યને દેખ-

इति व्यवहरन्ति, येषां तु दृश्यो भूत्वा अदृश्यो भवतस्ते तौ अस्तं गतौ इति व्यव-
हरन्ति इति तयोर्द्वयास्तमययोः द्रष्टृजनसापेक्षतयाऽनियतत्वमवसेयम् ।

उक्तञ्च—“ जह जह समये समये पुरओ संचरइ भवत्सरो गयणे,
तह तह इओ वि नियमा जासइ रयणीय भावत्यो,
एवं च सया नराणं उदयत्थमणाइं होंतिऽनिययाइं,
सयदेस मेण कस्तइ किंची ववदिस्सइ नियमा,

होने का व्यवहार होता है वह सूर्य को देखने वाले मनुष्यों की अपेक्षा होता है ऐसा जानना चाहिये । कारण की समग्र-भूमण्डल पर सूर्य के उदय होने का और अस्त होने का समय नियत नहीं है । अच्छी तरह से विचार किया जाय तो दोनों ही सूर्य लोगों के समक्ष सदा उपस्थित ही रहते हैं, परन्तु जब कोई सूर्य-आचारक द्रव्य सूर्यों की आड़में आजा ता है तब अनुक देशके मनुष्य उन्हें देख नहीं पाते अतः उनकी दृष्टि के अनुसार सूर्य अस्त हो गया ऐसा व्यवहार होता है । और जब वह आचारकद्रव्य उनके आड़े नहीं आता है तब अनुक देश के मनुष्य सूर्य को देखते हैं तो वे कहते हैं कि सूर्य उदित हो गया । इस तरह “ उपर्युक्त सूर्य अदृश्य होकर जब दर्शक जनों उसको देखते हैं तो उनमें उदय हो गये ऐसा व्यवहार होता है और जब दृश्य होकर वे दर्शक जनों की दृष्टि से ओझल हो जाते हैं तब अस्त हो गये ऐसा उनमें व्यवहार होता है) सूर्यों के उदय अस्त का यह व्यवहार उनके दर्शक जनों की अपेक्षा वाला होने के कारण अनियत जानना चाहिये ।

નારા મનુષ્યોની અપેક્ષાએ કરવામાં આવેલ છે, એમ સમજવું. કારણ કે સમ-
સ્ત ભૂમંડળ ઉપર સૂર્યોદય અને સૂર્યાસ્ત થવાનો કોઈ નિયત સમય નથી. જો
બરાબર વિચાર કરવામાં આવે તો બન્ને સૂર્યો લોકોની સમક્ષ સદા ઉપસ્થિત
(મોજૂદ) જ રહે છે. પરન્તુ બ્યારે કોઈ આવારક (આચ્છાદિત કરનાર)
દ્રવ્ય સૂર્યોની આડે આવી જાય છે, ત્યારે અમુક દેશના લોકો તેમને દેખી
શકતા નથી. તેથી તેઓની દૃષ્ટિએ (સૂર્ય અસ્ત પામી ગયો,) એવો વ્યવહાર
થાય છે. પણ બ્યારે તે આવારક દ્રવ્ય ત્યાંથી દૂર થઈ જાય છે ત્યારે તે લોકો
તેને દેખી શકે છે, અને કહે છે કે (સૂર્યનો ઉદય થઈ ગયો.) આ રીતે
(ઉપર્યુક્ત સૂર્ય અદૃશ્ય થઈને ફરીથી બ્યારે દર્શકોની નજરે પડે છે ત્યારે
તેઓ કહે છે કે (સૂર્યનો ઉદય થયો) અને પહેલાં દૃશ્ય હોય એવો સૂર્ય બ્યારે
દર્શકોથી અદૃશ્ય બને ત્યારે દર્શકો કહે છે કે (સૂર્ય અસ્ત પામ્યો.) સૂર્યના
ઉદય-અસ્તનો આ વ્યવહાર તેના દર્શકોની અપેક્ષાએ જ કરાયો છે એમ સમ-
જવું. અને તેથી જ તેને અનિયત સમજવો.

સહ પેવ ય નિર્દિદ્ધો મરમુદ્ધો ગમેવ મઙ્ગેતિ જેમિ,

વીદાર્ણિ પિય વિસયપમાણે રથી જેમિ " રૂપાદિ ।

છાયા—“ યથા યથા સમયે સમયે પુરતઃ સમરણિ મામ્કરો ગમને,

તથા તથા ર્થોઽપિ નિયમાદ્ ગાયને રજની મ મારાર્થઃ,

અથ સદા નરાણામુદયા—સ્તમ (ય) નાનિ મયન્તિ અનિયતાનિ,

સ્વકદેશમેદ કસ્પચિત્ કિશ્ચિદ્ ધ્વપદિદ્રવતે નિયમાદ્,

સઠુદેવ ચ નિર્દિષ્ટઃ મરમુદ્ધનઃ ક્રમેણ સર્વેર્ગાં કેવા—

ચિદિદાનીમપિ ચ વિયયમમાણે રચિર્યેવામ્ ' રિતિ ।

આવતા સૂત્રેણ રચેયતસ્યપિ દિધુ ગમને પ્રતિપાદિતં, તેન યતુ ' સૂર્યઃ પશ્ચિમસમુદ્રં પ્રવિશ્ય પાતાલેન ગમને કૃત્વા સમુદ્રે ડેતિ' રિત્યુક્તં તત્ત્વપરાસ્તમ્ ॥૧॥

કહા મી હૈ—સમય ૨ પર જેસે ૨ સૂર્ય આગે ૨ આકાશ મેં ગતિ કરતા હુઆ ચલતા હૈ, ઉસી તરફ સે રસ તરફ મી રાત્રિ હોતી જલી આતી હૈ યહ વાત સત્ય હૈ । અતઃજય રસ પ્રકાર સે હૈ કિ સૂર્ય કી ગતિ ઉપર હી ઉસકે ઉદિત હોને કા ઓર અસ્ત હોને કા વ્યવહાર નિર્ભર હૈ, તો ફિર મનુષ્યોં કે હિસાબ સે ઉનકા ઉદિત ઓર અસ્ત હોના યે દોનોં વાંતેં અનિયમિત હૈ । રિત્યાદિ । સૂર્ય ચારોં દિશાઓં મેં ગમન કરતાં હૈ આકાશ મેં સૂર્ય સમસ્ત દિશાઓં મેં ફિરતા હૈ—યહ વાત રસ મૂલ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કી ગઈ હૈ, તો જો લોગ એસા માનતેહૈં કિ (સૂર્ય પશ્ચિમ કે સમુદ્ર મેં પ્રવિષ્ટ હોકર પાતાલ સે ગમન કરતા હુઆ પૂર્વસમુદ્ર મેં ઉદિત હોતા હૈ) ઉનકા યહ કથન યોગ્ય નહોં હૈ ક્યોં કિ સૂર્ય કી ગતિ ચારોં દિશાઓં મેં હોતી હૈ યહ વાત પૂર્વોક્ત સૂત્ર સે પ્રકટ કી ગઈ હૈ ॥સૂ૦૧॥

કહું પણ છે—સમય સમય પર જેમ જેમ સૂર્ય આકાશમાં આગળને આગળ ગમન કરે છે, તેમ તેમ તે તરફ પણ રાત્રિ થતી જાય છે, એ વાત સત્ય છે આરીતે જો સૂર્યની ગતિ ઉપર જ તેના ઉદય અને અસ્ત થવાનો વ્યવહાર નિર્ભર હોય, તો મનુષ્યોની દૃષ્ટિએ તેમનો ઉદય અને અસ્ત થવાની વાતો અનિયમિત જ છે.

(સૂર્ય ચારે દિશામાં ગમન કરે છે—આકાશમાં સૂર્ય સમસ્ત દિશાઓમાં ફરે છે,) આ વાત મૂળસૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરી છે.

આ કથન દ્વારા લોકોની નીચેની માન્યતાઓનું ખંડન કરવામાં આવ્યું છે— (સૂર્ય પશ્ચિમ સમુદ્રમાં પ્રવેશીને પાતાલમાં ગમન કરીને પૂર્વ સમુદ્રમાં ઉદય પામે છે) આ માન્યતાનું જો સૂત્રદ્વારા ખંડન કરાયું છે, કારણ કે સૂર્યની ગતિ ચારે દિશામાં થાય છે, એવું પૂર્વોક્ત સૂત્રદ્વારા પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. ॥સૂ૧॥

मूलम्—“ जया णं भंते ! ॐ दीवे दीवे दाहिणद्धे दिवसे
हवइ, तयाणं उत्तरद्धेऽवि दिवसे भवइ, जयाणं उत्तरद्धेऽवि
दिवसे भवइ, तयाणं जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुर-
त्थिमपच्चत्थिमेणं राई भवई ? हंता, गोयमा ! जयाणं
जंबुदीवे दीवे दाहिणद्धे वि दिवसे जाव—राई भवइ जया णं
भंते ! जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमे णं दिवसे
भवइ, तयाणं पच्चत्थिमेण वि दिवसे भवइ, जयाणं पव्व-
त्थिमेणं दिवसे भवइ, तयाणं जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पव्व-
यस्स उत्तरदाहिणेणं राई भवइ ? हंता, गोयमा ! जयाणं
जंबुदीवे दीवे मंदरपुरत्थिमेणं दिवसे जाव — राई भवइ
जयाणं भंते ! जंबुदीवे दीवे दाहिणद्धे उक्कोसए अट्टारस-
मुहुत्ते दिवसे भवइ, तयाणं उत्तरद्धे वि उक्कोसए अट्टारस-
मुहुत्ते दिवसे भवइ, जयाणं उत्तरद्धे उक्कोसए अट्टारस मुहुत्ते
दिवसे भवइ, तयाणं जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पुरत्थिम—
पच्चत्थिमेणं जहन्निया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ ? हंता,
गोयमा ! जयाणं जंबुदीवे दीवे जाव—दुवालसमुहुत्ता राई
भवइ, जयाणं जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पुरत्थिमे उक्कोसए
अट्टारस मुहुत्ते दिवसे भवइ, तयाणं जंबुदीवे दीवे पच्चत्थि-
मेण वि उक्कोसेणं अट्टारसमुहुत्ते दिवसे भवइ, जयाणं
पच्चत्थिमेणं उक्कोसिए अट्टारस मुहुत्ते दिवसे भवइ, तया
णं भंते ! जंबुदीवे दीवे उत्तरे दुवालसमुहुत्ता जाव—राई

भवइ ? हंता, गोयमा ! जाव-भवइ, जयाणं भंते ! जंबु-
 द्वीवे दीवे दाहिणद्वे अट्टारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ,
 तयाणं उत्तरे अट्टारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवइ, जयाणं
 उत्तरद्वे अट्टारसमुहुत्ता णंतरे दिवसे भवइ, तयाणं जंबुद्वीवे
 दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं पच्चत्थिमेणं साइरेगा
 दुवालसमुहुत्ता राई भवइ ? हंता, गोयमा ! जया णं जंबु-
 द्वीवे दीवे जाव राई भवइ, जयाणं भंते ! जंबुद्वीवे दीवे
 मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं अट्टारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे
 भवइ, तयाणं पच्चत्थिमेणं अट्टारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे
 भवइ, जयाणं पच्चत्थिमेणं अट्टारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे
 भवइ, तयाणं जंबुद्वीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणे
 साइरेगदुवालसमुहुत्ता राई भवइ ? हंता, गोयमा ! जाव-
 भवइ, एवं एएणं कमेण ओसारेयव्वं, सत्तरसमुहुत्ते दिवसे
 तेरसमुहुत्ता राई भवइ, सत्तरसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगा
 तेरसमुहुत्ता राई, सोलसमुहुत्ते दिवसे चोदसमुहुत्ता राई,
 सोलसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगच्चउदंसमुहुत्ता राई,
 पण्णारसमुहुत्ते दिवसे पन्नरसमुहुत्ता राई, चोदसमुहुत्ते दिवसे
 सोलसमुहुत्ता राई, चोदसमुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगा सो-
 लसमुहुत्ता राई, तेरसमुहुत्ते दिवसे सत्तरसमुहुत्ता राई, तेर-
 समुहुत्ताणंतरे दिवसे साइरेगा सत्तरसमुहुत्ता राई, जयाणं
 जंबुद्वीवे दीवे दाहिणद्वे जहन्नए दुवालसमुहुत्ते दिवसे

ભવઈ, તયાણં ઉત્તરઢે વિ, જયાણં ઉત્તરઢે તયાણં જંબુદ્વીવે
 દીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ પુરત્થિમ—પચ્ચત્થિમેણં ઉક્કોસિયા
 અટ્ટારસમુહુત્તા રાઈ ભવઈ? હંતા, ગોયમા! એવં ચેવ ઉચ્ચારે-
 યવ્વં, જાવ-રાઈ ભવઈ, જયાણં મંતે ? જંબુદ્વીવે દીવે મંદર
 સ્સ પવ્વયસ્સ પુરત્થિમેણં જહન્નણ દુવાલસમુહુત્તે દિવસે
 ભવઈ, તયાણં પચ્ચત્થિમેણં વિ, જયાણં પચ્ચત્થિમેણં વિ, તયા
 ણં જંબુદ્વીવે દીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ ઉત્તરદાહિણેણં ઉક્કો-
 સિયા અટ્ટારસમુહુત્તા રાઈ ભવઈ ? હંતા. ગોયમા ?
 જાવ રાઈ ભવઈ ॥ સૂ. ૨ ॥

છાયા—યદા खलु भदन्त ! जम्बूद्वीपे द्वीपे दक्षिणार्धे दिवसो भवति तदा खलु उत्तरार्धेऽपि दिवसो भवति, यदा खलु उत्तरार्धेऽपि दिवसो भवति, तदा जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्त्य—पश्चिमे खलु रात्रिर्भवति ? इन्त, गौतम ! यदा जम्बू-

(જયાણં મંતે !) इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(જયા ણં મંતે ! જંબુદ્વીવે દીવે દાહિણઢે દિવસે હવઈ) હે
 ભદન્ત ! જય જંબુદ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં દિન હોતા હૈ (તયાણં ઉત્તરઢે
 વિ દિવસે ભવઈ) તય ઉત્તરાર્ધ મેં બી દિવસ હોતા હૈ । ઓર (જયાણં
 ઉત્તરઢેઽવિ દિવસે ભવઈ, તયા ણં જંબુદ્વીવે દીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ પુર-
 ત્થિમપચ્ચત્થિમે ણં રાઈ હવઈ) જય ઉત્તરાર્ધ મેં બી દિવસ હોતા હૈ તય

“ જયાણં મંતે ! ” इत्यादि

સૂત્રાર્થ—(જયાણં મંતે ! જંબુદ્વીવે દીવે દાહિણઢે દિવસે હવઈ) હે ભદન્ત ! જ્યારે જંબુદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં દિવસ હોય છે, (તયા ણં ઉત્તરઢે વિ દિવસે ભવઈ) ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ શું દિવસ હોય છે ? અને (જયાણં ઉત્તરઢેઽવિ દિવસે ભવઈ, તયાણં જંબુદ્વીવે દીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ પુરત્થિમપચ્ચત્થિમેણં રાઈ હવઈ) ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ દિવસ હોય છે, ત્યારે જંબુદ્વીપમાં સુમેરુ

દ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધેઽપિ દિવસઃ, યાવત્-રાત્રિર્ભવતિ, યદા સ્વલ્પ મદન્તા । જમ્બુદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરતસ્ત્યે દિવસો ભવતિ તદા પશ્ચિમોર્ગેપિ દિવસો ભવતિ, યદા સ્વલ્પ પશ્ચિમે દિવસો ભવતિ તદા સ્વલ્પ જમ્બુદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય ઉત્તર-દક્ષિણે રાત્રિર્ભવતિ? હન્ત, ગૌતમ । યદા સ્વલ્પ જમ્બુદ્વીપે દ્વીપે મન્દરપૌરત્સ્યે

જંબુદ્વીપ મેં સુમેરુ પર્વત કી ઉત્તરદિશા તરફ ઓર પશ્ચિમ દિશા તરફ રાત્રિ હોતી હૈ ? (હંતા, ગોયમા જયા ણં જંબુદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે વિ દિવસે જાવ રાઈ ભવઈ) હાં ગૌતમ । હમી તરહ સે હોતા હૈ-જય જંબુદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં બી દિવસ હોતા હૈ તય યાવત્ રાત્રિ હોતી હૈ । (જયા ણં મંતે । જંબુદ્વીપે દ્વીપે મંદરસ્સ પન્વયસ્સ પુરતિયમે ણં દિવસે ભવઈ) હૈ મદન્ત । જિસ સમય જંબુદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મંદર પર્વત કી પૂર્વદિશા તરફ દિવસ હોતા હૈ (તયા ણં પન્વતિયમેણ વિ દિવસે ભવઈ) તય પશ્ચિમ દિશા તરફ બી દિવસ હોતા હૈ ઓર (જયા ણં પન્વતિયમેણ દિવસે ભવઈ, તયા ણં જંબુદ્વીપે દ્વીપે મંદરસ્સ પન્વયસ્સ ઉત્તર-દક્ષિણેણ રાઈ ભવઈ) જય પશ્ચિમ દિશા તરફ દિવસ હોતા હૈ, તય જમ્બુદ્વીપ મેં મંદર પર્વત કી ઉત્તર દક્ષિણ દિશા તરફ રાત્રિ હોતી હૈ ? કયા ? (હંતા, ગોયમા । જયા ણં જંબુદ્વીપે દ્વીપે મંદરપુરતિયમે ણં દિવસે જાવ રાઈ ભવઈ) હાં, ગૌતમ । હસી તરહ સે હોતા હૈ-તય યાવત્ રાત્રિ

પર્વતની ઉત્તર દિશા તરફ અને પશ્ચિમ દિશા તરફ શું રાત્રિ હોય છે (હંતા, ગોયમા !-જયાણં જંબુદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે વિ દિવસે જાવ રાઈ ભવઈ) હા, ગૌતમ । એવું જ અને છે જ્યારે જંબુદ્વીપ નામના દક્ષિણાર્ધમાં દિવસ હોય છે ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ દિવસ હોય છે, (યાવત્) અને ત્યારે સુમેરુ પર્વતની ઉત્તર અને પશ્ચિમ દિશામાં રાત્રિ હોય છે. (જયાણં મંતે । જંબુદ્વીપે દ્વીપે મંદરસ્સ પન્વયસ્સ પુરતિયમેણ દિવસે ભવઈ) હે ભદન્ત । જ્યારે જંબુદ્વીપના મંદર પર્વતની પૂર્વ દિશામાં દિવસ હોય છે, (તયાણં પન્વતિયમેણ વિ દિવસે ભવઈ ત્યારે પશ્ચિમ દિશામાં પણ દિવસ હોય છે અને (જયાણં પન્વતિયમેણ દિવસે ભવઈ, તયાણં જંબુદ્વીપે દ્વીપે મંદરસ્સ પન્વયસ્સ ઉત્તરદક્ષિણેણ રાઈ ભવઈ ? ” જ્યારે પશ્ચિમદિશામાં દિવસ હોય છે, ત્યારે જંબુદ્વીપના મંદર પર્વતની ઉત્તર દક્ષિણ દિશામાં શું રાત્રિ હોય છે ? (હંતા ગોયમા) હા, ગૌતમ । એવું જ અને છે, ” જયાણં જંબુદ્વીપે દ્વીપે મંદરપુરતિયમેણ દિવસે જાવ રાઈ ભવઈ ”

દિવસઃ, યાવત્-રાત્રિર્ભવતિ, યદા સ્વલ્પ મદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે ઉત્કૃષ્ટો
ષ્ટાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ, તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ ઉત્કૃષ્ટોઽષ્ટાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ,
યદા ઉત્તરાર્ધે ઉત્કૃષ્ટોઽષ્ટાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ તદા સ્વલ્પ જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દ-
રસ્ય પૌરસ્ત્ય-પશ્ચિમે જવન્નિપકા દ્વાદશમુહૂર્તા રાત્રિર્ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા
જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે યાવત્-દ્વાદશમુહૂર્તા રાત્રિર્ભવતિ, યદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય

હોતી છે (જયાળું મંતે ! જંબુદ્વીપે દીવે દાહિણદ્વે ઉક્ષોસપ અટ્ટારસમુ-
દ્વે દિવસે ભવહ, તયાળું ઉત્તરદ્વે વિ ઉક્ષોસપ અટ્ટારસમુદ્વે દિવસે ભવહ)
હે મદન્ત ! જય જંબુદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં જ્યાદા ૧૮ અટ્ટારહ
મુહૂર્ત કા દિવસ હોતા છે, તય ઉત્તરાર્ધ મેં મી અધિક સે અધિક ૧૮ અટ્ટાર-
હ મુહૂર્ત કા દિન હોતા છે, ઓર (જયાળું ઉત્તરદ્વે ઉક્ષોસપ અટ્ટારસમુદ્વે
દિવસે ભવહ, તયાળું જંબુદ્વીપે દીવે મંદરસ્સ પુરત્થિમ-પચ્ચત્થિમેળં જહ-
ન્નિયા દુવાલસમુદ્વે રાઈ ભવઈ) જય ઉત્તરાર્ધ મેં સય સે ઘડા અટ્ટારહ
મુહૂર્ત કા દિન હોતા છે તય જંબુદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મંદરપર્વત કી પૂર્વ
પશ્ચિમ દિશા તરફ સય સે કમતી પ્રમાણવાલી પારહમુહૂર્ત કી રાત્રિ
હોતી છે કયા ? (હંતા ગોયમા ! જયાળું જંબુદ્વીપે દીવે જાય દુવાલસમુદ્વે
રાઈ ભવહ) હાં, ગૌતમ ! હસી તરહ સે હોતા છે ! જંબુદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં
યાવત્ પારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી છે ! (જયાળું જંબુદ્વીપે દીવે મંદરસ્સ પુરત્થિમે

ન્યારે જંબુદ્વીપના મંદર પર્વતની પૂર્વ દિશામાં દિવસ હોય છે, ત્યારે પશ્ચિમ
દિશામાં પણ દિવસ હોય છે (યાવત્) અને ત્યારે મંદર પર્વતની ઉત્તર
દક્ષિણ દિશામાં રાત્રિ હોય છે, (જયાળું મંતે ! જંબુદ્વીપે દીવે દાહિણદ્વે ઉક્ષો-
સપ અટ્ટારસમુદ્વે દિવસે ભવહ, તયાળું ઉત્તરદ્વે વિ ઉક્ષોસપ અટ્ટારસમુદ્વે દિ-
વસે ભવહ !) હે મદન્ત ! ન્યારે જંબુદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં વધારેમાં વધારે અટ્ટાર
મુહૂર્તનો દિવસ હોય છે, ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ શું વધારે ૧૮ અટ્ટાર મુહૂર્તનાં
જ દિવસ હોય છે ! અને (જયાળું ઉત્તરદ્વે ઉક્ષોસપ અટ્ટારસમુદ્વે દિવસે ભવહ,
તયાળું જંબુદ્વીપે મંદરસ્સ પુરત્થિમપચ્ચત્થિમેળં જહન્નિયા દુવાલસમુદ્વે રાઈ ભવઈ ?)
ન્યારે ઉત્તરાર્ધમાં સૌથી મોટો દિવસ ૧૮ અટ્ટાર મુહૂર્તનો થાય છે, ત્યારે
શું જંબુદ્વીપના મંદર પર્વતની પૂર્વ પશ્ચિમ દિશામાં સૌથી નાની બાર મુહૂ-
ર્તની રાત્રિ થાય છે ! “ હંતા ગોયમા ! જયાળું જંબુદ્વીપે દીવે જાય દુવાલસમુ-
દ્વે રાઈ ભવહ) હા ગૌતમ ! ન્યારે જંબુદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં મોટામાં મોટો
દિવસ ૧૮ અટ્ટાર મુહૂર્તનો થાય છે, ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ મોટામાં મોટો દિવસ
૧૮ અટ્ટાર મુહૂર્તનો થાય છે, અને ત્યારે મંદર પર્વતની પૂર્વ તથા પશ્ચિમે

પૌરસ્ત્યે ઉત્કૃષ્ટોઽષ્ટાદશમુહર્તો દિવસો મરતિ. તદા જમ્બૂદીપે દ્વીપે પશ્ચિમેઽપિ ઉત્કૃષ્ટોઽષ્ટાદશમુહર્તો દિવસો મરતિ, તદા પશ્ચિમે ઉત્કૃષ્ટોઽષ્ટાદશમુહર્તો દિવસો મરતિ, તદા સત્ત્વ મદન્ત ! જમ્બૂદીપે દ્વીપે ઉગરે દ્વાદશમુહર્તો યાવત્-રાત્રિર્મરતિ ! હન્ત, ગૌતમ ! યાવત્-મરતિ, તદા સત્ત્વ મદન્ત ! જમ્બૂદીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે અષ્ટા-

વક્રોસપ અઢારસમુદ્દત્તે દિવસે મરતિ, તથા ણં જંબુદીપે દ્વીપે પશ્ચિમ-સ્થિમેણં ચિ ઉત્કૃષ્ટેણં અઢારસમુદ્દત્તે દિવસે મરતિ (હે મદન્ત ! જમ્બુદીપ નામકે દ્વીપ મેં મંદરપર્વત કી પૂર્વદિશા તરફ અધિક સે અધિક અઢારસ મુહર્ત્ત કા દિન હોતા હૈ, તપ જંબુદીપ મેં પશ્ચિમ દિશા કી તરફ ઓ અધિક સે અધિક અઢારસ મુહર્ત્ત કા દિવસ હોગા હૈ । ઓર (જયા ણં પશ્ચિમે ણં ઉત્કૃષ્ટેણ અઢારસમુદ્દત્તે દિવસે મરતિ, તથા ણં મંતે ! જંબુદીપે દ્વીપે ઉત્તરે દુવાલસમુદ્દત્તા જાવ રાઈ મરતિ) જમ્બુદીપ દિશા કી તરફ અધિક સે અધિક અઢારસ મુહર્ત્ત કા દિન હોતા હૈ તપ હૈ મદન્ત ! જંબુદીપ મેં ઉત્તરાર્ધ મેં સપ સે કમ યાવત્ મુહર્ત્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ કયા ? (હંતા, ગોયમા જાવ મરતિ) હાં, ગૌતમ ! હસી તરફ સે યાવત્ સપ સે કમ યાવત્ મુહર્ત્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ । (જયા ણં મંતે ! જંબુદીપે દ્વીપે દાહિણદ્વે અઢારસમુદ્દત્તાણંતરે દિવસે મરતિ) હે મદન્ત ! જમ્બુદીપ

નાનામાં નાની રાત્રિ ૧૨ બાર મુહૂર્તની થાય છે.

(જયાણં જંબુદીપે દ્વીપે મંદરપર્વ પુરતિમે ઉત્કૃષ્ટેણ અઢારસમુદ્દત્તે દિવસે મરતિ તથા ણં જંબુદીપે દ્વીપે પશ્ચિમસ્થિમેણં ચિ ઉત્કૃષ્ટેણં અઢારસમુદ્દત્તે દિવસે મરતિ ?) હે મદન્ત ! ત્યારે જંબુદીપ નામના દ્વીપના મંદર પર્વતની પૂર્વદિશા તરફ લાંબામાં લાંબા ૧૮ અઢાર મુહૂર્તનો દિવસ થાય છે, ત્યારે જંબુદીપમાં પશ્ચિમ દિશા તરફ પણ શું લાંબામાં લાંબા ૧૮ અઢાર મુહૂર્તનો દિવસ થાય છે ? અને (જયાણં પશ્ચિમે ણં ઉત્કૃષ્ટેણ અઢારસમુદ્દત્તે દિવસે મરતિ, તથા ણં મંતે જંબુદીપે દ્વીપે ઉત્તરે દુવાલસમુદ્દત્તા જાવ રાઈ મરતિ) ત્યારે પશ્ચિમ દિશામાં લાંબામાં લાંબા દિવસ ૧૮ અઢાર મુહૂર્તનો હોય છે, ત્યારે શું જંબુદીપના ઉત્તરાર્ધમાં નાનામાં નાની રાત્રિ ૧૨બાર મુહૂર્તની હોય છે ? (હંતા, ગોયમા ! જાવમરતિ) હા, ગૌતમ ! જંબુદીપના ઉત્તરાર્ધમાં દૂકામાં દૂકી ૧૨ બાર મુહૂર્તની રાત્રિ હોય છે, ત્યાં મુધીનું સમસ્ત કથન સત્ય છે. (જયાણં મંતે ! જંબુદીપે દ્વીપે દાહિણદ્વે અઢારસમુદ્દત્તાણંતરે દિવસે મરતિ, તથા ણં ઉત્તરે અઢારસમુદ્દત્તાણંતરે દિવસે મરતિ)

દશમુહૂર્તાનન્તરો દિવસો ભવતિ, તદા ઉત્તરે અષ્ટાદશમુહૂર્તાનન્તરો દિવસો ભવતિ, યદા ઉત્તરે અષ્ટાદશમુહૂર્તાનન્તરો દિવસો ભવતિ, તદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે, પશ્ચિમે સાતિરેકા દ્વાદશમુહૂર્તા રાત્રિર્ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે યાવત્-રાત્રિર્ભવતિ, યદા ચલુ ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે અષ્ટાદશમુહૂર્તાનન્તરો દિવસો ભવતિ, તદા પશ્ચિમે અષ્ટાદશમુહૂર્તાનન્તરો દિવસો ભવતિ, યદા પશ્ચિમે અષ્ટાદશમુહૂર્તાનન્તરો દિવસો ભવતિ તદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય ઉત્તર-દક્ષિણે સાતિરેકદ્વાદશમુહૂર્તા રાત્રિર્ભવતિ ?

નામકે દ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં અઠારહ મુહૂર્ત્ત સે કુછ કમ વિવસ હોતા હૈ (તયાણં ઉત્તરે અઠારસમુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવહ) તય ઉત્તરાર્ધ મેં અઠારહ મુહૂર્ત્ત સે કુછ કમ દિવસ હોતા હૈ । ઓર (જયાણં ઉત્તરહ્રદે અઠારસમુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવહ, તયાણં જંબુદ્વીવે દ્વીવે મંદરસ્સ પવ્વ-યસ્સ પુરત્થિમેણં પચ્ચત્થિમેણં સાહરેગા દુવાલસમુહૂત્તા રાઈ ભવહ) જય ઉત્તરાર્ધ મેં અઠારહ મુહૂર્ત્ત સે કુછ કમ દિન હોતા હૈ તય જમ્બૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપમેં મંદરપર્વત કી પૂર્વ ઓર પશ્ચિમ કી ઓર ઘારહ મુહૂર્ત્તસે કુછ અધિક લંબી રાત હોતી હૈ કયા ? (હંતાગોયમા ! જયા ણં જંબુદ્વીવે દ્વીવે જાવ રાઈ ભવહ) હાં ગૌતમ ! હસી તરહ સે હોતા હૈ-જમ્બૂદ્વીપ મેં યાવત રાત્રિ હોતી હૈ । (જયા ણં મંતે ! જંબુદ્વીવે દ્વીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ પુરત્થિમે ણં અઠારસમુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવહ, તયા ણં પચ્ચત્થિમેણં અઠારસમુહૂ-ત્તાણંતરે દિવસે ભવહ) હે ભદન્ત ! જિસ સમય જમ્બૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વદિશા તરફ અઠારહ મુહૂર્ત્ત સે કુછ કમ દિવસ હોતા

હે ભદન્ત ! ન્યારે જંબૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં ૧૮ અઠારમુહૂર્ત્તથી ટૂંકો દિવસ થાય છે, ત્યારે શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ દિવસ ૧૮અઠારમુહૂર્ત્ત કરતાં ટૂંકો દિવસ થાય છે ? અને(જયાણં ઉત્તરહ્રદે અઠારસ મુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવહ, તયા ણં જંબુદ્વીવે દ્વીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ પુરત્થિમે ણં પચ્ચત્થિમે ણં સાહરેગા દુવાલસમુહૂત્તા રાઈ ભવહ) ન્યારે ઉત્તરાર્ધમાં ૧૮ અઠાર મુહૂર્ત્ત કરતાં ટૂંકો દિવસ થાય છે, ત્યારે શું જંબૂદ્વીપના મંદર પર્વતની પૂર્વ અને પશ્ચિમ તરફ બાર મુહૂર્ત્ત કરતાં પણ લાંબી રાત્રિ થાય છે ? (હંતા ગોયમા ! જયા ણં જંબુદ્વીવે દ્વીવે જાવ રાઈ ભવહ) હા, ગૌતમ ! એવું બને છે—ન્યારે જંબૂદ્વીપમાંથી શરૂકરીને બાર મુહૂર્ત્ત કરતાં લાંબી રાત્રિ થાય છે ત્યાં સુધીનું કથન અહણ કરવું. (જયા ણં મંતે ! જંબુદ્વીવે દ્વીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ પુરત્થિમેણં અઠારસમુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવહ, તયા ણં પચ્ચત્થિમેણં અઠારસમુહૂત્તાણંતરે દિવસે ભવહ) હે ભદન્ત ! ન્યારે જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપના મંદર પર્વતની પૂર્વાદિશા તરફ અઠાર મુહૂર્ત્ત કરતાં ટૂંકો દિવસ

હન્ત, ગૌતમ ! યાનન્-મરતિ, પન્નમ્ પતેન પ્રમેન પ્રાગારગિન્યમ્, સન્નદન્નમ્ હર્ત્વો દિવસઃ, પ્રયોદશમુહર્ત્વો રાત્રિર્ભવતિ, માદન્નમુહર્ત્વાનન્નમો દિવસઃ, સાતિરેકા પ્રયો-
દશમુહર્ત્વો રાત્રિઃ, પોટનમુહર્ત્વો દિવસઃ, પચ્ચદશમુહર્ત્વો રાત્રિઃ, પોટનમુહર્ત્વાનન્તરો દિવસઃ, સાતિરેકા પચ્ચદશમુહર્ત્વો રાત્રિઃ, પચ્ચદશમુહર્ત્વો દિવસઃ, પચ્ચદશમુહર્ત્વો

હૈ, તપ પશ્ચિમ દિશા તરફ અઠારહ મુહર્ત્તો સે કુછ કમ દિવસ હોતા હૈ ।
ઔર (જપા ણં પચ્ચત્તિમેણં અઠારસ મુહત્તાણંતરં દિવસે ભવહ, તપા
ણં જંબુદીપે દીપે મંદરસ્સ પબ્બયસ્સ ઉત્તરદાહિણે સાદ્દરેગદુવાલસમુ-
હત્તા રાઈં ભવહ) જપ પશ્ચિમ દિશા તરફ અઠારહ મુહર્ત્તો સે કુછ કમ
દિવસ હોતા હૈ તપ જમ્બૂદીપ નામકે દીપ મેં મંદર પર્વતની ઉત્તર
દિશાતરફ પારહ મુહર્ત્તો સે કુછ અધિક લંબી-ચઢી રાત્રિ હોતી હૈ કયા ?
(હંતા ગોયમા ! જાવ ભવહ) હાં ગૌતમ ! હસી તરહ સે યાવત્ પારહ
મુહર્ત્તો સે કુછ અધિક લંબી રાત્રિ હોતી હૈ । (ણવં પપ્પણં કમેણ ઓસારે-
યવ્વં) હસી તરહ હસી ક્રમ સે દિવસ કા પ્રમાણ કમ કરના ચાહિયે
ઔર, રાત્રિકા પ્રમાણ ઘડાના ચાહિયે । જપ (સત્તરસમુહત્તે દિવસે
તેરસમુહત્તો રાઈં ભવહ) સત્તરહ મુહર્ત્ત કા દિવસ હોગા તપ
તેરહ મુહર્ત્ત કી રાત્રિ હોગી । (સત્તરસમુહત્તાણંતરે દિવસે સાદ્દરેગા,
તેરસમુહત્તારાઈં, સોલસમુહત્તે દિવસે; ચોદસ મુહત્તા રાઈં, સોલસ

થાય છે, ત્યારે શું મંદર પર્વતની પશ્ચિમ દિશામાં પણ અઠાર મુહૂર્ત કરતાં
હૈકા દિવસ થાય છે ? અને (જયાણં પચ્ચત્તિમેણં અઠારસમુહત્તાણંતરે દિવસે
ભવહ તપા ણં જંબુદીપે દીપે મંદરસ્સ પબ્બયસ્સ ઉત્તરદાહિણે સાદ્દરેગદુવાલસ-
મુહત્તા રાઈંભવહ ?) ન્યારે પશ્ચિમ દિશામાં અઠાર મુહૂર્ત કરતાં હૈકા દિવસ
થાય છે, ત્યારે શું જંબુદીપ નામના દીપના મંદર પર્વતની ઉત્તર દક્ષિણ
તરફ પાર મુહૂર્ત કરતાં લાંબી રાત્રી થાય છે ? (હંતા, ગોયમા ! જાવ ભવહ)
હા, ગૌતમ એવું જાને છે. અહીં ઉપરોક્ત પાર મુહૂર્ત કરતાં લાંબી રાત્રી થાય
છે, ત્યાં સુધીનું કથન શ્રદ્ધા કરવું. (એવં પપ્પણં કમેણ ઓસારેયવ્વં) એજ રીતે
એજ ક્રમથી દિવસનું પ્રમાણ ઓળખું. કરવું જોઈએ અને રાત્રિનું પ્રમાણ વધારવું
જોઈએ ન્યારે (સત્તરસમુહત્તે દિવસે તેરસ મુહત્તા રાઈં ભવહ) ન્યારે સત્તર મુહૂર્તના
દિવસ થાય ત્યારે તેર (૧૩) મુહૂર્તની રાત્રિ થાય છે. (સત્તરસ મુહત્તાણંતરે
દિવસે સાદ્દરેગા, તેરસમુહત્તા રાઈં, સોલસમુહત્તે દિવસે, ચોદસમુહત્તા રાઈં, સોલસ

રાત્રિઃ પચ્ચદશમુહર્તાનન્તરો દિવસઃ સાતિરેકા પચ્ચદશમુહર્તા રાત્રિઃ, ચતુર્દશમુહર્તો દિવસઃ પોઢશમુહર્તા રાત્રિઃ, ચતુર્દશમુહર્તાનન્તરો દિવસઃ, સાતિરેકા પોઢશમુહર્તા રાત્રિઃ ત્રયોદશમુહર્તો દિવસઃ સપ્તદશમુહર્તા રાત્રિઃ, ત્રયોદશમુહર્તાનન્તરો દિવસઃ, સાતિરેકા સપ્તદશમુહર્તા રાત્રિઃ । યદા સ્વલુ જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે

મુદ્દુત્તાણંતરે દિવસે, સાહરેગા ચત્તરહ મુદ્દુત્તા રાઈ) જય સત્તરહ મુદ્દુત્તે સે મ્હી કુછ કમ દિવસ હોતા હૈ, તય તેરહ મુદ્દુત્તે સે મ્હી કુછ અધિક રાત્રિ હોતી હૈ । ઓર જય સોલહ મુદ્દુત્તે કા દિવસ હોતા હૈ તય ૧૪ ચૌદહ મુદ્દુત્તે કી રાત્રિ હો જાતી હૈ । જય સોલહ મુદ્દુત્તે સે કુછ કમ દિવસ હોતા હૈ તય રાત્રિ કુછ અધિક ચૌદહ મુદ્દુત્તે કી હો જાતી હૈ । (પળ્ળરસ મુદ્દુત્તે દિવસે, પળ્ળરસમુદ્દુત્તા રાઈ) જય પન્દરહ મુદ્દુત્તે કા દિવસ હોતા હૈ તય પન્દરહ મુદ્દુત્તે કી રાત્રિ હોતી હૈ । (પળ્ળરસ મુદ્દુત્તાણંતરે દિવસે સાહરેગા પળ્ળરસમુદ્દુત્તા રાઈ) પન્દરહ મુદ્દુત્તે સે કુછ કમ જય દિવસ હોતા હૈ, તય કુછ અધિક પન્દરહ મુદ્દુત્તે કી રાત્રિ હોતી હૈ । (ચોદસમુદ્દુત્તે દિવસે, સોલસમુદ્દુત્તા રાઈ) જય ચૌદહ મુદ્દુત્તે કા દિવસ હોતા હૈ તય સોલહ મુદ્દુત્તે કી રાત્રિ હોતી હૈ । (ચોદસમુદ્દુત્તાણંતરે દિવસે, સાહરેગા સોલહમુદ્દુત્તા રાઈ) જય ચૌદહ મુદ્દુત્તે સે કુછ કમ કા દિન હોતા હૈ તય રાત્રિ કુછ અધિક સોલહ મુદ્દુત્તે કી હોતી હૈ । (તેરસમુદ્દુત્તે દિવસે, સત્તરસમુદ્દુત્તા રાઈ) જય તેરહ મુદ્દુત્તે કા દિવસ હોતા હૈ તય

મુદ્દુત્તાણંતરે દિવસે, સાહરેગા ચત્તરહમુદ્દુત્તા રાઈ) ન્યારે સત્તર મુદ્દુત્તે કરતાં પળ્ળ કંઈક દ્વંકે દિવસ થાય છે, ત્યારે તેર (તેર) મુદ્દુત્તે કરતાં કંઈક વધારે સમયની રાત્રિ થાય છે, ન્યારે સોળ મુદ્દુત્તે નો દિવસ થાય છે, ત્યારે ચૌદ મુદ્દુત્તેની રાત્રિ થાય છે, ન્યારે સોળ મુદ્દુત્તે કરતાં પળ્ળ કંઈક ઓછા સમયનો દિવસ હોય છે ત્યારે ચૌદ મુદ્દુત્તેથી કંઈક વધારે સમયની રાત્રિ થાય છે. (પળ્ળરસમુદ્દુત્તે દિવસે પળ્ળરસમુદ્દુત્તા રાઈ) ન્યારે ૧૫ પંદર મુદ્દુત્તેનો દિવસ થાય છે, ત્યારે પંદર મુદ્દુત્તેની રાત્રિ થાય છે. (પળ્ળરસમુદ્દુત્તાણંતરે દિવસે સાહરેગા પળ્ળરસમુદ્દુત્તા રાઈ) ન્યારે પંદર મુદ્દુત્તેથી કંઈક દ્વંકે દિવસ હોય છે, ત્યારે રાત્રિ પંદર મુદ્દુત્તેથી કંઈક લાંબી હોય છે, (ચોદસમુદ્દુત્તે દિવસે, સોલસ મુદ્દુત્તારાઈ) ન્યારે ૧૪ ચૌદ મુદ્દુત્તેનો દિવસ થાય છે, ત્યારે ૧૬ સોળ મુદ્દુત્તેની રાત્રિ થાય છે. (ચોદસમુદ્દુત્તાણંતરે દિવસે, સાહરેગા સોલસ મુદ્દુત્તા રાઈ) ન્યારે દિવસ ચૌદ મુદ્દુત્તે કરતાં કંઈક દ્વંકે થાય છે, ત્યારે રાત્રિ સોળ મુદ્દુત્તે કરતાં

દક્ષિણાર્ધે જઘન્યકો દ્વાદશમુહર્તો દિવસો ભાતિ, યદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ, યદા ઉત્ત-
રાર્ધે તદા જમ્બૂદીપે દ્વીપે મંદરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ય-પદિમે ઉન્નકૃષ્ટિકા અઘ્રાદ-
શમુહર્તા રાત્રિર્ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! एवं येन उचारयिष्यमस्, यावत्-रात्रिर्भ-
वति, यदा भदन्त ! जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्ये जघन्यको द्वादश-

સત્તરહ મુહર્ત્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ । (તેરસમુહરતાળંતરે દિવસે, સાઝરેના મુહરતા રાઈ) ઓર જય તેરહ મુહર્ત્ત સે કુછ કમ દિવસ કા પ્રમાણ રહતા હૈ તય રાત્રિ કા પ્રમાણ કુછ અધિક સગરહ મુહર્ત્ત કા હો જાતા હૈ । (જયા ણં જંબૂદ્વીપે દ્વીપે દાહિણ જહણ્ણ દુવાલસમુહરતે દિવસે ભવહ, તયા ણં ઉત્તરહ્વે વિ, જયા ણં ઉત્તરહ્વે તયા ણં જંબૂદ્વીપે દ્વીપે મંદરસ્સ પન્વયસ્સપુરત્થિમેણ પન્વત્થિમેણં ઉપોસિયા અઘારસમુહરતા રા-
ઈ ભવહ) હે ભદન્ત ! જય જંબૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં સય સે કમ પારહ મુહર્ત્ત કા દિવસ હોતા હૈ, તય ઉત્તરાર્ધ મેં બી ઈસા હી હોતા હૈ । ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં ઈસા હોતા હૈ, તય જંબૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મંદર પર્વત કી પૂર્વ પશ્ચિમ કી ઓર સય સે અધિક અઠારહ મુ-
હર્ત્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ કયા ? (હંતા, ગોયમા ! एवं येन उच्चारयेयम् जाव राई भवह) हां गौतम ! इसी प्रकार से होता है इसी तरह से ही सय कहना चाहिये यावत् रात्रि होती है । (જયા ણં ભંતે ! જંબૂદ્વીપે દ્વીપે મંદરસ્સ પન્વયસ્સ પુરત્થિમેણં જહણ્ણ દુવાલસમુહરતે દિવસે ભવહ,

૬૪૬ લાંબી થાય છે. (તેરસમુહરતે દિવસે સત્તરસમુહરતા રાઈ) બ્યારે ૧૩ તેર મુહર્ત્તનો દિવસ થાય છે, ત્યારે ૧૭સત્તર મુહર્ત્તની રાત્રિ થાય છે. (તેરસમુહરતાળંતરે દિવસે, સાઝરેના -સત્તરસ મુહરતા રાઈ) બ્યારે દિવસ ૧૩તેર મુહર્ત્ત કરતાં થોડા દૂંકા હોય છે, ત્યારે રાત્રિ સત્તર મુહર્ત્ત કરતાં થોડી લાંબી હોય છે. (જયા ણં જંબૂદ્વીપે દ્વીપે દાહિણહ્વે જહણ્ણ દુવાલસમુહરતે દિવસે ભવહ, તયાણં ઉત્તરહ્વે વિ જયાણં ઉત્તરહ્વે તયાણં જંબૂદ્વીપે દ્વીપે મંદરસ્સ પુરત્થિમપન્વત્થિમેણં ઉપોસિયા અઘારસ મુહરતા રાઈ ભવહ) હે ભદન્ત ! બ્યારે જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં દક્ષિણાર્ધમાં દૂંકામાં દૂંકા બાર મુહર્ત્તનો દિવસ થાય છે, ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ શું એમ જ બને છે ? અને બ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં એવું બને, ત્યારે શું જંબૂદ્વીપના મંદર પર્વતની પૂર્વ પશ્ચિમ દિશામાં લાંબામાં લાંબી ૧૮ અઠાર મુહર્ત્તની રાત્રિ હોય છે ? (હંતા ગોયમા ! एवं येन उच्चारयेयम् जाव राई भवह) હે ગૌતમ ! એવું જ બને છે. (૧૮ અઠાર મુહર્ત્તની રાત્રિ થાય છે) ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન અહીં અહલ્યુ ૬૬૫ લેખ્યું, (જયાણં ભંતે ! જંબૂદ્વીપે દ્વીપે મંદરસ્સ પન્વયસ્સ પુરત્થિમેણં

મુહૂર્તો દિવસોભવતિ, તદા પશ્ચિમેऽપિ, યદા પશ્ચિમેऽપિ તદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મંદરસ્ય પર્વતસ્ય ઉત્તર-દક્ષિણે ઉત્કૃષ્ટા અષ્ટાદશમુહૂર્તા રાત્રિર્ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ? યાવત્-રાત્રિર્ભવતિ ॥ મૂ—૨ ॥

ટીકા—અય રવેશ્ચતુર્દિશ્ણ પરિભ્રમણેऽપિ તત્પ્રકાશસ્ય પ્રતિનિયતદિવ્યાતિતયા રાત્રિદિવસવ્યવસ્થાં ક્ષેત્રભેદેન પ્રતિપાદયિતુમાદ—‘જયાણં મંતે ।’ ઇત્યાદિ । ગૌતમઃપૃચ્છતિ—હે ભદન્ત ! યદા સ્વલ્લ ‘જંબુદ્વીવે દીવે’ જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મધ્યજમ્બૂદ્વીપે

તયા ણં પચ્ચત્થિમે ણં વિ, જહાર્ણ પચ્ચત્થિમેણં વિ તયા ણં જંબુદ્વીવે દીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ ઉત્તરદાહિણેણં ઉક્કોસિયા અઢ્ઠારસમુહુત્તા રાઈ ભવહ) હે ભદન્ત ! જય જંબુદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મંદરપર્વત કી પૂર્વદિશા કી ઓર સય સે કમ યારહ મુહૂર્ત્ત કા દિવસ હોતા હૈ, તય પશ્ચિમ કી ઓર ખી વૈસા હી હોતા હૈ । ઓર જય પશ્ચિમ કી ઓર ખી વૈસા હોતા હૈ, તય જંબુદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મંદર પર્વત કી ઉત્તર દક્ષિણ દિશા તરફ અધિક અઠારહ મુહૂર્ત્ત કી રાત્રિ ખી હોતી હૈ કયા ? (હંતા ગોયમા ! જાવ રાઈ ભવહ) હાં, ગૌતમ ! હસી પ્રકાર સે રાત્રિ હોતી હૈ યાવત્ અધિક સે અધિક અઠારહ મુહૂર્ત્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ ॥

ટીકાર્થ—મૂર્ચ ચારોં દિશાઓં મેં ભ્રમણ કરતા હૈ—ફિર ખી ઉસકા પ્રકાશ પ્રતિનિયત દિશાઓં મેં હી પડતા હૈ, હસ કારણ રાત્રિ દિવસ કી વ્યવસ્થા કો સૂત્રકાર ક્ષેત્ર ભેદ દ્વારા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે કહતે હૈ—(જયા ણં મંતે) ઇત્યાદિ ।

જહમ્પ હુવાલસમુહુત્તે દિસસે ભવહ, તયા ણં પચ્ચત્થિમે ણં વિ, જયાણં પચ્ચત્થિમેણં વિ તયાણં જંબુદ્વીવે દીવે મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ ઉત્તર દાહિણેણં ઉક્કોસિયા અઢ્ઠારસમુહુત્તા રાઈ ભવહ) હે ભદન્ત ! ત્યારે જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપમાં મંદર પર્વતની પૂર્વ દિશા તરફ દૂઠામાં દૂઠો ૧૨ બાર મુહૂર્તનો દિવસ થાયછે, ત્યારે શુ પશ્ચિમ તરફ એવું બને છે, અને ત્યારે પશ્ચિમ તરફ એવું બને છે ત્યારે શુ જંબુદ્વીપના મંદર પર્વતની ઉત્તર દક્ષિણ દિશા તરફ લાંબામાં લાંબી ૧૮ અઠાર મુહૂર્તની રાત્રિ હોય છે ? (હંતા ગોયમા ! જાવ રાઈ ભવહ) હા, ગૌતમ ! એવું જ બને છે—(લાંબામાં લાંબી ૧૮ અઠાર મુહૂર્તની રાત્રિ હોય છે,) ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન ગ્રહણ કરવું.

ટીકાર્થ—સૂર્ય ત્યારે દિશાઓમાં ભ્રમણ કરે છે. પણ તેનો પ્રકાશ પ્રતિનિયત દિશાઓમાં જ પડે છે, તેથી રાત્રિ દિવસની વ્યવસ્થાનું ક્ષેત્રભેદ દ્વારા પ્રતિપાદન કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે—(જયા ણં મંતે !) ઇત્યાદિ

‘દાહિણદ્વે’ દક્ષિણાર્ધે દક્ષિણદિગ્ભાગે ‘દિવસે ભવદ્’ દિવસો ભવતિ, ‘તયાળં’ તદા સ્વલ્પ ‘ઉત્તરદ્વે’ ઉત્તરાર્ધેષ્વિ ઉત્તરદિગ્ભાગેષ્વિ ‘દિવસે ભવદ્’ દિવસો ભવતિ ‘તયાળં’ તદા સ્વલ્પ કિમ્ ‘જંબુદ્વીપે દીવે’ જંબુદ્વીપે દીવે ‘મંદરસ્સ પ-વ્વયસ્સ’ મંદરસ્સ પર્વતસ્સ ‘પુરત્થિમેળ-પન્નત્થિમેળ’ પૂર્વસ્સ-પશ્ચિમેળ સ્વલ્પ પૂર્વ પશ્ચિમભાગે ‘રાઈ ભવદ્’ રાત્રિર્ભવતિ કિમ્ ? મગયાનાદ-‘દંતા, ગોયમા !’ હે

ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન છે પૂછતે છે કે કિ હે ભદન્ત ! જય (જંબુદ્વીપે દીવે) જંબુદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં-મધ્યજંબુદ્વીપ મેં (દાહિણદ્વે) દક્ષિણાર્ધ મેં દક્ષિણદિગ્ભાગ મેં-(દિવસે ભવદ્) દિવસ હોના છે, (તયાળં) તથા (ઉત્તરદ્વે વિ) ઉત્તરાર્ધ મેં ભી-ઉત્તરદિગ્ભાગ મેં ભી (દિવસે ભવદ્) દિવસ હોના છે તો કયા ઉસ સમય (જંબુદ્વીપે દીવે) મધ્ય જંબુદ્વીપ મેં (મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ) મંદર પર્વત કી (પુરત્થિમેળ પન્નત્થિમેળ) પૂર્વ ઓર પશ્ચિમ દિશા મેં પૂર્વપશ્ચિમદિગ્ભાગ મેં (રાઈ ભવદ્) રાત્રિ હોતી છે ? હસકા અભિપ્રાય એસા છે કે ઉપરકે સૂત્રદ્વારા એસા કહા ગયા છે કે સૂર્ય ચારો દિશાઓ મેં ગમન કરતા છે-તો હસસે તો યહી સમજા જા સકતા છે કે ઉસકા પ્રકાશ સદા કાયમ ફેલતા રહતા છે-જય એસી વાત છે તો ફિર કહીં રાત્રિ ઓર કહીં દિવસ એસા વિભાગ કેસે ધન સકતા છે ? અર્થાત્ નહીં ધન સકતા । યયોં કે હસ પ્રકાર થી માન્યતા સે તો સર્વત્ર દિવસ હી રહના ચાહિયે । પરન્તુ એસા તો હોતા નહીં છે । સો હસકા કારણ કયા છે ? હસકે સમાધાન નિમિત્ત એસા કહા ગયા છે કે યથાપિ સૂર્ય ચારો દિશાઓ મેં ગતિ કરતા

ગૌતમસ્વામી મહાવીરપ્રભુને પૂછે છે કે-હે ભદન્ત ! ત્યારે (જંબુદ્વીપે દીવે) જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપમાં (મધ્ય જંબુદ્વીપમાં) (દાહિણદ્વે) દક્ષિણાર્ધમાં (દક્ષિણ દિગ્ભાગમાં) પણ “દિવસે ભવદ્” દિવસ થાય છે ? “તયાળં” ત્યારે “ઉત્તરદ્વે વિ” શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ (દિવસે ભવદ્) દિવસ થાય છે ? અને ત્યારે (જંબુદ્વીપે દીવે) મધ્ય જંબુદ્વીપમાં આવેલા (મંદરસ્સ પવ્વયસ્સ) મંદર (સુમેરુ) પર્વતની (પુરત્થિમેળ પન્નત્થિમેળ) પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિશામાં (પૂર્વ પશ્ચિમ દિગ્ભાગમાં) શું (રાઈ ભવદ્) રાત્રિ હોય છે ? ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એવું છે કે-પહેલા સૂત્રમાં એવું બતાવવામાં આવ્યું છે કે સૂર્ય ત્યારે દિશાઓમાં ગમણ કરે છે. એથી તો એવું માનવાને કારણ મળે છે કે તેનો પ્રકાશ સદા સર્વત્ર ફેલાતો જ રહે છે. આવું હોવા છતાં કેાઈ જગ્યાએ દિવસ અને કેાઈ જગ્યાએ રાત્રી થવાનું કારણ શું છે ? ખરેખર તો બંધી જગ્યાએ દિવસ જ હોવો જોઈએ. તો તેનું સમાધાન નીચે પ્રમાણે કરવામાં આવ્યું છે-સૂર્ય

ગૌતમ ! દન્ત, રાત્ર્યમ્ ' જયાણં ' યદા સ્વલુ ' જમ્બુદ્વીવે દીવે ' જમ્બુદ્વીપે દ્વીપે ' દાહિણદ્વે ' દક્ષિણાર્ધે ' દિવસે ' દિવસઃ ' જાવ-રાઈભવઈ ' યાવત્-રાત્રિ-ભવતિ, ઇતિ, યાવત્કરણાત્ ' ભવતિ, તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ દિવસો ભવતિ, યદા ચ ઉત્તરાર્ધેઽપિ દિવસો ભવતિ, તદા જમ્બુદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્સ પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યપશ્ચિમે ' ઇતિ સંપ્રાણમ્ ।

રહતા હૈ ફિર ખી ઝસકા પ્રકાશ મર્યાદિત હૈ । અર્થાત્ ઝસકા પ્રકાશ અમુક ભાગતક હી જાતા હૈ- આગે નહીં જાતા હૈ-ઇસલિયે રાત ઓર દિવસ કા વ્યવહાર યન જાતા હૈ । જિતની મર્યાદા તક જયનક સૂર્યકા પ્રકાશ રહતા હૈ-ઉતના ભાગ મેં તયનક દિવસ કા વ્યવહાર ઓર પ્રકાશ વર્જિત સ્થાન મેં રાત્રિ કા વ્યવહાર હોતા હૈ । હસી યાન કો ક્ષેત્ર વિભાગપૂર્વક ઇસ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કિયા ગયા હૈ, ગૌતમ પ્રશ્ન સે પ્રશ્ન કરતે છુપ પૂછતે હૈં કિ જય જમ્બુદ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં ઓર ઉત્તરાર્ધ મેં દિવસ હોતાહૈ-તય કયા પૂર્વ ઓર પશ્ચિમભાગ મેં રાત્રિ હોતી હૈ કયા? ભગવાન્ ઇસકા ઉત્તર દેતે છુપ ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ (હંતા ગોયમા ! હાં ગૌતમ ! (જયાણં) જય (જંબુદ્વીવે દીવે) જમ્બુદ્વીપ નામકે મધ્ય જંબુદ્વીપ મેં (દાહિણદ્વે વિ) દક્ષિણાર્ધ મેં ખી (દિવસે) દિવસ હોતા હૈં-તય (જાવ રાઈ ભવઈ) યાવત્ રાત્રિ હોતી હૈ । યહાં યાવત્પદ સે (ભવતિ તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ દિવસો ભવતિ, યદા ચ ઉત્તરાર્ધેઽપિ દિવસો ભવતિ, તદા (જમ્બુદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્સ પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યપશ્ચિમે) ઇસ પાઠકા સંગ્રહ કિયા

ચારે દિશામાં ગતિ કરતો રહે છે, છતાં પણ તેનો પ્રકાશ મર્યાદિત છે-એટલે કે સૂર્યનો પ્રકાશ અમુક હદ સુધી જ જાય છે-તે હદ કરતાં આગળ જતો નથી. તે કારણે રાત્રિ અને દિવસ થાયા કરે છે. જેટલી હદમાં ત્યાં સુધી સૂર્યનો પ્રકાશ રહે છે, તેટલી હદમાં ત્યાં સુધી દિવસ રહે છે, અને પ્રકાશવિહીન સ્થાનમાં રાત્રિ હોય છે એજ વાતને ક્ષેત્ર વિભાગપૂર્વક આ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને પૂછે છે કે (ત્યારે જંબુદ્વીપના દક્ષિણાર્ધ અને ઉત્તરાર્ધમાં દિવસ હોય છે, ત્યારે શું પૂર્વ અને પશ્ચિમ ભાગમાં રાત્રિ હોય છે ?)

આ પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રશ્ન એવો ઉત્તર આપે છે કે (હંતા ગોયમા !) હા, ગૌતમ ! (જયાણં) ત્યારે (જંબુદ્વીવે દીવે) જંબુદ્વીપ નામના મધ્ય જંબુદ્વીપના (દાહિણદ્વે વિ) દક્ષિણાર્ધમાં “દિવસે” દિવસ હોય છે, ત્યારે (જાવ રાઈ ભવઈ) યાવત્ રાત્રી હોય છે. અહીં યાવત્ પદથી (ભવતિ તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ) ઇત્યાદિ પાઠનો સંગ્રહ થયો છે. ઉત્તરાર્ધમાં પણ દિવસ હોય છે, ત્યારે જંબુ-

અતઃ એવં યથા ગન્ધ હાસ્તના ગન્ધમાગ્રાયાન્યે ગજાઃ ક્ષાપિ પ્રપલાયન્તે તથા ભગવદ્
ચિન્ત્યાતિશયપ્રભાવવશાત્તદ્વિહરણસમીરણગન્ધસમ્બન્ધગન્ધતોઽપિ-ઈતિ-હમર-મરકાદય
ઉપદ્રવાસ્ત્ર ન તિષ્ઠન્તીતિ, ગન્ધગજાશ્રિતરાજવદ્ ભગવદાશ્રિતો ભવ્યગણઃ સર્વદા
વિજયવાન્ ભવતીતિ ચ ભવત્યુભયોર્યુક્તં સાદૃશ્યમ્ । ‘લોગુત્તમેણ’ લોકોત્તમેન-
લોકેષુ=ઋધ્વાધસ્તિર્યગ્રૂપેષુ ઉત્તમઃ=શ્રેષ્ઠઃ, યદ્વા-લોકસ્ય=ભવ્યલોકસ્ય કલ્યાણ
કારિત્વાદુત્તમસ્તેન । ‘લોગનાદેણ’ લોકનાયેન-લોકસ્ય=ભવ્યસમૂહસ્ય નાથઃ=યોગક્ષેમ
કારિત્વાત્પ્રમુસ્તેન । ‘લોગહિણ’ । ‘લોકહિતેન-લોકસ્ય=પટ્ત્વીવનિકાયરૂપસ્ય હિતઃ=
સર્વથા તદ્રક્ષણપ્રરૂપણેન સ્વયં રક્ષણેન હિતકરસ્તેન । ‘લોગપર્દિવેણ’ લોકપ્રદીપેન-લોકસ્ય
=ભવ્યરૂપવિશિષ્ટલોકસ્ય આન્તરમિથ્યાત્વતિમિરનિકરનિરાકરણપુરસ્સરં જીવાજીવાદિ
પદાર્થસ્વરૂપપ્રકાશકત્વાત્પ્રદીપસ્તેન, નહિ જન્માન્ધઃ પ્રદીપે સત્યપિ વસ્તું પદ્યતિ,

ગંધ ગજારૂઢ નરેશ કી તરહ ભગવદાશ્રિત, “ભવ્ય ગણ” મી સર્વદા વિજયી
હોતા હૈ । “લોકોત્તમ” પ્રમુ કો હસલિયે કહા ગયા હૈ કિ ઉર્ધ્વ
અધો એવં મધ્યલોક મેં ડન જૈસા ઉત્તમ શ્રેષ્ઠ ઓર કોઈ નહીં હૈ-ન હુમા
હૈ-ઓર ન હોગાં । અથવા-લોક શબ્દ કા અર્થ ભવ્યજન મી હોતા હૈ-
ડનકા કલ્યાણ પ્રમુદ્ધારા હી હોતા હૈ-હસલિયે મી ડન્હે “લોકોત્તમ કહા હૈ ।

‘ભવ્યસમૂહ’ કે યે યોગક્ષેમકારી હોને સે નાથ હૈં હસલિયે “લોક-
નાથ” ડન્હે કહા ગયા હૈ । પટ્ત્વીવનિકાયરૂપ હસલોક કે રક્ષણ કરને કે
પ્રરૂપક હોને સે યે “લોકહિત” હસ શબ્દ કે વાચ્ય હુએ હૈં । લોક પ્રદીપ-
મવ્યરૂપ-વિશિષ્ટ લોકોં કી યે, ડનકે આન્તર મિથ્યાત્વરૂપ તિમિર નિકર
અન્ધકારસમૂહ) કે નિરાકરણ કરનેવાલે હોને સે ઓર સાથ સાથ મેં ડન્હે
જીવ અજીવ આદિપદાર્થોં કે યથાર્થ સ્વરૂપ કા પ્રકાશ દેને વાલે હોને સે
પ્રદીપ જૈસે કહે ગયે હૈં ।

ગંધ હાથી ઉપર ઝેમનાર રાજાની જેમ ‘ભગવદાશ્રિત’ ‘ભવ્યગણ’ પણ કાયમને માટે
વિજયી થાય છે. પ્રભુને ‘લોકોત્તમ’ એટલા માટે કહેવામાં આવ્યા છે કે ઊર્ધ્વ, અધો
અને મધ્યલોકમાં એમના જેવો ઉત્તમ અને શ્રેષ્ઠ ખીલો કોઈ છે નહિ, થયો નથી
અને થશે નહિ. અથવા-લોક શબ્દનો અર્થ ભવ્યજન પણ થાય છે-તેમનું શ્રેય પ્રભુ
વડે જ થાય છે, એટલા માટે પણ તેમને ‘લોકોત્તમ’ કહ્યા છે. ભવ્યસમૂહના એ
યોગક્ષેમ કરનાર હોવાથી ‘નાથ’ છે, એટલા માટે જ એમને ‘લોકનાથ’ કહ્યા છે.
પટ્ત્વીવનિકાયરૂપ આલોકના રક્ષણ કરવાના નિરૂપક હોવાથી એઓને ‘લોકહિત’ આ
શબ્દથી સંબોધવામાં આવ્યા છે. લોકપ્રદીપ-ભવ્યરૂપથી વિશિષ્ટ લોકોને એ તેમના
અન્તરના મિથ્યાત્વરૂપ તિમિર નિકટ (અન્ધકાર) સમૂહને દૂર કરનારા હોવાથી અને
માથે માથે તેમને હવ-અહવ વગેરે પદાર્થોના સાચારૂપના પ્રકાશ આપનાર (સાચા
રૂપને બતાવનાર) હોવાથી પ્રદીપના જેમ તેઓને ‘પ્રદીપ’ કહેવામાં આવ્યા છે.

દર્શન' ચક્ષુદયેન પश्यतीति चक्षुः, हेयोपादेयवस्तुविभागकारित्वेन चक्षुरिव चक्षुः= श्रुतज्ञानं तस्य दयो दायकश्चक्षुर्दयस्तेन । 'मगदपणं' मार्गदयेन-मृग्यते=अन्विष्यते स्वाभीष्टस्थानमनेनेतिमार्गः=निश्चयव्यवहारलक्षणः शिवपुरपथस्तस्य दयेन । 'शरणदपणं' शरणदयेन-शरणं=संसारदुःखसन्तप्तप्राणिगणस्य रक्षास्थानं तत्त्वतो निर्वाणपदं दयतइति शरणदयस्तेन, संसारकान्तारे परिभ्रमतां रागपञ्चानन-द्वेषव्याध

ચક્ષુર્દય-“પશ્યતીતિચક્ષુઃ” હસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર યહા ચક્ષુ શબ્દ કા. અર્થ શ્રુતજ્ઞાન હૈ કયોંકિ વહી હેય ઓર ઉપાદેય વસ્તુકા વિભાગ-કારી માના ગયા હૈ ।—

હસ ચક્ષુ કી પ્રાપ્તિ મન્યજીવોં કો પ્રભુ સે હી હોતી હૈ-અતઃ વે ચક્ષુર્દય હૈ । મગદય-માર્ગદય-“મૃગ્યતે સ્વાભીષ્ઠસ્થાનં-અનેન ઇતિ માર્ગઃ” હસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર માર્ગ કા. અર્થ-મોક્ષપુર કા રાસ્તા હોતા હૈ । કયોં કિ માર્ગ સે હી પથિક અપને અભીષ્ઠ સ્થાન કી સ્વોજ કરતે હૈ । યહ રાસ્તા નિશ્ચય ઓર વ્યવહારકી અપેક્ષા દો તરહ કા કહા હુઆ હૈ । મોક્ષરૂપ અભીષ્ઠ-સ્થાનકી પ્રાપ્તિ કરાનેવાલે હસ માર્ગ કી પ્રાપ્તિ મોક્ષા મિલાપીજનોં કો પ્રભુ કે ઉપદેશ સે હી હુઈ હૈ । અતઃ ઉન્હે “માર્ગદય” સૂત્રકારને પ્રકટ કિયા હૈ । શરણદય- સાંસારિક દુઃખોં સે સન્તપ્ત હુણ પ્રાણિયોં કે લિયે રક્ષા કા જો સર્વોત્તમ સ્થાન હૈ ઉસકા નામ શરણ હૈ । એસા સ્થાન-કેવલ એક મોક્ષ હી હૈ । હસ પદ કે પ્રદાતા પ્રભુ હૈ અતઃ વે શરણદય હૈ । યહ સંસાર એક મયંકર કાન્તાર હૈ । હમમેં પરિભ્રમણ કરનેવાલે પ્રાણી રાગરૂપી પંચાનન (તિંહ)

અર્થ-“પશ્યતીતિચક્ષુઃ” આ વ્યુત્પત્તિ મુજબ આહીં ચક્ષુ શબ્દનો અર્થ શ્રુતજ્ઞાન છે. કેમકે તેજ હેય ઉપાદેય (અસ્વીકાર કરવા યોગ્ય અને સ્વીકાર કરવા યોગ્ય) પદાર્થને વિભક્ત કરનાર માનવામાં આવ્યો છે. ભવ્યજીવોને આ અશુભી પ્રાપ્તિ પ્રભુથી જ થાય છે, એટલા માટે તેઓ અશુદ્ધ છે. મગદય-માર્ગદય-“મૃગ્યતે અન્વિષ્યતે સ્વાભીષ્ઠસ્થાનં અનેન ઇતિ માર્ગઃ” આ વ્યુત્પત્તિ મુજબ માર્ગનો અર્થ મોક્ષપુરનો માર્ગ એ પ્રમાણે થાય છે. કેમકે માર્ગથી જ મુસાફર પોતાના ઇચ્છિત સ્થાનની શોધ કરે છે. આ માર્ગ નિશ્ચય અને વ્યવહારની અપેક્ષાએ જે બાતના બતાવવામાં આવ્યો છે. મોક્ષરૂપ ઇચ્છિત સ્થાનની પ્રાપ્તિ મોક્ષમિલાપીઓને પ્રભુના ઉપદેશથી જ થઈ છે. એટલા માટે તેમને ‘માર્ગદય’ સૂત્રકારે કહ્યા છે.

‘શરણદય’ જગતના દુઃખોથી સન્તપ્ત થયેલ પ્રાણીઓને માટે રક્ષણનું જે સૌથી શ્રેષ્ઠ સ્થાન છે, તેનું નામ શરણ છે. એવું સ્થાન કંઈ એક મોક્ષ જ છે. આ (મોક્ષ) પદને આપનારા પ્રભુ જ છે, એટલા માટે તેઓ શરણદય છે. આ સંસાર એક મયંકર ‘કાન્તાર’ (અટવી) છે. આમાં વિચરનારા પ્રાણીઓ સગરૂપી પંચાનન

અનગારવમાં મૃતશિવિનીટીકા. સૂ. ૩ સુધમાં સ્વામિનઃ સમ્પાનગર્વા સમવસરણમ્ ૩૨
 ક્રોધદાવાનલ-માનમહાગિરિ-માયાપિશાચી-લોભમહાજગર-વિપયાવલીવિપવલી-
 કુગુરુતસ્કરકર્મ મકૃતિવૃક્ષાલી-મિથ્યાત્વમહાઅપકારચતુર્ગતિદીર્ઘાધ્વતૃણામહાસરિ-
 દાસ્રવજલ-કુશ્રદ્વામવાહ કૃતિસતપ્રરુપણા-તરદ્વ-કુશીલતટે-દ્વિયગળમકર-સંયોગ-
 વિયોગકણ્ઠક નરકનિગોદ મહાવર્ત્તોમિમુલ્ય વહ નાનાવિષદુઃસ્વપરમ્પરાસંકલેશસંવ્રસ્તા-
 નાં પ્રાણિનાં નિરુપદ્રવ્યમચલમરુજમવ્યાવાયમપુનરાવૃત્તિકં સુરક્ષાસ્થાનં દદાતીતિ ભાવઃ।

અર્થ-‘અભયદયેન, -ચક્ષુર્દયેન, -માર્ગદયેન, -શરણદયેન’ इत्येतत्पदचतुष्ट-
 સ્વાયમભિપ્રાયઃ—

यथा कोऽपिकारुणिकः पुरुषोऽनेकविधभ्वापदादिकीर्णे महारण्ये तरवरनिक-
 से, द्वेप रूपी व्याघ्र से क्रोध रूपी दावानल से मानरूपी महागिरि से,
 मायारूपी महापिशाची से, लोभ रूपी महा अजगर से, विपयावली रूपी
 विपवल्ली से, कुगुरु रूपी तस्कर से कर्मप्रवृत्ति रूपा वृक्ष पंक्ति से, मिथ्यात्व
 रूपी महाअन्धकार से चतुर्गति रूपी चिकट लम्बे मार्ग से, तृष्णा रूपी
 महानदी से आस्रव रूपी जल से व्रस्त कुश्रद्धा रूपी प्रवाह से कृत्स्न प्ररुपणा-
 तरद्वો से कुशील रूपी तटसे इन्द्रियगળ रूपी मकर से संयोग वियोगरूपी
 કેંટકોં से નરક एवं નિગોદ રૂપી મહા આવર્તોં મેં પરિભ્રમણ જન્ય અનેક
 વિષ દુઃખ પરમ્પરા કે સંલેશોં સે હો રહે હેં। ઉન્હેં હસ સંસાર કાન્તાર-
 કે દુઃખોં સે છુટાકર નિરુપદ્રવ્ય, અચલ, અરુજ, અન્યાયાથ એવં અપુન-
 રાવૃત્તિક સિદ્ધિનામ કા સુરક્ષિત સ્થાન દેને વાલે યદિ કોઈ હેં તો વે
 એક મગવાન હી હેં। હસીલિયે વે “શરણદય” કહલાયે હેં। અભયદય ચક્ષુ
 ર્દય માર્ગદય તથા શરણદય હન ચાર પદોં કા યહ અભિપ્રાય હેં કિ-જિમ

(અંહ)થી, દ્વેષરૂપી વ્યાધથી, ક્રોધરૂપી દાવાનલથી, માનરૂપી મહા પર્વતથી, માયારૂપી
 મહાપિશાચીથી, લોભરૂપી મહા અજગરથી વિપયાવલીરૂપી વિપની વેલથી, કુગુરુ (પશાળ
 શુઃ) રૂપી ચોરથી, કર્મની પ્રવૃત્તિરૂપી આઠની પાંતીથી, મિથ્યાત્વ (મિથ્યાપણ)રૂપી
 ધાર અન્ધારાથી, ચતુર્ગતિરૂપી ચિકટ લાંબા રસ્તાથી, તૃષ્ણારૂપી મહા નદીથી, આસ્રવ
 (કર્મનું) આત્મામાં દાખલ થવું તે)રૂપી પાણીથી, કુશ્રદ્ધારૂપી પ્રવાહથી, કૃત્સિત પ્ર પાણી-
 રૂપી મોઝાઓથી, કુશીલરૂપી કિનારાથી, ઇન્દ્રિયોના અમૂલ્યરૂપી મગરથી, સંયોગ વિયોગ
 રૂપી કાંટાઓથી તક અને નિગોદરૂપી મહા આવર્તો (ચકરી અથવા પાણીની બમરી)
 માં પરિભ્રમણથી ઉત્પન્ન અનેકવિધ દુઃખની પરંપરાના સંલેશોથી વ્રસ્ત થઈ રહ્યા
 છે. તેમને આ સંસાર કાન્તાર (નિર્જન જંગલ)ના દુઃખોથી મુક્ત કરાવીને નિરુપદ્રવ્ય,
 અચલ, અરુજ, અન્યાયાથ અને અપુનરાવૃત્તિક-સિદ્ધિનામનું સુરક્ષિત સ્થાન આપનાર
 વે કોઈ છે તો તે એક મગવાન જ છે. એટલા માટે તેઓ “શરણદય” કહેવામાં આવ્યા છે.
 અભયદય, ચક્ષુર્દય માર્ગદય તથા શરણદય આ ચાર પદોના એ અર્થ છે કે-જેવી રીતે કોઈ

રાપદ્વતસર્વસ્વં ભયસ્થાનપતિતં પટ્ટિકાદદ્યદ્વચક્ષુષં પુરુષં નિરીક્ષ્ય તમભયરૂપમધુરાભા
પાદિતા સંતોષ્ય પટ્ટિકાપનોદેન ચક્ષુર્દત્વા માર્ગપદર્શનપૂર્વકં નિરુપદ્રવં સ્થાનં પ્રાપયતિ,
તથૈવ ભગવાનપિ નાનાવિધવલેશસન્તાપસંકુલે વિપુલે ભવારણ્યે કર્મતસ્કરાપદ્વતાત્મગુણ
સર્વસ્વં મોહાચ્છાદિતનેત્રં મન્યજનં 'મો મન્ય ! મા મૈપીઃ, બુદ્ધ્યસ્વ નિજાત્મ-
સ્વરૂપમ્' इति सम्बोधनपुरस्सरं सन्तोष्य ज्ञानचक्षुर्दानेन सम्यग्दर्शनादिलक्षणं
મોક્ષમાર્ગ પ્રદર્શ્ય નિર્વાણરૂપં શરણં દદાતીતિ ।

મકાર કોઈ કારુણિક (દયાળુ) પુરુષ અનેક વિધ હિંસ્રજન્તુઓં સે આકીર્ણ
હુપ મહારણ્ય મેં ચોરોં દ્વારા જિસકા સર્વસ્વ હરણ કર લિયા ગયા હૈ
ઔર જિસે ભયસ્થાન મેં ઢાલ દિયા ગયા હૈ-તથા દોનોં ઔલેં
જિસકી દૃઢ પટ્ટી સે વાંધ કર જકડ દી ગઈ હૈં એસે પુરુષ કો દેખકર
કરુણાભાવ સે ઉસે અભયપદ મધુર મધુર સ્નેહોત્પાદક આલાપોં સે
ધૈર્ય વંધાતા હૈ-આંલોં સે પટ્ટી ધોલકર ઉસે ચક્ષુ પ્રદાન કરતા હૈ
ઔર અન્ત મેં માર્ગ દિશાકર ઉસે નિરુપદ્રવસ્થાન મેં પહુંચા દેતા હૈ, ઉસી
તરહ પ્રશ્નુ મી નાનાવિધ વલેશ ઔર સન્તાપ સે સંકુલ (ધિરે) હુપ હસ વિસ્તૃત
ભવારણ્ય મેં કર્મ રૂપી લુટેરોં દ્વારા જિસકા આત્મગુણ સર્વસ્વરૂપ છૂટ
લિયા ગયા હૈ તથા જિસકે આન્તર જ્ઞાનરૂપ ચક્ષુઓં પર મોહરૂપી પટ્ટી
વાંધ દી ગઈ હૈ એસે મન્યજન કો હૈ મન્યો તુમ મત ડરો, અપને આત્મ
સ્વરૂપ કો સમજો "इन वचनो द्वारा संतोषित कर उसे ज्ञान रूपी चक्षु
પ્રદાનકર સમ્યગ્દર્શનાદિય મોક્ષમાર્ગ કો દિશા કર નિર્વાણરૂપ અભય-
સ્થાન મેં પહુંચા દેતે હૈં

કારુણિક (દયાળુ) પુરુષ અનેક જાતના હિંસ્રક પશુઓથી આકાંત મોટા જંગલમાં
ચોરાએ જેતું સર્વસ્વ હરી લીધું છે, અને જેને ભયસ્થાનમાં ફેંકવામાં આવ્યો છે,
તેમજ તેની બન્ને આંખો મજબૂત પટ્ટીથી બાંધીને કસવામાં આવી છે, એવા પુરુષને
કરુણાવાધી તેને નિર્ભય બનાવનાર મીઠા મીઠા વચનોથી ધીરજ આપે છે, આંખોની
પટ્ટી ખોલીને તેને દૃષ્ટિ અર્પે છે અને અંતે તેને રસ્તો બતાવીને નિરુપદ્રવ સ્થાનમાં
પહોંચાડે છે, તેમજ પ્રભુ પણ અનેક જાતના કલેશ અને સન્તાપથી ઘેરાયેલા આ
વિશાલ ભવારણ્યમાં કર્મરૂપી લુટારાઓવડે જેતું સર્વસ્વરૂપ આત્મગુણ છૂંટાઈ ગયું
છે, તેમજ જેમના આન્તરજ્ઞાનરૂપ ચક્ષુઓ ઉપર મોહ (અજ્ઞાન)રૂપી પટ્ટી બાંધવામાં
આવી છે, એવા ભવ્યજનને "હું ભવ્યો તમે મા બીશિયા, પોતાના આત્મસ્વરૂપને
સમજો," આ પ્રકારના વચનો વડે અંતુષ્ટ કરીને તેમને જ્ઞાનરૂપી ચક્ષુ અર્પીને
સમ્યગ્દર્શનાદિરૂપ મોક્ષમાર્ગને બતાવીને નિર્વાણરૂપ અભયસ્થાનમાં પહોંચાડે છે.

જીવદયેન-જોવેપુ દયતે ઇતિ જીવદયઃ, યદ્વા-જીવન્તિ મુનયો યેન સ જીવઃ= સંયમજીવિતં, તં દયત ઇતિ જીવદયસ્તેન । ‘ચોદિદણં’ ચોધિદયેન-ચોધનં ચોધિ= જિનધર્મપ્રાપ્તિઃ, પ્રથમસંવેગનિર્વેદાનુકમ્પાઽઽસ્તિક્વયાનાં પશ્ચાન્નુપૂર્વ્યાં પ્રાદુર્ભાવોચા, તં દયતે ઇતિચોધિદયસ્તેન । ‘ધમ્મદણં’ ધર્મદયેન-ધર્મઃ=શ્રુતચારિત્રલક્ષણસ્તસ્ય દયેન ‘ધમ્મદેસણં’ ધર્મદેશકેન-ધર્મઃ=અગારાનગારરૂપસ્તસ્ય દેશકઃ=પ્રરૂપકસ્તેન । ‘ધમ્મનાયગેણં’ ધર્મનાયકેણ ધર્મઃ=ક્ષાયિકજ્ઞાનદર્શનચારિત્રાત્મકસ્તસ્ય । નાયકઃ=સ્વામી-યથાવત્પરિપાલનેન તત્પલપરિભોગાત્, યદ્વા-ધર્મઃ=શ્રુતચારિત્રલક્ષણસ્તસ્ય નાયકઃ સ્વશાસનાપેક્ષયા તત્પ્રરૂપકત્વાત્, તેન । ‘ધમ્મસારહિણા’ ધર્મસાર-

‘જીવદય’ જીવોં પર દયા કરને ચાલે હોને સે અથવા સંયમરૂપ જીવન પ્રદાન કરને ચાલે હોને સે પ્રભુ મેં જીવદય યહ વિશેષણ સાર્થક હૈ । ચોધિદય-જિનધર્મ કી પ્રાપ્તિ હોને કા નામ ચોધિ હૈ-અથવા પશ્ચાન્નુપૂર્વોં સે પ્રથમ સંવેગ નિર્વેદ અનુકમ્પા તથા અસ્તિક્વ્ય ઇન માર્ગોં કા પ્રાદુર્ભાવ હોના હસકા નામ મી ચોધિ હૈ, યહ ચોધિ પ્રભુ દ્વારા હી જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતી હૈ । હસલિયે ઉન્હેં ચોધિદય કહા ગયા હૈ । શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કા ઉપદેશ જીવોં કો પ્રભુ સે મિલતા હૈ-હસલિયે ઉન્હેં ધર્મદય, તથા અગાર શ્રાવક ઔર અનગારમુનિ રૂપ ધર્મ કી પ્રરૂપણા પ્રભુ દ્વારા હી હુઈ હૈ । હસલિયે ઉન્હેં ધર્મદેશક કહા ગયા હૈ । તથા વે ક્ષાયિક જ્ઞાન ક્ષાયિક દર્શન, ઔર ક્ષાયિક ચારિત્ર રૂપ ધર્મ કે સ્વામી હૈં ક્યોંકિ વે હનકા યથાવત્ પાલન કરતે હૈં ઔર ઉનકે મુલોં કા પરિભોગ કરતે હૈં હસલિયે વે ધર્મનાયક હૈં । અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કી ઉન્હેંને પ્રરૂપણા અપને શાસન કી અપેક્ષા

‘જીવદય’ જીવોં ઉપર દયા કરનાર હોવાથી અથવા સંયમરૂપ જીવન આપનાર હોવાથી પ્રભુ માટે ‘જીવદય’ આ વિશેષણ સાર્થક છે. ‘જોધિદય’ જિનધર્મ પ્રેરણાવાળો તેનું નામ જોધિ છે, અથવા પશ્ચાન્નુપૂર્વોં વડે પ્રથમ, સંવેગ, નિર્વેદ, અનુકમ્પા અને આસ્તિક્ય ભાવોના જન્મ થવો એનું નામ પણ જોધિ છે. આ જોધિ પ્રભુવડે જ જીવોને મળે છે. એટલા માટે તેમને જોધિદય કહેવામાં આવ્યા છે. જીવોને શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મના ઉપદેશ પ્રભુથી જ મળે છે, એથી જ તેઓ ધર્મદય નામે પ્રસિદ્ધિ પામ્યા છે. તેમજ અંગાર શ્રાવક અને અનગાર મુનિરૂપ ધર્મની પ્રરૂપણા પ્રભુવડે જ થઈ છે, એથી જ તેમને ધર્મદેશક કહેલ છે. તેમજ તેઓ ક્ષાયિકજ્ઞાન, ક્ષાયિકદર્શન અને ક્ષાયિક ચારિત્રરૂપ ધર્મના સ્વામી છે, કેમકે તેઓ તેને સારી રીતે પોષે છે, અને તેઓના કૃપાને તેઓ સારી રીતે ભોગવે છે, એટલા માટે જ તેઓ ધર્મનાયક છે. અથવા પોતાના શાસનની અપેક્ષાથી જ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની તેઓએ પ્રરૂપણા કરી છે, એટલા માટે પણ તે તેના (ધર્મના) નાયક છે. ‘ધર્મસારથી’ સારથીની એ કરજ

થિના-ધર્મસ્ય સારથિઃ=સંચાલકઃ-ધર્મસારથિસ્તેન ! યથા સારથિરુન્માર્ગે ગચ્છન્તે
 રથં સન્માર્ગમાનયતિ તથા ભગવાનપિ શ્રુતચારિત્રધર્મસ્થલિતાન્ તદ્રક્ષણોપદેશેન
 પુનર્ધર્મમાર્ગે સ્થાપયતીતિ । ‘ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તિ-
 ના=દાનશીલતપોભાવૈશ્વતૃષ્ણાં નરકાદિગતીનાં ચતુર્ણાં વા કપાયાનામન્તો નાશો
 યસ્માત્ સ ચતુરન્તઃ, ચતુરન્ત એવ ચાતુરન્તઃ, ચક્રમિવ ચક્રમ્, ચાતુરન્ત એવ
 ચક્રમ્=ચાતુરન્તચક્રમ્ જન્મજરામરણોચ્છેદકત્વેન ચક્રતુલ્યત્વાત્, વરં ચ તથાતુરન્ત-
 ચક્રમ્=વરચાતુરન્તચક્રમ્, વરપદેન રાજચક્રાપેક્ષયાઽસ્ય શ્રેષ્ઠત્વં વ્યજ્યતે લોકદ્વય-
 સાધકત્વાત્ ધર્મએવ વરચાતુરન્તચક્રં=ધર્મવરચાતુરન્તચક્રમ્, તેન વર્તિતું શીલમસ્યેતિ

કી હૈ હસલિયે મ્હી વે ઉસકે નાયક હૈ। ધર્મસારથી-સારથી કા યહ
 કર્તવ્ય હોતા હૈ કિ વહ રથકા સંચાલન ઠીકર રૂપ સે કરેં યદિ વહ
 ઉન્માર્ગ પર જા રહા હૈ-તો ઉસે સન્માર્ગ પર લે આવે। અતઃ હસ અપને
 કર્તવ્ય કા પાલક જૈસે સારથી હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર પ્રભુને મ્હી ધર્મરૂપી
 રથ કા અચ્છી તરહ સે સંચાલન ક્રિયા હૈ। યદિ કોઈ પ્રાણી ધર્મરૂપી રથ
 કો ઉન્માર્ગ મેં લે જાતા હૈ-અર્થાત્ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ સ્થલિત હોતા હૈ
 તો પ્રભુ ઉસકી રક્ષા કરને કે ઉપદેશ સે પુનઃ ઉસ ધર્મ મેં સંસ્થાપિત કર
 દેતે હૈ। ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તી દાન શીલ તપ એવં ભાવોં દ્વારા નરકાદિ
 ચાર ગતિયોં કા અથવા ક્રોધાદિ ચાર કપાયોં કા યહ ધર્મનાશક હોતા
 હૈ હસ લિયે વહ ચતુરન્ત હૈ। જન્મ, જરા એવં મરણ કા ઉચ્છેદક હોને
 સે ધર્મકો ચક્ર કે સમાન પ્રકટ ક્રિયા ગયા હૈ। વર શબ્દ કા
 અર્થ શ્રેષ્ઠ હૈ હસસે યહ બોધ હોતા હૈ કિ રાજ ચક્ર કી અપેક્ષા
 મ્હી યહ ધર્મરૂપી ચક્ર શ્રેષ્ઠ હૈ। કયોં કિ હસસે જીવ કે દોનોં લોક

હોય છે કે તે સારી પેઠે રથને હાંકે, ને તે ઉન્માર્ગે (ખોટે રસ્તે) જતો હોય તો
 તેને સન્માર્ગ (સારા રસ્તા) તરફ વાળે. માટે જેમ આ સારથી પોતાની ફરજને પાળનાર
 હોય છે. તે પ્રમાણે જ પ્રભુએ પણ ધર્મરૂપી રથને સારી પેઠે હાંક્યો છે. ને ગમે તે
 પ્રાણી ધર્મરૂપી રથને ઉન્માર્ગ (ખોટા રસ્તા) તરફ લઈ જવાનો પ્રયત્ન કરે અર્થાત્ શ્રુતચારિ-
 ત્રરૂપ ધર્મનું અનલથાય એ રીતનું વર્તન કરે તો પ્રભુ તેના રક્ષક થાય, એટલે કે ધર્મના
 ઉપદેશથી તેને ફરી ધર્મમાં સંસ્થાપિત કરે છે. ધર્મવરચાતુરન્ત ચક્રવર્તી દાન, શીલ,
 તપ અને ભાવો વડે નરક વગેરે ચાર ગતિયોને અથવા ક્રોધ વગેરે ચાર કપાયોને આ ધર્મ
 નાશ કરનારો હોય છે, એટલા માટે તે ‘ચતુરન્ત’ છે. જન્મ, જરા [વૃદ્ધાવસ્થા] અને મૃત્યુને
 નાશ કરનાર હોવાથી ધર્મને ચક્રના આકારે બતાવ્યો છે. વર શબ્દનો અર્થ શ્રેષ્ઠ છે.
 એનાથી એમ જણાય છે કે ‘રાજચક્ર’ કરતાં પણ ધર્મચક્ર અધિયાતું છે. કેમકે

અનગારધર્મામૃતવર્ષિણી ટીકા. મૂ. ૩ સુચર્મસ્યામિનઃચમ્પાનગર્થો સમવસરણમ્ ૫૩

ધર્મવરચાતુરન્તચક્રચર્તી=લોકોનર ધર્મપ્રવર્તકસ્તેન ધર્મવરચાતુરન્તચક્રચર્તિના ।
 'દ્વીપો' દ્વીપઃ સંસારસમુદ્રે નિમજ્જતાં દ્વીપ 'તુલ્યઃ', 'ત્રાણં' ત્રાણં=કર્મકદર્ધિતાનાં
 મનુષ્યાનાં રક્ષણસમૂહઃ, અતएव તેષાં 'સરણગર્હ' શરણગતિઃ=આશ્રયસ્થાનમ્,
 'પદ્મત્રાણં' પ્રતિષ્ઠાનં=કાલત્રયેऽપ્યવિનાશિત્વેન સ્થિતઃ, તેન, અત્ર તૃતીયાર્થે પ્રથમા ।
 'અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનધરેણ' અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનધરેણ-પ્રતિહત-મિત્યાધા-
 ચરણસ્વલિતં ન પ્રતિહતમ્અપ્રતિહતં, જ્ઞાનશ્ચદર્શનશ્ચેતિ જ્ઞાનદર્શને, અપ્રતિહતે
 વરજ્ઞાનદર્શને અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શને, ધરતીતિધરઃ-અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનયોધરઃ,

સુભાવહ વનતે હૈં ધર્મરૂપી શ્રેષ્ઠ ચાતુરન્ત ચક્ર સે વર્તન કરને કા પ્રમુ કા
 સ્વભાવ હૈ અતઃ વે ધર્મવરચાતુરન્ત ચક્રચર્તી હૈં । હસ કા નિષ્કર્પાર્થ યહ
 હૈ કિ પ્રમુને જિસ ધર્મ કી પ્રરૂપણા કી હૈ વહ લોકોત્તર હૈ એસે લોકોત્તર
 ધર્મ કે પ્રવર્તક પ્રમુ કે સિવાય ઓર દૂસરા કોઈ નહીં હો સકતા હૈ ।
 પ્રમુ દ્વીપ તુલ્ય હસલિયે પ્રકટ કિયે ગયે હૈં કિ વે સંસારરૂપી સમુદ્ર મેં
 ડૂબતે હુણ પ્રાણિયોં કો ઇક દ્વીપ કે સમાન સહારા પ્રદાન કરને વાલે
 હૈ । "ત્રાણં" પ્રમુ કર્મોં સે કદર્ધિત હુણ મનુષ્ય જીવોં કો રક્ષણ કરને મેં
 સમર્થ હૈં હસલિયે ત્રાણરૂપ હૈં । હસલિયે "શરણગતિઃ" ઉન્હેં આશ્રયસ્થાન
 હૈં । કાલત્રય મેં ભી અવિનાશીરૂપ સે સ્થિત રહને કે કારણ
 પ્રમુ પ્રતિષ્ઠાન સ્વરૂપ હૈં અપ્રતિહત વરજ્ઞાનદર્શન ધર-પ્રમુ કે અનન્તજ્ઞાન
 ઓર અનન્ત દર્શન ત્રિકાલ મેં ભી કિસી ભી પદાર્થ દ્વારા પ્રતિહત નહીં
 હો સકતે હૈં-હસલિયે ઉન્હેં અપ્રતિહત કહા ગયા હૈં । અપ્રતિહતજ્ઞાન ઓર
 દર્શન કો ધારણ કરને વાલે કેવલ ઇક પ્રમુ હૈં હસલિયે વે ઉસ વિશે-

એનાથી છવના અને લોક [ઇહલોક અને પરલોક] સુખી બને છે. ધર્મરૂપી શ્રેષ્ઠ
 ચાતુરન્ત ચક્રવર્તે વર્તવાની પ્રભુની ટેવ છે. એટલા માટે તેઓ ધર્મવર ચાતુરન્ત
 ચક્રચર્તી છે. એનો નિષ્કર્ષરૂપે આ અર્થ છે કે પ્રભુએ જે ધર્મની પ્રરૂપણા
 કરી છે, તે [ધર્મ] લોકોત્તર [અલોકિત અથવા અસાધારણ] છે. એવા લોકોત્તર ધર્મને
 પ્રવર્તનાર પ્રભુ વિના અન્ય બીજો કોઈ પણ ન થઈ શકે. પ્રભુને દ્વીપ (ખેત)ના જેવા
 એટલા માટે બતાવવામાં આવ્યા છે કે તેઓ સંસારરૂપી સમુદ્રમાં ડૂબનારા પ્રાણિઓને
 એક દ્વીપની જેમ સહારો આપનાર છે. 'ત્રાણ' કર્મો વડે કદર્ધિત [દુઃખિત] થયેલ
 છવોનું રક્ષણ કરવામાં પ્રભુ સમર્થ છે, એટલા માટે ત્રાણરૂપ છે. એથી જ 'શરણ-
 ગતિઃ' તેઓનું આશ્રય આપનારું સ્થાન છે. ત્રણે કાળમાં પણ અવિનાશીરૂપે [એક-
 રૂપે] સ્થિત રહેવાને લીધે પ્રભુ પ્રતિષ્ઠાન સ્વરૂપ છે. 'અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનધર' પ્રભુનું
 અનન્તજ્ઞાન અને અનન્તદર્શન ત્રણે કાળોમાં પણ ગમે તે પદાર્થ વડે પ્રતિહત
 [પ્રતિબંધ પામેલું] થઈ શકતું નથી, એથી જ તેમને અપ્રતિહત કહેવામાં આવ્યા
 છે. કદત એક પ્રભુ જ અપ્રતિહતજ્ઞાન અને દર્શનને ધારણ કરનારા છે. એટલા માટે તેઓને આ

ધિના-ધર્મસ્ય સારથિઃ=સંચાલકઃ-ધર્મસારથિસ્તેન ! યથા સારથિરુન્માર્ગે ગચ્છન્તં
 રથં સન્માર્ગમાનયતિ તથા ભગવાનપિ શ્રુતચારિત્રધર્મસ્થલિતાન્ તદ્રક્ષણોપદેશેન
 પુનર્ધર્મમાર્ગે સ્થાપયતીતિ । ‘ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તિના’ ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તિ-
 ના=દાનશીલતપોભાવૈશ્વતપૃષ્ઠાં નરકાદિગતીનાં ચતુર્ણાં ત્રા કપાયાનામન્તો નાશો
 યસ્માત્ સ ચતુરન્તઃ, ચતુરન્ત એવ ચાતુરન્તઃ, ચક્રમિવ ચક્રમ્, ચાતુરન્ત એવ-
 ચક્રમ્=ચાતુરન્તચક્રમ્ જન્મજરામરણોચ્છેદકત્વેન ચક્રતુલ્યત્વાત્, વરં ચ તચાતુરન્ત-
 ચક્રમ્=વરચાતુરન્તચક્રમ્, વરપદેન રાજચક્રાપેક્ષયાઽસ્ય શ્રેષ્ઠત્વં વ્યજ્યતે લોકદ્વય-
 સાધકત્વાત્ ધર્મએવ વરચાતુરન્તચક્રં=ધર્મવરચાતુરન્તચક્રમ્, તેન વર્તિતું શીલમસ્યેતિ

કી હૈ ફસલિયે ભી વે ઉસકે નોયક હૈ। ધર્મસારથી-સારથી કા યહ
 કર્તવ્ય હોતા હૈ કિ વહ રથકા સંચાલન ઠીકર રૂપ સે કરેં યદિ વહ
 ઉન્માર્ગ પર જા રહ્યા હૈ-તો ઉસે સન્માર્ગ પર લે આવે। અતઃ ફસ અપને
 કર્તવ્ય કા પાલક જૈસે સારથી હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર પ્રભુને ભી ધર્મરૂપી
 રથ કા અચ્છી તરહ સે સંચાલન કિયા હૈ। યદિ કોઈ પ્રાણી ધર્મરૂપી રથ
 કો ઉન્માર્ગ મેં લે જાતા હૈ-અર્થાત્ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ સ્થલિત હોતા હૈ
 તો પ્રભુ ઉસકી રક્ષા કરને કે ઉપદેશ સે પુનઃ ઉસ ધર્મ મેં સંસ્થાપિત કર
 દેતે હૈ। ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તી દાન શીલ તપ એવં ભાવોં દ્વારા નરકાદિ
 ચાર ગતિયોં કા અથવા ક્રોધાદિ ચાર કપાયોં કા યહ ધર્મ નાશક હોતા
 હૈ ફસ લિયે વહ ચતુરન્ત હૈ। જન્મ, જરા એવં મરણ કા ઉચ્છેદક હોને
 સે ધર્મકો ચક્ર કે સમાન પ્રકટ કિયા ગયા હૈ। વર શબ્દ કા
 અર્થ શ્રેષ્ઠ હૈ ફસસે યહ યોધ હોતા હૈ કિ રાજ ચક્ર કી અપેક્ષા
 ભી યહ ધર્મરૂપી ચક્ર શ્રેષ્ઠ હૈ। કયોં કિ ફસસે જીવ કે દોનોં લોક

હોય છે કે તે સારી પેઠે રથને હાંકે, જો તે ઉન્માર્ગે (ખોટા રસ્તે) જતો હોય તો
 તેને સન્માર્ગ (સારા રસ્તા) તરફ વાળે. ખોટા જોમ આ સારથી પોતાની ફરજને પાળનાર
 હોય છે. તે પ્રમાણે જ પ્રભુએ પણ ધર્મરૂપી રથને ચારી પેઠે હાંક્યો છે. જો ગમે તે
 પ્રાણી ધર્મરૂપી રથને ઉન્માર્ગ (ખોટા રસ્તા) તરફ લઈ જવાનો પ્રયત્ન કરે અર્થાત્ શ્રુતચારિ-
 ત્રવિરૂધ્ધ ધર્મનું સ્ખનન થાય એવી તત્ત્વ વર્તન કરે તો પ્રભુ તેના રક્ષક થાય, એટલે કે ધર્મના
 ઉપદેશથી તેને ફરી ધર્મમાં સંસ્થાપિત કરે છે. ધર્મવરચાતુરન્ત ચક્રવર્તી દાન, શીલ,
 તપ અને ભાવો વડે નરક વગેરે ચાર ગતિયોને અથવા ક્રોધ વગેરે ચાર કપાયોને આ ધર્મ
 નાશ કરનારો હોય છે, એટલા ખોટા તે ‘ચતુરન્ત’ છે. જન્મ, જરા [વૃદ્ધાવસ્થા] અને મૃત્યુને
 નાશ કરનાર હોવાથી ધર્મને ચક્રના આકારે બતાવ્યો છે. વર શબ્દનો અર્થ શ્રેષ્ઠ છે.
 એનાથી એમ જણાય છે કે ‘રાજચક્ર’ કરતાં પણ ધર્મચક્ર અધિચતુર છે. કેમકે

પ્રાપ્તેન । 'બોધણ' બોધકેન-બુધ્યમાનાન્ અન્યાન્ ભવ્યજીવાન્ પ્રેરયતીતિ
 બોધકસ્તેન । 'મુક્તેણ' મુક્તેન-અમોચિ સ્વયંકર્મપજ્જરાદિતિ મુક્તસ્તેન । 'મોયગેણ'
 મોચકેન-મુચ્યમાનાન્-ભવ્યજીવાન્ પ્રેરયતીતિ મોચકસ્તેન । 'સચ્ચણ્ણા' સર્વ-
 જ્ઞેન-સર્વસકલદ્રવ્યગુણપર્યાયલક્ષણં વસ્તુજાતં યાથાતથ્યેન જાનાતીતિ સર્વજ્ઞઃ,
 તેન । 'સચ્ચદરિસિણા' સર્વદર્શિના-સર્વ-સમસ્તં પદાર્થસ્વરૂપં સામાન્યેન દ્રષ્ટું શીલ-
 મસ્પાઽસૌ સર્વદર્શી તેન । 'સિવં' શિવં-નિલિલોપદ્રવરહિતત્વાત્, શિવં કલ્યાણમયં,
 'સ્થાનં' इत्यस्य विशेषणमिदम्, શિવાદીનાં સર્વેષાં દ્વિતીયાન્તાનામગ્રેત્તનેન
 'ઉપગતેન'-इत्यनेनाऽन्वयः । 'અચલં' અચલં-સ્વામાયિક-પ્રાયોગિક-ચલનક્રિ

જીવોં કો પ્રભુને બોધ પ્રાપ્ત કરને કી પ્રેરણા પ્રદાન કી इसलिये वे बोधक
 हैं, कर्म पंजर से प्रभु स्वयं छूटे इसलिये मुक्त, तथा अन्य भव्य जीवों
 को कर्म पंजर से छूटने की प्रेरणा की इसलिये मोचक हैं। समस्त द्रव्य
 और उनके गुण पर्यायों के यथार्थ ज्ञाता होने से प्रभु सर्वज्ञ हैं तथा
 समस्त पदार्थों का स्वरूप वे सामान्य रूप से जानते हैं इसलिये सर्वदर्शी
 हैं । (सिवमयलमरुयमणंतमक्खयमन्वावाहमपुणरचित्तियं साससंठाणं
 उवागएणं पंचमस्स अंगस्स विवाइपण्णत्तीय अयमट्ठे पण्णत्ते छट्ठस्स णं भंते
 अंगस्स जायाधम्मकहाणं के अट्ठे पण्णत्ते) शिव अचल अरुज अणंन अस्य,
 अव्याघाद्य एवं अपुनरावृत्तिरूप ऐसे शाश्वत स्थान को प्रभुने प्राप्त किया
 है। यह स्थान समस्त उपद्रवों से रहित होने के कारण कल्याण मय
 कहा गया है-इसलिये शिवरूप हैं, इसमें स्वभाविक तथा प्रायोगिक
 किसी भी तरह की चलन क्रिया नहीं है इसलिये अचलरूप हैं, इसमें

બોધ પ્રાપ્ત કરવાની પ્રેરણા આપી એટલા માટે તેઓ બોધક છે. કર્મના પાંજરામાંથી
 પ્રભુ બંતે મુક્ત થયા, એટલા માટે મુક્ત તેમજ બીજા ભવ્ય છુપોને કર્મના પાંજરા-
 માંથી મુક્તિ મેળવવાની પ્રેરણા આપી એટલે તેઓ મોચક છે. બધા દ્રવ્ય અને
 તેમના ગુણપર્યાયો (પદાર્થના ગુણ અથવા ધર્મો)નાં સાચા જ્ઞાતા હોવાથી પ્રભુ સર્વજ્ઞ
 છે. તેમજ બધા પદાર્થોના સ્વરૂપને તેઓ સામાન્યરૂપમાં સમજે છે. એટલા માટે
 સર્વદર્શી છે. (સિવ મલય મરુય મણંત મક્કલયમન્વાવાહમપુણરાચિત્તિયં સાસસં
 ઠાણં ઉવાગણં પંચમસ્સ અંગસ્સ વિવાઇપણ્ણત્તીય અયમટ્ઠે પણ્ણત્તે છટ્ઠસ્સ-
 ણં ભંતે અંગસ્સ જાયાધમ્મકહાણં કે અટ્ઠે પણ્ણત્તે) શિવ, અચળ, અરુજ,
 અણુતં, અક્ષય, અન્યાગ્રાહ અને અપુનરાવૃત્તિરૂપ એવા શાશ્વત સ્થાનને પ્રભુએ
 મેળવ્યું છે. આ સ્થાન બધા ઉપદ્રવો વગર હોવાને કારણે કલ્યાણમય બતાવવામાં
 આવ્યું છે. એટલા માટે શિવરૂપ છે. આમાં સ્વાભાવિક તેમજ પ્રાયોગિક કોઇ પણ
 બતાવી બસવાની ક્રિયા [ચલિત થવાની ક્રિયા] નથી, એટલા માટે જ અચળરૂપ છે.

નેન આવરણ રહિત કેવલજ્ઞાન કેવલદર્શનધારણા । 'નિવૃત્તછમ્બે' વ્યાવૃત્ત-
 છદ્ધના-છાદ્યતે-આવ્રિયતે કેવલજ્ઞાન કેવલદર્શનાઘાત્મનોડનેનેતિ-છમ્બ=વાતિક
 કર્મવૃન્દં જ્ઞાનાડ્ઢવરણીયાદિરૂપં વા કર્મજાતમ વ્યાવૃત્ત-નિવૃત્ત-છમ્બ યસ્માત્ ત
 વ્યાવૃત્તછદ્ધ, તેન વ્યાવૃત્તછદ્ધના । જિણેણં' જિનેન-રાગદ્વેષાદિશત્રુવિજય-
 શીલેન । 'જાવણં' જાપકેન-રાગદ્વેષરિપું જયન્તં ભવ્યજીવગળં પ્રતિધર્મદેશના-
 દિના પ્રેરકેણ, 'જિ જયે' ઇતિધાતોર્ણિતિ-'કીરુજોનાં ણીં' ઇત્યાત્વે પુકિ પ્વુલ્ ।
 'તિણ્ણેણં' તીર્ણેન-સ્વયં સંસારીયાદ્ ઉત્તીર્ણેન । 'તારણં' તારકેણ-તારયતિ-
 -તરતોડ્ઢ્યાન્ ભવ્યમીધાન્ પ્રેરયતીતિ-તારકસ્તેન । 'બુદ્ધેણં' બુદ્ધેન-સ્વયંબોધં

પણ સે કહે ગયે હૈં । તાત્પર્ય આવરણ રહિત કેવલજ્ઞાન ઓર કેવલ
 દર્શન કો પ્રભુ ધારણ કરતે હૈં । ઇસલિયે વે અપ્રતિહત વરજ્ઞાનદર્શન વાલે
 હૈં । વ્યાવૃત્તછમ્બ-છદ્ધ શબ્દ કા અર્થ આવરણ કરના હોતા હૈ-કેવલજ્ઞાન
 કેવલદર્શન આદિરૂપ આત્મા જિન કે દ્વારા આવ્રિત કી જાતી હૈ એમે
 જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ, મોહનીય તથા અન્તરાય રૂપ ઘાતકકર્મ યા
 આઠોં કર્મ યહૌ છમ્બ શબ્દ સે કથિત હૂય હૈં । યહ છમ્બ પ્રભુ કી આત્મા
 સે નિવૃત્ત હો ચુકા હૈ અતઃ વે વ્યાવૃત્ત છમ્બ હૈં । રાગદ્વેષ આદિ શત્રુઓં
 કે વિજેતા હોને સે પ્રભુ જિન હૈં તથા જિન રાગદ્વેષ રૂપી શત્રુઓં કો
 જીતને કી પ્રેરણા ભવ્ય જીવોં કો પ્રભુને અપની ધર્મદેશના દ્વારા પ્રદાન
 કી અતઃપ્રભુ જાપક હૈં સ્વયં સંસાર સમુદ્ર સે પ્રભુ પાર તિર ચુકે હૈં
 ઇસલિયે તીર્ણ હૈં, તથા અન્ય જીવોં કો તરને કી ડન્હોને પ્રેરણા કી-અતઃ
 તારક હૈં, સ્વયંબોધ કો પ્રાપ્ત હો જાને કે કારણ પ્રભુ બુદ્ધ હૈં તથા અન્ય

વિશેષણાથી મુક્ત કહેવામાં આવ્યા છે. તાત્પર્ય એ છે કે આવરણરહિત કેવળજ્ઞાન અને
 કેવળદર્શનને પ્રભુ ધારણ કરે છે. એટલા માટે તેઓ અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનવાળા છે.
 'વ્યાવૃત્તછમ્બ' છમ્બશબ્દનો અર્થ આવરણ, કરવું હોય છે. કેવળજ્ઞાન કેવળદર્શન વગેરેરૂપ
 આત્મા તેઓ વડે આવૃત્ત (આચ્છાદિત) કરવામાં આવે છે, એવા જ્ઞાનાવરણ, દર્શના-
 વરણ, મોહનીય તેમજ વિવિધ ઘોર ઘાતકકર્મ અથવા આઠે કર્મ આઠી છમ્બ શબ્દ
 વડે કહેવામાં આવ્યાં છે. આ છમ્બ પ્રભુના આત્માથી નિવૃત્ત થઈ ગયું છે, એટલા
 માટે તેઓ વ્યાવૃત્ત છમ્બ છે. રાગદ્વેષ વગેરે શત્રુઓ ઉપર વિવિધ મેળવનાર હોવાથી
 પ્રભુ જિન છે, તેમજ આ રાગદ્વેષરૂપી શત્રુઓને છતવાની પ્રેરણા ભવ્ય છવોને
 પોતાની ધર્મ દેશના વડે પ્રભુએ જ આપી છે, એટલા માટે પ્રભુ વાપક છે. પ્રભુ
 પાતે આ સંસારસમુદ્રને પાર તરી ગયા છે, એટલા માટે તેઓ તીર્ણ છે, તેમજ
 બીજા છવોને તરવાની તેમણે પ્રેરણા આપી એટલા માટે તેઓ તારક છે. બંને
 બ્રાહ્મ (જ્ઞાન) મેળવનાર હોવાને લીધે પ્રભુ બુદ્ધ છે, તેમજ બીજા છવોને પ્રભુએ

अस्य ज्ञाताधर्मकथाङ्गस्य कोऽर्थः प्रज्ञमः ? इति प्रश्नवाक्यम् । अथ उत्तरदानाथ शिष्यं सम्बोधयति—हे जम्बूः । इति—इत्थं प्रकारेणाऽऽमन्त्रणवाक्येनाऽऽमन्त्र्य आर्यं सुधर्मा स्थविरः—आर्यजम्बूनामानमनगारमेवमवादीत्—अकथयत्—हे जम्बूः । खलु निश्चयेन—एवम्—अमुना प्रकारेण श्रमणेन भगवता महावीरेण जावत् संपाप्तेन सिद्धिगतिस्थानप्रापतेन पृच्छम्याऽङ्गस्य—ज्ञाताधर्मकथाङ्गस्य द्वौ श्रुतस्कन्धौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथाज्ञातानिच धर्मकथाश्च, एतद्वृत्तौ द्वौ श्रुतस्कन्धौ कथितौ इत्युत्तरम् पुनर्जम्बूनामाऽनगारः पृच्छं प्रस्ताति ‘जह्णं भंते’ इत्यादि—हे भगवन् ! यदि श्रमणेन भगवता महावीरेण पृच्छस्याऽङ्गस्य द्वौ श्रुतस्कन्धौ प्रज्ञप्तौ—ज्ञातानि च

कहा है तो ज्ञाता धर्मकथाङ्ग नामक छठे अंग का क्या भाव कहा है ? इस तरह अपने शिष्य जंबूस्वामी के प्रश्न को सुनकर सुधर्मास्वामी इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं कि—(जंबूत्तितर्णं अज्ज सुहम्मे येरे अज्ज जंबूणामं अणगारं एवं वयासी) हे जंबू इस प्रकार सम्बोधन वाक्य द्वारा सम्बोधितकर आर्य सुधर्मा स्वामीने आर्य जंबूनामक अनगार से इस प्रकार कहा—(एवं खलु जंबू समणेणं भगवया महावीरेण जाव संपत्तेणं छट्ठस्स अंगस्स दो सुयक्खंधा पणत्ता) हे जंबू ! श्रमण भगवान् महावीर ने जो कि पूर्वोक्त आदिकरादि विशेषणों से विशिष्ट हैं एवं शिवरूप आदि विशेषण संपन्न सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हो चुके हैं उन्होंने छठे ज्ञाताधर्मकथाङ्ग के दो श्रुतस्कंध प्ररूपित किये हैं (तं जहा णायणिंय धम्मकहाओय) वे ये हैं—१ ज्ञाता और दूसरा धर्म-कथा । (जह्णं भंते समणेणं भगवया महावीरेण जाव संपत्तेणं छट्ठस्स

इय पांचमा अंगेनो अर्थ કહ્યો છે તો જ્ઞાતાધર્મકથાંગ નામના છઠ્ઠા અંગેનો શો અર્થ કહ્યો છે. પોતાના પ્રધાન શિષ્ય જંબૂસ્વામીના આ પ્રશ્નને સાંભળીને સુધર્મા સ્વામી આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં કહે છે (જંબૂતિ તર્ણં અજ્જસુહમ્મે યેરે અજ્જ જંબૂણામં અણગારં એવં વયાસી) હે જંબૂ ! આ જ્ઞાતાના સંબોધન વચન વડે સંબોધતા આર્ય સુધર્માસ્વામીએ આર્ય જંબૂ નામક અણગારને આ પ્રમાણે કહ્યું— (એવં ખલુ જંબૂ સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણ જાવ સંપત્તેણં છટ્ઠસ્સ અંગસ્સ દો સુય-વક્કંધા પણત્તા) હે જંબૂ ! શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વડે—એઓ પૂર્વે કહેલ આદિ-કરાદિ વિશેષણોથી યુક્ત છે અને શિવરૂપ વિશેષે વિશેષણ સંપન્ન સિદ્ધિગતિ નામના સ્થાનને પ્રાપ્ત થઈ ગયા છે તેમણે—છઠ્ઠા જ્ઞાતાધર્મકથાંગના બે શ્રુતસ્કંધ નિરૂપિત કર્યા છે. (તં જહા ણાયાણિય ધમ્મકહાઓય) તે આ પ્રમાણે છે. પહેલો—જ્ઞાતા [૧] અને બીજો ધર્મકથા. [૨] (જહ્ણં ભંતે સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણ જાવ સંપત્તેણ

યારહિતમ્ । ‘અશયં’ અરુજમ્-અવિધમાના રુજા यस્ય તત્, અવિધમાનશરીર-
મનસ્કત્વાત્, આધિવ્યાધિરહિતમિત્યર્થઃ । ‘અણંતં’ અનન્તમ્-અવિધમાનોઽન્તો=
નાશો यस્ય તત્, અતएव ‘અવશયં’ અક્ષયં-નાસ્તિ લેશતોઽપિ ક્ષયો यस્ય તત્, અવિ-
નાશિ-इत्यर्थः, ‘અવ્યાવાહં’ ‘અવ્યાવાધમ્’-ન વિધતે વ્યાવાધા-પીડા દ્રવ્યતો
ભાવતશ્ચ યત્ર તત્ । ‘અપુનરાવિત્તિયં’ અપુનરાવૃત્તિકમ્-અવિધમાના પુનરાવૃત્તિઃ=
સંસારે પુનરાવર્તનં યસ્માત્ તત્, યત્ર ગત્વા ન કદાચિદપ્યાત્મા વિનિવર્તતે । इत्थ-
શુક્તશિવત્વાદિ વિશેષણવિશિષ્ટં. ‘સાસયં’ શાશ્વતં-નિત્યં ‘ઠાણં’ સ્થાનમ્-
સ્થાયતેઽસ્મિન્-इति स्थानं लोकाऽग्रलक्षणम्, ‘ઉવગણં’ ઉપગતેન-પ્રાપ્તેન શ્રમણેન
ભગવતા મહાવીરેણ પશ્ચમસ્યાદ્રસ્ય=વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞસિરૂપસ્ય અયમર્થઃ-અનન્ત-
રોદિતત્ત્વેન બુદ્ધ્યા સન્નિધાવાનીતત્ત્વાત્પ્રત્યક્ષં પ્રજ્ઞતઃ-કથિતઃ, તતઃ પશ્ચિમસ્ય-

પહુંચે હુણે જીવોં કો શરીર ઓર મન સે રહિત હોને કે કારણ આધિ-
વ્યાધિરૂપ દુઃખોં કો ભોગના નહીં પડતા હસલિયે યહ અરુજરૂપ હૈં ત્રિકાલ
મેં ભી હસ સ્થાન કા નાશ નહીં હોતા હૈં હસલિયે યહ અનન્તરૂપ હૈં
ઓર હસલિયે અવિનાશી હોને સે અક્ષયરૂપ હૈં દ્રવ્યપીડા તથા ભાવપીડા
કા હસમેં લેશતઃ ભી સમ્યગ્ધ નહીં હૈં, હસલિયે વ્યાપાધા-પીડા સે
રહિત હોને કે કારણ યહ અવ્યાપાધ રૂપ હૈં હસ સ્થાન પર પહુંચે હુણે
જીવોં કા પુનઃ સંસાર મેં કભી ભી આગમન નહીં હોતા હૈં હસલિયે યહ અપુ-
નરાવૃત્તિરૂપ હૈં શાશ્વત હોને કે કારણ યહ સ્થાન નિત્ય હૈં ઓર લોક
કે અગ્ર ભાગ મેં યહ સ્થિત હૈં એસે સ્થાન કો ભગવાન મહાવીર ને પ્રાપ્ત
કિયા હૈં અતઃ જમ્બૂસ્વામીને સુધર્માસ્વામી સે એસા પૂછા કિ એસે સ્થાન-
કો પ્રાપ્ત હુણે તથા આદિકર આદિ વિશેષણોં સે યુક્ત હુણે શ્રમણ ભગ-
વાન મહાવીર પ્રજ્ઞને વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞસિરૂપ પંચમ અંગ કા અર્થ હસ પ્રકાર

અહીં પહોંચેલ હુણેને શરીર અને મનથી રહિત હોવાને લીધે આધિવ્યાધિરૂપ દુઃખો
લોગવવાનાં રહેતાં નથી, એટલા માટે એ અરુજરૂપ છે. ત્રણે કાળોમાં પણ આ સ્થાન
નો નાશ થતો નથી, એટલા માટે આ અનંતરૂપ છે. અને એથી અવિનાશી હોવા બદલ
અક્ષયરૂપ છે, દ્રવ્ય પીડા અને ભાવપીડાનો એનાથી થોડો પણ સંબંધ નથી, એટલા
માટે વ્યાપાધા પીડાથી રહિત હોવાને કારણે આ અવ્યાપાધ રૂપ છે. આ સ્થાને
પહોંચેલ હુણેને ફરીથી સંસારમાં ક્યારેય પણ પાછા ફરવાનું થતું નથી, એટલા
માટે એ આ અપુનરાવૃત્તિરૂપ છે. શાશ્વત હોવાને લીધે આ સ્થાન નિત્ય છે, અને
લોકના અગ્રભાગમાં આ અવસ્થિત છે. એવા સ્થાનને ભગવાન મહાવીરે મેળવ્યું છે.
માટે જમ્બૂસ્વામીએ સુધર્માસ્વામીને એવું પૂછ્યું કે એવા સ્થાનને પ્રાપ્ત થયેલ તેમજ
આદિકર વગેરે વિશેષણોથી યુક્ત શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુએ વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞિત

(૧) ઉત્તિષ્ઠજ્ઞાતમ્-મેઘકુમારજીવેન સ્વ હસ્તિભવે દાવદલમાનશશક
જીવરક્ષાયે પાદ ઉત્તિષ્ઠઃ=ઝર્ધ્વીકૃત એવં ધૃત ઇતિ તદુપલસિતમિદં પ્રથમમધ્યયન-
મુત્તિષ્ઠજ્ઞાતમ્ । જ્ઞાતમિત્યુદાહરમ્-તદેવાધીયમાનત્વાદધ્યયનમ્ । એવમપ્રેડપિ ।

(૨) સદ્ગાટકઃ-ધન્યશ્રેષ્ઠિ-વિજયતસ્કરયોરેકવન્ધન વદ્ધત્વાર્થાભિધાયકં
જ્ઞાતં સદ્ગાટકજ્ઞાતમ્ ।

૧૧ પગૂળવીસડમે ॥

જંબૂ કે હસ પ્રશ્નકા ઉત્તર દેતે હુણ શ્રી મુધર્મસ્વામી કહતે હૈ-જંબૂ ?
શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને જો કિ આદિકર આદિ વિશેષણોં સે યુક્ત હૈં ઓર
શિવ આદિ રૂપ સિદ્ધિગતિ નામક સ્થાન પર વિરાજમાન હો ચુકે હૈં ઉન્હોંને
જ્ઞાતા નામક પ્રથમ શ્રુતસ્વંધ કે હસ પ્રવાર ૧૦ અધ્યયન પ્રરૂપિત દિ ચે હૈ-
વે ચે હૈ-ઉત્તિષ્ઠજ્ઞાત ૧, સંઘાટક ૨, અંક ૩, કર્મ ૪, શૈલક ૫, તુંબ ૬, રોહિણી ૭,
મહિલ ૮, માકંદી ૯, ચાન્દ્રિક ૧૦, દાવદ્રવ ૧૧, ઉદકજ્ઞાત ૧૨, મંદૂક ૧૩, તેતલિ
૧૪, નંદિકલ ૧૫, અપરકંકા ૧૬ આકીર્ણ ૧૭ સુંસમા ૧૮, પુંડરીકજ્ઞાત ૧૯।
જ્ઞાત શબ્દ કા અર્થ ઉદાહરણ હૈ ઉત્તિષ્ઠજ્ઞાત મેં યહ કહા ગયા હૈ
કિ મેઘકુમાર કે જીવને જવ કિ યહ હસ્તી કે મવ મેં થા દાવાગ્નિ સે
દલમાન (જલતા હુઆ) એક શશક કી રક્ષા કરને કે લિયે અપને ચરણ
કો ઝેંચા કિયા થા-સો વહ ઉસે ઝેંચા હો કિયે રહા।

હસ ઉત્તિષ્ઠ ઉદાહરણ સે યુક્ત હોને કે કારણ હસ અધ્યયન કા નામ
મી ઉત્તિષ્ઠ જ્ઞાત પડ ગયા હૈ । સંઘાટકજ્ઞાત મેં ધન્ય શ્રેષ્ઠિ ઓર વિજય

પગૂળવીસડમે ।

જંબૂના આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં શ્રી મુધર્મસ્વ.મીએ કહ્યાં કે-જંબૂ ! શ્રમણ ભગવાન
મહાવીર-કે જેઓ આદિકર વગેરે વિશેષણોથી વિશિષ્ટ છે, અને શિવ વગેરે રૂપ સિદ્ધિ ગતિ
નામના સ્થાને વિરાજમાન થયા છે. તેઓએ જ્ઞાતા નામના પ્રથમશ્રુતના આ રીતે યોગાણીસ
[૧૬] અધ્યયનો પ્રરૂપિત કર્યાં છે, તે આ પ્રમાણે છે:-ઉત્તિષ્ઠજ્ઞાત ૧, સંઘાટક ૨, અંક
૩ કર્મ ૪, શૈલક ૫, તુંબ ૬, રોહિણી ૭, મહિલ ૮, માકંદી ૯, ચાન્દ્રિક ૧૦, દાવદ્રવ ૧૧,
ઉદકજ્ઞાત ૧૨, મંદૂક ૧૩, તેતલિ ૧૪, નંદિકલ ૧૫, અપરકંકા ૧૬, આકીર્ણ ૧૭,
સુંસમા ૧૮, પુંડરીકજ્ઞાત ૧૯, જ્ઞાત શબ્દનો અર્થ ઉદાહરણ છે. ઉત્તિષ્ઠજ્ઞાત તમા
એ બતાવવ માં અ બું છે કે મેઘકુમારેને જીવ જ્યારે તે હાથીના ભવ (સ્વરૂપ) માં હતો,
ત્યારે દાવાગ્નિથી બળતા અસલ ની રક્ષા કરવા માટે પોતાના પગને અદ્ધર કર્યો હતો,
તે તેને અદ્ધરજ સખતા રહ્યા.

આ ઉત્તિષ્ઠ ઉદાહરણથી યુક્ત હોવાને કારણે આ અધ્યયનનું નામ પણ
ઉત્તિષ્ઠ જ્ઞાત પડ્યું છે. ૧, સંઘાટકજ્ઞાતમાં ધન્ય શ્રેષ્ઠી અને વિજય ચોરને લગતી કથા છે,

ધર્મકથાથ, અનયોઃ શ્રુતસ્કન્ધયોર્મધ્યે પ્રથમસ્ય-જ્ઞાતારૂપસ્ય ચલુ ભગવન્ ! શ્રુત-
સ્કન્ધસ્ય શ્રમણેન યાવત્સમ્પાત્તેન-શાશ્વતસ્થાનમુપગતેન ભગવતા મહાવીરેણ
જ્ઞાતાનાં કતિ અધ્યયનાનિ પ્રજ્ઞાનિ-રૂપિતાનિ, એવં પ્રશ્ને કૃતે સુધર્માસ્વામી-
ઝચરમાહ-એવં ચલુ જંચૂઃ ! ચલુ-નિશ્ચયેન એવમ્=એતન્નામકપ્રથમાશ્રુતસ્કન્ધસ્ય
एकोनविंशतिरध्ययनानि प्रज्ञानि, तद्यथा तानि सार्द्धश्लोकद्वयेन दर्शयति-‘उक्त्व-
त्तणाए’ इत्यादि ।

અંગસસ દો સુચક્ષંધા પળ્લતા તંજહા ણાયાણીય ધમ્મકહાઓ ય । પઢમસસ ણં-
અંતે ! સુચક્ષંધસસ સમણેણં જાવ સંપત્તેણં ણાયાણં કહ અઙ્ગયણા પળ્લતા?)
પુનઃ જંચૂ પૂછતે હૈં ભદન્તઃ? યદિ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને કિ જો આદિ-
કરાદિ વિશેષણોવાલે એવં શિવ આદિ વિશેષણ સંપન્ન સિદ્ધિગતિ નામક
સ્થાન પર પહુંચ ચુકે હૈં છઠ્ઠે અગકે યે દો શ્રુતસ્કંધ પ્રરૂપિત કિયે હૈં-
૧ જ્ઞાતા ઓર દૂસરા ધર્મકથા-તો ભદન્ત! પ્રથમ શ્રુતસ્કન્ધ જ્ઞાતા કે ઓન
શ્રમણભગવાન મહાવીરને કિ જો પૂર્વોક્ત વિશેષણ વાલે હૈં એવં શિવ આદિ
વિશેષણ યુક્ત સ્થાન પર વિરાજમાન હો ચુકે હૈં ઝન્હોને કિતને અધ્ય-
યનપ્રરૂપિત કિયે હૈં? (એવં ચલુ જંચૂ? સમણેણં જાવ સંપત્તેણં ણાયાણં
एगुणवीसं अङ्गयणा पणत्ता तं जहा उक्त्वत्तणाए१ संव्राडे२, अंडे३,
कुम्मे४, सेलगे५, तुवे६, य रोहिर्णि७ मल्ली८ मायंदी९, चंदीमाइय१०
॥१॥ दावहवे११, उदगणाए१२ मुंडवके१३, तेयली१४, विय। नंदीफले
१५, अचरकंका१६, आइन्ने१७, सुसमा१८ इय। अचरे य पुंडरीय णायए

છઠ્ઠસસ અંગસસ દો સુચક્ષંધા પળ્લતા તં જહા ણાયાણીય ધમ્મકહાઓ ય । પઢ-
મસસ ણં અંતે ! સુચક્ષંધસસ સમણેણં જાવ સંપત્તેણં ણાયાણં કહ અઙ્ગયણા
पणत्ता?) ફરી જંચૂ પૂછે છે કે હે ભદન્ત! ને શ્રમણ ભગવાન મહાવીર-
નેઓ આદિકરાદિ વિશેષણોથી યુક્ત અને શિવ વગેરે વિશેષણોથી સંપન્ન સિદ્ધ ગતિ
નામના સ્થાને પહોંચ્યા છે-તેઓએ છઠ્ઠા અંગના આ બે શ્રુતસ્કંધ નિરૂપિત ક્યાં છે-[૧] જ્ઞાતા
અને બીજો ધર્મકથા તો હે ભદન્ત! પ્રથમ શ્રુતસ્કંધ જ્ઞાતાના તે શ્રમણ ભગવાન
મહાવીર-નેઓ પૂર્વે કહેવામાં આવેલા બધા વિશેષણોથી યુક્ત છે અને શિવ વગેરે
વિશેષણ યુક્તસ્થાને વિરાજમાન થયેલ છે, તેમણે કેટલા અધ્યયનો નિરૂપિત ક્યાં છે?
(એવં ચલુ જંચૂ? સમણેણં જાવ સંપત્તેણં एगुणवीसं अङ्गयणा पणत्ता તં
जहा उक्त्वत्तणाए १, संव्राडे २, अंडे ३. कुम्मे ४, सेलगे ५, तुवे ६,
य रोहिणी ७, मल्ली ८, मायंदी ९. चंदीमाइय १० ॥१॥ दावहवे ११
उदगणाए १२, मुंडवके १३. तेयली १४, विय। नंदी फले १५, अचर-
कंका १६. आइन्ने १७ सुसमा १८, इय। अचरे य पुंडरीय णायए १९.

(૧) ઉત્તિસજ્ઞાતમ્—મેઘકુમારજીવેન સ્વ હસ્તિમવે દાવદત્તમાનશશક
જીવરક્ષાયે પાદ ઉત્તિસઃ=ઝર્ધ્વાકૃત એવં ધૃત ઇતિ તદુપલક્ષિતમિદં મથમમધ્યયન-
મુત્તિસજ્ઞાતમ્ । જ્ઞાતમિત્યુદાહરમ્—તદેવાધીષમાનત્વાદધ્યયનમ્ । એવમગ્રેડપિ ।

(૨) સઘાટકઃ—ધન્યશ્રેષ્ઠિ—વિજયતસ્કરયોરેકવન્ધન પ્રદ્વત્વાર્થાભિધાયકં
જ્ઞાતં સઘાટકજ્ઞાતમ્ ।

૧૧ પગૂળવીસહમે ॥

જંબૂ કે હસ પ્રશ્નકા ઉત્તર દેતે હુણ શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈ—જંબૂ ?
શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને જો કિ આદિકર આદિ વિશેષણોં સે યુક્ત હૈં ઓર
શિવ આદિ રૂપ સિદ્ધિગતિ નામક સ્થાન પર વિરાજમાન હો ચુકે હૈં ઉન્હોંને
જ્ઞાતા નામક પ્રથમ શ્રુતસ્વંધ કે હસ પ્રવાર ૧૦, અધ્યયન પ્રરૂપિત દિયે હૈ—
વે યે હૈં—ઉત્તિસજ્ઞાત ૧, સંઘાટક ૨, અંક ૩, કર્મ ૪, શૈલક ૫, તુંબ ૬, રોહિણી ૭,
મહિલ ૮, માકંદી ૯, આન્દ્રિક ૧૦, દાવદ્રવ ૧૧, ઉદકજ્ઞાત ૧૨, મંદૂક ૧૩, તેતલિ
૧૪, નંદિફલ ૧૫, અપરકંકા ૧૬ આકીર્ણ ૧૭ સુંસમા ૧૮, પુંડરીકજ્ઞાત ૧૯।
જ્ઞાત શબ્દ કા અર્થ ઉદાહરણ હૈં ઉત્તિસજ્ઞાત મેં યહ કહા ગયા હૈ
કિ મેઘકુમાર કે જીવને જય કિ યહ હસ્તી કે મવ મેં શ્વા દાવાગ્નિ સે
વત્તમાન (જલતા હુઆ) એક શશક કો રક્ષા કરને કે લિયે અપને ચરણ
કો ઝેંચા કિયા થા—સો વહ ઉસે ઝેંચો હી કિયે રહા।

હસ ઉત્તિસ ઉદાહરણ સે યુક્ત હોને કે કારણ હસ અધ્યયન કા નામ
બી ઉત્તિસ જ્ઞાત પડ ગયા હૈ । સંઘાટકજ્ઞાત મેં ધન્ય શ્રેષ્ઠિ ઓર વિજય

પગૂળવીસહમે ।

જંબૂના આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં શ્રી સુધર્માસ્વ. મીએ કહ્યાં કે—જંબૂ ! શ્રમણ ભગવાન
મહાવીર—કે જેઓ આદિકર વગેરે વિશેષણોથી વિશિષ્ટ છે, અને શિવ વગેરે રૂપ સિદ્ધિ ગતિ
નામના સ્થાને વિરાજમાન થયા છે. તેઓએ જ્ઞાતા નામના પ્રથમશ્રુતના આ રીતે યોગાણીસ
[૧૬] અધ્યયનો પ્રરૂપિત કર્યાં છે, તે આ પ્રમાણે છે—ઉત્તિસજ્ઞાત ૧, સંઘાટક ૨, અંક
૩ કર્મ ૪, શૈલક ૫, તુંબ ૬, રોહિણી ૭, મહિલ ૮, માકંદી ૯, આન્દ્રિક ૧૦, દાવદ્રવ ૧૧,
ઉદકજ્ઞાત ૧૨, મંદૂક ૧૩, તેતલિ ૧૪, નંદિફલ ૧૫, અપરકંકા ૧૬, આકીર્ણ ૧૭,
સુંસમા ૧૮, પુંડરીકજ્ઞાત ૧૯, જ્ઞાત શબ્દનો અર્થ ઉદાહરણ છે. ઉત્તિસજ્ઞાત તમા
એ યતાવય માં અ વ્યું છે કે મેઘકુમરને છવ જ્યારે તે હાથીના ભવ (સ્વરૂપ) માં હતો,
ત્યારે દવાન્નિથી યાજતા સસલ ની રક્ષા કરવા માટે પોતાના પગને આદર કર્યો હતો,
તે તેને આદરજ સખતા રહ્યા.

આ ઉત્તિસ ઉદાહરણથી યુક્ત હોવાને કારણે આ અધ્યયનનું નામ પણ
ઉત્તિસ જ્ઞાત પડ્યું છે. ૧, સંઘાટકજ્ઞાતમાં ધન્ય શ્રેષ્ઠી અને વિજય ચોરને લગતી કથા છે,

ધર્મકથાશ્ચ, અનયોઃ શ્રુતસ્કન્ધયોર્મધ્યે પ્રથમસ્ય-જ્ઞાતારૂપસ્ય સ્વલુ મગવન્ ! શ્રુત-સ્કન્ધસ્ય શ્રમણેન યાવત્સમ્પ્રાપ્તેન=જ્ઞાન્વતસ્થાનમુપગતેન મગવતા મહાવીરેણ જ્ઞાતાનાં કતિ અધ્યયનાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ-કથિતાનિ, એવં પ્રશ્ને કૃતે સુધર્માસ્વામી-ઉત્તરમાહ-એવં સ્વલુ જંબૂઃ ! સ્વલુ-નિશ્ચયેન એવમ્=એતન્નામકપ્રથમાશ્રુતસ્કન્ધસ્ય એકોનવિંશતિરધ્યયનાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથા તાનિ સાર્દ્ધશ્લોકદ્વયેન દર્શયતિ-‘ઉચ્ચિત્ત-ત્તણા’ ઇત્યાદિ ।

અંગસ્સ દો સુયવલંબા પળ્ણત્તા તંજહા ણાયાણીય ધમ્મકહાઓ ય । પઢમસ્સ ણં-ખંતે ! સુયવલંબસ્સ સમણેણં જાવ સંપત્તેણં ણાયાણં કહ અજ્ઞયણા પળ્ણત્તા ?) પુનઃ જંબૂ પૂછતે હૈં મદન્ત ? યદિ શ્રમણ મગવાન મહાવીરને કિ જો આદિ-કરાદિ વિશેષણોંવાલે એવં શિવ આદિ વિશેષણ સંપન્ન સિદ્ધિગતિ નામક સ્થાન પર પહુંચ ચુકે હૈં છઠ્ઠે અગકે યે દો શ્રુતસ્કંધ મરૂપિત કિયે હૈં- ૧ જ્ઞાતા ઓર દૂસરા ધર્મકથા-તો મદંત ! પ્રથમ શ્રુતસ્કન્ધ જ્ઞાતા કે ઉત્તર શ્રમણમગવાન મહાવીરને કિ જો પૂર્વોક્ત વિશેષણ વાલે હૈં એવં શિવ આદિ વિશેષણ યુક્ત સ્થાન પર વિરાજમાન હો ચુકે હૈં ઉન્હોંને કિતને અધ્ય-યનમરૂપિત કિયે હૈં ? (એવં સ્વલુ જંબૂ ? સમણેણં જાવ સંપત્તેણં ણાયાણં પગૂળવીસં અજ્ઞયણા પળ્ણત્તા તં જહા ઉચ્ચિત્તણા ૧ સંઘરાઢે ૨, અંઢે ૩, કુમ્મે ૪, સેલગે ૫, તુવે ૬, ય રોહિણી ૭ મલ્લી ૮ માયંદી ૯, ચંદીમાહય ૧૦ ॥૧॥ દાવદ્ધવે ૧૧, ઉદગણા ૧૨ મંડુલકે ૧૩, તેયલી ૧૪, વિય । નંદી ફલે ૧૫, અવરકંકા ૧૬, આહન્ને ૧૭, સુસમા ૧૮ ઇય । અવરે ય પુંડરીય ણાયપ

છટ્ઠસ્સ અંગસ્સ દો સુયવલંબા પળ્ણત્તા તં જહા ણાયાણીય ધમ્મકહાઓ ય । પઢ-મસ્સ ણં ખંતે ! સુયવલંબસ્સ સમણેણં જાવ સંપત્તેણં ણાયાણં કહ અજ્ઞયણા પળ્ણત્તા ?) ફરી જંબૂ પૂછે છે કે હે ભદન્ત ! જો શ્રમણ ભગવાન મહાવીર-જેઓ આદિકરાદિ વિશેષણોથી યુક્ત અને શિવ વગેરે વિશેષણોથી સંપન્ન સિદ્ધ ગતિ નામના સ્થાને પહોંચ્યા છે-તેઓએ છઠ્ઠા અંગના આ બે શ્રુતસ્કંધ નિરૂપિત કયાં છે- [૧] જ્ઞાતા અને બીજો ધર્મકથા તો હે ભદન્ત ! પ્રથમ શ્રુતસ્કંધ જ્ઞાતાના તે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર-જેઓ પૂર્વે કહેવામાં આવેલા બધા વિશેષણોથી યુક્ત છે અને શિવ વગેરે વિશેષણ યુક્ત સ્થાને વિરાજમાન થયેલ છે, તેમણે કેટલા અધ્યયનો નિરૂપિત કયાં છે ? (એવં સ્વલુ જંબૂ ? સમણેણં જાવ સંપત્તેણં પગૂળવીસં અજ્ઞયણા પળ્ણત્તા તં જહા ઉચ્ચિત્તણા ૧, સંઘરાઢે ૨, અંઢે ૩, કુમ્મે ૪, સેલગે ૫, તુવે ૬, ય રોહિણી ૭, મલ્લી ૮, માયંદી ૯, ચંદીમાહય ૧૦ ॥૧॥ દાવદ્ધવે ૧૧, ઉદગણા ૧૨, મંડુલકે ૧૩, તેયલી ૧૪, વિય । નંદી ફલે ૧૫, અવર-કંકા ૧૬, આહન્ને ૧૭, સુસમા ૧૮, ઇય । અવરે ય પુંડરીય ણાયપ ૧૦

(૧૨) ઉદકજ્ઞાતમ્-ઉદર્ક=નગરપરિત્વાજલં, તદુદાહરણેન પુદ્ગલરવભાવ
પ્રતિપાદકત્વાદ્જ્ઞાતમ્ ઉદકજ્ઞાતમ્ ।

(૧૩) મણ્ઢકઃ-એકઃ-નન્દમણિકાર શ્રેષ્ઠિજીવઃ, તચરિત્રોપલક્ષિતં મણ્ઢકજ્ઞાતમ્ ।

(૧૪) તેતલિઃ-તેતલિરિતિ તેતલિપુત્રઃ મૂચામાત્રત્વાત્પુત્રસ્ય, સ કનકરથરાજા-
માત્યઃ, તદુપલક્ષિતં તેતલિજ્ઞાતં તેતલિપુત્રજ્ઞાતમિત્યર્થઃ ।

(૧૫) નન્દિફલમ્-નન્દિફલાભિધાના આપાતભદ્રાઃ પરિણામદારુણાદૃષ્ટાઃ,
તદુદાહરણપ્રતિપાદકમધ્યયનં નન્દિફલજ્ઞાતમ્ ।

(૧૬) અપરકઙ્કા-ધાતકીલ્ખણ-ભરતક્ષેત્ર રાજધાની, તત્ર પરિહૃતદ્રૌપદ્યા-
નયનાર્થ કૃષ્ણ વાસુદેવ ગમનરૂપાશ્વર્યાદિ પ્રરૂપકં જ્ઞાતમ્ અપરકઙ્કાજ્ઞાતમ્ ।

(૧૭) આકીર્ણઃ-આકીર્ણાઃ-કાલિકઢીપર્વર્તિનો જાત્યાશ્વાઃ, તદુદાહરણો-
પલક્ષિતમ્ આકીર્ણજ્ઞાતમ્ ।

(૧૮) સુંસુમા-સુંસુમાનામ્ની ધન્યશ્રેષ્ઠિદુહિતા, તચરિત્રવિપયકમધ્યયનં
સુંસુમાજ્ઞાતમ્ ।

(સ્વાઈ) કે જલ કે દૃષ્ટાન્ત દ્વારા પુદ્ગલ કે સ્વભાવ કા પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા
હે ૧૨, મંઢકજ્ઞાત મેં નન્દિમણિકારસેઠ કા જીવ જો મંઢક હુઆ થાઉસકા
જીવનચરિત્ર કહા ગયા હૈ ૧૩। તેતલિજ્ઞાત મેં કનકસ્થરાજા કે અમાત્ય
તેતલિ કા જીવન ચારિત્ર લિખા ગયા હૈ ૧૪। નંદીફલજ્ઞાત મેં નંદિફલ-
જો દેખને મેં તો ઘડા સુન્દર હોતા હૈ પરન્તુ ઉસકા પરિણામ ઘડા હી
દારુણ હોતા હૈ- યદ-ચાત સ્પષ્ટ કી ગઈ હૈ ૧૫। અપર કંકાજ્ઞાત મેં ધાતકી
લંઢસ્થ ભરતક્ષેત્ર કી રાજધાની અપરકંકા મેં પરિહૃત દ્રૌપદી કો લાને કે લિયે
ગયે હુઅ કૃષ્ણ વાસુદેવ કા વર્ણન ક્રિયા હૈ ૧૬। આકીર્ણજ્ઞાત મેં કાલિક
ઢીપ મેં રહે હુઅ જાત્યશ્વો (જાતિમાન અશ્વો) કા ઉદાહરણ પ્રદર્શિત ક્રિયા
ગયા હૈ ૧૭। સુંસુમાજ્ઞાત મેં ધન્ય શ્રેષ્ઠી કી પુત્રી કા ચરિત્ર લિખા ગયા

૧૧, ઉદકજ્ઞાતમાં પરિણા (ખાઈ)ના પાણીના ઉદાહરણ વડે પુદ્ગલના સ્વભાવનું નિરૂ-
પણ કરવામાં આવ્યું છે. ૧૨ મંઢકજ્ઞાતમાં નંદિ મણિકાર સેઠનો જીવ જે મેઢક (દેડકો)
થયો, તેના જીવનની કથા કહેવામાં આવી છે. ૧૩, તેતલીજ્ઞાતમાં કનકસ્થ રાજાના
મંત્રી તેતલીનું જીવન ચરિત્ર લખવામાં આવ્યું છે. ૧૪, નંદીફળજ્ઞાતમાં નંદીફળ જે
જેવામાં ખડુ જ સાડું હોય છે, પણ તેનું પરિણામ ખડુ જ ખરાબ હોય છે, આ વાત
સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે. અપરકંકાજ્ઞાતમાં ધાતકી ખંડ ક્ષેત્રની રાજધાની અપરકંકામાં
પરિહૃત દ્રૌપદીને લાવવા માટે ગયેલ કૃષ્ણ-વાસુદેવનું વર્ણન કરાયું છે. ૧૬, આકીર્ણ-
જ્ઞાતમાં કાલિકઢીપમાં રહેતા જાત્યશ્વો (જાતિમાન અશ્વો)નું દૃષ્ટાન્ત બતાવવામાં આવ્યું
છે. ૧૭, સુંસુમાજ્ઞાતમાં ધન્ય શ્રેષ્ઠીની પુત્રીનું ચરિત્ર લખાયું છે. ૧૮, પુંડરીકજ્ઞાતમાં

સવ્વભૂમિયાસુ લઙ્ઘપચ્છાદિ વિદ્વણવિચારે રજ્જુધરચિત્તે યાત્રિ હોત્યા,
સેનિયસ્સ રન્નો રજ્જં ચ રટ્ઠં ચ કોસં ચ કોટ્ટાગારં વલં ચ વાહણં ચ
પુરંચ અંતેરુરંચ સયમેવ સમુવેક્ખમાણે સમુવેક્ખમાણે વિહરહાસુ, ૪।

ટીકા—‘જહણં મંતે !’ इत्यादि । जम्बूस्वामी भगवन्तमार्यसुधर्मस्वामिनं
पृच्छति—यदि खलु भगवन् ! श्रमणेन यावत्सम्प्राप्तेन ज्ञातानां=ज्ञाताख्य-
स्य प्रथमश्रुतस्कन्धस्यैकोनविंशतिरध्ययनानि=प्रज्ञप्तानि, तद्यथा=उत्क्षिप्तज्ञातादीनि
यावत्=पुण्डरीकज्ञातान्तानि च, एतेषु प्रथमस्य खलु भगवन् ! अध्ययनस्य=
उत्क्षिप्तज्ञाताख्यस्य कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? । इति प्रश्ने कृतेति-आर्यसुधर्मास्वामी प्राह-
एवम्=अमुना प्रकारेण खलु=निश्चयेन हे जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन्
समये इहैव=निवासाधारतया प्रत्यक्षाऽऽसन्ने न तु जम्बूद्वीपानामसङ्ख्यतयाऽन्य-

❀ જહણં મંતે ! સમણેણં જાવ્વ इत्यादि ❀

જંબૂસ્વામી-આર્ય સુધર્માસ્વામી સે પુનઃ યદ્ પૂછતે હું કિ (જાવ્વ
સંપત્તેણં સમણેણં) આદિ કરઆદિ વિશેષણો સે લેકર-સિદ્ધિગતિ કો પ્રાપ્ત ।
હુએ વિશેષણો વાલે શ્રમણ ભગવાન-મહાવીરને (જાગ્યાણં જગૂણવીસા અઙ્ગ-
યણા પણ્ણત્તા) જ્ઞાતા નામક-પ્રથમ શ્રુતસ્કન્ધ કે યે ૧૦, ઉત્તરીસ અધ્યયન કહે
હું (તં જહા) જૈસે (ઉત્તરિણાણે જાવ્વ પુંડરીણત્તિય) ઉત્તરિણજ્ઞાત સે લગાકર-
પુંડરીકજ્ઞાત તક । તો હનમેં (પદમસ ણં મંતે । અઙ્ગયણસસ કે-અટ્ટે પણ્ણત્તે)
પ્રથમ અધ્યયન જો ઉત્તરિણજ્ઞાત હૈ ઉસકા કયા અર્થ ઉન્હોંને પ્રતિપાદિત
કિયા હૈ । હસપ્રકાર જંબૂસ્વામી કા વક્તવ્ય સુનકર શ્રી સુધર્માસ્વામી ઉત્તર
રૂપ મેં યદ્ કહતે હું કિ-(એવં ચલુ જંબૂ ! તેણં કાલેણં તેણં સમણં ઇહેવ

“જંબૂણં મંતે ! સમણેણં જાવ્વ इत्यादि”

જંબૂસ્વામી આર્ય સુધર્માસ્વામીને ફરી આ પ્રમાણે પૂછે છે કે (જાવ્વ સંપત્તેણં સમણેણં)
આદિકર આદિ વિશેષણોથી લઈને સિદ્ધિગતિને પ્રાપ્ત કરેલ વિશેષણોવાળા શ્રમણ
ભગવાન મહાવીરે (જાગ્યાણં જગૂણવીસા અઙ્ગયણા પણ્ણત્તા) જ્ઞાતા નામના પ્રથમ
શ્રુતસ્કન્ધના એ ઓગણીસ (૧૯) અધ્યયનો કહ્યાં છે. (તં જહા) જેમ કે
(ઉત્તરિણાણે જાવ્વ પુંડરીણત્તિય) ઉત્તરિણજ્ઞાતથી લઈને પુંડરીકજ્ઞાત સુધી તો
એમનામાં (પદમસ ણં મંતે ! અઙ્ગયણસસ કે અટ્ટે પણ્ણત્તે) પ્રથમ અધ્યયન જે
ઉત્તરિણજ્ઞાત છે, તેના એ અર્થ તેઓએ બતાવ્યો છે? આ રીતે જંબૂસ્વામીના
વચનો સાંભળીને શ્રી સુધર્માસ્વામી ઉત્તરમાં આ પ્રમાણે કહે છે કે-(એવં ચલુ
જંબૂ ! તેણં કાલેણં તેણં સમણં જંબૂ દીવે દીવે મારહે વાસે દાહિણહિં મંતે

अपरं च अन्यत्—एकोनविंशतितमं—

(१९) पुण्डरीकज्ञातम्—पुण्डरीकः=पुष्कलावतीविजयमध्यवर्तिपुण्डरीकिणी नगर्यामेतन्नामको राजा, तद्वत्कन्यता प्रतिबद्धत्वादिदं पुण्डरीकज्ञातम् ।

इत्थं सङ्कलनया प्रथमश्रुतस्कन्धे ज्ञातानामके एकोनविंशतिसंख्यकानि ज्ञातानि—उत्क्षिप्तादीनि सन्ति ॥मू० ३॥

मूलम्—जड़णं भंते समणेणं जाव संपत्तेणं एगूणवीसा अज्झ यणा पणत्ता तं जहो—उक्खित्तणाए जाव पुंडरीए त्ति य, पढमस्स णं भंते अज्झयणस्स के अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु जंवू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुदीवे दीवे भारहे वासे दाहिणवट्ठे भरहे राय-गिहे णामं नयरे होत्था वण्णओ, गुणसिलए चेइए वन्नओ । तत्थणं रायगिहे नयरे सेणिए नामं राया होत्था, महयाहिमवंतं वण्णओ । तस्स णं सेणियस्स रन्नो नंदा नामं देवी होत्था सुकुमालपाणिपाया वण्णओ ।

तस्स णं सेणियस्स रन्नो पुत्ते नंदाए देवीए अत्तए अभए नामं कुमारे होत्था, अहीण जाव सुरूवे साम-दंड-भेय-उवप्पयाणणीति-सुप्पउत्तणयविहिन्नू ईहा-बूह-मग्गण-गवेसण-अत्थसत्थ-मइविसारए उप्पत्तियाए वेणइयाए कम्मियाए पारिणा-मियाए चउव्विहाए बुद्धिए उववेए सेणियस्स रण्णो बहुसु कज्जेसु य कुडुंवेसु य मंतेसु य गुज्जेसु य रहस्सेसु य निच्छएसु य आपु-च्छणिज्जे पडिपुच्छणिज्जे मेढीपमाणं आहारे आलंवणं चक्खू मेढी-भूए पप्राणभूए आहारभूए आलंवणभूए चक्खूभूए सच्चकज्जेसु

है १८। पुण्डरीकज्ञात में पुष्कलावती विजय के मध्य में रही हुई पुण्डरी किणी नान की नगरी में पुण्डरीक राजा की कथा दिखलाई गई है १९ ॥३॥

पुष्कलावती विजयना मध्यमां आपेली पुंडरीकिणी नामनी नगरीमां पुंडरीक राजतनी इथा यत्तायवाभां आवी छे १८. ॥३॥

પર્વતઃ ક્ષુદ્રહિમવત્પર્વતાપેક્ષયા—ઉચ્ચત્વાયામોદ્દેધ (ગામ્ભીર્ય) વિષ્કમ્ભપરિક્ષેપાદિના
રત્નમયપદ્મચરવેદિકા નાનામણિરત્નમયકૂટ=રત્નતરુશ્રેણિપ્રભૃતિના ક્ષેત્રમર્યાદાકા-
રિત્વેન ચ મહાન્ તથા શ્રેણિકમ્ભૂપોડપિ શેષરાજાપેક્ષયા જાતિકુલનીતિન્યાયાદિના
વિપુલધનકનકરત્નમણિમૌક્તિકશક્તિશિલાપ્રવાલ-રાજ્યરાષ્ટ્રવલવાહનકોશકોષ્ટાગા-
રાદિના જાતિકુલધર્મમર્યાદાકારિત્વેન ચ મહાન્ વરીવર્તિ, તથા સર્વજનમનોમોદક-
તથા વિસ્તૃતપદ્મઃ કીર્તિરૂપમુગંધતથા ચ મહામલયવત્, ઔદાર્ય-ધૈર્ય-ગામ્ભી-
ર્યાદિગુણમન્દરવત્, ભૂપટ્ટન્દે દિવ્યર્દિ-દિવ્યશ્રુતિ-દિવ્યપ્રભાવાદિભિર્મહેન્દ્રવત્

કે-જેસા શ્રેષ્ઠ થા । જેસે મહા હિમવાન પર્વત અન્ય છોટે ૨ પર્વતોંકી
અપેક્ષા ઉચ્ચતા આયામ (દીર્ઘતા) एवं ઉદ્દેધ (ગામ્ભીર્ય) તથા વિષ્કંભ
ઔર પરિક્ષેપ આદિ દ્વારા રત્નમય પદ્મ કી ચરવેદિકાદ્વારા નાનામણિ મય
एवं, રત્નમય કૂટોં દ્વારા તથાકલ્પવૃક્ષોંકી પંક્તિયોંદ્વારાક્ષેત્ર કી મર્યાદા-
કારી હોને સે મહાન્ માના જાતા હૈં ઉસી પ્રકાર શ્રેણિક રાજા ભી અન્ય
રાજાઓં કી-અપેક્ષા, જાતિ, કુલ નીતિ, ન્યાય આદિદ્વારા વિપુલ ધન,
કનક, રત્ન, મણિમૌક્તિક, શંખ શિલા-પ્રવાલ દ્વારા, રાજ્ય, રાષ્ટ્રવલ,
વાહન કોશ, કોષ્ટાગાર આદિ દ્વારા, જાતિ કુલ, ધર્મ કી મર્યાદા કરનેવાલા
હોને સે મહા હિમવાન જેસા કહા ગયા હૈં । સમસ્તજનતા કે મન કો પ્રમદ્ધ
ફરનેવાલા હોનેસે તથા વિસ્તૃત પદ્મ एवं કીર્તિરૂપ મુગંધિવાલા હોનેસે
મહામલયકી તરહ વહ શ્રેષ્ઠ માના ગયા હૈં ।—ઔદાર્ય ધૈર્ય તથા ગાંભીર્ય
આદિ ગુણોં સે યુક્ત હોને કે કારણ વહ-રાજામન્દર કી તરહ ઉત્તમ કહા

જેવા શ્રેષ્ઠ હતા. જેમ મહાન્ હિમવાન પર્વત બીજા નાના પર્વતોની અપેક્ષા ઉચ્ચતા
આયામ (દીર્ઘતા) ઉદ્દેધ (ગંભીરતા) તેમજ વિષ્કંભ અને પરિક્ષેપ વડે રત્નમય પદ્મની
ઉત્તમ વેદિકાવડે અનેક મણિમય અને રત્નમય કૂટો (શિખરો) વડે, તેમજ કલ્પવૃક્ષની
હારમાળાઓ વડે ક્ષેત્રની મર્યાદા કરનાર હોવાથી મહાન્ માનવામાં આવે છે, તેમજ
શ્રણિક શંખ પણ બીજા શબ્દો કરતાં જાતિ, કુળ, નીતિ ન્યાય વગેરે વડે પુષ્કળ
ધન, કનક, રત્ન, મણિ, મૌક્તિક, શંખ, શિલા પ્રવાલવડે રાજ્ય, રાષ્ટ્ર, બળ, વાહન,
કોશ, કોષ્ટાગારવડે જાતિકુળ અને ધર્મની મર્યાદા કરનાર હોવાથી મહા હિમવાન
જેવા કહેવામાં આવ્યા છે. સંપૂર્ણ જનસમાજના મનને પ્રસન્ન કરનાર હોવાથી
તેમજ વિસ્તૃત પદ્મ અને કીર્તિરૂપ મુગંધવાળા હોવાથી મહા મલયની જેમ તેમને
શ્રેષ્ઠ માનવામાં આવ્યા છે. ઉદારતા ધીરજ, તેમજ ગંભીરતા વગેરે ગુણોથી સંપન્ન
હોવાને લીધે તે રાજાને મેરુપર્વતની જેમ ઉત્તમ કહેવામાં આવ્યા છે. રાજાઓના

સ્મિન્ જમ્બૂદ્વીપે, જમ્બૂદ્વીપનામકે દ્વીપે ભારતે=ભારતનામકે વર્ષે=ક્ષેત્રે દક્ષિણા-
ર્દ્ધભરતે ભરતક્ષેત્રસ્ય દક્ષિણાર્દ્ધે રાજગૃહં નામકં નગરમાસીત્, 'વર્ણઓ' વર્ણકઃ=વર્ણન-
ગ્રન્થોઽપ્પ વસ્તવ્યઃ, સ ચ ચમ્પાવર્ણનાત્મકઔપપાતિકસૂત્રં વર્તતે, સોઽત્ર નપુંસકલિ-
ન્નિર્દેશેન દ્રષ્ટવ્યઃ, વ્યાख्याતોઽપ્યસૌ તસ્ય પીયૂષવર્ષિણાં ટીકાયાં મયેતિ । ગુણ-
શિલકં ચૈત્યમ્ વર્ણકઃ=ઔપપાતિકસૂત્રકૃતવર્ણનવદેવાત્રજ્ઞાતવ્યઃ । તથ ચ્ચલુ રાજગૃહે
નગરે શ્રેણિકો નામ રાજાઽઽસીત્ । સ કીદશઃ ? इत्यत्राह—'महयाहिमवंत' इत्यनेन
'महयाहिमवंतमहंतमलयमंदरमहिंदसारे' इत्येवं विज्ञेयम् महाहिमवन्महामलय-
मन्दरमहेन्द्रसारः=तत्र महाहिमवानिव=एतन्नामकवर्षधरपर्वतइव, यथा महाहिमवान्

જંબુદ્વીપે દ્વીપે-ભારતે વાસે દાહિજાઈ ભરતે રાયગિહે જામં જયરે હોત્યા) જંબુ ।
તુમ્હારે પ્રશ્નના ઉત્તર આ પ્રકાર છે-ઉસકાલ મેં ઓર ઉસ સમય મેં ઇસી
જંબુ દ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં ભરત નામના ક્ષેત્ર છે । ઇસ ભરત ક્ષેત્ર કે દક્ષિ-
ણાર્દ્ધ મેં રાજગૃહ નામકા નગર થા । યહી જો (વર્ણઓ) યહ પદ આયા છે
ઉસકા તાત્પર્ય યહ છે કિ ઔપપાતિક સૂત્ર મેં ચમ્પાનગરીના જૈસા વર્ણન
કર્યા ગયા છે વૈસા હી વર્ણન ઇસ રાજગૃહ નગરના જાનનાં ચાહિયે ।
ઉસ વર્ણનના અનુવાદ ઔપપાતિક સૂત્રની પીયૂષવર્ષિણી નામની ટીકા મેં
કર દિયા છે । જિજ્ઞાસુઓ જો વહાં સે યહ વિષય સમજ લેનાં ચાહિયે । (ગુણ-
શિલક ચૈટ્ય વર્ણઓ) ઉસ નગર મેં ગુણશિલક નામકા-ચૈત્ય થા । ઇસકા
વર્ણનની ઔપપાતિક સૂત્ર મેં કર્યા ગયા છે વહાં સે જાન લેનાં ચાહિયે ।
(તત્ત્વ જ્ઞ રાયગિહે નયરે સેણિય નામ રાયા હોત્યા મહયા હિમવંત વર્ણઓ) ઉસ
રાજગૃહ નામ નગર મેં શ્રેણિક ઇસ નામના રાજા રાજ્ય કરતા થા । યહ મહા
હિમવાન પર્વત-જૈસા મહામલય પર્વત જૈસા, મંદરાચલ જૈસા, ઓર મહેન્દ્ર

રાયગિહે જામં જયરે હોત્યા) જંબુ ! તમારા પ્રશ્નનો જવાબ આ પ્રમાણે છે-તે
કાળે અને તે વખતે એજ જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપમાં ભરત નામે ક્ષેત્ર હતું. આ
ક્ષેત્રના દક્ષિણાર્દ્ધમાં રાજગૃહ નામે નગર હતું. અહીં જે (વર્ણઓ) આ પદ આવ્યું
છે. તેનો અભિપ્રાય આ પ્રમાણે છે કે ઔપપાતિક સૂત્રમાં ચંપાનગરીનું બેવું વર્ણન
કરવામાં આવ્યું છે, તેવું જ વર્ણન આ રાજગૃહ નગરનું પણ સમજવું જોઈએ.

તે વર્ણનનો અનુવાદ પીયૂષવર્ષિણી નામની ટીકામાં કરવામાં આવ્યો છે. જિજ્ઞા-
સુઓએ ત્યાંથી આ વિષયને સમજવો જોઈએ. (ગુણશિલક ચૈટ્ય વર્ણઓ) તે નગરમાં
ગુણશિલક નામે ચૈત્ય હતું. આનું વર્ણન પણ ઔપપાતિક સૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું છે.
ત્યાંથી જાણવું જોઈએ. (તત્ત્વ જ્ઞ રાયગિહે નયરે સેણિય નામ રાયા હોત્યા મહયા
હિમવંત વર્ણઓ) તે રાજગૃહ નગરમાં શ્રેણિક નામે રાજા રાજ્ય કરતા હતા. તે
મહા હિમાલય પર્વતના જેવા મહામલય પર્વત જેવા, મંદરાચલ જેવા અને મહેન્દ્રના

લક્ષણ-વંજનગુણોચ્ચેષ, માણુમ્માણપ્પમાણપટ્ટિપુણમુજાત્યસવ્વંગમુદરંગે, સત્તિ-
સોમાકારે, કંતે, પિપદંસણે મુરુચે' इति संग्रहः । व्याख्या-અહીનપ્રતિપૂર્ણપણે-
ન્દ્રિયશરીર:- અહીનાનિ=લક્ષણતોડન્યૂનાનિ પ્રતિપૂર્ણાનિ=સ્વરૂપતોડવચ્છિદતાનિ
પજ્ઞાવીન્દ્રિયાણિ યસ્મિન્ તત્તથાવિધં શરીરં યસ્ય સ તથોક્તઃ । લક્ષણવ્યજ્ઞનગુણો-
પપેતઃ-લક્ષણાનિ=સ્વસ્તિકચક્રયવમત્સ્યાદીનિ, વ્યજ્ઞનાનિ=મપતિલાદીનિ,
તેષાં ગુણઃ=પ્રશસ્તત્વરૂપાસ્તૈઃ ઉપપેતઃ=યુક્તઃ । અત્ર-'ઉપ' 'અપ' અનયોરુપ-
સર્ગયોઃ શકન્વાદિત્વાત્પરરૂપે 'ઉપપેતઃ' અનયોર્ગુણે 'ઉપપેતઃ' इति सिद्धम् ।
માનોન્માનપ્રમાણપ્રતિપૂર્ણમુજાતસર્વાદ્રમુન્દરાદ્ઃ-અત્ર માનં=જલેન પરિપૂર્ણં કુણ્ડે
યસ્મિન્ પુરુપે પ્રવિષ્ટે સત્તિ યજ્ઞલં કુણ્ડાદ્વદિર્નિસ્સરતિ તજ્ઞલં યદિ દ્રોણપરિ-
માણં ભવતિ તદા તસ્ય શરીરાવગાહના માનમુચ્યતે । તુલાદણ્ડેન સન્તુલિતઃ
પુરુપો યદ્ધર્ધમારપરિમાણો ભવતિ તદા તસ્ય અર્ધમારપરિમાણમ્ ઉન્માનમુચ્યતે ।
સ્વાર્જુલેનાપ્તોત્તરશ્વતોન્નતતા પ્રમાણં કથયતે તતઃ-માનં ચ ઉન્માનં ચ પ્રમાણં
ચ માનોન્માનપ્રમાણાનિ, તૈઃ પ્રતિપૂર્ણાનિ મુજાતાનિ સર્વાદ્રાણિ, તૈઃ
મુન્દરાદ્ઃ-સર્વથા પ્રમાણપ્રતિપૂર્ણમુજાતતથા સર્વાદ્રીણ મુન્દર इति भावः । 'सति-

तथा स्वरूप से परिपूर्ण पांचो इन्द्रियों से युक्त था ।' लक्षणों-स्वस्तिक-चक्र
यव एवं मत्स्य आदि के चिह्नो-से-तथा मपा तिल-आदिरूप व्यञ्जनो से
भरपूर था । 'मान' उन्मान, तथा 'प्रमाण' से शरीर का प्रत्येक अवयव

આબે છે કે એમનું શરીર લક્ષણોથી અન્યૂન (અંપૂર્ણ) તેમજ સ્વરૂપ (સૌંદર્ય)થી
પરિપૂર્ણ પાંચે ઇન્દ્રિયોથી યુક્ત હતું. લક્ષણો-સ્વસ્તિક ચક્ર, યવ અને મત્સ્ય વગેરે
ચિહ્નો-થી તેમજ મપાતિલ વગેરે વ્યંજનોથી અંપૂર્ણ રીતે ભરેલું હતું. માન, (૧)
ઉન્માન, (૨) તેમજ પ્રમાણવડે (૩) શરીરનો દરેકે દરેક અવયવ પરિપૂર્ણ હતો.

(૧) જલ સે પરિપૂર્ણ ભરે હુણ કુણ્ડ મેં મનુષ્ય કો વૈઠાને પર ઉસ
કુણ્ડ સે જિતના પાની વાહર-નિકલ આવે હૈ વહ પાની નૌલને પર યદિ
એક દ્રોણ પ્રમાણ હોતા હૈ તો વહ જલ ઉસ પુરુષ કી શરીરાવગાહના કા
માન માના જાતા હૈ । (૨) તરાજૂ પર સન્તુલિત હોને પર પુરુષ કા જો અર્ધ
માર હોગા વહ ઉન્માન માના જાવેગા । (૩) ૧૦૮ અંગુલ કી જો ઝંચાઈ હોતી

વિશેષ:- (૧) પાણીથી પૂર્ણ ભરેલ કુંડમા માણસને બેસાડ્યા પછી તે કુંડમાંથી
જેટલું પાણી બહાર નિકળી આવે છે, તે પાણીને જો તોલવામાં આવે, અને તે એક
દ્રોણ પ્રમાણ તોલમાં ઉતરે તો તે પાણીને તે પુરુષની શરીરાવગાહનાતું 'માન' માન-
વામાં આવે છે.

(૨) ત્રાજવા ઉપર તોલવામાં પુરુષનું જે અર્ધું વજન થાય તેને 'ઉન્માન' માનવામાં આવે છે.

(૩) એકસો આઠ (૧૦૮) આંગળની જે બેચાઈ હોય છે તેને 'પ્રમાણ' કહેવામાં આવે છે.

सारः=श्रेष्ठः, इत्यादि। 'वृष्णओ' वर्णकः=भूपवर्णनप्रवरणमौपपातिकमृत्राद् विज्ञेयम्, तस्य खलु श्रेणिकस्य राज्ञः नन्दानाम्नी देव्यासीत्। सा कीदृशी? इत्यत्राह—'सुकुमारपाणिपाया' सुकुमारपाणिपादा=पाणी च पादा च पाणिपादं=करचरणं, सुकुमारम्=अतिकोमलं पाणिपादं यस्याः सा तथोक्ता=अतिकोमलकरचरणवतीत्यर्थः, 'वृष्णओ' वर्णकः=राज्ञीवर्णन औपपातिकमृत्रादवसेयम्।

तस्य खलु श्रेणिकस्य पुत्रः 'नन्दाए देवीए भत्तए' नन्दाया देव्या आत्मजः=तद्गर्भज इत्यर्थः अभयनामा कुमारऽआसीत्। स कीदृशः? इत्याह—'अहीण जाव सुरूवे' अहीन यावत्सुरूपः, भत्रत्ययावच्छब्देन—'अहीणपडिपुण्णपंचिदियसरीरे,

गया है। राजाओं के समूह में दिव्यशक्ति, दिव्यद्युति, तथा दिव्यप्रभाव आदिद्वारा वह महेन्द्रकी तरह उत्तम प्रकट किया गया है। यहाँ पर भी जो यह "वृष्णओ" शब्द आया है वह यह प्रकट करता है कि इस राजा के विषय में और भी अधिक वर्णन अन्य ग्रन्थों में किया गया है, सो वह वर्णन औपपातिक सूत्र से जाना जा सकता है।

(तस्स णं सेणियस्स रन्नो नन्दा नामं देवी होत्था सुकुमार पाणिपाया वृष्णओ) उस श्रेणिक राजा की रानी का नाम नन्दा था। इसके हाथ पाँव बहुत ही सुकुमार थे। यह कितनी-अधिक सुन्दर थी-और किस स्वभाव आदि की थी यह सब विषय का वर्णन औपपातिक सूत्र में दिया गया है। (नस्सणं सेणियस्सरत्तो पुत्ते नन्दाए अत्तए अभयनामं कुमारे होत्था) उस श्रेणिक राजा के एक पुत्र था जिसका नाम अभयकुमार था। यह नन्दा-देवी की कुक्षि से अवतरित हुआ था। (अहीण जाव सुरूवे) यहाँ यावत् शब्द से यह पाठ-ग्रहीत हुआ है—इसका शरीर लक्षण से अन्यून

समूहमां दिव्यशक्ति, दिव्यद्युति तेभञ्ज दिव्यप्रभाव वजोरेथी तेने भडेन्द्रनी जेम उत्तम जतावत्तामां आःया छे. अर्द्धी पणु ने 'वृष्णओ' शब्द आःये छे, ते आभ जतावे छे के आं राजना विषे जेना करवां जीलुं वधु वधुन जील शास्त्रोमां करवामां आःयुं छे. भाटे ते वधुन औपपातिक सूत्रवडे समल शक्य छे.

तस्स णं सेणियस्स रन्नो नन्दा नामं देवी होत्थासुकुमार पाणिपाया वृष्णओ) ते श्रेणिक राजनी राणीनुं नाम नन्दा હતું. તેના હાથપગ બહુ જ સુકોમળ હતા. તે કેટલી બધી રૂપવતી હતી તેના સ્વભાવ વજોરે કેવો હતો, આ જાતના બધા વિષયોનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રમાં આપવામાં આવ્યું છે. (તસ્સ ણં સેણિયસ્સ રન્નો પુત્તે નન્દાણ દેવીણ અત્તણ અભયનામં કુમારે હોત્થા) તે શ્રેણિક રાજાના એક પુત્ર હતા. તેનું નામ અભયકુમાર હતું. તે નન્દાદેવીની રૂપમાંથી આવતો હતો. (અહીં જાવ સુરૂવે) અહીં યાવત્ શબ્દથી એ પાઠ ગ્રહણ કરવામાં

કોષાઘપહરણેન ચા. શત્રોરનુશાસનમ્ । મેદઃ=શત્રુપક્ષે સ્નેહાપનયનપુરસ્સરં સ્વામિ
સેવકયોશ્ચિત્તમેદકરણં, સ ત્રિવિધઃ, ।

ઉક્તચ્ચ-“પરોપ્પરં ણેહમંગો, કલહ્નુપ્પાયણં તદા ।

તત્તજ્જણં સત્તુપક્કલેસુ, મેયણીઈ પકિત્તિયા ॥૧” ઇતિ ।

અસ્ય છાયા-પરસ્પરં સ્નેહમદ્ગ્, કલહોત્પાદન તથા ।

તર્જનં શત્રુપક્ષેષુ, મેદનીતિઃ પ્રકીર્તિતા ॥૧॥ ઇતિ ।

ઉપપ્રદાનમ્=સ્વૈયશ્ચીત્તવસ્તુપ્રતિપ્રદાનમ્, અભિમતાર્થદાનં વા, એતદ્દૂષા ચતુર્વિધા
નીતિઃ-નીયતે=સ્વાનુકૂલ્યં પ્રાપ્યતે રિપુરનયેતિ સા તથોક્તા તથા સામાદિ ચતુ-
ર્વિધયા નીતયા મુ=મૃષ્ટુ મયુક્તં=પયોગો વ્યાપારો-ચત્ર સ મુપયુક્તઃ, એતાદશો નયઃ=
ન્યાયંસ્તસ્યં વિધિઃ=વિધાનં, તં જ્ઞાનાતીતિ સ તથોક્તઃ-યથાયોગ્યનીતિન્યાય
કુશલ ઇત્યર્થઃ । નીતિં પ્રયોગો યથા-‘ઉત્તમં પ્રણિપાતેન, શૂરં મેદેન યોજયેત્ ।

‘પરોપ્પરં ણેહમંગો, કલહ્નુપ્પાયણં તદા ।’

તત્તજ્જણં સત્તુપક્કલેસુ “મેયણીઈ પકિત્તિયા ॥૧॥

શત્રુ પક્ષમે સ્વામી સેવકમે સ્નેહ કા મંગ કરવાના ઉનમે આપસમે
લડાઈ ઇગડા કરવા, દેના-પ્રત્તં પરસ્પર મે તર્જન-હાટ-હપટ-આદિ
કરવાના । પૂર્વમે શ્ચીત્ત કી હુઈ વસ્તુ કા દેના અથવા અભિમત
અર્થકા દેના, હસે કા નામે ઉપપ્રદાન હે સામ, દંડ મેદ એવં ઉપપ્રદાન
હસે તરહ ૪ ચાર પ્રકાર કી નીતિ કે પ્રયોગરૂપ ન્યાય કે વિધાનમે યદ અમય-
કુમાર નિષ્ણાત ધા-યથા યોગ્યનીતિ ન્યાય મે કુશલ ધા-નીતિ કા
પ્રયોગ હસે પ્રકાર ક્રહા ગયા હે-(ઉત્તમં પ્રણિપાતેન) ઉત્તમ જનકો યદિ

સ્નેહભાવ હોય છે, તેમાં ફૂટ પાડવી, તેમના મનમાં એવી વાત ઠસાવવી કે જેથી જન્ને
એક બીજાનો વિશ્વાસ ન કરે, તેનું નામ લેહ-નીતી છે. આ લેહ નીતિ ત્રણ પ્રકારની
ખતાવવામાં આવી છે.

પરોપ્પરં ણેહમંગો, કલહ્નુપ્પાયણં તદા ।

તત્તજ્જણં સત્તુપક્કલેસુ મેયણીઈ પકિત્તિયા ॥૧॥”

શત્રુ પક્ષમાં સ્વામી સેવકના સ્નેહમાં ફૂટ પડાવવી, તેમનામાં પરસ્પર કલહ કરાવવો અને
પરસ્પર તર્જન (તિરસ્કાર) દમદાટી વગેરે કરાવવાં. પૂર્વે કોઈ પાસેથી લીધેલ પદાર્થને
આપવો અથવા અભિમત (ઇષ્ટ) અર્થને આપવો તેનું નામ ઉપપ્રદાન છે. સામ, દંડ,
લેહ અને ઉપપ્રદાન આ પ્રમાણે ચાર પ્રકારની નીતિના પ્રયોગ કરતાં ન્યાય આપવામાં
અમયકુમાર નિષ્ણાત હતા. નીતિના સમુચિત માર્ગને અનુસરતાં ન્યાય આપવામાં તે
કુશળ હતા. નીતિના યથાયોગ્ય વ્યવહાર આ રીતે ખતાવવામાં આવ્યો છે:-“ઉત્તમં
પ્રણિપાતેન, સારા માણસને વશ કરવો હોય તો તેની સામે નમ્ર થઈને વર્તન

સોમાગારે' શશિસૌમ્યાકારઃ-શશી=ચન્દ્રસ્તદ્વત્ સૌમ્યઃ=રમણીયઃ, આકારઃ=સ્વરૂપં यस્ય સ તથોક્તઃ । 'કંતે' કાન્તઃ=કમનીયઃ । 'પિયદંસણે' પ્રિયદર્શનઃ-પ્રિયં=દર્શકજનમનોહલાદકં દર્શનમ્=અવલોકનં यस્ય સ તથોક્તઃ । 'સુરુવે' સુરુપઃ=સર્વાતિશાયિરૂપલાવણ્યવાન્ । 'સામદંડભેદઉવપ્પયાણની' સુપ્પઉત્તજ્ઞ-યવિહિણ્ણુ' સામદંડભેદોપપદાનનીતિ સુપ્પુક્તનયવિધિઃ-તત્ર સામ=વયં યુષ્મા-કં શ્રૂયમસ્માકં કો ભેદોઽસ્માકમ્' इत्यादि मधुरवाक्यैः शत्रुपक्षवशीकरणम्, दण्डः दण्डयते-धनाद्यपहरणेन निस्सारी क्रियते जनो येन स तथोक्तः=क्लेशोत्पादेन

परिपूर्ण था । चंद्रमाके जैसा इसका सौम्य आकार था । देवने वालों को यह बहुत अधिक प्रिय लगता था । कमनीय था । रूप लावण्य इसके प्रत्येक अंग से टपकसा रहा था ।

यहाँ "अहीणजावसुरुवे" में जो यावत् पद रखा है-उस से इस पाठ का यहाँ ग्रहण किया गया है-अहीणपडिपुण-पंचेन्द्रियसरीरे लक्खणवंजणगुणोववेए, माणुम्माणप्पमाणपडिपुण-सुजायसव्वंगसुंदरंगे, ससिसोमागारे, कंते, पियदंसणे सुरुवे । (सामदंडभेदउवप्पयाणणी-तिसुप्पउत्तज्ઞયવિહિન્નુ ईहा-बृहमगण-गवेसणअत्थमत्थमइविसामए) हम आपके हैं आप हमारे हैं हम में और आप में कोई भेद नहीं है इत्यादि मधुर वचनों द्वारा शत्रुपक्ष को वश में करना यह साम उपाय है, क्लेश उत्पन्न करके अथवा काप आदि का अपहरण करके शत्रु को वश में करना-या उसे विलकुल कम-जोर बना देना यह दण्डनीति है, शत्रु पक्ष के स्वामी-तथा सेवक में जो परस्पर में स्नेह होता है उसमें भेद करना-उनके चित्त में ऐसी बात जमा देना कि जिससे दोनों आपसमें एक दूसरे का विश्वास न कर सकें इसका नाम भेदनीति है । यह भेदनीति ३ तीन प्रकार की कही गई है-

ચન્દ્રના જેવો એમનો સૌમ્ય આકાર હતો. જોનારને એ બહુજ વધારે ગમતો હતો. એ કમનીય હતા. રૂપ અને લાવણ્ય એમના દરેકે દરેક અંગમાંથી નીતરતું હતું.

અહીં 'અહીણ જાવ સુરુવે' માં જે યાવત્ પદ મુકવામાં આવ્યું છે, તેનાથી આ પાઠનું અહીં ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે-અહીણપડિપુણપંચેન્દ્રિયસરીરે

લક્ષણવંજનગુણોવવેए माणुम्माणप्पमाणपडिपुणसुजायसव्वंगसुंदरंगे ससिसोमागारे, कंते. पियदंसणे सुरुवे ।" सामदंडभेदउवप्पयाण नीतिसुप्पउत्तज्ઞયवિહिન્નુ ईहा बृहमगणगवेसणअत्थमत्थमइविसामए) અમે તમારા છીએ; તમે અમારા છો; આપણામાં કોઈ પણ જાતનો ભેદ નથી, વગેરે મીઠા વચનોથી શત્રુપક્ષને વશ કરવો આ આમ ઉપાય છે. ખીડત કરીને અથવા તેા ધન-ભાગ્યરતું હુણુ કરીને હુશ્મન ઉપર કાળુ મેળવવો અગરતો તેને સાવ નિર્ણય બનાવવો આ દણ્ડનીતિ છે. શત્રુપક્ષના સ્વામી તેમજ સેવકમાં જે એક બીજા વચ્ચે

है वह प्रमाण फही गई है ।

અપોહ:-અપોહ્યતે=નિવાર્યતે સ્વાકારાદ્વિપરીત આકારોડનેનેતિ જ તથોક્ત:-નિજા-
કારનિર્ણયજ્ઞાનં યથા-‘સ્થાણુરેવાય’ મિતિ। માર્ગણ-માર્ગ્યતે=અન્વિષ્યતે વસ્તુ-
નેનેતિ તત્તથોક્તમ્=અપોહાગ્રે સદ્ભૂતાર્થવિશેષજ્ઞાનાભિમુખમેવ ‘તત્સત્ત્વે તત્સ-
ત્ત્વમન્વયઃ’ इत्यन्वयधर्मान्वेषणं, યથા વહ્નીલતાધારોહણં સ્થાણુધર્મં एवात्र घटते
इति। સ્થાણુમેવાશ્રિત્ય વહ્નીલતાધારોહણં ભવતિ, અતઃસ્થાણુ ધર્મત્વેન વહ્નીલતા-
ધારોહણં વ્યપદ્વિશ્યતે। ગવેષણં-ગવેષ્યતે=વિશેષતો નિશ્ચીયતે વસ્તુનેનેતિ તત્ત-

“इसी का नाम संशय है। इस संशयके होने पर यह स्थाणु होना चाहिये
अथवा पुष्ट होना चाहिये इसतरह किसी एक तरफ झुकती हुई जो
बुद्धि की चेष्टा होती है यही ईहा है।

ईहा के बाद जो विशेष ज्ञान होता है उसका नाम अवाय है-
अपोह है-। अपने आकार से विपरीत आकार जहां दूर किया जाता है
वह ‘अपोह’ है ऐसी अपोह शब्द की व्युत्पत्ति है। जैसे जब यह
बोध हुआ कि यह स्थाणु होना चाहिये तब ऐसा जो बोध
होता है कि यह स्थाणु ही है इसी का नाम अपोह है मार्गण शब्द
का अर्थ होता है-अन्वेषण-यह स्थाणु ही है ऐसा जो अपोह नामक
बोध हो रहा है वह इस वान को लेकर हो रहा है कि यहाँ पर वल्ली
आरोहण आदि जो स्थाणुगत धर्म है वे ही घटित हो रहे हैं। इसी का
नाम अन्वय है ‘तत्सत्त्वे तत्सत्त्वमन्वयः’ यह अन्वय का लक्षण है। स्थाणु
को अश्रित करके ही वल्ली लता आदि का वहाँ आरोहण होता है-
इसलिये ये स्थाणु के धर्म तरी के प्रकट किये जाते हैं। मार्गणा में अन्वय
धर्म की पर्यालोचना होती है। गवेषणा में व्यतिरेक धर्म का विचार चलता

આ પ્રમાણે કેઇ એક તરફ વળતી બુદ્ધિની ચેષ્ટા થાય છે, તેનું નામ ઇહા છે.

ઇહા પછી જે વિશેષજ્ઞાન હોય તેનું નામ અવાય છે-અપોહ-છે. પોતાના
આકારથી ભિન્ન આકારને જ્યાં દૂર કરવામાં આવે તેને અપોહ કહે છે. એ રીતે અપોહ શબ્દની
વ્યુત્પત્તિ છે. ટા. ત. જ્યારે એ જ્ઞાન થયું કે આ સ્થાણુ (હું) હોયું નેહંએ. ત્યારે
એવું નિશ્ચયરૂપે જે જ્ઞાન થાય છે કે આ સ્થાણુ (હું) જ છે, આનું જ નામ અપોહ છે.
માર્ગણ શબ્દનો અર્થ ‘અન્વેષણ’ થાય છે. આ સ્થાણુ જ છે, આ પ્રકારનું અપોહ
નામે જે જ્ઞાન થઈ રહ્યું છે, તે આને લઈને જ થઈ રહ્યું છે કે અહીં વલ્લી (વેલ)
આદિહણુ વગેરે જે સ્થાણુમાં રહેનારા ધર્મો છે, તે જ ઘટિત થઈ રહ્યા છે. આનું નામ
અન્વય છે. “તત્સત્ત્વે તત્સત્ત્વમન્વયઃ” આ અન્વયનું લક્ષણ છે. ‘સ્થાણુ (હું) ના
આધારે જ લતા વગેરેનું આદિહણુ થાય છે. માટે જ એ સ્થાણુના ધર્મ બતાવવામાં
આવ્યા છે. માર્ગણમાં ‘અન્વય’ ધર્મની પર્યાલોચના થાય છે. ગવેષણામાં કે વ્યતિરેક

નીચમલ્પપ્રદાનેન, સમં તુલ્યપરાક્રમેઃ॥૧૧॥” ઇતિ, અન્યચ—“લુબ્ધમર્થેન ગૃહ્ણીયાત્, સાધુમઞ્જલિકર્મણા । મૂર્ખઃ છન્દાનુરોધેન, તત્ત્વાર્થેન ચ પષ્ટિતમ્ ॥” ઇતિ । ‘ઈદાવોદ મગ્ગણગવેસણચ્ચત્થમસત્થમદ્વિસારપ્’ ઈદાપોદમગ્ગણગવેસણાર્થશાસ્ત્રમતિવિશાદઃ— તત્ર ઈદા=કર્યાપિવસ્તુનોડનાલંચિતવિલોકનજન્યસંશયનિરાશાય બુદ્ધિચેષ્ટા, યથા દૂરત ઉચ્ચેસ્ત્વયુક્તસ્ય કસ્યચિદ્દર્શને ‘સ્થાણુ વાં પુરુષો વા ઇતિ વિવેકાય બુદ્ધિચેષ્ટનમ્ ।

વશ મેં કરના હોવે તો उसके સાથ નમ્રતા કા વ્યવહાર રાખના ચાહિયે । (શૂરં ભેદેન યોજયેત્) કિસી શૂરવીરકો યદિ વશ મેં કરના હો તો उसके સાથ ભેદનીતિ કા પ્રયોગ કરના ચાહિયે । (નીચમલ્પપ્રદાનેન) યદિ કિસી નીચજનકો વશ મેં કરના હો, તો ઉસે કુછ ન કુછ થોડા બહુત અવશ્ય દે દેના ચાહિયે ।

(સમં તુલ્યપરાક્રમેઃ) વરાચરી વાલે શત્રુ કો યદિ વશ મેં કરના હો તો ઉસકે તો ઉસકે સાથ વરાચરી કા પરાક્રમ કરના ચાહિયે । યદી યાત અન્યત્ર હસ પ્રકાર સે ગઈ હો—

‘લુબ્ધમર્થેન ગૃહ્ણીયાત્ સાધુમઞ્જલિકર્મણા,
‘મૂર્ખઃ છન્દાનુરોધેન તત્ત્વાર્થેન ચ પષ્ટિતમ્’ ।

સામાન્ય રૂપ સે વસ્તુ કે વાદ જો ઉસમેં સંયશ હોતા હો ઉસ સંશય કોં દૂર કરને કી જો એક પ્રકાર કી બુદ્ધિ ચેષ્ટા હોતી હો ઉસકા નામ ઈદા હો । જૈસે દૂર સે કિસી ઝૂંચી વસ્તુ કા જબ હમે દર્શન હોતા હો તબ યહ કુછ હો એસા સામાન્ય બોધ હોતા હો અથ હસ સામાન્ય બોધ કે વાદ ફિર એસા જો વિચાર આતા હો કિ યહ સ્થાણુ હો યા પુરુષ હો

કરવું નોંધો ‘શૂરં ભેદેન યોજયેત્’ વીર પુરુષને વશ કરવો હોય તો તેની સાથે ભેદનીતિનો પ્રયોગ કરવો નોંધો. ‘નીચમલ્પપ્રદાનેન’ નીચ માણસને વશ કરવો હોય તો કંઈકને કંઈક—થોડું ચોક્કસ આપવું નોંધો. ‘સમં તુલ્યપરાક્રમેઃ’ સરખી શક્તિવાળા હુશ્મનને વશ કરવો હોય તો તેની સાથે બરાબરીનું શૂરાતન બતાવવું નોંધો એજ વાત બીજે સ્થાને આ રીતે બતાવવામાં આવી છે:—

લુબ્ધમર્થેન ગૃહ્ણીયાત્ સાધુમઞ્જલિકર્મણા ।

મૂર્ખઃ છન્દાનુરોધેન તત્ત્વાર્થેન ચ પષ્ટિતમ્ ॥૧૧॥,

સામાન્ય રૂપમાં વસ્તુના બોધ પછી જો તેમાં સંશય ઉદ્ભવે છે તેને દૂર કરવાની એક પ્રકારની બુદ્ધિનીચેષ્ટા હોય છે, તેનું નામ ‘ઇદા’ છે. ઘ. ત. દરથી કોઈ ઊંચી વસ્તુનું ન્યાયે દર્શન થાય છે, ત્યારે આ કંઈક છે, એવું સામાન્ય જ્ઞાન આપણને થાય છે. આ સામાન્ય જ્ઞાન પછી ફરી એમ વિચાર થાય કે આ સ્થાણું (હું) છે કે પુરુષ છે, આનું નામ અંશય છે. આ અંશય પછી આ સ્થાણું હોવું નોંધો અથા પુરુષ હોવો નોંધો,

वैनयिक्या—विनयेन जाता वैनयिकी=गुर्वादिविनयप्राप्तशास्त्रार्थ संस्कारजन्या, तथा,
अत्र नैमित्तिकशिष्यद्वयोदाहरणं संक्षेपतः प्रदर्श्यते—

एकस्मिन्ननगरे समकक्षवयस्कौ द्वौ शिष्यौ निमित्तशास्त्रं पठितुं कस्यापि
नैमित्तिकस्य समीपे गतवन्तौ। तयोरेको विनयशीलो यद् यथा गुरुपदिशति तत्तथैव
बहुमानपुरस्सरं विनयावनतमस्तकोऽधीते, गुरुपाठितं मुहुर्मुहुर्विमृशति, शङ्कास्पदं स्थूलं
गुरुसमीपमुपेत्य सविनयं निर्णयति च। अपरस्तु न तथा विनयेन पठति, न पृच्छति,
नापि विमृशति च। अधीतशास्त्राबुधौ कालान्तरे जीविकार्थं देशान्तरं गतौ। ववचि-

है। गुरु आदि के विनय से प्राप्त हुए शास्त्री अर्थ के संस्कार से जो
बुद्धि प्राप्त होती है वह वैनयिकी बुद्धि है।

इस विषय में दो नैमित्तिक शिष्यों का उदाहरण इस प्रकार है—
किसी नगर में समान अवस्था वाले दो शिष्य किसी निमित्तज्ञ के पास
निमित्त शास्त्र को पढ़ने के लिये गये। उनमें एक शिष्य विनय शील
था। गुरुमहाराज उसे जिस प्रकार जिस बात को पढ़ाते थे वह उस
बात को बहुमान पुरस्सर बड़े भारी विनय के साथ पढ़ता था। विद्या
गुरु जिस विषय को उसे समझाया करते थे वह उस विषय को बार
बार विचार में लाया करता था। जिन विषय में उसे किसी भी तरह
का संदेह होता तो वह गुरु के पास जा कर विनय के साथ उसका
निर्णय करता। दूसरा शिष्य ऐसा कुछ अविनयी था कि वह न तो कुछ
पढ़ता न कुछ लिखता और न गुरु से कुछ पूछता और न कुछ विचार
ही करता। अब उन दोनों के लिये ऐसा अवसर आया कि उन्हें आज्ञा

गुरु वगेरेना विनयशी प्राप्त करेव शास्त्रीय अर्थना संस्कार वरे वे बुद्धि प्राप्त थाय
छे, तैवैनाधिद्री बुद्धि छे. आ विषयने लगता जे नैमित्तिक शिष्योना दृष्टान्त आ प्रमाण छे—

कोई नगरमां अरुभी उभरना जे विद्यार्थिआ कोई निमित्तज्ञनी पास निमित्त-
शास्त्रना अभ्यासाधे गथा. तेजोमां ओक शिष्य विनय छतो. गुरु तेने जे बात
धीअवता ते ते बातने बहुत मानपूर्वक धरि विनय आधे ते शीअतो छतो. विद्या
आपनाइ गुरु जे विषय तेने अभ्यासवता ते ते विषय उपर बारंवार मनन करतो
छतो. ते विषयमां तेने कोइ पक्ष अलगनी थका छाय तो ते गुरुनी पास अर्थने
सविनय तेनुं प्रमाधान करतो छतो. जीजे शिष्य कंछक अविनयी छतो न
तो ते कंछ वांचतो अने न ते कंछ लअतो तेभज न गुरुने ते कंछ पूछतो अने
न ते कोइधर—वतना विचार करतो. हवे विद्याअभ्यास करी रह्य पछी आ अन्नेने

યોક્તં-માર્ગજાદ્યર્થે સદ્ભૂતાર્થવિશેષ નિર્ણયાભિપ્રયસેવાન્યધર્મપરિત્યાગેન 'તદસત્ત્વે તદસત્ત્વં વ્યતિરેકઃ' इति व्यतिरेक धर्माभ्यास समालोचनं यथा--'अस्मिन् शिरः शरीर कण्डूयनादयः पुरुषधर्मा न दृश्यन्ते' इति। एतेषां समाहारे ईहापोहमार्गणगवेष्णानि, 'तैरर्थशास्त्रे=अर्थोपार्जननिमित्तं शास्त्रमर्थशास्त्रं, तत्र या मतिः=मननं तथा विशारदः=निपुणः स तयोक्तः। तथा 'उत्पत्तियाए वेणइयाए कम्मयाए पारिणामियाए चउव्विहाए बुद्धीए उववेए' औत्पत्तिकया, 'वैनयिकया, 'कर्मजया, 'પારિણામિકયા, 'ચતુર્વિધયા' બુદ્ધયા' ઉપપેતઃ, તત્ર-ઔત્પત્તિકયા-ઉત્પત્તિય-શાસ્ત્રાભ્યાસકર્મપરિશીલનાદિકં વિહાય પ્રયોજનં યસ્યા સા ઔત્પત્તિકી-પૂર્વમદદાશ્રુતાનુભૂતવિષયતયાપ્યકસ્માદુદ્ધવનશીલા, તયા, અત્ર રોહકદૃષ્ટાન્તઃપ્રસિદ્ધ, एव।

है जैसे ऐसा विचार होना-कि यह स्याणु ही है- पुरुष नहीं-कारण पुरुषगत जो शिरः कण्डूयन आदि धर्म हैं वे यहां प्रतीत नहीं हो रहे हैं। 'तदसत्त्वे तदसत्त्वम्' यह व्यतिरेक का लक्षण है। अभयकुमार जिस तरह सामआदि नीति के प्रयोग करने में विशेष पटु थे उसी प्रकार वे ईहा अपोह मार्गण, गवेष्ण द्वारा अर्थशास्त्र के विचार करने में भी विशेष विशारद थे। (उत्पत्तियाए वेणइयाए कम्मयाए पारिणामियाए चउव्विहाए बुद्धीए उववेए) औत्पत्तिकी, 'वैनयिकी' कर्म जा तथा, 'परिणामिकी', इस तरह चार प्रकार की बुद्धि से वे अभयकुमार युक्त थे। जो बुद्धि स्वतः इस जीव को बिना किसी शास्त्राभ्यास आदि के उत्पन्न होती है वह औत्पत्तिकी बुद्धि है। यह बुद्धि पूर्व में अदृष्ट अश्रुत तथा अननुभूत हुए विषयों को अकस्मात् जान लेती है। इस विषय में रोहके का दृष्टान्त प्रसिद्ध ही

[અભ્યાસ] ધર્મ ઉપર વિચાર કરવામાં આવે છે. દા. ત. એમ 'વિચાર' થયો કે આ સ્થાણુ ન છે, પુરુષ નથી. કારણ કે પુરુષગત જે શિર કણ્ડૂયન વગેરે ધર્મો છે, તેઓની અહીં પ્રતીતિ થતી નથી. 'તદસત્ત્વે તદસત્ત્વમ્' આ વ્યતિરેકનું લક્ષણ છે. એમ અભયકુમાર, સામ સગેરે નીતિનો, પ્રયોગ કરવામાં વિશેષ કુશળ હતા; તેમજ ઈહા, અપોહ, માર્ગણ, ગવેષણ વડે અર્થશાસ્ત્ર ઉપર વિચાર કરવામાં પણ વિશેષ હોશિયાર હતા. (ઉત્પત્તિયાए वेणइयाए कम्मयाए परिणामियाए चउव्विहाए बुद्धीए उववेए) ઔત્પત્તિકી, 'વૈનયિકી' કર્મજ અને પરિણામિકી આ રીતે ચાર પ્રકારની બુદ્ધિથી અભયકુમાર સંપન્ન હતા. એવને પોતાની એણે કોઈ પણ જાતના શાસ્ત્રાભ્યાસ વગર જે બુદ્ધિ ઉદ્ભવે છે તે ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિ છે. આ બુદ્ધિપણેમાં કોઈપણ વખત જોવામાં નહિ આવેલા, સાંભળવામાં નહીં આવેલા તેમજ અનુભૂતિના વિષયમાં નહિ આવેલા વિષયને અનાયાસ સમજ લે છે. આ જાણતમાં રોહકનું દૃષ્ટાંત પ્રસિદ્ધ થયેલું છે.

वैनयिक्या—विनयेन जाता वैनयिकी=गुर्वादिविनयप्राप्तशास्त्रार्थ संस्कारजन्या, तथा,
अत्र नैमित्तिकशिष्यद्वयोदाहरणं संक्षेपतः प्रदर्श्यते—

एकस्मिन्नगरे समकसवयस्कौ द्वौ शिष्यौ निमित्तशास्त्रं पठितुं कस्यापि
नैमित्तिकस्य समीपे गतवन्तौ। तयोरेको विनयशीलो यद् यथा गुरुरूपदिशति तत्तथैव
बहुमानपुरस्सरं विनयावनतमस्तकोऽधीते, गुरुपाठितं मुहुर्मुहुर्विमृशति, शङ्कास्पदं स्थूलं
गुरुसमीपमुपेत्य सविनयं निर्णयति च। अपरस्तु न तथा विनयेन पठति, न पृच्छति,
नापि विमृशति च। अधीतशास्त्रावुभौ कालान्तरे जीविकार्थं देशान्तरं गतौ। वचचि-

है। गुरु आदि के विनय से प्राप्त हुए शास्त्री अर्थ के संस्कार से जो
बुद्धि प्राप्त होती है वह वैनयिकी बुद्धि है।

इस विषय में दो नैमित्तिक शिष्यों का उदाहरण इस प्रकार है—
किसी नगर में समान अवस्था वाले दो शिष्य किसी निमित्तज्ञ के पास
निमित्त शास्त्र को पढ़ने के लिये गये। उनमें एक शिष्य विनय शील
था। गुरुमहाराज उसे जिस प्रकार जिस बात को पढ़ाते थे वह उस
बात को बहुमान पुरस्सर बड़े भारी विनय के साथ पढ़ता था। विद्या
गुरु जिस विषय को उसे समझाया करते थे वह उस विषय को बार
बार विचार में लाया करता था। जिस विषय में उसे किसी भी तरह
का संदेह होता तो वह गुरु के पास जा कर विनय के साथ उसका
निर्णय करता। दूसरा शिष्य ऐसा कुछ अविनयी था कि वह न तो कुछ
पढ़ता न कुछ लिखता और न गुरु से कुछ पूछता और न कुछ विचार
ही करता। अब उन दोनों के लिये ऐसा अवसर आया कि उन्हें आजो

गुरु वगेरेना विनयशी प्राप्त करेले शास्त्रीय अर्थना संस्कार वरे वे बुद्धि प्राप्त थाय
छे, तेवैनायित्री बुद्धि छे. आ विषयने लगता जे नैमित्तिक शिष्याना दृष्टान्त आ प्रमाण छे—

कोई नगरमां अरुणी उमरना जे विद्यार्थिआ कोई निमित्तज्ञनी पासो निमित्त-
शास्त्रना अस्थाआर्थे जया. तेओमां ओइ शिष्य विनय छतो. गुरु तेने वे बात
शीष्यता ते ते बातने अहुज मानपूर्वक घण्टा विनय आथे ते शीष्यतो छतो. विद्या
आपनास गुरु वे विषय तेने अभ्यसता ते ते विषय उपर बारंवार मनन करतो
छतो. ते विषयमां तेने कोइ पणु बातनी थंका छाय तो ते गुरुनी पासो न्हने
अविनय तेनुं समाधान करतो छतो. बीजे शिष्य कंछु अविनयी छतो न
तो ते कंछ वांछतो अने न ते कंछ लप्पतो तेमज न गुरुने ते कंछ पूछतो अने
ते कोइपणु बातना विचार करतो. हुवे विद्याअव्यास करी रखा पछी आ अन्नेने

નગરનિકટે સરસ્તીરે વિશ્રમતઃ । 'પતાવુમી વિદ્વાંસૌ' ઇતિજ્ઞાત્વા મસ્તકન્યસ્ત-
જલમૃતઘટા કાચિદ્ગૃદ્ધા વિદેશગતસ્વસુતકુશલિનીં વાર્તાં પપ્રચ્છ । પ્રશ્નસમકાલમેવ
તન્મસ્તકાદ્ઘટો ન્યપતત્, તદ્દૃષ્ટ્વા સોઽવિગ્નચક્રારી ક્ષટિતિપ્રાદ-—'દૃદે ।=મૃતસ્તવ-
પુત્રઃ' ઇત્યાદિ । કર્ણકઠોરં માળાપહારકં વજ્રમિવાઽઽપતત્ પુત્રમરણરૂપં તદ્વચનં
શ્રુત્વા યાવત્સા મૂર્છા પ્રાપ્નોતિ તાવદપરો વિમર્શશીલો નૈમિત્તકો ન્યગદન્ મોખ્રાત-
ર્મૈવ વ્રૂહિ, અસ્યાઃ પુત્રઃ સામ્પતમેવ સ્વગૃહમાગતો વર્તતે, માતઃ ! ગચ્છ શીઘ્રં ગૃહં
પુત્રમુખાવલોકનજનિતમમન્દપરમાનન્દમનુભવેત્યાદિ । તચ્છ્રુત્વા પ્રત્યુજીવિતેવ

વિકા સંપાદન કે લિયે પરદેશ મેં જાના પડા । જ્ય યે વાહર જા રહે થે તો
કિસી એક નગર કે પાસ કે સરોચર કે કિનારે યે દોનો ઠહર ગયે । ઇતને મેં
એક દૃદ્ધાને કિ જિસકા પુત્ર વહુત સમય સે પરદેશ ગયા હુઆ થા ઓર અમી તક
વાપિસ નહીં આયા થા ઉન્હે દેલા-વહ મસ્તક પર ઘડા રત્નકર વહાં
જલ ભરને કો આઈ થી । ઉસને વિદ્વાન સમજ્ઞ કર ઇનસે અપને પુત્ર કો
કુશલ વાર્તા પૂછી તો અવિનીત શિષ્યને યહ દેઝકર કિ ઉસકે મસ્તક
સે પ્રશ્ન પૂછને કે સાથ સાથ ઘડા ગિર ગયા હૈ જલ્દી સે એસા કહા
કિ હે દૃદે ? તેરા પુત્ર તો પરદેશ મેં હી મર ગયા હૈ-તૂ અચ કિસ કો
કુશલ વાર્તા પૂછ રહી હૈ । એસા ઉસકા કર્ણકઠોર વજ્ર કે પ્રહાર જૈસા
તીક્ષ્ણ મર્મભેદક પુત્ર કા મરણ રૂપ વચન સુનકર વહ મૂર્ચ્છિત હોને
વાલી હી થી ઇતને મેં દૂસરે વિનયશીલ શિષ્યને વિચાર કર કહા માઈ
એસા મતકહો-ઇસકા પુત્ર તો ઇસ સમય ઘર પર હી આ પહુંચા હૈ । એસા
કહકર ફિર ઉસને ઉસ દૃદ્ધા સે કહા ! તુમ જલ્દી સે જલ્દી ઘર જાઓ ।

પોતાની આલ્લવિડા ચલાવવા માટે પરદેશ જવાનું થયું. ત્યારે તેઓ બહાર જઈ રહ્યા
હતા ત્યારે માર્ગમાં કોઈ નગર પાસે સરોવરના કાંઠે આ બન્ને રોકાયા. એટલામાં એક ડાશીએ
કે જેનો પુત્ર ઘણા સમય પહેલાં વિદેશ ગયો હતો અને હજી પોતાને ઘેર ખાછો ક્યો
ન હતો-તેઓને બોલ્યા, તે ઘડા માથા ઉપર મૂકીને પાણી ભરવા આવી હતી. તે
ડાશીએ તેઓને વિદ્વાન સમજીને એમને પોતાના પુત્રનું કુશળ પૂછ્યું પ્રશ્ન પૂછતાની
સાથે જ વૃદ્ધાના માથા ઉપરથી પાણીનો ઘડો પડી ગયોછે,—એ બેઠીને અવિનીત શિષ્યે અડપટ્ટી
કહ્યું કે હે દૃદે ! તારો પુત્ર તો વિદેશમાં મરણ પામ્યો છે, તું હવે કોના
કુશળની વાત પૂછે છે, આ પ્રમાણે તેનું વજ્રપ્રહાર જેવું ડાણુંકડું, તીક્ષ્ણ, અન્તાઃકરણને
વીધનાઈ, પુત્રમરણ રૂપવચન સાંભળીને તે બેલાન થવાની જ હતી તેટલામાં બીજા વિનયશીલ
શિષ્યે વિચારીને કહ્યું કે ભાઈઆવું ન બોલો એનો પુત્ર તો અત્યારે ઘેર આવી પહોંચ્યો છે.
આમ કહીને પછી તેણે તે ડાશીને કહ્યું કે મા ! તમે સત્વરે ઘેર જાઓ. તમારો પુત્ર

सा गता गृहं, मिलितो लब्धलक्षलाभः पुत्रः, हर्षप्रकर्षमुपागता । तदनु ता बहुमूल्यं पारितोषिकमादाय सरस्तीरमागत्य तौ पृष्ठवतीकथं ज्ञातमेतद्वृत्तमिति। अविमृश्य-
कारी ब्रूते-प्रश्नसमये तव मस्तकान्निपत्य कुम्भः स्फुटितस्तेन मया ज्ञातं-‘मृतस्तव
पुत्रः’ इति । तत्पश्चाद् विमृश्यकारी प्रवक्ति-प्रश्नसमकालमेव तव घटाऽथो भूमौ
निपतितस्तज्जलं च सरोजलेन साकं मिलितं तेन मया ज्ञातं-‘यस्य यज्जलं तत्तेन

तुम्हारा पुत्र घर पर आ गया है। उसके मुख्वावलीकन से तुम परम हर्ष का
अनुभव करो। इस प्रकार उस विनयशील विचारक शिष्य के वचन सुन-
कर उसे मानो नई चेतना मी प्राप्त हो गई हो इस तरह वनकर वह
अपने घर पहुँची। पहुँचते ही वहाँ उसने एक व्याघ्र रुपयाँ को कमा-
कर साथ में लाये हुए अपने पुत्र को देखा-देखते ही उसे परम आनन्द
का अनुभव हुआ हर्ष प्रकर्ष से युक्त हो कर वह बहुमूल्य पारि-
तोषिक लेकर पुनः उस तालाब के किनारे पर वह आई। आते ही उन
दोनों से उसने पूछा-माई बतलाओ तुमने यह सब कैसे जाना। सुनकर
अविमृश्यकारी शिष्यने उससे कहा-मा! प्रश्न पूछने के साथ ही जब
तुम्हारे मातक से घडा गिर कर फूट गया-तो मैने विचार किया कि
जिस प्रकार यह घडा अचानक गिरकर फूट गया है उसी प्रकार तुम्हारा
पुत्र भी मर गया है। विमृश्यकारीने अपनी बात के समर्थन में उसे कहा
-कि मातः? प्रश्न करने के समकाल में ही जब आप का घडा
जमीन पर गिर पडा और उसमें का जल सरोवर के साथ मिल गया

घेर आयी गयो छे. तेनुं आ जेधने तमे भूषण आनन्द अनुभवो. आ रीते यिनथी
अने विचारके शिष्यना वचन सांलणीने तेछे जेछे केनवी येतनान भेजवी छाय, तेभ ते
तस्तज पोताने घेर गछ अने घेर पछोयतां ज त्यां तेछे ओके बाण इपिया इभाई आवेल पोता-
ना पुत्रने जेयो. जेतांणी साथे ज तेनुं ‘हेयुं’ आनन्दथी तरणोण थई गयुं. प्रसन्न थती
ते जहु कीमती लेट लधने तेज तणावने छोटे इरी आवी आवीने तेजो जन्नेने
तेछे पूछयुं ‘बाई. तमे आ जधुं केवी रीते जेयुं?’ जे सांलणीने अविमृश्यकारी
[अविश्वारी] शिष्ये कछुं-‘मा! प्रश्न करतानी साथे ज तमाशे माथा उपरथी घडो
पडीने इरी गयो, त्यारे भने थयुं’ के जे रीते आ घडो ओयितो पडीने इरी
गयो, ते रीते तमाशे पुत्र पछु भण्य पाय्यो ह्यो. “विमृश्यकारीजे [विचारके]
पोतानी वातनी अभर्थनमां कछुं’ के ‘मा! प्रश्न करती वणते तमाशे घडो जमीन
पर पड्यो अने तेनुं पाछी सरोवरना पाछीनी साथे भणी गयुं’ ते जे
उपरथी में जेयुं’ के जे प्रभाछे आ घडनुं पाछी आ सरोवरना पाछीनी साथे
भणी गयुं छे, ते ज प्रभाछे तमाशे पुत्र पछु तमने जेही भणयो जेधयो. आ

મિલિતમિત તતોઽસ્યાઃપુત્રેઽપ્યનયા સહદ્રુતમેવ મિલિપ્યતી' ત્યાદિ । તત્કૃત્વા તમવિમૃશ્યકારિણં દુર્વચનૈર્નિર્મલસ્ય વિમૃશ્યકારિણે વદ્મપૂલ્યં પારિતોપિકં સમર્પ્યા- શીર્વાદશતાનિ દદૌ । અયાસાવિમૃશ્યકારી શ્વેદલિન્નો ભૂત્વા સ્વચેતસિ ચિન્તયા- માસ- 'મયા ગુરુજન વિનયાભાવેન શાશ્વમભ્યસ્તં તસ્માન્મે વિદ્યા ન ફલવતી જાતે' ત્યાદિના મનઃસંતાપં સંપ્રાપ । વિનયશીલો વિમૃશ્યકારી તુ ગુરોરુપકારં મુદુર્મદ્ રતુસ્મરન્ વિદ્યાપચારં કુર્વન્વાસ્મિન્ લોકે જનરમ્યતમિય પૂજિતઃ-ક્રમશઃ આત્મ- વિદ્યાં સંપ્રાપ્ય કલ્યાણમાર્ગ સાધિતવાન્ । સહાધ્યયને કૃતેઽપિ વિનિતે એવ

તો હસ પર સે મૈને જાના કિ જિસ પ્રકાર વહ જલ હસ જલ કે સાથ મિલ જુલ ગયા હૈ-ઉસી પ્રકાર આપકા પુત્ર બી આપકે સાથ શીઘ્ર હી મિલ જાના ચાહિયો હસ પ્રકાર ઉસ વિમૃશ્યકારી કે ખૂરિ ખૂરિ પ્રશંસા કરતી હુઈ ઉસ વૃદ્ધાને ઉસ અવિમૃશ્યકારી વ્યક્તિ કો ઘુરા મલા કહ કર તથા ઉમ વિચારશીલ વ્યક્તિ કો વદ્મપૂલ્ય પારિતોપિક પ્રદાન કર અન્ત મેં સૈકડોં આશીર્વાદ વચનોં સે વધાયા । અપને સાથી કા હસ પ્રકાર દેવ વુર્લમ સન્માન દેલકર અવિમૃશ્યકારી વહુત અધિક શ્વેદ લિલ્લ હુઆ । ઉસને અપને ચિત્ત મેં સોચા મૈને વિદ્યાગુરુકે પાસ વિદ્યા કા અધ્યયન તો કિયા હૈ-પરન્તુ વિનયાભાવ કે કારણ વહ મુક્ષ મેં ફલવતી નહીં હુઈ હૈ । વિનયશીલ વિમૃશ્યકારીને 'વિનયાદિ સંપન્ન વનકર જો બી વિદ્યા મૈને વિદ્યા ગુરુ સે પઢી વહ મુક્ષ મેં વિશેષ રીતિ સે પ્રસ્ફુટિત હુઈ હૈ અતઃ મેરે ઉપર વિદ્યાગુરુ કા વડા ભારી ઉપકાર હુઆ હૈ-હસ પ્રકાર વાર વાર વિદ્યા ગુરુ કે ઉપકાર કા સ્મરણ કરતે હુએ વિદ્યા કા પ્રચાર અચ્છી તરહ સે કિયા હસ પ્રચારસે લોગો મેં ઉસકી અમૃત જૈસી માન્યતા વઢી । ક્રમશઃ જવ વહ આત્મવિદ્યા કી સાધના કરતેર કલ્યાણમાર્ગ કા પરિક્રમન

પ્રમાણે વાતબલી તે ટાથીએ અવિમૃશ્યકારીના જ્ઞાનની ખૂણ આટકણી કાઢી, અને તે પછી વિચારશીલને ખૂણ કીમતી ભેટ અને સેકડો આશીર્વાચનો આપ્યાં. 'પોતાના સાથીનું' આ રીતે દેવ દુર્લભ સન્માન બેઠને અવિમૃશ્યકારી ખૂણ જ હુઃખી થયો અને તેણે પોતાનાં મનમાં વિચાર કર્યો કે 'મેં વિદ્યાગુરુ પાસેથી વિદ્યાભ્યાસ તો કર્યો છે પણ વિનય રહિત હોવાને લીધે વિદ્યા સારી પેઠે મારામાં ફળવતી થઈ નથી.' વિનય-શીલ વિમૃશ્યકારી શિષ્યે વિચાર કર્યો કે 'વિનયાદિથી જે વિદ્યા ગુરુ પાસેથી મેળવી છે, તે મારામાં સવિશેષ વિકાસ પામી છે. ખરેખર મારા ઉપર વિદ્યાગુરુનો ખુદ બારે ઉપકાર થયો છે.' આ રીતે વારંવાર વિદ્યાગુરુના ઉપકારનું સ્મરણ કરતાં આર્ય પેઠે વિદ્યાપ્રચાર કર્યો. આ પ્રચારથી લોકોમાં અમૃત જેવી તેની ખ્યાતી વધી. અનુક્રમે ત્યારે તે આત્મવિદ્યાની સાધના કરતાં કરતાં કલ્યાણપથનો પથિક બન્યો ત્યારે અનન્ત જનમ-

વિદ્યા સકલશાસ્ત્રરહસ્યં પ્રકટયતિ । મુચ્ચિનીતગત્તદ્વિદ્યા પ્રભાવેનાસ્મિન્ લોકે
સ્વ રચનયા શાસ્ત્રાદિરહસ્યં પ્રકટયન્ આત્મવિદ્યાં સમગ્રાપ્ય સ્વપર કલ્યાણાય પ્રભવતિ ।
इतिवैनयिकी बुद्धि दृष्टान्तः । अत्रानेकशो दृष्टान्ताः सन्तीति विस्तरभयाद्
विरम्यते ।

કાર્મિકયા=કર્મણઃ=કૃપિવાણિજ્યાદિ વ્યવસાયાત્ જાતા કાર્મિકી=તત્તત્ક-
ર્માન્યાસપ્રકર્પજનિતેત્યર્થઃ તયા । અત્ર તત્કરકૃપીવલોદાહરણમ્—

કશ્ચિત્તસ્કરો વાણિજગ્રામે કસ્યચિદ્વાણિજો ગૃહે કમલાકારં સ્વાતં સ્થનિતયાન્ ।
પ્રમાતે જના એકત્રીભૂતારતસ્સ્વાતં દૃષ્ટ્વા ભૂયો ભૂયઃ પ્રશંસાં કૃતવન્તઃ—અહો ! ચોરસ્ય
ગયા તો અનન્ત સંસાર કા ખી અંત ઉસને કર દિયા । ઇસ દૃષ્ટાન્ત લિખને કા
તાત્પર્ય યહ હૈ કિ સાશ્વર અધ્યયન કરને પર ભી વિનીત જનમેં હી વિદ્યા
ફલવતી થનતી હૈ તથા સકલ શાસ્ત્રોં કા રહસ્ય ખી આત્મા મેં પ્રકટ હોતા હૈ
જો આત્મા વિનીત હોતા હૈ । વિનીત જન હી વિદ્યા કે પ્રભાવ સે ઇસ
લોક મેં અપની રચના દ્વારા શાસ્ત્રાદિ કે રહસ્ય કો પ્રકટ કરતે હૈ—ઔર
આત્મવિદ્યા કો પ્રાપ્ત કર અન્ત મેં વે સ્વ ઔર પર કે કલ્યાણ કરને મેં
સમર્થ થન જાતે હૈ । ઇસ બુદ્ધિ કે ઊપર ઔર ખી અનેક પ્રકાર દૃષ્ટાન્ત
હૈ જો યહાં ગ્રન્થ વિસ્તૃત હો જાને કે ભય સે નહી લિખે ગયે હૈ । કૃપિ વાણિ
જ્ય આદિ વ્યવસાયરૂપ કર્મ સે જો બુદ્ધિ ઉત્પન્ન હોતી હૈ વહ કાર્મિકી બુદ્ધિ હૈ ।

इसके ऊपर कृपिवल (किशान) और चोर का उदाहरण इस प्रकार है—

एक चोर ने वाणिज गाँव में किसी एक वाणिज के घर में रात्रि
के समय कमल के आकार जैसा खात-ओँडा किया ।—प्रभातकाल जब
हुआ तो लोगोंने इसे देख कर चोर की बड़ी भारी प्रशंसा की । कहने

મરણુને પણ તેણે અંત કયોં. આ દષ્ટાન્ત લખવાનું પ્રયોજન એ છે કે એકી સાથે
અભ્યાસ કરવા છતાં પણ વિનીત માણસમાં જ વિદ્યા સફળ થાય છે, અને બધા શાસ્ત્રોનું
રહસ્ય પણ તે જ આત્મામાં પ્રકટે છે, કે જે આત્મા વિનમ્ર હોય છે. નમ્ર માણસ જ
વિદ્યાના પ્રભાવથી આ લોકમાં પોતાની રચના વડે શાસ્ત્ર વગેરેનું રહસ્ય ખતાવે છે, અને
આત્મવિદ્યાને મેળવીને અંતે સ્વ [પોતાનું] અને પર [પારકાનું] કલ્યાણ સાધવામાં સમર્થ
થાય છે. આ બુદ્ધિ વિષે બીજાંપણ એનેક દષ્ટાન્તો છે. જે અહીં અન્ય વિસ્તારના
ભયથી લખ્યા નથી. કૃપિ, વાણિજ્ય વગેરે વ્યવસાયના કર્મોથી જે બુદ્ધિ ઉત્પન્ન થાય
છે. તે કાર્મિકી બુદ્ધિ છે.

એના માટે કૃપીવલ [કિશૂત] અને ચોરનું ઉદાહરણ આ પ્રમાણે છે—

વાણિજ ગામમાં કોઈ એક વાણિયાના ઘેર રાતના વખતે એક ચોરે કમળના
આકાર જેવું ખાકોરું [ખાતર] પાડ્યું. સવારે લોકોએ એ જોયેને ચોરના બહુ ભારે

અસ્યામવસર્પિण्याં જાતસ્ય ચતુર્વિંશસ્ય ચરમતીર્થંકરસ્ય ભગવતઃ શ્રીવર્ધમાન-
સ્વામિનશ્ચરમચાતુર્માસ્યં પાવાપુર્યાંમાસીત્ । તત્ર કૃતપષ્ઠભક્તેષુ નવમહ્લકિ-નવ-
લેચ્છકિ-કાશી-કૌશલકેષુ અષ્ટાદશમુ ગણરાજેષુ સમુપસ્થિતેષુ તસ્ય ચરમદેશના
પદ્મત્રિશદધ્યયનાત્મિકા ઉત્તરાધ્યયનનામતઃ પ્રસિદ્ધા, વિંશત્યધ્યયનાત્મિકા તુ
વિપાકશ્રુતારબ્યા । તત્રોત્તરાધ્યયનસ્ય શબ્દાર્થસ્ત્વેવમ્-ઉત્તરાણિ=મોક્ષસાધકત્વાત્
પ્રધાનાનિ અધ્યયનાનિ યત્ર તદુત્તરાધ્યયનમ્ ।

નન્વિદમેવ શાસ્ત્રં પ્રધાનં ચેત્ આચારાઙ્ગાદિદ્વાદશાઙ્ગી ભગવત્પૂજાઽપિ
પ્રધાનતયાઽનુકત્વાદિતોઽપકૃષ્ટતયા પ્રેક્ષાવદ્ભિરનુપાદેયા સ્યાદિતિ ચેદ્ ? અત્રો-
ભગવાન ગૌતમ ગણધર કો (નત્વા) નમસ્કાર કર મેં (ઉત્તરાધ્યયને)
હસ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર કે ઉપર (પ્રિયદર્શિનીં વૃત્તિં) પ્રિયદર્શિની નામક
વૃત્તિ કી (કુર્વે) રચના કરતા હું ॥ ૪ ॥

ટીકાર્થ-હસ અવસર્પિણી કાલ મેં ઉત્પન્ન ચૌવીસવે અન્તિમ તીર્થંકર
ભગવાન શ્રીવર્ધમાન સ્વામી કા અન્તિમ ચાતુર્માસ પાવાપુરી મેં હુઆ ।
વહાં પર ભગવાન કી સેવા મેં, નવમહ્લકિ નવલેચ્છકિ જો કાશી ંવં
કૌશલદેશ કે અઠારહ ગણરાજાથે વે ઉપસ્થિત હુણ । ઁન સર્વોંને પષ્ઠભક્ત
કિયા । ઁસ સમય ઁન શ્રી ભગવાન મહાવીર સ્વામી કી અન્તિમ દેશના
હુઈ, જો દેશના છત્તીસ અધ્યયનરૂપ 'ઉત્તરાધ્યયન' હસ નામ સે પ્રસિદ્ધ
હુઈ, તથા વીસ અધ્યયનરૂપ વિપાકશ્રુત, હસ નામ સે મી પ્રસિદ્ધ હુઈ ।
ઁનમેં 'ઉત્તરાધ્યયન' શબ્દ કા અર્થ હસ પ્રકાર હૈ-મોક્ષ સાધક હોને
સે ઉત્તર-પ્રધાન હૈ અધ્યયન જિસમેં વહ ઉત્તરાધ્યયન હૈ ।

ગણધરને (નત્વા) નમસ્કાર કરી હું (ઉત્તરાધ્યયને) ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર ઉપર
(પ્રિયદર્શિનીમ્ વૃત્તિં) પ્રિયદર્શિની નામની વૃત્તિની (કુર્વે) રચના કરું છું. ॥૪॥

ટીકા-આ અવસર્પિણી કાળમાં ઉત્પન્ન થયેલા ચૌવીસમા છેલ્લા તીર્થંકર ભગ-
વાન શ્રી વર્ધમાન સ્વામીનો છેલ્લો ચાતુર્માસ પાવાપુરીમાં થયો. ત્યાં આગળ
ભગવાનની સેવામાં નવમહ્લકિ નવલેચ્છકિ જે કાશી અને કૌશલ દેશના અઠાર
ગણરાજા આવેલ હતા એ બધાએ પષ્ઠભક્ત કરેલ. આ સમયે ભગવાન શ્રી
મહાવીર સ્વામીની અન્તિમ દેશના થઈ, જે દેશના છત્તીસ અધ્યયનરૂપ
'ઉત્તરાધ્યયન' આ નામથી પ્રસિદ્ધ થઈ, તથા વીસ અધ્યયનરૂપમાં વિપાકશ્રુત
નામથી પણ પ્રસિદ્ધ થઈ, આમાં 'ઉત્તરાધ્યયન' શબ્દનો અર્થ આ પ્રકારે છે-
મોક્ષસાધક હોવાથી ઉત્તર-પ્રધાન છે અધ્યયન જેમાં તે ઉત્તરાધ્યયન છે.

(સગુણિસમિતિં સમાં વિરતિમાદધાનં સદા) જો પાંચ સમિતિ
 ઓર ત્રીન ગુણિયોં કો ધારક હૈં, તથા સર્વદા સર્વવિરતિ કો પાલને વાલે
 હૈં, (ક્ષમાવદલિલક્ષમં) પૃથિવી કો સમાન જો સર્વ પ્રકાર કો અનુકૂલ
 પ્રતિકૂલ પરીપહાદિક કો સહન કરતે હૈં, (કલિતમઞ્જુચારિત્રકમ્)
 જો નિરતિચાર ચારિત્ર અરાધન મેં સદા તત્પર રહતે હૈં, તથા—(સદોર-
 મુલ્લવલ્લિકાવિલસિતાનનેન્દુ) વાયુકાયાદિ કો યતના કો લિયે જિનકા
 મુલ્લરૂપી ચન્દ્રમણ્ડલ સદા સદોરક મુલ્લવલ્લિકા સે સુશોભિત હૈં, તથા—
 (અપૂર્વવોધપ્રદં) જો અપૂર્વ સમકિતરૂપી વોધ-વીજ કો દાતા હૈં ઓર
 (ભવવારિધિપ્લવમ્) ઇસ સંસારસમુદ્ર સે ભવ્ય જીવોં કો પાર હોને કો
 લિયે નૌકા સમાન હૈં, ઁસે (ગુરં) નિર્ગન્થ ગુરુ મહારાજ કો (પ્રણૌમિ)
 મેં નમસ્કાર કરતા હૂં ॥ ૩ ॥

અવ ટીકાકાર ભગવાનકી વાણી આદિકો નમસ્કાર કરકે અપની
 વ્યક્ત્યપતા પ્રકટ કરતે હૈં—‘જૈનો’ ઇત્યાદિ ।

(જૈનોં સરસ્વતોં) જિનેન્દ્ર કો મુલ્લકમલ સે નિર્ગત દ્વાદશાંગીરૂપ
 સરસ્વતી દેવી કો, ઁવં (ગણનાયકં ગૌતમં) ગણનાયક-ગચ્છ કો નાયક

(સગુણિસમિતિં સમાં વિરતિમાદધાનં સદા)—જો પાંચ સમિતિ અને
 ત્રણ ગુણિયોના ધારક છે, તથા સર્વદા સર્વવિરતિને પાળવાવાળા છે, (ક્ષમા-
 વદલિલક્ષમં) પૃથ્વીના સમાન જે સર્વ પ્રકારના અનુકૂળ પ્રતિકૂળ પરિપહોને સહન
 કરે છે, (કલિતમંજુચારિત્રકમ્)—જો નિરતિચાર ચારિત્રના આરાધનમાં
 સદા તત્પર રહે છે. તથા (સદોરમુલ્લવલ્લિકાવિલસિતાનનેન્દુ) વાયુકાય આદિની
 યતનાને માટે જેમનું મુખરૂપી ચન્દ્રમંડળ સદા દોરાસહિતની મુંડપત્તીથી
 સુશોભિત છે, તથા (અપૂર્વવોધપ્રદં) અપૂર્વ સમકિતરૂપી બોધ-બીજના
 દાતા છે અને (ભવવારિધિપ્લવમ્) આ સંસારસમુદ્રથી ભવ્ય છવોને પાર
 કરવામાં નૌકાસમાન છે, એવા (ગુરં) નિર્ગન્થ ગુરુ મહારાજને (પ્રણૌમિ)
 હું નમસ્કાર કરું છું.

હવે ટીકાકાર જીન ભગવાનની વાણી આદિને નમસ્કાર કરી સ્વવક્ત-
 વ્યતા પ્રકટ કરે છે—‘જૈનો’ ઇત્યાદિ.

(જૈનોં સરસ્વતોં) જિનેન્દ્રના મુખકમળથી નિર્ગત દ્વાદશાંગીરૂપ સરસ્વતી
 દેવીને, અને (ગણનાયકમ્ ગૌતમં) ગણનાયક-ગચ્છના નાયક ભગવાન ગૌતમ

તત્ર પટ્ટ્ત્રિંશદધ્યયનાનાં નામાનિ પ્રદર્શ્યન્તે—

૧-વિનયશ્રુતમ્, ૨-પરીપહઃ, ૩-ચતુરંગીયમ્, ૪-અસંસ્કૃતમ્, ૫-અકામસકામમરણીયમ્, ૬-ક્ષુલ્લકનિર્ગ્રન્થીયં, ૭-એલકીયમ્ (ઉરગ્રીયમ્), ૮-કાપિલકમ્, ૯-નમિપ્રવ્રજ્યા, ૧૦-દ્રુમપત્રકમ્, ૧૧-વહુશ્રુતમ્, ૧૨-હરિકેશીયમ્, ૧૩-ચિત્તસંભૂતીયમ્, ૧૪-ઇપુકારીયમ્, ૧૫-સભિશ્ચુ, ૧૬-બ્રહ્મચર્યસમાધિઃ, ૧૭-પાપશ્રમણીયમ્, ૧૮-સંયતીયમ્, ૧૯-મૃગાપુત્રીયમ્, ૨૦-મહાનિર્ગ્રન્થીયમ્, ૨૧-સમુદ્રપાલીયમ્, ૨૨-રથનેમીયમ્, ૨૩-કેશિગૌતમીયમ્, ૨૪-સમિતીયમ્, ૨૫-યજ્ઞીયમ્, ૨૬-સામાચારી, ૨૭-સ્વલુંકીયમ્, ૨૮-મોક્ષમાર્ગગતિઃ, ૨૯-સમ્યક્ત્વપરાક્રમઃ, ૩૦-તપોમાર્ગઃ, ૩૧-ચરણવિધિઃ, ૩૨-પ્રમાદસ્થાનમ્, ૩૩-કર્મ-

જગહ-જગહ વર્ણિત હુઆ હૈ, અતઃ પ્રસિદ્ધિવશ ઇસે પ્રધાન કહના કોઈ અનુચિત નહીં હૈ । ઇસલિખ ઇસ મૂલસૂત્ર કા નામ ઉત્તરાધ્યયન કહા ગયા હૈ । ઉત્તરાધ્યયન કે ૩૬ અધ્યયન યે હૈ—

(૧) વિનયશ્રુત, (૨) પરીપહ, (૩) ચતુરંગીય, (૪) અસંસ્કૃત, (૫) અકામસકામમરણ, (૬) ક્ષુલ્લકનિર્ગ્રન્થીય, (૭) એલકીય, (૮) કાપિલક, (૯) નમિપ્રવ્રજ્યા, (૧૦) દ્રુમપત્રક, (૧૧) વહુશ્રુત, (૧૨) હરિકેશીય, (૧૩) ચિત્તસંભૂતીય, (૧૪) ઇપુકારીય, (૧૫) સભિશ્ચુ, (૧૬) બ્રહ્મચર્યસમાધિ, (૧૭) પાપશ્રમણીય, (૧૮) સંયતીય, (૧૯) મૃગાપુત્રીય, (૨૦) મહાનિર્ગ્રન્થીય, (૨૧) સમુદ્રપાલીય, (૨૨) રથનેમીય, (૨૩) કેશિગૌતમીય, (૨૪) સમિતીય, (૨૫) યજ્ઞીય, (૨૬) સામાચારી, (૨૭) સ્વલુંકીય, (૨૮) મોક્ષમાર્ગગતિ, (૨૯) સમ્યક્ત્વપરાક્રમ, (૩૦) તપોમાર્ગ,

એટલે પ્રસિદ્ધિવશ આને પ્રધાન કહેવામાં કાંઈ અનુચિત બેબું નથી. આ માટે આ મુલસૂત્રનું નામ ઉત્તરાધ્યયન કહેવાયેલ છે. ઉત્તરાધ્યયનના છત્રીસ અધ્યયન આ પ્રકારે છે—

(૧) વિનયશ્રુત, (૨) પરિપહ, (૩) ચતુરંગીય, (૪) અસંસ્કૃત, (૫) અકામસકામમરણ, (૬) ક્ષુલ્લકનિર્ગ્રન્થીય, (૭) એલકીય, (૮) કાપિલક, (૯) નમિપ્રવ્રજ્યા, (૧૦) દ્રુમપત્રક (૧૧) વહુશ્રુત, (૧૨) હરિકેશીય, (૧૩) ચિત્તસંભૂતીય, (૧૪) ઇપુકારીય, (૧૫) સભિશ્ચુ, (૧૬) બ્રહ્મચર્યસમાધિ, (૧૭) પાપશ્રમણીય, (૧૮) સંયતીય, (૧૯) મૃગાપુત્રીય, (૨૦) મહાનિર્ગ્રન્થીય, (૨૧) સમુદ્રપાલીય, (૨૨) રથનેમીય, (૨૩) કેશિગૌતમીય, (૨૪) સમિતીય, (૨૫) યજ્ઞીય, (૨૬) સામાચારી, (૨૭) સ્વલુંકીય, (૨૮) મોક્ષ માર્ગગતિ, (૨૯) સમ્યક્ત્વપરાક્રમ,

ચ્યતે—યદ્યપિ સર્વે પ્રવચનં પ્રધાનમેવ, તથાપ્યેતાનિ વિનયશ્રુતાદીનિ પદ્ત્રિંશદ-
ધ્યયનાનિ રુદ્ધિવશાત્ પ્રધાનાનિ । ભગવદ્ધર્મદેશનાસ્વરૂપતયાઽસ્મિન્ શાસ્ત્રે દ્વાદશાંગી
પ્રતિપાદિતાર્થમુપસંહરતા ભગવતા પ્રાધાન્યં રુદ્ધ્યા પ્રદર્શિતમ્, સચિસ્તરં તુ તત્ત્વં તત્ર
તત્ર સૂત્રે વર્ણિતમિતિ ન કાઽપ્યનુપપત્તિઃ ।

પ્રશ્ન—યદિ છત્રીસ અધ્યયનાત્મક યહ શાસ્ત્ર હી પ્રધાન માના
જાવેગા તો આચારાંગ આદિ દ્વાદશાંગ કિ જિનકા પ્રરૂપણ ખી સ્વયં
ભગવાન્ ને હી કિયા હૈ, પ્રધાનરૂપ સે નહીં કહે જાને કે કારણ ઇસકી
અપેક્ષા અપકૃષ્ટ-અપ્રધાન હો જાયેંગે, ઓર ઇસ કારણ વે પ્રેક્ષાવાન્-
બુદ્ધિમાનો-કી દૃષ્ટિ મેં ઉપાદેય નહીં રહ સકેંગે, સો ઇસ પ્રકાર યદિ
કોઈ પ્રશ્ન કરે તો ડસકા સમાધાન ઇસ પ્રકાર હૈ—

ભગવત્પ્રતિપાદિત હોને કે કારણ યદ્યપિ સખી દ્વાદશાંગાત્મક
પ્રવચનપ્રધાન હૈ ફિર ખી યહાંજો ઇન વિનયશ્રુતાદિક છત્રીસ અધ્યયનોં
મેં પ્રધાનતા પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈ વહ કેવલ પ્રસિદ્ધિ કે વશ સમજના
ચાહિયે । ભગવાન કી અન્તિમદેશનાસ્વરૂપ હોને સે ઇસ શાસ્ત્ર મેં
દ્વાદશાંગપ્રતિપાદિત અર્થ કા સંક્ષેપ સે સમાવેશ કિયા ગયા હૈ, અતઃ
સૂત્રકાર ને પ્રસિદ્ધિ સે હી ઇસમેં પ્રધાનતા પ્રકટ કી હૈ । દ્વાદશાંગ કા
વિસ્તારસહિત વાસ્તવિક તત્ત્વ, આચારાંગ, સૂત્રકૃતાંગ આદિ આગમોમેં

પ્રશ્ન—જો છત્રીસ અધ્યયનાત્મક આ શાસ્ત્ર જ પ્રધાન મનાશે તો આચારા-
રાંગ વગેરે દ્વાદશાંગ કે જોનું પ્રરૂપણ પણ સ્વયં ભગવાને જ કરેલ છે, તે
પ્રધાનરૂપનાં ન કહેવાવાને કારણે આની અપેક્ષા અપકૃષ્ટ-અપ્રધાન બની જશે,
અને આ કારણથી તે પ્રેક્ષાવાન્-બુદ્ધિમાનો-ની દૃષ્ટિએ ઉપાદેય નહીં રહે. જો
આ પ્રકારનો કદાચ કોઈ પ્રશ્ન કરે તો એનું સમાધાન આ પ્રકારથી છે—

સ્વયં ભગવાનથી પ્રતિપાદિત હોવાના કારણે જોકે બંધાં દ્વાદશાંગાત્મક
પ્રવચન પ્રધાન છે છતાં પણ અહિં આ વિનયશ્રુતાદિક છત્રીસ અધ્યયનોમાં
પ્રધાનતા પ્રદર્શિત કરાયેલ છે, તે કેવળ પ્રસિદ્ધિને વશ હોવાનું સમજવું
જોઈએ. ભગવાનની છેલ્લીદેશનાસ્વરૂપ હોવાથી આ શાસ્ત્રમાં દ્વાદશાંગપ્રતિ-
પાદિત અર્થનો સંક્ષેપમાં સમાવેશ કરવામાં આવેલ છે, એટલે સૂત્રકારે
પ્રસિદ્ધિથી જ આમાં પ્રધાનતા પ્રગટ કરી છે. દ્વાદશાંગનું વિસ્તારસહિત
વાસ્તવિક તત્ત્વ, આચારાંગ, સૂત્રકૃતાંગ વગેરે આગમોમાં ઠેકઠેકાણે વર્ણન થયેલ

સહ સમ્યન્ધઃ । ભાવસંયોગઃ—અશુભભાવૈઃ સહાત્મનઃ સમ્યન્ધઃ, તસ્માત્ સર્વવિધ-
સંયોગાદ્ વિપ્રમુક્તસ્ય=વિપ્રયુક્તસ્ય, અનિત્યાશરણાદિદ્વાદશભાવનાભિઃ સંયોગસ્ય
ફલં સંસારપરિભ્રમણાદિરૂપં વિજ્ઞાય સંયોગં પરિત્યક્તવત્ इत्यर्थः । સંયોગો હિ મૃગ-
તૃષ્ણાવદ્ ભ્રમોત્પાદકઃ, કુગતિસાધકઃ, વિવેકતસ્મૂલને મત્તગજરાજોપમઃ, અમ-
ન્દાત્માનન્દરસશોપણે પ્રચण्डमार्तण्डसमः, શ્રુતચારિત્રધર્મારામદાવાનલઃ, સદ્ધ્યાન-
વારિદિવિક્ષેપણે શૈલશિખરાનિલઃ । સંયોગસ્ય પ્રિયવિયોગજનકત્વેન દારુણદુઃખોત્પાદ-
કતયાઽપિ પરિહાર્યતા,

ક્તસ્ય) સર્વથા રહિત (અળગારસ્સ-અનગારસ્ય) અનગાર (મિક્ષુણો
-મિક્ષોઃ)-સાધુ કે (વિણયં-વિનયં) વિનય કો મૈં (આણુપુર્વિ-આ-
નુપૂર્વી) શાસ્ત્રોક્તપદ્ધતિ કે અનુસાર (પાઙ્કરિસ્સામિ-પ્રાદુષ્કરિણ્યામિ)
પ્રકટ-ક ગા । અતઃ હે જમ્બૂ ! તુમ સવ ઉસે (મે-મત્તાઃ) મુક્ત સે
(સુણેહ-શૃણુત) સુનો ॥ ૧ ॥

ભાવાર્થ—સંયોગ શબ્દ કા અર્થ સંબંધ હૈ । દ્રવ્યસંયોગ ઔર
'ભાવસંયોગ' કે ભેદ સે यह संयोग दो प्रकार का है । पूर्वसंयोग और
पश्चात्संयोग के भेद से द्रव्यसंयोग भी दो तरह का बतलाया गया है ।
माता पिता आदि के साथ जो जन्म से संबंध है वह पूर्वसंयोग है ।
श्वशुर अदि के साथ पीछे से हुआ संबंध पश्चात्संयोग है । अशुभ
भावों के साथ आत्मा का संबंध रहता है वह 'भावसंयोग' है । इस
संयोग का सर्वथा परित्याग वही आत्मा कर सकता है जो अनित्य

રહિત (અળગારસ્સ-અનગારસ્ય) અળગાર (મિક્ષુણો-મિક્ષોઃ) સાધુના (વિણયં-
વિનયં) વિનયને હું (આણુપુર્વિ-આનુપૂર્વી) શાસ્ત્રોક્ત પદ્ધતિ અનુસાર (પાઙ્ક-
રિસ્સા મિ-પ્રાદુષ્કરિણ્યામિ) પ્રગટ કરીશ. એટલે હે જમ્બૂ ! તમે બધા એને
(મે-મત્તાઃ) મારી પાસેથી (સુણેહ-શૃણુત) સાંભળો.

ભાવાર્થ—સંયોગ શબ્દનો અર્થ સંબંધ છે. દ્રવ્યસંયોગ અને ભાવસંયોગના
ભેદથી આ સંયોગ બે પ્રકારે છે. પૂર્વસંયોગ અને પશ્ચાત્સંયોગના ભેદથી દ્રવ્ય
સંયોગ પણ બે રીતનો બતાવેલ છે. માતા પિતા વગેરેની સાથેનો જે જન્મનો
સંબંધ છે, તે પૂર્વસંયોગ છે. શ્વશુર વગેરેની સાથે પછીથી થયેલ સંબંધ
એ પશ્ચાત્સંયોગ છે. અશુભ ભાવોની સાથે આત્માનો જે સંબંધ રહે છે એ
ભાવસંયોગ છે. આ સંયોગનો સર્વથા પરિત્યાગ એજ આત્મા કરી શકે છે.

પ્રકૃતિઃ, ૩૪-લેશ્યા, ૩૫-અનગાર માર્ગગતિઃ, ૩૬-જીવાજીવ-વિમક્તિઃ, इति ।
તત્ર-શ્રીસુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામિનમન્યાનપિ શિષ્યાનુત્તરાધ્યયનસૂત્રાર્થ પ્રતિબોધ-
યિતું પ્રવૃત્તઃ સન્ ધર્મસ્ય વિનયમૂલકત્વાત્પથમં વિનયશ્રુતાભ્યયનં પ્રસ્તુવંસ્ત-
સ્યાદં સૂત્રમાહ—

મૂલમ્—

સંજોગો વિપ્પમુવ્વકસ્સ, અણગારસ્સ ભિવ્વલુણો ।

વિણંયં પાઉંકરિસ્સામિ, આણુપુંઠિવં સુણેહં મે ॥ ૧ ॥

છાયા—

સંયોગાદ વિપ્રમુક્તસ્ય, અનગારસ્ય મિશ્નોઃ ।

વિનયં પ્રાદુષ્કરિષ્યામિ, આનુપૂર્વો ગૃણત મે ॥ ૧ ॥

ટીકા—

‘સંજોગા.’ इत्यादि । संयोगादिति, संयोगः=सम्बन्धः, स द्विविधः—
द्रव्यसंयोगः भावसंयोगश्च । तत्र द्रव्यसंयोगो द्विविधः—पूर्वसंयोगः पश्चात्संयोगश्च ।
तत्र पूर्वसंयोगो मातापित्रादिभिः सार्धं सम्बन्धः । पश्चात्संयोगस्तु श्वशुरादिभिः
(૩૧) ચરણવિધિ, (૩૨) પ્રમાદસ્થાન, (૩૩) કર્મપ્રકૃતિ, (૩૪) લેશ્યા,
(૩૫) અનગારમાર્ગગતિ, (૩૬) જીવાજીવવિમક્તિ ।

इन में श्री सुधर्मास्वामीने सर्व प्रथम जंबूस्वामी एवं और भी
दूसरे शिष्योंको इस उत्तराध्ययन सूत्र के अर्थको समझाने के लिये
“विनय है मूल कारण जिसका ऐसा धर्म है” ऐसा समझकर पहले
इस विनयश्रुत नाम अध्ययनका प्ररूपण करते हुए प्रथम सूत्र कहते
हैं—‘संजोगा’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(સંજોગા-સંયોગાત્)સંયોગ સે (વિપ્પમુક્કસ્સ-વિપ્રમુ-

(૩૦) તપોભાગ, (૩૧) ચરણવિધિ, (૩૨) પ્રમાદસ્થાન, (૩૩) કર્મપ્રકૃતિ,
(૩૪) લેશ્યા, (૩૫) અનગારમાર્ગગતિ, (૩૬) જીવાજીવવિમક્તિ.

આમાં શ્રી સુધર્મા સ્વામીએ સર્વ પ્રથમ જમ્બૂસ્વામી અને બીજા ઘણા
શિષ્યોને આ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રનો અર્થ સમજાવવા માટે “વિનય છે મૂળ
કારણ જેનું એવો ધર્મ છે” એવું સમજાવેલું આ વિનયશ્રુત નામના
અધ્યયનનું પ્રરૂપણ કરતાં પ્રથમ સૂત્ર કહે છે—‘સંજોગા વિપ્પમુક્કસ્સ’ इत्यादि.

અ-વચાર્થઃ—(સંજોગા-સંયોગાત્) સંયોગથી (વિપ્પમુક્કસ્સ-વિપ્રમુક્તસ્ય) સર્વથા

સહ સમ્બન્ધઃ । ભાવસંયોગઃ-અશુભભાવૈઃ સદ્ગત્મનઃ સમ્બન્ધઃ, તસ્માત્ સર્વવિધ-
સંયોગાદ્ વિપ્રયુક્તસ્ય=વિપ્રયુક્તસ્ય, અનિત્યાશરણાદિદ્વાદશભાવનામિઃ સંયોગસ્ય
ફલં સંસારપરિભ્રમણાદિરૂપં વિજ્ઞાય સંયોગં પરિત્યક્તવત્ इत्यर्थः । સંયોગો હિ મૃગ-
તુષ્ણાવદ્ ભ્રમોત્પાદકઃ, કુગતિસાધકઃ, વિવેકતસ્મૂલને મત્તગજરાજોપમઃ, અમ-
ન્દાત્માનન્દરસશોષણે પ્રચण्डमार्तण्डसमः, શ્રુતચારિત્રધર્મારામદાવાનલઃ, સદ્ધ્યાન-
ચારિદિવિલેપણે શૈલશિખરાનિલઃ । સંયોગસ્ય પ્રિયવિયોગજનકત્વેન દારુણદુઃખોત્પાદ-
કતયાઽપિ પરિહાર્યતા,

ક્તસ્ય) સર્વથા રહિત (અણગારસ્સ-અનગારસ્ય) અનગાર (મિલ્લુણો
-મિલ્લોઃ)-સાધુ કે (વિણયં-વિનયં) વિનય કો મૈં (આણુપુલ્લિ-આ-
નુપૂર્વી) શાસ્ત્રોક્તપદ્ધતિ કે અનુસાર (પાઙ્કરિસ્સામિ-પ્રાદુષ્કરિણ્યામિ)
પ્રકટ-ક ગા । અતઃ હે જમ્બૂ ! તુમ સય ઉસે (મૈ-મત્તાઃ) મુદ્ધ સે
(સુણેહ-શ્રુણુત) સુનો ॥ ૧ ॥

ભાવાર્થ—સંયોગ શબ્દ કા અર્થ સંબંધ હૈ । દ્રવ્યસંયોગ ઔર
ભાવસંયોગ કે ભેદ સે यह संयोग दो प्रकार का है । पूर्वसंयोग और
पश्चात्संयोग के भेद से द्रव्यसंयोग भी दो तरह का बतलाया गया है ।
माता पिता आदि के साथ जो जन्म से संबंध है वह पूर्वसंयोग है ।
श्वशुर अदि के साथ पीछे से हुआ संबंध पश्चात्संयोग है । अशुभ
भावों के साथ आत्मा का संबंध रहता है वह भावसंयोग है । इस
संयोग का सर्वथा परित्याग वही आत्मा कर सकता है जो अनित्य

રહિત (અણગારસ્સ-અનગારસ્ય) અણગાર (મિલ્લુણો-મિલ્લોઃ) સાધુના (વિણયં-
વિનયં) વિનયને હું (આણુપુલ્લિ-આનુપૂર્વી) શાસ્ત્રોક્ત પદ્ધતિ અનુસાર (પાઙ્ક-
રિસ્સા મિ-પ્રાદુષ્કરિણ્યામિ) પ્રગટ કરીશ. એટલે હે જમ્બૂ ! તમે બધા એને
(મૈ-મત્તાઃ) મારી પાસેથી (સુણેહ-શ્રુણુત) સાંભળો.

ભાવાર્થ—સંયોગ શબ્દનો અર્થ સંબંધ છે. દ્રવ્યસંયોગ અને ભાવસંયોગના
લેહથી આ સંયોગ બે પ્રકારે છે. પૂર્વસંયોગ અને પશ્ચાત્સંયોગના લેહથી દ્રવ્ય
સંયોગ પણ બે રીતનો બતાવેલ છે. માતા પિતા વગેરેની સાથેનો જે જન્મનો
સંબંધ છે, તે પૂર્વસંયોગ છે. શ્વશુર વગેરેની સાથે પછીથી થયેલ સંબંધ
એ પશ્ચાત્સંયોગ છે. અશુભ ભાવોની સાથે આત્માનો જે સંબંધ રહે છે એ
ભાવસંયોગ છે. આ સંયોગનો સર્વથા પરિત્યાગ એજ આત્મા કરી શકે છે,

અન્યચ—

ન સ્વલુ વિઘટિતાઃ પુનર્ઘટન્તે,
ન ચ ઘટિતાઃ સ્થિરસંગતં શ્રયન્તે ।

પિપતિપુમવશં રુજન્તિ વશ્યા,—

સ્તટતરુમાપ ઇવાપગાગણસ્ય ॥ ૩ ॥

અત્ર વિષયે દૃષ્ટાતં કથયતિ—

કથિદ્ વણિકપુત્રઃ સંયોગસ્ય કટુકફલં વિજ્ઞાય વિરજ્ય સંયોગં પરિત્યક્ત-
વાન્ । તથાહિ—મથુરાનગર્યાં સુભગ-મુનન્દનામાનો દ્વો વણિજો સ્તઃ, સુભગસ્ત્ર

ઔર મી-ન સ્વલુ વિઘટિતા પુનર્ઘટન્તે, નચ ઘટિતાઃ સ્થિરસંગતં શ્રયન્તે ।

પિપતિપુમવશં રુજન્તિ વશ્યાસ્તટતરુમાપ ઇવાપગાગણસ્ય ॥ ૩ ॥

જો મિલકર ફિર અલગ હો જાતે હૈં उनका उसी पर्याय में उसी
रूप से फिर मिलना होगा, यह सर्वथा असम्भव है । जो मिले हँ वे
हमारे साथ सदा स्थिर ही रहेंगे-यह भी कोई नहीं कह सकता । जिस
प्रकार नदियों का पानी अपने तट पर रहे हुए वृक्षोंको दुःख देता है,
उसी प्रकार वश्य-प्रिय स्त्रीपुत्रादि मरते समय मनुष्य को दुःखी करते हैं,
अर्थात् ये स्त्री पुत्रादिक इस जीव को अनेक प्रकार से व्यथित करते
रहते हैं । इस लिये माता पिता आदि का संयोग सर्वथा त्यागने योग्य है ।

इस पर सुधन नामक वणिक्पुत्र का दृष्टान्त इस प्रकार है—

सुधन नामक एक वणिक्पुत्र ने किस तरह इस संयोग का फल
कटुक जाना और किस तरह विरक्त होकर उसका परित्याग किया? यह

વળી પણ....ન સ્વલુ વિઘટિતાઃ પુનર્ઘટન્તે, ન ચ ઘટિતાઃ સ્થિરસંગતં શ્રયન્તે ।

પિપતિપુમવશં રુજન્તિ વશ્યાસ્તટતરુમાપ ઇવાપગાગણસ્ય ॥ ૩ ॥

જે મળીને ફરી જુદા થઇ જાય છે. એમનું એજ પર્યાયમાં એજ રૂપમાં
ફરી મળવાનું ધારે; એ સર્વથા અસંભવ છે. જે મળ્યા છે તે અમારી સાથે
સદા સ્થિર જ રહેશે—આ પણ કેઇ કહી શકતું નથી. જે રીતે નદિયોનું પાણી
ચોતાના તટ ઉપરનાં વૃક્ષોને દુઃખ આપે છે, એજ પ્રકારે વશ્ય-પ્રિય સ્ત્રી પુત્રાદિ
મરતી સમયે મનુષ્યને દુઃખી કરે છે, અર્થાત્ એ સ્ત્રીપુત્રાદિક આ જીવને
અનેક પ્રકારથી દુઃખી કરતાં રહે છે. આ માટે માતાપિતા આદિનો સંયોગ
સર્વથા ત્યાગવા યોગ્ય છે.

આ અંગે સુધન નામના વણિકપુત્રનું દૃષ્ટાંત આ પ્રકારનું છે—

સુધન નામના એક વણિકપુત્રને કેવી રીતે આ સંયોગનું ફળ કડતું
માલુમ પડ્યું? અને કેવી રીતે વિરક્ત બનીને તેનો પરિત્યાગ કર્યો? એ વાત

दक्षिणतः, सुनन्दश्चोत्तरतो निवसन्नासीत् । तत्रैकोऽपरस्य गृहे प्राधुणिकोऽभवत्, तदोभौ मिथश्चित्तितवन्तौ—आवयोः प्रीतिर्दृढतरा कथं भविष्यति ?, यथावयोर्मध्ये एकस्य पुत्रः स्यादेकस्य च पुत्री, तदा तयोर्वैवाहिकसम्बन्धेनावयोः संयोगस्तज्जनिता प्रीतिश्च स्थिरतरा भविष्यति । अथैकदा दक्षिणदिग्वर्तिनः श्रेष्ठिनः सुधननामकः पुत्रो जातः, उत्तरदिग्वासिनः श्रेष्ठिनश्च पुत्री, कुसुमवती—नाम्नी समजनि । तयोः परस्परं वाग्दानं संजातम् । तदनन्तरं दक्षिणदिग्वासी वणिग् गृहः । तस्मिन् मृते—सति तत्पुत्रः सुधनः पितृधनाधिकारी संजातः । प्रचुरं पितृधनं प्राप्य स प्रमुदितो—

यात उसीके आख्यान द्वारा प्रकटित की जाती है—मथुरा नगरीमें सुभग और सुनन्द नाम के दो वणिक् निवास करते थे । सुभग का घर दक्षिण दिशा में था और सुनन्द का घर उत्तर दिशा में । एक दिनकी बात है कि इन दोनों में से एक दूसरे के घर मेहमान हुआ था, वहाँ इन दोनों ने परस्पर यह विचार किया कि-अपने दोनों का यह स्नेह सर्वदा इसी तरह से बना रहे, इस हेतु अपनेदोनों में से यदि एक को पुत्र हो और दूसरे को पुत्री हो तो दोनों का विवाह कर दें । भाग्यवशात् ऐसा ही हुआ कि-सुभग के यहाँ पुत्र का जन्म हुआ । लड़केका नाम सुधन रखा गया । उत्तरदिशा में निवास करनेवाले उस सुनन्दके यहाँ एक पुत्री हुई । उसका नाम कुसुमवती रखा गया, पूर्वनिश्चित के अनुसार इनकी सगाई-वाग्दान पक्की कर दी गई । सगाई पक्की करके सुभग का तो देहांत हो गया । पिता के धनका अधिकारी पुत्र होता है, इस नियम

तेना आख्यान द्वारा प्रकट करवाभां आवे छे—मथुरा नगरीभां सुभग अने सुनंद नामना जे वणिक् निवास करता छता । सुभगनुं घर दक्षिण दिशाभां छतुं अने सुनंदनुं घर उत्तर दिशाभां । ओक द्विपसनी बात छे के जे जन्मेमांथी ओक जीजने घर मेहमान जनेल, त्यां आ जन्मे परस्पर विचार क्यो के—आपणा जन्मेना आ स्नेह कायम टकी रहे ते हेतुथी आपणा जन्मेमांथी कदाय ओकने पुत्र होय अने जीजने पुत्री होय तो जन्मेना विवाह करी देवा । भाग्यवशात् जेवुं जे जन्मुं के, सुभगने त्यां पुत्रनो जन्म थयो, छोकरानुं नाम सुधन राजवाभां आव्युं उत्तर दिशाभां निवास करवावाणा ते सुनंदने त्यां पुत्री अवतरी, तेनुं नाम कुसुमवती राजवाभां आव्युं । अगाउना निश्चय अनुसार तेमनी सगाई करवाभां आवी । सगाई पक्की क्यो पक्की सुभगनुं मृत्यु थयुं । पिताना धननो अधिकारी पुत्र होय छे, आ नियम अनुसार पिताना पिताना धननो सुधन अधिकारी जन्मे । कोछ ओक समये सुधने स्नान

ऽभवत् । अथैकदा तेन स्नानार्थं पार्श्वतः पृष्ठतः पुरतश्चतुर्दिक्षु चत्वारः स्वर्ण-कलशा-
श्चत्वारो रौप्यकलशाश्चत्वारस्ताम्रकलशाश्चत्वारो मृन्मयकलशा जलपूर्णाः स्थापिताः,
अन्यान्यपि स्नानोपकरणानि तत्रोपस्थापितानि । अत्रान्तरे तत्पूर्वभवमित्रदेवस्तं
प्रतिबोधयितुं समागतः । स वणिक्पुत्रः सुधनः स्नानार्थं स्वर्णकलशमुत्थापयति,
स स्वर्णकलशस्तदानीमेव मित्रदेवमभावात्पण्डितः, एवं चतुर्दिक्षु सर्वे कलशाः
प्रणष्टाः । ततोऽसौ स्नानपीठादुत्तिष्ठति । तस्मिन्नुत्थिते सति स्नानपीठमपि नष्टम् ।
ततस्तस्य धृतिर्नष्टा । यावद् गृहं प्रविष्टः, भृत्यैर्भोजनविधिरुपस्थापितः, स्वर्णरौप्य-

के अनुसार सुधन अपने पिताके धनका अधिकारी बना । किसी एक
समय सुधनने स्नान के अवसर पर भृत्योंसे चार सोने के कलश, चार
चांदी के कलश, चार ताँबेके कलश और चार हीमिट्टी के कलश पानी
से भरवाकर अपनी चारों ओर आजू बाजू और समक्ष एवं पीछे की
ओर, इस प्रकार चारों दिशाओं में रखवा लिये । इसके बाद इसका
पूर्वभवका मित्र जो देवपर्याय में था इसकी इस तरह संयोगी पदार्थों के
सेवन में अधिक लालसा का निरीक्षण कर उसको प्रतिबोध देने के लिये
वहाँ आया । वणिक्पुत्र उस सुधन ने ज्योंही नहाने के लिये सुवर्ण के
कलश को ऊपर उठाया कि उसी समय वह कलश उस अदृश्य हुए देव
के प्रभाव से शीघ्र ही अदृश्य हो गया । इसी तरह अवशिष्ट तीन
कलशों की भी यही हालत हुई । वह एकदम स्नान पीठसे उठ कर खड़ा
हो गया और ज्यों ही उससे नीचे उतरा तो वह स्नान पीठ भी इसकी
नजरों के समक्ष ही नष्ट-अदृश्य हो गया । उसने आश्चर्यचकित होकर
इधर उधर देखा पर कुछ समझ में नहीं आया । यह क्या बात है इससे

करवाना समझे नोकरेथी बार सोनाना कणश, बार चाँदीना कणश, बार ताँबाना
कणश, अने बार माटीना कणश पाणीथी लशवीने पोतानी बार तरङ्ग-आणु-
आणु बार दिशाओमां रखाव्या. आ पछी ओना पूर्व भवने मित्र ने देव
पर्यायमां छतो तेले आ रीते संयोगी पदार्थना सेवनमां अधिक लालसानुं
निरीक्षण करी तेने प्रतिबोध आपवा माटे त्यां आण्ये. वणिक्पुत्र सुधने नडावा
माटे न्यां सुवर्ण कणशने उपाड्यो त्यां अदृश्य रहेला देवना प्रलावथी
ते कणश तुरत न अदृश्य थछ गया. आन रीते पीछे त्रय कणशोनी
पण ओन छालत थछ. वणिक्पुत्र स्नाननी न्याओथी ओडडम छेला थछ
गयो. अने पाटला उपर पोते गेडा छतो तेनाथी नीचे उतर्यो त्यां ओ पाटला
पण अदृश्य थछ गयो. ओले आश्चर्यचकित गनी बार तरङ्ग ओवा मांड्यु

मयभोजनपात्राणि समानीतानि, तत्रैकैकभाजनं क्रमेण नष्टमभवत् । यदाऽसौ स्वर्णमयस्थालमग्रतो धावमानं व्योम्नि पश्यति, तदा तत् स्थालं हस्तेन गृह्णाति, गृहीते सति तदग्रभागतः खण्डमेकं तस्य करतललग्नमासीत्, अपरभागतः स्वर्णमय-स्थालं सर्वं प्रणष्टम् । ततः चुटितस्थालैकखण्डहस्तः सुधनः सर्वं नश्यद् विलोकयन् मूलधनं द्रष्टुमागच्छति, तावत् सर्वं मूलधनमपि नष्टम् । एवं सर्वाऽपि तस्य श्री विनष्टा । अथ निर्धिं द्रष्टुमागच्छति तदा सर्वं निधानमपि नष्टम् । एवं दासीवर्गः, परिवारवर्गोऽपि तस्य नष्टः ।

इसका धैर्य नष्ट हो गया । घर में जाकर यह ज्यों ही भोजन करने के लिये भोजनालय में गया तो रसोईयेने पहिलेसे सजाकर रखे हुए सुवर्ण एवं चांदी के भोजनपात्रों में इसके बैठने पर भोजन परोस दिया परन्तु इसके समक्ष ही वे सब के सब भोजनपात्र क्रम २ से नष्ट हो गये- पता नहीं पडा कहां चले गये। जब एक सुवर्ण का थाल जो इसके समक्ष ही आगे से उठकर आकाश में उड़ने लगा तो इसने उसे धाम कर पकड़ लिया । पकड़ते ही उस थाल की किनार टूटकर इसके हाथ में रह गयी। बांकी का थाल नष्ट हो गया । यह फिर उस टुकड़े को हाथ में लिये हुए ही अपने मूल धन को देखने के लिये वहां से दूसरी तरफ चला तो क्या देखता है कि इसका मूल धन भी सब नष्ट हो चुका है । इस तरह समक्ष ही देखते २ इसकी समस्त लक्ष्मी नष्ट हो गई । निधान नष्ट हो गया । दासी-दास आदि और परिवार वर्ग भी नष्ट हो गये । अब यह उस

परंतु कांछ समज्जवाभां न आब्युं. जेनाभां घिरज न रही. आथी अकजाछ नावानुं छोडी दछ धरभां गथे. अने लोअन करवा लोअनादथभां पडोअथे. ज्यां रसोअथाये सोना आंदिना वासलोभां जेना जेडा पछी लोअन पीरस्थुं. लोअन घिरसाया पछी तेनी नजर सामे जेत जेताभां कम कमथी लोअनपात्रे अदस्थ थवा लाज्यां. जणर न पडी कथां आल्यां गथां. जेक सुवर्ण थाण जे तेनी सामेथी उडवा भांडेले तेने हाथथी पकडतां जे थाणनी किनार तुटीने तेना हाथभां रही गछ. अने जाडीने थाण अदस्थ जनी गथे. थाणना तुटेला टुकडाने हाथभां राभीने पोताना मुण धनने जेवा भाटे त्यांथी भीजु तरक्ष गथे. त्यां जतां शुं देजे छे के पोतानुं मुण धन पछु अदस्थ जनी गथुं हुतुं आ रीते पोतानी नजर सामे तेनी सधजी लक्ष्मी अदस्थ जनी गछ, निधान नष्ट थछ गथे. दासी दास वगेरे परिवार पछु

अथासौ स्वर्णमयस्थालैकखण्डहस्तः सन्नितस्ततो भ्राम्यन्नकस्मादुत्तरभाग-
वासिनः पितृमित्रस्य सुनन्दनामकस्य वणिजो गृहं जगाम । तं दृष्ट्वा सुनन्दस्तं
सादरं भोजयामास । भोजनसमये सुधनस्तानि तानि रत्नानि, तांश्च स्वर्णकलशान्,
तानि स्वर्णमयस्थालानि सर्वाणि स्वकीयानि वस्तूनि तत्र ददर्श । तत्तद् वस्तुजातं
भेक्षमाणं वणिक्पुत्रं सुधनं सुनन्दो वणिक् पृच्छति—किं मम पुत्रीं पश्यसि ?
सुधनेनोक्तम्—नाहं तव पुत्रीं पश्यामि, किं तु त्वद्गृहस्थितान्येतानि रत्नमयानि
वस्तूनि मदीयानि सन्तीति विलोकयामि । सुनन्देन वणिजा प्रोक्तम्—किमत्र

सोने के थाल के टुकड़े को हाथ में लिये हुए इधर-उधर घूमने फिरने
लगा । फिरते २ इसकी दृष्टि उस उत्तर दिशा में रहने वाले सुनन्द के
मकान ऊपर पड़ी, जो इसके पिता का मित्र था । यह उसके घर पर
गया । सुनन्द ने उसको आदर के साथ भोजन करने के लिये बैठाया ।
वहां पर सुधन ने अपनी समस्त नष्ट हुई वस्तुएँ देखीं—वे ही सोने के
थाल, वे ही सुवर्णादि के कलश और वे ही रत्न आदि । जब उसकी दृष्टि
उन अपनी चीजोंके निरीक्षण करने में आसक्त हो रही थी, तब अचा-
नक ही बीचमें टोकते हुए सुनन्द ने कहा—सुधन ! यह क्या करते हो ?
तुम्हारी दृष्टि इस समय कहाँ है, क्या हमारी पुत्री को देख रहे हो ?
सुनन्द के वचन सुन कर सुधन ने कहा—महाशय ! मैं आपकी पुत्री को
नहीं देख रहा हूँ, किन्तु यह विचार कर रहा हूँ कि “ तुम्हारे यहां रही
हुई ये सबही रत्नादिक वस्तुएँ मेरी हैं, यहां ये कैसे आ गईं ” इस बात
का विचार कर रहा हूँ । सुनन्द ने कहा—तुम्हारी होने का क्या प्रमाण है ?

नष्ट થઇ ગયા, આ પછી સોનાના થાલના ટુકડાને હાથમાં રાખીને તે અહિં
તહિં ધુમવા લાગ્યો. ફરતાં ફરતાં તેની દૃષ્ટિ ઉત્તર દિશામાં રહેવાવાળા સુનંદના
મકાન ઉપર પડી, જે તેના પિતાનો મિત્ર હતો. તે એના ઘરે ગયો. સુનંદે
તેને આવકારી પ્રેમપૂર્વક ભોજન કરવા બેસાડ્યો. ત્યાં સુધને પોતાની નષ્ટ
થએલી સઘળી વસ્તુઓ જોઈ—તેજ સોનાનો થાળ, એજ સોનાના કળશ અને
એજ રત્ન આદિ. જ્યારે તેની દૃષ્ટિ એ પોતાની ચીજોનું નિરીક્ષણ કરવામાં
આસક્ત થઈ રહી હતી, ત્યારે અચાનક જ તેને ટોકતાં સુનંદે કહ્યું—સુધન !
આ શું કરો છો ? તમારી દૃષ્ટિ આ સમયે ક્યાં છે, શું મારી પુત્રીને જોઈ
રહ્યા છો ? સુનંદના વચન સાંભળીને સુધને કહ્યું—મહાશય ! હું આપની
પુત્રી તરફ જોતો નથી, પરંતુ એ વિચાર કરું છું કે “ તમારે ત્યાં રહેલી આ
સઘળી રત્નાદિક વસ્તુઓ મારી છે, અહિં એ કઈ રીતે આવી ” આ વાતનો
વિચાર કરી રહ્યો છું. સુનંદે કહ્યું—તમારી હોવાનું શું પ્રમાણ છે. હા. પ્રમાણ છે.

प्रमाणम् ? । सुधनः प्रत्याह—त्वद्गृहावस्थितस्यैतस्य वृद्धितस्वर्णमयस्थालस्य खण्ड-
मेकं मम हस्ते विद्यते, पश्य संयोजयामीत्युक्त्वा संयोजयति, संयोजिते सति तत्
खण्डं तत्र सम्पक् संलग्नम् । अथ सुनन्दः पृच्छति—कस्त्वम्, सुनन्देन पृष्टोऽसौ
वणिकपुत्रः सुधनः स्वपितुर्नाम कथयित्वा परिचयं दत्तवान् । तस्मिन् वणिक-
पुत्रे परिचिते सति सुनन्दः पुनराह—त्वं तु मम जामाताऽसि, इति । इत्थं सर्वं
हां, प्रमाण है तभी तो ऐसा कह रहा हूँ, नम्रता से सुधन ने
जवाब दिया । साबित करनेकी चेष्टा करते हुए सुधन ने वह एक
सोने के थाल की किनार जो उसके हाथ में पहिलेसे थी उसको
दिखलाया, और यह भी बतलाया कि देखो यह सुवर्ण का थाल
जो भग्न अवस्था में आप के यहां है उसी की यह किनार है ।
मैं आप के ही समक्ष उसे इसमें जोड़ता हूँ, यदि यह उस थाल में
जुट जाये तो आपको मेरी बात सत्य माननी पड़ेगी । सुनन्द ने
यह सब स्वीकार कर लिया । सुधन ने सुनन्द के समक्ष ही उस किनार
को उस थाल में ज्यों ही योजित किया तो वह उस में अच्छी तरह जुट
गया । यह देखकर सुनन्द ने कहा—ठीक है । अब तुम यह तो बतलाओ
कि तुम हो कौन ? इस प्रकार सुनन्द के पूछ ने पर सुधन ने उसे अपना
परिचय दे दिया । परिचय पाकर सुनन्द बहुत हर्षित हुआ और कहने
लगा कि धन्य है आज का दिन जो आपके दर्शन हुए । आपके पिताने
मेरी पुत्री के साथ आप का पहिले से वाग्दान निश्चित कर दिया था,
अतः आप मेरे संबंध में जामाता हैं । अब आप योग्य हो चुके हैं, इस

त्यारे तो એવું કહી રહ્યો છું તેવો નમ્રતાથી જવાબ સુધને આપ્યો. સાબીત
કરવાની ચેષ્ટા કરતાં પોતાના હાથમાં રહેલી સોનાના થાળની કિનાર તેને
ખતાવી, અને એ પણ જણાવ્યું કે એવો સોનાનો થાળ જે તુટેલી અવસ્થામાં
તમારે ત્યાં છે તેની આ કિનાર છે. આપની સમક્ષ જ હું તેને આ સાથે જોડું
છું, કદાચ તે આ થાળ સાથે જોડાઈ જાય તો આપને મારી વાત સત્ય માનવી
પડશે. સુનંદે એ વાતનો સ્વીકાર કર્યો. સુધને સુનંદની સામે જ એ કિનાર
તુટેલા થાળ સાથે જોડતાં તેની સાથે બરાબર મળી ગઈ. આ જોઈ સુનંદે
કહ્યું—ઠીક છે, હવે તમે એ તો ખતાવો કે તમે છે કેણું ? આ પ્રકારે સુનંદના
પૂછવાથી સુધને તેને પોતાનો પરિચય આપ્યો. પરિચય સાંભળતાં જ ખૂબ જ
હર્ષ પામ્યો અને કહેવા લાગ્યો કે ધન્ય છે આજનો દિવસ, કે આપનાં દર્શન
થયાં. તમારા પિતાએ મારી પુત્રી સાથે તમારું વેવિશાળ અગાઉ નક્કી કરેલું
એટલે તમે મારા જમાઈ છો, અને તમે યોગ્ય ઉમરના થયા છો, એ માટે મારી

પૂર્વવૃત્તં વર્ણયિતા મુનન્દો વણિક્ પુનરવોચત્-ગૃહાણ મમ પુત્રીં, મદીયં સર્વસ્વં ચ ।
 एतद्वचनं श्रुत्वा मुधनोऽब्रवीत्-पुरुषः पूर्वं कामभोगान् परित्यजति, कामभोगा
 वा पुरुषम्, मां तु कामभोगा एव पूर्वं परित्यक्तवन्तस्तेनाहं तान् परित्यजामि,
 नास्ति मे किञ्चित् प्रयोजनं तव पुत्र्या सर्वस्वेन चेति । एवं संवेगसंगलितं मुधन-
 वचनं श्रुत्वा मुनन्दो वणिक् संवेगं प्राप्तवान् ।

अथ वणिक्पुत्रस्य मुधनस्य वैराग्यं दृष्ट्वा तत्पूर्वभग्नमित्रदेवः प्रत्यक्षीभूय
 तमब्रवीत्-त्वां प्रतिबोधयितुं मया सर्वमेतत् समाचरितम्, इत्युक्त्वा तस्मै सदोरक-
 मुखवस्त्रिकारजोहरणपात्रादीनि साधूपकरणानि समर्पितानि । तदा मुधनः मुनन्देन
 सह प्रव्रजित इति ।

લિયે મેરી પુત્રી કો ઔર મેરે સર્વસ્વ કો અપનાકર મુક્તે કૃનાર્થ કરે ।
 सुनंद के वचनोंको सुनकर मुधन ने कहा-संसार की विचित्रता को
 देखो । प्रायः पुरुष ही पहिले काम-भोगोंका परित्याग किया करता है
 परन्तु आश्चर्य है कि जब काम-भोगों ने ही मुझे पहिले से छोड़ दिया
 है, तब अब सुन्दर मार्ग यही है कि मैं भी अब इन्हें सर्वथा छोड़ दूँ,
 अतः मुझे अब न आपकी पुत्री से मतलब है और न आपके सर्वस्व से ।
 इस प्रकार वैराग्य से युक्त मुधन के वचनको सुनकर सुनंद भी वैराग्य
 को प्राप्त हुआ । वणिक्पुत्र मुधनके वैराग्यको देखकर उसका पूर्वभवीय
 वह मित्र जो देव था प्रत्यक्ष होकर उससे कहने लगा-मित्र मुधन !
 तुम्हें प्रतिबोधित करने के लिये ही मैंने यह सब खेल रचा है, अच्छा
 हुआ तुम प्रतिबोधित हो गये । इस प्रकार कहते हुए उसने उसके लिये

પુત્રીને અને મારા સર્વસ્વને પોતાપુત્રીમાની મને કૃતાર્થ કરે. મુનન્દનાં વચનો
 સાંભળી મુધને કહ્યું-સંસારની વિચિત્રતાને જુઓ, ખરી રીતે પુરુષ જ કામ
 ભોગોનો પરિત્યાગ કરતો આવેલ છે, પરંતુ આશ્ચર્ય છે કે બ્યારે કામ-ભોગોએ
 જ પહેલેથી મને છોડી દીધેલ છે, ત્યારે સારામાં સારો માર્ગ એ છે કે હું
 પણ આને સર્વથા છોડી દઉં, એટલે મને હવે નથી આપની પુત્રીથી મતલબ
 કે ન આપના સર્વસ્વથી. આ પ્રકારનાં વૈરાગ્યથી યુક્ત એવાં મુધનનાં વચનો
 સાંભળીને મુનન્દને પણ વૈરાગ્ય પ્રાપ્ત થયો. હવે વણિક્પુત્ર મુધનના વૈરાગ્યને
 જોઈ તેના પૂર્વભવનો મિત્ર કે જે દેવ છે તે પ્રત્યક્ષ બની તેને કહેવા લાગ્યો-
 -મિત્ર મુધન ! તને પ્રતિબોધિત કરવા માટે જ મેં આ મુઘળો એલ રચેલ છે.
 ઠીક થયું કે તમે પ્રતિબોધ પામ્યા. આ પ્રકારે કહેતાં તેણે તેના માટે

અનગારસ્ય=ન વિઘટેઽગારં = ગૃહં यस્ય સોઽનગારઃ=દ્રવ્યભાવગૃહ-
રહિતઃ, તત્ર દ્રવ્યાગારં-નિયતવાસસ્થાનમ્, ભાવાગારં કપાયમોહનીયં કર્મ, તસ્ય
સ્થિત્યાદિભૂયસ્ત્વે નાસ્તિ ચિરતિસંભવસ્તસ્માદલ્પકપાયમોહનીયો ભાવતોઽનગાર-
સ્તસ્ય મિશ્નોઃ=હનનઘાતનાદિનવકોટિપરિચ્છિદ્ધમિત્તાગ્રાહિણઃ વિનયમ્=વિશિષ્ટો

સાધુ કે ઉપકરણરૂપ સદોરક મુલ્યવસ્ત્રિકા રજોહરણ એવં પાત્ર આદિ
સમર્પિત કિયે । ઇસ પ્રકાર સંયોગ કા કટુક ફલજાનકર સુધનકે સાથ
સુનન્દ ભી પ્રવ્રજિત હો ગયા ।

અવ 'અણગારસ્સ મિક્કલુણો' કા અર્થ કહતે હૈં-અનગાર શબ્દ
કા અર્થ ઘર કા પરિત્યાગ કરના હૈં । દ્રવ્ય ઔર ભાવકે ભેદસે અગાર
કે દો ભેદ હૈં । નિયત જો નિવાસ કા સ્થાન હૈં-વહ દ્રવ્ય-અગાર હૈં ।
કપાય-મોહનીય કર્મ ભાવ-અગાર હૈં । ઇસકી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ આદિ મેં
જીવ કો ચિરતિકા લાભ નહોં હોતા હૈં । ચિરતિ કા લાભ હોને કે લિયે
ઇસકી સ્થિતિ આદિ અલ્પ અપેક્ષિત હોતી હૈં, ઇસલિયે અલ્પકપાય-
મોહનીયવાલા ભાવાનગારરૂપ સે વિવક્ષિત હુઆ હૈં । અવ 'મિક્કુ'
શબ્દ કા અર્થ કહતે હૈં-મિક્કુ વહી હો સકતા હૈં જો હનન ઘાતન આદિ
ક્રિયાઓં કા નવકોટિ સે પરિત્યાગી હોતા હૈં, અર્થાત્ હનના, હનવાના,
ઉસકા અનુમોદન કરના, પકાના, પકવાના, ઉસકા અનુમોદન કરના,
ખરીદના, ખરીદવાના, ઉસકા અનુમોદન કરના, ઇન નવકોટિ દોષોંસે

સાધુનાં ઉપકરણરૂપ દોરાસાથેમુખવસ્ત્રિકા, રજોહરણ અને પાત્રો આદિ
સમર્પિત કર્યાં. આ પ્રકારે સંયોગનાં કટકાં ફળને બાણીને સુધનની સાથેસાથ
સુનન્દ પણ પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરી.

હવે “અણગારસ્સ મિક્કલુણો” નો અર્થ કહે છે—અનગાર શબ્દનો
અર્થ ઘરનો પરિત્યાગ કરવો. તે દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી અગારના બે ભેદ છે.
નિયત જે નિવાસનું સ્થાન છે તે દ્રવ્ય-અગાર છે. કપાય મોહનીય
કર્મ ભાવ-અગાર છે. તેની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ આદિમાં જીવને વિરતિનો લાભ થતો
નથી. વિરતિનો લાભ થવા માટે એની સ્થિતિ આદિ અલ્પ અપેક્ષિત થાય
છે, આ માટે અલ્પકપાયમોહનીયવાળા ભાવાનગારરૂપથી વિવક્ષિત થયેલ છે.
હવે “મિક્કુ” શબ્દનો અર્થ કહે છે—મિક્કુ એજ યદ્યથા છે જે હનન ઘાતન
આદિ ક્રિયાઓનો નવકોટીથી પરિત્યાગ કરે છે. અર્થાત્ હણવું, હણાવવું અને તેનું
અનુમોદન કરવું. પકાવવું, પીબથી તૈયાર કરાવવું, તેનું અનુમોદન કરવું,
ખરીદવું, ખરીદાવવું, અને તેનું અનુમોદન કરવું, આ નવકોટી દોષોથી રહિત

નયો નીતિર્વિનયઃ=સાધુસમાદતઃ સમાચારસ્તમ્, યદ્વા-વિનયતિ=નાશયતિ સકલ-
 વલેશજનકમષ્ટવિધં કર્મ સ વિનયસ્તમ્, ગુરું પ્રતિ નીચૈર્વૃત્તિલક્ષણા નમ્રતા દ્રવ્યતો
 વિનયઃ, સાધ્વાચારં પ્રતિ પ્રવળત્વં ભાવતો વિનયસ્તમિત્યર્થઃ, પ્રાદુષ્કરિષ્યામિ=
 પ્રકટયિષ્યામિ । કેન પ્રકારેણ પ્રાદુષ્કરિષ્યામીત્યાકાઙ્ક્ષાયામાહ-‘આણુપુર્વિ’
 इति । आनुपूर्वोमिति, अत्र-सौत्रत्वात् तृतीयार्थे द्वितीया, आनुपूर्व्यां=क्रमेण
 शास्त्रोक्तपरिपाठयेत्यर्थः, हे शिष्याः ! ये=मम मत्सकाशादित्यर्थः, यद्वा-‘मे’ इति
 विभक्त्यन्तप्रतिरूपकमव्ययम् मे=मत्तः, शृणुत=यूयमाकर्णयत श्रवणं प्रति सावधाना
 भवतेत्यर्थः । स्वशिष्यामिमुલીकरणार्थमिदम् ॥ ૧ ॥

‘વિનયં પ્રાદુષ્કરિષ્યામી’ત્યુક્તં, તત્ર વિનીતલક્ષણે વિજ્ઞાતે સતિ વિનય-
 સ્વરૂપં વિદિતં સ્યાદિતિ વિનીતલક્ષણમાહ—

રહિત ભિક્ષા કા ગ્રહણ કરનેવાલા ભિક્ષુ કહા ગયા હૈ । વિનયં કા અર્થ
 હૈ-વિશિષ્ટ નય, इसलिये यहाँ ‘विनय’ शब्द से साधुओंका आचार
 समझना चाहिये । अथवा-जो अष्टविध कर्मोंका नाश करे सो ‘विनय’
 है । वह विनय द्रव्य-विनय और भाव-विनय के भेद से दो प्रकार का
 है । गुरु के प्रति, तथा पर्यायज्येष्ठोंके प्रति नम्र होना, तथा उनकी सेवा
 करना यह द्रव्य-विनय है । साध्वाचार में तत्पर रहना यह भाव-विनय
 है । उस विनय को मैं शास्त्रोक्त पद्धति के अनुसार प्रकट करूंगा,
 अतः हे जंबू ! तुम सब मुझ से इस बात को अच्छीतरह सुनो ॥ ૧ ॥

વિનીત કે લક્ષણ કા જ્યવતક જ્ઞાન ન હો જાય તબ તક વિનય કા
 સ્વરૂપ જાના નહીં જા સકતા હૈ, इसलिये सूत्रकार विनीत का लक्षण
 कहते हैं—‘आणाणिदेसकरे’ इत्यादि ।

ભિક્ષાને ગ્રહણ કરવાવાળા ‘ભિક્ષુ’ કહેવાય છે. વિનયનો અર્થ છે-વિશિષ્ટ નય,
 આ માટે અહિં ‘વિનય’ શબ્દથી સાધુઓનો આચાર સમજવો જોઈએ. અથવા-
 જે અષ્ટવિધ કર્મોનો નાશ કરે તે ‘વિનય’ છે. તે વિનય દ્રવ્ય-વિનય અને ભાવ
 -વિનયના ભેદથી બે પ્રકારે છે. ગુરૂના પ્રતિ તથા પર્યાયથી યજ્ઞઓ પ્રતિ નમ્ર
 થવું, તથા તેની સેવા કરવી તે દ્રવ્ય વિનય છે. સાધુના આચારમાં તત્પર રહેવું
 એ ભાવ-વિનય છે. તે વિનયને હું શાસ્ત્રોક્ત પદ્ધતિ અનુસાર પ્રગટ કરીશ,
 માટે હે જમ્બૂ ! તમે મારાથી આ સઘળી વાતને સારી રીતે સાંભળો (૧).

વિનીતના લક્ષણનું બધું સુધી જ્ઞાન ન થાય ત્યાં સુધી વિનયનું સ્વરૂપ જાણી
 શકાતું નથી. આ માટે સૂત્રકાર વિનીતનાં લક્ષણ કહે છે.—‘આણાણિદેસકરે’. ઈત્યાદિ.

मूलम्—आणाणिद्वेसकरे, गुरुणमुववायकारण ।

इंगियार्गारसंपण्णे, से विणीए त्तिं वुच्चई ॥ २ ॥

छाया—

आज्ञानिर्देशकरः गुरुणामुपपातकारकः ।

इङ्गिताकारसम्पन्नः स विनीत इत्युच्यते ॥ २ ॥

टीका—

‘आणाणिद्वेसकरे’ इत्यादि । आज्ञानिर्देशकरः=आज्ञा=विधिरूपं प्रतिषेधरूपं वा गुरुवचनं, यथा—‘इदं कुरु’ ‘इदं मा कुरु’ इति, तस्या निर्देशः—भवद्बचनानुसारेण करिष्यामीति कथनं, तस्य करः=कर्ता, यद्वा—आज्ञायाः=तीर्थ-करवाण्या निर्देशः=उत्सर्गापवादकथनं, तस्य कारकः, तथा—गुरुणाम्=आचार्यादीनाम्, उपपातकारकः=उपपातः=समीपेऽवस्थानं, तस्य कारकः, आचार्यादिसंनिहितस्थान-वर्ती, न तु तन्नियोगवचनभयाद् दूरावस्थायीत्यर्थः, तथा—इङ्गिताकारसम्पन्नः, इङ्गितं=निपुणमतिगम्यं स्वाभिप्रायमूचकमीपद्भ्रूचालनादिकम्, आकारः=स्थूल-मतिगम्यः प्रस्थानादिमूचको दिग्बलोकनादिः, ताभ्यां संपन्नः=युक्तः, गुरुमनो-वृत्तिज्ञानवानित्यर्थः, एवंभूतो यः शिष्यः सः विनीतः=विनयवान्, इत्युच्यते तीर्थकरगणधरादिभिरिति शेषः ।

अन्वयार्थ—(गुरुणं—गुरुणां) आचार्य आदिकी (आणाणिद्वेसकरे—आज्ञानिर्देशकरः) आज्ञा को मानने वाला (उववायकारण—उपपातकारकः) उनके निकट सदा रहने वाला (इंगियार्गारसंपण्णे—इङ्गिताकारसंपन्नः) इङ्गित—सूक्ष्म बुद्धि वालों से जानने योग्य गुरु आदि की भ्रूचालन आदि चेष्टा । आकार—स्थूल बुद्धि वालों से भी समझने योग्य गुरु आदि की गमनादिसूचक दिशाका अवलोकनादि चेष्टा । गुरु आदि की इन दोनों चेष्टाओं को अच्छी तरह जानने वाला जो शिष्य होता है (से विणीए

अन्वयार्थ—(गुरुणं—गुरुणां) आचार्य वगैरेनी (आणाणिद्वेसकरे—आज्ञा-निर्देशकरः) आज्ञाने मानवावाणा (उववायकारण—उपपातकारकः) ओभनी पास सदा रहेवावाणा (इंगियार्गारसंपण्णे—इङ्गिताकारसंपन्नः) धङ्गित—सूक्ष्म बुद्धिवाणाथी बलुवा योग्य शुङ्गी भ्रूचालन—(आंभनो धंशारे) आदिनी चेष्टा, आकार-स्थूल बुद्धिवाणाथी पलुसभञ्जवा योग्य शुङ्ग आदिनी गमनादिसूचक दिशानु-अवलोकन आदि चेष्टा, शुङ्ग आदिनी आ भन्ने चेष्टाओने सारी रीते बलुवावाणा

ત્તિ બુચ્છ-સઃ વિનીત ઇતિ ઉચ્યતે) વહ તીર્થંકર ગણધર આદિ કે દ્વારા વિનીત કહા ગયા હૈ ॥ ૨ ॥

ભાવાર્થ—“આજ્ઞાનિર્દેશકરઃ” “યહ કરો, યહ ન કરો” ઇસ પ્રકાર વિધિરૂપ ઓર નિષેધરૂપ જો ગુરુ કે વચન હૈં વે ‘આજ્ઞા’ શબ્દ સે ગ્રહણ કિયે ગયે હૈં । “આપ કે વચન કે અનુસાર હી પ્રવૃત્તિ કરને કા ભાવ હૈ, અન્યથા નહીં,” ઇસ પ્રકાર શિષ્ય કા કથન નિર્દેશ હૈ । ઇસ નિર્દેશ કા અચ્છી તરહ સે પાલન કરને ચાલા આજ્ઞાનિર્દેશકર હૈ । અથવા—આજ્ઞા-તીર્થંકર પ્રભુ કી વાણી કે દ્વારા જો ઉત્સર્ગ ંવં અપવાદ માર્ગ કા નિર્દેશ અર્થાત્ વિધાન કિયા ગયા હૈં ઉસકે અનુસાર કરને ચાલા આજ્ઞાનિર્દેશકર કહા જાતા હૈ । ઉપપાત શબ્દ કા અર્થ હૈ—સમીપ બૈઠના । શિષ્ય કા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ સદા અપને ગુરુ કે સમીપ બૈઠે । ઉનકી આજ્ઞા કે પાલન કરને કે ભય સે ઉનસે દૂર ન બૈઠે । ગુરુ કા અભિપ્રાય પરખના યહ સાધારણ વાત નહીં હૈ । યહ વાત તબ હી સીખી જા સકતી હૈં કિ જબ શિષ્ય ઉન કે પાસ મૈં બૈઠે, અન્યથા નહીં । વિનીત શિષ્ય ગુરુ કી સેવા કરને સે આત્મકલ્યાણ કરતા હૈ, ।

જે શિષ્ય હોય છે, (સે વિનીત—ત્તિ બુચ્છ-સઃ વિનીત ઇતિ ઉચ્યતે) તે તીર્થંકર ગણધર આદિ દ્વારા વિનીત કહેવાયેલ છે (૨).

ભાવાર્થ—“આજ્ઞાનિર્દેશકરઃ” “આ કરો અને આ ન કરો.” આ પ્રકારે વિધિરૂપ અને નિષેધરૂપ જે ગુરૂનાં વચન છે તે ‘આજ્ઞા’ શબ્દથી બ્રહ્મણ કરવામાં આવેલ છે. “આપના વચન અનુસાર જ પ્રવૃત્તિ કરવાના ભાવ છે ખીજા નથી” આ પ્રકારનું શિષ્યનું કથન નિર્દેશ છે. નિર્દેશનું સારી રીતે પાલન કરવાવાળા આજ્ઞાનિર્દેશકર છે. અથવા—આજ્ઞા-તીર્થંકર પ્રભુની વાણીદ્વારા જે ઉત્સર્ગ અને અપવાદ માર્ગનો નિર્દેશ અર્થાત્ વિધાન કરવામાં આવેલ છે તે અનુસાર કરવાવાળા આજ્ઞાનિર્દેશકર કહેવાય છે. ઉપપાત શબ્દનો અર્થ છે. સમીપ બેસવું. શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે સદા પોતાના ગુરૂની સમીપ બેસે. ગુરૂની આજ્ઞાનું પાલન કરવાના ભયથી તેનાથી દૂર ન બેસે. ગુરૂનો અભિપ્રાય બ્રહ્મણો તે સાધારણ વાત નથી. એ વાત ત્યારે જ શીખી શકાય કે બન્યારે શિષ્ય તેની પાસે બેસે, એ શિષ્ય નહીં. વિનીત શિષ્ય ગુરૂની સેવા કરવાથી આત્મકલ્યાણ કરે છે.

अत्र गुणनिधिश्रमणस्य दृष्टान्तः—

तथाहि—धर्मसिंहाचार्यस्य गुणनिधिनामकः सुधीः शिष्यः प्रकृतिभद्रः प्रकृतिविनीतः प्रतिदिवसं गुरुनिकटवासी गुरुवचनानुकूलकार्यकारी गुरुमनोवृत्त्यनुसारी गुरुविचारश्रेणिसरणिसंचरणशीलः प्रकृतिसरलः सुशील आसीत्। यदा गुरुरागच्छति तदाऽऽसनादुत्थाय तस्मै सविनयमासनं प्रयच्छति, यदा गच्छति तदाऽऽसनमुपादाय तदुपवेशनस्थाने विस्तारयति, गुरोराज्ञा कदा क्रीडशी भविष्यतीत्येवं प्रतिक्षणं प्रतीक्षमाणस्तिष्ठति। यस्मिन् यस्मिन् ऋतौ यद् यद् गुरुप्रकृत्यनुकूलमशनादिकं, तत्तत् समानीय गुरवे समर्पयति। गुरुहिं जननीजनकाभ्यामप्यधिकः, तत्र कारणं-जन्मदाता जन्मनि जन्मनि भवति, मुक्तिदाता गुरुस्तु दुर्लभः,

इस पर गुणनिधिश्रमण का दृष्टान्त कहते हैं—

धर्मसिंह आचार्य का गुणनिधि नामका एक शिष्य था। यह सुबुद्धि एवं प्रकृतिभद्र था। विनीत था। गुरु महाराज के पास बैठना उनके वचन के अनुसार चलना, उनकी मनोवृत्ति के अनुकूल काम करना, इत्यादि समस्त सद्गुणों से युक्त था। बड़ा ही सुशील था। जब गुरु महाराज पधारते तब आसन से उठ कर वह उनके लिये विनयपूर्वक आसन देता, तथा जब गुरु महाराज वहाँ से उठ कर जाते तब वह आसन लेकर उनके पीछे २ चलता और जहाँ गुरु महाराज बैठना चाहते वहाँ आसन बिछा देता। गुरु महाराज की आज्ञा कब कैसी होगी, इसकी प्रतिक्षण प्रतीक्षा करता था। जिस २ ऋतु में जो जो आहार पानी आदि गुरुमहाराज के प्रकृति के अनुकूल होता उस उस ऋतु में वही वही पदार्थ लाकर गुरु महाराज को अर्पण करता। गुरु ने जो कुछ कहा वही

आ अंगे शुष्मनिधि श्रमणस्य दृष्टान्त उक्ते छे—

धर्मसिंह आचार्य ने शुष्मनिधि नामका एक शिष्य होता। ते सुबुद्धि-वाणो अने प्रकृतिभद्र होता। विनीत होता। गुरु महाराज पास बैठने, तेमना वचन अनुसार चलने, तेमनी मनोवृत्ति अनुकूल काम करने इत्यादि समस्त सद्गुणोपेत युक्त होता। धर्मो सुशील होता। न्याये गुरुमहाराज पधारते तब आसन देता उठीने ते तेमने भाटे विनयपूर्वक आसन आपतो, तथा न्याये गुरु महाराज त्यांथी उठीने जाता त्यारे ते आसन लधने तेमनी पाछण पाछण जाता अने न्यां गुरु महाराज बैठवा धर्ये त्यां आसन पीछापी (पाधरी) होता। गुरु महाराजनी आज्ञा क्यारे केवी हसे, तेनी प्रतिक्षण प्रतीक्षा करते होता। जे जे ऋतुमां जे जे आहार पाणी आदि गुरु महाराजनी प्रकृतिने अनुकूल होयते ते ऋतुमां ते ते पदार्थ लावीने गुरु महाराजने

ગુરું વિના કાલત્રયેऽપિ જ્ઞાનં દુર્લભમ્, યથા સિદ્ધાઞ્જનં વિના ભૂતલાન્તર્ગતં નિધાનં નયનપથં નાવતરતિ, તથૈવ ગુરુમન્તરેણાત્મસ્વરૂપં ન પश्यति । યથા દુग्ધાન્નવનીતં તદ્વિલોડનં વિના ન પ્રાપ્યતે, एवं ગુરુસેવનં વિના રત્નત્રયં નોપલભ્યતે । સ ગુણ-

કરના, યહ સમજ કર કિ ગુરુ મહારાજ કમી ખી અન્યથા પ્રવૃત્તિ નહીં કરા સકતે હૈં, અહિત મેં પ્રવર્તન કરાને કા અભિપ્રાય ઇન્કે અન્તઃકરણ મેં કમી ખી જાગ્રત નહીં હો સકતા હૈ, ક્યોં કિ યે મેરે હિતકારી હૈં, ઇસ અભિપ્રાય સે-ઇસ દૃઢ આસ્થા સે-ચહ સદા ગુરુ કી આજ્ઞા કા આરાધન ક્રિયા કરતા થા । સાથ મેં ઉસકા યહ પક્કા વિશ્વાસ થા કિ ગુરુમહારાજ માતા પિતા સે ખી અધિક ઉપકારી હોતે હૈં, ક્યોં કિ જન્મ દાતા તો ઇસ જીવ કો પ્રત્યેક ભવ મેં પ્રાપ્ત હોતે રહતે હૈં, પરન્તુ મુક્તિદાતા ગુરુ તો વહે ભાગ્ય સે હી મિલતે હૈં, નિર્ધન કો નિધિકે સમાન આત્મા કો ઇન્કા સમાગમ વહુત દુર્લભ હૈ । આત્મજ્ઞાનકી પ્રાપ્તિ ઇન્સે હી હુઆ કરતી હૈ । ગુરુ કે વિના તો કાલત્રય મેં ખી સમ્યગ્જ્ઞાન કા લાભ નહીં હો સકતા હૈ. યે તો સિદ્ધ-ઞ્જન સમાન હૈં-જિસ પ્રકાર સિદ્ધ-ઞ્જન આંત્રોં મેં આંજને કે પ્રભાવ સે જીવોં કી ભૂમિગત નિધાન કો લક્ષિત કરનેવાલી દૃષ્ટિ ખુલ જાતી હૈ ઉસી પ્રકાર ગુરુ કી કૃપા સે આત્મજ્ઞાન કા અનુભવ-જીવકો હોને લગતા હૈ । દુગ્ધ કે વિલોડન કિયે વિના જૈસે મલ્લખન કા

અર્પણ કરતો. ગુરુએ જે કંઈ કહ્યું એજ કરવું, એવું સમજીને કે ગુરુ મહારાજ કહી પણ અન્યથા પ્રવૃત્તિ ન જ કરાવે. અહિતમાં પ્રવર્તન કરાવવાનો અભિપ્રાય તેમના અંતઃકરણમાં કોઈ વખત પણ બાજત થાય જ નહીં, કેમકે તેઓ મારા હિતકારી છે. આ અભિપ્રાયથી-આવી દૃઢ આસ્તાથી-તે સદા ગુરુની આજ્ઞાનું આરાધન કર્યા કરતો. સાથેસાથ તેને એ પાકો વિશ્વાસ હતો કે ગુરુ મહારાજ માતા પિતાથી પણ અધિક ઉપકારી હોય છે. કેમકે જન્મદાતા તો આ જીવને પ્રત્યેક ભવમાં પ્રાપ્ત થતા જ રહે છે. પરંતુ મુક્તિદાતા ગુરુ તો સારા સદ્બ્રહ્માચારી જ મળે છે. નિર્ધનને નિધિ સમાન તેવી રીતે આત્માને ગુરુનો સમાગમ થયો જ દુર્લભ છે. આત્મજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ તેમનાથી જ થાય છે. ગુરુ વિના તો કાલત્રયમાં પણ સમ્યગ્જ્ઞાનનો લાભ થઈ શકતો નથી. એઓ તો સિદ્ધ-ઞ્જન સમાન છે. જે પ્રકારે સિદ્ધ-ઞ્જન આંખોમાં આંજવાના પ્રભાવથી જીવોની ભૂમિગત નિધાનને લક્ષિત કરવાપણી દૃષ્ટિ ખુલી બંધ છે એવી રીતે ગુરુની કૃપાથી આત્મજ્ઞાનનો અનુભવ જીવને થવા લાગે છે. દુધને વલોળ્યા શીવાય જેમ માળાણું મળવું અસંભવ છે તેમ

निधिर्गुरुस्तुतिं करोति—हे गुरो ! भवान् वारिद इव करुणारसवृष्ट्यामामकीनं चित्त-
चातकं प्रमोदयति, शमदमादिगुणोद्यानं हरितीकरोति । हे करुणासागर ! भव-
त्करुणां विना सम्यक्त्वप्राप्तिर्न भवति, सम्यक्त्वं विना तत्त्वातत्त्वविवेकरूपाऽमृत-
भावना न जायते, अमृतभावनां विना विशुद्धध्यानं न भवति । विशुद्धध्यानं विना
क्षपकश्रेणिर्न प्रादुर्भवति । क्षपकश्रेणिं विना शुक्लध्यानस्य द्वितीयपादः प्राप्तो न
भवति । शुक्लध्यानस्य द्वितीयपादं विना केवलज्ञानं न संभवति । केवलज्ञान-

मिलना असंभव है उसी प्रकार गुरु की सेवा किये विना भी रत्नत्रयकी
प्राप्ति होना महादुर्लभ है, धन्य है, गुरुमहाराज !। गुणनिधि ने इस प्रकार
मन में विचार कर गुरु महाराज की स्तुति की, जो इस प्रकार है—
हेगुरुमहाराज ! आप मेघ की तरह मेरे चित्तरूपी चातक को करुणारस
के वर्षण से प्रमुदित करनेवाले हैं । शम दम आदि गुणस्वरूप उद्यान
को हरा भरा बनाने वाले हैं । हे करुणासागर ! जबतक आपकी करुणा-
रसाद्र दृष्टि जीवों पर नहीं पड़ती, तबतक उन्हें सम्यक्त्व का लाभ नहीं
होता है । सम्यक्त्व प्राप्त किये विना जीव कभी भी तत्त्वातत्त्वविवेकरूप
अमृत से भरी हुई भावना को अपने में नहीं भर सकता । अमृतभा-
वना भरे विना विशुद्ध ध्यान कभी भी नहीं जग सकता । विशुद्ध
ध्यान की जागृति विना जीव को क्षपकश्रेणिकी प्राप्ति नहीं हो सकती,
क्षपकश्रेणि की प्राप्ति हुए विना शुक्लध्यान का द्वितीयपाद (दूसरा

शुद्धी सेवा कर्था त्रिषाय रत्नत्रयनी प्राप्ति यवी महादुर्लभ छे. धन्य छे
शुद्ध महाराज !. गुणनिधिने आ प्रकारने मनमां विचार करी शुद्धमहाराजनी
स्तुति करी, जे आ प्रकारनी छे.—हे शुद्धमहाराज आप मेघनी भाक्ष
भारा चित्तरूपी चातकने करुणारसना वर्षणुथी प्रमुदित करवावाणा छे. शम
दम आदि गुणस्वरूप उद्यानने झलतो झलतो बनाववावाणा छे, हे करुणासागर !
त्यां सुधी आपनी करुणा रसाद्र (द्वितीय लीनी) दृष्टि एवो पर नथी पडती
त्यां सुधी तेने सम्यक्त्वने लाभ थतो नथी. सम्यक्त्व प्राप्त कर्था वगर
एव कथारेय पणु तत्त्वातत्त्वविवेकरूप अमृतथी लरेली लावनाने पोतानाभां
लरी शकतो नथी. अमृत लावना लर्था वगर विशुद्ध ध्यान कही पणु व्यग्रत
थतुं नथी. विशुद्धध्याननी जागृति विना एवने क्षपकश्रेणीनी प्राप्ति थती
नथी. क्षपकश्रेणीनी प्राप्ति थया विना शुक्लध्यानने जीने पाये प्राप्त थतो

પ્રાપ્તિં વિના શૈલેશ્યવસ્થા ન જાયતે । તાં વિના સકલકર્મક્ષયો ન ભવતિ । સકલ-
કર્મક્ષયં વિના મુક્તિર્ન સંભવતિ । મુક્તિપ્રાપ્તિં વિના ડ્યમાત્મા ડમરપદં ન લભતે ।
અમરપદપ્રાપ્તિં વિના ડડ્ડત્મનઃ સિદ્ધાવસ્થા ન જાયતે, અતો ભવાનેવ સકલકલ્યાણ-
કારણમિતિ પ્રતિક્ષણં ભવચરણસમારાધનમેવ મમ સંયમારાધનમ્ । એવં ગુરુમારા-
ધયન્ ગુણનિધિઃ સંયમયાત્રાં નિર્વહન્ સ્વાત્મકલ્યાણમચિરેણ સાધિતવાન્ । એવ
મન્યેનાપિ શિષ્યેણ વિનયપરેણ ભવિતવ્યમ્ ॥ ૨ ॥

અવિનીતત્વવર્જનેન વિનીતો ભવતીત્યતો વિનીતવિપરીતમવિનીત-
સ્વરૂપમાહ—

પાયા) પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા । શુદ્ધધ્યાન કે દૂસરે પાયે કી પ્રાપ્તિ વિના
કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી । કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશી
અવસ્થા પ્રાપ્ત નહીં હો સકતી હૈ । શૈલેશી અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ વિના સકલ
કર્મોંકા ક્ષય નહીં હો સકતા હૈ ઓર સકલ કર્મોંકે ક્ષય વિના મુક્તિ
કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી, ઓર મુક્તિકી પ્રાપ્તિ વિના અમરપદ નહીં
મિલ સકતા । અમર પદ પાયે વિના આત્મા સિદ્ધાવસ્થાસમ્પન્ન નહીં
બન સકતા । ઇસ લિયે હૈ નાથ ! આપ હી સકલ કલ્યાણ કે કારણ
હૈ, અતઃ પ્રતિક્ષણ આપકે ચરણોંકા આરાધન હી મેરા સંયમારાધન હૈ ।
ઇસ પ્રકાર અપને ગુરુકી આરાધના કરતે હુએ ગુણનિધિ ને તપ સંયમ
કી આરાધના કી, ઓર થોડે હી કાલ મેં આત્મકલ્યાણ કિયા । ઇસી
તરહ અન્ય શિષ્યોંકો બી અપને ગુરુકે પ્રતિ વિનયશીલ રહના ચાહિયે ॥ ૨ ॥

નથી. શુદ્ધધ્યાનના ળીબ પાયાની પ્રાપ્તિ વિના કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થતી
નથી. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત થતી નથી. શૈલેશી
અવસ્થાની પ્રાપ્તિ વિના સકલ કર્મોંના ક્ષય થતો નથી અને સકલ કર્મોંના
ક્ષય વિના મુક્તિની પ્રાપ્તિ થતી નથી. અને મુક્તિની પ્રાપ્તિ વિના અમરપદ
મળી શકતું નથી. અમરપદ મેળવ્યા વગર આત્મા સિદ્ધાવસ્થાસંપન્ન
બની શકતો નથી માટે હે નાથ ! આપજ સકલ કલ્યાણના કારણ છે. એટલે
પ્રતિક્ષણ આપના ચરણોંનું આરાધનજ માફ સંયમ આરાધન છે. આ પ્રકારથી
પોતાના ગુરુની આરાધના કરતાં કરતાં ગુણનિધિએ તપ સંયમની આરાધના
કરી અને થોડાજ કાળમાં આત્મકલ્યાણ કર્યું. આવી રીતે અન્ય શિષ્યોંએ
પણ પોતાના ગુરુ પ્રત્યે વિનયશીલ રહેવું બેઠએ. ॥૨॥

આળાઽણિદેસકરે, ગુરુણમણુવવાયકારણ.

પઢિણીણ અસંવુદ્ધે, અવિણીણ—તિં વુચ્ચઈ ॥ ૩ ॥

છાયા—

આજ્ઞાઽનિર્દેશકરો ગુરુણામનુપપાતકારકઃ ।

પ્રત્યનીકોઽસંવુદ્ધઃ અવિનીત ઇત્યુચ્યતે ॥ ૩ ॥

ટીકા—

‘આળાઽણિદેસકરે’ ઇત્યાદિ । આજ્ઞાઽનિર્દેશકરઃ=આજ્ઞાયા ગુરુવચન-
સ્યાનિર્દેશકરઃ—અનાદરકારકઃ, તથા ગુરુણામ્=આચાર્યાદીનામ્, અનુપપાતકારકઃ=
સમીપાનવસ્થાયી, ગુરુણાં સંનિધૌ તિષ્ઠામિ चेद् ગુરવો માં સ્વકાર્યાર્થમાજ્ઞાપયિष्य-
ન્તીતિ ત્રિજ્ઞાય દૂરે તિષ્ઠતીત્યર્થઃ । તથા—પ્રત્યનીકઃ=પ્રતિકૂલઃ, ગુરુદોષાન્વેષણપર
ઇત્યર્થઃ । તથા—અસંવુદ્ધઃ જીવાજીવાદિતત્ત્વાનભિજ્ઞઃ, એવંભૂતો યઃ શિષ્યઃ સ
સ્વલ્પવિનીત ઇત્યુચ્યતે ।

શિષ્ય મેં વિનીતતા, અવિનીતતા કે પરિત્યાગ સે હી આતી હૈ
इसलिये विनीत से विपरीत अविनीत का स्वरूप सूत्रकार कहते हैं—
‘आणाऽणिदेसकरे’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(ગુરુણ આળાઽણિદેસકરે—ગુરુણાં આજ્ઞાઽનિર્દેશકરઃ) ગુરુ
કી આજ્ઞા કા અનાદર કરને વાલા, (અણુવવાયકારણ) ઉનકે સમીપ
નહીં વૈઠને વાલા (પઢિણીણ) ઉનસે સદા પ્રતિકૂલ વર્તાવ કરનેવાલા
(અસંવુદ્ધે) જીવ એવં અજીવ આદિ કે સ્વરૂપ કો નહીં જાનનેવાલા એસા
શિષ્ય (અવિણીણ વુચ્ચઈ—અવિનીતઃ—ઉચ્યતે) અવિનીત કહા જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—इस गाथा द्वारा सूत्रकार ने विनीत से विपरीत अविनीत
का स्वरूप प्रदर्शित किया है । यद्यपि यह बात अर्थापत्ति से स्वयं सिद्ध

શિષ્યમાં વિનીતતા અવિનીતતાના પરિત્યાગથી જ આવે છે. આ માટે
વિનીતથી વિપરીત અવિનીતનું સ્વરૂપ સૂત્રકાર કહે છે—‘આળાઽણિદેસકરે.’ ઇત્યાદિ
અન્વયાર્થ—(ગુરુણ આળાઽણિદેસકરે—ગુરુણાં આજ્ઞાઽનિર્દેશકરઃ) ગુરુની આજ્ઞાનો
અનાદર કરવાવાળા (અણુવવાયકારણ) એમની સામે ન બેસવાવાળા (પઢિણીણ)
એમનાથી સદા પ્રતિકૂળ વર્તાવ કરવાવાળા (અસંવુદ્ધે) જીવ અને અજીવ આદિના
સ્વરૂપને નહીં બાણુવાવાળા એવા શિષ્ય (અવિણીણ—વુચ્ચઈ—અવિનીતઃ ઉચ્યતે)
અવિનીત કહેવાય છે.

ભાવાર્થ—આ ગાથાદ્વારા સૂત્રકારે વિનીતથી વિપરીત અવિનીતનું સ્વરૂપ
પ્રદર્શિત કરેલ છે. બોલે આ વાત અર્થાપત્તિથી સ્વયંસિદ્ધ થઈ જતી હતી

પ્રાપ્તિં વિના શૈલેશ્યવસ્થા ન જાયતે । તાં વિના સકલકર્મક્ષયો ન ભવતિ । સકલ-
કર્મક્ષયં વિના મુક્તિર્ન સંભવતિ । મુક્તિપ્રાપ્તિં વિનાઽયમાત્માઽમરપદં ન લભતે ।
અમરપદપ્રાપ્તિં વિનાઽઽત્મનઃ સિદ્ધાવસ્થા ન જાયતે, અતો ભવાનેવ સકલકલ્યાણ-
કારણમિતિ પ્રતિક્ષણં ભવચરણસમારાધનમેવ મમ સંયમારાધનમ્ । એવં ગુરુમારા-
ધયન્ ગુણનિધિઃ સંયમયાત્રાં નિર્વહન્ સ્વાત્મકલ્યાણમચિરેણ સાધિતવાન્ । એવ
મન્યેનાપિ શિષ્યેણ વિનયપરેણ ભવિતવ્યમ્ ॥ ૨ ॥

અવિનીતત્વવર્જનેન વિનીતો ભવતીત્યતો વિનીતવિપરીતમવિનીત-
સ્વરૂપમાહ—

પાયા) પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા । શુદ્ધધ્યાન કે દૂસરે પાપે કી પ્રાપ્તિ વિના
કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી । કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશી
અવસ્થા પ્રાપ્ત નહીં હો સકતી હૈ । શૈલેશી અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ વિના સકલ
કર્મોંકા ક્ષય નહીં હો સકતા હૈ ઓર સકલ કર્મોંકે ક્ષય વિના મુક્તિ
કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી, ઓર મુક્તિકી પ્રાપ્તિ વિના અમરપદ નહોં
મિલ સકતા । અમર પદ પાપે વિના આત્મા સિદ્ધાવસ્થાસમ્પન્ન નહોં
યન સકતા । ઇસ લિયે હે નાથ ! આપ હી સકલ કલ્યાણ કે કારણ
હું, અતઃ પ્રતિક્ષણ આપકે ચરણોંકા આરાધન હી મેરા સંયમારાધન હૈ ।
ઇસ પ્રકાર અપને ગુરુકી આરાધના કરતે હુએ ગુણનિધિ ને તપ સંયમ
કી આરાધના કી, ઓર થોડે હી કાલ મેં આત્મકલ્યાણ કિયા । ઇસી
તરહ અન્ય શિષ્યોંકો ભી અપને ગુરુકે પ્રતિ વિનયશીલ રહના ચાહિયે ॥ ૨ ॥

નથી. શુદ્ધધ્યાનના ખીબ પાયાની પ્રાપ્તિ વિના કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થતી
નથી. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત થતી નથી. શૈલેશી
અવસ્થાની પ્રાપ્તિ વિના સકલ કર્મોંના ક્ષય થતો નથી અને સકલ કર્મોંના
ક્ષય વિના મુક્તિની પ્રાપ્તિ થતી નથી. અને મુક્તિની પ્રાપ્તિ વિના અમરપદ
મળી શકતું નથી. અમરપદ મેળવ્યા વગર આત્મા સિદ્ધાવસ્થાસંપન્ન
બની શકતો નથી માટે હે નાથ ! આપજ સકલ કલ્યાણના કારણ છે. એટલે
પ્રતિક્ષણ આપના ચરણોંનું આરાધનજ માફ સંયમ આરાધન છે. આ પ્રકારથી
પોતાના ગુરુની આરાધના કરતાં કરતાં ગુણનિધિએ તપ સંયમની આરાધના
કરી અને થોડાજ કાળમાં આત્મકલ્યાણ કર્યું. આવી રીતે અન્ય શિષ્યોંએ
પણ પોતાના ગુરુ પ્રત્યે વિનયશીલ રહેવું બેઠ્યો. ॥૨॥

આળાઽણિદેસકરે, ગુરુળમંણુવવાંયકારણ ।

પડિળીણ અસંવુદ્ધે, અવિળીણ-તિં વુચ્ચઈ ॥ ૩ ॥

છાયા—

આજ્ઞાઽનિર્દેશકરો ગુરુણામનુપપાતકારકઃ ।

પ્રત્યનીકોઽસંવુદ્ધઃ અવિનીત ઇત્યુચ્યતે ॥ ૩ ॥

ટીકા—

‘આળાઽણિદેસકરે’ ઇત્યાદિ । આજ્ઞાઽનિર્દેશકરઃ=આજ્ઞાયા ગુરુવચન-
સ્થાનિર્દેશકરઃ=અનાદરકારકઃ, તથા ગુરુણામ્=આચાર્યાદીનામ્, અનુપપાતકારકઃ=
સમીપાનવસ્થાપી, ગુરુણાં સંનિધૌ તિષ્ઠામિ चेद् ગુરવો માં સ્વકાર્યાર્થમાજ્ઞાપયિष्य-
ન્તીતિ વિજ્ઞાય દૂરે તિષ્ઠતીત્યર્થઃ । તથા—પ્રત્યનીકઃ=પ્રતિકૂલઃ, ગુરુદોષાન્વેષણપર
ઇત્યર્થઃ । તથા—અસંવુદ્ધઃ જીવાજીવાદિતત્ત્વાનભિન્નઃ, એવંભૂતો યઃ શિષ્યઃ સ
સ્વલ્પવિનીત ઇત્યુચ્યતે ।

શિષ્ય મેં વિનીતતા, અવિનીતતા કે પરિત્યાગ સે હી આતી હૈ
હસલિયે વિનીત સે વિપરીત અવિનીત કા સ્વરૂપ સૂત્રકાર કહતે હૈ—
‘આળાઽણિદેસકરે’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(ગુરુળ આળાઽણિદેસકરે—ગુરુણાં આજ્ઞાઽનિર્દેશકરઃ) ગુરુ
કી આજ્ઞા કા અનાદર કરને વાલા, (અણુવવાયકારણ) અનેક સમીપ
નહીં થૈઠને વાલા (પડિળીણ) અનેક સદા પ્રતિકૂલ વર્તાવ કરનેવાલા
(અસંવુદ્ધે) જીવ એવં અજીવ આદિ કે સ્વરૂપ કો નહીં જાનનેવાલા એસા
શિષ્ય (અવિળીણ વુચ્ચઈ—અવિનીતઃ—ઉચ્યતે) અવિનીત કહા જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—ઇસ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર ને વિનીત સે વિપરીત અવિનીત
કા સ્વરૂપ પ્રદર્શિત કિયા હૈ । યદ્યપિ યહ વાત અર્થાપત્તિ સે સ્વયં સિદ્ધ

શિષ્યમાં વિનીતતા અવિનીતતાના પરિત્યાગથી જ આવે છે. આ માટે
વિનીતથી વિપરીત અવિનીતનું સ્વરૂપ સૂત્રકાર કહે છે—‘આળાઽણિદેસકરે.’ ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—(ગુરુળ આળાઽણિદેસકરે—ગુરુણાં આજ્ઞાઽનિર્દેશકરઃ) ગુરુની આજ્ઞાને
અનાદર કરવાવાળા (અણુવવાયકારણ) એમની સામે ન બેસવાવાળા (પડિળીણ)
એમનાથી સદા પ્રતિકૂળ વર્તાવ કરવાવાળા (અસંવુદ્ધે) જીવ અને અજીવ આદિના
સ્વરૂપને નહીં બાંધવાવાળા એવા શિષ્ય (અવિળીણ—વુચ્ચઈ—અવિનીતઃ ઉચ્યતે)
અવિનીત કહેવાય છે.

ભાવાર્થ—આ ગાથાદ્વારા સૂત્રકારે વિનીતથી વિપરીત અવિનીતનું સ્વરૂપ
પ્રદર્શિત કરેલ છે. જોકે આ વાત અર્થાપત્તિથી સ્વયંસિદ્ધ થઈ જતી હતી

પ્રાપ્તિં વિના શૈલેશ્યવસ્થા ન જાયતે । તાં વિના સકલકર્મક્ષયો ન ભવતિ । સકલ-
કર્મક્ષયં વિના મુક્તિર્ન સંભવતિ । મુક્તિપ્રાપ્તિં વિનાઽયમાત્માઽમરપદં ન લભતે ।
અમરપદપ્રાપ્તિં વિનાઽઽત્મનઃ સિદ્ધાવસ્થા ન જાયતે, અતો ભવાનેવ સકલકલ્યાણ-
કારણમિતિ પ્રતિક્ષણં ભવચરણસમારાધનમેવ મમ સંયમારાધનમ્ । એવં ગુરુમારા-
ધયન્ ગુણનિધિઃ સંયમયાત્રાં નિર્વહન્ સ્વાત્મકલ્યાણમચિરેણ સાધિતવાન્ । એવ
મન્યેનાપિ શિષ્યેણ વિનયપરેણ ભવિતવ્યમ્ ॥ ૨ ॥

અવિનીતત્ત્વવર્જનેન વિનીતો ભવતીત્યતો વિનીતવિપરીતમવિનીત-
સ્વરૂપમાહ—

પાયા) પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા । શુદ્ધધ્યાન કે દૂસરે પાયે કી પ્રાપ્તિ વિના
કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી । કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશી
અવસ્થા પ્રાપ્ત નહીં હો સકતી હૈ । શૈલેશી અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ વિના સકલ
કર્મોંકા ક્ષય નહીં હો સકતા હૈ ઓર સકલ કર્મોંકે ક્ષય વિના મુક્તિ
કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી, ઓર મુક્તિકી પ્રાપ્તિ વિના અમરપદ નહીં
મિલ સકતા । અમર પદ પાયે વિના આત્મા સિદ્ધાવસ્થાસમ્પન્ન નહીં
વન સકતા । હસ લિયે હે નાથ ! આપ હી સકલ કલ્યાણ કે કારણ
હૈ, અતઃ પ્રતિક્ષણ આપકે ચરણોંકા આરાધન હી મેરા સંયમારાધન હૈ ।
હસ પ્રકાર અપને ગુરુકી આરાધના કરતે હુણ ગુણનિધિ ને તપ સંયમ
કી આરાધના કી, ઓર થોડે હી કાલ મેં આત્મકલ્યાણ કિયા । હસી
તરહ અન્ય શિષ્યોંકો બી અપને ગુરુકે પ્રતિ વિનયશીલ રહના ચાહિયે ॥ ૨ ॥

નથી. શુદ્ધધ્યાનના ળીજ પાયાની પ્રાપ્તિ વિના કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થતી
નથી. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ વિના શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત થતી નથી. શૈલેશી
અવસ્થાની પ્રાપ્તિ વિના સકલ કર્મોંના ક્ષય થતો નથી અને સકલ કર્મોંના
ક્ષય વિના મુક્તિની પ્રાપ્તિ થતી નથી. અને મુક્તિની પ્રાપ્તિ વિના અમરપદ
મળી શકતું નથી. અમરપદ મેળવ્યા વગર આત્મા સિદ્ધાવસ્થાસંપન્ન
ળની શકતો નથી માટે હે નાથ ! આપજ સકલ કલ્યાણના કારણ છો. એટલે
પ્રતિક્ષણ આપના ચરણોંનું આરાધનજ માફ સંયમ આરાધન છે. આ પ્રકારથી
પોતાના ગુરૂની આરાધના કરતાં કરતાં ગુણનિધિએ તપ સંયમની આરાધના
કરી અને થોડાજ કાળમાં આત્મકલ્યાણ કર્યું. આવી રીતે અન્ય શિષ્યોંએ
પણ પોતાના ગુરૂ પ્રત્યે વિનયશીલ રહેવું જોઈએ. ॥૨॥

अत्र क्षुद्रबुद्धिशिष्यस्य दृष्टान्तः—

यथा एकस्य भद्रबुद्धिनामकाचार्यस्याऽविनीतः क्षुद्रबुद्धिनामकः शिष्य आसीत् । यदा गुरुः शिक्षार्थं प्रेरयति, तदा शिक्षा वह्निज्वालेव तस्य प्रतिभाति, व्रतं विपवत्, तपस्या खड्गधारेव, स्वाध्यायः कर्णमूचीव, संयमो यम इव । अयमाहारे विहारे व्यवहारे च सर्वदाऽऽचार्यं पौडयति । सरसं भद्रकं सुस्वादमाहारं स्वयमश्नाति विवर्णं विरसमभद्रकं रूक्षमाचार्याय प्रयच्छति । अथ कदाचिदसौ श्रावकश्राविकाणां पुरतो ब्रूते—अद्य मम गुरोरुपवासः,

पास वह इसलिये नहीं रहना चाहता है कि वह प्रत्यनीक—अर्थात्—गुरु-द्वेषी—गुरु के छिद्रान्वेषण में तत्पर है, गुन्द्वेषी वह इसलिये है कि वह असम्बुद्ध अर्थात् हिताहित के विचारों से रहित है ।

अविनीत शिष्य कैसा होता है इस बात को क्षुद्रबुद्धि शिष्य के दृष्टान्त से स्पष्ट किया जाता है—

भद्रबुद्धि नामके एक आचार्य थे । उनका क्षुद्रबुद्धि नामक शिष्य था जो बड़ा अविनीत था । यह यथानाम तथागुण था । गुरु महाराज जब इसे शिक्षा देने बैठते तब उसका मन उदास हो जाता था । शिक्षा उसे ऐसी मालूम होती थी कि जैसे अग्नि की ज्वाला है । विपतुल्य इसे व्रत ज्ञात होने लगते । तलवार की धार के समान यह तपस्या को मानता, कर्ण को भेदनेवाली शलाई के तुल्य यह स्वाध्याय को समझता । अधिक क्या कहा जाय—संयम को तो यह यमके समान निहारता । आहार में विहार में एवं व्यवहार में यह सदा गुरु—महाराज को दुःखित ही किया

नथी, तेमनी पासे रहितो नथी, पासे रहैवानुं ते ओटला भाटे नथी आहते ।
के ते प्रत्यनीक—अर्थात् गुन्द्वेषी—गुन्नां छीद्रां जेवामां तत्पर छे । गुन्द्वेषी ते ओ भाटे छे के ते हिताहितना विचारैथी रहित छे ।

अविनीत शिष्य केवो डोय छे आ वातने क्षुद्रबुद्धि शिष्यना दृष्टांतथी स्पष्ट करवामां आवे छे—

क्षुद्रबुद्धि नामना ओक आचार्य हता । तेमने क्षुद्रबुद्धि नामनो ओक शिष्य हतो जे अविनीत हतो, तेनामां नाम प्रभाछे गुण हता । गुं भडारान् न्यारे तेने शिक्षा आपवा भेसता त्यारे तेनुं मन उदास थई जतुं । शिक्षा जेने अग्निनी ज्वाला जेवी लागती हती । व्रत तेने अडेर जेवां कडवां लागतां, तपस्याने ते तरवारनी धार समान गणुतो, स्वाध्यायने ते डानने विधनारा सोया भाइक बलुतो हतो । वधु शुं कडेवामां आवे । संयमने तो ते यमनी भाइक जे जेतो, आधारमां, विहारमां, ने वडेवारमां ओ गुंभडाराने

હો જાતી થીં કિ જો વિનીત કે કથિત સ્વરૂપસે રહિત હૈં વહ અવિનીત હૈં
 ફિર ખી જો યહાં સૂત્રકાર ને ઉસે સ્પષ્ટ શબ્દોં દ્વારા અલગ ઉલ્લેખ
 કિયા હૈં ઉસકા કારણ વિશેષરીતિ સે વિવેચન કરના હૈં, તાકિ મંદ-
 બુદ્ધિ જન ખી ઇસ વાત કો અચ્છી તરહ સમજ સર્કેં। ગુરુ કે સમીપ વહ
 અવિનીત શિષ્ય ઇસલિયે નહીં રહના ચાહતા હૈં કિ વહ વિચારતા હૈં કિ
 યદિ ગુરુ કે પાસ ચૈટંગા તો ઉનકા પ્રત્યેક કાર્ય મુજે કરના પડેગા
 ઇસલિયે અચ્છા હૈં કિ મૈં ઉનસે દૂર હીં ચૈટૂં। એસા કરને ચાલા શિષ્ય
 સ્વેચ્છાચારી હો જાતા હૈં। ગુરુ કે પાસ ચૈઠને કા મુખ્ય યહીં ઉદ્દેશ્ય હોતા
 હૈં કિ શિષ્યજન વિનય આદિ ગુણોં કો પ્રાપ્ત કરતે હુણ તપ સંયમ કી
 આરાધના સુખ સે કર સર્કેં। મુજ સે ગુરુ કુછ ખી કહ ન સર્કેં, ગુરુ
 પર ખી મેરા રૌચ રહે, ઇસ ચ્યાલ સે વહ અપને પૂજ્ય ગુરુજનોં મેં ખી
 દોષોં કો ઢુંઢને મેં લગા રહતા હૈં। યહ કામ ઉસી શિષ્ય સે હો સકતા
 હૈં જો અસંબુદ્ધ-અર્થાત્ હિતાહિત કે વિચારોં સે રહિત હૈં। અમિજ્ઞ
 શિષ્ય એસા નહીં હોતા। ગાથા મેં યે સય વિશેષણ હેતુહેતુમદ્ભાવ વાલે હૈં,
 જિનકા અભિપ્રાય ઇસ પ્રકાર હૈં-યહ ગુરુ કી આજ્ઞા કા પાલક ઇસલિયે
 નહીં હૈં કિ વહ ઉનકે પાસ નહીં ચૈઠતા હૈં-ઉનકે પાસ નહીં રહતા હૈં,

કે જે વિનીતના કથિત સ્વરૂપથી રહિત છે, તે અવિનીત છે, તેા પણ અહિં
 સૂત્રકારે એનો સ્પષ્ટ શબ્દો દ્વારા અલગ ઉલ્લેખ કરેલ છે, તેનું કારણ વિશેષ
 રીતિથી વિવેચન કરવું એજ છે, કારણ કે મંદબુદ્ધિવાળો માણસ પણ આ
 વાતને સારી રીતે સમજી શકે. ગુરુની સમીપ તે અવિનીત શિષ્ય એટલા
 માટે રહેવા નથી ચાહતો કે તે વિચારે છે કે કદાચ ગુરુની પાસે બેસું તો
 તેનું પ્રત્યેક કાર્ય મારે કરવું પડશે. આ માટે સાઈં એ છે કે હું તેમનાથી
 દૂર બેસું. આવું કરનાર શિષ્ય સ્વેચ્છાચારી બને છે. ગુરુની પાસે બેસવાનો
 ખાસ ઉદ્દેશ તો એ છે કે શિષ્યજન વિનય આદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરતાં કરતાં
 તપ સંયમની આરાધના સુખથી કરી શકે. ગુરુ મને કંઈ પણ કહી ન શકે,
 ગુરુ ઉપર મારો દાબ રહે, આ ખ્યાલથી તે પોતાના પૂજ્ય ગુરુજનોમાં પણ
 દોષોને શોધવા લાગી રહે છે. આ કામ તેવા શિષ્ય કરે છે કે જે અસંબુદ્ધ
 અર્થાત્ હિતાહિતના વિચારથી રહિત છે, અભિજ્ઞ શિષ્ય આવા નથી હોતા.
 ગાથામાં આ બધાં વિશેષણ હેતુહેતુમદ્ભાવવાળાં છે, જેનો અભિપ્રાય આ પ્રકારે
 છે. તે ગુરુની આજ્ઞાનો પાલક એ ખાતર નથી કે તે ગુરુની પાસે બેસતો

કરોતિ, યદિ કમપિ દાનાદિકં વિપયમવલમ્બ્ય ગુરુર્મન્યાનુપદિશતિ, તદા તત્સ-
ભાયામેવ ગુરોરનભિજ્ઞતાં વદન્ તં વિપયં સ્વયમુપદિશન્ ગુરુમપમાનયતિ । કદાચિદ્
વદતિ-‘અથ મમ ગુરુર્મૌનવ્રતમનુતિપ્લઠાસ્તે’ ઇત્યુક્ત્વા સ્વયમેવ વ્યાખ્યાનં કરોતિ ।
एवं ह्रद्रवुद्धिचरितं विभोक्त्य वृद्धाचार्यः स्वचेतसि चिन्तयति-अयमभीक्ष्णं ‘सनि-
मित्त-मनिमित्तं वा क्रोधकारकः, कलहप्रियः, अभिमानी, अज्ञानी, मर्ममृपावादी च,
तदिदं ममैव कर्मणः फलमिति मन्यानो वृद्धाचार्यः सर्वं सहमान आसीत् । कदा-

સે વિહીન હો ગયા । ગુરુજી વૃદ્ધ થે, ઇસ લિયે વિહારકાલ મેં ચલતે
સમય ઉન્હેં ઘડા કલ્પ હોને લગા, પરન્તુ ક્યા કિયા જાય ફિર મી
શિષ્ય કી પ્રેરણા સે ઉન્હેં અનિચ્છા હોને પર મી વિહાર કરના હી પડતા
થા । શિષ્ય કા યહ હાલ થા કિ યહ સાધુસામાચારી કો મી વિપરીત
કરતે હુએ નહીં લજાતા થા । ગુરુ-મહારાજ જય કમી કિસી દાનાદિક
વિપય કો લેકર પ્રવચન પરિપદ કે મીતર બેઠકર કરતે તય યહ ઉન્કે
પ્રવચન કો અન્યથારૂપ મેં જાહિર કરને કે લિયે, અથવા ઉસ વિપય મેં
ઉન્કી અનભિજ્ઞતા પ્રકટ કરને કે લિયે યીચ હી મેં ઘોલ ઉઠતા ઓર
કહતા કિ યહ એસે નહીં એસે હૈ, ગુરુજી વૃદ્ધ હોને કે કારણ ભૂલ ગયે
હૈં । જય કમી ઇસે ઘોલના હોતા તો લોગોંસે કહને લગતા કિ આજ
ગુરુજી કો મૌનવ્રત હૈ, વે વ્યાખ્યાન નહીં દેંગે, મેં હી વ્યાખ્યાન દૂંગા, ઇસ
પ્રકાર કહ કર વ્યાખ્યાન દેને લગ જાતા । હુદ્રવુદ્ધિ કા ઇસ પ્રકાર
સ્વચ્છંદાચરણ દેલ કર ગુરુ-મહારાજ સ્વયં ઇસમેં અપને કર્મોંકા ફલ

ળની ગચું. ગુરુ વૃદ્ધ હતા એથી વિહારમાં ચાલતી વખતે તેમને ઘણું કષ્ટ
થવા લાગ્યું પરંતુ શું થઈ શકે ? શિષ્યની પ્રેરણાથી તેમણે ઈચ્છા ન
હોવા છતાં પણ વિહાર કરવો પડતો. શિષ્ય સાધુસામાચારીથી વિપરીત
ચાલવામાં પણ લજાતો નહતો. ગુરુ મહારાજ ન્યારે કોઈ દાનાદિક વિપયને
લઈને તેના ઉપર પ્રવચન પરિપદમાં કરતા ત્યારે તે શિષ્ય તેમના પ્રવચનને
અન્યથારૂપમાં બહાર કરવા માટે અથવા એ વિપયમાં તેમની અનભિજ્ઞતા
ખતાવવા માટે વચમાં જ ઘોલી ઉઠતો અને કહેતો કે આ આમ નથી પણ
આમ છે, ગુરુજી વૃદ્ધ હોવાથી ભૂલી ગયા છે. ન્યારે તેને ઘોલવાનું મન થતું
ત્યારે તે લોકોને કહેતો કે આજે ગુરુજીને મૌનવ્રત છે. તે વ્યાખ્યાન આપશે
નહીં, હું જ લાપણુ કરીશ. આ રીતે કહીને લાપણુ કરવા લાગતો. હુદ્રવુદ્ધિનું
આતું સ્વચ્છંદ આચરણ બોધને ગુરુ મહારાજ પોતાના કર્મોનું ફળ

इति, ततोऽसौ स्वयमश्नाति, गुरुश्च क्षुधार्तः सन् दिवसं यापयति। कदाचिद् वदति-
अद्य मम गुरुणा पष्ठभक्तं कृतम्, कदाचिच्च वदति-अद्य मम गुरुणाऽष्टभक्तमनु-
ष्ठितमिति, एवं क्रमेण गुरुः क्षुधया विवर्णः कृशः शक्तिरहितः संजातः। विहार-
काले दृढत्वेन शीघ्रगमनसामर्थ्यवर्जितोऽपि गुरुः शिष्यप्रेरणया सक्लेशं
विहरति। साधुसामाचार्या क्षुद्रबुद्धिर्विपरीतमाचरति, प्रतिलेखनादिकं सम्यग् न

करता था। आहार के समय सरस सुस्वादु एवं रुचिकारक आहार यह
स्वयं पहिले खाता और जो रुख विरस एवं अंत प्रान्त आहार होता
वह गुरु-महाराज को देता। जय इसे गुरु-महाराज को आहार देनेकी
इच्छा नहीं होती तो श्रावक और श्राविकाओं के समक्ष कहने लगता
कि आज तो मेरे गुरु-महाराज ने उपवास किया है, इस प्रकार यह गुरु
महाराज को भूखा रखकर स्वयं खूब खाने पीनेकी मजामौज उड़ाता
रहता। विचारे गुरुजी क्षुधा को शांतिभाव से सहन करते हुए
शमभाव में समय को व्यतीत करते। कभी २ कहता है कि आज
हमारे गुरु महाराज ने षष्ठभक्त किया है, आज अष्टभक्त किया है।
इस प्रकार गुरु को अत्यन्त कष्ट पहुँचाता। गुरु जी भी सम-
ताभाव से क्षुधा की वेदना इसे अविनीत समझ कर सहन करने लगे,
परन्तु आखिर औदारिक शरीर ही तो ठहरा वह बिना आहार के कहाँ
तक टिके। अन्त में वह शरीर विवर्ण-म्लान, कृश-कमजोर, और शक्ति

સહા હુઃખીત જ કયાં કરતો, આહારના સમયે સરસ સ્વાદવાળા એટલે રૂચી-
કારક આહાર તે પોતે પહેલાં ખાઈ લેતો અને જે રૂક્ષ, વિરસ એવો અન્ત-
પ્રાન્ત આહાર હોય તે શુરૂ મહારાજને આપતો. જ્યારે તેની શુરૂમહારાજને
આહાર કેવાની ઇચ્છા ન થતી ત્યારે શ્રાવક અને શ્રાવિકાઓની સમક્ષ કહેવા
લાગતો કે આજ તો મારા શુરૂમહારાજે ઉપવાસ કરેલ છે. આ પ્રકારે તે
શુરૂ મહારાજને ભૂખ્યા રાખીને પોતે ખૂબ ખાવાપીવાની મોજમનાહ ઉડાવતો
રહેતો, ધીરારા શુરૂજી ક્ષુધાને શાન્ત લાવથી સહન કરીને સમભાવમાં સમયને
વ્યતીત કરતા. કેઈ કેઈ વખત કહેતો કે આજે અમારા શુરૂ મહારાજે છટુ કરેલ
છે. આજે અક્રમ કરેલી છે. આવી રીતે શુરૂને અત્યંત કષ્ટ પહોંચાડતો. શુરૂ
પણ સમતાલાવથી ક્ષુધાની વેદના તેને અવિનીત સમજી સહન કરવા લાગ્યા.
પરંતુ આખરે ઔદારિક શરીર તો છે જ તે આહાર વિના કયાં સુધી ટકી
શકે? અંતમાં તો શરીર વિવર્ણ મ્લાન, કૃશ-કમજોર, અને શક્તિ વગરનું

જરાજર્જરિતે કૃશે નિઃસત્ત્વે સત્યપિ શરીરે કાતરજનદુષ્કરં કઠિનતરં તીવ્ર-
મનશનં સ્વીકૃતમ્ । एवं चतुर्विधसंघवचनं श्रुत्वा गुरुणा चिन्तितम्—यदि स्वगतां
बुभुक्षां प्रकाशयामि शिष्यप्रपञ्चं चावेदयामि, तर्हि जिनशासनस्य हीलना
निन्दना लघुता भवतीति । तदन्तरं वृद्धाचार्येण चिन्तितम्—मम साहजिकं सकल-
कर्मक्षयसमयः समायात इति । एवमसौ मनसि धारयन् समाधिभावमुपगत्य प्रवृद्ध-
परिणामेन क्षणकत्रेणि प्राप्य सकलकर्म क्षपयित्वा केवली भूत्वा सिद्धिगतिं प्राप्तवान् ।

કો સુનકર સમસ્ત ચતુર્વિધ સંઘ ઉસી સમય આચાર્ય કે સમીપ આયા
ઔર कहने लगा हे महात्मा ! आपको अनेकशः धन्यवाद है, आप वास्तव
में बड़े भाग्यशाली हैं, आप जैसे जिनशासन को प्रकाशित करनेवाले
सूर्य से धर्मकी प्रभावना होती है । कण्ठासागर ! हम आपका गुणगान
कहां तक गावें, हम सबको तो यह सुनकर अपार हर्ष हो रहा है कि
आपने जरा से जर्जरित, कृश एवं निःसत्त्व शरीर के होने पर भी
कायर जनों द्वारा दुष्कर एवं कठिनतर तीव्र अनशन को जो स्वीकृत
किया है । इस प्रकार चतुर्विध संघ के वचन सुनकर गुरुमहाराज ने
चित्त में विचार किया कि यदि मैं अपनी भूल प्रकट करता हूं और 'यह
सब कुछ शिष्यका प्रपञ्च है' ऐसा जो कहता हूं तो जिनशासन की अव-
हेलना होती है, निन्दा होती है लघुता जाहिर होती है अतः अथ श्रेय
इसी में है कि अनशन व्रत अंगीकार कर लूं, यह सहज ही कर्मक्षय-
का समय उपस्थित हुआ है, इसे छोड़ना बुद्धिमान्नी की बात नहीं

નોને સાંભળી સમસ્ત ચતુર્વિધ સંઘ તે સમયે આચાર્યની પાસે આવી અને
વિનંતી કરી કહેવા લાગ્યા કે હે મહાત્મા ! આપને અનેકાનેક ધન્યવાદ છે,
આપ વાસ્તવમાં મહાન ભાગ્યશાળી છે. આપ જેવા જીનશાસનને પ્રકાશિત
કરવાવાળા સૂર્યથી ધર્મની પ્રભાવના થાય છે. કણ્ઠાસાગર અમે આપના
શુભોને ક્યાં સુધી વર્ણવી શકીએ. અમને બધાને તો એ બાણીને એવો હર્ષ
થયો છે કે આપે વૃદ્ધાવસ્થાથી જીર્ણ કૃશ અને નિઃસત્ત્વ શરીર હોવા છતાં
પણ કાયરજનો દ્વારા દુષ્કર એવા આ કઠિનતર તીવ્ર અનશનનો અંગીકાર
કરેલ છે. ચતુર્વિધ સંઘના આ પ્રકારનાં વચન સાંભળીને શુરૂ મહારાજે ચિત્તમાં
વિચાર કર્યો કે જો હું મારી ભુખ પ્રગટ કરું અને 'આ સંઘનો શિષ્યનો
પ્રપંચ છે' એમ જો કહું તો જીનશાસનની અવહેલના થાય છે, નિન્દા થાય
છે, લઘુતા બાહર થાય છે, માટે હવે તો શ્રેય એમાં છે કે અનશન વ્રત
અંગીકાર કરી લઉં. કર્મક્ષયનો આ સહેજે સમય પ્રાપ્ત થયો છે. એને
છોડવો એ બુદ્ધિવાળી વાત નથી. આ પ્રકારે વિચાર કરી શુરૂ મહારાજે

ચિદતિહુધયા પીડિતો ગુરુચિન્તયતિ આહારાનયનાર્થં હુદ્રયુદ્ધિં પ્રેપયામીતિ, તાવદસો હુદ્રયુદ્ધિઃ સ્વગુરોઃ પ્રાણવ્યપરોપણાર્થં ચતુર્વિધસંઘસમક્ષમયાદીત્-ગુરુના શરીરમતિકૃશં શક્તિરહિતં વિલોક્ય યાવજ્જીવમનશનં સ્વીકૃતમ્, હુદ્રયુદ્ધિવાક્યં શ્રુત્વા ચતુર્વિધસંઘસ્તદૈયાચાર્યસ્ય સમીપમાગત્યાવ્રવીત્-ધન્યોઽસિ કૃતપુણ્યોઽસિ મહાત્મન્ ! ભવાન્ જિનશાસનભાસ્કરઃ કરુણાસાગરઃ, યત્ સ્વલુ ભવતા

વિચારતે થે ઔર મનહી મન કહતે થે-દેલો તો સહી इसकी किननी बड़ी भारी अज्ञानता है जो बिना निमित्त के ही क्रोध किया करता है, चाहे जिससे झगड़ा करता है, समझाने पर भी नहीं मानता है, अभिमान का पुतला बना हुआ है, मर्मच्छेदी मृपावचन बोलने में इसे संकोच तक नहीं होता, अब इसका इलाज क्या किया जावे, कुछ भी उपाय नहीं, अनुपायवस्तु में सहनशीलता धारण करना ही उचित है। इस प्रकार के विचार से गुरुमहाराज शान्त होकर उस के द्वारा प्रदत्त कष्टोंको सहते रहते। एक समय की बात है जब कि गुरु-महाराज क्षुधा से पीड़ित होकर आहार लाने के लिये क्षुद्रयुद्धिको भेजनेका विचार कर रहे थे कि इतने में क्षुद्रयुद्धि ने गुरुमहाराज को मारने के अभिप्राय से चतुर्विध संघ के समक्ष ऐसा प्रकट कर दिया कि वृद्धावस्था के कारण गुरुमहाराजने शरीर की स्थिति कमजोर जानकर यावज्जीव अनशनव्रत-संधारा धारण कर लिया है। क्षुद्रयुद्धि के इस प्रकार वचनों

હોવાનું પોતે વિચારતા અને મનમાં જ કહેતા કે બુદ્ધો તો ખરા આની કેટલી બધી અજ્ઞાનતા છે કે જે બિના નિમિત્ત ક્રોધ કર્યા કરે છે, ચાહે તેનાથી ઝગડે છે, સમજાવવા છતાં પણ માનતો નથી, અભિમાનનું પુતળું બની ગયો છે. મર્મવેધક મૃપા વચન બોલવામાં તેને સંકોચ થતો નથી, હવે એનો ઈલાજ શું થઈ શકે, કોઈ ઉપાય નથી. અનુપાય વસ્તુમાં સહનશીલતા ધારણ કરવી તે જ ઉચિત છે. એવા પ્રકારના વિચારથી ગુરુમહારાજ શાન્ત બનીને તેનાથી અપાતા કષ્ટોને સહ્યા કરતા. એક સમયની વાત છે જ્યારે ગુરુ મહારાજ બુખથી પીડિત બનીને આહાર લાવવાને હુદ્રયુદ્ધિને મોકલવાનો વિચાર કરતા હતા એટલામાં હુદ્રયુદ્ધિએ ગુરુમહારાજને મારવાના અભિપ્રાયથી ચતુર્વિધ સંઘની સમક્ષ એવું પ્રગટ કર્યું કે વૃદ્ધાવસ્થાને કારણે ગુરુ મહારાજના શરીરની સ્થિતિ સારી રહેતી ન હોવાથી તેમણે જ્યાં સુધી જીવે ત્યાં સુધી અનશન વ્રત ધારણ કરેલ છે. હુદ્રયુદ્ધિના આ પ્રકારનાં વચ-

तरां दशविधक्षेत्रवेदनामनुभूय स गर्भाद् गर्भं, जन्मतो जन्म, मरणाद् मरणं, दुःखाद् दुःखं, पुनः पुनश्चतुर्गतिदुःखं प्राप्नुवन् दुर्लभबोधितां दीर्घसंसारितां च प्राप्तवान् ॥ ३ ॥

अविनीतस्य सदृष्टान्तमवस्थामाह—

मूलम्—जहाँ सुणी पूइकणैनी, निक्कसिज्जइ सर्वसो ।

एवं दुस्सील पडिणीए, मुहंरी निक्कसिज्जइ ॥ ४ ॥

छाया—

यथा शुनी पूतिकर्णी निष्कास्यते सर्वतः ।

एवं दुःशीलः प्रत्यनीकः मुखारिर्निष्कास्यते ॥ ४ ॥

‘जहा०’ इत्यादि—यथा—पूतिकर्णी=पूती=दुर्गन्तवन्तो कर्णौ यस्याः सा

तथोक्ता, कर्णगतानेकविपमव्रणपरिपाकजनितदुस्सहदुर्गन्धपूयविकृतरक्तस्रावस्थि-
तकृमिमक्षिकानिकरदंशनोद्भूततीव्रतरवेदनान्याकुलतया प्रतिस्रणमितस्ततो भ्रम-
न्तीत्यर्थः, शुनी=कुक्कुरी, सर्वशः=सर्वप्रकरणे प्रतियुक्तानां निष्कास्यते=निःसार्यते,

और घोर नरक में जाकर नारकी की पर्याय से उत्पन्न हुआ । वहाँ उसने दश प्रकार की तीव्रतर क्षेत्रसंबंधी वेदना को पाया । वहाँ की स्थिति को समाप्त कर जब वह वहाँ से निकला तो भी इस के दुःखों का अन्त नहीं आया । एक गर्भ से दूसरे गर्भ में पहुँचना और वहाँ के कष्टों को भोगना, फिर वहाँ से मर कर पुनः जन्म धारण करना और कष्टों को भोगना, इस प्रकार अनंतसंसारी बने हुए इस क्षुद्रबुद्धि की आत्मा को बोधिका लाभ दुर्लभ हो गया ॥ ३ ॥

अविनीत की अवस्था को दृष्टान्त द्वारा सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—

‘जहा सुणी०’ इत्यादि ।

इस प्रकारनी तीव्रतर क्षेत्र संबंधी वेदनाओं सहित पड़ी. ये स्थिति लोगवी
ये न्याये त्यांथी निकल्यो छतां पणु तेना दुःखेनो अंत न आव्यो. अेक
गर्भभांथी भीज्ज गर्भभां ज्वुं अने त्यांनां कष्ट लोगववां. अेक स्थणेथी भरी
भीजे स्थणे इरी जन्म धारणु करवो अने कष्टो लोगववां. आ प्रकारे अनन्त
संसारि अनेस ते क्षुद्रबुद्धिना आत्माने बोधिनो लाभ दुर्लभ अनी गयो.

अविनीतनी अवस्थाने दृष्टान्त द्वारा सूत्रकार प्रदर्शित करे छे—‘जहा सुणी’. इत्यादि.

તદા ગગનમણ्डले देवैर्दुन्दुभिर्नादयद्भिर्जयजयध्वनिः कृतः । क्षुद्रबुद्धिकृतं सर्वमत्याचारं च ते देवा विदितवन्तः । ततस्ते तदवृत्तमुद्धोषितवन्तः । तच्छ्रुत्वा चतुर्विधसंग्रस्तं संघान्निष्कासितवान् । तस्मिन्नेव समये आचार्यांशातनाजनितपापेन क्षुद्रबुद्धेर्वपुषि षोडश रोगाः समुत्पन्नाः । गच्छान्निष्कासितः, तीव्रवेदनां सर्वजनतिरस्कारं च प्राप्नुवन् स क्षुद्रबुद्धिर्मृतः । तदतन्तरं स नरके निपतितः । तत्र तीव्र-

હોગી । इस प्रकार विचार कर गुरु-महाराज ने समाधिभाव को धारण कर लिया, और परिणामों की अतिशय विशुद्धि एवं वृद्धि से क्षपक श्रेणि पर आरुढ़ होकर घातिया कर्मों के नाश से केवली-अवस्था प्राप्त करली, पश्चात् अघातिया कर्मों के नाश से सिद्धिगति के अधिपति बन गये । देवों ने भद्रबुद्धि आचार्य के केवलज्ञानप्राप्तिका उत्सव मनाया । आकाशमें जयघोषपूर्वक दुंदुभियां बजायीं । उन देवों ने साथ २ यह भी जान लिया कि इन आचार्य के साथ इस क्षुद्रबुद्धि ने अच्छा व्यवहार नहीं किया, उन्हें इसने अधिक से अधिक दुःख दिये और खूब मनमाना उनके साथ अविनीतता का व्यवहार किया है । देवताओं ने इस बात को संघ में जाहिर की । संघ ने क्षुद्रबुद्धि को संघबाहर किया, क्षुद्रबुद्धि भी कुछ समय बाद गुरुद्वेषी होने के कारण अर्जित पापकर्म के उदय से बहुत दुःखी हुआ, उसके शरीर में १६ प्रकार के रोगों ने अपना प्रभाव जमाया । संघ से बहिष्कृत वह इस प्रकार तीव्र वेदना एवं तिरस्कारजन्य दुःखों का अनुभव करता हुआ मर गया,

સમાધિભાવ ધારણ કર્યો અને પરિણામોની અતિશય વિશુદ્ધિ અને વૃદ્ધિથી ક્ષપકશ્રેણી પર આરુઢ બની ઘાતીયા કર્મોના નાશથી સિદ્ધગતિના અધિપતિ બની ગયા. દેવોએ ભદ્રબુદ્ધિ આચાર્યને પ્રાપ્ત થયેલ કેવળજ્ઞાનનો ઉત્સવ મનાવ્યો. આકાશમાં જયજયકાર સાથે ડુંદુભિયો વગાડવામાં આવી, અને દેવોએ સાથોસાથ એ પણ બાણી લીધું કે આ આચાર્યની સાથે ક્ષુદ્રબુદ્ધિએ સારો વહેવાર કરેલ નથી, તેણે એમને વધુમાં વધુ દુઃખ આપેલ છે, અને મનમાન્યો અવિનીતનો વહેવાર એમની સાથે ચલાવ્યો છે. દેવતાઓએ આ વાતને સંઘમાં બહેર કરી સંઘે ક્ષુદ્રબુદ્ધિને સંઘ બહાર કર્યો. ક્ષુદ્રબુદ્ધિ ગુરુદ્વેષી હોવાના કારણે થોડા સમય બાદ અર્જિત પાપકર્મના ઉદયથી ઘણો દુઃખીત થયો, તેના શરીરમાં સોળ ૧૬ પ્રકારના રોગોએ પોતાનો પ્રભાવ જમાવ્યો. સંઘથી બહિષ્કૃત એવા એ શિષ્યે આ પ્રકારની તીવ્ર વેદના અને તિરસ્કાર-જન્ય દુઃખોનો અનુભવ કર્યો, અને છેવટે તેનો દેહાંત થયો. મરણબાદ તેને

સમાલોચયતિ, મુખં દિ આસેવના ક્રિયતે, દુઃખં ચેત્યમાલોચયિતુમ્, તસ્માદયં શાઙ્ઘ્યહીનઃ શુદ્ધ ઇતિ । એવં તં ગુરુણા પ્રશસ્યમાનં દૃષ્ટ્વાઽન્યેઽપિ અગીતાર્થશ્રમણાઃ પ્રશંસન્તિ ચિન્તયન્તિ ચ-દોષાસેવનાયામસકૃદાપતિતાયામપિ ન કશ્ચિદોષઃ, આલોચનયૈવ સકલદોષપરિહારસંભવાત્ । અથાન્યદા તત્ર સંવિગ્નગીતાર્થઃ કશ્ચિદા-ચાર્યઃ શિષ્યગણપરિવૃત્તઃ સમાયાતઃ । સ ચ પ્રતિદિનં તમેવ વ્યતિકરં ત્રિલોક્યા-ચાર્યમવ્રવીત્-હે મહાભાગ ! શાસનપ્રભાવક ! ભવ્યભાસ્કર ! અયમવિનીતઃ સ્વલુશિષ્યો

કરતા હૈ । જો મુનિ હસ પ્રકાર સે અપને અતિચારોં કી આલોચના કરતા હૈ ઁસી કી આલોચના કરના ઠીક હૈ । ઁસી આલોચના સે હી દુઃખોં કા વિનાશ હોતા હૈ । હસ પ્રકાર અન્ય શિષ્યોંને જવ ગચ્છાચાર્ય કો ઁસકી પ્રશંસા કરને મેં રત દેઁલા તો અગીતાર્થ શિષ્ય ભી ઁસકી પ્રશંસા કરને લગે । તથા સાથ ૨ મેં યહ ભી ધારણા ઁનકે ચિત્ત મેં જમ ગઈ કિવાર ૨ દોષોં કી આસેવના કરને પર ભી હરકત નહીં હૈ, ક્યોંકિ દોષ કરને પર ભી ઁન દોષોંકી શુદ્ધિ આલોચના સે હો જાતી હૈ, નહીં તો હસ મુનિકી પ્રશંસા હમારે આચાર્ય ક્યોં કરતે, ઁર ક્યોં યહ દોષોં કા આસેવન કરતા હુઁઆ ભી ઁનકી આલોચના કરતા હૈ । ઁક દિન કી વાત હૈ કિ વહાં સંવિગ્ન ગીતાર્થ- (ક્રિયાપાત્ર) કોઈ આચાર્ય મહારાજ અપની શિષ્યમંડલીસહિત ઁયે । ઁન્હોં ને જય વહાં હસ અવિનીત શિષ્ય કે હસ પ્રકાર કે પ્રતિદિન કે વ્યવહાર કો દેઁલા તો વે આશ્ચર્ય પાયે ઁર ગચ્છાચાર્ય સે કહને લગે કિ-હે મહાભાગ ! શાસનપ્રભાવક ।

લાગેલા અતિચારોની શુદ્ધ આલોચના કરે છે. જે મુનિ આ રીતે પોતાના અતિચારોની આલોચના કરે છે. તેવી આલોચના કરવી ઠીક છે. આવી આલોચનાથીજ દુઃખોનો વિનાશ થાય છે. આ પ્રકારે અન્ય શિષ્યોએ જ્યારે શુદ્ધ મહારાજને તેની પ્રશંસા કરવામાં રત જોયા ત્યારે જીજ્ઞાસુ શિષ્યો પણ તેની પ્રશંસા કરવા લાગ્યા. અને સાથેસાથ જોવી ધારણા એમના ચિત્તમાં ઈસી ગઈ કે વારંવાર દોષોનું સેવન કરવામાં પણ હરકત નથી કેમકે દોષ કરવા છતાં પણ તેવા દોષોની શુદ્ધિ આલોચનાથી થઈ જાય છે. નહીં તો આ મુનિની પ્રશંસા અમારા આચાર્ય કયા કારણે કરત. તેમ આવા દોષોનું આસેવન કરવા છતાં પણ તે તેની આલોચના કરે છે. એક દિવસની વાત છે કે ત્યાં કોઈ અન્ય આચાર્ય મહારાજ પોતાની શિષ્યમંડળી સાથે આવ્યા. તેઓએ જ્યારે ત્યાં તે અવિનીત શિષ્યના આ પ્રકારના દરરોજના વહેવારને જોયો તો તેમને આશ્ચર્ય થયું અને આચાર્ય મહારાજને કહેવા લાગ્યા કે

અત્ર દૃષ્ટાન્તસ્તથાદિ—

કસ્મિંશ્ચિદ્ ગચ્છે એકઃ શ્રમણગુણમુક્તઃ સર્વથા ભાવવિનયવર્જિતઃ સાધ્વાભાસઃ શિષ્ય આસીત્ । સ ચ પ્રતિદિનં પુરઃકર્માદિદોષદૂષિતમનેપણીયં ભક્તાદિકં યદ્દીત્વા મહતા સંવેગેન પ્રતિક્રમણકાલે આલોચયતિ । તસ્ય ગચ્છાચાર્યઃ પ્રાયશ્ચિતં પ્રયચ્છન્ વદતિ—અહો પશ્યત કથમસૌ ભાવમગોપયન્ શાઠ્યહીનઃ સર્વં

इस अविनीततारूपी घाव के होने पर शिष्यजनों में स्वाभाविक चञ्चलता आजाती है, परन्तु जब उस घाव में गुरुओं से भी प्रत्यनीक होनेरूप सड़ा आने लगता है तब उसकी दुर्गंध को गुरुजन भी सहन नहीं कर सकते हैं, अतः वह संघ से अथवा गच्छ से बाहर कर दिया जाता है । यदि इस प्रकार की परिस्थितिवाले शिष्य को संघ से बाहर न करे तो कुल गण एवं संघ में महान् अनर्थ होता है । इसी विषय को एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जाता है—

કિસી ગચ્છ મેં સાધુઓં કે ખીતરી આચાર વિચાર સે રહિત પરન્તુ ઉપર સે સાધુ જૈસા જ્ઞાત હોને ચાલ્યા એક સાધ્વાભાસ શિષ્ય રહતા થા । વહ પ્રતિદિન પુરઃકર્માદિદોષોં સે દૂષિત અનેપણીય—આહારાદિક ગ્રહણ કરતાં ઔર ઉપર સે દિલાવટી સંવેગભાવ સે થડે જોર-શોર સે પ્રતિક્રમણ કે સમય આલોચના કિયા કરતા થા । ગચ્છાચાર્ય પ્રાયશ્ચિત દેતે સમય કહા કરતે કિ દેલો યહ કિતના ભદ્રપરિણામી જીવ હૈ જો અપને હાર્દિક ભાવોં કો નહીં છુપાકર લગે હુવે અતિચારોં કી શુદ્ધ આલોચના

કારણે અવિનીતતારૂપ ધા ને લઈ તેના મનમાં ભારે અંચળતા આવી બાથ છે પરંતુ ગુરુ-આજ્ઞાના અનાદરરૂપી સડો એના હિલમાં લાગી બાથ છે ત્યારે એની દુર્ગંધીને ગુરુજન પણ સહન કરી શકતા નથી એટલે એને સંઘથી અથવા ગચ્છથી બાહરે કરી દેવામાં આવે છે. જે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિવાળા શિષ્યને સંઘથી બહાર કરવામાં ન આવે તો કુલ ગણ અને સંઘમાં મહાન અનર્થ બને છે. આ વિષયને એક ઉદાહરણ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે:—

કોઈ ગચ્છમાં સાધુઓના અંદરના આચાર વિચારથી રહિત પરંતુ ઉપરથી સાધુ જેવો દેખાવ રાખતો એક સાધ્વાભાસ શિષ્ય રહેતો હતો. તે દિન દહાડે આધા કર્માદિ દોષોથી દૂષિત અનેપણીય આહારાદિક ગ્રહણ કરતો. અને ઉપરના દેખાવમાં સંવેગભાવથી ઘણા બેરશીયથી પ્રતિક્રમણના સમયે આવો-અના કર્યા કરતો. ગુરુ મહારાજ એને પ્રાયશ્ચિત દેતી વખતે કહેતા કે ભુલો આ કેટલો ભદ્રપરિણામી જીવ છે જે પોતાના હાર્દિક ભાવોને નહીં છુપાવતાં

આગતેનાચાર્યેણ કથિતમ્—

ગિરિનગરનિવાસી કથિદગ્નિભક્તો વળિક્ પદ્મરાગરત્નૈર્ભવનં પૂરયિત્વા પ્રતિવર્ષં વહ્નિના પ્રદીપયતિ । તત્રત્યમન્દવુદ્ધિનૃપતિસભાયાં સ વળિક્ પ્રશંસિતઃ—અહો ધન્યોઽયં વળિક્ યદનેન વહ્નિદેવઃ પદ્મરાગરત્નૈઃ સંતર્પ્યતે । તદનન્તરમેકદા પ્રવલપવનપટલપ્રેરિતસ્તત્પ્રદીપિતદહનઃ સરાજપ્રાસાદં સમસ્તમપિ તન્નગરં દહતિસ્મ । તતોઽસૌ વળિક્ રાજા દષ્ટિતો નગરાન્નિષ્કાસિતઃ, તદેવં રાજા કો વાંધને મેં મિહ્ય કે જૈસા સિદ્ધહસ્ત હોતા હૈ । ધર્મરૂપી ઉદ્યાન કો નષ્ટ કરને કે લિયે યહ તરુકોટરાન્તર્ગત વહ્નિકી જ્વાલા કે સમાન દારુણ ઔર વિનાશકારી માના ગયા હૈ । આપ જૈસે ગચ્છાધિપતિ કો હસ અવિનીત કી પ્રશંસા કરતે હુણ દેલ કર મુજે ઉસ રાજા કી કથા યાદ આતી હૈ—

ગિરિનગરનામક એક શહેર મેં અગ્નિભક્ત કોઈ એક બનિયા રહતા થા, જો પ્રતિવર્ષ અપને ભવન કો પદ્મરાગ મળિયોં સે ભર કર જલા દિયા કરતા થા । ઉસકે હસ કાર્યકી પ્રશંસા વહાં કે મન્દવુદ્ધિ નામક રાજા તથા પ્રજા સમી મુક્તકંઠ સે કરતે થે । વે કહતે થે—ધન્ય હૈ યહ અગ્નિભક્ત જો અગ્નિ કી પ્રતિવર્ષ હસ પ્રકાર સે પૂજા કિયા કરતા હૈ । એક દિન કી વાત હૈ કિ ઉસ વળિક્ ને જ્યોં હી અપના મકાન જલાયા કિ હતને મેં વડી ભારી આંધી કા એક પ્રવલ વેગ આયા, ઔર ઉસસે પ્રજ્વલિત હો ઉસ અગ્નિજ્વાલા ને ઉસ નગર કો ભસ્મ કર દિયા ।

ભાળા ભવ્ય ભવરૂપી મૃગોને ખાંધવામાં ભિલની માફક સિદ્ધહસ્ત હોય છે. ધર્મરૂપી બાગનો નાશ કરવા માટે આ તરુકોટરાન્તર્ગત અગ્નિની જ્વાલા સમાન દારુણ અને વિનાશકારી માનવામાં આવેલ છે. આપ જેવા ગચ્છાધિપતિને આવા અવિનીતની પ્રશંસા કરતા જોઈ મને એક રાજાની વાત યાદ આવે છે—

ગિરિનગર નામના એક શહેરમાં અગ્નિભક્ત એવો એક વણીક રહેતો હતો જે દર વર્સે પોતાના મકાનને પદ્મરાગ મણીઓથી ભરી બાળી નાખતો. તેના આ કાર્યની પ્રશંસા રાજા અને પ્રજા બધા મુક્તકંઠે કરતા હતા અને કહેતા હતા કે—ધન્ય છે આ અગ્નિભક્તને કે જે દરવર્સે અગ્નિની આ પ્રકારથી પૂજા કર્યા કરે છે. એક દિવસની વાત છે કે એ વણીકે પોતાનું મકાન સળગાવ્યું એ સમયે ભારે જોરશોરથી પવનની આંધી ચઢી આવી વેગવાળી પવનની આંધીને લઈ અગ્નિ જોશભેર પ્રજ્વલિત બન્યો અને તેના અંગારા શહેરભરમાં ફરી વળતાં આયુ શહેર અને રાજાના મહેલમાં પણ અગ્નિશાખાઓ ફરી વળી અને સાડે એ શહેર તથા રાજામહેલ પણ નાશ પામ્યો. રાજાએ આથી અસંતુષ્ટ બની એ વણીકને

જન્મજરામરણગર્તપાતનાય પશ્ચવિધાસ્રવસ્વપ્, ક્ષાન્ત્યાદિગુણકમલનિકરનાશનાય મયંકરતુપારનિકરસ્વસ્વપ્, ચારિત્રવિધ્વંસને ધૂમકેતુઃ, સકલાસ્રવહેતુઃ, મુનિ-મણ્ડલાલ્પણ્ડશશિમણ્ડલે રાહુરિવ, માયાજાલેન ભવ્યમૃગવન્ધને મિહ્ન ઇવ, ધર્મોદ્યાનદહને તરુકોટરવહ્નિરિવ ગચ્છે વર્તેતે । મવાનિત્યમસ્ય પ્રશંસાં કુર્વન્ ક્ષિતીશ ઇવ લક્ષ્યતે । આચાર્યેણોક્તમ્-કોઽસી ક્ષિતીશઃ ? કીદૃશી તસ્ય વાર્તા ?

આપ ભવ્ય જીવોંકે વિકસિત કરને મેં યથાપિ સૂર્ય કે તુલ્ય હેં તો મી આપકી છત્રછાયા મેં રહ્કર મી જો કુમુદ હી ચના રહે, અર્થાત્-આચાર વિચાર સે સદા શિથિલ રહે ઉસ મન્દભાગી કે લિયે ક્યા કહા જાય । આપ કે હસ ગચ્છ મેં એક અવિનીત શિષ્ય હૈ, જો હસ ગચ્છ કા કલંક સ્વસ્વપ્ હૈ, ક્યોં કિ અવિનીત શિષ્ય જન્મ જરા એવં મરણસ્વી સ્વે મેં પાડ્ને કે લિયે પંચવિધ આસ્રવસ્વપ્ માના ગયા હૈ, જિસ પ્રકાર તુપાર-હિમ કા પુંજ કમલોં કે વન કો વિશ્વસ્ત કરને મેં કસર નહીં રલ્લતા હૈ ઉસી પ્રકાર અવિનીત શિષ્ય મી ક્ષાન્ત્યાદિ ગુણોં કો નષ્ટ બ્રષ્ટ કરને મેં જરા મી આગે પીછે કા વિચાર નહીં કરતા હૈ । અવિનીત શિષ્ય ચારિત્ર કે વિનાશ કરને કે લિયે ધૂમકેતુ કે જૈસા માના ગયા હૈ । સમ્પૂર્ણ આસ્રવોં કા યહ કારણ યતલાયા ગયા હૈ । મુનિમંડલસ્વપ્ અલ્પ ચન્દ્રમણ્ડલ કો પ્રસન્ન કરને કે લિયે વિદ્વાનોં ને હસ કો રાહુ કે જૈસા કહા હૈ । યહ અપની માયા-જાલસે અન્ય વિચારે મોલે મોલે ભવ્યજીવસ્વી સૃગોં

હે શાસન પ્રભાવક ! આ લઘ્ય છવોને વિકસિત કરવામાં જો કે સૂર્યના તુલ્ય છે તો પણ આપની છત્રછાયામાં રહીને પણ જે કુમુદ જ બની રહે-અર્થાત્ આચાર વિચારથી સદા શિથિલ રહે તેવા મંદભાગી માટે શું કહેવામાં આવે. આપના આ ગચ્છમાં એક અવિનીત શિષ્ય છે-જે આ ગચ્છમાં કલંકસ્વરૂપ છે કેમકે અવિનીતજન જન્મ, જરા, અને મરણરૂપી ખાડામાં પાડવાવાળા પંચવિધ આસ્રવરૂપ માનવામાં આવેલ છે. જે પ્રકારે તુપાર, અર્થાત્ (બરફ) હીમનો પુંજ કમળના વનનો નાશ કરવામાં કસર રાખતો નથી તેમ અવિનીત શિષ્ય પણ ક્ષાન્ત્યાદિ ગુણોને નષ્ટ બ્રષ્ટ કરવામાં આગળ પાછળનો વિચાર કરતો નથી. અવિનીત શિષ્ય ચારિત્રનો વિનાશ કરવા માટે ધૂમકેતુ જેવો માનવામાં આવેલ છે. સંપૂર્ણ આસ્રવતું એ કારણ બતાવવામાં આવ્યું છે. મુનિમંડળરૂપ અખંડચંદ્રમંડળને અલ્પ કરનારા રાહુ જેવો વિદ્વાનોએ કહેલ છે તે પોતાની આ અવિનીતતા રૂપી બળથી અન્ય બીયારા લોળા-

નનુ દુઃશીલં સકલઅનર્થમૂલં ચેત્ અવિનીતેન કથં તર્હિં તન્નાનુરજ્યતે ?
 इत्याकाङ्क्षायां दुःशीलरतिकारणं सदृष्टान्तं प्रतिबोधयितुमाह—

મૂલમ્—કળકુંડગં ચંડત્તાં ણં; વિટ્ટં મુંજઈ સૂયરો ।

एवं सीलं चंडत्तां णं, दुस्सीले रमई मिष्ट ॥ ५ ॥

છાયા—

કળકુંડકં ત્યક્ત્વા સ્વલુ, વિટ્ટાં મુંજઈ સૂકરઃ ।

एवं शीलं त्यक्त्वा स्वलु, दुःशीले रमते मृगः ॥ ५ ॥

ટીકા—

‘કળકુંડગં’ इत्यादि । सूकरः स्वलु कणकुण्डकम्-तण्डुलपूर्णभाजनम्-
 इदमुपलक्षणम्-रुचिरं मधुरं सुस्वादं सुगन्धयुक्तं त्वश्मांसादिपुष्टिकरं हितकरं
 यत् तण्डुलादिकं, तेन पूर्णं यद्भाजनमुपस्थितं तदिति भावः, त्यक्त्वा विष्टां
 मृङ्गे, अत्र विष्टामित्यनेन अपवित्रां घृणोत्पादिकां रुजाकरां हेयां दुर्गन्धां कृमिमक्षि-
 कादिपरिपूर्णामित्यर्थो ध्वनितः । एवम्=अमुना प्रकारેण મૃગઃ=મૃગ इव मृगः अत्रः-
 हिताहितविवेकवर्जित इत्यर्थः, शीलं=મૂલોત્તરગુણલક્ષણ સાધ્વાચારં, યદ્વા-વિનય-
 સમાધિલક્ષણં ત્યક્ત્વા દુઃશીલે=દુરાચારે અવિનયલક્ષણે રમતે=આસજ્યતે । અર્થ-
 भावः-यथा सूकरः प्रशस्तमाहारं विहाय नितान्तमशुचिं सादरं मृङ्गे, अत्रत्वात् ,

यदि दुःशील सकल अनर्थों की जड़ है तो फिर क्यों अविनीत उसमें
 अनुरक्त होता है? इस प्रकार की शंका के समाधान निमित्त दुःशील में
 रतिका कारण दृष्टान्त देकर सूत्रकार समझाते हैं—कणकुंडगं, इत्यादि ।

અન્વયાર્થ-જેસે-(સૂયરો-સૂકરઃ) સૂકર (કળકુંડગં-કળકુંડકં)
 तण्डुल-आदि उत्तम भोजनीय पदार्थों से भरे हुए भाजन को (चइत्ता)
 परित्याग कर (णं-स्वलु) निश्चय से आनंद के साथ (विट्टं-विष्टां)
 विष्टा-अशुचिको (मूंजइ-मुंक्ते) खाता है (एवं) इसी तरह (मिष्ट-

ને દુઃશીલ સકલ અનર્થોની જડ છે તો પણ અવિનીત એમાં કેમ
 અનુરક્ત થાય છે. આ પ્રકારની શંકાનું સમાધાન કરવા નિમિત્ત દુઃશીલમાં
 રતિનું દૃષ્ટાંત આપી સૂત્રકાર સમજાવે છે—‘કળકુંડગં’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—જેમ (સૂયરો-સૂકરઃ) સૂકર (મૂંડ) (કળકુંડગં-કળકુંડકં)
 એખા પગેરે ઉત્તમ ભોજનના પદાર્થોથી ભરેલા ભોજન પાત્રનો (ચइत्ता) ત્યાગ કરી
 (ણ-સ્વલુ) નિશ્ચયથી આનંદ સાથે (વિટ્ટં-વિષ્ટાં) વિષ્ટા-અશુચિને (મુંજइ-

તસ્ય પ્રશંસાં કુર્વતા આત્મા નગરં લોકથ નાશિતઃ । તથા મવાનપિ અસ્યાવિધિ-
પ્રવૃત્તસ્ય પ્રશંસાં કુર્વન્ આત્માનં સમસ્તગચ્છં ચોચ્છેદયતિ । તતસ્તદ્વચનં શ્રુત્વા સ
આચાર્યઃ સાધ્વાભાસમવિનીતં શિષ્યં સ્વગચ્છતો નિષ્કાસિતવાન્ । તસ્માદ્ દુઃશી-
લસ્ય નિષ્કાસનં શ્રેયસ્કરમ્ ॥ ૪ ॥

દેખતે ૨ વહ સમસ્ત નગર ઉસ રાજા કે મહલસહિત એકદમ જલ કર નબ્દ હો ગયા । રાજાને ઇસસે અસંતુષ્ટ હો ઉસ વણિક્ કો દળિંદત કરકે અપને નગર સે વાહર નિકાલ દિયા । રાજા જો પેહિલે સે ઉસ વણિક્ કે ઇસ કાર્ય કી પ્રશંસા ન કરતા તો ઉસકા હોસલા આગે મી ઇસ કાર્ય કો કરને કે લિયે નહીં વઢતા । સમસ્ત નગર એવં રાજમહલ જો નામશેષ હુણ ઉસકા પ્રધાન કારણ ઉસ રાજા કી હી નાસમક્ષી હૈ । ઇસી તરહ સાધુ કે અકલ્પનીય કાર્ય મેં પ્રવૃત્ત ઇસ અવિનીત શિષ્ય કી જો આપ પ્રશંસા કરતે હૈં ઉસસે ઇસકા હોસલા વઢતા હૈ, આગે મી અકલ્પનીય કાર્ય કરને મેં સોત્સાહ વનતા હૈ । જિસકા અન્તિમ ફલ હોગા ગચ્છકા ઉચ્છેદ, ઓર ઇસ ઉચ્છેદજન્ય દોષોં કે ભાગી હોના પડેગા આપ કો, અતઃ આપકા અપની ઓર ગચ્છકી રક્ષાનિમિત્ત ઇસ અવિનીત કો ગચ્છ સે વાહર કર દેને મેં હી શ્રેય હૈ । ઇસ પ્રકાર આવે હુવે આચાર્ય મહારાજ કે કથન પર અચ્છી તરહ ધ્યાન દેકર ગચ્છા-ચાર્યજીને ઉસ અવિનીત શિષ્ય કો અપને ગચ્છ સે વાહર કર દિયા । વ્યોં કિ દુઃશીલ શિષ્ય કા ગચ્છ સે સંબંધવિચ્છેદ કરના શ્રેયસ્કર હી માના ગયા હૈ ॥ ૪ ॥

સારી રીતે ઢંડ કરવા ઉપરાંત તેને પોતાના શહેરમાંથી કાઢી મૂક્યો. રાજા જો વણીકના એ કાર્યની પ્રશંસા ન કરત તો એ વણીકની તાકાત નહોતી કે દર વરસે આ પ્રમાણે અગ્નિવાલા પ્રગટાવી શકે. સમસ્ત શહેર અને રાજમહેલ બળી ગયાં તેનું પ્રધાન કારણ એ રાજાની બીનસમજદારી જ છે. એ રીતે સાધુના અકલ્પનીય કાર્યમાં પ્રથમ આ અવિનીત શિષ્યની આપ પ્રશંસા કરો છો, એથી એ પોતાના મનમાં કુલાઈને આગળ ઉપર આથી પણ વિશેષ અકલ્પનીય કાર્યમાં આગળ વધશે. જેનું અંતિમ ફળ ગચ્છના ઉચ્છેદમાં આવવાનું અને એ ઉચ્છેદજન્ય દોષોના ભાગી આપને બનવું પડશે. આથી આપની અને ગચ્છની રક્ષા માટે આ અવિનીતને ગચ્છમાંથી બહાર કરી દેવામાં જ શ્રેય છે. આ પ્રકારે આવેલા આચાર્ય મહારાજના કહેવા ઉપર સારી રીતે ધ્યાન દઈ ગચ્છાચાર્યજીએ એ અવિનીત શિષ્યને પોતાના ગચ્છથી બહાર કરી દીધો. કેમકે દુઃશીલ શિષ્યનો ગચ્છથી વિચ્છેદ કરવો એ શ્રેયસ્કર માનવામાં આવેલ છે (૪).

જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મરજઃસમુત્પાદકં ક્ષાન્ત્યાદિગુણધાતકં મૂલોત્તરગુણકલ્પપાદ-
પોન્મૂલકં શુભભાવનાઽમ્બોજનિકરનીઠારપટલં સકલનર્થમૂલં ધર્મમર્યાદાત્રિધ્વંસન-
શીલં દુઃશીલં સેવતે । અજ્ઞાનં દિ સર્વાનર્થકરં વિવેકહરં કષ્ટકષ્ટકાતુચિદ્દં સકલ-
દુર્ગુણસમિદ્દં તપઃસંયમવિનાશકં પ્રમાદજનકં સ્વર્ગાપવર્ગમુલહારકમ્ ।

દેને ચાલે એસે શીલ-અર્થાત્ મુનિ કે આચાર કા પરિત્યાગ કર દેતા હૈ ।
યહ શીલ સકલ ગુણોં મેં પ્રધાન માના ગયા હૈ । જીવ કે સાથ અનાદિ-
કાલ સે લગે હુણ અષ્ટવિધ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કે વંધ કા ઉચ્છેદ
કરને ચાલા વતલાયા ગયા હૈ । મિથ્યાત્વરૂપી પ્રવલગ્રન્થિ-(ગાંઠ) કા યહ
ભેદ કરને ચાલા હૈ । સમ્યગ્જ્ઞાનરૂપી અમૃત કી વૃષ્ટિ કરના ઇસ્કા
સ્વભાવ હૈ । એસે પ્રશસ્ત ઉપકારક ઇસ શીલ કા વહ અવિનીત શિષ્ય
પરિત્યાગ કરકે દુઃશીલકા સેવન કિયા કરના હૈ । યહ દુઃશીલ શિષ્ય
જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મરૂપી ધૂલીકો અપની આત્મા મેં ચિપકાને ચાલા હૈ ।
ક્ષાન્તિ આદિ સદ્ગુણોં કા ધ્વંસક હૈ । મૂલગુણ ઇવં ઉત્તરગુણરૂપ
કલ્પવૃક્ષ કા ઉન્મૂલક હૈ । શુભભાવનારૂપી કમલોં કો નષ્ટ-બ્રષ્ટ કરને
કે લિયે તુપારપાત-અર્થાત્-હિમવર્ષા જૈસા હૈ । સકલ અનર્થોં કા યહ
મૂલ હૈ । એસે ધાર્મિક મર્યાદા કો ઉઘાડુને કે સ્વભાવચાલે ઇસ દુઃશીલ
કા વહ અવિનીતશિષ્ય સેવનકર હિતાહિત કો નહીં સમજતા હૈ । યહ
કિતને આશ્ચર્ય કી યાત હૈ કિ જિસ વિનયમૂલ ધર્મ સે અપની આત્મા
કા ઉદ્ધાર હોતા હૈ ઇસ્કા વહ અવિનીત ત્યાગ કર અપકારક દુઃશીલ

આચારનો પરિત્યાગ કરી દે છે. આ શીલ સકલ ગુણોમાં પ્રધાન મનાયેલ છે.
છવની સાથે અનાદિકાળથી લાગેલા આઠ પ્રકારના જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મના
બંધનોનો ઉચ્છેદ કરવા વાળા બતાવેલ છે. મિથ્યાત્વરૂપી પ્રબળ શ્રેયોનો આ
લેહ કરવાવાળો છે, સમ્યગ્જ્ઞાનરૂપી અમૃતની વૃષ્ટિ કરવી તેનો સ્વભાવ છે,
એવા પ્રશસ્ત ઉપકારક આ શીલનો તે અવિનીત શિષ્ય પરિત્યાગ કરીને દુઃશીલનું
સેવન કરે છે. આવો દુઃશીલ શિષ્ય જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મરૂપ ધૂળને પોતાના
આત્મામાં ચોંટાડનાર છે, ક્ષાન્તિ આદિ સદ્ગુણોનો નાશ કરનાર છે. મૂળગુણ
ઉત્તરગુણરૂપ કલ્પવૃક્ષનો ઉન્મૂલક-નાશ કરનાર છે. શુભ ભાવનારૂપી કમલોને
નષ્ટ બ્રષ્ટ કરવા માટે તુપારપાત-અર્થાત્ હિમવર્ષા એવા છે. સકલ અનર્થોનું
એ મુળ છે. એવા ધાર્મિક મર્યાદાને ઉઘાડવાની વૃત્તિવાળા આવા દુશીલનું
તે અવિનીતજન સેવન કરી હિતાહિતને સમજતા નથી. આ કેવા આશ્ચર્યની
વાત છે કે જે વિનય મુળ ધર્મથી પોતાના આત્માનો ઉદ્ધાર થાય છે. તેનો

યથા વા હિતાહિતવિવેકરહિતત્વાનમૃગઃ સ્વાપાયમપચ્ચન્ ગાનતાનશ્રવણમોહિતઃ
 સન્ વ્યાધમભિસરતિ, एवम्-અજ્ઞાનતિમિરસંવૃતાત્મા સ્વલુ સંસારવારિધિમહાતરણિ
 શિવપદસરલસરણિ સિદ્ધિપદદાયકં સકલગુણનાયકમ્, અનાદિભવસંચિતાઘ્નિ-
 કર્મવન્ધનોચ્છેદકં મિથ્યાત્વગ્રંથિભેદકં સમ્યગ્જ્ઞાનમુધાવર્પણશીલં શીલં પ્રવિહાય
 મૃગઃ) વિવેક રહિત હોને કે કારણ મૃગ જેસા યહ અવિનીત શિષ્ય બી
 (સીલં-શીલં) મૂલોત્તરગુણરૂપ અથવા વિનયસમાધિરૂપ સાધુસંબંધી
 આચાર કો (ચઙ્ગા-ત્યક્ત્વા) પરિત્યાગ કર (ણં-લુ) નિશ્ચય સે
 (દુસ્સીલે-દુઃશીલે) અવિનયરૂપ દુરાચાર કા (રમઈ-રમતે) સેવન
 કરતા હૈ ॥ ૫ ॥

ભાવાર્થ—બોધવિકલ હોને કે કારણ જૈસે સૂકર પ્રશસ્ત આહાર
 કા પરિત્યાગ કર નિતાન્ત અશુચિ પદાર્થકા વડે આનંદકે સાથ સેવન
 કરતા હૈ, તથા હિતાહિત વિવેક સે રહિત હોનેકી વજહ સે જૈસે
 મૃગ ભવિષ્ય મેં હોને વાલી આપત્તિ કો નહીં જાનતા હુઆ ગાન કે
 સુનને મેં એકતાન હોકર અપને આપ વ્યાધ કી જાલ મેં ફસ જાતા હૈ,
 ડસી તરહ અજ્ઞાનરૂપી અંધકાર સે આચ્છાદિત હુઆ અવિનીત શિષ્ય બી
 સંસારરૂપી સમુદ્ર સે પાર લગાને કે લિયે વડે સુરક્ષિત જહાજ જૈસે, તથા
 શિવપદ મેં લેજાને કે લિયે સુન્દર સીધે માર્ગે જૈસે, એવં સિદ્ધિપદ કો

મુક્તે) ખાય છે (એવં) આ પ્રમાણે (મિત્ર-મૃગઃ) વિવેકરહિત થવાને કારણે મૃગ
 જેવા આ અવનીત શિષ્ય પણ (સીલં-શીલં) મૂલોત્તર ગુણરૂપ અથવા વિનય-
 સમાધિરૂપ સાધુસંબંધી આચારનો (ચઙ્ગા-ત્યક્ત્વા) પરિત્યાગ કરી (ણં-લુ)
 નિશ્ચયથી (દુસ્સીલે-દુઃશીલે) અવિનયરૂપ દુરાચારનું (રમઈ-રમતે) સેવન કરે છે.

ભાવાર્થ—બોધવિકલ હોવાને કારણે જેમ સૂકર (બૂડ) પ્રશસ્ત
 આહારનો પરિત્યાગ કરી નિતાન્ત અશુચિ પદાર્થનું ભારે આનંદથી સેવન કરે
 છે. અને હિતાહિત વિવેકથી રહીત હોવાના કારણે જેમ મૃગ ભવિષ્યમાં
 આવનારી આપત્તિને બળુતો નથી, કારણકે સંગીતના સુરોમાં એકતાન બનીને
 પોતે પોતાના હાથે શીકારીની જાળમાં ફસાઈ બંધ છે. એવી રીતે અજ્ઞાનરૂપી
 અંધકારથી આચ્છાદિત બનેલા અવિનીત શિષ્ય પણ સંસારરૂપી સમુદ્રથી પાર
 કરવાવાળા મોટામાં મોટા સુરક્ષિત જહાજ જેવા તથા શિવપદમાં લઈ જવાવાળા
 સુંદર સીધા માર્ગે જેવા અને સિદ્ધિપદને આપનાર એવા શીલ-અર્થાત મુનિના

दासी सूकरीसंनिधौ गत्वा तदीयशिशुं समानीय राजपुत्र्यै समर्पयामास । सा च राजपुत्री वात्सल्येन सूकरशिशुं पालयन्ती कदाचित्तमङ्गे स्थापयति, स्नापयति, तदङ्गं करेण प्रोच्छयति, कदाचित् तदङ्गसंलग्नां धूलिमपसारयितुं मार्जयति, विविधं मिष्टान्नं भोजयति, मृदुलशय्यायां स्वसमीपे स्थापयति । सा राजपुत्री तस्य सूकरशिशोर्गले चरणेषु च सकिङ्किणीकं स्वर्णाभरणं रचयति, पृष्ठोपरि बहुमूल्यकं निविधवर्णरञ्जितं 'शृङ्ग' इति प्रसिद्धं स्वर्णजटितवस्त्रं च वितरति । एवं सा राजपुत्री पुत्रवत् सूकरशिशुं लालयतिस्म ।

एक दिनकी बात है कि जब यह अपने महलके झरोखे में बैठी हुई बाहर की ओर निहार रही थी कि सहसा इसकी दृष्टि एक सूकरी पर पड़ी, जो अपने बच्चोंको संगमें लिये हुए चर्हीं पर इधर-उधर फिर रही थी । उसे देखकर उसने मन में विचार किया कि यह सूकरी मेरी अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ है, जो कम से कम अपने बच्चों के साथ घूमा करती है । इस अवस्था में इसे जो आनंद मिलता है वह यही जान सकती है । एक में अभागिनी हूं जो राजमहल में रहती हुई भी इस प्रकार के सुख से वंचित बनी हुई हूं । इस प्रकार का विचार कर उसने अपनी एक दासी को बुलाया और कहा कि जाओ और इन सूकरी के बच्चों में से एक बच्चे को ले आओ । आज्ञा पाते ही दासी सूकरी के पास पहुँची और वहाँ से एक बच्चे को उसने उस राजपुत्री के लिये लाकर दे दिया । राजपुत्री ने भी बड़े आनंद के साथ उसका पालन पोषण करना प्रारंभ कर दिया । इस सिलसिले में कभी वह उसे अपनी गोद में बैठा लेती,

न्याये ये पोताना भडेलना अङ्गमां जेही जेही जडार जेध रही छती, के सहसा तेनी दृष्टी जेक छूँछु छपर पडी. जे पोताना जन्माजाने साथमां लधने आभतेम धुमी रही छती तेने जेधने राजकन्याजे मनमां विचार क्यो के आ सूकरी भारा करतां घण्टी सुणी छे, जे पोताना जन्माजाने साथे लधने करे छे, आ अवस्थामां जेने जे आनंद भणतो छे ते जेन नालुती छे. जेक हुं न जेवी अलागणी छुं के राजभडेलमां रहेवा छतां पछ आ प्रकारना सुभधी वंचित जनेल छुं. आ प्रकारनो विचार करी तेछे पोतानी जेक दासीने जोलावी जने कहुं के जन्मा जने जे सूकरीना जन्माभांथी जेक जन्मुं लध आये. आज्ञा भणतां न दासी सूकरीनी पाजे पछोन्ची जने त्यांथी जेक जन्मुं लध राजपुत्री पासे आवी तेने सुभद क्युं. राजपुत्रीजे तेनुं सारी रीते पालन पोषण करवानुं थरु क्युं. आ उत्साहमां ते कोर्ध वधत सूकरीना जन्माने प्रेमधी पोताना जोणामां जेसारी देती, क्यारेक तेने नवडावती

અસ્મિન્નર્થે સૂકરદૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

વૃદ્ધદેશેક્ષિતિપ્રતિષ્ઠિતનગરેઽરિમર્દનનામા નૃપો વભૂવ । તસ્ય સપ્ત કન્યકા આસન્ । સ ભૂપતિસ્તાસાં કન્યકાનાં યૌવને વયસિ પ્રાપ્તે તા एकैकक्रमेण विवाहिताः । તત્રૈકા કન્યકા કર્મયોગતો વિવાહાનન્તરમચિરેણૈવ કાલેન પતિહીતા જાતા । એકદા સા ગચ્ચાક્ષે સ્થિતા કુતશ્ચિદ્ સમાગતાં સમુતાં સૂકરીં દૃષ્ટ્વા ચિન્તયામાસ—અહો ! ધન્યમસ્યા જન્મ, યદિયં વ્રહ્મિરપત્યૈઃ સાર્થં વિચરન્તી મુક્તમનુભવતિ । ઇતિ વિચિન્ત્ય સા સ્વદાસીમગ્રવીત—અત્રૈકં સૂકરશિશું સમાનય । તદાગ્રયા કો સેવતા હૈ । અજ્ઞાન કી મહિમા અપાર હૈ । સમસ્ત અનર્થો કી જડ એક અજ્ઞાન હી તો હૈ । અજ્ઞાન આતે હી પહિલે વહ વિવેક પર હી કુઠારા ઘાત કરતા હૈ । જિસ આત્મા સે વિવેક કા લોપ હો જાતા હૈ ઉસ આત્મા મેં વિવિધ કષ્ટરૂપી કાંટે સ્પર્ધે હો જાતે હૈ । યહ અજ્ઞાન અનેક પ્રકાર કે દુર્ગુણો કો ઉત્પન્ન કરતા હૈ । તથા તપ ઓર સંયમ કા વિનાશક હૈ, યહ પ્રમાદ કો ઉત્પન્ન કરનેવાલા હૈ, તથા સ્વર્ગ ઓર મોક્ષ કે સુખોંકા વિધાતક હૈ ॥ ઇસ પર સૂકર કા દૃષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—

વંગદેશ મેં ક્ષિતિપ્રતિષ્ઠિત નામકા એક સુંદર નગર થા । અરિમર્દન નામકા રાજા ઉસકા શાસક થા । ઇસકે સાત કન્યાઈ થીં । રાજા ને ઇનકા ક્રમશઃ જય વે તરુણ અવસ્થાવાલી હો ચુકીં વિવાહ કર દિયા । કર્મકી વિચિત્રતાવશ એક લડકી વિવાહ કે બાદ હી વિધવા હો ગઈ ।

તે અવિનીત ત્યાગ કરી અપકારક દુઃશીલને સેવે છે. અજ્ઞાનની મહિમા અપાર છે. સમસ્ત અનર્થોની જડ એક અજ્ઞાન જ છે. અજ્ઞાન આવતાંની સાથે જ તે સહુ પ્રથમ વિવેક ઉપર જ ઘા કરે છે. જે આત્મામાંથી વિવેકનો લોપ થઈ જાય છે એ આત્મામાં નાના પ્રકારના કષ્ટરૂપી કાંટાઓ ખીછાવાઈ જાય છે. એ અજ્ઞાન અનેક પ્રકારના દુર્ગુણોને ઉત્પન્ન કરે છે. તથા તપ અને સંયમનો વિનાશ કરે છે. એ પ્રમાદને ઉત્પન્ન કરનાર છે તથા સ્વર્ગ અને મોક્ષના સુખોનો નાશ કરનાર છે.

આ ઉપર સૂકરનું દૃષ્ટાંત આ પ્રકારે છે.

વંગદેશમાં ક્ષિતિ પ્રતિષ્ઠિત નામનું એક સુંદર નગર હતું. અરિમર્દન નામના રાજાનું શાસન હતું, તેને સાત કન્યાઓ હતી રાજાએ તેના કેમ પ્રમાણે । જેમ જેમ ઉંમર લાયક થતી ગઈ તેમ તેમ તેના વિવાહ કરી આપ્યા. કર્મની વિચિત્રતાવશ એક પુત્રી વિવાહ પછી વિધવા બની. એક દિવસની વાત છે કે

सह भुक्तवत्यः । सा दुर्भगाऽपि सूकरशिथुना सह भोक्तुं प्रवृत्ता स्वर्णस्थाले रत्न-
कटोरकेषु च स्थापितं प्रशस्तं पथ्यं रुचिकरं वातपित्तकफहरं विविधमशनं पानं
खाद्यं स्वाद्यं च चतुर्विधमाहारमभ्यवहरन्ती प्रेम्णा प्रथमग्रासं सूकरशिथुमुखे दत्त्वा
तदनु सानन्दं स्वयमश्नाति, तदाऽकस्मादेकस्या भगिन्याः शिथुना आसन्नप्रदेशे
पुरीपोत्सर्गः कृतः, तमालोक्य तेन सूकरशिथुना प्रशस्तमशनं परित्यज्य पुरीप-
भक्षणं कृतम् । पुरीपमशनन्तं सूकरशिथुं विलोक्य सर्वा भगिन्यः सपरिहासमब्रुवन्-

विधवा राजपुत्रीने कहा कि यदि आप सब जनों मेरे इस सूकर शिशु के
साथ जो भोजन करने के लिये तैयार हों तो ही मैं आपके साथ भोजन
करने में सम्मिलित हो सकती हूँ अन्यथा नहीं। उसकी इस बात को
सुनकर उसकी अन्य बहिनोंने मंजूर नहीं किया। अतः उन सबने
अपने-अपने बच्चोंके साथ पृथक्-पृथक् रूप में ही भोजन करना प्रारंभ
किया। और पति विना की राजपुत्री भी अपने सूकर शिशु के साथ
भोजन करने में प्रवृत्त हुई। खाने के पहिले उसने जो भोजन सुवर्णके
थालों में परोसा हुआ था और सुवर्णकी कटोरियों में अलग-अलग
रूपमें रखा गया था और जो प्रशस्त, पथ्य, रुचिप्रद तथा वात पित्त
एवं कफ हारक था ऐसे उस विविध भाँति के अशन-हलुआ पुरी आदि,
पान-दुध शरबत आदि, खाद्य-द्राक्षा आदि, खाद्य-चूरण आदि, एवं
चार प्रकार के भोजन में से एक-एक ग्रास अपने प्रिय उस सूकर
शिशु के मुखमें देती हुई आनंद के साथ भोजन करने लगी। जब यह
भोजन करने में प्रवृत्त थी कि इतने में ही एक अपनी बहिन के बच्चे

भारा सूकरना भय्यानी साथे भोजन करवा तैयार हो, तो न हुं आपनी
साथे भोजन करवाभां सागील धर्ष शकुं ओ सिवाय नहीं। तेनी आ वातने
भीलु भडेनाओ भंलुर न करी ओटले ते भधीयोओ पोतपोताना भाणके।
साथे भुद्री भुद्री रीते भोजन करवानो आरंभ कर्यो। अने विधवा राजपुत्री
पथु पोताना सूकर भय्यानी साथे भोजन करवा लागी। आपा भेसतां पडेलां
ओले ने भोजन सेनाना थाणभां पीरसेल हुतुं, ने नानी वाटडीओभां अलग
अलग रीते गोठववाभां आवेल हुतुं ने भोजन प्रशस्त, पथ्य, रुचीप्रद तथा
वातपित्त अने कंठ हरनार हुतुं ओवा विविध प्रकारना भोजनभां हुलवा
पुरी आदि, पान-दुध शरबत विगेरे भाध-द्राक्ष वगेरे, स्वाध-चूर्ण वगेरे
आवा चार प्रकारना भोजनभांथी ओकेक डोणीयो पोताना प्रिय सूकरना भय्याना
भाढाभां देती देती विधवा राजपुत्री भुशी साथे भोजन करवा लागी। न्यारे
ओ भोजन करवाभां प्रवृत्त हुती त्यारे तेनी ओक भडेनना भाणके थोडे छे

एकदाऽरिमर्दनस्य भवने कंचिदुत्सवं निमित्तीकृत्य सर्वाः कन्यकाः समायाताः । प्रेम्णा परस्परं ता ऊचुः—अद्यास्माभिः सर्वाभिः सहैव भोजनं कर्तव्यम्, तदाऽसौ दुर्भगा राजपुत्री जगाद—यद्यनेन मम प्रियशिथुना सह यूयं भोजनं कुरुत, तर्हि युष्माभिः साकं मया भोक्तव्यं नान्यथा, ततोऽन्याभिस्तस्याः सर्वभगिनीभिस्तद्वचनं नाङ्गीकृतम् । तदा पृथक् पृथगेव सर्वाः स्व-स्व-शिथुभिः

कभी उसको स्नान कराती । और स्नान कराकर फिर उसका शरीर भी पोंछती । कभी कभी यह उसके शरीर पर लगी हुई धूलीका मार्जन करती । विविध मिष्टान्न खिलाती । नरम-मृदुल-शय्या पर उसे अपने ही पास सुलाती । इतने मात्र से ही वह राजपुत्री संतुष्ट नहीं रहती किन्तु वह उस बच्चे के गले में और पैरों में सुवर्ण रचित बहुमूल्य आभरणों को भी पहिराती । जिनमें छोटी-छोटी बजती हुई घंटियां लगी रहती थीं । उसकी पीठ पर वह झूल भी ओढ़ाती जो बहुत कीमती होती तथा अनेक प्रकार के रंगविरंगे रंगों से रंजित रहा करती । और जिस झुलमें सुनहरी काम बना रहता । इस प्रकार वह राजपुत्री उस सूकर के बच्चे का लालन पालन करने में तत्पर रहने लगी । एक समय की बात है कि राजा अरिमर्दनने अपनी समस्त कन्याओं को किसी उत्सव के समय आमंत्रित किया और कन्यायें आयीं, बहुत समय के बाद उन सबको परस्पर मिलने से बहुत ही आनंद हुआ । सबने विचार किया कि आज हम सब मिलकर एक ही साथ भोजन करें । यह सुनकर उस

अने नवजायी तेना शरीरने साक्ष करती, क्यारैक क्यारैक तेना शरीर उपर ठोढी धुजने साक्ष करती, विविध मिष्टान्न भवडावती अने सुवाणी ऐवी शैया उपर पोतानी पासे सुवाडती. आटलाथी न राजपुत्रीने संतोष न थतो परंतु ते भय्याना गणाभां अने पजेभां सोनाना अहु सुख्य अलंकारे पणु पड़ेरावती जेभां नानी नानी टोकरीओ-घुघरीओ लगाडवाभां आवती ऐनी पीठ उपर जुल पणु ओढाडती जे घड़ी किमती हुती तेमज अनेक प्रकारना रंगभेरंगी रंगोवाणी हुती. जेभां सोनेरी तारनी कसण कणा पणु करवाभां आवेल हुती. आ प्रकारे राजपुत्री जे सूकरना भय्यानुं लालन पालन करवाभां तत्पर रहेती. जेक समये राजा अरिमर्दनने पोतानी समस्त कन्याओने कोठ उत्सवना प्रसंगे आमंत्रण आपी ओढावी, कन्याओ आवी. घण्टा समय पछी जेक गीलओने परस्पर भणतां घण्टा न आनंद थयो. अधी अडेनोओ भणी विचार क्यो के आजे अधी अडेनो साथे जेसीने लोअन करीओ. आ सांभणी जे विधवा राजपुत्रीओ कहुं के जे-तजे अधी अडेनो

ઉક્તાર્થમુપસંહરન્ કર્તવ્યમુપદિશતિ—

મૂલમ્—સુણિયાઽભાવં સાળસ્સ સૂયરસ્સ નરસ્સ યં ।

વિણેણ ઠવિજ્ઞે અપ્પાણં ઇચ્છંતો હિર્યમપ્પણો ॥૬॥

છાયા—

શ્રુત્વાઽભાવં શુન્યાઃ સૂકરસ્ય નરસ્ય ચ ।

વિનયે સ્થાપયતિ આત્માનમ્ ઇચ્છન્ હિતમાત્મનઃ ॥ ૬ ॥

ટીકા—

‘સુણિયા.’ इत्यादि —शुन्याः=पूतिकर्णशुन्याः सूकरस्य च एतदुभय-
दृष्टान्तस्य, तथा च=पुनः नरस्य=पुरुषस्य-दार्ष्टान्तिकतया कथितस्य दुःशीलशिष्य-
अग्नि जलाकर उसकों अग्नि में भून दिया । इस कुमौत से उसको
मारा । इस लिये सूत्रकार कहते हैं कि-दुःशील का त्यागकर शील
सदाचार का सेवन करना चाहिये ॥ ५ ॥

इसी कथित अर्थका उपसंहार करते हुए सूत्रकार कर्तव्य का उप-
देश अगली गाथा द्वारा करते हैं—‘सुणिया. इत्यादि’

अन्वયાર્થ—(સાળસ્સ-શુન્યાઃ) પૂતકર્ણી કુત્તી કે (સૂયરસ્સ
નરસ્સ ય-સૂકરસ્ય નરસ્ય ચ) સૂકર કે ઓર દાઢ્યાન્તિક રૂપ મેં પ્રદર્શિત
કિયે ગયે દુઃશીલ શિષ્ય કે (અભાવ-અનાદર) અર્થાત્ દુર્દશારૂપ
અવસ્થા કો (સુણિયા-શ્રુત્વા) સુનકર (અપ્પણો હિયં ઇચ્છંતો-આત્મનઃ
હિતમ્ ઇચ્છન્) આત્મા કે હિત કે અભિલાષી શિષ્ય (અપ્પાણં-
આત્માનં) અપની આત્માકો (વિણેણ ઠવિજ્ઞ-વિનયે સ્થાપયેત્) વિનય

સળગાવ્યો અને તેમાં તેને ભૂંછ નાખ્યું. આ રીતે કમોતથી તેને માર્યું.
આ માટે સૂત્રકાર કહે છે કે દુઃશીલનો ત્યાગ કરી શીલ-સદાચારનું સેવન
કરવું જોઈએ. (૫)

આ કહેવાયેલા અર્થનો ઉપસંહાર કરીને સૂત્રકાર કર્તવ્યનો ઉપદેશ
આ ગાથા દ્વારા કરે છે.—‘સુણિયા ભાવં.’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(સાળસ્સ-શુન્યાઃ) પૂતકર્ણી કુતરીના (સૂયરસ્સ નરસ્સ ય-
સૂકરસ્ય નરસ્ય ચ) સૂકરના અને દર્ષાન્તિક રૂપમાં પ્રદર્શિત કરાયેલ દુઃશીલ શિષ્યના
(અભાવ-અનાદર) અર્થાત્ દુર્દશારૂપ અવસ્થાને (સુણિયા-શ્રુત્વા) સાંભળીને
(અપ્પણો હિયં ઇચ્છંતો-આત્મનઃ હિતમ્ ઇચ્છન્) આત્માના હિતના અભિલાષી
શિષ્ય (અપ્પાણં-આત્માનં) પોતાના આત્માને (વિણેણ ઠવિજ્ઞ-વિનયે સ્થાપયેત્)

भगिनि ! पश्य तवायं शिशुः किं करोति ! विष्ठां भक्षयति । अनेनैव साकमस्मान् भोजयितुं समीहसे, एवं सर्वभगिनीनां वचनं श्रुत्वा लज्जिता सा राजपुत्री सूकर-शिशुं तत्याज । तदनन्तरमितस्ततो भ्रमन्तं दृष्टपुष्टाङ्गं तं सूकरशिशुं विलोक्य चाण्डालः स्वगृहं नीत्वा चरणेषु वदध्वा बह्वीं प्रक्षिप्य कुत्सित मृत्युना हतवान् । तस्मात् दुःशीलं परित्यज्य शीलमासेवनीयम् । ॥ ५ ॥

ने थोड़ी दूर पर जाकर अशुचि कर दी । यह देखकर उस सूकर शिशु ने उस प्रशस्त मधुर सुस्वादु सुगन्धि पथ्य भोजन का परित्याग करके कन्या के मना करते भी शीघ्र ही दौड़कर अशुचि के पास जाकर उसका भक्षण करने लगा । सूकर शिशु को अशुचि खाते देखकर वे सभी बहिनें मजाक करती हुई अपने बहिन से बोलीं कि हे बहिन ! देखो तो सही आपका यह प्यारा पुत्र क्या कर रहा है । कितने आनंदसे अशुचि खाने में मग्न हो रहा है । इसी के साथ आप हम सबको भोजन करने के लिये प्रेरित करती हैं ? इस प्रकार बहिन को उन सब बहिनों ने उलाहना दिया । उलाहनेके वचन सुनकर वह उनके समक्ष अधिक लज्जित हुई और उस सूकर शिशु को घर से बाहिर निकाल दिया । घरसे बाहिर होजाने पर यह इधर उधर फिरने लगा । इतने में चांडाल ने इसे पकड़ लिया और घर ले जाकर चारों पैर घाँघकर जमीन पर डाल दिया और उस पर घाँस डालकर फिर अग्नि जलाई और

जहाँने अशुचि करी, आ जेठ ते सूकर अन्न्याये प्रशस्त, मधु, सुस्वादु, सुगंधी लोअननेा परित्याग करीने विधवा राजकन्याना रोकवा छतां न रोकतां अउपधी होडी जध अशुचि पासे पडोअथी तेनुं लक्षणु करनुं शइ कथुं. सूकर अन्न्याने अशुचि भातुं जेठ अधी अडेनो भस्करी करतां पेदी विधवा अडे-नने कडेवा लागी के डे अडेन ! जुअो तो अरां तमारे अे प्यारे पुत्र शुं करी रडेल छे. डेटवा आनंदथी अशुचि भावाभां भग्न अनी गयेल छे. आनी साथे तमे अन्नोने लोअन करवानुं कडेतां छतां. आ प्रकारे पेदी अधी अडेनोअे तेने भडेणुं देतां भडेणानुं वचन सांलणीने ते अेभनी समक्ष जुअ शरभार्थ गध अने अे सूकर अन्न्याने घरभांथी अहार काडी भूकथुं. घरथी अहार थध जतां ते न्यां त्यां लटकवा लाग्युं अेटलाभां अंडाणने छाय ते पडी गथुं जेने पकडी ते पोताने घेर लध गयेा अने त्यां लध जध न्यारे पग भांधी जभीन उपर पछाड्युं, अने तेना उपर घास नाथीने पछी अग्नि

ઉક્તાર્થમુપસંહરન્ કર્તવ્યમુપદિશતિ—

મૂલમ્—સુણિયાઽભાવં સાળસ્સ સૂયરસ્સ નરસ્સ યં ।

વિળેણ ઠવિઙ્ગ અપ્પાણં ઇચ્છંતો હિર્યમપ્પણો ॥૬॥

છાયા—

શ્રુત્વાઽભાવં શુન્યાઃ સૂકરસ્ય નરસ્ય ચ ।

વિનયે સ્થાપયતિ આત્માનમ્ ઇચ્છન્ હિતમાત્મનઃ ॥ ૬ ॥

ટીકા—

‘સુણિયા.’ इत्यादि —शुन्याः=पूतिकर्णशुन्याः सूकरस्य च एतदुभय-
दृष्टान्तस्य, तथा च=पुनः नरस्य=पुरुषस्य-दार्ष्टान्तिकतया कथितस्य दुःशीलशिष्य-
अग्नि जलाकर उसको अग्नि में भून दिया । इस कुमौत से उसको
मारा । इस लिये सूत्रकार कहते हैं कि-दुःशील का त्यागकर शील
सदाचार का सेवन करना चाहिये ॥ ५ ॥

इसी कथित अर्थका उपसंहार करते हुए सूत्रकार कर्तव्य का उप-
देश अगली गाथा द्वारा करते हैं—‘सुणिया. इत्यादि’

अन्वયાર્થ—(સાળસ્સ-શુન્યાઃ) પૂતકર્ણી કુત્તી કે (સૂયરસ્સ
નરસ્સ ય-સૂકરસ્ય નરસ્ય ચ) સૂકર કે ઓર દાર્ષ્ટાન્તિક રૂપ મેં પ્રદર્શિત
કિયે ગયે દુઃશીલ શિષ્ય કે (અભાવ-અનાદર) અર્થાત્ દુર્દશારૂપ
અવસ્થા કો (સુણિયા-શ્રુત્વા) સુનકર (અપ્પણો હિયં ઇચ્છંતો-આત્મનઃ
હિતમ્ ઇચ્છન્) આત્મા કે હિત કે અભિલાષી શિષ્ય (અપ્પાણં-
આત્માનં) અપની આત્માકો (વિળેણ ઠવિઙ્ગ-વિનયે સ્થાપયેત્) વિનય

સજગાઓ અને તેમાં તેને ભૂંછ નાખ્યું. આ રીતે કમોતથી તેને માર્યું.
આ માટે સૂત્રકાર કહે છે કે દુઃશીલનો ત્યાગ કરી શીલ-સદાચારનું સેવન
કરવું જોઈએ. (૫)

આ કહેવાયેલા અર્થનો ઉપસંહાર કરીને સૂત્રકાર કર્તવ્યનો ઉપદેશ
આ ગાથા દ્વારા કરે છે.—‘સુણિયા ભાવં.’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(સાળસ્સ-શુન્યાઃ) પૂતકર્ણી કુતરીના (સૂયરસ્સ નરસ્સ ય-
સૂકરસ્ય નરસ્ય ચ) સૂકરના અને દર્ષાન્તિક રૂપમાં પ્રદર્શિત કરાયેલ દુઃશીલ શિષ્યના
(અભાવ-અનાદર) અર્થાત્ દુર્દશારૂપ અવસ્થાને (સુણિયા-શ્રુત્વા) સાંભળીને
(અપ્પણો હિયં ઇચ્છંતો-આત્મનઃ હિતમ્ ઇચ્છન્) આત્માના હિતના અભિલાષી
શિષ્ય (અપ્પાણં-આત્માનં) પોતાના આત્માને (વિળેણ ઠવિઙ્ગ-વિનયે સ્થાપયેત્)

સ્યેત્યર્થઃ, અભાવં-કુત્સિતો ભાવઃ અભાવઃ દુર્દશાલક્ષણઃ, સ ચેહ ભવે સર્વતો નિષ્કાસનાદિરૂપઃ, પરભવે ગુરોરાશાતનયા અવોધિઃ, અવોધેસ્તપઃસંયમાસંભવઃ, સંયમભાવેન મોક્ષમાર્ગાનારાધનમ્, તેનાનન્તસંસારપરિભ્રમણમ્ તં તથાવિધમભાવં તપઃ શ્રુત્વા=ગુરુસંનિધૌ નિશમ્ય આત્મનઃ=સ્વસ્ય, હિતં=કલ્યાણમ્ ઇચ્છન્ આત્માનં ધર્મ મેં સ્થાપિત કરતા હૈં । અથવા-ભાવ યહ હૈં કિ કુત્તી સૂકર ઔર અવિનીત શિષ્યકા સ્વરૂપ સૂનકર આત્મહિતૈપી વિનય શીલ બનેં ।

ભાવાર્થ—ઇસ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર યહ ઉપદેશ દે રહે હૈં કિ જો શિષ્ય આત્મકલ્યાણ કા અભિલાષી હૈં ઉસકા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ ઇસ વિનયધર્મકે આચરણ કરને મેં થોડા ભી પ્રમાદ ન કરે । કારણ કિ અવિનીત શિષ્ય કી વહ દુર્દશા હોતી હૈં જો પૂતિકર્ણી શુની કી તથા સૂકર શિશુ કી હુઈ હૈં । અવિનીત કે ઊપર કિસી કા ભી વિશ્વાસ નહીં રહતા વહ ઇસ ભવમેં ગુરુ કી અકૃપાકા ભાજન બનતા હુઆ જગહ-જગહ અપમાન આદિ દુઃસ્થિતિ કો સહન કરતા હૈં—ઔર ગચ્છ સે બાહર ભી કર દિયા જાતા હૈં તથા પરભવ મેં ગુરુ કી આશાતના સે બોધિ કે લાભ સે ભી વંચિત રહતા હૈં બોધિલાભ કે વિના કમી ભી શ્રેયસ્કર મુક્તિ કા માર્ગ ઉસે પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા હૈં । ક્યોં કિ બોધિ કે અભાવ મેં સમ્યક્ તપ ઔર સંયમ નહીં હોતા હૈં । સમ્યક્ તપ સંયમ કે અભાવ સે મોક્ષમાર્ગ કી આરાધના નહીં હોતી હૈં ઔર મોક્ષ-

વિનય ધર્મમાં સ્થાપિત કરે છે. અથવા ભાવાર્થ એ છે કે—કુતરી, સૂકર અને અવિનીત શિષ્યનું સ્વરૂપ સાંભળી આત્મહિતૈપી વિનયશીલ બને.

ભાવાર્થ—આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર એવો ઉપદેશ આપે છે કે જે શિષ્ય આત્મ કલ્યાણનો અભિલાષી છે, એનું કર્તવ્ય છે કે તે આ વિનય ધર્મનું આચરણ કરવામાં થોડો પણ પ્રમાદ ન કરે. કારણ કે અવિનીત શિષ્યની આવી દુર્દશા થાય છે જે પૂતકર્ણી શુનીની તથા સૂકર (ભૂંડણના બચ્ચાની) બાળકની થઈ છે, અવિનીતનો કોઈ પણ વિશ્વાસ કરતું નથી. તે આ ભવમાં શુદ્ધી અકૃપાનો ભાજન બની દરેક સ્થળે અપમાન આદિ દુઃસ્થિતિને સહન કરે છે. અને ગચ્છથી બહાર કરી દેવામાં આવે છે અને પરભવમાં શુદ્ધી આશાતનાથી બોધિના લાભથી પણ વંચિત રહ્યા કરે છે. બોધિ લાભ વિના કદી પણ શ્રેયસ્કર મુક્તિનો માર્ગ એને પ્રાપ્ત થઈ શકતો નથી. કેમકે બોધિના અભાવમાં સમ્યક્ તપ અને સંયમ હોતું નથી. સમ્યક્ તપ સંયમના અભાવથી મોક્ષ માર્ગની આરાધના બની શકતી નથી. અને મોક્ષમાર્ગની

વિનયે=અમ્યુત્થાનાદિગુરુશુશ્રૂપાલક્ષણે સ્થાપયતિ । ઉક્તં ચ—

વિનયા હોઙ ય ણાણં, ણાણાઓ દંસણં તઓ ચરણં ।

ચરણાદિંતો મોક્ષો મોક્ષે, સોક્ષં નિરાવાહં ॥ ૧ ॥

છાયા—

વિનયાદ્ ભવતિ ચ જ્ઞાનં, જ્ઞાનાદ્ દર્શનં તત્તથરણમ્ ।

ચરણાદ્ મોક્ષો, મોક્ષે સૌખ્યં નિરાવાધમ્ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥ ૬ ॥

અધોપસંહરણાદ્—

મૂલમ્—તમ્હાં વિણંયમેસિંજ્જા સીલં પહિલંભેજ્જંઓ ।

બુદ્ધપુત્તે નિયાગંદો નં નિવકસિંજ્જંઙ કણ્હુઙં ॥ ૭ ॥

છાયા—

તસ્માદ્ વિનયમેપયેત્ શીલં પ્રતિભેત્ યતઃ ।

બુદ્ધપુત્રો નિયાગાર્થી ન નિપ્કાસ્યતે કુતથિત્ ॥ ૭ ॥

ટીકા—

‘તમ્હા. ઇત્યાદિ ।—તસ્માત્=દુઃશીલસ્ય સર્વતો નિપ્કાસનાદિરૂપા દુર્ગતિ મેવતીત્યુક્તરૂપાત્ કારણાત્ સાધુર્વિનયમ્ એપયેત્=કુર્યાત્ ધાતૂનામનેકાર્થત્વાત્ ।

માર્ગ કે આરાધના કે અભાવ મેં અનંત સંસાર પરિશ્રમણ કરના પડતા હૈ, ઇસલિયે શિષ્ય કો અપને પરમોપકારી ગુરુ મહારાજ કા વિનય સદા કરના ચાહિયે । વે જવ કહીં સે અપને સ્થાન પર આવેં તો શિષ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ્ અનેક સમક્ષ જાવેં—અન્હેં દેખકર અપને આસનસે ઉઠ ઊઠા હોવે । અનેકી શુશ્રૂષા આદિ કરતા રહે । ઇસસે વિનય ધર્મકી આરાધના હોતી હૈ । કહા મી હૈ—વિનય સે જ્ઞાન હોતા હૈ । જ્ઞાન સે દર્શન ઓર દર્શન સે ચારિત્રકા લાભ હોતા હૈ ચારિત્ર સે મોક્ષ ઓર મુક્તિ હોને સે ઇસ જીવ કો અવ્યાવાધ સુખ્મ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ ॥ ૬ ॥

આરાધનાના અભાવથી અનંત સંસાર પરિશ્રમણ કરવું પડે છે. આ માટે શિષ્યે પોતાના પરોપકારી ગુરુ મહારાજનો સદા વિનય કરવો જોઈએ. તેઓ ન્યારે કયાંયથી પોતાના સ્થાન ઉપર આવે ત્યારે શિષ્યનું એ કર્તવ્ય છે કે તે તેમની સામે બંધ—એમને જોઈ પોતાના આસન ઉપરથી ઉઠી ઉભા રહે અને એમની સેવા કરવામાં લાગી બંધ, આથી વિનય ધર્મની આરાધના થાય છે. વિનયથી જ્ઞાન થાય છે, જ્ઞાનથી દર્શન અને દર્શનથી ચારિત્રનો લાભ થાય છે. ચારિત્રથી મોક્ષ અને મુક્તિ થવાથી આ જીવને અવ્યાવાધ સુખની પ્રાપ્તિ થાય છે. ॥૬॥

સ્યેત્યર્થઃ, અભાવં-કુત્તિસતો ભાવઃ અભાવઃ દુર્દશાલક્ષણઃ, સ ચેહ ભવે સર્વતો નિષ્કાસનાદિરૂપઃ, પરભવે ગુરોરાશાતનયા અવોધિઃ, અવોધેસ્તપઃસંયમાસંભવઃ, સંયમભાવેન મોક્ષમાર્ગનારાધનમ્, તેનાનન્તસંસારપરિભ્રમણમ્ તં તથાવિયમભાવં તપઃ શ્રુત્વા=ગુરુસંનિધૌ નિશમ્ય આત્મનઃ=સ્વસ્ય, હિતં=કલ્યાણમ્ ઇચ્છન્ આત્માનં ધર્મ મેં સ્થાપિત કરતા હૈં । અથવા-ભાવ યહ હૈં કિ કુત્તી સૂકર ઔર અવિનીત શિષ્યકા સ્વરૂપ સૂનકર આત્મહિતૈપી વિનય શીલ યેનં ।

ભાવાર્થ—ઇસ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર યહ ઉપદેશ દે રહે હૈં કિ જો શિષ્ય આત્મકલ્યાણ કા અભિલાષી હૈં ઉસકા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ ઇસ વિનયધર્મકે આચરણ કરને મેં ધોડા મી પ્રમાદ ન કરે । કારણ કિ અવિનીત શિષ્ય કી વહ દુર્દશા હોતી હૈં જો પૂતિકર્ણી શુની કી તથા સૂકર શિશુ કી હુઈ હૈં । અવિનીત કે ઊપર કિસી કા મી વિશ્વાસ નહીં રહતા વહ ઇસ ભવમેં ગુરુ કી અકૃપાકા ભાજન યનતા હુઆ જગહ-જગહ અપમાન આદિ દુઃસ્થિતિ કો સહન કરતા હૈં—ઔર ગચ્છ સે બાહર મી કર દિયા જાતા હૈં તથા પરભવ મેં ગુરુ કી આશાતના સે બોધિ કે લાભ સે મી વંચિત રહતા હૈં બોધિલાભ કે વિના કમી મી શ્રેયસ્કર મુક્તિ કા માર્ગ ઉસે પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા હૈં । ક્યોં કિ બોધિ કે અભાવ મેં સમ્યક્ તપ ઔર સંયમ નહીં હોતા હૈં । સમ્યક્ તપ સંયમ કે અભાવ સે મોક્ષમાર્ગ કી આરાધના નહીં હોતી હૈં ઔર મોક્ષ-

વિનય ધર્મમાં સ્થાપિત કરે છે. અથવા ભાવાર્થ એ છે કે—કુતરી, સૂકર અને અવિનીત શિષ્યનું સ્વરૂપ સાંભળી આત્મહિતૈષી વિનયશીલ બને.

ભાવાર્થ—આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર એવો ઉપદેશ આપે છે કે જે શિષ્ય 'આત્મ કલ્યાણનો અભિલાષી છે, એનું' કર્તવ્ય છે કે તે આ વિનય ધર્મનું આચરણ કરવામાં થોડો પણ પ્રમાદ ન કરે. કારણ કે અવિનીત શિષ્યની આવી દુર્દશા થાય છે જે પૂતકર્ણી શુનીની તથા સૂકર (ભૂંડણના બચ્ચાની) બાળકની થઈ છે, અવનીતનો કોઈ પણ વિશ્વાસ કરતું નથી. તે આ ભવમાં શુરૂની અકૃપાનો ભાજન બની દરેક સ્થળે અપમાન આદિ દુસ્થિતિને સહન કરે છે. અને ગચ્છથી બહાર કરી દેવામાં આવે છે અને પરલવમાં શુરૂની આશાતનાથી બોધિના લાલથી પણ વંચિત રહ્યા કરે છે. બોધિ લાભ વિના કદી પણ શ્રેયસ્કર મુક્તિનો માર્ગ એને પ્રાપ્ત થઈ શકતો નથી. કેમકે બોધિના અભાવમાં સમ્યક્ તપ અને સંયમ હોતું નથી. સમ્યક્ તપ સંયમના અભાવથી મોક્ષ માર્ગની આરાધના બની શકતી નથી. અને મોક્ષમાર્ગની

માલમ્બનમ્ । યથા શ્રીચણ્ડચન્દનતરુઃ સમસ્તમલયાચલકાનનગતાન્ વૃક્ષાન્ સુર-
ભયતિ, યથા વા અમૃતમયશીતલચન્દ્રકિરણસંસર્ગતો વિકસત્ કુમુદવનં મનોજ્ઞમુગન્ધ
શીતલપવનમનોહરચન્દ્રિકાભિર્જનમનઃપ્રસાદકં ભવતિ, યથા વા ક્ષીરસાગરનિર્ઝરી
સ્વાસન્નવર્તિનો વૃક્ષગુચ્છગુલ્મલતાવલ્લીપ્રમૃતીન્ નાનાવિધાન્ વનસ્પતીન્ રસપ્રદાનેન
વર્ધયન્તી મોદયતિ, एवं વિનયવિભૂષિતઃ સ્વલુ શીલેન કુલગણગચ્છાન્ મોદયન્
લોકે ચિન્તામણિરિવ સંમન્યતે, કલ્પતરુરિવ સેવ્યતે, નિધિરિવ સમાદ્રિયતે, સુધેવ
પરિપૂજ્યતે ॥ ૭ ॥

કર લેતી હૈં કિ મુજે અપના કલ્યાણ કરના હૈં—અતઃ વહ નિયાગાર્થી-
મોક્ષાભિલાષી બન જાતા હૈં । ઓર ઇસ સ્થિતિ મેં ડસકી પ્રત્યેક ક્રિયા
એ મોક્ષપ્રાપ્તિ કી ઓર હી ડસે લે જાને વાલી હોતી રહતી હૈં, અતઃ વહ
કિસી મી કુલ, ગણગવં-ગચ્છ સે નહીં નિકાલા જાતા હૈં ।

‘માયાર્થ’—જિસ પ્રકાર શ્રીચણ્ડચંદન કા વૃક્ષ સમસ્ત મલયાચલ
કે જંગલ મેં રહે હુણ વૃક્ષોં કો અપની અપાર સુગંધિ સે સુરમિત કરતા
રહતા હૈં । અથવા જિસ પ્રકાર અમૃતમય શીતલચન્દ્ર કી કિરણોં કે
સંસર્ગ સે વિકસિત કુમુદવન, મનોજ્ઞ, શીતલ એવં સુગંધિત વાયુ એવં
મનોહર ચાંદની કે દ્વારા પ્રત્યેક જન કે મન કો આલ્હાદિત કરતા હૈં ।
અથવા—જિસ પ્રકાર ક્ષીર સાગર કી નિર્ઝરી અપને નિકટ રહે હુણ વૃક્ષોં
કો ડનકે ગુચ્છોં કો ગુલ્મોં એવં લતાવલ્લી આદિ કો રસપ્રદાન સે વૃદ્ધિ-
ગત અર્થાત્ વઢાતી હુઈ ડન્હેં વિકસિત કરતી હૈં ઇસી તરહ વિનય સે

મારે પોતાનું કલ્યાણ કરવું છે—આથી તે નિયાગાર્થી—મોક્ષ અભિલાષી બની
બધ છે. અને એ સ્થિતિમાં એની પ્રત્યેક ક્રિયાઓ મોક્ષ પ્રાપ્તિની તરફ જ
એને લઈ જવાવાળી થતી રહે છે. એટલે તે કોઈપણ કુળ, ગુણ અને ગચ્છથી
દૂર કરવામાં આવતા નથી. મતલબ આનો એ છે કે જે પ્રકારે શ્રીખંડ
ચંદનનું વૃક્ષ સમસ્ત મલયાચલના જંગલમાં રહેલાં બધાં વૃક્ષોને પોતાની
અપાર સુગંધિથી સુરભિત કરતું રહે છે. અથવા જે પ્રકારે અમૃતમય શીતળ
કિરણોના સંસર્ગથી વિકસિત કુમુદવન, મનોજ્ઞ, શીતળ અને સુગંધિત વાયુ
એવી મનોહર ચાંદની દ્વારા પ્રત્યેક જનના મનને આલ્હાદિત કરે છે. અથવા—
જે પ્રકાર ક્ષીર સાગરની નિર્ઝરી (ઝરણાં) પોતાની નિકટ રહેલા વૃક્ષોને
એની ડાળો વિગેરેને તથા કુલકળાદિ, પાંદડાં વગેરેને રસપ્રદાનથી વૃદ્ધિગત
અર્થાત્ વધારે છે. અને વિકસિત કરે છે. આ રીતે વિનયથી વિભૂષિત બનેલ

વિનયસ્ય ફલમાહ—શીલમિત્યાદિ । યતઃ વિનયાત્, શીલં=મૂલોત્તરગુણલક્ષણ પ્રતિલભેત=પ્રાપ્તુયાત્ । અનેન વિનયસ્ય ફલં શીલપ્રાપ્તિરિત્યુક્તમ્ । શીલસ્યાપિ ફલં પ્રદર્શયન્નાહ—‘બુદ્ધપુત્રે.’ ઇત્યાદિ । બુદ્ધપુત્રઃ—બુદ્ધસ્ય=આચાર્યસ્ય પુત્ર ઇવ પુત્રઃ—શીલધારી શિષ્યઃ, પુત્રશિષ્યયોઃશિક્ષણીયતયા સામ્યાત્ ; અતएव નિયાગાર્થી—નિયાગો=મોક્ષસ્તમર્થયતીતિ નિયાગાર્થી—મોક્ષાભિલાષી કુતચિત્=કુલગણગચ્છતઃ ન નિષ્કાસ્યતે=ન વહિષ્ક્રિયતે । અયં ભાવઃ—વિનીતઃ કુલગણગચ્છાનાં સર્વેષા-

અવ ઉપસંહાર કરતે હૈં—‘તમ્હા.’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—અતઃ (તમ્હા-તસ્માત્) અવિનીત શિષ્ય કી સર્વ જગહ દુર્દશા હોતી હૈ સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ (વિણયં-વિનયમ્) વિનયરૂપ ધર્મકા (એસિજ્ઞા-એપયેત્) પાલન કરે । ઇસ વિનય ધર્મ કે પાલન કરનેકા ક્યા ફલ હૈ—ઇસ વાતકો (શીલં પઢિલભેજ્જઓ-શીલં પ્રતિ લભેત યતઃ) ઇસ પદ દ્વારા સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હુણ કહતે હૈં કિ યહ વિનયધર્મ, આચરિત હોને સે આચરણ કરને વાલે સાધુ કે લિયે મૂલગુણ ઓર ઉત્તરગુણોંકી પ્રાપ્તિ કરાતા હૈ । શીલ કી પ્રાપ્તિ હોને સે વહ શીલધારી શિષ્ય (બુદ્ધપુત્રે નિયાગદ્વી-બુદ્ધપુત્રઃ નિયાગાર્થી) ગુરુજનોં કી દ્રષ્ટિ મેં અપના પુત્ર જૈસા હો જાતા હૈ । ક્યોં. કિ પુત્ર શિક્ષણીય હોતા હૈ ઓર વૈસે શિષ્ય ભી શિક્ષણીય હોતા હૈ । ઇસી વિચાર સે શિષ્ય કો યહાં પુત્ર જૈસા વતલાયા ગયા હૈ જવ વહ ગુરુ કૃપા કા પાત્ર હર તરહ સે હો જાતા હૈ તથ યહ વાત ભી સ્વતઃ ઉસકે હૃદય મેં સ્થાન

હેવે ઉપસંહાર કરે છે—‘તમ્હા.’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—એટલા માટે (તમ્હા-તસ્માત્) અવિનીત શિષ્યની સર્વ સ્થળે દુર્દશા થાય છે. સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તે (વિણયં-વિનયમ્) વિનયરૂપ ધર્મનું (એસિજ્ઞા-એપયેત્) પાલન કરે. આ વિનય ધર્મનું પાલન કરવાનું શું ફળ છે. આ વાતને (શીલં પઢિલભેજ્જઓ-શીલં પ્રતિ લભેત યતઃ). આ પદ દ્વારા સૂત્રકાર પ્રગટ કરતાં કહે છે કે આ વિનય ધર્મ આચરિત હોવાથી આચરણ કરવાવાળા સાધુને માટે મુળગુણ અને ઉત્તર ગુણોની પ્રાપ્તિ કરાવે છે. શીલની પ્રાપ્તિ થવાથી એ શીલધારી શિષ્ય (બુદ્ધપુત્રે નિયાગદ્વી-બુદ્ધપુત્રઃ નિયાગાર્થી) ગુરુજનોની દ્રષ્ટીમાં પોતાના પુત્ર જેવો બની જાય છે. કેમકે પુત્ર શિક્ષણીય હોય છે અને આવા શિષ્ય પણ શિક્ષણીય હોય છે. આ વિચારથી શિષ્યને અહિં પુત્ર જેવો બતાવવામાં આવેલ છે. બ્યારે તે ગુરુકૃપાને પાત્ર દરેક રીતે બને છે ત્યારે આ વાત પણ સ્વતઃ એના દિલમાં સ્થાન કરી જાય છે કે

યુક્તાનિ-અર્ચ્યતે=પ્રાર્ચ્યતે મુમુક્ષુભિર્યઃસોડર્યઃ અવ્યાવાધસુખરૂપો મોક્ષસ્તેન
યુક્તાનિ તત્પ્રતિબોધકાનિ । યદ્વા-અર્થો=હેયોપાદેયરૂપસ્તેન યુક્તાનિ-તત્પ્રતિપાદ
કાનિ વીતરાગશાસ્ત્રાણિ શિક્ષેત=અભ્યસ્યેત્ । અયં ભાવઃ-મોક્ષમાર્ગપ્રદર્શકાનિ
શાસ્ત્રાણ્યેવ ઉપાદેયાનિ પારમાર્થિકસ્વરૂપપ્રતિપાદકત્વાત્, યથા સિન્ધુસ્તરદ્વૈર્વિલસતિ
તથા સ્યાદ્વાદૈર્વિલસિતાનિ રાગદ્વેપદોષપરિવર્જિતાનિ અવ્યાવાધસુખજનકાનિ
ઉત્પાદવ્યયઘ્રોવ્યસ્વરૂપનિરૂપકાણિ ભગવદ્વચનાનિ, તસ્માત્ તાન્યેવાભ્યસેદિતિ ।

કે સમીપ (સયા-સદા) સદા-કાલ (અદ્વજુક્તાનિ-અર્થયુક્તાનિ) મોક્ષ-
પ્રતિબોધક-અથવા હેયોપાદેય તત્ત્વ પ્રતિપાદક-એસે વીતરાગો-પદિષ્ટ
શાસ્ત્રોંકા (સિલ્લિજ્ઞા-શિક્ષેત) અભ્યાસ કરે । તથા (નિરદ્વાણિ ડ
વજ્જણ-નિરર્થાનિ તુ વર્જયેત્) ઇનસે વિપરીત અન્ય શાસ્ત્રોંકા વર્જન કરે ।

ભાવાર્થ—વસ્તુકા પારમાર્થિક સ્વરૂપ પ્રતિપાદન કરને વાલે હોને
સે મોક્ષમાર્ગકે પ્રદર્શક શાસ્ત્ર હી ઉપાદેય હું । જિસ પ્રકાર સમુદ્ર અપની
તરફમાલાઓસે શાભિત હોતા હૈં ડસી તરહ પ્રભુ કે વચન સ્વરૂપ
આગમશાસ્ત્ર મી સ્યાદ્વાદ-શૈલી સે સુશોભિત હોતે હું । ઇનમેં રાગ ંવં
દ્વેપકો વઢાને વાલી-કથાઈં વિલકુલ નહીં હું । ડનસે યે સદા વર્જિત હું ।
અવ્યાવાધ સુખ કે યે જનક હું । ઉત્પાદ વ્યય ંવં ઘ્રોવ્ય કે યથાર્થ
સ્વરૂપ કા યે નિરૂપક હું । ઇસલિયે મોક્ષાભિલાષિઓ કો વીતરાગ
પ્રણીત શાસ્ત્રકા હી અભ્યાસ કરના ચાહિયે । જિન મેં ઇસ પ્રકાર કી
વાતેં નહીં હું જો સર્વથા ંકાન્તવાદ કે પોષક અસર્વજ્ઞોપદિષ્ટ શાસ્ત્ર હું

(અદ્વજુક્તાનિ-અર્થયુક્તાનિ) મોક્ષ પ્રતિબોધક-અથવા હેયોપાદેય તત્ત્વ પ્રતિપાદક
એવાં વિતરાગોપદિષ્ટ શાસ્ત્રોંકા (સિલ્લિજ્ઞા-શિક્ષેત્) અભ્યાસ કરે. તથા
(નિરદ્વાણિ ડ વજ્જણ-નિરર્થાનિ તુ વર્જયેત્) એનાથી વિપરીત અન્ય શાસ્ત્રોંકા
ત્યાગ કરે.

ભાવાર્થ—વસ્તુતુ પારમાર્થિક સ્વરૂપ પ્રતિપાદન કરવાવાળા હોવાથી
મોક્ષમાર્ગના પ્રદર્શક શાસ્ત્ર જ ઉપાદેય છે. જે પ્રકાર સમુદ્ર પોતાની તરંગ-
માળાઓથી શોભિત દેખાય છે એ જ રીતે પ્રભુના વચન સ્વરૂપ આગમ-
શાસ્ત્ર પણ સ્યાદ્વાદશૈલીથી સુશોભિત હોય છે. તેમાં રાગ અને દ્વેશને વધા-
રનારી કથાઓ ખીલકુલ હોતી નથી. એનાથી એ સદા વર્જિત છે. અવ્યાવાધ
સુખના એ જનક છે. ઉત્પાદ વ્યય, અને ઘ્રોવ્યના યથાર્થ સ્વરૂપના એ નિરૂપક છે.
આ માટે મોક્ષાભિલાષિઓએ વિતરાગ પ્રણીત શાસ્ત્રનો જ અભ્યાસ કરવો
જોઈએ. જેમાં આ પ્રકારની વાતો નથી, જે સર્વથા ંકાન્તવાદને પોષનાર

વિનયઃ કથમેષણીય ઇત્યાદિ—

મૂલમ્—નિસંતે સિયાઽમુહરી બુદ્ધાણં અંતિષં સયાં ।

અદ્વજુત્તાણિ સિખિર્જજા, નિરદ્વાંણિ ઊં વજ્જંણે ॥૮॥

છાયા—

નિશાન્તઃ સ્યાત્ અમુત્વારિઃ બુદ્ધાનામ્ અન્તિકે સદા ।

અર્થયુક્તાનિ શિક્ષેત નિરર્થાનિ તુ વર્જયેત્ ॥ ૮ ॥

ટીકા—

‘નિસંતે ઇત્યાદિ’—નિશાન્તઃ=નિતરાં શાન્તઃ—ઉપશમયુક્તઃ—અન્તઃ ક્રોધ-
પરિવર્જનેન વહિથ સૌમ્યાકારેણ પ્રશાન્તઃ સ્યાદ્=ભવેત્, અમુત્વારિઃ=અવિરુદ્ધભાષી
પ્રિયભાષી સન્ બુદ્ધાનામ્=આચાર્યાણામ્, અન્તિકે=સમીપે, સદા=સર્વકાલમ્ અર્થ—

વિભૂષિત યના શિષ્ય ભી શીલ સે કુલ, ગણ ઇવં ગચ્છ કો પ્રમુદિત
કરતા હુઆ લોક મેં ચિન્તામણિ રત્ન કે સમાન માના જાતા હૈ કલ્પ-
વૃક્ષકે સમાન સેવિત કિયા જાતા હૈ, નિધિકે સમાન આદરીણય હોતા
રહતા હૈ ઔર સુધા (અમૃત) કે સમાન પૂજા જાતા હૈ ॥ ૭ ॥

વિનય પાલન કેસે કરના ચાહિયે હસે સૂત્રકાર હસ નિમ્નલિ-
ખિત ગાથા સે સ્પષ્ટ કરતે હૈ—‘નિસંતે.’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(નિસંતે-નિશાન્તઃ) જો ઉપશમ ભાવ સે યુક્ત હૈ—
મીતર મેં જિસકે ક્રોધ કા ઉદ્રેક નહીં હોતા હૈ—તથા બાહિર સે જિસકા
સદા સૌમ્ય આકાર યના રહતા હૈ એસા શિષ્ય (અમુત્વારિ) અવિરુદ્ધ-
ભાષી-પ્રિયભાષી-હોતા હુઆ (બુદ્ધાણં અંતિષ-બુદ્ધાનાં અન્તિકે) આચાર્યો

શિષ્ય પશુ શીલથી કુળ, ગણ એટલે ગચ્છને પ્રમુદિત કરીને લોકમાં ચિન્તા-
મણી રત્ન સમાન માનવામાં આવે છે. કલ્પવૃક્ષના સમાન સેવિત કરવામાં
આવે છે. નિધિની માફક આહત થતા રહે છે. અને સુધાની (અમૃત)
માફક પૂજાય છે. ॥૭॥

વિનય પાલન કેવી રીતે કરવું એઈએ તેને સૂત્રકાર આ નિયે બતાવેલ
ગાથાથી સ્પષ્ટ કરે છે. નિસંતે. ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(નિસંતે-નિશાન્તઃ) જે ઉપશમ લાવથી યુક્ત છે—જેને
અંદર ક્રોધનો ઉપદ્રવ થતો નથી. તથા બાહરથી જેનો સદા સૌમ્ય આકાર
બન્યો રહે છે એવા શિષ્ય (અમુત્વારિ) અવિરુદ્ધભાષી-પ્રિયભાષી બનીને
(બુદ્ધાણં અંતિષ-બુદ્ધાનાં અન્તિકે) આચાર્યોની સમિપ (સયા-સદા) હંમેશાં

પ્રશમસરઃશોષણે પ્રચડમાર્તઙ્કિરણરૂપાણિ, ભ્રમોત્પાદને મૃગતૃષ્ણાસ્વરૂપાણિ,

શ્રદ્ધા જાગ્રત હુણ વિના જીવકો આત્મ કલ્યાણ કા માર્ગ દિશ્વલાઈ નહીં દેતા હૈ । અતઃ વહ પતિત હોકર અનંત સંસારી હો જાતા હૈ । હસીલિયે લૌકિક શાસ્ત્રોંકા અધ્યયન વર્જનીય વતલાયા ગયા હૈ યદિ હસ ભાવના સે ઁનકા અધ્યયન કિયા જાય કિ દેશું કિ વીતરાગ પ્રસૂપિત શાસ્ત્રોં મેં ઁઁર ઁનકે ઉપદેશ મેં કિતના ભેદ હૈ તો હસ સ્થિતિ મેં જ્ઞાની કો ઁનેકાન્ત શાસન પર ઁઁર અધિક દુઢ શ્રદ્ધા વઢ જાતી હૈ । યયોં કિ સચ્ચે મણિકી કીમત તો જૂઠે મણિ કે દેશ્વને સે હી હોતી હૈ । સચ્ચે મણિકા પરિચાયક જૂઠામણિ હી હુઁઆ કરતા હૈ । હસીલિયે ટીકાકાર નેં ઁન્હેં મહાવ્રત રૂપ પર્વત કે ભેદન કરને મેં વજ્રકી ઉપમા દી હૈ । દાવાનલ જિસ પ્રકાર વન કો ભસ્મ કરને મેં ઢીલ નહીં કરતા ઁસી પ્રકાર નિરર્થક શાસ્ત્રોં કા અધ્યયન ભી મોક્ષાભિલાષિઓં કે તપ ઁઁર સંયમરૂપ ઉદ્યાન કો નાશ કરતા હૈ । જિસ પ્રકાર ગ્રીષ્મકાલ કા પ્રશ્વર આતપ-ધૂપ સરોવર કો શોષણ કરતા હૈ ઁસી પ્રકાર યે મોક્ષમાર્ગ કે ઉપદેશ સે વિહીન શાસ્ત્ર ભી મોક્ષાભિલાષી કે પ્રશમભાવકો શુષ્ક કરને મેં જરા સી ભી કસર નહીં રઁગ્વતે હેં । મૃગતૃષ્ણા જિસ પ્રકાર મૃગોં કો

વિના છવને આત્મકલ્યાણનો માર્ગ મળતો નથી. ઁટલે તે પતિત બની અનંત સંસારી થઈ જાય છે આ માટે લૌકિક શાસ્ત્રોં અધ્યયન વર્જનીય બતાવવામાં આવેલ છે. જો ઁ ભાવનાથી તેનું અધ્યયન કરવામાં આવે કે જોઉં વિતરાગ પ્રસૂપિત શાસ્ત્રોમા ઁને ઁમના ઉપદેશમાં કેટલો ભેદ છે તો આ સ્થિતિમાં જ્ઞાનીને ઁનેકાન્ત શાસન પર વધુ દ્રઢ શ્રદ્ધા જોસી જાય છે કેમકે સાચા મણિની કિંમત તો જુઠા મણીને જોવાથી જ થાય છે સાચા મણીને ઁગળાબાવનાર ખોટો મણી જ હોય છે. આ માટે ટીકાકારે તેને મહાવ્રતરૂપ પર્વતનું ભેદન કરનારા વજ્રની ઉપમા આપી છે. દાવાનળ જે રીતે વનને ભસ્મ કરવામાં ઢીલ કરતો નથી, તેવી જ રીતે નિરર્થક શાસ્ત્રોં અધ્યયન પણ મોક્ષાભિલાષિઓના તપ ઁને સંયમરૂપ ઉદ્યાનનો નાશ કરે છે. જે પ્રકાર ગ્રીષ્મકાળનો પ્રશ્વર આતપ સરોવરનું સોશણ કરે છે. તેવા પ્રકારે મોક્ષમાર્ગનાં ઉપદેશથી વિહીન શાસ્ત્ર પણ મોક્ષ અભિલાષિના પ્રશમભાવને શુષ્ક કરવામાં કસર રાખતો નથી. મૃગજર્ણ જેવા પ્રકારે મૃગોને

નિરર્થકાનિ મોક્ષાર્થવર્જિતાનિ, યદ્વા-હેયોપાદેયરૂપાર્થાનભિધાયકાનિ વૈશેષિકાર્દાનિ વાત્સ્યાયનપ્રણીતકામશાસ્ત્રાણિ તુ વર્જયેત્-પરિહરેત્ । અયં ભાવઃ-લૌકિકશાસ્ત્રાણિ તુ-મહાવ્રતપર્વતભેદને વજ્રોપમાનિ, તપઃસંયમકાનનવિનાશને દાવાનલસમાનિ, વે નિરર્થક શાસ્ત્ર હૈં । उनका अभ्यास नहीं करना चाहिये । क्यों कि वे अपने अभ्यासियोंके लिये मोक्षमार्ग के यथार्थ स्वरूप से वंचित एवं अपरिचित हैं । अथवा-निरर्थक वे शास्त्र हैं कि जिनके अध्ययन करने से जीवोंको हेय और उपादेय रूप अर्थका भान न हो सके, जो इस प्रकार के मोक्ष अर्थ के अभिधायक नहीं हैं ऐसे वैशेषिक आदि-आदि द्वारा प्रणीत शास्त्र तथा वात्स्यायनद्वारा प्रणीत काम शास्त्रों का अध्ययन कभी भी मोक्षामिलापियों को नहीं करना चाहिये । लौकिक-असर्वज्ञ-द्वारा उपदिष्ट लौकिक शास्त्र संसार बढ़ाने वाली ही शिक्षाओं से परिपूर्ण हैं । इनसे साधुओं को अपने महाव्रतों को पालन करनेकी शिक्षा यथार्थतया प्राप्त नहीं होती है । अतः उनका अध्ययन अर्थात्-अध्ययन करने वाला भद्रपरिणामी साधुजन अपने व्रतों से भी च्युत हो जाता है । इसलिये ऐसे शास्त्रों का अध्ययन महाव्रतरूप पर्वत को नष्ट करने के लिये वज्रका काम करता है । सम्यग्दर्शन की पुष्टि जबतक जीव की नहीं होती हैं-तबतक उसे समस्त द्रव्यों से भिन्न आत्मद्रव्य में दृढ श्रद्धा जाग्रत नहीं होती है । इस प्रकार के

અસર્વજ્ઞોપદિષ્ટ શાસ્ત્ર છે તે નિરર્થક શાસ્ત્ર છે, તેનો અભ્યાસ નહીં કરવો જોઈએ. કેમકે તે આપણા અભ્યાસિયો માટે મોક્ષમાર્ગના યથાર્થ સ્વરૂપથી વંચિત અને અપરિચિત છે. અથવા-નિરર્થક તે શાસ્ત્ર છે કે જેનું અધ્યયન કરવાથી જીવોને હેય અને ઉપાદેયરૂપ અર્થનું ભાન થઈ શકતું નથી. જે આ પ્રકારના મોક્ષ અર્થના અભિધાયક નથી એવા વૈશેષિક આદિ આદિ દ્વારા પ્રણીત શાસ્ત્ર તથા વાત્સ્યાયન દ્વારા પ્રણીત કામશાસ્ત્રોનું અધ્યયન કદી પણ મોક્ષના અભિલાષીયોએ કરવું ન જોઈએ. લૌકિક-અસર્વજ્ઞ-દ્વારા ઉપદિષ્ટ લૌકિક શાસ્ત્ર સંસાર વધારનારી શિક્ષાઓથી પરિપૂર્ણ હોય છે. તેનાથી સાધુઓને પોતાનાં મહાવ્રતોનું પાલન કરવાની શિક્ષા યથાર્થ તથા પ્રાપ્ત થતી નથી, એટલે એનું અધ્યયન કરવાવાળા ભદ્રપરિણામી સાધુજન પોતાના વ્રતોથી પણ ચ્યુત બની જાય છે. આ માટે એવા શાસ્ત્રોનું અધ્યયન મહાવ્રતરૂપ પર્વતને નષ્ટ કરનાર વજ્રનું કામ કરે છે. સમ્યગ્દર્શનની પુષ્ટિ જ્યાં સુધી જીવને થતી નથી, ત્યાં સુધી તેને સમસ્ત દ્રવ્યોથી ભિન્ન આત્મ-દ્રવ્યમાં દ્રઢ શ્રદ્ધા જાગ્રત થતી નથી. આ પ્રકારની શ્રદ્ધા જાગ્રત થયા

गुरु परुषवचनानि ग्रीष्मर्तुसहस्रकिरणकिरणावलीसमानि तथापि स्वल्पेनैव समयेन सजला जलदावलीसमुत्थितसमीरसहचारिनीरकणिका इव परिणमन्तीति गुह्यां परुषवचनानि अनन्तद्वितविधायकानि मोक्षपथप्रदर्शकानि सावधकर्म-निवर्तकानि अमृतमयानि आसेवनाग्रहण शिक्षारूपाणि भवन्तीति मन्यमानः सन् सहेत । उक्तं च—

शास्त्र किस तरह से सीखे सो बतलाते हैं—‘अणुसासिओ.’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—शिष्यजन यदि कदाचित् गुरुओं द्वारा कठोर वचनों से भी (अणुसासिओ-अनुशासितः) अनुशासित-शिक्षापाते हों तो भी उन्हें चाहिये कि वे (न कुपिज्ज्ञा-न कुप्येत्) अपने शिक्षाप्रदाता गुरुजन पर कभी भी क्रुपित न हों । प्रत्युत ऐसी अवस्था में सत् और असत् के विवेक करने में (पण्डित-पण्डितः) कुशलमति वह शिष्य (खंति सेविज्ज क्षान्ति सेवेत्) परुषभाषणको सहन करने रूप शांतिभाव का ही सेवन करे । तथा (खुड्डेहिं सह संसग्गं हासं क्रीडं च वज्जण-क्षुद्रैः सह संसग्गं हासं क्रीडं च वर्जयेत्) क्षुद्रजनों-याल अथवा पार्श्वस्थ अवसन्न-कुशील संसक्त-स्वेच्छाचारी साधुओं का संग वर्जन करें । तथा-हास्य क्रीडा का भी वर्जन करें ।

भावार्थ—यद्यपि गुरु महाराजके वचन उस समय शिष्य को ग्रीष्मऋतुके प्रखर सूर्यकी किरणों के समान मालूम पड़ते हैं परन्तु

शास्त्र कथं रीते शीघ्रवां ते गतावे छे.—अणुसासिओ. इत्यादि.

अन्वयार्थ—शिष्यजन जो कदाचि गुरुओं द्वारा कठोर वचनोधी पणु

(अणुसासिओ-अनुशासितः) अनुशासित-शिक्षा भेगवता होय तो पणु तेमणु विचारुं नेछं ओ के ते (न कुपिज्ज्ञा-न कुप्येत्) भेताना शिक्षा प्रदाता गुरुजन उपर कही पणु क्रोध न करे. परंतु ओवी अवस्थाभां सत् अने असत्नो विवेक करवाभां (पण्डित-पण्डितः) कुशलमति ते शिष्य (खंति सेविज्ज-क्षान्ति सेवेत्) (कठोर) परुष भाषणने सहन करवाइय शांतिभावनुं न सेवन करे. तथा (खुड्डेहिं सह संसग्गं हासं क्रीडं च वज्जण-क्षुद्रैः सह संसग्गं हासं क्रीडां च वर्जयेत्) क्षुद्रजनों, १ याल अथवा २ पार्श्वस्थ, ३ अवसन्न, ४ कुशील, ५ संसक्त-स्वेच्छाचारी साधुओंनो संग वर्जन करे. तथा हास्य क्रीडानुं पणु वर्जन करे.

मतलब तेनो ओ छे के कदाचि गुरु महाराजनुं वचन, ते सभये शिष्यने उनाणाना प्रणर सूर्यना किरणो समान मालूम पडे छे. परंतु परिधामभां

સકલાપત્તિદાયકવિપયવિલાસમવર્તકાનિદીર્ઘાધ્વચતુર્ગતિકસંસારપરિભ્રમણકારણાનિ
સન્તિ, તસ્માદ્ વિપમવિપધરશુનઙ્ગવત્ તાનિ દૂરતઃ પરિવર્જનીયાનિ ॥૮॥

અર્થયુક્તાનિ કથં શિક્ષેત ? इत्याह—

મૂલમ્—અણસોસિઓ નં કુપ્પિજ્ઞાં, સ્વંતિં સેવિજ્ઞં પંડિણં ।

खुँडेहिं सह संसर्गं, हांसं क्रीडं' च वज्जये ॥ ९ ॥

છાયા—

अनुशासितः न कुप्येत्, क्षान्तिं सेवेत पण्डितः ।

खुँदैः सह संसर्गं, हांसं क्रीडां च वर्जयेत् ॥ ९ ॥

ટીકા—

‘અણસોસિઓ.’ इत्यादि—अनुशासितः—गुरुभिः कठोरवचनैस्तर्जि-
तोऽपि न कुप्येत्=कोपं न कुर्यात् । किं तर्हि ? इत्याह—‘स्वन्तिं.’ इत्यादि । पण्डितः=
सदसद्विवेकवान् सन् क्षान्तिं=परुषभाषणसहनरूपां सेवेत । अयं भावः—यद्यपि

जलका भ्रम उत्पन्न करती है उसी तरह मिथ्या शास्त्र भी मोक्षाभिला-
षियोंके लिये यथार्थस्वरूप का ज्ञान न कराकर केवल वस्तु के स्वरूप
में भ्रमोत्पादक होते हैं । समस्त आपत्ति—एवं विपत्तियों को देने वाले
विषय कपार्योंकी ही इनसे केवल वृद्धि होती रहती है अतः इनसे
संसार का अन्त न आकर जीवों के अनन्त संसार के मार्ग की ही पुष्टि
होती है और इसी वजह से यह जीव इस चतुर्गति स्वरूप संसार में
इतस्ततः परिभ्रमण किया करता है । इस लिये जिस प्रकार जहरीले
सर्पका दूर से ही परिहार कर दिया जाता है उसी प्रकार मोक्षाभिला-
षियों को इन निरर्थक शास्त्रोंका परिहार कर देना चाहिये ॥ ८ ॥

જળનો ભ્રમ ઉત્પન્ન કરે છે, તેવી રીતે મિથ્યાશાસ્ત્ર પણ મોક્ષ અભિલાષીઓ
માટે યથાર્થ સ્વરૂપનું જ્ઞાન ન કરાવતાં કેવળ વસ્તુના સ્વરૂપમાં ભ્રમોત્પાદક
બને છે. સમસ્ત આપત્તિ અને વિપત્તિને દેવાવાળા વિષય કપાર્યોની જ તેનાથી
ફક્ત વૃદ્ધિ થતી રહે છે. જેથી તે વડે સંસારનો અંત ન આવતાં જીવોને
અનંત સંસારના માર્ગમાં લઇ બંધ છે, અને એ કારણે આ જીવ આ ચતુ-
ર્ગતિરૂપ સંસારમાં આહિં તહિં ભટકતો રહે છે. આ માટે જે પ્રકારે જહેરીલા
સાપનો દુરથી જ ત્યાગ કરવામાં આવે છે, તેવી રીતે મોક્ષના અભિલાષીઓએ
આવા નિરર્થક શાસ્ત્રનો ત્યાગ કરવો જોઇએ. ॥૮॥

નનુ ચાલપાર્શ્વસ્થાદિસંસર્ગે સત્યપિ સાધોઃ કા હાનિઃ ? દૃશ્યતે હિ વૈદ્યૃયમણિઃ કાચસહયોગેઽપિ કાચધર્મં નામોતિ, એવમાત્માર્થિનો મુનેર્વાલપાર્શ્વસ્થાદિ-સંસર્ગે સત્યપિ સ્વાચારપરિવર્તનં ન સ્યાત્ ? અત્રોચ્યતે—જીવો હિ સંસર્ગદોષાનુ-ભાવતો ચાલપાર્શ્વસ્થાદ્યાચરિત્રપ્રમાદાદિભાવનાભાવિતત્વાત્ દ્રુતમેવ તદ્વાવં પ્રાપ્નોતિ, યથા—નિમ્બોદકવાસિતાયાં ભૂમૌ કચિદામ્રવૃક્ષઃ સમુત્પન્નઃ, પુનસ્તત્રામ્રસ્ય નિમ્બસ્ય ચ દ્વયોરપિ મૂળે મિલિતે, તતથ સંસર્ગદોષાદામ્રો નિમ્બત્વં પ્રાપ્ય

કઠોર અક્ષરોં સે યુક્ત ગુરુજનોં કે વચનોં સે તિરસ્કૃત હુણ શિષ્યજન મહત્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં । જવતક મળી શાળ પર નહીં ચઢાયા જાતા હૈં તવતક વહ અપને ઉત્કર્ષ કો પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હૈં ઓર ન રાજાઓં કે મુકુટોં મેં ભી જડા જાતા હૈં । સાધુ યદિ ચાલ એવં પાર્શ્વસ્થ આદિ કી સંગતિ કરે તો ઉસકી ઇસસે ક્યા હાનિ હૈં । ક્યોં કિ દેખા જાતા હૈં કિ વૈદ્યૃયમણિ કાચમણિ કે સાથ રહતે હુણ ભી ઉસકે ધર્મકો અર્થાત્ કાચ કે ગુણ કો ગ્રહણ નહીં કરતા હૈં ઇસી પ્રકાર પાર્શ્વસ્થ આદિ કી સંગતિ મેં રહા હુઆ આત્માર્થી સાધુ ભી અપને આચાર વિચાર સે પરિચલિત નહીં હો સકતા ? પ્રશ્ન ઠીક હૈં—પરન્તુ યહ ધ્યાન રખના ચાહિયેકિ ભદ્રપરિણામી આત્મા નિમિત્તાધીન હોતા હૈં । નિમિત્ત મિલને પર નિમિત્ત કે અનુસાર શીઘ્ર હી ઉસકા પરિણમન હો જાતા હૈં । જિસ પ્રકાર જિસ ભૂમિ મેં નીમકે વૃક્ષ લગે હુણ હોતે હૈં ઓર ઉસી ભૂમિમેં યદિ આમ કા ભી વૃક્ષ લગા દિયા જાવે તો વહ નીમકે મૂળ કે

કઠોર અક્ષરોથી ભરેલા શુદ્ધનોના વચનોથી તિરસ્કૃત થયેલ શિષ્યજન મહત્ત્વને પામે છે. જ્યાં સુધી મણીને સરાણ ઉપર ચડાવવામાં આવતો નથી ત્યાં સુધી તે પોતાના ઉત્કર્ષને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. અને ન તો એ રાજાઓના મુગટોમાં જડાય છે. સાધુ જે બાલ અને પાર્શ્વસ્થ આદિની સંગતિ કરે તો એથી એને કંઈ જ નુકશાન થતું નથી. કેમકે જોઈ શકાય છે કે વૈદ્યૃયમણી કાચ મણીની સાથે રહેવા છતાં પણ એ કાચના શુભ અહુષ કરતો નથી. આ રીતે પાર્શ્વસ્થ આદિની સંગતિમાં રહેલા આત્માર્થી સાધુ પણ પોતાના આચાર વિચારથી પરિચલિત થતા નથી ? પ્રશ્ન ઠીક છે—પરંતુ એ ધ્યાનમાં રાખવું જોઈએ કે ભદ્રપરિણામી આત્મા નિમિત્ત આધિન બને છે. નિમિત્ત મળવાથી નિમિત્તના અનુસાર જલ્દીથી તેનું પરિણમન થઈ જાય છે. જે પ્રકારે જે ભૂમિમાં લીમડાનાં વૃક્ષો લાગેલાં હોય છે. અને એ જ ભૂમિમાં જે આંખાતું વૃક્ષ વાવવામાં આવે તો લીમડાના મૂળ સાથે તેના મૂળ મળવાથી

ગીર્મિર્ગુરુણાં પરુપાક્ષરાભિ,-

સ્તિરસ્કૃતા યાન્તિ નરા મહત્ત્વમ્ ।

અલબ્ધશાનોત્કપ્પના નૃપાણાં,

ન જાતુ મૌલૌ મળયો વસન્તિ ॥ ૧ ॥

ચ=પુનઃ શુદ્ધૈઃ=વાલૈઃ, અથવા પાર્શ્વસ્થાવસન્નકુશીલસંસક્તયથાચ્છન્દૈઃ
સહ સંસર્ગ=સજ્ઞં વર્જયેત્ ।

પરિણામ મેં વે જલ સે ભરે હુણ મેઘ કે સમય ઉત્પન્ન વાયુ કે સાથ જલ કણિકા કે સમાન હિતવિધાયક હોતે હૈં । જિસ પ્રકાર વર્ષાકાલ મેં જબ આકાશ મેં ઘટાણું ઘિર આતી હૈં તો ઉસસમય વાયુ કા ભી સંચાર હોને લગતા હૈં-આંધી ઉઠને લગતી હૈં ઓર ઉસકે ઉઠતે હી વે ઘટાણું વરસને લગતી હૈં । ઇસસે આતપતપ્ત-ગરમીસે પીડિત આત્માઓં કો શીતલતા કા અનુભવ હોને લગતા હૈં । ઇસી પ્રકાર ઉસ સમય ગુરુજનોં કે વચન કઠોર પ્રતીત હોતે હૈં પરન્તુ ભવિષ્ય મેં વે શિષ્યોં કે લિયે આત્મકલ્યાણ કે સાધક હોને સે અનંત શીતલતાપ્રદાન કરને વાલે હો જાતે હૈં । શિષ્યજન કો ગુરુ કે વચન અનંતહિત વિધાયક, મોક્ષપથપ્રદર્શક, સાવધકર્મનિવર્તક અમૃતસ્વરૂપ જાનકર સહતે રહના ચાહિયે । ક્યોં કિ ઇનસે શિષ્યોંકો આસેવનશિક્ષા ઇવં ગ્રહણ શિક્ષા પ્રાપ્ત હોતી હૈં વ્રતોં કો ગ્રહણ કરના ઇવં ઉનકા સમ્યગ્રીતિ સે પાલન કરના યહ શિક્ષા ગુરુ કે વચનોંસે હી શિષ્યોં કો મિલતી હૈં । કહા ભી હૈં—ગીર્મિર્ગુરુણાં૦ ઇત્યાદિ—

તે જળથી ભરેલા મેઘના સમયે ઉત્પન્ન થતા વાયુની સાથે જળકણિકાના જેવાં હિત વિધાયક હોય છે. જે પ્રકારે વર્ષાકાળમાં જ્યારે આકાશમાં ઘટાઓ ઘેરાય છે. એ સમયે વાયુનો પણ સંચાર થાય છે. અને આંધી ઉઠવા લાગે છે. અને આંધીના આગમનથી તે ઘટાઓ વરસવા લાગે છે. એનાથી (તડકાથી તપેલ) આતપતપ્ત આત્માઓને શીતળતાનો અનુભવ થવા લાગે છે. આ પ્રકારે એ સમયે શુદ્ધજનેતું વચન કઠોર જણાય છે. પરંતુ ભવિષ્યમાં તે શિષ્યોને માટે આત્મ કલ્યાણનું સાધક હોવાથી અનંત શિતળતા આપનાર બને છે. શિષ્યજને શુદ્ધનાં વચન અનંત હિત વિધાયક, મોક્ષપથ પ્રદર્શક, સાવધ કર્મ નિવર્તક અમૃત સ્વરૂપ બાણીને સહી લેવાં બેઠાં. કેમકે તેનાથી શિષ્યોને આસેવન શિક્ષા અને ગ્રહણશિક્ષા પ્રાપ્ત થાય છે. પ્રતોતું ગ્રહણ કરવું અને તેને સમ્યગ્રીતિથી પાલન કરવું આ શિક્ષા શુદ્ધના વચનોથી જ શિષ્યોને મળે છે. કહ્યું પણ છે—ગીર્મિર્ગુરુણાં. ઇત્યાદિ—

તથા-હાસં=હસનં, ક્રીડાં=કન્દુકાદિકાં ચ વર્જयेत्, જ્ઞાનાવરણીયાઘટ્ટવિધ-
કર્મવન્ધજનકત્વાદિતિ ભાવઃ ।

ઉક્તંચ—“જીવે ણં મંતે ! હસમાણે વા ઉસ્સુયમાણે વા કહ્ કમ્મપગડીઓ
વંધઈ ? ગોયમા ! સત્તવિહવંધણ વા અટ્ટવિહવંધણ વા ”

છાયા-જીવઃ સ્વલુ મદન્ત ! હસન્ વા ઉત્સુકન્ વા કતિ કર્મપ્રકૃતીર્વિ-
ધ્નાતિ, ગૌતમ ! સત્તવિધવન્ધકો વા અટ્ટવિધવન્ધકો વા ઇત્યાદિ । ક્રીડાવિપયે-
સ્પ્યેવમેવાગમોઽનુસન્ધેયઃ ॥ ૯ ॥

કે મહત્વ કો ખી વિનષ્ટ કર દેતા હૈં એવં દશવિધ ધર્મકો ધ્વસ્ત કર દેતા
હૈં । ઇસલિયે ક્ષુદ્રોં કા તથા ચાલકોં કા સંસર્ગ સદા પરિહાર્ય ચતલાયા
ગયા હૈં । તથા ચાલઆદિજનોંકી સંગતિ સે નિંદા હોતી હૈં એવં પાપકાર્યોં
મેં અનુમતિ દેને કી ખી આદત પડ જાતી હૈં । ઇસી તરહ જ્ઞાનાવરણીય
આદિ અષ્ટવિધ કર્મોંકે વંધ કે જનક હોને સે સાધુજન કો ચાલોંકે સાથ
હૈંસી કરના, ક્રીડા કરના આદિ અકર્તવ્યોંકા ખી પરિહાસ કર દેના
ચાહિયે । પ્રભુકા સ્વયં ખી એસા હી ઉપદેશ હૈં—“જીવે ણં મંતે ! હસમાણે
ઉસ્સુયમાણે વા કહ્ કમ્મપગડીઓ વંધઈ ? ગોયમા ! સત્તવિહવંધણ વા
અટ્ટવિહવંધણ વા ” ઇત્યાદિ—પ્રભુ સે ગૌતમને પ્રશ્ન કિયા હે મદન્ત !
યહ જીવ જવ હૈંસી કરતા હૈં અથવા ઉત્સુક હોતા હૈં તવ કિતને કર્મકી
પ્રકૃતિયોં કા વંધ કરતા હૈં ? તવ પ્રભુ ને ઉત્તર દિયા કિ હે ગૌતમ ! ઇસ
અવસ્થા મેં યહ જીવ સાત પ્રકાર કે યા આઠ પ્રકાર કે કર્મોંકા વંધ કરતા

સંયમના મહત્વનો પણ નાશ કરી નાખે છે. એમ જ દશવિધ ધર્મનો
પણ ધ્વસ્ત કરી નાખે છે. આ માટે ક્ષુદ્રોનો તથા બાલકોનો સંસર્ગ સદા
પરિહાર્ય બતાવવામાં આવેલ છે. તથા બાળ આદિ જનોની સંગતિથી નિંદા
થાય છે. તેમજ પાપકાર્યોમાં અનુમતિ દેવાની પણ આદત પડી ગય છે.
આ રીતે જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મનાં બંધનોના જનક હોવાથી સાધુજનોએ
હાંસી કરવી, ક્રીડા કરવી આદિ અકર્તવ્યોનો પરિહાર કરી દેવો જોઈએ.
પ્રભુનો સ્વયં આવો જ ઉપદેશ છે. “જિવેણં મંતે ! હસમાણે વા ઉસ્સુયમાણે વા
કહ્ કમ્મપગડીઓ વંધઈ ? ગોયમા ! સત્તવિહ વંધણ વા અટ્ટવિહ વંધણ વા”
ઇત્યાદિ—પ્રભુથી ગૌતમે પ્રશ્ન કર્યો હે મદન્ત ! આ જીવ જ્યારે હસે છે
ત્યારે કેટલા કર્મની પ્રકૃતિઓનો બંધ કરે છે ? પ્રભુએ ઉત્તર આપ્યો કે હે
ગૌતમ ! આ અવસ્થામાં આ જીવ સાત પ્રકારના અથવા આઠ પ્રકારના કર્મોનો

કટુફલો ભવતિ । અપરં ચ ચાલપાર્શ્વસ્થાદિસંસર્ગો લોકે ગદ્ધો જનયતિ, સર્વં
 એવૈતે સાધવ્યં એવંશૂતાં ઇતિ, તથા પાપેઽનુમતિમુત્પાદયતિ । અયં ભાવઃ-યથા-
 રજઃપુઙ્ગો મણિગણં મલિનયતિ, રાહુચન્દ્રમણ્ડલપ્રભામપકર્ષયતિ, લોભઃ સર્વગુણ-
 ગણં વિનાશયતિ, હેમન્તઃ કમલવનં પ્રલીનયતિ, તથા-શુદ્રસંસર્ગઃ શાન્ત્યાદિગુણગણં
 મલિનયતિ, લબ્ધ્યાદિપ્રભાવમપકર્ષયતિ, તપઃસંયમજનિતમદહ્યં વિનાશયતિ, દશ-
 વિધધર્મં પ્રલીનયતિ, તસ્માત્ શુદ્રસંસર્ગઃ પરિવર્જનીય ઇતિ ।

સાથ અપને મૂલ સે મિલા રહને પર કટુકફલ દેને લગતા હૈ । યહ વાત
 પ્રસિદ્ધ હૈ । ઇસલિયે સંસર્ગ કે દોષ સે જૈસે આમ્ર નિમ્બભાવ કો પ્રાપ્ત
 હોકર કહુવે ફલ દેને લગતા હૈ ઉસી પ્રકાર આત્માર્થી સાધુજન ભી
 ચાલ પાર્શ્વસ્થાદિ કે સંગતિ સે સ્વાચાર અપ્ત હો જાતે હૈ । આમ્ર પર
 નીમકા હી પ્રભાવ પડતા હૈ-નીમ પર આમ્ર કા નહીં-કારણ કિ બુરી
 વસ્તુ કા હી અધિક પ્રભાવ પડા કરતા હૈ ઓર વહી વસ્તુ દુસરોં કો
 જલ્દી અપને અનુરૂપ પરિણમા લેતી હૈ-યહ એક સ્વાભાવિક વાત હૈ ।
 યહ તો આંખોંદેહી વાતે હૈ કિ ધૂલિ કા પુંજ મણિગણકો ભી મલિન
 બના દેતા હૈ । રાહુચન્દ્રમંડલ કી પ્રભા કા અપકર્ષક હોતા હૈ, લોભ
 સમસ્ત સદ્ગુણોંકા લોપક હોતા હૈ । હેમન્ત ઋતુ કમલવન કો દગ્ધ કર
 દેતા હૈ । ઇસી તરહ યહ ભી માનને મેં કોઈ આપત્તિ નહીં હૈ કિ શુદ્ર-
 જનોં કા સંસર્ગ ભી સાધુજનોં કે શાંતિ આદિ ગુણગણોં કો મલિન
 બના દેતા હૈ । ઉનકે પ્રાપ્ત-પ્રભાવ કો કમ કર દેતા હૈ । તપ એવં સંયમ

કડવાં ફળ આપવા લાગે છે. આ વાત પ્રસિદ્ધ છે. આ માટે સંસર્ગના
 દોષથી જેમ આંખો લીમડાના ભાવને પામી કડવાં ફળ આપનાર બને છે
 એ જ રીતે આત્માર્થી સાધુજન પણ ખાળ પાર્શ્વસ્થાદિના સંગથી સ્વાચારબ્રહ્મ
 બની જાય છે. આંખો ઉપર લીમડાનો જ પ્રભાવ પડે છે, લીમડા ઉપર
 આંખાનો નહીં કારણ કે ખરાબ વસ્તુનો અધિક પ્રભાવ પડે છે. અને વસ્તુ
 ખીજાઓને જલ્દી પોતાના જેવી બનાવે છે. આ એક સ્વાભાવિક વાત છે આ
 તો આંખે જોયેલી વાત છે કે ધુળનો વંટોળ મણીઓને પણ મલીન બનાવી
 દે છે. રાહુ ચંદ્ર મંડળ તેજને ઢાંકી દે છે. લોભ સમસ્ત સદ્ગુણોને લોપનાર
 હોય છે. હેમન્ત કમળ વનને ખાળી નાખે છે. આ રીતે એ માનવામાં કોઈ
 અચૂક્તિ નથી કે શુદ્રજનોનો સંસર્ગ પણ સાધુજનોના શાન્તી આદિ ગુણોને
 મલીન બનાવી દે છે. એના પ્રાપ્ત પ્રભાવને ઓછો કરે છે, તપ અને

ક્રોધ કે આવેશ સે મૃપાભાષણ મત કરો । (વહુયં માય આલવે-વહુકં માચ આલપેત્) વ્યર્થ આલજાલરૂપ વચનોંકા ઉચારણ મત કરો-અનર્થ પ્રલાપ મત કરો-અધિક મત બોલો । (કાલેણ ચ અહિજ્જિત્તા-કાલેન ચાધીત્ય) પ્રથમ પૌરૂપી મેં સ્વાધ્યાય કરકે (તઓ ઇગઓ જ્ઞાણ-તતઃ એકાકી ધ્યાયેત્) દ્વિતીય પૌરૂપી મેં એકાકી હોકર સૂત્રાર્થકા ચિન્તવન કરો । ઉપલક્ષણ સે તૃતીય પૌરૂપી મેં ભિક્ષાચર્યા, એવં ચતુર્થી પૌરૂપી મેં ભણ્ડોપકારણ કી પ્રતિલેખના કે વાદ પુનઃ સ્વાધ્યાય કરો । યહ વાત સ્વયં સૂત્રકાર છાઈસ વે અધ્યયન મેં કહેંગે ।

ભાવાર્થ—ઇસ સૂત્ર દ્વારા પ્રકારાન્તર સે વિનય ધર્મકા શિષ્ય-જનોં કો ઉપદેશ દેતે હુઃ સૂત્રકાર કહતે હેં કિ હે શિષ્યોં યદિ તુમ ઇસ વિનય ધર્મકો પાલન કરને કે અભિલાષી હો તો તુમ્હારા યહ કર્તવ્ય હૈ કિ તુમ ક્રોધ કે આવેશમેં આકર કમી મી મૃપાભાષણ મત કરો । ક્યોં કિ ઇસ પ્રકાર કરનેસે વિનયધર્મકી પાલના નહીં હોતી હૈ મૃપા-ભાષણ કે નિષેધ સે ઉસકે સાથ-સાથ માન, માયા, લોભ, એવં હાસ્યાદિ કોં કા મી વિનયવાન કો ત્યાગ કર દેના ચાહિયે । મૃપાવાદાદિ કો ત્યાગ કરને કા કારણ યહ હૈ કિ ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ કરને વાલા

મૃપાભાષણ ન કરે (વહુયં માય આલવે-વહુકં માચ આલપેત્) આળપ'પાળ રૂપ વચનોંકા વ્યર્થ ઉચ્ચારણ ન કરે-અનર્થ પ્રલાપ ન કરે-વધારે ન બોલે । (કાલેણ ચ અહિજ્જિત્તા-કાલેન ચાધીત્ય) પ્રથમ પૌરૂપીમાં સ્વાધ્યાય કરી (તઓ ઇગઓ જ્ઞાણ-તતઃ એકાકી ધ્યાયેત્) બીજા પૌરૂપીમાં એકાકી થઇને સૂત્રાર્થનું ચિંતવન કરે । ઉપલક્ષણથી ત્રીજા પૌરૂપીમાં ભિક્ષા ચર્યા અને ચોથા પૌરૂપીમાં ભણ્ડોપકરણની પ્રતિલેખના પછી ફરી સ્વાધ્યાય કરે । આ વાત સૂત્રકાર પોતે ૨૬ મા અધ્યયનમાં કહેશે ।

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા પ્રકારાન્તરથી વિનય ધર્મનો શિષ્યજનોને ઉપદેશ આપતાં સૂત્રકાર કહે છે કે હે શિષ્યો ! જો તમે આ વિનયધર્મનું પાલન કરવાના અભિલાષી હો તો તમારું એ કર્તવ્ય છે કે તમે ક્રોધના આવેશમાં આવી કદી પણ મૃપાભાષણ કરો નહીં. કેમકે આ પ્રકારે કરવાથી વિનય ધર્મની પાલના થતી નથી. મૃપાભાષણના નિષેધથી એની સાથે માન, માયા, લોભ અને હાસ્યાદિકનો પણ વિનયવાને ત્યાગ કરી દેવો જોઇએ. મૃપાવાદાદિકોને ત્યાગ કરવાનું કારણ આ છે કે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ કરવા-

પુનરપિ પ્રકારાન્તરેણ વિનયમુપદિશન્નાહ—

મૂલમ્—માં યં ચંડાલિયં કાંસી, વહુયં માં યં આલંવે ।

કાલેનં યં અહિર્જિત્તા, તંઓ જ્ઞાઈર્જં એર્ગંઓ ॥ ૧૦ ॥

છાયા—

મા ચ ચણ્ડાલીકં કાર્પીદ્, વહુકં મા ચ આલપેત્ ।

કાલેન ચાપીત્ય, ત્વો ધ્યાયેત્ એકકઃ ॥ ૧૦ ॥

ટીકા—

‘મા ય’ इत्यादि—च शब्दः समुच्चयार्थकः । चण्डालीकं—चण्डः=क्रोध-
स्तद्वशादलीकं=मृपाभाषणं मा कार्पीत्=मा कुर्यात्, इदमुपलक्षणं मानमायालोभ-
भयहास्यादीनाम् । उक्तंच—

મુસાવાઓ ઉ લોગમ્મિ, સન્નસાહુદિ ગરિહિઓ ।

અવિસ્સાસો ય ભૂયાણં, તમ્હા મોસં વિવજ્જણ ॥ (દશવૈ. ૬ અ. ૧૩ ગા.)

છાયા—

મૃપાવાદસ્તુ લોકે, સર્વસાધુભિર્ગર્હિતઃ ।

અવિશ્વાસસ્થ ભૂતાનાં, તસ્માદ્મૃપા વિવર્જયેત્ ॥

ચ=પુનઃ વહુકં-વદ્ધેવ વહુકમ્-અતિશયમ્ આલજાલરૂપં મા આલપેત્=મા
વદેત્ । વહુમાપણે વહવો દોપા ભવન્તિ । ઉક્તં ચ—

है। इसी तरह क्रीडाके विषय में भी समझ लेना चाहिये ॥ ९ ॥

दूसरे प्रकार से भी इसी विनयधर्मका सूत्रकार उपदेश करते हैं—‘ माय. ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—શિષ્યજનોં કો સંવોધિત કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે
હૈં કિ હૈ શિષ્યો ! તુમ (ચણ્ડાલિયં મામ કાસી-ચંડાલીકં મા ચકાર્પીત્

અંધ કરે છે. આ રીતે ક્રીડાઓના વિષયમાં પણ સમજાવેલું જોઈએ. ॥ ૯ ॥

બીજા પ્રકારથી પણ આ વિનય ધર્મનો સૂત્રકાર ઉપદેશ કરે છે—
માય. ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—શિષ્યજનોને સંબોધન કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે હું
શિષ્યો ! તમે ચંડાલિયં મામ કાસી-ચંડાલીકં મા ચકાર્પીત્) ક્રોધના આવેશથી

પાલને કા આદેશ હૈ । વહુભાપણ મૈં અથવા વિના વિચાર કિયે ભાપણ મૈં ન તો સાધુ કે મૂલગુણરૂપ ઇસ સમિતિ કા હી પાલન હોતા હૈ ઓર ન ગુપ્તિ કા હી । ઇસીલિયે વહુભાપણ મૈં “વહુત દોષ હૈ” અન્યત્ર ભી એસા હી કહા હૈ—

વહુભાપણમુન્માદં સ્વાધ્યાયધ્યાનમંજનં કુરુતે ।

અહિતમનર્થકરં તત્, ભવતિ ચ પીઢાકરં નિતરામ્ ॥ ૧ ॥

વહુભાપણાત્ દ્વિતીયં નશ્યતિ, તાવન્મહાવ્રતં તસ્માત્ ।

સ્યાદેવ કર્મવંધસ્તસ્માદ્ દીર્ઘાધ્વસંસારઃ ॥ ૨ ॥

વહુત આલજાલરૂપ વકવાદ કરને વાલોંકે ઉન્માદ રોગ હો જાતા હૈ । સાધુ કે સ્વાધ્યાય ણં ધ્યાન મૈં વિધ્ન પડતા હૈ—સ્વાધ્યાય ધ્યાન નષ્ટ હો જાતે હૈ । વહુભાપણ સે અનેક અનર્થ હોતે હૈ । જ્યાદા ઇસ વિષય મૈં ઓર કયા કહા જાય સાધુ કા ઇસ હાલત મૈં દ્વિતીય સત્ય-મહાવ્રત ભી ઁંડિત હો જાતા હૈ અતઃ વહુભાપીકે કર્મ વહુત વન્ધતે હૈ ઓર વહુ દીર્ઘ સંસારી હોકર સંસાર મૈં પરિભ્રમણ કરતા હૈ ।

“કાલેણ” ઇસ પદ સે સૂત્રકાર સાધુ કા કયા કર્તવ્ય હૈ યહ વાત દિશ્વલાતે હૈ । વે કહતે હૈં કિ સાધુ કો પ્રથમ પૌરુષી મૈં સ્વાધ્યાય

સમિતિ અને વચનશુદ્ધિ પાળવાનો આદેશ છે. બહુ ભાષણમાં અથવા વિચાર કર્યા વગરના ભાષણમાં ન તો સાધુના મુળગુણ રૂપ એ સમિતિનું પાલન થાય છે અને ન શુદ્ધિનું પણ આ માટે બહુ ભાષણમાં “ધણે દોષ છે” બીજામાં પણ તેમજ કહ્યું છે.

વહુભાપણમુન્માદં સ્વાધ્યાયધ્યાનમંજનં કુરુતે ।

અહિતમનર્થકરં તત્ ભવતિ ચ પીઢાકરં નિતરામ્ ॥૧॥

વહુભાપણાત્ દ્વિતીયં નશ્યતિ તાવન્મહાવ્રતં તસ્માત્ ।

સ્યાદેવ કર્મવંધસ્તસ્માત્ દીર્ઘાધ્વસંસારઃ ॥૨॥

આલ જાલરૂપ વધુ બકવાદ કરવાવાળાને ઉન્માદ રોગ થઇ આવે છે. સાધુના સ્વાધ્યાય અને ધ્યાનમાં વિધ્ન પડે છે—સ્વાધ્યાય ધ્યાન નષ્ટ થઇ જાય છે. બહુ ભાષણથી અનેક અનર્થ થાય છે. આ વિષયમાં વધુ શું કહેવાય. સાધુનું આ હાલતમાં બીજું સત્ય મહાવ્રત પણ બંડિત થઇ જાય છે. એટલે બહુભાષીનાં કર્મ વધુ બંધાય છે. અને તે દીર્ઘ સંસારી બની સંસારમાં પરિભ્રમણ કરે છે.

“કાલેણ” આ પદથી સૂત્રકાર સાધુનું શું કર્તવ્ય છે આ વાત બતાવે છે, તેઓ કહે છે કે સાધુને પ્રથમ પૌરુષીમાં સ્વાધ્યાય કરવો જોઇએ. પછી

યહુભાષણયુન્માદં, સ્વાધ્યાયધ્યાનમઙ્ગનં કુરુતે ।

અહિતમનર્થકરં તદ્, ભવતિ ચ પીઠાકરં નિતરામ્ ॥૧॥

યહુભાષણાદ્ દ્વિતીયં, નશ્યતિ તાવન્મહાવ્રતં તસ્માત્ ।

સ્પાદેવ કર્મવન્ધ, -સ્તસ્માદ્ દીર્ઘાધ્વસંસારઃ ॥ ૨ ॥

તર્હિં કિં કુર્યાત્ ? इत्याह—‘कालेण.’ इत्यादि । ‘कालेण’-इत्यत्र सप्तम्यर्थे तृतीया; काले=प्रथमपौरुष्यां तु, चकारस्त्वर्थवाचकः, अशीत्य=स्वाध्यायं कृत्वा ततः=तदनु द्वितीयपौरुष्याम् एककः-एकाकी सन् भावतो रागादिरहितः, द्रव्यतो विविक्तशयनासनादिसंस्थः ध्यायेत्-सूत्रार्थं चिन्तयेत् । उपलक्षणमेतत् तृतीयचतुर्थ-पौरुष्योरपि, तथा च-तृतीयपौरुष्यां भिक्षाचर्यं चतुर्थ्या पुनः स्वाध्यायं कुर्या-दित्यर्थः । वक्ष्यति पङ्क्तिशेऽध्ययने-

સાધુ સાધુ નહોં હૈ વહ સાધ્વાભાસ હૈ । કહા બી હૈ કિ—

मुसावाओ उलोगम्मि सब्वासहहिं गरिहिओ ।

अविस्सासो य भूयाणं तम्हा मोसं विवज्जए । (दशवै० ६ अ. १३ गाथा)

यह मृपावाद सर्व-साधुओं अर्थात् तीर्थंकर आदि महापुरुषों द्वारा गर्हित-निन्दित है, दूसरे मृपावादी पर जगत का कोई भी प्राणी विश्वास नहीं करता है, अर्थात् वह सब के लिये अविश्वास्य होता है । इसी प्रकार बहुत बोलने से भी विनय धर्म यथावत् पालित नहीं हो सकता है । क्यों कि इस अवस्था में ऐसे भी कई शब्द निकल जाते हैं जो व्यर्थ होते हैं एवं सुनने वाले के लिये भी कष्टप्रद होते हैं । जो मन में आया सो बोल देना-यह प्रवृत्ति साधु मार्ग की नहीं है । इसमें तो बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है । इसी लिये भाषासमिति एवं वचनगुप्ति

વાળા સાધુ સાધુ નથી તે સાધ્વાભાસ છે. કહું પણ છે કે—

मुसावओ उ लोगम्मि सब्वासह हिं गरिहिओ ।

अविस्सासो य भूयाणं तम्हा भासं विवज्जए । दशवै० ६ अ. १३ गाथा.

આ મૃપાવાદ સર્વ સાધુઓ અર્થાત્ તીર્થંકર આદિ મહાપુરુષોદ્વારા પ્રહિત છે. બીજા મૃપાવાદી ઉપર જગતના કોઇપણ પ્રાણી વિશ્વાસ કરતા નથી તે બધાને માટે અવિશ્વાસ હોય છે. આ પ્રકારે બહુ બોલવાથી પણ વિનયધર્મ યથાવત્ પાલિત નથી થઇ શકતો. કેમકે એ અવસ્થામાં એવા પણ કોઇ શબ્દ નિકળી બાય છે, જે વ્યર્થ હોય છે, અને સાંભળવાવાળાને માટે પણ દુઃખદાયક હોય છે. જે મનમાં આવ્યું તે બોલી નાખ્યું-આ કામ સાધુનું નથી. એણે તો ખૂબજ સાવધાની રાખવી પડે છે. આ માટે ભાષા

ચ-પુનઃ, અકૃતમ્=અનાચરિતં ચણ્ડાલીકાદિકં, નો કૃતમિતિ=મૃપાભાષણં મયા ન કૃતમિત્યેવ ભાષેત । અયં ભાવઃ-ગુરુશુશ્રૂષાકારિણોઽપિ શિષ્યસ્ય કથંચિદતીચાર-સંભવે ગુરુસંનિધૌ તદાલોચના કરણીયા । આલોચના હિ-મોક્ષમાર્ગવિચારતાનામ-નન્તસંસારવર્ધકાનાં માયા-નિદાન-મિથ્યાદર્શનશલ્યાનાં નિષ્કર્ષણી, જ્ઞાનાવરણીયા-દૃષ્ટવિધર્મમલાપર્કર્ષણી, શુદ્ધાત્મસ્વરૂપદર્શની, તત્ત્વાતત્ત્વવિમર્શની, અવ્યાવાધ-મુલ્લવર્ષિણીતિ ॥ ૧૧ ॥

(આહચ-કદાચિત્) યદિ અકસ્માત્ (ચંડાલિયં કટ્ટુ-ચંડાલીકં કૃત્વા । ક્રોધ કે આવેશ સે અકસ્માત્ ઝૂટ ચોલા ગયા હો તો મી ઉસે (કયાચિ ન નિન્દુવિજ્ઞ-કદાપિ ન નિહ્નુવીત) કમી મી કિસી મી પરિસ્થિતિ મેં છિપાના નહીં ચાહિયે । (કડં કડેત્તિ ભાસેજ્ઞા-કૃતં કૃતમિતિ ભાષેત) એસા નહીં કહના ચાહિયે કિ મેંને ક્રોધાદિક કે આવેશ સે અસત્ય ભાષણ નહીં કિયા હૈ-કિન્તુ એસા હી કહના ચાહિયે કિ મેરે દ્વારા ક્રોધાદિક કે આવેશ સે અસત્યભાષણ અવશ્ય-અવશ્ય હુઆ હૈ, (અકડં નો કડેત્તિ ય-અકૃતં નો કૃતમિતિ ચ) ઓર જો ક્રોધાવેશસે અસત્ય નહીં ચોલા ગયા હો તો એસા મી નહીં કહના ચાહિયે કિ મેંને અસત્ય ભાષણ કિયા હૈ ।

ભાવાર્થ-યદિ ક્રોધાદિક કપાયોં કે આવેશ સે સહસા અસત્ય ભાષણ હો મી જાય તો ઉસે યહ નહીં કહના ચાહિયે કિ મેંને અસત્ય ભાષણ નહીં કિયા હૈ । જૈસે રક્ત સે દૂપિત વસ્ત્ર રક્તસે ધોને

આહચ્ચ-કદાચિત્-કદાચ યદિ-અકસ્માત્ ચંડાલિયં કટ્ટુ-ચંડાલીકંકૃત્વા ક્રોધના આવેશથી અકસ્માત્ બુઠું બોલી જવાયું હોય તો પણ તેને કયાચિ ન નિન્દુ-વિજ્ઞ-કદાપિ ન નિહ્નુવીત કદી પણ કોઈ પણ પરિસ્થિતિમાં છુપાવવું નહીં ભેઈએ. કડં કડેત્તિ ભાસેજ્ઞા-કૃતં કૃતમિતિ ભાષેત એમ ન કહેવું ભેઈએ કે મેં ક્રોધા-દિકના આવેશમાં અસત્ય-ભાષણ કરેલ નથી-પરંતુ એવું કહેવું ભેઈએ કે મારાથી ક્રોધના આવેશમાં અસત્ય ભાષણ જરૂરજરૂર થયું છે. અકડં નો કડે-ત્તિ ય-અકૃતં નો કૃતમિતિ ચ અને બે ક્રોધાવેશના લીધે અસત્ય ન બોલાયું હોય તો એવું પણ ન કહેવું ભેઈએ કે મેં અસત્ય ભાષણ કર્યું છે.

મતલબ આનો એ છે કે બે ક્રોધાદિક કપાયેના આવેશથી સહસા અસત્ય-ભાષણ થઈ જાય તો એવું ન કહેવું ભેઈએ કે મેં અસત્ય-ભાષણ નથી કર્યું. જે રીતે લોહીથી ખરડાયેવું દૂપિત વસ્ત્ર લોહીથી ધોવાથી શુદ્ધ થતું

“પદમં પોરિસિ સજ્ઞાયં વીયં જ્ઞાણં જ્ઞિયાયઈ ।

તદ્યાપ મિક્ત્વાયરિયં પુણો ચઉત્થીઈ સજ્ઞાયં ” ઇતિ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

યદિ કથન્નિદસત્યભાષણં ભવેત્તદા તન્ન ગોપયેદિત્યાહ—‘આહચ્ચ.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્મ—આહચ્ચં ચંડાલિયં કદ્દુ, નં નિન્નુવિજ્ઞ કયોઈવિ’ ।

કંડં કંડેત્તિ’ ભાસેજ્ઞો, અકંડે નો કંડેત્તિ’ યં ॥૧૧॥

છાયા—

કદાચિત્ ચણ્ડાલીકં કૃત્વા, ન નિહ્નુવીત કદાચિદપિ ।

કૃતં કૃતમિતિ ભાષેત, અકૃતં નોકૃતમિતિ ચ ॥ ૧૧ ॥

ટીકા—

‘આહચ્ચ’ ઇત્યાદિ—કદાચિત્=અકસ્માદ્ ચણ્ડાલીકં=ક્રોધાદિવશાદ—
વૃત્તભાષણં કૃત્વા કદાચિદપિ—યદા પરેણ જ્ઞાતં નોજ્ઞાતં વા તદાપિ ન નિહ્નુવીત=ન
ગોપયેત્—અવૃત્તભાષણં મયા ન કૃતમિત્યપલાપં ન કુર્યાત્ । કિં તર્હિ ? ઇત્યાહ—કૃતં
ચણ્ડાલીકાદિ, કૃતમિતિ=ક્રોધાદિવશાદવૃત્તભાષણં મયા કૃતમિત્યેવ ભાષેત, તયા
કરના ચાહિયે । પશ્ચાત્ દ્વિતીય પૌરુષી મેં રાગાદિક ભાવોં સે રહિત
હોકર સૂત્રાર્થકા ચિન્તવન કરના ચાહિયે । ઉપલક્ષણ સે તૃતીય, ‘એવં
ચતુર્થ પૌરુષી કા ગ્રહણ હુઆ હેં જિસકા ભાવ ઇસ પ્રકાર હેં કિ તૃતીય
પૌરુષી મેં વહ મિક્ષાચર્યા કરે ઓર ચતુર્થ પૌરુષી મેં પુનઃ સ્વાધ્યાય કરે
ઈસી વાત કો ઇસી સૂત્ર કે છાઈસ ૨૬ વેં અધ્યયન મેં ભગવાને કહા હે—

પદમં પોરિસિ સજ્ઞાયં વીયં જ્ઞાણં જ્ઞિયાયઈ ।

તદ્યાપમિક્ત્વા યરિય પુણો ચઉત્થીઈ સજ્ઞાયં ॥ ઇતિ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

અગર કિસી કારણ વશ અસત્ય બોલાજાય તો ઉસે છિપાવે
નહીં, ઇસી વાતકો કહતે હીં—‘આહચ્ચ.’ ઇત્યાદિ ।

બીજા પૌરુષીમાં રાગાદિક ભાવોથી રહિત બની સૂત્રાર્થનું ચિંતવન કરવું
જોઈએ. ઉપલક્ષથી ત્રીજા અને ચોથા પૌરુષીનું ગ્રહણ થયેલ છે. જેને ભાવ
આ પ્રકારે છે કે ત્રીજા પૌરુષીમાં તે ભિક્ષા ચર્યા કરે અને ચોથા પૌરુષીમાં
ફરી સ્વાધ્યાય કરે. આ વાત આજ સૂત્રના ૨૬મા અધ્યયનમાં ભગવાને કહી છે—

પદમં પોરિસિ સજ્ઞાયં વીયં જ્ઞાણં જ્ઞિયાયઈ ।

તદ્યાપ મિક્ત્વાયરિય પુણો ચઉત્થીય સજ્ઞાયં ઇતિ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

આ વાતને આ સૂત્રના ૨૬ મા અધ્યયનમાં ભગવાને કહ્યું છે.

જો કોઈ કારણવશ અસત્ય બોલાઈ બાય તો એને છૂપાવવું નહિં એજ
વાત ને કહે છે. આહચ્ચં ઇત્યાદિ.

વાલે અષ્ટવિધ કર્મોંકા હસ આલોચના કે પ્રભાવ સે વિનાશ હોતા હૈં । આત્મિક શુદ્ધ સ્વરૂપ કે દર્શન કરાનેવાલી યહ આલોચના હૈં ઓર તત્ત્વ ંવં અતત્ત્વ કે વિવેક કો જાગ્રત કરતી હુઈ અવ્યાવાધ સુખ કો પ્રદાન કરનેવાલી યહી આલોચના હૈં ॥ ૧૧ ॥

શિષ્યકો સમી કામ ગુરુમહારાજકે અભિપ્રાયસે હી કરના ચાહિયે, સો દિગ્વલાતે હૈં—‘ મા ગલિયસ્સેવ૦’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(ગલિયસ્સેવ કસં-ગલિતાશ્વ ઇવ કશાં) જિસ પ્રકાર અવિનીત ઘોડા વારંવાર કશા (ચાવુક) કે પ્રહાર કી ઇચ્છા કરતા હૈં, ઁસી પ્રકાર (પુણો પુણો મા વયણમિચ્છે-પુનઃ પુનઃ મા વચનં ઇચ્છેત્) પુનઃ પુનઃ પ્રવૃત્તિનિવૃત્તિરૂપ ગુરુકે આજ્ઞા કી શિષ્ય કો વાંછા નહીં કરની ચાહિયે, અર્થાત્-ઉપદિષ્ટ અર્થકો હી વારંવાર કહલવાને કે લિયે ગુરુ મહારાજ કો કષ્ટ નહીં દેના ચાહિયે । કિન્તુ (આહ્નને કસં વ દદ્ધું-આકીર્ણઃ કશામ્ ઇવ દૃષ્ટ્વા) જિસ પ્રકાર આકીર્ણ અર્થાત્ જાતિ-માન્ સુશિક્ષિત વિનીત ઘોડા ચાવુક કો દેખકર અપની અવિનીતતા કા પરિહાર કર દેતા હૈં, ઁસી તરહ વિનીત શિષ્ય મી (પાવગં પરિવજ્રણ-પાપકં પ્રતિવર્જયેત્) ગુરુ કે ઇંગિત આકાર કો જાનકર પાપમય અનુષ્ઠાન કા પરિત્યાગ કરે ।

હસ શ્લોકકા ભાવાર્થ શત્રુમર્દન રાજા કે દૃષ્ટાન્ત સે કહતે હૈં— વહ હસ પ્રકાર હૈં—

સ્વરૂપનું દર્શન કરાવનાર આ આલોચના છે. અને તત્ત્વ તેમજ અતત્ત્વના વિવેકને જાગ્રત કરીને અવ્યાવાધ સુખ આપનારી આ જ આલોચના છે. ॥૧૧॥

શિષ્યે બધાં કામ ગુરુમહારાજના અભિપ્રાયથી જ કરવાં બેઠાં, તે બતાવવામાં આવે છે. ‘ મા ગલિયસ્સેવ૦’ ઇત્યાદિ.

ગલિયસ્સેવ કસં-ગલિતાશ્વ ઇવ કશાં જે પ્રકારે ઘોડો વારંવાર ચાવુકના પ્રહારની ઇચ્છા કરે છે એ પ્રકારે પુણો પુણો મા વયણમિચ્છે-પુનઃ પુનઃ મા વચનં-ઇચ્છેત્ કરી કરી પ્રવૃત્તિનિવૃત્તિરૂપ ગુરુની આજ્ઞાની શિષ્યે ઇચ્છા ન કરવી બેઠાં-અર્થાત્ ઉપદિષ્ટ અર્થને વારંવાર કહેવડાવવા માટે ગુરુમહારાજને કષ્ટ ન આપવું બેઠાં. પરંતુ આહ્નને કસં વ દદ્ધું-આકીર્ણઃ કશામ્ ઇવ દૃષ્ટ્વા જે પ્રકારે આકીર્ણ અર્થાત્ જાતિમાન કેળવાયેલ ઘોડો ચાવુકને બેઠ પોતાની અવિનીતતાનો ત્યાગ કરે છે એવી રીતે વિનીત શિષ્ય પણ પાવગં પરિવજ્રણ-પાપકં પ્રતિવર્જયેત્ ગુરુના ઇંગિત-આકારને બાળી પાપમય અનુષ્ઠાનનો પરિત્યાગ કરે.

આ શ્લોકનો ભાવાર્થ શત્રુમર્દનના દૃષ્ટાંતથી સમજાવવામાં આવે છે, જે આ પ્રકારે છે.

ગુરોરભિપ્રાયેણૈવ સર્વં કર્તવ્યમિત્યાદ્—

મૂલમ્—માં ગલિયસ્સેવં કંસં, વંચનામિચ્છે પુર્ણો પુર્ણો ।

કંસં વં દંદ્વુમાઇન્ને, પાંત્રંગં પરિવેજ્જણ ॥૧॥

છાયા—

મા ગલિતાશ્વ ઇવ કશાં, વચનમ્ ઇચ્છેત્ પુનઃ પુનઃ ।

કશામ્ ઇવ દૃષ્ટ્વા આકીર્ણઃ, પાપકં પરિવર્જયેત્ ॥ ૧૨ ॥

ટીકા—

‘મા ગલિયસ્સેવ.’ ઇત્યાદિ—ઇવ=યથા, ગલિતાશ્વઃ=અધિનીતતુરજઃ, પુનઃ પુનઃ કશાં=કશામહારં વાચ્યતિ, તથા પુનઃ પુનઃ વચનં=મટ્ટતિનિટ્ટતિપરં ગુરોરુપદેશં મા ઇચ્છેત્ । ઉપદિષ્ટાર્થમેવ પુનઃ પુનર્વક્તું ગુરવે પરિશ્રમો ન દેય ઇતિ ભાવઃ ।

પર શુદ્ધ નહીં હોતા, उसी प्रकार झूठ की शुद्धि पुनः झूठ बोलने से नहीं होती है यह विश्वास रखना चाहिये । फलितार्थ यह है कि वास्तविक स्थिति को साधु के लिये छुपाना नहीं चाहिये, और अवास्तविक स्थिति को कल्पना के तूलिका से सजाकर प्रकट नहीं करना चाहिये । शिष्य चाहे गुरुजन की शुश्रूषा करनेवाला भी क्यों न हो तो भी उसे कथंचित् अतीचार लगने पर गुरु के समीप आलोचना अवश्य करनी चाहिये । कारण कि आलोचना से आत्मा की शुद्धि होती है एवं मोक्ष-मार्ग के विघातक तथा अनंत संसार के वर्धक ऐसे माया, मिथ्या एवं-निदान इन तीन शक्तियों का अभाव होता है । आत्मा को मलिन करने-

નથી એજ રીતે બુઠની શુદ્ધિ કરી બુઠ બોલવાથી થતી નથી, આ વિશ્વાસ રાખવો જોઈએ. આનો અર્થ એ છે કે વાસ્તવિક સ્થિતિને સાધુએ કદી પણ છુપાવવી ન જોઈએ, અને અવાસ્તવિક સ્થિતિને કલ્પનાથી સજાવીને પ્રગટ ન કરવી જોઈએ. શિષ્ય ગુરુજનની શુશ્રૂષા કરવાવાળો પણ કેમ ન હોય તો પણ તેને કથંચિત્ અતીચાર લાગવાથી ગુરૂની પાસે તેણે આલોચના જરૂર કરવી જોઈએ. કારણ કે આલોચનાથી આત્માની શુદ્ધિ થાય છે અને મોક્ષ-માર્ગના વિઘાતક તથા અનંત સાગરને વધારનાર એવાં માયા, મિથ્યા અને નિદાન આ ત્રણ શક્તિઓનો અભાવ હોય છે. આત્માને મલિન કરવાવાળા અષ્ટ-વિધ કર્મેણો આ આલોચનાના પ્રભાવથી વિનાશ થાય છે. આત્મિક

સ ચ તુરજ્ઞમઃ કશયા પુનઃ પુનસ્તાડિતોઽપિ નેચ્છતિ શત્રુમભિગન્તુમ્ । અગ્રાન્તરે શત્રુ-
સૈનિકા અસ્ય સવલાનપિ સૈનિકાન્ અનાથાનિવ અશરણાનિવ મન્વાના અચિરેણૈવ
વિમિત્ય નિમગ્નાઞ્ચ વાદયામાસુઃ, શત્રુમર્દનઃ સ્વવાહનેન ગલિતાશ્વેન પરાજિતઃ શ્રી-
હતો યાવત્પલાયિતું વાચ્છતિ, તાવત્ “ગૃહ્ણતાં ગૃહ્ણતામ્”-ઇતિ વદન્તઃ શત્રુસૈનિકાસ્તં
નિગ્રહીતું પશ્ચાદ્વાચમાનાઃ શત્રુમર્દનં નિગૃહ્ય લૌહપિઞ્જરે સ્થાપિતવન્તઃ । એવં ગલિતા-
શ્વસદશઃ શિષ્યો મહત્તેઽનર્થાય ભવતિ । કિં તર્હિ કુર્યાદિત્યાહ-કશાં-‘ચાવૃક’
ઇતિ ભાપામસિદ્ધાં દૃષ્ટ્વા, અકીર્ણઃ=જાત્યાશ્વઃ, વિનીતાશ્વ इव શિષ્યો ગુરોરિન્દ્રિ-
તમાકારં દૃષ્ટ્વા પાપકં=પાપાનુષ્ઠાનમ્-અવિનીતતામિત્યર્થઃ, પરિવર્જયેત્=સર્વથા પરિ-
હરેત્ । અર્થે માયઃ-યથા જાત્યાશ્વઃ કશાં દૃષ્ટ્વાથાસ્થસ્થાશયં વિજાય કશાતાઢનં
ઘોડે કો ચાવૃકસે તાઢના કરતા થા વહ ઘોડા ત્યોં ત્યોં પીછે હટતા
જાતા થા ઓર શત્રુ કે સન્મુખ જાને મેં અચકચાતાથા । ઇસકે વાદ શત્રુ
સૈનિકોં ને ઇસ રાજા કે સૈનિકોંકો અશરણ એવં અનાથ જેસા માનકર
વહુત જલ્દી પરાજિત કર દિયા । ઓર અપની વિજયકી હુંદું મી વજા દી ।
શત્રુમર્દન નરેશ જ્યોં હી અપને કો ઉસ અઢિયલ ઘોડે કી વજહ સે
પરાજિત સમક્ષકર એવં શ્રીવિહીન હોકર યુદ્ધભૂમિ સે પલાયન કરને કો
તૈયાર હુઆ કિ ઇતને મેં હી “ ઇસકો પકડ લો પકડ લો ” ઇસ પ્રકાર
બોલતે હુએ શત્રુસૈનિકોં ને ઉસકા પીછા ક્રિયા ઓર ઉસકો પકડકર
ઉન્હોંને લૌહનિર્મિત એક પીંજર કે અન્દર વન્દ કર દિયા ।

ઇસ કથા સે વહ સારાંશ નિકલતા હૈ કિ ગલિતાશ્વ-અઢિયલ
ઘોડે કી તરહ અવિનીત શિષ્ય મી મહાન્ અનર્થકારી હોતા હૈ । તથા
જિસ પ્રકાર વિનીત ઘોડા અપને સ્વામી કે અભિપ્રાયાનુસાર ચલતા

વાર તેને ક્ષટકારવાનું શરૂ કર્યું. પરંતુ ગમે તેટલા ચાણુક પડવા છતાં પણ
ઘોડો પાછળજ હાંતો ગયો, શત્રુની સામે જવામાં તે અચકાતો હતો. આ
પરિસ્થિતિને લાભ લઈ શત્રુ સેનાએ શત્રુમર્દન રાજાના સૈન્યમાં હાહાકાર વર્તાવી
લીધો અને શત્રુઓએ છત મેળવી પોતાના વિજયનાં વાળાં વગાડ્યાં. શત્રુમર્દન
રાજાએ, આ પોતાના અડીયલ ઘોડાને કારણે પરાજિત થવું પડ્યું છે તે બાણી
યુદ્ધભૂમિથી પલાયન કરવાની તૈયારી કરી એટલામાં “આને પકડી લ્યો, પકડી
લ્યો” આ પ્રકારે બોલતા શત્રુસૈનિકો તેની પાસે આવી પહોંચ્યા. અને તેને
પકડી લોહના મજબુત સળીયાવાળા પાંજરામાં પુરી દીધો.

આ વાર્તાથી એ સારાંશ નિકળે છે કે ગલિતાશ્વ-અઢિયલ ઘોડાની
માફક અવિનીત શિષ્ય પણ મહાન અનર્થકારી હોય છે. જે પ્રકારે વિનીત

अत्र शत्रुमर्दनदृष्टान्तः, तथाहि—

आसीदङ्गदेशे चम्पापुरी नाम नगरी, तत्र नरवीरः समर्थीरः शूरः शत्रु-
मर्दनो नाम नृपतिर्वभूव । स चैकदा युद्धप्रसङ्गेन तुरङ्गमारुह्य हस्त्यश्वरथपदातिभिः
परिवृतः संग्रामभूमौ गतः । तत्प्रतिपक्षनृपसैनिका दुर्बला अपि ससैन्यं शत्रुमर्दनं
शस्त्रास्त्रवर्षणैः पीडयन्ति । अथ शत्रुमर्दनः सोत्साहं शत्रुसैनिकान् मर्दयितुं स्वगाहनं
त्रैरिसेनायां प्रवेशयन् प्रेरयति स्म । तेन तुरङ्गमेन त्रिलोमतः पश्चात् गमनं समार-
ब्धम् । ततः शत्रुमर्दनः कशया स्वगाहनं ताडयन् पुनः पुनश्चैव धावयितुमिच्छति,

अंगदेश में चंपापुरी नामकी एक नगरी थी । उसका शासक
शत्रुमर्दन नामका एक राजा था । वह मनुष्यों में श्रेष्ठ, युद्धकला में
निपुण एवं शूरों में वीर था । एक दिन की बात है कि वह नरेश युद्ध
के प्रसंग से घोड़े पर सवार होकर हस्ति, अश्व, रथ एवं पदातियों से
परिवृत होकर संग्राम भूमि में गया । उसके प्रतिपक्षभूत राजा की
सेनाने जो कि एक प्रकार से दुर्बल थी तो भी ससैन्य उस शत्रुमर्दन
नरेश को शस्त्र एवं अस्त्रों के प्रहारों से जर्जरित कर दिया । शत्रुमर्दन
ने जब इस प्रकार की अपनी स्थिति देखी तो उसने उत्साहित होकर
शत्रु के सैनिकों को मर्दन करने के लिये अपने घोड़े को शत्रुकी सेनाके
भीतर प्रविष्ट होने के लिये आगे प्रेरित किया । परन्तु वह घोड़ा उस
सेना के भीतर न घुसकर उल्टा पीछे ही हटने लगा । तब शत्रुमर्दन ने
कोड़े से बारंबार अपने उस घोड़े की ताड़ना करना प्रारंभ की जिससे
कि उस घोड़े द्वारा वह शत्रुसेना हट सके । परन्तु ज्यों-ज्यों नरेश उस

अंगदेशमां चंपापुरी नामनी ऐक नगरी छती. त्यां शत्रुमर्दन नामना
राज्य राज्य करता छता. ते मनुष्यमां श्रेष्ठ, युद्धकलामां निपुण्य अने शूरवीर
छता. ऐक द्विवसनी बात छे के राज्य शत्रुमर्दन युद्धना प्रसंगे घोडा उपर
स्वार यध छाथी, घोडा, रथ अने सैनिकाना समुदाय साथे संग्राम भूमि
उपर गया. जेना प्रतिपक्षी राज्यनी सेना ऐक प्रकारथी धल्ली ओछी छती,
छतां पण्य शत्रुमर्दन राज्यना सैन्यने तथा युद्ध शत्रुमर्दनने पण्य शस्त्र अस्त्रना
प्रहारोथी विह्वल बनानी छीधा. शत्रुमर्दनने पोतानी आ प्रकारनी स्थिति
लेध त्यारे ऐक साथी वीर पुरुषने थोले जे रीते शत्रुसैन्यने शिकस्त
आपवा अने पोताना सैन्यने निकलतो क्य्यरधाण्य अपाववा पोताना घोडाने
शत्रुसैन्यनी वञ्चोपव्य लध जवा प्रयत्नशील बन्या, परंतु ते घोडा शत्रु-
सेनानी वञ्चे न जतां पाछो छडवा लाग्यो. त्यारे शत्रुमर्दनने डारडाथी वार-

भो ! मन्त्रिणः ! किमधुना करणीयं, प्रचलवैरिणश्चतुर्गिणी सेना चतुर्षु खलु भागेषु नगरी-मावेष्ट्य तिष्ठति। मन्त्रिण ऊचुः-प्रभो ! अलमनया चिन्तया, वयमल्पसंख्यका अपि भवदीयतेजः समुपलभ्य शात्रववलविजये प्रखरतरशक्तिशालिनो भवामः । भवत्प्रतापादेव सर्वं रिपुबलं प्रणष्टं भविष्यति । देव ! जात्याश्वमारुह्य भवान् सन्नद्धः सन्नग्रतः शत्रुमभिसरतु, वयमपि सन्नद्धाः सन्तो भवन्तमनुगच्छामः । एवं विचार्य स्वकीयसेनापरिवृतः स मणिनाथो योद्धुं निःसृतः । अल्पबलं मणिनाथ-मवलोक्य शत्रुसैनिकाः केचिदसिचर्महस्ताः केचिद्गल्लहस्ताः केचिदनुर्वाणधराः साथ विचार किया, बोला-हे मंत्री महाशयो ! कहो अब क्या करना चाहिये । देखो, प्रचलशत्रुकी चतुरंगिणी सेना नगरी को चारों ओर से घेर कर पड़ी हुई है । सुनकर मंत्रियोंने कहा प्रभो ! चिन्ता मत करो । हम सब लोग आपके प्रचल तेज से उद्दीप्त होकर शत्रुसेना को पराजय करने में प्रखर शक्तिशाली होंगे । आपके प्रताप से ही समस्त रिपुबल प्रणष्ट होगा । स्वामिन् ! सजधज कर आप जात्याश्व पर सवार होकर पहिले से ही शत्रु के सन्मुख जाडये । हम लोग भी सन्नद्ध होकर आपके पीछे-पीछे आते हैं । इस प्रकार विचार कर मणिनाथ नरेश सेना से परिवृत होकर युद्ध करने के लिये निकल पडे । अल्पबलवाले नरेश को देखकर शत्रु के सैनिकोंने उसे घेर लिया । सैनिकों में किन्हीं-किन्हीं के हाथों में तलवारें थीं । किन्हीं-किन्हीं के हाथों में भाले थे । किन्हीं-किन्हीं के हाथों में धनुष एवं बाण थे । किन्हीं-किन्हीं के हाथों में

आ नल्लु मंत्रीओ साथे विचार कर्यो, मंत्रीओने उदेशीने तेल्लु कहुं-डे मन्त्रि-महाशयो ! कडो डवे शुं करुं न्नेधओ. प्रणण शत्रुनी चतुरंगिणी सेना नगरने आरे तरक्ष्थी घेरे घावीने पडेल छे. आ प्रकारनुं रावन्नुं कडेवुं सांलणी मन्त्रियोओ कहुं, प्रलो ! चिंता न करे. ओओ पधा आपना प्रणण तेज्थी उद्दीप्त थध शत्रु सेनाने पराजय करवाभां प्रखर शक्तिशाली थधशुं. आपना प्रतापथी शत्रुनुं सैन्य डारी न्नेथे. स्वामिन् ! आप तैयार थध नत्त्याश्व पर सवार थध पडेलान् शत्रुओनी सन्मुख पडोथि, ओओ पणु तैयार थध आपनी पाछण पाछण आवीओ छीये. आ प्रकारे विचार करी मणिनाथ रावन् सेनाथी परिवृत थध युद्ध करवा भाटे निकणी पडथा. थोडा पणवाणा रावन्ने न्नेध शत्रुसेनाओ तेभने घेरी वीधा. सैनिकेभां केध केधना डायभां तरवार डती, केधना डायभां बाळां डतां. केधनी पासे धनुष्य बाणु डतां. केधना

ત્રિનૈવ તદભિપ્રાયાનુસારં ચેષ્ટતે, તથા મુશિષ્યોઽપિ ગુરોરિદ્વિતાકારં દૃષ્ટ્વા તદાશયં વિજ્ઞાય “ગુરોર્વચનાયાસો માભૂદિતિ”-વચનેનામેસ્તિ એવ તદભિપ્રાયાનુસારં કુર્યાત્ ।

અત્ર મણિનાથદૃષ્ટાન્તઃ-તથાહિ—

આસીદજિતનાથજિનશાસને વક્ત્રદેશે રઙ્ગપુરં નામ નગરમ્ । તત્ર પ્રજા-પાલનતત્પરઃ સ્વજનપદહિતકરઃ પ્રશાન્તમાનસઃ સુજનહંસમાનસઃ સમાશ્રિતનીતિ-સરણિઃ સકલસદ્ગુણસરોજતરર્ણિર્મણિનાથનામકો વૃષ્ટિઃ । સ ચૈકદા દુરાત્મભિઃ પ્રવલરિપુભિઃ પરિતો વેષ્ટિતાં સ્વનગરીમાલોક્ય મન્ત્રિભિઃ સહ વિચારિતવાન-ભો હૈ ડસી પ્રકાર સુશિષ્ય ભી ગુરુ કે ઇંગિત આકાર કો સમજ્ઞ કર ડનકી આજ્ઞા કે અનુસાર ચલતા રહતા હૈ ।

હસ વિષય મૈં મણિનાથરાજા કા દૃષ્ટાન્તહૈ ઓર વહ હસ પ્રકાર હૈ—

દ્વિતીય તીર્થકર શ્રી અજિતનાથ સ્વામી કે સમય મૈં બંગાલ દેશ કે અન્દર રંગપુર નામકા ઁક નગર થા । વહાં કે નરેશ કા નામ મણિનાથ થા । યહ પ્રજાપાલન કરને મૈં સદા તત્પર રહા કરતા થા । હસસે દેશ ખર મૈં આનન્દ મંગલ છા રહા થા । રાજ્યકાર્ય સે હસકા મન કભી ભી કાયર નહીં બનતા થા । સુજનરૂપી હંસોં કો રમને કે લિયે યહ માનસરોવર જૈસા માના જાતા થા । રાજનીતિ કે પાલન કરને મૈં યહ સર્વદા દત્તચિન્ત રહા કરતા થા । સદ્ગુણરૂપી કમલોં કો વિકસિત કરને કે લિયે યહ સૂર્ય જૈસા થા । ઁક દિન કી બાત હૈ કિ હસકી નગરી કો હસકે પ્રવલ શત્રુ ને આકર ઘેર લિયા । રાજાને યહ દેલકર મંત્રિયોંકે

ઘોઢા પોતાના માલીકના કહેવા મુજબ ચાલે છે, ઁ બે રીતે સુશિષ્ય પણ ગુરુના ઇંગિત આકારને સમજી ઁમની આજ્ઞા પ્રમાણે ચાલતો રહે છે.

આ અંગે મણિનાથ રાજાનું દષ્ટાંત છે જે આ પ્રકારનું છે.

ખીજા તીર્થકર શ્રી અજિતનાથ સ્વામીના સમયમાં બંગાળ દેશમાં રંગપુર નામના ઁક નગરમાં મણિનાથ નામના રાજા રાજ્ય કરતા હતા. જે પ્રજા પાલન કરવામાં સદા તત્પર રહેનાર હતા. આથી દેશભરમાં આનંદ મંગળ વરતાઈ રહેલ હતો. રાજ્યકાર્યથી ઁનું મન કદી પણ કાયર બનતું નહીં. મુજનરૂપી હંસોને રમવા માટે તે માનસરોવર જેવા ગણાતા હતા. રાજનીતિનું પાલન કરવામાં તે સર્વદો દત્તચિન્ત રહેતા હતા, સદ્ગુણરૂપી કમળોને વિકસિત કરવા માટે તે સૂર્ય જેવા હતા. ઁક દિવસની બાત છે કે ઁના નગરને ઁના પ્રબળ શત્રુએ, સૈન્યસાથે આવી ઘેરી લીધું. રાજાએ

ટીકા—

‘અણાસવા’ इत्यादि—अनाश्रवाः=अनाश्रकारिणः, उच्छृङ्खलत्वात्, स्थूलवचसः=अविचारितभाषिणः, अभिमानित्वात्, कुशीलाः=कुत्सिताचारवन्तः दुष्टस्वभावा उभयलोकभयरहितत्वादित्यर्थः । शिष्याः मृदुमपि=कोमलहृदयमपि गुरुं, चण्डं=सकोपं प्रकुर्वन्ति । पूर्वार्धेनाविनीतशिष्याचरणं प्रदर्शितम् ।

का आराधन करता हुआ स्व और पर का कल्याण करनेवाला होता है ॥ १२ ॥

फिर भी सूत्रकार अविनीत एवं विनीत के स्वरूप को कहते हैं—
‘अणासवा’ इत्यादि ।

अन्वયાર્થ—(અણાસવા-અનાશ્રવાઃ) અવિનીત હોને સે આજ્ઞા-નુસાર નહીં ચલને વાલે (થૂલવચા-સ્થૂલવચસઃ) અભિમાની હોને સે વિના વિચારે ચોલનેવાલે, (કુસીલા-કુશીલાઃ) હહલોક એવં પરલોક કે ભય સે રહિત હોને કે કારણ દુષ્ટ સ્વભાવવાલે એસે (સીસા-શિષ્યાઃ) શિષ્ય (મિઝંપિ-મૃદુમપિ) કોમલ હૃદયવાલે ગુરુ કો ભી (ચંડં પકરંતિ-ચંડં પ્રકુર્વન્તિ) કોપયુક્ત કરતે હૈં । એવં જો શિષ્ય (ચિત્તાણુયા-ચિત્તા-નુગા) આચાર્ય મહારાજકી આરાધના તપ એવં સંયમ કી હેતુ હોતી હૈં એસા જાનકર આચાર્ય મહારાજ કી મનોવૃત્તિકા અનુસરણ કરનેવાલે હોતે હૈં અર્થાત્ ઉનકે આજ્ઞા કે આરાધક હોતે હૈં, તથા (દક્ષોવવેયા-દાક્ષ્યોપપેતાઃ) ગુરુ મહારાજ કી સુખ શાતા કે અભિલાપી હોને સે

કરકાવી આ પ્રકારે શુશિષ્ય પણ ગુરુ મહારાજની આજ્ઞાનું આરાધન કરતાં પોતાનું અને બીજાનું કલ્યાણ કરવાવાળા હોય છે. ॥૧૨॥

સૂત્રકાર વધુમાં અવિનીત એને વિનિતના સ્વરૂપને કહે છે. અણાસવા૦ ઇત્યાદિ અન્વયાર્થ—અણાસવા-અનાશ્રવાઃ અવિનીત બનવાથી આજ્ઞાનુસાર ન ચાલ-

વાવાળા થૂલવચા-થૂલવચસઃ અભિમાની હોવાથી વગર વિચાર્યું બોલવાવાળા કુસીલા-કુશીલાઃ આલોક અને પરલોકના ભયથી રહિત હોવાના કારણે દુષ્ટ સ્વભાવવાળા એવા શિષ્ય કોમળ હૃદયવાળા ગુરુને પણ કોપ યુક્ત કરે છે. અથવા બે સીસા-શિષ્યાઃ શિષ્ય મિઝંપિ-મૃદુમપિ કોમળ હૃદયવાળા ગુરુને પણ ચંડં પકરંતિ-ચંડં પ્રકુર્વન્તિ કોપ યુક્ત કરે છે. આચાર્ય મહારાજની આરાધના તપ અને સંયમના હેતુથી હોય છે એવું બાકી આચાર્ય મહારાજની મનોવૃત્તિનું અનુસરણ કરવાવાળા હોય છે, અર્થાત્ એમની આજ્ઞાના આરાધક હોય છે તથા દક્ષોવવેયા-દાક્ષ્યોપપેતાઃ ગુરુ મહારાજની સુખશાતાના અભિલાપી

કેચિદ્ યદ્વિધારિણઃ કેચિત્તોમરકરા અનેકાનેકશસ્ત્રાસ્ત્રધારિણઃ પરિતો મણિનાથં
વેદિતવન્તઃ । एवं विविधसंकटेषु समुपस्थितेषु स मणिनाथस्तेन जात्यादववाद्नेन
शत्रुसैनिकरचितविविधव्यूहेषु मृगेषु सिंह इव निःशङ्कः प्रविश्य सर्वानुचरैः सहाग्रतो
धावमानः शत्रुसैनिकेषु विजयं प्राप्तवान् । एवं मुशिष्यः स्वगुरुमाराधयन् स्वपर-
कल्याणाय भवति ॥ १२ ॥

પુનરવિનીતવિનીતયોરાચરણમાહ—

मूलम्—अणासंवा थूलवया कुसीला, मिडंपि चंडं पकंरंति सीसा ।

चित्ताणुया लंहु दक्खोववेया, पसार्यं ते' हुं दुरासंयंपि ॥ १३ ॥

ઢાયા—

अनाश्रवाः स्थूलवचसः कुशीलाः, मृदुमपि चण्डं प्रकुर्वन्ति शिष्याः ।

चित्तानुगा लघु दाक्ष्योपपेताः, प्रसादयन्ति ते ह्य दुराशयमपि ॥ १३ ॥

લકડિયાં થીં । કિન્હીં-કિન્હીં કે હાથોં મેં તોમરજાતિ કે શસ્ત્ર થે । ઇસ પ્રકાર અસ્ત્ર એવં શસ્ત્રોં સે સુસજ્જિત ડસ શત્રુસેના ને ચારોં ઓર સે મુક્કે ઘેર લિયા હૈ, યહ દેસકર નરેશ ને અપને ડસ ઘોડેકો ડસ સેના કે રચિત વિવિધ પ્રકાર કે વ્યૂહ મેં આગે વઢાયા । જિસ પ્રકાર મૃગોં કે ટોલે મેં નિઃશંક હોકર સિંહ ઘુસ જાતા હૈ ડસી પ્રકાર મણિનાથનરેશ બી ડસ ઘોડે પર બેઠે હુણ ડસ શત્રુ કી સેના મેં ઘુસ પડે ઓર અપની એવં અપને અનુચરોં કી ડનસે રક્ષા કરતે હુણ આગે વઢતે ગયે । શત્રુ-સેના બી ડનસે જ્યોં-જ્યોં યે આગે વઢતે જાતે થે પરાસ્ત હોતી જાતી થી । ઇસ પ્રકાર શત્રુસેના કો પરાજિત કર મણિનાથ ને અપની વિજય-પતાકા વહાં ફહરાઈ । ઇસી પ્રકાર મુશિષ્ય બી ગુરુ મહારાજ કી આજ્ઞા

હાથમાં લાકડીઓ હતી, કોઈના હાથમાં તોમર નામનાં શસ્ત્ર હતાં. આ પ્રકારના શસ્ત્ર-અસ્ત્રથી સુસજ્જ એવી શત્રુસેનાએ મને ઘેરી લીધેલ છે, એવું ભેદ મણિનાથ રાજાએ પોતાના ઘોડાને એ સેનાએ રચેલા વ્યૂહની વચ્ચે આગળ વધાર્યો. જે રીતે મૃગોના ટોળામાં નિઃશંક બની સિંહ ધૂમતો હોય, આ રીતે શત્રુસેનાની વચ્ચે ઘુસી જઈ પોતાનું અને પોતાના સૈનિકોનું રક્ષણ કરતાં કરતાં આગળ વધવા માંડ્યું. આથી શત્રુસેનામાં ભંગાણું પડ્યું. આ પ્રકારે શત્રુસેનાને પરાજિત કરી રાજા મણિનાથે પોતાની વિજયપતાકા

ચંડનામકઃ શિષ્યો મિલિતઃ । અથૈકદા ભિક્ષાચર્યા ગચ્છતસ્તસ્યાચાર્યસ્ય માર્ગે-
કસ્માદ્જ્ઞાનતો મૃતમણ્ડકલેવરોપરિ ચરણતલં સંલગ્નમ્ । તદનુગતોઽસૌ ચંડસ્તદાર્ની-
ગુરુમવ્રવીત્-અહહ ! ભવતા ચરણાઘાતેન મણ્ડકો મારિતઃ, તદા ગુરુઃ શિષ્યવચનં શ્રુત્વા
દુઃશીલોઽયમિતિ મત્ત્વા સમતામવલ્લભ્ય મૌનમાસ્થાય સ્વસ્થાનમાગત્ય સ્વાધ્યાય-
ધ્યાનસંલગ્નો જાતઃ । તદાર્નો ચંડેન મનસિ વિચારિતમ્-મામયં પ્રતિદિનં પ્રતિક્ષણં
ગ્રહણાસેવનાશિક્ષાયાં પ્રેરયતિ-મા પ્રમાદ્યતામ્, મા પ્રમાદ્યતામ્ । ઇતિ કાર્યભારં

છિદ્રોંકા અન્વેષણ કરના હી એક ઉસકા કામ થા । ઇસી સે ગુરુમહારાજ
જૈસે પરમોપકારી કે સાથે મીં યહ સદા અંપની દેષ ભરી દૃષ્ટિ રહ્યા
કરતા થા । એક દિન કી વાત હૈં કિ જય ગુરુ મહારાજ સ્વયં ગોચરી કે
લિયે જા રહે થે-તવ માર્ગ મેં ઇનકા પૈર એક મૃતક મણ્ડક કે કલેવર
કે ઉપર અનજાન સે પડ ગયા । સાથ મેં યહ ક્રોધી શિષ્ય મીં થા ।
જો ગુરુમહારાજ કે પીછે-પીછે ચલ રહ્યા થા । ઉસને જ્યોં હી યહ દેખ્યા,
સહસા ચોલ ઉઠા કિ ગુરુ મહારાજ આપ કે પૈર કે આઘાત સે મંડૂક કી
વિરાધના હુઈ હૈં । ઇસ પ્રકાર શિષ્ય કા વચન સુનકર ઓર યહ દુઃશીલ
હૈં એસા જાનકર સમતા કા અવલંબન કરકે ચુપચાપ ગુરુ મહારાજ અપને
સ્થાન પર વાપિસ લૌટ આવે ઓર વહાં આકર સ્વાધ્યાય એવં ધ્યાન મેં
લીન હો ગયે । એસા દેખકર ઉસ સમય ચંડ-(ક્રોધી શિષ્ય) ને મનમેં
વિચાર કિયા-દેખો ગુરુ મહારાજ તો મુજે પ્રતિદિન એવં-પ્રતિક્ષણ
“પ્રમાદ મત કરો, પ્રમાદ મત કરો” ઇસ પ્રકાર સે ગ્રહણ શિક્ષા ઓર

મહારાજના છિદ્રોંકા અન્વેષણ કરવું એ જ એનું કામ હતું. એથી ગુરુ
મહારાજ જેવા પરમોપકારીના સાથે પણ સદા પોતાની દેશભરી દૃષ્ટિ રાખ્યા
કરતા હતા. એક દિવસની વાત છે કે, ન્યારે ગુરુમહારાજ પોતે ગોચરી
માટે જઈ રહ્યા હતા, ત્યારે માર્ગમાં તેમનો પગ એક મરેલા દેડકાના
કલેવર ઉપર અબલુથી પડી ગયો. તે ક્રોધી શિષ્ય પણ સાથે હતો જે ગુરુ
મહારાજની પાછળ પાછળ ચાલતો હતો ન્યારે તેણે આ બેયું તો તુર્તજ
બોલી ઉઠ્યો કે ગુરુ મહારાજ આપના પગના આઘાતથી દેડકાનું મૃત્યુ થયું
છે. આ પ્રકારનાં શિષ્યનાં વચન સાંભળીને અને તે દુઃશીલ છે, તેવું બાણીને
સમતાનું અવલંબન કરીને ગુરુ મહારાજ ચુપચાપ પોતાના સ્થાન ઉપર પાછા
ફરી ગયા. અને ત્યાં આવીને સ્વાધ્યાય તેમજ ધ્યાનમાં લીન બની ગયા. આવું
બોધ ચન્ડે (તે ક્રોધી શિષ્યે) મનમાં વિચાર કર્યો. બુદ્ધિ ગુરુ મહારાજ તો
મને પ્રતિદિન તેમજ પ્રતિક્ષણ “પ્રમાદ ન કરો, પ્રમાદ ન કરો” આ પ્રકાર

અત્ર ચણ્ડશિષ્યદૃષ્ટાન્તઃ, તથાહિ—

એકઃ સરલહૃદયઃ સદયસ્તપસ્વી તેજસ્વી રત્નત્રયસમ્પન્નઃ કોમલાન્તઃ
કરણઃ સુંભદ્રનામકો દુદ્ધાચાર્ય આસીત્ । તસ્પાતિવિદેપી ગુરુચ્છિદ્રાન્વેપી પ્રચણ્ડ-
ચતુરાઈ સે યુક્ત હોતે હૈં વે શિષ્ય (દુરાસયંપિ-દુરાશયં અપિ) કુપિત
ભી અપને ગુરુમહારાજ કો (હુ) નિશ્ચય સે (લહુ-લઘુ) શીઘ્ર હી
(પસાયણ-પ્રસીદયન્તિ) પ્રસન્ન કરતે હૈં ।

અવિનીત શિષ્ય કા આચરણ ચણ્ડ અર્થાત્ ક્રોધી શિષ્ય કે
દૃષ્ટાન્ત સે વર્ણન કિયા જાતા હૈ—

એક વૃદ્ધ આચાર્ય થે । જિનકા નામ સુભદ્ર થા । હૃદય ઇનકા
કષાય નિર્મુક્ત હોને સે વહુત હી સરલ થા । ઓર દયાલુ થે । વે વહુત
હી અધિક તપસ્યા કિયા કરતે થે, અતઃ “તપસ્વી” ઇસ નામ સે
પ્રસિદ્ધ થે । જૈસે વે તપસ્વી થે વૈસે હી વે તેજસ્વી ભી થે । ઇસી સે
રત્નત્રય સે સુશોભિત ઇનકા અન્તઃકરણ વના હુઆ થા । આર્જવ
(સરલતા) ધર્મકી પ્રાપ્તિ હો જાને સે જો મનમેં એક પ્રકાર કી નરમાઈ
આજાતી હૈં ઉસકા નામ કોમલતા હૈં । યહ કોમલતા ઇનકે અન્તઃકરણ
મેં પૂર્ણતયા ભરી હુઈ થી । ઇનકા એક શિષ્ય થા । ઇસકા નામ ચણ્ડથા ।
યહ યથા નામ તથા ગુણવાલા થા । જિતને ગુરુ મહારાજ કોમલ
પરિણામી થે ઉતના હી અધિક યહ કઠોર થા । અપને ગુરુ મહારાજ કે

હોવાથી ચતુરાઈથી યુક્ત હોય છે તે શિષ્ય દુરાસયંપિ-દુરાશયંઅપિ ક્રોધાયમાન
થયેલા પોતાના ગુરુ મહારાજને હુ નિશ્ચયથી લહુ-લઘુ જલ્દી પસાયણ-
પ્રસીદયન્તિ પ્રસન્ન કરે છે.

અવિનીત શિષ્યનું આચરણ ચંડ અર્થાત્ ક્રોધી શિષ્યના દૃષ્ટાન્તથી વર્ણન
કરવામાં આવે છે.

એક વૃદ્ધ આચાર્ય હતા, જેમનું નામ સુભદ્ર હતું. જેમનું હૃદય
કષાય નિર્મુક્ત હોવાથી ખૂબ સરળ હતું અને દયાળુ હતા. તેઓ ખુબ
અધિક તપસ્યા કર્યા કરતા હતા. જેથી તપસ્વી નામથી પ્રસિદ્ધ હતા. જેવા
એ તપસ્વી હતા એવા એ તેજસ્વી પણ હતા. તેજસ્વીપણાને લીધે રત્ન-
ત્રયથી સુશોભિત જેમનું અંતઃકરણ હતું. આર્જવ (સરલતા) ધર્મની પ્રાપ્તિ થઈ
જવાથી જે મનમાં એક પ્રકારની નરમાઈ આવી બન્ય છે, એનું નામ કોમળતા
છે. આ કોમળતા એમના અંતઃકરણમાં પૂર્ણતયા ભરી હતી. એમને એક શિષ્ય
હતો જેનું નામ ચંડ હતું. તે યથા નામ તથા ગુણવાળો હતો. જેટલા ગુરુ
મહારાજ કોમળ પરિણામી હતા એટલા જ એ કઠોર હતા. પોતાના ગુરુ

ચંગતોઽસૌ વૃદ્ધાચાર્યઃ શરીરં ત્યજ્વા સર્પદેહં પ્રાપ્તવાન્ । સ ચ વિપમવિપધરો
નામ્ના ચણ્ડકૌશિકઃ સર્પો જાતઃ । एवं चण्डशिष्यवदविनीतशिष्या मृदुमपि गुरुं
પ્રકોપયન્તિ, દુર્ગતિમપિ પ્રાપયન્તિ ।

અથ વિનીતશિષ્યાચરણં પ્રદર્શયતિ—‘ચિત્તાણુયા’. इत्यादि । चित्तानुगाः=
આચાર્યમનોઢ્યનુસરણશીલાઃ, આચાર્યારાધનસ્ય તપઃસંયમહેતુત્વાત્, દાક્ષ્યોપેતાઃ
—દાક્ષ્યં=ચાતુર્યં તેનોપેતાઃ=યુક્તાઃ, ગુરુશાતામિલાપિત્વાત્, તે શિષ્યાઃ હુ=
નિશ્ચયેન, દુરાશયમપિ=સકોપમપિ ગુરું, લઘુ=શીઘ્રં પ્રસાદયન્તિ=પ્રસન્નં કુર્વન્તિ ।
અથ ચણ્ડરુદ્રાચાર્યશિષ્યોદાહરણમ્—તથાહિ—

કદાચિદુજ્જયિનીનગર્યાં શિષ્યપરિવારસહિતઃ સ્વભાવતઃચણ્ડ ચણ્ડરુદ્રનામક
આચાર્યઃ સમવસ્ટુતઃ । સ ચ સાધુનાં ગ્રહણાસેવનાશિક્ષાયાં ન્યૂનાતિરિક્તાદિદોષ-

જો અન્ધકાર હોને કી વજહ સે દિલ્લાઈ નહીં પડ રહ્યા થા । उससे
उनका माथा टकराया और फूट गया विशिष्ट आघात होने से उनके
चित्त में आर्त्तध्यान उत्पन्न हुआ । इससे वे वृद्ध आचार्य आर्त्तध्यान में
મરકર વિપમ-વિપધર ચણ્ડકૌશિક સર્પકી પર્યાય મેં ઉત્પન્ન હુઅ । इस
प्रकार चंडशिष्यकी तरह अविनीत शिष्य कोमल हृदयवाले भी अपने
गुरु महाराज को क्रुपित करते हैं और दुर्गति तक पहुँचाते हैं—

વિનીત શિષ્યકા આચરણ કેસા હોતા હૈ, યહ યાત ચણ્ડરુદ્ર-
ચાર્યકે શિષ્ય કે ઉદાહરણ સે સ્પષ્ટ કી જાતી હૈ—

કિસી સમય ઉજ્જયિની નગરી મેં શિષ્ય પરિવાર સહિત ચણ્ડરુદ્ર
નામક એક આચાર્ય જો સ્વભાવતઃ ક્રોધી થે આયે । वे एकान्त स्थान में
ચૈઠકર સ્વાધ્યાય એવં ધ્યાન ઇસ અભિપ્રાય સે કિયા કરતે થે કિ કહીં

तेमनुं माथुं टकराथुं अने कुटी गथुं. विशिष्ट आघात होवाधी तेमना चित्तमां
आर्त्तध्यान उत्पन्न थयुं, जेनाधी ते वृद्ध आचार्य आर्त्तध्यानमां भरीने विपम
વિપધર ચંડકૌશિક સર્પની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયા. આ પ્રકારે ચંડ શિષ્યની
માફક અવિનીત શિષ્ય કોમળ હૃદયવાળા યોતાના ગુરુને પણ ક્રોધીત બનાવે
છે, અને દુર્ગતિમાં પહોંચાડે છે.

વિનિત શિષ્યનું આચરણ કેવું હોય છે તેવાત ચંડરુદ્રાચાર્યના શિષ્યના
ઉદાહરણથી સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે.

કોઇ એક સમય ઉજ્જયિની નગરીમાં શિષ્ય પરિવાર સહિત ચંડરુદ્ર
નામના એક આચાર્ય જે સ્થલાવે ક્રોધી હતા તે પધાર્યા તે એકાન્ત સ્થાનમાં
બેસીને સ્વાધ્યાય તેમજ ધ્યાન એવા અભિપ્રાયથી કરતા હતા કે ક્યારેક

દત્ત્વાઽનેન વિશ્રામાય મહાં સમયો ન પ્રદીયતે, અથ તુ સ્વયમેવ પ્રમાદવશં ગતઃ । પ્રતિક્રમણસમયે સાયંકાલે સર્વવૈરનિર્યાતનં કરિષ્યામિ । તદનુ સાયંકાલે દૈવસિક-પ્રતિક્રમણે કૃતે સતિ સ ચણ્ડો વન્દન સમયે શ્રાવકસંઘસમક્ષે વ્રવીતિ-ગુરો ! મળ્દૂકવિરાધનાયાઃ પ્રાયશ્ચિત્તં કથં ન શૂઠતે, एवं पुनः पुनः शिष्येणोक्तः सन् गुरुः क्रोधवशेन तं शिष्यं ताडयितुं सवेगमुत्थितो यावत् तदभिमुखं गच्छति ताव-दुपाश्रये तमसि पापणमयस्तम्भे संघट्टितं तस्य शिरः स्फुटितम् । तदाऽऽर्तध्यान

આસેવન શિક્ષા દેતે રહતે હૈં । તથા મેરે ઊપર ઇતના અધિક કાર્યભાર રાખ દિયા હૈં કિ જિસસે મુઝે વિશ્રામ કરને કા બી સમય નહીં મિલતા હૈં । ઓર આપ સ્વયં પ્રમાદ કા સેવન કરતે હૈં । આજ સાયંકાલ કે સમય પ્રતિક્રમણ કરને કે અવસર પર મેં ઉનસે સમસ્ત વૈર ભાવ કા વદલા લૂંગા । ઇસ પ્રકાર વિચાર કર ઉસને સાયંકાલ કે સમય પ્રતિક્રમણ કર ચુકને પર વન્દના કે સમય શ્રાવકસંઘ કે સમક્ષ ગુરુમહારાજ સે કહા કિ હૈ ગુરો ! આજ આપને મંદૂક કી વિરાધના કા પ્રાયશ્ચિત્ત ક્યોં નહીં લિયા । શિષ્ય કી ઇસ વાત કો ગુરુ મહારાજ ને લક્ષ્ય મેં નહીં દિયા । અતઃ શિષ્ય કો વુરા માલૂમ દિયા ઓર ઈર્ષ્યાવશ ઉસને ફિર સે વહી વાત વારંવાર કહી । ગુરુમહારાજ કો સુનકર ક્રોધ કા આવેશ હો આયા । ઇસસે વે ઉસ શિષ્ય કો મારને કે લિયે ટપકે હુએ ઓર ઉસકી તરફ આગે વઢે । વીચ મેં ઉસ ઉપાશ્રય મેં એક પાપાણ કા સ્તમ્ભ થા

રથી ઝહણુ શિક્ષા અને આસેવન શિક્ષા આપે છે અને મારા ઉપર એટલો અધિક કાર્યભાર રાખ્યો છે કે જેથી મને વિશ્રામ કરવાનો સમય મળતો નથી, અને પોતે પ્રમાદનું સેવન કરે છે. આજ સાંજના વખતે પ્રતિક્રમણ કરવાના અવસર ઉપર હું તેમનાથી સમસ્ત વેરલાવનો બઢલો લઈશ. આ પ્રકારે વિચાર કરી તેણે સાયંકાળનું પ્રતિક્રમણ કરી લીધા પછી વંદનાના સમયે શ્રાવક સંઘની સમક્ષ શુરુ મહારાજને કહ્યું કે હે શુરુ ! આજ આપે દેડકાની વિરાધનાનું પ્રાયશ્ચિત્ત કેમ ન લીધું ? શિષ્યની આ વાતને શુરુ મહારાજે લક્ષમાં લીધી નહીં આથી શિષ્યને ખરાબ લાગ્યું અને ઈર્ષ્યાવશ ફરીથી તેને તે વાત વારંવાર કહી. શુરુ મહારાજે સાંભળીને તેમના મનમાં ક્રોધનો આવેશ આવી ગયો જેથી તે પોતાના શિષ્યને મારવા ઉભા થયા અને તેની તરફ આગળ વધ્યા, વચમાં તે ઉપાશ્રયમાં એક પથ્થરનો સ્તંભ હતો જે અંધકાર હોવાના કારણે દેખવામાં આવતો ન હતો તે સ્તંભ સાથે

निर्विण्णोऽयं गृहवासेन, भार्ययाऽप्ययं परित्यक्तः अतः प्रसीदत, संसारदुत्तारयत, साधुभिरुक्तम्-अत्रास्माकं गुरुस्ति स प्रव्राजयिष्यति, वयमनधिकारिणोदीक्षा-दानस्य, तस्मात् तत्समीपं गच्छत, तदनु मित्रवर्गस्तमिभ्यपुत्रं चण्डरुद्राचार्यस्य समीपं नीत्वा तं प्रणम्य सपरिहासमुक्तवान्-भदन्त ! दीयतामस्मै दीक्षा । ततस्तत्परिहासवचनं श्रुत्वा संजातकोपेन चण्डरुद्राचार्येण कथितम्-भस्मानयेति, तदानी-मेकेन मित्रेण हास्यादेव भस्मानीतं, ततश्चण्डरुद्राचार्यो भस्म गृहीत्वा बलादेव तत्केशलुञ्चनं चकार, तदा तद्वयस्याः सर्वे प्रव्रज्याभयात्पलायिता ।

उन्होंने हँसी में कहा कि महाराज ! इस नव परिणीत श्रेष्ठ पुत्र को आप दीक्षा दीजिये । क्यों कि यह गृहस्थावाससे उदासीन हो रहा है । इस की धर्मपत्नी ने भी इसका परित्याग कर दिया है । अतः प्रसन्न होकर इसे संसार से पार उतारिये । मुनिराजों ने सुनकर उनसे कहा कि यहां हमारे गुरुमहाराज विराजमान हैं-वे ही दीक्षा देंगे-हम लोग उनके समक्ष दीक्षा देने के अधिकारी नहीं हैं । इसलिये आप लोग इन्हें उनके ही पास ले जाइये । साधुओंके इस प्रकार के कहे गये वचनों को सुनकर वे लोग अपने उस मित्र को चंडरुद्र आचार्य के समीप ले गये । आचार्य महाराज को वन्दना कर वे उनसे भी परिहासपूर्वक यही कहने लगे कि हे भदन्त ! इसको आप दीक्षा दीजिये । उनकी हँसी के वचन सुनकर कुपित होते हुए चंडरुद्र आचार्य बोले-ठीक है-भस्म लाओ मैं इसे दीक्षा देता हूँ । इतना सुनते ही किसी एक मित्र ने हंसी-हंसी में शीघ्र ही भस्म लाकर वहां उपस्थित कर दी । चंडरुद्राचार्य ने उस भस्म

तेमळे कळुं डे भडाराज ! आ नवपरिणीत श्रेष्ठ पुत्रने आप दीक्षा आपो केमडे अे गृहस्थावासधी उदासीन जनी रहेल छे. आनी धर्मपत्तिने पळु तेनो त्याग कर्चो छे. आथी प्रसन्न थडने आने संसार सागरधी पार उतारे. मुनिराजने अे सांलणीने तेमने कळुं डे अडिं अमारा गुरु भडाराज गिराजे छे ते दीक्षा आपशे. अमे तेमनी सामे दीक्षा आपवाना अधिकाारी नथी. माटे आप लोग तेने गुरु भडाराज पासो लई जव. साधुज्योना आ प्रकारे कडेवाभां आवेल वयनोथी तेजो तेमना मित्रने अंउड्र आचार्य पासो लई गया. आचार्य भडाराजने वंदना करी तेजो तेमने पळु परिहासपूर्वक अेवुं ज कडेवा लाज्या डे डे लदन्त ! आने आप दीक्षा आपो. तेमनां हांसीनां वयन सांलणीने कधीत थतां अंउड्र आचार्य जोड्या ठीक छे-लरुम लावो, हुं तेने दीक्षा आपुं छुं आ सांलणतां केध अेक मित्रे डसतां डसतां तुरतज लरुम लावीने डाजर करी. अंउड्राचार्ये अे लरुमने डायभां

दर्शनात् कोपोत्पत्तिर्माभूदिति मनसि कृत्वा रहसि स्वाध्यायध्यानं कुर्वन्नन्यसाधुभ्यः
 पृथगवतिष्ठते । अत्रान्तरे उज्जयिनीयास्तव्य इभ्यपुत्रः कोऽपि नवपरिणीतः
 सुहृत्परिवृतः कृतकुङ्कुमरागः प्रवस्नेषध्वः साधूनां वन्दनार्थं तत्रागतः, साधूनां
 सविधि वन्दनं कृत्वा तत्र स्थितः । अथ तन्मित्रैः कैश्चित् सोपहासमुक्तम्-भो साधवः !
 धर्मं व्रूत । ते साधवस्तेषामुपहासवचनं विदित्वा किमपि नोक्तवन्तः, किंतु स्वा-
 ध्यायं कुर्वन्त आसन् । पुनस्तैः सपरिहासमुक्तम्-हे भगवन्तः ! दीयतामस्मै दीक्षा,
 साधुओं की ग्रहण शिक्षा एवं आसेवन शिक्षा में न्यूनातिरिक्त दोषों के
 देखने से उनके प्रति मेरे चित्त में क्रोध की उत्पत्ति न हो जाय, । अतः
 वे साधुओं से सदा अलहदा ही एकान्त में रहा करते थे । और वहाँ
 स्वाध्याय एवं ध्यान करते-करते अपना समय व्यतीत करते । एक
 समय की बात है कि उसी उज्जयिनी नगरी का रहने वाला कोई एक
 सेठ का पुत्र कि जिसका उसी समय विवाह हुआ था अपनी मित्रमंडली
 सहित सजधज के साधुओंको वन्दना करनेके लिये आया ! उसके
 पैरों का माहुर अभी ठीला भी नहीं पड़ा था और हाथोंकी मेंहदी भी
 अभी पूरी तरह से सुखी नहीं थी । वह सविधिवन्दना कर एक ओर
 बैठ गया । इतने में उसके मित्रों ने मुनिराज से उपहास करके कहा कि
 हे महाराज ! आप लोग धर्मका उपदेश दीजिये । साधुओंने उनके हास्य
 मिश्रित वचन सुनकर उन्हें धर्मका उपदेश नहीं दिया और न कुछ कहा
 भी किन्तु अपने स्वाध्याय करने में ही तल्लीन रहे । पश्चात् फिर भी

साधुओंकी अलङ्घ्य शिक्षा अने आसेवन शिक्षाओंमें न्यूनातिरिक्त दोषोंने जेवाधी
 तेमना प्रति भारा चित्तमां कोधनी उत्पत्ति न थई जाय, आधी तेजो साधु-
 ओधी सदा अलायहा ओकांतमां न रह्या करता उता, अने त्यां स्वाध्याय
 अने ध्यान करता करतां पोतानो समय व्यतित करता, ओक समयनी, पात
 छे डे, ओ उज्जयनी नगरीमां रहनेार ओक सेठनो पुत्र डे जेनो तुरतमां
 विवाह थयो उतो, ते पोताना मित्र मंडल साथे जनी ठनीने, साधुओंने
 वंदना करवा आओ, ओना पगनुं माहुर (महावर) पगना तणीयानो दाढ
 रंग) ढल्लु ढील्लु थयेव न, उतुं तेम हाथमांनी मेंहदी पल्लु सुकाई न उती,
 ते सविधि वंदना करी ओक जाल्लु गेठो, ओ वणते तेना मित्रोओ मुनिराजने
 उपहास करी कहुं डे महाराज ! आप धर्मनो उपदेश, आपो, साधुओंओ
 तेमनुं हास्य मिश्रीत वचन सांलणीने उपदेश न आथे, अने, न, कांछ
 पल्लु कहुं, पोतानो स्वाध्याय करवामांन तल्लीन रह्या, इरीधी, डसतां, डसतां

वान्धवा उपद्रवं करिष्यन्ति । गुरुणोक्तम्—अहो शिष्य ! संप्रति रात्रिर्जाता, अहं रात्रौ न पश्यामि । ततस्तेन शिष्येण स्वकीयस्कन्धे गुरुरारोपितः, मार्गे उच्च-नीचप्रदेशे वहनेन गुरुचेतसि खेदः समुत्पन्नः, तेन चण्डरुद्राचार्येण शिष्यशिरसि रजोहरणदण्डप्रहारो दत्तः, अस्मि शिष्यो मनस्येवं विचारयति—अहो! ममाराधनीयो गुरुं मयेदृशीमवस्थां प्रापितः इति । एवं सम्यग्भावनायाः तस्य शिष्यस्य केवल-

बन्धुजन यहाँ आकर उपद्रव करेंगे। शिष्यकी यह बात सुनकर आचार्य महाराज ने कहा—ठीक है परन्तु इस समय तो अब रात्रि हो चुकी है तथा मुझे रात्रि में दिखता भी नहीं है—अतः जाना ठीक नहीं है। आचार्य महाराज की बात सुनकर शिष्य ने कहा कि आप इसकी चिन्ता नहीं करें। मैं आप को अपने कंधे पर बैठा लूंगा। ऐसा कह कर उस शिष्य ने गुरु महाराज को अपने कंधे पर बैठा लिये और उस स्थानसे दूसरे स्थान पर पहुँचने के लिये प्रयाण प्रारंभ कर दिया। मार्ग सम विषम था। अतः गुरु महाराज को अचानक हिलने डुलने की वजह से कष्ट हुआ और इससे उनके चित्तमें अशांति उत्पन्न हो गई। उन्होंने बैठे-बैठे ही अपना रजोहरण दंड उसके मस्तक पर देभारा। चोट लगते ही शिष्य ने चित्त में चिन्तन किया कि हे मन जिनकी मुझे सेवा करनी चाहिये उन गुरु महाराज को इस समय मेरे द्वारा कितना कष्ट पहुँच रहा है। गुरुमहाराज की इस कष्टावस्था का कारण मैं ही बन रहा हूँ। इस प्रकार की भक्तिरूप हार्दिकभावना के प्रभाव से क्षपक श्रेणी

जन अङ्घ्रियां आवीने उपद्रव करे। शिष्यनी आ वात सांलणीने आचार्य महाराज कहुं, ठीक छे. परंतु आ समय रात्रीनुं आगमन थछ युक्तुं छे तेम मने रात्रीमां सुनतुं पछ नथी, आथी नवुं ठीक नथी. आचार्य महाराजनी वात सांलणी शिष्ये कहुं, आप जेनी चिंता न करे हुं आपने भारा भला उपर जेसाडी लछि जेवुं कही ते शिष्ये गुरु महाराजने पोताना भला उपर जेसाडी लीछा जने जे स्थानथी जीन स्थान तरुं प्रयाण करवाने प्रारंभ कर्यो. मार्ग सम विषम छेतो. आथी गुरु महाराजने अचानक डलवा डोलवाने कारणे कष्ट थयुं जने तेथी जेमना चित्तमां अशांती उत्पन्न थछ तेजो जे जेहा जे पोताने रनेछ छे हुं जेना भाथा उपर भार्यो, चोट लागतान शिष्ये मनमां विचार्युं के छे मन! जेनी भारे सेवा करवी जेछे जे गुरु महाराजने आ समय भारा तरुंथी केतुं कष्ट थछ रह्युं छे. गुरु महाराजनी कष्ट अवस्थानुं कारणे हुं न जनी रहेछ छुं. आ प्रकारनी लक्ष्मि रूप हार्दिक भावनाना प्रभावथी क्षपक श्रेणी प्राप्त करी घातक जेमोना

તતઃ સ ઇન્ધ્રપુત્રો ભાગ્યવશેન લઘુકર્મણા ચ ભાવશ્રમણો જાતઃ, તદાનીં તસ્યેન્ધ્રપુત્રસ્ય લોચે કૃતે સતિ “મમ પ્રવ્રજ્યૈવાસ્તુ” ઇતિ પરિણામઃ સમ્પન્નઃ, તતો રજોહરણસદોરકમુલ્લવલ્લિકાદિભિઃ સાધુવેપં ધૃત્વા દ્રવ્યભાવતઃ સંયતો જાતઃ । તતોઽસૌ ગૃહીતપ્રવ્રજ્યઃ શિષ્યો ગુરુમવ્રતીત્-ભદન્ત ! અન્યત્ર વ્રજામઃ, અત્ર મમ

કો હાથ મેં લેકર જવર્દસ્તી ઉસકે કેશોં કા લુંચન કર દિયા । મિત્રોં ને યહ દેખકર સમજા કિ કહીં હમારી બી યહી હાલત ન હો જાય-હમેં બી જવર્દસ્તી સે દીક્ષિત ન વના દિયા જાય-ઇસ ડરસે વે સબ કે સબ વહાં સે શીઘ્ર ભાગ ગયે ।

ઉસ સમય વહ શ્રેષ્ઠિપુત્ર ભાગ્ય કે ઉદય સે એવં લઘુકર્મ કે પ્રભાવ સે ભાવશ્રમણ વન ગયા થા । ક્યોં કિ જિસ સમય આચાર્ય-મહારાજને ઉસકે કેશોંકા લુંચન કિયા થા ઉસ સમય ઉસકે ચિત્ત મેં યહી પરિણામ હો ગયા થા કિ મેરી દીક્ષા હી હો જાય તો સર્વ સુન્દર હૈ । ” ઇસ પરિણામ વિશિષ્ટ-ભાવ શ્રમણ અવસ્થા સંપન્ન-ઉસ ઇન્ધ્રપુત્ર કે લિયે આચાર્ય મહારાજ ને કેશલુંચન કરને કે વાદ હી રજોહરણ એવં સદોરક મુલ્લવલ્લિકા પ્રદાન કરદી-ઇસસે વહ યથાર્થ મેં દ્રવ્યરૂપ સે બી સાધુ વેપસે સુશોભિત હોને લગા । ઇસ પ્રકાર દ્રવ્ય એવં ભાવ સે સંયત અવસ્થા કો ધારણ કિયે હુઅ-ઉસ નવીન શિષ્ય ને ગુરુમહારાજ સે કહા કિ હે ભદન્ત ! ચલો અવ યહાં સે દૂસરી જગહ ચલેં । નહીં તો મેરે

લઈને જખરજસ્તીથી તેના વાળને લોચ કર્યો. મિત્રો આલેઈને એવું સમજ્યા કે અમારી પણ આવી હાલત ન થઈ જાય અમને પણ જખરજસ્તીથી દીક્ષિત ન બનાવાય આવા ડરથી તેઓ સઘળા ત્યાંથી તુરંતજ ભાગી ગયા.

તે સમય શ્રેષ્ઠી પુત્ર ભાગ્યના ઉદયથી તેમજ લઘુ કર્મના પ્રભાવથી ભાવશ્રમણ બની ગયો હતો કેમકે જે સમય આચાર્ય મહારાજે તેના વાળને લોચ કર્યો ત્યારે તે સમયે તેના ચિત્તમાં એજ પરિણામ થઈ ગયું હતું કે મને દીક્ષા અપાય તો તે સર્વ સુન્દર છે. આ પરિણામ વિશિષ્ટ-ભાવશ્રમણ અવસ્થા સંપન્ન-તે ઇન્ધ્ર પુત્ર માટે આચાર્ય મહારાજે કેશને લોચ કર્યા પછી રજોહરણ અને દોરા સાથેની મુખવસ્ત્રિકા આપી. આથી યથાર્થમાં દ્રવ્ય રૂપથી પણ સાધુ વેશથી સુશોભિત બની રહ્યો. આ પ્રકારે દ્રવ્ય અને ભાવથી સંયત અવસ્થાને ધારણ કરીને એ નવીન શિષ્યે ગુરુમહારાજને કહ્યું કે હે ભદન્ત ! ચાલો હવે અહિંથી બીજા સ્થળે જઈએ. નહીં તો મારા બંધુ-

વાન્યવા ઉપદ્રવં કરિષ્યન્તિ । ગુરુગોક્તમ્—અહો શિષ્ય ! સંપ્રતિ રાત્રિર્જાતા, અહં રાત્રીં ન પશ્યામિ । તતસ્તેન શિષ્યેણ સ્વકીયસ્કન્ધે ગુરુરારોપિતઃ, માર્ગે ઉચ્ચ-નીચપ્રદેશે વહનેન ગુરુચેતસિ સ્વેદઃ સમુત્પન્નઃ, તેન ચણ્ડરુદ્રાચાર્યેણ શિષ્યશિરસિ રજોહરણદણ્ડપ્રહારો દત્તઃ, અસી શિષ્યો મનસ્યેવં વિચારયતિ—અહો! મમારાધનીયો ગુરુ મયેદશીમવસ્થાં પ્રાપિતઃ ઇતિ । एवं सम्यग्भावनाया तस्य शिष्यस्य केवल-

बन्धुजन यहां आकर उपद्रव करेंगे। शिष्यकी यह बात सुनकर आचार्य महाराज ने कहा—ठीक है परन्तु इस समय तो अब रात्रि हो चुकी है तथा मुझे रात्रि में दिखता भी नहीं है—अतः जाना ठीक नहीं है। आचार्य महाराज की बात सुनकर शिष्य ने कहा कि आप इसकी चिन्ता नहीं करें। मैं आप को अपने कंधे पर बैठा लूंगा। ऐसा कह कर उस शिष्य ने गुरु महाराज को अपने कंधे पर बैठा लिये और उस स्थानसे दूसरे स्थान पर पहुँचने के लिये प्रयाण प्रारंभ कर दिया। मार्ग सम विषम था। अतः गुरु महाराज को अचानक हिलने डुलने की वजह से कष्ट हुआ और इससे उनके चित्तमें अशांति उत्पन्न हो गई। उन्होंने बैठे-बैठे ही अपना रजोहरण दंड उसके मस्तक पर देभारा। चोट लगते ही शिष्य ने चित्त में चिन्तवन किया कि हे मन जिनकी मुझे सेवा करनी चाहिये उन गुरु महाराज को इस समय मेरे द्वारा कितना कष्ट पहुँच रहा है। गुरुमहाराज की इस कष्टावस्था का कारण मैं ही बन रहा हूँ। इस प्रकार की भक्तिरूप हार्दिकभावना के प्रभाव से क्षपक श्रेणी

જન અહિંયાં આવીને ઉપદ્રવ કરશે. શિષ્યની આ વાત સાંભળીને આચાર્ય મહારાજે કહ્યું, ઠીક છે. પરંતુ આ સમયે રાત્રીનું આગમન થઈ ચુક્યું છે તેમ મને રાત્રીમાં સુઈતું પણ નથી, આથી જવું ઠીક નથી. આચાર્ય મહારાજની વાત સાંભળી શિષ્યે કહ્યું, આપ એની ચિંતા ન કરો હું આપને મારા ખભા ઉપર બેસાડી લઈશ એવું કહી તે શિષ્યે ગુરુ મહારાજને પોતાના ખભા ઉપર બેસાડી લીધા અને એ સ્થાનથી બીજા સ્થાન તરફ પ્રયાણ કરવાનો પ્રારંભ કર્યો. માર્ગ સમ વિષમ હતો. આથી ગુરુ મહારાજને અચાનક હલવા ડાલવાને કારણે કષ્ટ થયું અને તેથી એમના ચિત્તમાં અશાંતી ઉત્પન્ન થઈ તેઓએ બેઠા બેઠા જ પોતાનો રજોહરણ દંડ એના માથા ઉપર માર્યો, ચોટ લાગતાં જ શિષ્યે મનમાં વિચાર્યું કે હે મન! જેની મારે સેવા કરવી જોઈએ એ ગુરુ મહારાજને આ સમય મારા તરફથી કેટલું કષ્ટ થઈ રહ્યું છે. ગુરુ મહારાજની કષ્ટ અવસ્થાનું કારણ હું જ બની રહેલ છું. આ પ્રકારની ભક્તિરૂપ હાર્દિક ભાવનાના પ્રભાવથી ક્ષપક શ્રેણી પ્રાપ્ત કરી ઘાતક કર્મોના

તતઃ સ ઇન્દ્રિયપુત્રો ભાગ્યવશેન લઘુકર્મણા ચ ભાવશ્રમણો જાતઃ, તદાનીં તસ્યેન્દ્રિયપુત્રસ્ય લોચે કૃતે સતિ “મમ પ્રવ્રજ્યૈવાસ્તુ” ઇતિ પરિણામઃ સમ્પન્નઃ, તતો રજોહરણસદોરકમુલવલ્લિકાદિભિઃ સાધુવેપં ધૃત્વા દ્રવ્યભાવતઃ સંયતો જાતઃ । તતોઽસૌ ગૃહીતપ્રવ્રજ્યઃ શિષ્યો ગુરુમવ્રતીત્-ભદન્ત ! અન્યત્ર વ્રજામઃ, અત્ર મમ

કો હાથ મેં લેકર જવર્દસ્તી ઉસકે કેશોં કા લુંચન કર દિયા । મિત્રોં ને યહ દેખકર સમજા કિ કહીં હમારી ખી યહી હાલત ન હો જાય-હમેં ખી જવર્દસ્તી સે દીક્ષિત ન વના દિયા જાય-ઇસ ડરસે વે સવ કે સબ વહાં સે શીઘ્ર ભાગ ગયે ।

ઉસ સમય વહ શ્રેષ્ઠિપુત્ર ભાગ્ય કે ઉદય સે એવં લઘુકર્મ કે પ્રભાવ સે ભાવશ્રમણ વન ગયા થા । ક્યોં કિ જિસ સમય આચાર્ય-મહારાજને ઉસકે કેશોંકા લુંચન કિયા થા ઉસ સમય ઉસકે ચિત્ત મેં યહી પરિણામ હો ગયા થા કિ મેરી દીક્ષા હી હો જાય તો સર્વ સુન્દર હૈ । ” ઇસ પરિણામ વિશિષ્ટ-ભાવ શ્રમણ અવસ્થા સંપન્ન-ઉસ ઇન્દ્રિયપુત્ર કે લિયે આચાર્ય મહારાજ ને કેશલુંચન કરને કે વાદ હી રજોહરણ એવં સદોરક મુલવલ્લિકા પ્રદાન કરદી-ઇસસે વહ યથાર્થ મેં દ્રવ્યરૂપ સે ખી સાધુ વેપસે સુશોભિત હોને લગા । ઇસ પ્રકાર દ્રવ્ય એવં ભાવ સે સંયત અવસ્થા કો ધારણ કિયે હુએ-ઉસ નવીન શિષ્યે ને ગુરુમહારાજ સે કહા કિ હૈ ભદન્ત ! ચલો અવ યહાં સે દૂસરી જગહ ચલેં । નહીં તો મેરે

લઈને જબરજસ્તીથી તેના વાળને લોચ કર્યો. મિત્રો આ જોઈને એવું સમજ્યા કે અમારી પણ આવી હાલત ન થઈ જાય અમને પણ જબરજસ્તીથી દીક્ષિત ન બનાવાય આવા ડરથી તેઓ સઘળા ત્યાંથી તુરંતજ લાગી ગયા.

તે સમય શ્રેષ્ઠી પુત્ર લાગ્યના ઉદયથી તેમજ લઘુ કર્મના પ્રભાવથી ભાવશ્રમણ બની ગયો હતો કેમકે જે સમય આચાર્ય મહારાજે તેના વાળને લોચ કર્યો ત્યારે તે સમયે તેના ચિત્તમાં એજ પરિણામ થઈ ગયું હતું કે મને દીક્ષા અપાય તો તે સર્વ સુન્દર છે. આ પરિણામ વિશિષ્ટ-ભાવશ્રમણ અવસ્થા સંપન્ન-તે ઇન્દ્રિય પુત્ર માટે આચાર્ય મહારાજે કેશને લોચ કર્યો પછી રજોહરણ અને દોરા સાથેની મુખવલ્લિકા આપી. આથી યથાર્થમાં દ્રવ્ય રૂપથી પણ સાધુ વેશથી સુશોભિત બની રહ્યો. આ પ્રકારે દ્રવ્ય અને ભાવથી સંયત અવસ્થાને ધારણ કરીને એ નવીન શિષ્યે ગુરુમહારાજને કહ્યું કે હે ભદન્ત ! ચાલો હવે અહિંથી બીજા સ્થળે જઈએ. નહીં તો મારા બંધુ-

પુનસ્તત્ક્રામણં કુર્વન્ સોઽપિ કેવલજ્ઞાનં પ્રાપ્તવાન્ । એવં વિનીતશિષ્યૈર્ભવિતવ્યમ્ ॥૧૩॥

કયં ગુરુચિત્તાનુગામી ભવેદિત્યાહ—

મૂલમ્—નાપુદ્ધો' વાગરે કિંચિ, પુદ્ધો વાં નાલિયં વણં ।

કોહં અસત્ત્વં કુવિજ્ઞા, ધારિજ્ઞો પિયંમાપ્પિયં^૩ ॥૧૪॥

છાયા—

નાપુદ્ધો કુર્યાત્ કિંચિત્ , પુદ્ધોવા નાલીકંવદેત્ ।

ક્રોધમ્ અસત્યં કુર્યાત્ , ધારયેત્ પ્રિયમપ્રિયમ્ ॥ ૧૪ ॥

ટીકા—'નાપુદ્ધો'. ઇત્યાદિ—

અપુદ્ધઃ=ગુરુનાઽનુક્તઃ કિંચિત્ ન વ્યાકુર્યાત્=ન વદેત્ પુદ્ધો વા=ગુરુના કાર્સ્મિક-
ધિદ્ વિષયે પુદ્ધઃ સન્ અલીકમ્=અનૃતં ન વદેત્, ક્રોધં=કેનાપિ કારણેન સમુત્પન્નં
ક્રોધમ્ અસત્યં=નિષ્ફલં કુર્યાત્ ।

કર ધાર ધાર અતિશય પશ્ચાત્તાપ કરને લગે । પશ્ચાત્ ઉનસે અપને દોષ
ખમાને લગે । હસ પ્રકાર પશ્ચાત્તાપ કરતે કરતે વિશુદ્ધ ભાવના સે ગુરુ
ને ભી કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત ક્રિયા । હસદૃષ્ટાન્ત કા સાર યહી હૈ કિ વિનીત
શિષ્ય અપની વિશુદ્ધિ કે સાધ-સાધ ગુરુ મહારાજ કી ભી વિશુદ્ધિ કા
કારણ બનતા હૈ । અતઃ શિષ્ય કો હસી તરહ વિનીત હોના ચાહિયે ॥૧૩॥

ગુરુ-ચિત્તાનુગામીશિષ્ય કે ચિન્હોં કો હસ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર
બતાવતે હૈ—' નાપુદ્ધો. ' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(અપુદ્ધો કિંચિ ન વાગરે-અપુદ્ધઃ કિંચિત્ ન વ્યા-
કુર્યાત્) ગુરુમહારાજ જય તક કોઈ વાત નહીં પૂછે તવ તક શિષ્ય કા
કર્તવ્ય હૈ કિ વહ કિસી ભી વિષય મેં કુછ ન કહે । (પુદ્ધો વા

અતિશય પશ્ચાત્તાપ કરવા લાગ્યા. પછી તેનાથી પોતાનો દોષ ખમાવવા લાગ્યા.
આ પ્રકારે પશ્ચાત્તાપ કરતાં કરતાં વિશુદ્ધ ભાવનાથી ગુરુને પણ કેવલી જ્ઞાન
પ્રાપ્ત થયું.

આ દૃષ્ટાંતનો સાર એ છે કે વિનિત શિષ્ય પોતાની વિશુદ્ધિની સાથે
સાથે ગુરુ મહારાજની પણ વિશુદ્ધિનું કારણ બને છે. એટલે શિષ્યોએ આ
રીતે વિનીત થવું જોઈએ. ॥૧૩॥

ગુરુ-ચિત્તાનુગામી શિષ્યના ચિન્હોને આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર બતાવે
છે. નાપુદ્ધો. ઇત્યાદિ,

અન્વયાર્થ—અપુદ્ધો કિંચિ ન વાગરે-અપુદ્ધઃ કિંચિત્ ન વ્યાકુર્યાત્ ગુરુ
મહારાજ ત્યાં સુધી કોઈ વાત ન પૂછે ત્યાં સુધી શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે
કોઈ પણ વિષયમાં કંઈ ન કહે. પુદ્ધો વા નાલિયં વણ-પુદ્ધોવા અલીકંવદેત્

જ્ઞાનમુત્પન્નમ્, તતઃ કેવલજ્ઞાનપ્રભાવાદસૌ સમપ્રદેશ इव वहन् गुरुणा प्रोक्तः—
 मार एव सारः, अधुना कीदृशः समप्रदेशे इव वहन्नसि ? शिष्येणोक्तं—युष्मत्प्र-
 सादान्मम वहनं संम भवति । पुनर्गुरुणोक्तम्—किं रे ! ज्ञानं समुत्पन्नं तव । शिष्ये-
 णोक्तम्—एवम् । पुनर्गुरुणा प्रोक्तम्—प्रतिपाति, अप्रतिपाति वा ज्ञानमुत्पन्नम् ? ।
 तेनोक्तम्—अप्रतिपाति । ततो गुरुः पश्चात्तापं कुर्वन् वदति—हा ! मया केवली आशा-
 तितः—इत्युक्त्वा शिष्यशिरसि रजोहरणदण्डप्रहारजनितं रुधिर प्रवाहं पश्यन् पुनः

પ્રાસકર ઘાતક કર્મોંકા નાશકર ઉસ શિષ્ય ને કેવલજ્ઞાન કો પ્રાસ
 ક્રિયા । કેવલ જ્ઞાન કે પ્રભાવ સે યહ ગુરુકો ઇસ પ્રકાર અવ લેજાને લગા
 કિ માનો સમ પ્રદેશમેં હી વહ ચલ રહા હો । ગુરુજીને કહા કિ માર હી
 સાર હૈ, ઇતના માર ને પર અવ તૂ સીધા ચલને લગા હૈ । શિષ્યને કહા
 મહારાજ આપકે પ્રભાવ સે હી યહ સવ કુછ હો રહા હૈ—અર્થાત્ પહિલે ચલતે
 સમય ડેંચી નીચી જગહ મેં મેરા પૈર પડતા થા સો આપકો કષ્ટ હોતા થા ।
 પર અવ નહીં પડતા હૈ અતઃ સમભૂમિ મેં ચલને કી તરહ મેં ચલ રહા
 હું । ગુરુ મહારાજ ને કહા તો કયા તુજે જ્ઞાન ઉત્પન્ન હો ગયા હૈ ? શિષ્યને
 કહા હાં ! પુનઃ ગુરુ મહારાજ ને કહા વહ જ્ઞાન પ્રતિપાતિ ઉત્પન્ન હુઆ હૈ
 યા અપ્રતિપાતિ ઉત્પન્ન હુઆ હૈ । શિષ્યને ઉત્તર દિયા મહારાજ ! અપ્રતિ-
 પાતિ જ્ઞાન ઉત્પન્ન હુઆ હૈ । બાદ ગુરુ ને કહા ! હાય ! મેં ને કેવલી કી
 ઇસ સમય આશાતના કી હૈ । ઇસ પ્રકાર કહ કર ગુરુ જી શિષ્ય કે
 શિર પર રજોહરણ કે દણ્ડ કે પ્રહાર સે વહતે હુએ રુધિર કો દેલ-દેલ

નાશ કરી તે શિષ્યે કેવલ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કર્યું. કેવલજ્ઞાનના પ્રભાવથી તે
 ગુરુને એવા પ્રકારે લઈ જવા લાગ્યો કે બધે તે સમપ્રદેશમાં ચાલી રહ્યા
 હોય. ગુરુજીએ કહ્યું કે “ માર જ સાર છે. ” આટલું મારવાથી હવે તું
 સીધો ચાલવા લાગ્યો છે, શિષ્યે કહ્યું મહારાજ ! આપના પ્રભાવથી જ આ
 સઘળું બની રહ્યું છે. અર્થાત્ પહેલાં ચાલતી વખતે ડેંચી નીચી જગ્યામાં
 મારા પગ પડતા હતા જેનાથી આપને કષ્ટ થતું હતું પણ હવે પડતા નથી.
 એટલે સમભૂમિમાં ચાલવાની માફક હું ચાલું છું. ગુરુ મહારાજે કહ્યું કે
 શું તને જ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ ગયું છે ? શિષ્યે કહ્યું હા ! ફરી ગુરુ મહારાજે
 કહ્યું, તે જ્ઞાન પ્રતિપાતિ ઉત્પન્ન થયું છે કે અપ્રતિપાતિ શિષ્યે કહ્યું.
 મહારાજ ! અપ્રતિપાતિ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું છે. આથી ગુરુએ કહ્યું, અહાહા !
 મેં કેવલીની આ સમયે આશાતના કરી છે. આ પ્રકારે કહીને ગુરુજીએ
 શિષ્યના શીર ઉપર રજોહરણના દંડના પ્રહારથી વહેતા રુધીરને બેઠ વારંવાર

ઉક્તંચ—લોભી પશ્યેદ્ધનપ્રાપ્તિ, કામિનીં કામુકસ્તથા ।

ભ્રાન્તં પશ્યેદધોન્મત્તો ન કિંચિદ્ધ ક્રુધાકુલઃ ॥૧॥

અન્વચ્ચ—અપકારિણિ ચેત્ ક્રોધઃ ક્રોધે ક્રોધઃ કથં ન તે ।

ધર્માર્થકામમોક્ષાણાં ચતુર્ણાં પરિપન્થિનિ ॥ ૨ ॥

ક્રોધસ્યાસત્યકરણે ઉદાહરણમ્ । યથા—કસ્યચિત્કુલપુત્રસ્યભ્રાતાવૈરિણાદતઃ ।

“લોભી આત્મા ધનકી પ્રાપ્તિ કી ચિન્તા મેં હી મસ્ત બના રહતા હૈ । કામુક કામિની મેં મસ્ત હૈ । ઉન્મત્ત સર્વત્ર ભ્રાન્તિ યુક્ત બના રહતા હૈ । પરન્તુ ક્રોધ સે આકુલ હુઆ આત્મા દેવતા હુઆ ભી અન્ધા બના રહતા હૈ ॥૧॥”

इस क्रोध को निवारण करना हो तो इस प्रकार की भावना माननी चाहिये जैसे—

“હે આત્મન ! તુ અપને અપકાર કરનેવાલે પર જિસ પ્રકાર ક્રોધ કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર ઇસ અપકાર કરને વાલે ક્રોધ પર ક્રોધ ક્યોં નહીં કરતા । ક્યોં કિ યહ તેરા વડા ભારી અપકારી હૈ । કારણ કિ ઇસકે સદ્ભાવ મેં ધર્મ, અર્થ, કામ ંવં મોક્ષ કા સર્વથા વિનાશ હો જાતા હૈ । અતઃ ચતુર્વર્ગકા વિનાશ કરને વાલા હોને સે યહ તેરા સવ સે અધિક અપકારી હૈ । ક્રોધ પર ક્રોધ કરના ઇસકા મતલબ હૈ કિ ક્રોધ કમી નહીં કરના ચાહિયે ॥ ૨ ॥ ”

ક્રોધ કો અસત્ય કરને મેં દયા દેને મેં—દૃષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—

કિસી કુલપુત્ર કે ભાઈ કો ઉસકે વૈરી ને માર ડાલા । વહ કુલ-

લોભી આત્મા ધનની પ્રાપ્તિની ચિંતામાં જ મસ્ત બની રહે છે, કામુક કામિનીમાં મસ્ત છે, ઉન્મત્ત સર્વત્ર પ્રાતિયુક્ત બની રહે છે. પરંતુ ક્રોધથી વ્યાકુલ બનેલ આત્મા જોવા છતાં પણ આંધળો બની રહે છે. ॥૧॥

આ ક્રોધનું નિવારણ કરવું હોય તો આ પ્રકારની ભાવના કરવી જોઈએ કે હે આત્મા ! તું તારા ઉપર અપકાર કરવાવાળા ઉપર જે પ્રકારે ક્રોધ કરે છે એ પ્રકારે તે અપકાર કરવાવાળા ક્રોધ ઉપર ક્રોધ કેમ નથી કરતો. કેમકે એ તારો ખુબ મોટો અપકારી છે. કારણ કે તેના સદ્ભાવમાં ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષનો સર્વથા વિનાશ થાય છે. એથી ચતુર્વર્ગનો વિનાશ કરવાવાળો હોવાથી એ તારો બધાથી વધુ અપકારી છે. ક્રોધ પર ક્રોધ કરવો એનો મતલબ છે કે ક્રોધ કદી ન કરવો જોઈએ.

ક્રોધને દબાવી દેવામાં દષ્ટાંત આ પ્રકારે છે—

કોઈ કુળપુત્રના ભાઈને તેના વૈરીએ ભારી નાખ્યો. તે કુળપુત્ર મરણ

અર્થ ભાવઃ—ગુરુગા નિર્ભર્ત્સને કૃતે સતિ કદાચિત્ ક્રોધોત્પત્તો સત્યાં તસ્ય કદુકવિપાકમનુચિન્ત્ય સમપા તં પરિહરેત્, ક્રોધો હિ સર્વાનર્થકરઃ સકલશુભહરઃ તપઃ સંયમોદ્યાનદાઞ્જલનઃ સમમાવજલદપટલીવિકિરણમચ્છડપવનઃ શાન્તિમુખા-કરતમઃ' સકલસદ્ગુણસરોજવનહિમઃ ચિત્તોદ્વેજકઃ શત્રુતાવર્થકઃ સકલવિપદા-માસ્પદં જનપદં વિપ્લવયતિ ।

૧-તપઃ=રાહુઃ ।

નાલિયંચણ-પૃષ્ઠો વા અલીકં ન વદેત્) યદિ પ્રસંગ વશ કિસી વિષય મેં ગુરુ મહારાજ પૂછેં ખી તો ઉસ મેં શૂઠ નહીં ચોલના ચાહિયે । (કોહં અસત્ત્વં કુલ્લિજ્ઞા-કોપં અસત્યં કુર્યાત્) કિસી નિમિત્ત સે ઉત્પન્ન હુણ ક્રોધ કો શીઘ્ર હી દવા દેના ચાહિયે ।

ભાવાર્થ—કિસી કારણ વશ યદિ કદાચિત્ ગુરુ મહારાજ શિષ્ય કો કઠિન વચન સે શિક્ષા દેં તો ઉસ સમય ક્રોધ કા કદુઆ ફલ સમજ્જકર ઉત્પન્ન હુવે ક્રોધ કો ક્ષમા સે દવા દેવે । કારણ કિ ક્રોધ સમસ્ત અનર્થોં કી ઇક મજ્જૂત જડ હૈ । સકલ કલ્યાણોં કા વિનાશક હૈ । સંયમરૂપી ઉદ્યાન કો ભસ્મ કરને કે લિયે યહ દાવાનલ કી જ્વાલા જૈસા ભયંકર હૈ । સમતારૂપી મેઘઘટાઓં કો વિક્ષિપ્ત કરને કે લિયે યહ ક્રોધ પ્રચ્છડ પવન કે જૈસા હૈ । શાન્તિરૂપી ચન્દ્રમંડલ કે ગ્રસને કે લિયે રાહુ જૈસા, સકલ સદ્ગુણરૂપી કમલવન કો દગ્ધ કરને કે લિયે હિમ-પાત જૈસા કહા હૈ । ક્રોધ સે ચિત્ત મેં ઉદ્વેગ ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર ક્રોધ સે હી શત્રુતા કી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । જિસ જનપદ (દેશ) મેં હિસ ક્રોધ કા આવાસ હી જાતા હૈ વહ સકલ વિપત્તિયોં કા સ્થાન બનકર દેશ આદિ કો નષ્ટ કર દેતા હૈ । કહા ખી હૈ—

જો પ્રસંગવશ કોઈ વિષયમાં ગુરુ મહારાજ પૂછે તો પણ એમાં ભુલું નહીં બોલવું જોઈએ. કોહં અસત્ત્વં કુલ્લિજ્ઞા-કોપં અસત્યં કુર્યાત્ કોઈ નિમિત્તથી ઉત્પન્ન થયેલા ક્રોધને જલદીથી દબાવી દેવો જોઈએ.

ભાવાર્થ—કોઈ કારણવશ જો કદાચ ગુરુ મહારાજ શિષ્યને કઠીન વચ-નથી શિક્ષા આપે તો તે સમયે ક્રોધનું કડવું ફળ સમજી ઉત્પન્ન થયેલ ક્રોધને ક્ષમાથી દબાવી દે. કારણ કે ક્રોધ સમસ્ત અનર્થોની એક મજ્જુત જડ છે. બધા કલ્યાણોનો વિનાશક છે. સંયમરૂપી ઉદ્યાનને ભસ્મ કરવા માટે દાવાનળની જ્વાળા જેવો ભયંકર છે. સમતારૂપી મેઘ ઘટાઓને વેરવિગેર કરવા માટે આ ક્રોધ પ્રચ્છડ પવન જેવો છે. શાંતિરૂપી ચન્દ્રમંડળને ગ્રસવા માટે રાહુ જેવા સકળ સદ્ગુણરૂપી કમળવનને દગ્ધ કરવા માટે હિમપાત જેવો કહેલ છે. ક્રોધથી ચિત્તમાં ઉદ્વેગ ઉત્પન્ન થાય છે અને ક્રોધથીજ શત્રુતાની વૃદ્ધિ થાય છે. જે જનપદ (દેશમાં) આ ક્રોધનો આવાસ થાય છે તે સકળ વિપત્તિઓનું સ્થાન બની દેશ આદિનો નાશ કરે છે. કહ્યું પણ છે—

તતસ્તેન કુલપુત્રેણ કથિતમ્-તર્હિ કયં સ્વરોપં સફલીકરોમિ ? જનન્યા પ્રોક્તમ્
-વત્સ ! સર્વથ ન રોપઃ સફલીક્રિયતે । માતૃવાક્યાત્ કુલમિત્રેણ સ વન્ધુઘાતકો
મુક્તઃ । તતોડસૌ તયોશ્ચરણેષુ નિપત્ય સ્વાપરાધં ક્ષામયિત્વા ગતઃ । એવં કુલ-
પુત્રવત્ ક્રોધમસત્યં કુર્યાત્ ।

તથા-અપ્રિયં=શિક્ષાર્થં ગુરોઃ કદુવચનં, પ્રિયં=પ્રિયમિવ-દ્રિતમિત્યર્થઃ, ધારયેત્=

માતા કે ઇસ પ્રકાર વચન સુનકર કુલપુત્ર ને કહા-ટીકા હૈં યહ
અવધ્ય હૈં પરન્તુ હે જનનિ ! યહ રોપ જો મુક્તે ઉત્પન્ન હુઆ હૈં ઉસે કૈસે
અય સફલ કરૂં ? માતા ચોલી પ્રિય પુત્ર ! ઉત્પન્ન રોપ સર્વથ સફલ હી
કિયા જાય એસા કોઈ નિયમ નહીં હૈં । માતા કે ઇન વચનોસે સન્તુષ્ટ
હોકર કુલપુત્ર ને રોપ કો શાંત કરતે હુણ ઉસ અપને વન્ધુ કે ઘાત
કરને વાલે વૈરી કો વિના કિસી તકલીફ દિયે છોડ દિયા । ઉસ વૈરી
ને ભી ઉન દોનોંકે ચરણોં મેં ગિરકર અપને અપરાધ કી ક્ષમા માંગી
ઔર ખુશ હોતે હુણ અન્ત મેં વહ અપને ઘર ચલા ગયા । પ્રત્યેક મુનિ
કા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ કુલપુત્ર કી તરહ અપને ઉત્પન્ન હુણ ક્રોધ કો
વિફલ બનાને મેં સચેષ્ટ રહે ।

(અપ્રિયં પ્રિયં ધારિજ્ઞા-અપ્રિયં પ્રિયં ધારયેત્) શિષ્ય કા યહ
કર્તવ્ય હૈં કિ વહ ગુરુ મહારાજ કે દ્વારા કહે ગયે અપ્રિય વચનોં કો ભી
પ્રિયવચન હી માનકર હૃદય મેં ધારણ કરે । ગુરુ મહારાજ કે વચન

એમના ઉપર મહાપુરૂષ પ્રહાર કરતા નથી, પરંતુ તેની રક્ષા કરે છે.

માતાનાં આ પ્રકારનાં વચન સાંભળીને કુળપુત્રે કહ્યું ઠીક છે. આ અવધ્ય
છે. પરંતુ હે માતા ! આ રોપ જે મારામાં ઉત્પન્ન થયો છે તેને હું કઈ
રીતે શાન્ત કરૂં ?

માતાએ કહ્યું પ્રિય પુત્ર ! ઉત્પન્ન થયેલ રોપ બધી રીતે સફળ કરવામાં
આવે એવો કોઈ નિયમ નથી, માતાનાં આવાં વચનોથી સંતુષ્ટ બની કુળપુત્રે
રોપને શાન્ત કરીને તેણે પોતાના બંધુનો ઘાત કરનાર વૈરીને કોઈ તકલીફ
આપ્યા વગર છોડી દીધો. મારનાર વૈરીએ પણ બન્નેના ચરણોમાં પડીને
પોતાના અપરાધની ક્ષમા માગી અને ખુશ થતા તે પોતાના ઘર તરફ ચાલી
ગયો. પ્રત્યેક મુનિનું કર્તવ્ય છે કે કુળપુત્રની માફક પોતાનામાં ઉત્પન્ન
થયેલ ક્રોધને દબાવવામાં સચેષ્ટ રહે.

(અપ્રિયં પ્રિયં ધારિજ્ઞા-અપ્રિયં પ્રિયં ધારયેત્) શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે
તે ગુરુ મહારાજ દ્વારા કહેવામાં આવેલ અપ્રિય વચનોને પણ પ્રિય વચન
માની હૃદયમાં ધારણ કરે. ગુરુ મહારાજના વચન પરિણામમાં સંતાપને

પુત્રમરણાર્ત્તધ્યાનયુક્તાં જનનીં વિલોચય સ કુલપુત્રસ્તં વૈરિણં ગૃહીત્વા માતુઃ
સમિપમાનીયાવ્રવીત્-અરે ! વન્ધુઘાતક ! અનેનાસિના ત્વાં કુત્ર હન્યામ્, તેનાતિમી-
તેન કથિતમ્ યત્ર શરણાગતા ન હન્યન્તે તત્ર । એતદ્વચનં શ્રુત્વા કુલપુત્રેણ જનનીમુખં
વિલોકિતમ્ । જનન્યા ચ મધ્યસ્થભાવમવલમ્બ્ય સંજાત-કરુણયા નિગદિતમ્-હે
પુત્ર ! શરણાગતા ન હન્યન્તે । યતઃ—

શરણાગયા ય વીસ, -ત્યા પળયા વસળપત્તા ય ।

રોગી અજંગમા ય, સપ્પુરિસા ણેવ પહરંતિ ॥

છાયા—શરણાગતાંશ્ચ વિશ્વસ્તાન્ પ્રણતાન્ વ્યસનમાત્તાંશ્ચ ।

રોગિણઃ અજઙ્ગમાંશ્ચ સત્પુરુષા નેવ પ્રહરન્તિ ॥

પુત્ર પુત્રમરણ જનિત દુઃખ સે આર્તધ્યાન કરતી હુઈ માતા કો દેખકર
શીઘ્ર હી અપને ભાઈ કે ઉસ ઘાતક કો પકડ કર માતા કે સન્મુલ
ઉપસ્થિત કર કહા અરે વન્ધુ ઘાતક ! વોલ તુજે હસ તલવાર કે દ્વારા
કહાં પર મારું । ઉસને ડરતે હુણ કહા-જહાં શરણ મેં આયે હુણ પ્રાણી
નહીં મારે જાતે હું વહીં પર આપ મુજે મારે । વન્ધુ ઘાતક કે હસ પ્રકાર
વચન સુનકર કુલપુત્ર ને માતા કે મુલકી ઓર દેલા । માતા ને ધૈર્ય
ધારણ કર દયાયુક્ત હોતે હુણ કહા કિ હે બેટા ! શરણ મેં આયે હુણ કો
વીર પુરુષ મારા નહીં કરતે હું । કયોં કિ હતને પ્રાણી અવધ્ય હોતે હું—

શરણાગયા ય વીસ-ત્યા પળયા વસળ પત્તાય ॥

રોગી અજંગમા ય, સપ્પુરિસા ણેવ પહરંતિ ॥ ૧ ॥

ગાથાર્થ—શરણાગત, વિશ્વાસપાત્ર, કષ્ટ મેં પડા હુઆ, રોગી
ઔર અપંગ, હનકે ઉપર મહા પુરુષ પ્રહાર નહીં કરતે હું અર્થાત્ હનકી
રક્ષા કરતે હું ॥

જનિત દુઃખથી આર્તધ્યાન કરતી માતાને જોઈ તુરતજ પોતાના ભાઈના એ
ઘાતકને પકડીને માતાની સન્મુખ ઉભો રાખી કહ્યું, અરે બંધુ ઘાતક !
જોલ તને આ તલવાર કયે સ્થળે મારું. તેણે કહ્યું-જ્યાં શરણુમાં
આવેલાં પ્રાણીને મારવામાં નથી આવતાં એ સ્થળે આપ મને મારો. બંધુને
મારનારનાં આ પ્રકારનાં વચનને સાંભળી કુળપુત્રે માતાના મુખની સામે
જોયું. માતાએ ધૈર્ય ધારણ કરી દયાયુક્ત બની કહ્યું કે હે બેટા ! શરણુમાં
આવેલાને વીરપુરુષો કદી મારતા નથી કેમકે આટલા પ્રાણી અવધ્ય હોય છે.

શરણાગયા ય વીસ, -ત્યા પળયા વસળપત્તા ય ।

રોગી અજંગમા ય, સપ્પુરિસા ણેવ પહરંતિ ॥ ૧ ॥

ગાથાર્થ—શરણાગત, વિશ્વાસપાત્ર, કષ્ટમાં પડેલા, રોગી અને અપંગ,

ઇદમત્ર ધોધ્યમ્—યથા ગુરોરાતયા મિહ્નાચર્યાં ગતઃ શિષ્યઃ શ્રાવકગૃહં પ્રવિષ્ઠઃ, તત્ર મદ્રભાવસંપન્નો ધાર્મિકો ધર્માનુગો ધર્મસેવી ધર્મિષ્ઠો ધર્મશ્યાતિધર્માનુરાગી ધર્મપ્રલોકી ધર્મજીવી ધર્મપ્રરજ્ઞનો ધર્મશીલઃ શ્રાવકો મુનિં દૃષ્ટ્વા સપ્તાષ્ટપદાનિ તદમિમુલમાગચ્છન્ હૃષ્ટસ્તુષ્ટઃ પ્રસન્નચિત્તઃ પ્રીતમનાઃ પરમસૌમનસ્યયુક્તો મુનિદર્શનજનિતહર્ષવશત્તિર્સર્પન્માનસસ્તં વન્દિત્વા નમસ્કૃત્ય પુનઃ પુનઃ સ્તુવન્ વદતિ—

લાભ મેં, અલાભ મેં, સુખ મેં, દુઃખ મેં, જીને મેં મરણે મેં, માન મેં, અપમાન મેં તથા નિંદા ઓર પ્રશંસા મેં એક સાધુ હી પેસા હૈ જો સમાન રહતા હૈ । યહાં ઇસ પ્રકાર સમજના ચાહિયે—ગુરુ કી આજ્ઞા પ્રાપ્ત કર હી તો શિષ્ય મિહ્નાચર્યાં કે લિયે ગૃહસ્થોં કે ઘર જાતા હૈ । ગૃહસ્થ મીં અપને ઘર પર પધારે હુઇ સાધુ કે દર્શન કર અપને આપકો વહુત હી પુણ્યશાલી માનતા હૈ । કયોં કિ પેસે ગૃહસ્થજન પ્રકૃતિ સે ‘મદ્રપરિણામી’ એવં ધર્માનુગ-ધર્મકા અનુસરણ કરને વાલે હોતે હૈં । ધર્મ સેવી હોતે હૈં ઓર ધર્મિષ્ઠ હોતે હૈં । ધર્મશ્યાતિ-ધર્મકા ઉપદેશ દેનેવાલે એવં ધર્માનુરાગી-ધર્મ મેં અનુરાગ રખને વાલે હોતે હૈં । ધર્મપ્રલોભી ઓર ધર્મજીવી હોતે હૈં । ધર્મપ્રરજ્ઞન ઓર ધર્મશીલ હોતે હૈ । યે મુનિ કો ઘર પર આતે હુઇ દેખકર સર્વ પ્રથમ ઉનકા વિનય કરને કે નિમિત્ત સાત આઠ પગ ઉનકે સમજ જાતે હૈં । હર્ષ સે સંતુષ્ટ ચિત્ત હોકર પેસે ફૂલ જાતે હૈં કિ માનોં કોઈ અપૂર્વ નિધિ કા હી ઇન્હેં લાભ હુઆ હૈ ।

લાભમાં, અલાભમાં, સુખમાં, દુઃખમાં, જીવવામાં, મરણમાં, માનમાં, અપમાનમાં, તથા નિંદા અને પ્રશંસામાં એક સાધુજ એવા છે જે સમાન રહે છે. અહિં એ પ્રકારે સમજવું જોઈએ—ગુરુની આજ્ઞા મેળવીને પછીજ શિષ્ય મિહ્નાચર્યા માટે ગૃહસ્થોને ઘર બંધ છે. ગૃહસ્થ પણ પોતાના ઘર પધારેલા સાધુનાં દર્શન કરી પોતાને બહુજ પુણ્યશાળી માને છે. કેમકે એવા ગૃહસ્થજન પ્રકૃતિથી ભદ્ર પરિણામી તેમજ ધર્માનુ અનુસરણ કરવાવાળા હોય છે, ધર્મ સેવી હોય છે અને ધર્મિષ્ઠ હોય છે. ધર્મશ્યાતિ-ધર્મને ઉપદેશ દેવાવાલા એટલે ધર્માનુરાગી-ધર્મમાં અનુરાગ રાખવાવાળા હોય છે. ધર્મપ્રલોકી અને ધર્મજીવી હોય છે. ધર્મ પ્રરજ્ઞન અને ધર્મશીલ હોય છે. મુનિને ઘર આવતા જોઇને સર્વ પ્રથમ તેના વિનય કરવા નિમિત્ત સાત આઠ પગલાં એમની સામે બંધ છે. હર્ષથી સંતુષ્ટ ચિત્ત બનીને એવા કુલાતા હોય છે કે બહુ કોઇ અપૂર્વ નિધિના એમને લાભ થયો હોય, અહોરો પ્રસન્ન થઈ બંધ છે, મનમાં

મનસા ભાવયેત્ । ગુરોર્વચનં હિ પરિણામે તાપોપશ્ચમકં રત્નત્રયપરિશોધકં શાન્તિમુષા-
સંધૃતં પરમહિતમ્, આમ્રફલમિવાદૌ કદુકં, મધ્યેઽમ્લરસયુતમ્, અન્તે ચાપૂર્વાસ્વાદ-
જનકં ભવતીતિ મત્વા પ્રિયમેવ મન્યેતેતિ ભાવઃ ।

યદ્વા-પ્રિયં=પ્રીતિજનક સ્તુત્યાદિ, અપ્રિયમ્=અપ્રીતિકારકં નિન્દાદિ, ધારયેત્=સમં જાનીયાત્ । ભિક્ષાચર્યાદૌ પ્રિયમપ્રિયં વા વચનં શ્રુત્વા સમભાવનયા તત્ તિતિક્ષેત, તત્ર રાગં દ્વેપં વા ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । ઉક્તં ચ ભગવતા—

લાભાલાભે સુહે દુઃખે, જીવિષ મરણે તદ્વા ।

સમો નિંદાપસંસાસુ, તદ્વા માણાવમાણઓ ॥ (ઉત્ત૦ ૧૯અ.)

પરિણામ મેં સંતાપ કો મિટાને વાલે રત્નત્રય કો પરિ શુદ્ધ કરને વાલે, શાન્તિરૂપી અમૃત કે સમુદ્ર પરમ હિતકારી તથા આમ્રફલ કે સમાન આદિ મેં કદુક, મધ્ય મેં આમ્લરસયુક્ત એવં અન્ત મેં અપૂર્વ રસ કા આસ્વાદ કરાને વાલે હોતે હેં । ઇસલિયે ગુરુ મહારાજ કે વચન કો પ્રિય માનકર હી ઉનકા સેવન કરતે રહના ચાહિયે યહી વિનીત શિષ્ય કા કર્તવ્ય હૈ । અથવા—“ ધારિજ્ઞા પ્રિયમપ્પિયં ” ઇસકા અભિપ્રાય યહ બી હૈ કિ સાધુ જવ ભિક્ષાચર્યા આદિ કે લિયે જાવે તવ ઉસ સમય યદિ કોઈ છોટે મીઠે વચન બી કહે—નિંદા એવં સ્તુતિ બી કરે તો બી ઉસમેં ઇસે પક્ષપાતી નહીં હોના ચાહિયે—દોનોં પર સાધુ કા સમાન ભાવ હી હોના ચાહિયે । ઉસ પર રાગ એવં દ્વેષ કરના સાધુકા કર્તવ્ય નહીં હૈ ।

લાભાલાભે સુહે દુઃખે । જીવિષ મરણે તદ્વા ॥

સમો નિંદા પસંસાસુ । તદ્વા માણા વ માણઓ ॥ (ઉ. ૧૯અ.)

મટાડવાવાળા રત્નમયને પરિશુદ્ધ કરવાવાળા શાન્તિરૂપી અમૃતના સમુદ્ર પરમ હિતકારી તથા આમ્રફળ જેવા, શરૂઆતમાં તુરા, મધ્યમાં આમ્લરસ યુક્ત તથા અંતમાં અપૂર્વ રસનો આસ્વાદ કરવાવાળા હોય છે. આ માટે ગુરુ મહારાજનાં વચનને પ્રિય માનીને તેનું સેવન કરતા રહેવું જોઈએ. તે વિનીત શિષ્યનું કર્તવ્ય છે. અથવા—“ ધારિજ્ઞા પ્રિયમપ્પિયં ” આનો અભિપ્રાય એવો પણ છે કે સાધુ જ્યારે ભિક્ષા ચર્ચા વગેરે માટે જાય ત્યારે તે સમયે કોઈ કાંઈ સાડું નરસું વચન કહે—નિંદા અગર સ્તુતિ પણ કરે તો પણ એમાં તેમણે પક્ષપાતિ ન બનવું જોઈએ. બન્ને પર સાધુનો સમાનભાવ હોવો જોઈએ. એના પર રાગ અગર દ્વેષ કરવો એ સાધુનું કર્તવ્ય નથી.

લાભાલાભે સુહે દુઃખે, જીવિષ મરણે તદ્વા ।

સમો નિંદાપસંસાસુ, તદ્વા માણાવમાણઓ ॥ (ઉત્ત૦ ૧૯ અ.)

તથા—કેચિદધાર્મિકા અનાર્યા મ્લેચ્છા અધર્મજીવિનોઽધર્માનુરાગિણોઽધર્મ-
શીલા વિવેકવિકલાઃ સાધું દૃષ્ટ્વા નિન્દન્તિ હીલન્તિ ધ્વિસન્તિ—‘અયં વરાકો
નિઃસત્ત્વઃ કાતરો દામ્ભિકો ભિક્ષામાત્રોપજીવી કુર્ષિભરિર્ધૂમિભારસ્વરૂપો ગૃહે ગૃહે
ગૃહપાલ ઇવ ભ્રમતિ’ ઇત્યાદિ વચનં શ્રુત્વા મુનિઃ સ્વાત્માનં નાપકર્ષયેત્ ।

અત્રોદાહરણમ્—કથિદ્ દૃષ્ટ્વો મહાત્મા ભિક્ષાર્થમેકસ્મિન્ ગૃહે ગત્વા તદ્ગૃહસ્વા-
મિનીં પ્રતિ કિં સચિત્તજલાદિસ્પર્શરહિતાઽસિ ન વેત્યાશયેન પૃષ્ટવાન્—ભગિનિ !

તથા કિતનેક એસે મી અધાર્મિક, મ્લેચ્છ, અનાર્યજન હૈં કિ
જિનકા જીવન સત્ય ધર્મ કી વાસના સે ચિલકુલ વિહીન બના હુઆ
હૈં, અધર્મ મેં હી જિન્હેં વડાભારી અનુરાગ હૈં, પ્રકૃતિ મી જિનકી
અધર્મશીલ હૈં, વિવેક સે જો સર્વથા પરાઙ્મુખ હૈં વે સાધુજન કો દેખતે
હી અપની નાક મોઠેં સિકોડને લગતે હૈં ઓર જો મન મેં આતા હૈં વહી
બકને લગ જાતે હૈં—નિન્દા કરતે હૈં, હીલના કરતે હૈં—ધ્વિસાતે હૈં—કહતે
હૈં કિ દેલો તો સહી યહ વિચારા કિતના અપને આપકો મૂલતા હૈં તથા
કિતના કાયર બના હુઆ ફિર રહા હૈં કૈસે—કૈસે દંભ રચ રહા હૈં જો
યહ વહાં સે ભિક્ષા માંગકર અપના નિર્વાહ કરતા હૈં । અપના હી પેટ
ભરના હસને સીખા હૈં । એસે જનોં સે સંસાર કી ક્યા મલાઈ હો સકતી
હૈં । યે તો કેવલ હસ પૃથિવી કે ભારભૂત હૈં જો કુસેકી તરહ ઘર ઘર મેં
પ્રતિદિન ભ્રમણ કરતે રહતે હૈં । હસ પ્રકાર કે વચન સુનકર સાધુ કો
ચાહિયે કિ વહ અપની આત્મા કો હલ્કી ન સમજે । હસી વિષય કો
એક ઉદાહરણ દ્વારા સ્પષ્ટ કિયા જાતા હૈં—

તથા કેટલાક એવા પણ અધાર્મિક. મ્લેચ્છ, અનાર્યજન છે કે જેમનું
જીવન સત્ય ધર્મની વાસનાથી ખીલકુલ વિહીન બનેલ હોય છે. અધર્મોમાં જ
જેને ભારે અનુરાગ છે, પ્રકૃતિ પણ જેની અધર્મશીલ છે, વિવેકથી જે સર્વથા
પરાઙ્મુખ છે. તે સાધુજનને જોઈને પોતાનાં નાક તથા મોઠાંને ખગાડે છે
અને મનમાં આવે તેવું બકવા લાગી જાય છે. નિન્દા કરે છે, હીલના કરે છે—
ભિક્ષાય છે, કહે છે કે જુઓ તો ખરા આ ખીચારો કેટલો પોતાની બાતને
બુલે છે તથા કેવો કાયર બનીને ફરી રહ્યા છે, કેવા કેવા દંભ રચી રહેલ છે,
જે અહિં તહિંથી ભિક્ષા માગીને પોતાનો નિર્વાહ કરે છે. પોતાનું જ પેટ
ભરવાનું એ શીખેલ છે. આવા સાધુથી સંસારની શું મલાઈ થઈ શકવાની
છે. આ તો કેવળ આ પૃથ્વી ઉપર ભાર જેવા છે. જે કુતરાની માફક ઘેર
ઘેર દરેકોજ ભમતા રહે છે. આ પ્રકારનાં વચન સાંભળી સાધુએ પોતાના
આત્માને હલકો માનતા ન બનવું જોઈએ. આ વિષયને એક ઉદાહરણ દ્વારા
સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—

‘ધન્યોઽસ્મિ, કૃતપુણ્યોઽસ્મિ, કૃતલક્ષણોઽસ્મિ ભવદર્શનેન, ભવદાગમનં દરિદ્રસ્ય ગૃહે સ્વર્ણવૃષ્ટિરિવ કામધેનુરિવ મમ સર્વસૌભાગ્યજનકમ્” ઇત્યુક્ત્વા સ્વગૃહં સાદર-
માનીય વિપુલમશનં પાનં શાઘં સ્વાઘં દદાતિ, દત્ત્વા ચ પુનઃ પુનઃ સ્તૌતિ, તત્ર
મુનિઃ સ્વાત્માનં નોત્કર્ષયેત્ ।

ચેહરા પ્રસન્ન હો જાતા હૈ । મન મેં એક પ્રકાર કા વિલક્ષણ સંતોષ આ
જાતા હૈ, ઉસ સમય ઉસે વડા ભારી આનન્દ આતા હૈ । ઉસ આનન્દ મેં
તહ્લીન હોતા હુઆ વહ શ્રાવક ઉસ સમય એક પ્રકાર સે અપને આપકો
ભી ભૂલ સા જાતા હૈ ઓર વન્દના એવં નમસ્કાર કર ભક્તિ કે આવેશ
સે સ્વયં અપને ગુરુ મહારાજ કી સ્તુતિ કરતા હુઆ કહતા હૈ હે નાથ !
આજ મેં ધન્ય હુઆ હૂં કૃતપુણ્ય હુઆ હૂં ઓર મેરી યહ પર્યાય સફલ
હુઈ હૈ જો આપકે દર્શન પાવે । દરિદ્ર કે ઘર મેં સુવર્ણ કી વર્ષા કે સમાન
એવં કામધેનુ કે સમાન આપ કા મેરે ઘર પધારના મેરે પરમ સૌભાગ્ય
કા ઉત્પન્ન કરને વાલા એવં વૃદ્ધિ કરનેવાલા હૈ । હસલિયે પધારિયે ઓર
ઘર કો પાવન કીજિયે—હસ પ્રકાર કહ કર વહ મહાત્મા કો અપને ઘર
લાતા હૈ ઓર સાદર ઉન્હેં વિપુલ અશન, પાન, શાઘ એવં સ્વાઘ ચાર
પ્રકાર કા આહાર દેતા હૈ । ફિર વારંવાર ઉનકી સ્તુતિ કરતા હૈ । એસી
પ્રશંસા સુનકર ગૃહસ્થકી એસી વિનય ભક્તિ દેવકર સાધુ કો ફૂલ નહીં
જાના ચાહિયે ।

એક પ્રકારનો વિલક્ષણ સંતોષ આવી બાબ છે. એ સમયે એને ઘણોજ આનંદ
થાય છે. એ આનંદમાં તહ્લીન થતાં થતાં તે શ્રાવક એ સમયે એક પ્રકારથી
પોતે પોતાને પણ ભૂલી બાબ છે. અને વંદના એવં નમસ્કાર કરી ભક્તિના
આવેશથી સ્વયં પોતાના ગુરુ મહારાજની સ્તુતિ કરતાં કહે છે કે હે નાથ !
આજ હું ધન્ય બન્યો છું, કૃત પુણ્ય બન્યો છું, અને ભારી આ પર્યાય સફળ
બની છે જે આપનાં દર્શન થયાં. દરિદ્રના ઘરમાં સોનાના વરસાદ સમાન તેમ
કામ ધેનુ સમાન આપનું મારે ઘર પધારવું મારા પરમ સૌભાગ્યને ઉત્પન્ન
કરવાવાળું અને વૃદ્ધિ કરનાર છે. આ માટે પધારો અને ઘરને પાવન કરો આ
પ્રકારે કહી તે મહાત્માને પોતાને ઘર લાવે છે અને આદર માનથી તેમને
વિપુલ અશન, પાન, શાઘ અને સ્વાઘ એમ ચાર પ્રકારનો આહાર આપે છે.
પછી વારંવાર તેની સ્તુતિ કરે છે. એવી પ્રશંસા સાંભળી, ગૃહસ્થની એવી
વિનય ભક્તિ બોધ, સાધુએ કુલાધ જરૂર ન બોધ્યો.

યતિ-સ્થૂલસ્પ હૃષ્ટપુષ્ટાન્નસ્ય તવ કથમલ્પેનોદરં ભરિષ્યતિ ? इत्यादि परिभववचनं
 થ્રુત્વાઽપિ સ મહાત્મા સમભાવં સમાલમ્બ્ય સ્વાત્માનં હીનં ન મન્યતે સ્મ, તદા સ
 ંચિતમિશાં ગૃહીત્વા પ્રતિનિવૃત્તઃ । एवं सर्वैर्मुनिभिर्मान्यम् ॥ ૧૪ ॥

આત્મનો દમને સત્યેવ ક્રોધવૈફલ્યં કર્તું શક્યતે તસ્માત્ તદુપદેશં તત્કલં ચાહ-
 મૂલમ્-અર્પાં ચેવં દમેયંઘ્વો અર્પા હું સ્વર્લુ દુર્દમો ।

અર્પા દંતો સુંહી હોઈ અંસિસ લોઈ પરતેય યં ॥૧૫॥

છાયા-આત્મા એવ દમિતવ્યઃ આત્મા હુ સ્વલુ દુર્દમઃ ।

આત્માનં દામ્યન્ સુખી ભવતિ, અસ્મિન્ લોકે પરત્ર ચ ॥૧૫॥

સ્વામિનિ ને કહા-ચાહ સ્વય કહા इतने संडसुसंड तो होरहे हो फिर भी
 થોડા આહાર દેને કે લિયે કહ રહે હો થોડે સે દિયે ગયે આહાર સે
 મલા इस हृष्टपुष्ट शरीर की तृप्ति कैसे हो सकेगी । इत्यादि उसके
 અપમાન જનક વચન સુનકર મી વે મહાત્મા સમભાવશાલી હી વને રહે
 ઔર उन्होंने उसके वचन से अपने आपको हीन नहीं समझा । वहां से
 ંચિત મિશ્તા લેકર ફિર વે અપને સ્થાન પર વાપિસ આગયે । इसी
 પ્રકાર કહને કા મતલબ યહ હૈ કિ समस्त मुनिजनोंको अपने आपको
 પ્રતિકૂલ સંયોગ મેં હીન નહીં માનના ચાહિયે ॥ ૧૪ ॥

જો આત્મા કા દમન કરતા હૈ વહી ક્રોધ કો નિઃફલકર સકતા
 હૈ इस लिये सूत्रकार आत्मा-अर्थात्-मन को दमन करने का उपदेश
 દેતે હૈ एवं उसका फल भी कहते हैं-‘अप्पाचेव०’ इत्यादि ।

વાહ ખૂબ કહ્યું, આટલા અલભસ્ત જેવા તો બની રહેલ છે છતાં પણ
 થોડો આહાર દેવાનું કહી રહ્યા છે. થોડા આહારથી ભલા આ અલભસ્ત
 શરીરની તૃપ્તિ કઈ રીતે થઈ શકશે. ઇત્યાદિ એનાં અપમાન જનક વચન
 સાંભળીને પણ તે મહાત્મા સમભવશાળી જ બની રહ્યા અને તેનાં તેવાં વચનોથી
 પોતાની બાતને હીન નહિં સમજ્યા. ત્યાંથી ંચિત મિશ્તા લઈને પછી તે પોતાના
 સ્થાન ઉપર આવી ગયા. આ પ્રકાર કહેવાનો મતલબ એ છે કે સમસ્ત મુનિ
 જનોએ પોત પોતાને પ્રતિકૂલ સંજોગમાં પણ હિન માનવું ન જોઈ એ. ॥૧૪॥

જે આત્માનું દમન કરે છે તે ક્રોધને નિષ્ફળ કરી શકે છે આ માટે
 સૂત્રકાર આત્મા-અર્થાત્-મનને દમન કરવાનો ઉપદેશ આપે છે. અને તેનું ફળ
 પણ કહે છે-અપ્પાચેવ૦ इत्यादि .

સ્વસ્થાઽસિ, તયા કથિતમ્-ત્વમેવાસિ રોગી, અહં તુ સ્વસ્થૈવારિમ મિશ્નાદાનાર્થં મહાત્મના પ્રોક્તા સા ગૃહસ્વામિની વદતિ-કિમત્ર તત્ર પિત્રોપાર્જનં કૃત્વા સ્થાપિતં, તદ્ પ્રહીતુમગ્રામતોઽસિ, એતદ્ વચનં શ્રુત્વા સ મહાત્મા પરાટૃતઃ । તતો ગૃહસ્વામિની વદતિ-ઓહો ! મિશ્નાર્થિનોઽપિ તવૈતાવાન્ મદઃ, એહિ, એહિ, દદામિ મિશ્નામ્, એવં તયાઽભિહિતઃ સન્ સ મહાત્મા પુનસ્તદ્ગૃહે મિશ્નાં પ્રહીતુમાગતઃ । સ્થૂલાઃ સ્થૂલાશ્વ-તક્ષો રોટિકાસ્તયા સમાનીતાઃ, મહાત્મના પ્રોક્તમ્-સ્તોકં દેહિ, ગૃહસ્વામિની કથ-

કોઈ એક વૃદ્ધ મહાત્મા મિશ્નાકે લિયે કિસી એક ઘર પર પહુંચે। વહાં જાકર ગૃહસ્વામિની સે “ સચિત્ત જલાદિક કે સ્પર્શ સે રહિત હો કિ નહીં ” ઇસ અભિપ્રાય સે પૂછા કિ વહિં ન ! સ્વસ્થ તો હો ? મહાત્મા જી કી વાત સુનકર ગૃહસ્વામિની કહને લગી કિ મેં તો સ્વસ્થ હી હું-રોગી તો તુમ હી હો । મહાત્માજીને ફિર ઉસસે મિશ્ના દેને કે લિયે કહા તો વહ બોલી કિ યહાં ક્યા તુમ્હારા વાપ કમાકર રમ્મ ગયા હું જો લેને કે લિયે દોડે આયે હો ? ઇન વચનોંકો સુનકર મહાત્માજી વહાં સે પીંછે લૌટે । મહાત્માજી કો પીંછા લૌટા હુઆ દેલકર ગૃહસ્વામિની વડવડાતી હુઈ કહને લગી-ઓહો ! મિશ્નાર્થીં હોકર કે મીં ઇતના અભિમાન । અચ્છા આઓ આઓ ઔર મિશ્ના લે જાઓ । મેં મિશ્ના દેતી હું । ઇસ પ્રકાર જવ ઉસ ગૃહસ્વામિની ને કહા તો મહાત્મા ઉસકે ઘર મિશ્ના લેને કે લિયે પીંછે આયે । વહ જવ ઉન્હેં મોટી-મોટી ચાર રોટી દેને લગી તો મહાત્મા-જીને પુનઃ કહા વહિંન થોડા આહાર દો-યહ તો અધિક હૈં । તત્ર ગૃહ

કોઈ એક વૃદ્ધ મહાત્મા મિશ્ના માટે કોઈ એક ઘર પહોંચ્યા ત્યાં જઈ ગૃહસ્થની સ્ત્રીને “ સચિત્ત જલાદિકના સ્પર્શથી રહિત છે કે નહીં ” આ અભિપ્રાયથી પૂછ્યું કે, બહેન ! સ્વસ્થ છે ને ? મહાત્માજીની વાત સાંભળીને ગૃહસ્થની સ્ત્રી કહેવા લાગી કે હું તો સ્વસ્થ જ છું-રોગી તો તમેજ છે. મહાત્માજીએ પછી તેને મિશ્ના આપવા કહ્યું તો એ બોલી કે, અહીં ક્યાં તમારો બાપ કમાઈને રાખી ગયેલ છે, જે લેવા માટે દોડી આવ્યા છે ? આ વચનોને સાંભળીને મહાત્માજી ત્યાંથી પાછા ફર્યા, મહાત્માજીને પાછા ફરેલા જોઈ ગૃહસ્થની સ્ત્રી બડબડાટ કરતાં કહેવા લાગી, ઓહો ! મિશ્નાર્થીં હોવા છતાં પણ આટલું અભિમાન ! આવો મિશ્ના લઈ જવ. હું મિશ્ના આપું છું. આ પ્રકારે એ ગૃહસ્થની સ્ત્રીએ કહ્યું તો મહાત્મા એને ઘર મિશ્ના લેવા પાછા ગયા તે જ્યારે તેને મોટી મોટી ચાર રોટલી દેવા લાગી તો મહાત્માજીએ કહ્યું બહેન થોડો આહાર આપો-આ તો ઘણું છે. ત્યારે ગૃહસ્થની સ્ત્રીએ :-

ઉક્તંચ—જઓ જઓ સંચરઈ, મળો ચંચલમત્થિરં ॥

તઓ તઓ નિયમિય, કુજ્જા અપ્પમિ તં થિરં ॥૧॥

છાયા—યતો યતઃ સંચરતિ મનઃ ચંચલમસ્થિરમ્ ।

તતસ્તતો નિયમ્ય કુર્યાત્ આત્મનિ તત્ સ્થિરમ્ ।

સૂર્યોદયે સતિ શીતવેદના નિવૃત્તવન્મનોવિજયે સતિ સ્કલદુઃખાનામાત્મ્યન્તિક નિવૃત્તિર્ભવતિ । અવિજિતં મનસ્તત્ત્વજ્ઞાનં વિનાશયતિ તપઃ સંયમશિખરાદાત્માનં

જાગ્રત્ હો સકતી હૈ । આત્મા શબ્દ કા અર્થ યહાં પર મન હૈ । ક્યોં કિ હસીકા દમન કિયા જાતા હૈ । જીવ આત્મા હસકા દમન કરને વાલા હૈ । દમન કરને સે આત્મા કો સચ સે વડા ભારી લાભ યહ હોતા હૈ કિ જિસ પ્રકાર સૂર્યકે ઉદય હોને પર શીતવેદના કી નિવૃત્તિ હો જાતી હૈ ઉસી પ્રકાર મનકો જીત લેને પર આત્મા સે સ્કલ દુઃખોં કી આત્મ્યન્તિક નિવૃત્તિ હો જાતી હૈ । હસીલિયે શાસ્ત્રકારોં કા યહ ઉપદેશ હૈ કિ “જઓ જઓ સંચરઈ મળો ચંચલમત્થિરં । તઓ-તઓ નિયમિય કુજ્જા અપ્પમિ તં થિરં ॥ યહ અસ્થિર ચંચલ મન જિન-જિન પદાર્થોંકી ઓર જુકે-ઉનમેં ચલે-ઉસે વહાં સે લેંચકર મોક્ષાભિલાષી કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઉસે અપની આત્મા મેં સંલગ્ન કરે । જયતક મન સ્થિર નહીં હોગા ઉસકા નિગ્રહ નહીં હોગા-તય તક તત્ત્વજ્ઞાન આત્મા મેં ઉત્પન્ન નહીં હો સકતા હૈ । તત્ત્વજ્ઞાન કી જાગૃતિ હુએ વિના આત્મા કો હેય એવં ઉપાદેય પદાર્થોંકા વાસ્તવિક ભાન નહીં હો સકતા । મનકી હી તો યહ ચંચલતા

જ આત્મામાં શાંતી બગી થકે છે. આત્મા શબ્દનો અર્થ અહીં મન છે. કેમ કે આત્માતું જ દમન કરવામાં આવે છે. જીવ આત્મા એનું દમન કરવાવાળા છે. દમન કરવાથી આત્માને મોટામાં મોટો લાભ તો એ થાય છે કે જે પ્રકારે સૂર્યનો ઉદય થવાથી ઠંડીની વેદાનાની નિવૃત્તિ થાય છે. એજ રીતે મનને જીતી લેવાથી આત્માના સકળ દુઃખોની નિવૃત્તિ થઈ બચ છે. આ માટે શાસ્ત્રકારોનો આ ઉપદેશ છે કે:-

“જઓ જઓ સંચરઈ, મળો ચંચલમત્થિરં ।

તઓ તઓ નિયમિય, કુજ્જા અપ્પમિ તં થિરં ॥”

આ અસ્થિર ચંચલ મન જે જે પદાર્થોની તરફ ઢળે-એમાં ચાલે-એને ત્યાંથી ખેંચીને મોક્ષાભિલાષીએ પોતાના આત્મામાં સંલગ્ન કરી દેવું બેઈએ. બ્યાં સુધી મન સ્થિર નહી હોય-ત્યાં સુધી એનો નિગ્રહ થનાર નથી-ત્યાં સુધી તત્ત્વજ્ઞાન આત્મામાં ઉત્પન્ન થઈ શકતું નથી. તત્ત્વજ્ઞાનની બાગૃતિ થયા પછર આત્માને હેય અને ઉપાદેય પદાર્થોનું વાસ્તવિક ભાન થઈ શકતું નથી.

ટીકા—‘અપ્પા ચેવ’ ઇત્યાદિ—

આત્મૈવ=મન એવ, દમિતવ્યઃ=વશી કર્તવ્યો જેતવ્ય ઇત્યર્થઃ, રૂઢાત્મશબ્દેન મનો ગૃહ્યતે તસ્યૈવ દમનીયત્વાત્ । આત્મા તુ દમકો વોધ્યઃ । શબ્દાદિ વિષયેષુ પ્રવર્તમાનં મનસ્તતઃ પ્રત્યાહત્ય સ્વાત્મનિ સ્થાપનીયમિતિ ભાવઃ ।

અન્વયાર્થ—(અપ્પાચેવ દમેયન્વો-આત્મા એવદમિતવ્યઃ) મન હી દમન કરને યોગ્ય હૈ । (અપ્પા હુ સ્વલ્લુ દુદ્દમો-આત્મા હુ સ્વલ્લુ દુર્દમઃ) વ્યોં કિ મન હી દુર્દમ હૈ । (અપ્પા દંતો અસ્સિ લોણ પરત્થ ય સુહો હોઈ-આત્માનં દામ્પ્યન્ રૂહલોકે પરત્ર ચ સુસી ભવતિ) મનકો દમન કરને ચાલા જીવ નિયમ સે રસ લોક મેં તથા પરલોક મેં સુસી હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર રસ ગાથા દ્વારા રૂન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં પ્રવર્તમાન મન કે નિગ્રહ કરનેકા ઉપદેશ દે રહે હેં । વે કહતે હેં કિ રસલોક એવં પરલોક મેં યદિ સુસી હોના ચાહતે હો-તો મનકા નિગ્રહ કરો ઉસે અપને વશ મેં કરો । જવ તક રસકો વશ મેં નહીં કિયા જાયગા તવ તક રસકા અધીન બના હુઆ આત્મા કમી મી કિસી મી ભવ મેં સુસ રાંતિ નહીં પાયેગા । આત્મા હી મન કા દમન કર સકતા હૈ । દમન કરનેકા મતલબ યહ હૈ કિ જો મન રૂન્દ્રિયોંકે વિષયોં મેં ગૃહ્ય બના હુઆ હૈ ઉસકો ઉનમેં ગૃહ્ય નહીં બનને દેતા । યહી મનકા દમન કરના હૈ । મનકો વિષયોંસે હટાકર આત્મામેં સ્થાપિત કરના ચાહિયે । તમી આત્મા મેં રાંતિ

અન્વયાર્થઃ—અપ્પા ચેવ દમેયન્વો-આત્મા એવ દમિતવ્યઃ—

મનજ દમન કરવા યોગ્ય છે.

અપ્પા હુ સ્વલ્લુ દુદ્દમો-આત્મા હુ સ્વલ્લુ દુર્દમઃ—

કેમકે મનજ દુર્દમ છે.

અપ્પા દંતો અસ્સિ લોણ પરત્થ ય સુહો હોઈ ।

આત્માનં દામ્પ્યન્ રૂહ લોકે પરત્ર ચ સુસી ભવતિ ।

મનનું દમન કરનાર એવ આલોક અને પરલોકમાં સુખી થાય છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર આ ગાથા દ્વારા રૂન્દ્રિયોના વિષયોમાં પ્રવર્તમાન મનનો નિગ્રહ કરવાનો ઉપદેશ આપી રહ્યા છે. તેઓ કહે છે કે, આ લોક અને પરલોકમાં જો સુખી થવાં ચાહતા હો તો-મનનો નિગ્રહ કરો, અને ચોતાના વશમાં રાખો. જ્યાં સુધી મનને વશ કરવામાં ન આવત્યાં સુધી એના આધીન બનેલો આત્મા કયારેય પણ-કોઈ પણ ભવમાં સુખ રાંતિથી રહી શકવાનો નથી. આત્મા જ મનનું દમન કરી શકે છે. દમન કરવાનો હેતુ એ છે કે મન રૂન્દ્રિયોના વિષયમાં વ્યાપ્ત બન્યું છે. એને એમાંથી દૂર કરવું એજ મનનું દમન કરવું છે. મનને વિષયોથી હટાડી આત્મામાં સ્થાપિત કરવું જોઈએ. ત્યારે

वृक्षतले उपविष्ट आसीत् तदा तेन महात्मना ध्यानावस्थायामेकं श्वापदसंकुलं व्यालाकुलं विशालं महारण्यं दृष्टम् । तत्रैको पुरुषस्तेन दृष्टः, स च सहस्रभुजो विसृतकायः सहस्रहस्तधृतैः सहस्रमुखैः स्वदेहं ताडयन् भीतभीत इव चीत्कारं कुर्वन्नितस्ततः पलायमानः शतयोजनानि धावमानः श्रेमेण शिथिलावयवः परवशः सन् पातालवद्गम्भीरे गाढान्धकारे महान्धकूपे निपतितः । पुनरसौ तस्मादन्धकूपाद् बहिर्निःसृतः पूर्ववत् सहस्रमुखैः स्वदेहं ताडयति तदनु महत्यामग्निज्वालायां शलभ इवासौ प्रविष्टः । पुनरसौ ततोऽपि बहिर्निःसृत्यकण्टकाकीर्णं महारण्ये इतस्ततो धावति, तदनु पुनः स्वदेशेपरि पूर्ववत्सहस्रमुखश्लप्रहारं कुर्वन् स दृष्टः ।

घैठे हुए थे । मुख पर सदोरक मुखचित्रिका बँधी हुई थीं, उन्हें उस ध्यान में एक विशाल जंगल दिखलाई पड़ा । जो श्वापदों हिंसक प्राणीयों से संकीर्ण एवं व्याप्त था । उस में उन्होंने एक महाकाय व्यक्ति जिसके हजार हाथ थे देखा । उसके सब ही हाथों में मुसल थे । वह इधर उधर भागता हुआ मुसलको शरीर पर मारता हुआ भयंकर चीत्कार शब्द करता था । वह भगता भी इतना अधिक कि सौ योजन तक निकल जाता । जब वह थक जाता और उसका शरीर जब ढीला हो जाता तब वह पाताल के समान गंभीर एक महान्धकूप में कि जिसमें गाढ अंधकार ही अंधकार था उसमें गिर जाता था । पीछे वहाँसे निकलना और इसी तरह अपने शरीर को हजारों मुसलोंसे पीटता, बाद में शलभ-(पतंग) की तरह एक महती अग्निज्वाला में प्रविष्ट हो जाता । पश्चात् वहाँ से भी निकल कर वह एक कण्टकाकीर्ण अरण्य में घुस जाता और वहाँ इधर उधर दौड़ता हुआ अपने शरीर को सहस्र मुसलों से पूर्वकी तरह

पेक्षा होता. मोठा ઉપર દોરાસાથે મુખચિત્રિકા બાંધેલ હતી. એમને એ ધ્યાનમાં એક વિશાળ જંગલ દેખાયું, જે અનેક પ્રકારના હિંસક પ્રાણીઓથી ભરેલું હતું, તેમાં એમણે એક મહાકાય વ્યક્તિ જેને હજાર હાથ છે તેવી જોઈ, એના બધા હાથોમાં મુશળ હતાં, તે અહિંથી તહીં દોડતા દોડતા મુસલોને પોતાના શરીર પર મારતો હતો અને ભયંકર ચિત્કાર શબ્દ કરતો હતો, એ એટલા ભેરથી દોડતો હતો કે સો યોજન મુઠી નિકળી જતો. થાક લાગતો અને શરીર ન્યારે ઢીલું થઈ જતું ત્યારે તે મુખજ ઉંડા અને ગાઢ અંધકારથી છવાયેલ કુવામાં કુદી પડતો, પાછો ત્યાંથી નિકળતો અને એજ રીતે હજારો મુસલોથી પોતાના શરીરને ટીપતો. બાદમાં શલભ (પતંગ)ની માફક એક મહત્તી અગ્નિ-જ્વાલામાં પડતો અને ત્યાંથી પણ નીકળીને તે મહાન કાંટાંઓવાળા જંગલમાં ઘુસી જતો ત્યાં પણ આમ તેમ દોડતો અને પહેલાંની જેમ પોતાના

પાતયતિ ઉન્માર્ગે પ્રાપયતિ ચતુર્ગતિકસંસારચક્રે ભ્રામયતિ નરકનિગોદાદ્યનન્તદુઃખ-
ગતે નિપાતયતિ રત્નત્રયં લુપ્તયતિ આત્મગુણાન્ પાતયતિ જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટવિધં
કર્મોપાર્જયતિ । તસ્માન્મનો નિગ્રહં કુર્યાત્ ।

અગ્રોદાહરણમ્—

તથાહિ—एको लब्धिसंपन्नो महात्मा वदत्तदोरकमुखवस्त्रिकः ध्याननिष्ठः सन्

હૈ જો અચ્છે-અચ્છે જ્ઞાનીજન 'મી સંયમરૂપી શિશ્વર' સે ઇકદમ પતિત
હો જાતે હૈં ઓર નહીં સેવન કરને યોગ્ય માર્ગ મેં 'મી પ્રવૃત્ત' હો જાતે હૈં ।
ઇસસે ડનકી ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર મેં પરિભ્રમણરૂપ દુર્દશા હી હોતી રહતી
હૈં । નરક ઇવં નિગોદ કે અનંત દુઃખોં કો વે 'ભોગતે' હૈં । ઇન સમસ્ત
દુઃખોં સે આત્મા કા સંરક્ષણ કરનેવાલા જો રત્નત્રય ધર્મ હૈં-વહ ડનકા
લુપ્તા જાતા હૈં । વે ધિલકુલ નિર્ધન બન જાતે હૈં । ઇન નિર્ધનતા મેં ઓર
મી અનેક જો આત્મા કે સદ્ગુણ હૈં ડનકા વિકાસ નહીં હોતે પાતા હૈં
ઇસ સ્થિતિ મેં ઇસ આત્મા કી ઇતની દયનીય સ્થિતિ હો જાતી હૈં, કિ
જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટ પ્રકાર કે કર્મ ઇસ પર રાત ડિન અપના પ્રહાર
કરતે રહતે હૈં । ઇસકો ડસ સમય ઘચાનેવાલા કોઈ નહીં હોતા હૈં । ઇસ
લિયે મોક્ષાભિલાષી કા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ મન કા નિગ્રહ કરે ।

ઇસ વિષય કો ઇક ઉદાહરણ દ્વારા સ્પષ્ટ કિયા જાતા હૈં—

कोई एक महात्मा जो लब्धिसंपन्न थे, एक वृक्ष के नीचे ध्यानमें

મન એલું ચંચળ છે કે ભલભલા જ્ઞાનીજનને પણ ચંચળરૂપી શિશ્વર ઉપરથી
એકદમ નીચે ગળડાવી મુકે છે, અને સેવન ન કરવા યોગ્ય માર્ગમાં પ્રવૃત્ત
બનાવી દે છે. આથી તેમની ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં પરિભ્રમણ રૂપ દુર્દશા જ
થતી રહે છે. નરક અને નિગોદના અનંત દુઃખો તે લોગવે છે. આ સમસ્ત
દુઃખોથી આત્માનું રક્ષણ કરનાર જે રત્નત્રય ધર્મ છે-તે એની પાસેથી
લુપ્તાઈ બાય છે, આથી ધિલકુલ નિર્ધન બની બાય છે. આ નિર્ધનતામાં
આત્માના જે ખીબા સદ્ગુણ હોય છે એનો પણ વિકાસ થતો નથી. આ
પરિસ્થિતિમાં આત્માની એટલી દયામય હાલત થઈ બાય છે, કે જ્ઞાનાવરણાદિક
આઠ પ્રકારનાં કર્મ રાત અને દિવસ એના પર પ્રહાર કરતાં રહે છે. આ સમયે
એને આમાંથી કોઈ બચાવનાર હોતું નથી આ માટે મોક્ષાભિલાષીનું કર્તવ્ય
છે કે, તે મનનો નિગ્રહ કરે.

આ વિષયને એક ઉદાહરણ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—

કોઈ એક મહાત્મા જે લ્બિસંપન્ન હતા, એક વૃક્ષની નીચે ધ્યાનમાં

અહમન્યો નાસ્મિ કિં તુ મનોનામ્ના પ્રસિદ્ધોઽસ્મિ ઇષ્ટાનિષ્ટશબ્દાદિવિષયે પ્રવર્ત-
માનોઽહં તૃષ્ણારજ્જ્વા પ્રાણિનં વધ્નામિ, તતસ્તમારમ્ભપરિગ્રહાઽસક્તં સંસારચક્રે
ભ્રામયન્ કદાચિદ્દેવજાતૌ કદાચિન્નરજાતૌ કદાચિત્તિર્યગ્જાતૌ કદાચિત્ પૃથિ-
વ્યાદિસ્થાવરયોનિષુ દ્વીન્દ્રિયાદિ-ત્રસયોનિષુ અનન્તદુઃખં પ્રાપયામિ । યદા તુ
ભવાદૃશેન મહાત્મના નિગૃહીતો ભવામિ તદા રત્નત્રયારાધનં કારયામિ, મોક્ષમાર્ગે
સ્થાપયામિ, ક્ષપકત્રેણિમારોહયામિ । શ્નૈઃ શ્નૈર્નિગ્રહાભ્યાસપ્રકર્ષે સતિ શાસ્ત્રસંદર્શિ-

નહીં હું-મેરા નામ મન હૈ । ઇષ્ટ અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોં મેં પ્રવૃત્તિ
કરના ઓર તૃષ્ણારૂપી રસી સે પ્રાણિયોં કો જકડના યહી મુઝે પ્રિય
હૈ । મુઝે આનંદ ભી ઇસી મેં આતા હૈ કિ જય પ્રાણી આરંભ પરિગ્રહ મેં
આસક્ત હોકર સંસાર ચક્રમેં ધૂમતા હૈ । મેં હી તો ડનકી ઇસ સ્થિતિ
કા મૂલ કારણ બનતા હું । કમી મેં જીવોં કો દેવજાતિ મેં, કમી મનુષ્ય
યોનિ મેં કમી તિર્યગ્જાતિ મેં, કમી પૃથ્વીયાદિક સ્થાવર યોનિ મેં, કમી
દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસ પર્યાયોં મેં ધુમાતા રહતા હું ઓર વહાંકે અનંત કષ્ટોં
કા ડનહેં પાત્ર બનાતા હુઆ વડા ખુશી હોતા રહતા હું । આપ જૈસે
મહાત્માઓં પર દુઃખ હૈ કિ મેરા બશ નહીં ચલતા । કારણ કિ આપકે
સામર્થ્ય કે આગે મેરી શક્તિ સર્વથા સંકુચિત હો જાતી હૈ । વહ
ઇસ દિશા મેં ન વહ કર દૂસરી દિશા તરફ વહને લગ જાતી હૈ ।
ઇસલિયે મેં નિગૃહીત હોકર આપ જૈસોં સે રત્નત્રય કી આરાધના
કરવાતા હું । મુક્તિ કે માર્ગ મેં લગા દેતા હું તથા ક્ષપકત્રેણિ
પર ભી ચઢા દેતા હું । જય સાધુજનોં કા મુઝે નિગ્રહ કરને

હું બીજો કોઈ નથી-મારું નામ મન છે. ઇષ્ટ અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોમાં
પ્રવૃત્તિ કરવી અને તૃષ્ણારૂપી રસીથી પ્રાણીઓને બાંધવા એ મને પસંદ છે.
મને આનંદ પણ એ વાતમાં આવે છે કે જ્યારે પ્રાણી આરંભ પરિગ્રહમાં
આશક્ત બની સંસાર ચક્રમાં ધૂમે છે. હું યોતેજ તેની આ સ્થિતિતું મૂળ
કારણ બનું છું, કોઈ વખત હું જીવોને દેવ જાતીમાં, ક્યારેક મનુષ્ય યોનીમાં,
ક્યારેક તિર્યંચ ગતિમાં, ક્યારેક પૃથ્વી આદિ સ્થાવર યોનીમાં, ક્યારેક એ
દ્વિન્દ્રિયાવાળા ત્રસ પર્યાયોમાં ધૂમતો રહું છું. અને ત્યાંના અનેક કષ્ટોને પાત્ર
બનાવી હું ખુશી થતો રહું છું. આપ જેવા મહાત્માઓ ઉપર મારો પ્રભાવ પડી
શકતો નથી એ વાતનું મને દુઃખ છે. કારણ કે આ આપના સામર્થ્ય આગળ
મારી શક્તિ સર્વથા સંકુચિત બની જાય છે. તે આ દિશામાં ન વહેતાં બીજી
દિશા તરફ વહેતી હોય છે. આ માટે હું નિગૃહીત બનીને આપ જેવાઓથી
રત્નત્રયની આરાધના કરાવું છું મુક્તિના માર્ગમાં લગાડી દઉં છું, અને ક્ષપક

અથાસૌ દૂરં ગત્વાઽદ્દાહાસં કુર્વન્ ધાવમાનચન્દ્રકિરણશીતલં કદલીવનં પ્રવિષ્ટઃ ।
 ક્ષણાદેવ તતોઽપિ વહિર્નિઃસૃત્ય પુનઃ સ્વદેહોપરિ સહસ્રમુશલૈઃ પ્રહારં કુર્વન્ ધાવમાન
 ઇતસ્તતો ભ્રામ્યતિ । પુનઃ શ્રમેણ શિથિલાવયવઃ સન્ મહાન્યકપે નિપતિતઃ । તત-
 થિરેણ નિઃસૃત્ય પુનઃ કદલીવનં પ્રવિષ્ટઃ, તતોઽપિ નિર્ગત્ય લેતાવનં ગતઃ, લતા-
 વનાદ્ વહિર્ભૂત્વાઽન્યકૂપે પતિતઃ, તદનુ કૂપાન્નિઃસૃત્ય કુસુમવનં ગતસ્તત્રેતસ્તત્તો
 ધાવમાનઃ સ્વદેહોપરિ મુશલૈઃ પ્રહારં કરોતિ તતોઽપિ નિઃસૃત્ય ફલવનં પ્રવિષ્ટઃ,
 તત્રાપિ ધાવમાનઃ સ્વદેહોપરિ પૂર્વવત્ સહસ્રમુશલૈઃ પ્રહારં કરોતિ । एवंविधं पुरुषं
 स महात्मा ज्ञान दृष्ट्या विलोक्य स्वलब्धि बलेन तस्य प्रतिरोधं कृत्वा पृष्ठवान्-
 कस्त्वम् ? किमर्थमेवं क्रियते ? तव किं प्रियमस्ति ? एवं पृष्ठोऽसौ पुरुषोऽब्रवीत्-
 ही प्रहारित करता । फिर दूर जाकर बड़े जोर से हँसता और चंद्रकिरण
 के समान शीतल कदलीवन में प्रवेश कर वहाँ विश्राम करने लगता ।
 क्षण एक विश्रामित होकर वहाँसे बाहर आते ही फिर वही अपनी चाल
 शुरू करता, जब वह इस चाल से थक जाता था तो गाढ़ अंधकार वाले
 कूँ में गिर जाता था, वहाँ से निकल कर फिर कदली वनमें जाता, वहाँ
 से बाहर होते ही लतावन में वहाँसे फिर अंधकूपमें वहाँ से कुसुमित
 वन में, वहाँ से फल वाले वन में इस प्रकार भ्रमण करता-करता वह
 अपने शरीर को मूसलों के प्रहारोंसे कूटता रहता । महात्मा ने जब इस
 प्रकार की इसकी स्थिति देखी तो उन्हें बड़ा ही अचरज हुआ । उसकी
 इस स्थिति को उन्होंने अपने लब्धिवलसे स्थंभित कर दिया और उससे
 पूछा-तुँ कौन है और क्यों इस प्रकार की चेष्टाएँ करता है ? तुझे क्या
 प्रिय है ? महात्माकी इस बात को सुनकर उसने कहा कि मैं और कोई

શરીર ઉપર મુશલોના ફટકા લાગાવતો પછી થોડા આગળ વધી ભેર ભેરથી
 હસતો અને ચંદ્રકિરણ સમાન શીતળ કેળોના વનમાં પ્રવેશ કરી ત્યાં આરામ
 કરવા લાગતો. થોડો સમય વિશ્રાંતિ લઈ-શ્રમ રહિત બની ત્યાંથી બહાર
 નીકળી પૂર્વવત્ દોડા દોડ અને શરીર ઉપર મુશલના પ્રહારની પ્રવૃત્તિ, અંધ-
 કારવાળા કુવામાં પડવું, ફરી પાછો કેળોના વનમાં પ્રવેશ, ત્યાંથી લતા વનમાં,
 ત્યાંથી ફરી કુવામાં, ત્યાંથી નીકળી ફરી કેળોના વનમાં, આ પ્રકારે બ્રમણ કરતો
 અને પોતાના શરીરને મુશલોથી મારતો. આ સ્થિતિ બ્યારે મહાત્માએ જોઈ
 ત્યારે તેમને ભારે અચરજ થઈ, એની એ સ્થિતિને પોતાના લબ્ધિબળથી સ્થંભિત
 બનાવી દઈ મહાત્માએ તેને પૂછ્યું-તું કોણ છે અને આ પ્રકારની ચેષ્ટાઓ
 શા માટે કરે છે ? તને શું પ્રિય છે ? મહાત્માની વાત સાંભળી તેણે કં કં

પદ્મા—આત્મા=વાહોન્દ્રિયં દમિતવ્ય એવં વાહોન્દ્રિય પશ્ચવિધં શ્રોત્રચક્ષુઘ્ર્ણણ
રસનસ્પર્શનભેદાત્ । વાહોન્દ્રિયાણાં દમનાકરણે આત્મનો વિનાશઃ સ્યાત્ । ઉત્તંચ—

જિસ પ્રકાર સૂર્ય કે ઉદય હોને કે પહિલે उसका आलोक-प्रकाश
प्रसृत हो जाता है उसी प्रकार समस्त रूपादिक पदार्थोंको विषय करने
वाला यह प्रतिभज्ञान, केवलज्ञानरूप सूर्य के उदित होने के पहिले उसकी
प्रभा सरीखा प्रकट हो जाता है । जिससे यह बात निश्चित हो जाती
है कि अब इस आत्मा में केवलज्ञान का उदय होनेवाला है । जब मनो-
निग्रह का अभ्यास सर्वोत्कृष्ट अवस्था संपन्न हो जाता है तब उस समय
आत्मा में केवलज्ञान की उद्भूति हो जाती है । इसके समस्त पदार्थोंका
स्पष्ट प्रतिभास होने लग जाता है । कोई भी रूपी अथवा अरूपी पदार्थ
ऐसा नहीं बचता जो केवलज्ञान का विषय नहीं बनता हो । यह ज्ञान
अनुपम है—ऐसा कोई और ज्ञान नहीं है—कि जिससे इसे उपमित किया
जा सके । इसके द्वारा प्रकाशित पदार्थों में किसी भी प्रकार से बाधा
नहीं आती है । इस प्रकार महात्मासे कहकर वह मन नामका पुरुष
अन्तर्हित हो गया ॥

आत्मा शब्द का अर्थ वाह्य इन्द्रियां भी हैं । वे स्पर्शन, रसना,
घ्राण, चक्षु और कर्ण के भेद से ५ प्रकार की हैं । मोक्षाभिलाषी आत्मा

જાનની અપેક્ષા રહેતી નથી. જેમ સૂર્યનો ઉદય થયા પહેલાં તેનો આવવાનો
પ્રકાશ પ્રસાર પામે છે, ભાસ પ્રસુત બને છે તે પ્રકારે સમસ્ત રૂપાદિક પદાર્થોનો
વિષય કરવાવાળા આ પ્રાતિભા જ્ઞાન કેવળ જ્ઞાનરૂપ સૂર્યના ઉદય થતાં
પહેલાં તેની પ્રભાકરણે પ્રગટ થાય છે. જેથી એ વાત નિશ્ચય બને છે કે
હવે આ આત્મામાં કેવલજ્ઞાનનો ઉદય થવાનો છે. બ્યારે મનોનિગ્રહનો અભ્યાસ
સર્વોત્કૃષ્ટ અવસ્થા સંપન્ન બની બાય છે, ત્યારે તે સમય આત્મામાં કેવલજ્ઞાનની
ઉદ્ભૂતિ થઈ બાય છે. આથી સમસ્ત પદાર્થોનો સ્પષ્ટ પ્રતિભાસ થવા લાગી બાય
છે. કોઈ પણ રૂપી અથવા અરૂપી પદાર્થ એવો નથી બચતો જે કેવલજ્ઞાનનો
વિષય ન બનતો હોય, આ જ્ઞાન અનુપમ છે એવું બીજું કોઈ જ્ઞાન નથી કે
જેનાથી આને ઉપમિત કરી શકે. તેના દ્વારા પ્રકાશિત પદાર્થોમાં કોઈ પણ
પ્રકારની બાધા આવતી નથી. આ પ્રકારે મહાત્માને કહીને તે મન નામનો
પુરૂષ અંતર્ધાન થઈ ગયો.

આત્મા શબ્દનો અર્થ બાહ્ય ઇન્દ્રિયો પણ છે, જે સ્પર્શન, રસના, ઘ્રાણ,
ચક્ષુ, અને કાનના સેદથી પાંચ પ્રકારની છે. મોક્ષાભિલાષી આત્મા એવું ઇમન

તોપાયાઃ વચનગોચરાતીતાઃ, નિગ્રહાભ્યાસપ્રકર્પરહિતમાણિગણસંવેદનયાગમ્યાઃ
સિદ્ધિપદસંપજ્જનકાઃ સૂક્ષ્મસૂક્ષ્મતરાર્થવિપયા મનાઃ સમુદ્રસત્સ્ફુટપ્રતિભાસા
જ્ઞાનવિશેષા ઉત્પદ્યન્તે। તતઃ કિંચિદ્નાત્યન્તપ્રકર્પે નિરપેક્ષમત્યાદિજ્ઞાનં પ્રકર્પપર્યન્તો-
ત્તરકાલભાવિકેવલજ્ઞાનાદર્વાક્તનં સવિતુરુદયાત્ પ્રાઃ તદાલોકકલ્પમ્ અશેષ-
રૂપાદિવસ્તુવિશેષં પ્રાતિમં જ્ઞાનમુદયતે, પથાત્ સર્વોત્કૃષ્ટપ્રકર્પે સતિ મુસ્પટપ્રતિ-
ભાસંસકલલોકાલોકવિપયમનુપમમવાધ્યં કેવલજ્ઞાનમુત્પદ્યતે। એવમુક્ત્વાઽસૌ તિરો-
હિતો જાતઃ। તસ્માદાત્મેવ દમનીયઃ।

કા અભ્યાસ ધીરે-ધીરે પ્રકર્પ અવસ્થા કો પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ તય્ ઇસ
અભ્યાસ કી પ્રકર્પતા કી કૃપા સે ઉન્હેં જ્ઞાનવિશેષોંકી પ્રાપ્તિ હો જાતી
હૈ। ઇનસે વે શાસ્ત્ર પ્રતિપાદિત ઉપાયોં કા નિરીક્ષણ કિયા કરતે હૈં।
ઉન જ્ઞાનવિશેષોં કા કથન યેસા તો નહીં હૈં જો આપકે સમક્ષ વચનોં
દ્વારા કથિત હો સકે। યદ્ વાત તો વે હી જાન સકતે હૈં જો ઇસ અવ-
સ્થા પર પહુંચ ચુકે હોતે હૈં। જિનકી આત્મા ઇસ નિગ્રહ કે અભ્યાસ કે
પ્રકર્પ સે વિહીન હૈં ભલા વે ઇનકે સ્વાદ કો ક્યા જાનેં। યે જ્ઞાન વિશેષ
સિદ્ધિપદરૂપી સંપત્તિ કે જનક હોતે હૈં। સૂક્ષ્મ, સૂક્ષ્મતર મી પદાર્થોંકે યે
નિર્ણાયક હોતે હૈં। ઇનસે જીવોંકા કુછ-કુછ પદાર્થોંકા સ્પષ્ટ પ્રતિભાસ
હોને લગ જાતા હૈં। જય મનોનિગ્રહ કરનેકા અભ્યાસ કિશ્ચિત્ ન્યૂન
અત્યંત પ્રકર્પ અવસ્થા તક પહુંચ જાતા હૈ તય્ ઉસ સમય આત્મા મેં
પ્રાતિભ નામકા એક જ્ઞાનવિશેષ ઉત્પન્ન હોતા હૈં। યદ્ જ્ઞાન કેવલજ્ઞાનસે
પહિલે હોતા હૈં। ઇસમેં મત્યાદિક પરોક્ષ જ્ઞાનકી અપેક્ષા નહીં રહતી હૈં।

શ્રેણી પર પણ ચડાવી હઉં છું. બ્યારે સાધુજનને નિગ્રહ કરવાને મને અભ્યાસ
ધીરે ધીરે પ્રકર્ષ અવસ્થા પ્રાપ્ત થાય છે, ત્યારે આ અભ્યાસની પ્રકર્ષતાની
કૃપાથી તેને જ્ઞાન વિશેષોની પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે, તેનાથી તે શાસ્ત્ર પ્રતિપાદિત
ઉપાયોનું નિરીક્ષણ કર્યા કરે છે. એ જ્ઞાન વિશેષોનું કથન એવું તો નથી જે
આપની સામે વચનથી કહી શકાય, તે વાત તો તેજ જાણી શકે છે જે આ અવ-
સ્થાને પહોંચેલ છે. જેની આત્મા આ નિગ્રહના અભ્યાસના પ્રકર્ષથી વિહિન
છે. આવા જીવ એ સ્વાદને ક્યાંથી જાણે. આ જ્ઞાન વિશેષ સિદ્ધિ પદરૂપી
સંપત્તિના જનક હોય છે. સૂક્ષ્મથી સૂક્ષ્મ પદાર્થોના પણ એ જાણકાર હોય છે.
એમનાથી જીવોને કોઈ કોઈ પદાર્થોને સ્પષ્ટ પ્રતિભાસ થવા લાગે છે.
મને નિગ્રહ કરવાને અભ્યાસ બ્યારે થોડા અંશે અત્યંત પ્રકર્ષ અવસ્થા સુધિ
પહોંચી જાય છે ત્યારે એ સમયે આત્મામાં પ્રાતિભ નામનું એક જ્ઞાનવિશેષ
ઉત્પન્ન થાય છે. આ જ્ઞાન કેવલ જ્ઞાનથી પહેલાં થાય છે. તેમાં મત્યાદિક

અયં ભાવઃ—મનોનિગ્રહેણ વાહ્યેન્દ્રિયનિગ્રહેણ ચાત્મા ઉપશમભાવે નેતવ્ય
ઇતિ ભાવઃ ।

હુ=નિશ્ચયેન, સ્વલુ-યતઃ આત્મા દુર્દમઃ=દુર્જયઃ ।

અત્રોદાહરણમ્—

‘અપ્પા હુ સ્વલુ દુદ્દમો’ ઇતિ ભગવદ્વચનં ભદ્રાચાર્યસન્નિધૌ શ્રુત્વાઽઽત્મક-
લ્યાણસાધક ઉગ્રવંશોત્પન્ન ઉગ્રનામા નૃપઃ પ્રવ્રજ્યાં ગૃહીતવાન્ । સ્વકલ્યાણાર્થં મનો
નિગ્રહીતું પ્રવૃત્તઃ । કિન્તુ મનઃ પારદવત્ પરમચ્ચલત્, તેન તત્સ્વાયત્તં ન જ્ઞાતમ્,
અસૌ મુનિવ્રતધારી નૃપશ્ચિન્તયતિ—અહો ! એકેનાપિ કોપકટાક્ષમાત્રેણ સર્વે જના
મમાજ્ઞાં શિરસિધૃત્વા મમાયત્તાઃ સન્તો મમ ચરણં શરણીકૃત્ય તિષ્ઠન્તિ સ્મ । પરન્તુ
વિષયોં કી ઓર અર્થાત્ અસંયમ માર્ગે મેં પ્રવૃત્તિ કરતે હૈં । સંયમરૂપી
લગામ સે સંયમિત કરે જિસસે ડનકી અસંયમ મેં પ્રવૃત્તિ રુક જાય । કહને
કા ભાવ યહી હૈ કિ પાંચ ઇન્દ્રિય એવં મન ઇન છહ કો નિગૃહીત કરને સે
આત્મા અપને ઉપશમ ભાવમેં સ્થિત હોતા હૈ । અતઃ ઇનકે નિગ્રહ કરનેકા
પ્રયત્ન પ્રત્યેક મોક્ષાભિલાષીઃ આત્મા કો કરના ચાહિયે । “અપ્પા હુ
સ્વલુ દુદ્દમો ” ઇસ પ્રશુ કથિત વચન કો ભદ્રાચાર્ય કે પાસ સુનકર ઉગ્ર-
વંશીય ઉગ્ર નામકા રાજા દીક્ષિત હુએ । ડન્હોને હર તરહ સે અપને મન
કો નિગ્રહ કરને કા સ્વયં પ્રયત્ન કિયા, પરન્તુ પારે એવં પવનકે સમાન
અતિ ચંચલ હોને સે ડસકા વહ નિગ્રહ નહીં કર સકે । ડસી મુનિવ્રત-
ધારી રાજા ને વિચાર કિયા—વડે આશ્ચર્યકી વાત હૈ કિ એક કોપકુટિલ
બ્રહ્મકુટીમાત્ર સે બી સમસ્ત મેરે પ્રજાજન મેરી આજ્ઞાકો શિર પર ધારણ
કર લિયા કરતે થે ઓર ચરણ કી શરણ મેં આ જાતે થે—પરન્તુ—યહ

માર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે. એને સંયમરૂપી લગામથી સંયમિત બનાવે એનાથી
તેની અસંયમની પ્રવૃત્તિ રોકાઈ જાય. મતલબ કહેવાનો એ છે કે, પાંચ ઇન્દ્રિય
અને મન, આ છ ને નિગૃહીત કરવાથી આત્મા પોતાના ઉપશમ ભાવમાં સ્થિત
થાય છે. આથી એને નિગ્રહ કરવાનો પ્રયત્ન કરેક મોક્ષાભિલાષી આત્માએ
કરવો જોઈએ. “અપ્પાહુ સ્વલુ દુદ્દમો ” આ પ્રશુએ કહેલા વચનને ભદ્રાચાર્યની
પાસેથી સાંભળીને ઉગ્રવંશીય ઉગ્ર નામના રાજા દીક્ષિત થયા. તેઓએ કરેક
પ્રકારે પોતાના મનને નિગ્રહ કરવાનો પ્રયત્ન કર્યો, પરંતુ પવનના સમાન
અતિ ચંચળ હોવાથી તેનાથી નિગ્રહ કરી શકાયો નહીં. એ મુનિવ્રતધારી રાજાએ
વિચાર કર્યો—ઘણા આશ્ચર્યની વાત છે કે, એક કોપકુટિલ બ્રહ્મકુટી માત્રથી મારા
સમસ્ત પ્રજાજનો મારી આજ્ઞાને માથા ઉપર ધારણ કરતા હતા અને ચરણના
શરણમાં આવી જતા હતા. પરંતુ આ મન કેટલું બળવાળું છે એ મારા વશમાં

કુરંગમાતૃપતૃશ્ચક્ર,-

મીના હતાઃ પશ્ચભિરેવ પશ્ચ ।

एकः प्रमादी स न हन्यते किं,

यः सेवते पश्चभिरेव पश्च ॥ ૧ ॥

અન્યચ—ઇન્દ્રિયાણાં હિ ચરતાં, વિષયેષ્વપહારિષુ ।

સંયમે યત્નમાતિષ્ઠેદ્, વિદ્વાન્ યન્તેવ વાજિનામ્ ॥ ૧ ॥

અયમર્થઃ—વિદ્વાન્=તત્ત્વજ્ઞઃ અપહારિષુ=પ્રાકર્ષકેષુ=તત્ત્તદિન્દ્રિયવિષયેષુ ચરતાં=ગચ્છતામ્ ઇન્દ્રિયાણાં સંયમે=સંયમને યત્નમ્ આતિષ્ઠેત્=કુર્યાત્, ક ઇવ ? इत्याह-वाजिनाम्=अश्वानां यन्तेव=सारथिरिवेति ।

यदि इनका दमन नहीं करता है तो वह मुक्तिमार्ग में प्रवृत्त नहीं हो सकता है और न साधक ही बन सकता है । इन्द्रियों का यदि दमन न किया जाय तो शास्त्रकारों ने यहां तक कह दिया है कि आत्मा का भी विनाश हो जाता है । कहा भी है—देखो—जब क्रमशः एक एक इन्द्रिय के विषय में लोलुप होने से कुरंग-हिरण, मातंग-हस्ती, पतंग, भ्रमर एवं मीन-मछली, ये प्राणी अपने प्राणों से रहित होते हैं तब जो मनुष्य पांचों इन्द्रियोंके विषय में लोलुप बनेगा क्या वह विनष्ट नहीं होगा ? परंतु अवश्य विनष्ट होगा—दुर्गति को प्राप्त करेगा । अतः जिस प्रकार यन्ता-अश्वरोही-घुड़सवार-इच्छित मार्ग पर चलाने के लिये घोड़े को लगाम द्वारा अपने आधीन बना लेता है उसी प्रकार आत्महितैषी का कर्तव्य है कि वह भी इन इन्द्रियरूपी घोड़ों को कि जो अपने-अपने

ન કરે તો તે મુક્તિ માર્ગમાં પ્રવર્તી બની શકતો નથી. તેમજ સાધક પણ બની શકતો નથી. ઇન્દ્રિયોનું જે દમન ન કરવામાં આવે તો શાસ્ત્રકારોએ ત્યાં સુધી કહેલું છે કે, આત્માનો પણ વિનાશ થઈ જાય કહ્યું પણ છે—બુઓ-બ્યારે ક્રમથી એક એક ઇન્દ્રિયના વિષયમાં લોલુપ હોવાથી કુરંગ-હરણ, માતંગ-હાથી, પતંગ, ભ્રમર, તેમજ માછલી, આ પ્રાણી પોતાના પ્રાણોથી રહિત બને છે. તો પછી માણસ બ્યારે પાંચેય ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં લોલુપ બની રહે તો તેનો નાશ ન થાય ? ખરેખર નાશ થવાનો—દુર્ગતિને પ્રાપ્ત કરશે. એથી જે રીતે ઘોડેસવાર ઇચ્છિત માર્ગ ઉપર ચલાવવા માટે ઘોડાને લગામ દ્વારા પોતાના આધિન બનાવી લે છે. એજ પ્રકારે આત્મહિતૈષીનું કર્તવ્ય છે કે, તે પણ આ ઇન્દ્રિયરૂપી ઘોડાઓને કે જે પોત પોતાના વિષયોની તરફ અર્થાત અસંયમ

नियमयति, ततोऽपि निःसृतं पुनरुपशमभावे समारोहयति, ततोऽपि निःसृतं दृष्ट्वा स चिन्तयति—अहो ! मनो हि दुर्दमम् तदपि ज्ञानक्रियाभ्यां वशीकरिष्यामि, इति विचिन्त्य क्षपकश्रेण्यामारुह्य मनो निगृह्य शुक्लध्यानद्वितीयपादं संप्राप्य केवलज्ञानं प्राप्तवान् । आत्मानं दाम्प्यन् अस्मिन् लोके परत्र च सुखी भवति ।

अत्रोदाहरणम्—

एको धर्मघोषनामाऽऽचार्यः शिष्यसहितो ग्रामानुग्रामं विहरन् विस्मृतमार्गः पञ्चशतचौराधिष्ठितायां चौरपल्लयां गतः । मार्गविस्मरणादेव चातुर्मास्यकरणाथ

जय यह वहां भी नहीं ठहरा तो सूत्रार्थचिन्तनरूप ध्यान में लगा दिया । तब यह वहां सूत्रार्थ के चिन्तन करने में लग गया । परंतु यह बहुत काल तक स्थित नहीं रह सका । तो फिर उसको उपशम भाव में लगाया । जिससे उसको शांति मिले, फिर भी यह स्थिर नहीं रहा और निकला तो मुनि विचारने लगे अहो ! मन बड़ा ही दुर्दम है उसको ज्ञान एवं क्रिया में लगा दिया । ज्ञान क्रिया से इसको वश में करूंगा ऐसा निश्चित विचारकर क्षपक श्रेणी का आश्रयण किया, फिर मन स्थिर हो गया, और शुक्ल ध्यान के द्वितीय पाद के अवलम्बन से केवलज्ञान को प्राप्त कर लिया और सिद्धिपद पाये, तात्पर्य कहनेका यह है कि आत्मा को दमन करने वाला साधु इस लोक एवं परलोक में सुखी होता है ।

धर्मघोष नाम के कोई एक आचार्य थे । वे शिष्यों सहित विहार करते हुए किसी दूसरे ग्राम को पधार रहे थे । चलते-चलते वे मार्ग

तडिं जवानो प्रयत्न कर्यो के, राज्ञिओ तुरतज स्वाध्यायभां निरत करी दीधुं । न्यारे ते त्यां पक्षु न टक्युं त्यारे सूत्रार्थं चिंतनरूप ध्यानभां लगावी दीधुं । अने ते सूत्रार्थना चिंतनभां त्यां लागी गया, परंतु त्यां पक्षु ते लांओ समय स्थिर न रही सक्या । आ पछी उपशम लावभां लगाववाभां आवतां जेभांथी शांति भजे । छतां पक्षु ओ स्थिर न रहुं । त्यारे मुनि वीचारवा लाग्या के, मन भहुज थंयण छे । तेने ज्ञान वजेरेनी डियाभां लगाववाभां आव्युं, ज्ञानक्रियाथी तेने वश करीश जेवो निश्चिंत विचार करी क्षपक श्रेण्याना आश्रय लीधो, पछी मन स्थिर थयुं अने शुक्ल ध्यानना भीज पदना अवलंबनथी केवलज्ञानने प्राप्त क्युं । अने सिद्धी पद पाभ्या । तात्पर्य कहेवानुं ओ छे के, आत्माने दमन करवावाणा साधु आ लोक अने परलोकभां सुखी थाय छे । आने उदाहरण द्वारा समर्थन करवाभां आवे छे—

धर्मघोष नामना कोई ओक आचार्य हुता, ते शिष्यो सहित विहार करीने कोछ गांमे जई रह्या हुता, यावतां यावतां ते मार्ग भुली गया अने

इदमेकमेव मनः शतधा मां नर्तयति, अहं जातिसम्पन्नः कुलसम्पन्न उग्रवंशीयः क्षत्रियोऽस्मि, येन केनापि प्रकारेणातिचञ्चलमिदं मनः स्वायत्तीकरिष्यामि तपसा संयमेन वा स्वाध्यायध्यानादिना वा यथातथा मनः सुस्थिरं करिष्यामि, इति मनसि निश्चित्य समितिषु मनः संयोजयति, ततो निःसरति तदनु गुप्तिषु नियोजयति ततोऽपि निःसृतं स्वाध्याये, ततोऽपि निःसृतं मृगार्थचिन्तनलक्षणे ध्याने

मन कितना ચલિષ્ટ છે જો મેરે વશમાં નહીં આતા હૈ—ઉલ્ટા મુશ્કેલી અનેક તરહ સે નચાતા હૈ । મેં જાતિ સંપન્ન છું, કુલ સંપન્ન છું ઓર ઉગ્રવંશીય ક્ષત્રિય છું, અતઃ મેરા કર્તવ્ય હૈ કિ इसका विजय करने के लिये मैं अपनी शक्ति का परिचय दूं । मैं कोई ऐसा वैसा व्यक्ति तो हूं नहीं जो इसके वश में पड़ जाऊं । अतः जैसे भी हो सकेगा हर एक उपाय से चाहे यह कितना भी चंचल क्यों न हो इसे अपने अधीन बनाकर ही रहूंगा । यदि यह तप से वश में होना चाहेगा—तो तप करूंगा—संयम से वश में होना चाहेगा—तो संयम मार्ग अराधुंगा, यदि स्वाध्याय एवं ध्यान से वश में होना चाहेगा—तो स्वाध्याय, ध्यान करूंगा, परंतु इसे अब छोड़ूंगा नहीं । इस प्रकार दृढ प्रतिज्ञा होकर सर्वप्रथम उसने पांच समितियों के पालन करने में मनको नियुक्त किया, परन्तु यह तो बड़ा ही चंचल था, इसलिये ज्यों ही वहां से निकला की गुप्तियों में नियुक्त किया, फिर भी यह वहां कुछ ही देर ठहर कर जब इसने इधर उधर जानेका प्रयत्न किया कि राजकपि ने शीघ्र ही स्वाध्याय में निरत कर दिया ।

આવતું નથી. ઉલટું મનેજ અનેક રીતે નચાવે છે. હું ભતિ સંપન્ન છું, કુળ સંપન્ન છું, અને ઉગ્ર વંશીય ક્ષત્રિય છું. આથી મારું કર્તવ્ય છે કે, એના ઉપર વિજય કરવા માટે હું મારી શક્તિનો પરિચય કરાવું. હું કોઈ એવો નબળા મનનો માણસ નથી કે એના વશમાં પડી જાઉં. આથી જેમ અને તેમ દરેક ઉપાયથી આહે તે કેટલું પણ ચંચલ કેમ ન હોય તેને મારા આધિન બનાવીને જ જંપીશ. જો તે તપથી વશ બનશે તો હું તપ કરીશ—સંયમથી વશ થશે તો સંયમ માર્ગનું આરાધન કરીશ, જો સ્વાધ્યાય અને ધ્યાનથી વશમાં આવશે તો સ્વાધ્યાય, ધ્યાન કરીશ. પરંતુ આને હું છોડનાર નથી. આ પ્રકારની દૃઢ પ્રતિજ્ઞા લઈ સર્વ પ્રથમ તેણે પાંચ સમિતિઓનું પાલન કરવામાં મન પડેલું પરંતુ મન તો ભારે ચંચલ હતું આ કારણે જેમ-ત્યાંથી નિકળ્યું કે ગુપ્તિઓમાં નિયુક્ત થયું. છતાં પણ તે ત્યાં થોડીવાર રહી બ્યારે તેણે અહિં

मेधां पिपीलिका हन्ति, यूका कुर्याज्जलोदरम् ॥
 कुरुते मक्षिका वान्ति, कुष्ठरोगं च कोलिकः ॥ १ ॥
 कण्टको दारुखण्डं च, वितनोति गलव्ययाम् ।
 व्यञ्जनान्तर्निपतित,—स्तालु विध्यति वृश्चिकः ॥ २ ॥
 विलग्नस्तु गले वालः, स्वरभंगाय जायते ।
 इत्यादयो दृष्टदोषाः, सर्वेषां निशिभोजने ॥ ३ ॥
 तथैव परलोकेऽपि, दुर्गतिर्जायते ध्रुवम् ।
 तस्मात् रात्रौ न भुञ्जीत प्रोक्तं भगवता सदा ॥ ४ ॥

लिये उनके पीछे २ गये । वहां आचार्य ने उन्हें रात्रिभोजन न करने का उपदेश दिया । उस समय में उन्होंने ने बतलाया कि रात्रिभोजन में अनेक दोष हैं, क्यों कि सूर्यास्त हो जाने से उस समय अनेक सूक्ष्म जीवों का प्रचार और उत्पत्ति होती है तथा यदि भोजन में पिपीलिका-कीड़ी खाने में आ जावे तो खाने वाले की बुद्धि नष्ट हो जाती है । जूं यदि भोजनमें खाने में आ जावे तो जलोदर नामका रोग हो जाता है । भोजनमें मक्षिका आ जानेसे बमन होता है, भोजनमें कौलिक करोळिया के खाने से कुष्ठरोग होता है, कांटा तथा लकड़ी की फांस से गले में घोर दुःख होता है, विछु खाने में आ जाय तो तालु का भेदन होता है, केश-खाने में आ जावे तो स्वर का भंग होता है इत्यादि अनेक दोष रात्रिभोजन में हैं । तथा परलोक में रात्रिभोजन करने वाले को दुर्गति की प्राप्ति होती है । इसलिये किसी को रात्रिभोजन नहीं करना चाहिये ।

भडारान्ने पछोऽयाडवा तेमनी पाछण पाछण गया. त्यां आचार्ये तेमने रात्री लोअन न करवाने उपदेश आये, ते वणते तेमले जख्वाव्हुं के रात्री लोअनमां अनेक दोष छे केमके, सूर्यास्त थर्ध जवाथी अनेक सूक्ष्म जिवेने प्रचार अने उत्पत्ति थाय छे. अने लोअनमां ले पीपीलीका-कीड़ी आवामां आवी जय तो बुद्धिने नाश थाय छे. जूं वगेरे ले आवामां आवी जय तो जलोदर नामने रोग थाय छे, माभी आवी जवाथी छलटी थाय छे, ले करौणीये आवामां आवी जय तो कौल थाय छे, कांटा तेमज लाकडांणी फांस जेवुं आवामां आवी जय तो गुणामां अटकाई जय छे अने तालु दुःख थाय छे, पिछी ले आवामां आवी जय तो तालुवुं तोडी नाये छे, मोवाणे आवामां आवी जय तो स्वरने भंग थाय छे. इत्यादि अनेक दोष रात्री लोअनमां छे अने रात्री लोअन कराने दुर्गतिनी प्राप्ति थाय छे. आ भाटे केछि रात्री लोअन न करवुं,

निश्चितस्थानं गन्तुमक्षमो भूत्वा चौरपत्न्यामेव चातुर्मास्येऽवस्थातुं चौर-
पल्लीनायकमुपाश्रयं याचितवान् चौरपल्लीनायकेन प्रोक्तम्—अत्र भवता देशना न
कर्तव्या, सर्वे वयं तस्करवृत्तिजीविनः । मुनिना तद्वचनं स्वीकृत्य स्वाध्यायध्याना-
दिना चातुर्मास्यं यापितम् । चातुर्मास्यावसाने विहारसमये सर्वे तस्कराः किञ्चिद्दूरं
मुनिमनुगताः तदा मुनिना तेषु रात्रिमोजनप्रतिषेधरूपा देशना दत्ता । तथा चोक्तम्—

भूल गये और चोरोंकी पल्ली में जा पहुँचे । वहाँ ५०० चौर रहते थे,
चौमासे का समय बिलकुल नजदीक आ पहुँचा था । इतना समय था
नहीं कि किसी और दूसरे स्थान पर वहाँ से चलकर चौमासे में रहने
का निश्चय किया जा सके । अतः आचार्यने वहीं पर चतुर्मास व्यतीत
करने के अभिप्राय से चौरों के नायकसे चतुर्मास में ठहरने के लिये
उपाश्रयकी याचना की । आचार्यकी बात सुनकर पल्लीपति ने उनसे कहा
कि आप यहाँ ठहरें—हमें इसमें कुछ हरकत नहीं है परंतु आप यहाँ
धार्मिक उपदेश देने का कष्ट न करें । कारण कि हम सब यहाँ के
निवासी चोरी करके अपना निर्वाह करते हैं कहीं ऐसा न हो कि
आपकी देशना से हमारा व्यापार धंदाबंद हो जाय । आचार्य ने उसकी
बात मान ली और स्वाध्याय एवं ध्यान से वहीं पर रहते हुए अपना
चौमासे का समय व्यतीत किया । जब विहार करने का समय आया
तो उस वक़्त सब चौर मिलकर आचार्य को पहुँचाने के लिए इकट्ठे
हुए और कुछ दूर तक सब के सब आचार्य महाराज को पहुँचाने के

शेराना नेसडाभां ङर्ध पडोंय्या. त्यां ५०० चौर रहता डता, योभासानो समय
नञ्ज आवी रह्यो डतो, ओटवो समय न डतो डे त्यांथी भीज स्थाने पडोंथीने
त्यां योभासानां रहवानो निश्चय करी सकाय. आथी आचार्ये ओ स्थान उपर
यतुर्मास व्यतीत करवाना अलिप्रायथी शेराना नायकथी यतुर्मास रोकावा भाटे
आश्रय स्थाननी याचना करी. आचार्यनी बात सांभली शेराना नायके कहुं डे
बडे आप अडिं रहो अमने ओभां कांई बांधा नथी. परंतु आप अडिं
धामीं ड उपदेश आपवानो विचार न राखथो. कारख डे अमे सधणा अडिं ना
निवासी चोरी करीने पोतानो निर्वाड करीओ छीये. कदाय ओतुं न अने डे
आपना उपदेशथी अमारो धंधा अंध थंध अय, आचार्ये तेनी बात भानी
लीधी अने स्वाध्याय अने ध्यानथी त्यां रहीने पोतानो योभासानो समय व्यतीत
करीं. न्यारे विहार करवानो समय आओ ते वजते अथा शेराने भणी आचा-
र्यने पडोंयाडवा भाटे ओकडा थया अने थोडे दूर सुधी आ अथा

निर्विपा । पाकप्रवृत्ता अपि एवमेव विचार्य स्वभोजनार्थमर्थं मांसं पृथक् निधाय
अर्थं मांसं विषमिश्रितं कृतवन्तः । सर्वे भोजनार्थमुपस्थिताः पल्लीनायकं प्रोक्तवन्तः ।
पल्लीपतिनोक्तम्—इदानीं रात्रिः संजाता, मया रात्रिभोजनस्य प्रत्याख्यानं कृतम्,
सर्वैर्भुज्यताम्, ततः पल्लीनायकाज्ञया सर्वे चौरा भोक्तुमुपविष्टाः । तत्र सार्धद्वय-
संख्यकाश्चोराः सविषमदिरापानेन मृताः, अन्ये सार्धद्वयसंख्यकाः सविष-
मांसभक्षणेन मृताः । एतत् सर्वं दृष्ट्वा पल्लीनायकेन मनसि चिन्तितम्—

से आधी मदिरा में विष मिला दिया जाय । ऐसा विचार कर उन्होंने
आधी मदिरा में विष मिला दिया और आधी मदिरा अपने लिये बिना
विष की अलग रख ली । उधर जो मांस आदि पकाने में लगे हुए थे
उन्होंने भी यही विचार किया और जैसा काम इन लोगोंने किया वैसा
ही उन्होंने ने किया—अर्थात् उन लोगों ने भी आधे भोजन में विष मिला
दिया और आधा भोजन अपने लिये बिना विष का अलग रख लिया ।
जब सब भोजन के लिये बैठने लगे तब सब ने पल्लीपति को भोजन
करने के लिये बुलाया । परंतु पल्लीपति ने उस समय भोजन करने से
यह कह कर मना कर दिया कि देखो भाईयों इस समय रात्रि हो चुकी है—
मैं ने रात्रिभोजन का त्याग किया है, अतः आप लोग ही इस समय
भोजन करें ! पल्लीपति की इस प्रकार आज्ञा प्राप्त कर वे सब के सब
भोजन करने के लिये बैठ गये । उनमें आधे तो विष मिश्रित मदिरा
के पान करने से मर गये और आधे विषमिश्रित मांस के खाने से
मर गये । इस प्रकार सर्व विनाश देखकर पल्लीपति ने मन में विचार

आवे, એવો વિચાર કરી તેઓએ અરધા ઢાંચમાં વિષ મેળવી દીધું અને અરધો
ઢાંચ પોતાના માટે અલગ રાખ્યો. અહિં પણ જે માંસ વગેરે પકાવવામાં
લાગેલ હતા તેમણે પણ એવો વિચાર કર્યો જેવું કામ આ લોકોએ કર્યું.
અર્થાત્ એ લોકોએ પણ અરધા ભોજનમાં વિષ મેળવી દીધું અને અરધું પોતાના
માટે અલગ રાખી લીધું. જ્યારે બધા જમવા માટે બેસવા માંડ્યા ત્યારે બધાએ
તેના આગેવાનને જમવા માટે બોલાવ્યા. પરંતુ આગેવાને એમ કહી ના કહી
કે બુઝો ભાઈએ આ સમયે રાત્રીના સમય થઈ ચુક્યો છે મેં રાત્રી ભોજ-
નનો ત્યાગ કરેલ છે આથી આપ લોકોજ જમી લ્યો. આગેવાનની આ પ્રકારે
આજ્ઞા મળતાં તે બધા જમવા માટે બેસી ગયા, અને અરધા તો વિષ મેળવેલ
ઢાંચું પાન કરવાથી મરી ગયા અને અરધા વિષ મિશ્રીત માંસના ખાવાથી
મરી ગયા. આ પ્રકારે સર્વ વિનાશ બોધને આગેવાને મનમાં વિચાર કર્યો કે

દેશનાં થુત્વા તેષુ કેવલમેકેન પહ્લીપતિના રાત્રિભોજનપ્રત્યાહવાનં કૃતમ્ ।
 એકદા પચ્ચશતસંખ્યકૈર્થોરૈઃ સહ પહ્લીપતિઃ સ્તંભં યતું ગતઃ । એકસ્યાં નગર્યાં વહુતરં
 ધનં ચૌર્યેણ પ્રાપ્તં, તદુપાદાય તે સર્વે મહારણ્યે સમાગત્ય તત્ર સર્વં સંસ્થિતાઃ । તત્ર
 તન્નાયકેન કથિતમ્—અત્ર શુજ્યતાં સર્વઃ, તદા સાર્ધદ્વયસંખ્યકાઃ પાકકરણાર્થં પ્રવૃત્તાઃ,
 સાર્ધદ્વયસંખ્યકાશ્ચ સુરાદિકમાનેતું સમીપસ્થં ગ્રામં ગતાઃ । મદિરાદિકમાનેતું પ્રવૃ-
 ત્તૈસ્તૈશ્ચિન્તિતમ્—ચૌર્યેણોપાર્જિતં સર્વં ધનમસ્માકં મચિન્ન્યતિ, યદર્થમદિરાં ત્રિપમિ-
 થિતા નીયતે । एवं વિચિન્ત્યાર્ધમદિરાં ત્રિપમિથિતા તૈરાનીતા, અર્ધાં તુ સ્વાર્થં

આચાર્ય મહારાજ કી इस प्रकार की धर्मदेशना सुनकर उनमें से केवल
 एक पल्लीपति ने रात्रिभोजन का त्याग कर दिया । एक समय की बात
 है कि यह पल्लीपति उन पांचसौ चोरों के साथ चोरी करने के लिये
 बाहर गया । किसी एक नगर में चोरी करने से उन्हें बहुत सा द्रव्य
 मिला । उसे लेकर वे सब के सब वहां से चल दिये और किसी एक
 जंगल में आकर ठहर गये । पल्लीपति ने सब से कहा कि अब सब लोग
 भोजन की तैयारी करो । पल्लीपति के इस आदेश को पाकर उनमें से
 आधे अर्थात् अढ़ाईसौ चौर तो भोजन करने की तैयारी में लग गये
 और अढ़ाईसौ चौर सुरा मदिरा आदि को लेने के लिये पास के गावों
 में गये । मदिरादिक लानेके लिये गये हुए इन व्यक्तियों ने मनमें विचार
 किया कि चोरी में जितना भी द्रव्य हाथ लगा है वह सब का सब हम
 सब लोगों को ही मिल जावे तो बहुत ही उत्तम बात है, इसलिये ऐसा
 प्रयत्न करना चाहिये कि जो लोग भोजन बना रहे हैं वे सब के सब
 मर जायें—अतः उन्हें मारने की तरकीब एक यही है कि इस मदिरा में

આચાર્ય મહારાજની આ પ્રકારની ધર્મ દેશના સાંભળીને તેમાંથી ક્ષણ એક
 ચોરના આગેવાને રાત્રી ભોજનનો ત્યાગ કર્યો. એક વખતે તે ચોરનો આગેવાન
 એ પાંચસો ચોરોની સાથે ચોરી કરવા માટે બહાર ગયો, કોઈ એક નગરમાં ચોરી
 કરવાથી તેને ઘણું દ્રવ્ય મળ્યું એને લઈ તે બધા ત્યાંથી ચાલતા થયા અને કોઈ
 એક જંગલમાં પહોંચી ત્યાં રોકાયા. ચોરના આગેવાને બધાને ભોજનની તૈયારી
 કરવાનું કહ્યું તેના આદેશને સાંભળી અરધ જેટલા ચોર તો ભોજનની તૈયારીમાં
 લાગી ગયા અને અરધા ઘડિ વિગેરે લેવા માટે પાસેના ગામમાં ગયા, ઘડિ
 વિગેરે લેવા ગયેલા એ ચોરોએ મનમાં વિચાર કર્યો કે, ચોરીમાં મળેલું સઘળું
 દ્રવ્ય બધુ અમને મળી જાય તો ઘણું સારું થાય આ માટે એવો પ્રયત્ન કરવો
 જોઈએ કે જે લોકો ભોજન બનાવે છે તે બધા મરી જાય. તેમને મારવાની
 તરકીબ કેવળ એક જ છે કે આ ઘડિમાંના અરધા ઘડિમાં વિષ ભેળવ

લક્ષણેન સપ્તદશવિધેન, તપસા અનશનાદિદ્વાદશવિધેન ચ દાન્તઃ=વશીકૃતઃ સ્યાત્
તર્હિ વરં=થ્રેયઃ શોભનં ભવેદિત્યર્થઃ, સંયમો હિ આસ્રવનિરોધં જનયતિ, ક્ષપકથ્રેણિ
સમારોહયતિ, કર્મ નિર્જરયતિ કેવલજ્ઞાનમુત્પાદયતિ, શૈલેશ્યવસ્થાં પ્રાપયતિ સિદ્ધા-
વસ્થાં પ્રકટયતિ । તપથ રાગદ્વેષાદિદોષમલિનાત્મસંશોધકં, તેજોલેશ્યાદિવિવિ-
ધલબ્ધિજનકં પૂર્વસંચિતસકલકર્મદાહકં નવકર્માનુત્પાદકમ્ । પુનર્મનસ્યેવં ચિન્ત-
યેત્-અહં પરૈઃ=અન્યૈઃ વન્ધનૈઃ શૃંગલાદિભિઃ, વધૈઃ=લગુડચપેટાદિભિઃ, દમિતઃ=
નિગૃહીતઃ-વદ્ધ્વા તાડયિત્વા ચ સ્વાધીનીકૃતિત્યર્થઃ, મા ભવેયમ્ ।

અર્થ ભાવઃ-યદાऽન્યે મમ વન્ધન તાડનૈર્દમનં કરિષ્યન્તિ તદા મમ થ્રેયો નાસ્તિ,
પરવશ્ચાત્, તથાહિ-વધવન્ધનૈઃ પરવશસ્ય મમ ચિત્તસમાધિર્ ન સમ્ભવતિ તદભાવે
કર્મનિર્જરાભાવઃ, તદભાવે દીર્ઘાધ્વસંસારપરિભ્રમણં ભવિષ્યતીતિ ।

एवं मन का दमन कहूँ यह सर्वोत्तम है । अगर ऐसा नहीं कहूँ तो
कदाचित् मुझे (बंधणेहिं वहेहिं परेहिं दम्नं तो अहं मा वरं-बंधनैः
वधैः परैः दमितः अहं मा वरं) बधनों-शृंखला आदि के द्वारा बांधना-
रूप क्रियाओं से तथा वध-चपेटा आदि प्रहारों से जो मैं दूसरों के
द्वारा दमित होऊँ । अथवा यदि मैं इन्द्रियो एवं मनका जो तप तथा संयम
द्वारा दमन कर लूंगा तो यह इसलिये उत्तम है कि मैं भविष्य में अन्य
व्यक्तियों द्वारा बंधन एवं वध से निगृहीत नहीं हो सकूंगा । कहने का
तात्पर्य यह है कि जब मुझे अन्यजन बंधन एवं ताडन आदि द्वारा
निगृहीत करेंगे तो इसमें मेरी कोई भी भलाई नहीं है कारण कि यह
अवस्थाएँ अनिच्छापूर्वक वश होने की वजह से सहन करनी पड़ती हैं ।
इसमें चित्त की समाधि तो होती नहीं है । चित्त में समता भावरूप

સંયમ અને તપ દ્વારા જો હું આત્માનો-ઇન્દ્રિયો અને મનનું દમન કરું એ
સર્વોત્તમ છે. જો તેમ ન કરું તો કદાચિત મને વંધણેહિં વહેહિં પરેહિં દમ્નં તો
અહં મા વરં-વંધનૈઃ વધૈઃ પરૈઃ દમિતઃ અહં મા વરં બંધનો શ્રંગલા આદિ દ્વારા
બાંધવારૂપ ક્રિયાઓથી તથા વધ-ચપેટા આદિ પ્રહારોથી જો હું બીજાઓથી
દમિત બનું અથવા-જો હું ઇન્દ્રિયો અને મનનું તપ તથા સંયમ દ્વારા દમન
કરી લઉં તો તે એ માટે ઉત્તમ છે કે હું ભવિષ્યમાં અન્ય વ્યક્તિઓ દ્વારા
બંધન અને વધથી નિગૃહીત નહીં થઈ શકું. કહેવાનો મતલબ એ છે કે જ્યારે
મને બીજા માણસો બંધન અથવા તાડન આદિ દ્વારા નિગૃહીત કરે તો આમાં
મારી કોઈ પણ લાભ નથી. કારણ કે, આ અવસ્થાઓ અનિચ્છાએ પરવશ
થવાને કારણે સહન કરવી પડે છે. તેમાં ચિત્તની સમાધી થતી નથી. ચિત્તમાં

રાત્રિભોજનપત્યાહ્યાનેન રસનેન્દ્રિયમાત્રદમનસ્ય ફલમેતદ્ યન્મયા જીવનં
લબ્ધમ્, યદિ પુનઃ સર્વયાઽઽત્મદમનં કુર્યોં તર્હિ કથં ન ધ્રુવં નિત્યમચલમવ્યાપ્તધં
શિવસૌખ્યં લભેયમ્ । એવં વિચિન્ત્ય ચૌરપછીનાયકેન મુનિસમીપે ગત્વા પ્રવ્રજ્યાં
ગૃહીત્વા સ્વાત્મકલ્યાણં સાધિતમ્ ॥ ૧૫ ॥

આત્મદમનાર્થમેવં ચિન્તયેદિત્યાહ—

મૂલમ્—‘વરં મે’ અપ્પાં દંતો. સંજમેળ તવેળ ચં ।

મોઽહં પરેહિં દમ્મંતો, વંધંનેહિં વેહેહિ ચં ॥ ૧૬ ॥

છાયા—વરં મે આત્મા દાન્તઃ સંયમેન તપસા ચ ।

માઽહં પરેર્દમિતઃ વન્ધનૈર્વધૈશ્ચ ॥ ૧૬ ॥

ટીકા—‘વરં મે૦’ ઇત્યાદિ ।

મે=મયા, આત્મા-મનરૂપઃ પન્નેન્દ્રિયરૂપશ્ચ સંયમેન=સાવધાનુષ્ઠાનવિરતિ-

ક્રિયા કિ રાત્રિભોજન ત્યાગ કરને કા, જિસમેં એક માત્ર રસનેન્દ્રિય
કા દમન ક્રિયા જાતા હૈ, યહ ફલ હૈ જો મેં અકેલા જીવિત બચ સકા
હું । યદિ સર્વ પ્રકાર સે મેં આત્મા-ઇન્દ્રિયોં એવં મન કા દમન કરૂં તો
કયોં નહીં ધ્રુવ, નિત્ય, અચલ ઓર અવ્યાબાધ મુક્તિ સુખ કા અધિકારી
બનું । ઇસ પ્રકાર વિચાર કર ઉસ પછીપતિ ને ઉસી સમય મુનિકી પાસ
જા કર દીક્ષા ધારણ કર આત્મકલ્યાણ કે માર્ગ કા સાધન કરના
પ્રારંભ કર દિયા ॥૧૫॥

આત્મા કો દમન કરને કે લિયે મોક્ષાભિલાષી કો ઇસ પ્રકાર વિચાર
કરના ચાહિયે—‘વરંમે૦’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(મે અપ્પા સંજમેળ તવેળ ચ દંતો વરં-સંયમેન તપસા
મયા દાન્તઃ વરં) સંયમ એવં તપ કે દ્વારા જો મેં આત્મા કા-ઇન્દ્રિયોં

રાત્રી ભોજન ત્યાગ કરવાથી માત્ર એક રસનેન્દ્રિયનું દમન કરવામાં આવે છે
તેનું આ ફળ છે. જે હું એકલો જીવતો રહી શક્યો. જો હું સર્વ પ્રકારથી
આત્મા-ઇન્દ્રિયો અને મનનું દમન કરું તો ધ્રુવ, નિત્ય, અચલ અને અવ્યાબાધ
મુક્તિ મુખનેા અધિકાર કેમ ન બનું ? આ પ્રકારનેા વિચાર કરી તે ચોરના
આગેવાને એજ વખતે મુનિ પાસે જઈને દીક્ષા ધારણ કરી આત્મ કલ્યાણના
માર્ગનું સાધન કરવાનેા પ્રારંભ કરી દીધો ॥ ૧૫ ॥

મોક્ષના અભિલાષીએ આ પ્રકારે આત્માનું દમન કરવાનેા વિચાર
કરવો જોઇએ—વરંમે૦ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—મે અપ્પા સંજમેળ તવેળચ દંતોવરં-સંયમેન તપસા મયા દાન્તઃ વરં

चिन्तयति, यदा कथमपि मे बालको भविष्यति तदाऽनेन हनिष्यते । ततः सा हस्तिनी यूथादपसरति, क्रमेण प्रहरं प्रहरद्वयमन्तरितं कृत्वा यूथमध्ये मिलति, क्रमशः सा द्वितीये दिवसे यूथमध्ये गत्वा मिलति एवं कुर्वत्या तया प्रसवसमये समागते सति तापसाश्रमो दृष्टः, सा तत्राऽऽलीना गुप्तस्थाने प्रसूता, बालकः संजातः । स बालकस्तत्र यथा तापसकुमारा घटादिभिरुद्यानगतान् वृक्षान् सिञ्चन्ति, तथा जलाशयं गत्वा स्वगुण्डायां जलं भूत्वा वृक्षान् सिञ्चति । ततस्तापसैस्तस्य

निवास करता था । वहाँ जितने भी नवीन बच्चे पैदा होते थे सब को मार डालता था । एक समय की बात है कि एक हस्तिनी गर्भवती हुई । गर्भावस्था में हस्तिनी ने विचार किया कि जब मेरी कुक्षि से बच्चा पैदा होगा तो यह निश्चय है कि यह दुरात्मा गज उसे बिना मारे नहीं रहेगा, अतः अच्छी अब यही है कि मैं इस यूथ से अलग ही होकर रहूँ । ऐसा विचार कर यूथ से अलग रहने लगी—परन्तु यह अलग रहने का भेद प्रकट न हो जाय इस ख्याल से पहिले तो वह यूथ में एक २ दो २ प्रहर के बाद आती जाती रही, फिर १-१-२-२ दिन के बाद मिलती रही । इस प्रकार करते २ जब उसके प्रसव का समय नजदीक आ गया तो वह किसी तापस के आश्रम में जा पहुँची । वहाँ पर गुप्तस्थान में प्रच्छन्न होकर उसने बच्चे को जन्म दिया । बच्चा क्रमशः बढने लगा । वहाँ पर जिस तरह तापस कुमार घड़ों में पानी भरकर उद्यान के वृक्षों को सीँचा करते थे उसी प्रकार यह हाथी का बच्चा भी जलाशय से अपनी झुंड में पानी भर कर उद्यान के वृक्षों

(हाथी) निवास करता होता । त्यां जेटलां नवां अन्थां जन्मतां हुतां ते अधाने ते भारी नाभता । ओक समयनी वात छे ओक हाथणी गलवती थर्, गलावस्थाभां हाथणीजे विचार कर्यो के न्यारे भने अन्थु अवतरशे त्यारे ओ वात निश्चित छे के आ दुरात्मा हाथी तेने भारी नाभ्या वभर रडेसे नडीं । आथी साङ् तो ओ छे के, आ जुथथी जुदा पडीने रहुं । आवो विचार करी ते जुथथी जुदी रडेवा लागी । परंतु अलग रडेवानो बोद प्रगट न थर् नय ओ भाटे ते जुथभां अवार नवार आवती जती अने धीरे धीरे ओकेके दिवस अने अज्जे दिवसना अंतरे आवती जती । आ प्रकारे करतां करतां न्यारे तेनो प्रसव समय नज्ज आब्यो त्यारे ते कोर्ध तापस्वीना आश्रमभां जर्ध पडोन्थी अने त्यां गुप्त स्थानभां प्रच्छन्न-छुपाईने अन्थाने जन्म आये । अन्थुं भोटुं धवा भांडुं, त्यां जे रीते तापस कुमार घडाभां पाणी भरिने उद्यानना वृक्षेने पाता हुता ते रीते आ हाथीनुं अन्थुं पणु जलाशयथी पोतानी सुढंभां पाणी भरिने

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ સેચનકહસ્તી યથા—

एकस्यामटव्यां बहुतद्वस्तिनीभिः सह महागजो निवसन्नासीत् । स च जातं
जातं करिशावकं विनाशयति । एकदा तत्रैका हस्तिनी सगर्भा जाता, सा चैवं
समाधि की प्राप्ति नहीं होगी—यह भी निश्चित है कि कर्म की निर्जरा
नहीं होगी । कर्म की निर्जरा के अभाव में इस अनन्तसंसार का परि-
भ्रमण भी नहीं रुक सकता है । १७ प्रकार के संयम से एवं १२ प्रकार
के अनशन आदि तप से जो मैं आत्मा का दमन कर लूंगा उससे मेरा
एकान्त हित होगा । कारण कि संयम से ही आश्रय का निरोध होता
है । इसकी सहायता से ही आत्मा क्षपकश्रेणी पर आरुढ़ होता है ।
अनन्तशुणी कर्मों की निर्जरा इसके ही सद्भाव से होती है । केवलज्ञान
की प्राप्ति जीव को इसी के बल पर होती है । शैलेशी अवस्था का लाभ
एवं सिद्धावस्था की प्रकटता इसी तप संयम से मिलती है । रागद्वेष
आदि से मलिन आत्मा का शोधन तप से होता है । तेजोलेइया आदि
विविध लब्धियों का जनक तथा पूर्व में संचित समस्त कर्मों का नाशक
एवं नवीन कर्मों का आगमन का निरोधक तप होता है । अतः इस
अवस्था में एकान्ततः आत्मा का हित भरा हुआ है ।

अथ सेचनकहस्ती के दृष्टान्त से इस विषय को स्पष्ट करते हैं—

કિસી એક અટવીમેં અનેક હસ્તિનીકે સાથે એક મદોન્મત્ત મહાગજ

સમતાભાવરૂપ સમાધીની પ્રાપ્તિ થશે નહીં. આ પણ નિશ્ચીત છે કે, કર્મની
નિર્જરા પણ થશે નહીં. કર્મની નિર્જરાના અભાવમાં આ અનંત સંસારનું
પરિભ્રમણ પણ રોકી શકાવાનું નથી. ૧૭ પ્રકારના સંયમથી અને ૧૨ પ્રકારના
અનશન આદિ તપથી જો હું આત્માનું દમન કરી લઉં તો તેનાથી મારું એકાન્ત
હિત થશે. કારણ કે, સંયમથી જ આશ્રવનો નિરોધ થાય છે, તેની સહાયતાથી
જ આમાં ક્ષપક શ્રેણીએ પહેલો છે. અનંતશુણી કર્મોની નિર્જરા એનાજ
સદ્ભાવથી થાય છે. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ જીવને એના જ બળથી મળે છે. શૈલેશી
અવસ્થાનો લાભ તેમજ સિદ્ધાવસ્થાની પ્રગટતા એજ તપ સંયમથી મળે છે.
રાગદ્વેષ આદિથી મલીન આત્માનું શોધન તપથી થાય છે. તેજો લેશ્યા આદિ
વિવિધ લબ્ધિઓના જનક તથા પૂર્વનાં સંચિત સમસ્ત કર્મોનો નાશ કરનાર
અને નવીન કર્મોને રોકનાર તપ હોય છે. આથી આ અવસ્થામાં એકાન્તતઃ
આત્માનું હિત સમાયેલું છે.

(સેચનક હાથીના દૃષ્ટાંતથી સૂત્રકાર આ વિષયને સ્પષ્ટ કરે છે.)

કોઈ એક વનમાં અનેક હાથણીઓની સાથે એક મદોન્મત્ત

आलानस्तम्भे लौहशृङ्खलाभिः स निबद्धः । तापसास्तत्रागत्य सेचनकं भर्त्सयन्ति-
अरे गजराज ! अधुना क्व ते पराक्रमः, अविनयस्य फलमिदानीं लब्धम् । एतद्वचनं
श्रुत्वा सेचनकः क्रुद्धः स्तम्भं भङ्क्त्वा पुनर्वनं प्रविष्टस्तेषामावासभूमौ वृक्षान् विध्वं-
सितवान् । पुनः श्रेणिकः सेचनकं गजं निशृङ्खितुं तद्वनं गतः । अत्रान्तरे पूर्वभव
मित्रदेवेन सेचनकसमीपमागत्य प्रोक्तम्—हे वत्स ! परेभ्यो दमनात् स्वयं दमनं
वरम्, ततस्तद्वचः श्रुत्वाऽसौ स्वयमागत्यालानस्तम्भनिकटे स्थितः ।

रहा है । हमारे आश्रम का समस्त वन उसने नष्ट भ्रष्ट कर दिया है ।
तापसों की इस प्रकार बात सुनकर श्रेणिक ने बड़ी सेना के साथ वन
में जाकर उस सेचनक हाथी को पकड़ लिया । और उसे लाकर आलान-
स्तम्भ में लौहे की सांकलों से बांध दिया । तापस आकर अब उसे
भर्त्सित करने लगे । कहने लगे—अरे ! सेचनक गजराज ! कह अब वह
तेरा पराक्रम कहाँ चला गया, देख तेरी कैसी दुर्दशा हुई है । समझा
यह अविनय करने का फल है, जिसे तू भोग रहा है । तापसों के
इस प्रकार भर्त्सना भरे वचनों को सुनकर सेचनक को बहुत ही क्रोध
आया और उस आवेश में आलानस्तम्भ को तोड़ मरोड़ कर वह सीधा
वन में जा पहुँचा । वहाँ पहुँचकर उसने पहिले की तरह ही उनकी
आवासभूमि के वृक्षों का विध्वंस करना प्रारंभ कर दिया । राजा श्रेणिक
पुनः उसे पकड़ने के लिये वन में आये । इतने में पूर्वभव के मित्र देवने
आकर सेचनक से कहा—जो तुम बार २ दूसरों के द्वारा दमित किये
जाते हो—उसकी अपेक्षा तो यही अच्छा है कि तुम अपने आपको

आश्रमनां सधजां वृक्षानो अेषो नाश करी नाभ्यो छे. तापसेनी वात सांभणी
श्रेणिक राबळे भारे सेना साथे वनमां जर्ध अे सेचनक डाथीने पकडी दीधो.
अने तेने राजधानीमां लावी अेक भूष भज्जुत स्तंभ साथे बाढानी सांकणोथी
भांधी दीधो. तापसेअे आ सभये तेनी साथे जर्ध तेनी भशकरी शङ् करी अने
कडेवा लाग्या—अडो ! सेचनक गजराज कडो हवे तमाङ् पराक्रम कथां आदथुं
गथु ? जे तारी डेवी दुर्दशा थर्ध ? अविनयनुं आ इण छे, जे तुं लोगवी रडेल छे.
तापसेनुं आ कडेवानुं सांभणी सेचनकने भूष ज क्रोध आब्यो. अने ते
जपरजस्त अेवा स्तंभने तोडी नाभी बाढानी सांकणोने इगावी दध वनमां
जर्ध पडोन्थ्यो. त्यां पडोन्थीने थारे भाजुथी वननां वृक्षानो विच्छेद करवानुं
शङ् करी दीधुं. राबळ श्रेणिक इरी तेने पकडवा भाटे वनमां पडोन्थ्या. आ सभये
सेचनकना पूर्वभवना मित्र देवे आवी सेचनकने कहुं—तमे भील द्वारा धडी
धडी डेरान थाव छे—आथी साङ् तो अे छे के तमे तमारी अते पोतानुं दमन करे.

‘સેચનક’ इति नाम कृतम् । स सेचनकस्तापसबालकानां वयस्यो जातः । कदाचिद् भ्रमन्तं यूथाधिपतिं दृष्ट्वा सेचनकस्तं मारितवान् । स्वयं यूथाधिपतिर्जातः । स च तापसाश्रमे वृक्षाणां विध्वंसनं कृतवान् , काऽप्यन्या मन्मातेव प्रच्छन्ना मा तिष्ठतु इति विचारित्वांश्च । ततस्ते तापसा रुष्टाः पुष्पफलपूर्णहस्ताः श्रेणिकनृपस्य समीपं गत्वा तमनुयन्-एकः सेचनकनामाहस्ती वने तिष्ठति, स चास्माकं वासस्थाने वनं विनाशयति । ततः श्रेणिकेन महत्या सेनया सह वनं गत्वा सेचनकं निगृह्य

को सिंचने का काम करने लगा। सिंचनरूप कार्य को करने से तापसों ने इसका नाम “सेचनक” रख दिया। तापस बालक इस पर षड़े प्रसन्न रहा करते, अतः उन सबके साथ यह खूब हिलमिल कर रहने लगा, यहां तक कि उनके साथ इसकी पूर्ण मित्रता हो गई। जब यह खूब बलिष्ठ हो चुका-तो एक समय की यात है कि उसने अवसर पाकर यूथाधिपति हाथी को घूमते समय जान से मार दिया और स्वयं यूथ का अधिपति हो गया। इसने ऐसा विचार किया कि मेरी माता के समान कोई भी हथिनी छुप कर न बच्चा उत्पन्न करे और न छुप कर ही रहे, इस अभिप्राय से इसने आश्रम के समस्त वृक्ष उखाड़ डाले। इसके इस प्रकार के कार्य से तापस लोग रुष्ट हो गये। वे सब के सब पुष्प फलादिकरूप भेट लेकर राजा श्रेणिक के पास पहुँचे। वहां पहुँचकर उन्होंने ने राजा को अपनी सारी कथा सुनाई। कहा महाराज ! एक सेचनक नामक हस्ती वनमें रहता है वह बहुत ही उपद्रव कर

ઉધાનના વૃક્ષોને ખાણી ખાવાનું કામ કરવા લાગ્યું, તાપસોએ આ પ્રકારનું કામ કરવાથી તે હાથી બાળકનું નામ ‘સેચનક’ રાખ્યું. તાપસ બાળક તેના પર ખૂબ પ્રસન્ન રહ્યા કરતા, એથી તે એમની સાથે ખૂબ હળી મળીને રહેવા લાગ્યું, તે ત્યાં સુધી કે એમની સાથે તેની પૂર્ણ મિત્રતા થઈ ગઈ જ્યારે તે હાથી બચ્યું ખૂબ બળવાન બન્યું ત્યારે એક સમયે તે સશક્ત અને બળવાન બનેલા હાથી બાળે મહાબળવાન અને ઘાતક એવા હાથી ઝુંડપતિને અવસર મેળવી જીવથી મારી નાખ્યો. અને પોતે ઝુંડપતિ બન્યો. તેણે વિચાર કર્યો કે મારી માતાની માફક કોઈ પણ હાથણી છુપાઈને બચ્યાને જન્મ ન આપે અને ન તો છુપાઈને રહે. આ અભિપ્રાયથી તેણે આશ્રમનાં બધાં વૃક્ષોને જડઝુળથી ઉખેડી નાખ્યાં. હાથીના આ પ્રકારના કાર્યથી તપસ્વીઓના દિલમાં ભારે દુઃખ થયું અને તેઓ પુષ્પ ફળ વગેરે ભેટ લઈ રાજા શ્રેણિકની પાસે પહોંચ્યા અને ત્યાં જઈ રાજાને બધી વાત કહી સંભળાવી અને કહ્યું, મહારાજ ! સેચનક નામનો એક હાથી વનમાં રહે છે તે ખૂબ ઉપદ્રવ કરે છે, અમારા

समागताः प्रजा संमिलन्ति । तस्य प्राज्यं राज्यसुखं, प्रतिदिवसं नवं नवमिव यौवनम्, नवनीतमिव शिरीषकुसुममिव सुकुमारं शरीरम्, नयनलोभकरं रूपलावण्यम्, सर्वत्रा-
व्याहतगतिकं यानम्, दिङ्मण्डलविजयिनी चतुरङ्गिणी सेना, शीतलसुगन्ध-
मन्दमास्तमनोविनोदनं, नन्दनवनमिव सर्वर्तुसुखदं रमणीयमुद्यानम्, चन्द्रमण्डला-
वधीरणगगनस्पर्शिधवलप्रासादाः, सर्वे कामभोगा अनुकूला आसन् । असौ दौण्डु-
कदेव इव सर्वं सुखमनुभवन्नास्ते । तत्रैकदा धर्मचन्द्रनामक आचार्यः शिष्यगणपरि-

राज्य का उसे अधिक से अधिक सुख था । यौवन भी इसका प्रति-
दिन नवीन नवीन रूप में खिलता रहता था । शरीर इसका नवनीत
एवं शिरीष पुष्प से भी अधिक सुकुमार था । रूप लावण्य नयनों को
लुभावे ऐसे थे इसे कहों पर भी चले जाने में कोई रुकावट नहीं होती
थी । इसकी चतुरंगिणी सेना दिङ्मण्डल को विजय करने वाली थी ।
इसके एक रमणीय उद्यान था जो नन्दनवन के समान समस्त ऋतुओं
में सुखदायक था । जिसमें शीतल, मंद एवं सुगंधित पवन बहा
करता था उससे मन का अच्छा विनोद होता था । जिस महल में
राजा का निवास था वह चंद्रमण्डल से भी रमणीय था तथा इतना ऊँचा
था कि आकाश को जैसे स्पर्श करता हो । समस्त कामभोग इसके
अनुकूल थे । दौण्डुक देव की तरह यह समस्त प्रकार के सुखों को
भोगता हुआ अपना समय निश्चितरूप से व्यतीत करते थे । इतने में
एक दिन की बात है ग्रामानुग्राम विचरते हुए धर्मचन्द्र नामके आचार्य

दिशाओमांथी बोको होडीने आवता होता. राज्यतुं ओमने साइं ओयुं सुभ हुतुं,
यौवन पक्षु ओमतुं प्रतिदिन अपनवीन रीते भीवतुं रहेतुं हुतुं, शरीर ओमतुं
नवनीत (भाषण) अने शिरीष पुष्पथी पक्षु अधिक सुकुमार हुतुं, रूप लावण्य
नयनाने बोलावे तेवुं हुतुं, केछ पक्षु स्थणे ज्वाभां ओने केछ इकापट न
हुती, ओमनी चतुरंगिणी सेना दिङ्मण्डलने विजय करनार हुती, ओमतुं ओक
सुंदर ओयुं उद्यान हुतुं जे नन्दनवन समान इरेक इतुमां सुभ आपनार
हुतुं. जेमां शीतल, मंद, अने सुगंधित पवन बहा करतो हुतो, जेथी मनने
सारे आनंद भजतो. जे मंडलमां राजाने निवास हुतो ते चंद्रमण्डली
पक्षु रमणिय हुतो अने ते ओटवो उंचो हुतो के जे आकाशने अडीने उलो
डाय ओम लागतुं. जथा कामभोग ओने अनुकूल हुता. दौण्डुक देवनी माइक
ओ समस्त प्रकारनां सुभाने लागवतां पोतानो समय निश्चित रीते व्यतीत
करता हुता. आमां ओक दिवसनी बात छे के ग्रामानुग्राम विचरता धर्मचंद्र

સ્વયમાગતં સ્તમ્ભસમીપે ત્રિચરણેનાવસ્થિતં સેચનકં દૃષ્ટ્વા શ્રેણિકલ્પસ્તં
મિષ્ટાદારૈઃ સ્વર્ણભૂષણૈઃ કરસ્પર્શાદિભિઃ નિતરાં લાલયતિ સ્મ । एवं सैचनकह-
स्तिवत् स्वयमात्मनो दमनेन लोके सर्वत्रादरं लभमानः सुखी भवति । तथैव
परलोकेऽपि सुखी भवति ' तत्रोदाहरणम्—

અષ્ટમતીર્થકરસ્ય શ્રીચંદ્રપ્રભસ્ય શાસને ચંદ્રપુરીનગર્યાં તદ્વંશપરંપરાયાં સુદ-
ર્શનો નામ નરપતિરાસીત્ । સ ચૈવં પૂર્વોપાર્જિતપુણ્યરાશિરાસીત્-વેન તસ્ય દર્શનાત્
પ્રજાનામિષ્ટલાભો ભવતિ, અતસ્તદ્દર્શનાર્થમનુદિવસં તત્ર ચતસ્રમ્યો દિગ્મ્યઃ

દમન કરો । દેવ કે હસ પ્રકાર વચન સુનકર સેચનક આલાનસ્તમ્ભ કે
પાસ સ્વયં આ કર યજ્ઞા હો ગયા । રાજા સેચનકકો આલાનસ્તમ્ભકે
પાસ યજ્ઞા દેવકર યજ્ઞા પ્રસન્ન હુઆ । ડસને મિષ્ટ આહાર સે તથા સ્વર્ણ
કે આભૂષણોં સે ડસકા સૂચ સત્કાર કિયા । ચારંચાર ડસકે ડપર હાથ
ફેરા ઓર પુચકારા । મતલબ કહને કા યહી હૈ કિ જો વ્યક્તિ સેચનક
હાથી કી તરહ અપના સ્વયં દમન કરતા હૈ વહ સર્વત્ર આદરણીય વન
કર હસ લોક મેં સૂચ સુખી હો જાતા હૈ । તથા પરલોક મેં આનંદકા
ભોક્તા વનતા હૈ, હસ વિષય મેં ડદાહરણ હસ પ્રકાર હૈ—

અષ્ટમતીર્થકર શ્રી ચંદ્રપ્રભુ સ્વામી કે શાસન મેં ચંદ્રપુરી નામ કી
નગરી મેં સુદર્શન નામકા ઇક રાજા થે । યહ ચંદ્રપ્રભુસ્વામી કી વંશપરં-
પરા મેં હી ઉત્પન્ન હુઇ થે । ડસકી પૂર્વોપાર્જિતપુણ્યરાશિ હતની પ્રબલ થી કિ
જો કોઈ પ્રજાજન હસકા દર્શન કરતે થે ડસે અવશ્ય હી ઇષ્ટ કા લાભ
હોતા થા । હસી સે ડસકે દર્શન કે લિયે હરઇક દિશા સે દોડ ર આતે થે ।

દેવનાં આ પ્રકારનાં વચન સાંભળી સેચનક પોતાની જાતે જ રાજધાનીમાં
પહોંચ્યો અને પ્રથમ જે સ્થળે તેને બાંધવામાં આવેલ હતો તે સ્થળે જઈ ઉભો
રહી ગયો. સેચનકને આ રીતે પાછો આવેલો જોઈ રાજા શ્રેણિક પ્રસન્ન થયા
અને તેને સાડું એવું મીઠું ભોજન આપી સોનાના અલંકારો પહેરાવી તેના
શરીર ઉપર પ્રેમથી હાથ ફેરવવા લાગ્યા. કહેવાનો મતલબ એ છે કે જે વ્યક્તિ
સેચનક હાથીની માફક સ્વયં પોતાનું દમન કરે છે તે સર્વત્ર આદરને પાત્ર
બની આ લોકમાં ખૂબ સુખી થઈ પરલોકમાં પણ આનંદના ભોગવનાર બને છે.

આ વિષયમાં ઉદાહરણ આ પ્રકારનું છે—

આઠમા તીર્થકર શ્રી ચંદ્રપ્રભુસ્વામીના શાસનમાં ચંદ્રપુરી નામના નગ-
રમાં સુદર્શન નામના રાજા હતા. તે ચંદ્રપ્રભુ સ્વામીના વંશના જ હતા. એની
પૂર્વોપાર્જિત પુણ્યરાશિ એટલી પ્રબળ હતી કે જે કોઈ પ્રબળ અને એમનાં દર્શન
કરતો તેને ઇષ્ટનો લાભ અવશ્ય મળી જતો, આથી એમના દર્શન માટે દરેક

अनशनवमौदरिकाभ्यां तपोभ्यां रूपलावण्य संपन्नं मुकुमारं शरीरं कृशयति, तथाहि—चतुर्भक्तं कृत्वा तत्पारणायामन्तप्राप्तं रुक्षं, तदपि साभिग्रहं, तदपि स्वल्पं, तदप्यवमौदरिकानुकूलं गृह्णाति । तदनन्तरं पष्ठभक्तमष्टमभक्तं दशमभक्तं द्वादशभक्तं पावन्मासक्षणं तपः कृत्वा सर्वपारणासु अवमौदरिकं तपः कुर्वन्नेव शरीरं कृशतरं कृतवान् । एवं तीव्रतरतपश्चरणाद् धन्यनामानगारवत् शुष्कमांसशोणितः सन् परिचिन्तयति—आचार्यदेशनानुसारेण मया सर्वथाऽऽत्मा दमितः, धर्मध्यानेनात्मबलं प्राप्य पुष्टोऽस्मि, अतः परं शुकध्यानाय सर्वथा यतिष्ये, एवं सोत्साहं विशुद्धभाव-नया क्षपकश्रेणि समारुहान्तर्मुहूर्तमात्रेण केवलज्ञानं प्राप्तवान्, एवं वर्षकमात्रेण तीव्र-तपसा स्वात्मानं दमयन् सिद्धो जातः । तस्मात् स्वयमेव स्वात्मा दमनीय इति ॥१६॥

होकर दीक्षित हो गये । उन्होंने ने अपने रूपलावण्ययुक्त सुन्दर मुकुमार शरीर को अनशन एवं अवमौदरिक तप द्वारा कृश करना प्रारंभ कर दिया । कभी वह चतुर्भक्त उपवास करते और पारणा के समय अन्त, प्रान्त एवं रुक्ष आहार लेते, उसमें भी अभिग्रह, अभिग्रह में भी स्वल्प, उसमें भी अवमौदरिकानुकूल लेते । बाद में पष्ठ भक्त, अष्टमभक्त, द्वादशभक्त, से लेकर एक मासक्षण तक भी तपश्चर्या करते । और इन सब तपस्याओं के पारणा के दिन वह अवमौदरिक तप करते । इससे इनका शरीर अतिशय दुर्बल हो गया । इस प्रकार तीव्र तपश्चर्या के करने से इनका शरीर धन्य नामक अनगार के शरीर की तरह शुष्क मांस शोणित वाला होकर केवल अस्थिपंजर मात्र अवशिष्ट रहा । उस समय उन्होंने विचार किया—कि मैं ने आचार्य महाराज की देशना अनुसार सर्व प्रकार से अपनी आत्मा का दमन किया तथा इस अवस्था

मुकुमार शरीरने अनशन अने अवमौदरिक तपशी कृश करवाने प्रारंभ करी दीधे। क्यारेक तेओ अतुर्भक्त अपवास करता अने पारणाना सभये अन्त, प्रान्त अने रुक्ष आहार लेता छता। ओमां पष्प अलिग्रह, अलिग्रहमां पष्प स्वल्प, ओमां पष्प उमौदरिक तप करता आदमां पष्ठभक्त, अष्टमभक्त, दश-मभक्त, द्वादशभक्त, थी लई ओके मासक्षण सुधीनी पष्प तपश्चर्या करता अने ओ अधी तपश्चर्याना पारणाना द्विसे उल्लोदरिक तप करता। आशी ओमनुं शरीर अतिशय दुर्बल अनी गयुं, आ प्रकारनी तीव्र तपश्चर्या करवाथी तेमनुं शरीर धन्य नामना अनगारना शरीरनी माक्क लोही मांस वगरनुं थई गयुं, अने इकत छोटकाने भाजणे न आकी रह्यो। ओ सभये तेमणे विचार क्योई के—मैं आचार्य महाराजनी देशना अनुसार सर्व प्रकारशी मारा आत्मानुं दमन क्युं

દ્રુતો ગ્રામાનુગ્રામં વિહરન્ ચન્દ્રપુરીનગર્યાં વહિરુચ્યાને સહસ્રાઽઽન્નવને સમવશ્નતઃ ।
 તદ્વન્દનાર્થં સુદર્શનો નૃપઃ સપરિવારઃ સમાયાતઃ । આચાર્યેણ સુદર્શનનૃપસ્ય નામા-
 નુરૂપં રૂપલાવણ્યાદિકં ચિલોક્ષ્ય ધર્મદેશનાદત્તા-સુદર્શનનૃપો નિશમ્ય મુનિદેશનાં
 મનસિ ચિન્તયતિ-અહો ! યઃ સ્વાત્માનં સ્વયં ન દમયતિ, સ પરે વંધવંધનાદિમિ
 દમિતઃ સન્ સ્વાત્મનઃ કર્મ નિર્જરયિતું ન પ્રમયતિ અપિતુ જ્ઞાનાવરણીયાઘપ્ટવિષ-
 કર્મરજોમિઃ સ્વાત્માનં ગુરુતરીકૃત્ય ચતુર્ગતિકસંસારગર્તે નિપતતિ જન્મમરામ-
 રણાઘનન્તદુઃખં પ્રાપ્નોતિ । ઇતિ ચિન્તયન્ સર્વેભ્યઃ કામભોગેભ્યો વિરજ્ય મત્રજિતઃ ।

મહારાજ અપને શિષ્યગણ સહિત ઉસ ચંદ્રપુરો નગરી કે યાહિર યગીચે
 મેં સહસ્રાન્નવન મેં પધારે । ડનકો વન્દન કરને કે લિયે વે સુદર્શનનરેશ
 પરિવારસહિક વહાં ગયે । આચાર્ય મહારાજ ને નામ કે અનુરૂપ ડનકે
 રૂપલાવણ્ય કો દેખકર ધર્મ દેશના પ્રારંભ કી । સુનકર નરેશ વહૂત
 હી આનંદિત હુઅ ઓર વિચારને લગે-જો વ્યક્તિ અપનો આત્મા કો સ્વયં
 દમન નહીં કરતા હૈ વહ દૂસરોં દ્વારા વધ વંધનાદિક સે દમિત હોકર
 અપને કર્મોં કી નિર્જરા કરને મેં શક્તિ શાલી નહીં હોતા હૈ કિન્તુ દુધ્યાન
 હોને સે ડસ સમય વહ આત્મા ચતુર્ગતિક સંસારરૂપ ગર્ત મેં નિપાતન
 હેતુ જો જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટવિધ કર્મ કા વંધ હૈ ડસે દૃઢ કરતા હૈ ।
 ડસ કર્મરૂપી રજ સે મલિન યના વહ આત્મા ઇતના ભારી હો જાતા હૈ
 કિ ડસકા પતન સંસારરૂપી ગર્ત મેં અવશ્યંભાવી હોતા હૈ । ઓર વહાં
 પડા હુવા વહ જન્મમરણ આદિકે અનંત દુઃખોં કો ભોગતા રહતા હૈ ।
 ઇસ પ્રકાર વિચાર કર વહ નરેશ સમસ્ત કામભોગોં સે વિરક્ત

નામના આચાર્ય પોતાના શિષ્યગણ સહિત એ ચંદ્રપુરી નગરના બહારના બગી-
 ચામાં પધાર્યાં. રાજા સુદર્શન તેમને વંદન કરવા પરિવાર સાથે ત્યાં ગયા. આચાર્ય
 મહારાજે નામના જેવાજ તેના રૂપ લાવણ્યને જોઈ ધર્મ દેશના પ્રારંભ કરી,
 સાંભળી રાજા ખૂબજ ખુશી થયા અને મનમાં વિચારવા લાગ્યા કે જે વ્યક્તિ
 પોતાના આત્માનું સ્વયં દમન નથી કરતો તે બીજા દ્વારા વધ બંધનાદિકથી
 દમિત થઈ પોતાના કર્મોની નિર્જરા કરવામાં શક્તિશાળી બની શકતો નથી.
 પરંતુ દુધ્યાન હોવાથી એ સમય તે આત્મા ચતુર્ગતિક સંસારરૂપ ખાડામાં
 અવશ્ય પડે છે. અને એમાં જ પડયો રહી તે જન્મ મરણ આદિના અનંત
 દુઃખો ભોગવતો રહે છે. આ પ્રકારનો વિચાર કરી રાજા સુદર્શન સમસ્ત કામ-
 ભોગોથી વિરક્ત બની દીક્ષિત થઈ ગયા. તેમણે પોતાના રૂપલાવણ્ય સુકત સુંદર

કર્મયોગ્યાનામ્ આચાર્યાદીનામિત્યર્થઃ, પક્ષતઃ=પાર્શ્વતઃ, ન ઉપવિશેદિતિ શેષઃ । પાર્શ્વભાગોપવેશને ગુર્વાદિપંક્તૌ સમાવેશાત્ તત્સામ્યં સ્યાત્, કિંચ શિષ્યં પ્રતિ વક્ત્રાવલોકને ગુરોઃ સ્કન્ધાદિશાધાસમ્ભવઃ તથા ચાવિનયઃ પ્રસજ્યેત, તસ્માદાચાર્યાદિવાહુના સહ વાહું કૃત્વા શિષ્યો નોપવિશેદિતિ ભાવઃ । પુરતો ન=ગુર્વાદીનામગ્રતોડપિ નોપવિશેત્, તથોપવેશને વન્દનાર્થમાગતાનાં જનાનાં ગુર્વાદિમુખાવલોકને-ડન્તરાયઃ સ્યાત્, પૃષ્ઠતોડપિ નૈવોપવિશેત્, ગુરુશિષ્યયોરુભયોરપિ મુખાદર્શને વાચનાદીનામાનન્દો ન સ્યાદિતિ ભાવઃ । ઝરુણા=જહ્વ્યા ઝરું=જહ્વાં ન યુઙ્જ્યાત્=ન સંઘટ્ટયેત્, અત્યાસન્નોપવેશનાદિભિઃ શિષ્યઃ સ્વક્રીયેનોરુણા ગુરોરુરું ન સ્પૃશેદિત્યર્થઃ । તથાકરણે સતિ ગુર્વાદીનામવિનયઃ સ્યાત્ । તથા-શયને=શય્યાયાં શયિત આસીનો વા ન પ્રતિશૂણુયાત્ । અયં ભાવઃ-શય્યાગતઃ શિષ્યો યદિ ઝરુણાડ્ઢહૂતઃ

આસન વિનય કો સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘ ન પક્ષઓ ’ ઇત્યાદિ ॥

અન્વયાર્થ (કિચ્ચાણે પક્ષઓ-કૃત્યાનાં પક્ષતઃ “ ન ઉપવિશેત્ ” કૃતિકર્મ-અર્થાત્ વન્દનાદિ કે યોગ્ય-આચાર્ય તથા અપને સે વઢો કે પાસ મેં સંઘટ્ટા કરતે હુણ ઘરાચર નહીં વૈટે । (પુરઓ ન પિટ્ઠઓ ન-પુરતઃ ન પૃષ્ઠતઃ ન) ગુરુ મહારાજ કે આગે નહીં વૈટે । પીછે સંઘટ્ટા કરતા હુઆ નહીં વૈટે । (ઝરુણા ઝરું ન જુંજે-ઝરુણા ઝરું ન યુઙ્જ્યાત્) ઉનકે ઝરુ-ધુટના સે ધુટના લગાકર નહીં વૈટે । (સયણે નો પઢિસ્સુણે) તથા જિસ સમય આચાર્ય આદિ કિસી કામ કરને કે લિયે બુલાવેં અથવા કહેં ઉસ સમય અપને આસન પર વૈટે હી વૈટે ઉત્તર નહીં દે ।

કૃતિકર્મ કા અર્થ વન્દન વિશેષ હૈ । ઇસકા ચર્ણન મેરે દ્વારા રચિત આશ્ચર્યક સૂત્ર કી ટીકા મેં કિયા ગયા હૈ । અતઃ યહ વિષય વહાં સે જાન લેના ચાહિયે । ઇસ કૃતિકર્મ કે યોગ્ય આચાર્ય આદિ હોતે હૈ ।

આસન-વિનય વિષે સૂત્રકાર કહે છે—ન પક્ષઓ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—કિચ્ચાણં પક્ષઓ-કૃત્યાનાં પક્ષતઃ “ ન ઉપવિશેત્ ” કૃતિકર્મ અર્થાત્ વન્દનાદિને યોગ્ય આચાર્ય તથા પોતાનાથી મોટાઓની પાસે તેમની અડાઅડ થઈને બેસવું નહીં, પુરઓ ન પિટ્ઠઓ ન-પુરતઃ ન પૃષ્ઠતઃ ન ગુરુ મહારાજની આગળ બેસવું નહિ, પાછળ અડાઅડ થઈ ન બેસે ઝરુણા ઝરું ન જુંજે-ઝરુણા ઝરું ન યુઙ્જ્યાત્ તેમના ધુંટણથી ધુંટણ લગાડીને ન બેસે સયણે નો પઢિસ્સુણે તથા જે સમયે આચાર્ય આદિ કોઈ કામ કરવા માટે બોલાવે અથવા કહે તે સમયે પોતાના આસન ઉપર બેઠાં બેઠાં જવામ ન આવે.

ભાવાર્થ—કૃતિ કર્મનો અર્થ વંદન વિશેષ છે । જેનું વર્ણન મારાથી રચિત આશ્ચર્યક સૂત્રની ટીકામાં કરવામાં આવેલ છે, આથી આ વિષય ત્યાંથી

આસનવિનયમાદ—

મૂલમ્—નં પંક્તઓ નં પુરંઓ, નેવં કિચ્ચાણ પિટ્ટંઓ ।

નં જુંજે” ઝરુણા ઝરું, સયંણે નો” પડિસ્સુણે ॥૧૮॥

છાયા—ન પક્ષતો ન પુરતો, નૈવ કૃત્યાનાં શૃણુતઃ ।

ન યુઙ્ઘ્યાદ્ ઝરુણા ઝરું, શયને નો પ્રતિશૃણુયાત્ ॥ ૧૮ ॥

ટીકા—‘ ન પંક્તઓ ’ इत्यादि ।

કૃત્યાનામ્=કૃતિયોગ્યાઃ કૃત્યાઃ, અગ્ર કૃતિશબ્દેન કૃતિકર્મ ગૃહ્યતે, કૃતિકર્મ-વન્દનવિશેષઃ, તદ્વર્ણનમાવશ્યકસૂત્રસ્ય મત્કૃતમુનિતોષિનીટીકાયાં દ્રષ્ટવ્યમ્, કૃતિ-

સુન્દર લતા કો પ્રત્યનીકભાવ નષ્ટ કર દેતા હૈ । इसलिये मोक्षाभिलाषी विनयवान शिष्य का कर्तव्य है कि वह स्वप्न में भी अपने गुरु महाराज का प्रत्यनीक न बनें ।

શ્લોક મેં “ વાચા કર્મણા ” જો પદ દિયે ગયે હૈં ઉસકા મતલબ યહ હૈં કિ ગુરુ કે પ્રતિ શિષ્ય એસા ન કહે કિ “ આપ મી ક્યા કુછ જાનતે હૈં ” । इस प्रकार का व्यवहार वाचनिक प्रतिकूल आचरण में गर्भित होता है । इसी तरह वे जिस संस्तारक पर बैठते हों उसका कभी भी शिष्य को उल्लंघन नहीं करना चाहिये । उससे पैर का संघર્षण या संघट्टन न हो इसकी सदा सावधानी रखनी चाहिये । तथा आचार्य महाराज के समक्ष कभी भी शिष्य को उच्च आसन पर नहीं बैठना चाहिये और उनके आने पर अपने आसन से उठकर गुरु महाराज को वंदन आदि करना उचित है ॥ ૧૭ ॥

લતાનો પ્રત્યનિકભાવ નાશ કરી નાખે છે. આ માટે મોક્ષાભિલાષી વિનયવાન શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે સ્વપ્નામાં પણ પોતાના ગુરુ મહારાજને પ્રત્યનિક ન બને.

શ્લોકમાં (વાચા કર્મણા) જે પદ આવવામાં આવેલ છે તેનો મતલબ એ છે કે ગુરુના પ્રતિ શિષ્ય એવું ન કહે કે “ તમે પણ શું કાંઈ બોલો છો ” આ પ્રકારનો વહેવાર વાચનિક પ્રતિકૂલ આચરણમાં ગર્ભિત થાય છે. આ રીતે તે જે આસન ઉપર બેસતા હોય તેનું શિષ્યે કદિ પણ ઉલ્લંઘન કરવું ન જોઈએ, એ આસનને તેના પગ ન લાગે તેની તેણે સાવચેતી રાખવી જોઈએ તથા આચાર્ય મહારાજની સામે કદી પણ શિષ્યે ઉંચા આસન પર બેસવું ન જોઈએ અને તેમના આવવાથી પોતાના આસન ઉપરથી ઉભા થઈ ગુરુ મહારાજને વંદન વગેરે કરવું ઉચિત છે ॥ ૧૭ ॥

मूलम्—नेव पल्हत्थियं कुज्जा, पक्खपिण्डं च संजए ।

पाएँ पैसारिए वाविँ नै चिट्ठे' गुरुणंतिएँ ॥ १९ ॥

छाया—नैव पर्यस्तिकां कुर्यात्, पक्षपिण्डं च संयतः ।

पादौ प्रसार्य वापि, न तिष्ठेद् गुरुणामन्तिके ॥ १९ ॥

टीका—'नेव पल्हत्थियं' इत्यादि ।

संयतः—मुनिः, पर्यस्तिकाम्—द्वे जानुनी उत्थाप्य वस्त्रेण पृष्ठतः समारभ्य पार्श्वद्वयं जानुद्वयं च संवेष्ट्योपवेशनं पर्यस्तिका, यद्वा—जङ्घाद्वयं वस्त्रेण संवेष्ट्यो-

उन्हें प्राप्त नहीं हो सकेगा । तथा गुरु महाराज की जंघा से जंघा अड़ाकर भी शिष्य को इसलिये नहीं बैठना चाहिये कि इस प्रकार की क्रिया से गुरु महाराज का अविनय होता है । गुरु महाराज जब किसी कार्य करने के लिये शिष्य को बुलावें तो उस समय उसका कर्तव्य है कि वह 'तहेति-तहेति' कहकर आसनसे उसी वस्त्र संभ्रान्तचित्त होकर आसन का परित्यागकर दें और बड़ी भक्तिसे विनयके साथ गुरुके समक्ष जाकर हाथ जोड़ घन्दना करके पूछे कि हे भदन्त ! आज्ञा दीजिये—किस कार्य के लिये आपने मुझे याद किया है । इस प्रकार का व्यवहार भी विनयधर्म में परिगृहीत हुआ है ॥ १८ ॥

'नेव पल्हत्थियं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(संजए संयतः) मुनि शिष्य को (गुरुणंतिए—गुरुणामन्तिके) अपने गुरुजनों के समक्ष (पल्हत्थियं नेव कुज्जा—पर्यास्तिकां नैव कुर्यात्) पैरों पर पैर रखकर—पालरथी मारकर—पद्मासन माड़कर—कभी नहीं बैठना चाहिये । इस प्रकार बैठने से आशातना दोष लगता है ।

એને પ્રાપ્ત થઈ શકતો નથી. તેમ શુરુ મહારાજના ગોઠણથી ગોઠણ ભીડાવીને શિષ્યે એટલા માટે ન બેસવું બોધ એ, કારણ કે આ પ્રકારની ક્રિયાથી શુરુ મહારાજનો અવિનય થાય છે, શુરુ મહારાજ કોઈ કામ માટે શિષ્યને બોલાવે તો તે સમયે એનું કર્તવ્ય છે કે પોતાના આસન ઉપરથી એજ વખતે સ્વસ્થ ચિત્ત બની શુરુ બોલાવે ત્યારે તહેલ કહી આસનનો ત્યાગ કરી ભક્તિપૂર્વક વિનય સાથે શુરુની સામે જઈ હાથ બોડી વંદના કરી પૂછે કે હે ભદ્રન્ત ! આજ્ઞા આપો કયા કામ માટે આપે મને યાદ કરેલ છે. આ પ્રકારનો વહેવાર પણ વિનય ધર્મમાં મહણ કરવામાં આવેલ છે ॥ ૧૮ ॥

नेव पल्हत्थियं इत्यादि,

अन्वयार्थ—संजए—संयतः मुनि शिष्ये गुरुणंतिए—गुरुणामन्तिके पोटाना शुश्रूणोनी सामे पल्हत्थियं नेवकुज्जा—पर्यास्तिका नैव कुर्यात् पक्ष उपर पक्ष राणी—पक्षोड़ी लगावी—पद्मासन लगाडी, कडि पक्ष बिसवुं न बोटिओ. आ

કિંચિત્કાર્યકરણાય પ્રોક્તો વા સ્યાત્, તદા શિષ્યેણ શર્યાયાં સ્થિતેનૈવ ન શ્રોતવ્યમ્, કિં તુ ગુરુવચનશ્રવણસમનન્તરમેવ સંશ્રાન્તવેતાઃ સવિનયઃ કૃતાહ્નિલિઃ સન્ ગુરોઃ સમીપમાગત્ય ચરણાવિન્દં વન્દમાનઃ ‘અનુગૃહીતોઽહમ્’ ઇતિ મનસિ મન્યમાનો વદેત્-‘મદન્ત ! આજ્ઞાપયતુ કિં વિધેયં મયા ’ ઇતિ ॥ ૧૮ ॥

મોક્ષાભિલાષી શિષ્ય કા કર્તવ્ય છે કિં વહ આચાર્યાદિક કો દાયેં વાયેં ન વૈઠે । કારણ કિં ઇસ પ્રકાર વૈઠને સે ગુર્વાદિક કી પંક્તિ મેં ઉસકા સમાવેશ હોતા હૈ । દર્શનાર્થી લોગ શિષ્ય કો સમજેંગે કિં યહી ગુરુ મહારાજ હૈ । તથા શિષ્ય કે પ્રતિ જય ગુરુ કો દેખને કી ઇચ્છા હોગી તો વે અપની ગર્દન કો મોઢકર ઉસકો દેખેંગે, ઇસસે ઉનકી ગર્દન મેં તથા સ્કન્ધ આદિ ફિરાને મેં તકલીફ હોગી, તથા ગુરુ મહારાજ કા સંઘટ્ટા આદિ હોને સે શિષ્ય કો આશાતના આદિ દોષ લગને કા સંભવ હૈ । ઇસલિયે ગુરુ મહારાજ કી વરાવરી મેં નહીં વૈઠના ચાહિયે । ગુરુ મહારાજ કે આગે ભી ઇસી તરહ સે નહીં વૈઠના ચાહિયે । કારણ કિં ઇસ પ્રકાર સે વૈઠને મેં ગુરુ મહારાજ કો વન્દના નિમિત્ત આને વાલોં કો ઉનકે દર્શનોં મેં અન્તરાય હોતી હૈ । ઇસી પ્રકાર ગુરુ કે પીછે ભી શિષ્ય કો નહીં વૈઠના ચાહિયે-ક્યોં કિં ઇસ પ્રકાર સે વૈઠને પર ગુરુ કો શિષ્ય કા મુખ નહીં દીઘ સકેગા ઓર શિષ્ય કો ગુરુ કા મુખ નહીં દીઘ સકેગા, ઇસસે વાચના પૃચ્છના આદિ મેં અન્તરાય હોને સે ઉનકા આનંદ

ભણી લેવો નેઈએ, આ કૃતિકર્મના યોગ્ય આચાર્ય આદિ હોય છે. મોક્ષા-ભિલાષી શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે આચાર્ય આદિથી ડાખા-જમણા ન બેસે કારણ કે, આ પ્રકારે બેસવાથી ગુરુ આદિની પંક્તિમાં તેનો સમાવેશ થાય છે. દર્શનાર્થી લોક શિષ્યને જ ગુરુ મહારાજ માની લે. શિષ્ય તરફ જ્યારે ગુરુ મહારાજને બોવાની ઇચ્છા થાય ત્યારે તે પોતાની ગરદન મરડીને તેના તરફ નેથે આથી એમની ગરદનમાં તથા ખભા વગેરે ફેરવવામાં તકલીફ થશે તથા ગુરુ મહારાજનું સંઘટ્ટ આદિ થવાથી શિષ્યને અશાતના આદિ દોષ લાગવાનો સંભવ છે. આ માટે ગુરુ મહારાજની બરોબરીમાં બેસવું ન નેઈએ તેમ ગુરુ મહારાજની આગળ પણ આ રીતે બેસવું ન નેઈએ. કારણ કે આ પ્રકારના બેસવાથી ગુરુ મહારાજની વંદના માટે આવનારને તેમના દર્શનમાં અંતરાય થાય છે. આ પ્રકારે ગુરુની પાછળ પણ શિષ્યે બેસવું ન નેઈએ કેમ કે આ રીતે બેસવાથી ગુરુ શિષ્યનું સુખ નેઈ શકતા નથી અને શિષ્ય, ગુરુનું સુખ નેઈ શકતા નથી અને ગુરુ શિષ્યનું સુખ નેઈ શકે નહીં આથી વાચના પૃચ્છના આદિમાં અંતરાય થવાથી એને

પ્રેક્ષિતું શીલમસ્યેતિ તથા, અસૌ ગુરુણાં પ્રસાદઃ—યદન્યેષાં શિષ્યાણાં સદ્ભાવેऽપિ ગુરવો માયાજ્ઞાપયન્તીતિ વિચારશીલ इत्यर्थः । यद्वा—केन विधिना गुरुः प्रसन्नो भवेदिति भावनाभावितः, गुरुप्रसादलाभार्थी इति यावत् । उक्तञ्च—

જો નત્યિ ભગસાલી, નો સો ગુરુદેસણં इहं लभए ।

ધારામિયસ્સ નિવડ્ઢ, અંગેણો પુન્નહીણાણં ॥ ૧ ॥

છાયા—યો નાસ્તિ ભાગ્યશાલી, નાસૌ ગુરુદેશનામિહાલભતે ।

ધારાઽમૃતસ્ય નિપતતિ, અગ્ને નો પુણ્યહોનાનામ્ ॥ ૧ ॥

તથા નિયાગાર્થી=મોક્ષાર્થી શિષ્યઃ ગુરું=ધર્માચાર્યાદિકં, સદા ઉપતિષ્ઠેત્= 'મત્થપણ વંદામિ' इत्यादि वदन् सविनयं गुरुसमीपे तिष्ठेदित्यर्थः ॥ ૧૦ ॥

જાવે, અથવા કિસી કામ કરને કેલિયે કહા જાવે—તય વહ (કયાઈવિ-કદાચિદપિ) કમી ખી (તૂસણીઓ ન-તૂણીકઃ ન ભવેત્) ઉત્તર દિયે વિના નહીં રહે જાહે ધીમાર ખી હોવે તૌ ખી ચુપચાપ ન રહે । (પસાય-પેહી-પ્રસાદપ્રેક્ષી) યહ સમજે કિ મેરા વડા ભારી સૌભાગ્ય કા ઉદય હૈ, જો અન્ય શિષ્યોં કે હોને પર ખી ગુરુ મહારાજ મુજે હી આજ્ઞાપ્રદાન-કર રહે હૈં । અથવા—યહ વિચાર કરે કિ ગુરુ મહારાજ જિસ ઉપાય સે મેરે પર પ્રસન્ન હૌં વહી ઉપાય મુજે કરતે રહના જાહિયે । ઇસ પ્રકાર કી ભાવના સે ભાવિત હોકર ગુરુ કે પ્રસાદ કા લાભાર્થી બને । ક્યોં કિ કહા ખી હૈ—જિસ પ્રકાર હીન પુણ્યવાલોં કે શરીર ઉપર અમૃત રસ કી ધારા નહીં પડતી હૈ—ઉસી પ્રકાર જો શિષ્ય ભાગ્યશાલી નહીં હોતા હૈ વહ ગુરુ કી દેશના કા પાત્ર નહીં હોતા હૈ । ઇસી તરહ (નિયાગટ્ટી) મોક્ષા-મિલાપી શિષ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ (સયા ગુરું ઉવચિદ્ઢે—સદા ગુરું

ન્યારે તેને બોલાવવામાં આવે અથવા કોઈ કામ માટે કહેવામાં આવે ત્યારે કયાઈવિ-કદાચિદપિ તે કદિ પણ તુસણીઓ ન-તુણીકઃ ન ભવેત્ ઉત્તર આપ્યા વગર ન રહે. જાહે તે ધીમાર હોય તો પણ ચુપચાપ ન રહે. પસાયપેહી—પ્રસાદપ્રેક્ષી તે એવું સમજે કે, મારા સૌભાગ્યનો મોટો ઉદય છે કે, બીજા શિષ્યો હોવા છતાં પણ ગુરુ મહારાજ મને જ આજ્ઞા આપે છે. અથવા એવો વિચાર કરે કે ગુરુ મહારાજને ઉપાયથી મારા ઉપર પ્રસન્ન રહે તેવો જ ઉપાય મારે કરતા રહેવું બેઠ્યો. આ પ્રકારની ભાવનાથી ભાવિત બનીને ગુરુના પ્રસાદનો લાભાર્થી બને. કેમકે, કહ્યું છે કે—જે પ્રકારે દુર્ભાગીના શરીર ઉપર અમૃતરસની ધાર પડતી નથી, એ પ્રકારથી જે શિષ્ય ભાગ્યશાળી નથી હોતો તે ગુરુની દેશનાને પાત્ર બનતો નથી. આ રીતે નિયાગટ્ટી-મોક્ષામિ-લાપી શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે સયા ગુરું ઉવચિદ્ઢે—સદા ગુરું ઉપતિષ્ઠેત્ હમેશાં

પવેશનં, પર્યસ્તિકા, તામ્, પક્ષપિઙ્ડં—વાદુદ્યેન કાયવેદનં ચ નૈવ કુર્યાત્ । અપિ
વા=અપિ ચ ગુરુણામ્ અન્તિકે=સંનિધૌ પાદૌ=ચરણૌ પ્રસારિતૌ કૃત્વા ન તિષ્ઠેત્ ।
ઇદમુપલક્ષણમ્—અકજ્ઞોપરિ અપરચરણં નિધાયાપિ ન તિષ્ઠેત્ । તથાસત્યવિનયઃ
સ્યાદિતિ ભાવઃ ॥ ૧૯ ॥

મૂલમ્—આયરિણ્દિં વાહિત્તો, તુસિંળીઓ નેં કયાઈ ત્રિ ।

પસાયપેહી નિયાંગટ્ટી, ઉંવચિદ્દે ગુરં સયા ॥૨૦॥

છાયા—આચાર્યવ્યાહતઃ તૂળીકો, ન કદાચિદપિ ।

પ્રસાદપ્રેક્ષી નિયાગાર્યી, ઉપતિષ્ઠેત્ ગુરં સદા ॥ ૨૦ ॥

ટીકા—‘આયરિણ્દિં’ ઇત્યાદિ ।

આચાર્યઃ=ગુરુભિઃ, વ્યાહતઃ—આહતઃ, યદ્વા-ઉક્તઃ સન્ તૂળીકઃ=મૌનાવલમ્બી,
કદાચિદપિ=ગ્લાનાઘવસ્થાયામપિ ન ભવેદિતિ શેષઃ । કિંતુ પ્રસાદપ્રેક્ષી=પ્રસાદં

(પક્ષપિઙ્ડં ચ નૈવ કુઙ્જા-પક્ષપિઙ્ડં ચ નૈવ કુર્યાત્) ઇતી પ્રકાર દોનોં
હાથોં સે ઘુટને વાંધકર તથા પીઠ ભાગ સે હેકર દોનોં ઘુટનોં કો વસ્ત્ર
વાંધકર ભી વૈઠના ગુરુ મહારાજ કી આશાતના હૈ । (પાપ પસારિણ વાવિ
ન ચિદ્દે-પાદૌ પ્રસાર્ય વાપિ ન તિષ્ઠેત્) અર્થાત્ ગુરુ મહારાજ કે સામને
પૈરોં કો પસાર કર ભી શિષ્ય કો વૈઠના ઉચિત નહીં હૈ । ઇતી તરહ
અર્ધ પદ્માસન કે રૂપ મેં ભોં ઉનકે સમક્ષ નહીં વૈઠના ચાહિયે । એસા
કરને સે અવિનય દોષ લગતા હૈ ॥ ૧૯ ॥

‘આયરિણ્દિં’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—શિષ્ય કો ચાહિયે કિં વહ (આયરિણ્દિં વાહિત્તો-
આચાર્યઃ વ્યાહતઃ સન્) આચાર્ય તથા અપને સે વડોં દ્વારા જવ ઘુલાયા

પ્રકારે બેસવાથી અશાતનાનો દોષ લાગે છે. પક્ષપિઙ્ડં ચ નૈવ કુઙ્જા-પક્ષપિઙ્ડં
ચ નૈવ કુર્યાત્ આ પ્રકારે બન્ને હાથોને ગોઠણ ઉપર લગાવી. તથા
વાંસાના લાગથી લઈ બન્ને ઘુટણને વસ્ત્રથી બાંધી બેસવાથી પણ શુરુ
મહારાજની અશાતના થાય છે. પાપ પસારિણ વાવિ ન ચિદ્દે-પાદૌ પ્રસાર્યવાપિ ન
તિષ્ઠેત્ અર્થાત્ શુરુ મહારાજની સામે પગ લાંબા કરીને પણ શિષ્યે બેસવું
ઉચિત નથી. આ રીતે અર્ધ પદ્માસનના રૂપથી પણ એમની સામે બેસવું ન
ભેઈ એ એમ કરવાથી અવિનય દોષ લાગે છે ॥ ૧૯ ॥

‘આયરિણ્દિં’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—વિવેક્ષી શિષ્ય માટે એ જરૂરી છે કે તે આયરિણ્દિં વાહિત્તો-
આચાર્યઃ વ્યાહતઃ સન્ આચાર્ય તથા પોતાનાથી એટલે ૧.

આસનાવસ્થિતં શિષ્યં વદતિ, તદા શિષ્યો વ્યાખ્યાનાદિકાલેપિ પટ્ટાધાસને નોપ-
વિષ્ટઃ સ્યાદ્, કિંતુ આસનં ત્યક્ત્વા ધીરઃ=બુદ્ધિમાન્, શિષ્યઃ યતઃ=યત્નવાન્ એકા-
ગ્રચિત્તઃ સન્ યત્=યત્ કાર્યં, ગુરુણોક્તં સુકરં દુષ્કરં વા, તત્તત્ પ્રતિશૃણુયાત્,
'અવશ્યકરણભાવોઽસ્તિ' હત્યુક્ત્વા સ્વીકુર્યાત્ । અન્ન-ધીર ઇતિ વિશેષણં વ્યાખ્યા-
નાદિકાલે, તથા સ્વશરીરાદિકાર્યવશાદ્ વ્યગ્રસ્યાપિ શિષ્યસ્ય ગુરુત્રિનયારાધનાર્થં
ક્ષમત્વં સાવધાનત્વં ચ સૂચયતિ । 'યતઃ' ઇતિ વિશેષણેન સમિતિગુપ્તિસમારાધન-
પૂર્વકં ગુરોઃ સકલકાર્યસંપાદનાભિરુચિઃ સૂચિતા । પ્રતિશૃણુયાદિતિ પદેન ગુરુ-
વચનશ્રવણસમનન્તરમવિલમ્બેન તત્કાર્યસંપાદનાર્થં સ્વીકૃતિવચનમુક્ત્વાઽન્યત્ સર્વં
સ્વકીયકાર્યં વિહાય પ્રથમં સર્વથા ગુરુકાર્યસાધને સાદરા પ્રવૃત્તિઃ સૂચિતા ॥૨૧॥

બેઠા હો તો મી ઉસ સમય શીઘ્ર ઉઠકર ઉસે ગુરુ મહારાજ કી આજ્ઞા
કા પાલન કરના ચાહિયે । એસા નહીં કરના ચાહિયે કિ ગુરુ મહારાજ
કી ઘાત સુનકર મી પુનઃ આસન પર બેઠ જાવે । અર્થાત્ ઉસ સમય
વ્યાખ્યાન આદિ કા સમય હો તો મી ગુરુ મહારાજ કી આજ્ઞા કા
આરાધન કરના ચાહિયે । હસી ઘાત કો ઉત્તરાર્થ મે સૂત્રકાર ને સ્પષ્ટ
કિયા હૈ—(ચઙ્ગણ આસનં ધીરો જઓ જત્તં પઢિસ્સુણે—ત્યક્ત્વા આસનં
ધીરઃ યત્તત્ પ્રતિશૃણુયાત્) ચાહે વહ કાર્ય સરલ હો ચાહે કઠિન હો તો
મી સર્વપ્રકાર કે સંકલ્પ વિકલ્પ સે રહિત હોકર ગુરુ મહારાજ કથિત
કાર્ય કો “ અવશ્ય કરને કા ભાવ હૈ ” એસા કહકર શિષ્ય કો સ્વીકાર
કરના ચાહિયે । સૂત્ર મેં જો ધીર વિશેષણ દિયા ગયા હૈ ઉસસે સૂત્રકાર
કા યહ અભિપ્રાય સૂચિત હોતા હૈ કિ જિસ સમય ગુરુ મહારાજ કાર્ય
કરને કે લિયે શિષ્ય સે કહેં ઉસ સમય વહ શિષ્ય ચાહે વ્યાખ્યાન દેને

આસન ઉપર બેસેલ હોય તો પણ ત્યાંથી તુરત જ ઉઠીને તેણે ગુરુ મહારાજની
આજ્ઞાનું પાલન કરવું બોધ્યું. એવું નહીં કરવું બોધ્યું કે, ગુરુ મહારાજની
વાત સાંભળીને પણ આસન ઉપર પાછો બેસી બીજા અર્થોત્ એ વખતે વ્યાખ્યાન
આદિનેા સમય હોય તો પણ ગુરુ મહારાજની આજ્ઞાનું આરાધન કરવું
બોધ્યું. આ વાતને ઉત્તરાર્થથી સૂત્રકારે સ્પષ્ટ કરેલ છે.

ચઙ્ગણ આસનં ધીરો જઓ જત્તં પઢિસ્સુણે—ત્યક્ત્વા આસનં ધીરઃ યતો યત્તત્ પ્રતિ-
શૃણુયાત્ યાહે તે કામ સરળ હોય, યાહે કઠીન હોય તો પણ સર્વ પ્રકારના
સંકલ્પ વિકલ્પથી રહિત થઈને ગુરુ મહારાજે કહેલા કામને “ અવશ્ય કરવું
બોધ્યું તેવો ભાવ છે ” એવું કહીને શિષ્યે તેના સ્વીકાર કરવો બોધ્યું.
સૂત્રમાં જે ધીર વિશેષણ અપાયેલ છે તેનાથી સૂત્રકારનો એ અભિપ્રાય જણાય
છે કે, જે સમયે ગુરુ મહારાજ કામ કરવા માટે શિષ્યને કહે તે સમયે શિષ્ય

આસનસ્થિતસ્ય શિષ્યસ્ય વિનયમાહ—

મૂલમ્—આલંબંતે લંબંતે વા, ન નિસિઙ્ગ કયાઙ્ગિ વિ ।

ચઙ્ગર્જણ આસંઘં ધીરો, જંઓ જંતં” પઙ્ગિસુણે ॥૨૧॥

ઝાયા—આલપતિ લપતિ વા, ન નિપીદેત્ કદાચિદપિ ।

ત્પક્ત્વા આસનં ધીરો, યતો યત્ પ્રતિગૃણ્યાત્ ॥ ૨૧ ॥

ટીકા—‘આલંબંતે’ इत्यादि ।

ગુરૌ આલપતિ=સકુદ્ વદતિ સતિ, કાર્યસ્ય લઘુત્વાત્સકુત્કલ્પનમિતિ ભાવઃ, યથા-આસનમાનીયતામ્, પારણં ક્રિયતામ્, इत्यादि, વા=અથવા ગુરૌ લપતિ= પુનઃ પુનઃ કથયતિ સતિ ગ્રહણાસેવનાશિક્ષાયાં સ્વપરવૈયાદ્યત્ત્યકાર્યે ચ, કાર્યસ્ય ગૃહ- ત્ત્વાદત્ત્યાવશ્યકત્વાચ્ચ પુનઃ પુનઃ કથનમિતિ ભાવઃ, શિષ્યઃ કદાચિદપિ ન નિપીદેત્= આસનાઽઽસીનો ન ભવેત્ । અર્થ ભાવઃ—યદિ ગુરુઃ કિંચિત્ કાર્યં સકુદ્ વા, પુનઃ પુનર્વા,

ઉપતિષ્ઠેત્) “મત્થે ણં વંદામિ” ઇસ પ્રકાર વિનયશ્લોક શબ્દ કા વ્યવહાર કરતા હુઆ સદા અપને ગુરુ કે સમક્ષ ઉપસ્થિત હોવે ।

ભાવાર્થ—ગુરુમહારાજ જિસ તરહ અપને ઉપર પ્રસન્ન હો ઉત્તમ શિષ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઉસ પ્રકાર પ્રયત્નશીલ રહે ॥ ૨૦ ॥

‘આલંબંતે’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(આલંબંતે લંબંતે વા કયાઙ્ગિ વિ ન નિસિઙ્ગા-આલપતિ લપતિ વા કદાચિદપિ ન નિપીદેત્) ઉત્તમશિષ્ય-વિનયશીલશિષ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ જય ગુરુ મહારાજ કિસી કાર્ય કો કરને કે લિયે એક હી વાર મેં કહેં યા વાર ૨ મી કહેં તૌં ઉસ સમય ઉસે કમીં ઉસ કાર્ય કો કરને કે લિયે આના કાની નહીં કરનીં ચાહિયે । અર્થાત્—ઉસ સમય વહ શિષ્ય ચાહે અપને આસન પર મી

પોતાના ગુરુની સમક્ષ જતી વખતે મત્થે ણં વંદામિ આ પ્રકારનો વિનય ધોનક શબ્દનો વહેવાર કરતો રહે.

ભાવાર્થ—ગુરુદેવ જે રીતે પોતાના ઉપર પ્રસન્ન થાય એવો પ્રયત્ન કરવાનું ઉત્તમ શિષ્યનું કર્તવ્ય છે, અને એ પ્રકારે તે પ્રયત્નશીલ રહે ॥ ૨૦ ॥

આલંબંતે ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—આલંબંતે લંબંતે વાં કયાઙ્ગિ વિ ન નિસિઙ્ગા-આલપતિ લપતિ વા કદાચિદપિ ન નિપીદેત્ ઉત્તમ શિષ્ય-વિનયશીલ શિષ્યનું કર્તવ્ય છે કે જ્યારે ગુરુ મહારાજ કોઈ કામ કરવા માટે એક જ વખતે કહી દે અથવા વારંવાર કહે તે સમયે તેણે કદિ પણ એ કાર્યને કરવા માટે આનાકાની કરવી ન જોઈએ. અર્થાત્—એ વખતે એ શિષ્ય ભલે પોતાના

કૃત્વા સ્થિતઃ સન્ પ્રાજ્ઞલિપુટઃ=ઠતાજ્ઞલિઃ, સૂત્રાદિકં પૃચ્છેત્ । યદ્વા-કદાચિદ્પિ
=બહુશ્રુતત્વેઽપિ આસનગતઃ શય્યાગતો વા ન પૃચ્છેત્ સૂત્રાદિકમિત્યર્થઃ ।

‘આસનગઓ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—ઉત્તમ શિષ્યં કો, ચાહિયે કિ વહ (આસનગઓ-આસનગતઃ) આસન પર બેઠે ૨ અથવા (સેઝગાગઓ-શય્યાગતઃ) સંસ્તારક પર બેઠે ૨ યા સોયે ૨ (રોગાદિક અવસ્થા કો છોડ-કર) (કયાઈવિ-કદાચિદ્પિ) કમી મી (ન પુચ્છિજ્ઞા-ન પૃચ્છેત્) ગુરુ મહારાજ સે સૂત્ર કા અર્થ અથવા ડનકી કુશલતા ન પૂછે । કિન્તુ (આગમ્મુકકુહુઓ સંતો પંજલી ડડો પુચ્છિજ્ઞા-આગમ્ય ડત્કુહુકઃ સન્ પ્રાજ્ઞલિપુટઃ પૃચ્છેત્) ડનકે સમીપ આકર ઓર ડત્કુહુકાસન-ડકહુ આસનસે બેઠકર ડોનોં હાથજોડ ફિર ડનસે સૂત્ર આદિ કા અર્થ પૂછે । શિષ્ય કિતના હી વહુશ્રુતી કયોં ન હો તો મી અપને ગુરુ સે સૂત્રાર્થ કી પ્રચ્છના અથવા સુખ શાતા કી પૃચ્છના આસન પર બેઠે ૨ યા વિસ્તર પર લેટે ૨ નહીં કરની ચાહિયે । યદ્વપિ સૂત્રાર્થ કી પૃચ્છના સંશય હોને પર હી કી જાતી હૈ । વહુશ્રુત હોને પર મી સંશય હો સકતા હૈ । અવ ઁસી સ્થિતિ મેં શિષ્ય કા ધર્મ હૈ કિ ડસ સંશય કી

આસનગઓ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ઉત્તમ શિષ્યની એ ફરજ છે કે તે આસનગઓ-આસનગતઃ આસન ઉપર બેઠાં બેઠાં અથવા સેઝગાગઓ-શય્યાગતઃ શય્યામાં બેઠાં બેઠાં કે સુતાં સુતાં (રોગાદિક અવસ્થાને છેડીને) કયાઈવિ-કદાચિદ્પિ કદી પણ ગુરુ મહારાજથી સૂત્રનો અર્થ અથવા એમની કુશળતા ન પુચ્છિજ્ઞા-ન પૃચ્છેત્ ન પુછે. પરંતુ આગમ્મુકકુહુઓ સંતો પંજલિ ડડો પુચ્છિજ્ઞા-આગમ્ય ડત્કુહુકઃ સન્ પ્રાજ્ઞલિપુટઃ પૃચ્છેત્ તેમની સામે આવી અને ઉત્કુટાસનથી બેસી બંને હાથ બેડી ત્યારપછી એમને સૂત્ર આદિના અર્થ પુછે અને સુખ-શાતાના સમાચાર પુછે શિષ્ય ગમે તેવો બહુશ્રુત કેમ ન હોય તો પણ પોતાના ગુરુથી સૂત્રાર્થના અર્થ અથવા સુખશાતાના સમાચાર આસન પર બેઠાં બેઠાં અથવા તો પથારી પર સુતાં સુતાં ન પુછવા બેઠએ. બે કે સૂત્રાર્થ આદિના અર્થ સંશય થવાથી જ પુછાય છે. બહુશ્રુત હોવા છતાં પણ સંશય થાય છે. આથી આવી સ્થિતિમાં શિષ્યનો ધર્મ છે કે, એ સંશયની નિવૃત્તિ માટે તે ગુરુની સમક્ષ બંધ અને ખુબ વિનયની સાથે એ સંશયની નિવૃત્તિ

मूलम्—आसणगओ न पुच्छिज्जा, नेव सेज्जागओ कयाइ वि ।

आगम्मुक्कुडुओ संतो, पुच्छिज्जा पंजेलीउडो ॥२२॥

छाया—आसनगतो न पृच्छेत्, नैव शय्यागतः कदाचिदपि ।

आगम्योत्कुदुकः सन्, पृच्छेत् प्राञ्जलिपुटः ॥ २२ ॥

टीका—‘आसणगओ’ इत्यादि । आसनगतः=आसनोपविष्टः सन् न पृच्छेत् सूत्रार्थं कुशळादिकं वा किमपि न पृच्छेदित्यर्थः । तथा—कदाचिदपि कस्मिन्नपि काले शय्यागतः संस्तारकरिधतः नैव पृच्छेत् रोगाघवस्थां विना शयानः सन् किमपि नैव पृच्छेदित्यर्थः । किंतु आगम्य=गुरोः समीपे आगत्य, उत्कुदुकः=उत्कुदुकासनं

के लिये भी तैयार रहा हो—वह काल उसके व्याख्यान करने का भी हो अथवा अपने शारीरिक कार्य के वश से वह शिष्य व्यग्रचित्त वाला भी हो तो भी विनय धर्म की आराधना निमित्त उसे गुरु महाराज कथित कार्य करने की क्षमता एवं उस कार्य करने में विशेष सावधानी रखनी चाहिये । “जओ—यतः” यह पद यह प्रकट करता है कि शिष्य को समिति गुप्ति के आराधनपूर्वक ही गुरु महाराज के समस्त कार्यों के सम्पादन में रुचि शील होना चाहिये । “प्रतिश्रृणुयात्” यह क्रिया-पद इस विशेषता का सूचक है कि गुरु वचन के श्रवण के अनन्तर ही विना किसी विलंब के उनके कार्य को करने के लिये प्रतिज्ञा वचन कहकर और अपने निज कार्य को भी छोड़कर शिष्य का कर्तव्य है कि वह सर्व प्रकार से उनके कार्य के साधन करने में सादर प्रवृत्ति करे ॥२१॥

जबे व्याख्यान आपवा भाटेनी तैयारीमां डोय—ते समय तेने व्याख्यान करवाने। डोय, अथवा पोताना शारीरिक कार्यना वशथी ते शिष्य व्यग्र चित्त-वाणे। डोय तो पछु विनय धर्मनी आराधना निमित्त तेनामां गुरु महाराज के डोवा कामने करवानी क्षमता अने ओ काम करवामां विशेष सावधानी राखवी जेई ओ. जओ—यतः ओ पद ओवुं प्रकट करे छे के, शिष्ये समिति गुप्तिना आराधन पूर्वक ओ गुरु महाराजना दरेक कामेनुं संपादन करवामां रुचि केणववी जेई ओ. प्रतिश्रृणुयात् ओ क्रियापद ओ विशेषतानुं सूचक छे के गुरुवचनने सांभलतां ओ केई प्रकारना विलंब विना ओमना कामने करवा भाटे प्रतिज्ञा वचन कहीने अने पोतानुं काम डोय तेने छोडीने शिष्यनुं कर्तव्य छे के, ते सर्व प्रकारथी गुरु महाराजना कामने पूरुं करवामां पोतानी सादर प्रवृत्ति करे. ॥ २१ ॥

કૃત્વા સ્થિતઃ સન્ પ્રાઞ્જલિપુટઃ=ઠતાઞ્જલિઃ, સૂત્રાદિકં પૃચ્છેત્ । યદ્વા-કદાચિદપિ
=બહુશ્રુતત્વેઽપિ આસનગતઃ શય્યાગતો વા ન પૃચ્છેત્ સૂત્રાદિકમિત્યર્થઃ ।

‘આસનગઓ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—ઉત્તમ શિષ્ય કો, ચાહિયે કિ વહ (આસનગઓ
-આસનગતઃ) આસન પર બેઠે ૨ અથવા (સેઝાગઓ-શય્યાગતઃ)
સંસ્તારક પર બેઠે ૨ યા સોયે ૨ (રોગાદિક અવસ્થા કો છોડ-
કર) (કયાઈવિ-કદાચિદપિ) કમીં મી (ન પુચ્છિઝ્જા-ન પૃચ્છેત્)
ગુરુ મહારાજ સે સૂત્ર કા અર્થ અથવા ડનકી કુશલતા ન પૂછે । કિન્તુ
(આગમ્મુક્કુઙ્ગઓ સંતો પંજલી ડહો પુચ્છિઝ્જા-આગમ્ય ડત્કુટુકઃ સન્
પ્રાઞ્જલિપુટઃ પૃચ્છેત્) ડનકે સમીપ આકર ઓર ડત્કુટુકાસન-ડકઙ્ગ
આસનસે બેઠકર ડોનોં હાથજોડ ફિર ડનસે સૂત્ર આદિ કા અર્થ પૂછે ।
શિષ્ય કિત્તના હી બહુશ્રુતી ક્યોં ન હો તો મી અપને ગુરુ સે
સૂત્રાર્થ કી પ્રચ્છના અથવા સુખ ડાતા કી પૃચ્છના આસન પર
બેઠે ૨ યા વિસ્તર પર લેટે ૨ નહીં કરનીં ચાહિયે । યદ્યપિ સૂત્રાર્થ કી
પૃચ્છના સંડાય હોને પર હી કી જાતો હૈ । બહુશ્રુત હોને પર મી સંડાય
હો સકતા હૈ । અવ ંસી સ્થિતિ મેં શિષ્ય કા ધર્મ હૈ કિ ડસ સંડાય કી

આસનગઓ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ઉત્તમ શિષ્યની એ ફરજ છે કે તે આસનગઓ-આસનગતઃ
આસન ઉપર બેઠાં બેઠાં અથવા સેઝાગઓ-શય્યાગતઃ શય્યામાં બેઠાં બેઠાં
કે સુતાં સુતાં (રોગાદિક અવસ્થાને છોડીને) કયાઈવિ-કદાચિદપિ કદી પણ
ગુરુ મહારાજથી સૂત્રનો અર્થ અથવા એમની કુશળતા ન પુચ્છિઝ્જા-ન પૃચ્છેત્
ન પુછે. પરંતુ આગમ્મુક્કુઙ્ગઓ સંતો પંજલિ ડહો પુચ્છિઝ્જા-આગમ્ય
ડત્કુટુકઃ સન્ પ્રાઞ્જલિપુટઃ પૃચ્છેત્ તેમની સામે આવી અને ઉત્કુટાસનથી
બેસી બંને હાથ બેઠી ત્યારપછી એમને સૂત્ર આદિના અર્થ પુછે અને સુખ-
શાતાના સમાચાર પુછે શિષ્ય ગમે તેવો બહુશ્રુત કેમ ન હોય તો પણ પોતાના
ગુરુથી સૂત્રાર્થના અર્થ અથવા સુખશાતાના સમાચાર આસન પર બેઠાં બેઠાં
અથવા તો પથારી પર સુતાં સુતાં ન પુછવા બેઠએ. બે કે સૂત્રાર્થ આદિના
અર્થ સંશય થવાથી જ પુછાય છે. બહુશ્રુત હોવા છતાં પણ સંશય
થાય છે. આથી આવી સ્થિતિમાં શિષ્યનો ધર્મ છે કે, એ સંશયની નિવૃત્તિ
માટે તે ગુરુની સમક્ષ બાય અને સુખ વિનયની સાથે એ સંશયની નિવૃત્તિ

અર્થ ભાવ:-વહુશ્રુતોઽપિ શિષ્યઃ સંશયે સતિ ગુરું પૃચ્છતિ સૂત્રાર્થમ્, તત્ર વિનયપૂર્વિકૈવ મચ્છના કરણીયા યથા ગુરોરાશાતના ન ભવેદિતિ । ઉત્કુટુક ઇતિ વિશેષણેન-ઇન્દ્રિયદમનશીલત્વં વિનીતત્વં ચ સૂચિતમ્, પ્રાઙ્ગલિપુટ ઇત્યનેન સર્વવિધવિનયવત્ત્વં જાતિકુલસમ્પન્નત્વં ચ સૂચિતમ્ ॥ ૨૨ ॥

મૂલમ્—એવં વિણયજુત્તસ્સ, સુત્તં અર્થં ચં તદુભયં ।

પુચ્છમાણસ્સ સીસસ્સ, વાગેરિજ્જ જહાસુયં ॥૨૩॥

છાયા—એવં વિનયયુક્તસ્ય, સૂત્રમ્ અર્થ ચ તદુભયમ્ ।

પૃચ્છતઃ શિષ્યસ્ય, વ્યાકુર્યાદ્ યથાશ્રુતમ્ ॥ ૨૩ ॥

ટીકા—‘એવં વિણયજુત્તસ્સ’ ઇત્યાદિ । એવં=ઉક્તપ્રકારેણ વિનયયુક્તસ્ય-વિનયયતઃ, સૂત્રમ્-કાલિકોત્કાલિકાદિ, અર્થ—તદ્વોધ્યં, સૂત્રાભિપ્રાયમિત્યર્થઃ ।

નિવૃત્તિકે લિયે ગુરુકે સન્મુલ્લ જાવેઔર વહે વિનયકે સાથ ઉસ સંશય કી નિવૃત્તિ કરે । ગુરુ મહારાજ કા વિનય ભક્તિ મેં યદિ જરા સીં મી ટુટિ હો જાયગી તો શિષ્ય આશાતના દોષ કા ભાગી હોગા । “ઉત્કુટુક” ઇસ વિશેષણ સે સૂત્રકાર યહ સૂચિત કરતે હું કિ જો ઇસ આસન સે વેઠતા હૈ વહ સાધુ ઇન્દ્રિય દમન શીલ તથા વિનીત હોતા હૈ । “પ્રાઙ્ગલિપુટ” ઇસ વિશેષણ સે શિષ્ય મેં સમી પ્રકાર કે વિનયગુણ તથા જાતિસમ્પન્નતા એવં કુલ સમ્પન્નતા સૂચિત હોતી હૈ ॥ગા.૨૨॥

‘એવં’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(એવં-એવં) પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે (વિણયજુત્તસ્સ-વિનયયુક્તસ્ય) વિનયધર્મ સે યુક્ત હોકર (સુત્તં અર્થં ચં તદુભયં પુચ્છમાણસ્સ-સૂત્રં અર્થં તદુભયં પૃચ્છતઃ) સૂત્ર-અર્થ ઔર સૂત્ર અર્થ દોનોં કો પૂછને વાલે (સીસસ્સ-શિષ્યસ્ય) શિષ્ય કો (જહાસુયં

કરી દ્યે. શુરુ મહારાજની વિનય ભક્તિમાં જરા પણ ભૂલ થાય તો શિષ્ય આશાતના દોષનો ભાગી બને છે. “ઉત્કુટુક” આ વિશેષણથી સૂત્રકાર એ એ સૂચિત કરે છે કે, જે આ આસનથી બેસે છે તે સાધુ ઇન્દ્રિયનું દમન કરનાર તથા વિનિત હોય છે. “પ્રાઙ્ગલિપુટ” આ વિશેષણથી શિષ્યમાં સર્વ પ્રકારના વિનયશુષ્ણ તથા ભતિસંપન્નતા અને કુણસંપન્નતા દેખાઈ આવે છે. ॥૨૨॥ એવં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—‘એવં-એવં’ પૂર્વોક્ત પ્રકારથી વિણયજુત્તસ્સ - વિનયયુક્તસ્ય વિનય ધર્મથી યુક્ત બની સુત્તં અર્થં ચં તદુભયં પુચ્છમાણસ્સ-સૂત્રં અર્થં તદુભયં પૃચ્છતઃ સૂત્ર-અર્થ અને સૂત્ર અર્થ બન્નેને પૂછવાવાળા

ઉક્તચ્ચ—

જો સુત્તાભિપ્પાઓ, સો અત્યો અજ્ઞણ ય જમ્હા । (સ્થા. ૨ ઠા. ૧ ૩૦)

છાયા—યઃ સૂત્રાભિપ્રાયઃ સોઽર્થઃ, અર્થતે ચ યસ્માત્ ।

વ્યાખ્યા—યઃ સૂત્રસ્ય અભિપ્રાયઃ સ એવ અર્થઃ । યસ્માત્=યતઃ કરુણાદસા-
ર્થઃ સૂત્રાત્ અર્થતે ગમ્યતે । તદુભયં=સૂત્રાર્થદ્વયં ચ પૃચ્છતઃ=પૃચ્છાં કુર્વતઃ શિષ્યસ્ય
ગુરુઃ યથાશ્રુતં-ગુરુપરંપરાતો યથા જ્ઞાતં તથા સૂત્રમ્, અર્થ તદુભયં ચ વ્યાકુર્યાત્
=કથયેત્, ન તુ સ્વયુદ્ધયા કલ્પિતં કૃત્વા ઘોષયેદિતિ ભાવઃ । ઇહ તાવત્ સૂત્રજ્ઞા-
નાય સૂત્રસ્ય શબ્દાર્થ તલ્લક્ષણં તદ્ભેદં તદ્વાચનાદિકં ચ નિર્દિશામઃ, તથાદિ—

વાગરિજ્ઞા-યથાશ્રુતં વ્યાકુર્યાત્) ગુરુ મહારાજ ઉન સય કા શાસ્ત્રવિહિત
વિધિ કે અનુસાર પ્રતિપાદન કરે ।

કાલિક ઉત્કાલિક આદિ સૂત્ર હૈ । સૂત્ર કા જો અભિપ્રાય હૈ વહી
અર્થ હૈ । કહા ખી હૈ-જો સુત્તાભિપ્પાઓ સો અત્યો અજ્ઞણ ય જમ્હા-
સૂત્ર કે અભિપ્રાય કો અર્થ કહા ગયા હૈ । ક્યોં કિ યહ અર્થ સૂત્ર સે હી
નિશ્ચિત કિયા જાતા હૈ । હસ તરહ કેવલ સૂત્ર કો અથવા ઉસકે અર્થ
કો એવં હન દોનોં કો જય શિષ્ય અપને આચાર્ય મહારાજ સે પૂછે તો
આચાર્ય મહારાજ કો ચાહિયે કિ વે ઉસકો ગુરુ પરંપરા સે યથાજ્ઞાત
સૂત્ર-અર્થ એવં દોનોં કો અચ્છી તરહ સમજાવેં । એસા ન કરેં કિ અપની
નિજી કલ્પના સે મિશ્રિત કર ઉન્હેં સમજાવેં । સૂત્રજ્ઞાન કે લિયે ઉપયોગી
સમજકર સૂત્ર કા શબ્દાર્થ, ઉસકા લક્ષણ, ઉસકે ભેદ, એવં ઉસકી
વાચના આદિ કે વિષય મેં કુછ સ્પષ્ટીકરણ કિયા જાતા હૈ ।—

શિષ્યને જહાસુયં વાગરિજ્ઞા-યથાશ્રુતં વ્યાકુર્યાત્ ગુરુ મહારાજ એ બધાને શાસ્ત્ર
વિહિત વિધિ અનુસાર પ્રતિપાદન કરે.

કાલિક ઉત્કાલિક આદિ સૂત્ર છે, સૂત્રનો જે અભિપ્રાય છે તે જ અર્થ
છે. કહ્યું પણ છે, -જો સુત્તાભિપ્પાઓ સો અત્યો અજ્ઞણ ય જમ્હા-સૂત્રના અભિપ્રાયને
અર્થ કહેવામાં આવેલ છે. કેમ કે, આ અર્થ સૂત્રથી નિશ્ચિત કરવામાં આવે
છે. આ રીતે કેવળ સૂત્રને અથવા તેના અર્થને અથવા એ બન્નેને ન્યાયે
શિષ્ય પોતાના આચાર્ય મહારાજને પૂછે તો આચાર્ય મહારાજે તેને ગુરુ
પરંપરાથી યથાજ્ઞાત સૂત્ર-અર્થ અને બન્નેને સારી રીતે સમજાવે એવું ન
કરે કે પોતાની જ કલ્પનાથી મિશ્રિત કરી તેને સમજાવે. સૂત્ર જ્ઞાનને માટે
ઉપયોગી સમજીને સૂત્રનો શબ્દાર્થ, તેનું લક્ષણ, તેનો ભેદ, અને તેની વાચના
આદિના વિષયમાં કાંઈક સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે-સૂત્રયતીતિ સૂત્રમ્—

અર્થ ભાવઃ—વહુશ્રુતોઽપિ શિષ્યઃ સંશયે સતિ ગુરું પૃચ્છતિ સૂત્રાર્થમ્, તત્ર વિનયપૂર્વિકૈવ પ્રચ્છના કરણીયા યથા ગુરોરાશાતના ન ભવેદિતિ । ઉત્કુટુક ઇતિ વિશેષણેન—ઇન્દ્રિયદમનશીલત્વં વિનીતત્વં ચ સૂચિતમ્, પ્રાક્કલિપુટ ઇત્યનેન સર્વવિધવિનયવત્તં જાતિકુલસમ્પન્નત્વં ચ સૂચિતમ્ ॥ ૨૨ ॥

મૂલમ્—એવં વિનયયુક્તસ્સ, સુત્તં અર્થં ચ તદુભયં ।

પુચ્છમાણસ્સ સીસસ્સ, વાગંરિજ્જ જહાસુયં ॥૨૩॥

છાયા—એવં વિનયયુક્તસ્ય, સૂત્રમ્ અર્થં ચ તદુભયમ્ ।

પૃચ્છતઃ શિષ્યસ્ય, વ્યાકુર્યાદ્ યથાશ્રુતમ્ ॥ ૨૩ ॥

ટીકા—‘ એવં વિનયયુક્તસ્સ ’ ઇત્યાદિ । એવં=ઉક્તપ્રકારેણ વિનયયુક્તસ્ય-વિનયવતઃ, સૂત્રમ્-કાલિકોત્કાલિકાદિ, અર્થં-તદ્વોધ્યં, સૂત્રાભિપ્રાયમિત્યર્થઃ ।

નિવૃત્તિકે લિયે ગુરુકે સન્નુલ જાવેઔર વહે વિનયકે સાથ ઉસ સંશય કી નિવૃત્તિ કરે । ગુરુ મહારાજ કા વિનય ભક્તિ મેં યદિ જરા સી બી ત્રુટિ હો જાયગી તો શિષ્ય આશાતના દોષ કા ભાગી હોગા । “ઉત્કુટુક” ઇસ વિશેષણ સે સૂત્રકાર યહ સૂચિત કરતે હેં કિ જો ઇસ આસન સે બેઠતા હૈ વહ સાધુ ઇન્દ્રિય દમન શીલ તથા વિનીત હોતા હૈ । “પ્રાક્કલિપુટ” ઇસ વિશેષણ સે શિષ્ય મેં સબી પ્રકાર કે વિનયગુણ તથા જાતિસમ્પન્નતા એવં કુલ સમ્પન્નતા સૂચિત હોતી હૈ ॥ગા.૨૨॥

‘ એવં ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(એવં-એવં) પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે (વિનયયુક્તસ્સ-વિનયયુક્તસ્ય) વિનયધર્મ સે યુક્ત હોકર (સુત્તં અર્થં ચ તદુભયં પુચ્છમાણસ્સ-સૂત્રં અર્થં તદુભયં પૃચ્છતઃ) સૂત્ર-અર્થ ઔર સૂત્ર અર્થં દોનોં કો પૂછને વાલે (સીસસ્સ-શિષ્યસ્ય) શિષ્ય કો (જહાસુયં

કરી દ્યે, ગુરુ મહારાજની વિનય ભક્તિમાં જરા પણ ભૂલ થાય તો શિષ્ય આશાતના દોષનો ભાગી બને છે. “ઉત્કુટુક” આ વિશેષણથી સૂત્રકાર એ એ સૂચિત કરે છે કે, જે આ આસનથી બેસે છે તે સાધુ ઇન્દ્રિયત્વં દમન કરનાર તથા વિનિત હોય છે. “પ્રાક્કલિપુટ” આ વિશેષણથી શિષ્યમાં સર્વ પ્રકારના વિનયશુભ તથા જાતિસંપન્નતા અને કુળસંપન્નતા દેખાઈ આવે છે. ॥૨૨॥
એવં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—એવં-એવં પૂર્વોક્ત પ્રકારથી વિનયયુક્તસ્સ-વિનયયુક્તસ્ય વિનય ધર્મથી યુક્ત બની સુત્તં અર્થં ચ તદુભયં પુચ્છમાણસ્સ-સૂત્રં અર્થં તદુભયં પૃચ્છતઃ સૂત્ર-અર્થં અને સૂત્ર અર્થં બન્નેને પુછવાવાળા

ઉક્તञ्च—

જો સુત્તાભિપ્પાઓ, સો અત્યો અજ્ઞાણ ય જન્મ્યા । (સ્થા. ૨ ઠા. ૧ ૩૦)

છાયા—યઃ સૂત્રાભિપ્રાયઃ સોઽર્થઃ, અર્થતે ચ યસ્માત્ ।

વ્યાખ્યા—યઃ સૂત્રસ્ય અભિપ્રાયઃ સ એવ અર્થઃ । યસ્માત્=યતઃ કરણાદસા-
ર્થઃ સૂત્રાત્ અર્થતે ગમ્યતે । તદુભયં=સૂત્રાર્થદ્વયં ચ પૃચ્છતઃ=પૃચ્છાં કુર્વતઃ શિષ્યસ્ય
ગુરુઃ યથાશ્રુતં-ગુરુપરંપરાતો યથા જ્ઞાતં તથા સૂત્રમ્, અર્થ તદુભયં ચ વ્યાકુર્યાત્
=કથયેત્, ન તુ સ્વચુદ્ધયા કલ્પિતં કૃત્વા બોધયેદિતિ ભાવઃ । इह तावत् सूत्रज्ञा-
नाय सूत्रस्य शब्दार्थं तद्वक्षणं तदभेदं तद्वाचनादिकं च निर्दिशामः, तथाहि—

વાગરિજ્ઞા-યથાશ્રુતં વ્યાકુર્યાત્) ગુરુ મહારાજ ઉન સવ કા શાસ્ત્રવિહિત
વિધિ કે અનુસાર પ્રતિપાદન કરે ।

કાલિક ઉત્કાલિક આદિ સૂત્ર હૈ । સૂત્ર કા જો અભિપ્રાય હૈ વહી
અર્થ હૈ । કહા भी है-जो सुत्ताभिप्राओ सो अत्यो अज्ज्ञाण य जन्म्या-
સૂત્ર કે અભિપ્રાય કો અર્થ કહા ગયા હૈ । क्यों कि यह अर्थ सूत्र से ही
નિશ્ચિત કિયા જાતા હૈ । इस तरह केवल सूत्र को अथवा उसके अर्थ
કો એવં इन दोनों को जब शिष्य अपने आचार्य महाराज से पूछे तो
આચાર્ય મહારાજ કો વાહિયે કિ વે उसको गुरु परंपरा से यथाज्ञात
સૂત્ર-અર્થ એવં दोनों को अच्छी तरह समझावें । ऐसा न करें कि अपनी
નિજી કલ્પના સે મિશ્રિત કર ઉન્હેં સમજાવે । सूत्रज्ञान के लिये उपयोगी
સમજકર સૂત્ર કા શબ્દાર્થ, उसका लक्षण, उसके भेद, एवं उसकी
વાચના આદિ કે વિષય મેં कुछ स्पष्टीकरण किया जाता है ।—

શિષ્યને જહાસુયં વાગરિજ્ઞા-યથાશ્રુતં વ્યાકુર્યાત્ ગુરુ મહારાજ એ બધાને શાસ્ત્ર
વિહિત વિધિ અનુસાર પ્રતિપાદન કરે.

કાલિક ઉત્કાલિક આદિ સૂત્ર છે, સૂત્રનો જે અભિપ્રાય છે તે જ અર્થ
છે. કહ્યું પણ છે,—जो सुत्ताभिप्राओ सो अत्यो अज्ज्ञाण य जन्म्या-સૂત્રના અભિપ્રાયને
અર્થ કહેવામાં આવેલ છે. કેમ કે, આ અર્થ સૂત્રથી નિશ્ચિત કરવામાં આવે
છે. આ રીતે કેવળ સૂત્રને અથવા તેના અર્થને અથવા એ બન્નેને જ્યારે
શિષ્ય પોતાના આચાર્ય મહારાજને પૂછે તો આચાર્ય મહારાજે તેને ગુરુ
પરંપરાથી યથાજ્ઞાત સૂત્ર-અર્થ અને બન્નેને સારી રીતે સમજાવે એવું ન
કરે કે પોતાની જ કલ્પનાથી મિશ્રિત કરી તેને સમજાવે. સૂત્ર જ્ઞાનને માટે
ઉપયોગી સમજીને સૂત્રનો શબ્દાર્થ, તેનું લક્ષણ, તેનો ભેદ, અને તેની વાચના
આદિના વિષયમાં કાંઈક સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—સૂચયતીતિ સૂત્રમ્—

અયં ભાવઃ—વદ્યુશ્રુતોઽપિ શિષ્યઃ સંશયે સતિ ગુરું પૃચ્છતિ સૂત્રાર્થમ્, તત્ર વિનયપૂર્વિકૈવ પ્રચ્છના કરણીયા યથા ગુરોરાશાતના ન ભવેદિતિ । ઉત્કુટુક ઇતિ વિશેષણેન—
 ઇન્દ્રિયદમનશીલત્વં વિનીતત્વં ચ સૂચિતમ્, પ્રાજ્ઞલિપુટ ઇત્યનેન સર્વવિધવિનયવત્ત્વં
 જાતિકુલસમ્પન્નત્વં ચ સૂચિતમ્ ॥ ૨૨ ॥

મૂલમ્—એવં વિણયજુત્તસ્સ, સુત્તં અર્થં ચ તદુભયં ।

પુચ્છમાણસ્સ સીસસ્સ, વાગેરિજ્જ જહાસુયં ॥ ૨૩ ॥

છાયા—એવં વિનયયુક્તસ્ય, સૂત્રમ્ અર્થ ચ તદુભયમ્ ।

પૃચ્છતઃ શિષ્યસ્ય, વ્યાકુર્યાદ્ યથાશ્રુતમ્ ॥ ૨૩ ॥

ટીકા—‘ એવં વિણયજુત્તસ્સ ’ ઇત્યાદિ । એવં=ઉક્તપ્રકારેણ વિનયયુક્તસ્ય-
 વિનયવતઃ, સૂત્રમ્-કાલિકોત્કાલિકાદિ, અર્થ-તદ્વોધ્યં, સૂત્રાભિપ્રાયમિત્યર્થઃ ।

નિવૃત્તિકે લિયે ગુરુકે સન્મુખ જાવેઔર વઢે વિનયકે સાથ ઉસં સંશય
 કી નિવૃત્તિ કરે । ગુરુ મહારાજ કા વિનય ભક્તિ મેં યદિ જરા સીં મી
 ત્રુટિ હો જાયગી તો શિષ્ય આશાતના દોષ કા ભાગી હોગા । “ ઉત્કુટુક ”
 હસ વિશેષણ સે સૂત્રકાર યહ સૂચિત કરતે હેં કિ જો હસ આસન સે
 બેઠતા હેં વહ સાધુ ઇન્દ્રિય દમન શોલ તથા વિનીત હોતા હેં । “ પ્રાજ્ઞ-
 લિપુટ ” હસ વિશેષણ સે શિષ્ય મેં સમી પ્રકાર કે વિનયગુણ તથા
 જાતિસમ્પન્નતા એવં કુલ સમ્પન્નતા સૂચિત હોતી હેં ॥ગા.૨૨॥

‘ એવં ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(એવં-એવં) પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે (વિણયજુત્તસ્સ-
 વિનયયુક્તસ્ય) વિનયધર્મ સે યુક્ત હોકર (સુત્તં અર્થં ચ તદુ-
 ભયં પુચ્છમાણસ્સ-સૂત્રં અર્થ તદુભયં પૃચ્છતઃ) સૂત્ર-અર્થ ઔર સૂત્ર
 અર્થ દોનોં કો પૂછને વાલે (સીસસ્સ-શિષ્યસ્ય) શિષ્ય કો (જહાસુયં

કરી લ્યે. શુરુ મહારાજની વિનય ભક્તિમાં જરા પણ ભૂલ થાય તો શિષ્ય
 આશાતના દોષનો ભાગી બને છે. “ ઉત્કુટુક ” આ વિશેષણથી સૂત્રકાર એ
 એ સૂચિત કરે છે કે, જે આ આસનથી બેસે છે તે સાધુ ઇન્દ્રિયનું દમન
 કરનાર તથા વિનિત હોય છે. “ પ્રાજ્ઞલિપુટ ” આ વિશેષણથી શિષ્યમાં સર્વ
 પ્રકારના વિનયગુણ તથા જાતિસંપન્નતા અને કુલસંપન્નતા દેખાઈ આવે છે. ॥૨૨॥
 એવં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—એવં-એવં પૂર્વોક્ત પ્રકારથી વિણયજુત્તસ્સ - વિનયયુક્તસ્ય
 વિનય ધર્મથી યુક્ત બની સુત્તં અર્થં ચ તદુભયં પુચ્છમાણસ્સ-સૂત્રં અર્થ
 તદુભયં પૃચ્છતઃ સૂત્ર-અર્થ અને સૂત્ર અર્થ બન્નેને પુછવાવાળા સીસસ્સ-

સૂત્રપદનિર્ણયનામકં દ્વિતીયં દ્વારમ્—

અથ-સૂત્રપદનિર્ણયઃ । દ્રવ્યસૂત્રં-કાર્પાસાદિકમ્ । ભાવસૂત્રં તુ-અસ્મિન્ જ્ઞાનાધિકારે સૂચકં જ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનમ્, તસ્યૈવ સ્વપરાર્થસૂચકત્વાત્, શ્રૂયતે યત્ તત્ શ્રુતં જ્ઞાયતેન્નેતિ જ્ઞાનં, શ્રુતં ચ તદ્ જ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનમ્ । તચ-૧૬ાદશાઙ્ગાનિ, પ્રકીર્ણકાનિ, દૃષ્ટિવાદશ્ચ । તદુક્તમ્—

“ ૧૬ારસમંગાઈં, પૈન્નગં દિદ્ધિવાઓ ય ” ઇતિ । (૩. ૨૮ અ. ૨૩ ગા.)

॥ ઇતિ દ્વિતીયં સૂત્રપદનિર્ણયદ્વારમ્ ॥

અથ તૃતીયં સૂત્રલક્ષણદ્વારમ્—

યત્ સૂત્રં સૂત્રલક્ષણોપેતં તદેવોચારણીયમ્, લક્ષણરહિતં હિ સૂત્રં વિવક્ષિતમર્થં ન સાધયતિ, તસ્માદ્લક્ષણયુક્તમેવ સૂત્રમિપ્યતે, અતઃ સૂત્રલક્ષણં વાચ્યમ્ । તદ્ યથા-અપ્પક્કારં મહત્તયં, વત્તીસદોસવિરહિયં જં ચ ।
લક્ષણજુત્તં સુત્તં, અદ્ધિ ય ગુણેહિ ઉવ્વેયં ॥

જિસકે સેવન સે-ઉપાસના કરને સે-ઉસકે દ્વારા પ્રતિપાદિત માર્ગ કા અનુસરણ કરને સે-અષ્ટવિધ કર્મો કા આત્મા સે નિર્ગમન હો જાય ઉસકા નામ સૂત્ર હૈ । ૧ ।

સૂત્ર પદ નિર્ણય નામક દ્વસરા દ્વાર કહતે હૈ—

સૂત્ર કે દો ભેદ હૈ—૧ દ્રવ્યસૂત્ર, ૨ ભાવસૂત્ર । કપાસ આદિ સે યના હુઆ દ્રવ્યસૂત્ર હૈ । ભાવશ્રુત કા નામ ભાવસૂત્ર હૈ । ઇસસે હી સ્વરૂપ ઓર પરસ્વરૂપ કા સૂચન-અર્થાત્ બોધ હોતા હૈ । જો સુના જાય વહ શ્રુત ઇવં જિસકે દ્વારા જાના જાય વહ જ્ઞાન હૈ । શ્રુતરૂપ જો જ્ઞાન હૈ ઉસ કા નામ શ્રુતજ્ઞાન હૈ । ૧૧ અંગ પ્રકીર્ણક (પૈન્નગ) ઇવં દૃષ્ટિવાદ યે સવ શ્રુતજ્ઞાન સ્વરૂપ હૈ । કહા ઓ હૈ—“ ૧૬ારસમંગાઈં પૈન્નગં દિદ્ધિવાઓય ” । ૩ ।

કરવાથી તેના દ્વારા પ્રતિપાદિત માર્ગનું અનુસરણ કરવાથી આઠ પ્રકારના કર્મોનું આત્માથી નિર્ગમન થઈ બચ તેનું નામ સૂત્ર છે. ॥ ૧ ॥

સૂત્રપદ નિર્ણય નામનું ખીજું દ્વાર કહે છે—

સૂત્રના બે ભેદ છે—૧ દ્રવ્યસૂત્ર, ૨ ભાવસૂત્ર કપાસ વગેરેથી બનેલ દ્રવ્યસૂત્ર છે, ભાવશ્રુતનું નામ ભાવસૂત્ર છે. આનાથી જ સ્વ સ્વરૂપ અને પર-સ્વરૂપનું સૂચન-અર્થાત્ બોધ થાય છે. જે સાંભળી શકાય તે શ્રુત અને જેનાથી બાધી શકાય તે જ્ઞાન છે. શ્રુતરૂપ જે જ્ઞાન છે. એનું નામ શ્રુતજ્ઞાન છે. ૧૧ અંગ પ્રકીર્ણક (પૈન્નગ) અને દૃષ્ટિવાદ એ બધા શ્રુતજ્ઞાન સ્વરૂપ છે. કહ્યું પણ છે કે—૧૬ારસમંગાઈં પૈન્નગં દિદ્ધિવાઓ ય

નનુ કઃ સૂત્રશબ્દાર્થઃ ?-અચ્યતે-સૂચયતીતિ સૂત્રમ્, યથા સૂચી સૂત્રેણ સૂચ્યતે, સૂચીસંલગ્નં યત્ સૂત્રં તદેવ સૂચ્યાઃ સૂચકં પ્રબોધકં ભવતિ, તથાર્થસંબદ્ધં સૂત્રં, વાચ્યવાચકભાવસમ્બન્ધેન યાવાનર્થઃ સૂત્રે વિધમાનસ્તસ્ય તસ્યાર્થસ્ય સૂચકં સૂત્રમ્। એવમર્થસ્ય સૂચનાત્ સૂત્રમ્ ॥ ૧ ॥ અથવા-સીવ્યતીતિ સૂત્રમ્। યથા-સૂત્રં-તન્તુઃ અઙ્ગરક્ષિકાદીનિ સીવ્યતિ, એવમર્થે ચ પદં સીવ્યતિ=યોજયતિ-એવં ચ સીવનાત્ સૂત્રમિતિ ॥ ૨ ॥ અથવા-સ્રવતીતિ સૂત્રમ્ યથા-ચન્દ્રકાન્તમણિઃ ચન્દ્રકિરણસંનિધાનાઞ્જલં સ્રવતિ-પ્રાદુર્ભાવયતિ। એવં સૂત્રમપ્યાચાર્યસંનિધાનાદર્થં પ્રસ્રવતિ તથા ચ સ્રવણાત્ સૂત્રમિતિ ॥ ૩ ॥ અથવા-સરતીતિ સૂત્રમ્, અષ્ટવિધં કર્મ સરતિ-નિર્ગચ્છતિ યેન તત્ સૂત્રમ્ ॥ ૪ ॥

॥ ઇતિ પ્રથમં સૂત્રશબ્દાર્થદ્વારમ્ ॥ ૧ ॥

સૂચયતીતિ સૂત્રમ્—

સૂત્ર શબ્દ કા અર્થ-જિસ પ્રકાર સૂઈ સંલગ્ન સૂત્ર સૂઈ કા પ્રબોધક હોતા હૈ ઉસી તરહ અર્થ સંબદ્ધ સૂત્ર વાચ્ય વાચકભાવ સંબંધ સે જિતના ૨ અર્થ અપને મેં વિચિમાન હોતા હૈ ઉતને ૨ અર્થ કા સૂચક હોતા હૈ, ઇસ તરહ “સૂચયતીતિ સૂત્રમ્” અર્થ કા સૂચક હોને સે સૂત્ર કહા ગયા હૈ। યહ વ્યુત્પત્તિલભ્ય અર્થ હૈ। અથવા-“સીવ્યતીતિ સૂત્રમ્”-જિસ પ્રકાર ઢોરા અંગરક્ષિકા-કુર્તા-આદિ વસ્ત્રોં કો સીતા હૈ પરસ્પર મેં જોડે દેતા હૈ-ઉસી તરહ સૂત્ર મી અર્થ કો યોજિત કર દેના હૈ। અથવા-“સ્રવતીતિ સૂત્રમ્”-જિસ પ્રકાર ચંદ્રકાન્તમણિ ચંદ્ર કિરણોં કે સંપર્ક સે દ્રવિત હો જાતા હૈ-પાની છોડતા હૈ-ઉસી પ્રકાર સૂત્ર મી આચાર્ય કે સંનિધાન સે અર્થ કો અપનેમેં પ્રકટ કર દેતા હૈ। અથવા-“સરતીતિ સૂત્રમ્”-

સૂત્ર શબ્દનો અર્થ-જે રીતે સોય સંલગ્ન સૂત્ર સોયનો પ્રબોધક બને છે તેવી રીતે અર્થ સંબદ્ધ સૂત્ર વાચ્ય વાચક ભાવ સંબંધથી બેટલા બેટલા અર્થ તેનામાં વિધમાન હોય છે, એટલા એટલા અર્થનો સૂચક હોય છે. “સૂચયતીતિ સૂત્રમ્” અર્થનો સૂચક હોવાથી જ સૂત્ર કહેવામાં આવેલ છે. આ વ્યુત્પત્તિલભ્ય અર્થ છે. અથવા-સીવ્યતીતિ સૂત્રમ્ જે રીતે દોરા અંગતું રક્ષણ કરનાર કુર્તા આદિ વસ્ત્રોને સીવે છે, પરસ્પરથી જોડી દે છે. એવી જ રીતે સૂત્ર પણ અર્થને યોજનાર હોય છે. અથવા સ્રવતીતિસૂત્રમ્ જે રીતે ચંદ્રકાન્ત મણી ચંદ્રકિરણોના સંપર્કથી દ્રવિત બને છે. પાણી છોડે છે-તે પ્રકારે સૂત્ર પણ આચાર્યના સંનિધાનથી અર્થને કે જે પોતાનામાં સમાયેલ છે તે પ્રગટ કરી દે છે અથવા સરતીતિ સૂત્રમ્ જેના ૨

‘महाक्षरं महार्थं’ यथा-दृष्टिवादः ॥ ४ ॥ यच्च द्वात्रिंशदोषविरहितं= अलीकादिभिर्द्वात्रिंशदोषैर्वर्जितं तथाऽष्टभिर्गुणैरुपेतं सूत्रं तल्लक्षणयुक्तं सूत्रं भवति तत् सूत्रं पठनीयमित्यर्थः ।

अथ-सूत्रदोषाः—

अथ सूत्राणां द्वात्रिंशदोषा उच्यन्ते—

अलियमुवधायजणयं, निस्त्यगमवत्थयं छलं दुहिलं ।
निस्तारमहियमूणं, पुणरुत्तं वाहयमजुत्तं ॥ १ ॥

क्रमभिन्न-वयणभिन्ने, विभक्तिभिन्नं च लिङ्गभिन्नं च ।
अणमिहियमपयमेव य, सभावहीणं ववहियं च ॥ २ ॥

काल-जति-छवि-दोसो, समयविरुद्धं च वयणमित्तं च ।
अत्थावत्ती दोसो, हवइ य असमासदोसो य ॥ ३ ॥

उवमा रूवगदोसो, निहेसपयत्थसंधिदोसो य ।
एय य सुत्तदोसा, वत्तीसं हुंति नायव्वा ॥ ४ ॥

छाया—अलीकम् १, उपघातजनकं २, निरर्थकं ३, अपार्थक्यं ४, छलं ५, दुहिलम् ६, निस्तारम् ७, अधिकम् ८, ऊनम् ९, पुनरुक्तं १०, व्याहृतं ११, अयुक्तम् १२, ॥ १ ॥

क्रमभिन्न १३, वचनभिन्ने १४, विभक्तिभिन्नं च १५, लिङ्गभिन्नं च १६, अनभिहितं १७, अपदमेव च १८, स्वभावहीनं १९, व्यवहितं च २० ॥ २ ॥

तथा बृहत्कल्पादि सूत्र २ । महा अक्षर वाला हो पर अर्थ अल्प हो जैसे-
ज्ञाताध्ययन आदि ३ । महाक्षर वाला हो और अर्थ भी जिसका महान्
हो जैसे दृष्टिवाद ४ । ३२ वत्तीस दोष सूत्र के ये हैं—

३२ दोष सूत्र के—अलीक १, उपघातजनक २, निरर्थक ३, अपार्थक्य ४, छल ५, दुहिल ६, निस्तार ७, अधिक ८, ऊन ९, पुनरुक्त १०, व्याहृत ११, अयुक्त १२, क्रमभिन्न १३, वचनभिन्न १४, विभक्तिभिन्न १५, लिङ्गभिन्न १६, अनभिहित १७, अपद १८, स्वभावहीन १९, व्यवहित

दोषादि सूत्र २. पधु अक्षरवाणा होय पधु अर्थ नानो होय जेवां ज्ञाताध्ययन
आदि ३. पधु अक्षरवाणा होय अने अर्थ पधु जेना महान् होय जेवां
धीवाह ४. सूत्रना अत्रीस दोष आ छे.....

अलीक १, उपघातजनक २, निरर्थक ३, अपार्थक्य ४, छल ५, दुहिल ६, निस्तार ७, अधिक ८, ऊन ९, पुनरुक्त १०, व्याहृत ११, अयुक्त १२, क्रमभिन्न १३, वचनभिन्न १४, विभक्तिभिन्न १५, लिङ्गभिन्न १६, अनभिहित १७, अपद १८, स्वभावहीन १९, व्यवहित २०, कालदोष २१, यति-

યદ્ અલ્પાક્ષરં, તથા-મહાર્થં ચ ભવતિ, અત્ર “અલ્પાક્ષરં મહાર્થમ્” ઇતિ વિશેષણદ્વયે ચત્તારો ભક્ત્રા ભવન્તિ, યથા—અલ્પાક્ષરમલ્પાર્થમ્’ યથા કાર્પાસાદિકમ્ ॥ ૧ ॥ ‘અલ્પાક્ષરં-મહાર્થમ્’ યથા—સામાયિકં વૃહત્કલ્પાદિ ચ ॥ ૨ ॥ ‘મહાક્ષરમલ્પાર્થમ્’ । યથા—જ્ઞાતાધ્યયનાનિ, અન્યચ યદસ્યાં કોટીં વ્યવસ્થિતમ્ ।

અવ સૂત્રલક્ષણ નામ કા ત્રીસરા દ્વાર કહતે હૈ—જો સૂત્ર સૂત્રલક્ષણ સે યુક્ત હૈ વહી ઉચ્ચારણ કરને કે યોગ્ય હોતા હૈ । ઓર ઉસીસે અપને વાસ્તવિક અર્થ કા ઘોષ હોતા હૈ । ઇસસે વિપરીત સૂત્ર દ્વારા વિવક્ષિત અર્થ કી પ્રતિપત્તિ-જ્ઞાન નહીં હો સક્તી હૈ ક્યોં કિ ઉસસે યથાર્થ અર્થ કા પ્રકાશન નહીં હોતા હૈ । ઇસ લિયે “સૂત્ર કા કયા લક્ષણ હૈ” ઇસ પ્રકાર કે પ્રશ્ન કે સમાધાન નિમિત્ત ઉસકા લક્ષણ કહા જાતા હૈ ।

“અપ્પક્ષરં મહત્થં, વત્તીસદોસ, વિરહિયં જં ચ ।

લક્ષણજુત્તં સુત્તં, અદુહિય ગુણેહિ ઉવવેયં” ॥ ૧ ॥

જિસમેં અલ્પ અક્ષર હોતે હૈં ઓર મહાન્ જિસકા અર્થ હોતા હૈં એવં વત્તીસ દોષોં સે જો રહિત હોતા હૈ તથા આઠગુણોં સે જો યુક્ત હોતા હૈં વહ સૂત્ર હૈ “અલ્પ અક્ષર વાલા હો એવં અર્થ જિસકા મહાન્ હો” ઇસ પ્રકાર કે સૂત્ર કે વિશેષણ સે યે ૪ ભંગ હોતે હૈં—અલ્પ અક્ષર વાલા હો એવં અલ્પ અર્થ વાલા હો જૈસે કપાસ આદિ કા ઘના હુઆ સૂત ૧ । અલ્પ અક્ષર વાલા હો, પર જિસકા મહાન્ અર્થ હો જૈસે સામાયિક સૂત્ર,

હવે સૂત્ર લક્ષણ નામનું ત્રીણું દ્વાર કહે છે—

જે સૂત્ર સૂત્રલક્ષણથી યુક્ત છે તે જ ઉચ્ચારણ કરવા માટે યોગ્ય છે, અને એનાથી પોતાના વાસ્તવિક અર્થનો ઘોષ થાય છે. એનાથી વિપરીત સૂત્રથી વિવક્ષિત અર્થની પ્રતિપત્તિ-જ્ઞાન થઈ શકતું નથી, કારણ કે, એનાથી યથાર્થ અર્થનું પ્રકાશન થતું નથી.

અપ્પક્ષરં મહત્થં વત્તીસ દોસવિરહિયં જં ચ ।

લક્ષણજુત્તં સુત્તં અદુહિયથેણેહિ ઉવવેયં જેમાં અક્ષર ઓછા હોય છે અને અર્થ મહાન હોય છે જે બત્તીસ દોષોથી રહિત હોય છે તથા આઠ ગુણોથી જે યુક્ત હોય છે તે સૂત્ર છે. “થોડા અક્ષરવાળા હોય અને અર્થ જેનો મહાન હોય”

આ પ્રકારના સૂત્રના વિશેષણથી આ ચાર ભંગ થાય છે. થોડા અક્ષર-વાળા હોય અથવા અલ્પ અર્થવાળા હોય. જેમ કે કપાસ આદિથી બનેલ સુતર ૧. થોડા અક્ષરવાળા હોય પણ જેનો અર્થ મહાન હોય, જેવાં સામાયિક

યયા- 'અ, આ, ઇ, ઈ,' ઇત્યાદિ । ડિત્યાદિવદ્વા ॥ ૩ ॥ અપાર્થકમ્-અસંવદ્ધા-
ર્થકમ્, યયા- "દશ દાડિમાનિ પટપૂષાઃ, સપ્ત ગર્દભપુચ્છાઃ, ઇત્યાદિ ॥ ૪ ॥

છલં—યત્રાનિષ્ટસ્યાર્થાન્તરસ્ય સંભવાદ્ વિવક્ષિતાર્થોપધાતઃ કર્તુ શક્યતે
તત્છલમ્, યયા—'નવકમ્બલો દેવદત્તઃ' ઇત્યાદિ, અત્ર-નૂતનકમ્બલસ્ય વિવ-
ક્ષિતાર્થસ્ય નવસંલ્પકકમ્બલધિપયકવોધસંભવાદુપધાતઃ કર્તુ શક્યતે ॥ ૫ ॥

દુહિલં-જન્તુનામહિતોપદેશકત્વેન પાપવ્યાપારોપકમ્, યયા—

અનુષ્ટુપ્છન્દઃ—પ્રતાવાનેવ લોકોડ્યં, યાવાનિન્દ્રિયગોચરઃ ।

ભદ્રે! વૃકપદં પશ્ય, યદ્ વદન્ત્યવહુશ્રુતાઃ ॥ ૧ ॥

વિયોગિની છન્દઃ—પિવ લ્વાદ ધ ચારુલોચને, યદતીતં વરુણાત્રિ ! તન્ન તે ।

નહિ મીરુ ! ગતં નિવર્તતે, સમુદયમાત્રમિદં કલેવરમ્ ॥ ૨ ॥

નહીં પડતા; જૈસે-અ આ ઇ ઈ ઇત્યાદિ ॥ ૩ ॥ અસંવદ્ધ અર્થ જિસ સૂત્ર
દ્વારા કહા જાતા હૈ વહ અપાર્થક દોષ ચાલા સૂત્ર માના જાતા હૈ-જૈસે
દશદાડિમ, છહ માલપુષ, સાત ગધે કી પૂંછે ઇત્યાદિ ॥ ૪ ॥ યે સ્વ સૂત્ર
અસંવદ્ધ અર્થ કે પ્રતિપાદક હૈં । જહાં અનિષ્ટ અર્થાન્તર કી સંભાવના સે
વિવક્ષિત અર્થ કા અપલાપ કિયા જા સકતા હૈ વહ છલદોષ હૈ જૈસે કિસી
ને કહા કિ "નવ કમ્બલોડ્યં દેવદત્તઃ" દેવદત્ત નવકમ્બલ ચાલા હૈ-યહાં
નવ શબ્દ કા અર્થ નૂતન હૈ, ઓર હસી અર્થ મેં નવ શબ્દ વિવક્ષિત હુઆ
હૈ, પરંતુ હસ અર્થ કો ઉપધાત કરને ચાલા યહ કહ દેતા હૈ કિ ૧ સંલ્પ્યા
યુક્ત કમ્બલ હસકે પાસ કહાં હૈ એક હી કમ્બલ તો હૈ । હસ પ્રકાર કે
અર્થ કી સંભાવના નવ શબ્દ સે હુઈ હૈ । અતઃ વિવક્ષિત અર્થ કા ઉપધાત
જિસ શબ્દ સે યુક્ત સૂત્ર કા હોના, ઉપધાત દોષાવશિષ્ટ માના જાતા હૈ.

જ મળતો નથી, જેમ અ આ ઇ ઈ ઇત્યાદિ (૩) અસંવદ્ધ અર્થ ને સૂત્ર દ્વારા
કહેવામાં આવે છે તે અપાર્થક દોષવાળા સૂત્ર માનવામાં આવે છે. જેમ દસ
દાડિમ, છ પુષ્પ, સાત ગધેડાની પૂછ ઇત્યાદિ. (૪) આ બધા સૂત્ર અસંવદ્ધ
અર્થનાં પ્રતિપાદક છે. જ્યાં અનિષ્ટ અર્થાન્તરની સંભાવનાથી વિવક્ષિત અર્થનો
અપલાપ કરવામાં આવે છે તે છલદોષ છે. જેમ કોઈએ કહ્યું કે, "નવ
કમ્બલોડ્યં દેવદત્તઃ" આ દેવદત્ત નવ કમ્બલવાળા છે-આહિ નવ શબ્દનો અર્થ
નૂતન છે. અને આજ અર્થમાં નવ શબ્દ વિવક્ષિત થયેલ છે. પરંતુ આ અર્થને
ઉપધાત કરવાવાળા એવું કહી દે છે કે, નવ સંખ્યા યુક્ત કમ્બલ એમની પાસે
ઠ્યાં છે. એક જ કમ્બલ છે. આ પ્રકારે અર્થની સંભાવના નવ શબ્દથી થઈ છે.
વિવક્ષિત અર્થનો ઉપધાત ને સૂત્રમાં થાય છે એ શબ્દથી યુક્ત સૂત્રનું હોવું
ઉપધાત દોષાવશિષ્ટ માનવામાં આવે છે. (૫)

કાલ-યતિ-છવિદોષ: (કાલદોષ: ૨૧, યતિદોષ: ૨૨, છવિદોષ: ૨૩) સમયવિરુદ્ધં ચ ૨૪, વચનમાત્રં ચ ૨૫, । અર્થાપત્તિર્દોષો ૨૬, ભવતિ ચ અસમાસ દોષશ્ચ ૨૭ ॥ ૩ ॥

ઉપમા ૨૮, -રૂપકદોષો ૨૯, નિર્દેશ ૩૦, -પદાર્થ ૩૧, -સંધિદોષશ્ચ ૩૨, एते तु सूत्रदोषा द्वात्रिंशद् भवन्ति ज्ञातव्या: ॥ ૪ ॥

વ્યાख्या—અલીકમ્—અવૃત્તમ્ તત્ત્વ દ્વિધા—અભૂતોદ્ભાવનં ભૂતનિહવશ્ચ । યથા— ‘ઈશ્વર કર્તૃકં જગત્’ ઇત્યાદિ—અભૂતોદ્ભાવનમ્ । ‘નાસ્તિ આત્મા’ ઇત્યાદિકસ્તુ ભૂતનિહવ: ॥ ૧ ॥ ઉપઘાત:—સત્ત્વચાતાદિ:, તજ્જનકં યથા—‘વેદવિહિતા હિંસા-ધર્માય’ ઇત્યાદિ ॥ ૨ ॥ નિરર્થકં—યત્ર વર્ણનાં ક્રમનિર્દેશમાત્રગુપલભ્યતે ન ત્વયો

૨૦, કાલદોષ ૨૧, યતિદોષ ૨૨, છવિદોષ ૨૩, સમયવિરુદ્ધ ૨૪, વચનમાત્ર ૨૫, અર્થાપત્તિ ૨૬, અસમાસદોષ ૨૭, ઉપમા ૨૮, રૂપક ૨૯, નિર્દેશ ૩૦, પદાર્થ ૩૧, એવં સંધિદોષ ૩૨ । કહા મી હૈ—

‘અલિય મુવઘાયજળયં’ ઇત્યાદિ—

इन ३२ दोषों का स्वरूप इस प्रकार है—अलीक नाम असत्य का है यह दो प्रकार का होता है—अभूतोद्भावन १ । भूतनिहव है २ । जैसे—“ ईश्वर कर्तृक जगत् इत्यादि ” जगत् को ईश्वर ने बनाया है—इस प्रकार का प्रतिपादक सूत्र अभूतोद्भावक है नास्ति आत्मा—आत्मा नहीं इस प्रकार जमाली द्वारा कथित सूत्र भूतनिहव स्वरूप है ॥ १ ॥ उपघात शब्द का अर्थ है प्राणियों की हिंसा आदिका प्ररूपण करना । इस वात के प्ररूपक सूत्र उपघात दोषवाले माने जाते हैं—जैसे कहना कि वेदविहिता हिंसा धर्माय ” वेदविहित हिंसा धर्म के लिये है ” ॥ २ ॥ जिसमें सिर्फ वर्णों का क्रम ही निर्दिष्ट हो वह निरर्थक दोष है—इसमें अर्थ का पता

દોષ ૨૨, છવિદોષ ૨૩, સમયવિરુદ્ધ ૨૪, વચનમાત્ર ૨૫, અર્થાપત્તિ ૨૬, અસમાસ દોષ ૨૭, ઉપમા ૨૮, રૂપક ૨૯, નિર્દેશ ૩૦, પદાર્થ ૩૧. અને સંધીદોષ ૩૨, તદુક્તં—“ આલિયમુવઘાય જળયં ” ઇત્યાદિ ।

આ બન્નીસ દોષોનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે છે—અલીક નામ અસત્યનું છે. આ બે પ્રકારે છે, ૧ અભૂતોદ્ભાવન, ૨ ભૂતનિહવ, જેમ—‘ઈશ્વર કર્તૃક જગત્ ઇત્યાદિ’ જગતને ઈશ્વરે બનાવ્યું છે—આ પ્રકારે પ્રતિપાદિત સૂત્ર અભૂતોદ્ભાવક છે, નાસ્તિ આત્મ—આત્મા નથી, આ પ્રકારના જમાલી દ્વારા કહેવાયેલ સૂત્ર ભૂતનિહવ સ્વરૂપ છે. ઉપઘાત શબ્દનો અર્થ છે. પ્રાણીયોની હિંસા આદિનું પ્રરૂપણ કરવું, આ વાતને પ્રરૂપક સૂત્ર ઉપઘાત દોષવાળા માનવામાં આવે છે—જેમ કહેવું કે, વેદવિહિતા હિંસા ધર્માય (૨) ” વેદ વિહિત હિંસા ધર્મના માટે છે ” જેમાં ફક્ત વર્ણોના ક્રમનો જ નિર્દેશ હોય તે નિરર્થક દોષ છે, આમાં અર્થ

ऊनम्—अक्षरपदादिभिर्हीनम् । अथवा—हेतुदृष्टान्ताभ्यामेव हीनम् ऊनम् । यथा—अनित्यः शब्दो घटवदिति । अत्र हेतुर्नास्ति, यथा वा ‘अनित्यः शब्दः कृतकत्वाद्’ इत्यादि, अत्र—घटादिरूपो दृष्टान्तो नास्ति ॥ ९ ॥

पुनरुक्तं त्रिधा—शब्दतोऽर्थतश्च । तथा—अर्थादापन्नस्य पुनर्वचनं—पुनरुक्तं । तत्र शब्दतः पुनरुक्तं यथा—घटः, घटः, इत्यादि । अर्थतः पुनरुक्तं यथा—घटः, कुटः, कुम्भ इत्यादि । अर्थादापन्नस्य पुनर्वचनं यथा—पीनोऽयं देवदत्तो, दिवा न भुङ्क्ते इत्युक्ते अर्थादापन्नं—‘रात्रौ भुङ्क्ते’ इति, तत्रार्थादापन्नमपि ‘रात्रौ भुङ्क्ते’ इति यो ब्रूयात् तस्य पुनरुक्तता ॥ १० ॥

व्याहतं—यत्र पूर्वेण परं विहन्यते । यथा—

“कर्म चास्ति फलं चास्ति कर्ता न त्वस्ति कर्मणाम्” इत्यादि ।

અક્ષર એવં પદ આદિ સે હીન હોતા હૈ વહાં ડન નામક દોષ માના જાતા હૈ । અથવા હેતુ એવં દૃષ્ટાન્ત સે જો હીન હોતા હૈ વહાં ભી યહ દોષ માના જાતા હૈ । જૈસે “અનિત્યઃ શબ્દઃ ઘટવત્” યહ વાક્ય હેતુ સે હીન હૈ ॥૯॥ પુનરુક્ત દોષ શબ્દ, અર્થ એવં પ્રસંગાદિ સે પ્રાપ્ત અર્થ કે પુનઃ કથન સે હોતા હૈ । ઘટ ઘટ યહાં શબ્દ કી અપેક્ષા, ઘટ કુંભ કુટ યહાં અર્થ કી અપેક્ષા તથા “પીનોઽયં દેવદત્તઃ દિવા ન ભુંકતે” યહાં અર્થાત્ પ્રસક્ત અર્થ રાત્રિ મેં ભોજન કરના હૈ ફિર ભી “રાત્રૌ ભુઙ્ક્તે” રાત્રિ મેં ખાતા હૈ યહ કહના પુનરુક્તિ દોષ સે દૂષિત માના જાતા હૈ ॥ ૧૦ ॥ પૂર્વ સે પર જહાં વિરોધ હોતા હૈ, વહાં વ્યાહત દોષ માના જાતા હૈ—જૈસે—કિસી ને કહા કિ કર્મ હૈં ફલ હૈં પરન્તુ કર્મોં કા કર્તાં કોઈ નહીં હૈ । યહ વાક્ય પૂર્વાપર મેં

અને જે દૃષ્ટાંત નહીં. (૮) જે અક્ષર અને પદ આદિથી હીન હોય છે. ત્યાં ડન નામનો દોષ માનવામાં આવે છે. અથવા હેતુ અને દૃષ્ટાંતથી જ હીન હોય છે, ત્યાં પણ એ દોષ માનવામાં આવે છે. જેવી રીતે અનિત્યઃ શબ્દઃ ઘટવત્ આ વાક્ય હેતુથી હીન છે. અનિત્યઃ શબ્દઃ કૃતકત્વાત્ અહિં દૃષ્ટાંતથી વિહિનતા છે. (૯) પુનરુક્ત દોષ શબ્દ, અર્થ અને પ્રસંગ આદિથી પ્રાપ્ત અર્થના પુનઃ કથનથી થાય છે. ઘટ ઘટ અહિં શબ્દની અપેક્ષા ઘટ કુંભ કુટ અહિં અર્થની અપેક્ષા તથા “પીનોઽયં દેવદત્તઃ દિવા ન ભુંકતે” અહિં અર્થાત્ પ્રસક્ત અર્થ રાત્રીમાં ભોજન કરવું એ છે. છતાં પણ એ કહેવું છે કે રાત્રૌ ભુંકતે એ રાત્રીમાં ખાય છે, આમ કહેવું પુનરુક્તિ દોષથી દુષિત માનવામાં આવે છે. (૧૦) પૂર્વથી પરનો ત્યાં વિરોધ છે, ત્યાં વ્યાહત દોષ માનવામાં આવે છે, જેમ કે, કોઈ એ કહ્યું કે, કર્મ છે, ફળ છે, પરંતુ કર્મોનો કર્તા કોઈ નથી. આ વાક્ય

इत्यादि ॥ ६ ॥

निःसारं=तथाविधयुक्तिरहितं परिफल्गु, यथा-सौगतादिशास्त्रम् ॥ ७ ॥

अधिकम्-अक्षरपदादिभिरतिमात्रम् । अथवा हेतुदृष्टान्तस्य वाऽऽधिक्ये सति अधिकं, यथा-अनित्यः शब्दः, कृतकत्वप्रयत्नानन्तरीयकत्वाभ्यां घटपटवदित्यादि। एकस्मिन् साध्ये एक एव हेतुदृष्टान्तश्च वक्तव्यः । अत्र च प्रत्येकं द्वयाभिधानादाधिक्यमिति भावः ॥ ८ ॥

॥ ૧ ॥ જન્ટુઓં કો અહિત કા ઉપદેશક હોને સે જો પાપવ્યાપાર કા પોપક સૂત્ર હોતા હૈ વહ દુહિલ દોપચાલા સૂત્ર માના જાતા હૈ । જૈસે-ચાર્વાક કા યહ કહના કિ-યહ લોક જિતના પ્રત્યક્ષ સે દિખતા હૈ ઉતના હી હૈ હસસે આગે નહીં । પુણ્ય પાપ એવં સ્વર્ગ નરક યહ બી નહીં હૈ । હસ લિયે લાઓ પીઓ મસ્ત રહો ઓર આનંદ સે અપને સમય કો નિકાલો ॥ ૬ ॥ યુક્તિ રહિત જો સૂત્ર હોતા હૈ વહ નિસ્સાર દોપ ચાલા માના જાતા હૈ, જૈસે સૌગત આદિ કા શાસ્ત્ર ॥ ૭ ॥ જિસમેં અક્ષર પદ આદિ આવશ્યકતા સે અધિક હોતે હૈં વહ સૂત્ર અધિક દોપ સંયુક્ત જાનના ચાહિયે, અથવા-જિસમેં એક હેતુ ઓર દૃષ્ટાન્ત કે અતિરિક્ત હેતુ ઓર દૃષ્ટાન્ત હોં વહ બી અધિક દોપચાલા સૂત્ર માનના ચાહિયે-જૈસે-“અનિત્યઃ શબ્દઃ કૃતકત્વપ્રયત્નપ્રત્યક્ષાન્તરીયકત્વાત્ ઘટપટવદિતિ” શબ્દ અનિત્ય હૈ ક્યોં કિ વહ કૃતક હૈ એવં પ્રયત્નપૂર્વક હોતા હૈ જૈસે ઘટ ઓર પટ ॥ ૭ ॥ હસ અનુમાન મેં એક હેતુ ઓર ૧ દૃષ્ટાન્ત અધિક હૈ । એક સાધ્ય મેં ૧ હી હેતુ ઓર ૧ હી દૃષ્ટાન્ત હોતા હૈ । દો હેતુ ઓર દો દૃષ્ટાન્ત નહીં ॥ ૮ ॥ જો.

જન્ટુઓના અહિતના ઉપદેશક હોવાથી જે પાપ વ્યાપારને પોપક સૂત્ર હોય છે, તે દુહિલ દોપવાળા સૂત્ર માનવામાં આવે છે. જેમ ચાર્વાક કહે છે કે:- આ લોક જે રીતે પ્રત્યક્ષથી દેખાય છે એટલું જ છે એનાથી આગળ નથી, પુણ્ય, પાપ અને સ્વર્ગ નરક એ પણ નથી, આ માટે ખાઓ પીઓ અને મસ્ત રહો તથા આનંદથી સમયને પસાર કરો, (૬) યુક્તિ રહિત જે સૂત્ર હોય છે તે નિસ્સાર દોપવાળા મનાય છે. જેમ સૌગત આદિ શાસ્ત્ર, (૭) જેમાં અક્ષર પદ આદિ આવશ્યકતાથી અધિક હોય છે તે સૂત્ર અધિક દોષ સંયુક્ત બાણુવું બોધે છે. અથવા જેમાં એક હેતુ અને દૃષ્ટાંતના અતિરિક્ત હેતુ અને દૃષ્ટાંત હોય તેને પણ અધિક દોષવાળા સૂત્ર માનવા બોધે છે. જેમ-“અનિત્યઃ શબ્દઃ કૃતકત્વપ્રયત્નપ્રત્યક્ષાન્તરીયકત્વાત્ ઘટપટવદિતિ” શબ્દ અનિત્ય છે, કેમ કે, તે કૃતક છે. અને પ્રયત્નપૂર્વક થાય છે, જેમ ઘટ અને પટ. આ અનુમાનમાં એક હેતુ અને એક દૃષ્ટાંત અધિક છે. એક સાધ્યમાં એક જ હેતુ અને એક જ દૃષ્ટાંત હોય છે. બે ;

શબ્દરૂપગન્ધરસસ્પર્શાં इति वक्तव्ये रूपगन्धशब्दस्पर्शरसा इति ब्रूयाद्' इत्यादि ॥ १३ ॥

वचनभिन्नं—यत्र वचनव्यत्ययः, यथा—‘वृक्षा ऋतौ पुष्पितः’ इत्यादि ॥ १४ ॥

विभक्तिभिन्नं—यत्र विभक्तिव्यत्ययः, यथा—‘वृक्षं पश्य’ इति वक्तव्ये ‘वृक्षः पश्य’ इति ब्रूयात्’ इत्यादि ॥ १५ ॥

लिङ्गभिन्नं—यत्र लिङ्गव्यत्ययः, यथा—‘इयं स्त्री’ इति वक्तव्ये ‘अयं स्त्री’ इति ब्रूयात्, इत्यादि ॥ १६ ॥

अनभिहितं—स्वसिद्धान्तોપદિष्टાધિકથનम् । यथा—राशिद्वयमिति वक्तव्ये राशित्रयकथनम्, इत्यादि ॥ १७ ॥

કા દોષ આતા હૈ । ક્યોં કિ સૂત્ર મેં જિસ ક્રમ સે ઇન્દ્રિયોં કા વર્ણન કિયા ગયા હૈ ઉસી ક્રમ સે ઉનકે વિષય કા ભી વર્ણન કરના ચાહિયે ॥ ૧૩ ॥ જહાં વચન કા વ્યત્યય હોતા હૈ વહાં વચનભિન્ન નામકા દોષ હોતા હૈ જૈસે “વૃક્ષાઃ ઋતૌ પુષ્પિતઃ” યહાં વચન વ્યત્યય હૈ । ક્યોં કિ “પુષ્પિતઃ” કી જગહ “પુષ્પિતાઃ” એસા યહુવચન હોના ચાહિયે ॥ ૧૪ ॥ જહાં વિભક્તિ કા વ્યત્યય હોતા હૈ વહાં વિભક્તિભિન્ન દોષ માના જાતા હૈ જૈસે “વૃક્ષઃ પશ્ય” યહાં પર વિભક્તિ ભિન્ન દોષ હૈ યહાં, ‘વૃક્ષઃ’ કી જગહ ‘વૃક્ષં’ એસા હોના ચાહિયે ॥ ૧૫ ॥ જહાં સ્ત્રીલિંગ આદિ કા વ્યત્યય હોતા હૈ વહ લિંગભિન્ન દોષ હૈ જૈસે; “અયં સ્ત્રી” યહાં હુઆ હૈ । ‘અયં’ કી જગહ ‘ઇયં’ હોની ચાહિયે સો ‘ઇયં’ કી જગહ ‘અયં’ કર દિયા યહ લિંગવ્યત્યય હૈ ॥ ૧૬ ॥ જો વાત સિદ્ધાન્ત મેં પ્રતિપાદિત નહીં હૈ ઉસે ભી માનના અર્થાત્ સિદ્ધાન્તકથિત વાત સે ભી

ભિન્ન નામનો દોષ આવે છે. કેમ કે, સૂત્રમાં જે ક્રમથી ઇન્દ્રિયોંનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે એ જ ક્રમથી એના વિષયનું પણ વર્ણન કરવું ભેદ છે. (૧૩) ત્યાં વચનનો ઉલટ-સુલટ વ્યત્યય થાય છે. ત્યાં વચનભિન્ન નામનો દોષ લાગે છે. જેમ વૃક્ષાઃ ઋતૌ પુષ્પિતઃ-અહીં વચનવ્યત્યય છે, કેમકે પુષ્પિતઃ ની જગ્યાએ “પુષ્પિતાઃ” એમ બહુવચન હોવું ભેદ છે. (૧૪) ત્યાં વિભક્તિનો વ્યત્યય હોય છે. તે વિભક્તિ ભિન્ન દોષ માનવામાં આવે છે. જેમ “વૃક્ષઃ પશ્ય” અહિં પદ છે “વૃક્ષં પશ્ય” એ ઠીક છે. વૃક્ષં ની જગ્યાએ વૃક્ષઃ આ વિભક્તિનો વ્યત્યય છે. (૧૫) ત્યાં સ્ત્રીલિંગ આદિનો વ્યત્યય બને છે તે લિંગ ભિન્ન દોષ છે, જેમ અયં સ્ત્રી અહીં અયં ની જગ્યાએ ઇયં હોવું ભેદ છે. તે ઇયં ની જગ્યાએ અયં કરી દીધું એ લિંગવ્યત્યય છે, (૧૬) જે વાત સિદ્ધાન્તમાં પ્રતિપાદિત નથી તેને માનવી, અર્થાત્ સિદ્ધાન્ત કથિત વાતથી પણ અધિક જે યુક્તિ

પૂર્વે-‘કર્મ ચાસ્તિ’ ઇત્યુક્તમ્, તેન-કર્મણાં કર્તાનાસ્તીત્યસ્ય વિઘાતો ભવતિ ।
 યથા વા—અયં વાલકો વન્ધ્યામ્સૂતઃ, ઇત્યાદિ ॥ ૧૧ ॥

અયુક્તમ્—બુદ્ધ્યા ચિન્ત્યમાનમ્—અનુપપત્તિક્ષમમ્ । યથા—

“તેષાં કટતટભ્રષ્ટૈર્-ગજાનાં મદવિન્દુભિઃ ।

પ્રાવર્તત નદી ધોરા, હસ્ત્યશ્વરથવાહિની ॥ ૧ ॥

યથા વા—શ્રાવકસ્ય મુનિર્દર્શનદર્પાશ્રુભિરુપાશ્રયઃ સંભૃતઃ ॥ ૧૨ ॥

ક્રમભિન્ન—યત્ર ક્રમો નારાધ્યતે । યથા—‘શ્રોત્રચક્ષુર્ગ્રાણરસનસ્પર્શનાનાં વિપયાઃ

વિરોધી હૈ કારણ કિ જય કર્મ હૈ તોં કોઈ ન કોઈ इनका कर्त्ता भी हैं—फिर यह कहना कि इनका कोई कर्त्ता नहीं है यह व्याहत दोष है । इसी तरह “अयंवालको वन्ध्यामसूतः” अर्थात् यह वालक वन्ध्यापुत्र है यह भी समझना चाहिये ॥ ११ ॥ जो युक्ति सह नहीं होता है वहां अयुक्त दोष आता है जैसे—हाथियों का वर्णन करते समय ऐसा कहा जाय कि उनके हाथियों के गण्डस्थल से च्युत मद्जल का इतना अधिक प्रवाह बहा कि वहां एक घोर नदी हो गई जिसमें हाथी, अश्व एवं रथ सब के सब बह गये । यह बुद्धिकल्पित चीज युक्ति सह नहीं है । इस लिये ये अयुक्त नामका दोष है । इसी तरह यह कथन भी “कि मुनियों के दर्शन से श्रावकों की आंखों से इतने आनंदाश्रु निकले कि उपाश्रय भर गया” ॥ १२ ॥ जहां क्रम वर्णन पर ध्यान नहीं रखा जाता है वहां क्रमभिन्न नामका दोष है—जैसे—श्रोत्रचक्षुर्ग्राणरसनस्पर्शनानां विपयाः रूपगंधशब्दस्पर्शरसाः, ऐसा कोई सूत्र बनावे तो उसमें क्रमभिन्न नाम

પૂર્વાપરમાં વિરોધી છે કારણ કે, બ્યારે કર્મ છે તે કોઈને કોઈતેના કર્તા પણ હોવો જોઈએ. પણ એ કહેવું કે એનો કોઈ કર્તા નથી એ ‘વ્યાહત’ દોષ છે. આ રીતે “અયં વાલકો વન્ધ્યામસૂતઃ” અર્થાત્ “આ બાળક વન્ધ્યા પુત્ર છે” એમ કહેવું તે પણ સમજવું જોઈએ. (૧૧) જે યુક્તિ પુરઃસર નથી ત્યાં અયુક્ત દોષ આવે છે. જેમ હાથીયાનું વર્ણન કરતી વખતે એમ કહેવામાં આવે કે તે હાથીયાના ગંડસ્થલથી ચ્યુત મદ્જળના એટલા વધુ પ્રવાહ નિકળ્યો કે, ત્યાં એક ધોર નદી થઈ ગઈ જેમાં હાથી, અશ્વ અને રથ આ બધાં તણાઈ ગયાં, આ બુદ્ધિ કલ્પિત ચિજ યુક્તિ સહ નથી. આ માટે અયુક્ત નામનો દોષ છે. એવી રીતે “મુનિયાના દર્શનથી શ્રાવકોની આંખોમાંથી એટલાં આંસુ વહ્યા કે તેનાથી ઉપાશ્રય ભરાઈ ગયો. આ કથન પણ અયુક્ત દોષવાળું છે (૧૨) બધાં ક્રમવર્ણન ઉપર ધ્યાન નથી રખાતું ત્યાં ક્રમભિન્ન નામનો દોષ છે—જેમ શ્રોત્રચક્ષુર્ગ્રાણરસનસ્પર્શનાનાં વિપયાઃ—રૂપ-ગંધ-શબ્દ-સ્પર્શ-રસાઃ એવું કોઈ સૂત્ર બનાવે તો એમાં ક્રમ-

કાલદોષો યત્રાતીતાદિકાલવ્યત્યયઃ, યથા 'રામો વનં પ્રવિવેશ' ઇતિ વક્તવ્યે 'રામો વનં પ્રવિશતિ' ઇત્યાદિ ॥ ૨૧ ॥

યતિદોષોઽસ્થાનવિરતિઃ, સર્વથાઽવિરતિર્વા । યથા-‘ધમ્મો મંગલમુક્કિટ્ઠં’ ઇત્યાદૌ ‘ધમ્મો’ ઇત્યત્ર વિરામઃ । યદ્વા-ગાથાયાં અન્તે વિરામકરણમ્ ॥ ૨૨ ॥

છવિઃ-અલંકારઃ, તેન શૂન્યં છવિદોષઃ । યથા-‘વાલો ધાવતિ’ ઇત્યાદિ ॥ ૨૩ ॥

સમયવિરુદ્ધં-સ્વસિદ્ધાન્તવિરુદ્ધં, યથા-સ્પાદ્યાદસિદ્ધાન્તે તદ્વિરુદ્ધકથનમ્ ॥ ૨૪ ॥

મેં સુવન્ત તિહન્તાત્મક પદ કા સ્વરૂપ વિસ્તાર સે વિવેચિત કરકે અથવા અર્થશાસ્ત્ર કા કથન કરકે પુનઃ હેતુ કા કથન કરને લગ જાના । હસી તરહ દયા કે વર્ણવ કરતે સમય શીલ કા વિસ્તૃત વર્ણન કરના ઔર પુનઃ દયા કા વર્ણન કરના । હસ પ્રકાર કા વર્ણન હસ દોષ વાલા જાનના ચાહિયે ॥ ૨૦ ॥ જહાં અતિતાદિકાલ કા વ્યત્યય હોતા હૈ વહાં કાલ-દોષ માના જાતા હૈ-જૈસે-રામ વન મેં પ્રવિષ્ટ હુય કી જગહ એસા કહના કિ રામ વન મેં પ્રવેશ કરતે હૈ ॥ ૨૧ ॥ અસ્થાન મેં વિરતિ-‘અર્થાત્-વિરામ-રુકના’ હોના અથવા સર્વથા અવિરતિ-‘નહી રુકના’ હોના હસકા નામ યતિ દોષ હૈ । જૈસે-ધમ્મોમંગલ મુક્કિટ્ઠં” ઇત્યાદિ મેં ધમ્મો યહાં વિરામ કરના અથવા ગાથા કા અન્તમેં વિરામ કરના ॥ ૨૨ ॥ અલંકાર શૂન્યતા મેં છવિદોષ હોતા હૈ-જૈસે-“વાલો ધાવતિ” ઇત્યાદિ ॥ ૨૩ ॥ જહાં સ્વસિદ્ધાન્ત સે વિરુદ્ધ કહા જાતા હૈ વહાં સમય વિરુદ્ધ દોષ લગતા હૈ-જૈસે-સ્પાદ્યાદસિદ્ધાન્ત મેં હસકે વિરુદ્ધ પ્રતિપાદન કરના

સુખન્ત તિહન્તાત્મક પદનું સ્વરૂપ વિસ્તારથી વિવેચિત કરીને અથવા અર્થ-શાસ્ત્રનું કથન કરીને પુનઃ હેતુનું કથન કરવા લાગી જવું. આ રીતે દયાનું વર્ણન કરતી વખતે શિલનું વિસ્તૃત વર્ણન કરવું અને ફરીથી દયાનું વર્ણન કરવું. આ પ્રકારનું વર્ણન બ્યવહિત દોષવાળું બાણુ બોધાયે. (૨૦) જ્યાં અતીતાદિ કાળને વ્યત્યય થાય છે ત્યાં કાળ દોષ મનાય છે-જેમ રામ વનમાં પ્રવિષ્ટ થયાની જગ્યાએ એવું કહેવું કે, રામ વનમાં પ્રવેશ કરે છે. (૨૧) અસ્થાનમાં વિરતિ-અર્થાત્-વિરામ-રોકાવું, થવું અથવા સર્વથા અવિરતિ-“ન રોકાવું” થવું, તેનું નામ યતિદોષ છે. જેમ-“ધમ્મો મંગલમુક્કિટ્ઠં” ઇત્યાદિમાં ધમ્મો એ જગ્યાએ વિરામ કરવો અથવા ગાથાના અંતમાં વિરામ કરવો. (૨૨) અલંકાર શૂન્યતામાં છવિ દોષ થાય છે. જેમ “વાલો ધાવતિ” છેકરો દોડે છે. (૨૩) ઇત્યાદિ. જ્યાં સ્વસિદ્ધાંતથી વિરુદ્ધ કહેવામાં આવે છે ત્યાં સમયવિરુદ્ધ દોષ લાગે છે. જેમ સ્પાદ્યાદ સિદ્ધાંતમાં તેની વિરુદ્ધ પ્રતિપાદન કરવું. (૨૪) સુકિતશૂન્ય કથન કરવામાં વચન માત્ર નામનું ઉપયુગ આવે છે.

અપદં—નિર્વિભક્તિકશબ્દોચારણરૂપમ્ । યથા—મુનિર્વિહરતીતિ વક્તવ્યે મુનિ
વિહરતીતિ કથનમ્ ॥ ૧૮ ॥

સ્વભાવહીનં—યત્ર વસ્તુસ્વભાવોઽન્યથા સ્થિતોઽન્યથાઽભિધીયતે તત્ । યથા
'શીતો વહ્નિઃ' 'રૂપવદાકાશમ્' इत्यादि ॥ ૧૯ ॥

વ્યવહિતં—યત્ર પ્રકૃતપ્રત્યુત્તવાઽપ્રકૃતં વિસ્તરતોઽભિધાય પુનઃ પ્રકૃતમુચ્યતે તદ્ ।
યથા—हेतुकथामधिकृत्य सुप्तिदन्तपदलक्षणग्रपञ्चमर्थशास्त्रं वा अभिधाय पुनर्हेतुवच-
नम् । यथा वा—दयां प्रस्तुत्य शीलस्य विस्तरवर्णनं विधाय पुनर्दयावर्णनम् ॥ ૨૦ ॥

અધિક જો યુક્તિયુક્ત નહીં હૈ—उस को मानना जैसे—जीवराशि अजीव-
राशि ये दा ही राशियां हैं । पर ऐसा कहना कि “नो जीव नो अजीव”
इस प्रकार तीसरा राशि का वर्णन करना अनभिहित दोष है ॥ ૧૭ ॥
વિભક્તિ રહિત શબ્દ ચાલા સૂત્ર અપદ દોષ ચાલા માના જાતા હૈ જૈસે
“મુનિવિહરતિ” યહાં હુઆ હૈ । ક્યોં કિ સુવન્ત એવં તિહન્ત કી પદ
સંજ્ઞા હોતી હૈ । નિર્વિભક્તિક શબ્દ પદ સંજ્ઞક નહીં હોતા । અતઃ ઇસ
પ્રકાર કા શબ્દ ચાલા સૂત્ર ઇસ દોષ સે વિશિષ્ટ માના જાતા હૈ ।
“મુનિર્વિહરતિ” યહ શુદ્ધ હૈ ॥ ૧૮ ॥ જિસ સૂત્ર દ્વારા વસ્તુ કા યથા-
વસ્તિ સ્વરૂપ નિરૂપિત ન હોકર અન્યથારૂપ મેં નિરૂપિત કિયા જાતા
હૈ વહાં સ્વભાવહીન દોષ હોતા હૈ । જૈસે—अग्नि को शीत एवं आकाश
को रूपी कहना ॥ ૧૯ ॥ જહાં પ્રકૃત અર્થ કો છોડકર અપ્રકૃત કા
વિસ્તાર સે વર્ણન કરકે પુનઃ પ્રકૃત અર્થ કા વર્ણન કિયા જાતા હૈ વહાં
વ્યવહિત નામ કા દોષ હોતા હૈ—जैसे—हेतु के लक्षण के कथन अवसर

યુક્ત નથી તેને માનવી જેમ—लवराशी अलवराशी એ જે રાશી છે, પણ
એમ કહેવું કે નો જીવ—નો અજીવ આ પ્રકારે ત્રીજી રાશીનું વર્ણન કરવું
અનભિહિત દોષ છે. (૧૭) વિભક્તિરહિત શબ્દવાળા સૂત્ર અપદ દોષવાળા
મનાય છે જેમ “મુનિવિહરતિ” અહિં થયેલ છે. કેમકે, મુળન્ત અને તિહન્તની
પદ સંજ્ઞા થાય છે. નિર્વિભક્તિક શબ્દ પદ સંજ્ઞક થતો નથી એટલે આ
પ્રકારના શબ્દવાળા સૂત્ર આ દોષથી વિશિષ્ટ માનવામાં આવે છે. “મુનિર્વિહરતિ”
આ શુદ્ધ છે. (૧૮) જે સૂત્રથી વસ્તુનું યથાવસ્થિત સ્વરૂપ નિરૂપિત ન થતાં
બીજા રૂપમાં નિરૂપિત કરવામાં આવે છે ત્યાં સ્વભાવહિન દોષ હોય છે. જેમ
અગ્નિને શીત અને આકાશને રૂપી કહેવું. (૧૯) જ્યાં પ્રકૃત અર્થને છોડીને
અપ્રકૃતનું વિસ્તારથી વર્ણન કરીને પુનઃ પ્રકૃત અર્થનું વર્ણન કરવામાં આવે છે
ત્યાં વ્યવહિત નામનો દોષ લાગે છે—જેમ હેતુ લક્ષણના કથન અવસર

મિયદાંશની ટોકા ગા. ૨૩ સૂત્રદોષા: ૩૨

રૂપકદોષ:—અવયવિન્યારોપયિતવ્યેઽવયવારોપણમ્ । યથા-પર્વતાદી રૂપયિ-
તવ્યે શિખરાદીંસ્તદવયવાન્ રૂપયતિ । ગગ્નં પ્રતિ ઉચ્ચત્વાદિ ધર્મં નિરીક્ષ્ય પર્વતા-
ભેદમારોપ્ય પર્વતોઽયમિતિ વક્તવ્યે શિખરોઽયમિતિ કથનમ્ ॥ ૨૯ ॥
નિર્દેશદોષસ્તત્ર, યત્ર નિર્દિષ્ટપદાનામેકવાક્યતા ન ક્રિયતે, યથા-—ઈહ શ્રાવક
ઉપાશ્રયે પ્રતિક્રામતીત્યભિપ્રાયતવ્યે પ્રતિક્રામતિ શબ્દં નાભિપ્રત્તે ॥ ૩૦ ॥
પદાર્થદોષ:—યત્ર વસ્તુનિ પર્યાયોઽપિ સન્ પદાર્થાન્તરત્વેન કલ્પ્યતે, યથા-
'સતો ભાવ: સત્તા' ઇતિ કૃત્વા વસ્તુપર્યાય એવ સત્તા, સા ચ વૈશેષિકૈ: પદ્મ
પદાર્થેષુ મધ્યે પદાર્થાન્તરત્વેન સ્વીકૃતા, તત્ત્વાયુક્તમ્-વસ્તુનામનન્તપર્યાયત્વેન

પદાર્થાનિત્ય-પ્રસંગાદિતિ ॥ ૩૧ ॥

ઉપમા કરને મેં આતી હૈ વહાં ઉપમા દોષ માના જાતા હૈ જૈસે કહના કિ મેરુ
સર્પ કે સમાન હૈ અથવા સર્પ મેરુકે સમાન હૈ ॥૨૮॥ અવયવી કા જહાં
આરોપણ કરના ચાહિયે વહાં અવયવ કા આરોપણ કરના, જૈસે-પર્વતકે
નિરૂપયિતવ્ય હોને પર ઉસ કે અવયવમૂત શિખરાદિકોં કા નિરૂપણ
કરના । ગજ મેં ઉચ્ચત્વ આદિ ધર્મ કા નિરીક્ષણ કર કે ઉસ મેં પર્વત કા
રૂપક વાંચકર ફિર એસા કહના કિ યહ શિખર હૈ ॥ ૨૯ ॥ જહાં નિર્દિષ્ટ
પદો મેં એક વાક્યતા નહીં કી જાતી હૈ વહાં નિર્દિષ્ટ દોષ માના જાતા
હૈ । જૈસે-—ઇસ ઉપાશ્રય મેં શ્રાવક પ્રતિક્રમણ કરતા હૈ એસે કહને કી
જગહ સિર્ફ ઇતના હી કહના । “ ઇહ ઉપાશ્રયે શ્રાવક: ” અર્થાત્ એક
વાક્યતા પ્રદર્શક ક્રિયાપદ કા પ્રયોગ નહીં કરના ॥ ૩૦ ॥ જિસ વસ્તુમેં
પર્યાય બી દૂસરે પદાર્થરૂપ મેં કલ્પિત કી જાવે વહાં પદાર્થદોષ માના
જાતા હૈ । જૈસે-સત્ કા ભાવ હી સત્તા હૈ ઓર યહ સત્તા વસ્તુ કી હી

ત્યાં ઉપમાદોષ માનવામાં આવે છે. જેમ કહેવું કે, એક સર્પવના જેવો છે
અથવા સર્પવ એટલા સમાન છે. (૨૮) અવયવીનું બ્યાં આરોપણ કરવું
નેઈએ ત્યાં અવયવનું આરોપણ કરવું, જેમ પર્વતના નિરૂપયિતવ્ય કથન
કરવું નેઈએ ત્યાં એમના શિખરાદિકોનું નિરૂપણ કરવું; ગજમાં ઉચ્ચત્વ
આદિ ધર્મનું નિરીક્ષણ કરી એમાં પર્વતનું રૂપક વાંધીને પછી એવું કહેવું કે
એ શિખર છે. (૨૯) બ્યાં નિર્દિષ્ટ પદોમાં એકવાક્યતા કરવામાં નથી આવતી
ત્યાં નિર્દિષ્ટ દોષ માનવામાં આવે છે. જેમ આ ઉપાશ્રયમાં શ્રાવક પ્રતિક્રમણ
કરે છે એમ કહેવાને બદલે ક્રૂર એટલું જ કહેવું કે, “ ઇહ ઉપાશ્રયે શ્રાવક: ”
અર્થાત્ એક વાક્યતા પ્રદર્શક ક્રિયાપદનો પ્રયોગ કરવો નહીં. (૩૦) જે વસ્તુમાં
પર્યાય પછી બીજા પદાર્થરૂપમાં કલ્પિત કરવામાં આવે ત્યાં પદાર્થ દોષ મનાય
છે, જેમ સત્નો ભાવ જ સત્તા છે અને એ સત્તા વસ્તુની જ એક પર્યાય છે—

વચનમાત્ર-નિર્હેતુકં કેવલવચનમ્, યથા કથિદ્ યથેચ્છયા કંચિત્ પ્રદેશં લોક-મધ્યતયા જનેભ્યઃ પ્રરૂપયતિ ॥ ૨૫ ॥

અર્થાપત્તિદોષઃ—યત્રાર્થાપત્ત્યાનિષ્ટમાપતતિ તત્ર, યથા—ગ્રામકુક્કુટો ન હન્તવ્યઃ, ઇત્યુક્તેઽર્થાપત્ત્યા શેષઘાતોઽદુષ્ટ ઇત્યાપતતિ ॥ ૨૬ ॥

અસમાસદોષઃ—યત્ર સમાસવિધિમાત્તૌ સમાસં ન કરોતિ, વ્યત્યયેન વા કરોતિ તત્ર । યથા—ભગવતો નામનિર્દેશે ‘મહાવીરઃ’ ઇતિ વક્તવ્યે ‘મહાન્ વીરઃ’ ઇતિ કથનમ્ । યદ્વા—સમાનાધિકરણ્યેન સમાસે કર્તવ્યે વ્યધિકરણેન તત્કરણમ્ । યથા—મહતો વીરો મહદ્વીર ઇતિ ॥ ૨૭ ॥

ઉપમાદોષો યત્ર હીનોપમા ક્રિયતે । યથા—મેરુઃ સર્પપોપમઃ । અધિકોપમા વા ક્રિયતે, યથા—સર્પપો મેરુસંનિમઃ । અનુપમા વા યથા મેરુઃ સમુદ્રોપમઃ, ઇત્યાદિ ॥૨૮॥

॥ ૨૪ ॥ યુક્તિ શૂન્ય કથન કરને મેં વચનમાત્ર નામકા દૂષણ આતા હૈ । જૈસે-અપની ઇચ્છા સે કલ્પના કરકે કહના કિ અમુક પ્રદેશ લોક કે મધ્ય મેં હૈ ॥ ૨૫ ॥ જહાં પર અર્થાપત્તિ સે અનિષ્ટ કી પ્રસક્તિ હોતી, વહાં અર્થાપત્તિદોષ માના જાતા હૈ । જૈસે-કિસી ને કહા કિ ગ્રામ કા કુક્કુટ (મુર્ગ) નહીં મારના ચાહિયે, તો ઇસસે ઇસ અનિષ્ટ કા આપા-દન હોતા હૈ કિ શેષ જીવોં કા ઘાત કરના દોષાવહ નહીં હૈ ॥ ૨૬ ॥ જહાં સમાસવિધિ પ્રાપ્ત હો ભી તો ભી વહાં સમાસ નહીં કરના, ઇસમેં અસમાસદોષ માના જાતા હૈ અથવા વ્યત્યય સે સમાસ કરના ઇસમેં ભી સમાસદોષ માના જાતા હૈ । જૈસે કિસી ને પૂછા કિ અન્તિમ તીર્થંકર કા નામ કયા હૈ ? વહાં મહાવીર ન કહ કર મહાન્ વીર એસા કહ દેના । અથવા—સમાનાધિકરણ્ય સે સમાસ કર્તવ્ય હોને પર વ્યધિકરણ સે સમાસ કરના—જૈસે—મહતો વીરઃ મહદ્વીરઃ ॥૨૭॥ જહાં હીન ઉપમા અથવા અધિક

જેમ પોતાની ઇચ્છાથી કલ્પના કરીને કહેવું કે, અમુક પ્રદેશ લોકના મધ્યમાં છે. (૨૫) ત્યાં અર્થાપત્તિથી અનિષ્ટની પ્રસક્તિ થાય છે ત્યાં અર્થાપત્તિ દોષ માનવામાં આવે છે. જેમ કેઈએ કહ્યું કે, ગામનો કુકડો મારવો ન જોઈએ, તો આથી એ અનિષ્ટનું કથન આપાદન થાય છે કે, શેષ જીવોના ઘાત કરવો તે દોષાવહ નથી. (૨૬) ત્યાં સમાસવિધિ પ્રાપ્ત થાય તો પણ ત્યાં સમાસ ન કરવો એમાં અસમાસ દોષ માનવામાં આવે છે, અથવા વ્યત્યયથી સમાસ કરવો એમાં પણ સમાસ દોષ માનવામાં આવે છે, જેમ કેઈએ પૂછ્યું કે અંતિમ તીર્થંકરનું નામ શું છે ? ત્યાં મહાવીર ન કહેતા મહાન્ વીર એમ કહી દેવું અથવા સામાનાધિકરણથી સમાસ કર્તવ્ય હોવા છતાં વ્યધિકરણથી સમાસ કરવો, જેમ ‘મહતોવીરઃ મહાવીરઃ’ (૨૭) ત્યાં હીન ઉપમા અથવા અધિક ઉપમા કરવામાં આવે છે

વ્યાખ્યા—નિર્દોષમ્—અલીકાદિદોષવર્જિતમ્ ॥ ૧ ॥ સારવત્—ભૂમિશબ્દવદ્
 વહુપર્યાયયુક્તમ્ ॥ ૨ ॥ હેતુયુક્ત—હેતવઃ—અન્વયવ્યતિરેકલક્ષણાસ્તૈર્યુક્તમ્ ॥ ૩ ॥
 અલંકૃતમ્—ઉપમોત્પ્રેક્ષાઘલંકારૈર્યુક્તમ્ ॥ ૪ ॥ ઉપનીતમ્—ઉપનયોપસંહૃતમ્ ॥ ૫ ॥
 સોપચારં—ગ્રામ્યભણિતિરહિતમ્ ॥ ૬ ॥ મિતં—વર્ણાદિનિયતપરિમાણમ્ ॥ ૭ ॥
 મધુરં—શ્રવણમનોહરમ્ ॥ ૮ ॥

અવ સૂત્રકે ૮ ગુણ કૌન ૨ સે હેં સો કહતે હેં—નિર્દોષ ૧, સારવત્ ૨, હેતુયુક્ત ૩, અલંકૃત ૪, ઉપનીત ૫, સોપચાર ૬, મિત ૭, એવં મધુર ૮, કહાં મી હેં—

“નિર્દોષં સારવતં ચ, હેતુયુક્ત મલંકિયં ।

ઉવર્ણીયં સોપચારં ચ, મિતં મધુરમેવ ચ ॥૧॥

જો સૂત્ર અલીકાદિ દોષોં સે વર્જિત હોતા હૈં વહાં નિર્દોષ યહ ગુણ માના જાતા હૈં ॥ ૧ ॥ જિસ પ્રકાર ભૂમિ શબ્દ કે અનેક પર્યાયવાચી શબ્દ હૈં, ઉસી પ્રકાર અનેક પર્યાયોં સે યુક્ત જો સૂત્ર હોતા હૈં વહ “સારવત્” હિસ ગુણ સે વિશિષ્ટ માના જાતા હૈં ॥ ૨ ॥ અન્વય વ્યતિરેક લક્ષણ હેતુ સે યુક્ત હો વહ હેતુયુક્ત નામક તીસરા ગુણ હૈં ॥ ૩ ॥ ઉપમા ઉત્પ્રેક્ષા આદિ અલંકારોં સે સંપન્ન સૂત્ર કો અલંકૃત ગુણ વાલા કહાં ગયા હૈં ॥ ૪ ॥ ઉપનય પૂર્વક સે ઉપસંહૃત—સમાસિ જો સૂત્ર હોતા હૈં વહ ઉપવીતગુણવાલા કહાં ગયા હૈં ॥ ૫ ॥ ગ્રામ્યભણિતિ સે રહિત જો સૂત્ર હોતા હૈં અર્થાત્ જિસ સૂત્ર કી ભાષા સાધારણજનોં કી ભાષા જૈસી નહીં હોતી હૈં વહ સૂત્ર સોપચારગુણ સે વિશિષ્ટ માના ગયા હૈં.

હવે સૂત્રના આઠ ગુણ કયા કયા છે તે કહે છે—નિર્દોષ, સારવત્, હેતુયુક્ત, અલંકૃત, ઉપનીત, સોપચાર, મિત, અને મધુર કહ્યું પણ છે—

નિર્દોષં સારવતં ચ, હેતુયુક્ત મલંકિયં ।

ઉવર્ણીયં સોપચારં ચ, મિતં મધુરમેવ ॥ ૧ ॥

જે સૂત્ર અસત્ય અલીકાદિ દોષોથી વર્જિત હોય છે ત્યાં નિર્દોષ આ ગુણ માનવામાં આવે છે. (૧) જે પ્રકારે ભૂમિ શબ્દ જે અનેક પર્યાયવાચી શબ્દ છે એ જ રીતે અનેક પર્યાયોથી યુક્ત જે સૂત્ર હોય છે તે “સારવત્” આ ગુણથી વિશિષ્ટ માનવામાં આવે છે. (૨) અન્વય વ્યતિરેક લક્ષણ હેતુથી યુક્ત હોય તે હેતુયુક્ત નામના ત્રીજો ગુણ છે. (૩) ઉપમા ઉત્પ્રેક્ષા આદિ અલંકારોથી સંપન્ન સૂત્રને અલંકૃત ગુણવાળા કહેવામાં આવેલ છે. (૪) ઉપનય પૂર્વકથી ઉપસંહૃત સમાસિ જે સૂત્ર હોય છે તે ઉપવિત ગુણવાળા કહેવાયેલ છે. (૫) ગ્રામ્યભણિતિથી રહિત જે સૂત્ર હોય છે અર્થાત્ જે સૂત્રની ભાષા સાધારણ જનોની ભાષા જેવી હોતી નથી તે સૂત્ર સોપચાર ગુણથી વિશિષ્ટ માનવામાં આવેલ છે. (૬)

સન્ધિદોષઃ—યત્ર સન્ધિમાતૃં તં ન કરોતિ, દુષ્ટં વા કરોતિ તત્ર, યથા
—“સંયમારાધનમ્” ઇતિ વક્તવ્યે ‘સંયમ, આરાધનમ્’ ઇતિ કથનમ્ । યથા વા
‘મુનિ ઇતૌ’ ઇતિ વક્તવ્યે ‘મુન્યેતૌ’ ઇતિ કથનમ્ ॥૩૨॥ एते द्वात्रिंशत् सूत्रदोषाः ।

અથ સૂત્રગુણાઃ—

સૂત્રાણામષ્ટૌ ગુણાસ્ત્વેવમ્—

નિદોસં સારવંતં ચ, હેઝુત્ત મલંકિયં ।

ઉવળીયં સોવયારં ચ, મિર્ય મહુરમેવ ય ॥ ૧ ॥

एक पर्याय है-फिर भी वैशेषिक सिद्धान्तकार इसे द्रव्यगुण आदि-पदार्थ से भिन्न पदार्थरूप से स्वीकार करते हैं । अतः उनके सूत्रों में यह दोष आता है । कारण कि इस प्रकार से पर्याय को यदि भिन्न पदार्थ तरीके माना जायगा तो प्रत्येक पदार्थ की अनंत पर्याये हैं उन समयमें अनंत पदार्थता की प्रसक्ति माननी पड़ेगी, इस प्रकार छह ही भावात्मक पदार्थ है, यह कथनविरुद्ध मानना पड़ेगा ॥ ३१ ॥ जहां संधि की प्राप्ति होने पर भी संधि नहीं की जाय वहां सन्धिदोष होता है जैसे—“यह संयम का आराधन करता है” इस स्थानमें संयमाराधनं न कह कर “संयम आराधनं” ऐसा कहना । इसी प्रकार “मुनी एतौ” इस जगह “मुन्येतौ” कहना । “मुनो एतौ” यहां व्याकरण सिद्धान्त के अनुसार द्विवचनान्त ईदन्त शब्दकी प्रगृह्य संज्ञा होती है और उससे सन्धिकार्य का अभाव हो जाता है ॥ ३२ ॥ इस प्रकार सूत्रके ये बत्तीस (३२) दोष हैं ।

વૈશેષિક સિદ્ધાંતકાર તેના દ્રવ્યશુષ્ક આદિ પદાર્થથી ભિન્ન પદાર્થ રૂપથી સ્વીકાર કરે છે. આથી તેમના સૂત્રોમાં એ દોષ આવે છે. કારણ કે, આ પ્રકારથી પર્યાયને કદિ ભિન્ન પદાર્થ તરીકે માનવામાં આવે તો પ્રત્યેક પદાર્થની અનંત પર્યાયો છે એ બધામાં અનંત પદાર્થતાની પ્રસક્તિ માનવી બેઠકશે. આ પ્રકારે છ ભાવાત્મક પદાર્થ છે, એ કહેવું વિરુદ્ધ માનવું પડશે. (૩૧) જ્યાં સંધિની પ્રાપ્તિ હોવા છતાં પણ સંધી ન કરવામાં આવે તો સંધી દોષ બને છે. એમ—“આ સંયમનું આરાધન કરે છે” આ સ્થાનમાં સંયમારાધન ન કહીને “સંયમ આરાધન” એમ કહેવું. આ પ્રકારે “મુનિ ઇતૌ” આ સ્થળે મુન્યેતૌ કહેવું. વ્યાકરણ સિદ્ધાંત અનુસાર દ્વિવચનનાં ઈદન્ત શબ્દની પ્રગૃહ્ય સંજ્ઞા થાય છે. અને એથી સંધી કાર્યનો અભાવ થઈ બાક્ય છે. (૩૨) આ પ્રકારે સૂત્રના ૩૨ દોષ છે.

તત્વારોઽપ્યનુયોગા વ્યાખ્યાયન્તે॥૪॥ ‘અસ્તોમકમ્, સ્તોમકાઃ-નિરર્થકતયા પ્રયુક્તાઃ, ચકાર-વા-શબ્દાદયો નિપાતાઃ, તૈર્વિયુક્તમ્ ॥૫॥ ‘અનવચ્ચ’-કામાદિપાપવ્યાપારા-પ્રરૂપકમ્ ॥૬॥ એવંભૂતં સૂત્રં સર્વજ્ઞભાષિતમ્ । ઇમે પદ્મ ગુણાઃ પૂર્વોક્તેષ્વપ્સુ ગુણે-પ્વન્તર્ભૂતાઃ સન્તિ, તથાહિ-અલ્પાક્ષરસ્ય વિશ્વતોમુલસ્ય ચ મિતે સમાવેશઃ, અસ-ન્દિગ્ધાનવદ્યાસ્તોભાનાં ચ નિર્દોષેન્તર્ભાવઃ ।

એવં સૂત્રાનુગમે સમસ્તદોષવર્જિતે લક્ષણયુક્તે સૂત્રે ઉચ્ચારિતે સતિ સ્વસમયગત-જીવાદ્યર્થપ્રતિપાદકસ્ય સ્વસમયપદસ્ય જ્ઞાનં ભવતિ તથા પરસમયગત-પ્રકૃતીશ્વ-રાદ્યર્થપ્રતિપાદકસ્ય પરસમયપદસ્ય જ્ઞાનં ભવતિ । અનયોરેવ મધ્યે પરસમયપદં જેસે “ધમ્મોમંગલમુક્ષિદ્ધં” વહ સૂત્ર હૈ । ઇસ સૂત્ર મેં ચારોં હી અનુયોગ કા વ્યાખ્યાન હૈ ॥ ૪ ॥ જિસ સૂત્ર મેં ચકાર, વકાર આદિ નિરર્થક શબ્દોં કા પ્રયોગ નહીં કિયા જાતા હૈ વહ સૂત્ર “અસ્તોમ” ગુણ વાલા માના ગયા હૈ ॥ ૫ ॥ જિસ સૂત્ર દ્વારા કામાદિક વ્યાપારોં કી પ્રરૂપણા નહીં કી જાતી હૈ વહ સૂત્ર “અનવચ્ચ” ગુણ સંપન્ન હૈ ॥૬॥ સૂત્ર ઇતી પ્રકાર કા હોના ચાહિયે, ઇસસે વિપરીત નહીં, એસા પ્રશ્ન કા આદેશ હૈ । યે છહ્ ગુણ પૂર્વોક્ત અષ્ટગુણોં મેં અન્તર્ભૂત સમજના ચાહિયે । અલ્પાક્ષર એવં વિશ્વતોમુલ, ઇન દો ગુણોં કા અન્તર્ભાવ “મિત” ઇસ ગુણ મેં તથા અસંદિગ્ધ, અનવચ્ચ એવં અસ્તોમ ઇન ગુણોં કા અન્તર્ભાવ “નિર્દોષ” ઇસ ગુણ મેં હુઆ હૈ ।

ઇસ પ્રકાર સમસ્તદોષવર્જિત, એવં લક્ષણયુક્ત સૂત્ર કે ઉચ્ચારિત હોને પર જીવાદિક અર્થ કે પ્રતિપાદક સ્વસમય-પદ કા જ્ઞાન તથા પર સમયાનુસાર પ્રકૃતિ ઈશ્વર આદિક અર્થ કે પ્રતિપાદક પરસમય-પદ કા

જેમ-“ધમ્મો મંગલમુક્ષિદ્ધં” આ સૂત્ર છે આમાં ચારે અનુયોગ ને વ્યાખ્યાન છે. ચકાર, વકાર આદિ વ્યાખ્યાન છે આદિ નિરર્થક શબ્દોના પ્રયોગ નથી કરવામાં આવ્યો તે સૂત્ર અસ્તોમ ગુણવાળા મનાયેલ છે. (૫) જે સૂત્રદ્વારા કામાદિક વ્યાપારોની પ્રરૂપણા કરવામાં નથી આવતી તે સૂત્ર અનવચ્ચ ગુણસંપન્ન છે. (૬) સૂત્ર આવા પ્રકારનું હોવું જોઈએ એનાથી વિપરીત નહીં એવો પ્રશ્નનો આદેશ છે. આ છ ગુણ પૂર્વોક્ત આઠ ગુણમાં અન્તર્ભૂત સમજવા જોઈએ. અલ્પાક્ષર તેમજ વિશ્વતોમુલ આ બે ગુણોનો અન્તર્ભાવ “મિત” આ ગુણમાં તથા અસંદિગ્ધ, અનવચ્ચ અને અસ્તોમ ગુણોનો અન્તર્ભાવ “નિર્દોષ” આ ગુણમાં થયેલ છે.

આ પ્રકાર સમસ્ત દોષ વર્જિત, અને લક્ષણયુક્ત સૂત્રના ઉચ્ચારિત હોવાથી જીવાદિક અર્થના પ્રતિપાદક સ્વસમય પદનું જ્ઞાન તથા પર સમયાનુ-સાર પ્રકૃતિ, ઈશ્વર આદિક અર્થના પ્રતિપાદક પરસમયપદનું જ્ઞાન થાય છે.

કેચિત્તુ સૂત્રસ્ય પદ ગુણાન્ વદન્તિ । તદ્ યથા—

અપ્પક્ષરમસંદિઘં, સારવં વિસ્સઓમુહં ।

અત્થોભમણવ્જ્જં ચ, સુત્તં સન્વણ્ણમાસિયં ॥ ૧ ॥

છાયા—અલ્પાક્ષરમસંદિઘં, સારવદ્ વિશ્વતોમુલ્લમ્ ।

અસ્તોભમનવઘં ચ, સૂત્રં સર્વેભાપિતમ્ ॥ ૧ ॥

વ્યાખ્યા—‘અલ્પાક્ષરમ્’ મિતાક્ષરં, યથા સામાયિકસૂત્રમ્ ॥ ૧ ॥

અસંદિઘમ્—સૈન્ધવશબ્દવદ્ યહ્લવણ-વસન-તુરગાદ્યનેકાર્થસંશયકારિ ન ભવતિ, યથા—અહિંસા ॥૨॥ સારવત્ત્વં ચ પૂર્વવત્ ॥૩॥ ‘વિશ્વતોમુલ્લ’ પ્રતિભૂતં ચરણાનુયોગાદ્યનુયોગચતુષ્ટયવ્યાખ્યાક્ષમમ્, યથા—‘ધમ્મોમંગલ મુકિદ્દં’ इत्यादि શ્લોકે

॥ ૬ ॥ વર્ણાદિક કા જિસમેં નિયત પરિમાણ હોતા હૈ વહ મિત ગુણ હૈ ॥ ૭ ॥ એવં કર્ણમનોહર જો હોતા હૈ વહ મધુર ગુણ સંયુક્ત સૂત્ર માના જાતા હૈ ॥ ૮ ॥ કિન્હીં ૨ કે મતાનુસાર સૂત્ર કે ૬ ગુણ ભી માને ગયે હૈ—વે યે હૈ—

અલ્પાક્ષર ૧, અસંદિઘ ૨, સારયુક્ત ૩, વિશ્વતોમુલ્લ ૪, અસ્તોભ ૫, અનવઘ ૬ । इनमें मित अक्षर जिसमें हो वह अल्पाक्षर गुण है, यह “अल्पाक्षर” प्रथम गुण है । जैसे सामायिक सूत्र ॥ १ ॥ सैन्धव शब्द की तरह जो लवण, वसन, तुरग आदि अनेक अर्थों के बोध का संशय-जनक नहीं हो वह “असंदिग्ध” गुण है । जैसे अहिंसा शब्द ॥ २ ॥ भूमि शब्द के समान अनेक पर्यायों से युक्त जो सूत्र वह “सारवत्” तीसरा गुण वाला है ॥ ३ ॥ प्रत्येक सूत्र चरणानुयोगादिक अनुयोग-चतुष्टय से युक्त है वह “विश्वतोमुख” गुणवाला सूत्र माना जाता है ।

વર્ણાદિકતુ' જેમાં નિયત પરિમાણ હોય છે તે મિતગુણ છે. (૭) જે કણું મનોહર હોય છે તે મધુરગુણ સંયુક્ત સૂત્ર માનવામાં આવે છે. (૮) કોઈ કોઈના મત અનુસાર સૂત્રના છ ગુણ પણ માનવામાં આવ્યા છે તે પ્રમાણ છે—

અલ્પાક્ષર ૧ અસંદિઘ ૨ સારયુક્ત ૩

વિશ્વતોમુલ્લ ૪ અસ્તોભ ૫ અનવઘ ૬

આમાં મિત અક્ષર જેમાં હોય તે અલ્પાક્ષર ગુણ છે, આ “અલ્પાક્ષર” પ્રથમ ગુણ છે, જેમ સામાયિક સૂત્ર (૧) સૈન્ધવ શબ્દની માફક લવણ, વસન, તુરગ આદિ અनेक अर्थोंના बोध જેમાં સંશયજનક ન હોય તે “અસંદિઘ” ગુણ છે. જેમ અહિંસા શબ્દ (૨) ભૂમિ શબ્દની માફક અનેક પર્યાયોથી યુક્ત જે સૂત્ર હોય તે “સારવત્” ત્રીજા ગુણવાળા છે. (૩) પ્રત્યેક સૂત્ર ચરણાનુયોગાદિક અનુયોગ ચતુષ્ટયથી યુક્ત છે તે “વિશ્વતોમુલ્લ” ગુણવાળા સૂત્ર માનવામાં છે.

કુવાસનાજનકત્વાંત્ વન્ધપદમ્, સ્વસમયપદં તુ-સદ્બોધકારણત્વાન્મોક્ષપદ-
મિતિં બોધ્યમ્ ।

इति तृतीयं द्वारम् ।

अथ सूत्रपर्यायनामकं चतुर्थं द्वारम् :—

सुयसुत्तगंधसिद्धं-त, सासणे आण वयण उवएसो ।

पण्णवणां मा गमइय, एगद्धा पज्जवा सुत्ते ॥ १ ॥

શ્રુતમ્, સૂત્રમ્, ગ્રન્થઃ, સિદ્ધાન્તઃ, શાસનમ્, આજ્ઞા, વચનમ્, ઉપદેશઃ,
પ્રજ્ઞાપના, આગમઃ, इति दश पर्यायाः एकार्याः ।

॥ इति चतुर्थं द्वारम् ॥

अथ सूत्र भेद नामकं पञ्चमं द्वारम्—

સૂત્રં નામ શ્રુતજ્ઞાનમિત્યુક્તમ્, તત્ સ્વલ્લ મૂલભેદાપેક્ષયા દ્વિભેદમ્ ; અક્ષપ્રવિ-
ષ્ટમ્, અક્ષવાહીં ચ । તથા ચોક્તમ્—

જ્ઞાન હોતા હૈ । કુવાસના કા જનક હોને સેં પરસમયપદ વન્ધપદ હૈ
એવં સદ્બોધ કા કારણ હોને સેં સ્વસમય-પદ મોક્ષપદ હૈ ॥

॥ इस प्रकार तीसरा द्वार सम्पूर्ण हुआ ॥ ३ ॥

अथ चौथा द्वार कहते हैं—

શ્રુત, સૂત્ર, ગ્રન્થ, સિદ્ધાન્ત, શાસન, આજ્ઞા, વચન, ઉપદેશ, પ્રજ્ઞાપના
આગમ, ये सब सूत्र के पर्यायवाची शब्द-नामान्तर हैं—

कहा भी है—“सुयसुत्तगंधसिद्धं सासणे आण वयण उवएसो ।

पण्णवणा-मागम इय, एगद्धा पज्जवा सुत्ते ॥ १ ॥

॥ चौथा द्वार संपूर्ण ॥ ४ ॥

કુવાસનાના જનક હોવાથી પરસમયપદ બન્ધ પદ છે અને સદ્બોધના કારણ-
રૂપ હોવાથી સ્વસમયપદ મોક્ષપદ છે.

આ પ્રકારથી ત્રીજું દ્વાર સંપૂર્ણ થયું.

હવે સૂત્રભેદ નામનું ચોથું દ્વાર કહે છે:—

શ્રુત, સૂત્ર, ગ્રન્થ, સિદ્ધાન્ત, શાસન, આજ્ઞા, વચન, ઉપદેશ, પ્રજ્ઞાપના,
આગમ, આ બધા સૂત્રનાં પર્યાયવાચી શબ્દ-નામાન્તર છે, કહ્યું પણ છે—

सुयसुत्तगंधसिद्धं, सासणे आण वयण उवएसो ।

पण्णवणा-मागम इय एगद्धा पज्जवा सुत्ते ॥ १ ॥

॥ योथुं द्वार संपूर्ण ॥

કિંચિદર્થવિશેષં જાનાતિ, યદા તુ ગુરુણાઽર્થેન સહ સૂત્રં પ્રવોધિતં ભવતિ, તદા શિષ્યસ્તદન્તર્ગતાનાં સર્વેષાં ભાવાનાં જ્ઞાતા ભવતિ, યથા સ એવ કલાઽમિત્તઃ પુરુષઃ પ્રવોધિતઃ સન્ સર્વાસાં કલાનાં જ્ઞાતા ભવતિ, અતઃ સૂત્રં ગુરુસંનિધાનં વિના પ્રસુપ્ત-સમં ભવતિ, તસ્માત્ સૂત્રં ગુરુસંનિધૌ શ્રુત્વા પઠનીયમ્ ।

કિંચ-ગુરુસંનિધાનાભાવે સૂત્રોચ્ચારણં સ્વલિતાદિદોષદુષ્ટં સ્યાત્ । તથા સતિ પ્રાયશ્ચિત્તમ્, અજ્ઞાનં, મિથ્યાત્વં, આત્મવિરાધના, સંયમવિરાધનાદયો દોષા ભવન્તિ તસ્માદ્ ગુરુસંનિધૌ સૂત્રમુચ્ચારણીયમ્ ।

સૂત્ર કા અર્થ યદિ જ્ઞાત ન હો તો પઢને વાલા વ્યક્તિ ઉસકે મહત્ત્વ કો નહીં જાન સકતા હૈ । જિસ સમય શિષ્ય ગુરુ મહારાજ કે પાસ અર્થ-સહિત સૂત્ર કા અધ્યયન કરતા હૈ, અથવા ગુરુ મહારાજ શિષ્ય કો અર્થ-સહિત સૂત્ર પઢા દેતે હૈં ઉસ સમય શિષ્ય ઉસકે અન્તર્ગત સમસ્ત ભાવોં કા જ્ઞાતા હો જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર ૭૨ કલા કે જાનને વાલા પુરુષ જગને પર સમસ્ત કલાઓં કા જ્ઞાતા હોતા હૈ । ઇસલિયે સૂત્ર ગુરુ મહારાજ કે સમીપ સુનકર હી પઢના ચાહિયે, ક્યોંં કિ વિના ગુરુ મહારાજ કે પઠિત સૂત્ર કલાનિપુણ સોયા હુઆ પુરુષ જૈસા માના જાતા હૈ, પઢને વાલે કો ઉસસે અર્થવિશેષ કી પ્રાપ્તિ નહીંં હો સકતી હૈ ।

કિંચ-ગુરુમુખસે યદિ સૂત્ર કા અધ્યયન ન કિયા જાય તો સૂત્ર કે યથાવત્ ઉચ્ચારણ કરને મેં સ્વલના આદિ દોષોં કા સદ્ભાવ હો સકતા હૈ । ઇસસે અધ્યયન કરને વાલોં કો લાભ કે સ્થાન મેં પ્રાયશ્ચિત્ત કા ભાગી હોના પડતા હૈ । અજ્ઞાન, મિથ્યાત્વ, આત્મવિરાધના એવં સંયમ કી વિરાધના આદિ દોષોં કા ભાજન ભી બનના પડતા હૈ । ઇસલિયે ગુરુ મહારાજ કે

વ્યક્તિ તેના મહત્ત્વને બાણી શકતા નથી. જે સમયે શિષ્ય ગુરુમહારાજની પ્રાપ્તે અર્થ સહિત સૂત્રનું અધ્યયન કરે છે અથવા ગુરુ મહારાજ શિષ્યને અર્થ સહિત સૂત્ર બાણી દે છે, તે સમયે શિષ્ય તેના અંતર્ગત સમસ્ત ભાવોના જ્ઞાતા બની બાધ છે. જે પ્રકારે ૭૨ કળાને બાણવાવાળા પુરુષ બગવાથી સમસ્ત કળાઓના જ્ઞાતા બને છે. આ માટે સૂત્ર ગુરુ મહારાજની સમીપ સાંભળીને બાણું બેઠે છે. કેમ કે ગુરુ મહારાજ વગર બાણવામાં આવેલ સૂત્ર કળા નિપૂર્ણ સુતેલા પુરુષ જેવું માનવામાં આવે છે. બાણવાવાળાને જ્ઞેનાથી અર્થ વિશેષની પ્રાપ્તિ થતી નથી.

કિંચ ફરી-ગુરુ મુખથી સૂત્રનું અધ્યયન કદાચ ન કરવામાં આવે તો, સૂત્રનું યથાવત્ ઉચ્ચારણ કરવામાં સ્વલના આદિ દોષોના સદ્ભાવ બને છે. જેથી અધ્યયન કરવાવાળાએ લાભના સ્થાનમાં પ્રાયશ્ચિત્તના ભાગી બનવું પડે છે, અજ્ઞાન, મિથ્યાત્વ, આત્મવિરાધના અને સંયમની વિરાધના આદિ દોષોના ભાવન

આવશ્યકવ્યતિરિક્તં દ્વિવિધમ્-કાલિકમ્, ઉત્કાલિકં ચ । તત્ર-જમ્બૂદ્રીપપ્રજ્ઞસિ-
ચન્દ્રપ્રજ્ઞસિર્નિરયાવલિકાદીનિ ચ પञ્ચ સૂત્રાણીતિ સપ્તોપાદ્ધાનિ, વ્યવહારાદીનિ ચત્વારિ
છેદસૂત્રાણિ, મૂલસૂત્રેષુ-ઉત્તરાધ્યયનં, સમુત્થાનસૂત્રં ચ । એતત્ સર્વં કાલિકમ્ ।
ઉત્કાલિકં તુ દશવૈકાલિકસૂત્રં નન્દીસૂત્રમ્, અનુયોગદ્વારસૂત્રં ચ-એતત્ત્રયં મૂલમૂત્રમ્,
ઔપપાતિકં રાજપ્રશ્નીયં જીવાભિગમઃ પ્રજ્ઞાપના સૂર્યપ્રજ્ઞસિરિતિ પञ્ચોપાદ્ધાનિ ચ ।

॥ ઇતિ પञ્ચમદ્વારમ્ ॥

અથ સૂત્રોચ્ચારણવિધિનામકં પઠ્યં દ્વારમ્—

સુવિનીતેન શિષ્યેણ સૂત્રં ગુરુસંનિધૌ ગ્રહીતવ્યમ્ । યથા-દ્વાસપ્તતિકલાપષ્ટિતો
મનુષ્યઃ પ્રસુપ્તઃ સન્ તાસાં કલાનાં ન કિંચિત્ જાનાતિ, એવમર્થેનાવોધિતે સૂત્રે ન
સે તદ્વ્યતિરિક્ત દો પ્રકાર કા હૈ । જમ્બૂદ્રીપપ્રજ્ઞસિ, ચન્દ્રપ્રજ્ઞસિ ઓર નિર-
યાવલિકા આદિ પાંચ સૂત્ર-યે સાતોં ઉપાંગ, વ્યવહાર આદિક ચાર છેદ
સૂત્ર, મૂલસૂત્રોં મેં ઉત્તરાધ્યયન, ઓર સમુત્થાનસૂત્ર, યે સર્વ કાલિક હૈ ।
દશવૈકાલિક, નન્દીસૂત્ર ઓર અનુયોગદ્વાર યે ત્રીનોં મૂલસૂત્ર, તથા-
ઔપપાતિક, રાજપ્રશ્નીય, જીવાભિગમ, પ્રજ્ઞાપના ઓર સૂર્યપ્રજ્ઞસિ યે
પાંચોં ઉપાંગ ઉત્કાલિક હૈ ।

॥ પાંચવા દ્વાર સંપૂર્ણ ॥

અવ છઠ્ઠે દ્વાર મેં સૂત્ર કે ઉચ્ચારણ કી વિધિ કહતે હૈ—

સુવિનીત શિષ્ય કો સૂત્ર કા અધ્યયન ગુરુ મહારાજ કે સમીપ
કરનાં ચાહિયે । જિસ પ્રકાર ૭૨ કલાઓં કા જ્ઞાતા મનુષ્ય પ્રસુપ્ત
અવસ્થા મેં ઉન કલાઓં કે અર્થવિશેષ કો નહીં જાનતા હૈ, ઉસી પ્રકાર

કાચેત્સર્ગ પ, અને પ્રત્યાખ્યાન ૬. કાલિક, ઉત્કાલિકના લેદધી તદ્વ્યતિરિક્ત યે
પ્રકારે છે. જમ્બૂદ્રીપપ્રજ્ઞસિ, ચન્દ્રપ્રજ્ઞસિ અને નિરયાવલિકા આદિ પાંચ તથા
વ્યવહારઆદિક ચાર સૂત્ર-એ સાતે ઉપાંગ, વ્યવહાર આદિક ચાર છેદ સૂત્ર,
મૂળસૂત્રોમાં ઉત્તરાધ્યયન અને સમુત્થાન સૂત્ર એ બધાં કાલિક છે. દશવૈકાલિક,
નન્દીસૂત્ર અને અનુયોગદ્વાર આ ત્રણે મૂળસૂત્ર તથા-ઔપપાતિક, રાજપ્રશ્નીય,
જીવાભિગમ, પ્રજ્ઞાપના અને સૂર્યપ્રજ્ઞસિ આ પાંચે ઉપાંગ ઉત્કાલિક છે.

॥ પાંચમું દ્વાર સંપૂર્ણ ॥

હવે છઠ્ઠા દ્વારમાં સૂત્રના ઉચ્ચારણની વિધિ કહે છે—

સુવિનીત શિષ્યે સૂત્રત્વં અધ્યયન ગુરુ મહારાજની સમીપ કરવું જોઈએ,
જે પ્રકાર ૭૨ કલાઓના જ્ઞાતા મનુષ્ય પ્રસુપ્ત અવસ્થામાં એ કલાઓના અર્થ
વિશેષને નથી બાણતો એ જ રીતે સૂત્રનો અર્થ જો બાણેલ ન હોય તો વાંચનાર

અત્ર ન જ્ઞાયતે સકલસાધારણથ્રોત્ત્વમ્, યદિદં કાલિકમુત્કાલિકં વા । યથા
વા-સામાયિકપદે દશવૈકાલિકોત્તરાધ્યયનમ્ભૃતીનામનેકાનિ પદાનિ મીલયતિ ।

૩ વ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્—વ્યાવિદ્ધાક્ષરં, વિપર્યસ્તરત્નમાલાગતરત્નાનીવ વિદ્ધાનિ
વિપર્યસ્તાન્યક્ષરાણિ યત્ર તત્ । યથા—‘ધમ્મો મંગલ’ ઇત્યત્ર ‘લગમમ્મોધ’ ઇત્યુચ્ચારણમ્ ।

૪ હીનાક્ષરમ્-અક્ષરેહીનમ્ । યથા—‘નમો અરિહંતાણં’ ઇત્યત્ર ‘નમો અરિહંતા’
ઇત્યુચ્ચારણમ્ ।

૫ અધિકાક્ષરં—સ્વચુદ્ધઘાડધિકાક્ષરયોજનં યત્ર તત્ । યથા—‘ધમ્મો મંગલ
મુક્ષિટ્ઠં’ અત્ર—‘ધમ્મો મંગલમુક્ષિટ્ઠં નરગં’ ઇત્યુચ્ચારણમ્ । હીનાક્ષરે અધિકાક્ષરે વા

સર્વસાધારણ શ્રોતાજન યહ નહીં સમજ સકતે કિ યહ કાલિક હૈ
અથવા ઉત્કાલિક હૈ । અથવા—જો ઉચ્ચારણ સામાયિક પદ મેં દશવૈકા-
લિક ઉત્તરાધ્યયન આદિકે અનેક પદોં કો મિલા દેતા હૈ વહાં પર મી
યહ દોષ હોતા હૈ ॥ ૨ ॥ વ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્—જિસ ઉચ્ચારણ મેં ઉલ્ટે ઉલ્ટે
કર અક્ષર બોલે જાવેં વહાં વ્યાવિદ્ધાક્ષર નામકા દોષ હોતા હૈ—જૈસે-
ધમ્મો મંગલં એસા ન બોલકર “લગમમ્મોધ” એસા ઉચ્ચારણ કરના ॥૩॥
હીનાક્ષરમ્—જૈસા સૂત્ર હો વૈસા ઉચ્ચારણ ન કરના—હીનાક્ષર દોષ હૈ ।
જૈસે—“નમો અરિહંતાણં” કી જગહ “નમો અરિહંતા” એસા બોલના ॥૪॥
અધિકાક્ષર—જિસ ઉચ્ચારણ મેં અધિક અક્ષર ઉચ્ચરિત હોં વહાં અધિ-
કાક્ષર નામકા દોષ જાનના ચાહિયે, જૈસે—ધમ્મો મંગલમુક્ષિટ્ઠં ” બોલતે
સમય ધમ્મો મંગલમુક્ષિટ્ઠં નરગં ” એસા અધિક “નરગં” અક્ષર કા
ઉચ્ચારણ કરના । હીનાક્ષર એવં અધિકાક્ષર, યે દોનોં દોષ ઉચ્ચારણ કે

સર્વ સાધારણ શ્રોતાજન એ નથી સમજી શકતા કે, આ કાલિક છે કે
ઉત્કાલીક છે. જે ઉચ્ચારણ સામાયિક પદમાં હસ વૈકાલિક ઉત્તરાધ્યયન આદિના
અનેક પદોને મેળવી દે છે ત્યાં પણ આ દોષ થાય છે. (૨)

(૨) વ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્—જે ઉચ્ચારણમાં ઉલટાવી ઉલટાવીને અક્ષર બોલવામાં
આવે ત્યાં ‘વ્યાવિદ્ધાક્ષર’ નામનો દોષ બને છે. જેમ ધમ્મોમંગલં એવું ન બોલીને
લગમમ્મોધ એવું ઉચ્ચારણ કરવું.

(૩) હીનાક્ષરમ્—જેવાં સૂત્ર હોય તે પ્રમાણે ઉચ્ચારણ ન કરવું. અર્થાત્
ઓછા અક્ષરોથી ઉચ્ચારણ કરવું—‘હીનાક્ષર’ દોષ છે, જેમ—“નમો અરિહંતાણં”
ની જગ્યાએ “નમો અરિહંતા” એવું બોલવું.

(૪) અધિકાક્ષર—જે ઉચ્ચારણમાં વધુ અક્ષર ઉચ્ચારવામાં આવે ત્યાં
અધિકાક્ષર નામનો દોષ બાળ્યવો લેઈએ. જેમ “ધમ્મો મંગલ મુક્ષિટ્ઠં”
બોલતી વખતે “ધમ્મો મંગલ મુક્ષિટ્ઠં નરગં” એમ “નરગં” આ વધારાના
અક્ષરવું ઉચ્ચારણ કરવું. હીનાક્ષર અને અધિકાક્ષર આ બંને દોષ ઉચ્ચારણમાં

અયોચ્ચારણદોષાઃ સ્વલિતાદયો દશ પ્રોચ્યન્તે-સ્વલિતમ્ ૧, મિલિતમ્ ૨, વ્યાવિદ્ધાક્ષરમ્ ૩, હીનાક્ષરમ્ ૪, અધિકાક્ષરમ્ ૫, વ્યત્યાગ્રેડિતમ્ ૬, અપરિપૂર્ણમ્ ૭, અપરિપૂર્ણઘોષમ્ ૮, અકળ્ઠોષ્ટવિપ્રમુક્તમ્ ૯, અગુરુવાચનોપગતમ્ ૧૦, ઇતિ । તત્ર-

૧ સ્વલિતમ્-યદ્ અન્તરાઽન્તરા આલાપકાન્ મુઞ્ચતિ, યથા-“ અહિંસા ” “ દેવા વિ તં નમંસંતિ ” ।

૨ મિલિતમ્-યદ્ અન્યસ્થાન્યસ્યોદ્દેશકસ્યાધ્યયનસ્ય વા આલાપકાન્ એકત્ર મીલયતિ ‘ સર્વે જિનવચનમ્ ’ ઇતિ કૃત્વા, યથા-“ સન્વે પાણા પિયાડયા ” (સર્વે પ્રાણાઃ પ્રિયાયુષ્કાઃ) (આચા. ૧ શ્રુ. ૨ અ. ૩ ઉ.) “ સન્વે જીવા વિ ઇચ્છંતિ જીવિતં ન મરિજ્જિતં ” (સર્વે જીવા અપિ ઇચ્છન્તિ જીવિતં ન મર્તુમ્) દશ. વૈ. ૬ અ. ।

સમીપ હી સૂત્ર કા અધ્યયન યા ઉસકા ઉચ્ચારણ કરના સીખના ચાહિયે । ઉચ્ચારણ કે કિતને દોષ હૈં યહ અવ પ્રકટ કિયા જાતા હૈં—સ્વલિત ૧, મિલિત ૨, વ્યાવિદ્ધાક્ષર ૩, હીનાક્ષર ૪, અધિકાક્ષર ૫, વ્યત્યાગ્રેડિત ૬, અપરિપૂર્ણ ૭, અપરિપૂર્ણઘોષ ૮, અકળ્ઠોષ્ટવિપ્રમુક્ત ૯, એવં અગુરુવાચનોપગત ૧૦, યે ૧૦ દોષ ઉચ્ચારણ સંબંધી હૈં । સ્વલિત-ચીચ ૨ મેં રુક ૨ કર સૂત્ર કા બોલના યહ સ્વલિત દોષ હૈં, જૈસે-અહિંસા, દેવા વિ તં નમંસંતિ ઇત્યાદિ ॥૧॥ મિલિત-જહાં અન્ય ૨ ઉદ્દેશક અથવા અધ્યયન કે આલાપકોં કો એકત્ર મિલા દિયા જાતા હૈં વહાં મિલિત દોષ હોતા હૈં; જૈસે-“ સર્વે જિનવચનં ” એસા રૂપાલકર “ સન્વે પાણા પિયાડયા ” “ સન્વે જીવા વિ ઇચ્છંતિ જીવિતં ન મરિજ્જિતં ” ઇન સબ કો એક સાથ હી બોલ દેના । ઇન સબ કે એક સાથ બોલને મેં મિલિત દોષ ઇસલિયે આતા હૈં કિં

પશુ ખનવું પડે છે. માટે શુરુ મહારાજ સમીપજ સૂત્રનું અધ્યયન અગર તેનું ઉચ્ચારણ કરવું—સીખવું જોઈએ ઉચ્ચારના કેટલા દોષ છે તે હવે પ્રગટ કરવામાં આવે છે. (૧) સ્ખલિત, (૨) મિલિત, (૩) વ્યાવિદ્ધાક્ષર, (૪) હીનાક્ષર, (૫) અધિકાક્ષર, (૬) વ્યત્યાગ્રેડિત, (૭) અપરિપૂર્ણ, (૮) અપરિપૂર્ણઘોષ, (૯) અકળ્ઠોષ્ટવિપ્રમુક્ત, અને (૧૦) અગુરુવાચનોપગત આ દસ દોષો ઉચ્ચારણ સંબંધી છે.

સ્ખલિત-વચમાં વચમાં રોકાઈને સૂત્રનું બોલવું તે સ્ખલિત દોષ છે. જેમ--અહિંસા દેવા વિ તં નમંસંતિ ઇત્યાદિ ! (૧) મિલિત-જ્યાં અન્ય અન્ય ઉદ્દેશક અથવા અધ્યયનના આલાપોને એકત્ર મેળવી અપાય છે ત્યાં મિલિત દોષ થાય છે જેમ “ સર્વે જિનવચનં ” એવો ખ્યાલ કરી “ સન્વે પાણા પિયાડયા સન્વે જીવા વિ ઇચ્છંતિ જીવિતં ન મરિજ્જિતં ” આ બધાને એક સાથે જ બોલવું. આ બધાને એક સાથે બોલવામાં મિલિત દોષ એ માટે આવે છે કે,

દ્રવ્યભાવતો વ્યત્યાગ્રેહિતં સૂત્રે કુર્વતોઽર્થસ્ય વિસંવાદઃ ઇત્યાદિ વિવક્ષા પ્રાગિવ, યયા દીક્ષા નિરર્થિકા ।

૭ અપરિપૂર્ણ-માત્રાભિઃ, પદૈશ્વરણૈર્વિન્દુભિર્વર્ણૈશ્ચ । માત્રાભિરપરિપૂર્ણ ‘ધમ્મ મંગલમુક્ષિટ્ઠં’ । પદૈરપરિપૂર્ણ-યયા-“ધમ્મં ઉક્ષિટ્ઠં” । ચરણૈરપરિપૂર્ણ-યયા-‘ધમ્મો મંગલમુક્ષિટ્ઠં’ ઇત્યાદિ ગાથાયાં કમપિ ચરણં પરિત્યજ્ય પઠનમ્ । વિન્દુ-ભિરપરિપૂર્ણ-યયા ‘ધમ્મો મંગલમુક્ષિટ્ઠં’ ઇતિ । વર્ણૈરપરિપૂર્ણ યયા-‘ધમ્મો લ ઉક્ષિટ્ઠં’ ઇત્યાદિ । માત્રાભિઃ પદૈશ્વરણૈર્વિન્દુભિર્વર્ણૈરપરિપૂર્ણ ઉચ્ચારિતે તદેવ પ્રાયશ્ચિત્તં ત એવ દોષાશ્ચ ભવન્તિ ।

મેં વ્યત્યાગ્રેહિત કર દેતા હૈ તવ उसके અર્થ મેં સ્વભાવતઃ વિસંવાદ હોને લગતા હૈ ઓર ઇસસે જો હાનિ હોતી હૈ ચહ અધિકાક્ષર તથા હીનાક્ષર કે દોષ કે સ્વરૂપનિરૂપણ મેં યતા ચુકે હૈ ॥ ૬ ॥ અપરિપૂર્ણ-જહાં માત્રાઓં સે, પદોં સે, ચરણોં સે, વિન્દુઓં સે, વર્ણોં સે અપરિપૂર્ણતા હોતી હૈ વહાં અપરિપૂર્ણ દોષ માના જાતા હૈ, જૈસે “ધમ્મો મંગલમુક્ષિટ્ઠં” કી જગહ “ધમ્મમંગલમુક્ષિટ્ઠં” ઇસ પ્રકાર “ઓકાર” કી માત્રા હીન કર પઢના । “ધમ્મં ઉક્ષિટ્ઠં” એસા મંગલપદ હીન કર પઢના । કિસી ચરણ કો-પાદ કો-હીન કર પઢના, કિસી વિન્દુ કો હીન કર પઢના, કિસી વર્ણ કો હીન કર પઢના સો ક્રમશઃ માત્રા આદિકોં સે અપરિપૂર્ણ દોષ માના ગયા હૈ । ઇસ પ્રકાર કે ઉચ્ચારણ કરને પર એકતો આગમ કી આશાતના હોને સે પ્રાયશ્ચિત્ત કા ભાગી હોના પડતા હૈ દૂસરે વિસંવાદાદિ અનેક અનર્થ ઉત્પન્ન હો જાતે હૈ । ઇસસે જીવ કો મુક્તિ કા લાભ નહીં હો સકતા હૈ । તથા દીક્ષા મેં નિરર્થકતા કી પ્રસક્તિ કા પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોતા હૈ ॥ ૭ ॥

વિસંવાદ યયા લાગે છે અને એથી જે હાની થાય છે તે અધિકાક્ષર તથા હિનાક્ષરતા દોષના નિરૂપણમાં બતાવવામાં આવેલ છે.

(૬) અપરિપૂર્ણ જ્યાં માત્રાઓથી પદોથી, ચરણોથી, વિન્દુઓથી, વર્ણોથી, અપરિપૂર્ણતા હોય છે ત્યાં ‘અપરિપૂર્ણ’ દોષ માનવામાં આવે છે. “ધમ્મો મંગલ મુક્ષિટ્ઠં” ની જગ્યાએ ધમ્મમંગલમુક્ષિટ્ઠં આ રીતે, ઓકાર”ની માત્રા હીન કરી વાંચવું, “ધમ્મં ઉક્ષિટ્ઠં” એમ મંગલ પદ હીન કરી વાંચવું, કેાઈ વર્ણને હીન કરી વાંચવું તે ક્રમશઃ માત્રા આદિથી અપરિપૂર્ણ દોષ માનવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારનું ઉચ્ચારણ કરવાથી એક તો આગમની આશાતના થવાથી પ્રાયશ્ચિત્તના ભાગી થવું પડે છે બીજું વિસંવાદાદિ ઘણા અનર્થ ઉત્પન્ન થાય છે, આથી જીવને મુક્તિનો લાભ મળી શકતો નથી. આથી દીક્ષામાં નિરર્થકતાની પ્રસક્તિનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થાય છે.

ઉચ્ચારિતે સતિ-અર્થસ્ય વિસંવાદઃ, અર્થસ્ય વિસંવાદે ચરણસ્ય વિસંવાદઃ, ચરણ-વિસંવાદાન્ન મોક્ષઃ, મોક્ષાભાવે સર્વા દીક્ષા નિરર્થિકા ।

૬ વ્યત્યાગ્રેહિતં—નામ અન્યાન્યશાસ્ત્રપલ્લવત્રિમિશ્રણં, યથા—‘ સવ્વભૂયપ્પ-ભૂયસ્સ સમ્મં ભૂયાઈ પાસઓ । પિહિયાસવસ્સ દંતસ્સ, પાવકમ્મં ન વંધઈ ॥ ’
અત્રેદમપિ-ઘટતે इति કૃત્વા ક્ષિપતિ—અન્યશાસ્ત્રવચનમ્—

શ્રૂયતાં ધર્મસર્વસ્વં, શ્રુત્વા ચૈવાવધાર્યતામ્ ।

આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ, પરેપાં ન સમાચરેત્ ॥

હસલિયે માને જાતે હૈં કિ સૂત્ર મેં હીનાક્ષર અથવા અધિકાક્ષર ઉચ્ચરિત હોને પર ઉસકે અર્થ મેં વિસંવાદ (વિપરીતતા) હોતા હૈં । અર્થ મેં વિસંવાદ જહાં હુઆ કિ ચરણ-આચાર-ચારિત્ર મેં બી વિસંવાદ હોને લગતા હૈં । હસસે મોક્ષ કા લાભ નહીં હો સકતા । મોક્ષ કે અભાવ મેં સમસ્ત દીક્ષા નિરર્થક હો જાતી હૈં ॥ ૬ ॥ વ્યત્યાગ્રેહિત-ભિન્ન ૨ શાસ્ત્રોં કે પલ્લવ (અંશ) કા જિસ ઉચ્ચારણ મેં મિશ્રણ હોતા હૈં વહાં વ્યત્યાગ્રેહિત દોષ માના જાતા હૈં । જૈસે—“ સવ્વભૂયપ્પભૂયસ્સ સમ્મં ભૂયાઈ પાસઓ । પિહિયાસવસ્સ દંતસ્સ પાવકમ્મં ન વંધઈ ”—યહાં યહ બી ઘટિત હોતા હૈં એસા સમક્ષકર અન્ય શાસ્ત્ર કા વચન મિલાના, જૈસે—

“ શ્રૂયતાં ધર્મસર્વસ્વં, શ્રુત્વા ચૈવાવધાર્યતામ્ ॥

આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ, પરેપાં ન સમાચરેત્ ॥૧॥ ”

મહાભારત કે હસ વાક્ય કો મિશ્રિત કરના । યહ વ્યત્યાગ્રેહિત દોષ હસ લિયે માના ગયા હૈં કિ ઉચ્ચારણ કરને વાલા દ્રવ્ય એવં ભાવ સે જવ સૂત્ર

એ માટે માનવામાં આવેલ છે કે સૂત્રમાં હીનાક્ષર અથવા અધિકાક્ષર ઉચ્ચારવાથી એના અર્થમાં વિસંવાદ થાય છે. વિપરીત અર્થમાં વિસંવાદ ન્યાં થયો કે, ચરણ-આચાર ચારિત્રમાં પણ વિસંવાદ થવા લાગે છે એથી મોક્ષના લાભ થઈ શકતો નથી. મોક્ષના અભાવથી સમસ્ત દીક્ષા નિરર્થક થઈ જાય છે.

(૫) વ્યત્યાગ્રેહિત બુદ્ધિ બુદ્ધિ શાસ્ત્રોના પલ્લવનું જે ઉચ્ચારણમાં મિશ્રણ થાય છે ત્યાં “ વ્યત્યાગ્રેહિત ” દોષ માનવામાં આવે છે. જેમ સવ્વભૂયપ્પભૂયસ્સ સમ્મં ભૂયાઈ પાસઓ ” “ પિહિયાસવસ્સ દંતસ્સ પાવકમ્મં ન વંધઈ ” અહિં એ પણ ઘટિત થાય છે એમ સમજી બીજા શાસ્ત્રનું વચન મેળવવું જેમ—

“ શ્રૂયતાં ધર્મસર્વસ્વં શ્રુત્વા ચૈવાવધાર્યતામ્ ॥

આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ પરેપાં ન સમાચરેત્ ॥૧॥

મહાભારતના આ વાક્યને મેળવવું, આ “ વ્યત્યાગ્રેહિત ” દોષ એ માટે માનવામાં આવેલ છે કે, ઉચ્ચારણ કરવાવાળા દ્રવ્ય અને ભાવથી ન્યારે સૂત્રમાં વ્યત્યાગ્રેહિત થવાથી એના અર્થમાં સ્વભાવતઃ

અથ વાચનાનામકં સપ્તમં દ્વારમ્—

અથ વાચનાવિધિરુચ્યતે—તત્રૈવં વાચનાશબ્દાર્થઃ—વાચયતીતિ વાચના—પાઠના, શિષ્યાય સૂત્રાદિદાનં । નનુ વાચનાયાઃ કિં ફલમ્ ? વાચનયા જીવો નિર્જરાં જનયતિ શ્રુતસ્ય ચાનાશાતનાયાં પ્રવર્તતે, તત્ર ચ પ્રવર્તમાનો જીવઃ શ્રુતપ્રદાનરૂપં તીર્થધર્મમવલમ્બતે, એવં તીર્થધર્મમાશ્રયન્ કૃત્સ્નકર્મક્ષપણેન મહાનિર્જરાવાન્ ભવતિ । તત્તો મુક્તિપ્રાપ્ત્યા તસ્ય સર્વથા ભવપર્યવસાનં ભવતિ । વાચનાદાનગ્રહણવિધિસ્ત્વેવમ્—

ઉવગિસદ્ ઉવજ્ઞાઓ, સીસા વિઅરંતિ વંદણં તસ્સ ।

સો તેસિ સન્નસમયં, વાયદ્ સામડ્યપ્પમુદ્દં ॥ ૧ ॥

વાચના સે જો વિહીન હોતા હૈ, અર્થાત્—ગુરુપ્રદત્ત વાચના સે જો પ્રાપ્ત નહીં હોતા હૈ વહ અગુરુવાચનોપગત દોષ હૈ ॥ ૧૦ ॥

॥ યહ છટ્ટા દ્વાર હુઆ ॥ ૬ ॥

સાતવાં વાચનાદ્વાર કહતે હૈ—

અથ વાચના કી વિધિ બતલાતે હૈ—શિષ્ય કો સૂત્રાદિક કા દેના-પઢાના યહ વાચના હૈ । સૂત્ર કી વાચના સે કર્મોં કી નિર્જરા હોતી હૈ તથા ઉસકી અનાશાતના મેં પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । ઉસ વાચના મેં લગા હુઆ જીવ શ્રુતપ્રદાનરૂપ તીર્થધર્મ કા આધાર હોતા હૈ । તીર્થધર્મ કા આધાર હોને સે વહ જીવ સમસ્ત કર્મોં કે ક્ષપણ સે મહાનિર્જરાવાળા હોતા હૈ । મહાનિર્જરાવાળા હોને સે મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ દ્વારા ઉસકે સર્વથા ભવ કા ક્ષય હો જાતા હૈ । વાચના કે દેને કી એવં ઉસકે ગ્રહણ કરને કી વિધિ હસ પ્રકાર હૈ—

નાથી જે વિહિન હોય છે, અર્થાત્—ગુરુપ્રદત્ત વાચનાથી જે પ્રાપ્ત થયેલ નથી હોતું. તે અગુરુ વાચનોપગત દોષ છે. (૧૦)

આ છટ્ટું દ્વાર થયું

સાતમું વાચનાદ્વાર કહેવામાં આવે છે.—

હવે વાચનાની વિધિ બતાવવામાં આવે છે—શિષ્યને સૂત્રાદિક ભણાવવા-સમજાવવાં એ વાચના છે. સૂત્રની વાચનાથી કંમોની નિર્જરા થાય છે, તથા તેના અનાશાતનાની પ્રવૃત્તિ થાય છે. એ વાચનામાં લાગેલ જીવ શ્રુતપ્રદાનરૂપ તીર્થ ધર્મના આધાર બને છે, તીર્થ ધર્મના આધાર થવાથી તે જીવ સમસ્ત કંમોના ક્ષપણથી મહાનિર્જરાવાળા થાય છે. મહાનિર્જરાવાળા થવાથી મુક્તિની પ્રાપ્તિ દ્વારા એને જીવન મરણના ફેરાનો ભય મટી જાય છે.

૮ અપરિપૂર્ણઘોષમ્—ઘોષૈરેવાપરિપૂર્ણ નાક્ષરાદિભિઃ, ઘોષા-ઉદાત્તાદયઃ । તત્ર-ઉચ્ચૈરુદાત્તઃ, નીચૈરનુદાત્તઃ, સમાંહારઃ સ્વરિતઃ । ઉચ્ચૈઃશબ્દેન યથા—“ઉપ્પન્નેઈ વા વિગમેઈ વા, ધ્રુવેઈ વા ” ઇત્યાદિ । નીચૈઃશબ્દેન યથા—“જે મિક્ષુ વા મિક્ષુણી વા ” ઇત્યાદિ । અત્ર ઘોષૈરયુક્તમુચ્ચારણં કુર્વતસ્તદેવ પ્રાયશ્ચિત્તં ત एव च दोषाः ।

૯ અકળ્ઠૌષ્ઠવિપ્રમુક્તમ્—કળ્ઠૌષ્ઠેન વિપ્રમુક્તં-વ્યક્તં-સુસ્પષ્ટં યન્ન ભવતિ, બાલમૂકભાષિતવદવ્યક્તમિત્યર્થઃ ।

૧૦ અગુરુવાચનોપગતમ્, ગુરુપ્રદત્તયા વાચનયા યન્ન પ્રાપ્તં તત્ ॥

॥ इति पष्ठं द्वास् ॥

અપરિપૂર્ણઘોષ-ઘોષોં સે અર્થાત્-ઉદાત્તાદિક સ્વરોં સે-જો અપરિપૂર્ણ હોતા હૈં વહાં અપરિપૂર્ણઘોષ નામ કા દોષ આતા હૈં । જો ડુંચે સ્વર સે ઘોલા જાય ઉસકા નામ ઉદાત્ત, નીચે સ્વર સે જો ઘોલા જાય ઉસકા નામ અનુદાત્ત, તથા જો ન અધિક ડુંચે સ્વર ઓર ન અધિક નીચે સ્વર સે કિન્તુ મધ્યમ સ્વર સે ઘોલા જાય ઉસકા નામ સ્વરિત હૈં । જૈસે—“ઉપ્પન્નેઈ વા, વિગમેઈ વા, ધ્રુવેઈ વા,” ઇત્યાદિ ડુંચે સ્વર સે ઘોલે જાતે હૈં । નીચે સ્વર સે જૈસે—“જે મિક્ષુ વા મિક્ષુણી વા ” ઇત્યાદિ સૂત્ર નીચે સ્વર સે ઘોલા જાતા હૈં । ઇસ કો દોષ ઇસલિયે માના હૈં કિ ઘોષોં સે અયુક્ત ઉચ્ચારણ કરને વાલે કો આગમ કી આશાતનાજન્ય દોષ કા ભાગી હોને સે પ્રાયશ્ચિત્ત કા ભાગી હોના પડતા હૈં ॥ ૮ ॥ અકળ્ઠૌષ્ઠવિપ્રમુક્ત-બાલમૂકાદિક કે બોલને કી તરહ જો ઉચ્ચારણ વ્યક્ત-સ્પષ્ટ નહીં હોતા હૈં વહ અકળ્ઠૌષ્ઠવિપ્રમુક્ત દોષ હૈં ॥ ૯ ॥ અગુરુવાચનોપગતદોષ-ગુરુપ્રદત્ત

(૭) અપરિપૂર્ણઘોષ—ઘોષોથી-અર્થાત્ ઉદાત્તાદિક સ્વરોથી-જે અપરિપૂર્ણ હોય છે, ત્યાં ‘અપરિપૂર્ણઘોષ’ નામનો દોષ લાગે છે, જે ઉંચા સ્વરથી બોલાય તેનું નામ ઉદાત્ત, નીચા સ્વરથી બોલાય એનું નામ અનુદાત્ત તથા જે ન તો ધણા ઉંચા સ્વરથી કે ન તો ધણા નીચા સ્વરથી પરંતુ મધ્યમ સ્વરથી બોલાય એનું નામ સ્વરિત છે. જેમ—“ઉપ્પન્નેઈ વા, વિગમેઈ વા, ધ્રુવેઈ વા,” ઇત્યાદિ ઉંચા સ્વરથી બોલાય છે. નીચા શબ્દથી જેમ—“જેમિક્ષુ વા મિક્ષુણી વા ” ઇત્યાદિ સૂત્ર નીચા સ્વરથી બોલાય છે. આનો દોષ એ માટે માનવામાં આવેલ છે કે, ઘોષોથી અયુક્ત ઉચ્ચારણ કરવાવાળાએ આગમની આશાતના જન્ય દોષના ભાગી બનવાથી પ્રાયશ્ચિત્તના ભાગી બનવું પડે છે. (૮) અકળ્ઠૌષ્ઠ વિપ્રમુક્ત—બાલ મૂકાદિકના બોલવાની રીતે જે ઉચ્ચારણ સ્પષ્ટ વ્યક્ત થતું નથી તે અકળ્ઠૌષ્ઠ વિપ્રમુક્ત દોષ છે. (૯) અગુરુ વાચનોપગત દોષ—અગુરુ પ્રદત્ત વાચ-

નિદ્રારૂપે પ્રમાદે, અપ્રતિલેખને દુષ્પ્રતિલેખનાદૌ ચ સકૃત્ સ્વલ્પિતસ્ય સ્મા-
રણા કર્તવ્યા ભવતિ । યથા—“ મો આયુષ્મન્ ! પ્રમાદો વર્જનીયઃ ” ઇતિ પૂર્વમેવા-
સ્માભિઃ કથિતમ્, અતઃ પ્રમાદં મા કુરુ તપઃસંયમં ચ સમારાધય, ઇત્યેષા સ્મારણા ।

અથ પ્રતિસ્મારણા—

પુનઃ પુનઃ સામાચાર્યો પ્રમાદં કુર્વન્ શિષ્યઃ પુનર્ગુરુણા વોધનીયઃ—“ વત્સ ! મા
પ્રમાદ્યતામ્, તપઃસંયમારાધનં ક્રિયતામ્ ” । ઇત્યેષા પ્રતિસ્મારણા ।

ઇત્યુક્તોઽપિ યદિ પ્રમાદ્યતિ, તદા દण्डना-લघुप्रायश्चित્તરૂપા કર્તવ્યા ।

પ્રતિલેખના નહીં કરે અથવા દુષ્પ્રતિલેખના આદિ કરતા હૈં ઉસ સમય
ઉસે સ્મારણા વાચના દેની ચાહિયે, ઇસમેં ઉસે યહ સમજ્ઞાના ચાહિયે
કિ હૈ આયુષ્મન્ ! તુમ્હેં યહ પહિલે થતલા દિયા ગયા હૈં કિ પ્રમાદ
વર્જનીય હૈં । ઇસલિયે ઇસ યાત કા ક્યાલ કરો, ઔર પ્રમાદ કા આસે-
ચન મત કરો. તથા તપ એવં સંયમ કી અચ્છી તરહ આરાધના કરો,
ઇસકા નામ સ્મારણા હૈં । પ્રતિસ્મારણા વાચના શિષ્ય કો ઉસ સમય દી
જાતી હૈં જવ શિષ્ય અપની સમાચારી મેં બાર ૨ પ્રમાદ કરતા હૈં । ઉસ
સમય ઉસે યહી સમજ્ઞાયા જાતા હૈં કિ હે વત્સ ! દેખો યહ પ્રમાદ
ઠીક નહીં હૈં, ઇસસે તપ એવં સંયમ કી આરાધના ઠીક ૨ નહીં હોતી હૈં ।
તુમ્હેં બાર બાર યહ સમજ્ઞા દિયા ગયા હૈં અતઃ ઇસકા પરિત્યાગ કર તપ
એવં સંયમ કી આરાધના કરો । ઇસી મેં આત્મા કી ભલાઈ હૈં, ઇસકા
નામ પ્રતિસ્મારણા હૈં । અથ દण्डना કહતે હૈં—ઇસ પ્રકાર ઉપદેશ, સ્મારણા,

ઉપદેશ છે. નિદ્રારૂપ પ્રમાદમાં પડેલ શિષ્ય જો પ્રતિલેખના ન કરે અથવા દુષ્પ્ર-
તિલેખના આદિ કરતો હોયતો એ સમયે એને સ્મારણા વાચના આપવી જોઈએ
એમાં એને એ સમજાવવું જોઈએ કે આયુષ્યમન્ ! તમને એ પહેલું ખતાવ-
વામાં આવેલ છે કે, પ્રમાદ છોડવા યોગ્ય છે, જેથી એ વાતનો ખ્યાલ કરે ને
પ્રમાદનો ખ્યાલ ન કરે, તથા તપ અને સંયમની સારી રીતે આરાધના કરે.
આનું નામ સ્મારણા છે. પ્રતિસ્મારણા વાચના શિષ્યને તે સમયે આપવામાં આવે
છે જ્યારે શિષ્ય ચોતાની સામાચારીમાં વારંવાર પ્રમાદ કરે છે. તે સમયે
તેને એવું સમજાવાય છે કે હે વત્સ જુઓ આ પ્રમાદ કરવો ઠીક નથી તેનાથી
તપ અને સંયમની આરાધના સારી રીતે થતી નથી તમને વખતો વખત એ
સમજાવવામાં આવેલ છે, માટે તેનો પરિત્યાગ કરી સંયમ અને તપની આરા-
ધના કરો. તેમાં આત્માની ભલાઈ છે, તેવું નામ પ્રતિ સ્મારણા છે. હવે
દંડના કહે છે—આ પ્રકારનો ઉપદેશ સ્મારણા, પ્રતિસ્મારણા રૂપ ત્રણ પ્રકાર

છાયા—ઉપવિશતિ ઉપાધ્યાયઃ, શિષ્યા પિતરન્તિ વન્દનં તસ્મૈ ।

સ તેમ્યઃ સર્વસમયં, વાચયતિ સામાયિકપ્રમુલ્લમ્ ॥ ૧ ॥

વાચના—ત્રિવિધા ભવતિ—ઉપદેશઃ, સ્મારણા, પ્રતિસ્મારણા ચ । યે સ્વલુ ગૃહીત-
સામાચારીકાઃ શિષ્યાસ્તેમ્ય સૂત્રાર્થવાચના દાતવ્યા । તેપાં સામાચારીકરણે પ્રમાદં
કુર્વતાં ક્રમેણ ઉપદેશઃ, સ્મારણા, પ્રતિસ્મારણા ચ કરણીયા । તત્ર ગુરુસ્તાન્ પ્રતિ
વદતિ—“ મુનીનામેષા સામાચારી યન્નિદ્રાવિકથાદયઃ પ્રમાદાઃ પરિહર્તવ્યાઃ ”
એવ ઉપદેશઃ ।

“ ઉવચિસહ ઉવજ્ઞાઓ, સીસા વિપરંતિ વંદણં તસ્સ ।

સો તેસિ સંવસમયં, વાયહ સામાહ્યપ્પમુહં ॥ વાચના દેને વાલા
ઉપાધ્યાય અપને આસન પર ચિરાજમાન જવ હો જાય તવ વાચના લેને
વાલા શિષ્ય સર્વપ્રથમ ઉન્હેં વંદના કરે । ફિર થાદ મેં ઉનસે સામાયિક
આદિ સર્વ સૂત્રોં કી વાચના લેવે । ઉપદેશ ૧, સ્મરણા ૨ એવં પ્રતિ-
સ્મારણા ૩ કે ભેદ સે વાચના ૩ પ્રકાર કી હૈ । જિન શિષ્યોં ને સામા-
ચારી કો ગ્રહણ કર લિયા હૈ ઉન શિષ્યોં કો સૂત્રાર્થ કી વાચના દેના
ચાહિયે । વે યદિ સામાચારી કે આચરણ કરને મેં પ્રમાદ કરેં તો ગુરુ
કા કર્તવ્ય હૈ કિ વે ઉન્હેં ક્રમ સે ઉપદેશ, સ્મારણા એવં પ્રતિસ્મારણા
રૂપ વાચના દે । ઉસમેં વે ઉસે યહ સમજાવેં કિ દેલ્લો યહી મુનિયોં કી
સામાચારી-આચાર હૈ કિ વે સર્વપ્રથમ નિદ્રા વિકથા આદિ પ્રમાદોં કો
દૂર કરેં । યહ ઉપદેશ હૈ । નિદ્રારૂપ પ્રમાદ મેં પડા હુઆ શિષ્ય યદિ

વાચના દેવાની અને તેને ગ્રહણ કરવાની વિધિ આ પ્રકારે છે—

ઉવચિસહ ઉવજ્ઞાઓ, સીસા વિપરંતિ વંદણં તસ્સ ।

સો તેસિ સંવસમયં વાયહ સામાહ્યપ્પમુહં ॥

વાચના આપવાવાળા ઉપાધ્યાય ન્યારે પોતાના આસન ઉપર બિરાજમાન
શ્ર્દ જાય ત્યારે વાચના દેવાવાળા શિષ્ય સર્વ પ્રથમ એમને વંદના કરે અને
પછી તેમની પાસેથી સામાયિક આદિ સર્વ સૂત્રોની વાચના લે. ઉપદેશ,
સ્મારણા અને પ્રતિ સ્મારણા ના ત્રણે ભેદથી વાચના ત્રણ પ્રકારની છે. જે
શિષ્યોએ સમાચારીને ગ્રહણ કરી લીધેલ હોય તે શિષ્યોને સૂત્રાર્થની વાચના
દેવી જોઈએ. તે કદી સામાચારીનું આચરણ કરવામાં પ્રમાદ કરે તો ગુરુ
કર્તવ્ય છે કે તે એને ક્રમથી ઉપદેશ, સ્મારણા, અને પ્રતિ સ્મારણા રૂપ વાચના
આપે. એમાં તેઓ શિષ્યને એ સમજાવે કે, જુઓ આજ મુનિયોની સમા-
ચારી આચાર છે કે જે સર્વ પ્રથમ નિદ્રા, વિકથા આદિ પ્રમાદોને દૂર કરે આ

નિદ્રારૂપે પ્રમાદે, અપ્રતિલેખને દુષ્પ્રતિલેખનાદૌ ચ સકૃત્ સ્વલ્લિતસ્ય સ્મા-
રણા કર્તવ્યા ભવતિ । યથા—“ ભો આયુષ્મન્ ! પ્રમાદો વર્જનીયઃ ” ઇતિ પૂર્વમેવા-
સ્માભિઃ કથિતમ્, અતઃ પ્રમાદં મા કુરુ તપઃસંયમં ચ સમારાધય, ઇત્યેષા સ્મારણા ।

અથ પ્રતિસ્મારણા—

પુનઃ પુનઃ સામાચાર્યો પ્રમાદં કુર્વન્ શિષ્યઃ પુનર્ગુરુણા વોધનીયઃ—“ વત્સ ! મા
પ્રમાદ્યતામ્, તપઃસંયમારાધનં ક્રિયતામ્ ” । ઇત્યેષા પ્રતિસ્મારણા ।

ઇત્યુક્તોઽપિ યદિ પ્રમાદ્યતિ, તદા દળ્ડના—લઘુપ્રાયથિત્તરૂપા કર્તવ્યા ।

પ્રતિલેખના નહીં કરે અથવા દુષ્પ્રતિલેખના આદિ કરતા હૈં ઉસ સમય
ઉસે સ્મારણા વાચના દેની ચાહિયે, ઇસમેં ઉસે યહ સમજ્ઞાના ચાહિયે
કિ હૈં આયુષ્મન્ ! તુમ્હેં યહ પહિલે વતલા દિયા ગયા હૈં કિ પ્રમાદ
વર્જનીય હૈં । ઇસલિયે ઇસ વાત કા ક્યાલ કરો, ઓર પ્રમાદ કા આસે-
વન મત કરો. તથા તપ એવં સંયમ કી અચ્છી તરહ આરાધના કરો,
ઇસકા નામ સ્મારણા હૈં । પ્રતિસ્મારણા વાચના શિષ્ય કો ઉસ સમય દી
જાતી હૈં જય શિષ્ય અપની સમાચારી મેં વાર ૨ પ્રમાદ કરતા હૈં । ઉસ
સમય ઉસે યહી સમજ્ઞાયા જાતા હૈં કિ હૈં વત્સ ! દેખો યહ પ્રમાદ
ઠીક નહીં હૈં, ઇસસે તપ એવં સંયમ કી આરાધના ઠીક ૨ નહીં હોતી હૈં ।
તુમ્હેં વાર વાર યહ સમજ્ઞા દિયા ગયા હૈં અતઃ ઇસકા પરિત્યાગ કર તપ
એવં સંયમ કી આરાધના કરો । ઇસી મેં આત્મા કી ભલાઈ હૈં, ઇસકા
નામ પ્રતિસ્મારણા હૈં । અવ દળ્ડના કહતે હૈં—ઇસ પ્રકાર ઉપદેશ, સ્મારણા,

ઉપદેશ છે. નિદ્રારૂપ પ્રમાદમાં પડેલ શિષ્ય જો પ્રતિલેખના ન કરે અથવા દુષ્પ્ર-
તિલેખના આદિ કરતો હોયતો એ સમયે એને સ્મારણા વાચના આપવી જોઈએ
એમાં એને એ સમજાવવું જોઈએ કે આયુષ્યમન્ ! તમને એ પહેલું બતાવ-
વામાં આવેલ છે કે, પ્રમાદ છોડવા યોગ્ય છે, જેથી એ વાતનો ખ્યાલ કરે ને
પ્રમાદનો ખ્યાલ ન કરે, તથા તપ અને સંયમની સારી રીતે આરાધના કરે.
આત્મું નામ સ્મારણા છે. પ્રતિસ્મારણા વાચના શિષ્યને તે સમયે આપવામાં આવે
છે જ્યારે શિષ્ય પોતાની સામાચારીમાં વારંવાર પ્રમાદ કરે છે. તે સમયે
તેને એવું સમજાવાય છે કે હે વત્સ જીએ આ પ્રમાદ કરવો ઠીક નથી તેનાથી
તપ અને સંયમની આરાધના સારી રીતે થતી નથી તમને વખતો વખત એ
સમજાવવામાં આવેલ છે, માટે તેનો પરિત્યાગ કરી સંયમ અને તપની આરા-
ધના કરો. તેમાં આત્માની ભલાઈ છે, તેનું નામ પ્રતિ સ્મારણા છે. હવે
દંડના કહે છે—આ પ્રકારનો ઉપદેશ સ્મારણા, પ્રતિસ્મારણા રૂપ ત્રણ પ્રકાર

તતોઽપિ યદિ પ્રમાદ્યતિ તર્હિ માસલઘુપ્રાયશ્ચિત્તરૂપા દણ્ડના કર્તવ્યા ।
 इत्थं दण्डितोऽपि यदि प्रमादान्न विरमते तदा कुकुमदृष्टान्तो वक्तव्यः । यथा—अतीव
 પિષ્ટં કુકુમં ‘કેસર’ ઇતિ માપાપ્રસિદ્ધં પાપાણમિવ કઠોરં ન ભવતિ, ભવાન્
 મહતા પ્રયાસેન પ્રતિનોદ્યમાનઃ કથં પ્રમત્તઃ સંવૃત્તઃ । અત્ર માસલઘુ દીપતે ।

વારત્રયાદર્ધ્યં યદિ પ્રમાદતો ન નિર્વર્તતે તદા નિષ્કાસના કર્તવ્યા । અથાસૌ
 स्वयं परेण वा प्रज्ञापितः सन् पुनरागत्य प्रमादात् प्रतिनिवृत्तो वदति—भगवन् । क्षमस्व
 મદીયમપરાધનિકુરમ્ભમ્, ન પુનરેવં કરિષ્યામીતિ । તદા ગુરુરેવં વદેત્—યથા
 પ્રતિસ્મારણારૂપ ત્રીન પ્રકાર કી વાચના કે દેને પર મી યદિ શિષ્ય
 પ્રમાદપતિત હોતા હૈ, તો ઉસે એક માસ કા લઘુપ્રાયશ્ચિત્ત દેના ચાહિયે ।
 उस समय उससे यह कहना चाहिये कि देखो केशर जब बार २ रगड़
 કર પીસી જાતી હૈ તો વહ મી પાપાણ જૈસી કઠોર નહીં રહતી હૈ કિન્તુ
 હકદમ નરમ પડ જાતી હૈ પરન્તુ વહે આશ્ચર્ય કી વાત હૈ કિ તુમ્હેં વાર ૨
 સમજાયા જાતા હૈ ફિર મી તુમ પ્રમાદ કો નહીં છોડતે હો । વ્યા વાત
 હૈ પતા નહીં પડતા કિ તુમ પ્રમાદી ક્યોં વન રહે હો ॥

આચાર્ય તથા અન્ય મુનિ દ્વારા ત્રીન વાર સમજાને પર મી યદિ
 શિષ્ય પ્રમાદ સે પીછે નહીં હટતા હૈ, ઉસ સમય ઉસે સંઘ સે બાહર
 કરને રૂપ દણ્ડ દેના ચાહિયે । ઉસ સમય યદિ દૂસરોં કે દ્વારા સમજાવે
 જાને પર અથવા અપની ગલ્તી અપને આપ સ્વીકાર કરને પર યહ એસા
 ગુરુ મહારાજ કે સમક્ષ કહે કિ હૈ ગુરુ મહારાજ ! મેરે અમીતક કે
 સમસ્ત અપરાધ આપ ક્ષમા કરે, અવ આગે એસા નહીં કરને કા માધ

રની વાચના દેવા છતાં પણ જો શિષ્ય પ્રમાદ વશ બને, તો તેને એક માસનું
 લઘુ પ્રાયશ્ચિત દેવું જોઈએ. તે સમય તેને એવું કહેવું જોઈએ કે, કેશર
 ને વારંવાર ઘુંટાઈ ઘુટાઈને પીસવામાં આવે છે, તો પણ પત્થરની
 માફક કઠોર નહિ બનતાં વધુ ને વધુ નરમ બને છે. ઘણા જ આશ્ચર્યની
 વાત છે કે, તમને વારંવાર સમજાવવા છતાં પણ તમે પ્રમાદને છોડતા નથી.
 ક્યું કારણ છે તે સમજાતું નથી કે તમે તમારો પ્રમાદ છોડતા નથી. આચાર્ય
 તથા અન્ય મુનિદ્વારા ત્રણવાર સમજાવ્યા છતાં પણ જો શિષ્ય પ્રમાદથી પાછો
 ન હટે તો તેને તે સમયે સંઘની બહાર કરવારૂપ દંડ દેવું જોઈએ. તે સમય
 કદાચ બીજાઓ દ્વારા સમજાવવાથી અથવા પોતાની જૂલ પોતે જ સ્વીકારીને તે
 ગુરુ મહારાજ સમક્ષ એવું કહે કે, હૈ ગુરુ મહારાજ ! મારા આજ સુધીના
 બધા અપરાધ આપ માફ કરો, હવે આગળ હું આવું નહિં કરું. તે સમયે

તામ્બૂલપત્રં કુથિતં ન પરિત્યજ્યતે चेत्, तर्हि शेषाण्यपि पत्राणि तत् कोथयति । एवं त्वमपि स्वयं विनष्टो मम अन्यानपि साधून् विनाशयिष्यसीति कृत्वा निष्कासितोऽस्माभिः । संप्रति पुनरप्रमत्तेन भवितव्यम्, मासगुरु च ते प्रायश्चित्तम् ।

अत्र राजदष्टान्तो वर्णनीयः ।

कस्यचिद् राज्ञोऽक्षिरोगः संजातः । तत्रत्यवैद्यास्तच्चिकित्सां कर्तुमशक्ता अभूवन् । अन्यश्च कश्चिदागन्तुको वैद्यस्तत्रागत्याह—ममाक्षिगुटिकास्तु अक्षिरोगप्रश-
मन्यः । ताभिरञ्जितेषु अक्षिषु तीव्रतरा दुःसहा वेदना भवति । सा तु मुहूर्तमात्रम् ।

है, उस समय गुरु महाराज उससे ऐसा कहें कि देखो, पान सड़ जाने पर यदि बाहर निकाल कर न फेंक दिया जाय तो वह जैसे अन्य पानों को सड़ा कर बिगाड़ देता है, उसी प्रकार तुम भी स्वयं विनष्ट होकर मेरे संघ के अन्य साधुओं को विनष्ट कर दोगे इस ख्याल से हम तुम्हें संघ से बाहर कर रहे हैं । यदि आगे ऐसा नहीं करोगे तो संघ में रख लिये जाते हैं । इसलिये जाओ १ मास का यह तुम्हें गुरु प्रायश्चित्त दिया जाता है । इस विषय में एक राजा का दृष्टान्त इस प्रकार है—

किसी एक राजा को आंखों में रोग हो गया । नगर भर में जितने वैद्य थे उन सब ने खूब यत्नपूर्वक इलाज किया, परंतु उनके इलाज से राजा की आंखों का रोग शमित नहीं हुआ । एक समय वहां बाहर गांव का एक वैद्य आया । उसने नरेश के पास जाकर कहा कि महाराज ! हमारे पास ऐसी गोलियां हैं जो आंखों में आंजने पर विलकुल रोग को नष्ट कर देती हैं । परन्तु उनके आंजने पर १ मुहूर्त तक बड़ी दुःसह

शुरुभઢારાજ તેને એવું કહે કે બુઝો પાન સડી જવાથી બહાર કાઢી ફેંકી દેવામાં ન આવે તો તે જેમ બીજા પાનને સડાવી બગાડી દે છે. તે જ રીતે તમે પણ સ્વયં વિનિષ્ટ બની મારા સંઘના બીજા સાધુઓને પણ વિનિષ્ટ બનાવી દેશો. આ ખ્યાલથી તમને સંઘથી બહાર કરવામાં આવે છે. કદાચ આગળ એવું નહીં કરે તો સંઘમાં રાખવામાં આવશે. આ માટે તમને એક મહિનાનું શુદ્ધ પ્રાયશ્ચિત્ત આપવામાં આવે છે.

આ વિષયમાં એક રાજાનો દાખલો આ પ્રકારે છે.—

કેઈ એક રાજાની આંખમાં રોગ થયો, શહેરમાં જેટલા વૈદ્ય હતા તે સઘળાથી ખૂબ પ્રયત્ન પુર્વક ઈલાજ કરવામાં આવ્યો. પરંતુ તેઓના ઈલાજથી રાજાની આંખોનો રોગ મટ્યો નહીં. એક સમયે ત્યાં બહાર ગામનો એક વૈદ્ય આવ્યો તેણે રાજાની પાસે પહોંચી કહ્યું કે, મહારાજ ! મારી પાસે એવી ગોળીઓ છે, જે આંખોમાં આંજવાથી રોગને બીલકુલ મટાડે છે પરંતુ તેને આંજવાથી

યદિ વેદનાયાં સત્યાં માં પ્રાણદણ્ડં કર્તુ કર્મચારિભ્ય આજ્ઞાં ન દદાસિ, તર્હિ ત્વા-
ક્ષિણી અજ્ઞયામિ । રાજ્ઞા કથિતમ્—નાહં તવ પ્રાણદણ્ડં કર્તુમાજ્ઞાપયિષ્યામિ । તદા
રાજ્ઞોઽક્ષ્ણોરજ્ઞનં વૈથઃ કૃતવાન્ । અજ્ઞિતયોરક્ષ્ણોસ્તીવ્રતરા વેદના જાતા । તદા
રાજ્ઞા નિગદિતમ્—‘અનેનાક્ષિણી મમ પીડિતે, અત એનં મારય ’ इत्याज्ञां स्वकर्म-
चारिणः प्रति दत्तवान् । तैः कर्मचारिभिस्तस्य राज्ञो हितकरं विज्ञाय वैथः प्रच्छन्नः
स्थापितः । शुहूर्तान्तरेण राज्ञो वेदना उपशान्ताः, अक्षिणी रोगरहिते दिव्ये दिव्य-
ज्योतिष्मती संजाते । तदा राज्ञा वैथः स्मृतः । राजकर्मचारिभिरानीय समर्पितो
वैथः सत्कारितः संमानितश्च । यथा तस्य राजस्तत्कालदुःसहमपि गुटिकाज्जनं क्रमेण
चक्षुषो नैरुज्यकरणात् परिणामसुन्दरं समजनि, एवं भवतामपि स्मरणादिकं खर-

પીડા होती है । यदि आप वेदना होने पर अपने कर्मचारियों को मुझे
प्राणदण्ड देने की आज्ञा न करे तो मैं आपकी आंखों में उन गोलियों
को आंज सकता हूं । राजाने वैथ की बात सुन कर उसे अभय करने
का वचन दे दिया । वैथ ने भी गोलियों को घिस कर राजा की आंखों
में आंज दिया । आंजते ही राजा की आंखों में तीव्रतर दुःसह वेदना
होने लगी । उस वेदना से पीड़ित होकर राजा ने उसे मारने की
आज्ञा दे दी । कर्मचारियों ने उसे राजा का हितकारी मान कर एक
जगह छिपा दिया और मारा नहीं । कुछ समय के बाद वेदना शांत हो
गई और आंखें रोग रहित हो गईं । राजा ने प्रसन्न होकर उस वैथ
को याद किया तब कर्मचारियों ने उस वैथ को लाकर हाजर किया ।
राजा ने उसको खूब आदर सत्कार करके विसर्जित किया । मतलब
इस दृष्टान्त का यह है कि जिस प्रकार उस राजा के लिये दुःसह भी

એક ઘડી સુધી ઘણી જ અસહ્ય વેદના થાય છે. વેદના થવાથી આપ આપના
કર્મચારીઓ દ્વારા મને પ્રાણદંડ દેવાની આજ્ઞા ન કરે તો હું આપની આંખોમાં
એ ગોળીઓ આંજવા ઇચ્છું છું. રાજાએ વેદની વાત સાંભળીને તેને અભય
કરવાનું વચન આપ્યું. વૈથે પણ ગોળીઓને ઘસીને રાજાની આંખમાં આંજ
દીધી આંખમાં જ રાજાની આંખોમાં તીવ્રતર દુઃસહ વેદના થવા લાગી, આ
વેદનાથી વ્યાકુળ બની રાજાએ તેને મારવાની આજ્ઞા આપી. કર્મચારીઓએ
તેને રાજાને હિતકારી માની એક જગ્યાએ છુપાવી દીધો અને માયે નહીં.
થોડા સમય પછી વેદના શાન્ત થઇ અને આંખો રોગ રહિત બની. રાજાએ
પ્રસન્ન થઇને તે વૈથને યાદ કર્યો ત્યારે કર્મચારીઓએ તે વૈથને લાવીને હાજર
કર્યો. રાજાએ તેના ખૂબ આદરસત્કાર કરીને વિદાય આપી. આ દૃષ્ટાંતનો સાર એ
છેકે, રાજા માટે દુઃસહ એવી આંખોની પીડાનું ગુટિકાના અંજનથી શમન થયું.

પરુષત્વાત્ યદ્યપ્યાપાતમાત્રદુઃસ્વજનકં તથાપિ પરિણામસુન્દરમેવ દ્રષ્ટવ્યમ્, इह परत्र च सकलकल्याणपरंपराकारणत्वादिति ।

॥ इति सप्तमं वाचनाद्वारम् ॥

સૂત્રાર્યોઃ પૌર્વાપર્યનિરૂપણનામક્રમદ્વારમ્—

અથ પૂર્વે સૂત્રમ્ અર્થો વા ? इति निरूप्यते—उत्पादव्ययध्रौव्यलक्षणोऽर्थस्तीर्थ-
करैः पूर्वमुक्तः, पश्चात् तमेवार्थं हृदये निधाय गणधराः सूत्रं रचयन्ति, तस्मादर्थतः
पश्चाद्भावि सूत्रम्, इति सिद्धान्तः । अत एव सूत्रम् अणु-लघु भवति, अर्थस्तु महान्,
गुटिकांजन आंखो की पीड़ा का शमक हुआ-पीड़ाजनक होने पर भी
परिणाम में हितविधायक हुआ, उसी प्रकार शिष्यों को भी गुरु
महाराज द्वारा प्रदत्त स्मारणादिक तीव्र कठोर होने पर भी आयति-
(उत्तरकाल) सुख कारक होने से एकान्त हितविधायक ही होते हैं ।
क्यों कि इनसे इस लोक में तथा परलोक में आत्मा का हित ही होता
है अहित नहीं ।

॥ सातवाँ द्वार समाप्त हुआ ॥ ७ ॥

અવ આઠવાં દ્વાર કહતે હૈં—

સૂત્ર એવં અર્થ કે પૌર્વાપર્ય દ્વાર કા નિરૂપણ કરતે હૈં—

અવ યહાં યહ વતલાયા જાતા હૈ કિ પહિલે સૂત્ર હોતા હૈ કિ અર્થ
હોતા હૈ । ઉત્પાદ, વ્યય, એવં ધ્રૌવ્ય હસ લક્ષણ સે યુક્ત અર્થ-પદાર્થ
હોતા હૈ । અર્થ કા યહ લક્ષણ તીર્થકર પ્રભુને કહા હૈ । હસી અર્થ
કો હૃદય મેં અવધૂત કર ગણધર દેવોં ને સૂત્રોં કી રચના કી હૈ । હસ-

પીડા આપનાર હોવા છતાં પણ પરિણામમાં હિતકારક પરિણામ આનું.
આ પ્રકાર શિષ્યોએ પણ ગુરુમહારાજ દ્વારા પ્રદત્ત સ્મારણાદિક તીવ્ર-કઠોર હોવા
છતાં પણ અતે શુભ કરનાર સુખકારક હોવાથી એકાન્ત હિતવિધાયક જ હોય
છે કેમકે એનાથી આલોક તથા પરલોકમાં આત્માનું હિત થાય છે, અહિત નહીં

॥ सातमुं द्वार समाप्तं ययुं ॥७॥

હવે આઠમું દ્વાર કહેવામાં આવે છે—

સૂત્ર તથા અર્થના પૌર્વાપર્યદ્વારનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે.—

હવે અહિં એ બતાવવામાં આવે છે કે, પહેલાં સૂત્ર હોય છે કે અર્થ
હોય છે. ઉત્પાદ, વ્યય, અને ધ્રૌવ્ય આ લક્ષણથી યુક્ત અર્થ પદાર્થ બને છે.
અર્થનું એ લક્ષણ તીર્થકર પ્રભુએ કહેલ છે તે અર્થને હૃદયમાં ધારણ કરીને
ગણધર દેવોએ સૂત્રની રચના કરી છે, માટે અર્થની પાછળ સૂત્ર છે, એ સિદ્ધાંત

યદિ વેદનાયાં સત્યાં માં પ્રાણદણ્ડં કર્તુ કર્મચારિભ્ય આજ્ઞાં ન દદાસિ, તર્હિ ત્વા-
ક્ષિણી અજ્ઞયામિ । રાજ્ઞા કથિતમ્-નાહં તવ પ્રાણદણ્ડં કર્તુમાજ્ઞાપયિષ્યામિ । તદા
રાજ્ઞોઽક્ષ્ણોરજ્ઞનં વૈદ્યઃ કૃતવાન્ । અજ્ઞિતયોરક્ષ્ણોસ્તીવ્રતરા વેદના જાતા । તદા
રાજ્ઞા નિગદિતમ્-‘અનેનાક્ષિણી મમ પીઢિતે, અત એનં મારય ’ ઇત્યાજ્ઞાં સ્વકર્મ-
ચારિણઃ પ્રતિ દત્તવાન્ । તૈઃ કર્મચારિભિસ્તસ્ય રાજ્ઞો હિતકરં વિજ્ઞાય વૈદ્યઃ પ્રચ્છન્નઃ
સ્થાપિતઃ । મુહૂર્તાન્તરેણ રાજ્ઞો વેદના ઉપશાન્તાઃ, અક્ષિણી રોગરહિતે દિવ્યે દિવ્ય-
જ્યોતિષ્મતી સંજાતે । તદા રાજ્ઞા વૈદ્યઃ સ્મૃતઃ । રાજકર્મચારિભિરાનીય સમર્પિતો
વૈદ્યઃ સત્કારિતઃ સંમાનિતશ્ચ । યથા તસ્ય રાજસ્તત્કાલદુઃસહમપિ ગુટિકાજનં ક્રમેણ
ચક્ષુષો નૈરુજ્યકરણાત્ પરિણામસુન્દરં સમજનિ, एवं भवतामपि स्मारणादिकं खर-

પીઢા હોતી હૈ । યદિ આપ વેદના હોને પર અપને કર્મચારિયોં કો મુશ્કે
પ્રાણદણ્ડ દેને કી આજ્ઞા ન કરે તો મૈ આપકી આંખોં મેં उन गोलिएँ
કો આંજ સકતા હું । રાજાને વૈદ્ય કી ચાત સુન કર ઉસે અભય કરને
કા વચન દે દિયા । વૈદ્ય ને બી ગોલિયોં કો ઘિસ કર રાજા કી આંખોં
મેં આંજ દિયા । આંજતે હી રાજા કી આંખોં મેં તીવ્રતર દુઃસહ વેદના
હોને લગી । ઉસ વેદના સે પીઢિત હોકર રાજા ને ઉસે મારને કી
આજ્ઞા દે દી । કર્મ ચારિયોં ને ઉસે રાજા કા હિતકારી માન કર ઇક
જગહ છિપા દિયા ઓર મારા નહોં । કુછ સમય કે વાદ વેદના શાંત હો
ગઈ ઓર આંખે રોગ રહિત હો ગઈ । રાજા ને પ્રસન્ન હોકર ઉસ વૈદ્ય
કો યાદ કિયા તવ કર્મચારિયોં ને ઉસ વૈદ્ય કો લાકર હાજર કિયા ।
રાજા ને ઉસકો સૂચ આદર સત્કાર કરકે વિસર્જિત કિયા । મતલબ
इस दृष्टान्त का यह है कि जिस प्रकार उस राजा के लिये दुःसह भी

એક ઘડી સુધી ઘણી જ અસહ્ય વેદના થાય છે, વેદના થવાથી આપ આપના
કર્મચારીઓ દ્વારા મને પ્રાણદંડ દેવાની આજ્ઞા ન કરો તો હું આપની આંખોમાં
એ ગોળીઓ આંજવા ઇચ્છું છું. રાજાએ વેદની વાત સાંભળીને તેને અભય
કરવાનું વચન આપ્યું. વૈદ્યે પણ ગોળીઓને ઘસીને રાજાની આંખમાં આંજ
દીધી આંજતાં જ રાજાની આંખોમાં તીવ્રતર દુઃસહ વેદના થવા લાગી, આ
વેદનાથી વ્યાકુળ બની રાજાએ તેને મારવાની આજ્ઞા આપી. કર્મચારીઓએ
તેને રાજાને હિતકારી માની એક જગ્યાએ છુપાવી દીધા અને માથે નહીં.
થોડા સમય પછી વેદના શાંત થઇ અને આંખો રોગ રહિત બની. રાજાએ
પ્રસન્ન થઇને તે વૈદ્યને યાદ કર્યો ત્યારે કર્મચારીઓએ તે વૈદ્યને લાવીને હાજર
કર્યો. રાજાએ તેના ખૂબ આદરસત્કાર કરીને વિદાય આપી. આ દૃષ્ટાંતનો સાર એ
છેકે, રાજા માટે દુઃસહ એવી આંખોની પીડાનું ગુટિકાના અંજનથી શમન થયું.

તત્ર માન્તિ સ્મ । एवं पेटिकास्थानीये सूत्रे बहून्यर्थपदानि वर्तन्ते, तत्र सूत्रमेव वादरं भवितुमर्हति नार्थ इति । किंचार्थस्य महत्त्वमेकान्ततो नास्ति, प्रथमे उत्क्षिप्तज्ञाते हि 'अनुकम्पा कर्तव्या' इत्यर्थो बहुभिः सूत्रैर्वर्णितः । तथा-अष्टादशे सुंस्तुमा-दारिकाज्ञाते वर्णरूपबलादितृद्वयर्थं नाहारयितव्यम्, इत्यर्थो बहुभिः सूत्रैर्वर्णितः, तस्मादर्थो न महान् किन्तु सूत्रमेव महदिति चेत्—?

अत्रोच्यते—पूर्वं सूत्रं पञ्चादर्थः, इति न संभवति । अर्थस्य हि सूत्रतः पञ्चा-
द्भावित्वं न युज्यते, अर्थं विना सूत्रं निधारयितुं सत् कीदृशं स्यात् ? असंबद्ध
में अनेक वस्त्र रख दिये जाते हैं एतावता पेटी में ही वादरता आती है
वस्त्रों में नहीं । क्यों कि उसके आधार से ही बहुत वस्त्र उसमें समा
जाते हैं । इसी तरह पेटी के स्थानीय सूत्र में भी बहुत से अर्थपद रहा
करते हैं इसलिये सूत्र को ही वादर होने का प्रसंग प्राप्त होता है अर्थ
को नहीं । तथा-अर्थ में महत्ता भी एकान्त से स्थापित नहीं होती है ।
“ प्रथमे उत्क्षिप्तज्ञाते ” ज्ञातासूत्र के प्रथम उत्क्षिप्तज्ञात नामक अध्ययन
में भगवान ने फरमाया है कि अनुकम्पा करनी चाहिये इस प्रकार का
अर्थ बहुत सूत्र से वर्णित किया है । तथा “ अष्टादशे सुंस्तुमादारिका-
ज्ञाते ” अर्थात् इसी ज्ञाता सूत्र के अठारवें सुंस्तुमादारिकानामक
अध्ययन में वर्ण, रूप, बल आदि की वृद्धि निमित्त मुनियों को आहार
नहीं करना चाहिये यह अर्थ बहुत सूत्रों से वर्णित किया है । इसलिये
अर्थ महान् नहीं है किन्तु सूत्र ही महान् है यही बात ज्ञात होती है ।

उत्तर-પહિલે સૂત્ર હોતા હૈ પઞ્ચાત્ અર્થ યહ કથન યુક્તિયુક્ત નહીં હૈ,

આવે છે, વસ્ત્રોમાં નહીં, કેમ કે પેટીના આધારથી જ ઘણાં વસ્ત્રો તેમાં સમાઈ
શકે, એવી રીતે સ્થાનીય સૂત્રમાં પણ ઘણા અર્થ પદ રહ્યા કરે છે માટે જ
સૂત્રને બાદર હોવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થાય છે, અર્થને નહીં. તેમ અર્થમાં મહત્તા
પણ એકાન્તથી સ્થાપિત થતી નથી, જ્ઞાતા સૂત્રના પ્રથમ ઉત્ક્ષિપ્તજ્ઞાત નામના
અધ્યયનમાં ભગવાને ફરમાવ્યું છે કે, અનુકમ્પા કરવી જોઈએ. આ પ્રકારનો અર્થ
ઘણા સૂત્રોથી વર્ણવવામાં આવેલ છે તથા “ અષ્ટાદશે સુંસમાદારિકા જ્ઞાતે ” અર્થાત્
આ જ્ઞાતા સૂત્રના અઠારમા “ સુંસમાદારિકા ” નામના અધ્યયનમાં વર્ણ, રૂપ, બળ
વગેરેની વૃદ્ધિ નિમિત્તે મુનિઓએ આહાર ન કરવો જોઈએ આ અર્થ ઘણા સૂત્રોમાં
વર્ણવવામાં આવેલ છે. આ માટે અર્થ મહાન નથી પણ સૂત્ર જ મહાન છે આ
વાત જ્ઞાત થાય છે.

ઉત્તર-પહેલાં સૂત્ર હોય છે પછી અર્થ આ કહેવું યુક્તિ યુક્ત નથી, કારણ

एकैकस्य सूत्रस्यार्थोऽनन्तः । स्तोकत्वात् पश्चादभिहितत्वाच्च सूत्रम् 'अणु' इत्युच्यते, तेन चाणुना सूत्रेण सार्थस्य यः सम्बन्धो योगः स चाणुयोगः इत्युच्यते ।

નનુ પૂર્વમર્થઃ પશ્ચાત્ સૂત્રમિતિ કથનમયુક્તમ્, પૂર્વં હિ સૂત્રં પશ્ચાદર્થઃ, સૂત્રાભાવે તુ અર્થઃ કસ્ય સ્યાત્ । લૌકિકા અપ્યેવમેવ વદન્તિ-આધારે સત્યેવાધેયં તિષ્ઠતીતિ ।

યચ્ચ સૂત્રમણુ, અર્થસ્તુ વિસ્તૃત ઇતિ, તદપ્યયુક્તમ્ ? એકસ્યાં હિ પેટિકાયાં વહ્નિ વસ્ત્રાણિ સન્તિ, તત્ર પેટિકાયા એવ વાદસ્ત્વં યુજ્યતે, તદ્વશાદ્ વહ્નિ વસ્ત્રાણિ

લિયે અર્થ કે પશ્ચાદ્ સૂત્ર હૈ यह सिद्धान्त निर्धारित हो जाता है । सूत्र अणु-लघु होता है । तथा-अर्थ सूत्र की अपेक्षा महान् होता है । एक २ सूत्र के अनन्त अर्थ होते हैं । सूत्र को अणु इसी अभिप्राय से कहा गया है कि एक तो वह अर्थ के पश्चाद् भावी है और दूसरे वह स्तोक अर्थात् छोटा होता है । उस अणु सूत्र के साथ अर्थ का जो योग है-संबंध है उसी का नाम अनुयोग है ।

પ્રશ્ન-પહિલે અર્થ હોતા હૈ વાદ મેં ઉસકે સૂત્ર હોતા હૈ यह कथन अयुक्त है । कारण कि सूत्र के बिना अर्थ नहीं हो सकता है । इसलिये ऐसा मानना चाहिये कि पहिले सूत्र होता है और बाद में अर्थ होता है । लौकिक जन भी यही कहते हुए पाये जाते हैं । सूत्र आधार है और अर्थ आधेय है । सूत्र में अर्थ रहता है अर्थ में सूत्र नहीं । आधार के होने पर ही आधेय रह सकता है अन्यथा नहीं । दूसरे-अर्थ की अपेक्षा जो सूत्र को अणु कहा गया है वह भी ठीक नहीं मालूम पड़ता । कारण कि देखा जाता है कि एक ही सन्दूक

નિર્ધારિત બની જાય છે. સૂત્ર આણું-લઘુ હોય છે. તથા અર્થ સૂત્રની અપેક્ષાથી મહાન હોય છે, એક એક સૂત્રના અનન્ત અર્થ થાય છે. સૂત્રને આણું એ અભિ-પ્રાયથી કહેવામાં આવેલ છે કે, એક તો તે અર્થના પશ્ચાદ્ભાવિ છે, (પાછળ થનાર) અને બીજું તે લઘુ હોય છે, એ આણું સૂત્રની સાથે અર્થનો જે યોગ છે-સંબંધ છે તેનું નામ અનુયોગ છે.

પ્રશ્ન-પહેલો અર્થ થાય છે અને એ પછી સૂત્ર થાય છે, તે કહેવું અયુક્ત છે. કારણ કે સૂત્ર વગર અર્થ થઈ શકે નહીં. આ માટે સમજવું જોઈએ કે પહેલાં સૂત્ર હોય છે અને પછી અર્થ થાય છે. સૂત્ર આધાર છે અને અર્થ આધેય છે. સૂત્રમાં અર્થ રહે છે અર્થમાં સૂત્ર નહીં. આધારના હોવાથી જ આધેય રહી શકે છે તેના વગર નહીં. બીજું અર્થની અપેક્ષા જે સૂત્રને આણું કહેવામાં આવેલ છે તે પણ ઠીક નથી. કારણ કે, જોવામાં આવે છે કે, એકજ પેટીમાં ઘણાં વસ્ત્ર રાખવામાં આવે છે આથી તે પેટીમાં વાદસ્તા

પ્રિયદર્શિની ટીકા. એ ૧ ગાં ૨૩ સં તથંતદુભયેષુ યંધોત્તરં પ્રાવલ્યમ્ । ૧૭૨

રચ્યન્તે । एवं वस्त्रस्थानीयस्यार्थस्य इत्थम्, पेटिकास्थानीयस्य तु सूत्रस्याणु-
त्वमेव । यदप्युक्तम्-अर्थो महानित्यस्यैकान्तता नास्तीति तदप्यविचारितभाषितम्
-उत्क्षिप्तज्ञातादिषु सत्त्वानुकम्पादिकोऽर्थस्तत्तदध्ययनमात्रस्य, अशेषस्य तु सूत्रस्य
तदतिरिक्ता अपि बहवोऽर्थाः सन्ति ।

॥ इति अष्टमं द्वारम् ॥

अर्थ के बिना सूत्र निश्चरहित होता हुआ दशदाडिम आदि वाक्य
की तरह केवल असंबद्ध और निरर्थक ही माना जाता है । २ । जो यह
कहा है कि पेट्टी की तरह सूत्र चादर होता है तथा वस्त्रादिक की तरह
अर्थ अणु होता है सो यह कहना भी ठीक नहीं है । क्यों कि जिस
प्रकार उसी पेट्टी के किसी एक वस्त्र द्वारा उसी पेट्टी जैसी अनेक पेट्टियाँ
लपेट्टी जा सकती हैं उसी प्रकार एक अर्थ से अनेक सूत्र रचे जा सकते हैं ।
इस तरह वस्त्रस्थानीय अर्थ में महत्व आता है और पेट्टी स्थानीय
सूत्र में अणुत्व हो । एकान्तसे अर्थ में महत्व नहीं है क्यों कि उत्क्षिप्त
आदि अध्ययनों में जो कहा गया है वह सत्त्वानुकम्पादिक रूप अर्थ
उस अध्ययनमात्र का ही है, अर्थात् उनमें अनुकम्पादि अर्थों की ही
प्रधानता है । और अनुकम्पादि अर्थों को ही सिद्ध किया है । न कि
अवशिष्ट समस्त सूत्र का । उसके तो उससे अतिरिक्त और भी
अनेक अर्थ हैं ।

॥ यह आठवाँ द्वार संपूर्ण हुआ ॥ ८ ॥

દશદાડીમ આદિ વાક્યની માફક કેવળ અસંબદ્ધિત અને નિરર્થક જ માનવામાં
આવે છે. એમ કહેવામાં આવે કે પેટીની માફક સૂત્ર બાદર હોય છે, તથા
વસ્ત્રાદિકની માફક અર્થ અણુ હોય છે તો તે કહેવું પણ ઠીક નથી. કેમ કે, એ
પેટીના કોઈ એક વસ્ત્રમાં આવી અનેક પેટીઓ બાંધી શકાય છે. એજ રીતે
એક અર્થથી અનેક સૂત્ર રચી શકાય છે. આ રીતે વસ્ત્રનું સ્થાનીય અર્થમાં
મહત્વ આવે છે. અને પેટી સ્થાનીય સૂત્રમાં અણુત્વ જ એકાન્તથી અર્થમાં મહત્વ
નથી એવું જ કહેવામાં આવેલ છે તે પણ ઠીક નથી. કેમકે, ઉત્ક્ષિપ્ત વગેરે
અધ્યયનમાં જે કહેવાયેલ છે તે સત્વાનુકંપાદિક રૂપ અર્થ તે તે અધ્યયન
માવાના જ છે. અર્થાત્ તેમાં અનુકંપાદિ અર્થોની જ પ્રધાનતા છે. અને અનુ
કંપાદિ અર્થોને જ સિદ્ધ કરેલ છે. ન કે અવશિષ્ટ બધા સૂત્રોને, એના તો એનાથી
બીજા ઘણા અર્થો છે.

॥ આ આઠમું દ્વાર સંપૂર્ણ થયું. ॥ ૮ ॥

નિરર્થકં સ્યાત્, યથા નવ પૂષા દશદાદિમાનીત્યાદિવાક્યં સમ્બન્ધરહિતં નિરર્થકં ભવતિ। અપિ ચ-લૌકિકા અપિ શાસ્ત્રારઃ પ્રથમતોડ્યં દૃષ્ટ્વા સૂત્રં કુર્વન્તિ, અર્થમન્તરેણ સૂત્રસ્યાનિષ્પત્તેઃ। તથા ચોક્તમ્--

“અત્યં ભાસઈ અરિહા, તમેવ સુત્તીકરેંતિ ગણધારી।

અત્યં વિણા ચ સુત્તં, અણિસ્સિયં કેરિસં હોઈ” ॥ ૧ ॥

છાયા--અર્થં ભાષતેડઈન્, તમેવ સૂત્રીકુર્વન્તિ ગણધારિણઃ।

અર્થં વિના ચ સૂત્રમ્, અનિશ્રિતં કીદશં સ્યાત્ ॥ ૧ ॥

ફિશ્ચ--“અત્યં ભાસઈ અરિહા, સુત્તં ગુંફંતિ ગણહરા નિડુણા।”

અપરશ્ચ--સાસણસ્સ હિયદ્દાણ, તતો સુત્તં પવત્તઈ ॥

યદપ્યુક્તં--પેટિકાવદ્ વાદરં સૂત્રમ્, અર્થસ્તુ અણુરિતિ તદપ્યસત્, યતસ્તસ્યા પેટિકાયા એકં વસ્ત્રમાદાય તેનાનેકાઃ પેટિકા વધ્યન્તે, તથૈકેનાર્થેન વહુનિ સૂત્રાણિ કારણં કિ અર્થં કે વિના નિશ્રારહિત સૂત્રં હો હી નહીં સકતાં હૈ। યદિ વહુ હોતાં હૈ તો “નવપૂષા દશદાદિમા” આદિ વાક્ય કી તરહ નિરર્થક ઔર અસંયદ્ધ હી હોગા। લૌકિક શાસ્ત્ર કે જાનને વાલે ભી તો પ્રથમ અર્થ કો દેખકર હી સૂત્ર કી રચના કિયા કરતે હૈં। ક્યૌં કિ અર્થ કે વિના સૂત્ર કી નિષ્પત્તિ નહીં હોતી હૈ। કહા ભી હૈ--

અત્યં ભાસઈ અરિહા, તમેવ સુત્તી કરેંતિ ગણધારી।

અત્યં વિણા ચ સુત્તં, અણિસ્સિયં કેરિસં હોઈ ॥ ૧ ॥

અત્યં ભાસઈ અરિહા, સુત્તં ગુંફંતિ ગણહરા નિડુણા।

સાસણસ્સ હિયદ્દાણ, તતો સુત્તં પવત્તઈ ॥ ૨ ॥

તીર્થંકર ભગવાન પહિલે અર્થ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં ઔર ડસી અર્થ કો ગણધર ભગવાન સૂત્રરૂપ મેં ગુંથતે હૈ। ૧।

કે અર્થના વિના નિશ્રા રહિત સૂત્ર થઈજ શકતુ નથી. કદાચ તે હોય છે, તો “નવપૂષા દશદાદિમા” આદિ વાક્યની માફક નિરર્થક અને સંબંધ વગરનું હોય લૌકિક શાસ્ત્રના બાણવાણા પણ પ્રથમ અર્થને જોઈને સૂત્રની રચના કર્યા કરે છે. કેમ કે અર્થના વગર સૂત્રની ઉત્પત્તિ થતી નથી. કહ્યું પણ છે કે--

અત્યં ભાસઈ અરિહા, તમેવ સુત્તીકરેંતિ ગણધારી।

અત્યં વિણા ચ સુત્તં, અણિસ્સિયં કેરિસં હોઈ ॥ ૧ ॥

અત્યં ભાસઈ અરિહા, સુત્તં ગુંફંતિ ગણહરા નિડુણા।

સમણસ્સ હિયદ્દાણ, તતો સુત્તં પવત્તઈ ॥ ૨ ॥

તીર્થંકર ભગવાન પહેલા અર્થની પ્રરૂપણા કરે છે, અને એજ અર્થને ગણધર ભગવાન સૂત્રના રૂપમાં ગૂંથે છે. અર્થના વગર સૂત્ર નિશ્રારિ નીને

પ્રિયદર્શિની ટીકાં. અં ૧ ગાં ૨૩ સ્થિતદુભયેષુ યથોત્તરં પ્રાવલ્યમ્ । ૧૭૬

રચ્યન્તે । एवं वस्त्रस्थानीयस्यार्थस्य महत्त्वम्, पेटिकास्थानीयस्य तु सूत्रस्याणु-
त्वमेव । यदप्युक्तम्—अर्थो महानित्यस्यैकान्तता नास्तीति तदप्यविचारितभाषितम्
—उत्क्षिप्तज्ञातादिषु सत्त्वानुकम्पादिकोऽर्थस्तत्तदध्ययनमात्रस्य, अशेषस्य तु सूत्रस्य
तदतिरिक्ता अपि बहवोऽर्थाः सन्ति ।

॥ इति अष्टमं द्वारम् ॥

અર્થ કે વિના સૂત્ર નિર્રારહિત હોતા હુઆ દશદાહિમ આદિ વાક્ય
કી તરફ કેવલ અસંબદ્ધ ઓર નિરર્થક હી માના જાતા હૈ । ૨ । જો યહ
કહા હૈ કિ પેટી કી તરફ સૂત્ર યાદર હોતા હૈ તથા વસ્ત્રાદિક કી તરફ
અર્થ અણુ હોતા હૈ સો યહ કહના મી ઠીક નહીં હૈ । ક્યોં કિ જિસ
પ્રકાર ડસી પેટી કે કિસી ઇક વસ્ત્ર દ્વારા ડસી પેટી જૈસી અનેક પેટિયાં
લપેટી જા સકતી હૈં ડસી પ્રકાર ઇક અર્થ સે અનેક સૂત્ર રચે જા સકતે હૈં ।
ઈસ તરફ વસ્ત્રસ્થાનીય અર્થ મેં મહત્વ આતા હૈ ઓર પેટી સ્થાનીય
સૂત્ર મેં અણુત્વ હો । ઇકાન્તસે અર્થ મેં મહત્વ નહીં હૈ ક્યોં કિ ઉત્ક્ષિપ્ત
આદિ અધ્યયનોં મેં જો કહા ગયા હૈ વહ સત્વાનુકંપાદિક રૂપ અર્થ
ડસ અધ્યયનમાત્ર કા હી હૈ, અર્થાત્ ડનમેં અનુકંપાદિ અર્થોં કી હી
પ્રધાનતા હૈ । ઓર અનુકંપાદિ અર્થોં કો હી સિદ્ધ કિયા હૈ । ન કિ
અવશિષ્ટ સમસ્ત સૂત્ર કા । ડસકે તો ડસસે અતિરિક્ત ઓર મી
અનેક અર્થ હૈં ।

॥ यह आठवां द्वार संपूर्ण हुआ ॥ ८ ॥

દશદાહીમ આદિ વાક્યની માફક કેવળ અસંબદ્ધિત અને નિરર્થક જ માનવામાં
આવે છે. એમ કહેવામાં આવે કે પેટીની માફક સૂત્ર બાહર હોય છે, તથા
વસ્ત્રાદિકની માફક અર્થ આણું હોય છે તો તે કહેવું પણ ઠીક નથી. કેમ કે, એ
પેટીના કોઈ એક વસ્ત્રમાં આવી અનેક પેટીઓ બાંધી શકાય છે. એજ રીતે
એક અર્થથી અનેક સૂત્ર રચી શકાય છે. આ રીતે વસ્ત્રનું સ્થાનીય અર્થમાં
મહત્વ આવે છે. અને પેટી સ્થાનીય સૂત્રમાં અણુત્વ જ એકાન્તથી અર્થમાં મહત્વ
નથી એવું જ કહેવામાં આવેલ છે તે પણ ઠીક નથી. કેમકે, ઉત્ક્ષિપ્ત વગેરે
અધ્યયનમાં જ કહેવાયેલ છે તે સત્વાનુકંપાદિક રૂપ અર્થ તે તે અધ્યયન
માત્રાના જ છે. અર્થાત્ તેમાં અનુકંપાદિ અર્થોની જ પ્રધાનતા છે. અને અનુ
કંપાદિ અર્થોને જ સિદ્ધ કરેલ છે. ન કે અવશિષ્ટ બધા સૂત્રોને. એના તો એનાથી
બીજા ઘણા અર્થો છે.

॥ આ આઠમું દ્વાર સંપૂર્ણ થયું. ॥ ૮ ॥

અથ નવમં દ્વારમ્—સૂત્રાર્થતદ્ભયેષુ યથોત્તરં પ્રવલ્યમ્—

દ્વાદશાંગમધીયાનાનાં વૈયાવૃત્ત્યે ક્રિયમાણે તેપાં વૈયાવૃત્ત્યકારાણાં મહતી નિર્જરા ભવતિ તદાવરણીયસ્ય કર્મણઃ ક્ષયકરણાત્, તેપાં મહાપર્યવસાનં ચ ભવતિ—પુનરન્ય નવકર્મચન્ધાભાવાત્ । નનુ કસ્ય કીદૃશી નિર્જરા ભવતિ ?

અત્રોચ્યતે—સૂત્રેર્થં ચ યથોત્તરં વલ્લતી નિર્જરા । આવશ્યકાદિયાવચ્ચતુર્દશ પૂર્વાણિ સૂત્રં, તદ્દ્વારા યથોત્તરં મહતી મહત્તરા નિર્જરા ભવતિ । ઇયમત્ર ભાવના—એક આવશ્યકસૂત્રધરસ્ય વૈયાવૃત્ત્યં કરોતિ, અપરો દશવૈકાલિકસૂત્રધરસ્ય વૈયાવૃત્ત્યક-

સૂત્ર, અર્થ એવં સૂત્રાર્થ મેં યથોત્તર પ્રવલતા કા કથન નવમે દ્વાર મેં કરતે હેં—

દ્વારશાંગ કો પડતે હેં ઓર વે વૈયાવૃત્ત્ય કરતે હેં (અર્થાત્ આચાર્ય ઉપાધ્યાય કી સેવા કરતે હેં) ડનકો શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મો કી મહા-નિર્જરા હોતી હૈ તથા અન્ય નવીન કર્મ કા ચન્ધ ખી નહીં હોતા હૈ । કિસકે કૈસી નિર્જરા હોતી હૈ ? ઇસ વાત કો સ્પષ્ટ કિયા જાતા હૈ—સૂત્ર એવં અર્થ કો પઢને વાલોં કી યથોત્તર મહાનિર્જરા હોતી હૈ । આવશ્યક સૂત્ર સે લેકર ૧૪ પૂર્વતક કે આગમ સૂત્ર હેં । ડનકે દ્વારા ઉત્તરોત્તર મહાનિર્જરા હોતી હૈ મો તાત્પર્ય ઇસકા ઇસ પ્રકાર હૈ કિ કોઈ મુનિ આવશ્યક સૂત્ર કો જાનને વાલે કી વૈયાવૃત્તિ (સેવા) કરતા હૈ ઓર કોઈ દૂસરા દશવૈકાલિક સૂત્ર કો જાનને વાલે કી વૈયાવૃત્તિ (સેવા) કરતા હૈ । તો ડનમેં આવશ્યક સૂત્ર કો જાનને વાલે કી વૈયાવૃત્તિ કરને વાલે કી નિર્જરા કી અપેક્ષા જો દશવૈકાલિક કો પઢાને વાલે કી વૈયા-

સૂત્ર, અર્થ એવં સૂત્રાર્થમાં યથોત્તર પ્રવલતાનું કથન નવમાં દ્વારમાં કરે છે.—

દ્વાદશાંગ ભણે છે અને જે વૈયાવૃત્ત્ય કરે છે. (આચાર્ય—ઉપાધ્યયની સેવા કરે છે) અને શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મોની મહાનિર્જરા થાય છે. તથા નવા બીજા કર્મોના અંધ પણ થતો નથી. કોને કેવી નિર્જરા થાય છે ? આ વાતને સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે.—

સૂત્ર અને અર્થને બહુવાવાળાને યથોત્તર મહાનિર્જરા થાય છે. આવશ્યક સૂત્રથી લઈ ૧૪ પૂર્વ સુધીનાં આગમ સૂત્ર છે, એના દ્વારા ઉત્તરોત્તર મહાનિર્જરા થાય છે. મતલબ કોઈ મુનિ આવશ્યક સૂત્રને બહુવાવાળાની વૈયાવૃત્તિ (સેવા) કરે છે અને કોઈ બીજા દશવૈકાલિક સૂત્રને બહુવાવાળાની વૈયાવૃત્તિ (સેવા) કરે છે. તો એમાં આવશ્યકસૂત્રને બહુવાવાળાની વૈયાવૃત્તિ કરવાવાળાની નિર્જરાને બદલે જે દશવૈકાલિકના બહુવાવાળાની વૈયાવૃત્તિ કરવાવાળા છે,

રસ્તસ્યાવશ્યકસૂત્રધરવૈયાવૃત્ત્યકરાપેક્ષયા મહતી નિર્જરા, આવશ્યકસૂત્રધરસ્યૈવ દશ-
વૈકાલિકાધ્યયનેઽધિકારાત્ । एनम् अथस्तनाधस्तनतरश्रुतधरवैयावृत्त्यकरापेक्षया
અર્થપરિતિનશ્રુતધરવૈયાવૃત્ત્યકરો યથોત્તરં મહાનિર્જરાવાન્ ભવતિ । एवं त्रयोदश-
पूर्वधरवैयावृत्त्यकरापेक्षया चतुर्दशपूर्वधरवैयावृत्त्यकरो महानिर्जराकारी भवति ।
एवमर्थेऽपि भावनीयम् । આવશ્યકાર્થધરસ્ય યો વૈયાવૃત્ત્યં કરોતિ, તદપેક્ષયા દશ-
વૈકાલિકાર્થધરસ્ય યો વૈયાવૃત્ત્યકરસ્તસ્ય મહતી નિર્જરા ભવતિ, एवं पूर्ववद्विध्यम्
યથા સૂત્રે યથોત્તરં વલિપ્તતા એવમર્થેઽપિ ભાવનીયા । तत्र विशेषस्तु-अर्थधरवैया-

વૃત્તિ કરને ચાલા હૈં ઉસકે મહાનિર્જરા હોતી હૈં । क्योंकि कि आवश्यक
સૂત્ર કો પદ ચુકને ચાલે કા હી અધિકાર દશવૈકાલિક સૂત્ર કે અધ્યયન
મેં હોતા હૈં । इस प्रकार नीचे २ श्रुत को धारण करने वालों की वैया-
वृत्ति करने वालों की निर्जरा की अपेक्षा जो ऊपर २ के श्रुत को धारण
करने वाले हैं उनकी वैयावृत्ति करने वालों की निर्जरा यथोत्तर अधिक
अधिकतर होती है । इसी तरह जो तेरहपूर्व के धारी हैं उनकी जो वैयावृत्त
करने वाला है उसके जितनी निर्जरा होगी उसकी अपेक्षा जो १४ पूर्व
के पाठियों की वैयावृत्ति करने वाला होगा उसकी महानिर्जरा होगी ।
इसी तरह इनके अर्थ विषय में भी समझ लेना चाहिये । जैसे-जो आव-
श्यक सूत्र के अर्थ का पाठो है उसका जो वैयावृत्त्य करने वाला है उसके
जितनी निर्जरा होगी उसकी अपेक्षा जो दशवैकालिक सूत्र के अर्थ का
पाठो है उनकी वैयावृत्ति करने वाले की निर्जरा अधिकतर होगी । इस
तरह पहिले की तरह अर्थ के विषय में लगा लेना चाहिये । जिस तरह

એને મહાનિર્જરા થાય છે. કેમકે, આવશ્યક સૂત્ર પુરી રીતે શીખી લેનારનો જ
અધિકાર દશવૈકાલિકસૂત્રના અધ્યયનનો હોય છે. આ રીતે નીચે નીચેનાં શ્રુતને
ધારણ કરવાવાળાની વૈયાવૃત્તિ કરનારને નિર્જરાની અપેક્ષા જે ઉપર ઉપરનાં
શ્રુતને ધારણ કરવાવાળા છે એની વૈયાવૃત્તિ કરનારની નિર્જરા યથોત્તર અધિક
અધિકતર થાય છે. આ રીતે જે તેરપૂર્વના ધારક છે એમની જે વૈયાવૃત્તિ કરે
છે, એને જેટલી નિર્જરા થાય એની અપેક્ષા જે ચૌદપૂર્વના ધારક છે એની વૈયાવૃત્તિ
કરવાવાળાને મહાનિર્જરા થાય છે આવી જ રીતે અર્થમાં પણ સમજવું જોઈ એ.
જે આવશ્યક સૂત્રના અર્થના પાઠી છે, એનો વૈયાવૃત્તિ કરનારની જેટલી નિર્જરા
થાય એની અપેક્ષા જે દશવૈકાલિક સૂત્રના અર્થના પાઠી છે એમની વૈયાવૃત્તિ
કરવાવાળાની નિર્જરા અધિકતર થાય છે. એજ રીતે પહેલાની માફક અર્થના વિષ-
યમાં સમજી લેવું જોઈ એ. જે રીતે સૂત્રમાં ઉત્તરોત્તર મહાનિર્જરા કહી છે એજ

વૃત્યકરેષુ નિશીથ-ગૃહસ્થ-વ્યવહારાર્થધરાણાં વૈયાવૃત્યકરો મહાનિર્જરાવાન્
ભવતિ । તથા દ્વાદશાંગીયસ્ય વૈયાવૃત્યકરઃ । શેષાર્થેભ્યઃછેદ સૂત્રાર્થસ્ય વલ્લભ્વે
કિં કારણમિતિ ચેત્-ઉચ્યતે-સ્થલિતચારિત્રસ્ય છેદસૂત્રાર્થેન શોધિર્ભવતિ, તસ્માત્
શેષાત્ સર્વસ્માદપ્યર્થાત્ છેદસૂત્રાર્થો વલ્લવાન્ ।

સૂત્રેઽર્થે તથા યુગપત્ તદુભયર્થમિચ્છિન્ત્યમાને યથોત્તરં નિર્જરા વલ્લતી ભવતિ ।
સૂત્રાપેક્ષયાઽર્થો મહર્દિકઃ, અર્થાપેક્ષયા તદુભયો મહર્દિકઃ, તત્ર કિં કારણમિતિ
ચેત્ ? અત્રોચ્યતે-ગૃહનિપત્તૌ યત્ સાધનં-કાષ્ઠ પાપાણાદિ, તત્સંગ્રહે કૃતે સત્યેવ

સૂત્ર મેં ઉત્તરોત્તર મહાનિર્જરા કહી છે उसी तरह अर्थ में उत्तरोत्तर
महानिर्जरा समझनी चाहिये । अर्थधरों की वैयावृत्ति करने वालों में
निशीथ, सूत्र, गृहस्तरूपसूत्र, एवं व्यवहार सूत्र के अर्थधरों की वैयावृत्ति
करने वालों के महानिर्जरा होते हैं तथा-द्वादशांगी के पाठी की वैया-
वृत्ति करनेवाला महानिर्जरा करता है । शेष अर्थ की अपेक्षा छेद सूत्रों
के अर्थों में अधिकता क्यों कही गई है, उसका समाधान इस प्रकार
है । यदि कोई साधु अपने गृहोत्त चारित्र्य से स्थलित हो जाता है तो
उसकी शुद्धि छेदश्रुत के अर्थ से होती है । इसलिये अवशिष्ट-समस्त
अर्थों की अपेक्षा छेदश्रुतों का अर्थ अधिक कहा गया है ।

સૂત્ર કા, અર્થ કા તથા યુગપત્ સૂત્રાર્થ કા અધ્યયન કરને પર યથો-
ત્તર અધિક ૨ નિર્જરા હોતી છે । સૂત્ર કી અપેક્ષા અર્થ મહાન્ હોતા છે
ઔર અર્થ કી અપેક્ષા તદુભય-સૂત્ર એવં અર્થ-યે દોનોં મહાન્ હોતે છે ।
इसमें कारण यह है कि जिस प्रकार घर बनाने में जो काष्ठपाषाण
आदि साधन हैं जब उनका संग्रह हो जाता है तब घर बनता है । उसी

રીતે અર્થમાં ઉત્તરોત્તર મહાનિર્જરા સમજવી જોઈએ. અર્થધરાની વૈયાવૃત્તિ
કરવાવાળામાં નિશીથસૂત્ર, ગૃહસ્થરૂપસૂત્ર અને વ્યવહારસૂત્રના અર્થધરાની
વૈયાવૃત્તિ કરવાવાળાને મહાનિર્જરા થાય છે. તથા દ્વાદશાંગીના પાઠીની વૈયાવૃત્તિ
કરનાર મહાનિર્જરા કરે છે. શેષ અર્થની અપેક્ષા છેદ સૂત્રોના અર્થોમાં અધિ-
કતા કેમ કહેવામાં આવી છે, એનું સમાધાન આ પ્રકારનું છે.-જો કોઈ સાધુ
પોતે ગ્રહણ કરેલા ચારિત્ર્યથી સ્થલિત થઈ જાય છે. તો એની શુદ્ધિ છેદશ્રુતના
અર્થથી થાય છે. આ માટે અવશિષ્ટ-સમસ્ત અર્થોની અપેક્ષા છેદશ્રુતોનો અર્થ
અધિક કહેવાયેલ છે.

સૂત્રનું, અર્થનું તથા યુગપત્ સૂત્રાર્થનું અધ્યયન કરવાથી યથોત્તર અધિક
અધિક નિર્જરા થાય છે. સૂત્રની અપેક્ષા અર્થ મહાન્ હોય છે. આમાં એ કારણ
છે કે, જે રીતે ઘર બનાવવામાં પાષાણ લાકડાં વગેરે સાધન છે, અને તેને સંગ્રહ

ગૃહં નિષ્પદ્યતે, તથાધર્માનુસન્ધાને સત્યેન સૂત્રં નિષ્પદ્યતે, અતઃ સૂત્રાપેક્ષયાધર્મસ્ય પ્રાધાન્યં ભવતિ । કિં ચ-સૂત્રંગણધર પ્રોક્તમ્, અર્થસ્તુ ભગવદ્વોધિતસ્તસ્માત્ સૂત્રાપેક્ષયાધર્મસ્ય પ્રાધાન્યં ભવતિ । તથાચોક્તમ્—

તિત્થગરદ્વાણો સ્વલુ, અત્યો સુત્તં તુ ગણહરદ્વાણં ।

અત્યેણ ય વંજિઙ્ગહ સુત્તં, તમ્હા ઉ સો વલ્લવં ॥ ૧ ॥

છાયા-તીર્થંકરસ્થાનઃ સ્વલુ અર્થઃ, સૂત્રં તુ ગણધરસ્થાનમ્ ।

અર્થેન ચ વ્યજ્યતે સૂત્રં, તસ્માત્તુ ત વલવાન્ ॥ ૧ ॥

વ્યાખ્યા—અર્થઃ સ્વલુ તીર્થંકરસ્થાનઃ, તસ્ય તેનામિદિતત્વાત્ । સૂત્રં તુ ગણધરસ્થાનં તસ્ય તૈર્ગ્રથિતત્વાત્ । અર્થેન ચ યસ્માત્ સૂત્રં વ્યજ્યતે=પ્રકટોક્રિયતે, તસ્માત્ સોધર્મઃ સૂત્રાદ્ વલવાન્ ॥ ૧ ॥

સૂત્રાપેક્ષયાધર્માપેક્ષયા ચ સૂત્રાર્થોભયસ્ય પ્રાવલ્યે દૃષ્ટાન્તઃ, પ્રદર્શ્યતે । યથા જાતમાત્રં દધિ મધુરં, તદપેક્ષયા શર્કરા મધુરતરા, એકત્ર સંમિલિતે દધિશર્કરે શ્રીશ્વ-

તરહ અર્થ કા અનુસંધાન જય હોતા હૈ તમ્હી ગણધર ભગવાન સૂત્રોં કી રચના કરતે હૈ । અતઃ સૂત્ર કી અપેક્ષા અર્થ મેં પ્રધાનતા આતી હૈ । તથા-સૂત્ર ગણધરોં ને કહે હૈં ઓર અર્થ પ્રભુ દ્વારા પ્રરૂપિત હુઆ હૈં । ફસલિયે મ્હી સૂત્રકી અપેક્ષા અર્થ મેં પ્રધાનતા આજાની હૈ । કહા મ્હી હૈ-અર્થ તીર્થંકર કે સ્થાનાપત્ર હૈં ક્યોં કિ તીર્થંકર હી અર્થ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં । સૂત્ર ગણધર કે સ્થાનાપત્ર હૈં ક્યોં કિ વહાં ઉનકે દ્વારા ગ્રથિત હોતા હૈ । અર્થ સે હી સૂત્ર ઉત્પન્ન હોતા હૈં અતઃ અર્થ હી પ્રધાન હૈ । સૂત્ર કી અપેક્ષા એવં અર્થ કી અપેક્ષા સૂત્રાર્થ કિસ પ્રકાર પ્રધાન હોતા હૈં યહ યાત દૃષ્ટાન્ત દ્વારા સ્પષ્ટ કી જાતી હૈં-જૈસે-તાજા દહીં મીઠા હોતા હૈં । દહીં કી અપેક્ષા શર્કર મીઠી હોતી હૈ । જય ઇન દોનોં કા પરસ્પર

કરવામાં આવે છે ત્યારે જ ઘર બને છે એ જ રીતે અર્થનું અનુસંધાન થાય છે, ત્યારે ગણધર ભગવાન સૂત્રોની રચના કરે છે. આથી સૂત્રની અપેક્ષાએ અર્થમાં પ્રધાનતા આવે છે. તથા-સૂત્ર ગણધરોએ કહેલ છે, અને અર્થ પ્રભુ દ્વારા પ્રરૂપિત થયેલ છે. આ કારણે પણ અર્થમાં પ્રધાનતા આવે છે. કહ્યું પણ છે.-અર્થ તીર્થંકર પ્રભુના સ્થાનાપત્ર છે કેમકે, તીર્થંકર જ અર્થની પ્રરૂપણા કરે છે. સૂત્ર ગણધરનાં સ્થાનાપત્ર છે કેમકે, તે એમના દ્વારા ગ્રથિત થાય છે. અર્થથી જ સૂત્ર ઉત્પન્ન થાય છે આથી અર્થ જ પ્રધાન છે. સૂત્રની અપેક્ષા અને અર્થની અપેક્ષા સૂત્રાર્થ કઈ રીતે પ્રધાન હોય છે, તે વાત દ્રષ્ટાંત દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે.—જેમ-તાજું દહીં મીઠું હોય છે, અને દહીંથી સાકર મીઠી હોય છે, ત્યારે એ બન્ને ને એક બીજા સાથે મેળવવામાં આવે છે ત્યારે

ખડનામકં દ્રવ્યે ભવતિ, તત્ સ્વરૂપં ઉભાભ્યાં વૃથગાસ્થિતાભ્યાં દેધિર્કૃત્ત્રાભ્યામધિકં
વિશિષ્ટાસ્વાદજનકં યથા ભવતિ, તથા સ્વાધ્યયાર્થોભયસ્ય સર્વભાવાધિગમકારણત્વેન
વિશિષ્ટભાવશુદ્ધિજનકતાત્ સર્વતઃ પ્રાધાન્યમ્ । અતસ્તદુભયધરસ્ય મહતી નિર્જરા
ભવતિ ॥ ૨૩ ॥

॥ इति नवमं द्वारम् ॥

પુનઃ શિષ્યસ્ય વાચિનયમાહ—

मूलम्—मुंसं परिहरे भिक्षुं, न यं ओहंरणि वण ।

भासांदोसं परिहरे, मौयं चं वर्जेण सय्या ॥ २४ ॥

મેં સંમિશ્રણ હો જાતા હૈ તો ઉસસે શ્રીલંકનામ કા એક અપૂર્વ મધુર
પદાર્થ બનતા હૈ । ઉસકા સ્વાદ ન દહી જૈસા હોતા હૈ ઓર ન શકર
જૈસા હોતા હૈ । કિન્તુ इन दोनों से विलक्षण स्वाद होता है । इसी
तरह सूत्र अर्थ ये दोनों जब सम्मिलित होते हैं तब इनसे समस्त भावों
का-पदार्थों के स्वरूप का ज्ञान होने लगता है जो न केवल सूत्र से साध्य
है और न केवल अर्थ से । इससे विशिष्ट भावों की अर्थात्-अध्यवसायों
की विशिष्ट शुद्धि होती है । इसलिये सूत्र और अर्थ इन दोनों की
अपेक्षा तदुभय प्रधान कहा गया है और इसीलिये केवल सूत्रधारी
अथवा केवल अर्थधारी की अपेक्षा तदुभयधारी की सेवा करने वाले
के महानिर्जरा होती है । इस तरह तेवीसवीं गाथा का अर्थ संक्षेप से
संपूर्ण हुआ विस्तार से अर्थ अन्य शास्त्रों से समझना चाहिये ॥ २३ ॥

નવમા દ્વાર સમ્પૂર્ણ

એનાથી શ્રીખંડ નામનો એક અપૂર્વ મધુર પદાર્થ બને છે, જેનો સ્વાદ ન દહીં
જેવો હોય છે અને ન તો શકર જેવો. પરંતુ આ બન્નેથી બુદ્ધિ જ બાતને
સ્વાદ હોય છે. આવી જ રીતે સૂત્ર અને અર્થ એ બન્ને બંધારે સમ્મિલિત હોય
છે, ત્યારે એનાથી 'સમસ્ત ભાવોનું-પદાર્થોના સ્વરૂપનું' જ્ઞાન થવા લાગે છે. જે
ન કેવળ સૂત્રથી સાધ્ય છે અને ન કેવળ અર્થથી. એનાથી વિશિષ્ટ ભાવોની
અર્થાત-અધ્યવસાયોની વિશિષ્ટ શુદ્ધિ થાય છે. આ માટે સૂત્ર અને અર્થ આ
બન્નેની અપેક્ષા તદુભય પ્રધાન કહેવામાં આવેલ છે. અને એજ માટે કેવળ સૂત્ર
ધારી અથવા કેવળ અર્થધારીની અપેક્ષા તદુભયધારીની સેવા કરવાવાળાની મહા-
નિર્જરા થાય છે. આ રીતે તેવીસમી ગાથાનો અર્થ સંક્ષેપથી સંપૂર્ણ થયો.
વિસ્તારથી અર્થ અન્ય શાસ્ત્રોથી સમજવો બોધ એ. ॥ ૨૩ ॥

नवमुं द्वार संपूर्ण

છાયા—મૃપા પરિહરેદ્ મિશ્નુઃ, ન ચાવધારણીં વદેત્ ।

ભાષાદોષ પરિહરેત્, માયાં ચ વર્જયેત્ સદા ॥ ૨૪ ॥

ટીકા—‘મુસં પરિહરે’ ઇત્યાદિ ।

મિશ્નુઃ=સાધુઃ, મૃપા=મૃપાવાદમ્-અસત્યવચનં પરિહરેત્=વર્જયેત્ । મૃપાવાદઃ સંક્ષેપેણ દ્વિવિધઃ—લૌકિકો લોકોત્તરચ્ચ । તત્ર પ્રત્યેકં દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવ-ભેદા-ચતુર્થા । દ્રવ્યતો લૌકિકમૃપાવાદઃ—વિપરીતદ્રવ્યકથનમ્, યથા—ગામ્ અથ્થં કથયતિ । ક્ષેત્રતઃ—યથા—અન્યદીયક્ષેત્રં પ્રતિ મદીયમિદં ક્ષેત્રમ્, ઇતિ કથનમ્ । एवमेव कालेऽपि भूत भविष्यद् वर्तमानविषये विपरीतकथनम्, यथा—पूर्वाह्णं प्रति-मध्याह्नकालो-ऽप्यमिति कथनम् इत्यादि ।

ભાવતો લૌકિકમૃપાવાદઃ—ક્રોધાદિકપાયનિમિત્તકઃ, તત્ર ક્રોધતો યથા—રુષ્ટઃ પુત્રો વદતિ નૈષ મમ પિતા, રુષ્ટઃ પિતા ત્રા વદતિ—નૈષ મમ પુત્ર ઇતિ । માનતો

શિષ્ય કે વચનચિનય કે ચિપય મેં સૂત્રકાર સમજાતે હુણ કહતે હેં કિ—‘મુસં’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(મિશ્નુ મુસં પરિહરે-મિશ્નુઃમૃપા પરિહરેત્) મિશ્નુ-સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ મૃપાવાદ કા પરિત્યાગ કર દેવે । મૃપાવાદ સંક્ષેપ સે દો પ્રકાર કા હૈ—એક લૌકિક ઓર દૂસરા લોકોત્તર । યે દોનોં દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, ઁવં ભાવ સે ચાર ૨ પ્રકાર કે હેં । વિપરીત દ્રવ્ય કા કહના યહ દ્રવ્ય સે લૌકિક મૃપાવાદ હૈ જૈસે ગાય કો ઘોડા કહના ॥ ૧ ॥ દૂસરે કે ક્ષેત્રકો અપના ક્ષેત્ર બનાના યહ ક્ષેત્ર કો અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ ॥ ૨ ॥ પૂર્વાહ્ન કો મધ્યાહ્નકાલ વતલાના યહ કાલ કો અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ ॥ ૩ ॥ જો ક્રોધાદિ કપાય નિમિત્તક હોતા હૈ વહ ભાવ કો અપેક્ષા મૃપાવાદ કહલાતા હૈ ૪ ॥ વહ ભી ચાર પ્રકાર કા હૈ—જૈસે ક્રોધ કે આવેશ મેં

શિષ્યના વચનચિનયના વિષયમાં સૂત્રકાર સમજાવતાં કહે છે કે—મુસં ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—મિશ્નુમુસં પરિહરે-મિશ્નુઃ મૃપાપરિહરેત્ મિશ્નુ-સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તે મૃપાવાદનો પરિત્યાગ કરી દે. મૃપાવાદ સંક્ષેપથી બે પ્રકારે છે. એક લૌકિક અને બીજો લોકોત્તર આ બંને દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવથી ચાર પ્રકારના છે. વિપરીત દ્રવ્યનું કહેવું એ દ્રવ્યથી લૌકિક મૃપાવાદ છે, જેમ ગાયને ઘોડો કહેવો, ॥૧॥ બીજાના ક્ષેત્રને પોતાનું ક્ષેત્ર બનાવવું તે ક્ષેત્રની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે. ॥૨॥ સવારને મધ્યાહન કાળ કહેવો એ કાળની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે. ॥૩॥ જે ક્રોધાદિક કપાય નિમિત્ત બને છે, તે ભાવની અપેક્ષા મૃપાવાદ કહેવાય છે. ॥૪॥ તે પશુ ચાર પ્રકારથી છે. જેમ ક્રોધનાં આવેશમાં આવીને પુત્ર કહે છે કે આ મારો પિતા નથી અથવા જે સમય

પડનામકં દ્રવ્યં ભવતિ, તત્ સ્વત્વં ઉભાભ્યાં વૃથગાસ્થિતાભ્યાં દધિર્શર્કાભ્યામધિકં
વિશિષ્ટાસ્વાદજનકં યથા ભવતિ, તથા મૂઞાર્થોભયસ્ય સર્વભાવાધિગમકારણત્વેન
વિશિષ્ટભાવશુદ્ધિજનકત્વાત્ સર્વતઃ પ્રાધાન્યમ્ । અતસ્તદુભયધરસ્ય મહતી નિર્જરા
ભવતિ ॥ ૨૩ ॥

॥ इति नवमं द्वारम् ॥

પુનઃ શિષ્યસ્ય વાગ્વિનયમાહ—

મૂલમ્-મુંસં પરિહરે ભિક્ષૂ, ન ચ ઓહારણિ વણ ।

ભાસાદોસં પરિહરે, મોયં ચં વર્જણે સય્યા ॥ ૨૪ ॥

મેં સંમિશ્રણ હો જાતા હૈ તો ઉસસે શ્રીખંડનામ કા એક અપૂર્વ મધુર
પદાર્થ બનતા હૈ । ઉસકા સ્વાદ ન દહી જૈસા હોતા હૈ ઓર ન શક્કર
જૈસા હોતા હૈ । કિન્તુ ઇન દોનોં સે ચિલક્ષણ સ્વાદ હોતા હૈ । ઇસી
તરહ સૂત્ર અર્થ યે દોનોં જય સમ્મિલિત હોતે હૈ તય ઇનસે સમસ્ત ભાવોં
કા-પદાર્થોં કે સ્વરૂપ કા જ્ઞાન હોને લગતા હૈ જો ન કેવલ સૂત્ર સે સાધ્ય
હૈ ઓર ન કેવલ અર્થ સે । ઇસસે વિશિષ્ટ ભાવોં કી અર્થાત્-અધ્યવસાયોં
કી વિશિષ્ટ શુદ્ધિ હોતી હૈ । ઇસલિયે સૂત્ર ઓર અર્થ ઇન દોનોં કી
અપેક્ષા તદુભય પ્રધાન કહા ગયા હૈ ઓર ઇસીલિયે કેવલ સૂત્રધારી
અથવા કેવલ અર્થધારી કો અપેક્ષા તદુભયધારી કી સેવા કરને વાલે
કે મહાનિર્જરા હોતી હૈ । ઇસ તરહ તેવીસવીં ગાથા કા અર્થ સંક્ષેપ સે
સંપૂર્ણ હુઆ વિસ્તાર સે અર્થ અન્ય શાસ્ત્રોં સે સમજના ચાહિયે ॥ ૨૩ ॥

નવમા દ્વાર સંપૂર્ણ

એનાથી શ્રીખંડ નામનો એક અપૂર્વ મધુર પદાર્થ બને છે, જેનો સ્વાદ ન દહીં
જેવો હોય છે અને ન તો શક્કર જેવો. પરંતુ આ બન્નેથી બુદ્ધિ જ ભાતનો
સ્વાદ હોય છે. આવી જ રીતે સૂત્ર અને અર્થ એ બન્ને ન્યારે સમ્મિલિત હોય
છે, ત્યારે એનાથી સમસ્ત ભાવોતું-પદાર્થોના સ્વરૂપનું જ્ઞાન થવા લાગે છે. જે
ન કેવળ સૂત્રથી સાધ્ય છે અને ન કેવળ અર્થથી. એનાથી વિશિષ્ટ ભાવોની
અર્થાત્-અધ્યવસાયોની વિશિષ્ટ શુદ્ધિ થાય છે. આ માટે સૂત્ર અને અર્થ આ
બન્નેની અપેક્ષા તદુભય પ્રધાન કહેવામાં આવેલ છે. અને એજ માટે કેવળ સૂત્ર
ધારી અથવા કેવળ અર્થધારીની અપેક્ષા તદુભયધારીની સેવા કરવાવાળાની મહા-
નિર્જરા થાય છે. આ રીતે તેવીસમી ગાથાનો અર્થ સંક્ષેપથી સંપૂર્ણ થયો.
વિસ્તારથી અર્થ અન્ય શાસ્ત્રોથી સમજવો બેધ છે. ॥ ૨૩ ॥

નવમું દ્વાર સંપૂર્ણ

છાયા—મૃપા પરિહરેત્ મિશ્નુઃ, ન ચાવધારણીં વદેત્ ।

માપાદોપં પરિહરેત્, માયાં ચ વર્જયેત્ સદા ॥ ૨૪ ॥

ટીકા—‘મુસં પરિહરે’ ઇત્યાદિ ।

મિશ્નુઃ=સાધુઃ, મૃપા=મૃપાવાદમ્-અસત્યવચનં પરિહરેત્=વર્જયેત્ । મૃપાવાદ-સંક્ષેપેણ દ્વિવિધઃ—લૌકિકો લોકોત્તરચ્ચ । તત્ર પ્રત્યેકં દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવ-ભેદા-ચતુર્ધા । દ્રવ્યતો લૌકિકમૃપાવાદઃ—વિપરીતદ્રવ્યકથનમ્, યથા—ગામ્ અશ્વં કથયતિ । ક્ષેત્રતઃ—યથા—અન્યદીયક્ષેત્રં પ્રતિ મદીયમિદં ક્ષેત્રમ્, ઇતિ કથનમ્ । एवमेव कालेऽपि भूत भविष्यद् वर्तमानविषये विपरीतकथनम्, यथा—पूर्वाह्णं प्रति—मध्याह्नकालो-ऽपिमिति कथनम् इत्यादि ।

ભાવતો લૌકિકમૃપાવાદઃ—ક્રોધાદિકપાયનિમિત્તકઃ, તત્ર ક્રોધતો યથા—રુષ્ટઃ પુત્રો વદતિ નૈપ મમ પિતા, રુષ્ટઃ પિતા વા વદતિ—નૈપ મમ પુત્ર ઇતિ । માનતો

શિષ્ય કે વચનવિનય કે વિષય મેં સૂત્રકાર સમજાતે હુણ કહતે હું કિ—‘મુસં’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(મિશ્નુ મુસં પરિહરે-મિશ્નુઃમૃપા પરિહરેત્) મિશ્નુ-સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ મૃપાવાદ કા પરિત્યાગ કર દેવે । મૃપાવાદ સંક્ષેપ સે દો પ્રકાર કા હૈ—એક લૌકિક ઓર દૂસરા લોકોત્તર । યે દોનોં દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, એવં ભાવ સે ચાર ૨ પ્રકાર કે હૈ । વિપરીત દ્રવ્ય કા કહના યહ દ્રવ્ય સે લૌકિક મૃપાવાદ હૈ જૈસે ગાય કો ઘોડા કહના ॥ ૧ ॥ દૂસરે કે ક્ષેત્રકો અપના ક્ષેત્ર બનાના યહ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ ॥ ૨ ॥ પૂર્વાહ્ન કો મધ્યાહ્નકાલ વતલાના યહ કાલ કી અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ ॥ ૩ ॥ જો ક્રોધાદિ કપાય નિમિત્તક હોતા હૈ વહ ભાવ કી અપેક્ષા મૃપાવાદ કહલાતા હૈ ૪ ॥ વહ ભી ચાર પ્રકાર કા હૈ—જૈસે ક્રોધ કે આવેશ મેં

શિષ્યના વચનવિનયના વિષયમાં સૂત્રકાર સમજાવતાં કહે છે કે—મુસં ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—મિશ્નુમુસં પરિહરે-મિશ્નુઃ મૃપાપરિહરેત્ મિશ્નુ-સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તે મૃપાવાદનો પરિત્યાગ કરી દે. મૃપાવાદ સંક્ષેપથી બે પ્રકારે છે. એક લૌકિક અને બીજો લોકોત્તર આ બંને દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવથી ચાર પ્રકારના છે. વિપરીત દ્રવ્યનું કહેવું એ દ્રવ્યથી લૌકિક મૃપાવાદ છે, જેમ ગાયને ઘોડો કહેવો, ॥૧॥ બીજાના ક્ષેત્રને પોતાનું ક્ષેત્ર બનાવવું તે ક્ષેત્રની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે ॥૨॥ સવારને મધ્યાહન કાળ કહેવો એ કાળની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે. ॥૩॥ જે ક્રોધાદિક કપાય નિમિત્ત બને છે, તે ભાવની અપેક્ષા મૃપાવાદ કહેવાય છે. ॥૪॥ તે પણ ચાર પ્રકારથી છે. જેમ ક્રોધનાં આવેશમાં આવીને પુત્ર કહે છે કે આ મારો પિતા નથી અથવા જે સમય

યથા-અસ્ય કુદુમ્બસ્ય ભરણપોષણાદિકાર્યં કર્તું કો માં વિહાય સમર્થઃ ? । માયાતો
 યથા-રાજકરગ્રાહકઃ કંચિદ્ વ્યાપારિણં વિક્રયવસ્તુ સમાદાય સ્વસ્થાનમાગતં પ્રતિ
 પૃચ્છતિ-‘કસ્યેદં વસ્તુજાતમ્’ ઇતિ, એવં ઘટ્ટોડસૌ વ્યાપારી માયયા કથયતિ-
 ‘નાસ્તિ મમેદં વસ્તુજાતમ્, અન્યદીયમેતત્ સર્વમ્’ ઇતિ ।

લોભતો યથા-વ્યાપારી લોભવશાદ્ વદતિ ગ્રાહકં પ્રતિ ‘યાવતા મૂલ્યેન મયા
 ક્રીતં, તાવતૈવ તવ હસ્તે વિક્રીણામિ કિંચિદપ્યધિકં મૂલ્યં ન ગૃહ્ણામી-’તિ ।

લોકોત્તરમૃપાવાદઃ પ્રદર્શયતે-તત્ર દ્રવ્યતો યથા-જીવમ્ અજીવં વદતિ, અજીવં

આકર પુત્ર કહતા કિ યહ મેરા પિતા નહીં હૈ । અથવા જિસ સમય
 પિતા રુઠ્ઠ હોતા હૈ, ઉસ સમય વહ કહતા હૈ કિ યહ મેરા પુત્ર નહીં હૈ,
 યહ સવ કથન ક્રોધ રુપ ભાવ કી અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ (૧) મન કપાય
 કે વશવર્તી હોકર એસા કહના કિ યદિ મેં ન હોઁ તો ઇસ કુદુમ્બ કા
 ભરણ પોષણ કૌન કરે (૨) માયા કે વશ મેં હોકર જો એસા કહતા
 હૈ કિ યહ વસ્તુ મેરી નહીં હૈ યહ તો દુસરોં કી હૈ, તાત્પર્ય ઇસકા
 યહ હૈ જબ કોઈ વ્યાપારી કિસી રાજા કા કર લેને વાલે કે પૂછને પર
 કિ યહ વિક્રેય વસ્તુ કિસકી હૈ તવ યહ માયા વશ કહતા હૈ કિ યહ
 તો દુસરો કી હૈ મેરી નહીં હૈ (૩) લોભ કે વશ હોકર જો झूठ વચન
 બોલા જાતા હૈ વહ લોભ કપાય કી અપેક્ષા મૃપાવાદ હૈ-જૈસે વ્યાપારી
 લોભ ગ્રાહકોં કો એસા કહતે હૈં કિ માઈ હમને જિતને મૂલ્ય મેં યહ
 चीज खरीदी है उतने ही मूल्य में हम तुम्हें यह दे रहे हैं । कुछ भी
 अधिक नहीं ले रहे हैं ॥ ૪ ॥ યહ સવ લોકિક મૃપાવાદ હૈ । ચાર પ્રકાર
 કા લોકોત્તર મૃપાવાદ ઇસ પ્રકાર હૈ-જીવ કો અજીવ કહના, અજીવ

પિતા કો ધેત બને છે તે વખતે તે કહે છે કે, આ મારો પુત્ર નથી, આ સઘળાં
 કથન ભાવની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે (૧) મન કપાયના વશવર્તિ બનીને એવું કહેવું
 કે બેહુ નહોડું તો આ કુદુમ્બ ભરણ પોષણ કેણુ કરે. (૨) માયાના વશમાં
 આવીને જે એમ કહે છે કે આ વસ્તુ મારી નથી પણ ખીજની છે. મતલબ આંની
 એ છે કે, જ્યારે કોઈ રાજાને કર્મચારી, કર વસુલ માટે આવે અને તેના પુછ-
 વાથી કોઈ વેપારી પોતાની વસ્તુ હોવા છતાં માયા વશ બની પોતાની ન હોવાનું
 કહી ખીજની હોવાનું બતાવે (૩) લોભના વશ બનીને જે બહુ વચન બોલવામાં
 આવે છે તે લોભ કપાયની અપેક્ષા મૃપાવાદ છે. જેમ-વેપારી લોક આહકોને
 એમ કહે છે કે, ભાઈ જેટલી કિંમતે આ વસ્તુ મારા ઘરમાં પડેલ છે તેજ
 કિંમતે હું તમોને આપું છું, કાંઈ પણ નફો લેતો નથી. (૪) આ બધા
 લોકિક મૃપાવાદ છે. ચાર પ્રકારના લોકોત્તર મૃપાવાદ આ પ્રકારે છે અને

या जीवम्, इत्यादि । क्षेत्रतो यथा—भरतक्षेत्रम् ऐरवतक्षेत्रम् वदति, ऐरवतं या भरतमिति । काळतो यथा—उत्सर्पिणीम् अवसर्पिणीं वदति, तथा—अवसर्पिणीम् उत्सर्पिणीं वदति । भावतो लोकोत्तरमृपावादः क्रोधादिकपायजनितः, तत्र क्रोधतो यथा—सत्यपि गुरुशिष्यसम्बन्धे रुष्टो गुरुर्वदति—न त्वमसि मम शिष्यः, क्रोधाविष्टः शिष्योऽपि वदति—‘नायं मम गुरुः’ इत्यादि । मानतो यथा—अहमेव गच्छधुराधारणे समर्थोऽस्मि, यद्वा—अहमेव साधुनिर्वाहकोऽस्मि । मायातो यथा—कृतातिचारं शिष्यं प्रति गुरुः पृच्छति—त्वयाऽतिचारः कृतः किम् ? तदा शिष्यो मायया वदति न मयातिचारः कृतः’ इत्यादि ।

को जीव कहना । यह द्रव्य की अपेक्षा मृपावाद है १ । भरतक्षेत्र को ऐरावत क्षेत्र कहना अथवा ऐरावत क्षेत्र को भरत क्षेत्र कहना यह क्षेत्र की अपेक्षा लोकोत्तर मृपावाद है २ । उत्सर्पिणी काल को अवसर्पिणी काल कहना अथवा अवसर्पिणी काल को उत्सर्पिणी काल कहना यह काल की अपेक्षा लोकोत्तर मृपावाद है ३ । भाव से लोकोत्तर मृपावाद क्रोधादिक कपाय को लेकर चार प्रकार का है । गुरु शिष्य संबंध होने पर भी जिस समय गुरु किसी निमित्त को लेकर जब शिष्य के प्रति रुष्ट हो जाते हैं तब वे कहने लगते हैं कि तुम मेरे शिष्य नहीं हो । शिष्य भी जब क्रोध के आवेश में आ जाता है तो वह भी इस तरह से गुरु के प्रति कहने लगता है कि आप हमारे गुरु नहीं हैं । यह क्रोध की अपेक्षा लोकोत्तर भाव मृपावाद है (१) । मैं ही गच्छ की धुरा धारण करने में समर्थ हूं अथवा मैं ही साधुओं का निर्वाहक हूं इस प्रकार कहना यह मान कपाय की अपेक्षा लोकोत्तर भाव मृपावाद है (२) ।

अष्टव कडेपुं, अष्टवने षव कडेपे, ओ द्रव्यनी अपेक्षा मृपावाद छे. (१) भरत क्षेत्रने औरवतक्षेत्र कडेपुं अने औरवत क्षेत्रने भरतक्षेत्र कडेपुं ते क्षेत्रनी अपेक्षा बोडोत्तर मृपावाद छे. (२) उत्सर्पिणी काणने अवसर्पिणी काण कडेपे. अथवा अवसर्पिणी काणने उत्सर्पिणी काण कडेपे. ओ काणनी अपेक्षा बोडोत्तर मृपावाद छे. (३) बापथी बोडोत्तर मृपावाद कोधादिक कपायने लठ आर प्रकारना छे. गुरु कोर्ष निमित्ते न्यारे शिष्य प्रत्ये कोधित जने छे त्यारे ते कडेवा लागे छे के तुं मारे शिष्य नथी, शिष्य पक्ष कोधना आवेशमां आपी जाय छे, त्यारे ते पक्ष पोताना गुरुने कडेवा लागे छे के आप मारा गुरु नथी. आ कोधनी अपेक्षा बोडोत्तर भाव मृपावाद छे. (१) हुं न गच्छनी धुरा धारण करवामां समर्थ छुं अथवा हुं न साधुओंना निर्वाहक छुं. आ प्रकारे कडेपुं ओ मान कपायनी अपेक्षा बोडोत्तर भाव मृपावाद छे. (२) ओ समय शिष्य न्यारे

લોભતો યથા—અકલ્પ્યેઽપિ વદ્ધપાત્રાદૌ, ‘મમેદં વદ્ધં કલ્પતે’ ઇત્યાદિ કથનમ્ ।

યદ્વા-મૃપાવાદશ્વર્તુર્વિધઃ—સદ્ભાવપ્રતિપેધઃ ૧, અસદ્ભાવોદ્ભાવનમ્ ૨, અર્થા-
નન્તરમ્ ૩, ગર્હા ચ ૪, । તત્ર સદ્ભાવપ્રતિપેધો યથા—નાસ્ત્યાત્મા, નાસ્તિ પુણ્યં,
નાસ્તિ પાપમ્, ઇત્યાદિ । અસદ્ભાવોદ્ભાવનં યથા—અસ્ત્યાત્મા સર્વગતઃ, આત્મા સ્યામાક-
ત્તણ્ડુલમાત્રઃ, ઇત્યાદિ । અર્થાન્તરં યથા—ગોવિષયે—‘અથોઽયમ્’ ઇતિ । ગર્હા તુ
ત્રિધા—एका सावद्यव्यापारप्रवर्तनी, યથા ‘ક્ષેત્રં કૃપ’ ઇત્યાદિ । દ્વિતીયા—અપ્રિયા,

જિસ સમય શિષ્ય જય કોઈ અતિચાર લગા લેતા હૈ તો ગુરુ મહારાજ
ઉસસે પૂછતે હૈં કિ કયા તુમને અતિચાર લગાયા હૈં તવ શિષ્ય માયા
કપાય કા અવલમ્બન કર કહતા હૈં કિ મેંને કોઈ અતિચાર નહીં લગાયા,
इस प्रकार शिष्य का यह कथन माया कपाय की अपेक्षा लोकोत्तर
भावमृपावाद है (३) । जो वद्वप्रादिक अकल्पनीय हूँ उनमें ये मेरे लिये
कल्पनीय हूँ इस प्रकार कहना यह लोभकपाय की अपेक्षा लोकोत्तर
मृपावाद है । अथवा—मृपावाद इन अन्य प्रकारों से भी चार भेद वाला
है—१ सद्भाव का प्रतिषेध, २ असद्भाव का उद्भावन, ३ अर्थान्तर, ४ गर्हा ।
आत्मा नहीं है पुण्य और पाप नहीं हैं इस प्रकार सत् अर्थ का अपला-
पक वचन सद्भाव प्रतिषेध मृपावाद है १ । आत्मा सर्वव्यापक है अथवा
इयामाक तण्डुल के समान आत्मा है इस प्रकार असत् अर्थ का उद्भावक
वचन असद्भाव का उद्भावनरूप द्वितीय मृपावाद है २ । गो के विषय
में ऐसा कहना कि यह अश्व है इस प्रकार अर्थान्तर का कथक वचन
तृतीय अर्थान्तर नामक मृपावाद है ३ । गर्हा तीन प्रकार की है सावद्य

કોઈ અતિચાર લગાડી લે છે તો ગુરુ મહારાજ એને પૂછે છે કે, શું તને અતિ-
ચાર લાગેલ છે, ત્યારે શિષ્ય માયા કપાયનું અવલંબન કરી કહે છે કે મેં
કોઈ અતિચાર લગાડેલ નથી. આ પ્રકારનું એ શિષ્યનું કથન માયા કપાયની
અપેક્ષા લોકોત્તર ભાવ મૃપાવાદ. (૩) જે વદ્ધ પાત્રાદિક અકલ્પનીય છે એમાં
એ મારા માટે કલ્પનીય છે એમ કહેવું તે લોક કપાયની અપેક્ષા લોકોત્તર મૃપા-
વાદ છે. અથવા—મૃપાવાદ એ અન્ય પ્રકારેથી પણ ચાર ભેદ વાળા છે. ૧ સદ્-
ભાવનો પ્રતિષેધ, ૨ અસદ્ભાવનું ઉદ્ભાવન, ૩ અર્થાન્તર, ૪ ગર્હા. આત્મા નથી,
પુણ્ય અને પાપ નથી, આ પ્રકારનું સાચા અર્થનું અપલાપક વચન સદ્ભાવ
પ્રતિષેધ મૃપાવાદ છે. ૧. આત્મા સર્વ વ્યાપક છે, અથવા સ્યામાક ચોખાના જેવો
આત્મા છે, આ પ્રકારનું અસત્ અર્થનું ઉદ્ભાવક વચન અસદ્ભાવનું ઉદ્ભાવ-
ન રૂપ બીજું મૃપાવાદ છે. ૨. ગાયના વિષયમાં એવું કહેવું કે તે ઘોડો છે.
આ પ્રકારે અર્થાન્તરનું કથન વચન ત્રીજો અર્થાન્તર નામનો મૃપાવાદ છે. ૩. ગર્હા

યથા-કાણં પ્રતિ-‘અયં કાણ’ ઇત્યાદિ । તૃતીયા-આક્રોશરૂપા યથા-‘અરે વાન્ધકિનેય દાસીપુત્ર: ? ’ ઇત્યાદિ । પુનરયં ક્રોધાદિભાવોપલક્ષિતશ્ચતુર્વિધઃ । અત્રેદં વોઘ્યમ્-મૃપાવાદઃ ક્રોધમાનમાયાલોભહાસ્યભયત્રીઢાક્રીડારત્યરતિદાક્ષિણ્યમાત્સર્યવિપાદાદિભિઃ સંભવતિ । પીઢાજનકઃ સત્યવાદોઽપિ મૃપાવાદ ઇતિ । મૃપાભાષણે દોષા ડકાઃ—

ધર્મહાનિરવિશ્વાસો, દેહાર્થવ્યસનં તથા ।

અસત્યભાષિણાં નિન્દા, દુર્ગતિશ્ચોપજાયતે ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

વ્યાપાર પ્રવર્તિની, અપ્રિયા, ઔર આક્રોશરૂપા । ક્ષેત્ર કો જોતો ઇત્યાદિક સાવચ્ચવ્યાપાર મેં પ્રવર્તન કરાને વાલા વચન ગર્હાં કા પ્રથમ ભેદ હૈ । કાને કો કાના કહના યહ ગર્હાં કા દ્વિતીય પ્રકાર હૈ । ‘અરે કુલડા કે પુત્ર’ ઇત્યાદિ વચન ગર્હાં કા તૃતીય પ્રકાર હૈ । ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, હાસ્ય, ભય, ત્રીઢા-(લજ્જા) ક્રીડા, રતિ, અરતિ, દાક્ષિણ્ય, માત્સર્ય ણં વિપાદ આદિ નિમિત્તો કો લેકર મૃપાવાદ મેં મનુષ્યોં કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । જિસ સત્યવચન સે દૂસરોં કી પીઢા ઉપજે એસા સત્યવચન ભી મૃપાવાદ મેં અન્તર્હિત જાનના ચાહિયે । મૃપાવાદ મેં અનેક દોષ હૈ—જેસે કહા હૈ—

“ ધર્મહાનિરવિશ્વાસો, દેહાર્થવ્યસનં તથા ॥

અસત્યભાષિણાં નિન્દા, દુર્ગતિશ્ચોપજાયતે ॥ ૧ ॥ ”

મૃપાવાદ સે ધર્મ કી ક્ષતિ હોની હૈ લોગોં મેં વિશ્વાસ ડઠ જાતા હૈ દેહ ઔર ધન કા નાશ હોતા હૈ । જો અસત્યભાષી હોતે હૈં ડનકી અનેક

ત્રણ પ્રકારની છે. સાવચ વ્યાપાર પ્રવર્તિની, અપ્રિયા અને આક્રોશ રૂપા ક્ષેત્રને જોઈને ઇત્યાદિક સાવચ વ્યાપારમાં પ્રવર્તન કરાવનાર વચન ગર્હાંનો પ્રથમ ભેદ છે. કાણુને કાણુ કહેવો એ ગર્હાંનો બીજો પ્રકાર છે ‘અરે કુલડાના પુત્ર’ ઇત્યાદિ વચન ગર્હાંનો ત્રીજો પ્રકાર છે. ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, હાસ્ય, ભય, લજ્જા ક્રીડા, રતિ, અરતિ, દાક્ષિણ્ય, માત્સર્ય અને વિપાદ આદિ નિમિત્તોને મૃપાવાદમાં મનુષ્યોની પ્રવૃત્તિ થાય છે. જે સત્ય વચનમાં બીજાઓને પીડા ઉપજે એવું સત્ય વચન પણ મૃપાવાદમાં અંતર્હિત જાણવું જોઈ એ મૃપાવાદમાં એનેક દોષ છે. જેવી રીતે કહ્યું છે કે—

“ ધર્મહાનિરવિશ્વાસો દેહાર્થવ્યસનં તથા ।

અસત્યભાષિણાં નિન્દા દુર્ગતિશ્ચોપજાયતે ॥ ૧ ॥ ”

મૃપાવાદથી ધર્મની ક્ષતિ થાય છે, લોકોનો વિશ્વાસ ઊડી જાય છે, દેહ અને ધનનો નાશ થાય છે, જે અસત્ય ભાષી હોય છે તેની અનેક પ્રકારથી

ચ-પુનઃ, અવધારણીમ્-નિશ્ચયાત્મિકાં ભાષાં ન વદેત્-‘ગમિષ્યામ્યેવ’
‘કરિષ્યામ્યેવ’ इत्यादिकां भाषां न ब्रूयादित्यर्थः । यतः—

“अन्नह परिचितिज्जइ, कज्जं परिणमइ अन्नहा चेव ।

विहिवसयाण जियाणं, मुहुत्तमेत्तं पि बहुविग्गं ॥ ૧ ॥

છાયા-અન્યથા પરિચિન્ત્યતે, કાર્થ પરિણમત્યન્યથા ચૈવ ।

विधिवशगानां जीवानां मुहूर्तमात्रमपि बहुविघ्नम् ॥ ૧ ॥

યદ્વા—અવધાર્યતે જ્ઞાયતેડ્યોડનયેત્યવધારણી અવબોધજનિકા ભાષા, સા
ચતુર્વિધા-સત્યા, મૃષા, સત્યામૃષા, અસત્યામૃષા ચ ।

પ્રકાર સે ઇમ્ લોક મેં નિન્દા હોની હૈ ઓર પરલોક મેં ઉન્હેં દુર્ગતિ કી
પ્રાપ્તિ હોની હૈ । અવધારણાત્મક (નિશ્ચયકારી) ‘ભાષા’ કો ચોલના યહ
‘ભી’ એક અસત્ય કા પ્રકાર હૈ-જૈસે-‘ જાઝંગા હી,’ ‘કરૂંગા હી’ ।
અથવા-‘ જાઝંગા ’ ‘ કરૂંગા ’ ઇમ્ પ્રકાર કો ‘ભાષા’ ગુણાદ મેં ઇસલિયે
સમ્મિલિત હો જાતી હૈ કિ—

“અન્નહ પરિચિતિજ્જइ, कज्जं परिणमइ अन्नहा चेव ।

विहिवसाण जियाणं मुहुत्तमेत्तं पि बहुविग्गं” ॥૧॥

ચોલને વાલા વિચારતા કુછ હૈ ઓર હોતા કુછ હૈ । મન મેં અવ-
ધારિત વાત કી પૂર્તિ નહોં હોતી હૈ । વર્ષોં કિ કર્મ વશવર્તીં જીવોં કે
એક મુહૂર્ત મેં ‘ભી’ અનેક વિઘ્ન ઉત્પન્ન હો જાતે હેં । અથવા-“અવધારણ”
શબ્દ કા અર્થ અવબોધ જનક ‘ભી’ હૈ । યહ અવબોધજનક ‘ભાષા’
સત્યા ૧, મૃષા ૨, સત્યામૃષા ૩, एवं असत्यामृषा ૪, કે ભેદ સે

આ લોકમાં નિંદા થાય છે, અને પરલોકમાં તેને દુર્ગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે.
અવધારણાત્મક નિશ્ચયકારી ભાષા બોલવી એ પણ એક અસત્યનો પ્રકાર છે.
જેમ-‘જઈશજ, કરીશજ’ અથવા-‘જઈશ-કરીશ’ આ પ્રકારની ભાષા મૃષાવાદમાં
એ માટે સમાય જાય છે,—

अन्नह परिचितिज्जई कज्जं परिणामइ अन्नहा चेव ।

विहिवसयाण जीयाणं मुहुत्तमेत्तं बहुविग्गं ॥ ૧ ॥

બોલવાવાળો વિચારે છે કાંઈ અને જાને છે કાંઈ, મનમાં અવધારીત
વાતની પૂર્તિ થતી નથી કેમકે, કર્મવશ વર્તીં જીવોને એક ઘડીમાં પણ અનેક
વિઘ્ન ઉત્પન્ન થાય છે. અથવા-“અવધારણ” શબ્દનો અર્થ અવ બોધજનક પણ છે.
અવ બોધજનક ભાષા ૧ સત્યા, ૨ મૃષા, ૩ સત્યામૃષા અને ૪ અસત્યા-
મૃષાના સેદથી ચાર પ્રકારની છે. દેશકાલાદિકની અપેક્ષા જેમાં કાંઈ પ્રકારનો

તત્રારાધની સત્યા । આરાધ્યતે મોક્ષમાર્ગોઽન્યેત્યારાધની યથાવસ્થિતવસ્ત્વ-
ભિધાયિની-યા સર્વજ્ઞમતાનુસારેણ ભાષ્યતે, યથા-અસ્ત્યાત્મા સદસન્નિત્યાનિ-
ત્યાદ્યનેકધર્મયુક્ત ઇત્યાદિ ।

યા તુ વિરાધની વિપરીતવસ્ત્વભિધાયિની સા મૃષા । વિરાધ્યતે મોક્ષમાર્ગોઽન-
યેતિ વિરાધની, સર્વજ્ઞમતપ્રાતિકૂલ્યેન ભાષ્યતે, યથા-‘નાસ્ત્યાત્મા’ યથા વા-
‘એકાન્તનિત્ય આત્મા’ યથા વા-અચૌરે ‘અયં ચૌરઃ’ ઇત્યાદિ । તથા-સત્યાઽપિ
પરપીડોત્પાદિકા, સા પરપીડાઝનકત્વાદ્ મુક્તિવિરાધનાદ્ વા વિરાધની, વિરાધનો-
ત્વાદ્ મૃષા । યથા ચૌરં પ્રતિ-‘અયં ચૌરઃ’ ઇતિ ।

ચાર પ્રકાર કી હૈ । દેશકાલાદિક કી અપેક્ષા જિસમેં કિસી મી પ્રકાર
કા વિસંવાદ ન આસકે एवं વસ્તુકા જો સ્વરૂપ હૈ ઉસે ઉસી
પ્રકાર સે કહને વાલી ભાષા સત્ય ભાષા હૈ । હસ ભાષા સે મોક્ષાભિલાપી
મોક્ષમાર્ગ કી આરાધના કરતે હૈ । જૈસે-આત્મા હૈ ઓર વહ ન
સર્વથા નિત્ય હૈ ઓર ન સર્વથા અનિત્ય હૈ કિન્તુ કથંચિત્ નિત્યા-
નિત્યાત્મક હૈ (૧) હસ પ્રકાર અનેક ધર્મવિશિષ્ટ વસ્તુ કા કથન કરને
વાલી ભાષા હસ કોટિ મેં પરિગણિત હોતી હૈ ? જો ભાષા વિરાધિની
હૈ-વસ્તુ કે વિપરીત સ્વરૂપ કો પ્રતિપાદન કરને વાલી હૈ-વહ મૃષા ભાષા
હૈ । હસકો ચોલને વાલા પ્રાણી કમી મી મુક્તિમાર્ગ કા આરાધક નહીં
હો સકતા હૈ । હસ પ્રકાર કી ભાષા મેં સદા સર્વજ્ઞ મત સે પ્રતિકૂલતા
રહા કરતો હૈ । જૈસે-આત્મા નહીં હૈ । અથવા હૈ મો તો વહ સર્વથા
નિત્ય હૈ વા સર્વથા અનિત્ય હૈ । અથવા જો ચોર નહીં હૈ ઉસકો ‘યહ
ચોર હૈ’ એસા કહના । જો ભાષા સત્ય મો હો-પરન્તુ યદિ ઉસસે દૂસરો
કો પીડા હોતી હો તો વહ મી હસી મૃષાવાદ મેં સમ્મિલિત જાનની ચાહિયે ૨ ।

વિસંવાદ ન આવી શકે અને વસ્તુનું જે સ્વરૂપ છે તેને તેવા પ્રકારથી કહેવા-
વાળી ભાષા સત્ય ભાષા છે આ ભાષાથી મોક્ષાભિલાષી મોક્ષ માર્ગની આરા-
ધના કરે છે. જેમ આત્મા છે અને તે સર્વથા નિત્ય નથી તેમ સર્વથા અનિત્ય
પણ નથી. પરંતુ કયંચિન નિત્યાનિત્યાત્મક છે. આ રીતે અનેક ધર્મ વિશિષ્ટ
વસ્તુનું કથન કરવાવાળી ભાષા આ કોટિમાં પરિગણીત થાય છે (૧) જે ભાષા
વિરાધિની છે વસ્તુના વિપરીત સ્વરૂપને પ્રતિપાદન કરવાવાળી છે. તે મૃષા ભાષા છે.
એને યોલનાર પ્રાણી કદી પણ મુક્તિ માર્ગનો આરાધક બની શકતો નથી.
આ પ્રકારની ભાષામાં સદા સર્વજ્ઞ મતથી પ્રતિકૂળતા રહ્યા કરે છે. જેમ-આત્મા
નથી, અથવા છે તો પણ તે સર્વથા નિત્ય છે વા સર્વથા અનિત્ય છે, અથવા જે
ચોર નથી એને ‘આ ચોર છે’ એમ કહેવું, જે ભાષા સત્ય પણ હોય-પરંતુ
જે એનાથી બીજાને પીડા થતી હોય તો તે પણ આ મૃષાવાદમાં સંમિલિત

યા તુ આરાધનવિરાધની સા સત્યમૃષા-આરાધની ચાસૌ વિરાધની ચ આરાધનવિરાધની, 'કર્મધારયત્વાત્ પુંચ્ચાવઃ । યથાચસ્થિતવસ્તુતત્ત્વાભિધાયિની વિપરીતવસ્તુભિધાયિની ચેત્યુભયસ્યમાત્રા સત્યામૃષા । યથા-ઋર્મિશ્ચિન્નગરે પચ્ચસુ દારકેષુ જાતેષુ ઇવમભિધીયતે ' અસ્મિન્નગરેઽઘ દશ દારકા જાતાઃ ' ઇતિ સા આરાધનવિરાધની । ઇયં હિ પચ્ચાનાં દારકાણાં યજ્જન્મ, તાવતાંશેન સંવાદન-સંભવાદારાધની, દશ ન પૂર્યન્તે ઇત્યેતાવતાંઽશેન વિસંવાદસંભવાદ્ વિરાધની ભવતિ । યદ્વા-શ્વસ્તે શતં દાસ્યામીત્યભિધાય પચ્ચાશત્સ્વપિ દત્તેષુ લોકે મૃષાત્વાદર્શનાત્, અદત્તેષ્વેવ ચ મૃષાત્વસિદ્ધેઃ, સર્વથા પ્રદાનક્રિયાઽભાવેન સર્વથાવ્યત્યયાત્ ।

જો ભાષા આરાધની મી હો ઓર વિરાધિની હો વહ સત્યમૃષા ભાષા હૈ । સત્યભાષા કા નામ આરાધિની હૈ ઓર મૃષાભાષા કા નામ વિરાધિની હૈ । ઇન દોનોં સ્વરૂપવાલી જો ભાષા હૈ વહ સત્યામૃષા ભાષા હૈ જૈસે યહ કહના કિ આજ ઇસ ગાંવ મેં દશ ચાલક ઉત્પન્ન હુણ હૈં । ડસ ગાંવ મેં પાંચ હી ચાલક ઉત્પન્ન હુણ થે । તય ઇસા કહના સત્યામૃષા સ્વરૂપ ઇસલિયે હૈ, કિ દશ કે કહને મેં પાંચ કા અન્તર્ભાવ તો હો હી જાતા હૈ અતઃ ઇતને અંશકી અપેક્ષા યહ વચન સત્ય હૈ પરન્તુ દશ ચાલક હુણ નહીં હૈં ઇતને અંશ મેં વહ મૃષા હૈ । અથવા ઇસા કહના કિ “શ્વસ્તે શતં દાસ્યામિ” મેં કલ તુમ્હે સો (૧૦૦) રૂપયે ડૂંગા । ઇસમેં સો રૂપયે ન દેકર વહ યદિ પચાસ રૂપયે હો દે દેતા હૈ તો ઇસપ્રકાર કે વ્યવહાર કો લોક મેં અસત્ય મેં પરિગણિત નહીં કિયા જાતા હૈ । જિતના ભાગ નહીં દિયા ગયા હૈ ડસી મેં અસત્યતા આતી હૈ । હાં યદિ વહ ચિલકુલ ન દેતા તો યહ ભાષા

બાણુવી બેઈ એ. (૨) જે ભાષા આરાધની પણ હોય અને વિરાધની પણ હોય તે સત્યામૃષા ભાષા છે. સત્યભાષાતું નામ આરાધિની છે અને મૃષા ભાષાતું નામ વિરાધિની છે. આ બન્ને સ્વરૂપવાળી જે ભાષા છે તે સત્યામૃષા ભાષા છે. જેમ એવું કહેવું કે, આજ આ ગામમાં ૧૦ બાળક જન્મ્યાં છે. કેઈ ગામમાં પાંચ જ બાળક જન્મ્યાં હતાં. ત્યારે એવું કહેવું સત્યામૃષા સ્વરૂપ આ માટે છે કે, દશના કહેવામાં પાંચનો અંતર્ભાવ તો થઈ જાય છે. આથી આટલા અંશની અપેક્ષા આ વચન સત્ય છે પરંતુ ઇસ બાળક જન્મ્યાં નથી એટલા અંશે એ મૃષા છે. અથવા જેમ કહેવું કે હું “કાલે તમને સો રૂપીયા આપીશ,” આમાં સો ન આપતાં બે ૫૦ રૂપીયા પણ આવે તો આ પ્રકારના વ્યવહારમાં લોકોમાં અસત્ય બોલનાર તરીકેની ગણના નથી થતી, એટલે ભાગ આપવામાં ન આવે એટલા પુરતી એમાં અસત્યતા આવે છે, પણ

યા તુ નૈવાઽસત્યા નાપિ સત્યા સા અસત્યામૃષા નામ ચતુર્થીભાષાવ્યવહારરૂપા ।
તત્ર પ્રથમા ચતુર્થી ચ ભાષા ભાષનીયા । ચતુર્થી-અસત્યામૃષા ભાષા-આમન્વ-
ણ્યાદિભેદયુક્તા । તત્ર કોઽસાવામન્વણ્યાદિભેદઃ ? ઉચ્યતે-અયમર્થો ભગવત્યામુક્તઃ ।
યથા-“અહં ભંતે ! આસઙ્સામો સઙ્સામો ચિદ્વિસ્સામો નિસીઙ્સામો તુયદ્વિસ્સામો ।

આમંતણિ આણવળી, જાયણિ તહ પુચ્છળી ય પળવળી ।
પચ્ચક્વાળી ભાસા, ભાસા ઇચ્છાણુલોમા ય ॥ ૧ ॥
અણભિગ્ગહિયા ભાસા, ભાસા ય અભિગ્ગહમ્મિ વોદ્ધન્વા ।
સંસયકરળી ભાસા, વોયડમન્વોયડા ચેવ ॥ ૨ ॥
પન્નવળી ણં એસા, ન એસા ભાસા મોસા ? ।

મૃષા મેં હી અન્તર્ભૂત હો જાતો (૩) । જો ન સત્ય છે, ઓર ન અસત્ય
હૈં એસી ભાષા કા નામ અસત્યામૃષા-અર્થાત્ વ્યવહાર ભાષા હૈં ૪ ।
इनमें प्रथम एवं चतुर्थ भाषा बोलने योग्य है । चौथी जो असत्यामृषा
भाषा है वह आमन्त्रणी आदि भेदों से अनेक प्रकार की कही गई है ।
इसी विषय को भगवान ने भगवतीसूत्रमें कहा है-

अहं भंते ! आसङ्गसामो सङ्गसामो चिद्विस्सामो निसीङ्गसामो
तुयद्विस्सामो ।

આમંતણિ આણવળી, જાયણિ તહ પુચ્છળી ય પળવળી ।
પચ્ચક્વાળી ભાસા, ભાસા ઇચ્છાણુલોમા ય ॥ ૧ ॥
અણભિગ્ગહિયા ભાસા, ભાસા ય અભિગ્ગહમ્મિ વોદ્ધન્વા ।
સંસયકરળી ભાસા, વોયડમન્વોયડા ચેવ ॥ ૨ ॥
પન્નવળી ણં એસા, ન એસા ભાસા મોસા ? ।

ન દેત તો એ ભાષા મૃષામાં જ અંતર્ભૂત બની જાત. (૩) જે ન સત્ય છે અને
ન અસત્ય છે એવી ભાષાનું નામ અસત્યામૃષા-અર્થાત્ વ્યવહાર ભાષા છે. (૪)
આમાં પ્રથમ અને ચોથી ભાષા બોલવા યોગ્ય છે. ચોથી જે અસત્યામૃષા ભાષા
છે, તેને આમન્ત્રણી આદિ લેદોથી અनेक प्रकारની કહેવામાં આવે છે. આ વિષયને
ભગવાને ભગવતી સૂત્રમાં કહેલ છે-

अहं भंते आसङ्गसामो सङ्गसामो चिद्विस्सामो निसीङ्गसामो तुयद्विस्सामो ।

આમંતણિ આણવળી, જાયણિ તહ પુચ્છળી ય પળવળી ।

પચ્ચક્વાળી ભાસા, ભાસા ઇચ્છાણુ લોમાય ॥ ૧ ॥

અણભિગ્ગહિયા ભાસા, ભાસા ય અભિગ્ગહમ્મિ વોદ્ધન્વા ।

સંસયકરળી ભાસા, વોયડમન્વોયડા ચેવ ॥ ૨ ॥

પન્નવળી ણં એસા, ન એસા ભાસા મોસા ? ।

હંતા ! ગોયમા ! આસહસ્સામો તં ચેવં જાવ ન ઇસા ભાસા મોસા ।
(મં ૧૦ શ૦ ૩ ઉ૦ ૪૦૩ સૂ૦)

છાયા—અથ ભદન્ત ! આશયિષ્યામહે શયિષ્યામહે સ્થાસ્યામઃ નિપત્સ્યામઃ
ત્વગ્વર્તયિષ્યામઃ ।

આમન્ત્રણી આજ્ઞાપની યાચની તથા પ્રચ્છની ચ પ્રજ્ઞાપની ।

પ્રત્યાખ્યાની ભાષા, ભાષા ઇચ્છાનુલોમા ચ ॥ ૧ ॥

અનભિગૃહીતા ભાષા, ભાષા ચાભિગ્રહે ચોદ્ધવ્યા ।

સંશયકરણી ભાષા, વ્યાકૃતા અવ્યાકૃતા ચેવ ॥ ૨ ॥

પ્રજ્ઞાપનો સ્વલુ ઇષા, નૈષા ભાષા મૃષા ? ।

હંત ! ગૌતમ ! આશયિષ્યામહે તદેવ યાવત્ નૈષા ભાષા મૃષા ।

વ્યાખ્યા—‘અથ’ એટલે પ્રશ્નાર્થકઃ । ભદન્ત ! હે ભગવન્ ! ઇત્યેવં શ્રી મહાવીરં ગૌતમઃ
પૃચ્છતિ—આશ્રયિષ્યામહે=આશ્રયણીયં વસ્તુ સ્વીકરિષ્યામઃ, શયિષ્યામહે=વિશેષતઃ
શયનં કરિષ્યામહે, સ્થાસ્યામઃ—ઊર્ધ્વસ્થાનેન સ્થાસ્યામઃ, નિપત્સ્યામઃ=ઉપવેશ્યામઃ ।
ત્વગ્વર્તયિષ્યામઃ—સંસ્તારકે પાર્શ્વવર્તનં કરિષ્યામઃ, યદ્વા—આશ્રયિષ્યામઃ=
આશ્રયણીયં સ્થાનાદિકં સ્વીકરિષ્યામઃ । ઇત્યાદિકા ભાષા કિં પ્રજ્ઞાપની ? ઇત્યન્વયઃ
ઇદમ્પલક્ષણમ્ । એવંજાતીયા ભાષાવિશેષાઃ કિં પ્રજ્ઞાપનોરૂપાઃ ? એતિ ભાવઃ ।

હંતા ! ગોયમા ! આસહસ્સામો તં ચેવં જાવ ન ઇસા ભાસા મોસા
(મં. ૧૦ શ૦ ૩ ઉ. ૪૦૩ સૂત્ર)

ભગવાન મહાવીર સે ગૌતમ પૂછતે હૈં કિ—હે ભગવન્ ! હમ આશ્રય-
યોગ્ય વસ્તુ કા આશ્રય લેંગે, શયન કરેંગે, સ્વપ્ને રહેંગે, ચેઠેંગે, કરવટ બદલેંગે
ઇત્યાદિક ભાષા, તથા આમંત્રણી આદિ ભાષા કયા પ્રજ્ઞાપની ભાષા હૈ ? યહ
ભાષા મૃષા નહીં હૈ ? । આમન્ત્રણી આદિ ભાષાઓં કે નામ યે હૈં—૧ આમંત્રણી,
૨ આજ્ઞાપની, ૩ યાચની, ૪ પ્રચ્છની, ૫ પ્રજ્ઞાપની, ૬ પ્રત્યાખ્યાની, ૭ ઇચ્છા-
નુલોમા, ૮ અનભિગૃહીતા, ૯ અભિગૃહીતા, ૧૦ સંશયકરણી, ૧૧ વ્યાકૃતા,
૧૨ અવ્યાકૃતા । હિસ પ્રકાર ગૌતમ સ્વામી કે પૂછને પર ભગવાન્ ઉત્તર

હંતા ગોયમા ! આસહસ્સામો તં ચેવં જાવ ન ઇસા ભાસા મોસા (મં. ૧૦ શ. ૩ ઉ. ૪૦૩ સૂત્ર)

ભગવાન મહાવીરને ગૌતમ પૂછે છે કે હે ભગવાન ! અમે સુધૃશું, વધું
સુધૃશું, ઉભા રહિશું, બેસશું, કરવટ બદલશું, ઇત્યાદિક ભાષા તથા આમંત્રણી
આદિ ભાષા શું પ્રજ્ઞાપની ભાષા છે ? આ ભાષા મૃષા નથી ?

આમંત્રણી આદિ ભાષાઓનાં નામ આ છે—૧ આમંત્રણી ૨ આજ્ઞાપની
૩ યાચની ૪ પ્રચ્છની ૫ પ્રજ્ઞાપની ૬ પ્રત્યાખ્યાની ૭ ઇચ્છાનુલોમા ૮ અનભિગૃહીતા
૯ અભિગૃહીતા, ૧૦ સંશયકરણી, ૧૧ વ્યાકૃતા, ૧૨ અવ્યાકૃતા. આ ગૌતમ

તત્ર-આમન્ત્રણી-યથા 'હે સાધો !' ઇત્યાદિ । એપા ચ ક્રિઠ વસ્તુનોઽવિધા-
યકત્વાદનિપેધકત્વાચ સત્યાદિભાષાત્રયલક્ષણત્રિયોગતથાઽસત્યામૃપા વ્યવહારરૂપા ૧ ।

આજ્ઞાપની-કાર્યે પરસ્ય પ્રવર્તની યથા " હં કુરુ " " હં મા કુરુ " ઇત્યાદિ । એપા ચ નિર્દિષ્ટકાર્યપ્રવર્તકત્વાદદુષ્ટવિવક્ષાસદ્ભાવાચાઽસત્યામૃપા ।
એવમન્યત્રાપિ ભાવનીયમ્ ॥ ૨ ॥

યાચની-અનિર્દિષ્ટવસ્તુવિશેષસ્ય દેહીત્યેવં યાચનરૂપા । યથા-
" ભિક્ષાં દેહિ " ॥ ૩ ॥

પ્રચ્છની-અવિજ્ઞાતસ્ય સંદિગ્ધસ્ય વાઙ્મ્યસ્ય જ્ઞાનાર્થ પ્રચ્છનમ્ । યથા-
" કથમેતત્ " ? ॥ ૪ ॥

દેતે હૈં કિં હે ગૌતમ ! પૂર્વોક્ત પ્રકાર કો ભાષા પ્રજ્ઞાપની ભાષા હૈં, કિન્તુ
યહ ભાષા મૃપા નહીં હૈં । આમન્ત્રણી આદિ ભાષાઓં કા અર્થ કહતે હૈં-

આમન્ત્રણી-' હે સાધો !' ઇત્યાદિ । યહ કિસી વસ્તુ કી અવિધાયક
એવં અનિપેધક હોને સે, તથા સત્યાદિ ત્રીન ભાષા કે લક્ષણ સે રહિત
હોને સે અસત્યામૃપાસ્વરૂપ વ્યવહાર ભાષા હૈં ૧ । આજ્ઞાપની-દૂસરે કો
કાર્ય મેં પ્રવૃત્ત કરાને વાલી ભાષા આજ્ઞાપની ભાષા હૈં । જૈસે-' યહ કરો,
યહ મત કરો ' ઇત્યાદિ । યહ ભાષા નિર્દિષ્ટકાર્ય મેં પ્રવર્તક હોને સે તથા
નિર્દોષ વિવક્ષા કે સદ્ભાવ સે અસત્યામૃપા-સ્વરૂપ હૈં ૨ । યાચની-"ભિક્ષા
દો" ઇસ પ્રકાર કી યાચનસ્વરૂપ ભાષા યાચની ભાષા હૈં ૩ । પ્રચ્છની-
અવિજ્ઞાત-અર્થાત્-વિના જાને હુએ વિષય કો, અથવા સંદિગ્ધ અર્થાત્-
સંદેહયુક્ત વિષય કો જાનને કે લિયે જો પૂછના વહ પ્રચ્છની ભાષા હૈં ૪ ।

સ્વામીના પુછવાથી ભગવાન ઉત્તર દે છે કે હે ગૌતમ પૂર્વોક્ત પ્રકારની ભાષા પ્રજ્ઞા-
પનીભાષા છે પરંતુ આ ભાષા મૃપા નથી. આમન્ત્રણી વગેરે ભાષાઓના અર્થ કહે છે.

અમન્ત્રણી-હે સાધો ! ઇત્યાદિ ! આ કોઈ વસ્તુની અવિધાયક અને અનિપેધક
હોવાથી, તથા સત્યાદિ ભાષાત્રયના લક્ષણથી રહિત હોવાથી અસત્યામૃપા સ્વરૂપ વ્યવ-
હાર ભાષા છે. ૧ આજ્ઞાપની-ખીબને કાર્યમાં પ્રવૃત્ત કરાવવાવાળી ભાષા આજ્ઞાપની
ભાષા છે. જેમ-આ કરો, આ ન કરો, ઇત્યાદિ ! આ ભાષા નિર્દિષ્ટકાર્યમાં પ્રવર્તક
હોવાથી તથા નિર્દોષ વિવક્ષાના સદ્ભાવથી અસત્યામૃપા સ્વરૂપ છે. ૨ યાચની-
" ભિક્ષાદો " આ પ્રકારની યાચના સ્વરૂપ ભાષા યાચનીભાષા છે. ૩ પ્રચ્છની-
અવિજ્ઞાત, અર્થાત્ જાણવા વગરના વિષયની અથવા -સંદિગ્ધ અર્થાત્-સંદેહયુક્ત
વિષયને જાણવા માટે જે પૂછવું તે પૂછની ભાષા છે. ૪ પ્રજ્ઞાપની-શિખ્યને ઉપ-

પ્રજ્ઞાપની-વિનયસ્થોપદેશદાનરૂપા, અર્થચોધિકા ભાષા, યથા-હિંસામવૃત્તો-
ડન્તદુઃસ્વભાગી ભવતિ ” ઇત્યાદિ । યથા ચા-પ્રાણિવધાન્નિવૃત્તાઃ પ્રાણિનો મન્વે
મન્વે દીર્ઘાયુષો નીરોગાથ ભવન્તિ । ઉક્તચ--

પ્રાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મર્દ પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિં ॥ ૧ ॥ ૫ ॥

છાયા-પ્રાણિવધાદ્ નિવૃત્તા, ભવન્તિ દીર્ઘાયુષઃ અરોગાથ ।

એપા મતિઃ પ્રજ્ઞાપા, પ્રજ્ઞાપની ચીતરાગેઃ ॥ ૧ ॥

પ્રત્યાખ્યાની-ભાષા-યાચમાનસ્ય પ્રતિપેધ વચનમ્ । યથા-મર્યાદાતિરિક્તં વસ્ત્ર
પાત્રં વા યાચમાનં શિષ્યં પ્રતિ ગુરુર્વદતિ-“અધિકં વસ્ત્રં પાત્રં વા ન દીયતે” ઇતિ ॥૬॥

પ્રજ્ઞાપનો-શિષ્ય કો ઉપદેશ દેને સ્વરૂપ જો ભાષા હોતી છે કે જિસસે
ઉસે અર્થ કા અવચોધ હોના છે ઉમકા નામ પ્રજ્ઞાપની ભાષા છે । જૈસે-“ જો
હિંસા મેં પ્રવૃત્ત હોતા છે વહ અનંત દુઃસ્વ કા ભાગી હોતા છે ” અથવા
જો પ્રાણિવધ સે દૂર રહતે હૈં વે ભવ ભવ મેં દીર્ઘ આયુ પાતે હૈં તથા
નિરોગ શરીર હોતે હૈં ૫ । ઉક્તચ--

“પ્રાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મર્દ પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિં ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજ કે પામ યાચના કરતે હુપ શિષ્ય કે
લિયે જો નિષેધાત્મક ભાષા કા પ્રયોગ હોતા છે વહ પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે,
જૈસે-મર્યાદા સે અતિરિક્ત વસ્ત્ર એવં પાત્ર કો યાચને વાલે શિષ્ય કો
ગુરુ મહારાજ કહતે હૈં કે-મર્યાદા સે અધિક વસ્ત્ર વ પાત્ર નહીં દિયા
જાતા છે ” ઇત્યાદિ ૬ । ઇચ્છાનુલોમા-પ્રતિપાદન કરને વાલે કી અર્થાત્

દેશ આપવા સ્વરૂપ જે ભાષા હોય છે તે જેનાથી તેને અર્થનો અવબોધ થાય છે.
એતુ નામ પ્રજ્ઞાપનીભાષા છે જેમ-“ જે હિંસામાં પ્રવૃત્ત બને છે તે અનંત
દુઃખનો ભાગી થાય છે ” અથવા જે પ્રાણી વધથી દૂર રહે છે તે લવોલવમાં
દીર્ઘાયુ લોગવે છે તથા શરીરે નિરોગી રહે છે. ૫ કહ્યું છે કે--

“પ્રાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મર્દ પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિં ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજની પાસે યાચના કરનાર શિષ્યને માટે જે
નિષેધાત્મક ભાષાનો પ્રયોગ હોય છે તે પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે. જેમ-મર્યાદાથી
અતિરિક્ત વસ્ત્ર અને પાત્રની યાચના કરનાર શિષ્યને ગુરુ મહારાજ કહે છે કે.
મર્યાદાથી વધુ વસ્ત્ર અને પાત્ર દેવામાં આવતું નથી. (૬) ઇત્યાદિ । ઇચ્છાનુલોમા-

इच्छानुलोमा-प्रतिपादयितुयां इच्छा तदनुलोमा-तदनुकूल। यथा शुभकार्ये प्रेरितस्य “एवमस्तु ममाप्यभिप्रेतमेतत्” एवं रूपा, यथा वा कश्चित् किञ्चित् शुभ-
कार्यमारभमाणः कंचन पृच्छति, स प्राह-‘भवान् करोतु ममाप्येतदभिप्रेतम्’ इति।
यथा वा-केनचित् कश्चिदुक्तः-“साधुसकाशं गच्छामः” स वदति-एवमस्तु इति॥७॥

अनभिगृहीता-अर्थमनभिगृह्य योज्यते ‘इत्थ्यादिवत्’। अथवा-अन-
भिगृह्य यत्र न प्रतिनियतार्थावधारणम्। यथा-बहुपुकार्येष्ववस्थितेषु कश्चित् कंचन
पृच्छति-किमिदानीं करोमि?, स प्राह-‘यत् रोचते तत् कुरु’ इति ॥ ८ ॥

अभिगृहीता-अर्थमभिगृह्य योज्यते-इदं वस्त्रपात्रादિકं धर्मोપकरणम्, अथवा

પ્રેરક કી ઇચ્છા કે અનુકૂલ જો ખાપા ચોલી જાતી હૈ વહ ‘इच्छानुलोमा’
ખાપા હૈ-જૈસે કોई किसी को किसी शुभ कार्यमें प्रेरणा करे तब वह
कहे कि ‘ठीक है यह मुझे भी अभिलपित है’। अथवा कौई किसी
शुभ कार्य का प्रारंभ करते हुए किसी को पूछे तो वह कहे कि-करो
यह मुझे भी पसंद है। अथवा-कौई ऐसा कहे-‘मैं साधु के पास जा रहा
हूँ’ तो सुनने वाला कहता है कि अच्छा जाओ ७। अनभिगृहीता-
अर्थशून्य-इत्थ्यडिदित्यादि शब्दों का बोलना। अथवा जिसमें किसी
एक अर्थ का निश्चय न हो जैसे-बहुनसे कार्यों के उपस्थित होने पर
कौई किसी से जब यह पूछता है कि-‘कहो मैं इस समय कौनसा
काम करूँ?’ तो वह कहता है कि-जो तुम्हें रुचे सो करो’। इस
प्रकार की ‘खापाका’ नाम अनभिगृहीता ‘खापा’ है ८। अभिगृहीता-अर्थ
को लक्ष्य करके जिस ‘खापाका’ प्रयोग किया जाता है वह अभिगृहीता
‘खापा’ है-जैसे ‘ये वस्त्र पात्रादिक धर्म के उपकरण हैं’। अथवा ‘इस

પ્રતિપાદન કરવાવાળાની અર્થાત-પ્રેરકની ઇચ્છાને અનુકૂળ જે લાપા બોલાય છે તે
‘इच्छानुलोमा’ લાપા છે. જેમ-કોઈ કોઈને કોઈ શુભ કાર્યમાં પ્રેરણા કરે ત્યારે
કહે કે ઠીક છે. એ મારી પણ અભિલાપા છે અથવા-કોઈ શુભ કાર્યનો પ્રારંભ
કરતાં કોઈને પૂછે તો તે કહે કે-કરો. એ મને પણ પસંદ છે. અથવા કોઈ એમ
કહે કે હું સાધુની પાસે જઈ રહ્યો છું તો સાંભળનાર કહે કે, સારું જાન. ૭
અનભિગૃહિતા-અર્થશૂન્ય-“इत्थं उदित्यादि” શબ્દ બોલવો અથવા જેમાં કોઈ
એક અર્થનો નિશ્ચય ન હોય, જેમ-ઘણાં કામો ઉપસ્થિત થતાં કોઈ બીજાને ત્યાં
એ પૂછે છે કે, કહો હું આ વખતે કયું કામ કરું, તો તે કહે છે કે, જે તમને
રુચે તે કરો. આ પ્રકારની લાપાનું નામ અનભિગૃહિતા લાપા છે. ૮ અભિગૃહિતા-
અર્થનું લક્ષ કરીને જે લાપાનો પ્રયોગ કરવામાં આવે છે તે ‘અભિગૃહિતા’
લાપા છે. જેમ-“આ વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મનાં ઉપકરણ છે” અથવા ‘આ સમયે

પ્રજ્ઞાપની-વિનયસ્યોપદેશદાનરૂપા, અર્થબોધિકા ભાષા, યથા-હિંસાપ્રવૃત્તો-
જન્તદુઃસ્વભાગી ભવતિ ” इत्यादि । यथा वा-प्राणिवधान्निवृत्ताः प्राणिनो भवे
भवे दीर्घायुषो नीरोगाश्च भवन्ति । उक्तञ्च—

પાણિવહાડ નિયત્તા, હવંતિ દીહાડ યા અરોગા ય ।

एस मई पन्नत्ता, पन्नवणी वीयरामेहिं ॥ १ ॥ ५ ॥

છાયા-પ્રાણિવધાદ્ નિવૃત્તા, ભવન્તિ દીર્ઘાયુષઃ અરોગાશ્ચ ।

एषा मतिः प्रज्ञप्ता, प्रज्ञापनी वीतरामेः ॥ १ ॥

પ્રત્યાખ્યાનીભાષા-યાચમાનસ્ય પ્રતિપેદ્ય વચનમ્ । યથા-મર્યાદાતિરિક્તં વસ્ત્રં
પાત્રં વા યાચમાનં શિષ્યં પ્રતિ ગુરુર્વદતિ-“અધિકં વસ્ત્રં પાત્રં વા ન દીયતે” इति ॥ ૬ ॥

પ્રજ્ઞાપનો-શિષ્ય કો ઉપદેશ દેને સ્વરૂપ જો ભાષા હોતી છે કે જિસસે
ઉસે અર્થ કા અવબોધ હોતા છે ઉસકા નામ પ્રજ્ઞાપની ભાષા છે । જૈસે-“ જો
હિંસા મેં પ્રવૃત્ત હોતા છે વહ અનંત દુઃસ્વ કા ભાગી હોતા છે ” અથવા
જો પ્રાણિવધ સે દૂર રહતે હૈં વે ભવ ભવ મેં દીર્ઘ આયુ પાતે હૈં તથા
નિરોગ શરીર હોતે હૈં ૫ । ઉક્તંચ—

“પાણિવહાડ નિયત્તા, હવંતિ દીહાડયા અરોગા ય ।

एस मई पन्नत्ता, पन्नवणी वीयरामेहिं ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજ કે પાસ યાચના કરતે હુણ શિષ્ય કે
લિયે જો નિપેદ્યાત્મક ભાષા કા પ્રયોગ હોતા છે વહ પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે,
જૈસે-મર્યાદા સે અતિરિક્ત વસ્ત્ર એવં પાત્ર કો યાચને વાલે શિષ્ય કો
ગુરુ મહારાજ કહતે હૈં કે-મર્યાદા સે અધિક વસ્ત્ર વ પાત્ર નહીં દિયા
જાતા છે ” इत्यादि ६ । इच्छानुलोमा-प्रतिपादन करने वाले की अर्थात्

દેશ આપવા સ્વરૂપ જે ભાષા હોય છે તે જેનાથી તેને અર્થનો અવબોધ થાય છે.
એવું નામ પ્રજ્ઞાપનીભાષા છે જેમ-“ જે હિંસામાં પ્રવૃત્ત બને છે તે અનંત
દુઃખનો ભાગી થાય છે ” અથવા જે પ્રાણી વધથી દૂર રહે છે તે લવોલવમાં
દીર્ઘાયુ ભોગવે છે તથા શરીર નિરોગી રહે છે. ૫ કહ્યું છે કે—

“પાણિવહાડ નિયત્તા, હવંતિ દીહાડ યા અરોગા ય ।

एस मई पन्नत्ता, पन्नवणी वीयरामेहिं ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજની પાસે યાચના કરનાર શિષ્યને માટે જે
નિપેદ્યાત્મક ભાષાનો પ્રયોગ હોય છે તે પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે. જેમ-મર્યાદાથી
અતિરિક્ત વસ્ત્ર અને પાત્રની યાચના કરનાર શિષ્યને ગુરુ મહારાજ કહે છે કે.
મર્યાદાથી વધુ વસ્ત્ર અને પાત્ર દેવામાં આવતું નથી. (૬) इत्यादि । इच्छानुलोमा-

इच्छानुलोमा-प्रतिपादयितुर्था इच्छा तदनुलोमा-तदनुकूल। यथा शुभकार्ये प्रेरितस्य “एवमस्तु ममाप्यभिप्रेतमेतत्” एवं रूपा, यथा वा कश्चित् किञ्चित् शुभ-
कार्यमारभमाणः कंचन पृच्छति, स प्राह-‘भवान् करोतु ममाप्येतदभिप्रेतम्’ इति।
यथा वा-केनचित् कश्चिदुक्तः-“साधुसकाशं गच्छामः” स वदति-एवमस्तु इति॥७॥

अनभिगृहीता-अर्थमनभिगृह्य योच्यते ‘इत्थ्यादिवत्’। अथवा-अन-
भिगृह्य यत्र न प्रतिनियतार्थावधारणम्। यथा-बहुपुकार्येष्ववस्थितेषु कश्चित् कचन
पृच्छति-किमिदानीं करोमि?, स प्राह-‘यत् रोचते तत् कुरु’ इति ॥ ८ ॥

अभिगृहीता-अर्थमभिगृह्य योच्यते-इदं वस्त्रपात्रादિકं धर्मोપकरणम्, अथवा
પ્રેરક કી ઇચ્છા કે અનુકૂલ જો ભાષા બોલી જાતી હૈ વહ ‘इच्छानुलोमा’
‘ભાષા’ હૈ-જૈસે કોઈ કિસી કો કિસી શુભ કાર્યમે પ્રેરણા કરે તવ વહ
કહે કિ ‘ઠીક હૈ યહ સુજે બી અભિલપિત હૈ’। અથવા કોઈ કિસી
શુભ કાર્ય કા પ્રારંભ કરતે હુઁ કિસી કો પૂછે તો વહ કહે કિ-કરો
યહ સુજે બી પસંદ હૈ। અથવા-કોઈ એસા કહે-‘મૈ સાધુ કે પાસ જા રહા
હું’ તો સુનને વાલા કહતા હૈ કિ અચ્છા જાઓ ૭। અનભિગૃહીતા-
અર્થશૂન્ય-ઈત્થઈવિત્થાદિ શબ્દો કા બોલના। અથવા જિસમે કિસી
એક અર્થ કા નિશ્ચય ન હો જૈસે-યદ્યુતસે કાર્યો કે ઉપસ્થિત હોને પર
કોઈ કિસો સે જવ યહ પૂછતા હૈ કિ-‘કહો મૈ ઇસ સમય કૌનસા
કામ કરું?’ તો વહ કહતા હૈ કિ-જો તુમ્હે રુચે સો કરો’। ઇસ
પ્રકાર કી ‘ભાષા’કા નામ અનભિગૃહીતા ‘ભાષા’ હૈ ૮। અભિગૃહીતા-અર્થ
કો લક્ષ્ય કરકે જિસ ‘ભાષા’કા પ્રયોગ કિયા જાતા હૈ વહ અભિગૃહીતા
‘ભાષા’ હૈ-જૈસે ‘યે વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મ કે ઉપકરણ હું’। અથવા ‘ઇસ

પ્રતિપાદન કરવાવાળાની અર્થાત્-પ્રેરકની ઇચ્છાને અનુકૂળ જે ભાષા બોલાય છે તે
‘इच्छानुलोमा’ ભાષા છે. જેમ-કોઈ કોઈને કોઈ શુભ કાર્યમાં પ્રેરણા કરે ત્યારે
કહે કે ઠીક છે. એ મારી પણ અભિલાષા છે અથવા-કોઈ શુભ કાર્યનો પ્રારંભ
કરતાં કોઈને પૂછે તો તે કહે કે-કરો એ મને પણ પસંદ છે. અથવા કોઈ એમ
કહે કે હું સાધુની પાસે જઈ રહ્યો છું તો સાંભળનાર કહે કે, સારું ભવ. ૭
અનભિગૃહીતા-અર્થશૂન્ય-“इत्थि उपित्थादि” શબ્દ બોલવો અથવા જેમાં કોઈ
એક અર્થનો નિશ્ચય ન હોય, જેમ-ઘણાં કામે ઉપસ્થિત થતાં કોઈ બીજાને જ્યારે
એ પૂછે છે કે, કહો હું આ વખતે કયું કામ કરું, તો તે કહે છે કે, જે તમને
રુચે તે કરો. આ પ્રકારની ભાષાનું નામ અનભિગૃહીતા ભાષા છે. ૮ અભિગૃહીતા-
અર્થનું લક્ષ કરીને જે ભાષાનો પ્રયોગ કરવામાં આવે છે તે ‘અભિગૃહીતા’
ભાષા છે. જેમ-“આ વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મનાં ઉપકરણ છે” અથવા ‘આ સમયે

પ્રજ્ઞાપની-ચિનયસ્યોપદેશદાનરૂપા, અર્થબોધિકા ભાષા, યથા-હિંસાપ્રવૃત્તો-
જનન્તદુઃખભાગી ભવતિ ” इत्यादि । यथा वा-प्राणिवधान्निवृत्ताः प्राणिनो भवे
भवे दीर्घायुषो नीरोगाश्च भवन्ति । उक्तञ्च—

पाणिवहाउ नियत्ता, हवंति दीहाउ या अरोगा य ।

एस मई पन्नत्ता, पन्नवणी वीयरगेहिं ॥ १ ॥ ५ ॥

છાયા-પ્રાણિવધાદ્ નિવૃત્તા, ભવન્તિ દીર્ઘાયુષઃ અરોગાશ્ચ ।

एषा मतिः प्रज्ञप्ता, प्रज्ञापनी वीतरागैः ॥ १ ॥

પ્રત્યાખ્યાની-ભાષા-યાચમાનસ્ય પ્રતિપેધ વચનમ્ । યથા-મર્યાદાતિરિક્તં વસ્ત્રં
પાત્રં વા યાચમાનં શિષ્યં પ્રતિ ગુરુર્હદતિ-“અધિકં વસ્ત્રં પાત્રં વા ન દીયતે” इति ॥ ६ ॥

પ્રજ્ઞાપનો-શિષ્ય કો ઉપદેશ દેને સ્વરૂપ જો ‘ભાષા’ હોતી છે કે જિસસે
उसे अर्थ का अवबोध होता है उसका नाम प्रज्ञापनी भाषा है । जैसे-“ जो
हिंसा में प्रवृत्त होता है वह अनन्त दुःख का भागी होता है ” अथवा
जो प्राणिवध से दूर रहते हैं वे भव भव में दीर्घ आयु पाते हैं तथा
निरोग शरीर होते हैं ५ । उक्तञ्च—

“ पाणिवहाउ नियत्ता, हवंति दीहाउया अरोगा य ।

एस मई पन्नत्ता, पन्नवणी वीयरगेहिं ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજ કે પાસ યાચના કરતે હુણ શિષ્ય કે
લિયે જો નિપેદાત્મક ભાષા કા પ્રયોગ હોતા છે વહ પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે,
जैसे-मर्यादा से अतिरिक्त वस्त्र एवं पात्र को याचने वाले शिष्य को
गुरु महाराज कहते हैं कि-मर्यादा से अधिक वस्त्र व पात्र नहीं दिया
जाता है ” इत्यादि ६ । इच्छानुलोमा-प्रतिपादन करने वाले की अर्थात्

દેશ આપવા સ્વરૂપ જે ભાષા હોય છે તે જેનાથી તેને અર્થનો અવબોધ થાય છે.
એનું નામ પ્રજ્ઞાપનીભાષા છે જેમ-“ જે હિંસામાં પ્રવૃત્ત અને છે તે અનંત
દુઃખનો ભાગી થાય છે ” અથવા જે પ્રાણી વધથી દૂર રહે છે તે લવોલવમાં
દીર્ઘાયુ લોગવે છે તથા શરીરે નિરોગી રહે છે. ૫ કહ્યું છે કે—

“ पाणिवहाउ नियत्ता, हवंति दीहाउ या अरोगा य ।

एस मई पन्नत्ता, पन्नवणी वीयरगेहिं ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજની પાસે યાચના કરનાર શિષ્યને માટે જે
નિપેદાત્મક ભાષાનો પ્રયોગ હોય છે તે પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે. જેમ-મર્યાદાથી
અતિરિક્ત વસ્ત્ર અને પાત્રની યાચના કરનાર શિષ્યને ગુરુ મહારાજ કહે છે કે,
મર્યાદાથી વધુ વસ્ત્ર અને પાત્ર દેવામાં આવતું નથી. (૬) ઇત્યાદિ । ઇચ્છાનુલોમા—

इच्छानुलोमा-प्रतिपादयितुर्था इच्छा तदनुलोमा=तदनुकूला । यथा शुभकार्ये प्रेरितस्य “ एवमस्तु ममाप्यभिप्रेतमेतत् ” एवं रूपा, यथा वा कश्चित् किञ्चित् शुभ-
कार्यमारभमाणः कंचन पृच्छति, स प्राह-‘ भवान् करोतु ममाप्येतदभिप्रेतम् ’ इति ।
यथा वा-केनचित् कश्चिदुक्तः-“ साधुसकाशं गच्छामः ” स वदति-एवमस्तु इति॥७॥

अनभिगृहीता-अर्थमनभिगृह्य योच्यते ‘ इत्थ्यादिवत् ’ । अथवा-अन-
भिगृह्य यत्र न प्रतिनियतार्थावधारणम् । यथा-बहुपुकार्येण्वस्थितेषु कश्चित् कचन
पृच्छति-किमिदानीं करोमि ?, स प्राह-‘ यत् रोचते तत् कुरु ’ इति ॥ ८ ॥

अभिगृहीता-अर्थमभिगृह्य योच्यते-इदं वस्त्रपात्रादिक धर्मोपकरणम्, अथवा

પ્રેરક કી ઇચ્છા કે અનુકૂલ જો ભાષા ચોલી જાતી હૈ વહ ‘ઇચ્છાનુલોમા’
‘ભાષા’ હૈ-જૈસે કોઈ કિસી કો કિમી શુભ કાર્ય મેં પ્રેરણા કરે તય વહ
કહે કિ ‘ ટીક હૈ યહ મુજે બી અભિલપિત હૈ ’ । અથવા કોઈ કિસી
શુભ કાર્ય કા પ્રારંભ કરતે હુઃ કિસી કો પૂછે તો વહ કહે કિ-કરો
યહ મુજે બી પસંદ હૈ । અથવા-કોઈ એસા કહે-‘ મેં સાધુ કે પાસ જા રહા
હું ’ તો સુનને વાલા કહતા હૈ કિ અચ્છા જાઓ ૭ । અનભિગૃહીતા-
અર્થશુન્ય-હિત્યહિત્યાદિ શબ્દો કા ચોલના । અથવા જિસમેં કિસી
એક અર્થ કા નિશ્ચય ન હો જૈસે-બહુતસે કાર્યોં કે ઉપસ્થિત હોને પર
કોઈ કિસો સે જવ યહ પૂછતા હૈ કિ-‘ કહો મેં ઇસ સમય કૌનસા
કામ કરું ? ’ તો વહ કહતા હૈ કિ-જો તુમ્હેં રુચે સો કરો ’ । ઇસ
પ્રકાર કી ‘ભાષા’કા નામ અનભિગૃહીતા ‘ભાષા’ હૈ ૮ । અભિગૃહીતા-અર્થ
કો લક્ષ્ય કરકે જિસ ‘ભાષા’કા પ્રયોગ કિયા જાતા હૈ વહ અભિગૃહીતા
‘ભાષા’ હૈ-જૈસે ‘વે વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મ કે ઉપકરણ હું ’ । અથવા ‘ ઇસ

પ્રતિપાદન કરવાવાળાની અર્થાત્-પ્રેરકની ઇચ્છાને અનુકૂળ જે ભાષા બોલાય છે તે
‘ઇચ્છાનુલોમા’ ભાષા છે. જેમ-કોઈ કોઈને કોઈ શુભ કાર્યમાં પ્રેરણા કરે ત્યારે
કહે કે ઠીક છે. એ મારી પણ અભિલપા છે અથવા-કોઈ શુભ કાર્યને પ્રારંભ
કરતાં કોઈને પૂછે તો તે કહે કે-કરો એ મને પણ પસંદ છે. અથવા કોઈ એમ
કહે કે હું સાધુની પાસે જઈ રહ્યો છું તો સાંભળનાર કહે કે, સારું ત્વર. ૭
અનભિગૃહીતા-અર્થશુન્ય-“ હિત્ય હિત્યાદિ ” શબ્દ બોલવો અથવા જેમાં કોઈ
એક અર્થને નિશ્ચય ન હોય, જેમ-ઘણાં કામે ઉપસ્થિત થતાં કોઈ બીજાને જ્યારે
એ પૂછે છે કે, કહો હું આ વખતે કયું કામ કરું, તો તે કહે છે કે, જે તમને
રૂચે તે કરો. આ પ્રકારની ભાષાનું નામ અનભિગૃહીતા ભાષા છે. ૮ અભિગૃહીતા-
અર્થનું લક્ષ કરીને જે ભાષાનો પ્રયોગ કરવામાં આવે છે તે ‘અભિગૃહીતા’
ભાષા છે. જેમ-“ આ વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મનાં ઉપકરણ છે ” અથવા ‘ આ સમયે

પ્રજ્ઞાપની-વિનયસ્પોપદેશદાનરૂપા, અર્થબોધિકા ભાષા, યથા-હિંસાપ્રવૃત્તો-
ડનન્તદુઃસ્વભાગી ભવતિ " ઇત્યાદિ । યથા યા-પ્રાણિવધાનિવૃત્તાઃ પ્રાણિનો ભવે
ભવે દીર્ઘાયુષો નીરોગાશ્ચ ભવન્તિ । ઉક્તચ--

પાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મર્દ પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિં ॥ ૧ ॥ ૫ ॥

છાયા-પ્રાણિવધાદ્ નિવૃત્તા, ભવન્તિ દીર્ઘાયુષઃ અરોગાશ્ચ ।

એપા મતિઃ પ્રજ્ઞાતા, પ્રજ્ઞાપની વીતરાગૈઃ ॥ ૧ ॥

પ્રત્યાખ્યાની-ભાષા-યાચમાનસ્ય પ્રતિપેધ વચનમ્ । યથા-મર્યાદાતિરિક્તં વસ્ત્રં
પાત્રં વા યાચમાનં શિષ્યં પ્રતિ ગુરુર્વદતિ--“અધિકં વસ્ત્રં પાત્રં વા ન દીયતે” ઇતિ ॥૬॥

પ્રજ્ઞાપનો-શિષ્ય કો ઉપદેશ દેને સ્વરૂપ જો ભાષા હોતી હૈ કિ જિસસે
ઉસે અર્થ કા અવબોધ હોતા હૈ ઉસકા નામ પ્રજ્ઞાપની ભાષા હૈ । જૈસે--“ જો
હિંસા મૈં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ વહ અનંત દુઃસ્વ કા ભાગી હોતા હૈ ” અથવા
જો પ્રાણિવધ સે દૂર રહતે હૈં વે ભવ ભવ મૈં દીર્ઘ આયુ પાતે હૈં તથા
નિરોગ શરીર હોતે હૈં ૫ । ઉક્તચ--

“ પાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મર્દ પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિં ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજ કે પાસ યાચના કરતે હુણ શિષ્ય કે
લિયે જો નિપેધાત્મક ભાષા કા પ્રયોગ હોતા હૈ વહ પ્રત્યાખ્યાની ભાષા હૈ,
જૈસે-મર્યાદા સે અતિરિક્ત વસ્ત્ર એવં પાત્ર કો યાચને વાલે શિષ્ય કો
ગુરુ મહારાજ કહતે હૈં કિ-મર્યાદા સે અધિક વસ્ત્ર વ પાત્ર નહીં દિયા
જાતા હૈ ” ઇત્યાદિ ૬ । ઇચ્છાનુલોમા-પ્રતિપાદન કરને વાલે કી અર્થાત્

દેશ આપવા સ્વરૂપ જે ભાષા હોય છે તે જેનાથી તેને અર્થનો અવબોધ થાય છે.
એનું નામ પ્રજ્ઞાપનીભાષા છે જેમ--“ જે હિંસામાં પ્રવૃત્ત બને છે તે અનંત
દુઃખનો ભાગી થાય છે ” અથવા જે પ્રાણી વધથી દૂર રહે છે તે ભવોલપમાં
દીર્ઘાયુ ભોગવે છે તથા શરીરે નિરોગી રહે છે. ૫ કહ્યું છે કે--

“ પાણિવહાઽ નિયત્તા, હવંતિ દીહાઽ યા અરોગા ય ।

એસ મર્દ પન્નત્તા, પન્નવળી વીયરાગેહિં ॥ ”

પ્રત્યાખ્યાની-ગુરુ મહારાજની પાસે યાચના કરનાર શિષ્યને માટે જે
નિપેધાત્મક ભાષાનો પ્રયોગ હોય છે તે પ્રત્યાખ્યાની ભાષા છે. જેમ-મર્યાદાથી
અતિરિક્ત વસ્ત્ર અને પાત્રની યાચના કરનાર શિષ્યને ગુરુ મહારાજ કહે છે કે.
મર્યાદાથી વધુ વસ્ત્ર અને પાત્ર દેવામાં આવતું નથી. (૨) ઇત્યાદિ । ઇચ્છા મા-

इच्छानुलोमा-प्रतिपादयितुया इच्छा तदनुलोमा=तदनुकूला। यथा शुभकार्ये प्रेरितस्य “ एवमस्तु ममाप्यभिप्रेतमेतत् ” एवं रूपा, यथा वा कश्चित् किञ्चित् शुभ-
कार्यमारभमाणः कंचन पृच्छति, स ग्राह-‘ भवान् करोतु ममाप्येतदभिप्रेतम् ’ इति।
यथा वा-केनचित् कश्चिदुक्तः-“ साधुसकाशं गच्छामः ” स वदति-एवमस्तु इति॥७॥

अनभिगृहीता-अर्थमनभिगृह्य योच्यते ‘ वित्थादिवत् ’। अथवा-अन-
भिगृह्य यत्र न प्रतिनियतार्थावधारणम्। यथा-बहुपुकार्येष्ववस्थितेषु कश्चित् कचन
पृच्छति-किमिदानीं करोमि ?, स ग्राह-‘ यत् रोचते तत् कुरु ’ इति ॥ ८ ॥

अभिगृहीता-अर्थमभिगृह्य योच्यते-इदं वस्त्रपात्रादिकं धर्मोपकरणम्, अथवा

પ્રેરક કી ઇચ્છા કે અનુકૂલ જો ભાષા બોલી જાતી હૈ વહ ‘ઇચ્છાનુલોમા’
‘ભાષા’ હૈ-જૈસે કોઈ કિમી કો કિમી શુભ કાર્ય મેં પ્રેરણા કરે તવ વહ
કહે કિ ‘ ટીક હૈ યહ સુદ્ધે ભી અભિલપિત હૈ ’। અથવા કોઈ કિસી
શુભ કાર્ય કા પ્રારંભ કરતે દુઃગ કિસી કો પૂછે તો વહ કહે કિ-કરો
યહ સુદ્ધે ભી પસંદ હૈ। અથવા-કોઈ એસા કહે-‘ મેં સાધુ કે પાસ જા રહા
હું ’ તો સુનને વાલા કહતા હૈ કિ અચ્છા જાઓ ૭। અનભિગૃહીતા-
અર્થશૂન્ય-વિત્થાદિવિત્થાદિ શબ્દો કા બોલના। અથવા જિસમેં કિસી
એક અર્થ કા નિશ્ચય ન હો જૈસે-વહુતસે કાર્યોં કે ઉપસ્થિત હોને પર
કોઈ કિસો સે જવ યહ પૂછતા હૈ કિ-‘ કહો મેં ઇસ સમય કૌનસા
કામ કરૂં ? ’ તો વહ કહતા હૈ કિ-જો તુમ્હેં રૂચે સો કરો ’। ઇસ
પ્રકાર કી ‘ભાષા’કા નામ અનભિગૃહીતા ‘ભાષા’ હૈ ૮। અભિગૃહીતા-અર્થ
કો લક્ષ્ય કરકે જિસ ‘ભાષા’કા પ્રયોગ કિયા જાતા હૈ વહ અભિગૃહીતા
‘ભાષા’ હૈ-જૈસે ‘યે વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મ કે ઉપકરણ હૈં’। અથવા ‘ઇસ

પ્રતિપાદન કરવાવાળાની અર્થાત્-પ્રેરકની ઇચ્છાને અનુકૂળ જે ભાષા બોલાય છે તે
‘ઇચ્છાનુલોમા’ ભાષા છે. જેમ-કોઈ કોઈને કોઈ શુભ કાર્યમાં પ્રેરણા કરે ત્યારે
કહે કે ઠીક છે. એ મારી પણ અભિલાષા છે અથવા-કોઈ શુભ કાર્યનો પ્રારંભ
કરતાં કોઈને પૂછે તો તે કહે કે-કરો. એ મને પણ પસંદ છે. અથવા કોઈ એમ
કહે કે હું સાધુની પાસે જઈ રહ્યો છું તો સાંભળનાર કહે કે, સાડું જાવ. ૭
અનભિગૃહીતા-અર્થશૂન્ય-“ વિત્થાદિવિત્થાદિ ” શબ્દ બોલવો અથવા જેમાં કોઈ
એક અર્થનો નિશ્ચય ન હોય, જેમ-ઘણાં કામો ઉપસ્થિત થતાં કોઈ બીજાને ન્યારે
એ પૂછે છે કે, કહો હું આ વખતે કયું કામ કરું, તો તે કહે છે કે, જે તમને
રૂચે તે કરો. આ પ્રકારની ભાષાનું નામ અનભિગૃહીતા ભાષા છે. ૮ અભિગૃહીતા-
અર્થનું લક્ષ કરીને જે ભાષાનો પ્રયોગ કરવામાં આવે છે તે ‘અભિગૃહીતા’
ભાષા છે. જેમ-“ આ વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મનાં ઉપકરણ છે ” અથવા ‘ આ સમયે

—પ્રતિનિયતાર્થાવધારણમ્ । યથા—શ્દમિદાનીં કર્તવ્યમ્, શ્દં ન કર્તવ્યમિતિ ॥૧॥

સંશયકરણી—યાઽનેકાર્થપ્રતિપત્તિકરી સા । યા ભાષા અનેકાર્થાભિધાયિ તયા પરસ્ય સંશયમુત્પાદયતિ, યથા—સૈન્ધવમાનયેત્યવ સૈન્ધવશ્વશે નરજ્ઞવળ-વાજિવાચકત્વેન સંશયોત્પાદકઃ ॥ ૧૦ ॥

વ્યાકૃતા—યા પ્રકટાર્થા । યથા—અહિંસા—સર્વકલ્યાણકારિણી ॥ ૧૧ ॥

અવ્યાકૃતા—અતિગમ્ભીરશબ્દાર્થા, અવ્યક્તાક્ષરપ્રયુક્તા વા, યથા—
“સંયત-સ્ય મહત્પાપં પ્રતિક્રમણકર્મણા” । इत्यादि, यथा वा मम्मगादि
वालभाषा ॥ ૧૨ ॥ एषा=आमन्त्रण्यादिका भाषा प्रज्ञापनी खलु-प्रज्ञाप्यते प्रकटी
क्रियतेऽर्थोऽनयेति प्रज्ञापनी अर्थकयनी, सा भाषणीया इत्यर्थः । नैषा भाषा मृषा

સમય યહ કરના ચાહિયે, યહ નહીં કરના ચાહિયે' ૯. સંશયકરણી-
જિસ ભારા સે સુનને વાલેકો અનેક અર્થોં કી પ્રતિપત્તિ હોને લગે उस
भाषा का नाम संशयकरणी भाषा है, जैसे-किसी ने कहा कि-‘सैन्धव
लाओ’ यह सैन्धव शब्द पुरुष, लवण और घोड़े रूप अर्थों का प्रतिपादक है,
अतः सुनने वाले को संशय जनक हो जाता है १० । व्याकृता-
जिस्का अर्थ स्पष्ट होता है वह व्याकृता भाषा है जैसे-“अहिंसा
सर्व प्रकार से कल्याण करने वाली है” ११ । अव्याकृता-अतिगंभीर
शब्दार्थवाली भाषा अव्याकृता भाषा है । अथवा-जो अव्यक्त अक्षर से
युक्त होती है वह भाषा अव्याकृता भाषा है जैसे-“संयत-स्य महत्पापं
प्रतिक्रमणकर्मणा” प्रतिक्रमण कर्म से संयत को बड़ा भारी पाप लगता
है । यहां पर जब “स्य” को क्रियापद मान लिया जाता है तब इसका

આ કરવું જોઈએ, આ ન કરવું જોઈએ.” ૯ સંશયકરણી-જે ભાષાથી સાંભળ-
નારને અનેક અર્થોના આભાસ થયા લાગે તે ભાષાનું નામ સંશયકરણી ભાષા
છે. જેમ કોઈએ કહ્યું કે—“સૈન્ધવ લાઓ” આ સૈન્ધવ શબ્દ પુરુષ મીઠું અને
ઘોડાંરૂપ અર્થોના પ્રતિપાદક છે. આથી સાંભળવાવાળાને પ્રકરણુદિના અભાવમાં
સંશયજનક બને છે. એ માટે પ્રકરણુ સમજીને આ ભાષા બોલવામાં દોષ નથી
કેમકે, તે વ્યવહારુ ભાષા છે. ૧૦ વ્યાકૃતા-જેનો અર્થ સ્પષ્ટ થાય છે તે વ્યાકૃત
ભાષા છે. જેમ—“અહિંસા” સર્વ પ્રકારથી કલ્યાણ કરવાવાળી છે.” ૧૧ અવ્યાકૃતા
અતિ ગંભીર શબ્દાર્થવાળી ભાષા અવ્યાકૃતા ભાષા છે. અથવા-જે અવ્યક્ત
અક્ષરથી યુક્ત હોય છે તે ભાષા અવ્યાકૃતા ભાષા છે. જેમ—

સંયત-સ્ય મહત્પાપં પ્રતિક્રમણા કર્મણા—

પ્રતિક્રમણ કર્મથી સંયતને મોટું ભારે પાપ લાગે છે, અહિં જ્યારે
“સ્ય” ને ક્રિયાપદ માનવામાં આવે ત્યારે એનો અર્થ એવો થાય છે કે, હે

-એવા ભાષા મૃષા અવક્તવ્યા નેત્યર્થઃ । પ્રશ્નકર્તુરયમભિપ્રાયઃ-‘આશયિષ્યામહે’
 इत्यादिका भाषा भविष्यत्कालविषया, साचान्तरायसंभवेन कदाचिदर्थभिधायिनी
 न स्यात् । तथा एकार्थविषयाऽपि बहुवचनान्ततयाऽभिहिता तस्मादयथार्था ।
 तथा-आमन्त्रणीप्रभृतिका, सत्यभाषावदर्थे नियता नास्ति विधिप्रतिषेधबोधकत्वा
 भावात्, अतः किमियं वक्तव्या स्यात्, उत न ? इति ।

अर्थ ऐसा होता है कि हे संयत ? प्रतिक्रमण कर्म से तुम अपने पापोंका
 क्षय करो । यह बोध शीघ्र नहीं हो सकता है, अतः इसे अव्याकृत भाषा
 कहा है । अथवा-बालककी भाषाको अव्याकृत भाषा कहते हैं १२ । ये सब
 भाषाएँ प्रज्ञापनी हैं, यह प्रज्ञापनी भाषा मृषास्वरूप नहीं है । प्रश्न करने
 वालेका कहने का हेतु यह है-जब यह कहा जाता है कि हम ‘शयनकरेंगे’
 इत्यादि, तब यह भाषा भविष्यत् काल को विषय करने वाली होने से
 अर्थकी पूर्ति में असमर्थ जान पड़ती है, कारण कि अन्तराय कर्म के
 उदय की संभावना होने से उस विवक्षित अर्थकी कदाचित् पूर्ति न भी
 हो सके तो फिर जिस प्रकार मृषाभाषा अर्थको कहनेवाली नहीं मानी
 जाती है उसी प्रकार यह भाषा भी अनर्थाभिधायिनी मान लेना चाहिये
 तथा “हम शयनकरेंगे” इस कथनमें “मैं शयनकरूँगा” इस एक
 वचन के ही प्रयोग में बहुवचन का प्रयोग किया गया है । जैसे एक को
 अनेक कहनेवाली भाषा अयथार्थ मानी जाती है । उसी प्रकार यह भी
 अयथार्थ मानी जानी चाहिये । इसी तरह आमन्त्रणी भाषाएँ भी सत्य
 भाषाकी तरह अर्थ में नियत नहीं हैं, क्योंकि इनमें विधि एवं प्रतिषेध
 की बोधकता का अभाव है, इसलिये यह संदेह होता है कि यह बोलने
 के योग्य है अथवा नहीं है । इस प्रकारकी आशंका का यह उत्तर है कि

સંયત ! પ્રતિક્રમણ કર્મથી તમે તમારાં પાપોનો ક્ષય કરો. આ બોધ જલદી
 થઈ શકતો નથી આથી આને અવ્યાકૃતા ભાષા કહેવામાં આવે છે. અથવા-
 બાળકની ભાષાને અવ્યાકૃત ભાષા કહેવામાં આવે છે. ૧૨ આ બધી ભાષા પ્રજ્ઞાપની છે.
 આ પ્રજ્ઞાપની ભાષા મૃષા સ્વરૂપની નથી. પ્રશ્ન કરનારના કહેવાનો મતલબ
 એ છે કે, જ્યારે એમ કહેવામાં આવે છે કે, “અમે સુઈ એ છીએ” આ
 કથનમાં “હું સુઉં છું” આ એક વચનના પ્રયોગમાં બહુ વચનનો પ્રયોગ
 કરવામાં આવેલ છે. જેમ એકને અનેક કહેવાવાળી ભાષા અયથાર્થ માનવામાં
 આવે છે એ રીતે પણ અયથાર્થ માનવી બોઈએ આ રીતે આમન્ત્રણી ભાષાઓ
 પણ સત્ય ભાષાની જેમ અર્થમાં નિયત નથી કેમકે, એનામાં વિધિ અને પ્રતિષેધની
 બોધકતાનો અભાવ છે. આ માટે એ સંદેહ થાય છે, એ બોલવાને યોગ્ય છે,

અગ્રોત્તરમાદ્—હંતા । ઇત્યાદિ । ‘હન્ત’ ઇતિ સ્વીકારાર્થકઃ, અયં ભાવઃ— ‘આશયિષ્યામહે’ ‘શયિષ્યામહે’ ઇત્યાદિકા ભાષા નિશ્ચયાત્મકશબ્દપ્રયોગ-ભાવાન્નાસ્તિ નિશ્ચયાત્મિકા, યા તુ—‘આશયિષ્યામહે એવ’ ‘શયિષ્યામહે એવ’ ઇત્યાદિકા નિશ્ચયાત્મિકા સૈવાન્તરાયસંભવાદ્ ભવિષ્યત્કાલવિષયા ભાષા મૃષા-ભવિતુર્ભવતિ । ‘આશયિષ્યામહે’ ઇત્યાદૌ તુ—શયનાદિક્રિયાયાં વક્તુરભિપ્રાયઃ “શયનાદિક્રિયાકરણસ્ય ભાવો મમ વર્તતે” ઇત્યાદિ રૂપઃ સત્ય એવાસ્તીતિ ભવતિ પ્રજ્ઞાપની । એકાર્થવિષયે વહુવચનાભિધાનમપિ આત્મનિ ગુરૌ ચ શાસ્ત્રાનુમતં, તસ્માદ્ વહુવચનાન્તતયા પ્રયુક્તાઽપિ પ્રજ્ઞાપન્યેવ ભવતિ । એવમામન્ત્રણ્યાદિકાઽપિ ।

“આશ્રયિષ્યામહે” ઇત્યાદિક ભાષાએ નિશ્ચયાત્મક શબ્દ કે પ્રયોગ કે અભાવ સે નિશ્ચયાત્મક નહીં હૈં । યે નિશ્ચયાત્મક જય હી માની જાતી હૈં કિ જય इनके साथ નિશ્ચયાત્મક શબ્દકા પ્રયોગ કિયા હુઆ હોતા હૈ । જૈસે—આશ્રયિષ્યામહે એવ, શયિષ્યામહે એવ” હસ પ્રકારકી નિશ્ચયાત્મક ભાષા મૈં જો કિ ભવિષ્યત્ કાલકો વિષય કરનેવાલી હો અન્તરાય કર્મ કે ઉદય સે અપને અર્થકી પૂર્તિ કી નિશ્ચિતતા સંદિગ્ધ રહતી હૈ અતઃ ઘઘી ભાષા મૃષાવાદ રૂપ માની જાતી હૈ । “આશ્રયિષ્યામહે” ઇત્યાદિ ભાષા મૈં તો શયનરૂપ ક્રિયા કરને કા ભાવ હી કેવલ વક્તા કા રહા હુઆ હૈ અતઃ ઉસ અપેક્ષા વહ સત્ય હી હૈ । ઇસી અર્થ કો મન મૈં રહ કર મુનિરાજ ભવિષ્યત્કાલ કે અર્થ મૈં ભાવ શબ્દ કા પ્રયોગ કરતે હૈં, જૈસે—‘કાલ સ્વાધ્યાય કરને કા ભાવ હૈ’ અથવા—‘તપસ્યા કરને કા ભાવ હૈ’ ઇત્યાદિ । એકવચન મૈં બી વ્યાકરણસિદ્ધાન્ત કે અનુસાર

અથવા નથી એ પ્રકારની આશંકાનો આ ઉત્તર છે કે, “આશયિષ્યામહે” ઇત્યાદિક ભાષાઓ નિશ્ચયાત્મક નથી. અને નિશ્ચયાત્મક ત્યારે જ માનવામાં આવે કે ત્યારે એની સાથે નિશ્ચયાત્મક શબ્દનો પ્રયોગ કરવામાં આવેલ હોય જેમ આશયિષ્યામહે એવ શયિષ્યામહે એવ—આ પ્રકારની નિશ્ચયાત્મક ભાષામાં કે જે ભવિષ્યત્ કાળનો વિષય કરવાવાળી હોય અંતરાય કર્મના ઉદયથી તેના અર્થની પૂર્તિની નિશ્ચિતતા સંદિગ્ધ રહે છે. આથી તે ભાષા મૃષાવાઃ રૂપ માનવામાં આવે છે. “આશયિષ્યામહે” ઇત્યાદિ ભાષામાં તો કહેનારનો મુવાની કિયા કરવાનો ભાવ જ ક્ષત રહેલ છે. આથી એ અપેક્ષાથી તે સત્ય જ છે. આ જ અર્થને મનમાં રાખી મુનિરાજ ભવિષ્યકાળના અર્થમાં ભાવ શબ્દનો પ્રયોગ કરે છે. જેમ—‘કાલે સ્વાધ્યાય કરવાનો ભાવ છે’ અથવા “તપસ્યા કરવાનો ભાવ છે” ઇત્યાદિ ! એક વચનમાં પણ વ્યાકરણ સિદ્ધાંતની

યા નિરવધપુરુષાર્થસાધની સા પ્રજ્ઞાપન્યેવ । યથા “હે સાધો !” “ઈદં કુરુ” “ઈદં મા કુરુ” इत्यादिका । सा तु भाषणीयैवेति ।

भाषादोषं=सावधानुमोदनादिकं, मृषा-कर्कशाऽसम्यग्शब्दोच्चारणादिकं च, परिहरेत् । च-पुनः, मायां सदा=सर्वकालं परिवर्जयेत् ।

अत्र मायामित्युपलक्षणम्, क्रोधमानलोभानां कषायाणाम् । सर्वान् कषायान् परिवर्जयेदित्यर्थः । कषायाणां मृषाभाषणहेतुत्वात्, कषायवर्जने सति मृषाभाषणपरिहारः सुतरां स्यादिति भावः ॥ २४ ॥

यहुવચન का प्रयोग हो जाता है । चहां कहागया ह कि अपने में एवं गुरु में यहुवचन का प्रयोग करना निर्दोष है, इसलिये एक में भी यहुवचनान्तरूप से प्रयुक्त भाषा प्रज्ञापनी ही भाषा है । इसी तरह आमन्त्रणी आदि भाषाएँ भी जो निरवध पुरुषार्थ की साधक होती हैं वे प्रज्ञापनी ही हैं । जैसे-“ हे साधो । ” “यह करो यह मत करो ” इत्यादि ।

सावध कर्म की अनुमोदना आदि करना यह भाषा दोष है । इसी प्रकार कर्कश एवं कठोर शब्द का उच्चारण करना आदि भी मृषा भाषा में ही अन्तर्हित है । माया शब्द उपलक्षण है । इसलिये क्रोधादिक कषाय के विषय में भी समझ लेना चाहिये, क्यों कि कषाय के आवेश से ही मृषाभाषण होता है । इनके परिवर्जन से मृषाभाषाका परिवर्जन हो जाता है । अतः भाषादोष एवं माया का सदा काल परित्याग कर देना चाहिये ॥ २४ ॥

બહુ વચનને પ્રયોગ થઈ જાય છે, આથી એ બતાવાયું છે કે, પોતાનામાં અને શુરુ મહારાજમાં બહુ વચનનો પ્રયોગ કરવો નિર્દોષ છે. આ માટે એકમાં પણ બહુવચનાન્તરૂપથી પ્રયુક્ત ભાષા પ્રજ્ઞાપની ભાષા જ છે આ રીતે આમન્ત્રણી આદિ ભાષાઓ પણ જે નિરવધ પુરુષાર્થની સાધક હોય છે તે પ્રજ્ઞાપની જ છે. જેમ—“ હે સાધો ! ” “ આ કરો, આ ન કરો, ” इत्यादि !

સાવધ—કર્મની અનુમોદના આદિ કરવી એ ભાષા દોષ છે. આ પ્રકારે કર્કશ અને કઠોર શબ્દનું ઉચ્ચારણ કરવું આદિ પણ મૃષાભાષામાં જ અન્તર્હિત છે. માયા શબ્દ ઉપલક્ષણ છે આ માટે ક્રોધાદિક કષાયના વિષયમાં પણ સમજવું જોઈએ. કેમકે, કષાયના આવેશથી જ મૃષાભાષણ થાય છે. તેના ત્યાગથી મૃષા ભાષાનો ત્યાગ થાય છે. આથી ભાષાદોષ અને માયાનો સદાકાળ પરિત્યાગ કરી દેવો જોઈએ. (૨૪)

મૂલમ્—ને લવેજ્જ પુટ્ટો સાવજ્જં, નં નિરેટ્ઠં નં મમ્મયં ।

અપ્પણઢ્ઠા પરંઢ્ઠા વો, ઉભયસ્સંતરેણે વો ॥ ૨૫ ॥

છાયા—ન લપેત્ પુટ્ઠઃ સાવઘં, ન નિરર્થં ન મર્મગમ્ ।

આત્માર્થં પરાર્થં વા, ઉભયસ્ય અન્તરેણ વા ॥ ૨૫ ॥

ટીકા—‘ન લવેજ્જ’ ઇત્યાદિ । પુટ્ઠઃ=કેનચિત્, સાવઘં=અવઘેત-પાપેન સહ વર્તતે ઇતિ સાવઘં-સદોષં વચનં ન લપેત્=ન વદેત્, સાવઘ્યવચનં હિ રાગદ્વે-
પાદિદુર્ગુણનિધાનં સકલાસ્રવનિદાનમ્, આત્મસમાધિવિધુવિધુંતદસ્વરૂપં, ગુણવૃક્ષસ-
મૂલોન્મૂલને પ્રચ્છન્દશંસાવાતરૂપં, કપાયવિપવહ્લીવર્ધકં, પદ્મજીવનિકાયોપમર્દકમ્ ।

ન લવેજ્જ ઇત્યાદિ—

અન્વયાર્થ—(પુટ્ટો સાવજ્જં ન લવેજ્જ-પુટ્ઠઃ સાવઘં ન લપેત્)
કિસી કે દ્વારા પૂછે જાને પર સાવઘ-પાપયુક્ત વચન નહીં ચોલના
ચાહિયે । (ન નિરેટ્ઠં ન મમ્મયં-ન નિરર્થકં ન મર્મગં) નિરર્થક વચન
નહીં ચોલના ચાહિયે । મર્મ ઉદ્ઘાટક વચન નહીં ચોલના ચાહિયે । (અપ્પ-
ણઢ્ઠા પરંઢ્ઠા વા ઉભયસ્સંતરેણ વા સાવજ્જં ન લવેજ્જ-આત્માર્થં પરાર્થં વા
ઉભયસ્યાન્તરેણ વા સાવઘં ન લપેત્) અપને નિમિત્ત અથવા પર કે
નિમિત્ત તથા ઉભય-સ્વ પર કે નિમિત્ત ઓર વિના પ્રયોજન કે (વ્યર્થ)
મી સાવઘ વચન નહીં ચોલના ચાહિયે । કયોં કિ-સાવઘ વચન રાગ દ્વેષ
આદિ દુર્ગુણોં કા નિધાન હૈ, સમસ્ત આત્મચોં કા નિદાન-કારણ હૈ,
આત્મસમાધિરૂપ ચન્દ્રમા કો ગ્રસન કરને મેં રાહુસમાન હૈ, ગુણરૂપ
વૃક્ષોં કો જડ સે ઉઘાડ ને મેં પ્રચ્છન્દ શંસાવાત સમાન હૈ, તથા કપાય-

ન લવેજ્જ ઇત્યાદિ—

અન્વયાર્થ—પુટ્ટો સાવજ્જં ન લવેજ્જ-પુટ્ઠઃ સાવઘં ન લપેત્—કેાઈના પુછવાથી
પાપયુક્ત સાવઘ વચન બોલવું બોધ એ નહીં. ન નિરેટ્ઠં ન મમ્મયં-ન નિરર્થકં ન મર્મગં
નિરર્થક વચન બોલવું ન બોધ અને મર્મઉદ્ઘાટક વચન બોલવું ન બોધ એ.

અપ્પણઢ્ઠા પરંઢ્ઠા વા ઉભયસ્સંતરેણ વા સાવજ્જં ન લવેજ્જ—

આત્માર્થં પરાર્થં વા ઉભયસ્યાન્તરેણ વા સાવઘં ન લપેત્—

પોતાના નિમિત્ત અથવા બીજાના નિમિત્ત તથા અરસપરસના નિમિત્ત
અને વગર પ્રયોજન (વ્યર્થ) સાવઘ વચન ન બોલવાં બોધ એ.

કેમકે, સાવઘ વચન રાગ દ્વેષ આદિ દુર્ગુણોં નિધાન છે, સમસ્ત
આશ્રવોં કારણ છે, આત્મસમાધિરૂપ ચન્દ્રમાનું ચક્રણ અસિત કરવામાં રાહું
સમાન છે, શુષ્ક વૃક્ષને જડથી ઉઘેડવામાં પ્રચ્છન્દ શંસાવાત સમાન છે. તથા

સાવચવચન માપણદટ્ટાન્તઃ—

નિરવચમાપાનમિજ્ઞઃ કશ્ચિદશ્વપતિર્હૃન્મૂલ્યકમશ્ચ વિક્રેતું કસ્મિન્નિગરે-
જગામ । તત્રાકસ્માદશ્વપતિદસ્તાદશ્વો નિર્મુક્તઃ સન્ ધાવતિ । ધાવન્તમશ્વં પરિગ્રહીતું
તત્પૃષ્ઠતોઽશ્વપતિરપિ ધાવતિ । તં પરિગ્રહીતુમશક્તોઽસૌ ધાવનાત્ પરિશ્રાન્તઃ કોપા-
વેશેન તદાનીં સ્વામિમુલ્કમાગચ્છન્તં કંચિદ્ ભાપાદોપાનમિજ્ઞં દણ્ડહસ્તં પુરુષમ-
વ્રવીત્-ભો ! અશ્વોઽયં ધાવતિ, એનં મારય મારય, એવમુક્તોઽસૌ દણ્ડેન તમશ્વં
મર્મસ્થાને તાઢિતવાન્ । તદાઽસૌ દણ્ડાવાતેન મૃતઃ । અથાશ્વપતિસ્તં તુરગધાતકં
રૂપ ચિપલતાઓં કો યદાને મેં મેઘસમાન હૈ, एवं पडजीवनिकार्यों का
उपमर्दन करने वाला है ।

સાવચ વચન કે ધોલને મેં જીવ કો વધા હાની ઉઠાની પડતી હૈ,
इसे दट्टान्त द्वारा स्पष्ट किया जाता है.

एक अश्वपति था जो निरवच भापा धोलने का अनभिज्ञ था । वह
एक लाख रुपया की कीमत वाले अपने घोड़े को बेचने के लिये किसी
नगर में आया । वहां आते ही उसके हाथ से वह घोड़ा छूटकर भाग
निकला । भागते हुए उस घोड़े का पीछा करने पर भी वह पकड़ नहीं
सका । जब यह दौड़ते २ थक गया तो क्रोधके आवेश में आकर इसने
एक पुरुष से जो हाथ में दंडा लिये हुए इसकी ही ओर आ रहा था ।
तथा भापा के दोष से अनभिज्ञ था कहा कि हे भाई देखो यह घोड़ा
जो भाग रहा है इसे मारो मारो । इस प्रकार अश्वपति के कहने पर
उस व्यक्ति ने एक दंडा ऐसा मारा जो उस घोड़े के मर्मस्थान में लगा ।

કપાયરૂપ વિધ લત્તાઓને વધારનાર છે, ૫૨ છવનીકાયોનું ઉપમર્દન કરનાર છે.

સાવચ વચન બોલવાથી શું અનર્થ થાય છે, તે આ દ્રષ્ટાંત દ્વારા સ્પષ્ટ
કરવામાં આવે છે—

એક અશ્વપતિ હતો, જે નિરવચ ભાપા બોલવામાં અનભિજ્ઞ હતો. તે
એક લાખ રૂપિયાની કિંમતના પોતાના ઘોડાને વેચવા માટે કોઈ એક નગરમાં
ગયો ત્યાં પહોંચતાં જ તેના હાથમાંથી તે ઘોડો છુટીને ભાગી ગયો, ભાગી
રહેલા તે ઘોડા પાછળ તેને હાથ કરવા તે ખૂબ દોડ્યો છતાં પકડી શકાયો
નહીં. બ્યારે તે દોડતાં દોડતાં થાકી ગયો ત્યારે ક્રોધના આવેશમાં આવી એણે એક
પુરુષ, કે જે હાથમાં દંડો લઈને તેની સામે આવી રહ્યો હતો અને તે ભાપાના
દોષથી અજાણુ હતો, તેને કહ્યું કે હે ભાઈ ! આ ઘોડો જે ભાગી રહ્યો છે તેને મારો.
આ પ્રકારે એ અશ્વપતિના કહેવાથી પેલા માણસે એક દંડો ઘોડાને એવો માર્યો
કે જે મર્મસ્થાનમાં લાગવાથી તેના પ્રહારના કારણે ઘોડો એજ વખતે મરી ગયો.

શ્રીત્યા ન્યાયાલયં ગતઃ । તત્ર સ ન્યાયાધ્યક્ષસંનિધી વદતિ—અનેન મમ લક્ષમ્-
લ્યકસ્તુરગો દણ્ડાઘાતેન મારિતઃ । તદા ન્યાયાધ્યક્ષેણ કથિતમ્—‘કથય કસ્તે સાક્ષી’
ઇતિ । અશ્વપતિર્વ્રતે—અસ્યૈવ પુત્રો મમ સાક્ષી । ન્યાયાધ્યક્ષેણ પૃષ્ઠસ્તપુત્રોઽવદત્—
અનેનાશ્વપતિના મમ પિતા નિગદિતઃ—“ ભો ! તુરગોઽયં ધાવતિ, એનં મારય મારય ”
ઇતિ । તદા મમ પિત્રા દણ્ડેનાસ્ય તુરગો મારિતઃ । એવં સાક્ષિભાષણં શ્રુત્વા ન્યાયા-
ધીશો મનસિ વિચારયતિ—અહો ! સાવધભાપાદોપાનભિજ્ઞતયાઽનેનાશ્વપતિના ‘ મારય
મારય ’ ઇત્યુક્તમ્ દણ્ડતાડનમયં પ્રદર્શ્ય તુરગં નિર્વર્તયેત્યાશયેનાનેન પ્રોક્તમેતત્ ।

ઘોડા દંડા કે પ્રહાર સે શીઘ્ર મર ગયા । જ્ય અશ્વપતિ ને અપને ઘોડેકો
મરા હુઆ દેખ્યા તો વહ ઉસ મારને વાલે કો પકડકર ન્યાયાલય લે
ગયા । ન્યાયધીશ કે સમક્ષ ઉસકે ઝપર અભિયોગ (આરોપ) લગા ને કે
અભિપ્રાય સે ઇસને કહા કિ ઇસને મેરા ઇક લાખ રૂપયે કી કીમત કા
ઘોડા દંડે કે પ્રહાર સે માર દિયા હૈ । યહ સુનકર ન્યાયધીશ ને કહા
ઠીક હૈ । પરંતુ ઇસકા સાક્ષી કોન હૈ કહો ! અશ્વપતિને કહા કિ સાહેબ !
ઇસકા પુત્ર હી મેરે ઇસ વિષય મેં સાક્ષી હૈ । ન્યાયધીશ ને ઉસકે પુત્ર
સે પૂછા—તય પુત્ર ને કહા કિ સ્વયં ઇસ અશ્વપતિ ને હી મેરે પિતા સે
ઘોડે કો મારને કે લિયે કહા થા । અતઃ મેરે પિતા ને દંડે કે પ્રહાર સે
ઇસ કે ઘોડે કો મારા હૈ । ઇસ પ્રકાર સાક્ષી કે ભાષણ કો સુનકર
ન્યાયધીશ ને મન મેં વિચાર કિયા માલૂમ પડતા હૈ કિ ઘોડે કા યહ
સ્વામી ભાષા દોષ સે અનભિજ્ઞ હૈ । ઇસલિયે ઇસને “ મારો મારો ”
એસા કહા હૈ । ઇસકે કહને કા અભિપ્રાય કેવલ ઉસ સમય ઇતના હી
થા કી યહ દણ્ડે કા ભય દિલ્લાકર ઉસ ઘોડે કો લૌટા દેવે । ઇસ

ન્યાયે અશ્વપતિએ પોતાના ઘોડાને મરણ પામેલો જોયો ત્યારે તે માર-
નારને પકડી ન્યાયાલયમાં લઈ ગયો, ન્યાયાધીશની સામે તેના ઉપર આરોપ
લગાવવાના ભાવથી તેણે કહ્યું કે, આ માણસે મારા એક લાખ રૂપિયાની કિંમ-
તના ઘોડાને દંડાના પ્રહારથી મારી નાખેલ છે. આ સાંભળીને ન્યાયાધીશે કહ્યું
ઠીક છે, પરંતુ આનો સાક્ષી કોણ છે તે કહો. અશ્વપતિએ કહ્યું કે, સાહેબ !
તેનો પુત્ર જ મારા આ વિષયમાં સાક્ષી છે. ન્યાયાધીશે તેના પુત્રને પૂછ્યું ત્યારે
પુત્રે કહ્યું કે, આ અશ્વપતિએ પોતે જ મારા પિતાને ઘોડાને મારવાનું કહ્યું હતું.
આથી મારા પિતાએ દંડાના પ્રહારથી તેના ઘોડાને મારેલ છે. આ પ્રકારે સાક્ષીનું
ભાષણ સાંભળી ન્યાયાધીશે મનમાં વિચાર કર્યો કે ઘોડાનો આ સ્વામી ભાષા
દોષથી અનભિજ્ઞ છે તેવું જણાય છે, આ માટે તેણે મારો, મારો ! એમ
કહેલ છે. આમ કહેવાનો અભિપ્રાય કેવળ તે સમય એટલો જ હતો કે, દંડાને

इत्थं मनसि चिमृश्य न्यायाधीशः सावद्यभाषाभाषिणमन्वपति प्राह—त्वया सावद्य-
भाषा प्रोक्ता, तत्फलमेतत् प्राप्तम् । पुनरेवं कदापि कथमपि सावद्यभाषा न
वाच्या ॥ इति । तथा निरर्थम्=अर्थरहितं न लपेत्, यथा—

एष बन्ध्यासुतो याति, खपुष्पकृतशेखरः ।

मृगतृष्णाम्भसि स्नातः, शशशृंगधनुर्धरः ॥ १ ॥

પ્રકાર વિચાર કર સાવચ ભાષા ભાષી उस अश्वस्वामी से न्यायधीशने
कहा कि इसका क्या अपराध है ! अपराध तो तेरा ही है । जो तूने
मारो २ इस प्रकारकी सावच भाषा द्वारा इसे मार ने के लिये उत्साहित
किया, उसीका यह फल है । अब आगे इस बात का ध्यान रखो कि
इस प्रकारकी सावच भाषा न चोली जाय ।

इसी प्रकार निरर्थक भाषा भी नहीं बोलनी चाहिये । जिस भाषा
का कोई अर्थ नहीं होता हो ऐसी भाषा का प्रयोग करना भी वर्जित
बतलाया गया है—जैसे—

एष बन्ध्या सुतो याति । खपुष्पकृतशेखरः ।

मृगतृष्णाम्भसि स्नातः । शशशृंग धनुर्धरः ॥ १ ॥

यह बन्ध्या पुत्र जा रहा है । इस के शिर पर आकाश के पुष्पों को
माला है, तथा यह मृग तृष्णा के जल में स्नान किया हुआ है, इस के
हाथ में शशले के सींग का धनुष है । इस प्रकार के वचन निरर्थक
होते हैं । क्यों कि न तो बंध्या का कोई पुत्र होता है, न आकाश का

ભય દેખાડી તે ઘોડાને પાછો ફરવી દે. આ પ્રકારનો વિચાર કરી સાવચ ભાષ.-
ભાષી તે અશ્વસ્વામીને ન્યાયાધીશે કહ્યું આનો શું અપરાધ છે, અપરાધ તો તારોજ
છે, જે તે ભારો, ભારો ! આ પ્રકારની સાવચ ભાષા દ્વારા તને મારવા માટે
ઉત્સાહિત બનાવ્યો તેનું આ ક્ષણ છે, હવે પછી એ વાત ધ્યાનમાં રાખો કે આ
પ્રકારની સાવચ ભાષા બોલવામાં ન આવે.

આજપ્રકારે—નિરર્થક ભાષા પણ ન બોલવી જોઈએ. જે ભાષાનો કોઈ
અર્થ ન થતો હોય એવી ભાષાનો પ્રયોગ કરવો એ નિરર્થક બતાવવામાં
આવેલ છે જેમ—

“एष बन्ध्या सुतो याति ख पुष्प कृत शेखरः ।

मृगतृष्णाम्भसि स्नातः शशशृंग धनुर्धरः ॥ ”

આ વંધ્યાપુત્ર જઈ રહ્યો છે, તેના માથા ઉપર આકાશના પુષ્પોની માળા છે,
તથા એણે મૃગતૃષ્ણાના જળમાં સ્નાન કરેલ છે, એના હાથમાં સસલાના
શીંગનું ધનુષ્ય છે, આ પ્રકારનાં વચન નિરર્થક હોય છે, કેમકે, ન તો વંધ્યા

પૃહીત્યા ન્યાયાલયં ગતઃ । તત્ર સ ન્યાયાધ્યક્ષસંનિધૌ વદતિ—અનેન મમ લક્ષમ્-
લ્યકસ્તુરગો દણ્ડાઘાતેન મારિતઃ । તદા ન્યાયાધ્યક્ષેણ કથિતમ્—‘કથય કસ્તે સાક્ષી’
ઇતિ । અશ્વપતિર્વૃત્તે—અસ્યેવ પુત્રો મમ સાક્ષી । ન્યાયાધ્યક્ષેણ પૃષ્ઠસ્તપુત્રોઽવદત્—
અનેનાશ્વપતિના મમ પિતા નિગદિતઃ—“ભો ! તુરગોઽયં ધાવતિ, एनं मारय मारय”
ઇતિ । તદા મમ પિત્રા દણ્ડેનાસ્ય તુરગો મારિતઃ । एनं साक्षिभाषणं श्रुत्वा न्याया-
धीशो मनसि विचारयति—अहो ! सावद्यभाषादोषानभिज्ञतयाऽनेनाश्वपतिना ‘मारय
मारय’ इत्युक्तम् दण्डताडनभयं प्रदर्श्य तुरगं निवर्तयेत्वाशयेनानेन प्रोक्तमेतत् ।
ઘોડા દંડા કે પ્રહાર સે શીઘ્ર મર ગયા । જય અશ્વપતિ ને અપને ઘોડેકો
મરા હુઆ દેલા તો વહ ઉસ મારને વાલે કો પકડકર ન્યાયાલય લે
ગયા । ન્યાયધીશ કે સમક્ષ ઉસકે ડપર અભિપ્રાય (આરોપ) લગા ને કે
આમપ્રાય સે ઇસને કહા કિ ઇસને મેરા ણક લાલ્હ રુપયે કી કીમત કા
ઘોડા દંડે કે પ્રહાર સે માર દિયા હૈ । યહ સુનકર ન્યાયધીશ ને કહા
ઠીક હૈ । પરંતુ ઇસકા સાક્ષી કોન હૈ કહો ! અશ્વપતિને કહા કિ સાહેબ !
ઇસકા પુત્ર હી મેરે ઇસ વિષય મેં સાક્ષી હૈ । ન્યાયધીશ ને ઉસકે પુત્ર
સે પૂછા—તવ પુત્ર ને કહા કિ સ્વયં ઇસ અશ્વપતિ ને હી મેરે પિતા સે
ઘોડે કો મારને કે લિયે કહા થા । અતઃ મેરે પિતા ને દંડે કે પ્રહાર સે
ઇસ કે ઘોડે કો મારા હૈ । ઇસ પ્રકાર સાક્ષી કે ભાષણ કો સુનકર
ન્યાયધીશ ને મન મેં વિચાર કિયા માલૂમ પડતા હૈ કિ ઘોડે કા યહ
સ્વામી ભાષા દોષ સે અનભિજ્ઞ હૈ । ઇસલિયે ઇસને “મારો મારો”
એસા કહા હૈ । ઇસકે કહને કા અભિપ્રાય કેવલ ઉસ સમય ઇતના હી
થા કી યહ દણ્ડે કા ભય દિલ્હલાકર ઉસ ઘોડે કો લૌદા દેવે । ઇસ

જ્યારે અશ્વપતિએ પોતાના ઘોડાને મરણ પામેલો જોયો ત્યારે તે માર-
નારને પકડી ન્યાયાલયમાં લઈ ગયો, ન્યાયાધીશની સામે તેના ઉપર આરોપ
લગાવવાના ભાવથી તેણે કહ્યું કે, આ માણસે મારા એક લાખ રૂપિયાની કિંમ-
તના ઘોડાને દંડાના પ્રહારથી મારી નાખેલ છે. આ સાંભળીને ન્યાયાધીશે કહ્યું
કે, પરંતુ આનો સાક્ષી કોણ છે તે કહો. અશ્વપતિએ કહ્યું કે, સાહેબ !
તેનો પુત્ર જ મારા આ વિષયમાં સાક્ષી છે. ન્યાયાધીશે તેના પુત્રને પૂછ્યું ત્યારે
પુત્રે કહ્યું કે, આ અશ્વપતિએ પોતા જ મારા પિતાને ઘોડાને મારવાનું કહ્યું હતું.
આથી મારા પિતાએ દંડાના પ્રહારથી તેના ઘોડાને મારેલ છે. આ પ્રકારે સાક્ષીનું
ભાષણ સાંભળી ન્યાયાધીશે મનમાં વિચાર કર્યો કે ઘોડાનો આ સ્વામી ભાષા
દોષથી અનભિજ્ઞ છે તેવું જણાય છે, આ માટે તેણે મારો, મારો ! એમ
કહેલ છે. આમ કહેવાનો અભિપ્રાય કેવળ તે સમય એટલો જ હતો કે, દંડાને

મૂર્ખો, એકસ્તુ ભાણ્ડનિર્માણકલામિત્તોઽપિ નૈવ નિર્માતિ । યસ્તુ નાસ્તિ ભાણ્ડનિ-
ર્માતા, તેન ત્રીણિ ભાણ્ડાનિ નિર્મિતાનિ । તત્ર દ્વે સ્ફુટિતે, એકં ન યુજ્યતે । અયો-
જિતે ભાણ્ડે ત્રયસ્તપ્તુલા રન્ધ્રિતાઃ, તત્રોમૌ તપ્તુલાવામરૂપૌ, એકો ન સિધ્યતિ । તેન
ત્રયો વ્રાહ્મણા ભોજિતાઃ તત્રોમૌ વુમુક્ષિતૌ, એકો ન મુક્ચતે, એવમેકઃ કથિદાસીદ્
ભૂષતિર્ય આસીદાસીન્નચાસીદ્ ।

તથા-મર્મગં=મર્મવાચકં વચનં ન લપેત્ । રહસ્યોદ્ઘાટકં વચનં ન વ્રૂયાદિત્યર્થઃ ।
મર્મગં વચનં હિ હૃદયે શરાયાતવેદનામિવ વેદનાં જનયતિ, વત્રાઘાત ઇવ મૂર્છયતિ,

નિવાસ ન્ના હી અભાવ થા । જો ગાંચ જનોં કે નિવાસ સે વિહીન થા
ઉસમેં ત્રીન કુંભાર થે । इन में दो मूर्ख थे और एक वर्तन बनाने की
कला में निपुण था । परंतु यह वर्तन नहीं बनाता था । जो वर्तन बनाने
वाला नहीं था—उसने तीन वर्तन बनाये । दो फूटे और एक ऐसा जो
जुड़ता नहीं था । अर्थात् कपाल माला जिसकी जुड़ी २ थी । इस में तीन
चावल पकाये गये । इन में दो चावल कच्चे रहे और एक चावल सीझा
नहीं । उससे तीन ब्राह्मणों को भोजन कराया गया । दो ब्राह्मण तो
मूखे रहे और एक ने खाया नहीं । इस प्रकार इस कथा में केवल
निरर्थक शब्दों का ही प्रयोग हुआ है । इस प्रकार के निरर्थक वचन
नहीं बोलना चाहिये ।

જિનસે દૂસરોં કે મર્મ કા ઉદ્ઘાટન હોતા તો એસે વચન મી નહીં
બોલના ચાહિયે । જો મર્મોદ્ઘાટક વચન હોતે હૈં વે જિસ પ્રકાર બાળ
હૃદય મેં આઘાત પહુંચાતા હૈં, ડસી તરહ આઘાત પહુંચાતે હૈં । વજ્ર કે

વિહીન હતું તેમાં ત્રણ કુંભાર રહેતા હતા, જેમાં બે મૂર્ખ હતા અને
એક વાસણ બનાવવાની કળામાં નિપુણ હતો, પરંતુ તે વાસણ બનાવતો ન
હતો. જે વાસણ બનાવનાર ન હતો, તેણે ત્રણ વાસણ બનાવ્યાં. બે ફુટેલાં
અને એક એવું કે જે ભેડાતું ન હતું. અર્થાત્ કપાલમાળા જેની જુદી જુદી
હતી, જેમાં ત્રણ ચોખા પકવવામાં આવ્યા, જેમાં બે ચોખા કાચા રહ્યા અને
એક ચોખો ચડ્યો નહીં—એનાથી ત્રણ બ્રાહ્મણોને ભોજન કરાવવામાં આવ્યું.
બે બ્રાહ્મણ તો ભુખ્યા રહ્યા અને એકે ખાધું નહીં. આ રીતે આ કથામાં કેવળ
નિરર્થક શબ્દોનો જ પ્રયોગ થયો છે. આ પ્રકારનાં નિરર્થક વચન
ન બોલવાં બેઈએ.

જેનાથી બીજાના મર્મનું ઉદ્ઘાટન થાય એવાં વચન પણ ન બોલવાં
બેઈએ. જે મર્મોદ્ઘાટક વચન હોય છે, તે જેમ બાણ હૃદયમાં આઘાત
પહોંચાડે છે એજ રીતે આઘાત પહોંચાડે છે. વજ્રના આઘાતથી જે રીતે મૂર્ખો

નિરર્થકં વચનં હિ વહ્નિવત્ સઠ્ઠલગુણભસ્મકારકં, સદ્ભૂતાર્યાપલાપકં, મિથ્યા-
ર્થપ્રતિબોધકં, ભવાટવીખ્રામકં, વિકલ્પનાલગ્નકં, વૈરાગ્યલતાવિનાશકં, વિવેક-
ચન્દ્રમચ્છાદકમ્ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે યથા—

આસીત્ કશ્ચિદેકો વસતિનિર્માપકો નૃપતિઃ, સ આસીદાસીન્ન ચાસીત્ ।
અસદ્ભાવં પ્રાપ્તેન તેન ભૂપતિના ત્રયો ગ્રામા નિર્માપિતાઃ । તત્ર વત્તિનિવાસિનાં
જનાનાં નિર્વાસનાદ્ દ્વો ગ્રામો નિર્વાસિતો, એકથ જનનિવાસાભાવાદેવ વમતિ-
ર્નાભૂત્ । અથ યત્ર જનાનાં વાસો નાભૂત્ તત્ર ત્રયઃ કુમ્ભકારા આસન્ । તેષુ દ્વો
કોઈ પુષ્પ હોતા હૈ, ન મૃગતૃષ્ણા રૂપ જલ કોઈ ભાવાત્મક પદાર્થ હૈ, ઓર
ન શશશ્રૃંગ કોઈ વસ્તુ હૈ । નિરર્થક વચન અગ્નિ કી તરહ્ સકલગુણો
કો ભસ્મ કરને વાલે સદ્ભૂત અર્થ કે અપલાપક एवं મિથ્યા અર્થ કે
પ્રતિબોધક હોતે હૈ । इनके प्रयोग से प्रयोक्ता भवाटवो में ही भ्रमण
करता रहता है । अनेक प्रकार के विकल्पों का तांता इन निरर्थक वचनों
से आत्मा में उद्भुत होता रहता है । वैराग्यरूपी लता के ये विनाशक
तथा विवेक रूपी चंद्रमा के आच्छादक ये माने गये हैं । इस विषय में
दृष्टાंत इस प्रकार है—

કોઈ એક રાજા થા જો વસ્તિ કા નિર્માણ ક્રિયા કરતા થા । વહ
હોકર મો નહોં થા । उसने अपनी गैर मौजूदगी अवस्था में तीन ग्रामों
की रचना की । दो गांवों को उसने वहां के निवासियों को निकाल कर
बिल्कुल उजड़ कर दिये । एक इसलिये ऊजड़ था कि उसमें जनों के

શિને પુત્ર હોય છે, ન આકાશનું કોઈ પુષ્પ હોય છે, મૃગતૃષ્ણા રૂપ જળ ન તો
કોઈ ભાવાત્મક પદાર્થ છે, અને ન તો સસલાના શિંગ કોઈ વસ્તુ છે. નિરર્થક વચન
અગ્નિ માફક સઘળા શુભોને ભસ્મ કરવાવાળા સદ્ભૂત અર્થનો અપલાપક અને
મિથ્યા અર્થ કરવાવાળા હોય છે. આવા પ્રયોગથી પ્રયોક્તા ભવાટવીમાં જ
ભ્રમણ કરતા રહે છે. અનેક પ્રકારના વિકલ્પોના તાંતા આવા નિરર્થક વચનોથી
આત્મામાં ઉદ્ભવતા રહે છે, વૈરાગ્યરૂપી લતાના એ વિનાશક તથા વિવેકરૂપી
ચંદ્રમાનું આચ્છાદન કરનાર માન્યા ગયા છે.

આ વિષયમાં આ પ્રકારે દ્રષ્ટાંત છે.—

કોઈ એક રાજા હતો, જે વસ્તીનું નિર્માણ કર્યો કરતો હતો, તે હોવા
છતાં ન હતો, તેણે પોતાની ગેરમોજૂદગી અવસ્થામાં ત્રણ ગામોની રચના કરી જે
ગામોને ત્યાંના રહેવાસીઓને ત્યાંથી કાઢી મુકી ઉત્તજડ બનાવી દીધાં. એક એ
માટે ઉત્તજડ હતું કે ત્યાં કોઈ વસ્તી જ ન હતી. જે ગામ લોકોના નિવાસથી

શ્વશુરગ્રામસમીપસ્ય કૂપસ્ય તટે વિશ્રામાર્થમુપવિષ્ટઃ । તત્ર તદ્ધાર્યયા ચિન્તિતમ્-વિદેશે
નાનાધિષ્ઠં કપ્ટં મયા કયં સોઢવ્યમ્ ? इति विमृश्य सा पतिमब्रवीत्-प्राणनाथ ! मां
पिपासा बाधते । ततोऽसौ श्रेष्ठी भार्यावचनं निशम्य तत्र कूपादुदकमुद्धर्तुं कूपा-
भिमुखं शिरोऽवनतीकरोति यावत्, तावदेव भार्यया पृष्ठे हस्ताघातेन कूपे निपा-
तितः । तदनन्तरं सा पितुर्गंहं गत्वा पितरमब्रवीत्-तव मामाता गृहात् वचचिन्नि-
र्गतस्तस्य नास्ति वार्ता, अतस्तव समीपे समागताऽस्मि ।

उसे अपने श्वशुर का ग्राम मिला । वह वहां गाम के बाहर कुए के पास विश्राम करने के लिये एक तरफ ठहर गया । इतने में उसकी पत्नी ने विचार किया कि-‘ये विदेश जा रहे हैं और मैं भी इनके साथ जा रही हूं । विदेश में अनेक प्रकार के कष्ट प्राणियों को सहन करने पड़ते हैं मैं उन कष्टों को कैसे सहन करूंगी’ ऐसा विचार कर उसने अपने पति धनगुप्त से कहा कि हे प्राणनाथ ! मुझे इस समय बड़े जोरकी प्यास लग रही है, पति पानी लेने को ज्यों ही कुए पर पहुँचा और पानी भरने लगा कि इतने में पीछे से उस पत्नी ने आकर उसे धक्का मारकर कुए में पटक दिया । बाद में फिर वह अपने पिता के घर जाकर कहने लगी कि हे पिता ! तुम्हारे जमाई न मालूम घर से कहां निकल कर चले गये हैं । मैं ने बहुत तपास कराई परन्तु अभीतक उनकी कोई खबर नहीं मिली है, सो मैं तुम्हारे पास आई हूं ।

જવા નીકળ્યા ચાલતાં ચાલતાં માર્ગમાં તેના સસરાનું ગામ આવ્યું. તે ત્યાં ગામ બહાર એક કુવા પાસે આરામ કરવા રોકાયા. એ સમયે તેની સ્ત્રીએ વિચાર કર્યો કે, “શેઠ પરદેશ બાંધ છે અને હું પણ તેમની સાથે બાંધ છું પરદેશમાં અનેક પ્રકારના દુઃખો પ્રાણીયોએ સહન કરવાં પડે છે, હું એ દુઃખોને કેમ કરીને સહન કરી શકીશ ” એવો વિચાર કરી તેણે પોતાના પતિ ધનગુપ્તને કહ્યું કે, હે પ્રાણનાથ ! મને અત્યારે ખૂબજ તરસ લાગી છે, પતિ પાણી લેવા માટે જ્યાં કુવા પર પહોંચ્યા, અને પાણી ભરવા લાગ્યા કે એટલામાં તેની સ્ત્રીએ પાછળથી આવીને તેને ધક્કો મારી કુવામાં હડસેલી દીધો. આ પછી તે પોતાના પિયર પહોંચી અને ત્યાં જઈ કહેવા લાગી કે, હે પિતા ! તમારા જમાઈ કદા વગર કોણ બહુ કેમ ઘેરથી ચાલ્યા ગયા છે, મેં ઘણી તપાસ કરાવી છતાં હજી સુધી તેની કોઈ ભાળ મળી નથી, માટે હું તમારી પાસે આવી છું.

દ્વેપાગ્નિ પ્રજ્વલયતિ, શોકમૃત્પાદયતિ, ચારિત્રં ધ્વંસયતિ, ગુણગણં સંહારયતિ, નરકનિગોદાદિદુઃખર્ગે નિપાતયતિ, નિશિતકૃપાણધારાન્મર્માણિ કર્તવ્યતિ ।

મર્મગવચનભાષણસ્ય દૃષ્ટાન્તસ્ત્વેવમ્—

આસીદ્ ધનગુપ્તનામા કથિદેકઃ શ્રેષ્ઠી । સ ચૈકદા માર્યામિત્રવીત્-પ્રિયે ! ધનાર્જનાય વિદેશં વ્રજામિ । તથા પ્રોક્તમ્-નાથ ! મયાન્ મામપિ તત્ર નયતુ । સ શ્રેષ્ઠી સહગમનાર્થમનુમતિં પત્ન્યૈ પ્રદત્તવાન્ । તતોઽસી પત્ન્યા સહ ગચ્છન્ માર્ગં

આઘાત સે જિસ પ્રકાર મૂર્છાં આજાતી હૈ उसी प्रकार इन वचनों से भी प्राणी मूर्च्छित हो जाता है । ये वचन सदा द्वेष रूपी अग्नि को प्रज्वलित करते रहते हैं और शोक परम्परा के संवर्द्धक होते हैं । इन के सद्भाव में चरित्र का सर्वथा विनाश होता रहता है । गुणगण का संहार करके ये वचन प्राणी को नरक एवं निगोदादिक के दुःख रूपी खड्गों में गिराते हैं । जैसे तीक्ष्ण धार वाली तलवार हर एक वस्तु को छेदनभेदन करती है उसी प्रकार मर्मग वचन भी प्राणी के मर्मस्थानों को छेदनभेदन करते हैं ।

इस विषय में दृष्टાન્ત इस प्रकार है—

कोई एक धनगुप्त नाम का सेठ था । उसने एक दिन अपनी पत्नी से कहा कि हे प्रिये ! मैं धन कमाने के लिये परदेश जाना चाहता हूँ । सुनकर उसने कहा कि हे नाथ ! आग मुझे भी साथ ले ले चलिये । पत्नी की बात सुनकर धनगुप्त ने उसे अपने साथ चलने की अनुमति दे दी । धनगुप्त पत्नी को साथ लेकर परदेश निकला । चलते-र मार्ग में

આવી બાય છે, એ જ રીતે આવા વચનોથી પણ પ્રાણી મૂર્ચ્છિત થઇ બાય છે. આવાં વચનો હંમેશાં દ્વેષરૂપી અગ્નિને પ્રગટ કરતાં રહે છે અને શોક પરંપરાને ઉત્તેજન કરનાર નિવડે છે. આના સદ્ભાવમાં આસ્ત્રિનો સર્વથા વિનાશ થતો રહે છે. શુષ્ક સમૂહનો સંહાર કરીને એ વચનો પ્રાણીને નરક અને નિગોદાદિકના દુઃખરૂપી ખાડામાં પાડે છે. જેમ તીક્ષ્ણ ધારવાળી તરવાર હરએક વસ્તુનું છેદન ભેદન કરે છે એજ રીતે માર્મિક વચન પણ પ્રાણીના મર્મસ્થાનોનું છેદન ભેદન કરે છે.

આ વિષયમાં આ પ્રકારનું દૃષ્ટાન્ત છે.—

કોઈ એક ધનગુપ્ત નામે થેઠ હતા, એણે એક દિવસ પોતાની સ્ત્રીને કહ્યું કે, હે પ્રિયે ! હું ધન કમાવા માટે પરદેશ જવા ઇચ્છું છું. સાંભળીને તેણે કહ્યું, કે હે નાથ ! આપ મને પણ સાથે લેતા બંધ, સ્ત્રીની વાત સાંભળી ધનગુપ્ત થેઠે તેને પોતાની સાથે ચાલવાની અનુમતિ આપી. ધનગુપ્ત સ્ત્રીને સાથે લઈ

વ્યજનવીજનં કુર્વતી પુરોઽવતિષ્ઠતે । અકસ્માદ્ ભાસ્કરકિરણાસ્તદ્ધવનજાલાન્ત-
ર્ગતાઃ શ્રેષ્ઠિમુલોપરિ નિપતન્તસ્તયા દ્વિષ્ટાઃ । પત્યુર્મુખે ભાસ્કર ક્ર સ્પર્શજનિતસ્તાપો
મા ભૂદિતિ ભાવનયા સા સત્વરં નિનકરદ્વયં ભાસ્કર કિરણસંમુલેકૃત્વા શ્રેષ્ઠિમુલો-
પરિ મૂર્યકિરણાન્ નિવાસ્યતિ ।

અકસ્માત્તદૈવ પત્નીકૃતં પૂર્વઘૃતં શ્રેષ્ઠિના સ્મૃતમ્ । શ્રેષ્ઠી મનસિ ચિન્તયતિ-
“અહો યયાહં રૂપે નિપાતિતઃ સૈવેયમધુના મમ સૂર્યઋસ્પર્શજનિતં તાપં નિવાસ્યતિ”
इत्येवं विचारयतस्तस्य श्रेष्ठिनो मुखे हास्यं समजनि । तदा तत्पुत्रवधूर्हसन्तं श्रेष्ठि-
नमकस्मादपश्यत् । सा पत्युः समीपमागत्य वदति-नाथ ! भवतः पिता श्वश्रूसमक्षं

કિ ધનગુપ્ત અપને રંગમવન મેં વૈઠા હુઆ ભોજન કર રહા થા । ઔર
પત્ની ઉસ કે ઝપર પંચા કર રહી થી । ધનગુપ્ત કે ચહરે પર અકસ્માત્
સૂર્ય કી કિરણેં મકાન કી છત કે છિદ્રો મેં સે આકર પડને લગી, પત્ની
ને ડ્યોં હી યહ દેખા કિ શીઘ્ર હી ઉસને ‘પતિ કો તાપ ન લગે’ इस
ख्याल से अपनी दो नों हथेलियों को सूर्य के साम्हने कर दिया । इससे
धनगुप्त के मुख पर पड़ती हुई वे किरणें थम गई-मुख पर हथेलियों की
छाया हो गई । पत्नी द्वारा इस प्रकार की गई सेवा का अवलोकन कर
धनगुप्त को पहले का वह कुए में डाल ने का वृत्तान्त याद आ गया ।
धनगुप्त ने विचार किया, देखो-जिसने मुझे पहिले कुए में पटका वही
अब मुझे ‘सूर्यजनित संताप न हो’ इस ख्याल से उस संताप का
निवारण कर रही है । ऐसा ख्याल कर धनगुप्त को कुछ हँसी आगई ।
धनगुप्त को अकस्मात् हँसता हुआ उस समय उसकी पुत्रवधू ने देख-
लिया था, इसलिये वह अपने पति के पास आकर कहने लगी कि नाथ,

અને તેની સ્ત્રી પંખાથી તેને હવા નાખી રહી હતી એ વખતે ધનગુપ્તના ચહેરા
ઉપર મકાનના છતના કાણામાંથી સૂર્યનાં કિરણો અકસ્માત પડવા લાગ્યાં તેની
સ્ત્રીએ જેવું આ જોયું કે તુરત જ એણે “પતિને તાપ ન લાગે” એવા ખ્યાલથી
પોતાના બન્ને હાથની હથેળીઓને સૂર્યના એ કિરણોની આડે ધરી દીધી. આથી
ધનગુપ્તના ચહેરા ઉપર પડતા કિરણોનો તાપ અટકી ગયો, મુખ ઉપર
હથેળીઓની છાયા થઈ ગઈ, સ્ત્રી તરફથી આ રીતે કરવામાં આવેલી સેવા
જોઈને ધનગુપ્તને પહેલાંનો કુવાવાળો પ્રસંગ યાદ આવી ગયો, ધનગુપ્તે વિચાર
કયો, જુઓ ! જેણે મને પહેલાં કુવામાં નાખી દીધો હતો તે હવે મને સૂર્યના
કિરણોનો તાપ ન લાગે એવા ખ્યાલથી એ સંતાપનું નિવારણ કરી રહી છે. આ
વિચારથી ધનગુપ્તને જરા હસવું આવ્યું. ધનગુપ્તને અકસ્માત્ હસતાં તેની પુત્ર
વધુએ જોઈ લીધેલ, આથી એ પોતાના પતિ પાસે જઈ કહેવા લાગી કે-

इतथासौ श्रेष्ठी कूपे पतन् भाग्यवशात् कूपमिनिगतं पापाणं प्राप्य तमवल-
म्ब्य स्थितः । तदनु तत्रागतैर्जलार्थिजनैरनुकम्पयाऽसौ कूपान्निःसारितः । ततोऽसौ
विदेशं गत्वा पुण्यप्रभावात् प्रचुरं धनं समुपाज्यं श्वशुरगृहे समायातः । तदा तस्य
पत्नी प्रसन्ना जाता, तथा सह श्रेष्ठी स्वगृहं गतः । अथैकदा श्रेष्ठिनः पुत्रो जातः
तस्य यौवने वयसि प्राप्ते श्रेष्ठिना विवाहः कारितः । पुत्रवधूरागता । किञ्चिदि-
वसेषु व्यतीतेषु सत्सु श्वश्रूवध्वोर्मध्ये कलहः प्रवृत्तः । यथूर्नित्यं श्वश्रूच्छिद्रान्वेषण-
परा जाता । एकदाऽसौ श्रेष्ठी रत्नभरने भोजनं कुर्वन्नासीत्, तत्पत्नी तदानीं बाल-

धनगुप्तज्यो ही कुए में गिरा कि भाग्यवश से उसे कुए की भित्ति
में पास ही एक पत्थर का टुकड़ा लगा हुआ दिखलाई पड़ा । यह भित्ति से
कुछ अधिक बाहर की ओर निकला था । पड़ते ही धनगुप्त ने उसको पकड़
लिया । जब पानी भरने वाले वहाँ पानी भर ने के लिये आये तब
उन्होंने धनगुप्त को कुए से बाहर निकाला । स्वस्थ होकर यह बिना कुछ
कहे परदेश की ओर चल दिया । वहाँ पहुँच कर उसने पुण्यकर्म के
उदय से खूब धन कमाया । कमाकर यह वहाँ से अपने घर वापिस
हुआ । रस्ते में इस के श्वसुर का गाम आया और यह श्वशुर के घर
पहुँचा । पत्नी ने पति को देखकर बहुत आनंद मनाया । वहाँसे अपनी
पत्नी को साथ लेकर घर आ गया । कालान्तर में धनगुप्त के एक पुत्र
हुआ । समय पर उसका विवाह कर दिया गया, बहु घरमें आई । रहते २
सास और बहु में झगडा होने लगा । बहु ने सास को दवाने के लिये
उस के छिद्रों का अन्वेषण करना प्रारंभ कर दिया । एक दिनकी बात है,

धनगुप्त कुवांमां पड्यो के, भाज्यवश कुवांनी लीं तमां तेनी पासे ज ओक
पत्थर थोटाडोला नजरे पड्यो जे लीं तथी थोडा अडार चिकणेला डतो । कुवांमां
पडतांनी साथे ज धनगुप्ते ते पत्थर पकडी लीयो ज्यारे पाणी भरवावाणा कुवा उपर
पाणी भरवा आवां त्यारे तेमणे धनगुप्तने कुवांमांथी अडार काढ्यो । स्वस्थ जनी
ठांई पणु जोदया सिवाय ते परदेश जवा आली निकल्यो त्यां पडोंथी ते पूरय
कर्मा उदयथी पूण धन कमायो । पूण धन कमाई ते पोताने घेर आववा निकल्यो,
रस्तांमां सासरानुं गाम आव्युं त्यारे ते सासराने घेर पडोंथ्यो, पतिने पतिने
जेई आनंद मनाव्यो । त्यांथी जे पोतानी स्त्रीने लधने पोताने गाम पोताने घेर
पडोंथ्यो । समय जतां जे धनगुप्तने त्यां ओक पुत्र थयो, समय उपर तेनां लग्न
क्यां, बहु घेर आवी, रडोतां रडोतां सासु अने बहु वर्ये विभवाड थवा लाग्यो,
बहु जे सासुने दणाववा भाटे तेनां गुप्त छिद्रोनां अन्वेषण करवाने प्रारंभ करी
दीयो । ओक दिवस धनगुप्त पोताना रंगलवनमां जेसी बीजन करी रडेल डतो ।

પુનરેકદા શ્રેષ્ઠિપત્ન્યાઃ પુત્રવધ્વા સહ કલહો જાતઃ, તસ્મિન્નવસરે પુત્રવધૂ-
વદત્-જાનામિ તવ ચરિત્રમ્, પતિ ક્રૂપે નિપાત્ય, સંપતિ પતિવ્રતા ભવિતુમ્વ્રતાઽસિ।
एतन्मार्मिकं वचनं निशम्य श्वश्रूः परमदुःखिता जाता, बहुशो हरोद, रुदित्वा च
मनसि चिन्तयति स्म-अयुना मम जीवनं धूलिखि निरर्थकम्. अय ममेयं वार्ता
लोके प्रसारिष्यति, मां लोकः किं वदिष्यति। इत्येवं विचिन्त्य सा भयनस्य द्वितीय-
भूमिकामाहरोह। तत्र गत्वा गले पाशं संयोज्य रज्ज्वां लम्बिता प्राणान्
परित्यक्तवती।

હૈંસી કા જો કુછ કારણ થા વહ અપને પુત્ર કો કહ દિયા। માંકા પાકર
શ્રેષ્ઠિ પુત્ર ને મો જો કુછ જૈસી ચાત થી વહ અપની પત્ની સે કહ દી।

एक समय सास बहु में परस्पर जब कलह हुआ तो पूत्रवधू ने
सासु से कहा कि "आप ज्यादा मत बोलो मैं जानती हूं कि आप बही
हैं जिन्होंने ने अपने पति को क्रूर में डाल दिया था, अब पतिव्रता
बनती हूं।" इस प्रकार बहू के मार्मिक वचनों को सुनकर सास के
हृदय में अपार दुःख हुआ, वह बारं बार रोने लगी, विचार किया कि
अब मेरा जीना बिलकुल निरर्थक है। वह ने मेरी सब शान धूलि में
मिला दी है। यदि मेरी यह बात लोक में फैल गई तो लोग क्या कहेंगे?
इस प्रकार सोचकर वह अपने मकान के दूसरे मंजिल पर गई, और
वहां उसने गले में फांसी डालकर आत्मघात कर लिया।

વાગા શેઠે હાંસીનું જે કાંઈ કારણ હતું તે સઘળું પોતાના પુત્રને કહી દીધું.
અવસર મેળવીને શેઠ પુત્રે પણ જે કાંઈ વાત હતી તે પોતાની પત્નીને
કહી દીધી.

સાસુ વહુમાં પરસ્પર બ્યારે કંઈ સ થયો ત્યારે પુત્રવધુએ સાસુને કહ્યું
કે, "તમે વધુ ન બોલો, હું જાણું છું કે, તમે એ જ છો કે જેણે પોતાના
પતિને ક્રુવામાં ધકેલ્યો દીધેલ, હવે પતિવ્રતા બનો છો." આ પ્રકારનાં વહુનાં
માર્મિક વચનોને સાંભળી સાસુના હૃદયમાં અપાર દુઃખ ઉપવસ્યું અને તે ચોધાર
આંસુએ રડવા લાગી, તેણે મનમાંને મનમાં એવો નિશ્ચય કર્યો કે, હવે મારું
જીવન બીલકુલ નીરર્થક છે, વહુએ મારી બધી શાન ધુળમાં મેળવી દીધી છે. જો
મારી આ વાત લોકોમાં ફેલાઈ જાય તો લોકો શું કહેશે? આ રીતે વિચાર
કરી તે પોતાના મકાનના બીજા માળા ઉપર પહોંચી અને ત્યાં જઈ ગળામાં
ફાંસો નાખી આત્મઘાત કર્યો.

इसन् मया दृष्टः, किं तत्र हासस्य कारणमभूदित्यादिवाच्यताम् । श्रेष्ठिपुत्रः प्राह-
पतिपत्न्योर्वृत्तमवेद्यं भवति । पत्नी वदति-भवता यावदेतद्वृत्तं नानेप्यते, न वा
वृत्तानयनवचनं दास्यते, नावन्मयाऽन्नपानं परित्याज्यम् । प्रेमपरवशेन विस्मृतविवे-
केन श्रेष्ठिपुत्रेण 'हास्यकारणं कथयिष्यामी' ति वचन प्रदानेन पत्नी परितोषिता ।

एकदा श्रेष्ठिपुत्रः पितृशरणसंसादनं कर्तुं पृच्छतिस्म आर्य ! तस्मिन् दिवसे
केनकारणेन भवता हसितम्, इत्येवं पृष्टोऽसौ सरलहृदयः श्रेष्ठो सर्वं पूर्ववृत्तं
पुत्राय कथितवान् । श्रेष्ठिपुत्रः सर्वं पूर्ववृत्तं विज्ञाय पत्न्यै कथयामास ।

आज मैं ने आप के पिता को सागुजी के समक्ष हैंसते हुए देखा है
अतः हे नाथ ! आप मुझे बतलाईये कि इस अकारण हँसी का क्या
कारण है । सेठ के पुत्र ने अपनी पत्नी को समझाया कि पति और पत्नी
का वृत्त अवेद्य हुआ करता है । अतः इस विषय को जानने की चेष्टा
करना व्यर्थ है । पत्नी ने पति के मुख से यह बात सुनकर कहा हे नाथ !
जब तक आप मुझे इसका कारण नहीं बतलावेंगे, तबतक मैं अन्नजल
ग्रहण नहीं करूँगी । पत्नी का इस प्रकार वृत्त को जानने का अधिक
आग्रह देखकर पति ने उसके प्रेम से पागल जैसे बनकर उसे इस
बात का आश्वासन दिया कि वह कुछ समय बाद इसका वास्तविक
कारण उसे बतला देगा । इस प्रकार रुष्ट हुई पत्नी संतुष्ट हो गई । एक
समय की बात है कि श्रेष्ठि पुत्र ने पिता के चरणों को दाबते हुए उनसे
पूछा कि हे तात ! आप एक दिन भोजन करते समय किस कारण से
हँसे थे ? पुत्र की इस बात को सुनकर सरल हृदय वाले सेठ ने समस्त

हे नाथ ! आज मैं तमारा पिताने सागुलु साथे इसता जेया. तो आप जे
जतावे। ते तेमना अकारण इसवानुं शुं कारण छे ? सेठ पुत्रे पोतानी अने
समजान्युं के, पति पत्नीने संबंध अवेद्य होय छे. आ विषयने जलुवानी
जेन्टा करवी व्यर्थ छे. पत्नीजे पतिना मुजधी आवी बात सांलणीने कह्युं के,
हे नाथ ! जयां सुधी तमे भने तेनुं कारण नहीं जतावे। त्यां सुधी हुं अन्न
जल ग्रहण करीश नहीं. पत्नीने आ प्रकारे वृत्तान्त जलुवाने अधिक आग्रह
जलुने पतिजे तेना प्रेमभा पागल जेम जनीने तेने आ बातनुं आश्वासन
आप्युं के, थोडा समयमां पोते तेनुं वास्तविक कारण जतावशे. आथी इष्ट
जनेल पत्नीने संतोष थयो. जेक समयनी बात छे के, सेठ पुत्रे पोताना पिताना
पम हाजता हाजतां जेमने पूछ्युं के, हे तात ! आप जेक दिवस जोजन
करतां करतां शा भाटे इस्या डता ? पुत्रनी आ बातने सांलणीने सरण कथ-

તદાડસી પુત્રોડપિ માતાપિત્રોર્વિયોગેન શોકાર્તઃ સન્ ભવિષ્યદનિષ્ઠં ચિન્તયન્ મૃતં પિતરં પાશવન્ધનાદ્ વિમુચ્ય સ્વગલે તં પાશં વદધ્વા મૃતઃ ।

તદનન્તરં પુત્રવધૂઃ ‘ ઇમે ત્રયઃ સ્વલુ મિલિત્વા મમૈવ દુર્દશાં ભાવયન્તિ ’ ઇતિ વિચિન્ત્ય ક્રોધાવેશેન ધમધમાયમાના ઉપરિ ગતા । તત્ર સા પદ્યતિ-શ્વશ્રૂઃ શ્વશુર-શ્ચોર્મૌ મૃતૌ નિપત્તિતૌ, પતિરપિ ગલે વદ્ધપાશો મૃતઃ પાશરજ્જ્વાં લમ્બિત ઇતિ । તદા ચિનિષ્ટકોપા નિતાન્તદુઃખાર્તાં સા ચિન્તયતિ સ્મ-અતઃ પરં કીદૃશી દશા મમ ભવિષ્યતિ, લોકાઃ કિં વદિષ્યન્તિ, કઃ સ્યાન્મમ શરણમ્, ઇત્યાદિ । તદનન્તર-મસૌ સગર્ભા પુત્રવધૂઃ પત્યુર્ગલે સંલગ્નં પાશવન્ધનં વિમુચ્ય સ્વગલે સંયોજ્ય લમ્બિતા પ્રાણાન્ ત્યક્તવતો ।

ગલે મેં ફાંસી લગાકર મરે હુએ લટક રહે હેં । હસ પરિસ્થિતિ સે ઉસે વહુત હી દુઃખ હુઆ । માતા પિતા કે વિયોગ ને ઉસે પાગલ બના દિયા, અન્ત મેં ઉસ વિચારે ને ભી અપને પિતા કે ગલે સે ફાંસી ઉતાર કર અપને ગલે મેં લગાલી । જય પુત્રવધૂ ને યહ વિચારા કિ “ દેખો યે તિનોં કે તિનોં મિલકર મેરી દુર્દશા કર ને કી ભાવના કર રહે હેં । અતઃ ડુપર જાકર દેખૂં, કિ હન સચકી ક્યા રાય હો રહી હૈ ’ હસ પ્રકાર ક્રોધ કે આવેશ સે ધમ ધમ કરતી હુઈ વહ ડુપર ગઈ । જાતે હી ઉસને દેખા કિ સાસ શ્વશુર મરે પડે હુએ હેં પતિ ભી ગલે મેં ફાંસી લગાકર મરે હુએ લટક રહે હેં । ઉસ દુર્ઘટના કો દેખકર ઉસકે શરીર મેં સન્નાટા છા ગયા, કોપ જાતા રહા । અત્યંત શોક સે વહ વિહ્વલ હો ગઈ । વિચારા કિ અય સંસાર મેં મેરા કૌન હૈ, કિ જિસ કે લિયે હન પ્રાણોં કી રક્ષા કરૂં । લોગ સુનેંગે તો ક્યા કહેં ગે । હસ પ્રકાર વિચાર કર વહ ભી અન્ત મેં

ગળામાં ફાંસી લગાડી મરેલી હાલતમાં લટકી રહ્યા છે. આ પરિસ્થિતિ જોઈ તેને ખૂબ દુઃખ થયું, માતા પિતાના વિયોગે તેને પાગલ બનાવી દીધો. અંતે એ બિચારાએ પણ પોતાના પિતાના ગળામાંથી ફાંસી કાઢી પોતાના ગળામાં લગાવી આત્મઘાત કર્યો બ્યારે પુત્રવધુએ એ વિચાર્યું કે, “ આ ત્રણે જણા મળી મારી દુર્દશા કરવાની યોજના ઘડી રહ્યાં હશે. આથી ઉપર જઈ જોઈ તો ખરી કે બધા કેવો વિચાર કરી રહ્યા છે ” આ રીતે ક્રોધના આવેશથી ધમ ધમ કરતી વહુ ઉપર પહોંચી ને જુએ છે તો સાસુ સસરા મરેલ પડ્યા છે. અને પતિ પણ ગળામાં ફાંસી લગાવી મરેલ લટકી રહેલ છે. આ દુર્ઘટનાને જોઈ એના શરીરમાં કંપારી વધુટી, ક્રોધ જતો રહ્યો અને શોકથી વિહ્વળ બની ગઈ. વિચાર્યું કે હવે સંસારમાં મારું કાણુ છે કે જેના માટે આ પ્રાણની રક્ષા કરે લોકો બચશે તો શું કહેશે ? આ વિચાર કરી તેણે પોતાના

અથ શ્રેષ્ઠી ગૃહમાગતઃ, પત્નીમનવલોચ્ય પુત્રવધૂં પૃષ્ટવાન્-આયુષ્મતિ ! તથ
 શ્વશ્રુઃ ક્વાસ્તિ ?, પુત્રવધૂઃ કરચેષ્ટયાઽઽવેદયતિ-માનોપરિભાગે ગતા ઇતિ । શ્રેષ્ઠી
 ગૃહોપરિભાગભૂમિકાં ગત્વા શ્રેષ્ઠિનાં ગલે પાશવદ્વાં મૃતાં પશ્યતિ । તદાઽસૌ શ્રેષ્ઠી
 વિપાદમુપગતઃ સન્ વિચિન્તયતિ-અનયા વિના મમ કીદૃશી દશા મવિષ્યતિ,
 ઇત્યાદિ । તદનુ સશ્રેષ્ઠો પત્નીગલગતં પાશં વિમુચ્ય સ્વગલે સંયોજ્ય પ્રાણાંમૃત્યુક્તવાન્ ।
 પુત્રોઽપિ ગૃહમાગતઃ, સ પિતરમદૃષ્ટ્વા પત્નીં પૃષ્ટવાન્-‘ક્વાસ્તિ મમ ઠાતઃ’ ।
 પત્ની પ્રાહ-‘ઉભૌ મમાનિષ્ટં કર્તુમુપરિ વર્તેતે । પુત્રઃ પત્નીવચનમાકર્ષ્ય તત્ર ગત્વા
 પશ્યતિ-માતા મૃતા નિપત્વિતાઽસ્તિ, પિતાઽપિ પાશવદ્વો મૃતઃ પ્રલમ્બિયતો વર્તેતે, ઇતિ ।

ધનગુપ્ત જવ ઘર આયા તો ઉસને સેઠાની કો ન દેખકર વહુ સે
 પૂછા આયુષ્યમતી ! તુમ્હારી સાસ કહાં હૈ ? ઉસને હાથ કે હશારં સે
 કહા કિ વે મકાન કે દૂસરે મંજિલ પર હૈં । ધનગુપ્ત વહાં પહુંચા ઔર
 દેખા કિ વહુ ગલે મેં ફાંસી લગા કર મર ગઈ હૈ । ધનગુપ્ત ને યહુ દશા
 દેખકર વહુન હી શોચ વિચાર કિયા ઔર અન્ત મેં યહુ નિર્ણય કર કિ
 સેઠાની કે વિના મેરી કયા દશા હોગી, પત્ની કો ફાંસી સે ઉતાર કર
 વહુ સ્વયં ફાંસી લટક ગયા । પુત્ર ને પિતા કો ઘર પર આકર જવ નહીં
 દેખા તો પત્ની સે પૂછા કિ પિતાજી કહાં પર હૈં । ઉસને ઘાત કો બના
 કર કહા કિ માતા-પિતા દોં નોં હી દૂસરે મંજિલ પર મેરા અનિષ્ટ કર
 ને કી વિચારણા કરને કે લિયે ગયે હુએ હૈં । પત્ની કી વાત સુનકર
 વહુ મકાન કે ઉપર ગયા । દેખા કિ માતા મરી પડી હૈ ઔર પિતાજી

ધનગુપ્ત બ્યારે ઘેર આવ્યો તો તેણે પોતાની સ્ત્રીને ન જોતાં વહુને પૂછ્યું,
 ‘આયુષ્મતી ! તમારી સાસુ કયાં છે ? તેણે હાથના ઈશારાથી કહ્યું કે, ખીખ માળ
 ઉપર (મેડી ઉપર) છે. ધનગુપ્ત ત્યાં પહોંચ્યો અને જુએ છે તો ગળામાં ફાંસી
 નાખી તે મરી ગયેલ છે. આ રીતે પોતાની પત્નિની દશા જોઈ ધનગુપ્તે ખૂબજ
 મનોમંથન સાથે વિચાર કયો. અને અંતે એ નિર્ણય કયો કે, પત્નિના જવા
 પછી હવે મારી શું દશા થશે ? ફાંસાથી લટકતી પત્નિને નીચે ઉતારી એ
 દોરડાને ફાંસી પોતાના ગળામાં નાખી લઈ પોતે પણ આત્મઘાત કયો.

એક તરફ પતિપત્નિ એક જ દોરડાના ફાંસાથી આત્મહત્યા કરી જીવમુક્ત
 બન્યાં એ સમયે પુત્રે ઘેર આવતાં પોતાના પિતાને ન જોવાથી પત્નિને પૂછ્યું,
 પિતાજી કયાં ગયા ? સ્ત્રીએ વાતને બનાવીને કહ્યું કે, માતા-પિતા બન્ને જહાં
 માફ અનિષ્ટ કરવાની વિચારણા કરવા મેડી ઉપર ગયેલ છે. પત્નિની વાત
 સાંભળી તે મેડી ઉપર ગયો. જોયું તો મા નીચે મરેલી પડી છે, અને પિતાજી

લક્ષણં સર્વેષાં સ્થાનાનામ્, કુત્રાપિ સ્ત્રિયા સદાવસ્થાનં સંભાષણં ચ ન કુર્યાદિત્યર્થઃ,
 એકગ્રહણમપ્યુપલક્ષણમ્ તેનાનેકસ્ત્રીભિરપિ સદાવસ્થાનં સંભાષણં ચ વર્જનીયમ્, યત્ર
 પુરુષઃ સાક્ષી નાસ્તિ તત્ર સ્ત્રિયા સદાવસ્થાનં સંભાષણં ચ પરિહરેદિતિ મૂત્રાશયઃ ।

ઉક્તં ચ શ્રીદશવૈકાલિક સૂત્રે—

જહા કુક્કુડપોયસ્સ, નિચ્ચં કુલલઓ મયં ।

એવં સુ વંમયારિસ્સ, ઇત્થીવિગ્ગહઓ મયં ॥ (અ. ૮ ગા. ૫૪)

છાયા—યથા કુક્કુટપોતસ્ય, નિત્યં કુલલાદ મયમ્ ॥

એવમેવ વ્રહ્મચારિણઃ, સ્ત્રીવિગ્રહાદ મયમ્ ॥

સ્વગત દોષ કા નિરૂપણ કર કે અથ અન્ય કે સંસર્ગ સે હોને વાલે
 દોષોંકા ચર્ણન કરતે હૈં—‘સમરેસુ-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(સમરેસુ-સમરેપ્) લુહારકી શાલા મૈં (અગારેસુ-અગારેપ્)
 ઘરોં મૈં, (સંધીસુ-સંધિપુ) દો ઘરોં કે અંતરાલ મૈં તથા (મહાપહેસુ-મહાપથેપુ),
 રાજમાર્ગ મૈં (એગિત્થિએસદ્ધિ-એકન્નિયાસાર્ધ) અકેલી સ્ત્રી
 કે સાથ (નેવચિટ્ટે ન સંલવે-નૈવતિષ્ઠેત્ નૈવ સંલપેત્) ન યાદા હોવે
 ઓર ન ડસસે વાતચીત કરે ।

હસ શ્લોક મૈં સમરાદિક ચાર પદ ઉપલક્ષણ હૈં, હસસે સમજના
 ચાહિયે કિ કિસી મી જગહ મૈં જવ તક પુરુષ સાક્ષીભૂત ન હો તવ તક
 અકેલી સ્ત્રી સે અથવા અનેક સ્ત્રીયોં સે વ્રહ્મચારી કા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ
 ન યોલે ઓર ન વહાં યાદા રહે । દશવૈકાલિક સૂત્ર મૈં ભગવાનને કહા હૈં

આ પ્રકારે ચોતાનામાં રહેલ હોયોતું વણું ન કરી હવે બીજાના સંસર્ગથી
 થયેલ હોયોતું વણું ન કરે છે. સમરેસુ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—સમરેસુ-સમરેપુ લુહારની કોડમાં, અગારેસુ-અગારેપુ ઘરોમાં,
 સંધેસુ-સંધેપુ બે ઘરોના અંતરાળમાં તથા મહાપહેસુ-મહાપથેપુ રાજમાર્ગમાં,
 એગિત્થિએ સદ્ધિ-એકસ્ત્રિયા સાર્ધ એકલી સ્ત્રી સાથે, નેવ ચિટ્ટે ન સંલવે-નૈવ તિષ્ઠેત્
 નૈવ સંલપેત્ બીજા ન રહેવું અને એનાથી વાતચીત કરવી નહીં.

આ શ્લોકમાં સમરાદિક ચાર ઉપલક્ષણ છે, એથી એ સમજવું બેઠએ
 કે, કોઈ પણ સ્થળે જ્યાં સુધી બીજો પુરુષ સાક્ષીભૂત ન હોય ત્યાં એકલી
 સ્ત્રી અથવા અનેક સ્ત્રીઓ સાથે વ્રહ્મચારીએ બોલવું ન બેઠએ, અને ત્યાં
 બોલવું પણ ન બેઠએ. દશવૈકાલિક સૂત્રમાં ભગવાને કહ્યું છે કે, જે રીતે
 કુકડાના બચ્ચાને બિલાડીનો બચ રહે છે, એ રીતે સ્ત્રીના શરીરનો વ્રહ્મચારીને
 પણ બચ રહ્યા કરે છે.

અત્મિન્ દૃષ્ટાન્તે-સકદુક્તાદપિ મર્મવચનાત્ પળ્ળાં જીવાનાં પ્રાણવ્યપરોપણં
જાતમ્, યતઃ પુત્રવધૂર્ગમં દ્વયમપત્યમાસીત્ । તસ્માન્માર્મિકં વચનં ન માપનીયમ્ ।

સાવચ-નિરર્થક-મર્મગ-વચનમાપગસ્ય સર્વથા પ્રતિપેષં ત્રોધયિતુમુત્તરાર્ધમાહ-
'અપ્પળઢ્ઢા' ઇત્યાદિ । આત્માર્થ=સ્વાર્થ, પરાર્થ વા, તથા ઉભયસ્ય આત્મનઃ પરસ્ય
ચ અર્થે, વા-અથવા, અન્તરેણ=અનુભયાર્થે સ્વપ્રયોજનાભાવેઽપિ સાવચં ન લપેત્=
ન નિરર્થકં લપેત્, ન મર્મગં લપેત્, ઇતિ સમ્બન્ધઃ ॥ ૨૫ ॥

અથાન્યસંસર્ગકૃતદોષપરિહારમાહ—

મૂલમ્—સમરેસુ અગારેસુ, સંધીસુ યં મહાપૈહે ।

૧ંગો ૧ંગિત્થિ ૧ સંદ્ધિ, નેવં ચિદ્દે' ને સંલેવે ॥૨૬॥

છાયા—સમરેપુ અગારેપુ, સંધિપુ ચ મહાપથે ।

૧કઃ ૧કલ્પિયા સાર્ધ, નૈવ તિષ્ઠેત્ ન સંલપેત્ ॥૨૬॥

ટોકા—'સમરેસુ' ઇત્યાદિ—

સમરેપુ=ઐહકારશાલાસુ તથા-અગારેપુ=ગૃહેપુ, તથા સંધિપુ=ગૃહદ્વયાન્તરા-
લેપુ તથા-મહાપથે=રાજમાર્ગે, ૧કઃ=૧કાકો, ૧કલ્પિયા=૧કાકિન્યા ક્ષિયા,
સાર્ધ=સહ, નૈવ તિષ્ઠેત્=ઋચસ્થાનાવસ્થિતો નૈવ ભવેત્ । ન સંલપેત્-તયા=સહ સમ-
રાદિપુ સ્થાનેપુ ક્વાઽપિ સંભાષણં ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । અથ સમરાદિચતુષ્વસ્થાનશુષ્

પતિ કે ગલે સે ફાંસી નિકાલ કર અપને ગલે મેં ફાંસી ઢાલકર મર
ગઈ વહ ઉસ સમય ગર્ભવતી થી । ઉસ કે ગર્ભ મેં દો બાલક થે ।

ઇસ દૃષ્ટાંત સે યહ વાત સ્પષ્ટ હોતી હૈ કિ દેખો ૧ક બાર મો કહે
ગયે માર્મિક વચન સે છહ પ્રાગિયોં કા દારૂળ આપઘાત હુઆ । ઇસલિયે
માર્મિક વચન નહીં કહના ચાહિયે । અપને અથવા પર કે નિમિત્ત તથા
દોનોં કે નિમિત્ત ૧વં જહાં સ્વ ઔર પર કા કુછ મી પ્રયોજન ન હો વહાં
પર મી વ્યર્થ હી મનુષ્ય કો સાવચ, નિરર્થક ૧વં મર્મગ વચન નહીં
બોલના ચાહિયે ॥ ૨૬ ॥

પતિના ગળામાંથી ફાંસો કાઢી પોતાના ગળામાં નાખી મરી ગઇ. તે એ સમયે
ગર્ભવતી હતી, એના ગર્ભમાં બે બાળક હતાં.

આ દૃષ્ટાંતથી એ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે, એક વખત પણ કહેવામાં
આવેલા માર્મિક વચનથી છ પ્રાણીઓના કહેલુ આપઘાત થયો, આ માટે
માર્મિક વચન ન બોલવાં ભેધએ. પોતાના અથવા બીજાના નિમિત્ત તથા
બીજાના નિમિત્ત અને બીજાં પોતાનું કે બીજાનું કોઈ પણ પ્રયોજન ન હોય ત્યાં
પર પણ મનુષ્યને સાવચ, નિરર્થક અને માર્મિક વચન બોલવાં ન ભેધએ. (૨૫)

રણમ્, લાભઃ—અપ્રાપ્તસ્ય સમ્યક્દર્શન—સમ્યગ્જ્ઞાન—સમ્યક્ચારિત્રલક્ષણરત્નત્રયસ્ય પ્રાપ્તિસ્તસ્ય કારણમસ્તિ, इति प्रेक्षया=इति पर्यालोचनात्मिकया बुद्ध्या प्रयतः=प्रकरणे यतनावान् सहनशीलः सन् शिष्यः तत्=अनुशासनं गुरोः शिक्षावचनं प्रतिशृणुयात्=कर्तव्यतयाऽङ्गीकुर्यात् ।

અર્થે ભાવઃ—

यथा—वर्षाकाले सूर्यकिरणाः प्रचण्डतरा भवन्ति, परंतु परिणामे द्वित्रदिवसाभ्यन्तर एव ते जलदावलीसमागमनशीतलपवनजलधारासंघातजनितशीतस्पर्श-सुखं प्रादुर्भावयन्ति । “यथा वा—नालिकेरं वहिः कर्कशं भवति. तथापि तदीयं शीतलमधुरनीरगर्भितमाभ्यन्तरिकभागपुलभ्य लोकस्तदास्वादनेन तुष्टिं पुष्टिं इससे अप्राप्त सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक् चारित्र की मुझे प्राप्ति होती है । (त्ति पेहाए—इति प्रेक्ष्य) इस प्रकार पर्यालोचनात्मक बुद्धि से विचार कर (पयओ तं पंडिस्सुणे—प्रयतःतं प्रतिशृणुयात्) सहनशील बना हुआ शिष्य गुरु के शिक्षात्मक वचनों को कर्तव्य समझकर अंगीकार करे ।

તાત્પર્ય—જિસ પ્રકાર વર્ષાકાલ મેં સૂર્યકી કિરણે પ્રચણ્ડતર હો જાતી હેં ઓર હસ સે વે પ્રાણિયોં કો અસહનીય બનતી હેં પરંતુ પરિણામ મેં દો ત્રીન દિન કે ખીતર હી વે ઘરસાત કે સમાગમન સે પવન કો શીતલ બના દેતી હેં ઉસ સે જલવૃષ્ટિ ખૂબ હોકર શીતસ્પર્શ કે સુખ કા ઉન્હેં અનુભવ કરાતી હેં । અથવા જૈસે—નારિયલ ઉપર સે કઠોર હોતા હૈ પરંતુ ઉસકા ખીતર કા ભાગ શીતલ, મીઠે જલ સે ખરા રહતા હૈ, ઉસકો

ખધું મારે માટે લાભકારક છે. કેમ કે, એનાથી અપ્રાપ્ત સમ્યગ્ દર્શન સમ્યગ્ જ્ઞાન, અને સમ્યક્ ચારિત્રની મને પ્રાપ્તિ થાય છે. ત્તિપેહાए—इतिप्रेक्ष आ प्रकारे पर्या-लोचनात्मक बुद्धिથી વિચાર કરી, पयओ तं 'पंडिस्सुणे'—प्रयतः तत् प्रतिशृणुयात् सहनशील બનેલ શિષ્ય ગુરુના શિક્ષાત્મક વચનોને 'કર્તવ્ય' સમજી અંગિકાર કરે.

આતું તાત્પર્ય એ છે કે, જેવી રીતે વર્ષાકાળમાં સૂર્યનાં કિરણો પ્રચંડતર થઈ જાય છે, અને તેથી તે પ્રાણીઓ માટે અસહનીય બની જાય છે. પરંતુ પરિણામે જે ત્રણ દિવસની અંદર તે વરસાદના સમાગમથી પવનને શીતળ બનાવી દે છે, જેથી જળવૃષ્ટિ ખૂબ થાય છે અને ઠંડીનો સ્પર્શ મુખને અનુભવ કરાવે છે. અથવા જેમ નાળિયેર ઉપરથી કઠોર હોય છે પરંતુ એની અંદરનો ભાગ શીતળ મીઠા જળથી ભરેલો હોય છે. જેને એજવી લોકો તુષ્ટિ-સંતોષ

ઉક્તં ચાન્યત્ર-સસા મુપા નુસા માયા, ય્યાદિં ચિ ન સંલયે ।

અંગતે નેવ ચિદ્દેજ્ઞા, અપ્પઠ્ઠી સંજ્ઞા સયા ॥ ૧ ॥

છાયા—સ્વસા મુતા મુપા માતા, યતામિરપિ ન સંલપેત્ ।

અકાન્તે નેવ તિષ્ઠેત્, આત્માર્થો સંપતઃ સદા ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥ ૨૬ ॥

અથ વિનીતશિષ્યકર્તવ્યમાહ—

મૂલમ્—જં મે' બુદ્ધાઽણુસાંસંતિ, સીંણેણ ફરુસેણ વા ।

મમ લાભો તિ' પેહાપે, પંયઓ તં' પડિસંસુણે ॥ ૨૭ ॥

છાયા—યન્માં બુદ્ધા અનુશાસંતિ, શીતેન પરુપેણ વા ।

મમ લાભ ઇતિ પ્રેક્ષયા, પ્રયતસ્તત્ પ્રતિશૃણુયાત્ ॥ ૨૭ ॥

ટીકા—'જં મે' ઇત્યાદિ ।

બુદ્ધાઃ=આચાર્યાઃ, યન્મામ્ શીતેન=શીતલવચનેન મૃદુવચનેનેત્યર્થઃ, વા=અથવા પરુપેણ=કઠોરવચનેન અનુશાસતિ શિષ્યવન્તિ, હ્રદમનુશાસનં મમ લાભઃ=જ્ઞાનકા-

-કિ-જિસં પ્રકાર મુર્ગે કે વચ્ચેકો કુલલ-ચિલાડી સે અય વના રહતા હૈ ઉસી તરહ બ્રહ્મચારી કો ભી સ્ત્રી કે શરીર સે સદા ભય રહા કરતા હૈ । ઇસલિયે ચાહે અપની સાંસારિક વહિન ભી હો, ચાહે પુત્રી હો, વહુ હો, માતા ભી હો, તો ભી અકાન્તમેં બ્રહ્મચારી કો इनके साथ उठना बैठना नहीं चाहिये और न पातचीत ही करनी चाहिये ॥ ૨૬ ॥

અથ વિનીત શિષ્ય કા કર્તવ્ય કહતે હૈ—'જંમે' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—વિનીત શિષ્ય કો ઇસ પ્રકાર વિચાર કરના ચાહિયે કિ (જંમે બુદ્ધા-યન્માં બુદ્ધા) જો મુદ્ધે આચાર્ય મહારાજ (સીંણ-શીતેન) મીઠે વચનોં સે, વા અથવા (ફરુસેણ-પરુપેણ) કઠોર વચનોં સે (અણુસા-સંતિ-અનુશાસતિ) અનુશાસિત કરતે હૈ અર્થાત્ શિક્ષા દેતે હૈ સો (મમ લાભો-મમ લાભઃ) યહ મેરે લિયે એક વડા ખારી લાભ હૈ, ક્યોં કિ

આ માટે બહે પોતાની સંસારીક બહેન હોય, આહે પુત્રી હોય, વહુ હોય, અથવા માતા હોય તો પણ એકાંતમાં એમની સાથે એસવું ઉઠવું કે વાતચિત પણ બ્રહ્મચારીએ કરવી ન જોઈએ. ॥૨૬॥

હવે વિનીત શિષ્યનું કર્તવ્ય કહે છે—જંમે ઇત્યાદિ.

વિનીત શિષ્યે આ પ્રકારનો વિચાર કરવો જોઈએ કે,

અન્વયાર્થ—જંમેબુદ્ધા-યન્માંબુદ્ધા મને આચાર્ય મહારાજ, સીંણ-શીતેન મીઠા વચનોથી, વા અથવા ફરુસેણ-પરુપેણ કઠોર વચનોથી, અનુસાસંતિ-અનુ-શાસંતિ અનુશાસિત કરે છે, અર્થાત્ શિક્ષા આપે છે. મમલાભો

રણમ્, લાભઃ—અપ્રાપ્તસ્ય સમ્યક્દર્શન—સમ્યગ્જ્ઞાન—સમ્યક્ચારિત્રલક્ષણતત્ત્વત્રયસ્ય પ્રાપ્તિત્વસ્ય કારણમસ્તિ, इति प्रेक्षया=इति पर्यालोचनात्मिकया बुद्ध्या प्रयतः=प्रकर्षेण यतनावान् सहनशीलः सन् शिष्यः तत्=अनुशासनं गुरोः शिक्षावचनं प्रतिशृणुयात्=कर्तव्यतयाऽद्वीकुर्यात्।

અયં ભાવઃ—

यथा—वर्षाकाले सूर्यकिरणाः प्रचण्डतरा भवन्ति, परंतु परिणामे द्वित्रदिव-
साभ्यन्तर एव ते जलदायलोसमागमनशीतलपवनजलधारासंघातजनितशीतस्पर्श-
सुखं प्रादुर्भावयन्ति। “यथा वा—नालिकेरं वहिः कर्कशं भवति. तथापि तदीयं
शीतलमधुरनीरगर्भितमाभ्यन्तरिकभागमुपलभ्य लोकस्तदास्वादनेन तुष्टिं पुष्टिं

इससे अप्राप्त सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक् चारित्र की मुझे
प्राप्ति होती है। (त्ति पेहाए—इति प्रेक्ष्य) इस प्रकार पर्यालोचनात्मक बुद्धि
से विचार कर (पयओ तं पंडिस्सुणे—प्रयतःतं प्रतिशृणुयात्) सहनशील
बना हुआ शिष्य गुरु के शिक्षात्मक वचनों को कर्तव्य समझकर
अंगीकार करे।

તાત્પર્ય—જિસ પ્રકાર વર્ષાકાલ મેં સૂર્યકી કિરણે પ્રચણ્ડતર હો જાતી
હૈં ઓર હસ સે વે પ્રાણિયોં કો અસહનીય બનતી હૈં પરંતુ પરિણામ મેં
દો ત્રીન દિન કે ખીતર હી વે ઘરસાત કે સમાગમન સે પવન કો શીતલ
બના દેતી હૈં ઉસ સે જલવૃષ્ટિ ખૂબ હોકર શીતસ્પર્શ કે સુખ કા ઉન્હેં
અનુભવ કરાતી હૈં। અથવા જૈસે—નારિયલ ઊપર સે કઠોર હોતા હૈ
પરંતુ ઉસકા ખીતર કા ભાગ શીતલ, મીઠે જલ સે ખરા રહતા હૈ, ઉસકો

બધુ મારે માટે લાભકારક છે. કેમ કે, એનાથી અપ્રાપ્ત સમ્યક્ દર્શન સમ્યક્જ્ઞાન,
અને સામ્યક્ ચારિત્રની મને પ્રાપ્તિ થાય છે. ત્તિપેહાએ—इतिप्रेक्ष आ प्रकारे पर्या-
लोचनात्मक बुद्धिથી विचार करी, पयओ तं 'पंडिस्सुणे—प्रयतः तत् प्रतिशृणुयात्
सहनशील बनेल शिष्य गुरुना शिक्षात्मक वचनोने 'कर्तव्य समल अंगिकार करे.

આનું તાત્પર્ય એ છે કે, જેવી રીતે વર્ષાકાળમાં સૂર્યનાં કિરણો
પ્રચંડતર થઈ જાય છે, અને તેથી તે પ્રાણીઓ માટે અસહનીય બની જાય છે.
પરંતુ પરિણામે જે ત્રણ દિવસની અંદર તે વરસાદના સમાગમથી પવનને
શીતળ બનાવી દે છે, જેથી જળવૃષ્ટિ ખૂબ થાય છે અને ઠંડીનો સ્પર્શ સુખનો
અનુભવ કરાવે છે. અથવા જેમ નાજિયેર ઉપરથી કઠોર હોય છે પરંતુ એની
અંદરનો ભાગ શીતળ મીઠા જળથી ભરેલો હોય છે. જેને મેળવી લોકો તુષ્ટિ-સંતોષ

ઉક્તં ચાન્યત્ર-સસા મુયા તુસા માયા, ય્યાર્હિં વિ ન સંલયે ।

અર્ગંતે નેવ ચિદ્દેજ્ઞા, અપ્પટ્ટી સંજ્ઞ સયા ॥ ૧ ॥

છાયા—સ્વસા મુતા સ્તુપા માતા, યતામિરપિ ન સંલપેત્ ।

અકાન્તે નેવ તિષ્ઠેત્, આત્માર્થી સંયતઃ સદા ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥ ૨૬ ॥

અથ વિનીતશિષ્યકર્તવ્યમાહ—

મૂલમ્—જં મે' બુદ્ધોઽણુસાંસંતિ, સીર્ણેણ ફરુસેણ વા ।

મમ લાભો ત્તિ' પેહાપે, પંચઓ તં' પહિર્સંસુણે ॥ ૨૭ ॥

છાયા—યન્માં બુદ્ધા અનુશાસંતિ, શીતેન પરુપેણ વા ।

મમ લાભ ઇતિ પ્રેક્ષયા, પ્રયતસ્તત્ પ્રતિગૃણ્યાત્ ॥ ૨૭ ॥

ટીકા—'જં મે' ઇત્યાદિ ।

બુદ્ધાઃ=આચાર્યાઃ, યન્મામ્ શીતેન=શીતલવચનેન મૃદુવચનેનેત્યર્થઃ, વા=અથવા પરુપેણ=કઠોરવચનેન અનુશાસતિ શિક્ષયન્તિ, હ્રદમનુશાસનં મમ લાભઃ=જામકા-

-કિ-જિસં પ્રકાર મુર્ગે કે ઘચ્ચેકો કુલલ-વિલાડી સે ભય બના રહતા હૈ ઉસી તરહ બ્રહ્મચારી કો ભી સ્ત્રી કે શરીર સે સદા ભય રહા કરતા હૈ । ઇસલિયે ચાહે અપની સાંસારિક વહિન ભી હો, ચાહે પુત્રી હો, વહુ હો, માતા ભી હો, તો ભી અકાન્તમેં બ્રહ્મચારી કો इनके साथ ઉઠના બેઠના નહીં ચાહિયે ઔર ન યાતચીત હી કરની ચાહિયે ॥ ૨૬ ॥

અથ વિનીત શિષ્ય કા કર્તવ્ય કહતે હૈ—'જંમે' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—વિનીત શિષ્ય કો હસ પ્રકાર વિચાર કરના ચાહિયે કિ (જંમે બુદ્ધા-યન્માં બુદ્ધા) જો મુઝે આચાર્ય મહારાજ (સીર્ણ-શીતેન) મીઠે વચનોં સે, વા અથવા (ફરુસેણ-પરુપેણ) કઠોર વચનોં સે (અણુસા-સંતિ-અનુશાસતિ) અનુશાસિત કરતે હૈ અર્થાત્ શિક્ષા દેતે હૈ સો (મમ લાભો-મમ લાભઃ) યહ મેરે લિયે અક બડા ભારી લાભ હૈ, કયોં કિ

આ માટે ભડે પોતાની સંસારીક બહેન હોય, ચાહે પુત્રી હોય, વહુ હોય, અથવા માતા હોય તો પણ એકાંતમાં એમની સાથે એસવું ઉઠવું કે વાતચિત પણ બ્રહ્મચારીએ કરવી ન ભેઈએ. ॥ ૨૬ ॥

હવે વિનીત શિષ્યનું કર્તવ્ય કહે છે—જંમે ઇત્યાદિ.

વિનીત શિષ્યે આ પ્રકારનો વિચાર કરવો ભેઈએ કે,

અ-વયાર્થ—જંમેબુદ્ધા-યન્માંબુદ્ધા મને આચાર્ય મહારાજ, સીર્ણ-શીતેન મીઠા વચનોથી, વા અથવા ફરુસેણ-પરુપેણ કઠોર વચનોથી, અનુસાસંતિ-અનુ-શાસંતિ અનુશાસિત કરે છે, અર્થાત્ શિક્ષા આપે છે. મમલાભો એ

રણમ્, લાભઃ—અપ્રાપ્તસ્ય સમ્યક્દર્શન-સમ્યગ્જ્ઞાન-સમ્યક્ચારિત્રલક્ષણત્તત્રયસ્ય પ્રાપ્તિસ્તસ્ય કારણમસ્તિ, इति प्रेक्षया=इति पर्यालोचनात्मिकया बुद्ध्या प्रयतः=प्रकर्षेण यतनावान् सहनशीलः सन् शिष्यः तत्=अनुशासनं गुरोः शिक्षावचनं प्रतिशृणुयात्=कर्तव्यतयाऽङ्गीकुर्यात्।

અર્થ ભાવઃ—

યથા—વર્ષાકાલે સૂર્યકિરણાઃ પ્રચ્છંદતરા ભવન્તિ, પરંતુ પરિણામે દ્વિવદિવસાભ્યન્તર એવ તે જલદાવલોસમાગમનશીતરૂપવનજલધાસંપાતજનિતશીતસ્પર્શ-સુલંબાદુર્ભાવયન્તિ। “યથા વા—નાલિકેરં વહિઃ કર્કશં ભવતિ. તથાપિ તદીયં શીતલમધુરનીરગર્ભિતમાભ્યન્તરિકભાગમુપલભ્ય લોકસ્તદાસ્વાદનેન તુષ્ટિ પુષ્ટિ ઇત્યસે અપ્રાપ્ત સમ્યક્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન એવં સમ્યક્ ચારિત્ર કી મુક્તે પ્રાપ્તિ હોતી હૈ। (ત્તિ પેહાપ્—ઇતિ પ્રેક્ષ્ય) ઇસ પ્રકાર પર્યાલોચનાત્મક બુદ્ધિ સે વિચાર કર (પયઓ તં પંડિસ્તુણે—પ્રયતઃતં પ્રતિશ્રુણુયાત્) સહનશીલ બના હુઆ શિષ્ય ગુરુ કે શિક્ષાત્મક વચનોં કો કર્તવ્ય સમજકર અંગીકાર કરે।

તાત્પર્ય—જિસ પ્રકાર વર્ષાકાલ મેં સૂર્યકી કિરણે પ્રચ્છંદતર હો જાતી હૈં ઓર ઇસ સે વે પ્રાણિયોં કો અસહનીય બનતી હૈં પરંતુ પરિણામ મેં દો ત્રીન દિન કે ખીતર હી વે વરસાત કે સમાગમન સે પવન કો શીતલ બના દેતી હૈં ઉસ સે જલવૃષ્ટિ સ્વૃષ્ હોકર શીતસ્પર્શ કે સુખ કા ઉન્હેં અનુભવ કરાતી હૈં। અથવા જૈસે—નારિયલ ઉપર સે કઠોર હોતા હૈં પરંતુ ઉસકા ખીતર કા ભાગ શીતલ, મીઠે જલ સે ભરા રહતા હૈં, ઉસકો

ખધુ ભારે માટે લાભકારક છે. કેમ કે, એનાથી અપ્રાપ્ત સમ્યક્ દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન, અને સામ્યક્ ચારિત્રની મને પ્રાપ્તિ થાય છે. ત્તિપેહાપ્—ઇતિપ્રેક્ષ આ પ્રકારે પર્યાલોચનાત્મક બુદ્ધિથી વિચાર કરી, પયઓ તં પંડિસ્તુણે—પ્રયતઃ તત્ પ્રતિશ્રુણુયાત્ સહનશીલ અનેલ શિષ્ય ગુરુના શિક્ષાત્મક વચનોને કર્તવ્ય સમજી અંગિકાર કરે.

આનું તાત્પર્ય એ છે કે, જેવી રીતે વર્ષાકાળમાં સૂર્યનાં કિરણો પ્રચ્છંદતર થઈ જાય છે, અને તેથી તે પ્રાણીઓ માટે અસહનીય બની જાય છે. પરંતુ પરિણામે જે ત્રણ દિવસની અંદર તે વરસાદના સમાગમથી પવનને શીતળ બનાવી દે છે, જેથી જળવૃષ્ટિ ખૂબ થાય છે અને ઠંડીનો સ્પર્શ સુખનો અનુભવ કરાવે છે. અથવા જેમ નાજિયેર ઉપરથી કઠોર હોય છે પરંતુ એની અંદરનો ભાગ શીતળ મીઠા જળથી ભરેલો હોય છે. જેને મેળવી લોકો તુષ્ટિ-સંતોષ

ઉક્તં ચાન્યત્ર-સસા સુયા તુસા માયા, ઇયાહિં વિ ન સંલયે ।

અર્થે નેવ ચિદ્દેજ્ઞા, અપ્પઠ્ઠી સંજ્ઞે સયા ॥ ૧ ॥

છાયા—સ્વસા સુતા સ્તુપા માતા, ઇતામિરપિ ન સંલપેત્ ।

અકાન્તે નેવ તિષ્ઠેત્, આત્માર્થી સંયતઃ સદા ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥ ૨૬ ॥

અથ વિનીતશિષ્યકર્તવ્યમાહ—

મૂલમ્—જં મે' બુદ્ધાઽણુસાંસંતિ, સીણેણ પરુસેણ વા ।

મમ લાભો ત્તિ' પેહાણે, પંચઓ તં' પડિસંસુણે ॥ ૨૭ ॥

છાયા—યન્માં બુદ્ધા અનુશાસંતિ, શીતેન પરુપેણ વા ।

મમ લાભ ઇતિ પ્રેક્ષયા, પ્રયતસ્તત્ પ્રતિશૃણુયાત્ ॥ ૨૭ ॥

ટીકા—'જં મે' ઇત્યાદિ ।

બુદ્ધાઃ=આચાર્યાઃ, યન્મામ્ શીતેન=શીતલવચનેન મૃદુવચનેનેત્યર્થઃ, વા=અથવા પરુપેણ=કઠોરવચનેન અનુશાસતિ શિક્ષયન્તિ, ઇદમનુશાસનં મમ લાભઃ=કામકા-

-કિ-જિસં પ્રકાર મુર્ગે કે ઘચ્ચેકો કુલલ-ચિલાડી સે ભય બના રહતા હૈ
ઉસી તરહ બ્રહ્મચારી કો ભી સ્ત્રી કે શરીર સે સદા ભય રહા કરતા હૈ ।
ઇસલિયે ચાહે અપની સાંસારિક બહિન ભી હો, ચાહે પુત્રી હો, વહુ હો,
માતા ભી હો, તો ભી અકાન્તમેં બ્રહ્મચારી કો ઇનકે સાથ ઉઠના બેઠના
નહીં ચાહિયે ઔર ન યાતચીત હી કરની ચાહિયે ॥ ૨૬ ॥

અથ વિનીત શિષ્ય કા કર્તવ્ય કહતે હૈ—'જંમે' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—વિનીત શિષ્ય કો ઇસ પ્રકાર વિચાર કરના ચાહિયે
કિ (જંમે બુદ્ધા-યન્માં બુદ્ધા) જો મુઝે આચાર્ય મહારાજ (સીણ-શીતેન)
મીઠે વચનોં સે, વા અથવા (પરુસેણ-પરુપેણ) કઠોર વચનોં સે (અણુસા-
સંતિ-અનુશાસતિ) અનુશાસિત કરતે હૈ અર્થાત્ શિક્ષા દેતે હૈ સો
(મમ લાભો-મમ લાભઃ) યહ મેરે લિયે એક બડા ભારી લાભ હૈ, કયોં કિ

આ માટે ભલે પોતાની સંસારીક બહેન હોય, આડે પુત્રી હોય, વહુ
હોય, અથવા માતા હોય તો પણ એકાંતમાં એમની સાથે એસવું ઉઠવું કે
વાતચિત પણ બ્રહ્મચારીએ કરવી ન ભેઈએ. ॥૨૬॥

હવે વિનીત શિષ્યનું કર્તવ્ય કહે છે—જંમે ઇત્યાદિ.

વિનીત શિષ્યે આ પ્રકારનો વિચાર કરવો ભેઈએ કે,

અન્વયાર્થ—જંમેબુદ્ધા-યન્માંબુદ્ધા મને આચાર્ય મહારાજ, સીણ-શીતેન
મીઠા વચનેથી, વા અથવા પરુસેણ-પરુપેણ કઠોર વચનેથી, અનુસાસંતિ-અનુ-
શાસંતિ અનુશાસિત કરે છે, અર્થાત્ શિક્ષા આપે છે. મમલાભો એ

રણમ્, લાભઃ—અપ્રાપ્તસ્ય સમ્યક્દર્શન—સમ્યગ્જ્ઞાન—સમ્યક્ચારિત્રલક્ષણરત્નત્રયસ્ય પ્રાપ્તિસ્તસ્ય કારણમસ્તિ, इति प्रेक्षया=इति पर्यालोचनात्मिकया बुद्ध्या प्रयतः=प्रकर्षेण यतनावान् सहनशीलः सन् शिष्यः तत्=प्रनुशासनं गुरोः शिक्षावचनं प्रतिशृणुयात्=कर्तव्यतयाऽङ्गीकुर्यात्।

અર્થ ભાવઃ—

यथा—वर्षाकाले सूर्यकिरणाः प्रचण्डतरा भवन्ति, परंतु परिणामे द्वित्रदिव-
साभ्यन्तर एव ते जलदावलीसमागमनशीतलवपनजलधारासंपातजनितशीतस्पर्श-
सुखंपादुर्भावयन्ति। “यथा वा—नालिकेरं बहिः कर्कशं भवति. तथापि तदीयं
शीतलमधुरनीरगर्भितमाभ्यन्तरिकभागमुपलभ्य लोकस्तदास्वादनेन तुष्टिं पुष्टिं
इससे अप्राप्त सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक् चारित्र की मुझे
प्राप्ति होती है। (त्ति पेद्दाए—इति प्रेक्ष्य) इस प्रकार पर्यालोचनात्मक बुद्धि
से विचार कर (पयओ तं पंडिस्सुणे—प्रयतःतं प्रतिशृणुयात्) सहनशील
बना हुआ शिष्य गुरु के शिक्षात्मक वचनों को कर्तव्य समझकर
अंगोकार करे।

તાત્પર્ય—જિસ પ્રકાર વર્ષાકાલ મેં સૂર્યની કિરણે પ્રચણ્ડતર હો જાતી
હૈં ઓર હસ સે વે પ્રાણિયોં કો અસહનીય બનતી હૈં પરન્તુ પરિણામ મેં
દો ત્રીન દિન કે ખીતર હી વે વરસાત કે સમાગમન સે પવન કો શીતલ
બના દેતી હૈં ઉસ સે જલવૃષ્ટિ ખૂબ હોકર શીતસ્પર્શ કે સુખ કા ઉન્હેં
અનુભવ કરાતી હૈં। અથવા જૈસે—નારિયલ ઉપર સે કઠોર હોતા હૈ
પરન્તુ ઉસકા ખીતર કા ભાગ શીતલ, મીઠે જલ સે ભરા રહતા હૈ, ઉસકો

ખધુ માદે માટે લાભકારક છે. કેમ કે, એનાથી અપ્રાપ્ત સમ્યક્ દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન,
અને સામ્યક્ ચારિત્રની મને પ્રાપ્તિ થાય છે. તિપેદ્દાએ—इति प्रेक्ष આ પ્રકારે પર્યા-
લોચનાત્મક બુદ્ધિથી વિચાર કરી, પયઓ તં પંડિસ્સુણે—પ્રયતઃ તત્ પ્રતિશ્રુણુયાત્
સહનશીલ અનેલ શિષ્ય ગુરુના શિક્ષાત્મક વચનોને કર્તવ્ય સમજી અંગિકાર કરે.

આનું તાત્પર્ય એ છે કે, જેવી રીતે વર્ષાકાળમાં સૂર્યનાં કિરણો
પ્રચંડતર થઈ જાય છે, અને તેથી તે પ્રાણીઓ માટે અસહનીય બની જાય છે.
પરંતુ પરિણામે એ ત્રણ દિવસની અંદર તે વરસાદના સમાગમથી પવનને
શીતળ બનાવી દે છે, જેથી જળવૃષ્ટિ ખૂબ થાય છે અને ઠંડીનો સ્પર્શ સુખનો
અનુભવ કરાવે છે. અથવા જેમ નાળિયેર ઉપરથી કઠોર હોય છે પરંતુ એની
અંદરનો ભાગ શીતળ મીઠા જળથી ભરેલો હોય છે. જેને એળવી લોકો તુષ્ટિ-સંતોષ

ઉક્તં ચાન્યત્ર-સસા મુસા નુસા માયા, ય્યાદિં વિ ન સંલયે ।

एगंते नेव चिट्ठेज्जा, अप्पही संत्रए सया ॥ १ ॥

छाया—स्वसा मुता स्नुषा माता, एताभिरपि न संलयेत् ।

एकान्ते नैव तिष्ठेत्, आत्मार्यी संयतः सदा ॥ १ ॥ इति ॥ २६ ॥

અય વિનીતશિષ્યકર્તવ્યમાહ—

મૂલમ્—જં મે' બુદ્ધાણુસાંસંતિ, સીણેણ ફરુસેણ વા ।

मम लाभो त्ति' पेहाएँ, पेयओ तं' पडिस्सुणे ॥ २७ ॥

छाया—यन्मां बुद्धा अनुशासंति, शीतेन परुषेण वा ।

मम लाभ इति प्रेक्षया, प्रयतस्तत् प्रतिशृणुयात् ॥ २७ ॥

ટીકા—‘જં મે’ ઇત્યાદિ ।

બુદ્ધાઃ=આચાર્યાઃ, યન્મામ્ શીતેન=શીતલવચનેન મૃદુવચનેનેત્યર્થઃ, વા=અથવા પરુષેણ=કઠોરવચનેન અનુશાસતિ શિક્ષયન્તિ, દ્વદમનુશાસનં મમ લાભઃ=જ્ઞાપકા-

-કિ-જિસં પ્રકાર મુર્ગે કે વચ્ચેકો કુલલ-બિલાડી સે ભય બના રહતા હૈ
उसी तरह ब्रह्मचारी को भी स्त्री के शरीर से सदा भय रहा करता है ।
इसलिये चाहे अपनी सांसारिक बहिन भी हो, चाहे पुत्री हो, बहू हो,
माता भी हो, तो भी एकान्तमें ब्रह्मचारी को इनके साथ उठना बैठना
नहीं चाहिये और न बातचीत ही करनी चाहिये ॥ २६ ॥

અથ વિનીત શિષ્ય કા કર્તવ્ય કહતે હૈં—‘જંમે’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—વિનીત શિષ્ય કો ઇસ પ્રકાર વિચાર કરના ચાહિયે
कि (जंमे बुद्धा-यन्मां बुद्धा) जो मुझे आचार्य महाराज (सीएण-शीतेन)
मीठे वचनों से, वा अथवा (फरुसेण-परुषेण) कठोर वचनों से (अणुसा-
संति-अनुशासति) अनुशासित करते हैं अर्थात् शिक्षा देते हैं सो
(मम लाभो-मम लाभः) यह मेरे लिये एक बड़ा भारी लाभ है, क्योंकि

આ માટે ભલે પોતાની સંસારીક બહેન હોય, થાડે પુત્રી હોય, વહુ
હોય, અથવા માતા હોય તો પણ એકાંતમાં એમની સાથે એસવું ઉઠવું કે
વાતચિત પણ બ્રહ્મચારીએ કરવી ન જોઈએ. ॥ ૨૬ ॥

હવે વિનીત શિષ્યનું કર્તવ્ય કહે છે—જંમે ઇત્યાદિ.

વિનીત શિષ્યે આ પ્રકારનો વિચાર કરવો જોઈએ કે,

અન્વયાર્થ—જંમેબુદ્ધા-યન્માંબુદ્ધા મને આચાર્ય મહારાજ, સીણ-શીતેન
મીઠા વચનોથી, વા અથવા ફરુસેણ-પરુષેણ કઠોર વચનોથી, અનુસાસંતિ-અનુ-
શાસંતિ અનુશાસિત કરે છે, અર્થાત્ શિક્ષા આપે છે. મમલાભો-મમલાભ એ

છાયા—અનુશાસનમૌપાયં, દુષ્કૃતસ્ય ચ નોદનમ્ ।

હિતં તત્ મન્યતે પ્રજઃ, દ્વેષ્યં ભવતિ અસાધોઃ ॥ ૨૮ ॥

ટીકા—‘અણુસાસણ’ ઇત્યાદિ—

પ્રજઃ=પ્રજાવાન મેધાવી શિષ્યઃ, ઔપાયમ્-ઉપાયે=શીતપરુષભાષણરૂપે ભવમ્, મૃદુકઠોરભાષણસમન્વિતમ્ અનુશાસનં=ગુરોઃ શિક્ષાવાચ્યં, ચ-પુનઃ દુષ્કૃતસ્ય=અતિ-
ચારસ્ય નિવારણાર્થ નોદનં=પ્રેરણં, ‘હા કિમિદમકલ્પ્યં ત્વયા કૃતમ્’ ઇત્યાદિરૂપમ્
તદ્ વચનં હિતં-લોકહયકલ્યાણકારકં, મન્યતે । અસાધોઃઅવિનીતશિષ્યસ્ય તદેવ
વચનં દ્વેષ્યં=દ્વેષજનકં ભવતિ ।

યથા—શુદ્ધક્ષેત્રે દત્તં જલં મધુરસરૂપેણ પરિણતં ભવતિ, નિમ્બતરૂપૂલે તુ તદેવ

સકલ કલ્યાણ કરનેવાલી ‘મી ગુરુશિક્ષા કિસ કો કિસ રૂપ મેં
પરિણન હોની હૈ સો કહતે હૈ’-‘અણુસાસણ’-ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(પત્નો-પ્રજઃ) બુદ્ધિમાન મેધાવી શિષ્ય (ઓવાયં-ઔપાયં)
મૃદુ एवं કઠોર ભાષણ સે મુક્ત (અણુસાસણં-અનુશાસનં) ગુરુ કે શિક્ષા
સ્વરૂપ વચનોં કો કિ જો (દુષ્કૃદસ્ત ય ચોયણં-દુષ્કૃતસ્ય ચ નોદનમ્)
અતિચાર કે નિવારણ કે લિપે પ્રયુક્ત કિયે ગયે હૈ—‘યહ તુમને નહીં
કરને યોગ્ય કામ કયોં કર દિયા હૈ’ ઇત્યાદિરૂપ સે જો કહે ગયે હૈ
(તં હિયં મન્નત-તત્ હિતં મન્યતે) ઉસકો અપના હિતકારક માનતા હૈ ।
(અસાદુણો-અસાધોઃ) પરન્તુ જો અવિનીત શિષ્ય હોના હૈ વહ ઉન્હીં
શિક્ષાવચનોં કો (વેસંહવહ-દ્વેષ્યં ભવતિ) અહિતકારી માનતા હૈ । મેધાવી
શિષ્ય ગુરુ કે મૃદુકઠોરરૂપ વચનોં કો અપના હિતકારક, एवं અસાધુ
અર્થાત્ અવિનીત શિષ્ય ઉન્હીં વચનોં કો દુઃસ્વદાયક માનતા હૈ ।

સકલ કલ્યાણ કરવાણી ગુરુ શિક્ષા કેને કયા રૂપમાં પરિણત થાય છે
તે કહેવામાં આવે છે. અણુસાસણં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—પત્નો-પ્રજઃ બુદ્ધિમાન મેધાવી શિષ્ય ઓવાયં-ઔપાયં કેમણ
અથવા કઠોર ભાષણથી મુક્ત અણુસાસણં-અનુશાસનં ગુરુનાં શિક્ષા સ્વરૂપ
વચનોને કે જે દુષ્કૃદસ્ત ય ચોયણં-દુષ્કૃતસ્ય ચ નોદનમ્ અતિચારના નિવારણ માટે
પ્રયુક્ત કરવામાં આવેલ છે. આ ન કરવા યોગ્ય કામ તમે શા માટે કયું ?”
ઇત્યાદિ રૂપથી જે કહેવાય છે તેહિયં મન્નત-તત્ હિતં મન્યતે એને પોતાનાં હિતકર
માને છે અસાદુણો-અસાધોઃ પરંતુ જે અવિનીત શિષ્ય હોય છે તે એ શિક્ષા
વચનોને દ્વેષ્યં ભવતિ અહિતકારી માને છે.

ચ લભતે । એવાચાર્યાનાં શીતં પરૂપં ચેત્પ્રભયવિધં શિક્ષાવચનં પરિણામે સુલજ્જનકમેવ । આચાર્યવચનં દ્વિ-પરિણામતસ્તપઃસંયમારાધનપ્રવર્તકં, મિથ્યાત્વાદિપાંચવિધાસ્રવનિવર્તકં, જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મરજઃપટલાપસારણપરમમીપણસમીરણાત્મકં, નાનાવિધઙ્ગવિસાધકં, નિશ્ચિલભાવસ્વભાવાવભાસકંકેવલાલોક્પ્રદર્શકં, શાશ્વતિક્ષુલ્પસમર્પકં ચ ભવતિ ” ઇત્યેવ પર્યાલોચ્ય ગુરોઃ શિક્ષાવચનમદ્વીકૃયાદિતિ ॥ ૨૭ ॥

સકલકલ્યાણકારિણ્યપિ ગુરુશિક્ષા કર્મૈ કીદૃશી પરિણમતીત્યાહ—

મૂલમ્—અણુસાસનમોવાયં, દુઃકડેસસ ય ચોર્યણં ।

હિર્યં તં મન્નણં પેન્નો, વેસેસં હોઈં અસાંદુણો ॥ ૨૮ ॥

પ્રાપ્ત કર લોક તુષ્ટિ एवं પુષ્ટિ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં । इसी तरह आचार्य महाराज के कोमल एवं कठोर, दोनों प्रकार के शिक्षाप्रद वचन शिष्य को परिणाम में सुखजनक होते हैं । शिष्य को आचार्य महाराज के वचन ही अन्त में तप एवं संयम की आराधना करने में प्रवृत्त कराने वाले होते हैं । मिथ्यात्वादि पांच प्रकार के आस्रव के वे निरोधक होते हैं । ज्ञानावरणीय आदि कर्मरज के पटल को हटाने में वे प्रचण्ड पवन के वेगतुल्य होते हैं । शिष्यजनोमें अनेक प्रकार की लब्धियों की जागृति कराने वाले होते हैं । समस्त पदार्थों के स्वभाव का जिस में अवभासन होता है ऐसे केवलज्ञानरूप प्रकाश के प्रदर्शक एवं शाश्वतिक सुख के देनेवाले होते हैं । इस प्रकार गुरु महाराज के शिक्षा वचनों को हितकारक जानकर शिष्यका कर्तव्य है कि वह उन्हें अंगीकार करे ॥ २७ ॥

અને પુષ્ટિ પ્રાપ્ત કરે છે. આ રીતે આચાર્ય મહારાજનાં કોમળ અથવા કઠોર બન્ને પ્રકારનાં શિક્ષાપ્રદ વચન શિષ્યને પરિણામમાં સુખજનક બને છે. આચાર્ય મહારાજનાં વચનજ અંતમાં શિષ્યને તપ તથા સંયમની આરાધના કરવામાં પ્રવૃત્ત કરાવનાર હોય છે. મિથ્યાત્વાદિ પાંચ પ્રકારના આસ્રવના એ નિરોધક હોય છે. જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મરજના આવરણને દૂર કરવામાં તે પ્રચંડ પવનના વેગ જેવાં હોય છે. શિષ્યજનોમાં અનેક પ્રકારની લબ્ધિયોની જાગૃતિ કરાવનાર હોય છે, સમસ્ત પદાર્થોના સ્વભાવનું જેનામાં અવભાસન હોય છે એવા કેવળ જ્ઞાન રૂપ પ્રકાશના પ્રદર્શક અને શાશ્વતિક સુખને દેવાવાળા હોય છે. આ પ્રકારે ગુરુ મહારાજના શિક્ષા વચનોને હિતકારક બાળીને શિષ્યનું એ કર્તવ્ય છે કે તે એનો અંગિકાર કરે. ॥ ૨૭ ॥

ટીકા—‘હિયં’ ઇત્યાદિ—

વિગતભયાઃ=ભયરહિતાઃ, ભયં સપ્તવિધમ્-ઇહલોકભયમ્ ૧, પરલોકભયમ્ ૨, આદાનભયમ્ ૩, અકસ્માદ્ભયમ્ ૪, આજીવિકાભયમ્ ૫, મરણભયમ્ ૬, અશ્લોક-ભયં ચ ૭, એતૈર્વિવર્જિતાઃ, બુદ્ધાઃ=જ્ઞાતતત્ત્વા મેધાવિન ઇત્યર્થઃ, એવંભૂતાઃ શિષ્યાઃ પરુપમપિ=ઠઠોરમપિ, અનુશાસનમ્=ગુરુણાં શિક્ષાવચનમ્ હિતં=પથ્યં મન્યન્તે ઇતિ શેષઃ । કિંતુ ક્ષાન્તિશોધિકરં-ક્ષાન્તિઃ=ક્ષમા, શોધિઃ=શુદ્ધિઃ આત્મશુદ્ધિઃ, તયોઃ કરમ્=ઉત્પત્તિજનકં, યથા-વર્ષાક્રતુનિમિત્તં પ્રાપ્ય જલધરા ગર્જન્તિ, વસન્તં પ્રાપ્ય વૃક્ષા નૂતનપલ્લવકુસુમપ્રિયોપેતા ભવન્તિ, ચન્દ્રં પ્રાપ્ય ચન્દ્રકાન્તમળયઃ પ્રસ્રવન્તિ, સૂર્યં પ્રાપ્ય કમલાનિ વિકસન્તિ, તથા ક્ષમાં પ્રાપ્ય નિર્ઝોભતાદિગુણાઃ પ્રાદુર્ભવન્તિ । શોધિ-શ્ચ દુઃસ્વમેધનાશને પવનરૂપા, સુસ્વોત્પાદને કલ્પતરૂપા ભવસિન્ધુપારકરણે નૌકા-રૂપા, અજ્ઞાનાન્ધકારનાશને પ્રભારૂપા । એવંભૂતયોઃ ક્ષાન્તિશોધ્યોર્જનકમ્, ઇદમુપ-લક્ષણમ્ તેન આજેવાદિકરમપિ, પદં=જ્ઞાનાદિ ગુણાનાં સ્થાનમ્ । તત્=અનુશાસનં, મૂઢાનાં=કુશિષ્યાણાં દ્વેષ્યં=દ્વેષજનકં ભવતિ । ઉક્તં ચ—

પુનરપ્યાહ—‘હિયં’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(વિગતભયા-વિગતભયાઃ) ઇહલોકભય, પરલોકભય, આદાનભય, અકસ્માત્ભય, આજીવિકાભય, મરણભય, એવં અશ્લોકભય, એ સાત ભયં હૈં । इनसे जो रहित हैं तथा (बुद्धा-बुद्धा): तत्त्वों के जो जानकार हैं-मेधावी हैं वे शिष्य (परुपमपि-परुपमपि) कठार भी (अनुशासनं-अनुशासनं) गुरु महाराज के शिक्षात्मक वचनों को (हियं-हितं) पथ्य-हितविधायक मानते हैं । किन्तु (खंति सोहिकरं -क्षान्तिशोधिकरं) क्षमा और शुद्धि के विधायक तथा (पयं-पदम्) ज्ञानादिक गुणों के स्थानभूत (तत्) गुरु के वे ही अनुशासनरूप

પુનરપ્યાહ હિયં:-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—વિગતભયા-વિગતભયાઃ આ લોકનો ભય, પરલોકનો ભય, આદાન ભય, અકસ્માત ભય, આજીવિકા ભય, મરણ ભય અને અશ્લોક ભય આ સાત ભય છે એનાથી જે રહિત છે તથા (બુદ્ધા-બુદ્ધા) તત્ત્વોનો જે જાણકાર છે, મેધાવી છે, તે શિષ્ય પરુપમપિ-પરુપમપિ કઠોર પણ અનુશાસન-અનુશાસન ગુરુ મહારાજનાં શિક્ષાત્મક વચનોને હિયં-હિતં પથ્ય હિત વિધાયક માને છે, હંતિસોહિકરં-શાન્તિશોધિકરં ક્ષમા અને શુદ્ધિના વિધાયક, પયં-પદમ્ જ્ઞાનાદિક

કટુકરસરૂપેણ, યથા ચા સિતોપલં-‘મિસરી’ ઇતિ ભાવામસિદ્ધં સર્વેષાં મધુરા-
સ્વાદજનકં ભવતિ તદેવ પિત્તદૂષિતરસનસ્ય નિમ્બાદિભ્યઃ કટુકં, ગર્દભાણાં તુ વિષ-
મેવ ભવતિ, યથા ચા શુદ્ધં ઘૃતં સર્વેષાં પુષ્ટિકરં ભવતિ, તદેવ જ્વરાક્રાન્તાનાં જનાનાં
રોગવર્ધકમ્ । एवं गुरुवचनं सचिनयस्य द्वितीयं जायते, विनयरहितस्य शिष्यस्य तु
द्वेषाय इति भावः ॥ २८ ॥

ઉક્તમર્થે વિશદયન્નાહ—

મૂલમ્—હિયં વિગયંભયા બુદ્ધા, ફરુસં પિ અણુસાસણં ।

વેસંસં તં હોઁ મૂઢાણં, ચંતિસોહિકરં પયં ॥૨૯॥

છાયા—હિતં વિગતભયા બુદ્ધાઃ, પરુપમપિ અનુશાસનમ્ ।

દેવ્યં તત્ ભવતિ મૂઢાનાં, શાન્તિશોધિકરં પદમ્ ॥ ૨૯ ॥

તાત્પર્યે इसका इस प्रकार का है कि जिस प्रकार इक्षु के खेन में दिया गया पानी मधुर रसरूपसे परिणत होता है और वही पानी जब निम्बवृक्ष के मूल में दिया जाता है तो कटुवे रूपमें परिणत हो जाता है, अथवा जैसे मिश्री सब के लिये मधुर आस्वाद देती है परन्तु जिस की जीभ पित्त से दूषित हो रही है उसके लिये वह मिश्री कटुवी नीम जैसी मालूम होती है, तथा गधों को तो वह विष जैसी ही मालूम होती है । अथवा जैसे शुद्ध घृत समस्तजनों को पुष्टि करने वाला होना है परन्तु वही घृत ज्वरवाले के लिए रोगवर्द्धक होता है, इसी प्रकार जो विनयी शिष्य हैं उनके लिये गुरु महाराज के वचन हितकारक होते हैं और वे ही वचन अविनीत शिष्य के लिये द्वेषकारक होते हैं ॥ २८ ॥

તેનું તાત્પર્ય આ પ્રકારનું છે, કે જે પ્રકારે દ્રાક્ષના ખેતરમાં આપવામાં આવેલ પાણી મધુરરસરૂપમાં પરિણીત બને છે અને તેજ પાણી જ્યાંને લિખડાના વૃક્ષના મૂળમાં આપવામાં આવે છે તો કટુરસ રૂપમાં પરિણમે છે. જેમ-સાકર બધા માટે મધુર આસ્વાદ આપે છે પરંતુ જેની જીભ પિત્તથી દુષિત થયેલ હોય છે, તેને માટે સાકર કડવા લિખડા જેવી માલુમ પડે છે. અને ગધેડાને તો તે ઝડેર જેવી બને છે. અથવા જેમ ચોખ્ખું ઘી સઘળા માટે પુષ્ટી કરવાવાળું હોય છે પરંતુ તે ઘી તાવવાળા માટે રોગને વધારનાર બને છે. એ જ રીતે જે વિનયી શિષ્ય છે તેને માટે ગુરુ મહારાજનું વચન હિતકારક હોય છે. અને તે જ વચન અવિનીત શિષ્ય માટે દ્વેષકારક હોય છે. ॥ ૨૮ ॥

ટીકા—‘હિયં’ ઇત્યાદિ—

વિગતભયાઃ=ભયરહિતાઃ, મયં સપ્તવિધમ્-ઇહલોકભયમ્ ૧, પરલોકભયમ્ ૨, આદાનભયમ્ ૩, અકસ્માદ્ભયમ્ ૪, આજીવિકાભયમ્ ૫, મરણભયમ્ ૬, અશ્લોક-મયં ચ ૭, એતૈર્વિવર્જિતાઃ, બુદ્ધાઃ=જ્ઞાતૃતત્ત્વા મેધાવિન ઇત્યર્થઃ, એવંભૂતાઃ શિષ્યાઃ પરુષમપિ=કઠોરમપિ, અનુશાસનમ્=ગુરુણાં શિક્ષાવચનમ્ હિતં=પથ્યં મન્યન્તે ઇતિ શેષઃ । કિંતુ ક્ષાન્તિશોધિકરં-ક્ષાન્તિઃ=ક્ષમા, શોધિઃ=શુદ્ધિઃ આત્મશુદ્ધિઃ, તયોઃ કરમ્=ઉત્પત્તિજનકં, યથા-વર્ષાકૃતુનિમિત્તં પ્રાપ્ય જલધરા ગર્જન્તિ, વસન્તં પ્રાપ્ય વૃક્ષા નૂતનપલ્લવકુસુમશ્રિયોપેતા ભવન્તિ, ચન્દ્રં પ્રાપ્ય ચન્દ્રકાન્તમણયઃ પ્રસ્રવન્તિ, સૂર્યં પ્રાપ્ય કમલાનિ વિકસન્તિ, તથા ક્ષમાં પ્રાપ્ય નિર્ભોભતાદિગુણાઃ પ્રાદુર્ભવન્તિ । શોધિ-શ્ચ દુઃખમેધનાશને પવનરૂપા, સુખોત્પાદને કલ્પતરુરૂપા ભવસિન્ધુપારકરણે નૌકા-રૂપા, અજ્ઞાનાન્ધકારનાશને પ્રભારૂપા । એવંભૂતયોઃ ક્ષાન્તિશોધ્યોર્જનકમ્, દ્વદશુપ-લક્ષણમ્ તેન આર્જવાદિકરમપિ, પદં=જ્ઞાનાદિ ગુણાનાં સ્થાનમ્ । તત્=અનુશાસનં, મૂઢાનાં=કુશિષ્યાણાં દ્વેષ્યં=દ્વેષજનકં ભવતિ । ઉક્તં ચ—

પુનરપ્યાહ—‘હિયં’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(વિગતભયા-વિગતભયાઃ) ઇહલોકભય, પરલોકભય, આદાનભય, અકસ્માત્ભય, આજીવિકાભય, મરણભય, એવં અશ્લોકભય, યે સાન ભયં હૈં । इनसे जो रहित हैं तथा (बुद्धा-बुद्धा): तत्त्वों के जो जानकार हैं-मेधावी हैं वे शिष्य (परुषंपि-परुषमपि) कठार भी (अनुशासनं-अनुशासनं) गुरु महाराज के शिक्षात्मक वचनों को (हियं-हितं) पथ्य-हितविधायक मानते हैं । किन्तु (खंति सोहिकरं -क्षान्तिशोधिकरं) क्षमा और शुद्धि के विधायक तथा (पयं-पदम्) ज्ञानादिक गुणों के स्थानभूत (तत्) गुरु के वे ही अनुशासनरूप

પુનરપ્યાહ હિયં:-ઇત્યાદિ.

અ-વયાર્થ—વિગતભયા-વિગતભયાઃ આ હોકનો ભય, પરલોકનો ભય, આદાન ભય, અકસ્માત ભય, આજીવિકા ભય, મરણ ભય અને અશ્લોક ભય આ સાત ભય છે એનાથી જે રહિત છે તથા (બુદ્ધા-બુદ્ધા) તત્ત્વોનો જે જાણકાર છે, મેધાવી છે, તે શિષ્ય પરુષંપિ-પરુષંપિ કઠોર પણ અનુશાસન-અનુશાસન ગુરુ મહારાજનાં શિક્ષાત્મક વચનોને હિયં-હિતં પથ્ય હિત વિધાયક માને છે, ખંતિસોહિકર-શાન્તિશોધિકર ક્ષમા અને શુદ્ધિના વિધાયક, પયં-પદમ્ જ્ઞાનાદિક

કદુરસરૂપેણ, યથા ચા સિતોપલં—‘મિસરી’ ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધં સર્વેષાં મધુરા-
સ્વાદજનકં ભવતિ તદેવ પિત્તદૂષિતરસનસ્ય નિમ્બાદિચા કદુરકં, ગદ્દંભાણાં તુ વિષ-
મેવ ભવતિ, યથા ચા શુદ્ધં ઘૃતં સર્વેષાં પુષ્ટિકરં ભવતિ, તદેવ જ્વરાક્રાન્તાનાં જનાનાં
રોગવર્ધકમ્ । एवं गुरुवचनं सविनयस्य हिताय जायते, विनयरहितस्य शिष्यस्य तु
द्वेषाय इति भावः ॥ २८ ॥

ઉક્તમર્થ વિશદયન્નાહ—

મૂલમ્—હિયં વિગયેભયા બુદ્ધા, ફરૂસં પિ અણુસાસનં ।

વેસંસં તં હોરે મૂઢાણં, સંતિસોહિકરં પયં ॥૨૯॥

છાયા—હિતં વિગતભયા બુદ્ધાઃ, પરુપમપિ અનુશાસનમ્ ।

દ્રેષ્યં તત્ ભવતિ મૂઢાનાં, ક્ષાન્તિશોધિકરં પદમ્ ॥ ૨૯ ॥

તાત્પર્ય इसका इस प्रकार का है कि जिस प्रकार इक्षु के खेन में दिया गया पानी मधुर रसरूपसे परिणत होता है और वही पानी जय निम्यवृक्ष के मूलमें दिया जाता है तो कड़वे रूपमें परिणत हो जाता है, अथवा जैसे मिश्री सब के लिये मधुर आस्वाद देती है परन्तु जिस की जीभ पित्त से दूषित हो रही है उसके लिये वह मिश्री कड़वी नीम जैसी मालूम होती है, तथा गर्वों को तो वह विष जैसी ही मालूम होती है । अथवा जैसे शुद्ध घृत समस्तजनों को पुष्टि करने वाला होना है परन्तु वही घृत ज्वरवाले के लिए रोगवर्द्धक होता है, इसी प्रकार जो विनयी शिष्य हैं उनके लिये गुरु महाराज के वचन हितकारक होते हैं और वे ही वचन अविनीत शिष्य के लिये द्वेषकारक होते हैं ॥ २८ ॥

તેનું તાત્પર્ય આ પ્રકારનું છે, કે જે પ્રકારે દ્રાક્ષના ખેતરમાં આપવામાં આવેલ પાણી મધુરરસરૂપમાં પરિણીત બને છે અને તેજ પાણી જ્યારે લિંબડાના વૃક્ષના મૂળમાં આપવામાં આવે છે તો કદુરસ રૂપમાં પરિણમે છે. જેમ-સાકર બધા માટે મધુર આસ્વાદ આપે છે પરંતુ જેની જીભ પિત્તથી દુષિત થયેલ હોય છે, તેને માટે સાકર કડવા લિંબડા જેવી માલુમ પડે છે. અને ગર્વેડાને તો તે ઝંકેર જેવી બને છે. અથવા જેમ ચોખ્ખું ઘી સઘળા માટે પુષ્ટી કરવાવાળું હોય છે પરંતુ તે ઘી તાવવાળા માટે રોગને વધારનાર બને છે. એ જ રીતે જે વિનયી શિષ્ય છે તેને માટે ગુરુ મહારાજનું વચન હિતકારક હોય છે. અને તે જ વચન અવિનીત શિષ્ય માટે દ્વેષકારક હોય છે. ॥ ૨૮ ॥

मूलम्—आसणे उवंचिट्ठिज्जा, अणुच्चे अकुए थिरे^३ ।

अप्पुट्ठाई निरुट्ठाई, निसीएज्जप्पकुर्वकुए ॥३०॥

छाया—आसने उपतिष्ठेत्, अनुच्चे अकुचे स्थिरे ।

अल्पोत्थायी निरुत्थायी, निपीदेत् अल्पकौकुच्यः ॥ ३० ॥

टीका—‘आसणे’ इत्यादि—

अनुच्चे—द्रव्यतो गुर्वासनानीचे, भावतः स्वल्पमूल्यके, अकुचे अकम्पमाने, यद्वा चटत्कारादिशब्दरहिते, स्थिरे=समपादवस्त्वेन निश्चले, आसने उपतिष्ठेत् पीठादौ वर्षासु उपतिष्ठेत्=उपविशेत् । ईदृशेऽप्यासने साधुः किमवस्थः संस्तिष्ठे-
दित्याह—‘अप्पुट्ठाई’ इति अल्पोत्थायी—कार्ये सत्यपि ईषदुत्तिष्ठतीत्येवंशीलः,
एककार्येणोत्थितः सन् बहुकार्यसंपादक इत्यर्थः । अत-एव-कीदृशः सन्नित्याह—

अयं शिष्य के लिये आसन की विधि कहते हैं—‘आसणे’—इत्यादि ।

अन्वयार्थ—शिष्य (अणुच्चे-अनुच्चे) द्रव्यकी अपेक्षा गुरुमहाराज के आसनसे नीचा भावकी अपेक्षा अल्पमूल्यवाला (अकुए-अकुचे) तथा चटचट इत्यादि शब्द से रहित, अथवा हिलनेवाला नहीं ऐसा जो (थिरे-स्थिरे) स्थिर-चारों पाये जिसके समान हों ऐसे (आसणे-आसने) आसन - पीठ फलक पाट पाटले आदि, उन पर वर्षाकाल में (उवंचिट्ठिज्जा-उपतिष्ठेत्) बैठे । शिष्य जिस आसन पर बैठे वह गुरु के आसन की अपेक्षा नीचा होना चाहिये । तथा अल्प मूल्यवाला एवं हिलने डुलने वाला नहीं होना चाहिये । शिष्य अपने आसन पर जम कर बैठे, कारण बिना न उठे, यही बात (अप्पुट्ठाई-अल्पोत्थायी) इस पद द्वारा प्रदर्शित की गई है । उठने का काम यदि

हुवे शिष्य भाटे आसननी विधि कडे छे, आसणे-धत्तादि.

अन्वयार्थ—शिष्य अणुच्चे-अनुच्चे द्रव्यकी अपेक्षा गुरुमहाराजना आसनथी नीचा, लावनी अपेक्षा अल्पमूल्यवाला, अकुए-अकुचे तथा चटचट इत्यादि शब्दथी रहित अथवा हिलवाला नहीं ऐसा जो थिरे-स्थिरे स्थिर-चारों पाया जेना अके सरभा डोय तेवा, आसणे-आसने आसन-पीठ फलक पाट पाटला आदि जेना उपर वर्षाकालमां उवंचिट्ठिज्जा-उपतिष्ठेत् जेसे. शिष्य जे आसन उपर जेसे ते गुरुना आसनथी नीचुं डोवुं जेधजे, तथा हुवे जेवे नडीं तेवुं डोवुं जेधजे. शिष्य पोताना आसन उपर स्थिर बधने जेसे, कारण वगर न उठे, अप्पुट्ठाई-अल्पोत्थाई आ बात आ पद द्वारा प्रदर्शित करवाभां

સદ્બોધં વિદધાતિ હન્તિ કુમતિ મિથ્યાદ્રશં વાધતે,
ધત્તે ધર્મમતિં તનોતિ પરમે સંવેગનિર્વેદને।

રાગાદીન્ વિનિહન્તિ નીતિમમલાં પુણ્નાતિ હન્ત્યુત્પથં,
યદ્વા કિં ન કરોતિ સદ્ગુરુભાવદમ્બુદ્રતા ભારતી ॥૧॥

ઈતિ ॥ ૨૧ ॥

વચન (મૂઢાણં વેસ્સં હોદ્-મૂઢાનાં દ્વેષ્યં ભવતિ) મૂર્ખ-અવિનીત શિષ્યોં
કે લિયે દ્વેષજનક હોતે હૈં। કહા બી હૈ—

“સદ્બોધં વિદધાતિ હન્તિ કુમતિ મિથ્યાદ્રશં વાધતે,
ધત્તે ધર્મમતિં તનોતિ પરમે સંવેગનિર્વેદને।

રાગાદીન્ વિનિહન્તિ નીતિમમલાં પુણ્નાતિ હન્ત્યુત્પથં,
યદ્વા કિં ન કરોતિ સદ્ગુરુભાવદમ્બુદ્રતા ભારતી” ॥ ૧ ॥

સદ્ગુરુ કે મુગ્ધસે નિકલો હુદ્ વાળો પ્રશસ્ત બોધકી-સમ્યગ્જ્ઞાન કી
જનક હોતી હૈ, કુમતિ કી વિદારક હોની હૈ, મિથ્યાત્વરૂપી દષ્ટિ કી
વિધ્વંસક હોની હૈ, ધર્મ મેં મતિ ઉત્પન્ન કરને વાલી હોતી હૈ, સંવેગ,
અંધ નિર્વેદ ગુણ કી ઉત્કર્ષક હોની હૈ, રાગાદિકોં કી વિનાશક હોતી હૈ,
નિર્મલ નીતિ કી પોષક હોતી હૈ, કુમાર્ગ કી વિદ્રાવક હોતી હૈ। એસે
ઔર કૌન સે સદ્ગુણ વચતે હૈં જો ગુરુદેવ કી વાળી સે જીવોં કો પ્રાપ્ત
ન હોતે હૈં ॥ ૨૧ ॥

શુભોના સ્થાનભૂત, તત્ તે શુરુ કે જોઓનાં અનુશાસના રૂપ વચન મૂઢાણં
વેસ્સં હોદ્-મૂઢાનાં દ્વેષ્યં ભવતિ અવિનીત શિષ્ય ઓટ દેષ જનક બને છે.
કહ્યું પણ છે કે—

સદ્બોધં વિદધાતિ હન્તિકુમતિ, મિથ્યાદ્રશં વાધતે।
ધત્તે ધર્મમતિ તનોતિ પરમે સંવેગનિર્વેદને ॥

રાગાદીન્ વિનિહન્તિ નીતિમમલાં પુણ્નાતિ હન્ત્યુત્પથં।
યદ્વા કિં ન કરોતિ સદ્ગુરુભાવદમ્બુદ્રતા ભારતી ॥૧॥

સદ્ગુરુના મુખથી નીકળેલી વાણી પ્રશસ્ત બોધની સામ્યગ્જ્ઞાનની જનક
હોય છે, કુમતિની વિદારક હોય છે, મિથ્યાત્વરૂપી દષ્ટિની વિધ્વંસક હોય છે,
ધર્મમાં મતિ ઉત્પન્ન કરવાવાળી હોય છે, સંવેગ અને નિર્વેગ શુભોના ઉત્કર્ષક
કરવાવાળી હોય છે, રાગાદિકોના વિનાશ કરનારી હોય છે, નિર્મળ નીતીની
પોષક હોય છે. કુમાર્ગની વિદ્રાવક હોય છે, એવા અને બીજા કયા સદ્ગુણ
બાકી રહે છે કે જે ગુરુદેવની વાણીથી જીવોને પ્રાપ્ત ન થતા હોય

मूलम्—आसणे उवंचिट्ठिजा, अणुच्चे अकुए थिरे ।

अप्पुट्ठाई निरुट्ठाई, निसीएजप्पकुर्वकुए ॥३०॥

छाया—आसने उपतिष्ठेत्, अनुच्चे अकुचे स्थिरे ।

अल्पोत्थायी निरुत्थायी, निपीदेत् अल्पकौकुच्यः ॥ ३० ॥

टीका—‘आसणे’ इत्यादि—

अनुच्चे—द्रव्यतो गुर्वासनाग्नीचे, भावतः स्वल्पमूल्यके, अकुचे अकम्पमाने, यद्वा चटत्कारादिशब्दरहिते, स्थिरे=समपादवत्त्वेन निश्चले, आसने उपतिष्ठेत् पीठादौ वर्षासु उपतिष्ठेत्=उपविशेत् । ईदृशेऽप्यासने साधुः किमवस्थः संस्तिष्ठे-
दित्याह—‘अप्पुट्ठाई’ इति अल्पोत्थायी—कार्ये सत्यपि ईपदुत्तिष्ठतीत्येवंशीलः,
एककार्येणोत्थितः सन् बहुकार्यसंपादक इत्यर्थः । अत-एव-कीदृशः सन्नित्याह—

अब शिष्य के लिये आसन की विधि कहते हैं—‘आसणे’-इत्यादि ।

अन्वयार्थ—शिष्य (अणुच्चे-अनुच्चे) द्रव्यकी अपेक्षा गुरुमहाराज के आसनसे नीचा भावकी अपेक्षा अल्पमूल्यवाला (अकुए-अकुचे) तथा चटचट इत्यादि शब्द से रहित, अथवा हिलनेवाला नहीं ऐसा जो (थिरे-स्थिरे) स्थिर-चारों पाये जिसके समान हों ऐसे (आसणे-आसने) आसन—पीठ फलक पाट पाटले आदि, उन पर वर्षाकाल में (उवंचिट्ठिजा-उपतिष्ठेत्) बैठे । शिष्य जिस आसन पर बैठे वह गुरु के आसन की अपेक्षा नीचा होना चाहिये । तथा अल्प मूल्यवाला एवं हिलने डुलने वाला नहीं होना चाहिये । शिष्य अपने आसन पर जम कर बैठे, कारण विना न उठे, यही बात (अप्पुट्ठाई-अल्पोत्थायी) इस पद द्वारा प्रदर्शित की गई है । उठने का काम यदि

हुवे शिष्य भाटे आसननी विधि कहे छे, आसणे-इत्यादि.

अन्वयार्थ—शिष्य अणुच्चे-अनुच्चे द्रव्यकी अपेक्षा गुरुमहाराजना आसनथी नीचा, भावकी अपेक्षा अल्पमूल्यवाला, अकुए-अकुचे तथा चटचट इत्यादि शब्दथी रहित अथवा हिलवाला नहीं जेवा जे थिरे-स्थिरे स्थिर-चार पाया जेना जेक सरभा डोय तेवा, आसणे-आसने आसन-पीठ फलक पाट पाटला आदि जेना उपर वर्षाकालमां उवंचिट्ठिजा-उपतिष्ठेत् जेसे. शिष्य जे आसन उपर जेसे ते गुरुना आसनथी नीचुं डोवुं जेधज्जे, तथा हुवे जेवे नही तेवुं डोवुं जेधज्जे. शिष्य पोताना आसन उपर स्थिर थधने जेसे, कारण वगर न उठे, अप्पुट्ठाई-अल्पोत्थाई आ बात आ पद द्वारा प्रदर्शित करवाभां

સદ્ગોષ્ઠં વિદધાતિ હન્તિ કુમતિ મિથ્યાદ્રશં વ્રાધતે,
 ધત્તે ધર્મમતિં તનોતિ પરમે સંવેગનિર્વેદને ।
 રાગાદોન્ વિનિહન્તિ નીતિમમલાં પુણ્નાતિ હન્ત્યુત્પથં,
 યદ્વા કિં ન કરોતિ સદ્ગુરુમુખાદમ્યુદ્ગતા ભારતી ॥૧॥ ઇતિ ॥ ૨૯ ॥

વચન (મૂઢાણં વેસ્સં હોદ્-મૂઢાનાં દ્રેષ્યં ભવતિ) મૂર્લ-અવિનીન શિષ્યોં
 કે લિયે દ્રેષજનક હોતે હૈં । કદા બી હૈ—

“સદ્ગોષ્ઠં વિદધાતિ હન્તિ કુમતિ મિથ્યાદ્રશં વ્રાધતે,
 ધત્તે ધર્મમતિં તનોતિ પરમે સંવેગનિર્વેદને ।
 રાગાદોન્ વિનિહન્તિ નીતિમમલાં પુણ્નાતિ હન્ત્યુત્પથં,
 યદ્વા કિં ન કરોતિ સદ્ગુરુમુખાદમ્યુદ્ગતા ભારતી ” ॥ ૧ ॥

સદ્ગુરુ કે મુખસે નિકલો હુઈ વાણી પ્રશસ્ત યોધકી-સમ્યગ્જ્ઞાન કી
 જનક હોતી હૈ, કુમતિ કી ચિદારક હોની હૈ, મિથ્યાત્વરૂપી દ્રષ્ટિ કી
 વિધ્વંસક હોતી હૈ, ધર્મ મેં મતિ ઉત્પન્ન કરને વાલી હોતી હૈ, સંવેગ,
 एवं નિર્વેદ ગુણ કી ઉત્કર્ષક હોની હૈ, રાગાદિકોં કી વિનાશક હોતી હૈ,
 નિર્મલ નીતિ કી પોષક હોતી હૈ, કુમાર્ગ કી વિદ્રાવક હોતી હૈ । એસે
 ઓર કૌન સે સદ્ગુણ વચતે હૈં જો ગુરુદેવ કી વાણી સે જીવોં કો પ્રાપ્ત
 ન હોતે હૈં ॥ ૨૯ ॥

શુભાના સ્થાનભૂત, તત્ તે શુરુ કે જોઓનાં અનુશાસના રૂપ વચન મૂઢાણં
 વેસ્સં હોદ્-મૂઢાનાં દ્રેષ્યં ભવતિ અવિનીત શિષ્ય માટે દ્રેષ જનક બને છે.

કહ્યું પણ છે કે—

સદ્ગોષ્ઠં વિદધાતિ હન્તિકુમતિ, મિથ્યાદ્રશં વ્રાધતે ।
 ધત્તે ધર્મમતિં તનોતિ પરમે સંવેગનિર્વેદને ॥
 રાગાદિન્ વિનિહન્તિ નીતિમમલાં પુણ્નાતિ હન્ત્યુત્પથં ।
 યદ્વા કિં ન કરોતિ સદ્ગુરુમુખાદમ્યુદ્ગતા ભારતી ॥૧॥

સદ્ગુરુના મુખથી નીકળેલી વાણી પ્રશસ્ત યોધકી સામ્યગ્જ્ઞાનની જનક
 હોય છે, કુમતિની વિદારક હોય છે, મિથ્યાત્વરૂપી દ્રષ્ટિની વિધ્વંસક હોય છે,
 ધર્મમાં મતિ ઉત્પન્ન કરવાવાળી હોય છે, સંવેગ અને નિર્વેગ . શુભને ઉત્કર્ષક
 કરવાવાળી હોય છે, રાગાદિકોના વિનાશ કરનારી હોય છે, નિર્મળ નીતિની
 પોષક હોય છે. કુમાર્ગની વિદ્રાવક હોય છે, જોવા અને જીવવા કયા સદ્ગુણ
 બાકી રહે છે કે જે ગુરુદેવની વાણીથી જીવોને પ્રાપ્ત ન થતા ॥

मूलम्—आसणे उवचिट्टिजा, अणुच्चे अकुए थिरे ।

अप्पुट्टाई निरुट्टाई, निसीएजप्पकुर्वकुए ॥३०॥

छाया—आसने उपतिष्ठेत्, अनुच्चे अकुचे स्थिरे ।

अल्पोत्थायी निरुत्थायी, निपीदेत् अल्पकौकुच्यः ॥ ३० ॥

टीका—‘आसणे’ इत्यादि—

अनुच्चे—द्रव्यतो गुर्वासनानीचे, भावतः स्वल्पमूल्यके, अकुचे अकम्पमाने, यद्वा चटत्कारादिशब्दरहिते, स्थिरे=समपादवत्त्वेन निश्चले, आसने उपतिष्ठेत् पीठादौ वर्षासु उपतिष्ठेत्=उपविशेत् । ईदृशेऽप्यासने साधुः किमवस्थः संस्तिष्ठे-
दित्याह—‘अप्पुट्टाई’ इति अल्पोत्थायी-कार्ये सत्यपि ईषदुत्तिष्ठतीत्येवंशीलः,
एककार्येणोत्थितः सन् बहुकार्यसंपादक इत्यर्थः । अत-एव-कीदृशः सन्नित्याह—

अथ शिष्य के लिये आसन की विधि कहते हैं—‘आसणे’-इत्यादि ।

अन्वयार्थ—शिष्य (अणुच्चे-अनुच्चे) द्रव्यकी अपेक्षा गुरुमहाराज के आसनसे नीचा भावकी अपेक्षा अल्पमूल्यवाला (अकुए-अकुचे) तथा चटचट इत्यादि शब्द से रहित, अथवा हिलनेवाला नहीं ऐसा जो (थिरे-स्थिरे) स्थिर-चारों पाये जिसके समान हों ऐसे (आसणे-आसने) आसन - पीठ फलक पाट पाटले आदि, उन पर वर्षाकाल में (उवचिट्टिजा-उपतिष्ठेत्) बैठे । शिष्य जिस आसन पर बैठे वह गुरु के आसन की अपेक्षा नीचा होना चाहिये । तथा अल्प मूल्यवाला एवं हिलने डुलने वाला नहीं होना चाहिये । शिष्य अपने आसन पर जम कर बैठे, कारण बिना न उठे, यही बात (अप्पुट्टाई-अल्पोत्थायी) इस पद द्वारा प्रदर्शित की गई है । उठने का काम यदि

हुवे शिष्य भाटे आसननी विधि कडे छे, आसणे-धत्तादि.

अन्वयार्थ—शिष्य अणुच्चे-अनुच्चे द्रव्यकी अपेक्षा गुरुमहाराजना आसनथी नीचा, लापनी अपेक्षा अल्पमूल्यवाला, अकुए-अकुचे तथा चटचट धत्तादि शब्दथी रहित अथवा डुलवावाला नहीं ऐसा जो थिरे-स्थिरे स्थिर-चार पाया जेना ओक सरणा डोय तेवा, आसणे-आसने आसन-पीठ इलक पाट पाटला आदि जेना उपर वर्षाकाणभां उवचिट्टिजा-उपतिष्ठेत् जेसे. शिष्य जे आसन उपर जेसे ते गुरुना आसनथी नीयुं डोयुं जेधजे, तथा हुवे यवे नही तेयुं डोयुं जेधजे. शिष्य पोताना आसन उपर स्थिर यधने जेसे, कारण पगर न उठे, अप्पुट्टाई-अल्पोत्थाई आ बात आ पद द्वारा प्रदर्शित करवाभां

‘નિરુઠ્ઠાઈ’ ઇતિ નિરુત્થાયી-પ્રયોજનેઽપિ ન પુનઃ પુનરુત્થાનશીલઃ પુનઃ કીદન્નઃ સન્નિત્યાહ-‘અપ્પકુક્કુણ’ ઇતિ અલ્પકૌકુચ્યઃ-અલ્પં કૌકુચ્યં यस્ય સ તથા-અત્રાલ્પશબ્દો નર્તર્યે વર્તતે તથાચ-કરચરણભ્રૂભ્રમણાદ્યશિષ્ટચેષ્ટારહિત ઇત્યર્થઃ નિપીદેત્=ઉપવિશેત્ ।

‘અનુચ્ચે’ ઇતિ વિશેષણેન વિનયઃ પ્રદર્શિતઃ ।

‘અકુચે’ ઇત્યનેન દ્વીન્દ્રિયાદિત્રસજીવયતના સૂચિતા ।

‘સ્થિરે’ ઇત્યનેન વાયુકાયપતના સૂચિતા ।

‘અલ્પોત્થાયી’ ઇત્યનેન નિષધાપરિપહવિજયઃ સૂચિતઃ ।

‘નિરુત્થાયી’ ઇત્યનેન આખ્યન્તરિકચ્યુત્સર્ગતપસઃ સમારાધનાઽઽવેદિતા ।

પહે ભી તૌ ભી જય ઉઠે તય જિસ કામ કે લિયે ઉઠા હો ઉસ સમય ઔર ભી જો કામ કરના હો વે ભી કર લેવે । તથા (અપ્પકુક્કુણ-અલ્પ કૌકુચ્યઃ) હાથ તથા પૈર એવં ભ્રૂ આદિ કા અશિષ્ટ સંચાલન ન કરે, તાત્પર્યં યહ કિ યદિ વહ પાટ આદિ આસનપર જમકર બેઠે તો ભી એસી હાલત મેં જિસ પ્રકાર સંસારી જન બેઠે ૨ હી હાથ પૈર આદિ હિલાયા ડુલાયા કરતે હૈં વૈસી અશુભ ચેષ્ટાઈ નહીં કરની ચાહિયે । સૂત્રકાર ને ‘અનુચ્ચે’ હસ પદ દ્વારા વિનયગુણ પ્રદર્શન કિયા હૈં । ‘અકુચે’ હસ વિશેષણ દ્વારા દ્વીન્દ્રિયાદિ જીવોં કી યાતના કા સૂચન કિયા હૈં । ‘સ્થિરે’ હસ શબ્દ દ્વારા વાયુકાય કી યાતના કા ‘અલ્પોત્થાયી’ હસ પદ દ્વારા નિષધાપરીપહ કે વિજય કા ‘નિરુત્થાયી’ હસ દ્વારા આખ્યન્તર

આવેલ છે. ઉઠવાનું કામ બે પડે તો પશ્ચુબ્યારે ઉઠે ત્યારે બે કામ માટે ઉઠેલ હોય તેની સાથે બીજું પશ્ચુ બે કામ કરવાનું હોય તે કરી લે. તથા અલ્પકુક્કુણ-અલ્પકૌકુચ્યઃ તથા હાથ અને પગ તથા બ્રૂ વગેરેનું અશિષ્ટ સંચાલન ન કરે. તાત્પર્યં એ છે કે, બે તે પાટ આદિ આસન ઉપર સ્થિર બેસે તો પશ્ચુ એવી હાલતમાં બે પ્રકારથી સંસારી જન બેઠાં બેઠાં બે હાથ પગ વગેરે ડુલાવ્યા-ડોલાવ્યા કરે છે તે રીતે અશુભ ચેષ્ટાઓ કરવી ન બેઈ એ. સૂત્રકારે “અનુચ્ચે” આ પદ દ્વારા વિનયશુષ્ણ પ્રદર્શન કરેલ છે. અકુચે આ વિશેષણ દ્વારા દ્વિ દ્વિન્દ્રિયાદિ જીવોની યતનાનું સૂચન કરેલ છે. સ્થિરે આ પદ દ્વારા વાયુકાયની યતનાનું સૂચન કરેલ છે. “અલ્પોત્થાયી” એ પદ દ્વારા નિષધા પરિપહના વિજયનું સૂચન કરેલ છે. નિરુત્થાયી એ પદ દ્વારા આખ્યન્તર ચ્યુત્સર્ગ

‘અલ્પકૌકુચ્યઃ’ इति विशेषणेन संयमलज्जा सूचिता ॥ ૩૦ ॥

સંપ્રતિ એપણાસમિતિવિધિનું વિનયમાહ—

मूलम्—कालेण निक्खमे भिक्खू, कालेण यं पडिक्कमे ।

अकालं च विवज्जित्ता, काले कालं समाचरे ॥ ૩૧ ॥

છાયા—કાલેન નિષ્ક્રામેદ્ ભિક્ષુઃ, કાલેન ચ પ્રતિક્રામેત્ ।

अकालं च विवर्ज्य, काले कालं समाचरेत् ॥ ૩૧ ॥

ટીકા—‘કાલેણ’ इत्यादि—

કાલેન—કાલે—દેશકાલાનુસારેણ ભિક્ષાયોગ્યસમયે એવ ભિક્ષુઃ=સાધુનિષ્ક્રા-
મેત્=ભિક્ષાર્થ નિર્ગચ્છેત્—અકાલે ભિક્ષાર્થ નિર્ગમને સંનિવેશનિન્દાસ્વાત્મકલેશાદિ
દોષસંભવાત્ । ચ—પુનઃ કાલેન=કાલે ઉચિત સમય એવ પ્રતિક્રામેત્=ભિક્ષાટનાત્ પ્રતિ-
નિવર્તેત્, અલ્પલાભે અલાભે વા લાભાશયા કાલપ્રતિક્રમ્ય ન ચિરકાલમટેદિતિ ભાવઃ ।

व्युत्सर्ग तपका तथा ‘अल्पकौकुच्यः’ इस पद द्वारा संयम की लज्जा के निर्वाह का सूचन किया है ॥ ૩૦ ॥

अब एपणासमिति विषयक विनयधर्मका सूत्रकार कथन करते हैं—‘कालेण’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—(कालेण—कालेन) देश काल के अनुसार भिक्षायोग्य समय में ही (भिक्खू—भिक्खु) साधु को (निक्खमे—निष्क्रामेत्) भिक्षा के लिये अपने स्थान से जाना चाहिये । अकाल में भिक्षा के लिये निकल ने में संनिवेश—गाँव की तथा साधु की निन्दा होती है, इस से आत्मा को क्लेशादिक दोषों की संभावना रहती है । तथा (कालेण य पडिक्कमे—कालेन च प्रतिक्रामेत्) उचित समय में ही वह वापिस भिक्षाटन से लौट आवे, ऐसा नहीं करना चाहिये कि भिक्षा का अल्पलाभ हो अथवा

अल्पकौकुच्यः એ પદ દ્વારા સંયમની લજ્જાના નિર્વાહનું સૂચન કરેલ છે. ॥૩૦॥

હવે એપણાસમિતિવિષયક વિનયધર્મનું સૂત્રકાર કથન કરે છે. કાલેણ ૦ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—કાલેણ—કાલેન દેશકાળ અનુસાર ભિક્ષાના યોગ્ય સમયેજ,
ભિક્ષુ—ભિક્ષુ સાધુએ નિક્કમે—નિષ્ક્રામેત્ ભિક્ષા માટે પોતાના સ્થાનથી જવું જોઈએ.
અકાળમાં ભિક્ષા માટે નિકળવામાં ગામની તથા સાધુની નિંદા થાય છે. એથી આત્માને
ક્લેશાદિક દોષોની સંભવના રહે છે, તથા કાલેણ ચ પડિક્કમે—કાલેન, ચ
પ્રતિક્રામેત્ ઉચિત સમયમાં જ તે ભિક્ષાટનથી પાછા ફરે. એવું ન કરવું
જોઈએ કે ભિક્ષાને અલ્પ લાભ હોય અથવા અલાભ હોય તો તે લાભની

उक्तं च—अलाभो ति न सोऽज्जा, तवोत्ति अहियासए॥

छाया—अलाभ इति न शोचेत्, तप इत्यध्यासीत् ॥

च—पुनः अकालं—प्रतिक्रमण—प्रतिलेखनाऽऽपृच्छना—स्वाध्याय—भिक्षाचरीप्रभृति-
कार्याणामयोग्य समयं च विवर्ज्य=परित्यज्य, काले—यस्य कार्यस्य यः कालस्त-
स्मिन्नेव, कालं-तत्कालोचितं प्रतिक्रमण-प्रतिलेखनादिकं कार्यं समाचरेत्=कुर्यात्।

अयं भावः—यो यस्य अङ्गप्रविष्टादेः श्रुतस्य काल उक्तस्तस्य श्रुतस्य तस्मि-
न्नेव काले स्वाध्यायः कार्यः, नान्यदा, विघ्नसंभवात्, तीर्थकराज्ञाविरोधाच्च।

अलाभ हो तो वहीं लाभ की आशा से समय को उल्लंघन कर बहुत
समय तक घूमता ही रहे। भगवान ने कहा भी है—

“अलाभो ति न सोऽज्जा, तवोत्ति अहिया सए”

साधु को जब अपने समयानुसार भिक्षा का लाभ न हो तो उस
समय उसे शोच नहीं करना चाहिये किन्तु ऐसा समझना चाहिये कि
यह एक बड़े भारी तप का लाभ हुआ है। प्रतिक्रमण, प्रतिलेखना,
अपृच्छना, स्वाध्याय तथा भिक्षाचर्या का जो समय नियत है उस
समय के अतिरिक्त (अकालं च विवर्जिता—अकालं च विवर्ज्य) शेष
उनका अकाल का समय है अतः उसे छोड़कर (कालं) जोर, कार्य
जिसर समय में किये जाने चाहिये उन्हें (काले) उसी समय में (समायरे
—समाचरेत्) करे।

भावार्थ—जिस अंगप्रविष्ट आचारांग आदि सूत्रों के स्वाध्याय
करने का जो समय नियत है उस समय में उसी श्रुत की स्वाध्याय

आशाधी समयनु उलंघन करीने धृष्टा समय सुधी करता रहे. लगवाने कह्युं छे के
अलाभोत्ति न सोऽज्जा तवो ति अहियासए साधुने न्यारे पोताना समय अनुसार
भिक्षाने लाभ न थाय तो ते समये तेहुं साथ न करवो नोछे परंतु
अभ समयनु नोछे के, आ अके लारे तपने लाभ भव्यो, प्रतिक्रमण,
प्रतिलेखना. आपृच्छना. स्वाध्याय. तथा भिक्षाचर्याने के समय नियत छे अ
समय सिवाय, अकालं च विवर्जिता—अकालं च विवर्ज्य शेष तेने अकालने।
समय छे, आधी अने छोडी, कालं के के कार्य के के समयमां करी देवां
नोछे अने के के काले समयमां समायरे—समाचरेत् करे.

भावार्थ—अंग प्रविष्ट आचारांग आदि सूत्रोने स्वाध्याय करवाने के
समय नियत छे अ समयमां अज श्रुतने स्वाध्याय करवो नोछे. श्री

દૃશ્યતે ચ લોકેઽપિ કાલ એવ કૃષ્યાદિકરણે ધાન્યાદિનિષ્પત્તિરૂપં ફલં ભવતિ, વિપર્યયે તુ વિપર્યયઃ । યથા કાલ એવ વનસ્પતીનામઙ્કુરાઃ પ્રાદુર્ભવન્તિ, કાલ એવ વૃક્ષાઃ કુસુમિતા ભવન્તિ, ફલવન્તશ્ચ, કાલ એવ પદ્મ ઋતવઃ સમાયાન્તિ, કાલ એવ તીર્થકરાશ્ચક્રિણો ચલદેવા વાસુદેવા જાયન્તે, કાલ એવ ધુક્તિકાર્યા મુક્તા ઉત્પદ્યન્તે, કાલે આવશ્યકકારિણસ્તીર્થકરગોત્રં કર્મોપાર્જયન્તિ ।

યતઃ—કાલમ્મિ કીરમાણં, કિસિકમ્મં વહુફલં જહા હોઈ ।

इय सच्चच्चिय किरिया, निय-निय-कालम्मि विन्नेया ॥ १ ॥

છાયા—કાલે ક્રિયમાણં, કૃષિકર્મ વહુફલં યથા ભવતિ ।

इति सर्वैव क्रिया, निज-निज-काले विज्ञेया ॥ १ ॥

કરની ચાહિયે, બિન્ન સમય મેં નહીં, કારણ કિ અકાલ મેં વિઘ્નોં કે આને કી સંભવના રહતી હૈ । તથા તીર્થકર પ્રભુકી એસી આજ્ઞા નહીં હૈ, અતઃ ઉનકી આજ્ઞા કે વિરુદ્ધ પ્રવૃત્તિ કરને સે સ્વચ્છંદતા કા દોષ લગતા હૈ । લોકમેં ભી યહી વાત દેખી જાતી હૈ—લેતી આદિ કરને કા જો કાલ નિયત હૈ ઉસો મેં ઉસ કે કરને સે ધાન્યાદિક ફલ કી નિષ્પત્તિ હોતી હૈ, અન્ય સમય મેં નહીં । સમયાનુસાર હી વૃક્ષોં મેં પત્ર પુષ્પ ફલાદિક આયા કરતે હૈ । તથા વનસ્પતિયોં ઁંકુરોં કો ઉત્પન્ન કરતી હૈ । અપને અપને સમય મેં છહ ઋતુઁ આતી હૈ । તીર્થકર, ચક્રવર્તી, ચલદેવ, વાસુદેવ, યે સવ અપને ૨ સમય પર હી હોતે હૈ । સીપ મેં મોતી, સમયાનુસાર હી હોતે હૈ । આવશ્યક ક્રિયાઓં કો કરને વાલે જીવ સમય પર હી તીર્થકર ગોત્ર કા ઉપાર્જન કિયા કરતે હૈ । કહા ભી હૈ—

સમયમાં નહીં. કારણ કે અકાલમાં વિઘ્નો આવવાની સંભાવના રહે છે. તથા તીર્થકર પ્રભુની એવી આજ્ઞા નથી. માટે એમની આજ્ઞાની વિરુદ્ધ પ્રવૃત્તિ કરવાથી સ્વચ્છંદતાનો દોષ લાગે છે. લોકોમાં પણ આવી વાત દેખાય છે—ખેતી વગેરે કરવાનો જે કાળ નિયત છે એ સમયે જ કરવાથી ધાન્યાદિક ફળની ઉત્પત્તિ થાય છે. અન્ય સમયમાં નહીં. સમયાનુસારજ વૃક્ષોમાં પત્ર પુષ્પ ફળાદિક આવ્યા કરે છે. તથા વનસ્પતિઓ ઁંકુરોને ઉત્પન્ન કરે છે. પોતાના સમયમાં જ ઋતુઓ આવે છે તીર્થકર, ચક્રવર્તી, ચલદેવ, વાસુદેવ. એ બધા પોત પોતાના સમય ઉપર થાય છે. સીપમાં મોતી સમયાનુસાર જ થાય છે. આવશ્યક ક્રિયાઓને કરવાવાળા જીવ સમય પર જ તીર્થકર પ્રકૃતિનો બંધ કર્યા કરે છે. કહ્યું પણ છે કે—

तस्मात् साधुभिः कालेन सर्वां प्रतिक्रिमणप्रतिलेखनादिक्रिया कर्तव्येति ।
सूत्रे 'कालेन' इत्यत्र तृतीया सप्तम्यर्थे ॥ ३१ ॥

मूलम्—परिवाडीए न चिट्ठेज्जा, भिक्खू दत्तेसणं चरे ।

पंडिरूवेण एसित्ता, मियं कांलेण भक्खेए ॥ ३२ ॥

छाया—परिपाट्यां न तिष्ठेत्, भिक्षुः दत्तैषणां चरेत् ।

प्रतिरूपेण एपित्वा, मितं कालेन भक्षयेत् ॥ ३२ ॥

टोका—'परिवाडीए' इत्यादि—

भिक्षुः=साधुः, परिपाट्यां=गृहस्थगृहे भुञ्जानानां जनानां पङ्क्तौ न तिष्ठेत् ।
किं च-दत्तैषणां=दत्तं-दानं तस्मिन् गृहस्थेन दीयमाने, एषणा-तद्गतशङ्कित-

“कालम्भि कीरमाणं, किसिकम्भं बहुफलं जहा होई ।

इय सव्वच्चिय किरिया, निय-निय-कालम्भि विन्नेया ॥ १ ॥

छाया—काले क्रियमाणं, कृपिकर्म बहुफलं यथा भवति ।

इति सर्वां चैव क्रिया निज-निज-काले विज्ञेया ॥ १ ॥

इस लिये साधुओं को चाहिये कि वे समस्त अपनी प्रतिक्रमण
प्रतिलेखनादिक क्रियाओं को नियत समय पर ही करते रहें ॥ ३१ ॥

'परिवाडीए' इत्यादि.

अन्वयार्थ—(भिक्खू-भिक्षुः) साधु (परिवाडीए न चिट्ठेज्जा-
परिपाट्यां न तिष्ठेत्) गृहस्थ के घर में भोजन करती हुई जीमणवार
की जनपङ्क्ति में न खड़ा रहे । (दत्तेसणं चरे-दत्तैषणां चरेत्)

“कालम्भि कीरमाणं, किसिकम्भं बहुफलं जहा होई ।

इय सव्वच्चिय किरिया, निय-निय-कालम्भि विन्नेया ॥ १ ॥

छाया—काले क्रियमाणं, कृपिकर्म बहुफलं यथा भवति ।

इतिसर्वैवक्रिया, निज-निज-काले विज्ञेया ॥ १ ॥

आ भाटे साधुनुं कर्तव्य छे के तेबु पोतानी समस्त क्रियाओ प्रतिक्रमण
प्रतिलेखनादिक नियत समय उपर करवी ओईओ. ॥ ३१ ॥

परिवाडिए—इत्यादि.

अन्वयार्थ—भिक्षु-भिक्षुः साधु, परिवाडीए न चिट्ठेज्जा-परिपाट्यां न तिष्ठेत्
गृहस्थनामधरमां भोजन करती भिक्षुवारनी जनपङ्क्तिमां उभा न रहे. दत्तेसणं चरे—
दत्तैषणां चरेत् गृहस्थ दाश प्रदत्त दानमां शङ्कित, भक्षिक आदिदोषोनी अवेपथु ३५

પ્રસિત્તાદિદોપાન્વેષણાત્મિકા દત્તૈષણા તાં, ચરેત્=આસેવેત । અનેન ગ્રહણૈષણા સૂચિતા ।
 ફિં કૃત્વા દત્તૈષણાં ચરેદિત્યાહ-‘પઢિરૂવેણ’ ઇત્યાદિ । પ્રતિરૂપેણ=મુનિવેષેણ,
 વદ્વસદોરકમુલવસ્ત્રિકત્વં, રજોહરણપાત્રધારકત્વં, શ્વેતવસ્ત્રપરિધાયકત્વં ચ મુનિ-
 વેષસ્તેન, એપિત્વા=ગવેષયિત્વા, અનેન ઉદ્ગમોત્પાદનાવિષયા ગવેષણૈષણા પ્રોક્તા ।
 મિતં=પરિમિતં કાલેન-કાલે-આગમોક્તસમયે દેશકાલાનુસારેણ ભક્ષયેત્-શુક્ષીત ।
 અનેનાભ્યવહરણવિષયા ગ્રાસૈષણાઽઽવેદિતા ।

અત્ર ‘પરિવાડીએ ન ચિદ્રેજ્ઞા’ ઇત્યનેન અપ્રીતિઃ, રસલોલુપતાવર્જનં
 ચ સૂચિતમ્ । ‘દત્તૈસણં’ ઇત્યનેનાદત્તાદાનનિવૃત્તિઃ સૂચિતા । ‘પઢિરૂવેણ’
 ઇત્યનેન નિષ્કપટતા પ્રદર્શિતા । ‘મિયં’ ઇત્યનેનાધિકભોજનનિવૃત્તિરાવેદિતા ॥ ૩૨ ॥

ગૃહસ્થદ્વારા પ્રદત્ત દાન મેં શક્તિ, પ્રક્ષિત આદિ દોષોં કી ગવેષણા રૂપ
 દત્તૈષણા અર્થાત્ ગ્રહણૈષણા કા ધ્યાન રલે । (પઢિરૂવેણ-પ્રતિરૂપેણ)
 પ્રતિરૂપસે-મુનિ કે વેષ સે-મુલ પર દોરાસહિત મુંહપત્તિ બાંધના.
 રજોહરણ એવં પાત્રોં કા ધારણ કરના, યહ મુનિવેષ હેં હસ વેષ સે
 (એસિત્તા-એપિત્વા) ગવેષણા કર (કાલેણ-કાલેન) આગમન મેં કથિત
 સમયમેં દેશ કાલ કે અનુસાર સમય પર મિલે હુએ અન્ન આદિકા (મિયં-
 મિતં) પરિમિતં (ભક્ષલ્લ-ભક્ષેત્) આહાર કરે । ‘એસિત્તા-એપિત્વા’ હસ પદ
 સે ઉદ્ગમ, ઉત્પાદન આદિ દોષોં સે વર્જિત ગવેષણૈષણા, તથા ‘શુક્ષીત’ હસ
 ક્રિયાપદ દ્વારા ગ્રાસૈષણા પ્રકટ કી ગઈ હેં । ‘પરિવાડીએ ન ચિદ્રેજ્ઞા’ હસ
 પદ દ્વારા અપ્રીતિ એવં રસ મેં લોલુપતાકા પરિહાર સૂચિત હુઆ હેં ।
 ‘દત્તૈસણં’ સે અદત્તાદાન સે નિવૃત્તિ, ‘પઢિરૂવેણ’ સે નિષ્કપટતા, ‘મિયં’
 હસ સે અધિક ભોજનકી નિવૃત્તિ સૂચિત કી ગઈ હેં ॥ ૩૨ ॥

હૈતૈષણા અર્થાત્ પ્રહૈષણાનું ધ્યાન રાખે. પઢિરૂવેણ-પ્રતિરૂપેણ પ્રતિરૂપથી-મુનિના
 વેશથી મોઢા ઉપર દોરાસહિત મુહપત્તિ બાંધવી, રજોહરણ તથા પાત્રોનું ધારણ
 કરવું તથા શુકલ વસ્ત્રોને ધારણ કરવાં એ મુનિવેશ છે. આ વેશને, એસિત્તા-
 એપિત્વા ધારણ કરી, કાલેણ-કાલેન આગમના કહેલા સમયમાં દેશકાળ સમય અનુ-
 સાર સમય ઉપર મળેલા અન્ન આદિને મિયં-મિતં પરિમિત ભક્ષલ્લ-ભક્ષયેત્ આહાર
 કરે. એસિત્તા-એપિત્વા એ પદથી ઉદ્ગમ, ઉત્પાદન આદિ દોષોથી વર્જિત ગવેષણૈષણા
 તથા “શુક્ષીત” આ ક્રિયા પદ દ્વારા ગ્રાસૈષણા પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે.
 પરિવાડી એ ન ચિદ્રેજ્ઞા આ પદ દ્વારા અપ્રીતિ એવં રસમાં લોલુપતાને
 પરિહાર સૂચિત થયેલ છે. દત્તૈસણં આ પદથી અદત્તાદાનની નિવૃત્તિ, સૂચિત
 કરવામાં આવી છે. પઢિરૂવેણ આ પદથી નિષ્કપટતા સૂચિત કરે છે. મિયં
 એ પદથી અધિક ભોજનની નિવૃત્તિ સૂચવવામાં આવેલ છે. (૩૨)

। મિક્ષાચર્યાં કુર્વતા સાધુના ગૃહસ્થગૃહે પૂર્વસમાગતમિશ્નુસન્નાયે યત્
કર્તવ્યં તદાહ—

મૂલમ્—નાઈદૂરમણાસન્ને, નન્નેસિં ચર્કેલુપાસઓ ।

। ઇંગો ચિદ્દેજ્ઞ મત્તદં, લંઘિતાં તં નૌઈર્કમે ॥૩૩॥

છાયા—નાતિદૂરં અનાસન્ને, નાન્યેપાં ચક્ષુઃસ્પર્શતઃ ।

। એકસ્તિષ્ઠેદ્ મત્કાર્થમ્, લઙ્ઘયિત્વા તં નાતિક્રામેત્ ॥ ૩૩ ॥

ટીકા—‘નાઈદૂરં’ ઇત્યાદિ—

। અતિદૂરમ્=અતિદૂરે ન તિષ્ઠેત્, મિક્ષાચર્યાં કુર્વન્ સાધુ ગૃહસ્થગૃહે પૂર્વસમાગતં મિશ્નુકં દૃષ્ટ્વા તતોઽતિ દૂરે ન તિષ્ઠેત્, અતિદૂરાવસ્થાને મિશ્નુનિર્ગમનં જ્ઞાતુમશક્યં સ્યાત્, એપના ગુદ્વચસંભવથેતિ ભાવઃ । તથા આસન્ને=અતિનિકટેઽપિ ન તિષ્ઠેત્,

જિસ સમય સાધુ મિક્ષાચર્યા કર રહ્યા હો તે સમય યદિ ગૃહસ્થ કે ઘર મેં કોઈ દૂસરા મિશ્નુ મિક્ષાચર્યા કે લિયે આયા હુઆ હો તો સાધુ કા કયા કર્તવ્ય હૈ ? ઇસ વિષય કો ઇસ ગાથાદ્વારા સ્પષ્ટ કિયા જાતા હૈ—‘નાઈદૂરં’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—મિક્ષા કરતા હુઆ સાધુ (નાઈદૂરમણાસન્ને-નાતિદૂરં અનાસન્ને) જય યહ દેખે કિ ગૃહસ્થ કે ઘર પર પહિલે સે કોઈ દૂસરા મિશ્નુ આદિ મિક્ષાનિમિત્ત આયા હુઆ હૈ, યા મિક્ષા ગ્રહણ કર રહ્યા હૈ તો વહ તે સમય વહુત દૂર જાકર યહા ન હોવે ઓર ન અતિ સમીપ યહા હોવે । ક્યોં કિ અતિદૂર યહા હોને પર મિશ્નુ કા નિર્ગમન તે સે જ્ઞાત નહીં હો સકતા હૈ, તથા અતિ સમીપ યહા રહને પર તે સે પૂર્વગત

તે સમય સાધુ મિક્ષા ચર્યા કરતા હોય એ સમયે ગૃહસ્થને ઘેર કોઈ બીજા મિશ્નુ મિક્ષાચર્યા માટે આવેલ હોય તો સાધુનું શું કર્તવ્ય છે. આ વિષયને આ સૂત્રદ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—નાઈદૂરં-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—મિક્ષા માટે નિકળેલ સાધુ, નાઈદૂરમણાસન્ને-નાતિદૂરં અનાસન્ને એ બુદ્ધિ કે જે ગૃહસ્થને ત્યાં પોતે જઈ રહેલ છે, ત્યાં તેની પહેલાં કોઈ બીજા મિશ્નુ મિક્ષા નિમિત્ત ગયેલ છે, અથવા મિક્ષા ગ્રહણ કરી રહેલ છે, તો તે એ સમયે ધણે આવે જઈ બિલા ન રહે તેમ અતિ સમીપમાં પણ બિલા ન રહે કેમ કે, અતિ દૂર બિલા રહેવાથી મિક્ષાચર્યા ગયેલા મિશ્નુનું નિર્ગમન બહુ શકાતું નથી તથા અતિ સમીપ રહેવાથી પહેલાં માટે

तत्र स्थिते सति पूर्वागतभिक्षुकस्य द्वेषः स्यादिति भावः । अन्येषां=भिक्षुकापेक्षया=येऽन्ये सन्ति गृहस्थास्तेषां, चक्षुःस्पर्शतः=चक्षुःस्पर्शे दृष्टिगोचरे न तिष्ठेत्, 'अयं भिक्षुः पूर्वागतभिक्षुनिष्क्रमणं प्रतिक्ष्यते इति यथा गृहस्था न जानन्ति तथा तिष्ठेदिति भावः । एकः=रागद्वेष रहितः सन्, भक्तार्थम्-आहारार्थं तिष्ठेत् । तम्=पूर्वागतभिक्षुकं, लङ्घयित्वा=अनादृत्य, नातिक्रामेत्=न गृहमध्ये गच्छेत्, पूर्वागतभिक्षुकस्य सद्भावे गृहस्थस्यगृहे-गमने तदप्रीतिशासनलघुतादिदोषाणां संभव इति भावः ॥ ३३ ॥

सम्पत्ति ग्रहणैपणाविधिं सूत्रकारः प्रदर्शयति—

मूलम्—नांङ्उच्चे न नीए वा, नांसण्णे नांङ्दूरओ ।

फासुयं परकडं पिडं, पडिगांहिज्ज संजए ॥३४॥

छाया—नात्युच्चे न नीचे वा नासन्ने नातिदूरतः ।

प्रासुकं परकृतं पिण्डं, प्रतिगृहीयात् संयतः ॥ ३४ ॥

भिक्षु को द्वेष हो सकता है । इसी प्रकार (नन्नेसिं चक्खुफासओ चिट्ठेज्ज-नान्येषां चक्षुःस्पर्शतः तिष्ठेत्) गृहस्थ के नजर में आवे ऐसा भी खडा न होवे (एगो-एकः) एक तथा राग-द्वेष रहित होकर (भत्तङ्गं-भक्तार्थम्) आहार के लिये (चिट्ठेज्ज) खडा रहे और (लंघित्ता तं नाइक्कमे-लङ्घयित्वा तं नातिक्रमेत्) पहले वाला भिक्षु जब तक बाहर न निकले तब तक मुनि को उस गृहस्थ के घर में आहार निमित्त प्रविष्ट नहीं होना चाहिये । पहले आये हुए भिक्षु के सद्भाव में गृहस्थ के घर जाने पर गृहस्थ को उस के प्रति अप्रीति हो सकती है एवं शासन की लघुता आदि दोषों की संभावना हो सकती है ॥ ३३ ॥

गयेला भिक्षुकना मनमां द्वेष लागवा जेवुं अने छे. तेम नन्नेसिं चक्खु-फासओ चिट्ठेज्ज-नान्येषां चक्षुः स्पर्शतः तिष्ठेत् गृहस्थनी दृष्टि पडे अे रीते पणु जिला न रहे. एगो-एकः अेक तथा राग द्वेष रहित अनीने भत्तङ्गं-भक्तार्थम् भिक्षा भाटे चिट्ठेज्ज जिला रहे अने लंघित्ता तं नाइक्कमे-लंघयित्वा तं नातिक्रमेत् पडेला भिक्षा भाटे गयेल भिक्षु ज्यां सुधी भडार न नीकजे त्यां सुधी मुनिअे ते गृहस्थना घरमां आहार निमित्त प्रवेश न करेवा जेधअे. पडेलां गयेलां साधुना सइलावमां गृहस्थने त्यां जवाथी गृहस्थने तेना तरइ अप्रीति थाय . अने शासननी लघुता आदि दोषोनी संभावना थाय छे. ॥ ३३ ॥

ટીકા—‘નાઇઉચ્ચે’ ઇત્યાદિ—

સંયતઃ=સાધુઃ, પ્રાસુકં=પનકાદિજંતુરહિતં, નિર્દોષિ=નવકોટિવિશુદ્ધં, પર-
કૃતં=પરેણ ગૃહસ્થેન સ્વાર્થ કૃતં ન તુ સાધ્વર્થમ્, પિણ્ડમ્=ચતુર્વિધમાહારમ્, અત્યુચ્ચે-
ગૃહોપરિભૂમિકાદૌ વંશકાષ્ઠનિર્મિતચર નિથ્રેણિકારોહણં કૃત્વા, ન પ્રતિગૃહ્ણીયાત્
પ્રતિગૃહ્ણીયાદિત્યસ્ય નીચાદાવપિ સમ્બન્ધઃ । નીચે=અતિનીચે=ભૂમિગૃહાદૌ વા ન
પ્રતિગૃહ્ણીયાત્ તથા-આસન્ને=અત્યાસન્ને, અતિસમીપે સ્થિતઃ સન્ ન પ્રતિ-
ગૃહ્ણીયાત્, અતિદૂરતઃ=અતિદૂરે સ્થિતઃ સન્ ન પ્રતિગૃહ્ણીયાત્ ।

અન્ન-‘અત્યુચ્ચે’ ઇતિ-આરોહણેઽવરોહણે ચ સ્વપરવિરાધનાસંભવં સૂચયતિ ।

અવ ગ્રહણૈપણા કી વિધિ કહતે હું—‘નાઇઉચ્ચે’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(સંજય-સંયતઃ) સાધુ (પ્રાસુયં-પ્રાસુકં) પનક-નીલન
-ફૂલન-આદિ જીવોં સે રહિત-નિર્દોષ-નવકોટિ સે વિશુદ્ધ તથા
(પરકહં-પરકૃતં) ગૃહસ્થ દ્વારા અપને નિમિત્ત યનાયે ગયે-ન કિ સાધુ કે
નિમિત્ત યનાયે ગયે, એસે (પિંડં-પિણ્ડં) ચતુર્વિધ આહાર કો (અઇઉચ્ચે
ન પઢિગાહિજ્જ-અત્યુચ્ચે ન પ્રતિગૃહ્ણીયાત્) ઘર કે ઉપર કી ભૂમિ
કાદિ પર વાંસ અથવા કાષ્ઠ કી નિસરણી સે ચઢકર ન લેવે. હસી
તરહ જો આહાર (નીચ-નીચે) અત્યંત નીચે તળઘર આદિ મેં હો ઉસકો
(ન) નહીં લેવે । તથા (નાસણે નાઇદૂરઓ-નાસન્ને નાતિદૂરતઃ) ન અતિ
નજદીક સે લેવે ઓર ન અતિદૂર સે હી લેવે ।

‘અત્યુચ્ચે’ હસ પદ દ્વારા સૂત્રકાર યહી સૂચિત કરતે હું કિ ઝંચે
સ્થાન પર ચઢને ઇવં ઉતર ને મેં સ્વ ઓર પર કો વિરાધના હોને કી

હવે ગૃહણૈપણાની વિધિ કહેવામાં આવે છે. નાઇઉચ્ચે-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—સંજય-સંયતઃ સાધુ, પ્રાસુયં-પ્રાસુકં પનક, નીલન, ફૂલન, આદિ
જીવોથી રહિત નિર્દોષ-નવ કોટીથી વિશુદ્ધ તથા પઢકહં-પરકૃતં ગૃહસ્થને ત્યાં
પોતાના નિમિત્ત બનાવવામાં આવેલ ન કે સાધુના નિમિત્ત બનાવેલ એવા પિંડ-પિણ્ડ
ચતુર્વિધ આહારને આઇઉચ્ચે ન પઢિગાહિજ્જ-અત્યુચ્ચે ન પ્રતિગૃહ્ણીયાત્ ઘરની
ઉપરની ભૂમિ ઉપર વાંસ કે લાકડાની નિસરણી ઉપર ચડીને ન લે આ રીતે
જે આહાર નીચ-નીચે અત્યંત નીચે તળઘર આદિમાં હોય તેને પણ ન લે
તથા નાસણે નાઇદૂરઓ-નાસન્ને નાતિદૂરતઃ અતી નજીકથી ન લે તેમજ
અતિ દૂરથી પણ ન લે.

અત્યુચ્ચે આ પદ દ્વારા સૂત્રકાર એવું સૂચિત કરે છે કે, ઉંચાં સ્થાને
ચડવા અગર ઉતરવામાં સ્વ અને પરની વિરાધના થવાની સંભાવના નથી હોતી.

‘નીચે’ ઇતિ તત્રોત્કેપનિક્ષેપનિરીક્ષણાસંભવઃ સ્વપરવિરાધનાસંભવથેતિ દ્યોતયતિ ।

‘આસન્ને’ ઇતિ પશ્ચાત્કર્માદિસંભવં જ્ઞાપયતિ ।

‘અતિદૂરે’ ઇતિ એપણાશુદ્ધિસંભવં વોધયતિ ॥ ૩૪ ॥

અથ ગ્રાસૈપણાવિધિમાહ—

મૂલમ્—અપ્પપાણેઽપ્પવીયમ્મિ, પઢિચ્છન્નમ્મિ સંવુઢે ।

સમયં સંજેઃ મુંજે, જયં અપરિસાદિયં ॥૩૫॥

છાયા—અલ્પપ્રાણેઽલ્પવીજે, પ્રતિચ્છન્ને સંવૃતે ।

સમકં સંયતો યુજ્જીત, યતમાનોઽપરિશાદિતમ્ ॥ ૩૫ ॥

ટીકા—‘અપ્પપાણે’ ઇત્યાદિ—

અલ્પપ્રાણે=અવસ્થિતાગન્તુકદ્વીન્દ્રિયાદિજીવરહિતે, અલ્પવીજે=શાલ્યાદિ-
વીજરહિતે, ઇદમુપલક્ષણમ્-પૃથ્વીએકેન્દ્રિયજીવરહિતે ઇત્યર્થઃ, પ્રતિચ્છન્ને=સંપા-
તિમજીવા યથા ન પતન્તિ તથોપરિકૃતપ્રાવરણયુક્તે, સંવૃત્તે=પાર્થતઃ કટકુડચા-

સંભાવના રહતી હૈ । ‘નીચે’ હસ પદ સે ખી યહી વાત ડનકી લક્ષિત
હોતી હૈ । ‘આસન્ને’ પદ સે પશ્ચાત્કર્માદિક કી સંભાવના રહતી હૈ, તથા
‘અતિદૂરે’ પદ સે એપણાશુદ્ધિ કી ઠીક તરહ પાલના નહીં હોતી હૈ વહ
વાત પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈ ॥૩૪॥

અથ ગ્રાસૈપણા કા વિધિ કહતે હૈ—‘અપ્પપાણ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(અપ્પપાણે અપ્પવીયમ્મિ પઢિચ્છન્નમ્મિ સંવુઢે-અલ્પ-
પ્રાણે અલ્પવીજે પ્રતિચ્છન્ને સંવૃત્તે) અવસ્થિત એવં આગન્તુક દ્વીન્દ્રિ-
યાદિક જીવોં સે રહિત તથા શાલી આદિ વીજોં સે રહિત, હસી તરહ
પૃથ્વી આદિ એકેન્દ્રિય જીવોં સે વર્જિત ઓર સંપાતિમ જીવ ન પડ સકે
હસ ધ્યાલ સે ડપર સે તથા ચારોં તરફ સે છાંયે હુણ એસે ડપાશ્રય

“નીચે” આ પદથી પણ એ જ વાત એને લક્ષિત છે. “આસન્ને” આ પદથી
પશ્ચાત્કર્માદિકની સંભવના રહે છે. તથા “અતિદૂરે” આ પદથી એપણા શુદ્ધિની
ઠીક ઠીક પાલના થતી નથી એ વાત પ્રદર્શિત કરવામાં આવી છે. ॥ ૩૪ ॥

હવે ગ્રાસૈપણાની વિધી કહેવામાં આવે છે. અપ્પપાણે-ઈત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—અપ્પપાણે અપ્પવીયમ્મિ પઢિચ્છન્નમ્મિ સંવુઢે—અલ્પપ્રાણે અલ્પવીજે
પ્રતિચ્છન્ને સંવૃત્તે અવસ્થિત અને આગતુક દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવોથી રહિત તથા શાલી
આદિ બીજોથી રહિત, એજ રીતે પૃથ્વી આદિ એકેન્દ્રિય જીવોથી વર્જિત અને
સંપત્તિમય જીવ ન પડી શકે આ ખ્યાલથી ઉપરથી તથા ચારે બાજુથી

દિના સમાવૃત્તે ઉપાશ્રયાદાનિત્યર્થઃ, સંયતઃ=સાધુઃ, યતમાનઃ-ચપ્પડ ચપ્પડાદિ શબ્દમકુર્વન્ સન્ અપરિશાટિત=પરિશાટરહિતં । સિચ્ચપાતનેન રહિતં યથા સ્યાત્, યથા ઇકોડપ્યન્નરૂપઃ કરાન્મુલતો વાડ્યઃ પતિતો ન ભવેત્તચેત્યર્થઃ, સમરૂપ-સંભોગિ સાધુભિઃ સહ ન ત્વેકાવ્યેવ આહારં શુઙ્ગીત ॥ ૩૫ ॥

સંપ્રતિ ચાગ્યતનામાહ—

મૂલમ્—સુકડેત્તિ સુપંકેત્તિ, સુચ્છિન્ને સુહૃદે મંડે ।

સુનિઠ્ઠિય સુલઠ્ઠેત્તિ સાવજ્જં વજ્જંય મુણી ॥૩૬॥

છાયા—સુકૃતમિતિ સુપક્વમિતિ, સુચ્છિન્નં સુહૃતં મૃતમ્ ।

સુનિઠ્ઠિતં સુલઠ્ઠમિતિ, સાવઘં વર્જયેન્મુનિઃ ॥ ૩૬ ॥

ટીકા—‘સુકડેત્તિ’ इत्यादि—

મુનિઃ=સાધુઃ, સાવઘં=સપાપ વચનં વર્જયેત્=ન વહેત્ । કીદૃશં તત્સાવઘમિત્યાહ

આદિ મેં (સંજય-સંયતઃ) સાધુ (જયં-યતમાનઃ) ચપ્પડ ચપ્પડ આદિ શબ્દ કે તથા ચિના (અપરિશાડિયં-અપરિશાટિતમ્) હાથ સે યા મુંહ સે એક ભી સીથ-અન્ન કા કળ-નીચે ન ગીરે, ઇસ રૂપ સે (સમયં-સમકં) સંભોગી સાધુઓં કે સાથ (મુંજે-મુઙ્ગીત) આહાર કરે ॥૩૫॥

અવ વચન કી યાતના કહેતે હું—‘સુકડેત્તિ’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—(મુણી સાવજ્જં વજ્જંય-મુનિઃ સાવઘં (વચનં) વર્જયેત્ મુનિ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઇસ પ્રકાર કે સાવઘ-સપાપ વચન કે ધોલને કા પરિત્યાગ કરે । વે વચન વે હું—(સુકડે ત્તિ સુપક્વે ત્તિ, સુચ્છિન્ને, સુહૃદે મંડે સુનિઠ્ઠિય, સુલઠ્ઠેત્તિ, સુકૃતમિતિ, સુપક્વ-મિતિ સુચ્છિન્નં સુહૃતં મૃતમ્ (સુમૃતમ્) સુનિઠ્ઠિતં સુલઠ્ઠમિતિ, ‘સુકડે’

છવાયેલ એવા ઉપાશ્રય આદિમાં સંજયે-સંયતઃ સાધુ જયં-યતમાનઃ ચપ્પડ ચપ્પડ આદિ શબ્દ વગર અપરિશાડિયં-અપરિશાટિતમ્ તથા હાથથી તથા મોઢાથી એક પણ સીથ અન્નનો કણ નીચે ન પડે એ રીતે સમયં-સમકં સંભોગી સાધુઓની સાથે મુંજે-મુઙ્ગીત આહાર કરે. ॥ ૩૫ ॥

હવે વચનની યતના કહેવામાં આવે છે. સુકડેત્તિ-ઈત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—મુણીસાવજ્જં વજ્જંય-મુનિ સાવઘં વચનં વર્જયેત્ મુનિઃ કર્તવ્ય છે કે તે આ પ્રકારના સાવઘ-સપાપ વચનને ધોલવાનો પરિત્યાગ કરે તે વચન આ છે. સુકડેત્તિ સુપક્વેત્તિ સુચ્છિન્ને સુહૃદે મંડે સુનિઠ્ઠિય સુલઠ્ઠેત્તિ-સુકૃતમિતિ, સુપક્વમિતિ, સુચ્છિન્નં સુહૃતં મૃતમ્ (સુમૃતમ્) સુનિઠ્ઠિતમ્ સુલઠ્ઠમિતિ

—‘મુકડેતિ’ ઇત્યાદિ । મુકુતમિતિ—ઈદં મૂપમિષ્ટાન્નાદિકં હિદ્ગુજીરકાદિવ્યા-
પારૈઃ સુપ્ત સંસ્કૃતમિતિ, તથા—મુપન્વમિતિ—ઈદં ઘૃતપૂરાદિકં ઘૃતાદિના મુપક-
મસ્તીત્યાદિકં, તથા—સુચ્છિન્નમિતિ—ઈદં શાકપત્રાદિદાત્રાસિપુત્રાદિશૃઙ્ઘૈઃ સુપ્ત છેદિત-
મસ્તીત્યાદિકં, તથા—સુહૃતં=‘કારવેલ્લાદિશાકસ્થં કઢુકત્વં સુપ્ત હૃતં=નિવારિતં
તદુત્કાલનેન’ ઇત્યાદિકમ્, તથા—‘મડે’ ઇત્યનેન પૂર્વાપર—સાહચર્યાત્ ‘મુમડે’
ઈતિ બોધ્યતે, મૃતં=મુમૃતમ્—પારદાદિધાતુજાતમ્, ઇત્યાદિકં, તથા—‘સુનિદ્રિય’
સુનિષ્ઠિતમ્—‘ઈદમન્નાદિકં સમ્યગ્ નિષ્ઠાં રસપ્રકર્પાત્મિકાં ગ્રાસં, સુપ્ત રસવત્કૃત-
મસ્તિ’ ઇત્યાદિકં, તથા—‘સુલટ્ટેતિ’ સુલટ્ટં—સુપ્ત કમનોવમ્ ‘ઈદમન્નાદિકં
મનોહરમસ્તિ’ ઇત્યાદિકં સાવચં વર્જયેદિતિ સંવન્ધઃ ।

યહ દાલ વગેરહ હીંગ જીરે આદિ કે વચાર સે વહુત અચ્છી બની હુઈ હૈ,
તથા ‘સુપકે’ યહ કચૌરી રાજા માલપુઆ વેવર આદિ ઘી મેં વહુત
અચ્છી તરહ સે પકાયે ગયે હૈં, તથા—‘સુચ્છિન્ને’ યહ શાક આદિ ચાકૂ
છૂરિ આદિ સે વહુત હી ઉત્તમ રીત સે કાઢા ગયા હૈ, તથા ‘સુહડે’ યહ
કરેલા કા શાક દેખો તો સહી કિતના સ્વાદિષ્ટ બના હૈ કિં ઇન કા
કઢુઆપન સર્વથા હરલિયા હૈ અર્થાત્ ઇન મેં જરા બી કઢુઆપન નહીં
રહા હૈ, । તથા—‘મડે’ યહ પારદાદિક ધાતુએ કિતની અચ્છી તરહ સે
માર કર દયા કે ઉપયોગ લાયક બના દી ગઈ હૈં । તથા—‘સુનિદ્રિય’ યહ
આહાર વહુત હી સ્વાદિષ્ટ બનાયા ગયાહૈ । ‘સુલટ્ટે’ યહ ભોજન જવ
દેખને મેં હી મનોહર લગ રહા હૈ તો ફિર ઇસ કે રાને મેં કિતના આનંદ
આવેગા ? ઇત્યાદિ, યે સમસ્ત સાવચ વચન હૈં, ઇસ લિયે સાધુ કો ઇસ
પ્રકાર કે સાવચ વચન નહીં બોલનાં ચાહિયે ।

આ દાળ વગેરે હિંગ જીરે વગેરેના વધારથી ઘણી સારી બની છે, તથા સુપકે
આ કચૌરી, ખાન્ન, માલપુવા, વેવર વગેરે ઘીમાં ઘણી સારી રીતે પકવવામાં
આવેલ છે, તથા સુચ્છિન્ને આ શાક વગેરે ચાકા છરીથી ઘણી ઉત્તમ રીતે
સુધારવામાં આવેલ છે, તથા સુહડે આ કારેલાંનું શાક જુઓ તો ખરા કેવું
સ્વાદિષ્ટ બન્યું છે કે એનું કડવાપણું પણ દૂર થયેલ છે. અર્થાત્ એમાં જરા પણ
કડવાપણું રહેલ નથી. મડે આ પારદાદિક ધાતુઓ કેવી સારી રીતે મારીને
દવાના ઉપયોગ લાયક બનાવવામાં આવી છે. તથા સુનિદ્રિય આ આહાર
ઘણો જ સ્વાદિષ્ટ બનાવવામાં આવેલ છે. સુલટ્ટે આ ભોજન બ્યારે ભેવાથી જ
મનોહર લાગે છે તો પછી એને ખાવામાં કેટલો આનંદ આવશે ? ઇત્યાદિ.
આ સઘળાં સાવચ વચન છે. સાધુએ આ પ્રકારનાં વચન ન બોલવા બેધએ.

યદ્વા-સુકૃતં-‘સુપ્તુકૃતં યદનેન શત્રુ પ્રતિ પ્રતિક્રિયા કૃતા’ इति, સુપવન્નમ્, इदमपूपादिकं घृताद्यतिशयेन पाचितमिति, सुच्छिन्नोऽयं दृक्षो वटपिप्पलादिरिति, सुहृतं-कृपणस्य धनं तस्करैरिति, मृतः-सुप्लु मृतोऽयं दुष्ट इति । मुनिष्ठितः-‘सुप्लु नष्टोऽयं मासादः, कूपो वा’ इति, यद्वा-‘सुप्लु निर्मितोऽयं मासादः, कूपो वा’ इति, यद्वा-‘सुप्लु नष्टमस्पदुष्टस्य द्रविणादिक’ मिति । मुलष्टः-‘मुप्लुष्टोऽयं गजस्तुरङ्गमो वा’ इति, यद्वा-‘मुलष्टा रुचिराव्यवेयं राजकन्ये’-ति सावद्यं वर्जयेत् ।

અથવા-इस प्रकार साधु को कभी नहीं करना चाहिये, कि जो -‘सुकडे’-इसने शत्रु को मार भगा दिया है, यह बहुत अच्छा काम किया । ‘सुपक्के’ ये अपूपादिक अधिक घृत में खूब अच्छे पकाये गये हैं इस लिये सुपक्क हैं खाने में बहुत अच्छे लगते हैं । ‘सुच्छिन्ने’ इस वृक्ष को आसानी से खूब अच्छा काटा है । ‘सुहडे’ अच्छा हुआ जो इस कंजूस का द्रव्य चोरों ने चुरा लिया । ‘मडे’ यह बड़ा दुष्ट था मरा सो अच्छा ही हुवा । ‘मुनिष्ठिण’ यह मकान अथवा कुंआ गिर गया वह अच्छा हुआ, अथवा-यह मकान या कुंआ बहुत ही सुन्दर बनाया गया है, या ऐसा कहना कि भला हुवा इस दुष्ट की संपत्ति जो लूट गई । ‘मुलष्टे’ यह हाथी अथवा घोड़ा बहुत अच्छा पुष्ट हुआ है । यह राजकन्या बड़ी सुन्दर है । ये सब वचन सावद्य हैं, अतः साधु के कहने योग्य नहीं हैं ।

અથવા—આ પ્રકારનાં વચનો પણ સાધુએ કદી ઉચ્ચારવાં ન જોઈએ. કે જે સુકડે આવે શત્રુને મારી ભગાડી દીધો છે, એ કામ ધણું સારું કયું. સુપક્કે આ મિઠાઈઓ, અપૂપ-માલપુડા વગેરે સારા ધીમાં ઘણી જ સારીરીતે પકાવવામાં આવેલ છે તેથી એ સુપક્ક વ છે, ખાવામાં બહુ લીભ્યત આવે છે. સુચ્છિન્ને આ વૃક્ષને ઓછી મહેનતે સારીરીતે કાપવામાં આવ્યું છે. સુહડે સારું થયું કે, આ કંબુસનું ધન ચોર ઉપાડી ગયા મડે એ ઘણો દુષ્ટ હતો. મર્યો તે સારું થયું, મુનિષ્ઠિય આ મકાન અગર કુવો પાડી અથવા ભુરી નાખવામાં આવતાં સારું થયું અથવા આ મકાન અગર કુવો ખૂબ સુંદર બનાવવામાં આવેલ છે. તથા આ દુષ્ટની સંપત્તિ લુંટાઈ ગઈ તે સારું થયું મુલ્લેટ્ટે આ હાથી અથવા ઘોડો ખૂબ સારીરીતે પુષ્ટ બનેલ છે, આ રાજકન્યા ખૂબ સુંદર છે, આ બધાં વચનો સાવધ વચન છે આથી તે સાધુએ બોલવા યોગ્ય નથી.

‘સુકૃતમ્’ ઇત્યનેન સૂપનિશ્ચાનાદિસંપાદને લવણલક્ષણપૃથિવીકાયાદિજલ-
તેજોવાયુવનસ્પતિદ્વીન્દ્રિયાદિત્રસજીવપર્યન્ત હિંસાનુમોદનં સૂચિતમ્ । एवं सुप
कमित्यत्रापि हिंसानुमोदनं बोध्यम् ।

સુચ્છિન્નમિત્યનેન-વનસ્પતિદ્વીન્દ્રિયાદિહિંસાનુમોદનં સૂચિતમ્ । સુહૃતમિત્ય-
નેન કારવેદ્યાદિપક્ષે વનસ્પત્યાદિહિંસાનુમોદનમ્, ધનહરણપક્ષેઽદત્તાદાનપરપીડોત્પા-
દનાઘનુમોદનં સૂચિતમ્ । મૃતમિત્યનેન પારદાદિધાતુપક્ષે પૃથિવીકાયાદિ હિંસાનુ-

‘સુકૃતમ્’ इस पद से सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि जब साधु
ऐसा कहता है कि यह दाल आदि बहुत ही अच्छी बनी हैं तब उसे
लवणरूप पृथिवीकाय तथा जलकाय, तेजस्काय, वायुकाय, वनस्पति-
काय एवं द्विन्द्रियादिक त्रस काय, इन सबकी हिंसा की अनुमोदना
करने का दोष लगता है । इसी प्रकार सुपक कहने में भी यही दोष
लगते हैं ।

‘सुच्छिन्नम्’ इस पद से सूत्रकार यह बात सूचित करते हैं कि
यदि मुनि ‘ये शाकपत्रादि चाक् आदि से अच्छी तरह काटे गये हैं’
ऐसा कहता है तो उसे वनस्पति काय की एवं द्विन्द्रियादिक त्रसकाय
की हिंसा की अनुमोदना करने का दोष लगता है । ‘सुहृतम्’ यदि
यही बात धन हरण आदि के पक्ष में जब बोलने में आती है तो उस
समय उसे अदत्तादान की अनुमोदना करने का तथा पर को पीड़ा
उत्पन्न कर ने आदि की अनुमोदना का दोष लगता है । ‘मृतम्’ इस

“સુકૃતમ્” આ પદથી સૂત્રકાર એ પ્રકટ કરે છે કે, સાધુ જ્યારે એમ
કહે છે કે, આ દાળ વગેરે ખૂબ સ્વાદિષ્ટ બનેલ છે. ત્યારે તેને લવણ રૂપી
પૃથ્વીકાયા, જળકાયા, તેજસ્કાયા, વાયુકાયા, વનસ્પતિકાયા અને દ્વિન્દ્રિયાદિક
ત્રસકાયા આ બધાની હિંસામાં અનુમોદના કરવાનો દોષ લાગે છે. આ રીતે
સુપક્કમ્ કહેવાથી પણ આ દોષ લાગે છે.

સુનિચ્છન્નમ્ આ પદથી સૂત્રકાર આ વાત સૂચિત કરે છે કે, મુનિ જો શાક
પત્રાદિક આકૃ વગેરેથી સરસ રીતે કાપવામાં આવેલ છે. એવું કહે તો તેને
વનસ્પતિ કાયા અને દ્વિન્દ્રિયાદિક ત્રસકાયાની હિંસા કરવામાં અનુ-
મોદન કરવાનો દોષ લાગે છે. સુહૃતમ્ આવી જ રીતે ધન હરણ વગેરેની
બાબતમાં બોલવામાં આવે ત્યારે તેને અદત્તા દાનની અનુમોદન કરવાનો તથા
બીજાને પીડા ઉત્પન્ન કરવી વગેરેની અનુમોદનનો દોષ લાગે છે મૃતમ્ એ પદથી

મોદનં સૂચિતમ્, દુષ્ટપક્ષે તુ પ્રાણઘાતાનુમોદનં ચોધ્યમ્ । સુનિષ્ઠિતમિત્યનેન પટ્કાય
હિંસાનુમોદનં સૂચિતમ્ । મુલઘમિત્યત્રાપિ તથૈવ ચોધ્યમ્ ।

‘સાવચં વર્જયેત્’ इत्यनेन उक्तमेव भाषणं निरवयवं चेत् तत्र न प्रतिषेध
इति ध्वन्यते, तथा च पक्षद्वयमनया गाथया गम्यते । तत्र सावद्यपक्षो व्याख्यातः,

પદ સે સૂત્રકાર કા યહ અભિપ્રાય હૈ કિ જય સાધુ ‘સુમૃતં’ હસ પદ કા
ખુશ હોકર પ્રયોગ કરતા હૈ ઓર વહ પ્રયોગ યદિ ઉસકા પારદાદિક
ધાતુઓં કે મારણ કરને કે પક્ષ મેં હોતા હૈ તો ઉસ સમય ઉસે પૃથિવી
કાયાદિક એકેન્દ્રિય જીવ કી હિંસા કરને કી અનુમોદના કા સમર્થક
માના જાતા હૈ । જય પહી પ્રયોગ સાધુ કી ઓર સે કિસી દુષ્ટ કે પક્ષ
મેં કિયા ગયા હોતા હૈ તો વહ પ્રાણઘાત કા અનુમોદક માના જાતા હૈ ।
‘સુનિષ્ઠિતમ્’ હસ પદ સે સૂત્રકાર યહ સૂચિત કરતે હૈં કિ જય સાધુ
‘યહ અન્નાદિક સામગ્રી સરસ તૈયાર હુઈ હૈં’ હસ પ્રકાર કા પ્રયોગ કરતા
હૈ તો ઉસે અન્નાદિક સામગ્રી કી તૈયારી મેં જો પટ્કાય કે જીવોં કી
વિરાધના હુઈ હૈં ઉસકી અનુમોદના કરને કા દોષ લગતા હૈ । હસી
તરહ ‘સુલઘ્નમ્’ હસ પદ કે ઉચારણ કરને મેં બી હસી દોષ કા ભાગી
હોના પડતા હૈ ।

‘સાવચં વર્જયેત્’ હસ પ્રકાર કે કથન કા યહ અભિપ્રાય હૈ કિ
યદિ યહ સુકૃત આદિ ભાષણ નિરવય્ય હોતા હૈ તો ઉસ સમય સાધુ કો

સૂત્રકારનો એ અભિપ્રાય છે કે, જ્યારે સાધુ “ સુમૃતં ” આ પદનો ખુશ થઈ
પ્રયોગ કરે છે અને તે પ્રયોગ પારદાદિક ધાતુઓનું મારણ કરવાના પક્ષમાં
હોય છે તો એ સમયે એને પૃથ્વીકાયાદિક એકેન્દ્રિય જીવની હિંસા કરવાની
અનુમોદનાના સમર્થક માનવામાં આવે છે. જ્યારે એજ પ્રયોગ સાધુ તરફથી
કોઈ દુષ્ટના પક્ષમાં કરવામાં આવ્યો હોય તો તે પ્રાણઘાતનો અનુમોદક માન-
વામાં આવે છે.

સુનિષ્ઠિતમ્ આ પદથી સૂત્રકાર એ સૂચિત કરે છે કે, જ્યારે સાધુ “ આ
અન્નાદિ સામગ્રી સરસ તૈયાર કરવામાં આવી છે ” આ પ્રકારનો પ્રયોગ કરે
છે તો તેને અન્નાદિક સામગ્રીની તૈયારીમાં જે પટ્કાય જીવોની વિરાધના
થઈ છે એની અનુમોદના કરવાનો દોષ લાગે છે. આ રીતે “ સુલઘ્નમ્ ” એ
અંગેના પદનું ઉચ્ચારણ કરવામાં પણ એ દોષના ભાગી બનવું પડે છે.

“ સાવચં વર્જયેત્ ” આ પ્રકારના કથન અંગે એ અભિપ્રાય છે કે, એ
એ સુકૃત આદિ ભાષણ નિરવય્ય હોય છે તો એ સમયે સાધુને કોઈ દોષ

નિરવધપક્ષો વ્યાખ્યાયતે-યથા-‘ સુકૃતમિતિ ’ સુષ્ટુ કૃતમનેન વૈયાટ્યમભયદાનં
સુપાત્રદાનાદિકં વેતિ, ‘ સુપક્વમિતિ ’ સુષ્ટુ પક્વમસ્ય વ્રહ્મચર્યાદિકમિતિ,
‘ સુચ્છિન્નં ’ સુષ્ટુ છિન્નમનેન સ્નેહવન્ધનમિતિ, ‘ સુદ્ધતં ’ સુષ્ટુ દ્ધતં=સ્વાયત્તીકૃતં
જ્ઞાનાદિરત્નત્રયમિતિ, ‘ સુનિષ્ઠિતમ્ ’ સુષ્ટુ નષ્ટમસ્યાપ્રમત્તસાધોઃ કર્મજાલમ્,
સુમૃતઃ=સુષ્ટુ મૃતોયં પण्डितमरणेन इति । सुलष्टा=सुष्टु मनोज्ञा क्रियाऽस्य साधोः,
यद्वा-सुलष्टा=दीक्षायोग्या कन्येति वदेत् ॥ ૩૬ ॥

કોઈ દોષ નહીં લગતા, ઇસ પ્રકાર યહ સાવચ પક્ષ કા વર્ણન હુવા હૈ ।
અવ નિરવચ પક્ષકા અર્થ કહતે હૈ—નિરવચ પક્ષ મૈ જવ સાધુ ‘સુકૃતં’
‘ઇસ ને વૈયાટ્ય; અભયદાન એવં સુપાત્ર દાન આદિ સત્કર્મ જો કિયે
હૈ વે વહુત અચ્છે કિયે હૈ’ ઇસ પ્રકાર ચોલ ને મૈ કોઈ દોષ નહીં હૈ ।
ઇસી પ્રકાર આગે સવ જગહ સમક્ષલેના ચાહિયે,—જૈસે ‘સુષ્ટુ પક્વમસ્ય
વ્રહ્મચર્યાદિકં’ ઇસ કે વ્રહ્મચર્ય આદિ સદ્ગુણ અચ્છી તરહ સે પરિપક્વ
હો ચુકે હૈ, ઇતિ ‘સુષ્ટુ છિન્નં અનેન સ્નેહવન્ધનમ્’ ઇતિ, ઇસ ને સ્નેહ
કા વંધન અચ્છી તરહ સે કાટ દિયા હૈ, ‘સુષ્ટુ દ્ધતં સ્વાયત્તીકૃતં અનેન
જ્ઞાનાદિરત્નત્રયં’ ઇતિ, ઇસ ને જ્ઞાનાદિક રત્નત્રય કો અચ્છી તરહ સે
સ્વાધીન કર લિયા હૈ, ‘સુષ્ટુ નષ્ટમસ્યાપ્રમત્તસાધોઃ કર્મજાલમ્’
ઇતિ, ઇસ અપ્રમત્ત સાધુ કા કર્મજાલ અચ્છી તરહ સે નષ્ટ હો ચુકા હૈ;
‘સુષ્ટુ મૃતોઽયં પण्डितमरणेन’ ઇતિ, પંડિત મરણ સે ઇસકી મૃત્યુ હુઈ
યહ વહુત હી સુંદર વાત હુઈ, ‘સુષ્ટુ મનોજ્ઞા અસ્ય સાધોઃ ક્રિયા’ ઇતિ,

લાગતો નથી. આ પ્રકારે આ સાવધ પક્ષનું વર્ણન થયું હવે નિરવધ પક્ષનું
વર્ણન કરવામાં આવે છે.—

નિરવધ પક્ષમાં બ્યારે સાધુ “સુકૃતં” આણે વૈયાટ્ય, અભયદાન, અને
સુપાત્રદાન આદિ જે સત્કર્મ કર્યાં છે તે ઘણાં સારાં કર્યાં છે” આ પ્રકારે
ખોલવામાં કોઈ દોષ નથી. આ પ્રકારે આગળ દરેક જગ્યાએ સમજી લેવું
જોઈ એ. જેમ—“સુષ્ટુ પક્વમસ્ય વ્રહ્મચર્યાદિકં” એને બ્રહ્મચર્ય આદિ સદ્ગુણ
સારી રીતે પરિપક્વ થયેલ છે, ઇતિ, “સુષ્ટુ છિન્નં અનેન સ્નેહવન્ધનમ્” ઇતિ,
એણે સ્નેહનું બંધન સારી રીતે કાપી નાખેલ છે “સ્વાયત્તીકૃતં અનેન જ્ઞાનાદિરત્નત્રયં”
ઇતિ, એણે જ્ઞાનાદિક રત્નત્રયને સારી રીતે સ્વાધીન કરી લીધેલ છે. ‘સુષ્ટુ નષ્ટમસ્યા-
પ્રમત્ત સાધોઃ કર્મજાલમ્” આ અપ્રમત્ત સાધુની કર્મજાલ સારી રીતે નષ્ટ થઈ
ચુકેલ છે, “સુષ્ટુ મૃતોઽયં પण्डितमरणेन” ઇતિ, પંડિત મરણથી એનું મૃત્યુ
થયું એ ઘણું જ સારું થયું, “સુષ્ટુ મનોજ્ઞા અસ્ય સાધોઃ ક્રિયા” ઇતિ યદ્વા—

વિનીતાવિનીતયોરુપદેશદાને યત્ ફલં ગુરોર્ભવતિ તદાહ—
મૂલમ્—રમણે પંડિણે સાંસં, હ્યં ભંદં વં વાહણે ।

વાલં સમ્મેંદં સાંસંતો, ગલિયંસ્સં વં વાહેણ ॥૩૭॥

છાયા—રમતે પંડિતાન્ શાસ્ત્ર, હ્યં ભદ્રમિવ વાહકઃ ।

વાલં શ્રામ્યતિ શાસ્ત્ર, ગલિતાથમિવ વાહકઃ ॥ ૩૭ ॥

ટીકા—‘રમણ’ ઇત્યાદિ—

અત્ર ગુરુરિતિ કર્તૃપદં પ્રકરણવશાદ્વિજ્ઞેયમ્ । પંડિતાન્=વિનીતશિષ્યાન્, શાસ્ત્ર=શિક્ષયન્ ગુરુઃ, રમતે=સફલપ્રયત્નતયા પ્રસન્નો ભવતીત્યર્થઃ । ક ઇવ ? ભદ્રં=જાત્યં વિનીતં, હ્યમ્=અથં વાહયન્, વાહકઃ=અશ્વવાહ ઇવ, યથા જાત્યાશ્વં વાહયન્નશ્વવાહઃ

યદ્વા- ‘સુલઘ્ઠા દીક્ષાયોગ્યા કન્યેતિ’ ઇસી સાધુ કી ક્રિયા મનોજ્ઞ હૈ અથવા યહ કન્યા દિક્ષા યોગ્ય હૈ ।

ભાવાર્થ—સુકૃત આદિ શબ્દોં કો પ્રયોગ યદિ સાધુ સાંસારિક કાર્યોં કો લક્ષ્ય મેં રક્ષ કર કરતા હૈ તો વહ દોષ કા ભાગી હોતા હૈ ઓર ઇન્હોં શબ્દોં કા પ્રયોગ યદિ વહ ધાર્મિક કાર્યોં કો લક્ષ્ય મેં રક્ષકર કરતા હૈ તો ઉસકો કોઈ દોષ નહીં લગતા હૈ ॥૩૬॥

વિનીત ઓર અવિનીત શિષ્ય કો ઉપદેશ દેને મેં ગુરુ મહારાજ કો જો ફલ પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસે ઇસ ગાથાદ્વારા સૂત્રકાર કહેતે હેં—‘રમણ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ગુરુ મહારાજ (પંડિણ-પંડિતાન્) વિનીત શિષ્યોં કો (સાંસં-શાસ્ત્ર) શિક્ષા દેતે હુણ (રમણ-રમતે) સફલ પ્રયત્નવાલા હોને સે પ્રસન્ન હોતે હેં । જૈસે—(ભંદં હ્યં વ વાહણ-ભદ્રં હ્યં ઇવ વાહકઃ)

સુલઘ્ઠા દીક્ષાયોગ્યા કન્યેતિ ” આ સાધુની ક્રિયા મનોજ્ઞ છે. અથવા આ કન્યા દિક્ષા યોગ્ય છે.

ભાવાર્થ—સુકૃત આદિ શબ્દોના પ્રયોગ બે સાધુ સંસારિક કાર્યોને લક્ષમાં રાખીને કરે છે તો તે દોષનો ભાગી બને છે અને એ જ શબ્દોના પ્રયોગ બે તે ધાર્મિક કાર્યોને લક્ષમાં રાખીને કરે છે તો તેને કોઈ દોષ લાગતો નથી. ॥૩૬॥

વિનીત અને અવિનીત શિષ્યને ઉપદેશ દેવામાં ગુરુ મહારાજને બે ફળ પ્રાપ્ત થાય છે એને આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર કહે છે.—રમણં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ગુરુ મહારાજ પંડિણ-પંડિતાન્ વિનીત શિષ્યોને સાંસં-શાસ્ત્ર શિક્ષા આપતાં રમણ-રમતે સફળ પ્રયત્ન વાળા હોવાથી તેના ઉપર પ્રસન્ન થ

પ્રસીદતિ તદ્વદિત્યર્થઃ। વાલં=વિનયરહિતં શિષ્યં, શાસત્=શિક્ષયન્ ગુરુઃ શ્રામ્યતિ= સ્વિઘતે, ક ઇવ? ગલિતાશ્વં=દુર્વિનીતમશ્વં વહુશઃ કશયા તાડનેઽપિ વિપરીતગત્યા પથાદ્ભાગગમનાદિકારિણમશ્વં વાહયન્, વાહક ઇવ। યથા દુર્વિનીતમશ્વં વાહયન્ વાહકઃ સ્વલુ નિષ્ફલપ્રયત્નતયા સ્વેદં પ્રાપ્નોતિ તદ્વદિત્યર્થઃ ॥ ૩૭ ॥

વિનીત ઘોડે કો ઇચ્છિત માર્ગ પર ચલાને રૂપ શિક્ષા સે ઘુડસવાર પ્રસન્ન હોતા હૈ। (વાલં-વાલં) વિનયરહિતશિષ્યકો (સાસંતો-શાસત્) શિક્ષા દેતે હુએ ગુરુ મહારાજ (સમ્મદ-શ્રામ્યતિ) સ્વેદસ્વિન્ન હોતે હૈં। જૈસે- (ગલિયસ્સં વ વાહ-ગલિતાશ્વં ઇવ વાહકઃ) દુર્વિનીત અશ્વકો વાર ૨ કશા સે તાડિત કરને પર સવાર દુઃસ્વિત હોતા હૈ, ક્યોં કિ દુર્વિનીત અશ્વકો ડ્યોં ૨ ચાલુક લગાતે હૈં ત્યોં ૨ વહ પીછે ડલડા હટતા હૈ। ઇસસે સવાર કા પ્રયત્ન નિષ્ફલ હોતા હૈ।

ભાવાર્થ-વિનીત શિષ્ય કો દી ગઈ શિક્ષા સફલતા કા સાધક હોને સે ગુરુ કી પ્રસન્નતા કા કારણ હોતી હૈ। અવિનીત શિષ્ય કો દી ગઈ વહી શિક્ષા અસફલ હોતી હૈ। અતઃ ડસ સે ડલડા ગુરુ મહારાજ કો સ્વેદસ્વિન્ન હી હોના પડતા હૈ। જૈસે-વિનીત અશ્વ ઇચ્છિત માર્ગ પર ચલ કર અપને માલિક કો પ્રસન્ન કરતા હૈ ઓર અવિનીત અશ્વ કશાદ્વારા તાડિત હોને પર બી વિપરીત હી માર્ગ પર ચલતા હૈ, ઇસ સે સવાર કો ડલડા કષ્ટ ડઠાના પડતા હૈ ॥ ૩૭ ॥

જેમ મદ્દ હયં વવાહ-મદ્દહયં ઇવ વાહકઃ-વિનીત ઘોડાને ઇચ્છિત માર્ગ ઉપર ચલાવવા ૩૫ શિક્ષાથી ઘોડેસ્વાર પ્રસન્ન થાય છે. વાલં-વાલં વિનય રહિત શિષ્યને સાસંતો-શાસત્ શિક્ષા આપતાં ગુરુ મહારાજ સમ્મદ-શ્રામ્યતિ ખેદ ખિન્ન બને છે, જેમ ગલિયસ્સેવ વાહ-ગલિતાશ્વં ઇવ વાહકઃ અવિનીત ઘોડાને ઘડી ઘડી આખખાથી મારવાની ખાખતમાં સ્વાસ્થ્ય મન દુઃખીત બને છે. કેમ કે. અવિનીત ઘોડાને જેમ જેમ આલુક મારવામાં આવે છે તેમ તેમ તે પાછો પડે છે આથી સવારનો પ્રયત્ન નિષ્ફળ બને છે.

ભાવાર્થ:-વિનીત શિષ્ય ને આપવામાં આવેલ શિક્ષા સફળતાની સાધક બનવાથી ગુરુ મહારાજની પ્રસન્નતાનું કારણ બને છે, અવિનીત શિષ્યને આપવામાં આવતી એ જ શિક્ષા અસફળ બને છે, આથી ગુરુ મહારાજે ખેદ ખિન્ન બનવું પડે છે. જેમ-વિનીત ઘોડો ઇચ્છિત માર્ગે ચાલી પોતાના માલીકને પ્રસન્ન કરે છે, અને અવિનીત ઘોડો આલુકથી પીટવામાં આવવા છતાં પણ વિપરીત માર્ગ પર જ ચાલે છે જેનાથી સવારને ઉડ્ડાનું કષ્ટ જ ભોગવવું પડે છે. ॥૩૭॥

વિનીતાવિનીતયોરુપદેશદાને યત્ ફલં ગુરોર્ભવતિ તદાહ—

મૂલમ્—રમણે પંડિણે સાંસં, હ્યં ભદ્રં વે વાહણે ।

વાલં સન્મેઙ્ગ સાંસંતો, ગલિયંસ્સં વે વાહેણે ॥૩૭॥

છાયા—રમતે પંડિતાન્ શાસ્ત્ર, હ્યં ભદ્રમિવ વાહકઃ ।

વાલં શ્રામ્યતિ શાસ્ત્ર, ગલિતાશ્રમિવ વાહકઃ ॥ ૩૭ ॥

ટીકા—‘રમણ’ ઇત્યાદિ—

અત્ર ગુરુરિતિ કર્તૃપદં પ્રકરણવશાદ્વિજ્ઞેયમ્ । પંડિતાન્=વિનીતશિષ્યાન્, શાસ્ત્ર=શિક્ષયન્ ગુરુઃ, રમતે=સફલપ્રયત્નતયા પ્રસન્નો ભવતીત્યર્થઃ । કઙ્ક ? ભદ્રં=જાત્યં વિનીતં, હ્યમ્=અથં વાહયન્, વાહકઃ=અશ્વવાહ ઇવ, યથા જાત્યાશ્વં વાહયન્નશ્વવાહઃ

યદ્વા- ‘સુલઠા દીક્ષાયોગ્યા કન્યેતિ’ ઇસી સાધુ કી ક્રિયા મનોજ્ઞ હૈ અથવા યહ કન્યા દિક્ષા યોગ્ય હૈ ।

ભાવાર્થ—સુકૃત આદિ શબ્દોં કો પ્રયોગ યદિ સાધુ સાંસારિક કાર્યોં કો લક્ષ્ય મેં રલ્લ કર કરતા હૈ તો વહ દોષ કા ભાગી હોતા હૈ ઓર ઇન્હીં શબ્દોં કા પ્રયોગ યદિ વહ ધાર્મિક કાર્યોં કો લક્ષ્ય મેં રલ્લ કર કરતા હૈ તો ઉસકો કોઈ દોષ નહીં લગતા હૈ ॥૩૬॥

વિનીત ઓર અવિનીત શિષ્ય કો ઉપદેશ દેને મેં ગુરુ મહારાજ કો જો ફલ પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસે ઇસ ગાથાદ્વારા સૂત્રકાર કહતે હીં—‘રમણ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ગુરુ મહારાજ (પંડિણ-પંડિતાન્) વિનીત શિષ્યોં કો (સાંસં-શાસ્ત્ર) શિક્ષા દેતે હુણ (રમણ-રમતે) સફલ પ્રયત્નવાલા હોને સે પ્રસન્ન હોતે હીં । જૈસે—(ભદ્રં હ્યં વ વાહણે-ભદ્રં હ્યં ઇવ વાહકઃ)

સુલઠા દીક્ષાયોગ્યા કન્યેતિ” આ સાધુની ક્રિયા મનોજ્ઞ છે. અથવા આ કન્યા દિક્ષા યોગ્ય છે.

ભાવાર્થ—સુકૃત આદિ શબ્દોનેા પ્રયોગ જે સાધુ સંસારીક કાર્યોને લક્ષમાં રાખીને કરે છે તે તે દોષનેા ભાગી બને છે અને જે જ શબ્દોનેા પ્રયોગ જે તે ધાર્મિક કાર્યોને લક્ષમાં રાખીને કરે છે તે તેને કોઈ દોષ લાગતો નથી. ॥૩૬॥

વિનીત અને અવિનીત શિષ્યને ઉપદેશ દેવામાં ગુરુ મહારાજને જે ફળ પ્રાપ્ત થાય છે એને આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર કહે છે.—રમણ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ગુરુ મહારાજ પંડિણ-પંડિતાન્ વિનીત શિષ્યોને સાંસં-શાસ્ત્ર શિક્ષા આપતાં રમણ-રમતે સફળ પ્રયત્ન વાળા હોવાથી તેના ઉપર પ્રસન્ન થા છે.

અર્થ ભાવ:—દુર્વિનીતશિષ્ય: સ્વલ્લેવં ચિન્તયતિ-અર્થ ગુરુર્મા કેવલં સ્વદ્વુકાદિભિઃ પીડયતિ ન તુ કિમપિ મમદિતં ચિન્તયતીતિ ॥ ૩૮ ॥

સવિનયશિષ્યસ્ય ભાવનામાહ—

મૂલમ્—પુત્તો મે' ભાઈ ણાંઈત્તિ, સાહૂં કહ્ણાં મન્નઈં ।

પાવંદિટ્ટીં ડં અપ્પાં, સાંસં દાંસેત્તિ' મન્નઈં ॥ ૩૯ ॥

છાયા—પુત્રો મે ભ્રાતા જ્ઞાતિરિતિ, સાધુ: કલ્યાણં મન્યતે ।

પાપદદિસ્તુ આત્માનં, શાસ્યમાનં દાસ ઇતિ મન્યતે ॥ ૩૯ ॥

ટોકા—‘પુત્તો મે’ ઇત્યાદિ—

અર્થ શિષ્ય:; મે=મમ, પુત્રતુલ્ય ઇતિ, ભ્રાતા=ભ્રાતૃતુલ્ય ઇતિ, જ્ઞાતિ:=જ્ઞાતિ-

ભાવાર્થ—ઉભયલોકસંબંધી હિતકારક ઉપદેશ દેને પર મી અવિનીત શિષ્યકી દષ્ટિમેં વહ ગુરુ મહારાજ કે શિક્ષાવચન હિતકારક પ્રતીત ન હોકર કેવલ કષ્ટપ્રદ ચપેટા આદિરુપ હી પ્રતીત હોતે હૈં । વહ એસા માનતા હૈ કિ યે મુશ્કે ઇસ વહાને કેવલ પીડિત હી કરના ચાહતે હૈં । વ્યોં કિ ઇન્હોં ને કમી મી મેરે હિત કા વિચાર હી નહીં કિયા હૈ તો ફિર યે મેરે હિત કી બુદ્ધિ સે અચ્છી વાત કહેંગે મી કૈસે ॥ ૩૮ ॥

વિનીત શિષ્ય કી ભાવના કૈસી હોતી હૈ ! ઇસકો ઇસ ગાથાદ્વારા સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં—‘પુત્તો મે’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—જવ ગુરુમહારાજ શિષ્યોં કો શિક્ષા દેતે હૈં તથ ડનમેં જો (સાહુ-સાધુ:) વિનીત શિષ્ય હોતા હૈ વહ ઇસ પ્રકાર વિચાર કરતા

ભાવાર્થ:—ઉભયલોક સંબંધી હિતકારક ઉપદેશ દેવા છતાં પણ અવિનીત શિષ્યની દષ્ટિમાં ગુરુ મહારાજનું તે શિક્ષા વચન હિતકારક ન ગણતાં કેવળ દુઃખદાયક તેમજ સુખવનાર આદિરૂપ જ લાગે છે તે એવું માને છે કે, આ બહાના તમે તેઓ કેવળ પીડવાજ માગે છે. કેમકે, તેમણે કદી પણ મારા હિતનો વિચાર કર્યો નથી. તો તેઓ મારા હિતની ભાવનાથી સારી વાત કેવી રીતે કહે. ॥ ૩૮ ॥

વિનીત શિષ્યની ભાવના કેવી હોય છે—એને આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે. પુત્તો મે ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ત્યારે ગુરુ મહારાજ શિષ્યને શિક્ષા આપે છે, ત્યારે એનામાં જે સાહુ-સાધુ: વિનીત શિષ્ય હોય છે તે એ પ્રકારનો વિચાર કરે છે કે, આ ગુરુ

ગુરોઃ શિક્ષાયચને કુશિષ્યસ્ય દુર્માન્વનામાહ—

મૂલમ્—‘સ્વદ્દુયા મે’ ચવેડા મે, અક્રોસા યે વહા યે મે’ ।

કલ્લાણમણુસાસંતો, પાવદિદ્વિત્તિ મન્નૈર્દ ॥ ૩૮ ॥

છાયા—સ્વદ્દુકા મે ચપેટા મે, આક્રોશાથ વધાથ મે ।

કલ્યાણમનુશાસત્, પાપદદિરિત્તિ મન્યતે ॥ ૩૮ ॥

ટીકા—‘સ્વદ્દુયા’ इत्यादि—

કલ્યાણં=લોકદ્વયહિતમ્, અનુશાસત્ = શિક્ષયન્ ગુરુઃ કુશિષ્યેણ પાપદદિઃ= પાપા=પાપમયી દદિરિત્ત્ય સ તથા, इति મન્યતે—અયં ગુરુર્મમ હિંસકોઽસ્તીતિ મન્યતે । યતોઽનેન-મે=મમ, સ્વદ્દુકાઃ=દુષ્ટતા આઘાતા દીયન્તેઽનેનેતિ શેષઃ । તથા મે=મમ, ચપેટાઃ=કાતલાઘાતા દીયન્તે । ચ-પુનઃ, આક્રોશાઃ=પરુષભાષણાનિ, ચ-પુનઃ, મે=મમ, વધાઃ=દણ્ડાદિઘાતાઃ ક્રિયન્તે ।

જો કુશિષ્ય હોતા હૈં ઉસે જય ગુરુ મહારાજ શિક્ષા દેતે હૈં તય ઉસકી કયા ભાવના હોતી હૈં યહ વાત હસ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કી જાતી હૈં—
‘સ્વદ્દુયા’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—અવિનીત શિષ્ય (કલ્લાણમણુસાસંતો-કલ્યાણં અનુશાસત્) ઉભયલોકસંબંધી હિત શિક્ષા દેને વાલે ગુરુ મહારાજ કો (પાવદિદ્વિ-પાપદદિઃ) યહ પાપદદિ વાલે મેરે ઘાતક હૈં (ત્તિ-इति) હસ પ્રકાર સમજતા હૈં । કયોં કિ વહ ગુરુ મહારાજ કી શિક્ષા સમ્બન્ધી વાતોં કો હસ પ્રકાર માનતા હૈં કિ (સ્વદ્દુયા મે ચવેડા મે અક્રોસા ય વહા ય મે-સ્વદ્દુકા મે ચપેટા મે આક્રોશાથ વધાથ મે) યે મેરે લિયે આઘાતસ્વરૂપ હૈં થપ્પડસ્વરૂપ હૈં, પરુષભાષણ-ગાલી-સ્વરૂપ હૈં, પ્રહારસ્વરૂપ હૈં ।

જે કુશિષ્ય હોય છે એને ગુરુ મહારાજ શિક્ષા આપે છે, ત્યારે તેની કેવી ભાવના હોય છે? તે વાત આ ગાથા દ્વારા પ્રગટ કરવામાં આવે છે. સ્વદ્દુયા इत्यादि.

અન્વયાર્થ—અવિનીત શિષ્ય કલ્લાણમણુસાસંતો-કલ્યાણં અનુશાસત્ ઉભય લોક સંબંધી હિતશિક્ષા દેવાવાળા ગુરુ મહારાજને પાવદિદ્વિ-પાપદદિઃ એ પાપ દહીવાળા મારા ઘાતક છે ત્તિ-इति એ પ્રકારના સમજે છે. કેમ કે, ગુરુ મહારાજની શિક્ષા સંબંધી વાતોને એ પ્રકારે માને છે કે, સ્વદ્દુયા મે ચવેડા મે અક્રોસા ય વહા ય મે-સ્વદ્દુકા મે ચપેટા મે આક્રોશાથ વધાથ મે આ મારા માટે આઘાત સ્વરૂપ છે, થપ્પડ સ્વરૂપ છે, પ્રહાર સ્વરૂપ છે.

અથ વિનયસર્વસ્વમુપદિશતિ—

મૂલમ્—ને કોવેષ આચરિય, અપ્પાણં પિ નં કોવેષ ।

બુદ્ધોવેષાઈ નં સિયાં, નં સિયાં તોત્તંગવેસણ ॥૪૦॥

છાયા—ન કોપયેત્ આચાર્યમ્, આત્માનમપિ ન કોપયેત્ ।

બુદ્ધોપધાતી ન સ્યાત્, ન સ્યાત્ તોત્તંગવેષકઃ ॥ ૪૦ ॥

ટીકા—‘ન કોવેષ’ इत्यादि—

આચાર્ય ન કોપયેત્=ક્રોધાવિષ્ટં ન કુર્યાત્, આચાર્યમિત્યુપલક્ષણં તેન વિનયા-
ર્હમુપાધ્યાયાદિકમપિ ન કોપયેદિત્યર્થઃ । આત્માનમપિ ન કોપયેત્—આચાર્યેણ પરુપ-
ભાષણાદિભિઃ શિક્ષ્યમાણમાત્માનમપિ કોપયુક્તં ન કુર્યાત્ । અપિનાઽન્યસ્યાપિ સંગ્રહઃ
અન્યં કમપિ ન કોપયેદિત્યર્થઃ ॥

યતઃ—માસોપવાસનિરતોઽસ્તુ તનોતુ સત્યં,

ધ્યાનં કરોતુ વિદધાતુ વહિર્નિવાસમ્ ।

બ્રહ્મવ્રતં ધરતુ ભૈશ્વરતોઽસ્તુ નિત્યં,

રોપં કરોતિ યદિ સર્વમનર્થકં તત્ ॥ ૧ ॥

કથંચિત્ કોપાવેશેઽપિ બુદ્ધોપધાતી ન સ્યાત્—આચાર્યોપધાતકો ન ભવેત્ ।

અથ વિનય કા સારાંશ કહતે હૈ—‘ન કોવેષ’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—(આચરિયં ન કોવેષ—આચાર્ય ન કોપયેત્) વિનીત શિષ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ આચાર્ય કો કબી ભી કુપિત ન કરે ।
(અપ્પાણં પિ ન કોવેષ—આત્માનમપિ ન કોપયેત્) આચાર્ય મહારાજ જવ કોઈ શિક્ષા દેવેં ઉસ સમય અપની આત્મા કો ભી કુપિત ન કરે । યદિ કદાચિત્ કોપ કા આવેશ આ ભી જાવે તો ઉસ સમય (બુદ્ધોવેષાઈ ન સિયા—બુદ્ધોપધાતી ન સ્યાત્) અપને આચાર્ય મહારાજ કા ઉપધાતક નહીં

હવે વિનયનેા સારાંશ કહે છે.—ન કોવેષ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—આચરિયં ન કોવેષ—આચાર્યાન્ ન કોપયેત્ વિનીત શિષ્યનું એ કર્તવ્ય છે કે, તે આચાર્યને કદી પણ દોષિત ન કરે. અપ્પાણં પિ ન કોવેષ—આત્માનમપિ ન કોપયેત્ આચાર્ય મહારાજ ત્યારે કોઈ શિક્ષા આપે ત્યારે પોતાના આત્માને પણ દોષિત ન કરે. કદાચિત્ નો દોષનેા આવેશ આવી પણ જાય તો તે સમયે બુદ્ધોવેષાઈ ન સિયા—બુદ્ધોપધાતી ન સ્યાત્ પોતાના આચાર્ય મહારાજનું

તુલ્ય इति गुरुर्नानाति, इत्येवं साधुः=विनयवान् शिष्यः कल्याणं=शुभं मन्यते-
'अयं गुरुः पुत्रादिभावेन मामनुशास्ति' इति शुभभावनां करोतीत्यर्थः। कुश्लिष्यः
पुनः किं मन्यते ? इत्याह- 'पावदिद्वी उ' इत्यादि। पापदृष्टिः=विनयरहितः शिष्यस्तु
शास्यमानम् आत्मानं=मां दास इति गुरुर्नानाति, इत्येवं मन्यते। 'अयं गुरुर्न वि-
दृष्ट्याऽवमानयन्मां दासमिव तर्जयति' इत्यशुभभावनां करोतीत्यर्थः।

अन्ये तु सुयुविभक्तिव्यत्ययात् 'पुत्रो' इत्यस्य 'पुत्रमिव' 'भाय'
इत्यस्य- 'भ्रातरमिव' 'णाइ' इत्यस्य 'ज्ञातिमिव' इति द्वितीयान्तार्थं कल्पयन्ति
'मे' इति द्वितीयान्तार्थकं च कल्पयन्ति तत्सर्वमनुचितम्-आगमोक्तपाठेऽर्थसंगतो
सत्यां तद्विपरीतार्थकल्पनायां भगवद्वचनविराधनाऽऽपत्तेः ॥ ३९ ॥

है कि ये गुरु महाराज मुझे (पुत्रो मे-पुत्रः मे) यह शिष्य मेरे पुत्रतुल्य
है (भाय-भ्राता) भाई के समान है (णाय-ज्ञातिः) ज्ञातिजनतुल्य है,
ऐसा समझकर शिक्षा देते हैं, (ति-इति) इस प्रकार विनीत शिष्य
(कल्याण-कल्याणं) शुभ (मन्नइ-मन्यते) मानता है, अर्थात् विनीत
शिष्य गुरु महाराज के प्रति कल्याण भावना करता है। और (पावदिद्वी
य-पापदृष्टिस्तु) जो अविनीत शिष्य होता है वह इस प्रकार विचारता
है कि ये गुरुमहाराज (सासं अप्पाणं-शास्यमानमात्मानम्) शिक्षापाते
हुए मुझको (दासे-दासः) यह दास है, इस प्रकार समझकर शिक्षा देते
हैं (ति-इति) इस प्रकार (मन्नइ-मन्यते) अशुभ मानता है, अर्थात्
अविनीत शिष्य गुरु महाराज के प्रति अशुभ भावना करता है। इस
गाथा में विनीत और अविनीत शिष्य की भावना प्रदर्शित की है॥३९॥

મહારાજ મને પુત્રો મે-પુત્રઃ મે આ શિષ્ય મારા પુત્ર તુલ્ય છે ભાય-ભ્રાતા ભાઈની
તુલ્ય છે ણાય-જ્ઞાતિ જાતિ તુલ્ય છે. એવું સમજીને શિક્ષા આપે છે. તિ-इति આ
પ્રકારે વિનીત શિષ્ય કલ્યાણ મન્નइ-કલ્યાણ-મન્યતે કલ્યાણકારક અને શુભકારક
માને છે. અર્થાત્ વિનીત શિષ્ય ગુરુ મહારાજ તરફ ખૂબ હંચી ભાવના રાખે છે અને
પાવદિદ્વિય-પાપદૃષ્ટિસ્તુ જે અવિનીત શિષ્ય હોય છે તે એવા પ્રકારનું વિચારે છે કે,
ગુરુ મહારાજ સાસં અપ્પાણં-શાસ્યમાનમાત્માનં શિક્ષા આપતી વખતે મને દાસે-દાસઃ
આ દાસ છે, એવી રીતે સમજીને શિક્ષા આપે છે. તિ इति આ પ્રકારે મન્નइ-મન્યતે
અશુભ માને છે. અર્થાત્ કુશિષ્ય, ગુરુ મહારાજ તરફ અશુભ ભાવના ભાવે છે.
આ ગાથામાં શિષ્યની વિનીત અને અવિનીત ભાવના પ્રદર્શિત કરેલ છે. ॥૩૯॥

બુદ્ધોપધાતી ન સ્યાદિતિ યદુક્તં તત્ર દૃષ્ટાન્તો વર્ણયતે—

અંગદેશે ચમ્પાપુરીનગર્યાં ગણિગુણસમન્વિતઃ પ્રક્ષીણપ્રાયકર્મા ક્ષીણજઙ્ઘાવલઃ
કૃતૈકશિષ્યપ્રતિજ્ઞઃ કથિદ્ વીર્યોલ્લાસનામક આચાર્યઃ ક્ષુદ્રમતિનામ્નૈકેનૈવ શિષ્યેણ
જો વિનય કે યોગ્ય હૈં ઉન્હેંં બી કુપિત નહીં કરના ચાહિયે, ક્યોંં કિ
કોપ અનેક અનર્થોંં કી જડ એવં સમસ્ત ઉત્તમ ક્રિયાઓંં કા વિનાશક
માના ગયા હૈ, કહા બી હૈ—

“ માસોપવાસનિરતોઽસ્તુ તનોતુ સત્યં,
ધ્યાનં કરોતુ વિદધાતુ વહિર્નિવાસમ્ ।
બ્રહ્મવ્રતં ધરતુ ભૈક્ષરતોઽસ્તુ નિત્યં,
રોપં કરોતિ યદિ સર્વમનર્થકં તત્ ” ॥ ૧ ॥

કોઈં બી વ્યક્તિ યદિ માસ માસ સ્વમણ બી પારણા કરતા હોં, સદા
સત્ય વોલતા હો, ધ્યાન કરતા હો, વન મેંં બી નિવાસ કરતા હો, બ્રહ્મ-
ચર્યવ્રત કા પાલન કરતા હો, ભિક્ષાવૃત્તિ કરતા હો પરંતુ યદિ રોપ
-કોપ કરતા હૈતોંં ઉસકીંં યે સમસ્ત ક્રિયાઈં વ્યર્થ હૈં ॥ ૧ ॥

‘બુદ્ધોપધાતી નહીં હોના ચાહિયે’ એસા જો કહા હૈં ઉસકો
દૃષ્ટાન્ત સે સ્પષ્ટ કરતે હૈં—

અંગદેશ મેંં ચંપા નામકી નગરી થી । ઉસમેં ગણિગુણોંં સે યુક્ત
કરવા બેઠેંં એ. કેમકે, કોપ અનેક અનર્થોંની બડ તેમજ સમસ્ત ઉત્તમ
ક્રિયાઓંને નાશ કરનાર મનાયેલ છે. કહુંં પણ છે.—

માસોપવાસ નિરતોઽસ્તુ તનોતુ સત્યં,
ધ્યાનં કરોતુ વિદધાતુ વહિર્નિવાસમ્ ।
બ્રહ્મવ્રતં ધરતુ ભૈક્ષરતોઽસ્તુ નિત્યં,
રોપં કરોતિ યદિ સર્વમનર્થકં તત્ ॥ ૧ ॥

કોઈં પણ વ્યક્તિ કદાચ તે મહિના મહિનાના અપવાસ કરે, સદા સાચું
બોલતો હોય, ધ્યાન કરતો હોય, વનમાં પણ રહેતો હોય, બ્રહ્મચર્યવ્રતનું
પાલન કરતો હોય, ભિક્ષાવૃત્તિ કરતો હોય, પરંતુ તે બે કોપ કરતો હોય તો
તેની એ સઘળી ક્રિયાઓ વ્યર્થ છે.

બુદ્ધોપધાતિ ન થવુંં બેઠેંં એ, એવુંં બે કહેવામાં આવે છે એને દૃષ્ટા-
ન્તથી સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે.—

અંગ દેશમાં અંબાપુરી નામની નગરી હતી, તેમાં ગણીશુભ્રાથી યુક્ત

તથા તોત્રગવેષકો ન સ્યાત્-તોત્ર=તોદનં તત્સદ્વ્યસ્ય પીઠોત્પાદકસ્ય પરુપભાષણા-
ઽઽદર્શવેષકઃ=અન્વેષકો ન ભવેદિત્યર્થઃ । અયં માત્રઃ-યથા-દુષ્ટસ્તુરદ્રમો વિપરીત-
ગત્યા પ્રચલન્ તોદનમન્વેષયતિ તદ્વત્ શિષ્યઃ આચાર્યસ્ય પ્રેરણાલક્ષગવચનસ્ય
ગવેષકો ન ભવેદિતિ ।

હોના चाहिये । तथा-(तोत्तगवेसण न सिया-तोत्रगवेषकः न स्यात्)
तोत्रगवेषक भी नहीं होना चाहिये-अर्थात् गुरु महाराज को बार २
प्रेरणा करने की आवश्यकता नहीं होने दे । तात्पर्य इसका यह है
कि शिष्य को यह चाहिये कि जिस समय आचार्य महाराज अपने
लिये परुप भाषण आदि रूप में भी यदि शिक्षात्मक वचन कहें तो
उस समय वह उनके प्रति ऐसा व्यवहार न करे कि जिससे वे कुपित
हो जावें, तथा स्वयं भी अपनी आत्मा को उनके व्यवहार से अप्र-
सन्न न रखे । तथा ऐसी चेष्टा भी उसको नहीं करना चाहिये कि जिसमें
आचार्य महाराज का उपघात हो । जिस प्रकार दुष्ट धोड़ा विपरीत चाल
से चलता हुआ अपने मालिक को पद २ पर दुःखित किया करता है
उसी प्रकार उनकी इच्छा के विरुद्ध चलकर शिष्यको उन्हें कभी भी
दुःखित नहीं करना चाहिये । सूत्र में जो अपि-शब्द आया है वह इस
घात का सूचक है कि शिष्य को अपने आचार्य महाराज से अतिरिक्त
और भी किसी को व्यथित नहीं करना चाहिये । तथा उपाध्याय आदि

અપમાન કરનાર ન થવો જોઈએ. તથા તોત્રગવેસણ ન સિયા-તોત્રગવેષકઃ ન સ્યાત્
તોત્રગવેષક પણ ન બનવું જોઈએ. અથવા-ગુરુ મહારાજે વારંવાર પ્રેરણા કરવી
પડે તેવું ન થવા દે. જે સમયે આચાર્ય મહારાજ પોતાના માટે પણ ભાષણ
આદિ રૂપથી પણ કદાચ શિક્ષાત્મક વચન કહે તો તે વખતે તે તેમના પ્રત્યે
એવો વહેવાર ન કરે કે, જેથી ગુરુ મહારાજે ક્રોધિત બનવું પડે. તથા તેમના
વહેવારથી પોતાની ભાતને પણ અપ્રસન્ન ન રાખે. તથા એવી એટા પણ તેણે
ન કરવી જોઈએ કે જેમાં આચાર્ય મહારાજનું અપમાન હોય, જે પ્રકારે હુલ
ધોડો વિપરીત ચાલથી ચાલીને પોતાના માલીકને પગલે પગલે દુઃખિત કર્યા કરે
છે તેવી રીતે, તેમની ઈચ્છાની વિરુદ્ધ ચાલીને શિષ્યે તેમને કદી પણ દુઃખી
ન કરવા જોઈએ. સૂત્રમાં જે 'અપિ' શબ્દ આવેલ છે તે આ વાત સૂચન કરે
છે કે શિષ્યે પોતાના ગુરુ મહારાજ કે બીજા કોઈને પણ દુઃખ ન પહોંચાડવું
જોઈએ. તથા ઉપાધ્યાય આદિ જે વિનયને યોગ્ય છે તેમને પણ પિત. ન

પથ્યં ચતુર્વિધમશનાદિકં શ્રાવકજનૈરુદારભાવૈરનુદિનં દીયમાનમુપાદાય તસ્મૈ નાર્પ-
યતિ સ્વયમેવ તદશ્નાતિ ।

અન્તં ગ્રાન્તં રુક્ષં શુષ્કં કુપથ્યમશનાદિકમાનીય ગુરવે પ્રયચ્છતિ । વદતિ ચ-
કિમિદ્ કુર્મો વયમ્ । ઈદૃશીં દશામુપગતાનાં ભવતાં યોગ્યમશનાદિકં વિદ્યમાનમપિ
નામી વિવેકવિકલાઃ શ્રાવકા દાતુમિચ્છન્તિ । શ્રાવકાન્ કથયતિ ચ-મમાચાર્યાઃ
લ્હુ પરમનિઃસૃહતયા સ્વશરીરયાત્રામપ્યચિન્તયન્તઃ પ્રણીતં ભક્તપાનં ગ્રહીતું નેચ્છન્તિ

और दूसरी जगह भी चल फिर सकें। इस प्रकार विचार कर उसने
ऐसा काम करना प्रारंभ किया कि-श्रावकों से जो आचार्य की अवस्था
अनुरूप स्निग्ध, मधुर, मनोज्ञ, सरस चतुर्विध आहार इसे भिक्षा में
मिलता वह स्वयं खा जाता और गुरु महाराज को अन्तर्ग्रान्त, रुक्ष
शुष्क एवं कुपथ्यरूप आहार लाकर देता। जब गुरु महाराज पूछते तो
कहने लगता कि महाराज हम इस में क्या करें। यहां के श्रावक आप-
की ऐसी अवस्था को देखकर असंतुष्ट हो गये हैं, इसी लिये वे अपने
घर में होते हुए भी योग्य अशनादिक को देना नहीं चाहते। जब
श्रावक उससे पूछते तो कहता कि हमारे ये आचार्य महाराज अब
विलकुल शिथिलशरीर हो रहे हैं इसलिये उन्हें अपने शरीरमें अब
कोई ममत्वपरिणति नहीं रही है। उन्हें तो जैसा भी आहार मिलजाता
है वे उसे ले लेते हैं। वे नहीं चाहते कि हमारा यह शरीर अब और

રહી નથી કે એક સ્થળ ઉપરથી બીજા સ્થળે જરા પણ હાલી ચાલી શકે.
આ પ્રકારનો વિચાર કરી તેણે એવા કામનો પ્રારંભ કર્યો કે, શ્રાવકોથી
આચાર્યની અવસ્થા અનુરૂપ જે સ્નિગ્ધ, મધુર, મનોજ્ઞ, સુરસ ચાર પ્રકારનો
આહાર તેને ભિક્ષામાં મળતો તે સ્વયં ખાઈ જતો અને ગુરુ મહારાજને
અન્ત, પ્રાન્ત, રૂક્ષ, શુષ્ક અને કુપથ્યરૂપ આહાર લાવી આપતો. ગુરુ મહા-
રાજના પૂછવાથી તે કહેતો કે, મહારાજ હું એમાં શું કરું અહીંના શ્રાવકો
આપની આવી અવસ્થા જોઈને અસંતુષ્ટ બની ગયા છે. આ માટે તેઓ પોતાના
ઘરમાં હોવા છતાં પણ યોગ્ય આહાર આપવા ઈચ્છતા નથી. બીજા શ્રાવક
તેને પૂછતા તો કહેતો કે, મારા આચાર્ય મહારાજ હવે બીલકુલ શિથિલ
શરીરના બની ગયા છે આ માટે તેમને હવે પોતાના શરીરમાં કોઈ મમત્વ
પરિણતી રહી નથી. તેમને જેવો આહાર મળી જાય છે તેવો તે લે છે. તે
નથી ચાહતા કે મારું આ શરીર હવે વધુ વખત ટક્યું રહે. આ માટે પ્રણીત

સહ કૃતસ્થિરવાસ આસીત્ । તન્નાસૌ શિષ્યઃ પ્રતિદિવસં સંસારસાગરોત્તારકં જન્મમર-
ણોચ્છેદકં સકલકર્મવિધ્વંસકં તીર્થં કરગોત્રોપાર્જકં ગુરુવૈયાટૃત્યં કુર્વાણો ગુરુકર્મ-
ક્ત્વાદ્ દુર્લભયોધિત્વાચ્ચૈકદા મનસિ ચિન્તયતિ-‘પ્રક્ષીણવલઃ સ્થવિરોઽયમસ્માભિઃ
કિયત્કાલમનુપાલનીયઃ’ इत्येवं विमृश्यासौ तद्वयोऽनुरूपं स्निग्धं मधुरं मनोज्ञं मुरसं

વીર્યોલ્લાસ નામ કે આચાર્ય અપને પ્રિય ક્ષુદ્રમતિ નામક શિષ્ય કે સાથ
સ્થિરવાસ રહેતે થે । વિશેષ વૃદ્ધ હોને કે કારણ હલન-ચલન આદિ
ક્રિયાઈં इनकी क्षीणप्राय हो चुकी थी । जंचा चल भी कम हो गया था ।
“मैं एक ही शिष्य करूंगा” ऐसी उनकी प्रतिज्ञा थी । उस के अनुसार
उन्होंने क्षुद्रमति नामक एक ही शिष्य किया था, और उसी के साथ वे
वहां रहा करते थे । शिष्य भी अपने गुरु महाराज की ठीक २ रीत से
वैयावृत्य किया करता था । वैयावृत्य करना यह एक तप है इसके प्रभाव
से प्राणी संसार समुद्र से पार हो जाता है । जन्म, मरण और जरा से
विमुक्त हो जाता है । अष्ट कर्मों का विनाश भी इस वैयावृत्य के बल
पर प्राणी कर देता है । इससे तीर्थकरनामगोत्र का उपार्जन भी करता है ।
शिष्य गुरु कर्मा था । इस लिये वैयावृत्य करने पर भी इसे बोध
का लाभ दुर्लभ हो रहा था । एक दिन शिष्य ने विचार किया कि हम
इनकी अब कयतक वैयावृत्य करते रहेंगे । यह तो बिलकुल स्थविर हो
चुके हैं । इन में तो अब इतनी भी शक्ति नहीं रही है जो ये यहां से

એક વિર્યોલ્લાસ નામના આચાર્ય પોતાના ક્ષુદ્રમતિ નામના શિષ્ય સાથે સ્થિર
વાસ રહેતા હતા. ખૂબ વૃદ્ધ થઈ જવાના કારણે હલન ચલન આદિ ક્રિયાઓ
તેઓ કરી શકતા નહીં. શરીરનું તેમજ બાંગોત્રું બળ પણ ક્ષિણ થઈ ગયું
હતું. “હું એકજ શિષ્ય કરીશ” એવી તેમની પ્રતિજ્ઞા હતી એ અનુસાર તેમણે
એક જ શિષ્ય કરેલ હતો. જેનું નામ ક્ષુદ્રમતિ હતું તે શિષ્યની સાથે તે
અંપાપુરીમાં રહેતા હતા. શિષ્ય પણ પોતાના ગુરુમહારાજની યોગ્ય રીતે આકરી
બરદાસ કરતો હતો. વૈયાવૃત્ય કરવું એ એક તપ છે. તેના પ્રભાવથી પ્રાણી
સંસાર સમુદ્રથી પાર થાય છે. જન્મ મરણ અને જરાથી વિમુક્ત થઈ બાકી છે.
આઠ કર્મોના વિનાશ પણ આ વૈયાવૃત્યના બળ ઉપર પ્રાણી પુરી દે છે. તેનાથી
તીર્થંકર નામ ગોત્રનું ઉપાર્જન પણ કરે છે. શિષ્ય ગુરુ કર્મી હતો. આ માટે
વૈયાવૃત્ય કરવા છતાં પણ એને બોધનો લાભ દુર્લભ થતો હતો. એક દિવસ
શિષ્યે વિચાર કર્યો કે, હું કયાં સુધી આમની સેવા આકરી કરતો રહીશ.
આ તો બીલકુલ સ્થવિર બની ગયા છે. એમનામાં એટલી પણ શક્તિ હવે

રસ્માભિર્ભવન્તઃ શિષ્યથ પીડનોયાઃ ? इति निवेद्य भक्तं प्रत्याख्याय स प्राणरहितो जातः । एवं क्षुद्रमतिशिष्यवत् साधुर्बुद्धोपघाती न भवेत् ॥ ૪૦ ॥

આચાર્યે કુપિતે શિષ્યકર્તવ્યમાહ—

મૂલમ્—આયરિયં કુવિયં નચ્ચા, પત્તિર્ણ પસાયેણ ।

विज्झविज्झ पंजलीउडो, वएज्ज नं पुंणुत्ति य ॥ ૪૧ ॥

છાયા—આચાર્ય કુપિતં જ્ઞાત્વા, પ્રીતિકેન પ્રસાદયેત્ ।

विध्यापयेत् प्राञ्जलिपुटः, वदेत् न पुनरिति च ॥ ૪૧ ॥

ટીકા—‘ આયરિયં ’ इत्यादि ।

શિષ્યઃ કેનચિત્ સ્વાપરાયેન આચાર્ય કુપિતમ્=અપરિતુષ્ટં જ્ઞાત્વા પ્રીતિકેન= પ્રીતિરેવ પ્રીતિકં તેન-પ્રીતિજનકેન વિનયભાવેન યદ્વા-‘પ્રતીતિકેન’ इतिच्छाया; પ્રતીતિકેન-વિશ્વાસજનકેન વાક્યેન તં પ્રસાદયેત્=પ્રસન્નં કુર્યાત્ । ‘ પ્રીતિકેન ’

कहाँ तक कष्ट दिया जाय, अतः यही सर्वसुंदर मार्ग है कि संलेखना धारण करली जाय । ऐसा कह कर उन्होंने भक्तप्रत्याख्यान कर दिया और कुछ समय के बाद वे समाधिमरण को प्राप्त कर अपना कल्याण किया । इस कथा से शिष्य को यह शिक्षा लेनी चाहिये कि क्षुद्रमति शिष्य की तरह वह गुरु महाराज का प्राणप्रहारी न बने ॥ ૪૦ ॥

આચાર્ય મહારાજ કે કુપિત હોને પર શિષ્ય કા કયા કર્તવ્ય હૈ સો કહતે હૈ—‘ આયરિયં ’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—शिष्य (कुवियं आयरियं नच्चा-कुपितं आचार्यं ज्ञात्वा । जय यह समझे कि आचार्य महाराज कुपित हैं उस समय वह (पत्ति-एण पसायए-प्रीतिकेन प्रसादयेत्) प्रीतिजनक-विनयभाव से अथवा

સર્વ સુંદર માર્ગ છે કે, સંલેખણા ધારણ કરી હૈ એવું કહીને તેઓએ ભક્ત-પ્રત્યાખ્યાન કરી લીધું અને થોડા સમય બાદ સમાધી મરણને પ્રાપ્ત કરી. પોતાનું કલ્યાણ કર્યું. આ કથાથી શિષ્યે એ શિક્ષા લેવી જોઈએ કે, ક્ષુદ્રમતિ શિષ્યની માફક તે પોતાના ગુરુ મહારાજના પ્રાણ હરનાર ન બને. ॥ ૪૦ ॥

આચાર્ય મહારાજના ક્રોધિત થવાથી શિષ્યનું શું કર્તવ્ય છે. તે કહેવામાં આવે છે.—આયરિયં-इत्यादि.

अन्वयार्थ—शिष्य कुवियं आयरियं नच्चा-कुपितं आचार्यं ज्ञात्वा न्याये એવું સમજે કે આચાર્ય મહારાજ કુપિત છે તે સમય તે પત્તિર્ણ પસાયે-પ્રીતિકેન પ્રસાદયેત્ પ્રીતિજનક-વિનય ભાવથી અથવા વિશ્વાસ જનક વાક્યથી તેને પ્રસન્ન

કિંતુ સંલેખનામેવ કર્તું વ્યવસ્યન્તિ । તતઃ શિષ્યવચનં નિશ્ચય શોકાર્ત્વચેતસઃ
 શ્રાવકાસ્તુપપ્સ્ય સગદ્ગદં વદન્તિ-ભગવન્ ! કથમત્ર ભવદ્ગિરકાલ એવ સંલેખના-
 વિધિરાશ્વઃ ? ન ચ વયં નિર્વેદહેતવઃ, इति मन्तव्यम् यतः शिरःस्थिता अपि
 ભવન્તો ન ભારમસ્માકં કુર્વન્તિ । इत्थं श्रावकाणां वचनं श्रुत्वाऽऽचार्येण विचारि-
 तम्—सर्वमेतच्छिष्यदुश्चरितम्-भलमस्य शिष्यस्यापीतिकरेण मम प्राणधारणेन,
 इति मनसि विचिन्त्य तेन श्रावकाणां शिष्यस्य च पुरस्तादुक्तम्-क्रियचिरमजह्रमै

અધિક સમય તક ટિકા રહે । इस लिये प्रणीत रस वाले भक्त पान को
 લેને કી વે અવ ચાહના હી નહીં કરતે હૈ, કિન્તુ સંલેખના ધારણ
 કરને કે લિયે ઉચત હો રહે હૈ, શ્રાવક જનોં ને જય શિષ્ય કે इन वचनों
 કો સુના તો વે બહુત શોકાર્ત્વ ચિત્ત હો ચિન્તિત હુપ્પ ઓર ગુરુ મહારાજ
 કે સમીપ પહુચ કર ગદ્ગદ વાણી સે કહને લગે કિ-મહારાજ ! अकाल
 મેં આપ સંલેખના ક્યોં ધારણ કર રહે હૈં ? हम लोग तो आपके लिये
 નિર્વેદ કે કારણ હૈં નહીં-हमारे तो आप माये पर भी बैठें तो भी आपका
 હમેં કોઈ ભાર નહીં લગ સકતા હૈ । आचार्य ने जब श्रावकों के इन
 વચનોં કો સુના તો વે વડે વિચાર મેં પડ ગયે ઓર મન મેં કહને લગે
 કિ यह सब करतूत हमारे शिष्य की है, मालूम पड़ता है इस को मैं
 વહુત ભારી હો રહા હું । इस प्रकार सोच समझकर आचार्य ने शिष्य
 एवं श्रावकों के समक्ष कहा कि महानुभाव ! अव हम से चलना फिरना
 યનતા નહીં હૈ, अतः ऐसी स्थिति में आप सब को एवं शिष्य को

રસવાળા ભક્ત પાનને લેવાની ચાહના હવે તેઓ કરતા નથી. પરંતુ સંલેખના
 ધારણ કરવામાં પ્રયત્નશીલ બની રહ્યા છે. શિષ્યનું આ કહેવું સાંભળી શ્રાવક-
 જનો ખૂબ શોકાતુર બન્યા અને ગુરુ મહારાજ પાસે જઈને ગદ્ગદ વાણીથી
 કહેવા લાગ્યા કે, મહારાજ ! અકાલમાં આપ સંલેખના કેમ ધારણ કરી રહ્યા
 છો ? અમે લોકો તો આપના માટે નિર્વેદના કોઈ કારણ નથી ? આપ અમારા
 માથા ઉપર બેસો તો પણ અમને આપનો કોઈ ભાર લાગતો નથી. આચાર્યે
 શ્રાવકોનું બ્યારે આ પ્રકારનું કહેવું સાંભળ્યું તો તે વિચારમાં પડી ગયા અને
 મનમાં કહેવા લાગ્યા કે, આ બધું કરતૂત મારા શિષ્યનું છે, એને હું ખૂબ ભાર
 રૂપ બની રહ્યો છું. આ પ્રકારનું સમજી વિચારીને આચાર્યે શિષ્ય તેમજ
 શ્રાવકોની સમક્ષ કહ્યું કે, મારાથી હાલીચાલી ચકાતું નથી, આથી આવી
 સ્થિતિમાં આપ બધાને તથા શિષ્યને કયાં સુધી કષ્ટ આપ્યાં કરું. આથી એજ

રસ્માભિર્ભવન્તઃ શિષ્યથ પીડનીયાઃ ? इति निवेद्य भक्तं प्रत्याख्याय स प्राणरहितो जातः । एवं क्षुद्रमतिशिष्यवत् साधुर्युद्धोपघाती न भवेत् ॥ ૪૦ ॥

આચાર્યે કુપિતે શિષ્યકર્તવ્યમાહ—

શ્લૂ—આચરિયં કુવિયં નચ્ચા, પત્તિર્ણ પસાયેણ ।

विज्झविज्झ पंजलीउडो, वएज्ज न पुंणुत्ति य ॥ ૪૧ ॥

છાયા—આચાર્ય કુપિતં જ્ઞાત્વા, પ્રીતિકેન પ્રસાદયેત ।

विध्यापयेत् प्राञ्जलिपुटः, वदेत् न पुनरिति च ॥ ૪૧ ॥

ટીકા—‘આચરિયં’ इत्यादि ।

શિષ્યઃ કેનચિત્ સ્વાપરાધેન આચાર્ય કુપિતમ્=અપરિતુષ્ટં જ્ઞાત્વા પ્રીતિકેન= પ્રીતિરેવ પ્રીતિકં તેન-પ્રીતિજનકેન વિનયભાવેન યદ્વા-‘પ્રતીતિકેન’ इतिच्छाया; પ્રતીતિકેન-વિશ્વાસજનકેન વાક્યેન તં પ્રસાદયેત્=પ્રસન્નં કુર્યાત્ । ‘પ્રીતિકેન’

કહાં તક કષ્ટ દિયા જાય, અતઃ યહી સર્વસુંદર માર્ગ હૈ કિ સંલેખના ધારણ કરલો જાય । એસા કહ કર ઉન્હોને ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કર દિયા ઓર કુછ સમય કે વાદ વે સમાધિમરણ કો પ્રાપ્ત કર અપના કલ્યાણ કિયા । હસ કથા સે શિષ્ય કો યહ શિક્ષા લેની ચાહિયે કિ ક્ષુદ્રમતિ શિષ્ય કી તરહ વહ ગુરુ મહારાજ કા પ્રાણપ્રહારી ન વને ॥૪૦॥

આચાર્ય મહારાજ કે કુપિત હોને પર શિષ્ય કા કયા કર્તવ્ય હૈ સો કહતે હૈ—‘આચરિયં’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—શિષ્ય (કુવિયં આચરિયં નચ્ચા-કુપિતં આચાર્ય જ્ઞાત્વા । જય યહ સમક્ષે કિ આચાર્ય મહારાજ કુપિત હૈ ઉસ સમય વહ (પત્તિ-ર્ણ પસાયે-પ્રીતિકેન પ્રસાદયેત્) પ્રીતિજનક-વિનયભાવ સે અથવા

સર્વ સુંદર માર્ગ છે કે, સંલેખના ધારણ કરી ક્ષેત્ર એવું કહીને તેઓએ ભક્ત-પ્રત્યાખ્યાન કરી લીધું અને થોડા સમય બાદ સમાધી મરણને પ્રાપ્ત કરી. પોતાનું કલ્યાણ કર્યું. આ કથાથી શિષ્યે એ શિક્ષા લેવી જોઈએ કે, ક્ષુદ્રમતિ શિષ્યની માફક તે પોતાના ગુરુ મહારાજના પ્રાણ હરનાર ન બને. ॥ ૪૦ ॥

આચાર્ય મહારાજના ક્રોધિત થવાથી શિષ્યનું શું કર્તવ્ય છે. તે કહેવામાં આવે છે.—આચરિયં-इत्यादि.

અન્વયાર્થ—શિષ્ય કુવિયં આચરિયં નચ્ચા-કુપિતં આચાર્ય જ્ઞાત્વા જ્યારે એવું સમજે કે આચાર્ય મહારાજ કુપિત છે તે સમય તે પત્તિર્ણ પસાયે-પ્રીતિકેન પ્રસાદયેત્ પ્રીતિજનક-વિનય ભાવથી અથવા વિશ્વાસ જનક વાક્યથી તેને પ્રસન્ન

इत्यत्र रूढ्या नपुंसकत्वम् । प्राञ्जलिपुटः=कृताञ्जलिः सन् विध्यापयेत्=कथंचित्पुत्त-
कोपवर्द्धिं प्रशमयेत् । च=पुनः 'न पुनरेवं करिष्यामि' 'क्षान्तव्योऽयमपराधः' इति
वदेत् । मानसिक-कायिक वाचिकोपायै गुरुः प्रसादनीय इति भावः ॥४१॥

अथ येन गुरोः कोप एव नोत्पद्येत तमुपायमाह—

मूलम्—धम्मज्जियं चं ववंहारं, बुद्धेहायंरियं सय्या ।

तंमांयरंतो ववंहारं, गरंहं नोभिगेच्छइ ॥४२॥

छाया—धर्माजितश्च व्यवहारः बुद्धेः आचरितः सदा ।

तमाचरन् व्यवहारं, गर्हां नाभिगच्छति ॥४२॥

टीका—'धम्मज्जियं' इत्यादि—

यत्तदોર્નિત્યસમ્યન્ધાદ્ યઃ ધર્માર્જિતઃ=ધર્મેણ ક્ષાન્ત્યાદિના અર્જિતઃ=ઉપા-
ર્જિતઃ, ચ=પુનઃ સદા=સર્વકાલં બુદ્ધેઃ=તત્ત્વવિદ્ધિઃ આચરિતઃ=સેવિતઃ, વ્યવહારઃ=
-વિશ્વાસજનક વાક્ય સે ડન્હે પ્રસન્ન કરે । ઓર (પંજલીડહો વિજ્ઞવિજ્ઞ
-પ્રાજ્ઞલિપુટઃ વિઃધ્યાપયેત્) ડોનોં હાથ જોડકર ડનકી કથંચિત્ ઉત્થિત
કોપાગ્નિ કો બુદ્ધાવે । ડસ સમય વહ ંસા (વણ્જ-વડેત્) કહે કિ (ન
પુણ્તિ ય-ન પુનરિતિ ચ) હે ગુરુ મહારાજ અવ ંસા વ્યવહાર નહીં કરને
કા ભાવ હૈ અતઃ અવ યહ મેરા અપરાધ આપ ક્ષમા કરેં । મન સે વચન સે
ંવં કાયા સે જૈસે ભી વને ડસ પ્રકાર કે ઉપાયોં સે ગુરુ મહારાજ કો
પ્રસન્ન કર લેના ડાહિયે ॥ ૪૧ ॥

અવ સૂત્રકાર 'ગુરુ મહારાજ કો કોપ હી ન ઉત્પન્ન હો સકે ંસા
ઉપાય વતલાતે હૈ—'ધમ્મજ્જિયં' ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—જો (ધમ્મજ્જિયં-ધર્માર્જિતઃ) ઉત્તમ ક્ષમા આદિ ધર્મોં

કરે. પંજલિહો વિજ્ઞ વિજ્ઞ-પ્રાજ્ઞલિપુટઃ વિધ્યાપયેત્ અને બન્ને હાથ જોડીને
તેમની કથંચિત્ ઉત્થિત કોપાગ્નિને શુભાવે. ં સમય તે ંવે પંજ-વડેત્ કહે કે,
ન પુણ્તિ ય-ન પુનરિતિ ચ હે ગુરુ મહારાજ હવે હું ંવું કદી નહીં કરું આથી
હવે આપ આ મારો અપરાધ ક્ષમા કરો. મન વચન અને કાયાથી ંવું પણ
બને ં પ્રકારના ઉપાયોથી ગુરુ મહારાજને પ્રસન્ન કરી લેવા જોઈ ં. ॥ ૪૧ ॥

હવે સૂત્રકાર 'ગુરુ મહારાજને કોપજ ન ઉત્પન્ન થાય' ંવો ઉપાય
બતાવે છે.—ધમ્મજ્જિયં' ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ં ધમ્મજ્જિયં-ધર્માર્જિતમ્ ઉત્તમ ક્ષમા આદિ ધર્મોંથી અર્જિત કર-

मोक्षार्थी कर्तव्यः प्रतिलेखनादिरूपः, अस्ति, तं व्यवहारम्-आचरन् साधुः, गहर्-
निन्दाम्-‘अविनीतोऽयम्’ इत्यादिरूपां नाभिगच्छति=न प्राप्नोति। एवं कृते गुरोः
कोपोत्पत्तिर्न भवतीति भावः।

‘धम्मज्जियं’ इत्यादी प्रथमार्थे द्वितीया आर्पत्वात्। ‘धम्मज्जियं’ इति
विशेषणं प्रतिलेखनादिव्यवहारस्य शास्त्रानुकूलतां दंभसंमानाद्यर्थं कृतव्यवहारस्य
परिहार्यतां च बोधयति। ‘बुद्धेहायरियं’ इति विशेषणं व्यवहारस्य शासनसंप्रदा-
यानुगतत्वं सूचयति ॥ ४२ ॥

मूलम्—मणोगयं ववैकगयं, जाणिंत्तारियस्स उ।

‘तं परिगिज्झ वार्याए, कम्मूणा उववायए ॥४३॥

के द्वारा अर्जित किया है, तथा (सया-सदा) सर्व काल (बुद्धेहायरियं-
बुद्धैः आचरितः) तीर्थंकर गणधारों के द्वारा आचरित-सेवित हुआ है
ऐसा यह (व्यवहारं-व्यवहारः) प्रतिलेखनादिरूप कर्तव्य है। (तं व्यवहारं
आचरन्तो-तं व्यवहारम् आचरन्) उस व्यवहार को अपने आचरण में
लाने वाला साधु (गरहं-गहर्) ‘यह अविनीत है’ इत्यादिरूप निन्दा को
(नाभिगच्छद्-नाभिगच्छति) प्राप्त नहीं करता है। “धम्मज्जियं” यह पद
यह सूचित करता है कि प्रतिलेखनादिरूप जो व्यवहार है वह शास्त्रानु-
कूल है, तथा दंभ एवं सम्मान आदि के निमित्त जो व्यवहार किया
जाता है वह परिहार्य है। “बुद्धेहायरियं” यह पद ‘यह व्यवहार तीर्थ-
कर एवं गणधारों की परंपरा से चला आ रहा है अतः प्रामाणिक हैं’
यह सूचित करता है ॥ ४२ ॥

વામાં આવેલ છે તથા સયા-સદા સર્વ કાળ બુદ્ધેહાયરિયં-બુદ્ધઃ આચરિતઃ તીર્થંકર
ગણધરોથી સેવિત થયેલ છે એવાં આ વ્યવહારં-વ્યવહારઃ પ્રતિલેખનાદિરૂપ કર્તવ્ય
છે. આ વ્યવહારને પોતાના આચરણમાં લાવનાર સાધુ ગરહં-ગહર્ ‘આઅવિનીત
છે’ ઇત્યાદિ રૂપ નિંદાને નાભિગચ્છદ્-નાભિગચ્છતિ પ્રાપ્ત કરતા નથી. ધમ્મજ્જિયં
આ પદથી એ સૂચિત થાય છે કે પ્રતિલેખનાદિક રૂપ જે વ્યવહાર છે તે શાસ્ત્રા-
નુકૂળ છે. તથા દંભ અને સમ્માન આદિ નિમિત્ત જે વ્યવહાર કરવામાં આવે
છે તે પરિહાર્ય છે “બુદ્ધેહાયરિયં” આ પદથી આ વ્યવહાર તીર્થંકર તેમજ
ગણધરોની પરંપરાથી આવ્યો આવે છે આથી તે પ્રમાણીક છે એવું સૂચિત
કરવામાં આવે છે. ॥ ૪૨ ॥

छाया—मनोगतं वाक्यगतं, ज्ञात्वा आचार्यस्य तु ।

तत् परिगृह्य वाचा, कर्मणा उपपादयेत् ॥४३॥

टीका—‘मणोगयं’ इत्यादि—

आचार्यस्य मनोगतं=मनसि वर्तमानं, तथा वाक्यगतं=वचसि स्थितं तु शब्दात् वाक्यगतमपि कार्यं पूर्वं ज्ञात्वा, पश्चात् तत्=कार्यं वाचा परिगृह्य=अङ्गीकृत्य, ‘अहमेतत् कार्यं करोमि’ इत्युक्त्वा शिष्यः कर्मणा=कापिवया क्रियया, उपपादयेत्=संपन्नं कुर्यात् । यत् कार्यं गुरोर्मनसि विद्यमानं, ‘कार्यमिदं क्रियताम्’ इत्यादिना वचसा वाऽभिहितं, गुरुणा क्रियमाणं वा यत् कार्यं तद् गुरुहस्तादुपादाय त्वरितमेव सुशिष्येण संपादनीयमिति भावः ॥४३॥

‘मणोगयं’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—(आयरियस्स मणोगयं वक्कगयं—आचार्यस्य मनोगतं वाक्यगतं) आचार्य महाराज के मनोगत एवं वाक्यगत “तु” शब्द से कायगत कार्य को (जाणिता-ज्ञात्वा) पहिले जानकर पश्चात् (तं-तत्) उस कार्य को (वायाए-वाचा) वाणी से (परिगिज्झ-परिगृह्य) अंगीकार कर के शिष्य (कम्मुणा-कर्मणा) कायसंबंधी क्रिया द्वारा (उववायए-उपपादयेत्) उस कार्य को कर देवे। जो कार्य गुरु के मन में स्थित हो-गुरु ने जिस कार्य को करने का विचार किया हो ‘इदं कार्यम् क्रियताम्’ यह काम करो’ इस प्रकार जिस कार्य को करने के लिये उन्होंने कहा हो, अथवा गुरु महाराज जिस कार्य को स्वयं अपने हाथ से कर रहे हों तो विनयी शिष्य का कर्तव्य है कि वह उस कार्य को शीघ्र ही स्वयं संपादित करे। और गुरु महाराज करते हों तो उनके हाथ से लेकर स्वयं करने लग जाय ॥ ४३ ॥

मणोगयं—इत्यादि.

अन्वयार्थ—आयरियस्स मनोगयं वक्कगयं—आचार्यस्य मनोगतं वाक्यगतं आचार्य महाराजना मनोगत् अने वाक्यगत “तु” शब्दधी कायगत कार्यने जाणिता-ज्ञात्वा पडेलां बाणीने पछीथी तं-तत् ते कार्यने वायाए-वाचा वाणीथी परिसिज्झ-परिगृह्य अंगिकार करीने शिष्य कम्मुणा-कर्मणा काय संबंधी क्रिया द्वारा उववाय-उपपादयेत् अे कार्य करी दे. जे कार्य गुरुना मनमां स्थित होय, गुरुअे जे कार्य करवाने विचार कर्यो होय, “आ काम करे.” आ प्रकार जे कार्यने करवा भाटे पोते पोताना हाथथी करी रखा होय तो विनयी शिष्यनुं कर्तव्य छे के अे ते कार्यने तुरत जे पोते उपाडी ले अने गुरु महाराज करता होय तो तेमना हाथमांथी लईने पोते करवा लग्गी जाय. ॥ ४३ ॥

मूलम्—वित्ते' अचोइए निच्चं, खिप्पं हवइ सुचोइए ।

जहोवइष्टं सुकयं, किच्चाइं कुव्वइं सयां ॥४४॥

छाया—वित्तः अनोदितः नित्यं, क्षिप्रं भवति सुनोदितः ।

यथोपदिष्टं सुकृतं, कृत्यानि करोति सदा ॥ ४४ ॥

टीका—' वित्ते ' इत्यादि—

वित्तः=विनयादिगुणेन प्रसिद्धः शिष्यः, अनोदितः=अप्रेरित एव गुरुकार्येषु नित्यं=सर्वदा, प्रवर्तते। कदाचित् स्वयमेव कार्यं कुर्वाणः सुनोदितः=गुरुणा सुष्ठु प्रेरितश्चेत् स विनयवान् शिष्यः क्षिप्रं=क्षिप्रकृद् शीघ्रमेव-कार्यकारी भवति। अयं भावः—कार्यं कुर्वन् आचार्येण प्रेरितश्चेद् एयं न व्रूते—'अहं तु कार्यं करोम्येव, किं

' वित्ते ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(वित्ते-वित्तः) विनय आदि गुणों से प्रसिद्ध शिष्य (अचोइए-अनोदितः) विना कहे ही-प्रेरणाकिये विना ही-अपने गुरु महाराज के कार्यों में (निच्चं-नित्यं) सर्वदा प्रवृत्ति शील रहा करता है। (सुचोइए-सुनोदितः) गुरु महाराज अपने कार्य को करने की प्रेरणा करें तो विनयवान् शिष्य का कर्तव्य है कि वह (खिप्पं हवइ-क्षिप्रं भवति) गुरु महाराज का कार्य यतनापूर्वक शीघ्र करे। ऐसा शिष्य गुरु महाराज जब कार्य करने के लिये कहते हैं तब ऐसा नहीं कहता है कि 'मैं तो कार्य कर ही रहा हूं आप क्यों कहते हैं'। वह तो (सया-सदा) सर्वदा जो कुछ भी करने को कहा जाता है उसे ही कहने के अनुसार (सुकयं-सुकृतं) जैसे वह अच्छी रीति से हो सकता है उसी

वित्ते इत्यादि—

अन्वयार्थ—वित्त-वित्तः विनय आदि गुणोत्थी प्रसिद्ध शिष्य अचोइए-अनोदितः कछा पगर प्रेरणा कर्था पगर-पोताना गुरु भट्टाराजना कार्योभां निच्चं-नित्यं सदा सर्वदा प्रवृत्तिशील रह्या करे छे। सुचोइए-सुनोदितः गुरु भट्टाराज पोतानुं कार्य करवा भाटे प्रेरणा करे तो विनयवान शिष्यनुं कर्तव्य छे के ते खिप्पं हवइ-क्षिप्रं भवति गुरु भट्टाराजना ते कार्यने यतनापूर्वक तुरत न करवा भांडे। विनयी शिष्य गुरु भट्टाराजना तरस्थी काम भाटेनुं सूचन यतां येवुं कदी पणु कहेतो नथी के, हुं काम तो करी रह्यो छुं, आप शा भाटे कहे छे। ते तो सया-सदा सर्वदा येने जे कार्य कहेवाभां आवे ते काम ते कहेवा अनु-सार सुकयं-सुकृतं जेम ते सारी रीते थर् थके ये रीते किच्चाइं कुव्वइ-कृत्यानि

भवद्भिः प्रलप्पते?’ इति। यद्योपदिष्टम्=उपदिष्टमनतिक्रम्य सर्वमुपदिष्टं कार्यं, सुकृतं =सुष्ठु कृतं, यथा स्यात्, तथा कार्याणि=सर्वाणि गुरुकार्याणि, सदा=सर्वकालं, करोति=संपादयति। गुरुकार्येष्वालस्यं न विधेयं प्रसन्नभावेन तदेव कार्यं सत्वरं करणीयमिति भावः॥ ४४ ॥

अध्ययनार्थमुपसंहरन्नाह—

मूलम्—नच्चा नमइ मेहावी, लोए किंતી સેં જાયંણ ।

હવેંઈં કિર્ચાણ સંરણં, મૂયાંણં જગંઈં જહો ॥૪૫॥

છાયા—જ્ઞાત્વા નમતિ મેધાવી, લોકે કીર્તિસ્તસ્ય જાયતે ।

भवति कृत्यानां शरणं, भूतानां जगती यथा ॥ ४५ ॥

ટીકા—‘નચ્ચા’ ઇત્યાદિ—

મેધાવી=મર્યાદાવર્તી શિષ્યઃ, જ્ઞાત્વા=અનન્તરોક્તં સર્વમધ્યયનાર્થમવગમ્ય, નમતિ=નમ્રીભવતિ વિનયવાન ભવતીત્યર્થઃ, સ્વકર્તવ્યકરણં પ્રતિ સાદરમુદ્યતો ભવતીતિ યાવત્ । વિનયસ્ય ફલમાહ—‘લોએ’ ઇત્યાદિ । લોકે તસ્ય કીર્તિઃ—

રીતિ કે માફિક (કિચ્ચાઈં કુવ્વઈ—કૃત્યાનિ કરોતિ) ડન સવ કાર્યોં કોં સુસંપાદિત કરતા હૈ । ગુરુ મહારાજ કે કાર્યોં મેં કમ્મી મ્મી આલસ્ય નહીં કરનાં ચાહિયે પ્રત્યુત પ્રસન્નચિત્ત સે જો કુછ મ્મી કરને કો કહા જાય વહ શીઘ્ર હી કર દેના ચાહિયે ॥ ૪૪ ॥

અથ અધ્યયન કે અર્થ કા ઉપસંહાર કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—
‘નચ્ચા’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(મેહાવી-મેધાવી) મર્યાદાવર્તી શિષ્ય (નચ્ચા-જ્ઞાત્વા) અનન્તરોક્ત ઇસ સમસ્ત અધ્યયન કે અર્થ કો જાનકર (નમઈ-નમતિ) અવશ્ય વિનયી હોતા હૈ । અર્થાત્ અપને કર્તવ્ય કો નિભાને કે લિયે સાદર ઉદ્યત હો જાતા હૈ । (સે લોએ કિંતી જાયંણ—તસ્ય લોકે કીર્તિઃ

કરોતિ તે બધાં કામો સારીરીતે કરતો રહે છે. ગુરુ મહારાજના કામોમાં કદી પણ આળસ શિષ્યે ન કરવી બોધ્યો. જે કાંઈ કરવાનું કહેવામાં આવે તે પ્રસન્ન ચિત્તે શીઘ્ર કરી દેવું બોધ્યો. ॥ ૪૪ ॥

હવે અધ્યયનના અર્થને ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે—નચ્ચા ઇત્યાદિ—
અન્વયાર્થ—મેહાવી-મેધાવીમર્યાદાવર્તી શિષ્ય નચ્ચા-જ્ઞાત્વા અનન્તરોક્ત આ સમસ્ત અધ્યયનના અર્થને બાંધીને નમઈ-નમતિ અવશ્ય વિનયી બને છે. અર્થાત્ પોતાના કર્તવ્યને નિભાવવા માટે સાદર ઉદ્યત રહે છે. સે લોએ કિંતી

‘અનેન સફલીકૃતં જન્મ, છિન્નં ચ દુઃષ્ટેયં કર્મવન્ધનં નિસ્તીર્ણથ દુસ્તરઃ સંસાર-સાગરઃ’ ઇત્યાદિરૂપા, જાયતે=પ્રાદુર્ભવતિ, અપિ ચ-સ કૃત્યાનાં=આચાર્યાણાં શરણમ્=આશ્રયો ભવતિ, યથા જગતી=પૃથિવી, ભૂતાનાં=પ્રાણિનાં શરણમ્=આધારો-ઽસ્તિ વદત્ ॥ ૪૫ ॥

મૂલમ્—પુજ્ઞા જસંસ પસીયંતિ, સંવુદ્ધા પુર્વસંશુયા ।

પસન્ના લાભઈસંસંતિ, વિઝંલં અઢિયં સુયમ્ ॥૪૬॥

છાયા—પૂજ્યા યસ્ય પ્રસીદન્તિ, સંવુદ્ધાઃ પૂર્વસંસ્તુતાઃ ।

પસન્ના લાભયિપ્યન્તિ, વિપુલમ્ આર્થિકં શ્રુતમ્ ॥ ૪૬ ॥

ટોકા—‘પુજ્ઞા’ ઇત્યાદિ—

સંવુદ્ધાઃ=સમ્યગ્જ્ઞાનવન્તઃ, પૂર્વસંસ્તુતાઃ=પૂર્વ સમ્યક્ પ્રકારેણ સ્તુતાઃ, શ્રુતદા-

જાયતે) જો સાધુ અપને કર્તવ્ય કો નિમાતા હૈં ઉસકા ઉસે યહ ફલ મિલતા હૈં કિ ઉસકી કીર્તિ હિસ લોક મેં ફેલ જાતી હૈં । લોગ કહને લગ જાતે હૈં કિ હિસને અપને જન્મ કો સફલ બના લિયા હૈં । દુઃષ્ટેય કર્મવન્ધન હિસને હેદ ઢાલા હૈં । દુસ્તર સંસાર સાગર હિસને પાર કર લિયા હૈં । (જહા-યથા) જૈસે-(જગઈ-જગતી) પૃથિવી (ભૂયાણં સરણં હવઈ-ભૂતાનાં શરણં ભવતિ) પ્રાણિયોં કે લિયે આધારભૂત હોતી હૈં, હિસી તરહ વહ શિષ્ય ભી (કિચ્ચાણ સરણં હવઈ-કૃત્યાનાં શરણં ભવતિ) અપને આચાર્ય મહારાજ કા આધાર બન જાતા હૈં ॥ ૪૫ ॥

‘પુજ્ઞા’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(સંવુદ્ધા-સંવુદ્ધાઃ) પહિલે-શ્રુતદાન કે પહિલે હી વિનય-

લોકે કોર્તિઃ જાયતે જે સાધુ પોતાના કર્તવ્યને નિભાવે છે એને તેણે એ ક્ષણ મળે છે કે, તેમની કિર્તિ આ લોકમાં ફેલાઈ જાય છે, લોકો કહેવા લાગે છે કે, આણે પોતાના જન્મને સફળ બનાવી લીધો છે. કર્મના બંધનને એણે તોડી નાખ્યાં છે, દુસ્તર સંસાર સાગર એણે પાર કરી લીધો છે. જહા-યથા જેમ-જગઈ-જગતી પૃથ્વી ભૂયાણં સરણં હવઈ-ભૂતાનાં શરણં ભવતિ પ્રાણીઓને માટે આધારભૂત હોય છે, એજ રીતે તે શિષ્ય પણ પોતાના આચાર્ય મહારાજને આશ્રય બની જાય છે. ॥ ૪૫ ॥

પુજ્ઞા-ઇત્યાદિ—

અન્વયાર્થ—સંવુદ્ધા-સંવુદ્ધાઃ પહેલાં શ્રુતદાનના પહેલાં-વિનયશુભ્રથી

भवद्भिः प्रलप्सते?' इति। यथोपदिष्टम्=उपदिष्टमनतिक्रम्य सर्वमुपदिष्टं कार्यं, मुकृतं=मुण्ड कृतं, यथा स्यात्, तथा कार्याणि=सर्वाणि गुरुकार्याणि, सदा=सर्वकालं, करोति=संपादयति। गुरुकार्येष्वालस्यं न विधेयं प्रसन्नभावेन तदेव कार्यं सत्त्वं करणीयमिति भावः॥ ४४ ॥

अध्ययनार्थमुपसंहरन्नाह—

मूलम्—नच्चा नमइ मेहावी, लोए किंती से जायए ।

हवइ किच्चाण संरण, भूयाणं जगई जहाँ ॥ ४૫ ॥

छाया—જ્ઞાત્વા નમતિ મેઘાવી, લોકે કીર્તિસ્તસ્ય જાયતે ।

भवति कृत्यानां शरणं, भूतानां जगती यथा ॥ ४૫ ॥

टीका—‘नच्चा’ इत्यादि—

મેઘાવી=મર્યાદાવર્તી શિષ્યઃ, જ્ઞાત્વા=અનન્તરોક્તં સર્વમધ્યયનાર્થમવગમ્ય, નમતિ=નમ્રીભવતિ વિનયવાન્ ભવતીત્યર્થઃ, સ્વકર્તવ્યકરણં પ્રતિ સાદરમુદ્યતો ભવતીતિ યાવત્ । વિનયસ્ય ફલમાહ—‘લોએ’ ઇત્યાદિ । લોકે તસ્ય કીર્તિઃ—

રીતિ કે માફિક (કિચ્ચાઈ કુબ્વઈ-કૃત્યાનિ કરોતિ) ડન સઘ કાર્યો કો મુસંપાદિત કરતા હૈ । ગુરુ મહારાજ કે કાર્યો મેં કમી મી આલસ્ય નહીં કરના યાહિયે પ્રત્યુત પ્રસન્નચિત્ત સે જો કુછ મી કરને કો કહા જાય વહ શીઘ્ર હી કર દેના યાહિયે ॥ ૪૪ ॥

અય અધ્યયન કે અર્થ કા ઉપસંહાર કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—
‘નચ્ચા’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(મેઘાવી-મેઘાવી) મર્યાદાવર્તી શિષ્ય (નચ્ચા-જ્ઞાત્વા) અનન્તરોક્ત ઇસ સમસ્ત અધ્યયન કે અર્થ કો જાનકર (નમઈ-નમતિ) અવશ્ય વિનયી હોતા હૈ । અર્થાત્ અપને કર્તવ્ય કો નિભાને કે લિયે સાદર ઉદ્યત હો જાતા હૈ । (સે લોએ કિત્તી જાયએ-તસ્ય લોકે કીર્તિઃ

કરોતિ તે બધાં કામે સારીરીતે કરતો રહે છે. ગુરુ મહારાજના કામેમાં કદી પણ આળસ શિષ્યે ન કરવી બેઠીએ. જે કાંઈ કરવાનું કહેવામાં આવે તે પ્રસન્ન ચિત્તે શીઘ્ર કરી દેવું બેઠીએ. ॥ ૪૪ ॥

હવે અધ્યયનના અર્થનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે—નચ્ચા ઇત્યાદિ—

અન્વયાર્થ—મેઘાવી-મેઘાવીમર્યાદાવર્તી શિષ્ય નચ્ચા-જ્ઞાત્વા અનન્તરોક્ત આ સમસ્ત અધ્યયનના અર્થને બાણીને નમઈ-નમતિ અવશ્ય વિનયી બને છે. અર્થાત્ પોતાના કર્તવ્યને નિભાવવા માટે સાદર ઉદ્યત રહે છે. સે લોએ કિત્તિ જાયએ-તસ્ય

‘એને સફલીકૃતં જન્મ, છિન્નં ચ દુશ્ચેદ્યં કર્મવન્ધનં નિસ્તીર્ણથ દુસ્તરઃ સંસાર-સાગરઃ’ इत्यादिरूपा, जायते=पादुर्भवति, अपि च-स कृत्यानां=आचार्याणां शरणम्=आश्रयो भवति, यथा जगती=पृथिवी, भूतानां=प्राणिनां शरणम्=आधारोऽस्ति तद्वत् ॥ ४५ ॥

મૂલમ્—પુજ્ઞાં જર્સં પસીયંતિ, સંવુદ્ધા પુર્વસંશુયા ।

પસન્નાં લાભઈંસંતિ, વિઝંલં અટ્ટિયં સુર્યમ્ ॥૪૬॥

છાયા—પૂજ્યા यस्य प्रसीदन्ति, संवुद्धाः पूर्वसंस्तुताः ।

પસન્ના લાભયિપ્યન્તિ, વિપુલમ્ આર્થિકં શ્રુતમ્ ॥ ૪૬ ॥

ટીકા—‘પુજ્ઞા’ इत्यादि—

સંવુદ્ધાઃ=સમ્યગ્જ્ઞાનવન્તઃ, પૂર્વસંસ્તુતાઃ=પૂર્વ સમ્યક્ પ્રકારેણ સ્તુતાઃ, શ્રુતદા-

जायते) जो साधु अपने कर्तव्य को निभाता है उसका उसे यह फल मिलता है कि उसकी कीर्ति इस लोक में फैल जाती है । लोग कहने लग जाते हैं कि इसने अपने जन्म को सफल बना लिया है । दुश्चेद्य कर्मवन्धन इसने छेद डाला है । दुस्तर संसार सागर इसने पार कर लिया है । (जहा-यथा) जैसे-(जगई-जगती) पृथिवी (भूयाणं सरणं हवइ-भूतानां शरणं भवति) प्राणियों के लिये आधारभूत होती है, इसी तरह वह शिष्य भी (किञ्चाण सरणं हवइ-कृत्यानां शरणं भवति) अपने आचार्य महाराज का आधार बन जाता है ॥ ४५ ॥

‘પુજ્ઞા’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(સંવુદ્ધા-સંવુદ્ધાઃ) પહિલે-શ્રુતદાન કે પહિલે હી વિનય-

લોકે કોર્તિઃ જાયતે જે સાધુ પોતાના કર્તવ્યને નિભાવે છે એને તેનું એ ફળ મળે છે કે, તેમની કિર્તી આ લોકમાં ફેલાઈ બાધ છે, લોકો કહેવા લાગે છે કે, આણે પોતાના જન્મને સફળ બનાવી લીધો છે. કર્મના બંધનને એણે તોડી નાખ્યાં છે, દુસ્તર સંસાર સાગર એણે પાર કરી લીધો છે. જહા-યથા જેમ-જગઈ-જગતી પૃથ્વી ભૂયાણં સરણં હવઈ-ભૂતામાં શરણં ભવતિ પ્રાણીઓને માટે આધારભૂત હોય છે, એજ રીતે તે શિષ્ય પણ પોતાના આચાર્ય મહારાજનો આશ્રય બની બાધ છે. ॥ ૪૫ ॥

પુજ્ઞા-इत्यादि—

અન્વયાર્થ—સંવુદ્ધા-સંવુદ્ધાઃ પહેલાં શ્રુતદાનના પહેલાં-વિનયગુણથી

કાર્યે રુચિરિચ્છા યસ્ય સ મનોરુચિઃ—ગુરુમનોઽનુવર્તી ન તુ સ્વેચ્છાચારી તિષ્ઠતિ= આસ્તે તથા-તપઃસમાચારીસમાધિસંવૃતઃ—તપસોઽનશનાદેર્દ્રાદશવિધસ્ય સમાચારી ચ સમાધિથ તપઃસમાચારીસમાધી, તામ્યાં સંવૃતઃ=નિરુદ્ધાસ્રવઃ, પચ્ચ વ્રતાનિ=પ્રાણાતિપાતવિરમણાદીનિ પચ્ચમહાવ્રતાનિ પાલયિત્વા=નિરતિચારં સમારાધ્ય મહાદ્યુતિઃ=મહતી દ્યુતિ યસ્ય સ મહાદ્યુતિઃ=તપસ્તેજઃસમન્વિતઃ, તેજોલેશ્યાપુલાકલઙ્ઘ્યાદિ સહિતો ભવતીત્યર્થઃ ॥ ૪૭ ॥

કાર્ય કો સંપાદન કરને કી જિસકી ઇચ્છા યની રહતી હૈ—ગુરુ મહારાજ કી ઇચ્છાનુસાર ચલને વાલા, સ્વેચ્છાચારી નહીં । એવં (તવોસમાચારિસમાહિસંવુદે-તપઃસમાચારીસમાધિસંવૃતઃ) અનશન આદિ બારહ પ્રકાર કે તપ કે અનુષ્ઠાન સે, તથા ચિત્તકી શુદ્ધિરૂપ સમાધિ સે જિસને આસ્રવ કે દ્વારકો નિરુદ્ધ કર દિયા હૈ (પંચવયાઈ પાલિયા-પંચવ્રતાનિ પાલયિત્વા) પાંચ પ્રાણાતિપાતચિરમણ આદિ મહાવ્રતોં કા નિરતિચાર પાલન કરકે (મહજ્જુઈ ચિદૃઢ-મહાદ્યુતિઃ તિષ્ઠતિ) તપસ્તેજ સે સમન્વિત હોતા હુઆ તેજોલેશ્યા એવંપુલાકલઙ્ઘિ આદિ સે સહિત હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—ગુરુ મહારાજ કે પ્રસાદ સે જિસને શ્રુતજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ એસા શિષ્ય શાસ્ત્રસંમત અર્થ મેં વિગતસંશયહોકર જનતા દ્વારા પ્રસંશનીયજ્ઞાનવાલા માના જાતા હૈ । ઉસકે વચન કો જનતા નિસ્સંદેહ અંગીકાર કર લેનેમેં નિસ્સંકોચિત હો જાતી હૈ । ઉસકી વિનયાદિ

પોતાનો ગુરુ મહારાજના મનોનુકૂળ કાર્ય સંપાદન કરવાની ઇચ્છા બેની બની રહે છે. એવા ગુરુ મહારાજની ઇચ્છાનુસાર ચાલવાવાળા સ્વેચ્છાચારી નહિં એવા શિષ્ય કે જેણે તવોસમાચારિસમાહિસંવુદે-તપઃ સમાચારીસમાધિસંવૃતઃ અનશન આદિ બાર પ્રકારનાતપના અનુષ્ઠાનથી તથા ચિત્તની શુદ્ધિરૂપ સમાધીથી જેણે આસ્રવના દ્વારને નિરુદ્ધ કરી લીધાં છે, પંચવયાઈ પાલિયા-પંચવ્રતાનિ પાલયિત્વા પંચ પ્રણાતિપાત વિરમણ આદિ મહાવ્રતોને નિરતિચાર પાલન કરી મહજ્જુઈ ચિદૃઢ-મહાદ્યુતિઃ તિષ્ઠતિ તપસ્તેજથી સમન્વિત થઈ તેણે લેશ્યા એવં પુલાકલઙ્ઘિ આદિથી સહિત બને છે.

ભાવાર્થ—ગુરુ મહારાજના પ્રસાદથી શ્રુતજ્ઞાન જેણે પ્રાપ્ત કરી લીધું છે એવા શિષ્ય શાસ્ત્રીય સંમત અર્થમાં વિગતસંશય બનીને જનતા દ્વારા પ્રસંશનીય જ્ઞાનવાળા માનવામાં આવે છે. એવા વચનને જનતા નિઃસંદેહ અંગીકાર કરવામાં સંકેતરહિત બની બાય છે. એની ક્રિયા-સંપત્તિથી ગુરુ મહારાજ

મૂલમ્—સ દેવગંધર્વમણુસ્સપૂઙ્ગ, ચઈત્તુ દેહં મલપંકપૂઙ્ગયં ।
સિદ્ધે વા હવંઙ સાસં, દેવે^૩વાં અપ્પરં મહિદ્ધિં^૪—ત્તિ^૫વેમિ^૬ ॥૪૮॥

[સ સિદ્ધ વા હવં ય સાસં, મુરેય વા અપ્પરં મહિદ્ધિં એ—ત્તિવેમિ]

॥ ઉત્તરજ્ઞયણસ્સ પઢમજ્ઞયણં સમત્તં ॥

છાયા—સ દેવ ગન્ધર્વમણુપ્યૂજિતઃ, ત્યક્ત્વા દેહં મલપદ્મપૂતિકમ્ ।

સિદ્ધો વા ભવતિ શાશ્વતઃ, દેવો વા અલ્પરજા મહર્દિક્કિં^૭ ઇતિ વ્રવીમિ ॥૪૮॥

[સ સિદ્ધો વા ભવતિ ચ શાશ્વતઃ, મુરથ વા અલ્પરજા મહર્દિક્કિઃ—ઇતિ વ્રવીમિ]

ટીકા—‘સ દેવગંધર્વ’^૮’ ઇત્યાદિ—

સઃ=પૂર્વોક્તલક્ષણવિશિષ્ટો વિનયવાન્ શિષ્યઃ, ઇહ લોકે દેવગન્ધર્વમણુપ્ય-
પૂજિતઃ=દેવૈઃ=વૈમાનિક જ્યોતિષ્કૈઃ, ગન્ધર્વૈઃ—ગન્ધર્વનિકાયો—પલક્ષિતૈર્વ્યન્તરભ-
વનપતિભિઃ, મણુપ્યૈઃ=ચક્રવર્ત્યાદિભિઃ પૂજિતઃ સંમાનિતો ભવતિ । યથા મલપદ્મપૂ-
તિકં=મલં=વિષ્ણુનાદિકં, તદેવ પદ્મઃકર્દમસ્તેન પૂતિકં=દુર્ગન્ધિયુક્તદેહમ્=ઔદારિકં

ક્રિયાસંપત્તિ સે ગુરુ મહારાજ ઉસ પર સદા પ્રસન્ન રહા કરતે હૈં । દ્વાદશ
પ્રકાર કી તપસ્યા સે વહ કર્મોં કે આશ્રવ કો રોકને વાલા હો જાતા હૈ ।
પાંચ મહાવ્રતોં કી આરાધના સે ઉસકા આત્મિક બલ વિશિષ્ટ હોકર
ઉસકો તપસ્તેજ કી લબ્ધિ સે સંપન્ન બના દેતા હૈ ॥ ૪૭ ॥

‘સદેવ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(સ-સઃ) પૂર્વોક્ત લક્ષણોં સે વિશિષ્ટ વિનયશાલી શિષ્ય
(દેવગંધર્વમણુસ્સપૂઙ્ગ—દેવગંધર્વમણુપ્ય પૂજિતઃ) દેવ વૈમાનિક જ્યોતિષ્ક
દેવોં સે ગંધર્વ—ગંધર્વનિકાય સે ઉપલક્ષિત વ્યન્તર દેવોં સે, એવં ભવનપતિ-
દેવોં સે, તથા મણુપ્યોં—ચક્રવર્તી આદિ સે પૂજિત હોતા હૈ । તથા (મલપં-

એના પર સદા પ્રસન્ન રહ્યા કરે છે બાર પ્રકારની તપસ્યાથી તે કર્મના
આશ્રવને રોકનાર બની બાચ છે. અને પાંચ મહાવ્રતોની આરાધનાથી એનું
આત્મિક બલ વિશિષ્ટ બને છે. અને આથી તેને તપસ્તેજની લબ્ધિ સંપન્ન
બનાવે છે. ॥ ૪૭ ॥

“સ દેવ” ઇત્યાદિ—

અન્વયાર્થ—સ-સઃ પૂર્વોક્ત લક્ષણની વિશિષ્ટ વિનયશાળી શિષ્ય દેવ ગંધર્વ-
મણુસ્સપૂઙ્ગ—દેવ ગંધર્વ મણુપ્ય પૂજિતઃ દેવ—વૈમાનિક જ્યોતિષ્ક દેવો, ગંધર્વ—ગંધર્વ
નિકાયથી ઉપલક્ષિત વ્યન્તર દેવ એવે ભવનપતિ દેવો તથા મણુપ્યો—ચક્રવર્તી
આદિથી પૂજીત બને છે. તથા મલપંક પૂઙ્ગ દેહં ચઈત્તુ—મલપંકપૂતિકં દેહં ત્યક્ત્વા

મનુષ્યશરીરં, ત્યક્ત્વા, શાશ્વતઃ=સર્વકાલાવસ્થાયી જન્મમરણરહિતઃ સિદ્ધો ભવતિ ।
 વા=અથવા, સાવશેષકર્મા તુ અલ્પરજાઃ=અલ્પકર્મા મહર્દિકઃ=મહતી=દિવ્યા ઋદ્ધિઃ=
 વિમાનાદિસમ્પત્તિ, ઉપલક્ષણેન દિવ્યાનિ યુતિયશોર્વણચલવીર્યાદીનિ ચ यस્ય સ
 મહર્દિકઃ, તત્ર=યુતિઃ-શરીરાભરણકાન્તિઃ, યશઃ=કીર્તિઃ, વર્ણઃ=શુભ્રાદિઃ, ચલં=
 શારીરિકપરાક્રમઃ, વીર્યમ્=આત્મચલમ્, આદિપદેન-ઇતોઽન્યદપિ સંગ્રાહમ્, ણ્મિઃ
 સંપન્નાઃ, દેવો ભવતિ ।

કપૂર્યં દેહં ચૈત્તુ-મલપંકપૂતિકં દેહં ત્યક્ત્વા) શુક્રશોણિત સે જન્ય્ ઇસ
 ઔદારિક શરીર કા પરિત્યાગ કર (સાસણ સિદ્ધે હવઈ-શાશ્વતઃ સિદ્ધો
 વા ભવતિ) અનંત કાલ તક સદા સિદ્ધિ સ્થાન મેં રહને ચાલા સિદ્ધ
 પરમાત્મા હો જાતા હૈ । (વા) અથવા યદિ વહ સિદ્ધ નહોં બને તો
 (અપ્પરેમહિદ્ધિદેવ દેવે વા હવઈ-અલ્પરજાઃ મહર્દિકઃ દેવો વા ભવતિ)
 અલ્પકર્મા મહર્દિક દેવ હો જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ — પૂર્વોક્તલક્ષણવિશિષ્ટ વિનીત શિષ્ય દેવાદિક દ્વારા
 પૂજ્ય હોતા હૈ, એવં ઇસ અપવિત્ર ઔદારિક શરીર કા પરિત્યાગ કર
 સિદ્ધ હો જાતા હૈ । યદિ કર્મ શેષ રહ જાય તો વહ મહાઋદ્ધિશાલી દેવ
 હોતા હૈ । યહાં ઋદ્ધિસે યુતિ, યશ, વર્ણ, ચલ, વીર્ય ઇન સવકા
 ગ્રહણ હુવા હૈ । વિમાન આદિ સંપત્તિ કા નામ ઋદ્ધિ હૈ । શરીર એવં
 આભરણ કી કાન્તિ કા નામ યુતિ હૈ । કીર્તિ કા નામ યશ હૈ । શરીર
 કા જો શુકલ આદિ વર્ણ હૈ — ઉસકા નામ વર્ણ હૈ । શારીરિક
 પરાક્રમ કા નામ ચલ એવં આત્મજન્ય શક્તિ કા નામ વીર્ય હૈ ।

શુક શોણિત જન્ય આ ઔદારિક શરીરનો પરિત્યાગ કરી સાસણ સિદ્ધે હવઈ-
 શાશ્વતઃ સિદ્ધો ભવતિ અનન્તકાળ સુધી સદા સિદ્ધિ સ્થાનમાં રહેવાવાળા સિદ્ધ
 પરમાત્મા બની જાય છે. વા અથવા જો તે સિદ્ધ ન બને તો, અલ્પકર્મા મહ-
 ર્દિક દેવ બની જાય છે.

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત લક્ષણવિશિષ્ટ વિનીત શિષ્ય દેવાદિક દ્વારા પૂજ્ય બને
 છે. અને આ અપવિત્ર ઔદારિક શરીરનો પરિત્યાગ કરી કાં તો સિદ્ધ બની
 જાય છે. જો કર્મ શેષ રહી જાય તો તે મહાઋદ્ધિ શાળી દેવ બને છે. ઋદ્ધિથી
 યુતિ, યશ, વર્ણ, બળ, વીર્ય, આ બધાનું ગાથામાં ગ્રહણ કરેલ છે, વિમાન
 આદિ સંપત્તિનું નામ ઋદ્ધિ છે. શરીર અને આભરણની કાન્તિનું નામ
 યુતિ છે, કીર્તિનું નામ યશ છે. શરીરનો જે શુકલ આદિ વર્ણ છે-દ્રવ્ય લેશ્યા
 છે-એનું નામ વર્ણ છે. શારીરિક પ્રક્રમનું નામ બળ છે. અને

इति शब्दः समाप्तिबोधकः, अथवा 'इति' एवम्-अमुना प्रकारेण एतद् विनयश्रुताख्यमध्ययनं ब्रवीमि यथा भगवता कथितं तथा कथयामि न तु स्वबुद्ध्या परिकल्प्य किंचिद् ब्रवीमीत्यर्थः ॥ ४८ ॥

इति श्रीविश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितललितकलापालापक-प्रवि-शुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्माय-
कवादमानमर्दक-श्रीशाहूछत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त-
“ जैनशास्त्राचार्य ”-पदभूषित-कोल्हापुर-राजगुरु-
पालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-
श्रीधासीलालव्रतिविरचितायां श्रीमदुत्तराध्ययन-
मूत्रस्य प्रियदर्शिन्याख्यायां व्याख्यायां
विनयसमाधिनामकं प्रथममध्ययनं
संपूर्णम् ॥ १ ॥



(‘તિવેમિ’-‘इति ब्रवीमि’) यह पद अध्ययनकी समाप्ति का सूचक है, इसका यह अर्थ है कि-श्री सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामी से कहते हैं कि हे जम्बू! यह विनयश्रुत नाम का अध्ययन जैसा भगवान से सुना है उसी तरह का मैंने कहा है। इस में अपनी बुद्धि से कल्पित कुछ नहीं कहा गया है ॥ ४८ ॥

विनयश्रुतनामक प्रथम अध्ययन सम्पूर्ण ॥ १ ॥



શક્તિનું નામ વીધું છે. “તિવેમિ” ‘इति ब्रवीमि’ આ પદ અધ્યયનની સમાપ્તિનું સૂચક છે તેનો અર્થ આ છે કે-શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે હે જમ્બૂ! આ વિનયશ્રુત નામનું અધ્યયન જેવું ભગવાનથી સાંભળ્યું છે તેજ પ્રકારે મેં કહ્યું છે. આમાં પોતાની બુદ્ધિથી કલ્પિત કંઈ નથી કહ્યું. ॥ ૪૮ ॥
॥ આ વિનયશ્રુત નામનું પ્રથમ અધ્યયન સંપૂર્ણ ॥ ૧ ॥



દ્વિતીયાધ્યયનમ્ ।

વિનયશ્રુતાત્મ્યં પ્રથમમધ્યયનં વર્ણિતમ્, હ્દાનીં દ્વિતીયમધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે ।
 અસ્ય ચાયમભિસમ્બન્ધઃ—હ્દાનન્તરાધ્યયને વિનયઃ સવિસ્તરં વર્ણિતઃ, સ ચાનુકૂલપ્ર-
 તિકૂલપરીપદજયનશીલૈરેવ કર્તું શક્યતે इति દ્વિતીયં પરીપદાત્મ્યમધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે—
 યદ્વા—વિનયારાધકાઃ પ્રાયઃ પરીપદમાજો ભવન્ત્યેવેતિ દ્વિતીયં પરીપદાત્મ્ય-
 મધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે, તસ્યેદમાદ્યં સૂત્રમ્—

મૂલમ્—સુયં મે આડસં ! તેણં ભગવયા એવમક્લાયં—ઈહ
 खलु वावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं
 पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खा-
 यरियाए परिव्वयंतो पुट्ठो नो विनिहन्नेज्जा ॥१॥

છાયા—શ્રુતં મે આયુષ્મન્ ! તેન ભગવતા એવારુપાતમ્—ઈહ खलु द्वाविंशतिः
 परीपदाः श्रमणेन भगवता महावीरेण काश्यपेन प्रवेदिताः, यान् भिक्षुः श्रुत्वा
 ज्ञात्वा जित्वा अभिभूय भिक्षाचर्यायां परित्रिजन् स्पृष्टो नो विनिहन्त्येव ॥१॥

द्वितीय अध्ययन ।

વિનયશ્રુત નામ કે પ્રથમ અધ્યયન કા વર્ણન હુવા, અવ સૂત્રકાર
 દ્વિતીય અધ્યયન કા વર્ણન કરતે હૈં । પ્રથમ અધ્યયન કે સાથે સ્વકા
 સંબંધ સ્વ પ્રકાર હૈ—પ્રથમ અધ્યયન મેં વિસ્તારપૂર્વક વિનયધર્મ કા
 વર્ણન કરને મેં આયા હૈ । ઉસ વિનયધર્મ કી આરાધના પરીપદો કો
 જીતને વાલા હી કર સકતા હૈ, ઓર વિનયશીલ કો પ્રાયઃ પરીપદ
 ઉત્પન્ન હોતે હી હૈં ફસલિએ અવ પરીપદાધ્યયન કહતે હૈં જિસકા યહ
 પ્રથમસૂત્ર હૈ—“સુયંમે” ફત્યાદિ ।

બીજું અધ્યયન

વિનય શ્રુત નામના પ્રથમ અધ્યયનનું વર્ણન પુરું થયું હવે સૂત્રકાર
 બીજા અધ્યયનનું વર્ણન કરે છે. પ્રથમ અધ્યયનની સાથે જોના સંબંધ આ
 પ્રકારનો છે. પ્રથમ અધ્યયનમાં વિસ્તાર પૂર્વક વિનય ધર્મનું વર્ણન કરવામાં
 આવેલ છે. તે વિનય ધર્મની આરાધના પરિપદને છૂટવાવાળા જ કરી શકે છે
 અને વિનયશીલને પરિપદ ઘણે લાગે ઉત્પન્ન થાય જ છે, આ માટે હવે “પરિ-
 પદાધ્યયન” કહેવામાં આવે છે જેનું આ પ્રથમ સૂત્ર છે મયંમે

ટીકા—શ્રીમુધર્મા સ્વામી શ્રીજમ્બૂસ્વામિનં પ્રતિ કથયતિ—‘સુયં મે આડસં!’
 ઇત્યાદિ । હે આયુષ્મન્ ! ભગવતા=જ્ઞાનાદિયુક્તેન, તેન=તીર્થકરેણ, એવમ્=વક્ષ્યમા-
 નપ્રકારેણ, યત્ આલ્યાતં=સકલજીવભાપાપરિણામિન્યા ભાપયા કથિતમ્, ઉક્તશ્ચ-

દેવા દૈવીં નરા નારીં, શવરાથાપિ શાવરીમ્ ।

તિર્યંચોઽપિ હિ તૈરથોં, મેનિરે ભગવદ્દિસમ્ ॥ ૧ ॥

તત્, મે=મયા, શ્રુતમ્ । ભગવત્કથિતમેવાર્થ તવાગ્રે વર્ણયામીતિ ભાવઃ । અસ્ય
 સવિસ્તરં વ્યાખ્યાનં જિજ્ઞાસુભિરાચારાદ્ગુરુસ્ય મત્કૃતાચારચિન્તામણિટીકાયાં
 દ્રષ્યમ્ । યદ્વા—‘આડસંતેણં’ ઇત્યેકં પદં, ‘મયા’ ઇત્યસ્ય વિશેષણમ્ ।

શ્રી મુધર્મા સ્વામી શ્રી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં—(આડસં-આયુષ્મન્)
 કિ હે આયુષ્મન્ ! જમ્બૂ ! (તેણં ભગવયા એવમક્ષાયં-તેન ભગવતા
 એવં આલ્યાતમ્) જ્ઞાનાદિ ગુણોં સે યુક્ત ઉન તીર્થકર ભગવાન્ શ્રી મહા-
 વીર સ્વામી ને વક્ષ્યમાણ પ્રકાર સે કહા હૈ વહ (મે સુયં-મયા શ્રુતમ્)
 મૈને સુના હૈ વહી મૈ કહતા હું । પ્રભુ કી ભાપા સર્વભાપામય હોતી હૈ,
 કહા ખી હૈ—“ દેવા દૈવીં ” ઇત્યાદિ ।

પ્રભુ કી વાણી કો દેવ, મનુષ્ય, આર્ય, અનાર્ય, તિર્યંચ, સમી અપની
 અપની ભાપા મેં સમજતે હૈં ।

હસ સૂત્ર કા વિસ્તૃત વિવેચન આચારાંગ સૂત્ર કી આચારચિન્તામણિ
 ટીકા મેં કિયા ગયા હૈ, ઇસલિએ જિજ્ઞાસુ કો વહાં સે દેલ લેના ચાહિયે ।
 “ આડસં તેણં ” હસ પદ કી સંસ્કૃત છાયા “ આયુષ્મન્ તેન ” એસી ન

શ્રી મુધર્માસ્વામી, શ્રી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે આડસં-આયુષ્મન્ ‘હે
 આયુષ્મન્ જમ્બૂ! તેણં ભગવયા એવમક્ષાયં-તેન ભગવતા એવં આલ્યાતમ્ જ્ઞાનાદિ
 ગુણોથી યુક્ત એવા તીર્થકર ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામીએ વક્ષ્યમાણ પ્રકા-
 રથી કહ્યું છે મે સુયં-મયા શ્રુતમ્-તે મેં સાંભળ્યું છે એ હું કહું છું. પ્રભુની
 ભાપા સર્વભાપામય હોય છે. કહ્યું પણ છે—દેવા દૈવીં ઇત્યાદિ.

પ્રભુની વાણીને દેવ, મનુષ્ય, આર્ય, અનાર્ય, તિર્યંચ, સઘળા પોત પોતાની
 ભાષામાં સમજે છે.

આ સૂત્રનું વિસ્તૃત વિવેચન આચારાંગસૂત્રની આચારચિન્તામણી ટીકામાં
 કરેલ છે. માટે છત્તાસુએ ત્યાંથી બોધ લેવું બોધએ. “ આડસં તેણં ” એ
 પદની સંસ્કૃત છાયા “ આયુષ્મન્ તેન ” એવી ન થતાં આડસંતેણં ” “ આવસતા ”

મનુષ્યશરીરં, ત્યક્ત્વા, શાશ્વતઃ=સર્વકાલાવસ્થાયી જન્મમરણરહિતઃ સિદ્ધો ભવતિ ।
 વા=અથવા, સાવશેષકર્મા તુ અલ્પરજાઃ=અલ્પકર્મા મહર્દિકઃ=મહતી=દિવ્યા ઋદ્ધિઃ=
 વિમાનાદિસમ્પત્તિ, ઉપલક્ષણેન દિવ્યાનિ યુતિયશોવર્ણવલવીર્યાદીનિ ચ यस્ય સ
 મહર્દિકઃ, તત્ર=યુતિઃ-શરીરાભરણકાન્તિઃ, યશઃ=કીર્તિઃ, વર્ણઃ=શુદ્ધાદિઃ, વલં=
 શારીરિકપરાક્રમઃ, વીર્યમ્=આત્મવલમ્, આદિપદેન-ઇતોઽન્યદપિ સંગ્રાહ્યમ્, ઇમિઃ
 સંપન્નઃ, દેવો ભવતિ ।

કપૂર્યં દેહં ચૈત્તુ-મલપંકપૂતિકં દેહં ત્યક્ત્વા) શુદ્ધશોણિત સે જન્ય ઇસ
 ઔદારિક શરીર કા પરિત્યાગ કર (સાસણ સિદ્ધે હવઈ-શાશ્વતઃ સિદ્ધો
 વા ભવતિ) અનંત કાલ તક સદા સિદ્ધિ સ્થાન મેં રહને વાલા સિદ્ધ
 પરમાત્મા હો જાતા હૈ । (વા) અથવા યદિ વહ સિદ્ધ નહીં બને તો
 (અપ્પરણમહિદ્ધિદેવ દેવે વા હવઈ-અલ્પરજાઃ મહર્દિકઃ દેવો વા ભવતિ)
 અલ્પકર્મા મહર્દિક દેવ હો જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ — પૂર્વોક્તલક્ષણવિશિષ્ટ વિનીત શિષ્ય દેવાદિક દ્વારા
 પૂજ્ય હોતા હૈ, ઇવં ઇસ અપવિત્ર ઔદારિક શરીર કા પરિત્યાગ કર
 સિદ્ધ હો જાતા હૈ । યદિ કર્મ શેષ રહ જાય તો વહ મહાઋદ્ધિશાલી દેવ
 હોતા હૈ । યહાં ઋદ્ધિસે યુતિ, યશ, વર્ણ, વલ, વીર્ય ઇન સબકા
 ગ્રહણ હુવા હૈ । વિમાન આદિ સંપત્તિ કા નામ ઋદ્ધિ હૈ । શરીર ઇવં
 આભરણ કી કાન્તિ કા નામ યુતિ હૈ । કીર્તિ કા નામ યશ હૈ । શરીર
 કા જો શુક્લ આદિ વર્ણ હૈ — ઉસકા નામ વર્ણ હૈ । શારીરિક
 પરાક્રમ કા નામ વલ ઇવં આત્મજન્ય શક્તિ કા નામ વીર્ય હૈ ।

શુદ્ધ શોણિત જન્ય આ ઔદારિક શરીરનો પરિત્યાગ કરી સાસણ સિદ્ધે હવઈ-
 શાશ્વતઃ સિદ્ધો ભવતિ અનન્તકાળ સુધી સદા સિદ્ધિ સ્થાનમાં રહેવાવાળા સિદ્ધ
 પરમાત્મા બની જાય છે. વા અથવા જો તે સિદ્ધ ન બને તો, અલ્પકર્મા મહ-
 ર્દિક દેવ બની જાય છે.

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત લક્ષણવિશિષ્ટ વિનીત શિષ્ય દેવાદિક દ્વારા પૂજ્ય બને
 છે. અને આ અપવિત્ર ઔદારિક શરીરનો પરિત્યાગ કરી કાં તો સિદ્ધ બની
 જાય છે. જો કર્મ શેષ રહી જાય તો તે મહાઋદ્ધિ શાળી દેવ બને છે. ઋદ્ધિથી
 યુતિ, યશ, વર્ણ, બળ, વીર્ય, આ બધાનું ગાથામાં ગ્રંથ કરેલ છે, વિમાન
 આદિ સંપત્તિનું નામ ઋદ્ધિ છે. શરીર અને આભરણની કાન્તિનું નામ
 યુતિ છે, કીર્તિનું નામ યશ છે. શરીરનો જો શુક્લ આદિ વર્ણ છે—દ્રવ્ય લેશ્યા
 છે—એનું નામ વર્ણ છે. શારીરિક પરાક્રમનું નામ બળ છે.

ટીકા—શ્રીસુધર્મા સ્વામી શ્રીજમ્બૂસ્વામિનં પ્રતિ કથયતિ—‘ સુયં મે આઠસં !’
 इत्यादि । हे आयुष्मन् ! भगवता=ज्ञानादियुक्तेन, तेन=तीर्थकरणे, एवम्=वक्ष्यमाणप्रकारेण, यत् आख्यातं=सकलजीवभाषापरिणामिन्या भाषया कथितम्, उक्तञ्च—

देवा दैवीं नरा नारीं, श्वराश्चापि शवरीम् ।

तिर्यञ्चोऽपि हि तैश्चૉ, મેનિરે ભગવદ્ધિરમ્ ॥ ૧ ॥

તત્, મે=મયા, શ્રુતમ્ । ભગવત્કથિતમેવાર્થ તવાગ્રે વર્ણયામીતિ ભાવઃ । અસ્ય સવિસ્તરં વ્યાખ્યાનં જિજ્ઞાસુમિરાચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય મત્કૃતાચારચિન્તામણિટીકાયાં દ્રશ્યમ્ । યદ્વા—‘ આઠસંતેનં ’ इत्येकं पदं, ‘ मया ’ इत्यस्य विशेषणम् ।

શ્રી સુધર્મા સ્વામી શ્રી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં—(આઠસં—આયુષ્મન્)
 कि हे आयुष्मन् ! जम्बू ! (तेनं भगवया एवमक्खायं—तेन भगवता एवं आख्यातम्) ज्ञानादि गुणों से युक्त उन तीर्थकर भगवान् श्री महावीर स्वामी ने वक्ष्यमाण प्रकार से कहा है वह (मे सुयं—मया श्रुतम्) मैंने सुना है वही मैं कहता हूं । प्रभु की भाषा सर्वभाषामय होती है, कहा भी है—“ देवा दैवीं ” इत्यादि ।

પ્રભુ કી વાણી કો દેવ, મનુષ્ય, આર્ય, અનાર્ય, તિર્યંચ, સઘ્ના અપ્ની અપ્ની ભાષા મેં સમજતે હૈં ।

इस सूत्र का विस्तृत विवेचन आचारांग सूत्र की आचारचिन्तामणि टीका में किया गया है, इसलिए जिज्ञासु को वहां से देख लेना चाहिये ।
 “आठसं तेनं” इस पद की संस्कृत छाया “आयुष्मन् तेन” ऐसी न

શ્રી સુધર્માસ્વામી, શ્રી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે આઠસં—આયુષ્મન્ ‘ હે આયુષ્મન્ જમ્બૂ ! તેણં ભગવયા એવમક્ખાયં—તેન ભગવતા એવં આખ્યાતમ્ જ્ઞાનાદિ ગુણોથી યુક્ત એવા તીર્થકર ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામીએ વક્ષ્યમાણ પ્રકારથી કહ્યું છે મે સુયં—મયા શ્રુતમ્—તે મેં સાંભળ્યું છે એ હું કહું છું. પ્રભુની ભાષા સર્વભાષામય હોય છે. કહ્યું પણ છે—દેવા દૈવી ઇત્યાદિ.

પ્રભુની વાણીને દેવ, મનુષ્ય, આર્ય, અનાર્ય, તિર્યંચ, સઘ્ના પોત પોતાની ભાષામાં સમજે છે.

આ સૂત્રનું વિસ્તૃત વિવેચન આચારાંગસૂત્રની આચારચિન્તામણી ટીકામાં કરેલ છે. માટે જિજ્ઞાસુએ ત્યાંથી જોઈ લેવું જોઈએ. “ આઠસં તેનં ” એ પદની સંસ્કૃત છાયા “ આયુષ્મન્ તેન ” એવી ન થતાં આઠસંતેનં ” “ આવસતા ”

દ્વિતીયાધ્યયનમ્ ।

વિનયશ્રુતાણ્યં પ્રથમમધ્યયનં વર્ણિતમ્, હદાનીં દ્વિતીયમધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે ।
 અસ્ય ચાયમભિસમ્બન્ધઃ—હ્રાનન્તરાધ્યયને વિનયઃ સત્વિસ્તરં વર્ણિતઃ, સ ચાનુકૂલમ-
 તિકૂલપરીપહજયનશીલૈરેવ કર્તું શક્યતે इति દ્વિતીયં પરીપહાણ્યમધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે—
 યદ્વા—વિનયારાધકાઃ પ્રાયઃ પરીપહમાજો ભવન્ત્યેવેતિ દ્વિતીયં પરીપહાણ્ય-
 મધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે, તસ્યેદમાદ્યં સૂત્રમ્—

મૂલમ્—સુયં મે આઠસં ! તેણં ભગવયા એવમકલાયં—હ્રા
 લ્લુ વાવીસં પરીસહા સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણં કાસવેણં
 પવેશ્યા, જે ભિક્ષૂ સોઠ્ઠા નચ્ચા જિઠ્ઠા અભિભૂય ભિક્ષ્વા-
 યરિયાણ પરિવ્વયંતો પુટ્ઠો નો વિનિહન્નેજ્જા ॥૧॥

છાયા—શ્રુતં મે આયુષ્મન્ ! તેન ભગવતા એવારુપાતમ્—હ્રા લ્લુ દ્વાવિંશતિઃ
 પરીપહાઃ શ્રમણેન ભગવતા મહાવીરેણ કાશ્યપેન પવેદિતાઃ, યાન્ મિહુઃ શ્રુત્વા
 જ્ઞાત્વા જિત્વા અભિભૂય મિહ્સાચર્યાયાં પરિવ્રજન્ સ્પૃષ્ઠો નો વિનિહન્યેત ॥૧॥

દ્વિતીય અધ્યયન ।

વિનયશ્રુત નામ કે પ્રથમ અધ્યયન કા વર્ણન હુવા, અવ સૂત્રકાર
 દ્વિતીય અધ્યયન કા વર્ણન કરતે હૈં । પ્રથમ અધ્યયન કે સાથે હસકા
 સંબંધ હસ પ્રકાર હૈ—પ્રથમ અધ્યયન મેં વિસ્તારપૂર્વક વિનયધર્મ કા
 વર્ણન કરને મેં આયા હૈ । હસ વિનયધર્મ કી આરાધના પરીપહોં કો
 જીતને વાલા હી કર સકતા હૈ, ઓર વિનયશીલ કો પ્રાયઃ પરીપહ
 ઉત્પન્ન હોતે હી હૈં હસલિણ અવ પરીપહાધ્યયન કહતે હૈં જિસકા યહ
 પ્રથમસૂત્ર હૈ—“સુયંમે” હત્યાદિ ।

ખીજી અધ્યયન

વિનય શ્રુત નામના પ્રથમ અધ્યયનનું વર્ણન પુરું થયું હવે સૂત્રકાર
 ખીજી અધ્યયનનું વર્ણન કરે છે. પ્રથમ અધ્યયનની સાથે એનો સંબંધ આ
 પ્રકારનો છે. પ્રથમ અધ્યયનમાં વિસ્તાર પૂર્વક વિનય ધર્મનું વર્ણન કરવામાં
 આવેલ છે. તે વિનય ધર્મની આરાધના પરિપહને જીતવાવાળા જ કરી શકે છે
 અને વિનયશીલને પરિપહ ધણે ભાગે ઉત્પન્ન થાય જ છે, આ માટે હવે “પરિ-
 પહાધ્યયન” કહેવામાં આવે છે જેનું આ પ્રથમ સૂત્ર છે સુયંમે ધ

एवं श्रीसुधर्मस्वामिना प्रोक्ते सति श्री जम्बूस्वामी पृच्छति—

मूलम्—कयरे ते खलु वावीसं परीसहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पवेइया जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिब्बयंतो पुट्ठो नो विनिहन्नेज्जा? ॥२॥

छाया—कतरे ते खलु द्वाविंशति: पરીપદા: શ્રમણેન ભગવતા મહાવીરેણ કાશ્વપેન પ્રવેદિતા: । યાન્ ભિક્ષુ: શ્રુત્વા જ્ઞાત્વા જિત્વા અભિભૂય ભિક્ષાચર્યાયાં પરિવ્રજન્ સ્પૃષ્ઠો ન વિનિહન્યેત ? ॥૨॥

टीका—‘ कयरे ते ’ इत्यादि ।

કતરે=કિનામકાસ્તે=અનન્તરસૂત્રોક્તા: खलु द्वाविंशति: परीपदा:, अत्र खलु शब्दो वाक्यालंकारे, शेषपदानां व्याख्या पूर्ववत् ॥

तदा श्रीसुधर्मा स्वामी श्रीजम्बूस्वामिनं प्रति प्राह—

मूलम्—इमे ते खलु वावीसं परीसहा समणेणं भगवया

इस तरह श्री सुधर्मास्वामिका कहने पर श्री जम्बू स्वामी पूछने लगे—‘ कयरे ’ इत्यादि ।

(कासवेणं) કાશ્વપગોત્રી (સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણં) શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર સ્વામી ને જિન ૨૨ પરિપદાં કા (પવેइया-પ્રવેદિતા) વર્ણન કિયા હૈ ઔર જિનકે સુનને આદિ સે ભિક્ષાચર્યા મેં ઘૂમતા હુવા મુનિ ઉન પરિપદાં સે સ્પૃષ્ટ હોને પર મી સંયમમાર્ગ સે ચલિત નહીં હોતા હૈ ઉન પરિપદાં કે નામ કયા ૨ હૈં ? ।

સુધર્માસ્વામી જંબૂસ્વામી કે ૨૨ પરિપદાં કે નામોં કો જાનને વિષયક પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેને કે લિયે કહ રહે હૈં કિ હે જંબૂ ! સુનો—

આ પ્રમાણે શ્રી સુધર્માસ્વામીએ કહ્યું ત્યારે જમ્બૂસ્વામી ફરી પૂછવા લાગ્યા કયરે ઇત્યાદિ.

કાસવેણં કાશ્વપગોત્રી “સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણં” શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામીએ જે ૨૨ પરિપદાં પવેइया-પ્રવેદિતા વર્ણન કરેલ છે. અને જેના સાંભળવા આદિથી ભિક્ષાચર્યામાં ફરી રહેલ મુનિએ પરિપદાંથી સ્પૃષ્ટ થયા પછી પણ સંયમ માર્ગથી ચલિત બનતા નથી. એ પરિપદાંનાં નામ કયાં કયાં છે ?

સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને ૨૨ પરિપદાંના નામને જાણવા અંગેના પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતાં કહે છે કે, કે જમ્બૂ ! સાંભળો. “ ઇમે ” ઇત્યાદિ !

કદાચિત્ સ્પૃષ્ટઃ=પરીપહેરાક્રાન્તઃ સન્, ન વિનિહન્યેત=મોક્ષમાર્ગાત્ પ્રચ્યુતો ન ભવેદિત્યર્થઃ । 'ભિક્ષ્વાયરિયાણ' ઇત્યનેન ભિક્ષાટને પ્રાયઃ પરીપહાઃ પ્રાદુર્ભવન્તિ, ઇતિ સૂચિતમ્ ॥

નહીં હોવે । "ભિક્ષ્વાયરિયાણ" હસસે યહ પ્રકટ હોતા હૈ કિ ભિક્ષુ કો ભિક્ષાટન કરતે સમય પ્રાયઃ પરીપહ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ।

ભાવાર્થ—હસ સૂત્ર દ્વારા મુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામી કો સમક્ષાતે હુણ્ણ યહ કહ રહે હૈં કિ હે જમ્બૂ ! મૈં હસ અધ્યયન મૈં ૨૨પરીપહોં કે સંબંધ મૈં જો કુછ ભી વિવેચન કરૂંગા વહ સવ જૈસા મૈંને પ્રભુ વર્ધમાનસ્વામી કે મુખ સે સુના હૈ વૈસા હી કરૂંગા । ભગવાન્ ને વાઈસ પરીપહ ફરમાયે હૈં—જો ભિક્ષુ ઇન પરીપહોં સે સ્વયં પરાજિત ન હોકર ઇનકો જીતતા રહતા હૈ વહ મોક્ષમાર્ગ સે કબી ભી વિચલિત નહીં હોતા હૈ । ભિક્ષાચર્યા કરતે સમય પરીપહોં કે આને કો અર્થાત્ ઉત્પન્ન હોને કી પ્રાયઃ અધિક સંભાવના રહતી હૈ, અતઃ સાધુ કો ડનસે વિચલિત નહીં હોના ચાહિયે । પરીપહ સાધુ કો કસોડી હૈ । ઇનકે દ્વારા કસા જાને પર જો સાધુ મોક્ષમાર્ગ સે ચલાયમાન નહીં હોતા હૈ, એવં વીર્યોહ્યાસ પ્રકટ કર ઇનકા સામ્હના કરતા હૈ વહ કર્મોં કી નિર્જરા કરતા હુઆ અપના કલ્યાણ કરતા હૈ ॥

પદ્ધતી પ્રગટ થાય છે કે, ભિક્ષુને ભિક્ષાટન કરતી વખતે પ્રાયઃ પરિપહ ઉત્પન્ન થાય છે.

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા મુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને એ સમજાવીને કહે છે કે, હે જમ્બૂ ! હું આ અધ્યયનમાં ૨૨ પરિપહનાં સંબંધમાં જે કાંઈ પણ વિવેચન કરીશ. તે મેં પ્રભુ વર્ધમાનસ્વામીથી જે રીતે સાંભળ્યું છે તે કરીશ. ભગવાને ખાવીસ ૨૨ પરિપહ ફરમાવ્યા છે. જે ભિક્ષુ આ પરિપહોથી સ્વયં પરાજિત ન બની તેને જીતે છે તે મોક્ષ માર્ગથી કદી પણ વિચલિત થતો નથી. ભિક્ષાચર્યા કરતી વખતે પરિપહોના આવવાની અર્થાત્ ઉત્પન્ન થવાની પ્રાયઃ અધિક સંભાવના રહે છે. આથી સાધુએ તેનાથી વિચલિત ન બનવું જોઈએ. પરિપહ સાધુની કસોટી છે તેના દ્વારા કસાયા પછી સાધુ મોક્ષમાર્ગથી ચલાયમાન નથી થતા તેમજ વિર્યોહ્યાસ પ્રગટ કરી એનો સામનો કરે છે તે કમોની નિર્જરા કરીને પોતાનું કલ્યાણ કરે છે.

ટીકા--તદ્ યથા-ધુધાપરીપદઃ દિગ્વિંશતિશબ્દો દેશીયઃ ધુધાર્થે વર્તતે
સૈવ પરીપદઃ પરિપલ્લવતે ઇતિ પરીપદઃ, ॥ ૧ ॥ પિપાસાપરીપદઃ - પિપાસા
=તૃષ્ણા, સૈવ પરીપદઃ, એવં સર્વત્ર પરીપદાર્થેન સમાનાધિકારણ્યં બોધ્યમ્ ॥૨॥ શીત-
પરીપદઃ-શીતં=હેમન્તશિશિરયોર્જાતઃ શીતસ્પર્શઃ, તદેવ પરીપદઃ શીતપરીપદઃ
॥૩॥ ઉષ્ણપરીપદઃ-ઉષ્ણં-ગ્રીષ્મવર્ષાસુ જાતસ્તાપરૂપ ઉષ્ણસ્પર્શઃ, તદેવ પરીપદઃ ॥૪॥
દંશમશકપરીપદઃ-દંશમશકાઃ પ્રસિદ્ધાઃ, ત એવ પરીપદઃ દંશમશકપરી-
પદઃ, દંશમશકાઃ પરીપદત્વવન્તે ઇત્યર્થઃ, તત્ર પરીપદત્વગતૈકત્વવિવક્ષ્યા પરીપદ
ઇત્યેકવચનમ્ ॥ ૫ ॥ અચૈલં=ચૈલાભાવઃ જિનકલ્પિકવિશેષણામ્ । સ્થવિરક-
લ્પિકાનાં તુ જીર્ણં સ્વઙિતમલ્પમૂલ્યં પ્રમાણોપેતં ચ ચૈલં સદપ્યચૈલમેવ । તદેવ

“હમે”-ઇત્યાદિ । શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર સ્વામી ને જિન ૨૨ પરીપદોં કો
સહન કરને કે લિપ્ત મિશ્રુકો આદેશ દિયા હૈ વે ૨૨ પરીપદ યે હૈ—

દિગ્વિંશતિશબ્દ દેશીય શબ્દ હૈ, ઇસકા અર્થ ધુધા હૈ । દિગ્વિંશતિરૂપ
પરીપદ કા નામ દિગ્વિંશતિપરીપદ હૈ ૧ । પિપાસા-શબ્દ કા અર્થ તૃષ્ણા હૈ ।
ઇસરૂપ જો પરીપદ હૈ વહ પિપાસાપરીપદ હૈ ૨ । હેમન્ત એવં શિશિર
ઋતુ મેં ઉત્પન્ન શીતસ્પર્શ કા નામ શીત હૈ । ઇસરૂપ જો પરીપદ હૈ
ઉસકા નામ શીતપરીપદ હૈ ૩ । ગ્રીષ્મ ઋતુ એવં વર્ષા ઋતુ મેં ઉત્પન્ન હુણ
તાપ કા નામ ઉષ્ણસ્પર્શ હૈ । ઇસરૂપ પરીપદ કા નામ ઉષ્ણપરીપદ હૈ ૪ ।
ઢાંસ, મચ્છર, વિચ્છ્ર, ચિંટી આદિ કા નામ દંશમશક હૈ । ઇનકે
કાટને કી વેદનારૂપ જો પરીપદ હૈ વહ દંશમશકપરીપદ હૈ ૫ । વસ્ત્રકા
સર્વથા અભાવ અચૈલ હૈ, યહ જિનકલ્પિયોં કો હોતા હૈ । સ્થવિરકલ્પિયોં
કે જીર્ણ, સ્વઙિત, અલ્પમૂલ્યવાલે એવં પ્રમાણોપેત વસ્ત્ર હોતે હૈ તૌ મી ઉનકો

શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામીએ જે ૨૨ પરીપદોને સહન કરવાનો બિશ્વને
આદેશ આપેલ છે તે ૨૨ પરિપદ આ છે.

દિગ્વિંશતિરૂપ પરિપદનું નામ દિગ્વિંશતિપરીપદ છે (૧) “દિગ્વિંશતિ”
એટલે ભૂખ. પિપાસા શબ્દનો અર્થ તૃષ્ણા છે, આ રૂપ જે પરીપદ છે તે પિપાસા-
પરીપદ છે (૨) હેમન્ત અને શિશિર ઋતુમાં ઉત્પન્ન થતાં ઠંડા સ્પર્શનું નામ શીત-
પરીપદ છે (૩) ગ્રીષ્મ તથા વર્ષા ઋતુમાં ઉત્પન્ન થતા તાપ રૂપ ઉષ્ણ સ્પર્શનું નામ
ઉષ્ણપરીપદ છે (૪) ઢાંસ, મચ્છર, વીંછી, માકડ, આદિનું નામ દંશમશક છે. તેના
કરડવાની વેદના રૂપ પરીપદ તે દંશમશકપરીપદ છે. (૫) વસ્ત્રનો સદા અભાવ તે અચૈલ
છે એ જીનકલ્પિયોને થાય છે. સ્થવિરકલ્પિયોના જીર્ણ, સ્વઙિત અલ્પ મૂલ્યવાળાં
એવાં પ્રમાણોપેત વસ્ત્ર હોય છે તે પણ તેને અચૈલજ્ઞ માનવા બોધ્યો. એવો

महावीरेणं कासवेणं पवेइया, जे भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा
अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयंतो पुट्ठो नो विनिहन्नेज्जा ॥३॥

छाया—इमे ते खलु द्वाविंशतिः परीपहाः श्रमणेन भगवता महावीरेण
काश्यपेन प्रवेदिताः, यान् भिक्षुः श्रुत्वा ज्ञात्वा जित्वा अभिभूय भिक्षाचर्यायां
परिव्रजन् स्पृष्टो नो विनिहन्वेत् ॥३॥

‘इमे ते’ इत्यादि ।

ये द्वाविंशतिः परीपहाः श्रमणेन भगवता महावीरेण काश्यपेन प्रवेदितास्ते
खलु इमे=अग्रे वक्ष्यमाणाः सन्ति, अनन्तरमेव वक्ष्यमाणत्वात् इदि वर्तमानाः परी-
पहाः ‘इदं’ शब्देन निर्दिष्टाः। यान् भिक्षुः श्रुत्वा ज्ञात्वेत्यादि पदानां व्याख्या पूर्ववत्॥
अथ तानेव नामनिर्देशपूर्वकं दर्शयति—

मूलम्—तं जहा—दिग्गिछापरीसहे १, पिवासापरिसहे २, सी-
यपरीसहे ३, उप्पिणपरीसहे ४, दंसमसयपरीसहे ५; अचेल-
परीसहे ६, अरत्तिपरीसहे ७, इत्थीपरीसहे ८, चरियापरीसहे ९,
निसीहियापरीसहे १०, सेज्जापरीसहे ११, अक्कोसपरीसहे १२,
वहपरीसहे १३, जायणापरीसहे १४, अलाभपरीसहे १५,
रोगपरीसहे १६, तण्णापरीसहे १७, जल्लपरीसहे १८,
सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९, पन्नापरीसहे २०, अन्नानपरीसहे २१,
दंसणपरीसहे २२ ॥४॥

छाया—तद् यथा—क्षुधापरीपहः १, पिपासापरीपहः २, शीतपरीपहः ३,
उष्णपरीपहः ४, दंसमशक्कपरीपहः ५, अचैलपरीपहः ६, अरतिपरीपहः ७, स्त्री-
परीपहः ८, चर्यापरीपहः ९, नैपेघिकीपरीपहः १०, शय्यापरीपहः ११, आक्रोश-
परीपहः १२, वधपरीपहः १३, याचनापरीपहः १४, अलाभपरीपहः १५,
रोगपरीपहः १६, तृणस्पर्शपरीपहः १७, जल्लपरीपहः १८, सत्कारपुरस्कारपरीपहः १९,
पन्नापरीपहः २०, अज्ञानपरीपहः २१, दर्शनपरीपहः २२ ॥ ४ ॥

॥ १५ ॥ रोगः=वातपित्तश्लेष्मणां वैषम्येण समुत्पन्नः कुष्ठादिः, स एव परीपहो रोगपरीपहः ॥ १६ ॥ तृणस्पर्शः-दर्भादिस्पर्शः, स एव परीपहः तृणस्पर्शपरीपहः ॥ १७ ॥ जल्ल=मलः, स एव परीपहः जल्लपरीपहः ॥ १८ ॥ सत्कारो वस्त्रपात्रादिदानेन संमाननम्, पुरस्कारोऽभ्युत्थानासनप्रदानवन्दनादिसंपादनम्, तावेव परीपहः सत्कारपुरस्कारपरीपहः ॥ १९ ॥ प्रज्ञा=स्वयंविमर्शपूर्वको वस्तुपरिच्छेदः, सैव परीपहः प्रज्ञापरीपहः ॥ २० ॥ अज्ञानपरीपहः—ब्रानं=मत्पादि, तदभावस्तु अज्ञानम् तदेव परीपहः ॥ २१ ॥ दर्शनपरीपहः—दर्शनं=सम्यग्दर्शनं, तदेव क्रियादिवादिनां नानाविधमतश्रवणेऽपि निश्चलतया ध्रियमाणत्वात् सम्यक् परिपह्यमाणं सत् परिपहो भवति ॥ २२ ॥ ४ ॥

एवं श्रीसुधर्मा स्वामी परीपहाणां नामान्यभिधाय तेषां स्वरूपं वक्तुकामः माह—

मूलम्—परीसंहाणं पविभैत्ती, कासवेणं पवेइया ।

तं भे उदार्हरिस्सामि, आणुपुविं सुणेहं मे ॥१॥

कफ की विषमता से समुत्पन्न कुष्ठादिरूप परीपह रोगपरीपह है ॥ १५ ॥ दर्भ आदि का स्पर्शरूप परीपह तृणस्पर्शपरीपह है ॥ १६ ॥ मेल आदिरूप परीपह जल्लपरीपह है ॥ १८ ॥ अन्यद्वारा वस्त्र, पात्र आदि के देने रूप सत्कार, एवं अभ्युत्थान, आसनप्रदान तथा वंदना आदि करने रूप पुरस्कार, इन दोनोंरूप परीपह सत्कारपुरस्कार परीपह है ॥ १९ ॥ स्वयं विमर्शपूर्वक वस्तु के परिच्छेद करनेरूप परीपह प्रज्ञापरीपह है ॥ २० ॥ मत्पादिज्ञान के अभावरूप अज्ञानपरीपह है ॥ २१ ॥ क्रियावादी आदि के अनेकविध सिद्धान्तों के श्रवण करने पर भी सम्यग्दर्शन को निश्चलरूप से धार रखने के परिपह का नाम दर्शनपरीपह है ॥ २२ ॥

उत्पन्न थयेल कुष्ठादिइय परीपह रोगपरीपह छे. (१६) दर्भा आदिना स्पर्शइय परीपह तृणस्पर्शपरीपह छे. (१७) मेल आदिइय परीपह जल्लपरीपह छे. (१८) अन्यद्वारा वस्त्र, पात्र आदिना देवाइय सत्कार, अने अभ्युत्थान, आसनप्रदान तथा वंदना आदि करवाइय पुरस्कार आ अने इय परीपह सत्कार-पुरस्कारपरीपह छे. (१९) स्वयं विमर्शपूर्वक वस्तुने निष्पथ-परिच्छेद करवाइय परीपह प्रज्ञापरीपह छे. (२०) मत्पादि ज्ञानना अभावइय परीपह अज्ञानपरीपह छे. (२१) क्रियावादी आदिना अनेकविध सिद्धान्ताने श्रवण करवाथी पणु सम्यग् दर्शनने निश्चय इयथी धारी राखवाना परीपहहुं नाम दर्शनपरीपह छे. ॥ २२ ॥

પરીપઢઃ અચેલપરીપહઃ ॥ ૬ ॥ અરતિપરીપહઃ-રતિઃ=સંયમવિષયિકા પ્રીતિઃ । તદ્વિપરીતા ત્વરતિઃ, સૈવ પરીપહઃ, અરતિપરીપઢઃ ॥૭॥ સ્ત્રી=નારી સૈવ કથંચિદ્ દૃષ્ટા સતી તદ્વતરાગપૂર્વકગતિવિલાસઘાસચેષ્ટાચંદુર્વિકારાઘવલોકનેઽપિ તદ્ભિલાષનિવર્તનેન પરિપક્ષમાણત્વાત્ પરીપઢઃ સ્ત્રીપરીપહઃ ॥ ૮ ॥ ચર્યા-ગ્રામાનુષામ વિહારરૂપા, સૈવ પરીપહઃ ચર્યાપરીપહઃ ॥ ૯ ॥ નૈપેધિકી-સ્વાધ્યાયભૂમિઃ, સૈવ પરીપહઃ-નૈપેધિકીપરીપહઃ ॥ ૧૦ ॥ શય્યા=વસતિઃ, સૈવ પરીપહઃ શય્યાપરીપહઃ ॥૧૧॥ આક્રોશઃ=અસમ્યભાષણરૂપઃ, સ એવ પરીપહઃ આક્રોશપરીપહઃ ॥૧૨॥ વધઃ-તાડનં, સ એવ પરીપહઃ વધપરીપહઃ ॥૧૩॥ યાચનૈવ પરીપહઃ યાચનાપરીપહઃ ॥૧૪॥ અલાભઃ-અભિલપિતવસ્તુનોઽપ્રાપ્તિઃ, સ એવ પરીપહઃ, અલાભપરીપહઃ

અચેલ હી જાનના ચાહિયે । ઇસ રૂપ પરીપહ હી અચેલ પરીપહ હૈ । ૬। સંયમવિષયક અપ્રીતિ કા નામ અરતિ હૈ ઇસ અપ્રીતિરૂપ હી અરતિ પરીપહ હૈ । ૭। સ્ત્રી કે રાગપૂર્વક ગમન, વિલાસ, હાસ્ય, ચેષ્ટા, તથા ચંદુ કે ચિકાર કટાક્ષ-આદિ કે અવલોકિત હોને પર ભી ઉસ વિષય કી કોઈ ભી અભિલાષા નહીં કરના-વહ સ્ત્રી પરીપહ હૈ । ૮। એક ગ્રામ સે દૂસરે ગ્રામ મેં વિહાર કરના ઇસકા નામ ચર્યા હૈ ઇસરૂપ પરીપહ ચર્યાપરીપહ હૈ । ૯। સ્વાધ્યાય કરને કે સ્થાન કા નામ નૈપેધિકી હૈ । ઇસરૂપ જો પરીપહ હૈ વહ નૈપેધિકી પરીપહ હૈ । ૧૦। વસતિ રૂપ પરીપહ શય્યાપરીપહ હૈ । ૧૧। અસમ્યભાષણરૂપ પરીપહ આક્રોશપરીપહ હૈ । ૧૨। તાડનરૂપ પરીપહ વધપરીપહ હૈ । ૧૩। યાચનારૂપ પરીપહ યાચનાપરીપહ હૈ । ૧૪। અભિલપિત વસ્તુ કી અપ્રાપ્તિરૂપ પરીપહ અલાભપરીપહ હૈ । ૧૫। વાત પિત્ત

પરીપહ અચેલપરીપહ છે. (૬) સંયમવિષયક અપ્રીતિનું નામ અરતિ છે, એ અપ્રીતિરૂપ પરીપહ અરતિપરીપહ છે (૭) સ્ત્રી તરફના રાગપૂર્વક ગમન, વિલાસ, હાસ્ય, ચેષ્ટા તથા ચંદુનો ચિકાર-કટાક્ષ આદિના અવલોકન બોધને પણ એ વિષયની કોઈ અભિલાષા ન કરવી તેવો પરીપહ તે સ્ત્રીપરીપહ છે. (૮) એક ગામથી બીજા ગામે વિહાર કરવો એનું નામ ચર્યા છે, આ રૂપ જે પરીપહ તે ચર્યાપરીપહ છે. (૯) સ્વાધ્યાય કરવાના સ્થાનનું નામ નૈપેધિકી છે તેવા રૂપનો જે પરીપહ તે નૈપેધિકીપરીપહ છે. (૧૦) વસ્તીરૂપ પરીપહ શય્યાપરીપહ છે. (૧૧) અસમ્યભાષણ સહન કરવું તે આક્રોશપરીપહ છે. (૧૨) તાડનરૂપ પરીપહ વધપરીપહ છે. (૧૩) યાચનારૂપ પરીપહ તે યાચનાપરીપહ છે. (૧૪) અભિલપિત વસ્તુની અપ્રાપ્તિરૂપ પરીપહ તે અલાભપરીપહ છે. (૧૫) વાત, પિત્ત, કફની વિવિધતાથી

તસ્માદાદૌ દ્રામ્યાં ગાથામ્યાં ક્ષુધાપરીપદજયં ગ્રાહ—

મૂલમ્—દિગ્દિગ્ધાપરિગણ દેહે, તવસ્તી મિત્રસૂ થામંત્રં ।

નં છિંદે નં છિંદાવણ, નં પંપે નં પયોવણ ॥ ૨ ॥

છાયા—ક્ષુધાપરિગતે દેહે, તપસ્વી મિત્રુઃ સ્યામવાન ।

ન છિન્ધ્યાત્ ન છેદયેત્, ન પચેત્ ન પાચયેત્ ॥ ૨ ॥

ટીકા—‘દિગ્દિગ્ધાપરિગણ૦’ इत्यादि ।

તપસ્વી=પટ્ટાદ્યમહત્તાદિતપોઽનુષ્ઠાનવાન સ્યામવાન=મનોવલ સમન્વિત; મિત્રુઃ= સાધુ; દેહે=શરીરે, ક્ષુધાપરિગતે=વુશુક્તયા વ્યાપ્તે સતિ, ન છિન્ધ્યાત્=ફલાદિકં સ્યયં ન ઘ્રોટયેત્, ન છેદયેત્=નાષ્પન્યૈઃ ફલાદાનાં છેદનં કારયેદિત્યર્થઃ, ન પચેત્= સ્યયં પાકં ન કુર્યાત્, ન ચ પાચયેત્=અન્યૈઃ પાકં ન કારયેત્ । इदमुपलक्षणम्—

પંથસમા નતિથિ જરા, દારિદ્ર સમો ય પરિભવો નતિથિ ।

મરણસમં નતિથિ ભયં, સુહાસમા વેયણા નતિથિ ॥ ૧ ॥

માર્ગ કે સમાન જરા કોઈ નહીં હૈ અર્થાત્—નિરન્તર ચલનેવાલા માર્ગ ગામી જરાજનિત દુઃખોં કા અનુભવ કરતા હૈ । તથા દારિદ્ર્ય કે સમાન અન્ય કોઈ બી પરિભવ—અર્થાત્ અનાદર નહીં હૈ, તાત્પર્ય યહ હૈ—અન્ય ગુણ કે રહને પર બી દારિદ્ર્ય કે અસ્તિત્વ મેં મનુષ્ય અનાદર પાતા હૈ । તથા—મરણ કે સમાન ભય નહીં હૈ ઓર ન ક્ષુધા સે વઢકર કોઈ વેદના હૈ, અર્થાત્ મનુષ્ય મરણ કે ભયસે જિતના ડરતા હૈ ઉતના અન્ય સે નહીં । તથા—ક્ષુધાજનિત વેદના જિતની દુઃખદાયી હોતી હૈ ઉતની અન્ય વેદના નહીં ॥ ૧ ॥

પંથસમા નતિથિ જરા, દારિદ્ર્યસમો ય પરિભવો નતિથિ ।

મરણસમં નતિથિ ભયં, સુહાસમા વેયણા નતિથિ ॥ ૧ ॥

માર્ગના સમાન જરા કોઈ નથી, અર્થાત્ નિરંતર ચાલવાવાળા માર્ગગામી જરાજનિત દુઃખોનો અનુભવ કરે છે. તથા દારિદ્ર્યના જેવું અન્ય કોઈ પણ પરિભવ—અર્થાત્ અનાદર નથી. તાત્પર્ય એ છે કે, અન્ય ગુણના હોવા છતાં દારિદ્ર્યના અસ્તિત્વમાં માણસ અનાદર પામે છે. તથા મરણના સમાન ભય નથી. અને ક્ષુધાથી પણ કોઈ વેદના નથી. અર્થાત્ મનુષ્ય મરણના ભયથી જેટલો ડરે છે, એટલો ખીલથી નથી ડરતો, તથા—ક્ષુધાજનક વેદના જેટલી અસહ્ય હોય છે, તેવી ખીલ કોઈ વેદના નથી. ॥ ૧ ॥

છાયા—પરીપહાણાં પ્રવિભક્તિઃ, કાશ્યપેન પ્રવેદિતા ।

તાં યુગ્માકમ્ ઉદાહરિષ્યામિ, આનુપૂર્વ્યાં શૃણુત મે ॥ ૧ ॥

ટીકા—‘પરીસહાણં’ इत्यादि ।

हे शिष्याः ! परीपहणां प्रविभक्तिः=पृथक् पृथक् विभागः, काश्यपेन=काश्य=गोत्रोत्पन्नेन, श्रीमहावीरवर्धमानस्वामिना प्रवेदिता, प्रकर्षेण बोधिता द्वादशपरिपदि, तां=परीपहणां प्रविभक्तिम्, आनूपूर्व्यां=अनुक्रमेण, यथानिर्दिष्टक्रमेण युग्माकम् उदाहरिष्यामि=कथयिष्यामि, मे=मत्, मम सकाशात्, शृणुत=सावधानतया श्रवणगोचरी कुरुत । ‘सुणेह’-अत्र बहुवचनमादरार्थम् ॥ गा. १ ॥

इह सर्वेषु परीपहेषु क्षुधापरीपद एव दुस्सहः । उक्तञ्च—

पथसमा नत्थि जरा, दारिद्रसमो य परिभवो नत्थि ।

मरणसमं नत्थि भयं, खुदासमा वेयणा नत्थि ॥ ૧ ॥

છાયા—પથિસમા નાસ્તિ જરા, દારિદ્ર્યસમથ પરિભવો નાસ્તિ ।

મરણસમં નાસ્તિ ભયં, ક્ષુધાસમા વેદના નાસ્તિ ॥ ૧ ॥ इति

इस प्रकार सुधर्मा स्वामी परीपहों के नामोंका कथन करके अब उनका प्रत्येक का स्वरूप प्रकट करते हैं—परीसह्राणं—इत्यादि.

हे शिष्य ! (परीसह्राणं प्रविभक्ती—परीपह्राणां प्रविभक्तिः) परीपहों का यह पृथक् २ विभाग (कासवेणं—काश्यपेन) काश्यगोत्रोत्पन्न श्री वर्धमान स्वामीने (पवेइया—प्रवेदिता) समवसरण में प्रकट किया है । मैं (तं मे उदाहरिस्सामि—तां युग्माकं उदाहरिष्यामि) उस परीपहों के पृथक् २ विभाग को तुम को कहूंगा (मे आणुपुर्व्व सुणेह—मे आनुपूर्व्यां शृणुत) अतः मेरे से उस को यथा क्रम तुम सुनो । इन समस्त परीपहों में क्षुधापरीपह ही दुस्सह है । कहा भी है—

આ પ્રકારે સુધર્મા સ્વામી પરીપહોના નામોનું કથન કરીને હવે તે દરેકનું સ્વરૂપ પ્રગટ કરે છે —પરીસહ્રાણં ઇત્યાદિ.

હે શિષ્ય ! ‘પરિસહ્રાણં પ્રવિભક્તી’—પરીપહ્રાણાં પ્રવિભક્તિઃ પરિપહોનો પ્રથક્ પ્રથક્ વિભાગ કાસવેણં પવેइया—કાશ્યપેન પ્રવેદિતા કાશ્યપગોત્રોત્પન્ન શ્રી મહાવીર વર્ધમાન સ્વામીએ સમવસરણમાં પ્રગટ કરેલ છે. તં મે ઉદાહરિસ્સામિ—તાં યુગ્માકં ઉદાહરિષ્યામિ હું એ પરીપહોના પ્રથક્ પ્રથક્ વિભાગ તમોને કહીશ. મે આણુપુર્વ્વ સુણેહ—મે આનુપૂર્વ્યાં શૃણુત આથી યથાક્રમ તેને સાંભળો. મારાથી આ સમસ્ત પરિપહોમાં ક્ષુધા પરિપહ હુકર છે. કહ્યું છે કે—

કિંચ —

મૂલ્પ્-કાલીપવ્વંગસંકાસે, કિંસે ધમણિસંતણ ।

માયન્ને અસણપાણસ્સ, અદીણમણસો ચેરે ॥૩॥

છાયા — કાલીપર્વસંકાશાઙ્ગઃ, કૃશઃ ધમનિસંતતઃ ।

માત્રજઃ અશનપાનસ્ય, અદીનમનાથરેત્ ॥ ૩ ॥

ટીકા—‘ કાલીપવ્વંગ૦ ’ इत्यादि ।

કાલીપર્વસંકાશાઙ્ગઃ—કાલી=કાકજંઘા વનસ્પતિ, તસ્યાઃ પર્વાણિ મધ્યે તનૂનિ, અન્ત્યે સ્થૂલાનિ ભવન્તિ તત્સંકાશાનિ=તત્સદૃશાનિ વાહુજઙ્ઘાદીન્યઙ્ઘાનિ यस્ય સ તથા, यस્ય સાધોસ્તપથર્યયા જાનુર્કૂર્પરાદયોઽવયવાઃ કાકજંઘાવત્ પ્રતલાઃ સન્તિ સ इत्यर्थः । અત एव कृशः=कृशशरीरः, धमनिसंततः=धमनिभिः नाडीभिः संततः=व्याप्तः शोणितमांसादीनां शुष्कतया दृश्यमाननाडीयुक्त इत्यर्थः । तथा-अशनपानस्य=अशनम्=ओदनरोटिकादि, पानं=दुग्धादि, तयोः समाहारः अशनपानं, तस्य, मात्र-ज्ञः=परिमाणज्ञानसम्पन्नः । यावताऽऽहारेण स्वकीयोदरपूरणं भवेत् तावत्प्रमाणमे-वाहारं गृह्णाति, न तु रसास्वादादिबोभादधिकं गृह्णातीति भावः । तथा-अदीनमनाः तात्पर्यं यह है कि साधु को भूखसे पीडित होने पर भी नवकोटि से विशुद्ध आहार ग्रहण करना चाहिये ॥ २ ॥

ફિર મી-‘ કાલીપવ્વંગ૦ ’-इत्यादि ।

(કાલીપવ્વંગસંકાસે-કાલીપર્વાંગસંકાશઃ) કાલી-કાકજંઘા (વન-સ્પતિ વિશેષ)કે પર્વ જૈસે અંગવાલા અત એવ (કિસે-કૃશઃ) કૃશશરીરયુક્ત, (ધમણિસંતણ-ધમનિસન્તતઃ) નસાજાલ સે વ્યાપ્ત, એવં (અસણપાણસ્સ માયન્ને-અશનપાનસ્ય માત્રજઃ) અશન પાન કી માત્રા કા જ્ઞાતા સાધુ

તાત્પર્ય આ છે કે, સાધુએ ભૂખથી પીડિત હોવા છતાં પણ નવપ્રકારના વિશુદ્ધ આહારને જ ગ્રહણ કરવો જોઈએ. ॥ ગા. ૨ ॥

ફરી પણ કહે છે. કાલિપવ્વંગ૦ ઇત્યાદિ.

કાલિપવ્વંગસંકાસે-કાલીપર્વાંગ સંકાશઃ કાલી-કાકજંઘાના પર્વ જેવા અંગ-વાળા અતએવ કિસે-કૃશઃ કૃશ શરીરયુક્ત, ધમણિસંતણ-ધમનિસંતતઃ નશાબળથી વ્યાપ્ત અને અસણપાણસ્સ માયન્ને-અશનપાનસ્ય માત્રજઃ અશન પાનની માત્રાના જ્ઞાતા સાધુ અદીણમણસો-અદીનમનાઃ અદીન મન યની સંયમના ભાગમાં

અન્યં છિન્દન્તં પચન્તં વા નાનુમોદયેત્ । ઉપલક્ષણત્વાદેવ-ન સ્વયં ક્રીणीयात् ,
 નાપ્યન્યૈઃ ક્રાપયેત્ , ન ચાન્યં ક્રીણન્તમનુમોદયેત્ । ન સ્વયં હન્યાત્ , ન ચાન્યૈ-
 ર્ધાતયેત્ , ન ચાન્યં ઘનન્તમનુમોદયેત્ । બુદ્ધયા પીઢિતોઽપિ નવકોટિશુદ્ધમેવાહારં
 શ્લીયાદિતિ ભાવઃ ॥ ગા. ૨ ॥

ધુધા સે અધિક કોઈ વેદના નહીં હૈં इस लिये सब से पहिले सूत्रकार
 प्रथम धुधापरिपह का जय कहते हैं—‘दिगिच्छापरिगण’-इत्यादि.

(તવસ્સી-તપસ્વી) પઠાપ્રમખક્તાદિ તપોંકા અનુષ્ઠાન કરને વાલા
 एवं (ધામવં-સ્થામવાન્) મનોબલ સે સમન્વિત (મિક્ષૂ-મિશુઃ)
 -સાધુ (દેહે) શરીર (દિગિચ્છાપરિગણ-ધુધાપરિગણે) ધુધા સે
 વ્યાપ્ત હોને પર ખી (ન છિંદે-ન છિન્યાત્) ફલાદિક કો સ્વયં છેદે
 નહીં-તોડે નહીં (ન છિંદાવણ-ન છેદયેત્) ન દૂસરોં સે તુડવાવે (ન પપ
 ન પયાવણ-નપચેત્ ન પાચયેત્) ન સ્વયં પકાવે ઓર ન દૂસરોં સે પક-
 વાવે । ઉપલક્ષણ સે (અન્યં છિન્દન્તં પચન્તં વા નાનુમોદયેત્, ન સ્વયં
 ક્રીणीयात् નાપ્યન્યૈઃ ક્રાપયેત્ ન ચાન્યં ક્રીણન્તમનુમોદયેત્, ન સ્વયં
 હન્યાત્ ત ચાન્યૈર્ધાતયેત્ ન ચાન્યં ઘનન્તં અનુમોદયેત્) ઇન પદોં કા ખી
 યહાં સંગ્રહ કરલેના ચાહિયે, અર્થાત્ છેદન કરને વાલે તથા પકાને વાલે
 વ્યક્તિ કી અનુમોદના ન કરે, ન સ્વયં સ્વરીદે ન દૂસરોં સે સ્વરીદવાવે
 ઓર ન સ્વરીદને વાલે કી અનુમોદના કરે, ન સ્વયં હણે ન દૂસરોં સે
 હણાવે ઓર ન હણતે હુણ કી અનુમોદના કરે ।

ધુધાથી અધિક કોઈ વેદના નથી, એટલા માટે સૂત્રકાર સૌથી પહેલાં
 ધુધા પરીપહને જય કરવા કહે છે. દિગિચ્છાપરિગણ-આદિ.

તવસ્સી-તપસ્વી છૂટ અક્રમ ભક્તાદિ તપોજ્ઞાન અનુષ્ઠાન કરવાવાળા તથા
 ધામવં-સ્થામવાન્ અને મનોબળથી સમન્વિત મિક્ષૂ-મિશુઃ (મિશુ-સાધુ દિગિચ્છા
 પરિગણ-ધુધાપરિગણે શરીરે ભૂખથી વ્યાકુળ હોવા છતાં પણ ન છિંદે-ન છિન્યાત્
 ક્ષણ ક્ષણાદિકને સ્વયં છેદવું નહિ, તોડવું નહિ, ન છિંદાવણ-ન છેદયેત્ બીજાથી
 તોડાવવું નહિ. નપણ ન પયાવણ-નપચેત્ ન પાચયેત્ ન સ્વયં પકાવે, અને ન
 બીજાથી પકાવે. ઉપલક્ષણથી અન્યં છિન્દન્તં પચન્તં વા નાનુમોદયેત્ છેદન કર-
 વાવાળી તથા પકવવાવાળી વ્યક્તિની અનુમોદના ન કરે ન સ્વયં ક્રીणीयात् નાન્યૈઃ
 ક્રાપયેત્ ન ચાન્યં ક્રીણન્તમનુમોદયેત્ ન સ્વયં ખરીદે ન બીજાથી ખરીદાવે કે
 ન તેની અનુમોદના કરે ન સ્વયં હન્યાત્ ન ચાન્યૈર્ધાતયેત્ ન ચાન્યં ઘનન્તમનુમોદયેત્
 ન સ્વયં હણે, ન કોઈથી હણાવે કે ન તેની અનુમોદના કરે.

અત્ર ક્ષુધાપરીપહજયે દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે—

આસીદુઝ્જયિન્યાં ગજમિત્રનામા શ્રેષ્ઠી । તસ્ય દૃઢવીર્યનામકઃ પુત્રોઽભવત્ ।
 એકદા ગજમિત્રશ્રેષ્ઠિનો માર્યા મૃતા । તતઃ સંસારાસારતાં વિજ્ઞાય સંજાતવૈરાગ્યો-
 ઽસૌ દૃઢવીર્યપુત્રેણ સહ પ્રવ્રજિતઃ । સ ચ ગજમિત્રમુનિઃ સ્વ શિષ્યેણ દૃઢવીર્યેણ સહ
 ગ્રામાનુગ્રામં વિચરંસ્તત્ર તત્ર ધર્મદેશનાં કુર્વન્ સંયમેન તપસાઽઽત્માનં ભાવયન્
 વિહરતિ । સ ચૈકદા વિહારં કુર્વન્ વિસ્મૃતમાર્ગઃ સન્ મહારણ્યં પ્રવિષ્ટઃ ।

તત્ર ક્વચિન્મૃગાણાં યુથા ઇતસ્તતો ધાવન્તિ । ક્વચિજ્જમ્યૂકાઃ સ્વપરિવારૈઃ સહ
 શબ્દાયન્તે । ક્વચિદ્ વ્યાગ્રાઉત્પ્લવન્તિ । ક્વચિત્ સિંહા ગર્જન્તિ, યેપાં નાદાનુપશ્રુત્ય

ક્ષુધાપરીપહ કે વિજય કરને મેં દૃષ્ટાંત ઇસ પ્રકાર હૈ—ઉઝ્જેની
 નગરી મેં ગજમિત્ર નામકા એક સેઠ રહતા થા । ઉસકા એક પુત્ર થા
 જિસકા નામ દૃઢવીર્ય થા । એક સમય કી વાત હૈ કિ સેઠ કી પત્ની
 કા દેહાન્ત હો ગયા । ઇસસે સેઠ કો સંસાર, શરીર એવં ભોગોં સે
 વિરક્તિ આગઈ ઓર અપને પુત્ર કે સાથ ઉન્હોંને દીક્ષા ધારણ કરલી ।
 સાધુચર્યા કી વિધિ કે અનુસાર સશિષ્ય વે વિહાર કરને લગે । વે
 જનતા કો ધર્મ કે ઉપદેશ સે વાસિત કરતે ઓર સંયમ એવં તપ સે
 અપની આત્મા કો ભાવિત કરતે હુણ ગ્રામાનુગ્રામ વિચરતે થે । એક સમય
 કી વાત હૈ કિ વે વિહાર મેં માર્ગ ભૂલ ગયે ઓર ભયંકર કિસી અટવી
 મેં જા પહુંચે । વહાં પહુંચ કર વે દેખતે કયા હૈં કિ કહીં પર ઇધર ઉધર
 મૃગોં કા કુણ્ડ દોંડ રહા હૈ, કહીં પર શ્રંગાલ ફિક્કાર કર રહે હૈં

ક્ષુધા પરિપહને જીતવાની ઉપર દૃષ્ટાંત આ પ્રકારે છે—

ઉઝ્જેની નગરીમાં ગજમિત્ર નામનો એક શેઠ રહેતો હતો. તેને એક
 પુત્ર હતો તેનું નામ દૃઢવીર્ય હતું. એક સમયની વાત છે કે, શેઠની પત્નીના
 દેહાંત થઈ ગયો તેથી શેઠને સંસાર શરીર અને ભોગોથી વિરક્તિ આવી ગઈ
 અને પોતાના પુત્રની સાથે તેણે દીક્ષા ગ્રહણ કરી લીધી. સાધુ ચર્યાની વિધિ
 અનુસાર સશિષ્ય તેઓ વિહાર કરવા લાગ્યા. તેઓ જનતાને ધર્મનો ઉપદેશ
 આપતાં આપતાં સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા ગ્રામનુ
 ગ્રામ વિચરવા લાગ્યા. એક સમયની વાત છે કે વિહારમાં એ મુનિરાજ માર્ગ
 ભૂલી ગયા અને ભયંકર જંગલમાં બંધ પહોંચ્યા. ત્યાં પહોંચતાં તેમણે એવું
 બોલ્યું કે, ત્યાં ત્યાં મૃગોનાં ટોળાં દોડી રહ્યાં છે, કયાંક શિયાળયાં લાગી કરી
 રહ્યાં છે, વાઘ ધુમી રહ્યા છે, સિંહ ગળું રહ્યા છે, કયાંક સિંહગર્જનના ભયથી

=અવ્યાકુલચિત્તઃ, અશનાદેરપ્રાપ્તી દૈન્યં વિપાદં ચ ન કુર્વન્નિત્યર્થઃ, ચરેત્=સંયમમાર્ગે વિચરેત્ । પ્રાકૃતત્વાત્-‘સંકાસ’ ઇતિ વિશેષણસ્ય પરનિપાતઃ ।

(અદીનમણસો-અદીનમનાઃ) આદીનમન હોકર સંયમ કે માર્ગ મેં (ચરે-ચરેત્) વિચરણ કરે.

ભાવાર્થ-વિશિષ્ટ તપસ્યાઓં કે અનુષ્ઠાન કરતે ૨ જિસકે શારીરિક અવયવ કાક કી જંઘા કે પર્વ સમાન વીચ મેં પતલે તથા અન્ત મેં સ્થૂલ હો ગયે હૈં, ઓર ઇસસે જિસકા શરીર અત્યંત કૃશ હો ગયા હૈ, તથા શરીર મેં કૃશતા હોને કી વજહ સે હી જિસકે શરીર કે નસાજાલ સ્પષ્ટ દિખલાઈ દે રહા હૈ એસા સાધુ ઇતના હી આહાર ગ્રહણ કરે કી જિન સે સંયમયાત્રાકા નિર્વાહ હો સકે ! રસાસ્વાદ કે લોભ સે અધિક આહાર ન લેવે । તથા જિસ સમય તપસ્યા કા પારણા કરને કા અવસર આવે ઉસ સમય યદિ આહાર પ્રાપ્ત ન હો તો ખી ચિત્ત મેં કિસી ખી પ્રકાર કા વિપાદ ન કરે ઓર સંયમમાર્ગ મેં સદા સાવધાન બને રહને કી ચેષ્ટા કરતા રહે । કાક કી જંઘા કે પર્વ વીચ મેં પતલે એવં અન્ત મેં સ્થૂલ હોતે હૈં, તપસ્યા કરતે ૨ સાધુ કે ખી જંઘા આદિ અંગ ઇસી તરહ હો જાતે હૈં ।

ચરે-ચરેત્ વિચરણ કરે.

ભાવાર્થ-વિશિષ્ટ તપસ્યાઓનું અનુષ્ઠાન કરતાં કરતાં જેનાં શારીરિક અવયવ કાકની જંઘાના પર્વ સમાન વચમાં પાતેળા તથા અંતમાં સ્થૂળ થઈ ગયેલ હોય અને તેનાથી જેનું શરીર અત્યંત કૃશ થઈ ગયેલ હોય તથા શરીરમાં કૃપતા આવી જવાના કારણે જેના શરીરની નાડીઓ સ્પષ્ટ દેખાઈ આવે છે, એવા સાધુ એટલો જ આહાર ગ્રહણ કરે કે, જેનાથી સંયમ માર્ગનો નિર્વાહ થઈ શકે. રસ સ્વાદના લોભથી અધિક આહાર ન લે. તથા જે સમય તપસ્યાનું પારણું કરવાનો સમય આવે તે વખતે કદાચ આહાર ન મળી શકે તો પણ ચિત્તમાં કોઈ પણ પ્રકારનો વિપાદ ન કરે અને સંયમ માર્ગમાં સદા સાવધાન બની રહેવાની ચેષ્ટા કરતા રહે. કાકની જંઘાનું પર્વ વચમાં પાતળું અને છેડે સ્થૂળ હોય છે, તપસ્યા કરતાં કરતાં સાધુની જંઘા આદિ અંગ આ પ્રકારનાં થઈ બચે છે.

तत्र वने गच्छतस्तस्य गजमित्रमुनेश्चरणतलं विषमविषभरेण कण्टकाग्रेण चिद्ध-
मभवत् । ततो गन्तुमसमर्थोऽसौ निजायुरल्पमवगम्य चतुर्विधाहारस्य प्रत्याख्यानं
कर्तुमुद्यतः सन् शिष्यमवदत्-इतोऽन्यत्र गम्यताम्, अत्र दुःसहः खलु क्षुधापरीपह-
स्तत्र सोढव्यः स्यात् । शिष्योऽवदत्-भदन्त ! यथा छाया शरीरं विहाय नापस-
रति, तथाऽहमपि भवदीयचरणयुगलं परित्यज्य नैव गमिष्यामि । इत्युक्त्वाऽसौ

उधर फैले हुए हैं, लताप्रतानों द्वारा ग्रथित होकर एक जैसे वन गये हैं ।
इस प्रकार यह अटवी अनेक हिंसक जीवों से परिपूर्ण होती हुई जनों
के लिये सर्वथा दुर्गम थी । कुश काश आदि घास से भरे हुए रहने के
कारण यहां के मार्ग बड़े ही विकट बने हुए थे । यहां की भूमि ऊंची नीची
और कांटों से व्याप्त थी ।

इस अटवीमें चलते हुए गजमित्र मुनिराज के पैरों में विषम
वेदना कारक चिपैले कांटे चुमने लगे तथा उनके पैरों के तलिये
कांटों से विंध गये, इससे ये आगे विहार नहीं कर सके । इन्होंने उस
समय अपनी अवशिष्ट आयु बहुत अल्प जानकर चतुर्विध आहार के
परित्याग करने के अभिप्राय से अपने शिष्य से कहा—तुम यहां से
किसी दूसरी जगह चलेजाओ नहीं तो यहां पर मेरे साथ रहने से
तीव्र क्षुधापरीपह तुम्हें सहन करना पड़ेगा । गुरु की इस बात को सुनकर
शिष्य ने कहा, भदन्त ! जिस प्रकार छाया वृक्ष को नहीं छोड़ती है उसी
तरह मैं भी आप के चरणकमलों को छोड़कर अन्यत्र नहीं जा सकता ।

ઓથી આ બધાં વૃક્ષો એકરૂપ બની ગયાં દેખાય છે, આ પ્રકારે તે જંગલ
અનેક હિંસક જીવોથી પરિપૂર્ણ હતું, માણસો માટે દરેક રીતે બયકારક હતું,
જમીન ઉપર ઉગેલાં ઘાસ વગેરેને કારણે કોઈ સરળ માર્ગ દેખાતો નથી, ભૂમિ
ઉંચીનીચી અને કાંટાથી ભરેલી હતી.

આ જંગલમાં ચાલતાં ચાલતાં ગજમિત્ર મુનિરાજના પગોમાં ઘણી
વેદના ઉપબળે તેવા કાંટા લાગવા લાગ્યા આથી તેના પગોનાં તળીયાં કાંટાથી
વિંધાઈ ગયાં જેથી તે આગળ વિહાર કરી શક્યાં નહીં તેમણે તે સમય પોતાની
બાકી રહેલ આયુ ઘણી ટુંકી બાંધીને ચાર પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરવાના
ભાવથી પોતાના શિષ્યને કહ્યું, તમે અહિંથી કોઈ અન્ય સ્થળે વિહાર કરો, આ
સ્થળે મારી સાથે રહેવાથી તમારે જીખનો તીવ્ર પરિપક્વ સહન કરવો પડશે,
ગુરુની આ વાતને સાંભળીને શિષ્યે કહ્યું-ભદન્ત ! જે પ્રકારે છાયા વૃક્ષને છોડતી
નથી તેવી રીતે હું પણ આપના ચરણ કમળને છોડીને અન્યત્ર જઈ શકતો નથી.

કચ્છિદ્વયમીતાશ્રકિતા હસ્તિનઃ પલાયન્તે । કચ્છિચ્છ . વિપમવિપધરા મયંકગઃ
 ફળિનઃ સ્વકીયવિસ્તૃતફળાટોપમુત્થાપ્ય સમુત્તિષ્ઠન્તિ । તથા વૃદ્ધવિપાણધારિણઃ
 સ્થૂલકાયાઃ શ્યામવર્ગા મહિષાઃ કચ્છિચ્છ સજલપદ્મિલે ગતે શરીરપરિવર્તનેન પદ્મલિપ્ત-
 વેદાઃ સન્તિ । કચ્છિચ્છ તથૈવ સૂકરાણાં યુથાઃ પરિભ્રમન્તિ । કચ્છિદ્વિનરાઃ કચ્છિચ્છ
 કુક્ષા અત્યુત્પ્લવન્તિ । લતાવદ્ધીસમાવૃતા નિવિઙ્છાયા વિટપિનઃ પરિતઃ સમુદ્ધ-
 સન્તિ । કચ્છિચ્છાનાવિધાનિ નિકૃષ્ઠાનિ મવનાનોત્ર વિલમન્તિ । કચ્છિચ્છ કણ્ઠકિનો
 વૃક્ષાઃ પરિતઃ પરસ્પરં લતાવિતાનેરુદ્ગ્રયિતાઃ સન્તિ, યેષાં કણ્ઠકા ઇતસ્તતો વિ-
 કીર્ણાઃ સન્તિ । એવં વહુર્હિસસંકુલા કુશકાશાદિવૃણપરિપૂર્ણા નિમ્નોન્નતા કણ્ઠ-
 કિતા જનાનાં દુર્ગમા વનસ્થલી વર્તતે ।

કહીં પર વ્યાગ્ર ઘૂમ રહે હૈં, કહીં પર સિંહ ગર્જ રહે હૈં, કહીં
 પર સિંહ કી ગર્જના કો સુનકર ભય સે ત્રસ્ત ગજરાજ ચિંધાર
 કરતે હુએ ઇધર ઉધર ભાગે ફિર રહે હૈં, કહીં પર વિપમ વિષધર
 સર્પ અપને ફળોં કો ઝપર ઉઠાકર વેઠે હુએ હૈં, કહીં પર જંગલી
 મૈસે કિ જિનકા શરીર ચિલકુલ કાલા હૈ, તથા સીંગ મી જિનકે બડે ૨
 હૈં ઓર જો શરીર મૈં વિશેષ સ્થૂલ હૈં, સજલગર્ત મૈં કિ જિસમૈં કાદવ
 હો રહા હૈ અપને શરીર કો ઇધર સે ઉધર કરતે હુએ કીચડ સે લિપ્ત બને
 હુએ હૈં । ઇસી તરહ કહીં ૨ શૂકરોં કા યુથ મી ઇધર ઉધર ભાગ રહા
 હૈ । કહીં ૨ પર વાનર ઓર કહીં પર વૃક્ષ-રીંછ-ઉછલકૂદ કર રહે હૈં ।
 ઇસ વન મૈં ચારોં ઓર લતાઓં સે વેષ્ટિત વહુત ગહરી છાયા વાલે વૃક્ષોં
 કે જુંડ હૈં । કહીં ૨ પર વૃક્ષોં કા જુંડ એસે માલૂમ પડતે હૈં જૈસે માનો
 મકાન હી લહે હુએ હૈં । કહીં ૨ પર કાંટેદાર વૃક્ષ કિ જિનકે કાંટે ઇધર

ત્રાસીને હાથી ચિત્કાર કરતાં અહિં તહિં નાસભાગ કરી રહ્યા છે, કયાંક
 વિષમ વિપધરા પોતાની કુલોને ઉંચી કરીને બેઠા છે, કયાંક જંગલી ભેંસે કે
 બેનાં શરીર એકદમ કાળાં છે અને બેનાં શીંગ લાંબાં છે અને શરીર બેનાં
 અલમસ્ત છે તે જળથી ભરેલા ખાડાઓમાં બેમાં કાદવ ભરેલ છે તેમાં આળોટી
 પોતાના શરીરને કીચડથી ખરડાવી રહેલ છે, આવી રીતે ડુકરોનાં જુથો પણ
 અહિં તહિં ભાગતાં નજરે પડે છે, કયાંક કયાંક વાનર અને રીંછ કુદાકુદ
 કરતાં દેખાય છે. એ જંગલ ચારે તરફથી મોટાં વૃક્ષો અને તેની ડાળીયો
 તથા અન્ય વેલા પાનથી છવાઈ રહેલ છે, કોઈ વૃક્ષનાં જુંડ એવાં અરસપરસ
 મળી ગયાં દેખાય છે કે બાજુ તેની નીચે મઝાન જેવું બની ગયેલ છે, કોઈ
 સ્થળે કાંટાવાળાં વૃક્ષોથી તેના કાંટા જમીન ઉપર જ્યાં ત્યાં પડ્યા વેલા-

યા સા રૂપવિનાશિની સ્મૃતિહરી પઞ્ચેન્દ્રિયાકર્પિણી,
ચક્ષુઃશ્રોત્રલલાટદીનકરણી સંક્લેશસંપાદિની ।
બન્ધૂનાં ત્યજની વિદેશગમની ધૈર્યસ્ય વિઘ્નંસિની,
સેયં તિષ્ઠતિ સર્વભૂતદમની પ્રાણાપહારિક્ષુધા ॥ ૧ ॥

અપરં ચ—

વિવેકો હ્રીર્દયા ધર્મો, વિદ્યા સ્નેહસ્ત્ર સૌમ્યતા ।

સત્ત્વં ચ જાયતે નૈવ, ક્ષુધાર્તસ્ય શરીરિણઃ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ॥

તથાપિ સ દૃઢવીર્યશિષ્યઃ કસ્મિન્નપિ નિજાત્મપ્રદેશે કાતરતાં નાશ્રયતિ કિં
જો આત્માકે પ્રતિપ્રદેશમેં વ્યાસ હોકર અપના પ્રયલ પ્રતાપ દિશ્વલાતી હૈ,
જૈસે કહા ભી હૈ—

યહ ક્ષુધા રૂપ કો વિનષ્ટ કર દેતી હૈ, સ્મૃતિ કો ધ્વસ્ત કર
દેતી હૈ, પાંચોં ઇન્દ્રિયોં કી શક્તિ કા હાસ કર દેતી હૈ, ચક્ષુ મેં
શ્રોત્ર મેં એવં લલાટ મેં દિનતા કે નિશાનેંબના દેતી હૈં સંક્લેશ
પરિણામોં કો જાગૃત કરતી રહતી હૈ, બન્ધુઓં કા વિયોગ કરા દેતી હૈ,
વિદેશ મેં વાસ કરા દેતી હૈ, ધૈર્ય કો જડમૂલ સે ઉઘાડ દેતી હૈ,
અધિક કયા કહા જાય યહ ક્ષુધા પ્રાણિયોં કે પ્રાણ કા ભી હરણ કરને
વાલી હૈ ॥ ૧ ॥

ઔર ભી કહા હૈ—ક્ષુધાર્ત પ્રાણી કે વિવેક, લજ્જા, દયા, ધર્મ, વિદ્યા
સ્નેહ, સૌમ્યતા, ચલ આદિ સભી સદ્ગુણ નષ્ટ હો જાતે હૈ ॥ ૨ ॥

મુનિ દૃઢવીર્ય શિષ્ય કી આત્મા કે પ્રતિપ્રદેશ મેં યદ્યપિ ક્ષુધા કી
તીવ્ર વેદના જાગૃત હો રહી થી તૌ ભી વહ કભી ભી કાયર નહીં બના ।

અંદરના ભાગમાં પ્રવેશ કરીને પોતાનો પ્રબળ પ્રભાવ બતાવે છે. કહ્યું પણ છે—

આ ભૂખ રૂપનો નાશ કરે છે, સ્મૃતિનો ધ્વંસ કરે છે, પાંચ
ઇન્દ્રિયની શક્તિઓને ક્ષિણ બનાવી દે છે, આંખ, કાન અને કપાળમાં દિનતાની
નિશાની જગાડે છે. કલેશના પરિણામોને ભગ્નત કરે છે, બંધુઓનો વિયોગ કરાવે
છે, વિદેશમાં વાસ કરાવે છે, ધૈર્યને જડમુળથી ઉખેડી નાખે છે, છેલ્લે છેલ્લે
આ ભૂખ પ્રાણીઓના પ્રાણોત્તું પણ હરણ કરે છે. ॥ ૧ ॥

ફરી પણ કહ્યું છે ભૂખથી પીડાતા પ્રાણીમાં વિવેક, લજ્જા, દયા, ધર્મ
વિદ્યા, સ્નેહ, સૌમ્યતા, બળ, આદિ સઘળા સદ્ગુણો નાશ પામે છે. ॥ ૨ ॥

મુનિ દૃઢવીર્ય શિષ્યના આત્માના ઉંડાણમાં બે કે, ભૂખની તીવ્ર
વેદના થઈ હતી. તો પણ કોઈ વખત કાયર ન બન્યો. પોતાના

તત્રૈવ નિવસતિ સ્મ । ગુરુથ ચતુર્વિધાહારસ્ય પ્રત્યાખ્યાનં કૃતવાન્ । સ ચ શિષ્યઃ
સ્વગુરું પરિતસ્તદ્ગ્રહણાર્થં પરિભ્રમંસ્તિષ્ઠતિ, તત્ર વિવિધેષુ મનોદ્વેષુ રુચિરેષુ ફલેષુ
સત્સ્વપિ ન તાનિ ગ્રોટયિતુમિચ્છતિ, વૃદ્ધાપસ્તલે પતિતાન્યપિ ફલાનિ સચિત્તતયા
કેનાપ્યદત્તતયા ચ નૈવ ગૃહ્ણતિ । આહારાર્થં કિંચિદ્ગં ગત્વા ગત્વા પ્રતિનિવર્તતે ।
વસતેરભાવાત્ ક્યચિદાહારો ન લભ્યતે । માર્ગસ્ય દુર્ગમતયા કશ્ચિત્ પથિકોઽપિ
નાયાતિ, યસ્માદશનં ગૃહ્ણીયાત્ । પુનરુજ્જ્વલભાવેન ગુરોર્વૈયાદૃત્યં કરોતિ । યદ્યપિ
તદા ક્ષુધાયા વલં વર્ધમાનમાત્મનઃ પ્રતિપ્રદેશં વ્યાપ્તું પ્રવર્તતે । યતઃ—

શિષ્યની આ પ્રકારની વાત સાંભળીને ગુરુ મહારાજે ચાર પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરી દીધો. શિષ્યે આ પરિસ્થિતિમાં પોતાના ગુરુ મહારાજની સેવા કરવાનો પ્રારંભ કર્યો. તે જંગલમાં જો કે, અનેક પ્રકારનાં સુંદર અને સ્વાદિષ્ઠ એવાં ફળો હતાં તો પણ તેને તોડવાનો શિષ્યે સ્વપ્નામાં પણ વિચાર ન કર્યો. વૃદ્ધોની નીચે તૂટીને પડેલાં જે ફળ દેખાતાં તેને પણ સચિત્ત માનીને ગ્રહણ કર્યાં નહીં તથા કોઈ કોઈ ફળ અચિત્ત હોવા છતાં આપનારના અભાવથી તે અદત્ત હોવાથી લીધાં નહીં. શિષ્ય આહાર માટે જતો અને થોડે દૂર જઈ ત્યાંથી પાછો ફરી આવતો કેમકે, એક તો ત્યાં વસ્તી હતી નહીં. માટે ત્યાં આહારનો કોઈ જોગ મળતો ન હતો, બીજું માર્ગ અત્યંત દુર્ગમ હોવાથી તે રસ્તે કોઈ પણ વટેમાર્ગ આવતો જતો ન હતો. પરંતુ શિષ્ય અનન્ય ભાવથી ગુરુની સેવા કરતો હતો. જૂથ એક એવી વસ્તુ છે કે જે આત્માની

શિષ્યની આ પ્રકારની વાત સાંભળીને ગુરુ મહારાજે ચાર પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરી દીધો. શિષ્યે આ પરિસ્થિતિમાં પોતાના ગુરુ મહારાજની સેવા કરવાનો પ્રારંભ કર્યો. તે જંગલમાં જો કે, અનેક પ્રકારનાં સુંદર અને સ્વાદિષ્ઠ એવાં ફળો હતાં તો પણ તેને તોડવાનો શિષ્યે સ્વપ્નામાં પણ વિચાર ન કર્યો. વૃદ્ધોની નીચે તૂટીને પડેલાં જે ફળ દેખાતાં તેને પણ સચિત્ત માનીને ગ્રહણ કર્યાં નહીં તથા કોઈ કોઈ ફળ અચિત્ત હોવા છતાં આપનારના અભાવથી તે અદત્ત હોવાથી લીધાં નહીં. શિષ્ય આહાર માટે જતો અને થોડે દૂર જઈ ત્યાંથી પાછો ફરી આવતો કેમકે, એક તો ત્યાં વસ્તી હતી નહીં. માટે ત્યાં આહારનો કોઈ જોગ મળતો ન હતો, બીજું માર્ગ અત્યંત દુર્ગમ હોવાથી તે રસ્તે કોઈ પણ વટેમાર્ગ આવતો જતો ન હતો. પરંતુ શિષ્ય અનન્ય ભાવથી ગુરુની સેવા કરતો હતો. જૂથ એક એવી વસ્તુ છે કે જે આત્માની

યા સા રૂપચિનાશિનો સ્મૃતિહરી પઞ્ચેન્દ્રિયાકર્પિણી,
ચક્ષુઃશ્રોત્રલલાટદીનકરણી સંક્લેશસંપાદિની ।
ચન્ધૂનાં ત્યજની વિદેશગમની ધૈર્યસ્ય વિઘ્નંસિની,
સેયં તિષ્ઠતિ સર્વભૂતદમની પ્રાણાપહારિક્ષુધા ॥ ૧ ॥

અપરં ચ—

વિવેકો હ્રીર્દયા ધર્મો, વિદ્યા સ્નેહશ્ચ સૌમ્યતા ।

સત્ત્વં ચ જાયતે નૈવ, ક્ષુધાર્તસ્ય શરીરિણઃ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ॥

તથાપિ સ દૃઢવીર્યશિષ્યઃ કસ્મિન્નપિ નિજાત્મપ્રદેશે કાતરતાં નાત્રયતિ કિં

જો આત્માકે પ્રતિપ્રદેશમેં વ્યાસ હોકર અપના પ્રયત્ન પ્રતાપ દિશ્વલાતી હૈ,
જૈસે કહા ભી હૈ—

યહ ક્ષુધા રૂપ કો વિનષ્ટ કર દેતી હૈ, સ્મૃતિ કો ધ્વસ્ત કર
દેતી હૈ, પાંચોં ઇન્દ્રિયોં કી શક્તિ કા હાસ કર દેતી હૈ, ચક્ષુ મેં
શ્રોત્ર મેં એવં લલાટ મેં દિનતા કે નિશાનેંચના દેતી હૈં સંક્લેશ
પરિણામોં કો જાગૃત કરતી રહતી હૈ, ચન્ધુઓં કા વિયોગ કરા દેતી હૈ,
વિદેશ મેં વાસ કરા દેતી હૈ, ધૈર્ય કો જડમૂલ સે ઉઠાડ દેતી હૈ,
અધિક ક્યા કહા જાય યહ ક્ષુધા પ્રાણિયોં કે પ્રાણ કા ભી હરણ કરને
વાલી હૈ ॥ ૧ ॥

ઔર ભી કહા હૈ—ક્ષુધાર્ત પ્રાણી કે વિવેક, લજ્જા, દયા, ધર્મ, વિદ્યા
સ્નેહ, સૌમ્યતા, બલ આદિ સમી સદ્ગુણ નષ્ટ હો જાતે હૈ ॥ ૨ ॥

મુનિ દૃઢવીર્ય શિષ્ય કી આત્મા કે પ્રતિપ્રદેશ મેં યદ્યપિ ક્ષુધા કી
તીવ્ર વેદના જાગૃત હો રહી થી તૌ ભી વહ કમી ભી કાયર નહીં બના ।

અંદરના ભાગમાં પ્રવેશ કરીને પોતાનો પ્રબળ પ્રભાવ બતાવે છે. કહ્યું પણ છે—

આ ભૂખ રૂપનો નાશ કરે છે, સ્મૃતિનો ધ્વંસ કરે છે, પાંચ
ઇન્દ્રિયની શક્તિઓને ક્ષિણ બનાવી દે છે, આંખ, કાન અને કપાળમાં દિનતાની
નિશાની જગાડે છે. કલેશના પરિણામોને બાતલ કરે છે, બંધુઓનો વિયોગ કરાવે
છે, વિદેશમાં વાસ કરાવે છે, ધૈર્યને જડમુળથી ઉખેડી નાખે છે, છેલ્લે છેલ્લે
આ ભૂખ પ્રાણીઓના પ્રાણોનું પણ હરણ કરે છે. ॥ ૧ ॥

ફરી પણ કહ્યું છે ભૂખથી પીડાતા પ્રાણીમાં વિવેક, લજ્જા, દયા, ધર્મ
વિદ્યા, સ્નેહ, સૌમ્યતા, બળ, આદિ સઘળા સદ્ગુણો નાશ પામે છે. ॥ ૨ ॥

મુનિ દૃઢવીર્ય શિષ્યના આત્માના ઉંડાણમાં જો કે, ભૂખની તીવ્ર
વેદના થઈ હતી તો પણ કોઈ વખત કાયર ન બન્યો. પોતાના

તુ કર્મનિર્જરાર્થં ક્ષુધાપરીપહં વિજિત્ય ગુરુસેવાપરાયણ ઇચાસીત્ । તતો ગજમિત્ર-
 મુનિઃ કણ્ઠકજનિતામસદ્ભવેદનાં સદ્માનઃ સમાધિભાવેન નિજાયુઃ સમાપ્ય પ્રથમ-
 કલ્પે વૈમાનિકદેવત્વં પ્રાપ્તઃ । અયાસી દેવઃ સ્વકીયપૂર્વભગવદધિના વિજ્ઞાય,
 સ્વદિવ્યશક્ત્યા શિષ્યરક્ષાર્થં તત્સમીપપ્રદેશે વસતિં નિર્માય સ્વયં મનુષ્યરૂપઃ સન્
 દૃઢવીર્યશિષ્યં પ્રાહ—શુને ! ઇતઃ સમીપે વસતિર્દિશ્યતે, અશનપાનમાનીયતામ્ ।
 શિષ્યો વદતિ—અયમસ્તિ કથિદેવપપ્તઃ, ઇહ હિ નાસીત્ પુરા કાપિ વસતિઃ, ભૂમિ-
 અપને ધીર્યોલ્લાસ સે વસને ઇસ પરીપહ્ કો સ્તૂય સહન કિયા ।
 ઔર ગુરુ મહારાજ કી સેવા ભક્તિ કો, ક્યોં કિ શિષ્ય કો યહ પૂર્ણ-
 શ્રદ્ધા થી કિ કર્મનિર્જરા કે લિયે ક્ષુધાપરીપહ્ કો સહન કરના હી
 ચાહિયે । પૈર મેં લગે હુએ કાંટે કી અસહ્ય વેદના પ્રતિક્ષણ વઢને લગી,
 અપની આયુ કે અન્ત સમયમેં સમાધિભાવ સે કાલધર્મ કો પ્રાપ્ત હોકર
 પ્રથમકલ્પ મેં વૈમાનિક દેવ હુએ । ઇન્હોં ને દેવ કી પર્યાય મેં અપને પૂર્વભવ
 કો અવધિજ્ઞાન સે જાનકર અપને શિષ્ય કી પ્રાણરક્ષા નિમિત્ત દિવ્યશક્તિ
 સે વસતિ સમીપ પ્રદેશ મેં એક વસતિ કા નિર્માણ કિયા ઔર સ્વયં
 મનુષ્ય કે રૂપ મેં પ્રગટ હોકર શિષ્ય સે કહને લગે કિ યહાં સે નજદીક
 હી એક વસતિ દિલાઈ દેતી હૈ અતઃ વહાં સે આપ આહાર પાની લે આઈયે ।
 દેવ કી ઇસ પ્રકાર વાત કો સુનકર શિષ્ય ને ચિત્ત મેં વિચાર કિયા—યહ
 કોઈ દેવ છલના કરતા હૈ । મૈં પહિલે યહાં કઈ વાર આયા હૂં પરન્તુ
 મુક્તે તો કોઈ વસતિ નજર નહીં આઈ, ઇસલિયે યહાં સે આહાર પાની

વિર્યોદ્ધાસથી તેણે આ પરીપહને ખૂબ સહન કર્યો અને ગુરુ મહારાજની
 સેવા ભક્તિ કરી. કેમકે, શિષ્યને એ પૂર્ણ શ્રદ્ધા હતી કે, કર્મનિર્જરા
 માટે ક્ષુધા પરિપહ સહન કરવો જોઈએ. પગમાં લાગેલા કાંટાઓની વેદના
 શોષ ખરોજ વધવા લાગી, પોતાના આયુના અંતસમયમાં સમાધિભાવથી ગુરુજી
 કાળ ધર્મને પામી પ્રથમ કલ્પમાં વૈમાનિક દેવ બન્યા. તેઓએ દેવની પર્યા-
 વમાં પોતાના પુર્વભવને અવધિજ્ઞાનથી જાણીને પોતાના શિષ્યની પ્રાણરક્ષા
 નિમિત્ત દિવ્ય શક્તિથી તેના સમીપપ્રદેશમાં એક વસતિનું નિર્માણ કર્યું અને
 પોતે મનુષ્યના રૂપમાં પ્રગટ બનીને શિષ્યને કહેવા લાગ્યા કે, અહિંથી નજીક
 જ એક વસતિ દેખાય છે માટે ત્યાંથી તમે આહાર પાણી લઈ આવો, દેવની
 આ પ્રકારની વાતને સાંભળીને શિષ્યે ચિત્તમાં વિચાર કર્યો કે, આ કોઈ દેવ
 મારી છલના કરે છે. હું પહેલાં કેટલીએ વખત ગયો છું પરંતુ મને કોઈ
 વસતિ દેખાઈ નથી, માટે ત્યાંથી આહાર પાણી લાવવો ઉચિત નથી. શિષ્યની આ

સ્વત્યા પ્રાગેવ દૃષ્ટાઽસ્માભિઃ, અતોઽત્રાશનપાનં ન ગ્રહીપ્યામિ । તતોઽસૌ પ્રસન્નમનસા
સાક્ષાદેવરૂપં ધૃત્વા દૃઢવીર્યમુનિર્દુઃસહં ક્ષુધાપરીપદં સદમાનઃ ક્ષપકથ્રેણીમારુદ્ય પ્રશસ્તધ્યા-
નેન શુભાધ્યવસાયેન કેવલજ્ઞાનં પ્રાપ્ય મોક્ષં પ્રાપ્તવાન્ । સ ચ દેવસ્તસ્ય કેવલોત્સવં
નિર્વાણોત્સવં ચ કૃત્વા સ્વસ્થાનં ગતઃ । एवं सर्वमुनिभिरपि दृढवीर्यमुनिवत् क्षुधा-
परीपदः सोढव्यः ॥ ૩ ॥

ક્ષુધાં સદમાનસ્યૈપનીયાહારાર્થં મિશ્નાચર્યાં પર્યટતો મુનેર્યદિ શ્રમાદિજનિતા
પિપાસા સ્યાત્તર્હિ સાઽપિ સોઢવ્યેત્યાશયેન પિપાસાપરીપદ્ધત્યં ગ્રાહ—

मूलम्—ततो पुष्टो पिपासां ए, दोगुच्छी लज्जसंजए ।

सीओदगं न सेविजा, वियंडस्सेसणं चैरे ॥ ૪ ॥

ગ્રહણ કરના ઉચિત નહીં હૈ । શિષ્ય કી હસ પ્રકાર દૃઢ વિચારધારા કો
દેખકર વહ દેવ વહુત હી પ્રસન્ન હુઆ ઓર સાક્ષાત્ રૂપ મેં
પ્રકટ હોકર શિષ્ય કી વહુત પ્રશંસા કરને લગા, ચોલા-આપ ધન્ય
હેં વ્રત કે પાલન કરને મેં અતીવ દૃઢપ્રતિજ્ઞ હેં । શિષ્ય ને દુઃસહ ક્ષુધા
પરીપદ્ધ કો સહન કરને સે ક્ષપકથ્રેણી પર આરુઢ હોકર પ્રશસ્ત-ધ્યાન
અં શુભાધ્યવસાય કે વલ પર કેવલજ્ઞાન કા લાભ કર મોક્ષ કો પ્રાપ્ત
કિયા । હનકે ગુરુ મહારાજ કા જીવ જો દેવ થા ઉસને અપને પૂર્વપર્યાય
કે શિષ્ય કો પ્રાપ્ત હુએ કેવલજ્ઞાન કે અં નિર્વાણ કે ઉત્સવ કો મના-
કર અપને સ્થાન ગયા । હસી તરહ પ્રત્યેક મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ
દૃઢવીર્યમુનિ કી તરહ ક્ષુધાપરીપદ્ધ કો સહન કરે ॥ ૩ ॥

પ્રકારની દૃઢ ધારણા બેધને તે દેવનો જીવ ખૂબજ પ્રસન્ન થયો. અને પ્રગટ
થયેને શિષ્યની ખૂબ પ્રશંસા કરવા લાગ્યા. તેમણે કહ્યું—આપને ધન્યવાદ છે,
મતનું પાલન કરવામાં દૃઢ પ્રતિજ્ઞ છે. શિષ્યે દુઃસહ જૂખનો પરિપદ સહન
કરવાથી ક્ષપકથ્રેણી ઉપર આરુઢ બની પ્રશસ્ત ધ્યાન અને શુભ અધ્યવસાયના
બળ ઉપર કેવળજ્ઞાનનો લાભ કરી મોક્ષને પ્રાપ્ત કર્યો. દેવ કે જે તેના
ગુરુ મહારાજનો જીવ હતો તેણે પોતાના પૂર્વ પર્યાયના શિષ્યને પ્રાપ્ત થયેલ
કેવળજ્ઞાનના અને નિર્વાણના ઉત્સવને મનાવીને પોતાને સ્થાને ગયા. આવી
રીતે પ્રત્યેક મુનિનું કર્તવ્ય છે કે, તે દૃઢવીર્ય મુનિની માફક ક્ષુધા પરિપદને
સહન કરે. ॥ ૩ ॥

छाया—ततः स्पृष्टः पिपासया, जुगुप्सी लज्जासंयतः ।

शीतोदकं न सेवेत विकृतस्य एषणां चरेत् ॥ ४ ॥

टीका—‘तओ पुटो’ इत्यादि ।

ततः=क्षुधापरीषद्दानन्तरं, पिपासया=वृषया, स्पृष्टः=व्याप्तः सन्, जुगुप्सी=जुगुप्सकः अनाचारविरत इत्यर्थं तथा—लज्जासंयतः—लज्जायां=संयमे सम्पत् यत्नवानित्यर्थः । साधुः शीतोदकं=सचित्तं जलं ‘न सेवेत’ न व्यापृणयात् किं तु विकृतस्य=यवतण्डुलद्राक्षादिधावनोत्कालनादिना वर्णगन्धरसस्पर्शैरन्यथाभावं प्राप्तस्य प्रासुकस्य जलस्य, प्रासुकजलं त्वेकविंशतिविधं भवतीत्याचाराद्गमूत्रे द्वितीयश्रुतस्कन्धे नवमाध्ययने निगदितम्—

क्षुधापरीषद् को सहन करने वाला मुनि को आहार की गवेयणा करते हुए पिपासा लगे, तथा अहार करने के बाद पिपासा लगे तो उसको सहन करना चाहिये, इस आशय से अब सूत्रकार पिपासापरीषद् को कहते हैं—“तओ पुटो” इत्यादि ।

(तओ—ततः) क्षुधापरीषद् के अनन्तर (पिपासाए पुटो—पिपासया—स्पृष्टः) पिपासा से व्याप्त होने पर भी (दोगुच्छी—जुगुप्सी) अनाचार-विरत तथा (लज्जसंजए—लज्जासंयतः) संयम की रक्षा करने में प्रयत्न-शील साधु (सीओदगं न सेविज्जा—शीतोदकं न सेवेत) सचित्त जल का सेवन नहीं करे । किन्तु (वियडस्सेसणं चरे—विकृतस्य एषणां चरेत्) विकृत-यव, तण्डुल, एवं द्राक्षा आदि के घोने से अथवा उनके उकालने से जिनके वर्ण, गंध, रस तथा स्पर्श का परिवर्तन हो चुका है ऐसे प्रासुक जल की गवेयणा करे । तात्पर्य यह है कि पिपासा से पीडित होने

क्षुधा परिषद् सहन करनेवाले मुनिने आहार किया पछी तरस लागे तेने सहन करवी ओई ओ आ आशयथी सूत्रकार पिपासा परिषद् कहे छे. तओ पुटो—इत्यादि.

तओ—ततः क्षुधा परिषद्ना अनन्तर पिपासाए पुटो—पिपासयास्पृष्टः तरसथी व्यापृत होवा छतां अनाचार विरत तथा दोगुच्छी—जुगुप्सी अनाचार विरत तथा लज्जासंजए—लज्जासंयतः संयमनी रक्षा करवाभां प्रयत्नशील साधु सीओदगं न सेविज्ज—शीतोदकं न सेवेत सचित्त जलनुं सेवन न करे. किंतु वियडस्सेसणं चरे—विकृतस्य एषणां चरेत् विकृत (अचित्त)—यव, ओआ, द्राक्ष वगेरेना धोवाथी अथवा ओने उकाणवाथी तेना वषुं, गंध, रस तथा स्पर्शनुं परिवर्तन यई चुकथुं छे ओवा प्रासुक जलनी गवेयणा करे. तात्पर्य ओ छे के, तरसथी पीडाता होवा छतां पछ साधुओ सचित्त प य

- (૧) ઉસ્સેદ્દમં-ઉત્સેદિમં-પિષ્ટોત્સેદનાર્થમુદકમ્ । રોટિકાયાં કૃતાયાં યેનો-
દકેન પિષ્ટસ્થાલ્યાદિધાવનં ક્રિયતે તદિત્યર્થઃ ।
- (૨) સંસેદ્દમં-સંસેકિમં-ઉત્કાલિતાનાં પત્રશાકાદીનામનપગતવિક્તાદિરસાપ-
સારણાર્થં શૈત્યાર્થં વા યેનોદકેન ધાવનં ક્રિયતે, તદિત્યર્થઃ ।
- (૩) ચાઉલોદગં-તણ્ડુલોદકં-તણ્ડુલધાવનોદકમ્ ।
- (૪) તિલોદગં-તિલોદકં-તિલધાવનોદકમ્ ।
- (૫) તુસોદગં-તુપોદકં-તુપધાવનોદકમ્ ।
- (૬) જવોદગં-યવોદકં-યવધાવનોદકમ્, અત્ર 'યવ' હત્યુપલક્ષણં તેન વ્રીહ્યા-
દિધાવનોદકસ્યાપિ ગ્રહણમ્ ।

પર 'મી સાધુ કો ચાહિયે કિ વહ કમો મી સચિત્ત અનેપનીય જલ કા
ઉપયોગ ન કરે । પ્રાસુક જલ ફક્ત ૨૧ પ્રકાર કા હોતા હૈં યહ વાત
આચારાંગસૂત્ર મેં દ્વિતીય શ્રુતસ્કન્ધ કે નવમ અધ્યયન મેં કહી ગઈ હૈં-

- ૧ ઉસ્સેદ્દમં-ભોજન યન ચુકને કે વાદ આટે કી ધાલી આદિકા ધોવન ।
- ૨ સંસેદ્દમં-શાકપત્રાદિકોં કે ઉચાલને પર ઉનકા કઢુઆપન આદિ
નિકાલને કે લિયે અથવા ઉન્હેં ઠંઢે કરને કે લિયે જો
જલ ઉપર સે ડાલા જાતા હૈં વહ ।

- ૩ ચાઉલોદકં-ચાવલોં કા ધોવન ।
- ૪ તિલોદગં-તિલોં કા ધોવન ।
- ૫ તુસોદગં-તુપોં કો ધોને સે નિકલા હુઆ જલ ।
- ૬ જવોદગં-જો આદિકા ધોયા હુઆ જલ ।

જળનો ઉપયોગ કદી પણ ન કરવો બેઈએ. પ્રાસુક જળ એકવીસ પ્રકારનું
હોય છે આ વાત આચારાંગસૂત્રમાં બીજા શ્રુતસ્કન્ધના નવમાં અધ્યયનમાં
કહેવામાં આવેલ છે.

- | | |
|-------------|--|
| ઉસ્સેદ્દમં- | ૧ ભોજન બની ચુક્યા પછી આટાની થાળી વિગેરેનું ધોવણું. |
| સંસેદ્દમં- | ૨ શાક પત્રાદિકે ઉકાળવાથી તેના કડવા પછા વગેરેને કાઢવા
માટે અથવા તેને ઠંડા કરાવવા માટે જે પાણી ઉપરથી નાખ-
વામાં આવે છે તે. |
| ચાઉલોદગં- | ૩ ચાખાનું ધોવણું. |
| તિલોદગં- | ૪ તલનું ધોવણું. |
| તુસોદગં- | ૫ તુપોને ધોવાથી નિકળેલ પાણી. |
| જવોદગં- | ૬ જવ આદિને ધોતાં નિકળેલ પાણી. |

छाया—ततः स्पृष्टः पिपासया, जुगुप्सी लज्जासंयतः ।

शीतोदकं न सेवेत विकृतस्य एषणां चरेत् ॥ ४ ॥

टीका—‘तओ पुटो’ इत्यादि ।

ततः=क्षुधापरीपहानन्तरं, पिपासया=वृषया, स्पृष्टः=व्याप्तः सन्, जुगुप्सी=जुगुप्सकः अनाचारविरत इत्यर्थं तथा-लज्जासंयतः-लज्जायां=संयमे सम्यग् यत्नवानित्यर्थः । साधुः शीतोदकं=सचित्तं जलं ‘न सेवेत’ न व्यापृणयात् किं तु विकृतस्य=यवतण्डुलद्राक्षादिधावनोत्कालनादिना वर्णगन्धरसस्पर्शैरन्यथाभावं प्राप्तस्य प्रासुकस्य जलस्य, प्रासुकजलं त्वेकविंशतिविधं भवतीत्याचाराङ्गमूत्रे द्वितीयश्रुतस्कन्धे नवमाध्ययने निगदितम्—

क्षुधापरीपह को सहन करने वाला मुनि को आहार की गवेषणा करते हुए पिपासा लगे, तथा अहार करने के बाद पिपासा लगे तो उसको सहन करना चाहिये, इस आशय से अथ सूत्रकार पिपासापरीपह को कहते हैं—“तओ पुटो” इत्यादि ।

(तओ-ततः) क्षुधापरीपह के अनन्तर (पिपासाए पुटो-पिपासया-स्पृष्टः) पिपासा से व्याप्त होने पर भी (दोगुच्छी-जुगुप्सी) अनाचार-विरत तथा (लज्जसंजए-लज्जासंयतः) संयम की रक्षा करने में प्रयत्न-शील साधु (शीतोदकं न सेवेत-शीतोदकं न सेवेत) सचित्त जल का सेवन नहीं करे । किन्तु (वियडसेसणं चरे-विकृतस्य एषणां चरेत्) विकृत-यव, तण्डुल, एवं द्राक्षा आदि के धोने से अथवा उनके उकालने से जिनके वर्ण, गंध, रस तथा स्पर्श का परिवर्तन हो चुका है ऐसे प्रासुक जल की गवेषणा करे । तात्पर्य यह है कि पिपासा से पीड़ित होने

क्षुधा परिषद सहन करनेवाले मुनिने आहार किया पछी तरस लागे तेने सहन करवी ओई ओ. आ. आशयथी सूत्रकार पिपासा परिषद कहे छे. तओ पुटो-इत्यादि.

तओ-ततः क्षुधा परिषदना अनन्तर पिपासाए पुटो-पिपासयास्पृष्टः तरसयी व्यापृत होवा छतां अनाचार विरत तथा दोगुच्छी-जुगुप्सी अनाचार विरत तथा लज्जसंजए-लज्जासंयतः संयमनी रक्षा करवामां प्रयत्नशील साधु शीतोदकं न सेवेत-शीतोदकं न सेवेत सचित्त जलन सेवन न करे. किंतु वियडसेसणं चरे-विकृतस्य एषणां चरेत् विकृत (अचित्त)-यव, ओभा, द्राक्ष वगेरेना धोवाथी अथवा ओने उकालवाथी तेना वषु, गंध, रस तथा स्पर्शनुं परिवर्तन यई युक्तुं छे ओवा प्रासुक जलनी गवेषणा करे. तात्पर्य ओ छे के, तरसयी पीडाता होवा छतां पछु साधुओ सचित्त य

- (૧) ઉસ્સેહમં-ઉત્સ્વેદિમં-પિષ્ટોત્સ્વેદનાર્થમુદકમ્ । રોટિકાયાં કૃતાયાં. યેનો-
દકેન પિષ્ટસ્થાલ્યાદિધાવનં ક્રિયતે તદિત્યર્થઃ ।
- (૨) સંસેહમં-સંસેકિમં-ઉત્કાલિતાનાં પત્રશાકાદીનામનપગતતિક્તાદિરસાપ-
સારણાર્થં શૈત્યાર્થં વા યેનોદકેન ધાવનં ક્રિયતે, તદિત્યર્થઃ ।
- (૩) ચાઉલોદગં-તણ્ડુલોદકં-તણ્ડુલધાવનોદકમ્ ।
- (૪) તિલોદગં-તિલોદકં-તિલધાવનોદકમ્ ।
- (૫) તુસોદગં-તુપોદકં-તુપધાવનોદકમ્ ।
- (૬) જવોદગં-યવોદકં-યવધાવનોદકમ્, અત્ર 'યવ' ઇત્યુપલક્ષણં તેન વ્રીહ્યા-
દિધાવનોદકસ્યાપિ ગ્રહણમ્ ।

પર ખી સાધુ કો ચાહિયે કિ વહ કમો ખી સચિત્ત અનેપનીય જલ કા
ઉપયોગ ન કરે । પ્રાસુક જલ ફક્કીસ ૨૧ પ્રકાર કા હોતા હૈ વહ વાત
આચારાંગસૂત્ર મેં દ્વિતીય શ્રુતસ્કન્ધ કે નવમ અધ્યયન મેં કહી ગઈ હૈ-

- ૧ ઉસ્સેહમં-ભોજન વન ચુકને કે વાદ આટે કી થાલી આદિકા ધોવન ।
- ૨ સંસેહમં-શાકપત્રાદિકોં કે ઉવાલને પર ઉનકા કહ્ડુઆપન આદિ
નિકાલ ને કે લિયે અથવા ઉન્હેં ઠંડે કરને કે લિયે જો
જલ ઉપર સે ડાલા જાતા હૈ વહ ।

- ૩ ચાઉલોદકં-ચાવલોં કા ધોવન ।
- ૪ તિલોદગં-તિલોં કા ધોવન ।
- ૫ તુસોદગં-તુપોં કો ધોને સે નિકલા હુઆ જલ ।
- ૬ જવોદગં-જો આદિકા ધોયા હુઆ જલ ।

જળનેા ઉપયોગ કદી પણ ન કરવો જોઈએ. પ્રાસુક જળ એકવીસ પ્રકારનું
હોય છે આ વાત આચારાંગસૂત્રમાં બીજા શ્રુતસ્કન્ધના નવમાં અધ્યયનમાં
કહેવામાં આવેલ છે.

- | | |
|-----------|---|
| ઉસ્સેહમં- | ૧ લોજન બની ચુક્યા પછી આટાની થાળી વિગેરેનું ધોવણુ. |
| સંસેહમં- | ૨ શાક પત્રાદિકને ઉકાળવાથી તેના કડવા પશ્ચાત્તઃ વગેરેને કાઢવા
માટે અથવા તેને ઠંડા કરાવવા માટે જે પાણી ઉપરથી નાખ-
વામાં આવે છે તે. |
| ચાઉલોદગં- | ૩ ચોખ્ખાનું ધોવણુ. |
| તિલોદગં- | ૪ તલનું ધોવણુ. |
| તુપોદગં- | ૫ તુપોને ધોવાથી નિકળેલ પાણી. |
| જવોદગં- | ૬ જવ આદિને ધોતાં નિકળેલ પાણી. |

અથ ગ્રામનગરાદિभ्यो वहिः क्वचिदटव्यादिमार्गे विहरन् मुनिर्यदि पिपासया पीडितः स्यात् तदाऽपि तत्परीपहः सोढव्य इत्याह—

मूलम्—छिन्नावाएसु पंथेसु, आउरे सुपिवासिए ।

परिसुक्कमुहादीणे, तं तितिक्षेव परीसंहं ॥ ५ ॥

છાયા—છિન્નાપાતેષુ પથિષુ આતુરઃ સુપિપાસિતઃ ।

परिशुष्कमुखादीनः तं तितिक्षेव परीपहम् ॥ ५ ॥

ટીકા—‘છિન્નાવાएसु’ इत्यादि ।

छिन्नापातेषु=छिन्नः=अपगतः, आपातः—जनानां गमनागमनरूपः संचारो यत्र तेषु, पथिषु=मार्गेषु गच्छन्निति शेषः, आतुरः तृपया व्याप्तकायः, अत एव सुपिपासितः=अतिशयेन तृपितः, अत एव परिशुष्कमुखादीनः=परीशुष्कमुखः गत-निष्ठीवनतया शुष्कतालुरसनोष्ठः, स चासावदीनश्च परिशुष्कमुखादीनः, परिशुष्क-

ગ્રામ નગર આદિ સે બાહર કિસી અટવી-આદિ કે માર્ગ મેં વિચરતે હુણ સાધુ કો યદિ પિપાસા સે આકુલતા ઉત્પન્ન હો જાવે તો બી ઉસે ઉસ દ્વિતીય ક્ષુધાપરીપહ કો સહન કરના ચાહિયે યહ વાત ઇસ નીચે કી ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં—‘છિન્નાવાएसु’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(છિન્નાવાएसु-છિન્નાપાતેષુ) જિન માર્ગોં મેં જનોં કા આવાગ-મનરૂપ સંચાર છિન્ન હો ગયા હૈ અર્થાત્-નહીં, હોતા હૈ એસે (પંથેસુ-પથિષુ) માર્ગોં મેં સંચરણ અર્થાત્-વિચરણ કરતા હુઆ સાધુ (સુપિવાસિય આઉરે-સુપિપાસિતઃ આતુરઃ) યદિ પિપાસા સે વ્યાપ્ત હોકર આતુર-અત્યંત પીડિત હો જાતા હૈ ઓર ઇસીસે (પરિસુક્કમુહાદીણે-પરિશુષ્ક-મુખાદીનઃ) જિસકે મુખ કા ધૂંક તક બી સૂઝચુકા હૈ ઓર એસી

ગ્રામ, નગર વગેરેથી બહારના રસ્તા ઉપર વિચરતા સાધુને માર્ગમાં તર-સની આકુળતા ઉત્પન્ન થાય તો પણ તેણે એ બીજા ક્ષુધાપરીપહને સહન કરવો જોઈએ. આ વાત નીચેની ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે. છિન્નાવાएसु-ઈત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—છિન્નાવાएसુ-છિન્નાપાતેષુ એ માર્ગમાં માણસોનો અવાગમનરૂપ સંચાર બંધ થઈ ગયો હોય. અર્થાત્ નથી થતો એવા પંથેસુ-પથિષુ માર્ગોમાં સંચારણ અર્થાત્ વિચારણ કરનાર સાધુ સુપિવાસિય આઉરે-સુપિપાસિતઃ આતુરઃ પાણીની તરસથી વ્યાકુળ બની અત્યંત પીડિત થઈ બન્ય છે અને એથી પરિસુક્કમુહાદીણે-પરિશુષ્કમુખાદીનઃ એના મોઢામાંનું ધૂંક પણ સુકાઈ બન્ય છે એવી માં,

મુલોઽપિ સન્નદીન इत्यर्थः । तं=तृपापरीपहं, तितिक्षेत=सहेत । अयं भावः-निर्जन-
स्थानस्थितोऽपि तृपाव्याकुलितोऽपि सन् सचित्तमनेपणीयं जलं न पिबेदिति ।

‘છિન્નાવાણ્ણુ પંથેસુ’ इत्यनेन मुनीनां चरणविहारः सूचितः ।

‘આડરે’ इत्यनेन-परीपहवस्थायामपि समाधिभावेन वर्तितव्यमिति
बोधितम् ।

‘सुपिवासिण’ इत्यनेन पिपासाधिक्येऽपि सचित्तमनेपणीयमुदकं न ग्रहीत-
व्यमिति सूचितम् ।

‘परिमुक्कमुहादीणे’ इत्यनेन कष्टावस्थायामपि परીપહો જેતવ્ય એવેતિ-
સૂચિતમ્ ।

‘तितिक्षे’ इत्यनेन परीपहोपस्थितौ सहिष्णुता समाश्रयणीया, इति
बोधितम् ।

હાલત મેં તાલુ, રસના એવં ઓઠ્ઠાં ભી ચિલકુલ શુષ્ક હો ચુકા હૈ ફિર
ભી અદાન ચના હુવા મુનિ (તં પરીસહં તિતિક્ષે-તં પરીપહં તિતિક્ષેત)
इस तृपापरीपह को जीते । तात्पर्य इसका यह है कि निर्जनस्थान में
रहने पर भी यदि साधु तृपा से पीड़ित होता है तो भी उसे सचित्त
अनेपणीय जल का पान नहीं करना चाहिये ।

ગાથા મેં રહે હુ “છિન્નાવાણ્ણુ પંથેસુ” इस विशेषणगर्भित पद
द्वारा मुनियों का चरण विहार सूचित किया है । “आडरे” इस
पद द्वारा परीपह अवस्था में मुनियों को समाधिभावपूर्वक रहना
बतलाया गया है । “सुपिवासिण” पद द्वारा पिपासा की तीव्र
अवस्था में भी सचित्त अनेपणीय उदक नहीं लेना चाहिये, यह प्रकट

તાલુ રસના અને ડોઠ પહુ તદ્દન સુકા બની બચ છે, એવી પરિસ્થિતિમાં
મુકાવા છતાં પહુ અદીન બનેલ મુનિ તં પરિસહં તિતિક્ષે-તં પરિપહં તિતિક્ષેત
એ તૃપા પરીપહને જીતે. એવું તાત્પર્ય એ છે કે, નિર્જન સ્થાનમાં રહેવા
છતાં પહુ સાધુ તરસથી પીડિત હોય તો તેણે સચિત્ત અનેપણીય જળનું
પાન ન કરવું જોઈએ.

ગાથામાં રહેલા “છિન્નાવાણ્ણુ પંથેસુ” વિશેષણ ગર્ભિત પદ દ્વારા મુનિ-
યોનો ચરણ વિહાર મુશ્વવામાં આવેલ છે. આડરે-આપદથી પરીપહ અવસ્થામાં
મુનિયોએ સમાધિ ભાવ પૂર્વક રહેવાનું બતાવેલ છે. સુપિવાસિણ આ પદથી
તરસની તીવ્ર અવસ્થામાં પહુ સચિત્ત અનેપણીય ખાણી ન લેવું જોઈએ.

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ—

આસીદુઃખિન્યાં ધનમિત્રનામકઃ શ્રેષ્ઠી, સ ધનપ્રિયનામ્નાઽષ્ટવર્ષવયસ્કેન સ્વપુત્રેણ સહ મિત્રગુપ્તાચાર્યસમીપે મત્રજિતઃ । સ ધનપ્રિયશિષ્યઃ સપરિવારેણાચાર્યેણ સહ કદાચિન્માર્ગે વિહસન્ પિપાસાર્તોઽભવત્ । અન્યૈઃ સાધુભિઃ સહાચાર્યમગ્રે ગતં દૃષ્ટ્વા ધનમિત્રમુનિના નદીમાલોક્ય પુત્રાનુરાગેણ કથિતમ્, વત્સ! જલં પિવ, પથ્થાદાલોચનયા શુદ્ધિર્ભવિષ્યતિ । इत्युक्तोऽपि शिष्यो जलपानं कर्तुं न वाञ्छति । 'तवો

કિયા ગયા હૈ। “પરિસુકમુહાદીણે” ઇસ પદ સે સૂત્રકાર યહ પ્રદર્શિત કર રહે હૈં કિ કષ્ટ કી અવસ્થા મેં મી પરીપહોં કો જીતના હીં ચાહિયે। “તિતિક્ષ્ણે” પદ સે યહ જ્ઞાત હોતા હૈં કિ પરીપહ કી ઉપસ્થિતિ મેં ઘબઢ્ઢાના નહીં ચાહિયે કિન્તુ સહિષ્ણુતા ધારણ કરની ચાહિયે।

इस विषय को अब दृष्टान्तद्वारा स्पष्ट किया जाता है—

ઉઝ્જૈની નગરી મેં ધનમિત્ર નામ કા એક સેઠ રહતા થા। વૈરાગ્ય પાકર ઉસને અપને આઠવર્ષ કે ધનપ્રિય નામક પુત્ર કે સાથ મિત્રગુપ્ત આચાર્ય કે પાસ મુનિદીક્ષા ધારણ કરલી। એક સમયકી વાત હૈં કિ વે ધનપ્રિય મુનિ સપરિવાર આચાર્ય કે સાથ જવ વિહાર કર રહે થે તવ માર્ગ મેં ઉન કો પ્યાસ કી વેદના જાગૃત હુઈ। અન્ય સાધુઓં કે સાથ આચાર્ય કો આગે ગયે હુએ જાન કર ધનમિત્ર મુનિ ને નદી કો દેખતે હીં પુત્રાનુરાગ કે વશવર્તી બન ધનપ્રિય સે કહા કિ વત્સ! જલ પીલો, પીછે આલોચના સે ઇસકી શુદ્ધિ કર લેના। ઇસ પ્રકાર ધનમિત્ર મુનિ કે વચન

એવું પ્રગટ કરેલ છે. પરિસુકમુહાદીણે આપદથી કષ્ટની અવસ્થામાં પણ પરિપહોને છૂતવા બેઠા. એવું સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરે છે. “તિતિક્ષ્ણે” આપદથી પરિપહનાં આવવાથી ગભરાવું ન બેઠા પરંતુ સહિષ્ણુતા ધારણ કરવી બેઠા.

આ વિષય ઉપર એક દૃષ્ટાંત કહેવામાં આવે છે.—

ઉઝ્જૈની નગરીમાં ધનમિત્ર નામે એક શેઠ રહેતો હતો. વૈરાગ્ય પામીને તેણે પોતાના આઠ વર્ષના ધનપ્રિય નામના પુત્ર સાથે મિત્રગુપ્ત નામના આચાર્ય પાસે મુનિ દીક્ષા ધારણ કરી. એક સમયની વાત છે કે, ધનપ્રિય મુનિ સપરિવાર આચાર્યની સાથે જ્યારે વિહાર કરી રહેલ હતો, ત્યારે માર્ગમાં તેને તરસ લાગી. બીજા સાધુઓ સાથે આચાર્યને આગળ ગયેલા બાણીને ધનમિત્ર મુનિએ નદીને બેઠાને પુત્રપ્રેમને વશ બની ધનપ્રિયને કહ્યું, વત્સ પાણી પીઈ લે. પછી આલોચનાથી એની શુદ્ધિ કરી લેશે. આ પ્રકારનાં ધનમિત્ર

ધનમિત્રમુનિશ્ચિન્તયતિ—મમ સમક્ષે નાયં જલં પિવતીતિ, एवं विचिन्त्य शुष्कमार्गेण सत्वरं नदीमुत्तीर्याग्रे गतः, तदनन्तरं धनप्रियमुनिर्जलपानार्थं नद्यां प्रविश्याञ्जलौ जलं धृत्वा सद्यः संजातकारुण्यश्चिन्तयति—कथमहं जलं पिवामि । यतः—

एगंमि उदगविंदुम्मि, जे जीवा जिणवरेहि पन्नत्ता ।

ते सरिसवपरिमित्ता, जम्बुद्वीवे न मायंति ॥ १ ॥

છાયા—एकस्मिन्नुदकचिन्दौ, ये जीवा जिनवरैः प्रज्ञप्ताः ।

ते सर्पपपरिमात्राः जम्बूद्वीपे न मायेयुः ॥ १ ॥

વ્યાख्या—एकस्मिन् जलचिन्दौ ये जीवाः सन्ति, ते यदि सर्पपप्रमाणं शरीरं धृत्वा वर्तेयुस्तर्हि जम्बूद्वीपे न मायेयुरित्यर्थः ॥ १ ॥

मुनकर धनप्रिय ने पानी पीने की जरा भी इच्छा नहीं की। इस परि-
स्थिति को देखकर धनमित्र मुनि ने विचार किया कि यह मेरे साम्हने
जल नहीं पीवेगा अतः यहां से चल देना चाहिये, सो वे शुष्कमार्ग से
नदी को पार कर आगे चले गये। इसके बाद धनप्रियमुनि जलपान
करने के लिये नदी में प्रविष्ट हुए और अंजलि में पानी भर कर दया
भाव से विचारने लगे कि इस अकल्पनीय सच्चित्त जल को मैं कैसे
पीऊँ ? क्यों कि—

“ एगंमि उदगविंदुम्मि, जे जीवा जिणवरेहि पन्नत्ता ।

ते सरिसवपरिमित्ता, जंबुद्वीवे न मायंति ॥ १ ॥ ”

एक जल के बिन्दु में जितने जीव जिनेन्द्र भगवान ने वतलाये हैं
वे यदि सरसों के आकार को धारण करलें तो इस जंबूद्वीप में नहीं समा
सकते हैं ॥ १ ॥

મુનિનાં વચન સાંભળીને ધનપ્રિયમુનિએ પાણી પીવાની જરા પણ
ઈચ્છા ન કરી આ પરિસ્થિતિને બોધ ધનમિત્રમુનિએ વિચાર કર્યો કે, આ
મારી સામે પાણી પીશે નહીં માટે અહીંથી ચાલવું બોધ એ જેથી તેઓ સુકા
માર્ગેથી નદીને પાર કરીને આગળ ચાલ્યા. આ પછી ધનપ્રિયમુનિએ જળપાન
કરવા માટે નદીમાં પ્રવેશ કર્યો અને હાથમાં પાણી લઈ દયા ભાવથી વિચારવા
લાગ્યા કે, આ અકલ્પનીય સચિત્ત પાણી હું કેવી રીતે પીઉં કેમકે કહ્યું છે કે—

एगंमि उदगविंदुम्मि, जे जीवा जिणवरेहि पन्नत्ता ।

ते सरिसव परिमित्ता, जम्बुद्वीवे न मायन्ति ॥ १ ॥

જળના એક ટીપામાં જેટલા જીવ જિનેન્દ્ર ભગવાને બતાવ્યા છે તે કદાચ સરસવના
આકારને ધારણ કરીએ તો આ જમ્બૂદ્વિપમાં સમાઈ ન શકે. ॥૧॥

જત્ય જલં તત્ય વર્ણં, જત્ય વર્ણં તત્ય ણિચ્છિઓ તેજ ।

તેજ વાસસહગઓ, તસા ય પચ્ચક્કલયા ચેવ ॥ ૨ ॥

છાયા—યત્ર જલં તત્ર વર્ણં, યત્ર વર્ણં તત્ર નિશ્ચિતં તેજઃ ।

તેજો વાયુસહગતં ત્રસાથ પ્રત્યક્ષકા એવ ॥ ૨ ॥

વ્યાख्या—યત્ર જલં તત્ર વર્ણં=વનસ્પતિઃ, યત્ર વનસ્પતિસ્તત્ર નિશ્ચયેન તેજો=વદ્ધિઃ, યત્ર તેજસ્તત્ર વાયુઃ સહયોગિત્વાત્, ત્રસાસ્તુ પ્રત્યક્ષા એવ સન્તિ ॥૨॥

હંતૂણ પરપ્પાણે, અપ્પાણં જો કરેઈ સપ્પાણં ।

અપ્પાણં દિવસાણં, કપ્પ ય નાસેઈ સપ્પાણં ॥ ૩ ॥

છાયા—હત્વા પરમાણાન્, આત્માનં યઃ કરોતિ સપ્રાણમ્ ।

અલ્પાનાં દિવસાનાં, કૃતે નાશયતિ સ્વાત્માનમ્ ॥ ૩ ॥

વ્યાख्या—તસ્માત્ પરમાણાન્ હત્વા યઃ આત્માનં સપ્રાણં=સબલં કરોતિ, સ અલ્પાનાં દિવસાનાં કૃતે સ્વાત્માનં નાશયતિ ॥૩॥

“જત્ય જલં તત્ય વર્ણં, જત્ય વર્ણં તત્ય ણિચ્છિઓ તેજ ।

તેજવાસ સહગઓ, તસા ય પચ્ચક્કલયા ચેવ ॥ ૨ ॥”

જહાં જલ હૈ વહાં નિશ્ચિત વનસ્પતિ હૈ । જહાં વનસ્પતિ હૈ વહાં નિશ્ચિત તેજ-અગ્નિ હૈ । જહાં તેજ હૈ વહાં નિશ્ચિત વાયુ હૈ । ત્રસકાય તો પ્રત્યક્ષ હી હૈ ॥૨॥

“હંતૂણ પરપ્પાણે, અપ્પાણં જો કરેઈ સપ્પાણં ।

અપ્પાણં દિવસાણં, કપ્પ ય નાસેઈ સપ્પાણં ॥ ૩ ॥”

જો દૂસરે જીવોં કે પ્રાણોં કા હનન કર કુછ હી દિનોં કે લિયે અપને આપકો સબલ વનાને કી ચેષ્ટા કરતા હૈ વહ અપને આપકા વિનાશ કરતા હૈ ॥૩॥

જત્યજલં તત્ય વર્ણં, જત્ય વર્ણં તત્ય ણિચ્છિઓ તેજ ।

તેજ વાસસહગઓ, તસાય પચ્ચક્કલયા ચેવ ॥ ૨ ॥

જ્યાં જળ છે ત્યાં વનસ્પતિનું હોયું નિશ્ચિત છે, જ્યાં વનસ્પતિ છે ત્યાં તેજ અગ્નિ નિશ્ચિત છે. જ્યાં તેજ છે. ત્યાં વાયું નિશ્ચિત છે. ત્રસકાય તો પ્રત્યક્ષ છે જ ॥૨॥

હંતૂણ પરપ્પાણે, અપ્પાણં જો કરેઈ સપ્પાણં ।

અપ્પાણં દિવસાણં, કપ્પ ય નાસેઈ સપ્પાણં ॥ ૩ ॥

જે બીજા જીવોના પ્રાણોની વિરોધના કરીને થોડા દિવસો માટે પોતે પોતાની જાતને સખળ બનાવવાની ચેષ્ટા કરે છે તે પોતે પોતાની જાતનો વિનાશ કરે છે ॥૩॥

અહો! દુર્લભા સંયમપ્રાપ્તિઃ, તતોઽપિ સંયમરક્ષણં દુર્લભતરં, તદ્વાપ્કાયવિરાધનયા
પદ્કાયવિરાધનાયાં સત્પાં ન ભવિતું શક્યતે, સંયમરક્ષણાભાવે સર્વેષાં મહાવ્રતાનાં ભદ્રઃ
સ્પાત્, તતશ્ચ ચતુર્ગતિકસંસારપરિભ્રમણં ભવિષ્યતિ । યસ્માન્નેદં જલં પાસ્યામીતિ
નિશ્ચિત્યાસી મુનિ રજ્જલિતો જલં નદ્યામેવ યતનયા મુમોચ । સ લઘુવ્રયસ્કોઽપિ મહ-
નીયધૈર્યઃ શુષ્કમાર્ગેણ તાં નદીમુત્તીર્ય તત્તીર એવ પિપાસયા ગન્તુમક્ષમઃ સન્
ભૂમૌ નિપત્તિતઃ ।

इस प्रकार विचार कर धनप्रियनामक लघुमुनिने यह भी विचार
किया कि इस संसार में जीवों को एक तो संयम की प्राप्ति होना दुर्लभ
है, और उसकी अपेक्षा संयम की रक्षा महान् दुर्लभ है । मैं कच्चा पानी
पीऊँ तो अप्काय की विराधना होती है अप्काय की विराधना
में पदकाय की विराधना अवश्य होती है, पदकाय की विराधना से
संयम की रक्षा नहीं हो सकती । जहाँ संयम की रक्षा नहीं है वहाँ
समस्त महाव्रतों का भंग है । इनके भंग से संसारपरिभ्रमण अवश्य
होता है, अतः मैं तो इस जलको नहीं पीऊँगा । इस प्रकार निश्चय
कर लघुमुनि ने बड़ी ही यतना से अंजलि में लिये हुए जल को उसी
नदी में छोड़ दिया । उस समय उनकी आयु कोई अधिक नहीं थी परंतु
धैर्य की मात्रा हृदय में बड़ी हुई थी इस लिये यथा कथंचित् वे शुष्क-
मार्ग से होकर नदी को पार करके दूसरे तीर पर आगये । परन्तु प्यास
ने इतनी प्रचलता धारण की कि वे आगे मार्ग पर नहीं चलसके और

આ પ્રકારનો વિચાર કરી ધનપ્રિય નામના નાના મુનિએ એવો વિચાર
કયો કે, આ સંસારમાં જીવોને એક તો સંયમની પ્રાપ્તિ થવી દુર્લભ છે અને
તેની અપેક્ષા સંયમની રક્ષા મહાન દુર્લભ છે. હું કાચું પાણી પીઉં તો અપ્-
કાયની વિરાધના થાય છે, અપ્કાયની વિરાધનામાં પદ્કાયની વિરાધના અવશ્ય
જાને છે. પદ્કાયની વિરાધનાથી સંયમની રક્ષા થતી નથી. જ્યાં સંયમની રક્ષા
નથી ત્યાં સમસ્ત મહાવ્રતોનો ભંગ છે. તેના ભંગથી સંસાર પરિભ્રમણ અવશ્ય
થાય છે. માટે હું તો આ જાળને પીઈશ નહીં. આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરી
લઘુ મુનિએ ખૂબજ યતનાથી જોખામાં લીધેલ પાણીને તે નદીમાં છોડી દીધું.
આ સમયે તેની ઉંમર કાંઈ મોટી ન હતી પરંતુ ધૈર્યની માત્રા હૃદયમાં વધેલી
હતી. આ કારણે આગળ કહેવામાં આવ્યા પ્રમાણે સુકા માર્ગથી નદીને પાર
કરી સામા કાંઠે પહોંચી ગયા. પરંતુ તરસ એટલા ભેરથી લાગી હતી કે આને

अथ पिपासाविवशोऽपि धर्मे निश्चलमतिरसौ पञ्चनमस्कारस्मरणपूर्वकं समाधिभावेन देहं विहाय प्रथमकल्पे वैमानिकदेवत्वेन समुत्पन्नः । ततोऽवधिज्ञानेन स्वपूर्वभवं विज्ञाय तेन धनप्रियेण देवेन सर्वेषां मुनीनामनुग्रहार्थं वैक्रियशक्त्या पथि गोकुलं निर्मितम् । अथ सपरिवारो मित्रगुप्ताचार्यः पुरतो गोकुलं दृष्ट्वा तत्र शुद्धतक्रादि गृहीत्वा पिपासां निवार्य चलितः । अथ तेन देवेन स्वपरिचयार्थमेकस्य साधोरासने विस्मारितम् । येन मुनिनाऽऽसने विस्मृतम् , स च स्वासनान्वेषणार्थं पुनर्गोकुलस्थानमागत्य गोकुलमपश्यन् प्रत्यावृत्तः सर्वान् मुनीनब्रवीत्-नास्ति तत्र वहीं पर गिर पडे । पिपासा से विवश होने पर भी इनकी मति धर्म में निश्चल बनी रही, पंचनमस्कार मंत्र का स्मरण करते हुए इन्होंने समाधिभाव से काल को प्राप्त किया । पिपासापरीपह को सहन करने के प्रभाव से ये प्रथमकल्प में वैमानिक देव हुए । अवधिज्ञान से अपने पूर्व भव को जानकर उस लघुमुनि के जीव देव ने समस्त मुनियों की रक्षा के लिये अपनी वैक्रियिक शक्ति से मार्ग में गोकुल की रचना कर दी । सपरिवार मित्रगुप्ताचार्य ने आगे गोकुल देखा ।

वहां से शुद्ध तक्र आदि को लेकर अपनी पिपासा को शांत किया, एवं आगे विहार करना प्रारंभ कर दिया । किसी ने भी यह नहीं जाना कि यह सब देवकृत माया है, अतः देव ने अपने परिचय के निमित्त एक साधु को अपना आसन विस्मृति करा दिया । जो मुनि वहां पर आसन भूल गया था वह उस आसन को लेने के लिये पीछे उस स्थान पर आया तो क्या देखता है कि यहां पर तो कोई

वर्ध ते आगज भागे आली शक्या नहीं' अने त्यां ज पडी गया. तरसथी विवश बनवा छतां पक्षु तेनी मति धर्ममां निश्चल बनी रही. पंचनमस्कार मंत्रनुं स्मरण करीने तेमणे सभाधी लावथी काणधर्म प्राप्त कथो. तरसना परीपडने सहन करवाना प्रलावथी ते प्रथम कल्पमां वैमानिक देव थया. अवधिज्ञानथी पोताना पूर्वबनने ब्रह्मिने ते लघुमुनिना एव देवे समस्त मुनियेना अनुग्रह भाटे पोतानी वैक्रियिक शक्तिथी भागेमां गोकुलनी रचना करी. सपरिवार मित्रगुप्ताचार्ये आगज गोकुल जेथुं अने त्यांथी शुद्ध छाया आदि वर्धने पोतानी तरसने छिपावी. अने आगज विहार करवा लाग्या. कोधये जे न ब्रह्म के आ बधी देवकृत माया हती. आथी देवे पोताना परिचय निमित्त जेक साधुने तेनुं आसन बुलावी दीधुं. जे मुनि आसन बुली गया हता ते मुनि त्यां आसन देवा भाटे पाछा आव्या तो थुं देजे छे के त्यां के। गोकुल

पूर्वदृष्टं गोकुलम् । तदा तद्वचनेन सर्वैरपि साधुभिर्ज्ञातगोकुलाभावैस्तत्र काचिदेव शक्तिर्विदिता । सर्वस्तत्पिण्डभोजनस्य प्रायश्चित्तं कृतम् । ततस्तत्रागत्य तेन देवेन संसारावस्थायां तातं स्वगुरुं मुक्त्वा सर्वे साधवो वन्दिताः । किं कारणं त्वया नायं वन्दितः ? एवमाचार्येण पृष्टोऽसौ सर्वं स्ववृत्तान्तं सचित्तजलपानार्थं पितुः प्रेरणं च सर्वेषां साधूनां पुरस्ताद् कथयित्वा देवलोकं गतः । एवमन्यैरपि मुनिभिस्तृपापरीपहः सोढव्यः ॥ ५ ॥

क्षुधापिपासापरीपहसहनेन कृशशरीरस्य साधोः शीतकाले शीतमपि बहु बाधते, इति शीतपरीपहजयं ग्राह—

गोकुल नहीं है । वह शीघ्र ही पीछे वहां से वापिस लौटा और अपने आचार्य के पास आकर इस बात को कहा कि अब तो वहां पर कोई गोकुल नहीं है । साधुओं ने जब यह बात सुनी तो उन्होंने ने यह निश्चित किया कि अवश्य इसमें कोई देव की माया थी। सब ने मिलकर इसका प्रायश्चित्त लिया, क्यों, कि इन सब ने वहां से पहिले तक्रादि को ग्रहण किया था । बाद में देव ने आकर अपने संसार अवस्था के पिता-धन-मित्र मुनि को छोड़कर बाकी के समस्त साधुओं को वंदना की। आचार्य ने पूछा धनमित्र मुनि को वंदन क्यों नहीं किया? तब उस देव ने समस्त पहिले का वृत्तान्त जो धनमित्र मुनि ने सचित्त जल को पीने के लिये अपने शिष्य धनप्रिय को मुनि की अवस्था में कहा था आचार्य के समक्ष कह दिया । कह कर फिर यह स्वर्ग को वापिस चला गया । इसी प्रकार अन्य मुनियों को भी तृपापरीपह का विजय करना चाहिये ॥ ५ ॥

नथी. ते जेव वणते पाछा इथां अने पोताना आचार्यनी पासे आवीने कहुं के, त्यां तो केह गोकुल नथी. साधुज्यो जे न्यारे आ वात सांलणी तो तेज्यो जे जेवुं नल्ली कथुं के, अवश्य आभां केह देवनी माया હતી, સહુજે મળીને તેણે પ્રાયશ્ચિત્ત લીધું. કારણ કે, તે સહુજે ત્યાંથી છાસ આદિ વસ્તુ ગ્રહણ કરેલ હતી. બાદમાં દેવે આવીને પોતાના સંસાર અવસ્થાના પિતા ધનમિત્ર મુનીને છોડીને બાકીના સમસ્ત સાધુઓને વંદના કરી, આચાર્યે પૂછ્યું કે, ધનમિત્ર મુનીને વંદના કેમ ન કરી ? ત્યારે તે દેવે પહેલાનો સમસ્ત વૃત્તાંત જે ધનમિત્ર મુનિએ સચિત્ત પાણી પીવા માટે પોતાના શિષ્યને મુનિ અવસ્થામાં કહ્યું હતું તે આચાર્ય સમક્ષ કહી દીધું. આ કહીને તે પોતાના મુળધામ સ્વર્ગમાં ચાલ્યા ગયા. આ પ્રકારે આ યમુનિઓએ પણ તૃપાપરીપહનો વિજય કરવો જોઈએ. ॥૫॥

મૂલમ્—ચરંતં વિરંયં લૂહં, સીયં ફુસઈ એગ્યા ।

નોંડ વેલં” મુંળી ગેચ્છે, સોંચાં ણં જિણંસાસણં ॥૬॥

છાયા—ચરન્તં ચિરંતં રૂઢં, શીતં સ્પૃશતિ એકદા ।

નાતિવેલં મુનિર્ગચ્છેત્ શ્રુત્વા સ્વલ્પ જિનશાસનમ્ ॥ ૬ ॥

ટીકા—‘ચરંતં’ ઇત્યાદિ ।

ચરન્તં=મોક્ષમાર્ગે, ગ્રામાનુગ્રામં વા વિહરન્તં, ચિરંતં=સાવધયોગતો નિવૃત્તમ્-
અગ્નિમજ્જાલનાદિભ્યો નિવૃત્તમિત્યર્થઃ, રૂઢં=સ્નિગ્ધાહારતૈલાભ્યન્નપરિહારેણ ધૂસરાન્નં
મુનિમ્, એકદા=શીતકાલે, શીતં સ્પૃશતિ=પીડયતિ ।

શીતકાલે હિ વનસ્પતયો હિમનિપાતેન પરિતઃ પરિશુષ્કા ભવન્તિ, પથિકાઃ
સંકોચિતપાણયઃ પદૈકમપિ ગન્તુમસમર્થાઃ પદ્મુવત્ તત્ર તત્રૈવ તિષ્ઠન્તિ, કેચિદ્
ક્ષવણદન્તવીણિકાઃ કમ્પમાનગાત્રાઃ કુશાનુસેવનાય તદભિમુલ્લં શલભા ઇવાપતન્તિ ।

ધુધા એવં પિપાસા પરીપહ કે સહન કરને સે મુનિ કા શરીર કૃશ
હો જાતા હૈં ઇસસે શીતકાલ મેં શીત કી પીડા યદ્વત્ હોતી હૈં ઇસલિયે
તીસરે શીતપરીપહ કો જીતના ચાહિયે; યહી વાત ઇસ નીચે કી ગાથા
સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં—

‘ચરંતં વિરંયં’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(ચરંતં વિરંયં—ચરન્તં ચિરંતં) મોક્ષ માર્ગ મેં અથવા એક
ગ્રામ સે દૂસરે ગ્રામ મેં વિહાર કરને વાલે તથા સાવધયોગ સે વિરક્ત એવં
(લૂહં-રૂક્ષમ્) સ્નિગ્ધાહાર તૈલમર્દન આદિકે ત્યાગ સે ધૂસર શરીર વાળે
પેસે મુનિ કો (એગ્યા—એકદા) શીતકાલ મેં (સીયં ફુસઈ—શીતં સ્પૃ-
શતિ) શીત પીડિત કરતા હૈં । ઉસ સમય વહ મુનિ (ણં—સ્વલ્પ) નિશ્ચ-

ભૂખ અને તરસ સહન કરનારા મુનિનું શરીર દુર્બળ બની જાય છે, અને
દુર્બળ શરીરવાળાને ઠંડિથી બહુ પીડા થાય છે. આથી ત્રીજો ઠંડિના પરિપહને
મુનિએ જીતવો જોઈએ. એવી વાત સૂત્રકાર નીચેની ગાથાથી પ્રગટ કરે છે.

ચરંતં વિરંયં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ચરંતં વિરંયં—ચરંતં ચિરંતં મોક્ષમાર્ગ અથવા એક ગામથી બીજા
ગામે વિહાર કરવાવાળા તથા સાવધ યોગથી વિરક્ત અને લૂહં-રૂક્ષમ્ સ્નિગ્ધાહાર
તૈલમર્દન આદિના ત્યાગથી ધૂસર શરીરવાળા એવા મુનિને એગ્યા—એકદા શીતકાળમાં
સીયં ફુસઈ—શીતં સ્પૃશતિ શીતકાળ પીડિત કરે છે. તે સમયે તે મુનિ ણં—સ્વલ્પ

वायवश्च तुपारासारसंगादतिशय शिशिराः प्राणिनां शरीराणि परितः सातिशयं पीडयन्ति । अनवरतशीतपातजनितच्यथावारणाय बालकाः काष्ठखण्डादीनि समाहृत्यैकत्र वह्निं प्रज्वाल्य प्रसारितपाणयस्तापमासेवन्ते । यत्र प्रतिक्षणं प्राणिनां प्राणाः प्रखर शीतवेदनाभिरुद्विग्ना भवन्ति ।

तदा स मुनिः खलु=निश्चयेन, जिनशासनं जिनवचनरहस्यं श्रुत्वा 'अनेन ममात्मना नरकनिगोदादौ तीव्रतरा अनन्तवेदना अनन्तवारमनुभूता' इति विभाव्य, अतिवेलं=वेलाऽतिक्रमणं न गच्छेत्=न प्राप्नुयात्-प्रतिलेखनादे र्यः कालस्तं शीतभयादुल्लङ्घ्याऽन्यस्मिन् काष्ठे प्रतिलेखनादिकं न कुर्यादित्यर्थः । यद्वा-शीतभयात् पूर्वोपविष्टस्थानं विहाय स्थानान्तरं न व्रजेदिति ।

'चरंतं' इत्यनेन कारणं विना एकत्रावस्थानं न करणीयमिति सूचितम् ।

'विरयं' इत्यनेन यतनावच्छं सूचितम् ।

यसे (जिनशासनं सोच्चा-जिनशासनं श्रुत्वा) जिन शासक को-'इस मेरी आत्मा ने नरक निगोद आदि स्थानों में तीव्रतर अनन्त वेदनाएँ अनन्तवार भोगी हूँ उस वेदना के सामने यह शीतवेदना क्या अधिक है ?' इस बात को सुनकर-समझकर (अइवेलं-अतिवेलम्) समय को उल्लंघन करके-प्रतिलेखना आदि के समय को टालन करके (न गच्छे-न गच्छेत्) प्रतिलेखना आदि का जो समय है उसके सिवाय अन्य समय में प्रतिलेखनादिक क्रियाओं को न करे । तथा शीत के भय से पूर्वाधिष्ठित स्थान का परित्याग कर दूसरे स्थान में भी न जावे ।

गाथा में रहे हुए "चरंतं" इस पदद्वारा सूत्रकार यह प्रदर्शित करते हैं कि मुनि को कारणविशेष विना एक जगह स्थिररूप से नहीं

निश्चयथी जिनशासनं सोच्चा-जिनशासनं श्रुत्वा एन शासनने आ भारा आत्माओ नरक निगोद आदि स्थानोभां तीव्रतावाणी अनन्त वेदनाओ धखी वपत लोगवी छे ते वेदनाओ सामे आ शीत वेदना क्या डिआभमां छे ?' आ बातने सांलणी समए अइवेलं-अतिवेलं समयनुं उल्लंघन करी प्रतिलेखना आदिना समयने टाणीने न गच्छे-न गच्छेत् प्रतिलेखना आदिने ओ समय छे तेना सिवाय भीन समयभां प्रतिलेखनादिके क्रियाओने न करे. तथा ठंडीना लयथी पूर्वाधिष्ठित स्थानने त्याग करीने भीन स्थानभां न जाय.

गाथाभां रहेला "चरंतं" ओ पदद्वारा सूत्रकार ओ प्रदर्शित करेछे के, मुनिये कारण विशेष बिना ओके जगहाओ स्थिर रूपथी रोकवुं न लेछेओ.

‘લૂહં’ इत्यनेन तपश्चरणशीलत्वं प्रवेदितम् ॥ ६ ॥

‘मुणी’ इत्यनेन सावद्यकार्यं मौनस्यमिति बोधितम् ।

मूलम्—‘न मे’ निवारणं अतिथि, छवित्ताણं न विज्ઞે ।

अहं तु अग्निं सेवामि, इह भिक्षुं न चिंतये ॥ ७ ॥

छाया—न मे निवारणम् अस्ति, छवित्राणं न विद्यते ।

अहं तु अग्निं सेवे, इति भिक्षुर्न चिन्तयेत् ॥ ७ ॥

टीका—‘न मे’ इत्यादि ।

મે=મમ, નિવારણં=શીતનિવારકં સ્થાનં નાસ્તિ, તથા—છવિત્રાણં=શરીરાચ્છા-
દનકં વસ્ત્રકમ્બલાદિકં ન વિદ્યતે । તુ=પુનઃ, અગ્નિં સેવે=અગ્નિં પ્રજ્વાલ્ય તત્પાપમા-
શ્રયેય, इति=एयं, भिक्षुर्न चिन्तयेत्=मनसापि न प्रार्थयेत् । चिन्ताप्रतिषेધेन
तत्સેવનં તુ દૂરત એવ નિરાકૃતમ્ ।

ઠહરના ચાહિયે । “વિરયં” હસસે મુનિકો યતનાવાન હોના ચાહિયે યહ
સૂચિત કિયા ગયા હૈ । “લૂહં” પદ સે તપશ્ચરણ શીલતા એવં “મુણી”
હસ પદ સે સાવધકાર્ય મેં મૌન રલ્લના યહ સૂચિત કિયા ગયા હૈ ॥ ૬ ॥

‘ન મે નિવારણં’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—(મે-મમ) મેરે પાસ (નિવારણં-નિવારણમ્) શીત કો દૂર કરને
વાલા સ્થાન (ન અતિથિ-નાસ્તિ) નહીં હૈં (છવિત્તાણં ન વિજ્ઞે-છવિત્રાણં
ન વિદ્યતે) શરીર કો આચ્છાદાન કરને વાલા વસ્ત્ર એવં કમ્બલ આદિ બી
નહીં હૈ અતઃ (અહં તુ અગ્નિં સેવામિ-અહંતુ અગ્નિં સેવે) મેં અગ્નિ કા
‘સેવન કરૂં (इह-इति) હસ પ્રકાર (भिक्षु-भिक्षुः) સાધુ (न चिंतए-न
‘चिन्तयेत्) મન સે બી વિચાર ન કરે, ઉસકે સેવન કી વાત તો દૂર રહી ।

“વિરયં” એનાથી મુનિયે યતનાવાન બનવું જોઈ એ. એવું સૂચિત કરવામાં
આવ્યું છે “લૂહં” પદથી તપશ્ચરણ શીલતા અને “મુણી” આ પદથી સાવધ
કાર્યમાં મૌન રાખવું એ સૂચિત કરવામાં આવેલ છે.

નમે નિવારણં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—મે-મમ મારી પાસે નિવારણં-નિવારણમ્ ઠંડીથી બચાવી શકે તેવું
સ્થાન ન અતિથિ-નાસ્તિ નથી, છવિત્તાણં ન વિજ્ઞે-છવિત્રાણં ન વિદ્યતે શરીર ઉપર આવેલા
માટે વસ્ત્ર તાથા કમ્બલ વગેરે પણ નથી. આથી અહંતુ અગ્નિં સેવામિ-અગ્નિં સેવે
અગ્નિતુ સેવન કરું इह-इति આ પ્રકારનો મનથી પણ ભિક્ષુ-ભિક્ષુ મુનિ ન
ચિંતए-ન ચિન્તयेत् વિચાર ન કરે. તેના સેવનની વાત તો દૂર રહી.

અયં ભાવઃ—શીતે મહત્યપિ પતતિ સતિ જીર્ણવસનઃ પરિત્રાણર્જિતો નાક-
લ્પ્યાનિ વસનાનિ ગૃહ્ણીયાત્ શીતત્રાણાય । આગમવિહિતેન વિધિના એપનીયમેવ
યથાકલ્પં ગવેપયેત્ પરિશુઙ્ગીત વા । નાપિ શીતાર્તોઽગ્નિં જ્વાલયેત્, અન્યજ્વાલિતં
વા નાસેવેત । એવમનુતિષ્ઠતા શીતપરીપદ્મજયઃ કૃતો ભવતીતિ ।

અત્ર ‘ભિક્ષૂ’ ઇત્યનેન નિરવધભિક્ષાગ્રહણશીલત્વં સૂચિતમ્ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ—

ચતુર્યારકે-રાજગૃહે નગરે ચત્વારઃ કુવેરદત્તથ્રેષ્ઠિપુત્રાઃ કુવેરસેન-કુવેરમિત્ર-
કુવેરવલ્લભ-કુવેરપ્રિયનામાનો ભદ્રગુપ્તાચાર્યસમીપે જિનોક્તં ધર્મં શ્રુત્વા પ્રવ્રજિતાઃ ।

इस का भाव यह है कि जब शीतकाल में शीत पड़ता है उस
समय जीर्णवस्त्र वाला एवंशीत की रक्षा के साधनों से रहित साधु
अकल्पनीय वस्त्रों को शीत की रक्षा निमित्त ग्रहण नहीं करे। आगम
में विहित विधिके अनुसार जो एपणीय हों तथा साधु के लिये कल्प-
नीय हों उन्हें ही ग्रहण करें। ठंड से पीड़ित होने पर भी अग्नि को न
जलावे तथा दूसरों द्वारा जलाई गई अग्नि का भी सेवन नहीं करें।
ऐसा करने से ही साधु शीतपरिपहविजयी माना जाता है। गाथा में
रहे हुए-भिक्षूपद से सूत्रकार ‘भिक्षु को निरवध भिक्षा ही ग्रहण
करना चाहिये’ यह सूचित करते हैं ।

इस विषय पर यहां दृष्टान्त दिया जाता है—राजगृह नगरमें कुवेर-
दत्त नामक एक सेठके कुवेरसेन, कुवेरमित्र, कुवेरवल्लभ, कुवेरप्रिय

આનો ભાવ એ છે કે, બ્યારે શીતકાળમાં ઠંડી પડે છે એ સમયે જીર્ણ વસ્ત્ર-
વાળા અને ઠંડીની રક્ષાના સાધનોથી રહિત સાધુ અકલ્પનીય વસ્ત્રોને ઠંડીની રક્ષા
નિમિત્તે ગ્રહણ ન કરે. આગમમાં કહેવાયેલ વિધિ અનુસાર જે એપણીય હોય
તથા સાધુ માટે કલ્પનિય હોય તેને જ ગ્રહણ કરે. ઠંડીથી પીડિત હોવા છતાં
પણ અગ્નિને પ્રગટાવે નહીં તથા બીજાઓ દ્વારા પ્રગટાવવામાં આવેલ અગ્નિનું
પણ સેવન ન કરે. આ રીતનું વર્તન રાખનાર સાધુ શીતપરીપદ્મવિજયી
માનવામાં આવે છે. ગાથામાં રહેલા “ભિક્ષૂ” પદથી સૂત્રકાર એમ સૂચિત
કરે છે કે, ‘ભિક્ષુએ નિરવધ ભિક્ષા જ ગ્રહણ કરવી જોઈએ.’

આ વિષય ઉપર અહીં દૃષ્ટાન્ત કહેવામાં આવે છે.

ચોથા આરામાં-રાજગૃહ નગરમાં કુવેરદત્ત નામનો એક થેઠ હતો. જેને
કુવેરસેન, કુવેરમિત્ર, કુવેરવલ્લભ અને કુવેરપ્રિય નામે ચાર પુત્ર હતા. આ

તે શ્રુતમધીત્યાન્યદા કદાચિદેકાકિત્વવિહારાખ્યપ્રતિમાં સ્વીકૃતવન્તઃ । તદનન્તર-
મેકાકિત્વપ્રતિમયા વિહરન્તસ્તે પુનરપિ રાજગૃહનગરસમીપવર્તિનિ વૈભારગિરિપદેશે
વસતેર્યથાકલ્પમવગ્રહમવગૃહ્ય સંયમેન તપસાઽત્માનં ભાવયન્તો વિહરન્તિ સ્મ । તદા
હેમન્તર્તુસ્તુપારાસારૈર્જનાન્ પીડયન્ , વનસ્પતીન્ પરિમ્લानयन् , પશુપક્ષ્યાદીન્ કા-
ઘ્રવજ્જડતાં પ્રાપયન્ , સર્વપ્રાણિપ્રાણાનુદ્વેજયન્નાસીત્ । તસ્મિન્ સમયે તે ચત્વારો
મુનયસ્તૃતીયયામે ભિક્ષાચર્યાયં રાજગૃહનગરં પ્રવિષ્ઠાઃ, તથા ભિક્ષાં ગૃહીત્વા કૃતા-
નામકે ચાર પુત્ર થે । उन चारों पुत्रों ने भद्रगुप्त आचार्य के समीप धर्म
का श्रवण कर मुनिदीक्षा धारण की । शास्त्रों का अच्छी तरह से
अध्ययन किया ।

एक समय की बात है उन्होंने ने एकाकित्वविहार नाम की भिक्षु
प्रतिमा स्वीकार की इससे वे एकाकी होकर विहार करने लगे । विहार
करते-ते वे किसी समय पुनः राजगृह नगर के समीपवर्ती वैभारगिरि
की तलहटी में बसी हुई एक बस्ती में आये और वहाँ यथाकल्प अब-
ग्रह-आज्ञा लेकर उतरे और संयम एवं तप से आत्मा को भाते हुए
विचरने लगे । यह समय हेमन्तऋतु का था । तुषार-हिम के छोटे-
कणों से इस समय मनुष्यों को अधिक कष्ट होता है । वनस्पतियाँ हिम-
कणों के निपात से दग्ध हो जाती हैं । पशु पक्षी काष्ठ जैसे जड़ हो
जाते हैं । तात्पर्य यह कि इस ऋतु में ठंड की अधिकता से हर एक
प्राणी को अधिक कष्ट का अनुभव होता है । ऐसे समय में ये चारों ही

ચારે પુત્રોએ ભદ્રગુપ્ત આચાર્ય પાસેથી ધર્મનું શ્રવણ કરી મુનિદીક્ષા ધારણ
કરી. શાસ્ત્રોનું સારી રીતે અધ્યયન કર્યું. એક સમયની વાત છે, તેઓએ
એકાકિત્વ વિહાર નામની ભિક્ષુ પ્રતિમા સ્વીકારી. આથી તેઓ ચારે એકાકી
બનીને વિહાર કરવા લાગ્યા. વિહાર કરતાં કરતાં કોઈ સમયે રાજગૃહ નગર
સમીપ રહેલી વૈભારગિરીની તળેટીમાં વસેલી એક વસ્તીમાં આવ્યા અને ત્યાં
યથાકલ્પ અવગ્રહ આજ્ઞા લઈને ઉતર્યા સંયમ અને તપથી આત્માને ભાવતા
વિચરવા લાગ્યા. આ સમયે હેમન્ત ઋતુ હતી. તુષાર હિમનાં નાનાં નાનાં
કણોથી આ સમયે મનુષ્યો અધિક કષ્ટ પામે છે. વનસ્પતિઓ હિમ કણોના
પડવાથી બળી જાય છે, પશુ પક્ષીઓ લાકડાં જેવા જડ થઈ જાય છે. મતલબ
એ કે, આ ઋતુમાં ઠંડીની અધિકતાથી દરેક પ્રાણીને વધુ કષ્ટનો અનુભવ
થાય છે. એવા સમયમાં એ ચારેય મુનિ દિવસના ત્રીજા ભાગમાં

हारास्ते सर्वे स्ववसतिं गन्तुं पृथक् पृथगेव प्रतिनिवृत्ताः तेषामेकस्य कुबेरसेनमुने-
वैभारगिरिकन्दरान्तिकमुपगतस्य रात्रिः संजाता, अतस्तत्रैव सोऽतिष्ठत् । द्वितीयस्य
कुबेरमित्रमुनेरुद्याने रात्रिः समज्जनि, अतस्तत्रैव सोऽतिष्ठत् । तृतीयस्य कुबेरवल्ल-
भमुनेरुद्यानसमीपे, चतुर्थस्य कुबेरप्रियमुनेस्तु नगरसमीपे । तत्र वैभारगिरिकन्दरा-
द्वारसमीपावस्थितस्य मुनेर्निपतत्तुपारसंपर्कशीतलैः शैलमारूढैः प्रकम्पितशरीरस्यापि
मनो मेरुरिवनिष्कम्प मासीत् । यथा यथा शीतं प्रवर्धते, तथा तथा ऽऽत्मिकवलं
प्रकाशयन् मनः सुस्थिरं कुर्वन् रणे वीर इव शत्रुं शीतं विजेतुं श्रोत्साहसंपन्नः सुधीरः
शीतवेदनां सहमानोऽसौ मुनिः समाधिभावेन रात्रेः प्रथमयाम एव कालं गतः ।

मुनि दिवस के तृतीय प्रहर में भिक्षाचर्या के लिये राजगृहनगर में
आये । वहां पर मिले हुए एपणीय आहार करके वे सब फिर वहां से
एक पीछे एक वैभारगिरि के समीप जहां उतरे हुए थे वहां पहुँचने के
लिए चले । इनमें कुबेरसेन मुनि को मार्ग में ही जब वे वैभारगिरि का
कन्दरा के पास पहुँचे तो रात्रि हो गई, इसलिये वह वहीं पर ठहर गये ।
दूसरे कुबेरमित्रमुनि रात्रि हो जाने से बगीचे में ठहरे । वैसे ही तीसरे
कुबेरवल्लभमुनि बगीचे के पास ठहरे । चौथे कुबेरप्रियमुनि रात्रि होने
से राजगृह नगर के पास ही ठहर गये । वैभारगिरि की कन्दरा-गुफा के
द्वार पर ठहरे हुए मुनिराज ने पड़ते हुए शीत के संपर्क से अत्यंत
शीतल पर्वतीय वायु के वेग से कम्पितशरीर होने पर भी अपने मनको
मेरु के समान निष्कम्प बनाते हुए उस शीत को प्रचलता का सामना
किया । जैसे २ शीतकी अधिकता होती जाती थी, उस उस रूप से

भाटे राजगृह नगरमां आव्यां, त्यांथी भजेल ओषष्ठीय आडार करीने ते सधणा
दरी पाछा ओक पछी ओक वैभारगिरीनी समीप ज्यां तेओ उतयां छता त्यां
पछोअवा भाटे आदी नीकज्या. तेमांथी कुबेरसेन मुनिने भार्गभांज रात्रि पडी
जवाथी वैभारगिरीनी कंदरानी पासै शेकाई गया. जीज कुबेरमित्र मुनि रात्रि
थवाथी भगीयामां शेकाई गया, ओवी ज रीते त्रीज कुबेरवल्लभ मुनि भगी-
यानी पासै शेकाई गया, चौथा कुबेरप्रियमुनि रात्रि थई जवाथी राजगृह
नगरनी पासै ज शेकाई गया वैभारगिरि कंदराना मुण द्वार पासै शेकाई
गयेला, मुनिराजे ठंडीना संपर्कथी अत्यंत शीतल पर्वतीय वायुना वेगथी कंपीत
शरीर डोवा छातां पछु पोताना मनने भेइ समान अडग राभी ठंडीनी प्रणगताने
सामने कथो. जेम जेम ठंडीनी अधिकता वधनी गर्ध ते ते इपथी तेमनुं आत्म.

ઉદ્યાનસ્થં તુ નીચપ્રદેશવર્તિત્વાદ્ દ્વિતીયયામે પ્રવલતરં શીતં વાધતે સ્મ, તદા સોડપિ પૂર્વોક્તમુનિયન્નિશ્ચલેન મનસા શીતવેદનાં સહમાનઃ સમાધિભાવેન દ્વિતીયયામે કાલગતોઽभवत् । एवमुद्यानसमीपसंस्थितस्तु तृतीययामे, एवं नगरासन्नस्तु-
उनका आत्मिकबल भी अधिकर विकसित होता जाता था। जिस प्रकार कोई उत्तम वीर रणाङ्गण में वैरी का सामना करता है, उसी प्रकार ये भी उस शीत का डटकर सामना कर रहे थे। सद्भावना में जरा सी भी शिथिलता इन्होंने ने नहीं आने दी। साम्हना करते २ ही वे मुनि समाधिभाव से कालधर्म को पाये १।

જો મુનિરાજ ઉદ્યાન મેં ઠહરે હુણ થે ઉન્હેં શીત કી વેદના ને દ્વિતીયપ્રહર મેં સતાવા । જિસ પ્રકાર પ્રથમ મુનિરાજ ને શીત કી વેદના સહન કરને મેં નિશ્ચલતા ધારણ કી, ઉસી પ્રકાર ઇન્હોં ને મી ઉસકે સહન કરને મેં નિશ્ચલતા ધારણ કી । અન્ત મેં સમાધિભાવ સે યે મી કાલધર્મ પા ગયે ૨ ।

જો મુનિરાજ ઉદ્યાન કે સમીપ ઠહરે હુણ થે, ઉન્હેં શીત કી વેદના રાત્રિ કે તૃતીય પ્રહર મેં સતાને લગી, ઓર નગર કે પાસ ઠહરે હુણ મુનિરાજ કો શીત વેદના ને રાત્રિ કે ચતુર્થ પ્રહર મેં સતાના શુરુ કિયા । હિસ પ્રકાર યે દોનોં મુનિરાજ મી શીતપરીપહ કો જીતતે ૨ હી સમાધિભાવ સે અન્ત મેં કાલધર્મ કો પ્રાપ્ત હુણ ૪ । યે ચારોં કે ચારોં હી અનુસ્તર

બળ પશુ અધિક રૂપથી વિકસતું જતું હતું. જે રીતે કોઈ ઉત્તમ વીર રણાંગણમાં વૈરીના સામનો કરે છે તેવા પ્રકારે મુનિ પશુ ઠંડીના ઓવી જ રીતે સામનો કરી રહ્યા હતા. સદ્ભાવનામાં જરા પશુ શિથિલતા તેમણે આવવા ન દીધી. સામનો કરતાં કરતાં તે મુનિ સમાધિ ભાવથી કાળ ધર્મ પામ્યા.

જે મુનિ બગીચામાં રહ્યા હતા. તેમને ઠંડીની વેદના બીજા પ્રહરમાં થઈ. જે પ્રકારે પ્રથમ મુનિરાજે ઠંડીની વેદના સહન કરવામાં અડગતા ધારણ કરી તેવી જ રીતે આમણે પશુ અડગતા દાખવી અને છેવટે સમાધિભાવથી કાળધર્મ પામ્યા.

જે મુનિરાજ બગીચાની ખંડાર રોકાયા હતા તેમને ઠંડીની વેદના રાત્રીના ત્રીજા પહોરમાં થવા લાગી અને નગરની પાસે રોકાયેલા મુનિરાજને ઠંડીની વેદના ચોથા પહોરે સતાવવા લાગી. આ પ્રકારે આ બન્ને મુનિરાજ પશુ ઠંડીના પરીપહને છતતાં છતતાં સમાધિ ભાવથી અંતે કાળધર્મને પામ્યા. આ રીતે

ચતુર્થયામે । સર્વેડ્યેતે વિજિતશીતપરીપદાઃ કાલં કૃત્વાઽનુત્તરવિમાનેષુ એકમવા-
ચતારિત્વેન સમુત્પન્નાઃ । એવમન્યૈરપિ મુનિભિઃ શીતપરીપદઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૭ ॥

શીતકાલાનન્તરં ગ્રીષ્માગમો ભવતીત્યતઃ શીતપરીપદાનન્તરમુષ્ણપરીપદ
જયં ગ્રાહ—

મૂલમ્—ઉસિણપરિયાવેણં, પરિદાહેણ તંજિણ ।

ધિંસુ વાં પરિયાવેણં, સાયં નો પરિદેવણ ॥ ૮ ॥

છાયા—ઉષ્ણપરિતાપેન, પરિદાહેન તર્જિતઃ ।

ગ્રીષ્મે વા પરિતાપેન, સાતં નો પરિદેવયેત્ ॥ ૮ ॥

ટીકા—‘ઉસિણ૦’ ઇત્યાદિ ।

ગ્રીષ્મે=ઉષ્ણકાલે, યત્ર દિ-ભાસ્કરઃ કિરણનિકરૈર્દહનં કિરન્નિવ ધરાતલેઽદ્ધાર-
પ્રકરમાસ્તૃણન્નિવ જીવજાતં પરિતાપયતિ, તરુણં પરિશોપયતિ, શુષ્કયતિ ચ ।

વિમાનોં મેં એકમવાચતારી રૂપ સે ઉત્પન્ન હુએ । ઇસી પ્રકાર અન્ય મુનિયો
કો ભી શીતવેદના કે સહન કરને મેં અપના પરાક્રમ ફોડના ચાહિયે ॥૭॥

શીતકાલ કે વાદ હી ગ્રીષ્મઋતુ કા આગમન હોતા હૈ અતઃ શીત-
પરીપદ કો સહન કરને કે વાદ ચોથા ઉષ્ણપરીપદ ભી મુનિરાજ કો
સહન કરના ચાહિયે, યહ વાત ઇસ નીચે કી ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર પ્રદ-
ર્શિત કરતે હૈ—‘ઉસિણ૦’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(ધિંસુ-ગ્રીષ્મે) ગ્રીષ્મકાલ મેં કિ જિસમેં સૂર્ય અપની પ્રચ્છર
કિરણોં કે નિકર સે ઇસ સમસ્ત ભૂમણ્ડલ પર પ્રબલ તાપ કી વર્ષા કિયા
કરતા હૈ, સમસ્ત જીવ જિસમેં માનોં અગ્નિ તાપસે જલતે હોં, વૃક્ષસમૂહ
જિસ મેં શુષ્ક જૈસા હો જાતા હૈ વિચારે પ્યાસે ખોલે મૃગોં કે કુણ્ડ કે

એ ચારે મુનિરાજ અનુત્તર વિમાનમાં એકલવ અવતારી રૂપથી ઉત્પન્ન થયા. આ
પ્રકારે અન્ય મુનિયોએ પણ શીતવેદના સહન કરવામાં પોતાનું પરાક્રમ
ખતાવવું બેઠુંએ. ॥૭॥

ઠંડીના વખત પછી ઉનાળાનો વખત આવે છે અહીં શીતપરીપદને
સહન કર્યા પછી ચોથો ગરમીના પરીપદને પણ મુનિરાજે સહન કરવો બેઠુંએ.
એ વાત નીચેની ગાથાથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે.—“ઉસિણ૦” ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ધિંસુ-ગ્રીષ્મે ગ્રીષ્મ કાળમાં કે જ્યારે સૂર્ય પોતાનાં પ્રખર કિરણોથી
સમસ્ત ભૂમંડળ ઉપર પ્રબળ તાપની વર્ષા વરસાવે છે. સમસ્ત જીવ જેમાં
અગ્નિના તાપની આક્રમ બળતા હોય છે, વૃક્ષ સમૂહ શુષ્ક બની નાથ છે,

મૃગતૃણાભિરારચિતજલતરંગમાલાભિરિવ પ્રચલજ્જલધારા વિભ્રમમુપગતા મુઘ્ધમુગ-
યુયાઃ પિપાસયા પરિતઃ પ્રધાવન્તિ । મનુષ્યાઃ સ્વલુ પ્રાયશઃ પ્રચળ્ડમાર્તઙ્ડકરનિક-
રસંપર્કપ્રચરરજઃકળોપેતયાત્યાપરિઘટ્ટિતાઃ પ્રતપ્તભૂતલનિવર્તિતાઃ પિપાસયાઽઽસ-
ન્મૃત્યુવ ચ ભવન્તિ । યત્ર સ્વલુ વનસ્થલી પિપાસાવશવિભ્રમદ્વિવિવિધપશુપક્ષ્યા-
દિભિઃ પરિશુષ્કતાલુરસનકળ્પૈઃ સમાકુલા, નમસ્તલં ચ નાનાવિધ પત્રકાષ્ઠતૃણકવ-
ચરોદ્ધૂલનકરપ્રતિકૂલમારુતધ્વનિસમાકુલં ભવતિ । તસ્મિન્નુષ્ણકાલે, વા શબ્દેન-
શરદિ વર્ષાસુ ચા, ઉષ્ણપરિતાપેન=ઉષ્ણમ્-સૂર્યકિરણસંયોગાત્તપ્તં-ભૂમિધૂલિપાપાના-

કુણ્ડ જિસમેં “યહ જલધારા વહ રહી હૈ” હસ પ્રકાર ભ્રમોત્પાદક
મૃગતૃણા સે પાગલ જૈસે વને હુણ્ડ ઇધર ઉધર દૌડને લગતે હૈં । જિસ
ઋતુમેં સૂર્ય કી પ્રચળ્ડ કિરણોં સે ધૂપ સ્ત્રૂવ પડતી હૈ જિસસે રેતી તપ
જાતી હૈ ઓર લૂ ચલને લગતી હૈ । સંતપ્ત રજકળ સે મિશ્રિત ઉસ લૂકે
વેગ સે વ્યાકુલ હોકર મનુષ્ય બી ઉસ તપી હુઈ ભૂમિ પર ગિર ગિર કર
પ્યાસ કે મારે મૂર્છિત હો આસન્નમૃત્યુ જૈસે દિખાઈ દેને લગતે હૈં । જિસ
ગ્રીષ્મ કાલ મેં પિપાસા કે વશ જિનકે તાલૂ ઓષ્ઠ એવં કંઠ સૂચ રહે હૈં
ગર્મીં કે મારે મુંહ જિન કે ફટે હુણ્ડ હૈ ઓર જીભ લટક રહી હૈ એસે
પશુ પક્ષિયોં સે અટવી વ્યાપ્ત હો જાતી હૈ । તથા જિસમેં આકાશ
નાનાવિધપત્ર, કાષ્ઠ, તૃણ, કૂડા-કચરા આદિ કો ઉડાને વાલી પ્રતિકૂલ
વાયુ કી સનસનાહટ ધ્વનિ સે વ્યાપ્ત હો જાતા હૈ એસે ઉષ્ણકાલ મેં ।
(ઉસિળપરિધાવેણં-ઉષ્ણપરિતાપેન) ઉષ્ણપરિતાપ સે-સૂર્ય કિરણોં કે

તરસથી ખીચાશ લોખાં હરણનાં ટોળાં “આ જળધાર વહી રહી છે” આ
પ્રકારના ભ્રમથી પાગલની માફક મૃગજળ રૂપી જળના આલાસ તરફ
દોડતાં રહે છે. જે ઋતુમાં સૂર્યના પ્રચંડ કિરણોથી ખૂબ તાપ પડે છે તેનાથી
રેતી તપે છે, અને લૂ ચાલવા લાગે છે, સંતપ્ત રજકણથી મિશ્રીત તે લૂના
વેગથી વ્યાકુળ બની મનુષ્ય પણ તે તપેલી ભૂમી ઉપર તરસના માથાં પડી
બઈ મૂર્છિત થઈ આસન્ન મૃત્યુ જેવા દેખાય છે. જે ગ્રીષ્મકાળમાં અટવીમાં પીપા-
સાને વશ જેવું તાળવું, હોઠ અને કંઠ સુકાઈ જાય છે, ગરમીના માથાં મોઢું જેવું
ફાટી રહે છે અને જીભ લટકી જાય છે એવા પશુ પક્ષિઓથી વ્યાપ્ત થઈ જાય છે.
તથા જેમાં આકાશ જુદી જુદી ભતનાં પાંદડાં, લાકડું, ઘાસ, કચરા, પુંખ વગેરેને
ઉડાવવાવાળા પ્રતિકૂળ વાયુના સુસવોટા કરતા ધ્વનિથી વ્યાપ્ત થઈ જાય છે. એવા
ઉષ્ણકાળમાં “ઉસિળ પરિધાવેણં-ઉષ્ણપરિતાપેન” ઉષ્ણ પરિતાપથી ના

દિકં, તેન પરિતાપઃ—ઉષ્ણપરિતાપસ્તેન તર્જિતઃ, અત્યંત પીડિતઃસન્, તથા—
પરિદાહેન=સૂર્યકિરણસંતપ્તવાયુના ‘લૂ’ इति भाषाप्रसिद्धेन, दाहज्वरादિકृता-
ન્તરિક્તાપેન ચા, તર્જિતઃ, તથા પરિતાપેન=સૂર્યકિરણાદિજનિતતાપેન-તર્જિતઃ,
સાતં=સુખં પ્રતિ ન પરિદેવયેત્=હા ! કદા મમ ચન્દ્રચન્દનશીતલાનિલાદિભિઃ
સદ્ સંયોગો ભવિષ્યતિ યેન મમ શાન્તિઃ સ્યાદિતિ ॥ ૮ ॥

ઉપદેશાન્તરમાહ—

મૂલ્મ—ઉપહાહિતત્તો મેહાવી, સિઠાણં નો ત્રિ’ પત્થંઈ ।

ગાયં નો પરિસિંચેજ્જા, ને વીણેજ્જા યં અપ્પેયં ॥૯॥

છાયા—ઉષ્ણાભિતપ્તઃ મેધાવી, સ્નાનં નો અપિ પ્રાર્થયેત્ ।

ગાત્રં નો પરિપિચ્ચેત્, ન વીજયેચ આત્માનમ્ ॥૯॥

સંયોગ સે તસ એસે જો ભૂમિ, ધૂલિ, एवं पापाण आदि हैं उनके द्वारा
જો પરિતાપ-કષ્ટ હોતા હેં ઉસસે, તથા (પરિદાહેણ) સૂર્ય કી કિરણોં
દ્વારા ગર્મ હુઈ વાયુ સે-લૂસે, અથવા દાહજ્વર આદિ સે હોને વાલે
આન્તરિક તાપ સે (પરિયાવેણં-પરિતાપેન) एवं सूर्य की किरणों से उत्पन्न
हुई अत्यंत गर्मी से (तज्जिए-तर्जितः) અતિશય પીડિત સાધુ
(સાયં નો પરિદેવ-શાતં નો પરિદેવયેત્) સુખ કી વાચ્છા ન
કરે-હા ! કિસ સમય મુઝે ચન્દ્ર અથવા ચંદન કે સમાન શીતલ પવનાદિ
કા સંયોગ મિલેગા કિ જિસ સે મુઝે શાંતિ મિલે । અર્થાત્-સાધુ કા
કર્તવ્ય હૈ કિ વહ્ હરેક અવસ્થા મેં ઉષ્ણપરીપહ કો જીતે કિન્તુ ઇસ સે
ઘબરાવે નહીં ॥ ૮ ॥

સંયોગથી તપેલ એવી જે ભૂમિ ધૂળ અને પાપાણુવાળી છે. તેના દ્વારા જે કષ્ટ થાય
છે, એનાથી તથા “પરિદાહેણ” સૂર્યના કિરણો દ્વારા ગરમ થયેલા વાયુથી લૂથી,
અથવા દાહજ્વર આદિથી થનાર આંતરિક તાપથી પરિયાવેણં-પરિતાપેન અને સૂર્યના
કિરણોથી ઉદ્ભવેલ અત્યંત ગરમીથી તજ્જિય-તર્જિતઃ અતિશય પીડિત સાધુ
“સાયંનો પરિદેવ-શાતં નો પરિદેવયેત્” સુખની વાંચ્છના ન કરે-મને કયા સમયે ચંદ્ર
અથવા ચંદનની જેવી શીતળ પવન આદિનો સંયોગ મળે કે જેથી મને
શાન્તી થાય. અર્થાત્-સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તે દરેક અવસ્થામાં ઉષ્ણ પરીપહને
છતે, પરંતુ તેનાથી ગભરાય નહીં. (૮)

टीका—‘उण्हाहित्तो’ इत्यादि ।

मेधावी=आगमोक्तमर्यादानुवर्ती मुनिः, उष्णाभितप्तः=उष्णेन-उष्णस्पर्शेन, अभितप्तः-तापाकुलः सन् स्नानं नो प्रार्थयेत्=नैवाभिलषेत् । अपि च गात्रं-शरीरं, नो परिपिबेत्-न जलैराद्रीकुर्यात् । च=पुनः आत्मानं-स्वदेहं न वीजयेत्=व्यजनादिना शरीरे वायुं नोदीरयेत् ।

अयं भावः-उष्णतप्तोऽपि मुनिर्जलावगाहनस्नानव्यजनवातादि वर्जयेत्, न च जलैर्गात्रं सिञ्चेत् । आतपवारणाय स्वदेहोपरि रजोहरणादिना छायां न कुर्यात् । न चापि छत्रादिकं धारयेत् । मनसाऽपि न प्रार्थयेत् किंतु उष्णपरीपहं सम्यक् सहेतेति ।

‘उण्हाहि०’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ- (मेधावी-मेधावी) आगमोक्त मर्यादा का अनुसरण करने वाला मुनि (उण्हाहित्तो-उष्णाभितप्तः) उष्णस्पर्श से संतप्त होता हुआ भी (सिसाणं नो विपत्ये-स्नानं नोऽपि प्रार्थयेत्) स्नान की अभिलाषा न करे । तथा (गायं नो परिसिञ्चेज्जा-गात्रं नो परिपिबेत्) अपने शरीर ऊपर पानी न छींटे तथा उसको गीला भी न करे और न गीले कपड़े से ही पोंछे । तथा (अप्पयं न वीएज्जा-आत्मानं न वीजयेत्) शरीर पर वीजना आदि से हवा भी न करे ।

इसका भाव यह है-उष्ण से संतप्त भी मुनि अचित्त जल का भी अवगाहन करना-उससे स्नान करना, वीजनादि से-पंखा आदि से हवा करना इन समस्त शीतलोपचारकारक क्रियाओं का परित्याग कर देवे । अपने शरीर पर गर्मी की वेदना को शमन करने के लिए शीतल जल के

“उण्हाहि” इत्यादि.

अन्वयार्थ-मेधावी-मेधावी आगमभां कहेल मर्यादानु अनुसरण करवावाणा मुनि उण्हाहित्तो-उष्णाभितप्तः उष्ण स्पर्शेन संतप्त थवा छात्रं पक्षु सिसाणं नो विपत्ये-स्नानंनोऽपि प्रार्थयेत् स्नानंनो अभिलाषा न करे गायं नो परिसिञ्चेज्जा-गात्रं नो परिपिबेत् पोताना शरीर उपर पाणी न छांटे तेम जेने लीनुं पक्षु न करे के न तो लीना कपडाथी छुछे, तथा “अप्पयं न वीएज्जा”-आत्मानं न वीजयेत् शरीर उपर वीजणा वजेरेथी हवा पक्षु न नाजे.

आनो भाव जे छे-उष्णताथी संतप्त जनेल मुनिजे पाणीनो आशरी देवे, जेनाथी स्नान करवुं, पंखा आदिथी हवा भावी आ समस्त शीतल उपचार करके क्रियाजोनो परित्याग करवे। पोताना शरीर उपर गरमीनी वेदनानुं शमन करवा भाटे शीतल जलनो छांटे पक्षु न देवे, आतपनुं वारण

अत्र दृष्टान्तः—

आसीत् तगरानगर्यां दत्तनामकः श्रेष्ठी । तस्य भद्राभार्यायामरहन्नक नामकः पुत्रो जातः । एकदाऽसौ दत्तश्रेष्ठी भार्यापुत्राभ्यां सहार्हन्मित्राचार्यसंनिधौ धर्मदेशनां निश्चयं विरक्तः सन् प्रव्रज्यां गृहीतवान् । स दत्तमुनिः स्नेहवशादरहन्नकं कदाचिदपि भिक्षार्थं न प्रेषयति, स्वयमेव भिक्षामानीय तं पोषयति, न च तेन किमपि कार्यं कारयति, अतोऽसौ सुकुमारो जातः । अन्यदा कदाचित् तस्य पिता

छींटे भी न दे, तथा आतप को वारण करने के लिये रजोहरणादिक से शरीर पर छाया भी न करे। छत्र-छाता-आदि को भी धारण न करे और न इस प्रकार की क्रियाओं को करने की भावना ही रखे। जैसे भी बने उष्णपरीपह को सहन करे ।

दृष्टान्त—तगरा नाम की नगरीमें दत्त नाम का एक सेठ रहता था। उसकी धर्मपत्नी का नाम भद्रा था। भद्रा से एक पुत्र हुआ, जिस का नाम अरहन्नक था। एक समय सेठ ने अपने स्त्री पुत्र के साथ जाकर अर्हन्मित्र नामके किसी आचार्य के पास धर्म का उपदेश सुना। सुनकर वे संसार से विरक्त हो गये और स्त्रीपुत्रसहित उसने दीक्षा अंगीकार करली, पुत्र से प्रेम होने के कारण वे कभी भी अपने पुत्र को भिक्षा लाने के लिये नहीं भेजते थे, किन्तु स्वयं जाकर भिक्षा लाते और पुत्र को भी आहार कराते। पुत्र से कुछ भी कार्य नहीं कराते। इस तरह दत्तमुनि का वह पुत्ररूप शिष्य बहुत ही सुकुमार प्रकृति के

करवा भाटे रजोहरणादिकथी शरीर उपर छाया पणु न करवी, छत्र-छत्री वगेरे पणु धारणु न करवां. अने आ प्रक्षारनि क्रियाओ करवानी लावना पणु न राखवी. जेम जने तेम उष्णपरीपहने सहन करवां.

दृष्टान्त—तगरा नामनी नगरीमां दत्त नामना ओक शेठ रहैता हता, तेनी धर्मपत्तिनुं नाम भद्रा हतुं. भद्राथी ओक पुत्र थयो जेतुं नाम अरहन्नक हतुं ओक समय शेठ पोताना स्त्री पुत्रनी साथे अर्हन्मित्र नामना ओक आचार्य पासे धर्मने उपदेशे सांलगेथे ओ उपदेशथी संसारथी विरक्तलाव लागेथे. अने स्त्री पुत्र साथे तेहे दीक्षा अंगिकार करी लीधो. पुत्रथी प्रेम होवाने मरहे कही पणु पोताना पुत्रने भिक्षा लाववा भाटे मोकलता न हता परंतु पोते न जेथ ने भिक्षा लावता अने पुत्रने पणु आहार करावता. पुत्रथी कांछ पणु कार्य करावता नही. आ रीते दत्त मुनिना ओ पुत्रइय शिष्य धर्यो न सुकुमार प्रकृतिवाणा

दत्तमुनिर्मृतः तदनन्तरं साधुभिः प्रेरितः सन्नरहन्नको ग्रीष्मकाले भिक्षार्थं गतः ।
 स पूर्वमकृतश्रमोऽतीवसुकुमाराङ्गः सूर्यकिरणोत्तमरेणुनिकरण चरणतले, तपनाग्नि-
 र्मस्तके च तापामिभूतसृषाशुष्कण्ठोऽरहन्नकः कस्यचित् श्रेष्ठिनः प्रोत्तुङ्गभवनस्य-
 च्छायामाश्रित्य तिष्ठति ।

तदा तं सुकुमारं रूपसौन्दर्यं लावण्यगुणैर्मन्मथावतारं मुनिमरहन्नककुमारं दृष्ट्वा
 काचित् प्रोपितभर्तृका वणिग्भार्या दास्या तं समाहूय गृहमानयति । ततः सा तं
 पृच्छति-भवान् किं याचते ? अरहन्नकः ग्राह-भिक्षां याचे । ततः सा कामवशंगता
 वन गये । कालान्तरं तं दत्तमुनि का स्वर्गवास हो गया । अब क्या था-
 साधुओं से प्रेरित होकर वह एक समय भिक्षा लाने के लिये ग्रीष्म
 काल में गये । सुकुमार प्रकृति के तो थे ही, पिता के समय पहिछे
 इन्होंने ने कुछ परिश्रम भी नहीं किया था, अतः उस ग्रीष्मकाल में
 सूर्य की प्रचण्ड किरणों से संतप्त भूमि पर चलने से उनके पैरों में छाले
 पड़ गये । माथा गरम हो गया । कंठ गर्मी के मारे सूख गया गर्मी की
 इनको अधिक वेदना हुई । पास में किसी एक सेठकी बहुत ऊँची हवेली
 थी सो वे गर्मी के मारे उसकी छाया में आकर ठहर गये । ठहरे हुए इन
 मुनि को एक प्रोपितभर्तृका-विरहिणी-स्त्री ने देखा । यह शारीरिक रूप,
 लावण्य एवं सौन्दर्य से ऐसे मालूम पड़ते थे कि जैसे मानो साक्षात् देव
 ही हो । देखते ही सुकुमार इस अरहन्नक मुनि को उस विरहिणी वणि-
 ग्भार्या ने अपनी दासी द्वारा मकान ऊपर बुलवाया । मकान ऊपर पहुँचते

अनी गया. कालान्तरे दत्तमुनिने स्वर्गवास धयो. आ पछी साधुओंनी प्रेरणाथी
 प्रेरित अनी ते सुकुमारमुनि ग्रीष्मकालमां भिक्षा लेवा भाटे गया. सुकुमार
 प्रकृति तो હતી જ, પિતાની હાજરીમાં તેણે જરા જેટલો પણ પરિશ્રમ કરેલ ન
 હતો. આથી ગ્રીष्મકાળમાં સૂર્યનાં પ્રચંડ કિરણોથી સંતપ્ત અનેલ ભૂમિ ઉપર
 ચાલવાથી એના પગમાં છાલા પડી ગયાં, માથું ગરમ થઈ ગયું, ગળું ગર-
 મીના કારણે સુકાઈ ગયું, ગરમીની એને અધિક વેદના થઈ, પાસે જ કોઈ એક
 શેઠની ઘણી જ ઉંચી હવેલી હતી-આથી તે એ હવેલીની છાયામાં જઈને
 ઉભા રહ્યા. ઉભેલા મુનિને એઈ એક વિરહણી સ્ત્રીનું એ તરફ લક્ષ્યે થાયું જે
 શારીરિક રૂપ, લાવણ્ય અને સૌંદર્યથી તેની દ્રષ્ટિએ દેવ તુલ્ય દેખાયા. આ
 અરહન્નક સુકુમાર મુનિને એઈને તે વિરહિણી વધિક સ્ત્રીએ પોતાનીદાસી માર-
 ક્ત મકાન ઉપર બોલાવ્યા. મકાન ઉપર પહોંચતાં જ મુનિ અરહન્નકને તેણે

તં પ્રલોભ્ય સ્વભવને સ્થાપિતવતી । અથ તન્માતા ભદ્રાસાધ્વી મુનીનાં નિવાસસ્થાને
વન્દનાર્થમાગતા । સા તત્ર તમપશ્યન્તી અર્હન્મિત્રાચાર્યમપૃચ્છત્-ભદન્ત ! અરહન્ન-
કમુનિઃ ક્વ વર્તતે ? અર્હન્મિત્રાચાર્યઃ પ્રાહ-અરહન્નકો ભિક્ષાર્થં ગતઃ, કિં તુ ન પુનઃ
પરાવૃત્તઃ, અતસ્તમન્વેપયન્તિ મુનયઃ, ઇતિ તદનુપલબ્ધિવચનં વજ્રાઘાતમિવકઠોરં
શ્રુત્વા વ્યાકુલા સતી ભદ્રા સાધ્વી પુત્રમોદેન અરે અરહન્નક ! અરે અરહન્નક !
ઇત્યુચૈર્વિલપન્તી નયનનિઃસ્રવદશ્રુધારાં પાતયન્તી મોદેન પદે પદે પ્રસ્રવલન્તી પ્રતિ-

હી મુનિ અરહન્નક સે ડસને પૂછા આપ ક્યા ચાહતે હું ? અરહન્નક ને કહા
ભિક્ષા ચાહતા હું । કામ કે વશંગત હુઈ ડસ સ્ત્રી ને ભિક્ષા કા લોભ દેકર
અરહન્નક મુનિ કો અપને ઘર પર ઠહરા લિયા । ડધર અરહન્નક મુનિ કી
માતા ભદ્રા સાધ્વી મુનિયોં કો વન્દના કરને કે લિયે આઈ । અરહન્નક
મુનિ કો ડ્યોં હી વહાં સાધ્વી ને નહીં દેલા ત્યોં હી વહ અર્હન્મિત્રા-
ચાર્ય કો પૂછને લગી કિ ભદન્ત ! અરહન્નક મુનિ કહાં હું । આચાર્ય
મહારાજ ને કહા કિ વે ભિક્ષા લેને કે લિયે યાહર ગયે થે, પરન્તુ અભી-
તક વાપિસ નહીં આયે હું અતઃ અન્યમુનિજન ડનકી તલાશ કર રહે
હું । માતા ભદ્રા સાધ્વી ને ડ્યોં હી યહ વાત સુની ત્યોં હી ડસકે હૃદય
મેં વજ્ર કે આઘાત જૈસા ઇક કઠોર આઘાત હુઆ ઓર ડસી સમય
ડસ કા ચિત્ત વિક્ષિપ્ત-હો ગયા । વહ પુત્ર કે મોહ સે વહુત હી આકુલ-
વ્યાકુલ હોને લગી, ઓર અપને આપ વડ-વડાને લગી-અરે અરહન્નક !
તું ઇસ સમય કહાં હૈ, કહ તો સહી । ઇસ પ્રકાર ડૂંચે સ્વર સે વિલાપ
કરતી ઓર આંખોં સે આંસુઓં કી ધારા વહાતી હુઈ વહ સ્થાન સ્થાન પર

પૂછ્યું. આપ શું ઈન્છા છે ? અરહન્નકે કહ્યું કે, હું ભિક્ષા આહું છું. કામને
વશ બનેલ તે સ્ત્રીએ ભિક્ષાનો લોભ આપીને અરહન્નક મુનિને પેતાને ઘેર શેડી
લીધા. અહિં અર્હન્નક મુનિની માતા ભદ્રા સાધ્વી મુનિયોને વંદણ કરવા આવી.
અરહન્નક મુનિને જ્યારે તે સાધ્વીએ ત્યાં ન જોયા ત્યારે આચાર્યને પૂછ્યું કે, 'હે
ભદન્ત ! અરહન્નક મુનિ ક્યાં છે ? આચાર્ય મહારાજે કહ્યું કે, ભિક્ષા લેવા માટે તેઓ
બહાર ગયા છે, પરંતુ હજી સુધી પાછા ફરેલ નથી. જેથી અન્ય મુનિજન તેની
તપાસ કરી રહેલ છે. માતા ભદ્રા સાધ્વીએ જ્યારે આ વાત સાંભળી ત્યારે તેના હૃદ-
યમાં વજ્રના ઘા જેવો એક આઘાત થયો અને એ વખતે એનું ચિત્ત વ્યાકુળ બની
ગયું. તે પુત્રના મોહથી ઘણાં વ્યાકુળ વ્યાકુળ થવા લાગ્યાં, અને પોતાના મનમાં જ
બડબડવા લાગ્યાં કે, અરે અરહન્નક ! તું આ સમયે ક્યાં છે, કહે તો બરે
આ પ્રકારે હંચા સ્વરથી વિલાપ કરતાં અને આંખોથી અશ્રુધારા વહાવતાં, તે

स्यलं भ्राम्यति, सा यत्र यत्र गच्छति तत्र तत्र पुनः पुनर्लोकान् पृच्छति-मम
माणवल्लभः पुत्रोऽरहन्नकः क्वापि दृष्टो भवद्भिः? । इत्येवं पृच्छन्ती रुदती यं कमपि
दृष्टवती, तं प्रति-अयमरहन्नक इति मत्वा हर्षमुद्वहन्ती, पुनस्तमनालोक्य स्वती
विलपन्ती एकदा यत्रारहन्नक आसीत् तद्भवनसमीपे समागता । तदा गवाक्षवर्तिनाऽर-
हन्नकेन तादृशावस्थापन्ना माता दृष्टा, संजातात्यन्तसंवेगः स गवाक्षादुत्तीर्य चर-
णयोः पतित्वा मातरमेवमाह-हे मातः ! सोऽहमरहन्नकः । इति तद्वचनं श्रुत्वा माता
स्वस्थमानसा जाता, तदनु सा पुत्रं माह-वत्स ! मन्वकुलोत्पन्नस्य तव कथमीदृशी-

गिरती पडती इधर उधर घूमने लगी । जहाँ जहाँ वह जाती वहाँ २ पूछती
कि हे महानुभावो ! कहो तो सही तुम लोगों ने मेरे पुत्र अरहन्नक को
कहीं देखा भी है ? । इस प्रकार पूछती, विलाप करती, रोती हुई वह भद्रा
साध्वी जिस किसी को भी देखती हर्ष के भावावेश में आकर कहने
लगती 'यह रहा मेरा अरहन्नक' । परन्तु जब उसमें उसे अरहन्नक दिखाई
नहीं पड़ता तो पुनः रोने लगती । इस प्रकार अत्यंत विह्वल बनी हुई एक
दिन वह वहाँ पहुँची जिस मकान में स्वयं अरहन्नक थे । जब यह वहाँ
पहुँची थी उस समय अरहन्नक उस मकान की खीड़की में बैठे हुए थे ।
उसने रोती हुई अपनी माता को ज्यों ही देखा त्यों ही उसे संवेग के
भाव अतिशय रीति से जागृत हो उठे । वह इकदम झरोखे से नीचे उतर
कर माता के दोनों चरणों में पड़ गये और बोला कि हे मातः मैं अर-
हन्नक हूँ । इस प्रकार उनके वचन को सुनकर माता का चित्त शान्त हो
गया और बोली-वत्स ! तुम तो कुलवान् हो जातिमान हो फिर तुम्हारी

स्थणे स्थणे अथक्षातां अडिं तडिं इरवा लाग्यां. जे ते स्थणे ते जेधं पूछतां
के डे भडानुभावे । कडे तो भरा तमेअजे भाश पुत्र अरहन्नकने कयाँह देअये
छे ? आ प्रकारे पूछतां अने विलाप करतां अने रीतां ते लद्रा साध्वी न्यारे
डेअने जेअये तो हर्षना भावावेशमां आवीने कडेवा लागतां के आ रह्यो भारे
अरहन्नक ! परंतु न्यारे तेने अरहन्नक न देणातो त्यारे ते इरीथी रीचा लागतां
आ प्रकारे अत्यंत विह्वल बनी अेक दिवसे ते अे भडान छपर पडोअ्यां के
न्यां अरहन्नक डेतो. न्यारे ते त्यां पडोअ्यां ते वंभते अरहन्नक ते भडाननी
अेक भारीमां भेडेल डेतो. तेखे पोतानी माताने रीती जेधं त्यारे तेनामां
संवेगने भाव अतिशय जगृत थये. ते अेकदम अ्जेथी नीचे उतरिने माताना
अरहोमां पडी गये अने बोलेये के डे माता ! हुं अरहन्नक छुं. आ प्रकारनां
तेनां वचन सांझीने मातानुं चित्त शान्त बनी गयुं अने बोली, वत्स !

દશા ? સોઝવદત્—હે માતશ્ચારિત્રં પાલયિતુમસમર્થોઽસ્મિ । સા ગ્રાહ-તર્હિ
અનશનં કુરુ । યતઃ—

વરં પવેસો જલિણ હુયાસણે,
ન યાવિ ભગં ચિરસંચિયં વયં ।

વરં હિ મચ્ચુ સુવિસુદ્ધકર્મ્મઓ,
ન યાવિ સીલક્ખલિયસ્સ જીવણં ॥ ૧ ॥

છાયા—વરં પ્રવેશો જ્વલિતે હુતાશને,
ન ચાપિ ભગં ચિરસંચિતં વ્રતમ્ ।

વરં હિ મૃત્યુઃ સુવિશુદ્ધકર્મ્મતો,
ન ચાપિ સીલસ્વલિતસ્ય જીવનમ્ ॥ ૧ ॥

સુવિશુદ્ધકર્મ્મતઃ—નિરવધક્રિયાઽઽચરણતઃ, મૃત્યુઃ=મરણં, વરં=શ્રેયઃ, ન તુ
શીલસ્વલિતસ્ય=ચરિત્રપતિતસ્ય જીવનમ્ । અન્યત્ સુગમમ્ ।

ऐसी दशा क्यों हुई ? । अरहन्नक बोले—मातः ! इस दशा के होने का
कारण चारित्र को पालन करने की असमर्थता है । माता बोली—यदि तुम
चरित्र पार करने के लिये असमर्थ हो तो अनशन करो । जैसे कहा है—

“ वरं पवेसो जलिण हयासणे,
न यावि भगं चिरसंचियं वयं ।

वरं हि मच्चू सुविसुद्धकम्मओ,
न यावि सीलक्खलियस्स जीवणं ॥ १ ॥ ”

ધધકતી હુઈ અગ્નિ મેં પ્રવેશ કરના તો ઠીક હૈ પરન્તુ ચિરસંચિત
વ્રત કા ભંગ કરના ઠીક નહીં હૈ । સુવિશુદ્ધ કર્મ-શીલ આરાધન કરતે

તમે તો કુળવાન છો, જાતિવાન છો, છતાં તમારી આવી દશા કેમ થઈ ?
અરહન્નકે કહ્યું, માતા ! આ દશા થવાનું કારણ ચારિત્ર પાલન કરવાની અસ-
મર્થતા છે. માતાએ કહ્યું, જો તમે ચારિત્ર પાલન કરવા માટે અસમર્થ છો
તો અનશન કરો. જેમ કહ્યું છે—

“ વરં પવેસો જલિણ હુયાસણે,
ન યાવિ ભગં ચિરસંચિયં વયં ।

વરં હિ મચ્ચુ સુવિસુદ્ધકર્મ્મઓ,
નયાવિ સીલક્ખલિયસ્સ જીવણં ॥ ૧ ॥ ”

ભલકતી એવી અગ્નિમાં પ્રવેશ કરવો ઠીક છે, પરંતુ ચિરસંચિત વ્રતનો
ભંગ કરવો ઠીક નથી. સુવિશુદ્ધ કર્મશીલ આરાધના કરતાં કરતાં મૃત્યુ થવું ઠીક છે,

एवं मातृवचः श्रुत्वा स संज्ञातवैराग्यः सर्वसाधयोगं प्रत्याख्याय पुनः संयमं गृहीतवान् । तत उत्कृष्टाचारेण ग्रामानुग्रामं विहरन् उष्णपरीपहं सहमानः क्वचित् पाषाणमयप्रदेशं प्राप्य चिन्तयति—‘प्रदेशोऽयं प्रचण्डमार्तण्डकिरणसंयोगाद् बह्वि-
वत्प्रतप्तः, उष्णतरश्च वायुः प्रवहति, अत्र पदमपि गन्तुमसमर्थोऽस्मि,’ एवं विचिन्त्य परितः प्रतप्तभूमीतलं विलोक्य परीपहोऽयं मया सोढव्य इत्यवधार्य तप्तशिलोपरि
करते मृत्यु होना ठीक है, परन्तु शील से स्वलित व्यक्ति का जीवन ठीक नहीं है। निरवय क्रिया का नाम सुविशुद्धकर्म एवं चारित्र्य से पतित होने का नाम शील से स्वलित होना है।

इस प्रकार जननी के वचन सुनकर उसका मुक्त वैराग्य जग उठा, पश्चात् उसने सर्वसाधय योग का प्रत्याख्यान कर पुनः संयम लिया। माता के वचन से उद्योधित होकर उसने फिर उत्कृष्ट चरित्र का आराधन किया और चारित्र्य की आराधनापूर्वक ही ग्रामानुग्राम विहार करते हुए उष्णपरीपह को सहन किया। एक समय की बात है कि ये विहार करते २ ऐसे प्रदेश में पहुँचे कि जहाँ पत्थरों की बहुलता थी। वहाँ पहुँच कर उन्होंने विचार किया कि यह प्रदेश सूर्य की किरणों से अधिक संतप्त बना हुआ है। यह तो ऐसा तप रहा है कि जैसे मारो अग्नि ही जल रही हो। वायु भी इतनी गर्म चल रही है कि जिससे एक पैर भी सुखपूर्वक चला नहीं जा सकता है। इस प्रकार विचार करते हुए अरहन्नक मुनि ने अपने आसपास की समस्त भूमि को

પરંતુ શીલથી સ્ખલિત થયેલ વ્યક્તિનું જીવન ઠીક નથી. નિરવય ક્રિયાનું નામ સુવિશુદ્ધ કર્મ, ચારિત્રથી પતિત થવાનું નામ શીલથી સ્ખલિત બનવું તે.

આ પ્રકારનાં માતાનાં વચન સાંભળીને તેનો સુતેલો વૈરાગ્ય જાગી ઉઠ્યો અને તેણે સર્વ સાધય યોગનું પ્રત્યાખ્યાન કરી પુનઃ સંયમને ધારણ કર્યો. માતાના વચનથી ઉદ્દોષિત બની તેણે પછી ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્રનું આરાધન કર્યું અને ચારિત્રની આરાધના પૂર્વક જ ગ્રામનુગ્રામ વિહાર કરીને ઉષ્ણ પરીપહને સહન કર્યો. એક સમયે એ વિહાર કરતાં કરતાં એવા પ્રદેશમાં પહોંચી ગયા કે, જ્યાં પથરાઓ ચોટા પ્રમાણમાં હતા. ત્યાં પહોંચીને તેઓએ વિચાર કર્યો કે, આ પ્રદેશ સૂર્યના કિરણોથી અધિક સંતપ્ત બનેલો છે. આ તો એવા તપી રહ્યા છે કે બધું અગ્નિ જ સળગી રહી છે. વાયુ પણ એટલી જ રીતે ગરમ કુંકાઈ રહેલ છે આથી એક ડગલું પણ સુખપૂર્વક ચાલી શકાતું નથી. આ પ્રકારનો વિચાર કરતાં કરતાં અરહન્નક મુનિએ પોતાની આસપાસની

समुपविशति । तत्र—प्रत्याख्याताष्टादशपापः कृतदुष्कृतगर्हः क्षामितसकलसत्त्वः स्वीकृतचतुर्विधशरणः, परित्यक्तसर्वसंगः पुनः पुनः कृतपंचनमस्कारोऽनशनं कृत्वा समाधिभावसम्पन्नः पादपोषगमनेन मुहूर्तमात्रेण सुकुमारशरीरो नवनीतपिण्डइवोष्णेन विलीनः सौधर्मं मुरलोकं गतः, एवं मुनिमिरुष्णपरीपहः सोढव्यः ॥९॥

ग्रीष्मकालान्तरं वर्षाकाले दंशमशकादिकृतपीडां प्राप्तेन साधुना तत्परीपहः सोढव्यः इत्याह—

मूलम्—पुंढो यं दंसैमसएहिं, संम रेवं महामुणी ।

नागो संगामसीसे वां, सूरौ अभिहणे परं ॥१०॥

छाया—स्पृष्टश्च दंशमशकैः सम एव महामुनिः ।

नागः संग्रामशीर्षे वा, सूरौऽभिहन्यात् परम् ॥ १० ॥

अत्यंत उष्ण देखा और पुनः विचार करने लगे कि यह उष्णपरीपह मुझे साधु के नाते अवश्य सहन करना चाहिये, ऐसा निश्चित कर वह एक तप्त शिला के ऊपर बैठ गये। वहाँ उन्होंने १८ पापस्थानों का प्रत्याख्यान किया, अपने दुष्कृतों की गहरी की, समस्त जीवों से खमत खामणा किया। चार प्रकार के शरणों को स्वीकार किया, समस्त भमता का त्याग किया, एवं पंचपरमेष्ठी को बार बार नमस्कार किया। पश्चात् अनशन धारण कर समाधिभाव से युक्त अरहन्नक मुनि ने पादपोषगमन संथारा किया। एक मुहूर्तमात्र में ही उनका सुकुमार शरीर मक्खन के पिंड की तरह गर्मी से विलीन हो गया और वे मर कर सुधर्मदेवलोक में देव हुए। इसी तरह अन्य मुनि जनों को भी उष्णपरीपह सहन करना चाहिये ॥ ९ ॥

समस्त भूमीने अत्यंत उष्ण जेठ अने पाछा विचार करवा लाग्या के उष्ण परीपह भारे साधुना धर्मधी अवश्य सहन करवा जेठ अने अने निश्चय करी अने तपेदी शिला उपर जेसी गया ल्यां तेअने १८ पापस्थानानुं प्रत्याख्यान कथुं, पोताना दुष्कृत्यानी भाइी भागी, समस्त एवेधी भमत भामणा लीधां, बार प्रकारना शरणुने स्वीकार कथी अने समस्त भमतानो त्याग कथी तेमज पंचपरमेष्ठीने बारंवार नमस्कार करवा लाग्या. पछी अनशन धारण करी समाधि-भावधी युक्त अरहन्नक मुनिने पादपोषगमन संथारे कथी. अने मुहूर्त मात्रमां ज तेमनुं सुकुमार शरीर भाषणुना पीडनी भाइक गरमीधी ओगणी गथुं. अने ते मरीने सुधर्म देवलोकमां देव थया. आ रीते अन्य मुनिजनेअने पण उष्णपरीपह सहन करवा जेठ अने ॥ ९ ॥

एवं मातृवचः श्रुत्वा स संजातवैराग्यः सर्वसाधनयोगं प्रत्याख्याय पुनः संयमं गृहीतवान् । तत उत्कृष्टाचारेण ग्रामानुग्रामं विहरन् उष्णपरीपहं सहमानः क्वचित् पापाणमयप्रदेशं प्राप्य चिन्तयति—‘प्रदेशोऽयं प्रचण्डमार्तण्डकिरणसंयोगाद् बह्वि-
 वत्प्रतप्तः, उष्णतरश्च वायुः प्रवहति, अत्र पदमपि गन्तुमसमर्थोऽस्मि,’ एवं विचिन्त्य परितः प्रतप्तभूमीतलं विलोक्य परीपहोऽयं मया सोढव्य इत्यवधार्य तप्तशिलोपरि
 करते मृत्यु होना ठीक है, परन्तु शील से स्खलित व्यक्ति का जीवन ठीक नहीं है। निरवद्य क्रिया का नाम सुविशुद्धकर्म एवं चारित्र्य से पतित होने का नाम शील से स्खलित होना है।

इस प्रकार जननी के वचन सुनकर उसका मुस वैराग्य जग उठा, पश्चात् उसने सर्वसाधन योग का प्रत्याख्यान कर पुनः संयम लिया। माता के वचन से उद्वेगित होकर उसने फिर उत्कृष्ट चरित्र का आराधन किया और चारित्र्य की आराधनापूर्वक ही ग्रामानुग्राम विहार करते हुए उष्णपरीपह को सहन किया। एक समय की यात है कि ये विहार करते २ ऐसे प्रदेश में पहुँचे कि जहाँ पत्थरों की बहुलता थी। वहाँ पहुँच कर उन्होंने विचार किया कि यह प्रदेश सूर्य की किरणों से अधिक संतप्त बना हुआ है। यह तो ऐसा तप रहा है कि जैसे मानों अग्नि ही जल रही हो। वायु भी इतनी गर्म चल रही है कि जिससे एक पैर भी सुखपूर्वक चला नहीं जा सकता है। इस प्रकार विचार करते हुए अरहन्नक मुनि ने अपने आसपास की संमस्त भूमि को

પરંતુ શીલથી સ્ખલિત થયેલ વ્યક્તિનું જીવન ઠીક નથી. નિરવધ ક્રિયાનું નામ સુવિશુદ્ધ કર્મ, ચારિત્રથી પતિત થવાનું નામ શીલથી સ્ખલિત બનવું તે.

આ પ્રકારનાં માતાનાં વચન સાંભળીને તેનો સુતેલો વૈરાગ્ય બળી ઉઠ્યો અને તેણે સર્વ સાધન યોગનું પ્રત્યાખ્યાન કરી પુનઃ સંયમને ધારણ કર્યો. માતાના વચનથી ઉદ્વેગિત બની તેણે પછી ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્રનું આરાધન કર્યું અને ચારિત્રની આરાધના પૂર્વક જ ગ્રામનુગ્રામ વિહાર કરીને ઉષ્ણ પરીપહને સહન કર્યો. એક સમયે એ વિહાર કરતાં કરતાં એવા પ્રદેશમાં પહોંચી ગયા કે, જ્યાં પત્થરાઓ મોટા પ્રમાણમાં હતા. ત્યાં પહોંચીને તેઓએ વિચાર કર્યો કે, આ પ્રદેશ સૂર્યના કિરણોથી અધિક સંતપ્ત બનેલો છે. આ તો એવા તપી રહ્યા છે કે બધું અગ્નિ જ સળગી રહી છે. વાયુ પણ એટલી જ રીતે ગરમ કુંકાઈ રહેલ છે આથી એક ડગલું પણ સુખપૂર્વક ચાલી શકાતું નથી. આ પ્રકારનો વિચાર કરતાં કરતાં અરહન્નક મુનિએ પોતાની આસપાસની

समुपविशति । तत्र-प्रत्याख्याताष्टादशपापः कृतदुष्कृतगर्हः क्षामितसफलसत्त्वः स्वीकृतचतुर्विधशरणः, परित्यक्तसर्वसंगः पुनः पुनः कृतपंचनमस्कारोऽनशनं कृत्वा समाधिभावसम्पन्नः पादपोषगमनेन मुहूर्तमात्रेण सुकुमारशरीरो नवनीतपिण्डद्वोष्णेन विलीनः सौधर्मं सुरलोकं गतः, एवं मुनिभिरुष्णपरीपहः सोढव्यः ॥९॥

ग्रीष्मकालान्तरं वर्षाकाले दंशमशकादिकृतपीडां प्राप्तेन साधुना तत्परीपहः सोढव्यः इत्याह—

मूलम्—पुंठो ये दंसंमसएहिं, संम रेवं महामुणी ।

नागो संगामसीसे वां, सूरुो अभिहणे परं ॥१०॥

छाया—स्पृष्टश्च दंशमशकैः सम एव महामुनिः ।

नागः संग्रामशीर्षे वा, शूरोऽभिहन्यात् परम् ॥ १० ॥

अत्यंत उष्ण देखा और पुनः विचार करने लगे कि यह उष्णपरीपह मुझे साधु के नाते अवश्य सहन करना चाहिये, ऐसा निश्चित कर वह एक तप्त शिला के ऊपर बैठ गये। वहां उन्होंने १८ पापस्थानों का प्रत्याख्यान किया, अपने दुष्कृतों की गर्हों की, समस्त जीवों से खमता खामणा किया। चार प्रकार के शरणों को स्वीकार किया, समस्त ममता का त्याग किया, एवं पंचपरमेष्ठी को बार बार नमस्कार किया। पश्चात् अनशन धारण कर समाधिभाव से युक्त अरहन्नक मुनि ने पादपोषगमन संथारा किया। एक मुहूर्तमात्र में ही उनका सुकुमार शरीर मक्खन के पिण्ड की तरह गर्मी से विलीन हो गया और वे मर कर सुधर्मदेवलोक में देव हुए। इसी तरह अन्य मुनि जनों को भी उष्णपरीपह सहन करना चाहिये ॥ ९ ॥

समस्त भूमिने अत्यंत उष्ण जेष्ठ अने पाछा विचार करवा लाग्या के उष्ण परीपह भारे साधुना धर्मधी अवश्य सहन करवा जेष्ठये. जेवो निश्चय करी जेक तपेही शिला उपर जेसी गया ज्यां तेजोये १८ पापस्थानानुं प्रत्याख्यान कर्युं, पोताना दुष्कृत्योनी भाइी भागी, समस्त लोवाधी भमत आभण्ठा लीधां, चार प्रकारना शरणुने स्वीकार कर्यो अने समस्त भमतानो त्याग कर्यो तेमज पंचपरमेष्ठीने वारवार नमस्कार करवा लाग्या. पछी अनशन धारण करी समाधि-भावधी युक्त अरहन्नक मुनिजे पादपोषगमन संथारे कर्यो.. जेक मुहूर्त मात्रमां ज तेमनुं सुकुमार शरीर भाण्णुना पीडनी भाइक गरभीधी आगणी गयुं. अने ते भरीने सुधर्म देवलोकमां देव थया. आ रीते अन्य मुनिजनोये पणु उष्णपरीपह सहन करवा जेष्ठये. ॥ ९ ॥

एवं मातृवचः श्रुत्वा स संजातवैराग्यः सर्वसाधयोगं प्रत्याख्याय पुनः संयमं गृहीतवान् । तत उत्कृष्टाचारेण ग्रामानुग्रामं विहरन् उष्णपरीपहं सहमानः क्वचित् पापाणमयप्रदेशं प्राप्य चिन्तयति—‘प्रदेशोऽयं प्रचण्डमार्त्तण्डकिरणसंयोगाद् बह्वि-
वत्प्रतप्तः, उष्णतरश्च वायुः प्रवहति, अत्र पदमपि गन्तुमसमर्थोऽस्मि,’ एवं विचिन्त्य परितः प्रतप्तभूमीतलं विलोक्य परीपहोऽयं मया सोढव्य इत्यवधार्य तप्तशिलोपरि
करते मृत्यु होना ठीक है, परन्तु शील से स्वलित व्यक्ति का जीवन ठीक नहीं है। निरवद्य क्रिया का नाम सुविशुद्धकर्म एवं चारित्र्य से पतित होने का नाम शील से स्वलित होना है।

इस प्रकार जननी के वचन सुनकर उसका मुक्त वैराग्य जग उठा, पश्चात् उसने सर्वसाधय योग का प्रत्याख्यान कर पुनः संयम लिया। माता के वचन से उद्बोधित होकर उसने फिर उत्कृष्ट चरित्र का आराधन किया और चारित्र्य की आराधनापूर्वक ही ग्रामानुग्राम विहार करते हुए उष्णपरीपह को सहन किया। एक समय की बात है कि ये विहार करते २ ऐसे प्रदेश में पहुँचे कि जहाँ पत्थरों की बहुलता थी। वहाँ पहुँच कर उन्होंने विचार किया कि यह प्रदेश सूर्य की किरणों से अधिक संतप्त बना हुआ है। यह तो ऐसा तप रहा है कि जैसे मानों अग्नि ही जल रही हो। वायु भी इतनी गर्म चल रही है कि जिससे एक पैर भी सुखपूर्वक चला नहीं जा सकता है। इस प्रकार विचार करते हुए अरहन्नक मुनि ने अपने आसपास की संमस्त भूमि को

પરંતુ શીલથી સ્ખલિત થયેલ વ્યક્તિનું જીવન ઠીક નથી. નિરવધ ક્રિયાનું નામ સુવિશુદ્ધ કર્મ, ચારિત્રથી પતિત થવાનું નામ શીલથી સ્ખલિત બનવું તે.

આ પ્રકારનાં માતાનાં વચન સાંભળીને તેનો સુતેલો વૈરાગ્ય બગી ઉઠ્યો. અને તેણે સર્વ સાધય યોગનું પ્રત્યાખ્યાન કરી પુનઃ સંયમને ધારણ કર્યો. માતાના વચનથી ઉદ્બોધિત બની તેણે પછી ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્રનું આરાધન કર્યું અને ચારિત્રની આરાધના પૂર્વક જ આમનુઆમ વિહાર કરીને ઉષ્ણ પરીપહને સહન કર્યો. એક સમયે એ વિહાર કરતાં કરતાં એવા પ્રદેશમાં પહોંચી ગયા કે, ત્યાં પથરાઓ મોટા પ્રમાણમાં હતા. ત્યાં પહોંચીને તેઓએ વિચાર કર્યો કે, આ પ્રદેશ સૂર્યના કિરણોથી અધિક સંતપ્ત બનેલો છે. આ તો એવા તપી રહ્યા છે કે બધું અગ્નિ જ સળગી રહી છે. વાયુ પણ એટલી જ રીતે ગરમ કુંકારી રહેલ છે આથી એક ડગલું પણ સુખપૂર્વક ચાલી શકાતું નથી. આ પ્રકારનો વિચાર કરતાં કરતાં અરહન્નક મુનિએ પોતાની આસપાસની

समुपविशति । तत्र-प्रत्याख्याताष्टादशपापः कृतदुष्कृतगर्हः क्षामितसकलसत्त्वः स्वीकृतचतुर्विधशरणः, परित्यक्तसर्वसंगः पुनः पुनः कृतपंचनमस्कारोऽनशनं कृत्वा समाधिभावसम्पन्नः पादपोषगमनेन मुहूर्तमात्रेण सुकुमारशरीरो नवनीतपिण्डव्योष्णेन विलीनः सौधर्म सुरलोकं गतः, एवं मुनिमिरुष्णपरीपहः सोढव्यः ॥९॥

ग्रीष्मकालान्तरं वर्षाकाले दंशमशकादिकृतपीडां प्राप्तेन साधुना तत्परीपहः सोढव्यः इत्याह—

मूलम्—पुट्टो ये दंसमसएहिं, संम रेवं मर्हामुणी ।
नागो संगामसीसे वां, सूरुओ अभिहणे 'परं ॥१०॥

छाया—सृष्टृश्च दंशमशकैः सम एव महामुनिः ।

नागः संग्रामशीर्षे वा, सूरुओऽभिह्न्यात् परम् ॥ १० ॥

अत्यंत उष्ण देखा और पुनः विचार करने लगे कि यह उष्णपरीपह मुझे साधु के नाते अवश्य सहन करना चाहिये, ऐसा निश्चित कर वह एक तप्त शिला के ऊपर बैठ गये। वहाँ उन्होंने १८ पापस्थानों का प्रत्याख्यान किया, अपने दुष्कृतों की गद्दी की, समस्त जीवों से खमत् खामणा किया। चार प्रकार के शरणों को स्वीकार किया, समस्त ममता का त्याग किया, एवं पंचपरमेष्ठी को बार बार नमस्कार किया। पश्चात् अनशन धारण कर समाधिभाव से युक्त अरहन्नक मुनि ने पादपोषगमन संघारा किया। एक मुहूर्तमात्र में ही उनका सुकुमार शरीर मक्खन के पिण्ड की तरह गर्मी से विलीन हो गया और वे मर कर सुधर्मदेवलोक में देव हुए। इसी तरह अन्य मुनि जनों को भी उष्णपरीपह सहन करना चाहिये ॥ ९ ॥

समस्त भूमीने अत्यंत उष्ण जेष्ठ अने पाछा विचार करवा लाज्या के उष्ण परीपह भारे साधुना धर्मथी अवश्य सहन करवा जेष्ठजे. जेवो निश्चय करी जेक तपेदी शिला उपर जेसी गया ज्यां तेजोजे १८ पापस्थानोनुं प्रत्याख्यान करुं, पोताना दुष्कृत्यानी भाङ्गी भागी, समस्त लोपोधी भमत भाभणुा लीधां, चार प्रकारना शरणुनो स्वीकार कर्यो अने समस्त भमतानो त्याग कर्यो तेभज पंचपरमेष्ठीने बारबार नमस्कार करवा लाज्या. पछी अनशन धारण करी समाधि-भावथी युक्त अरहन्नक मुनिजे पादपोषगमन संघारो कर्यो.. जेक मुहूर्त मात्रमां ज तेभनुं सुकुमार शरीर भाभणुना पीडनी भाङ्क गरभीथी जोगणी गयुं. अने ते भरीने सुधर्म देवलोकां देव थया. आ रीते अन्य मुनिजनोजे पणु उष्णपरीपह सहन करवा जेष्ठ जे. ॥ ९ ॥

ટીકા—‘ પુટ્ટો ય ’ इत्यादि ।

च=अपरं च सम एव=उपकार्यपकारिणु तुल्यभावनधारकः, महामुनिः=उग्र-
तपश्चरणशीलः दंशमशकैः, इदमुपलक्षणम्, तेन मत्कुणयूकादिभिरपि स्पृष्टः-पीडितः
सन्, संग्रामशिरसि=रणमस्त्वके, सूरः=पराक्रमी, नागो वा=हस्तीव परं=शत्रु-
रागद्वेषलक्षणं भावशत्रुम्, अभिह्न्यात्=पराजयेत् । ‘ समरेव ’ इत्यत्रार्पणत्वाद्भेदः ।

अयं भावः-यथा-सूरः=करो शराघातैर्व्यथितोऽपि रणे शत्रुं जयति, तद्वत्
साधुरपि दंशमशकादिभिः पीड्यमानोऽपि कषाय शत्रुं जयेदिति ॥ १० ॥

ગ્રીષ્મ કાલ કે વાદ ચર્પા કાલ આતા હૈ, ઉસમેં દંશમશક આદિ કા
પરીપહ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઇસ દંશમશકરૂપ
પાંચવે પરીપહ કો સહન કરે, ઇસ વાત કો સૂત્રકાર આગે કી ગાથા
દ્વારા બતલાતે હૈ—‘ પુટ્ટો ય ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(સમરેવ-સમણ) ઉપકારી ઓર અપકારી મેં તુલ્ય ભાવ
ધારણ કરને વાલા (મહામુની-મહામુનિઃ) ઉગ્રતપશ્ચરણશીલ મહામુનિ
(દંસમસર્પહિં-દંશમશકૈઃ) દંશમશકોં કે દ્વારા, ઉપલક્ષણ સે મત્કુળ-
લ્લટમલ, યૂકા-જૂં આદિ દ્વારા મી (પુટ્ટો-સ્પૃષ્ટઃ) પીડિત હોને પર (સંગ્રામઃ-
સીસે-સંગ્રામ શીર્ષે) યુદ્ધ કે વીચ મેં (સૂરો-શૂરઃ) પરાક્રમી (નાગો વા-
નાગ ઇવ) હસ્તી કી તરહ (પરં અમિહ્ણે-પરં અમિહ્ન્યાત્) શત્રુ કો-
રાગદ્વેષરૂપ ભાવશત્રુ કો પરાસ્ત કરે ।

ગરમઋતુ પછી ચોમાસાનો સમય આવે છે આમાં દંશમશક વગેરે પરી-
પહની ઉત્પત્તિ થાય છે, સાધુનું એ કર્તવ્ય છે કે દંશમશકરૂપી પાંચમે પરીપહ
સહન કરે. આ વાતને સૂત્રકાર આગળની ગાથાથી બતાવે છે.

“ પુટ્ટો ય ” इत्यादि.

અન્વયાર્થ—(સમરેવ-સમણ) ઉપકારી અને અપકારીમાં સમભાવ ધારણ
કરવાવાળા મહામુની-મહામુનિઃ ઉગ્ર તપસ્થા કરનાર શીલવાન મહામુનિ દંસમસર્પહિં-
દંશમશકૈઃ ડાંસ, મચ્છર દ્વારા ઉપલક્ષણથી માકડ, જૂ, આદિ દ્વારા પણ પુટ્ટો-સ્પૃષ્ટઃ
પીડિત હોવા છતાં “સંગ્રામસીસે-સંગ્રામશીર્ષે” યુદ્ધની વચમાં (સૂરો-શૂરઃ) પરાક્રમી
(નાગો વા-નાગઇવ) હાથીની માફક (પરં અમિહ્ણે-પરં અમિહ્ન્યાત્) શત્રુને-રાગ દ્વેષ
રૂપ ભાવશત્રુને પરાસ્ત કરે. એનો ભાવ આ છે. જેમ પરાક્રમી હાથી બાણોના
આઘાતથી વ્યથિત હોવા છતાં પણ રણમાં શત્રુઓને હરાવે છે તેવી રીતે સાધુ પણ
ડાંસ, મચ્છર આદિ દ્વારા પીડિત હોવા છતાં પણ કષાયરૂપી શત્રુને પરાસ્ત કરે.

કેન પ્રકારેણ ભાવશત્રું જયેદિત્યાહ—

મૂલમ્—નં સંતસે નં વારેજ્ઞાં, મંણંપિ નં પંઓસણ્ ।

ઉવેહે નં હંણે પાંણે, મુંજંનંતે મંસંસોણિયં ॥ ૧૧ ॥

છાયા—ન સંતસેત્ ન વારયેત્, મનોઽપિ ન પ્રદૂપયેત્ ।

ઉપેક્ષેત ન હન્યાત્ પ્રાણાન્, મુજ્ઞાનાન્ માંસં શોણિતમ્ ॥ ૧૧ ॥

ટીકા—‘ ન સંતસે ’ इत्यादि ।

મહામુનિદંશમશકૈરુપદ્રુતઃ સન્ ન સંત્રસેત્=નોદ્વિજેત્—દંશમશકાદિભિર્દંશપમા-
નોઽપિ ન તતઃ સ્થાનાદપગચ્છેદિત્યર્થઃ । ન વારયેત્, હસ્તવસ્ત્રાદિના નાપસારયેત્-
મનોઽપિ ન પ્રદૂપયેત્=ન કલુપિતં કુર્યાત્ અપિ—શબ્દાદ્વચનાદિકમપિ ન પ્રદુષ્ટં

इसका भाव यह है—जैसे पराक्रमी हस्ती बाणों के आघात से व्यथित होने पर भी रण में शत्रु को परास्त कर देता है, उसी तरह साधु भी दंशमशक आदि द्वारा पीडित होने पर भी कपायरूपी शत्रु को परास्त करे ॥ १० ॥

भावशत्रु को किस तरह परास्त करना चाहिये इसको इस गाथा द्वारा स्पष्ट किया जाता है—न संतसे इत्यादि

अन्वयार्थ—महामुनि दंशमशक आदि से पीडित होने पर भी (न संतसे—न संत्रसेत्) कभी भी चित्त में उद्विग्न न होवे—दंशमशक आदि से पीडित होने पर भी मुनि एक स्थान से दूसरे स्थान पर नहीं जावे (न वारेज्जा—न वारयेत्) दंशमशक को अपने शरीर पर बैठ जाने पर हस्तअथवा वस्त्र आदि से नहीं हटावे । (मणं पि न पओसण्—

આનેા ભાવ એ છે કે—જેમ પરાક્રમી હાથી બાણોના આઘાતથી પીડિત હોવા છતાં પણ રણમાં શત્રુને પરાજીત કરે છે, તેવી જ રીતે સાધુ પણ દંશમશક આદિ દ્વારા પીડિત હોવા છતાં પણ કપાયરૂપી શત્રુનો પરાજય કરે ॥૧૦॥

ભાવશત્રુને કેવી રીતે જીતવા ભેદ એ, એ હકીકત આ ગાથા દ્વારા પ્રગટ કરવામાં આવે છે. નસંતસે—ઈત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ડાંસ અને મચ્છરથી પીડિત બનવા છતાં પણ ન સંતસે—ન સંત્રસેત્ મહામુનિ ચિત્તમાં ઉદ્વેગ ન લાવે,—ડાંસ મચ્છરના કરડવાથી મુનિએ એક સ્થાનથી બીજા સ્થાને ન જવું, ન વારેજ્ઞા—ન વારયેત્ ડાંસ મચ્છરને પોતાના શરીર પર બેઠેલ ભેદને હાથ અને વસ્ત્ર આદિથી તેને હટાવે નહીં, મણંપિ ન પઓસણ્—

ટીકા—‘ પુટ્ટો ય ’ इत्यादि ।

च=अपरं च सम एव=उपकार्यपकारिणु तुल्यभावनधारकः, महाशुनिः=उग्र-
तपश्चरणशीलः दंशमशकैः, इदमुपलक्षणम्, तेन मत्कुणयूकादिभिरपि स्पृष्टः-पीडितः
सन्, संग्रामशिरसि=रणमस्त्वके, शूरः=पराक्रमी, नागो वा=हस्तीव परं=शत्रु-
रागद्वेषलक्षणं भावशत्रुम्, अभिह्न्यात्=पराजयेत् । ‘ समरेव ’ इत्यत्रार्पत्वाद्देवः ।

अयं भावः-यथा-शूरः=करी शराघातैर्व्यथितोऽपि रणे शत्रुं जयति, तद्वत्
साधुरपि दंशमशकादिभिः पीड्यमानोऽपि कषाय शत्रुं जयेदिति ॥ १० ॥

ગ્રીષ્મ કાલ કે યાદ વર્ષા કાલ આતા હૈ, ઉસમેં દંશમશક આદિ કા
પરીપહ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । સાધુ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઇસ દંશમશકરૂપ
પાંચવે પરીપહ કો સહન કરે, ઇસ યાત કો સૂત્રકાર આગે કી ગાથા
દ્વારા યતલાતે હૈ—‘ પુટ્ટો ય ’ इत्यादि ।

અન્યયાર્થ—(સમરેવ-સમણ) ઉપકારી ઓર અપકારી મેં તુલ્ય ભાવ
ધારણ કરને વાલા (મહાશુની-મહાશુનિઃ) ઉગ્રતપશ્ચરણશીલ મહાશુનિ
(દંસમસર્ણિ-દંશમશકૈઃ) દંશમશકોં કે દ્વારા, ઉપલક્ષણ સે મત્કુળ-
લ્લટમલ, યૂકા-જૂં આદિ દ્વારા મી (પુટ્ટો-સ્પ્રષ્ટઃ) પીડિત હોને પર (સંગ્રામ-
સીસે-સંગ્રામ શીર્ષે) યુદ્ધ કે વીચ મેં (સૂરો-શૂરઃ) પરાક્રમી (નાગો વા-
નાગ ઇવ) હસ્તી કી તરહ (પરં અમિહણે-પરં અમિહન્યાત્) શત્રુ કો-
રાગદ્વેષરૂપ ભાવશત્રુ કો પરાસ્ત કરે ।

ગરમઋતુ પછી ચોમાસાનો સમય આવે છે આમાં દંશમશક વગેરે પરી-
પ્રહની ઉત્પત્તિ થાય છે, સાધુનું એ કર્તવ્ય છે કે દંશમશકરૂપી પાંચમો પરીપ્રહ
સહન કરે. આ વાતને સૂત્રકાર આગળની ગાથાથી બતાવે છે.

“ પુટ્ટો ય ” इत्यादि.

અન્યયાર્થ—(સમરેવ-સમણ) ઉપકારી અને અપકારીમાં સમભાવ ધારણ
કરવાવાળા મહાશુની-મહાશુનિઃ ઉગ્ર તપસ્થા કરનાર શીલવાન મહાશુનિ દંસમસર્ણિ-
દંશમશકૈઃ ડાંસ, મચ્છર દ્વારા ઉપલક્ષણથી માકડ, જૂ, આદિ દ્વારા પણ પુટ્ટો-સ્પ્રષ્ટઃ
પીડિત હોવા છતાં “ સંગ્રામસીસે-સંગ્રામશીર્ષે ” યુદ્ધની વચ્ચેમાં (સૂરો-શૂરઃ) પરાક્રમી
(નાગો વા-નાગઇવ) હાથીની માફક (પરં અમિહણે-પરં અમિહન્યાત્) શત્રુને-રાગ દ્વેષ
રૂપ ભાવશત્રુને પરાસ્ત કરે. એનો ભાવ આ છે. જેમ પરાક્રમી હાથી બાણોના
આઘાતથી વ્યથિત હોવા છતાં પણ રણમાં શત્રુઓને હરાવે છે તેવી રીતે સાધુ પણ
ડાંસ, મચ્છર આદિ દ્વારા પીડિત હોવા છતાં પણ કષાયરૂપી શત્રુને પરાસ્ત કરે.

कृत्वा समुत्तस्यौ । तत्र प्रथमयामे लघुकाया मूच्यग्रतीक्ष्णमुखाः दंशमशकाः सहस्रशः परितः समागत्य मुनेः शरीरं दंशन्ति । तदनु-द्वितीययामे तदपेक्षया स्थूलाकारा दंशमशकाः घनघनघनि कुर्वन्तः परितस्तद्वपुस्तीक्ष्णतरं दंशन्ति, तदनु तृतीयचतुर्थयामयोस्तदपेक्षयापि स्थूलतराः स्थूलतीक्ष्णमुखा विविधजातीया दंशमशकास्तं सातिशयं दंशन्ति । ततः सूर्योदये सति पञ्चमप्रहरे अकस्मात् तत्रैवोद्दीयमाना मधुमक्षिकाः सहस्रशस्तद्वपुःसंलग्नास्तं मुनिं दंशन्ति । मधुमक्षिकाभिराच्छादितं सकलं तद्वपुः श्यामवर्णं संजातम् । तस्य मुखोपरि सदोरकमुखवस्त्रिकाऽपि

एक समय की बात है कि इन्होंने एक अटवी में रात्रि के समय पांच प्रहरका कायोत्सर्ग धारण किया । उस अटवी में कायोत्सर्ग में रहे हुए इन सुदर्शन मुनि के शरीर को प्रथम प्रहर में लघुकायवाले हजारों दंशमशकों ने सूची के अग्रभाग के समान अपने २ तीक्ष्ण मुखों से चारों ओर से आ आकर खूब डसा । फिर द्वितीय प्रहर में इनकी अपेक्षा स्थूलाकार वाले दंशमशकों ने घन घन शब्द करते हुए सब तरफ से आकर बहुत बुरी तरह उनके शरीर को डसना प्रारंभ किया । बाद में तृतीय चतुर्थ प्रहर में द्वितीय याम में आये हुए दंशमशकों की अपेक्षा बलिष्ठ एवं स्थूलतर विविध जाति के दंशमशकों ने काटना शरु किया । इस प्रकार जब रात्रि के चार प्रहर समाप्त हो चुके और सूर्योदय हुआ तब पंचमप्रहर में-अर्थात् दिवस के प्रथमप्रहर में-अकस्मात् उड़ी हुई हजारों मधुमक्षिकाओं ने उन मुनि के शरीर में चिपट कर उन्हें काटना प्रारंभ

तेजोतेजो तेजो जंगलभां रात्रिना सभये पांच प्रहरना कायोत्सर्ग कथ्यो । ते जंगलभां कायोत्सर्गभां रहेला आ सुदर्शन मुनिना शरीरने प्रथम प्रहरभां नाना शरीरवाणा डल्लरो डांस, भच्छरोते सोयनी अण्णी जेवा पोत पोताना तीक्ष्ण मुजोधी यारे आबुथी आवीने मूच्य उंभ भार्या । पाछा पील प्रहरभां तेनी अपेक्षा स्थूल आकारवाणा डांस, भच्छरोते गच्छ गच्छ शब्द करीने यारे तरक्षी आवीने घण्टी भरान रीते तेमना शरीरने उंभ भारवा लाग्या । त्वार पछी त्रील अने चोथा प्रहरभां आवेला डांस भच्छरोनी अपेक्षा नाना मोटा विविध लतना डांस भच्छरोते उंभ भारवा शङ् कथ्यो । आ प्रहारे ज्यारे रात्रीना चार प्रहर पुरा थया । अने सूर्योदय दये त्वारे पांचभा प्रहरभां अर्थात् दिवसना प्रथम प्रहरभां अकस्मात् उडेदी डल्लरो मधमाभीओते ते मुनिना शरीर उपर चोटी पडीने करडुं शङ् कथुं । मधमाभीओधी आच्छा-

कुर्यादित्यर्थः । किं तु उपेक्षेत-मध्यस्थभावमाश्रयेत् । अत एव-मांसशोणितं भुजानान् प्राणान्=प्राणिनः, न हन्यात्=न मारयेत् ।

अत्र सुदर्शनमुनेर्दृष्टान्तः—

चम्पानगरीं रिपुमर्दननामको भूपतिरासीत् । तस्य पुत्रः सुदर्शननामकः संजातः । स धर्मघोषाचार्यसमीपे धर्मदेशनां निश्चय्य कामभोगेभ्यो विरक्तः प्रव्रजितः । स सुदर्शनो मुनिर्गुरुप्रसादात् श्रुतज्ञानसम्पन्नो दृढसत्त्वतया एकाकित्व-विहाराल्पप्रतिमया विहरन् कदाचित् महादव्यां निशि पञ्चप्रहरात्मकं कायोत्सर्गं मनोऽपि न प्रदूषयेत् । अपने मन में उनके काटने पर अपने मन में कलुषित विचार नहीं करे । अथवा उनके काटने पर मन को कलुषित नहीं करना चाहिये । अपि शब्द से वचन आदिक को भी प्रदुष्ट नहीं करे । किन्तु उस समय (उवेहे-उपेक्षेत) मध्यस्थभाव का ही आश्रय करे । अतः साधु का कर्तव्य है कि वह (मांस सोणियं भुञ्जते पाणे न हणे-मांस शोणितं भुजानान् प्राणिनः न हन्यात्) मांस खाते एवं शोणित को पीते हुए प्राणियों को कभी भी न मारे ।

दृष्टान्त—चंपानगरी में रिपुमर्दन नामक एक राजा था । उसका एक पुत्र था, जिसका नाम सुदर्शन था । उसने धर्मघोष आचार्य के पास धर्म-देशना सुनकर काम भोगों से विरक्त वन मुनिदीक्षा धारण की । इन सुदर्शन मुनि ने अपने गुरु महाराज के प्रसाद से श्रुतज्ञान की प्राप्ति कर दृढ पराक्रमशाली होने की वजह से एका की विहार करने रूप प्रतिमा को धारण किया । अब ये उस प्रतिमा से विचरने लगे ।

मनोऽपि न प्रदूषयेत् तेना करुणवाची पोताना मनमां कलुषित विचार पणु न करे, अथवा तेना करुणवाची मनने कलुषित न करे, अरे शब्दही वचनादिकने पणु प्रदुष्ट न करे, परंतु ते सभये उवेहे-उपेक्षेत मध्यस्थभावने आश्रय करे आथी साधु कर्तव्य छे के ते मांससोणियं भुञ्जतेपाणे न हणे-मांसशोणितं भुजानान् प्राणिनः न हन्यात् मांस खाता अने छोड़ी पीता प्राणीओने कही पणु न मारे.

दृष्टान्तः—यथा नगरीमां रिपुमर्दन नामना ओक राजा छेता, तेमने ओक पुत्र छेता; ओतु नाम सुदर्शन छेतुं, तेखे धर्मघोष आचार्यनी पासे धर्मदेशना सांख्यी कामभोगथी विरक्त अनी मुनिदीक्षा धारण करी, आ सुदर्शन मुनिओ पोताना गुरुमहाराजना प्रसादथी श्रुतज्ञाननी प्राप्ति करी, दृढ पराक्रम-शाली थवाना करुणवाची ओकाकी विहार करवा रूप प्रतिमाने धारण करी, अने तेओ ओ प्रतिमाथी विचरवा लाग्या, ओक सभयनी वात के,

વેદના જાયતે તતોઽપ્યનન્તગુણા વેદના નરકેઽનન્તવારં મયા સોઢા, एवं निगो-
 देऽपि, यत्र सूच्यग्रपरिमितकन्दादौ असंख्याताः श्रेणयः सन्ति, एकैकश्रेण्या
 मसंख्यातानि प्रतराणि, एकैकप्रतरे असंख्याता गोलाः, एकैकगोले असंख्यातानि
 निगोदशरीराणि, एकैकशरीरे अनन्ता जीवाः, एकैकनिगोदजीवः प्रत्येकश्वासो-
 च्छ्वासे सार्धसप्तदश जन्ममरणानि करोति, एवंविधनिगोदेऽपि अनन्तजन्ममर-
 णानां दारुणदुःखानि अनन्तवारं परवશેन मया सोढानि । किं पुनरेतत्, यतस्त-
 तदुःखसागरैकविन्दुमात्रमपि नैतत्, एवं दंशमशकपरीपहं प्रकृष्टपरिणामेन सहमानः

इससे भी अनंतगुणी वेदना नरक में अनंतवार तूने भोगी है। इसी तरह
 निगोद में भी सही हैं। सूची-सुई-के अग्रभाग प्रमाण कन्द आदि में
 असंख्यात श्रेणियां होती हैं एक एक श्रेणी में असंख्यात प्रतर होते हैं।
 एक एक प्रतर में असंख्यात गोले होते हैं। एक एक गोले में असंख्यात
 निगोद शरीर हुआ करते हैं। एक एक निगोद शरीर में अनन्त जीव रहा
 करते हैं। एक एक निगोदराशि का जीव एक २ श्वासोच्छ्वास में १७॥
 साढासत्रह बार जन्मता है और १७॥ साढा सत्रह बार ही मरता है। इस
 प्रकार के स्वरूप वाले निगोद में भी हे आत्मन्! तूने अनन्तवार अनंत
 जन्म और मरण के दुःखों को परवश होकर सहन किया है। उन दुःखों
 के सामने यह दंशमशक आदि से होने वाला दुःख कितना सा है। उन
 दुखों के सामने तो यह एक लेश मात्र भी नहीं है। इस प्रकार दंशमशक
 परीपह को प्रकृष्ट शुभाध्यवसाय से सहन करते हुए सुदर्शन मुनिराज

અગ્નિથી બાળવાથી જેવી વેદના જીવોને થાય છે, તેથી અનંતગણી વેદના નરકમાં
 અનંતવાર તેં બોગવી છે. આ રીતે નિગોદમાં પણ સહન કરેલ છે. સોયના અગ્રભાગ
 પ્રમાણનાં કન્દ આદિમાં અસંખ્યાત શ્રેણિયો હોય છે. એકેક શ્રેણીમાં અસંખ્ય
 પ્રતર હોય છે. અને એકેક પ્રતરમાં અસંખ્ય ગોળા હોય છે. અને એકેક ગોળામાં
 અસંખ્યાત નિગોદ શરીર હોય છે. એકેક નિગોદ શરીરમાં અનંત જીવ રહ્યા કરે છે.
 એકેક નિગોદ રાશીનો જીવ એક શ્વાસોચ્છ્વાસમાં સાડાસત્તરવાર જન્મે છે. અને
 સાડાસત્તરવાર મરે છે. આ પ્રકારના સ્વરૂપવાળા નિગોદમાં પણ હે આત્મન્! તેં
 અનંતવાર અનંત જન્મ અને મરણના દુઃખોને પરવશ બની સહન કર્યા છે
 એ દુઃખોની સામે આ ડાંસ મચ્છરોથી થતું દુઃખ કેવડું છે? તે દુઃખોની
 સામે તો આ દુઃખ લેશ માત્ર પણ નથી. આ પ્રકારે ડાંસ મચ્છરોના પરી-
 પહને પ્રકૃષ્ટ શુભાધ્યવસાયથી સહન કરતાં સુદર્શન મુનિરાજે પ્રશસ્ત

મક્ષિકામિરાચ્છાદિતત્યાનલક્ષ્યતે । एवं दंशमशकमक्षिकाकृतवेदनां प्राप्यापि स सुदर्शनमुनिर्दंशादीन् न निवारयति चिन्तयति च—दुःखमेतत् कियत्, इताऽनन्तगुण-वेदनाऽनन्तवारं नरकेषु मया प्राप्ता, असिपत्रेण धुरपत्रेण कदम्बचीरिकापत्रेण छिद्यमाने शक्यपत्रेण कुन्तापत्रेण शरापत्रेण सूत्रापत्रेण छुरिकापत्रेण, सूचीकलापात्रेण, कपिकच्छुना, वृश्चिककण्टकेन भिद्यमाने, अक्षरेण, प्रज्वलज्ज्वालया दह्यमाने च यादृशी कर दिया । मधुमक्षिकाओं से आच्छादित सुदर्शन मुनि का गौर शरीर उस समय श्यामवर्णवाला मालूम देने लगा । उनके मुख के ऊपर डोरे से जो मुखचित्रिका बंधी हुई थी वह भी मक्षिकाओं से आच्छादित होने की वजह से दिखलाई नहीं पड़ती थी । इस प्रकार दंशमशकों द्वारा तीव्र वेदना को पाकर भी सुदर्शन मुनि ने उन दंशमशकों का अपने हाथ आदि से निवारण नहीं किया । प्रत्युत उस समय यही विचार किया कि हे आत्मन् ! यह जो वर्तमान में दुःख मिल रहा है वह तेरे द्वारा पहिले भोगे हुए नरक एवं निगोद के दुःखों के समक्ष कितना सा है । अरे ! तूने पहिले भवों में इस वेदना से भी अनन्तगुणी वेदनाएँ अनन्तवार नरक में भोगी हैं । असिपत्र, धुरपत्र एवं कदम्बचीरिका पत्र से छेदे जाने पर, शक्ति के अग्रभाग से कुन्त-भाला के अग्रभाग से, बाणके अग्रभाग से, छुरिका के अग्रभाग से, सूचिकलाप के अग्रभाग से, कपिकच्छु कोंचकीफली से और विच्छु के डंक से भेदे जाने पर, तथा जलती हुई अग्नि से जलाये जाने पर जैसी वेदना जीवों को होती है

દિત અનેલ સુદર્શન મુનિનું ગૌર શરીર તે સમયે શ્યામ વર્ણવાળું દેખાવા લાગ્યું, તેમના મુખ ઉપર દોરાથી જે મુખપત્તિ બંધાયેલ હતી તે પણ માખીઓથી આચ્છાદિત હોવાના કારણે જોવામાં આવતી ન હતી. આ પ્રકારે ડાંસ, મચ્છરોથી તીવ્ર વેદના પામીને પણ સુદર્શન મુનિએ એ ડાંસ, મચ્છર, વગરને પોતાના હાથ આદિથી દૂર ન કર્યા. પરંતુ એ વખતે એવોજ વિચાર કર્યો કે હે આત્મન્ ! વર્તમાનમાં જે પ્રકારનું આ દુઃખ મળી રહ્યું છે તે તારાથી પહેલાં ભોગવવામાં આવેલ નરક અને નિગોદના દુઃખો પાસે શું હિસાબમાં છે, અરે ! તે પહેલાંના ભવોમાં આ વેદનાથી પણ અનંતગણી વેદનાઓ અનંતવાર નરકમાં ભોગવી છે. અસિપત્ર, ધુરપત્ર, અને કદમ્બચીરિકા પત્રથી છેદાઈ જવાથી, શક્તિના અગ્રભાગથી કુંત ભાલાના અગ્રભાગથી, બાણના અગ્રભાગથી, છુરીના અગ્રભાગથી, સૂચિ કલાપના અગ્રભાગથી, કપિકચ્છુ-કોંચની ફળીથી, અને વીંછીના ડંખથી, હેદાઈ જવાથી તથા બળતી

उक्तः=नूतनवस्त्रवान् भविष्यामि, इति भिक्षुर्न चिन्तयेत्, अयं भावः—जीर्णवस्त्र-
साधुर्वस्त्राभावसंभावनाया स्वात्मनि विपादं न कुर्याद्, नापि च नूतनवस्त्र-
संभावनाया हर्षं कुर्यादिति ॥१२॥

उक्तार्थमेव दृढीकर्तुमाह—

एगया अचेलए होइ, संचेले याँवि एगयाँ ।

एयं धम्मं हिंयं न च्छं, नाणीं नो परिदेवए ॥१३॥

छाया—एकदा अचेलको भवति, सचेलथापि एकदा ।

एतद् धर्महितं ज्ञात्वा, ज्ञानी नो परिदेवयेत् ॥१३॥

टीका—‘एगया’ इत्यादि ।

एकदा=कदाचित्, कल्पनीयजीर्णवस्त्रविपादमलिनाल्पवस्त्रस्य सद्भावे मुनिः,

अयं भाव न करे । (अदुवा-अथवा) अथवा (सचेलए होक्खं-सचेलको भविष्यामि) नवीन वस्त्रों से “उनकी अधिक स्थिति होने से” सचेलक-
वस्त्र सहित हो जाऊँगा (इति) इस प्रकार (भिक्षु) साधु (न चिंतए-
न चिन्तयेत्) विचार न करे ।

इस का भाव केवल यही है कि साधु जिस समय जीर्ण वस्त्रों का परिधान करे उस समय मुनि “ये फटे पुराने वस्त्र कितने दिन तक चलेंगे इनके फट जाने पर मैं निर्वस्त्र हो जाऊँगा” इस प्रकार कभी भी अपनी आत्मा में विपाद न करे । “ये नवीन वस्त्र हैं अधिक दिन तक चलते रहेंगे अतः मैं सबस्त्र ही रहूँगा” इस प्रकार कभी हर्ष भाव को प्राप्त न हो । अथवा ‘अब नूतन वस्त्रों की मुझे प्राप्ति होगी, इस बात की संभावना से भी साधु कभी भी हर्षित न होवे ॥ १२ ॥

सचेलए होक्खं-सचेलको भविष्यामि नवीन वस्त्रोत्थी “ते वधु प्रमाणुमां छोवाथी” सचेलक वस्त्र सहित थर्धं जर्धश आ प्रकारेण पणु “भिक्षु” साधु नचिंतए-न चिन्तयेत् विचार न करे.

आने। लाव डेवण ओ ज छे डे, साधु जे समये लणु वस्त्रो परिधान करे ओ समये आ शूटयां तूटयां वस्त्रो कैंटला द्विपस आलशे, आना शूटी जवा पछी हुं वस्त्र वगरने। जनी जर्धश. आ प्रकारेण विपाद कही पणु पोताना आत्माभां न करे. आ नवां वस्त्र छे, धणु समय सुधी आलतां रडेशे, अने आथी हुं सवस्त्र रडेश. आ प्रकारेण दुर्धलाव पणु कही न लावे. अथवा डवे भने नवां वस्त्रनी प्राप्ति थशे आ वातनी संभावनाथी पणु साधु कही हर्षित न थाय (१२)

प्रशस्तध्यानेन शुभाध्ययसायेन प्राप्तकेवलज्ञान-केवलदर्शनः सुदर्शनः साधनन्तम-
व्यावाधं शाश्वतं शिवपदं लब्धवान् । एवमन्यैरपि मुनिभिर्मध्यस्थभावेन दंशमश-
कपरीपहः सोढव्यः ॥ ११ ॥

अथाचेलपरीपहजयं प्राह—

मूलम्—परिजुन्नेहिं वंत्येहिं, होक्खामि त्तिं अचेलए ।

अदुवा सचेलए, होक्खं, इति भिक्खू नं चित्तए ॥१२॥

छाया—परिजीर्णैर्वस्त्रैः, भविष्यामि इति अचेलकः ।

अथवा सचेलको भविष्यामि, इति भिक्षुर्न चिन्तयेत् ॥१२॥

टीका—‘परिजुन्नेहिं’ इत्यादि ।

परिजीर्णैः=पुरातनैः, वस्त्रैः, अचेलकः=वस्त्ररहितः, भविष्यामि, तेषां स्वल्प-
कालस्थायित्वात्, इति=एतद्रूपं दैन्यं, भिक्षुर्न चिन्तयेत्=न कुर्यात् । अथवा
ने प्रशस्तध्यान से और शुभ परिणामों को धारा से केवलज्ञान और
केवलदर्शन प्राप्त कर लिया । पश्चात् आयु के अंत में सादि अनंत,
अव्याबाध एवं शाश्वत पद जो मुक्तिपद है उस को प्राप्त कर लिया ।
सुदर्शन मुनि की तरह अन्यमुनिजनों को भी मध्यस्थभाव से दंशमशक
परीषह सहन करना चाहिये ॥ ११ ॥

अथ सूत्रकार छठे अचेल परीषह को जीतने का उपदेश करते हैं—
परिजुन्नेहिं—इत्यादि.

अन्वयार्थ—(परिजुन्नेहीं—परिजीर्णैः) पुराने (वंत्येहिं—वस्त्रैः) वस्त्रोंसे
(अचेलए होक्खामि—अचेलकः भविष्यामि) मैं उनकी अल्पकाल
स्थिति होने से अचेल वस्त्ररहित हो जाऊंगा । (त्तिं—इति) इस प्रकार का

ध्यानशील अने शुभ परिष्काराभ्यानी धाराशी केवलज्ञान अने केवलदर्शन प्राप्त
क्युं. पछी आयुना अंतर्भां आदि अनंत, अव्याबाध अने शाश्वत पद जे
मुक्तिपद छे तेने प्राप्त क्युं. सुदर्शन मुनिनी भाइके अन्य मुनिजनोंजे
पण मध्यस्थ भावशी अंस अने मच्छरोना परीषहने सहन करवे जेधये ॥११॥
हुवे सूत्रकार छठे अचेल परीषहने उतपाने उपदेश करे छे. परिजुन्नेहिं इत्यादि.

अन्वयार्थ—परिजुन्नेहिं—परिजीर्णैः शुनां “ वंत्येहिं—वस्त्रैः ” पत्रोंशी अचेलए
होक्खामि—अचेलकः भविष्यामि हुं तेनी अपेक्षाण स्थिति होवाशी अचेल वस्त्र
रहितथर्ध जेधे त्तिं—इति आ प्रकारने दैन्यभाव न करे अदुवा—अथवा अथवा

નવીનવસ્ત્રસદ્ભાવે તન્નિમિત્તકં હપં ન કુર્યાત્, તથા એપણીયપ્રમાણોપેતવસ્ત્રાણા-
મમહામુલ્યકત્વાદલ્પત્વાદશોભનત્વાદ્ધ વિપાદં ન કુર્યાત્ શીતસ્પર્શાદિના વાધિતોઽપિ
પ્રમાણાધિકવસ્ત્રાકાંક્ષાં ચ ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । તથાચોક્તમાચારાંગસૂત્રે—

“ જે મિત્ત્વુ તિહિં વત્યેહિં પરિવુસિણ પાયચડત્યેહિં, તસ્સ ણં ણો એવં ભવહ,
ચડત્યં વત્યં જાહસ્સામિ । ” (આચા. ૧ શ્રુ. ૮ અ. ૪૩.)

છાયા—યો મિત્ત્વુભિર્વસ્ત્રૈ પર્યુપિતઃ પાત્રચતુર્થઃ, તસ્ય સ્વલુ નો એવં ભવતિ
ચતુર્થં વત્યં વાચિધ્યે । પર્યુપિતઃ=વ્યવસ્થિતઃ । અનેન સ્થવિરકલ્પિકસ્ય ચતુર્થવસ્ત્ર
પ્રતિપેધોઽવગમ્યતે । અપરં ચ—તત્રૈવોક્તમ્—

“ જસ્સ ણં મિત્ત્વુસ્સ એવં ભવહ—પુટ્ટો સ્વલુ અહમંસિ નાલમહમંસિ સીયપાસં

ભાવ નહીં કરના ચાહિયે—ઑર યે નવીન વસ્ત્ર હૈં ઇનસે શીત આદિક
કી રક્ષા વહુત અચ્છી તરહ હો જાયગી ” ઇસ પ્રકાર કમી હર્ષિત મી
નહીં હોના ચાહિયે । શીતસ્પર્શાદિક સે પીડિત હોને પર પ્રમાણ સે
અધિક વસ્ત્રોં કી આકાંક્ષા કરના સાધુમાર્ગ મેં નિષિદ્ધ હૈં । આચારાંગ-
સૂત્ર (૧ શ્રુ. ૮ અ. ૪૩.) મેં યહી વાત વતલાઈ ગઈ હૈં “ જે મિત્ત્વુ
તિહિંવત્યેહિં પરિવુસિણ પાયચડત્યેહિં તસ્સ ણં ણો એવં ભવહ ચડત્યં
વત્યં જાહસ્સામિ ” જો મિત્ત્વુ ત્રણ વસ્ત્રોં સે એવં ચૌથે પાત્ર સે વ્યવસ્થિત
રહતા હૈં ઉસે ચતુર્થ વસ્ત્ર કે વાચન કી આવશ્યકતા નહીં હોતી હૈં ઉસ
કે ચિત્ત મેં યહ વાત નહીં આતી હૈં કિ મૈ ચતુર્થ વસ્ત્ર કી વાચના કરૂં ।
ઇસ કથન સે સ્થવિરકલ્પી સાધુ કો ચતુર્થવસ્ત્ર કા પ્રતિપેધ સિદ્ધ હોતા હૈં ।
ઑર મી આચારાંગ સૂત્ર (૧ શ્રુ. ૮ અ. ૪૩.) મેં કહા હૈં “ જસ્સ ણં
મિત્ત્વુસ્સ એવં ભવહ—પુટ્ટો સ્વલુ અહમંસિ નાલમહમંસિ સીયપાસં

નવીન વસ્ત્ર છે, તેનાથી ઠંડી વગેરેની રક્ષા સારી રીતે થશે, આ પ્રકારે કદી
હર્ષિત પણ ન થવું જોઈએ. ઠંડીના સ્પર્શથી પીડિત થવાથી અધિક વસ્ત્રોની
આકાંક્ષા કરવી તે સાધુ માર્ગમાં નિષેધ છે. આચારાંગસૂત્ર (૧ શ્રુ. ૮. અ. ૪૩)
માં એવી વાત બતાવવામાં આવેલ છે કે, જે મિત્ત્વુ તિહિંવત્યેહિં પરિવુસિણ પાય
ચડત્યેહિં તસ્સ ણં ણો એવં ભવહ ચડત્યં વત્યં જાહસ્સામિ એ મિત્ત્વુ ત્રણ વસ્ત્ર અને
ચોથા પાત્રથી વ્યવસ્થિત રહે છે. તેને ચોથા વસ્ત્રની વાચના કરવાની આવશ્યકતા
થતી નથી. એના ચિત્તમાં એ વાત આવતી નથી કે હું ચોથા વસ્ત્રની વાચના
કરું. આ કથનથી સ્થવિરકલ્પી સાધુને ચોથા વસ્ત્રનો પ્રતિપેધ સિદ્ધ થાય છે.

બીજું પણ આચારાંગ સૂત્ર (૧. શ્રુ. ૮. અ. ૪. ૩.) માં કહ્યું છે—

જસ્સ ણં મિત્ત્વુસ્સ એવં ભવહ—પુટ્ટો સ્વલુ અહમંસિ નાલમહમંસિ સીયપાસં

અચેલકઃ=ચલ્લરહિત ઇવ, ભવતિ-તથાવિધવલ્લસ્ય તનુગ્રાયકત્વાભાવાત્ । એકદા=કદાચિત્-નૂતનવલ્લસદ્ભાવે, સચેલકોઽપિ=નવીનવલ્લવાનાપ ભવતિ । એતદ્=અચેલ-કત્વં સચેલકત્વં ચેતિ દ્વયં, ધર્મહિતં=ધર્માય હિતં-શ્રુતચારિત્રધર્મોપકારકં, જ્ઞાત્વા જ્ઞાની=મેધાવી, નો પરિદેવયેત્=જીર્ણવલ્લસદ્ભાવે વિપાદં ન કુર્યાત્,

‘એગયા અચેલણ’ ઇત્યાદિ.

અન્યવાર્થ—(એગયા-એકદા) કબી કિસી સમય કલ્પનીય જીર્ણ લંડિત મલિન એવં અલ્પ વલ્લોં કે સદ્ભાવ મેં મુનિ (અચેલણ હોઈ-અચેલકો ભવતિ) વલ્લ રહિત જૈસા હી હોતા હૈ । ક્યોં કિ જો જીર્ણાદિવલ્લ ઉસકે હોતે હૈં ઉનસે યથાવત્ શરીર કી રક્ષા નહીં હોતી હૈ । (એગયા) કબી કિસી સમય-નૂતન વલ્લોં કે સદ્ભાવ મેં (સચેલે યાવિ હોઈ-સચેલકોઽપિ ભવતિ) સચેલ ભી-નવીન વલ્લ વાલા ભી હોતા હૈ । (એવં-એતત્) યે દોનોં હી અવસ્થાએં સાધુ કી ઉસકે (ધર્મહિયં-ધર્મહિતમ્) શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મ કી ઉપકારક હૈં । એસા (નચ્ચા-જ્ઞાત્વા) જ્ઞાનકર (નાળી નો પરિદેવ-જ્ઞાની નો પરિ દેવયેત્) જ્ઞાની મુનિ કિસી ભી અપની અવસ્થા મેં ચાહે વલ્લ સહિત અવસ્થા હો ચાહે વલ્લ રહિત અવસ્થા હો ઉસમેં હર્ણવિપાદ ન કરે ।

ભાવાર્થ—સાધુ કો “યે વલ્લ જો મેરે પાસ હૈં વે વહુત હી જીર્ણ શીર્ણ હૈં, તથા હલકે પોતકે હૈં, યે વહુત થોડે હૈં, સુન્દર ભી નહીં હૈં જનસે શીત આદિક કી રક્ષા કૈસે હોગી” ઇસ પ્રકાર કબી વિષાદ

‘એગયા અચેલણ’ ઇત્યાદિ.

અન્યવાર્થ—એગયા-એકદા કોઈ વખત કલ્પનીય જીર્ણ લંડિત મલિન અને અદ્યવલ્લોના સદ્ભાવમાં મુનિ અચેલણ હોઈ-અચેલકો ભવતિ વલ્લ રહિત જેવો જ હોય છે, કેમ કે, જે જીર્ણ એવાં વલ્લ તેની પાસે હોય છે તેનાથી યથાવત્ શરીરની રક્ષા થતી નથી એગયા કોઈવખત નવા વલ્લોના સદ્ભાવમાં સચેલે યાવિ હોઈ-સચેલકોઽપિ ભવતિ સચેલ પણ-નવીન વલ્લવાળા પણ હોય છે. એવં-એતત્ આવી બંને અવસ્થાઓ સાધુની ધર્મહિયં-ધર્મહિતં શ્રુતચારિત્ર ઇવ ધર્મમાં ઉપકારક છે એવું નચ્ચા-જ્ઞાત્વા બધીને નાળી નો પરિદેવ-જ્ઞાની નો પરિદેવયેત્ જ્ઞાની કોઈ પણ અવસ્થામાં ચાહે વલ્લસહિત અવસ્થા હોય, ચાહે વલ્લરહિત અવસ્થા હોય તેમાં હર્ણ-વિષાદ ન કરે.

ભાવાર્થ—સાધુએ “આ વલ્લ જે ભારી પાસે છે તે ઘણાં જીર્ણશીર્ણ છે, તથા હલકા પોતનાં છે અને ખૂબ થોડાં છે, સુંદર પણ નથી, એનાથી ઠંડી વગેરેથી રક્ષા કેમ થશે” આ પ્રકારનો વિષાદભાવ કદી ન કરવો જોઈએ. આ

નવીનવસ્ત્રસદ્ભાવે તન્નિમિત્તકં હપં ન કુર્યાત્, તથા એપણીયપ્રમાણોપેતવસ્ત્રાણા-
મમહામૂલ્યકત્વાદલ્પત્વાદશોભનત્વાચ વિપાદં ન કુર્યાત્ શીતસ્પર્શાદિના વાધિતોઽપિ
પ્રમાણાધિકવસ્ત્રાકાંક્ષાં ચ ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । તથાચોક્તમાચારાઙ્ગસૂત્રે—

“ જે મિક્ખૂ તિહિં વત્થેહિં પરિવુસિણ પાયચઉત્થેહિં, તસ્સ ણં ણો એવં ભવહ,
ચઉત્થં વત્થં જાહસ્સામિ । ” (આચા. ૧ શુ. ૮ અ. ૪૩.)

છાયા—યો ભિક્ષુસ્ત્રિભિર્વસ્ત્રે પર્યુપિતઃ પાત્રચતુર્થેઃ, તસ્ય ચતુર્થો નો એવં ભવતિ
ચતુર્થં વસ્ત્રં યાચિષ્યે । પર્યુપિતઃ=વ્યવસ્થિતઃ । અત્રેન સ્થવિરકલ્પિકસ્ય ચતુર્થવસ્ત્ર
પ્રતિપેધોઽગમ્યતે । અપરં ચ—તત્રૈવોક્તમ્—

“ જસ્સ ણં મિક્ખુસ્સ એવં ભવહ—પુટ્ટો ચલુ અહમંસિ નાલમહમંસિ સીયફાસં

ભાવ નહીં કરના ચાહિયે—ઔર યે નવીન વસ્ત્ર હૈં ઇનસે શીત આદિક
કી રક્ષા વહુત અચ્છી તરહ હો જાયગી ” ઇસ પ્રકાર કમી હર્ષિત બી
નહીં હોના ચાહિયે । શીતસ્પર્શાદિક સે પીડિત હોને પર પ્રમાણ સે
અધિક વસ્ત્રોં કી આકાંક્ષા કરના સાધુમાર્ગ મેં નિષિદ્ધ હૈં । આચારાંગ-
સૂત્ર (૧ શુ. ૮ અ. ૪૩.) મેં યહી વાત વતલાઈ ગઈ હૈં “ જે મિક્ખૂ
તિહિંવત્થેહિં પરિવુસિણ પાયચઉત્થેહિં તસ્સ ણં ણો એવં ભવહ ચઉત્થં
વત્થં જાહસ્સામિ ” જો ભિક્ષુ ત્રીન વસ્ત્રોં સે એવં ચૌથે પાત્ર સે વ્યવસ્થિત
રહતા હૈં ઉસે ચતુર્થ વસ્ત્ર કે યાચન કી આવશ્યકતા નહીં હોતી હૈં ઉસ
કે ચિત્ત મેં યહ વાત નહીં આતી હૈં કિ મૈ ચતુર્થ વસ્ત્ર કી યાચના કરૂં ।
ઇસ કથન સે સ્થવિરકલ્પી સાધુ કો ચતુર્થવસ્ત્ર કા પ્રતિપેધ સિદ્ધ હોતા હૈં ।
ઔર બી આચારાંગ સૂત્ર (૧ શુ. ૮ અ. ૪૩.) મેં કહા હૈં “ જસ્સ ણં
મિક્ખુસ્સ એવં ભવહ—પુટ્ટો ચલુ અહમંસિ નાલમહમંસિ સીયફાસં

નવીન વસ્ત્ર છે, તેનાથી ઠંડી વગેરેની રક્ષા સારી રીતે થશે, આ પ્રકારે કહી
હર્ષિત પણ ન થવું જોઈએ. ઠંડીના સ્પર્શથી પીડિત થવાથી અધિક વસ્ત્રોની
આકાંક્ષા કરવી તે સાધુ માર્ગમાં નિષેધ છે. આચારાંગસૂત્ર (૧ શુ. ૮. અ. ૪૩)
માં એવી વાત બતાવવામાં આવેલ છે કે, જે મિક્ખૂ તિહિંવત્થેહિં પરિવુસિણ પાય
ચઉત્થેહિં તસ્સ ણં ણો એવં ભવહ ચઉત્થં વત્થં જાહસ્સામિ જે ભિક્ષુ ત્રણ વસ્ત્ર અને
એથા પાત્રથી વ્યવસ્થિત રહે છે. તેને એથા વસ્ત્રની યાચના કરવાની આવશ્યકતા
થતી નથી. એના ચિત્તમાં એ વાત આવતી નથી કે હું એથા વસ્ત્રની યાચના
કરું. આ કથનથી સ્થવિરકલ્પી સાધુને એથા વસ્ત્રનો પ્રતિપેધ સિદ્ધ થાય છે.

ખીલ્લું પણ આચારાંગ સૂત્ર (૧. શુ. ૮. અ. ૪. ઉ.) માં કહ્યું છે—

જસ્સ ણં મિક્ખુસ્સ એવં ભવહ—પુટ્ટો ચલુ અહમંસિ નાલમહમંસિ સીયફાસં

अहियासित्तए, से वसुमं सव्वसमन्नागयपन्नाणेणं अप्पाणेणं केइ अकरणयाए आउट्टे, तवस्सिणो हु ते सेयं जं एगे विहमाइए । तत्थवि तस्स कालपरियाए । से वि तत्थ विअंतिकारए । इच्चेयं विमोहायतणं हियं सुहं खमं णिस्सेयसं अणुगामियं । (आचा. १ श्रु. ८ अ. ४ उ.)

छाया—यस्य खलु भिक्षोः एवं भवति—स्पृष्टः खलु अहमस्मि, नालमहमस्मि शीतस्पर्शम् अध्यासितुम्, स वसुमान् सर्वसमन्वागतप्रज्ञानेन आत्मना कोऽपि अकरणतया आहतः तपस्विनः खलु तच्चेयः यदेकं वैहायसादिकम् । तत्रापि तस्य कालपर्यायः । सोऽपि तत्र व्यन्तकारकः । इत्येतत् विमोहायतनं हितं सुखं क्षमं निःश्रेयसम् आनुगामिकम् ।

व्याख्या—यस्य भिक्षोः खलु एवम्=ईदृशी विचारणा भवति—अहं खलु परीपहैः स्पृष्टः=वाधितोऽस्मि, अहं शीतस्पर्शम् अध्यासितुं=सोढुम्, अलं=पर्याप्तः, नास्मि । सः—ईदृशभावनाभावितः, कोऽपि वसुमान्=संयमी, सर्वसमन्वागतप्रज्ञानेन=पूर्णेपयोगयुक्तेन, आत्मना=अन्तःकरणेन अकरणतया=उपसर्गप्रतीकारस्या-अहियासित्तए, से वसुमं सव्वसमन्नागयपन्नाणेणं अप्पाणेणं केइ अकरणयाए आउट्टे, तवस्सिणो हु ते सेयं जं एगे विहमाइ ए । तत्थ वि तस्स कालपरियाए । से वि तत्थ विअंतिकारए । इच्चेतं विमोहायतणं हियं सुहं खमं णिस्सेयसं अणुगामियं ॥ ”

जिस भिक्षु के हृदय में ऐसी विचारणा होती है कि मैं परीपहों से पीड़ित हूँ अतः शीतपरीपह को सहन करने के लिये समर्थ नहीं हूँ ” । इस प्रकार के विचार से युक्त होकर वह संयमी मुनि प्रमाणाधिक वस्तुओं को ग्रहण करने रूप, तथा अग्नि को जलाने रूप सावध व्यापारों को कभी भी न करे । किन्तु वैहायस (फांसी)

अहियासित्तए से वसुमं सव्वसमन्नागयपन्नाणेणं अप्पाणेणं केइ अकरणयाए आउट्टे तवस्सिणो हु ते सेयं जं एगे विहमाइए । तत्थ वि तस्स कालपरियाए । से वि तत्थ विअंतिकारए । इच्चेतं विमोहायतणं हियं सुहं खमं णिस्सेयसं अणुगामियं ॥

जो भिक्षुना हृदयमां ऐवी विचारणा थाय छे के, “हुं परीपडोथी पीडित छुं आथी ठंडीना दुःखोने सहन करवामां समर्थ नथी ” आ प्रकारना विचारथी युक्त जनी ते संयमी मुनि प्रमाणाधिक वस्तुओने ग्रहण करवां ३५, तथा अग्निने जलाववा ३५ सावधव्यापारोने कही पणु न करे. पणु ते वैहायस

કરણભાવનયા આદ્યતઃ=વ્યવસ્થિતસ્તિષ્ઠેત્ । તપસ્વિનઃ સ્વલુ તચ્છ્રેયઃ=તદેવ શ્રેયસ્કરં ભવતિ, યત્-એકં વૈહાયસાદિકં-વૈહાયસત્રિપદમક્ષણં પાપાતાદિમરણેષુ કિમપ્યેકં મરણમ્ । તત્રાપિ=વૈહાયસાદિષુ તસ્ય કાલપર્યાયઃ=ભક્તપરિણાદિવત્ કાલમૃત્યુરેવ નત્વ-કાલમૃત્યુઃ, અત એવ સોઽપિ તત્ર=ચતુર્થવસ્ત્રાનાકાઙ્ગાવિપયે, વ્યન્તકારકઃ=પર્યવસાન મૃત્યુકારકઃ, સંસારાન્તકારક ઇત્યર્થઃ । ઇત્યેતત્-ઇતિ=અતઃ-અસ્માત્ કારણાત્, एतन्मरणं विमोहायतनम्-विमोहानां=પરીપદ્મસાદિષ્ણુનામ્, આયતનં=સ્થાનં-મોક્ષપદદાયકમિતિભાવઃ, હિતમ્=ઉપકારકમ્, સુખં=સુખકરં, ક્ષમં=યોગ્યં, નિઃશ્રેયસં=નિશ્ચિતં-નિશ્ચલં, શ્રેયઃ-શુભમ્, આનુગામિકમ્=ગચ્છન્તં પુરુષમ્ આ=સમન્તાત્, અનુગચ્છતીત્યેવં શીલં આનુગામિ, તદેવ-આનુગામિકમ્, મોક્ષપદપર્યન્તાનુગમન-શીલમિત્યર્થઃ ।

અર્થ ભાવઃ-અપણીયવસ્ત્રત્રયધારણે શીતસ્પર્શવેદનામસાદિષ્ણુશ્ચતુર્થવસ્ત્રાકાઙ્ગાયા અકરણેન ત્રિવસ્ત્રકત્વરૂપમચેલં પરીપદ્મં સદ્માનો મુનિર્વૈહાયસાદિષ્ણેકં કિમપિ મરણમુપગતશ્ચેત્તર્હિ તાદૃશમરણજન્યઃ પ્રકૃષ્ઠધર્મસ્તસ્ય મુનેસ્તસ્મિન્નેવ ભવે સંસારાન્તં કરોતિ, મોક્ષપદં ચ પ્રાપયતિ ।

इहाचेलकत्वं प्रवचनोक्तरीत्या ग्राह्यम् । तीर्थकरोपदिष्टाचारसेविनो मुनयः प्रवचनानुसारेण कल्पनीयाल्पजीर्णखण्डितमलिनवस्त्रपरिधानाः प्रमाणोपेतवस्त्रधारिण-श्चाप्यचेलका एव । यथा-परिहितकौपीना अपि तापसा लोके नग्ना उच्यन्ते, आदि मरणों में से किसी एक मरण को धारण कर अपने प्राणों का व्युत्सर्ग कर देवे । इस प्रकार के मरण से होने वाला जो प्रकृष्ट धर्म है वह उस मुनि को उसी भव में संसार का अन्त करता हुआ मोक्ष का प्रदायक होता है ।

પ્રવચન મેં કથિત રીતિ કે અનુસાર યહાં અચેલકતા કા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । તીર્થકરો દ્વારા ઉપદિષ્ટ આચાર કા સેવન કરને વાલે મુનિ પ્રવચન કે અનુસાર કલ્પનીય, અલ્પ, જીર્ણ, એવં

ફાંસી વગેરે મરણોમાંથી કેઇ એક મરણને ધારણ કરી પોતાના પ્રાણનો ત્યાગ કરી દે. આ પ્રકારના મરણથી થનાર જે પ્રકૃષ્ઠ ધર્મ છે તે એ મુનિને એ ભવમાં સંસારનો અંત કરાવનાર મોક્ષદાયી બને છે.

પ્રવચનમાં કહેલ રીત અનુસાર અહિં અચેલકતાનું શ્રદ્ધણ કરવામાં આવેલ છે. તીર્થકરો દ્વારા ઉપદિષ્ટ આચારનું સેવન કરવાવાળા મુનિ પ્રવચન અનુસાર કલ્પનીય, અલ્પ, જીર્ણ અને ખંડિત મલિન વસ્ત્રને, પ્રમાણોપેત વસ્ત્રોને, ધારણ કરેલ હોવા છતાં

યથા વા યસ્યાદ્ગરક્ષિકા જીર્ણા સંજાતા, ત્ત પરિશ્ચિતાદ્ગરક્ષિકોઽપિ સૌચિક્રાન્તિકં ગત્વા વદતિ—અનાઘૃતોઽસ્મિ, અદ્ગરક્ષિકાં દેહીતિ, યથા વા કાચિન્નારી પરિશ્ચિત-પરિજીર્ણશાટિકાઽપિ વસ્ત્રકારં તન્તુવાયં વદતિ—‘નગ્નાઃ હમસ્મિ, દેહિ મે શાટિકામ્’ ઇત્યાદિ, એવં સાધયોઽપ્યમહાલ્પમૂલ્યાનિ સ્વણ્ડિતાનિ જીર્ણાનિ પ્રમાણોપેતાનિ પ્રમાણતો ન્યૂનાનિ વા વસ્ત્રાણિ શ્રુતોપદેશાદ્ ધર્મવુદ્ધ્યા ધારયન્તોઽવેલકા એવં । અવેલકસદૃશા અપ્યવેલકા ઉચ્યન્તે ।

સ્વંડિત મલિન વસ્ત્રોનો પ્રમાણોપેત વસ્ત્રોનો ધારણ કરતે હુણે એ અવેલકા હી માને જાતે હૈં । જિસ પ્રકાર લોક મેં લંગોટીમાત્રનો ધારણ કરને પર એ તાપસ લોક “યે નગ્ન હૈં” ઇસ પ્રકાર કહે જાતે હૈં । અથવા જૈસે કિસી પુરુષ કા અંગરખા જીર્ણ હો જાયે ઓર વહ ઉસે પહિર કર એ જયે દર્જી કે પાસે દુસરે અંગરખેનો સિલાને કે લિયે જાતા હૈં તો કહતા હૈં કિ ખાઈ દેલો જલ્દી ઇસે સીકર દે દેના મૈ ઉઘાડા ફિરતા હું, મેરે પહિરનેનો અંગરખા નહીં હૈં । અથવા—જૈસે કોઈ સ્ત્રી કિ જિસકી શાટિકા—સાડી પરિજીર્ણ હો ચુકી હૈં જયે તન્તુ-વાય—કપડે ઘુનનેવાલે કે પાસે જાતી હૈં તો કહતી હૈં કિ મુઝે સાડી દે મેં વિના સાડી ફિર રહી હું । ઇસી તરહ સાધુ એ પ્રમાણોપેત સ્વંડિત જીર્ણ એવં અત્યંત અલ્પમૂલ્યવાલે વસ્ત્રોનો શ્રુતોપદેશ કે અનુસાર ધર્મ-વુદ્ધિ સે ધારણ કરતે હુણે એ અવેલકા હી હૈં, એસા સમજના ચાહિયે । જો અવેલકા કે તુલ્ય હોતે હૈં એ એ અવેલકા હી માને જાતે હૈં ।

પણ અવેલકા જ માનવામાં આવે છે. જે પ્રકારે લોકમાં તાપસ લોકો લંગોટી ધારણ કરે છે. પણ “આ નગ્ન છે” આ પ્રકારથી કહેવામાં આવે છે. અથવા જેમ-કેઈ પુરૂષનું અંગરખું જીર્ણ થઈ જાય અને તે તેને પહેરીને પણ બીજાને દરજીની પાસે ખીલું અંગરખું શીવડાવવા માટે જાય છે તો કહે છે ભાઈ જુઓ આને જલ્દીથી શીવી આપજો હું ઉઘાડો ફરું છું. મારે પહેરવાને અંગરખું નથી અથવા જેમ-કેઈ સ્ત્રી કે જેની સાડી પરિજીર્ણ થતાં તે કપડાં બનાવનાર પાસે જાય છે અને કહે છે કે મને સાડી આપ હું સાડી વગરની ફરી રહી છું. આ રીતે સાધુ પણ પ્રમાણોપેત સ્વંડિત જીર્ણ અને અત્યંત અલ્પમૂલ્યવાળાં વસ્ત્રોને શ્રુત ઉપદેશ અનુસાર ધર્મ વુદ્ધિથી ધારણ કરતા હોવા છતાં અવેલકા જ છે એવું સમજવું જોઈએ. જે અવેલકા તુલ્ય હોય છે તે પણ અવેલકા જ માન્યા જાય છે.

આગમે હિ દ્વિવિધઃ કલ્પઃ—સ્થવિરકલ્પઃ જિનકલ્પથ । તત્ત્વ ગચ્છપ્રતિવદ્ધાનાં મુનીનામાચારઃ સ્થવિરકલ્પઃ ।

નનુ કસ્તાવત્ સ્થવિરકલ્પક્રમઃ ? ઉચ્યતે—પ્રથમં શ્રુતચારિત્રલક્ષણધર્મશ્રવણમ્, તતઃ સમ્યક્ત્વલાભઃ, તદનુઆલોચનાપૂર્વિકા પ્રવ્રજ્યાપ્રતિપત્તિઃ, તતઃ શિક્ષાધિકારો ભવતિ શિક્ષા ચ દ્વિવિધા—ગ્રહણશિક્ષા, આસેવનાશિક્ષા ચ । તત્ત્વ ગ્રહણશિક્ષા—સૂત્રાધ્યયનરૂપા, આસેવનાશિક્ષા—પ્રતિલેખનાદિરૂપા । તતઃ સૂત્રાણામર્થગ્રહણમ્ । તત્પશ્યાદનિયતવાસઃ । ત્ત્વ ચ તાદૃશયોગ્યતાસંપન્નસ્ય મુનેઃ સાધુસહાયસ્ય ગ્રામ-નગરસંનિવેશાદિપુ દેશાન્તરે વા ગુરોરાજ્ઞયા પર્યટનમ્ ।

આગમ મેં સ્થવિરકલ્પ ઓર જિનકલ્પ કે ભેદ સે દો કલ્પ ભગવાન ને કહે હેં । ઉનમેં ગચ્છપ્રતિવદ્ધ મુનિયોં કા જો આચાર હૈ વહ સ્થવિર-કલ્પ હૈ । સ્થવિરકલ્પ કા ક્રમ હસ પ્રકાર હૈ—પ્રથમ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કા શ્રવણ, ઉસસે સમ્યક્ત્વ કા લાભ, વાદ મેં આલોચનાપૂર્વક પ્રવ્રજ્યા કી પ્રતિપત્તિ, ઉસસે ગ્રહણશિક્ષા ઇવં આસેવનશિક્ષા કે અધિકાર કા લાભ । સૂત્ર કે અધ્યયન કરને રૂપ ગ્રહણશિક્ષા ઇવં પ્રતિલેખનાદિકરૂપ આસેવનશિક્ષા હૈ । હસકે વાદ સૂત્રોં કા અર્થ ગ્રહણ કરના, પશ્ચાત્ અનિયત વાસ । અનિયતવાસ કા તાત્પર્ય હૈ ગુરુ કી આજ્ઞા સે ગ્રામ, નગર ઇવં સન્નિવેશ આદિકોં મેં અથવા દેશાન્તર મેં વિચરણ કરના । યહ વિચરણ, વિચરણ કરને કી યોગ્યતા સંપન્ન જો સાધુ હોતા હૈ ઉસી કા હોતા હૈ । ફિર ભી યહ ઇકાકી વિહાર નહીં કર સકતા કિન્તુ અન્ય સાધુઓં કે સાથ હી વિહાર કરતા હૈ ।

આગમમાં સ્થવિરકલ્પ અને જીનકલ્પના ભેદોથી બે કલ્પ ભગવાને કહ્યાં છે. એમાં ગચ્છપ્રતિવદ્ધ મુનિઓના આચાર છે, તે સ્થવિરકલ્પ છે. સ્થવિર કલ્પનો કેમ આ પ્રકારનો છે.—પ્રથમ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું શ્રવણ, એનાથી સમ્યક્ત્વનો લાભ, પછી આલોચના પૂર્વક પ્રવ્રજ્યાની પ્રાપ્તિ એથી ગ્રહણ-શિક્ષા અથવા આસેવનશિક્ષાનો લાભ, સૂત્રનું અધ્યયન કરવા રૂપ ગ્રહણ-શિક્ષા અને પ્રતિલેખનાદિક રૂપ આસેવનશિક્ષા છે. એ પછી સૂત્રોના અર્થ સમજ્યા પછી અનિયતવાસ, અનિયતવાસનું તાત્પર્ય એ છે કે, ગુરુની આજ્ઞાથી ગ્રામ-નગર અને સિન્નિવેશ વગેરેમાં અથવા દેશાન્તરમાં વિચરણ કરવું. આ વિચરણ કરવાની યોગ્યતા સંપન્ન જે સાધુ હોય છે, તેને જ ગુરુ મહારાજ એવી આજ્ઞા આપે છે. આમાં તે એકાકી વિહાર કરી શકતા નથી પરંતુ અન્ય સાધુઓની સાથે જ વિહાર કરે છે.

નનુ કિં પ્રયોજનં દેશાન્તરપર્યટનસ્ય ? ઉચ્યતે-નાનાસ્થાનેષુ વદ્યુશ્રુતાનાચાર્યાદીન્ પશ્યતસ્તસ્ય સૂત્રાર્થેષુ સમાચાર્યાં ચ વિશેષપ્રતિપત્તિર્ભવતિ, નાનાદેશભાષાજ્ઞાનં ચ । તેનાસૌ તત્તદેશીયભાષયા તત્ર તત્ર ધર્મદેશનાં દદાતિ પ્રવ્રજ્યાં ગ્રાહયતિ ચ । ગચ્છાન્તરીયા અન્યદેશીયાઃ સાધવઃ ‘અયમસ્મદ્ભાષાજ્ઞાનવાન્’ इति મત્વા તદન્તિકમાગત્ય શાસ્ત્રામ્યસનરૂપાં તદુપસંપદં પ્રતિપદ્યન્તે, તેષાં પ્રીતિશ્ચ તદુપરિજાયતે । એવમનિયતવાસેન પર્યટતસ્તસ્ય નિષ્પત્તિર્ભવતિ । નિષ્પત્તિર્નામ સદ્ગુણવત્ત્વેન પ્રભૂતશિષ્યાણાં તદન્તિકે સંસિદ્ધિઃ ।

દેશાન્તર મેં ભ્રમણ કરને કા પ્રયોજન યહ હૈ કિ જય સાધુ દેશાન્તર મેં ભ્રમણ કરતે હૈ, તય उनका अन्यदेश के अनेक बहुश्रुत आचार्य आदिकों के साथ संपर्क चढता है । उससे उनको सूत्रमें अर्थ में एवं साधु समाचारी में विशेष प्रतिपत्ति-जानकारी होती है । तथा नाना देशकी भाषाओं का ज्ञान भी हो जाता है । इससे साधु को धर्मप्रचार करने में बड़ी भारी सहायता मिलती है । क्योंकि वह उस २ देशमें उस २ देश की भाषा से उपदेश देकर वहां की जनता को धार्मिक वासना से वासित करते हैं । एवं लोगों को दीक्षा ग्रहण करने की भावना जागृत करते हैं । लोग उनसे प्रतिबोध पाकर दीक्षा धारण करते हैं । दूसरे गच्छ के अथवा अन्य देश के साधु “ ये हमारी भाषा भाषी हैं ” यह समझकर उनके पास आते जाते हैं और उनसे शास्त्रों का अभ्यास करते हैं । इससे दूसरे गच्छ के मुनिराजों की उन पर अधिक प्राप्ति भी हो जाती है । शिष्यपरंपरा की भी वृद्धि होती है । क्योंकि लोग जब

દેશાન્તરમાં ભ્રમણ કરવાનું પ્રયોજન એ છે કે, ત્યારે સાધુ દેશાન્તરમાં ભ્રમણ કરે છે ત્યારે તેને ખીજા દેશના બહુશ્રુત આચાર્ય વગેરે સાથે સંપર્ક થાય છે આથી તેને સૂત્રમાં અર્થમાં અને સાધુ સમાચારીમાં વધુ જાણવાનું મળે છે. અને જુદા જુદા દેશની ભાષાઓનું પણ જ્ઞાન થાય છે. આથી સાધુને ધર્મ પ્રચાર કરવામાં સારી એવી સહાયતા મળી રહે છે. કેમ કે, તે જે તે દેશમાં જે તે દેશની ભાષાથી ત્યાંની જનતાને ધાર્મિક ભાવનાથી ભાવનાયુક્ત બનાવી શકે છે, અને લોકોમાં દીક્ષા ગ્રહણ કરવાની ભાવના જાગૃત કરે છે. ખીજા ગચ્છના અથવા ખીજા દેશના સાધુ “ આ અમારા ભાષાભાષી છે. ” એમ સમજી એની પાસે આવે છે. સંપર્ક વધારે છે. અને એની પાસેથી શાસ્ત્રોના અભ્યાસ કરે છે. આથી ખીજા ગચ્છના મુનિરાજોની પણ તેના પર પ્રીતિ થવા લાગે છે આથી શિષ્ય પરંપરાની વૃદ્ધિ થાય છે, કેમ કે

અર્થે શિષ્યપ્રાપ્ત્યનન્તરં સ્વ પરીપકારકરણેન ગચ્છકાર્યે સંપાદિતે દીર્ઘે પર્યાયે ચ પ્રતિપાલિતે સતિ અભ્યુદયતમરણં સ્વીકરણીયમ્ । અભ્યુદયતમરણં ત્રિવિધમ્-પાદપોષગમનં, ઇક્ષિતમ્, ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં ચ ।

અભ્યુદયતમરણે સંલેખનાદિરૂપા સમાચારી પ્રદર્શ્યતે-સંલેખના આગમોક્તેન વિધિના શરીરાદેઃ કૃશીકરણમ્, સા ત્રિવિધા-ઉત્કૃષ્ટા, મધ્યમા, જઘન્યા ચ । તત્રો-
 ંનકો ગુણગણશાલી સમજ્ઞને લગતે હૈં તો ંનકે અધિક પરિચય મેં આને સે લોગોં પર ંનકે જ્ઞાનાદિક ગુણોં કા પ્રભાવ પડતા હૈં । ંસસે પ્રભાવિત હોકર ંે ંનકો અપના હિતકારક જાન ંનકે સમીપ દીક્ષિત મીં હો જાતે હૈં । ંસસે શિષ્યપરંપરા વઢતી હૈં । ંસ પ્રકાર અનિયત વાસ સે પર્યટન કરને વાલે સાધુ કો ંે અનેક લાભ હોતે હૈં ।

શિષ્યપ્રાપ્તિ કે અનંતર સ્વ અર્થે પર કા ઉપકાર કરને સે ગચ્છ કા કાર્ય સંપાદિત હોને પર તથા સાધુ અવસ્થા કી પર્યાય દીર્ઘકાલતક પાલીજાને પર ંન સાધુઓંકો અભ્યુદયતમરણ સ્વીકાર કરના ચાહિયે । ંહ અભ્યુદયતમરણ ૩ ત્રીન પ્રકાર કા હૈં ૧ પાદપોષગમન, ૨ ઇક્ષિત, ૩ ભક્તપ્રત્યાખ્યાન ।

ંસ અભ્યુદયતમરણ મેં અવ સંલેખનાદિ રૂપ સમાચારી દિખલાઈ જાતી હૈં - આગમોક્તવિધિ કે અનુસાર શરીર આદિ કા કૃશ કરના ંસ કા નામ સંલેખના હૈં । ંહ ઉત્કૃષ્ટ, મધ્યમ અર્થે જઘન્ય કે

લોકો ન્યારે તેને ગુણશાળી સમજતા થાય છે ત્યારે તેના અધિક પરિચયમાં આવે છે. આથી લોકો ઉપર ંના જ્ઞાનાદિક ગુણોના પ્રભાવ પડે છે. ંથી પ્રભાવિત થઈ તેને પોતાના હિતકારી જાણી તેની સમીપ દીક્ષિત પણ થઈ જાય છે. આથી શિષ્યપરંપરા વધે છે. આથી આ પ્રકારનો અનિયતવાસ અને પર્યટન કરવાવાળા સાધુને અનેક લાભ થાય છે.

શિષ્ય પ્રાપ્તિ ઉપરાંત સ્વ અને પરના ઉપકારક બનવાથી ગચ્છતું કાર્ય સંપાદિત થવાથી. તથા સાધુ અવસ્થાની પર્યાય લાંબા સમય સુધી પાળવામાં આવવાથી ંે સાધુઓંએ અભ્યુદયતમરણ સ્વીકારવું જોઈ ંે. આ અભ્યુદયતમરણ ત્રણ પ્રકારનાં છે. (૧) પાદપોષગમન (૨) ઇક્ષિત (૩) ભક્તપ્રત્યાખ્યાન.

આ અભ્યુદયતમરણમાં હવે સંલેખનાદિ રૂપ સમાચારી બતાવવામાં આવે છે. આગમમાં બતાવેલ વિધિ અનુસાર શરીર વગેરેને કૃશ કરવું, ંતું નામ સંલેખના છે. ંે ઉત્કૃષ્ટ, મધ્યમ અને જઘન્યના લેહથી ત્રણ પ્રકારની

ત્કૃષ્ટા દ્વાદશવર્ષપ્રમાણા, મધ્યમા-સંવત્સરપ્રમાણા, જઘન્યા-પાળ્માસિકી । તત્રો-
ત્કૃષ્ટા તાવદેયમ્-પ્રથમં ચત્વારિ વર્ષાણિ વિચિત્રં તપઃ કૃત્વા પારણકે વિકૃતિવિપ-
ત્યાગં કરોતિ । તતઃ પરં ચત્વારિ વર્ષાણિ વિચિત્રતપાંસિ કરોતિ । નનુ કિં નામ
વિચિત્રં તપઃ ? ઉચ્યતે-કદાચિચતુર્થમ્ કદાચિત્ પૃષ્ઠમ્, કદાચિદષ્ટમમ્, એવં દશમ
દ્વાદશાદીન્યપિ કરોતિ, પારણં ચ સર્વકામગુણિતેન ઉદ્ગમાદિ શુદ્ધેનાહારેણ વિષતે ।
તતઃ પરં દ્વે ચ વર્ષે એકાન્તરિતમાચામ્લં કરોતિ । એકાન્તરં ચતુર્થં કૃત્વા આચામ્લેન
પારણં કરોતીત્યર્થઃ । એવં દશવર્ષાણિ વ્યતીત્યેકાદશેવર્ષે આધાન્ પળ્માસાન્ ચતુર્થં

ભેદ સે ત્રીન પ્રકાર કી હોતી હૈ । ઉત્કૃષ્ટસંલેખના ચારહ ૧૨ વર્ષ કી,
મધ્યમ સંલેખના એક ૧ વર્ષ કી એવં જઘન્ય સંલેખના છહ ૬ માસ કી
હોતી હૈ । ઉત્કૃષ્ટસંલેખના કી વિધિ હસ પ્રકાર હૈ-સવ સે પહિલે જો
ઉત્કૃષ્ટસંલેખના ધારણ કરતા હૈ વહ પ્રથમ કે ચાર વર્ષ લગાતાર
વિચિત્ર તપ કરકે પારણા મેં વિકૃતિ-વિગય કા ત્યાગ કરે । દૂસરે ચાર
વર્ષોં મેં વિચિત્ર તપ અર્થાત્ કબી વહ ચતુર્થ કરતા હૈ કબી છટ્ઠ કરતા
હૈ કબી અઠ્ઠમ કરતા હૈ કબી દશમ કરતા હૈ ઓર કબી દ્વાદશ આદિ
કરતા હૈ । પારણા સર્વકામગુણિત સવ હિન્દ્રિયોં કે અનુકૂલ તથા ઉદ્ગમ
આદિ દોષોં સે વિશુદ્ધ એસે આહાર સે કરતા હૈ । હસકે વાદ ફિર વહ
દો વર્ષોં મેં અર્થાત્ નવમેં દશમેં વર્ષ મેં એકાન્તરિત આચામ્લ (આયંબિલ)
વ્રત કી આરાધના કરતા હૈ । યહ આરાધના ડસકી દો ૨ વર્ષ તક
ચલતી રહતી હૈ । અર્થાત્-દો વર્ષ એકાન્તર ચતુર્થ કરકે આચામ્લ
(આયંબિલ) સે પારણા કરતા હૈ । હસ પ્રકાર કરતે ૨ ડસકે દસ ૧૦

હોય છે. ઉત્કૃષ્ટસંલેખના બારવર્ષની, મધ્યમ સંલેખના એકવર્ષની, અને
જઘન્યસંલેખના છ મહિનાની હોય છે. ઉત્કૃષ્ટ સંલેખનાની વિધિ આ પ્રકારની
છે, સહુથી પહેલાં જે ઉત્કૃષ્ટ સંલેખના ધારણ કરે છે, તેણે પ્રથમના ચાર
વર્ષ સુધી વિચિત્ર તપ કરી પારણામાં વિકૃતિ વિગયનો ત્યાગ કરે, બીજા
ચાર વર્ષોમાં તે વિચિત્ર તપ અર્થાત્ કદી ચોથ કરે છે. કદીક છટ્ઠ
કરે છે. કદીક અઠ્ઠમ કરે છે. અને ક્યારેક દ્વાદશ વર્ગે કરે છે. પારણું સર્વ-
કામ શુણીત બધી હિન્દ્રિયોને અનુકૂળ તથા ઉદ્ગમ આદિ હોયોથી રહિત
આહારથી કરે છે. આ પછી તે જે વર્ષમાં અર્થાત્ નવમા દશમા વર્ષમાં
એકાન્તરિત આયંબીલ વ્રતની આરાધના કરે છે. આ આરાધના જે વર્ષ સુધી ચાલે
છે. અર્થાત્ જે વર્ષ એકાન્તર ચોથ કરી આયંબીલથી પારણું કરે છે, આ રીતે
કરતાં કરતાં એના દશ વર્ષ વ્યતિત થઈ જાય છે. બધારે અગીયારમાં વર્ષની

પષ્ટં વા તપઃ કરણીયં નાષ્ટમાદિકમ્ । તતઃ પરમન્યાન્ પળ્માસાન્ અષ્ટમદશમ-
દ્વાદશાદિકમુત્કૃષ્ટં તપઃ કરોતિ । અસ્મિન્નેકાદશેર્વં પારણકે તુ પરિમિતં-સ્વલ્પ-
સંલ્પકમાચામ્લં કરોતિ । કદાચિત્ કરોતિ કદાચિન્નકરોતીતિ ભાવઃ । દ્વાદશે
તુ વર્ષે કોટિસહિતં નિરન્તરમાચામ્લં કરોતિ । અત્ર કોટિસહિતમિત્યસ્યાયમર્થઃ-
કોટિભ્યાં સહિતમ્-વિવક્ષિતદિને આચામ્લં કૃત્વા પુનર્દ્વિતીયેઽક્ષિ આચામ્લમેવ
પ્રત્યાચ્યાતિ, તતઃ પ્રથમસ્ય પર્યન્તકોટિઃ, દ્વિતીયસ્ય પ્રારમ્ભકોટિઃ, એમ દ્વે મિલિતે
ભવતસ્ત્કોટિસહિતં ભવતિ, હિદમાચામ્લં નિરન્તરં ભવતીત્યર્થઃ । તત્રાપિ માસાર્દ્ધેન
માસિકેન વાઽઽહારત્યાગેન તપશ્ચરણીયમ્ । અનશનં કરણીયમિત્યર્થઃ । અનેન ક્રમેણ
દ્વાદશવાર્ષિકીમુત્કૃષ્ટાં સંલેખનાં કૃત્વા ગિરિગહરં વા પટ્કાયોપમર્દરહિતં નિર્જનં

વર્ષ વ્યતીત હો જાતે હૈં ઓર જય ગ્યારહ ૧૧વાં વર્ષ પ્રારંભ હોતા હૈં તો
ઉસમેં આદિ કે છહ ૬ માસ તક વહ ચતુર્થ, પષ્ટ, તપસ્યા કી આરાધના
કરતા હૈં, અષ્ટમ આદિ કી નહોં । વાકી ડપર કે છહ ૬ મહિનોં મેં
અષ્ટમ, દશમ એવં દ્વાદશ આદિ ઉત્કૃષ્ટ તપ કરતા હૈં । હિસ વર્ષ મેં
પારણાં કે દિન પરિમિત આયંબિલ કરતા હૈં । અર્થાત્ કબી આયંબિલ
કરતા હૈં કબી નહોં કરતા । વારહ ૧૨વે વર્ષ મેં કોટિસહિત-નિરન્તર
આયંબિલ કરતા હૈં । જહાં પહિલે આયંબિલ કા અન્ત હો ઓર દૂસરે
આયંબિલ કા પ્રારંભ, હિસકા નામ કોટિ હૈં । હિન દોનોં કોટિયોં સે
સહિત જો આયંબિલ હોતા હૈં ઉસકા નામ કોટિસહિત આયંબિલ હૈં ।
યે આયંબિલ નિરન્તર હોતા હૈં, અન્ત મેં માસાર્ધ-એક પક્ષ ઓર
માસિક-એક માસ કા અનશન કરતા હૈં । હિસ ક્રમ સે વારહ ૧૨
દ્વાદશ વર્ષ કી ઉત્કૃષ્ટ સંલેખના હોતી હૈં । હિસ ઉત્કૃષ્ટ સંલેખના કો

શરૂઆત હોય છે. છ માસ સુધી તે ચોથ, છઠ્ઠ તપસ્થાની આરાધના કરે છે.
અષ્ટમ વગેરેની નહીં એ પછીના છ મહિનામાં અષ્ટમ, દશમ, અને દ્વાદશ
આદિ ઉત્કૃષ્ટ તપ કરે છે. આ વર્ષમાં પારણાના દિવસે પરિમિત આયંબિલ
કરે છે. અર્થાત્ કોઈ વખત આયંબિલ કરે છે. કોઈ વખત કરતા નથી.
બારમા વર્ષમાં કોટિ સહિત નિરંતર આયંબિલ કરે છે. બ્યાં પહેલાં આયં-
બિલને અંત આવે અને બીજા આયંબીલને પ્રારંભ થાય એનું નામ કોટિ
છે. આ બંને કોટિઓ સહિત બે આયંબિલ હોય છે એનું નામ કોટિ
સહિત આયંબિલ છે. આ આયંબિલ રોજ થાય છે. અંતમાં માસાર્ધ-એક
પક્ષ અને માસિક-એક માસનું અનશન કરે છે. આ ક્રમથી બાર (દ્વાદશ)
વર્ષની ઉત્કૃષ્ટ સંલેખના થાય છે. આ ઉત્કૃષ્ટ સંલેખના કરીને સાધુ કાં તો

સ્થાનં વા ગત્વા પાદપોપગમનમ્, રૂઢિતં ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં વા મરણં યથાશક્તિ પ્રપદ્યતે ।

મધ્યમા તુ સંલેખના પૂર્વોક્તપ્રકારેણ દ્વાદશભિર્માસિર્ભવતિ । તત્ર વર્ષસ્થાને માસા સ્થાપનીયાઃ ।

જઘન્યા તુ દ્વાદશભિઃ પદ્ધૈઃ પૂર્વોક્તપ્રકારેણ ભવતિ । પક્ષાનેવ વર્ષસ્થાનીયાત્ કૃત્વા તપશ્ચરણં કર્તવ્યં ભવતિ । ગિરિકન્દરાદિગમનં મધ્યમજઘન્યયોરપિ ।

કરકે સાધુ યા તો કિસી પર્વત કી ગુફા મેં ચલા જાતા હૈ, યા પટ્કાય કે ઉપમર્દન સે રહિત નિર્જીવ કિસી નિર્જનસ્થાન મેં ચલા જાતા હૈ । વહાં પહુંચ કર પાદપોપગમન, રૂઢિત, ભક્તપ્રત્યાખ્યાન इन तीनों में से किसी एक को जैसी शक्ति होती है उसके अनुसार स्वीकार कर लेता है ।

મધ્યમા સંલેખના એક ૧ વર્ષ કી હોતી હૈ । જો વિધિ ચારહ ૧૨ વર્ષ કી સંલેખના મેં પ્રદર્શિત કરને મેં આઈ હૈ વહ વિધિ હસકી બી હૈ વહાં જહાં વર્ષ કા પ્રમાણ ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ હસમેં ઉસ જગહ માસ રૂપ પ્રમાણ સમજાના ચાહિયે । જૈસે વહાં ૪ વર્ષ આદિ કહા હૈ હસમેં ૪ માસ સમજાના ચાહિયે ।

જઘન્ય સંલેખના ૧૨ પક્ષો-૬ માસ-કે પ્રમાણ વાલી હોતી હૈ । હસકી બી વિધિ વહી હૈ જો ઉત્કૃષ્ટ સંલેખના કી હૈ । વર્ષ કે સ્થાન મેં યહાં પક્ષો કો ગ્રહણ કિયા જાતા હૈ । મધ્યમ સંલેખના એવં જઘન્ય સંલેખના इन दोनों में भी गिरिकन्दरा आदि में जाना आवश्यकिय है ।

કોઈ પર્વતની શુદ્ધામાં આલ્યા બાય છે. અથવા પટ્કાયના, ઉપમર્દનથી રહિત નિર્જીવ એવા નિર્જન સ્થાનમાં આલ્યા બાય છે. ત્યાં પહોંચી પાદપોપગમન રૂઢિત, ભક્તપ્રત્યાખ્યાન આ ત્રણમાંથી પોતાની શક્તિ પ્રમાણે કોઈ એક મરણને સ્વીકાર કરી લે છે,

મધ્યમા સંલેખના એક ૧ વર્ષની હોય છે. જે વિધિ ચાર ૧૨ વર્ષની સંલેખનામાં પ્રદર્શિત કરવામાં આવી છે તે વિધિ આની પણ છે. જ્યાંવર્ષનું પ્રમાણ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે ત્યાં મહિનાનું પ્રમાણ મધ્યમા સંલેખના માટે સમજવું બેધએ. જેમ ત્યાં ચાર વર્ષ આદિ કહેલ છે. ત્યાં આમાં ચાર મહિના સમજવા બેધએ.

જઘન્ય સંલેખના ૧૨ પક્ષ-૬ માસ ના પ્રમાણવાળી હોય છે. આની વિધિ પણ એ જ છે. જે ઉત્કૃષ્ટ સંલેખનાની છે. મધ્યમ સંલેખના અને જઘન્ય સંલેખના આ બંનેમાં પણ ગિરિકન્દરા આદિમાં જવું

સંલેખનાયામસમર્થેન મુનિના સંલેખનાં વિનાઽપિ યથાશક્તિ સંસ્તારકં કૃત્વાઽ-
ભ્યુદયતમરણં સ્વીકરણીયમ્ ।

અભ્યુદયતમરણાઙ્ગીકરણાત્ પ્રાંગિદં ચિન્તનીયમ્-મયા વિશુદ્ધચારિત્રાનુષ્ઠાનેન
સ્વપરહિતં સંપાદિતમ્ , શિષ્યાદ્યુપકારતઃ પરહિતં ચ, નિષ્પન્નાશ્ચ સમ્પ્રતિ મમ ગ-
ચ્છપરિપાલનક્ષમાઃ શિષ્યાઃ, અથ વિશેષેણ મમાત્મહિતમનુઠેયમિતિ વિચિન્ત્ય
સ્વપરિજ્ઞાને સતિ સ્વકીયમાયુઃ શેષં સ્વયમેવ પર્યાલોચયતિ, તદભાવેઽન્યં વિશિષ્ટ
માચાર્યાદિકં પૃચ્છતિ । સ્વાયુપિસ્તોકતયા જ્ઞાતે ભક્તપ્રત્યાખ્યાનાદિ મરણં યથા-
શક્તિ પ્રતિપદ્યતે । યદિ સ્વાયુર્દીર્ઘતયા જ્ઞાતં જહ્વાલમાત્રં પરિક્ષીણં તદા સ્થિરવાસં

જો સાધુ સંલેખના કરને મેં અસમર્થ હૈં ઉસે સંલેખના કે વિના મી
યથાશક્તિ સંધારાકર અભ્યુદયતમરણ સ્વીકાર કરના ચાહિયે । હસ અભ્યુ-
દયતમરણ કો અંગીકાર કરને કે પહિલે સાધુ કો હસ પ્રકાર વિચાર
કરના ચાહિયે કિ મેંને વિશુદ્ધ ચારિત્ર કે અનુષ્ઠાન સે સ્વ હિત સંપાદિત
કર લિયા હૈં । શિષ્યાદિકોં કે ઉપકાર સે પર કા ઉપકાર મી કર દિયા
હૈં । હસ સમય ગચ્છ કા પરિપાલન કરને મેં સમર્થ મેરી શિષ્યાદિ સંપત્તિ
મી સર્વ પ્રકાર સે શક્તિશાલી હો ચુકી હૈં । અવ મુઝે નિશ્ચિન્ત હોકર
વિશેષ રીતિ સે અપની આત્મા કા કલ્યાણ કરના ચાહિયે “મેરી અવ-
શિષ્ટ આયુ કિતની હૈં ” હસ પ્રકાર સ્વયં જાન કર અથવા યદિ સ્વયં
નહીં જાન સકે તો અન્ય વિશિષ્ટ આચાર્ય આદિ સે પૂછકર નિશ્ચિન્ત
કરલે । યદિ આયુ અલ્પ જ્ઞાત હોવે તો યથાશક્તિ ઉસે ભક્તપ્રત્યાખ્યા-
નાદિ મરણ સ્વીકાર કર લેના ચાહિયે । યદિ આયુ દીર્ઘ જ્ઞાત હોવે ઔર

જે સાધુ સંલેખના કરવામાં અસમર્થ છે, એણે સંલેખના વગર પણ
યથાશક્તિ સંધારો કરી અભ્યુદયત મરણનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ. આ અભ્યુ-
દયત મરણનો અંગિકાર કરતાં પહેલાં સાધુએ એ પ્રકારનો વિચાર કરવો જોઈએ
કે, મેં વિશુદ્ધ ચારિત્રના અનુષ્ઠાનથી સ્વહિત સંપાદિત કરી લીધું છે, શિષ્યા-
દિકેના ઉપકારની સાથેસાથ ખીજ ઉપર પણ ઉપકાર કર્યો છે. આ સમય
ગચ્છનું પરિપાલન કરવામાં સમર્થ એવી મારી શિષ્યાદિસંપત્તિ પણ સર્વ
પ્રકારથી શક્તિશાળી બની ચુકી છે. હવે મારે નિશ્ચિત બનીને વિશેષ રીતથી
મારા આત્માનું કલ્યાણ કરવું જોઈએ. “મારી અવશિષ્ટ આયુ કેટલી છે ” આ
વાત યોતે બાણીને અથવા જો યોતે ન બાણી શકે તો ખીજ ગુણસંપન્ન
આચાર્ય આદિથી પૂછીને નક્કી કરી લે. જો આયુષ્ય અલ્પ હોય તો; યથાશક્તિ
તેણે ભક્તપ્રત્યાખ્યાના આદિ મરણનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ. જો આયુ લાંબી

સ્વીકરોતિ તત્રૈવ ક્ષેત્રે વસત્રપિ વસતિદોષૈરુપધિદોષૈશ્વરહિતો ભવતિ । શક્તૌ પુષ્ટાયાં
તુ અસ્મિન્ પञ્ચમારકે જિનકલ્પપ્રતિપત્તિવિધાનાભાવાત્ સ્થવિરકલ્પેનૈવ સ્વ-
રોપકારકરણેન દીર્ઘપર્યાયઃ પ્રતિપાલનીયઃ ।

॥ ઇતિ સ્થવિરકલ્પિકસામાચારી ॥

ચતુર્ધારકાપેક્ષયા જિનકલ્પાદિપ્રતિપત્તિરૂપે અભ્યુદયતવિહારે મર્યાદા પ્રદર્શ્યતે
-તત્ર જિનકલ્પાદિ પ્રતિપિત્સુના પ્રથમમેવ 'મયા વિશુદ્ધચારિત્રાનુષ્ઠાનેન સ્વપ-
હિતં' इत्यादि विचिन्त्य, તપઃ સત્વાદિ ભાવનાભિસાત્મા માવનીયઃ ।

સાથ મેં જંઘાચલ ક્ષીણ હુઆ માલૂમ પડે તો ઉસે સ્થિરવાસ અંગીકાર
કરલેના ચાહિયે । ઓર હસી સ્થિરવાસ સે ઉસી ક્ષેત્ર મેં રહતે હુણ મી
વહ વસતિ કે દોષોં સે ંવં ઉપાધિ કે દોષોં સે રહિત હો જાતા હૈ । યદિ
શક્તિ પુષ્ટ હોવે તો મી હસ પञ्चम आरे મેં જિનકલ્પ કી પ્રતિપત્તિ કે
વિધાન કા અભાવ હોને સે સ્થવિરકલ્પ કી હાલત મેં હી રહતે હુણ સ્વ
પર કા ઉપકાર કરતે ૨ દીર્ઘપર્યાય કો પાલતે રહના ચાહિયે ।

॥ यह स्थविर कल्प की समाचारी है ॥

અવ-ચૌથે આરે કી અપેક્ષા સે જિનકલ્પ આદિ કી પ્રતિપત્તિ સ્વી-
કૃતિ રૂપ અભ્યુદય વિહાર મેં કૈસી કયા મર્યાદા હોતી હૈ યહ વાત પ્રકટ
કી જાતી હૈ-જો સાધુ જિનકલ્પ આદિ કો પ્રાપ્ત કરને કા અભિલાષી હૈ
ઉસે ચાહિયે કી વહ સર્વ પ્રથમ એસા વિચાર કરે કિ મૈને વિશુદ્ધ ચરિત્ર
કે અનુષ્ઠાન સે અપના ઓર પર કા હિત તો સાધિત ક્રિયા । અબ હમ કો
તપ ંવં સત્વાદિ પાંચ ભાવનાઓં સે આત્મા કો ભાવિત કરના ચાહિયે ।

હોય અને સાથે જ'ઘાળળ ક્ષીણ જ'ણાય તો તેણે સ્થિરવાસ અંગિકાર કરી
લેવો જોઈએ. આ સ્થિરવાસથી તે ક્ષેત્રમાં રહેવા છતાં તે વસ્તીના દોષોથી
અને ઉપાધીના દોષોથી રહિત બને છે. કદાચ શક્તિ સારી હોય તો પણ આ
પાંચમા આરામાં જનકલ્પની પ્રતિપત્તિના વિધાનનો અભાવ હોવાથી સ્થવિર-
કલ્પની હાલતમાં રહીને સ્વ અને પરનો ઉપકાર કરતાં કરતાં દીર્ઘ પર્યાયનું
પાલન કરતા રહેવું જોઈએ.

॥ આ સ્થવિરકલ્પની સમાચારી છે ॥

હવે ચોથા આરાની અપેક્ષાથી જનકલ્પ આદિની પ્રતિપત્તિ સ્વીકૃતિરૂપ
અભ્યુદય વિહારમાં કેવી અને કેટલી મર્યાદા હોય છે આ વાત પ્રગટ કરવામાં
આવે છે-જો સાધુ જનકલ્પ આદિને પ્રાપ્ત કરવાનો અભિલાષી છે તેણે જાણવું
જોઈએ કે, મેં વિશુદ્ધ ચારિત્રના અનુષ્ઠાનથી 'પોતાનું' અને પરનું હિત તો સાધ્યું.
હવે મારે તપ અને સત્વાદિપાંચ ભાવનાઓથી આત્માને ભાવિત કરવા જોઈએ

તથાચોક્તમ્—

તવો સત્તં ચ સુત્તં ચ, એગત્તં વલમપ્પણો ।

પદમં પંચ ભાવિત્તા, જિણકપ્પં પવજ્જહ ॥ ૧ ॥

છાયા—તપઃ સત્ત્વં ચ મૂત્રં ચ, એકત્વં વલમાત્મનઃ ।

પ્રથમં પત્ર ભાવયિત્વા, જિનકલ્પં પ્રપદ્યતે ॥ ૧ ॥

અર્થ ભાવઃ—જિનકલ્પપ્રતિપિત્સુસ્તપોભાવનયાત્માનં ભાવયન્ દેવાદિકૃતોપસ-
ર્ગાદિનાઽનેપણાદિકારણતો વા યદિ પણમાસપર્યન્તમાહારં ન લભતે તથાપિ ન
વાધ્યતે ॥ ૧ ॥ સત્ત્વભાવનયા મયં પરાજયતે ॥ ૨ ॥ સૂત્રભાવનયા મૂત્રં સ્વના-
મવત્ પહિચિત્તં કરોતિ ॥ ૩ ॥ એકત્વ ભાવનયા ચાત્માનં ભાવયન્ સાધર્મિક
સાધ્વાદિના સહ મિથઃ કથાદિવ્યતિકરાન્ સર્વાનપિ પરિવર્જયતિ । તતો વાહ્ય-
કહા મી હૈ ।

તવો સત્તં ચ સુત્તં ચ, એગત્તં વલમપ્પણો ।

પદમં પંચ ભાવિત્તા, જિણકપ્પં પવજ્જહ ॥ ૧ ॥

હસકા ભાવ યહ હૈ કિ—જિનકલ્પ કો ધારણ કરને કા હચ્છુક સાધુ
તપ ભાવના સે આત્મા કો ભાવિત કરતા હુઆ યદિ દેવ મનુષ્ય આદિ
દ્વારા હોને વાલે ઉપસર્ગ સે અથવા અનેપણાદિ રૂપ કારણ સે છહ માસ
તક આહાર પ્રાપ્ત ન કર સકે તૌ મી વાધિત નહીં હોતા હૈ । સત્ત્વ
ભાવના સે વહ મય પર વિજય પ્રાપ્ત કરતા હૈ । એકત્વભાવના સે અપની
આત્મા કો ભાવિત કરતા હુઆ સાધર્મિક સાધુ આદિકોં કે સાથ પર-
સ્પર મેં કથા વાર્તા આદિ સમસ્ત વાતોં કા પરિત્યાગ કર દેતા હૈ । જવ

કહું પહુ છે—

તવો સત્તં ચ સુત્તં ચ, એગત્તં વલમપ્પણો ।

પદમં પંચ ભાવિત્તા, જિણકપ્પં પવજ્જહ ॥ ૧ ॥

આનો ભાવ એ છે કે—જનકલ્પને ધારણ કરવાની ઈચ્છાવાળા સાધુ તપ
ભાવનાથી આત્માને ભાવિત કરીને દેવ મનુષ્ય આદિ દ્વારા થનાર ઉપસર્ગથી
અથવા અનેપણાદિરૂપ કારણથી છ મહિના સુધી આહાર મેળવી ન શકે તો પહુ
પીડા પામતો નથી. સત્ત્વભાવનાથી તે ભય ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. સૂત્ર-
ભાવનાથી પોતાના નામની માફક સૂત્રનો પરિચય પ્રાપ્ત કરે છે, એકત્વ ભાવ-
નાથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરીને સાધર્મિક સાધુ આદિની સાથે પરસ્પરમાં
કથાવાર્તા આદિ સમસ્ત વાતોને પરિત્યાગ કરી દે છે. બ્યારે બાહ્યમાં તેનું મમત્વ

મમત્વે મૂલત ઇચ્છેદિતે પથાદ્ દેહાદિમ્યોઽપિ ભિન્નમાત્માનં પદ્યન્ સર્વથા તેષ્-
નાસક્તો ભવતિ ॥ ૪ ॥ ચલભાવનાયાં ચલં દ્વિવિધં-શરીરં, માનસં ચ । તત્ર શરી-
રમપિ ચલં જિનકલ્પપ્રતિપત્તિયોગ્યસ્ય શેષજનાતિશાયિકં સ્યાત્, તપઃ પ્રવૃત્તિભિઃ
શુષ્યમાણસ્ય યદ્યપિ શરીરં ચલં તાદૃશં ન ભવતિ તથાપિ સ્વાત્મા ધૃતિચલેન તથા
ભાવયિતવ્યો યથા મહદ્ગિરપિ પરીપહોપસર્ગેર્નવાધ્યતે ।

આમિઃ પદ્મભિર્ભાવનાભિર્માવિતાત્મા જિનકલ્પાદિ પ્રતિપિત્તુર્ગ્છે પ્રતિ-
વસન્નાહારાદિપરિકર્મ પ્રથમમેવ કરોતિ । આહારાદાવન્યસાધ્વપેક્ષ્યાઽન્તપ્રાન્તાદિ-
યાદ્ય મેં મમત્વ મૂલતઃ ઉસકા ઉચ્છેદિત હો જાતા હૈ તય અન્ય દેહાદિ
પદાર્થો સે ભિન્ન સ્વ આત્મા કો જાનતા હુઆ વહ્ન ઉન મેં સર્વથા અના-
સક્ત હી રહતા હૈ । ઉનમેં આસક્ત નહીં હોતા । ચલભાવના મેં ચલ દો
પ્રકાર હૈ ઇક શરીર સંબંધી ઓર દુસરા મનસંબંધી । જો સાધુ જિન-
કલ્પ કી પ્રતિપત્તિ કે યોગ્ય હોતા હૈ ઉસકા શારીરિક ચલ ભી યદ્યપિ
સાધારણજન કી અપેક્ષા અતિશય વિશિષ્ટ હોતા હૈ પરન્તુ તપશ્ચર્યા
આદિ કે કારણ ઉનકા શરીર જવ કૃશ હો જાતા હૈ તય વહ્ન વૈસા નહીં
રહતા હૈ તૌ ભી ઉનકી આત્મા ધૃતિચલ દ્વારા ઇતની અધિક ભાવિત
રંહતી હૈ કિ જિસકી વજહ સે વે અધિક સે અધિક પરીપહ્ ઓર ઉપ-
સર્ગો સે આક્રાન્ત હોને પર ભી અપને કર્તવ્યમાર્ગ સે જરા ભી
વિચલિત નહીં હોતે ।

इन पांच भावनाओं से भावितात्मा जिनकल्पादिक को ग्रहण
करने की इच्छा से गच्छ में रहता हुआ आहारादि परिकर्म को सब

મુલતઃ નાશ પામે છે ત્યારે બીજા દેહાદિ પદાર્થોથી ભિન્ન પોતાના આત્માને
જાણીને તેમાં સર્વથા અનાસક્ત જ રહે છે. એમાં આસક્ત બનતા નથી.
બળભાવનામાં બળ બે પ્રકારનાં છે. એક શરીર સંબંધી અને બીજું મન
સંબંધી. જે સાધુ જનકલ્પની પ્રતિપત્તિને યોગ્ય હોય છે તેનું શારીરિક બળ
પણ જો કે, સાધારણ જનની અપેક્ષા અતિશય બલવાન હોય છે. પરંતુ તપ-
શ્ચર્યા આદિના કારણથી તેનું શરીર બ્યારે કૃષ બને છે ત્યારે તે તેવા રહેતા
નથી. તો પણ તેની આત્મા ધૃતિબળ દ્વારા એટલી અધિક ભાવિત રહે છે કે,
જેનાથી તે અધિકથી અધિક પરીપહ્ અને ઉપસર્ગોથી આક્રાન્ત થતા હોવા છતાં
પણ પોતાના કર્તવ્યમાર્ગથી જરા પણ ચલિત થતા નથી.

આ પાંચ ભાવનાઓથી ભાવિતાત્મા જનકલ્પાદિકને ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છાથી
ગચ્છમાં રહીને આહારાદિ પરિકર્મને બધાથી પહેલાં કરી લે છે, આહારાદિમાં

ગ્રહણાદુલ્કૃષ્ટતાસમ્પાદનમ્-પરિકર્મ । યથા-તૃતીયપૌરુષ્યામવગાઢાયાં વલ્લ-ચળ-
કાદિકમન્તં પ્રાન્તં રુક્ષં ચ ગૃહ્ણતિ ।

“ સંસદ્દમસંસદ્દા, ઉદ્દહ તહ હોઈ અપ્પલેવા ય ।

ઊગ્ગહિયા પગ્ગહિયા, ઉજ્જિયધમ્મા ય સત્તમિયા ॥ ૧ ॥ ”

આસાં સપ્તવિધાનાં પિઠ્ઠૈપણાનાં મધ્યે આદ્યદ્વયં વિહાય પચ્ચાનાં મધ્યાદન્ય-
તરૈપણાદ્વયાભિગ્રહેણાઽઽહારં ગૃહ્ણતિ એકયૈષણયા ભક્તં, દ્વિતીયયા તુ પાનકમ્ ।
એવમાગમોક્તવિધિનાઽઽત્માનં ભાવયિત્વા ગચ્છપ્રતિવદ્ એવ જિનકલ્પં પ્રતિપિત્સુ-
ચતુર્વિધસંઘં સંમેલયતિ, તદભાવે સ્વગણં તતસ્તીર્યકરસ્ય સમીપે, તદભાવે ગણ-

સે પહિલે હી કર લેતા હૈ આહાર આદિ મેં અન્ય સાધુ કી અપેક્ષા
અંતપ્રાંત આદિ ગ્રહણ સે ઉલ્કૃષ્ટતા કા સંપાદન કરના પરિકર્મ હૈ ।
જૈસે તૃતીય પૌરુષી મેં વલ્લ; ચના આદિ કા આહાર કરના એવં અન્ત-
પ્રાન્ત રુક્ષ આહાર કરના ।

સંસદ્દમસંસદ્દા, ઉદ્દહ તહ હોઈ અપ્પલેવા ય ।

ઊગ્ગહિયા પગ્ગહિયા, ઉજ્જિયધમ્મા ય સત્તમિયા ॥૧॥

इन सात प्रकार की पिण्डैपणाओं के मध्य में आदि की दो एष-
णाओं को छोड़कर बाकी बची पांच एषणाओं में से अन्यतर एषणा दो
के अभिग्रह से वह आहार को ग्रहण करता है । एक एषणा से भक्त
को और द्वितीय एषणा से पान को । इस प्रकार आगमोक्त विधि के
अनुसार आत्मा को भावित करके गच्छ में रहता हुआ ही जिनकल्प
को अंगीकार करने का अभिलाषी साधु चतुर्विध संघ को एकत्रित

અન્ય સાધુની અપેક્ષા અંતપ્રાન્ત આદિ ગ્રહણથી ઉલ્કૃષ્ટતાનું સંપાદન કરવું
પરિકર્મ છે. જેમ-ત્રીજા પૌરુષીમાં વાલ, ચણા આદિનો આહાર કરવો અને
અન્તપ્રાન્ત રુક્ષ આહાર કરવો.

સંસદ્દમસંસદ્દા, ઉદ્દહ તહ હોઈ અપ્પલેવા ય ।

ઊગ્ગહિયા પગ્ગહિયા, ઉજ્જિયધમ્મા ય સત્તમિયા ॥ ૧ ॥

એ સાત પ્રકારની પિન્ડૈપણાઓના મધ્યમાં પહેલાની એ એપણાઓને
છોડીને બાકી બચેલ પાંચ એપણાઓમાંથી અન્યતર એપણા બેના અભિગ્રહથી
તે આહાર ગ્રહણ કરે છે, એક એપણાથી ભક્તને અને બીજી એપણાથી પાનને
આ પ્રકારે આગમમાં કહેલ વિધિ અનુસાર આત્માને ભાવિત કરીને ગચ્છમાં
રહીને જ છનકલ્પને અંગિકાર કરવાના અભિલાષી સાધુ ચતુર્વિધ સંઘને એક-

ધરસ્ય, તદભાવે ચતુર્દશપૂર્વધરસ્ય, તદભાવે દશપૂર્વધરસ્ય, તદભાવે વટાશ્વત્થાશ્લોક-
વૃક્ષાણાં સંનિધૌ સિદ્ધસાક્ષિકં જિનકલ્પં સ્વીકરોતિ । તદા સચાલવૃદ્ધં ગચ્છ
ક્ષામયતિ । તતો નિઃશલ્યો નિષ્કણાયોઽસૌ સ્વગણસાધ્વાદીનનુશસ્તિ । એવમેવ
યુષ્માભિરપ્યાચરણીયમ્ નાત્ર પ્રમાદઃ કાર્યઃ । ગણમર્યાદા નોલ્લઙ્ઘનીયા । ઇત્યાદિ
શિક્ષાં દત્વા ગચ્છાદ્ વિનિર્ગતો ભવતિ । તસ્મિન્ ચક્રુર્વિપયાતિક્રાન્તે સતિ સાધવઃ
પ્રતિનિવર્તન્તે ।

કરતા હૈ । इसके अभाव में अपने गण को, एकत्रित करता हॆ बाद में
तीर्थंकर के समीप में, इनके अभाव में गणधर के समीप में, इनके
अभाव में चौदहपूर्वधारी के समीप में, इनके अभाव में दशपूर्वधारी के
समीप में, इनके भी अभाव में वटवृक्ष, अश्वत्थ-पीपल वृक्ष, अथवा
अशोक वृक्ष के समीप सिद्ध परमात्मा को साक्षी करके जिनकल्प को
स्वीकार करता है । उस समय यह अपने गच्छ में रहने वाले बालवृद्ध
साधुओं से खमत खामणा करते हैं । पश्चात् निःशल्य एवं निष्कषाय
होकर अपने गच्छ के साधु आदिकों को यह शिक्षा देता है कि आप-
लोग भी इसी तरह से 'करें' इसमें प्रमाद करना ठीक नहीं है । गण की
जो मर्यादा है उसका उल्लंघन नहीं करना । इत्यादि शिक्षा देकर फिर
वह गच्छ निर्गत हो जाता है । साधु वर्ग जब तक वह दिखता रहता
है तयतक उसके पीछे २ चलता रहता है और जब वह दिखलाई नहीं
पड़ता तब सब पीछे वापिस लौट आते हैं ।

ત્રીત કરે છે, એના અભાવમાં પોતાના ગણને એકત્રીત કરે છે. બાદમાં તીર્થ-
કરની સમીપમાં, એના અભાવમાં ગણધરની સમીપમાં, તેના અભાવમાં ચૌદ
પૂર્વધારીની સમીપમાં, તેના અભાવમાં દશપૂર્વધારીની સમીપમાં, તેના પણ
અભાવમાં વટવૃક્ષ, આશોપાલવ, પીપળો અથવા અશોકવૃક્ષના સમીપ સિદ્ધ
પરમાત્માને સાક્ષી રાખીને જીનકલ્પનો સ્વીકાર કરે છે. આ સમયે તે પોતાના
ગચ્છમાં રહેલા બાળ-વૃદ્ધ સાધુઓથી ખમત ખામણ કરે છે પછી નિઃશલ્ય અને
નિષ્કષાય થઈને પોતાના ગચ્છના સાધુ આદિને એવી શિખામણ આપે છે કે,
આપ લોકોએ પણ આજ રીતે કરવું. તેમાં પ્રમાદ કરવો ઠીક નથી. ગણની જે
મર્યાદા છે તેવું ઉલ્લંઘન કરવું નહીં. ઇત્યાદિ શિખામણ આપીને પછી તે ગચ્છ
નિર્ગત થઈ જાય છે. જ્યાં સુધી તે દેખાય છે ત્યાં સાધુવર્ગ તેની પાછળ પાછળ
આવતા રહે છે અને જ્યારે તે દેખાતા બંધ થાય છે ત્યારે સઘળા પાછા ફરે છે.

અથ જિનકલ્પિકમર્યાદા—

અનયા મર્યાદયા જિનકલ્પં સ્વીકૃત્યાસી યત્ર ગ્રામે માસકલ્પઃ કરિષ્યમા-
ણસ્તત્ર પદ્ ભાગાન્ કલ્પયતિ, તતથ યસ્મિન્ ભાગે એકસ્મિન્ દિને ભિક્ષાચર્યા-
કૃતા, તત્ર પુનરપિ સપ્તમ એવ દિને પર્યટતિ । ભિક્ષાચર્યા ગ્રામાન્તરગમનં ચ તૃતીય-
પૌરુષ્યામેવ કરોતિ । યત્ર ચતુર્થપૌરુષી ગ્રામ્ના ભવેત્, તત્રૈવાવતિષ્ઠતે, નાન્યત્ર ગ-
ચ્છતિ । ભક્તં પાનકં ચ પૂર્વોક્તૈપણાદ્રયાભિગ્રહેણાલેપકૃદેવ શૃક્લાતિ । એપણાદિ-
વિષયમન્તરેણ ન કેનાપિ સાર્થં ભાપતે । એકસ્યાં ચ વસતૌ યદ્યપિ ઉત્કૃષ્ટતઃ સપ્ત
જિનકલ્પિકાઃ પ્રતિવસન્તિ તથાપિ તે પરસ્પરં સંભાષણં ન કુર્વન્તિ । સમાપન્નાન્ ઉપ-
સર્ગપરીપઠાન્ સર્વાન્ સહત એવ । રોગેષુ ચિકિત્સાં ન કારયત્યેવ તદ્વેદનાં તુ

અવ જિનકલ્પી કી મર્યાદા કહતે હૈ—

હસ મર્યાદા સે જિનકલ્પ કો સ્વીકાર કર યહ જિસ ગ્રામ મેં માસ-
કલ્પ કરતા હૈ વહાં છહ ભાગોં કી કલ્પના કરતા હૈ । જિસ ભાગ મેં
એક દિન મેં ભિક્ષાચર્યા કરલી ગઈ હો વહાં ફિર યહ સાતવે દિન હી
ભિક્ષાચર્યા કરતા હૈ । ભિક્ષાચર્યા કરના અથવા એક ગ્રામ સે દૂસરે ગ્રામ
મેં જાના યહ તૃતીય પૌરુષી મેં હી કરતા હૈ । જહાં ચતુર્થ પૌરુષી આ
જાતી હૈ વહ વહીં પર ઠહર જાતા હૈ । અન્યત્ર નહીં જાતા હૈ । પૂર્વોક્ત દો
એપણાઓં કે અભિગ્રહ સે અલેપકૃત-લેપરહિત જિસકા લેપ ન લગે એસે
ભક્ત પાન કો ગ્રહણ કરતા હૈ । એપણાદિ વિષય-કે વિના કિસી કે ભી
સાથ વાતચીત નહીં કરતા હૈ । એક વસ્તી મેં યદ્યપિ અધિક સે અધિક
સાત જિનકલ્પી સાધુ રહ સકતે હૈ તૌ ભી વે પરસ્પર સંભાષણ નહીં
કરતે હૈ । જો ભી ઉપસર્ગ યા પરીપહ આપડે તો ઉસે સહતે હી હૈ । રોગ

હવે જનકલ્પીની મર્યાદા કહેવામાં આવે છે—

આ મર્યાદાથી જનકલ્પનો સ્વીકાર કરી તે સાધુ જે ગામમાં માસ કલ્પ
કરે છે ત્યાં છ ભાગોની કલ્પના કરે છે. જે ભાગમાં એક દિવસમાં ભિક્ષાચર્યા
કરી લેવામાં આવી હોય ત્યાં તે ફરી સાતમા દિવસે જ ભિક્ષાચર્યા કરે છે.
ભિક્ષાચર્યા કરવી અથવા એક ગામથી બીજા ગામે જવું એ ત્રીજા પૌરુષીમાં જ
કરે છે ત્યાં એથી પૌરુષી આવે ત્યાં તે રોકાઈ બચે છે આગળ વધતા નથી.
પૂર્વોક્ત જે એપણાના અભિગ્રહથી (અલેપકૃત) જેનો લેપ ન લાગે એવા ભક્ત
પાનને ગ્રહણ કરે છે. એપણાદિ વિષય વગર કોઈની સાથે વાતચિત કરતા નથી,
એક વસ્તીમાં જો કે, વધુમાં વધુ સાત જનકલ્પી સાધુ રહી શકે છે તો પણ
તેઓ પરસ્પર સંભાષણ કરતા નથી. જે પણ ઉપસર્ગ અને પરીપહ આવી પડે

સમ્યગેવ સહતે । આપાતસંલોકાદિદોષરહિતે સ્થણ્ડિલે ઉચ્ચારાદીન્ કરોતિ, નત્વસ્થણ્ડિલે । પરિકર્મરહિતાયાં વસતૌ તિષ્ઠતિ । યદ્યુપવિશતિ તદા નિયમાદુત્કુડક એવ, ન તુ નિપઘાયામ્, ઔપગ્રાહિકોપકરણસ્યૈવાભાવાત્ । મત્તમાત્કસિંહવ્યાગ્રાદિકે સંમુલે સમાપતતિ સતિ ઝ્ઞમાર્ગગમનાદિના ઈયાંસમિતિ ન ભિનત્તિ ।

જિનકલ્પિકોડપવાદં નાસેવતે, જઙ્ઘાવલ્લપરિક્ષીણસ્તુ અચિહરમાગોડપ્યારાધકઃ લોચં ચ કરોત્યેવ, દશવિધસામાચાર્યાં પઞ્ચ સમાચાર્યો જિનકલ્પિકાનાં, આપ્રચ્છના, મેં યે કિસીં ભી પ્રકાર ચિકિત્સા નહોં કરાતે હં કિન્તુ જૈસે ભી યનતા હૈ ઉસ રોગ કો સહન હી કરતે હં । જહાં મનુષ્યોં કા આવાગમન નહોં હોતા હૈ એસે સ્થણ્ડિલ મેં હી યે ઉચ્ચાર આદિ કે લિયે જાતે હં । અસ્થણ્ડિલ મેં નહોં । પરિકર્મ રહિત-ઘઠારી મઠારી વિના કી વસ્તી મેં યે રહતે હં જય વૈઠતે હં તો નિયમ સે ઉત્કુડક આસન સે હી વૈઠતે હં । નિપઘા સે નહોં ક્યોં કિ ઔપગ્રાહિક ઉપકરણ આસન આદિ કા હી ઇન્કે પાસ અભાવ હૈ । મત્તમાતંગ, સિંહ, એવં વ્યાગ્ર આદિ ઇન્હેં માર્ગ મેં ચલતે હુએ સામ્હને મિલ જાય તો ભી યે ઉસીમાર્ગ સે ચલકર અપની ઈયાં સમિતિ કો લંઘિત નહોં કરતે હં ।

યે જિનકલ્પી સાધુ અપવાદ માર્ગ કા સેવન નહોં કરતે હં । ઇન્કા જંઘાવલ યદિ પરિક્ષીણ ભી હો જાવે ઔર ઉસકી વજહ સે યે વિહાર ન ભી કરે તૌ ભી આરાધક હી માને ગયે હં । યે કેશોં કા લોચ કરતે હં । દશ પ્રકાર કી સમાચારી મેં સે પાંચ પ્રકાર કી સમાચારી ઇન જિનકલ્પિયોં

તેને તેઓ સહન કરે છે. રોગમાં કોઈ પણ પ્રકારની ચિકિત્સા તેઓ કરાવતા નથી પણ જેમ અને તેમ તે રોગને સહન કરે છે. જ્યાં મનુષ્યોનું આવાગમન હોતુ નથી એવા ઉજ્જડ સ્થાનોમાં જ તેઓ શૌચાદિક કર્મ મટે નાથ છે. અવરજવરના સ્થાને નહીં. પરિકર્મ રહિત-ઘઠારી મઠારી વગરની-વસ્તીમાં રહે છે. જ્યારે એસે છે તો નિયમથી ઉત્કુડક (ઉલળક પગે બેસવું) આસનથી એસે છે, નિપઘાથી નહીં. કેમકે, ઔપગ્રાહિક ઉપકરણ આસન આદિને તેની પાસે અભાવ છે. મત્ત માતંગ, સિંહ, અને વાઘ આદિ તેને માર્ગમાં ચાલતાં સામા મળે તો પણ તે તે માર્ગથી ચલીને પોતાની ઈયાંસમિતિને અંકિત કરતા નથી.

એ જીનકલ્પી સાધુ અપવાદ માર્ગે જતા નથી, તેમનું જંઘાબળ જો ક્ષિણ પણ થઈ નાથ અને એ કારણે તે પોતાની જગ્યાએથી વિહાર ન પણ કરે તો પણ આરાધક જ માનવામાં આવે છે. તે કેશોને લોચ કરે છે દશ પ્રકારની સમાચારીમાંથી પાંચ પ્રકારની સમાચારી જીનકલ્પીયોની છે. તે આ પ્રકારે છે. ૧ આપ્ર-

મિથ્યાકાર, આવશ્યકી, નૈપેધિકી, ગૃહસ્થોપસંપદ, इति। આવશ્યકીપ્રમૃતયસ્તિસ્તો
વા સામાચાર્યસ્તેપામ્। તેણાં શ્રુતજ્ઞાનં જઘન્યતો નવમસ્ય પૂર્વસ્ય તૃતીયમાચારવસ્તુ,
ઉત્કર્ષતસ્તુ દશપૂર્વાણિ ભિન્નાનિ, ન તુ સમ્પૂર્ણાનિ। સંહનનં ચ શારીરં-વજ્રપ્રભના-
રાચાલ્યં, માનસં વજ્રકુલ્લસમાના ધૃતિઃ ચ।

સ્થિતિરપિ તેણાં ક્ષેત્રાદિકા અનેકવિધા। ક્ષેત્રતસ્તાવજ્જન્મના સદ્ભાવેન ચ
પશ્ચદશસ્યપિ કર્મભૂમિષુ, સંહરણતઃ કદાચિત્ કર્મભૂમૌ, અકર્મભૂમૌ વા સદ્ભાવાપે-
ક્ષી હૈ। વહ્ ઇસ પ્રકાર હૈ-૧ આપ્રચ્છના, ૨ મિથ્યાકાર, ૩ આવશ્યકી,
૪ નૈપેધિકી, ૫ ગૃહસ્થોપસંપદા ગૃહસ્થ કી આજ્ઞા લેકર ઉતરના, વૈઠના।
અથવા આવશ્યકી, નૈપેધિકી, ગૃહસ્થોપસંપત્, યહ ત્રીન પ્રકાર કી સામા-
ચારી ઇન જિનકલ્પિયોં કૈ હોતી હૈ। ઇનકા શ્રુતજ્ઞાન જઘન્ય કી અપેક્ષા
નવમપૂર્વ કી તૃતીય આચાર વસ્તુતક, ઉત્કૃષ્ટ કી અપેક્ષા ભિન્ન દશપૂર્વ-
તક હી સીમિત રહ્યા કરતા હૈં સંપૂર્ણ નહીં। ઇનકા શારીરિક સંહનન
વજ્ર ઋપભ નારાચ નામક હૈ ઓર માનસિક સંહનન વજ્રકુલ્લ-વજ્રકી
ભીત કૈ તુલ્ય ધૈર્ય હૈ અર્થાત્ ઇનકા ધૈર્ય વજ્રભિત્તિ કૈ સમાન અમેય
હોતા હૈ ઓર વહી ઇનકા માનસિક વલ્લ હૈ।

ક્ષેત્ર આદિ કી અપેક્ષા ઇનકી સ્થિતિ અનેક પ્રકાર કી હૈ। ઇનકા ૧૫
કર્મભૂમિયોં મૈં હી જન્મ હોતા હૈ ઇસ અપેક્ષા ૧૫ કર્મભૂમિયોં મૈં ઇનકી
સ્થિતિ જન્મ ઓર સદ્ભાવ કી અપેક્ષા માની જાતી હૈ। સંહરણ કી અપેક્ષા
કદાચિત્ કર્મભૂમિમૈં કદાચિત્ અકર્મભૂમિમૈં ભી ઇનકી સ્થિતિ હો સકતી હૈ।

અછના, ૨ મિથ્યાકાર, ૩ આવશ્યકી, ૪ નૈપેધિકી, ૫ ગૃહસ્થોપસંપદ ગૃહસ્થની
આજ્ઞા લઈને ઉતરવું, બેસવું અથવા આવશ્યકી, નૈપેધિકી, ગૃહસ્થોપસંપત્, આ
ત્રણ પ્રકારની સમાચારી તે જીનકલ્પિયોને હોય છે. તેમનું શ્રુતજ્ઞાન જઘન્યની
અપેક્ષા નવમા પૂર્વના ત્રીજા આચાર વસ્તુતક, ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષા ભિન્ન દશપૂર્વ
સુધી જ સીમિત રહ્યા કરે છે, સંપૂર્ણ નહીં. તેનું શારીરિક સંહનન વજ્ર ઋપભ
નારાચ નામનું છે. અને માનસિક સંહનન વજ્ર કુલ્લ-વજ્રની ભીંત બેવું ધૈર્ય
છે. અર્થાત્ તેનું ધૈર્ય વજ્રભીંત સમાન અલેખ હોય છે. તે તેનું માનસિક બળ છે.

ક્ષેત્ર આદિની અપેક્ષા એમની સ્થિતિ અનેક પ્રકારની છે, એમને ૧૫
કર્મભૂમિયોમાં જ જન્મ થાય છે. આ અપેક્ષા ૧૫ કર્મભૂમિયોમાં તેની સ્થિતિ
જન્મ અને સદ્ભાવની અપેક્ષા માનવામાં આવે છે. સંહરણની અપેક્ષા કદાચિત
કર્મ ભૂમિમાં, કદાચિત્ અકર્મભૂમિમાં પણ એની સ્થિતિ હોઈ શકે છે. આ

ક્ષયા સ્થિતિઃ। કાલતઃ ઉત્સર્પિણ્યાં, વ્રતાપેક્ષયા તૃતીયચતુર્થારકયોરેવ, જન્મમાત્રેણ તુ દ્વિતીયારકેડપિ । અવસર્પિણ્યાં તુ જન્મના તૃતીયચતુર્થારકયોરેવ । પૂર્વપ્રતિપન્નવ્રતાપેક્ષયા તુ પશ્ચમારકેડપિ । સંહરણતસ્તુ મહાવિદેહક્ષેત્રાપેક્ષયા સર્વસ્મિન્નપિ કાલે પ્રાપ્યતે । ચારિત્રતઃ—પ્રતિપદમાનાનાં સામાયિકે, છેદોપસ્થાપનોયે ચ ચારિત્રે સ્થિતિઃ । મધ્યમતીર્થકર-વિદેહતીર્થકરતીર્થવર્ત્યપેક્ષયાઽન્ન સામાયિકં, પ્રથમચરમતીર્થકરતીર્થવર્ત્યપેક્ષયા તુ છેદોપસ્થાપનીયચારિત્રમ્ । પ્રતિપદ્માનાં તુ મુક્તસંપ્રાયે,

યહ સદ્ભાવ કી અપેક્ષા કથન હૈ । કાલ કી અપેક્ષા-ઉત્સર્પિણી કાલ કે તૃતીય ઓર ચતુર્થ આરે મેં उनकी સ્થિતિ માની गई है । सो यह व्रत की अपेक्षा जानना चाहिये । जैसे तो जन्ममात्र की अपेक्षा से द्वितीय आरे में भी इनकी स्थिति हैं । अवसर्पिणीकाल में जन्म की अपेक्षा तृतीय और चौथे आरे में ही, तथा पूर्वप्रतिपन्न व्रत की अपेक्षा अर्थात् -चौथे आरे के व्रत को लेकर पंचम आरे में भी इनकी स्थिति जानना चाहिये । यदि कोई देव इन्हें हरण कर महाविदेह क्षेत्र से अन्यत्र पहुँचा देवे तो उस अपेक्षा इनकी स्थिति सब काल जाननी चाहिये । चारित्र की अपेक्षा जो प्रतिपद्यमानचारित्रી हैं उनको सामायिक एवं છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર મેં સ્થિત માનના चाहिये, क्योंकि जो मध्यमतीर्थकर एवं विदेह क्षेत्र में रहे हुए तीर्थकर के तीर्थ में रहने वाले हैं वे सामायिकचारित्र में, एवं जो प्रथम एवं चरमतीर्थकर के तीर्थवर्ती हैं वे છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર મેં સ્થિત રહતે હૈ । जो

સદ્ભાવથી અપેક્ષા કથન છે. કાળની અપેક્ષા-ઉત્સર્પિણી કાળના ત્રીજા ચોથા આરામાં સ્થિતિ માનવામાં આવેલ છે. આને વ્રતની અપેક્ષાથી બાબુ બેઠાએ. એમ તો જન્મ માત્રની અપેક્ષાથી બીજા આરામાં પણ તેની સ્થિતિ છે. અવસર્પિણી કાળમાં જન્મની અપેક્ષા ત્રીજા અને ચોથા આરામાં, તથા પૂર્વપ્રતિપન્ન વ્રતની અપેક્ષા અર્થાત્ ચોથા આરાના વ્રતને લઈ પાંચમા આરામાં પણ એની સ્થિતિ બાબુવી બેઠાએ. કહાય કેઈ દેવ આદિ એનું હરણ કરી મહાવિદેહ ક્ષેત્રથી બીજે પહોંચાડી દે તો એ અપેક્ષા એની સ્થિતિ બધા કાળમાં બાબુવી બેઠાએ. ચારિત્રની અપેક્ષા જે પ્રતિપદમાન ચારિત્રી છે તે સામાયિક અને છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્રમાં સ્થિત માનવા બેઠાએ કેમકે, જે મધ્યમ તીર્થકર અને વિદેહ ક્ષેત્રમાં રહેતા તીર્થકરના તીર્થમાં રહેવાવાળા છે તે સામાયિક ચારિત્રમાં, અને જે પ્રથમ અને ચરમતીર્થકરના તીર્થવર્તી છે તે છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્રમાં સ્થિત રહે છે. જે પ્રતિપદ્માન ચારિત્રી છે તેની

યથાહ્યાતે ચ ચારિત્રે ઉપશમશ્રેણ્યામ્ । તીર્થતસ્તુ જિનકલ્પકાનાં સ્થિતિનિયમત-
સ્તીર્થ એવ ભવતિ ન તુ તીર્થે વ્યવચ્છિન્ને । પર્યાયાગમવેદાહ્યાઃ સ્થિતિભેદા
અપ્યવગન્તવ્યાઃ ।

સ્થવિરકલ્પકાનાં જિનકલ્પકાનાં ચ કલ્પો દશવિધઃ—આચૈલક્યમ્ ૧, ઔદે-
શિકં ૨, શય્યાતરપિન્ડત્યાગઃ ૩, રાજપિન્ડત્યાગઃ ૪, કૃતિકર્મ ૫, મહાવ્રતમ્ ૬,
પુરુષજ્યેષ્ઠત્વમ્ ૭, પ્રતિક્રમણમ્ ૮, માસકલ્પઃ ૯, પર્યુપણકલ્પ ૧૦ (વર્ષાકલ્પ)
થેતિ । તેષુ મધ્યમતીર્થકરતીર્થવર્તિનાં સાધુનાં ચત્વારઃ કલ્પાઃ અવસ્થિતાઃ નિયમેન
પાલનીયાઃ—શય્યાતરપિન્ડત્યાગઃ ૧, કૃતિકર્મ ૨, મહાવ્રતમ્ ૩, પુરુષજ્યેષ્ઠત્વં ૪ ચેતિ ।
ઇતરે પદ્ કલ્પાસ્તુ તેષામનવસ્થિતાઃ ।

પ્રતિપદ્મચારિત્રી હૈં ડનકી સ્થિતિ ઉપશમશ્રેણી મેં સૂક્ષ્મસાંપરાય, એવં
યથાહ્યાતચારિત્ર મેં હોતી હૈ । તીર્થ કી અપેક્ષા જિનકલ્પયોં કી સ્થિતિ
નિયમ સે તીર્થ મેં હી હોતી હૈ, તીર્થ કે વ્યવચ્છિન્ન હોને પર નહીં । પર્યાય
આગમ એવં વેદ, યે ભી સ્થિતિ કે ભેદ હૈ ।

સ્થવિરકલ્પયોં કા એવં જિન કલ્પયોં કા કલ્પ દશ પ્રકાર કા હૈ—

૧ આચૈલક્ય, ૨ ઔદેશિક, ૩ શય્યાતરપિન્ડત્યાગ ૪ રાજપિન્ડ-
ત્યાગ, ૫ કૃતિકર્મ, ૬ મહાવ્રત, ૭ પુરુષજ્યેષ્ઠતા ૮ પ્રતિક્રમણ ૯ માસ-
કલ્પ ૧૦ પર્યુપણકલ્પ (વર્ષાકલ્પ) ઇન કલ્પો મેં મધ્યમતીર્થકર કે
તીર્થવર્તી સાધુઓ કે ચાર કલ્પ અવસ્થિત હોતે હૈ—નિયમ સે પાલનીય
હોતે હૈ । વે ચાર યે હૈ—શય્યાતરપિન્ડત્યાગ, કૃતિકર્મ, મહાવ્રત, પુરુષ-
જ્યેષ્ઠતા । બાકી કે ૬ કલ્પ ડનકે લિયે અનવસ્થિત હૈ ।

સ્થિતિ ઉપશમ શ્રેણીમાં સૂક્ષ્મસાંપરાય, એવા યથાહ્યાત ચારિત્રમાં થાય છે.
તીર્થની અપેક્ષા જીનકલ્પયોની સ્થિતિ નિયમથી તીર્થમાં જ થાય છે, તીર્થના
વ્યવચ્છિન્ન થવાથી નહીં. પર્યાય, આગમ અને વેદ આ પણ સ્થિતિના લેહ છે.

સ્થવિરકલ્પયોના અને જીનકલ્પયોના કલ્પ દશ પ્રકારના છે.—

૧ આચૈલક્ય, ૨ ઔદેશિક, ૩ શય્યાતરપિન્ડત્યાગ, ૪ રાજપિન્ડત્યાગ,
૫ કૃતિકર્મ, ૬ મહાવ્રત, ૭ પુરુષજ્યેષ્ઠતા, ૮ પ્રતિક્રમણ ૯ માસકલ્પ, ૧૦
પર્યુપણકલ્પ (વર્ષાકલ્પ) આ કલ્પોમાં મધ્યમતીર્થકરના તીર્થવર્તી સાધુઓના
ચાર કલ્પ અવસ્થિત હોય છે—નિયમથી પાળવાના હોય છે. તે ચાર આ છે—
શય્યાતરપિન્ડત્યાગ, કૃતિકર્મ, મહાવ્રત, પુરુષ જ્યેષ્ઠતા. બાકીના છ કલ્પ એમને
ભાટે અનવસ્થિત છે.

આદ્યચરમતીર્થકરતીર્થવર્તિનાં સાધુનામેષ દશવિધઃ કલ્પોઽવસ્થિત એવ । તન્ના-
ચૈલક્યં દ્વિવિધમ્-મુખ્યમ્, ઔપચારિકં ચ । અવિગમાનચૈલકત્વરૂપં મુખ્યમાચૈ-
લક્યં પ્રાયશો જિનકલ્પિકવિશેષાણામ્ । ઔપચારિકમાચૈલક્યં સ્થવિરકલ્પિકા-
નામ્, સ્થવિરકલ્પિકા દ્વિ-કલ્પનીયમેષણીયં જીર્ણં સ્ખંડિતં મલિનં તથૈવ નૂતન-
મપિ સ્વલ્પમૂલ્યકં વદ્ધં ગૃહ્ણન્તિ, લોકસ્તુત્ત્વપ્રકારાદન્યપ્રકારેણ ચ તદાસેવન્તે ।
અતરતે ચેલસદ્ભાવેઽપ્યુપચારતોઽચેલકા વ્યપદિશ્યન્તે ।

પ્રથમતીર્થકર એવં અન્તિમતીર્થકર કે તીર્થ મેં રહનેવાલે જો સાધુ
હેં ઉનકે લિયે તો યહ ૧૦ પ્રકાર કા કલ્પ અવસ્થિત હી હેં-અવશ્ય
પાલને યોગ્ય હી હેં । આચૈલક્ય જો પ્રથમ કલ્પ હેં વહ દો પ્રકાર કા હેં ।

૧ મુખ્ય ૨ ઔપચારિક, કટિબન્ધન-રજોહરણ-ઔર સદોરકમુખવ-
સ્ત્રિકા કે સિવાય અન્ય વસ્ત્ર કા પરિત્યાગ કરના યહ મુખ્ય આચૈલક્ય
હેં । યહ જિનકલ્પિક વિશેષોં કે હોતા હેં । ઔપચારિક જો આચૈલક્ય
હેં વહ સ્થવિરકલ્પિકોં કે હોતા હેં । ક્યોં કિ જો સ્થવિરકલ્પી સાધુ
હોતે હેં વે કલ્પનીય, એષણીય, જીર્ણ સ્ખંડિત એવં મલિન વસ્ત્ર રાખતે
હેં । જો નવીન વસ્ત્ર મી હેં તો વહ મી અલ્પમૂલ્ય વાલા હી લેતે હેં ।
લૌકિકજન જિસ પદ્ધતિ સે વસ્ત્રોં કા પરિધાન કરતે હેં વે ઉસ પદ્ધતિ
સે વસ્ત્રોં કા પરિધાન નહોં કરતે હેં, કિન્તુ અન્ય પ્રકાર સે હી ઉન્હેં
પહિનતે હેં । ઇસ લિયે ચેલ કે સદ્ભાવ મેં મી વે અચેલક હી કહે જાતે હેં ।

પ્રથમ તીર્થકર અને અંતિમ તીર્થકરના તીર્થમાં રહેવાવાળા જે સાધુ છે,
તેમને માટે તો આ દશ પ્રકારના કલ્પ અવસ્થિત જ છે.—અવશ્ય પાળવા
યોગ્ય જ છે. આચૈલક્ય જે પ્રથમ કલ્પ છે તે બે પ્રકારના છે.

૧ મુખ્ય, ૨ ઔપચારિક, કટિબન્ધન રજોહરણ અને સદોરકમુખવસ્ત્રિકાના સિવાય અન્ય વસ્ત્રનો પરિત્યાગ કરવો આ મુખ્ય આચૈલક્ય છે, આ જિનકલ્પિક વિશેષોમાં હોય છે. ઔપચારિક જે આચૈલક્ય છે તે સ્થવિરકલ્પિકા-
ઓને હોય છે. કેમકે, સ્થવિરકલ્પી સાધુ હોય છે તે કલ્પનીય, એષણીય,
સ્ખંડિત અને મલિન, વસ્ત્ર રાખે છે. જે નવીન વસ્ત્ર મળે તે પણ
ઓછા મૂલ્યનું હોય તે જ લે છે. લૌકિકજન જે પદ્ધતિથી વસ્ત્રોનું પરિધાન કરે
છે એ પદ્ધતિથી તેઓ વસ્ત્ર પરિધાન કરતા નથી. પરંતુ અન્ય પ્રકારથી જ અને
પહેરે છે આ માટે ચેલના સદ્ભાવમાં પણ તે આચૈલક જ કહેવાય છે.

નનુ—જીર્ણખણ્ડિતાદિવસ્ત્રસદ્ભાવે મુનીનામચેલકત્વે દરિદ્રા અપિ—અચેલકાઃ કથં ન કથ્યન્તે ? ઉચ્યતે—નવવ્યૂતસદશકમહામૂલ્યકાદીનાં વસ્ત્રાણામઘ્નામે દરિદ્રાઃ પરિજીર્ણાદીનિ વાસાંસિ ધારયન્તિ ન તુ ધર્મચુદ્વચ્ચા । અતો ભાવતસ્તદ્વિપયકમૂર્છા-પરિણામસ્યાનિવૃત્તત્વાત્ પરિજીર્ણવસ્ત્રસદ્ભાવે દરિદ્રાણામચેલકત્વવ્યપદેશો ન ભવતિ । મુનયસ્તુ—કેનચિદીયમાનાન્યપિમહામૂલ્યકાનિ પ્રમાણવહિર્ભૂતાનિ વસ્ત્રાણિ

શંકા—જીર્ણ, ખણ્ડિત આદિ વસ્ત્રોં કે સદ્ભાવ મેં યદિ મુનિયોંકો અચેલક માના જાય તો જો દરિદ્રી જન હેં, જિનકે પાસ જીર્ણ ખણ્ડિત આદિ વસ્ત્ર હેં વે ધી અચેલક કહે જાને ચાહિય ? પરંતુ વે તોં અચેલક નહીં કહે જાતે હેં ?

ઉત્તર—દરિદ્રી જો જીર્ણ શીર્ણ આદિ વસ્ત્ર ધારણ કરતે હેં વે ધર્મ-ચુદ્ધિ સે નહીં કરતે હેં કિન્તુ ઉન્હેં નવીન મહામૂલ્યવાલે વસ્ત્ર મિલતે નહીં હેં—उनका उनके पास अभाव है—अतः उनके अभाव में उन्हें वे पहिनने पड़ते हैं परन्तु पहिनना नहीं चाहते, इसलिये वे अचेलक नहीं कहे जाते हैं। क्योंकि उनके भाव से तद्विषयक मूर्च्छापरिणाम की अनिवृत्ति है, इसलिये परिजिर्ण वस्त्र के सद्भाव में दरिद्रियों में अचेलकत्व का व्यवहार नहीं होता है। मुनियो को तद्विषयक मूर्च्छा नहीं है, क्योंकि यदि कोई दाता उन्हें बहुमूल्यवस्त्र प्रदान करता है और वस्त्र यदि प्रमाणोपेत नहीं है—प्रमाण से वहिर्भूत है तो वे उस को ग्रहण नहीं करते हैं, किन्तु जीर्ण खंडित ही वस्त्र ग्रहण करते हैं। यदि कोई नवीन

શંકા છુટ્ટું ખાંડિત, આદિ વસ્ત્રોના સદ્ભાવમાં જો મુનિયોને અચેલક માનવામાં આવે તો જો દરિદ્રી જન છે, જેની પાસે છુટ્ટું ખાંડિત આદિ વસ્ત્ર છે. તેને પણ અચેલક કહેવા જોઈએ ? પરંતુ તેને તો અચેલક નથી કહેવામાં આવતા ?

ઉત્તર—દરિદ્રી જો છુટ્ટું શીર્ણ વસ્ત્ર ધારણ કરે છે, તે ધર્મ ચુદ્ધિથી નહીં, પરંતુ તેને નવીન સારા મૂલ્યવાળા વસ્ત્રો મળતાં નથી,—એનો એની પાસે અભાવ છે તેથી એના અભાવમાં તેણે તે પહેરવાં પડે છે, પરંતુ પહેરવાં આહતા નથી. આ માટે તે અચેલક કહેવાતાં નથી. કેમ કે તેને ભાવથી તદ્વિષયક મૂર્છા પરિણામની અનિવૃત્તિ છે. માટે પરિછુટ્ટું વસ્ત્રોના સદ્ભાવથી દરિદ્રીયોમાં અચેલકત્વનો વ્યવહાર થતો નથી. મુનિયોને તદ્વિષયક મમતા—મૂર્છા નથી. કેમ કે, કોઈ દાતા તેમને બહુમૂલ્ય વસ્ત્રપ્રદાન કરે છે. અને તે વસ્ત્ર જો પ્રમાણોપેત નથી હોતું—પ્રમાણથી બહિર્ભૂત હોય છે તો તે તેને ગ્રહણ કરતા નથી. પરંતુ છુટ્ટું ખાંડિત વસ્ત્ર જ ગ્રહણ કરે છે. જો કોઈ

પરિવર્જયન્તિ, જીર્ણસ્વણિડતાનિ નૂતનાન્યપ્યમહામૂલ્યકાનિ વસનાનિ પ્રમાણોપે-
તાન્યેવ ધારયન્તિ । તાન્યપિ શ્રુતચારિત્રધર્મોપકરણબુદ્ધય, ન તુ તત્ર મુનીનાં
મૂર્છાપરિણામો ભવતિ । અતસ્તેષામચેલકત્વેન વ્યવદેશઃ સમ્યગેવ ।

મધ્યમતીર્થકરતીર્થવર્તિનાં મુનીનામાચેલક્યમનવસ્થિતમ્ અતસ્તેષાં રક્તપીતાદિ
રાગરજિતમહામૂલ્યકાદિવસ્ત્રવર્જનનિયમો નાસ્તિ, મમત્વરહિતતત્વાત્ તેષામ્ ।
પ્રથમચરમતીર્થકરતીર્થવર્તિનાં મુનીનાં તુ ધર્મબુદ્ધયા સ્વલ્પમૂલ્યકપ્રમાણોપેત-
શ્વેતવસ્ત્રાણામેવ ધારકત્વાદાચેલક્યં ભવતિ ।

વસ્ત્ર દેતા भी हो तो वह यदि अल्पमूल्य वाला एवं प्रमाणोपेत है तो ही
लेते हैं । उसका लेना भी वे इसीलिये आवश्यक समझते हैं कि वह
उनके श्रुतचारित्ररूप धर्म का उपकरण है । मूर्च्छापरिणाम से उसका वे
ग्रहण नहीं करते हैं, क्योंकि उनके तद्विषयक मूर्च्छा का अभाव है ।
इसलिये मुनियों में अचेलकत्व का व्यवहार वास्तविक ही है ।

જો મધ્યમ તીર્થકરોં કે તીર્થવર્તી સાધુ હૈં उनमें अचेलकत्व अनव-
स्थित है । इसलिये उन्हें लालपीले आदि रंग से रंगे हुए, तथा महामू-
ल्यवाले वस्त्रों के परिवर्जन का कोई नियम नहीं है, क्योंकि ये ममता
से रहित होते हैं । प्रथम चरम तीर्थकर के तीर्थवर्ती मुनियों के तो प्रमा-
णोपेत तथा स्वल्पमूल्यवाले श्वेतवस्त्रों के परिधान करने का ही नियम
है, सो भी उन का ग्रहण केवल धर्मबुद्धि से हो है । मूर्च्छापरिणाम से
नहीं, अतः वस्त्रों के सद्भाव में भी इनमें अचेलकता ही है ।

નવીન વસ્ત્ર આપે છે તો તે અદ્યમૂલ્યવાળું અને પ્રમાણોપેત હોય તો જ લે
છે. એ લેવાનું પણ તેઓ એ ખાતર આવશ્યક માને છે કે, એના શ્રુત
ચરિત્ર રૂપ ધર્મનું ઉપકરણ છે. મૂર્છા પરિણામથી તેને એ ગ્રહણ કરતા નથી.
કેમ કે એનામાં એના માટેની લાવનાનો અભાવ છે આ માટે મુનિઓમાં
અચેલકત્વનો વ્યવહાર વાસ્તવિક જ છે.

જે મધ્યમ તીર્થકરના તીર્થવર્તી સાધુ છે. એમનામાં અચેલકત્વ અન-
વસ્થિત છે. આ માટે તેને લાલ, પીળા આદિ રંગથી રંગેલાં તથા અહુમૂલ્ય
વસ્ત્રોના પરિવર્જનનો કોઈ નિયમ નથી. કેમ કે એ મમતાથી રહિત હોય છે.
પ્રથમ ચરમ તીર્થકરના તીર્થવર્તી મુનિ છે. એને તો પ્રણોપેત તથા સ્વલ્પ
મૂલ્યવાળાં શ્વેત વસ્ત્રો પરિધાન કરવાનો જ નિયમ છે અને તે ગ્રહણ કરવાનો
નિયમ કેવળ ધર્મ બુદ્ધિથી જ છે. મૂર્છા પરિણામથી નહીં. આથી વસ્ત્રોના
સદ્ભાવમાં પણ એમનામાં અચેલકતા છે જ.

સ્થવિરકલ્પિકાનાં વસ્ત્રધારણમાચારાઙ્ગવૃહત્કલ્પાદ્યાગમેષુ વ્યવસ્થિતમ્ (આચારાઙ્ગસૂત્રે દ્વિતીયશ્રુતસ્કન્ધે ચતુર્દશાધ્યયને) (વૃહત્કલ્પસૂત્રે તૃતીયોદેશકે)।

સ્થાનાઙ્ગસૂત્રે ભગવતાઽચેલકસ્ય પશ્ચમિઃ સ્થાનૈઃ પ્રશસ્તત્વં પ્રતિવોધિતમ્, તથાહિ—

પંચર્હિ ઠાળેર્હિ અચેલૅ પસત્યે ભવઈ । તં જહા—“અપ્પા પહિછેહા, લાઘવિૅ પસત્યે, રૂવે વેસાસિૅ, તવે અણુણ્ણાૅ, વિઝલે ઈંદિયનિગ્ગહે ।”

પશ્ચમિઃ સ્થાનૈઃ=કારણૈઃ, અચેલકઃ પ્રશસ્તઃ—તીર્થંકરાદિમિઃ પ્રશંસિત ઇત્યર્થઃ । સ ચ જિનકલ્પિકવિશેષઃ, સ્થવિરકલ્પિકચ્ચ । તત્ર વસ્ત્રાભાવાદેવ જિનકલ્પિકવિ-

સ્થવિરકલ્પિકોં કે લિયે વસ્ત્રોં કો ધારણ કરને કી વ્યવસ્થા કા ઉલ્લેખ આચારાંગસૂત્ર ંવં વૃહત્કલ્પસૂત્ર આદિ આગમોં મેં પાયા જાતા હૈ । ઇસકે લિયે આચારાંગસૂત્ર દ્વિતીય શ્રુતસ્કન્ધ કા ૧૪ વાં અધ્યયન દેખના ચાહિયે । તથા વૃહત્કલ્પસૂત્ર કા તૃતીય ઉદ્દેશ દેખના ચાહિયે ।

સ્થાનાઙ્ગસૂત્રમેં ભગવાન્ ને પાંચ કારણોં કો લેકર અચેલકતા કો પ્રશસ્ત પ્રતિવોધિત કી હૈ, જૈસે—

“પંચર્હિ ઠાળેર્હિ અચેલૅ પસત્યે ભવઈ । તં જહા—અપ્પા પહિ-
છેહા ૧, લાઘવિૅ પસત્યે ૨, રૂવે વેસાસિૅ ૩, તવે અણુણ્ણાૅ ૪, વિઝલે
ઈંદિયનિગ્ગહે ૫ ॥”

પાંચ કારણોં સે ભગવાન્ ને અચેલકતા કી પ્રશંસા કી હૈ । જિન-
કલ્પિકવિશેષોં મેં જો અચેલકતા કહી ગઈ હૈ વહ વસ્ત્ર કે અભાવ સે

સ્થવિરકલ્પિકોંને માટે વસ્ત્રોંને ધારણ કરવાની વ્યવસ્થાનો ઉલ્લેખ આચારાંગસૂત્ર એને વૃહત્કલ્પસૂત્ર આદિ આગમોંમાં બાણી શકાય છે. આને માટે આચારાંગસૂત્ર બીજા શ્રુતસ્કન્ધના ૧૪ મા અધ્યયનને નોંધ લેવું નોંધએ, તથા વૃહત્કલ્પસૂત્રના ત્રીજા ઉદ્દેશને નોંધ લેવો નોંધએ.

સ્થાનાંગસૂત્રમાં ભગવાને પાંચ કારણોંને લઈ અચેલકતાને પ્રશસ્ત પ્રતિવોધિત કરેલ છે.

પંચર્હિ ઠાળેર્હિ અચેલૅ પસત્યે ભવઈ । તં જહા અપ્પા પહિછેહા, ૧ લાઘવિૅ પસત્યે ૨ રૂવે વેસાસિૅ ૩ તવે અણુણ્ણાૅ ૪ વિઝલે ઈંદિયનિગ્ગહે ૫ ॥

પાંચ કારણોંથી ભગવાને અચેલકતાની પ્રશંસા કરેલ છે. જનકલ્પિક વિશેષોંમાં જે અચેલકતા કહેવામાં આવી છે. તે વસ્ત્રના અભાવથી જ

શેષોઽચેલકઃ, સ્થવિરકલ્પિકસ્તુ અલ્પમૂલ્યસપ્રમાણઝીર્ણમલિનવસનત્વાદિતિ વિશેષઃ।
તાનિ સ્થાનાનિ પ્રદર્શયતિ—

‘તં જહા’ ઇત્યાદિ। ‘અપ્પા પડિલેહા’ અલ્પા પ્રત્યુપેક્ષા પ્રતિલેખનીયસ્ય
વસ્ત્રસ્યાલ્પત્વાત, અલ્પપ્રતિલેખનયા સ્વાધ્યાયાદેરન્તરાયો ન ભવતીતિ ભાવઃ।
તથા ‘લાઘવિણ્ પસત્યે’ લાઘવિકં પ્રશસ્તમ્—લઘોર્ભાવો લાઘવં તદેવ લાઘવિકમ્,
યદ્ વસ્ત્રસ્ય પરિમાણતો મૂલ્યતઃ સંખ્યયા ચાલ્પતરત્વાલ્લઘુત્વં, તદેવ દ્રવ્યતો
લાઘવમ્, ભવતોઽપિ તત્ર રાગાદિભાવાદિત્યચેલકસ્ય લાઘવિકં પ્રશસ્તમ્—અનવ-
ધમ્। ‘રૂપે વેસાસિણ્’ રૂપં વૈશ્વાસિકમ્—તત્ર રૂપં—વેષઃ, તત્ત્વ સાધૂનાં મુલ્કવદ્ધૃત્વેત
હી કહી ગઈ છે। તથા સ્થવિરકલ્પિયોં મેં જો અચેલકતા કહી ગઈ છે
વહ કેવલ અલ્પમૂલ્યવાલે પ્રમાણોપેત ઝીર્ણ, મલિન વસ્ત્રોં કે ગ્રહણ
કરને કી અપેક્ષા સે કહી ગઈ છે। યહ વાત તીર્થકરોં કી પરમ્પરા સે
પ્રદર્શિત હોતી હુઈ ચલી આ રહી છે। કલ્પિત નહોં છે। વે પાંચ સ્થાન-
કારણ યે હેં—અલ્પપ્રતિલેખના—પ્રતિલેખનીય વસ્ત્રોં કી અલ્પતા સે પ્રતિ-
લેખના મી અલ્પ હી હોગી—અલ્પસમયસાધ્ય હોગી, ઇસ સે સ્વાધ્યાય
આદિ મેં અન્તરાય નહોં આ સકતી છે। ઇસ અપેક્ષાં અચેલકતા પ્રશસ્ત
કહી ગઈ છે। ૧। ઇસી તરહ લાઘવ કી અપેક્ષા મી અચેલકતા પ્રશસ્ત
કહી ગઈ છે, ક્યોં કિ વસ્ત્રોં મેં જો લઘુતા છે વહ પરિમાણ, મૂલ્ય એં
સંખ્યા કી અપેક્ષા સે છે। યહ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા લઘુતા છે। ભાવ કી
અપેક્ષા લઘુતા ઉનમેં સાધુ કે રાગાદિક કા અભાવ છે। ૨। વૈશ્વાસિક
રૂપકી અપેક્ષા અચેલકતા ઇસલિયે પ્રદર્શિત હુઈ છે કિ જય કોઈ એસા

કહેવામાં આવી છે. તથા સ્થવિરકલ્પિયોમાં જે અચેલકતા કહેવામાં આવી
છે તે કેવળ અલ્પમુલ્યવાળા પ્રમાણોપેત જીર્ણ, મલિન વસ્ત્રોને ગ્રહણ
કરવાની અપેક્ષાથી કહેવામાં આવેલ છે. આ વાત તીર્થકરોની પરંપરાથી
પ્રદર્શિત થતી આવી આવેલ છે કલ્પિત નથી. આ પાંચ સ્થાન—કારણ આ
છે. અલ્પપ્રતિલેખના પ્રતિલેખનીય વસ્ત્રોની અલ્પતાથી પ્રતિલેખના પણ અલ્પ
જ થશે. અલ્પ સમય સાધ્ય થશે. આથી સ્વાધ્યાય આદિમાં અંતરાય
આવી શકતો નથી. આ અપેક્ષાથી અચેલકતા પ્રશસ્ત કહેવામાં આવેલ છે.
(૧) આ રીતે લાઘવની અપેક્ષા પણ અચેલકતા પ્રશસ્ત રહી છે. કેમ કે,
વસ્ત્રોમાં જે લઘુતા છે તે પરિણામ મૂલ્ય અને સંખ્યાની અપેક્ષાથી છે. આ
દ્રવ્યની અપેક્ષા લઘુતા છે. લાવની અપેક્ષા આ લઘુતામાં સાધુના રાગાદિકને
અભાવ છે. (૨) વૈશ્વાસિક રૂપની અપેક્ષા આ અચેલકતા એ માટે પ્રદર્શનીય થઈ

સદોરકમુખવસ્ત્રિકં પરિહિતશ્વેતચોલપટ્ટકં પરિધૃતશ્વેતવસ્ત્રપાવરણં પરિગૃહીતપ્ર-
માર્જિકારજોહરણં, મિશ્તાધાનીસમાવૃતપાત્રહસ્તમ્, અનાવૃતમસ્તકમ્, પાદત્રાણ-
રહિતચરણમ્, ઈર્યાદિપશ્ચસમિતિસમિતં ગુપ્તિત્રયગુપ્તમ્, જિનકલ્પિકાનાં તુ-મુખ-
વદ્શ્વેતસદોરકમુખવસ્ત્રિકં પરિગૃહીતરજોહરણં, વદ્કટિવન્ધનવસ્ત્રં ચ । एतादृशं
સાધુનાં રૂપં વૈશ્વાસિકં=જનાનાં વિશ્વાસજનકં ભવતિ નિઃસ્પૃહતાસૂચકત્વાત્ । તથા
'તવે અણુણાણ' તપઃ અનુજ્ઞાતં=તપઃ સકલેન્દ્રિયસંગોપનરૂપમ્ અનુજ્ઞાતં=જિના-

વેપ દેખતા હૈ કિ “મુખ પર સફેદદોરાસહિત મુખવસ્ત્રિકા બંધી હુઈ હૈ,
સફેદ ચોલપટ્ટા પહિરા હુઆ હૈ, સફેદ ચાદર ઓઢી હુઈ હૈ, રજોહ-
રણ ધારણ કિયા હુઆ હૈ, મિશ્તાધાની-ઝોલી-સે ઢંકે હુણ પાત્ર હાથ મેં
હૈ, મસ્તક ખુલા હુઆ હૈ, પેરોં મેં પગરખી મોજા આદિ નહીં હૈ, ઈર્યા-
સમિતિ આદિ પાંચ સમિતિયોં સે યુક્ત હૈં, ત્રીન ગુપ્તિયોં સે ગુપ્ત હૈં ”
યહી સાધુ કા વેપ હૈ ઓર ઇસ વેપ ચાલા “યહ સાધુ હૈ ” એસા શીઘ્ર હી
સમજાજાતા હૈ, તથા જિનકલ્પિયોં કા યહ વેપ હૈ કિ વે અપને મુખ પર
દોરે સે સફેદ મુખવસ્ત્રિકા વાંધે રહતે હૈં, રજોહરણ લિયે રહતે હૈં ઓર
કટિવન્ધન વસ્ત્ર રખતે હૈં । જય કોઈ ઇસ વેપ કો દેખતા હૈ દેખ-
કર વહ યહ સમજા જાતા હૈ કિ યહ જિનકલ્પિ સાધુ હૈ । ઇસ પ્રકાર કા
યહ સાધુ કા વેપ લોગોં મેં વિશ્વાસજનક હોતા હૈ ઓર વહ ઇસલિયે
હોતા હૈ કિ યહ વેપ નિઃસ્પૃહતા કા સૂચક હોતા હૈ । ૩। તપ કી અપેક્ષા
યહ અચેલકતા ઇસલિયે પ્રશંસિત હુઈ હૈ કિ ઇસમેં સકલ ઇન્દ્રિયોં કા

છે કે, જ્યારે કોઈ એવો વેશ બુઝે છે “મુખ ઉપર દોરા સાથેની મુખ-
વસ્ત્રિકા બાંધેલ છે. સફેદ ચોલપટ્ટો પહેરેલ છે. સફેદ ચાદર ઓઢેલ છે, રજો
હરણ ધારણ કરેલ છે. મિશ્તા માટેના પાત્ર ઝોળીમાં ઢંકાયેલ હાથમાં છે.
મસ્તક ખુલ્લું છે. પગમાં પગરખાં, મોજા આદિ નથી, ઈર્યા સમિતિ આદિ
પાંચ સમિતિઓથી યુક્ત છે. ત્રણ ગુપ્તિઓથી ગુપ્ત છે.” સાધુનો આજ વેશ
છે. અને આવા વેશવાળા આ સાધુ છે, એવું તુરત જ સમજાઈ જાય છે.
તથા જનકલ્પિઓનો એ વેપ છે કે તે પોતાના મોઢા ઉપર દોરાથી સફેદ
મુખવસ્ત્રિકા બાંધે છે. રજોહરણ રાખે છે, અને કટિબંધન વસ્ત્ર રાખે છે.
એને જોતાંની સાથે જ જોનાર સમજી જાય છે કે એ જનકલ્પિ સાધુ છે, આ
પ્રકારનો સાધુનો વેપ લોકોમાં વિશ્વાસ જનક હોય છે. અને તે એ માટે
કે, આ વેપ નિઃસ્પૃહતાનો સૂચક હોય છે. (૩) તપની અપેક્ષા આ આચે-
લકતા એ માટે પ્રશંસનીય બની છે કે જેમાં સકલ ઇન્દ્રિયોના સંગોપન

નુમતં ભવતિ । તથા-‘ચિત્તે ઇન્દ્રિયનિગ્રહે’ વિપુલઃ=મહાન, ઇન્દ્રિયનિગ્રહો ભવતિ, ઉપકરણં વિના સ્પર્શનમતિકૂલશીતવાતાતપાદિસહનાત્ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

આસીદશપુરનામ્નિનગરે સોમદેવનામા વ્રાહ્મણઃ । તસ્ય જિનાશ્ચારાધિકા રુદ્ર-સોમાનામ્ની માર્યાઽભવત્ । તસ્યાં માર્યાંયાં સોમદેવસ્ય દ્વૌ પુત્રૌ જાતૌ । તત્ર જ્યેષ્ઠ આર્યરક્ષિતનામકઃ, દ્વિતીયઃ ફલ્ગુરક્ષિતનામકઃ । આર્યરક્ષિતઃ પિતુઃ સંનિષ્ઠૌ શાસ્ત્ર-મધીત્યાધિકવિદ્યાભાર્ય પાટલિપુત્રનગરં ગતઃ । તત્ર તેન સાક્ષોપાક્ષાશ્ચત્વરો વેદા અધીતાઃ, ચતુર્દશવિદ્યાસ્થાનાનિ ગૃહીતાનિ । તતોઽસૌ દશપુરં નગરં સમાયાતઃ॥

સંગોપનરૂપ તપ જિનેન્દ્ર ભગવાન્ કા અનુજ્ઞાત હૈ।૪। તથા હસમેં મહાન્ ઇન્દ્રિય નિગ્રહ હોતા હૈ, ક્યોં કિ ઉપકરણ કે વિના સ્પર્શન ઇન્દ્રિય કે પ્રતિકૂલ શીત વાત આતપ આદિ કા સહન હોતા હૈ । હસસે ઇન્દ્રિયાં કાઠૂ મેં રહતી હેં ।

દૃષ્ટાન્ત—દશપુર નામકે નગર મેં એક સોમદેવ નામ કા વ્રાહ્મણ થા । ઉસકી પત્ની કા નામ રુદ્રસોમા થા । યહ જિનેન્દ્ર ભગવાન્ કી આજ્ઞા કી આરાધિકા થી । સોમદેવ કે દો પુત્ર થે । જેઠે પુત્ર કા નામ આર્યરક્ષિત થા ઓર છોટે પુત્ર કા નામ ફલ્ગુરક્ષિત । આર્યરક્ષિત પિતા કે પાસ શાસ્ત્રોં કા અધ્યયન કરકે અધિક વિદ્યા કી પ્રાપ્તિ કી અભિલાષા સે દશપુર સે પાટલિપુત્ર નગર કો રવાના હુઆ । વહાં પહુંચકર હસ ને સાંગોપાંગ ચારોં વેદોં કા એવં ૧૪ ચૌદહ વિદ્યાઓં કા સૂચ અધ્યયન કિયા । જબ યહ પટ્ટ વન ચુકા તબ વહાં સે વાપિસ દશપુર નગર કી

૩૫ તપ જિનેન્દ્ર ભગવાનથી અનુજ્ઞાત છે. (૪) તથા તેમાં મહાન ઇન્દ્રિય નિગ્રહ થાય છે. કેમ કે ઉપકરણ વગર સ્પર્શન ઇન્દ્રિયને પ્રતિકૂલ શીતવાત, આતપ, આદિ સહેવાં પડે છે, આનાથી ઇન્દ્રિયો કાળુમાં રહે છે.

દૃષ્ટાન્ત—દશપુર નામના નગરમાં એક સોમદેવ નામનો બ્રાહ્મણ હતો, તેની સ્ત્રીનું નામ રુદ્રસોમા હતું. તે જિનેન્દ્ર ભગવાનની આજ્ઞાની આરાધિકા હતી. સોમદેવને બે પુત્રો હતા. મોટા પુત્રનું નામ આર્યરક્ષિત અને નાના પુત્રનું નામ ફલ્ગુરક્ષિત હતું. આર્યરક્ષિત પિતાની પાસે શાસ્ત્રોનું અધ્યયન કરીને અધિક વિદ્યાપ્રાપ્તિની અભિલાષાથી દશપુરથી પાટલીપુત્ર રવાના થયો, ત્યાં પહોંચીને તેણે સાંગોપાંગ ચારે વેદોનું અને ચૌદ વિદ્યાનું ખૂબ અધ્યયન કર્યું. ત્યારે તે પારંગત બની ચક્ર્યો ત્યારે તે પાટલીપુત્રથી પોતાને

तन्नगरनरेशस्तं नगरसमीपे समागतं विज्ञाय तदभिमुखं गत्वा गजोपरि तमुपवेश्य बहुसंमानपुरस्सरं नगरे प्रावेश्य तस्य रूप्यस्वर्णमणि प्रभृतिभिः प्राभृतैः संमानं कृतवान् । एवं तन्नगरनिवासिभिः प्रवेशोत्सवं कृत्वा संमानितः स्वगृहमागतः पितरौ प्रणतवान् । प्राप्तविद्यं लोकसंमानितमार्यरक्षितं विलोक्य पितास्तीव हृष्टो जातः, किंतु माता हर्षं न दर्शितवती । आर्यरक्षितस्तदा मातरमजातहर्षां दृष्ट्वा प्राह—हे मातः ! किमिदानीं मदवलोकनेन हृष्टा न भवसि ? सा प्राह—किमनेन

ओर प्रस्थान किया । दशपुर के राजा को जब इसके आने का समाचार मिला तो उसने इसके स्वागत की खूब तैयारी की । जब आर्यरक्षित आते २ नगर के समीप पहुँचा तो राजा इन्हें नगर में प्रवेश कराने के लिये इसके संमुख गया । हाथी पर बैठा कर बहुत सन्मानपूर्वक राजा ने इसको नगर में प्रवेश कराया । रूप्य, सुवर्ण और मणि आदि के नजराने से राजा ने इसका खूब सत्कार किया । इसी तरह नगरनिवासियों ने भी राजा का साथ दिया । सब से अच्छी तरह संमानित होकर आर्यरक्षित अपने घर पर आया । मातापिता को नमस्कार किया । विद्या की प्राप्ति से राजा तथा अन्य नगर निवासियों द्वारा संमानित अपने पुत्र को देखकर पिता तो चित्त में बहुत ही हर्षित हुआ, परन्तु माता ने इस विषय में अपना हर्ष नहीं प्रकट किया । जब आर्यरक्षितने अपनी माता की इस प्रकार परिस्थिति देखी तो वह बोला हे माता ! क्या बात है तुम्हें क्यों नहीं इस समय मेरी इस परिस्थिति के अवलोकन से हर्ष

गाम पाछो आव्यो. दशपुरना राजने न्यादे तेना आववाना समाचार भल्या ओटले तेष्टे तेना स्वागतनी भूष तैयारी करी. आर्यरक्षित न्यादे नगरनी समीप पडोव्यो, ते समये राज तेने नगरभां प्रवेश कराववा तेनी साभे गया. हाथी उपर बसाडीने धृष्टाञ् सन्मान पूर्वक राजने तेना नगरभां प्रवेश कराव्यो. इपुं, सोनुं विगेरेना नजराबुथी राजने तेना भूष सत्कार कथो. आ रीते नगर निवासीओने पणु राजने साथ आव्यो. सारी रीते आदर सत्कार भेजवीने आर्यरक्षित पोताने घेर पडोव्यो. माता पिताने नमस्कार कथो. विद्यानी प्राप्तिथी राज तथा अन्य नगरवासीओथी सन्मानित पोताना पुत्रने जेध पिता तेना दिलभां भूष न हर्षित भन्या, माताने आ विषयभां पोतानो हर्ष प्रगट कथो नहीं न्यादे आर्यरक्षिते मातानी आ प्रकारनी स्थिति जेध तो ते बोव्यो के, हे माता ! शुं कारण छे के तमे आ

जीवघातादिहेतुकेन बहुशास्त्राध्ययनेन ? किं त्वया दृष्टिवादः पठितः ? येन मम हर्षः स्यात् । मातुरेतद् वचनं श्रुत्वाऽऽर्यरक्षितः पृच्छति—क्वास्ति दृष्टिवादः ? जनन्या निगदितम्—इक्ष्वाटकनामके ग्रामे विद्यमानस्य तोसलिपुत्राचार्यस्य समीपेऽस्ति, तदासेवनया तदाशापरिपालनया वत्संनिधौ दृष्टिवादोऽभ्यसनीयः । आर्यरक्षितेनोक्तम्—हे मातः ! श्वस्तत्राहं गमिष्यामि दृष्टिवादपठनार्थम् । रात्रौ सुप्तो-

हो रहा है। पुत्र के वचन सुनकर माताने कहा कि बेटा ! मुझे जो हर्ष नहीं उमड़ रहा है उसका कारण यह है कि तुम्हें जीवघात की हेतुमूल अनेक वेदादि शास्त्रों की इस पढ़ाई से क्या लाभ ? बेटा ! तुम हमें यह बतलाओ कि क्या तुमने दृष्टिवाद का भी अध्ययन किया है ? मुझे तो तभी हर्ष हो सकता है कि जब तुम दृष्टिवाद का ज्ञाता हो जाओ। जननी के इस प्रकार के वचन सुनकर आर्यरक्षित ने माता से पूछा मातः ! जिसके लिये तुम मुझे पढ़ने के लिये कह रही हों वह दृष्टिवाद शास्त्र कहाँ है। माता ने कहा—सुनो ! इक्ष्वाटक नाम का एक ग्राम है। उस में तोसलिपुत्र नामके एक आचार्य ठहरे हुए हैं, उनके पास यह शास्त्र है सो तुम वहाँ जाओ और उनकी खूब सेवा करो तथा उनकी आज्ञानुसार रहो तो वे तुम्हें इस शास्त्र का अध्ययन करा देंगे। आर्यरक्षित ने माता के ये सीखभरे वचन सुनकर कहा—मातः ! मैं कल उनके समीप इस शास्त्र का अध्ययन करने के लिये जाऊँगा। रात्रि में

समये भारी आ प्रकारनी स्थितिथी हृषित यतां नथी ? पुत्रतुं वचन सांलणीने माताये कहुं, के डे पुत्र ! मने हर्ष यतो नथी तेनुं कारणु ये छे के, एवनघातना डेतुमूल अनेक वेदादि शास्त्रो लक्षुवाथी तने शुं लाभ थरो ? बेटा ! तुं मने ये तो बताव के ते' दृष्टिवादतुं पणु अध्ययन कथुं छे ? मने त्वारे जे हर्ष थाय के ज्यारे तुं दृष्टिवादनो ज्ञाता भने, मातातुं आ प्रभाषेतुं वचन सांलणीने अर्थरक्षिते माताने पूछथुं, माता ! तुं मने जे लक्षुवानुं कहे छे ते दृष्टिवाद शास्त्र कयां छे ? माताये कहुं, सांलण ! ओक इक्ष्वाटक नामतुं ग्राम छे, तेमां तोसली पुत्र नामना ओक आचार्य विधारे छे तेमनी पासे आ शास्त्र छे, जेथी तुं त्यां जा अने तेनी पूज सेवा कर तथा जेनी आज्ञानुसार रहे तो तेजो तने आ शास्त्रतुं अध्ययन करावी हेरो, आर्यरक्षिते मातातुं आपुं छितवाणुं वचन सांलणीने कहुं, मा ! हुं आवती काबे आ शास्त्रतुं अध्ययन करवा माटे तेमनी पासे जहशि, रात्रे ज्यारे अर्थरक्षित सुवा

સ્થિતેન તેન મનસ્યેવં ચિન્તિતમ્-દષ્ટિવાદનામ્નેવ તસ્ય શાસ્ત્રસ્ય તત્ત્વજ્ઞાનવોધકત્વં
જ્ઞાયતે । તતોઽસૌ પ્રભાતે પ્રસ્થિતઃ । માર્ગે દશપુરનગરનિકટવર્તિગ્રામનિવાસી
પિતૃમુહુર્દ્વ દ્રાક્ષ્યણઃ સાર્ધનવેશુદળદાન્ ગૃહીત્વા સમાગચ્છન્ મિલિતઃ । સ આર્યરક્ષિતં
દૃષ્ટ્વા પરસ્પરં કુશલપ્રદનં કૃત્વાજ્વદત્-એતે મયા સાર્ધનવસંખ્યકા ઇક્ષ્વો ભવદર્થમા-
નીતાઃ, યદ્દાતુ ભવાન્ । આર્યરક્ષિતો વદતિ-ઇદમિશ્વરૂપં પ્રાપ્તં મમ માતુર્હસ્તે
ભવતાર્ષપિત્વા કથનીયમ્-એતે ઇક્ષ્વો મયાઽર્ષ્યરક્ષિતાય સમાનીતાઃ, તેન તુભ્યં
પ્રેપિતાઃ, ઇતિ । કથિતં ચ-અહમેવ માર્ગે પ્રથમં મિલિતઃ, ઇત્યપિ તદગ્રે કથનીય-

આર્યરક્ષિત સોને કે લિયે અપને સ્થાન પર ગયા ઓર શાંતિ સે સો
ગયા । જય વહ ઉઠા તો ઉસને વિચાર કિયા-માતા ને જો કુછ કહા
હે વહ વિલકુલ ઠીક હૈ, કારણ કિ વહ શાસ્ત્ર તત્ત્વજ્ઞાન કા બોધક હૈ
યહ યાત તો ઉસકે નામ સે હી જ્ઞાત હોતી હૈ । પ્રાતઃકાલ હોતે હી વહ
ઘર સે ઇશુવાટક ગ્રામકી ઓર ચલ દિયા । માર્ગ મેં ઇસ કો દશપુર
નગર કે પાસ કે ગ્રામ મેં રહેને વાલા એક વ્રાહ્મણ જો ઇનકે પિતા કા
મિત્ર થા મિલા । વહ ૧॥ સાહે નૌ ઇશુ દળડોં કો લેકર આ રહા થા ।
કુશલ પ્રશ્ન કે વાદ ઉસને આર્યરક્ષિત સે કહા કિ ભાઈ ! યે ૧॥ સાહે નૌ
ઇશુદંડ મેં આપ કે લિયે હી લાયા હું-અતઃ આપ ઇન્હેં લીજિયે । આર્ય-
રક્ષિત ને કહા ઠીક હૈ આપ ઇસ મેંદ કો મેરી માતા કે હાથ મેં દેકર
કહના કિ યે ૧॥ સાહે નૌ ઇશુદંડ મેં આર્યરક્ષિત કે લિયે લાયા થા । વે
મુક્ષે માર્ગ મેં મિલ ગયે હું । ઉન્હોં ને હી યે તુમ્હારે પાસ મેજે હું । ઓર

માટે પોતાના સ્થાન ઉપર ગયો અને શાંતિથી સુઈ ગયો. ન્યારે તે ઉઠ્યો
ત્યારે તેણે વિચાર કર્યો કે, માતાએ જે કાંઈ કહ્યું છે તે અક્ષરશઃ સત્ય છે.
કારણ કે તે શાસ્ત્ર તત્ત્વજ્ઞાનનો બોધ આપનાર છે, એ હકિકત તેના નામ
ઉપરથી જ જણાઈ આવે છે. સવાર થતાં તે ઘરથી બહાર નીકળી ઇશુવાટક
ગામની તરફ આવતો થયો માર્ગમાં તેને દશપુરનગરની પાસેના ગામમાં રહેવા
વાળો અને પોતાના પિતાનો મિત્ર એક બ્રાહ્મણ મળી ગયો. તે બ્રાહ્મણ
હાથમાં લાા ઇશુદંડ લઈને આવતો હતો કુશળ સમાચાર પૂછ્યા બાદ તેણે
આર્યરક્ષિતને કહ્યું કે, ભાઈ ! આ લાા ઇશુદંડ તારા માટે જ લાવ્યો
છું. માટે તું તેનો સ્વીકાર કર. આર્યરક્ષિતે કહ્યું, ઠીક છે. આપ આ દંડ ભારી
માતાના હાથમાં આપીને કહેજો કે, હું આ લાા ઇશુદંડ આર્યરક્ષિત માટે
લાવ્યો હતો, તે મને માર્ગમાં મળ્યો હતો અને તેણે આ દંડ તમને આપ-

મિતિ । અથાસી તદ્વચનાત્તથૈવ કૃતવાન્ । તતો માતાઽતીવ દૃષ્ટા તુષ્ટા સંજાતા,
ચિન્તયતિ ચ । માર્ગે સાર્ધનવસંખ્યકા રક્ષતો મિલિતા અતોઽસી સાર્ધનવપૂર્વાપિ
અધ્યેપ્યતે । આર્યરક્ષિતોઽપિ શુભં શકુનં મત્વેશ્ચુવાટકં ગતઃ । ઉપાશ્રયે પ્રવિશ્ય
તોસલિપુત્રાચાર્યસ્ય વન્દનં કૃત્વા તત્રોપવિષ્ટઃ । તોસલિપુત્રાચાર્યેણ પૃષ્ટમ્-તવ કિં
નામ?, કિં ચ પ્રયોજનમ્ ? । આર્યરક્ષિતેન સ્વનામ કથયિત્વા પ્રયોજનં કથિતમ્-
દૃષ્ટિવાદમધ્યેતુમદ્મત્રાગતોઽસ્મિ, મામધ્યાપયન્તુ દૃષ્ટિવાદં ભવન્તઃ । આચાર્યઃ

યહ્ ભી કહના કિ માર્ગ મેં ડનકો પહલે પહલ મેં હી મિલા ધા । આર્ય-
રક્ષિત કે વચનાનુસાર ડસ ત્રાછળ ને વેસા હી કિયા । માતા ને ૧॥ સાઢે
નૌ રક્ષુદંડ પ્રાસકર રસ શકુનસે ઁસા અનુમાન લગાવા કિ રસે જો યે
૧॥ સાઢે નૌ રક્ષુદંડ માર્ગ મેં ચલતે સમય મિલે હેં ડસસે ઁસા હી જ્ઞાત
હોતા હે કિ યહ્ ૧॥ સાઢે નૌ પૂર્વો કા અધ્યયન કર સકેગા । આર્યરક્ષિત
ને ભી “રનકી પ્રાસિ શુભ શકુન સ્વરૂપ હે ” ઁસા જ્ઞાનકર બઢે આનંદ
કે સાથ રક્ષુવાટક કી ઓર અધિક તેજી સે ચલને લગા । વહેા પહુંચતે
હી વહ્ ડપાશ્રય મેં ગયા । તોસલિપુત્ર આચાર્ય કો વંદન કર ફિર વહેી
ઘેઠ ગયા । આચાર્યશ્રી ને પૂછા તુમ્હારા કયા નામ હે ? યહાં કિસ પ્રયો-
જન સે આયે હો । ? આર્યરક્ષિત ને અપના નામ કહ કર પ્રયોજન ભી
સ્પષ્ટ કર ડિયા । આચાર્યશ્રી ને જવ યહ્ જાના કિ “ યહ્ દૃષ્ટિવાદ કે
અધ્યયન કે લિયે યહાં આયા હે ” તવ આચાર્યશ્રી ને ડસસે કહા કિ

વાતુ' કહ્યું છે. અને એ પણ કહેજો કે માર્ગમાં અને પહેલવહેલો હું જ
મળ્યો હતો. આર્યરક્ષિતાના વચનાનુસાર તે બ્રાહ્મણે તેવું જ કયું. માતાએ
હા. રક્ષુદંડ પ્રાપ્ત કરી એ શુકનથી એવું અનુમાન લગાવ્યું કે, તેને જે આ
હા. રક્ષુદંડ રસ્તામાં ચાલવા સમયે મળેલ છે એથી એવું જ્ઞાત થાય છે કે,
સાડાનવ પૂર્વનું અધ્યયન કરી શકશે. આર્યરક્ષિતે પણ આની પ્રાપ્તિ શુભ શુકન
સ્વરૂપ છે તેવું જાણીને ઘણા આનંદની સાથે રક્ષુવાટકની તરફ ઝડપથી ચાલવા
માંડ્યું. ત્યાં પહોંચતાં જ તે ડપાશ્રયમાં ગયો તોસલિપુત્ર આચાર્યને વંદન કરી
ત્યાં બેસી ગયો. આચાર્યશ્રીએ તેને પૂછ્યું, તમારું નામ શું છે ? શું કારણથી
અહિં આવ્યા છો ? આર્યરક્ષિતે પોતાનું નામ આપીને આવવાનું પ્રયોજન
જણાવી દીધું. આચાર્યશ્રીએ જ્યારે એવું જાણ્યું કે, “ આ દૃષ્ટિવાદના અધ્યયન
માટે અહિં આવેલ છે. ત્યારે આચાર્યશ્રીએ તેને કહ્યું કે, દૃષ્ટિવાદનું અધ્યયન જ્યારે

ब्राह्म-यदि ममान्तिके प्रव्रज्यां गृह्णासि, तर्हि त्वां दृष्टिवादमध्यापयामः । आर्यरक्षितेन प्रव्रज्याग्रहणं स्वीकृतम्, तदनन्तरमसौ श्रावकेण दत्तं साधुवेपयोग्यं सदो-
रकमुखवस्त्रिका-रजोहरणवस्त्रपात्रादिकं लब्ध्वा साधुवेपेण मातुरनुमत्या च प्रव्रजितः
सन्नाचार्यस्य समीपे एकादशाङ्गानि सोपाङ्गानि पठित्वा दृष्टिवादस्य प्रथमं परिक-
र्माख्यं द्वितीयं सूत्राख्यमध्ययनमधीतवान् । अथातः परं दृष्टिवादं पठितुं तोसलि-
पुत्राचार्याज्ञया स वज्रस्वामिसमीपं गन्तुकामः पथि गच्छन्नवन्त्यां भद्रगुप्ताचार्य-
स्यान्त्यक्रियारूपां निर्यापनां कृतवान् । तेन चान्त्यसमये प्रोक्तम्-त्वया रात्रौ

दृष्टिवाद का अध्ययन हम तुम को तब ही करावेंगे कि जब तुम मेरे पास
दीक्षा धारण करोगे । आर्यरक्षित ने दीक्षाग्रहण करना मंजूर कर लिया ।
माताने उन्हें दीक्षा लेने की अनुमति पहले दे दी थी । आर्यरक्षित ने मुनिदीक्षा
धारण कर ली । श्रावकों ने मिलकर उनके लिये मुनिवेप के योग्य सदो-
रक मुखवस्त्रिका एवं रजोहरण तथा वस्त्रपात्रादिक प्रदान किये । आचार्य
के पास रह कर आर्यरक्षित ने उपाङ्गसहित ग्यारह अंगों का अध्ययन
कर दृष्टिवाद का प्रथम परिकर्म नाम का अध्ययन तथा द्वितीय सूत्र
नाम का अध्ययन पढ़ लिया । अवशिष्ट दृष्टिवाद को पढ़ने के लिये
फिर वे वहां से तोसलिपुत्राचार्य की अनुमति से वज्रस्वामी के समीप
जाने को इच्छुक हुए । जब ये उनके पास जा रहे थे तो मार्ग में इन्हें
उज्जैनो नगरी आई । वहां उस समय भद्रगुप्ताचार्य की उन्होंने अन्त्य-
क्रिया रूप निर्यापना की । आचार्य ने अंत समय में इनसे यह कहा कि

तमे भारी पासे दीक्षा धारण करेशे । त्वारे ७ कराववाभां आवशे । आर्यरक्षिते दीक्षा
ग्रहण करवानु स्वीकार्युं, माताये पथु तेने दीक्षा लेवानी अनुमति पडेत्तांथी आवी,
हुती । आर्यरक्षिते मुनिदीक्षा धारण करी । श्रावकेये भणाने तेने माटे मुनिवेपने योग्य
सदोराकमुखवस्त्रिका, रजोहरण तथा वस्त्रपात्रादिक प्रदान कर्थां । आचार्यनी पासे रहने
आर्यरक्षिते उपांग सहित अग्यार अंगेणुं अध्ययन करी दृष्टिवादनुं प्रथम परिकर्म
नामनुं अध्ययन तथा द्वितीय सूत्र नामनुं अध्ययन शीघ्री लीधुं । भाडीना दृष्टिवा-
दने शीघ्रवा माटे पछी ते त्यांथी तोसलीपुत्राचार्यनी अनुमतिथी वज्रस्वामी समीप
जवा माटे धव्वा करी । त्वारे ते तेनी पासे ७८ रहो हुतो । त्वारे पथभां
मार्गभां उज्जैनि नगरी आवी । त्यां ये समये भद्रगुप्ताचार्यनी अन्त्यक्रिया
इप निर्यापना करी । आचार्ये अंत समये तेने ये कहुं के, तमे रात्रीभां वज्र-

વજ્રસ્વામિના સહ ન સ્યાતવ્યમ્ યતસ્તેન સહ રાત્રી સંવસન્ પ્રિયતે । એતદ્વચનં હિ
 નિધાય સ તતો નિર્ગત્યાવન્તીનગર્યાં અદૂર એવ ગ્રામાદ્ વહિરુચ્ચાને રાત્રી સ્થિતઃ ।
 વજ્રસ્વામિના રાત્રિશેષે સ્વપ્નો-દૃષ્ટઃ કેનચિદાગન્તુકેન શિષ્યેણ મત્પાત્રસ્થં સાવ
 શેષં પયઃ પીતમિતિ । અર્ચાર્યરક્ષિતઃ પ્રભાતે ક્વચિદન્યસ્મિન્નુપાશ્રયે વસતિ કૃત્વા
 વંદનાર્થં વજ્રસ્વામિનોઽન્તિકં ગતઃ । તદાનોં સ વજ્રસ્વામી રાત્રિશેષદૃષ્ટં સ્વપ્નં
 ચિન્તયન્નાસીત્ । વજ્રસ્વામિના કુશલપ્રશ્નાનન્તરં રાત્રાવન્યત્રાવસ્થાનસ્ય કારણં પૃષ્ટમ્
 આર્યરક્ષિતઃ પ્રાહ-ભદ્રગુપ્તાચાર્યસ્યાનુશાસનાદહમન્યસ્મિન્નુપાશ્રયે નિવસામિ,
 વજ્રસ્વામી તુ તદા પૂર્વે નિજોપયોગં દત્ત્વા આર્યરક્ષિતકૃતસ્ય રત્નપામન્યત્રોપાશ્રયેઽ

તુમ રાત્રિ મેં વજ્રસ્વામી કે સાથ નહીં રહના, ક્યોં કિ રાત્રિ મેં ઉને
 સાથ રહને વાલે કી મૃત્યુ હો જાની હૈ । આચાર્ય કે હન વચનોં કો હૃદય
 મેં રલ્લકર વે વહાં સે નિકલે ઓર જાકર પાસ કે કિસી ગ્રામ કે વાહિર
 ઉચ્ચાન મેં રાત્રિ મેં ઠહર ગયે । ઉધર વજ્રસ્વામીને રાત્રિકે શેષભાગ મેં એક
 એસા સ્વપ્ન દેલા, કિ કિસી આનેવાલે શિષ્ય ને મેરે પાત્ર કા સાવશિષ્ટ
 (કુછ વાકી રલ્લકર) ક્ષીરકો પી લિયા હૈ । ઉધર આર્યરક્ષિત પ્રભાત કાલ મેં
 કિસી અન્ય ઉપાશ્રયમેં અપને ઉપકરણ રલ્લકર એવં સ્થાન નિશ્ચિત કર વંદના
 નિમિત્ત વજ્રસ્વામી કે પાસ પહુંચે । ઉસ સમય વજ્રસ્વામી રાત્રિ કે શેષ-
 ભાગ મેં દૃષ્ટ સ્વપ્ન કા વિચાર કરને મેં મગ્ન હો રહે થે । વજ્રસ્વામી ને
 કુશલપ્રશ્ન કે વાદ રાત્રિ મેં અન્યત્ર ઠહરને કા કારણ આર્યરક્ષિત સે પૂછા,
 આર્યરક્ષિત ને કહા કિ મેં ભદ્રગુપ્તાચાર્ય કે અનુશાસન સે અન્ય ઉપા-
 શ્રય મેં ઠહર ગયા હું । ઉસ સમય વજ્રસ્વામી ને અપને ઉપયોગ કે બલસે

સ્વામીની સાથે રહેશે નહીં. કારણ કે, રાત્રે તેની સાથે રહેવાવાળાનું મૃત્યુ
 થાય છે. આચાર્યના આ વચનને હૃદયમાં રાખીને ત્યાંથી નીકળી પાસેના કોઈ
 ગામે બહાર બગીચામાં રાત્રી રોકાયો. આ તરફ વજ્રસ્વામીએ રાત્રીના છેલ્લા
 પ્રહરે એક એવું સ્વપ્ન દેખ્યું કે, કોઈ આવી રહેલા શિષ્યે મારા પાત્રમાંથી
 સાવશિષ્ટ (કંઈક બકી રાખીને) ખોર પીઈ લીધેલ છે. આ તરફ આર્યરક્ષિત પ્રભાતકા-
 લમાં કોઈ બીજા ઉપાશ્રયમાં પોતાનું ઉપકરણ રાખીને અને સ્થાન નિશ્ચિત કરીને
 વંદનાનિમિત્ત વજ્રસ્વામી પાસે પહોંચ્યો. એ સમયે વજ્રસ્વામી રાત્રીના છેલ્લા
 પ્રહરે જોયેલા સ્વપ્નનો વિચાર કરવામાં મગ્ન હતા. વજ્રસ્વામીએ કુશળ પ્રશ્ન બાદ
 રાત્રીમાં બીજા સ્થળે રોકાવાનું કારણ આર્યરક્ષિતને પૂછ્યું. આર્યરક્ષિતે કહ્યું કે હું
 ભદ્રગુપ્તાચાર્યના અનુશાસનથી બીજા ઉપાશ્રયમાં રોકાયો છું. તે સમયે વજ્ર-
 સ્વામીએ પોતાના ઉપયોગના બગીચી “આર્યરક્ષિતનું” બીજા ઉપાશ્રયમાં

વસ્થાનસ્ય કારણં જ્ઞાત્વાઽવ્રવીત્-યુક્તમેતદુક્તં ભદ્રગુપ્તાચાર્યેणेતિ । અધાર્યરક્ષિતેન વજ્રસ્વામિસંનિધૌ નવ પૂર્વાણિ પઠિતાનિ, દશમપૂર્વસ્ય કતિચિદધિકારાસ્તેન યાવત્ પઠિતાસ્તાવદ્ દશપુરાત્ ફલ્ગુરક્ષિતો ભ્રાતા ચિરવિરહાર્તમાત્રાદિભિઃ પ્રેરિતસ્તસ્પા-કારણાય તત્રાગતઃ । આર્યરક્ષિતસ્તં પ્રતિવોધ્ય તત્રૈવ પ્રવ્રજ્યાં ગ્રાહયતિ સ્મ ।

एकदाऽऽर्यरक्षितो वज्रस्वामिनं पृच्छति-भगवन् ! मम पठनार्थं दृष्टिवादे दशमं पूर्वं कियदवशिष्टमस्ति ? वज्रस्वामी प्राह-वत्स ! त्वया दशमपूर्वस्य विन्दुमात्रं पठितं समुद्रोपमं दशमं पूर्वमस्ति । ततोऽसौ श्रान्तमनाः प्राह-नाहमतः परं पूर्वपाठं कर्तुं

‘આર્યરક્ષિત કા અન્ય ઉપાશ્રય મેં રાત્રિ મેં ઠહરને કા કયા કારણ હૈ’ યહ વાત અચ્છી તરહ જાનકર આર્યરક્ષિત સે કહા ‘ભદ્રગુપ્તાચાર્ય ને જો કહા વહ યુક્ત હી કહા હૈ’ । યાદ મેં આર્યરક્ષિત ને વજ્રસ્વામી સે નવ પૂર્વ કા અધ્યયન આનન્દ સે કર લિયા । પરન્તુ દશમ પૂર્વ કે કિતનેક અધિકાર જવ યે પડ રહે થે કિ ઇતને મેં ઇનકા છોટા ભાઈ ફલ્ગુરક્ષિત દશપુર સે ચિરવિરહાર્ત માતા આદિ દ્વારા પ્રેરિત હોકર ઇન્હેં બુલાને કે લિયે વહાં આપહુંચા । આર્યરક્ષિત ને ઉસે સમજાકર-પ્રતિવોધિતકર-વહીં દીક્ષા દિલવા દી । એક દિન કી વાત હૈ કિ આર્યરક્ષિત ને વજ્ર-સ્વામી સે પૂછા કિ ‘ભગવન્ ! દૃષ્ટિવાદ મેં દશમપૂર્વ, પઢને કે લિયે અવ મેરા કિતના વાકી રહા હૈ’ । યહ સુનકર વજ્રસ્વામી ને કહા કિ ‘વત્સ ! દશમ પૂર્વ તો સમુદ્ર કે સમાન હૈ તુમને તો અભીતક ઉસકો વિન્દુમાત્ર હી પઢા હૈ’ । વજ્રસ્વામી કી યહ વાત સુનકર ઇનકા મન કુછ શ્રાન્ત સા

રોકવાતું શું કારણ છે” આ વાત સારી રીતે બાણીને આર્યરક્ષિતને કહ્યું. ભદ્ર-ગુપ્તાચાર્યે જે કહ્યું છે, તે યુક્ત જ કહ્યું છે. બાદમાં આર્યરક્ષિતે વજ્રસ્વામીથી નવ પૂર્વનું અધ્યયન આનંદથી શીખી લીધું. પરંતુ દશમા પૂર્વના કેટલાક અધિકાર બ્યારે તે શીખી રહ્યો હતો ત્યારે તે અરસામાં તેનો નાનોભાઈ ફલ્ગુ-રક્ષિત દશપુરથી પુત્રનો વિરહ અનુભવતી માતા દ્વારા પ્રેરિત બની તેને બોલા-વવા માટે ત્યાં આવી પહોંચ્યો. આર્યરક્ષિતે તેને સમજાવીને પ્રતિબોધિત કરી ત્યાંજ દીક્ષિત બનાવ્યો. એક દિવસની વાત છે કે, આર્યરક્ષિતે વજ્રસ્વામીને પૂછ્યું કે બદંત દૃષ્ટીવાદમાં દશમું પૂર્વ પુરું થવા માટે હવે કેટલો સમય બાકી છે? આ સાંભળીને વજ્રસ્વામીએ કહ્યું કે, વત્સ ! દશમું પૂર્વ તો સમુદ્ર સમાન છે, આમાંથી તેં તો માત્ર હબ્બ બીંદુ જેટલું જ શીખેલ છે. વજ્ર-સ્વામીની આ વાત સાંભળીને તેણે મન કાંઈક ખિન્ન થઈ ગયું અને કહેવા

शक्नोमि । वज्रस्वामी तु दशमपूर्वस्य स्वस्मिन्नेवावस्थानं ज्ञात्वा मौनमवलम्ब्य स्थितः । आर्यरक्षितो वज्रस्वामिगुरोरनुशया फल्गुरक्षितेन सह दशपुरनगरं समागतः । वज्रस्वामिना स्वायुरल्पं ज्ञात्वा तस्मै सुशिष्याचार्यरक्षिताय विहारसमये आचार्यपदं प्रदत्तम् । आचार्यरक्षिताचार्यः स्वमातृभगिनीप्रमुखसांसारिकवर्गं प्रतिबोध्य प्रव्रज्यां ग्राहयामास । सोमदेवस्तु प्रतिबोधितोऽपि साधुवेपं नैव गृह्णाति, आर्यरक्षिताचार्यस्तं दीक्षाग्रहणार्थं बहुशः कथयति । ततस्तस्य पिता सोमदेवः ग्राहवस्त्रयुग्मं, यज्ञोपवीतं, कमण्डलुं, छत्रं, पादुकां चापरित्यज्यैव मया दीक्षा ग्राह्या ।

हो गया और कहने लगे—भदन्त ! अब मैं इससे आगे पढ़ने के लिये समर्थ नहीं हूँ । वज्रस्वामी दशमपूर्व “मेरे हृदय में ही अवस्थित रहेगा” ऐसा जानकर पश्चात् चुप हो गये । आर्यरक्षित वज्रस्वामी गुरु की आज्ञा से फल्गुरक्षित के साथ विहार करके दशपुर नगर को आये । वज्रस्वामी ने अपनी आयु अल्प जानकर उन सुशिष्य आर्यरक्षित के लिये विहार के समय में आचार्य पद दे दिया था । आचार्य आर्यरक्षित ने अपनी माता बहिन आदि सांसारिक जनों को प्रतिबोधित कर उन्हें दीक्षा से दीक्षित कर दिये । अपने संसारी पिता सोमदेव को भी समझाया पर उन्होंने प्रतिबोधित होने पर भी दीक्षा धारण नहीं की । आचार्य आर्यरक्षित ने उनको अनेक बार बहुत २ भी कहा कि ‘आप दीक्षा स्वीकार करलो’ परन्तु उन्होंने ने साधुवेप अंगीकार नहीं किया । कहने लगे कि वस्त्रयुग्म, यज्ञोपवीत, कमण्डलु, छत्र एवं पादुका नहीं छोड़कर ही मैं दीक्षा ग्रहण

लाग्यो, भदन्त ! डबे डुं आनाथी आंगण शीभी शकुं तेभ नथी. वज्रस्वामी दशमुं पूर्वं पोताना हृदयमां न अवस्थित रहेशे तेवुं न्णणीने सुप रइया. आर्यरक्षित वज्रस्वामी शुरुणी आसाथी इत्थुरक्षितनी साथे विहार करी दशपुर नगरमां आव्या. वज्रस्वामीओ पोतानी आयु अल्प न्णणीने विहार करवाना समथे सुशिष्य आर्यरक्षितने आचार्य पद अपी दीधु. ‘आचार्य आर्यरक्षिते पोतानी माता, बहिन, वगेरे संसारी संनधीओने प्रतिबोधित करीने तेओने दीक्षा आपी दीक्षित कथो. पोताना संसारिक पिता सोमदेवने पखु समज्जव्या पखु तेओने प्रतिबोध करवा छतां पखु तेभखे दीक्षा ग्रहण न करी. आचार्य आर्यरक्षिते तेभने अनेकवार धणुं धणुं कहुं के, तगे दीक्षा लई हो. परंतु तेओओ साधुवेश अंगिकार न कर्यो. कडेवा लाग्या के, पन्ननी जेडी, यज्ञोपवीत, ...’

आर्यरक्षिताचार्येण स्वपितुर्वृद्धावस्थायां तारणवृद्ध्या पूर्वज्ञाने उपयोगं दत्त्वा तथैवासौ प्रव्राजितः ।

अन्यदा कदाचिद् गृहस्थबालकाः साधूनां वन्दनार्थं तत्र मंडल्यां समागताः, आचार्यः कचिदन्यत्र तदानीं गतश्चासीत्, तत्र साधुभिरिङ्गितेन प्रतिबोधितास्ते बालका वदन्ति—इमं छत्रधरं मुत्त्वाऽन्यान् सर्वान् साधून् वन्दामहे । इत्युक्त्वा ते बालका एकं छत्रधरं तं विहाय सर्वान् साधून् वन्दन्ते । ततः सोमदेवमुनिः प्राह—एते मम पुत्रनप्त्रादयः सर्वे युष्माभिर्वन्दिताः, अहं कस्मान्न वन्दितः? किं मया दीक्षान

करूंगा । अपने पिता सोमदेव की यह बात सुनकर आर्यरक्षित आचार्य ने उन्हें वृद्धावस्था में तारण की भावना से पूर्वज्ञान में उपयोग देकर अपने आगमविहारी होनेसे उसीरूप से दीक्षित कर लिया ।

किसी एक समय की बात है कि गृहस्थों के बालक साधुओं को वंदना निमित्त वहां मंडली में आये । आचार्य आर्यरक्षित कहीं दूसरी जगह उस समय गये हुए थे । साधुओंके इशारे से प्रतिबोधित-किये गये वे सब बालक कहने लगे कि—हम लोग इस छत्रधारी साधुको छोड़कर बाकी समस्त साधुओं को वंदना करते हैं । इस प्रकार कह कर वे सबके सब एक छत्रधारी मुनिको छोड़कर सबको वंदना करने लगे । सोमदेव मुनिने जब यह बालकों का व्यवहार देखा तो बोले—क्यों बालको !—तुमने हमारे इन पुत्रों एवं नातियों को तो वंदना की पर मुझे वंदना क्यों नहीं की ? क्या मैंने

छत्र, अने पाहुका छोड्या शिवायज हुं दीक्षा अहंछु करीश. पोताना पिता सोमदेवनी आ वात सांलणीने आर्यरक्षित आचार्ये तेमनी वृद्धावस्थाभां तारवानी भावनाथी पूर्वज्ञानने उपयोग आपी पोताना आगम विहारी होवाथी तेवा इथी दीक्षित अनाव्या.

कोई अेक समयनी बात छे के गृहस्थानां आणको साधुआनी वंदना निमित्त साथे भणीने आव्या. आचार्य अे समये कोई भीछु नय्याअे गया हुता. साधुआअे धशाराथी दरेकने वंदना करवा भाटे ते आणकोने कहुं. तो ते सघणा आणको कहेवा लाग्या के, अमे भधा आ छत्रधारी मुनिने छोडीने आकी समस्त साधुआने वंदना करीअे छीये अेम कहीने ते सघणा आणको छत्रधारी महाराजने छोडीने भीन भधाने वंदना करवा लाग्या. सोमदेव मुनिअे आणकोने न्यारे आ प्रकरने वडेवार बोये तो बोध्या के छे आणको ! तमे भारा आ पुत्रे तेमज संभंधीआने वंदना करी तो मने केम वंदना करी

ગૃહીતા ? , ચાલકા ઝુચુ:-કિં દીક્ષિતાઞ્ચત્રધારિણઃ સ્યુઃ । एवमुक्त्वा गंतुं बाणकेषु
 आर्यरक्षिताचार्यस्तत्र समायातः । तदाऽसी सोमदेवमुनिस्तस्मिन्पमागत्य वदति-
 पुत्र ! चालका अपि मां हसन्ति, अलमनेन छत्रेण, इत्युक्त्वा तेन छत्रं परित्यक्तम् ।
 एवमेकैकं क्रमेण परित्यजता तेन धૌતિકवस्त्रमन्तरेण सर्वं यज्ञोपवीतादિકં परित्य-
 क्तम्, बहुशस्तथा वन्दनाकरणैरुપहासादि प्रयोगैश्चापि स धૌतिकं न मुञ्चति ।

મુનિદીક્ષા ધારણ નહીં કરી ? । ચાલકોં ને ડાકી ઇસ યાત્રા કો સુનકર
 શીઘ્ર હી નિસ્સંકોચ સે ઉત્તર દિયા કિ જો મુનિદીક્ષા સે દીક્ષિત હુઆ
 કરતે હૈં કયા વે છત્રધારી હોતે હૈં ? । ચાલક એસા કહ કર ચલે ગયે ઇતને
 મેં હી વહાં વાહર સે આર્યરક્ષિત આચાર્ય આ પહુંચે । આચાર્ય કો આયે
 દેખકર સોમદેવ મુનિ ને ડાકી પાસ જાકર કહા પુત્ર ! દેવો તો સહી-
 ચાલક ભી મેરી હૈંસી મજાક કરતે હૈં-કહતે હૈં કિ મુનિ કહીં છત્રધારી
 ભી હોતે હૈં । અતઃ ઇસ છત્ર કી મુક્તે અવ જરૂરત નહીં હૈં । એસા કહકર
 સોમદેવ ને છત્રકા પરિત્યાગ કર દિયા । ઇસી તરહ ક્રમશઃ ઓર મી
 ગૃહીત વસ્તુઓસે અપની મુનિ અવસ્થા મેં હૈંસી હોતી હુઈ જાનકર ડાકીને
 ધોતીજોડે કે સિવાય અન્ય સમસ્ત જનેઝ આદિ વસ્તુઓં કા પરિત્યાગ
 કર દિયા । યદ્યપિ ધોતી કે રાખને સે લોગ ડાકી ઉપહાસ ભી કરતે વે
 તો ભી વે ડાકી નહીં છોડ સકે ।

નહીં ? શું મેં મુનિદીક્ષા ધારણ નથી કરી ? બાળકોએ તેની આ વાત
 સાંભળીને તરત જ નિઃસંકોચથી જવાબ દીધો કે, જે મુનિદીક્ષા લે છે તેઓ
 છત્રધારી હોય છે ખરા ? બાળકો આ પ્રમાણે કહીને ચાલ્યાં ગયાં એવા સમયે
 બહાર ગયેલા આર્યરક્ષિત આચાર્ય આવી પહોંચ્યા. આચાર્યને આવેલા બેઠાને
 સોમદેવ મુનિએ તેમની પાસે બેઠાને કહ્યું. પુત્ર બુદ્ધો તો ખરા ! બાળકો
 પણ મારી હાંસી મજાક કરે છે. કહે છે કે, મુનિ કયાંય છત્રધારી હોય
 ખરા ! આથી આ છત્રની હવે મને જરૂરત નથી એમ કહીને સોમદેવે તે છત્રનો
 પરિત્યાગ કરી દીધો. આ પ્રમાણે ક્રમે ક્રમે તેમણે ઝડપ કરેલી વસ્તુઓથી
 પોતાની મુનિ અવસ્થામાં હાંસી થતી બાળીને તેમણે ધોતીજોડા સિવાય
 બીજી સમસ્ત જનોઈ આદિ વસ્તુઓનો પરિત્યાગ કરી દીધો. એમ છતાં પણ
 ધોતીના રાખવાથી લોકો તેમનો ઉપહાસ કરતા હતા. છતાં પણ તેઓ તેને
 છોડી શક્યા નહીં.

अन्यदा कदाचिदेकः साधुरनशनतपश्चरणेन स्वर्गं गतः । तत आर्यरक्षिताचार्येण तस्य सोमदेवमुनेर्धौतिकपरित्याजनार्थं साधवोऽभिहिताः—य एनं साधुमृतकं स्कन्धेन वहति तस्य महती निर्जरा भवति । तदनन्तरं स सोमदेवमुनिर्ब्रूदति—पुत्र ! अत्र निर्जरा भवति किम् । आर्यरक्षिताचार्य आह—सत्यम्, ततः स वदति—अहं ब्रूहामि । आचार्यः ब्रूह—अत्रोपसर्गा ब्रूहो जायन्ते, कतिचिद् बालकास्तस्य संलग्ना भवन्ति, तत्र तूष्णीभाव आश्रयणीयः, कोपो न करणीयः, स्वीकृतकार्यं सर्वथा संपादनीयम्, यदि सकला उपसर्गाः शक्यन्ते सोढुम्, तदा श्रेयः, अन्यथाऽस्माकम-

कोई एक दिन की बात है कि एक साधु अनशन से कालधर्म पाये । आर्यरक्षित आचार्य ने सोमदेव मुनि की धोती छुड़ाने के अभिप्राय से साधुओं से कहा कि जो इस मृतक साधु को अपने कंधे पर आरोपित कर ले जायगा उसके लिये महान् निर्जरा होगी । यह बात सुनकर सोमदेव मुनिने कहा कि पुत्र ! क्या इस कार्य के करने में निर्जरा होती है ? । आचार्य ने कहा—हां होती है । सोमदेव ने कहा तो इसे कंधे पर रखकर मैं ले जाऊंगा । आचार्य ने कहा कि देखो—ऐसा करने में बहुत विघ्न आते हैं—कितनेक बालक देखते ही उसके पीछे लग जाते हैं, हँसी उड़ाते हैं सो उसमें शांतिभाव रखना पड़ता है । क्रोध नहीं करना पड़ता है । तथा जिस कार्य को करने का आरंभ किया जाता है उसे अन्ततक निभाना पड़ता है । यदि इन सब विघ्नों को सहन करने के लिये अपने को शक्तिशाली समझते हो तो ही इसमें श्रेय है अन्यथा हमसब लोगों का

એક વખતે એક સાધુ અનશનથી કાળધર્મ પામ્યા, આર્યરક્ષિત આચાર્યે સોમદેવ મુનિને ધોતી છોડાવવાના ભાવથી સાધુઓને કહ્યું કે, જે કોઈ આ મૃત્યુ પામેલા સાધુને ધોતાની કાંધ ઉપર લઈને જશે તેમના માટે મહાન નિર્જરા થશે. આ વાત સાંભળીને સોમદેવ મુનિએ કહ્યું કે હે પુત્ર ! શું આ કાર્ય કરવામાં નિર્જરા થાય છે ? આચાર્યે કહ્યું કે, હા ! થાય છે. સોમદેવે કહ્યું કે, તો હું એને કાંધ ઉપર ઉપાડીને લઈ જઈશ. આચાર્યે કહ્યું કે, જુઓ ! આમ કરવામાં બહુ વિઘ્ન આવે છે. કેટલાક બાળકો દેખતાં જ તેમની પાછળ પડે છે, હસી ઉડાવે છે, તો આમાં શાન્તી ભાવ રાખવો પડે છે. ક્રોધ આવવો ન જોઈએ તથા જે કાર્ય કરવાનો આરંભ કર્યો છે તેને અન્ત સુધી નભાવવું પડે છે. જે આ બધા વિઘ્નોને સહન કરવા માટે આપ આપને શક્તિશાળી માનતા હો તો જ તેમાં શ્રેય છે. નહિતર અમારા સઘળા લોકોનું તેમાં અનિશ્ચ

शुभं भविष्यति। एवं प्रवर्तितोऽसौ मृतकं साधुं स्कन्धे समारोप्य साधुभिः सह वहति। मार्गे मृतकं वहतस्तस्य धौतिकं बालकैराचार्यसंकेति तैराकर्णितम्। स लज्जामयशो मृतकं स्कन्धादवतारयति तावदन्यैः साधुभिर्वक्तुम्-मा मुञ्च, मा मुञ्च, तदा तस्य कस्यां केनचित्साधुना स्वसार्धमानीतभोलपट्टको वद्धः, स तु लज्जया तं शयं वहन् निर्जने वने प्रामुकस्थण्डिले तं व्युत्सृज्याचार्यसमीपमागतो ब्रूते-हे

इसमें अनिष्ट हो जायगा। इस प्रकार समझाने पर जब सोमदेव संभल गये तो उन्होंने ने उस शय को उठाकर अपने कंधे पर रख लिया और साधुओं के साथ चले। मार्ग में मृतकसाधु को वहन किये हुए सोमदेव को देखकर बालकों ने उनकी आचार्यआर्यरक्षित के संकेत करने पर धोती खींच ली। अपनी धोती उतारी हुई देखकर उन्हें नग्न होने की वजह से बड़ी लज्जा का अनुभव होने लगा। उन्होंने ने चाहा कि इस मृतकसाधु के शय को कंधे से नीचे उतार कर बालकों से अपनी धोती छुड़ा लो जाय। ज्यों ही वे ऐसा करने को उद्यत हुए कि इतने में ही साधुओं ने कहना प्रारंभ कर दिया कि इसे नीचे मत उतारो मत उतारो। और इसी के भीतर ही किसी साधु ने जो चोलपट्टा उनके पहिराने के लिये पहिले से साथ ले आया था उन्हें पहिरा दिया। लज्जा से उस साधु के शय को वहन करते हुए सोमदेव ने निर्जन वन में उस शय को प्रामुक भूमि पर उतार दिया, और आचार्य महाराज के

थर्ध जथे. आ प्रभाञ्चे सभजववाथी न्यादे सोमदेव सभञ्ज गया त्यादे तेमञ्चे ते शयने उठावी पोतानी कांध उपर राणी वीधुं अने साधुओंनी साथे थाव्या. मार्गमां भरेवा साधुने उपाडी जता सोमदेवने जेधने भाजकेअे आचार्य आर्यरक्षितना धिसाराथी तेमनी धोती जेथी वीधी. पोतानी धोती नीकणी गयेली जधुने तेमने नग्न थवाना कारणे धणी लज्जनो अनुभव थावा ज्यो. तेज्योअे धिच्छुं के, आ भरेवा साधुना शयने कांधथी नीचे उतारी भाजके पासेथी भारी धोती छोडावी लठं न्यां तेज्यो जेवुं करवाने उद्यत जन्त्या जेटवाभां ज साधुज्योअे कडेवानो प्रारंवा कर्यो के, तेने नीचे न उतारे। अेक तरक्षी आभ कडेवायुं जेव वणते जे साधुज्योभांथी अेक साधुअे चोलपट्टो तेने पहिराववा भाटे अगावथी ज साथे राखेल ते पहिरावी वीधो. लज्जथी जे साधुना शयने वहन करतां सोमदेवे निर्जन वनमां जे शयने प्रामुक भूमि उपर उतारी वीधुं अने आचार्य महाराजनी समीप आवीने

पुत्र ! अद्य महानुपसर्गो जातः, तथापि सर्वं कार्यं भवत्कथनानुसारेणमया सम्पादितम् । आचार्योऽन्यं मुनिं प्रति प्राह—धौतिकमानीयास्मै दीयताम् तदा स वृद्धोऽवदत्—इदानीमलं धौतिकवस्त्रेण, यद् द्रष्टव्यं तद् दृष्टमेव, अतः परमयं चोलपट्टक एव मम देहे तिष्ठतु । अद्यप्रभृति नवीनवसनं नैव परिधास्यामि, अन्यसाधुव्यापृतमेव वस्त्रं ग्रहीष्याम, एकेनैव प्रावरणेन, एके नैव चोलपट्टकेन संयमयात्रा निर्वाहं करिष्यामि । एवमेवासौ विहरन्नवीनवस्त्रानाकाङ्क्षया द्वितीयप्रावरणचोलपट्टानाकाङ्क्षया च जीर्णशीर्णवस्त्रहेतुकदैन्याद्यकरणेन चाचेलपरीपहं सहते स्म । एकदा-

समीप आकर कहने लगे—हे पुत्र ! आज बड़ा भारी उपसर्ग उपस्थित तो हुआ था, परन्तु आपके कथनानुसार मैंने सब कार्य यथावस्थित संपादित कर दिया है । आचार्य ने उसी समय एक मुनि से कहा कि—धोती लाकर इन्हें दे दो । आचार्य महाराज की बात सुनकर सोमदेव ने कहा कि अद्य धोती से बस करो । इसकी अब आवश्यकता नहीं रही है । जो कुछ देखना था वह देख लिया है, इस लिये यह चोलपट्टा ही अब मेरे शरीर पर रहे यही भावना है, तथा मैं आज से नवीन वस्त्र नहीं पहिरेँगा, तथा अन्य साधुओं द्वारा उपभुक्त वस्त्र ही ग्रहण करूँगा, एक ही प्रावरण से एक ही चोलपट्टक से संयम यात्रा का निर्वाह करूँगा । इस प्रकार सोमदेव मुनि विहार करते हुए नवीन वस्त्र की अनाकाङ्क्षा से तथा द्वितीय प्रावरण (चादर) एवं द्वितीय चोलपट्टक की अनिच्छा से जीर्णशीर्णवस्त्र हेतुक दीनता के नहीं करने से अचेलपरीपह को सहते

કહેવા લાગ્યા હે પુત્ર ! આજ ધણે ભારે ઉપસર્ગ ઉપસ્થિત થયો હતો, પરંતુ તમારા કથન અનુસાર મેં સઘળું કાર્ય યથાવસ્થિત સંપૂર્ણ કરેલ છે. આચાર્યે એજ વખતે એક મુનિને કહ્યું કે, ધોતી લાવીને આમને આપી દો. આચાર્ય મહારાજની વાત સાંભળીને સોમદેવે કહ્યું કે, હવે ધોતીથી બસ કરો. મારે હવે તેની આવશ્યકતા નથી. જે કાંઈ બેસું હતું તે બેઈ લીધું છે. જેથી આ ચોલપટ્ટોજ મારા શરીર ઉપર રહે એજ ભાવના છે. તથા હું આજથી નવીન વસ્ત્ર પહેરવાનો નથી. અને બીજા સાધુઓ દ્વારા વપરાયેલા વસ્ત્રોનો હું અંગિકાર કરીશ. એક જ પ્રાવરણથી, એક જ ચોલપટ્ટાથી સંયમ યાત્રાનો નિર્વાહ કરીશ. આ પ્રકારે સોમદેવ મુનિ વિહાર કરતા કરતા નવા વસ્ત્રોની આકાંક્ષા વગર તથા બીજા પ્રાવરણ ચાદર અને બીજા ચોલપટ્ટાની અનિચ્છાથી છૂટું શીર્ષું વસ્ત્રથી દિનતા ન બતાવતા અચેલપરીપહ સહન કરતા રહ્યા. એક

ઽતિશયિતં હિમં સમાપતિતમ્ ત્યાપ્યેકમાત્રં પ્રાવરણમસૌ દધાતિ ન તુ દ્વિતીયવક્ત્રં
 ઘૃણાતિ, તસ્મિન્નેવ જીર્ણશીર્ણં પ્રાવરણે પ્રોત્સાહસમ્પન્નેન મનસાઽચેલપરીપહં
 સહમાનઃ સમાધિભાવેન કાલધર્મં પ્રાપ્ય દેવલોકં ગતઃ । एवं तेन यथा-अचेलपरीपहः
 सोढस्तथैवान्यैरपि साधुभिः सर्वदाऽचेलपरीपहः सोढव्य एव ॥ ૧૩ ॥

અચેલકસ્ય શીતાદિભિઃ સ્પૃષ્ટસ્યારતિઃ સ્યાત્, અતસ્તત્પરીપહત્રયં પ્રાઢ—
 મૂલમ્—ગામાણુગામં રીયંતં, અર્ણગારં અર્કિચેનં ।

અરંઈ અણુપ્પવેસેજ્જા, તં તિતિક્કલે પરીસહં ॥ ૧૪ ॥

છાયા—ગ્રામાનુગ્રામં રીયમાણમ્, અનગારમ્ અર્કિચ્ચનમ્ ।

અરતિઃ અનુપ્રવિશેત્, તં તિતિક્ષેત પરીપહમ્ ॥ ૧૪ ॥

ટીકા—‘ગામાણુગામં’ ક્ત્યાદિ ।

ગ્રામાનુગ્રામમ્—ગ્રામમ્ અનુ, ગ્રામાત્ પથાત્, ગ્રામાનન્તરવર્તી યો ગ્રામઃ સ

રહે । એક દિન કી વાત હૈ કિ શીતકાલ મેં અત્યન્ત હિમ ગિરા તૌ બી
 ઇન્હોં ને બિતીય પ્રાવરણ ધારણ કરને કી સ્વપ્ન મેં બી ઇચ્છા નહીં કી
 કિન્તુ એક હી પ્રાવરણ સે ઉસ હિમ કા સામના કિયા । જીર્ણ શીર્ણ
 ઉસ પ્રાવરણ મેં હી પ્રોત્સાહસંપન્ન ચિત્ત સે અચેલપરીપહ કો સહન
 કરતે હુણ ઉન સોમદેવ મહાત્માને સમાધિભાવ સે કાલધર્મ પાકર દેવ-
 લોક કો પ્રાપ્ત કિયા ।

इस कथा के कहने का केवल एक यही प्रयोजन है कि देखो
 सोमदेव मुनिराज ने पहिले अचेलपरीपह नहीं सहा, पश्चात् प्रतिबोधित
 होने पर उस परीपहको अधिक प्रोत्साह के साथ सहन किया । इस तरह
 अन्य साधुओं को भी अचेलपरीपह सहन करना चाहिये ॥ ૧૩ ॥

દિવસની વાત છે કે, ઠંડીના સમયે અત્યંત હિમ પડ્યું તો પણ તેઓએ બીજું
 પ્રાવરણ કરવાની સ્વપ્નમાં પણ ઇચ્છા ન કરી. પરંતુ એક જ પ્રાવરણમાં જ ઉત્સાહ
 સંપન્ન ચિત્તથી અચેલ પરીપહને સહન કરીને તે સોમદેવ મહાત્માએ સમાધી
 ભાવથી કાળધર્મ પામી દેવલોક ને પ્રાપ્ત કર્યો.

આ કથા કહેવાનું કેવળ એક જ પ્રયોજન છે કે, જુઓ, સોમદેવ મુનિએ
 પહેલાં અચેલપરીપહ ન સહો પાછળથી પ્રતિબોધ પામતાં તેમણે એ પરીપહને
 અધિક ઉત્સાહથી સહન કર્યો. અન્ય સાધુઓએ પણ એમની ભાક્ષ
 અચેલપરીપહ સહન કરવો જોઈએ (૧૩)

ગ્રામાનુગ્રામસ્તમ્ । નગરાદ્યુપલક્ષણમેતત્ , નગરાદિકં ચેત્યર્થઃ । રીયમાણં=વિહર-
માણમ્ , અકિચ્ચનં=નિષ્પરિગ્રહમ્ , અનગારં=મુનિમ્ અરતિઃ=સંયમવિપયિકાઽદ્યુતિઃ
મોહનીયકર્મોદયજનિતા સંયમારુચિરૂપાઽઽત્મપરિણતિઃ અનુપ્રવિશેત્=પ્રવિષ્ટા ભવેત્-
મુનેર્મનસિ પ્રાપ્તા ભવેત્ , તમ્=અરતિરૂપં પરીપહં તિતિક્ષેત=અરતિરૂપસ્ય મનઃ
પરિણામસ્ય કટુકફલં ચિક્ષણકર્મવન્ધનં ચતુર્ગતિકસંસારપરિભ્રમણં ચ વિજ્ઞાપ
મનસસ્તન્નિરાકરણેન સદેત ॥

અચેલક કે શીત આદિ દ્વારા સતાયે જાને પર અરતિ મી હો સક્તી
હૈં ફસલિયે સાતવેં અરતિપરીપહ કો સહને કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં ।

‘ ગામાણુગામં ’ ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ-(ગામાણુગામં રીયતં-ગ્રામાનુગ્રામં રીયમાણમ્) એક ગાંવ સે
દૂસરે ગાંવ તથા ઉપલક્ષણ સે એક નગર સે દૂસરે નગર વિહાર કરતે હુણ
તથા (અકિચ્ચનં-અકિચ્ચનમ્) અકિચ્ચન-પરિગ્રહરહિત એસે (અનગારં-
અનગારમ્) મુનિ કો (અરદ્ અણુપ્પવેસેજ્જા-અરતિઃ અનુપ્રવિશેત્) યદિ
અરતિ-સંયમ મેં અરુચિ અર્થાત્ મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે હોનેવાલી જો
સંયમઅરુચિરૂપ આત્મપરિણતિ, તથા સંયમમેં અદ્યુતિ જાગ્રત હો જાવે
તો મુનિ કા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ (તં પરીપહં તિતિક્ષે-તં પરીપહં તિતિ-
ક્ષેત) ઉસ પરીપહ કો શાંતિ કે સાથ સહન કરે । “અરતિરૂપ ફસ માન-
સિક પરિણતિ કા ફલ ચિક્ષણકર્મવન્ધરૂપ હૈં ઓર ઉસસે જીવ કા

અચેલકમુનીને શીતઆદિ સતાવે ત્યારે અરતિ પણ થવાનો સંભવ છે
તેથી ૭મા અરતિપરીપહને સહન કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે.

‘ ગામાણુગામં ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ-ગામાણુગામં રીયતં-ગ્રામાનુગ્રામં રીયમાણમ્ એક ગામથી બીજા ગામ
તથા ઉપલક્ષણથી એક નગરથી બીજાનગર વિહાર કરતા અકિચ્ચનં-અકિચ્ચનમ્ તથા
અકિચ્ચન-પરિગ્રહ રહિત એવા અનગારં-અનગારમ્ મુનિને કહાય અરદ્
અણુપ્પવેસેજ્જા-અરતિ અનુપ્રવિશેત્ અરતિ-સંયમમાં અરુચિ અર્થાત્ મોહનીય કર્મના
ઉદયથી થનારી જે સંયમ અરુચિ રૂપ આત્મપરિણતિ-તથા સંયમમાં અદ્યુતિ, બદ્યુતિ
થઈ બીજા તો મુનિનું કર્તવ્ય છે કે, તે મુની તં પરિસદ્ તિતિક્ષે-તં પરીપહં તિતિક્ષેત
એ પરિપહને શાન્તીની સાથે સહન કરે “અરતિ રૂપ આ માનસિક પરિણતિનું
ફળ ચિક્ષણ કર્મવન્ધ રૂપ છે. અને તેનાથી જીવનું ચતુર્ગતિરૂપે સંસારમાં

‘ગામાનુગામં રીયંતં’ इत्यनेन रागादिनिवृत्तिः सूचिता ।

‘अकिंचणं’ इत्यनेन ममत्वरहितत्वं प्रवेदितम् ।

‘अरईअणुप्पवेसेज्जा’ इत्यनेन शब्दादिविषयाणां प्रबलता प्रदर्शिता ।

‘तितिवखे’ इत्यनेनानागरस्य परीषदसहिष्णुता सूचिता ॥ ૧૪ ॥

ઉક્તમર્થ દ્રઢ્યબાદ—

મૂલમ્—અરંદં પિટ્ટંઓ કિંચા, વિરંઓ આયરંવિલ્લપ્પ ।

ધર્મમારામે નિરારંભે, ઉવંસંતે, મુંળીં ચેરે ॥ ૧૫ ॥

છાયા—અરતિ પૃષ્ઠતઃ કૃત્વા, ચિરતઃ આત્મરક્ષિતઃ ।

ધર્મારામે નિરારમ્ભઃ, ઉપશાન્તઃ મુનિશ્ચરત્ ॥ ૧૫ ॥

ટીકા—‘અરંદં’ इत्यादि ।

વિરતઃ=હિંસાદિમ્યો નિવૃત્તઃ, આત્મરક્ષિતઃ=આત્મા રક્ષિતઃ નરકનિગોદાદિ-

चतुर्गतिक संसार में परिभ्रमण होता है” यह समझकर इस संयम विषयक अरति को साधु मनसे भी हटाते रहे ।

સૂત્રકાર ને “ગામાનુગામં” इस पद से रागादिक की निवृत्ति सूचित की है । “अकिंचणं” इस पद से मुनि को ममत्वरहित प्रदर्शित किया है ॥ “अरई अणुप्पवेसेज्जा” इस पद से शब्दादिक विषयों की प्रबलता प्रकट की है । “तितिवखे” इससे ‘अनागर को परीषद सहिष्णु होना चाहिये’ यह कहा है ॥ ૧૪ ॥

इसी अर्थ को दृढ करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘अरं पिट्ठंओ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(વિરંઓ-વિરતઃ) હિંસાદિક પાપોંસે વિરક્ત તથા (આયર-વિલ્લપ્પ-આત્મરક્ષિતઃ) નરકનિગોદાદિકકેદુઃખોંકે જનક અશુભ ધ્યાનસે

પરિભ્રમણ થાય છે. એવું સમજીને આ સંયમ વિષયક અરતિને સાધુએ મનથી પણ હટાવવી જોઈ એ.

સૂત્રકારે ગામાનુગામં આ પદથી રાગાદિકની નિવૃત્તિ સૂચિત કરેલ છે.

અકિંચણ—આ પદથી મુનિને મમત્વ રહિત પ્રદર્શિત કરેલ છે. અરઈઅ-
ણુપ્પવેસેજ્જા આ પદથી શબ્દાદિક વિષયોની પ્રબળતા પ્રગટ કરેલ છે. “તિતિવખે”
આથી અણુગારે પરીષદ સહિષ્ણુ બનવું જોઈ એ તેમ કહ્યું છે. ॥૧૪॥

આ અર્થને દ્રઢ કરતા સૂત્રકાર કહે છે. અરં પિટ્ઠંઓ ધ્યાનદિ.

અન્વયાર્થ—વિરંઓ-વિરતઃ હિંસાદિક પાપોથી વિરક્ત તથા આયરવિલ્લપ્પ-આત્મર-
ક્ષિતઃ નરક નિગોદાદિકના દુઃખના જનક એવા અશુભ ધ્યાનથી ચોતાના આત્માની રક્ષા

દુઃખજનકાદશુભધ્યાનાદ્ યેન સ તથા, યદ્વા-આયરક્ષિત્વ ઇતિચ્છાયા, આયઃ-
રત્નત્રયસ્ય લાભઃ, રક્ષિતો યેન સ તથેત્યર્થઃ । નિરાસમ્ભઃ=સાવધક્રિયાવર્જિતઃ, તથા
ઉપશાન્તઃ=ક્રોધાદિકપાપોપશમાદ્ મનોવાકાવયિકારવર્જિતઃ મુનિઃ, અરતિ પૃથ્તઃ
કૃત્વા=ઇયં ધર્મવિરાધિકેતિ મત્વા પરિત્યજ્ય ધર્મારામે ચરેત્, ઇત્યગ્રેણ સમ્બન્ધઃ ।

અરતિર્હિ ધૃષ્ટિર્વાત્માનં મલિનયતિ, જલદપટલાવલીસંકુલા ગાઢતિમિસ્પરિ-
વ્યાપ્તા રજનીવ વિવેકં સંહરતિ, અવિવેકં વર્ધયતિ, વજ્રમિવ જ્ઞાનાદિગુણાનુપધાત-
યતિ, અવિવેકિજનમનઃકાનનનિવાસિની કૃષ્ણસર્પિણીવ છિદ્રાન્વેષણપરા મુનોનાં

અપની આત્મા કી રક્ષા કરને વાલા અથવા “આયરક્ષિતઃ” રત્નત્રય-
લાભરૂપ આય-આવક કી રક્ષા કરને વાલા-સંભાલ રાખનેવાલા, તથા
(નિરાસંભે-નિરાસંભઃ) સાવધ ક્રિયા કે સેવન સે વર્જિત, તથા (ઉવસંતે
-ઉપશાન્તઃ) ક્રોધાદિક કપાય કે ઉપશમ સે મન વચન એવં કાય
સંબંધી વિકારો સે રહિત (મુણી-મુનિઃ) સાધુ (અરહં પિઢુઓ કિચ્વા-
અરતિ પૃથ્તઃ કૃત્વા) અરતિ કા પરિત્યાગ કર (ધમ્મારામે-ધર્મારામે)
ધર્મરૂપી ઉદ્યાન મેં (ચરે-ચરેત્) સદા લવલીન રહે-ઉસ મેં સર્વદા
વિચરતા રહે ।

યહ અરતિભાવ ધૂલી કી તરહ આત્મા કો મલિન કરતા હૈ ।
ઘાદલોં કે સમૂહ સે સંકુલ એવં ગાઢ અન્ધકાર સે વ્યાપ્ત રાત્રી કે
સમાન યહ વિવેકરૂપી સૂર્ય કો આચ્છાદિત કરદેતા હૈ, એવં અવિવેક-
રૂપી અન્ધકાર કી વૃદ્ધિ કરતા હૈ । વજ્ર કી તરહ જ્ઞાનાદિક ગુણરૂપ
પર્યંત કા ભેદન કરતા હૈ । યહ અરતિભાવ અવિવેકી જન કે મનરૂપ

કરવાવાળા અથવા “આયરક્ષિતઃ” રત્નત્રય લાભરૂપ આય-આવકની રક્ષા કરવા-
વાળા-સંભાળ રાખવાવાળા નિરાસંભે-નિરાસંભઃ તથા સાવધ ક્રિયાના સેવનથી
વર્જિત ઉવસંતે-ઉપશાન્તઃ ક્રોધાદિક કપાયના ઉપશમથી મન વચન અને કાય
સંબંધી વિકારોથી રહિત મુણી-મુનિઃ સાધુ અરહં પિઢુઓ કિચ્વા-અરતિ પૃથ્તઃ
કૃત્વા અરતિનો ત્યાગ કરી ધમ્મારામે-ધર્મારામે ધર્મરૂપી ઉદ્યાનમાં ચરે-ચરેત્
એમાં સદા વિચરતા રહે.

આ અરતિભાવ ધુળી માફક આત્માને મલીન કરે છે. વાદળોના સમૂહથી
છવાયેલ અને ગાઢ અંધકારથી વ્યાપ્ત રાત્રિના સમાન એ વિવેકરૂપી સૂર્યને
આચ્છાદિત કરે છે, અને અવિવેકરૂપી અંધકારની વૃદ્ધિ કરે છે. વજ્રની માફક
જ્ઞાનાદિક શુભરૂપ પર્યંતનું ભેદન કરે છે. આ અરતિભાવ અવિવેકી માણસના

સંયમપ્રાણાનપદ્ધતિ, કુઠાર ઇવ શ્રુતચારિત્રધર્મતરૂન્ સમુન્દ્યેદ્યતિ, કુપધ્યાહાર સ્વ
કર્મવ્યાધિ વર્ધયતિ । एवं विचिन्त्य धर्मारामे=धर्म एव निरन्तरानन्दहेतुतया
પ્રતિપાલ્યતયા ચારામઃ ધર્મારામઃ, યદ્વા-ધર્મ આરામ ઇવ કર્મસંતાપોપશાન્તા
જન્તુનાં નિર્વૃત્તિહેતુતયા સ્વામિલપિતફલપ્રદાનતથેતિ ધર્મારામઃ, યત્ર સમ્યક્ત્વં ભૂમિઃ,

વન મેં વિહાર કરને ચાલા હૈ, કૃષ્ણસર્પ કી तरह છિદ્રાન્વેષણ મેં તત્પર
રહતા હૈ, एवं मुनियों के संयमरूपी प्राणों का हरण करने वाला है ।
કુઠાર કી तरह શ્રુતચારિત્રરૂપી વૃક્ષ કો યહ મૂલસે ઉચ્છેદન કરતા હૈ ।
કુપધ્ય આહાર કી तरह કર્મવન્ધરૂપી વ્યાધિકો વધાને ચાલા હૈ । इस
પ્રકાર વિચાર કરકે સાધુ કો इस धर्मरूपी उद्यान में विचरण
કરતે રહના ચાહિયે । ઉદ્યાન જિસ પ્રકાર અપને મેં વિચરણ કરને
ચાલોં કો આનંદ કા હેતુ હોતા હૈ, उसी प्रकार यह धर्म भी अपने
આરાધકોં કો આનંદ કા કારણ હોતા હૈ, तथा उद्यान जिस प्रकार
પ્રતિપાલ્ય-રક્ષણ કરને કે યોગ્ય હોતા હૈ उसी प्रकार जीवन को सुन्दर
વનાને ચાલા હોને સે ધર્મ મી પ્રતિપાલ્ય-કરને યોગ્ય હોતા હૈ । अथवा
ધૂપ સે સંતૃપ્ત પ્રાણિયોં કે લિયે ઉદ્યાન જિસ પ્રકાર શીતલતા પ્રદાન
કરતા હૈ उसी प्रकार कर्मरूपी आताप के संताप से संतप्त प्राणियों को
શાંતિ કા હેતુ હોને સે एवं अभिलषित फल का देनेवाला होने से धर्म
મી એક ઉત્તમ ઉદ્યાન કે સમાન યહાં પ્રકટ કિયા ગયા હૈ । इस उद्यान

મનરૂપી વનમાં વિહાર કરનાર છે. કાળા સાપની માફક ડંથ દેવામાં તત્પર
રહે છે, અને મુનિયોના સંયમરૂપી પ્રાણોનું હરણ કરનાર છે. કુહાડાડે શ્રુત
ચારિત્રરૂપી વૃક્ષનું એ મૂળસાથે ઉચ્છેદન કરે છે, કુપધ્ય આહારની માફક કર્મ
બંધરૂપી વ્યાધિને વધારનાર છે. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને સાધુએ ધર્મરૂપી
ઉદ્યાનમાં વિચરણ કરતા રહેવું બેઠ્યો.

ઉદ્યાન જેમ તેની અંદર ફરનારાઓને આનંદ આપવાવાળું છે તેજ પ્રમાણે
ધર્મ પણ ચોતાના આધારરૂપ સાધુ માટે આનંદનું કારણ હોય છે. तथा उद्यान
જેમ પ્રતિપાલ્ય-રક્ષણ કરવાને યોગ્ય છે તેજ પ્રમાણે જીવનને સુંદર બનાવવાળા
ધર્મને પણ પ્રતિપાલ્ય-પાલન કરવાને યોગ્ય છે. अथवा धूपથી संतप्त બનેલા
પ્રાણીયોને ઉદ્યાન જેમ શીતળતા આપે છે તેજ પ્રમાણે કર્મરૂપી આ તાપથી
સંતૃપ્ત થયેલા પ્રાણીઓને માટે શાંતિના હેતુ હોવાથી અભિલષિત ફળને દેનાર
ધર્મને એક ઉદ્યાન રૂપથી અહિં બતાવવામાં આવેલ છે. આ ઉદ્યાનમાં સમ્યક્ત્વ

ગુપ્તિરાલલાલઃ, સમિતિઃ પાલી, ક્ષાન્ત્યાદયો ધર્મા એવ દૃક્ષાઃ, વિનયસ્તેપાં મૂલમ્, ભાવના સલિલમ્, શ્રુતમેવ સ્કન્ધઃ ધર્મશુક્લધ્યાનરૂપાઃ શાખાઃ, ધ્યાન-ભેદાઃ પ્રશાખાઃ, યોગસંગ્રહાઃ પત્રાણિ, જ્ઞાનાદિગુણાઃ પુષ્પાણિ, સ્વર્ગાપવર્ગપ્રાપ્તિઃ ફલમ્, તદ્ગતં સુખં રસઃ, તસ્મિન્ ધર્મારામે ચરેત્-વિચરેત્, અરતિં નિરાકૃત્ય સ્વાધ્યાયધ્યાનેષુ પરાયણો મવેદિત્યર્થઃ ॥

‘અરહં પિટ્ઠઓ કિચ્ચા’ ઇત્યનેન મુનેરાત્મવલસંપન્નત્વં સૂચિતમ્ ।

‘વિરણ’ ઇત્યનેન મુનેવૈરાગ્યદશા પ્રદર્શિતા ।

મેં સમ્યક્ત્વ તો ભૂમિ છે, ગુપ્તિયાં ક્યારિયાં છે, સમિતિયાં હી પાલિયાં છે, ક્ષાન્ત્યાદિક ધર્મ વૃક્ષ છે, એવં ઉન વૃક્ષોં કા મૂલ વિનય છે । ભાવના-રૂપી જલ સે વે સદા હરે-ભરે રહતે છે । શ્રુતજ્ઞાન ઉનકા વિસ્તૃત સ્કંધ છે । ધર્મધ્યાન એવં શુક્લધ્યાન ઉનકી શાખાએ છે, ધ્યાન કે ભેદ ઉનકી પ્રશાખાએ છે । વત્તીસ યોગસંગ્રહ ઉનકે પત્ર, જ્ઞાનાદિકગુણ ઉનકે પુષ્પ, સ્વર્ગ એવં મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ ઉનકે ફલ, સ્વર્ગમોક્ષસંબંધી સુખ હી ઉનકા રસ છે । ઇતને મનોહર ઇસ ધર્મરૂપી ઉદ્યાન મેં સાધુ કા કર્તવ્ય છે કિ વહ અરતિ કો દૂર કર વિચરણ કરતા રહે । સ્વાધ્યાય એવં શુભધ્યાન મેં સદા આત્મપરિણતિ કો લગાતા રહે ।

‘અરહં પિટ્ઠઓ કિચ્ચા’ ઇસ પદ સે યહ સૂચિત કિયા ગયા છે કિ મુનિ કો આત્મવલ સે યુક્ત હોના ચાહિયે । “વિરણ” ઇસ પદ સે યહ જ્ઞાત હોતા છે, કિ મુનિ મેં ઇસ પ્રકાર કે વલ કી જાગૃતિ વિના વૈરાગ્ય દશા કે નહીં હો સકતી છે, અતઃ વૈરાગ્યદશા દૃઢ બનાની ચાહિયે ।

તો ભૂમિ છે. ગુપ્તિયો કચ્ચા છે, સમિતિયો પાળા છે, ક્ષાન્ત્યાદિક ધર્મવૃક્ષ છે, અને એ વૃક્ષોનું મૂળ વિનય છે, ભાવનારૂપ બળથી તે સદાય હયાંભયાં રહે છે. શ્રુતજ્ઞાન એનો વિશાળ સ્કંધ છે, ધર્મધ્યાન તેમજ શુક્લધ્યાન એની શાખાઓ છે, ધ્યાનનો ભેદ એની પ્રશાખાઓ છે, ૩૨ યોગ સંગ્રહ તેના પાન, જ્ઞાનાદિક શુભ તેનાં પુષ્પ, સ્વર્ગ અને મોક્ષની પ્રાપ્તિ એનાં ફળ સ્વર્ગ મોક્ષ સંબંધિ સુખ તે એનો રસ છે, આવા મનોહર ધર્મરૂપી બાગમાં સાધુનું એ કર્તવ્ય છે કે તેઓ અરતિને દૂર કરી વિચરણ કરતા રહે. સ્વાધ્યાય અને શુભ ધ્યાનમાં પોતાના આત્માપરિણતી ને લગાવતા રહે.

અરહં પિટ્ઠઓ કિચ્ચા-આ પદથી એ સૂચિત કરવામાં આવે છે કે, મુનિયે આત્મબળથી યુક્ત રહેવું જોઈએ “વિરણ” આ પદથી મુનિમાં બળતી બાગૃતી વિના વૈરાગ્યદશા આવી શકતી નથી. આથી વૈરાગ્યદશા દૃઢ બનાવવી જોઈએ.

- ‘આયરક્ષિણ’ ઇત્યનેન મુનેરાસ્રવનિરોધઃ પ્રદર્શિતઃ ।
 ‘નિરાસ્રંભે’ ઇત્યનેન મુનેસતિપરીપહવિજયયોગ્યતા સૂચિતા ।
 ‘ઊવસંતે’ ઇત્યનેન કપાયનિગ્રહિત્વં સૂચિતમ્ ।
 ‘મુણી’ ઇત્યનેન પ્રવચનરહસ્યમનનશીઘ્રત્વં પ્રતિયોધિતમ્ ।
 ‘ધમ્મારામે’ ઇત્યનેન સંયમસ્ય રમણસ્થાનત્વં સૂચિતમ્ ।
 ‘ચરે’ ઇત્યનેન મુનેઃ સંયમવિષયે પ્રમાદવર્જિતત્વં પ્રવેદિતમ્ ।

“આયરક્ષિણ” ઇસસે યહ સૂચિત કિયા હૈ કિ મુનિ કો આસ્રવ કા નિરોધ કરતે રહના ચાહિયે । “નિરાસ્રંભે” પદ સે યહ જ્ઞાત હોતા હૈ કિ અસતિપરીપહ કો જીતને કી યોગ્યતા વિના મુનિઅવસ્થા આતી નહીં હૈ, કયોં કિ ઊસી અવસ્થા મેં નિરાસ્રંભતા રહતી હૈ । “ઊવસંતે” પદ સે યહ સૂચિત હોતા હૈ કિ વિના કપાય કે નિગ્રહ હુણ આત્મા મેં મુનિવ્રત પાલને કી યોગ્યતા નહીં આતી હૈ, અતઃ કપાય કા નિગ્રહ અવશ્ય કરના ચાહિયે । ‘મુણી’ પદ સે કપાય કા નિગ્રહ કરને વાલા તમી હો સક્તા હૈ કિ જવ વહ પ્રવચન કે રહસ્ય કા મનન કરને વાલા હોતા હૈ । વિના ઇસા કિયે આત્મા કપાયોં કા નિગ્રહ નહીં કર સક્તા હૈ । “ધમ્મારામે” ઇસસે યહ સૂચિત કિયા ગયા હૈ કિ કપાયોં કા નિગ્રહ કરને કા વહી આત્મા પરિણામશાલી હોગા—જો સંયમ મેં રમણ કરને કી ભાવના રહતા હોગા, ઇસકે વિના નહીં । ઇસી લિયે સંયમ કો રમણ કા સ્થાન બતલાયા ગયા હૈ । “ચરે” ઇસ ક્રિયાપદ સે મુનિ કો સંયમ કે વિષય મેં પ્રમાદરહિત હોના ચાહિયે યહ બતલાયા ગયા હૈ ।

આયરક્ષિણ આ પદ્ધતિ એમ સૂચિત કરવામાં આવ્યું છે કે, આસ્રવનો નિરોધ કરીને રહેવું બેઠે એ નિરાસ્રંભે આ પદ્ધતિ અસતિ પરીપહને જીતવાની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કર્યા સિવાય મુનિઅવસ્થા આવતી નથી. કારણ કે, આ અવસ્થામાં નિરાસ્રંભતા રહે છે. ઊવસંતે આ પદ્ધતિ સૂચિત થાય છે કે, કપાયનો નિગ્રહ કર્યા સિવાય આત્મામાં મુનિવ્રત પાળવાની યોગ્યતા આવતી નથી બેઠી કપાયનો નિગ્રહ અવશ્ય કરવો બેઠે એ. “મુણી” પદ્ધતિ કપાયનો નિગ્રહ કરવાવાળા ત્યારે જ બની શકે છે કે, બ્યારે પ્રવચનનું રહસ્ય મનન કરનાર બની રહે. એમ કર્યા સિવાય આત્મા કપાયોનો નિગ્રહ કરી શકતો નથી. ધમ્મારામે આ પદ્ધતિ સૂચિત કરવામાં આવેલ છે કે—કપાયોનો નિગ્રહ તેજ આત્મા કરવાને પરિણામ શાળી બને છે જે સંયમમાં રમણ કરવાની ભાવના રાખતા હોય, તેના વગર નહીં. આથી સંયમને રમણનું સ્થાન બતાવેલ છે. ચરે આ પદ્ધતિ મુનિએ સંયમના વિષયમાં પ્રમાદ રહિત બનવું બેઠે એ એમ બતાવેલ છે.

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે—

અચલપુરે જિતશત્રુનામ્નો રાજ્ઞઃ પુત્રોઽપરાજિતનામા રોહાચાર્યસ્ય સમીપે દીક્ષિતોઽભવત્ । એકદા રોહાચાર્યઃ સ્વશિષ્યપરિવારૈઃ સહ ગ્રામાનુગ્રામં વિહરન્ તગરાનગરીં સમવસ્યતઃ । તદાનીં રોહાચાર્યસ્ય સ્વાધ્યાયશિષ્ય આર્યરોહનામાઽઽ-ચાર્યં ઉજ્જયિન્યામાસીત્, તસ્ય જ્યેષ્ઠઃ શિષ્યઃ શ્રુતકીર્તિનામકો મુનિઃ શિષ્ય-પરિવારૈઃ સહ ગ્રામાનુગ્રામં વિહરમાણસ્તગરાનગર્યાં સમાગતઃ । રોહાચાર્યઃ શિષ્ટા-ચારાનન્તરં શ્રુતકીર્તિમુનિં પૃચ્છતિ—ઉજ્જયિન્યાં સાધવો નિરુપસર્ગં તિષ્ઠન્તિ કિમ્, ? શ્રુતકીર્તિમુનિઃ પ્રાહ—ભદન્ત ! સર્વં તત્ર કુશલમ્, કિન્તુ રાજપુત્રઃ પુરોહિતપુત્રશ્ચ

દૃષ્ટાન્ત—અચલપુર મેં જિતશત્રુ રાજા કા અપરાજિત નામકા પુત્ર થા । વહ ધર્મશ્રવણ કર રોહાચાર્ય કે સમીપ દીક્ષિત હો ગયા । એક સમય કી વાત હૈ કિ રોહાચાર્ય અપની શિષ્યમંડલી સહિત ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતે હુએ તગરાનગરી પધારે । ઉસ સમય ઇન રોહાચાર્ય કે સ્વાધ્યાય શિષ્ય આર્યરોહ નામકે આચાર્ય ઉજ્જયિની નગરી મેં વિરાજમાન થે । ડન આર્યરોહ આચાર્ય કે મુખ્ય શિષ્ય શ્રુતકીર્તિ બી અપને શિષ્યપરિ-વાર કે સાથ ગ્રામાનુગ્રામ વિચરતે હુએ ઇસી તગરા નગરી મેં રોહાચાર્ય કે પાસ પધારે । રોહાચાર્ય ને શિષ્ટાચાર કે અનન્તર શ્રુતકીર્તિ મુનિ સે પૂછા—કહો ઉજ્જયિની નગરી મેં સાધુ મંડલ તો સુખશાતા મેં વિરાજમાન હૈ ન ? સુનકર શ્રુતકીર્તિ મુનિ ને ઉત્તર મેં કહા—ભદન્ત ! સવ સુખશાતા મેં વિરાજમાન તો હૈં, પરન્તુ વહાં કે રાજા કા એવં પુરોહિત કા પુત્ર

દૃષ્ટાન્ત—અચળપુરમાં જિતશત્રુ રાજાને અપરાજિત નામનો પુત્ર હતો. તેણે ધર્મશ્રવણ કરીને રોહાચાર્ય પાસે દીક્ષા લીધી. એક સમયની વાત છે, કે રોહાચાર્ય પોતાની શિષ્ય મંડળી સાથે વિહાર કરતા કરતા તગરાનગરીમાં પધાર્યા. આ સમયે રોહાચાર્યના સ્વાધ્યાય શિષ્ય આર્યરોહ નામના આચાર્ય ઉજ્જયિની નગરીમાં બિરાજમાન હતા. આ આર્યરોહ આચાર્યના મુખ્ય શિષ્ય શ્રુતકીર્તિ પણ પોતાના શિષ્ય પરિવાર સહિત એક ગામથી બીજે ગામ વિચરતા આ તગરા નગરીમાં રોહાચાર્યની પાસે પધાર્યા. રોહાચાર્યે શિષ્ટાચાર પછી શ્રુતકીર્તિ મુનિને પૂછ્યું, કહો ! ઉજ્જયેની નગરીમાં સાધુ મંડળ તો સુખ શાતામાં બીરાજમાન છે ને ? આ સાંભળી શ્રુતકીર્તિ મુનિએ જવાબમાં કહ્યું, ભદન્ત ! દરેક સુખ શાતામાં બિરાજમાનતો છે, પરંતુ ત્યાંના રાજાનો અને પુરોહિતનો પુત્ર

મુનીનુદ્વેજયતઃ । શ્રુતકીર્તિરેતદ્વચનં શ્રુત્વા રોહાચાર્યોઽપરાજિતમુનિં કથયતિ-ત્વ
 સાંસારિકભાવપુત્રોઽસૌ રાજકુમારઃ સાધુજનમુદ્વેજયતિ, તં પ્રતિવોધયિતુમ્બ્રજ્યિન્યાં
 ત્વયા ગન્તવ્યમ્ । આચાર્યનિદેશેન શિષ્યપરિચારેણ સહાપરાજિતમુનિરુજ્જયિન્યાં
 ગતઃ । તત્રાર્યરોહાચાર્યં પ્રણમ્યાપરાજિતમુનિર્ગિતાવેલાયાં રાજકુલં પ્રવિષ્ટઃ ।
 તત્રાપરાજિતમુનિં રાજપુત્ર-પુરોહિતપુત્રો સોપઢાસં વન્દનં કુરુતઃ । મુનિવરે ગતે સત્તિ
 તસ્મિન્નેવ સમયે મુનેરુપહાસાઞ્જઠરે વેદના સમુત્પન્ના, ઉચ્ચૈઃ સ્વરેણ તૌ રોદનં

મુનિયોં કો દુઃખિત કિયા કરતે હું । શ્રુતીકર્તિ કે વચનોં કો સુનકર
 રોહાચાર્ય ને અપને શિષ્ય અપરાજિત મુનિ સે કહા કિ ઉજ્જયિની
 નગરી કા જો કુમાર હૈ વહ તુમ્હારે સાંસારિક ભાઈ કા પુત્ર હૈ । ઇસ
 સમય વહ સાધુઓં કો ઉજ્જયિનીનગરી મેં કષ્ટ પહુંચા રહા હૈ અતઃ
 તુમ ઇસકો સમજાને કે લિયે વહાં જાઓ । આચાર્ય કે આદેશ સે
 અપરાજિત મુનિ તગરાનગરી સે શિષ્યમંડલી સહિત વિહાર કર ઉજ્જ-
 યિની નગરી મેં આર્યરોહ આચાર્ય કે પાસ પહુંચે, ઔર ઇનકો વંદન
 નમસ્કાર કિયે । વાદ ભિક્ષા કે સમય આચાર્ય કે નિદેશ સે વે અપરા-
 જિત મુનિ રાજમહલ મેં પ્રવિષ્ટ હુએ । વહાં ઇન અપરાજિત મુનિ કે
 સાંસારિક ભાઈ કા પુત્ર રાજકુમાર એવં પુરોહિત પુત્ર ને ઇન મુનિ કો
 ઉપહાસપૂર્વક વંદના કિ । અપરાજિત મુનિ કે વહાં સે ચલે જાને પર
 મુનિ કે ઉપહાસ સે ઇન દોનોં કે પેટ મેં વઢે જોર સે પીડા હોને લગી ।

મુનિયોને દુઃખિત કયા કરે છે. શ્રુતકીર્તિનું વચન સાંભળીને રોહાચાર્યે પોતાના
 શિષ્ય અપરાજિત મુનિને કહ્યું કે, ઉજ્જૈની નગરીના જે રાજકુમાર છે તે તમારા
 સાંસારિક ભાઈના પુત્ર છે. આ સમયે તેઓ ઉજ્જૈની નગરીમાં સાધુઓને કષ્ટ
 પહોંચાડી રહ્યા છે જેથી તમે તેને સમજાવવા માટે ત્યાં જાવ. આચાર્યના
 આદેશથી અપરાજિત મુનિ તગરાનગરીમાંથી શિષ્ય મંડળી સાથે વિહાર કરી
 ઉજ્જૈની નગરીમાં આર્યરોહાચાર્યની પાસે આવી પહોંચ્યા અને તેમને વંદન
 નમસ્કાર કર્યા બાદ શિક્ષાના સમયે આચાર્યના આદેશથી અપરાજિત મુનિયે
 રાજમહેલમાં પ્રવેશ કર્યો. ત્યાં તે અપરાજિત મુનિના સાંસારિક ભાઈના પુત્ર
 રાજકુમાર તેમજ પુરોહિતપુત્રે તે મુનિને ઉપહાસપૂર્વક વંદના કરી. અપરા-
 જિત મુનિના ત્યાંથી જવા બાદ મુનિનો ઉપહાસ કરવાથી આ બંનેના પેટમાં
 એકદમ પીડા ઉત્પન્ન થઈ. બંને જણા ખૂબ જોર જોરથી રાડો પાડવા લાગ્યા,

कृतवन्तौ । राजा पुरोहितश्च पुत्रयोर्दुस्वस्थां परिवारवचनाद् विज्ञाय आर्यरोहा-
चार्यस्य समीपं गतवन्तौ । तत्रार्यरोहाचार्यं प्रणम्य तौ सरोदनं प्रार्थितवन्तौ,
भदन्त ! प्रसीदतु भवान्, अस्मद्बालकौ रक्षणीयौ, इत्यादि । आर्यरोहाचार्य आह—
राजन् ! अस्मिन् विषये न किञ्चिज्जानामि, इमं प्राधुणकं महामुनिं प्रसादय ।
ततस्तद्वचनाद्राजा पुरोहितेन सहापराजितमुनेः पार्श्वं गत्वा तं प्रणम्य ब्रवीति—
हे भदन्त ! स्वभ्रातृपुत्रं जीवितं कुरु, मुनिः प्राह—साधुपीडकस्य पुत्रस्यापि
शिक्षां दातुं न शक्नोषि?, नीतिमार्गानुसारिणा राज्ञाऽन्यस्यापि कस्यचिदपराधे
कृते तु पुत्रो निग्रहणीयः किं पुनर्यः साधुबाधकः ? नृपेणोक्तम्—भदन्त ! ममापराधं-

दोनों जने खूब जोर २ से चिल्लाने लगे । राजा एवं पुरोहित दोनों ही
परिवार जनों के कहने से अपने २ पुत्रों की दुस्वस्था जानकर साथ २
आर्यरोहाचार्य के पास आये । आचार्य महाराज को वंदन कर वे दोनों
के दोनों उनके समक्ष रोते २ प्रार्थना करने लगे, कि भदन्त ! आप हमारे
ऊपर प्रसन्न होइये—कृपा कीजिये—हमारे बालकों की रक्षा कीजिये इत्यादि।
आर्यरोहाचार्य ने कहा कि राजन् ! मैं इस विषय में कुछ नहीं जानता हूँ ।
यह जो महेश्वररूप में महामुनि आये हुए हैं उनके पास जाओ और उनसे
कहो । राजा आर्यरोह के वचन से पुरोहित को साथ लेकर अपराजित
मुनि के पास गया और उनको वंदन कर कहने लगा कि—हे भदन्त !
अपने भाई के पुत्र को जीवित करो । मुनि ने कहा कि—हे राजन् राजनीति
इस प्रकार की है कि जब अपना पुत्र साधारण जनता का भी अपराध करे
तो उसके लिये शिक्षा है तो फिर जो मुनिजनों को पीड़ा पहुंचावे

राजा અને પુરોહિત બન્ને પોતાના પરિવાર બંનેના કહેવાથી પોતાના પુત્રોની
દુઃખદ અવસ્થા બાણીને આર્યરોહાચાર્યની પાસે આવ્યા. આચાર્ય મહારાજને
વંદના કરીને બન્ને તેમની સમક્ષ રેતાં રેતાં પ્રાર્થના કરવા લાગ્યા કે, હે
ભદન્ત ! અમારા ઉપર પ્રસન્ન થાઓ, કૃપા કરો, અમારાં બાળકોની રક્ષા કરો,
વિગેરે. આર્યરોહાચાર્યે કહ્યું, હે રાજન્ ! આ વિષયમાં હું કંઈ બાણુતો નથી. મહેશ્વ-
રરૂપમાં મહામુનિ પધાર્યા છે તેમની પાસે બાણુ અને તેમને કહેા. આર્યરોહનાં
વચન સાંભળી રાજા પુરોહિતને સાથે લઈને અપરાજિત મુનિની પાસે ગયા. અને
તેમને વંદના કરીને કહેવા લાગ્યા કે, હે ભદન્ત ! તમારા ભાઈના પુત્રને જીવતદાન
આપો. મુનિએ કહ્યું કે, હે રાજન્ ! રાજનીતિ એવા પ્રકારની છે કે, બ્યારે આપનો
પુત્ર સાધારણ જનતાનો પણ અપરાધ કરે તો તેને માટે શિક્ષા છે તો મુનિરાજને

समस्त, बालकौ महाकष्टं प्राप्तौ, अनुकम्पस्य भगवन् । स्वस्थावस्थासम्पन्नौ ही
मुनिदेशनया प्रव्रज्यां स्वीकृतवन्तौ । तत्र राजपुत्रः शुद्धभावेन चारित्रपालनं कृत्वा
पुनः, पुरोहितपुत्रस्तु जातिमदं कृत्वा पूर्वपीडास्मरणेन गुरुं प्रति सामर्थ्यं जातः।
द्रावपि चारित्रं पालयन्तौ मृत्वाज्जन्ते देवलोकं गतौ ।

इतश्च कौशाम्बीनगर्यां तापसनामकः कोऽपि धनिक आसीत् । स स्वष्टे
मृत्वा लोभावेशेन सूकरो जातः, स स्वभवनादिकं दृष्ट्वा जातिस्मरणं प्राप्तवान् ।

उसके लिए राजा को चाहिये कि जरूर ध्यान रखे । अपराजित मुनि
की बात सुनकर राजाने समझकर कहा कि महाराज ! आजपीछे ऐसा
नहीं होगा, आप मेरे इस अपराध को क्षमा करें । तथा राजकुमार
और पुरोहित पुत्र ने भी अपराजित मुनि से क्षमा मांगी । फिर उपदेश
सुनकर वे दोनों प्रव्रजित हो गये । प्रव्रज्या लेने पर राजपुत्र ने तो
शुद्ध भाव से चारित्र का पालन किया परन्तु जो पुरोहित का पुत्र था,
वह जाति मद से संयम का आराधन पूरा नहीं करता था और अपने
पेट की पीड़ा को याद करता हुआ अपने गुरु अपराजित मुनि पर रुष्ट
भाव रखता था । अन्त में ये दोनों ही चारित्र की पालना करते हुए
काल धर्म को पाकर देव लोक में देव हुए ।

इधर-कौशाम्बी नामकी एक नगरी थी । उसमें तापस नामका एक
हिंसक धनिक व्यक्ति रहता था । वह लोभ के वश होकर मरा तो
अपने ही घर पर सूअर की योनि में उत्पन्न हुआ । अपने पूर्व के भवना-

पिडा पडोयाडनाशयो भाटे राज्ञे नृदर ध्यान राजपुं नोर्धये. अपराजित
मुनिनी बात सांभलीने राज्ञे समल नृधने कहुंके, भडाराज ! डवेथी येवुं
'नडी' भने. आप भास आ अपराधने क्षमा करो. राजकुमार अने पुरोहि-
तना पुत्रे पणु अपराजित मुनिनी क्षमा मांगी, त्पार भाद उपदेश सांभलीने
ते भन्ने प्रव्रजित भन्या. प्रव्रज्या लीधा पछी राजपुत्रे शुद्ध भावथी चारित्रनुं पालन
'कथुं' परंतु जे पुरोहितने पुत्र हुता ते नतीना भदना डारले संयमनुं आरा-
धन पूणु रीते करतो न हुतो अने पोताना पेटनी पीडाने याद करतां करतां
अपराजित मुनि उपर क्रोधभाव राखतो हुतो. अंतमां जे भन्ने चारित्रनुं पालन
करतां करतां काणधर्मे पामीने देवलोकां देव थया.

आ तरङ्ग कौशाम्बी नामनी एक नगरी हुती. जेमां तापस नामने
जेक हिंसक धनवान भाषुस रहितो हुतो. ते दोलवशे करीने पोताना न
धरमां सपरः (७५) । इये जन्मयो. पोताना पूर्वना भकान आदि नोर्धने

एकदा तत्पूर्वभवपुत्रास्तं तस्यैव श्राद्धदिने हतवन्तः, ततः स्वगृह एवासौ सर्पो जातः, तस्मिन्नपि भवे तस्य जातिस्मरणं संजातम् । पुनस्तः एव पूर्वभवपुत्रास्तं सर्पं गृहान्तर्भ्रमन्तं दृष्ट्वा जघ्नुः । तदनन्तरमसौ स्वपुत्रस्य पुत्रोऽभवत्, पित्रा तस्य 'अशोकदत्त' इति नाम कृतम् । स तत्रापि जन्मनि जातिस्मरणं प्राप्य मूकत्वमङ्गी-
चकार । पूर्वभवीया पुत्रवधूरिदानीं माता जाता, कथमेनां मातेति ब्रवीमि । पुत्रोऽपि पिताभवत् कथमेनं 'तातः' इति संवोधयामि, इत्येवं मनसि विचार्य स मूकोऽभवत् ।
मातापितृभ्यां तन्मूकत्वापनयनार्थं बहवः प्रयत्नाः कृतास्तथापि तस्य मूकत्वं नाप-
गतम्, अतो लोकास्तं मूकनाम्नाऽऽह्वयन्ति ।

दિકको देखकर उस सूअर के बच्चे को जातिस्मरण ज्ञान हो गया । एक दिन की बात है कि पुत्रोने अपने बाप के श्राद्ध के निमित्त उस सूअर को मार डाला । यह मर कर अपने ही घर में सर्प हुआ । इस भव में भी इसे जातिस्मरण ज्ञान हो गया । पुत्रों ने अपने घर में इधर उधर घूमते हुए सर्प को जब देखा तो उसको मार डाला । मर कर यह तृतीय भव में अपने पुत्र का पुत्र हुआ । पिताने इसका नाम अशोकदत्त रक्खा । इस अवस्था में भी इसे जातिस्मरण ज्ञान हो गया, अतः इसने मूकपना अंगीकार कर लिया । जो पूर्वभव में मेरी पुत्रवधू थी वह इस भव में माता हो गई है अतः कैसे तो इसे माता कह कर पुकारूँ तथा जो पुत्र था वह भी अब मेरा बाप बन गया है इसलिये अब इसे पिता कैसे कहूँ, ऐसा मन में विचार कर उसने अपना

આ સૂવરના બચ્ચામાં જાતિ સ્મરણ જ્ઞાન થયું. એક દિવસની વાત છે. પુત્રોએ પોતાના બાપના શ્રાદ્ધ નિમિત્તે આ સૂવરને મારી નાખ્યું. ત્યાંથી મરીને ફરીથી પોતાના એજ ઘરમાં સર્પ થયો. આ ભવમાં પણ તેને જાતિ સ્મરણ જ્ઞાન થયું. પુત્રોએ પોતાના ઘરમાં આમ તેમ ધુમતા સર્પને ન્યાયે જોયો ત્યારે તેને મારી નાખ્યો. મરીને ત્રીજાભવમાં પોતાના પુત્રના પુત્ર (પૌત્ર) તરીકે જન્મ્યો. પિતાએ તેનું નામ અશોકદત્ત રાખ્યું. આ અવસ્થામાં પણ તેને જાતિસ્મરણ જ્ઞાન થયું. આથી તેણે મૌનવ્રત ધારણ કરી લીધું. પહેલા ભવમાં જે મારી પુત્રવધૂ હતી તે આ ભવમાં મારી માતા થઈ છે તો કેવી રીતે હું. માતા કહીને બોલાવું. જે મારો પુત્ર હતો તે અત્યારે મારો બાપ થઈ ગયેલ છે તેથી હવે તેને પિતા તરીકે કેમ સંબોધન કરું ? એમ મનમાં વિચાર

एकदा चतुर्गानधराः स्थविराः स्वज्ञानोपयोगेन मूकं विज्ञाय तं प्रति-
बोधयितुं तत्र शिष्यपरिवारैः सह समवृत्ताः, तैश्च मूकगृहे द्वौ भ्रमणौ प्रेषितौ
तत्रैकेन मूकस्य पुरतः स्थविरशिक्षिता गाथा पठिता ।

“ तावस ! किमिणा ? मूअव्वयेण पडिवज्ज जाणिउं धम्मं ।

मरिऊण सूअरोग, जाओ पुत्तस्स पुत्तोत्ति ॥ १ ॥ ”

मूकभाव (गुंगापन) रखना ही अच्छा समझा । माता पिता ने अपने
बच्चे की जब ऐसी स्थिति देखी तो उसकी मूकता दूर करने के लिये
उन्होंने अनेक प्रयत्न किये, परन्तु उसकी मूकता दूर नहीं हुई, इसलिये
लोगों ने उसका नाम “ मूक ” रख दिया, और इसी नाम से उसे
बुलाने लगे ।

एक समय कि बात है कि चार ज्ञान के धारी स्थविर मुनि अपने
ज्ञानोपयोगसे उस मूक की परिस्थितिको जानकर उसे प्रतियोधित करनेके
लिये वहां शिष्यमंडलीसहित आये । :उन्होंने उस मूकके घर पर दो
मुनियों को भेजा । उनमेंसे एक मुनिने उस मूक के आगे स्थविरशिक्षा
से युक्त एक गाथा पढ़ी । वह गाथा इस प्रकार है—

तावस ! किमिणा ? मूअव्वयेण पडिवज्ज जाणिउं धम्मं ।

मरिऊण सूअरोग, जाओ पुत्तस्स पुत्तोत्ति ॥ १ ॥

करीने ते आणके भूंगापणुं राअवातुं येअथ भान्थुं. माता पिताअे न्हादे आणकनी
आ स्थिति नेअ त्हादे तेनुं भूंगापणुं हर करवा भाटे अनेक प्रयत्नो कया परंतु
तेनुं भूंगापणुं हर न थयुं. आथी बोकाअे तेनुं नाम “भूंगा” राअथुं. अने
अेअ नामथी तेने बोलाववा लाअ्या.

अेअ वअत आर ज्ञानना धारी स्थविरे पोताना ज्ञानना उपयोगधी
आ भूंगानी परिस्थिति नअीने तेने प्रतियोधित करवा भाटे शिष्य
मंडली साथे त्यां पधाय्या. तेअेअे आ भूंगाना घेर अे मुनियेने भोअ्या.
आभांथी अेअ मुनिये आ भूंगानी आगण स्थविरनी शीअवेली अेअ गाथा गाअ.
ते गाथा आ प्रकारनी अे.

तावस ? किमिणा ? मूअव्वयेण, पडिवज्ज जाणिउं धम्मं ।

मरिऊण सूअरोग, जाओ पुत्तस्स पुत्तोत्ति ॥ १ ॥

છાયા—તાપસ ! કિમનેન મૂકવ્રતેન પ્રતિપદ્યસ્ય જ્ઞાત્વા ધર્મમ્ ।

મૃત્વા સૂકર ઉરગો જાતઃ પુત્રસ્ય પુત્ર ઇતિ ॥ ૧ ॥”

મૂકસ્તાં ગાથાં શ્રુત્વાઽઽશ્ચર્યે ગતસ્તૌ પ્રણમ્ય પૃચ્છતિ — ભવદ્ગિરેતત્ કથં જ્ઞાતમ્ ? તૌં વ્રૂતઃ—ઈહોદ્યાનેઽસ્મદ્ગુરવઃ સમવસૃતાસ્તે સ્વલ્પ જ્ઞાનન્તિ । તત્તોઽસૌ મૂકસ્તાભ્યાં શ્રમણાભ્યાં સદ્ ગત્વા નગરોદ્યાને સ્થવિરાણાં વન્દનં કૃત્વા તદ્દેશાં શ્રુત્વા શ્રાવકો ભૂત્વા મૂકત્વં પરિત્યક્તવાન્ ।

इतश्च कृतजातिमदः पुरोहितपुत्रजीवदेवः कृताञ्जलिः सन् महाविदेहे तीर्थकर-
समीपे पृच्छति-भगवन् ! किमहं सुलभबोधिस्तदितरो वा ? भगवता प्रोक्तम्—त्वं
दुर्लभबोधिकोऽसि । देवः पुनरपृच्छत्—इतश्च्युतः सन् कुत्राहमुत्पन्नो भविष्यामि ?

હસ ગાથા કો સુનકર મૂક કો વડા ભારી આશ્ચર્ય હુઆ । ઉસને
उन दोनों को नमस्कार कर पूछा—आपने हमारी सूअर की पर्याय से
लेकर यहां तक की समस्त परिस्थिति कैसे जानली ? उन्होंने कहा—कि
इस नगर के उद्यान में हमारे गुरु महाराज पधारे हुए हैं वे तुम्हारी
इस समस्त स्थितिको जानते हैं । मूकने जब यह सुना तो वह उनदोनों
मुनियों के साथ उद्यान में आया । उसने सब मुनियों को नमस्कार
एवं वंदन किया । पश्चात् उनसे धर्मका उपदेश सुनकर श्रावक हो गया
और मूकता का परित्याग कर दिया ।

જાતિમદ કરને ચાલા જો પુરોહિતપુત્ર કા જીવ થા કિ જો
मरकर देव की पर्याय से उत्पन्न हुआ था उसने हाथ जोड़ कर महा-
विदेह क्षेत्र में तीर्थकर श्री सीमंधर स्वामी के पास ऐसा प्रश्न किया

આ ગાથા સાંભળીને તે મૂંગાને ભારે આશ્ચર્ય થયું. તેણે આ બંને સ્થવિરોને
नमस्कार करीने पूछयुं, “तमोऽये भारी सूवरनी स्थितिथी मांडीने आज सुधीनी
સમસ્ત પરિસ્થિતિ કેમ બાણી ?” તેઓએ કહ્યું કે, “આ નગરના બગીચામાં અમારા
गुरु महाराज पधायो छे अने तेओ तमारी सवणी पीना बहो छे.” મૂંગાએ
બંન્ધારે આ બાણ્યું ત્યારે તે બંને મુનિઓની સાથે બગીચામાં આવ્યો, અને તેણે
બધા મુનિઓને નમસ્કાર અને વંદના કરી. ત્યાર પછી તેમની પાસેથી ધર્મનો
ઉપદેશ સાંભળીને તે શ્રાવક બની ગયો અને મૂંગાપણુને છોડી દીધું.

જાતિમદ કરવાવાળા પુરોહિત પુત્રનો જીવ જે મરીને દેવની પર્યાયમાં
उत्पन्न थयो हुतो तेणु हाथ जोडीने महाविदेह क्षेत्रमा तीर्थ'कर श्रीमंधर स्वामी
ની સમક્ષ એવો પ્રશ્ન કર્યો કે, “હે ભગવત ! હું સુલભબોધી છું કે દુર્લભ-
बोधी छुं ?” ભગવાને જવાબમાં કહ્યું કે, તમે દુર્લભબોધી છો. દેવે કરી પ્રશ્ન

भगवता कथितम्-कौशाम्बीनगर्यां मूकभ्राता भविष्यति । धर्मप्राप्तिश्च मूकादेव तव भविष्यति । इत्येवं भगवद्वचनं श्रुत्वाऽसौ देवस्तं प्रणम्य कौशाम्बीनगर्यां मूकोपान्तिकमागत्य तस्मै बहुद्रव्यं दत्त्वा प्रोक्तवान्-स्वर्गात् प्रच्युतस्य मम जन्म त्वन्मातुर्गर्भे भविष्यति, तदा तस्या अकालेऽप्याम्रदोहदो भविष्यति । तदर्थं सर्वतु फलवानाम्रवृक्षः कौशाम्ब्याः समीप एव पर्वतस्य निर्जनप्रदेशे मया रोपितः । यदा सा तदोहदाकुलाऽऽम्रं याचते तदा तस्याः पुरस्त्वया वाच्यम् । यदि जनिष्यमाणं बालकं मयं ददासि, तदाऽऽम्रफलमानीय तुभ्यं ददामि ।

किं है भगवान् ! मैं सुलभयोधि हूं किं दुर्लभयोधि हूं ? भगवान् ने इसके उत्तर में कहा कि तुम दुर्लभयोधि हो । देव ने पुनः प्रश्न किया कि मैं यहाँ से च्यवकर कहाँ उत्पन्न होऊँगा ? भगवान् ने कहा कि कौशाम्बी नगर में मूक के भाई होंगे । वहाँ तुम्हें धर्म की प्राप्ति मूक से ही होगी । इस प्रकार भगवान् की वाणी सुनकर वह देव उन्हें नमन कर के कौशाम्बी नगरी में मूक के पास आया और उसे बहुत सा द्रव्य देकर कहने लगा कि मैं स्वर्ग से च्यवकर तुम्हारी माता की कुक्षि में जन्म धारण करूँगा । उस समय उसे अकाल में आम खाने का दोहला उत्पन्न होगा । उस दोहले की पूर्ति के लिये सर्वश्रुतों में फल देने वाला आम का वृक्ष मैंने पहिले से ही कौशाम्बी नगरी के समीप के पर्वत के निर्जन प्रदेश में आरोपित कर दिया है । जिस समय वह दोहद से आकुलित होकर आम की याचना करे तो तुम उससे ऐसा कहना कि जो बालक उत्पन्न होगा उसे यदि तुम मुझे देना अंगीकार करो तो मैं तुम्हें लाकर आम देता हूँ ।

कथ्यो, हु अहिंथी व्ययीने कथां उत्पन्न यधश ? लगवाने कहुं के, कौशांभी नगरीमां भूंगानो बाध यधश. त्यां तमने धर्मनी प्राप्ति भूंगाथी यशे. आ प्रकारनी लगवाननी वाष्णी सांलणीने ते देव नमस्कार करीने कौशांभी नगरीमां ते भूंगांभी पासे आव्या अने तेने पूण द्रव्य दधने कडेवा लाग्या के हुं स्वर्गथी व्ययीने तमारी मातानी कुंजे जन्म धारण करीश. अे वधते तेने अकाणे केरी आवानो बाव (दोहद) उत्पन्न यशे. आ दोहदनी सङ्गता माटे सर्व इतुयोमां इण देनार आंगाना वृक्षने पडेवेथी ज कौशांभी नगरीनी पासे आवेला पर्वतना निर्जन प्रदेशमां मे वावी दीधेव छे. न्यारे ते दोहदथी व्याकुण यधने केरीनी मागणी करे ल्यारे तारे तेने अे प्रभावे कडेपुं के, जे आणक जन्मे तेने अने सांपवानुं स्वीकारे तो हुं तमने केरी बावी आपुं

एवमुक्ता तव माता यदि गर्भस्थपुत्रदानं स्वीकुर्यात् तर्हि तस्यै त्वया मदर्थि-
ताऽऽम्रफलं दातव्यम् । जातस्य मम यथा जैनधर्मप्राप्तिर्भवेत् तथा प्रयत्नस्त्वया
कर्तव्यः । एवमुक्त्वा स पुरोहितपुत्रजीवदेवो गतः ।

अन्यदा कदाचिदसौ देवो देवलोकान्च्युतस्तस्या गर्भे समुत्पन्नः, तदा तस्या
आम्रदोहदः समुत्पन्नः । मूकेन पूर्वोक्तव्यवस्थां कारयित्वाऽऽम्रदोहदः पूरितः ।
पुत्रो जातः । तस्यार्हदत्त इति नाम मातापितृभ्यां कृतम् । तदनन्तरमसौ मूक
स्तं बालसोदरं कालयन् साधूनां समीपं तद्वन्दनार्थं नयति, परन्त्वसौ दुर्लभबोधि-

तुम्हारी माता जब तुम्हारे इस कथन को मंजूर कर ले अर्थात्-
गर्भस्थ पुत्र का तुम्हें देना स्वीकार कर ले-तो तुम उसके लिये मेरे
द्वारा बताये हुए आम के वृक्ष से आम लाकर दे देना । तथा तुम इस
प्रकार का प्रयत्न भी करते रहना कि जिस से मुझे जैनधर्म की प्राप्ति हो ।
इस प्रकार कह कर वह पुरोहित के पुत्र का जीवदेव तिरोहित हो गया ।

किसी समय अपनी आयु के समाप्त होने पर यह स्वर्गलोक से
व्यवकर मूक की माता के गर्भ में अवतरित हो गया । उस की माता
को आम खाने का दोहला उत्पन्न हुआ । मूक ने पूर्वोक्त व्यवस्था करवा
कर उस के आम के दोहले की पूर्ति की । पुत्र का जन्म हुआ । उसका
नाम अर्हदत्त रक्खा गया । अर्हदत्त को जो कि अपना बालसोदर था
मूक ने बड़े चाव से लाड़ प्यार से रखा । कभी २ यह उसे साधुओं के
समीप भी वंदना कराने के लिये ले जाता था, परन्तु यह ता दुर्लभ-

तमारी माता ज्यारे तमारी आ भागणीने भंनुंर करे अर्थात्
गर्भमां रडेला पुत्रने तमने सोंपी देवाने स्वीकार करे त्यारे तमारे मे तमने
भतावेला आंजाना वृक्ष उपरथी डेरी लावीने तेने आपवी तथा तमारे ज्येवा
प्रकारना प्रयत्न करता रडेवुं के जेनाथी मने जैनधर्मनी प्राप्ति थाय
आ प्रमाणे कहीने ते पुरोहित पुत्रने जव-देव अवोप यर्ध गयो डेटलाक
समय जाद पोताना आयुष्यनी समाप्ति थवाथी ते देव स्वर्गदोडथी ज्यवीने
भूंगानी माताना गर्भमां उत्पन्न थया तेनी माताने डेरी जावानुं भन थयुं भूंगज्ये
पडेलेथी ज व्यवस्था करीने तेनी डेरी जावानी ध्वजाने पूषुं करी समय जतां
पुत्रने जन्म थयो तेनुं अर्हदत्त नाम राखवाभां आंयुं अर्हदत्त के जे पोताने
नाने लाध थतो हतो तेने भूंगज्ये भूण लाड प्यारथी राख्यो डोर्ध डोर्ध प्यार
ते तेने साधुज्योनी पासे वंदना करवा माटे लर्ध जतो हतो परंतु आ तो

ત્વેન સાધૂન્ દૃષ્ટા રોદિતિ । એવાચાલં પ્રતિચોધિતોઽપ્યસી ન ચોધિ ભ્રમતે ।
તતસ્તદ્ઝાતા મૂકઃ પ્રવ્રજિતો ભૂત્યા સંયમં પરિપાલ્ય દેવલોકં ગતઃ ।

અથ તેન મૂકજીવદેવેનાસી દુર્લભચોધિર્વાલકઃ પ્રતિચોધાયં જલોદરવ્યાધિ-
યુક્તઃ કૃતઃ, સ્વયં ચ વૈધરૂપં કૃત્વા તત્સમીપમાગત્યાહ-અહં સર્વરોગોપશ્ચમનં કરોમિ ।
જલોદરી વદતિ-મમ જલોદરવ્યાધિં પ્રશમય । વૈધેનોક્તમ્-અસાધ્યોઽયં તવ રોગઃ,
તથાપિ તત્પ્રતીકારં કરોમિ, યદિ મમીપથકોત્થલકં સ્કન્ધે સમારોપ્ય મામનુગચ્છસિ ।
જલોદરિણોક્તમ્-એવમસ્તુ । તતો વૈધેન સ જલોદરી નિવ્યાધિઃ કૃતઃ ।

ચોધિ થા, इसलिये साधुओं को देखते ही रोने लग जाता । इस प्रकार
पाल्य अवस्था से प्रतिचोधित करने पर भी यह चोधि को प्राप्त नहीं
कर सका । इसके बाद उसके बड़े भाई मूकने दीक्षा धारण कर ली और
संयम का पालन कर अन्तमें वह देवलोक में जा कर उत्पन्न हो गया ।

अपने सहोदर को प्रतिचोधित करने के लिये मूक के जीव देव ने
उसके शरीर में जलोदर की व्याधि उत्पन्न कर दी । यह उसने इस लिये
की कि देखें यह दुर्लभचोधि कैसे है । तथा स्वयं वैद्य का रूप ले कर
उसके पास आ कर कहने लगा कि मैं समस्त रोगों को दूर करने का
इलाज करता हूँ । उस जलोदरी बालक ने कहा कि ठीक है आप मेरे
इस रोग का इलाज करें । वैद्य ने प्रत्युत्तर में कहा कि यद्यपि तुम्हारा
यह रोग असाध्य है तौ भी इस शर्त पर प्रयत्न करता हूँ कि यदि तुम
मेरे इस कोथले को कि जिस में औषधियां भरी हैं अपने कंधे पर

ડુર્લભ બોધી હતો એટલે સાધુઓને બોધને શેવા લાગી જતો આ પ્રમાણે
બાલ્યાવસ્થાથી જ તેને પ્રતિબોધિત કરવા છતાં પણ તે બોધને પ્રાપ્ત કરી શક્યા
નહીં. આ બાદ તેના મોટાભાઈ મૂંગાએ દીક્ષા ધારણ કરીને, સંયમનું પાલન
કરીને, અંતમાં દેવ લોકમાં ઉત્પન્ન થયો. પોતાના સહોદરને પ્રતિબોધિત કરવા
માટે મૂંગાના છવ દેવે તેના શરીરમાં જજોદરની વ્યાધિ ઉત્પન્ન કરી. તે વ્યાધિ
એટલા માટે ઉત્પન્ન કરી કે, બેઈ તો ખરો કે તે ડુર્લભ બોધી કેવો છે? પછી
પોતે વૈદનું રૂપ લઈને તેની પાસે આવીને કહેવા લાગ્યા કે, સમસ્ત રોગોને
નિવારવાનો ઈલાજ મારી પાસે છે. તે જજોદરવાળા બાળકે કહ્યું કે, આપ
મારા આ રોગનો ઈલાજ કરો. વેદે પ્રત્યુત્તરમાં કહ્યું કે બે કે તમારો આ
રોગ અસાધ્ય છે. તો પણ એવી શરત ઉપર પ્રયત્ન કરું કે, તમે મારા આ
કોથળાને જેમાં ઔષધીઓ ભરી છે તેને તમારા કંધ ઉપર રાખીને મારી પાછળ

અથ તેન વૈદ્યેનૌપધકોત્થલકસ્તસ્મૈ વાહનાર્થં સમર્પિતઃ । સ ચાર્હદત્તઃ કોત્થલકમુત્યાપ્ય સ્કન્ધોપરિ વહન્ વૈદ્યપૃષ્ઠતથ્વલતિ । તથા સ કોત્થલકો દેવમા-
યપાસ્ત્રીવભારકારકઃ સંજાતઃ, તેનાતિમારેણ સ શ્રાન્તોઽપિ તમુત્સૃજ્ય ગન્તું ન શક્નોતિ,
ચિન્તયતિ ચ-અહં વચનવદ્ધોઽસ્મિ, કથમિમં મારં પરિત્યજામિ, કોત્થલકં વહતો
મમેતત્પૃષ્ઠતો ગમનેન પુનર્જલોદરવ્યાધિર્ન સ્યાદતો વજ્રસાર તુલ્યમિવ મારં વહન્ યદહં
લજ્જો ભવામિ તન્મે યોગ્યં ભવતીત્યેવં વિચિન્ત્ય સ કોત્થલકં વહન્ વૈદ્યમનુગચ્છતિ ।

રખ કર મેરે પીછેર ચલો તો । જલોદરી ને કહા હસ મેં કૌન સી ઘડી
ચાત હૈ । ‘યહ મેરા કોથલા ઉઠાયેગા’ એસા જાનકર વૈદ્ય ને હલાજ કે
દ્વારા ઉસકો વ્યાધિમુક્ત કર દિયા । વૈદ્યને અપના ઔષધિ કા કોથલ
ઉઠા કર ચલને કે લિયે દે દિયા । અર્હદત્ત ઉસ કોથલે કો કન્ધે પર
રખ કર વૈદ્ય કે પીછેર ચલને લગા । કોથલા દેવ કી માયા સે લે જાતે
લે જાતે માર્ગ મેં યદ્દુત વજનદાર બન ગયા । ઉસસે વહ યદ્દુત થક ગયા ।
પરન્તુ ફિર બી ઉસકી હિમ્મત ઉસે છોડકર આગે જાને કી નહીં હુઈ ।
વિચારને લગા કિ મૈં વચન યદ્દુ હો ચુકા હૂં અતઃ અથ હસ માર કો કૈસે
છોડસકતા હૂં । તથા યદિ કોથલે કો લાદ કર હસ વૈદ્ય કે પીછેર જો ન
ચલૂં તો ફિર જલોદર હો જાનેકી આશંકા હૈ, અતઃ જૈસે બી બનેં વજ્ર-
સમાન ભારી હસ કોથલે કો લેકર હી ચલને મેં શ્રેય હૈ, ચાહે મેરે શિર કે
થાલ બી ક્યોં ન ઘિસ જાઈં । હસ પ્રકાર વિચાર કર વહ કોથલે કો
શિર પર લિપ હુપ વૈદ્ય કે પીછેર ચલતા રહા ।

પાછળ ચાલેા. જળોદર વાળાએ કહ્યું કે, તેમાં કંઈ મોટી વાત છે. ‘આ મોરો
કેયળો ઉઠાવશે’ એવું બાણી ને વેદે ધલાજ દ્વારા તેને વ્યાધિમુક્ત કરી દીધી
વેદે પોતાની ઔષધીનેા કૈયળો ઉઠાવીને ચાલવા માટે તેને આપ્યો. અર્હદત્ત
તે કૈયળાને કાંધ ઉપર રાખીને વેદની પાછળ પાછળ ચાલવા લાગ્યો. કૈયળો
દેવની માયાથી ચાલતાં ચાલતાં માર્ગમાં ઘણો વજનદાર બની ગયો, આથી
તે ઘણો જ થાકી ગયો અને આગળ ચાલવાની તેનામાં હિંમત ન રહી છતાં
પણ તે વિચારવા લાગ્યો કે હું વચનથી બંધાયેલ છું માટે હવે આ ભારને
હું કેવી રીતે છોડી શકું ? અને જો કૈયળાને ઉપાડીને હું આ વેદની પાછળ પાછળ
ન ચાલું તો ફરી પાછો જળોદરનો ઉપદ્રવ થઈ જવા સંભવ છે. જેમ અને
તેમ વજ્ર સમાન ભારે આ કૈયળાને ઉપાડીને ચાલવામાં જ શ્રેય છે. મારા
માથાના વાળ ઘસાઈ જાય તો પણ મારે કૈયળાને ઉપાડીને ચાલવું જોઈએ. આ
પ્રકારનો વિચાર કરી માથા ઉપર કૈયળો લઈ તે વેદની પાછળ પાછળ ચાલતો રહ્યો.

एकदा स मायिको वैद्यस्तं मुनिसंनिधौ नीत्वा वदति यदि त्वं दीक्षां ग्रह्णासि, तर्हि त्वां मुञ्चामि । स भाराक्रान्तो वदति प्रदीप्याम्येव दीक्षाम् । ततोऽसौ मायिक-
वैद्यस्तस्मै दीक्षां प्रदाप्य स्वयं देवलोकं गतः । देवे स्वस्थानं गते स दुर्लभबोधि-
त्वादरतिपरीपहेणाभिभूतः सन् संयमं त्यक्तुं समुद्यतः । ततो देवनावधिना श्लाघा
पुनरपि तथैव जलोदरं कृत्वा वैद्यरूपेणागत्य पुनरसौ प्रतियोधितः । पुनर्गते च देवे
परीपहाभिभूतेन तेन दीक्षात्यागो मनसि भूतः । तदाऽसौ वैद्यरूपो देवस्तृतीय-
वारं प्रतियोष्य व्रते स्थिरीकरणार्थमर्हत्तत्समीप एव तिष्ठति ।

अब वह मायिक वैद्य उस जलोदरी को मुनि के पास ले गया और कहने लगा कि यदि तुम दीक्षा धारण करलो तो मैं तुम्हें छोड़ दूँ । भार से हेरान होकर उसने विचार किया कि— अच्छा है दीक्षा लेने से इस वजन को उठाने के दुःख से तो बच जाऊँगा और जोला दीक्षा ही ले लूँगा । वैद्य उसको संयम दिला कर अपने स्थान देवलोक को चला गया । देव को अपने स्थान पर गया हुआ जानकर वह दीक्षा का परित्याग करने को उद्यत हुआ । देवने पुनः उसे जलोदर रोग से पीडित किया और वैद्य के रूप से आकर प्रतियोधित किया । फिर भी वह अरतिपरीपह से उद्विग्न होकर संयम छोड़ने की इच्छा करने लगा । फिर भी देव आकर उसको प्रतियोधित किया और “यह संयम में स्थिर बना रहे” इस खयाल से वह देव स्वयं इसके पास रहने लगा ।

એ માયાધારી વૈદ્ય એ જળોદરવાળાને મુનિની પાસે લઈ ગયા અને કહેવા લાગ્યા કે જો તમે દીક્ષા ધારણ કરી દેશો તો હું તમને છોડી દઉં ભારથી હેરાન બનેલા તેણે વિચાર કર્યો કે, “ઠીક છે દીક્ષા લેવાથી આ વજનને ઉઠાવવાના કુખથી તે બચી જઈશ” આમ વિચારી તેણે કંઈ કે લલે । હું દીક્ષા લઉં તો પછી તેને દીક્ષા અપાવી વૈદ્ય પોતાના સ્થાને દેવલોકમાં ચાલ્યા ગયા. દેવને પોતાના સ્થાન ઉપર ગયેલા બાણીને તે દીક્ષાનો પરિત્યાગ કરવા તૈયાર થયો. દેવે ફરીથી તેણે જળોદરના રોગથી પીડિત બનાવ્યો અને વૈદ્યતા સ્વરૂપથી આવીને પ્રતિબોધિત કર્યો. ફરીથી તે અરતિપરીપહથી ઉદ્વેગ પામીને સંયમ છોડવાની ઇચ્છા કરવા લાગ્યો. ફરી પાછા દેવે આવીને તેને પ્રતિબોધિત કર્યો અને “આ સંયમમાં સ્થિર બની રહે” એવા જ્ઞાવથી તે દેવ પોતે તેની પાસે રહેવા લાગ્યા.

एकदा स देवो मनुष्यवेपेण तृणभारं गृहीत्वा कस्मिंश्चित् प्रज्वलति ग्रामे प्रविशति, तदा संयमारतिं कुर्वन्नर्हदत्तमुनिः प्राह-ज्वलति ग्रामे तृणभारं नयन् कथं प्रविशसि ? किं मूढोऽसि ? देवेनोक्तम्-त्वं तु महामूढोऽसि, यतः सकलकल्याणकारणं संयमं विहाय क्रोधमानमायालोभवद्विप्रज्वलिते सकलानर्थकरे गृहवासे पुनः पुनर्वार्यमाणोऽपि प्रवेष्टुमिच्छसि ? । स एतद्वचनं श्रुत्वाऽप्यरतिं सर्वथा न मुञ्चति ।

एक दिन की बात है कि वह देव मनुष्य का वेप धारण कर घास का गट्ठा लेकर एक गांव में कि जिसमें आग लगी हुई थी जाने लगा । उस समय अरतिभाव को धारण करने वाले उस अर्हदत्त मुनि ने उस से कहा कि तुम कितने मूर्ख हो जो आग से जल रहे इस ग्राम में घास का भारा लेकर जा रहे हो । इस स्थिति में तो कोई मूर्ख भी इस गांव में घास का भारा लेकर जाने को तैयार नहीं हो सकता है, अतः तुम्हारे जैसे समझदार व्यक्ति को ऐसा काम करना इस समय सर्वथा अनुचित है । अर्हदत्त मुनि की इस बात को सुनकर देव ने कहा कि -परोपदेश में पांडित्य प्रदर्शन करने वाले दुनिया में अनेक मनुष्य हैं तुम भी उन्हीं में से एक हो । मैं तो समझता हूँ कि मेरी अपेक्षा अधिक मूर्ख तुम हो जो कल्याण के कारणभूत इस ग्रहण किये हुए संयम में अरतिभाव धारण करते हुए क्रोध, मान, माया एवं लोभ-रूपी अग्नि से प्रज्वलित एवं सकल अनर्थों के उत्पादक ऐसे गृहस्थाश्रम में जाने के लिये वारं वार मन करने पर भी संयम छोड़ने की इच्छा करते हो ।

એક સમય તે દેવે મનુષ્યનો વેશ ધારણ કરીને ઘાસની ગાંસડી લઈ એક ગામમાં કે જ્યાં આગ લાગી હતી ત્યાં જવા લાગ્યા તે સમયે અરતી ભાવના ધારણ કરવાવાળા તે અર્હદત્ત મુનિએ તેમને કહ્યું, કે, તમે દેવા મૂર્ખ છો કે, આગથી બળી રહેલા ગામમાં ઘાસનો ભારો લઈને જાવ છો ? આ સ્થિતિમાં તો કોઈ મૂર્ખ પણ તે ગામમાં ઘાસનો ભારો લઈને જવાની તૈયારી ન કરે. માટે તમારા જેવી સમજદાર વ્યક્તિએ એવું કામ કરવું આ સમયે સર્વથા અનુચિત છે. અર્હદત્ત મુનિની આ વાતને સાંભળીને દેવે કહ્યું કે, પારકાને ઉપદેશ આપવામાં પંડિતાઈનું પ્રદર્શન કરવાવાળા દુનિયામાં અनेક મનુષ્યો છે. તેમાંના તમે એક છો. હું તો સમજું છું કે મારી અપેક્ષાએ તમે અધિક મૂર્ખ છો. જે કલ્યાણના કારણભૂત એવા લીધેલા સંયમમાં અરતી ભાવ ધારણ કરીને, ક્રોધ, માન, માયા, લોભ રૂપી અગ્નિથી પ્રવર્ત્તિત એવા સંકળ અનર્થોના ઉત્પાદક એવા ગૃહસ્થાશ્રમમાં જવા માટે વારંવાર મના કરવા છતાં પણ સંયમ છોડવાની ઇચ્છા કરો છો. આ પ્રમાણે તે દેવના

અન્યદા કદાચિત્ તેન સદ્ પુરઃ પુરશ્ચલમસૌ દેવઃ પન્થાનં વિશાલઃ કષ્ટ-
 કાકીર્ણેનોત્પથેનાટવીં ગચ્છતિ । તતોઽસૌ દુર્લભબોધિર્હૃદયઃ સાપ્રદં વદતિ મધ્યાનં
 દિત્વા કથમુત્પથેન ગચ્છસિ ? । દેવેનોક્તમ્-ત્વમપિ વિશુદ્ધં મોક્ષમાર્ગં પરિત્યજ્યાઽધિ-
 વ્યાધિરુપે કષ્ટકાકીર્ણે સંસારમાર્ગે કસ્માદ્ વ્રજસિ ? । એવમુક્તોઽપ્યર્હૃદયો બોધિમત્-
 ગ્ધ્વા વદતિ-કસ્ત્વમ્ । તતો દેવઃ સ્વપૂર્વભવસમ્બન્ધિનં મૂકરૂપં દર્શયિત્વા માર-
 હે ખાતઃ ! શૃણુ, ભવતા પૂર્વજન્મનિ દેવમવં પ્રાપ્ય મહં નિગદિતમ્-યદા સ્વર્ગ-

હસ પ્રકાર ઉસ દેવ કે વચન સુનકર અર્હદત્ત મુનિ અરતિપરીષદ
 કો સર્વથા નહીં ત્યાગ સકા । દેવને ઓર મી ઉપાય ઉસે સમજાને
 કે લિયે કિયે જેસે-કોઈ એક દિન જબ અર્હદત્ત બાહર જા રહે થે તબ
 દેવ મી હનકે આગે ર ચલને લગા ઓર રાસ્તા છોડકર કુરાસ્તે જાને
 લગા । વહ માર્ગ કષ્ટકાકીર્ણ થા એવં અટવી કી ઓર જાનેવાલા થા ।
 ઉસકી હસ પ્રકાર ચાલ દેલકર અર્હદત્ત મુનિ ને કહા કિ-તુમ કૈસે
 આદમી હો જો માર્ગ કા પરિત્યાગ કર કુમાર્ગ સે જા રહે હો । તબ દેવ
 ને મી અર્હદત્ત સે કહા કિ તુમ મી કૈસે આદમી હો જો વિશુદ્ધ મોક્ષમાર્ગ
 કા પરિત્યાગ કર આધિવ્યાધિરૂપ કંટકો સે આકીર્ણ સંસારમાર્ગ મેં જાને
 કો તૈયાર હો રહે હો । હસ પ્રકાર જબ દેવ ને કહા તો વહ અર્હદત્ત કહને
 લગા કિ-સચ તો કહો તુમ કૌન હો । દેવને અર્હદત્ત કી હસ પ્રકાર
 વાત સુનકર અપના પૂર્વભવસંવંધી મૂક રૂપ દિલ્લા કર કહા-હે મિત્ર !
 સુનો આપને પૂર્વભવ મેં દેવભવ પ્રાપ્ત કર મુક્ત સે કહા થા કિ યદિ મેં

વચન સાંભળીને પણ અર્હદત્ત મુનિએ અરતિપરીષદને ત્યાગ સર્વથા ન
 કર્યો. દેવે બીજા પણ ઉપાય તેને સમજાવવા માટે કર્યા. જેમ કેઈ એક
 દિવસ અર્હદત્ત બહાર જઈ રહ્યા હતા ત્યારે દેવ પણ તેની આગળ આગળ
 ચાલવા લાગ્યા અને રસ્તો છોડીને કુરસ્તે જવા લાગ્યા. તે માર્ગ કાંટાથી
 ભરેલ હતો. અને ઘોર જંગલ તરફ જતો હતો. તેની આ પ્રકારની ચાલ
 જોઈને અર્હદત્ત મુનિએ કહ્યું તમે કેવા માણસ છો કે માર્ગનો ત્યાગ કરી
 કુમાર્ગે જઈ રહ્યા છો. ત્યારે દેવે પણ અર્હદત્તને કહ્યું કે, તમે પણ કેવા
 આદમી છો કે, વિશુદ્ધ મોક્ષ માર્ગનો પરિત્યાગ કરી આધિ વ્યાધિ રૂપ
 કાંટાઓથી ભરેલા સંસારમાર્ગમાં જવાને તૈયાર થઈ રહ્યા છો. આ પ્રકારે
 દેવે કહ્યું એટલે અર્હદત્ત કહેવા લાગ્યા કે, સાચું કહો તમે કેણુ છો ? દેવે
 અર્હદત્તની આ વાત સાંભળીને પોતાના પૂર્વભવ સંબંધી મૂંગાતું સ્વરૂપ દેખાડીને
 કહ્યું કે, હે મિત્ર ! સાંભળો. આપે પૂર્વભવમાં દેવ ભવ પ્રાપ્ત કરી અને

त्प्रच्युतः स्याम्, तदा तव सहोदरभ्राता भविष्यामि, ततस्त्वया सुरालयगते-
नाऽप्यहं जैनधर्मं प्रतियोधनीयः, इति त्वद्वचनं मया स्वीकृतम्, अतस्त्वां प्रतिवो-
धयितुमहमत्रागतोऽस्मि, तस्माद् धर्मं स्वीकृत्य मुहुर्मुहुररतिं मा सेवस्व, इत्येवं
मूकदेववचनं निशम्यार्हहत्तोऽब्रवीत्-पूर्वभवेऽहं देव आसमित्यत्र किं प्रमाणम् ? ततो
मूकदेवस्तद्विश्वासाय देवभवे तेन रोपितमात्रवृक्षं प्रदर्श्य सर्वं पूर्ववृत्तमवदत् । ततस्त-
स्य जातिस्मरणमभूत् । तेनाऽस्य चारित्रदृढता जाता । अस्य पूर्वमरतिः, पश्चात्संय-
मे रतिः समुत्पन्ना । एवमन्यैरपि मुनिभिररतिपरीपदस्तन्निराकरणेन सोढव्यः॥१५॥

देवभव से च्युत हुआ तो तुम्हारा सहोदर होऊंगा, इसलिये तुम देवलोग
में देव होते हुए भी मुझे जैनधर्म का प्रतिबोध देना । तुम्हारे इस कथन
को उस समय मैंने स्वीकार कर लिया था । इसलिये मेरी प्रतिज्ञा के
अनुसार मैं तुम्हें प्रतिबोधित करने के लिये यहां आया हुआ हूं; अतः
संयमको अंगीकार कर फिर उसमें बार बार अरति का सेवन नहीं करना
चाहिये । इस प्रकार मूक देव के वचन सुनकर अर्हहत्त ने कहा कि
इसमें क्या प्रमाण है कि मैं पूर्वभव में देव था । मूकदेव ने अर्हहत्तकी
बात सुनकर उसके विश्वास के लिये देवभव में आरोपित आम्रवृक्ष को
दिखलाकर समस्त पूर्व का वृत्तान्त कह दिया । इस सब को सुनकर
उसे जातिस्मरण हो गया । इससे इसके चारित्र में दृढता आ गई ।
इस का सारांश यही है कि देखो अर्हहत्त को पहिले चारित्र में अरति
थी पश्चात् प्रतिबोधित होने पर उसे चारित्र में रति आ गई इस बात को

जे हूं देव भवथी च्युत थथेश तो तभारे सडोदर भनीश. आ भाटे
देव बोडभां रडेवा छतां पथु तभे भने जैनधर्मने प्रतिबोध आपता
तभारा जे कथनने भे जे समये स्वीकार करी लीथे छतो जेथी भारी
प्रतिज्ञा अनुसार हूं तभाने प्रतिबोधित करवा भाटे अर्हिं आव्ये छुं.
आधी संयमने आंगिकार करी तेभा वारंवार अरतिनुं सेवन न करवुं
जेछंजे. आ प्रकारे ते भूंगा देवनां वचन सांभजीने अर्हहत्ते कथुं के,
आभां कथुं प्रमाण छे के, हूं पूर्वभवभां देव छतो. भूंगा देवे अर्हहत्तनी
वात सांभजीने तेना विश्वास भाटे देव भवभां उगाडेछुं आम्रवृक्ष देखाडीने
अगाडिनुं सधछुं वृत्तांत कही सांभजाव्युं. आ पथुं जेछं जण्णीने तेने जाति-
स्मरण थयुं. आने सारांश जे छे के, अर्हहत्तने पडेवां अरित्रभां अरति
छती. पछी प्रतिबोधित थवाथी तेना अरित्रभां रति आवी. आ वातने जण्णीने

અરતિસદ્ભાવે સ્ત્રીપ્રભિલાપઃ સ્યાદતઃ સ્ત્રીપરીપદજયં ગ્રાહ—

મૂલમ્—સંગો એસ મણુસ્સાણં, જાંઓ લોગંમિ ઇતિઓ ।

જેસ પર્થા પરિણાયાં, સુકેંડં તેસંસ સામંણં ॥૧૬॥

છાયા—સંગ એ મનુષ્યાણાં, યાઃ લોકે સ્ત્રિયઃ ।

યસ્ય એતાઃ પરિજ્ઞાતાઃ, સુકૃતં તસ્ય શ્રામણ્યમ્ ॥ ૧૬ ॥

ટીકા—‘સંગો’ ઇત્યાદિ ।

લોકે=અસ્મિન્ સંસારે યાઃ સ્ત્રિયઃ સન્તિ, એ મનુષ્યાણાં-પુરુષાણાં સંગઃ=સંગઙ્ગતે=વશીભવતિ જીવો યસ્માત્ સ સંગો=વંધનમ્-યથા મૃગાણાં વંધનં, વાગુ-રાદિ, યથા યા મસિકાણાં શ્લેષ્મસંગો વંધનં, તથા પુરુષાણાં સ્ત્રિયો વંધનમિત્યર્થઃ । સ્ત્રિયો દિ હાવભાવાદિભિઃ પુરુષાણાં વિષયાસક્તિલક્ષણં રાગમુત્પાદયન્તિ, રાગો જાતકર, સવ મુનિયો, કો ચાહિયે, કિ વે આતે, હુપ અરતિપરીપદ કો નિવારણ કર સંયમ મેં રતિ રલે ॥ ૧૬ ॥

અરતિ.કે સદ્ભાવ મેં મુનિ કો સ્ત્રીપરીપદ ઉત્પન્ન હોને કા સંભવ હૈ, હસ લિયે, અવ સૂત્રકાર આઠમે સ્ત્રીપરીપદજય કો કહતે હૈ—

‘સંગો. એસ.’—ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—(લોગંમિ-લોકેઃ) હસ સંસાર મેં. (જાઓ ઇતિઓ-યાઃ સ્ત્રિયઃ). જો સ્ત્રિયાં હૈ. (એસ મણુસ્સાણં સંગો-એપઃ મનુષ્યાણાં સંગઃ) યહ મનુષ્યો, કા વંધન હૈ. । જિસ પ્રકાર મૃગો કા વંધન વાગુરા-જાલ-આદિ; મસિકા કા વંધન શ્લેષ્મ આદિ હૈ. । ડસી પ્રકાર સ્ત્રિયાં સ્ત્રી પુરુષો કા વંધનરૂપ હૈ, ક્યોં કિ, યે સ્ત્રિયાં હાતુ, ભાવ, આદિ સે, પુરુષો મેં વિષયા-સક્તિરૂપ રાગ ઉત્પન્ન કરતી હૈ. । તદ્વિષયક રાગ કો ઉત્પત્તિ હોને, પર

સઘળા મુનિઓએ બાણુ બેઠએ કે, આવેલ અરતિપરીપદને નિવારી સંયમમાં રતિ રાખે. ॥ ૧૫ ॥

અરતિના સદ્ભાવમાં મુનિને સ્ત્રી પરીપદ ઉત્પન્ન થવાનો સંભવ છે. તેથી સૂત્રકાર આઠમે સ્ત્રી પરીપદ છતવાનું કહે છે. સંગોએસ—ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—લોગંમિ-લોકે યાઃ સંસારમાં જાઓ-ઇતિઓ-યાઃ સ્ત્રિયઃ જે સ્ત્રિઓ છે, એસ મણુસ્સાણં સંગો-એપઃ મનુષ્યાણાં સંગઃ તે મનુષ્યોનું બંધન છે. જેમ મૃગોનું બંધન બાણ આદિ માખીઓનું બંધન બળદા આદિ છે, તે પ્રકાર સ્ત્રિઓ પણ પુરુષોને બંધનરૂપ છે કેમ કે, સ્ત્રિઓ હાવભાવ આદિથી પુરુષોમાં વિષયાસક્તિ રૂપ રાગ ઉત્પન્ન કરે છે, તે વિષયરાગ ઉત્પત્તિ થવાથી પુરુષ તેને વશીભૂત બની બંધ છે.

ત્પતૌ ચ તદ્દશીભૂતાનાં પુરુષાણાં નરકનિગોદાદિદુર્ગતિકસંસારપાતઃ, તસ્માત્ સ્ત્રિયઃ પુરુષાણાં વંધનમિતિ વ્યપદેશઃ ।

અતઃ કિં કર્તવ્યમિત્યાકાંક્ષાયામાહ—‘જસ્સ’ ? इत्यादि ।

यस्य—अत्र सम्बन्धसामान्ये पृष्ठी, येन मुनिनेत्यर्थः, एताः स्त्रियः परिज्ञाताः परि-सर्वथा ज्ञाताः ज्ञ-परिज्ञायाऽस्मिन् भवे परमवे चानन्तदुःखकारणतया विज्ञाताः प्रत्याख्यानपरिज्ञया च परिवर्जिताः, तस्य मुनेः श्रामण्यं=चारित्र्यम्, अत्र श्राम-ण्येन सह परिपाल्यपरिपालकभावसम्बन्धे पृष्ठी । सुकृतं=सुष्ठु आचरितं भवति, सफलं भवतीत्यर्थः ॥ १६ ॥

પુરુષઃ અનેકે વર્ણીભૂત હો જાતા હૈ । અનેક વર્ણ મેં હો જાને સે એસકા નરક નિગોદ આદિ દુર્ગતિરૂપ સંસાર મેં પતન અવશ્યભાવી હૈ । ઇસ લિયે યે સ્ત્રિયાં પુરુષોં કા વંધન હૈ । ઇસલિયે (જસ્સ-યસ્ય) જિસ મુનિ દ્વારા (ઇયા પરિણ્યાયા-એતાઃ પરિજ્ઞાતાઃ) યે સર્વથા જ્ઞ-પરિજ્ઞા સે ઇસ ભવ મેં તથા પરમવ મેં અનંત દુઃખોં કે કારણરૂપ જાનકર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા સે પરિવર્જિત કર દી જાતી હૈ (તસ્સ સામણં સુકર્ત-તસ્ય શ્રામણ્યં સુકૃતમ્) એસ મુનિ કા સાધુપના સફલ હૈ ।

ભાવાર્થ—જિસ પ્રકાર મૃગાદિ પશુઓં કો પકડી કર રાખને કેં લિયે વાંગુરા (જાલ) આદિ વંધન પ્રસિદ્ધ હૈં ક્યોં કિ ઇન દ્વારા પર-તન્ત્ર કિયે વે સ્વંતન્ત્ર વિહાર સે રહિત હો જાતે હૈં, ઓર અનેક પ્રકાર કી યાતનાઈ સહન કરતે હૈં ઇસી પ્રકાર પુરુષોં કા વંધન યે સ્ત્રિયાં હૈં । ઇનકે વર્ણ મેં પડા હુઆ પ્રાણી પરતન્ત્ર હોકર અપની સ્વંતન્ત્રતા-ચારિત્ર

તેના વર્ણ થવાથી તેનું નરક નિગોદ આદિ દુર્ગતિ રૂપ સંસારમાં પતન અવશ્યભાવિ છે માટે સ્ત્રિઓ પુરુષોનું બંધન છે, આ માટે જસ્સ-યસ્ય એ મુનિદ્વારા ઇયાપરિણ્યાયા-એતાઃ પરિજ્ઞાતાઃ એ સર્વથા જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી આ ભવ તથા પરમવમાં અનંત દુઃખોના કારણ રૂપ બાંધીને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી પરિવર્જિત કરી દેવામાં આવે છે. તસ્સ સામણં સુકર્ત-તસ્ય શ્રામણ્યં સુકૃતમ્ એવા મુનિનું સાધુ પશુ સંકળ છે.

ભાવાર્થ—એ પ્રકાર મૃગ આદિ પશુઓને પકડી રાખવા માટે જાળ આદિ બંધન પ્રસિદ્ધ છે કેમકે, તેના દ્વારા પરતન્ત્ર કંથોથી તે સ્વંતન્ત્ર વિહારથી રહિત બની બાંધ છે અને અનેક પ્રકારની યાતનાઓ સહન કરે છે. આ રીતે પુરુષોનું બંધન સ્ત્રિઓ છે તેના વર્ણમાં પડેલાં પ્રાણી પરતન્ત્ર બનીને

અયં ભાવઃ—ધર્મમર્યાદાનુવર્તી મુનિઃ—સ્ત્રીણામદ્વપ્રત્યક્ષસંસ્થાનહસ્તિવિભ્રમા-
ધાથિત્તવિભેષકારિણીદેષ્ટાઃ કદાચિદપિ ન ચિન્તયેત્, નાપિ કામબુદ્ધ્યા મોક્ષ-
માર્ગકર્દમકલ્પાસુ તાસુ ચશ્વરપિ નિધિપેત્ કિંત્વાત્માનમેત્ પર્યાલોચયેત્। एवं स्त्री
પરીપહજયઃ સ્યાદિતિ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

દ્વાદશતીર્થંકરચામુપૂજ્યશાસને ચમ્પાનગર્યાં તદંશીયો રૂપલાવણ્યસમ્પન્નઃ,
સુજાતસર્વાંગસુન્દરઃ, શશિસીમ્પાકારઃ, શ્ણુઃ, શ્ણુરૂપઃ, કાન્તઃ, કાન્તરૂપઃ, પ્રિયઃ,

इस का भाव यह है—धर्म मर्यादा अनुवर्तन करने वाला मुनि चित्त
को विक्षिप्त करने वाली स्त्रियों के अंग, प्रत्यंग की आकृति का, तथा
उनकी हांसी आदि क्रियाओं का एवं हाव विभाव आदि विलासों का
कभी भी विचार तक न करे, और न मोक्षमार्ग में कर्दमस्वरूप
इनको विकारदृष्टि से देखे। जहाँ तक हो मुनिका यही कर्तव्य है कि
वह अपनी आत्मा का जिस तरह से कल्याण होता रहे, तथा जिन
विचारधाराओं से वह अहर्निश अपने गृहीत पथ पर अग्रगामी बना
रहे, इस प्रकार का ही प्रयत्न साधु को करते रहना चाहिये। यही
अपनी पर्यालोचना है ॥

દૃષ્ટાન્ત—વાહર વેં તીર્થંકર શ્રી વાસુપૂજ્ય સ્વામી કે શાસન કાલ મેં
ચમ્પાનગરી મેં इन्हीं का वंशज लावण्यपूर नामका एक राजा रहता था।

वह सुजातसर्वाङ्गसुन्दर—अर्थात् आकार से सर्वाङ्ग सुन्दर था,

આનો લાવાઈ એ છે કે—ધર્મ મર્યાદાનું અનુવર્તન કરવાવાળા મુનિ ચિત્તને
વિક્ષિપ્ત કરવાવાળી સ્ત્રીઓના અંગ પ્રત્યંગની આકૃતિનું તથા તેની હાંસી આદિ
ક્રિયાઓનું, અને હાવભાવ આદિ વિલાસોનો કદી વિચાર સુધ્ધાં પણ ન કરે.
મોક્ષમાર્ગમાં કર્દમસ્વરૂપ એવી આ ભાવનાને વિકાર દૃષ્ટિથી ન જુએ. એનું
કર્તવ્ય છે કે, જ્યાં સુધી બની શકે ત્યાં સુધી પોતાના આત્માનું કલ્યાણ થતું
રહે અને જે વિચારધારાઓથી તે હરહંમેશ પોતે અહંકાર કરેલ માર્ગ ઉપર
અગ્રગામી બની રહે. આ પ્રકારનો જ વિચાર પ્રયત્ન સાધુએ કરવો જોઈએ
એ જ તેમની પર્યાલોચના છે.

દૃષ્ટાન્ત—બારમા તીર્થંકર શ્રી વાસુપૂજ્ય સ્વામીના શાસનકાળમાં ચંપા-
નગરીમાં તેમના જ વંશના લાવણ્યપૂર નામના એક રાજા રાજ્ય કરતા હતા.
તે સુજાતસર્વાંગસુન્દર અર્થાત્ આકારથી સર્વાંગ સુંદર હતા, તે સફલસમાજના
મનોરથ પૂર્ણ કરવાવાળા હોવાથી બધાને શ્ણુ હતા, તેમની આકૃતિ મનોહર

प्रियरूपः, मनोज्ञः, मनोज्ञरूपः, सौम्यः, सुभगः, प्रियदर्शनः, सुरुपोः लावण्यपूर-
नामको नृप आसीत् । असी नृपः सुभूमनामकस्य वासुपूज्यतीर्थकृतप्रथमगणधरस्य
समीपे धर्मदेशनां श्रुत्वा दीक्षितो जातः ।

स चैकदा भिक्षाचर्यां पर्यटन् श्रावकगृहं मत्वा वेश्यागृहं प्रविष्टः, तत्र सा काम-

वह सकल समाज का मनोरथ पूर्ण करनेवाला होने से सब को इष्ट था,
इसकी आकृति मनोहर होने से इष्टरूप था, तथा वह सबका सहायक
होने से कान्त अभिलषणीय था । वह कान्तरूप रूप से भी कान्त कम-
कमनीय था । वह सब जनों के उपकार करने में परायण होने से सबके
लिये प्रिय था । वह रूप से भी प्रिय होने से प्रियरूप था । सब के हित-
कारी होने से वह मनोज्ञ था । इसके देखने वाले के लिये यह चित्ता-
कर्षक होने से मनोज्ञ रूप था । दुःखियों का दुःख दूर करने वाला होने
से मनोऽम् सबके मन में बसने वाला था । सकल जनमन के अनुकूल
आकृति वाला होने से मनोऽमरूप था, इसलिये वह सौम्य-भद्र
स्वभाव होने से समस्त जन का आह्लादक था । तथा कल्याण
मार्ग पर चलने वाला होने से सुभग था । वह प्रियदर्शन था अर्थात्
जो व्यक्ति इसे एकवार भी देख लेता तो पुनः उसे देखनेकी लालसा
उस के बनी रहती थी । वह सुरुप-लावण्य की राशि से भरपूर था ।
राजा ने सुभूम नाम के गणधर के पास जो वासुपूज्यतीर्थंकर के प्रथम
गणधर ये धर्मदेशना सुनकर दीक्षा धारण करली ।

डोवाधी इष्टरूप होता, तथा तेजो अधाने सहायकरवावाणा डोवाधी कान्त अभि-
लषणीय होता, ते कान्तरूप इषधी पञ्च कान्त-कमनीय होता, तेजो द्वरेक भनुभ्य
पर उपकार करवाभां परायण्य डोवाधी द्वरेकने प्रिय होता, ते इषधी पञ्च प्रिय
डोवाधी प्रियरूप होता, द्वरेकना हितचिंतक डोवाधी ते मनोज्ञ होता, तेभने
नेनारने तेजो चित्ताकर्षक डोवाधी मनोज्ञरूप होता, दुःखीजोना दुःख दूर
करवावाणा डोवाधी मनोऽम् अर्थात् द्वरेकना मनभां पास करवावाणा होता, सकल
जनमननी अनुकूल आकृतिवाणा डोवाधी मनोऽमरूप होता, जे भाटे तेजो
सौम्य भद्रस्वभाव डोवाधी समस्तजनना आह्लादक होता, तथा कल्याण
मार्ग पर चलवावाणा डोवाधी सुभग होता तेजो प्रियदर्शनीय होता, अर्थात् जे को
तेने एकवार ज्ञे तो श्रीथी तेने जेवानी लालसा उत्पन्न थया करती, ते सुरुप-
इषलावण्यधी भरपूर होता, राजज्ये सुभूम नामना गणधरनी पास दे जे वासुपूज्य
तीर्थंकरना प्रथम गणधर होता तेभनी धर्मदेशना सांभलीने दीक्षा धारण करी लीधी,

મંજરીનામ્ની વેશ્યા છાવણ્યપૂરમુનેર્મનોદરં વયોરૂપલાવણ્યસંસ્થાનાદિકં ક્લિષ્ણ
મોહિતા જાતા । અથ સા લાવણ્યપૂરમુનિં પ્રણમ્ય ક્ષતિતિ દ્વારવેશમાગત્ય સર્વાંપિ
નિર્ગમદ્વારાણિ પિધાય પુનસ્તસ્ય સમીપમાગત્ય સાનુરાગં પश्यन्ती સસ્મિત્વં વદતિ-
મહાત્મન્ ! સ્વરૂપમેવ કાલં મયાનન્ન તિષ્ઠતુ, યાવન્નિધામાનયામિ । તદ્વિનયવચનં
નિશમ્ય લાવણ્યપૂરમુનિસ્તત્રૈવતિષ્ઠતિ । સા ચ ગૃહાભ્યન્તરગતા મુનિસંગમાભિલાષિની
મિસોપયોગિવસ્તુગ્રહણવ્યાજેન નૃત્યન્તીવ ભવને ચલન્તી, વાહુવિશેષે:

एक समय की बात है कि जय ये भिक्षाचरी के लिये निकले तो वे श्रावक का घर जानकर वेश्या के घर में आहार पानी के लिये पहुंच गये । वहां वेश्या ने जय इन्हें आया हुआ देखा तो वह इन पर इनके सुन्दरातिमुन्दररूप को देखकर मोहित हो गई । वेश्या का नाम काममंजरी था । अब क्या था रूप का निधान जय घर के भीतर स्वयं आ गया है तो उसने विचार किया कि यह वापिस न हो जाय इस ख्याल से उठ कर उसने शीघ्र ही बाहिर निकल ने के जितने भी द्वार थे वे सब द्वार बंद कर दिये । पश्चात् वह उन मुनिराज के पास आई और सानुराग उनकी ओर निहार कर मुस्कराती मुस्कराती कहने लगी कि-हे महात्मन् ! आप कुछ देर तक यहां ठहरिये-जब तक मैं भिक्षा लेकर आती हूं । मुनिराज उसके विनीत वचन सुनकर वे वहीं पर ठहरे रहे और वह मुनि के साथ संगम की अभिलाषा से घर के भीतर रही हुई आहार पानी लाने के वहाने से मकान में ऐसी चलने लगी कि जैसे मानो नाचती हो । कामराग के प्रकट

એક સમયની વાત છે કે, જ્યારે તે ભિક્ષાચર્યા માટે બહાર નીકળ્યા ત્યારે શ્રાવકનું ઘર બાણીને એક વેશ્યાના ઘરમાં આહાર પાણી માટે બંધ થયેલા. જ્યારે વેશ્યાએ મુનિને આવેલા જોયા ત્યારે તે તેના રૂપલાવણ્યને જોઈ તેના ઉપર મોહિત બની ગઈ. વેશ્યાનું નામ કામમંજરી હતું. રૂપનું નિધાન જ્યારે ઘરની અંદર આવેલ હતું પછી બાકી રહે શું? એણે વિચાર કર્યો કે, મુનિ પાછા ન ફરી જાય એ વાતના ખ્યાલથી ઉઠીને તેણે તરત જ બહાર નીકળવાના જોટલા રસ્તા હતા તે બધા બંધ કરી દીધા. પછી તે મુનિરાજની પાસે આવી અને વિવેકપૂર્વક હસતી હસતી સામે આવી અને મુનિરાજની સામે જોઈ કહેવા લાગી કે, હે મહાત્મન્ ! આપ થોડીવાર રોકાઈ જાવ ત્યાં હું ભિક્ષા લઈને આવું છું. મુનિરાજ તેનાં વિનીત વચન સાંભળીને દરવાજા પાસે ઉભા રહ્યા અને તે વેશ્યા મુનિરાજની સાથે સંગમની અભિલાષાથી ઘરની અંદર ચાલી ગઈ. આહારપાણી લાવવાનાં બહાને તે મકાનમાં એ રીતે ચાલવા

प्रावरणवसनापगमव्यक्तीकृताङ्गप्रत्यङ्गाच्छादनपरा कामरागं प्रदर्शयति । भोगाभिलापप्रकाशक मदनधनुःकल्पभ्रुकुटिविलाससहकृतशिथिलारुणनयननिपातैर्लावण्यपूरमुनेर्मनो हरन्तीव, रूपयौवनसौन्दर्यसम्पन्नसुकुमाराङ्गलीलाप्रदर्शनपरा कोकिलारावमधुरस्वरेण गायति । तदनु तनुनूतनविविधवर्णचित्रितरुचिरवसनाञ्चलस्फालनं प्रकुर्वती भूपणध्वनिमनोहरैश्चरणप्रचारणैर्मुनेः समीपमागत्य सा भृङ्गावलि-समाश्लिष्टकमलायमानलावण्यमरविद्योतितसुषुप्तरागोपगतकपोलपाली समालम्बितालकावलिबिभूषितसमुज्ज्वलभ्रमाणवदना भुजादिनिजगात्राणि मोटयन्ती स्मरमदोन्मादेनापहतकृत्याकृत्यविवेकविज्ञाना गद्गदस्वरेण मुनिमभ्यर्थयति काम-

करने के अभिप्राय से अपने अंग एवं प्रत्यङ्ग को साड़ी के गिर जाने के छल से प्रकट कर फिर उन्हें चारों ढकने लगी । मानों मुनि के मन को हरती हो इस प्रकार वह उनके ऊपर, भोगाभिलाप सूचक एवं काम के धनुष जैसी भ्रुकुटी के विलास के साथ-कुछ-हुके हुए अरुण नयनों के विक्षेपों से प्रहार करने लगी । रूप, यौवन, एवं सौन्दर्य से संपन्न अपने सुकुमार अंगोंकी लीला के प्रदर्शन में तत्पर बनी हुई उसने फिर कोकिल के शब्दसमान मीठे स्वर से गाना गाना भी प्रारंभ कर दिया । पश्चात् शरीर पर पहिरे हुए नवीन बहुमूल्य रंग विरंगे वस्त्र के अंचल को हिलाती एवं भूपणों की ध्वनि से मनोहर पैरों को ठुमक ठुमक कर रखती हुई वह मुनि के समीप आकर गद्गद स्वर से कहने लगी । कहते हुए उसे जरा भी संकोच जो नहीं हुआ उसका कारण इसके ऊपर चढ़ा हुआ काम का उन्माद था, इससे कृत्य और अकृत्य का विवेक विलुप्त हो चुका था । भौरों से युक्त कमल जिस

लागी है, जल ते नाचती होय. कामराग प्रगट करवानी ध्विछाथी पोताना दरेक अंग प्रत्यंगने साडीना पडी जवाना जलानाथी प्रगट करी इरीथी ते शरीरने वारवार ढांडवा लागी जलु मुनिना मनने छरती होय । आ प्रकट ते मुनि उपर, लोगविलासनां सूचक जेवां कामना धनुष जेवी भ्रुकुटिना विलासनी साथे साथे नयनोनां जलु ड्रेकवा लागी. रूप, यौवन अने सौंदर्यथी संपन्न पोताना सुकुमार अंगोनी लीलाना प्रदर्शनमां तत्पर बनेली ते वेश्याजे कोकिलकंठ जेवा भीडा स्वरथी गायन गावानी शब्दात करी. पछी शरीर उपर पड़ेरेला नवीन रंगवेरंगी वस्त्रोना छेडने छेडावती तेमज धरेलुजोनी ध्वनीथी मनोहर पगोथी ठुमक ठुमक नाचती ते मुनिनी साथे आनीने ते गद्गद स्वर कडेवा लागी, कडेती वभते तेने जरा पणु सडैथ न थये। तेनुं कारख तेना उपर कामना उन्मादनी छाया डेवाध गडिइती. आथी कृताकृत्यना लानने विवेक ते चुकी

મોગાય—“ મહાત્મન્ ! કામજ્વરભરેણ સંતપ્તમિદં મદન્નમધુના, દયસ્વ મમ ત્વ
શાન્ત્યૈ ” ઇત્યાદિવિવિધપ્રાર્થનાવચનૈર્વિવિધકામચેષ્ટાભિથ સા મુનિ ચારિત્રાન્વા-
હયિતું પ્રવૃત્તા । તદા મુનિચિન્તયતિ—

ગણિકાસ્ત્રિયો દિ સ્વલુ નામ્નાઽવલા: ૧, કાર્યેણ સવલા: ૨, પ્રકૃતિવિપમા: ૩,
કપટપ્રેમગિરિનય: ૪, અપરાધસહસ્રગૃહા: ૫, પ્રભવ: (ઉત્પત્તિસ્થાન) શોકસ્ય ૬,

પ્રકાર સુન્દર માલૂમ પડતા હૈં ઉસકા મુગ્ધકમલ ખી કૈશપંક્તિ સૈ
ચિરાજિત હોંને સૈ ઠીક ંસા હી સુન્દર માલૂમ પડતા થા । મુલ્લ કી
કપોલપાલી લાવણ્ય કૈ પ્રકર્ષ સૈ ચમક રહી થી । લલાઈ કો લિયે હુણ
થી । કામ કૈ આવેશ સૈ યહ ક્ષણ૨ મૈં જંભાઈ લેતી ંર ક્ષણ૨ મૈં
આલસ્ય મોઢતી હુઈ ઘોલી-મહાત્મન્ ! મેરા યહ શરીર ઈસ સમય
કામજ્વર સૈ સંતપ્ત હો રહા હૈં । અતઃ દયા કરો ંર ઈસ કમજ્વર કો
શાન્ત કરો । ઈત્યાદિ વિવિધ પ્રાર્થના કૈ વચનોં ંવં અનૈકવિધ કામ
કી ચેષ્ટાં સૈ ંસને મુનિ કો ંનકૈ પવિત્ર ચારિત્ર સૈ ચલાયમાન
કરને કૈ લિયે કોશિશ કી, પરન્તુ મુનિરાજ ને ંસ સમય ખી યહી
વિચાર કિયા કિ—

યૈ વેદ્યા ત્રિયાં કેવલ નામ સૈ હી અવલા હૈં કાર્યસૈ નહીં ૧ । કાર્ય મૈં
તો યૈ વઢી ભારી સવલ હૈં ૨ । પ્રકૃતિ સૈ યૈ વિપમ હોતી હૈં ૩ । કપટ પ્રેમ
કી યૈ પહાઢી નદિયાં હૈં જો શીઘ્ર હી શુષ્ક હો જાતો હૈં ૪ । હજારોં
અપરાધોં કી યૈ સ્થાન હૈં ૫ । શોક કી ઉત્પત્તિ કા યૈ સ્થાનમૂત હૈં ૬ ।

ગઈ હતી. લમરાથી શુંજતું કમળ જે રીતે સુંદર દેખાય છે તેવી રીતે એવું
મુખ કમળ પણ કેશ પંક્તિથી વિરાળત હોવાથી એવુંજ સુંદર દેખાતું
હતું. તેના મોઢા ઉપરની લાલીમા લાવણ્યથી ચમકી રહેલ હતી. કામના
આવેશથી એ ક્ષણ ક્ષણમાં અટકતી અને આગસ મરડતી યોલી. મહાત્મન્ !
હું આ સમયે કામજ્વરથી પીડાઈ રહી છું આથી દયા કરી આ કામજ્વરને
શાંત કરો. ઇત્યાદિ વિવિધ પ્રાર્થના વચનોથી તેમજ અનેકવિધ કામચેષ્ટાથી
તેણે મુનિને તેના પવિત્ર ચારિત્રથી ચલાયમાન કરવાની કૌશિષ કરી. આ સમયે
મુનિરાજે એ વિચાર કર્યો કે,—

આ વેશ્યા સ્ત્રીઓ કેવળ નામથીજ અળખા છે, કાર્યથી નહીં ૧. કાર્યમાં
તો એ ઘણી ભારે સળંગ છે ૨. પ્રકૃતિથી એ વિપમ હોય છે ૩. કપટ પ્રેમની એ
પહાડની નદીઓ જેવી છે, જે વહેલી સુકાઈ જાય છે ૪. હબરો અપરાધોં
એ સ્થાન છે ૫. શોકની ઉત્પત્તિને જગાવનાર છે ૬. અળખો વિનાશ કરનાર

વિનાશો વલસ્ય, (વલહારકત્વાત્) ૭, મૂના (વધસ્થાનં) પુરુષાણામ્ ૮, નાશો
 લજ્જાયા:-(લજ્જારહિતત્વાત્, અસ્યા: સંગે પુરુષસ્ય લજ્જાનાશાચ્ચ) ૯, મૂલમ-
 વિનયસ્ય ૧૦, ગૃહં માયાનામ્ ૧૧, સ્વર્ણસ્ય ૧૨, ભેદો મર્યાદાનામ્, (સંયમમ-
 ર્યાદાયા વિનાશદેતુત્વાત્) ૧૩, આશ્રયો રાગસ્ય, (આશ્રય: સ્થાનં) ૧૪, ગૃહં
 દુશ્ચરિત્રાણામ્ ૧૫, સ્વલ્લના: જ્ઞાનસ્ય ૧૬, વિધ્વંસનં બ્રહ્મચર્યસ્ય ૧૭, વિધ્નો-
 ધર્મસ્ય ૧૮, અરિ: સાધુનામ્ (મોક્ષમાર્ગસાધકાનાં ચારિત્રપ્રાણવિનાશકત્વાત્) ૧૯
 દૂષણં બ્રહ્મચારિણામ્ ૨૦, કારણં કર્મરજસ: ૨૧, અર્ગલા મોક્ષમાર્ગસ્ય ૨૨, ભવનં
 દુર્ગુણસ્ય ૨૩, મત્તગજવન્મદનપરવશા: ૨૪, વ્યાધીવદ્ દુષ્ટહૃદયા: ૨૫ તૃણચ્છન્ન-
 કૂપવદ્ અપ્રકાશાન્ત:કરુણા: ૨૬, કારીપાગ્નિવદન્તર્દહનશીલા: ૨૭, અન્તર્દુષ્ટવ્ર-

થલ કો વિનાશ કરને વાલી હૈં ૭ । પુરુષોં કે મન કી હત્યા કરને કે
 લિયે યે વધસ્થાન હૈં ૮ । લજ્જા કી વિનાશક હૈં ૯ । અવિનય કી યે
 મૂલ કારણ હૈં ૧૦ । માયા કા તો યહાં સ્વજાના હી ભરા રહતા હૈં ૧૧ ।
 વૈર વિરોધ આદિ જિતને બી અનર્થ દુનિયાં મેં હોતે હૈં ઊન સવ મેં યે
 પ્રધાન રહા કરતી હૈં અતઃ યે ઊનકી સ્થાન હૈં ૧૨ । સંયમમર્યાદા કા
 ભંગ કરને વાલી હૈં ૧૩ । રાગ કા યે સ્થાન હૈં ૧૪ । દુશ્ચરિત્રોં કી તો
 યે પેટી હૈં ૧૫ । જ્ઞાન કી સ્વલ્લના કરનેવાલી હૈં ૧૬ । બ્રહ્મચર્ય કી
 આંખેં કૈસે ફોડી જાતી હૈં હસ વાત મેં યે વડી હોશિયાર હોતી હૈં
 ૧૭ । ધર્મ કી વિધ્નભૂત હૈં ૧૮ । સાધુઓં કે લિયે શત્રુસમાન હૈં ૧૯ ।
 બ્રહ્મચારિયોં કે લિયે દૂષણરૂપ હૈં ૨૦ । કર્મરજ કી કારણ ૨૧,
 એવં મુક્તિમાર્ગ કી યે આર્ગલા હૈં ૨૨ । યે દુર્ગુણોં કે ભવન હૈં ૨૩ ।
 મત્તગજરાજ કે સમાન હૈં ૨૪ । વ્યાધી કે સમાન દુર્હૃદયવાલી હૈં ૨૫ ।
 તૃણ સે ઢકે હુણ કૂપ કે સમાન હૈં ૨૬ । કરીપાગ્નિ કે સમાન અન્તર્દહન-

છે ૭. પુરુષોના મનની હત્યા કરનાર એ વધસ્થાન છે ૮. લજ્જાના નાશ
 કરનાર છે ૯, અવિનયનું એ મૂળ છે ૧૦. માયાનો તો એ ખજાનો છે ૧૧.
 વૈર વિરોધ આદિ બેટલા અનર્થ દુનિયામાં છે તે સઘળા અનર્થોનું ઉદ્ગમ સ્થાન
 છે ૧૨. આથી તે એ અનર્થોની ખાણ છે, સંયમમર્યાદાનો ભંગ કરનાર છે
 ૧૩. રાગનું એ સ્થાન છે ૧૪. દુશ્ચરિત્રોની તો એ પેટી છે ૧૫. જ્ઞાનનો નાશ
 કરનાર છે ૧૬. બ્રહ્મચર્યની આંખ ફાડનારી છે ૧૭. એ મહા ચપળ હોય છે,
 ધર્મમાં વિધ્ન કરાવનારી છે. ૧૮. સાધુઓ માટે શત્રુ સમાન છે ૧૯.
 બ્રહ્મચારિઓ માટે કલંક છે ૨૦. કર્મરજનું કારણ છે ૨૧. મુક્તિ
 માર્ગમાં આર્ગલા છે ૨૨. દુર્ગુણોની ખાણ છે ૨૩. મત્ત ગજરાજ સમાન છે ૨૪.
 વાઘ જેવી દયા વગરની છે ૨૫. ઘાસથી ઢંકાયેલા કુવા જેવી છે ૨૬. છુપા-

મોગાય—“મહાત્મન્ ! કામજ્વરભરેણ સંતપ્તમિદં મદદ્વમધુના, દયસ્વ મમ તપ શાન્ત્યૈ ” ઇત્યાદિવિવિધપ્રાર્થનાવચનૈર્વિવિધકામચેષ્ટાભિથ સા મુનિ ચારિત્રાન્વા-
ઘયિતું પ્રવૃત્તા । તદા મુનિચિન્તયતિ—

ગણિકાસ્ત્રિયો હિ સ્વલુ નામ્નાઽવલાઃ ૧, કાર્યેણ સવલાઃ ૨, પ્રકૃતિવિપમાઃ ૩,
કપટપ્રેમગિરિનયઃ ૪, અપરાધસહસ્રગૃહાઃ ૫, પ્રભવઃ (ઉત્પત્તિસ્થાનં) શોકસ્ય ૬,

પ્રકાર સુંદર માતૃમ પડતા હૈં ઉસકા મુલકમલ ભી કૈશપંતિ સે
ચિરાજિત હોને સે ટીક ણેસા હી સુંદર માતૃમ પડતા થા । મુલ કી
કપોલપાલી લાવણ્ય કૈ પ્રકર્ષ સે ચમક રહી થી । લલાઈ કો લિયે હુ
ધી । કામ કૈ આવેશ સે યહ ક્ષણ ૨ મેં જંભાઈ લેતી ઓર ક્ષણ ૨ મેં
આલસ્ય મોઢતી હુઈ ચોલી-મહાત્મન્ ! મેરા યહ શરીર ઇસ સમય
કામજ્વર સે સંતપ્ત હો રહા હૈં । અતઃ દયા કરો ઓર ઇસ કમજ્વર કો
શાન્ત કરો । ઇત્યાદિ વિવિધ પ્રાર્થના કૈ વચનોં ઇવં અનેકવિધ કામ
કી ચેષ્ટાઓં સે ઉસને મુનિ કો ઉનકે પવિત્ર ચારિત્ર સે ચલાયમાન
કરને કૈ લિયે કોશિશ કી, પરંતુ મુનિરાજ ને ઉસ સમય ભી યહી
વિચાર કિયા કિ—

યે વેશ્યા સ્ત્રિયાં કેવલ નામ સે હી અચલા હૈં કાર્યસે નહીં ૧ । કાર્ય મેં
તો યે વડી ભારી સવલ હૈં ૨ । પ્રકૃતિ સે યે વિપમ હોતી હૈં ૩ । કપટ પ્રેમ
કી યે પહાડી નદિયાં હૈં જો શીઘ્ર હી શુષ્ક હો જાતો હૈં ૪ । હજારોં
અપરાધોં કી યે સ્થાન હૈં ૫ । શોક કી ઉત્પત્તિ કા યે સ્થાનમૂત હૈં ૬ ।

ગઈ હતી. ભમરાથી શુંજતું કમળ જે રીતે સુંદર દેખાય છે તેવી રીતે એવું
મુખ કમળ પણ કેશ પંક્તિથી વિરાળત હોવાથી એવું જ સુંદર દેખાતું
હતું. તેના મોઢા ઉપરની લાલીમા લાવણ્યથી ચમકી રહેલ હતી. કામના
આવેશથી એ ક્ષણ ક્ષણમાં અટકતી અને આજસ મરડતી બોલી. મહાત્મન્!
હું આ સમયે કામજ્વરથી પીકાઈ રહી છું આથી દયા કરી આ કામજ્વરને
શાંત કરો. ઇત્યાદિ વિવિધ પ્રાર્થના વચનોથી તેમજ અનેકવિધ કામચેષ્ટાથી
તેણે મુનિને તેના પવિત્ર ચારિત્રથી ચલાયમાન કરવાની કોશિષ કરી. આ સમયે
મુનિરાજે એ વિચાર કયો કે,—

આ વેશ્યા સ્ત્રીઓ કેવળ નામથી જ અબળા છે, કાર્યથી નહીં ૧. કાર્યમાં
તો એ ઘણી ભારે સબળ છે ૨. પ્રકૃતિથી એ વિપમ હોય છે ૩. કપટ પ્રેમની એ
પહાડની નદીઓ જેવી છે, જે વહેલી સુકાઈ જાય છે ૪. હજારો અપરાધો
એ સ્થાન છે ૫. શોકની ઉત્પત્તિને જગાવનાર છે ૬. બળનો વિનાશ કરનાર

૪૭, પરદોષપ્રકાશિકાઃ ૪૮, અરજ્જુકાઃ પાશાઃ (રજ્જુકં વિના વન્ધનરૂપાઃ) ૪૯, કૃતપાપપથાત્તાપવર્જિતાઃ ૫૦, અકાર્યપ્રવૃત્તિશીલાઃ ૫૧, અનામકા વ્યાધયઃ ૫૨, અરૂપા ઉપસર્ગાઃ (અનુકૂલોપસર્ગભૂતાઃ) ૫૩, ચિત્તવિક્ષેપકારિકાઃ ૫૪, અનમ્રકા વિદ્યુતઃ ૫૪, સમુદ્રવેગાઃ, (કેનાપિ નિરોદ્ધમશક્યત્વાત્ ૫૬ । ઉક્તञ्च—

ન તથાઽસ્ય ભવેન્મોહો વન્ધશ્ચાન્યપ્રસંગતઃ ।

યોપિત્સંગાદ્ યથા પુંસો યથા સ્ત્રીસંગિસંગતઃ ॥ ૧ ॥

પદાઽપિ યુવર્તી મિશ્રુર્ન સ્પૃશેદારવીમપિ ।

સ્પૃશન્ કરીવ વધ્યેત કરિણ્યા અઙ્ગસંગતઃ ॥ ૨ ॥

કે દોષોં કો પ્રકાશિત કરને વાલી હૈં ૪૮ । યે વિના દોરી કે પાશતુલ્ય હૈં ૪૯ । કિયે હુણ પાપોં કે પશ્ચાત્તાપ સે વર્જિત ૫૦, એવં અકાર્ય મેં પ્રવૃત્તિ કરને વાલી હોતી હૈં ૫૧ । વિના નામ કી યે વ્યાધિયાં હૈં ૫૨ । વિના આકૃતિ કે ઉપસર્ગ સમાન હૈં ૫૩ । ચિત્તકો વિક્ષેપ કરને વાલી હૈં ૫૪ । વિના વાદલોં કી યે વિદ્યુત્ હૈં ૫૫ । કિસી સે ભી ઇનકા વેગ રોકા નહીં જા સકતા, ઇસલિયે યે સમુદ્ર કે વેગ જૈસી હૈં ૫૬ । કહા ભી હૈ—

ન તથાઽસ્ય ભવેન્મોહો વન્ધશ્ચાન્યપ્રસંગતઃ ।

યોપિત્સંગાદ્ તથા પુંસો, યથા સ્ત્રીસંગિસંગતઃ ॥ ૧ ॥

પદાઽપિ યુવર્તી મિશ્રુર્ન સ્પૃશેદારવીમપિ ।

સ્પૃશન્ કરીવ વધ્યેત, કરિણ્યા અંગસંગતઃ ॥ ૨ ॥

અર્થાત્—પુરુષ કો સ્ત્રી કે સંગ સે તથા વિષયવિલાસી કે સંગ સે જિસ પ્રકાર કા મોહ ઓર વન્ધ હોતા હૈં ઉસ પ્રકાર કા મોહ ઓર

સ્વજનમાં તેમજ મિત્રોમાં છેલ્લેલે કશવનારી છે ૪૭, જીભના દોષોને પ્રકાશિત કરવાવાળી છે ૪૮, દોરી વગરના કાંસલા જેવી છે ૪૯, કરેલા પાપોના પશ્ચાત્તાપથી દૂર રહેનારી છે ૫૦, અકાર્યમાં પ્રવૃત્તિ કરનાર હોય છે ૫૧, નામ વગરનો એ રોગ છે ૫૨, આકૃતિ વગરનો ઉપસર્ગ છે ૫૩, ચિત્તને વ્યગ્ર બનાવનાર છે ૫૪, વાદળ વગરની વિજળી જેવી છે, કોઈથી તેનો વેગ રોકી શકાતો નથી આ કારણે તે સમુદ્રના વેગ જેવી છે. કહ્યું છે કે—

ન તથાઽસ્ય ભવેન્મોહો વન્ધશ્ચાન્ય પ્રસંગતઃ ।

યોપિત્સંગાદ્ તથા પુંસો, યથા સ્ત્રી સંગિસંગતઃ ॥ ૧ ॥

પદાઽપિ યુવર્તિ મિશ્રુર્ન સ્પૃશેદારવી મપિ ।

સ્પૃશન્ કરીવ વધ્યેત, કરિણ્યા અંગ સંગતઃ ॥ ૨ ॥

પુરુષને સ્ત્રીના સંગથી તેમજ વિષય વિલાસીના સંગથી જે પ્રકારનો મોહ અને બંધ થાય છે, તે પ્રકારનો મોહ અને બંધ જીભથી થતો નથી. આ

ળવત્કુચિતહૃદયા: ૨૮, સંધ્યાપ્રરાગચન્દ્રહર્તરાગા: ૨૯, સમુદ્રવીચિચલસ્વમાચા: ૩૦, કૃષ્ણસર્પચનિરુકમ્પા: ૩૧, સલિલચન્નિમ્નગામિન્ય: ૩૨, કૃષ્ણવદુષ્ણન-
હસ્તા: ૩૩, નરકચત્રાસોત્પાદિકા: ૩૪, દુષ્ટાશ્વચ્ચ દુર્દમા: ૩૫, ચાલચત્ર સ્થ
રુષ્ટતુષ્ટા: ૩૬, અન્ધકારચ્ચ દુષ્પ્રવેશા: ૩૭, વિપવલ્લીચ્ચ અનાશ્રયણીયા: ૩૮,
કિંપાકફલતુલ્યમુલમધુરા: ૩૯, રાક્ષસીચ્ચ અકાલચારિણ્ય: ૪૦, દુરુપચારા: ૪૧,
અગમ્ભીરા: ૪૨, અવિશ્વસનીયા: ૪૩, અરતિકરા: ૪૪, રૂપસૌભાગ્યમદ-
મત્તા:—(રૂપ-સુન્દરાકૃતિ:, સૌભાગ્ય-સ્વકીર્તિશ્રવણાદિરૂપ, મદો-મનમયજગર્વ,
તૈમત્તા:) ૪૫, શુજગગતિચત્ર કુટિલહૃદયા: ૪૬, કુલસ્વજનમિત્રભેદનકારિકા:

શીલ છે ૨૭ । ખીતર કે ઘાવ કી તરહ કુચિત હૃદયવાલી છે ૨૮ । સંધ્યારાગસમાન છે ૨૯ । સમુદ્ર કી તરફ કે સમાન ચંચલ સ્વમાચ વાલી છે ૩૦ । કૃષ્ણસર્પ કે સમાન ભયંકર છે ૩૧ । જલ કે સમાન નીચે કી ઓર જાને વાલી છે ૩૨ । કૃષ્ણ કી તરહ ઉત્તાન હાથોવાલી અર્થાત્ હર સમય 'લાવ-લાવ' કરને વાલી છે ૩૩ । નરક કે તુલ્ય કષ્ટ દેનેવાલી છે ૩૪ । દુષ્ટ ઘોડે કી તરહ દુર્દમ છે ૩૫ । ચાલક કે સમાન ક્ષણ ૨ મેં રુષ્ટ એવં તુષ્ટ હોનેવાલી છે ૩૬ । અન્ધકાર કી તરહ દુષ્પ્રવિશ્ય છે ૩૭ । વિપવલ્લી કી તરહ આશ્રય લેને યોગ્ય નહીં છે ૩૮ । કિંપાક ફલ કી તરહ આદિ મેં મધુર છે ૩૯ । રાક્ષસી કી તરહ અકાલ મેં ચલને વાલી છે ૪૦ । દુરુપચાર ૪૧, અગમ્ભીર ૪૨, અવિશ્વસનીય ૪૩, ઓર અરતિકર છે ૪૪ । રૂપ, સૌભાગ્ય તથા મદ સે સદા ઉન્મત્ત છે ૪૫ । સર્પ કી ગતિ કે સમાન કુટિલ મનવાલી છે ૪૬ । કુલ મેં, સ્વજન મેં, એવં મિત્રો મેં છેદ-ભેદ કરને વાલી છે ૪૭ । દુસરો

ચેલા છાણના અગ્નિ માફક બાળવાવાળી છે ૨૭. અંદરના ઘાના જેવી દુર્ગંધીમાં કુચિત જેવા હૃદયવાળી છે ૨૮. સંધ્યાના રંગ જેવી છે ૨૯. સમુદ્રના તરંગોની માફક ચંચલ સ્વભાવવાળી છે ૩૦. કાળા સર્પ જેવી ભયંકર છે ૩૧. જળની માફક નીચે જનારી છે ૩૨. કૃષ્ણની માફક ઉત્તાન હાથવાળી અર્થાત્ હર સમય લાવ લાવ કરવાવાળી છે ૩૩. નરકના જેવાં દુઃખો દેનારી છે ૩૪. દુષ્ટ ઘોડાના જેવી દુર્દમ છે ૩૫. બાળકની માફક ધડીમાં રીસાનાર અને ધડીમાં હસનાર છે ૩૬. અંધકારના જેવી બીહામણી છે ૩૭. વિપવેલના જેવી આશ્રય લેવાય તેવી નથી ૩૮. કિંપાક ફળની માફક શરૂમાં મધુર છે ૩૯. રાક્ષસીની માફક અકાળમાં ચાલવાવાળી છે ૪૦. દુરુપચાર છે ૪૧, અગમ્ભીર છે ૪૨, અવિશ્વસનીય છે ૪૩, અરતિકર છે ૪૪, રૂપ, સૌભાગ્ય તથા મદથી સદા ઉન્મત્ત છે ૪૫, સર્પની ગતી સમાન કુટિલ મનવાળી છે ૪૬.

પ્રિયદર્શિની ટીકા. અં ૨ ગા ૦ ૧૭ સ્ત્રીપરીપદજયે લાવણ્યપૂરમુને: પરીપદ્વા: ૪૦૩

મહાગ્નિ ! હ્રદમગ્નચર્ય મહાપુરુષૈરનાચરિતં, જન્મજરામરણદાયકં કાતરપુરુષસેવિતં
પ્રમાદચહુલં તપ:સંયમવિઘ્નભૂતમધર્મદ્વારમ્, પક્ષ્પનકપાશજાલતુલ્યમ્ । અસ્ય સ્વલ્પ
અગ્નિચર્યસ્ય ફલવિપાકોનરકનિગોદાધનન્તદુઃખરૂપો મહાદારુણઃ, પલ્યોપમસાગ-
રોપમકાલેનાપ્યમુચ્યમાનાઽશાતવેદનારૂપઃ, તસ્માદ્ વિરમ્યતામસ્માત્પાપાચરણાત્,

ફિર अपनी અમૃતતુલ્ય વાણી સે સમજાના પ્રારંભ કિયા । કહા-હે
દેવાનુપ્રિયે ! તુમ કયા કરને કે લિયે ઉચત હો રહી હો । તુમ્હેં કયા
માલૂમ નહીં હૈ કિ કુશીલસેવન કા માર્ગ મહાપુરુષો સે અનાચરિત
હૈ । હસ મેં એસા કોઈ બી લાભ નહીં હૈ જો આત્મા કો હિતકારક
હો । હસ સે જન્મ જરા એવં મરણ વ કષ્ટો કો ભોગને કે સિવાય કુછ
નહીં મિલતા હૈ । બ્રહ્મચર્ય મેં જો કાયર હૈં વે હી હસમેં આનંદ માનતે
હૈં । વે વિપયભોગ પ્રમાદચહુલ એવં તપ તથા સંયમ કે પાલન મેં
પ્રવલ અન્તરાયસ્વરૂપ હૈં । અધર્મ કે પ્રધાન માર્ગ હૈં । યહ
કુશીલસેવન પંક - કીચડ, પનક-કાર્ડ તથા જાલ કે સમાન હૈ ।
અર્થાત્ હસમેં મનુષ્ય ગડ જાતા હૈ, ફિસલ જાતા હૈ, ઓર બંધ જાતા હૈ ।
હસ અગ્નિચર્ય સેવન કા ફલ જીવો કો નરક નિગોદ કે અનંત દારુણ
દુઃખો કે ભોગને કે રૂપ મેં પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।

હસકે સેવન કે ફલસ્વરૂપ અશાતવેદનાઈ પલ્યોપમ સાગરોપમ
તક ભોગની પડતી હૈ, હસ લિયે હસ પાપાચરણ સે વિરક્ત હોને મેં હી

આરંભ કર્યો, અને કહ્યું ! હે દેવાનુપ્રિયે ! તું શું કરવા માટે પ્રવૃત્ત બની છે ?
તને શું ખબર નથી કે, કુશીલ સેવનનો માર્ગ મહાપુરુષે આચરવા થોડો
નથી. તેમાં કોઈ એવો લાભ નથી જે આત્માને હિતકારક હોય, એનાથી જન્મ,
જરા અને મરણનાં દુઃખો ભોગવવા સિવાય બીજું કંઈ મળતું નથી. બ્રહ્મચ-
ર્યમાં જે કાયર હોય છે તેજ આમાં આનંદ માને છે. આ વિપયભોગ પ્રમાદ
તપ તથા સંયમના પાલનમાં પ્રબળ અંતરાય સ્વરૂપ છે. અધર્મનો પ્રધાન
માર્ગ છે, આ કુશીલ સેવન કિચડ, ખાઈ, તથા બળ સમાન છે. અર્થાત્-
મનુષ્ય તેમાં ગળડી બંધ છે, ફસાઈ બંધ છે, બંધાઈ બંધ છે. આ અગ્નિચર્ય
સેવનનું ફળ જીવોને નરક નિગોદના અનંત દારૂણ દુઃખોને ભોગવવાના રૂપમાં
પ્રાપ્ત થાય છે. આના સેવનના ફળ સ્વરૂપ આશાતવેદનાઓ પલ્યોપમ
સાગરોપમ સુધી ભોગવવી પડે છે. માટે આ પાપાચરણથી વિરક્ત થવામાં જ

તથૈવ પુરુપસંગઃ સાધ્વીનામપિ । ઉક્તચ્ચ—

ઘૃતકુમ્ભસમા નારી તપ્તાદ્ધારસમઃ પુમાન્ ।

તસ્માદ્ ઘૃતં ચ વહ્નિં ચ, નૈકત્ર સ્થાપયેદ્ બુધઃ ॥ ૧ ॥

હત્યેવં વિચિન્ત્યાસૌ મુખાધારાસારયા પ્રવચનસારયા ગિરા તાં પ્રતિબોધયતિ ।

બન્ધ દૂસરે સે નહીં હોતા હૈ ॥ ૧ ॥ ફસલિયે મુનિ કો ચાહિયે કો બહ ફાટ કી પુતલી કો 'ભી પૈર સે 'ભી સ્પર્શ ન કરે, અગર સ્પર્શ કરે તો જિસ પ્રકાર હથની કે અંગસ્પર્શ સે હાથી બન્ધ જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર મુનિ 'ભી કામરાગ મેં બંધ જાતા હૈ ॥ ૨ ॥

ફસી પ્રકાર સાધ્વિયોં કે લિયે 'ભી પુરુપોં કા સંગ વર્જનીય હૈ । ક્યોં કિ-પુરુપ કા સંગ સાધ્વી કે વ્રણચર્ય કે નાશ મેં અસાધારણ હેતુ હૈ । કહા 'ભી હૈ—

“ ઘૃતકુમ્ભસમા નારી, તપ્તાદ્ધારસમઃ પુમાન્ ॥

તસ્માદ્ ઘૃતં ચ વહ્નિં ચ, નૈકત્ર સ્થાપયેદ્ બુધઃ ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—શ્રી ધી કે 'ભરે હુણ ઘડે કે સમાન હૈ ઓર પુરુપ પ્રજ્વલિત અદ્ધાર કે સમાન હૈ । ફસલિયે વિદ્વાન્ કો ચાહિયે કિ ઘૃત ઓર અગ્નિ કો ફક જગહ નહીં રક્ષે ।

ફસ પ્રકાર ઉન લાવણ્યપૂર મુનિરાજ ને વિચાર કિયા । વિચાર કરને કે પશ્ચાત્ કામ સે અતિ વિહલ બની હુઈ ઉસ વેદ્યા કો ઉન્હોં ને

માટે મુનિઓએ લાકડાની પુતળીનો પગથી પણ સ્પર્શ ન કરવો જોઈએ. કારણ કે, સ્પર્શ કરવાથી જેમ હાથી હાથણીના અંગસ્પર્શથી બંધાઈ બંધ છે, એવી રીતે મુનિ પણ કામ રાગમાં બંધાઈ બંધ છે.

કહ્યું છે કે—આ પ્રકારે સાધ્વિઓને માટે પણ પુરુષોનો સંગ તજવા યોગ્ય છે, કારણ કે પુરુષોના સંગ સાધ્વિને બ્રહ્મચર્યના નાશમાં અસાધારણ હેતુ છે કહ્યું પણ છે—

ઘૃતકુમ્ભસમા નારી, તપ્તાદ્ધારસમઃ પુમાન્ ।

તસ્માદ્ ઘૃતં ચ વહ્નિં ચ, નૈકત્ર સ્થાપયેદ્ બુધઃ ॥ ૧ ॥

શ્રી ધીના બારેલા ઘડા સમાન છે અને પુરુષ પ્રજ્વલિત અગ્નિ સમાન છે, માટે વિદ્વાને બાણવું જોઈએ કે ધી અને અગ્નિને એક સ્થળે ન રાખે.

આ પ્રકારે તે લાવણ્યપૂર મુનિરાજે વિચાર કર્યો વિચાર કરીને પછીથી કામવિહળ બનેલી તે વેશ્યાને પોતાની અમૃતતુલ્ય વાણીથી સમબંધવાનો

ટીકા—‘ એગ ’ ઇત્યાદિ ।

લાઢઃ=અયં દેશીયઃ શબ્દઃ, લાઢઃ=પ્રાસુકૈપણીયાહારેણાત્મનિર્વાહકો મુનિઃ
પરીપહાન્=ધુત્પિપાસાદીન્ અભિભૂય=વિજિત્ય, ગ્રામે=અલ્પજનનિવાસસ્થાને, વા=
અથવા નગરે=પ્રાકારવેષ્ટિતેઽપિ, વા=અથવા નિગમે=ત્રણિગ્જનસ્થાને, વા=અથવા
રાજધાન્યામ્=રાજસ્થાને, ઉપલક્ષણમેતત્ તેન મડમ્વાદિષુ વા, એષુ ગ્રામાદિષુ યત્ર
કુત્રાપિ સ્થાને, એકઃ=રાગદ્વેપરહિતઃ, યદ્વા-યોગ્યસહાયસ્યોલાભે એકઃ=એકાકી,
ચરેદેવ=અપ્રતિવદ્ધવિહારેણ ચર્યાં કુર્યાદિવ ।

મુનિ કા એક જગહ રહતેર અરતિ આદિ પ્રસંગ પ્રાપ્ત હો સકતા હૈ
ઇસલિયે ઉસે ગ્રામાનુગ્રામવિહારરૂપ ચર્યા કરની ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર
ચર્યાકે કરને સે હી નૌવેં ચર્યાપરીપહ પર વિજય પાઈ જાતી હૈ, ઇસી વાત
કો ઇસ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરતે હૈ—‘ એગ એવ ચરે’—ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(લાઢે-લાઢઃ) ‘લાઢ’ યહ દેશીય શબ્દ હૈ । ‘પ્રાસુક એપણીય
આહાર સે અપના નિર્વાહ કરને વાલા મુનિ’ એસા ઇસકા અર્થ હૈ,
અતઃ એસા મુનિ (પરીસહે-પરીપહાન્) ધુત્પિપાસા આદિ પરીપહોં કો
(અભિભૂય-અભિભૂય) જીતકર (ગામે વા નગરે વાવિ નિગમે વા રાય-
હાણિએ-ગ્રામે વા નગરે વાઽપિ નિગમે વા રાજધાન્યામ્) ધોડે જનોં કા
જિસમેં નિવાસ હૈ એસે ગ્રામ મેં, અથવા પ્રાકાર સે જો વેષ્ટિત હૈ એસે
નગર મેં, અથવા વ્યાપારી જનોંકે સ્થાનભૂત એસે નિગમ મેં, અથવા રાજા
કા જહાં રહના હો રહા હૈ એસી રાજધાની મેં, ઉપલક્ષણ સે મડંબ આદિ

મુનિને એક જગ્યાએ રહેવાથી અરતિ વગેરેના પ્રસંગ પ્રાપ્ત થઈ શકે છે
તેથી તેણે એક ગામથી બીજા ગામ વિહાર રૂપી ચર્યા કરવી જોઈ એ આ
પ્રકારની ચર્યાને કરવાથી જ નવમા ચર્યાપરીપહ ઉપર વિજય પ્રાપ્ત થાય છે
આ વાતને સૂત્રકાર આ ગાથા દ્વારા પ્રદર્શિત કરે છે—એગ એવ ચરે—ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—લાઢે-લાઢઃ “ લાઢ ” એ દેશીય શબ્દ છે. ‘પ્રાસુક એપણીય
આહારથી પોતાનો નિર્વાહ કરવાવાળા મુનિ’ એવો આનો અર્થ છે, એટલે આવા મુનિ
પરીસહે-પરીપહાન્ ધુત્પિપાસા આદિ પરીપહોને અભિભૂય-અભિભૂય છતીને
ગામે વા નગરે વાવિ નિગમેવા રાયહાણિએ-ગ્રામે વા નગરે વાઽપિ નિગમે વા રાજધાન્યામ્
થોડા માણસો જેમાં રહેતા હોય તેવા ગામમાં, અથવા કોટથી ઘેરાયેલ હોય
તેવા નગરમાં, અથવા વેપારી જનોનો જેમાં વાસ હોય તેવા નિગમમાં, અથવા રાજા
જ્યાં રહેતો હોય તેવી રાજધાનીમાં, ઉપલક્ષણથી મડંબ આદિ સ્થાનોમાં આવા

एवं मुनिवचनं श्रुत्वा सा वेद्या हतमनोरथा जाता, तदनन्तरमसौ कोष-
वेशेन यष्टिमुष्ट्यादिभिर्मर्मणि गाढप्रहारं कृतवती । तदाऽसौ मुनिर्निर्गमनोपायमन-
वलोक्य ब्रह्मचर्यं परिरक्षयन् तामुज्ज्वलवेदनां शुभाध्यवसायेन सहमानः क्षप-
क्रेणिमारुहोऽन्तर्मुहूर्तं नैव प्राप्तकेवलज्ञानः कालं कृत्वा मोक्षं प्राप्तवान् । एवमन्येति
मुनिभिः स्त्रीपरीपहः सोढव्यः ॥ १७ ॥

एकत्र स्थितस्य मुनेरतयादिप्रसङ्गः स्यात्, अतो ग्रामानुग्रामविहारस्था
चर्या कार्येति चर्याकरणेनैव चर्यापरीपहः सोढव्य इत्याह—

मूढम्—ऐंग ऐंव चरे लाढे, अभिभूय परीसंहे ।

गाँमे वा नंगरे वावि, निंगमे वां रायहोंणिण ॥ १८ ॥

छाया—एक एव चरेत् लाढः, अभिभूय परीपहान् ।

ग्रामे वा नगरे वाऽपि, निंगमे वा राजधान्याम् ॥ १८ ॥

તેરા કલ્યાણ છે । હસ પ્રકાર મુનિ કે વચનોં કો સુનકર વેદ્યા બહી
લજ્જિત હુઈ । કોષ કે આવેશ મેં આકર વહ મુનિરાજ પર ઘોર ઉપસર્ગ
કરને લગી । ડન મુનિ કો યષ્ટિ ઇવં મુષ્ટિ આદિ કે પ્રહારોં સે મર્મ સ્થલોં મેં
આઘાત પહુંચાયા । મુનિ મહારાજ ને વહાં સે નિકલના ચાહા પરંતુ
નિકલને કે જિતને ખી દરવાજે યે વે સવ પહિલે સે હી બંદ કિયે જા
ચુકે યે, અતઃ વહાં સે નિકલને કા જય ઉન્હે કોઈ ઉપાય નહીં સૂઝા તો
અપને બ્રહ્મચર્ય કી રક્ષા મેં શુભાધ્યવસાય સે જીવન કો સમર્પિત કરતે હુણ
ઉન્હોં ને ક્ષપક્રેણિપર આરોહણ કિયા ઓર અન્તર્મુહૂર્ત મેં કેવલ જ્ઞાન
કી પ્રાપ્તિ કર મુક્તિ કા લાભ કર લિયા । હસી પ્રકાર અન્યમુનિજનોં
કો ખી હસ સ્ત્રીપરીપહ કો જીતના ચાહિયે ॥ ૧૭ ॥

તાઈ કલ્યાણ છે. આ પ્રકારનાં મુનિનાં વચનોને સાંભળી વેદ્યા ખૂબ લજવાઈ
ગઈ અને કોપના આવેશમાં આવીને તે મુનિરાજને ઘોર ઉપસર્ગ આપવા લાગી.
મુનિના મર્મસ્થાનોમાં મુઠીઓથી અને પગની લાતોથી આઘાત પહોંચાડ્યો.
મુનિરાજે ત્યાંથી નીકળવા આહું પરંતુ નીકળવાના બેટલા રસ્તા હતા તે પહે-
લેથી જ બંધ કરી દેવામાં આવ્યા હતા. આથી જો સ્થળેથી નીકળવાનો કોઈ
પણ માર્ગ ન મળ્યો ત્યારે પોતાના બ્રહ્મચર્યની રક્ષા માટે તેમણે શુભ અધ્ય-
વસાયથી જીવનનું સમર્પણ કરીને ક્ષપક્રેણી પર આરોહણ કર્યું અને અંત
મુહૂર્તમાં કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ કરી મુક્તિનો લાભ લીધો. આ રીતે અન્ય મુનિ-
જનોએ પણ સ્ત્રી પરીપહને જીતવો બોધ્યો. ॥ ૧૭ ॥

ટીકા—‘ એગ ’ ઇત્યાદિ ।

લાઢઃ=અયં દેશીયઃ શબ્દઃ, લાઢઃ=પ્રાસુકૈષ્ણીયાહારેણાત્મનિર્વાહકો મુનિઃ
પરીપહાન્=ક્ષુત્પિપાસાદીન્ અભિભૂય=વિજિત્ય, ગ્રામે=અલ્પજનનિવાસસ્થાને, વા=
અથવા નગરે=પ્રાકારવેષ્ટિતેઽપિ, વા=અથવા નિગમે=ત્રણિગ્જનસ્થાને, વા=અથવા
રાજધાન્યામ્=રાજસ્થાને, ઉપલક્ષણમેતત્ તેન મહમ્વાદિષુ વા, એષુ ગ્રામાદિષુ યત્ર
કુત્રાપિ સ્થાને, એકઃ=રાગદ્વેષરહિતઃ, યદ્વા-યોગ્યસહાયસ્થાલામે એકઃ=એકાકી,
ચરેદેવ=અપતિવદ્ધવિહારેણ ચર્યાં કુર્યાદિવ ।

મુનિ કો એક જગહ રહતેર અરતિ આદિ પ્રસંગ પ્રાપ્ત હો સકતા હૈ
इसलिये उसे ग्रामानुग्रामविहाररूप चर्या करनी चाहिये । इस प्रकार
चर्याके करने से ही नौवें चर्यापरीपद पर विजय पाई जाती है, इसी बात
को इस गाथा द्वारा सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—‘ एग एव चरे’—इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(લાઢે-લાઢઃ) ‘લાઢ’ યહ દેશીય શબ્દ હૈ । ‘પ્રાસુક એપળીય
આહાર સે અપના નિર્વાહ કરને ચાલા મુનિ’ એસા ઇસકા અર્થ હૈ,
અતઃ એસા મુનિ (પરીસહે-પરીપહાન્) ક્ષુત્પિપાસા આદિ પરીપહોં કો
(અભિભૂય-અભિભૂય) જીતકર (ગામે વા નગરે વાવિ નિગમે વા રાય-
હાણિય-ગ્રામે વા નગરે વાઽપિ નિગમે વા રાજધાન્યામ્) થોડે જનોં કા
જિસ્મેં નિવાસ હૈ એસે ગ્રામ મેં, અથવા પ્રાકાર સે જો વેષ્ટિત હૈ એસે
નગર મેં, અથવા વ્યાપારી જનોંકે સ્થાનભૂત એસે નિગમ મેં, અથવા રાજા
કા જહાં રહના હો રહા હૈ એસી રાજધાની મેં, ઉપલક્ષણ સે મહંબ આદિ

મુનિને એક જગ્યાએ રહેવાથી અરતિ વગેરેના પ્રસંગ પ્રાપ્ત થઈ શકે છે
તેથી તેણે એક ગામથી બીજા ગામ વિહાર રૂપી ચર્યા કરવી બોધી એ આ
પ્રકારની ચર્યાને કરવાથી જ નવમા ચર્યાપરીપદ ઉપર વિજય પ્રાપ્ત થાય છે
આ વાતને સૂત્રકાર આ ગાથા દ્વારા પ્રદર્શિત કરે છે—એગ એવ ચરે—ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—લાઢે-લાઢઃ “ લાઢ ” એ દેશીય શબ્દ છે. ‘પ્રાસુક એપળીય
આહારથી પોતાને નિર્વાહ કરવાવાળા મુનિ’ એવો આનો અર્થ છે, એટલે આવા મુનિ
પરીસહે-પરીપહાન્ ક્ષુત્પિપાસા આદિ પરીપહોને અભિભૂય-અભિભૂય છતીને
ગામે વા નગરે વાવિ નિગમેવા રાયહાણિય-ગ્રામે વા નગરે વાઽપિ નિગમે વા રાજધાન્યામ્
થોડા માણસો જેમાં રહેતા હોય તેવા ગામમાં, અથવા કોટથી ઘેરાયેલ હોય
તેવા નગરમાં, અથવા વેપારી જનોનો જેમાં વાસ હોય તેવા નિગમમાં, અથવા રાજા
જ્યાં રહેતો હોય તેવી રાજધાનીમાં, ઉપલક્ષણથી મહંબ આદિ સ્થાનોમાં આવા

तथा चाग्रे वक्ष्यति—

न वा लभिज्जा निउणं सहायं, गुणादियं वा गुणओ समं वा ।

एगो वि पावाइं विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो ॥ १ ॥

(उक्त. ३२ अ. ५ गा.)

छाया—न वा लभेत् निपुणं सहायं, गुणाधिकं वा गुणतः समं वा ।

एकोऽपि पापानि विवर्जयन्, विहरेत् कामेषु असजन् ॥

उक्तमन्यत्रापि—

ग्रामाद्यनियतस्थायी, स्थानबन्धविवर्जितः ।

चर्यामेकोऽपि कुर्वीत, विविधाभिग्रहैर्युतः ॥ १ ॥ इति ।

स्थानों में जहां कहां भी वह (एग एव चरे—एकाकी एव चरेत्) राग द्वेष से रहित होकर समुदाय के साथ अथवा योग्य सहाय के अभाव में अप्रतिबंध विहार से अकेला ही विचरे । कहा भी है—

न वा लभिज्जा निउणं सहायं, गुणादियं वा गुणओ समं वा ।

एगो वि पावाइं विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो ॥

(उक्त० ३२ अ. ५ गा.)

तात्पर्य इसका यह है कि साधु को जंय योग्य सहायक (शिष्य आदि) की प्राप्ति न हो तो वह निष्पाप होकर, तथा इच्छाओं को जीतता हुआ अकेला भी विहार करे । अन्यत्र भी यही बात कही है—

ग्रामाद्यनियतस्थायी, स्थानबन्धविवर्जितः ।

चर्यामेकोऽपि कुर्वीत, विविधाभिग्रहैर्युतः ॥ १ ॥

कैथ पणु स्थणे ते एग एव चरे—एकाकी एव चरेत् राग द्वेषही रहित अनी समुदायनी साथे अथवा योग्य सहायना अभावमां अप्रतिबंध विहारही अकेला न विचरे कहुं छे—

न वा लभिज्जा निउणं सहायं, गुणादियं वा गुणओ समं वा ।

एगो वि पावाइं विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो ॥ उ. ३२. अ. ५.

आनु तात्पर्य अे छे के, साधुने न्यारे योग्य सहायक शिष्य आदिनी प्राप्ति न होय तो ते निष्पाप अनीने इच्छाओंने छुतीने अकेला पणु विहार करे. अन्यत्र पणु आज बात कहेल छे—

ग्रामाद्यनियतस्थायी, स्थानबन्धविवर्जितः ।

चर्यामेकोऽपि कुर्वीत, विविधाभिग्रहैर्युतः ॥ ॥

अयं भावः—यथाकल्पं ग्रामनगरादावनियतवासं कुर्वता मुनिनाऽऽलस्यपरिवर्जनेन तत्र तत्रानासक्त्या च ग्रामानुग्रामविहरणात्मकचर्याकरणादेव चर्यापरीपहः सोढो भवति । यस्तु परिक्षीणजङ्घावलस्तेन स्थिरवासे कृते भिक्षाचर्यायां कथंचित् स्वयं प्रवृत्त्याऽपि स परीपहः सोढो भवतीति ।

ननु—चर्यापरीपहो न भवत्यागन्तुकः, कथं तर्हि स्वयमुदीरितायाश्चर्यायाः परीपहत्वमिति चेत्, उच्यते—कल्पस्यापि कस्यचित् कष्टकारित्वेन सह्यमानत्वात्

यथाकल्प ग्राम नगर आदि में अनियतवास करने वाला अप्रतिपन्ध चिह्नारी मुनि नाना प्रकार के अभिग्रहों से युक्त होकर अकेला अर्थात्—सम्प्रदाय में रहते हुए भी रागद्वेष रहित विचरे ॥१॥

प्रमाद का परिहार करते हुए ग्रामनगरादि में आसक्ति रहित होकर ग्रामानुग्राम विचरणरूप चर्या के करने से ही यह चर्यापरीपह जीता जाता है । जिसका जङ्घावल क्षीण हो चुका है उस साधु को भी स्थिरवास करने पर भिक्षाचर्या में कथंचित् स्वयं प्रवृत्ति से यह परीपह सहन किया जाता है । आये हुए कष्ट का नाम परीपह है । चर्या तो आनेवाली नहीं है यह तो स्वयं उदीरित की जाती है अतः चर्या को परीपहरूप कैसे माना जा सकता है ? इसका समाधान इस प्रकार है—यद्यपि चर्या साधु का कल्प है तो भी किसी२ कल्प को कष्टकारी होने से वह सहन करना ही पड़ता है । चर्या भी इसी प्रकार है । अतः भगवाने इसको परीपहरूप फरमाया है । अपने कल्प का प्रमाद से

यथाकल्प ग्राम नगर आदिमां अनियतवास करवावाणा अप्रतिपन्ध-विहारी मुनि विविध प्रकारना अभिग्रहोधी युक्त भनी ओहला, अर्थात्—संप्रदायमां रहैवा छतां पक्ष रागद्वेष रहित विचरे. प्रमादने त्याग करीने ग्राम नगर आदिमां आसक्ति रहित भनीने ग्रामानुग्राम विचरणाङ्ग अथो करवाधी न आ अर्या परीपह छताय छे. जेनुं जङ्घाण क्षीण भनी गयेल छे जेवा साधुजे पक्ष स्थिरवास करवाधी भिक्षाचर्यामां कडेवामां आवेल स्वयं प्रवृत्तिथी आ परीपह सहन करवामां आवे छे. आवेला दुःखेने सहन करवां तेनुं नाम परीपह छे. अर्या आवती नथी परंतु स्वयं उषी करवामां आवे छे. आधी अर्याने परीपहङ्ग केअ मानवामां आवे छे ? तेनुं समाधान आ प्रकारथी छे—कदाच अर्या साधुने कल्प छे तो पक्ष कोछ कोछ कल्प कष्टकारी होवाधी ते सहन करवाज पडे छे. अर्याने पक्ष आज प्रकार छे. भाटे भगवाने तेने परीपहङ्ग करवावेल छे. चोताना कल्पनुं प्रमादथी आचरण न करुं ते परीपह

तथा चाग्रे वक्ष्यति—

न वा लभिज्जा निउणं सहायं, गुणाहियं वा गुणओ समं वा ।

एगो वि पावाइँ विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो ॥ १ ॥

(उत्त. ३२ अ. ५ गा.)

छाया—न वा लभेत् निपुणं सहायं, गुणाधिकं वा गुणतः समं वा ।

एकोऽपि पापानि विवर्जयन्, विहरेत् कामेषु असज्ज ॥

उक्तमन्यत्रापि—

ग्रामाद्यनियतस्थायी, स्थानबन्धविवर्जितः ।

चर्यामेकोऽपि कुर्वीत, विविधाभिग्रहैर्युतः ॥ १ ॥ इति ।

स्थानों में जहां कहां भी वह (एग एव चरे-एकाकी एव चरेत्) राग द्वेष से रहित होकर समुदाय के साथ अथवा योग्य सहाय के अभाव में अप्रतिबंध विहार से अकेला ही चिचरे । कहा भी है—

न वा लभिज्जा निउणं सहायं, गुणाहियं वा गुणओ समं वा ।

एगो वि पावाइँ विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो ॥

(उत्त० ३२ अ. ५ गा.)

तात्पर्य इसका यह है कि साधु को जब योग्य सहायक (शिष्य आदि) की प्राप्ति न हो तो वह निष्पाप होकर, तथा इच्छाओं को जीतता हुआ अकेला भी विहार करे । अन्यत्र भी यही बात कही है—

ग्रामाद्यनियतस्थायी, स्थानबन्धविवर्जितः ।

चर्यामेकोऽपि कुर्वीत, विविधाभिग्रहैर्युतः ॥ १ ॥

छाया पक्ष स्थले से एग एव चरे-एकाकी एव चरेत् राग द्वेषही रहित अपनी समुदायनी साथे अथवा योग्य सहायना अभावमें अप्रतिबंध विहारही अकेला ही चिचरे कह्युं छे—

न वा लभिज्जा निउणं सहायं, गुणाहियं वा गुणओ समं वा ।

एगो वि पावाइँ विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो ॥ उ. ३२. अ. ५.

आनु' तात्पर्य अे छे के, साधुने अन्यारे योग्य सहायक शिष्य आदिनी प्राप्ति न होय तो ते निष्पाप अपनीने इच्छाओंने छुतीने अकेला पक्ष विहार करे. अन्यत्र पक्ष आज बात कहेल छे—

ग्रामाद्यनियतस्थायी, स्थानबन्धविवर्जितः ।

चर्यामेकोऽपि कुर्वीत, विविधाभिग्रहैर्युतः ॥ ॥

छाया—असमानश्चरेद् भिक्षुः, नैव कुर्यात् परिग्रहम् ।

असंसक्तो गृहस्थैः, अनिकेतः परिव्रजेत् ॥ १९ ॥

टीका—‘असमाणे’ इत्यादि ।

भिक्षुः=मुनिः, असमानः=गृहस्थैरन्यतीर्थिकैश्चासदृशः, तत्राश्रयमूर्छारहितत्वेन गृहस्थैरसदृशः, अनियतविहारादिना अन्यतीर्थिकैरसदृश इति भावः । यद्वा—मानस-
हितः समानः, न तथेत्यसमानः, अभिमानवर्जित इत्यर्थः, यद्वा—‘असमाणे’
इत्यस्य ‘असन्निति’ छाया, असन्निव-असन्, यत्र विद्यते तत्राप्यविद्यमान इव,
अल्पतरकालस्थायित्वेन तत्र तत्र तत्सत्ताया अनियतत्वात्, तत्र तत्र विद्यमानत्वेऽपि
तत्तद्ग्रामोपाश्रयादिषु ममत्वाभिमानाभावाच्च । इममेवार्थं प्रकटयन्नाह—‘नैव कुञ्जा’
इत्यादि । परिग्रहम्=तत्तद्ग्रामोपाश्रयादिषु स्थानेषु द्रव्यभावपरिग्रहं नैव कुर्यात्=
न धारयेत् । उक्तञ्च—

“गामे कुले वा नयरे य देसे, ममंति भावं न कर्हिचि कुञ्जा” ॥ इति ॥

‘असमाणे’—इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(असमाणे-असमानः) गृहस्थरूप आधार की मूर्च्छा से
रहित होने के कारण गृहस्थों के समान नहीं, तथा अनियत विहार आदि
द्वारा अन्यतीर्थिकों के समान नहीं, अथवा-असमान-मान से वर्जित, या
“असमाणे-असन्”—अल्पतर काल तक ग्राम नगरादिमें रहने वाला होने
की वजह से वहां नहीं जैसा ऐसा (भिक्षू-भिक्षुः) मुनि (परिग्रहं-नेव
कुञ्जा-परिग्रहं नैव कुर्यात्) उन २ ग्राम एवं उपाश्रयादिकों में द्रव्य एवं
भाव रूप परिग्रह से नहीं बंधे-उनमें ममत्व भाव न करे । कहा भी है—

“गामे कुले वा नयरे य देसे, ममंति भावं न कर्हिचि कुञ्जा ॥”

असमाणे इत्यादि.

अन्वयार्थ—असमाणे-असमानः गृहस्थरूप आधारणी मूर्च्छाधी रहित होवाने
कारण गृहस्थाना समान नहीं, तथा अनियतविहार आदि द्वारा अन्य तीर्थि-
काना समान नहीं, अथवा-असमान-मानधी वर्जित, या असमाणे-असन् अल्पतर
काल मुनी ग्राम नगर आदिमां रहवावाणा होवाना कारण त्यां नहीं लेवा लेवा
भिक्षू-भिक्षुः मुनि परिग्रहं नैवकुञ्जा-परिग्रहं नैव कुर्यात् ले ले गामं अने
उपाश्रय आदिमां द्रव्य अने लावइय परिग्रहधी न अंधाय-तेमां ममत्वलाव न
राजे. कह्य छे के—

“गामे कुले वा नयरे य देसे, ममंति भावं न कर्हिचि कुञ्जा ॥”

પરીપદરૂપત્વં ભવતિ, તત્ર પ્રમાદેન સ્વકલ્પાનાચરણમેત્ર પરીપદકૃતઃ પરાજયઃ, તસ્માત્ પ્રમાદવર્જિતેન યથાકલ્પચર્યારાધનેનૈવ ચર્યોપરીપદઃ સોદ્ધો ભવતીતિ ॥૧૮॥

ઉક્તમર્થ દ્વીકુર્વન્નાહ—

મૂલમ્—અસંમાણે ચૈરે ભિક્ષુ, નૈવ કુઝ્જા પરિગ્ગહં ।

અસંસત્તો ગિહૃત્યેહિં, અણિણ્ણો પરિવ્વણ ॥ ૧૯ ॥

આચરણ નહીં કરના હી પરીપદજનિત પરાજય હૈ । इसलिये प्रमाद वर्जित होकर यथाकल्प चर्या के आराधन से ही चर्यापरीपद सहन किया जाता है । तभी चर्यापरीपदजयी साधु कहलाता है ।

ભાવાર્થ—ચતુર્માસ કલ્પ કો છોડકર મુનિ કે લિયે એકત્ર સ્થિર રહના જૈનશાસન કી આજ્ઞા સે વાહિર હૈ । કોઈ સ્વાસ કારણ હો તો મુનિ એકત્ર વાસ કર સકતા હૈ, અન્યથા નહીં । અતઃ આત્મકલ્પાણ કી ભાવના સે અથવા ‘જનતા મેં ધર્મ કા પ્રચાર હોતા રહે’ इस शुभ अध्यवसाय से मुनि को नगर ग्राम आदि स्थानों में विचरते रहना चाहिये । एक स्थान पर रहने वाले साधु को स्थानजन्य मोह सता देता है, अतः वह चाहे एकाकी रूप में विहार करे चाहे योग्य सहायकों के साथ विहार करे, परन्तु विहार अवश्य करे । विहार में सदा अपने संयम की पूरी दृढ़ता रखे । क्षुत्पिपासा आदि परीपद सतावें तो भी उनकी परवाह न करे । इसका नाम चर्यापरीपदजय है ॥ १८ ॥

જનિત પરાજય છે માટે પ્રમાદથી દૂર રહીને યથાકલ્પ ચર્યાના આરાધનાથી જ ચર્યાપરીપદ સહન કરી શકાય છે. એજ ચર્યાપરીપદ છૂટેલ સાધુ કહેવાય છે.

ભાવાર્થ:—ચતુર્માસ કલ્પને છોડીને મુનિ માટે એક સ્થળે સ્થિર રહેવું જૈનશાસનની આજ્ઞાથી બહાર છે. ‘કોઈ ખાસ કારણ હોય તો મુનિ એક સ્થળે વાસ કરી શકે છે, તે સીવાય નહીં’. આથી આત્મકલ્પાણની ભાવનાથી અથવા ‘જનતામાં ધર્મનો પ્રચાર થતો રહે એવા શુભ આશયથી મુનિએ નગર ગ્રામ આદિ સ્થાનોમાં વિચરતા રહેવું જોઈએ. એક સ્થાન ઉપર રહેવાવાળા સાધુને સ્થાનજન્ય મોહ સતાવે છે. આથી ભલે તે એકાકી રૂપમાં વિહાર કરે અગર યોગ્ય સહાયકોની સાથે વિહાર કરે, પરંતુ વિહાર અવશ્ય કરે. વિહારમાં પોતાના સંયમની સદા પૂરી દ્રઢતા રાખે, ક્ષુત્પિપાસા આદિ પરીપદ સતાવે તો પણ તેની પરવા ન કરે. આનું નામ ચર્યાપરીપદનો વિજય છે.

छाया—असमानश्चेद् भिक्षुः, नैव कुर्यात् परिग्रहम् ।

असंसक्तो गृहस्थैः, अनिकेतः परिव्रजेत् ॥ १९ ॥

टीका—‘असमाणो’ इत्यादि ।

भिक्षुः=मुनिः, असमानः=गृहस्थैरन्यतीर्थिकैश्चासदृशः, तत्राश्रयमूर्च्छारहितत्वेन गृहस्थैरसदृशः, अनियतविहारादिनाऽन्यतीर्थिकैरसदृश इति भावः । यद्वा-मानस-
हितः समानः, न तथेत्यसमानः, अभिमानवर्जित इत्यर्थः, यद्वा-‘असमाणे’
इत्यस्य ‘असन्निति’ छाया, असन्निव-असन्, यत्र विद्यते तत्राप्यविद्यमान इव,
अल्पतरकालस्थायित्वेन तत्र तत्र तत्सत्ताया अनियतत्वात्, तत्र तत्र विद्यमानत्वेऽपि
तत्तद्ग्रामोपाश्रयादिषु ममत्वाभिमानाभावाच्च । इममेवार्थं प्रकटयन्नाह-‘नैव कुञ्जा’
इत्यादि । परिग्रहम्=तत्तद्ग्रामोपाश्रयादिषु स्थानेषु द्रव्यभावपरिग्रहं नैव कुर्यात्=
न धारयेत् । उक्तञ्च—

“गामे कुले वा नयरे य देसे, ममंति भावं न कर्हिचि कुञ्जा ॥” इति ॥

‘असमाणे’-इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(असमाणे-असमानः) गृहस्थरूप आधार की मूर्च्छा से
रहित होने के कारण गृहस्थों के समान नहीं, तथा अनियत विहार आदि
द्वारा अन्यतीर्थिकों के समान नहीं, अथवा-असमान-मान से वर्जित, या
“असमाणे-असन्”—अल्पतर काल तक ग्राम नगरादिमें रहने वाला होने
की वजह से वहां नहीं जैसा ऐसा (भिक्षू-भिक्षुः) मुनि (परिग्रहं-नैव
कुञ्जा-परिग्रहं नैव कुर्यात्) उन २ ग्राम एवं उपाश्रयादिकों में द्रव्य एवं
भावरूप परिग्रह से नहीं बंधे-उनमें ममत्व भाव न करे। कहा भी है—

“गामे कुले वा नयरे य देसे, ममंति भावं न कर्हिचि कुञ्जा ॥”

असमाणे इत्यादि.

अन्वयार्थ—असमाणे-असमानः गृहस्थरूप आधारणी मूर्च्छाधी रहित होवाने
कारण गृहस्थाना समान नहीं, तथा अनियतविहार आदि द्वारा अन्य तीर्थी-
याना समान नहीं, अथवा-असमान-मानथी वर्जित, या असमाणे-असन् अल्पतर
काल सुधी ग्राम नगर आदिमां रहोवावाणा होवाना कारण त्यां नहीं वेवा येवा
भिक्षू-भिक्षुः मुनि परिग्रहं नैवकुञ्जा-परिग्रहं नैव कुर्यात् वे वे गामे अने
उपाश्रय आदिमां द्रव्य अने भावरूप परिग्रहथी न आंधाय-तेमां ममत्वभाव न
राये. कहु छे के—

“गामे कुले वा नयरे य देसे, ममंति भावं न कर्हिचि कुञ्जा ॥”

મમત્વાભાવઃ કથં સ્યાદિત્યાહ-ગૃહસ્થૈઃ=શ્રાવકૈઃ, અસંસક્તઃ=રાગસંસર્ગવર્જિત
 इत्यर्थः, अनिकेतः=गृहवर्जितः नैकत्र प्रतिबद्धस्थितिक इत्यर्थः, परिव्रजेत्=सर्वतो
 विहरेत् न तु नियतदेशादावेव । अयं भावः-गृहस्थैः सह रागसंसर्गकरणे, एकत्र
 प्रतिबद्धास्पदत्वे, नियतदेशग्रामनगरादिविहारितायां वा ममत्वबुद्धिः स्यात् ।
 तस्मादालस्यं निरस्य ग्रामनगरकुलादिष्वनियतवसतिर्निर्ममत्वः सन् यथाकल्पमा-
 सक्तिरहितथर्यामाचरेदिति ।

અર્થાત્-ગ્રામાદિ મેં કહીં ભી મમત્વ નહીં કરે । તથા (ગિહસ્થેહિ અ-
 સંસક્તો-ગૃહસ્થૈઃ અસંસક્તઃ) ગૃહસ્થોં કે સાથ રાગ કે સંસર્ગ સે વર્જિત
 उनमें मोहरूप परिणाम से रहित होकर वह (अणिणओ-अनिकेतः)
 स्थानादि की ममतारहित होता हुआ (परिव्रए-परिव्रजेत्) ग्राम
 नगरादि में विहार करता रहे । इसका भाव यह है कि गृहस्थों से
 रागात्मक परिणति करने पर साधु को एक ही जगह प्रतिबद्ध होकर
 रहने का प्रसंग प्राप्त हो सकता है, इस परिस्थिति में नियत देश, ग्राम
 आदि में ही उसका विहार होगा, अतः उसमें ममत्वबुद्धि का सद्भाव
 हो जायगा । इसलिये प्रमाद का परित्याग कर ग्राम नगर आदि में
 अनियतरूप से विचरने वाले मुनि में निर्ममत्वभाव रहता है ।
 इसलिये साधु को चाहिये की वह गृहस्थों से असंसक्त होकर यथाकल्प
 अनियतविहाररूप चर्या करता रहे ।

भावार्थ—इस गाथा द्वारा सूत्रकार १८वीं गाथा में कहे हुए ही

અર્થાત્-ગ્રામાદિમાં કયાંય પણ મમત્વ ન કરે તથા ગિહસ્થેહિ અસંસક્તો-
 गृहस्थैः-असंसक्तः गृहस्थानी साथे रागना संसर्गથી रहित-तेमां मोहइय
 परिष्ठाभથી रहित બનીને તે અણિણઓ-અનિકેતઃ સ્થાનાદિકેની મમતા રહિત
 થઈને, પરિવ્રએ-પરિવ્રજેત્ ગ્રામ નગર આદિમાં વિહાર કરતા રહે. તેના
 ભાવાર્થ એ છે કે, ગૃહસ્થો સાથે રાગાત્મક પરિણતી કરવાથી સાધુને માટે એક
 જગ્યાએ પ્રતિબદ્ધ થઈને રહેવાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થાય છે. આ પરિસ્થિતિમાં
 નિયત ગ્રામનગર આદિમાંજ તે વિચરશે, આથી એનામાં મમત્વની ભાવના
 ઉત્પન્ન થશે. માટે પ્રમાદનો પરિત્યાગ કરી ગ્રામનગર આદિમાં અનિયત
 રૂપથી વિચરનાર મુનિમાં નિર્મમત્વભાવ રહે છે. આટલા માટે જ સાધુ માટે તે ગૃહ-
 સ્થોથી અસંસક્ત બની યથાકલ્પ અનિયત વિહારસ્વરૂપી ચર્યા કરતા રહે તે જરૂરી છે.

ભાવાર્થ—આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર ૧૮ મી ગાથામાં કહેલ

॥

અત્ર દષ્ટાન્તઃ—

કોહ્લાકસન્નિવેશે વહુશ્રુતઃ શાન્તો દાન્તઃ પરીપદ્ધોપસર્ગસહને સુધીરઃ ક્ષમા-
દિગુણગમ્भीરઃ કર્મેધૂલિનિવારણે સમીરઃ, શ્રુતચારિત્રધર્મારાધનપરઃ ક્ષીણજઙ્ઘા-
વલો નિઃસદ્ગનામક આચાર્ય આસીત્ । એકદા તત્ર દુર્ભિક્ષે જાતેઽસૌ સ્વશિષ્યં

અર્થ કી પુષ્ટિ કર રહે હૈં । જય ગૃહસ્થ જનોં કા સામાન્ય ભી પરિચય મનુષ્ય કો ઉનમેં મમત્વબુદ્ધિ સે જકડૂ દેતા હૈ તો ફિર સાધુ કી આત્મા કો વહ ભાવ વહાં જકડૂ ન દેગા વહ કૈસે હો સકતા હૈ । હસી-લિયે સાધુ કો અનિયત વિહાર કહા ગયા હૈ । હસમેં ગૃહસ્થોં કે સંસર્ગ સે સાધુ બચા રહતા હૈ । સંસક્તિભાવ ઉસકા ઉનમેં નહીં હો પાતા હૈ । સામાન્ય પરિચય મેં સંસક્તિ નહીં આતી હૈ । અધિક પરિચય સે વહ દોષ પૈદા હોતા હૈ । મૂર્છાપરિણતિ કા નામ હી પરિગ્રહ હૈ । વહ પરિ-ગ્રહ દ્રવ્ય એવં ભાવ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા હોતા હૈ । સાધુ ઇન દોનોં પ્રકાર કે પરિગ્રહોં સે રહિત હોતા હૈ । રાગાદિકભાવ ભાવપરિગ્રહ, એવં ક્ષેત્ર વસ્તુ આદિ દ્રવ્ય-પરિગ્રહ હૈ । અનિયત વિહાર કરને વાલે સાધુમેં વહ દોષ નહીં હો સકતા હૈ । હસીલિયે ઉસકો સદા યથાકલ્પ અનિયત વિહાર કરના ભગવાન ને કહા હૈ ।

દષ્ટાન્ત-કોહ્લાક નામ કે સન્નિવેશ મેં વહુશ્રુત, શાન્ત, દાન્ત પરીપદ્ધ એવં ઉપસર્ગ કે સહન કરને મેં ધીર વીર ક્ષમાદિ ગુણોં સે ગંભીર, કર્મ ધૂલિ કે નિવારણ કરને મેં પવનતુલ્ય નિઃસંગ નામ કે એક આચાર્ય થે ।

કરે છે. જ્યારે ગૃહસ્થ જનો સાથે સામાન્ય પરિચય પણ મનુષ્યને તેની સાથે મમત્વ-બુદ્ધિથી જકડી દે છે તો પછી સાધુના આત્માને તે ભાવ ત્યાં ન જકડે તે કેમ બની શકે. આટલા માટેજ સાધુને અનિયત વિહાર સુચવાયેલ છે. આમાં ગૃહસ્થના વધુ પડતા સંસર્ગથી સાધુ બચી બચ છે, સંસક્તિભાવ તેનો તેમાં આવતો નથી, સામાન્ય પરિચયથી સંસક્તિભાવ ઉત્પન્ન થતાં નથી. અધિક પરિચયથી આ દોષો પેદાથાય છે. મૂર્છાપરિણતીનું નામ જ પરિગ્રહ છે. આ પરિગ્રહના દ્રવ્ય અને ભાવ એમ બે પ્રકારના હોય છે. સાધુ આ બંને પ્રકારના પરિગ્રહોથી પર હોય છે. રાગાદિકભાવ ભાવપરિગ્રહ અને ક્ષેત્ર વસ્તુ આદિ દ્રવ્ય પરિગ્રહ છે. અનિયત વિહાર કરનાર સાધુમાં આ દોષ આવતો નથી આટલા માટે સાધુને સદાય યથાકલ્પ અનિયત વિહાર કરવાનું ભગવાને કહ્યું છે.

દષ્ટાન્ત—કોહ્લાક નામના સન્નિવેશમાં બહુશ્રુત, શાન્ત, દાન્ત, પરીપદ્ધ અને ઉપસર્ગ સહન કરવામાં ધીરવીર, ક્ષમાદિ ગુણોથી ગંભીર, કર્મરજુ

विक्रमाचार्यं गच्छसहितं दूरदेशे प्रेषितवात् । स्वयं तु एकेन शिष्येण सह वसन् तत्रैव नगरे नव भागान् कल्पयित्वा यथाकल्पमज्ञातकुले रूक्षशुष्कमन्तप्रान्तमादिकं गृहीत्वा विहरति स्म । जराक्रान्तोऽपि चर्यापरीपहं सोढुकामः कृताभिमृदत्वात् स्वयंभिक्षार्थमटति स्म । एवं चर्यापरीपहं सद्मानस्तमभिग्रहं यावज्जीवं निर्वाहालोचितप्रतिक्रान्तः कालमासे कालं कृत्वा स्वकल्याणं साधितवान् ।

श्रुतचारित्ररूप धर्म की आराधना करने में ही इनका जीवन का अधिक से अधिक समय निकलता था । अवस्थाप्राप्त होने से इनका जंघाबल क्षीण हो गया था । एक समय की बात है कि वहां पर भयंकर दुर्भिक्ष पड़ गया । आचार्य ने परिस्थिति का अवलोकन कर अपने विक्रमाचार्य शिष्य को गच्छसहित दूर देश में विहार करा दिया और स्वयं एक शिष्य के साथ उसी नगरी में रहे । वहां नौ भागों की कल्पना कर वे यथाकल्प अज्ञातकुल में रूक्ष, शुष्क, अन्त प्रान्त आहारादिक ग्रहण कर वहां विचरण करते रहे । यद्यपि इनकी वृद्धावस्था थी चलने में पूरी शक्ति नहीं थी तो भी चर्यापरीपह को सहन करने की अभिलाषा से वे विविध अभिग्रह ग्रहण करते और स्वयं भिक्षा के लिये जाते । इस प्रकार चर्यापरीपह को सहन करते-र उन्होंने ने अपने अभिग्रहों का अच्छी तरह से निर्वाह किया । अन्त में अपने कर्तव्यों की आलोचना कर उनके प्रति निवृत्त होकर आत्मकल्याण कर लिया ।

निवारण करवाभां पवनतुल्य एवा, ओक निःसंग नामना आचार्यं हता. श्रुतचारित्र रूप धर्मनी आराधना करवाभां न तेमना लवननो मोटेो लाग तेओ गणता हता. अवस्था यवाथी तेमनुं न्धाणज क्षीणु जनी गयुं हतुं. ओक समथनी वात छे के, त्यां भयंकर ओवो हुकाण पडयो, आचार्ये परिस्थितितुं अवलोकन करी पोताना विक्रमाचार्य नामना शिष्यने गच्छ साथे दूर देशमां विहार करावराओ. अने पोते ओक शिष्यनी साथे ते नगरमां रक्षा. त्यां नव लागोनी कल्पना करी तेओ यथाकल्प अज्ञात कुणमांथी रूक्ष, शुष्क अन्तप्रान्त आहार आदि ग्रहण करी त्यां विचरता रक्षा. छे के तेमनी वृद्धावस्थाने कारखे तेमनामांयालवानी पूरी शक्ति न हती तो पणु चर्यापरीपहने सहन करवानी अभिलाषाथी तेओ विविध अभिग्रह करता अने स्वयं भिक्षा माटे जाता. आ प्रकारे चर्यापरीपहने सहन करता करतां पोताना अभिग्रहोना सारी रीते निर्वाह करी. अंत समथ उपर पोतानां कर्तव्योनी आलोचना करी तेनाथी निवृत्त यथ आत्मकल्याण प्राप्त कयुं.

અગ્રાન્યોઽપિ દ્રષ્ટાન્તઃ—

ઉજ્જયિન્યાં વૈશ્રવણનામક આચાર્યઃ સમવસૃતઃ । સ સ્વશિષ્યપરિવારૈઃ સહ ચર્યાપરીપદં સહમાનો ગ્રામાનુગ્રામં વિહરન્ કદાચિદદૃષ્ટ્યાં પ્રવિષ્ટઃ । આચાર્ય ઇવ શિષ્યા અપિ ચર્યાપરીપદસહિષ્ણવ આસન્ । તત્ર સર્વે મુનિભિરકસ્માદ્ માર્ગો વિસ્મૃતઃ । તથૈવ શર્કરાપ્રમથૃધિવીવદ્ વિકીર્ણતીક્ષ્ણકષ્ટકિતે નિમ્નોન્નતશિલાખણ્ડદુર્ગમે ભયક્કરે વિપિને ગચ્છતા તેન દિવસો યાપિતઃ, રાત્રૌ ચ વૃક્ષાધસ્તલે નિવાસઃ કૃતઃ, એવં શિષ્યપરિવારૈઃ સદાસૌ ભ્રમન્નદ્રવ્યા અન્તં ન પ્રાપ,નાપિ કશ્ચિદ્ ગ્રામો દૃષ્ટિ-

દ્વિતીય દ્રષ્ટાન્ત—

ઉજ્જૈની નગરી મેં વૈશ્રવણ નામ કે આચાર્ય પધારે । વે અપને શિષ્યપરિવાર કે સાથ ચર્યાપરીપદ્ધ કો સહન કરતે હુએ ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતે ૨ કદાચિત્ માર્ગ ભૂલ જાને સે એક અટવી મેં જા પહુંચે । इनके समान ही चर्यापरीपद सहन करने में समर्थ इनके शिष्य भी थे । અકસ્માત્ વે સવ કે સવ હી માર્ગ ભૂલ ગયે । સમસ્ત દિવસ ઉન સવકા શર્કરા પૃથ્વી કે સમાન, ઇધર ઉધર ફેલે હુએ તીક્ષ્ણ કાંટોં વાલે તથા નીચે ડુંચે શિલાખંડોં સે દુર્ગમ ઉસ ભયંકર અટવી મેં હી સમાસ હો ગયા । રાત્રિ કા સમય આ ગયા । દૂસરા કોઈ ઉપાય નહીં હોને સે સમી ને વહીં એક વૃક્ષ કે નીચે ઠહર કર રાત્રિ વ્યતીત કી । પ્રાતઃ કાલ હુઆ । સૂર્ય કી કિરણેં નિકલી । માર્ગ કી તલાશ કરને લગે પરન્તુ માર્ગ કા પતા નહીં ચલા । અટવી કિતની ઘડી થી ઇસકા કુછ અન્ત હી નહીં જ્ઞાત હો સકા, ઓર ન “યહાં સે ગ્રામ કિતની દૂર હૈ”

દ્રષ્ટાન્ત ધીબુ—ઉજ્જૈની નગરીમાં વૈશ્રવણ નામના આચાર્ય પધાર્યા. તેઓ પોતાના શિષ્ય પરિવારની સાથે ચર્યાપરીપદ સહન કરતા કરતા ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા કરતા માર્ગ ભૂલવાથી અચાનક એક જંગલમાં જઈ ગયા. ચર્યાપરીપદ સહન કરવામાં તેમના સમાન જ સમર્થ તેમના શિષ્યો પણ હતા. ભોગાનુભોગ તેઓ બધા માર્ગ ભૂલી ગયા. શર્કરાપ્રલ પૃથ્વીની સમાન, આંધી તાંડી ચોમેર તીક્ષ્ણ કાંટાઓથી પથરાએલી તથા ઉંચી નીચી શિલાઓથી દુર્ગમ એવી ભયાનક અટવી—જંગલમાં આપોઆપ દિવસ વીતી ગયો. રાત્રીનો સમય આવી પહોંચતાં ધીબે કોઈ પણ ઉપાય ન હોવાથી સઘળાએ એક જાડ નીચે રહીને રાત વિતાવી. સવાર પડ્યું, સૂર્યનાં કિરણો દેખાયાં, માર્ગની તપાસ કરી પરંતુ બહાર નીકળવાનો માર્ગ ન જાણ્યો. જંગલ મોટું હતું તેના અંતની પણ ખબર પડતી ન હતી અને ગામ આ સ્થળેથી કેટલું દૂર છે તે પણ બાણી શકાતું ન

પથે સમાયાતઃ । સ ચ તસ્મિન્નેવ વિપમક્રણ્ટકિતપર્વતીયમાર્ગે ચલન્નપિ ચર્યાપરીપહૈઃ પરાજિતો નાભૂત્ । આચાર્યો વદતિ-અસ્મિન્ વને ચલતામસ્માકં ત્રયો દિવસા અતીતાઃ, ક્વચિદાહારો ન લબ્યો નાપિ પાનીયમ્ ।

एतदभ्यन्तरे केनचिद्देवेन वैक्रियशक्त्या तत्र शोभनो राजमार्गो निर्मितः । तत्र कस्यचिन्नृपस्य चतुरङ्गिणी सेना गच्छति, बह्वधः शिविका नरैर्वाक्षमाना ।
 इस बात का पता ही चल सका । आचार्य महाराज शिष्यमंडली सहित उसी जंगल में घूमते रहे । कभी २ चलते २ विपम एवं कंटकित पर्वत के मार्ग पर पहुँच जाते तो भी इनके चित्त में खेदखिन्नता नहीं आती । 'चर्यापरीपह सहन करना यह साधु की कर्तव्य कोटि में है' इस ख्याल से ये उसको शांति के साथ सहन करते रहे । चलते २ जब ठीक तीन दिन व्यतीत हो चुके तब आचार्य महाराज ने शिष्यों से कहा कि देखो-इस वन में लगातार अपने लोग तीन दिन से चल रहे हैं फिर भी मार्ग नहीं मिल रहा है । आहार पानी का भी ठिकाना नहीं पड़ा, अतः समस्या चिकट वन रही है ।

આચાર્ય મહારાજ જયેં હસ પ્રકાર અપને શિષ્યોં સે કહ રહે થે કિ હતને મેં હી કિસી દેવને અપની વૈક્રિયિક શક્તિ કે દ્વારા ઉસ અટવી મેં એક સુન્દર રાજમાર્ગ બના દિયા, ઓર હસ પ્રકાર કા દૃશ્ય દિખ-લાયા કિ ઉસ પર હોકર કિસી રાજા કી ચતુરંગિણી સેના જા રહી હૈ ।

હંતુ. આચાર્ય મહારાજ શિષ્ય મંડળી સાથે એ જંગલમાં ખૂબ ભટક્યા. ચાલતાં ચાલતાં કોઈ વેળા સ્થળે વિષમ એવા કાંટાળા ટેકરાવાળા રસ્તે ચઢી જતા તો પણ તેમના ચિત્તમાં ખેદ-ખિન્નતા આવતી નહીં. “ચર્યાપરીપહ સહન કરવો એ સાધુની કર્તવ્ય કોટીમાં છે આ ખ્યાલથી તેઓ આવતા પરીપહોને શાન્તી સાથે સહન કરતા રહ્યા. ચાલતાં ચાલતાં બ્યારે ત્રણ ત્રણ દિવસો વીતી ગયા ત્યારે આચાર્યમહારાજે શિષ્યોને કહ્યું કે, બુઓ આ વનમાં આપણે ત્રણ ત્રણ દિવસોથી ભટકીએ છીએ છતાં પણ બહાર નીકળવાનો કોઈ માર્ગ દેખાતો નથી. આહાર પાણીનું પણ ઠેકાણું પડતું નથી એટલે આપણી સમક્ષ ચિકટ સમસ્યા ઊભી થઈ છે.

આચાર્યમહારાજ આવું બ્યારે પોતાના શિષ્યોને કહી રહ્યા હતા એ વખતે કોઈ દેવે પોતાની વૈક્રિયિક શક્તિ દ્વારા તે જંગલમાં એક સુંદર રાજ-માર્ગ બનાવી દીધો અને એ પ્રકારનું દૃશ્ય ઉભું કરી દીધું કે તે માર્ગ ઉપરથી બધે કોઈ રાજાની ચતુરંગિણી સેના જઈ રહી છે તેમાં અનેક પાલખી

આસન્ । તત્ર સેનાપતિઃ કાનને ભ્રામ્યમાણમાચાર્યં વ્રવીતિ-ભગવન્ ! સન્ત્યગ્ર
વહ્નિ શિવિકાદીનિ યાનાનિ, યદત્ર રોચતે ભવદ્ગ્રચસ્તત્રાસ્ત્વા ગમ્યતામ્ । આચાર્યેણો-
ક્તમ્-યાનેન ગમનં નાસ્માકં કલ્પતે, ઇત્યુત્ત્વા તેન ' સર્વોઽયં દેવપ્રપન્ન' ઇતિ વિજ્ઞા-
તમ્ । રાજસૈનિકે ગતે સતિ સ આચાર્યઃ શિષ્યાન્ પૃચ્છતિ-કિમિદાનીં કર્તવ્યમ્, ।
શિષ્યા આદુઃ-આર્યેણ યદનુષ્ઠેયં, તદેવાસ્માભિરપિ કર્તવ્યમ્, આચાર્યઃ પાદપો-
પગમનાર્થં પ્રતિજ્ઞાતવાન્, તદનુ તદીયશિષ્યા અપિ પાદપોપગમનાર્થં સંસ્તારકં
કૃતવન્તઃ । સર્વેઃ સમાધિભાવેન કાલં કૃત્વાઽઽત્મનઃ કલ્યાણં સાધિતમ્ । એવમન્યૈ-
રપિ યુનિભિશ્ચર્યાપરીપહઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૧૯ ॥

ઉસ મેં અનેક પાલકિયાં કો વહન કરતે હુણ મનુષ્ય ચલે જા રહે હૈં ।
યહ સથ દૃશ્ય આચાર્ય મહારાજ કે દેખને મેં આ રહ્યા થા । હસી સમય
એક સેનાપતિ ને અટવી મેં ભ્રમણ કરતે હુણ આચાર્ય મહારાજ સે કહ્યા
હે ભદન્ત ! યહાં વહુત સે પાલકિયાં આદિ વાહન હૈં આપ જિન્હેં પસંદ કરે
ઉનપર ચઢકર ચલેં । આચાર્યશ્રીને સેનાપતિ કી વાત સુનકર કહ્યા કિ-
યાન પર ચઢકર ચલના યહ હમારે કલ્પ સે વાહર હૈં । તથા સાથ ૨ મેં
આચાર્યમહારાજ ને યહ બી જાન લિયા કિ યહ સવ દૈવી માયા હૈં । સેનાપતિ
કે ચલે જાને પર ફિર આચાર્ય મહારાજ ને શિષ્યોં સે પૂછા કિ કહો હસ
સમય કયા કરના ચાહિયે । શિષ્યોં ને કહ્યા જો આપકો કરના રુચે
વહી હમેં મંજૂર હૈં । શિષ્યોં કી વાત સુનકર આચાર્ય મહારાજને પાદ-
પોપગમન ધારણ કરને કી વિચારણા કરલી । શિષ્યોં ને બી એસા હી
કિયા । સવને વહાં સમાધિભાવ સે સંપન્ન હોકર પણ્ડિતમરણ કિયા,

ઉપાડીને મનુષ્યો આલી રહ્યા છે આ સઘળું દૃષ્ય આચાર્ય મહારાજના જોવામાં
આવી રહ્યું હતું. એવામાં એક સેનાપતિએ જંગલમાં વિચરી રહેલા
આચાર્ય મહારાજને કહ્યું, ભદ્રંત ! અહિં ઘણી પાલખીઓ વિગેરે વાહન
છે, આપ જેને પસંદ કરો તેમાં બેસીને ચાલો. આચાર્યે સેનાપતિની
વાત સાંભળીને કહ્યું કે, પાલખીમાં બેસીને વિચરવું તે અમારા
કલ્પની બહાર છે. સાથે સાથે આચાર્ય મહારાજે એ પણ બાણી લીધું કે આ
સઘળી દૈવી માયા છે. સેનાપતિના આલી ગયા પછી આચાર્ય મહારાજે શિષ્યોને
પૂછ્યું કે, કહો ! આવે વખતે હવે શું કરવું જોઈએ ? શિષ્યોએ કહ્યું કે, આપને
જે કરવું રુચે તે અમને મંબુર છે. શિષ્યોની વાત સાંભળીને આચાર્ય મહારાજે
પાદપોપગમન કરવાની પ્રતિજ્ઞા ધારણ કરી લીધી. શિષ્યોએ પણ એમજ કયું.
પરિણામે સઘળા ત્યાં સમાધી ભાવથી સંપન્ન બની પંડિત મરણ પામ્યા અને

अथ नैपेधिकीपरीपहजयं प्राह—

मूलम्—सुसाणे सुन्नगारे वां, रुक्खमूले वं एगंओ ।

अकुक्कुओ निसीएज्जा, नं यं वित्तासए 'परं ॥ २० ॥

छाया—श्मशाने शून्यागारे वा, वृक्षमूले वा एककः ।

अकौकुच्यः निपीदेत् न च विवासयेत् परम् ॥ २० ॥

टीका—'सुसाणे' इत्यादि ।

श्मशाने-शवस्थाने, वा=अथवा, शून्यागारे=निर्जनगृहे, वा=अथवा, वृक्ष-
मूले=वृक्षाधस्तले, मुनिः एककः=द्रव्यतः एकाकी प्रतिमाऽपेक्षया, भावतो-मुनि
गणस्थितोऽपि रागद्वेषरहितः, अकौकुच्यः=अशिष्टचेष्टारहितः-विषयचेष्टावर्जितः
सन्नित्यर्थः, निपीदेत्=भयरहितं यतनापूर्वकमुपविशेदित्यर्थः॥ च-पुनः मुनिस्तत्रोपवि-
ष्टः सन्, परम्-अन्यं जीवं द्वीन्द्रियादिकं, न विवासयेत्=तत्रस्थं जीवं स्थानभ्रष्टादिकं

और आत्मकल्याण की सिद्धि की । इसी तरह समस्त साधुओं को
चर्यापरीपह पर विजय पाने में प्रयत्नशील रहना चाहिये ॥१९॥

अब दसवें नैपेधिकीपरीपह को जीतने के लिये सूत्रकार कहते
हैं—'सुसाणे'-इत्यादि ।

अन्वयार्थ-मुनि को (सुसाणे-श्मशाने) श्मशानमें (वा) अथवा (सु-
न्नगारे-शून्यागारे) शून्य घर में (वा) या (रुक्खमूले-वृक्षमूले) वृक्ष के नीचे
(एगंओ-एककः) एकाकी द्रव्य-से प्रतिमा की अपेक्षा अकेले, तथा भाव
की अपेक्षा मुनि समुदाय में रहते हुए भी रागद्वेषरहित एवं (अकु-
कुओ-अकौकुच्यः) अशिष्ट चेष्टा से रहित होते हुए (निसीएज्जा-
निपीदेत्) भयशून्य होकर यतनापूर्वक रहे । (य-च) तथा वहां पर

आत्मकल्याणकी सिद्धि भेगवी. आ प्रभाणे सर्व साधुओओ चर्यापरीपहं उपर
विन्य भेगववा पयत्नशील रहवुं ओधओ. ॥१९॥

इसे सूत्रकार दशमा नैपेधिकीपरीपहने लतवा भाटे कहे छे—'सुसाणे' इत्यादि.

अन्वयार्थ-मुनिओ सुसाणे-श्मशाने श्मशानमां "वा" अथवा सुन्नगारे-शून्यागारे
सूना ओवा धरमां "वा" अथवा रुक्खमूले-वृक्षमूले वृक्षनी नीचे एगंओ-एककः
ओकाडी द्रव्यथी प्रतिमान्नी अपेक्षाओ ओकवा तथा भावनी अपेक्षाओ मुनि समुदायमां
रहेतां छतां पणु रागद्वेष रहित अने अकुक्कुओ-अकौकुच्यः अशिष्ट चेष्टाथी
रहित भनीने निसिएज्जा-निपीदेत् अथ रहित थर्ध यतनापूर्वक य-च

ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । હ્રદમત્ર-ચોધ્યમ્-આદાવસ્મિન્નધ્યયને ‘નિસીહિયાપરીસહે’ इति
 यदुक्तं तस्य छाया ‘नैपेधिकीपरीपहः’ इति । निपेधः=प्राणातिपातादि निवृत्तिः,
 स प्रयोजनमस्या इति नैपेधिकी । यद्वा निपेधः=पापकर्मणां गमनादिक्रियायाश्च
 निवृत्तिः, स प्रयोजनमस्या इति नैपेधिकी, निपद्या=उपवेशनस्थानम् कायोत्सर्ग-
 भूमिः । स्वाध्यायभूमिश्चेत्यर्थः । सैव च परिपहो नैपेधिकीपरीपहः उपवेशनस्थान
 परीपहः, तत्र श्मशानादिषु स्थानेषु स्थितेन मुनिना भयंकरोपसर्गसमापतने सति
 न भेतव्यम्, नापि स्वरविकारादिभिरन्येषां भयमुत्पादनीयमिति ॥ २० ॥

રહે હુએ उस मुनि को चाहिये की वह (परं न वित्तासए-परं न वित्रा-
 सयेत्) वहां पर पहिले से रहने वाले द्वीन्द्रियादीक जीवों को स्थान-
 भ्रष्ट न करे, यहां यह समझना चाहिये कि पहिले इस अध्ययन में
 “निसीहिया परीसहे” ऐसा कहा गया है उसकी संस्कृत छाया
 नैपेधिकीपरीपहः” ऐसी की गई है । उसका अर्थ इस प्रकार है-
 “प्राणातिपातादिक क्रियाओं से निवृत्ति करने का जिसका प्रयोजन हो
 वह नैपेधिकी है, अथवा पापकर्मों की एवं गमनादिक्रिया की निवृत्तिरूप
 निपेध जिसका प्रयोजन हो वह नैपेधिकी है, अथवा निपद्या उपवेशन
 स्थान का नाम है, वह या तो कायोत्सर्ग की भूमिस्वरूप होगा या स्वाध्याय
 की भूमिस्वरूप । उस निपद्यारूप जो परीपह उसका नाम नैपेधिकीपरीपह
 है । इसका फलितार्थ उपवेशनस्थान सम्बन्धी परीपह नैपेधिकीपरीपह
 है । श्मशान आदिक स्थानों में रहे हुए मुनि को भयंकर उपसर्ग के

તથા ત્યાં રહેતા એ મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે પરં ન વિત્તાસए-परं न वित्रा-
 सयेत् ત્યાં પહેલાથી રહેવાવાળા દ્વિધન્દ્રિયાદિક જીવોને સ્થાનભ્રષ્ટ ન કરે, અહીં એ સમજવું
 જોઈએ કે, પહેલાં આ અધ્યયનમાં નિસીહિયા પરીસહે એવું કહેવાયું છે કે જેની સંસ્કૃત
 છાયા “નૈપેધિકી પરીપહઃ” એમ કરવામાં આવેલ છે. એનો અર્થ આ પ્રકારનો છે-
 “પ્રાણાતિપાતાદિક ક્રિયાઓથી નિવૃત્તિ કરાવવાનું જેનું પ્રયોજન હોય તે નૈપે-
 ધિકી છે, અથવા પાપકર્મોની અને ગમનાદિ ક્રિયાઓની નિવૃત્તિરૂપ નિપેધ જેનું
 પ્રયોજન હોય તે નૈપેધિકી છે, અથવા નિપદ્યા ઉપવેશન સ્થાનનું નામ છે. તે
 યાતો કાયોત્સર્ગની ભૂમિ સ્વરૂપ હોય યા સ્વાધ્યાયની ભૂમિસ્વરૂપ. એ નિપ-
 દ્યારૂપ જે પરીપહ તેનું નામ નૈપેધિકીપરીપહ આનો તો ફલિતાર્થ ઉપવેશન
 સ્થાન સંબંધી પરીપહ નૈપેધિકીપરીપહ છે, શ્મશાન આદિ સ્થાનોમાં રહેનારા
 મુનિએ ભયંકર ઉપસર્ગોના આવવા છતાં પણ ભયભીત ન બનવું જોઈએ,

ઉક્તમર્થે વિશદીકૃત્વન્નાહ—

મૂલમ્—તત્થે સે ચિદ્દમાણસ્સ, ઉવસંગ્ગા ભિધારણ ।
સંકામ્મીઓ નં ગચ્છેજ્ઞો, ઉદ્ધિત્તાં અન્નમાસેણ ॥ ૨૧ ॥

છાયા—તત્ર તસ્ય તિષ્ઠતઃ, ઉપસર્ગા અભિધારયેત્ ।

શંકામીતઃ ન ગચ્છેત્; ઉત્થાપાન્યદાસનમ્ ॥ ૨૧ ॥

ટીકા—‘તત્થ’ इत्यादि ।

તત્ર=શ્મશાનાદૌ, તિષ્ઠતઃ=ઉપવિષ્ટસ્ય તસ્ય મુનેઃ ઉપસર્ગાઃ—દેવમનુષ્યતિર્ય-
ક્રૃતા ઉપદ્રવાઃ, યદિ ભવેયુસ્તર્હિ સ મુનિસ્તાનુપસર્ગાન્ અભિધારયેત્—‘મમાચલ
ષેતસઃ કિમેતે કરિષ્યન્તીતિ ચિન્તયન્ સહેત । પરન્તુ શંકામીતઃ=ઉપસર્ગકૃતોપદ્રવ-
સંશયાદુદ્વેગવાન્ સન્, ઉત્થાપ—તતઃ સ્થાનાદપમૃત્ય, અન્યત્=પરમ્, આસનમ્=
આસપતે—ઉપવિષ્યતેઽસ્મિન્નિત્યાસનં=સ્થાનમ્, ન ગચ્છેત્ ।

આને પર મી ભયમીત નહીં હોના चाहिये और न अपने अंगों को विकृत
करके दूसरों को भयभीत करना चाहिये ॥ ૨૦ ॥

इसी अर्थ को विशद करते हुए सूत्रकार समझाते हैं—
‘तत्थ से’—इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(તત્થ—તત્ર) શ્મશાન આદિ સ્થાન મેં (ચિદ્દમાણસ્સ સે-
તિષ્ઠતસ્તસ્ય) સ્થિત ઉસ સાધુકે ઉપર (ઉવસંગ્ગા-ઉપસર્ગાઃ). દેવ, મનુષ્ય,
તિર્યશ્ચ સમ્બન્ધી ઉપસર્ગ યદિ આવે તો ઉસ મુનિ કા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ
ઉન ઉપસર્ગોં કો (અભિધારણ—અભિધારયેત્) “યે ઉપસર્ગ મેરા ક્યા
કર સકતે હૈં” નિશ્ચલચિત્ત સે એસા વિચાર કર સહન કરે । પરન્તુ
(શંકામીઓ—શંકામીતઃ) ઉપસર્ગકૃત ઉપદ્રવ કે સન્દેહ સે ઉદ્વેગવાન્

અથવા તો પોતાના અંગોને વિકૃત બનાવી બીજાને ભયભીત કરવા ન જોઇએ. ॥૨૦॥

આજ અર્થવિશે સૂત્રકાર વિષદરૂપથી સમજાવે છે. ‘તત્થ સે’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—(તત્થ—તત્ર) શ્મશાન આદિ સ્થાનમાં ચિદ્દમાણસ્સ સે—તિષ્ઠતઃ તસ્ય રહેલા
એ સાધુની ઉપર ઉપસંગ્ગા—ઉપસર્ગાઃ દેવ, મનુષ્ય, તિર્યચ સંબંધી ઉપસર્ગ આવે
ત્યારે એ મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે એ ઉપસર્ગોને અભિધારણ—અભિધારયેત્ આ
ઉપસર્ગ માફ થું કરી શકવાના છે “નિશ્ચલ” ચિત્તે એવો વિચાર કરી સહન કરે.
પરંતુ શંકામીઓ—શંકામીતઃ ઉપસર્ગકૃત ઉપદ્રવના સંદેહથી અર્થ

પ્રિયદર્શિની ટીકા. અ. ૨ ગા. ૨૧ નૈપેધિકીપરીપદજયે કુરુદત્તમુનિદ્વિદ્યાનંતઃ ૪૧૨

સ્વાધ્યાયકરણાર્થં કાયોત્સર્ગકરણાર્થં ચ સ્ત્રીપશુપંડકવિવર્જિતે સ્થાને નિપ-
ળ્ણેન મુનિના અનુકૂલપ્રતિકૂલોપસર્ગસંપાતેऽનુદ્વેગકરણેન નિપદ્યાપરનામકો
નૈપેધિકીપરીપદઃ સોદ્ય્ય इति भावः ।

अत्र दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

हस्तिनापुरे कुरुदत्तनामा भ्रष्टिपुत्रः प्रव्रजितो भूत्वैकाकिविहारप्रतिमया
ग्रामानुग्रामं विहरन्नयोध्यानगर्वा ईषद्दूरप्रदेशे कાયोत्सर्गम् कृत्वा स्थितः । तत्र

હોકર (ઉદ્વિત્તા-ઉત્થાય) ઉઠકર (અન્નમાસર્ગ-અન્યદ્ આસનં) દૂસરે
કિસી સ્થાન પર (ન ગચ્છેઝ્જા-ન ગચ્છેત્) નહીં જાવે ।

તાત્પર્ય इसका यह है कि स्वाध्याय करने के लिये अथवा कयो-
त्सर्ग करने के लिये स्त्री पशु पंडक से वर्जित स्थान में बैठे हुए मुनि को
चाहिये कि वह अनुकूल प्रतिकूल उपसर्ग के आने पर अनुद्विग्न
चित्त होकर निपद्यापरीपद कि जिसका दूसरा नाम नैपेधिकीपरी-
पद है उसको सहन करे । अर्थात्-श्मशान आदि स्थान में बैठने पर
उपसर्ग आदि का आना स्वाभाविक है । अतः ऐसी स्थिति में मुनि का
कर्तव्य है कि वह तिर्यञ्चादिकृत उन उपसर्गों को अविचलितचित्त
होकर सहन करे । भयभीत न होवे, और न एक स्थान से दूसरे
स्थान पर अपनी रक्षा के अभिप्राय से जावे ।

दृष्टान्त-हस्तिनापुर में कुरुदत्त नाम का एक सेठ का पुत्र रहता था ।
उसने धर्म का उपदेश सुनकर दीक्षा धारण करली । जय वे श्रुतचा-

उद्विक्ता-उत्थाय त्यांથી ઉઠીને અન્નમાસર્ગ-અન્યત્ આસનં બીજા કોઈ સ્થાન ઉપર
ન ગચ્છેઝ્જા-ન ગચ્છેત્ ન બાધ.

આને ભાવ એ છે કે, સ્વાધ્યાય કરવા માટે અથવા તો કાયોત્સર્ગ
કરવા માટે સ્ત્રી, પશુ, પંડકથી વર્જિત એવા સ્થાનમાં બેઠેલા મુનિએ ગમે તેવા
અનુકૂળ પ્રતિકૂળ ઉપસર્ગ આવવાથી ઉદ્વિગ્ન ચિત્ત ન બનતાં વિપદ્યાપરીપદ કે
જેનું બીજું નામ નૈપેધિકીપરીપદ છે એને સહન કરે. અર્થાત્-શ્મશાન આદિ
સ્થાનમાં બેસવાથી ઉપસર્ગ વગેરેનું આવવું સ્વાભાવિક છે. આથી એવી
સ્થિતિમાં મુનિનું કર્તવ્ય છે કે, તિર્યંચ્ય આદિ દ્વારા થતા એ ઉપસર્ગોને અવિ-
ચલીત ચિત્ત બની સહન કરે અને ભયભીત ન થાય. પોતાના રક્ષણના અભિ-
પ્રાયથી એક સ્થાનથી બીજા સ્થાન ઉપર ન બાધ.

દ્રષ્ટાંત—હસ્તિનાપુરમાં કુરુદત્ત નામે એક શેઠનો પુત્ર રહેતો હતો એણે
ધર્મનો ઉપદેશ સાંભળી દીક્ષા ધારણ કરી લીધી. બ્યારે તે શ્રુતચારિત્ર રૂપ

रात्रेश्वतुर्थपौरुष्यां कुतश्चिद् ग्रामाद् गोधनापहारं कृत्वा चौराः कुरुदत्तमुनेः पार्श्व-
स्थेन मार्गेण सवेगं गताः । पथाद् गोस्वामिनस्तदन्वेयकास्तत्रायाताः द्वौ मार्गौ
तत्र दृष्ट्वा ते कुरुदत्तमुनिं पृच्छति-भदन्त ! ब्रूहि चौराः केन पथा गताः । तद्वचनं
श्रुत्वाऽपि स मुनिर्न किंचिदुक्तवान् ततस्ते गोस्वामिनः कोपावेशेन मुनेः शिरसि
आद्रिमृत्तिकालेपेन पालीं कृत्वाऽङ्गाराः क्षिप्ताः मुनिस्तु तदुपसर्गकृतवेदनां सहमानो

रित्ररूप धर्म के पालन करने में पूर्ण निष्णात हों गये तो उन्होंने ने
एकाकीविहारप्रतिमा लेकर ग्रामानुग्राम विचरण करने लगे विहार
करते २ वे अयोध्यानगरी के समीप कुछ दूर प्रदेश में कायोत्सर्ग
धारण कर रहे । रात्रि के चतुर्थ प्रहर में किसी ग्राम से गायों को बुरा-
कर चौर कुरुदत्त मुनि के पास के मार्ग से जल्दी २ बड़े वेग के साथ
निकले । इनके निकल जाने के बाद ही गायों के स्वामी उनकी तपास
करते हुए वहाँ पर आ पहुँचे । वहाँ से दो रास्ते जाते थे । उन्हें देख-
कर उन लोगों ने कुरुदत्त मुनि से पूछा कि भदन्त ! यहाँ से चौर किस
रास्ते होकर गये हैं । मुनि ने उनकी बात सुनकर कुछ भी उत्तर नहीं
दिया । वे सबके सब मुनि के ऊपर रुष्ट हुए । क्रोध के आवेशमें
आकर उन लोगों ने मुनिराज के माथे ऊपर मिट्टी की क्यारी बनाकर
उसमें जलते हुए अंगार रख दिये । मुनि ने उनके द्वारा किये गये इस

धर्मनु' पालन करवाभां पूर्ण पछे निष्णात भनी गया त्यारे अभवे अेकाकी
विहार प्रतिमा लई ग्रामानुग्राम विचरण करवा भांडयुं । विहार करतां करतां ते
अयोध्या नगरीनी पासो थोडा हरना प्रदेशभां कायोत्सर्ग धारण करी रह्या,
रात्रीना चोथा प्रहरना समये कोई गाभधी गाये चोरीने चोर कुरुदत्त मुनिनी
पासेना मार्ग उपरथी उतावणथी निकणी गया । गाये चोरीने लागेला अे चोरनी
पाछण अेना नीकणी जवा पछी थोडीवारो गाये जेनी चोरथेली ते अेनी
तपासभां नीकल्या । अने कुरुदत्त मुनि जे स्थाने भेटेल छता त्यां पछोअ्या आ
स्थानेथी जुही जुही भालु जता जे रस्ता कुटता छोवाथी गायेना भावीकोअे
मुनिने भेटेला जेई तेनी पासो आवी पूछयुं के, भदंत ! अडिंथी चोरो कंई
भालुअे गया ? मुनिअे आनो कोई प्रत्युत्तर न आपतां ते बोको मुनि उपर
भीजया अने कोधना आवेशभां आवी जई ते बोकोअे मुनिराजना भाथा उपर
भाटीनी क्यारी भनावी तेभां भण भणता अंगारा भूकी दीधा । अे बोको द्वारा
करायेला उपसर्गथी मुनिने भूख वेदना यई परंतु तेने भूख अ शांत थिते

निरुद्धेऽगः सन् तत्र स्थित एव समाधिभावेन कालं कृत्वा सिद्धिं प्राप्तवान् । एव-
मन्यैरपि मुनिभिर्नपेधिकीपरीपहः सोढव्यः ॥ २१ ॥

अथ शय्यापरीपहजयं प्राह—

मूलम्—उच्चावयाहिं सेज्जाहिं तवस्सी भिक्खु थामवं ।

नाइवेलं विहन्नेज्जा, पार्वदिट्ठी विहन्नई ॥ २२ ॥

छाया—उच्चावचाभिः शय्याभिः, तपस्वी भिक्षुः स्थामवान् ।

नातिवेलं विहन्त्यात्, पापदृष्टिर्विहन्त्यते ॥ २३ ॥

टीका—‘उच्चावयाहिं’ इत्यादि ।

स्थामवान्=स्थाम=बलं तद्वान्, शीतोष्णादिसहनशक्तिमानित्यर्थः, तपस्वी=
अनशनदिविविधतपश्चरणशीलः, भिक्षुः=मुनिः, उच्चावचाभिः=उत्कृष्टापकृष्टाभिः

उपसर्ग की वेदना को बड़े ही शान्त परिणामों से सहन किया । चित्त
में जरा भी उद्वेग नहीं आने दिया । ध्यान में ही वे समाधिभाव से
स्थिर रहे । अन्त में कालधर्म को प्राप्तकर कुरुदत्तमुनिने सिद्धि प्राप्त की ।
इसी प्रकार अन्य मुनियों को भी इस कथासे यही शिक्षा लेनी चाहिये
कि निपद्यापरीपह में यदि इस प्रकार के विघ्न आवे तो उन्हें सहन
करना चाहिये ॥ २१ ॥

अथ ग्याहरवें शय्यापरीपहजय के विषय में सूत्रकार कहते हैं—

‘उच्चावयाहिं’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(थामवं=स्थामवान्) शीत उष्ण आदि परीपहों को सहन
करनेकी शक्तिवाला, तथा (तवस्सी=तपस्वी) अनशन आदि विविध तपों
का अनुष्ठान करने वाला (भिक्खू=भिक्षुः) साधु (उच्चावयाहिं
सेज्जाहिं=उच्चावचाभिः शय्याभिः) अनुकूल जैसे हेमन्त शिशिर

सहन करी. चित्तमां जरा पणु उद्वेग आववा न दीधो अने ध्यानमां ज समाधी
भावमां स्थिर रह्या. अन्ते काण धर्मने पाभी जेमखे सिद्धि प्राप्त करी. आ
प्रकारे अन्य मुनियोजे पणु आ कथाथी जेवी शिक्षा लेवी जेई जे डे, निपद्या-
परीपहमां कदाथ आ प्रकारनां विघ्न आवे तो जेने सहन करवां जेईजे. ॥२१॥

इवे सूत्रकार शय्यापरीपह एतवाने कडे छे. ‘उच्चावयाहिं’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—थामवं=स्थामवान् ठंडीना अने गरमीना परीपहोने सहन करवानी
शक्तिवाला तथा तवस्सी=तपस्वी अनशन आदि विविध तपोभुं अनुष्ठान करवावाला
भिक्खू=भिक्षुः साधु उच्चावयाहिं सेज्जाहिं=उच्चावचाभिः शय्याभिः अनुकूल=जेवी डे,

उच्चाः=उत्कृष्टाः, अनुकूलाः-हेमन्तशिशिरयोः शैत्यरहिताः उष्णस्पर्शवत्यो वा, ग्रीष्मवर्षासु उष्णस्पर्शवर्जिताः, शीतस्पर्शवत्यो वा, द्रव्यतः उच्चप्रदेशस्थिता वा उच्चाः, सुधाभिः-‘चूना, सिमेन्ट’ इत्यादिभाषामसिद्धाभिः, उपलक्षितलादीनामुपलक्षणं चैतत् । अवचाः=अपकृष्टाः प्रतिकूलाः-हेमन्तशिशिरयोः शीतस्पर्शयुक्ताः, ग्रीष्मवर्षासु उष्णस्पर्शवत्यः, द्रव्यतः अधोभागस्थिता वा अवचाः, उच्चाश्च अवचाश्चेति, उच्चावचास्ताभिः, शय्याभिः शेस्ते यामु साधवस्ताः शय्याः=वसतयः उपाश्रयाः, पट्टकादिरूपाः संस्तारकाश्च उच्यन्ते, ताभिर्हेतुभिः, अतिवेलम्-वेला-मतिक्रम्य, स्वाध्यायादिकं न विहन्यात्=न परित्यजेत् । यद्वा-अतिवेलाम्-इति छाया । वेलाशब्दो मर्यादावाचकः, अतिशयिता वेला अतिवेला, अन्यमर्यादाऽपेक्षयाऽतिशयिनीं मर्यादां समतारूपां न विहन्यात्=रागद्वेषजनिताभ्यां हर्षविषादाभ्यां

ऋतु में शैत्यरहित, अथवा-उष्णस्पर्शसहित, ग्रीष्म वर्षाऋतु में उष्णस्पर्शरहित, अथवा शीतस्पर्शसहित, अथवा द्रव्य की अपेक्षा उच्च-प्रदेश में स्थित, उपलक्षण से चूना सिमेंट आदि की बनाई गई ऐसी उच्चशय्या-उपाश्रय अथवा पाटला संस्तारकको लेकर, अथवा अवच-उच्च से प्रतिकूल-हेमन्त शिशिर में शीतस्पर्शयुक्त, ग्रीष्मवर्षा में उष्णस्पर्शयुक्त तथा द्रव्य की अपेक्षा अधोभाग में स्थित ऐसी शय्या को-उपाश्रय, पाटला, संस्तारक को-लेकर (अइवेलं न विहन्ने-ज्जा-अतिवेलं न विहन्यात्) वेला का उल्लंघन करके स्वाध्याय आदि को न छोड़े, अर्थात् कालोकाल प्रतिलेखनादि करे । अथवा रागद्वेष-जनित हर्षविषादरूप परिणामों के द्वारा अन्यमर्यादा की अपेक्षा अति-शयविशिष्ट समतारूप मर्यादा का उल्लंघन न करे । उच्चशय्या-

हेमन्त शिशिर इतुमां शैत्य रहित, अथवा उष्णस्पर्शवाणी ग्रीष्म, वर्षा ऋतुमां उष्णस्पर्श रहित अथवा शीतस्पर्श सहित अथवा द्रव्यनी अपेक्षाथी उच्य प्रदेशमां रहित. उपलक्षणीयुनी चूना, सीमेन्ट आदिथी बनाववामां आवेल उच्य शैया, उपाश्रय, अथवा पाटला संस्तारकने लध अथवा अवच उच्यथी प्रतिकूल हेमन्त शिशिरमां ठंडीवाणी, ग्रीष्म वर्षांमां उष्ण स्पर्शवाणी तथा द्रव्यनी अपेक्षा अधोभागमां स्थित ओवी अवचशय्याने-उपाश्रय, पाटला, संस्तारकने लध अइवेलं न विनिहन्नेज्जा-अतिवेलं न विहन्यात् वेलानुं उलंघन करी स्वाध्याय आदिने न छोड़े, अर्थात् कालोकाण प्रतिलेखनादि करे. अथवा-रागद्वेष जनित हर्ष विषाद रूप परिणामो द्वारा अन्य मर्यादानी अपेक्षा अतिशय विशिष्ट समतारूप मर्यादानुं उलंघन न करे. उच्य शय्या-अनुकूल वस्तिने लाल मणतां ओवी विचार

ન લઘ્વેત્ । ઉચ્ચશય્યાં પ્રાપ્ય 'અહો ! ભાગ્યવાનઽહં યન્મમ સર્વકાલસુખદા વસતિ-
મિલિતે'તિ ઠ્ઠાઃ, અવચશય્યાં પ્રાપ્ય તુ 'અહો ! કીદૃશી મમ મન્દભાગ્યતા, યતઃ
શય્યાઽપિ શીતાદિનિવારિકા ન લઘ્યતે' ઇતિ વિપાદઃ । એવંભૂતાભ્યાં હર્ષવિપા-
દાભ્યાં મધ્યસ્થભાવરૂપાં મર્યાદાં નોછદ્વનીયેત્યર્થઃ । યસ્તુ મુનિઃ પાપદૃષ્ટિઃ=પૂર્વોક્ત
મર્યાદોદ્દિગ્ધકઃ સ ચિનિદ્યન્યતે, પરીપદૈઃ પરાજિતોઽતઃ એવં સાધુમર્યાદાસ્વલિતો
મુનિઃ સંયમાત્પતિતો ભવતીત્યર્થઃ । તસ્માદુપાશ્રયાદી રાગદ્વેષપરિવર્જનેન શય્યા-
પરીપદઃ સોદ્ભવ્ય ઇતિ ભાવઃ ॥ ૨૨ ॥

અનુકૂલ વસ્તિ કો પાકર પેસા વિચાર ન કરે કિ “અહો ! મેં ચઢા હી
‘ભાગ્યશાલી હું જો મુદો સર્વકાલ મેં સુખ દેનેવાલી વસતિ મિલી હૈ”
તથા અવચશય્યા પ્રતિકૂલ વસ્તિ કો પાકર પેસા વિચાર ન કરે
કિ-અહો ! મેં કૈસા મન્દભાગી હું જો મુદો શીતાદિ નિવારણ કરને
વાલી વસ્તિ મો નહીં મિલી । હસ પ્રકાર અનુકૂલ પ્રતિકૂલ
વસતિ કી પ્રાપ્તિ કો લેકર મુનિ કો હર્ષવિપાદાત્મક પરિણામોં દ્વારા
મધ્યસ્થભાવરૂપ મર્યાદા કા ઉલ્લંઘન નહીં કરના ચાહિયે । જો
મુનિ (પાવદિદ્વી વિહન્નર્દ-પાપદૃષ્ટિઃ વિહન્યતે) અનુકૂલ પ્રતિકૂલ
વસતિ મેં રાગદ્વેષ કરતા હૈ વહ પાપદૃષ્ટિ મુનિ હસ સમતાભાવરૂપ
મર્યાદા કા નાશ કરતા હુવા સંયમ સે પતિત હો જાતા હૈ । હસલિયે
મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઉપાશ્રય આદિ મેં રાગદ્વેષ કે પરિવર્જન સે
શય્યાપરીપદ સહન કરે ॥ ૨૨ ॥

ન કરે કે, “અહો ! હું ખૂબ જ ભાગ્યશાળી છું. જે મને સર્વકાળ સુખ દેવાવાળી
વસ્તિ મળી છે ” તથા “અવચ” શય્યા પ્રતિકૂળ વસ્તિથી એવો વિચાર ન કરે કે, હું
કેવો મંદભાગી છું જે મને કંડી આદિનું નિવારણ કરવાવાળી વસ્તિ ન મળી, આ
પ્રકારે અનુકૂળ પ્રતિકૂળ વસ્તિની પ્રાપ્તિને લઈ મુનિએ હર્ષ વિપાદાત્મક પરિણામો
દ્વારા મધ્યસ્થ ભાવરૂપ મર્યાદાનું ઉલ્લંઘન કરવું ન જોઈએ. જે મુનિ પાવદિદ્વી
વિહન્નર્દ-પાપદૃષ્ટિઃ વિહન્યતે અનુકૂળ પ્રતિકૂળ વસ્તિમાં રાગદ્વેષ કરે છે. તે
પાપદૃષ્ટિ મુનિ આ સમતા ભાવ રૂપ મર્યાદાને નાશ કરી સંયમથી પતિત
થઈ જાય છે. આ માટે મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે, ઉપાશ્રય આદિમાં રાગદ્વેશના
પરિવર્જનથી શય્યા પરીપદ સહન કરે ॥ ૨૨ ॥

શય્યાપરીપહઃ કયા રીત્યા સોઢ્યઃ ? ઇતિ પ્રદર્શયતિ—

મૂલમ્—પદ્દરિક્કમુવેસ્સયં લહ્ણં, કલ્લાણં અદુવ પાવગં ।

કિમેગરાયં કરિસ્સઇ, ઇવં તત્થહિયાસે ॥ ૨૩ ॥

છાયા—પ્રતિરિક્તમુપાશ્રયં લઙ્ઘા, કલ્યાણમ્ અથવા પાપકમ્ ।

કિમેકરાત્રં કરિષ્યતિ ઇવં તત્રાધ્યાસીત ॥ ૨૩ ॥

‘પદ્દરિક્ક’ ઇત્યાદિ ।

સાધુઃ, કલ્યાણમ્=શાતરૂપં સુખદાયકમ્, અથવા પાપકં-પાપરૂપં દુઃખજનકમ્, પ્રતિરિક્તં=સ્ત્રીપશુપણ્ડકાદિવર્જિતમ્—ઉપાશ્રયં=વસતિ, લઙ્ઘા=પ્રાપ્ત્ય, એકરાત્રમ્-એકસ્યાં રાત્રી અયમુપાશ્રયઃ કિં સુખં દુઃખં વા કરિષ્યતિ ન કિંચિત્ કરિષ્યતિ’ એવમ્=ઈદ્રશેન વિચારેણ તત્ર=ઉપાશ્રયે અધ્યાસીત=અધિવસેત્-રાગં દ્રેષં વા ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । અયં ભાવઃ-કચચિત્-સમભૂમિકં સુશોભનં સર્વતુષ્ટત્વદં,

શય્યાપરીપહ કિસ તરહ સહના ચાહિયે । હસ બાતકો સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરતે હૈ—‘પદ્દરિક્ક૦’-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ-સાધુ (કલ્લાણં-કલ્યાણમ્) શાતરૂપ-સુખદાયક (અદુવ-અથવા) યા (પાવગં-પાપકમ્) અશાતરૂપ-દુઃખજનક એસે (ઉવેસ્સયં-ઉપાશ્રયં) ઉપાશ્રય-વસતિ કો જો (પદ્દરિક્કં-પ્રતિરિક્તમ્) સ્ત્રી પશુ એવં પણ્ડક આદિ સે રહિત હૈ (લહ્ણં-લઙ્ઘા) પ્રાપ્ત કર એસા વિચાર કરે કિ (‘એગરાયં-એક-રાત્રં) યહ ઉપાશ્રય એકરાત્રમર ઠહરને વાલે મેરે લિયે કયા તો સુખ દે સકતા હૈ ઓર કયા દુઃખ દે સકતા હૈ (એવં તત્થહિયાસે-એવં તત્રાધ્યાસીત) હસ પ્રકાર વિચાર કર કે વહાં રહે — ઉપાશ્રય કે વિષય મેં વહ રાગદ્રેષ ન કરે । તાત્પર્ય યહ કિ સાધુ કે લિયે કહીં પર સમભૂમિ-

શય્યાપરીપહ કઈ રીતથી સહન કરવો ? આ વાતને સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરે છે ‘પદ્દરિક્ક’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ-સાધુ કલ્લાણં-કલ્યાણમ્ શાતરૂપ-સુખદાયક અદુવ-અથવા યા પાવગં-પાપકમ્ અશાતરૂપ-દુઃખજનક એવા ઉવેસ્સયં-ઉપાશ્રયં ઉપાશ્રય-વસતિ કે જે પદ્દરિક્કં-પ્રતિરિક્તમ્ સ્ત્રી પશુ અને પંડક આદિથી રહિત છે, એવી વસતિ લઙ્ઘુ-લઙ્ઘા પ્રાપ્ત કરી વિચાર કરે કે, એગરાયં-એકરાત્રં આ ઉપાશ્રય એક રાત્ર રોકાવાવાળા મારા માટે શું સુખ આપનાર છે કે શું દુઃખ આપનાર છે. એવં તત્થહિયાસે-એવં તત્રાધ્યાસીત આ પ્રકારનો વિચાર કરી ત્યાં રહે. ઉપાશ્રયના વિષયમાં તે રાગદ્રેષ ન કરે. તાત્પર્ય એ છે કે, સાધુને માટે કોઈ સ્થળે સમભૂમિવાળે

ક્વચિદ્વિપમભૂમિકં પાંસુપ્રચુરં શર્કરાશકલસંકુલં શીતકાલેઽતિશીતં ગ્રીષ્મે વહુધર્મકં
દુઃસ્વદં સુસ્વદં વા સ્વ્યાદિરહિતમુપાશ્રયં, મૃદુકઠિનાદિભેદેનોચાવચં પટ્ટકારૂપં
સંસ્તારકં ચ પ્રાપ્ય, તત્ર તત્ર રાગદ્વેષાકરણેનાનુદ્વિગ્નો ભવેત્ । एवं શય્યાપરીપદઃ
સાધુના વિજિતો ભવતીતિ ।

બાલા ઉપાશ્રય મિલે યા વિપમ ભૂમિવાલા, ચાહે તો વહ ઋતુ કે અનુકૂલ
હો ચાહે પ્રતિકૂલ હો, ચાહે વહ કંકર પથર સે યુક્ત ભૂમિવાલા હો
ચાહે સિમેંટ આદિ સે યની હુઈ ભૂમિવાલા હો-કૈસા મી કયોં ન હો
પરન્તુ સ્ત્રી પશુ આદિ સે યદિ વહ રહિત હૈ તો સાધુ કો ઉસ મેં કિસી
મી પ્રકાર કા હર્ષવિપાદ નહીં કરના ચાહિયે । ઈસી તરહ સંસ્તારક મી
ચાહે મૃદુગુણયુક્ત હો ચાહે કઠિન હો કૈસા મી હો ઉસકો પ્રાપ્તકર
સાધુ કો ઉસ વિષય મેં મી રાગદ્વેષપરિણતિ નહીં કરની ચાહિયે ।
ઈસ તરહ કરને સે સાધુ કે દ્વારા શય્યાપરીપદ જીતા જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—શય્યાપરીપદ પર યદિ સાધુ કો વિજય પાના હૈ તો
ઉસકી વિચારધારા એસી કમી નહીં હોની ચાહિયે કિ યહ શય્યા, ઉપા-
શ્રય અથવા પાટ-પાટલા આદિ સુન્દર હૈં યા અસુન્દર હૈં ? ઋતુ કે અનુકૂલ
હૈં યા પ્રતિકૂલ હૈં । સાધુ કે લિયે ક્યા તો અનુકૂલ ઔર ક્યા પ્રતિકૂલ ?
સપકે ઉપર ઉસકી સમાન દૃષ્ટિ હોની ચાહિયે । યહ તો દૃષ્ટિ કી વિષ-
મતા હૈ જો સાધુકે લિયે ઉસકી સમાચારી સે ઉચિત નહીં માની જાતી હૈ ।
સંયમ કા નિર્વિધ્નરૂપ સે નિર્વાહ જૈસે મી હો સકે ઉસ રૂપ સે

મળે અથવા વિપમભૂમિવાળો, તે ઋતુને અનુકૂળ હોય અથવા પ્રતિકૂળ હોય,
ચાહે તે કાંકરા પથરની ભૂમિવાળો હોય કે, ચાહે સિમેંટ આદિની ભૂમિવાળો
ગમે તેવો હોય. પરંતુ સ્ત્રી પશુ આદિથી જો તે રહિત હોય તો સાધુએ તેમાં
કોઈ પ્રકારનો હર્ષ વિપાદ નહીં કરવો જોઈએ. એ જ રીતે સંસ્તારક પશુ
ચાહે તેવું સુવાળું હોય અથવા તો કઠણ હોય ગમે તેવું હોય તેને
પ્રાપ્ત કરી સાધુએ તે વિષયમાં પશુ રાગદ્વેષ પરિણતિ રાખવી ન જોઈએ
આવી રીતે કરવાથી સાધુ શય્યાપરીપદ છૂતી નય છે.

ભાવાર્થ—શય્યાપરીપદને કદાચ સાધુએ છૂતવો હોય તો તેની વિચાર
ધારા એવી કદી ન હોય કે, આ શય્યા ઉપાશ્રય-પાટલા આદિ સુંદર છે કે અસુંદર,
ઋતુને અનુકૂળ છે કે પ્રતિકૂલ સાધુ માટે કયું અનુકૂળ અને કયું પ્રતિકૂળ
બધા ઉપર તેની સમાન દૃષ્ટિ હોવી જોઈએ. એ તો દૃષ્ટિની વિષમતા છે જે
સાધુ માટે તેની સમાચારીથી ઉચિત માનવામાં આવતી નથી. સંયમનો નિર્વિધ્ન

अत्र दृष्टान्तः प्रदर्शयते—

एकदा भावितात्मा शुभचन्द्रनामाचार्यः सुविनीतशिष्यपरिवारैः सह ग्रामानु-
ग्रामं विहरन् श्रावस्तीनगर्यां बहिरशोकनामके नन्दनवनतुल्ये उद्याने समकृष्टतः ।
तस्य बहुमध्यदेशभागे केलिमियभूपस्य प्रासाद आसीत् । स च प्रासादः प्रासादीयः
प्रदर्शनीयोऽभिरूपः प्रतिरूपो मणिकुट्टिमतलः समरमणीयभूमिभाग आदर्शतलोपमः
कोमलस्पर्शः सर्वतुल्यदः सर्वथाऽनुकूलो रुचिरपीठफलकसंस्तारकयुक्त आसीत् ।
तत्रासौ तपःसंयमाराधको मुनिनिवसन् विशुद्धभावेन तमनुकूलशय्यापरीपई मण्य-
स्थभावेन सहमानश्चिन्तयति—अत्रैकरात्रमात्रं ममावस्थानं, किमनेन शय्यासुखेन ।

करते रहना चाहिये इसी में साधु की शोभा है ।

दृष्टान्त—एक समय की बात है—शुभचंद्र नाम के आचार्य सुविनीत
अपने शिष्यपरिवार के साथ ग्रामानुग्राम विहार करते हुए श्रावस्ती
नगरी के बाहिर रहे हुए नंदनवनतुल्य अशोकनामक उद्यान में पधारे ।
उस उद्यान के ठीक मध्यभाग में केलिमियभूप का प्रासाद था ।
यह प्रासाद बहुत ही सुन्दर था । इसका कुट्टिमतल मणिमय था ।
इसका भूमिभाग सम एवं रमणीय था । वह ऐसा चलकता था कि
मानो दर्पण का तल हो । स्पर्श उसका सुकुमाल था । यह महल सब
ऋतुओं के अनुकूल था । रुचिर पीठ फलक संस्तारकों से युक्त था ।
तथा प्रासादिय दर्शनीय अभिरूप और प्रतिरूप था । तप और संयम
के आराधक ये आचार्य महाराज उस प्रासाद में एक तरफ ठहर गये ।
उस में इन्हे सय बात की सुविधा थी । परन्तु फिर भी आचार्य ने
उस विषय में अनुकूलता के विचार से हर्षभाव धारण नहीं किया ।

इयंथी निवाड जेम थर्ध शके तेवा इये करतुं रहेवु जेध अये तेमां साधुनी शोभा छे ।

दृष्टान्त—जेक समये शुभचंद्र नामना आचार्य सुविनीत पोताना शिष्य
परिवार साथे ग्रामानुग्राम विहार करता करता श्रावस्ती नगरीनी भंडार रहेला
नंदनवन तुल्य अशोक नामना उद्यानमां पधायो । ते उद्यानना मध्य लागमां
केलिप्रिय राजनुं निवास स्थान छतुं, ते महालय भूषण अ सुंदर छतो, जेनुं
आंगवुं भुजिजडित छतुं, भूमिभाग सम अने रमणीय छतो, ते जेवो अण-
काट भारतो छतो के जेष्ठे अरिसो छाय । जेनो रुपशे भूषण सुंवाजो लागतो ।
आ भडेव सधणी ऋतुजोमां अनुकूल छतो, इथी विषयवे तेवा पीठ, कुलंक,
शय्या, संस्तारक आदि युक्त छतो, तप अने संयमना आराधक शुभचंद्र
आचार्य ते भडेवनी जेक जागु छतयो जेमां तेमने दरेक प्रकारनी सगवडता
छती छतां पण आचार्ये ते अनुकूलताना विचारथी, हर्षभाव धार न कर्यो ।

ઈદ્દશસુખાવહશય્યાનુરાગઃ કિમાત્મકલ્યાણાય મમ ભવિષ્યતિ ?; કદાપિ નૈવ ।
 एवं વિચિન્ત્ય શુભપરિણામેન પ્રશસ્તાધ્યવસાયેન શિષ્યસહિતઃ શુભચન્દ્રાચાર્યસ્ત-
 દાઽવધિજ્ઞાનં પ્રાપ્તવાન્ । તત્ત્વ દ્વિતીયદિવસે શિષ્યપરિવારૈઃ સહ વિહારં કૃત્વા
 ક્વચિદ્ લઘુગ્રામે વસતૌ નિવસતિ સ્મ ।

સા ચ વસતિરુન્દરુકૃતાનેકવિલયુક્તમિત્તિકા, ભૂતશુજંગમાદિભયોત્પાદિકા
 પ્રચુરપાસુશર્કરાસંકુલા વિષમભૂમિકા જીર્ણશીર્ણા પીઠફલકાદિરહિતા ચાસીત્ । તત્ર
 પ્રમાર્જનં કૃત્વા સંયમેન તપસાઽઽત્માનં ભાવયન્નસૌ વિહરતિ સ્મ । તત્ર રાત્રી

કિન્તુ વિશુદ્ધ ભાવ સે યુક્ત હોકર ઉસ અનુકૂલ શય્યાપરીપદ કો
 મધ્યસ્થ ભાવ સે સહન કિયા । વિચાર કિયા કિ-યહાં એક રાત્રિ
 ભર કે લિયે તો મેરી સ્થિરતા હૈ । ઇસ શય્યા કે સુખ સે મુક્તે ક્યા
 લાભ । ઇસ શય્યા કા સુખ મેરે આત્મકલ્યાણ કા કોઈ સાધક નહીં
 હૈ કિ જિસસે ઇસ મેં મેરી ઉપાદેય બુદ્ધિ હો । પર દ્રવ્ય કે શુભાશુભ
 પરિણમન સે મૈં અપને મેં શુભાશુભરૂપ પરિણમન ક્યોં હોને દું । ઇસકા
 પરિણમન ઇસકે સાથ હૈ ઓર મેરા પરિણમન મેરે સાથ । ઇસ પ્રકાર
 વિચાર કર શુભ પરિણામ એવં પ્રશસ્ત અધ્યવસાય કે પ્રભાવ સે શિષ્ય
 સહિત ઉનકો અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન હો ગયા ।

દુસરે દિન ઉન્હોં ને વહાં સે વિહાર કર દિયા । વિહાર કર વે એક
 છોટે સે ગ્રામ મેં આયે । જહાં યે ઠહરે વહાં કા સ્થાન બડા હી મયાનક
 થા । ઉસ મેં અનેક ચૂહોં કે વિલ થે । ભૂત, શુજંગમ આદિ કા વહાં
 ઉપદ્રવ મી થા । ધૂલિ એવં કંકર સે વહાં કી ભૂમિ સમ વિષમ થી ।

પણ વિશુદ્ધ ભાવથી યુક્ત બની તેમણે અનુકૂલ શય્યાપરીપદને સહન કર્યો. વિચારું
 કે અહિં એક રાત્રિ માટે મારી સ્થિરતા છે. આ શય્યાના સુખથી મને શો લાભ ?
 શય્યાનું આ સુખ મારા આત્મકલ્યાણનું કોઈ સાધક નથી કે જેતાથી તેમાં મારી
 ઉપાદેય બુદ્ધિ થાય. પરદ્રવ્યના શુભાશુભ પરિણમનથી હું પોતાનામાં શુભાશુભ
 રૂપ પરિણમન શા માટે થવા દઉં. તેનું પરિણમન તેની સાથે અને મારું
 પરિણમન મારી સાથે. આ પ્રકારનો વિચાર કરી શુભ પરિણામ અને પ્રશસ્ત
 અધ્યવસાયના પ્રભાવથી શિષ્ય સહિત તેમને અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું.

બીજે દિવસે તેઓએ ત્યાંથી વિહાર કર્યો. વિહાર કરીને તેઓ એક
 નાના ગામડામાં આવ્યા. જ્યાં તેઓ રોકાયા હતા તે સ્થાન ઘણું જ ભયા-
 નક હતું. તેમાં અનેક ઉંદરનાં લોણ હતાં, ભૂત, શુજંગમ વગેરેનો ઉપદ્રવ
 ત્યાં હતો. ધૂળ અને કાંકરાથી ત્યાંની ભૂમિ ઉંચી નિચી હતી, ઘણું શીથળ

स्वाध्यायं ध्यानं च कृत्वा शुभचन्द्राचार्यस्तदाज्ञया सर्वे मुनयश्च स्वस्वसंस्तारको-
परि शयनार्थमुद्यताः । तदा तत्रैको भुजङ्गमः स्वाहारमन्त्रेण यन् समागतः । तमवलोक्य
सर्वे मुनयोऽनुद्विग्ना एव तस्युः । स च भुजङ्गमः कंचिन्मूपकमनुभावमानस्तस्मिन्
दृष्टिपथातिक्रान्ते मुनीन् पश्यति । तस्य दृष्टौ विपमासीत् अतस्तेन दृष्टमात्रा एव
सन्तस्ते मुनयो विपाक्रान्ता जाताः अथ शुभचन्द्राचार्यस्तदीयशिष्याश्च सर्वे मुनयः
समाधिभावमवलम्ब्य क्षपकश्रेणिं समारुह्य शुक्लध्यानानलेन सकलं कर्म भस्मसात्
कृत्वा केवली भूत्वाऽन्तर्मुहूर्तमात्रेण शिवपदं प्राप्तवन्तः । एवं सर्वैर्मुनिभिः श्रुत्या-
परीपहः सोढव्यः ॥ २३ ॥

जीर्ण शीर्ण संस्तारक तक भी इसमें कोई नहीं था । उस भूमि का
प्रमार्जन कर आचार्य महाराज ने वहां पर अपनी साधुमंडलीसहित
निवास किया । तब एवं संयम से आत्मा को भावित करते हुए उन
आचार्य महाराज ने रात्रि में स्वाध्याय और ध्यान करने के पश्चात्
समस्त अपने शिष्यों को अपने २ संस्तारकों पर शयन करने की
आज्ञा दी । आज्ञा पाते ही सब के सब अपने २ संस्तारक पर सोने
लगे । इतने में वहां एक सर्प अपने आहार की खोज में आया । देखकर
समस्त मुनिमंडली अनुद्विग्न ही रही । वह सर्प एक चूहेके पीछे पड़ा हुआ
था । जब वह चूहा उसे दिखा नहीं तो उसने मुनिमंडली की तरफ अपनी
दृष्टि लगाई । उसकी दृष्टि में ही विष था, इसलिये उसके द्वारा देखे
गये वे आचार्यसहित मुनिराज विष से आक्रान्त हो गये । सब ने
मिलकर समाधिभाव का आलम्बन किया, और उसके प्रभाव से वे
सब के सब क्षपकश्रेणी पर आरुह्य होकर शुक्लध्यान की प्राप्ति से सम-

संस्तारक पशु न हतुं. आ भूमिने साक्ष करीने आचार्य महाराज ते स्थये
पोताना शिष्यो साथे निवास कर्यो. तब अने संयमशी आत्माने भावित
करीने ते आचार्य महाराज रात्रिमां स्वाध्याय अने ध्यान कर्या पछी पोताना
पधा शिष्योने पोतपोताना संस्तारक उपर शयन करवानी आज्ञा आयी.
आज्ञा भजतां ७ सधणा पोतपोताना संस्तारक उपर सुवा लाग्या. ओटलाभां
ओक सर्प पोताना आहारनी शोधमां नीकल्यो, ओने ओक समस्त साधु
गण अनुद्विग्न रह्युं. ते सर्प ओक उंदरनी पाछण पडेल हतो. न्यारे ते उंदर
तेना ओपामां न आव्यो तो तेछे आ मुनि गण तरक्ष ओनी दृष्टि हेरवी.
ओनी दृष्टिमां ७ ओर हतुं, ओटले ओनी दृष्टिओ पडेल आचार्य सहित
मुनिराजो विषथी आकुणव्याकुण जनी गया. सधणाओ भणीने समाधि भावतुं
आर्वावन कर्युं. अने तेना प्रलापथी तेओ सधणां क्षपकश्रेणी पर आइ

અથાઽઽક્રોશપરીપહજન્યં પ્રાહ—

મૂલમ્—અક્રોસિજ્જ પંરો ભિક્કું, નં તંસિ પંહિસંજલે ।

સંરિસો હોઈં વાલાણં, તમ્હાં ભિક્કેવૂ નં સંજલે ॥૨૪॥

છાયા—આક્રોશેત્ પરો મિશું, ન તસ્મિન્ પ્રતિસંજ્વલેત્ ।

સદશો ભવતિ વાલાનાં, તસ્માદ્ મિશુર્ન સંજ્વલેત્ ॥ ૨૪ ॥

ટીકા—‘અક્રોસિજ્જ’ ઇત્યાદિ ।

પરઃ=અન્યઃ, યદિ મિશું=પુનિમ્ આક્રોશેત્=દુર્વચનેન તર્જયેત્, તર્હિ મુનિ-
સ્તસ્મિન્ ન પ્રતિસંજ્વલેત્=ન પ્રતિકુપ્યેત્ । અવાચ્યભાષયાઽઽક્રુષ્ટઃ સન્ કોપાવે-

સ્ત કર્મો કો નાશકર કેવલી હો ગયે, તથા અન્તર્મુહૂર્ત મેં શિવપદ કો
પ્રાસકર સિદ્ધ હો ગયે । હસ કથા સે યહી શિક્ષા મિલતી હૈ કિ
શય્યાપરીપહ પર વિજય પાનેવાલા મુનિ આત્મકલ્યાણ કર મુક્ત હો
જાતાં હૈ, અતઃ શય્યાપરીપહ પર વિજય પ્રાપ્ત કરના ચાહિયે ॥ ૨૩ ॥

અવ સૂત્રકાર બારહવેં આક્રોશપરીપહ કા જય કહતે હેં—

‘અક્રોસિજ્જ’-ઇત્યાદિ.

અન્યયાર્થ—યદિ (પરો-પરઃ) કોઈ અજ્ઞાની મનુષ્ય (ભિક્કું-મિશુમ્)
સાધુકો (અક્રોસિજ્જ-આક્રોશેત્) દુર્વચન સે તર્જિત કરે તવ વહ સાધુ
(તંસિ-તસ્મિન્) ઉસકે ઉપર (ન પંહિસંજલે-ન પ્રતિસંજ્વલેત્)
ક્રોધિત ન હો-અર્થાત્ જવ કોઈ અશિષ્ટ ભાષા સે સાધુ કે સાધ
અસભ્ય વ્યવહાર કરે-ગાલી આદિ દુર્વચન કહે તો સાધુ કો ઉસકે
પ્રત્યુત્તરરૂપ મેં ક્રોધ કે આવેશ સે ઉસકે પ્રતિ ગાલી વગેરહ અશિષ્ટ

બની શુકલધ્યાનની પ્રાપ્તિથી સમસ્ત કર્મભજનો નાશ કરી કેવળીપદને પ્રાપ્ત કર્યું.
તથા અંતર મુહૂર્તમાં શિવપદને પ્રાપ્ત કરી સિદ્ધ બની ગયા. આ કથાથી એ શિક્ષા
પ્રાપ્ત થાય છે કે, શય્યાપરીપહ પર વિવ્ય મેળવનાર મુનિ આત્મકલ્યાણ કરી
મુક્તિને પામે છે, માટે શય્યાપરીપહને વિવ્ય પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. ॥ ૨૩ ॥

હવે સૂત્રકાર બારમા આક્રોશ પરીપહના જય ને કહે છે. ‘અક્રોસિજ્જ’-ઇત્યાદિ,

અન્યયાર્થ—યદિ પરો-પરઃ જો કોઈ અજ્ઞાની મનુષ્ય મિક્કું-મિશું સાધુને અક્રો-
સિજ્જ-આક્રોશેત્ ખરાબ વચનથી અપમાનીત કરે તો પણ તે સાધુ તંસિ-તસ્મિન્
તેના ઉપર ન પંહિસંજલે-ન પ્રતિસંજ્વલેત્ ક્રોધિત ન થાય અર્થાત્ જો કોઈ અશિષ્ટ
ભાષાથી સાધુની સાથે અસભ્ય વહેવાર કરે, ગાળ આદિ દુર્વચન કહે તો સાધુએ
તેના પ્રત્યુત્તર રૂપે ક્રોધ આવેશથી તેના પ્રતિ ગાળ વિગેરે અશિષ્ટ ભાષાનો પ્રયોગ

શેન પ્રત્યાક્રોશરૂપં ગાલીદુર્વચનાદિકં ન વદેદિત્યર્થઃ । નત્તુ પ્રતિસંજ્વલને કા હા-
નિરિત્યાશદ્વયાહ—‘ સરિસો હોદ્દ ચાલાણં ’ ઇતિ । પ્રતિસંજ્વલન્ ચાલાનામ્-
અજ્ઞાનિનાં સદૃશો ભવતિ, તસ્માદ્ ભિક્ષુઃ=મુનિઃ ન સંજ્વલેત્=આક્રુષ્ટોઽપિ ક્રોધં
ન કુર્યાદિત્યર્થઃ ।

इदमत्र बोध्यम्—मिथ्यादर्शनोद्भूतमुखनिर्गतानि कोपानलोदीपनानि दुर्वचनानि
श्रुत्वा तत्प्रतीकारं कर्तुं समर्थोऽपि मुनिः—“ दुरन्तः क्रोधकषायोदयनिमित्तपापकर्म-
विपाकः ” इति चिन्तयन् स्वहृदये क्रोधायानवकाशदानेनाक्रोशपरीषदं सहेत ।

उक्तञ्च—

भाषા का प्रयोग नहीं करना चाहिये, क्यों कि गाली देने वाले को
गाली देनेवाला साधु-जैसे के साथ वैसा बनने वाला मुनि-(बालाणं
सरिसो होइ-चालाणां सदृशो भवति) अज्ञानियों के सदृश ही माना
जाता है । (तम्हा-तस्मात्) इसलिये (भिक्षू न संजले-भिक्षुः न
संज्वलेत्) भिक्षु क्रोध न करे ।

તાત્પર્ય इसका यह है कि-अज्ञान से मन्दोन्मत्त हुए व्यक्तियों के
मुख से निकले हुए दुर्वचनों को जो कि कोपरूप अग्नि के उदीपक होते
हैं, सुनकर उनके प्रतिकार करने में समर्थ भी मुनि “ क्रोध कषाय के
उदय के निमित्त से पापकर्म का विपाक दुरन्त होता है ” ऐसा विचार
कर अपने हृदय में क्रोध को स्थान न दे । इससे मुनि आक्रोशपरीषह
पर विजय पाता है । कहा भी है—

ન કરવો બેઈએ. કેમ કે, ગાળો દેનારને સામી ગાળ દેનાર સાધુ-જેવાની
સાથે તેવા થનાર-મુનિ ચાલાણં સરિસો હોઈ-ચાલાનાં સદૃશો ભવતિ અજ્ઞાની-
ઓની માફક જ માનવામાં આવે છે. તુમ્હા-તસ્માત્ આ માટે ભિક્ષુ ન સંજલે-
ભિક્ષુઃ ન સંજ્વલેત્ ભિક્ષુ ક્રોધ ન કરે.

તાત્પર્ય આનું એ છે કે, અજ્ઞાનથી મદોન્મત્ત બનેલ વ્યક્તિઓના
મોહમાંથી નિકળેલા દુર્વચનો કે જે ક્રોધ રૂપી અગ્નિ ઉત્પન્ન કરનાર
હોય છે, તે સાંભળી તેનો પ્રતિકાર કરવામાં સમર્થ હોય પણ મુનિ “ ક્રોધ
કષાયના ઉદય નિમિત્તથી પાપકર્મનો વિપાક દુરન્ત હોય છે. ” એવો વિચાર
કરી પોતાના હૃદયમાં ક્રોધને સ્થાન ન આપે. આથી તેવા મુનિ આક્રોશ
પરીષદ પર વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. કહ્યું પણ છે—

नाकुष्टो मुनिराक्रोशेत्, सम्यग्ज्ञानाद्यवर्जकः ।

अपेक्षेतोपकारित्वं, न तु द्वेषं कदाचन ॥ १ ॥

अन्यच्च—

चाण्डालः किमयं द्विजातिरथवा शूद्रोऽथवा तापसः,

किं वा तत्त्वनिवेशपेशलमतियोगीश्वरः कोऽपि वा ।

इत्यस्वल्पविकल्पजालमुखरैः संभाष्यमाणो जनै-

र्नो रुष्टो नहि चैव हृष्टहृदयो योगीश्वरो गच्छति ॥ २ ॥

इति विचार्य समत्वेन तिष्ठेत् ॥ २४ ॥

नाकुष्टो मुनिराक्रोशेत्, सम्यग्ज्ञानाद्यवर्जकः ।

अपेक्षेतोपकारित्वं, न तु द्वेषं कदाचन ॥ १ ॥

सम्यग्ज्ञानादिक का परिहार नहीं करनेवाला, अर्थात् सम्यग्ज्ञानादिक गुणों के उपार्जन करने में कुशलमति भिक्षु अपमानित होने पर भी कभी भी अपमान करने वाले के प्रति अशिष्ट भाषा का प्रयोग न करे । प्रत्युत अपने प्रति इस प्रकार का व्यवहार करने वाले व्यक्ति को अपना उपकारी ही माने, किन्तु इसके प्रति द्वेषभाव कभी न रखे । और भी—

चाण्डालः किमयं द्विजातिरथवा शूद्रोऽथवा तापसः,

किं वा तत्त्वनिवेशपेशलमतियोगीश्वरः कोऽपि वा ।

इत्यस्वल्पविकल्पजालमुखरैः संभाष्यमाणो जनै,

र्नो रुष्टो नहि चैव हृष्टहृदयो योगीश्वरो गच्छति ॥ २ ॥

नाकुष्टो मुनिराक्रोशेत्, सम्यग्ज्ञानाद्यवर्जकः ।

अपेक्षेतोपकारित्वं, न तु द्वेषं कदाचन ॥ १ ॥

सम्यग्ज्ञानादिकों का परिहार न करवावाणा—अर्थात् सम्यग्ज्ञानादिक गुणों का उपार्जन करवाभा कुशलमति भिक्षु अपमानित था करता पक्ष कही पक्ष अपमान करवावाणा तत्क्ष अशिष्ट भाषाओं प्रयोग न करे । पोताना तत्क्ष आ प्रकारों वहेवार करवावाणी व्यक्तित्व पोताना उपकारी न माने । तेम तेना तत्क्ष द्वेष भाव कही पक्ष न राखे । भीष्म पक्ष—

चाण्डालः किमयं द्विजातिरथवा शूद्रोऽथवा तापसः,

किं वा तत्त्वनिवेशपेशलमतियोगीश्वरः कोऽपि वा ।

इत्यस्वल्प विकल्पजालमुखरैः संभाष्यमाणो जनै,

र्नो रुष्टो नहि चैव हृष्टहृदयो योगीश्वरो गच्छति ॥ २ ॥

મુનિકો દેશ કર કોઈ ઉનકો ઑણડાલ કહે, કોઈ બ્રાહ્મણ કહે, કોઈ શૂદ્ર કહે, કોઈ તપસ્વી કહે, કોઈ વિશિષ્ટ જ્ઞાની તો કોઈ યોગીશ્વર કહે, ઇસ પ્રકાર કહેને વોલે વ્યક્તિયોં કે મુલ સે નિકલતે હુલ લણુતા ષ શ્રેષ્ઠતાસૂચક વચનોં કો સુનકર મુનિ ન તો રુષ્ટ હોતા હૈ ન તુષ્ટ હોતા હૈ કિન્તુ સમભાવ સે ચલા જાતા હૈ.

ભાવાર્થ—અશિષ્ટ ભાષા કા પ્રયોગ સાધુ જૈસે સન્ત પુરુષોં કે પ્રતિ ષે હી વ્યક્તિ કરતે હૈં જો મિથ્યાત્વ કે કીચઙ્ક સે લિસ હોતે હૈં. અતઃ ઉનકે દ્વારા અપમાનિત હોને પર મી સાધુ કો ઉનકે પ્રતિ રુષ્ટ ન હોકર પ્રત્યુત દયાવાન હી હોતે રહનાં ચાહિયે. યહ ઉસ સમય વિચાર કરનાં ચાહિયે કિ દેશો યે કિતને અજ્ઞાની હૈં જો ઓઠી સરી વસ્તુ કે યથાર્થ યોધ સે ચિકલ હો રહે હૈં. યે જો કુછ કહેતે હૈં ઉનમેં ઇનકા અપરાધ નહીં હૈ, યહ તો મિથ્યાદર્શન કા હી પ્રભાવ હૈ, અતઃ ઇનકી આત્મા સમ્યગ્જ્ઞાન સે વાસિત થનેં ઓર યે ઉત્તમ માર્ગ પર આરૂઢ હો જાયે, ઈસી ભાવના સાધુકો રલ્લની ચાહિયે. તથા ઇસ સમય યદિ મેં ઇનકે સાથ અસમ્ય વ્યવહાર ઇન્હીં જૈસા કરને લગૂં તો ઇનમેં ઓર મુદ્દા મેં વ્યા અન્તર હો સકતા હૈ. જ્ઞાની ઓર અજ્ઞાની કી ષેષ્ટાં મેં આસમાન પાતાલ જૈસા અન્તર જો યતલાયાં ગયાં હૈં વહ યહાં લુસ હો

મુનિને ઁધ કોઈ ઁને ચંડાલ કહે, કોઈ ગ્રાહ્યુ કહે, કોઈ શૂદ્ર કહે, કોઈ તપસ્વી કહે, કોઈ વિશિષ્ટ જ્ઞાની તો કોઈ યોગીશ્વર કહે, આ રીતે કહેવા-વાળી વ્યક્તિઓના મુખથી નિકળતા હણુતા અને શ્રેષ્ઠતા સૂચક વચનોને સાંભળી મુનિ ન તો ક્રોધિત અને છે કે ન તો તુષ્ટમાન થાય છે. પરંતુ સમભાવથી વિચરે છે.

ભાવાર્થ—અશિષ્ટ ભાષાનો પ્રયોગ સાધુ જેવા સંત પુરૂષ તરફ એજ વ્યક્તિ કરે છે કે જે મિથ્યાત્વના ક્રિયકર્માં લપટાયેલા હોય છે, આથી એમના દ્વારા અપમાનિત થવા છતાં પણ સાધુએ તેના તરફ ન રૂઠતાં પ્રત્યુત્તરમાં દયાવાન જ રહેવું ઁધ એ. એ સમયે એવો વિચાર કરવો ઁધ એ કે, જુઓ! આ કેટલા અજ્ઞાની છે. જે ઁઠી ખરી વસ્તુના યથાર્થ ભોધથી વિકળ બની રહેલ છે. એ જે કાંઈ કહે છે એમાં એનો અપરાધ નથી, મિથ્યાદર્શનનો જ આ પ્રભાવ છે. આથી એનો આત્મા સમ્યગ્જ્ઞાનથી વકસિત બની ઉત્તમ માર્ગ ઉપર આરૂઢ થઈ જાય એવી ભાવના સાધુએ રાખવી ઁધ એ. આ સમયે એ હું એના જેવોજ અસમ્ય વ્યવહાર કરવા લાગું તો એનામાં અને મારામાં શું અંતર રહ્યું? જ્ઞાની અને અજ્ઞાનીની ષેષ્ટામાં આકાશ પાતાળ જેટલું અંતર ખતાવવામાં આવ્યું છે તે આથી હુપ્ત થઈ જાય છે. આના આ ૦ રને મારે

उक्तार्थमेव विशदीकुर्वन् प्राह—

मूलम्—सोच्चाणं फरुसा भासा, दारुणा गामकंटगा ।

तुसिणीओ उवेहेज्जा, ने ताओ मणंसी केरे ॥२५॥

छाया—श्रुत्वा खलु परुषा भाषाः, दारुणा ग्रामकण्टकाः ।

तूष्णीकः उपेक्षेत, न ता मनसि कुर्यात् ॥ २५ ॥

टीका—‘सोच्चाणं’ इत्यादि ।

दारुणाः—दारयन्ति=विदारयन्ति संयमधैर्यमिति दारुणाः=दुःसहाः, मनसि वज्रा-
घातकारिका इत्यर्थः, ग्रामकण्टकाः=ग्रामः=इन्द्रियाणां समूहस्तस्य कण्टका इव कण्टकाः
=दुःखोत्पादकत्वेन प्रतिकूलाः परुषा=रुक्षाः कठोराः, भाषाः=वचनानि, श्रुत्वा खलु
तूष्णीकः=मौनयलम्बी सन्, उपेक्षेत=ता भाषा अवधीरयेत्-नाद्रियेत । ‘उवेहेज्जा’

ज्ञाता है । इनके इस व्यवहार को मुझे समताभाव से सहन करना
चाहिये, क्यों कि इससे मेरे अधिक कर्मों की निर्जरा होगी, इस निर्जरा
में यह मेरा उपकारी है । अतः इस उपकारी के प्रति मैं द्वेष करूँगा
यह मेरी कितनी अज्ञानता होगी । ऐसा विचार कर साधु आक्रोश-
परीपह पर विजय प्राप्त करे ॥ २४ ॥

उपरोक्त अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहते हैं—‘सोच्चाणं’-इत्यादि-

अन्वयार्थ—(दारुणा-दारुणाः) संयमरूपी धैर्यको विदारणकरने वाली
मन में वज्र के तुल्य दुस्सह आघात पहुँचाने वाली तथा (गामकंटगा-
ग्रामकंटकाः) इन्द्रियों को कंटकतुल्य दुःख की उत्पादक होने से प्रतिकूल
(फरुसा-परुषाः) रुक्ष-कठोर ऐसी (भासा-भाषाः) लोगों की-असह्य
व्यक्तियोंकी भाषाओं-वचनोंको (सोच्चाणं-श्रुत्वा खलु) सुनकर मुनि
(तुसिणीओ उवेहेज्जा-तूष्णीकः उपेक्षेत) चुपचाप रहा हुआ-मौन धारण

समताभावधी सहन करवे। ओह ओ. केमके ओधी भने अधिक कर्मोनी निर्जरा
धरो. ओवे। विचार करी साधु आक्रोश परीपह उपर विजय प्राप्त करे. ॥२४॥
उपरोक्तअर्थने स्पष्ट करतां कहे छे—‘सोच्चा णं’ इत्यादि,

अन्वयार्थ—दारुणा-दारुणाः संयमरूपी धैर्यने विदारण करवावाणी दुःसह-मनमां
पुत्र तुल्य आघात पहुँचायावावाणी गामकंटगा-ग्रामकंटकाः तथा इन्द्रियोने
कंटक समान दुःखने उत्पादन करनार होवाधी प्रतिकूल फरुसाः-परुषाः रुक्ष कठोर
ओवी भासा-भाषाः असह्य बोझोना वचनोने सोच्चाणं-श्रुत्वा खलु सांभलीने
मुनि तुसिणीओ उवेहेज्जा-तूष्णीकः उपेक्षेत चुपचाप रही, मौन धारण करी ते

इत्यस्यैवार्थं विशदीकुर्वन् प्राह—‘न ताओ मणसी करे’ इति । ताः भाषा मनसि न कुर्यात्—न स्थापयेत् । ‘अज्ञानवशादनेन संयमधैर्यापहारिण्यो भाषा उक्ता अत्र नास्त्यस्य दोषः किं तु ममैव पूर्वार्जितकर्मणः फलमेतत्’ इति विचार्य तादृशभाषाया अनादरणेन तद्भाषिणि द्वेषं न कुर्यादिति भावः ।

अत्र दृष्टान्तः प्रदर्शयते—

एकदा क्षमाधरनामकः कश्चिदुत्थरतपश्चर्यापरायणो मुनिरासीत् । तद्गुणानु-
रागेण कश्चिद्देवः प्रीत्या तमभिवन्द्याव्रीत्—मम योग्यं कार्यमावेदनीयं भवद्भिः ।

अन्यदा कदाचिन्मार्गे गच्छन् मुनिः स्वामिमुखागतेन केनचिच्चाण्डालेन सो-
पहासमुक्तः—अहो ! अकर्मण्य ! मिथुक ! क्व गच्छसि ? । एतद् दुर्वचनं निश्चय्य

करता हुआ—उस तरफ उपेक्षाभाव धारण करे, किन्तु (ताओ मणसी न करे—ताः मनसि न कुर्यात्) उन वचनों को अपने मन में स्थान न देवे । “अज्ञानवशसे ही इसने संयम धैर्य को अपहरण करने वाली भाषा का प्रयोग किया है सो इस में इसका दोष नहीं है किन्तु मेरे ही पूर्वोपार्जित पापकर्मों का यह फल है” । यह समझकर उस पुरुष भाषा बोलने वाले पर द्वेषबुद्धि न करे ।

दृष्टान्त—दुत्थरतपश्चर्या करने में लीन क्षमाधर नामक एक मुनि थे । उनके गुणों में अनुरागी होने से कोई एक देव वंदनाकर उनसे बोला कि यदि मेरे योग्य कोई कार्य हो तो आप मुझ से अवश्य कहें, यह मैं आप से हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता हूं ।

एक समय की बात है कि वे मुनि कहीं जा रहे थे । रास्ते में सन्मुख आता हुआ उन्हें एक चाण्डाल मिला । उसने मुनिराज को

तद्वत् उपेक्षाभाव धारण करे परंतु ताओ मणसी न करे—ताः मनसि न कुर्यात् तेना वचनेने पोताना मनमां स्थान न आये. अज्ञानवशात्ताथी तेणे संयम धैर्यंनु अपमान करनार भाषानो उपयोग कर्तो छे तो तेमां जेना दोष नथी. परंतु मारा पूर्वोपार्जित पाप कर्मोनु न जे क्षण छे. आपुं समजने जे असत्य भाषा बोलवावाणा उपर देशबुद्धि न करे.

दृष्टान्त—क्षमाधर नामना दुष्कर तपश्चर्या करवाभां लीन जेवा जेक मुनि हता. तेमना शुश्रूणा अनुरागी जेवा कोर्ध जेक देवे वंदना करीने जेमने कहुं के, मारा योज्य कोर्ध कार्य होय तो आप मने अवश्य कहे. जेम हुं आपने हाथ जोडी प्रार्थना करी कहुं छुं—जेक वज्रत ते मुनि कथांक जर्ध रह्या हता. रस्तामां सागेधी आवतो जेक चांडाल मज्यो. तेणे मुनिराजने

જાતકોપઃ સન્ મુનિરવ્રવીત્—ઉન્મત્તસ્ત્વમસિ કિમ્ ? । તતસ્તેન પ્રચળ્ડકોપાવેશેન
 ચાળ્ડાલેન કથિતમ્—અરે ભિક્ષુક ! કિં પ્રલપસિ ? કોઽન્યસ્ત્વત્સમો મલિનદેહઃ ક્ષુત્
 -પિપાસાદિવેદનાગ્રસ્તો લુચ્ચિતશિરા ગૃહે ગૃહે ગૃહપાલ ઇવાહારમન્વેપયન્ ભ્રમસિ ?
 અરે ! અકર્મણ્ય ! પૂર્વકૃતકર્મણો વિપાકમનુભવન્નપિ ન લજ્જસે । કૃપિનાગિ-
 જ્યાદિકર્મ કર્તુમસમર્થા એવ મુલ્ખોપરિવદ્ધમુલ્ખચલ્લિકાઃ પાત્રહસ્તાઃ વહ્વો ભિક્ષુ-
 કાસ્ત્વાદૃશા ઉદરપૂરણકામા ગ્રામાનુગ્રામં પર્યટન્તિ । અરે દુર્ભગ ! પુત્રદારાદિભિઃ

દેખતે હી હૈંસી કરતે હુએ કહા કિ-હે અકર્મણ્ય ભિક્ષુક ! તૂ ક્યાં જા
 રહા હૈ । મુનિ ને ડ્યોં હી ઇસ પ્રકાર કે ઉસકે દુર્વચન સુને તો મુનિ
 કો ક્રોધ આ ગયા, ઓર કહને લગા-ક્યા તૂં ઇસ સમય ઉન્મત્ત હો
 રહા હૈ । મુનિ કે વચન સુનકર ચાંડાલ કે ખી કોપ કા ઠિકાના ન
 રહા । ઉસને ચિઢકર મુનિકો કહા-“અરે ભિક્ષુક ! ક્યા વકતા હૈ ?
 તેરે જૈસા મલિન દેહ વાલા ઓર કૌન હોગા ? જાતે કમાતે નહીં વના
 સો મુંઢ મુંઢાકર મુનિ વન ગયા ઓર ઘર ઘર મેં કુત્તે કી તરહ ખીલ
 માગને કે લિયે ફિરને લગા હૈ । શરમ નહીં આતી, કરતે ધરતે કુછ
 નહીં વનતા સો નિકલ ગયે સાધુ વનને કો । પૂર્વ મેં દાન નહીં દિયા
 સો તો ઉસકા યહ ફલ ભોગના પડ રહા હૈ કિ દર દર કે ભિજારી વન
 રહા હૈ, ફિર ખી અકઢ્ઢ સે ઍંઠતા હૈ ? જરા શર્મ કર, તુમ્હારે
 જૈસે વહુત સે કાર્ય કરને મેં અસમર્થ હોકર મુંહ યાંધ કર પેટ ભરને કે
 લિયે ગાંવ ગાંવ ભટકતે હૈં । એસા કહ કર જવ વહ ચલા ગયા તો કોપ

જોધને હાંસી કરતાં કહું કે, હે અકર્મણ્ય ભિક્ષુક ! તું ક્યાં જઈ રહ્યો છે.
 મુનિએ જ્યારે તેનાં આવા દુર્વચન સાંભળ્યાં ત્યારે તેને ક્રોધ આવી ગયો અને
 કહેવા લાગ્યા કે, શું તું આ સમયે ઉન્મત્ત બની રહ્યો છે ? મુનિનું વચન
 સાંભળીને ચાંડાલના ક્રોધનું કેકાણું ન રહ્યું અને તેણે ચિડાઈને મુનિને કહ્યું
 અરે ભિક્ષુક ! તું શું બકે છે ? તારા જેવો મલીન દેહવાળો બીજે કોણ છે ?
 ખાતાં કમાતાં ન આવડ્યું જોટલે મુંઢો મુંઢાવીને મુનિ બની ગયા, અને ઘર
 ઘરમાં કુતરાની માફક લીબ ભાગવા લાગ્યો છે, શરમ નથી આવતી ? કાંઈ
 કામ કરતાં આવડતું નથી જોટલે સાધુ બનવા નિકળી પડ્યો. પૂર્વભવમાં દાન
 નહીં દીધું હોય જોટલે તો જોનું આ કૃણ ભોગવવું પડે છે. અને ઘરઘરનો
 ભિખારી બની રહ્યો છે. છતાં પણ અછડક થઈને ફરે છે. જરા લાજ !
 તારા જેવા અનેક કાર્ય કરવામાં અસમર્થ હોઈને મોં બાંધીને પેટ ભરવા
 માટે ગામ ગામ ભટકે છે. આમ કહી જ્યારે તે ચાલ્યો ગયો ત્યારે ક્રોધના

परित्यक्ता निर्गतिकाः सन्तः मन्त्रज्यामभ्युपगताः । इत्युक्त्वा तस्मिन् गतवति सति
कोपावेशादन्तर्दह्यमान इव मुनिः स्वस्थानं गतः । क्रमेण कोपमशमे सति मुनिना
पश्चात्तापः कृतः ।

तदनन्तरमसौ देवस्तस्य मुनेः समीपे समागत्य तमभिवन्द्य तत्पुरोज्वस्वितो
वदति—भवतः संयमयात्रा मुखेन निर्वहति किम् ? शान्तात्मना मुनिना सस्मितं
प्रोक्तम्—यदा संयमयात्रा चाण्डालेन बाधिता, तदा क्व गतस्त्वमासीः ? देवेन
कथितम्—यदा युवयोः कलहो जातस्तदाऽहमलक्षितः कौतुकं द्रण्डुकामस्तत्रैवात्सम् ।
किं तु तदा मया विशेषः कोऽपि नोपलब्धः, यथाऽसौ चाण्डालस्तथैव भवान् ।

के आवेश से वे मुनि भी भीतर ही भीतर जलते हुए अपने स्थान पर आ
गये। जब कोप शांत हुआ तो उनको इस विषय का बड़ा ही पश्चात्ताप हुआ।

इस के बाद वह देव मुनि के पास आकर नमस्कार करके बैठ
गया और बोला—आपकी संयमयात्रा तो सुखपूर्वक है ? शान्तात्मा मुनिने
मुस्कराते हुए प्रत्युत्तर में कहा कि जिस समय इस संयमयात्रा में
चाण्डाल ने विघ्न डाला था उस समय तुम कहाँ गये थे । देवने जवाब
दिया—जब आप दोनों का कलह हो रहा था उस समय मैं अदृश्य होकर वहीं
पर था । मुनिने कहा फिर आपने उस परिस्थिति में मेरी सहायता क्यों
नहीं की ? इस प्रकार मुनि के कहने पर प्रत्युत्तरमें देवने कहा कि—मुझे उस
समय सहायता करने लायक कोई विशेषता आप में लक्षित नहीं हुई।
उस समय जैसा वह चाण्डाल मुझे प्रतीत हुआ वैसे ही आप भी मुझे
प्रतीत हो रहे थे फिर सहायता किसकी करना । देव के इस उत्तर से

आवेशથી ते मुनि अंदरने अंदर भणता भणता पोताना स्थान ઉપર ગયા.

જ્યારે તેમને કોઈ શાંત થયો ત્યારે તેમને આ વિષયમાં બારે પશ્ચાત્તાપ થયો.

આ પછી એલા દેવ મુનિની પાસે આવીને નમસ્કાર કરીને બેઠો અને
કહ્યું, આપની સંયમયાત્રા તો સુખપૂર્વક છે ને ? શાંત આત્મા મુનિએ
અંદરથી હસતાં હસતાં પ્રત્યુત્તરમાં કહ્યું કે, જે સમયે આ સંયમયાત્રામાં
ચાંડાલે વિઘ્ન નાખ્યું તે સમયે તમે ક્યાં ગયા હતા ? દેવે જવાબ આપ્યો
જ્યારે આપ બંનેનો કલહ ચાલી રહ્યો હતો ત્યારે હું અદૃશ્ય રૂપે ત્યાં જ
હતા. તો પછી એ પરિસ્થિતિમાં તમે મારી સહાયતા કેમ ન કરી ? આ પ્રકારે
મુનિના કહેવાથી પ્રત્યુત્તરમાં દેવે કહ્યું, મને તે સમયે સહાયતા કરવા લાયક
કોઈ વિશેષતા આપનામાં ન દેખાઈ. એ વખતે જેવો તે ચાંડાલ મને દેખાયો તેવા જ
આપ મારી દૃષ્ટિમાં દેખાતા હતા. પછી સહાયતા કોની કરવી ? દેવના

મુનિનોક્તમ્—તેન મમ તુલ્યતા કથં જ્ઞાતા? । દેવેનોક્તમ્—એકેન કોપેનૈવ, અત-
સ્તસ્ય શિક્ષા ન કૃતા, શ્દાનોમાજ્ઞાપયતુ કીદંશી શિક્ષા તસ્મૈ કર્તવ્યા । મુનિઃ પ્રાહ-
નાસૌ દણ્ડનીયઃ, કિંતુ—સર્વોપેક્ષણીયઃ, યતઃ સાધૂનામયં ધર્મઃ—આક્રોશપરીપહઃ
સોઢવ્ય ઇતિ । એવમુક્તોઽસૌ દેવસ્તસ્ય મુનેઃ સેવાયાં સાનુરાગં તસ્થૌ । એવમન્યૈ-
રપિ મુનિભિરાક્રોશપરીપહઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૨૫ ॥

મુનિ કો ચડ્ઢા હી વિસ્મય હુઆ ઓર કહને લગે કિ મુક્ષ મેં ઓર ચાંડાલમેં
સમાનતા કા અનુભવ કૈસે કિયા ? । દેવ ને કહા—એક ક્રોધ સે આપકે
અંદર ઉસ સમય ક્રોધરૂપ ચાંડાલ પ્રવિષ્ટ હોયા હુઆ થા, ઓર વહ તો
ચાંડાલ થા હી, અતઃ સહાયતા કરને જૈસી વાત ઉસ સમય મુક્ષે
ઉચિત પ્રતીત નહીં હુઈં ઇસલિયે સહાયતા નહીં કી, ઓર ન ઉસે મી
કુછ દણ્ડાદિરૂપ શિક્ષા હી દી, હાં ! અવ કહિયે ઉસે કૈસી શિક્ષા દી
જાય । મુનિરાજ ને કહા કિ અવ વ્યા આવશ્યકતા હૈ જો અજ્ઞાની હોતે
હૈં વે ઉપેક્ષા કે હી પાત્ર હૈં ઇસલિયે ઉસકો દણ્ડાદિરૂપ શિક્ષા પ્રદાન
કરને કી કોઈ જરૂરત નહીં હૈ । મુનિયોં કા તો યહ આચાર હી હૈ કિ
વે આક્રોશપરીપહ કો સહન કરે । મુનિ કી ઇસ વાત કો સુનકર દેવ
ચડ્ઢા હી અનુરાગી હોકર ઉનકી સેવા મેં રહને લગા । ઇસ કથા સે મુનિ-
યોં કો યહી શિક્ષા ગ્રહણ કરની ચાહિયે કિ આક્રોશપરીપહ સહન
કરનાં યહ મુનિરાજોં કા કર્તવ્ય હૈ ॥ ૨૫ ॥

મુનિને નાહું આશ્ચર્ય થયું અને કહેવા લાગ્યા. મારામાં અને ચંડાલમાં સમા-
નતાનો અનુભવ તમોને કેવી રીતે થયો ? દેવે કહ્યું એક ક્રોધથી—આપની અંદર
તે સમયે ક્રોધ રૂપી ચંડાલ પ્રવિષ્ટ થયો હતો. અને તે તો ચંડાલ હતો જ.
આથી સહાયતા કરવા જેવી વાત મને તે સમયે ઉચિત ન લાગી. એ માટે
સહાયતા ન કરી, અને તેને પણ દંડ આદિ રૂપ કાંઈ શિક્ષા ન કરી. હા !
કહેો એને કઈ રીતે શિક્ષા કરવામાં આવે ! મુનિ મહારાજે કહ્યું કે, હવે શું
આવશ્યકતા છે. જે અજ્ઞાની હોય છે તે ઉપેક્ષાને પાત્ર જ છે. આ માટે તેને
દંડાદિકરૂપ શિક્ષા આપવાની કોઈ જરૂરત નથી. મુનિઓનો તે આચારજ છ
કે, તેઓ આક્રોશપરીપહને સહન કરે. મુનિની આ વાત સાંભળીને દેવ
પણ અનુરાગી બની તેની સેવામાં રહેવા લાગ્યા. આ કથાથી મુનિઓએ
એ જ શિક્ષા ગ્રહણ કરવી જોઈએ કે, આક્રોશપરીપહ સહન કરવો તે
મુનિરાજેનું કર્તવ્ય છે. ॥ ૨૫ ॥

કશ્ચિદાક્રોશમાત્રેણાસ્તુષ્ટો દુષ્ટઃ સંયતસ્ય વધમપિ કુર્યાદતો વધપરીપદમાદ-
મૂલમ્—હૌઓ ન સંજલે ભિક્ષૂ, મળંપિ ન પઓસણ્ ।

તિતિક્ષ્ણં પરમં નેચ્ચા, ભિક્ષુધર્મમ્ વિચિંતેણ ॥૨૬॥

છાયા—હતો ન સંજલેદ્ ભિક્ષુઃ મનોઽપિ ન પ્રદેપયેત્ ।

તિતિક્ષ્ણં પરમાં જ્ઞાત્વા, ભિક્ષુધર્મમ્ વિચિન્તયેત્ ॥ ૨૬ ॥

ટીકા—‘ હૌઓ ’ इत्यादि ।

ભિક્ષુઃ=મુનિઃ, હતઃ=કેનાપિ દુષ્ટેન મુષ્ટિયષ્ટ્યાદિના તાઙિતઃ સન્, ન સંજલેત્=ન ક્રુધ્યેત્, તથા મનોઽપિ ન પ્રદેપયેત્=દેપયુક્તં ન કુર્યાત્, તિતિક્ષ્ણં=ક્ષાન્તિ,

કોઈ દુષ્ટ પુરુષ આક્રોશમાત્ર સે સંતુષ્ટ નહીં હોકર મુનિ કા વધ ખી કરને લગતા હૈ इसलिये अब तेरहवें वधपरीपद को कहते हैं—‘ हौओ न संजले ’-इत्यादि.

અન્વયાર્થ—(ભિક્ષુ-ભિક્ષુઃ) મુનિ (હૌઓ-હતઃ) કિસી ખી દુષ્ટકે દ્વારા યષ્ટિ મુષ્ટિ આદિ સે તાઙિત હો જાય તૌ ખી (ન સંજલે-ન સંજલેત્) ક્રોધ સે તપાયમાન નહીં હોવે । તથા (મળંપિ ન પઓસણ-મનોઽપિ ન પ્રદેપયેત્) મન કો ખી દૂપિત નહીં કરે, કિન્તુ (તિતિક્ષ્ણં-તિતિક્ષ્ણમ્) ઉત્તમ ક્ષમા કો (પરમં-પરમામ્) દશવિધ ધર્મો મેં સર્વોત્કૃષ્ટ (નેચ્ચા-જ્ઞાત્વા) જાનકર (ભિક્ષુ-ભિક્ષુઃ) વહ સાધુ (ધર્મમ્ વિચિંતેણ-ધર્મ વિચિન્તયેત્) ઉત્તમ ક્ષમાદિરૂપ સાધુ કે કર્તવ્ય કા, અથવા અપને આત્મસ્વરૂપ કા વિચાર કરે કિ-ક્ષમામૂલક હી ધર્મ હૈ । યહ જો મુક્ષે નિમિત્ત બના કર કે કર્મો કા ઉપચય કર રહા હૈ ઉસ મેં મેરા હી

કેઈ દુષ્ટ માણસ આક્રોશ માત્રથી સંતોષ ન પામવાથી મુનિને વધ પણ કરમા લાગે છે. એ માટે હવે તેરમા વધપરીપદને કહે છે. ‘ હૌઓ ન સંજલે ’-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—ભિક્ષુ-ભિક્ષુઃ મુનિ હૌઓ-હતઃ કેઈ પણ દુષ્ટ દ્વારા લાકડી મડકાપાટુથી તાઙિત થઈ બાંધ તો પણ ન સંજલે-ન સંજલેત્ ક્રોધથી તપી ન બાંધ મળંપિ ન પઓસણ-મનોઽપિ ન પ્રદેપયેત્ મનને પણ દૂપિત ન કરે પણ તિતિક્ષ્ણં-તિતિક્ષ્ણં ઉત્તમ ક્ષમાને પરમં-પરમાં દશવિધ ધર્મોમાં સર્વોત્કૃષ્ટ નેચ્ચા-જ્ઞાત્વા બહુને ભિક્ષુ-ભિક્ષુઃ તે સાધુ ધર્મમ્ વિચિંતેણ-ધર્મ વિચિન્તયેત્ ઉત્તમ ક્ષમાદિરૂપ સાધુના કર્તવ્યનો તથા પોતાના આત્મસ્વરૂપનો વિચાર કરે કે, ક્ષમા એ જ ધર્મ છે. આજે મને નિમિત્ત બનાવીને કર્મોનો ઉપચય કરી

परमां=दशविधेषु धर्मेषु प्राधान्यात् प्रकृष्टां, ज्ञात्वा मुनिः, भिक्षुधर्म=क्षान्त्यादिकं
स्वात्मस्वरूपं वा विचिन्तयेत्, यथा-क्षमामूल एव धर्मः, यच्च मां निमित्तीकृत्यायं
कर्मोपचिनोति, तत्र ममैव पूर्वकर्म कारणमिति ममैव दोषः, तस्मादेनं प्रति कोपो
नोचित इति ॥ २६ ॥

पूर्वोपार्जित कर्म कारण है अतः इसमें मेरा ही दोष है इसलिये इसके
प्रति कोप करना मुझे उचित नहीं है ।

भावार्थ—मुनि जनों की यह विचारधारा कितनी सुन्दर है ।
वज्रहृदय वाला शत्रु भी इस विचार के सामने नतमस्तक होकर
अपनी क्रूरता का परित्याग कर देता है । एक तरफ ताड़ना मारणा
आदि क्रियाएँ हो रही हैं तो दूसरी ओर उस पर प्रतीकार न करते
हुए अपने पूर्वोपार्जित कर्म को ही बलवान माना जा रहा है कि—पूर्वो-
पार्जित कर्मों का यह फल मुझे मिल रहा है, इस बेचारे का क्या दोष है।
अफसोस केवल उंस मुनि आत्मा में इसी घातका हो रहा है कि जो
यह प्राणी मेरा निमित्त लेकर नवीन कर्मों का बंधक बन रहा है ।
इस प्रकार मन तक में भी जहाँ प्रतिकार करने की भावना का उदय
निषिद्ध घतलाया गया है वहाँ और अन्य प्रतिकारों के करने की तो
घात ही क्या हो सकती है । महात्मा का यहाँ कितना अच्छा उपदेश
है कि वह ताड़ित होने पर भी अपनी उत्तम क्षमाको न छोड़े । कुल्हाड़ा

रહેલ છે. તેમાં મારાં જ પૂર્વોપાર્જિત કર્મ કારણરૂપ છે. આથી તેમાં મારાં જ
દોષ છે માટે તેના પ્રતિ ક્રોધ કરવો મને ઉચિત નથી,

ભાવાર્થ—મુનિઓની આ વિચારધારા કેટલી સુંદર છે વજ્ર હૃદયવાળો
શત્રુ પણ આ વિચાર સામે નતમસ્તક બની પોતાની ક્રુરતાને ત્યાગી દે છે.
એક તરફ ધાકધમકી અને માર મારવાની હદ સુધીની ક્રિયાઓ થાય છે,
ત્યારે બીજી તરફ આનો પ્રતિકાર ન કરતાં પોતાના પૂર્વોપાર્જિત કર્મોને જ
બળવાન માનવામાં આવે છે. “પૂર્વોપાર્જિત કર્મોનું” ફળ મને મળી રહ્યું છે.
એ બિચારાનો કોઈજ દોષ નથી” મુનિના આત્મામાં અફસોસ ફક્ત એ વાતનો
થાય છે કે, આ પ્રાણી મને નિમિત્ત બનાવીને નવા કર્મોનો બંધ બાંધી રહેલ
છે. આ પ્રમાણે મનમાં પણ પ્રતિકાર કરવાની ભાવનાના ઉદયનો નિષેધ બતા-
વવામાં આવેલ છે, ત્યાં અન્ય પ્રતિકાર કરવાની તો વાત જ ક્યાં રહી ?
મહાત્માનો આ કેવો સુંદર ઉપદેશ છે કે તેને ધાકધમકી કોઈના તરફથી
અપાય અથવા માર મારવામાં આવે તો પણ પોતાની ઉત્તમ ક્ષમાને ન

ઉક્તમેઘાર્થ પ્રકારાન્તરેણાહ—

મૂલમ—સમણં સંજયં દંતં, હણેજાં કોઈ કત્થઈ ।

નંતિ જીવસ્સ નાંસોત્તિ”, એવં પેહેજે સંજય ॥૨૭॥

છાયા—શ્રમણં સંયતં દાન્તં, હન્યાત્ કોઽપિ કુત્રાપિ ।

નાસ્તિ જીવસ્ય નાશ ઇતિ, એવં પ્રેક્ષેત સંયતઃ ॥ ૨૭ ॥

ટીકા—‘સમણં’ ઇત્યાદિ

કોઽપિ=કથિન્મનુષ્યઃ, કુત્રાપિ=ગ્રામાદૌ, સંયતં=પટકાયયતનાવન્તં, દાન્તમ્

ચંદન વૃક્ષ કો કાટ મી ફાલે પર ચંદનવૃક્ષ કા જો ઉસકે મુલ્લ કો મી સુવાસિત કરને કા કામ હૈ વહ ઉસે નહીં છોડતા । નહીં તો વહ ચંદન હી જીતી । મહાત્મા મી અપને શત્રુ કે પ્રતિ હસી કર્તવ્ય કા નિર્વાહ કરતે હૈ નહીં તો વે મહાત્મા હી નહીં હૈ । ધન્ય હૈ મહાત્મા ! તેરે હલ્લ શુભાધ્યવસાય કો । ન્યોછાવર હૈ ત્રૈલોક્ય કા રાજ્ય હંસ પવિત્ર ભાવના પર । કયા હી સુન્દર વિચાર ધારા હૈ । હસી વિચારધારા કે બલ પર મહાવીર પ્રભુ કે શાસન મેં સર્વોત્કૃષ્ટતા રહી હુઈ હૈ । પ્રત્યેક મોક્ષાભિલાષી કો યહ અભિનંદનીય વંદનીય વિચારધારા અપનાને યોગ્ય હૈ ॥૨૬॥

વધપરીપહકો કિસ ભાવના સે સહન કરે સો કહતે હૈ—‘સમણં’—ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—(કોઈ—કોઽપિ) કોઈ અજ્ઞાની (કત્થઈ—કુત્રાપિ) કહીં પર મી (સંજયં—સંયતમ્) પટકાય કે જીવોં કી જતના કરનેવાલે (દંતં—દાન્તમ્)

છાડે, કુહાડો ચંદન વૃક્ષને કાપી નાખે છતાં ચંદન વૃક્ષમાં જે સુવાસિતતાનો ઉત્તમ શુભ છે તે પોતાને કાપનાર કુહાડાને પણ આપે છે. એ એમ ન કરે તો તે ચંદન શેનું ? મહાત્મા પણ પોતાના શત્રુ તરફ આવું જ વર્તન રાખે છે. નહીં તો એ મહાત્મા શાના ? ધન્ય છે મહાત્મા ! તમારા આ શુભ વ્યવસાયને ! આ પવિત્ર ભાવના પર ત્રણ લોકનું રાજ્ય પણ ન્યોછાવર છે, કેવી સુન્દર વિચારધારા છે ! આ વિચાર ધારાના ગુણ દ્વિપર શ્રી મહાવીર પ્રભુના શાસનમાં સર્વોત્કૃષ્ટતા રહેલ છે. પ્રત્યેક મોક્ષાભિલાષીએ આ અભિનંદનીય વંદનીય વિચારધારાને અપનાવવી બોધાયે ॥ ૨૬ ॥

કેવા ભાવથી વધપરીપહને સહન કરવાને કહે છે—સમણં ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—કોઈ—કોઽપિ કોઈ અજ્ઞાની કત્થઈ—કુત્રાપિ કોઈ જગ્યાએ પણ સંજયં—સંયતમ્ પટકાય છત્રેનું જતન કરનારા દંતં—દાન્તમ્ પાંચ ધનિદ્ર્ય અ

=ઇન્દ્રિયનોઇન્દ્રિય દમનશીલમ્, શ્રમણં=તપસ્વિનં મુનિં હન્યાત્=મુષ્ટિયપ્ત્યાદિના
ઠાડયેત્, તદા સંયતઃ=મુનિઃ, જીવસ્ય=આત્મનજ્ઞાનરૂપસ્ય નાશઃ નાસ્તિ=ન
ભવતિ શરીરસ્યૈવ નાશાત્, इत्येवं प्रेक्षेत=ચિન્તયેત્ ॥

પાંચ ઇન્દ્રિય એવં મન કો નિગ્રહ કરને વાલે (સમણ-શ્રમણમ્) શ્રમણ-તપસ્વી મુનિ કો (હણેજ્જા-હન્યાત્) યપ્તિ મુષ્ટિ આદિ દ્વારા મારે । ઉસ સમય (સંજળ-સંયતઃ) વહ મુનિ (જીવસ્સ નાસો નત્થિ-જીવસ્ય નાશઃ નાસ્તિ) “જ્ઞાનસ્વરૂપ આત્મા કા નાશ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ ઉસકા પર્યાયાન્તર હોતા હૈ અતઃ શરીરકા હી નાશ હોતા હૈ” (એવં પેહેજ્જ-એવં પ્રેક્ષેત) એસા વિચાર કરે ।

ભાવાર્થ—આત્મા કો ક્રોધી તવ હોના ચાહિયે કિ જય ઉસકી તિજ વસ્તુ કા વિનાશ હો । જૈસે સંસારી લોગ અપની વસ્તુ કે વિનાશ હોને પર ક્રોધી યા દુઃખી હુઆ કરતે હૈ, દસરોં કી વસ્તુઓં કે વિનાશ મેં તહીં । હસી પ્રકાર મહાત્મા કો બી કિસીકે દ્વારા તાડિત હોને પર ઘા મારે જાને પર વહ વિચાર કરના ચાહિયે કિ વહ શરીર પુદ્ગલ કા હૈ અતઃ વહ મેરી નિજવસ્તુ નહીં હૈ પરવસ્તુ હૈ । હસકે વિનષ્ટ હોનેપર મેં ક્યોં ક્રોધી યા દુઃખી બનું ? મેરી નિજ કી વસ્તુ જો જ્ઞાનાદિક ગુણ હૈં વે તો હસ કે આઘાત સે નષ્ટ નહીં હોતે હૈં, વે તો સદા અક્ષય હી રહતે હૈં હસ લિયે ક્રોધી યા દુઃખી હોને કી મુક્તે કિશ્ચિત્ માત્ર બી આવશ્યકતા નહીં હૈ ।

કરનાશ સમણં-શ્રમણમ્ શ્રમણ તપસ્વી મુનિને હણેજ્જા-હન્યાત્ ઠેંસા પાઠુ વગે-રેથી મારે એ સમયે સંજયે-સંયતઃ તે મુનિ જીવસ્સ નાસો નત્થિ-જીવસ્ય નાશઃ નાસ્તિ જ્ઞાન સ્વરૂપ આત્માને નાશ થતો નથી પરંતુ એ પર્યાયાન્તરિત હોય છે, આથી શરીરને જ નાશ થાય છે એવં પેહેજ્જ-એવં પ્રેક્ષેત એવો વિચાર કરે,

ભાવાર્થ—આત્માએ ક્રોધિત તો ત્યારે થવું જોઈએ કે, જ્યારે તેની પોતાની વસ્તુને વિનાશ થતો હોય. જેમ સંસારી લોકો પોતાની વસ્તુઓને વિનાશ થતાં ક્રોધિત અને દુઃખી થયા કરે છે, બીજાની વસ્તુઓના વિનાશમાં નહીં. આ પ્રકારે મહાત્માને પણ કોઈ તરફથી માર મારવામાં આવે કે ધાક ધમકી આપવામાં આવે ત્યારે તેણે વિચાર કરવો જોઈએ કે, આ શરીર પુદ્ગલ છે, આ કારણે તે મારી પોતાની વસ્તુ નથી, પારકી વસ્તુ છે. એના વિનાશ થવાથી હું શા માટે ક્રોધી અથવા દુઃખી બનું ? મારી પોતાની જે વસ્તુ જ્ઞાનાદિક ગુણ છે તે એના આઘાતથી નાશ પામતી નથી. એ તો સદાય અક્ષય જ રહે છે. આથી ક્રોધી અથવા દુઃખી થવાની મારે લેશ માત્ર પણ આવશ્યકતા નથી.

अत्र दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

श्रावस्तीनगर्या रिपुमर्दननाम्नो राज्ञः पुत्रो धारिणीदेव्या अङ्गजातः स्कन्दक-
नामकः कुमार आसीत् । अस्य भगिनी पुरन्दरयशा नाम्नी । सा कुम्भकारकटक-
नामके पुरे दण्डकिनाम्ने नृपतये पित्रा प्रदत्ता । तस्य दण्डकिभूपस्य पुरोहितः
पालकनामा ब्राह्मणो मिथ्यादृष्टिरासीत् ।

एकदा मुनिसुव्रतस्वामी विंशतितमस्तीर्थकरः श्रावस्तीनगर्या समवसृतः, तस्य
देशनां श्रुत्वा स्कन्दककुमारः श्रावको जातः । एकदा कदाचिदसौ पालकपुरोहितः
श्रावस्तीनगर्यामागतः । स राजसभायामार्हतसिद्धान्तं खण्डयितुं प्रवृत्तः तदा

दृष्टान्त—श्रावस्ती नगरी में रिपुमर्दन नाम का एक राजा राज्य
करता था । उसकी धर्मपत्नी का नाम धारिणी था । धारिणीदेवी से राजा
के एक कुमार का जन्म हुआ, जिसका नाम स्कन्दक था । स्कन्दक के एक
बहिन भी थी । उसका नाम पुरन्दरयशा था । कुम्भकारकटक नाम के
पुर में दण्डकी नामक राजा के साथ उसका विवाह हुआ था । दण्डकी
राजा का एक ब्राह्मण पुरोहित था । इसका नाम पालक था । यह
मिथ्यादृष्टि था ।

एक समय की बात है कि वे बीसवें तीर्थङ्कर श्री मुनिसुव्रतस्वामी
श्रावस्ती नगरी में पधारे । उनकी देशना को सुनकर स्कन्दककुमार
ने श्रावकधर्म अंगीकार किया । किसी समय पालक पुरोहित श्रावस्ती
नगरी में आया । राजसभा में बैठकर उसने जैनसिद्धान्त को खण्डन
करने वाली बात प्रारंभ की । जब वह बोल चुका तब उसकी बात को

दृष्टान्त—श्रावस्ती नगरीमें रीपुमर्दन नामने। ओक राजा राज्य करतो।
होतो। तेने धारिणी नामनी ओक राणी होती। धारिणीदेवीथी राजनेने ओक कुमा-
रने। जन्म थयो, जेनु नाम स्कंदक हंतु, स्कंदकने ओक भडेन पण होती। तेनु
नाम पुरंदरयशा हंतु। कुम्भकारकटक नामने। नगरने। दंडकी नामने। राजनी साथे
तेने। विवाह करवाभां आवेल होती। दंडकी राजनेने ओक ब्राह्मण पुरोहित होती।
तेनु नाम पालक हंतु। ते मिथ्यादृष्टी होती..

आ ओक समयनी बात छे के ज्यारे बीसभा तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रत
स्वामी श्रावस्ती नगरीमें पधर्या। तेमनी देशना सांभजीने। स्कंदककुमार
श्रावकधर्म अंगिकार कयो। केवलक वणते पालकपुरोहित श्रावस्ती नगरीमें
आव्या। राजसभांमें जेसीने जैन सिद्धान्तनु भंडन करवावणी बातनी शर-
आत करी। ज्यारे तेले बात पुरी करी त्यारे ते बात सांभजीने त्यां भेडेवा

श्रावकव्रतधारी स्कन्दककुमारं आईतसिद्धान्तं समर्थयन् तं निरुत्तरं कृतवान् । तेन कारणेन पालकपुरोहितस्य स्कन्दककुमारं प्रति महान् विद्वेषो जातः ।

एकदाऽसौ स्कन्दककुमारः पञ्चभिः शतैः कुमारैः सह भगवतो मुनिसुव्रतस्वामिनः समीपे देशनां श्रुत्वा दीक्षां गृहीतवान् । भगवता ते पञ्चशतकुमारकास्तस्य शिष्यत्वेन निश्चिताः कृताः । ततोऽसौ स्कन्दकाचार्योऽन्यदा भगवन्तं पृच्छति— भगवन् ! कुम्भकारकटकपुराभिमुखं विहर्तुमिच्छामि, भगवानाह—वरं तत्र गम्यताम्, किंतु तत्रोपसर्गो मारणान्तिकः । पुनस्तेनोक्तम्—भगवन् ! वयमाराधकाः, किं वा विराधकाः ? । भगवता कथितम्—एकं त्वां विना सर्व आराधकाः सन्ति ।

सुनकर वहाँ पर बैठे हुए श्रावकव्रतधारी स्कन्दककुमार ने जैन-सिद्धान्त का समर्थन करते हुए उसको निरुत्तर कर दिया, इससे पालक स्कन्दककुमार का महान् विद्वेषी बन गया ।

कुछ काल के बाद स्कन्दककुमार ने पांचसौ कुमारों के साथ भगवान् मुनिसुव्रतस्वामी के समीप धार्मिकदेशना सुनकर दीक्षा ली । उन पांचसौ कुमारोंको भगवानने उनकी नेत्राय (अधीनता) में कर दिया । अब वे स्कन्दक मुनि स्कन्दकाचार्य हो गये । स्कन्दकाचार्य ने एक दिन भगवान से पूछा कि भगवन् ! मैं यहाँ से कुम्भकारकटक पुर की तरफ विहार करना चाहता हूँ यदि आपकी आज्ञा हो तो । भगवान ने कहा जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो परन्तु तुम को वहाँ मरणान्तिक उपसर्ग का साम्हना करना पड़ेगा । फिर इस बात को सुनकर स्कन्दक ने प्रभु से पूछा कि प्रभो ! हम सब आराधक हैं या विराधक ? भगवान ने कहा तुम्हारे सिवाय सब ही आराधक हैं । भगवान के मुख से इस

श्रावकव्रतधारी स्कन्दककुमार ने जैनसिद्धांतने समर्थन करतां तेने निरुत्तर भनावी दीयो. आधी पालक स्कन्दककुमारने महान विरोधी बनी गयो.

केटलाक समय पछी स्कन्दककुमार पांचसो कुमारोनी साथे भगवान् मुनिसुव्रतस्वामी पासोधी धार्मिक देशना सांलणीने दीक्षा अंगीकार करी, ओ पांचसो कुमारोने भगवाने स्कन्दककुमारनी देणरेण नीचे राख्या, आधी ते स्कन्दकमुनि स्कन्दकाचार्य बनी गया, स्कन्दकाचार्य ओक द्विवस भगवानने पूछ्युं के, हे भगवन्त ! हुं अडिंथी आपनी आज्ञा होय तो कुंभकारकटकपुर तरफ विहार करवानी छुंछा राखुं छुं. भगवाने कछुं, जे रीते तमने सुभ थाय ओ रीते करे. परंतु तमादे त्यां मरणांतिक उपसर्ग नो सामने करवो पडसे. ते बात सांलणीने स्कन्दके प्रभुने पूछ्युं, के हे प्रभो ! अमे भधा आराधक छीओ के विराधक ? भगवाने कछुं, के तमाश शीवाय भधा आराधक छे. भगवाने

एवं भगवता कथितोऽपि स्कन्दकाचार्यो भाविष्यात् पञ्चशतशिष्यपरिवारसहितः
कुम्भकारकटकपुरं प्रति विहारं कृतवान् । पालकब्राह्मणेन तद् विहारवार्ता श्रुता-
“अत्रागच्छति स्कन्दकाचार्यः” इति । ततोऽसौ पूर्ववैरमनुस्मृत्य तन्निर्घातनाथं
यत्रोद्याने स्कन्दकाचार्य आगन्तुकस्तत्परितो विविधशस्त्रास्त्राणि प्रच्छन्नरीत्या भूमौ
निखन्य राज्ञः समीपमागत्य ब्रूते-स्वामिन् ! स्कन्दकाचार्यः पञ्चशतशिष्यपरिवारैः
सह साधुवेषेण इह समायाति, स भवदीयराज्यं हर्तुमिच्छति, यतोऽसौ भवदीयोद्या-
नस्य चतुर्दिक्षु राज्ञो मण्डलो भूत्वाऽस्त्रशस्त्राणि भूम्यन्तर्निहितानि, तद्दृष्टं कथंचि-
न्मया ज्ञातम्, तत्र गत्वा पश्यन्तु भवन्तः । पुरोहितवचनं श्रुत्वा राजा तत्र गत्वा

भविष्यत् को सुनकर भी स्कन्दकाचार्य ने भाविष्यात् पांचसौ शिष्यों
के साथ कुम्भकारकटकपुर की ओर विहार कर दिया । पालक
पुरोहितने उनके विहार की वार्ता सुनी तो उसको ज्ञात हो गया कि
स्कन्दकाचार्य विहार कर यहां आ रहे हैं । उसने उनके साथ अपना पूर्व
वैर याद कर “यदला लेने का अवसर आ गया है ” इस अभिप्राय से
उसने जिस उद्यान में स्कन्दकाचार्य आकर उतरे थे उस में जमीन
खुदवाकर नीचे विविध शस्त्र एवं अस्त्र गुप्तरीति से गड़वा दिये । पश्चात्
राजा के पास आकर फिर वह कहने लगा कि हे स्वामिन् ! यहां पांच
सौ शिष्यों के परिवार से स्कन्दकाचार्य साधु के वेश में आये हुए हैं ।
वे आप के राज्य को हरण करना चाहते हैं । इस लिये उन्होंने गुप्त-
रीति से उद्यान में चारों ओर अस्त्र शस्त्र भूमि में गड़वा दिये हैं । यह
बात राजा में मैने छुपकर देखी है । आप को जो विश्वास न हो तो

જોદાથી આ ભવિષ્યવાણી સાંભળીને પણ સ્કંદકાચાર્યે ભાવિષ્યાત્ ૫૦૦ શિષ્યોની
સાથે કુમ્ભકારકટકપુરની તરફ વિહાર કરી દીધો. પાલકપુરોહિતે તેમના
વિહારની વાત સાંભળીને જાણ્યું સ્કંદકાચાર્યે વિહાર કરતા કરતા આ
તરફ આવી રહ્યા છે. તેણે પોતાનું અંગાડનું તેમની સાથેનું વેર યાદ કરીને
“બદલે લેવાનો અવસર આવી ચુક્યો છે” આવા અભિપ્રાયથી જે બગીચામાં
સ્કંદકાચાર્યે આવીને ઉતર્યા હતા તેની અંદરની જમીન જોદાવીને તેની નીચે
જુદી જુદી જાતનાં શસ્ત્ર અસ્ત્ર દાટી દીધાં. પછી રાજાની પાસે આવીને તે
કહેવા લાગ્યો કે, પાંચસો શિષ્યોના પરિવાર સાથે સ્કંદકાચાર્ય સાધુના વેશમાં
અહિં આવ્યા છે. તે આપનું રાજ્ય લંઘ લેવા ઇચ્છે છે. કેમકે, તેમણે ગુપ્ત
રીતે બગીચામાં ચારે બાજુ શસ્ત્ર અસ્ત્ર દટાવી રાખ્યાં છે. આ વાત મેં રાત્રિના
ખંખતે છુપી રીતે જોઈ લીધી છે. આપને જે વિશ્વાસ ન હોય તો આપ ખુદ

भूम्यन्तर्गतानि तानि शस्त्रास्त्राणि विलोकितानि। ततोऽसौ नृपः कोपावेशेन पुरो-
हितमब्रवीत्—हे पालक ! सर्वानेतान् साधूनहं तवाधीनान् करोमि, यथेच्छसि
तथा कुरु। एवमुक्तोऽसौ दुष्टभावसमन्वितः पुरोहितः सर्वान् मुनीन् परितः समा-
क्रम्य एकैकं मुनिं तिलादिपीडनयन्त्रे संस्थाप्य पीडयितुं प्रवृत्तः। ते स्वात्मक-
स्यागार्थिनो मुनयस्तं वधपरीपहं सम्यक् परिपृष्टान्तसमये केवलज्ञानं प्राप्य मोक्षं
गताः। तत्र ४९८ चतुःशताष्टनवतिसंख्यका मुनयः पीडनयन्त्रे पीडितास्त-
थापि स्कन्दकाचार्येण समभावं समालम्ब्य तत्र स्थितम्। तदा स्वस्मादन्य एक एव
मुनिरवशिष्टः, तमपि पीडनयन्त्रे स्थापयितुमुद्यतस्तदा स्कन्दकाचार्येणोक्तम्—

स्वयं चलकर देख सकते हैं। पुरोहित की बात सुनकर राजा उद्यान में
आया और वहाँ उसने भूमि के भीतर गढ़े हुए अनेक अस्त्र शस्त्र देखे।
इस स्थिति से राजा को बड़ा ही कोप बढ़ा और उसने कोप के ही
आवेश में तन्मय होकर पुरोहित से कहा, पालक ! इन सब साधुओं
को मैं तुम्हारे आधीन करता हूँ। तुम जैसा भी समझो इनके साथ
वैसा करो। राजा ने जब ऐसा कहा तब पुरोहित के आनंद का पार
न रहा। उसने शीघ्र ही चारों ओर से सब मुनियों को घिरवा दिया और
एक एक मुनि को कोल्हू (घाणी) में पीलने लगा। चारसौ अठानवे (४९८)
मुनियों ने समभाव से वधपरीपहको सहन करके अंत समयमें केवलज्ञान
प्राप्तकर मुक्ति को प्राप्त किया। स्कन्दकाचार्य और एक बालमुनि पीलनेके
लिये अवशिष्ट रहे। जब पालक ने उस मुनि को पीलने के लिये कोल्हू
में रखने को उद्यत हुआ तो इतने में स्कन्दकाचार्य ने उससे कहा कि

जधने जेध शके छे. पुरोहितणी वात सांभणीने राजा जगीयाभां गया अने
त्यां जभीनणी अंदर हाटेलां अनेक शस्त्र अस्त्र जेयां. आधी राजाने भूष कोध
अउयो अने कोधना आवेशभां आवीने तेछे पुरोहितने कछुं, पालक ! आ
जधा साधुजोने हुं तभारे डवाळे कइं छुं. तभाने ठीक लागे तेभ तेने। हे'सवे। तभे
करो. राजाजे ब्यारे आ प्रभावे कछुं त्यारे पुरोहितना आनंदने पार न रह्यो. तेछे
तरेत ज त्यारे तरेइथी ते मुनिजोने घेरी लछ पकडीने ओक पछी ओक मुनिने
घाणीभां पीलवातुं शइ कथुं. ४९८ मुनिजोजे समभावथी वधपरीपहने सहन
करीने अंत समये केवलज्ञानने प्राप्त करीने मुक्तिने पाव्या. स्कंदकाचार्य अने
ओक मुनि पीलवा भाटे जाकी रह्या. ब्यारे पालके ते मुनिने पीलवा भाटे
घाणीभां नापवा प्रवृत्त थया त्यारे स्कंदकाचार्ये तेने कछुं, हे, आ तो डोभज.

અયમસ્તિ કોમલકાયો વાલકઃ, તસ્માદયં ત્વયા ન હન્તવ્યઃ મમ સમક્ષે પીઢનયન્ત્રેઽસ્ય સ્થાપને પીઢા મમ જાયતે, મુશ્વેનમ્ । સ્કન્દકાચાર્યવચનં શ્રુત્વાઽસૌ રાજપુરોહિતઃ પાલકબ્રાહ્મણો વદતિ-રાજસમાયાં ત્વયા પરાજિતોઽહમ્, અતો યાવદધિકાદપ્યધિકં દુઃખં તવ સ્યાત્ તદેવ કાર્યં મમ કર્તવ્યમ્ । ઇત્યુત્તવાઽસૌ તં વાલમનગારં સ્કન્દકાચાર્યસ્ય સમક્ષમેવ પીઢનયન્ત્રે સંસ્થાપ્ય તત્પીઢનં કૃતવાન્ । સ વાલોઽપ્યનગારસ્તત્ર વધપરીપહં સમ્યક્ પરિપદ્ય કેવલજ્ઞાનં પ્રાપ્ય મોક્ષં ગતઃ ।

તદા સ્કન્દકાચાર્યો રોપાવેશેન નિદાનં કૃતવાન્-“યદિ મમ તપઃસંયમસ્ય ફલં ભવેત્, તદા एतेषां सर्वेषां दुःखदायको भवेयम्” इति । अथाऽसौ स्कन्दका-

ચહ ઇસ સમય કોમલકાય વાલક હૈ અતઃ તુમ ઇસે છોડ દો । ઇસે કોલહૂ મેં રખતે હુए देखकर मुझे पीड़ा होती है, अतः यह मारने योग्य नहीं है । स्कन्दकाचार्य के इस प्रकार वचन सुनकर पालक उनसे कहने लगा-सुनो-तुमने मुझे पहिले राजसभा में परास्त किया था, अतः उसके उपलक्ष में अधिक से अधिक जो कष्ट हो सकता है वह मैं तुमको दूं ऐसा ही मेरा निर्णय है । इस में जरा भी इधर उधर नहीं हरना चाहता हूं । इस प्रकार कह कर उसने उस बालक मुनि को भी स्कन्दकाचार्य के सामने ही कोलहू में रखकर पील दिया । उस बालक अनगार ने भी खुशी खुशी से वधपरीपह सहन करके अंत में केवल-ज्ञान प्राप्त कर मुक्ति को प्राप्त कर लिया । उस समय स्कन्दकाचार्य ने रोश के आवेश में आकर यह निदान किया कि “यदि मेरे तप एवं संयम का फल होता हो तो मैं इन सब को दुःख देने वाला होऊँ ।”

કાય બાળક છે, માટે એને છોડી દો. એને ઘાણીમાં રાખેડ બેઠે ને મને પીડા થાય છે માટે તે મારવાને યોગ્ય નથી. સ્કન્દકાચાર્યનું આ પ્રમાણેનું વચન સાંભળીને બાલક પુરોહિત કહેવા લાગ્યો કે, સાંભળો ! તમે મને અગાઉ રાજસભામાં પરાજીત કરેલ હતો બેથી તેના ઉપલક્ષમાં હું અધિકમાં અધિક કષ્ટ બે હોય તે હું તમને આપીશ એવો મારો નિર્ણય છે. તેમાં જરા પણ હું ફેરફાર કરવા ઈચ્છતો નથી. આ પ્રમાણે કહીને તેણે તે બાળક મુનિને સ્કન્દકાચાર્યની સામે જ ઘાણીમાં નાખીને પીલી નાખ્યો. આ બાળક અનગાર પણ ખુશીથી વધપરીપહ સહન કરીને અંતમાં કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને મુક્તિ પામ્યા. આ સમયે સ્કન્દકાચાર્યે રોષના આવેશમાં આવીને આ પ્રમાણે નિદાન કયું કે, જો મારા તપ અને સંયમનું ફળ થતું હોય તો હું આ બધાને હુંબ દેવાવાળો બનું. પાલકે છેવટે સ્કન્દકાચાર્યને પણ પીલીને

चार्यं तत्र यन्त्रे निपीड्य हतवान् । स स्कन्दकाचार्यो मृत्वाऽग्निकुमारदेवत्वेन-
समुत्पन्नो भूत्याऽवधिज्ञानेन स्वपूर्वभववृत्तं ज्ञात्वा क्रोधावेशेन नृपपुरोहितामात्यादि-
सहितं कुम्भकारकटकपुरं सदेशं भस्मसात् कृतवान् । दण्डकिभूपस्य स देशो दण्ड-
कारण्यनाम्ना पश्चात् प्रसिद्धो जातः । एवमन्यैरपि मुनिभिर्वधपरीपहः सोढव्य एव,
न तु स्कन्दकाचार्यवत् कोपाविष्टैर्भवितव्यम् ॥ २७ ॥

अथ याचनापरीपहजयं प्राह—

मूलम्—‘दुष्करं खलु भो ! निर्वचं, अणंगारस्स भिक्खुणो ।

संखं सें जाइयं होईं, नैत्थि किंचि’ अजाईयं ॥ २८ ॥

छाया—‘दुष्करं खलु भो ! नित्यम्, अनंगारस्य भिक्षोः ।

सर्वं तस्य याचितं भवति, नास्ति किंचिद् अयाचितम् ॥ २८ ॥

टीका—‘दुष्करं’ इत्यादि ।

खलु=निश्चयेन भो ! इति सम्बोधनम्, हे जम्बू ! अनंगारस्य=गृहरहितस्य

पालक ने अन्त में स्कन्दकाचार्य को भी कोल्हू में पील कर नष्ट कर दिया । स्कन्दकाचार्य मर कर निदान के प्रभाव से अग्निकुमार जाति के देव हुए । देवपर्याय में अवधिज्ञान द्वारा अपने पूर्वभव का वृत्तान्त जानकर उस देवने क्रोध के आवेश में आकरके नृप पुरोहित एवं अमात्य आदि सहित समस्त कुम्भकारकटकपुर को भस्मसात् कर दिया । दण्डकीभूप का वह देश दण्डकारण्य नाम से प्रसिद्ध हुआ । इस कथा से मुनियों को यही शिक्षा लेना चाहिये कि वे वधपरीपह को समभाव से सहन करे । जिस प्रकार उनमुनियों ने वधपरीपहको सहा उसी प्रकार अन्य मुनियोंको भी वधपरीपह सहन करना चाहिये । स्कन्दकाचार्य की तरह कोपाविष्ट नहीं होना चाहिये ॥ २७ ॥

तेनाऽनाथ कथो. स्कन्दकाचार्य मरीने निदानना प्रभावथी अग्निकुमार देव जातीमां उत्पन्न थया. देवपर्यायमां पोताना अवधिज्ञानथी पोताना पूर्वभववृत्तं वृत्तांत ज्ञानीने ते देव क्रोधना आवेशमां आवीने सण पुरोहित अने आमात्य सहित समस्त कुम्भकारकटकपुरने लस्मीभूत बनावी दीधु. दंडकी सणनो ते देश पछीथी. दंडकारण्य तरीके प्रसिद्ध थयो. आ कथाथी मुनिओअे शिक्षा अछु करवी जेअेअे के, वधपरीपहने समभावथी सहन करे. जे प्रकारे मुनिओअे वधपरीपहने सहन करीअे प्रकारे सहन करे स्कंदकाचार्यनी भाक्षु कोपायमान थवु न जेअेअे ॥ २७ ॥

ભિક્ષોઃ=મુનેઃ નિત્યં=સર્વદા-યાચજીવમિત્યર્થઃ, દુષ્કરં=દુઃસ્થેન ક્રિયમાણં કઠિનં ભાતિ । કિં દુષ્કરં ભવતિ ? इत्याह—‘सर्वं’ इत्यादि, तत् सर्वम्=आहारोप-
 कणादिकं वस्तु तस्य याचितं=याचितमेव भवति, किंचिदपि दन्तशोधनादिकमपि
 अयाचितं नास्ति-न गृह्यते तस्मात् कष्टं मुनिजीवनमिति ॥ २८ ॥

उक्तार्थमेव सविशदं वर्णयति—

मूलम्—गोचरग्रप्रविष्टस्य, पाणि नो सुप्सार्थः ।

સેઓ અગારવાસોત્તિ, ઈંઙ્ ભિક્ષુ નં ચિંતેણ ॥ ૨૯ ॥

छाया—गोचराग्रप्रविष्टस्य, पाणिः नो सुप्सार्थः ।

શ્રેયાન્ અગારવાસઃ ઇતિ, ઇતિ ભિક્ષુર્ન ચિન્તયેત્ ॥ ૨૯ ॥

टीका—‘गोचरग्र०’ इत्यादि ।

गोचराग्रप्रविष्टस्य=गोचरः गौरिव चरणं गोचरः भिक्षाचर्या, यथा=ज्ञाताज्ञात-
 विशेषमपहायैव गौः प्रवर्तते, तथा साधुरपि ज्ञाताज्ञातकुलेषु भिक्षार्थम् । तस्याग्रं
 =प्रधानं, यतोऽसौ एषणायुक्तो गृह्णाति, न तु गौरिव यथा कथंचित्, तस्मिन् गो-
 चराग्रे प्रविष्टस्य, मुनेः पाणिः=इस्तः नो सुप्सार्थः=नैव मुखेन प्रसारयितुं

અમ સુત્રકાર ચૌદહ ષે યાચનાપરીપહ કો સહન કરને કા ઉપદેશ
 કરતે હૈં—‘દુષ્કરં સ્વલુ’-इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(સ્વલુ) નિશ્ચય સે (મોઃમોઃ) હે જંબૂ ! (અનગારસ્ય
 ભિક્ષુણો-અનગારસ્ય ભિક્ષોઃ) ગૃહરહિત ભિક્ષુકો (સર્વં જાહ્યં હોઃ-સર્વં
 યાચિતં ભવતિ) સમસ્ત વસ્તુએ યાચિત હી હોતી હૈં । (કિંચિ અજાહ્યં
 નત્યિ-કિંચિત્ અયાચિતં નાસ્તિ) કોઈં ખી વસ્તુ અયાચિત નહીં હોતી હૈ ।
 ફસલિયે મુનિજીવન (દુષ્કરં-દુષ્કરમ્) બડા હી દુષ્કર હૈં । બિના દિયે
 તો વહ દન્તશોધનાદિક ખી તૃણ તક ખી નહીં લે સકતે હૈ ॥ ૨૮ ॥

હવે ચૌદમો યાચનાપરીપહ સહન કરવાનો ઉપદેશ સુત્રગર કહે છે—

‘દુષ્કરં સ્વલુ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—સ્વલુનિશ્ચયથી મોઃમોઃ હે જંબૂ ! અનગારસ્ય ભિક્ષુણો-અનગારસ્ય
 ભિક્ષોઃ ગૃહ રહિત ભિક્ષુની સર્વ જાહ્યં હોઃ-સર્વ યાચિતં ભવતિ સમસ્ત વસ્તુએ
 યાચિત જ હોય છે. કિંચિ અજાહ્યં નત્યિ-કિંચિત્ અયાચિતં નાસ્તિ કેાદિ પણ વસ્તુ
 અયાચિત નથી, માટે મુનિજીવન દુ રં-દુષ્કરમ્ ધણું જ દુષ્કર છે. કેાદિતા આખ્યા
 વગર તે કાંતને જાહ કરવા માટે તણખડું પણ લઈ શકતા નથી.

गन्धः, नहि मुनिः कस्यापि गृहस्थस्य सम्बन्धीति भावः। इति=अतो हेतोः, अगारवासः=गार्हस्थ्यम्, श्रेयान्=श्रेष्ठः, इति=एतद्, भिक्षुः=मुनिर्न चिन्तयेत्, किंतु गृहवासो हि बहुसावद्ययुक्तस्तथा ज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्मबन्धस्य कारणम्, स कथमपि श्रेयस्करो न भवतीति विचारयेत्।

फिर सूत्रकार पूर्वोक्त अर्थको ही विशद करते हैं—‘गोचरगग’—इत्यादि।

अन्वयार्थ—(गोचरगगपविट्टस्स-गोचराग्रप्रविट्टस्य) ज्ञात अज्ञातकुलों में गोचरी के लिये प्रविष्ट हुए साधु का (पाणी-पाणिः) हाथ (नो सुप्पसारण-नो सुप्रसार्यः) सुप्रसार्य नहीं है, क्योंकि मुनि किसी गृहस्थ का संबंधी नहीं है, इसलिये (अगारवासो सेओ-अगारवासः श्रेयान्) इसकी अपेक्षा गृहस्थ जीवन श्रेष्ठ है, ऐसा (भिक्षू न चिंतए-भिक्षुः न चिन्तयेत्) भिक्षुको नहीं विचारना चाहिये, क्योंकि गृहवास बहुसावद्ययुक्त तथा ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों के बंध का कारण है अतः वह किसी प्रकार श्रेयस्कर नहीं माना जा सकता है।

भावार्थ—गोचरी के लिये ज्ञात अज्ञात कुलों में गये हुए साधु को ऐसा नहीं विचार करना चाहिये कि यहां मैं किसके सामने हाथ फैलाऊँ—कोई मेरा संबंधी तो है नहीं। संबंधी से मागने में कोई शर्म की बात नहीं है। इससे तो अच्छा गृहवास ही है कि जिसमें हर एक से हर एक चीज मांगने में कोई संकोच नहीं होता है। साधु का ऐसा

सूत्रकार पूर्वोक्त अर्थने ७ दूरी समझावे छे—‘गोचरगग’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—गोचरगगपविट्टस्स-गोचराग्रप्रविट्टस्य भाषेला :अगर अन्नप्या कुणोभां गोचरी भाटे जनारा साधुनो पाणी-पाणिः हाथ नो सुप्पसारण-नो सुप्रसार्यः सुप्रसार्य नथी. केभके, मुनि केहं गृहस्थना संबंधी नथी तेथी अगारवासो सेओ-अगारवासः श्रेयान् ते अपेक्षाजे गृहस्थ जवन श्रेष्ठ छे जेवे। भाव भिक्षू न चिंतए-भिक्षुः न चिन्तयेत् भिक्षुजे लाववे न जेधजे. केभके, गृहवास बहु सावद्य-युक्त तथा ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मोना बंधनुं कारण छे. आथी ते केह प्रकारे श्रेयस्करो मानवामां आवेद नथी.

भावार्थ—गोचरी भाटे भाषीता के अन्नप्या कुणभां जता साधुजे जेवे। विचार न करवे। जेधजे के, हुं त्यां केनी सामे हाथ लांजे कइं ? केह भारे। संबंधी तो नथी. संबंधी पासे मागवामां केह शरमनी बात नथी. आथी तो गृहस्थाश्रम सारे के जेभां जेक भीनथी थीन भागवामां संकोच थतो नथी.

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

દશમતીર્થકરશ્રીશીતલનાથસ્વામિશાસને તદ્વંશીયો વજ્રપ્રિયનામા શૂપતિ-
ર્વશૂવ । સ દીક્ષાં ગૃહીત્વા માસમાસક્ષપણસ્ય પારણં કરોતિ સ્મ । સ પ્રથમમાસ-
ક્ષપણપારણે ભિક્ષાચર્યાયાં પ્રવિષ્ટથિન્તયતિ—કથમથ યાચયામિ, વજ્રપ્રિયનામ-
ધારકોઽહમિદ્વાકુલવંશોઽન્નવેષ્વપિ અગ્રસરસ્તથા જાતિકુલસંપન્નોઽસ્મિ, પુનરુચ્ચની-
ચમધ્યમકુલેષુ હસ્તપ્રસારણં મમાસિધારાત્ કઠિનમ્ । યસ્ય ચરણે રાજાં મુકુટકો-
ટયઃ પરિલસન્તિ સ્મ, યસ્યાજ્ઞાં મન્દારકુમુદમમાલામિવ જનાઃ સાદરં ધારયન્તિ સ્મ,

વિચાર ફસલિયે પ્રશસ્ય નહીં હૈ કિ ગૃહસ્થાશ્રમ વહુસાવચ્ય કર્મો સે
યુક્ત હોતા હૈ તથા ઉસસે જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટવિધ કર્મો કા બંધ
હોતા હૈ ।

દૃષ્ટાન્ત—દશવેં તીર્થકર શ્રીશીતલનાથસ્વામી કે શાસનકાલ મેં
ફનકા હી વંશજ ઇક વજ્રપ્રિય નામકા રાજા થા । ઉસને ધાર્મિક ઉપદેશ
શ્રવણકર દીક્ષા ધારણ કર લી થી । મુનિ વનકર ઉન્હોને લૂય તપશ્ચર્યા કી।
માસર લખણ કી તપસ્યા કરને લગે । ઇક સમય કી વાત હૈ કિ જબ
ઉનકે પ્રથમ માસક્ષપણ કા પારણા થા તો સ્વયં ભિક્ષાચર્યા કે લિયે
ગયે । ઉસ સમય ઉન્હોને વિચાર કિયા કિ મેં આજ કૈસે યાચના કહૂંગા?
મેરા વંશ તો ઇસા નહીં હૈ કિ જિસમેં કિસીને યાચના કી હો । મેં તો
હૈવાકુલવંશજોં મેં અગ્રેસર હૂં । મેં જાતિકુલસંપન્ન હૂં । ઉચ્ચ નીચ ઇવં
મધ્યમ કુલોં મેં હાથ ફૈલાના મેરે લિયે તો અસિધારા કે સમાન કઠિન
પ્રતીત્ હોતા હૈ । જિન મેરે ચરણોં મેં રાજાઓં કે મુકુટ નમતે રહે થે,

સાધુનો આવો વિચાર ઁટલા માટે ઠીક નથી કે, ગૃહસ્થાશ્રમ ઘણા સાવધ
કર્મોથી ભરેલ છે. તથા ઁનાથી જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોના બંધ થાય છે.

દૃષ્ટાન્ત—દસમા તીર્થકર શ્રી શીતળનાથ સ્વામીના શાસન કાળમાં તેમના
જ વંશનો ઁક વજ્રપ્રિય નામનો રાજા હતો. તેણે ધાર્મિક ઉપદેશ સાંભળીને
દીક્ષા ગ્રહણ કરી. મુનિ બનીને તેણે ખૂબ તપશ્ચર્યા કરી. માસ માસ ખમણની
તપશ્ચર્યા કરવા લાગ્યા. ઁક સમયની વાત છે, બ્યારે તેમણે પહેલા માસ
ખમણનું પારણું હતું ઁટલે તે અંગે પોતે ભિક્ષાચર્યા માટે ગયા. તે સમયે તેમણે
વિચાર કર્યો કે, હું આજ કોની પાસે યાચના કરીશ ? મારો વંશ તો ઁવો
નથી કે જે યાચના કરે. હું તો હૈવાકુલવંશનો અગ્રેસર છું. ભતિકુળ સંપન્ન
છું. ઉચ્ચ નીચ મધ્યમ કુળોમાં હાથ ફેલાવવો ઁ મારા માટે તરવારની ધાર
માફક કઠીન છે. મારા ચરણોમાં જે રાજાઓના મુગટ નમતા હતા ઁની

यस्य दर्शनेन च स्वजन्म सफलं मन्यन्ते स्म, येन मया राज्ञां पुरतः कदापि हस्तो न प्रसारितः, सोऽहमिदानीं तेषां कुले तथा दीनदीनकुलेषु च कथं करं प्रसारयामि । यदि गृहवासमङ्गीकरोमि, तदा तु खलु मम वीरप्रतिज्ञैव नष्टा भवति । ज्ञानदर्शनचारित्र्येभ्यश्च पतितो भवामि, ततश्चानन्तसंसारवृद्धिः स्यात्, तत्रापि नरकनिगोदेष्वनन्तदुःखभोगानन्तरमपि रत्नत्रयं दुर्लभं स्यात् । तत्र रत्नत्रये-दर्शनेन विना ज्ञानं नास्ति, ज्ञानेन विना चारित्र्यं न भवति, चारित्र्येण विना मोक्षो न लभ्यः, तस्माद् याचनापरीपहः सर्वथा मया सोढव्यः, इति विचिन्त्य ग्रासुकैषणीयमिक्षा-

जिसकी आज्ञा कल्पवृक्ष के फूलोंकी माला के समान मनुष्य सादर मस्तक पर धारण किया करते थे, जिसके देखने से लोग अपने को सफल जन्मवाला मानते थे-आज वही मैं उन लोगों के घरों में जाकर कैसे मांगने के लिये हाथ फैलाऊंगा । मैंने आजतक तो किसी राजा के भी सामने हाथ नहीं फैलाया । फिर संयमके विषय में विचारने लगे कि-यदि इस संकोच से मैं गृहवास को स्वीकार कर लेता हूं तो मेरी सावध्यत्यागरूप वीरप्रतिज्ञा नष्ट होती है । ज्ञान दर्शन एवं चारित्र्य-से भी पतित हो जाता हूं । इसका फल यह होगा कि मेरा अनन्त संसार बढ़ेगा । अनन्तसंसारी होने पर नरक निगोद के अनंतदुःखों को भोगने के बाद भी ज्ञान, दर्शन, चारित्र्यरूप रत्नत्रय की प्राप्ति मुझे दुर्लभ ही रहेगा, क्योंकि दर्शन के बिना ज्ञान नहीं और ज्ञान के बिना चारित्र्य नहीं, तथा चारित्र्यके अभाव में मुक्ति की प्राप्ति नहीं होती है । इसलिये याचनापरीपह मुझे सर्वथा सहन करना ही चाहिये । इस प्रकार विचार

आज्ञा कल्पवृक्षेना कुलोनी भाणा समान मनुष्ये आदर साथे भाथा उपर धारण करता होता, जेने जेधने बोको पोताने सङ्ग जन्मवाला मानता होता. आज तेज हूं जे बोकोना घरोमां जध लीक्षा भागवा भाटे देवी रीते हाथ लांघो कइ ? मे आज सुधी कोध राज सामे पणु हाथ लांघो क्यो नही. पछी संयमना विषयमां विचार करवा लाय्या के-जे आ संकोचथी हूं गृहवासने स्वीकारी लठ तो भारी सावध त्यागरूप वीरप्रतिज्ञा नाश पाये छे. तेदुं सङ्ग जे आवशे के, भारी अनंत संसार पधये. अनंत संसारी जनावथी नरक निगोदनां अनंत दुःखोने लोगव्या पछी पणु ज्ञान, दर्शन चारित्र्यरूप रत्नत्रयनी प्राप्ति भने दुर्लभ रहये. केभके, दर्शन बीना ज्ञान नही, अने ज्ञान वगर चारित्र्य नही, अने चारित्र्यना अभावमां मुक्तिनी प्राप्ति नही. भाटे याचनापरीपह भारी सर्वथा सहन करवा ज जेधये. आ प्रकारना विचार

મુપાદાય સંયમયાત્રાં નિર્વિઘ્ન કાલમાસે કાલં કૃત્વા સ્વકલ્યાણં સાધિતવાન્ ।
 એવમન્યૈરપિ મુનિભિર્યાચનાપરીપહઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૨૯ ॥

યાચનાયાં પ્રવૃત્તસ્ય મુનેઃ કદાચિદ્ધામાન્તરાયોદયાત્ ભિક્ષાયા અલાભઃ
 સ્યાત્, इत्यलाभपरीपहजयं प्राह—

मूलम्—परेसुं घासमेसेज्जा, भोयणे परिनिष्ठिए ।

लद्धे पिण्डे° अलद्धे वा, नानुत्तप्येज्जं पण्डिए ॥ ३० ॥

छाया—परेषु ग्रासम् एषयेत्, भोजने परिनिष्ठिते ।

लब्धे पिण्डे अलब्धे वा, नानुत्तप्येत पण्डितः ॥ ३० ॥

टीका—‘परेसु’ इत्यादि ।

पण्डિતઃ=મિશુધર્મમર્મજ્ઞઃ સંયતઃ, ભોજને=ઓદનાદી, પરિનિષ્ઠિતે=નિષ્પન્ને
 સત્યેવ પરેષુ=ગૃહસ્થેષુ ગ્રાસં=પિણ્ડમ્ એષયેત્=ગવેષયેત્ । તતથ પિણ્ડે=આહારે-

કર ઉસને પ્રાપ્તુક એષણીય આહાર કી યાચના કી । યાચના મેં પ્રાપ્ત આહાર
 કો લેકર અપની સંયમયાત્રાકા નિર્વિઘ્ન રીતિસે નિર્વાહ કરતે ૨ અન્તર્મે બે
 આયુકે સમાપ્ત હોને પર કાલધર્મકો પ્રાપ્તકર આત્માકા કલ્યાણ કિયા ॥ ૨૯ ॥

યાચના મેં પ્રવૃત્ત મુનિ કો કદાચિત્ લાભાન્તરાય કે ઉદય સે
 ભિક્ષા કા લાભ ન હો સકે તો ઉસે પન્દ્રહવેં અલાભપરીપહ કો જીતના
 ચાહીયે અથ યહ વાત સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરતે હેં—‘પરેસુ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(પંડિત-પંડિતઃ) મિશુધર્મ કે મર્મ કા જ્ઞાતા સંયમી
 સાધુ (ભોયણે-ભોજને) ઓદનાદિક ભોજન (પરિનિષ્ઠિત-પરિનિષ્ઠિતે)
 નિષ્પન્ન હોને પર હી (પરેસુ-પરેષુ) ગૃહસ્થોં કે ઘર ઘિપે (ઘાસં-ગ્રાસમ્)
 પિણ્ડકી (એસેજ્જા-એષયેત્) ગવેષણા કરે (પિંડે લદ્ધે અલદ્ધે વા-

કરીને તેમણે પ્રાપ્તુક એષણીય આહારની યાચના કરી. અને યાચનાથી પ્રાપ્ત
 થયેલા આહારને લઈને પોતાની સંયમયાત્રાનું નિર્વિઘ્ને નિર્વાહ કરતાં કરતાં અંતમાં
 તેઓએ આયુની સમાપ્તિ થતાં, કાળધર્મ પામી આત્માનું કલ્યાણ કર્યું. ॥ ૨૯ ॥

યાચનામાં પ્રવૃત્ત મુનિને કદાચિત્ લાભાન્તરના ઉદયથી ભિક્ષાનો લાભ
 મળી શકતો ન હોય તો તેથી હવે પંદરમા અલાભપરીપહને છતવો બોધ્યો
 એ વાત હવે સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરે છે.—‘પરેસુ’ ઇત્યાદિ. .

અન્વયાર્થ—પંડિત-પંડિતઃ ભિક્ષુધર્મના મર્મના જ્ઞાતા સંયમી સાધુ ભોયણે-
 ભોજને ઓદનાદિક ભોજન પરિનિષ્ઠિત-પરિનિષ્ઠિતે નિષ્પન્ન હોવાથી જ પરેસુ-પરેષુ
 ગૃહસ્થોના ઘેર જઈ ઘાસં-ગ્રાસં પિંડની એસેજ્જા-એષયેત્ ગવેષણા કરે પિંડે લદ્ધે

નિષ્ઠે સ્વરૂપે વા લબ્ધે સત્તિ, અલબ્ધે વા નાનુતપ્પેત=‘ ભાગ્યહીનોઽસ્મિ, ભિક્ષાઽપિ ન લભ્યતે ’ ઇત્યાદિરૂપં સંતાપં ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । ‘ પરિનિદ્વિષ ’ ઇતિ વિશેષણેન ભોજનકાલ એવ ગચ્છેદિતિ સૂચિતમ્ । ‘ ઘાસં ’ ઇત્યનેન ભ્રમરવૃત્ત્યા ગ્રાહ્યમિતિ ચોધિતમ્ ॥ ૩૦ ॥

તર્હિં કિં કુર્યાદિત્યાહ—

મૂલમ્—અજ્ઞેવાહં ન લઘ્ભામિ, અવિ લાભો સુંણ સિંયા ।

જોં એવં પડિસંચિંચેલે, અલાભો તં નં તર્જેણ ॥૩૧॥

છાયા—અજ્ઞેવાહં ન લભે, અપિ લાભઃ શ્વઃ સ્યાત્ ।

ય એવં પ્રતિસમીક્ષતે, અલામસ્તં ન તર્જયેત્ ॥ ૩૧ ॥

પિણ્ઠે લબ્ધે અલબ્ધે વા) ઉસ સમય યદિ થોડા આહાર મિલે અથવા ચિલકુલ ભી ન મિલે તો ભી વહ (નાણુતપ્પેજ્જ-નાનુતપ્પેત) “ મેં ભાગ્યહીન હું મુજ્ઞે ભિક્ષા ભી નહીં મિલી ” ઇત્યાદિરૂપ સંતાપ ન કરે । “ પરિનિદ્વિષ ” ઇસ વિશેષણદ્વારા સૂત્રકાર કી સાધુ કે લિયે વહ સૂચના હૈ કિ વે ગોચરી કે લિયે ભોજનકાલ મેં હી નિકલે । “ ઘાસં ” ઇસ પદ સે ગૃહસ્થોં કે ઘઘાં સે જો ભી આહાર ગ્રહણ કિયા જાય વહ ભ્રમરવૃત્તિ સે કિયા જાય, વહ સૂચિત કિયા હૈ ।

ભાવાર્થ—સાધુ કો ગોચરી કે લિયે ભોજનકાલ મેં હી નિકલના ચાહિયે, ઉસ સમય યદિ ભોજન અલ્પ મિલે યા ચિલકુલ ભી ન મિલે તો ઇસ વિષય મેં કિસી ભી પ્રકાર કા ઉસે મન મેં સંતાપ નહીં કરના ચાહિયે ॥ ૩૦ ॥

અલ્લે વા-પિણ્ઠે લબ્ધે અલબ્ધે વા એ સમયે તેને થોડું ભોજન મળે અથવા ખીલકુલ ન મળે પણ તે નાણુતપ્પેજ્જ-નાનુતપ્પેત હું ભાગ્યહીન છું, મને ભિક્ષા ન મળી ” એવી રીતે સંતાપ ન કરે પરિનિદ્વિષ એ વિશેષણદ્વારા સૂત્રકાર સાધુ માટે એવું સૂચન કરે છે કે, તે ગોચરી માટે ભોજન સમયે જ નિકળે ઘાસં આ પદથી ગૃહસ્થોને ત્યાંથી જે કંઈ આહાર ગ્રહણ કરવામાં આવે તે ભ્રમરવૃત્તિથી સ્વીકાર કરવો જોઈએ. આ સૂચના આપવામાં આવે છે.

ભાવાર્થ—સાધુએ ગોચરી માટે ભોજનકાળમાં જ નિકળવું જોઈએ તે સમયે જો થોડું મળે અગર ન મળે તો પણ આ વિષયમાં તેના મનમાં કોઈ પ્રકારનો સંતાપ થવો ન જોઈએ. ॥ ૩૦ ॥

ટીકા—‘ અજ્જેવાહં ’ इत्यादि ।

અહમ્, અઘૈય=અસ્મિન્નેવ દિને ન લભે=ન પ્રાપ્નોમિ અપિ=સમ્ભાવયામિ
શ્વઃ=આગામિદિને, ઇદમ્પલક્ષણમ્ તેન અન્યસ્મિન્ કસ્મિન્નિદાગામિનિ દિને इत्यर्थः,
લાભઃ સ્યાત્=આદારાદિપ્રાપ્તિર્ભવિષ્યતિ, एवम्=અનેનોક્તમકારેણ, यः साधुः प्र-
તिसमीक्षते=ચિન્તયતિ-અગ્રામે સત્યનુદ્વિગ્નઃ સન્ સંયમયાત્રાં નિર્વહતીત્યર્થઃ । तं
મુનિમ્-અલાભઃ=અલાભપરીપદઃ, न तर्जयेत्=કયમપિ પરાજયં કર્તું ન શક્નુયા-

‘ અજ્જેવાહં ’-इत्यादि ।

અન્વયાર્થ-(અહં-અહમ્) મુદ્ધે (અજ્જેવ ન લભ્મામિ-અઘૈવ ન લભે)
આજ યદિ આહાર કા લાભ નહીં હુઆ હૈઃ(અવિ-અપિ) તો (સુપ-શ્વઃ)
આગામી દિન મેં ઉપલક્ષણ સે ઓર મી કિસી અન્ય દિવસ મેં (લાભો
સિયા-લાભઃ સ્યાત્) ઉસકા લાભ હો જાયગા । (एवं-एवम्) इस
પ્રકારસે (જો-યઃ) સાધુ (પડિસંચિક્ષે પ્રતિસમીક્ષતે) વિચાર લેતા હૈ,
(તં-તમ્) ઉસકે લિયે (અલાભો - અલાભઃ) અલાભપરીપદ (न
तर्जये-न तर्जयेत्) કમી મી સંતાપિત નહીં કર સકતા હૈ । इसका
તાત્પર્ય યહ હૈ-યાચના કરને પર મી યદિ ગૃહસ્થ-દાતા કી ઇચ્છા હોગી
તાં હી દેગા, નહીં હોગી તો નહીં દેગા । यदि वह नहीं देता है तो इसमें
સાધુ કે લિયે અપરિતુષ્ટ હોને કી વાત હી કૌન સી હૈ । जो साधु इस
પ્રકાર કી વિચારધારા સે યુક્ત હોતા હૈ વહ ભિક્ષા કા લાભ ન હોને
પર મી સમચિત્ત બના રહતા હૈ, ઉસકે મન મેં વિકૃતિ નહીં આતી હૈ ।
इसी से वह अलाभपरीपद का विजेता बन जाता है ।

‘ અજ્જેવાહં ’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ-અહં-અહમ્ મને અજ્જેવ ન લભ્મામિ-અઘૈવ ન લભે આજ ને લોજનને
લાભ થયો નથી અવિ-અપિ તો સુપ-શ્વઃ આગામી દિવસમાં ઉપલક્ષ્યથી ખીજ પછુ
કોઈ દિવસે લાભો સિયા-લાભઃ સ્યાત્ એનો લાભ મળશે. एवं-एवम् આ પ્રકારે
જો-यः સાધુ પડિસંચિક્ષે-પ્રતિસમીક્ષતે વિચારી લે છે તં-तम् તેને માટે અલાભો-
અલાભઃ અલાભપરીપદ કહી પણ સંતાપ આપનાર મનતો નથી. આનું તાત્પર્ય એ છે
કે, યાચના કરવા છતાં પણ ને ગૃહસ્થ દાતાની ઇચ્છા હશે તો આપશે. નહીં
હોય તો નહીં આપે. ને તે આપે નહિ. તો સાધુ માટે તેમાં અસંતોષ લાવવાની
વાત જ ક્યાં છે, જે સાધુ આ પ્રકારની વિચારધારાથી યુક્ત છે તે ભિક્ષાનો
લાભ ન થવાથી પણ સમચિત્ત બની રહે છે. તેના મનમાં વિકૃતી આવતી નથી.
તેનાથી તે અલાભપરીપદનો વિજેતા બની રહે છે.

દિત્થર્યઃ । અયં ભાવઃ—યાચિતં સતિ ગૃહસ્થઃ સ્વેચ્છયા દદ્યાત્ ન વા દદ્યાત્, ત્વ
કોઽસ્ત્યસંતોષો ન યચ્છતિ સતિ । एवं भावनया लाभभावेऽपि मुनिना सम-
चेतसैव अत्रिकृतस्यान्ते नैव भवितव्यमित्यलाभपरीपहो विजितो भवतीति ।

भावार्थ—અલાભપરીપહ પર વિજય પાને કે લિયે સાધુ કી
વિચારધારા કૈસી હોની ચાહિયે યહ વાત હસ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર ને
પ્રદર્શિત કી હૈ । વે કહરહે હૈં કિ સાધુ જવ ગોચરી કે લિયે કિસી
સદગૃહસ્થ કે યહાં જાતા હૈં ઓર આહારાદિકકી યાચના કરતા હૈં તો
ઉસકી ઇચ્છા કી પૂર્તિ હોના ન હોના યહ સાધુ કે હાથ કી વાત નહીં
હૈં । ગૃહસ્થ કી ભાચના હોગી તો વહ દેગા—નહીં હોગી તો નહીં દેગા ।
સાધુ કી કોઈ હસ મેં જયદસ્તી તો હૈં નહીં, અતઃ એસી પરિસ્થિતિ મેં
જવ કિ સાધુ કો આહાર કા લાભ ન હો તો ઉસકા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ
અપની આત્મા કો વ્યર્થ મેં ક્લેશિત ન કરે, ઓર ન ઉસ પર રુઢ પરિણતિ
હો ધારણ કરે । વિચાર યહ કરે કિ—આજ નહીં મિલા તો કલ મિલ જાયગા,
કલ બી ન મિલા તો પરસોં મિલ જાયગા, હસમેં સોચ ફિકર કરને કી
વાંત હી કૌન સી હૈં । દાતા કા ભાવ હોગા તો દેગા, નહીં હોગા તો
નહીં દેગા । હસ તરહ જો સાધુ વર્તતા રહના હૈં વહ વીર મુનિ અલાભ
પરીપહ કો અવશ્ય જીત લેતા હૈં ।

भावार्थ—અલાભપરીપહ ઉપર વિજય મેળવવા માટે સાધુની વિચારધારા
કેવી હોવી જોઈએ એ વાત આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકારે પ્રદર્શિત કરેલ છે. તેઓ
કહે છે કે, સાધુ જ્યારે ગોચરી માટે કોઈ ગૃહસ્થને ઘેર જાય અને આહાર-
સાદિકની યાચના કરે તો તેની ધમ્જાની પૂર્તિ થવી કે ન થવી તે સાધુના
હાથની વાત નથી. ગૃહસ્થની ભાવના હોય તો આપે, નહીં હોય તો આપ-
વાના નથી. સાધુની કોઈ જબરજસ્તી હોઈ શકે નહિં. આથી આવી પરિસ્થિ-
તિમાં કોઈ સાધુને આહારનો લાભ ન થાય તો તેનું કર્તવ્ય છે કે તે પોતાના
આત્માને નકામો કલુષિત ન કરે. અને ન તો તેના ઉપર ગુસ્સો કરે. વિચાર એ
કરે કે, આજ ન મળ્યું તો કાલે મળશે. કાલે નહીં મળે તો પરમ દિવસ
મળશે. આમાં ફિકર ચિંતા કરવાની હોય જ નહિં. દાતાનો ભાવ હશે તો
આપશે, નહીં હોય તો નહીં આપે. આ પ્રકારે જે સાધુ વર્તતા રહે છે તે
વીર મુનિ અલાભપરીપહને અવશ્ય જીતી લે છે.

अत्र दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

विन्ध्याचलप्रदेशे हुण्डनामके ग्रामे निर्धनः कृशशरीरः कुटुम्बबहुलः सौवीर नामा कृषीचल आसीत् । तत्र विन्ध्याचलवर्तिना गिरिसेननृपतिना पञ्चाशत्संख्यकानि हलानि वाहयितुं वारकेण पञ्चाशत्संख्यका हलवाहका नियोजिताः । तत्रैकदा सौवीरकृषीचलस्य वारकः समायातः । तस्मिन् दिने क्षेत्रे दृषभान्नीत्वा हलेषु योजयित्वा क्षेत्रं कर्षितवान् । दृषभाः श्रान्ताः अतिस्वग्नाः क्षुत्पिपासाव्याकुला ग्रीष्मातपसंतप्ता हलमुक्तावस्थां प्रतीक्षमाणाः स्वाहारमभिलषन्ति, पश्यन्ति च पुनः

दृष्टान्त—विन्ध्याचल प्रदेश में एक हुण्ड नाम का ग्राम था । उस में एक निर्धन सौवीर नाम का किसान रहता था । कुटुम्ब बहुत होने की वजह से उसे सदा इसके लालन पालन की चिन्ता घेरे रहती थी इसलिये चिन्ता के मारे इसका शरीर कृश हो गया था । विन्ध्याचलवर्ती गिरिसेन राजाने चारीर से पांचसौ हलों को जोतने के लिये पांचसौ हलवाहक-हाली-नियुक्त कर रखे थे । सौवीर कृषीचल (किसान) की भी एक दिन चारी आई । उस दिन उसने खेत में बैल ले जाकर और उन्हें हल में नियुक्त कर उस खेत को जोतना प्रारंभ कर दिया । खेत जोतते-बैल थक गये वे बीच-बीच में खड़े भी होने लगे । ग्रीष्मकाल के ताप से अतिशय संतप्त होकर वे क्षुत्पिपासा से अत्यंत व्याकुल हो गए और इस बात की प्रतीक्षा करने लगे कि कब हम हल से मुक्तहोवें और कब घास आदि खाकर अपनी क्षुधा को शांत करें । इसी अभिप्राय से वे बेचारे बार-बार अपने हाली सौवीर के मुखकी ओर भी

दृष्टांत—विन्ध्याचल प्रदेश में एक हुंड नाम का ग्राम है । तहां एक निर्धन सौवीर नाम का जेडुत रहेता है । कुटुम्ब बहुत होवाना कारणे तेन सदा तेना पालन पोषण नी चिन्ता रह्या करती है । आ चिन्ताना जेडुत तेन शरीर घसाई गयुं है । विन्ध्याचल प्रदेश ना गिरिसेन राजा के वारा पाडीने पांचसो हलो जेडुता माटे पांचसो जेडुताने नियुक्त करी राख्या है । सौवीर जेडुताना पणु एक वणत वारे आव्यो । ओ दिवसे तेहे जेतरेमां जण्ड लई जईने हण तैयार करी जेडुतानुं शई कयुं । जेतरे जेडुतां जेडुतां जण्ड थाकी गया अने वयमां वयमां उभा रहेवा लाग्या । उनाजाना सभ तापथी अतिशय संतप्त थईने जूण तरसथी ते वल्ला व्याकुल जनी गया । अने ओ बातनी प्रतीक्षा करवा लाग्या है, कयारे अभने हणथी मुक्त करवामां आवे अने कयारे घास वजेरे भाई जूजने शांत करीजे, आवे आवथी ते जीयारा बार-बार पेटाना माझीक सौवीरना मोठा तरई जेता है ।

पुनः सौवीरमुखम् । परंतु सौवीरस्तान् न मुञ्चति । तेन भक्तपानवेलायामेकश्चासौ-
ऽधिकः कर्पितस्तेन दृषभाणां भक्तपानान्तरायो जातः, ततश्चान्तरायकर्म सौ-
वीरेण बद्धम् । अथाऽसौ मृत्वा बहुकालं संसारे परिभ्रम्य, कदाचिद् गोपालदारक-
भवे बने गाथायन् कस्मिंश्चित्खतले बद्धसदोरकमुखवस्त्रिकं पट्कायपालकं मुनिं
दृष्टवान् । तत्र तद्देशनां निशम्य स सौवीरस्तस्मिन् गोपालदारकभवे प्रव्रजितः ।
तदनन्तरं कालमासे कालं कृत्वा सौधर्मकल्पे देवत्वेन समुत्पन्नः । ततश्च्युतोऽसौ द्वार-

देखने लगते थे, परन्तु सौवीर ने उनकी इस परिस्थिति पर जरा भी
ध्यान नहीं दिया और न उन्हें छोड़ा ही । प्रत्युत उनके खाने पीने के
समय में उसने एक चास (हलरेखा) और अधिक जोता । इससे
सौवीर को प्रबल अंतराय कर्म का बंध हुआ । कुछ काल के बाद मर
कर उस पर्याय से पर्यायान्तरित हुआ । बहुत काल तक इसने संसार
परिभ्रमण किया । संसारपरिभ्रमण करते-२ किसी समय यह गवाल
के घर में जन्मा । बड़ा होने पर गावों को चराता था । एक दिन जंगल
में इसकी दृष्टि वृक्ष के नीचे बैठे हुए एक मुनिराज पर जो पट्काय के
जीवोंकी यतना करने में तत्पर थे, तथा मुख पर जिनके दोरासहित
मुखवस्त्रिका बंधी हुई थी उन पर पड़ी । उनके पास पहुँचकर इसने
उनसे धर्मदेशना सुनी । उसका प्रभाव इसकी आत्मा पर इतना पड़ा
कि यह उसी समय दीक्षित हो गया । साधुचर्या का ठीकर तरह
निर्वाह करते हुए वह मृत्यु के अवसर में कालधर्म पाकर सौधर्म देव-

परिस्थिति उपर सौवीर नेतो जरा पक्षु ध्यान आभ्यु के नेतो तेमने धुंसरीथी छोडया.
वधाराभां तेमने आवा पीवाना समयने वधते ओक आस वधारे भेडाये, आथी
सौवीरने प्रणज अंतरायकर्मने बंध थयो. थोडा समय पछी सौवीर भेडूत भरीने
पर्यायथी पर्यायान्तरित थयो. धण्डा काण सुधी तेले संसारभां परिभ्रमणु कथुं.
संसारपरिभ्रमणु करतां करतां काणांतरे ते ओक गोवाणने त्यां जनभ्यो.
भोटो थतां ते गायेने यरावतो हुतो. ओक द्विस जंगलभां तेनी दष्टी आडनी नीये
भेडवा ओक मुनिराज उपर पडी, जे पटकायना लवोनी रक्षा करवाभां तत्पर
हुता. तेमना भोडा उपर होरा साथे ओक मुणवस्त्रिका बांधेली हुती. तेनी
पासे पडोन्नीने तेमनी पासेथी धर्मदेशना सांभणी. ओने प्रभाव तेना आत्मा
पर ओवो पडयो के ते ओज समये दीक्षित जनी गयो. साधुचर्याने ठीक ठीक
निर्वाह करतां करतां ते मृत्युना अवसरे काणधर्म पाभ्यो अने ते सौधर्म देव-

कायां श्रीकृष्णवासुदेवगृहे पुत्रत्वेन सगुत्पन्नः । तत्र च दंडणनाम्ना प्रसिद्धो जातः ।

अथैकदा स दंडणकुमारः श्रीनेमिनाथ तीर्थंकरस्य समीपे प्रव्रजितः । भिक्षा-
चर्यायां प्रवृत्तोऽसौ श्रीकृष्णस्य पुत्रोऽपि त्रिजगद्गुरोस्तीर्थंकरस्य शिष्योऽपि स्वर्ग-
लक्ष्मीजित्वरसंपत्समन्वितायां विशालायां द्वारकायां नगर्यां महेश्वरानां भवनेष्वपि
पर्यटनं लाभान्तरायवशात् किंचिदपि प्राप्तुकैपणीयं न लभते । ततोऽसौ श्रुधा-
पिपासया शुष्कशरीरः श्रीनेमिनाथस्वामिनं तदलाभकारणं पृष्ठवान् श्रीनेमिनाथ
स्वामिना कथितम्—वत्स ! अस्माद् पूर्वं नवनवतिलक्ष-नवनवतिसहस्र-नवशत-नवनवति
९९,९९,९९९ तमे भवे त्वं विन्ध्याचलप्रदेशे हुण्डकग्रामे सौवीरनामा कृषीवल

लोक में देवपने से उत्पन्न हुआ । वहां की स्थिति समाप्त होने पर यह
वहां से च्यवकर द्वारिकानगरी में श्रीकृष्ण वासुदेव के घर पुत्ररूप
से उत्पन्न हुआ और वहां इसका नाम दंडणकुमार रक्खा गया ।

इस दंडणकुमार ने श्रीनेमिनाथतीर्थंकर के समीप धर्मदेशना सुन-
कर दीक्षा अंगीकार की । भिक्षाचर्या करने को वे स्वयं जाते थे ।
श्रीकृष्ण के पुत्र एवं त्रिजगद्गुरु तीर्थंकर नेमिनाथ प्रभु के शिष्य होने
पर भी उस विशाल द्वारिका नगरी में इनको बड़े सेठ साहूकारों के घरों
में जाने पर भी लाभान्तराय कर्म के उदय से थोड़े से भी प्राप्तुक
एपणीय आहार का लाभ नहीं होता, अतः ये दिन प्रतिदिन शुष्क
शरीर होने लगे । भगवान् नेमिनाथ के पास जाकर एकदिन इन्होंने
आहार के अलाभ का कारण पूछा तो भगवान् ने कहा कि वत्स ! तू
इस भव से पहिले निन्यानवे लाख निन्यानवे हजार नौ सो निन्यानवे
९९,९९,९९९ भव में विन्ध्याचल प्रदेश में हुण्डक ग्राम में सौवीर नाम

लोक में देवपने से उत्पन्न भयो । त्यांनी स्थिति समाप्त थतां ते त्यांची अवीने
द्वारिका नगरीमां श्री कृष्ण वासुदेवने घेर पुत्र रूपे उत्पन्न भयो । अने त्यां
तेमनुं नाम दंडण राखवामां आण्युं ।

आ दंडणकुमारे श्रीनेमिनाथ तीर्थंकर पास धर्मदेशना सांख्यी दीक्षा ग्रहण
करी । भिक्षाचर्या करवा भाटे ते स्वयं जाता होता । श्रीकृष्णना पुत्र तेमनुं त्रिजगद्गुरु
तीर्थंकर नेमिनाथ प्रभुना शिष्य होवा छतां पण ते विशाल द्वारिका नगरीमां तेने
मोटा मोटा शेठ साहूकाराना घरेमां जवा छतां पण लाभान्तराय कर्मना उदयथी
थोडा पण प्राप्तुक आहारने लाभ भणतो न होतो । आथी जे दिनप्रतिदिन शुष्क
शरीरवाणा बनवा लाग्या । भगवान् नेमिनाथ पास जेठने जेक दिवस तेमने आहा-
रना अलाभनुं कारण पूछ्युं, भगवाने कहुं के, हे वत्स ! तू आ भवथी पडेतां
नवाणु लाख नवाणु हजार नवसो नवाणुना ९९,९९,९९९ भवमां विंध्या प्रदेश

આસીઃ। તત્ર ભવે હલયોજિતવૃષભાણાં ભોજનપાનાન્તરાયસ્ત્વયા કૃતઃ। તદન્તરાયકર્મા-
ડસ્મિન્ ભવે ઇદાનીમુદિતમ્, અતોઽયમલામપરીપદ્મસ્ત્વયા સોઢવ્યઃ। તદનુ ઢંઢળકુ-
મારેણ સ્વપૂર્વભવવૃત્તાન્તં શ્રુત્વા તદન્તરાયકર્મ ક્ષપયિતું ગાઢસંવેગેન સોત્સાહમભિગ્ર-
હો ગૃહીતઃ-અથમમૃતિ મયા પરલાભો ન ગ્રાહ્ય ઇતિ। તદનન્તરમભિગ્રહમુપાદાય સ
પ્રતિદિનં ભિક્ષાર્થમટતિ, પરંતુ-લાભાન્તરાયોદયાન્ન કિંચિત્ ગ્રાપ્નોતિ, તથાપિ નો
દ્વિગ્નો ભવતિ, નાપિ ચાન્યં નિન્દતિ કિન્તુ, નિત્યમદીનમાનસઃ સન્ સ્વંકર્મેવાચિન્તયત્।

કે એક કિસાન કી પર્ચાય મેં થા। उस समय तूने हल में जुते हुए
बैलों के भोजन पान में अन्तराय डाला था। वह अंतराय कर्म इस
भव में तुम्हारे इस समय में उदय में आया है इसलिये इस अलाभ
परीपद को तुझे सहन करना चाहिये। भगवान् द्वारा इस प्रकार कहे
गये अपने पूर्वभव के वृत्तान्त को सुनकर ढंढणकुमार मुनिने उस बद्ध
अन्तराय को नष्ट करने के निमित्त बड़े ही उत्साह के साथ गाढ
वैराग्य से युक्त अन्तःकरण होकर ऐसा अभिग्रह ग्रहण किया कि
“आज से लेकर मैं परलाभ को ग्रहण नहीं करूँगा” अर्थात् दूसरे
के निमित्त से मिला हुआ आहार पानी नहीं ग्रहण करूँगा। इस प्रकार
अभिग्रह ग्रहण कर वे प्रतिदिन भिक्षाचर्या को जाते परन्तु लाभान्तर-
राय कर्म के उदय से उनको किञ्चित् भी आहार का लाभ नहीं होता,
परन्तु फिर भी इस परिस्थिति में भी उनके चेहरे पर उद्विग्नता के
चिह्न जरा भी दिखलाई नहीं पड़ते-वे उद्विग्नचित्त नहीं होते और न

શમાં હુકક ગામમાં સૌવીર નામથી એક ખેડુતના પર્ચાયમાં હતો. તે સમયે
તે હળમાં જોડેલા બળદને ભોજન પાનમાં અંતરાય નાખ્યો હતો. તે અંતરાય
કર્મ આ ભવમાં તમારા માટે આ સમયે ઉદયમાં આવેલ છે. માટે આ અલાભ-
પરીપદને તમારે સહન કરવો જોઈએ, ભગવાન તરફથી કહેવામાં આવેલ
આ પ્રકારના પોતાના પૂર્વભવના વૃત્તાંતને બાણી ઢંઢણકુમાર મુનિએ આ અસ-
બદ્ધ અંતરાયનો નાશ કરવા માટે ખૂબ જ ઉત્સાહથી ગાઢ વૈરાગ્યયુક્ત અંતઃ-
કરણવાળા બની એવો અભિગ્રહ ધારણ કર્યો કે, “આજથી હું પરલાભને અહણ
નહીં કરું.” અર્થાત્ ખીજના નિમિત્તથી મળેલ આહાર પાણી અહણ નહીં
કરું. આ પ્રકારનો અભિગ્રહ અહણ કરી તે પ્રતિદિન ભિક્ષાચર્યા માટે જતા
પરંતુ લાભાન્તરાય કર્મના ઉદયથી તેમને થોડો પણ આહારનો લાભ મળતો નહીં.

અથાન્યદા શ્રીકૃષ્ણવાસુદેવઃ શ્રીનેમિનાથસ્વામિનં પૃષ્ટવાન્-ભગવન્! અષ્ટા-
દશસહસ્રેષુ શ્રમણેષુ કોઽસ્તિ દુષ્કરકારકઃ?, શ્રીનેમિનાથસ્વામિના પ્રોક્તમ્-સર્વે
શ્રમણદુષ્કરકારકાઃ, ઢંઢળમુનિસ્તુ અતિદુષ્કરકારકઃ । શ્રીકૃષ્ણેનોક્તમ્—કથમ્?,
શ્રીનેમિનાથસ્વામી પ્રાહ—અલાભપરીપહસ્ય સમ્યક્ સહનેન । તતો ભક્તિભરેણ
સંજાતરોમાન્નઃ શ્રીકૃષ્ણોઽવદત્—પ્રભો ! મહાત્મા ઢંઢળમુનિઃ કવં વિદ્યતે ? । શ્રી
ભગવાનાહ—ભિક્ષાથં દ્વારકાપુરીં ગતઃ, નગર્યાં પ્રાવિશન્નેવ તં દ્રક્ષ્યસિ । તદ્વચનં
શ્રુત્વા શ્રીકૃષ્ણઃ શ્રીનેમિજિનં પ્રણમ્ય ચલિતઃ । તતઃ પુરદ્વારં પ્રવિશન્ શ્રીકૃષ્ણઃ
કિસીં દૂસરે કીં નિન્દાં હી કરતે । નિન્દા કરતે ખી તો અદીનમન
હોકર અપને અશુભ કર્મ કી ।

एक दिन की बात है कि श्रीकृष्ण वासुदेव ने श्रीनेमिनाथप्रभु से
पूछा कि भगवन्! इन अठाहर हजार मुनियों में इस समय दुष्कर-
कारक कौन है । प्रभु ने कहा सब ही श्रमण दुष्करकारक हैं परन्तु
ढंढणमुनि विशेष रीति से दुष्करकारक है । वासुदेव ने कहा यह क्यों?
प्रभुने कहा अलाभपरीपह के सम्यक् सहन करने से । यह सुनते ही
श्रीकृष्ण का समस्त शरीर भक्ति के आवेश से रोमांचित हो गया ।
श्रीकृष्ण ने कहा—प्रभो! महात्मा ढंढणमुनि इस समय कहाँ विराजमान
हैं ? प्रभु ने उत्तर में कहा कि वे इस समय भिक्षा के लिये द्वारिका
में गये हैं । तुम्हें वहाँ जाते ही वे मिल जावेंगे । भगवान् की बात सुनकर
वासुदेव श्रीकृष्ण नेमिनाथ भगवान् को वंदना करके वहाँसे चलेगये ।

આ પરિસ્થિતિમાં પણ તેમના ચહેરા ઉપર ઉદ્દીગ્નતાનું ચિહ્ન દેખાતું નહીં.
એ ઉદ્દીગ્નચિત્ત ન બનતા, અને બીજા કોઈની નિંદા પણ કરતા નહીં. નિંદા
કરતા તો તે ફક્ત પોતાના અશુભ કર્મની.

એક દિવસની વાત છે કે, શ્રી કૃષ્ણ વાસુદેવે શ્રી નેમીનાથ પ્રભુને પૂછ્યું
કે, ભગવન્! આ અઠારહજાર મુનિઓમાં આ સમયે હુકર સ્થિતિ કોણ
લોગવે છે ? પ્રભુએ કહ્યું કે, બધા શ્રમણ હુકર કષ્ટ લોગવે છે છતાં ઢંઢળ-
મુનિ આ બધાથી વધુ હુકરસ્થિતિમાં છે. વાસુદેવે કહ્યું એમ કેમ ? પ્રભુએ કહ્યું કે,
અલાભપરીપહને સમ્યક્ સહન કરવાથી. આ સાંભળતાં જ શ્રી કૃષ્ણનું શરીર
લલિતના આવેશથી રોમાંચિત બની ગયું અને કહ્યું, પ્રભુ ! મહાત્મા ઢંઢળ મુનિ
આ સમયે ક્યાં બિરાજે છે ? પ્રભુએ ઉત્તરમાં કહ્યું કે, તે આ સમયે દ્વારિકામાં
ભિક્ષા માટે ગયા છે, તમને ત્યાં જતાં જ લેટો થઈ જશે. ભગવાનની આ વાત
સાંભળી વાસુદેવ શ્રીકૃષ્ણ નેમીનાથ ભગવાનને વંદના કરી ત્યાંથી આવી નીકળ્યા.

કૃશશરીરં શાન્તચેતસં ઢંઢણમુનિ દૃષ્ટવાન્ । તતસ્તદ્ગુણાકૃષ્ટોઽતિશુદિતઃ શ્રીકૃષ્ણો
 હસ્તિસ્કન્ધાદવતીર્ય મહીતલમિલનમોલિસ્તં વચ્ચન્દે । તદા તેન વચ્ચમાનોઽસૌ ઢંઢણમુનિઃ
 કેનચિદિભ્યેન દૃષ્ટઃ । તદા તેનેભ્યેન ચિન્તિતમ્-અહો ! એમ મહાત્મા શ્રીકૃષ્ણેન
 વચ્ચતે । એવં ચિન્તયત એવ તસ્યેભ્યસ્ય ગૃહે ઢંઢણમુનિઃ પ્રવિષ્ટઃ । તેનોત્કૃષ્ટભાવેન
 મોદકૈઃ પ્રતિલમ્બિતઃ ।

તતોઽસૌ ઢંઢણમુનિઃ શ્રીનેમિનાથસ્વામિનઃ સમીપં ગત્વા ભિક્ષાં પ્રદર્શ્ય પૃચ્છતિ-
 ભગવન્ ! મમ લાભાન્તરાયઃ ક્ષીણઃ કિમ્ ? શ્રીનેમિનાથસ્વામિના પ્રોક્તમ્-ન તવ-

ઉસ સમય ઉન્હોં ને કૃશશરીર એવં શાન્તચિત્ત ઢંઢણમુનિ કો
 પુરદ્વાર મેં પ્રવેશ કરતે હુણ દેખા । દેખતે હી વે અપને ગજરાજ સે નીચે
 ઉતરે ઓર કુકર ઉનકો વંદના કરને લગે । કૃષ્ણવાસુદેવ કો વંદના
 કરતે હુણ ઉસ સમય કિસી સેઠ ને દેખ લિયા । દેખતે હી ઉસને
 વિચાર કિયા કિ જિસ મહાત્મા કો વંદના યે વાસુદેવ કર રહે હૈં વહ
 કોઈ સાધારણ સાધુ નહીં હૈં, એસા વિચાર કર હી રહા થા કિ ઢંઢણમુનિ
 ઇતને મેં ઉસી સેઠ કે ઘર મેં પ્રવિષ્ટ હુણ । ઉસને વહે હી ઉત્કૃષ્ટભાવોં
 સે સમ્પન્ન હોકર ઢંઢણમુનિ કો મોદકોં કી ભિક્ષા દી । ભિક્ષા લેકર વે
 વાપિસ અપને સ્થાન પર આ ગયે ઓર જો કુછ ભિક્ષા મેં ઉનકો મિલા
 થા વહ ઉન્હોં ને શ્રીનેમિનાથ ભગવાન્ કો દિલ્લાયા । દિલ્લાયકર ફિર
 ભગવાન્ સે ઉન્હોં ને પૂછા કિ હે ભગવાન્ ! મેરા લાભાન્તરાય કર્મ ક્ષીણ
 હો ચુકા હૈં કયા ? । ભગવાન્ ને કહા અબી નહીં, ભિક્ષા મેં જો યે

એ સમયે તેમણે કૃશશરીરવાળા અને શાંતચિત્ત ઢંઢણ મુનિને દારિકાપુરીના
 દ્વારમાં પ્રવેશ કરતી વખતે જોયા. જોતાં જ પોતાના હાથી ઉપરથી નીચે
 ઉતરી ઢંઢણમુનિ પાસે જઈ પહોંચ્યા અને નીચા નમી વંદના કરી. કૃષ્ણ વાસુદે-
 વને વંદના કરતા કોઈ શેઠ જોઈ ગયા અને મનમાં વિચાર કર્યો કે, જે મહાત્માને
 વાસુદેવ વંદના કરી રહ્યા છે તે કોઈ સાધારણ સાધુ ન હોવા જોઈએ. ત્યાં શેઠ એવો
 વિચાર કરી રહ્યા હતા ત્યાં ઢંઢણમુનિ એજ શેઠને ઘેર ભિક્ષા માટે જઈ પહોંચ્યા.
 એણે ખૂબ જ આદર ભાવથી ઢંઢણમુનિને લાડુની ભિક્ષા આપી. ભિક્ષા લઈ
 તે પોતાના સ્થાન ઉપર પહોંચ્યા અને પોતાને જે કાંઈ ભિક્ષામાં મળ્યું હતું તે
 તેમણે ભગવાન શ્રી નેમીનાથને જતાવ્યું. ભગવાનને જતાવીને પછી તેમણે
 પૂછ્યું કે, ભગવૈન ! મારું લાભાન્તરાય કર્મ ક્ષીણ થઈ ગયું કે કેમ ? ભગવાને કહ્યું,

અથાન્યદા શ્રીકૃષ્ણવાસુદેવઃ શ્રીનેમિનાથસ્વામિનં પૃષ્ટવાન્-ભગવન્! અષ્ટા-
દશસહસ્રેષુ શ્રમણેષુ કોઽસ્તિ દુષ્કરકારકઃ?, શ્રીનેમિનાથસ્વામિના પ્રોક્તમ્-સર્વે
શ્રમણદુષ્કરકારકાઃ, ઢંઢળમુનિસ્તુ અતિદુષ્કરકારકઃ। શ્રીકૃષ્ણેનોત્કમ્—કથમ્?,
શ્રીનેમિનાથસ્વામી પ્રાહ—અલાભપરીપહસ્ય સમ્યક્ સહનેન। તતો ભક્તિભરેણ
સંજાતરોમાશ્ચઃ શ્રીકૃષ્ણોઽવદત્—પ્રભો! મહાત્મા ઢંઢળમુનિઃ ક્વ વિદ્યતે?। શ્રી
ભગવાનાહ—મિશ્કાર્થં દ્વારકાપુરં ગતઃ, નગર્યાં પ્રાવિશન્નેવ તં દ્રક્ષ્યસિ। તદ્વચનં
શ્રુત્વા શ્રીકૃષ્ણઃ શ્રીનેમિજિનં પ્રણમ્ય ચલિતઃ। તતઃ પુરદ્વારે પ્રવિશન્ શ્રીકૃષ્ણઃ

કિસી દૂસરે કી નિન્દા હી કરતે। નિન્દા કરતે ભી તો અદીનમન
હોકર અપને અશુભ કર્મ કી।

एक दिन की बात है कि श्रीकृष्ण वासुदेव ने श्रीनेमिनाथप्रभु से
पूछा कि भगवन्! इन अठाहर हजार मुनियों में इस समय दुष्कर-
कारक कौन है। प्रभु ने कहा सब ही श्रमण दुष्करकारक हैं परन्तु
ढंढणमुनि विशेष रीति से दुष्करकारक है। वासुदेव ने कहा यह क्यों?
प्रभुने कहा अलाभपरीपह के सम्यक् सहन करने से। यह सुनते ही
श्रीकृष्ण का समस्त शरीर भक्ति के आवेश से रोमांचित हो गया।
श्रीकृष्ण ने कहा—प्रभो! महात्मा ढंढणमुनि इस समय कहां विराजमान
हैं?। प्रभु ने उत्तर में कहा कि वे इस समय भिक्षा के लिये द्वारिका
में गये हैं। तुम्हें वहां जाते ही वे मिल जावेंगे। भगवान् की बात सुनकर
वासुदेव श्रीकृष्ण नेमिनाथ भगवान् को वंदना करके वहांसे चलेगये।

આ પરિસ્થિતિમાં પણ તેમના અહેરા ઉપર ઉદ્દીગ્નતાનું ચિહ્ન દેખાતું નહીં.
એ ઉદ્દીગ્નચિત્ત ન બનતા, અને બીજા કોઈની નિંદા પણ કરતા નહીં. નિંદા
કરતા તો તે ફક્ત પોતાના અશુભ કર્મની.

એક દિવસની વાત છે કે, શ્રી કૃષ્ણ વાસુદેવે શ્રી નેમીનાથ પ્રભુને પૂછ્યું
કે, ભગવન્! આ અઠારહજાર મુનિઓમાં આ સમયે હુકર સ્થિતિ કોણ
લોગવે છે? પ્રભુએ કહ્યું કે, બધા શ્રમણ હુકર કબ્ત લોગવે છે છતાં ઢંઢળ-
મુનિ આ બધાથી વધુ હુકર સ્થિતિમાં છે. વાસુદેવે કહ્યું એમ કેમ? પ્રભુએ કહ્યું કે,
અલાભપરીપહને સમ્યક્ સહન કરવાથી. આ સાંભળતાં જ શ્રી કૃષ્ણનું શરીર
ભકિતના આવેશથી રોમાંચિત બની ગયું અને કહ્યું, પ્રભુ! મહાત્મા ઢંઢળ મુનિ
આ સમયે ક્યાં બિરાજે છે? પ્રભુએ ઉત્તરમાં કહ્યું કે, તે આ સમયે દ્વારિકામાં
ભિક્ષા માટે ગયા છે, તમને ત્યાં જતાં જ લોટો થઈ જશે. ભગવાનની આ વાત
સાંભળી વાસુદેવ શ્રીકૃષ્ણ નેમીનાથ ભગવાનને વંદના કરી ત્યાંથી ચાલી નીકળ્યા.

छाया—ज्ञात्वा उत्पत्तितं दुःखं, वेदनया दुःखार्तितः ।

अदीनः स्थापयेत् प्रज्ञां, स्पृष्टस्तत्र अधिसहेत ॥ ३२ ॥

टीका—“ नच्चा ” इत्यादि ।

वेदनया=वेदनीयकर्मणा दुःखं=श्वासकासादिषोडशविधरोगसम्बन्धिकं कष्टम् उत्पत्तितम्=उत्पन्नं भवतीति ज्ञात्वा दुःखार्तितः = भाविदुःखशङ्कयाऽऽर्त्तभावं गतः अदीनः = दैन्यभावरहितः सन् प्रज्ञां=बुद्धिं स्थापयेत्=भाविदुःखशङ्कया चलन्तीं बुद्धिं स्थिरीकुर्यात् । तथा यदि साधुः स्पृष्टः=श्वास-कास-ज्वर-दाह-कुक्षिशूल-भगन्दरा-शौऽर्जीर्ण-दृष्टिरोग-मूर्धशूल-रुच्य-क्षिशूल-कर्णशूल-कण्ठ-

आहार के अलाभ से अथवा अन्तप्रान्त आहार के लाभ से शरीर में रोग उत्पन्न हो जाता है इसलिये सोलहवां रोगपरीपह साधु को जीतना चाहिये, यह बात सूत्रकार कहते हैं—‘नच्चा’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(वेयणाए-वेदनया) वेदनीय कर्म के उदय से (दुःखं-दुःखं) श्वास कास आदि सोलह प्रकार के रोग संबंधी दुःख (उत्पद्यं-उत्पत्तितम्) उत्पन्न होता है ऐसा (नच्चा-ज्ञात्वा) जानकर (दुहृष्टि-दुःखार्तितः) भावी दुःख की आशङ्का से आर्त्त भाव को प्राप्त हुआ मुनि (अदीणो-अदीनः) दैन्यभाव से रहित होकर (पन्नं ठावाए-प्रज्ञां स्थापयेत्) भावी दुःख की आशङ्का से चलित होनी हुई अपनी बुद्धि को स्थिर करे । यदि साधु (पुटो-स्पृष्टः) श्वास, कास, ज्वर, दाह, कुक्षिशूल, भगन्दर, अंश, अर्जीर्ण, दृष्टिरोग मूर्धशूल, अरुचि, नेत्रशूल

आहारना अलाभथी अथवा अहितकर्ता (अपथ्य) आहारथी शरीरभां रोग थवा संभव छे तेथी सोणभे रोगपरीपह साधुअे एतवे नेधअे अे वात सूत्रकार कहे छे—‘नच्चा’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—वेयणाए-वेदनया वेदनीय कर्मना उदयथी दुःखं-दुःखम् श्वास कास आदि सोण प्रकारना रोग संबंधी दुःख उत्पद्यं-उत्पत्तितम् उत्पन्न श्राय छे अेवुं नच्चा-ज्ञात्वा अण्णिने दुहृष्टि-दुःखार्तितः भावी दुःखनी आशङ्काथी आर्त्तभा-पने प्राप्त करतार मुनि अदीणो-अदीनः दैन्य भावथी रहित अनी पन्नं ठावाए-प्रज्ञां स्थापयेत् भावी दुःखनी आशङ्काथी चलित थती पोतानी बुद्धिने स्थिर करे. अगर ने साधु पुटो-स्पृष्टः १ श्वास, २ कास, ३ ज्वर, ४ दाह, ५ अदगांड, ६ भगन्दर, ७ डरस, ८ अलुब्ध, ९ दृष्टिरोग, १० मूर्धशूल, ११ अश्चि,

કર્મ ક્ષીણમ્, અયં તુ વાસુદેવસ્ય લાભઃ, યતઃ શ્રીકૃષ્ણસ્ત્વાં વન્દિતવાન્, અતસ્તે મોદકાન્ શ્રેષ્ઠી દત્તવાન્ । તદ્વચનં શ્રુત્વા ઢંઢણમુનિઃ ‘પરલામો ન કલ્પતે’ ઇત્યુત્ત્વા રાગદ્વેપ-વર્જિતો મૂર્છારહિતઃ સન્ નગરાદ્ વહિર્ગત્વા પ્રાસુકસ્થગિલે મોદકાન્ યતના પારિષ્ઠાપ્ય, તાપદૈન્યાદ્યકરણેન લાભાન્તરાયકર્મ ક્ષપયન્ ક્ષપકશ્રેણિમાસ્થા કેવલી જાતઃ । એવમન્યૈરપિ મુનિભિરલામપરીપઠઃ સોઢ્યઃ ॥ ૩૧ ॥

અલાભાદન્તપ્રાન્તાઘાહારલાભાદ્ વા શરીરે રોગા વ્તપ્ત્યન્તે, અતઃ પાઢંઢં રોગપરીપઢજયં પ્રાઢ—

મૂલમ્—નચ્ચૌં ઉપ્પડ્ઢયં દુઢ્વંસ્વં, વેયળાઐ દુહટ્ઢિંઐ ।

અંદીળો ઠાવળ પૈંઢ, પુંટો તેંત્થઽહિયાસંઐ ॥ ૩૨ ॥

મોદકોં કા લાભ તુમ્હે હુઆ હૈ વહ લાભ તુમ્હારા નહીં હૈ કિન્તુ યહ લાભ વાસુદેવ કા હૈ, કારણ કિ તુમ કો કૃષ્ણ ને વંદના કી હસલિયે સેઠ ને તુમકો યે મોદક વહરાયે, અતઃ તુમ્હારે હસ લાભ મેં નિમિત્ત કૃષ્ણ હૈં । ઢંઢણમુનિ ને ભગવાન્ કે હન વચનોં કો સુનકર “પરલામ મુક્ષે કલ્પતા નહીં હૈ” ઐસા કહકર રાગદ્વેપ સે ઐવં મૂચ્છા સે વર્જિત હોતે હુઐ નગર કે બાહર જાકર કિસી પ્રાસુક ભૂમિ મેં હન મોદકોં કો યતનાપૂર્વક પારિઠવદિયા । તાપ ઐવં દીનતા કે નહીં કરને સે લાભાન્તરાયકર્મ કો નષ્ટ કરતે હુઐ હન ઢંઢણમુનિને ક્ષપકશ્રેણી પર આરોહણ કર કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર લિયા । હસી તરહ અન્યમુનિયોં કો ભી અલાભ પારિપહ કો સહન કરના ચાહિયે ॥ ૩૧ ॥

હજી સમય આકી છે. શિક્ષામાં લાડવાને લાભ તમને થયો છે તે લાભ તમારો નથી પરંતુ એ લાભ વાસુદેવનો છે. કારણ કે કૃષ્ણે તમારી વંદના કરી આ ભોધને શેઠ તમને લાડવા વહોરાવ્યા છે. આથી તમારા આ લાભમાં નિમિત્ત કૃષ્ણ બન્યા છે. ઢંઢણમુનિએ ભગવાનનાં આ વચન સાંભળી “ખીબનો લાભ મને કલ્પતો નથી” એમ કહી રાગદ્વેષ અને મૂચ્છાથી વળત રહી નગરની બહાર જઈ કોઈ પ્રાસુક ભૂમિમાં એ લાડવાને યતનાપૂર્વક છોડી દીધા. તપ અને શિક્ષામાં દીનતા ન કરવાથી લાભાન્તરાય કર્મને નષ્ટ કરતાં એ ઢંઢણમુનિએ ક્ષપકશ્રેણી પર આરોહણ કરી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું. આ રીતે અન્ય મુનિઓએ પણ અલાભ પરીપહને સહન કરતા રહેવું ભોધ એ. ॥ ૩૧ ॥

છાયા—જ્ઞાત્વા ઉત્પત્તિતં દુઃખં, વેદનયા દુઃખાર્તિતઃ ।

અદીનઃ સ્થાપયેત્ પ્રજ્ઞાં, સ્પૃષ્ટસ્ત્ર અધિસદૈત ॥ ૩૨ ॥

ટીકા—“ નચ્ચા ” ઇત્યાદિ ।

વેદનયા=વેદનીયકર્મણા દુઃખં=શ્વાસકાસાદિપોઢશવિધરોગસમ્બન્ધિકં કષ્ટમ્
ઉત્પત્તિતમ્=ઉત્પન્નં ભવતીતિ જ્ઞાત્વા દુઃખાર્તિતઃ = ભાવિદુઃખશઙ્કયાઽઽર્તભાવં
ગતઃ અદીનઃ = દૈન્યભાવરહિતઃ સન્ પ્રજ્ઞાં=બુદ્ધિ સ્થાપયેત્=ભાવિદુઃખશઙ્કયા
ચલન્તીં બુદ્ધિ સ્થિરીકુર્યાત્ । તથા યદિ સાધુઃ સ્પૃષ્ટઃ=શ્વાસ-કાસ-જ્વર-દાહ-
કુક્ષિશૂલ-ભગન્દરા-શૌર્જીર્ણ-દષ્ટિરોગ-મૂર્ધશૂલ-અરુચિ-ક્ષિશૂલ-કર્ણશૂલ-કણ્ઠ-

આહાર કે અલાભ સે અથવા અન્તપ્રાન્ત આહાર કે લાભ સે શરીર
મેં રોગ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈં ફસલિયે સોલહવાં રોગપરીપદ સાધુ કો
જીતનાં ચાહિયે, યહ યાત સૂત્રકાર કહતે હૈં-‘નચ્ચા’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(વેયણા—વેદનયા) વેદનીય કર્મ કે ઉદય સે (દુઃખ-
દુઃખં) શ્વાસ કાસ આદિ સોલહ પ્રકાર કે રોગ સંબંધી દુઃખ (ઉપ્પદ્ય-
ઉત્પત્તિતમ્) ઉત્પન્ન હોતા હૈં ણેસા (નચ્ચા-જ્ઞાત્વા) જાનકર (દુહટ્ટિ-
દુઃખાર્તિતઃ) ભાવી દુઃખ કી આશંકા સે આર્ત ભાવ કો પ્રાપ્ત હુઆ
મુનિ (અદીનો-અદીનઃ) દૈન્યભાવ સે રહિત હોકર (પન્નં ઠાવ-પ્રજ્ઞાં
સ્થાપયેત્) ભાવી દુઃખ કી આશંકા સે ચલિત હોતી હુઈ અપની બુદ્ધિ
કો સ્થિર કરે । યદિ સાધુ (પુટ્ટો-સ્પૃષ્ટઃ) શ્વાસ, કાસ, જ્વર, દાહ,
કુક્ષિશૂલ, ભગન્દર, અર્શ, અર્જીર્ણ, દષ્ટિરોગ મૂર્ધશૂલ, અરુચિ, નેત્રશૂલ

આહારના અલાભથી અથવા અહિતકર્તા (અપથ્ય) આહારથી શરીરમાં
રોગ થવા સંભવ છે તેથી સોળમે રોગપરીપદ સાધુએ જીતવો જોઈએ એ
વાત સૂત્રકાર કહે છે—‘નચ્ચા’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—વેયણા—વેદનયા વેદનીય કર્મના ઉદયથી દુઃખ-દુઃખમ્ શ્વાસ કાસ
આદિ સોળ પ્રકારના રોગ સંબંધી દુઃખ ઉપ્પદ્ય-ઉત્પત્તિતમ્ ઉત્પન્ન થાય છે એવું
નચ્ચા-જ્ઞાત્વા મણીને દુહટ્ટિ-દુઃખાર્તિતઃ ભાવી દુઃખની આશંકાથી આર્તભા-
વને પ્રાપ્ત કરનાર મુનિ અદીનો-અદીનઃ દૈન્ય ભાવથી રહિત બની પન્નં ઠાવ-પ્રજ્ઞાં
સ્થાપયેત્ ભાવી દુઃખની આશંકાથી ચલિત થતી પોતાની બુદ્ધિને સ્થિર કરે.
અગર જો સાધુ પુટ્ટો-સ્પૃષ્ટઃ ૧ શ્વાસ, ૨ કાસ, ૩ જ્વર, ૪ દાહ, ૫ બદમાંઠ,
૬ ભગન્દર, ૭ હરસ, ૮ અજીર્ણ, ૯ દષ્ટિરોગ, ૧૦ મુર્ધશૂળ, ૧૧ અરુચિ,

કર્મ ક્ષીણમ્, અયં તુ વાસુદેવસ્ય લાભઃ, યતઃ શ્રીકૃષ્ણસ્ત્વાં વન્દિતવાન્, અતસ્તે મોદકાન્
 શ્રેષ્ઠી દત્તવાન્ । તદ્વચનં શ્રુત્વા ઢંઢણમુનિઃ ‘પરલાભો ન કલ્પતે’ ઇત્યુત્ત્વા રાગદ્રેષ-
 વર્જિતો મૂર્છારવિતઃ સન્ નગરાદ્ વહિર્ગત્વા પ્રાસુકસ્થણ્ડિલે મોદકાન્ યતનવાં
 પરિષ્ઠાપ્ય, તાપદૈન્યાદ્યકરણેન લાભાન્તરાયકર્મ ક્ષપયન્ ક્ષપકશ્રેણિમાસ્તુ કેવલી
 જાતઃ । એવમન્યૈરપિ મુનિભિરલાભપરીપદઃ સોઢવ્યઃ ॥ ૩૧ ॥

અલાભાદન્તમાન્તાઘાહારલાભાદ્ વા શરીરે રોગા વત્પદ્યન્તે, અતઃ પાઢંઢ
 રોગપરીપદજયં પ્રાદ્—

મૂલમ્—નચ્ચાં ઉપ્પદૈયં દુઃખં, વેયળાં દુહટિં ॥

અંદીળો ઠાવળ પંઢ્ર, પુંઢો તેંત્યઽહિયાસં ॥ ૩૨ ॥

મોદકોં કા લાભ તુમ્હે હુઆ હૈ વહ લાભ તુમ્હારા નહીં હૈ કિન્તુ યહ
 લાભ વાસુદેવ કા હૈ, કારણ કિ તુમ કો કૃષ્ણ ને વંદના કી હસલિયે
 સેઠ ને તુમકો યે મોદક વહરાયે, અતઃ તુમ્હારે હસ લાભ મેં નિમિત્ત
 કૃષ્ણ હૈ । ઢંઢણમુનિ ને ભગવાન્ કે હન વચનોં કો સુનકર “પરલાભ
 મુશ્કે કલ્પતા નહીં હૈ” એસા કહકર રાગદ્રેષ સે એવં મૂર્છા સે વર્જિત
 હોતે હુએ નગર કે બાહર જાકર કિસી પ્રાસુક ભૂમિ મેં હન મોદકોં કો
 યતનાપૂર્વક પરિઠવદિયા । તાપ એવં દીનતા કે નહીં કરને સે લાભાન્ત-
 રાયકર્મ કો નષ્ટ કરતે હુએ હન ઢંઢણમુનિને ક્ષપકશ્રેણી પર આરોહણ કર
 કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કાર લિયા । હસી તરહ અન્યમુનિયોં કો બી અલાભ પરિ-
 પદ કો સહન કરના ચાહિયે ॥ ૩૧ ॥

હજી સમય બાકી છે. શિક્ષામાં લાડવાને લાભ તમને થયો છે તે લાભ તમારો નથી
 પરંતુ એ લાભ વાસુદેવનો છે. કારણ કે કૃષ્ણે તમારી વંદના કરી આ ભેદને
 શેઠે તમને લાડવા વહોરાવ્યા છે. આથી તમારા આ લાભમાં નિમિત્ત કૃષ્ણ બન્યા છે.
 ઢંઢણમુનિએ લગવાનનાં આ વચન સાંભળી “બીબનો લાભ મને કલ્પતો
 નથી” એમ કહી રાગદ્રેષ અને મૂર્છાથી વળત રહી નગરની બહાર બધેકોઈ
 પ્રાસુક ભૂમિમાં એ લાડવાને યતનાપૂર્વક છોડી દીધા. તપ અને શિક્ષામાં દીનતા ન
 કરવાથી લાભાન્તરાય કર્મને નષ્ટ કરતાં એ ઢંઢણમુનિએ ક્ષપકશ્રેણી પર આરો-
 હણ કરી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું. આ રીતે અન્ય મુનિઓએ પણ અલાભ
 પરીપદને સહન કરતા રહેવું ભેદ એ. ॥ ૩૧ ॥

छाया—ज्ञात्वा उत्पत्तितं दुःखं, वेदनया दुःखार्तितः ।

अदीनः स्थापयेत् प्रज्ञां, स्पृष्टस्तत्र अधिसेत ॥ ३२ ॥

टीका—“ नच्चा ” इत्यादि ।

वेदनया=वेदनीयकर्मणा दुःखं=श्वासकासादिषोडशविधरोगसम्बन्धिकं कष्टम् उत्पत्तितम्=उत्पन्नं भवतीति ज्ञात्वा दुःखार्तितः = भाविदुःखशङ्कयाऽऽर्त्तभावं गतः अदीनः = दैन्यभावरहितः सन् प्रज्ञां=बुद्धिं स्थापयेत्=भाविदुःखशङ्कया चलन्तीं बुद्धिं स्थिरीकुर्यात् । तथा यदि साधुः स्पृष्टः=श्वास-कास-ज्वर-दाह-कुक्षिशूल-भगन्दर-शोर्ज्जीर्ण-दृष्टिरोग-मूर्धशूल-रुचि-क्षिशूल-कर्णशूल-कण्ठ-

आहार के अलाभ से अथवा अन्तर्ग्रन्थ आहार के लाभ से शरीर में रोग उत्पन्न हो जाता है इसलिये सोलहवां रोगपरीपह साधु को जीतना चाहिये, यह बात सूत्रकार कहते हैं—‘नच्चा’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(वेयणाए-वेदनया) वेदनीय कर्म के उदय से (दुःखं-दुःखं) श्वास कास आदि सोलह प्रकार के रोग संबंधी दुःख (उत्पद्यं-उत्पत्तितम्) उत्पन्न होता है ऐसा (नच्चा-ज्ञात्वा) जानकर (दुहृष्टि-दुःखार्तितः) भावी दुःख की आशङ्का से आर्त्त भाव को प्राप्त हुआ मुनि (अदीणो-अदीनः) दैन्यभाव से रहित होकर (पन्नं ठावए-प्रज्ञां स्थापयेत्) भावी दुःख की आशङ्का से चलित होती हुई अपनी बुद्धि को स्थिर करे । यदि साधु (पुट्टो-स्पृष्टः) श्वास, कास, ज्वर, दाह, कुक्षिशूल, भगन्दर, अंश, अर्ज्जीर्ण, दृष्टिरोग मूर्धशूल, अरुचि, नेत्रशूल

आहारना अलाभधी अथवा अहितकर्ता (अपश्य) आहारधी शरीरमां रोग धवा संभव छे तेशी सोणमे रोगपरीपह साधुमे छतये लेधये ये पात सूत्रकार कहे छे—‘नच्चा’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—वेयणाए-वेदनया वेदनीय कर्मना उदयधी दुःखं-दुःखम् श्वास कास आदि सोण प्रकारना रोग संबंधी दुःख उत्पद्यं-उत्पत्तितम् उत्पन्न त्राय छे येपुं नच्चा-ज्ञात्वा ज्ञानीने दुहृष्टि-दुःखार्तितः भावी दुःखनी आशङ्काधी आर्त्तभा-पने प्राप्त करतार मुनि अदीणो-अदीनः दैन्य भावधी रहित अपनी पन्नं ठावए-प्रज्ञां स्थापयेत् भावी दुःखनी आशङ्काधी चलीत यती पित्तानी बुद्धिने स्थिर करे. अगर जे साधु पुट्टो-स्पृष्टः १ श्वास, २ कास, ३ ज्वर, ४ दाह, ५ अदगांड, ६ भगन्दर, ७ हस्त, ८ अशुर्ज, ९ दृष्टिरोग, १० मूर्धशूल, ११ अरुचि,

કર્મ ક્ષીણમ્, અપંતુ વાસુદેવસ્ય લાભઃ, યતઃ શ્રીકૃષ્ણસ્ત્વાં વન્દિતવાન્, અતસ્તે મોદકાન્
 શ્રેષ્ઠી દત્તવાન્ । તદ્વચનં શ્રુત્વા ઢંઢણમુનિઃ ‘પરલામો ન કલ્પતે’ ઇત્યુત્ત્વા રાગદ્વેષ-
 વર્જિતો મૂર્છારહિતઃ સન્ નગરાદ્ વહિર્ગત્વા પ્રાસુકસ્થણ્ડિલે મોદકાન્ યતનવાં
 પરિષ્ઠાપ્ય, તાપદૈન્યાદ્યકરણેન લાભાન્તરાયકર્મ ક્ષપયન્ ક્ષપકશ્રેણિમાસ્થ્ય કેવલી
 જાતઃ । એવમન્યૈરપિ મુનિભિરલામપરીપદઃ સોઢ્યઃ ॥ ૩૧ ॥

અલાભાદન્તપ્રાન્તાઘાહારલામાદ્ વા શરીરે રોગા વ્તપદ્યન્તે, અતઃ પાંડવ
 રોગપરીપદજયં પ્રાદ—

મૂલમ્—નચ્ચૌં ઉપ્પદ્યયં દુઃખં, વેયળાણ દુહટ્ટિયં ।

અંદીણો ઠાર્વણ પૈન્નં, પુંઠો તંતથઽહિયાસંણ ॥ ૩૨ ॥

મોદકોં કા લાભ તુમ્હે હુઆ હૈ વહ લાભ તુમ્હારા નહીં હૈ કિન્તુ યહ
 લાભ વાસુદેવ કા હૈ, કારણ કિ તુમ કો કૃષ્ણ ને વંદના કી હસલિયે
 સેઠ ને તુમકો યે મોદક વહરાયે, અતઃ તુમ્હારે હસ લાભ મેં નિમિત્ત
 કૃષ્ણ હૈં । ઢંઢણમુનિ ને ભગવાન્ કે હન વચનોં કો સુનકર “પરલામ
 મુક્ષે કલ્પતા નહીં હૈ” એસા કહકર રાગદ્વેષ સે એવં મૂર્છા સે વર્જિત
 હોતે હુણ નગર કે બાહર જાકર કિસી પ્રાસુક ભૂમિ મેં હન મોદકોં કો
 યતનાપૂર્વક પરિઠવદિયા । તાપ એવં દીનતા કે નહીં કરને સે લાભાન્ત-
 રાયકર્મ કો નષ્ટ કરતે હુણ હન ઢંઢણમુનિને ક્ષપકશ્રેણી પર આરોહણ કર
 કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરલિયા । હસી તરહ અન્યમુનિયોં કો ભી અલામ પરિ-
 પદ કો સહન કરના ચાહિયે ॥ ૩૧ ॥

હજી સમય બાકી છે. લિક્ષામાં લાડવાનો લાભ તમને થયો છે તે લાભ તમારો નથી
 પરંતુ એ લાભ વાસુદેવનો છે. કારણ કે કૃષ્ણે તમારી વંદના કરી આ જોઈને
 શેઠ તમને લાડવા વહોરાવ્યા છે. આથી તમારા આ લાભમાં નિમિત્ત કૃષ્ણ બન્યા છે.
 ઢંઢણમુનિએ ભગવાનનાં આ વચન સાંભળી “બીબનો લાભ મને કલ્પતો
 નથી” એમ કહી રાગદ્વેષ અને મૂર્છાથી વળીત રહી નગરની બહાર જઈ કોઈ
 પ્રાસુક ભૂમિમાં એ લાડવાને યતનાપૂર્વક છોડી દીધા. તપ અને લિક્ષામાં દીનતા ન
 કરવાથી લાભાન્તરાય કર્મને નષ્ટ કરતાં એ ઢંઢણમુનિએ ક્ષપકશ્રેણી પર આરો-
 હણ કરી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું. આ રીતે અન્ય મુનિઓએ પણ અલાભ
 પરીપદને સહન કરતા રહેવું જોઈએ. ॥ ૩૧ ॥

રોગાક્રાન્તસ્ય મુનેઃ કર્તવ્યમાહ—

મુલમ્—તેગિચ્છં નામિનંદિજ્ઞા, સંચિક્ષ્વત્તગવેસૅષ ।

‘એયં ચું તસ્સં સામન્નં, જં નં કુજ્જેના નં કારેણ ॥૩૩॥

છાયા—ચિકિત્સાં નામિનન્દેત્, સંતિષ્ઠેત આત્મગવેપકઃ ।

‘એતત્ ‘ચુ’ તસ્ય શ્રામણ્યં, યન્ન કુર્યાત્ ન કારયેત્ ॥૩૩॥

ટીકા—‘તેગિચ્છં’ ઇત્યાદિ ।

મુનિઃ, ચિકિત્સાં=રોગપ્રતીકારં, નામિનન્દેત્=નાનુમોદેત । અનુમતિનિપેધા-
ચિકિત્સાયાઃ કરણં કારણં તુ દૂરત એવ પ્રતિષિદ્ધમ્ । કિં તુ આત્મગવેપકઃ=આત્મા-
નમ્-આત્મકલ્યાણં ગવેપયતિ-સંયમરક્ષણેનેતિ આત્મગવેપકઃ સ્વાત્મકલ્યાણાર્થં ચારિ-
ત્રપાલકઃ સન્ સંતિષ્ઠેત્=સમાધિના તિષ્ઠેત્ । ‘ચુ’=યસ્માત્, એતત્ તસ્ય=શ્રમ-

કુછ મુજ્ઞે રોગાદિક દ્વો રહે હૈં વે સય મેરે હી અશુભ કર્મોંકે ફલ હૈં” ॥૩૨॥

રોગાક્રાન્ત મુનિ કે કર્તવ્ય કો સૂત્રકાર હસ ગાથાદ્વારા કહતે હૈં—
‘તેગિચ્છં’ ઇત્યાદિ ।

અન્યચાર્થ—મુનિ (તેગિચ્છં-ચિકિત્સામ્) રોગ કે પ્રતીકાર કી (નામિ-
નંદિજ્ઞા-ન અમિનંદેત્) અનુમોદના નહીં કરે । મુનિ જય ચિકિત્સા તક
કી અનુમોદના નહીં કરતા હૈ તો ઉસકી ચિકિત્સા કરના ઓર કરાના તો
બહુત દૂરકી યાત હૈ । કિન્તુ (અત્તાગવેસૅષ-આત્મગવેપકઃ) જો સંયમ
કી રક્ષા સે આત્મકલ્યાણ કા ગવેપક હૈ ઉસકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ
(સંચિક્ષ્વે-સંતિષ્ઠેત્) રોગાદિક અવસ્થા મૈં બી સમાધિ ભાવ સે રહે ।
(ચુ-યસ્માત્) કયોં કિ (તસ્સ-તસ્ય) ઉસ મુનિ કા (એયં-એતત્) યહી

“આ લે કાંઈ મને રોગ આદિ થયેલ છે તે બધાં મારા અશુભ કર્મોનું
ફળ છે.” ॥ ૩૨ ॥

રોગાક્રાન્ત મુનિનું કર્તવ્ય શું છે તે સૂત્રકાર આ ગાથા દ્વારા કહે છે.
‘તેગિચ્છં’ ઇત્યાદિ.

અ-વચાર્થ—મુનિ તેગિચ્છં-ચિકિત્સામ્ રોગના પ્રતિકારની નામિનંદિજ્ઞા-
ન અમિનન્દેત્ અનુમોદના ન કરે. મુનિ જ્યારે ચિકિત્સા મુધીની અનુમોદના નથી
કરતા ત્યારે તેની ચિકિત્સા કરવી અથવા કરાવવી ઘણી દુરની યાત છે અત્તાગવેસૅષ
-આત્મગવેપકઃ લે સંયમની રક્ષાદ્વારા આત્મકલ્યાણના ગવેપક હોય છે તેનું કર્તવ્ય
છે કે, સંચિક્ષ્વે-સંતિષ્ઠેત્ રોગાદિક અવસ્થામાં સમાધિભાવથી રહે ચુ-યસ્માત્
કેમ કે, તસ્સ-તસ્ય એ મુનિનું એયં-એતત્ એજ શ્રામણ્યમ્ શ્રમણ્યપણું છે

દરરોગ^{૧૧}—કુષ્ઠ^{૧૨}—તિ પોડશયિરોગાતઙ્કૃરાક્રાન્તો ભવેત્, તર્હિ તત્ર=તસ્મિન્ સમયે સ સાધુઃ તાન્ રોગાતઙ્ક્રાન્ અધિસહેત—“યદધુનાઽહં વ્યાધિના વાધ્યમાનોઽસ્મિ તદેતન્મમ સ્વસ્યેવ પૂર્વકૃતકર્મણઃ ફલમ્” ઇતિ સમભાવમવલમ્બ્ય રોગપરીપહ-સહનં કુર્યાદિત્યર્થઃ ॥ ૩૨ ॥

કર્ણશૂળ, કણ્ઠ^{૧૩}—શ્વજ્વર, ઉદરરોગ, ઓર^{૧૪} કુષ્ઠ, ઇન સોલહ પ્રકાર કે રોગોં સે આક્રાન્ત હો, તો (તત્થ-તત્ર) ઉસ સમય વહ સાધુ (અહિ-યાસપ-અધિસહેત) ઉન રોગોં કો શાન્તિપૂર્વક સહન કરે અર્થાત—‘મૈં જો ઇસ સમય વ્યાધિ સે આક્રાન્ત હું યહ મેરે પૂર્વભવ મૈં કિયે ફુલ કર્મોં કા ફલ હૈ’ એસા વિચાર કર મુનિ રોગપરીપહકો સમભાવ સે સહન કરે ॥ ૩૨ ॥

ભાવાર્થ—ઇસ ગાથા કે દ્વારા સૂત્રકાર સાધુ કો રોગપરીપહ સહન કરને કા ઉપદેશ દે રહે હૈં । વે કહતે હૈં કિ-સંસારી એવં મુનિયોં મૈં રોગોં કો સહન કરને કી વિચારધારા મૈં યદા અન્તર રહતા હૈં । સંસારી તો પ્રાયઃ રોગોં કે ઉત્પન્ન હોતે હી અધોર હો જાતે હૈં તથા સંયમી જન ઉનકા સામ્હના બડે હી ધર્મ સે કરતે હૈં । રોગોં સે પીડિત હોને પર ખી સાધુ કો અપની બુદ્ધિ અસ્થિર બનાની નહીંં ચાહિયે-પ્રત્યુત અસ્થિર હોને પર ઉસે માનસિક બલ દ્વારા સ્થિર કર ધર્મધ્યાન મૈં લીન બનાયે રખના ચાહિયે । તથા વિચાર ખી એસા કરના ચાહિયે—“યે જો

૧૨ નેત્રશૂળ, ૧૩ કર્ણશૂળ, ૧૪ ખસ ખુજલી, ૧૫ ઉદરરોગ, અને ૧૬ કોઠ. આ સોળ પ્રકારના રોગથી વ્યાકુળતા થાય તો તત્થ-તત્ર એ સમયે તે સાધુ અહિયાસપ-અધિસહેત એ રોગને શાંતિપૂર્વક સહન કરે. અર્થાત—‘હું આ સમય જે વ્યાધિથી પીડિત થઈ રહ્યો છું’ એ મારા પૂર્વભવનાં કરેલાં કર્મોના બદલો છે” એવો વિચાર કરી મુનિ રોગને સમભાવથી સહન કરે. ॥ ૩૨ ॥

ભાવાર્થ—આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર સાધુને રોગપરીપહ સહન કરવાનો ઉપદેશ આપે છે, તેઓ કહે છે કે,—સંસારીઓ અને મુનિઓને રોગોમાં તેને સહન કરવાની વિચારધારામાં ભારે અંતર હોય છે. સંસારી તો રોગોને ઉત્પન્ન થતાંજ અધિરા થઈ જાય છે ત્યારે સંયમી જન તેનો અત્યંત ધર્મથી સામનો કરે છે. રોગથી પીડિત હોવા છતાં પણ સાધુએ પોતાની બુદ્ધિને અસ્થિર નહીં થવા દેવી જોઈએ. પરંતુ અસ્થિર થાય ત્યારે તેને માનસિક બળદ્વારા સ્થિર કરીને લીન બનાવી રાખવી જોઈએ. અને વિચાર પણ એવો જોઈએ

કૃતમ્ । તસ્ય કલ્પવૈશિકસ્ય જ્યેષ્ઠા મગિની જિતશત્રુભૂપતિના મુદ્રશૈલનામકનગરા-
ધિપાય હતશત્રુનામ્ને નૃપાય પ્રદત્તા ।

અન્યદા કદાચિત્ સ કાલવૈશિકકુમારો નિશિ શૃગાલશબ્દં શ્રુત્વા સ્વસેવકાન્
પૃચ્છતિ-કસ્યાયં શબ્દઃ શ્રૂયતે ?, સેવકા અબ્રુવન્-શૃગાલસ્ય, તતઃ કુમારો વ્રૂતે તં
વદ્ધ્વા મત્સમીપે સમાનયત, તેઃ શૃગાલ આનીતઃ । ક્રીડનપ્રિયોઽસૌ કુમારસ્તં
યદ્વદ્યા પુનઃ પુનસ્તાડયતિ । કાલવૈશિકકુમારેણ તાઙ્મમાનોઽસૌ શૃગાલઃ ‘લિ-લિ’
શબ્દં કુર્વન્નુચ્ચૈરાક્રન્દતિ । તં શબ્દં શ્રુત્વાઽસૌ સહ્યં હસતિ । एवं તાઙ્મિતઃ શૃગાલઃ
કાલં કૃત્વા અકામનિર્જરયા વ્યન્તરદેવો જાતઃ ।

જાય કાલવૈશિક કી એક વઢી વહિન થી જિસકા વ્યાહ રાજા ને મુદ્ર-
શૈલ નામક નગર કે અધિપતિ હતશત્રુ કે સાથ કિયા થા ।

એક દિન કી વાત હૈ કિ કાલવૈશિકકુમાર ને રાત્રિ મેં શૃગાલ
કા શબ્દ સુનકર અપને સેવકોં સે પૂછા કિ યહ શબ્દ કિસકા સુનાઈ
વે રહા હૈ ? નૌકરોં ને કહા કિ યહ શબ્દ શૃગાલ કા સુનાઈ પડ રહા હૈ ।
કુમાર ને કહા ઉસકો વાંધકર મેરે પાસ લે આઓ । તવ વે શૃગાલ
કો વાંધકર લે આયે ઓર કાલવૈશિકકુમાર કો સોંપ દિયા । કુમાર
લેલને કા શોકિન થા ઇસલિયે વહ શૃગાલ કો વારં વાર લકડી કા ઘોડા
મારતા થા । જૈસેર કુમાર ઉસકો લકડી કા ઘોડા મારતા થા તૈસેર
વહ દુઃખિત હોકર “લિ લિ” શબ્દ કરતા હુઆ જોર સે ચિહ્લાતા
થા । ઉસકે શબ્દ કો સુનકર કુમાર વઢા હર્ષિત હોતા થા ઓર વહ
લૂંચ હૈસતા થા । ઇસ પ્રકાર કુમારસે તાઙ્મિત વહ શૃગાલ મર કર અકામ
નિર્જરા સે વ્યન્તરદેવ હો ગયા ।

એની હોકાને બહુ થાય. કાલવૈશિકને એક મોટી બહેન હતી, જેનો વિવાહ
રાબાએ મુદ્રશૈલ નગરના અધિપતિ હતશત્રુ રાબા બેડે કર્યો હતો.

એક સમયની વાત છે કે કાલવૈશિક કુમારે રાત્રિના વખતે શીયાળનો
શબ્દ સાંભળી પોતાના સેવકોને પૂછ્યું કે, આ શબ્દ શેનો સંભળાઈ રહ્યો છે ?
સેવકોએ કહ્યું કે, આ શબ્દ શીયાળનો સંભળાય છે. કુમારે કહ્યું કે તેને બાંધીને મારી
પાસે લઈ આવો. સેવકે તેને બાંધીને કુમાર પાસે લઈ આવ્યા. અને કાલવૈશિક
ને સોંપી દીધું. કુમાર ખેલવાનો ભારે શોખીન હતો. એટલે તે શીયાળને વારંવાર
લાકડીના ગોદા મારવા લાગ્યો. જેમ જેમ કુમાર તેને લાકડીના ગોદા મારવા
લાગ્યો તેમ તેમ તે દુઃખી થઈને બી.....બી.....શબ્દ કરીને બેરથી ચીડાવા
લાગ્યું. તેના શબ્દો સાંભળીને કુમાર ઘણો ખુશી થતો હતો અને બેરથી હસતો
હતો. આ પ્રમાણે કુમારથી મારવામાં આવેલ તે શૃગાલ મરીને અકામ નિર્જ-
રાથી વ્યંતરદેવ થઈ ગયું.

ગસ્ય, શ્રામણ્ય=શ્રમણધર્મઃ, યત્-ચિકિત્સાં સ્વયં ન કુર્યાત્, અન્યેન વા ન કારયેત્, ઉપલક્ષણત્વાત્ કુર્વન્તમન્યં નાનુમોદેત, इत्यपि बोध्यम् । इदं जिनकल्पिकापेक्षया अभिहितम् । स्थविरकल्पापेक्षया तु सावद्यचिकित्सा वर्जिता, निरवद्यचिकित्साया अपि ऐच्छिकं वर्जनम् ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

મથુરાનગર્યાં શત્રુવિનાસી જિતશત્રુનામા ભૂપતિરાસીત્ । તેન સર્વાંગસુન્દરી કાલાનામ્ની વેદ્યા સ્થાન્તઃપુરે સ્થાપિતા । તસ્યાં રાજઃ પુત્રો જાતઃ । તેન જિતશત્રુ ભૂપતિના કાલાવેદ્યાયા અદ્વજાતોઽયમિતિ હેતોસ્તસ્ય “કાલવૈશિક” ઇતિ નામ

તો (સામણ્ય-શ્રામણ્યમ્) શ્રમણપના છે (જં ન કુજ્જા ન કારણ-યત્ ન કુર્યાત્ ન કારયેત્) જો વહ સ્વયં બી ચિકિત્સા ન કરે ઓર ન દસરોં સે કરાવે । તથા ઉપલક્ષણ સે કરને વાલે દસરે કી અનુમોદના મ કરે । યહ જો હસ પ્રકાર કહા ગયા હૈ વહ જિનકલ્પી સાધુઓં કી અપેક્ષાસે કહા ગયા હૈ । સ્થવિરકલ્પિયોં કી અપેક્ષા તો સાવધ ચિકિત્સા હી વર્જિત હૈ । નિરવધચિકિત્સા ચાહે તો વે કરાવે ન ચાહેં નહીં કરાવે યહ ઉનકી હચ્છા પર નિર્ભર હૈ ।

દૃષ્ટાન્ત—મથુરા નગરી મેં શત્રુ કો ત્રાસ પહુંવાને વાલા જિતશત્રુ નામ કા એક રાજા થા । ઉસને કાલ નામ કી એક સર્વાંગ સુન્દરી વેદ્યા કો અપને અન્તઃપુર મેં રહી થી । ઉસ વેદ્યા કે એક પુત્ર ઉત્પન્ન હુઆ । રાજાને હસ પુત્ર કા નામ હસ હ્યાલ સે કાલવૈશિક રહા કિ લોગોં મેં હસકી પ્રસિદ્ધિ “યહ કાલવેદ્યા સે પૈદા હુઆ હૈ” હસ રૂપ સે હો

જો તે જં નકુજ્જા ન કારણ-યત્ ન કુર્યાત્ ન કારયેત્ સ્વયં ચિકિત્સા ન કરે અગર બીજાઓ પાસે ન કરાવે, તથા ઉપલક્ષણથી બીજા કરવાવાળાઓની અનુમોદના ન કરે. એજ પ્રમાણે કહેવામાં આવેલ છે તે જિનકલ્પી સાધુઓની અપેક્ષાથી કહેવામાં આવેલ છે. સ્થવિરકલ્પિઓની અપેક્ષાએ તો સાવધ ચિકિત્સા જ વર્જિત છે. નિરવધ ચિકિત્સા ચાહે તો તે કરાવે અને ન ચાહે તો ન કરાવે. તે તેની હચ્છા પર નિર્ભર છે.

દૃષ્ટાન્ત—મથુરા નગરીમાં શત્રુઓને ત્રાસ પહોંચાડવાવાળા જિતશત્રુ નામના એક રાજા હતા. તેણે કાલ નામની એક સર્વાંગ સુંદર વેદ્યાને પોતાના અન્તઃપુરમાં રાખેલ હતી. તે વેદ્યાથી તેને એક પુત્ર ઉત્પન્ન થયો. રાજાએ એ પુત્રનું નામ એ ખ્યાલથી કાલવૈશિક રાખ્યું કે એ કાલ-વેદ્યાથી પેદા થયેલ છે.

મિત્રાર્ય પર્વત દુષ્ટકૃત્ત્ય ભવનં પ્રવિષ્ટઃ । ત્વ ત્વ કાલદેવિકરકરકા
સ્પર્શોત્તમં તત્ત્વાનારિક્તનગિની કાલ્પાશ્ચોદૈત્તરપનિધાં નિધાં ૧૨૨૧ । તેન
વાગ્દાનતા ના નિજા ગૃહીતા । અદારસનયે કુતાશ્ચારેય જેન ત્વત્ત્વત્ત્વત્ત્વ
વાગ્દાનતાનં ચિન્તિત્ત્વ 'ત્ત્વે ! અવાનતા મયાનુચિત્ત્વેત્ત્વત્ત્વ ત્ત્વત્ત્વત્ત્વત્ત્વ
ત્ત્વત્ત્વ ત્ત્વત્ત્વત્ત્વત્ત્વ નિજા ગૃહીતા મુક્તા ચ । દૈત્ત્વત્ત્વત્ત્વત્ત્વત્ત્વ
અનિદ્રિત્ત્વ નદ્દેવિકરકરકા ત્ત્વત્ત્વ ત્ત્વત્ત્વ ત્ત્વત્ત્વત્ત્વત્ત્વ અદારસેર પરિત્ત્વ-
નાનિ " દૈત્ત્વ વિચિન્ત્ય મુદ્ગૈન્નનગરતો નિર્ગત્ય નિર્માલ્યત્ત્વત્ત્વત્ત્વત્ત્વ મુનિઃ
પાદપોષગનનં ક્ત્વં વ્યવસિતઃ ।

વાત હૈં કિ જય વે મિક્ષા કે લિયે પર્યટન કરતેર હતશાનુ રાજા કે
મહલ મેં જા વઢુંચે તો उनकी संसारी पहिन ने उनके पयासीर रोग
उत्पन्न हुआ जानकर औषधमिश्रित उनको भिक्षा दी कि जिससे पया-
सीर का रोग मिट जाय । अनजानपनमें इन्होंने ने यह भिक्षा लेली ।
आहार करते समय इनको मालूम हुआ कि यह आहार औषधमिश्रित
है । मुनि को इस बात का बड़ा पश्चात्ताप हुआ । विचार करने लगे कि
यह काम अच्छा नहीं हुआ, जो मैंने चिकित्सातक करवाने की भावना
से रहित होकर भी औषधमिश्रित आहार लिया और खा भी लिया ।
इस प्रकार के आहार से मुनियोंके अभिग्रह का भंग अवश्य होता है,
अतः आज से मैं अब आहार ही नहीं लूंगा । इस प्रकार विचार कर ये
मुनिराज मुद्गशैल नगरसे निकल कर किसी पर्यंत पर चले गये और वहां
आत्मवलसंपन्न होकर पादपोषगमन संथारा करने की तैयारी करने लगे ।

એક દિવસની વાત છે કે, જ્યારે ભિક્ષાને માટે પર્યટન કરતાં કરતાં હતશાનુ રાજાના
મહેલમાં જઈ પહોંચ્યા ત્યાં તેની સંસારી બહેને તેને હરસની ખીમારી મગેલ
છે એમ બાળીને ઔષધથી મિશ્રીત એવી ભિક્ષા આપી કે જેથી તેનો હરસનો
રોગ મટી જાય. અબજુ પછે તેમણે એ ભિક્ષા લઈ લીધી. આહાર કરતાં વખતે
તેમને ખબર પડી કે, આ આહાર તો ઔષધી મિશ્રીત છે. મુનિને આ જાણ-
તનો ઘણો પશ્ચાત્તાપ થયો. વિચાર કરવા લાગ્યા, આ કામ ઠીક નથી થયું.
જે હું ચિકિત્સા કરાવવાની ભાવનાથી રહિત હોવા છતાં ઔષધમિશ્રીત આહાર
મેં લીધો અને ખાઈ પણ લીધો. આ પ્રકારના આહારથી મુનિજોના અભિગ્રહનો
અવરથ ભંગ થાય છે. આથી હું આજથી આહાર જ નહીં લઉં, આ પ્રમાણે
વિચાર કરીને તે મુનિરાજ મુદ્ગશૈલ નગરથી નીકળી કોઈ પહાડપર ગયા અને ત્યાં
આત્મબળથી સંપન્ન થઈને પાદપોષગમન સંથારો કરવાની તૈયારી કરવા લાગ્યા.

क्रमेण यौवने वयसि प्राप्ते स कालवैदिककुमारः कदाचित् प्रभासनामकाचार्यस्य समीपे धर्मं श्रुत्वा जातवैराग्यः प्रव्रज्यां गृहीतवान् । स चेकदा एकाकिविहारप्रतिमां प्रतिपन्नो ग्रामानुग्रामं विहरन् मुद्गशैलारूपं नगरं गतः । तदा तस्य महामुनेरशौरोगः समुत्पन्नः । स तेन व्याधिना पीड्यमानोऽपि धीरमानसो मनसाऽपि चिकित्सां नेच्छति । चिकित्सायाः कारणं कारणं तु तेन दूरत एव निराकृतम् । 'व्याधिः कदा निवर्तिष्यते' इत्यपि न चिन्तितम्, किंतु 'स्वकृत-कर्मणः फलमेत'दिति भावयन्सौ रोगजनितवेदनां सहते स्म । एकस्मिन् दिने

जय कुमार यौवन अवस्था में आया तो उसने प्रभास नामक आचार्य के पास धार्मिक उपदेश सुनकर विषयों से विरक्त हो दीक्षा धारण करली । श्रुतज्ञानका खूब अभ्यास किया । जय वे मुनि आगमिक ज्ञान से विशिष्ट ज्ञानी बन चुके तो उन्होंने ने एकाकिविहार की प्रतिमा को अंगीकार कर ग्रामानुग्राम विहार करना प्रारंभ किया । विहार करते-तेरे एक दिन मुद्गशैल नामक नगरी में आये । वहाँ इन्हें घवासीर की बीमारी उत्पन्न हो गई इससे इन्हें अधिकाधिक कष्ट हुआ तो भी उस व्याधि की चिकित्सा के लिये इनका मन भी नहीं हुआ । 'इस व्याधि की निवृत्ति कब होगी' इतना तक भी संकल्प उनके दिल में नहीं उठा, पर यह विचार अवश्य हुआ कि यह स्वकृत-अपने किये हुये कर्म का फल है । इस प्रकार के दृढ़ अध्यवसाय से उन्होंने ने रोगजनित वेदना को बड़ी ही शूरीरता से सहन किया । एक दिन की

कुमार व्याधे यौवन अवस्थायां आभूत् । त्यादे प्रभास नामना आचार्यनी पासधी धार्मिक उपदेशे सांख्यीने विषयोधी विरक्त यधने दीक्षा धारण करी श्रुतज्ञानने भूषण अभ्यास कथी । व्याधे ते मुनि आगमिकज्ञानधी विशिष्ट ज्ञानी णनी युक्त्या त्यादे तेमण्णे ओकाकी विहारनी प्रतिमाने अंगीकार करी ओक ग्रामधी णीले ग्राम विहार करवाने प्रारंभ कथी । विहार करतां करतां ओक द्विपस मुद्गशैलनगरमां आव्या । त्यां तेमने डरसनी भीमारी उत्पन्न यध तेनाथी तेमने अत्यंत कष्ट थयुं । परंतु आ व्याधिनी चिकित्सा करवावानी छच्छा पण तेमने यध नछी । आ व्याधि क्यारे-भट्ठे, ओयो संकटप पण तेना दिलमां उठयो नछी । परंतु ओ विचार तेमना मनमां अवश्य थयो के, पोताना करेला कर्मानुं आ इण छे । आ प्रभाण्णे दृढ अध्यवसायधी तेओ रोगधी उत्पन्न थयेवी वेदनाने भूषण शूरीरताधी सहन करतां छता ।

मुनेर्घोरमुपसर्गं कर्तुं कर्णकठोरं नीरसं शब्दमहर्निशं निरन्तरं करोति । स च व्यन्तर-
देवस्तं मुनिं शृगालवधरूपं पापं स्मारयति । तदा स तां शृगालीकृतां तथाऽर्शोरोग-
कृतां च घोरां दुःसहामुज्ज्वलां वेदनां धैर्येण समभावेन च सहमान आसीत् ।
एवं पञ्चदश दिनानि घोरपरीपहोपसर्गं परिपह्य स कालवैशिकमुनिः शुक्लध्यानेन
केवली भूत्वा कर्मक्षयं कृत्वा मोक्षपदं प्राप । एवमन्यैरपि मुनिभिः समभावेन रोग-
परीपहः सहनीयः ॥ ३३ ॥

अथ सप्तदशं तृणस्पर्शपरीपहजयं प्राह—

मूलम्—अचेलगस्स ल्हंहस्स, संजयस्सं तव्वस्सिणो ।

तणेसु सयमाणस्स, होज्जा गांयविराहणा ॥ ३४ ॥

छाया—अचेलकस्य रुक्षस्य, संयतस्य तपस्विनः ।

तृणेषु शयानस्य, भवति गात्रविराधना ॥ ३४ ॥

तीक्ष्ण दांतों द्वारा काटने लगी, तथा काट खाने के बाद फिर वह
उनके चारों ओर घूमर कर कर्णकटुक विरस शब्द करने लगी । इस
प्रकार वह तब तक करती रही कि जब तक उनका मृत्यु न हुआ । उस
व्यन्तरदेव ने भी मुनि के लिये शृगाल को वध करने रूप पाप का
स्मरण करा कर दुःखित करने की भी खूब चेष्टा की । इस प्रकार
उन मुनिराज ने उस शृगाली की की हुई, व्यन्तरदेव की की हुई, तथा
बवालीर की घोर दुःसह वेदना को धैर्यपूर्वक समभाव से सहते हुए
पन्द्रह दिन व्यतीत कर दिये । पश्चात् शुक्लध्यान के प्रभाव से केवली हो
कर सर्व कर्मक्षय कर के मुक्ति को प्राप्त किया । इसी तरह अन्य मुनिजनों
को भी समभाव से रोगपरीपह को सहन करना चाहिये ॥ ३३ ॥

तेनी यारे ञ्जुअे धुमीने कानने अग्रिय अेवा ककंश शब्दो ओलवा लाग्थुं, आ
प्रकारे ते त्यां सुधी करतुं रह्थुं के, ज्यां सुधी तेनुं मृत्यु न थय्थुं, अे व्यन्तर-
देवे पञ्च मुनि भाटे शृगालना वध करवाइय पापतुं स्मरण करी, करावीने
दुःभीत करवानी भूष अेष्टा करी, आ प्रकारे ते मुनिराजे शृगालीनी भारइत
थयेली अने व्यन्तरदेवे करेली अने हरसनी घोर दुःसह वेदनाने धैर्यपूर्वक
समभावथी सहेतां १५ दिवस व्यतीत कर्या पछी शुक्लध्यानना प्रभावथी
देवणी ञ्जनी सर्व कर्म क्षय करी मुक्ति पाव्या. आवी रीते अन्य मुनिज-
नोअे समभावथी रोगपरीपह सहन करवो ओधये ॥ ३३ ॥

अथ यः शृगालजीवो कालवैशिकेन संसारावस्थायां इतः, तस्य व्यन्तरदेवमर्षं प्राप्तस्य तदानीं विमाने गच्छतस्तत्र पादपोषगमनाय संस्थितस्य मुनेरुपरि गगने विमानगतिः प्रतिरुद्धा, तदा स व्यन्तरदेवोऽवधिना पूर्वभववृत्तं ज्ञात्वा वैरनिर्यातनेच्छया तत्र कालवैशिकमुनेः समीपे विकुर्वणशक्त्या स शिशुका शृगाली विकुर्विता । सा शृगाली 'खि-खि' इति शब्दं कुर्वती तस्य महामुनेर्गात्रं दन्तैर्दशति । तस्य

इतने में एकव्यन्तरदेव - जो पूर्वभवमें शृगाल था, जिसका इन मुनि ने अपनी कुमारावस्था में ताड़न तर्जन आदि किया था, और जो इनके ताड़न तर्जन आदि के कारण अकामनिर्जरा से मर कर व्यन्तर हो गया था, वह व्यन्तरदेव-विमानमें बैठ कर कहीं दूसरी जगह जा रहा था उसका विमान वहां आ पहुँचा, जहां ये मुनिराज पादपोष-गमन संधारा धारण किये हुए थे । उनके ऊपर से होकर जाने में उस विमान की गति रुक गई । विमान को जाते रुका हुआ देखकर व्यन्तरदेव को बड़ा आश्चर्य हुआ । उसने अवधिज्ञान से विमान की गति के रुकने में कारण मुनिराज का वह समस्त पूर्व भव का वृत्तान्त जान लिया । उससे मुनि के ऊपर बहुत क्रोध उसका बढ़ने लगा । अपने पूर्वभव में मृत्यु के कारण मुनि को जानकर उस व्यन्तरदेव ने बदला लेने के अभिप्राय से उन मुनिराज के समीप अपनी वैक्रिय शक्तिके द्वारा एक बच्चे सहित शृगाली बनाकर खड़ी कर दी । उस शृगालीने 'खी-खी' शब्द करते हुए उन मुनिराज के समस्त शरीरको अपने

अटलाभां व्यन्तरदेव के जे पूर्वभवमां शृगाल इतो, जेनुं आ मुनिराजे पोतानी कुमार अवस्थाभां ताउन तर्जन करेव अने जे ताउन तर्जनना परिष्ठाभे अश्रमनिर्जराथी भरीने व्यन्तर थयेव ते विमानमां जेसीने कोध भीजे स्थणे जई रहेव इता. जेनुं विमान त्यां आवी पडोन्थुं के जथां मुनिराजे पादपोषगमन संधारे धारण करेव इतो. त्यांथी पसार यता-ते विमाननी गती अटकी गर्ध. विमानने जेकदम अटकेलुं जेधने व्यन्तरदेवने पूण आश्चर्य थयुं. तेजे अवधिज्ञानथी विमाननी गती रोकावाना कारणरूप मुनिराजने पूर्वभवने समस्त वृत्तांत ज्ञेयो. जेनाथी मुनि उपर तेना कोध जेकदम बढवा लाग्यो. पोताना पूर्वभवना मृत्युना कारणरूप मुनिराज जे तेम ज्ञेयने ते व्यन्तरदेवे जइलो देवानी छत्राथी ते मुनिराजनी पासे पोतानी वैक्रियशक्ति द्वारा जेक ज्ञेयावाणी प्रभज शियाजने उत्पन्न कथुं. जे शियाज "भी भी" थउव करीने पोताना तीक्ष्ण दांताथी मुनिराजना शरीरने कापवा लाज्जुं. करउथा ५ करीथी

તૃણસ્પર્શપીડાયાં મુનિના યત્ કર્તવ્યં તદ્ વોધયિતુમાહ—

મૂલમ્—આયવસ્સ નિવાંણં, અડલા હવેઈ વેયંણા ।

एवं नच्चा नं सेवन्ति”, तन्तुजं तर्णतज्जिया ॥૩૫॥

છાયા—આતપસ્ય નિપાતેન, અતુલા ભવતિ વેદના ।

एवं ज्ञात्वा न सेवन्ते, तन्तुजं तर्णतर्जिताः ॥ ૩૫ ॥

ટીકા—‘ આયવસ્સ ’ इत्यादि ।

भावार्थ—अचेलक पद से यहां स्थविरकल्पिक को भी जो अचेलक कहा है वह इसी अभिप्राय से कि वे शास्त्रमर्यादा के अनुसार ही चला रखते हैं, उससे अधिक नहीं आगम में स्थविरकल्पिक के लिये अल्पमूल्य वाले प्रमाणोपेत वस्त्रों का रखना मर्यादित है उनको ही ये धारण करते हैं। अतः इस अवस्था में भी ये अचेलक ही माने जाते हैं, इस विषय का विशेषरूप से खुलासा छठे अचेलक परीपह के प्रकरण में किया जा चुका है। मुनि को तैलादिक की मालिश करना वर्जित है। तथा ये तपश्चर्या करते रहते हैं, इसलिये इनका शरीर रुक्ष हो जाता है। रुक्ष शरीर में खून अल्प होने से तृणस्पर्श आदि की वेदना अधिक होती है, अतः ऐसी अवस्था में साधु का कर्तव्य है कि वह उस वेदना को समभाव से सहन करे ॥ ३४ ॥

जब तृणस्पर्श से पीडा हो तब मुनि को क्या करना चाहिये सो कहते हैं—‘ आयवस्स ’ इत्यादि ।

ભાવાર્થ—અચેલક પદથી અહિં સ્થવિરકલ્પિકને જે અચેલક કહ્યું છે. તે એવા અભિપ્રાયથી કે તે, શાસ્ત્ર મર્યાદાની અનુસારજ વસ્ત્ર રાખે છે. તેનાથી અધિક નહીં. આગમમાં સ્થવિરકલ્પિક માટે અલ્પમુલ્યવાળાં પ્રમાણોપેત વસ્ત્રોને રાખવાં મર્યાદિત છે, એને જ તેઓ ધારણ કરે છે. આથી આ અવસ્થામાં પણ તે અચેલક જ માનવામાં આવે છે. આ વિષયનો વિશેષરૂપથી ખુલાસો પહેલાં છઠ્ઠા અચેલકપરીપદના પ્રકરણમાં આપવામાં આવી ગયેલ છે. મુનિએ તેલ આદિનું માલીસ કરવું વર્જિત છે. તથા તપસ્યા કરતા રહે છે. આથી તેમનું શરીર રૂક્ષ થઈ જાય છે. રૂક્ષ શરીરમાં લેણી ખૂબ ઓછું હોવાથી તૃણસ્પર્શની વેદના અધિક થાય છે. આથી એવી અવસ્થામાં સાધુનું કર્તવ્ય છે કે, તે વેદનાને સમભાવથી સહન કરે. ॥ ૩૪ ॥

ત્યારે તૃણસ્પર્શથી પીડા થાય ત્યારે મુનિએ શું કરવું જોઈએ તે સૂત્રકાર કહે છે—‘ આયવસ્સ ’—इत्यादि.

ટીકા—‘અચેલગસ્સ’-ઇત્યાદિ ।

અચેલકસ્ય=સર્વથા વસ્ત્રરહિતસ્ય જિનકલ્પિકસ્ય, તથા શાસ્ત્રમર્યાદાતિરિક્તવસ્ત્રરહિતસ્ય સ્થવિરકલ્પિકસ્ય ચેત્યર્થઃ । આગમે હિ અસ્વમૂલ્યકાલ્પવસ્ત્રસ્ય મર્યાદિતસ્યૈવ ધારણાત્ સ્થવિરકલ્પિકોઽપ્યચેલકઃ । એવાસ્તીતિ પ્રાગચેલકપરીપદ્મકરણે નિર્ણીતમ્ । તથા ઉપવિધિસ્ય મુનેસ્તૃણસ્પર્શપરીપદ્મેઽપ્યાન્યપિ કારણાનિ સન્તીતિ પ્રદર્શયિતુમાદ—‘લૂહસ્સ’-ઇત્યાદિ । રૂક્ષસ્ય=તૈલામ્યદ્વાદિવર્જનાદ્ અસ્તિગ્ધ-શરીરસ્યેત્યર્થઃ, સંયતસ્ય=નિરતિચારસંયમાઽઽરાધનતત્પરસ્ય, તપસ્વિનઃ=તપશ્ચરણશીલસ્ય, અનશનાદિતપઃસમાચરણાત્ કૃશશરીરસ્યેત્યર્થઃ મુનેઃ, તૃણેષુ-દર્ભાદિષુ તદુપરિશયાનસ્ય ઉપલક્ષણત્વાદાસીનસ્ય ચેત્યર્થઃ ગાત્રવિરાધના=શરીરે તૃણસ્પર્શજન્યા પીડા ભવતિ ॥ ૩૪ ॥

અથ સૂત્રકાર સતરહવાં તૃણસ્પર્શપરીપદ્મજય કા વિવેચન કરતે હૈ—‘અચેલગસ્સ’-ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(અચેલગસ્સ-અચેલકસ્ય) સર્વથા વસ્ત્રરહિત જિનકલ્પિક, તથા શાસ્ત્રની મર્યાદા કે અતિરિક્ત વસ્ત્ર નહીં રાખે તેવા સ્થવિરકલ્પિક મુનિ કે (લૂહસ્સ-રૂક્ષસ્ય) કિ જિન કા તૈલ આદિની માલિશ કરના વર્જિત હોને સે શરીર વિલકુલ રૂક્ષ હો રહા હૈ, એવં (સંજયસ્સ-સંયતસ્ય) જો નિરતિચાર સંયમની આરાધના કરને મેં તત્પર રહતે હૈ, તથા (તપસ્વિનો-તપસ્વિનઃ) અનશન આદિ તપો કે કરનેવાલે હોને સે કૃશ શરીર થાલે હૈ, ઓર જો (તણેસુ સયમાણસ્સ-તૃણેષુ શયાનસ્ય) દર્ભાદિક તૃણો કે ઉપર સોતે હૈ ઉપલક્ષણ સે ઉપર બેઠતે હૈ ઉનકે (ગાયવિરાહના-ગાત્રવિરાધના) શરીર મેં તૃણસ્પર્શજન્ય પીડા હોતી હૈ ।

હવે સૂત્રકાર સત્તરમાં તૃણસ્પર્શપરીપદ્મ જીતવાનું વર્ણન કરે છે. ‘અચેલગસ્સ’-ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—અચેલગસ્સ-અચેલકસ્ય સર્વથા વસ્ત્ર રહિત જીનકલ્પિક, તથા શાસ્ત્રની મર્યાદાથી અતિરિક્ત વસ્ત્ર ન રાખવાવાળા સ્થવિરકલ્પિક મુનિ લૂહસ્સ-રૂક્ષસ્ય બેને તેલ આદિની માલિશ કરવાનું વર્જિત હોવાથી શરીર બીલકુલ રૂક્ષ બની ગયેલ છે. સંજયસ્સ-સંયતસ્ય અને જે નિરતિચાર સંયમની આરાધના કરવામાં તત્પર રહે છે તેવસ્વિનો-તપસ્વિનઃ તથા અનશન આદિ તપ કરનાર હોવાથી કૃશ શરીરવાળા છે. અને જે તણેસુ સયમાણસ્સ-તૃણેષુ શયાનસ્ય દર્ભાદિક તૃણોની ઉપર સુવે છે, ઉપલક્ષણથી ઉપર બેસે છે, તેમના ગાયવિરાહના-ગાત્રવિરાધના શરીરમાં તૃણસ્પર્શજન્ય પીડા થાય છે.

તૃણસ્પર્શપીડાયાં મુનિના યત્ કર્તવ્યં તદ્ વોધયિતુમાહ—

મૂલમ્—આયવસ્સ નિર્વાણં, અર્ઝલા હવંઙ્ વેયંણા ।

‘એવં નંચા નં સેવંતિ’, તંતુજં તર્ણતજ્જિયા ॥૩૫॥

છાયા—આતપસ્ય નિપાતેન, અતુલા ભવતિ વેદના ।

એવં જ્ઞાત્વા ન સેવન્તે, તન્તુજં તર્ણતર્જિતાઃ ॥ ૩૫ ॥

ટીકા—‘આયવસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

ભાવાર્થ—અચેલક પદ સે યહાં સ્થવિરકલ્પિક કો મી જો અચેલક કહા હૈ વહ્ ઇસી અભિપ્રાય સે કિ વે શાસ્ત્રમર્યાદા કે અનુસાર હી વસ્ત્ર રખતે હૈં, ઉસસે અધિક નહીં આગમ મેં સ્થવિરકલ્પિક કે લિયે અલ્પમૂલ્ય વાલે પ્રમાણોપેત વસ્ત્રોં કા રખના મર્યાદિત હૈં ઉનકો હી યે ધારણ કરતે હૈં । અતઃ ઇસ અવસ્થા મેં મી યે અચેલક હી માને જાતે હૈં, ઇસ વિષય કા વિશેષરૂપ સે खुलासा છટે અચેલક પરીપહ્ કે પ્રકરણ મેં કિયા જા ચુકા હૈં । મુનિ કો તૈલાદિક કી માલિશ કરના વર્જિત હૈં । તથા યે તપશ્ચર્યા કરતે રહતે હૈં, ઇસલિયે ઇનકા શરીર રુક્ષ હો જાતા હૈં । રુક્ષ શરીર મેં યૂન અલ્પ હોને સે તૃણસ્પર્શ આદિ કી વેદના અધિક હોતી હૈં, અતઃ એસી અવસ્થા મેં સાધુ કા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ્ ઉસ વેદના કો સમભાવ સે સહન કરે ॥ ૩૪ ॥

જવ તૃણસ્પર્શ સે પીડા હો તવ મુનિ કો કયા કરના ચાહિયે સો કહતે હૈં—‘આયવસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

ભાવાર્થ—અચેલક પદથી અહિં સ્થવિરકલ્પિકને જે અચેલક કહ્યા છે. તે એવા અભિપ્રાયથી કે તે, શાસ્ત્ર મર્યાદાની અનુસારજ વસ્ત્ર રાખે છે. તેનાથી અધિક નહીં. આગમમાં સ્થવિરકલ્પિક માટે અલ્પમુલ્યવાળાં પ્રમાણોપેત વસ્ત્રોને રાખવાં મર્યાદિત છે, એને જ તેઓ ધારણ કરે છે. આથી આ અવસ્થામાં પણ તે અચેલક જ માનવામાં આવે છે. આ વિષયનો વિશેષરૂપથી ખુલાસો પહેલાં છઠ્ઠા અચેલકપરીપહના પ્રકરણમાં આપવામાં આવી ગયેલ છે. મુનિએ તેલ આદિનું માલીશ કરવું વર્જિત છે. તથા તપસ્યા કરતા રહે છે. આથી તેમનું શરીર રુક્ષ થઈ જાય છે. રુક્ષ શરીરમાં લોહી ખૂબ ઓછું હોવાથી તૃણસ્પર્શની વેદના અધિક થાય છે. આથી એવી અવસ્થામાં સાધુનું કર્તવ્ય છે કે, તે વેદનાને સમભાવથી સહન કરે. ॥ ૩૪ ॥

બીયારે તૃણસ્પર્શથી પીડા થાય ત્યારે મુનિએ શું કરવું જોઈએ તે સૂત્રકર કહે છે—‘આયવસ્સ’-ઈત્યાદિ.

ટીકા—‘અચેલગસ્સ’-इत्यादि ।

અચેલકસ્ય=સર્વથા વહ્નરહિતસ્ય જિનકલ્પિકસ્ય, તથા શાસ્ત્રમર્યાદાતિરિક્તવહ્નરહિતસ્ય સ્થવિરકલ્પિકસ્ય ચેત્યર્થઃ । આગમે હિ અરૂપમૂલ્યકાલ્પવસ્તુસ્ય મર્યાદિતસ્યૈવ ધારણાત્ સ્થવિરકલ્પિકોઽપ્યચેલકઃ । एवास्तोति प्रागचैलकपरीपहप्रकरणे निर्णीतम् । તથા ઉભયવિધસ્ય મુનેસ્તૃણસ્પર્શપરીપહેઽન્યાન્યપિ કારણાનિ સન્તીતિ પ્રદર્શયિતુમાહ—‘લૂહસ્સ’-इत्यादि । રૂક્ષસ્ય=તૈલામ્યદ્વાદિવર્જનાદ્ અસ્નિગ્ધ-શરીરસ્યેત્યર્થઃ, સંયતસ્ય=નિરતિચારસંયમાઽઽરાધનતત્પરસ્ય, તપસ્વિનઃ=તપશ્ચરણશીલસ્ય, અનશનાદિતપઃસમાચરણાત્ કૃશશરીરસ્યેત્યર્થઃ મુનેઃ, તૃણેષુ-દર્ભાદિષુ તદુપશિયાનસ્ય ઉપલક્ષણત્વાદાસીનસ્ય ચેત્યર્થઃ ગાત્રવિરાધના=શરીરે તૃણસ્પર્શજન્યા પીડા ભવતિ ॥ ૩૪ ॥

अव सूत्रकार सत्तरहवां तृणस्पर्शपरीपहजय का विवेचन करते हैं-
‘अचेलगस्स’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(અચેલગસ્સ-અચેલકસ્ય) સર્વથા વહ્નરહિત જિન-કલ્પિક, તથા શાસ્ત્રની મર્યાદા કે અતિરિક્ત વહ્ન નહીં રાખે તેવા સ્થવિરકલ્પિક મુનિ કે (લૂહસ્સ-રૂક્ષસ્ય) જિનના કા તૈલ આદિની માલિશ કરના વર્જિત હોને સે શરીર ચિલકુલ રૂક્ષ હો રહા હૈ, એવં (સંજયસ્સ-સંયતસ્ય) જો નિરતિચાર સંયમની આરાધના કરને મેં તત્પર રહતે હૈ, તથા (તવસ્સિણો-તપસ્વિનઃ) અનશન આદિ તપો કે કરનેવાલે હોને સે કૃશ શરીર ચાલે હૈ, ઓર જો (તણેસુ સયમાણસ્સ-તૃણેષુ શયાનસ્ય) દર્ભાદિક તૃણો કે ઉપર સોતે હૈ ઉપલક્ષણ સે ઉપર બેઠતે હૈ ઉનકે (ગાયવિરાહણા-ગાત્રવિરાધના) શરીર મેં તૃણસ્પર્શજન્ય પીડા હોતી હૈ ।

હવે સૂત્રકાર સત્તરમાં તૃણસ્પર્શપરીપહ જય અતવાનું વર્ણન કરે છે.
‘અચેલગસ્સ’-इत्यादि.

અન્વયાર્થ—અચેલગસ્સ-અચેલકસ્ય સર્વથા વહ્ન રહિત અનકલ્પિક, તથા શાસ્ત્રની મર્યાદાથી અતિરિક્ત વહ્ન ન રાખવાવાળા સ્થવિરકલ્પિક મુનિ લૂહસ્સ-રૂક્ષસ્ય જેને તેલ આદિની માલિશ કરવાનું વર્જિત હોવાથી શરીર બીલકુલ રૂક્ષ બની ગયેલ છે. સંજયસ્સ-સંયતસ્ય અને જે નિરતિચાર સંયમની આરાધના કરવામાં તપ્ત રહે છે તવસ્સિણો-તપસ્વિનઃ તથા અનશન આદિ તપ કરનાર હોવાથી કૃશ શરીરવાળા છે. અને જે તણેસુ સયમાણસ્સ-તૃણેષુ શયાનસ્ય દર્ભાદિક તૃણોની ઉપર સુવે છે, ઉપલક્ષણથી ઉપર બેસે છે, તેમના ગાયવિહારણા-ગાત્ર-વિરાધના શરીરમાં તૃણસ્પર્શજન્ય પીડા થાય છે.

ક્રિયા સર્વદા સોપયોગાઽલ્પા ચ ભવતીત્યાગન્તુકદ્વીન્દ્રિયાદિજીવાનાં વિરાધના ન સંભવત્યતસ્તે વદ્ધં ન સેવન્તે । સ્થવિરકલ્પિકાસ્તુ સાપેક્ષસંયમિનો ભવન્ત્યતસ્તે તાનિ દર્ભાદીનિ તૃણાનિ ભૂમાવાસ્તીર્યં તત્રાગન્તુકકન્થુપિપીલિકાદિજન્તુવિરાધના નિવારણાય પ્રાન્તભાગેષુ વેષ્ટનં યથા સ્યાત્તથા તદુપરિ સંસ્તારકં નિધાય શેરતે, આસતે ચ । એવં યઃ કઠોરકુશદર્ભાદિતૃણસંસ્પર્શં સમ્યક્ સહતે તેન મુનિના તૃણસ્પર્શપરીપહો વિજિતો ભવતિ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

શ્રાવસ્તીનગર્યાં જિતશત્રુનૃપસ્ય ભદ્રનામકઃ પુત્ર આસીત્ । સ ચૈકદા પદ્મનામકાચાર્યસ્ય સમીપે ધર્મં શ્રુત્વા પ્રવ્રજિતઃ । ક્રમાદ્ વહુશ્રુતો ભૂત્વાઽન્યદા કદાચિ-

उनके शरीर की हलनचलन आदि क्रिया उपयोगपूर्वक तथा अल्प होती है इससे उनके आगन्तुक द्वीन्द्रियादिक जीवों की विराधना का प्रायः संभव नहीं है इसलिये वे वस्त्र का सेवन नहीं करते हैं । स्थविर-कल्पिकमुनि प्रायः ऐसे न होने से दर्भादिक तृणों को भूमि पर बिछा कर उसमें आगन्तुक कुन्थु पिपीलिका आदि जन्तुओं की विराधना निवारण करने के लिये प्रान्त भागों में वेष्टन जिस प्रकार हो जाय इस रूप से उस के ऊपर संस्तारक बिछाकर सोते हैं और बैठते हैं । इस प्रकार जो कठोर कुशदर्भादिक तृणस्पर्श को अच्छी तरह सहन करता है वह मुनि तृणस्पर्शपरीपह का विजेता कहलाता है ।

દૃષ્ટાન્ત—શ્રાવસ્તી નગરી મેં જિતશત્રુ નામ કે રાજાં કા ભદ્ર નામ કા એક પુત્ર થા । પદ્મનામક આચાર્ય કે પાસે ઉસને એક સમય ધર્મ કા ઉપદેશ સુનકર દીક્ષા ધારણ કરલી । ક્રમ સે આગમોં કા

ચલન આદિ ક્રિયા ઉપયોગ પુરતી અને અલ્પ હોય છે. તેનાથી આવનાર દ્વિદ્વિન્દ્રિયાદિક જીવોની વિરાધના થવાનો સંભવ નથી. આ માટે તે વસ્ત્રનું સેવન કરતા નથી. સ્થવિરકલ્પિક મુનિ એવા ન હોવાથી દ્વિભોદિક તૃણોને ભૂમિ ઉપર બીછાવી તેમાં આવવાવાળા કંથવા, પીપીલીકા, આદિ જન્તુઓની વિરાધનાનું નિવારણ કરવા માટે પ્રાન્ત ભાગોમાં કાપા ન પડે તે માટે તેના ઉપર વસ્ત્ર બિછાવીને સુવે છે અને બેસે છે. આ પ્રકારે જે કઠોર કુશ-દર્ભાદિક તૃણસ્પર્શને સારી રીતે સહન કરે છે તે મુનિ તૃણસ્પર્શપરીપહના વિજેતા કહેવાય છે.

દૃષ્ટાન્ત—શ્રાવસ્તી નગરીમાં જિતશત્રુ નામના રાજાને ભદ્ર નામનો પુત્ર હતો. પદ્મ નામના આચાર્યની પાસે તેણે એક સમય ધર્મનો ઉપદેશ સાંભળી દીક્ષા ધારણ કરી લીધી. ક્રમથી આગમોનો અભ્યાસ કરી બ્યારે તે બહુશ્રુત

આતપસ્ય=ધર્મસ્ય નિપાતેન=સંપાતેન, અતુલા=મહતી દુઃસહા વેદના ભવતિ, આતપોત્પન્નસ્વેદક્લેદયશાત્-તૃણક્ષતે ધારસેચનેન સમુત્પન્ના વેદનેવ વેદના ભવતીતિ ભાવઃ. ૧. એવમ્=અનેન પ્રકારેણ જ્ઞાત્વાઽપિ તૃણતર્જિતાઃ=દર્મોદિતૃણક્ષતા મુનયઃ તન્તુજં-મૂત્રનિર્મિતં કાર્પાસિકમ્, ઝર્ણાતન્તુનિર્મિતં કમ્બલાદિકં વા વસ્ત્રમ્=આચ્છાદનવસ્ત્રં ન સેવન્તે ।

અર્થ ભાવઃ-શયને આસને ચ શુપિરવર્જિતતૃણસ્ય દર્મોદિઃ પરિભોગોઽનુજ્ઞાતો જિનકલ્પિકાનાં સ્થવિરકલ્પિકાનાં ચ । તત્ર જિનકલ્પિકાનાં મુનીનાં દૃઢસંહનન-પૂર્વગતજ્ઞાન - તીક્ષ્ણોપયોગનિદ્રાલ્પત્વાદ્યનેકપ્રશ્નગુણસમ્પન્નત્વેન સ્પન્દનચલનાદિ

૧. અન્વયાર્થ—(આયવસ્સ-આતપસ્ય) ધામ-ધૂપ કે (નિવાણં-નિપાતેન) પડને સે જો શરીર મેં પસીના આતા હૈ, વહ પસીના તૃણ-ક્ષત અર્થાત્ શરીર મેં તૃણ કે ચુમને સે ઉત્પન્ન હુણ ઘાવ મેં લગતા હૈ, તથા (અડલા વેયણા હવર્ડ-અતુલા વેદના ભવતિ) મહાવેદના હોતી હૈ । (એવં નચ્ચા-એવં જ્ઞાત્વા) એસી વેદના કા અનુભવ કરકે ખી (તણતજ્જિયા-તૃણતર્જિતાઃ) દર્મોદિજન્ય ઘાવ વાલે મુનિ (તંતુજં-તન્તુજમ્) ઝર્ણાદિક તન્તુઓં સે નિર્મિત કમ્બલાદિક તથા કપાસ સે નિર્મિત વસ્ત્રાદિકરૂપ આચ્છાદન વસ્ત્ર કા સેવન નહીં કરતે હૈ ।

હસકા ભાવ યહ હૈ—શયન ઓર આસન મેં નિશ્ચિદ્ર દર્મોદિક તૃણોં કા પરિભોગ જિનકલ્પિક તથા સ્થવિરકલ્પિક દોનોં કે લિયે અનુજ્ઞાત હૈ । જિસ મેં જિનકલ્પી મુનિ દૃઢસંહનન, પૂર્વોં કા જ્ઞાન, તીક્ષ્ણ ઉપયોગ તથા અલ્પનિદ્રા આદિ અનેક પ્રશ્ન ગુણવાલે હોને સે

અન્વયાર્થ—આયવસ્સ-આતપસ્ય ધામ તડકાના નિવાણં-નિપાતેન પડવાથી શરીરમાં જે પરસેવો આવે છે તે પરસેવો તૃણક્ષત અર્થાત્ શરીરમાં તૃણના સ્પર્શથી ઉત્પન્ન થયેલા ઘાવમાં લાગે છે ત્યારે અડલા વેયણા હવર્ડ-અતુલા વેદના ભવતિ ભારે વેદના થાય છે એવં નચ્ચા-એવં જ્ઞાત્વા એવી વેદનાનો અનુભવ કરીને પણ તણતજ્જિયા-તૃણ-તર્જિતાઃ દર્મોદિજન્ય ઘાવ વાળા મુનિએ તંતુજં-તન્તુજમ્ બનાવતાં તાંતણાઓથી બનાવેલ કમ્બલ આદિ તથા કપાસથી બનાવેલ વસ્ત્રાદિકેનું આચ્છાદન ન કરવું બેઠ્યો. એનો ભાવ આ પ્રમાણે છે, શયન અને આસનમાં છિદ્રો વગરના દર્મો આદિ ખડનો પરિભોગ જનકલ્પિક તથા સ્થવિરકલ્પિક બન્નેને માટે અનુ-જ્ઞાત છે; જેમાં જનકલ્પિ મુનિ તેને દૃઢતાથી સહન કરીને, પૂર્વજ્ઞાન, તીક્ષ્ણ ઉપયોગ, તથા અલ્પનિદ્રા આદિ પ્રશ્ન શુષ્ણવાળા હોવાથી તેના શરીરનું કલન

શરીરે પ્રત્યેકાવયવસ્ય માંસે વિદીર્યમાણેऽપિ ક્ષોભવર્જિતઃ શાન્તરસનિમગ્નો મહામુનિઃ
ક્ષમાનિધિઃ કલુષધ્યાનમકુર્વાણઃ સમાધિભાવેન પ્રવલામુજ્જ્વલાં દુઃસહાં ધોરાતિ-
ધોરવેદનાં સહતે સ્મ । इत्थं तृणस्पर्शपरीषहं विजित्य क्षपकश्रेणिमारुह्य केवली-
भूत्वा शिवपदं प्राप । एवमन्यैरपि मुनिभिस्तृणस्पर्शपरीषहः सोढव्यः ॥ ૩૫ ॥

અથાપ્ટાદશં જહ્નપરીપહજન્યં પ્રાહ—

મૂલમ્—કિલિષ્ણગાણ મેઘાવી, પંકેણ વં રણં વા ।

ધિંસુ વા પરિતાવેણં, સાંયં નો પરિદેવેણ ॥૩૬॥

છાયા—ક્લિષ્ણગાઃ મેઘાવી, પક્ષેન વા રજસા વા ।

ગ્રીષ્મે વા પરિતાપેન, સાતં નો પરિદેવયેત્ ॥ ૩૬ ॥

ટીકા—‘કિલિષ્ણગાણ’ इत्यादि ।

મેઘાવી=સ્નાનપરિત્યાગમર્યાદાવર્તી મુનિઃ, ગ્રીષ્મે, વા શબ્દાત્-શરદિ,

માંસ ક્ષારજલ સે વિદીર્ણ હોને પર મ્હી ક્ષોભ સે વર્જિત એવં શાંત
રસ મેં નિમગ્ન, એસે ડન ક્ષમા કે નિધિ મુનિરાજ ને કલુષધ્યાન નહીં
કરતે હુણ સમાધિભાવ સે ડસ ધોરાતિધોર પ્રવલ દુઃસહ વેદના કો
સહન કિયા । ઇસ પ્રકાર ડન્હોં ને તૃણસ્પર્શપરીષહ કો જીતકર અન્ત મેં
ક્ષપકશ્રેણી પર આરોહણ કરકે કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ સે શિવપદ
પ્રાપ્ત કર લિયા । ઇસી તરહ અન્ય મુનિયોં કો મ્હી તૃણસ્પર્શપરીષહ
સહન કરના ચાહિયે ॥ ૩૫ ॥

અવ અઠારવેં જહ્નપરીપહ કો જીતને કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં—

‘કિલિષ્ણગાણ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(મેઘાવી - મેઘાવી) સ્નાનપરિત્યાગરૂપ મર્યાદા મેં
રહને વાલા મુનિ (ધિંસુ-ગ્રીષ્મે) ગ્રીષ્મકાલ મેં (વા-વા) તથા શરત્કાલ

ખારા પાણીથી વિદીર્ણ થવાથી, ક્ષોભથી વર્જિત અને શાંત રસમાં નિમગ્ન એવા
તે ક્ષમાનિધિ મુનિરાજે કલુષભાવ ન રાખતાં સમાધીભાવથી એ ધોર અતિ ધોર
દુઃસહ વેદનાને સહન કરી. આ પ્રકારે તેઓએ તૃણસ્પર્શપરીષહને છતીને
અંતમાં ક્ષપકશ્રેણી પર ચઢીને કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિથી શિવપદ પ્રાપ્ત કરી
લીધું. આ રીતે અન્ય મુનિરાજોએ તૃણસ્પર્શપરીષહ સહન કરવો જોઈ એ ॥૩૫॥
હવે અઠારમો જહ્નપરીપહ છતવા માટે સૂત્રકાર કહે છે—

‘કિલિષ્ણગાણ’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—મેઘાવી-મેઘાવી સ્નાન પરિત્યાગરૂપ મર્યાદામાં રહેવાવાળા મુનિ ધિંસુ-

દેકાકિવિહારપ્રતિમાં પ્રતિપન્નઃ સન્નપ્રતિવદ્ધવિહારં વિહરતિ સ્મ । સ ચૈકદા વિહ-
રન્ ક્વાપિ રાજ્યાન્તરે ગતઃ । રાજપુરુષાઃ “હેરિકોડ્ય”-મિતિજ્ઞાત્વા તં ગૃહીત્વા
પમચ્છુઃ-બ્રૂહિ કસ્ત્વં ? કેન ગુપ્તચારત્વાય પ્રદિતોઽસિ ? । સ ભદ્રમુનિઃ પ્રતિમા-
ધારિત્વાત્ કિમપિ નોત્તરં દદૌ । તતસ્તે કુપિતાસ્તં ભદ્રમુનિં ક્ષુરેણ તક્ષયિત્વા જ-
સિધારાતુલ્યૈઃ ક્ષુરધારાતુલ્યૈઃ કુન્તાગ્રતુલ્યૈસ્તીક્ષ્ણધારૈર્દર્ભર્ગાદમાવેષ્ટ્ય ક્ષારવર્તિતં
કૃત્વા, ગતે નિપાત્ય સ્વસ્થાનં ગતવન્તઃ । અતિતીક્ષ્ણાગ્રૈઃ કુરૈર્વિધ્યમાને ક્ષારજલૈશ્ચ

અભ્યાસ કર જય વહ વહુશ્રુત હો ગયા તથા ઉસને એકાકિવિહાર
પ્રતિમા અંગીકાર કર અપ્રતિવદ્ધ વિહાર કરના પ્રારંભ કર દિયા । એક
દિન કી વાત હૈ કિ યે મુનિરાજ વિહાર કરતેર દૂસરે કિમી રાજ્ય મેં
જા પહુંચે । રાજપુરુષોં ને ઉન્હે “યહ કહીં કા ગુપ્તચર હૈ” એસા સમસ-
કર પકડ લિયા, ઓર પૂછને લગે-કહો કૌન હો ? કિસને તુન્હે લુપ્તિયા
પુલિસ કે વતૌર યહાં ખેજા હૈ । રાજપુરુષોં કી યહ વાત સુનકર પ્રતિમા-
ધારી હોને સે મુનિરાજ ને કુછ બી ઉત્તર નહીં દિયા । મુનિરાજ કી ઇસ
મૌન પરિસ્થિતિકા અવલોકન કર વે સવ કે સવ ઉન પર વહુત અધિક
કુપિત હુએ । ઉન્હેં ને પ્રકૃતિભદ્ર ઉન મુનિરાજ કો પ્રથમ ક્ષુરા સે
ઘાયલ કર પશ્ચાત્ તલવાર કી ધાર કે સમાન, ક્ષુરા કી ધાર કે સમાન,
એવં માલે કી નૉક કે સમાન તીક્ષ્ણ અનીવાલે વર્મોં સે ગાઢ વેષ્ટિત
કરકે ઓર ઉપર સે નમક મિલા હુઆ જલ છિડકકરકે એક સ્વેડે મેં
ઉનકો ઢાલ દિયા, ઓર વે સવ કે સવ અપનેર સ્થાન પર ચલે ગયે ।
અતિ તીક્ષ્ણ અનીવાલે કુશોં સે વીંધે ગયે શરીર કા પ્રત્યેક અવયવગત

ખની ગયા ત્યારે તેમણે એકાકી વિહાર પ્રતિમા અંગિકાર કરી, અપ્રતિવદ્ધ
વિહાર કરવાનો પ્રારંભ કર્યો. એક દિવસની વાત છે કે, આ મુનિરાજ વિહાર
કરતા કરતા ખીબા કોઈ રાજ્યમાં જઈ પહોંચ્યા રાજપુરુષોએ તેને “આ કોઈ
રાજ્યનો ગુપ્તચર છે” એમ સમજીને પકડી લીધા અને એને પૂછવા લાગ્યા કહો
તમે કોણ છો ? કોણે તમને ગુપ્ત વાતમીઠાર તરીકે અહિં મોકલેલ છે ? રાજ-
પુરુષોની એ વાત સાંભળી પ્રતિમા ધારી હોવાથી મુનિરાજે કાંઈ પણ ઉત્તર ન
આપ્યો. મુનિરાજની આ મૌન પરિસ્થિતિ જોઈ સઘળા તેના ઉપર ખૂબ જ
ક્રોધિત બન્યા. તેઓએ પ્રકૃતિભદ્ર તે મુનિરાજને પ્રથમ છરાથી ઘાયલ કરી
પછી તલવારની ધાર જેવા, છરાની ધાર જેવા, અને લાલાની અણી જેવા તીક્ષ્ણ
અણીવાળા દર્ભોથી ગાઢ વેષિત કરીને ઉપરથી મીઠાનું પાણી છાંટી એક ખાડામાં
નાખી દીધા અને બધા રાજપુરુષો પોત પોતાને સ્થાને આદ્યતા ગયા. અતિ
તીક્ષ્ણ અણીવાળા દર્ભોના પાનથી વીંધાયેલા શરીરના પ્રત્યેક અવયવમાંથી માંસ,

મૂલમ્—વેણ્જ નિજરાપેહી, આરિયં ધર્મમ્ ણુત્તરં ।

જાવ સરીરમેઓત્તિ, જહ્લં કાંણ ધારયે ॥૩૭॥

છાયા—વેદયેત્ નિજરાપેક્ષી, આર્ય ધર્મમ્ અનુત્તરમ્ ।

યાવત્ શરીરમેદઃ, ઇતિ જહ્લં કાયેન ધારયેત્ ।

ટીકા—‘વેણ્જ’ ઇત્યાદિ ।

નિજરાપેક્ષી=આત્યન્તિકકર્મક્ષયાભિલાષી મુનિઃ, આર્ય=હેયોપાદેયસ્વરૂપનિરૂપકમ્, અનુત્તરં=ન ધિયતે ઉત્તરમ્-ઉત્કૃષ્ટં યસ્માત્ સોઽનુત્તરસ્તં સર્વોત્તમમિત્યર્થઃ । ધર્મ=શ્રુતચારિત્રરૂપં પ્રાપ્તઃ ઇતિ શેષઃ । વેદયેત્-પ્રક્રમાત્ જહ્લજનિતં દુઃખં સહેત । ઇમમર્થં વિશદીકૃવન્ પ્રાહ—‘જાવ સરીરમેઓ’ ઇત્યાદિ । ઇતિ=અતો હેતોઃ—યાવત્-યાવતાકાલેન શરીરમેદઃ=દેહપાતઃ સ્પાત્, તાવત્કાલપર્યન્તં, જહ્લં=મલં, કાયેન=શરીરેણ ધારયેત્ ।

કરે કિ—“હા ! હસ મેલ કે નિવારણ સે મુક્તે સાતા અર્થાત્ સુખ કા અનુભવ કય ઓર કૈસે હોગા ?” હસ પ્રકાર વિલાપ ન કરે ॥ ૩૬ ॥

‘વેણ્જ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(નિજરાપેહી-નિજરાપેક્ષી) આત્યન્તિક રૂપ સે કર્મોં કે ક્ષયકા અભિલાષી મુનિ (આરિયં-આર્યમ્) હેય એવં ઉપાદેય કે સ્વરૂપ કા નિરૂપક (અણુત્તરં-અનુત્તરમ્) સર્વોત્કૃષ્ટ-જિસસે શ્રેષ્ઠ ઓર કોઈ દૂસરા નહીં હૈ-સર્વોત્તમ એસે (ધર્મ-ધર્મમ્) શ્રુતચરિત્રરૂપ ધર્મ કો પ્રાપ્ત કર (વેણ્જ-વેદયેત્) મેલ કે દુઃખ કો સહન કરે । ઉસકા કર્તવ્ય હૈ કિ (જાવ શરીરમેઓત્તિ-યાવત્ શરીરમેદ ઇતિ) જવ તક શરીર કા મેદ નહીં હોતા હૈ-મૃત્યુ દ્વારા શરીર કા વિયોગ નહીં

પરીપહજય છે. સાધુ સ્વપ્નામાં પણ સુખનો અનુભવ ક્યારે અને કેમ થશે. આ પ્રકારનો વિલાપ ન કરે ॥ ૩૬ ॥

‘વેણ્જ’-ઈત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—નિજરાપેહી-નિજરાપેક્ષી આત્યન્તિક રૂપથી કર્મોનો ક્ષય કરવાના અભિલાષી મુનિ આરિયં-આર્યમ્ હેય અને ઉપાદેયના સ્વરૂપના નિરૂપક અણુત્તરં-અનુત્તરમ્ સર્વોત્કૃષ્ટ બેનાથી શ્રેષ્ઠ બીજો કોઈ નથી. સર્વોત્તમ એવા ધર્મ-ધર્મ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને પ્રાપ્ત કરી વેણ્જ-વેદયેત્ મલના દુઃખને સહન કરે. તેનું, કર્તવ્ય છે કે જાવ શરીરમેઓત્તિ-યાવત્ શરીરમેદઃ ઇતિ જ્યાં સુધી શરીરનો ભેદ નથી, થતો-મૃત્યુ દ્વારા શરીરનો વિયોગ થતો નથી ત્યાં સુધી

વર્ષાસુ વા, પરિતાપેન=ઉષ્ણસ્પર્શેન, હેતુર્થે તૃતીયા । પક્કેન વા=પ્રસ્વેદાદાત્રીભૂતેન મલેન વા, રજસા વા=પરિશુષ્ય કાઠિન્યં પ્રાપ્તેન મલેન વા, યદ્વા-રજસા=ધૂલ્યા, ક્લિન્નગાત્રઃ=વ્યાપ્તદેહઃ, સન્ સાત્ત્વં=સુત્ત્વં સમાશ્રિત્ય ન પરિદેવયેત્—“હા ! મમ-મલાપગમઃ કથં કદા વા ભવિષ્યતી.” — તિ કૃત્વા ન વિલપેત્, વિલાપં ન કુર્યાદિતિ ભાવઃ ॥ ૩૬ ॥

મેં ઓર વર્ષાકાલ મેં (પરિતાપેન-પરિતાપેન) ઉષ્ણસ્પર્શ દ્વારા આવે હુણ (પંકેણ વ-પક્કેન વા) પ્રસ્વેદ દ્વારા ગીલે હુણ મૈલ સે (રણ વા-રજસા વા) યા પસીને મેં સંસક્ત ધૂલિ સે (કિલિણ્ણગાણ-ક્લિન્નગાત્રઃ) વ્યાપ્ત શરીર હોને પર ભી (સાચં નો પરિદેવણ-સાત્ત્વં નો પરિદેવયેત્) “હા મેરે હસ મૈલ કા નિચારણ કેસે ઓર કય હોગા” એસા વિચાર કર વિલાપ નહીં કરે । કિન્તુ ઉસ હાલત મેં ઉસ પરીપહ કો અચ્છી તરહ સહન કરે, હસકા નામ જહ્લપરીપહ જય હૈ ।

ભાવાર્થ—ગ્રીષ્મકાલ મેં યા વર્ષાકાલ મેં અધિક ગમી પડ્ને સે શરીર મેં અધિક પસીના આયા કરતા હૈ । ઉસસે શારીરિક મૈલ ઢીલાં પડ જાતા હૈ । રગડ્ને સે વહ ચિપકા હુઆ મૈલ શરીર સે અલગ હો જાતા હૈ । પુનઃ ઉસી સ્થાન પર ઉડી હુઈ રજ આકર લગ જાતી હૈ । ઉસસે શરીર મેં આકુલતા હોતી રહતી હૈ । હસ આકુલતા સે ન ઘબરા કર જો મુનિ ઉસ મૈલ સે સંસક્ત હોને કા પરીપહ સહન કરતે હૈં ઉસોકા નામ જહ્લપરીપહજય હૈ । સાધુ સ્વપ્ન મેં ભી યહ વિચાર ન

ગ્રીષ્મે ઉનાળાની ઋતુમાં તથા વા-વા શરદકાળ અને વર્ષાકાળમાં પરિતાપેન-પરિતાપેન ઉષ્ણસ્પર્શ દ્વારા આવેલા પંકેણ વ-પક્કેન વા પરસેવા દ્વારા પલળેલા મેલથી રણ વા-રજસા વા અગર પરસેવામાં લળેલ ધૂળથી કિલિણ્ણગાણ-ક્લિન્નગાત્રઃ વ્યાપ્ત શરીર બનવા છતાં પણ સાચં નો પરિદેવણ-સાત્ત્વં નો પરિદેવયેત્ ભારા આ મેલનું નિવારણ કેમ અને કયારે થશે ” એવો વિચાર કરી વિલાપ ન કરે. પરંતુ તેવી હાલતમાં તે પરીપહને સારી રીતે સહન કરે તેનું નામ જહ્લમલ્લ પરિપહ જય છે.

ભાવાર્થ—ગ્રીષ્મકાળમાં યા વર્ષાકાળમાં અધિક ગરમી પડવાથી શરીરમાં અધિક પરસેવા વળે છે તેનાથી શરીર ઉપરનો મેલ ઢીલો પડે છે ચોળવાથી તે ચોટેલ મેલ શરીરથી છુટો પડે છે. ફરી એજ સ્થળે ઉડતી રજ આવીને ચોટે છે તેનાથી શરીરમાં આકુળતા થતી રહે છે. આથી એ આકુળતાથી ન ગભરાતાં જે મુનિ તે મેલનો સંસક્તપરીપહ સહન કરે છે એનું નામ જહ્લમલ્લ

અન્યચ—અત્યન્તમલિનો દેહો, દેહી ચાત્યન્તનિર્મલઃ ।

ઉભયોરન્તરં જ્ઞાત્વા, કસ્ય શૌચં વિધીયતે ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

અત્યન્તમલિનો દેહો, દેહી ચાત્યન્તનિર્મલઃ ।

ઉભયોરન્તરં જ્ઞાત્વા, કસ્ય શૌચં વિધીયતે ॥ ૨ ॥

ક્યોં કિ માતાપિતા કે રજવીર્ય સે યહ શરીર અપવિત્ર હી સ્વભાવતઃ ઉત્પન્ન હુઆ હૈ । જવ કારણ સ્વયં અશુચિસ્વરૂપ હૈ તો ઉસકા કાર્યરૂપ યહ શરીર શુચિ કૈસે હો સકતા હૈ । પ્યાજ કો યા લહસુન કો ક્ષીરસમુદ્ર કે જલ સે પ્રક્ષાલિત કરને પર ભી જૈસે ઉસમેં નિર્ગન્ધતા નહીં આ સકતી હૈ ઉસી પ્રકાર હજારોં વાર સ્નાન કરને પર ભી ઇસ અપવિત્ર શરીર મેં ભી નિર્મલતા-શુચિતા નહીં આ સકતી હૈ, ક્યોં કિ યહ નિરન્તર નૌ દ્વારોં સે મલ કો વહાતા હી રહતા હૈ । દેહ કા જવ સ્વભાવ એસા હૈ તો ફિર ઇસકી શુચિવિધાયક સાધન હી યહાં કૌન સે એકત્રિત કિયે જા સકતે હૈં । જો મૈં હૂં વહ તો પવિત્ર હૂં અત્યંત નિર્મલ હૂં । જિસ પ્રકાર વસ્તુસ્થિતિ સે વિચાર કરને પર શૌચાલય મેં રહ્યા હુઆ આકાશ અપવિત્ર ન હો સકતા હૈ ઉસી પ્રકાર ઇસ અપવિત્ર દેહ મેં નિવાસ કરને વાલા યહ આત્મા ભી અપવિત્ર નહીં હોતા હૈ, વહ તો સદા અત્યંત નિર્મલ હૈ । ઇસ પ્રકાર શરીર ઔર આત્મામેં અન્તર જાનકર જ્ઞાની સદા એસા વિચાર કરતા રહે કી મૈં અવ

અત્યંતમલિનો દેહો, દેહી ચાત્યન્તનિર્મલઃ ।

ઉભયોરન્તરં જ્ઞાત્વા, કસ્ય શૌચં વિધીયતે ॥ ૨ ॥

કેમકે, માતા પિતાના રજવિર્યથી આ શરીર અપવિત્ર જ સ્વભાવતઃ ઉત્પન્ન થયેલ છે. બ્યારે કારણ સ્વયં અશુચિ સ્વરૂપ છે તો તેના કાર્ય રૂપ આ શરીર શુચિરૂપ કઈ રીતે ગણાય, ડુંગળીને અથવા લસણને સમુદ્રના પાણીથી ધોવાથી પણ તેમાં નિર્ગંધતા આવી શકતી નથી તેવી રીતે હબ્બરો વાર સ્નાન કરવા છતાં પણ આ અપવિત્ર શરીરમાં નિર્મળતા-શુચિતા આવતી નથી. કેમકે, આ શરીર નિરંતર નવ દ્વારોથી મળને બહાર કાઢ્યા જ કરે છે. દેહનો બ્યારે સ્વભાવ એવો છે તો પછી એના શુચિ વિધાયક સાધન જ ક્યાંથી મેળવી શકાય. જે હું છું તે તો સદા પવિત્ર જ છું, અત્યંત નિર્મળ છું, જે પ્રકારથી વસ્તુ સ્થિતિનો વિચાર કરવા છતાં, શૌચાલયમાં રહેલું આકાશ અપવિત્ર બની શકતું નથી તેવીજ રીતે દેહમાં નિવાસ કરવાવાળો આ આત્મા પણ અપવિત્ર હો તો નથી. તે તો સદા નિર્મળ જ છે. આ પ્રકારે શરીર અને આત્મામાં અંતર બાણી જ્ઞાની એવો સદા

દશ્યન્તે હિ કેચિદ્ દાવાનલદગ્ધસ્થાણુવત્ કાલવર્ણાઃ શ્રીતવાતાદિમિલપ્તા ધૂલિવ્યાપ્તા મલિનદેહા મનુષ્યાઃ। તેષામકામનિર્જરયા નાસ્તિ કશ્ચિદ્ ગુણઃ, મમ તુ મલધારणेન મહાન્ ગુણઃ, इति मत्वा मन्नापनयनाय स्नानाद्यभिलाषमपि न कदाचित् कुर्यादित्यर्थः । उक्तञ्च—

न शक्यं निर्मलीकर्तुं गात्रं स्नानशतैरपि ।

अश्रान्तमिव स्रोतोभि, - नैवभिर्मलमुद्गिरत् ॥ ૧ ॥

હોતા હૈ તય તક વહ (કાણ-કાપેન) શરીર સે (જલ્લં ધારણ-જલ્લં ધારયેત્) મેલ કો ધારે । ઉસે યહ વિચાર કરતે રહના ચાહિયે કિ હસ સંસાર મેં એસે અનેક પ્રાણી-મનુષ્ય દેખે જાતે હૈં । જો દાવાનલ સે દગ્ધ સ્થાણુ કી તરહ ધિલકુલ કૃષ્ણવર્ણ હોતે હૈં । ઉનકા શરીર શીતવાત આદિ સે સદા પીડિત હોતા રહતા હૈં । ધૂલિ સે વ્યાપ્ત હોને કે કારણ અત્યન્ત મલિન હોતા હૈં । પરન્તુ ફિર બી હનકો હસકી ચિન્તા નહીં હોતી હૈં । અકામ નિર્જરા સે હનકો હતના સબ કુછ સહન કરને પર બી કોઈ લાભ નહીં । મેરે લિયે તો હસ મેલ ધારણ કરને સે મહાન્ લાભ હૈ, અતઃ હસકે દૂર કરને કે લિયે મુશ્કે સ્નાન આદિ સાવધક્રિયાઓં કી અભિલાષા સ્વપ્ન તક મેં બી નહીં કરની ચાહિયે । કહા બી હૈ—

न शक्यं निर्मलीकर्तुं, गात्रं स्नानशतैरपि ।

अश्रान्तमिव स्रोतोभि, - नैवभिर्मलमुद्गिरत् ॥ ૧ ॥

કાણ-કાપેન તે શરીરથી જલ્લં ધારણ-જલ્લં ધારયેત્ મેલને રાખે. તેણે એ વિચાર કરતા રહેવું બોધ્યે કે, આ સંસારમાં એવાં અનેક પ્રાણી, મનુષ્ય દેખવામાં આવે છે જે દાવાનળથી દગ્ધ પાણુની જેવા તદ્દન કાળા સ્વરૂપના બે હોય છે. તેનું શરીર શીત, વાત આદિથી સદા પીડિત રહે છે. ધૂળથી ભરેલું હોવાને કારણે અત્યંત મલીન હોય છે, છતાં પણ એમને એની ચિન્તા હોતી નથી. અકામનિર્જરાથી એમને એટલું બધું સહન કરવા છતાં પણ કોઈ લાભ નથી. મારા માટે તો આ મેલનો પરિવહ સહન કરવાથી મહાન લાભ છે, આથી તેને દૂર કરવા માટે મારે સ્નાન આદિ સાવધક્રિયાઓની અભિલાષા સ્વપ્ને પણ ન કરવી બોધ્યે. કહ્યું પણ છે.—

न शक्यं निर्मलीकर्तुं, गात्रं स्नानशतैरपि ।

अश्रान्तमिव स्रोतोभि, - नैवभिर्मलमुद्गिरत् ॥ ૧ ॥

મુનિનિન્દયા દુષ્કર્મ વદવાન્ । કાલમાસે કાલં કૃત્વા શ્રાવકત્વાત્ સૌધર્મે કલ્પે
દેવત્વં પ્રાપ્તવાન્ । તત્શ્ચ્યુતથાસૌ કૌશામ્બીનગરે ઇમ્યસ્ય વસુચન્દ્રશ્રેષ્ઠિનઃ પુત્રોઽભવત્ ।
સ શ્રેષ્ઠિપુત્રો વિશુદ્ધમતિનામ્ના પ્રસિદ્ધો જાતઃ ।

સ ચૈકદા વિશાસ્ત્રાચાર્યસમીપે ધર્મં શ્રુત્વા પ્રવ્રજિતઃ । અન્યદા કદાચિત્ તસ્ય
વિશુદ્ધમતિમુનેઃ પૂર્વભવકૃતમલિનમુનિનિન્દોપાર્જિતકર્મોદયાત્ દેહેઽતિદુર્ગન્ધઃ સમુ-
ત્પન્નઃ । શતિતસર્પાદિમૃતકગન્ધાદપ્યધિકં વિશુદ્ધમતિમુનિદેહભવં દુર્ગન્ધં કોઽપિ સોઢું
નાશકત્ । સર્વો લોકસ્તદ્વપુઃસ્પૃષ્ટવાયુનાઽપિ વ્યાકુલીકૃતઃ સન્નિતસ્તતઃ પલાયતે ।

કારણ મૈલ સે ભરા રહતા હૈ । ફિર भी ये लोग अपने को बहुत ऊँचा
समझते रहते हैं और इधर से उधर भटकते रहते हैं । इस प्रकार
मुनि की निंदा से उसने गाढ़ दुष्कर्म का बंध कर लिया, और श्रावक
होने की वजह से वह मर कर सौधर्म देवलोक में देवपर्याय से
उत्पन्न हुआ । वहां से च्यवकर यह कौशाम्बी नगरी में वसुचंद्र नामक
इभ्य-शेठ का पुत्र हुआ । उसका नाम विशुद्धमति रक्खा गया ।

एक दिनकी बात है कि विशुद्धमति ने विशास्त्राचार्य के पास धर्म
श्रवणकर दीक्षा ले ली । कालान्तरमें विशुद्धमति मुनिके शरीरमें सुनंद
वणिक्के भवमें की गई मुनिनिन्दासे उपार्जित पापकर्म के उदय से अति
दुर्गन्ध आने लगी । सड़े हुए सांप आदिकी जैसी दुर्गन्ध होती है
उससे भी अधिक दुर्गन्ध इनके शरीर की थी, अतः उस दुर्गन्ध को
सहन करने के लिये कोई भी समर्थ नहीं हुआ । उसके शरीर को
स्पर्शकर जो वायु आता था लोग उस वायु से भी घबरा जाते थे ।

પણ આ લોકો પોતાને ખૂબજ ઉંચા સમજે છે અને અહીં તહીં ભટકતા
રહે છે. આ પ્રકારની મુનિની નિંદાથી તેણે ગાઢ દુષ્કર્મના બંધ કરી લીધો
અને શ્રાવક હોવાના કારણે તે મરીને સૌધર્મ દેવલોકમાં દેવ પર્યાયથી ઉત્પન્ન
થયો. ત્યાંથી ચવીને તે કૌશામ્બી નગરીના વસુચંદ્ર નામના ઇમ્ય-શેઠના પુત્ર
થયો. તેનું નામ વિશુદ્ધમતિ રાખવામાં આવ્યું.

એક દિવસની વાત છે કે, વિશુદ્ધમતિએ વિશાખાચાર્યની પાસે ધર્મ શ્રવણ
કરી દીક્ષા લઈ લીધી કાળાન્તરમાં વિશુદ્ધમતિ મુનિના શરીરમાં સુનંદ વણી-
કના ભવમાં કરાયેલ મુનિ નિંદાથી ઉપાર્જન કરેલ પાપકર્મના ઉદયથી અતિ
દુર્ગંધ આવવા લાગી. સડેલા સર્પ વગેરેની જે દુર્ગંધ આવે છે તેનાથી પણ
અધિક દુર્ગંધ તેના શરીરની હતી. આથી એ દુર્ગંધને સહન કરવા કોઈ સમર્થ
ન બન્યું, તેના શરીરને સ્પર્શ કરીને જે પવન આવતો તે પવનથી પણ લોકો

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

ચંપાનગર્યાં સુનન્દનામા ધનાઢ્યો ઘણિક શ્રાવક આસીત્ । સંવહુવિધપણ્ય-
ર્વ્યવહારકરણેન જાતાભિમાનો વિવેકરહિતઃ કદાચિદેકદા સાધુ દૃષ્ટ્વા નિન્દતિ
સ્મ—અહો ! શરીરસંસ્કારવર્જિતાઃ અભદ્રવેષા ધૂલિધૂસરા ધર્માદિસમુત્પન્નમલા-
નપનયનેન મલિનશરીરાઃ પુનરપિ સ્વેપં મન્યમેવ મન્યમાના વિહરન્તિ । સ ચૈવં
સ્નાનાદિકં સે કિસકો શુચિં કરૂં ? જિસ શરીરકી શુચિં હન સ્નાનાદિ
ક્રિયાઓં સે કરના ચાહતા હું વહ તો સ્વભાવ સે હી અપવિત્ર હૈ, તથા
આત્મા પવિત્ર હોને સે ઉસકી શુચિ કરને કા પ્રયાસ વ્યર્થ હૈ । એસા
સમજકર સાધુ જલપરીપહ કો સહન કરે ।

દૃષ્ટાન્ત—ચંપાનગરી મેં સુનંદ નામકા એક ધનાઢ્ય વૈશ્ય શ્રાવક
રહતા થા । હસકા વ્યાપાર સૂચ ચલતા થા । અનેક ચીજોં કા રોજગાર
યહ કિયા કરતા થા । હસસે દુકાનદારી મેં હસકો અધિક લાભ હોતા
થા, હસલિયે હસે અપની દુકાનદારી કા યહુત કુછ અભિમાન થા ।
વિવેક સે રહિત હોને કે કારણ એક દિન કી યાત હૈ કિ હસને કિસી
એક સાધુ કો દેખકર ઉસકી ભારી નિંદા કી । કહને લગા—દેખો તો
સહી યે શરીર કે સંસ્કાર સે બિલકુલ વર્જિત રહતે હૈ, હનકા વેષ ભી
અદ્રપુરુષોં જૈસા નહીં હોતા હૈ, શરીર પર તો હનકે ધૂલ ચઢી રહતી હૈ ।
યે નહાતે ધોતે નહીં હૈ । રાત દિન પસીના આવતે રહનેસે કપડે ભી હનકે
બુરી તરહ સે દુર્ગન્ધ દેને લગતે હૈ । શરીર ભી પસીને સે તર હો જાને કે

વિચાર કરતો રહે કે, હું હવે સ્નાન આદિથી કેની શુદ્ધિ કરૂં ? જેની શુદ્ધિ
આવી સ્નાનાદિક ક્રિયાઓથી કરવા ચાહું છું તે તો સ્વભાવથી જ અપવિત્ર
છે. તથા આત્મા પવિત્ર હોવાથી એની શુદ્ધિ કરવાનો પ્રયાસ વ્યર્થ છે એવું સમજીને
સાધુ જળપરીપહને સહન કરે.

દૃષ્ટાન્ત—ચંપાનગરીમાં સુનંદ નામનો એક ધનાઢ્ય વૈશ્ય-શ્રાવક રહેતો.
હતો. તેનો વેપાર ખૂબ ચાલતો હતો. અનેક ચીજોનો રોજગાર તે કરતો હતો.
તેનાથી દુકાનદારીમાં તેને અધિક લાભ થતો હતો. તેને પોતાની દુકાનદારીનું
ધણું અભિમાન હતું. વિવેકથી રહિત હોવાના કારણે એક દિવસની યાત છે કે,
તેણે કોઈ એક સાધુને બોધને તેની ખૂબ નિંદા કરી, કહેવા લાગ્યો કે, જુઓ
તો ખરા ! આ શરીરના સંસ્કારથી તદ્દન વર્જિત રહે છે. તેનો વેષ પણ ભદ્ર
પુરૂષો જેવો નથી. શરીર ઉપર તો ધૂળ ચોટેલી રહે છે, એ નાતા ધોતા નથી,
રાત દિવસ પરસેવો આવતો હોવાથી તેમનાં કપડાં પણ દુર્ગન્ધ માસતાં હોય
છે અને શરીર પણ પરસેવાથી તર હોવાને કારણે બેઠથી ભરેલું રહે છે. તો

अथैकोनविंशतितमं सत्कारपुरस्कारपरीपहजयं प्राह—

मूलम्—अभिवायमवभुट्टाणं, सामी कुज्जा निमंतणं ।

जे ताइं पडिसेवन्ति, ने तेसिं पीहए मुंणी ॥३८॥

छाया—अभिवादम् अभ्युत्थानं, स्वामी कुर्यात् निमन्त्रणम् ।

ये तानि प्रतिसेवन्ते, न तेभ्यः स्पृहयेत् मुनिः ॥ ३८ ॥

टीका—‘अभिवाय०’ इत्यादि ।

स्वामी=राजादिकः, अभिवादम्-अभिवादनम्-‘शिरोनमनचरणस्पर्शनादिपूर्व-
कमभिवादये प्रणमामी’त्यादिवचनरूपं पुरस्कारं, तथा-अभ्युत्थानम्=अभिमुखमु-
त्थानम्-ससंभ्रममासनं परित्यज्योत्थानरूपं पुरस्कारं च, तथा-निमन्त्रणम्-
आहारादिग्रहणाय प्रार्थनम्, ‘अद्य मद्गृहे भिक्षा ग्रहीतव्या’ इत्यादिवचनरूपं

जन्ममरण से सदा के लिये विमुक्त हो गये। इसी तरह अन्य मुनियों
को भी जल्लपरीपह सहन करना चाहिये ॥ ३७ ॥

अब उन्नीसवां सत्कारपुरस्कारपरीपहजय को सूत्रकार कहते हैं-
‘अभिवायं’-इत्यादि ।

अन्वयार्थ—यदि (सामी-स्वामी) राजा आदि (अभिवायं अवभु-
ट्टाणं निमंतणं-अभिवादनं अभ्युत्थानम् निमन्त्रणं) अभिवादन-अपने
मस्तक को झुकाकर चरणस्पर्श करते हुए नमस्कार करें, तथा अभ्यु-
त्थान-मुनि को आते देखकर बड़े आदरभाव से अपने आसन का
परित्याग कर वे उठ खड़े हों और मुनि के सन्मुख जावें, तथा-निमं-
त्रण-आहार आदि के ग्रहण करने के लिये प्रार्थना करें कि महाराज !
आज आप मेरे घर पर भिक्षा लें, इस प्रकार अभिवादन, अभ्युत्थान

इत्याद्यु साधीने नमभरषुथी सहने भाटे विमुक्त भणी गया. आ रीते अन्य
मुनिओअये पषु नणपरीपहने सहन करवे लोधये. ॥ ३७ ॥

हुवे ओगळीसमे सत्कारपुरस्कारपरीपह एतवाने सूत्रकार कहे छे.

‘अभिवायं’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—यदि सामी-स्वामी राजा वगैरे अभिवायं अवभुट्टाणं निमंतणं-अभिवादनं
अभ्युत्थानम् निमन्त्रणम् पोताना मस्तकने झुकावी अर्षुस्पर्श करी नमस्कार करे,
तथा अभ्युत्थान-मुनिने आवता लोधने धरु आदरभावथी पोताना आसनने
परित्याग करी ते उठीने उभा रहे अने मुनिनी साथे जयं, तथा निमंत्रण-
आहार आदि ग्रहण करवा भाटे प्रार्थना करे के, महाराज ! आज आप मेरा
घर भिक्षा लें. आ प्रकारे अभिवादन, अभ्युत्थान तथा निमंत्रण कुज्जा-कुर्यात्

યત્ર યત્રાસૌ ભિક્ષાઘર્થે યાતિ તત્ર તત્ર લોકસ્તદ્ગન્ધેન વિમના ભવતિ । મુનિશ્ચ તિરસ્કારં પ્રાપ્નોતિ તથાપ્યસૌ જહ્લપરીપદં સદતે ।

તદનન્તરં વિશાખાચાર્યસ્તમત્રવીત્-વત્સ ! ત્વદ્દેહદૌર્ગન્ધ્યાદ્ મૃશમુદ્દેગો જનાનાં જાયતે, તસ્માદુપાશ્રય એવ ત્વયા સ્થાતવ્યં, ન તુ વહિર્ગૃહસ્યસંનિધૌ ગન્તવ્યમ્ ।
 इत्थं तद्वचनं निशम्य विशुद्धमतिमुनिस्तस्मिन्नेवोपाश्रये स्थितः । अन्तप्रान्ताहारेण दुर्बलशरीरोऽसौ विशुद्धमतिमुनिः स्वगुरुं प्रार्थ्य तदाज्ञामादाय पादपोषगमनं कृत्वा स्वकल्याणं साधयामास । एवमन्यैर्मुनिभिर्जह्लपरीपदः सोढव्यः ॥ ३७ ॥

જહાં જહાં યે ભિક્ષા કે લિયે જાતે વહારં લોગ ઉનકે શરીર કી દુર્ગન્ધ સે વ્યાકુલ હો ઉઠતે । હસ દુર્ગન્ધ કે કારણ મુનિરાજ કા બી તિરસ્કાર હોને લગા । ફિર બી ઉન્હોં ને હસ તર્ફ ધ્યાન નહીં દિયા ઓર જહ્લ-પરીપદ્દ કો જીતને મેં હી વે અપની સારી શક્તિ લગાતે રહે ।

વિશાખાચાર્ય ને એક દિન હનસે કહા વત્સ ! તુમ્હારે શરીર કી દુર્ગન્ધ સે લોગોં મેં યડા અસન્તોષ ફેલ રહા હૈ વે વડે ઉદ્વિગ્ન હોતે હૈ, હસલિયે તુમ અવ કહીં ન જાકર સિર્ફ ઉપાશ્રય મેં હી રહા કરો । હસ પ્રકાર ગુરુ મહારાજ કે વચન સુનકર વિશુદ્ધમતિ મુનિરાજ અવ ઉપાશ્રય મેં હી રહને લગે-વાહર ગૃહસ્થોં કે યહાં આના જાના ચંદ કર દિયા । અન્ત પ્રાન્ત આહાર સે હનકા શરીર બી દુર્બલ હો ગયા થા, અતઃ અપને ગુરુ મહારાજ સે પ્રાર્થના કર હન્હોં ને ઉનકી આજ્ઞાનુસાર પાદપોષગમન સંધારા ધારણ કર લિયા ઓર અપના કલ્યાણ સાધ કર

ગભરાઈ જતા હતા. જ્યાં જ્યાં એ ભિક્ષા લેવા જતા ત્યાં ત્યાં લોકો એના શરીરની દુર્ગંધથી વ્યાકુળ બની જતા. અને આ દુર્ગંધના કારણે જ્યાં ત્યાં મુનિશબ્દને પણ તિરસ્કાર થવા લાગ્યો. તે પણ તેમણે એ તરફ ધ્યાન ન આપ્યું. અને જહ્લપરીપદ જીવતામાં જ પોતાની બધી શક્તિ લગાડી રહ્યા.

વિશાખાચાર્યે તેને એક દિવસ કહ્યું, હે વત્સ ! તમારા શરીરની દુર્ગંધથી લોકોમાં ઘણો અસંતોષ ફેલાઈ રહ્યો છે. આથી ઘણા ઉદ્વિગ્ન બને છે, માટે તમે હવે ક્યાંય ન જતાં ફક્ત ઉપાશ્રયમાં જ રહ્યા કરો. આ પ્રકારનું શુરુમહારાજનું વચન સાંભળીને વિશુદ્ધમતિ મુનિરાજ હવે ઉપાશ્રયમાં જ રહેવા લાગ્યા. બહાર ગૃહસ્થોને ત્યાં જવા આવવાનું બંધ કરી દીધું. અન્ત પ્રાન્ત આહારથી તેમનું શરીર પણ દુર્બળ થઈ ગયું, અતે પોતાના શુરુમહારાજને પ્રાર્થના કરી તેમની આજ્ઞા અનુસાર પદપોષગમન સંધારી ધારણ કર્યો. આ

छाया—अनुत्कशायी अल्पेच्छः, अज्ञातैषी अलोलुपः ।

रसेषु नानुगृध्येत्, नानुवप्येत प्रज्ञावान् ॥ ३९ ॥

टीका—‘अणुकसाई’ इत्यादि ।

अनुत्कशायी=अनुत्कः-अनुत्कण्ठितः शेते, धातूनामनेकार्थत्वाद् वर्तते इत्येवं शीलः सत्कारादिवाञ्छारहित इत्यर्थः, यद्वा-प्राकृतत्वाद्-‘अणुकपायी’ इति-च्छाया । अल्पकपायी-कपायरहित इत्यर्थः-वन्दनादिकमकुर्वते न कुध्यति, वन्दनादौ कृते वा न मानं कुरुते न वा तदर्थं शीतोष्णाऽऽतापनादिभिर्मायां करोति, न चापि तत्र लोभं करोतीति भावः । अत एव-‘अल्पेच्छः’=धर्मोपकरणमात्राभिलाषी, न तु सत्कारपुरस्काराभिलाषीत्यर्थः । अत एव-अज्ञातैषी-अज्ञातः=जातिश्रुतादिभिरपरिचितो भूत्वा एषयति-गवेपयति पिण्डादिकं, यः स तथा, यद्वा-अज्ञाते=अज्ञातकुले एषयति=गवेपयति पिण्डादिकं यः स तथा, तत्र हेतुं प्रदर्शयति

अयं सूत्रकार इसी अर्थको विशद करते हैं-‘अणुकसाई’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(अणुकसाई-अनुत्कशायी) सत्कार आदि की अभिलाषा रहित अथवा अल्पकपाय वाला-सत्कारादि विषयक कपायभाव रहित, अर्थात्-वन्दना आदि नहीं करने वाले के प्रति क्रोध नहीं करने वाला, तथा वन्दनादि करने पर अभिमान नहीं करने वाला, तथा मान सन्मान आदि के निमित्त शीत, उष्ण, आतापना आदि द्वारा मायाचार नहीं करने वाला, तथा उस विषय में लोभ-कपाय भी नहीं करने वाला, (अपिच्छे-अल्पेच्छः) तथा अल्पइच्छावाला धर्मोपकरणमात्र की अभिलाषा वाला सत्कारपुरस्कार आदि की अभिलाषा वाला नहीं, तथा (अन्नाएसी-अज्ञातैषी) जाति एवं श्रुत आदि से अपरिचित होकर शुद्ध पिण्डादिक की गवेपणा करने वाला, अथवा-अज्ञातकुल में

हुवे सूत्रकार आ अर्थने स्पष्ट करे छे-‘अणुकसाई’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—अणुकसाई-अनुत्कशायी सत्कार आदिनी अभिलाषाथी रहित अथवा अल्प कपायवाला-सत्कारादि विषयक कपायभाव रहित, अर्थात्-वन्दना आदि न करना तरङ्ग क्रोध नहीं करवावाला तथा वन्दनादि करवायी अभिमान नहीं करवावाला तथा मान सन्मान आदि निमित्त शीत, उष्ण, आतापना आदि द्वारा मायाचार नहीं करवावाला तथा ये विषयमां दोष कपाय पक्ष नहीं करवावाला अपिच्छे-अल्पेच्छः तथा-अल्प इच्छावाला-धर्मोपकरण मात्रा की अभिलाषावाला-सत्कार पुरस्कार आदिनी अभिलाषावाला नहीं तथा अन्नाएसी-अज्ञातैषी जाति अगर श्रुत आदिथी अपरिचितानीने शुद्ध पिण्डादिकनी गवेपणा

સત્કારં કુર્યાત્, તાનિ=અભિવાદાદીનિ યે સ્વયૂથવર્તિનઃ અવસન્નપાર્શ્વસ્થાદયઃ, પરતીર્થિકા દણ્ડિશાક્યાદયો વા દ્રવ્યલિઙ્ગિનઃ પ્રતિસેવન્તે=આગમનિપિદ્ધાન્યપિ સ્વીકુર્વન્તિ, તેભ્યઃ=ઋદ્ધિરસસાતગૃદ્ધિયુક્તેભ્યઃ, મુનિઃ=અનગારઃ ન સ્પૃહયેત્, રાજાદિકૃતસત્કારપુરસ્કારો પ્રતિસેવમાનાન્ દ્રવ્યલિઙ્ગિનઃ સાધૂન્ વિલોક્ય-“અહો! પુણ્યશાલિનોઽમી પાર્શ્વસ્થાદયઃ શાક્યાદયથ યદેતાદૃશં ચન્દનાભ્યુત્થાનાદિસત્કારં પ્રાપ્નુવન્તિ, અતોઽહમપ્યેતાદૃશો ભવામી”-તિ મુનિસ્તત્સામ્યં ન વાઙ્છેદિત્યર્થઃ ॥૩૮॥

અમુમેવાર્થે વિશદયતિ—

મૂલમ્-અણુકેસાઈ અપિચ્છે, અન્નાપંસી અલોલુપ્તે ।

રસેસુ નાણુંગિઙ્ગિજ્ઞા, નાણુંતપ્પિજ્ઞ પેણવં ॥૩૯॥

તથા નિમંત્રણ (કુઙ્ગા-કુર્યાત્) કરે ઓર (તાઈ-તાનિ) ડનકો (જે-યે) જો સ્વયૂથવર્તી અવસન્ન પાસત્થ આદિ, અથવા પરતીર્થિક દણ્ડિશાક્યાદિક દ્રવ્યલિઙ્ગી સાધુ (પડિસેવન્તિ-પ્રતિસેવન્તે) સેવન કરતે હૈં ડનકો સ્વીકાર કરતે હૈં તો (મુણી તેસિં ન પીહણ-મુનિઃ તેભ્યઃ ન સ્પૃહયેત્) મુનિ ડન ઋદ્ધિરસસાતગૃદ્ધિયુક્તોં કી સ્પૃહા ન કરે રાજા આદિ દ્વારા કિયે ગયે સત્કાર પુરસ્કાર કો પ્રતિસેવન કરને વાલે અવસન્નપાર્શ્વસ્થાદિ દ્રવ્યલિઙ્ગી સાધુઓં કો દેવકર “અહો! યે અવસન્ન પાર્શ્વસ્થાદિક તથા શાક્યાદિક વહે હી પુણ્યશાલી હૈં જિસસે યે હિસ પ્રકાર કે વન્દન અભ્યુત્થાન આદિ સત્કાર કો પાતે હૈં અતઃ મૈં ખી ડનકો જૈસા હોઝં તો અચ્છા હો” હિસ પ્રકાર અણગાર-મુનિ ડનકી સમાનતા કી અર્થાત્ ડનકે જૈસા હોને કી વાચ્છા નહીં કરે ॥ ૩૮ ॥

કરે અને તાઈ-તાનિ એમને જે-યે જે સ્વયૂથવર્તી અવસન્ન પાસત્થ આદિ અથવા પરતીર્થિક દંડી, શાક્યાદિક દ્રવ્યલિંગી સાધુ પડિસેવન્તિ-પ્રતિસેવન્તે સેવન કરે છે-એનો સ્વીકાર કરે છે મુણી તેસિં ન પીહણ-મુનિઃ તેભ્યઃ ન સ્પૃહયેત્ તો મુનિ એ ઋદ્ધિરસ સાત ગૃદ્ધિયુક્તોની સ્પૃહા ન કરે. રાજા આદિ દ્વારા કરાયેલા સત્કાર પુરસ્કારનું પ્રતિસેવન કરવાવાળા અવસન્ન પાર્શ્વસ્થાદિ દ્રવ્યલિંગી સાધુઓને જોઈને “અહો” એ અવસન્ન પાર્શ્વસ્થાદિક તથા શાક્યાદિક ઘણા જ પુણ્યશાળી છે, જેથી તે આ પ્રકારનાં વંદન અભ્યુત્થાન આદિ સત્કાર પામે છે. એથી હું પણ એમના જેવો થાઉં તો સારું થાય. આ પ્રકારે અણગાર મુનિ તેમની સમાનતાની અર્થાત્ તેમનાં જેવા થવાની વાંચ્છના ને કરે. ॥ ૩૮ ॥

छाया—अनुत्कशायी अल्पेच्छः, अज्ञातैषी अलोलुपः ।

रसेषु नानुगृध्येत्, नानुत्प्येत प्रज्ञावान् ॥ ३९ ॥

टीका—‘अणुकसाई’ इत्यादि ।

अनुत्कशायी=अनुत्कः-अनुत्कण्ठितः शेते, धातूनामनेकार्थत्वाद् वर्तते इत्येवं शीलः सत्कारादिवाञ्छारहित इत्यर्थः, यद्वा-प्राकृतत्वाद्-‘अणुकपायी’ इति-च्छाया । अल्पकपायी-कपायरहित इत्यर्थः-वन्दनादिकमकुर्वते न कुर्वति, वन्दनादौ कृते वा न मानं कुरुते न वा तदर्थं शीतोष्णाऽऽतापनादिभिर्मायां करोति, न चापि तत्र लोभं करोतीति भावः । अत एव-‘अल्पेच्छः’=धर्मोपकरणमात्रा-भिलाषी, न तु सत्कारपुरस्काराभिलाषीत्यर्थः । अत एव-अज्ञातैषी-अज्ञातः=जाति-श्रुतादिभिरपरिचितो भूत्वा एषयति-गवेपयति पिण्डादिकं, यः स तथा, यद्वा-अज्ञाते=अज्ञातकुले एषयति=गवेपयति पिण्डादिकं यः स तथा, तत्र हेतुं प्रदर्शयति

अथ सूत्रकार इसी अर्थ को विशद करते हैं-‘अणुकसाई’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(अणुकसाई-अनुत्कशायी) सत्कार आदि की अभिलाषा रहित अथवा अल्पकपाय वाला-सत्कारादि विषयक कपायभाव रहित, अर्थात्-वन्दना आदि नहीं करने वाले के प्रति क्रोध नहीं करने वाला, तथा वन्दनादि करने पर अभिमान नहीं करने वाला, तथा मान सन्मान आदि के निमित्त शीत, उष्ण, आतापना आदि द्वारा मायाचार नहीं करने वाला, तथा उस विषय में लोभ-कपाय भी नहीं करने वाला, (अपिच्छे-अल्पेच्छः) तथा अल्पइच्छावाला धर्मोपकरणमात्र की अभिलाषा वाला सत्कारपुरस्कार आदि की अभिलाषा वाला नहीं, तथा (अज्ञाएसी-अज्ञातैषी) जाति एवं श्रुत आदि से अपरिचित होकर शुद्ध पिण्डादिक की गवेपणा करने वाला, अथवा-अज्ञातकुल में

हुवे सूत्रकार आ अर्थने स्पष्ट करे छे—‘अणुकसाई’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—अणुकसाई-अनुत्कशायी सत्कार आदिनी अभिलाषायी रहित अथवा अल्प कपायवाणा-सत्कारादि विषयक कपायभाव रहित, अर्थात्-वन्दना आदि न करना तरङ्ग क्रोध नहीं करवावाणा तथा वन्दनादि करवायी अभिमान नहीं करवावाणा तथा मान सन्मान आदि निमित्त शीत, उष्ण, आतापना आदि द्वारा मायाचार नहीं करवावाणा तथा ये विषयमां लोभ कपाय पक्ष नहीं करवावाणा अपिच्छे-अल्पेच्छः तथा-अल्प इच्छावाणा-धर्मोपकरण मात्रा नी अभिलाषावाणा-सत्कार पुरस्कार आदिनी अभिलाषावाणा नहीं तथा अज्ञाएसी-अज्ञातैषी जाति अगर श्रुत आदिनी अपरिचित जानीने शुद्ध पिण्डादिकनी गवेपणा

—‘અલોલુપ’ ઇતિ । અલોલુપઃ=સરસાહારાદિષુ રસનેન્દ્રિયાદિલોલુપતાવર્જિતઃ, તથા—પ્રજ્ઞાવાન્=હેયોપાદેયવિવેચનનિપુણબુદ્ધિમાન્, રસેષુ=રસાદિષુ, નાનુગૃધ્યેત્=મનોજ્ઞરસાદિભિઃ સત્કારે પુરસ્કારે ચ કૃતે તત્ર મૂર્છાં ન કુર્યાત્ । નાનુતપ્યેત્=સત્કારપુરસ્કારયોરભાવે વિષાદં ન કુર્યાત્ ।

અર્થ ભાવઃ—ભક્તપાનવલ્લપાત્રાદીનાં લાભઃ સત્કારઃ, ગુણોત્કીર્તનં વન્દનામ્બુ-
ત્થાનાસનપ્રદાનાદિવ્યવહારશ્ચ પુરસ્કારઃ । તત્ર—સત્કારપુરસ્કારપ્રાપ્તૌ સત્યાં ગૃદ્ધિ
ન કુર્યાત્, તયોરભાવે દ્વેષં ન કુર્યાત્, નાપિ ચ મનસ્તાપેનાત્માનં દૂપયેત્, કિંતુ
દૈન્યવર્જનેન તદનાકાઙ્ક્ષયા ચ સત્કારપુરસ્કારપરીપદઃ સોદન્યઃ, इत्येवं सद्भावस-
द्भावभेदेन द्विविधोऽयं परीपदः सोदन्य इति । उक्तञ्च

ગવેષણા કરને ચાલા, તથા (અલોલુપ—અલોલુપઃ) સરસ આહારાદિક
મેં રસના—ઇન્દ્રિય કી લોલુપતા સે રહિત એસા (પણ્ણવં—પ્રજ્ઞાવાન્) હેય
ઔર ઉપાદેય કે વિવેચન કરને મેં નિપુણ બુદ્ધિવાલા મુનિ (રસેષુ નાનુ-
ગિજ્ઞિજ્ઞા—રસેષુ નાનુગૃધ્યેત્) મનોજ્ઞ રસાદિ કે દ્વારા સત્કારપુરસ્કાર
હોને પર રસાદિ મેં મૂર્છા—ગૃદ્ધિ ભાવ નહીં કરે, તથા મનોજ્ઞ રસાદિ કે
નહીં મિલને પર વિષાદ નહીં કરે ।

ભાવાર્થ—ઇસકા સારાંશ યહ હૈ કિ—ભક્ત, પાન, વલ્લ એવં પાત્રા-
દિકા લાભ સત્કાર હૈ, તથા ગુણોં કા કથનરૂપ તથા વન્દના અમ્બુ-
ત્થાન એવં આસનપ્રદાનરૂપ જો વ્યવહાર હૈ વહ પુરસ્કાર હૈ । સાધુ કો
સત્કારપુરસ્કાર કી પ્રાપ્તિ હોને પર ગૃદ્ધિ ઔર इनके अभाव में द्वेष
નહીં કરના चाहिये, और न मनके संताप से अपने आपको दूषित ही

કરવાવાળા અથવા અજ્ઞાત કુળમાં આહારની ગવેષણા કરવાવાળા તથા
અલોલુપ—અલોલુપઃ સરસ આહારાદિકમાં રસનાઇન્દ્રિયની લોલુપતાથી રહિત એવી
પણ્ણવં—પ્રજ્ઞાવાન્ હેય અને ઉપાદેયનું વિવેચન કરવામાં નિપુણ બુદ્ધિવાળા
મુનિ, રસેષુ નાનુગિજ્ઞિજ્ઞા—રસેષુ નાનુગૃધ્યેત્ મનોજ્ઞ રસાદિ દ્વારા સત્કારપુરસ્કાર
હોવા છતાં રસાદિમાં મૂર્છા—ગૃદ્ધિભાવ ન કરે. તથા મનોજ્ઞ રસાદિ નહીં મળ-
વાથી વિષાદ ન કરે.

આનો સારાંશ એ છે કે—ભક્ત, પાન, વલ્લ, અને પાત્રાદિકનો લાભ
સત્કાર છે, તથા ગુણોના કથનરૂપ, તથા વન્દના અમ્બુત્થાન અને આસનપ્રદાન
રૂપ જે વહેવાર છે, તે પુરસ્કાર છે. સાધુને સત્કારપુરસ્કારની પ્રાપ્તિ હોવાથી
ગૃદ્ધિ અને તેના અભાવમાં દ્વેષ ન કરવો જોઈએ. તેમ મનના સંતાપો

ઉત્થાને વન્દને દાને, ન મવેદમિલાપુકઃ ।

અસત્કારે ન દીનઃ સ્યાત્, સત્કારે સ્યાન્ન હર્ષવાન્ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અત્ર દ્રષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

અરુણાચાર્યઃ શિષ્યપરિવારેણ સહ મથુરાનગર્યાં સમવસતઃ । તત્રારિમર્દનો નામ
ભૂપતિરાસીત્, ઇન્દ્રદત્તનામકસ્તસ્ય પુરોહિતસ્તત્ર નિવસતિ । સ જિનશાસનવિરો-

કરના ચાહિયે, કિન્તુ દીનતા કે પરિહાર સે એવં સત્કારપુરસ્કાર કી
અનાકાંક્ષા સે સત્કારપુરસ્કાર ઇન દોનોં કો સહન કરતે રહના
ચાહિયે । હસ પ્રકાર સદ્ભાવ ઓર અસદ્ભાવ કે ભેદ સે દો પ્રકારકા યહ
પરીપદ સાધુ કો સહન કરને યોગ્ય થતલાયા ગયા હૈ । કહા ખી હૈ—

ઉત્થાને વન્દને દાને, ન મવેદમિલાપુકઃ ।

અસત્કારે ન દીનઃ સ્યાત્, સત્કારે સ્યાન્ન હર્ષવાન્ ॥ ૧ ॥

ભાવાર્થ—વસ્ત્ર પાત્રાદિક કા લાભ હો ચાહે ન હો, કોઈ વંદનાદિક
કરે યા ન કરે, હસ તર્ફ લક્ષ્ય ન દેના ઓર ન હસ વિષયક હર્ષ વિષાદ
કરના । ચાહે કોઈ સત્કાર કરે ચાહે ન કરે સબ મેં સમભાવ રહના સો
સત્કારપુરસ્કારપરીપદજય હૈ ।

દ્રષ્ટાન્ત—એક સમય અરુણાચાર્ય અપને શિષ્યપરિવાર કે સાથ
મથુરા નગરી મેં આયે હુએ થે । ડસ સમય વહાં અરિમર્દન રાજા કા
રાજ્ય થા । રાજા કે પુરોહિત કા નામ ઇન્દ્રદત્ત થા । યહ ડસી નગરી

પોતાને દ્રવિત ન કરે, પરંતુ દીનતાના પરિહારથી અને સત્કારપુરસ્કારની
અનાકાંક્ષાથી સત્કારપુરસ્કાર આ બંને ને સહન કરતા રહેવું જોઈએ. આ
પ્રકારે સદ્ભાવ અને અસદ્ભાવના લેહથી બે પ્રકારનો આ પરીપદ સાધુએ
સહન કરવા યોગ્ય બતાવેલ છે. કહ્યું છે કે—

ઉત્થાને વંદને દાને, ન મવેદમિલાપુકઃ ।

અસત્કારે ન દીનઃ સ્યાત્, સત્કારે સ્યાન્ન હર્ષવાન્ ॥ ૧ ॥

ભાવાર્થ—વસ્ત્ર પાત્રાદિકનો લાભ હોય અગર ન હોય, કોઈ વંદના
આદિ કરે કે ન કરે, એ તરફ લક્ષ્ય ન આપવું. અથવા ન આ વિષયમાં હર્ષ
વિષાદ કરવો. આહે કોઈ સત્કાર કરે, આહે ન કરે સઘળામાં સમભાવ રહેવો
તે સત્કારપુરસ્કાર પરીપદ જય છે.

દ્રષ્ટાન્ત—એક સમયે અરુણાચાર્ય પોતાના શિષ્ય પરિવાર સાથે મથુરા
નગરીમાં વિચરતા હતા. એ વખતે ત્યાં અરિમર્દન રાજાનું રાજ્ય હતું. રાજાના
પુરોહિતનું નામ ઇન્દ્રદત્ત હતું. તે એજ નગરીમાં રહેતા હતા. જીનશાસન પ્રત્યે

धित्वात् स्वगवाक्षस्थः सन्नयो व्रजन्तमरुणाचार्यस्य शिष्यं सुधर्मशीलनामकं मुनिं दृष्ट्वा धर्मद्वेपादचिन्तयत्—'अस्य मुनेः शिरसि पादं निक्षिपामि' इति एवं विचिन्त्य, स तन्मस्तकोपरि स्वपादमवलम्बितं कृतवान् ।

यदा यदा भिक्षार्थं स्थण्डिलभूमौ वा मुनिस्तद्भवनाऽऽसन्नमार्गेण गच्छति, तदा तदाऽसौ पुरोहितः स्वगवाक्षे उपविश्य मुनिमस्तकोपरि पादधारणबुद्ध्या स्वपादौ तत्रावलम्बितौ कृत्वा दृष्टो भवति । एवं निरन्तरं कुर्वाणं दृष्ट्वाऽपि शान्तर-सप्तमुद्रोऽसौ मुनिर्मनसाऽपि नाकुप्यत् । एकदा मुनिमस्तकोपरि पादं निक्षिपन् स

में रहता था । जिन शासन के प्रति इसका विरोध सदा से चला आता था । एक दिन की बात है कि जब यह अपने मकान के झरोखे में बैठा हुआ था उसी समय इसने अरुणाचार्य के एक शिष्य को कि जिनका नाम सुधर्मशील मुनि था दृष्टि को झुकाकर जाते हुए देखा । देखकर धर्म के प्रति द्वेष होने की वजह से इसने उसी वस्तु विचार किया कि आज मैं इस मुनि के मस्तक पर पैर रखुं । ऐसा विचार कर झरोखे के पास से निकलते हुए मुनि के सिर के ऊपर अपने पैर लटका दिये ।

एक दिन उस नगर के सेठ ने कि जिसका नाम सुभद्र था इस पुरोहित को मुनि के मस्तक के ऊपर पैर रखते हुए देख लिया । मुनि के मस्तक ऊपर पुरोहित पैर इस तरह रखता था कि मुनि जबर् भिक्षा के लिये या शौच के लिये उसके मकान की खिड़की के पास के मार्गसे हो कर निकलते तब यह पुरोहित अपने मकानकी उस खिड़की में बैठ जाता और चलते हुए मुनि के मस्तक ऊपर अपने दोनों पैर

तेना विरोध सदा आह्वयो आपतो હતો. એક દિવસની વાત છે કે, બ્યારે તે પોતાના મકાનના અડખામાં બેઠેલ હતો તે સમયે તેણે અરુણાચાર્યના એક શિષ્યને કે જેનું નામ સુધર્મશીલ મુનિ હતું તેને નીચે માથું રાખી જતા તેણે જોયા. બેઠેને ધર્મના તરફ દ્વેષ હોવાના કારણે તેણે તે વખતે વિચાર કર્યો કે, આજ હું આ મુનિના મસ્તક ઉપર પગ રાખું. એવો વિચાર કરી અડખાની પાસેથી નિકળતા મુનિના માથા ઉપર પોતાના પગ લટકાવ્યા.

એક દિવસ એ નગરના જ સુભદ્ર નામના શેઠે આ પુરોહિતને મુનિના માથા ઉપર પગ રાખતા બેઠે લીધા. મુનિના માથા ઉપર પુરોહિત પગ એવી રીતે રાખતા કે, મુનિ બ્યારે બ્યારે ભિક્ષા માટે અગર શૌચ માટે તેના મકાનની ખડકીની પાસેના માર્ગેથી નીકળે ત્યારે ત્યારે તે પુરોહિત પોતાના મકાનની ખડકીમાં બેસી રહેતો, અને ચાલતા મુનિના માથા ઉપર પોતાના પગ રાખતો.

પ્રિયદર્શિની ટોકા અ૦૨ ગાં૦૩૨ સત્કારપુરસ્કારપરીપદે સુધર્મશીલમુનિદ્વયોઃ ૪૨૧

પુરોહિતસ્ત્રનગરથ્રેષ્ઠિના સુભદ્રનામકેન શ્રાવકેણ દદૃઃ। સ સુભદ્રશ્રાવકો ગુરોરપમાનમ-
સહમાનોઽરુણાચાર્યસમીપં ગત્વા વદતિ-ભદન્ત ! પુરોહિતકૃતો ભવદપમાનો મયા ન
સહ્યતે, યતો ભવદીપશિષ્યસ્ય મસ્તકોપરિ ઇન્દ્રદત્તપુરોહિતેન પાદો નિશ્ચિતઃ,
તસ્માદસ્ય યયોચિતશાસનં કર્તુમિચ્છામિ । આચાર્યેણોક્તમ્-દેવાનુપ્રિય ! યથા
નૃપાદિકૃતે સત્કારે પુરસ્કારે ચ ન પ્રમોદઃ ક્રિયતેઽસ્માભિઃ, તથા તદભાવે દ્રેપ-
દૈન્યાદિકમપિ ન ક્રિયતે, જૈનધર્મદ્વેપાદસૌ તથા કરોતિ । અસ્માભિસ્ત્વેપ પરીપદઃ
સોઢવ્ય એવ ।

રખને કી ઇચ્છા સે પસાર દેતા હસસે વે મુનિ કે માથે ડપર હો જાતે
થે । હસ કાર્ય સે પુરોહિત કો વડા મજા આતા । પુરોહિત કી હસ પ્રવૃત્તિ
કો દેખકર મો મુનિકે ચિત્ત મેં જરા મી વિકૃતિ નહીં આતી, ક્યોં કિ
વે શાન્તરસ કે સમુદ્ર થે । કિન્તુ સુભદ્ર શ્રાવક કો પુરોહિત કી યહ વાત
સહન નહીં હુઈ । ગુરુ કા અપમાન દેખકર ઉસકા મન તિલમિલા ડઠા ।
વહ શીઘ્ર હી અરુણાચાર્ય કે પાસ પહુંચકર કહને લગા-ભદન્ત ! પુરો-
હિત દ્વારા હોતા હુઆ આપકા અપમાન મુઝસે સહન નહીં કિયા
જાતા હૈ, ક્યોં કિ વહ આપ કે શિષ્ય કે મસ્તક પર કઈ દિન સે પૈર
જો રખ રહા હૈ, હસલિયે મેં ઉસે હસકા ઉચિત ઉત્તર દેના ચાહતા હું ।
સુભદ્ર સેઠ કી વાત સુનકર આચાર્યમહારાજ ને કહા કિ દેવાનુપ્રિય !
હમ લોગ જિસ પ્રકાર નૃપાદિકદ્વારા ક્રિયમાણ સત્કારપુરસ્કાર મેં
પ્રસન્ન નહીં હોતે હૈં ઉસી પ્રકાર ઉસકે અભાવ મેં દ્રેપ એવં દૈન્યાદિક મી

આ દિયા એવી રીતે કરતો કે, પગ લાંબા કરી પસારતો કે જેથી તે મુનિના
માથા ઉપર આવે. આ કાર્યમાં પુરોહિતને ખૂબ મજા આવતી. પુરોહિતની આ
પ્રકારની પ્રવૃત્તિને જોઈને મુનિના મનમાં જરા પણ વિકૃતિ આવતી ન હતી.
કારણ કે, તેઓ શાંતરસના સમુદ્ર હતા. પરંતુ સુભદ્રશ્રાવકથી પુરોહિતનું આ
વર્તન સહન ન થયું. ગુરુનું અપમાન જોઈને એનું મન ખૂબ વ્યગ્ર થઈ ગયું.
તે તરત જ અરુણાચાર્યની પાસે પહોંચીને કહેવા લાગ્યા, હે ભદન્ત ! પુરોહિતથી
થતું આપનું અપમાન મારાથી સહન થતું નથી કેમકે, તે આપના શિષ્યના
મસ્તક પર કેટલાક દિવસથી પગ રાખી અસાતના કરે છે. હું તેને આનો ઉચિત
ઉત્તર આપવા આહું છું. સુભદ્રશેઠની વાત સાંભળીને આચાર્ય મહારાજે કહ્યું કે,
દેવાનુપ્રિય ! અમે લોકો જે પ્રકારે નૃપાદિક દ્વારા કરાયેલા સત્કારપુરસ્કારમાં
પ્રસન્ન નથી થતા, તેવી રીતે તેના અભાવમાં દ્રેપ અને દૈન્ય આદિક પણ

एकदा गुरोः समीपमागत्य सुभद्रश्रावको वदति-भदन्त ! पुरोहितेन नूतनं भवनं निर्मापितं, तत्राऽसौ राजानं भोजयितुं निमन्त्रयति । तदा स आचार्यः पूर्वं उपयोगं दत्त्वा कथयति-देवानुग्रिय ! यदा राजा भवने प्रवेशं करिष्यति तदैव त्वया करं धृत्वा राजा भवनाद् वह्निर्निःसारणीयः, तद्भवनं कुमुदूर्तं निर्मापितं, येन राज्ञः प्रवेशसमये निश्चयेन तत् पतिष्यति । एतच्छ्रुत्वा सुभद्रश्रावकस्तस्मिन् भवने

नहीं करते हैं। यह पुरोहित जो कुछ करता है वह जैनधर्म के प्रति अपने द्वेष से करता है। हमारा तो यही आचार है कि हमें यह परीपह सहन करना ही चाहिये। आचार्य महाराज की बात सुनकर सेठ अपने घर चला गया। पुनः एक समय आकर सुभद्र श्रावक ने आचार्य महाराज को यह खबर सुनाई कि पुरोहित ने एक नूतन भवन बनवाया है सो आज उसके प्रवेश के उत्सव में उस ने राजा को भोजन के लिये आमंत्रित किया है। मैं चाहता हूं कि पुरोहित का यह व्यवहार जो उसने मुनिराज के साथ किया है वहां जाकर चुपके र राजा को सुनाया जाय। आचार्य महाराज ने सेठ की इस बात पर ध्यान न देकर उसे इस बात से सचेत किया कि-देखो जब राजा पुरोहित के नूतन भवन में प्रवेश करने लगे तो तुम उसी समय उनका हाथ पकड़ कर मकान से बाहर निकाल लेना, क्योंकि वह भवन कुमुदूर्त में बना है, और ज्यों ही राजा उसमें प्रविष्ट होगा त्यों ही वह उस समय गिर पड़ेगा। मरते को बचाना अपना काम है, आचार्य महाराज की बात

કરતા નથી. આ પુરોહિત જે કંઈ કરે છે તે જૈનધર્મ તરફના તેના દ્વેષને લઈને કરે છે. અમારો તો એ આચાર છે જ કે, અમારે આ પરીપહ સહન કરવો જ જોઈએ. આચાર્ય મહારાજની વાત સાંભળીને શેઠ પોતાને ઘેર આવ્યા ગયા. ફરીથી એક વખતે આવીને સુભદ્રશ્રાવકે આચાર્ય મહારાજને એવી ખબર આપી કે, પુરોહિતે એક નવું મકાન બનાવ્યું છે. અને આજ તેના વાસ્તુ સુદૂર્તમાં તેણે રાત્રીને ભોજન માટે આમંત્રણ આપેલ છે. હું ચાહું છું કે, પુરોહિતનો આ વહેવાર જો તેણે મુનિરાજની સાથે કર્યો છે, તે ત્યાં જઈને રાત્રીને ચુપકીદીથી કહેવામાં આવે. આ પ્રકારની શેઠની વાત ઉપર ધ્યાન ન આપતાં આચાર્ય મહારાજે જોઈને કહ્યું કે એ મકાન એવા કુસુદૂર્તમાં તૈયાર કરવામાં આવ્યું છે કે તે સુદૂર્તને દિવસે જ પડી જવાતું છે. માટે રાત્રી જે સમયે એમાં દાખલ થવા જાય તે સમયે તમે તેમનો હાથ પકડીને બહાર ખેંચી દેજો. મરતાને બચાવવા તે આપણો ધર્મ છે. આચાર્ય મહારાજની આ વાત સાંભળી શ્રાવક સુભદ્ર શેઠ ત્યાંથી નિકળી પુરોહિતના નવા

राज्ञः प्रवेशसमये तद्रक्षार्थं गतः । तत्र भवने राजा यदैव प्रविशति, तदैव स करं धृत्वा वेगेन राजानमाकृष्य भवनाद्वह्निनिःसारयति, नृपे निःसारिते सत्येव तद्भवनं समूलं निपतितम् । नृपेणोक्तम्—कथमेतद्भवता विदितम् । श्रावकः माह—मम गुरु-देवेन केनचित् कथाप्रसङ्गेन बोधितम्—कुमुद्वर्तनिर्मापितं भवनं नृपस्य प्रवेशकाले पतितं भविष्यतीति । इत्युक्त्वा श्रावको नृपतिं निवेदयति—राजन् ! अयं पुरोहितः

सुनकर श्रावक सुभद्र सेठ प्रवेश होने के समय राजा की रक्षा करने के अभिप्राय से उस मकान पर गया । ज्यों ही राजा ने ओकर उस भवन के भीतर प्रवेश करना चाहा कि सुभद्र सेठ ने उनका हाथ पकड़ वहाँ से शीघ्र ही राजा को बाहिर की ओर खेंच लिया । राजा के बाहर होते ही वह मकान पूरा का पूरा गिरपड़ा । राजा ने जब परिस्थिति देखी तो उसे बड़ा ही आश्चर्य हुआ । राजा ने हाथ पकड़ कर बाहिर निकालने का कारण पूछा तो सुभद्रसेठ ने सब बात उन्हें स्पष्ट कह सुनाई । राजाने प्रसन्न होकर सुभद्र सेठ से पूछा सुभद्र ! तुम्हें इस बात का पता कैसे पड़ा ? सुभद्र सेठ ने कहा महाराज ! किसी प्रसङ्ग पर आज मेरे गुरु-महाराज ने मुझ से यह बात कही कि कुमुद्वर्त में निर्मापित यह भवन नृप के प्रवेश करते समय गिर जायगा । राजा को इस पर बड़ा सन्तोष हुआ । उन्होंने आचार्य महाराज के अतिशय ज्ञान की बहुत प्रशंसा की और वहीं से उन्हें परोक्ष वंदन किया । इतने में ही सुअवसर देख

। भकाने पड़ोन्त्या अने राजाना आववानी प्रतिक्षा करवा लाग्या. राजाये आषी अने भकानभां प्रवेश करवा शङ्क्यो अटवै राजाने जथावीलेवाना अभिप्रा-यधी तेनी प्रतिक्षा करी रडेव सुभद्र शेठे राजाने हाथ पकडी आगण वधता अटकावी दीधा अने थोडा पाछा जेथी लीधा. राजाना भडार जेथार्थ जवानी साथोसाथ ज अने आपुंजे भकान कडउलुस करतुं जमीनदोस्त जन्थुं. राजाने आ परिस्थिति जेध भूजज आश्चर्य थयुं. तेहे सुभद्रशेठने तेतुं कारण पूछथुं त्यारे तेहे सघणी वात राजाने कडी संलग्गावी. राजाये प्रसन्न थतां कहुं के, आ वातनी जलु कथ रीते थध ? सुभद्रशेठे जलुज्जुं के, आज मारा शुरुदेव साथे वतथितभां आ प्रसंगनी वात उपस्थित थतां तेजोश्रीजे कहुं के, पुरोहितना जे भकानने पाथे जेवा सुद्धर्तभां नाजवामां आग्यो छे के राजाने प्रवेश थतांज जे आपुंजे भकान जमीनदोस्त थवातुं. राजाने आ वातथी धल्लोज संतोष थथो. जेहे आचार्यमहाराजना अगाध जेवा राजनी भूजज प्रसंशा करी अने त्यांथी ज जेभने परोक्ष वंदन क्युं. आ वजते सुअवसर जेध सुभद्र शेठे

કુમુદ્વર્તે ભવનં નિર્માપ્ય મોજનાર્થં ભવન્તમામન્વિતવાન્, મમ ગુરુદેવં ચાનેન પથા
ગચ્છન્તં દૃષ્ટ્વા ગવાક્ષદેશવસ્થિતોઽયં પ્રત્યહં તન્મસ્તકોપરિ ધર્મદ્વેષાત્ પાદં નિશ્ચિ-
પતિ । एतद्वचनं श्रुत्वा नृपस्तस्य दुष्टभावसंपन्नस्य पुरोहितस्य पादच्छेदरूपं दण्डं
કર્તું સ્વમૃત્યાનાજ્ઞાપયત્ । इयं राजाज्ञानगरे तत्कालमेव प्रमृता, अरुणाचार्येणापि
શ્રુતા । ततः करुणार्द्रचित्तः स मुनिः स्वशिष्येण नृपतिं प्रबोध्य तं पुरोहितमरक्षयत् ।
एवमन्यैरपि मुनिभिः सुधर्मशीलमुनिवत् सत्कारपुरस्कारपरीपहः सोढव्य इति ॥३९॥

કર સુભદ્ર સેઠ ને રાજા કો મુનિ કે પ્રતિ હુર પુરોહિત કા વ્યવહાર મી
આયોપાન્ત સય સ્પષ્ટ કર કે મુના દિયા, કહા કિ-હે રાજન્! આપકે
इन पुरोहित ने इस भवन का निर्माण कुमुद्वर्त में कराया है और उसमें
પ્રવેશ કે ઉત્સવ પર આપકો ભોજન કે લિયે આમંત્રિત કિયા હૈ । मेरे
गुरु महाराज इस भवन की झरोखे के पास से जब २ होकर निकलते
हैं तब २ यह धर्म के द्वेप से झरोखे में बैठ कर “मुनिके माथे ऊपर दोनों
પૈર, મેરે રહે ” इस भावना से पैर पसार दिया करता है । सुभद्र आबक
કી इस बात को सुनकर राजाने “यह पुरोहित दुष्टभाव संपन्न है ”
यह जान लिया और अपने नौकरों को यह आदेश दिया कि इसके दोनों
પૈર કાટ ઢાલો । यह राजाज्ञा नगर में वायुवेग से फैल गयी । अरुणा-
चार्य को भी यह बात मालुम हुई तो उन्होंने ने अपने शिष्य द्वारा राजा
કો સમજા વુજા કર પુરોહિત કો વચા લિયા । इस कथा से यही शिक्षा

પુરોહિતદ્વારા મુનિપ્રત્યે કરાતા અપમાનીત વ્યવહારની વાત વિગતથી રાજા
સમક્ષ રજુ કરી અને કહ્યું કે, હે રાજન્! આપના આ પુરોહિતે આ મકા-
નનું નિર્માણ કુમુદ્વર્તમાં કર્યું અને તેમાં પ્રવેશના ઉત્સવ ઉપર આપને લોભન
માટે આમંત્રણ આપેલ છે. મારા ગુરુમહારાજ આ મકાનના ઝરૂખાપાસેથી
જ્યારે જ્યારે નિકળે છે ત્યારે ત્યારે પુરોહિત ધર્મના દ્વેષથી ઝરૂખામાં બેસી
એમના માથા ઉપર “ મારા બન્ને પગ રહે ” આ ભાવનાથી પગ લાંબો કરી
દે છે. સુભદ્ર શેઠની વાત સાંભળી રાજાએ “ આ પુરોહિત દુષ્ટ ભાવનાથી
ભરેલ છે ” આ વાત બહુ લીધી, અને પોતાના નોકરોને હુકમ કર્યો કે,
પુરોહિતના બન્ને પગ કાપી નાખો. આ પ્રમાણેની રાજાની આજ્ઞા વાયુવેગથી
નગરમાં ફેલાઈ ગઈ અને તે અરૂણાચાર્ય મુનિના બહુવામાં આવતા તેઓએ પોતાના
શિષ્ય મારકૃત રાજાને સમજાવી પુરોહિતને બચાવી લીધો. આ કથાથી એ બહુ

अथ विंशतितमं प्रज्ञापरीपहमाह—

मूलम्—‘से’ य नूनं मए पुंवं, कम्माऽणाणफला कंडा ।

जेणोहं नाभिजानामि, पुंठो केणइं कणहुइ ॥ ४० ॥

अहं पच्छा उइंजंति, कम्माऽणाणफला कंडो ।

एवमासांसि अप्पाणं, नच्चा कम्मविवागयं ॥ ४१ ॥

छाया—अथ नूनं मया पूर्व, कर्माणि अज्ञानफलानि कृतानि ।

येनाहं नाभिजानामि, पृष्टः केनचित् कस्मिंश्चित् ॥ ४० ॥

अथ पश्चाद् उदीयन्ते, कर्माणि अज्ञानफलानि कृतानि ।

एवम् आश्वासय आत्मानं, ज्ञात्वा कर्मविपाककम् ॥ ४१ ॥

टीका—‘से य नूनं’ इत्यादि, ‘अहं पच्छा’ इत्यादि ।

अथ च नूनं=निश्चयेन, मया पूर्व=पूर्वकाले-पूर्वभवे इत्यर्थः, अज्ञानफलानि=अज्ञानोत्पादकानि, कर्माणि=ज्ञानावरणीयकर्माणि, कृतानि=धर्माचार्यगुरुश्रुतज्ञान-निन्दाध्ययनवाधादिभिरुपार्जितानि । उक्तञ्च—

मिलती है कि सुधर्मशील मुनि की तरह प्रत्येक मुनि को सत्कारपुरस्कार परीपह सहन करते रहना चाहिये ॥ ३९ ॥

अब धीसवा प्रज्ञापरीपहको सूत्रकार बतलाते हैं—

‘से य नूनं’ इत्यादि । ‘अहं पच्छा’ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—प्रज्ञापरीपहको जीतनेके लिये साधु विचार करे कि (नूनं-नूनम्) निश्चयसे (मए-मया) मैंने (पुंवं-पूर्वम्) पूर्वभवमें (अणाणफला कम्मा कंडा-अज्ञानफलानि कर्माणि कृतानि) धर्माचार्य गुरु महाराज और श्रुतज्ञान की निंदा करने से तथा किस के ध्यान अध्ययन में विघ्न डालनेसे अज्ञानोत्पादक ज्ञानावरणीय आदि चर्मों का उपार्जन किया है ।

शकाय छे के, सुधर्मशील मुनिनी जेभ प्रत्येक मुनिजे सत्कारपुरस्कारपरीपह सहन करता रहेवुं जेधये. ॥ ३९ ॥

इवे वीसभा प्रज्ञापरीपहने सूत्रकार बतावे छे—

‘से य नूनं’ इत्यादि. ‘अहं पच्छा’ इत्यादि.

अन्वयार्थ—प्रज्ञापरीपहने सुतवा भाटे साधु विचार करे के, नूनं-नूनं निश्चयशी मए-मया में पुंवं-पूर्वं पूर्वभवमां अणाणफला कम्मा कंडा-अज्ञान-फलानि-कर्माणि कृतानि धर्माचार्य गुरुभंडराज अने श्रुतज्ञाननी निंदा करवाभां तथा डोहनी ध्यान अध्ययनमां विघ्न नाभवानुं, आज्ञानोत्पादक ज्ञानावरणीय

નાણસ્સ નાણિણં ચિય, નિંદા પદોસમચ્છરેહિં ય ।

ઉવધાયણવિગ્ધેહિં, નાણગ્ધં વજ્જણ કમ્મં ॥ ૧ ॥ ”

છાયા-જ્ઞાનસ્ય જ્ઞાનિનાં ચૈવ, નિન્દાપદ્મેપમત્સરૈશ્ચ ।

ઉપધાતનવિઘ્નૈઃ, જ્ઞાનઘ્નં વધ્યતે કમ ॥ ૧ ॥

येन=यस्मात् कारणात्, केनचित्=जिज्ञासुना, कस्मिंश्चित्=जीवादितत्त्व-विषये, पृष्ठोऽहं नाभिजानामि=अज्ञानवशात् प्रश्नस्योत्तरं कर्तुं न शक्नोमीत्यर्थः । पूर्वोपार्जित-ज्ञानावरणीय-कर्मोदयात् मया ज्ञानं न लभ्यते, अतः प्रश्नोत्तरं कर्तु-मसमर्थो भवामीति भावः । उक्तञ्च—

(જેણ-યેન) जिसके कारण से (केणइ-केनचित्) किसी जिज्ञासु के द्वारा (कणहुइ-कस्मिंश्चित्) किसी भी जीवादिक तत्त्व के विषय में (पुट्ठो-पृष्ठः) पूछे जाने पर (अहं) मैं (नाभिजाणामि-नाभिजानामि) कुछ भी नहीं जान सकता हूँ, अर्थात् अज्ञानवश उसके प्रश्न का कुछ भी उत्तर नहीं दे सकता हूँ । कहा भी है—

“નાણસ્સ નાણિણં ચિય, નિંદા પદોસમચ્છરેહિં ય ।

ઉવધાયણ વિગ્ધેહિં, નાણગ્ધં વજ્જણ કમ્મં ॥ ૧ ॥ ”

જ્ઞાન એવં જ્ઞાનિયોંકી નિંદા કરને સે, ઉનમેં દેષબુદ્ધિ રાખને સે, ઉનકે સાથ મત્સરભાવ રાખને સે, ઉનકા ઉપધાત કરને સે અથવા જ્ઞાન કે સાધનોં મેં અથવા જ્ઞાનિયોં કે જ્ઞાનોપાર્જન મેં વિઘ્ન કરને સે જીવ જ્ઞાનનાશક કર્મ કા બંધ કરતા હૈ ।

આદિ કર્મોનું ઉપાર્જન કરેલ છે જેણ-યેન એના કારણથી કેણइ-કેનચિત્ કોઈ જિજ્ઞાસુ દ્વારા કણहुइ-कस्मिंश्चित્ કોઈ પણ જીવાદિક તત્ત્વના વિષયમાં પુટ્ठो-पृष्ठः પુછવામાં આવવાથી અહં હું નાभिजाणामि-नाभिजानामि કાંઈ પણ જાણતો નથી અર્થાત્ અજ્ઞાનવશ એમના પ્રશ્નને કાંઈ પણ ઉત્તર આપી શકતો નથી. કહ્યું પણ છે કે—

“નાણસ્સ નાણિણં ચિય, નિંદા પદોસમચ્છરેહિં ય ।

ઉવધાયણ વિગ્ધેહિં, નાણગ્ધં વજ્જણ કમ્મં ॥ ૧ ॥ ”

જ્ઞાન અને જ્ઞાનીયોંની નિંદા કરવાથી, એમનામાં દેષબુદ્ધિ રાખવાથી, એની સાથે મત્સરભાવ રાખવાથી, એનો ઉપધાત કરવાથી અથવા જ્ઞાનના સાધ-નોમાં અથવા જ્ઞાનીયોના જ્ઞાનોપાર્જનમાં વિઘ્ન કરવાથી જીવ જ્ઞાનનાશક કર્મોના બંધ કરે છે.

“સુહાસુહાણિ કમ્માણિ, સયં કુવ્વંતિ દેહિણો ।
સયમેવોવશુંજંતિ, દુહાણિ ય સુહાણિ ય ॥ ૧ ॥”

છાયા—શુભાશુભાણિ કર્માણિ, સ્વયં કુર્વન્તિ દેહિનઃ ।
સ્વયમેવોપશુન્નતે, દુઃખાણિ ચ સુખાણિ ચ ॥ ૧ ॥ ૪૦ ॥

ભાવાર્થ—સાધુ કે ઝપર સવ હી કા વિશ્વાસ હોતા હૈ । પ્રત્યેક વ્યક્તિ ઉનસે અપનીર જિજ્ઞાસાકા સમાધાન જાનને કા અભિલાષી તથા ઉત્સુક રહતા હૈ, હસ પરિસ્થિતિ મેં યદિ કોઈ જિજ્ઞાસુ પુરુષ મુનિ કે પાસ આકર જીવાદિતત્ત્વવિષયક અપની શંકા કી નિવૃત્તિ કરના યાહે ઓર વહ સાધુ સે હસ વિષય મેં પ્રશ્ન કરે, ઓર મુનિ ઉસકા ઉત્તર નહીં દે સકે તો ઉસ મુનિ કો યાહિયે કિ અપની આત્મા મેં સંક્લિષ્ટ પરિણામ ન કરે, કિન્તુ સમભાવ સે હસ પ્રકાર સોચે કિ મેરે જ્ઞાનાવર-
ણીયાદિક કર્મોં કા કિતના તોત્ર ઉદય હૈ જો જ્ઞાન કે સાધન હોને પર
ભી મુશ્કે જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ નહીં હુઈ હૈ । બુદ્ધિ મેં હસ પ્રકાર કી મંદતા કા
કારણ મેરે-પૂર્વ મેં ગુર્વાદિક કી નિંદા આદિ સે ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણી-
યાદિક કર્મ હી હૈ । હસ મેં કિસી કા દોષ નહીં હૈ । જૈસે કહા ભી હૈ—

“સુહાસુહાણિ કમ્માણિ, સયં કુવ્વંતિ દેહિણો ॥
સયમેવોવશુંજંતિ, દુહાણિ ય સુહાણિ ય ॥ ૧ ॥”

દેહી-આત્મા-શુભ ઓર અશુભ કર્મોં કો સ્વયં ઉપાર્જિત કરતા હૈ
ઓર ઉનકે ફલ મુઘ્ન દુઃખાદિક કો સ્વયં હી ભોગતા હૈ ॥ ૪૦ ॥

ભાવાર્થ—સાધુના ઉપર દરેકનો વિશ્વાસ હોય છે, પ્રત્યેક વ્યક્તિ પોતા-
પોતાની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન એમની પાસેથી મેળવવાના અભિલાષી તથા
ઉત્સુક રહે છે. આ પરિસ્થિતિમાં જો કોઈ જિજ્ઞાસુ પુરુષ મુનિની પાસે આવી
જીવાદિતત્ત્વ વિષયક પોતાની શંકાનું નિવારણ કરવા ઇચ્છે અને તે સાધુને આ
વિષયમાં પ્રશ્ન કરે અને મુનિ એનો ઉત્તર ન આપી શકે તો એ મુનિ પોતાના
આત્મામાં શંકાશિલ વૃત્તિ ન ભગવા દે પરંતુ સમભાવથી એવું વિચારે કે,
મારા જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોનો કેટલો તીવ્ર ઉદય છે કે જે જ્ઞાનના સાધન
હોવા છતાં પણ મને જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થઈ શકી નથી. બુદ્ધિમાં આ પ્રકારની
મંદતાનું કારણ મેં-પૂર્વભાગમાં શુભ આદિની નિંદા વગેરેથી ઉપાર્જિત કરેલ
જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મો છે. એમાં કોઈનો દોષ નથી. જેમ કહ્યું પણ છે—

“સુહાસુહાણિ કમ્માણિ, સયં કુવ્વંતિ દેહિણો ।
સયમેવોવશુંજંતિ, દુહાણિ ય સુહાણિ ય ॥ ૧ ॥”

આત્મા શુભ અને અશુભ કર્મોને સ્વયં ઉપાર્જિત કરે છે, અને એનું
સ્વરૂપ મુખ દુઃખાદિકને સ્વયં ભોગવે છે. ॥ ૪૦ ॥

‘अहं पच्छा’ इति ।

अथ अज्ञानफलानि=अज्ञानोत्पादकानि कर्माणि कृतानि तानि पश्चात्-अवा-
धोत्तरकालम्, ‘उदीयन्ते’=अज्ञानरूपेण अलर्क-मूपिकविषविकारवद् उदितानि
भवन्ति, एवम्=अमुना प्रकारेण कर्मविपाककं=कर्मणः फलं, ज्ञात्वा हे शिष्य ! आ-
त्मानम् आश्वासय=स्वस्थीकुरु, ‘स्वयं कृतानामेव ज्ञानावरणीयकर्मणां कुत्सितं
फलमेतत्, यदहं न जानामि-प्रश्नोत्तरमिति विज्ञाय स्वस्थो भव, न तु तन्निमि-
त्तकं विपादं कुरु इत्यर्थः । ‘कम्मा’ इति बहुवचनं कर्मबन्धहेतूनां बहुत्वात् ।

अन्वयार्थ- (कडाऽनाणफला कम्मा-कृतानि अज्ञानफलानि कर्माणि)
गुर्वादिकोंकी निंदा आदिसे पूर्व भवमें उपार्जित तथा ज्ञानमें अंतराय डालने
वाले-ज्ञान के निरोधक-ऐसे ज्ञानावरणीयादिक कर्म अपने अथाधाकाल
के बाद (उद्गज्जन्ति-उदीयन्ते) पागल कुत्ते अथवा पागल चूहेके विष के
विकार की तरह अज्ञानरूप से उदय में आते हैं । (एवं कम्मविवागयं-
एवं कर्मविपाककम्) इस प्रकार कर्म के फल को (नच्चा-ज्ञात्वा)
जानकर हे शिष्य ! (अप्पाणं आसासि-आत्मानं आश्वासय) तुम
अपनी आत्मा को कुछ नहीं आने पर-दूसरों के प्रश्नों का उत्तर नहीं
दे सकने पर धैर्य बधाओ-इस निमित्त को लेकर विपाद मत करो ।

भावार्थ-प्रज्ञापरीषद् को जीतने के लिये सूत्रकार साधुओं के
लिये शिक्षा देते हैं कि जो जैसा करता है उसे फल भी वैसा ही
मिलता है । बबुल का झाड़ बोने पर कोई उससे आम्रफल प्राप्ति की
आशा करे तो व्यर्थ है । इसी प्रकार पूर्वभवं में जिस जीव ने जिन २

अन्वयार्थ-कडाऽनाणफला कम्मा-कृतानि अज्ञानफलानि कर्माणि . पूर्वभवमां
शुरुआदिनी निंदाथी उपाएत तथा ज्ञानमां अंतराय नाभववाइय-ज्ञानना निरोधक-
ओवा ज्ञानावरणीयादिक कर्म पोताना वितेला काण पछी उद्गज्जन्ति-उदीयन्ते उदयाया
कुतराना अथवा पडरेला उदरना विषना विकारणी भाइक अज्ञान इपथी उदयमां
आवे छे. एवं कम्मविवागयं-एवं कर्मविपाककम् आ प्रकारे कर्मां इणने नच्चा-ज्ञात्वा
नाएली छे शिष्य ! अप्पाणं आसासि-आत्मानं आश्वासय तमे पोताना आत्मांमां
काई न आववाथी पीबाना प्रश्नोने उत्तर आपी शकता नथी ओ. नाएलीने आ
अधाना निमित्तने लई विपाद न करे.

भावार्थ-प्रज्ञापरीषद् ने एतवा माटे सूत्रकार साधुओ माटे शिक्षा
इपथी छडे छे के, जे जेपुं करे छे, तेने तेपुं इण भजे छे. काई
भावजनुं आउ वावीने तेमांथी आबाना इणनी आशा राखे तो ते व्यर्थ छे.

इदं गाथायुग्मं प्रज्ञाया अपकर्षमाश्रित्य व्याख्यातम् । इदमुपलक्षणं - यदि ज्ञानावरणीयकर्मणां क्षयोपशमात् प्रज्ञाया उत्कर्षः स्यात् तदा तन्निमित्तकं मदे न कुर्यादित्यपि बोध्यमिति । उक्तं हि ।

कारणों द्वारा जिन २ कर्मों का बन्ध किया है वे वे कर्म अवाधाकाल के बाद उस जीव के उदय आते रहते हैं । जब हे आत्मन् ! गुर्वादिक की निंदा करने से, शास्त्रों का अवर्णवाद बोलने से, उपघात से अर्थात् ज्ञानादिक के साधनों का नाश करने से, ज्ञान की अन्तराय देने से तूने तीव्र ज्ञानावरणीयादिक कर्मों का बंध किया है, तो उनका फल भी तुझे वैसा ही भोगना पड़ेगा । इसमें कोई के हाथ की बात नहीं है । जिन ज्ञानावरणीयादिक कर्मों का तूने बंध किया है वे उन उन रूप में ही उदय आवेंगे । अतः यदि तेरे से कोई जीवादिक तत्त्वों के विषय में कुछ पूछता है और तुझे उस विषय का कोई उत्तर ज्ञान में नहीं झलकता है इससे तू आत्मा में हीनता की भावना मत कर, और न खेद ही कर, किन्तु अपने आत्मा को धैर्य बंधा और इस प्रकार समझा कि यह तेरे ही किये हुए कर्म हैं अतः तुझे ही भोगना पड़ेगा । फिर इसमें हर्षविषाद करने की जरूरत क्या है ? । इस प्रकार इस परिणति से आत्मा प्रज्ञापरीपद को बहुत अच्छी तरह सहन कर सकता है ।

આ પ્રકારે પૂર્વભવમાં જે જીવે જે જે કારણો દ્વારા જે જે કર્મોનો બંધ કર્યો હોય તે તે કર્મ અવાધાકાળની બાદ તે તે જીવને ઉદયમાં આવે છે. આથી હે આત્મન્ ! શુરુ આદિની નિંદા કરવાથી, શાસ્ત્રોનો અવર્ણવાદ બોલવાથી, ઉપ-
ધાતથી અર્થાત્ જ્ઞાનાદિકનાં સાધનોનો નાશ કરવાથી જ્ઞાનમાં અંતરાય નાખવાથી, તેં તીવ્ર જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોનો બંધ કર્યો છે તો તેનું ફળ પણ તારે તેવુંજ લોગવવું પડશે. તેમાં કોઈના હાથની વાત નથી. જે જ્ઞાનાવરણીય કર્મોનો તેં બંધ કર્યો છે, તે તેવા તેવા રૂપમાંજ ઉદયમાં આવશે. આથી જો તને કોઈ જીવા-
દિક તત્વોના વિષયમાં કંઈ પુછે છે તો તને એ વિષયનો કોઈ જ્ઞાનભર્યો ઉત્તર જડતો નથી તો તેનાથી તું પોતાના આત્મામાં હિનતાની ભાવના અને ખેદ કરીશ નહીં. પરંતુ પોતાના આત્મામાં ધૈર્ય રાખ અને એ પ્રકારે સમજાવ કે, આ તારાંજ કરેલાં કર્મ છે. એથી એ તારે જ લોગવવાં પડશે. પછી આમાં હર્ષ વિષાદ કરવાની જરૂર જ શું છે ? આ પ્રકારે આ પરિણતિથી આત્મા પ્રજ્ઞા પરીપદને ખૂબજ સારી રીતે સહન કરી શકે છે. ગાથામાં "ક્રમા" એ બંધુ-

पूर्वपुरुषसिद्धानां, विज्ञानातिशयसागरानन्त्यम् ।

श्रुत्वा સામ્પ્રતપુરુષાઃ, કથં સ્વબુદ્ધ્યા મદં યાન્તિ ॥ ૧ ॥

યદ્વા-इह तन्त्रेणार्थद्वयसंभवः अनेकार्थबोधनेच्छातः सकृदुच्चारणं तन्त्रम् ।
अथ च-तन्त्रन्यायेनार्थद्वयस्य युगपत्संभवः-तन्त्रं च दैर्घ्यप्रसारितास्तन्त्रवः, ततो
यथा-दैर्घ्यप्रसारितमेकं सूत्रमनेकस्य तिरश्चीनस्य तन्तोः=संग्राहि, तथा-यदेकया

गाथा में “ कम्मा ” यह जो बहुवचनान्त शब्द का प्रयोग किया गया है वह कर्मों के बंध के हेतु अनेक हैं, इस आशय को प्रगट करने के लिये किया है । चालीस और इकतालीसवी गाथा का जो इस प्रकार विवेचन किया गया है वह बुद्धि की मन्दता को लक्ष्य में लेकर किया है । यदि ज्ञानावरणीय कर्मों के क्षयोपशम से प्रज्ञा का उत्कर्ष आत्मा में हो तो उस समय साधु को इस प्रज्ञानिमित्तक मद-अहंकार नहीं करना चाहिये । यह बात भी उपलक्षण से समझ लेनी चाहिये । कहा भी है-

पूर्वपुरुषसिद्धानां, विज्ञानातिशयसागरानन्त्यम् ।

શ્રુત્વા સામ્પ્રતપુરુષાઃ, કથં સ્વબુદ્ધ્યા મદં યાન્તિ ॥ ૧ ॥

પહિલે કે શ્રેષ્ઠ પુરુષોં કે અસાધારણ વિજ્ઞાન કી વાતોં કો સુનકર
ऐसा कौन पुरुष होगा जो अपने ज्ञान का मद-अहंकार करेगा । इस-
लिये बुद्धि की प्रकर्षता का भी मद नहीं करना चाहिये । तन्त्र न्याय
से प्रज्ञा के उत्कर्ष अपकर्षरूप दोनों अर्थ भी युगपत् विवक्षित हो
सकते हैं । जैसे एक लंबा फैला हुआ डोरा तिरछे फैले हुए अनेक

પ્રયનાત્મક શબ્દોનો પ્રયોગ કરેલ છે તે કર્મોના બાંધના હેતુ અનેક છે તેવો આશય
પ્રતાવવા માટે જ કરેલ છે. ચાલીસ અને એકતાલીસમી ગાથામાં જે આ પ્રકારે
વિવેચન કરેલ છે તે બુદ્ધિની મંદતાને લક્ષમાં લઈને કરેલ છે. જે કદી જ્ઞાના-
વરણીય કર્મોના ક્ષયોપશમથી પ્રજ્ઞાનો ઉત્કર્ષ આત્મામાં હોય તો તે સમયે સાધુએ
આ પ્રજ્ઞા નિમિત્તક મદ અહંકાર ન કરવો જોઈએ. આ વાત પણ ઉપલ-
ક્ષણથી સમજી લેવી જોઈએ. કહ્યું પણ છે—

पूर्वपुरुषसिद्धानां, विज्ञानातिशयसागरानन्त्यम् ।

શ્રુત્વા સામ્પ્રતપુરુષાઃ, કથં સ્વબુદ્ધ્યા મદં યાન્તિ ॥૧॥

પહેલાં શ્રેષ્ઠ પુરુષોની અસાધારણ વિજ્ઞાનની વાતો સાંભળીને એવો કયો
પુરુષ હશે કે જે પોતાના જ્ઞાનનો મદ અહંકાર કરશે ? આથી બુદ્ધિની પ્રકર્ષ-
તાનો પણ મદ ન કરવો જોઈએ.

તંત્ર ન્યાયથી પ્રજ્ઞાનો ઉત્કર્ષ અપકર્ષરૂપ બનને અર્થ પણ યુગપત્ વિવ-
ક્ષિત બની શકે છે. જેમ એક લાંબો ફેલાએલો દોરો આડા અવળા

ગાથયા અનેકાર્થસ્યાભિધાનં સ તન્ત્રન્યાયઃ, તદ્વિવક્ષયા પ્રજ્ઞાયા ઉત્કર્ષમાશ્રિત્યાપિ ભગવતા ગાથાદયં કથિતમ્। ઉપલક્ષણત્વે તુ તાત્પર્યગ્રાહકતયા પ્રમાણાન્તરં શ્રુતમ-પેક્ષણીયં સ્યાત્, અતસ્તન્ત્રાશ્રયણાદિહ વ્યાખ્યાદયં ક્રિયતે। તત્ર પ્રજ્ઞાયા ઉત્કર્ષ-પક્ષે એવં ગાથાદયં વ્યાખ્યાયતે—

પ્રજ્ઞોત્કર્ષવતા એવં ચિન્તનીયમ્—અથ નૂનં મયા પૂર્વં કર્માણિ=જ્ઞાનપ્રશંસા-જ્ઞાનિવૈયાઘટ્ટ્યાદિરૂપાણ્યનુષ્ઠાનાનિ, જ્ઞાનફલાનિ = જ્ઞાનમિહ વિમર્શપૂર્વકો ઘોષ-સ્તફલકાનિ, કૃતાનિ, યેન હેતુના-કેનાપિ=અવિવક્ષિતવિશેષેણ સર્વેણાપીત્યર્થઃ, કર્મશ્રિત્=યત્ર કુત્રાપિ વસ્તુનિ વિષયે પૃષ્ઠઃ અહં, ના=મનુષ્યઃ, વિશિષ્ટમનુષ્યત્વ-મનુભવન્ અભિજ્ઞાનામિ।

તન્તુઓં કા વસ્ત્રાદિક મેં સંગ્રાહક હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર એક ગાથા દ્વારા યુગપત્ અનેક અર્થોં કા ભી સંગ્રહ હોતા હૈં, યહી તન્ત્ર ન્યાય હૈં। ઇસ વિવક્ષા સે ઇન દોનોં ગાથાઓં દ્વારા પ્રજ્ઞા કા ઉત્કર્ષ લેકર ભી પ્રજ્ઞા-પરીપદ્ કા કથન હો સકતા હૈં। ઇસી અભિપ્રાય સે સૂત્રકાર ને યે દોનોં ગાથાએં કહી હૈં। બુદ્ધિ કી પ્રકર્ષતા કો લેકર વ્યાખ્યાન ઇસ પ્રકાર હૈં—

મેંને પૂર્વભવ મેં જ્ઞાનપ્રશંસા, જ્ઞાનિયોં કી વૈયાઘટ્ટ્ય આદિરૂપ શુભ કર્મ કિયે હૈં ઇસલિયે ઇનકા ફલ મુશે વિમર્શપૂર્વક ઘોષરૂપ મેં મિલા હૈં। ઇસલિયે ઇસ કે પ્રભાવ સે મેં જય કોઈ મુદ્ધ સે કિસી ભી વિષય કી અપની જિજ્ઞાસા સમાધાન કરને કે રૂપ મેં ઉપસ્થિત કરતા હૈં ઉસકી ઉસ જિજ્ઞાસા કા યયોચિત સમાધાન કર દેતા હૂં, ઇસસે ઉસ પૂછને વાલે કો સન્તોષ હો જાતા હૈં। ઇસલિયે સૂત્રકાર ઇકતાલીસવીં ગાથા દ્વારા એસે શ્રુતશાલી-સાધુ કો યહ સમજાતે હૈં કિ હે સાધો!

અનેક તાણાવાણાને વસ્ત્રરૂપમાં ફેરવનાર બને છે, તે પ્રકારે એક ગાથા દ્વારા યુગપત્ અનેક અર્થોનાં પણ સંગ્રહ થાય છે આ તન્ત્ર ન્યાય છે આ વિવક્ષાથી આ બંને ગાથાઓ દ્વારા પ્રજ્ઞાને ઉત્કર્ષ લઈને પણ પ્રજ્ઞાપરીપદનું કથન બની શકે છે, આ અભિપ્રાયથી ભગવાન સૂત્રકારે આ બંને ગાથાઓ કહી છે. બુદ્ધિની પ્રકર્ષતા બતાવનાર વ્યાખ્યાન આ પ્રકારનું છે.

મેં પૂર્વભવમાં જ્ઞાન પ્રશંસા, જ્ઞાનિઓની વૈયાઘટ્ટિ આદિ રૂપ શુભ કર્મ કરેલ છે. એનું ફળ મને વિમર્શપૂર્વક ઘોષરૂપમાં મળેલ છે. આ કારણે એના પ્રભાવથી ન્યારે કોઈ મારી પાસે કોઈ પણ વિષયની પોતાની જિજ્ઞાસા સમાધાન કરવાના રૂપમાં ઉપસ્થિત કરે છે ત્યારે હું એ જિજ્ઞાસાનું યયોચિત સમાધાન કરી દઉં છું. આથી એ પૂછવાવાળાને સંતોષ થાય છે, આ માટે સૂત્રકાર એકતાલીસમી ગાથાદ્વારા એવા શ્રુતશાળી-સાધુને એમ સમજાવે છે કે, હે સાધો!

તત્ર-શ્રુતમદો ન કર્તવ્ય ઇતિ વોધયિતુમાહ-‘ અહ પચ્છા ’ ઇત્યાદિ । અય-
 ઉત્કર્ષભાવનાનન્તરમ્, एवं विभावनीयम्-મયા પૂર્વભવે કૃતાનિ જ્ઞાનફલાનિ કર્માણિ
 પશ્ચાત્=અવાધોત્તરકાલમ્, इदानीम्, उदीयन्ते-ઉદિતાનિ ભવન્તિ, एवं कर्म-
 વિપાકકં જ્ઞાત્યાઽઽત્માનમ્ આશ્વાસય-આત્માનિ શાન્તિ સ્થાપય, ન તુ તન્નિમિત્તકં
 મદં કુરુ । અયં ભાવઃ-શ્રુતમદો હિ જ્ઞાનાવરણીયકર્મણઃ કારણમ્, तच्चावश्यवेधम्,
 तदुदये च कुतो ज्ञानम्, तस्माच्छ्रुतमदो न कर्तव्यः ।

યતઃ--“ નાણં મયદપ્પહરં, મજ્જઈ જો તેણ તસ્સ કો વેજ્જો ।

અમિયં જસ્સ વિસાયઈ, તસ્સ તિગિચ્છા કહં કિજ્જઈ ” ॥ ૧ ॥

છાયા--જ્ઞાનં મદદર્પહરં, માદ્યતિ યસ્તેન તસ્ય કો વૈદઃ ।

અમૃતં યસ્ય વિપાયતે, તસ્ય ચિકિત્સા કયં ક્રિયતે ॥ ૧ ॥

इत्येवं चिन्तनेन शान्तिं प्राप्नुहोति ।

વસ્તુતસ્તુ-ગાથાદ્વયમિદં યુગ્મકમ્ । ‘ સે ’ અથ નૂનં=નિશ્ચયેન મયા પૂર્વ=પૂર્વ
 ભવે-અજ્ઞાનફલાનિ કર્માણિ કૃતાનિ યેન કારણેનાહં કેનાપિ જિજ્ઞાસુના ક-
 સ્મિશ્વિત્ जीवाजीवादिस्वरूपविषये पृष्टः सन् नाभिजानामि=મન્દબુદ્ધિવાજ્ઞી-

તુમને યદિ પૂર્વભવ મેં જ્ઞાન કે સાધનોં કા અનુષ્ઠાન કરકે યદિ હસ
 ભવ મેં દૂસરોં કો અપેક્ષા કુછ વિશિષ્ટ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ, તો
 તુમ હસ જ્ઞાનરૂપ શ્રુત કા મદ મત કરો, કિન્તુ અપની આત્મા મેં શાંતિ-
 ભાવ સે રહો-આત્મા કો સમજાતે રહો કિ કહીં એસા ન હો જાય કિ
 મદ કરને સે આત્મા જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મ કા બન્ધ કરલે । હસ
 કર્મ કે બંધ મેં જવ હસકા ઉદય અપની અવાધાકાલ કે બાદ મેં
 આતા હૈ તો જીવ યથાર્થ જ્ઞાન સે રહિત હો જાતા હૈ, હસલિયે હૈ
 શિષ્ય તું શ્રુત કા મદ મતકર । તાત્પર્ય હન દોનોં ગાથાઓં કા યહ હૈ
 કિ જિસ સમય આત્મા મેં પ્રજ્ઞા કી હીનતા હો તો મુનિ કો એસા

તમે કહાય પૂર્વભવમાં જ્ઞાનના સાધનોનું અનુષ્ઠાન કરી એ આ ભાવમાં ખીનની
 અપેક્ષાએ કાંઈ વિશિષ્ટ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરેલ છે તો તમે એ જ્ઞાનરૂપ શ્રુતનો મદ ન
 કરો. પણ તમારા આત્મામાં શાંતિભાવથી રહો આત્માને સમભવતા રહો કે
 કયાંય એવું ન બની જાય કે, મદ કરવાથી આત્મા જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોનું
 બંધન કરી લે. એ કર્મના બંધમાં જ્યારે એનો ઉદય પોતાની અવાધાકાળની
 પછી આવે છે ત્યારે જીવ યથાર્થ જ્ઞાનથી રહિત થઈ જાય છે. આ માટે છે
 શિષ્ય ! તું શ્રુતનો મદ ન કર. આ બંને ગાથાનું તાત્પર્ય એ છે કે, જે સમયે
 આત્મામાં પ્રજ્ઞાની હિનતા હોય ત્યારે મુનિએ એવો વિચાર ન કરે એઈ એ

વાદિસ્વરૂપં નિરૂપયિતું ન સમર્થોઽસ્મિ । એવમ્=અમુના પ્રકારેણ કર્મવિપાકં-પૂર્વો-
પાર્નિત-જ્ઞાનાવરણીયકર્મફલં જ્ઞાત્વા આત્માનમ્ આશ્વાસયેત્યુત્તરગાથયા સમ્બન્ધઃ
અયમર્થઃ-હે શિષ્ય ! બુદ્ધિમાન્ધવિપયે વિપાદમકૃત્વા, તપઃ સંયમારાધને પ્રવૃત્તો ભવ ।
તપઃસંયમારાધનેન હિ કેવલજ્ઞાનપ્રાપ્તિરપિ ભવિતુમર્હતીતિ સોત્સાહં તત્સમારાધને
તત્પરો ભવેતિ ભાવઃ ।

અથ-પ્રજ્ઞાપ્રકર્ષે પથાત્-કદાચિત્તથાવિધજ્ઞાનાવરણીયક્ષયોપશમાનન્તરં 'કમ્મા-
ણાળફલા' इत्यस्य कर्माणि ज्ञानफलानि इति च्छाया तत्र - ज्ञानफलानि-
जीवाजीवादिस्वरूपनिर्णयजनकानि कर्माणि कृतानि=पूर्वभवोपाजितानि उदीयन्ते
तदा एवम્=अमुना प्रकारेण कर्मविपाकं ज्ञानावरणीयक्षयोपशमजन्यं प्रज्ञाप्रकर्षरूपं
कर्मफलं ज्ञात्वा हे शिष्य ! आत्मानम् आश्वासय=ज्ञानमदं परित्यज्य स्वस्थीकुरु ।
पूर्वकृतशुभकर्मणा मम ज्ञानावरणीयकर्मणः क्षयोपशमो जातस्तेन सूक्ष्म-सूक्ष्मतर-
सूक्ष्मतममपि जीवादिस्वरूपं सम्यग् जानामि, तथा केनापि पृष्टः सन् तस्मै
सम्यगवबोधयितुं समर्थोऽस्मीति विचारणया प्रज्ञामदं परिहरेत्यर्थः ।

વિચાર નહીં કરના ચાહિયે કિ મૈં કુછ નહીં જાનતા હું-મૂર્ખ હું જહાં
તહાં મેરા પરાભવ હોતા હૈ । ઇસ વિચાર સે આત્મા મૈં પરિતાપ હોતા
હૈ, ઇસ પ્રકાર વિચાર નહીં કરના યહ પ્રજ્ઞાપરીપહ હૈ । અથવા
શ્રુતજ્ઞાન કી વિશિષ્ટતા આત્મા મૈં હોને પર ઉસ સમય ઉસ મુનિ કો
ઉસકા મદ નહીં કરના ચાહિયે કિ-મૈં વિશિષ્ટજ્ઞાનસંપન્ન હું, પ્રત્યેક
વ્યક્તિ મેરે પાસ અપની ૨ જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કરને કે લિયે આતે
હૈ । પ્રત્યેક આત્મા કો મુક્ષ સે કિતના લાભ હોતા રહતા હૈ । ઇસ
પ્રકાર કા મદ નહીં કરના ચાહિયે । પ્રજ્ઞા કા મદ કરના ઇસ લિયે
નિષિદ્ધ હૈ કિ યહ જો જ્ઞાન પ્રાપ્ત હુઆ હૈ વહ જ્ઞાનાવરણીયકર્મ કે
ક્ષયોપશમ સે પ્રાપ્ત હુઆ હૈ । ઇસકા મૈં ક્યોં મદ કહું । ઇસ પ્રકાર

કે, હું કંઈ બાણુતો નથી, મૂર્ખ છું, બ્યાં ત્યાં મારો પરાભવ થાય છે. આ
વિચારથી આત્મામાં પરિતાપ થાય છે માટે આ પ્રકારનો વિચાર ન કરવો તે
પ્રજ્ઞાપરીપહ છે. અથવા શ્રુતજ્ઞાનની વિશિષ્ટતા આત્મામાં થવાથી તે સમયે તે
મુનિએ તેનો મદ ન કરવો બોધ્યો કે હું, વિશિષ્ટ જ્ઞાન સંપન્ન છું. પ્રત્યેક
વ્યક્તિ મારી પાસે પોતપોતાની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરવા આવે છે. પ્રત્યેક
આત્માને મારાથી કેટલો લાભ થાય છે? આ પ્રકારનો મદ ન કરવો બોધ્યો.
પ્રજ્ઞાનો મદ કરવાનો આ માટે નિષેધ છે કે, જે જ્ઞાન પ્રાપ્ત થયું છે તે જ્ઞાના-
વરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી પ્રાપ્ત થયેલ છે. આનો હું કંઈ રીતે મદ કરી

અસ્ય ગાધાદ્વયસ્યાયં નિષ્કર્ષઃ—પ્રજ્ઞાયા અપકર્ષે 'નાહં કિંચિજ્ઞાનામિ, મૂર્તોઽસ્મિ, યત્ર તત્ર પરાજિતો ભવામિ' इत्येवं परितापो न कर्तव्यः उत्कर्षे भुक्त-
मदो न कर्तव्यः । किन्तु कर्मविपाकोऽयमिति ज्ञात्वाऽऽत्मनः स्थिरीकरणेन द्विवि-
धोऽपि प्रज्ञापरीपहः सोढव्यः ।

અત્ર પ્રજ્ઞાપકર્ષે દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

પુષ્પદન્તાચાર્યઃ શિષ્યપરિવારેણ સહ ચમ્પાનગર્યાં સમવસતઃ । તેષુ શિષ્યેષુ
મદ્રમતિનામકઃ શિષ્યોઽતીવમન્દમતિરાસીત । સ આવશ્યકસમાપ્ત્યનન્તરં દશ-
વૈકાલિકસૂત્રાભ્યાસાર્થં પ્રવૃત્તઃ, પરન્તુ તદા તસ્ય પ્રવલજ્ઞાનાવરણીયાન્તરાયકર્મો-
દયો જાતસ્તે નૈકમપ્યક્ષરં ન સ્મરતિ, તતોઽસૌ ચિન્તયતિ—અહમસ્મિ પૂર્વધરાચાર્યસ્ય
શિષ્યઃ, આચાર્યો વાત્સલ્યેન મામધ્યાપયતિ, અન્યે મુનયશ્ચાપિ પ્રેમ્ણા મામન્તરં

આત્મા को अपने स्वभाव में स्थिर करते हुए प्रज्ञा के प्रकर्ष को सहन
करना यह भी प्रज्ञापरीपह है । इस तरह प्रज्ञा के उत्कर्ष और अप-
कर्ष के भेद से यह परीपह दो प्रकार का हो जाता है । यह दोनों प्रकार
का परीपह सहन करना मुनि के लिये आवश्यक है ।

પ્રજ્ઞા કે અપકર્ષ મેં દૃષ્ટાન્ત—કિસી સમય પુષ્પદન્તાચાર્ય શિષ્ય-
પરિવાર કે સાથ ચંપાનગરી મેં આયે । ઇનકી ઇસ શિષ્યમંડલી મેં
મદ્રમતિ નામ કા એક શિષ્ય અતીવ મંદમતિ થા । એક દિન કી રાત્ર
હે કિ ઉસને આવશ્યક કી સમાપ્તિ કે બાદ દશવૈકાલિકસૂત્ર કા
અભ્યાસ કરના પ્રારંભ કિયા । પરન્તુ ઉસ સમય ઉસકે પ્રવલ જ્ઞાના-
વરણીયકર્મ કા ઉદય હોને સે એક બી અક્ષર ઉસકો યાદ નહી હોતા ।
ઇસને વિચાર કિયા કિ પૂર્વધર આચાર્ય કા મેં શિષ્ય હૂં વાત્સલ્યભાવ

શકું ? આ પ્રકારે આત્માને પોતાના સ્વભાવમાં સ્થિર કરીને પ્રજ્ઞાને પ્રકર્ષ
સહન કરવો તે પણ પ્રજ્ઞાપરીપહ છે, આવી રીતે પ્રજ્ઞાને ઉત્કર્ષ અને અપ-
કર્ષના ભેદથી આ પરીપહ બે પ્રકારનો બને છે. આ બન્ને પ્રકારના પરીપહ
સહન કરવા મુનિને માટે આવશ્યક છે. પ્રજ્ઞાના અપકર્ષનું દૃષ્ટાન્ત—

કોઈ એક સમયે પુષ્પદન્તાચાર્ય શિષ્યપરીવાર સાથે ચંપાનગરીમાં આવ્યા.
આ શિષ્ય મંડળીમાં ભદ્રમતિ નામનો એક શિષ્ય ઘણો મંદમતી હતો. એક
દિવસની વાત છે કે, તેણે આવશ્યકની સમાપ્તિ બાદ દશવૈકાલિક સૂત્રનો અભ્યાસ
કરવો શરૂ કર્યો. પરંતુ તે સમયે તેને પ્રબળ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ઉદય થવાથી
એક પણ અક્ષર યાદ રહેતો નહીં. તેણે વિચાર કર્યો કે, હું પૂર્વધર આચાર્ય-
નું શિષ્ય છું, વાત્સલ્યભાવથી તેઓ મને શાસ્ત્રાધ્યયન કરાવે છે. બી નિઝો

બોધયતિ, તથાપિ મમ તત્ સ્મૃતિપથં નાયાતિ, અત્ર કથિત્ મુનિઃ સકૃદેવ શ્રુત્વા ધારયતિ, કથિદ્ દિવારં, કથિત્ ત્રિવારમ્ ।

કેનચિત્-શતં શતં ગાથા પ્રત્યહમમ્પસ્તાઃ, કેનચિત્ દ્વે દ્વે શતે । કથિદેક-પૂર્વધરઃ, કથિદ્ દ્વિપૂર્વધરો યાવચ્ચતુર્દશપૂર્વધરઃ સંજાતઃ, પરન્તુ મહાનિષ્કુરોડ્ગીવ નિર્બુદ્ધિરહમસ્મિ, શતશોઽભ્યાસે કૃતેઽપિ ધારણા ન ભવતિ । મમ પૂર્વજન્મોપાર્જિતં જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ, તથા જ્ઞાનાન્તરાયરૂપં કર્મ તીવ્રતયા સંપ્રત્યુદયાવસ્થાં પ્રાપ્તમ્,

સે વે મુક્તે પઢાતે હૈં, અન્ય મુનિ ભી મુક્ત પર વિશેષ અનુગ્રહ રખતે હૈં, વે ભી સમય ૨ પર મુક્તે વચવાતે હૈં-તો ભી મુક્ત કો યાદ નહીં હોતા । હમારે મેં કોઈ તો મુનિરાજ એસે હૈં જો એક વાર ભી સુનકર યાદ કર લેતે હૈં, કોઈ ૨ એસે હૈં જિન્હેં દો વાર કહને સે યાદ હો જાતા હૈ । કોઈ ૨ એસે હૈં જો ત્રીન વાર સુનકર વિષય કો અચ્છી તરહ યાદ કર લેતે હૈં । કિતને એસે હૈં જો એક હી દિન મેં સૌ-સૌ ૧૦૦-૧૦૦ ગાથાઈ યાદ કર લેતે હૈં । કોઈ ૨ એસે હૈં જો દો સૌ ૨૦૦-દો સૌ ૨૦૦ ગાથાઈ તંક કંઠસ્થ કર લેતે હૈં । કોઈ એક પૂર્વધર હૈં । કોઈ દો પૂર્વધર હૈં । કોઈ ત્રીન, કોઈ ચાર, કોઈ પાંચ, કોઈ છઠ્ઠ, કોઈ સાત ઓર કોઈ આઠ આદિ સે લેકર ચૌદહ પૂર્વતક કે પાઠી હૈં, કિન્તુ ઇન સવ મેં એક મેં હી એસા મન્દબુદ્ધિ હું જિસકો કુછ નહીં આતા હૈ । બુદ્ધિહીન યના હુઆ હું । સૌ વાર યાદ કરજે પર ભી ધારણા હોતી હી નહીં હૈ । કયા કહું પૂર્વોપાર્જિત જ્ઞાનાવરણીયકર્મ કા હી ઇસ સમય તીવ્ર હ્રદય

પણ આરા ઉપર વિશેષ લાવ રાખે છે અને સમય સમય ઉપર તેઓ મને બતાવે છે, તો પણ મને યાદ રહેતું નથી. અમારામાં કેટલાક મુનિરાજ એવા છે કે, તેઓ એકવાર સાંભળીને તેને કંઠસ્થ કરી લે છે, કોઈ કોઈ એવા છે કે, તેમને બે વખત ઠહેવાથી યાદ થઈ જાય છે, કોઈ કોઈ ત્રણ વાર સાંભળ્યાથી વિષયને સારી રીતે યાદ કરી લે છે. કેટલાક એવા પણ છે કે જે એક જ દિવસમાં ૧૦૦-૧૦૦ (સૌ-સૌ) ગાથાઓ યાદ કરી લે છે. કોઈ કોઈ ૨૦૦-૨૦૦ (બસો-બસો) ગાથાઓ કંઠસ્થ કરી લે છે. કોઈ કોઈ પૂર્વધર છે, કોઈ બે પૂર્વધર છે, કોઈ ત્રણ, કોઈ ચાર, કોઈ પાંચ, કોઈ છ, કોઈ સાત, કોઈ આઠ આદિથી લઈને ચૌદ પૂર્વ સુધીના પાઠી છે આ બધા વચ્ચે હું એકજ એવા મંદબુદ્ધિનો છું કે મને કોઈ પણ આવડતું નથી. હું બુદ્ધિહીન બનેલો છું સૌ વખત યાદ કરવા છતાંયે ગ્રહણ કરી શકતો નથી. શું કરું? પૂર્વોપાર્જિત સાત્તાવરણીય કર્મજ આ સમયે તીવ્ર હ્રદયમાં આવેલ છે. એનો જ આ પ્રતાપ છે.

અસ્ય ગાથાદ્વયસ્યાયં નિષ્કર્ષઃ—પ્રજ્ઞાયા અપકર્ષં 'નાહં કિંચિજ્ઞાનામિ, મૂર્ખોઽસ્મિ, યત્ર તત્ર પરાજિતો ભવામિ' इत्येवं परितापो न कर्तव्यः उत्कर्षे भुक्त-
मदो न कर्तव्यः । किन्तु कर्मविपाकोऽयमिति ज्ञात्वाऽऽत्मनः स्थिरीकरणेन द्वि-
धोऽपि प्रज्ञापरीपहः सोढव्यः ।

अत्र प्रज्ञापकर्षं दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

પુષ્પદન્તાચાર્યઃ શિષ્યપરિવારેણ સહ ચમ્પાનગર્યાં સમવસ્યતઃ । તેષુ શિષ્યેષુ
મંદ્રમતિનામકઃ શિષ્યોઽતીવમન્દમતિરાસીત્ । ॥ આવશ્યકસમાપ્ત્યનન્તરં દશ-
વૈકાલિકસૂત્રાભ્યાસાર્થં પ્રવૃત્તઃ, પરન્તુ તદા તસ્ય પ્રબલજ્ઞાનાવરણીયાન્તરાયકર્મો-
દયો જાતસ્તેનૈકમપ્યક્ષરં ન સ્મરતિ, તતોઽસૌ ચિન્તયતિ—અહમસ્મિ પૂર્વધરાચાર્યસ્ક
શિષ્યઃ, આચાર્યો વાત્સલ્યેન મામધ્યાપયતિ, અન્યે મુનયશ્ચાપિ પ્રેમ્ણા મામહારં
આત્મા કો અપને સ્વભાવ મેં સ્થિર કરતે હુણ પ્રજ્ઞા કે પ્રકર્ષ કો સહન
કરના યહ ભી પ્રજ્ઞાપરીપહ હૈ । ઇસ તરહ પ્રજ્ઞા કે ઉત્કર્ષ ઔર અપ-
કર્ષ કે ભેદ સે યહ પરીપહ દો પ્રકાર કા હો જાતા હૈ । યહ દોનોં પ્રકાર
કા પરીપહ સહન કરના મુનિ કે લિયે આવશ્યક હૈ ।

પ્રજ્ઞા કે અપકર્ષ મેં દૃષ્ટાન્ત—કિસી સમય પુષ્પદન્તાચાર્ય શિષ્ય-
પરિવાર કે સાથ ચંપાનગરી મેં આયે । ઇનકી ઇસ શિષ્યમંડલી મેં
મંદ્રમતિ નામ કા એક શિષ્ય અતીવ મંદમતિ થા । એક દિન કો વાત
હૈ કિ ઉસને આવશ્યક કી સમાપ્તિ કે બાદ દશવૈકાલિકસૂત્ર કા
અભ્યાસ કરના પ્રારંભ કિયા । પરન્તુ ઉસ સમય ઉસકે પ્રબલ જ્ઞાના-
વરણીયકર્મ કા ઉદય હોને સે એક ભી અક્ષર ઉસકો યાદ નહી હોતા ।
ઇસને વિચાર કિયા કિ પૂર્વધર આચાર્ય કા મેં શિષ્ય હૂં વાત્સલ્યભાવ

શકું ? આ પ્રકારે આત્માને પોતાના સ્વભાવમાં સ્થિર કરીને પ્રજ્ઞાને પ્રકર્ષ
સહન કરવો તે પણ પ્રજ્ઞાપરીપહ છે, આવી રીતે પ્રજ્ઞાને ઉત્કર્ષ અને અપ-
કર્ષના ભેદથી આ પરીપહ બે પ્રકારનો બને છે. આ બન્ને પ્રકારના પરીપહ
સહન કરવા મુનિને માટે આવશ્યક છે. પ્રજ્ઞાના અપકર્ષનું દૃષ્ટાન્ત—

કોઈ એક સમયે પુષ્પદન્તાચાર્ય શિષ્યપરિવાર સાથે ચંપાનગરીમાં આવ્યા.
આ શિષ્ય મંડળીમાં ભદ્રમતિ નામનો એક શિષ્ય ઘણો મંદમતી હતો. એક
દિવસની વાત છે કે, તેણે આવશ્યકની સમાપ્તિ બાદ દશવૈકાલિક સૂત્રનો અભ્યાસ
કરવો શરૂ કર્યો. પરંતુ તે સમયે તેને પ્રબળ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ઉદય થવાથી
એક પણ અક્ષર યાદ રહેતો નહીં. તેણે વિચાર કર્યો કે, હું પૂર્વધર આચાર્ય
નો શિષ્ય છું, વાત્સલ્યભાવથી તેઓ મને શાસ્ત્રાધ્યયન કરાવે છે. બીજા મુનિઓ

प्रज्ञाप्रकर्षे दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

एकदा—कालकाचार्यः प्रमादवतः स्वशिष्यानुज्जयिन्यां विहाय धारावासनगरे स्वशिष्यस्य सागरचन्द्रमुनेः समीपे समागतः । सागरचन्द्रस्तं सामान्यसाधुबुद्ध्या जानाति कालकाचार्योऽपि न किञ्चित् परिचयं ददाति ।

अथाऽन्यदा सागरचन्द्रमुनिनाऽऽगमनिर्णीततत्त्वस्वरूपव्याख्यानं कृते सति लोकास्तं प्रशंसन्ति, तदा सागरचन्द्रमुनिः कालकाचार्यं प्रति प्राह—मद्व्याख्यानं सकेगा, इस गाथा को तो याद करके ही छोड़ने का भाव है । इस प्रकार निश्चय करके प्रज्ञाप्रकर्षकरूप परीपह को सहन करते हुए उस भद्रमुनि ने शुभाध्यवसायजन्य प्रशस्त ध्यान से क्षपकश्रेणी को अरोहण कर केवलज्ञान को प्राप्त किया ।

प्रज्ञा के प्रकर्ष में दृष्टान्त इस प्रकार है—एक समय कालकाचार्य प्रमादशील अपने शिष्योंको उज्जयिनी नगरीमें छोड़कर धारावासनगर में स्वशिष्य सागरचन्द्रमुनि के पास आ गये । सागरचन्द्रशिष्यने उनके साथ सामान्य साधुके जैसा ही व्यवहार किया, गुरु जैसा नहीं । कालकाचार्यने भी इस बात पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और अपना परिचय भी नहीं दिया । एक दिन की बात है कि जब सागरचन्द्रमुनि ने आगमनिर्णीत तत्त्वों के स्वरूप को समझाते हुए व्याख्यान दिया तो सुनकर लोगों को अपार आनंद आया,—सबने प्रवचन की मुक्तकंठ से प्रशंसा की । सागरचन्द्रमुनि ने अपरिचित गुरु के समीप आकर कहा—आपने

याद किये व छुटके, तेवो भनोभाव छे. आ प्रकारनो निश्चय करीने प्रज्ञाप्रकर्षपरीपहने सहन करतां करतां ते भद्रमुनिछे शुभ अध्यवसाय जन्य प्रशस्त ध्यानधी क्षपकश्रेणी उपर यही केवलज्ञान प्राप्त कयुं.

प्रज्ञाना प्रदर्शनां दृष्टान्त आ प्रकारयुं छे—

એક સમય કાલકાચાર્ય પ્રમાદશિલ પોતાના શિષ્યોને ઉજ્જૈન નગરીમાં મૂકીને ધારાવાસ નગરમાં સ્વશિષ્ય સાગરચંદ્ર મુનિની પાસે આવ્યા. સાગરચંદ્ર શિષ્યે તેમની સાથે સામાન્ય સાધુ જેવો વહેવાર કર્યો, ગુરુ શિષ્ય જેવો નહીં. કાલકાચાર્યે આ વાત ઉપર કંઈ ધ્યાન ન આપ્યું, અને પોતાનો પરિચય પણ ન આપ્યો. એક દિવસની વાત છે કે, બ્યારે સાગરચંદ્ર મુનિએ આગમ નિર્ણીત તત્ત્વોના સ્વરૂપને સમજાવવાનું વ્યાખ્યાન આપ્યું તે સાંભળીને લોકોને અપાર આનંદ થયો. સમજાએ પ્રવચનની મુક્તકંઠે પ્રશંસા કરી. સાગરચંદ્ર મુનિએ અપરિચિત ગુરુની સમીપ આવીને કહ્યું. આપે આજ માટે તાત્વિક પ્રવચન

તસ્માન્મયા પ્રજ્ઞાયા અસદ્ભાવરૂપોઽયં પરીપદઃ સોઽવ્યઃ, ન તુ કસ્મિંશ્ચિત્ ઈર્ષ્યા દ્રેષો
વા કરણીયઃ, એવં વિચિન્ત્ય પ્રત્યહં પઠતિ, પુનઃ પુનરભ્યસ્યતિ ચ, પરં તુ ધારણા
ન ભવતિ, 'ધમ્મો મંગલમુક્ષિદ્ધ' ઇતિ ગાથા દ્વાદશવર્ષાણિ અભ્યસતા, પરં તુ
તસ્યા એકસ્યા અપિ ગાથાયાઃ સ્મૃતિસ્તસ્ય નાભૂત, અભ્યાસકાલે ધારિતેવ સા
તસ્ય ભવતિ, પરં ત્વલ્પકાલ એવં પુનસ્તાં વિસ્મરતિ । તદાઽસી પુનરભ્યવસ્યતિ-
પુનરપિ દ્વાદશવર્ષાણિ કાલમભ્યાસાર્થં યાપયિષ્યામિ, યેન કેનાપિ પ્રકારેણ ગાથા-
મેતાં કણ્ઠસ્થીકરિષ્યામ્યેવ । इत्येवं निश्चित्य प्रज्ञाऽपकर्षपरीपहं सहमानः भुमा-
ध्यवसायेन प्रशस्तध्यानेन क्षपकश्रेणिमारुह्य स भद्रमुनिः केवलज्ञानं प्राप्तवान् ।

હો રહ્યા હૈ, ઉન્હીં કા યહ કામ હૈ, અતઃ પ્રજ્ઞા કા અસદ્ભાવરૂપ યહ
પરીપદ મુક્ષે શાંતિ કે સાથ સહન કરના ચાહિયે, ઇસી મેં મેરા કલ્યાણ
હૈ, કિસી કે સાથ ઈર્ષા યા દ્રેષ કરને સે કોઈ લાભ નહીં । ઇસ પ્રકાર
ભદ્રમતિ મુનિ વાર ૨ વિચાર કરતા ઓર અપને પૂર્વોપાર્જિતકર્મોં કી
નિન્દા કરતા થા, પરન્તુ ઉસને અપના પઢના ઓર યાદ કરના બંદ નહીં
કિયા । અકેલે “ધમ્મો મંગલમુક્ષિદ્ધ” ઇસ ગાથા કો હી ઉસને લગા-
તાર ચારહ વર્ષતક યાદ કિયા-રટા, પર તૌ મી ઉસ કો યહ ગાથા યાદ
નહીં હુઈ । જિસ સમય યહ યાદ કરને બેઠતા ઉસ સમય તો યહ યાદ હો
જાતી પર ડ્યોં હી યહ યાદ કરના બંદ કર દેતા અથવા કિયા કરને મેં
ઉપયોગ લગાતા તો શીઘ્ર હી ઉસ ગાથા કો ભૂલ જાતા થા । યહ ફિર
મી ઉસકો યાદ કરના ઓર પઢના નહીં છોડતા ઓર વિચાર કરતા
કિ યદિ યહ ગાથા ઇન ચારહ ૧૨ વર્ષોં મેં કંઠસ્થ નહીં હુઈ તો અબ-
આગે કે ૧૨ વર્ષોં મેં કંઠસ્થ હો જાયેગી, કયા ચિંતા જૈસે મી હો

આથી પ્રજ્ઞાને આ અસદ્ભાવરૂપ પરીપદ માટે શાંતિથી સહન કરવો બેઠે એ.
તેમાં જ મારું કલ્યાણ છે. કોઈની સામે ઈર્ષા અથવા દ્રેષ કરવાથી કોઈ લાભ
નથી. આ પ્રકારે ભદ્રમતિ મુનિ વારંવાર વિચાર કરતા અને પોતાના પૂર્વો-
પાર્જિત કર્મોની નિંદા કરતા. પણ પોતાના પઠન-પાઠન આદિને તેણે બંધ ન કર્યો.
“ધમ્મો મંગલમુક્ષિદ્ધ” એ એક ગાથાને એકલાં તેણે બાર વર્ષ સુધી યાદ કરી ગોખ્યું
છતાં પણ તેને એ ગાથા યાદ ન થઈ. જે સમય તે યાદ કરવા બેસતા તો તે વખતે યાદ
રહી જતી પણ એ પછી યાદ કરવાનું બંધ કરી ક્રિયામાં ગુથાતાં તે ગાથા
બૂલાઈ જતી. છતાં પણ તે એને યાદ કરવાનું છોડતા નહીં. અને વિચાર
કરતા કે, આ બારવર્ષમાં યાદ ન થઈ તો આવતા બારવર્ષમાં જરૂર યાદ થઈ
જશે. ચિંતા શા માટે કરવી બેઠે. જે રીતે બનશે તે રીતે પ ગાથાને

सहितः कालकाचार्य आगच्छति इति बुद्ध्या सागरचन्द्रमुनिस्तत्रागच्छतां कालका-
चार्यशिष्याणां समुत्खे समागतः । स तत्र परितो विलोक्याचार्यमदृष्ट्वा; तान्
समागतान् मुनीन् पृच्छति-भो मुनयः ! क्व वर्तन्ते पूज्यचरणाः, सागरचन्द्रमुने-
रेतद्वचनं निशम्य हताशाः सर्वे मुनयः साश्रुनेत्राः सगद्गदं प्रोक्तवन्तः-हृतभाग्या-
नस्मान् परित्यज्य गुरुचरणाः क्व गता इति वयं न विद्मः, भवता ज्ञायते किम् ? ।
सागरचन्द्रमुनिनोक्तम्-तं न विद्मो वयम्, किं तु एकः कोऽपि वृद्धः संप्रति वर्तते
उपाश्रये । ततः सर्वे गुरुभक्त्युद्रेकात् तद्विरहखिन्ना उपाश्रये आगताः । सागरमुनि-
नाऽङ्कुल्या निर्देशेन प्रदर्श्य कथितम्-अयमागन्तुको महानुभावः । शिष्यास्तदैव

चल दिये । सागरचंद्रमुनि को जब पता चला कि सशिष्य गुरु महा-
राज कालकाचार्य विहार करते हुए यहां आरहे हैं तो वे उनका
स्वागत करने के लिये सामने गये । वहां उन मुनियों में गुरु महाराज
को नहीं देखा तब उसने उन अपने गुरु भाईओं से पूछा कि-पूज्य
गुरु महाराज तो दिखते नहीं हैं कहां वे इस समय कहां हैं । तब
मुनियों ने सागरचंद्रमुनि के वचन सुनकर हताशा एवं आंसू डालते
हुए गद्गद कंठ से बोले हृतभाग्य हम लोगों को छोड़कर गुरु महाराज
कहां चले गये हैं यह हम नहीं जानते हैं । कहो आप को मालूम है
क्या ? सागरचंद्रमुनि ने कहा उन्हें तो हम जानते नहीं हैं किन्तु एक
कोई वृद्ध महात्मा इस समय उपाश्रय में अवश्य ठहरे हुए हैं ।
सागरचंद्रमुनि की इस बात को सुनकर समस्त शिष्य जो गुरु महा-
राज के विरह से खेदखिन्न बने हुए थे गुरुभक्ति के उद्रेक से प्रेरित
होकर उपाश्रय में पहुँचे । सागरचंद्रमुनि ने अंगुली के इशारे से

करवा लाया, सागरचंद्र मुनिने ओ भणर भण्यो के; गुरुमहाराज कालकाचार्य
शिष्यो साथे विहार करता करता अछीं पधारे छे त्यारे ते तेभनु स्वागत
करवा सामे गया, त्यां ओ मुनिओमां गुरुमहाराजने न भयो त्यारे तेणे पोतीना
ओ गुरुबोधोआनि पूछयुं के पूज्य गुरुमहाराज तो हेआता नथी कडो, ते आ
समये क्या छे ? सागरचंद्र मुनिनां आ पयन सांखणीं ते शिष्यो हतांश
भनी गया अने आंसुसरी आंओ गइगइ कंठ्यो भोल्या, हतभाग्य ओमां
अधाने छोडीने गुरुमहाराज क्या याह्यो गया छे ओ अमे नखुता नथी, कडो
कडो आपने भणर छे ? सागरचंद्र मुनिओ कहुं, ओमने हुं ओणभतो नथी
परंतु ओक वृद्ध महात्मा आ पयते उपाश्रयमां रोकायेला छे, सागरचंद्रनी
ओ पाते सांखणीं सधणा शिष्यो ने गुरुमहाराजना विरहयो भेदभित्त ओनेद
हता; ते सधणा गुरुभक्तिना बोधयो प्रेरित भनी उपाश्रयमां पडोआ, सागर-

શ્રુતં ભવદ્ભિઃ, કીદૃશં તત્, ? તેનોક્તમ્-શોભનમ્; કાલકાચાર્યેણ સહ તસ્ય તર્ક-
માથિસ્ય વાદઃ પ્રવૃત્તેઃ । સાગરચન્દ્રમુનિસ્તસ્ય તુલ્યતયા પ્રત્યુત્તરં કર્તુમસમર્થો જાત-
સ્તતોઽતીવ ચમત્કારં સ પ્રાપ્તવાન્ ।

इतश्च कालकाचार्यस्य शिष्याः स्वगुरुपरित्यक्ताश्चतुर्विधसंघेस्तिरस्कारं प्राप्य;
लज्जिताः सन्तः स्वगुरुं गवेषयन्ति । ते ग्रामानुग्रामं विहरन्तः कालकाचार्यवार्तां
प्रतिग्रामं प्रतिनगरं प्रतिस्थलं पृच्छन्तः क्रमेण धारावासनगरं समीगताः । शिष्य-

आज मेरा तात्त्विक प्रवचन तो सुना है ? वह कैसा हुआ । कालका-
चार्य ने कहा अच्छा हुआ, बातचीत के सिलसिले में ही गुरु शिष्य का
तर्कशास्त्र पर परस्पर में वादविवाद छिड़ गया । सागरचंद्रमुनि को
यह पता नहीं था कि ये मेरे गुरु महाराज कालकाचार्य हैं । सागरचंद्र
मुनि कालकाचार्य को तर्कणाओं का प्रत्युत्तर नहीं दे सका अतः वह
कालकाचार्य के अगाध ज्ञान से विशेष प्रभावित हुआ ।

उधर से जब अपने शिष्यों को उज्जयिनी में छोड़कर कालकाचार्य
आगये तो उन शिष्यों का वहाँ के चतुर्विधसंघने बड़ा ही तिरस्कार
किया । वे सबके सब लज्जित होने लगे । सबने विचार किया कि
गुरु महाराज का पता लगाना चाहिये कि वे कहाँ पधारि हैं । विचार
निश्चित कर सबने वहाँ से गुरु महाराज की गवेषणा करने के लिये
विहार कर दिया । ग्रामानुग्राम विचरते हुए उन्होंने न प्रत्येक जगह में,
प्रत्येक ग्राम में, प्रत्येक शहर में कालकाचार्य का पता लगाया तथा
उनकी खबर भी पूछी । पूछते-ये सब के सब धारावास नगर की ओर

સાંકલ્પ્ય ? તે કેમ હતું ? કાલકાચાર્યે કેહ્યું; સાહે હતું; વાતચીતની ચર્ચામાં
જે ગુરુ શિષ્યને તર્કશાસ્ત્ર ઉપર પરસ્પરમાં વાદવિવાદ થયો; સાગરચંદ્ર મુનિને
એ જ્યાં ન હતો કે આ મારો ગુરુમહારાજ કાલકાચાર્ય છે. સાગરચંદ્ર મુનિ
કાલકાચાર્યની તર્ક ધારાઓનો પ્રત્યુત્તર આપી શકે એ નહીં; આથી તે કાલકા-
ચાર્યના અગાધ જ્ઞાનથી ખૂબ પ્રભાવિત બની ગયા.

આ તરફ ઉજ્જૈનીમાં રહેલા તે શિષ્યોના લાંબા ચતુર્વિધ સંઘે બહુ
તિરસ્કાર કર્યો. તે સઘળા આથી ખૂબજ શરમાયા. અને બધાએ મળી એ વિચાર
કર્યો કે, ગુરુમહારાજનો પત્તો મેળવવો જોઈએ કે તેઓ કયાં વિચરે છે; વિચાર
નહી કરી એ શિષ્યોએ ગુરુમહારાજની તપાસ માટે વિહાર કર્યો. આમ-
નુગ્રામ વિચરણ કરતાં તેમણે પ્રત્યેક જગ્યાએ, પ્રત્યેક ગામમાં, પ્રત્યેક
શહેરમાં, કાલકાચાર્ય મહારાજની પુછા કરી; અને તેમની બધર પૂછી.
પૂછતાં પૂછતાં બધર મળી જતાં તે સઘળા ધારાવાસ નગર વિહાર

‘નિરદ્વગં’ ઇત્યાદિ ।

નિરર્થકમ્=વ્યર્થમ્ મિ=અહં મૈથુનાત્=કામસુખાદ વિરતઃ=નિવૃત્તઃ। પ્રાણાતિપા-
તાદિવિરમણં વિહાય યન્મૈથુનમાત્રોપાદાનં તત્તસ્ય દુસ્ત્યજત્વબોધનાર્થમ્। દુસ્ત્યજ-
મૈથુનાત્ પ્રતિનિવર્તનેનાહં દુષ્કરં કાર્યં વ્યર્થમેવ કૃત્વાનિતિ ભાવઃ । તથા-નિરર્થકં
સુસંવૃત્તઃ = ઇન્દ્રિયનોઈન્દ્રિયવ્યાપારનિરોધેન સુષ્ટુસંવસ્યુક્તઃ । યોઽહં કલ્યાણં=
શુભં, પાપકમ્=અશુભં, ધર્મ=વસ્તુસ્વભાવં સાક્ષાત્=પરિસ્ફુટં યથા સ્યાત્ તથા, ના-
ભિજાનામિ=અવધ્યાદિજ્ઞાનાભાવેન પ્રત્યક્ષતયા સર્વથા ન જાનામીત્યર્થઃ । ઇતિ
ભિક્ષુર્ન ચિન્તયેત્ । ‘इह भिक्षू न चिंतए’ इत्युत्तरगाथा(૪૪)સ્થેન સદ્ સમ્બન્ધઃ ।

મતિશ્રુતરૂપ પરોક્ષજ્ઞાન કો આશ્રિત કર પ્રજ્ઞાપરીપહ્ કા સૂત્રકારને
યહ વર્ણન કિયા હૈ । અવ અવધિ આદિ રૂપ જો પ્રત્યક્ષ જ્ઞાન હૈ
उनके अभावरूप इक्षीसचां अज्ञानपरीपह का वर्णन किया जाता है—

‘નિરદ્વગંમિ’ ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(નિરદ્વગંમિ મૈથુણાઓ વિરઓ- નિરર્થકમહં મૈથુનાત્
વિરતઃ) વ્યર્થ હી મૈ કામસુખ સે વિરત્ત હુઆ હું । (સુસંવૃત્તો-સુસં-
વૃત્તઃ) વ્યર્થ હી મૈને ઇન્દ્રિયોં એવં મન કો અપને અભિલપિત વિષયોં સે
હટાકર સુસંવૃત્ત કિયા હૈ । (જો-યઃ) જો મૈ અભીતક ખી (કલ્યાણં પાવગં
ધર્મં સક્ષં નાભિજાનામિ-કલ્યાણં પાપકં ધર્મં સાક્ષાત્ નાભિજાનામિ)
શુભ તથા અશુભ વસ્તુસ્વભાવરૂપ ધર્મ કો અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષ
જ્ઞાનોં કૈ અભાવ મૈ સાક્ષાત્-સ્પષ્ટરૂપ સે નહીં જાનતા હું । ઇસ પ્રકાર
ભિક્ષુ વિચાર ન કરે । “इह भिक्षू न चिंतए” यह आगे गाथा
चौवालीस ४४वीं में कहा गया वाक्य यहाँ योजित कर लेना चाहिये ।

મતિશ્રુત રૂપ પરોક્ષજ્ઞાનને આશ્રિત કરી પ્રજ્ઞાપરીપહનું સૂત્રકારે આ
વર્ણન કરેલ છે. હવે અવધિ આદિરૂપ બે પ્રત્યક્ષજ્ઞાન છે તેના અભાવરૂપ
એકવીસમા અજ્ઞાનપરીપહનું વર્ણન કરવામાં આવે છે—‘ નિરદ્વગંમિ ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—નિરદ્વગંમિ મૈથુણાઓ વિરઓ-નિરર્થકમહં મૈથુનાત્ વિરતઃ કામસુખને
છોડીને હું નકામો વિરક્ત બન્યો છું. સુસંવૃત્તો-સુસંવૃત્તઃ ઇન્દ્રિયો અને મનને તેના
અભિલપિત વિષયોથી હટાવીને મેં વ્યર્થ સુસંવૃત્ત કરેલ છે, બે આજ સુધી પણ
હું કલ્યાણ પાવગં ધર્મ સક્ષં નાભિજાનામિ-કલ્યાણ પાપકં ધર્મ સાક્ષાત્ નાભિ-
જાનામિ શુભ તથા અશુભ વસ્તુ સ્વભાવરૂપ ધર્મને અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનના
અભાવથી સાક્ષાત્-સ્પષ્ટરૂપથી બાંધતો નથી. આ પ્રકારનો વિચાર ભિક્ષુ ન
કરે. ઇહ ભિક્ષૂ ન ચિંતય આ આગળ બતાવવામાં આવેલ ૪૪ મી ગાથાનું

દ્વષ્ટતુષ્ટાઃ સસંભ્રમં હર્ષવશવિસર્પદૃદયાઃ, 'હમેષ્વમમ ગુરવઃ' इति वन्दितवन्तः ।
 સાગરચંદ્રમુનિસ્તદા કાલકાચાર્યે પરિચિતે પથ્યાત્તાપં કુર્વન્ વદતિ-ભગવન્ ! મયા
 શ્રુતનિધીનાં તત્રભવતાં ભવતામાશાતના કૃતા, સમસ્વ ।

કાલકાચાર્યેણોક્તમ્—હે વત્સ ! શ્રુતમદો ન કર્તવ્યઃ । એવમન્યૈરપિ કાલકા-
 ચાર્યવત્ પ્રજ્ઞાપ્રકર્ષે મદાકરણેન પ્રજ્ઞાપરીપહઃ સોદ્યવ્યઃ ॥ ૪૧ ॥

મતિશ્રુતરૂપપરોક્ષજ્ઞાનમાશ્રિત્ય પ્રજ્ઞાપરીપહો વર્ણિતઃ । અધેદાનીમવગ્ચ્યાદિભૂષં
 પ્રત્યક્ષજ્ઞાનમાશ્રિત્ય તદભાવરૂપ એકવિંશતિતમોઽજ્ઞાનપરીપહઃ પ્રોચ્યતે—

મૂલમ્—નિરંદ્રગં મિં વિરંઓ, મેદુળાંઓ સુસંદુહો ।

જો સર્વેશ્વં નોભિજાળોમિ, ધર્મં કલ્હાણ પાવગં ॥ ૪૨ ॥

છાયા-નિરર્થકમ્ અહં ચિરતઃ, મૈથુનાત્ સુસંદૃતઃ ।

યઃ સાક્ષાત્ નાભિજાનામિ, ધર્મં કલ્યાણં પાપકમ્ ॥ ૪૨ ॥

ચતલાકર કહા કિ દેસો યે હૈં વે આગન્તુક મહાનુભાવ । વે શિષ્ય
 સવ કે સય उसी समय अपार हर्ष से उत्फुल्लहृदय होकर दृष्ट तुष्ट
 होते हुए बड़े ही आदर से “यही है हमारे गुरु महाराज” कह कर
 उनके चरणों में गिर कर वंदना करने लगे । सागरचंद्रमुनि उस
 समय कालकाचार्य के परिचित होने पर पथ्यात्ताप करता हुआ उनसे
 बोला भगवन् ! श्रुतनिधि पूज्य आपकी मेरे द्वारा आशातना हुई है,
 अतः मैं उसकी क्षमा चाहता हूँ, आप क्षमा करें । कालकाचार्य ने कहा
 वत्स ! श्रुतज्ञान का मद नहीं करना चाहिये । इस कथा से यही शिक्षा
 मिलती है कि कालकाचार्य की तरह प्रज्ञा के प्रकर्ष में मद नहीं करने
 से प्रज्ञापरीपह का जय होता है ॥ ४१ ॥

અંદ્ર મુનિએ આંગળીના ઇસારાથી બતાવીને કહ્યું કે, બુઝો આ છે તે આવેલા
 મહાનુભાવ ! આથી તે સઘળા શિષ્યો તે સમયે અપાર હર્ષથી પ્રકુલિત બની
 ખુશી થતાં થતાં ખૂબજ આદરથી “આ જ છે અમારા ગુરુમહારાજ” કહીને
 તેમના ચરણમાં પડીને વંદન કરવા લાગ્યા. સાગરચંદ્રમુનિ એ સમયે કાલકા-
 ચાર્યના પરિચયથી પથ્યાત્તાપ કરતાં કરતાં તેમને કહેવા લાગ્યા, ભગવંત !
 શ્રુતનિધિ પૂજ્ય મારાથી આપની અશાતના થઈ છે. આથી હું તેની ક્ષમા
 થાહું છું. આપ મને ક્ષમા કરો. કાલકાચાર્યે કહ્યું, વત્સ ! શ્રુતજ્ઞાનનો મદ ન
 કરવો બોધ્યો. આ કથાથી એ બાલુવાનું મળે છે કે, કાલકાચાર્યની મોક્ષ
 પ્રજ્ઞાના પ્રકર્ષમાં મદ નહીં કરવાથી પ્રજ્ઞાપરીપહનો જય થાય. ૧૧.

ટીકા--'તવોવહાણમાદાય' इत्यादि ।

તપઃ=યવમધ્યચન્દ્રપ્રતિમા-વજ્રમધ્યચન્દ્રપ્રતિમાદિકમ્, ઉપધાનં=સાભિગ્રહં તપઃ
આદાય=સ્વીકૃત્ય ચરિત્વેત્યર્થઃ, અભિગ્રહવિશેષરૂપાં માસિકયાદિકાં, પ્રતિપદ્યમા-
નસ્ય=પ્રતિપદ્યમાનસ્ય અંગીકૃતવતઃ, એવમપિ=વિશિષ્ટચર્યયાઽપિ, વિહરતઃ=નિષ્પ્રતિવ-
ન્ધં વિચરતઃ, મે=મમ, છદ્મ=છાદયતીતિ છદ્મ-જ્ઞાનાવરણીયાદિકં કર્મ, ન નિવર્તતે
=નાપગચ્છતિ, इति भिक्षुर्न चिन्तयेत्, इत्युत्तरगाथास्थेन सह सम्वन्धः ।

अयं भावः—अहं यवमध्यचन्द्रप्रतिमादिकं तपः करामि, तथा साभिग्रहं तपः

किंच—'तवोवह्राणमादाय' इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(તવોવહાણમાદાય-તપઉપધામ્ આદાય) યવમધ્ય-
ચન્દ્રપ્રતિમા, વજ્રમધ્યચન્દ્રપ્રતિમા આદિક તપ કો તથા સાભિગ્રહ તપ
રૂપ ઉપધાન કો સ્વીકાર કર કે, તથા ડનકા આચરણ કરકે (પઢિમં-
પઢિવજ્જઓ-પ્રતિમાં પ્રતિપદ્યમાનસ્ય) અભિગ્રહવિશેષરૂપ માસિકયા
દિક પ્રતિમા કો અંગીકાર કરને ચાલે (મે-મમ) મેરા જો કિ (એવં
પિ વિહરઓ-એવમપિ વિહરતઃ) ઇસ પ્રકાર કી વિશિષ્ટચર્યા સે મુક્તિ
કે માર્ગ મેં વિચરણ કર રહ્યા હું (છડમં-છદ્મ) જ્ઞાનાવરણીયાદિક
કર્મો કા આવરણ તો ઢી (ન નિયટ્વદ્-ન નિવર્તતે) નિવર્તિત નહીં હોતા
હે । ઇસ પ્રકાર ભિક્ષુ વિચાર નહીં કરે ।

ये दो ४२-४३ गाथाएँ अवधि आदि प्रत्यक्ष ज्ञान की प्राप्ति के विषय में कही गई हैं ।

तात्पर्य यह है कि मैं यवमध्यचन्द्रप्रतिमा आदिक तप करता हूँ

किंच—'तवोवह्राणमादाय' इत्यादि.

અન્વયાર્થ—'તવોવહાણમાદાય'—તપઉપધાનં આદાય યવમધ્યચન્દ્રપ્રતિમા
—વજ્રમધ્યચન્દ્ર પ્રતિમા આદિક તપને તથા સાભિગ્રહ તપરૂપ ઉપધાનને સ્વીકાર કરી
તથા તેનું આચરણ કરી પઢિમં પઢિવજ્જઓ-પ્રતિમાં પ્રતિપદ્યમાનસ્ય અભિગ્રહવિશેષરૂપ
માસિકયાદિક પ્રતિમાને અંગીકાર કરવાવાળા મે-મમ હું કે જે-એવં પિ વિહરઓ-
એવમપિ વિહરતઃ આ પ્રકારની વિશિષ્ટ ચર્યાથી મુક્તિના માર્ગમાં વિચરણ કરી
રહ્યો છું છડમં-છદ્મ છતાં જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોનું આવરણ ન નિયટ્વદ્-ન નિવર્તતે
ફર થતું નથી. આ પ્રકારનો વિચાર ભિક્ષુ ન કરે.

જેંતાલીસ અને તેંતાલીસ આ બે ગાથાઓ અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનની
અપ્રાપ્તિના વિષયમાં કહેવામાં આવેલ છે.

तात्पर्यं आ છે કે,— હું યવમધ્ય ચન્દ્રપ્રતિમા આદિક તપ કરું છું તથા

અર્થ ભાવઃ — મયા યથા મૈથુનવિરમણં કૃતમ્, વૃથૈવ ચેન્દ્રિયાણિ ત્રિજિતાનિ
યદહં શુભમશુભં વા વસ્તુસ્વભાવં પ્રત્યધ્વરુપેણ નામિજાનામીત્યેવં ચિન્તનૈન ઘનિર્વિ-
પાદં ન કુર્યાત્ । ‘મિ’ इत्यर्पत्वात् प्रथमार्थे द्वितीया ॥ ૪૨ ॥

કિન્ચ—

મૂલમ્—તેવોવહાણેમાદાય, પડિમં પડિવર્જેઓ ।

एवं पि° विहरओ मे, छडेमं ते नित्येदृङ् ॥ ૪૩ ॥

છાયા—તપ્પડમધાનમાદાય, પ્રતિમાં પ્રતિપદમાનસ્ય ।

एवमपि विहरतो मे, छद्मं न निवर्तते ॥ ૪૩ ॥

હસ ગ્રામ્યા મેં એક મૈથુન માત્ર કા હી ગ્રહણ હસલિયે ક્રિયા હૈ કિ અહિંસા
આદિ સ્વ કી અપેક્ષા મહ દુસ્ત્યજ જોતા હૈ હસલિયે મુનિ વિચારતા
હૈ કિ એસે દુષ્કર ત્યાગ કરને પર મી મુદ્દે કુછ લાભ નહીં જુઆ ।

ભાવાર્થ—હસકા ભાવ યહ હૈ કિ અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનો કી
પ્રાપ્તિ કે અભાવ મેં બિધુ કો અપની આત્મા કે લિયે હસ પ્રકાર કે
વિચાર સે વિપ્રાદિત નહીં કરના ચાહિયે કિ—મુદ્દે વ્રહ્મચર્ય કા પાલન
તથા તપશ્ચર્યા કરતે ૨ મહુત કાલ હો ચુકા હૈ અબી તક—મી મુદ્દે
વસ્તુ કા વાસ્તવિક શુભાશુભ સ્વભાવ સ્પષ્ટ રીતિ સે જાનલાજે જાકે
પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનો મેં સે એક મી કિસી જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ જહીં હુઈ હૈ । ત્ય
દીક્ષા વ્રહ્મચર્યવ્રત ઔર તપશ્ચર્યા અદિ મૈને વ્યર્થ ધારણ કિયે । હસકી
અપેક્ષા તો સંસારવશા મેં હી આનન્દ થા ॥ ૪૨ ॥

વાક્ય અહિં મેલત કરી હેવું જોઈએ. એ ગાથામાં એક મૈથુન ભાવનું
એટલા માટે થકણ કરવામાં આવેલ છે કે, અહિંસા આદિ અધ્યાત્મી અપેક્ષા
એ દુસ્ત્યજ હોય છે. આ માટે મુનિ વિચારતા હોય છે કે, આવો દુષ્કર ત્યાગ
કરના છતાં પણ મને કંઈ લાભ થયો નહીં.

ભાવાર્થ—અપની પ્રાપ્તિ એ છે કે, અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનેત્રી પ્રાપ્તિના અભાવમાં
બિધુએ મોતાના આત્મા માટે આ પ્રકારનો વિચાર કરી કદી વિપ્રાદિત બનવું
ન જોઈએ—કે, મને બ્રહ્મચર્યનું પાલન અને તપશ્ચર્યા કરતાં કરતાં છતાં સમય
ગયો તેમ છતાં પણ વસ્તુને વાસ્તવિક શુભાશુભ સ્વભાવ સ્પષ્ટ રીતે જાનાવ-
નાર પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનેત્રીમાંથી કંઈ એક પણ જ્ઞાનેત્રી પ્રાપ્તિ થવા પ્રાપ્તી નથી. આ
દીક્ષા, બ્રહ્મચર્યવ્રત અને તપશ્ચર્યા વગેરે એ નકામાં ધારણ કર્યા છે. આની
અપેક્ષા તો સંસાર દશામાં જ આનંદ હતો ॥ ૪૨ ॥

મયા નોપલબ્ધમ્ । તદનુપલબ્ધો ચ દુસ્ત્યજમૈયુનાત્ પ્રતિનિવર્તનં મમ વ્યર્થમ્ ।
તથા નિર્વર્થકં સુસંતૃપ્તઃ = ઇન્દ્રિયનો ઇન્દ્રિયવ્યાપારનિરોધેન સુષ્ટુસંવાયુક્તોઽભવમ્ ,
યોઽહં કલ્યાણં પાપકં વા ધર્મ=વસ્તુસ્વભાવં, સાક્ષાત્=પરિસ્ફુટં, નામિજાનામિ=અમિ-
-સર્વથા નિરવશેષવિશેષપૂર્વકં ન જાનામિ । અયં ભાવઃ—“ જે એમં જાણહ, સે
સર્વં જાણહ, જે સર્વં જાણહ, સે એમં જાણહ ” ઇત્યાગમવચનાચ્છદ્રસ્થોઽહં
કિમપ્યેકમપિ વસ્તુસ્વરૂપં ન તત્ત્વતો જાનામિ, યદિ સાક્ષાત્ સમસ્તભાવસ્વભાવાંવ-
ભાસકં કેવલાલોકં ન લબ્ધવાન્, તર્હિ કિમનેનાલપેન મુકુલિતવસ્તુસ્વરૂપજ્ઞાનેન,
ઇત્યેવં વિપાદં ન કુર્યાદિતિ ।

તથા—તપઉપધાનાદિભિર્નિર્જરાહેતુભિરપિ છદ્રસ્થાવસ્થા ન નિવર્તતે=નિરવશેષં
ન ક્ષીયતે, કિં તર્હિ મમાનેન ક્રિયાકલાપેન? ઇતિ વિચિન્ત્ય મુનિર્વિપાદં ન કુર્યાત્ ।

તથા ઇન્દ્રિય નો ઇન્દ્રિય કા નિગ્રહ ભી ક્રિયા હૈ વે સવ નિર્વર્થક હૈ ।
ક્યોં કિ અભીતક મુજે શુભાશુભ વસ્તુ કા સંપૂર્ણરૂપ સે જ્ઞાન કરાને
વાલા કેવલજ્ઞાન તો પ્રાપ્ત હુવા હી નહીં હૈ । ઉસકે ન હોને પર હિસ
દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ એવં ભાવ કી મર્યાદા કો લેકર વસ્તુ કે સ્વરૂપ કો
પ્રકટ કરાને વાલે હિન અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાન સે ક્યા લાભ હૈ । હિસ
પ્રકાર વિચાર કર સાધુ અપની આત્મા કો દુઃખિત નહીં કરે ।

તથા—નિર્જરા કે કારણ હિન તપ એવં ઉપધાન આદિ કે આચરણ
કરને સે મુજે લાભ હી ક્યા હુઆ, ક્યોં કિ અભીતક મેરી છદ્રસ્થા-
વસ્થા તો દૂર નહીં હુઈ હૈ । સમસ્ત જ્ઞાનાવરણીયકર્મ નષ્ટ હોકર જબ
તક કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત નહીં હોતા તવતક છદ્રસ્થાવસ્થા રહતી હૈ । અતઃ
કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ કા અભાવસ્વરૂપ અજ્ઞાનપરીપહ સાધુ કો જીતના
ચાહિયે । તથા તપ એવં ઉપધાન આદિ જો નિર્જરા કે હેતુ હૈં ઉનસે મેરે

નિશ્ચય પશુ કર્યો છે. તે બધું નિર્વર્થક છે. કેમકે, હજી સુધી મને શુભાશુભ
વસ્તુનું સંપૂર્ણરૂપથી જ્ઞાન કરાવનાર કેવળજ્ઞાન તો પ્રાપ્ત થયું નથી. તેના ન
હોવાથી આ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવની મર્યાદાને લઈને વસ્તુના સ્વરૂપને
પ્રગટ કરાવનાર આ અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનથી શું લાભ છે? આ પ્રકારનો વિચાર
કરી સાધુ પોતાના આત્માને દુઃખી ન કરે.

તથા—નિર્જરાનું કારણ આ તપ અને ઉપધાન આદિનું આચરણ કરવાથી
મને લાભ શું થયો? કેમકે, હજી સુધી મારી છદ્ર અવસ્થા દૂર થઈ નથી. જ્યાં
સુધી જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો નાશ થઈ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત ન થાય ત્યાં સુધી છદ્રસ્થ
અવસ્થા રહે છે. આથી કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિના અભાવ સ્વરૂપ અજ્ઞાનપરીપહ
સાધુએ ભૂતવો બોઈએ. તથા તપ અને ઉપધાન આદિ જે નિર્જરાના હેતુ છે

કરોમિ, પ્રતિમાં સમાચરામિ, एवं मोक्षमार्गे विचरामि, तथापि-अवधि-मनः पर्य-यरूप-प्रत्यक्षज्ञानवान् न भवामि' इति न चिन्तयेत् । इत्येवमज्ञानस्य सद्भावे विषादाकरणेनाज्ञानपरीपहः सोढव्य इति ।

यद्वा-इहापि तन्त्रन्यायेन गाथायुग्मस्यार्थद्वयं बोध्यम् । तत्र-अज्ञानसद्भाव-पक्षमाश्रित्य व्याख्याऽभिहिता । अथ ज्ञानसद्भावपक्षमाश्रित्य व्याख्या प्रदर्श्यते-

ज्ञानસદ્ભાવે—અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનસદ્ભાવેઽપિ કેવલજ્ઞાનાપ્રાપ્તીં મિશ્નુરેવં ન ચિન્તયેત્-યદહં વ્યર્થમેવ મૈથુનાદ્ વિરતઃ=નિવૃત્તઃ । પરમલક્ષ્યકેવલજ્ઞાનમઘાપિ

તથા અભિગ્રહ ભો કરતા હું एवं भिक्षुप्रतिमा का पालन भी करता हूँ इस प्रकार मैं मोक्षमार्ग में ही विचरण कर रहा हूँ तो भो मुझे अभीतक अवधिमनःपर्ययरूप प्रत्यक्ष ज्ञानकी प्राप्ति नहीं हुई है इस प्रकारसे साधुको विचार नहीं करना चाहिये । इस तरह अवधिमनःपर्ययरूप ज्ञानकी प्राप्ति के अभाव में विषाद नहीं करना इसी का नाम अज्ञानपरीपहका जीतना है ।

અથવા તન્ત્રન્યાય સે ભી જન દોનોં ગાથાઓં કા અર્થ જાનના ચાહિયે । ઉસ મેં અજ્ઞાન કે સદ્ભાવ પક્ષ કો લેકર પહેલે વ્યાખ્યા કી ગઈ હૈ અથ જ્ઞાન કે સદ્ભાવ પક્ષ કો લેકર વ્યાખ્યા કી જાતી હૈ, બહુ હસ પ્રકાર હૈ—

અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાન કે સદ્ભાવ મેં કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ ન હોને પર સાધુ હસ પ્રકાર વિચાર નહીં કરે કિ-મૈને જો મૈથુન જૈસે કુષ્કર કાર્યોં કા પરિત્યાગ કિયા હૈ પ્રાણાતિપાતાદિક કા વિરમણ કિયા હૈ

અભિગ્રહ પશુ કઈ છું. આ પ્રકારથી હું મોક્ષમાર્ગમાં જ વિચરણ કરી રહ્યો છું તો પશુ મને હજી સુધી અવધિમનઃપર્યયરૂપ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થઈ નથી. આ પ્રકારનો સાધુએ વિચાર ન કરવો જોઈએ. આ રીતે અવધિમનઃપર્યયરૂપ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિના અભાવમાં વિષાદ ન કરવો જોઈએ. આતું જ નામ અજ્ઞાન પરીપહને છતવો એ છે.

અથવા-તંત્ર ન્યાયથી પશુ આ બન્ને ગાથાઓના અર્થ બોધવા જોઈએ. એમાં અજ્ઞાનના સદ્ભાવપક્ષને લઈ પહેલાં વ્યાખ્યા કરવામાં આવી છે હવે જ્ઞાનના સદ્ભાવ પક્ષને લઈ વ્યાખ્યા કરવામાં આવે છે, તે આ પ્રકારે છે.

અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનના સદ્ભાવમાં કેવલજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ ન થવાથી સાધુ આ પ્રકારનો વિચાર ન કરે કે-મેં મૈથુન જેવા કુષ્કર કાર્યોના પરિત્યાગ કર્યો છે, પ્રાણાતિપાતાદિકતું વિરમણ કર્યું છે, તથા ધન્દ્રિય નોં (મન) ધન્દ્રિયનો

મયા નોપલબ્ધમ્ । તદનુપલબ્ધો ચ દુસ્ત્યજમૈથુનાત્ પ્રતિનિવર્તનં મમ વ્યર્થમ્ ।
તથા નિર્થકં સુસંવૃત્તઃ = इन्द्रियनोइन्द्रियव्यापारनिरोधेन सुषुप्तसंवरयुक्तोऽभवम् ,
યોડહં કલ્યાણં પાપકં વા ધર્મ=વસ્તુસ્વભાવં, સાક્ષાત્=પરિસ્ફુટં, નામિજાનામિ=અભિ-
-સર્વયા નિરવશેષવિશેષપૂર્વકં ન જાનામિ । અયં ભાવઃ—“ જે એમં જાણહ, સે
સવ્વં જાણહ, જે સવ્વં જાણહ, સે એમં જાણહ ” इत्यागमवचनाच्छ्रद्दस्योऽहं
કિમપ્યેકમપિ વસ્તુસ્વરૂપં ન તત્ત્વતો જાનામિ, યદિ સાક્ષાત્ સમસ્તભાવસ્વભાવાવ-
ભાસકં કેવલલોકં ન લબ્ધવાન્, તર્હિ કિમનેનાલ્પેન મુકુલિતવસ્તુસ્વરૂપજ્ઞાનેન,
इत्येवं विपादं न कुर्यादिति ।

તથા-તપઉપધાનાદિભિર્નિર્જરાહેતુભિરપિ છદ્મસ્થાવસ્થા ન નિવર્તતે=નિરવશેષં
ન ક્ષીયતે, કિં તર્હિ મમાનેન ક્રિયાકલાપેન? इति विचिन्त्य मुनिर्विपादं न कुर्यात् ।

તથા इन्द्रिय नोइन्द्रिय का निग्रह भी किया है वे सब निरर्थक हैं ।
કર્ણો કિ અભીતક મુદ્ધે શુભાશુભ વસ્તુ કા સંપૂર્ણરૂપ સે જ્ઞાન કરાને
વાલા કેવલજ્ઞાન તો પ્રાપ્ત હુવા હી નહીં હૈ । ઉસકે ન હોને પર હસ
દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ એવં ભાવ કી મર્યાદા કો લેકર વસ્તુ કે સ્વરૂપ કો
પ્રકટ કરાને વાલે હન અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાન સે ક્યા લાભ હૈ । હસ
પ્રકાર વિચાર કર સાધુ અપની આત્મા કો દુઃખિત નહીં કરે ।

તથા-નિર્જરા કે કારણ હન તપ એવં ઉપધાન આદિ કે આચરણ
કરને સે મુદ્ધે લાભ હી ક્યા હુઆ, કર્ણો કિ અભીતક મેરી છદ્મસ્થા-
વસ્થા તો દૂર નહીં હુઈ હૈ । સમસ્ત જ્ઞાનાવરણીયકર્મ નષ્ટ હોકર જય
તક કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત નહીં હોતા તવતક છદ્મસ્થાવસ્થા રહતી હૈ । અતઃ
કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ કા અભાવસ્વરૂપ અજ્ઞાનપરીપદ સાધુ કો જીતના
ચાહિયે । તથા તપ એવં ઉપધાન આદિ જો નિર્જરા કે હેતુ હૈ ઉનસે મેરે

નિશ્ચય પણ કર્યો છે. તે બધું નિર્થક છે. કેમકે, હજી સુધી મને શુભાશુભ
વસ્તુનું સંપૂર્ણરૂપથી જ્ઞાન કરાવનાર કેવળજ્ઞાન તો પ્રાપ્ત થયું નથી. તેના ન
હોવાથી આ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવની મર્યાદાને લઈને વસ્તુના સ્વરૂપને
પ્રગટ કરાવનાર આ અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનથી શું લાભ છે? આ પ્રકારનો વિચાર
કરી સાધુ પોતાના આત્માને દુઃખી ન કરે.

તથા-નિર્જરાનું કારણ આ તપ અને ઉપધાન આદિનું આચરણ કરવાથી
મને લાભ શું થયો? કેમકે, હજી સુધી મારી છદ્મ અવસ્થા દૂર થઈ નથી. ત્યાં
સુધી જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો નાશ થઈ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત ન થાય ત્યાં સુધી છદ્મસ્થ
અવસ્થા રહે છે. આથી કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિના અભાવ સ્વરૂપ અજ્ઞાનપરીપદ
સાધુએ છતવેા બેઈએ. તથા તપ અને ઉપધાન આદિ જે નિર્જરાના હેતુ છે

अत्राज्ञानसद्भावपक्षे दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

एकदा चतुर्ज्ञानसम्पन्नो भद्रगुप्ताचार्यः शिष्यपरिवारेण सह ग्रामानुग्रामं विहरन् श्रावस्तीनगरीं तिन्दुकोद्याने समवसृतः । तत्र वसुमित्रनामकः श्रेष्ठी तस्य समीपे धर्मं श्रुत्वा प्रयोजितः । ततः स एकादशाङ्गान्यधीतवान् । स चानिच्छन् तपश्चरति, उग्रं विहारं करोति, उत्कृष्टाचारं पालयति, यतनया चरति, यतनया तिष्ठति, यतनया उपविशति यतनया शेते, यतनया भुङ्क्ते, यतनया भाषते ।

तत्र सुवीरनामको नृपतिर्भद्रगुप्ताचार्यस्य संनिधावागत्य तं वन्दित्वा पर्युपास्ते ।

ज्ञानावरणीयादिक कर्म सर्वथा नष्ट नहीं हुवे हैं तो इस क्रियाकलाप से मुझे क्या लाभ हुआ ? ऐसा विचार कर साधु विपाद नहीं करे ।

अज्ञान के सद्भाव पक्ष में दृष्टान्त—एक समय चतुर्ज्ञानसंपन्न भद्रगुप्त आचार्य शिष्यपरिवार के साथ ग्रामानुग्राम विचरते हुए श्रावस्ता नगरी में तिन्दुक उद्यान में आये । वहाँ वसुमित्र नाम के एक सेठ ने उनसे धर्मकथा सुनकर दीक्षा धारण की । ग्यारह अंगों को पढ़कर उन्होंने ने अच्छी तरह ज्ञान प्राप्त किया । सदा उग्र तपस्या करना, उग्र विहार करना, उत्कृष्ट आचार का पालन करना, यतना से उठना, यतनासे बैठना, यतनासे सोना, यतना से आहार करना और यतना से बोलना, चलना, इस तरह प्रत्येक क्रिया, इनकी यतना से होने लगी ।

श्रावस्ती नगरी का राजा कि जिनका नाम सुवीर था प्रतिदिन भद्रगुप्त आचार्य के पास वंदना एवं पर्युपासना करने के लिये आते थे ।

तेनाथी भारां ज्ञानावरणीयादिक कर्म सर्वथा नाश पाभेल नथी. ते। आ क्रिया करवाथी भने शुं लाभ थये ? ओवे। विचार करी साधु विपाद न करे.

अज्ञानना सद्भाव पक्षमां दृष्टांत—

एक समय चतुर्ज्ञानसंपन्न भद्रगुप्त आचार्य शिष्य परिवारनी साथे ग्रामानुग्राम विचरता श्रावस्ती नगरीनां तिन्दुक उद्यानमां आव्या. त्यां वसुमित्र नामना एक शेठ तेमने धर्म उपदेश सांभली दीक्षा धारण करी. अगीआर अंगोने लक्ष्मीने तेमणे सारी रीते ज्ञान प्राप्त क्युं. सदा उग्र तपस्या करवी, उग्रविहार करवे, उत्कृष्ट आचारं पालन करवुं, यतनाथी उठवुं, यतनाथी बसवुं, यतनाथी आहार करवे, यतनाथी बोलवुं, यतनाथी चलवुं, आ रीते तेमनी प्रत्येक क्रियाओ यतनापूर्वक थवा लागी.

श्रावस्ती नगरीनो राजा के जेवुं नाम सुवीर हवुं ते हरदोअ भद्रगुप्त आचार्यनी पासे वंदना अने पर्युपासना करवा भाटे आवता हता. आचार्य

તદા ભદ્રગુપ્તાચાર્યસ્તમવ્રતીત્-રાજન્ ! વન્ધમોક્ષસ્વરૂપં ગ્રહ્ણં સમાગતોઽસિ કિમ્ ? ।
રાજા પ્રોક્તમ્-મદન્ત ! સત્યં ભવદીયવચનમ્ । તતોઽસૌ ભદ્રગુપ્તાચાર્યથતુર્ભિજ્ઞાનૈસ્તં
વન્ધમોક્ષસ્વરૂપોપદેશેન પરિતોપયતિ સ્મ । તદા સુવીરનૃપતિર્જાતૈરાગ્યઃ સન્
મવ્રજ્યાં ગૃહીતવાન્ ।

તદા વસુમિત્રમુનિર્ભદ્રગુપ્તાચાર્યસ્યાદ્ધુતં ચતુર્જ્ઞાનપ્રભાવમવલોક્ય મનસિ
ચિન્તયતિ-અહો ! આત્મનો વીર્યં મહદ્દુતમ્-યદન્તર્મુહૂર્તમાત્રેણૈવ જ્ઞાનાવરણીયા-

આચાર્ય મહારાજ મી ઉન કો ધર્મદેશના દેતે થે । રાજા કે હૃદય
મેં એક દિન વંધ ઓર મોક્ષ કે યથાર્થ સ્વરૂપ કો જાનને કી જિજ્ઞાસા
હુઈ, વે શીઘ્ર હી આચાર્ય મહારાજ કે પાસ આયે ઓર વંદના એવં
પર્યુપાસના કર સમીપ વેઠે । આચાર્ય મહારાજ ને ઉનસે કહા-કહો હે
રાજન્ ! આજ વંધ ઓર મોક્ષ કા યથાર્થ સ્વરૂપ પૂછને કો આયે હો
કયા ? રાજાને વડે વિનય કે સાથ દોનો હાથ જોડકર કહા-હૉં મદન્ત ! ।
ચાર જ્ઞાન કે ધારી આચાર્ય મહારાજ ને રાજા કો વંધ ઓર મોક્ષ કા
યથાર્થ સ્વરૂપ અચ્છી તરહ સમજાયા । ઉપદેશમેં સ્પષ્ટ કિયે ગયે વંધ ઓર
મોક્ષ કે સ્વરૂપ કો સુનકર રાજા કો વડા હી આનંદ આયા । રાજા અપની
વૈરાગ્ય ભાવના સે આચાર્ય મહારાજ કે પાસ દીક્ષા ધારણ કરલી ।

વસુમિત્ર મુનિ જિનકા નામ સંસારી અવસ્થા મેં વસુમિત્ર સેઠ થા,
ઉન્હોં ને ભદ્રગુપ્ત આચાર્ય કે ચાર જ્ઞાનોં કા પ્રભાવ દેખકર મન મેં
વિચાર કિયા-અહો ! આત્મા કી શક્તિ અચિન્ત્ય હૈ, હસકે વલ સે

મહારાજ પણ તેમને ધર્મદેશના આપતા હતા. રાજાના હૃદયમાં એક દિવસ વંધ
અને મોક્ષના યથાર્થ સ્વરૂપને જાણવાની જિજ્ઞાસા થઈ. તે તુરંત જ આચાર્યની
પાસે આવ્યા અને વંદના કરી સામે બેઠા. આચાર્ય મહારાજે તેમને કહ્યું, કહો
રાજન્ ! આજ વંધ અને મોક્ષનું યથાર્થ સ્વરૂપ પૂછવાને આવ્યા છો ને ?
રાજાએ વિનય સાથે બન્ને હાથ બેડીને કહ્યું, હા ! ચાર જ્ઞાનના ધારક આચાર્ય
મહારાજે રાજાને જ્ઞાન અને વંધનું યથાર્થ સ્વરૂપ સારી રીતે સમજાવ્યું.
ઉપદેશમાં કહેવામાં આવેલ વંધ અને મોક્ષના સ્વરૂપને સાંભળીને રાજાને
ધણી આનંદ થયો અને વૈરાગ્ય ભાવના જાગૃત થતાં રાજાએ આચાર્ય મહારાજ
પાસે દીક્ષા અંગીકાર કરી.

વસુમિત્રમુનિ કે જેમનું સંસારી અવસ્થામાં નામ વસુમિત્ર શેઠ હતું. તેમણે
ભદ્રગુપ્ત આચાર્યનો ચાર જ્ઞાનનો પ્રભાવ જોઈને મનમાં વિચાર કર્યો, અહો !
આત્માની શક્તિ અચિન્ત્ય છે. તેના બળથી આત્મા એક અંતર્મુહૂર્તમાં જ જ્ઞાના-

ઘટ્ટવિધકર્મરજોઽપનીય, અયમાત્મા સર્વજ્ઞઃ સર્વદર્શો ભવતિ । મયા તુ એકાદશજ્ઞા-
ન્યધીતાનિ, એવં નિરતિચારં શ્રુતજ્ઞાનમારાધિતમ્ । નિઃશંકિત-નિષ્કાઙ્ગિતાદિ ભેદ-
દર્શનાચારોઽપ્યારાધિતઃ, સમિતિગુપ્તિભિઃ પ્રશસ્તયોગયુક્તો ભૂત્વા ચારિત્રાચારઃ
સમારાધિતઃ, અગ્લાનતયા દ્વાદશવિધૈરનશનાદિતપોભિસ્તપઆચારઃ સમારાધિતઃ ।
એષુ જ્ઞાનાચારાદિષુ ચતુર્ણુ જ્ઞાનાચારઃ કાલવિનયાદિભેદૈરષ્ટવિધઃ, દર્શનાચારઃ સહ
નિઃશંકિત-નિષ્કાઙ્ગિતાદિ ભેદૈરષ્ટવિધઃ, ચારિત્રાચારઃ સમિતિ-ગુપ્તિપાલનાત્મકોઽ-
ષ્ટવિધઃ, તથાઽનશનાદિદ્વાદશવિધસ્તપઆચારસ્તેષુ સર્વેષુ પદ્વિત્રિશદ્વિષ્ણ્વાચારેષુ

આત્મા એક અન્તર્મુદ્દર્ત મેં હી જ્ઞાનાચરણીયાદિક આઠ પ્રકાર કી કર્મ-
રજ કો નષ્ટ કર સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી હો જાતા હૈં । મેંને ગ્યારહ અંગ પઠે હૈં
उनका खूब मनन किया है इस प्रकार निरतिचार श्रुतज्ञान की आरा-
धना की है । निःशंकित एवं निःकाङ्क्षित आदि भेदों से युक्त दर्शना-
चार का यथावत् पालन किया है । समिति गुप्तियों द्वारा प्रशस्त उप-
योग युक्त होकर चारित्राचार का भी अच्छी तरह आराधन किया है ।
अग्लानभाव से अनशन आदि बारह प्रकार के तपों का अनुष्ठान
करने से तप आचार को भी अच्छी तरह पाला है । इसी तरह काल
विनयादिक के भेद से आठ प्रकार के ज्ञानाचार, निःशंकित, निःकां-
क्षित आदि भेद से आठ प्रकार के दर्शनाचार, समिति गुप्ति आदि
के पालनस्वरूप आठ प्रकार के चारित्राचार, एवं चौबीस तथा अन-
शनादि बारह प्रकार का तप, इस प्रकार छत्तीस ३६ भेदवाले इस

વરણીયાદિક આઠ પ્રકારની કર્મરજને નાશ કરી સર્વજ્ઞ સર્વદર્શિ બની જાય છે.
મેં અગીયારઅંગનો અભ્યાસ કર્યો છે. તેનું ખૂબ મનન કર્યું છે. એ પ્રકારે
નિરતિચાર શ્રુતજ્ઞાનની આરાધના કરેલ છે. નિઃશંકિત અને નિઃકાંક્ષિત આદિ
લેદ્દથી યુક્ત દર્શનાચારનું યથાવત્ પાલન કર્યું છે. સમિતિ ગુપ્તિઓ દ્વારા
પ્રશસ્ત ઉપયોગયુક્ત બનીને ચારિત્રાચારનું પણ સારી રીતે આરાધન કર્યું છે.
અગ્લાનભાવથી અનશન આદી ૧૨ પ્રકારના તપોનું અનુષ્ઠાન કરવાથી તપ
આચારને પણ સારી રીતે પાળેલ છે. એવી રીતે કાલ વિનયાદિકના લેદ્દથી આઠ
પ્રકારના જ્ઞાનાચાર, નિઃશંકિત, નિઃકાંક્ષિત, આદિ લેદ્દથી આઠ પ્રકારનો દર્શના-
ચાર, સમિતિગુપ્તિ આદિના પાલન સ્વરૂપ આઠ પ્રકારનો ચારિત્ર આચાર અને ચોવીસ
તથા અનશન આદિ બાર પ્રકારનું તપ આ પ્રકારે છત્તીસ લેદ્દવાળા આ આચારને

અગોપિતવલ્લવોર્યેણ, અર્થાત્-પરિપૂર્ણસ્વશક્તિપ્રયોગેણ સોપયોગં પરાક્રમણેન વીર્યાચારોઽપિ સમારાધિતઃ । એતાનિ પદ્ત્રિશદાચારરૂપોદ્યાનાનિ વીર્યાચારવારિણા નિરન્તરપરિસેચનેન હરિતીકૃતાનિ શુભભાવનાનિરીક્ષણૈઃ શોભયા ભરિતીકૃતાનિ તથાપ્યદ્યાવધિ મમ જ્ઞાનાવરણીય-કર્મણાં ક્ષયાભાવાદવધ્યાદિરૂપં પ્રત્યક્ષજ્ઞાનં ન જાતમ્ , અતોઽહમપિ પુનસ્તથા યતિપ્યે, યથા તન્મમાવશ્યં ભવિષ્યત્યેવ । તસ્માદધુના વિપાદાકરણેનાજ્ઞાનપરીપદં સદ્માનઃ પુનરપિ વીર્યાચારં નિરતિચારં નિરતિશયં

આચાર કો પરિપૂર્ણ અપની શક્તિ કે પ્રયોગ સે ઉપયોગપૂર્વક તહ્લીન હોકર પાલન કિયા હૈ । ઇસીકા નામ વીર્યાચાર હૈ । મેને इन पांचों आचारों का सम्पक् रीति से पालन किया है । छत्तीसभेदविशिष्ट इस आचाररूप उद्यान को वीचाररूप निर्मल जल से मैंने निरन्तर सिंचित कर हरा-भरा रखा है । शुभ भावनाओं से इसे शोभित किया है । तो भी अभीतक ज्ञानावरणीयकर्मों के क्षय नहीं होने से मुझे अवधि आदि प्रत्यक्ष ज्ञान की प्राप्ति नहीं हुई है, इसलिये मैं फिर इस प्रकार का यत्न करूँ कि जिससे मुझे इस प्रत्यक्ष ज्ञान की प्राप्ति अवश्य हो जाय । इस प्रकार सोचकर वसुमित्र मुनि ने पुनः यह विचार किया कि प्रत्यक्षज्ञान की प्राप्ति नहीं होने का मुझे इस समय कुछ भी विपाद नहीं करना चाहिये, क्योंकि विपाद करने से अज्ञान परीपह विजित नहीं होता है, अतः विपाद को नहीं लाकर अज्ञान परीपह सहन करना यह साधुमार्ग है, इसलिये वीर्याचાર की

પરિપૂર્ણ પોતાની શક્તિના પ્રયોગથી ઉપયોગપૂર્વક તદ્દલીન બની પાલન કર્યું છે, તેનું નામ વીર્યાચાર છે. મેં આ પાંચે આચારનું સમ્યક્ રીતિથી પાલન કર્યું છે. છત્રીસ ભેદ વિશિષ્ટ આ આચારરૂપ ઉદ્યાનને વીર્યાચાર રૂપ નિર્મળ જળથી મેં નિરન્તર સિંચિત કરી હર્યુંભર્યું રાખ્યું છે. શુભ ભાવનાઓથી તેને શોભિત કર્યું છે. તો પણ હજી સુધી જ્ઞાનાવરણીયકર્મોને ક્ષય ન થયોયો મને અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થયેલ નથી. આ માટે હું ફરી એ પ્રકારનો યત્ન કરું કે, જેનાથી મને આ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ અવશ્ય થઈ જાય. આ પ્રકારથી વિચારીને વસુમિત્ર મુનિએ ફરીથી એ વિચાર કર્યો કે પ્રત્યક્ષજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ ન થવાનો મારે આ સમયે કાંઈ પણ વિપાદ ન કરવો જોઈએ. કેમકે, વિપાદ કરવાથી અજ્ઞાનપરીપદને છતાતો નથી. આથી વિપાદ ન લાવતાં અજ્ઞાનપરીપદ સહન કરવો એ સાધુમાર્ગ છે. આ માટે વીર્યાચારની નિશ્ચિતચાર

सम्यगाराधयामि इत्येवं विचिन्त्य प्रशस्तध्यानेन शुभाध्यवसायेन अवधिं मनःपर्ययं च संप्राप्य क्षपकश्रेणिमारुह्य केवलीं जातः। एवमन्यैरपि मुनिभिरज्ञानपरीपहः सोढव्यः।

अथाऽज्ञानाऽसद्भाव(ज्ञानसद्भाव)पक्षे दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

उग्रविहारी चतुर्ज्ञानचतुर्दशपूर्वधारी जिनवचनानुगामी गौतमस्वामी शिष्य-परिवारेण सह ग्रामानुग्रामं विहरन् भास्करवदज्ञानान्धकारं विध्वंसयन् स्याद्वाद-सिद्धान्तं स्थापयन् क्षान्त्यादिधर्मं प्रद्योतयन् चार्वाकादिपाखण्डमतं खण्डयन् विचरति स्म। एवं विहरन् गौतमस्वामी चम्पानगरीं पूर्णभद्रोद्याने समवसृतः।

निरतिचार सम्यक् आराधना करते २ प्रत्यक्ष ज्ञानकी प्राप्ति मुझे हो जायगी। इस प्रकार विचार करके उसने प्रशस्तध्यान के हेतुभूत शुभ अध्यवसाय से अवधि एवं मनःपर्यय ज्ञान को प्राप्त कर लिया, तथा क्षपकश्रेणी पर आरोहण कर केवलपद को भी प्राप्त कर लिया। इसी तरह अन्यमुनियों को भी अज्ञानपरीपह सहन करना चाहिये।

अज्ञान के असद्भाव (ज्ञान के सद्भाव) पक्षमें दृष्टान्त इस प्रकार है—
उग्र विहार करने वाले, मति, श्रुत, अवधि एवं मनःपर्ययज्ञान के धारी, चौदह पूर्व के पाठी, एवं जिनवचन के अनुसार चलने वाले गौतमस्वामी शिष्यपरिवार के साथ ग्रामानुग्राम विहार करते हुए, सूर्य के समान भव्यों के अज्ञानरूप अन्धकार को ध्वस्त करते हुए, स्याद्वादसिद्धान्त की विजयपताका फरकाते हुए, क्षान्ति आदि धर्मका उद्योत करते हुए एवं भौतिकवादी चार्वाक आदि मत का निराकरण करते हुए विहार करते २ चंपानगरी के पूर्णभद्र उद्यान में पधारे।

सम्यक् आराधना करतां करतां प्रत्यक्ष ज्ञानकी प्राप्ति होने शर्धं ज्ञे। आ प्रकारने वि-
चार करी तेहे प्रशस्त ध्यानना हेतुभूत शुभ अध्यवसायथी अवधि अने मनःपर्य-
यज्ञानने प्राप्त कथुं, तथा क्षपकश्रेणी उपर आरुढ शर्धं केवण पढने पक्ष प्राप्त करी
लीधुं। आ प्रकारे अन्य मुनियोअे पक्ष अज्ञानपरीपह छतवे जेधअे—

ज्ञानना सद्भाव पक्षमां दृष्टान्त आ प्रकारतुं छे—

उग्र विहार करवावाणा, मति, श्रुत, अवधि अने मनःपर्ययज्ञानना धारी,
चौद पूर्वना पाठी, अने जिनवचन अनुसार चलवावाणा गौतमस्वामी शिष्य
परिवारनी साथे ग्रामानुग्राम विहार करता, सूर्यनी भाक्षं लब्धेना अज्ञानरूप
अंधकारने हर करता स्याद्वादसिद्धांतनी विजयपताका हरकावता, क्षान्ति आदि
धर्मना उद्योत करता करता अने भौतिकवादि चार्वाक आदि मतनुं निरा-
करथु करता करता, विचरथु करता करता, चंपानगरीना पूर्णभद्र पधार्थी।

एकदा सोमभद्रनामा कथिदधर्मानुयायी, अधर्मसेवी, अधर्मिष्ठः, अधर्मख्याति-
रधर्मानुरागी, अधर्मप्रलोकी, अधर्मजीवी, अधर्मप्रजनकः, अधर्मप्रचारकः, सकल-
शास्त्रदर्शी तच्चाविमर्शी प्रकाण्डकुतर्ककेसरी शास्त्रार्थं कर्तुं तत्र गौतमस्वामिसंनिधौ
समागतः । तयोः शास्त्रार्थविषये विवादः प्रवृत्तः, परस्परं खण्डनमण्डनकरणे
प्रवृत्तयोस्तयोरेकस्य कस्यापि जयः पराजयो वा नाभूत् । गौतमस्वामी
शास्त्रार्थविषये स्वबुद्धिप्रतिभावालेन नास्तिकमतं निराकर्तुंमुद्यतः, सोऽपि नास्तिकः
स्वबुद्धिकौशलेन गौतमस्वामिनः स्पर्धया वाग्जालं वितन्वन् परिपदि तत्प्रदर्शितयुक्ति-

एक दिन की बात है कि सोमभद्र नामका कोई एक विशिष्ट विद्वान्
शास्त्रार्थ करने के लिये उनके पास आया । यह जैनधर्म से अतिरिक्त
धर्म का अनुयायी था, अधर्मसेवी था, अधर्मिष्ठ था, अधर्माख्यायी था,
अधर्मानुरागी था, अधर्मप्रलोकी था, अधर्मजीवी था, अधर्मप्रजनक था,
अधर्मप्रचारक था, सकलशास्त्रदर्शी होने पर भी तत्त्व-अविमर्शी था,
इसलिये प्रकाण्डकुतर्ककेसरी था । गौतमस्वामी एवं सोमभद्र का
परस्पर शास्त्रार्थ के विषय में विवाद प्रारम्भ हुआ । एक दूसरे के
खंडन मंडन करने में प्रवृत्त हुए । इन दोनों में जब किसी का भी जय
और पराजय नहीं हुआ तब गौतमस्वामी ने शास्त्रार्थ के विषय में
अपनी प्रतिभा के बल पर नास्तिकमत का निराकरण करना प्रारंभ
कर दिया । सोमभद्र ने भी जो नास्तिकमत का पक्षपाती था जब
अपने मत का खंडन होते देखा तो उसने सिर्फ अपनी बुद्धि की ही
कुशलता से गौतमस्वामी की युक्तियों का स्पर्धा के बश सभा के

एक द्विपक्षी वात छे डे, सोमभद्र नामको कोछ ओक विशिष्ट विद्वान्
शास्त्रार्थ करवा भाटे तेभनी पासे आब्यो. ते जैनधर्मांथी अतिरिक्त धर्मां
अनुयायी हुतो. अधर्मसेवी हुतो, अधर्मिष्ठ हुतो, अधर्माख्यायी हुतो, अध-
मानुरागी हुतो, अधर्मप्रलोकी हुतो, अधर्मजीवी हुतो, अधर्मप्रजनक हुतो,
अधर्मप्रचारक हुतो, सकल शास्त्र दर्शी होवा छतां पणु तत्त्व-अविमर्शी हुतो.
आ भाटे प्रकाण्डकुतर्ककेसरी हुतो. गौतमस्वामी :अने सोमभद्रने परस्पर
शास्त्रार्थना विषयमां विवाद शङ्क थयो. ओक पीबानुं अंडन मंडन करवाभां
प्रवर्त जन्था. आ अन्नेमांथी न्यारे कोछने पणु जय अने पराजय न थये.
त्यारे गौतमस्वामीओ शास्त्रार्थना विषयमां पोतानी प्रतिमाना जण उपर
नास्तिकमतनुं निराकरण करवानुं शङ्क करी दीधुं. सोमभद्र के जे नास्तिक
मतने पक्षपाती हुतो तेणे न्यारे पोताना मतनुं अंडन थनुं जेथुं तो तेणे
इकत पोतानी बुद्धिनी कुशलताथी स्पर्धोने बश थर् गौतमस्वामीनी युक्तिओने

सम्पगाराधयामि इत्येवं विचिन्त्य प्रशस्तध्यानेन शुभाध्यवसायेन अवधि मनःपर्ययं च
संप्राप्य क्षपकश्रेणिमारुह्य केवली जातः। एवमन्यैरपि मुनिभिरज्ञानपरीपहः सोढव्यः।

अथाऽज्ञानाऽसद्भाव(ज्ञानसद्भाव)पक्षे दृष्टान्तः प्रदर्श्यते—

उग्रविहारी चतुर्ज्ञानचतुर्दशपूर्वधारी जिनवचनानुगामी गौतमस्वामी शिष्य-
परिवारेण सह ग्रामानुग्रामं विहरन् भास्करवदज्ञानान्धकारं विध्वंसयन् स्याद्वाद-
सिद्धान्तं स्थापयन् क्षान्त्यादिधर्मं प्रद्योतयन् चार्वाकादिपातण्डमतं खण्डयन्
विचरति स्म। एवं विहरन् गौतमस्वामी चम्पानगरीं पूर्णभद्रोद्याने समवस्रतः।

निरतिचार सम्पक् आराधना करते २ प्रत्यक्ष ज्ञानकी प्राप्ति मुझे हो
जायगी। इस प्रकार विचार करके उसने प्रशस्तध्यान के हेतुभूत शुभ
अध्यवसाय से अवधि एवं मनःपर्यय ज्ञान को प्राप्त कर लिया, तथा
क्षपकश्रेणी पर आरोहण कर केवलपद को भी प्राप्त कर लिया। इसी
तरह अन्यमुनियों को भी अज्ञानपरीपह सहन करना चाहिये।

अज्ञान के असद्भाव (ज्ञान के सद्भाव) पक्षमें दृष्टान्त इस प्रकार है—

उग्र विहार करने वाले, मति, श्रुत, अवधि एवं मनःपर्ययज्ञान के
धारी, चौदह पूर्व के पाठी, एवं जिनवचन के अनुसार चलने वाले
गौतमस्वामी शिष्यपरिवार के साथ ग्रामानुग्राम विहार करते हुए,
सूर्य के समान भव्यों के अज्ञानरूप अन्धकार को ध्वस्त करते हुए,
स्याद्वादसिद्धान्त की विजयपताका फरकाते हुए, क्षान्ति आदि धर्मका
उद्योत करते हुए एवं भौतिकवादी चार्वाक आदि मत का निराकरण
करते हुए विहार करते २ चंपानगरी के पूर्णभद्र उद्यान में पधारे।

सम्पक् आराधना करता करता प्रत्यक्ष ज्ञानकी प्राप्ति भने यह ज्ञेय. आ प्रकारने वि-
चार करी तेजे प्रशस्त ध्यानना हेतुभूत शुभ अध्यवसायथी अवधि अने मनःपर्य-
यज्ञानने प्राप्त कथुं, तथा क्षपकश्रेणी उपर आरुह यह केवली पदने पक्ष प्राप्त करी
लीधुं. आ प्रकारे अन्य मुनिओओ पक्ष अज्ञानपरीपह छतवे ओधये—

ज्ञानना सद्भाव पक्षमां दृष्टान्त आ प्रकारनुं छे.—

उग्र विहार करवावाणा, मति, श्रुत, अवधि अने मनःपर्ययज्ञानना धारी,
चौदह पूर्वना पाठी, अने जिनवचन अनुसार चलवावाणा गौतमस्वामी शिष्य
परिवारनी साथे ग्रामानुग्राम विहार करता, सूर्यनी भाङ्क लब्धेना अज्ञानरूप
अंधकारने हर करता स्याद्वादसिद्धान्तनी विजयपताका फरकावता, क्षान्ति आदि
धर्मना उद्योत करता करता अने भौतिकवादि चार्वाक आदि मतनुं निरा-
करण करता करता, विचारषु करता करता, चंपानगरीना पूर्णभद्र उद्यानमां पधायी.

સ્ત્વ હૃદયે જાતો ન વા ? । તદાઽસૌ નાસ્તિકસ્તદ્વચનં સ્વીકુર્વન્ વદતિ-ભદન્ત !
 ભવાન્ સત્યં વદતિ મમ મનસ્યયમેવ વિચારઃ પ્રાદુરાસીત્ । ઇત્યુત્ત્વાઽસૌ ગૌતમસ્વામિનઃ
 શિષ્યો ભૂત્વા દીક્ષિતો જાતઃ । તેન શિષ્યેણાન્યૈશ્ચ શિષ્યપરિવારૈઃ સહ ગ્રામાનુગ્રામં
 વિહરન્ ગૌતમસ્વામી રાજગૃહનગરે ગુણશિષ્ઠે ચૈત્યે ભગવતઃ શ્રીવર્ધમાનસ્વામિનઃ
 સંનિધૌ સમાગતઃ । ભગવન્તં વન્દિત્વા નમસ્કૃત્ય ગૌતમસ્વામી ચતુર્જ્ઞાનગર્વમકુર્વન્
 સચિનયં વ્રવીતિ-હે ભગવન્ ! અયં ભગવત્પ્રભાવાદેવ સન્માર્ગે સમાયાતઃ । તતો
 ભગવતા શ્રીવર્ધમાનસ્વામિના શ્રમણનિર્ગન્ધાનાહૂય કથિતમ્-ભો ! મુનયઃ ! ગૌતમ-

ભદ્ર સે પૂછા કિ-કહો મહાનુભાવ ! તુમ્હારે મન મેં યહ વિચાર ઉત્પન્ન
 હુઆ યા નહીં ? । તવ સોમભદ્ર ને ગૌતમસ્વામી કે હસ કથન કો સ્વીકાર
 કરતે હુએ કહા-ભદન્ત ! આપને બિલકુલ હી યથાર્થ કહા હૈ, મેરે મન
 મેં એસા હી વિચાર ઉત્પન્ન હુઆ થા । હસ પ્રકાર અપને હૃદયંગમ અભિ-
 પ્રાય કો પ્રગટ કરતે હુએ ઉસને ગૌતમસ્વામી કે પાસ દીક્ષા ધારણ
 કરલી ઓર ઉનકા શિષ્ય હો ગયા । મુનિ સોમભદ્ર એવં અન્ય શિષ્યોં કે
 સાથ ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતે હુએ ગૌતમસ્વામી રાજગૃહ નગર કે
 ગુણશિલચૈત્ય મેં ભગવાન્ વર્ધમાન સ્વામી કે પાસ આયે । વંદના એવં
 નમસ્કાર કર કે ગૌતમસ્વામી ને અપને મેં રહે હુએ ચતુર્જ્ઞાન કી વિશિષ્ટતા
 કા ગર્વ ન કરકે પ્રભુ સે વડે વિનય કે સાથ કહા-ભગવન્ ! યહ સોમભદ્ર
 મુનિ આપકે હી પ્રભાવ સે સન્માર્ગ મેં આયા હૈ । ભગવાન શ્રીવર્ધમાન-
 સ્વામી ને શ્રમણનિર્ગન્થોં કો બુલાકર કહા કિ હે મુનિયોં ! દેહો ચાર

ઉત્પન્ન થયેલ કે નહીં ? ત્યારે સોમભદ્રે ગૌતમસ્વામીના આ કથનને સ્વીકાર
 કરીને કહ્યું, ભદન્ત ! આપે બિલકુલ યથાર્થ કહ્યું છે. મારા મનમાં આવે જ
 વિચાર ઉત્પન્ન થયો હતો. આ પ્રકારે પોતાના હૃદયમાંના અભિપ્રાયને પ્રગટ
 કરીને તેણે ગૌતમસ્વામીની પાસે દીક્ષા ગ્રહણ કરી લીધી. અને તેમના શિષ્ય
 બની ગયા. મુનિ સોમભદ્ર અને બીજા શિષ્યો સાથે ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા
 કરતા ગૌતમસ્વામી રાજગૃહ નગરના ગુણશિલચૈત્યમાં ભગવાન વર્ધમાન
 સ્વામીની પાસે આવ્યા. વંદના અને નમસ્કાર કરી ગૌતમસ્વામીએ પોતાનામાં
 ચારજ્ઞાન વિશિષ્ટતાનો ગર્વ ન કરતાં પ્રભુને ઘણા વિનય સાથે કહ્યું, ભગવન્ !
 આ સોમભદ્રમુનિ આપના જ પ્રભાવથી સન્માર્ગમાં આવ્યા છે. ભગવાનશ્રી
 વર્ધમાન સ્વામીએ શ્રમણનિર્ગન્થોને બોલાવીને કહ્યું કે, હે મુનિઓ ! બુદ્ધો

खण्डनात् प्रतिनिवृत्तो नाभूत्, परंतु अन्ततस्तदुक्तयुक्तिप्रतियुक्तिस्वरूपं खण्डयितुम-
समर्थः सन् मनसि विचारयति—“सत्यम् अयमस्ति गौतमस्वामी महान् विद्या-
निधिः, यदीदृशं मम मनोगतं भावं गौतमस्वामी कथयिष्यति तदाऽहमस्य शिष्यो
भविष्यामि” इति ।

गौतमस्वामी मनःपर्ययज्ञानधारकतया तदानीमेव परिपदि वदति—“अस्य
तर्ककेसरिणो मनसि संप्रति अयं विचारः समायातः—“सत्यमयं गौतमस्वामी महान्
विद्यानिधिः परंत्वेवं मम मनोगतं विचारं गौतमस्वामी यदि कथयेत् तर्हि तस्य
शिष्यो भविष्यामी”ति । इत्युक्त्वा पुनस्तं नास्तिकं पृच्छति—कथय किमयं विचार-
बीच खंडन करना प्रारंभ कर दिया, परन्तु गौतमस्वामी ने जब उसकी
युक्तियों का पूरे तौर से खंडन किया तो वह उसको संभालने में समर्थ
नहीं हो सका । गौतमस्वामी के अगाध ज्ञान को देखकर उस समय
उसके मन में यही विचार आया कि वास्तव में ये गौतमस्वामी विशिष्ट
विद्यानिधान हैं, परन्तु यदि ये मेरे इस मनोगत भाव को बतला दें
तो मैं इनका शिष्य हो जाऊँगा ?

गौतमस्वामी मनःपर्ययज्ञान के धारी थे, अतः उसी समय बे
इसके मानसिक विचार को स्पष्टरूप से जान गये । उन्होंने ने उसी
समय सभा के बीच में कहा कि इस तर्ककेसरी सोमभद्र के मन में
इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ है कि “ये गौतमस्वामी महाद्
विद्या के निधान हैं यदि ये मेरे इस अभिप्राय को बतला दें तो मैं
इनका शिष्य हो जाऊँगा” । गौतमस्वामी ने ऐसा कह कर उस सोम-

સભાની વચ્ચમાં ખંડન કરવાનો પ્રારંભ કરી દીધો. પરંતુ ગૌતમસ્વામીએ જ્યારે
તેની યુક્તિઓનું પુરી રીતે ખંડન કર્યું ત્યારે તે પોતાની જાતને સંભાળવામાં
સમર્થ ન બન્યો. ગૌતમસ્વામીના અગાધ જ્ઞાનને જોઈ એ સમય એના મનમાં એ
વિચાર આવ્યો કે, વાસ્તવમાં આ ગૌતમસ્વામી વિશિષ્ટવિદ્યાનિધાન છે. પરંતુ
જો તેઓ મારા આ મનોભાવને બતાવી આપે તો હું એમનો શિષ્ય બની જઈ.

ગૌતમસ્વામી મનઃપર્યયજ્ઞાનના ધારી હતા. આથી એજ વખતે તેમણે
એના માનસિક વિચારને સ્પષ્ટ રૂપથી જાણી લીધા. અને એજ વખતે સભાની
વચ્ચમાં કહ્યું કે, આ તર્કકેસરી સોમભદ્રના મનમાં એ પ્રકારનો વિચાર ઉત્પન્ન
થયો છે કે, “આ ગૌતમસ્વામી મહાન વિદ્યાનિધાન છે તેઓ જો મારા આ
અભિપ્રાયને બતાવી આપે તો હું તેમનો શિષ્ય બની જઈ.” ગૌતમસ્વામીએ
એવું કહીને સોમભદ્રને કહ્યું કે, કહે મહાનુભાવ ! તમારા મનમાં આ વિચાર

ટીકા—‘ નત્થિ નૂળં ’ ઇત્યાદિ ।

પરો લોકઃ=પરમ્ભવઃ-જન્માન્તરમ્, નૂનં=નિશ્ચયેન નાસ્તિ=ન ભવતિ । અયં ભાવઃ-શરીરં હિ ભૂતાત્મકં, તદિદૈવ નશ્યતિ, શરીરે વર્તમાનસ્ય ચૈતન્યસ્યાપિ ભૂત-ધર્મત્વાદેવ શરીરેણ સહ નાશસંભવાત્ । શરીરવ્યતિરેકેણ આત્મનઃ પ્રત્યક્ષતોડ્નુપ-લમ્પમાનત્વાચ્ચ જન્માન્તરં ન ભવતીતિ નિશ્ચેતવ્યમિતિ । યદ્વા-નૂનમિતિ સંભાવ-નાયામ્ પરલોકઃ સ્વર્ગાદિનાંસ્તીતિ સંભાવયામિ, યતઃ પરલોકે ગતઃ કોડપિ નાત્રા-ગત્ય વદતિ, તસ્માત્ પ્રત્યક્ષાભાવાન્નાસ્તિ પરલોક ઇતિ । વા=અથવા, અપિ=ઈહાપિ-

અવ સૂત્રકાર ચાર્હસવાં દર્શનપરીપહજય કો વતલાતે હે—

‘ નત્થિ નૂળં ’-ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(પરે લોએ નૂળં નત્થિ-પરઃ લોકઃ નૂનં નાસ્તિ) નિશ્ચય સે જન્માન્તર નહીં હૈ-યહ શરીર ભૂતાત્મક હૈ, હસલિયે યહ તો યહાં હી વિનિષ્ઠ હો જાતા હૈ । હસ શરીર મેં જો ચૈતન્ય વર્તમાન હૈ વહ ભી ભૂતોં કા ધર્મ હોને સે શરીર કે સાથ હી નાશ કો પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ । દૂસરે-શરીર સે ભિન્ન આત્મા-નામક કોઈ પદાર્થ હૈ, યહ કિસી ભી પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ સે સાવિત નહીં હોતા હૈ અતઃ પરલોકી (પરલોક જાને વાલા આત્મા) કા અભાવ હોને સે પરલોક કા અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ હૈ, અર્થાત્ જન્માન્તર નહીં હૈ । અથવા “ નૂનં ” યહ પદ સંભાવના મેં ભી પ્રયુક્ત કિયા જાતા હૈ હસ અપેક્ષા પરલોક-સ્વર્ગાદિક જો માને જાતે હૈ સો વે ભી નહીં હૈ, એસી સંભાવના હોતી હૈ, ક્યોં કિ કોઈ એસા તો હૈ નહીં જો પરલોક મેં જાકર પશ્ચાત્ યહાં આકર યહ કહે કિ મેં અમુક

હવે સૂત્રકાર બાવીસમા દર્શનપરીપહજને છતવાનું બતાવે છે—

‘ નત્થિ નૂળં ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—પરે લોએ નૂળં નત્થિ-પરલોકઃ નૂનં નાસ્તિ નિશ્ચયથી જન્માન્તર નથી. આ શરીર ભૂતાત્મક છે, આ માટે તે તો અહિં જ વિનિષ્ઠ થઈ બચ છે. આ શરીરમાં જે ચૈતન્ય વર્તમાન છે તે પણ ભૂતોનો ધર્મ હોવાથી શરીરની સાથેસાથ નાશ પામે છે, બીજું શરીરથી ભિન્ન આત્મા નામનો કોઈ પદાર્થ છે, એ કોઈ પણ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણથી જોળખી શકાતો નથી. આથી પરલોકીને (પરલોક જવાવાળો આત્મા) અભાવ હોવાથી પરલોકનો અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ છે. અર્થાત્ જન્માન્તર નથી. અથવા ‘ નૂનં ’ આ પદ સંભાવનામાં પણ પ્રયુક્ત કરાય છે. આ અપેક્ષા પરલોક, સ્વર્ગાદિક જે માનવામાં આવે છે તે પણ નથી એવી સંભાવના થાય છે. કેમકે, કોઈ એવો તો છે જ નહીં જે પરલોકમાં

ચતુર્જ્ઞાનચતુર્દશપૂર્વધારકઃ સ્વજ્ઞાનપ્રભાવાદનેકયુક્તિપતિયુક્તીઃ પ્રદર્શય, મત્તગજેન્દ્રમિવ સોમભદ્રં વશીકૃત્ય દીક્ષિતં કૃત્વાઽઽનીતવાન્ । અયં ગૌતમસ્ય પ્રયત્ને નૈવ મોક્ષમાર્ગમાશ્રિતઃ, તથાપિ ગૌતમો વિનયાતિશયં કુર્વન્ જ્ઞાનગર્વં ન વહતિ, ન ચ કેવલજ્ઞાનાપ્રાપ્તૌ વિપાદં કરોતિ । યથા ગૌતમેનાઽવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનપરીપહં તન્મદાકરણેન કેવલજ્ઞાનાપ્રાપ્તિવિષયકવિપાદાકરણેન ચ પરિપક્વ તદુપરિ વિજયઃ પ્રાપ્તસ્તથાઽપ્યૈરપિ મુનિભિરજ્ઞાનાભાવપરીપહઃ સોઽવ્યઃ ॥ ૪૩ ॥

અથ દ્વાવિંશતિતમં દર્શનપરીપહજયં ગ્રાહ—

મૂલમ્—નૅતિથિ નૂનં પૅરે લોપે ઈંડુઢી વા વિં તવસિંષ્ણો ।

અદુંવા 'વેચિ'ઓ મિ-ત્તિ', ઈંડુ મિર્કેલૂ નૅ ચિંતેં ॥૪૪॥

છાયા—નાસ્તિ નૂનં પરો લોકઃ ઋદ્ધિર્વાંઽપિ તપસ્વિનઃ ।

અથવા વશ્ચિતોઽસ્મીતિ ઇતિ મિશ્રુર્ન ચિન્તયેત્ ॥ ૪૪ ॥

જ્ઞાનકે ધારી એવં ચતુર્દશપૂર્વં કે પાઠી ગૌતમ ને અપને પ્રભાવ સે હી મત્તગજરાજ કી तरह હસ સોમભદ્ર કો અનેક યુક્તિ પ્રયુક્તિયોં દ્વારા વશ મેં કર કે દીક્ષિત કિયા હૈ, ઓર યહાં યે હસ કો લે આયે હૈ, ગૌતમ કા હી યહ પ્રયત્ન હૈ જો યહ મોક્ષમાર્ગ મેં આ ગયા હૈ, ફિર ખી ગૌતમ કો અપને વિનયાતિશય સે હસ વાત કા જરા ખી ગર્વ નહીં હૈ । તથા કેવલજ્ઞાન કી અપ્રાપ્તિ કે વિષય મેં વિપાદ ખી નહીં હૈ । જિસ તરહ ગૌતમ ને અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાન કે પરીપહ કો ઉનકા મદ નહીં કરને સે તથા કેવલજ્ઞાન કી અપ્રાપ્તિ મેં વિપાદ નહીં કરને સે જીતા હૈ ઊસી તરહ તુમ સબ મુનિયોં કો ખી અજ્ઞાનાભાવ અર્થાત્ જ્ઞાન કા સદ્ભાવ પરીપહ જીતના ચાહિયે ॥ ૪૩ ॥

આર જ્ઞાનના ધારી અને ચોદપૂર્વના પાઠી ગૌતમે મત્તગજરાજની માફક સ્વૈરવિહારી અને યુક્તિ પ્રયુક્તિઓના સ્વામી એવા આમને પોતાના જ્ઞાનવડે વશ કરીને દીક્ષિત કરેલ છે. અને તેને અહીં લઈ આવેલ છે. ગૌતમનો જ આ પ્રયત્ન છે કે જે આ મોક્ષમાર્ગમાં આવેલ છે. છતાં પણ ગૌતમને પોતાના વિનય અતિશયથી આ વાતનો જરા પણ ગર્વ નથી તથા કેવળજ્ઞાનની અપ્રાપ્તિના વિષયમાં વિપાદ પણ નથી. જેવી રીતે ગૌતમે અવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનના પરીપહનો મદ નહીં કરવાથી તથા કેવળજ્ઞાનની અપ્રાપ્તિમાં વિપાદ નહીં કરવાથી જીતેલ છે. આ રીતે તમે સઘળા મુનિઓએ પણ અજ્ઞાન અભાવ અર્થાત્ જ્ઞાનનો સદ્ભાવ જીતવો જોઈ એ. ॥ ૪૩ ॥

ટીકા—‘ નત્થિ નૂણં ’ ઇત્યાદિ ।

પરો લોકઃ=પરભવઃ-જન્માન્તરમ્, નૂનં=નિશ્ચયેન નાસ્તિ=ન ભવતિ । અયં ભવઃ-શરીરં હિ ભૂતાત્મકં, તદિદૈવ નશ્યતિ, શરીરે વર્તમાનસ્ય ચૈતન્યસ્યાપિ ભૂત-ધર્મત્વાદેવ શરીરેણ સહ નાશસંભવાત્ । શરીરવ્યતિરેકેણ આત્મનઃ પ્રત્યક્ષતોડનુપ-લભ્યમાનત્વાચ્ચ જન્માન્તરં ન ભવતીતિ નિશ્ચેતવ્યમિતિ । યદ્વા-નૂનમિતિ સંભાવ-નાયામ્ પરલોકઃ સ્વર્ગાદિનાંસ્તીતિ સંભાવયામિ, યતઃ પરલોકે ગતઃ કોડપિ નાત્રા-ગત્ય વદતિ, તસ્માત્ પ્રત્યક્ષાભાવાન્નાસ્તિ પરલોક ઇતિ । વા=અથવા, અપિ=શ્હાપિ-

અવ સૂત્રકાર ચાઈસવાં દર્શનપરીપહજય કો વતલાતે હું—

‘ નત્થિ નૂણં ’—ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(પરે લોએ નૂણં નત્થિ-પરઃ લોકઃ નૂનં નાસ્તિ) નિશ્ચય સે જન્માન્તર નહીં હૈ-યહ શરીર ભૂતાત્મક હૈ, હસલિયે યહ તો યહાં હી વિનિષ્ઠ હો જાતા હૈ । હસ શરીર મેં જો ચૈતન્ય વર્તમાન હૈ વહ બી ભૂતોં કા ધર્મ હોને સે શરીર કે સાથ હી નાશ કો પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ । દૂસરે-શરીર સે ભિન્ન આત્મા-નામક કોઈ પદાર્થ હૈ, યહ કિસી બી પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ સે સાચિત નહીં હોતા હૈ અતઃ પરલોકી (પરલોક જાને વાલા આત્મા) કા અભાવ હોને સે પરલોક કા અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ હૈ, અર્થાત્ જન્માન્તર નહીં હૈ । અથવા “ નૂનં ” યહ પદ સંભાવના મેં બી પ્રયુક્ત કિયા જાતા હૈ હસ અપેક્ષા પરલોક-સ્વર્ગાદિક જો માને જાતે હૈ સો વે બી નહીં હૈ, એસી સંભાવના હોતી હૈ, ક્યોં કિ કોઈ એસા તો હૈ નહીં જો પરલોક મેં જાકર પશ્ચાત્ યહાં આકર યહ કહે કિ મેં અમુક

હવે સૂત્રકાર બાવીસમા દર્શનપરીપહજને છતવાનું બતાવે છે—

‘ નત્થિ નૂણં ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—પરે લોએ નૂણં નત્થિ-પરલોકઃ નૂનં નાસ્તિ નિશ્ચયથી જન્માન્તર નથી. આ શરીર ભૂતાત્મક છે, આ માટે તે તો અહિં જ વિનિષ્ઠ થઈ જાય છે. આ શરીરમાં જે ચૈતન્ય વર્તમાન છે તે પણ ભૂતોનો ધર્મ હોવાથી શરીરની સાથેસાથ નાશ પામે છે, બીજું શરીરથી ભિન્ન આત્મા નામનો કોઈ પદાર્થ છે, એ કોઈ પણ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણથી ઓળખી શકાતો નથી. આથી પરલોકીનો (પરલોક જવાવાળો આત્મા) અભાવ હોવાથી પરલોકનો અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ છે. અર્થાત્ જન્માન્તર નથી. અથવા ‘ નૂનં ’ આ પદ સંભાવનામાં પણ પ્રયુક્ત કશય છે. આ અપેક્ષા પરલોક, સ્વર્ગાદિક જે માનવામાં આવે છે તે પણ નથી એવી સંભાવના થાય છે. કેમકે, કોઈ એવો તો છે જ નહીં જે પરલોકમાં

શબ્દો મિત્રક્રમઃ અતોડ્યમર્થઃ-તપસ્વિનોઽપિ મમ ઋદ્ધિઃ=આમશૌર્ણ્યાદિલભિ-
રૂપા નાસ્તિ=ન વિદ્યતે, તસ્યા અપ્યનુપલભ્યમાનત્વાત્ ।

પ્રસન્નાદિહ લભિભેદા ઉચ્યન્તે—

૧ આમશૌર્ણ્યપદિઃ, ૨ વિપ્રુહોપદિઃ, ૩ ચેલૌપદિઃ, ૪ જલ્લૌપદિઃ, ૫ સર્વૌપદિઃ,
૬ સંમિત્રશ્રોતોલભિઃ, ૭ અવધિલભિઃ, ૮ ઋજુમતિલભિઃ, ૯ વિપુલમતિલભિઃ,
૧૦ ચારણલભિઃ, ૧૧ આશીર્વિપલભિઃ, ૧૨ કેવલિલભિઃ, ૧૩ ગણધરલભિઃ,
૧૪ પૂર્વધરલભિઃ, ૧૫ અર્હલ્લભિઃ, ૧૬ ચક્રવર્તિલભિઃ, ૧૭ ચલદેવલભિઃ,
૧૮ વાસુદેવલભિઃ, ૧૯/૧ ક્ષીરાસ્રવલભિઃ, ૧૯/૨ મધ્વાસ્રવલભિઃ,
૧૯/૩ સર્પિરાસ્રવલભિઃ, ૨૦ કોષ્ઠબુદ્ધિલભિઃ, ૨૧ પદાનુસારિલભિઃ, ૨૨

સ્વર્ગ સે આયા હં, ઇસલિયે પ્રત્યક્ષ સે ડનકી ઉપલભિ કા અભાવ હોને
સે પરલોક નહીં હૈ । (વા) અથવા (તવસ્તિષ્ણો ઇહ્વી અવિ-તપસ્વિનઃ
ઋદ્ધિઃ અપિ) તપસ્વી જન કો ઋદ્ધિકી પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ યહ બી વાત
ઠીક નહીં હૈ, કયોં કિ ઋદ્ધિયોં અર્થાત્ લભિયોં કી સિદ્ધિ બી પ્રત્યક્ષપ્ર-
માણ સે હોતી નહીં હૈ । લભિયાં ૨૮ પ્રકાર કી હૈં વે યે હૈં—

આમશૌર્ણ્યપદિ ૧, વિપ્રુહોપદિ ૨, ચેલૌપદિ ૩, જલ્લૌપદિ ૪, સર્વૌ-
પદિ ૫, સંમિત્રશ્રોતોલભિ ૬, અવધિલભિ ૭, ઋજુમતિલભિ ૮, વિપુ-
લમતિલભિ ૯, ચારણલભિ ૧૦, આશીર્વિપલભિ ૧૧, કેવલિલભિ ૧૨,
ગણધરલભિ ૧૩, પૂર્વધરલભિ ૧૪, અર્હલ્લભિ ૧૫, ચક્રવર્તિલભિ ૧૬,
ચલદેવલભિ ૧૮, ક્ષીરાસ્રવલભિ ૧૯/૧, મધ્વાસ્રવલભિ ૧૯/૨, સર્પિ-
રાસ્રવલભિ ૧૯/૩, કોષ્ઠબુદ્ધિલભિ ૨૦, પદાનુસારિલભિ ૨૧, ષીજબુ-

જઈ પાછો અહિં આવી તે એમ કહે કે હું અમુક સ્વર્ગમાં જઈને આવ્યો
હું. આ માટે પ્રત્યક્ષથી તેની ઉપલબ્ધીના અભાવ હોવાથી પરલોક નથી. અથવા
તવસ્તિષ્ણો ઇહ્વી અવિ તપસ્વીઓને ઋદ્ધિઓની પ્રાપ્તિ થઈ બચ છે એ વાત પણ
ઠીક નથી. કેમકે, ઋદ્ધિઓની સિદ્ધિ પણ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણથી થતી નથી. ઋદ્ધિઓ
૨૮ પ્રકારની છે. તે આ પ્રમાણે છે.

(૧) આમશૌર્ણ્યપદિ, (૨) વિપ્રુહોપદિ, (૩) ચેલૌપદિ, (૪) જલ્લૌપદિ,
(૫) સર્વૌપદિ, (૬) સંમિત્રશ્રોતોલભિ, (૭) અવધિલભિ, (૮) ઋજુમતિ-
લભિ, (૯) વિપુલમતિલભિ, (૧૦) ચારણલભિ, (૧૧) આશીર્વિપલભિ,
(૧૨) કેવલિલભિ, (૧૩) ગણધરલભિ, (૧૪) પૂર્વધરલભિ, (૧૫) અર્હલ્લભિ,
(૧૬) ચક્રવર્તિલભિ, (૧૭) ચલદેવલભિ, (૧૮) વાસુદેવલભિ, (૧૯) ક્ષીરાસ્રવ-
લભિ, મધ્વાસ્રવલભિ, સર્પિરાસ્રવલભિ, (૨૦) કોષ્ઠબુદ્ધિલભિ ૧) પદાનુ-

બીજવુદ્ધિલઘ્વિઃ, ૨૩ તેજોલેશ્યાલઘ્વિઃ, ૨૪ આહારકલઘ્વિઃ, ૨૫ શીતલેશ્યાલઘ્વિઃ, ૨૬ વૈક્રિયલઘ્વિઃ, ૨૭ અક્ષીણમહાનસિકલઘ્વિઃ, ૨૮ પુલાકલઘ્વિઃ ।

ભવ્યત્વાભવ્યત્વવિશિષ્ટાનાં પુરુષાણાં ચ યાવત્યો લઘ્વયો ભવન્તિ, તા એવમ્-ભવ્યપુરુષાણામેતાઃ પૂર્વોક્તા સર્વા અપિ લઘ્વયો ભવન્તિ । અર્હચક્રવર્તિવાસુ-દેવલદેવસંભિન્નશ્રોતશ્ચારણપૂર્વધરગણધરપુલાકાઽઽહારકલઘ્વિલક્ષણા એતાદશ લઘ્વયો ભવ્યસ્ત્રીણાં નૈવ ભવન્તિ । શેષાસ્ત્વષ્ટાદશલઘ્વયો ભવ્યસ્ત્રીણાં ભવન્તિ ।

યચ મલ્લિસ્વામિનઃ સ્ત્રીત્વેઽપિ તીર્થંકરત્વમ્ભૂત્તત્તદાશ્ચર્યમ્ભૂતત્વાન્ન ગણ્યતે । તથા -અનન્તરોક્તાઅર્હદાદ્યા આહારકપર્યન્તા દશ લઘ્વયઃ, કેવલિ-ઋજુમતિ-વિપુલમતિ

દ્વિલઘ્વિ ૨૨, તેજોલેશ્યાલઘ્વિ ૨૩, આહારકલઘ્વિ ૨૪, શીતલેશ્યાલઘ્વિ ૨૫, વૈક્રિયલઘ્વિ ૨૬, અક્ષીણમહાનસીકલઘ્વિ ૨૭, પુલાકલઘ્વિ ૨૮ ।

અય ભવ્યત્વભાવવિશિષ્ટ એવં અભવ્યત્વભાવવિશિષ્ટ પુરુષ કો જિતની જિતની લઘ્વિયાં હોતી હૈં વે કહતે હૈં—

ભવ્યત્વભાવવિશિષ્ટ પુરુષોં કે યે સમી લઘ્વિયાં હોતી હૈં । ભવ્ય સ્ત્રિયોં કે અર્હલ્લઘ્વિ ૧, ચક્રવર્તિલઘ્વિ ૨, વાસુદેવલઘ્વિ ૩, લલદેવલઘ્વિ ૪, સંભિન્નશ્રોતોલઘ્વિ ૫, ચારણલઘ્વિ ૬, પૂર્વધરલઘ્વિ ૭, ગણધરલઘ્વિ ૮, પુલાકલઘ્વિ ૯, એવં આહારકલઘ્વિ ૧૦, યે દસ લઘ્વિયાં નહીં હોતી હૈં । વાકી અવશિષ્ટ અઠારહ લઘ્વિયાં ભવ્ય સ્ત્રિયોં કે મી હોતી હૈં । જો મલ્લિસ્વામી કે સ્ત્રીપના હોને પર મી તીર્થંકરત્વ વહાં હુઆ વહ અચ્છેરા-આશ્ચર્ય હોને કી વજહ સે ગિના નહીં જાતા હૈં । યે ૧૩ તેરહ લઘ્વિયાં અભવ્યપુરુષોં કે નહીં હોતી હૈં-કેવલિલઘ્વિ, ઋજુ-

સારિલઘ્વિ, (૨૨) બીજવુદ્ધિલઘ્વિ, (૨૩) તેજોલેશ્યાલઘ્વિ, (૨૪) આહારકલઘ્વિ, (૨૫) શીતલેશ્યાલઘ્વિ, (૨૬) વૈક્રિયલઘ્વિ, (૨૭) અક્ષીણમહાનસિકલઘ્વિ, (૨૮) પુલાકલઘ્વિ.

હવે ભવ્યત્વભાવવિશિષ્ટ અને અભવ્યત્વભાવ વિશિષ્ટ પુરુષોને જેટલી જેટલી લઘ્વિઓ થાય છે તે બતાવે છે.

ભવ્યત્વભાવ વિશિષ્ટ પુરુષોને આ બધી લઘ્વિઓ થાય છે. ભવ્ય સ્ત્રિઓને ૧ અર્હલ્લઘ્વિ, ૨ ચક્રવર્તિલઘ્વિ, ૩ વાસુદેવલઘ્વિ, ૪ બલદેવલઘ્વિ, ૫ સંભિન્નશ્રોતોલઘ્વિ, ૬ ચારણલઘ્વિ, ૭ પૂર્વધરલઘ્વિ, ૮ ગણધરલઘ્વિ, ૯ પુલાકલઘ્વિ, અને ૧૦ આહારકલઘ્વિ. આ દશ લઘ્વિઓ થતી નથી. બાકીની અઠાર લઘ્વિઓ ભવ્ય સ્ત્રીઓને પણ થાય છે. જેમ મલ્લિ સ્વામીને સ્ત્રીપણું હોવા છતાં પણ તીર્થંકરત્વ તેમને થયું. તે અચ્છેરા-આશ્ચર્ય થવાની ગણતરીમાં ગણવામાં આવતું નથી. આ તેર લઘ્વિઓ અભવ્ય પુરુષોને થતી નથી.

—લઘ્યથૈતાસ્યયોદશ લઘ્યયઃ પુરુષાણામપ્યભવ્યાનાં નૈવ ભવન્તિ, શેષાઃ પચ્ચદશ લઘ્યયસ્તુ ભવન્તિ । અભવ્યસ્ત્રીણામપ્યેતાસ્યયોદશ લઘ્યયો ન ભવન્તિ, મધુસીરાસ્રવલ્-
ઘ્નિરપિચતુર્દશી તાસાં નૈવ ભવતિ । શેષાથતુર્દશલઘ્યયસ્તુ તાસામપિ ભવન્તિ ।

અથાસાં વ્યાખ્યા પ્રદર્શયતે—આમર્શોપધિઃ—આમર્શો દિ હસ્તાદિના સ્પર્શઃ, સ
એવ ઓપધિઃ, કરાદિસંસ્પર્શમાત્રાદેવ વ્યાધ્યપનયનસામર્થ્યમ્ ॥ ૧ ॥

વિપુલોપધિઃ—યન્માહાત્મ્યાન્મૂત્રપુરીપાવયવમાત્રમપિ રોગરાશિપ્રણાશાય
સંપદ્યતે સુરમિ ચ સા ॥ ૨ ॥

મતિલઘ્નિ, વિપુલમતિલઘ્નિ ત્રીણે યે તથા ભવ્ય સ્ત્રિયોં કે જિન દશ ૧૦
ઋદ્ધિયોં કા અભાવ વતલાયા ગયા હૈ વે । ઇસ પ્રકાર ૧૩ તેરહ લઘ્નિયોં કા
અભવ્યપુરુષોં કે અભાવ રહતા હૈ । વાકી ૧૫ લઘ્નિયાં હોતી હૈ । ઇસી તરહ
અભવ્યસ્ત્રિયોં કે બી યે હી ૧૩ તેરહ લઘ્નિયાં નહીં હોતી હૈ । તથા ક્ષીરા-
સ્રવ એવં મધ્વાસ્રવ નામકો બી લઘ્નિ ઉનકે નહીં હોતી હૈ । ઇસ પ્રકાર
તેરહ ૧૩ પૂર્વોક્ત ઓર ૧૪ ચૌદહવીં ક્ષીરાસ્રવ, મધ્વાસ્રવ સર્પિરાસ્રવરુપ
કા ઉનકેઅભાવ જાનના ચાહિયે । વાકી ૧૪ ચૌદહ લઘ્નિયાં અભવ્ય-
સ્ત્રિયોં કે હોતી હૈ ।

ઇન લઘ્નિયોં કી વ્યાખ્યા કી જાતી હૈ—હસ્ત આદિ દ્વારા સ્પર્શ હોને
કા નામ આમર્શ હૈ । યહ સ્પર્શ હી જિનકા ઓપધિ કા કામ કરતા હૈ
વહ આમર્શોપધિ હૈ । ઇસ લઘ્નિ કે ધારી કો જો રોગી અપને હસ્તાદિક
સે છૂ લેતા હૈ ઉસકા વહ રોગ છૂતે હી નષ્ટ હો જાતા હૈ ૧, જિસ કે
પ્રભાવ સે મૂત્ર, પુરીપ, આદિ બી રોગરાશિકે વિનાશ કરને મેં ઓષ-

કેવલીલઘ્નિ, ઋબુમતિલઘ્નિ, વિપુલમતિલઘ્નિ, ત્રણ આ તથા લઘ્ય સ્ત્રીઓને
જે દશઋદ્ધિઓને અભાવ બતાવેલ છે તે આ પ્રકારની તેર લઘ્નિઓને અભવ્ય
પુરુષોને અભાવ રહે છે. બાકી પંદર લઘ્નિઓ થાય છે. આ રીતે અભવ્ય
સ્ત્રીઓને પણ આ તેર લઘ્નિઓ થતી નથી. તથા ક્ષીરાસ્રવ અને મધ્વાસ્રવ
સર્પિરાસ્રવ નામની પણ તેને થતી નથી. આ રીતે તેર પૂર્વોક્ત અને ચૌદમી ક્ષીરા-
સ્રવ મધ્વાસ્રવ લઘ્નિનો તેને અભાવ બહુવો જોઈએ. બાકી ચૌદ લઘ્નિઓ
અભવ્ય સ્ત્રીઓને થાય છે.

આ લઘ્નિઓની વ્યાખ્યા કહેવામાં આવે છે,—હાથ આદિ દ્વારા થવાનું
નામ આમર્શ છે. આ સ્પર્શ જ જેને ઔપધિનું કામ કરે છે તે આમર્શ
ઔપધિ છે. આ લઘ્નિના ધારીને જે રોગી થતાના હાથથી અડે છે એને
જે રોગ અડતાં જ નાથ પામે છે. (૧) જેના પ્રભાવથી મૂત્ર, પુરીપ, આદિ
રોગ વિનાશ કરવામાં ઔપધિનું કામ કરવા લાગે છે તથા તેમ આવવા

खेलौपधिः—यत् प्रभावात् श्लेष्मा सर्वरोगापहारकः सुरभिश्च भवति सा ॥३॥

जल्लौपधिः—जल्लो=मलः कर्णवदननासिकानयनजिह्वासमुद्भवः शरीरसमुद्भवश्च,
स एव ओषधिर्भवति यत्प्रभावात् सा ॥ ४ ॥

सर्वौपधिः—यत्प्रभावात् सर्वे विष्मूत्रकेशनखादय ओषधयो भवन्ति सा ॥५॥

संभिन्नश्रोतोलब्धिः—यत्प्रभावात् सर्वैरपि शरीरावयवः सुस्पष्ट शृणोति
सा । यद्वा—‘संभिन्नस्रोतस्’ इतिच्छाया । अत्र स्रोतस् शब्द इन्द्रियवाचकः, तेन
यत्प्रभावात्—एकैकमिन्द्रियं सर्वेषामिन्द्रियाणां कार्यं संपादयति सा । यथा—कर्णे-
नैव श्रवणदर्शनघ्राणरसनस्पर्शनकार्याणि लब्धिप्रभावात् सम्पादयति ॥ ६ ॥

अवधिलब्धिः—अवधिज्ञानमेव लब्धिः—अर्वाधिलब्धिः । अरूपिद्रव्यं विहाय

धिका काम करने लग जाते हैं, तथा उनमें सुगंध आने लगती है, इस
का नाम विप्रुडोपधि है २ । जिसके प्रभाव से श्लेष्मा सर्वरोग का अप-
हारक हो जाता है उस का नाम खेलौपधि है । इसके प्रभाव से श्लेष्म
भी सुगंधवाला हो जाता है ३ । जिसके प्रभावसे कान, मुख, नासिका,
नयन, एवं जिह्वा का मैल, तथा शरीरका मैल औपधि जैसा परिणमित
होता है उसका नाम जल्लौपधि है ४ । जिसके प्रभावसे विष्टा, मूत्र, केश,
तथा नख आदिक औपधि जैसे हो जाते हैं उसका नाम सर्वौपधि है ५ ।
जिसके प्रभावसे समस्त शारीरिक अवयवों द्वारा सुना जाय, अथवा एक ही
इन्द्रिय जिसके प्रभाव से अन्य इन्द्रियों का काम करने लग जाय उस का
नाम संभिन्नश्रोतोलब्धि है । जिसके यह लब्धि होती है वह एक कर्ण
इन्द्रिय से ही अवशिष्ट इन्द्रियों के काम—दर्शनादिक करने की शक्ति-
वाला हो जाता है ६ । जिसके प्रभाव से अमूर्तिक द्रव्य को छोड़ कर
भूर्तिक द्रव्यको जानने की सामर्थ्य आत्मामें प्रकट हो जाती है उसका नाम

लागे थे. तेनुं नाम विप्रुड औपधि थे. (२) जेना प्रभावथी श्लेष्मा सर्व
रोगोना नाश करनार थे तेनुं नाम खेलौपधि थे, तेना प्रभावथी श्लेष्म पण
सुगंधवाणा थई जय थे. (३) जेना प्रभावथी कान, मोडुं, नाक, नेणु अने
लभनेा मैल तथा शरीरनेा मैल, औपधिनी जेम परिणमित अने थे तेनुं
नाम जल औपधि थे. (४) जेना प्रभावथी विष्टा, मूत्र, वाण, नख, आदि
औपधि जेवा थई जय थे तेनुं नाम सर्वौपधि थे. (५) जेना प्रभावथी शरी-
रनां तमाम अवयवो द्वारा संभणाय अथवा ओक न इन्द्रिय जेना प्रभावथी
भील इन्द्रियोनुं काम करवा लागी जय तेनुं नाम संभिन्नश्रोतोलब्धि थे.
जेने आ लब्धि होय थे ते ओक कण्ठ इन्द्रियथी न अवशिष्ट इन्द्रियोनां

રુપિદ્રવ્યવિપયકમિન્દ્રિયનિરપેક્ષં મનઃપ્રગિધાનવીર્યકં પ્રતિવિશિષ્ટક્ષયોપશમનિમિ-
ત્તકં દેવમનુષ્યતિર્યક્નારકસ્વામિકં જ્ઞાનં ભવતિ યત્પ્રભાવાત્ સા ॥ ૭ ॥

ઋજુમતિલલ્લિધિઃ—ઋજુઃ=સામાન્ય—વિશેષરહિતં, દેશકાલાદ્યનેકપર્યાય-
ર્જિતં, સંજ્ઞિના ચિન્તિતં, તદ્ગ્રાહિણી મતિઃ—ઋજુમતિઃ, સૈવ લલ્લિધિઃ। સા ચ-
ઘટોડનેન ચિન્તિતઃ, इत्येवं संज्ञिमनोद्रव्यपरिच्छेदः ॥ ૮ ॥

વિપુલમતિલલ્લિધિઃ—વિશુદ્ધતરઃ સંપૂર્ણમનુષ્યક્ષેત્રવર્તિસંજ્ઞિપઠ્ઠેન્દ્રિયમનોદ્રવ્ય-
પ્રત્યક્ષીકરણહેતુર્મનઃપર્યયજ્ઞાનવિશેષઃ। યથા—પરેણ ચિન્તિતં ઘટં પ્રસંગતો બહુભિઃ
અવધિલલ્લિધિ હૈ, यह अवधि, इन्द्रिय और मनकी सहायता से उत्पन्न
नहीं होता है। अवधिज्ञानावरणीय कर्मके प्रतिविशिष्ट क्षयोपशम
से उत्पन्न होता है। देव, मनुष्य, नरक एवं तीर्यञ्च, इस प्रकार चारों
गतियों के जीव इस के स्वामी हो सकते हैं ७। जिस के प्रभाव से-
देश, काल आदि अनेक पर्यायों से वर्जित पदार्थ का सामान्य ज्ञान
होता है, और जो संज्ञी जीव के द्वारा चिन्तित पदार्थ को ग्रहण करता
है उसका नाम ऋजुमतिलल्लिधि है। जैसे जिसने अपने मन के द्वारा
घट का विचार किया तो ऋजुमतिलल्लिधि वाला उसे शीघ्र बतला देगा
कि इसने घट का विचार किया है ८। जिसके प्रभाव से मनुष्यक्षेत्र-
वर्ती समस्त संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के मनोद्रव्य को साक्षात् करनेवाला
जो विशुद्धतर ज्ञान होता है उसका नाम विपुलमतिलल्लिधि है। यह
मनःपर्यय ज्ञान का एक भेद है। जैसे किसी ने घट का विचार किया

કામ દર્શનાદિક કરવાની શક્તિવાળા બની જાય છે. (૬) જેના પ્રભાવથી અમુતિક
દ્રવ્યને છોડીને મુતિક દ્રવ્યને બાણવાનું સમર્થ આત્મામાં પ્રગટ થાય છે.
તેનું નામ અવધિલલ્લિધિ છે. આ અવધિ ઈન્દ્રિય અને મનની સહાયતાથી
ઉત્પન્ન થતા નથી. અવધિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મના પ્રતિવિશિષ્ટ ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન
થાય છે, દેવ, મનુષ્ય, નરક અને તિર્યંચ આ ચાર ગતીના જીવો તેના સ્વામી
બની શકે છે. (૭) જેના પ્રભાવ દેશ, કાલ આદિ અનેક પર્યાયોથી વર્જિત સામાન્ય
જ્ઞાન થાય છે. અને જે સંજ્ઞી જીવ દ્વારા ચિન્તિત પદાર્થને ગ્રહણ કરે છે.
અને તેનું નામ ઋજુમતિલલ્લિધિ છે. જેવો જેણે ચિન્તિત મનની સાથે
વિચાર કર્યો તો તે ઋજુમતિ લલ્લિધિવાળા તેને તુરંત બતાવી શકે છે કે આણે
મનમાં આ વિચાર કર્યો છે. (૮) જેના પ્રભાવથી મનુષ્ય ક્ષેત્રવર્તી સમસ્તસંજ્ઞી
પંચેન્દ્રિય જીવોના મનોદ્રવ્યોને સાક્ષાત્ કરવાવાળું જે વિશુદ્ધતરજ્ઞાન હોય
છે. તેનું નામ વિપુલમતિલલ્લિધિ છે આ મનઃપર્યયજ્ઞાનનો એક ભેદ છે.
જેમ કેદાર્થએ મનમાં વિચાર કર્યો હોય તો આ લલ્લિધિવાળા તેને પ્રસંગવશ એવા

પર્યાયરૂપેતં જાનાતિ, તત્ર ઘટોઽયં દ્રવ્યતઃ સૌવર્ણઃ, ક્ષેત્રતો મરુદેશીયસ્તથા ગૃહા-
મ્યન્તરસ્થઃ, કાલતત્ત્વમાસિકઃ, ભાવતઃ-સુસંસ્થાનચાક્રચિક્યાદિયુક્તઃ, આકારેણ
મહાન્, ઇત્યાદિ પ્રચુરવિશેષણવિશિષ્ટં જાનાતિ ॥ ૯ ॥ ચારણલલ્લિધઃ-આકાશ-
ગમનશક્તિઃ ॥ ૧૦ ॥ આશીર્વિપલલ્લિધઃ-આશીઃ-અનુગ્રહઃ, વિપં-નિગ્રહઃ, તદ્વા-
લલ્લિધઃ, નિગ્રહાનુગ્રહસામર્થ્યમિત્યર્થઃ ॥ ૧૧ ॥ કેવલિલલ્લિધઃ-કેવલિનઃ કેવલ-
જ્ઞાનસિદ્ધિઃ ॥ ૧૨ ॥ ગણધરલલ્લિધઃ-ગણધરત્વપ્રાપ્તિઃ ॥ ૧૩ ॥ પૂર્વધરલલ્લિધઃ-
પૂર્વધરત્વપ્રાપ્તિઃ ॥ ૧૪ ॥ અર્હલ્લલ્લિધઃ-અર્હત્વપ્રાપ્તિઃ ॥ ૧૫ ॥ ચક્રવર્તિલલ્લિધઃ-

હૈ તો હસ લલ્લિધવાલા ઉસે પ્રસંગવશ હસ રૂપ સે સ્પષ્ટ જાન લેતા હૈ
કિ હસને દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સુવર્ણ કા, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા મરુદેશ કા
અથવા ઘર કે ખીતર કા, કાલ કી અપેક્ષા ત્રીન માસ કા, એવં ભાવ
કી અપેક્ષા અચ્છે આકાર કા, અથવા ચાક્રચિક્યાદિ રૂપ સે યુક્ત ઘટ
કા ચિન્તન કિયા હૈ । હસ પ્રકાર વિપુલમતિલલ્લિધ વાલા ઘટકો અનેક
વિશેષણાં સે વિશિષ્ટ જાન સકતા હૈ તવ કિ ઋજુમતિલલ્લિધ વાલા
હસ પ્રકાર સે ઘટ કો નહીં જાન સકતા હૈ વહ તો ઉસે સામાન્યરૂપ
સે હી જાનતા હૈ ૯ । આકાશ મેં ગમન કરને કી શક્તિ જિસ લલ્લિધ
દ્વારા ઉત્પન્ન હો જાતી હૈ વહ ચારણલલ્લિધ હૈ ૧૦ । જિસકે પ્રભાવ સે
અનુગ્રહ ઓર નિગ્રહ કરને કી શક્તિ પ્રગટ હો જાવે વહ આશીર્વિપ-
લલ્લિધ હૈ ૧૧ । કેવલિયોં કે જો કેવલજ્ઞાન કી સિદ્ધિ હોતી હૈ ઉસકા
નામ કેવલિલલ્લિધ હૈ ૧૨ । ગણધરપદ કી પ્રાપ્તિ હોને મેં જો કારણ
હોતી હૈ વહ ગણધરલલ્લિધ હૈ ૧૩ । પૂર્વધરત્વ કી પ્રાપ્તિ પૂર્વધરલલ્લિધ ।
૧૪; અર્હત્વપદ કી પ્રાપ્તિ અર્હલ્લલ્લિધ ૧૫, ચક્રધરત્વ કી પ્રાપ્તિ ચક્રવર્તિ-

તેવા રૂપથી સ્પષ્ટ બાણી હો છે કે, તેણે દ્રવ્યની અપેક્ષા, સુવર્ણના ક્ષેત્રની
અપેક્ષા, મરુદેશના અથવા ઘરની અંદરના કાળની અપેક્ષા ત્રણ માસનું અને
ભાવની અપેક્ષા સારા આકારનું અથવા ચળકાટ ચક્રચક્રાટાદિ રૂપથી યુક્ત
ઘટ બાણી છે. આ પ્રકારે વિપુલમતિ લલ્લિધવાળા ઘટને અનેક વિશેષણોથી વિશિષ્ટ
બાણી શકે છે. ત્યારે ઋજુમતિ લલ્લિધવાળા આ રીતે ઘટને બાણી શકતા નથી.
તે તો અને સામાન્યરૂપથી જ બાણી છે. (૯) આકાશમાં ઉડવાની શક્તિ જે લલ્લિધ-
દ્વારા ઉત્પન્ન થાય છે તે ચારણલલ્લિધ છે. (૧૦) જેના પ્રભાવથી અનુગ્રહ
અને નિગ્રહ કરવાની શક્તિ પ્રગટ થાય છે તે આશીર્વિપલલ્લિધ છે. (૧૧)
કેવલીઅને કેવળજ્ઞાની લલ્લિધ થાય છે તેનું નામ કેવળલલ્લિધ છે. (૧૨) ગણ-
ધર પદની પ્રાપ્તિ થવામાં જે કારણ હોય છે તે ગણધરલલ્લિધ છે. (૧૩) પૂર્વધર-
ત્વની પ્રાપ્તિ પૂર્વધરલલ્લિધ. (૧૪) અર્હત્વપદની પ્રાપ્તિ અર્હત્વલલ્લિધ. (૧૫)

ચક્રધરસ્વપ્રાપ્તિઃ ॥૧૬॥ યલદેવલલ્લિઃ-ચલદેવત્વપ્રાપ્તિઃ ॥૧૭॥ વાસુદેવલલ્લિઃ-વાસુદેવત્વપ્રાપ્તિઃ ॥૧૮॥ ક્ષીરાસ્રવલલ્લિઃ-યત્પ્રભાવાદ્વચનં ક્ષીરવન્મધુરં ભવતિ ॥૧૯॥ ૧ ॥ મધ્વાસ્રવલલ્લિઃ-યત્પ્રભાવાદ્વચનં મધુતુલ્યં ભવતિ ॥૧૯૨॥ ૨ ॥ સર્પિરાસ્રવલલ્લિઃ-યત્પ્રભાવાદ્વચનં ઘૃતવત્ સ્નિગ્ધમરુક્ષં ભવતિ ॥૧૯૩॥

કોષ્ઠયુદ્ધિલલ્લિઃ-યથા કોષ્ઠકે ધાન્યં પ્રથિતં તદવસ્થમેવ ચિરમપ્યવતિષ્ઠતે, ન કિમપિ કાલાન્તરેડપિ ગલતિ, एवं यस्मिन् पुरुषे श्रुतज्ञानं निक्षिप्तं तदवस्थ-मेव चिरकालं तिष्ठति न कदापि विस्मरति यत्प्रभावात् सा ॥२०॥ पदानुसारिणी लल्लिः-यत्प्रभावात् पुनरेकमपि श्रुतपदमवधार्य शेषमश्रुतमपि तदवस्थमेव श्रुतमव-गाहते सा ॥ २१ ॥ बीजयुद्धिलल्लिः-यथा-एकस्माद् बीजान्महातरुत्पद्यते, लल्लि १६, ચલદેવ પદ કી પ્રાપ્તિ ચલદેવલલ્લિ ૧૭, વાસુદેવ પદ કી પ્રાપ્તિ વાસુદેવલલ્લિ ૧૮, ક્ષીર જૈસે મીઠે વચનોં કી પ્રાપ્તિ જિસકે પ્રભાવ સે હો વહ ક્ષીરાસ્રવલલ્લિ, મધુતુલ્ય મધુર વચનોં કા હોનાં વહ મધ્વાસ્રવલલ્લિ, સિગ્ધ एवं અરુક્ષ વચન જિસકે પ્રભાવ સે હો વહ સર્પિરાસ્રવ લલ્લિ હૈ ૧૯ । જિસ પ્રકાર કોઠે મેં રક્ત્વા હુવા ધાન્ય જ્યોં કા ત્યોં યદ્વત કાલ તક રહતા હૈ-વિગડતા નહીં હૈ, उसी प्रकार जिसके प्रभाव से प्राप्त श्रुत भी ज्यों का त्यों स्थिर रहे विस्मृत न हो उसका नाम कौष्ठयुद्धिलल्लि हૈ ૨૦ જિસકે પ્રભાવ સે શ્રુત કા એક પદ બી અવધારિત હોને પર શેષ નહીં સુના હુવા બી શ્રુત અવધારિત હો જાય હસ કા નામ પદાનુસારિણીલલ્લિ હૈ ૨૧ । જિસ પ્રકાર એક છોટે સે બી બીજ સે વિશાલ કાય વૃક્ષ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ, उसी प्रकार उत्पाद; व्यय,

ચક્રધરસ્વની પ્રાપ્તિ ચક્રવર્તિલલ્લિ. (૧૬) બલદેવપદની પ્રાપ્તિ બળદેવલલ્લિ. (૧૭) વાસુદેવ પદની પ્રાપ્તિ વાસુદેવલલ્લિ. (૧૮) ખીર જેવાં મીઠા વચનોની જેના પ્રભાવથી થાય તે ક્ષીરાસ્રવલલ્લિ. મધુતુલ્ય મધુર વચનોનું બનવું તે મધ્વાસ્રવલલ્લિ. સિગ્ધ અને અરુક્ષવચન જેના પ્રભાવથી થાય તે સર્પિરાસ્રવલલ્લિ છે. (૧૯) જે રીતે કોઠીમાં રાખેલું અનાજ જેમનું તેમ ઘણા સમય સુધી રહે છે. છતાં બગડતું નથી. તે પ્રકારે જેના પ્રભાવથી પ્રાપ્ત શ્રુત પણ જ્યાંનું ત્યાં સ્થિર રહે, વિસ્મૃત ન બને, તેનું નામ કોષ્ઠયુદ્ધિલલ્લિ છે. (૨૦) જેના પ્રભાવથી શ્રુતનું એક પદ પણ અવધારીત થવાથી આગળ ન સાંભળેલ પણ શ્રુત અવધારીત થઈ જાય તેનું નામ પદાનુસારિણીલલ્લિ છે. (૨૧) જે રીતે એક નાના બીજથી વિશાળકાય વૃક્ષ ઉત્પન્ન થાય છે. તે પ્રકારે ઉત્પાદ,

તયા-ઉત્પાદવ્યયધ્રોવ્યયુક્તં સદિત્યાદિરૂપમર્થપ્રધાનં પદમર્થપદં, તદેકં વીજભૂત-
મર્થપદમનુસૃત્ય શેષમપિ તથૈવ પ્રભૂતતરમર્થપદં જાનાતિ યત્પ્રભાવાત્ સા ॥ ૨૨ ॥

તેજોલેહ્યાલઘ્વિઃ - યત્પ્રભાવાદનેકયોજનપ્રમાણક્ષેત્રાશ્રિતવસ્તુદહનદક્ષતી-
વ્રતેજોનિસર્જનશક્તિરુત્પદ્યતે સા । इह यः खलु शमी-क्षमाशीलो मुनिर्निरन्तरम-
पानकं पठतपः करोति, पारणकदिने च सनखकुल्मापमुष्टया जलबुलुकेनैव
एकेन आत्मानं यापयति, पुनरातापनां करोति तस्य पण्मासान्ते तेजोलेह्यालघ्वि-
रुत्पद्यते ॥ २३ ॥ आहारकलघ्विः-आहारकशरीरकरणशक्तिः । आहारकशरीरं च-
સ્ફટિકવદુજ્જ્વલં હસ્તપ્રમાણમેકસ્મિન્ ભવે દ્વિઃ, સંસારે ચતુર્વારં કૃત્વા મોક્ષમવશ્યં

एवं ध्रौव्य युक्त सत् है, इत्यादिरूप एक भी अर्थ प्रधानपद के अनु-
सरण से शेष प्रभूततर अर्थपद भी इसी तरह ज्ञात हो जावें वह
बीजबुद्धिलघ्वि है । २२ जिसके प्रभाव से अनेकयोजनप्रमाण क्षेत्र
में रही हुई वस्तु को जलाने वाले तेज को निकाल ने की शक्ति उत्पन्न
हो जाती है इसका नाम तेजोलेह्यालघ्वि है, जो शमी-क्षमाशीलमुनि
निरन्तर चौविहार पष्ठ तप करता है, और पारणा के दिन सनख-
कुल्मापमुष्टि अर्थात्-सीझे हुए एक मुट्ठी भर उड़द खाकर उसी
समय एक चुल्लू भर पानी पीता है, और आतापना लेता है, इस प्रकार
उह महिने तक लगातार करता रहता है तो उसके तेजोलेह्यालघ्वि
उत्पन्न हो जाती है । २३ आहारक-शरीर के उत्पन्न होने की लघ्वि का
नाम आहारकलघ्वि है । आहारक शरीर स्फटिकमणि के जैसा उज्ज्वल
तथा एक हाथ का होता है । एक भव में इसकी प्राप्ति जीव को दो बार,
तथा संसार अवस्था में चार बार तक होती है, पश्चात् वह जीव मुक्ति

વ્યય, અને ધ્રોવ્ય યુક્ત સત્ છે ૩૫ એક પણ અર્થ પ્રધાનપદના અનુસરણથી
શેષ પ્રભુતતરઅર્થ પદ પણ તેવી રીતે જ્ઞાત થઈ જાય તે બીજબુદ્ધિ લઘ્વિ છે. (૨૨)
જેના પ્રભાવથી અનેક યોજન પ્રમાણક્ષેત્રમાં રહેલી વસ્તુઓને બાજુનાર તેજને
કાઢવાની શક્તિ ઉત્પન્ન થાય છે તેનું નામ તેજોલેહ્યાલઘ્વિ છે. જે શમી-ક્ષમાશીલ
મુનિ નિરંતર ચોવિહાર છઠ્ઠ તપ કરે છે અને પારણાના દિવસે ખાંડલા એક મુઠ્ઠીભર
અડદ ખાઈ ને એજ વખતે એક ચાપનું પાણી પીયે છે અને આતાપના લે છે આ
પ્રકાર લગાતાર છ મહિના મુખી કરતા રહે છે તો તેને તેજોલેહ્યાલઘ્વિ ઉત્પન્ન થાય
છે. (૨૩) આહારક શરીરના ઉત્પન્ન થવાની લઘ્વિનું નામ આહારકલઘ્વિ છે, આહાર-
ક શરીર સ્ફટિકમણીના જેવું ઉજ્જ્વળ અને એક હાથનું હોય છે. એક ભવમાં તેની
પ્રાપ્તિ જીવને બે વાર તથા સંસાર અવસ્થામાં ચાર વાર થાય છે. પછીથી એ

પ્રયાતિ । કથિચતુર્દશપૂર્વધારી ઋદ્ધિ પ્રાપ્ય, તીર્થંકરસમીપે પ્રેષણાર્થમાહારકશરીરં કરોતિ । તત્ર પ્રેષણં નિગોદાદિસંશયવિચ્છેદનાર્થં, સૂક્ષ્માર્થનિર્ણયાર્થમ્ ઋદ્ધિદર્શનાર્થં, પ્રાણિરક્ષણાર્થં, છદ્મસ્થોપગ્રહાર્થં ચ ભવતિ । ઉક્તચ્ચ—

પાણિદય-ઋદ્ધિદરિસણ, છુડમત્યોવગ્ગહ્ણહેડં વા ।

સુદુમત્ય સંસયચ્છે, -યત્થં ગમણં જિણસ્સંતે ॥ ૧ ॥

इदमत्र बोध्यम्—आहारकशरीरं यत्र स्थाने लब्धिधारी मुनिः प्रेषयति, तत्र भगवतोऽनुपस्थितौ तस्मादाहारकशरीरादूनहस्तं शरीरं निःसरति, तदेव भगवतः

को अवश्य प्राप्त कर लेता है । चतुर्दश पूर्व का पाठी कोई मुनि आहारक लब्धि को प्राप्त कर तीर्थंकर के समीप में भेजने के लिये आहारक शरीर की रचना करता है । निगोदादिसंबंधी संशय को दूर करने रूप सूक्ष्म अर्थ का निर्णय करने के लिये १ ऋद्धि के दर्शन करने के लिये २ प्राणियों की रक्षा करने के लिये ३ और छद्मस्थों का उपकार करने के लिये ४ इस शरीर का तीर्थंकर के पादमूल में गमन होता है । कहा भी है—

“पाणिदय-रिद्धिदंसण, -छुडमत्योवगग्हणहेडं वा ।

सुदुमत्थसंसयच्छेयत्थं गमणं जिणस्संते ॥ १ ॥”

छाया—प्राणिदया-ઋદ્ધિદર્શન-છદ્મસ્થોપગ્રહણહેતું વા ।

સૂક્ષ્માર્થસંશયચ્છેદાર્થં ગમનં જિનસ્યાન્તે ॥ ”

આહારક શરીર કો જિસ સ્થાન મેં લબ્ધિધારી મુનિ ભેજતા હૈ વહાં યદિ ભગવાન ન હોં તો ઉસ આહારક શરીર સે એક હાથ સે કુછ

છવ અવશ્ય મુકિત પ્રાપ્ત કરી દ્યે છે. ચોદપૂર્વનાં પાઠી કોઈ મુનિ આહારક લબ્ધિને પ્રાપ્ત કરી તીર્થંકરના સમીપમાં મોકલવા માટે આહારક શરીરની રચના કરે છે. નિગોદાદિ સંબંધિ સંશયને દૂર દૂર કરવા માટે, સૂક્ષ્મ અર્થનો નિબૂય કરવા માટે, ઋદ્ધિનાં દર્શન કરવા માટે, પ્રાણીઓની રક્ષા કરવા માટે, અને છદ્મસ્થોના ઉપકાર કરવા માટે આ શરીરનું તીર્થંકરના પાદમૂલમાં ગમન થાય છે. કહ્યું પણ છે.—

“પાણીદય-ઋદ્ધિદરિસણ, છુડમત્યોવગ્ગહ્ણહેડં વા ।

સુદુમત્ય-સંસયચ્છેયત્થં, ગમણં જિણસ્સંતે ॥ ”

છાયા—પ્રાણીદયા ઋદ્ધિદર્શન, -છદ્મસ્થોપગ્રહણહેતું વા ।

સૂક્ષ્માર્થસંશયચ્છેદાર્થં, ગમનં જિનસ્યાન્તે ॥

આહારક શરીરને જે સ્થાનમાં લબ્ધિધારી મુનિ મોકલે છે ત્યાં જ ભગવાન ન હોય તો તે આહારક શરીરથી એક હાથ આધુ (અંકહાથ) શરીર બીજું

સંનિધૌ ગત્વા સ્વકાર્યં સંપાદ્ય હસ્તપ્રમાણશરીરે પ્રવિશતિ । તત્ચાહારકશરીરં સ્વમૂલ-
 ભૂતે શરીરે પુનર્લીનં ભવતિ ॥૨૪॥ શીતલેદ્યાલઘ્વિઃ—પરમકારુણ્યવશાદનુગ્રાહ્યં
 પ્રતિ તેજોલેદ્યાપ્રશમનહેતુશીતલજોવિશેષવિમોચનસામર્થ્યમ્ ॥ ૨૫ ॥ વૈક્રિય-
 લઘ્વિઃ — વૈક્રિયશરીરકરણશક્તિઃ । સા ચાનેકવિધા-અણુત્વ-મહત્ત્વ-લઘુત્વ-
 ગુરુત્વ-પ્રાપ્તિ-પ્રાકામ્યે-શિત્ત્વ-વશિત્ત્વા-અપ્રતિઘાતિત્વા-અન્તર્ધાન-કામરૂપિત્વાદિ-
 ભેદાત્ ॥૨૬॥ અક્ષીણમહાનસીલઘ્વિઃ—મહાનસમ્-અન્નપાકસ્થાનં, તદાશ્રિત-
 સ્વાદન્નમપિ મહાનસમુચ્ચયતે, તત્ત્વં યત્પ્રભાવાત્ અક્ષીણં=સ્વલ્પમપ્યન્નં પાત્રે પતિતં
 પુરુષશતસહસ્રૈરપિ વૃષ્ટ્યા શુક્તં ન ક્ષીયતે, યાવત્ સ્વેનતદન્નં ન શુજ્યતે સા ॥૨૭॥

કમ શરીર ઓર નિકલતા હૈ, વહો ભગવાન કે પાસ જાકર અપને કાર્ય કો
 સંપાદિત કર પૂર્વ કે હસ્તપ્રમાણ શરીર મેં સમા જાતા હૈ, ઓર વહ પૂર્વ-
 હસ્ત પ્રમાણ શરીર ખી ફિર વહાં સે લૌટ કર અપને મૂલ શરીર મેં સમા-
 જાતા હૈ ૨૪ । પરમ કરુણા કે વશ સે દયા કરને યોગ્ય પ્રાણી કે પ્રતિ તેજો-
 લેદ્યા કે પ્રશમન કા હેતુ જો શીતલેદ્યાવિશેષ કો નિકાલને કી શક્તિ હૈ
 ઉસકા નામ શીતલેદ્યાલઘ્વિ હૈ ૨૫ । વૈક્રિયશરીર કો કરને કી
 શક્તિ કા નામ વૈક્રિયલઘ્વિ હૈ । યહ લઘ્વિ અણુત્વ, મહત્વ, લઘુત્વ,
 ગુરુત્વ, પ્રાપ્તિ, પ્રાકામ્ય, ઈશિત્વ, વશિત્વ, અપ્રતિઘાતિત્વ, અન્તર્ધાન,
 કામરૂપિત્વ આદિ કે ભેદ સે અનેક પ્રકાર કી હૈ ૨૬ । મહાનસ-શબ્દ
 કા અર્થ યદ્યપિ રસોઈઘર હૈ તો ખી તદાશ્રિત હોને સે અન્ન કો ખી
 મહાનસ કહ દિયા ગયા હૈ ઇસલિયે મહાનસ શબ્દ સે અન્ન સમજના

નીકળે છે તે ભગવાનની પાસે જઈને પોતાના કાર્યને સંપાદિત કરી પૂર્વના હસ્ત
 પ્રમાણ શરીરમાં સમાઈ જાય છે. અને તે પૂર્વહસ્ત પ્રમાણ શરીર પણ ત્યાંથી
 પાછું ફરી પોતાના મૂળ શરીરમાં સમાઈ જાય છે. (૨૪) પરમ કરુણાના વશથી દયા
 કરીને યોગ્ય પ્રાણી તરફ તેજોલેશ્યાના પ્રશમનનો હેતુ, જે શીત તેજ વિશેષને કાઢ-
 વાની શક્તિ છે તેનું નામ શીતલેશ્યાલઘ્વિ છે. (૨૫) વૈક્રિયશરીરને બનાવવાની
 શક્તિનું નામ વૈક્રિયલઘ્વિ છે. આ લઘ્વિ અણુત્વ, મહત્ત્વ, લઘુત્વ, ગુરુત્વ, પ્રાપ્તિ,
 પ્રાકામ્ય, ઇશિત્વ, વશિત્વ, અપ્રતિઘાતિત્વ, અન્તર્ધાન, કામરૂપિત્વ આદિના ભેદથી
 અનેક પ્રકારની છે. (૨૬) મહાનસ શબ્દનો અર્થ જે કે રસોઈ ઘર છે તે। પણ
 તદાશ્રિત હોવાથી અન્નને પણ મહાનસ કહેવાયેલ છે. માટે મહાનસ શબ્દથી અન્ન
 સમજવું જોઈએ. આથી આ અન્ન લોજન સામગ્રી જેના પ્રભાવથી અક્ષીણ-સ્વદય

પુલાકલલ્લિધિઃ—તપઃશ્રુતહેતુકા પ્રવચનલાઘવાદિપ્રયોજને જિનશાસનવિરોધિનઃ સવલવાહનસ્ય ચક્રવર્ત્યાદેરપિ પુલાકલલ્લિધિઃસારકરણે સમર્થા યા શક્તિઃ સા ॥૨૮॥

અથવા—ઇતિ=અને—કેશલુચ્ચનેન પંચમહાવ્રતાક્રીકારેણ, યાતનાસ્મકેનાન-શનાદિના તપસા, પૃથિવીકાયાદિસપ્તદશવિધસંયમેન મહાકષ્ટપ્રદદીક્ષાગ્રહણેન ઘેત્યર્થઃ, વચ્ચિતોઽસ્મિ=કામસુખાદપવર્જિતોઽસ્મીત્યર્થઃ । ઉક્તં ચ—

ચાહિયે અતઃ યહ અન્ન-ભોજનસામગ્રી જિસકે પ્રભાવ સે અક્ષીણ-સ્વલ્પ બી અન્ન પાત્ર મેં પહે તો બી ઉસસે હજારોં મનુષ્ય ખરપેટ આહાર ફરલે પીર બી લૂટે નહીં, જય તક કિ ઘહ સ્વયં આહાર ન ફરલે, એસી શક્તિ કા નામ અક્ષીણમહાનસ લલ્લિધિ હૈ ૨૭ । પ્રવચન કી લઘુતા કે સમય જિનશાસન કા વિરોધી સેના ઓર વાહનસહિત ચક્રવર્તી બી હોવે તો વહ બી જિસકે પ્રભાવ સે પુલાક (દાનારહિત ઘાસ કા પુલા) કી તરહ નિઃસાર કર દિયા જાતા હૈ એસી શક્તિ કા નામ પુલાકલલ્લિધિ હૈ, યહ લલ્લિધિ તપ એવં શ્રુત હેતુક હોતી હૈ ૨૮ ।

હસ પ્રકાર યે અઠાઈસ લલ્લિધિયાં જો વતલાઈ ગઈ હૈં હે, અથવા હનમેં સે કોઈ એક લલ્લિધિ બી મુક્તે પ્રાપ્ત નહીં હુઈ હૈ । હસી પ્રકાર કેશ હુંચન કરના પંચમહાવ્રતોં કા પાલન કરના, યતનાત્મક અનશનાદિક તપોં કા તપના, પૃથિવીકાયાદિકોં કી રક્ષા કરને રૂપ સત્સરહ ૧૭ પ્રકાર કે સંયમ કા પાલના, મહાકષ્ટપ્રદ દીક્ષા કા ગ્રહણ કરના, હન સચ વાતોં સે મેં ઠગા ગયા હું—અર્થાત્ સાંસારિક વિલાસતા સે મુક્ત

પણ અન્ન પાત્રમાં પડે તો પણ તેનાથી હબારે મનુષ્ય પેટભરીને આહાર કરી લે છતાં પણ ખૂટે નહીં જ્યાં સુધી તે પોતે આહાર ન કરી લે. આવી શક્તિનું નામ અક્ષીણમહાનસલલ્લિધિ છે. (૨૭) પ્રવચનની લઘુતાના સમયે જીન શાસનના વિરોધી સેના અને વાહન સહિત કોઈ ચક્રવર્તિ હોય તો તે પણ જેના પ્રભાવથી પુલાકની માફક નિઃસાર કરી દેવામાં આવે છે. એવી શક્તિનું નામ પુલાકશક્તિ છે. આ લલ્લિધિ તપ અને શ્રુત હેતુક હોય છે. (૨૮)

આ પ્રકારે જો અઠ્યાવીસ લલ્લિધિઓ જે બતાવવામાં આવી છે તે અથવા આમાંથી એક લલ્લિધિ પણ મને પ્રાપ્ત થયેલ નથી. આ રીતે કેશનો લેખ કરવો ખાંચ મહાનતોનું પાલન કરવું, યતનાત્મક અનશનાદિક તપોને તપવા, પૃથ્વી-કાયાદિકોની રક્ષા કરવારૂપ સત્તર પ્રકારના સંયમનું પાલન, મહાકષ્ટપ્રદ દીક્ષાને મહણ કરવી, આ સઘળી વાતોથી હું ક્યાંયો છું—અર્થાત્ સાંસાર વાસતાથી

“તપાંસિ યાતનાશ્ચિત્રાઃ સંયમો ભોગવચ્ચના” ઇત્યાદિ। ઇતિ=એતદ્, મિશ્રુઃ, ન ચિન્તયેત્=ન વિચારયેત્। અસ્ય ચિન્તનસ્ય સંયમઘાતકત્વેન તુચ્છત્વાત્।

તથાહિ-યદુચ્યતે-જન્માન્તરં નાસ્તિ, શરીરસ્ય ભૂતસમુદાયાત્મકત્વાત્ ભૂતધર્મ-સ્વાષ્ટૈતન્યરૂપસ્યાત્મનઃ શરીરેણ સદૈવ નાશાત્, ઇતિ, તદસત્-ન વયં શરીરસ્ય જન્માન્તરાણ્નુગામિત્વમગ્રીકુર્મઃ, કિંત્વાત્મન એવ, સ ચાત્મા નાસ્તિ ભૂતધર્મઃ, તથાહિ-

મોઢ કર જો મેં હન કષ્ટપ્રદ નિઃસાર કાર્યોં કી આરાધના મેં લગ ગયા હું વહ સવ વ્યર્થ હૈ। કહાં ખી હૈ-

તપાંસિ યાતનાશ્ચિત્રાઃ, સંયમો ભોગવચ્ચના” ઇત્યાદિ।

અર્થાત્-તપ એક વિચિત્ર પ્રકાર કા કષ્ટ હૈ, સંયમ જો હૈ વહ ભોગોં સે ઠગાના હૈ।

ભૂતવાદી યનકર મિશ્રુ કો હસ પ્રકાર કા વિચાર નહીં કરનાં ચાહિયે। ક્યોં કિ હસ પ્રકાર કી વિચારધારા સર્વથા તુચ્છ થતલાઈ ગઈ હૈ। હસીકા વિચાર અવ યહાં સે કિયા જાતા હૈ।

જો ભૂતવાદી યહ કહતા હૈ કિ “જન્માન્તર નહીં હૈ ક્યોં કિ યહ શરીર ભૂતોં કા સમુદાયસ્વરૂપ હૈ ઓર ચૈતન્યરૂપ આત્મા ખી ભૂત કા ધર્મ હૈ। ઉસકા વિનાશ ખી શરીર કે વિનાશ કે સાથ હી હો જાતા હૈ।” સો હસકા હસ પ્રકાર કા કહના ઠીક નહીં હૈ। ક્યોં કિ હમ લોગ અર્થાત્ જૈન-શરીર કો પરલોક મેં જાનેવાલા નહીં માનતે હૈં, હમ તો પરલોક મેં જાનેવાલી એક આત્મા કો હી માનતે હૈં। વહ આત્મા ભૂતોં કા ધર્મ નહીં હૈ। જવ મિશ્ર ૨ અવસ્થા મેં ભૂતોં સે

મોહુ મરડીને હું આ કષ્ટપ્રદ નિઃસાર કાર્યોંની આરાધનામાં લાગી ગયો છું તે સઘળું વ્યર્થ છે. કહ્યું છે—

“તપાંસિ યાતનાશ્ચિત્રાઃ સંયમો ભોગવચ્ચના” ઇત્યાદિ.

અર્થાત્ તપ એક વિશિષ્ટ પ્રકારનું કષ્ટ છે સંયમ જે છે તે ભોગોને ઠગનાર છે. ભૌતિકવાદી બની બિશ્રુએ આ પ્રકારનો વિચાર નહીં કરવો જોઈએ. કેમકે, આ પ્રકારની વિચારધારા સર્વથા તુચ્છ બતાવવામાં આવી છે તેનો વિચાર હવે અહીં કહેવામાં આવે છે.

પહેલાં જે ભૌતિકવાદીએ એવું કહ્યું છે કે, “જન્માન્તર નથી કેમકે આ શરીર ભૂતોના સમુદાય સ્વરૂપ છે અને ચૈતન્યરૂપ આત્મા પણ ભૂતોનો ધર્મ છે. તેનો વિનાશ પણ શરીરના વિનાશની સાથે થાય છે.” તેવું તેવા પ્રકારનું કહેવું ઠીક નથી. કેમકે, અમે લોક અર્થાત્ જૈનશરીરને પરલોકમાં જવા વાળું માનતા નથી. અમે તો એક આત્મા ભૂતોનો ધર્મ નથી. જ્યારે જુદી જુદી

પુલાકલઘ્નિઃ—તપઃશ્રુતહેતુકા પ્રવચનલાઘવાદિપ્રયોજને જિનશાસનવિરોધિનઃ સવલવાહનસ્ય ચક્રવર્ત્યાદેરપિ પુલાકનનિઃસારકરણે સમર્થા યા શક્તિઃ સા ॥૨૮॥

અથવા—ઇતિ=અનેન-કેશલુચ્ચનેન પન્નમહાવ્રતાઢીકારેણ, યાતનાસ્મકેનાન-શનાદિના તપસા, પૃથિવીકાયાદિસપ્તદશવિધસંયમેન મહાકષ્ટપદ્દીક્ષાગ્રહણેન ચેત્યર્થઃ, યન્નિતોઽસ્મિ=કામમુલાદપવર્જિતોઽસ્મીત્યર્થઃ । ઉક્તં ચ—

ચાહિયે અતઃ યહ અન્ન-ભોજનસામગ્રી જિસકે પ્રભાવ સે અક્ષીળ-સ્વલ્પ ભી અન્ન પાત્ર મેં પહે તો ભી ઉસસે હજારોં મનુષ્ય ખરપેટ-આહાર કરલે પીર ભી ખૂટે નહીં, જય તક કિ વહ સ્વયં આહાર ન કરલે, એસી શક્તિ કા નામ અક્ષીળમહાનસ લઘ્નિ હૈ ૨૭ । પ્રવચન કી લઘુતા કે સમય જિનશાસન કા વિરોધી સેના ઓર વાહનસહિત ચક્રવર્તી ભી હોવે તો વહ ભી જિસકે પ્રભાવ સે પુલાક (દાનારહિત ઘાસ કા પુલા) કી તરહ નિઃસાર કર દિયા જાતા હૈ એસી શક્તિ કા નામ પુલાકલઘ્નિ હૈ, યહ લઘ્નિ તપ એવં શ્રુત હેતુક હોતી હૈ ૨૮ ।

ઇસ પ્રકાર યે અઠાઈસ લઘ્નિયાં જો ચતલાઈ ગઈ હૈં બે, અથવા ઇનમેં સે કોઈ એક લઘ્નિ ભી મુક્તે પ્રાપ્ત નહીં હુઈ હૈં । ઇસી પ્રકાર કેશ લુંચન કરના પંચમહાવ્રતોં કા પાલન કરના, યતનાત્મક અનશનાદિક તપોં કા તપના, પૃથિવીકાયાદિકોં કી રક્ષા કરને રૂપ સત્તરહ ૧૭ પ્રકાર કે સંયમ કા પાલના, મહાકષ્ટપદ્દીક્ષા કા ગ્રહણ કરના, ઇન સઘ વાતોં સે મેં ઠગા ગયા હૂં—અર્થાત્ સાંસારિક વિલાસતા સે મુક્ત

પણુ અન્ન પાત્રમાં પહે તો પણ તેનાથી હજારો મનુષ્ય પેટભરીને આહાર કરી બે છતાં પણ ખૂટે નહીં જ્યાં સુધી તે પોતે આહાર ન કરી લે. આવી શક્તિનું નામ અક્ષીણમહાનસલઘ્નિ છે. (૨૭) પ્રવચનની લઘુતાના સમયે જીન શાસનના વિરોધી સેના અને વાહન સહિત કોઈ ચક્રવર્તિ હોય તો તે પણ જેના પ્રભાવથી પુલાકની માફક નિઃસાર કરી દેવામાં આવે છે. એવી શક્તિનું નામ પુલાકશક્તિ છે. આ લઘ્નિ તપ અને શ્રુત હેતુક હોય છે. (૨૮)

આ પ્રકારે એ અઠ્યાવીસ લઘ્નિઓ જે બતાવવામાં આવી છે તે અથવા આમાંથી એક લઘ્નિ પણ મને પ્રાપ્ત થયેલ નથી. આ રીતે કેશનો લેખ કરવો ખાંચ મહાવ્રતોનું પાલન કરવું, યતનાત્મક અનશનાદિક તપોને તપવા, પૃથ્વી-કાયાદિકોની રક્ષા કરવારૂપ સત્તર પ્રકારના સંયમનું પાલન, મહાકષ્ટપદ્દીક્ષાને મહણ કરવી, આ સઘળી વાતોથી હું ક્યાયો છું. અર્થાત્ સંસાર ।સતાથી

વાયુવિશેષોડનનાં તતોડપત્તિત્વમ્ન્યતે, તર્હિ જીવ એવ નામાન્તરેણ સ્વીકૃતો
ભવતિ, અસ્તુ યત્ કિંચિદેતત્, કથમપિ ભૂતસમુદાયમાત્રેણ ન ચૈતન્યાવિર્ભાવ ઇતિ
સિદ્ધમ્, પૃથિવ્યાદિપુ એકત્ર વ્યવસ્થાપિતેષ્વપિ ચૈતન્યાનુપલબ્ધેઃ । અથ કાયાકાર-
પરિણતૌ સત્યાં તદભિવ્યક્તિરિષ્યતે, તદપિ ન, યતો લેપ્યમયપુત્તલિકાયાં
સમસ્તભૂતસદ્ભાવેડપિ જડત્વમેવોલભ્યતે, તદેવમન્વયવ્યતિરેકાભ્યામાલોચ્યમાનો

ઉસકા સડના હો નહીં સકતા હૈં । યદિ હસ પર ઘોં કહા જાય
કિ “ સૂક્ષ્મ વાયુ તથા અગ્નિ વહાં સે અપગત હો જુકો હૈ અતઃ શરીર
મેં મરણ કા વ્યવહાર હો જાયગા ” સો એસા કહના આત્મા કે હી
સદ્ભાવ કા હ્યાપક માના જાતા હૈ । તુમ જિસે સૂક્ષ્મ વાયુ યા અગ્નિ
કહતે હો હમ ઉસે આત્મા કહતે હૈં । ભૂતસમુદાય સે ચૈતન્ય કા
આવિર્ભાવ હસલિયે ભી સિદ્ધ નહીં હોતા હૈ કિ એક હી જગહ હન
ચારોં કો સ્થાપિત કરને પર ભી ઉનસે ચૈતન્ય કી ઉપલબ્ધિ નહીં હોતી
હૈ । યદિ ભૂતવાદી હસ પર યોં કહે કિ “ જય યે ભૂત કાયાકાર
પરિણત હોતે હૈં તવ હી જાકર હન સે ચૈતન્ય કી અભિવ્યક્તિ હોતી
હૈ ” સો એસા કહના ભી હસ લિયે ઉચિત નહીં હૈ કિ લેપ્યમયપુત્તલિકા
મેં સમસ્તભૂતોં કા સદ્ભાવ હોને પર ભી વહાં ચૈતન્ય કી ઉપલબ્ધિ
નહીં હોતી હૈ, કિન્તુ જડતા હી ઉપલબ્ધ હોતી હૈ । કાર્યકારણભાવ
અન્વયવ્યતિરેક કે સદ્ભાવ મેં હી બનતા હૈ । હસ પ્રકાર યહાં ભૂત ઓર
ચૈતન્ય કા અન્વયવ્યતિરેક ઘટિત નહીં હોતા હૈ, -અતઃ ભૂતોં કા કાર્ય

ત્યાંથી અપગત થઈ ગયેલ છે, આથી શરીરમાં મરણનો વહેવાર થવાનો છે”
તો એવું કહેવું તે આત્માના સદ્ભાવનો યથાપક મનાય છે. તમે સૂક્ષ્મ વાયુ
અગરતો અગ્નિ કહો છો અને તેને આત્મા કહીએ છીએ. ભૂત સમુદાયથી
ચૈતન્યનો આવિર્ભાવ એ માટે પણ સિદ્ધ નથી થતો કે, એકજ જગ્યાએ તે
આરેને લેળા કરવા છતાં પણ તેમાં ચૈતન્યની ઉપલબ્ધિ થતી નથી. જો કદાચ
ભૂતવાદી આ ઉપર એવું કહે કે, “ જ્યારે એ ભૂતકાયઆકાર પરિણત હોય છે
ત્યારે જ જઈ ને તેનાથી ચૈતન્યની અભિવ્યક્તિ થાય છે. ” તો એવું કહેવું
પણ એ માટે ઠીક નથી કે, લેપ્યમય પુતલીકામાં સમસ્ત ભૂતોનો સદ્ભાવ
હોવા છતાં પણ ત્યાં ચૈતન્યની ઉપલબ્ધિ થતી નથી પરંતુ જડતાજ ઉપલબ્ધ
થાય છે. કાર્યકારણભાવ અન્વય વ્યતિરેકના સદ્ભાવમાં જ બને છે. આ પ્રકાર
અહિં ભૂત અને ચૈતન્યનો અન્વય વ્યતિરેક ઘટિત થતો નથી માટે ભૂતોનું
કાર્ય ચૈતન્ય છે તે કોઈ પ્રકારે સિદ્ધ થતું નથી. આ માટે આ ચૈતન્ય શુભ

एकैकस्य पृथिव्यादेः पृथक्त्वे चैतन्योत्पत्तिर्न भवति चेत् तर्हि पृथिव्यादिसमुदाया-
दपि चैतन्यं न भवितुमर्हति । यथैकस्मात् सिरुताकणात् तैलं नोत्पद्यते, तेन सिकता-
समुदायादपि न भवति तैलोत्पत्तिः किंच-चैतन्यस्य भूतधर्मत्वस्वीकारे मरणाभावः
स्यात्, मृतकायेऽपि पृथिव्यादिभूतानां सद्भावात्, न च मृतकाये वायोस्तेजसो
वा अभावान्मरणसद्भावः इति वाच्यम्, यतः मृतकाये शोफोपलब्धेर्न वायोरभावः ।
पक्तिस्वभावस्य च कोथस्य (शटनस्य) दर्शनाग्नेरभाव इति । अथ मूर्खः कश्चिद्

चैतन्य की उत्पत्ति नहीं होनी है तो उनके समुदाय में चैतन्य की
उत्पत्ति कैसे हो सकती है, जैसे एक सिकता (रेती) के कण से जब
तैल नहीं निकलता है तो समुदाय से तैल निकल सकेगा यह बात
कौन बुद्धिमान मान्य कर सकता है । दूसरी बात यह भी है कि जब
चैतन्य को भूतों का धर्म माना जायगा तो मरण का अभाव प्रसक्त
होता है, क्योंकि मृतकाय में भी पृथिवी आदि भूतों का सद्भाव
तो रहता ही है । यदि मृत शरीर में मरणसद्भाव ख्यापित करने के
लिये यह कहा जाय कि “वहां पर वायु एवं तेज का अभाव है
इसलिये इन दो तत्त्वों का अभाव होने से वहां भी मरण का सद्भाव
अंगीकार किया जाता है” सो ऐसा कहना इसलिये उचित नहीं है
कि मृतकाय में भी शोफ (सूजन) की उपलब्धि होने से वायु का वहां
असद्भाव नहीं माना जा सकता है । अग्नितत्त्व का भी वहां इसी
तरह अभाव नहीं माना जा सकता है, क्योंकि इसके अभाव में

અવસ્થામાં ભૂતોથી ચૈતન્યની ઉત્પત્તિ નથી થતી તો તેનાં સમુદાયમાં ચૈતન્યની
ઉત્પત્તિ કેવી રીતે થઈ શકે ? જેમ રેતીના એક કણમાંથી તેલ નીકળી શકતું
નથી તો રેતીના ઢગલામાંથી તેલ નીકળી શકે તેવું કોણ કહી શકે ? બીજી
વાત એ પણ છે કે, જો ચૈતન્યને ભૂતોનો ધર્મ માનવામાં આવે તો મરણનો
અભાવ પ્રસક્ત થાય છે. કેમકે, મૃતકાયમાં પણ પૃથ્વી આદિ ભૂતોનો સદ્ભાવ
તો રહેલો જ છે. જો મરણ શરીરમાં મરણ સદ્ભાવ ખ્યાપિત કરવા માટે એમ
કહેવામાં આવે કે, “ત્યાં વાયુ અને તેજનો અભાવ છે માટે આ બંને તત્વોનો
અભાવ હોવાથી ત્યાં પણ મરણનો સદ્ભાવ અંગિકાર કરવામાં આવે છે.” તો એમ
કહેવું એ માટે ઉચિત નથી કે, મૃતકાયમાં પણ સૂજનની ઉપલબ્ધિ હોવાથી
વાયુનો ત્યાં અસદ્ભાવ માની શકાતો નથી. અગ્નિતત્વનો પણ ત્યાં તેવી રીતે
અભાવ નથી માનવામાં આવતો કેમકે, તેના અભાવમાં એવું સડવું બનતું
નથી, જો ફદાચ એ ઉપર એમ કહેવામાં આવે કે, “સૂક્ષ્મ વાયુ તથા અગ્નિ

વાયુવિશેષોઽન્નાર્તા તતોઽપ્ય ત્વમિત્યમન્યતે, તર્હિ જીવ એવ નામાન્તરેણ સ્વીકૃતો
ભવતિ, અસ્તુ યત્ કિંચિદેતત્, કથમપિ ભૂતસમુદાયમાત્રેણ ન ચૈતન્યાવિર્ભાવ ઇતિ
સિદ્ધમ્, પૃથિવ્યાદિષુ એકત્ર વ્યવસ્થાપિતેષ્વપિ ચૈતન્યાનુપલબ્ધેઃ । અથ કાયાકાર-
પરિણતૌ સત્યાં તદભિવ્યક્તિરિષ્યતે, તદપિ ન, યતો લેપ્યમયપુત્તલિકાયાં
સમસ્તભૂતસન્નાવેઽપિ જડત્વમેવોલભ્યતે, તદેવમન્યવ્યવ્યતિરેકાભ્યામાલોચ્યમાનો

ઉસકા સડના હો નહીં સકતા હૈં । યદિ હસ પર યૌ કહા જાય
કિ “ સૂક્ષ્મ વાયુ તથા અગ્નિ વહાં સે અપગત હો ચુકી હૈ અતઃ શરીર
મેં મરણ કા વ્યવહાર હો જાયગા ” સો એસા કહના આત્મા કે હી
સદ્ભાવ કા હ્યાપક માના જાતા હૈ । તુમ જિસે સૂક્ષ્મ વાયુ યા અગ્નિ
કહતે હો હમ ઉસે આત્મા કહતે હૈં । ભૂતસમુદાય સે ચૈતન્ય કા
આવિર્ભાવ હસલિયે ભી સિદ્ધ નહીં હોતા હૈ કિ એક હી જગહ હન
ચારૌ કો સ્થાપિત કરને પર ભી ઉનસે ચૈતન્ય કી ઉપલબ્ધિ નહીં હોતી
હૈ । યદિ ભૂતવાદી હસ પર યૌ કહે કિ “ જય યે ભૂત કાયાકાર
પરિણત હોતે હૈં તય હી જાકર હન સે ચૈતન્ય કી અભિવ્યક્તિ હોતી
હૈ ” સો એસા કહના ભી હસ લિયે ઉચિત નહીં હૈ કિ લેપ્યમયપુત્તલિકા
મેં સમસ્તભૂતૌ કા સદ્ભાવ હોને પર ભી વહાં ચૈતન્ય કી ઉપલબ્ધિ
નહીં હોતી હૈ, કિન્તુ જડતા હી ઉપલબ્ધ હોતી હૈ । કાર્યકારણભાવ
અન્વયવ્યવ્યતિરેક કે સદ્ભાવ મેં હી વનતા હૈ । હસ પ્રકાર યહાં ભૂત ઔર
ચૈતન્ય કા અન્વયવ્યવ્યતિરેક ઘટિત નહીં હોતા હૈ, -અતઃ ભૂતૌ કા કાર્ય

ત્યાંથી અપગત થઈ ગયેલ છે, આથી શરીરમાં મરણનો વહેવાર થવાનો છે”
તો એવું કહેવું તે આત્માના સદ્ભાવનો ખ્યાપક મનાય છે. તમે સૂક્ષ્મ વાયુ
અગરતો અગ્નિ કહો છો અમે તેને આત્મા કહીએ છીએ ભૂત સમુદાયથી
ચૈતન્યનો આવિર્ભાવ એ માટે પણ સિદ્ધ નથી થતો કે, એકજ જગ્યાએ તે
ચારેને ભેળા કરવા છતાં પણ તેમાં ચૈતન્યની ઉપલબ્ધિ થતી નથી. જો કદાચ
ભૂતવાદી આ ઉપર એવું કહે કે, “ જ્યારે એ ભૂતકાયઆકાર પરિણત હોય છે
ત્યારે જ જઈને તેનાથી ચૈતન્યની અભિવ્યક્તિ થાય છે. ” તો એવું કહેવું
પણ એ માટે ઠીક નથી કે, લેપ્યમય પુતલીકામાં સમસ્ત ભૂતોનો સદ્ભાવ
હોવા છતાં પણ ત્યાં ચૈતન્યની ઉપલબ્ધિ થતી નથી પરંતુ જડતાજ ઉપલબ્ધ
થાય છે. કાર્યકારણ ભાવ અન્વય વ્યવ્યતિરેકના સદ્ભાવમાં જ બને છે. આ પ્રકાર
અહિં ભૂત અને ચૈતન્યનો અન્વય વ્યવ્યતિરેક ઘટિત થતો નથી માટે ભૂતોનું
કાર્ય ચૈતન્ય છે તે કોઈ પ્રકારે સિદ્ધ થતું નથી. આ માટે આ ચૈતન્ય ગુણ

નાયં ચૈતન્યાख्यो गुणो भूतानां भवितुमर्हति । तस्मात् पारिशेष्याच्चेतन्यमात्मनो धर्म इति सिद्धान्तोऽनुसरणीयः ।

यदप्युक्तम्—आत्मनः प्रत्यक्षतोऽनुपलभ्यमानत्वादिति तदप्यसदेव, सर्वेषां स्वात्मा स्वप्रत्यक्ष एव, ज्ञानादीनामात्मगुणानां प्रत्यक्षानुभवात् घटमहं जानामीत्याद्यनुभवस्य सर्वसिद्धत्वात् । यथा घटादीनां रूपादयः प्रत्यक्षतयोपलभ्यन्ते, तथाऽऽत्मनोऽपि ज्ञानसुखादयो गुणाः कस्य न सन्ति प्रत्यक्षानुभवगोचराः, किंतु सर्वेषामाबालवृद्धानां प्रत्यक्षानुभवगोचराः सन्त्येव । उक्तं च—‘आत्मप्रत्यक्ष आत्माऽयम्’ इत्यादि ।

चैतन्य है यह किसी प्रकार सिद्ध नहीं होता है इसलिये यह चैतन्यगुण पारिशेष्यात् (अनुमानविशेष से) आत्मा का ही एक धर्म है, इसी से आत्माका सद्भाव ख्यापित होता है यह सिद्धान्त अनुसरणीय है ।

तथा और भी जो ऐसा कहा है कि “आत्मा की प्रत्यक्ष से अनुपलब्धि होने की वजह से सत्ता ज्ञात नहीं होती है” सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि प्रत्येक संसार की जीवों को अपनी २ आत्मा का स्वानुभव से प्रत्यक्ष होता है, कारण कि उसके ज्ञानादिक गुणों का प्रत्यक्ष अनुभव होता रहता है । “मैं घट को जानता हूँ” यह अनुभव तो सब को ही होता है । जिस प्रकार घटादिकों के रूपादिक गुण प्रत्यक्ष से उपलब्ध हैं उसी प्रकार आत्मा के भी ज्ञानादिक गुण समस्त जीवों को प्रत्यक्ष से अनुभवित हो रहे हैं । ऐसा कोई भी जीव नहीं है चाहे वह बालक हो चाहे वृद्ध कि जिसे इन का प्रत्यक्ष से अनुभव न होता हो । कहा भी है—“आत्मप्रत्यक्ष आत्माऽयम्” इत्यादि ।

अनुमान विशेषથી આત્માનો જ એક ધર્મ છે. આથી જ આત્માનો સદ્ભાવ સ્થાપિત થાય છે. આ સિદ્ધાંત અનુસરણીય છે.

તેમ વધુમાં એમ પણ કહ્યું છે કે, “આત્માની પ્રત્યક્ષથી અનુપલબ્ધિ હોવાના કારણે સત્તા જ્ઞાત થતી નથી.” તેવું કહેવું પણ ઠીક નથી. કેમકે, પ્રત્યેક સંસારી જીવોને પોત પોતાના આત્માના સ્વાનુભવથી પ્રત્યક્ષ થાય છે. કારણ કે, તેને જ્ઞાનાદિક ગુણોના પ્રત્યક્ષ અનુભવ થતો રહે છે.” હું ઘટને જાણું છું” આ અનુભવ તો દરેકને થાય છે. જેવી રીતે ઘટાદિકના તથા રૂપાદિકના ગુણ પ્રત્યક્ષથી ઉપલબ્ધ છે જેવી રીતે આત્માને પણ જ્ઞાનાદિક ગુણ સમસ્ત જીવોને પ્રત્યક્ષથી અનુભવિત થઈ રહે છે. એવો કોઈ પણ જીવ નથી, લોકે તે બાળક અથવા વૃદ્ધ હોય કે જેને તેના પ્રત્યક્ષથી અનુભવ ન થતો હોય. કહ્યું છે કે—“આત્મ-પ્રત્યક્ષ આત્માઽયમ્” ઇત્યાદિ. આ આની ઉપર એમ કહેવામાં આવે કે,

નન્નુ ન ચં દૃષ્ટિગોચરો ભવતીત્યતો નાસ્તીત્યુચ્યતે ? નાયમપ્યેકાન્તઃ, ઉક્તં હિ—

“ન ચ નાસ્તીહ તત્ સર્વં, ચક્ષુષા યન્ન ગૃહ્યતે ।” અન્યથા ચૈતન્યમપિન દૃષ્ટિ-
ગોચરીભવંતીતિ ભૂતધર્મત્વેન, તદપ્યસત્ સ્યાત્ । અથ યદિ તત્ સ્વસંવિદિતમ્, અતઃ
સદિત્યુચ્યતે, તર્હિ અયમાત્માઽપિ સ્વસંવિદિત એવ ભવતીતિ વિધમાનો ભવતુ । યતઃ—

અસ્ત્યેવ ચાત્મા પ્રત્યક્ષો, જીવો હ્યાત્માનમાત્મના ।

અહમસ્મીતિ સંવેત્તિ, રૂપાદીનિ યથેન્દ્રિયૈઃ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥

યદિ હસ પર યોં કહા જાય કિ—“યહ આત્મા દૃષ્ટિગોચર નહીં
હોતા હૈં હસ લિયે યહ નહીં હૈં” સો યહ કથન એકાન્તતઃ સત્ય નહીં
માના જાં સકતા । “ન ચ નાસ્તીહ તત્સર્વં, ચક્ષુષા યન્ન ગૃહ્યતે”
જો ચક્ષુ સે ગૃહીત નહીં હોતા હૈં વહ નહીં હૈં, એસા મત કહો, અર્થાત્
જો વસ્તુ ચક્ષુ સે નહીં દિખાઈ દે વહ ભી હૈં એસા કહો । નહીં તો તુમ્હારે
મતસે ચૈતન્ય ભી દૃષ્ટિગોચર નહીં હોતા હૈં અતઃ વહ ભૂત કા ધર્મ હૈં
યહ યાત અસત્ માનની પડેગી । હસ પર યદિ યહ કહા જાય કિ “વહ તો
સ્વસંવેદન પ્રત્યક્ષ કા વિષય હૈં અતઃ ઉસે સર્ માન લિયા જાવેગા” તો
આત્મા ભી સ્વસંવેદિત હૈં હસ લિયે હસે ભી સર્ માનના ચાહિયે ।

યતઃ—“અસ્ત્યેવ ચાત્મા પ્રત્યક્ષો, જીવો હ્યાત્માનમાત્મના ।

અહમસ્મીનિ સંવેત્તિ, રૂપાદીનિ યથેન્દ્રિયૈઃ ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્ અત્મા પ્રત્યક્ષ સે હૈં કયોં કિ જીવ હી આત્મા સે આત્મા કો
“મૈંહ્” હસ પ્રકાર સંવેદન (અનુભવ) કરતા હૈં, જૈસે ઇન્દ્રિયોં સે રૂપાદિકકા

“આત્મા દૃષ્ટિગોચર થતો નથી માટે આ નથી” તો આ કહેવું એકાન્તતઃ
સત્ય માનવામાં આવતું નથી. “ન ચ નાસ્તીહ તત્સર્વં ચક્ષુષા યન્ન ગૃહ્યતે” જે
ચક્ષુથી ગૃહીત થતું નથી, તે નથી. એવું ન કહેા. અર્થાત્ જે વસ્તુ ચક્ષુથી
ન દેખાય તે પણ છે એમ કહેા નહીં તો તમારા મતથી ચૈતન્ય પણ દૃષ્ટિગોચર
થતું નથી. માટે તે ભૂતનો ધર્મ છે એ વાત અસત્ય માનવી પડશે. આ ઉપર
જે કદાચ એમ કહેવામાં આવે કે, “તે તો સ્વસંવેદન પ્રત્યક્ષનો વિષય છે
આથી એને સાચું માની લેવામાં આવે” તો આત્મા પણ સ્વસંવેદિત છે આ
માટે તેને પણ સત્ માનવો ભેઈ એ. કહું પણ છે—

“અસ્ત્યેવ ચાત્મા પ્રત્યક્ષો, જીવો હ્યાત્માનમાત્મના ।

અહમસ્મીતિ સંવેત્તિ, રૂપાદીનિ યથેન્દ્રિયૈઃ ॥ ૧ ॥ ”

અર્થાત્—આત્મા પ્રત્યક્ષથી છે. કેમકે, જીવજ આત્માથી આત્માને “હું છું” આ
પ્રકારનો સંવેદન (અનુભવ) કરે છે. જેમ ઇન્દ્રિયોથી રૂપ આદિનું સંવેદન થાય છે.

અલમધિકેન, યથા ચૈતન્યમસ્તીતિ મન્યતે, તથા ઽઽત્માઽસ્તીત્યપિ મન્તવ્યઃ ।
તથા ચોક્તમ્—

જ્ઞાનં સ્વસ્થં પરસ્થં વા યથા જ્ઞાનેન ગૃહ્યતે ।

જ્ઞાતા સ્વસ્થઃ પરસ્થો વા, તથા જ્ઞાનેન ગૃહ્યતામ્ ॥ ૧ ॥

અથાઽઽત્મસત્ત્વે તદભાવે સર્વસમ્બન્ધ્યનુપલમ્ભસ્ય હેતુત્વં ન સમ્મથતીત્યુચ્યતે,
યતોઽયમપ્યસિદ્ધો હેતુઃ, અહમસ્મીત્યનુભવસ્ય સદ્ભાવાત્, સર્વેભ્યાં પ્રાણિનાં હિ સ્વસ્ય
સ્વસ્યાત્મનં ઉપલમ્ભઃ પ્રતિપેદ્યમશક્યઃ, કેવલિનાં ચ સર્વાત્મનામુપલંભઃ પ્રતિપેદ્યપ્રશક્યઃ ।

સંવેદન હોતા હૈ । જિસ પ્રકાર ઉક્ત કથન સે ચૈતન્ય કા સદ્ભાવ માના
જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર આત્માકા ભી સદ્ભાવ માનના ચાહિયે । કહા ભી હૈ—

“ જ્ઞાનં સ્વસ્થં પરસ્થં વા, યથા જ્ઞાનેન ગૃહ્યતે ।

જ્ઞાતા સ્વસ્થો પરસ્થો વા, તથા જ્ઞાનેન ગૃહ્યતામ્ ” ॥ ૧ ॥

જિસ પ્રકાર અપને મેં રહા હુઆ જ્ઞાન, તથા દૂસરે મેં રહા હુઆ જ્ઞાન,
જ્ઞાન સે જાના જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર અપને ઓર દૂસરે મેં રહે હુઅ જ્ઞાતા
(આત્મા) કો ભી જ્ઞાન સે ગ્રહણ કર લેના ચાહિયે ॥ ૧ ॥

આત્મા કે અભાવ મેં જો અનુપલમ્ભરૂપ હેતુ દિયા ગયા હૈ । સો
આત્મા કા અનુપલંભ સવ કો હોતા હૈ, યદિ એસા કહા જાય તો યહ હેતુ
અસિદ્ધ હો જાતા હૈ, કયોં કિ સવ કો આત્મા કા અનુપલમ્ભ હૈ એક
તો યહ વાત ઇન્દ્રિયજન્ય પ્રત્યક્ષ સે જાન નહીં સકતે દૂસરે પ્રત્યેક પ્રાણી
કો “ અહમસ્મિ ” ઇત્યાકારક સ્વસંવેદનરૂપ પ્રત્યક્ષ સે ઉસ કી ઉપલબ્ધિ

જે રીતે આ કથનથી ચૈતન્યનો સદ્ભાવ માની લેવામાં આવે એજ રીતે
આત્માનો પણ સદ્ભાવ માનવો જોઈએ. કહ્યું પણ છે—

“ જ્ઞાનં સ્વસ્થં પરસ્થં વા, યથાજ્ઞાનેન ગૃહ્યતે ।

જ્ઞાતા સ્વસ્થો પરસ્થો વા, તથા જ્ઞાનેન ગૃહ્યતામ્ ॥ ૧ ॥ ”

જે રીતે પોતાનામાં રહેલું જ્ઞાન તથા બીજામાં રહેલું જ્ઞાન જ્ઞાનથી જાણી
શકાય છે એવી રીતે પોતામાં અને બીજામાં રહેલા આત્માને પણ જ્ઞાનથી
સમજી લેવો જોઈએ.

આત્માના અભાવમાં જે અનુપલમ્ભરૂપ હેતુ આપેલ છે તે આત્માનો
અનુપલંભ હરેકને થાય છે. તેલું જો કહેવામાં આવે તો આ હેતુ અસિદ્ધ બની
જાય છે કેમકે, સઘળાને આત્માનું અનુપલંભ છે. એક તો આ વાત ઇન્દ્રિય-
જન્ય પ્રત્યક્ષથી જાણી નથી શકાતાં બીજા પ્રત્યેક પ્રાણીને “ અહમસ્મિ ” ઇત્યાદિ

યદપિ-ઋદ્ધિર્વા તપસ્યિનો નાસ્તીત્યુક્તં, તદપિ નિષ્પમાણકમ્ । ઋદ્ધેરમાવેડ-
નુપલમ્બો હેતુરુક્તઃ સોઽપિ સ્વસમ્બન્ધો, સર્વસમ્બન્ધી વા ? તત્ર સ્વસમ્બન્ધી નિ-
યતદેશકાલાપેક્ષયાઽન્યથા વાઽનુપલમ્બઃ સ્યાત્, તત્ર પ્રથમપક્ષે ક્વચિત્ કદાચિત્
પંચમારકાપેક્ષયા ભરતક્ષેત્રાપેક્ષયા ઋદ્ધેરનુપલમ્બસ્યોપલમ્બસ્ય ચાસ્માકમપિ સંમ-
તત્વાત્ । દ્વિતીયપક્ષે તુ હેતોરનૈકાન્તિકતા, યથા દેશવિપ્રકૃષ્ટાનાં મેરુપ્રભૃતીનાં
કાલવિપ્રકૃષ્ટાનાં પિતામહાદીનામનુપલમ્બેઽપિ સત્ત્વાત્ । દૃશ્યતે ચ ક્વચિત્ કદાચિ-
છલ્લિપ્રભાવાચરણધૂલિસ્પર્શાદિ માત્રેણ વ્યાધિ પ્રશમનાદિઃ । તતશ્ચેહાઽપિ ભરતાદૌ
હોતી હૈ । કેવલિયોંકો તો સવ આત્માકા ઉપલમ્બ હોતા હૈ, યહ
તો નિપેધ નહીં કિયા જા સકતા ।

તથા લલ્લિયોંકો અસત્તા પ્રકટ કરને કે લિયે ભી આપને જો
અનુપલંભરૂપ હેતુ કહા હૈ સો વહ ભી ટીક નહીં હૈ । યહાં પર અનુપ-
લંભ સ્વસંબંધી ગ્રહણ કિયા હૈ યા સર્વસંબંધી । સ્વસંબંધી અનુપલંભ ભી
કૈસા ? નિયતદેશકાલાપેક્ષ, અથવા અનિયતદેશકાલાપેક્ષ ? પ્રથમપક્ષ મેં
સિદ્ધસાધનતા હૈ । અર્થાત્ યહ વાત તો હમ ભી માનતે હૈં કિ હસ પંચમ-
કાલ કે અંદર ભરતક્ષેત્ર મેં લલ્લિયોંકા અનુપલમ્બ હૈ । દ્વિતીયપક્ષ
મેં હેતુ અનૈકાન્તિક હૈ । દેશવિપ્રકૃષ્ટ મેર્વાદિકોં કા, કાલવિપ્રકૃષ્ટ
પિતામહ આદિકોં કા અનુપલમ્બ હોને પર ભી ડનકા સદ્ભાવ માના
જાતા હૈ । કહીં ૨ કમો ૨ લલ્લિયે કે પ્રભાવ સે ચરણધૂલિ કે સ્પર્શ
આદિ કરને માત્ર સે વ્યાધિ કી શાંતિ હોતી હુઈ દેલ્લી જાતી હૈ । ડસી
તરહ યહાં ભરત આદિ ક્ષેત્રોં મેં ભી પહિલે સમય મેં લલ્લિયોંકા સદ્ભાવ

કારણે સ્વ સંવેદન રૂપ પ્રત્યક્ષથી તેની ઉપલબ્ધિ થાય છે. કેવલીઓને તો બધા
આત્માનો ઉપલંભ થાય છે. આનો તો નિપેધ થઈ શકે તેમ નથી.

અર્થાત્—ઋદ્ધિઓની અસત્તા પ્રગટ કરવા માટે પણ આપે જે અનુપ-
લંભ રૂપ હેતુ કહેલ છે તે પણ ઠીક નથી. આ સ્થળે અનુપલંભ સ્વ સંબંધી
અહંબુ કરેલ છે, કે સર્વ સંબંધી ? સ્વ સંબંધિ અનુપલંભ પણ કેવો ?
નિયત દેશકાળ અપેક્ષ કે અનિયત દેશકાળ અપેક્ષ. પ્રથમ પક્ષમાં સિદ્ધ સાધ-
નતા છે. અર્થાત્ એ વાત અમે પણ માનીએ છીએ કે, આ પંચમકાળની અંદર
ભરતક્ષેત્રમાં ઋદ્ધિઓના અનુપલંભ છે. બીજા પક્ષમાં હેતુ અનૈકાન્તિક છે.
દેશવિપ્રકૃષ્ટ મેર્વાદિ કોનું કાલવિપ્રકૃષ્ટ પિતામહ આદિકોનું અનુપલંભ હોવા
છતાં પણ તેનો સહભાવ માનવામાં આવે છે. કોઈ કોઈ સ્થળે કદી કદી લલ્લિયના
પ્રભાવથી ચરણચરણનો સ્પર્શ આદિ કરવા માત્રથી વ્યાધિની શાંતિ થતી જોવામાં
આવે છે. એજ રીતે અહિં ભરત આદિ ક્ષેત્રોમાં પણ પહેલા સમયમાં લલ્લિય-

કાલાન્તરેડતીતે કાલે, મહાવિદેહેપુ ચ સર્વકાલમૃદ્ધીનામપિ સદ્ભાવાત્ । સર્વસમ્ય-
ન્ધી અનુપલમ્ભસ્તુ અસિદ્ધ એવ ।

યદપિ “કામસુખાદ્ વચ્ચિતોઽસ્મી”-ત્યુક્તં તદપ્યસમીક્ષિતમ્, વિપયસુખં
હિ રાગદ્વેષમોહજનનદ્વારેણ અતૃપ્તિકાંક્ષાશોકવિપાદાદિભિર્વિવિધકર્મવન્ધહેતુત્વેન ચ
ચતુર્ગતિભ્રમણકારકત્વેન યદ્દુલ્લુપ્તઃસ્વજનકત્વાત્ પ્રેક્ષાવતાં તત્ત્વવેદિનામનુપાદેયમ્ ।
વિપસંપૃક્તાઽન્નસદૃશં કામસુખં કસ્ય વિવેકિનો મનો રમયેત્, ન કસ્યાપિ ।

યદપિ-તપસો યાતનાત્મકત્વમુક્તં, તદપ્યસત્-સકલદુઃસ્વમૂલકર્મક્ષયહેતુત્વાત્,
મનઽન્દ્રિયયોગાનામહાનિકારકત્વેન તપસો યયાશક્તિ વિધાનાત્ । ઉક્તં હિ—

ધા તથા વિદેહક્ષેત્ર મેં સર્વદા લગ્નિયોં કા સદ્ભાવ રહતા હૈ । સર્વસંબંધી
અનુપલમ્ભ તો અસિદ્ધ હી હૈ. અર્થાત્ સર્વસમ્યન્ધી અનુપલમ્ભ લગ્નિયોં કી
અભાવાત્મકતા પ્રકટ કરને મેં અસમર્થ હૈ ।

“મેં કામસુખ સે વંચિત હો ગયા હું” જો યહ યાત કહી હૈ વહ
‘મી ઠીક નહીં હૈ ક્યોં કિ વિપયસુખ રાગદ્વેષ મોહ કી ઉત્પત્તિ કા કારણ
હોને સે, અતૃપ્તિ, કાંક્ષા, શોક એવં વિપાદ આદિ કો ઉત્પન્ન કરતે રહતે
હૈં, इनसे विविध कर्मों का बंध होता रहता है, उस के उदय से जीव चारों
ગતિયોં મેં ભ્રમણ કરતા ૨ અનેક દુઃસ્વપરમ્પરા કો વહાં ભોગતા રહતા
હૈ, અતઃ કામ કો સુખ માનના યહ ભ્રમ હૈ । ઇસી લિયે તત્ત્વજ્ઞાનિયોં
કે લિયે યે ઉપાદેય નહીં હૈં । વિચાર કિયા જાય તો વિપમિશ્રિત અન્નકી
તરહ યે કામસુખ કિસ વિવેકી કે મન કો આનંદ પહુંચા સકતે હૈં,
અર્થાત્ કિસી કો ‘મી નહીં । તપ કો યાતનાત્મક કહના ઇસલિયે અનુ-

ઓના સદ્ભાવ રહે છે. સર્વસંબંધિ અનુપલમ્ભ તો અસિદ્ધ જ છે. અર્થાત્
સર્વસંબંધિ અનુપલમ્ભ ઋદ્ધિઓની અભાવાત્મકતા પ્રકટ કરવામાં અસમર્થ છે.

“હું કામસુખથી વંચિત બની ગયો છું” આ વાત કહી છે તે પણ
ઠીક નથી. કેમકે, વિપયસુખ રાગદ્વેષ મોહની ઉત્પત્તિનું દ્વાર હોવાથી અતૃ-
પ્તિકાંક્ષા સુખ શોક અને વિપાદ આદિને ઉત્પન્ન કરતાં રહે છે, તેનાથી વિવિધ
ક્રમોના બંધ થતો રહે છે. તેના ઉદયથી જીવ ચારે ગતિઓમાં ભ્રમણ કરતાં
કરતાં અનેક દુઃખ પરંપરાને ત્યાં લોગવતો રહે છે. માટે કામને સુખ માનવું
એ ભ્રમ છે. આથી તત્ત્વજ્ઞાનીઓ માટે એ ઉપાદેય નથી. વિચારવામાં આવે
તો વિપમિશ્રીત અન્નની માફક એ કામ સુખ કયા વિવેકીના મનને આનંદ
પહોંચાડી શકે છે ? અર્થાત્ કોઈને પણ નહીં. તપને યાતનાત્મક કહેવું એ માટે
અનુચિત છે કે, એનાથી કોઈને પણ કષ્ટ પહોંચવું નથી. કારણે તે

મનઇન્દ્રિયયોગાના, -મહાનિઃ કથિતા જિનૈઃ ।

યતોઽત્ર તત્કથં તસ્ય, યુક્તા સ્યાદ્ દુઃખરૂપતા ॥ ૧ ॥

કેશલુંચનાદીનામપિ કિંચિત્ પીઢાજનકત્વેઽપિ સમીહિતાર્થપ્રાપકત્વેન દુઃખદાયકત્વં નાસ્તિ । તદુક્તમ્—

“દૃષ્ટા ચેષ્ટાર્થસંસિદ્ધૌ, કાયપીઢાઽપ્યદુઃખદા ।

રત્નાદિવણિગાદીનાં, તદ્વદત્રાપિ ભાવ્યતામ્ ” ॥ ૧ ॥

ચિત્ત હૈ કિ ઉસ સે કિસી કો ભી કણ્ઠ નહીં પહુંચતા હૈ પ્રત્યુત્ત યહ સકલ દુઃખોં કે મૂલ કારણ કર્મોં કા ક્ષય કરનેવાલા હૈ । મન, ઇન્દ્રિય તથા, યોગ ઇન કો હાનિ ન પહુંચને પાવે ઇસ રૂપ સે યથાશક્તિ તપસ્યા કરને કા વિધાન હૈ । કહા ભી હૈ—

મનઇન્દ્રિયયોગાના, -મહાનિઃ કથિતા જિનૈઃ ।

યતોઽત્ર તત્કથં તસ્ય, યુક્તા સ્યાદ્ દુઃખરૂપતા ॥ ૧ ॥

તપમેં મન ઓર ઇન્દ્રિયોં કે યોગોં કી હાનિ નહીં હોતી હૈ, એસા ભગવાંનેં ફરમાયા હૈ તો ફિર તપમેં દુઃખરૂપતા કેસે માની જાય, અર્થાત્ તપ દુઃખરૂપ નહીં હૈ કિન્તુ સુખરૂપ હૈ ॥ ૧ ॥

યથાપિ કેશલુંચન આદિ ક્રિયાઈ કિંચિત્ પીઢાજનક હૈ તો ભી સમીહિત અર્થ કી સિદ્ધિકે કારણ હોને સે ઉનમેં સર્વથા દુઃખદાયકતા નહીં હૈ । કહા ભી હૈ—

દૃષ્ટા ચેષ્ટાર્થસંસિદ્ધૌ, કાયપીઢાપ્યદુઃખદા ।

રત્નાદિવણિગાદીનાં, તદ્વદત્રાપિ ભાવ્યતામ્ ॥ ૧ ॥

સકળ દુઃખોંનું મૂળ કારણ અને કર્મોના ક્ષય કરનાર છે. મન ઇન્દ્રિય તથા યોગ એને હાની ન પહોંચે તેવા રૂપથી યથાશક્તિ તપસ્યા કરવાતું વિધાન છે. કહ્યું પણ છે—

મનઇન્દ્રિયયોગાના, -મહાનિઃ, કથિતા જીનૈઃ ।

યતોઽત્ર તત્કથં તસ્ય, યુક્તા સ્યાદ્ દુઃખરૂપતા ॥ ૧ ॥

તપમાં મન અને ઇન્દ્રિયોના યોગોની હાની થતી નથી એવું ભગવાને ફરમાવ્યું છે. તો પછી તપમાં દુઃખરૂપતા કેમ માનવામાં આવે ? અર્થાત્ તપ દુઃખરૂપ નથી પરંતુ સુખરૂપ છે.

કેશ લુંચન આદિ ક્રિયાઓ ભે કે પિઢાજનક કહેવાય છે તો પણ સમીહિત સિદ્ધિનું કારણ હોવાથી તેનામાં સર્વથા દુઃખદાયકતા નથી. કહ્યું પણ છે—

દૃષ્ટા ચેષ્ટાર્થ સંસિદ્ધૌ, કાયપીઢાપ્યદુઃખદા ।

રત્નાદિવણિગાદીનાં, તદ્વદત્રાપિ ભાવ્યતામ્ ॥ ૧ ॥

इत्थमत्रानुमानप्रयोगः—यत् इष्टार्थप्रसाधकं, न तत् कायपीडाकरत्वेऽपि दुःखदायकं, यथा रत्नवणिजामध्वश्रमादि । इष्टार्थप्रसाधकं च तपः । न चाऽस्याप्यसिद्धता, प्रशमहेतुत्वेन तपसस्तत्परिपक्तितारतम्यात् परमानन्दतारतम्यस्यानुभूयमानत्वेन तत्प्रकर्षे तस्यापि प्रकर्षाऽनुमानात् । प्रयोगश्च—यत्तारतम्येन यस्य तारतम्यं तस्य प्रकर्षे तत्प्रकर्षः, यथाऽग्नितापप्रकर्षे काञ्चनविशुद्धिप्रकर्षः, अनुभूयते च प्रशमतारतम्येन परमानन्दतारतम्यम्, लोकप्रतीतत्वाच्च ॥ ४४ ॥

इसलिये ऐसा अनुमान बनाना चाहिये कि जो इष्ट अर्थ का प्रसाधक होता है वह काय का पीड़ा कारक होने पर भी दुःखदायक नहीं होता है, जैसे रत्नव्यापारियों का मार्गश्रम देशाटन का परिश्रम, इसलिये तप भी इष्ट अर्थ का प्रसाधक है अतः यह भी दुःखदायक नहीं है । तप में इष्टार्थप्रसाधकता असिद्धि नहीं है, क्योंकि तप प्रशम का हेतु है । तप द्वारा प्रशमभाव की जैसी २ तरतमता आत्मा में होगी वैसी २ परमानन्द की तरतमता भी आत्मा में अनुभवित होगी इसलिये प्रशम के प्रकर्ष में परमानन्द का भी प्रकर्ष अनुमित होता है । जैसे अग्नि के ताप के प्रकर्ष में काञ्चन की विशुद्धि का प्रकर्ष, प्रयोग से देखा जाता है । अतः परम्परा रूप से तप इष्ट अर्थ का प्रसाधक सिद्ध होता है, क्योंकि तप प्रशम का कारण, प्रशम परमानन्द का कारण इस प्रकार बनता है ॥ ४४ ॥

આ માટે એવું અનુમાન બનાવવું જોઈએ કે, જે ઇષ્ટ, અર્થના પ્રસાધક હોય છે—તે કાયાને પીડા કારક હોવા છતાં પણ દુઃખ દાયક થતા નથી. જેમકે રત્નવ્યાપારીઓના માર્ગશ્રમ દેશાટનના પરિશ્રમ—આ માટે તપ પણ ઇષ્ટ અર્થનો પ્રસાધક છે. માટે એ પણ દુઃખદાયક નથી. તપમાં ઇષ્ટાર્થ પ્રસાધકતા અસિદ્ધ નથી, કેમકે, તપ પ્રશમનો હેતુ છે. તપ દ્વારા પ્રશમભાવની જેવી જેવી તારતમ્યતા આત્મામાં હશે તેવી તેવી પરમાનંદની તરતમતા પણ આત્મામાં અનુભવિત થશે. આ માટે પ્રશમના પ્રકર્ષમાં પરમાનંદનો પણ પ્રકર્ષ અનુમિત થાય છે. જેમ અગ્નિના તાપના પ્રકર્ષમાં કાંચનની શુદ્ધિનો પ્રકર્ષ પ્રયોગથી દેખાય છે. આથી પરંપરા રૂપથી તપ પ્રશમનું કારણ, પ્રશમ પરમાનંદનું કારણ આ પ્રકારથી બને છે ॥ ૪૪ ॥

તથા—

મૂલમ્—અમ્ જિણા અત્થિ જિણા, અદુવા વિ ભવિસ્સઈ ।

મુંસં તે એવ મોહંસુ, ઈંઈ ભિક્ખૂ ને ચિતંણ ॥ ૪૫ ॥

છાયા—અમ્બવન્ જિનાઃ સન્તિ જિનાઃ, અથવાઽપિ ભવિષ્યન્તિ ।

મૃપા તે એવમાહુઃ, ઇતિ ભિક્ષુર્ન ચિન્તયેત્ ॥ ૪૫ ॥

ટીકા—‘અમ્ જિણા’ ઇત્યાદિ ।

જિનાઃ—રાગાદિજયિનઃ—કેવલિનઃ, અમ્બવન્ અતીતકાળે, ‘જિનાઃ સન્તિ’=વર્તમાનકાળે જિના વિદ્યન્તે વિદેહેષુ ઇત્યર્થઃ । અથવા—જિના ભવિષ્યન્તિ, ભરતાદિષુ ઇત્યપિ । અપિ શબ્દો ભિન્નક્રમઃ, તે=જિનાસ્તિત્વવાદિનઃ, એવમ્=ઉક્તરીત્યા મૃપા=મિથ્યા-અલીકમ્, અસત્યમર્થમ્, આહુઃ=વદન્તિ, ઇતિ ભિક્ષુર્ન ચિન્તયેત્, અનુમાનાદિ પ્રમાણૈર્જિનાનાં કાલત્રયવર્તિત્વસિદ્ધેઃ ।

અર્થ માવઃ—મિથ્યાત્વમોહનીયોદયપ્રભાવાત્ કથંચિદસમ્યક્ત્વે સમુત્પન્ને પ્રત્યક્ષા-

તથા—‘અમ્ જિણા’ ઇત્યાદિ ।

અન્યયાર્થ—(જિણા-જિનાઃ) રાગાદિક કે જીતને વાળે કેવલી ભગવાન્ (અમ્-અમ્બવન્) અતીતકાલ મેં હુવે હું (જિણા અત્થિ-જિનાઃ સન્તિ) વર્તમાનકાલ મેં જિન હું (અદુવા વિ ભવિસ્સઈ-અથવાઽપિ ભવિષ્યતિ) અથવા ભવિષ્યત્કાલ મેં હોંગે । (એવં-એવમ્) હસ પ્રકાર જો કહતે હું (તે મુંસં આહંસુ-તે મૃપા આહુઃ) વે મિથ્યા કહતે હું, (ઈંઈ ભિક્ખૂ ન ચિતંણ-ઇતિ ભિક્ષુઃ ન ચિન્તયેત્) હસ પ્રકાર ભિક્ષુ વિચાર નહીં કરે, કારણ કિ અનુમાનાદિક પ્રમાણો સે જિનકા ત્રિકાલ મેં અસ્તિત્વ સિદ્ધ હોતા હૈ ।

માવાર્થ—આત્મામેં જબ મિથ્યાત્વમોહનીયકા ઉદય રહતા હૈ તબ ઉસંકે

તથા—‘અમ્ જિણા’ ઇત્યાદિ.

અન્યયાર્થ—જિણા-જિનાઃ રાગાદિનને છુતનાર કેવલી ભગવાન્ અમ્-અમ્બવન્ અતીતકાળમાં થયા છે જિણા અત્થિ-જિનાઃ સન્તિ વર્તમાનકાળમાં છુન છે અદુવા વિ ભવિસ્સઈ-અથવાઽપિ ભવિષ્યતિ અથવા ભવિષ્યત્ કાળમાં થશે એવં-એવમ્ આ પ્રકારનું જે કહેવામાં આવે છે તે મુંસં આહંસુ-તે મૃપા આહુઃ તે મિથ્યા કરે છે. ઈંઈ ભિક્ખૂ ન ચિતંણ-ઇતિ ભિક્ષુઃ ન ચિન્તયેત્ આ પ્રકારનો વિચાર ભિક્ષુ ન કરે. કારણ કે, અનુમાનાદિક પ્રમાણોથી જેનું ત્રિકાળમાં અસ્તિત્વ સિદ્ધ થયું છે.

માવાર્થ—આત્મામાં જ્યારે મિથ્યાત્વ મોહનિયનો ઉદય હોય છે ત્યારે તેના

પરિ સદોરકમુખવચ્ચિકાં ચ વિષ્ણુ, સંપૂર્ણશરીરમનાવૃતં કૃત્વા હેમન્તે રાત્રી ઉત્થિતાં
 એવ તિષ્ઠતિ, જિનવચને સમ્યક્ શ્રદ્ધાહરાસીત્ ।

એકદા કથિન્મિથ્યાત્વી દેવસ્તત્રાગત્ય વૈક્રયિકં નન્દનવનમિવોદ્યાનં પ્રદર્શ્ય,
 દદમતિમુનિમવ્રવીત્ - હે મુને ! અસ્યામાતાપનાયાં કો લાભઃ, કિં નિરર્થકમેતત્
 કષ્ટં વહસિ, નાસ્તિ પરલોકઃ, આગમ્યતામ્, મયા સહાસ્ય નન્દનવનસમાનોદ્યાનસ્ય
 મુલમનુભૂયતામ્ । યદાસૌ દદમતિમુનિર્વીરાસનમધ્યાસ્તે, તદા વૈક્રિયપુષ્પશય્યા-
 પ્રદર્શ્ય સ દેવો વદતિ-અગ્રાસ્યતામ્, કિમર્થં કષ્ટમાવહસિ, નાસ્તિ પરલોકઃ । યદા-
 સૌ તપસ્પતિ, તદા સ દેવઃ સ્વવૈક્રિયશક્ત્યા વિવિધં મિષ્ટાન્નં નિર્માય તસ્ય બુદ્ધશામુ-

સદોરકમુખવચ્ચિકા કો ધારણ કર એવં સમસ્ત શરીર કો અનાવૃત રખ-
 કર હેમન્ત ઋતુ મેં રાત્રિ કે સમય કો યહ ૨ વ્યતીત કરતા થા ।
 જિનવચન મેં હસે અપ્રતિમ શ્રદ્ધા થી ।

એક સમય કી વાત હૈ કિ કોઈ મિથ્યાત્વી દેવ વહાં આયા ઔર
 ડસને અપની વૈક્રિયશક્તિ સે નંદનવનકે સમાન એક ઉદ્યાન કી રચના
 કર દદમતિ મુનિ સે કહા હૈ મુને ! હસ આતાપના સે કયા લાભ હૈ ।
 નિરર્થક આપ હસ કષ્ટ કો સહન કરતે હો । પરલોક આદિ કુછ ભી
 નહીં હૈ, અતઃ આઓ ઔર મેરે સાથ હસ નંદનવન કે સમાન ઉદ્યાન
 કે સુખ કા યથેચ્છ અનુભવ કરો । જિસ સમય દદમતિ મુનિ વીરાસન
 સે વિરાજતે તો વહ દેવ વૈક્રિયપુષ્પશય્યા કી રચના કર ડનસે કહતા
 કિ હસ આસન મેં વૈઠને મેં કયા લાભ હૈ હસ પુષ્પ કી શય્યા
 પર આપ વિરાજો । જિસ કો લક્ષિત કર વહ આપ કર રહે હો, હૈ મુનિ
 વહ કુછ ભી નહીં હૈ । હસી તરહ જવ વહ તપ તપતે તો વહ અપની

સદોરકમુખવચ્ચિકાને ધારણ કરી સારાએ શરીરને ખુલ્લું રાખી હેમન્ત ઋતુમાં
 રાત ભર ઉભે પગે રહેતો હતો, જીન વચનમાં એને અપ્રતિમ શ્રદ્ધા હતી.

એક સમયની વાત છે કે, કોઈ મિથ્યાત્વી દેવ ત્યાં આવ્યો અને તેણે
 પોતાની વૈક્રિયશક્તિથી નંદનવન જેવું સુંદર ઉદ્યાન બનાવી દીધું. અને દદમતિ
 મુનિને કહ્યું કે, હે મુનિ ! આ આતાપનાથી શું લાભ છે ? નિરર્થક આપ આ
 કષ્ટને સહન કરો છો ! પરલોક વગેરે કંઈ પણ નથી. આથી ભારી સાથે આવો
 અને આ નંદનવન સમાન ઉદ્યાનના સુખનો યથેચ્છ અનુભવ કરો. જે સમયે
 દદમતિ મુનિ વીરાસનમાં વિરાજીત થતા ત્યારે તે દેવ વૈક્રિય પુષ્પશય્યાની
 રચના કરી એનાથી કહેતો કે, આ આસનથી બેસવામાં કયો લાભ ? આ પુષ્પની
 શય્યા ઉપર આપ બીરાજો. જેનું લક્ષ કરીને આપ આ બધું કરી રહ્યા છો તેવું
 હે મુનિ કંઈ છે જ નહીં. આ રીતે તપ તપતા ત્યારે પણ તે દેવ પોતાની

દિપમાળૈઃ સદ્ભાવનયા તન્નિરાકૃત્ય સમ્યક્ચરણેનૈવ દર્શનપરીપહઃ સોદ્ભવ્ય ઇતિ ।
અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

અવન્તીનગર્યાં વૈશ્રવણાચાર્યઃ શિષ્યપરિવારેણ સહ સમવસૃતઃ । તસ્ય દ્વદમતિ
નામકઃ શિષ્ય આસીત્, સ ઉગ્રતપસ્વી ઉગ્રવિહારી ઉત્કૃષ્ટક્રિયાપાલકઆસીત્,
અન્તપ્રાન્તાહારેણાવમોદરિકાદિ તપઃ કરોતિ, વીરાસનાદિકં કરોતિ, ગ્રીષ્મકાલે
પ્રચ્છન્દસૂર્યાતાપનાં સેવતે । શીતકાળે શીતસ્પર્શ સહતે સ્મ, કેવલં ચોલપટ્કં, મુલો-

પ્રભાવ સે સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ કા અભાવ હોને પર જીવ એસા માનતા
હૈ કિ જિન આદિ પરોક્ષપદાર્થ નહીં હૈં । અતઃ उनका प्रत्यक्ष न होने
पर भी अन्य अनुमानादिक प्रमाणों द्वारा उनकी सत्ता सिद्ध होती
है, इसलिये उनकी सद्भावना से उनकी असंभावनारूप मिथ्यात्व-
परिणति का परिहार करते हुए साधु को अपने सम्यक्त्व का रक्षण
करते रहना चाहिये । इसी का नाम दर्शनपरीपह जय है ।

દૃષ્ટાન્ત—વૈશ્રવણાચાર્ય અપને શિષ્ય પરિવાર કે સાથ વિહાર
કરતે હુણે કિસી સમય અવન્તી નગરી મેં પધારે । उन शिष्यों में
द्वदमति नाम का एक शिष्य था जो उग्रतपस्वी, उग्रविहारी एवं उत्कृष्ट-
रूप से प्रत्येक क्रिया का पालन करता था । अन्त प्रान्त आहार से यह
अवमोदरिका आदि तपों को तपता था । वीरासन आदि आसनों को
करता था । ग्रीष्मकाल में प्रच्छन्द सूर्य की अतापना लेता था । शीत-
काल में शीतस्पर्श को सहता था । केवल चोलपट्टक तथा मुख पर

પ્રભાવથી સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિને અભાવ હોવાના કારણે જીવ એવું માને છે કે, જીન
આદિ પરોક્ષપદાર્થ નથી. આથી તે પ્રત્યક્ષ ન હોવાથી અન્ય અનુમાનાદિક
પ્રમાણો દ્વારા તેની સત્તા સિદ્ધ હોય છે. આ માટે તેની સદ્ભાવનાથી તેની
અસંભવતારૂપ મિથ્યાત્વ પરિણતિના પરિહાર કરીને સાધુએ પોતાના સમ્ય-
ક્ત્વનું રક્ષણ કરતા રહેવું જોઈએ તેનું નામ દર્શનપરીપહ જય છે.

દૃષ્ટાન્ત—વૈશ્રવણાચાર્ય પોતાના શિષ્ય પરિવાર સાથે વિહાર કરતાં કરતાં
એક સમય અવન્તી નગરીમાં પધાર્યાં. તેમના શિષ્યોમાં દ્વદમતિ નામે એક
શિષ્ય હતો. જે ઉગ્રતપસ્વી, ઉગ્રવિહારી અને ઉત્કૃષ્ટ રૂપથી પ્રત્યેક ક્રિયાઓનું
પાલન કરતો હતો. અન્તપ્રાન્ત આહારથી તે અવમોદરિકા આદિ તપ તપતો
હતા. વીરાસન આદિ આસનો કરતો હતો, ગ્રીષ્મકાળમાં પ્રચ્છન્દ સૂર્યની આતાપના
લેતો હતો, શીતકાળમાં ઠંડીના સ્પર્શને સહન કરતો, ફક્ત ચોલપટ્ટો અને

મધુરં વારિ, કિમાત્મનઃ પિપાસાઽઽકુલીકરણેન, નાસ્તિ પરલોકઃ । इत्येवं विविध-
 પરીપદાનુત્પાદ્ય સ દેવસ્તસ્ય મુનેઃ સમ્યક્ત્વમપનેતું પ્રવૃત્તઃ, તથાપિ સ દ્વદમતિ-
 મુનિસ્તપઃસંયમારાધનાદ્ લેશતોઽપિ વિચલિતો નાભૂત્ । તદાઽસૌ મેરુરિવાપ્રકમ્પઃ
 સાગર ઇવ ગમ્भीરઃ સન્ વિચારયતિ-ભગવતઃ સર્વજ્ઞતયા તદ્વચનં સત્યં સંદેહરહિતં ધ્રુવં
 નિત્યં - પરમકલ્યાણસાધકં શ્રદ્ધેયમેવાસ્તિ । एभ्यः पौद्गलिकसुखेभ्यः किमपि

કિ હે મુનિ ! देखो यह कितना सुन्दर तालाव भरा हुआ है । आपको
 इस समय घोर पिपासा की वेदना हो रही है अतः आप शीतल
 मधुर जल का पान कर पिपासा को शान्त करो । व्यर्थ में पिपासा से
 આત્મા કો આકુલિત કરને સે ક્યા લાભ હૈ ? परलोक नहीं है । इस
 प्रकार इस देव ने मुनिराज के लिये अनेक परीपहों को उत्पन्न कर उनको
 સમ્યક્ત્વ સે પતિત કરને કે નિમિત્ત અનેક પ્રયત્ન કિયે તો મી વે
 મુનિરાજ સમ્યક્ત્વ સે રંચમાત્ર મી ચલાયમાન નહીં હુવ । प्रत्युत
 संयम एवं तप की आराधना करने में मेरु के समान अप्रकंप होकर
 एवं सागर के समान गंभीर बनकर अधिक से अधिक दृढ बनते रहे ।
 સાથ મેં યહ મી ઇન્હોં ને વિચાર કરને મેં કસર નહીં રચી કિ ભગવાન્
 વીતરાગ હોને સે, તથા સર્વજ્ઞ હોને સે કમી મી અસત્ય વચન વાલેં
 નહીં હો સકતે હેં, ઇનકા પ્રત્યેક વચન સંદેહરહિત ધ્રુવ સત્ય હૈ ।
 જિન વચનોં કી આરાધના સે હી જીવોં કો નિઃશ્રેયસ માર્ગ કી પ્રાપ્તિ
 હોતી હૈ, અતઃ યહી એકાન્તતઃ પરમકલ્યાણસાધક હૈ, ઓર હસી

આ સમય ખૂબજ તરસ લાગી રહી છે, આથી આ શિતળ મધુર જળનું પાન
 કરીને તમારી તરસને છીપાવો. તરસથી આત્માને નકામો પીડીત કરવાથી શું
 લાભ ? પરલોક છે જ નહીં. આ પ્રકારે તે દેવે મુનિરાજ માટે અનેક પરીપદો
 ઉત્પન્ન કર્યા અને તેમને સમ્યક્ત્વથી પતિત બનાવવા ખૂબ પ્રયત્નો કર્યા તે.
 પણ એ મુનિરાજ લેશ માત્ર પણ ચલાયમાન થયા નહી. અને પોતાના સંયમ
 અને તપની આરાધનામાં મેરુની માફક અડગ રીતે ઉભા રહ્યા અને સાગરની
 માફક ધીર ગભિર બની અધિક દૃઢ બનતા ગયા. સાથે સાથે તેમણે એ પણ
 વિચાર કરવામાં કસર ન રાખી કે ભગવાન વીતરાગી સર્વજ્ઞ હોવાને
 કારણે કદી પણ અસત્ય વચનવાળા હોઈ શકતા નથી. એમનું પ્રત્યેક વચન
 સંદેહ રહીત ધ્રુવ-સત્ય છે. જનવચનોની આરાધનાથી જ જીવોને નિઃશ્રેયસ
 (મોક્ષ) માર્ગની પ્રાપ્તિ થાય છે. જેથી તેનો વિશ્વાસ કરવો યોગ્ય છે. આથી
 આજ એક માત્ર પરમ કલ્યાણનું સાધન છે. આ પૌદ્ગલિક સુખોથી જીવોનું

ત્પાદ્ય વદતિ-મુને ! કિં વુશુક્તયા પ્રાણાન્ ગમયસિ ! શુન્દસ્વ વિવિધાનિ મિષ્ટાન્નાનિ,
 યદર્થમેતત્ કષ્ટમહ્નીકરોપિ સ નાસ્તિ પરલોકઃ । યદાઽસી મુનિરુગ્રવિહારં કરોતિ,
 તેન ચ શ્રાન્તો ભવતિ, તદા સ દેવઃ સ્વૈક્રિયશક્ત્યા શિવિકાં વાદકૈર્નીયમાન્
 પ્રદર્શ્ય વદતિ-મુને ! યાનમારુહતામ્, અલમનેન કષ્ટકરેણ પાદચારેણ, નાસ્તિ
 પરલોકઃ । ઉષ્ણકાલે સ્વશક્ત્યા ધોરપિપાસામુત્પાદ્ય શીતલસુગન્ધિનિર્મલજલપૂર્ણ-
 જલાશયં તદીયદૃષ્ટિગોચરીકુર્વન્ સ દેવસ્તં મુનોમત્રચીત્-મુને ! પિત્ર શીતલમિદં

વૈક્રિયશક્તિ કે પ્રભાવ સે વિવિધ મિષ્ટાન્નોં કો તયાર કર ઓર ઉન્ને
 વુશુક્તિત બનાકર કહને લગતા હે મુને ! ક્યોં ખૂલ સે વ્યર્થ મેં ઇન પ્યારે
 પ્રાણોં કો નષ્ટ કરના ચાહતે હો । જિસકે નિમિત્ત તુમ યહ કષ્ટ-
 પરંપરા સહ રહે હો વહ તો કુછ હૈ હી નહીં, અતઃ વિવિધ ઇન મિષ્ટાન્નોં
 કો ભોગો । જય મુનિરાજ ઉગ્રવિહારી હોતે ઓર શ્રાન્ત હો જાતે તો
 યહ દેવ ઉસ સમય શિવિકા કી રચના કર ઉન્નેં હસ પ્રકાર દિલાતા
 કિ યહ શિવિકા અનેક પુરુષોં દ્વારા અપને કંધો પર ઉઠાઈ જા રહી હૈ,
 ઓર ફિર કહને લગતા કિ મહારાજ આપ થક ચુકે હૈં અતઃ ઇસ
 શિવિકા પર ચઢકર વિહાર કરિયે । કષ્ટપ્રદ ઇસ પૈદલ ચલને સે
 ક્યા લાભ ? ઇસે છોડિયે । ઉષ્ણકાલ મેં અપની શક્તિ કે પ્રભાવ સે
 મુનિ કો ધોર પિપાસા ઉત્પન્ન કર ઓર શીતલ સુરભિ નિર્મલ જલ સે
 પરિપૂર્ણ જલાશય કી રચના કરકે મુનિ કો દિલાતા હુઆ કહને લગતા

વૈક્રિયશક્તિના પ્રભાવથી વિવિધ મિષ્ટાન્ન તૈયાર કરી તેને વિભૂષિત બનાવી
 કહેવા લાગતો હે મુનિ ! શા માટે વ્યર્થમાં ભૂખ અને તરસથી આ પ્યારા
 પ્રાણોને નષ્ટ કરી રહ્યા છો ? જે નિમિત્તથી તમે આ બધાં કષ્ટો સહન કરો
 છો એવું કાંઈ પણ નથી. આથી આ વિવિધ મિષ્ટાન્નોને આરોગ્યે. ત્યારે મુનિ-
 રાજ ઉગ્ર વિહારી બનતા અને શ્રાન્ત બની જતા તો તે દેવ એ સમયે
 શિબિકા (પાલખી)ની રચના કરી એને બતાવતો અને કહેતો આ શિબિકા
 અનેક પુરુષોદ્વારા પોતાના બંહે ઉઠાવવામાં આવી રહી છે. મહારાજ આપ
 થાકી ગયા છો જેથી આ શિબિકામાં બેસી જાઓ. અને વિહાર કરો. કષ્ટપ્રદ
 એવા પગપાળા ચાલવાથી શું લાભ મળવાનો છે ? એને છોડી દો. ઉષ્ણકાળમાં
 પોતાની શક્તિના પ્રભાવથી મુનિરાજ ને પાણીની ખૂબ તરસ ઉત્પન્ન કરાવી,
 શિતળ સુરભી નિર્મળ જળથી પરિપૂર્ણ જળાશયની રચના કરી મુનિને દેખા-
 ડીને કહેતો કે, હે મુનિ ! જુઓ આ કેવું સુંદર તળાવ બન્યું છે. આપને

અથ પરીપહાવતરણમાહ—

એતે ધર્મસ્યાન્તરાયકારણભૂતાઃ દ્વાવિંશતિપરીપહાઃ સોઢવ્યા ઇત્યુક્તમ્ । તત્ર-
જ્ઞાનાવરણીય-વેદનીય-દર્શનમોહનીય-ચારિત્રમોહનીયા-ડન્તરાયાણાં કર્મણામુદયાદેતે
સર્વે પરીપહાઃ પ્રાદુર્ભવન્તિ । ચતસ્રપુ કર્મપ્રકૃતિપુ-જ્ઞાનાવરણીય-વેદનીય-મોહનીયા
-ન્તરાયેપુ દ્વાવિંશતિઃ પરીપહાઃ સમવતરન્તિ, ઇતરાસુ ચતસ્રપુ-દર્શનાવરણીયાડ-
યુષ્ક-નામ-ગોત્રેપુ પરીપહા નોત્પદ્યન્તે । (ભગ૦ ૮ । ૮)

યઃ સૂક્ષ્મ સંપરાયઃ સૂક્ષ્મલોભપરમાણુસઙ્ગાવાત્ ન વીતરાગત્વં પ્રાપ્તઃ સ દશમગુણ-
સ્થાનવર્તી ઉપશમશ્રેણિસંપન્નો વા ક્ષપકશ્રેણિસંપન્નો વા તસ્ય સંયતસ્ય, તથા છદ્મસ્થવી-
તરાગયોર્ગુણસ્થાનમેદેન દ્વિવિધયોરેકાદશદ્વાદશગુણસ્થાનવર્તિનોશ્ચ સંયતયોશ્ચતુર્દશ-

અથ પરીપહોં કા અવતરણ કહતે હેં—

યથાપિ ધર્મકે સેવન કરને મેં યે વાઈસ પરીપહ અન્તરાયરૂપ હેં સાધુ
કો ઇન કો સહન કરતે રહના ચાહિયે, યહ યાત યતલાઈ જા ચુકી હૈ ।
અથ કૌન ૨ સે પરીપહ ફિસ ૨ કર્મ કે ઉદય સે હોતે હેં યહ યતલાયા
જાતા હૈ-જ્ઞાનાવરણીય, વેદનીય, મોહનીય (દર્શનમોહનીય ચારિત્રમો-
હનીય) એવં અન્તરાય, ઇન ચાર કર્મોં કે ઉદય સે યે ૨૨ વાઈસ પરીપહ
ઉત્પન્ન હોતે હેં । દર્શનાવરણીય આયુ નામ એવં ગોત્ર, ઇન ચાર કર્મોં કે
ઉદય મેં પરીપહ ઉત્પન્ન નહીં હોતે હેં । (ભગ૦ શ ૮ ઉ૦ ૮)

સૂક્ષ્મલોભ પરમાણુ કે સદ્ભાવ સે જો વીતરાગતા કો પ્રાપ્ત નહીં
હુઆ હૈ એસા દશમગુણસ્થાનવર્તી જીવ ચાહે વહ ઉપશમશ્રેણી મેં સ્થિત
હો ચાહે ક્ષપકશ્રેણી મેં ઉસકે તથા છદ્મસ્થ વીતરાગ કે ૧૧ ગ્યારહવેં એવં

હવે પરીપહોં અવતરણ કહેવામાં આવે છે—

ધર્મનું સેવન કરવામાં કદાચ આ બાવીસ પરીપહ અંતરાયરૂપ થાય
છતાં સાધુએ એને સહન કરતા રહેવું જોઈએ. આ વાત સમજાવવામાં આવી.
હવે કયા કયા પરીપહ કયા કયા કર્મના ઉદયથી થાય છે એ બતાવવામાં આવે
છે-જ્ઞાનાવરણીય, વેદનીય, મોહનીય, (દર્શન મોહનીય ચારિત્ર મોહનીય) અને
અંતરાય આ ચાર કર્મોના ઉદયથી આ બાવીસ પરીપહ ઉત્પન્ન થાય છે. દર્શનાવ-
રણીય, આયુ, નામ, અને ગોત્ર આ ચાર કર્મોના ઉદયથી પરીપહ ઉત્પન્ન થતા નથી.
ભગ. શ. ૮, ઉ. ૮

સૂક્ષ્મલોભ પરમાણુના સદ્ભાવથી જે વીતરાગતાને પ્રાપ્ત નથી થયા એવા
દશગુણુ સ્થાનવર્તી જીવ આહે તે ઉપશમ શ્રેણીમાં સ્થિત હોય, આહે ક્ષપક
શ્રેણીમાં તથા છદ્મસ્થ વીતરાગના અગીયાર અને બારમા ગુણુસ્થાનવર્તી જીવોને

કલ્યાણં નાસ્તિ । મયાઝનાદિભવસમાગતં મિથ્યાત્વમપનીય સમ્યક્ત્વં લઙ્ઘમ્ । તદેવ પુનઃ પુનરાત્મનિ દ્વીકૃત્ય જ્ઞાનાવરણીયાદૃષ્ટવિધકર્મરજઃ સમુત્સાર-
પોન કેવલિત્વપ્રાપ્તિપૂર્વકં મોક્ષપદં મમ લઙ્ઘ્યમસ્તિ । અત્તમનનં તુચ્છેન વિષયસુ-
ચેન । ઇતિ વિમૃશ્ય તપઃસંયમસમારાધનપૂર્વકનિરતિચારસમ્યક્ત્વરક્ષણેન દ્વદશમિ
મુનિર્દર્શનપરીપદં પરિપદ્ય, ક્ષપકથ્રેણિમારુદ્ધ, કેવલિત્વં લઙ્ઘ્યા સ્વાત્મકલ્યાણં સા-
ધિતવાન્ । એવમન્યૈરપિ મુનિર્મિર્દર્શનપરીપદઃ સોદઘ્યઃ ।

કા વિશ્વાસ કરના યોગ્ય છે । ઇન પૌદ્ગલિક સુખોં સે જીવોં કા કુછ
ભી આત્મહિત નહીં હો સકના છે । મૈને વઢી કઠિનતા સે અનાદિ મર્ષોં
સે સંસક્ત મિથ્યાત્વ કા અપનયન કર સમ્યક્ત્વ કા લાભ કિયા
છે । ઇસલિયે યહ દુર્લભતા સે પ્રાપ્ત હોને વાલી વસ્તુ (સમ્યક્ત્વ)
કા નાશ ન હોને પાવે, ઇસ પ્રકાર સચેષ્ટ હોકર મુક્તે યાર ૨ ઇસ
કો નિજ આત્મા મેં દૃઢ કરતે રહના ચાહિયે, ઓર જ્ઞાનાવરણીય
આદિ અષ્ટ પ્રકાર કર્મરજકે નિવારણ સે કેવલિત્વકી પ્રાપ્તિપૂર્વક મુક્તિ
પદકા લાભ કરના ચાહિયે ઇસી મેં મેરા કલ્યાણ છે । ઇન તુચ્છ વૈષ-
યિક સુખોં કે સેવન સે કૌનસા નિજ કા લાભ હો સકતા છે ।
ઇસ પ્રકાર વિચાર કર તપ એવં સંયમ કી આરાધના કરતે હુપ દ્વદ-
શમિ મુનિરાજ ને નિરતિચાર સમ્યક્ત્વ કી રક્ષા સે દર્શનપરીપદ કો
સહન કિયા ઓર ક્ષપકથ્રેણી પર આરુદ્ધ હો કર કેવલિપદકા લાભ કર
અપના આત્મકલ્યાણ કર લિયા । ઇસી પ્રકાર અન્ય મુનિજનોં કો ભી
દર્શનપરિપદજયી ઘનના ચાહિયે ।

કાંઈ પણ આત્મહિત થઈ શકવાનું નથી. મેં ભારે કઠીનતાથી અનાદિ ભવોથી
સંસક્ત મિથ્યાત્વનું અપનયન કરી સમ્યક્ત્વનો લાભ કર્યો છે. આ માટે આ
દુર્લભતાથી પ્રાપ્ત થયેલ વસ્તુ સમ્યક્ત્વનો નાશ ન થાય એ રીતે સચેત બનીને
મારે વારંવાર એને મારા પોતાના આત્મામાં દૃઢ કરતા રહેવું જોઈએ. અને
જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારની કર્મરજના નિવારણથી કેવલિત્વની પ્રાપ્તિ-
પૂર્વક મુક્તિ પદનો લાભ મેળવવો જોઈએ. આ કરવામાં જ મારું કલ્યાણ છે.
તુચ્છ એવાં વૈષયિક સુખોના સેવનથી મને કયો લાભ થવાનો છે ? આ પ્રકારનો
દૃઢ વિચાર કરી તપ અને સંયમની આરાધના કરતાં દ્વદશમિ મુનિરાજે નિર-
તિચાર સમ્યક્ત્વની રક્ષાથી દર્શનપરીપદ સહન કરી ક્ષપકથ્રેણી ઉપર આરુદ્ધ
બની કેવલિપદનો લાભ કરી પોતાના આત્માનું કલ્યાણ કર્યું. આ રીતે અન્ય
મુનિજનોએ પણ દર્શનપરીપદ જયી બનવું જોઈએ.

નનુ આત્પન્તિકશીતસ્પર્શે સતિ વહ્નિસાન્નિધ્યે, તથા-શરીરસ્યૈકસ્મિન્ ભાગે છાયાશ્રિતેઽપરસ્મિન્ ભાગે સૂર્યકિરણપ્રતપતે સતિ એકસ્ય પુરુષસ્ય એકસ્યાં દિશિ શીતમ્, અન્યસ્યાં ચોષ્ણમિત્યેવં દ્વયોરપિ શીતોષ્ણપરીપહયોર્યુગપત્ સંભવોઽસ્તીતિ ચેત્, ઉચ્યતે-અત્ર પરીપહે કાલકૃતશીતોષ્ણયોર્ગ્રહણમ્, અતો નાસ્થેતત્પ્રશ્ના-વકાશ इति ।

શંકા—શીતસ્પર્શી ઓર ઉષ્ણસ્પર્શી કા જો આપને પરસ્પર વિરોધ થતલાયા હૈ વહ જચતા નહીં હૈ, ક્યોં કિ આત્યંતિક શીતસ્પર્શી હોને પર ભી અગ્નિ કે સમીપ મેં, તથા શરીર કા એક ભાગ છાયાશ્રિત હોને પર, દ્સરા ભાગ સૂર્ય કી કિરણોં સે તસ હોને પર એક હી પુરુષ કો એક દિશા મેં શીત કા, અન્ય દિશા મેં ઉષ્ણ કા અનુભવ યુગપત્ હોતા હૈ, ઇસ પ્રકાર શીત ઓર ઉષ્ણસ્પર્શી કા એક હી પુરુષ મેં દેશાદિક કી અપેક્ષા એક સાથ સદ્ભાવ પાવે જાનેસે ઇનમેં આપ વિરોધ કેસે કહતે હૈં ।

ઉત્તર—ઇસ પ્રકાર કી આશંકા યહાં નહીં કરના ચાહિયે । ક્યોં કિ યહાં જો શીત ઉષ્ણ પરીપહ કા યુગપત્ વિરોધ થતલાયા ગયા હૈ વહ કાલ કી અપેક્ષા સે થતલાયા ગયા હૈ । શીતકાલ મેં શીતપરીપહ કા ઉષ્ણકાલ મેં ઉષ્ણપરીપહ કા સદ્ભાવ રહતા હૈ । શીતકાલ મેં ઉષ્ણકાલ નહીં હોતા ઓર ઉષ્ણકાલ મેં શીતકાલ નહીં હોતા, અતઃ ઇસ અપેક્ષા સે યહાં ઇસ પ્રશ્ન કે હોને કા અવકાશ હી નહીં હૈ ।

શંકા—શીતસ્પર્શી અને ઉષ્ણસ્પર્શીને જે આપે પરસ્પર વિરોધ બતાવેલો છે તે ખરેખર નથી. કેમકે, અત્યંતિક ઠંડીને સ્પર્શી હોવાથી પણ અગ્નિના સાંનિધ્યમાં તથા શરીરને એક ભાગ છાયાશ્રિત હોવાથી, બીજો ભાગ સૂર્યનાં કિરણોથી તૃપ્ત હોવાથી, એકજ માણસને એક દિશામાં ઠંડીનો અને બીજી દિશામાં ઉષ્ણનો અનુભવ યુગપત્ થાય છે. આ રીતે ઠંડી અને ઉષ્ણસ્પર્શીને એકજ માણસમાં દેશાદિકની અપેક્ષા એક સાથ સદ્ભાવ દેખાતાં આમાં આપ વિરોધ કેવી રીતે કહો છો ?

ઉત્તર—આ પ્રકારની આશંકા અહિં ન કરવી જોઈએ કેમકે, અહિં જે ઠંડી અને ઉષ્ણ પરીપહનો યુગપત્ વિરોધ બતાવવામાં આવેલ છે તે કાળની અપેક્ષાથી બતાવવામાં આવેલ છે. શીતકાળમાં ઠંડીનો પરીપહ અને ઉષ્ણકાળમાં ઉષ્ણપરીપહનો સદ્ભાવ રહે છે. શીતકાળમાં ઉષ્ણકાળ હોતો નથી અને ઉષ્ણકાળમાં શીતકાળ હોતો નથી. આથી આ અપેક્ષાએ અહિંયાં આ પ્રશ્ન થવાનો અવકાશ જ નથી.

અચેલા-રતિ-સ્ત્રી-નિપઘા-૬૬ક્રોશ-યાચના-સત્કારપુરસ્કારપરીપહા: મવન્તિ ।
 દર્શનમોહનીયોદયે-૧૬: દર્શનપરીપહ: -વેદનીયોદયે-૧૬૬ધુ-ત્વિપાસા-શીતો-
 ણ્ણ દંશમશક-ચર્યા-શર્યા-વધ-રોગ-તૂળસ્પર્શ-મલાશ્યા: પરીપહા: ઉત્પન્નંતે ।
 લાભાન્તરાયોદયે-૧૬: અલામપરીપહ: । અઘ્વિધકર્મબન્ધકસ્ય, તથા ૬૬યુર્વિજિત-
 સત્ત્વિધકર્મબન્ધકસ્ય ચ સંયતસ્ય દ્વાવિંશતિ: પરીપહા: સંભવન્તિ, તપ્ત સ ઉત્કર્ષતો
 યુગપદ્વિંશતિપરીપહાન્ વેદયતિ । યત્ર સમયે શીતપરીપહં વેદયતિ ન તદોષ્ણ-
 પરીપહમ્, યદા ચોષ્ણપરીપહં વેદયતિ, ન તદા શીતપરીપહં, તયો: પરસ્પરમત્ય-
 ન્તવિરોધેન એકદા એકત્રાસંમવાત્ । તથા યસ્મિન્ સમયે ચર્યાપરીપહમ્ વેદયતિ,
 ન તદા નિપઘાપરીપહમ્, યદા નિપઘા પરીપહં વેદયતિ ન તદા ચર્યાપરીપહં,
 ચર્યાનિપઘાપરીપહયોરપિ પરસ્પરમત્યન્તવિરોધેન એકદા એકત્રાસંમવાત્ ।

ચે દો પરીપહ હોતે હે । ચારિત્રમોહનીય કે ઉદય મેં અચેલ ૧; અરતિ
 ૨, સ્ત્રી ૩, નિપઘા ૪, આક્રોશ ૫, યાચના ૬, સત્કારપુરસ્કાર ૭,
 ચે ૭ સાત પરીપહ હોતે હે । દર્શનમોહનીય કે ઉદય મેં એક દર્શનપરી-
 પહ, વેદનીય કે ઉદય મેં ૧૧ ગ્યારહ પરીપહ-ધુધા ૧, તૃષા ૨, શીત ૩,
 ઉષ્ણ ૪, દંશમશક ૫, ચર્યા ૬, શર્યા ૭, વધ ૮, રોગ ૯, તૂળસ્પર્શ ૧૦,
 ઓર મેલ ૧૧ હોતે હે । લાભાન્તરાય કે ઉદય મેં એક અલામ
 પરીપહ ઉત્પન્ન હોતા હે । આઠોં પ્રકાર કે કર્મ કા બન્ધક તથા આયુ
 સિવાય સાત કર્મોં કા બન્ધક જો સંયત હે ઉસકે ૨૨ પાર્શ્વ પરીપહ
 હોતે હે । એક કાલ મેં જીવ અધિક સે અધિક ૨૦ વીસ પરીપહોં કા
 વેદન કર સકતા હે, ક્યોં કિ ચર્યા ઓર નિપઘા મેં સે કિસી એક કા,
 શીત એવં ઉષ્ણ મેં સે કિસી એક એક કા હી વેદન હોગા, દોનોં કા
 યુગપત્ નહીં, કારણ કિ ઇનકા પરસ્પર એક સાથ રહને મેં વિરોધ હે ।

પરીપહ છે. ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયમાં અચેલ, ૧ અરતિ, ૨ સ્ત્રી, ૩ નિપઘા, ૪
 આક્રોશ ૫ યાચના, ૬ સત્કારપુરસ્કાર, ૭ આ સાત પરીપહ હોય છે. દર્શનમોહ-
 નીયના ઉદયમાં એક દર્શનપરીપહ, વેદનીયના ઉદયમાં ૧૧ અગીયાર પરીપહ,
 બૂધ, ૧ તરસ, ૨ ઠંડી, ૩ ઉષ્ણ, ૪ દંશમશક, ૫ ચર્યા, ૬ શર્યા, ૭ વધ, ૮ રોગ,
 ૯ તૂળસ્પર્શ ૧૦ અને મેલ ૧૧ હોય છે. લાભાન્તરાયના ઉદયમાં એક અલામ
 પરીપહ ઉત્પન્ન થાય છે. આઠ પ્રકારનાં કર્મના બંધક તથા આયુ સિવાય સાત
 કર્મોના બંધક જે સંયત છે તેને ૨૨ બાવીસ પરીપહ હોય છે. એક કાળમાં એક જ
 અધિકમાં અધિક ૨૦ વીસ પરીપહનું વેદન કરી શકે છે. કેમકે, અર્થો અને નિપ-
 ઘામાંથી કોઈ એકનું ઠંડી અને ઉષ્ણમાંથી કોઈ એકનું જ વેદન થતું હોય છે.
 બન્નેનું યુગપત્ નહીં. કારણ કે, તેનો પરસ્પર એક સાથે રહેવામાં વિરોધ છે.

વેદુચ્યતે — સૂક્ષ્મસંપરાયસ્ય ચારિત્રમોહનીયં દર્શનમોહનીયં સત્તામાત્રં વર્તતે, ન તુ પરીપહહેતુભૂતઃ સૂક્ષ્મોઽપિ મોહનીયોદયોઽસ્તીતિ ન મોહનીયજન્યપરીપહો ભવતિ, તત્તથ પદ્ધિધવન્ધકસ્ય મોહનીયોદયાભાવેન સર્વત્રૌત્સુક્યનિવૃત્તિર્ભવતિ, ઔત્સુક્યનિવૃત્ત્યા ચ વિહારપરિણામાભાવઃ, તેન શય્યાપરીપહવેદનસમયે ચર્યાયા અભાવઃ । અત્ર તુ—મોહનીયોદયાદ્ વાદરરાગવચ્ચેન ઔત્સુક્યં વિહારપરિણામરૂપં સંભવતિ, તદા શય્યાપરીપહવેદનસમયે ચર્યાપરીપહં પરિણામરૂપેણ વેદયતિ, અતો વિંશતિપરીપહાન્ વેદયતીતિ કથનં સમ્યગેવ ।

કિ શય્યા ઓર નિપચા મેં સે એક ફિર ઘટ જાને સે વીસ કી જગહ ૧૯
ઉન્નીસ પરીપહોં કે વેદના કા હી સદ્ભાવ કહના ચાહિયે ?

ઉત્તર—સૂક્ષ્મસંપરાય સંયત કે ચારિત્રમોહનીય એવં દર્શનમોહનીય કેવલ સત્તામાત્ર હૈ, પરીપહ કા હેતુભૂત થોડા સા મોહનીય કા ઉદય વહાં નહીં હૈ કિ જિસસે વહાં મોહનીય કે ઉદય સે હોને વાલા પરીપહ હો સકે, અતઃ છહ કર્મોં કા બંધક જો સંયત હૈ ઉસકે મોહનીય કર્મ કે ઉદય કે અભાવ સે સર્વત્ર ઔત્સુક્ય કી નિવૃત્તિ હો જાતી હૈ । ઔત્સુક્ય કી નિવૃત્તિ સે વિહાર કરને કે પરિણામ કી મો નિવૃત્તિ હો જાતી હૈ, ઇસસે શય્યાપરીપહ કે વેદન કે સમય મેં વહાં ચર્યા કા અભાવ હૈ પરન્તુ જો સપ્તવિધ કર્મ કા અથવા અષ્ટવિધ કર્મ કા બંધક હૈ ઉસકે મોહનીય કા ઉદય હૈ ઇસસે વાદર રાગવાલા હોને સે ઉસકે વિહારપરિણામરૂપ ઔત્સુક્યભાવ સંભવિત હોતા હૈ । ઉસ સમય વહ શય્યાપરીપહ કે વેદન કે સમય મેં ચર્યાપરીપહ કી પરિણામ-

કારણ કે શય્યા અને નિપધામાંથી એક ઘટિ જવાથી વીસને બદલે એગણીસ પરીપહોના વેદનનો જ સદ્ભાવ કહેવો બોધ એ.

ઉત્તર—સૂક્ષ્મ સાંપરાય સંયતના ચારિત્ર મોહનીય અને દર્શનમોહનીયની કેવળ સત્તા માત્ર છે. પરીપહના હેતુભૂત થોડો પણ મોહનીયનો ઉદય ત્યાં નથી કે જેનાથી ત્યાં મોહનીયના ઉદયથી આવનાર પરીપહ થઈ શકે. આથી છ કર્મોના બંધક જે સંયત છે તેના મોહનીય કર્મના ઉદયના અભાવથી સર્વત્ર ઔત્સુક્યની નિવૃત્તિ થઈ જાય છે. ઔત્સુક્યની નિવૃત્તિથી વિહાર કરવાના પરિણામની પણ નિવૃત્તિ થઈ જાય છે. આથી શય્યાપરીપહના વેદનના સમયે ત્યાં ચર્યાનો અભાવ છે પરંતુ જે સાત પ્રકારના કર્મોના અથવા આઠ પ્રકારના કર્મોના બંધક છે તેને મોહનીયના ઉદય છે. આ કારણે બાદર રાગ વાળા હોવાથી એના વિહાર પરિણામ રૂપ ઔત્સુક્યભાવ સંભવિત બને છે. એ સમયે તે શય્યાપરીપહના વેદન સમયમાં ચર્યાપરીપહને પરિણામરૂપથી વેદિત

નનુ ભગવતા 'આયુર્મોહનીયવર્જિતપદ્ધિવિધર્મવન્ધકઃ સૂક્ષ્મસંપરાયસંયત ઉત્કર્ષતો યુગપદ્ દ્વાદશ પરીપહાન્ વેદયતિ' इत्युक्तम्, તત્ર યદા શય્યાપરીપહં વેદયતિ, ન તદા ચર્યાપરીપહમ્, યદા ચર્યાપરીપહં વેદયતિ, ન તદા શય્યાપરીપહમ્, इति कथितम्, કયં તર્હિ-સાત્ત્રવિધર્મવન્ધકોઽષ્ટવિધર્મવન્ધકશ્ચ સંયતો યુગપદ્ વિંશતિપરીપહાન્ વેદયેત્ । યતશ્ચર્યાયા સહ શય્યાનિપદ્યયોર્વિરોધેન ચર્યાસન્નાવે શય્યાનિપદ્યયોરસંભવાત્, एकोनविंशतेरेव परीपहाणां वेदनसंभव इति

શંકા—ભગવાન્ ને “આયુ એવં મોહનીય વર્જિત છહ કર્મોં કા બંધ કરનેવાલા સૂક્ષ્મસંપરાય ગુણસ્થાનવાલા સંયત ઉત્કર્ષ કી અપેક્ષા યુગપત્ ૧૨ વારહ પરીપહોંકા વેદન કરતા હૈ” એસા કહા હૈ સો ઉસમેં જિસ સમય વહ શય્યાપરીપહકા વેદન કરતા હૈ ઉસ સમય વહ ચર્યાપરીપહકા વેદન નહીં કરતા હૈ, ઓર જિસ સમય ચર્યાપરીપહ કા વેદન કરતા હૈ ઉસ સમય શય્યાપરીપહ કા વેદન નહીં કરતા સો હિસ પ્રકાર કી વિવક્ષા સે વહાં ચૌદહ પરીપહોં કે સામાન્ય કથન મેં ઉત્કર્ષક કી અપેક્ષા ધારહ પરીપહ કા વેદન કરના ઠીક બૈઠ જાતા હૈ, પરન્તુ જો આયુર્વર્જિત સાત પ્રકાર કે અથવા આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કા બંધક સંયત હૈ ઉસકે ચર્યા કે સાથ શય્યા ઓર નિપદ્યા કા વિરોધ હોને સે ચર્યા કે સદ્ભાવ મેં શય્યા ઓર નિપદ્યા કા સંભવ હો નહીં સકતા હૈ એસી પરિસ્થિતિ મેં હિસ સંયત કે જો ઉત્કર્ષક કી અપેક્ષા ૨૦ બીસ પરીપહોં કા સદ્ભાવ બતલાયા હૈ વહ કેસે સંગત હો સકતા હૈ, क्यों

શંકા—ભગવાને “આયુ અને મોહનીય વર્જિત છ કર્મોના બંધ કરવા-વાળા સૂક્ષ્મ સંપરાય સંયત ઉત્કર્ષની અપેક્ષા યુગપત્ બાર પરીપહનું વેદન કરે છે.” એવું કહ્યું છે તેા તેમાં જે સમય તે શય્યાપરીપહનું વેદન કરે છે. તે સમય તે ચર્યાપરીપહનું વેદન કરતા નથી. અને જે સમય ચર્યાપરી-પહનું વેદન કરે છે તે સમય શય્યાપરીપહનું વેદન નથી કરતા. આ પ્રકારની વિવિક્ષાથી ચૈદ પ્રકારના પરીપહોના સામાન્ય કથનમાં ઉત્કર્ષની અપેક્ષા બાર પરીપહનું વેદન કરવું બરાબર બંધ બેસતું છે. પરંતુ આયુર્વર્જિત જે સાત પ્રકારના અથવા આઠ પ્રકારના કર્મોના બંધક સંયત છે—એની ચર્યા સાથે શય્યા અને નિપદ્યાનો વિરોધ હોવાથી ચર્યાના સદ્ભાવમાં શય્યા અને નિપદ્યાનો સંભવ થઈ શકતો નથી. એવી પરિસ્થિતિમાં આ સંયત કે જે ઉત્કર્ષની અપેક્ષાએ બીસ પરીપહનો સદ્ભાવ બતાવેલ છે. તે કઈ રીતે સંગત થઈ શકે?

સમ્યક્ત્વ-મોહનીયરૂપસ્ય વૃદ્ધિ ભાગે ઉપશાન્તે, શેષે ચાનુપશાન્તે એવ સ્યાત્ । નપુંસકવેદં ચાસૌ દર્શનત્રયસ્ય શેષાંશેન સહોપશમયિતું પ્રવર્તતે, તત્થ નપુંસકવેદો-પશમાવસરે અનિવૃત્તિવાદરસંપરાયસ્ય સતો દર્શનમોહનીયસ્ય પ્રદેશત ઉદયોઽસ્તિ, ન તુ દર્શનમોહનીયસ્ય સત્તામાત્રમ્, તતસ્તન્નિમિત્તકો દર્શનપરીપદસ્તસ્યાસ્તિ, તત્થા-પ્તાવપિ પરીપદાન વેદયતિ ।

ઉત્તર—યહ અનિવૃત્તિવાદરસંપરાય ચાલા સંયમ દર્શનસસક કે ઉપશમ હોને કે ઉપર હી નપુંસકવેદાદિક કે ઉપશમકાલ મેં હોતા હૈ । હસકે દર્શનમોહનીય કા ઉદય પ્રદેશ કી અપેક્ષા સે માના ગયા હૈ । વહ હસ પ્રકાર—દર્શનસસક કે અન્તર્ગત જો મિથ્યાત્વ, મિશ્ર, સમ્યક્ત્વમોહનીય, યે ત્રીન દર્શન હૈ, હનકા અધિક સે અધિક જબ ઉપશમન હો જાતા હૈ તથા કુછ ભાગ અનુપશાન્ત રહતા હૈ તવ નપુંસક-વેદ કો યહ હસી અનુપશાન્ત દર્શનત્રય કે ભાગ કે સાથ ૨ ઉપશાંત કરને કે લિયે પ્રવૃત્ત હોતા હૈ, હસલિયે નપુંસકવેદ કે ઉપશમન કે કાલ મેં હસ અનિવૃત્તિવાદરસંપરાય ચાલે સંયત કે દર્શનમોહનીય કા પ્રદેશ કી અપેક્ષા સે ઉદય માના ગયા હૈ, અતઃ દર્શનમોહનીય કા હસકે કેવલ સત્તામાત્ર હી નહીં હૈ, પ્રદેશોદય ભી હૈ । હસસે હસકે દર્શનમોહનીય ઉદય જન્ય પરીપદ હૈ એસા માનના ચાહિયે હસસે વહાં વહ આઠ પરીપદોં કા વેદન કરતા હૈ ।

ઉત્તર—આ અનિવૃત્તિ બાદર સંપરાયવાળા સંયમદર્શનસસકનો ઉપ-શમ થવાના ઉપર જ નપુંસકવેદાદિકના ઉપશમ કાળમાં થાય છે. એના દર્શન-મોહનીયનો ઉદય પ્રદેશની અપેક્ષાથી માનવામાં આવેલ છે તે આ પ્રકારે—દર્શન સપ્તકના અંતર્ગત જે મિથ્યાત્વ, મિશ્ર, સમ્યક્ત્વ મોહનીય આ દર્શનત્રય છે. એમનો અધિકથી અધિક ભાગ બ્યારે ઉપશાંત થઈ જાય છે તથા થોડા ભાગ અનુપશાંત રહે છે ત્યારે નપુંસકવેદને આ એજ અનુપશાન્ત દર્શનત્રયના ભાગની સાથે સાથે ઉપશાંત કરવા માટે પ્રવૃત્ત થાય છે. આ માટે નપુંસક-વેદના ઉપશમના કાળમાં આ અનિવૃત્તિ બાદર સંપરાયવાળા સંયતના દર્શન-મોહનીયના પ્રદેશની અપેક્ષાથી ઉદય માનવામાં આવેલ છે. આથી દર્શન મોહનીયને એમાં કેવળ સત્તા માત્ર નથી, પ્રદેશોદય પણ છે. આથી એના દર્શન મોહનીય ઉદયજન્ય દર્શનપરીપદ છે. એમ માનવું જોઈએ. આથી ત્યાં તે આઠ પરિપદોનું વેદન કરે છે.

નવું અનિવૃત્તિવાદરસંપરાયસ્ય મોહનીયસંભવાનામપ્તાનામપિ પરીપહાનાં કથં સંભવઃ ? યતો દર્શનસપ્તકોપશમે વાદરકપાયસ્ય દર્શનમોહનાયોદયામાભેન દર્શન-પરીપહામાયાત્ સપ્તાનામેવ સંભવો નાપ્તાનામ્, અથ દર્શનમોહનીયોદયામાભેઽપિ દર્શનમોહનોયસત્તાઽપેક્ષયા દર્શનપરોપહોઽપિ સ્યાદિત્યુચ્યતે, તર્हि ઉપશમકરણે સૂક્ષ્મસંપરાયસ્યાપિ મોહનીયસત્તાસદ્ભાવાત્ કથં તજ્જનિતાઃ સર્વેઽપિ પરીપહા ન ભવન્તીતિ ન્યાયસ્ય સમાનત્વાત્ ? ।

અગ્રોચ્યતે—દર્શનસપ્તકોપશમસ્યોપર્યેવ નવુંસકવેદાધુપશમકાલે અનિવૃત્તિ-વાદરસંપરાયો ભવતિ, સ ચ દર્શનસપ્તકાન્તર્ગતસ્ય દર્શનત્રયસ્ય મિથ્યાત્વ-મિશ્ર-

રૂપ સે વેદિત કરતા હૈ । હસ કારણ વહ ૨૦ વીસ પરીપહોં કા વેદન કરતા હૈ, યહ કથન સમીચીન હી હૈ ।

શંકા—જો સંયત અનિવૃત્તિ વાદર સંપરાય વાલા હૈ ઉસકે મોહનીય સે સંભવિત આઠ પરીપહોં કી સંભાવના કૈસે હો સકતી હૈ ? ક્યોં કિ દર્શનસપ્તક કે ઉપશમ હાને પર ઉસ વાદર કષાય વાલે સંયત કે દર્શનમોહનીય કે ઉદય કે અભાવ સે દર્શનપરીપહ તો હોગા નહીં, ઇસલિયે વહાં આઠ કી જગહ ૭ સાન પરીપહ હી સંભવિત હોતે હૈ, ફિર આઠ કી સંભાવના કૈસે કહી ગઈ હૈ ? યદિ દર્શનમોહનીય કે ઉદય કે અભાવ મેં બી દર્શનમોહનીય કી સત્તા કી અપેક્ષા સે દર્શન-પરીપહ બી હૈ એસા કહા જાય તો ઉપશમક હોને પર સૂક્ષ્મસંપરાય વાલે કે બી મોહનીય કી સત્તા કે સદ્ભાવસે ઉસકે ઉદય સે હોનેવાલે સર્વ પરીપહ નહીં માનના ચાહિયે ક્યોં કિ ન્યાય સર્વત્ર સમાન હોતા હૈ ।

કરે છે આ કારણે તે વીસ પરીપહોનું વેદન કરે છે આ કથન સમીચીન જ છે.

શંકા—જે સંયત અનિવૃત્તિ વાદર સંપરાયવાળા છે તેના મોહનીયથી સંભવિત આઠ પરીપહોની સંભાવના કેવી રીતે બની શકે ? કેમકે દર્શનસપ્તક ઉપશમ કષાયથી એ વાદર કષાયવાળા સંયતના દર્શન મોહનીયના ઉદયના અભાવથી દર્શનપરીપહ તો થશે નહીં. આ માટે ત્યાં આઠની જગ્યાએ સાત પરીપહ જે સંભવિત દેખાય છે. છતાં આઠની સંભાવના કેમ કહેવાઈ છે ? કદાચ દર્શન મોહનીયના ઉદયના અભાવમાં પણ દર્શન મોહનીયની સત્તાની અપેક્ષા દર્શનપરીપહ પણ છે. એવું કહેવામાં આવે તો ઉપશમક હોવા છતાં સૂક્ષ્મ સંપરાયવાળાને પણ મોહનીયની સત્તાના સદ્ભાવથી તેના ઉદયથી થનાર સર્વ પરીપહ ન માનવા બોધ્યો. કારણ કે, ન્યાય સર્વત્ર સમાન હોય છે.

તત્ર પ્રથમં સ્થાનમ્-ઉદિતકર્મા । ઉદિતં પ્રવલં વા કર્મ=મિથ્યાત્વમોહનીયાદિ
યસ્ય સ તથા, સ્વલુ અયં પુરુષ ઉન્મત્તક્રમૂતો મદિરાદિના વિપ્લુતચિત્ત ઇવાસ્તિ,
તેન કારણેન 'મામયમાક્રોશતિ વા, અપહસતિ વા, નિચ્છોટયતિ=હસ્તાદી ગૃહીત્વા
ચલાત્ સિપતિ વા, દુર્વચનૈર્નિર્ભત્સયતિ વા, રજ્જ્વાદિના વધનાતિ વા, કારાગાર-
પ્રવેશનાદિના રુણદ્ધિ વા, છવિન્છેદ-છવેઃ શરીરાવયવસ્ય હસ્તાદેઃ છેદં કરોતિ વા,
મારણસ્થાનં નયતિ વા, મારયતિ વા, અપદ્રાવયતિ વા, ઉપદ્રવં કરોતિ વા, વસ્ત્ર,

અધિક સે અધિક સમય તક રચના ચાહિયે તાકિ ઉનકે સહન કરને
કી ક્ષમતા આત્મા મેં આતી રહે । પાંચ સ્થાનોં મેં સર્વપ્રથમ સ્થાન
ઉદિતકર્મા હૈ-મિથ્યાત્વ મોહનીય આદિ કર્મ જિસકા પ્રવલરૂપ સે
ઉદય મેં આરહા હૈ એસા જીવ ઉદિતકર્મા હૈ । હસ પ્રથમસ્થાન કો
લેકર જવ પરીપદ્દ એવં ઉપસર્ગોં કા નિપાત સંયત કે ઉપર હો તથ
ઉસે યહ વિચાર કરના ચાહિયે કિ યહ પુરુષ ઉદિતકર્મા હૈ-હસકા
મિથ્યાત્વમોહનીયાદિક કર્મ પ્રવલરૂપ સે ઉદય મેં આરહા હૈ, હસલિયે
યહ ઉન્મત્ત જૈસા હો રહા હૈ-મદિરા કે પાન સે જિસ પ્રકાર મનુષ્ય
હોશ હવાશ લો બેઠતા હૈ ઉસી તરહ કા યહ બના હુઆ હૈ, હસી કારણ
યહ મેરે પ્રતિ રુષ્ટ હો રહા હૈ, મેરી હૈંસી મેજાક કરતા હૈ, હાથ પકડ
કર મુક્કે લેંચના હૈ, દુર્વચનોં સે મેરા તિરસ્કાર કરતા હૈ, રસી આદિ
સે મુક્કે બાંધતા હૈ, કારાગાર મેં મુક્કે બંધ કરતા હૈ, મેરે શરીર કે અવ-
યવ કો છેદતા હૈ, વધસ્થાન પર મુક્કે લે જાતા હૈ, મારતા હૈ, મુક્કે યહાં

અધિક સમય સુધી રહેવું બેઠવું. જેથી તેને સહન કરવાની સમતા આત્મામાં
આવતી રહે. પાંચ સ્થાનોમાં સર્વપ્રથમ સ્થાન ઉદિત કર્મ છે. મિથ્યાત્વ
મોહનીય આદિ કર્મ જેવું પ્રખળ રૂપથી ઉદયમાં આવી રહેલ છે એવો જીવ
ઉદિત કર્મા છે. આ પ્રથમ સ્થાનને લઈને બ્યારે પરીપદ્દ અને ઉપસર્ગોના
નિપાત સાધુ સંયતની ઉપર હોય ત્યારે તેણે એ વિચાર કરવો બેઠવો એકે આ
પુરુષ ઉદિત કર્મા છે. તેવું મિથ્યાત્વ મોહનીયાદિક કર્મ પ્રખળ રૂપથી ઉદયમાં
આવી રહેલ છે આથી જ તે ઉન્મત્ત જેવો બની રહેલ છે. મદિરાના પાનથી જેવી
રીતે મનુષ્ય શુદ્ધિ બુદ્ધિ ખોઈ બેસે છે એવી રીતનું આ બનેલ છે. આ કારણથી
તે મારા તરફ રુષ્ટ બની રહેલ છે, મારી હાંસી મજાક કરે છે, હાથ પકડીને
મને ખેંચે છે. દુર્વચનોથી મારો તિરસ્કાર કરે છે, દોરડાં આંધિથી મને બાંધે
છે, કારાગારમાં મને બંધ કરે છે, મારા શરીરના અવયવોને છેદે છે, વધસ્થાન
ઉપર મને લઈ બેઠે છે, મારે છે, મને ત્યાંથી બગાડે છે, મારા ઉપર ઉપદ્રવ

૧. એતે ચ પરીપદા દ્વિવિધાઃ-દ્રવ્યપરીપદા ભાવપરીપદાઃ । તત્ર દ્રવ્યપરીપદા
નામ યે રૂપલોક નિમિત્તકા વધવંધનાદયઃ પરવશતાધિસમ્પન્તે તે । ભાવપરીપદા કે
સંસારોચ્છેદનાર્થમનાકુલેન મનસાઽધિસમ્પન્તે । અત્ર શાસ્ત્રે ભાવપરીપદાનામેવાધિકારઃ ।
અથ છદ્મસ્થપરીપદાણાં ભેદાઃ—

જ્ઞાનાવરણીયાદિઘાતિકર્મચતુષ્ટયં છદ્મ, તત્ર તિષ્ઠતીતિ છદ્મસ્થઃ=કમાયસરિતઃ,
સ પચ્ચમિઃ પરીપદાદિસહનાલમ્બનરૂપઃ સ્થાનેરુદિતાન્ પરીપદોપસર્ગાન્ સમ્યક્
તત્કપાયોદયનિરોધાઽઽદિના સહેત=ચિચલિતો ન ભવેત્, જ્ઞાન્ત્યા ક્ષમેત, અદીનઃ
તયા તિવિક્ષેત, અધ્યાસીત=પરીપદાદાએવ આધિક્યેનાસીત, ન ચલેત્ ।

યે પરીપદા દો પ્રકાર કે હૈં-એક દ્રવ્યપરીપદા દૂસરા ભાવપરીપદા । રૂપ
લોકસંબંધી જો વધ વંધન આદિક પરવશતા સે સહન કિયે જાતે હૈં કે
દ્રવ્યપરીપદા હૈં । સંસાર વંધન કો નષ્ટ કરને કે લિયે ભવ્ય સંયમીજનો
દ્વારા જો વિના કિસી આકુલતા કે સહન કિયે જાતે હૈં કે ભાવપરી-
પદા હૈં । રૂપ શાસ્ત્ર મેં રૂપી ભાવપરીપદા કો સહન કરને કા ઉપદેશ હૈં,
ઔર ઉસી નિમિત્ત યહ અધિકાર હૈં ।

છદ્મસ્થપરીપદાં કે ભેદ—જ્ઞાનાવરણીય આદિ ચાર ઘાતિયાકર્મ
કા નામ છદ્મ હૈં । રૂપ છદ્મ મેં જો રહતા હૈં ઉસકા નામ છદ્મસ્થ હૈં ।
એસા સંયમી જીવ કપાયસહિત હોતા હૈં । ઉસે પાંચ સ્થાનો સે ઉદિત
પરીપદાં એવં ઉપસર્ગો કો કપાય કે ઉદય કા નિરોધ આદિ કરતે રૂપ
સહન કરના ચાહિયે । શાન્તિભાવ સે અવિચલિત હોકર ઉસે ઉસ સમય
ઘરના નહીં ચાહિયે । પરીપદા આદિ કે સ્થાન મેં હી અપને આપકો

આ પરીપદા કે પ્રકારના છે-એક દ્રવ્યપરીપદા બીજો ભાવપરીપદા. આ લોક
સંબંધી જે વધ વંધન આદિક પરવશતાથી સહન કરવામાં આવે છે તે દ્રવ્યપરીપદા
છે. સંસાર વંધનને નષ્ટ કરવા માટે ભવ્ય સંયમી જનો દ્વારા જે કોઈ પ્રકારની
આકુલતા વગર સહન કરવામાં આવે છે તે ભાવપરીપદા છે. આ શાસ્ત્રમાં તે
ભાવપરીપદાને સહન કરવાનો ઉપદેશ છે અને એ નિમિત્તે આ અધિકાર છે.

છદ્મસ્થપરીપદાના ભેદ—

જ્ઞાનાવરણીય આદિ ચાર ઘાતિયા કર્મનું નામ છદ્મ છે. આ છદ્મમાં જે
રહે છે તેનું નામ છદ્મસ્થ છે. એવા સંયમીજીવ કપાય સહીત છે. એને પાંચ
સ્થાનોથી ઉદિત પરીપદા અને ઉપસર્ગોને કપાયના ઉદયનો નિરોધ આદિ સમજીને
સહન કરવા ભેદ છે. શાન્તિભાવથી અવિચલીત બનીને તેણે એ સમયે તેનાથી
ગભરાવું ન ભેદ છે. પરીપદા આદિના સ્થાનમાં જ પોતે પોતાને અધિકથી

તથા-એવ ચાલઃ પાપભયરહિતત્વાત્ કરોતુ નામ આક્રોશનાદિ, મમ પુનર સહમાનસ્ય=અક્ષમાણસ્ય અતિતિક્ષમાણસ્ય=અનધ્યાસમાનસ્ય, સર્વથા અસાતાદિ પાપકર્મ સંપદ્યતે । ઇતિ ચતુર્થ સ્થાનમ્ ।

તથા-એવ ચાલઃ પાપભયરહિતત્વાત્ કરોતુ નામ આક્રોશનાદિકં, મમ પુનઃ સલુ સમ્યક્ સહમાનસ્ય યાવત્ અધ્યાસમાનસ્ય કિં સંપદ્યતે, અયં તાવત્ પાપં વધ્નાતિ મયા ચ એકાન્તેન નિર્જરા ક્રિયતે । ઇતિ પચ્ચમં સ્થાનમ્ ।

તૃતીય સ્થાન મેં એસા વિચાર કરેં કિં યહ તો ચાલ હૈ, પાપ કે ભય સે રહિત હોને કે કારણ ભલે હી યહ આક્રોશ આદિ કરતા રહે, પરંતુ મેરા કર્તવ્ય તો इनको सहन करने का ही है । यदि मैं इनको सहन नहीं करता हूँ-सहन में साहस को छोड़ देता हूँ, इनसे यदि घबरा जाता हूँ तो मुझे असाता आदि पापकर्म का नियमतः बंध होगा । इस प्रकार यह चतुर्थ स्थान है ।

પંચમસ્થાન મેં સંયમી કો એસા વિચાર કરના ચાહિયે, કિં યહ પરીપદ્ધ એવં ઉપસર્ગકારી વ્યક્તિ પાપ કે ભય સે રહિત હોને કે કારણ ચાલ હૈ, इसकी इच्छा है यह आक्रोशादिक करे । इससे मेरा विगडता क्या है? मुझे तो उल्टा फायदा ही है, क्यों कि उपसर्ग और परीपद को समतापूर्वक सहन करनेवाले के एकान्ततः कर्मों की निर्जरा होती है; परंतु यह उपसर्ग परीपदकारी पुरुष पाप का बंध करता है । यह पंचम स्थान है ।

ત્રીજા સ્થાનમાં-એવો વિચાર કરે કે, આ તો જાણ છે, પાપને ભયથી રહિત થવાના કારણે ભલે એ આક્રોશ આદિ કરતો રહે પરંતુ મારું કર્તવ્ય તો એને સહન કરવાનું જ છે. એ હું તેને સહન કરતો નથી. તો સહિષ્ણુતાનાં શુભધર્મી વિમુખ થાઉં છું. એ તેનાથી હું ગભરાઈ બેઠો છું, તો મને અસાતા આદિ પાપે કર્મનો નિયમતઃ બંધ થશે. આ પ્રકારે આ ચોથું સ્થાન પણ છે.

પાંચમ સ્થાનમાં-સંયમીએ એવો વિચાર કરવો જોઈએ કે, આ પરીપદ્ધ એને ઉપસર્ગ કરનાર વ્યક્તિ પાપના ભયથી રહિત હોવાના કારણે જાણ છે. તેની ઇચ્છા છે કે, આ આક્રોશ આદિ કરે પણ તેથી મારું બગડે છે શું? મને તો એથી ઉલ્ટો ફાયદો જ છે. કારણકે ઉપસર્ગ અને પરીપદ્ધને સમતા પૂર્વક સહન કરનારને એકાન્તતઃ કર્મોની નિર્જરા થાય છે. પરંતુ દયાની વાત એ છે કે ઉપસર્ગ પરીપદ્ધકારી પુરુષ તો કેવળ પાપનો જ બંધ કરે છે. આ પાંચમું સ્થાન છે.

પાત્ર, કમ્બલ, પાદમોચ્છન, સદોરકમુલવલ્લિકાં રજોહરણં વા આચ્છિનત્તિ=
 વલાદુહાલપતિ વા, વિચ્છિનત્તિ=વિચ્છિન્નં કરોતિ દૂરે વ્યવસ્થાપયતિ વા, અથવા
 વલ્લમીપચ્છિનત્તિ-આચ્છિનત્તિ, વિશેષેણ છિનત્તિ-વિચ્છિનત્તિ । મિનત્તિ=પાત્ર
 સ્ફોટયતિ વા, અપહરતિ=ચોરયતિ વા । इदं चाक्रोशादिकमत्र आक्रोशवधाभिधान-
 परीपहद्वयरूपं-मन्तव्यम् । उपसर्गविवक्षायां तु मानुष्यकमाद्रेषिकाद्युपसर्गरूपमिति
 प्रथमं स्थानम् ।

તથા—અર્થ પરીપહોપસર્ગકારી, મિથ્યાત્વાદિકર્મવશવર્તી પુરુષો યજ્ઞાઽઽવિષ્ટઃ
 =દેવાધિષ્ઠિતઃ, તેન કારણેન મામાક્રોશતીત્યાદિ । इति द्वितीयं स्थानम् ।

તથા—મમ તદ્વયવેદનીયં કર્મ ઉદિતમસ્તિ, તેનૈષ મામાક્રોશતીત્યાદિ । तेनैव
 मानुष्यकेन भवेन वेद्यते=अनुभूयते यत्तत्, तद्वयवेदनीयम् । इति तृतीयं स्थानम् ।

સે ભગાતા હૈ, મેરે ऊपर उपद्रव करता है, वस्त्र, पात्र, कम्बल, पाद-
 मोच्छन, दोरासहित मुखवल्लिका रजोहरण आदि मेरे छुड़ाता है,
 और छुड़ाकर उन्हें दूर फेंक देता है, अथवा उन्हें झटकता है उन्हें फोड़ता
 है, चुराता है । ये आक्रोश आदि यहां पर आक्रोश एवं वधपरीपहरूप
 मानना चाहिये । जिस समय उपसर्ग की विवक्षा में ये आक्रोशादिक
 हों उस समय इनको मनुष्यकृत अथवा किसी द्वेषीकृत उपसर्ग में
 परिगणित करना चाहिये । इस प्रकार यह प्रथमस्थान है ।

द्वितीय स्थान में यह विचार करना चाहिये कि मिथ्यात्वादिकर्म-
 वशवर्ती यह, परीपह एवं उपसर्गकारी पुरुष किसी देव से अधिष्ठित
 हो रहा है । इसी कारण यह मुझे आक्रोश आदि से पीड़ित कर
 रहा है । यह द्वितीय स्थान है ।

કહે છે, વસ્ત્ર, પાત્ર, કમ્બલ, પાદમોચ્છન, દોરા સહિત મુખવલ્લિકા, રજોહરણ
 આદિ મારી પાસેથી ખસેડે છે, ખસેડીને તેને દૂર ફેંકી દે છે; અથવા તેને ઝાટકે
 છે, તેને ફોડે છે, ચોરાવે છે, એ આક્રોશ આદિ સર્વને આ રથેણ આક્રોશ અને વધ
 પરીપહરૂપ માનવા બેઈએ. એ સમયે ઉપસર્ગની વિવક્ષામાં એ આક્રોશ આદિક
 થાય તે સમયે એને મનુષ્યકૃત અથવા કોઈ દ્વેષીકૃત ઉપસર્ગમાં પરિગણિત
 કરવું બેઈએ. એ પ્રકારે આ પ્રથમ સ્થાન છે.

બીજા સ્થાનમાં—એ વિચાર કરવો બેઈએ કે, મિથ્યાત્વ આદિ કર્મના વશવર્તી
 આ પરીપહ અને ઉપસર્ગકારી પુરુષ કોઈ દેવથી અધિષ્ઠિત થઈ રહેલ છે. આ
 કારણથી મને આક્રોશ વગેરેથી પીડા આપી રહેલ છે. આ બીજું સ્થાન છે.

તથા-एष बालः पापभयरहितत्वात् करोतु नाम आक्रोशनादि, मम पुनर
सहमानस्य=अक्षममाणस्य अतितिक्षमाणस्य=अनध्यासमानस्य, सर्वथा असातादि
पापकर्म संपद्यते । इति चतुर्थं स्थानम् ।

तथा-एष बालः पापभयरहितत्वात् करोतु नाम आक्रोशनादिकं, मम पुनः
खलु सम्यक् सहमानस्य यावत् अध्यासमानस्य किं संपद्यते, अयं तावत् पापं वध्नाति
मया च एकान्तेन निर्जरा क्रियते । इति पञ्चमं स्थानम् ।

તૃતીય સ્થાન મેં એસા વિચાર કરેં કે યહ તો બાલ હૈ, પાપ કે ભય
સે રહિત હોને કે કારણ મહે હી યહ આક્રોશ આદિ કરતા રહે,
પરંતુ મેરા કર્તવ્ય તો ઇનકો સહન કરને કા હી હૈ । યદિ મેં ઇનકો
સહન નહીં કરતા હૂં-સહન મેં સાહસ કો છોડ દેતા હૂં, ઇનસે યદિ
ઘબરા જાતા હૂં તો મુક્તે અસાતા આદિ પાપકર્મ કા નિયમતઃ બંધ હોગા ।
इस प्रकार यह चतुर्थं स्थान है ।

પંચમસ્થાન મેં સંયમી કો એસા વિચાર કરના ચાહિયે, કિ યહ
પરીપદ્ધ એવં ઉપસર્ગકારી વ્યક્તિ પાપ કે ભય સે રહિત હોને કે કારણ
બાલ હૈ, ઇસકી ઇચ્છા હૈ યહ આક્રોશાદિક કરે । ઇસસે મેરા પ્રિગડતા
ક્યા હૈ? મુક્તે તો ઉલ્ટા ફાયદા હી હૈ, ક્યોં કિ ઉપસર્ગ ઓર પરીપદ્ધ કો
સમતાપૂર્વક સહન કરનેવાલે કે એકાન્તતઃ કર્મોં કી નિર્જરા હોતી હૈ,
પરંતુ યહ ઉપસર્ગ પરીપદ્ધકારી પુરુષ પાપ કા બંધ કરતા હૈ । યહ પંચમ
સ્થાન હૈ ।

ત્રીજા સ્થાનમાં-એવો વિચાર કરે કે, આ તો બાળ છે, પાપના ભયથી
રહિત થવાના કારણે ભલે એ આક્રોશ આદિ કરતો રહે પરંતુ મારું કર્તવ્ય
તો એને સહન કરવાનું જ છે. ભોલું તેને સહન કરતો નથી. તો સંહિષ્ણુતાનો
શુભ્રથી વિમુખ થાઉં છું. ભો તેનાથી હું ગભરાઈ બહુ, તો મને અસાતા આદિ
પાપ કર્મનો નિયમતઃ બંધ થશે. આ પ્રકારે આ ચોથું સ્થાન પણ છે.

પાંચમ સ્થાનમાં-સંયમીએ એવો વિચાર કરવો જોઈએ કે, આ પરીપદ્ધ
એને ઉપસર્ગ કરનાર વ્યક્તિ પાપના ભયથી રહિત હોવાના કારણે બાળ છે.
તેની ઇચ્છા છે કે, આ આક્રોશ આદિ કરે પણ તેથી મારું બગડે છે શું?
મને તો એથી ઉત્તરો ફાયદો જ છે. કારણકે ઉપસર્ગ અને પરીપદ્ધને સમતા પૂર્વક
સહન કરનારને એકાન્તતઃ કર્મોની નિર્જરા થાય છે. પરંતુ દયાની વાત એ છે કે
ઉપસર્ગ પરીપદ્ધકારી પુરુષ તો કેવળ પાપનો જ બંધ કરે છે. આ પાંચમું સ્થાન છે.

इत्येतैः पञ्चभिः स्थानैश्च ग्रन्थसंयतः उदितान् परीपहोपसर्गान् सम्यक् सहेत, समेत, तितिक्षेत, अध्यासीत ।

अथ केवलिपरीपहाणां भेदाः—

पञ्चभिः स्थानैः केवली उदितान् परीपहोपसर्गान् सम्यक् सहेत यावत् अध्यासीत । तद् यथा—सिप्तचित्तः=पुत्रशोकादिना नष्टचित्तः खलु अयं पुरुषः, तेन कारणेन—एष पुरुषो मामाक्रोशति वा तथैव यावत् अपहरति वा । इति प्रथमं स्थानम् ।

तथा—अयं पुरुषो हर्षाधिक्याद् दृष्टचित्तोऽस्ति, पुत्रजन्मादि जनितहर्षेण गर्वितोऽस्ति, तेन कारणेन एष पुरुषो मामाक्रोशति यावत् अपहरति वा । इति द्वितीयं स्थानम् ।

इस प्रकार इन पूर्वोक्त पांच स्थानों से उदित परीपह एवं उपसर्गों को सम परिणाम से युक्त हो कर साधु को सहन करना चाहिये । उन से घबराना नहीं चाहिये ।

केवलीपरीपहों के भेद—

केवली पांच स्थानों से उदित परिपहों को सहन करते हैं, यावत् अध्यासित करते हैं—अर्थात् सम्यक् रूपसे सहन करते हैं । प्रथम स्थानमें वे यह विचार करते हैं कि—यह पुरुष पुत्रशोक आदि से विक्षिप्तचित्त है—इसका चित्त ठिकाने पर नहीं है इस कारण यह मेरे प्रति आक्रोश आदि कर रहा है ।

द्वितीयस्थानमें वे यह विचार करते हैं कि यह पुरुष हर्षातिरेकसे दृष्टचित्त है—पुत्रोत्पत्ति आदि जनित हर्ष से गर्वित हो रहा है, इस कारण यह मेरे प्रति आक्रोश आदि चेष्टाएँ कर रहा है ।

આ પ્રકારનાં એ પૂર્વોક્ત પાંચ સ્થાનોથી ઉદિત પરિપહો અને ઉપસર્ગોને સમંભરિ-
ષ્ણામથી યુક્ત, અગ્નીને સાધુએ સહન કરવાં જોઈએ; એનાથી ગભરાવું ન જોઈએ.

કેવલીપરીપહોના ભેદ—

કેવલી પાંચ સ્થાનોથી ઉદિત પરિપહોને સહન કરે. યાવત અધ્યાસિત કરે. પ્રથમ સ્થાનમાં તે વિચાર કરે કે આ પુરુષ, પુત્રશોક આદિથી ચિત્તભ્રમ સ્થિતમાં છે. એનું ચિત્ત ઠેકાણે નથી તે કારણે તે મારા ઉપર આક્રોશ આદિ કરી રહેલ છે. બીજા સ્થાનમાં તે એવો વિચાર કરે કે, આ પુરુષ હર્ષના આવેશમાં કુલાઈ ગયેલ છે, પુત્રોત્પત્તિ વગેરેના કારણથી તે હર્ષથી છટકી ગયેલ છે. આ કારણે એ મારા તરફ આક્રોશ વગેરે ચેષ્ટાઓ કરે છે.

તથા—યક્ષાવિષ્ટઃ खलु अयं पुरुषः, तेन कारणेन एष पुरुषो मामाक्रोशति यावत्-अपहरति वा । इति तृतीयं स्थानम् ।

તથા—મમ પુનઃ खलु तद्भववेदनीयं कर्म उदितम् । तेन कारणेन एष पुरुषो मामाक्रोशति यावत्-अपहरति वा । इति चतुर्थं स्थानम् ।

તથા—માં પુનઃ खलु सम्यक् सहमानं क्षममाणं तितिक्षमाणम् अध्यासमानं दृष्ट्वा बहुषोऽन्ये छद्मस्थाः श्रमणा निर्ग्रन्था उदितान् परीपहोपसर्गान् एवं सम्यक् सहिष्यन्ते यावत् अध्यासिष्यन्ते । इति पञ्चમं स्थાનમ્ ॥

इत्येतैः पञ्चभिः स्थानैः केचली उदितान् परीपहोपसर्गान् सम्यक् सहेत् यावत् अध्यासीत । एतत् स्थानाङ्गसूत्रे स्पष्टम् । (स्था ५ ठा. १ उ०) ॥ ४५ ॥

તૃતીયસ્થાન મેં વે યહ વિચાર કરતે હેં કિ યહ પરીપહ એવં ઉપ-સર્ગાકારી વ્યક્તિ યક્ષાવિષ્ટ હો રહા હૈં હસ કારણ મેરે પ્રતિ આક્રોશ આદિ કર રહા હૈં ।

ચતુર્થસ્થાન મેં વે એસા વિચાર કરતે હેં કિ—મેરેં હસી ભવ કા વેદનીય કર્મ ઉદિત હો રહા હૈં હસ કારણ યહ પુરુષ મેરે પ્રતિ આક્રોશાદિક કર રહા હૈં ।

પંચમસ્થાન મેં એસા વિચાર કરતે હેં—મુજેં હન પરીપહ એવં ઉપ-સર્ગોં કો અચ્છી તરહ સહન કરતે હુણ દેઝકર અન્ય અનેક છદ્મસ્થ શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ ઉદિતપરીપહોં એવં ઉપસર્ગોંકો સહન કરેંગે, ઉનકે સહન કરને મેં ચલાયમાન નહીં હોવેંગે—સહન કરતે સમય ધૈર્ય ધારણ કરેંગે ।

હસ પ્રકાર હન પાંચ સ્થાનોં સે પરીપહોં એવં ઉપસર્ગોં કો સહન આદિ કરતે હેં । યહ સ્થાનાંગસૂત્રમેં સ્પષ્ટ લિખા હુઆ હૈં । (સ્થા. ૫ ડા. ૧) ॥ ૪૬ ॥

ત્રીજા સ્થાનમાં એવો વિચાર કરે છે કે, આ પરીપહ અને ઉપસર્ગ કરનાર વ્યક્તિ યક્ષાવિષ્ટ થઈ રહેલ છે. આ કારણે તે મારા તરફ આક્રોશ વગેરે કરી રહેલ છે.

ચોથા સ્થાનમાં એવો વિચાર કરે છે કે, મારાં આ ભવનાં વેદનીય કર્મ ઉદયમાં આવેલ છે, અને તે કારણને લઈ આ પુરુષ મારા તરફ આક્રોશ કરી રહેલ છે.

પાંચમા સ્થાનમાં એવો વિચાર કરે છે કે, મને આવા પરીપહ અને ઉપસર્ગોને સારી રીતે સહન કરતાં બોધને અન્ય અનેક છદ્મસ્થ નિઘન્ય શ્રમણ ઉદિત પરીપહો અને ઉપસર્ગોને સહન કરશે. તેના સહન કરવામાં ચલાયમાન નહીં થાય અને સહન કરતી વખતે ધૈર્ય ધારણ કરતા રહેશે.

આ પ્રકારે એ પાંચે સ્થાનોથી પરીપહો અને ઉપસર્ગોને સહન કરે. આ સ્થાનાંગસૂત્રમાં સ્પષ્ટ લખેલ છે. (સ્થા. ૫ ઉ૦ ૧) ॥ ૪૫ ॥

અધ્યયનાર્થમુપસંહરનાહ—

મૂલમ—એપ પરીસહા સંઘ્વે, કાસવેણં પવેદ્યા ।

જે ભિર્વસ્તુ ણે વિહમ્મેજ્ઞા, પુંટોકેણં કણંદુદ્ધ ॥૪૬॥ સિદ્ધેમિ ॥

॥ ધીયં પરિસહજ્ઞયણં સમત્તં ॥

છાયા—એતે પરીપહાઃ સર્વે, કાશ્યપેન પ્રવેદિતાઃ ।

યાન્ ભિક્ષુર્ન વિહન્યેત, સ્પૃષ્ટઃ કેનાપિ કસ્મિંશ્ચિત્ ॥૪૬॥ इति ब्रवीमि ॥

ટીકા—‘એપ’ इत्यादि ।

એતે સર્વે પરીપહાઃ કાશ્યપેન=કાશ્યપગોત્રોત્પન્નેન ભગવતા શ્રીવર્ધમાનસ્વામિના તીર્થકરેણ પ્રવેદિતાઃ—પ્રતિયોધિતાઃ । યાન્=પરીપહાન્ જ્ઞાત્વા ભિક્ષુઃ કેનાપિ પરીપહેણ કસ્મિંશ્ચિત્ સ્થાને સ્પૃષ્ટઃ સન્ ‘ન વિહન્યેત’=ન પરાજિતો ભવેત્, સંયમાત્

અવ અધ્યયન કે અર્થ કા ઉપસંહાર કરતે છુપ સૂત્રકાર કહતે હૈ—
‘એપ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(એપ પરીસહા—એતે પરીપહાઃ) યે ૨૨ ચાર્હસ પરીપહ (કાસ-
વેણ-કાશ્યપેન) કાશ્યપગોત્રોત્પન્ન તીર્થકર ભગવાન્ શ્રીમહાવીર સ્વામીને
(પવેદ્યા—પ્રવેદિતાઃ) કહે હૈ । (જે-યત્) જિનકા જાનકર (ભિક્ષુ-ભિક્ષુઃ)
ભિક્ષુ (કેણં-કેનાપિ) કિસી ખી પરીપહ સે (કણંદુદ્ધ-કુત્રચિત્) કિસી
સ્થાન મેં આક્રાન્ત હોને પર (ણ વિહમ્મેજ્ઞા-ન વિહન્યેત) પરાજિત નહીં

હવે અધ્યયનના અર્થનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે.—

‘એપ’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—એપ પરીસહા—એતે પરીપહાઃ આ બાવીસ પરીપહ કાસવેણ-કાશ્યપેન
કાશ્યપગોત્રોત્પન્ન તીર્થકર ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામીએ પવેદ્યા—પ્રવેદિતાઃ
કહેલ છે. જે-યત્ જેને બાણીને ભિક્ષુ-ભિક્ષુઃ કોઈ પણ ભિક્ષુ કેણં-કેનાપિ પરીપહથી
કણંદુદ્ધ-કુત્રચિત્ કોઈ સ્થાનમાં આક્રાન્ત થવાથી ન વિહમ્મેજ્ઞા-ન વિહન્યેત સંયમથી
ભિક્ષુ પ્રતિત ન થાય. “इति ब्रवीमि” આ પ્રકારે હે બંધુ ! ભગવાને જેવું કહ્યું
છે તેવું જ મેં કહ્યું છે. મારીચોતાની શુદ્ધિની કલ્પનાથી કોઈ પણ નથી.

પતિતો ન ભવેદિત્યર્થઃ । इति ब्रवीमि=भगवता यथा प्रतिबोधितं, तथा कथयामि
न तु स्वबुद्ध्या प्रकल्प्येति भावः ॥ ४६ ॥

इति श्रीविश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-

कलितललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मायक-

वादिमानमर्दक-श्रीशाहूछत्रपति-कोल्हापुरराजमदत्त-

“ जैनशास्त्राचार्य ”-यदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-

चालग्रन्थचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-

श्रीघासीलालव्रतिविरचितायां श्रीमदुत्तराध्ययन-

सूत्रस्य मિયર્શિન્યાख्यायाં व्याख्यायां

પરીપહનામકં દ્વિતીયમધ્યયનં

સમ્પૂર્ણમ્ ॥ ૨ ॥

—(૦)—

હોવે-સંયમ સે પતિત નહીં હોવે । “ इति ब्रवीमि ” इस प्रकार हे जम्बू !
भगवान् ने जैसा कहा है मैंने वैसा ही कहा है । अपनी बुद्धि से कल्पित
कर कुछ नहीं कहा है ।

भावार्थ—अध्ययन की समाप्ति करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि जो
साधु इन परीपहों से पराजित नहीं होता है वह संयम की ટીક ૨
આરાધના કરતા है । ये वाईस परीपह मैंने नहीं कहे हैं, भगवान् महा-
धीरने कहे हैं । अतः इनका स्वरूप जानकर इनके सहन करने में प्रत्येक
संयत को सावधान रहना चाहिये ॥

॥ यह द्वितीय परीपह अध्ययन समाप्त हुआ ॥ २ ॥



ભાવાર્થ—અધ્યયનની સમાપ્તિ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે, જે સાધુ
આ પરીપહોથી પરાજીત નથી થતાં, તે સંયમની ટીક ટીક આરાધના કરે છે.
આ બાવીસ પરીપહ મેં કહ્યા નથી ભગવાન મહાવીરે કહ્યા છે આથી એનું
સ્વરૂપ જાણીને તેને સહન કરવામાં પ્રત્યેક સંયતે સાવધાન રહેવું જોઈએ.

॥ આ બીજું પરીપહ નામનું અધ્યયન સમાપ્ત થયું ॥ ૨ ॥



અધ્યયનાર્થમુપસંહરનાહ—

મૂલમ—એષ પરીસહા સંઘ્વે, કાસવેણં પવેઙ્ગયા ।

જે ભિર્વસ્તૂ ણે વિહમ્મેજ્ઞાં, પુંદ્રો કેળ્હ કણ્દુહ ॥૪૬॥ સ્તિથેમિ ॥

॥ વીયં પરિસહજ્ઞયણં સમત્તં ॥

છાયા—એતે પરીપહાઃ સર્વે, કાશ્યપેન પ્રવેદિતાઃ ।

યાન્ ભિક્ષુર્ન વિહન્યેત, સ્પૃષ્ટઃ કેનાપિ કસ્મિંશ્ચિત્ ॥૪૬॥ इति ब्रवीमि ॥

ટીકા—‘ એ ’ इत्यादि ।

એતે સર્વે પરીપહાઃ કાશ્યપેન=કાશ્યપગોત્રોત્પન્નેન ભગવતા શ્રીવર્ધમાનસ્વામિના તીર્થકરેણ પ્રવેદિતાઃ—પ્રતિવોધિતાઃ । યાન્=પરીપહાન્ જ્ઞાત્વા ભિક્ષુઃ કેનાપિ પરીપહેણ કસ્મિંશ્ચિત્ સ્થાને સ્પૃષ્ટઃ સન્ ‘ ન વિહન્યેત=ન પરાજિતો ભવેત્, સંયમાત્

અથ અધ્યયન કે અર્થ કા ઉપસંહાર કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—
‘ એ ’ इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(એ પરીસહા—એતે પરાપહાઃ) એ ૨૨ ચાર્હસ પરીપહ (કાસ-
વેણ-કાશ્યપેન) કાશ્યપગોત્રોત્પન્ન તીર્થકર ભગવાન્ શ્રીમહાવીર સ્વામીને
(પવેઙ્ગયા—પ્રવેદિતાઃ) કહે હૈ । (જે—યત) જિનકા જ્ઞાનકર (ભિક્ષુ—ભિક્ષુઃ)
ભિક્ષુ (કેળહ—કેનાપિ) કિસી મી પરીપહ સે (કણ્દુહ—કુત્રચિત્) કિસી
સ્થાન મેં આક્રાન્ત હોને પર (ણ વિહમ્મેજ્ઞા—ન વિહન્યેત) પરાજિત નહીં

હવે અધ્યયનના અર્થનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે.—

‘ એ ’ इत्यादि.

અન્વયાર્થ—એ પરીસહા—એતે પરીપહાઃ આ બાવીસ પરીપહ કાસવેણ—કાશ્યપેન
કાશ્યપગોત્રોત્પન્ન તીર્થકર ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામીએ પવેઙ્ગયા—પ્રવેદિતાઃ
કહેલ છે. જે—યત જેને બાણીને ભિક્ષુ—ભિક્ષુઃ કોઈ પણ ભિક્ષુ કેળહ—કેનાપિ પરીપહથી
કણ્દુહ—કુત્રચિત્ કોઈ સ્થાનમાં આક્રાંત થવાથી ણ વિહમ્મેજ્ઞા—ન વિહન્યેત સંયમથી
ભિક્ષુ પતિત ન થાય. “ इति ब्रवीमि ” આ પ્રકારે છે. જાણું. ભગવાને જેવું કહ્યું
છે તેવું જ મેં કહ્યું છે. મારીચોતાની ભુદ્ધિની કલ્પનાથી કોઈ પણ કહેલ નથી.

मूलम्—चत्वारि परमंगाणि, दुल्लहाणीह जंतुणो ।

माणुसत्तं सुई सद्धा, संजंमम्मि यं वीरियं ॥१॥

छाया—चत्वारि परमाङ्गानि, दुर्लभानि इह जन्तोः ।

मानुपत्वं श्रुतिः श्रद्धा, संयमे च वीर्यम् ॥ १ ॥

टीका—‘चत्वारि’ इत्यादि ।

इह=संसारे चत्वारि परमाङ्गानि-परमाणु=उत्कृष्टानि, अङ्गानि=साधनानि-मुक्तिप्राप्तिकारणानि, जन्तोः=प्राणिनः, दुर्लभानि=दुःखेन लभ्यानि, नरकनिगोदाद्यनन्तजन्ममरणानन्तरप्राप्यत्वात् । तानि धर्मप्राप्तेः प्रधानकारणानि चत्वारि । कानि ? इत्यत आह—‘माणुसत्तं’ इत्यादि । मानुपत्वं=मनुष्यजन्म, श्रुतिः=धर्मस्य श्रवणम्, श्रद्धा=धर्मे रुचिः, च=पुनः संयमे आस्रवविरमणरूपे विरतिलक्षणे सप्तदशविधे वीर्यं विशेषेण ईरयति प्रवर्तयति आत्मानं तासु तासु क्रियासु इति वीर्यं=सामर्थ्यम् । एतानि चत्वारि जीवस्य दुर्लभानि सन्तीति ।

अन्वयार्थ—(इह) इस संसार में (चत्वारि परमंगाणि-चत्वारि परमाङ्गानि) मुक्तिप्रापक ये चार अंग (जंतुणो-जन्तोः) प्राणि को (दुल्लहाणि-दुर्लभानि) महादुर्लभ हैं-नरक निगोदादिक में अनन्त जन्म कर लेने के बाद जीवों को प्राप्त होते हैं । धर्मप्राप्ति के प्रधान कारण चार अंग ये हैं-(माणुसत्तं-मानुपत्वम्) १ मनुष्यजन्म, (सुई-श्रुतिः) २ धर्म का श्रवण, (सद्धा-श्रद्धा) ३ धर्म में श्रद्धा रुचि (य-च) और (संजंमम्मि य वीरियं-संयमे वीर्यम्) ४ आस्रव का विरमणरूप जो १७ सत्रह प्रकार का संयम है उसमें विशेषरूप से शक्ति के अनुरूप प्रवृत्ति । ये चार बातें जीवके लिये प्राप्त होना महादुर्लभ हैं ।

अन्वयार्थ—इह आ संसारमां चत्वारि परमंगाणि-चत्वारि परमाङ्गानि मुक्ति आपनार ये चार अंग जंतुणो-जन्तोः प्राणीने दुल्लहाणि-दुर्लभानि भडा दुर्लभ छे. नरक निगोदादिकमां अनन्त जन्म करी बीधा पछी एवोने प्राप्त थाय छे. धर्म प्राप्तितुं प्रधान कारण आ चार अंग छे माणुसत्तं-मानुपत्वम् १ मनुष्य जन्म, सुई-श्रुतिः २ धर्मनुं श्रवण सद्धा-श्रद्धा ३ धर्ममां श्रद्धा-इथी य-च अने संजंमम्मि वीरियं-संयमे वीर्यम् ४ आस्रवना विरमणरूप जे सत्तर प्रकारनो संयम छे तेमां विशेषरूपथी शक्तिनी अनुरूप प्रवृत्ति आ चारे बातो एव भाटे प्राप्त भवी भडा दुर्लभ छे.

॥ અથ તૃતીયમધ્યયનમ્ ॥

પરીપહનામકં દ્વિતીયમધ્યયનમુક્તમ્ । અથ તૃતીયં ચતુરંગીયમધ્યયનં પ્રારમ્ભ્યતે ।
 અસ્ય ચાયમભિસમ્બન્ધઃ—શ્દાનન્તરાધ્યયને પરીપહાઃ સોઢવ્યા ઇત્યુક્તમ્, તત્ર
 ‘કિમાલમ્બનં કૃત્વા તે સોઢવ્યાઃ ?’ ઇત્યાકાઢ્ઢાયાં ચતુર્ણમિજ્ઞાનાં દુર્લભસ્વમેવ
 તત્રાલમ્બનમિતિ યોધયિતું ચતુરંગીયનામકમિદં તૃતીયમધ્યયનમુચ્યતે, તત્રાદૌ તેષાં
 નામાનિ નિર્દિશન્નાહ—

તૃતીય અધ્યયન—

પરીપહનામક દ્વિતીય અધ્યયન કહા જા ચુકા હૈ । અબ ચતુ-
 રંગીયનામક તૃતીય અધ્યયન પ્રારંભ હોતા હૈ । દ્વિતીય અધ્યયન કે
 ષાદ હસ અધ્યયન કો પ્રારંભ કરને કા સૂત્રકાર કા યહ ઉદ્દેશ્ય હૈ કિ
 જો દ્વિતીય અધ્યયન મેં “પરીપહ સહન કરના ચાહિયે” એસા કહા હૈ
 સો વહાં પર એસા પ્રશ્ન હોતા હૈ કિ “ઇન પરીપહોં કો કિસકા અંબલમ્બન
 લેકર સહન કરના ચાહિયે” । હસકે સમાધાન નિમિત્ત હી હસ તૃતીય
 અધ્યયન કા પ્રારંભ હૈ । હસમેં યહ બતલાયા જાયગા કિ ચાર પરમ-
 ઉત્કૃષ્ટ અંગોં કી પ્રાપ્તિ મહાદુર્લભ હૈ । યે ચાર અંગ બડે પુણ્ય સે મિલે
 હૈ, એસા સમજકર સુનિ પરીપહોં કો સહન કરતે હૈ, વે હી ચાર અંગ
 યહાં અવલમ્બન-આધાર-રૂપ હૈ અતઃ ડન ચાર અંગોંકો યહાં બતલાતે હૈ—
 ‘ચત્તારિ’—ઇત્યાદિ ।

અધ્યયન ત્રીણું

પરીપહ નામનું ત્રીણું અધ્યયન કહેવાઈ ગયું. હવે ચતુરંગીય નામનું
 ત્રીણું અધ્યયન શરૂ થાય છે. ત્રીજા અધ્યયન પછી આ ત્રીજા અધ્યયનનો
 પ્રારંભ કરવાનો સૂત્રકારનો એ ઉદ્દેશ છે કે, ત્રીજા અધ્યયનમાં “પરીપહ સહન
 કરવો જોઈએ” એવું કહેલ છે. તેમાં એવો પ્રશ્ન ઉત્પન્ન થાય છે કે, આ
 પરીપહોને કોનું અવલંબન લઈને સહન કરવા જોઈએ. એના સમાધાન નિમિત્તે
 જ આ ત્રીજા અધ્યયનનો પ્રારંભ છે. આમાં એ વાત બતાવવામાં આવે છે કે,
 ચાર પરમ-ઉત્કૃષ્ટ અંગોની પ્રાપ્તિ મહા દુર્લભ છે. એ ચાર અંગ ઘણા પુન્યથી
 મળે છે. એવું સમજીને સુનિ પરીપહોને સહન કરે. એ ચાર અંગ અહીં
 અવલંબન આધાર રૂપ છે. આથી એ ચાર અંગોને અહીં બતાવવામાં આવેલ છે.

‘ચત્તારિ’ ઇત્યાદિ.

માનુષત્વાદિષુ ચતુર્ણામપ્યેકસ્યામાવે મોક્ષો ન સંભવતીત્યતુક્તં 'ચત્તારિ' इति ।
ધર્મશ્રવણં વિનાઽપિ યસ્ય શ્રદ્ધા દૃશ્યતે સા જન્માન્તરીયશ્રવણજન્યૈવેતિ નાસ્તિ
શક્ત્વાસરઃ । મૃદં વિના ઘટ ઇવ, તન્તૂન વિના પટ ઇવ, કાષ્ઠં વિના શકટમિવ
માનુષત્વાદિચતુષ્ટયં વિના મોક્ષો ન ભવતિ ।

નિર્જરા કી અપેક્ષા યે ચાર અંગ સર્વપ્રથમ ઉપાદેય હોને કે કારણ
મુખ્ય હૈ । ઇસલિયે ડનમેં હી ઉત્કૃષ્ટતા આતી હૈ । ઇન ચારોં મેં સે યદિ
એક ભી અંગ કા અભાવ રહતા હૈ તો મુક્તિ કા લાભ જીવ કો નહોં
હો સકતા હૈ । યહી વાત "ચત્તારિ" ઇસ વિશેષણ સે પુષ્ટ કી ગઈ હૈ ।

પ્રશ્ન—ધર્મ કે શ્રવણ સે હી જીવ કો ધર્મ મેં શ્રદ્ધા હાતી હૈ, એસા
એકાન્તિક નિયમ નહીં હૈ, ક્યોં કિ પ્રાયઃ એસે ભી જીવ દેલે જાતે હૈ
કિ જો ધર્મ કા શ્રવણ તો નહીં કરતે હૈ ફિર ભી ડનકી ધર્મ મેં
અટૂટ શ્રદ્ધા રહતી હૈ ।

ઉત્તર—પ્રશ્ન ઠીક હૈ । પરંતુ ડસકા ઉત્તર યહ હૈ કિ—જો જીવ
એસે હૈં કિ ધર્મ શ્રવણ કિયે વિના ભી ધર્મ મેં શ્રદ્ધાશાલી હોતેહૈં ડનહોં ને
પહિલે ભવ મેં ધર્મશ્રવણ કિયા હૈ, ડસીકા પ્રતાપ હૈ । મિટી
કે વિના જૈસે ઘટ ઉત્પન્ન નહીં હો સકતા હૈ, તન્તુઓં કે વિના
જૈસે વસ્ત્ર નહીં વન સકતા હૈ, કાષ્ઠ કે વિના જૈસે શકટ કા નિર્માણ

ચાર અંગ સર્વ પ્રથમ ઉપાદેય થવાના કારણે મુખ્ય છે. આ કારણે તેનામાં
ઉત્કૃષ્ટતા આવે છે. આ ચારમાંથી જો એક પણ અંગનો અભાવ રહે તો
મુક્તિનો લાભ જીવને થઈ શકતો નથી. આ વાત "ચત્તારિ" એ વિશેષણથી
નક્કી કરવામાં આવેલ છે.

પ્રશ્ન—ધર્મના શ્રવણથી જ જીવને ધર્મમાં શ્રદ્ધા થાય છે એવો એકાન્તિક
નિયમ નથી. કેમકે, ઘણા એવા જીવ જોવામાં આવે છે કે, જે ધર્મનું શ્રવણ
કરતા નથી છતાં પણ એની ધર્મમાં અટૂટ શ્રદ્ધા રહે છે.

ઉત્તર—પ્રશ્ન ઠીક છે. પરંતુ એનો ઉત્તર એ છે કે, જે જીવ એવા છે કે
જે ધર્મનું શ્રવણ ક્યો વગર પણ ધર્મમાં શ્રદ્ધાવાળા છે, એમણે આગલા ભવમાં
ધર્મ શ્રવણ કરેલું હોય છે આથી જ આ ભવમાં ધર્મમાં જે શ્રદ્ધા છે તે પરભવને
વીશે સાંભળેલા ધર્મ શ્રવણનો પ્રતાપ છે. માટી વગર જેમ ઘડો બની શકતો નથી,
તંતુઓ વગર જેમ વસ્ત્ર બની શકતું નથી, લાકડા વગર જેમ શકટનું નિર્માણ

एतदङ्गचतुष्टयं हि गिरिषु मेरुरिव, तरुषु कल्पतरुरिव, धातुषु सुवर्णमिव, पानेषु पीयूषमिव, मणिषु चिन्तामणिरिव, ग्रामाणिकपुरुषेषु तीर्थंकर इव, धेनुषु कामधेनुंरिव, मनुष्येषु चक्रवर्तीव, देवेषु शक्र इव प्रधानमस्तीति सूचनार्थं 'परमंगाणि' इत्यत्र परमेति विशेषणम् ।

ननु मानुषत्वादीनां कथं परमाङ्गत्वम् निर्जराया एव मुक्तिप्राप्तौ साक्षात् कारणत्वेन प्राधान्यादिति चेत्? उच्यते—मानुषत्वादितुष्टयं विना निर्जराया अनुत्पत्त्या तदपेक्षया मानुषत्वादितुष्टयस्य प्रथमोपादेयतया मुख्यत्वादुक्तुष्टत्वमस्ति ।

ये चાર અંગ, પર્વતોં મેં જૈસે મેરુ પ્રધાન હૈ, વૃક્ષોં મેં જૈસે કલ્પવૃક્ષ પ્રધાન હૈ, ધાતુઓં મેં જૈસે સુવર્ણ પ્રધાન હૈ, પેય પદાર્થોં મેં જૈસે અમૃત પ્રધાન હૈ, મણિયોં મેં જૈસે ચિન્તામણિ પ્રધાન હૈ, ગ્રામાણિક પુરુષોં મેં જૈસે તીર્થંકર પ્રધાન હૈ, ગાયોં મેં જૈસે કામધેનુ પ્રધાન હૈ, મનુષ્યોં મેં જૈસે ચક્રવર્તી પ્રધાન હૈ ઓર દેવોં મેં જૈસે ઇન્દ્ર પ્રધાન હૈ ડસી પ્રકાર યે બાર અંગ પ્રધાન હેં । હસી વાત કો ચોતન કરને કે લિયે સૂત્રકારને “પરમ” યહ વિશેષણ દિયોં હૈ ।

પ્રશ્ન—માનુષત્વ આદિ મેં પરમાંગતા-પ્રધાનતા કૈસે હો સકતી હૈ ।
ક્યોં કિ મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ મેં નિર્જરા હી સાક્ષાત્કારણ હોતી હૈ અતઃ નિર્જરા કી પ્રધાનતા હૈ ।

ઉત્તર—યયપિ મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ મેં સાક્ષાત્કારણ નિર્જરા હૈ પરંતુ નિર્જરા નિરાશ્રય તો હોગી નહીં, અતઃ માનુષત્વાદિ ચાર કે વિના જબ નિર્જરા નહીં બન સકતી હૈ તો યહ વાત સ્વતઃ સિદ્ધ હોતી હૈ કિ

જેવી રીતે પર્વતોમાં મેરુ પ્રધાન છે, વૃક્ષોમાં જેમ કલ્પવૃક્ષ પ્રધાન છે, ધાતુમાં જેમ સુવર્ણ પ્રધાન છે, પીવાના પદાર્થોમાં જેમ અમૃત પ્રધાન છે, મણીઓમાં જેમ ચિન્તામણી પ્રધાન છે, ગ્રામાણિક પુરુષોમાં જેમ તીર્થંકર પ્રધાન છે, ગાયોમાં જેમ કામધેનુ પ્રધાન છે, મનુષ્યોમાં જેમ ચક્રવર્તી પ્રધાન છે, અને દેવોમાં જેમ ઇન્દ્ર પ્રધાન છે, આવી રીતે આ ચાર અંગ પ્રધાન છે. આ વાતને સમજાવવા માટે સૂત્રકારે “પરમ” એવું વિશેષણ આપેલ છે.

પ્રશ્ન—મનુષ્યત્વ આદિમાં પરમાંગતા-પ્રધાનતા કઈ રીતે હોઈ શકે કેમકે, મુક્તિની પ્રાપ્તિમાં નિર્જરા જ સાક્ષાત્કારણ હોય છે. આથી નિર્જરાની પ્રધાનતા છે.

ઉત્તર—કહાય મુક્તિની પ્રાપ્તિમાં સાક્ષાત્કારણ નિર્જરા છે. પરંતુ નિર્જરા નિરાશ્રય તો રહે નહીં. આથી માનુષત્વાદિ ચાર અંગ વગર નિર્જરા બની શકતી નથી. આથી આ વાત સ્વતઃ સિદ્ધ થાય છે કે, નિર્જરાની જ

ચુલન્યામાસક્તો જાતઃ । તયોર્દુશ્ચરિતં બ્રહ્મદત્તેન વિદિતમ્ । બ્રહ્મદત્તેન કાકહંસી
યુગલં પિપ્પ્લમયં મૈથુનપરાયણં નિર્માય શૂલપ્રોતં કૃત્વા તાભ્યાં પ્રદર્શિતમ્ । તથા-
ગોનસ-પદ્મનાગિનીયુગલં પિપ્પ્લમયં કૃત્વા વાચા તર્જયતિ-રે દુષ્ટ ! દુરાચારિન !
ગોનસ ! કિં પદ્મનાગિન્યા સહ રમસે ? તત્કલં મુદ્ધસ્વ, ઇત્યુત્ત્વા તદુભયં પ્રજ્વલજ્જ્વ-
લને પ્રક્ષિપતિ । એવં દુષ્કર્મનિવૃત્ત્યર્થં બ્રહ્મદત્તપ્રદર્શિતં દણ્ડં વિલોક્યાપિ તૌદુષ્કર્મ-
કરણાન્ન નિવૃત્તૌ । તત્ચુલન્યા દીર્ઘપૃષ્ઠનૃપેણ ચ પરસ્પરં વિચાર્ય બ્રહ્મદત્તસ્ય વિવાહઃ

તો વહ દીર્ઘપૃષ્ઠ ચુલની કે મોહ મેં ફસ ગયા । ચુલની ઓર દીર્ઘપૃષ્ઠ
કે દુશ્ચરિત કી વાત બ્રહ્મદત્ત કે કાન તક મી પહુંચ ગઈ । બ્રહ્મદત્ત ને
ઉન દોનોં કો શિક્ષા દેને કે અભિપ્રાય સે આટે કા-એક, મૈથુન મેં પરા-
યણ કાક ઓર હંસી કા જોડા નિર્માણિત કર ઓર ઉસે શૂલ મેં પિરો-
કર ઉન દોનોં કો દિલ્લાયા । તથા ગોનસ (ફળરહિત સર્પ) ઓર
પદ્મનાગિની કા મી એક જોડા આટે સે ઉસને તયાર કિયા, ઓર
ઉન્હીં કે સમક્ષ કહને લગા રે-દુષ્ટ ! દુરાચારી ગોનસ ! તુમે લજ્જા નહીં
આતી જો તૂ પદ્મનાગિની કે સાથ રમતા હૈ ? અરે અધમ ! તૂ અબ
અપને કિયે હુએ કર્મ કા ફલ ભોગ । હસ પ્રકાર વાણી સે તર્જિત કર
ઉસને ઉન દોનોં કો જલતી હુઈ અગ્નિ મેં ઢાલ દિયા । હસ પ્રકાર
દુષ્કર્મ કી નિવૃત્તિ કે લિયે બ્રહ્મદત્ત કે દ્વારા પ્રદર્શિત દણ્ડ કો દેલ્લકર
મી રાની ઓર દીર્ઘપૃષ્ઠ અપને અનર્થવિધાયક દુષ્કર્મ સે પીછે નહીં હટા ।

સમય વિતી ગયા બાદ તે દિર્ઘપૃષ્ઠ ચુલનીના મોહમાં ફસાઈ ગયો. ચુલની
અને દિર્ઘપૃષ્ઠની આ દુશ્ચરિતની વાત બ્રહ્મદત્તના કાન સુધી પહોંચી ગઈ,
બ્રહ્મદત્તે એ બંનેને શિક્ષા દેવાના અભિપ્રાયથી આટામાંથી (લોટમાંથી)
એક મૈથુનમાં પરાયણ કાક અને હંસલીનું જોડું નિર્માણ કરી તેને શુદ્ધમાં
પરોવીને તે બંનેને બતાવ્યું. તથા ફેણ વગરનો સાપ અને પદ્મનાગણનું
પણ એક જોડું આટામાંથી (લોટમાંથી) બનાવી તૈયાર કર્યું. અને તેની સામે
કહેવા લાગ્યો, રે દુષ્ટ ! દુરાચારિ ગોનસ (ફેણ રહિત સર્પ) ! તને લાજ નથી
આવતી કે તું, પદ્મનાગણની સાથે રમી રહ્યો છે. અરે અધમ ! તું હવે પોતાના
કરેલા કર્મનું ફળ ભોગવ. આ પ્રકારે કહીને એ બંનેને તેણે બડબડતી
અગ્નિમાં નાખી દીધા. આ પ્રકારે દુષ્કર્મની નિવૃત્તિ માટે બ્રહ્મદત્તદ્વારા
પ્રદર્શિત દંડને જોઈને રાણી અને દિર્ઘપૃષ્ઠ પોતાના અનર્થ વિધાયક
દુષ્કર્મથી પાછાં ન ફર્યા. એક દિવસની વાત છે કે, આ બંનેએ એકાંતમાં

માનુપત્વં દુર્લભમિત્યત્ર દશ દૃષ્ટાન્તાઃ પ્રદર્શ્યન્તે, તદ્ યથા-ચોલ્લકઃ ૧, પાશકઃ ૨, ધાન્યં ૩, ઘૂતં ૪, રત્નં ૫, સ્વપ્નઃ ૬, ચક્રં ૭, કૂર્મઃ ૮, યુગં ૯, પરમાણુઃ ૧૦ ।

અથ પ્રથમચોલ્લકદૃષ્ટાન્તઃ-ચોલ્લકો=ભોજનં તદુપલક્ષિતો દૃષ્ટાન્તઃ પ્રોચ્યતે-કામ્પિલ્યનગરે બ્રહ્મનામકો નૃપતિરાસીત્, તસ્ય માર્યાં ચુલનીનામ્ની, પુત્રો બ્રહ્મદત્તનામકઃ । તસ્મિન્ બ્રહ્મનૃપતૌ મૃતે સતિ તત્પુત્રસ્ય બ્રહ્મદત્તસ્ય બાલ્યાવસ્થાં વિલોક્ય બ્રહ્મનૃપસુહૃદ્ દીર્ઘપૃષ્ઠનામકો નૃપસ્તદ્રાજ્યં રક્ષતિ । તદનન્તરં સ નહીં હો સકતા હૈ ડસી તરહ્ ઇન માનુપત્વ આદિ ચાર અંગોં કી પ્રાપ્તિ હુપ વિના મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હો સકતી હૈ ।

“માનુપત્વં દુર્લભં” મનુષ્યપન કી પ્રાપ્તિ મહાદુર્લભ હૈ, ઇસ વિષય મેં દશ દૃષ્ટાન્ત કહે જાતે હૈં, જૈસે-ચોલ્લક ૧, પાશક ૨, ધાન્ય ૩, ઘૂત ૪, રત્ન ૫, સ્વપ્ન ૬, ચક્ર ૭, કૂર્મ ૮, યુગ ૯ પરમાણુ ૧૦ ।

ચોલ્લક નામ ભોજનકા હૈ । ઇસસે ઉપલક્ષિત હોનેસે ચોલ્લક કો બી દૃષ્ટાન્ત કહ દિયા ગયા હૈ । યહ પ્રથમ ચોલ્લકદૃષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—

કામ્પિલ્ય નગર મેં બ્રહ્મ નામ કા રાજા થા । ઇસકી સ્ત્રી કા નામ ચુલની ઓર પુત્ર કા નામ બ્રહ્મદત્ત થા । રાજા બ્રહ્મ કે કાલ પ્રાપ્ત હો જાને કે બાદ બ્રહ્મદત્ત કી ચાલ અવસ્થા દેખકર “રાજ્ય મેં અવ્યવસ્થા ન ફેલ જાય” ઇસ દૃષ્ટિ સે રાજા બ્રહ્મ કે મિત્ર દીર્ઘપૃષ્ઠ નામ કે રાજા ને ડસકે રાજ્ય કો સંભાલ લિયા । જબ કુછ સમય વ્યતીત હો ગયા

થઈ શકતું નથી, એજ રીતે આ માનુપત્વ આદિ ચાર અંગોની પ્રાપ્તિ થયા વિના મુક્તિની પ્રાપ્તિ થવને થઈ શકતી નથી.

માનુપત્વં દુર્લભં મનુષ્યપણની પ્રાપ્તિ મહાદુર્લભ છે, આ વિષયમાં દશ દૃષ્ટાંત કહેવામાં આવે છે. જેમ-ચોલ્લક ૧, પાશક ૨, ધાન્ય ૩, ઘૂત ૪, રત્ન ૫, સ્વપ્ન ૬, ચક્ર ૭, કૂર્મ ૮, યુગ ૯, પરમાણુ ૧૦.

ચોલ્લક નામ ભોજનનું છે એથી ઉપલક્ષિત થવાથી ચોલ્લકનું પણ દૃષ્ટાંત કહેવામાં આવેલ છે. આ પ્રથમ ચોલ્લકદૃષ્ટાંત આ પ્રકારનું છે.—

કામ્પિલ્ય નગરમાં બ્રહ્મનામનો રાજા હતો. તેની સ્ત્રીનું નામ ચુલની અને પુત્રનું નામ બ્રહ્મદત્ત હતું. રાજા બ્રહ્મની કાળપ્રાપ્તિ પછી, બ્રહ્મદત્તની બાળ અવસ્થા જોઈને “રાજ્યમાં અવ્યવસ્થા ન ફેલાઈ જાય” આ દૃષ્ટીથી રાજા બ્રહ્મના મિત્ર દીર્ઘપૃષ્ઠ નામના રાજાએ તેના રાજ્યને સંભાળી લીધું. મોડે

તત્સમીપે પ્રકોષ્ઠકાન્તરે શયનાર્થ ગતઃ । તદાઽર્ધરાત્રે જનન્યાઽગ્નિસંયોજનાત્
તજ્જતુગૃહં પ્રદીપિતમ્ । બ્રહ્મદત્ત ઉત્થિતઃ । તદા વરધનુર્બ્રહ્મદત્તં વદતિ-નાથ !
માસાદઃ પ્રજ્વલતિ, મયાન્ નિઃસરતુ । ઇતિ તદ્વચનં શ્રુત્વા બ્રહ્મદત્તો વ્રવીતિ-પ્રદર્શય
માર્ગમ્, તદા વરધનુર્વદતિ નાથ ! અયમસ્તિ સુરજ્ઞામાર્ગઃ, પાદાધાતેન સુરજ્ઞાદ્વારવર્તિ-
શિલાપટ્કં ચૂરય, બ્રહ્મદત્તેન તથા કૃતે સતિ ઉભૌ તેનૈવ સુરજ્ઞાપથેન નિઃમૃત્ય વહિ-
દ્વારાવસ્થિતતુરજ્ઞમૌ સમારુઢ્ય દેશાન્તરં ગતૌ ।

દ્વારા પ્રેરિત હોને પર બ્રહ્મદત્ત ઉસ લાક્ષાગૃહ મેં જાકર સો ગયા । વર-
ધનુ ખી ઉસી કે સમીપ એક પ્રકોષ્ઠક મેં સો ગયા । જય આધી રાત
હોને કા સમય આયા તો ચુલની માતા ને ઉસ લાક્ષાગૃહ મેં આગ
લગા દી મકાન જલને લગા । બ્રહ્મદત્ત એકદમ ઉઠા । વરધનુ ને શીઘ્ર
પાસ આકર બ્રહ્મદત્ત સે કહા-નાથ ! મહલ જલ રહા હૈ, અપન યહાં સે
શીઘ્ર ચલે જાવેં । વરધનુ કે વચન સુનકર બ્રહ્મદત્તને કહા-વતાઓ માર્ગ
કહાં હૈ ? બ્રહ્મદત્ત કે વચન સુનકર વરધનુ ને કહા-નાથ ! યહ રહા
સુરંગ કા માર્ગ । હસકે દ્વાર પર જો યહ પથ્થર કી શિલા કા ઢક્કન
લગા હુઆ હૈ હસે આપ પૈરોં સે હટા દીજિયે ઓર વાહર નિકલ જાઈયે ।
બ્રહ્મદત્ત ને એસા હી કિયા । સુરંગ કે દ્વાર પર લગે હુએ પથ્થર કો પૈર સે
હટાકર વે ઓર વરધનુ દોનોં સુરંગમાર્ગસે વાહર નિકલ આયે ઓર વાહર
કે દ્વારપર સ્થલે હુએ દોનોં ઘોડોંપર ચઢકર વહાંસે દૂસરે દેશકો ચલે ગયે ।

મહેલમાં સુતા માટે ગયો. મંત્રીના પુત્ર વરધનુ પણ તેની સાથે તે મહેલમાં
ગયો અને તેની સાથે એ મહેલમાં તે પણ એક આસન ઉપર સુતો જ્યારે
અરધી રાતનો પ્રારંભ થઈ ચુકયો ત્યારે કુબિંધી એવી કુમારની માતા
ચુલનીએ તે લાખાગૃહમાં આગ લગાડી. મહેલ સળગવા લાગ્યો, બ્રહ્મદત્ત
એકદમ ઉઠ્યો. વરધનુએ એ વખતે તેની પાસે આવીને કહ્યું, નાથ ! મહેલ
સળગી રહ્યો છે. આપણે અહીંથી તુરત જ નીકળી જવું જોઈએ. વરધનુનાં
વચન સાંભળીને બ્રહ્મદત્તે કહ્યું કે માર્ગ કયાં છે ? બતાવો. બ્રહ્મદત્તનું વચન
સાંભળીને વરધનુએ કહ્યું, નાથ ! આ રહ્યો બહાર નીકળવાનો રસ્તો. અહીં જે
પથ્થરનું ઢાંકણ લગાડેલું છે તેને આપ પગથી ફર કરો અને પછી લોચરામાં
ઉતરી બહાર નીકળી જાઓ. બ્રહ્મદત્તે એ પ્રમાણે કયું. લોચરાના મુખદ્વારના
પથ્થરને ફર કરી કુમાર બ્રહ્મદત્ત અને વરધનુ બન્ને લોચરાના રસ્તે બહાર
નીકળી ગયા અને બહારના દ્વાર પાસે તૈયાર રાખવામાં આવેલા ઘોડા ઉપર
બેસી જણા ફર દેશમાં ચાલ્યા ગયા.

कारितः । ततः कपटप्रवन्धेन ब्रह्मदत्तमारणार्थं जतुगृहं कारितम् । तदा धनुनामकं ब्रह्मनृपतेर्मन्त्री तत् कपटं ज्ञातवान् । स च नदीतीरात् तद्गृहाभ्यन्तरेऽधः पृथिव्यां सुरङ्गां निर्माय नदीतटे सुरङ्गाद्वारे तुरंगमद्वयं स्थापयित्वा स्वपुत्रं वरधनुनामकं जतुगृहनिर्माणकारणं ज्ञापयति । ततो निःसरणार्थं निर्मापितां सुरङ्गां च दर्शयति । स वरधनुः स्वपित्राज्ञया ब्रह्मदत्तानुचरोऽभवत् ।

अन्यदा कदाचित् जनन्या प्रेरितो ब्रह्मदत्तस्तस्मिन् जतुगृहे सुप्तः, वरधनुश्च

एक दिन की बात है कि इन दोनोंने एकान्त में इस प्रकार की गुप्तमंत्रणा की कि ब्रह्मदत्त का विवाह कर देना चाहिये । ऐसा ही हुआ ब्रह्मदत्त का विवाह कर दिया गया । तथा ब्रह्मदत्त को मारने के लिये कपट से एक लाक्षागृह-लाख का महल भी बनवा कर तयार कराया गया । राजा ब्रह्म के मंत्री को उनकी यह कपट रचना ज्ञात हो गई । मंत्री का नाम धनु था । उसने नदी के तीर से लेकर उस लाक्षागृह के भीतर तक पृथिवी के नीचे एक सुरंग बनवाई । जब सुरंग बनकर तयार हो चुकी तो नदी के तट पर कि जहां सुरंग से बाहर निकलने का द्वार था दो घोड़े खड़े करवा दिये और अपने पुत्र से कि जिसका नाम वरधनु था लाक्षागृह के निर्माण का कारण प्रकट कर दिया । तथा यहां से निकलने के लिये जो सुरंग बनाई गई थी उसका भी भीतरी दरवाजा उसे दिखला दिया । वरधनु अपने पिता की आज्ञा से ब्रह्मदत्त का अनुचर बन गया । एक दिन की बात है कि अपनी माता

ऐसा प्रकारनी शुप्त मंत्रणा करी के, ब्रह्मदत्तने विवाह करी देवा. अने ओ प्रभाणे ब्रह्मदत्तने विवाह करी देवाभां आब्या. आ पछी ब्रह्मदत्तने कपटथी भारवा भाटे ओक लाक्षागृह (लगेष्ठीना भडेल) बनावी तैयार करी. राजा ब्रह्मना मंत्रीने तेमनी आ कपट रचना बालुवाभां आवी गध. मंत्रीनुं नाम धनु हुतुं. तेणे नदीना कांठाथी लध ने ओ लाक्षागृहनी अंदर सुधीनुं ओक लोयडुं तैयार कराव्युं. ज्यारे लोयडुं तैयार थरुं गथुं त्यारे नदीना कांठा उपर के ज्यो लोयारमांथी गडार नीकणवानो रस्तो राख्यो हुतो ते स्थणे ओ घोडा तैयार रभाव्या. अने पोताना पुत्र के जेनुं नाम वरधनु हुतुं तेने लाक्षागृहनी सभस्त वातथी बालुकार करी तेमांथी निकणवा भाटे जे लोयडुं बनाववाभां आवेल हुतुं तेनी सधणी भाडिती आभी नीकणवा भाटेनो दरवाजे तेने अतावी दीधो. ओक दिवसनी वात छे के, कुमार ब्रह्मदत्त तेनी माताना कहेवाथी,

तत्समीपे प्रकोष्ठकान्तरे शयनार्थं गतः । तदाऽर्धरात्रे जनन्याऽग्निसंयोजनात् तज्जनुगृहं प्रदीपितम् । ब्रह्मदत्त उत्थितः । तदा वरधनुर्ब्रह्मदत्तं वदति-नाथ ! प्रासादः प्रज्वलति, भवान् निःसरतु । इति तद्वचनं श्रुत्वा ब्रह्मदत्तो ब्रवीति-प्रदर्शय मार्गम्, तदा वरधनुर्वदति नाथ ! अयमस्ति सुरङ्गमार्गः, पादाघातेन सुरङ्गाद्वारवर्ति-शिलापट्टकं चूरय, ब्रह्मदत्तेन तथा कृते सति उभौ तेनैव सुरङ्गापथेन निःसृत्य वहि-र्द्वारावस्थिततुरङ्गमौ समारुह्य देशान्तरं गतौ ।

द्वारा प्रेरित होने पर ब्रह्मदत्त उस लाक्षागृह में जाकर सो गया । वर-धनु भी उसी के समीप एक प्रकोष्ठक में सो गया । जब आधी रात होने का समय आया तो चुलनी माता ने उस लाक्षागृह में आग लगा दी मकान जलने लगा । ब्रह्मदत्त एकदम उठा । वरधनु ने शीघ्र पास आकर ब्रह्मदत्त से कहा-नाथ ! महल जल रहा है, अपन यहाँ से शीघ्र चले जायें । वरधनु के वचन सुनकर ब्रह्मदत्तने कहा-वताओ मार्ग कहाँ है ? ब्रह्मदत्त के वचन सुनकर वरधनु ने कहा-नाथ ! यह रहा सुरंग का मार्ग । इसके द्वार पर जो यह पत्थर की शिला का ढक्कन लगा हुआ है इसे आप पैरों से हटा दीजिये और बाहर निकल जाईये । ब्रह्मदत्त ने ऐसा ही किया । सुरंग के द्वार पर लगे हुए पत्थर को पैर से हटाकर वे और वरधनु दोनों सुरंगमार्गसे बाहर निकल आये और बाहर के द्वारपर खड़े हुए दोनों घोड़ोंपर चढ़कर वहाँसे दूसरे देशको चले गये ।

મહેલમાં સુવા માટે ગયો. મંત્રીનો પુત્ર વરધનું પણ તેની સાથે તે મહેલમાં ગયો અને તેની સાથે એ મહેલમાં તે પણ એક આસન ઉપર સુતો બ્યારે અરધી રાતનો પ્રારંભ થઈ ચુક્યો ત્યારે હુકમિણી એવી કુમારની માતા ચુલનીએ તે લાખાગૃહમાં આગ લગાડી. મહેલ સળગવા લાગ્યો, બ્રહ્મદત્ત એકદમ ઉઠ્યો. વરધનુએ એ વખતે તેની પાસે આવીને કહ્યું, નાથ! મહેલ સળગી રહ્યો છે. આપણે અહીંથી તુરત જ નીકળી જવું બેઠએ. વરધનુનાં વચન સાંભળીને બ્રહ્મદત્તે કહ્યું કે માર્ગ ક્યાં છે? બતાવો. બ્રહ્મદત્તનું વચન સાંભળીને વરધનુએ કહ્યું, નાથ! આ રહ્યો બહાર નીકળવાનો રસ્તો. અહીં જે પથ્થરનું ઢાંકણ લગાડેલું છે તેને આપ પગથી દૂર કરો અને પછી ભોંયરામાં ઉતરી બહાર નીકળી જાઓ. બ્રહ્મદત્તે એ પ્રમાણે કર્યું. ભોંયરાના મુખદ્વારના પથ્થરને દૂર કરી કુમાર બ્રહ્મદત્ત અને વરધનુ બન્ને ભોંયરાના રસ્તે બહાર નીકળી ગયા અને બહારના દ્વાર પાસે તૈયાર રાખવામાં આવેલા ઘોડા ઉપર બેસી બન્ને જણા દૂર દેશમાં ચાલ્યા ગયા.

अत्यन्तदूरपथभ्रमणजनितश्रमादश्वौ मृती । पादचारेण ब्रह्मदत्तो वरधेनुना सह पृथिव्यामटति । ततो दीर्घपृष्ठनृपस्य भयात् पृथक् पृथक् भूता तौ पर्यटतः । अथ ब्रह्मदत्तः पर्यटन् निर्धनवेपेण क्वचिद् वृक्षतले उपविष्टः । तदा केनचित् सामुद्रिकविद्यावता विप्रेण मार्गे ब्रह्मदत्तचरणन्यासं दृष्ट्वा मुदितचित्तः शीघ्रगत्या तत्र वृक्षतले समायातः । तत्र निर्धनवेपेण वर्तमानं ब्रह्मदत्तमवलोस्य स विमो रोदिति । तं ब्रह्मदत्तः पृच्छति—हे विप ! कथं रोदिषि ? सामुद्रिकशास्त्रज्ञोऽसौ विम आह—अद्य मम विद्या असदर्थवेधिका जाता, भद्रचरणलक्षणं भवतश्चक्रवर्तित्वमावे-

अत्यन्त दूर तक अधिक वेग से चलने के कारण उनके घोड़े बहुत थक गये थे इसलिये उनका पेट फूल गया और दोनों घोड़े मर गये । ब्रह्मदत्त और वरधनु दोनों ही पैदल जंगलमें घूमने लगे, पर दीर्घपृष्ठ राजा का भय हृदय में बना हुआ था । इसलिये उन्होंने ने अब अलग २ होकर चलना ही अच्छा समझा । ब्रह्मदत्त चलते २ एक किसी वृक्ष के नीचे आकर ठहर गया । इतने में वहां एक सामुद्रिक शास्त्र का वेत्ता ब्राह्मण जो उसी रस्तेसे होकर कहीं जा रहा था मार्गमें ब्रह्मदत्त के चरणचिह्नों को देखकर बड़ा ही प्रसन्न हुआ, और चरणचिह्नों को लक्षित कर वह उस स्थान पर आपहुँचा जहां ब्रह्मदत्त वृक्ष के नीचे बैठा हुआ था । ब्रह्मदत्त की निर्धन अवस्था देखकर ब्राह्मण को रोना आगया । ब्राह्मण को रोते देखकर ब्रह्मदत्त ने पूछा हे ब्राह्मण ! क्यों रो रहे हो ? सामुद्रिक शास्त्रज्ञ उस ब्राह्मण ने कहा कि मैंने जो सामुद्रिक

मन्त्रा वेगधी लांभी भजल कापवाधी तेभना घोडा थाकी गया अने ओधी ओ घोडाओनुं पेट कुली जातां अने घोडा भरी गया, वरधनु अने ब्रह्मदत्त अने पगपाणा जंगलमां द्रवा लाया, आ रीते द्रवाधी दीर्घपृष्ठ राजा तरक्षुधी भय आवी पड्यो तेवी दंडेशतधी अने जल्लुओ गुदा गुदा यालवानुं राभ्युं, ब्रह्मदत्त यालतां यालतां केध ओक वृक्षनी नीचे जध पड्योओ अने त्यां रोकाध गयो, आ समये सामुद्रिकशास्त्रज्ञाने जल्लुकार ओक ब्राह्मण के ओ ओ रस्तेधी जध रह्यो छतो तेणे मार्गमां ब्रह्मदत्तनां चरणानां धूलमां पडेलं पगलानां चिन्होने जेधने पूण प्रसन्नता अनुभवी अने चरण चिन्होने लक्षमां राभतो राभतो ते ओ स्थजे कुमार ब्रह्मदत्त छतो त्यां आवी पड्योओ, ब्रह्मदत्तनी निर्धन अवस्था जेधने ब्राह्मणनी आंभमां आंसु आवी गयां, ब्राह्मणने रोतां जेध ब्रह्मदत्त कहुं, हे ब्राह्मण था माटे रडो छो ? सामुद्रिक शास्त्रना जल्लुकार त ब्राह्मणे कहुं के, में आज सुधी

દયતિ કિંતુ ભવાન્ નિર્ધનાવતારો મિલિતઃ । વ્રહ્મદત્તો વદતિ-અહમસ્મિ ચક્રવર્તી,
યદા મમ રાજ્યપ્રાપ્તિઃ સ્યાત્તદા ભવતા મમાન્તિકમાગન્તવ્યમ્ ।

કાલાન્તરે વ્રહ્મદત્તેન ચક્રવર્તિરાજ્યં પ્રાપ્તમ્, દ્વાદશ વર્ષાણિ રાજ્યાભિષેકો-
ત્સવઃ પ્રારબ્ધઃ । સામુદ્રિકશાસ્ત્રજ્ઞોઽસી વિપ્રસ્તદુત્સવસમાચારં પ્રાપ્ય તત્રાગતઃ ।

શાસ્ત્ર કા અભીતક અધ્યયન કિયા હૈ વહ આજ ચિલકુલ ગલત સાવિત હો રહા હૈ इसलिये मैं रो रहा हूं। आपके चरणों में जो चिह्न बने हुए हैं उनसे यह बात ज्ञात होती है कि आपको चक्रवर्ती होना चाहिये पर आपकी तो यह दशा है कि इस समय आपके पास खाने तक को अन्न भी नहीं है। आपका यह वेष दरिद्रियों जैसा है। अवस्था आपकी निर्धन है। ऐसे मालूम पड़ता है कि मानों आप में निर्धनताने ही अवतार लिया है। ब्राह्मण की बात सुनकर ब्रह्मदत्त ने कहा-तुम्हारा सामुद्रिक शास्त्र मिथ्या नहीं है दुःखी मत होओ, मैं वास्तव में चक्रवर्ती ही हूं। जब मुझे राज्य की प्राप्ति हो तो उस समय तुम मेरे पास आना।

કાલાન્તર મેં વ્રહ્મદત્ત કો ચક્રવર્તિપદ કી પ્રાપ્તિ હુઈ। વ્રહ્મદત્ત ચક્રવર્તી બન ગયે। ચારહ વર્ષ કા રાજ્યાભિષેક વડા હો ઠાટ વાટ સે મનાયા જાને લગા। इसी अवसर में उस ब्राह्मण ने जब यह समाचार सुना तो वह भी वहां पर आगया पर वह ब्रह्मदत्तसे मिल नहीं सका।

સામુદ્રિક શાસ્ત્રતું જે અધ્યયન કર્યું છે તે આજે બીલકુલ નકાસું માલુમ પડ્યું છે. આ માટે હું રોઈ રહ્યો છું. આપના ચરણોમાં જે ચિન્હ જોવામાં આવે છે તેનાથી એવી વાત સિદ્ધ થાય છે કે, આપ ચક્રવર્તી બનવા જોઈએ. પરંતુ આપની તો એ દશા છે કે, આ સમયે આપની પાસે ખાવાને અન્ન પણ નથી. આપનો આ વેશ દરિદ્રીઓના જેવો છે. આપની અવસ્થા નિર્ધન છે. એવું માલુમ પડે છે કે, આપનામાં નિર્ધનતાએ અવતાર લીધો છે, બ્રાહ્મણની વાત સાંભળી બ્રહ્મદત્તે કહ્યું. આ તમારું સામુદ્રિક શાસ્ત્ર મિથ્યા નથી, દુઃખી ન બનો. હું વાસ્તવમાં ચક્રવર્તી જ છું જ્યારે મને રાજ્યની પ્રાપ્તિ થાય એ સમયે તમે મારી પાસે આવજો.

સમયના વહેવા સાથે બ્રહ્મદત્તને ચક્રવર્તિ પદ પ્રાપ્ત થયું. રાજ્યમાં ૧૨ વર્ષ સુધી તેના રાજ્યાભિષેકનો ઉત્સવ ઠામઠામ મનાવા લાગ્યો. એ બ્રાહ્મણે જ્યારે આ પ્રસંગના શુભ સમાચર બહુવા તો તે પણ ત્યાં આવી પહોંચ્યો, પણ તે બ્રહ્મદત્તને મળી શક્યો નહીં. બ્રહ્મદત્ત ચક્રવર્તી સાથે તેનો મેળાપ

ब्रह्मदत्तचक्रवर्तिनो दर्शनं मम कथं स्यादिति पृष्ठः कथित् श्रेष्ठो तं विप्रं मार्गं दर्शयति । अथोत्सवसमये चक्रवर्ती गजमारुह्य वहिर्निःसरति । स विप्रस्तदा जन-समूहमध्ये वंशाग्रे पादत्राणमालां संयोज्य तं वंशमुत्थाप्य स्थितवान् । चक्रवर्ती स्वराज्यैर्भर्यशोभां समन्ताद् विलोकयन् वंशाग्रसंलग्नमुपानद्मालामपश्यत् । ततः कोपारुणनेत्रश्चक्रवर्ती भृत्यैस्तमाहूय पृच्छति-किमेतत् त्वया मर्तुमाचरितम् ? । विप्रः माह-नहि मर्तुं, किंतु जीवितुम् । चक्रवर्ती वंशोत्थापनकारणं विज्ञाय

ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती से अब मेरा मिलाप कैसे हो ? इस बात को उसने किसी वही के सेठ से पूछा तो उसने उसे मिलाप का रस्ता भी बतला दिया । उत्सव के समय चक्रवर्ती हाथी पर चढ़कर आ रहे थे, भीड़ काफी थी । ब्राह्मण ने मिलाप का मार्ग सोचा, उसके अनुसार एक बांस पर जूतों की माला लटका कर और उस बांस को भीड़ के बीच में ऊपर उठा कर वह खड़ा हो गया । चक्रवर्ती अपने राज्य के ऐश्वर्य की शोभा का चारों ओर से निरीक्षण करते हुए चल रहे थे । उन्होंने इस दृश्य को ज्यों ही देखा इकदम देखते ही आंखों में क्रोध की लाली उतर आई, नौकरों के जरिये उस ब्राह्मण को बुलवाकर पूछा, अरे ! इस सुन्दर अवसर पर यह तूने क्या काम किया है ? मालूम पड़ता है तेरी मौत आ गई है । ब्राह्मण ने चक्रवर्ती की बात सुनकर कहा यह काम मैंने अपनी मौत को बुलाने के लिये नहीं किया है, किन्तु जीने के लिये किया है । जब चक्रवर्ती वंशोत्थापन के कारण से

ઠઈ રીતે થાય આ વાત તેણે ત્યાંના કોઈ શેઠને પૂછી તો તેણે મેળાપ માટેના રસ્તો બતાવ્યો. ઉત્સવના સમયે ચક્રવર્તી હાથી ઉપર બેસી આવી રહ્યા હતા. ભીડ ખૂબ હતી, બ્રાહ્મણે મેળાપનો માર્ગ વિચાર્યો. આ અનુસાર તે એક વાંસ ઉપર લટકાવેલ જોડાની માળા સાથે તે લોકોની ભીડમાં હાથમાં વાંસડો ઉંચો રાખીને ઉભો રહ્યો. ચક્રવર્તી પોતાના સભ્યની ઐશ્વર્યની શોભાને આર તરફ દૃષ્ટી ફેરવી બેઈ રહેલ હતા, તેમણે આ દૃશ્ય જોયું અને જોતાં જ એકદમ આંખોમાં ક્રોધની-લાલીમાં છવાઈ ગઈ. નોકરો દ્વારા એ બ્રાહ્મણને બોલાવી પૂછ્યું. અરે ! આ સુંદર અવસર ઉપર તું આવું કામ કેમ કરી રહ્યો છે ? માલુમ પડે છે કે તારૂં મોત આવ્યું છે. ચક્રવર્તીની વાત સાંભળી બ્રાહ્મણે કહ્યું, આ કામ મેં મારા મોતના બોલાવવાથી નથી કર્યું, પરંતુ જીવવા માટે કરેલ છે. આ પછી ચક્રવર્તી વંશોત્થાપનના કારણથી યથાર્થ રૂપથી

પરિતુષ્ટો ભૂત્વા ગજોપરિ સ્વપાર્થે તપુપવેશ્ય ત્રવીતિ-હે વિપ્ર! સ્વામોષ્ટં દૂહિ, સોઽવદત્ ભાર્યાં પૃષ્ઠા કથયામિ । તતસ્તેન સ્વગૃહમાગત્ય ભાર્યાં પૃષ્ઠા । ભાર્યાં મનસિ ચિન્તયતિ-ધનાગમે ત્રીણિ નશ્યન્તિ જીર્ણં ગૃહં, જોર્ણાં ભાર્યાં, જિર્ણં મિત્રમ્ । ઇતિ વિચાર્ય સા પ્રાઢ - એકૈકસ્મિન્ દિને એકૈકગૃહે પાયસભોજનં ભવતુ, ઇત્યેવ પ્રાર્થનીયમ્ । તતોઽસૌ વિપ્રથકવર્તિસંનિધૌ સમાગત્ય તદેવ પ્રાર્થિતવાન્ । ચક્રવર્તી

યથાર્થરૂપ મેં પરિચિત્ત હો ચુકે, તય વે વડે પ્રસન્ન હુણ । ઉન્હોં ને ઉસ વ્રાહ્મણ કો શીઘ્ર હી હાથી પર અપને પાસ વૈઠા કર કહા કિ કહો વિપ્રદેવ ! તુમ કયા ચાહતે હો ? ઉસને કહા મહારાજ ! મેં કયા ચાહતા હું યહ વાત તો અપની ભાર્યાં સે પૂછકર આપસે કહુંગા । ચક્રવર્તી સે વહ ઘર જાને કી આજ્ઞા લેકર ઘર આગયા । ઘર પર આકર ઉસને અપની પત્ની સે સમસ્ત વૃત્તાન્ત કહ દિયા । પત્ની ને સુનકર વિચાર કિયા કિ યદિ યહ ધનવાન્ ઘન જાયગા તો મુક્તે અવશ્ય છોડ દેગા, કયોં કિ ધન કે આને પર ત્રીન ચીજેં છોડ દી જાતી હૈં—૧ જૂના ઘર, ૨ જૂની ભાર્યાં ઓર ૩ જૂનાં મિત્ર । ઇસલિયે ઇસસે કહ દિયા જાય કિ હમેં તો પ્રતિદિન એકર ઘર પર સ્ત્રીર કા ભોજન મિલતા રહે, એસી વ્યવસ્થા હો જાની ચાહિયે । ઘસ ઇસ પ્રકાર વિચાર કર વ્રાહ્મણી ને અપને પતિ સે યહી વાત કહી ઓર કહા કિ જાકર તુમ રાજા સે યહી માંગો અપને લિયે ઓર વસ્તુ કો કયા કરના હૈ । વ્રાહ્મણ ને અપની પત્ની કી સલાહ માન કર ચક્રવર્તી સે યહી માંગા । ચક્રવર્તી ને વ્રાહ્મણ સે કહા

પરિચિત્ત બનતાં ખૂબજ પ્રસન્ન થયા અને તેમણે બ્રાહ્મણને એજ વખતે પોતાના હાથી ઉપર બેસાડી લઈને પૂછ્યું, કહો વિપ્રદેવ તમે શું આહો છો ? જવાબમાં તે બ્રાહ્મણે કહ્યું, મહારાજ ! હું શું આહું છું તે વાત મારી સ્ત્રીને પૂછ્યા પછી આપને કહીશ. ચક્રવર્તીની આજ્ઞા લઈ તે પોતાને ઘેર ગયો. ઘેર પહોંચી તેણે પોતાની સ્ત્રીને સઘળો વૃત્તાંત કહી સંભળાવ્યો. સ્ત્રીએ સઘળી ખીના સાંભળીને વિચાર કર્યો કે, મારા પતિ ધનવાન બની જશે તો એ મને અવશ્ય છોડી દેશે. કેમકે, ધનના આવવાથી ત્રણ ચીજો ભુલાઈ બય છે. એક તો ભુનાં ઘર, બીજું સ્ત્રી, ત્રીજું ભુનામિત્ર. આ માટે એને એમ માગવાનું કહેવામાં આવે કે, અમને પ્રતિદિન એક એક ઘેરથી ખીરનું લોબન મળતું રહે એવી વ્યવસ્થા કરવામાં આવે. આ પ્રકારનો વિચાર કરી બ્રાહ્મણીએ પોતાના પતિને એ વાત કહી અને કહ્યું કે, તમે રાજા પાસે જઈને એ પ્રમાણે માગો. આપણે બીજી વસ્તુની શું જરૂર છે ? બ્રાહ્મણે સ્ત્રીની સલાહ માનીને રાજા પાસે જઈ તેની સ્ત્રીના કીધા પ્રમાણે જ માગ્યું.

પ્રાહ-કિમિદં પ્રાર્થયસિ? ગ્રામો, નગરં, વા કોશો વા યાચ્યતામ્ । સ વિપ્રોઽવદત્-
 ઇદમેવ મમેષ્ણિતમ્, તત્તથ્ચક્રવર્તિના તત્સ્વીકૃતમ્ । પ્રથમદિને ચક્રવર્તિનો ભવને પરમ-
 સુસ્વાદુ પાપસં લબ્ધમ્ । તત્ર કામ્પિલ્પનગરે ચક્રવર્ત્યાન્નયાઽસૌ ત્રિપ્રઃ પ્રત્યેકગૃહે
 ભોજનં ક્રમેણ પ્રતિદિનં લભતે, તથાપ્યસૌ ગૃહાણામન્તં ન પ્રાપ, કથં તર્હિ તસ્ય સમસ્ત
 ભરતક્ષેત્રવર્તિપુ ગૃહેષુ એકૈકગૃહે ક્રમેણ પ્રતિદિનં ભોજનપ્રાપ્ત્યનન્તરં પુનઃચક્રવર્તિભવને

યહ તુમને કયા चीज मांगी है, गांव मांगो नगर मांगो वा कोश-
 खजाना मांगो । सुनकर ब्राह्मण ने कहा हमें इन चीजों की आवश्यक-
 कता नहीं है । हमारी इच्छा तो जो है वह आप से निवेदित कर दी है ।
 चक्रवर्ती ने ब्राह्मणकी बात स्वीकार करली । चक्रवर्तीने स्वयं सबसे
 पहिले दिवस इसके लिये परम स्वादिष्ट बढ़िया खीर अग्ने महलमें तैयार
 करवाई । ब्राह्मण ने घड़े आनंद के साथ खाई । क्रमर से अब यह उस
 कांपिल्य नगर में सब के घर एकर दिन खीर के भोजन के लिये जाने
 लगा, परन्तु वहां इतने अधिक घर थे कि इसके जीवनभर तक भी
 जीमतेर घरों के बारे नहीं समाप्त हो सकते थे । तथा छह खंड की
 पृथिवी का अधिपति चक्रवर्ती होता है इसलिये यद्यपि उसके जीमने
 का नंबर छह खंडोंमें नियत कर दिया गया था, पर जब कांपिल्य नगर
 के घरों की ही समाप्ति नहीं हो सकी तो भरतक्षेत्र भर के घरों का
 बारा उसके कैसे प्राप्त हो सकता था ? अतः वह बड़ा ही चिन्तित रहने
 लगा । वह विचारता रहता कि कब समस्त घरों का बारा मेरा समाप्त

ચક્રવર્તીએ પ્રાદક્ષણને કહ્યું કે તમે આ શું માગ્યું ? ગામ, નગર અથવા તો ધન
 દોલત જે ભેધ એ તે માગીલ્યો. પ્રાદક્ષણે કહ્યું કે, મહારાજ ! મને એવી કોઈ ચીજની
 જરૂરીઆત નથી. અમારી જે ઇચ્છા છે તે આપની સમક્ષ રજુ કરી છે. ચક્રવર્તીએ
 પ્રાદક્ષણની વાતનો સ્વીકાર કરી અને પોતાનાજ મહેલમાં તેને માટે સ્વાદિષ્ટ
 એવી ખીર તૈયાર કરાવી. પ્રાદક્ષણે ખૂબ જ આનંદથી તે ખાધી. ક્રમે ક્રમે તે
 કાંપિલ્ય નગરમાં બધાને ત્યાં એક એક દિવસ ખીરના લોભન માટે જવા
 લાગ્યો. પરંતુ ત્યાં એટલાં બધાં ઘરો હતાં કે એના જીવન સુધી જમતાં જમતાં
 ઘરનો વારો સમાપ્ત થઈ શકે તેમ ન હતું. તેમાંથી ચક્રવર્તી તો છ ખંડ
 ધરતીનો અધિપતી હોય છે. આથી તેના જમવાનો નંબર છ ખંડોમાં નક્કી
 કરી આપેલ હતો પણ જ્યારે એકલા કાંપિલ્ય નગરનાં જ ઘરો તે પુરાં કરી
 શકે તેમ ન હતું ત્યાં ભરતક્ષેત્રના વિસ્તારનાં ઘરોનો વારો તો ક્યાંથી જ આવે ?
 આથી તે ખૂબ જ ચિંતા કરવા લાગ્યો. તે વિચારવા લાગ્યો કે, ક્યારે સંમસ્ત

ભોજનં લબ્ધવ્યમ્, સપસ્તભસ્તક્ષેત્રાન્તર્ગતગૃહાણાં વાહુલ્યાત્ । એવં યથા ચક્રવર્તિનો
ભવનેઽનુપમં પાયસં પ્રાપ્તુમિચ્છતસ્તસ્ય વિપસ્ય તદ્દુર્લભં તથા મનુષ્યજન્મ દુર્લભમ્ ।

અત્ર સંગ્રહશ્લોકઃ — (શાર્દૂલવિક્રીડિતવૃત્તમ્)

શુક્તં સ્વાદુરસં દ્વિજેન ભવને શ્રીબ્રહ્મદત્તસ્ય યત્,
ક્ષેત્રેઽસ્મિન્ ભરતેઽશ્વિલે પ્રતિગૃહે શુક્ત્વા પુનસ્તદ્ગૃહે ।
જાતં તસ્ય યથા મનોઽભિલપિતં તદ્ ભોજનં દુર્લભં,
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરમયો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥
॥ इति प्रथमश्चोलकद्वयप्रान्तः ॥ १ ॥

હો, ઓર કય મુજે પુનઃ ચક્રવર્તી કે ઘર પર ચઢિયા खीर खानेको मिले,
परन्तु न समस्त छह खण्ड के घरों का चारा उसका समाप्त हो और
न पुनः चकवर्ती के घर की खीर उसको मिले । जैसे इस ब्राह्मण को
पुनः वह खीर भोजन दुर्लभ हो गया उसी प्रकार यह मनुष्यजन्म भी
बड़ा दुर्लभ है । यह प्रथम दृष्टान्त है । इस पर यह संग्रह श्लोक है—

શુક્તં સ્વાદુરસં દ્વિજેન ભવને શ્રીબ્રહ્મદત્તસ્ય યત્,
ક્ષેત્રેઽસ્મિન્ ભરતેઽશ્વિલે પ્રતિગૃહે શુક્ત્વા પુનસ્તદ્ગૃહે ।
જાતં તસ્ય યથા મનોઽભિલપિતં તદ્ભોજનં દુર્લભં ।
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરમયો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

इस श्लोक में इस कथा का सार यतलाया गया है । अर्थात् जिस
प्रकार ब्रह्मदत्तचक्रवर्ती के घर पर एक बार चढिया खीर का भोजन

ધરોને વારો પુરો થાય અને કયારે અને ચક્રવર્તીના મહાલયમાં ફરીથી ઉત્તમ
એવી ખીર ખાવાનો પ્રસંગ મળે? આ રીતે ન તો સમસ્ત છ ખંડના ધરોને
તેનો વારો પુરો થાય અને ન ચક્રવર્તીને ત્યાં ફરીથી ખીર ખાવા જવાનો
પ્રસંગ મળે. આ રીતે તે બ્રાહ્મણને ફરીથી ચક્રવર્તીને ત્યાં ખીર ખાવાનો
પ્રસંગ પ્રાપ્ત ન થયો. તેવી જ રીતે આ મનુષ્ય જન્મ પણ ઘણો દુર્લભ
છે. આ પ્રથમ દૃષ્ટાંત છે એના ઉપર આ સંગ્રહ શ્લોક છે.

શુક્તં સ્વાદુરસં દ્વિજેન ભવને શ્રીબ્રહ્મદત્તસ્ય યત્ ।
ક્ષેત્રેઽસ્મિન્ ભરતેઽશ્વિલે પ્રતિગૃહે શુક્ત્વા પુનસ્તદ્ગૃહે ॥
જાતં તસ્ય યથા મનોઽભિલપિતં તદ્ભોજનં દુર્લભં ।

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરમયો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

આ શ્લોકમાં આ કથાનો સાર બતાવવામાં આવેલ છે. અર્થાત્ જે રીતે
બ્રહ્મદત્તચક્રવર્તીના ઘરે એકવાર ઉત્તમ ખીરનું ભોજન કરીને તે બ્રાહ્મણને

અથ દ્વિતીયઃ પાશકદૃષ્ટાન્તઃ પ્રોચ્યતે—

પાશકો ઘૃતોપકરણવિશેષઃ, સ એવ દૃષ્ટાન્તઃ—પાશકદૃષ્ટાન્તઃ, સ ચૈત્ત્મ—
ગોહ્લદેશે ચળકનામકે ગ્રામે વહુ શીલવ્રતગુણવ્રતવિરમણપ્રત્યાહ્વાનપૌપધોપવા
સાદિ શ્રાવકધર્મ પાલપન્ ચળકનામકો બ્રાહ્મણ આસીત્ । સ વદ્ધસદોરકમુલ્લવલ્લિકઃ
સન્નુભયકાલં સામાયિકપતિક્રમણં કુર્વન્નાસીત્ । અન્યદા કદાચિત્ તસ્ય ગૃહે સુવ્રત-
કર ઉસ બ્રાહ્મણ કો ઉસી ઘરપર પુનઃ ભોજન કરને કી અમિલાપા હુઈ-
પરન્તુ ઉસકી પૂર્તિ હોની વઢી હી મુશ્કિલ થી ક્યોં કિ જય તક ઉનકે
સામ્રાજ્યભર કે ઘરોં કા વારા વહ સમાપ્ત નહીં કર લેતા તથ તક
ઉસકો પુનઃ ચક્રવર્તી કે ઘર કા નંવર પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા । ઈસી
પ્રકાર ઈસ સંસાર મેં ભ્રમણ કરને વાલે ઈસ જીવ કો પુનઃ નરભવ
મિલના વઢા દુર્લભ હૈ । યહ પ્રથમ ચોહ્લકદૃષ્ટાન્ત હુઆ ॥ ૧ ॥

અવ દ્સરા પાશકદૃષ્ટાન્ત કહતે હૈ—

જુઆ ખેલને કા જો ઉપકરણ વિશેષ હોતા હૈ જિસકો હિન્દી મેં
પાસા કહતે હૈં ઉસકા નામ પાશક હૈ । ઉસકા દૃષ્ટાન્ત ઈસ પ્રકાર હૈ—

ગોહ્લદેશસ્થ ચળક નામ કે ગ્રામ મેં વહુ શીલ વ્રત ગુણ અર્થાત્ વ્રત-
પ્રાણાતિપાતાદિવિરમણ, પ્રત્યાહ્વાન-પૌપધોપવાસ આદિ શ્રાવકધર્મ
કો પાલન કરને વાલા ચળક નામ કા એક બ્રાહ્મણ રહ્તા થા । યહ
દોનોં કાલ મુલ પર ઢોરે સે મુલપત્તિ વાંધકર સામાયિક એવં પ્રતિ
ક્રમણ કિયા કરતા થા । એક દિન કી વાત હૈ કિ ઉસકે ઘર પર એક

ચક્રવર્તિને ત્યાં ખીરનું ભોજન કરીથી કરવાની ઇચ્છા બગી પરંતુ તેની એ ઇચ્છા
પૂર્ણ થઈ શકી નહી. કેમકે, એના સામ્રાજ્યભરનાં ઘરોનો વારો તે પૂર્ણ ન
કરી લે ત્યાં સુધી તેને કરી ચક્રવર્તિને ત્યાં ખીર ખાવા માટે જવાનો વારો પ્રાપ્ત
થતો નહતો. એ પ્રકારે આ સંસારમાં જમણ કરવાવાળા આ જીવને પુનઃ મનુષ્ય
અવતાર મળવો મહા દુર્લભ છે. આ પ્રથમ ચૌલ્લક દૃષ્ટાંત બતાવેલ છે.

હવે ખીજું પાશકદૃષ્ટાંત કહેવામાં આવે છે—

જુગાર ખેલવામાં જેનો ઉપયોગ કરવામાં આવે છે તેને પાસા કહે છે.
તેનું નામ પાશક છે. તેનું દૃષ્ટાંત આ પ્રકારનું છે—

ગોલ્લ દેશમાં ચણક નામના ગામમાં ઘણા જ શીલ વ્રત ગુણ સંપન્ન અને
વ્રત પ્રાણાતિપાતાદિ વિરમણ પ્રત્યાખ્યાન પૌપધ ઉપવાસ વગેરેથી શ્રાવક ધર્મનું
પાલન કરવાવાળા ચણક નામનો એક બ્રાહ્મણ રહેતો હતો. એ બંને વખત
મોઢા ઉપર દોરા સાથેની સુખવલ્લિકા રાખીને સામાયિક અને પ્રતિક્રમણ કરતો
હતો. એક દિવસની વાત છે કે, તેને ઘેર સુવ્રત નામના એક સુ

નામા મુનિર્મિશાયં સમાગતઃ । તદા ચળકત્રાહ્ણણસ્ય દન્તસહિતઃ પુત્રો જાતઃ ।
વાલકં મુનેઃ સમીપમાનીયાઽન્નવીત્—‘ભદન્ત ! અયં દન્તસહિતો જાતઃ, કિમસ્ય ફલં
ભવિષ્યતિ ’ । મુનિઃ પ્રાહ—અયં દન્તસહિતઃ સમુત્પન્નસ્તસ્માદયં રાજા ભવિષ્યતિ ।
ચળકો મુનેર્વચનં નિશમ્ય ચિન્તયતિ—અયં રાજા ભૂત્વા નરકં યાસ્યતિ । इत्येवं
त्रिचिन्त्य वालकस्य दन्तान् घृष्टवान् ।

પુનરેકદા કાલાન્તરે સુવ્રતમુનિશ્વળકસ્ય ગૃહે સમાગતઃ, તતશ્વળકત્રાહ્ણણો
મુનિં પ્રાહ—ભદન્ત ! અસ્ય વાલકસ્ય દન્તા ઘૃષ્ટાઃ । મુનિર્વદતિ—દન્તેષુ ઘૃષ્ટેષુ
વાલકોઽયં રાજા ન સ્યાત્, કિં તુ સર્વાધિકારસંપન્નઃ સચિવો ભવિષ્યતિ । ચળકેન

સુવ્રત નામ કે મુનિરાજ ભિક્ષા કે લિયે આયે । ઉસ સમય ઉસ ત્રાહ્ણણ
કે યહાં દાંત સહિત એક પુત્ર ઉત્પન્ન હુઆ થા । ચળક ને ઉસ વાલક
કો મુનિ કે સમીપ લાકર કહા—ભદન્ત ! યહ વાલક દાંતસહિત ઉત્પ-
ન્ન હુઆ હૈં ઇસકા કયા ફલ હોના ચાહિયે સો કૃપા કર કહિયે ।
સુનકર મુનિરાજ ને કહા—યહ જો દાંતોંસહિત ઉત્પન્ન હુઆ હૈં ઉસકા
યહ ફલ હૈં કિં યહ રાજા હોગા । ચળક ને મુનિ કે વચન સુનકર
ચિચાર કિયા કિં યદિ યહ રાજા હોગા તો દુર્ગતિ કા ભાગીં હો
જાયગા ઇસલિયે ઉસને ઉસકે દાંતોં કો ઘિસ દિયા ।

કાલાન્તર મેં વે હી સુવ્રતમુનિ એક દિન ચળક કે ઘર પર પુનઃ
પધારે । મુનિરાજ કો આયે દેખકર ચળક ને ઉનસે કહા—ભદન્ત ! ઇસ
વાલક કે દાંતોં કો મૈંને ઘિસ દિયા હૈં । ચળક કી વાત સુનકર
મુનિરાજ ને કહા—દાંતોં કો ઘિસે જાને સે યદપિ યહ વાલક રાજા નહીં
હો સકેગા તો ખી રાજા જૈસા હોગા, અર્થાત્ રાજા કા સર્વાધિકાર

માટે આવ્યા. તે વખતે એ પ્રાહ્ણણને ઘેર જન્મ વખતે દાંત સહિત એક પુત્ર જન્મ્યો
હતો, ચણક એ બાળકને મુનિ પાસે લઈ આવ્યો અને કહ્યું, ભદંત ! આ
બાળક દાંત સાથે ઉત્પન્ન થયો છે. એનું શું ફળ હોવું જોઈએ ? સાંભળી
મુનિરાજે કહ્યું કે, દાંત સહિત ઉત્પન્ન થયેલ આ બાળકનું ફળ એ છે કે, તે
રાજા થશે. ચણકે મુનિનું વચન સાંભળીને મનમાં વિચાર કર્યો કે, જો આ બાળક
રાજા થશે તો દુર્ગતિ લોગવનાર બનશે. આથી તેણે તે બાળકના દાંત ઘસી નાખ્યા.

વખત જતાં તે સુવ્રત મુનિ એક દિવસ ચણકને ત્યાં ફરીથી પધાર્યા.
મુનિરાજને આવેલા જોઈને ચણકે તેમને કહ્યું કે ભદંત ! મેં આ બાળકના
દાંતોને ઘસી નાખ્યા છે. ચણકની વાત સાંભળીને મુનિરાજે કહ્યું,—દાંતોના ઘસી
નાખવાથી જો કે તે રાજા બદ્દે ન બની શકે તો પણ તે રાજા જોવા થશે. અર્થાત

તસ્ય વાલકસ્ય 'ચાણક્ય' इति नाम कृतम् । स चतुर्दश विद्या अधीतवान् ।
तस्य यौवने वयसि विवाहः कारितः ।

चाणક્યસ્ય શ્વશુરો ધનાઢ્ય આસીત્ । કદાચિત્ તસ્ય ગૃહે પુત્રસ્ય પરિણયો-
ત્સવઃ સંજાતઃ । તદ્ વૃત્તં ચિદિત્વા ચાણક્યસ્ય માર્યા પિતૃભવનં ગતા । સા ગચ્છ-
ન્તી પતિમત્રોચત્-ભવતાઽપિ તત્રાગન્તવ્યમ્ । ચાણક્યો વદતિ-અહં નિર્ધનોઽસ્મિ,
સ ધનાઢ્યોઽસ્તિ, સ મમાદરં ન કરિષ્યતિ, માં નિર્ધનં મત્વા તેન નાહં નિમન્ત્રિતઃ,

સંપન્ન પ્રધાન વનેગા । ચણક ને उस वालक का नाम चाणक्य रखा ।
चाणक्य ने १४ चौदह विद्याएँ पढ़ी । पढ़कर जब चाणक्य योग्यता
संपन्न हो गया तब युवा होने पर पिताने इसका विवाह कर दिया ।

चाणक्य का श्वशुरपक्ष धनसंपन्न था । किसी एक समय चाणक्य
के ससुराल में विवाह होनेवाला था । चाणक्य की भार्या को जब यह
वृत्तान्त ज्ञात हुआ तो वह विवाह में संमिलित होने के लिये पतिगृह
से अपने पिता के घर आई । जिस समय यह पतिगृह से पित्रगृह
आई थी तब इसने अपने पति चाणक्य से चलते २ यह कहा था कि
आप भी संमिलित होने के लिये वहां आवें । चाणक्य ने उसके
प्रत्युत्तर में उससे कहा कि मैं निर्धन हूँ-वे धनिक हैं वहां बिना
धुलाये आने पर मेरा कोई आदर नहीं होगा । यही कारण है कि
ससुरने मुझे विवाहका आमंत्रण तक भी नहीं भेजा है । चाणक्य की यह

રાજાનો સર્વ અધિકાર સંપન્ન એવો સર્વાધિકારી પ્રધાન બનશે. ચણકે એ
ખાણકનું નામ ચાણક્ય રાખ્યું. ચાણક્યે ચૌદ વિદ્યાનો અભ્યાસ કર્યો. આ પછી
તે વિદ્યાથી સંપન્ન બની ગયો અને યોગ્ય વયે પહોંચ્યો. ત્યારે તેના પિતાએ
તેનો વિવાહ કરી દીધો.

ચાણક્યનો શ્વસુરપક્ષ ધન સંપન્ન હતો. કોઈ એક સમય ચાણક્યના
શ્વસુરપક્ષમાં લગ્ન પ્રસંગ હતો. ચાણક્યની પત્નિએ ત્યારે આ હકીકત
જાણી ત્યારે તે લગ્ન પ્રસંગમાં સામેલ થવા માટે પતિને ત્યાંથી નીકળી પોતાના
પિતાના ઘેર આવી. જે સમય તે પોતાના પતિને ત્યાંથી નીકળેલી ત્યારે તેણે
પોતાના પતિ ચાણક્યને પણ લગ્ન પ્રસંગમાં આવવાનું કહેલું. જેના પ્રત્યુ-
ત્તરમાં ચાણક્યે જણાવેલું કે, હું નિર્ધન છું એ ધનવાન છે. ત્યાં જોલાવ્યા
વગર જવાથી મારો યોગ્ય આદર ન પણ થાય અને મારી નિર્ધન અવસ્થા એ પણ
એક કારણ કે જેને લઈ મને લગ્નનું આમંત્રણ પણ આપવામાં આવેલ નથી.

चाणक्ये नैवमुक्ता भार्या पुनस्तत्राऽऽगन्तुं प्रति प्रार्थितवती । ततः स्वभार्यानुरो-
रोधेन चाणक्योऽपि पश्चात् तत्र गतः । ग्रामाद् बहिः क्वचिद् वृक्षतले चाणक्यः
स्थित्वा श्वशुरं प्रति संदेशं प्रेषयति । श्वश्रूः श्वशुरश्च चाणक्यं प्रति तदुत्तरं दत्तवन्तौ-
त्वया दिवसेऽत्र नागन्तव्यम्, रात्रौ भवनस्य पश्चाद्भागवर्तिना मार्गेणागन्तव्यम् ।
चाणक्यस्तच्छ्रुत्वा तथैव रात्रौ गतः । श्वश्रूः श्वशुरश्च भवनस्याधस्तनभूमिकायां
चाणक्यं भोजयतः । अग्न्यान् सम्वन्धिनस्तु भवनोऽरितनभूमिकायाम् । श्वश्रूश्चा-
णक्याय शुष्कं रुक्षं भोजनीयं परिवेषयति, अन्येभ्यस्तु विविधानि मिष्टानानि ।

यात सुनकर उसकी भार्या ने पुनः उनसे यही प्रार्थना की कि आप इस
यात का विचार न कर वहां अवश्य आवें । भार्या के इस प्रकार के
अनुरोध करने पर चाणक्य भी पीछे से वहां गया । उसने श्वशुर-
गृह में पहुँच ने के पहिले बाहिर ही किसी वृक्ष के नीचे ठहर कर श्वशुर
के पास अपने आनेका समाचार भेजा । सास ससुर ने चाणक्य के प्रति
उत्तररूप संदेश भेजा कि आप आये बहुत अच्छा किया परन्तु आप यहां
दिनमें न आवें, रात्रिमें आवें, सो भी मकान के पीछे के मार्ग से आवें
—साम्हनेके मार्ग से नहीं । चाणक्यने ऐसा ही किया । वे रात्रिमें श्वशुरगृह
पर पहुँचे । सास और श्वशुर न चाणक्य को भोंयरेमें बैठाकर भोजन कराया।
बाकीजो और संबंधीजन थे उन सबको मकान की छतपर बैठाकर भोजन
कराया । चाणक्य के लिये सासुजी ने जो भोजन परोसा था वह इक-
दम बिलकुल शुष्क एवं रुक्ष था । दूसरे महेमानों के लिये जो भोजन
परोसा गया था वह विविध प्रकार के मिष्टानों से युक्त था । चाणक्य

याणुक्यनुं आ वचन सांभणी तेनी पत्निञ्चे ओवी प्रार्थना करी के, तमे आवी वातने।
विचार न करतां लग्नभां नइरथी आवे। पत्निना आवा आग्रहने पश भनी पाछ-
गथी याणुक्य लग्न प्रसंगभां सामेल थवा त्यां गया. ओखे सासराने त्यां पछोयतां
पछेलां गामनी लागेणे कोछ ओक वृक्ष नीचे रोकाधने सासराने पोताना आववाना
भुंजर भोडल्या. सासु ससराने तेना आववाना समाचार नाली तेने इडेवराव्युं के,
तमे आव्या ते डीक कथुं. परंतु तमे दिवसना लागभां अडिं आवथो नही. रातना
वभते अने ते पशु भकानना पाछला लागभां थर्धने आवजे. याणुक्ये ओम न
कथुं. ते रातना वभते सासराने घेर पछोय्या. सासु ससराने तेने भकानना
लोयतणीये जेसाडीने लोअन कराव्युं. न्यारे आडीना भडेमानेने ओक साथे समा-
रोडभां उपरना भाणे लोअन कराव्युं. याणुक्यने आपवामां आवेल लोअन
पशु साव निरस अने शुष्क હતું. न्यारे जीव भडेमानेने स्वादिए मिष्ट

एवमपमानितो भूत्वा सभार्यथाणक्यः स्वगृहं समागतः । तदा चाणक्येन चिन्तितम्—अधुरेण मम निर्धनत्वादपमानः कृतः । इति विचिन्त्य धनमर्जयितुं चाणक्यः पाटलिपुत्रनगरे नन्दनाम्नो नृपस्य समीपे योगवेष्टेण गतः । पूर्वाह्ने राज्यकार्यालये प्रविष्टः, तदा तस्य दासी कार्यालयं समार्जयन्ती पश्यति—चाणक्यः सिंहासने तुम्बीपात्रं स्थापनं च स्थापयति । नन्दनृपस्य भृत्याश्चाणक्यं तिरस्कृत्य बहिर्निःसारयन्ति । तदा चाणक्येन प्रतिज्ञा कृता—नन्दनृपस्य राज्यं समूलं नाशयिष्यामि ।

अपना इस प्रकार का वहां निरादर देख कर भार्या को साथ में लेकर अपने घर पर वापिस आ गया। आकर उसने विचार किया कि श्वशुर ने जो मेरा निरादर किया है उसका कारण मेरी यह निर्धनता है, अतः धन कमाने का प्रयत्न करना चाहिये। इस प्रकार विचार करने के बाद यह धन कमाने के लिये पाटलीपुत्र नगर में नन्द नाम के राजा के पास योगी का वेप धारण कर पहुँचा। पूर्वाह्न अर्थात् दिन के पूर्व भाग में चाणक्य ने कचहरी में प्रवेश किया, एक उस कचहरी की दासी ने जो उस समय उस कचहरी को झाड़ रही थी चाणक्य को देखा, चाणक्य ने वहाँ एक ओर सिंहासन के ऊपर अपना तुम्बीपात्र और आसन रख दिया। नन्द राजा के नौकरों ने यह देखकर चाणक्य को धक्का देकर एवं तिरस्कार कर के वहाँ से बाहिर निकाल दिया। चाणक्य ने इस अपमान से क्रुद्ध होकर वहीं पर यह प्रतिज्ञा की, कि मैं इस नन्दनृप के राज्य का समूल विनाश कर दूँगा। इस प्रकार कह

ભોજન જમાડ્યું. આણક્યે આ પ્રકારની પોતાના પ્રત્યેની વર્તણૂક જોઈને પોતાની પત્નિને લઈ ને પોતાને ઘેર પાછા ફર્યા. ઘેર આવીને તેણે મનમાં એવો વિચાર કર્યો કે, સાસુસસરાએ મારું જે અપમાન કર્યું તેનું કારણ મારી નિર્ધનતા જ છે. આથી ધન કમાવવાનો મારે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. આ પ્રમાણે વિચાર કર્યા પછી તે ધન કમાવા માટે પાટલીપુત્ર નગરમાં નંદ રાજાની પાસે યોગીનો વેશ ધારણ કરી પહોંચી ગયા. દિવસના પહેલા પ્રહરમાં આણક્યે રાજકચેરીમાં પ્રવેશ કર્યો. એ વખતે રાજકચેરીની દાસી કચેરીને સાફસુફ કરી રહી હતી. તેણે આણક્યને જોયા. આણક્યે ત્યાં એક સિંહાસન ઉપર પોતાનું તુંબીપાત્ર અને આસન રાખી દીધું. નંદ રાજાના નોકરોએ આ જોઈને આણક્યને ધક્કા મારીને તથા તેનો તિરસ્કાર કરીને બહાર ઠાલી મુકયા. આણક્યે આ અપમાનથી ક્રોધિત થઈને ત્યાંજ પ્રતિજ્ઞા કરી કે, હવે હું આ નંદરાજાના રાજ્યનો સમૂળજોજ વિનાશ કરી નાખીશ. આ પ્રમાણે નિર્ણય કરીને તે

ततश्चाणक्यस्तस्य नन्दनृपस्य राज्ये भ्रमन् मयूरनामकं लघुग्रामे समागतः, तत्र मयूरपालको निवसति । तत्र मयूरपालकस्य सगर्भायां भार्यायाश्चन्द्रपानदोहदो जातः। सा दोहदालाभेन कृशशरीरा खिन्ना संजाता । संन्यासिवेपेण चाणक्यस्तत्र भ्रमन् मयूरपालकस्य गृहे समायातः। दोहदालाभेन मयूरपालकस्य भार्या कृशां दीनां विलोक्य चाणक्यो ब्रूते—भो ! मयूरपालक ! अहमस्या दोहदं पूरयिष्यामि, यदाऽस्याः पुत्रोऽष्टवर्षवयस्कः स्यात् तदा मम शिष्यत्वेन भवता समर्पणीयः । मयूरपालकेन तद् वचनं स्वीकृतम् । ततश्चाणक्यः सच्छिद्रं गण्डपं कारयित्वा तस्यो-

कर वह चाणक्य वहां से चलकर नंद राजा के राज्य के ही अन्तर्गत मयूर नाम के किसी एक छोटे से गांव में चला गया । वहां एक मयूरों को पालने वाला मयूरपालक नामक पुरुष रहता था । उसकी भार्या गर्भवती थी । उसे चन्द्र को पीने का दोहला उत्पन्न हुआ था । दोहले की पूर्ति न हो सकने के कारण शरीर से वह विशेष कृश हो गई थी । तथा चिन्तित भी रहती थी । चाणक्य भी इधर उधर घूमता घामता मयूरपालक के घर आया । मयूरपालक की पत्नी को ज्यों ही उसने दोहद की पूर्ति न हो सकने के कारण कृश-शरीर एवं खेदलिप्त जाना तो कहने लगा हे मयूरपालक ! तुम्हारी धर्मपत्नी के चन्द्र पीने के दोहद की पूर्ति मैं कर सकता हूं यदि तुम हमारी इस शर्त को कबुल कर सको तो, शर्त यह है कि जब इसका बालक आठ वर्ष का हो जाय तो तुम उसे मुझे दे देना, मैं उसे अपना शिष्य बना लूंगा । मयूरपालक ने चाणक्य की शर्त स्वीकार करली ।

आण्क्य नंदराजाना राज्यनी अंदर आवेला मयूर नामना ओक नानकडा गामभां आव्या गया. त्यां भोरने पाणवावाणो मयूरपालक नामनो ओक पुत्र रडेतो छतो. तेनी श्री गर्भवती छती. तेने अंद्र पिबानी छच्छा उत्पन्न थछ छती. ते छच्छा परिपूर्ण न थछ शकवाना कारखे ते शरीरे अत्यंत दुष्णी थछ गर्ध तथा चिंता-तुर रडेती छती. आण्क्य पणु आम तेम इरतां इरतां मयूरपालकने घेर आवी पछेज्या. मयूरपालकनी सीने तेनी छच्छा परिपूर्ण न थछ शकवाना कारखे शरीरे दुष्णी तेमअ चिंतातुर देणीने ते कडेवा लाज्या, मयूरपालक तारी पत्तिने अंद्र पीवानी जे छच्छा थछ छे ते हुं परिपूर्ण करी शकुं तेम छं पणु तुं भारी ओक शरतने कथुल करे तो अ. शर्त ओ छे के, न्यारे-तारी पत्तिने अवतरनार पाणक आठ वर्षनो थाय त्यारे ते पाणक भने सोंपी देवे पडशे. हुं तेने भारे शिष्य जनांचीश. मयूरपालके आण्क्यनी शर्तनो स्वीकार कयो. आण्क्ये

ધ્વંભાગે તચ્છિદ્રાચ્છાદનાર્થે કંચિદેકં પુરુષં ગુપ્તરીત્યા નિયોજ્ય છિદ્રસ્યાધસ્તાત્
સિતામિશ્રપયઃપૂર્ણં સ્થાલં સ્થાપિતવાન્ । અય મધ્યરાત્રિ તચ્છિદ્રદ્વારેણ તત્ર સ્થાલે
ચન્દ્રપ્રતિવિમ્બસંપાતે સતિ મયૂરપાલભાર્યાં તત્ર નોત્વા ચાળકયઃ સ્થાલપાતં ચન્દ્ર-
પ્રતિવિમ્બં પ્રદર્શયન્ પ્રાહ—અયં ચન્દ્રઃ પોયતામ્ । તતઃ સા ચન્દ્રપ્રતિવિમ્બસહિતં
સ્થાલમુત્થાપ્ય દુગ્ધં પિવત્તિ, તસ્મિન્નેવ સમયે છિદ્રપ્રાપ્તિપથઃ પુરુષઃ શ્વનૈઃ શ્વનૈ-
શ્ચિદ્રમાચ્છાદયતિ ।

ચાળકય ને અવ ઉસકે ચન્દ્ર પીને કે દોહલે કી પૂર્તિ કરને કા પ્રયત્ન
પ્રારંભ કર દિયા । ઇસમેં ઉસને એક સચ્છિદ્ર મંડપ તયાર કરવાયા ।
ઉસકે ઉધ્વંભાગ મેં ગુપ્તરીતિ સે એક પુરુષ કી ઉસને નિયુક્તિ કી,
જો ઉસ છિદ્ર કે પાસ જાકર વેઠ ગયા । જહાં છિદ્ર થા ઠીક ઉસી કે
નીચે ઉસને મિશ્રી સે મિશ્રિત કર એક દૂધ કા ભરા હુઆ થાલ રલ્લ
દિયા । મધ્યરાત્રિ મેં ઉસ છિદ્ર કે દ્વારા ઉસ થાલ મેં ચન્દ્ર કા પ્રતિવિમ્બ
જ્યોં હી પડા કિ ચાળકય ને મયૂરપાલક કી ભાર્યા કો વહાં ઘુલવા
લિયા । ઉસકે આનેપર ચાળકય ને ઉસકો ઉસ થાલ મેં રહે હુએ પ્રતિ-
વિમ્બ કો દિલ્લાયા ઓર કહને લગા દેલો યહ રહા ચન્દ્ર, પી જાઓ ।
ઉસ ને ઉસી સમય ચન્દ્રપ્રતિવિમ્બસહિત થાલ કો ઉઠા કર ઉસમેં કા
દૂધ પીના પ્રારંભ કર દિયા । જ્યોં ૨ યહ દૂધ પીતી જાતી થી ત્યોં ૨
છિદ્ર કે પાસ વેઠા હુઆ વહ મંડપ કે ઉપર રહા વ્યક્તિ ઉસ છિદ્ર કો
ધીરે ૨ વન્દ કરતા જાતા થા । જવ વહ પૂરા દૂધ પી ચુકી તો ઉસને બી
ઉસ છિદ્ર કો પૂરાં વન્દ કર દિયા । ઇસ પ્રકાર ચાળકય ને ઉસકે ચન્દ્ર

હવે ચંદ્ર પીવાની મયૂરપાલકની પતિની ઇચ્છાને પરિપૂર્ણ કરવાના પ્રયત્નની શરૂ-
આત કરી દીધી. આમાં તેણે એક છિદ્રવાળો મંડપ તૈયાર કરાવ્યો. તેના ઉધ્વ-
ભાગમાં શુભ રીતે એક પુરુષને તે છિદ્ર પાસે બેસાડ્યો. જ્યાં છિદ્ર હતું ત્યાં
બરાબર તેની નીચે સાકરથી મિશ્રિત કરેલ દૂધથી ભરેલો એક થાળ રાખ્યો.
મધ્યરાત્રીએ આ છિદ્ર દ્વારા તે થાળમાં ચંદ્રનું જ્યારે પ્રતિબિંબ પડ્યું ત્યારે
આણુક્યે મયૂરપાલકની સ્ત્રીને ત્યાં બોલાવી. અને થાળીમાં દેખાતા ચંદ્રને
બતાવી કહ્યું કે, હવે આ રહ્યો ચંદ્ર ! પી જાઓ. તેણીએ તે વખતે ચંદ્રના
પ્રતિબિંબવાળા થાળને ઉઠાવીને તેમાંનું દૂધ પીવાની શરૂઆત કરી. જેમ
જેમ તે દૂધ પીતી ગઈ તેમ તેમ તે છિદ્રની પાસે બેઠેલા તેમજ તે મંડપની
ઉપર હુપાઇ રહેલ તે વ્યક્તિએ તે છિદ્રને ધીરે ધીરે બંધ કરવા માંડ્યું.
જ્યારે તેણીએ બધું દૂધ પી લીધું ત્યારે તેણે પણ છિદ્રને પુરેપુરું બંધ કરી દીધું.

एवं चाणक्येन तस्याश्चन्द्रपानदोहदः सफलीकृतः । तदनु चाणक्यो रसायनादिभिर्धनार्जनं कर्तुं प्रवृत्तः । इत्थं समये प्राप्ते सति संपूर्णदोहदायास्तस्याः पुत्रो जातः । जनन्या दोहदपूर्तिसमये चन्द्रस्य गोपनात् पित्रा तस्य बालकस्य 'चन्द्रगुप्त' इति नाम कृतम् । चन्द्रगुप्तः क्रीडनकाले बालकैः सह राजनीतिं प्रदर्शयन् क्रीडति । यदा चन्द्रगुप्तोऽष्टवर्षवयस्को जातः, तदा पुनश्चाणक्यस्तत्रागतः । ततो विदितस्वजन्मवृत्तान्तोऽसौ चन्द्रगुप्तश्चाणक्यं ग्राह-भो मुनीन्द्र ! भवान् स्वेन सह मां नयतु । चाणक्यो वदति-त्वत्पिता त्वां प्रतिपेत्स्यति । चन्द्रगुप्तो वदति-मम पिता

पीने के दोहले की पूर्ति करने में सफलता प्राप्त करली । वह भी अपने दोहले की पूर्ति से विशेष प्रसन्न हुई । इसके बाद चाणक्य ने रासायनिक क्रिया द्वारा धन का उपार्जन करना प्रारंभ कर दिया । इस तरफ जय पूरे नौ मास व्यतीत हो चुके तब दोहले की पूर्ति से प्रसन्न हुई उस मयूरपालक की पत्नी के पुत्र उत्पन्न हुआ । माता की गर्भावस्था में चंद्र को गोपन करने से पिताने उसका नाम चन्द्रगुप्त रखा । धीरे २ जय चन्द्रगुप्त बालकों के साथ क्रीडा करने के लायक हो गया तब वह उनके साथ खेलते समय राजनीति का प्रदर्शन करने लगा । जिस समय चन्द्रगुप्त की अवस्था आठ वर्ष की हो गई उस समय चाणक्य मयूरपालक के घर पर आया चाणक्य ने चंद्रगुप्त को उसकी उत्पत्ति के वृत्तान्त से विदित कर दिया । चन्द्रगुप्त को जब अपनी उत्पत्ति का वृत्तान्त विदित हो चुका तो उसने चाणक्य से कहा हे महात्मा ! आप मुझे अपने ही साथ ले चलिये । चाणक्य ने कहा तुम्हारा पिता

आ प्रभाञ्छे आञ्छये तेष्णीनी अंद्र पीवानी धन्धाने परिपूर्णुं करवाभां सङ्गता भेजवी पोतानी धन्धानी परिपूर्णुताथी मयूरपालकनी पत्नि पूष प्रसन्नताभां रडेवा लागी. आ पछी आञ्छये रसायणीक क्रियाओ द्वारा धन भेजवानी शङ्कात करी दीधी. आ तरङ्ग न्यारे पुरा नव भङ्गिना पीती गया त्यारे पोतानी धन्धानी पूर्तिथी प्रसन्न थयेवी ते मयूरपालकनी पत्निओ पुत्रनो जन्म आप्यो. पिताओ तेनुं नाम अंद्रगुप्त राख्युं. समय जतां न्यारे अंद्रगुप्त आणकेनी साथे रभवाने लायक थये त्यारे तेजे आणकेनी साथे जेवती वषते राजनीतिनुं शिक्षण आपवा मांड्युं. यथा समये न्यारे अंद्रगुप्त आठ वर्षनो थये त्यारे अञ्छय मयूरपालकने घेर आवी पडोआया. आञ्छये अंद्रगुप्तने तेना जन्म काणनुं वृत्तांत कहुं अंद्रगुप्ते पोताना जन्मकाणनुं वृत्तांत बण्युं त्यारे तेजे आञ्छयने कहुं, हे महात्मा ! आप मने आपनी साथे लछ बओ, आञ्छये

પૂર્વમેવ માં દત્તવાન્ । તત્તથાણક્યથન્દ્રગુપ્તં સહ નીત્વા પ્રાહ-તવ રાજ્યલાભં કરિ-
 પ્યમિ । તત્તથાણક્યો વનં ગત્વા રસાયનેન દ્રવ્યં નિર્માય તત્પભાવાત્ સેનાં સંગ્ર-
 હીતવાન્ । સૈનિકૈઃ સહ સ પાટલિપુત્રનગરે નન્દનૃપતિમાક્રમતે સ્મ । નન્દનૃપતિશ્ચા-
 ણક્યસ્ય પરાજયં કૃતવાન્ । ચન્દ્રગુપ્તેન સહ ચાણક્યસ્તતોડ્યસ્યત્ય ક્વચિત્ પ્રચ્છન્નો
 ભૂત્વા સ્થિતઃ । નન્દનૃપતેઃ કશ્ચિત્ સૈનિકોડશ્વમારુદ્ય ચાણક્યં ગ્રહીતુમાગતઃ । ચાણ-
 ક્યસ્તં વિલોક્ય ચિન્તયતિ-અયં તુ માં ગ્રહીતું પ્રત્યાસન્નો ભવતિ, વાલકોડયં ચન્દ્ર-

મેરે સાથ ચલને મેં તુમ્હેં નિપેધ કરેગા । ચન્દ્રગુપ્ત ને કહા-નિપેધ કયો
 કરેગા ? પિતા ને તો મુઠ્ઠે આપકો પહિલે સે હી દે દિયા હૈ । ચન્દ્રગુપ્ત કી
 યાત સુનકર ચાણક્ય ને ચન્દ્રગુપ્ત કો અપને સાથ લે લિયા । કહા-ચલો
 મૈ તુમ્હેં રાજ્ય કી પ્રાપ્તિ કરાઝંગા । ચન્દ્રગુપ્ત કો સાથ લેકર ચાણક્ય
 વન મેં પહુંચા । રસાયન સે ડસને વહાં દ્રવ્ય કો સૂચ દ્વકદ્વા કિયા ઔર
 ડસકે પ્રભાવ સે ડસને વહીં પર સેના કા સંગ્રહ કરના ખી પ્રારંભ કર
 દિયા । જવ સેના અચ્છી તરહ સંગ્રહીત હો ચુકી તો ચાણક્ય ને સેના
 કો લેકર પાટલિપુત્ર મેં જાકર રાજા નન્દ કે ડપર આક્રમણ કર દિયા ।
 રાજા નન્દ ને ચાણક્ય કો પરાજિત કર વહાં સે નિકાલ દિયા । ચાણ-
 ક્ય ખી પરાસ્ત હોકર ચન્દ્રગુપ્ત કો સાથ લેકર વહાં સે ચલા ગયા
 ઔર કિસી જગહ ગુપ્તરૂપ સે જાકર છિપ ગયા । રાજા નન્દ ને ચાણક્ય
 કો પકડ ને કે લિયે ડસકે પીછે ઈક અપના ઘુડસવાર ખેજા । ઘુડ-
 સવાર કો અપના પીછા કરતે હુપ દેઝકર ચાણક્ય ને વિચાર કિયા

કહ્યું કે તારા પિતા તને મારી સાથે મોકલવામાં અડચણ ઉભી કરશે ચંદ્રગુપ્તે
 કહ્યું અડચણ શા માટે કરશે ? પિતાએ તો પહેલેથી જ મને આપને સુપ્રત કરેલ
 છે. ચંદ્રગુપ્તની વાત સાંભળીને ચાણક્યે ચંદ્રગુપ્તને પોતાની સાથે લઈ લીધો
 અને કહ્યું, ચાલો ! હું તમને રાજ્યની પ્રાપ્તિ કરાવીશ. ચંદ્રગુપ્તને લઈ ચાણક્ય
 વનમાં ગયા, રસાયણ પ્રયોગથી ત્યાં તેણે ખૂબ દ્રવ્ય એકઠું કર્યું અને એની
 સહાયથી સેના એકઠી કરવાનો આરંભ કરી દીધો. સેનાને લઈને પાટલીપુત્ર
 પહોંચી નંદરાજ ઉપર આક્રમણ કર્યું. યુદ્ધમાં રાજા નંદે ચાણક્યનો પરાજય કરીને
 ભગાડી મૂક્યા, ચાણક્ય હારી જવાથી ચંદ્રગુપ્તને સાથે લઈ ત્યાંથી ચાલી
 નીકળ્યા અને કોઈ છુપા સ્થળે જઈ રહેવા લાગ્યા. રાજા નંદે ચાણક્યને
 પકડવા માટે તેની પાછળ એક ઘોડેસવારને મોકલ્યો. ઘોડેસવાર પોતાનો પીછો
 પકડી રહ્યો છે. બાણીને ચાણક્ય વિચાર કરવા લાગ્યા કે તે પકડવા

ગુપ્તઃ કથં મયા સહ ગન્તું પ્રभवति । इत्येवं विचार्य स तत्र सरस्तटे वस्त्रं धावमानस्य
रजकस्यान्तिके गत्वा वदति—अरे रजक ! नन्दनृपतेः सैनिकास्त्वां हन्तुमागच्छन्ति ।
रजकस्तद्वचनं श्रुत्वा तद्गयात् ततः पलायितः । चाणक्यस्तानि वस्त्राणि धावमान-
स्तत्र संस्थितः, चन्द्रगुप्तोऽपि तत्रैवान्यभागे जले प्रविश्य प्रच्छन्नोऽभवत् । अश्व-
रूढोऽसौ नन्दराजपुरुषस्तत्रागत्य पृच्छति—अरे रजक ! चाणक्यः क्व गतः ?
रजकवेषधारी चाणक्यः प्राह—जले प्रविष्टः ततोऽसौ नन्दराजपुरुषस्तस्य कृतरज-

કિ યહ તો મુઝે પકડને કે લિયે ચિલકુલ હી પાસ આ તુકા હૈ, યહ ચન્દ્ર-
ગુપ્ત બાલક હૈ મેરે સાથ દોડ સકતા નહીં હૈ અતઃ એક ઉપાય કરના
ચાહિયે કિ જો સામ્રાજ્યને કે તાલાય પર ધોવી કપડે ધો રહા હૈ ઉસકો
કિસી વહાને સે વહાં સે ભગા દેના ચાહિયે ઓર સ્વયં કો ઉસકા કામ
કરને લગ જાના ચાહિયે તમી રક્ષા હો સકતી હૈ । એસા વિચાર કર
ચાણક્ય ઉસ ધોવી કે પાસ આકર કહને લગા કિ અરે ધોવી ! તું
દેખતા નહીં હૈ રાજા કે સૈનિક તુઝે મારને કે લિયે આ રહે હૈ । ધોવી
ને જ્યોં હી ચાણક્ય કી હસ યાત કો સુના કિ વહ વહાં સે એકદમ
ભગ ગયા । ચાણક્ય ને અપની નીતિ મેં સફલતા પ્રાપ્ત કી ઓર ઉસ
ધોવી કે જો કપડે વહાં ધોને કે લિયે પડે હુય થે ઉન્હેં ધોના પ્રારંભ
કર દિયા । ચન્દ્રગુપ્ત મી વહીં પર એક કિનારે પાની મેં જાકર છુપ
ગયા । વહ આશ્વારૂદ રાજપુરુષ જો હનકે પીછે પડા હુઆ થા વહાં પર
આ પહુંચા । ઉસને આતે હી ઉસસે પૂછા કિ અરે ધોવી ! ચાણક્ય કહાં
ગયા હૈ । રજકવેષધારી ચાણક્ય ને કહા કિ વહ અમી જલ મેં છુસ

માટે તદ્દન નશ્વર આવી ગયેલ છે. આ બાળક ચંદ્રગુપ્ત મારી સાથે ઢોડી
શકશે નહીં. માટે એને કાંઈક ઉપાય કરવો જોઈએ. સામા તળાવ ઉપર ધોબી
કપડાં ધોઈ રહ્યો છે, તેમને કાંઈ પણ બહાને ત્યાંથી ભગાડી દે એને
ચોતે તે કામ કરવા લાગી બચ કે બેથી રક્ષા થાય આવો વિચાર
કરીને ચાણક્ય તે ધોબીની પાસે જઈને કહેવા લાગ્યા, કે હે ધોબી !
તું જોતો નથી કે રાજાને સૈનિક તને મારવા માટે આવી રહ્યો છે ! ધોબી
ચાણક્યની આ વાત સાંભળીને ત્યાંથી એકદમ ભાગવા લાગ્યો. ચાણક્યે
પોતાની નીતિને મળેલી સફળતા જોઈને તે ધોબીનાં જે કપડાં ત્યાં ધોવા માટે
પડ્યાં હતાં તેને ધોવા લાગ્યો. ચંદ્રગુપ્ત પણ કિનારા ઉપર પાણીમાં જઈને છુપાઈ
ગયો. એટલામાં પેલો ઘોડેસ્વાર રાજપુરુષ જે તેમની પાછળ પડ્યો હતો તે ત્યાં
આવી પહોંચ્યો. તેણે આવીને પૂછ્યું, અરે ધોબી ! ચાણક્ય કઈ બાબતે ગયો ?
ધોબી વેશધારી ચાણક્યે કહ્યું કે, તે હમણાં જ પાણીમાં ઉતરી ગયો છે. તેની

પૂર્વમેવ માં દત્તવાન્ । તત્તથાણક્યથન્દ્રગુપ્તં સહ નીત્વા પ્રાહ-તવ રાજ્યલાભં કરિ-
 ણ્યામિ । તત્તથાણક્યો વનં ગત્વા રસાયનેન દ્રવ્યં નિર્માય તત્પ્રભાવાત્ સેનાં સંગૃ-
 હીતવાન્ । સૈનિકૈઃ સહ સ પાટલિપુત્રનગરે નન્દનૃપતિમાક્રમતે સ્મ । નન્દનૃપતિશ્ચા-
 ણક્યસ્ય પરાજયં કૃતવાન્ । ચન્દ્રગુપ્તેન સહ ચાણક્યસ્તતોઽપ્સૃત્ય ક્વચિત્ પ્રચ્છન્નો
 ભૂત્વા સ્થિતઃ । નન્દનૃપતેઃ કથિત્ સૈનિકોઽશ્વમારુઢ્ય ચાણક્યં ગ્રહીતુમાગતઃ । ચાણ-
 ક્યસ્તં વિલોક્ય ચિન્તયતિ-અયં તુ માં ગ્રહીતું પ્રત્યાસન્નો ભવતિ, વાલ્કોઽયં ચન્દ્ર-

મેરે સાથ ચલને મેં તુમ્હેં નિપેધ કરેગા । ચન્દ્રગુપ્ત ને કહ્યા-નિપેધ કયો
 કરેગા ? પિતા ને તો મુझे आपको पहिले से ही दे दिया है । चंद्रगुप्त की
 यात सुनकर चाणक्य ने चंद्रगुप्त को अपने साथ ले लिया । कहा-चलो
 मैं तुम्हें राज्य की प्राप्ति कराऊंगा । चन्द्रगुप्त को साथ लेकर चाणक्य
 वन में पहुँचा । रसायन से उसने वहाँ द्रव्य को खूब इकट्ठा किया और
 उसके प्रभाव से उसने वहीं पर सेना का संग्रह करना भी प्रारंभ कर
 दिया । जब सेना अच्छी तरह संगृहीत हो चुकी तो चाणक्य ने सेना
 को लेकर पाटलिपुत्र में जाकर राजा नन्द के ऊपर आक्रमण कर दिया ।
 राजा नन्द ने चाणक्य को पराजित कर वहाँ से निकाल दिया । चाण-
 क्य भी परास्त होकर चन्द्रगुप्त को साथ लेकर वहाँ से चला गया
 और किसी जगह गुप्तरूप से जाकर छिप गया । राजा नन्द ने चाणक्य
 को पकड़ ने के लिये उसके पीछे एक अपना बुढ़सवार भेजा । बुढ़-
 सवार को अपना पीछा करते हुए देखकर चाणक्य ने विचार किया

કહ્યું કે તારા પિતા તને મારી સાથે મોકલવામાં અડચણ ઉભી કરશે ચંદ્રગુપ્તે
 કહ્યું અડચણ શા માટે કરશે ? પિતાએ તો પહેલેથી જ મને આપને સુપ્રત કરેલ
 છે. ચંદ્રગુપ્તની વાત સાંભળીને ચાણક્યે ચંદ્રગુપ્તને પોતાની સાથે લઈ લીધો
 અને કહ્યું, ચાલો ! હું તમને રાજ્યની પ્રાપ્તિ કરાવીશ. ચંદ્રગુપ્તને લઈ ચાણક્ય
 વનમાં ગયા. રસાયણ પ્રયોગથી ત્યાં તેણે ખૂબ દ્રવ્ય એકઠું કર્યું અને એની
 સહાયથી સેના એકઠી કરવાનો આરંભ કરી લીધો. સેનાને લઈને પાટલીપુત્ર
 પહોંચી નંદરાજ ઉપર આક્રમણ કર્યું. યુદ્ધમાં રાજા નંદે ચાણક્યનો પરાજય કરીને
 ભગાડી મૂક્યા. ચાણક્ય હારી જવાથી ચંદ્રગુપ્તને સાથે લઈ ત્યાંથી ચાલી
 નીકળ્યા અને કોઈ છુપા સ્થળે જઈ રહેવા લાગ્યા. રાજા નંદે ચાણક્યને
 પકડવા માટે તેની પાછળ એક ઘોડેસ્વારને મોકલ્યો. ઘોડેસ્વાર પોતાનો પીછો
 પકડી રહ્યો છે. બાણીને ચાણક્ય વિચાર કરવા લાગ્યા કે તે મને પકડવા

वृद्धा प्राह-भोजने राज्यग्रहणे च प्रथमं प्रान्तभागे हस्तो निक्षेपणीयः । एतद्वचनं श्रुत्वा चाणक्यो हिमगिरिं गतवान् । तत्र पर्वतनामको नृपतिरासीत् । तस्य समीपं गत्वा चाणक्योऽवदत्-पाटलिपुत्रनगरे नन्दनृपतिना सह युद्धे भवान् सहयोगं दद्यात् तर्हि तदर्थं राज्यं भवते दास्यामि । तदा पर्वतेन तस्य वचनं स्वीकृतम् ।

ततश्चाणक्यः पर्वतश्च चन्द्रगुप्तेन सह पाटलिपुत्रनगरमागत्य नन्दं विजित्य राज्यं गृहीतवन्तौ । तदा नन्दनृपतिर्धर्मद्वारेण निःसर्तुं प्रार्थयति, चन्द्रगुप्तेन तत्प्रार्थनं स्वीकृत्य कथितम्-एकस्मिन् रथे यावद् द्रव्यं समाविशति, तावद् द्रव्यमुपादाय

ने क्या अनुचित किया है ? । वृद्धा ने कहा भोजन एवं राज्यग्रहण में प्रथम प्रान्तभाग में हाथ डालना चाहिये । वृद्धा के वचन सुनकर चाणक्य हिमगिरि जाकर वहां के राजा पर्वत से मिला । उससे चाणक्य ने कहा पाटलिपुत्र नगर में नन्दनृपति के साथ यदि युद्ध में आप हमें सहयोग प्रदान करें तो वहां का आधा राज्य हम आपको देंगे । चाणक्य की बात सुनकर पर्वत ने युद्ध में सहायता देना कबूल कर लिया ।

चंद्रगुप्त को लेकर चाणक्य और पर्वत दोनों मिल कर पाटलिपुत्र आये । वहां नन्द राजा के ऊपर इन्होंने धावा बोल दिया । नन्द को परास्त कर उसका राज्य ले लिया । उस समय नन्द ने धर्मद्वार से निकल ने के लिये प्रार्थना की । चंद्रगुप्त ने उसकी प्रार्थना को स्वीकार करते हुए कहा-एक रथ में जितना द्रव्य हो सकता हो उतने द्रव्य को

अनुचित काम क्युं छे ? वृद्धाछे कछुं के, लोअन अने राज्य अइछुमां प्रथम अेक छेउथी हाथ नाअवे। लेछेअे. वृद्धातुं आ वचन सांभणी तेने नमन करीने आछुक्य त्यांथी आलता थया. आ पछी आछुक्ये हिमगिरि जध त्यांना राज पर्वतनी मुलाकात बीधी अने तेने कछुं के, पाटलीपुत्रना राज नंदनी सामे अमे युद्ध करवा धखीये छीअे. अे युद्धमां तमे अे अभने साथ आपशे। तो ते छेतेवा राजन्यने। अरथे। लाग तमने आपवामां आवशे. आछुक्यनी आ बात सांभणी पर्वत राजअे युद्धमां सहायता देवानुं कछुल क्युं.

चंद्रगुप्तने लछेने आछुक्य अने पर्वत अनेअे पाटलीपुत्र उपर आक्रमण क्युं. सामसामी लडाई थर अेमां राज नंद डारी गया, तेना राजन्यने। कणअे चंद्र-गुप्ते सांभणी बीधी. आ समये नंदे धर्मद्वारथी निकणवा भाटे प्रार्थना करी. चंद्र-गुप्ते तेनी प्रार्थनाने स्वीकार करीने कछुं के, अेक रथमां अेटलुं द्रव्य समाध

કવેપસ્ય ચાણક્યસ્ય હસ્તે સ્વ સ્વં હયં ચ દત્વા જલે પ્રવિશતિ । તસ્મિન્નેવ સમયે રજકરૂપશ્ચાણક્યસ્તેન સ્વદ્વેન તસ્ય નન્દરાજપુરુષસ્ય ચિરશ્ચિન્હેદ ।

તતશ્ચાણક્યચન્દ્રગુપ્તેન સહ સ્થાનાન્તરં ગતઃ । કસ્મિંશ્ચિદ્ ગ્રામે મિશ્વાર્ય ગૃહ-
સ્થગૃહે ગત્વા પશ્યતિ—एका वृद्धा स्थालके पायसं परिचिप्य बालकाय भोक्तुं ददाति ।
તેન ચાલકેન સ્થાલકસ્ય મધ્યભાગે હસ્તો નિધિપ્તઃ । પ્રતપ્તપાયસસ્પર્શેન તસ્ય હસ્તો
દગ્ધઃ, તેનાસૌ ક્રન્દતિ । વૃદ્ધા વદતિ—रे मूढ ! त्वं चाणक्य इव किमाचरसि ।
एतद् वचनं श्रुत्वा वृद्धा चाणक्यः माह—मातः । किमनुचितं चाणक्येन कृतम्,

ગયા હૈ । સવાર ને જ્યોં હી યહ વાત સુની તો વહ અપને ઘોડે સે નીચે
ઉતર પડા ઓર કહને લગા કિ તુમ મેરે હસ ઘોડે કો ઓર તલવાર કો
પકડે રહો, જયતક મેં જલમેં ઘુસ કર ઉસે પકડ લાતા હું । હતને મેં હી
ચાણક્ય ને ઉસકો હી તલવાર સે ઉસકો માર દિયા ।

ચાણક્ય વહાં સે ચંદ્રગુપ્ત કો સાથ લેકર કિસી દુસરે સ્થાન પર
ચલા ગયા । એક સમય કી વાત હૈ કિ ચાણક્ય જબ મિશ્વા લેને કે
લિયે કિસી દુસરે ગાંવ મેં એક ગૃહસ્થ કે ઘર પર ગયા હુઆ થા તબ ઉસને
વહાં દેખા કિ એક વૃદ્ધા ને ધાલી મેં ગર્મ खीर પरोસ કરાં खाने કે
લિયે કિસી બાલક કો દી ઓર ઉસ બાલક ને ઉસ ગર્મ खीर સે યુક્ત
ધાલી કે બીચોબીચ હાથ ઢાલ દિયા સોં ગર્મ खीर કે उष्णस्पर्श સે ઉસ
બાલક કા હાથ જલ ગયા હસસે વહ રોને લગા । ઉસકો રોતાં દેખકર
વૃદ્ધા ને કહા કિ रे मूढ ! तू चाणक्य की तरह क्यों होता जा रहा
- है । वृद्धा के ये वचन सुनकर चाणक्य ने उससे कहा है माता ! चाणक्य

આ વાત સાંભળીને તે પોતાના ઘોડા ઉપરથી નીચે ઉતરી અને કહેવા લાગ્યો,
મારા આ ઘોડાને અને તરવારને તમે સાચવો ત્યાંસુધીમાં હું હમણાં જ તેને પાણી-
માંથી પકડી લાવું છું. ઘોડો અને તરવાર હાથ કરીને આજુકયે તરવારથી પેલા
સ્વારને મારી નાખ્યો. એને મારીને આજુકય ચંદ્રગુપ્તને સાથે લઈ કોઈ બીજા
સ્થળે આવ્યા ગયા. એક સમયની વાત છે કે બ્યારે આજુકય ત્યાં સ્થિર
થઈ ભિક્ષા લેવા માટે કોઈ બીજા ગામે એક ગૃહસ્થને ત્યાં ગયા. ત્યાં તે ભિક્ષા
માટે પહોંચ્યા, એજ વખતે એક વૃદ્ધો થાળીમાં ગરમ ગરમ ખીર પીરસી
બાળકને ખવરાવવાની તૈયારી કરી રહેલ હતી. બાળકે ખીર ખાવાની
ઉતાવળમાં તે ગરમ ખીરથી ભરેલી થાળીની વચ્ચે વચ્ચે હાથ નાખ્યો. ગરમ
ખીરના સ્પર્શથી બાળકનો હાથ દાબ્યો અને ચેવા લાગ્યો. આ બેધ વૃદ્ધાએ
તે બાળકને કહ્યું, કે અરે મૂઢ ! આજુકયના જેવો તું કેમ થતો બાક છે ? વૃદ્ધાનાં
આ વચન સાંભળી આજુકયે તે વૃદ્ધાને પૂછ્યું કે હે માતા ! આજુકયે કયું

चाणक्यस्तदा नन्दराज्यस्य द्वौ भागौ कृत्वा पर्वताय चन्द्रगुप्ताय चैकैकं भागं
मदत्तवान् । नन्देन स्वभवेन विपकन्या स्थापिता । तत्र पर्वतनृपस्तां विचोक्त्य
मोहितो जातः, तस्याः स्पर्शमात्रेण पर्वतनृपो विपाक्रान्तः संजातः । तद्विपापहारार्थं
चन्द्रगुप्तः प्रवृत्तः, स चाणक्येन प्रतिषेधितः, तदनन्तरं पर्वतनृपो मृतः । तदा
चन्द्रगुप्तस्य राज्यमखण्डं संजातम् ।

अथ नन्दराज्यान्तर्गताः शत्रुलोकाश्चौर्यादिभिरुपद्रवं कुर्वन्ति । चाणक्यश्चौराणां

मंगल है। चक्र के जो नव आरे टूट गये हैं उससे यह सूचित होता है कि
नौ पीढ़ी पर्यन्त यह राज्य स्थिर रहेगा । इसके बाद चाणक्य, पर्वत
और चंद्रगुप्त राज्यभवन में प्रविष्ट हो गये ।

चाणक्य ने उस मिले हुए नन्दराज्य के दो भाग किये । एक भाग
पर्वत के लिये और दूसरा भाग चन्द्रगुप्त के लिये दिया । नन्द के भवन
में एक विपकन्या पाली हुई थी । पर्वत इस कन्या को देखकर उस पर
मोहित हो गया । ज्यों ही उसने उसका स्पर्श किया कि उसका समस्त शरीर
विप से व्याप्त हो गया । पर्वत के समस्त शरीर में व्याप्त विप को दूर
करने के लिये चंद्रगुप्त ने प्रयत्न करना चाहा, परन्तु चाणक्य ने उसे
इसके लिये मना कर दिया अतः वह उससे दूर रहने लगा । बाद में
पर्वत मर गया । पर्वत के मरते ही चंद्रगुप्त का एकछत्र राज्य हो गया ।

राज्य परिवर्तित होने से अब नन्दराज्यान्तर्गत लोकों ने चोरी
आदि उपद्रव करना प्रारंभ कर दिया । चाणक्य ने चोरों को दमन

गणक्षप नहीं परंतु लोभे भगणक्षप छे. यकना जे नव आरा तूटी गया छे
जेनाथी जे सूचित थाय छे के, तमारी नव पेढी बुधी आ राज्य अखल अने स्थिर
रहेथे. पछी आणुक्य, राजा पर्वत अने चंद्रगुप्त जधा राजभवनमां गया.

नंद राजाना जे राज्यना आणुक्ये जे लागला पाडथा. ओक लाग राजा पर्वतने
अने ओक चंद्रगुप्तने सुप्रत करवामां आओये. नंदना राजभवनमां ओक विपकन्या
उछेरवामां आवी छती. पर्वत जेने जेध जेना उपर मोहीत जनी गयो. तेहे
जे कन्याना शरीरने स्पर्श कर्यो के तुरत ज तेना समस्त शरीरमां विप प्रसरी
गयुं. पर्वतना शरीरमां प्रसरी गयेला विपने दूर करवा चंद्रगुप्त तत्पर अन्यो
जेज वज्जते आणुक्ये तेने तेम करतां अटकाओये. आथी तेहे तेम करवुं मांडी
वाज्युं. विपना लोभे प्रकोपथी पर्वतनुं मृत्यु थयुं. पर्वतना मृत्युने कारहे
राजा नंदनुं समग्र राज्य चंद्रगुप्तना ओक छत्र नीजे आवी गयुं.

राज्यनुं परिवर्तन थवाथी राज्यनुं शासन जदलातां डेटलाक बोडो जे चोरी
आदि उपद्रवने प्रारंभ करी दीथे. आणुक्ये चोरी आदि उपद्रव करनाराज्यो सामे

भार्यापुत्रादिभिः सह भवान्निसरतु । नन्देन तथैव कृतम् । तदा रथस्थिता नन्दस्य पुत्री निर्गच्छन्ती चन्द्रगुप्तं सानुरागं पश्यति, तदा नन्दः स्वपुत्रीं ग्राह-पुत्रि ! अभीष्टं चेच्चन्द्रगुप्तं वरय । ततोऽसौ नन्दपुत्री चन्द्रगुप्तस्य रथे समारोहति, तदा नव संख्यका रथचक्रस्य अरा भग्नाः । चन्द्रगुप्तस्तद्भङ्गममङ्गलं विज्ञाय नन्दपुत्रीं प्रतिषेधयति । चाणक्यश्चन्द्रगुप्तं वदति-इदं महन्मङ्गलम्, नवसंख्यका अरा भग्ना इति नवपुरुषपर्यन्तं राज्यं स्थास्यति । ततश्चन्द्रगुप्तः पर्यतश्चाणक्यश्च सर्वे राजभवनं प्रविष्टाः ।

लेकर आप अपने स्त्रीपुत्रादिकसहित यहां से चले जायें । चन्द्रगुप्त की आज्ञानुसार नन्द ने वैसा ही किया । जिस समय नन्द राज्य से बाहर होकर बालकचक्रसहित चलने लगा उस समय रथ में बैठी हुई नन्द की पुत्री सुचन्द्रा ने बड़े ही अनुराग से चंद्रगुप्त की ओर देखा । चंद्रगुप्त की ओर अनुराग से देखनेवाली अपनी पुत्री को देखकर नन्द ने कहा कि हे पुत्री ! यदि तेरी इच्छा हो तो तू इस चंद्रगुप्त को बरले । पिता की बात सुनकर पुत्री चंद्रगुप्त के रथ पर जाकर बैठ गई । जिस समय यह उसके रथ पर बैठी उसी समय चंद्रगुप्त के रथ के पहिये के नौ आरे टूट गये । चंद्रगुप्त ने ज्यों ही अपने रथ के पहिये की यह हालत देखी तो उसने इसमें अमंगल माना और नन्द की पुत्री को उस में बैठने से निषेध कर दिया । चाणक्य ने इस बात को देखकर चंद्रगुप्त से कहा कि तुम जिसे अमंगल समझ रहे हो वह बड़ा भारी

शक्रे तेदं लब्धं लब्धं आप आपना श्री पुत्रादिकने लब्ध अडीथी आह्या नव नंदे अंद्रगुप्तनी आज्ञानुसार कथुं ने समये राजा नंद पोताना परिवार सहित राज्य छोडीने नवा लाग्या ते समये रथमां गेडेल नंदनी पुत्री सुचन्द्राये अंद्रगुप्तनी सामे बारे अनुरागथी द्रष्टि देडी अंद्रगुप्त तरङ्ग अनुरागथी नेध रडेल पोतानी पुत्रीने उद्देशीने नंदे कथुं के, डे पुत्रि ! ने तारी धम्मा डोय तो तू शुशीथी अंद्रगुप्तने वरी ले पितानी आ बात सांलणी सुचन्द्रा ते रथमांथी उतरी अंद्रगुप्तना रथ उपर अडी गध नेवी ते अंद्रगुप्तना रथ उपर न्छने गेडी तेवा न अंद्रगुप्तना रथना पछिंडांना नव आरा तूटी गया अंद्रगुप्ते पोताना रथनां पैडाना आ जनाव जेतां तेना मनमां अमंगलनी शंका जगी अने ओथी नंदनी पुत्रीने रथ उपर अडवाना ना पाडी आक्षुये आ नेध अंद्रगुप्तने समझाये के, तमे जेने अमंगल मानो छे ते अमं-

ચાળક્યસ્તદા નન્દરાજ્યસ્ય દ્વૌ ભાગૌ કૃત્વા પર્વતાય ચન્દ્રગુપ્તાય ચૈકૈકં ભાગં પ્રદત્તવાન્ । નન્દેન સ્વભવને વિપકન્યા સ્થાપિતા । ત્વ પર્વતનૃપસ્તાં વિલોક્ય મોહિતો જાતઃ, તસ્યાઃ સ્પર્શમાત્રેણ પર્વતનૃપો વિપાક્રાન્તઃ સંજાતઃ । તદ્વિપાપહારાર્થં ચન્દ્રગુપ્તઃ પ્રવૃત્તઃ, સ ચાળક્યેન પ્રતિપેધિતઃ, તદનન્તરં પર્વતનૃપો મૃતઃ । તદા ચન્દ્રગુપ્તસ્ય રાજ્યમલ્ખણં સંજાતમ્ ।

અથ નન્દરાજ્યાન્તર્ગતાઃ શત્રુલોકાશ્ચૌર્યાદિભિરુપદ્રવં કુર્વન્તિ । ચાળક્યશ્ચૌરાણાં

મંગલ હૈ । ચક્રકે જો નવ આરે ટૂટ ગયે હૈં ઉસસે યહ સૂચિત હોતા હૈં કિ નૌ પીઢી પર્યન્ત યહ રાજ્ય સ્થિર રહેગા । ઇસકે વાદ ચાળક્ય, પર્વત ઓર ચંદ્રગુપ્ત રાજ્યભવન મેં પ્રવિષ્ટ હો ગયે ।

ચાળક્ય ને ઉસ મિલે હુ઼ા નન્દરાજ્ય કે દો ભાગ કિયે । એક ભાગ પર્વત કે લિયે ઓર દૂસરા ભાગ ચન્દ્રગુપ્ત કે લિયે દિયા । નંદ કે ભવન મેં એક વિપકન્યા પાલી હુઈ થી । પર્વત ઇસ કન્યા કો દેખકર ઉસ પર મોહિત હો ગયા । જ્યોં હી ઉસને ઉસકા સ્પર્શ કિયા કિ ઉસકા સમસ્ત શરીર વિષ સે વ્યાસ હો ગયા । પર્વત કે સમસ્ત શરીર મેં વ્યાસ વિષ કો દૂર કરને કે લિયે ચંદ્રગુપ્ત ને પ્રયત્ન કરના ચાહા, પરન્તુ ચાળક્ય ને ઉસે ઇસકે લિયે મના કર દિયા અતઃ વહ ઉસસે દૂર રહને લગા । વાદ મેં પર્વત મર ગયા । પર્વત કે મરતે હી ચંદ્રગુપ્ત કા એકછત્ર રાજ્ય હો ગયા ।

રાજ્ય પરિવર્તિત હોને સે અવ નંદરાજ્યાન્તર્ગત લોકોં ને ચોરી આદિ ઉપદ્રવ કરના પ્રારંભ કર દિયા । ચાળક્ય ને ચોરોં કો દમન

ગળગ્ધ નથી પરંતુ ભારે મંગળગ્ધ છે. ચક્રના જે નવ આરા તૂટી ગયા છે એનાથી એ સૂચિત થાય છે કે, તમારી નવ પેઢી સુધી આ રાજ્ય અચલ અને સ્થિર રહેશે. પછી આજુકા, રાજા પર્વત અને ચંદ્રગુપ્ત બધા રાજભવનમાં ગયા.

નંદ રાજાના એ રાજ્યના આજુકા જે ભાગલા પાડયા. એક ભાગ રાજા પર્વતને અને એક ચંદ્રગુપ્તને સુપ્રત કરવામાં આવ્યો. નંદના રાજભવનમાં એક વિપકન્યા ઉછેરવામાં આવી હતી. પર્વત એને બેઠે એના ઉપર મોહીત બની ગયો. તેણે એ કન્યાના શરીરને સ્પર્શ કર્યો કે તુરત જ તેના સમસ્ત શરીરમાં વિષ પ્રસરી ગયું. પર્વતના શરીરમાં પ્રસરી ગયેલા વિષને દૂર કરવા ચંદ્રગુપ્ત તત્પર બન્યો. એજ વખતે આજુકા તેને તેમ કરતાં અટકાવ્યો. આથી તેણે તેમ કરવું માંડી પાડ્યું. વિષના ભારે પ્રકોપથી પર્વતનું મૃત્યુ થયું. પર્વતના મૃત્યુને કારણે રાજા નંદનું સમગ્ર રાજ્ય ચંદ્રગુપ્તના એક છત્ર નીચે આવી ગયું.

રાજ્યનું પરિવર્તન થવાથી રાજ્યનું શાસન બદલાતાં કેટલાક લોકોએ ચોરી આદિ ઉપદ્રવને પ્રારંભ કરી દીધો. આજુકા ચોરી આદિ ઉપદ્રવ કરનારાઓ સામે

દમનાર્થં વિચિન્તયન્ કદાચિદ્ નગરતો વહિર્નિઃમૃતઃ સન્ પश्यति-નલદામનામા
કુવિન્દઃ પુત્રં મત્કોટકૈર્દૃષ્ટં દૃષ્ટ્વા કોપાવિષ્ટો ભૂત્વા તેષાં ત્રિલમન્વેપયતિ ।
ચાણક્યસ્તથાકુર્વન્તં કુવિન્દં દૃષ્ટ્વા પૃચ્છતિ-કુવિન્દ ! કિમન્વેપયસિ ? કુવિન્દઃ
પ્રાહ-મત્પુત્રદંશદાયિનાં મત્કોટકાનાં-ગૃહમ્, एवं तदवृत्तं विदित्वा चाणक्यो मनसि
વિચારયતિ-योग્યોઽયં કુવિન્દો વૈરનિર્યાતનસ્ય । इति मनसि विचार्य तमेव
नगराध्यक्षं कृतवान् ।

एकदा कोशपूरणार्थं चाणक्यः मुवर्णमाप्तिकामो देवाराधनं कृतवान् । देवः

करने का बहुत कुछ विचार किया पर समझ में नहीं बैठा । एक दिन
इसी विषय का विचार करते २ चाणक्य नगर से बाहर जा पहुँचे ।
पहुँचते ही वहाँ एक नलदाम नामक कुविन्द (जुलाहे) को देखा जो
अपने पुत्र को काटने वाले मकोड़ों के बिल की तलास करने में बड़े
क्रोध से अभिभूत होकर इधर उधर फिर रहा था । चाणक्य ने इस
प्रकार से तलाशी करने में प्रयत्न करते हुए देखकर कुविन्द से पूछा
कि हे कुविन्द ! कहो क्या दूँद रहे हो ? कुविन्द ने कहा मेरे पुत्र को एक
मकोड़े ने काट लिया है सो मैं उसके घर को देख रहा हूँ । इस प्रकार
कुविन्द की बात सुनकर चाणक्य ने मन में विचार किया कि यह
कुविन्द बैर का बदला लेने में योग्य है । इस प्रकार विचार कर
चाणक्य ने उसे नगर का कोतवाल बना दिया ।

एक समय की बात है कि खजाने की पूर्ति करने के निमित्त
चाणक्य ने किसी देव की आराधना की । चाणक्य की आराधना से

સમ્પત્તિ હાથે કામ લેવાનો તેમજ દમનનો કારકો વીજવાનો વિચાર કર્યો. પરંતુ
તેમ કરવું અત્યારના સંજોગોમાં તેને ઉચિત ન લાગ્યું. એક દિવસ આજ આજ-
તનો વિચાર કરતાં કરતાં ચાણક્ય નગરની બહાર જતા હતા, ત્યાં રસ્તામાં એક
સ્થળે એક નલદામ નામના કુવિન્દ (વણકર)ને જોયો. જે પોતાના પુત્રને કરડનારા
મ'કોડાનું દર શોધી રહ્યો હતો. તેને ચાણક્યે પૂછ્યું, કુવિન્દ શું શોધી રહ્યો છે ?
વણા જ કોધના આવેશથી અહીં તહીં ફરી રહેલા કુવિન્દે કહ્યું, મારા પુત્રને
એક મ'કોડાએ કરડી ખાધેલ છે, હું તેના ઘરને જોતી રહ્યો છું. આ પ્રકારની
કુવિન્દની વાત સાંભળી ચાણક્યે વિચાર્યું કે, આ માણસ બદલો લેવામાં યોગ્ય
છે. આમ વિચારી તેને સમજાવી પછીથી ચાણક્યે તેને નગરના કોતવાળાની
જગ્યાએ નીમ્યો.

એક સમયની વાત છે-રાજ્યના ખજાનાને ભરપૂર બનાવવા ચાણક્યે

પ્રસન્નો ભૂત્વા ચાળક્યાય જયપ્રદાન્ પાશકાન્ દદૌ । તદનન્તરં ચાળક્યેન
 દીનારપૂર્ણસ્થાલેન સહ પાશકાન્ દત્ત્વા કથિદ્ ઘૂતપટુઃ પુરુષો ઘૂતાર્થં
 નગરે પ્રેષિતઃ । દીનારપૂર્ણં સ્થાલં પાશકાનપિ ગૃહીત્વાઽસૌ પુરુષઃ પુરાભ્યન્તરે
 ભ્રમન્ વદતિ—યદ્યદ્ જયામિ, તર્હિ દીનારમેકં ગૃહ્ણામિ । યદિ મામન્યો જયતિ,
 તદા દીનારપૂર્ણમિદં સ્થાલં દદામિ—ઇતિ । તતો વહ્નો જના ઘૂતક્રીડાર્થં સમાગતાઃ ।
 સર્વે તેન પુરુષેણ પરાજિતા, તં પાશકહસ્તં પુરુષં વિજેતુમસમર્થાં જાતાઃ । યથા
 તસ્ય પાશકહસ્તપુરુષસ્ય પરાજયો દુર્લભસ્તથા સંસારે खलु મનુષ્યજન્મ દુર્લભમ્ ।

દેવ પ્રસન્ન બીં હો ગયા । પ્રસન્ન હોકર દેવ ને ચાળક્ય કે લિયે જય
 કરાને ચાલે ચાર પાસે વરદાનરૂપ મેં દિયે । હસકે વાદ ચાળક્ય ને
 સ્વર્ણમુદ્રા-સોનામુહર સે પરિપૂર્ણ એક ધાલીં કોં ઉન પાસોં કે સાથર કિંસી
 ઘૂતક્રીડા મેં નિપુણ પુરુષ કોં દેકર ઉસકો નગર મેં જુઆં खेलने કે લિયે
 મેજા । સોનામુહરોં સે પૂર્ણ ધાલ કોં તથા પાસોં કોં લેકર વહ પુરુષ
 નગર મેં વહ અવાજ દેતે હુણ ફિરને લગા કિં યદિ મેં જીત જાતા હૂં
 તો પરાજિત હુણ વ્યક્તિ સે સિર્ફ એક હી સોનામુહર લેતા હૂં, ઓર
 યદિ હાર જાતા હૂં તો જીતને વાલે કોં સોનામુહરોં સે પૂર્ણ વહ ધાલ કા
 ધાલ દે દેતા હૂં । ઉસકી હસ ઘોષણા કોં સુનકર અનેક જન ઘૂતક્રીડા
 કે લિયે આને લગે । જુઆં खेलना પ્રારંભ હો ગયા । ઉસ પુરુષ ને સવ
 કોં જીત લિયા, હસ કોં કોઈં બીં પરાજિત ન કર સકા । સારાંશ-જિસ
 પ્રકાર હસ દેવપ્રદત્ત પાસોં કે પ્રભાવ સે ઉસ પુરુષ કા પરાજિત હોના

કોઈ દેવની આરાધના કરી. આણ્ક્યની આરાધનાથી પ્રસન્ન થઈ દેવે આણ્ક્યને
 વિજય અપાવનાર એવા ચાર પાસાં તેને આપ્યા. આ પછી આણ્ક્યે વરદા-
 નના રૂપમાં મળેલા એ પાસાંનો પ્રયોગ કરવાનું વિચારી એક ધાળમાં સુવર્ણ
 મુદ્રાઓ ભરી ઘૂતક્રીડામાં નિપુણ એવા એક પુરૂષને પાસાં સાથે તે ધાળ આપી
 નગરીમાં જુગાર રમવા મોકલ્યો. સોનામહોરથી ભરેલ ધાળ તથા પાસાં લઈ
 તે પુરૂષ નગરમાં ઘોષણા કરતો ફરવા લાગ્યો. કે એ કોઈ મને દાવમાં હરાવે
 તો સોનામહોરથી ભરેલ આ ધાળ આપી દઈ અને સામે મહાસ હારે તો તેણે
 મને ફક્ત એક જ સોનામહોર આપવી. એની આવી ઘોષણા સાંભળીને
 અનેક માણસો જુગાર રમવા આવવા લાગ્યા. જુગાર રમવાનો પ્રારંભ થઈ
 ચુક્યો. તેણે રમવા આવનાર દરેકને જીતી લીધા પછી તેને કોઈ પરાજીત કરી
 શક્યું નહીં. સારાંશ-દેવના આપેલા પ્રસાદરૂપ પાસાંના પ્રભાવથી જેવી રીતે એ

દમનાર્થં વિચિન્તયન્ કદાચિદ્ નગરતો વર્ધિર્નિઃસૃતઃ સન્ પશ્યતિ-નલદામનામા
કુવિન્દઃ પુત્રં મત્કોટકૈર્દૃષ્ટં દૃષ્ટ્વા કોપાવિષ્ટો ભૂત્વા તેષાં વિલમન્વેપયતિ ।
ચાણક્યસ્તથાકુર્વન્તં કુવિન્દં દૃષ્ટ્વા પૃચ્છતિ-કુવિન્દ ! કિમન્વેપયસિ ? કુવિન્દઃ
પ્રાઢ-મત્પુત્રદશદાયિનાં મત્કોટકાનાં ગૃહમ્, એવં તદ્વૃત્તં વિદિત્વા ચાણક્યો મનસિ
વિચારયતિ-યોગ્યોઽયં કુવિન્દો વૈરનિર્ગાતનસ્ય । ઇતિ મનસિ વિચાર્ય તમેવ
નગરાધ્યક્ષં કૃતવાન્ ।

एकदा कोशपूरणार्थं चाणक्यः मुवर्णमाप्तिकामो देवाराधनं कृतवान् । देवः

કરને કા વહુત કુછ વિચાર કિયા પર સમજા મેં નહીં થૈઠા । એક દિન
હસી વિષય કા વિચાર કરતે ૨ ચાણક્ય નગર સે યાહર જા પહુંચે ।
પહુંચતે હી વહાં એક નલદામ નામક કુવિન્દ (જુલાહે) કો દેલા જો
અપને પુત્ર કો કાટને વાલે મકોડોં કે ઘિલ કી તલાસ કરને મેં બંઢે
ક્રોધ સે અભિભૂત હોકર હધર ડધર ફિર રહા થા । ચાણક્ય ને હસ
પ્રકાર સે તલાશી કરને મેં પ્રયત્ન કરતે હુણ દેલકર કુવિન્દ સે પૂછા
કિ હે કુવિન્દ ! કહો કયા ઢૂંઢ રહે હો ? કુવિન્દ ને કહા મેરે પુત્ર કો એક
મકોડે ને કાટ લિયા હૈ સો મૈં ઉસકે ઘર કો દેલ રહા હૂં । હસ પ્રકાર
કુવિન્દ કી વાત સુનકર ચાણક્ય ને મન મેં વિચાર કિયા કિ યહ
કુવિન્દ વૈર કા વદલા લેને મેં યોગ્ય હૈ । હસ પ્રકાર વિચાર કર
ચાણક્ય ને ઉસે નગર કા કોતવાલ બના દિયા ।

एक समय की बात है कि खजाने की पूर्ति करने के निमित्त
चाणक्य ने किसी देव की आराधना की । चाणक्य की आराधना से

સપ્ત હાથે કામ લેવાનો તેમજ હમનનો કોરડો વીંઝવાનો વિચાર કર્યો. પરંતુ
તેમ કરવું અત્યારના સંજોગોમાં તેને ઉચિત ન લાગ્યું. એક દિવસ આજ બાબ-
તનો વિચાર કરતાં કરતાં ચાણક્ય નગરની બહાર જતા હતા, ત્યાં રસ્તામાં એક
સ્થળે એક નલદામ નામના કુવિન્દ (વણકર) ને જોયો. જે પોતાના પુત્રને કરડનારા
મકોડાનું દર શોધી રહ્યો હતો. તેને ચાણક્યે પૂછ્યું, કુવિન્દ શું શોધી રહ્યો છે ?
ધણ જ કોધના આવેશથી અહીં તહીં ફરી રહેલા કુવિન્દે કહ્યું, મારા પુત્રને
એક મકોડાએ કરડી ખાધેલ છે, હું તેના ઘરને જોતી રહ્યો છું. આ પ્રકારની
કુવિન્દની વાત સાંભળી ચાણક્યે વિચાર્યું કે, આ માણસ બહોલો લેવામાં યોગ્ય
છે. આમ વિચારી તેને સમજાવી પછીથી ચાણક્યે તેને નગરના કોટવાળાની
જગાએ નીમ્યો.

એક સમયની વાત છે-રાજ્યના ખજાનાને ભરપૂર બનાવવા ચાણક્યે

ત્રીદિ-કદ્દુ-કોદ્રવ-મકુષ્ઠકા-ઢવી-વહ્ન-કુલત્ય-શુણ-ધીનક-મમૂરા-તસી-કલમ્બપટ્ટિકા-મક્કા-વર્જરીત્યાદિવૃદ્ધભેદભિજ્ઞાન્ સંપૂર્ણભરતક્ષેત્રમધ્યગાન્ ધાન્ય-રાશીન્ કોઽપિ દેવઃ સ્વશક્ત્યા સંમીલ્યાશ્ચંલિહં તત્પુઞ્જં કુર્યાત્ તત્ર પ્રસ્થૈકપરિમિત-સર્પપં નિશ્ચિપ્ય સર્વં ધાન્યં સંમિશ્રયેત્, તદનન્તરં જરાજર્જરાં વિગલન્નેત્રાં કમ્પમા-નગાત્રામેકાં વૃદ્ધાં તાન્ સર્પપાન્ ધાન્યરાશિમ્યઃ કણશઃ પૃથક્ કૃત્ય પ્રસ્થં પૂરયિતું સમાદિશેત્ તદા તસ્યાસ્તત્પૃથક્કરણં યથા દુષ્કરં ભવેત્ તથા મનુષ્યભવાત્ પ્રચ્યુ-તસ્ય પ્રમાદિનઃ પુનર્મનુષ્યજન્મ દુર્લભમિતિ ॥

ઉડદ, તિલ, રાજમાપ (ચૌલા), મટર, મોંઠ, યાજરા આદિ સમસ્ત ધાન્યોં કો બો દેવેં ઓર વે જવ અપને સમય પર નિરૂપદ્રવરૂપ સે પકકર તૈયાર હો જાવેં તવ કોઈ દેવ હસ સમસ્ત ધાન્યરાશિ કી ઉડાવની અર્થાત્-તુપ સાફ-કરકે એક વહુત અધિક જૈંવી જો માનો આકાશ કો ખી સ્પર્શ કરતી હો એસી ઢેરી લગા દે । ફિર ઉસમેં એક પ્રસ્થપ્રમાણ સર્પપ મિલાકર કિસી વૃદ્ધા કો કિ જિસે કમ દીક્ષતા હો તથા શરીર ખી જિસકા કંપિત હો રહા હો યહ આદેશ દે કિ તૂ હસ ઢેરી મેં ઉસ પ્રસ્થપ્રમાણ સર્પપ કો અલગ ૨ છાંટ દે । તો જૈસે ઢેરી મેં ઉસ પ્રસ્થપ્રમાણ સર્પપ કા એક ૨ કણ કરકે છાંટના વડા મુશ્કિલ હૈ, વસી પ્રકાર મનુષ્ય ભવ કે છૂટ જાને પર પુનઃ ઉસકા સિલના જીવ કો વડા દુર્લભ હૈ ।

ચોખા, ઘઉં, ચણા, મગ, અડદ, તલ, ચોળા, મઠ, કળથી, બાજરા, બુવાર વગેરે સમસ્ત ધાન્યોનાં વાવેતર કરવાના કામમાં લાગી બાંધ છે. વવાયેલ તે સમગ્ર ધાન્ય તેના ચોખ્ય સમયે ઉપદ્રવરૂપી પાકીને તૈયાર થઈ બાંધ ત્યાં દેઈ દેવ એ સમસ્ત ધાન્યરાશીની ઉડાવણી અર્થાત્ તુલ સાફ કરીને એક ખૂણ અધિક ઉંચો માનો કે આકાશને પણ સ્પર્શ કરી બાંધ એવડો મોટો એક ઢગલો કરી દે, પછી તેમાં એક પ્રસ્થપ્રમાણ સરસવ મેળવીને કોઈ વૃદ્ધા કે જેને આંધું દેખાતું હોય, તથા શરીર પણ જેનું કંપન હોય તેને કહે કે, તું આ ઢગલા માંથી એ પ્રમાણપ્રસ્થ સરસવને ખોળી ખોળીને અલગ પાડી આપતો જેમ એ ઢગલામાંથી એ પ્રસ્થપ્રમાણ સરસવનો એકેક કણ કરીને બુદ્ધા પાડવા ધણું મુશ્કેલ છે છતાં પણ તે શક્ય બને તો પણ મનુષ્યભવ પુરો થતાં ફરીથી મનુષ્ય ભવ પામવો આત્માને ઘણું જ દુર્લભ છે.

અગ્ર સંગ્રહઃ શ્લોકઃ—(શાર્દૂલ ચિક્રીઢિતવૃષ્ટામ્)

દેવારાધનલબ્ધપાશકવરાન્ સ્થાલં ચ રત્નૈર્મૃતમ્,
 ષાણક્યેન વિતીર્ય કોઽપિ પુરુષઃ સ્વીયે પુરે પ્રેષિતઃ ।
 સર્વેષાં સ ચ તત્પુરાધિવસતાં જાતો યથા દુર્જયઃ,
 સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥

इति द्वितीयः पाशकदृष्टान्तः ॥ २ ॥

અથ તૃતીયો ધાન્યદૃષ્ટાન્તઃ પ્રોચ્યતે—

ભરતક્ષેત્રે દ્વાત્રિશતસહસ્રદેશસમન્વિતેઽનેકગ્રામનગરપત્તનાદિસહિતે પ્રશસ્ત
 વૃષ્ટૌ સત્યાં કૃપિકર્મદક્ષેઃ કૃપીચલૈઃ સર્વધાન્યવીજેષ્મેષુ સમુત્પન્નાન્ નિરુપદ્રવં
 નિષ્પન્નાન્ શાલિ-ગોધૂમ-ચણક-મુદ્ગ-માપ-તિલાણુક-રાજમાપ-કલાય-યવ-

દુર્લભ વના ઉસી પ્રકાર હસ સંસાર મેં યહ મનુષ્યજન્મ થડા દુર્લભ હૈ ।

સંગ્રહ શ્લોક—

દેવારાધનલબ્ધપાશકવરાન્ સ્થાલં ચ રત્નૈર્મૃતમ્,
 ષાણક્યેન વિતીર્ય કોઽપિ પુરુષઃ સ્વીયે પુરે પ્રેષિતઃ ।
 સર્વેષાં સ ચ તત્પુરાધિવસતાં જાતો યથા દુર્જયઃ,
 સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૨ ॥

यह दूसरा पाशकदृष्टान्त हुआ ॥ २ ॥

તૃતીય ધાન્યદૃષ્ટાન્ત હસ પ્રકાર હૈ—અનેક ગ્રામ, નગર, પત્તન
 આદિ સે સહિત હસ ૩૨ વતીસ હજાર દેશવાલે ભરતક્ષેત્ર મેં વૃષ્ટિ કે
 હોને પર કૃપિ કર્મ મેં દક્ષ કિસાન લોગ શાલિ, ગોધૂમ, ચણક, મુદ્ગ,

પરુષને પરાશ્રુત બનાવવો. મહાદુર્લભ હતું એવીજ રીતે આ સંસારમાં આ
 મનુષ્ય જન્મ મહાદુર્લભ છે. સંગ્રહ શ્લોક—

દેવારાધનલબ્ધપાશકવરાન્ સ્થાલં ચ રત્નૈર્મૃતમ્,
 ષાણક્યેન વિતીર્ય કોઽપિ પુરુષઃ સ્વીયે પુરે પ્રેષિતઃ ।
 સર્વેષાં સ ચ તત્પુરાધિવસતાં જાતો યથા દુર્જયઃ,
 સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૨ ॥

આ બીજું પાશકદૃષ્ટાન્ત થયું ॥ ૨ ॥

ત્રીજું ધાન્યદૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે.

અનેક ગ્રામ, નગર, જંગલ વગેરે દરેક સ્થળે ૩૨ હજાર દેશવાળા આ
 ભરતક્ષેત્રમાં વરસાદ વરસતાં ખેતીના કામમાં રચ્યા પચ્યા ખેડુતા

ગ્રીહિ-કદ્દુ-કોદ્રવ-મકુષ્ઠકા-ટકી-વહ્ન-કુલત્ય-શુણ-ચીનક-મમૂરા-તસી-કલમ્બપષ્ઠિકા-મક્કા-ચર્જરીત્યાદિવહુભેદમિન્નાન્ સંપૂર્ણભરતક્ષેત્રમધ્યગાન્ ધાન્ય-રાશીન્ કોઽપિ દેવઃ સ્વશક્ત્યા સંમીલ્યાશ્રંલિહં તત્પુઞ્જં કુર્યાત્ તત્ર પ્રસ્થૈકપરિમિત-સર્પપં નિશિષ્ય સર્વં ધાન્યં સંમિશ્રયેત્, તદનન્તરં જરાજર્જરાં વિગલન્નેત્રાં કમ્પમા-નગાગ્રામેકાં વૃદ્ધાં તાન્ સર્પપાન્ ધાન્યરાશિભ્યઃ કણશઃ પૃથક્ કૃત્ય પ્રસ્થં પૂરયિતું સમાદિશેત્ તદા તસ્યાસ્તત્પૃથક્કરણં યથા દુષ્કરં ભવેત્ તથા મનુષ્યભવાત્ પ્રચ્યુ-તસ્ય પ્રમાદિનઃ પુનર્મનુષ્યજન્મ દુર્લભમિતિ ॥

ઉડદ, તિલ, રાજમાપ (ચૌલા), મટર, મોઠ, વાજરા આદિ સમસ્ત ધાન્યોં કો યો દેવેં ઓર વે જવ અપને સમય પર નિરૂપદ્રવરૂપ સે પકકર તૈયાર હો જાવેં તવ કોઈ દેવ इस સમસ્ત ધાન્યરાશિ કી ઉઢાવની અર્થાત્-તુપ સાફ-કરકે એક વહુત અધિક ઝૂંચી જો માનો આકાશ કો બી સ્પર્શ કરતી હો એસી ઢેરી લગા દે । ફિર ઉસમેં એક પ્રસ્થપ્રમાણ સર્પપ મિલાકર કિસી વૃદ્ધા કો કિ જિસે કમ દીક્ષતા હો તથા શરીર બી જિસકા કંપિત હો રહા હો યહ આદેશ દે કિ તૂ इस ઢેરી મેં ઉસ પ્રસ્થપ્રમાણ સર્પપ કો અલગ ૨ છાંટ દે । તો જૈસે ઢેરી મેં ઉસ પ્રસ્થપ્રમાણ સર્પપ કા એક ૨ કણ કરકે છાંટના વડા મુશ્કિલ હૈ, ઉસી પ્રકાર મનુષ્ય ભવ કે છૂટ જાને પર પુનઃ ઉસકા મિલના જીવ કો વડા દુર્લભ હૈ ।

ચોખા, ઘઉં, ચણા, મગ, અડદ, તલ, ચોળા, મઠ, કળથી, બાબરો, જુવાર વગેરે સમસ્ત ધાન્યોનાં વાવેતર કરવાના કામમાં લાગી બાથ છે. વાવેલ તે સમય ધાન્ય તેના ચોખ્ય સમયે ઉપદ્રવરૂપીત પાકીને તૈયાર થઈ બાથ ત્યારે કોઈ દેવ એ સમસ્ત ધાન્યરાશીની ઉઢાવણી અર્થાત્ તુલ સાફ કરીને એક ખૂબ અધિક ઉંચો માનો કે આકાશને પણ સ્પર્શ કરી બાથ એવડો મોટો એક ઢગલો કરી દે, પછી તેમાં એક પ્રસ્થપ્રમાણ સરસવ મેળવીને કોઈ વૃદ્ધ કે જેને ઓછું દેખાતું હોય, તથા શરીર પણ જેનું કંપતું હોય તેને કહે કે, તું આ ઢગલા માંથી એ પ્રમાણપ્રસ્થ સરસવને જોળી જોળીને અલગ પાડી આપતો જેમ એ ઢગલામાંથી એ પ્રસ્થપ્રમાણ સરસવનો એકેક કણ કરીને જુદા પાડવા ઘણું મુશ્કેલ છે છતાં પણ તે શક્ય બને તો પણ મનુષ્યભવ પુરો થતાં ફરીથી મનુષ્ય ભવ પામવો આત્માને ઘણું જ દુર્લભ છે.

અગ્ર સંગ્રહઃ શ્લોકઃ—(શાર્દૂલ વિક્રીડિતવૃત્તમ્)

દેવારાધનલબ્ધપાશકવરાન્ સ્થાલં ચ રત્નૈર્મૃતમ્,
 ષાણક્યેન વિતીર્ય કોઽપિ પુરુષઃ સ્વીયે પુરે પ્રેષિતઃ ।
 સર્વેષાં સ ચ તત્પુરાધિવસતાં જાતો યથા દુર્જયઃ,
 સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥

इति द्वितीयः पाशकदृष्टान्तः ॥ २ ॥

અથ તૃતીયો ધાન્યદૃષ્ટાન્તઃ પ્રોચ્યતે—

ભરતક્ષેત્રે દ્વાત્રિશત્સહસ્રદેશસમન્વિતેઽનેકગ્રામનગરપત્તનાદિસહિતે પ્રશસ્ત
 વૃષ્ટી સત્યા કૃપિકર્મદક્ષેઃ કૃપીવલૈઃ સર્વધાન્યવીજેષ્ઠેષુ સમુત્પન્નાન્ નિરુપદ્રવં
 નિષ્પન્નાન્ શાલિ-ગોધૂમ-ચણક-મુદ્ગ-માપ-તિલાણુક-રાજમાપ-કલાય-યવ-

દુર્લભ યના ડસી પ્રકાર હસ સંસાર મેં યહ મનુષ્યજન્મ બઢા દુર્લભ હૈ ।

સંગ્રહ શ્લોક—

દેવારાધનલબ્ધપાશકવરાન્ સ્થાલં ચ રત્નૈર્મૃતમ્,
 ષાણક્યેન વિતીર્ય કોઽપિ પુરુષઃ સ્વીયે પુરે પ્રેષિતઃ ।
 સર્વેષાં સ ચ તત્પુરાધિવસતાં જાતો યથા દુર્જયઃ,
 સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૨ ॥

यह दूसरा पाशकदृष्टान्त हुआ ॥ २ ॥

તૃતીય ધાન્યદૃષ્ટાન્ત હસ પ્રકાર હૈ—અનેક ગ્રામ, નગર, પત્તન
 આદિ સે સહિત હસ ૩૨ યતીસ હજાર દેશવાલે ભરતક્ષેત્ર મેં વૃષ્ટિ કે
 હોને પર કૃપિ કર્મ મેં દક્ષ કિસાન લોગ શાલિ, ગોધૂમ, ચણક, મુદ્ગ,

પુરુષને પરાજીત બનાવવો મહાદુર્લભ હતું એવીજ રીતે આ સંસારમાં આ
 મનુષ્ય જન્મ મહાદુર્લભ છે. સંગ્રહ શ્લોક—

દેવારાધનલબ્ધપાશકવરાન્ સ્થાલં ચ રત્નૈર્મૃતમ્,
 ષાણક્યેન વિતીર્ય કોઽપિ પુરુષઃ સ્વીયે પુરે પ્રેષિતઃ ।
 સર્વેષાં સ ચ તત્પુરાધિવસતાં જાતો યથા દુર્જયઃ,
 સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૨ ॥

આ બીજું પાશકદૃષ્ટાન્ત થયું ॥ ૨ ॥

ત્રીજું ધાન્યદૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે.

અનેક ગ્રામ, નગર, જંગલ વગેરે દરેક સ્થળે ૩૨ હજાર દેશવાળા આ
 ભરતક્ષેત્રમાં વરસાદ વરસતાં એતીના કામમાં રચ્યા પચ્ય એડુતો

अत्र संग्रहः—(शार्दूल विक्रीडितवृत्तम्)

स्तम्भानां हि सहस्रमष्टसहितं प्रत्येकमष्टोत्तरं ।

कोणानां च सहस्रमेष्टु जयति द्यूते पितु र्यः सुतः ।

साम्राज्यं लभते स, तस्य विजयो द्यूते यथा दुर्लभः ।

संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ २ ॥

इति चतुर्थो द्यूतदृष्टान्तः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमो रत्नदृष्टान्तः—

धनसमृद्धे पुरे रत्नकोटिमभ्युर्धनदनामा वणिक् प्रतिवसति स भूमौ रत्नानि निखन्य तदुपरि पर्यङ्कं निधाय शयनं करोति । स विश्वासाभावेन पुत्रानपि तानि न प्रदर्शयति । स्वधनानुरूपं वेषं भवनादिकं च न करोति, व्यापारकरणे धनानि हस्तादपगतानि भविष्यन्तीति बुद्ध्या व्यापारमपि न करोति ।

संग्रहः श्लोक—

स्तम्भानां हि सहस्रमष्टसहितं प्रत्येकमष्टोत्तरं,

कोणानां च सहस्रमेष्टु जयति द्यूते पितु र्यः सुतः ।

साम्राज्यं लभते स तस्य विजयो द्यूते यथा दुर्लभः

संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ ४ ॥

यह चौथा द्यूतदृष्टान्त है ॥ ४ ॥

पाँचवा रत्न दृष्टान्त इस प्रकार है—धनसमृद्ध नामका एक नगर था । उसमें एक करोड़ रत्नों का मालिक धनद नामका वणिक् रहता था । वह जमीन में गड़े हुए रत्नों के ऊपर पलंग बिछाकर सोया करता था । उसको अपने पुत्रों तक का भी विश्वास नहीं था

संग्रहः श्लोक—स्तम्भानां हि सहस्रमष्टसहितं प्रत्येकमष्टोत्तरं,

कोणानां च सहस्रमेष्टु जयति द्यूते पितु र्यः सुतः ॥

साम्राज्यं लभते स तस्य विजयो ते यथा दुर्लभः

संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ ४ ॥

आ चौथुं द्यूतदृष्टान्त छे. ॥ ४ ॥

पाँचमुं रत्नदृष्टान्त आ प्रकारमुं छे—

धनसमृद्ध नाममुं ओके नगर छतुं, तेमां ओके करोड रत्नोनो मालिक ओवे। धनद नामनो वणिक् रहैतो छेतो। ते जमीनमां दाटी राखेला रत्नो उपर पलंग पाथरीने सुर्ध रहैतो छेतो। तेने पोताना पुत्रोनो पणु विश्वास न छेतो, तेथी

ચરસહસ્રવારં વિજિતે સતિ તનૈવ ક્રમેણ સર્વે સ્તમ્ભા વિજિતા ભવેયુઃ, તત્રાપ્યષ્ટો-
 ચરસહસ્રવારવિજયકરણે દૈવાત્ તન્મધ્યે પરાજયઃ સ્યાત્ તદા સર્વે વિજિતાઃ
 કોણા અવિજિતાઃ ભવન્તિ, સઠ્ઠદપિ વ્રહ્મચર્યભક્તે સર્વ મહાવ્રતમિવ, અતઃ
 પુનરાદિત એવ સર્વે કોણા વિજેતવ્યાઃ, એવં ત્વમપિ કુરુ । ઇતિ પિતૃવચનં શ્રુત્વા
 વસુમિત્રચિન્તયતિ-દ્યૂતાદેવ રાજ્યં લભ્યં પુનઃ કિમર્થે પિતરં હન્મિ, ઇતિ વિચાર્ય
 રાજા સહ ઘૂતંક્રીડાયાં પ્રવૃત્તઃ, તથાપિ જયો દુર્લભો જાતઃ તસ્ય વસુમિત્રસ્યૈતત્
 કાર્યં યથા દુષ્કરં, તથા મનુષ્યત્વમપિ દુર્લભમ્ ।

इनके जो प्रत्येक के एक हजार आठ १००८ कोने हैं उन कोनों में से
 एक २ कोने को एक हजार आठ १००८ बार जीत जाता है । इसी क्रम
 से ये समस्त खंभे जय जीत लिये जाते हैं तब जाकर वह विजयी
 कहलाता है । यदि सब कोने जीत भी लिये जायें और एक भी कोना
 यदि जीता न जा सके तो जीते हुए भी सब कोने नहीं जीते समझे
 जा सकते हैं, और उन सब को पुनः जीतने के लिये द्यूत का आरंभ
 करना पड़ता है । जैसे एक बार भी यदि गृहीत ब्रह्मचर्य खंडित हो
 जाता है तो समस्त महाव्रत खंडित माना जाता है । इस प्रकार पिता
 के वचन को सुनकर वसुमित्र ने विचार किया कि जब द्यूत क्रीडा में
 जीत होने से राज्य मिलता है तो फिर पिता के मार ने से क्या लाभ ।
 इस प्रकार विचार कर पिता के साथ जुआ खेलने में प्रवृत्त हो गया ।
 परन्तु उसे विजय पूर्वोक्त प्रकार से जैसे दुष्कर बनी उसी प्रकार यह
 मनुष्यभवं भी पुनः प्राप्त होना प्राणी के लिये दुर्लभ जानना चाहिये ।

છે અને એ પ્રત્યેકને એકહજારઆઠ૧૦૦૮ ખુણા છે એ ખુણામાંથી એક એક ખુણાને
 એકહજારઆઠ ૧૦૦૮વાર જીતવામાં આવે છે. આ ક્રમથી તે સઘળાં થાંભલાં બધારે
 જીતવામાં આવે ત્યારે તે વિજયી કહેવાય છે. કદાચ બધા ખુણા જીતી લેવામાં આવે
 અને એકાદ ખુણા જીતવામાં બાકી રહે તો બધા ખુણા ન જીતાયેલા જ માનાય
 છે. અને એ બધાને જીતવા માટે ફરીથી જુગાર રમવો પડે છે. જેમ એક
 વાર પછી બ્રહ્મચર્ય કરેલ બ્રહ્મચર્ય ખંડિત થઈ બચે તો સમસ્ત મહાવ્રત ખંડિત
 માનવામાં આવે છે. આ પ્રકારનાં પિતાનાં વચન સાંભળીને વસુમિત્રે વિચાર
 કર્યો કે, બધારે જુગાર રમવામાં જીત થવાથીજ જો રાજ્ય મળતું હોય તો પિતાને
 મારવાથી લાભ શું થવાનો ? આ પ્રકારનો વિચાર કરી વસુમિત્ર પિતાની સાથેજુગાર
 ખેલવામાં પ્રવૃત્ત બન્યો. પરંતુ તેને ઉપરોક્ત પ્રકારથી વિજય મેળવવો દુષ્કર
 બન્યો તેવીજ રીતે આ મનુષ્યભવ પુનઃ પ્રાપ્ત થવો પ્રાણી માટે દુર્લભ બધુવો બોધ્યો

अत्र संग्रहः—(शार्दूल विक्रीडितवृत्तम्)

स्तम्भानां हि सहस्रमष्टसहितं प्रत्येकमष्टोत्तरं ।
कोणानां च सहस्रमेषु जयति द्यूते पितु र्यः सुतः ।
साम्राज्यं लभते स, तस्य विजयो द्यूते यथा दुर्लभः ।
संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ २ ॥
इति चतुर्थो द्यूतदृष्टान्तः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमो रत्नदृष्टान्तः—

धनसमृद्धे पुरे रत्नकोटिप्रभुर्धनदनामा वणिक् प्रतिवसति स भूमौ रत्नानि
निखन्य तदुपरि पर्यङ्कं निधाय शयनं करोति । स विश्वासाभावेन पुत्रानपि
तानि न प्रदर्शयति । स्वधनानुरूपं वेषं भवनादिकं च न करोति, व्यापारकरणे
धनानि हस्तादपगतानि भविष्यन्तीति बुद्ध्या व्यापारमपि न करोति ।

संग्रह श्लोक—

स्तम्भानां हि सहस्रमष्टसहितं प्रत्येकमष्टोत्तरं,
कोणानां च सहस्रमेषु जयति द्यूते पितु र्यः सुतः ।
साम्राज्यं लभते स तस्य विजयो द्यूते यथा दुर्लभः
संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ ४ ॥
यह चौथा द्यूतदृष्टान्त है ॥ ४ ॥

पाँचवा रत्न दृष्टान्त इस प्रकार है—धनसमृद्ध नामका एक
नगर था । उसमें एक करोड़ रत्नों का मालिक धनद नामका वणिक्
रहता था । वह जमीन में गड़े हुए रत्नों के ऊपर पलंग बिछाकर
सोया करता था । उसको अपने पुत्रों तक का भी विश्वास नहीं था

संग्रह श्लोक—स्तम्भानां हि सहस्रमष्टसहितं प्रत्येकमष्टोत्तरं,
कोणानां च सहस्रमेषु जयति द्यूते पितु र्यः सुतः ॥
साम्राज्यं लभते स तस्य विजयो ते यथा दुर्लभः
संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ ४ ॥
आ योथुं द्यूतदृष्टांत छे. ॥ ४ ॥

पाँचवुं रत्नदृष्टांत आ प्रकारनुं छे—

धनसमृद्ध नामनुं ओक नगर छतुं, तेमां ओक करोड रत्नोनो मालिक ओवो
धनद नामनो वणिक् रहैतो छतो. ते जमीनमां हाटी राजेला रत्नो उपर पलंग
पाथरीने सुध रहैतो छतो. तेने पोताना पुत्रोनो पखु विश्वास न छतो, तेथी

ત્રસહસ્રવારં વિજિતે સતિ તનેવ ક્રમેણ સર્વે સ્તમ્ભા વિજિતા મધેયુઃ, તન્નાપ્યષ્ટો-
ત્રસહસ્રવારવિજયકરણે દૈવાત્ તન્મધ્યે પરાજયઃ સ્યાત્ તદા સર્વે વિજિતાઃ
કોણા અવિજિતાઃ ભવન્તિ, સઠદપિ વ્રહ્મચર્યમક્તે સર્વ મહાવ્રતમિવ, અતઃ
પુનરાદિત એવ સર્વે કોણા વિજેતવ્યાઃ, એવં ત્વમપિ કુરુ । ઇતિ પિર્તુવચનં શ્રુત્વા
વસુમિત્રશ્ચિન્તયતિ-ધૂતાદેવ રાજ્યં લભ્યં પુનઃ કિમર્થે પિતરં હન્મિ, ઇતિ વિચાર્ય
રાજ્ઞા સહ ધૂતંક્રીડાયાં પ્રવૃત્તઃ, તથાપિ જયો દુર્લભો જાતઃ તસ્ય વસુમિત્રસ્યૈતત્
કાર્યં યથા દુષ્કરં, તથા મનુષ્યત્વમપિ દુર્લભમ્ ।

इनके जो प्रत्येक के एक हजार आठ १००८ कोने हैं उन कोनों में से
एक २ कोने को एक हजार आठ १००८ बार जीत जाता है । इसी क्रम
से ये समस्त खंभे जय जीत लिये जाते हैं तब जाकर वह विजयी
कहलाता है । यदि सब कोने जीत भी लिये जायें और एक भी कोना
यदि जीता न जा सके तो जीते हुए भी सब कोने नहीं जीते समझे
जा सकते हैं, और उन सब को पुनः जीतने के लिये धूत का आरंभ
करना पड़ता है । जैसे एक बार भी यदि गृहीत ब्रह्मचर्य खंडित हो
जाता है तो समस्त महाव्रत खंडित माना जाता है । इस प्रकार पिता
के वचन को सुनकर वसुमित्र ने विचार किया कि जब धूत क्रीडा में
जीत होने से राज्य मिलता है तो फिर पिता के मार ने से क्या लाभ ।
इस प्रकार विचार कर पिता के साथ जुआ खेलने में प्रवृत्त हो गया ।
परन्तु उसे विजय पूर्वोक्त प्रकार से जैसे दुष्कर बनी उसी प्रकार यह
मनुष्यभव भी पुनः प्राप्त होना प्राणी के लिये दुर्लभ जानना चाहिये ।

છે અને એ પ્રત્યેકને એકહજારઆઠ ૧૦૦૮ ખુણા છે એ ખુણામાંથી એક એક ખુણાને
એકહજારઆઠ ૧૦૦૮વાર જીતવામાં આવે છે. આ ક્રમથી તે સઘળા થાંભલા બધારે
જીતવામાં આવે ત્યારે તે વિજયી કહેવાય છે. કદાચ બધા ખુણા જીતી, દેવામાં આવે
અને એકાદ ખુણા જીતવામાં બાકી રહે તો બધા ખુણા ન જીતાયેલા જ મનાય
છે. અને એ બધાને જીતવા માટે ફરીથી જુગાર રમવો પડે છે. જેમ એક
વાર પણ ગ્રહણ કરેલ બ્રહ્મચર્ય ખંડિત થઈ બચે તો સમસ્ત મહાવ્રત ખંડિત
માનવામાં આવે છે. આ પ્રકારનાં પિતાનાં વચન સાંભળીને વસુમિત્રે વિચાર
કર્યો કે, બધારે જુગાર રમવામાં જીત થવાથીજ જો રાજ્ય મળતું હોય તો પિતાને
મારવાથી લાભ શું થવાનો ? આ પ્રકારનો વિચાર કરી વસુમિત્ર પિતાની સાથેજુગાર
ખેલવામાં પ્રવૃત્ત બન્યો. પરંતુ તેને ઉપરોક્ત પ્રકારથી વિજય મેળવવો દુષ્કર
બન્યો તેવીજ રીતે આ મનુષ્યભવ પુનઃ પ્રાપ્ત થવો પ્રાણી માટે દુર્લભ બાજુવો બોધ્યો.

સન્તસ્તન્નગરાગતાનામન્યાન્યદેશવાસિનાં શ્રેષ્ઠિનાં હસ્તે રત્નાનિ વિક્રીય વાણિ-
જ્યાર્થં પ્પયવસ્તૂનિ ક્રીતવન્તઃ, તૈર્વાણિજ્યકાર્યં પ્રસારયન્તિ સ્મ । તતસ્તત્પુત્રાઃ
કોટિધ્વજા જાતાઃ । ચિરેણ તેષાં પિતા ગૃહમાગતઃ । સ સ્વસ્થાપિતાનિ રત્નાન્ય-
દદ્વા વસુપ્રિયં પુત્રં પૃચ્છતિ-અરે ! કેન મમ રત્નાનિ ગૃહીતાનિ ? । વસુપ્રિય આહ-
સર્વેભ્રાતૃભિરપહૃતાનિ । તતઃ પુત્રત્રાક્યં શ્રુત્વા ધનદઃ કોપાવિપ્તઃ સન્નવ્રતીત્-રે
લક્ષ્મીકન્દકુદાલકાઃ । યૂયં મદ્ગૃહાન્નિર્ગચ્છત, તાનિ વિક્રીતરત્નાનિ સમાનીય
મદ્ગૃહે સ્થાપયન્તુ, અન્યથા ગૃહે નાગન્તવ્યમ્ । યથા તેષાં રત્નાનાં પુનરાનયનં
ધનદપુત્રાણાં દુષ્કરં, તથા મનુષ્યત્વમપિ દુર્લભમ્ ॥

રત્નોં કો નિકાલ લિયા । સર્વોં કો રત્ન કી પ્રાપ્તિ સે અપાર હર્ષ હુઆ ।
જો દૂસરે દેશ કે વણિજન વ્યાપાર કે લિયે નગર મેં આયે હુઅ થે
उनके लिये वे सब रत्न उन लोगों ने बेच दिये और अपना पुंजी बना-
कर फिर वे सब के सब व्यापार करने में लग गये । इनका व्यापार
कार्य खूब चला । सब के सब कोटिध्वज हो गये । कालान्तर में धनद
घर पर वापिस आया । उसने अपने रखे हुए रत्नों की ज्यों ही
संभाल की वे उसको नहीं मिले-तब उसने वसुप्रिय पुत्र से पूछा ।
किसने मेरे रत्नों को लिया है । वसुप्रिय ने कहा-सब भाईओं ने ।
वसुप्रिय की बात सुनकर धनद को बहुत ही अधिक क्रोध आ गया ।
गुस्से में आकर उसने कहा-तुम सब के सब लक्ष्मीरूपी कन्द को
उग्राड़ ने के लिये कुदाली के समान हो अतः तुम्हारी अब भलाई
इसी में है कि तुम सब मेरे घर से निकल जाओ । नहीं तो बेचे हुए
रत्नों को वापिस लाओ । जब तक रत्न नहीं आवे तब तक याद

હયં થયો. બીજા દેશના વણિકજનો વેપાર માટે નગરમાં આવ્યા હતા તેમને
આ લોકોએ બધાં રત્નો વેચી દીધા અને પોતાપોતાની પુણ બનાવી લઇને દરેક
જણ વેપાર કરવા લાગ્યા. તેમનો વેપાર ખૂબ ચાલ્યો. બધા કરોડપતી બની
ગયા કાળાન્તરે ધનદ પાછો ઘેર આવ્યા, ત્યારે તેણે પોતા રાખેલાં રત્નોની જે
તે સ્થળે તપાસ કરી તો તે તેને મળ્યાં નહીં. ત્યારે તેણે વસુપ્રિયને પૂછ્યું, કોણે
મારાં રત્નોને લીધાં છે ? વસુપ્રિયે કહ્યું, બધા ભાઈઓએ રત્નો વહેંચી લીધાં છે.
વસુપ્રિયની વાત સાંભળીને ધનદને એકદમ ક્રોધ ચડ્યો અને ગુસ્સામાં આવીને
તેણે કહ્યું, તમે બધા લક્ષ્મીરૂપી કંદને ઉગાડનારા કોદાળી જેવા છો. આથી
તમે બધા મારા ઘરમાંથી ચાલ્યા જાવ એમાંજ તમે સઘળાની ભલાઈ છે,
નહિતર વેચેલાં રત્નોને પાછાં લાવો. જ્યાં સુધી રત્નો પાછાં નહીં આવે ત્યાં

કદાચિત્ સમ્બન્ધિનઃ કાર્યવશાદામન્ત્રણપત્રં સમાગતમ્ । તત્ર ગન્તું પ્રસ્થિતો
ધનદસ્તદ્રત્નરક્ષણાય વસુપ્રિયં સ્વકનિષ્ઠપુત્રં મૂચયતિ । તદનન્તરં ધનદે ગૃહાન્નિઃ-
સૃતે સતિ વસુપ્રિયસ્ય ભ્રાતરઃ સર્વે ગૃહે સમાગતાઃ । વસુપ્રિયઃ પિતૃમુચિતં રત્ન-
સ્થાનં ભ્રાતૃન્ કથયતિ । તૈર્ભૂમિં સ્થનિત્વા રત્નાન્યુદ્યતાનિ । સર્વે દૃષ્ટચિતાઃ

હસલિયે વહ રત્નોં કો વે કહાં ર રલ્લે હુપ્ હૈં પુત્રોં કો નહીં બતલાયા
થા । જૈસા યહ ધનપતિ થા ઉસકે અનુરૂપ ન હસકા મકાન થા ઓર
ન રહન સહન ભી । વ્યાપાર ભી યહ હસલિયે નહીં કરતા થા, યહ માનતા
થા કિ વ્યાપાર કરને મેં જો ધન લગાયા જાતા હૈ વહ હાથ સે ચલા
જાતા હૈ । ઉસકી પુનઃ પ્રાપ્તિ કોઈ નિશ્ચિત નહીં હોતી હૈ ।

એક સમય કી વાત હૈ કિ કિસી સંબંધી કા હસકે પાસ બુલાને કે
લિયે આમંત્રણ પત્ર આયા । જય યહ વહાં જાને કો તયાર હુઆ તત્ર
રત્નોં કી રક્ષા કરને કે લિયે હસને સય સે છોટે પુત્ર કો કિ જિસકા
નામ વસુપ્રિય થા, નિયુક્ત કર દિયા । તવ કહાં કિતને ર રત્ન રલ્લે
હુપ્ હૈં યહ વાત ભી ઉસકો બતલા દી । ધનદ જવ ચલા ગયા ઓર
વસુપ્રિય રત્નાદિક કી રક્ષા કરને લગા તય સય ભાઈ મિલકર વસુપ્રિય
કે પાસ આયે ઓર વાતોં વાર્તાં મેં ઉસને ઉન અપને ભાઈઓં કો રત્ન
રલ્લને કે સમસ્ત સ્થાનોં કો બતલા દિયા । ઉન્હોં ને જમીન સ્વોદ કર

રત્નોને તેણે ક્યાં ક્યાં રાખ્યાં છે તે પોતાના પુત્રોને પણ બતાવતો ન હતો. જેવો
તે ધનપતિ હતો તેને અનુરૂપ તેને રહેવાનું મકાન ન હતું તેમ તેની રહેણી
કરણી પણ તેને અનુરૂપ ન હતી. તે વેપાર પણ કરતો નહીં કારણ કે તેની માન્યતા
જેવી હતી કે, વેપારમાં જે ધન રાકવામાં આવે તે હાથથી ચાલ્યું જાય
છે. અને ગયેલું ધન ફરીથી મળવાનું નિશ્ચિત હોતું નથી.

એક સમયની વાત છે કે, જ્યારે તેને બોલાવવા માટે તેના કેઇ સંબં-
ધીનું આમંત્રણ આવ્યું. જ્યારે તે ત્યાં જવા માટે તૈયાર થયો ત્યારે
તેણે રત્નોની રક્ષા માટે પોતાના સૌથી નાના પુત્ર કે જેનું નામ વસુપ્રિય હતું
તેને નિયુક્ત કર્યો. અને કઇ કઇ જગ્યાએ કેટલાં રત્નો રાખ્યાં છે, એ વાત
પણ તેને બતાવી દીધી. તે ધનદ જ્યારે બહારગામ ગયો ત્યારે વસુપ્રિય રત્ના-
દિકની રક્ષા કરવા લાગ્યો. બધા લાઇએ એકઠા મળીને વસુપ્રિયની પાસે આવ્યા
અને વાત વાતમાં વસુપ્રિયે પોતાના ભાઇઓને રત્નનાં બધાં ઠેકાણાં બતાવી દીધાં.
તેમણે જમીન ખોદી રત્નો કાઢી લીધાં. દરેકને રત્નોની પ્રાપ્તિ થવાથી અપાર

जिनवचनानुरागी धर्मे दृढमतिरासीत् । मूलदेवः कार्पटिकशोभाः काञ्चनपुरनगराद्वहिः
सासस्तटे रात्रौ विष्टतः । तत्र सुप्तेन मूलदेवेन रात्रिशेषे स्वप्नो दृष्टः—
मुखे चन्द्रः प्रविष्ट इति । तदानीमेव तत्र सुप्तेन कार्पटिकेनापि तादृश एव स्वप्नो
दृष्टः । स्वप्नदर्शनानन्तरं तौ विनिद्रौ जातौ । कार्पटिको वदति—स्वप्नावस्थायां मम
मुखे चन्द्रः प्रविष्ट इति मया दृष्टः । मूलदेवः प्राह—अयं स्वप्नो रक्षणीयः, साधारण-
जनानामग्रे नायं प्रकाशनीयः । स्वप्नोत्थितयोस्तयोर्मनः प्रसन्नमभवत् । सूर्योदया-
नन्तरमेव तौ काञ्चनपुरनगरे प्रविष्टौ ।

वृद्धि के लिये दूसरे देश को घर से चला । मार्ग में जाते २ एक कार्प-
टिक ने इसका साथ कर लिया । मूलदेव जिन वचन में श्रद्धालु था ।
चलते २ ये दोनों काञ्चनपुर नगर के बहार रहे हुए किसी एक तालाब
के तीर पर रात्रि को ठहर गये । मूलदेव को रात्रि के शेषभाग में एक
स्वप्न दिखलाई दिया । जिसमें उसने देखा कि मेरे मुख में चन्द्रमा
प्रविष्ट हो गया है । उसी समय कार्पटिक ने भी इसी तरह का स्वप्न
देखा । स्वप्न देखने के बाद दोनों जग गये । आपस में बातचीत होने
लगी । कार्पटिक ने कहा आज मैंने स्वप्न में चन्द्रमा को अपने मुख में
प्रवेश करता हुआ देखा है । मूलदेव ने उसका स्वप्न सुनकर उससे
कहा यह स्वप्न गोपनीय है, हर एक आदमी के सामने इसको प्रका-
शित नहीं करना । जब प्रातः काल हो चुका तब ये दोनों उठे, उस समय
वे बड़े ही प्रसन्न मालूम देते थे, क्यों कि इनका मन बड़ा प्रसन्न था ।
सूर्योदय के अनन्तर फिर इन दोनों ने काञ्चनपुर नगरमें प्रवेश किया ।

भाग्यमां यावतां यावतां तेने ऐकं भुवाने साथ थर्ध गये। भूजदेव उन
पथनमां भूम श्रद्धालु छते। यावतां यावतां भन्ने काञ्चनपुर नगरनी भडास्ता
ऐक तणावना कांडा उपर रातना राकाई गया। भूजदेवने रात्रीना पाछवा
भागमां ऐक स्वप्न देआयुं जेमां तेले लेयुं के, जेणे तेना मोढाभां चंद्रमाजे
आवीने प्रवेश क्यो छे। आज सभये तेनी भानुभां सुतेला भुवाजे पछु
तेवुं ज स्वप्न लेयुं स्वप्न लेया पछी भन्ने लागी गया। आपसमां बातचीत
करवा लाग्या भुवाजे कह्युं, आज मे स्वप्नमां चंद्रमाने भास मोढाभां प्रवेश
करतां जेयो मूलदेवे तेना स्वप्नातुं कथन सांभलीने कह्युं के, आ स्वप्न भानगी
राजवा जेवुं छे। हरेक आदमीनी सामे आने प्रकाशित न करवुं लेछे,
न्यारे सवार थयुं त्यारे भन्ने उक्या ते सभये तेजो धया प्रसन्न भावुम
पडता छता। केमके, तेमनां मन धयां प्रसन्न छतां। सूर्योदय पछी भन्ने
जधुजे काञ्चनपुर नगरमां प्रवेश क्योः

અત્ર સંગ્રહ-(શાર્દૂલવિક્રીડિતવૃત્તસમ્)

તાતેઽન્યત્ર ગતે ધરાઽન્તરગતાન્યાદાય રત્નાનિ યદ્,

વિક્રીતાનિ સુતૈર્વિદેશિવણિજાં હસ્તેષુ પશ્ચાત્ તતઃ ।

રત્નાન્યાનયતેતિ તાતકથને, તત્પ્રાપ્તં દુષ્કરં,

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૫ ॥

इति पञ्चमो रत्नदृष्टान्तः ॥ ५ ॥

अथ पठः स्वप्नदृष्टान्तः—

આસીત્ પાટલિપુત્રનગરે મૂલદેવનામકઃ ક્ષત્રિયઃ । સ સ્વાશ્વદયાર્થે વેશાન્તરં
ગતું પ્રસ્થિતઃ । માર્ગે ગચ્છતસ્તસ્ય કથિત્ કાર્પટિકઃ સહચરોઽમ્ભવત્ । મૂલદેવઃ સહ

રત્નના ઘર મેં તુમ્હારે લિયે સ્થાન નહીં હૈં । ઇસ દૃષ્ટાન્ત સે યહ સમપ્રાપ્ત
ચાહિયે કિ જૈસે ઊન વિક્રીત રત્નોં કી પ્રાપ્તિ ઊન પુત્રોં કે લિયે દુષ્કર
હુઈં ઊસી તરહ સે હાથ સે નિકલા હુઆ મનુષ્ય જન્મ મી મહા દુર્લભ હૈં ।

इस दृष्टान्त का सार प्रदर्शक श्लोक इस प्रकार है—

તાતેઽન્યત્રગતે ધરાન્તરગતાન્યાદાય રત્નાનિ યત્,

વિક્રીતાનિ સુતૈર્વિદેશિવણિજાં હસ્તેષુ પશ્ચાત્તતઃ ।

રત્નાન્યાનયતેતિ તાતકથને તત્પ્રાપ્તં દુષ્કરમ્,

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥

यह पांचवां रत्नदृष्टान्त है ॥ ५ ॥

છઠા સ્વપ્નદૃષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—પાટલિપુત્ર નગર મેં મૂલદેવ
નામ કા એક ક્ષત્રિય રહતા થા । વહ કિસી સમય અપને આગ્ય કી

સુધી યાદ રાખો કે, તમારા માટે ઘરમાં કોઈ સ્થાન નથી. એટલા માટે આ
દૃષ્ટાન્તથી એમ સમજવું એક એ કે, વેશેલા રત્નોની પ્રાપ્તિ તે પુત્રોને માટે એમ દુષ્કર
થઈ તેમ હાથમાંથી નિકળી ગયેલ મનુષ્યજન્મ પશુકરી પ્રાપ્ત થયો મહાદુર્લભ છે.

સંગ્રહ શ્લોક—તાતેઽન્યત્રગતે ધરાન્તરગતાન્યાદાય રત્નાનિ યત્,

વિક્રીતાનિ સુતૈર્વિદેશિવણિજાં હસ્તેષુ પશ્ચાત્તતઃ ।

રત્નાન્યાનયતેતિ તાતકથને તત્પ્રાપ્તં દુષ્કરમ્,

સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥

આ પાંચમું રત્નદૃષ્ટાન્ત છે. ॥ ૫ ॥

છઠું સ્વપ્નદૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારથી છે—

પાટલિપુત્ર નગરમાં મૂલદેવ નામનો એક ક્ષત્રિય રહેતો હતો. તે એક
સમય પોતાના આગ્યની વૃદ્ધિ માટે ઘેરથી બીજા દેશમાં જ નીકળ્યો.

લોકૈઃ કથિતમ્—શુક્રસ્ય રાત્રી સ્વપ્નો દષ્ટઃ, અથ શનિવાસરઃ, તેન કારણેન ઘૃતગુડસ-
હિતં રોટકં તૈલં ચ મિલિપ્યતિ। યત્ર યત્ર ગૃહસ્થગૃહે કાર્પટિકો મિક્ષાર્થં ગચ્છતિ,
તત્ર તત્ર શનિદિવસે પ્રચુરં તાદૃશં રોટકં તૈલં ચ તેન લબ્ધમ્।

અથ પુત્રરહિતસ્તન્નગરનૃપઃ સ્વાયુષઃ ક્ષયેણ મૃતઃ। તસ્મિન્ મૃતે સતિ મન્ત્રિ
પ્રમૃતપસ્તદા વ્યવસ્થાં કૃતવન્તઃ—ઇયં રાજહસ્તિની યસ્ય ગલે પુષ્પમાલાં દદ્યાત્, સ
એવ રાજા ભવિષ્યતિ। ઇત્યેવં નિશ્ચિતે સતિ હસ્તિની સ્વશુષ્કયા પુષ્પમાલાં નીત્વા
મનુષ્યપરિવારૈઃ સહ નગરે પ્રતિમાર્ગં ભ્રમન્તી વનં ગતા। સા તત્ર વૃક્ષચ્છાયાયામુ-
પવિષ્ટસ્ય મૂલદેવસ્ય ગલે પુષ્પમાલાં દદૌ। તતો મનુષ્યવૃન્દૈઃ સહ રાજમન્ત્રિણો મૂલદેવં

તુમને શુક્ર કી રાત્રિ મેં યહ સ્વપ્ન દેખા હૈ, આજ શનિવાર હૈ, ઇસ
કારણ તુમકો ઘૃત ગુડ સહિત રોટ એવં તૈલ મિલેગા। અવ જિસર ઘરમેં
વહ કાર્પટિક મિક્ષા કે લિયે ગયા વહાં ૨ ડસકો વહીં चीज खूब मिली।
જય છહ દિન પૂરે હુએ उसी रात में उस नगर का राजा मर गया।
રાજા કે કોઈ પુત્ર नहीं था इसलिये जय वह मरा तब मन्त्रियों ने
રાજ્ય કી વ્યવસ્થા કે લિયે એસા વિચાર કિયા કિ યહ રાજા કી હથિની
જિસકે ગલે મેં પુષ્પમાલા ડાલે વહી રાજા સમજા જાય। ઇસ પ્રકાર
કા વિચાર જય પૂર્ણરૂપ સે નિશ્ચિત હો ચુકા તવ હથિની કો અપની
સૂંઢ મેં પુષ્પમાલા દેકર છોડા। નગર કે પ્રત્યેક માર્ગ મેં વહ ઘૂમતી
રહી। ઉસકે સાથ મનુષ્યોં કા સમુદાય બી વહુત થા। ઘૂમતે ૨ વહ
જંગલ મેં પહુંચી। મૂલદેવ ઉસ સમય એક વૃક્ષ કે નીચે છાયા મેં બેઠા હુઆ
થા। હથિની ને પહુંચતે હી મૂલદેવ કે ગલે મેં વહ પુષ્પમાલા ડાલ દી।

કહ્યું કે, શુકની રાત્રીમાં આ સ્વપ્ન દેખાયું છે આજે શનિવાર છે. એ કારણે
તમને ઘી ગોળ સાથે રોટલો અને તેલ મળશે. હવે જ્યાં જ્યાં એ ભિક્ષા
માટે ગયો ત્યાં ત્યાં તેને એ ચીજો ખૂબ પ્રમાણમાં મળી.

જ્યારે છ દિવસ પુરા થયે એક રાત્રિએ તે નગરનો રાજા મરી ગયો.
રાજાને કોઈ પુત્ર ન હતો. મંત્રીઓએ રાજ્યની વ્યવસ્થા માટે એવી
મસલત કરી કે રાજાની હાથણી જેના ગળામાં પુષ્પમાળા પહેરાવે
તેને રાજગાદી સુપ્રદ કરવી. આ પ્રકારનો જ્યારે પૂર્ણરૂપથી નિર્ણય
લેવાયો ત્યારે હાથણીની સૂંઢમાં પુષ્પમાળા આપીને તેને છુટી મુકી. નગરના
દરેક માર્ગ ઉપર તે ફરતી હતી, તેની પાછળ માણસોનો સમૂહ પણ ચાલ્યો
આવતો હતો. ઘૂમતાં ઘૂમતાં તે જંગલ તરફ વળી. મૂળદેવ આ વખતે
ત્યાં એક વૃક્ષની છાયામાં બેઠો હતો. હાથણીએ ત્યાં પહોંચીને મૂળદેવના

તત્ર મૂલદેવઃ સ્વપ્નપાઠકસ્ય ગૃહે ગત્વા વિનયેન સ્વપ્નપાઠકં પૃચ્છતિ-
 મુખે ચન્દ્રઃ પ્રવિષ્ટ ઇતિ સ્વપ્નો મયા દૃષ્ટઃ કિમસ્ય ફલં ભવિષ્યતિ ? । તેનોક્તમ્-
 પ્રથમે મમ કન્યકયા સહ વિવાહમગ્નીકરોપિ ચેત્તદાઽસ્ય સ્વપ્નસ્ય ફલં વક્ષ્યામિ ।
 મૂલદેવેન તદગ્નીકૃતમ્, સ સ્વપ્નપાઠકઃ સ્વપુત્રીં પ્રદાય જામાતૃસમ્બન્ધં વિધાય ભોજનં
 કારયિત્વા મૂલદેવં વદતિ-ઇતઃ સપ્તમે દિવસે મયાનસ્ય નગરસ્ય રાજા ભવિષ્યતિ ।
 કાર્પટિકસ્તુ સ્વકીયસ્વપ્નધૃતં તત્ર નગરે સાધારણલોકાનાં પુરઃ પ્રકાશિતવાત્,

મૂલદેવ ને વહાં સ્વપ્ન કે ફલ કો કહને વાલે વિદ્વાન કે ઘર કી
 તલાશ કી । જવ ઉસકો ઇસકા પતા લગ ગયા તો વહ બઢે હી વિનય
 કે સાથ સ્વપ્નપાઠક કે ઘર ગયા-ઔર વહાં વિનીતભાવ સે ઉસને
 સ્વપ્નપાઠક સે પૂછા-મહાનુભાવ ! આજ મેને રાત્રિ કે પિછલે પહર મેં
 ચન્દ્રમા કો મુખ મેં પ્રવેશ કરતે હુવે દેલા હૈ ઇસકા ફલ ક્યા હોગા ।
 કૃપાકર કહિયે । મૂલદેવ કી વાત સુનકર સ્વપ્નપાઠક ને કહા કિ-
 યદિ તુમ પહિલે મેરી કન્યા કે સાથ અપના વિવાહ કરના મંજૂર કરો
 તો મૈં ઇસકા ફલ તુમ્હેં વતલા સકતા હું । મૂલદેવ ને સ્વપ્નપાઠક કી
 વાત અંગીકાર કરલી । સ્વપ્નપાઠક ને અપની પુત્રી કા વિવાહ ઉસકે
 સાથ કર દિયા । મૂલદેવ અથ સ્વપ્નપાઠક કા જમાઈ બન ગયા । સ્વપ્ન-
 પાઠક ને જમાઈ કા આદરસત્કાર કિયા ઔર ભોજન કરા કર કહા
 આજ સે સાતવેં દિન આપ ઇસ નગર કે રાજા હો જાયેંગે ।

इधर कार्पटिक ने अपना स्वप्न नगर के साधारण से भी साधारण
 व्यक्ति को सुनाना शुरू कर दिया । लोगों ने भी उससे यही कहा कि

મૂલદેવે ત્યાં સ્વપ્ન ક્ષણના કહેવાવાળા વિદ્વાનના ઘરની તપાસ કરી,
 તેના પેતો મેળવી સ્વપ્નપાઠકને ઘેર ગયો અને ત્યાં વિનીત ભાવથી તેણે સ્વપ્ન-
 પાઠકને પૂછ્યું, મહાનુભાવ ! આજ મેં રાત્રિના પાછલા પહોરમાં ચન્દ્રમાને મુખમાં
 પ્રવેશ કરતો જોયો છે. તેનું ક્ષણ શું હશે ? તે કૃપાકરીને કહ્યો, મૂળદેવની વાત
 સાંભળીને સ્વપ્નપાઠકે કહ્યું કે, જો તમે પહેલાં મારી કન્યાની સાથે તમારા વિવાહ
 કરવાનું મંજૂર કરો તોજ હું તમને તેનું ક્ષણ બતાવું. મૂળદેવે સ્વપ્નપાઠકની વાત
 સ્વીકારી લીધી. સ્વપ્નપાઠકે પોતાની પુત્રીને વિવાહ તેની સાથે કરી લીધો.
 મૂળદેવ હવે સ્વપ્નપાઠકનો જમાઈ બની ગયો. સ્વપ્નપાઠકે જમાઈનો
 આદરસત્કાર કર્યો અને લોભન જમાડીને કહ્યું કે આજથી સાતમે દિવસે તમે
 આ નગરના રાજા થશો. બીજા બાળકો સાથે પોતાનું સ્વપ્ન નગરના સાધા-
 રણથી સાધારણ માણસને પણ સંભળાવવું શરૂ કરી દીધું. લોકોએ તેને એમ

ॐ अत्र संग्रहश्लोकः—(शार्दूलविक्रीडितवृत्तम्)

ॐ स्वप्ने कार्पटिकेन रात्रिविगमे चन्द्रं मुखान्तर्गतं,

ॐ दृष्ट्वा सर्वजनाग्रतो निगदितं लब्धं न राज्यं फलम् ।

ॐ स्वप्नस्तस्य पुनः स तत्र शयितस्यासीद् यथा दुर्लभः,

ॐ संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ १ ॥

॥ इति पष्ठः स्वप्नदृष्टान्तः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमश्चक्रदृष्टान्तः—चक्रोपलक्षितो दृष्टान्तः, राधाविधेदृष्टान्त

इत्यर्थः स चैवम्—

मथुरानगरीं जितशत्रुनामको भूपतिरासीत् । इन्दिरानाम्नी तस्य पुत्री चतुः-

उस स्वप्न की प्राप्ति पुनः दुर्लभ हुई उसी प्रकार इस मनुष्यजन्म से

प्रच्युत प्रमादी जीव को पुनः मनुष्यभव की प्राप्ति दुर्लभ है ।

इस कथा का भावदर्शक श्लोक इस प्रकार है—

ॐ स्वप्ने कार्पटिकेन रात्रिविगमे चन्द्रं मुखान्तर्गतं,

ॐ दृष्ट्वा सर्वजनाग्रतो निगदितं लब्धं न राज्यं फलम् ।

ॐ स्वप्नस्तस्य पुनः स तत्र शयितस्यासीद्यथा दुर्लभः,

ॐ संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ १ ॥

- यह छट्ठा स्वप्नदृष्टान्त है ॥ ६ ॥

सातवां चक्र दृष्टान्त इस प्रकार है—इसका दूसरा नाम राधाविधे

दृष्टान्त भी है—मथुरा नगरी में जितशत्रु नाम का राजा रहता था ।

इसकी एक कन्या थी, जिसका नाम इन्दिरा था । यह चौंसठ कलाओं

प्राप्ति दुर्लभ थी, तेरी ते आ मनुष्यजन्मभी प्रच्युत प्रमादी जीवने दूसरी

मनुष्यभवनी प्राप्ति दुर्लभ छे.

आ कथानो भावदर्शक श्लोक आ प्रकारनो छे.

स्वप्ने कार्पटिकेन रात्रिविगमे चन्द्रं मुखान्तर्गतं,

दृष्ट्वा सर्व जनाग्रतो निगदितं लब्धं न राज्यं फलम् ।

स्वप्नस्तस्य पुनः स तत्र शयितस्यासीद्यथा दुर्लभः,

संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ १ ॥

छट्ठा स्वप्नदृष्टान्त छे.

सातवुं चक्रदृष्टान्त आ प्रकारनुं छे. आनुं णीनुं नाम राधाविधे दृष्टान्त पंचु छे.

मथुरा नगरीमां जितशत्रु नामनो ऐकं राजा राज्य करतो હતો. તેને એક કન્યા હતી જેનું નામ ઇન્દિરા હતું. તે ચોસઠ કલાઓમાં કુશળ હતી એક

તામેવ હસ્તિનીં સાદરં સમારોહ નગરં પ્રવેશયન્તિ ।

કાર્પટિકસ્તુ—મનુષ્યવૃન્દૈઃ સહ હસ્તિનીસમાંસુદં પ્રાપ્તરાજ્યં મૂલદેવં વિલોક્ય
ચન્દ્રપાનસ્વપ્નારાધનેન મૂલદેવસ્ય રાજ્યલાભો જાતઃ, इति बुद्ध्या स्वात्मानं निन्दयन्
पश्चात्तापं करोति—ધિગૂમામ્, મન્દલોકાનાં પુરસ્તાત્ સ્વપ્નપ્રકાશનેન મયા સ્વપ્નો
નિષ્ફલીકૃતઃ, તસ્માત્ પુનરહં તત્રૈવ સરસ્તીરે શયિષ્યે, તદા રાજ્યપ્રાપ્તિકરં સ્વપ્નં
પુનઃ પશ્યામીતિ ધિચિન્ત્યં રાજ્યલક્ષ્મીં કારુક્ષમાણઃ પુનઃ પુનસ્તત્ર સ્વપિતિ ।

યથા કાર્પટિકસ્ય તત્સ્વપ્નદર્શનં દુર્લભં, તથા મનુષ્યદેહાત્ પ્રચ્યુતસ્ય પ્રમાદિનઃ
પુનર્મનુષ્યત્વં દુર્લભમ્ ।

હથિની ને પુષ્પમાલા મૂલદેવં કે. ગલે મેં ઢાલી દેલ્લકર. મન્ત્રિયોં ને
મૂલદેવ કો. उसी समय उस हथिनी पर बैठा कर यडे आदर के साथ
उनेका नगर में प्रवेश कराया ।

કાર્પટિક ને મનુષ્યવૃન્દોં કે સાથ મૂલદેવ કોં હસ્તિની પર બેઠા
एवं वहां का राजा बना हुआ देखकर "चन्द्रमापानरूप स्वप्न के आरा-
धन के प्रभाव से मूलदेव को राज्य का लाभ हुआ है" इस विचार से
अधिक से अधिक पश्चात्ताप किया—बुद्ध अभागे को धिक्कार है जो मैंने
सब लोकों के सामने अपने स्वप्न को प्रकाशित कर निष्फल बनाया ।
अब वह पुनः इस विचार से राजलक्ष्मी की प्राप्ति की आशा से उस
स्थान पर बार २ सोने लगा कि कब वह चन्द्रस्वप्न मुझे दिखलाई दे
और कब मुझे राज्य की प्राप्ति हो ।

इस दृष्टान्त से यही समझना चाहिये कि जिस प्रकार कार्पटिक का
गजाभां पुष्पभाणां पहेरावीं दीधी. हाथणीये भूणदेवने पुष्पभाणां पहेरावेली
नेछने मन्त्रीयेये भूणदेवने ते समये ते हाथणी उपर गेसाडीने धष्टा आदर-
सत्कारनी साथे तेना नगरप्रवेश कराये.

ભુવાએ મનુષ્યનાં ટોળાની વચ્ચે મૂલદેવને હાથણીપર બેઠેલો તેમજ ત્યાંના રાજા
બનેલો નેછને તેને લાચું કે સ્વપ્નના આરાધનના પ્રભાવથી મૂલદેવને રાજ્યનો
લાભ થયો છે. આ વિચારથી તેને ઘણું જ પશ્ચાત્તાપ થયો અને મનમાંને
મનમાં બંડબંડયો કે, મને અભાગીને ધીક્કાર છે કે, મેં સઘળાં લોકોની સાથે
મારા સ્વપ્નને પ્રકાશીત કરી નિષ્ફળ બનાવ્યું. આ પછી જ્યાં તેને સ્વપ્ન
આવ્યું હતું ત્યાં રાજલક્ષ્મીની આરાધી રાજા રાત્રીનાં સુષ્ યજ્ઞ લાગ્યો.
ક્યારે સ્વપ્નમાં મને ચંદ્ર દેખાય અને ક્યારે મને રાજ્યની પ્રાપ્તિ થાય.

આ દૃષ્ટાંતથી એ સમજવું નેછએ કે, એ પ્રકારે ભુવાને સ્વપ્નની

अत्र संग्रहश्लोकः—(शार्दूलविक्रीडितवृत्तम्)

स्वप्ने कार्पटिकेन रात्रिविगमे चन्द्रं मुखान्तर्गतं,

दृष्ट्वा सर्वजनाग्रतो निगदितं लब्धं न राज्यं फलम् ।

स्वप्नस्तस्य पुनः स तत्र शयितस्यासीद् यथा दुर्लभः,

संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ १ ॥

॥ इति पण्डः स्वप्नदृष्टान्तः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमश्चक्रदृष्टान्तः—चक्रोपलक्षितो दृष्टान्तः, राधाविषदृष्टान्त इत्यर्थः स चैवम्—

मथुरानगरीं जितशत्रुनामको भूपतिरासीत् । इन्दिरानाम्नी तस्य पुत्री चतुः-

उस स्वप्न की प्राप्ति पुनः दुर्लभ हुई उसी प्रकार इस मनुष्यजन्म से

प्रच्युत प्रमादी जीव को पुनः मनुष्यभव की प्राप्ति दुर्लभ है ।

इस कथा का भावदर्शक श्लोक इस प्रकार है—

स्वप्ने कार्पटिकेन रात्रिविगमे चन्द्रं मुखान्तर्गतं,

दृष्ट्वा सर्वजनाग्रतो निगदितं लब्धं न राज्यं फलम् ।

स्वप्नस्तस्य पुनः स तत्र शयितस्यासीद्यथा दुर्लभः,

संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ १ ॥

यह छद्वा स्वप्नदृष्टान्त है ॥ ६ ॥

सातवां चक्र दृष्टान्त इस प्रकार है—इसका दूसरा नाम राधाविष

दृष्टान्त भी है—मथुरा नगरी में जितशत्रु नाम का राजा रहता था ।

इसकी एक कन्या थी, जिसका नाम इन्दिरा था । यह चौंसठ कलाओं

प्राप्ति दुर्लभ थी, तेरी ते आ मनुष्यजन्मभी प्रच्युत प्रमादी भवने की

मनुष्यभवनी प्राप्ति दुर्लभ है.

आ कथाना भावदर्शक श्लोक आ प्रकारनो है.

स्वप्ने कार्पटिकेन रात्रिविगमे चन्द्रं मुखान्तर्गतं,

दृष्ट्वा सर्व जनाग्रतो निगदितं लब्धं न राज्यं फलम् ।

स्वप्नस्तस्य पुनः स तत्र शयितस्यासीद्यथा दुर्लभः,

संसारे भ्रमतः पुनर्नरभवो जन्तोस्तथा दुर्लभः ॥ १ ॥

छद्वा स्वप्नदृष्टान्त है.

सातवां चक्रदृष्टान्त आ प्रकारनो है आनुं श्रीनु नाम राधाविष दृष्टान्त पंधु है.

मथुरा नगरी में जितशत्रु नामनो ओक राजा रान्त्य करतो હતો तेने ओक कन्या હતી જેનું नाम इन्दिरा હતું. તે ચોસઠ કલાઓમાં કુશળ હતી એક

પટ્ટિકલાભિજ્ઞા જાતા । જિતશત્રુનૃપસ્તસ્યાઃ વિવાહયોગ્યં વયો વિલોક્ય ચિન્તયતિ
 -યઃ खलु राजकुमारो धार्मिकः कलाकुशलः सकलनीतिशास्त्रनिपुणो राधावेधसाध-
 नसमर्थः स्यात् स एव योग्यो वरः स्यादस्याः इति विचिन्त्य, तेन राज्ञा स्वयंवर-
 मण्डपः कारितः । तत्संनिधौ चैकमुच्चतरः स्तम्भः स्थापितः । तस्य स्तम्भस्योर्ध्व-
 भागेऽनुलोमेन चत्वारि, विलोमेन च चत्वारि लोहचक्राणि निवेशितानि । तेषां
 चक्राणामुपरि राधानाम्ना प्रसिद्धा काष्ठमयी भ्रमन्ती पुत्तलिका स्थापिता । तत्रा-
 धस्तात् तैलपूर्णकटाहश्च स्थापितः । यः खलु राधाया वामनयनं शरेण विध्येत् स
 एव मत्कन्यकाया इन्दिराया वरः स्यादिति जितशत्रुणा घोषणारूपेण प्रतिज्ञातम् ।

કી જ્ઞાતા થી । જિસ સમય જિતશત્રુ ને વિવાહયોગ્ય્ હસકી અવસ્થા
 देखी तो विचार किया कि-जो राजकुमार धार्मिक, कलाकुशल;
 सकलनीति शास्त्र में निष्णात एवं साथ में राधावेधसाधन में भी
 समर्थ हो वही इस कन्या का पति होने योग्य है । इस प्रकार विचार
 कर राजा ने स्वयंवरमंडप रचाया और उसके पास ही एक ओर एक
 बड़ा ऊँचा खंभा भी खड़ा करवाया । पश्चात् उसने उस खंभे के उर्ध्व-
 भाग में लोहे के चार चक्र अनुलोम-सुलटे फिरने वाले और चार
 चक्र विलोम-उलटे फिरनेवाले लगवा दिये । फिर उन चक्रों के भी
 ऊपर राधा नाम की एक काष्ठमयी घूमती हुई पुत्तली रखवा दी । खंभे
 के ठीक नीचे के भाग में तैल से भरा हुआ एक कड़ाह भी रखवा दिया ।
 जब इस प्रकार से स्वयंवरमंडप की पूर्ण तयारी हो चुकी तब उसने यह
 घोषणारूप में अपनी प्रतिज्ञा प्रकट करवाई कि जो व्यक्ति राधा के
 वामनयन को बाण से वेध देगा वही मेरी कन्या इन्दिरा का पति

સમયે જિતશત્રુએ તેની વિવાહયોગ્ય વય જોઈને વિચાર કર્યો કે, જે
 રાજકુમાર ધાર્મિક, કળાકુશળ, સકળ નીતિશાસ્ત્રમાં નિષ્ણાત અને સાથે સાથે
 રાધાવેધ સાધવામાં પણ સમર્થ હોય તેજ આ કન્યાનો પતિ થવા યોગ્ય છે.
 આ પ્રકારનો વિચાર કરી રાજાએ સ્વયંવરમંડપ રચ્યો અને તેની પાસે જ
 એક ખૂબ જાડો ઉંચો સ્તંભ પણ ઉભો કરાવ્યો. એ પછી તેણે તે સ્તંભના
 ઉર્ધ્વ ભાગમાં લોહના ચાર ચક્ર સીધાં ફરવાવાળાં અને ચાર ચક્ર અવળાં ફરવા
 વાળાં ગોઠવાવ્યાં પછી તે ચક્રોની ઉપર પણ રાધા નામની ફરતી લાકડાની
 પુતળી ગોઠવાવી સ્તંભના છેક નીચા ભાગમાં તેલથી ભરેલી એક કડાઈ રખાવી.
 આ પ્રકારે સ્વયંવરની સંપૂર્ણ તૈયારી થઈ ચુકી ત્યારે એક હરે

ततस्तेन नृपतिना निमन्त्रिता बहवो राजानो राजकुमाराश्च देशाद् देशान्तरादपि
त्रयं सोत्साहं समागताः । सर्वेषु राजसु राजकुमारेषु च मण्डपे समुपविष्टेषु जित-
शत्रुनृपस्तत्रागत्य वदन्ति-यो राधापुत्तलिकाया वामनेत्रं शरेण विध्वेत् तस्मै मया
कन्यका दातव्येति । राज्ञो वचः श्रुत्वा एकैकमुत्थितो नृपादिकस्तत्र राधावेधनाय
शरं धनुषि संयोज्य प्राक्षिपत् । स च शरः कस्यचिदेकेन चक्रेणास्फाल्य भग्नः सन्
भूमौ निपतितः, कस्यचिदेकं चक्रमतिक्रान्तः, कस्यचिद् द्वे, कस्यचित् त्रीणि,
अन्येषां तु लक्ष्यादन्यत्रैव निर्गतः, कोऽपि राधावेधं साधयितुं नाशक्तः ।

होगा । राजा ने इस प्रकार अपना भाव प्रकट कर सब राजाओं एवं
राजपुत्रों के लिये स्वयंवरमंडप में आनेका आमंत्रण भेज दिया ।
राजा से आमंत्रित हो बड़े उत्साह से अनेक राजा और राजकुमार
देश देशान्तर से उत्साहपूर्वक आये और स्वयंवरमंडप में बैठ गये ।
जब समस्त राजा और राजपुत्र अच्छी तरह अपने २ स्थानों पर बैठ
गये तब राजा जितशत्रु वहां आये और कहने लगे कि जो इस भ्रमण
करती हुई राधा पुत्तलिका के वामनेत्र को बाण से वेधित करेगा वही
मेरी पुत्री का पति होगा-अपनी पुत्री मैं उसे ही परणाऊंगा । राजा
के इस प्रकार वचन सुनकर वे राजा तथा राजकुमार आदि राधावेध
साधने के लिये उठे और अपने २ धनुष पर बाण रख कर राधावेध
साधने के अभिप्राय से बाण को छोड़ने लगे । इनमें से किसी का
बाण एक चक्र से टकरा कर, किसी का दूसरे चक्र से टकरा कर और

जहाँ पाड़ी पोतानी भड़ेच्छा प्रगट करी दे, जे व्यक्ति राधाना डाया नेत्रने आबुध्ती
वीधये ते भारी राजकुन्या धन्दिशने। पति जनये. राजाये आ प्रकारे ढंढेदे।
पीटावीने सधणा राजाये। अने राजपुत्रोने स्वयंवर मंडपमां आववानुं
आमंत्रणु भोडलावुं. राजानुं आमंत्रणु भगतां धया उत्साहथी अनेक राज
अने राजकुमारो देश देशांतरथी उत्साहपूर्वक आव्या अने स्वयंवर मंडपमां
भिराज्या. न्यारे सर्व राजाये। अने राजपुत्रो सारी रीते पोते पोताना
स्थान उपर भेसी गया त्यारे राजा जितशत्रु त्यां आव्या अने कडेवा लाज्या
दे, जे के।छ व्यक्ति आ करती राधा पुतणीना डाया नेत्रने आबुध्ती विधये तेने
भारी पुत्री वरभाणा पड़ेरावये अने तेनेज हुं भारी पुत्री परखावीश. राजानुं
आ प्रकारनुं वयन सांझणीने मंडपमां भिराजत थयेला राजा तथा
राजकुमार वगेरे राधावेध साधवा भाटे उठया अने पोतपोताना धनुष्य उपर
आबुध्ती राधावेध साधवाना लक्ष्यथी आबुने छोडवा लाज्या. तेयोभांथी के।छनुं

અધેન્દ્રપુરાધીશસ્યેન્દ્રદત્તનામ્નો નૃપસ્ય પુત્રો જયન્તકુમારઃ સોત્સાહમુચ્છિતિ,
 લોકાઃ કરતાલીપ્રદાનપૂર્વકમુપહસન્તો વદન્તિ-અહો !- હમે વીરાઃ ધનુર્ધરા યત્ર ન
 સમાસ્તગ્રાસ્ય કુમારસ્ય કીદૃશ સાહસમ્ ? કિમનેન કર્તું શક્યતે ? એવં વદત્સુ વચન-
 વાસ્તવ્યેષુ મનોહરૂપલાવણ્યસંપન્નો જયન્તકુમારઃ સ્તમ્ભસ્ત્રાસંનિધૌ ગત્વા ધનુષિ શ્ર-
 સંયોજ્ય, તૈલપૂર્ણકટાહસંક્રાન્તચક્રપ્રતિવિમ્બાન્તરાલમાર્ગેણ સાધાવામનેત્રપ્રતિબિ-

કિસીકાં તીસરે ચક્ર સે ટકરા કર ટૂટ કર નીચે ગિરં પડા । લક્ષ્યસ્થાન
 તક કિસી કાં ભી ઘાળ નહીં પહુંચ સકા । કિસી રં કા ઘાળ તો લક્ષ્ય સે
 ભી ચચટકર-આગે નિકલ ગયા । इस प्रकार राधावेध क किसी के भी
 द्वारा साध्य नहीं हो सका । इतने में इन्द्रपुर का राजा इन्द्रदत्त का पुत्र
 जयन्तकुमार बड़े उत्साह से अपने स्थान से उठा । उसके छठते ही
 लोगों ने करतल ध्वनि से पहिले तो उसकी हँसी करने लगे, फिर कहने लगे
 लगे-देखो ये एक नवीन वीरपुरुष आये हैं, जहाँ से इन वीर-
 धनुर्धारियों की भी नहीं चली वहाँ विचारे इस कुमार की क्या
 चलेगी जो यह साहस दिखला ने को खंडा हुआ है । लोग जब इस
 तरह से जयन्तकुमार की हँसी करने में तंतपर हो रहे थे कि कुमार
 सब के देखते ही उस स्तंभ के पास पहुँच गया । पहुँचते ही उसने
 पहिले अपने धनुष पर घाण चढाया । चढाकर फिर वह तैलपूर्ण
 कट्ठा में पड़े हुए चक्र के प्रतिविम्ब को देखने लगा । देखते ही चक्र के

ખાણ પહેલા ચક્ર સાથે અથડાઈ ને તો કોઈનું બીજા ચક્ર સાથે અથડાઈ ને કોઈનું
 ત્રીજા ચક્ર સાથે અથડાઈ ને તુટી નીચે પડી જતાં, પણ લક્ષ્ય સ્થાન સુધી કોઈનું
 પણ ખાણ જઈ શક્યું નહીં, કોઈ કોઈનાં ખાણ તો લક્ષ્યથી પણ ઉપર થઈ ને આગળ
 નિકળી ગયાં. આ પ્રકારે રાધાવેધ કોઈનાથી પણ સાધ્ય ન થઈ શક્યો. એટલામાં
 ઇન્દ્રપુર નગરના રાજા ઇન્દ્રદત્તનો પુત્ર જયન્તકુમાર ઘણા ઉત્સાહથી પોતાના સ્થાનેથી
 ઉઠ્યો તેના ઉઠતાં જ લોકોએ તેની હાંસી ઉઠાવવા માંડી અને પછી કહેવા લાગ્યા-
 બુઝો આ એક નવીન વીરપુરુષ આવેલ છે. જ્યાં મોટા મોટા વીર ધનુર્ધારી
 રીએ તું પણ ન ચાલ્યું ત્યાં આ બિચારા કુમારનું શું ચાલવાનું છે ?
 આ સાહસ બતાવવા ઉઠ્યો છે. લોકો બ્યારે આવી રીતે જયન્ત કુમારની હાંસી
 ઉઠાવવામાં તત્પર બની રહ્યા હતા ત્યારે કુમાર બધાનાં ભેતભેતામાં તે સ્તંભની
 પાસે પહોંચી ગયા અને પહોંચતાં જ તેણે પહેલાં પોતાના ધનુષ્ય ઉપર ખાણ
 ચડાવ્યું અને પછી તેલથી ભરેલ કટાઈમાં પડતા ચક્રના પ્રતિબિંબને જોવા
 લાગ્યો. ભેતાં ભેતાં ચક્રના અંતરાલમાંથી પછી તેણે રાધા-

मन्निवेशितदृष्टिर्ध्वमुष्टिर्भवति, तदा जयन्तकुमारस्य कलाचार्यस्तं पृच्छति-
पश्यसि, किं दृष्टिगतं भवति? जयन्तकुमारः प्राह-केवलं पुत्तलिकाया वामनेत्रम्,
न तु किंचिदन्यत् । तद्वचनं श्रुत्वा गुरुः परितुष्टो जातः । ततोऽसौ जयन्तकुमार-
स्तैलपूर्णकटादगतं प्रतिविम्बितं वामनेत्रं पश्यन् निश्चलेन मनसा करं स्थिरीकृत्य
हस्तलाघवं दर्शयन् सद्यः शरं व्यमुचत् । स शरश्चक्रान्तरालेन सवेगं निर्गच्छन्
पुत्तलिकाया वामनेत्रकनीनिकामविध्यत् । ततस्तस्य करस्थैर्यलग्नुदस्तत्वादिकं वर्ण-
यन्तो लोकाः प्रमुदिता जयजयध्वनिं प्रकुर्वन्ति । तदा जितशत्रुपुत्री इन्दिरा

अन्तराल मार्ग से फिर उसने राधा पुत्तली के वामनेत्र का प्रति-
विम्ब देखा । देखकर उसने फिर धनुष को चढ़ाने के लिये हाथ की
मुट्टी ऊँची की । इतने में उसके कालाचार्य बीच ही में उससे पूछा
जयन्त ! तुम्हें इस समय क्या दिख रहा है ? । जयन्त ने कहा-गुरुमहा-
राज ! मुझे इस समय पुत्तली के वामनेत्र सिवाय और कुछ नहीं
दिख रहा है । जयन्तकुमार के वचन सुनकर कलाचार्य के हर्ष का
ठिकाना नहीं रहा । जयन्त ने तैलपूर्ण कडाह में पड़े हुए पुत्तली के
वामनेत्र के प्रतिविम्ब को लक्ष्यकर शीघ्र ही निश्चल मन से हाथ को
संभालते हुए उस ओर धनुष से बाण छोड़ दिया । छूटते ही बाण ने
चक्र के अन्तराल से निकलते हुए उस पुत्तली के वामनेत्र की कनी-
निका को वेध दिया । उपस्थित जनताने जयन्तके लक्ष्यवेधकी निपुणता
की एवं हस्तलाघवकी बहुत अधिक प्रशंसा की । सब के सब बड़े ही प्रसन्न
हुए । जयन्त की चारों ओर से जयध्वनिपूर्वक बधाई होने लगी ।

आंणतुं प्रतिभिंभ नेथुं. नेधने तेवे धनुष्यने चडाववा माटे डाधनी मुडी
ढंछी करी. अे वणते तेना कणाचार्ये वयभां न तेने पूछयुं न्यंत तमने
आ समये शु देभाय छे? न्यते कछुं. शुरुभडाराज मने आ समये पुतणीनी
डाणी आंण सिवाय भीणुं कंछ देभातुं नथी. न्यंतकुमारनां वयन सालणीने
कलाचार्यं दुर्पित भन्या. न्यते तेव बरेव कडाधमां पडता पुतणीना डाणा
नेत्रना प्रतिभिंभने लक्ष्य करी तरत न निश्चल मनथी डाधने संभाणीने
ते तरक्ष णाणु छोडयुं णाणु छुटतां न चकना अंतरालथी नीकणीने
पुतणीनी डाणी आंणनी डीडीनुं वेधन कयुं. लेणी थयेली जनताअे न्यंत-
कुमारना लक्ष्यवेधनी प्रशंसा करी अने डायकुशणतानी धखीन प्रशंसा करी.
सधणा णणन प्रसन्न थया. न्यंतनी आरे णाणुथी न्यध्वनी पूर्वक वधाई थवा
लागी. धन्दिरा पणु पोताना लायने वणाणुती न्यंतना गणाभां वरभाणा

જયન્તકુમારસ્ય કળ્થે પુષ્પમાલાં દદૌ । યથા રાધાવેધો દુષ્કરસ્તથા મનુષ્યદેહ-
ચ્ચુતસ્ય પ્રમાદિનઃ પુનર્મનુષ્યત્વં દુર્લભમિતિ ।

અત્ર સંગ્રહશ્લોકઃ—(શાર્દૂલવિક્રીડિતવૃત્તમ્)

રાધાયાવદનાદયઃ ક્રમવશાચક્રાણિ ચત્વાર્યપિ,
ભ્રામ્યન્તીહ વિપર્યયેણ સ્વલુ તદ્વામાસિવેધો યથા ।
પ્રાપ્તો દુષ્કરતાં નરેન્દ્રતનયાપાણિગ્રહાકાક્ષિણાં,
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરમવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

इति सप्तमश्चक्रदृष्टान्तः ॥ ७ ॥

अथाष्टमः कूर्मदृष्टान्तः—

अगाधजलपरिपूर्णः सहस्रयोजनविस्तीर्णः सलिलजन्तुसंभृतः सुशोभितः

इन्दिरा भी अपने भाग्य की सराहना करती हुई जयन्त के गले में
वरमाला डालकर अपने आपको धन्य मानने लगी । इस दृष्टान्त का भाव
केवल इतना ही है कि जिस प्रकार राधावેધ સાધના દુષ્કર કાર્ય
હૈં ઉસી પ્રકાર મનુષ્ય જન્મકો હારા હુઆ પ્રમાદી પ્રાણી કો પુનઃ મનુષ્ય-
જન્મકી પ્રાપ્તિ દુર્લભ હૈં । इस दृष्टान्तका भावप्रदर्शकश्लोक इस प्रकार है—

રાધાયા વદનાદયઃ ક્રમવશાત્ ચક્રાણિ ચત્વાર્યપિ,
ભ્રામ્યન્તીહ વિપર્યયેણ સ્વલુ તદ્વામાસિભેદો યથા ।
જાતો દુષ્કરતાં નરેન્દ્રતનયાપાણિગ્રહાકાક્ષિણામ્ ;
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરમવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

यह सातवा चक्रदृष्टान्त है ॥ ७ ॥

आठवाँ कूर्म (कच्छप) का दृष्टान्त इस प्रकार है—अगाधजल से

પહેરાવીને પોતે પોતાને ધન્ય માનવા લાગી. આ દૃષ્ટાંતનો ભાવ એટલો છે કે,
જે રીતે રાધાવેધ સાધના અત્યંત કઠીન અને દુષ્કર છે એજ રીતે મનુષ્ય
જન્મને હારી ગયેલ પ્રમાદી પ્રાણીને પુનઃ મનુષ્યજન્મની પ્રાપ્તિ દુર્લભ છે.
આ દૃષ્ટાંતનો ભાવપ્રદર્શક શ્લોક આ પ્રકારનો છે.

રાધાયા વદનાદયઃ ક્રમવશાત્ ચક્રાણિ ચત્વાર્યપિ,
ભ્રામ્યન્તીહ વિપર્યયેણ સ્વલુ તદ્ વામાસિ ભેદો યથા ।
જાતો દુષ્કરતાં નરેન્દ્રતનયાપાણિગ્રહાકાક્ષિણામ્,
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરમવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

આ સાતમું ચક્રદૃષ્ટાંત છે. ॥ ૭ ॥

આઠમું કુર્મ કાચળા (કચ્છપ) નું દૃષ્ટાંત આ પ્રકારનું છે.—

જળથી પરિપૂર્ણ એવો એક (ધર) ડોલ હતો, જે

एको हृद आसीत् । तदुदकं च परस्परसम्बद्धशैवालजालैश्चादितमभवत् । तत्र
स्वाप्त्यसंततिसमन्वितः कच्छपः प्रतिवसति । अन्यदा कदाचित् तत्र सान्द्र
शैवालमध्ये हृदोपान्तस्थितजम्बूविटपिनः सुपक्वफलसंपातेन शैवालतन्तु-
विच्छेदाच्छिद्रमभवत्, तस्मिन्नेव समये तत्रस्थिताऽसौ कूर्मस्तत्कालजातच्छिद्रमा-
श्रित्य ग्रीवां वहिष्करोति । तदनु खल्वसौ निर्मलगगनमण्डलमण्डनायमान तारा-
गणसमन्वितमुपमासम्पन्नशरदपूर्णशशङ्कविम्बमवलोक्य साश्चर्यं मनसि चिन्तयति
—अहो ! किमिदं विलोक्यते । कीदृशमिदमदृष्टपूर्वं नयनानन्दजनकम् ? । इत्येवं

परिपूर्ण एक द्रह था । जिसका विस्तार एक हजार योजन का था ।
इसमें अनेक जलचर जीव रहते थे । यह बड़ा सुन्दर था । इसका जल
परस्पर संवद्ध शैवालसमूह से आच्छादित था । इसमें एक कच्छुआ
अपने घच्चों के साथ रहता था । एक समय की बात है कि उस द्रह
के किनारे पर जो जामुन के वृक्ष खड़े हुए थे उनके कुछ जम्बूफल
उस शैवालजाल के ऊपर गिरे । उनके गिरने से उस शैवालजाल के
बीच में शैवाल के तन्तुओं के टूट जाने से छिद्र हो गया । उसी समय
कच्छुए ने जो उस शैवालजाल के नीचे रहता था उस छिद्र से अपनी
गर्दन को बाहर निकाला । बाहर निकालते ही उसने स्वच्छ आकाश
में आकाश का मण्डनस्वरूप एवं तारागणों से सुशोभित परमशोभा-
संपन्न ऐसे शरदकालीन पूर्णचन्द्रमा के विम्ब को देखा । देखते ही उसे
बड़ा भारी आश्चर्य हुआ । विचार ने लगा—अहो ! यह क्या दिखाई
देता है ? मैंने तो आज तक ऐसा नेत्रों को अपूर्व आनन्द देने वाला

हजार योजन बेटे होता । तेमां अनेक प्रकारना जलचर एव रहता होता । ते धरा
भूमि सुंदर होता । तेनुं जल शेवाण समूहथी आच्छादित होतां अनेमां अनेक काययो
पोतानां भय्यांसा साथे रहता होता । अनेक समयनी बात छे के, ते धराना
काठे नंभुडानां वृक्षा डारणं ध उय्यां होतां ते पैडीना अनेक वृक्ष उपरथी थोडां नंभुडुण
शेवाण उपर पडयां । आ रीते नंभुडाना पडवाथी जल उपर आच्छादित थयेली
शेवाणमां छिद्र पडी गयां । आ वणते अ शेवाणनी नीचे रहता काययाअ
नंभुने लधने शेवाणमां पडेला छिद्रमांथी पोतानी डोक भडार काढी । पोतानी
डोकने शेवाणमांथी भडार काढतां ज काययाअ स्वच्छ आकाशमां तारागणोथी
सुशोभित परम शोभासंपन्न अवे शरदकाणना पूर्ण चंद्रमाना प्रकाशने लये।
नेतां ज तेने धष्टुं ज आश्चर्यं थयुं अने ते भनोभन विचारवा लाग्ये के,
। शुं देणाध रह्युं छे ? में आज सुधी नेत्रेने आनंद देवावाणे आवे

જયન્તકુમારસ્ય કળ્થે પુષ્પમાલાં દદૌ । યથા રાધાવેધો દુષ્કરસ્તથા મનુષ્યદેશ-
ચ્ચુતસ્ય પ્રમાદિનઃ પુનર્મનુષ્યત્વં દુર્લભમિતિ ।

અત્ર સંગ્રહશ્લોકઃ—(શાર્દૂલવિક્રીડિતવૃત્તમ્)

રાધાયાવદનાદધઃ ક્રમવશાચક્રાણિ ચત્વાર્યપિ,
ભ્રામ્યન્તીહ વિપર્યયેણ खलु तद्वामाक्षिवेधो यथा ।
પ્રાપ્તો દુષ્કરતાં નરેન્દ્રતનયાપાણિગ્રહાકાક્ષિણાં,
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

इति सप्तमश्चक्रदृष्टान्तः ॥ ७ ॥

અધાષ્ટમઃ કૂર્મદૃષ્ટાન્તઃ—

अगाधजलपरिपूर्णः सहस्रयोजनविस्तीर्णः सलिलजन्तुसंभृतः सुशोभितः
इन्दिरा भी अपने भाग्य की सराहना करती हुई जयन्त के गले में
वरमाला डालकर अपने आपको धन्य मानने लगी । इस दृष्टान्त का भाव
केवल इतना ही है कि जिस प्रकार राधावेध साधना दुष्कर कार्य
है उसी प्रकार मनुष्य जन्मको हारा हुआ प्रमादी प्राणी को पुनः मनुष्य-
जन्मकी प्राप्ति दुर्लभ है । इस दृष्टान्तका भावप्रदर्शकश्लोक इस प्रकार है—

રાધાયા વદનાદધઃ ક્રમવશાત્ ચક્રાણિ ચત્વાર્યપિ,
ભ્રામ્યન્તીહ વિપર્યયેણ खलु तद्वामाक्षिवेधो यथा ।
જાતો દુષ્કરતાં નરેન્દ્રતનયાપાણિગ્રહાકાક્ષિણામ્ ;
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

यह सातवा चक्रदृष्टान्त है ॥ ७ ॥

આઠવાં કૂર્મ (કચ્છપ) નો દૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારે છે—અગાધજલ સે

પહેરાવીને પોતે પોતાને ધન્ય માનવા લાગી, આ દૃષ્ટાન્તનો ભાવ એટલો છે કે,
જે રીતે રાધાવેધ સાધના અત્યંત કઠીન અને દુષ્કર છે એજ રીતે મનુષ્ય
જન્મને હારી ગયેલ પ્રમાદી પ્રાણીને પુનઃ મનુષ્યજન્મની પ્રાપ્તિ દુર્લભ છે.
આ દૃષ્ટાન્તનો ભાવપ્રદર્શક શ્લોક આ પ્રકારનો છે.

રાધાયા વદનાદધઃ ક્રમવશાત્ ચક્રાણિ ચત્વાર્યપિ,
ભ્રામ્યન્તીહ વિપર્યયેણ खलु तद्वामाक्षिवेधो यथा ।
જાતો દુષ્કરતાં નરેન્દ્રતનયાપાણિગ્રહાકાક્ષિણામ્,
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

આ સાતમું ચક્રદૃષ્ટાન્ત છે. ॥ ૭ ॥

આઠમું કૂર્મ કાચળા (કચ્છપ) નું દૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે.—

અગાધ જળથી પરિપૂર્ણ એવો એક (ધરો) હોજ હોતો, એક

શૈવાલે મિલિતે યથૈવ શશિનઃ સંદર્શનં દુર્લભં,
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

इत्यष्टमः कूर्मदृष्टान्तः ॥ ८ ॥

अथ नवमो युगदृष्टान्तः प्रोच्यते—

અસંખ્યયોજનવિસ્તીર્ણો વલયાકારઃ સદ્ગત્યોજનગમ્भीરઃ સ્વયંભૂરમણ-
સમુદ્રોઽસ્તિ । તસ્ય પ્રાચ્યાં દિશિ કોઽપિ દેવો યુગં પ્રાશ્નિપત્ તસ્ય યુગસ્ય કીલિકાં
પશ્ચિમાયાં દિશિ । યથા તસ્મિન્ સમુદ્રે ભ્રામ્યન્ત્યાસ્તસ્પાઃ કીલિકાયાસ્તેન યુગેન

શૈવાલે મિલિતે યથૈવ શશિનઃ સંદર્શનં દુર્લભમ્,
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

यह आठवा कूर्मदृष्टान्त हुआ ॥ ८ ॥

નોવાં યુગદષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—યહ દષ્ટાન્ત કલ્પનો સે સંબંધ
રખતા હૈ । અસંખ્યાત દ્વીપ ઓર સમુદ્રોં કે વાદ એક અન્તિમ દ્વીપ
ઓર સમુદ્ર હૈ । અન્તિમ સમુદ્ર કા અસંખ્યાત યોજન કા વિસ્તાર હૈ ।
ગહરાઈ મી હસકી એક હજાર યોજન કી હૈ । ઇસમેં કલ્પના કરો કિ
કોઈ એક દેવ પૂર્વ દિશા કી ઓર એક જુઆ-ગાડી કા અવયવવિશેષ
જો વૈલોં કે કન્ધાં પર રખા જાતા હૈ-ડાલ દે, ઓર પશ્ચિમ દિશા કી
ઓર ઉસકી કીલિકા-સેલ-ડાલ દે । અવ યહ કીલિકા ઉસ સમુદ્ર મેં
ઉસ દિશા સે વહતી હુઈ ચલી આવે ઓર વહતે હુએ જુઆ કે સાથ

શૈવાલે મિલિતે યથૈવ શશિનઃ સંદર્શનં દુર્લભમ્,
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરભવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

આ આઠમું કૂર્મદૃષ્ટાંત છે. ॥ ૮ ॥

નવમું યુગદષ્ટાંત આ પ્રકારનું છે—

આ દષ્ટાંત કલ્પનાથી સંબંધ રાખે છે. અસંખ્યાત દ્વીપ અને સમુદ્રો
પછી એક છેલ્લો દ્વીપ અને સમુદ્ર છે. એ છેલ્લા સમુદ્રનો વિસ્તાર અસંખ્ય
યોજનનો છે. ઉંડાઈ પણ તેની એક હજાર યોજનની છે. આમાં કલ્પના કરો
કે, કેઈ એક દેવ પૂર્વદિશા તરફ એક ધોંસરું કે જે ગાડીમાં બળદના કાંધ
ઉપર રાખવામાં આવે છે તે નાખી દે અને પશ્ચિમ દિશા તરફથી એ ધોંસ-
રાની લાકડીઓ નાખી દે. પશ્ચિમ દિશાએ નાખેલી ધોંસરાની એ સાંખેલ
વહેતાં વહેતાં ચાલી આવે અને તે ધોંસરી સાથે મળી જાય. જે રીતે આ વાત

વિચિન્ત્ય સ ક્રૂર્મઃ સ્વન્ધૂનપિ તદ્ દર્શયિતું જલે નિમજ્ય યાવતા કાષ્ઠેન તૈઃ
સહ પુનરાયાતિ, તાવત્ પુનઃ સમીરસંયોજિતશેવાલૈસ્ત્રિદ્રમાચ્છાદિતમ્ । યથા
તચન્દ્રમણ્ડલદર્શનં પુનસ્તસ્ય ક્રૂર્મસ્ય દુર્લભં તથા મનુષ્યદેહાચ્ચ્યુતસ્ય પ્રમાદિનઃ
પુનર્મનુષ્યત્વં દુર્લભમિતિ ।

અત્ર સંગ્રહશ્લોકઃ—(શાર્દૂલવિક્રીડિતવૃત્તામ્) .

દૃષ્ટ્વા કોઽપિ હિ કચ્છપો હૃદયુષે શૈવાલવન્ધચ્યુતે,
પૂર્ણેન્દુ મુદિતઃ કુડમ્બમિહ તં દ્રષ્ટું સમાનીતવાન્ ।

પદાર્થ નહીં દેખા હૈ, યહ કિતના સુન્દર હૈ । હસ પ્રકાર વિચાર કર
ઉસને હસ અપૂર્વ વસ્તુ કો અપને પરિવાર કો ભી દિખાને કા વિચાર
કિયા, અતઃ વહ પાની મેં હુવકી લગાકર અપને પરિવાર કે પાસ
પહુંચા ઓર ઉનકો સાથ મેં લેકર જ્યોં હી યહ વહાં આયા કિ વહ
શૈવાલજાલ હવા કે લગને સે ફિર સે જ્યોં કા ત્યોં પરસ્પર મેં મિલ
ગયા । હસ દૃષ્ટાન્ત સે હમ કો યહ શિક્ષા મિલતી હૈ કિ જિસ પ્રકાર
હવા કે ફોકોં કે લગને સે શૈવાલ કે તન્તુ આપસ મેં મિલ ગયે ઓર છિદ્ર
કા અભાવ હો ગયા, અતઃ ઉસ અભાગે કહુએ કો પુનઃ ચંદ્રદર્શન હોના
દુર્લભ હુઆ, ઉસી પ્રકાર મનુષ્યજન્મ કો હારે હુએ પ્રમાદી પ્રાણી કો
પુનઃ મનુષ્યજન્મ મિલના મહા દુર્લભ હૈ । હસ દૃષ્ટાન્ત કા ભાવસંગ્રહ
શ્લોક હસ પ્રકાર હૈ—

દૃષ્ટ્વા કોઽપિ હિ કચ્છપો હૃદયુષે શૈવાલવન્ધચ્યુતે,
પૂર્ણેન્દુ મુદિતઃ કુડમ્બમિહ તં દ્રષ્ટું સમાનીતવાન્ ।

અપૂર્વ પદાર્થ કહી પણ બેયો નથી..આ કેવો સુંદર છે ? આ પ્રકારનો વિચાર કરી,
એ અપૂર્વ વસ્તુ પોતાના પરિવારને પણ બતાવવાનો વિચાર કર્યો અને પાણીમાં
ડુબકી મારી તે પોતાના પરિવારની પાસે પહોંચ્યો. અને તેને સાથે લઈ તે
ઉપરોક્ત સ્થળે પહોંચ્યો ત્યારે તે શેવાળ કે જેમાં બાંધુને લઈ છિદ્ર પડેલું હતું.
તે પવનને કારણે પુરાઈ જતાં શેવાળની સપાટી ફરીથી સંઘાઈ ગઈ તેથી
કાચબા અને તેના પરિવારને ફરીથી ચંદ્રનાં દર્શન ન થયાં. એ પ્રકારે મનુષ્ય
જન્મને હારી ગયેલ પ્રમાદી પ્રાણીને મનુષ્ય જન્મ મળવો મહા દુર્લભ છે.

આ દૃષ્ટાંતનો ભાવસંગ્રહક શ્લોક આ પ્રમાણે છે.—

દૃષ્ટ્વા કોઽપિ હિ કચ્છપો હૃદયુષે શૈવાલવન્ધચ્યુતે,
પૂર્ણેન્દુ મુદિતઃ કુડમ્બમિહ તં દ્રષ્ટું સમાનીતવાન્ ।

તુલ્યં તચ્ચૂર્ણં નલિકાન્તર્નિધાય મેરુશિખરં સમાભ્ય ફૂલકૃતસમીરણંસ્તચ્ચૂર્ણં
સકલં સર્વતઃ સમુદ્ઘાપિતમ્ ।

અથ તેન દેવેન વિસિપ્તાસ્તે પરમાણવઃ પ્રચન્ડપવનોદ્ધૃતાઃ સર્વાસુ દિક્ષુ
દૂરં ગતા પૈકયો વિભિન્નાઃ પતિતાઃ ।

યથા તાન્ પરમાણૂન્ સર્વતઃ સંચિત્ય તૈઃ પુનઃ સ્તમ્ભનિપ્પાદનં લોકસ્ય દુષ્કરં,
તથા મનુષ્યભવાત્ પ્રચ્યુતસ્ય પ્રમાદિનઃ પ્રાણિનો મનુષ્યજન્મ દુર્લભમિતિ ॥

દસવાં પરમાણુ દૃષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—યહ દૃષ્ટાન્ત મી કલ્પના સે
સંબંધ રચને વાલા હૈ—જૈસે ક્રીડાવશ કિસી દેવ ને માણિક્યનિર્મિત
એક સ્તમ્ભ કો વજ્ર કે પ્રહાર સે તોડા । પશ્ચાત્ ઉસે ઇતના પીસા કિ
ઉસકા ચૂર્ણ ચૂર્ણા હો ગયા । ચૂર્ણ જૈસા જવ વહ વન ચુકા તવ ઉસ
ચૂર્ણ કો ઉસને એક નલિકા મેં ભરા ઓર સુમેરુ પર્વત કે શિખર પર
ખડે હોકર ઉસકો સવ તરફ ફુંક સે ડાડા દિયા । વે સવ કે સવ ઉસ
સ્તમ્ભકે પરમાણુ જો ઉસ દેવ ને અપની ફુંક સે ઇધર ઉધર ડાડા દિયે હૈ
ઓર વાયુકે પ્રવલ ઘોંકો ને ઉનકોપ્રત્યેક દિશા મેં લે જાકર ઓર મી
દૂર ફેંક દિયે । ઉન સવ કે સવ પરમાણુઓં કો એકત્રિત કર કે ફિર સે
જૈસે ઉસ સ્તમ્ભ કા ઉસી રૂપ સે નિર્માણ કરના દુષ્કર હૈ—ઉસી તરહ
મનુષ્યભવ સે પ્રચ્યુત જીવ કો મનુષ્યભવકી પુનઃ પ્રાપ્તિ હોના દુર્લભ હૈ ।

દસમું પરમાણુદૃષ્ટાન્ત આ પ્રકારનું છે.

આ દૃષ્ટાન્ત પણ કલ્પનાથી સંબંધ રાખવાવાળું છે. જેમ રમતના તોરથી
કોઈ દેવે માણિક્યથી ભરેલા એવા એક સ્તંભને વજ્રના પ્રહારથી તોડી નાખ્યો.
પછી તેને એટલો પિરયો કે, તેના ચૂરેચૂરા થઈ ગયા. ચૂર્ણ જેવો બન્યો તે
થઈ ગયો ત્યારે તે ભુકાને તેણે એક નળીમાં ભર્યો અને સુમેરુપર્વતના શિખર
ઉપર ઉભા રહીને ચારે બાજુ તે ભુકાને ફુંકથી ડાડી દીધો. એ સ્તંભના
ભુકા રૂપે બનેલા સઘળા પરમાણુઓને તે દેવે પોતાની ફુંકથી ચારે કોર ડાડાવી
દીધા અને વાયુએ પ્રબળ વેગથી દરેક દિશામાં લઈ જઈને દૂર ફેંકી દીધા.
ફર ફર બધાં ત્યાં ફેંકાઈ ગયેલા એ સઘળા પરમાણુઓને એકત્રિત કરી ફરીથી
સ્તંભનું નિર્માણ કરવું દુષ્કર છે તેવીજ રીતે આ મનુષ્યભવને હારી એટલો
છવ ફરી મનુષ્ય જન્મની પ્રાપ્તિ કરી શકતો નથી.

સહ સંઘટનમેવ દુર્લભં, તસ્ય યુગસ્ય છિદ્રે પુનઃ પ્રવેશસ્તુ તત્રાપિ દુર્લભસ્તથા
મનુષ્યભવાત્પ્રચ્યુતસ્ય પ્રમાદિનઃ પુનર્મનુષ્યજન્મ દુર્લભમિતિ ।

અત્ર સંગ્રહઃ— (શાર્દૂલચિક્રીઢિતવૃત્તામ્)

પ્રાચ્યબ્ધૌ યુગ-કીલિકા વિનિહિતા ક્ષિપ્તં યુગં પશ્ચિમે,
યદ્વદ્ દુર્લભમેવ તત્ર વહતોઃ સંમીલનં તદ્વયોઃ ।
શમ્યાયાસ્તુ પુનર્યુગસ્ય વિવરે તસ્યાઃ પ્રવેશો યથા,
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરમવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥
इति नवमो युगदृष्टान्तः ॥ ९ ॥

અથ દશમઃ પરમાણુદૃષ્ટાન્તઃ—

કેનાઽપિ ક્રીડાપરેણ દેવેન મણિક્યમયં સ્તમ્ભં વજ્રેણ ચૂર્ણીકૃત્ય પરમાણુ-
મિલ જાવે તો જિસ પ્રકાર યહ વાત વહુત દુર્લભ હૈ ઓર હસસે મી
અધિક દુર્લભ યહ હૈ કિ વહ કીલિકા વહતે ૨ ઉસ જુએ કે છેદ મેં
પ્રવિષ્ટ હો જાવે યહ વાત દુર્લભ હૈ । હસી તરહ મનુષ્ય ભવ સે પ્રચ્યુત
પ્રમાદી જીવ કો પુનઃ મનુષ્યભવ કી પ્રાપ્તિ હોના દુર્લભ હૈ । હસકા
ભાવપ્રદર્શકશ્લોક હસ પ્રકાર હૈ—

પ્રાચ્યબ્ધૌ યુગકીલિકા વિનિહિતા ક્ષિપ્તં યુગં પશ્ચિમે,
યદ્વદ્ દુર્લભમેવ તત્ર વહતોઃ સંમીલનં તદ્વયોઃ ।
શમ્યાયાસ્તુ પુનર્યુગસ્ય વિવરે તસ્યાઃ પ્રવેશો યથા,
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરમવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥
यह नौवां युगदृष्टान्त है ॥ ९ ॥

ધણી જ દુર્લભ છે અને તેનાથી પણ અધિક દુર્લભ તો એ છે કે, ધોસરાની
તે સાંભિલો વહેતાં વહેતાં તે ધોસરાના બીંધમાં ભેડાઈ જાય એ વાત દુર્લભ
છે. આ રીતે મનુષ્યભવથી પ્રચ્યુત પ્રમાદી જીવને ફરીથી મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ
થી દુર્લભ છે.

તેના ભાવને દર્શાવતો શ્લોક આ પ્રકારનો છે—

પ્રાચ્યબ્ધૌ યુગકીલિકા વિનિહિતા ક્ષિપ્તં યુગં પશ્ચિમે,
યદ્વદ્ દુર્લભમેવ તત્ર વહતોઃ સંમીલનં તદ્વયોઃ ।
શમ્યાયાસ્તુ પુનર્યુગસ્ય વિવરે તસ્યાઃ પ્રવેશો યથા,
સંસારે ભ્રમતઃ પુનર્નરમવો જન્તોસ્તથા દુર્લભઃ ॥ ૧ ॥

આ નવમું યુગદૃષ્ટાન્ત છે. ॥ ૯ ॥

છાયા—એકદા દેવલોકેષુ, નરકેષ્વપિ એકદા ।

એકદા આસુરં કાયં, યથા કર્મભિઃ ગચ્છતિ ॥ ૩ ॥

ટીકા—‘એગયા’ ઇત્યાદિ ।

જીવઃ, એકદા=એકસ્મિન્ કાલે શુભકર્માનુભવકાલે દેવલોકેષુ=સૌધર્માદિષુ યથાકર્મભિઃ=તદ્વત્પત્તિરૂપેષ્ટૈતૈઃ સરાગસંયમદેશવિરત્યકામનિર્જરાવાલતપઃકર્મભિઃ ગચ્છતિ । એકદા=અશુભકર્મોદયકાલે, નરકેષુ=રત્નપ્રભાદિષુ યથાકર્મભિઃ=મહારમ્ભમહાપરિગ્રહપંચેન્દ્રિયવધકુળપાહારૈર્ગચ્છતિ । એકદા આસુરમ્-અસુરસમ્બન્ધિનં, કાયં=નિકાયમ્ અસુરકુમારભાવમિત્યર્થઃ, યથા કર્મભિઃ=સરાગસંયમાદિભિઃ, ગચ્છતિ=પ્રાપ્નોતિ । ઉપલક્ષણતાઞ્જ્યોતિર્વ્યન્તરયોરપિ ગચ્છતીતિ બોધ્યમ્ ॥ ૩ ॥

ઉપરોક્ત કથન કો સ્પષ્ટ કરતે હુએ કહતે હૈ—‘એગયા’-ઇત્યાદિ ।
અન્વયાર્થ—યહ જીવ (એગયા-એકદા) કમી તો શુભ કર્મ કે અનુભવન કાલ મેં (દેવલોકેષુ-દેવલોકેષુ) સૌધર્મ આદિ દેવ લોક મેં (અહાકર્મ્મેહિં - યથાકર્મભિઃ) ‘સરાગસંયમ, દેશવિરતિ, અકામનિર્જરા’ એવં ચાલતપ આદિરૂપ ઉસ ગતિ કે કર્મ કે કારણોં સે (ગચ્છહ-ગચ્છતિ) જન્મ લેતા હૈ । (એગયા-એકદા) કમી અશુભકર્મ કે અનુભવનકાલ મેં (નરેષુ-નરકેષુ) રત્નપ્રભા આદિક નરકોં મેં (અહાકર્મ્મેહિં-યથાકર્મભિઃ) મહા આરંભ, મહાપરિગ્રહ, પંચેન્દ્રિયવધ કુળપ (માંસ) આહાર આદિ કરને સે (ગચ્છહ-ગચ્છતિ) જાતા હૈ । (એગયા-એકદા)

ઉપરોક્ત કથનને વધારે સ્પષ્ટ કરતાં કહે છે—

“એગયા” ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—આ જીવ એગયા-એકદા ક્યારેક તો શુભકર્મના અનુભવ કાળમાં, દેવલોકેષુ-દેવલોકેષુ સૌધર્મ આદિ દેવલોકમાં અહાકર્મ્મેહિં-યથાકર્મભિઃ સંયમ, દેશવિરતિ, અકામ નિર્જરા, અને ચાલતપ આદિરૂપ એ ગતીનાં કર્મોનાં કારણોથી ગચ્છહ-ગચ્છતિ જન્મ લે છે. એગયા-એકદા ક્યારેક અશુભ કર્મના ઉદયમાં નરેષુ-નરકેષુ રત્નપ્રભા આદિક નરકોમાં અહાકર્મ્મેહિં-યથાકર્મભિઃ આરંભ, મહાઆરંભ, મહાપરિગ્રહ, પંચેન્દ્રિયવધ કુળપ (માંસ) આહાર આદિ કરવાથી

(૧) “ચઙ્ઘિ ઠાણેહિં જીવા દેવાવ્યત્તાય કમ્મં પગરેંતિ, તં જહા-સરાંગ સંજમેણં, સંજમાસંજમેણં, ચાલતવોકમ્મેણં, અકામણિજ્જરાય” । (સ્થા. સ્થા. ૪ ઘ. ૪ એવં ઔપાતિક સૂત્રેણિ)

(૨) “ચઙ્ઘિ ઠાણેહિં જીવા જેરહ્યત્તાય કમ્મંપકરેંતિ, તં જહા-મહારંભાય મહા-પરિગ્રહાય, પંચિન્દ્રિયવહેણં, કુળિમાહારેણં (સ્થા. સ્થા. ૪ ઘ. ૪. એવમ્ ઔપાતિકસૂત્રેણિ)

અર્થ ભાવઃ—માનુષ્ય જન્મ લઙ્ઘ્યાઽપિ પ્રમાદકૃતદુષ્કર્મપ્રભાવાદેકેન્દ્રિયાદિ-
જાતિપ્રાપ્ત્યા ચક્રવર્તિપાયસાદિવત્ પુનર્માનુષત્વં દુર્લભમિતિ ॥ ૨ ॥

एतदेव स्पष्टयति—

मूलम्—एगया देवलोएसु, नरएसुवि एगया ।

एगया आसुरं कायं, अहा कम्मेहिं गच्छइ ॥ ३ ॥

ને અપને જન્મ મરણ સે ન ભર દિયા હો । જીવ ને સૂક્ષ્મપૃથિવી-
કાયાદિ સ્થાવર કાય મેં ઉત્પન્ન હોકર લોકાકાશ કા પ્રત્યેક પ્રદેશ કો
તેલ સે તિલ કી तरह ભર દિયા હૈ । इसलिये मनुष्यजन्म पाकर भी
जो प्रमादी होकर दुष्कर्मों का उपार्जन करते हैं वे उनके प्रभाव से
एकेन्द्रियादिक जाति की प्राप्ति से चक्रवर्ती के पायस आदि की तरह
मनुष्यभव की प्राप्ति को दुर्लभ बनालेते हैं—

ભાવાર્થ—મનુષ્યભવ પાકર મી પ્રાણી કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ
પ્રમાદી નહીં વને । પ્રમાદ કે કારણ જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મો કા બંધ
હોને સે इस जीव का एकेन्द्रियादिक योनियों में जन्म होता है ।
इसमें इसका अनन्तकाल निकल जाता है । अतः पुनः मनुष्यभव की
प्राप्ति दुर्लभ बन जाती है । तात्पर्य कहने का यह है कि मनुष्यभव
सार्थक करने का यही उपाय है कि प्रमादी न बना जाय ॥ ૨ ॥

જન્મમરણથી ન ભરી દીધા હોય. એવે સૂક્ષ્મ પૃથ્વી કાયાદિ સ્થાવર કાયમાં
ઉત્પન્ન થઈ થઈને લોકાકાશના પ્રત્યેક પ્રદેશને તલના તેલની માફક ભરી દીધેલ
છે. આ માટે મનુષ્યજન્મ મળવા છતાં પણ જે પ્રમાદી બની દુષ્કર્મોનું ઉપાર્જન
કરે છે, તે એના પ્રભાવથી એકેન્દ્રિયાદિક બાંતીની પ્રાપ્તિથી ચક્રવર્તીના દુધપાંક
વગેરેની માફક ફરી મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિને દુર્લભ બનાવે છે.

ભાવાર્થ—મનુષ્યભવ મેળવીને પણ પ્રાણીનું કર્તવ્ય છે કે, તે પ્રમાદી ન
બને. પ્રમાદના કારણે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોના બંધ થવાથી આ જીવને એકે-
ન્દ્રિયાદિક જેવી યોનીઓમાં જન્મ થાય છે. તેમાં તેનો અનંત કાળ નીકળી
ભય છે. આથી મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ દુર્લભ બની ભય છે. તાત્પર્ય કહેવાનું
એ છે કે, મનુષ્યભવ સાર્થક કરવાનો એક માત્ર ઉપાય એ છે કે, પ્રમાદ
પ્રમાદી ન બની અને ત્યાં સુધી સુક્ષ્મ પ્રાપ્તિ ન થાય ત્યાં સુધી મનુષ્યભવની જ
ફરી ફરી પ્રાપ્તિ થતી રહે એવો પ્રયત્ન તો કરવો જોઈએ. ॥ ૨ ॥

एवं चतुरशीतिलक्षसंख्यका योनयस्तासु, इत्यर्थः । न निर्विघ्नन्ते=अस्मात् पर्यटनात् कदा मोक्षो भविष्यतीति नोद्विजन्ते=उद्वेगं न प्राप्नुवन्ति । केषु कं इव ? सर्वार्थेषु=सर्वे च ते अर्थाः, सर्वार्थास्तेषु हिरण्य-सुवर्ण-मणि-मुक्ताफल-वज्र-वैडूर्य-ग्राम-नगर-कोश-कोष्ठागार-भूमि-गजाश्वादिषु सर्वविभवेषु प्राप्तेष्वपि, क्षत्रियाः=राजान इव । अयं भावः—यथा सर्वेषु विषयेषु प्राप्तेष्वपि राजानः संतोषं नाप्नुवन्ति, किंतु तत्प्राप्त्यर्थमेव पुनः पुनः प्रवर्तन्ते । एवं तासु तासु योनिषु पुनः पुनरुत्पत्तिमनुभवन्तोऽपि जीवाः पुनः पुनः ज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्म कुर्वन्तस्तत्तद् योनिप्राप्त्यर्थमेव प्रवर्तन्ते, तस्मान्मनुष्यजन्म दुर्लभम् इति ।

લાખ, તથા મનુષ્ય કો ચૌદહ લાખ, હસ પ્રકાર હન ચૌરાસી લાખ યોનિયો—ઉત્પત્તિ સ્થાનો મેં) (ન નિવિઝ્જંતિ—ન નિર્વિઘ્નન્તે) ‘હસ સંસાર પરિભ્રમણસે મેરા કય મોક્ષ હોગા’ હસ પ્રકાર કમી મી નિર્વેદ—ઉદ્વેગ કો પ્રાપ્ત નહીં હોતે હેં । (વ-ઈવ) જૈસે(સવઢેસુ સ્વત્તિયા-સર્વાર્થેષુ ક્ષત્રિયાઃ) હિરણ્ય સુવર્ણ, મણિ, મુક્તાફલ, વજ્ર વૈદૂર્ય, ગ્રામ, નગર, કોશ એવં કોષ્ટાગાર, ભૂમિ, ગજ અશ્વ આદિ પ્રાપ્ત વિભવોમેં ક્ષત્રિય લોગ ઉદ્વેગ (ઉદાસીનતા) કો પ્રાપ્ત નહીં હોતે હેં । તાત્પર્ય હસકા યહ હૈ કિ જૈસે યુદ્ધ કર ર.કે સમસ્ત દેશોં કા રાજ્ય પ્રાપ્ત હોને પર મી ક્ષત્રિય લોગ ઉદ્વેગ (ઉદાસીનતા) કો પ્રાપ્ત નહીં હોતે હેં, કિન્તુ ઉનકી પ્રાપ્તિ કે લિયે હી વે વાર ૨ ચેષ્ટા કિયે કરતે હેં ઉસો પ્રકાર ઉન ઉન યોનિયોં મેં વાર ૨ જન્મ મરણ કે દુઃખોં કા અનુભવ કરતે હુણ મી વે જીવ પુનઃ પુનઃ જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટ-વિધ કર્મોં કા બન્ધ કરતે હુણ ઉન ૨ યોનિયોં કી પ્રાપ્તિ કરને કે ળિયે

તથા મનુષ્યોની ચૌદ લાખ, આ પ્રકારે એ ચૌરાસી લાખ યોનીઓમાં ‘ન નિવિઝ્જંતિ—ન નિર્વિઘ્નન્તે આ સંસાર પરિભ્રમણથી મારો ક્યારે મોક્ષ થશે?’ એ પ્રકારે તેને કોઈ બતાવી ચિતા થતી નથી. વ-ઈવ જેમ સર્વઢેસુ સ્વત્તિયા-સર્વાર્થેષુ ક્ષત્રિયાઃ હીરા માણેક, સુવર્ણ, મણી, મુક્તાફળ, વજ્ર, વૈદૂર્ય, ગ્રામ, નગર, કોશ અને કોષ્ટાગાર, ભૂમિ, ગજ, અશ્વ, આદિ પ્રાપ્ત વૈભવોમાં રચ્યાપચ્યા રહેતા ક્ષત્રિયોને કોઈ ઉદ્વેગ થતો નથી. તાત્પર્ય એનું એ છે કે, જેમ યુદ્ધ કરી કરીને સમસ્ત દેશનું રાજ્ય પ્રાપ્ત થવા છતાં પણ ક્ષત્રિયોને કોઈ ઉદ્વેગ થતો નથી પરંતુ તેની પ્રાપ્તિને માટે જ એ વારંવાર પ્રયત્ન કરતા રહે છે. એવી રીતે યોનીઓમાં વારંવાર જન્મ મરણને અનુભવ કરવા છતાં પણ એ જીવ ફરી ફરી જ્ઞાનાવરણીયાદિ આઠ પ્રકારના કબોને બંધ કરીને તે તે યોનીઓની પ્રાપ્તિ કરવામાં જ કીયાશીલ રહે છે.

મૂલમ્-એવમાવદ્વજોર્ણસુ, પાણિણો કર્મમકિલ્વિસા ।
 નં નિર્વિજ્ઞંતિ સંસારે, સંવદ્દેસુ વં સ્વત્તિંયા ॥૫॥

છાયા—એવમ્ આવર્તયોનિષુ, પ્રાણિનઃ કર્મકિલ્વિપાઃ ।
 ન નિર્વિઘ્નંતે સંસારે, સર્વાર્થેષુ શ્વ સત્ત્રિયાઃ ॥ ૫ ॥

ટીકા—‘ એવમ્ ’ इत्यादि ।

કર્મકિલ્વિપાઃ=કર્મભિર્મલિનાઃ પ્રાણિનઃ સંસારે=મથે એવમ્=અમુના પ્રકારે,
 આવર્તયોનિષુ=આવર્તેન-પુનઃપુનઃપરિભ્રમણેન સ્પૃષ્ટા યોનયઃ આવર્તયોનયસ્તાસુ
 ચતુરશીતિલક્ષપ્રકારાસુ, તત્ર પૃથિવ્યપત્તેજોવાયુકાયેષુ પ્રત્યેકં સપ્ત સપ્ત લક્ષાઃ,
 દશ લક્ષાઃ પ્રત્યેકવનસ્પતિષુ, નિગોદજીવેષુ ચ ચતુર્દશ લક્ષાઃ, દ્વિ-ત્રિ-ચતુરિન્દ્રિયેષુ
 પ્રત્યેકં દ્વે દ્વે લક્ષે, તિર્યક્દનારકદેવેષુ પ્રત્યેકં ચતસ્રશ્વતસો લક્ષાઃ મનુજેષુ ચતુર્દશ લક્ષાઃ,

કમ્પી તેન્દ્રિય જીવોં મેં ઓર કમ્પી ચતુરિન્દ્રિય જીવોં મેં જન્મ લેતા હૈ ।
 હસ પ્રકાર હસ સંસાર મેં પ્રમાદી જીવ ભ્રમણ કરતા હી રહતા હૈ ।
 હસ કીટાદિક શબ્દ કે ઉપલક્ષણસે સમસ્ત તોર્યજાતિ કે ભેદોપભેદો
 કા ગ્રહણ જાનનાં ચાહિયે ॥ ૪ ॥

‘ એવમ્ ’-इत्यादि ।

અન્વયાર્થ—(કર્મમકિલ્વિસા-કર્મકિલ્વિપાઃ) કર્મોં સે મલિન
 (પાણિણો-પ્રાણિનઃ) પ્રાણી (સંસારે-સંસારે) સંસાર મેં (એવં-એવમ્)
 ઉક્ત પ્રકાર સે ભ્રમણ કરતે હુએ (આવદ્વજોર્ણસુ-આવર્તયોનિષુ) હન
 ચોરાસી લાખ યોનિયોં મેં (પૃથિવીકાય કી સાતલાખ, અપકાય કી
 સાત લાખ, તેજસ્કાય કી સાત લાખ, વાયુકાય કી સાત લાખ, પ્રત્યેક
 વનસ્પતિ કી દશ લાખ, નિગોદજીવોં કી ચૌદહ લાખ, દ્વિન્દ્રિય, તેન્દ્રિય
 ચતુરિન્દ્રિય કી દો દો લાખ, તિર્યગ્ચ, દેવ એવં નારકી કી ચાર ચાર

એ પ્રકારે આ સંસારમાં પ્રમાદી છપ્પ ભ્રમણ કરતા જ રહે છે આ કીટાદિક શબ્દનાં
 ઉપલક્ષણથી સમસ્ત તિર્યગ્ચ જાતીના ભેદોપભેદો અકલ્પ બલ્યું બેધએ. ॥ ૪ ॥

“ એવમ્ ”-इत्यादि.

અન્વયાર્થ—કર્મમકિલ્વિસા-કર્મકિલ્વિપાઃ કયોથી મલીન પાણિણો-પ્રાણિનઃ
 પ્રાણી સંસારે-સંસારે સંસારમાં એવ-એવમ્ ઉક્ત પ્રકારથી ભ્રમણ કરતાં કરતાં
 આવદ્વજોર્ણસુ-આવર્તયોનિષુ આ ચોરાસી લાખ યોનીઓમાં (પૃથ્વીકાયની સાત લાખ,
 અપકાયની સાત લાખ, તેજસ્કાયની સાત લાખ, વાયુકાયની સાત લાખ, પ્રત્યેક
 વનસ્પતિની દસ લાખ, નિગોદ જીવોની ચૌદ લાખ, બે ઇન્દ્રિય, ત્રણ ઇન્દ્રિય,
 ચાર ઇન્દ્રિયની બધે લાખ અને તિર્યગ્ચ, દેવ અને નારકોની ચાર ચાર લાખ,

एवं चतुरशीतिलक्षसंख्यका योनयस्तासु, इत्यर्थः । न निर्विघ्नन्ते=अस्मात् पर्यटनात् कदा मोक्षो भविष्यतीति नोद्विजन्ते=उद्वेगं न प्राप्नुवन्ति । केषु कं इव ? सर्वार्थेषु=सर्वे च ते अर्थाः, सर्वार्थास्तेषु हिरण्य-सुवर्ण-मणि-मुक्ताफल-वज्र-वैडूर्य-ग्राम-नगर-कोश-कोष्ठागार-भूमि-गजाश्वादिषु सर्वविभवेषु प्राप्तेष्वपि, क्षत्रियाः=राजान इव । अयं भावः—यथा सर्वेषु विषयेषु प्राप्तेष्वपि राजानः संतोषं नाप्नुवन्ति, किंतु तत्प्राप्त्यर्थमेव पुनः पुनः प्रवर्तन्ते । एवं तासु तासु योनिषु पुनः पुनरुत्पत्तिमनुभवन्तोऽपि जीवाः पुनः पुनः ज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्म कुर्वन्तस्तत्तद् योनिप्राप्त्यर्थमेव प्रवर्तन्ते, तस्मान्मनुष्यजन्म दुर्लभम् इति ।

लाख, तथा मनुष्य की चौदह लाख, इस प्रकार इन चौरासी लाख योनियों-उत्पत्ति स्थानों में) (न निर्विज्जन्ति-न निर्विघ्नन्ते) 'इस संसार परिभ्रमणसे मेरा कब मोक्ष होगा' इस प्रकार कभी भी निर्वेद-उद्वेग को प्राप्त नहीं होते हैं । (व-इव) जैसे(सबद्वेसु खत्तिया-सर्वार्थेषु क्षत्रियाः)हिरण्य सुवर्ण, मणि, मुक्ताफल, वज्र वैडूर्य, ग्राम, नगर, कोश एवं कोष्ठागार, भूमि, गज अश्व आदि प्राप्त विभवोंमें क्षत्रिय लोग उद्वेग (उदासीनता) को प्राप्त नहीं होते हैं । तात्पर्य इसका यह है कि जैसे युद्ध कर २ के समस्त देशों का राज्य प्राप्त होने पर भी क्षत्रिय लोग उद्वेग (उदासीनता) को प्राप्त नहीं होते हैं, किन्तु उनकी प्राप्ति के लिये ही वे बार २ चेष्टा किये करते हैं उसी प्रकार उन उन योनियों में बार २ जन्म मरण के दुःखों का अनुभव करते हुए भी ये जीव पुनः पुनः ज्ञानावरणीयादिक अष्टविध कर्मों का बन्ध करते हुए उन २ योनियों की प्राप्ति करने के लिये

तथा मनुष्यानी चौद लाख, आ प्रकारे ओ चौरासी लाख योनीओभां 'न निर्विज्जन्ति-न निर्विघ्नन्ते आ संसार परिभ्रमणथी भारो कथारे मोक्ष थरो?' ओ प्रकारे तेने कोष्ठ जतणी चित्ता थती नथी. व-इव ओम सबद्वेसु खत्तिया-सर्वार्थेषु क्षत्रियाः हीरा भाषेक, सुवर्ण, मणी, मुक्ताफल, वज्र, वैडूर्य, ग्राम, नगर, कोश आने कुष्ठागार, भूमि, गज, अश्व, आदि प्राप्त वैभवोभां रन्ध्यापन्ध्या रहेता क्षत्रियोने कोष्ठ उद्वेग थतो नथी. तात्पर्य ओनुं ओ छे के, ओम युद्ध करी करीने समस्त देशनुं राज्य प्राप्त थवा छतां पणु क्षत्रियोने कोष्ठ उद्वेग थतो नथी परंतु तेनी प्राप्तने आटे ओ वारंवार प्रयत्न करता रहे छे. ओवी रीते योनीओभां वारंवार जन्म भरथुने अनुभव करवा छतां पणु ओ लव करी करी ज्ञानावरणीयादि आठ प्रकारना कर्मोने बंध करीने ते ते योनीओनी प्राप्ति करवाभां ओ कीयाशील रहे छे.

મનુષ્યાણામ્, તથા વિપયા અપ્પનુકૂલતયા મનો હરન્તિ સર્વેષામ્ । વર્ષાકાલે જલબુદ્બુદા ઇવ, કરાજ્જલિગતા આ ઇવ સમ્પદઃ ક્ષણનભરાઃ સન્તિ । યથા-સ્વચ્છ-જલપરિપૂર્ણગંભીરગર્તે પ્રતિવિમ્બભાગાપન્નં તત્તટવર્તિવૃક્ષ-ચ્છાયા-લતા-પત્ર-પુષ્પાદિકં કિમપિ કાર્યં સાધયિતું ન શ્ચનોતિ, તથા સંસારાન્તર્ગતં વસ્તુજાતમ્ કિમપિ આત્મકલ્યાણાય ન ભવતિ । એવમનન્તદુઃસ્વસંભૃતે સંસારેડનન્તાનન્તદુઃસ્વમનુભવન્તોઽપિ નોદ્વિજન્તે સર્વાર્યેષુ લબ્ધેષ્વપિ રાજાન ઇવ પ્રાણિનઃ । અતો મનુષ્યજન્મદુર્લભમ્ ।

વિષયસુખ મ્હી અનુકૂલ હોને સે સય કો સુહાવને લગતે હૈં, સય કે ચિત્ત લુભાતે રહતે હૈં । વર્ષાકાલ મેં જૈસે જલ કા બુદ્બુદા દેખતે ૨ નષ્ટ હો જાતા હૈ, ઓર અંજલિ કા જલ જૈસે ક્ષણભર મેં ધ્રુર જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર સે યહ વૈભવ મ્હી ક્ષગચિનદ્વર જાનના ચાહિયે । જૈસે સ્વચ્છ જલ સે પરિપૂર્ણ ગંભીર ટહે મેં પ્રતિવિમ્બરૂપ સે પતિત ઉસકે તટવર્તી વૃક્ષ કી છાયા લતા પત્ર પુષ્પાદિક કુછ મ્હી કાર્ય સાધક નહીં હો સકતે હૈં, ઉસી તરહ સંસાર કે અન્તર્ગત વસ્તુઓં કા સમૂહ મ્હી આત્મકલ્યાણ કા કુછ મ્હી સાધક નહીં હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર અનંત દુઃખોં સે ભરે હુએ ઇસ સંસાર મેં અનન્ત દુઃખોં કા અનુભવ કરતે હુએ મ્હી સંસારી જીવ પ્રાપ્ત અર્થ મેં અધિકતર લુભાને ચાલે રાજા કી તરહ પ્રતિદિન ઉન્હોં સંસારવર્ધક વૈપયિક સુખોં મેં લુભાતે રહતે હૈં । આત્મકલ્યાણ કૈસે હોગા ઇસકી થોડી સી મ્હી ચિન્તા નહીં કરતે હૈં । ઇસલિયે યદિ મનુષ્યજન્મ પાયા હૈ તો કુછ કર લેના ચાહિયે, નહીં તો ઇસ મનુષ્ય

પ્રકારથી આ વિષયસુખ પણ અનુકૂળ હોતાં સઘળાને સુખરૂપ લાગે છે. બધાના ચિત્તને લોભાવે છે, વધોકાળમાં પાણીના પરપોટાની જેમ ભેત ભેતામાં નાશ પામે છે અને હાથમાં લીધેલ પાણી જેમ કણબરમાં ચાંદ્યુ બાય છે, એજ પ્રકારથી આ વૈભવ પણ કણબરમાં નાશ પામનાર સમજવો ભેઈએ. જેમ સ્વચ્છ જળથી ભરેલા ઊંડા ખાડામાં પ્રતિબિંબ રૂપથી પતિત તેની પાસેના વૃક્ષની છાયા, લતા, પાંદડાં, પુષ્પ વગેરે, કાંઈ પણ કાર્યસાધક થતાં નથી. એવી રીતે સંસારનો અંતર્ગત વસ્તુઓનો સમૂહ પણ આત્મકલ્યાણમાં કાંઈપણ સાધક બનતો નથી. આ પ્રકારનાં અનંત દુઃખોથી ભરેલા આ સંસારમાં અનંત દુઃખોનો અનુભવ કરવા છતાં પણ સંસારી જીવ પ્રાપ્ત અર્થમાં અધિકતર લોભાવનારા સબની માફક દરોજ તેની સંસારવર્ધક વિષયી સુખોમાં લોભાતો રહે છે. આત્માનું કલ્યાણ કઈ રીતે થશે તેની યોડી પણ ચિંતા કરતો નથી. આટલા માટેજ મનુષ્યજન્મ મળેલ છે તો તેનું કાંઈક સાર્થક કરી ભેઈએ.

તસ્માન્મનુષ્યજન્મ લબ્ધ્વા સંસારસ્વરૂપં ભાવयेत्—અહો ! ईदृशं दुःखस्थानमन्यत
किमपि नास्ति यादृशः संसारः ॥ ५ ॥

જન્મ છુટ જાને કે વાદ્દે હસકી પુનઃ પ્રાપ્તિ દુર્લભ છે, અતઃ મનુષ્ય કા કર્તવ્ય છે કે વહ મનુષ્યજન્મ પ્રાપ્ત કર સંસાર કે સ્વરૂપ કા અવશ્યર વિચાર કરતા રહે, ઉસકો સોચના ચાહિયે કે એસા દુઃખ કા સ્થાન ઓર કોઈ દૂસરા નહીં છે જૈસા કી યહ સંસાર છે ।

ભાવાર્થ—કર્મ સે કદર્થિત યે સંસારી જીવ ચૌરાસી લક્ષ યોનિયોંમે ભ્રમણ કરતે હુએ મી પુનઃ ઉસી ચક્કર મેં ફેંસને કે અભિલાપી હોતે રહતે હેં । યહ ચક્કર કેસે વંદે હોગા હસકી ચિન્તા હી નહીં કરતે હેં । જૈસે કોઈ ક્ષત્રિય વાર વાર યુદ્ધ કરને પર મી યુદ્ધ સે અરુચિ નહીં લાતા છે । ઉસી પ્રકાર યે સંસારો જીવ મી સાંસારિક અનંત દુઃખોં સે અરુચિ ન લાકર જ્ઞાનાવરણીય કર્મોં કો પુનઃ પુનઃ વઢાને કી ઓર હી અગ્રેસર બને રહતે હેં । ઇન કો હસ વાત કા પતા નહીં કે હસ મનુષ્યભવ સે હી ઇન અનંત દુઃખોં કા અંત હોતા છે, અતઃ હસ ભવસે યદિ યે દુઃખ નહીં નષ્ટ કિયે ગયે તો ફિર દૂસરા કૌન એસા ભવ છે જો ઇન દુઃખોં કા અન્ત કરનેવાલા હો સકેગા, અતઃ મિલે હુએ મનુષ્ય ભવ

નહીં તો આ મનુષ્યજન્મ પુરો થતાં તેની પ્રાપ્તિ ફરી થવી દુર્લભ છે. આથી મનુષ્યનું કર્તવ્ય છે કે, જ્યાં મહાદુર્લભ એવો મનુષ્યજન્મ તેને પ્રાપ્ત થયો છે તો સંસારના સાચા સ્વરૂપનો અવશ્ય અવશ્ય વિચાર કરતો રહે. તેણે વિચારવું જોઈએ કે, જેવો આ સંસાર છે તેના જેવું દુઃખનું સ્થાન બીજું કોઈ નથી.

ભાવાર્થ—કર્મથી કદાચ સંસારી જીવ ચૌરાસી લાખ યોનીઓમાં ભ્રમણ કરવા છતાં પણ ફરી એજ ચક્કરમાં ફસાય—ખૂંચી બાંધે તેવાં કાર્યોમાં તે રત રહે છે પણ એ ચક્કર કઈ રીતે બંધ થાય તેની ચિંતા કરતો નથી. જેમ કોઈ ક્ષત્રિય વારંવાર યુદ્ધ કરવા છતાં તેના દિલમાં યુદ્ધની અરૂચી જાગતી નથી. તેવી રીતે સંસારી જીવ પણ સંસારનાં અનંત દુઃખોને જાણવા છતાં તેના પ્રત્યે અરૂચી ન લાવતાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મોને ફરી ફરી વધારવાની તરફ જ તેની મુખ્ય પ્રવૃત્તિ બની રહે છે. તેને એ વાતનો ખ્યાલ પણ નથી આવતો કે, આ મનુષ્યભવદ્વારા જ તે અનંત દુઃખોનો અંત લાવી શકાય છે. એ કારણે આ ભવદ્વારા જ જો તે દુઃખ નષ્ટ કરવામાં નહીં આવે તો ફરી એવો કયો ભવ છે કે, આ દુઃખોનો અંત લાવવામાં ઉપયોગી થાય ? આથી મહાપૂણ્યના ઉદ્ધતથી અપ્રાપ્ય એવા મળેલા મનુષ્યભવને સફળ બનાવવા તરફ લક્ષ દેવું

મૂલમ્—કમ્મસંગેહિં સંમૂઢા, દુઃખિચ્યા વહુવેયર્ણા ।

અમાણુસાસુ જોળીસુ, વિણિહમ્મંતિ પાણિણો ॥ ૬ ॥

છાપા—કર્મસંગૈઃ સંમૂઢાઃ, દુઃખિતા વહુવેદનાઃ ।

અમાનુષીપુ યોનિપુ, વિનિહન્યન્તે પ્રાણિનઃ ॥ ૬ ॥

ટીકા—‘કમ્મસંગેહિં’? इत्यादि ।

કર્મસંગૈઃ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મસંયોગૈઃ, સંમૂઢાઃ=તત્ત્વાતત્ત્વવિવેકરહિતાઃ, દુઃખિતાઃ=વિવિધદુઃસ્વજાલજનકરોગશોકાદિસમાક્રાન્તાઃ, વહુવેદનાઃ=મન્દ તીવ્ર-તીવ્રતર-પીડાયુક્તાઃ પ્રાણિનઃ, અમાનુષીપુ=એકેન્દ્રિય-દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિય-ચતુરિન્દ્રિયમનુષ્યભિન્નપચ્ચેન્દ્રિયરૂપાસુ ચ, યોનિપુ કર્મભિઃ વિનિહન્યન્તે=પુનઃ પુનરુત્પન્તે । અતો માનુષત્વં દુર્લભમિતિ ભાવઃ ॥ ૬ ॥

કો સફલ બનાવેની કી ઓર લક્ષ્ય દેના યહી સવ સે પ્રથમ કર્તવ્ય હૈ ॥ ૬ ॥

“કમ્મસંગેહિં” इत्यादि

અન્વયાર્થ—(કમ્મસંગેહિં—કર્મસંગૈઃ) જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મો કે સંયોગ સે (સંમૂઢા—સંમૂઢાઃ) તત્ત્વાતત્ત્વ કે વિવેક સે વિકલ બને હુએ અતએષ (દુઃખિચ્યા—દુઃખિતાઃ) વિવિધદુઃસ્વજનક એસે રોગ, શોક આદિ સે સમાક્રાન્ત એવં (વહુ વેયર્ણા—વહુ વેદનાઃ) મન્દ, તીવ્ર, તીવ્રતર પીડાઓ સે યુક્ત યે (પાણિણો—પ્રાણિનઃ) સંસારી પ્રાણી (અમાણુસાસુ જોળીસુ-અમાનુષીપુ યોનિપુ) એકેન્દ્રિય, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય એવં મનુષ્ય ભિન્ન પચ્ચેન્દ્રિય ઇન યોનિયોં મેં (વિણિહમ્મંતિ—વિનિહન્યન્તે) પુનઃ પુનઃ જન્મમરણજનિત દુઃખ પાતે હૈં । ઇસલિયે મનુષ્યભવ દુર્લભ હૈ ।

એકએ અને તે પ્રાણીમાનુસું એક માત્ર સી પ્રથમ કર્તવ્ય છે. ॥ ૫ ॥

“કમ્મસંગેહિં”—इत्यादि.

અન્વયાર્થ—કમ્મસંગેહિં—કર્મસંગૈઃ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સંયોગથી સંમૂઢા—સંમૂઢાઃ તત્ત્વાતત્ત્વના વિવેકથી, વિકળ અનેલા તેમજ દુઃખિચ્યા—દુઃખિતાઃ વિવિધ દુઃખજનક એવા રોગ, શોક આદિથી સમાક્રાન્ત અને વહુ વેયર્ણા—વહુ વેદનાઃ મંદ, તીવ્ર, તીવ્રતર, પીડાઓથી યુક્ત આ પાણિણો—પ્રાણિનઃ સંસારી પ્રાણી અમાણુસાસુ જોળીસુ-અમાનુષીપુ યોનિપુ એકેન્દ્રિય, બેધન્દ્રિય, ત્રીધન્દ્રિય, ચાર ધન્દ્રિય, અને મનુષ્ય ભિન્ન પાંચ ધન્દ્રિય આ યોનીઓમાં વિણિહમ્મંતિ—વિનિહન્યન્તે ફરી ફરી જન્મ મરણ જનીત દુઃખ પામે છે. એટલા માટે મનુષ્યભવ દુર્લભ કહ્યો છે.

કથં તર્હિ માનુષત્વં પ્રાપ્નોતીત્યાહ—

મૂલમ્—કર્મમાણં તું પહાળાણ, આણુપુર્વિવં કેયાઈ વિં ।

જીવાં સોહિમણુપ્પન્તા, ઔયયંતિ મણુંસ્સયં ॥ ૭ ॥

છાયા—કર્મણાં તુ પ્રહાણ્યા, આનુપૂર્વ્યાં કદાચિદપિ ।

જીવા શોધિમનુપ્રાપ્તાઃ, આદદતે મનુષ્યતામ્ ॥ ૭ ॥

ટીકા—‘કર્મમાણં’ ઇત્યાદિ ।

તુ=પુનઃ આનુપૂર્વ્યા=અનુક્રમેણ, કર્મણાં=મનુષ્યગતિવિધાતકાનામનન્તાનુ-
વન્ધિક્રોધાદિરૂપાણામ્, પ્રહાણ્યા=ક્ષયેગ-અપગમેન, જીવાઃ=માગિનઃ, આનુપૂર્વ્યા
=અનુક્રમેણ પૃથિવીકાયાદિક્રમેણેત્પર્યઃ, શોધિમ્=અશુભકર્માપગમરૂપાં શુદ્ધિમ્,

ભાવાર્થ—પ્રાપ્ત મનુષ્યભવ યદિ પ્રમાદી હોકર યૌં હી શુમા દિયા
જાતા હૈ તો ફિર ઇસ જીવ કો કર્મોં કે પ્રભાવ સે તત્વાતત્ત્વવિવેક
રહિત થનકર અનેક અમાનુષીય યોનિયૌં મેં અનેક પ્રકાર કે કષ્ટોં કા
સામ્હના કરતે હુણ ઉત્પન્ન હોતે રહતે હેં । ઇસલિયે મિલે હુણ ઇસ મનુષ્ય-
ભવ કો વ્યર્થ મત જાને દો, નહીં તો પુનઃ ઇસકા મિલના દુર્લભ હૈ ॥ ૬ ॥

મનુષ્યભવ પ્રાપ્ત કેસે હોતા હૈ યહ વાત સૂત્રકાર વતલાતે હેં—

“કર્મમાણં” ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—(આણુપુર્વી-આનુપૂર્વ્યા) અનુક્રમ સે (કર્મમાણં-કર્મણામ્)
મનુષ્યગતિવિધાતક અનંતાનુવંધી ક્રોધાદિ કર્મોં કી પહાળાણ-પ્રહાણ્યા
પ્રહાણિ-ક્ષયસે (જીવા જીવાઃ) જીવ (આણુપુર્વી-આનુપૂર્વ્યા) પૃથિવી-

ભાવાર્થ—પ્રાપ્ત મનુષ્યભવ જો પ્રમાદી બની એમને એમજ શુમાવી દેવાય તો
પછી આ જીવને કર્મોના પ્રભાવથી તત્વાતત્ત્વવિવેકરહીત બની અનેક અમા-
નુષિય યોનીઓમાં અનેક પ્રકારનાં કષ્ટોનો સામનો કરતાં કરતાં ઉત્પન્ન થતા
રહે છે. પણ મનુષ્યભવ પામવો દુર્લભ રહે છે. માટે મળેલા આ મનુષ્યભવને
વ્યર્થ જવા ન દેવો જોઈ એ. જીવને ફરી ફરી મનુષ્યભવ મળવો દુર્લભ છે. ॥ ૬ ॥

મનુષ્યભવ કેવી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે તે સૂત્રકાર બતાવે છે—

‘કર્મમાણં’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—આણુપુર્વી-આનુપૂર્વ્યા અનુક્રમથી કર્મમાણં-કર્મણામ્ મનુષ્યગતી
વિધાતક અનંતાનુવંધી ક્રોધાદિ કર્મોના પહાળાણ-પ્રહાણ્યાક્ષયથી જીવા-જીવાઃ જીવ
આણુપુર્વી-આનુપૂર્વ્યાપૃથ્વીકાયાદિકના કર્મથી સોહિ-શોધિમ્ અશુભ કર્મોના અપગ-

મૂલમ્—કર્મસંગેહિં સંમૂઢા, દુઃખિચ્યા વહુવેયળાં ।

અમાણસાસુ જોળીસુ, વિણિહમ્મંતિ પાણિણો ॥ ૬ ॥

ઝાયા—કર્મસંગેઃ સંમૂઢાઃ, દુઃખિતા વહુવેદનાઃ ।

અમાનુષીપુ યોનિપુ, વિનિહન્યન્તે પ્રાણિનઃ ॥ ૬ ॥

ટીકા—‘કર્મસંગેહિં’ इत्यादि ।

કર્મસંગેઃ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મસંયોગેઃ, સંમૂઢાઃ=તત્ત્વાતત્ત્વવિવેકરહિતાઃ, દુઃખિતાઃ=વિવિધદુઃખજાલજનકરોગશોકાદિસમાકાન્તાઃ, વહુવેદનાઃ=મન્દ તીવ્ર-તીવ્રતર-પીડાયુક્તાઃ પ્રાણિનઃ, અમાનુષીપુ=એકેન્દ્રિય-દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિય-ચતુરિન્દ્રિયમનુષ્યભિન્નપચ્ચેન્દ્રિયરૂપાસુ ચ, યોનિપુ કર્મભિઃ વિનિહન્યન્તે=પુનઃ પુનઃ-ત્પદ્યન્તે । અતો માનુષત્વં દુર્લભમિતિ ભાવઃ ॥ ૬ ॥

કો સફલ વનાને કી ઓર લક્ષ્ય દેના યહી સવ સે પ્રથમ કર્તવ્ય હૈ ॥ ૬ ॥

“કર્મસંગેહિં” इत्यादि

અન્વયાર્થ—(કર્મસંગેહિં—કર્મસંગેઃ) જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોં કે સંયોગ સે (સંમૂઢા—સંમૂઢાઃ) તત્ત્વાતત્ત્વ કે વિવેક સે વિકલ બને હુએ અતએવ (દુઃખિચ્યા—દુઃખિતાઃ) વિવિધદુઃખજનક એસે રોગ, શોક આદિ સે સમાકાન્ત એવં (વહુ વેયળા—વહુ વેદનાઃ) મન્દ, તીવ્ર, તીવ્રતર પીડાઓં સે યુક્ત યે (પાણિણો—પ્રાણિનઃ) સંસારી પ્રાણી (અમાણસાસુ જોળીસુ—અમાનુષીપુ યોનિપુ) એકેન્દ્રિય, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય એવં મનુષ્ય ભિન્ન પચ્ચેન્દ્રિય इन યોનિયોં મેં (વિણિહમ્મંતિ—વિનિહન્યન્તે) પુનઃ પુનઃ જન્મમરણજનિત દુઃખ પાતે હૈં । હસલિયે મનુષ્યભવ દુર્લભ હૈ ।

બેધએ અને તે પ્રાણીમાત્રનું એક માત્ર સૌ પ્રથમ કર્તવ્ય છે. ॥ ૫ ॥

“કર્મસંગેહિં”—इत्यादि.

અન્વયાર્થ—કર્મસંગેહિં—કર્મસંગેઃ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સંયોગથી સંમૂઢા—સંમૂઢાઃ તત્ત્વાતત્ત્વના વિવેકથી, વિકળ અનેલા તેમજ દુઃખિચ્યા—દુઃખિતાઃ વિવિધ દુઃખજનક એવા રોગ, શોક આદિથી સમાકાન્ત અને બહુ વેયળા—વહુ વેદનાઃ મંદ, તીવ્ર, તીવ્રતર, પીડાઓથી યુક્ત આ પાણિણો—પ્રાણિનઃ સંસારી પ્રાણી અમાણસાસુ જોળીસુ—અમાનુષીપુ યોનિપુ એકેન્દ્રિય, બેધન્દ્રિય, ત્રીધન્દ્રિય, ચાર ધન્દ્રિય, અને મનુષ્ય ભિન્ન પાંચ ધન્દ્રિય આ યોનીઓમાં વિણિહમ્મંતિ—વિનિહન્યન્તે ફરી ફરી જન્મ મરણ જનીત દુઃખ પામે છે. એટલા માટે મનુષ્યભવ દુર્લભ કહ્યો છે.

કસ્યચિદ્ વિશિષ્ટપુણ્યસ્પોદયેન માનુષત્વલાભેઽપિ શ્રુતિર્દુર્લભેત્યાહ—

મૂલમ્—માણુસ્સં વિગ્ગહં લૅદ્ધું, સુદૅ ધમ્મસ્સ દુલ્લહા ।

જં સોચ્છા પડિવેજ્જંતિ, તવં 'સંતિમહિંસયં' ॥૮॥

છાયા—માનુષ્યં વિગ્રહં લઙ્ઘ્વા, શ્રુતિર્ધર્મસ્ય દુર્લભા ।

યં શ્રુત્વા પ્રતિપચ્ચન્તે, તપઃ ક્ષાન્તિમ્ અર્હિસતામ્ ॥ ૮ ॥

ટીકા—‘ માણુસ્સં ’ ઇત્યાદિ ।

માનુષ્યં=મનુષ્યભવસમ્બન્ધિનં, વિગ્રહં=શરીરં, લઙ્ઘ્વા=પ્રાપ્ય, ધર્મસ્ય=શ્રુતચારિત્રલક્ષણસ્ય, શ્રુતિઃ=શ્રવણં, દુર્લભા, યં ધર્મં શ્રુત્વા, તપઃ=અનશનાદિ દ્વાદશવિધમ્, ઇન્દ્રિયજયં વા, ક્ષાન્તિ=ક્રોધજયરૂપાં, ઉપલક્ષણમેતન્માનાદિજયસ્યાપિ, અર્હિસતામ્=અર્હિસકત્વમ્, અનેન પ્રથમવ્રતમુક્તમ્, દ્વદમપ્યુપલક્ષણમ્—મૃપાવાદાદત્તાદાનમૈથુનપરિગ્રહવિરમણસ્ય, પ્રતિપચ્ચન્તે=પ્રાપ્નુવન્તીત્યર્થઃ । ધર્મસ્ય શ્રવણં હિ મિથ્યાત્વતિમિરમણાશકં, શ્રદ્ધાજ્યોતિઃપ્રકાશકં, તત્ત્વાતત્ત્વવિવેચકં, પીયૂષપાનમિવ

કહતે હૈ—“ માણુસ્સં ” ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(માણુસ્સં વિગ્રહં લઙ્ઘું માનુષ્યકં વિગ્રહં લઙ્ઘ્વા) મનુષ્યભવ સંબંધી શરીર કો પાકર ‘મી’ (ધર્મસ્સ સુદૅ દુલ્લહા—ધર્મસ્ય શ્રુતિઃ દુર્લભા) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકા શ્રવણ દુર્લભ હૈ । (જં સોચ્છા—યં શ્રુત્વા) જિસ ધર્મ કો સુનકર પ્રાણી (તવં સંતિમહિંસયં—તપઃ ક્ષાન્તિમ્ અર્હિસતામ્) અનશન આદિ ચારહ ૧૨ પ્રકાર કે તપ કો, અથવા ઇન્દ્રિયનિગ્રહ કો, ક્રોધ જયરૂપ ક્ષાન્તિ કો, ઉપલક્ષણ સે માન આદિ કપાય કે વિજય કો, તથા અર્હિસક ભાવ કો, ઉપલક્ષણ સે મૃપાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન एवं પરિગ્રહ સે વિરમણરૂપ વ્રત કો (પડિવેજ્જંતિ—પ્રતિપચ્ચન્તે) પ્રાપ્ત કરતે હૈ । ધર્મ કા શ્રવણ જીવ કે મિથ્યાત્વરૂપ તિમિર કા ચિનાશક, શ્રદ્ધારૂપ જ્યોતિ કા પ્રકાશક, તત્ત્વ અતત્ત્વ કા વિવેચક, અમૃતપાન કે સમાન

‘ માણુસ્સં ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—માણુસ્સં વિગ્રહં લઙ્ઘું—માનુષ્યકં વિગ્રહં લઙ્ઘ્વા મનુષ્યભવ સંબંધી શરીરને મેળવીને પણ ધર્મસ્સ સુદૅ દુલ્લહા—ધર્મસ્ય શ્રુતિઃ દુર્લભા શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મનું શ્રવણ દુર્લભ છે. જં સોચ્છા—યં શ્રુત્વા જે ધર્મને સાંભળીને પ્રાણી તવં સંતિમહિંસયં—તપઃ ક્ષાન્તિમ્ અર્હિસતામ્ અનશનાદિ બાર ૧૨ પ્રકારના તપને અથવા ઇન્દ્રિયનિગ્રહને, ક્રોધજયરૂપ, ક્ષાન્તિને ઉપલક્ષણથી માન આદિ કપાયના વિજયને તથા અર્હિસક ભાવને ઉપલક્ષણથી મૃપાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન અને પરિગ્રહથી વીરમણરૂપ વ્રતને પડિવેજ્જંતિ—પ્રતિપચ્ચન્તે પ્રાપ્ત કરે છે. ધર્મનું શ્રવણ ભવને મિથ્યાત્વરૂપ અધિકારનો નાશ કરનાર, શ્રદ્ધારૂપ જ્યોતિનો પ્રકા-

અનુપાતાઃ સન્તઃ, કદાચિદેવ, ન તુ સર્વદા, અત્ર તુ-શબ્દ એવાર્થકઃ । મનુષ્યતામ્
આદદતે=પૃહ્નન્તિ-પ્રાપ્નુવન્તીત્યર્થઃ । અયં ભાવઃ-પ્રકૃતિભદ્રતયા, પ્રકૃતિવિનીતતયા,
સાનુક્રોશતયા (સદયતયા) અમત્સરિતયા મનુષ્યેષુ પ્રાણિન ઉત્પદ્યન્તે । અપિ ચ-
વિશિષ્ટશુદ્ધિહેતુભિસ્તનુકપાયત્વાદિર્મનુષ્યાયુર્વન્થો ભવતિ । ઉક્તશ્ચ—

પયર્ઘે તણુકસાઓ, દાળરઓ સીલસંજમવિહૂનો ।

મજ્જમગુણેહિં જુતો મળુયાઝં વંધણ જીવો ॥ ૨ ॥

છાયા-પ્રકૃત્યા તનુકપાયો, દાનરતઃ શીલસંયમવિહીનઃ ।

મધ્યમગુણૈર્યુક્તો મનુજાયુર્વધ્નાતિ જીવઃ ॥ ૧ ॥ ૭ ॥

કાયાદિક કે ક્રમસે (સોહિ-શોધિમ્) અશુભ કર્મોં કે અપગમરૂપ
શુદ્ધિ કો પ્રાપ્ત હોતે હુએ (કયાઈ વિ-કદાચિદપિ) કમી કમી હી-
સર્વદા નહીં, (મળુસ્સયં આયયંતિ-મનુષ્યતાં આદદતે) મનુષ્યભવ
કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં । પ્રાણી સ્વાભાવિક ભદ્રપરિણામી હો, સ્વાભાવિક
વિનીત હો, દયાલુ હો, મત્સરભાવ સે રહિત હો તો વહ મરકર
મનુષ્યપર્યાય કો પ્રાપ્ત કરતા હૈં । વિશિષ્ટ શુદ્ધિ કા કારણ જો કષાયોં
કી મંદતા હૈં ઉસસે મી મનુષ્યાયુકા વંધ પ્રાણી કો હોતા હૈં । ઉક્તશ્ચ—

પયર્ઘે તણુકસાઓ દાળરઓ સીલસંજમવિહૂનો ।

મજ્જમગુણેહિં જુતો મળુયાઝં વંધણ જીવો ॥ ૧ ॥

છાયા-પ્રકૃત્યા તનુકપાયો દાનરતઃ શીલસંયમવિહીનઃ ।

મધ્યમગુણૈર્યુક્તો મનુજાયુર્વધ્નાતિ જીવઃ ॥ ૧ ॥ ૭ ॥

વિશિષ્ટ પુણ્ય કે ઉદય સે કિસી જીવ કો મનુષ્યભવ કી પ્રાપ્તિ હો
મી જાય તો મી ધર્મ કા સુનના દુર્લભ હૈં । ઇસ વાત કો સૂત્રકાર

મૃપ શુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને કયાઈ વિ-કદાચિદપિ કોઈ કોઈ વખત મળુસ્સયં-મનુષ્યતા—
મનુષ્યભવને આયયંતિ-આદદતે પ્રાપ્ત કરે છે. પ્રાણી સ્વાભાવિક ભદ્ર પરિણામી હોય,
સ્વાભાવિક વિનીત હોય, દયાળુ હોય, મત્સરભાવથી રહિત હોય તો તે મરીને
મનુષ્યપર્યાયને પ્રાપ્ત કરે છે. વિશિષ્ટ શુદ્ધિનું કારણ જે કષાયોની મંદતા
છે તેનાથી પણ મનુષ્ય આયુને વંધ પ્રાણીને થાય છે. કહું પણ છે—

પયર્ઘે તણુકસાઓ દાળરઓ સીલસંજમવિહૂનો ।

મજ્જમ ગુણેહિં જુતો મળુયાઝં વંધણ જીવો ॥ ૧ ॥

છાયા—પ્રકૃત્યા તનુકપાયો દાનરતઃ શીલસંયમવિહીનઃ ।

મધ્યમગુણૈર્યુક્તો મનુજાયુર્વધ્નાતિ જીવઃ ॥ ૧ ॥ ૭ ॥

વિશિષ્ટ કર્મના ઉદયથી કોઈ જીવને મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ થઈ પણ જાય
તો પણ ધર્મને સાંભળવો દુર્લભ છે આ વાતને સૂત્રકાર

ટીકા—‘ આહચ્ચ ’ ઇત્યાદિ ।

કદાચિત્ શ્રવણં=ધર્મશ્રવણં લઙ્ઘ્વાઽપિ શ્રદ્ધા=ધર્મવિપયિકા રુચિઃ, પરમદુર્લભાઽસ્તિ । શ્રદ્ધા ઠિ સંસારસાગરતરણિઃ, મિથ્યાત્વતિમિરહરણધુમણિઃ, સ્વર્ગાપર્ગસુખચિન્તામણિઃ, ક્ષપકથ્રેણિસરણિઃ, કર્મરિપુદમની, કેવલજ્ઞાનકેવલદર્શનજનની । શ્રદ્ધાયાઃ પરમદુર્લભત્વે હેતુમાદ્-‘ વહ્વે ’ ઇત્યાદિ ।

વહ્વો મનુષ્યા નૈયાયિકં-ન્યાયે પશ્ચસમનાયકારણે મત્તં નૈયાયિકં પશ્ચસમ-

ધર્મશ્રવણ કી પ્રાપ્તિ કે વાદ સૂત્રકાર અથ શ્રદ્ધા કી દુર્લભતા દિખલાતે હૈં—‘ આહચ્ચ ’-ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—(આહચ્ચ-આહત્ય) કદાચિત્ (સવણં લઙ્ઘુ-શ્રવણં લઙ્ઘ્વા) ધર્મકા શ્રવણ મી પ્રાપ્ત હો જાય તો મી (સદ્ધા પરમદુર્લભા-શ્રદ્ધા પરમદુર્લભા) ધર્મ મેં શ્રદ્ધા-રુચિ-હોના પરમ દુર્લભ હૈં । યહ શ્રદ્ધા સંસારરૂપી સાગર સે પાર કરાને કે લિયે નૌકા જૈસી હૈ, મિથ્યાત્વરૂપી તિમિર કો દૂર કરને કે લિયે ધુમણિ-સૂર્ય જૈસી હૈ । સ્વર્ગ એવં મોક્ષ કે સુખોં કો દેને કે લિયે ચિન્તામણિરત્ન જૈસી હૈ । ક્ષપકથ્રેણી પર આરુઢ હોને કે લિયે નિસરણી જૈસી હૈ । કર્મરૂપી શત્રુ કો પરાસ્ત કરને વાલી હૈ, એવં કેવલ જ્ઞાન કેવલ દર્શન કો ઉત્પન્ન કરને કે લિયે જનની જૈસી હૈ । યહ શ્રદ્ધા પરમ દુર્લભકયોં હૈ ? યહ યાત સ્વયં સૂત્રકાર કહતે હૈં (વહ્વે-વહ્વઃ) સંસારમેં એસે મી કિતનેક મનુષ્ય હૈં જો

ધર્મ શ્રવણની પ્રાપ્તિ બાદ સૂત્રકાર હવે શ્રદ્ધાની દુર્લભતા સમજાવે છે.—‘ આહચ્ચ ’ ઇત્યાદિ.

અન્વયાર્થ—આહચ્ચ-આહત્ય કદાચિત્ સવણં લઙ્ઘુ-શ્રવણં લઙ્ઘ્વા ધર્મનું શ્રવણ પ્રાપ્ત થઈ નય તો પણ સદ્ધા પરમદુર્લભા-શ્રદ્ધા પરમદુર્લભા ધર્મમાં શ્રદ્ધા રૂપી થવી એ પરમ દુર્લભ વાત છે. આ શ્રદ્ધા સંસારરૂપી સાગરથી પાર ઉતારનાર નૌકાનું કામ કરે છે. મિથ્યાત્વ રૂપી ઘોર અંધકારને દૂર કરી માણસના હૃદયમાં સૂર્ય તેજનાં કિરણો જેવો પ્રકાશ પહોંચાડે છે. સ્વર્ગ અને મોક્ષનાં સુખોને આપવા માટે ચિન્તામણીરત્ન જેવી છે. ક્ષપકથ્રેણી ઉપર આરુઢ થવા માટે એ નિસરણી જેવી છે. કર્મરૂપી શત્રુનો નાશ કરવા માટે એ અતુલ બળવાળી છે. અને કેવળજ્ઞાનદર્શનને ઉત્પન્ન કરવા માટે એ જનની જેવી છે. આ શ્રદ્ધા પરમ દુર્લભ કેમ છે ? આ વાત સ્વયં સૂત્રકાર બતાવે છે. તેઓ કહે છે કે, વહ્વે-વહ્વઃ સંસારમાં એવા પણ કેટલાક મનુષ્યો છે જે નૈયાયક.

હિતાવહં, ચન્દ્રચન્દ્રિકેય હૃદયાઠાદકં, સ્વપ્રદૃશ્વસ્તુનઃ પુનર્જાગ્રિદવસ્થાયાં તદ્દા-
ભવત્ પ્રમોદજનકં, ભૂમિગતનિધાનપ્રાપ્તિરિવ સુલ્લજનકં, સકલસંતાપહારકમ્ ।
તસ્માદ્ ધર્મઃ શ્રોતવ્ય इति भावः ॥ ૮ ॥

શ્રુતિલાભેઽપિ શ્રદ્ધા દુર્લભેત્યાદ—

મૂલમ્—આહ્યં સર્વેણં લદ્ધં, સદ્ધા પરમદુલ્લહા ।

સોર્ષ્ચા નૈયાઽયં મર્ગં, વહવે પરિભ્રંસસઙ્ ॥ ૯ ॥

છાયા—ઋદાચિત્ શ્રવણં લબ્ધ્વા, શ્રદ્ધા પરમદુર્લભા ।

શ્રુત્યા નૈયાયિકં માર્ગં, વહવઃ પરિભ્રમ્યન્તિ ॥ ૯ ॥

एकान्ततः हितविधायक, निर्मल चादनी के समान हृदय को आनंद
उत्पन्न करने वाला, स्वप्न में दृष्ट पदार्थ की जागृत अवस्था में प्राप्ति
होने की तरह प्रमोदजनक, भूमि में गड़े हुए निधान की प्राप्ति के समान
सुल्लजनक एवं समस्त संताप का अपहारक होता है, इसलिये धर्म
अवश्य श्रवण करने योग्य है ।

भावार्थ—मनुष्यभव पाकर भी जीव को श्रुतचारित्ररूप धर्म का
श्रवण बड़े भाग्य से मिलता है । धन्य वे पुरुष हैं जो इस प्रकार से
अपने जीवन को सफल करते हैं, क्योंकि धर्म के श्रवण से ही यह
जीव को मालूम होता है कि हमारा क्या कर्तव्य है क्या अकर्तव्य है ?
हिंसादिक पाप अकर्तव्य हैं, तथा प्रणातिपातादि विरमणरूपकर्तव्य हैं ।
तप पालो योग्य हैं एवं कषायादिक परित्याग करने योग्य हैं ॥ ८ ॥

શક, તત્ત્વ અતત્ત્વનો વિવેચક અમૃત પાન સમાન, એકાન્તતઃ હિત વિધાયક,
નિર્મળ ચાદની સમાન હૃદયને ઉત્પન્ન કરવાવાળા, સ્વપ્નમાં દૃષ્ટ પદાર્થની જાગૃત
અવસ્થામાં પ્રાપ્તિ થવાની માફક, પ્રમોદ જનક ભૂમિમાં ગડાયેલા ધનની પ્રાપ્તિ
સમાન, સુખ જનક અને સમસ્ત સંતાપનો અપહારક બને છે. માટે ધર્મ
અવશ્ય શ્રવણ કરવા યોગ્ય છે.

ભાવાર્થ—મનુષ્યભવ મેળવીને પણ જીવને શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું શ્રવણ ભાગ્યના
ઉદયથી જ મળે છે. એ પુરૂષને ધન્ય છે કે જે આ પ્રકારથી પોતાના જીવનને
સફળ બનાવે છે. કેમકે ધર્મનું શ્રવણ કરવાથી જ આ જીવને ખબર પડે છે
કે માફ કર્તવ્ય શું છે અને અકર્તવ્ય શું ? છે. હિંસાદિક પાપ એ અકર્તવ્ય
છે, અને એનાથી પ્રાણાતિપાતાદિ વિરમણરૂપ કર્તવ્ય છે. તપ પાળવા યોગ્ય
છે, અને કષાયાદિક પરિત્યાગ કરવા યોગ્ય છે. ॥ ૮ ॥

યસ્ય સઃ, સંયતાદિજ્ઞાને સંદિગ્ધવુદ્ધિઃ । ૩ । અશ્વમિત્રચતુર્થઃ સામુચ્છેદિકઃ, સ
ઉત્પાદાનન્તરમેવ વસ્તુનઃ સમુચ્છેદઃ—વિનાશો ભવતીતિ પ્રરૂપયતિ । ૪ । ગંગાચાર્યઃ
પંચમો દ્વૈક્રિયઃ—સ એકસ્મિન્ સમયે ક્રિયાદ્વયાનુભવો ભવતીતિ પ્રરૂપયતિ । ૫ ।
પડુલૂકઃ પટ્ટમૈરાશિકઃ, સ જીવા-જીવ-નોજીવ-ભેદાત્ ત્રયો રાશયઃ સન્તીતિ
પ્રરૂપયતિ । ૬ । ગોષ્ઠઃમાહિલઃ સ્થવિરઃ સપ્તમોઽવદિકઃ સ ચ જીવેન સ્પૃષ્ટં કર્મ
અવદ્ધં પ્રરૂપયતિ । ૭ ।

તત્ર જમાલેર્વૃત્તાન્તઃ પ્રોચ્યતે—

ક્ષત્રિયકુણ્ડપુરે ભગવતઃ શ્રીવીર્યવર્ધમાનસ્વામિનો ભગિન્યાઃ સુદર્શનાયાઃ પુત્રઃ ક્ષત્રિયા

એસી માન્યતા હૈ કિ સંયત આદિ કા જ્ઞાન સદા સંદિગ્ધ રહતા હૈ, કૌન
સંયત હૈ કૌન નહીં ઇસકા યથાર્થ નિશ્ચય નહીં હો સકતા હૈ, ઇસ પ્રકાર
યે અવ્યક્તવાદી હૈ ૩ । ચતુર્થ નિહવ-અશ્વમિત્ર હૈ, ઇનકી એસી માન્યતા હૈ
કિ ઉત્પાદ કે અનન્તર હી વસ્તુ વિનષ્ટ હો જાતી હૈ ૪ । પંચમ નિહવ
ગંગાચાર્ય હૈ, ઇનકી એસી માન્યતા હૈ કિ એક સમય મેં દો ક્રિયાઓ
કા અનુભવ હોતા હૈ ૫ । છઠવાં નિહવ પડુલૂક હૈ, ઇનકી એસી માન્યતા
હૈ કિ જીવ અજીવ ઇવં નોજીવ, ઇસ પ્રકાર ત્રીન રાશિ હૈ ૬ । ગોષ્ઠ
માહિલ સ્થવિર સાતવાં નિહવ હૈ, ઇનકી એસી માન્યતા હૈ કિ જીવ કે
સ્પૃષ્ટ કર્મ સદા ડસસે અવદ્ધ રહતા હૈ ૭ ।

જમાલિ કા વૃત્તાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—જમાલિ ભગવાન્ વર્ધમાન
સ્વામાં કી વહિન સુદર્શના કે પુત્ર થે । યે ક્ષત્રિયકુણ્ડપુર કા નિવાસી
ક્ષત્રિય થે । ભગવાન્ વીર પ્રભુ કી પુત્રી જો પ્રિયદર્શના થી ડસકા

સ્વરૂપ છે. (૨) તૃતીય નિહવ આપાદ હતા એમની એવી માન્યતા હતી કે, સંયત
આદિતુ જ્ઞાન સદા સંદિગ્ધ રહે છે. કેાણ સંયત છે ? કેાણ સંયત નથી ? એનો
યથાર્થ નિશ્ચય થઈ શકતો નથી. આ પ્રકારથી તેઓ અવ્યક્તવાદી હતા. (૩) ચતુર્થ
નિહવ અશ્વમિત્ર હતા એમની એવી માન્યતા હતી કે, ઉત્પાદના અનંતરજ વસ્તુનો
નાશ થઈ જાય છે. (૪) પંચમ નિહવ ગંગાચાર્ય હતા, એમની એવી માન્યતા
હતી કે, એક સમયમાં બે ક્રિયાઓનો અનુભવ થાય છે. (૫) છઠા નિહવ પડુલૂક
હતા એમની એવી પણ માન્યતા હતી કે, જીવ, અજીવ અને નો જીવ આ રીતે ત્રણ
પ્રકારની રાશી છે. (૬) સાતમા નિહવ ગોષ્ઠમાહિલસ્થવિર હતા એમની એવી પણ
માન્યતા હતી કે, સ્પૃષ્ટ કર્મ હંમેશાં તેનાથી અળદ રહે છે.

જમાલિતુ વૃત્તાંત આ પ્રકારે છે—જમાલિ ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીની
બહેન સુદર્શનાના પુત્ર હતા. તેઓ ક્ષત્રિય હતા અને ક્ષત્રિયકુણ્ડપુરના
નિવાસી હતા. ભગવાન વીરપ્રભુની પુત્રી જે પ્રિયદર્શના હતી, તેના તેઓ

વાયકારણવાદરૂપ જૈનદર્શન, યદ્વા-ન્યાયયુક્ત માર્ગ સમ્યગ્દર્શનાદિરૂપ માર્ગ-મોક્ષમાર્ગ શ્રુત્વા પરિભ્રમ્યન્તિ-મોક્ષમાર્ગાત્ પ્રચ્યુતા ભવન્તિ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તાઃ—જમાલિપ્રમૃતયો નિહ્વાઃ ।

અથ કે તે જમાલિપ્રમૃતયઃ ? इत्युच्यते—जमालिप्रमृतयः सप्त प्रवचननिह्वाः—मिथ्यात्वाभिनिवेशाज्जिनोक्ततत्त्वापलापकास्त्यक्तसम्यग्दर्शना अभूवन् । तत्र जमालिः प्रथमः, स बहुमतः—बहुषु समवेपु रतः=सक्तः, प्रभूतसमयैः कार्योत्पत्तिर्भवति, नत्वेकेन समयेनेति प्ररूपयति ॥ १ ॥ तिष्यगुप्तो द्वितीयः—स जीवप्रदेशिकः—जीवः प्रदेश एव यस्य स जीवप्रदेशः, स एव जीवप्रदेशिकः, चरमप्रदेश एव जीव इति प्ररूपयति ॥२॥ तृतीय आपादः—स तु अव्यक्तिकः, अव्यक्तम्—अस्फुटं वस्तु

(નેયાઉયં મગ્ગં-નૈયાયિકં માર્ગ) પંચસમવાયકારણવાદરૂપ જૈનદર્શન કો, અથવા સમ્યગ્દર્શનાદિરૂપ ન્યાયયુક્ત માર્ગ-મોક્ષમાર્ગ કો (સોચ્ચા-શ્રુત્વા) સુનકર ખી ઉસમેં શ્રદ્ધાનહીં હોને સે (પરિભ્રમ્સઈ-પરિભ્રમ્યન્તિ) ઉસ મોક્ષમાર્ગ સે શ્રપ્ટ હો જાતે હેં ઇસલિયે શ્રદ્ધા કો ટુલભ થતલાઈ હૈ ।

इस विषय में दृष्टान्तस्वरूप जमालि निह्व आदि समझना चाहिये । जमालि आदि कौन हैं ? इस विषय को यहां प्रदर्शित किया जाता है । ये जमालि आदि सात व्यक्ति निह्व-प्रवचन को छिपाने वाले हुए हैं—मिथ्यात्व के अभिनिवेश से जिनोक्त तत्त्व के अपलापक-सम्यग्दर्शन से रहित हुए हैं । इनमें सर्वप्रथम जमालि हुए हैं, इनकी मान्यता यह है कि अनेकसमयों से द्रव्य की उत्पत्ति होती है, एक समय से नहीं ? द्वितीय निह्व तिष्यगुप्त हुए हैं, इनकी ऐसी मान्यता है कि जीवका एक अन्तिम प्रदेश ही जीवस्वरूप है २ । तृतीय निह्व आपाद हुए हैं, इनकी

મગ્ગ-નૈયાયિકં માર્ગ પાંચ સમવાયકારણવાદરૂપ જૈનદર્શનને અથવા સમ્યગ્દર્શનાદિરૂપ ન્યાયયુક્ત માર્ગ-મોક્ષ માર્ગને સૌએ સોચ્ચા-શ્રુત્વા સાંભળીને પણ એનામાં શ્રદ્ધા ન હોવાથી પરિભ્રમ્સઈ-પરિભ્રમ્યન્તિ એ મોક્ષમાર્ગથી શ્રપ્ટ થઈ ગય છે. આ માટે શ્રદ્ધાને ટુલંભ થતાવેલ છે.

આ વિષયમાં દૃષ્ટાંતસ્વરૂપ જમાલિ નિહ્વ આદિ સમજવા બેધએ. જમાલિ આદિ કેાણ હતા એ વિષયને આદિ પ્રદર્શિત કરવામાં આવે છે. એ જમાલિ આદિ સાત વ્યક્તિ પ્રવચનનિહ્વ છુપાવવાવાળા હતા. મિથ્યાત્વના અભિનિવેશથી છુપાવેલ તત્ત્વના અપલાપક-સમ્યગ્દર્શનથી રહિત હતા. એમાં સર્વ પ્રથમ જમાલિ હતા. એમની માન્યતા એ હતી કે અનેક સમયેથી દ્રવ્યની ઉત્પત્તિ થાય છે એક સમયથી નહીં. (૧) દ્વિતીય નિહ્વ તિષ્યગુપ્ત હતા, એમની એવી માન્યતા હતી કે, હવેના એક અંતિમ પ્રે જ હવે

સ્ય સઃ, સંયતાદિજ્ઞાને સંદિગ્ધવુદ્ધિઃ । ૩ । અશ્વમિત્રશ્ચતુર્થઃ સામુચ્છેદિકઃ, સ
ઉત્પાદાનન્તરમેવ વસ્તુનઃ સમુચ્છેદઃ—ચિનાશો ભવતીતિ પ્રરૂપયતિ । ૪ । ગંગાચાર્યઃ
પન્ચમો દ્વૈક્રિયઃ—સ એકસ્મિન્ સમયે ક્રિયાદ્વયાનુભવો ભવતીતિ પ્રરૂપયતિ । ૫ ।
પડુલૂકઃ પટ્ટસૈરાશિકઃ, સ જીવા-જીવ-નોજીવ-ભેદાત્ ત્રયો રાશયઃ સન્તીતિ
પ્રરૂપયતિ । ૬ । ગોષ્ઠઃ માહિલઃ સ્થવિરઃ સપ્તમોઽવદ્ધિકઃ સ ચ જીવેન સ્પૃષ્ઠં કર્મ
અવદ્ધં પ્રરૂપયતિ । ૭ ।

તત્ર જમાલેવૃત્તાન્તઃ પ્રોચ્યતે—

ક્ષત્રિયકુણ્ડપુરે ભગવતઃ શ્રીવીરવર્ધમાનસ્વામિનો ભગિન્યાઃ સુદર્શનાયાઃ પુત્રઃ ક્ષત્રિયા

એસી માન્યતા હૈ કિ સંયત આદિકા જ્ઞાન સદા સંદિગ્ધ રહતા હૈ, કૌન
સંયત હૈ કૌન નહીં इसका यथार्थ निश्चय नहीं हो सकता है, इस प्रकार
ये अव्यक्तवादी हैं ३ । चतुर्थ निहव-अश्वमित्र हैं, इनकी ऐसी मान्यता है
कि उत्पाद के अनन्तर ही वस्तु विनष्ट हो जाती है ४ । पंचम निहव
गंगाचार्य हैं, इनकी ऐसी मान्यता है कि एक समय में दो क्रियाओं
का अनुभव होता है ५ । छठवां निहव पडुलूक हैं, इनकी ऐसी मान्यता
है कि जीव अजीव एवं नोजीव, इस प्रकार तीन राशि हैं ६ । गोष्ठ
माहिल स्थविर सातवां निहव हैं, इनकी ऐसी मान्यता है कि जीव के
स्पृष्ट कर्म सदा उससे अवद्ध रहता है ७ ।

जमालि का वृत्तान्त इस प्रकार है—जमालि भगवान् वर्धमान
स्वामी की बहिन सुदर्शना के पुत्र थे । ये क्षत्रियकुण्डपुर का निवासी
क्षत्रिय थे । भगवान् वीर प्रभु की पुत्री जो प्रियदर्शना थी उसका

સ્વરૂપ છે. (૨) તૃતીય નિહવ આપાદ હતા એમની એવી માન્યતા હતી કે, સંયત
આદિતુ' જ્ઞાન સદા સંદિગ્ધ રહે છે. કેણુ સંયત છે ? કેણુ સંયત નથી ? એનો
યથાર્થ નિશ્ચય થઈ શકતો નથી. આ પ્રકારથી તેઓ અવ્યક્તવાદી હતા. (૩) ચતુર્થ
નિહવ અશ્વમિત્ર હતા એમની એવી માન્યતા હતી કે, ઉત્પાદના અનંતરજ વસ્તુનો
નાશ થઈ જાય છે. (૪) પંચમ નિહવ ગંગાચાર્ય હતા, એમની એવી માન્યતા
હતી કે, એક સમયમાં બે ક્રિયાઓનો અનુભવ થાય છે. (૫) છઠા નિહવ પડુલૂક
હતા એમની એવી પણ માન્યતા હતી કે, જીવ, અજીવ અને નો જીવ આ રીતે ત્રણ
પ્રકારની રાશી છે. (૬) સાતમા નિહવ ગોષ્ઠમાહિલસ્થવિર હતા એમની એવી પણ
માન્યતા હતી કે, સ્પૃષ્ટ કર્મ હંમેશાં તેનાથી અબદ્ધ રહે છે.

જમાલિતુ' વૃત્તાંત આ પ્રકારે છે—જમાલિ ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીની
બહેન સુદર્શનાના પુત્ર હતા. તેઓ ક્ષત્રિય હતા અને ક્ષત્રિયકુન્ડપુરના
નિવાસી હતા. ભગવાન વીરપ્રભુની પુત્રી જે પ્રિયદર્શના હતી, તેના તેઓ

जमालिरासीत् । श्रीवीरवर्धमानस्वामिनः पुत्री प्रियदर्शना जमालेः भार्याऽभवत् ।

एकदा कदाचित् भगवान् श्रोत्रोत्सर्धमानस्वामी तत्र क्षत्रियकुण्डपुरे समवसृतः । जमालिर्भार्या सह तं वन्दितुं समागतः । भगवद्देशनया जातवैराग्योऽसौ जमालिर्गृहमागत्य पित्रोरनुज्ञां गृहीत्वा पञ्चशतक्षत्रियकुमारैः सह प्रव्रज्यां गृहीतवान् । अयं भगवतः श्रोमहावीरस्य केवलज्ञानप्राप्त्यनन्तरं चतुर्दशे वर्षे प्रव्रजितः । तदा तस्य भार्या प्रियदर्शनाऽपि भगवतः श्रीवीरवर्धमानस्वामिनः समीपे स्त्रीसहस्रेण सह प्रव्रजिता । ततः पञ्चशतसंख्यकान् साधून् जमालिमुनये, तस्यै प्रियदर्शनासाध्व्यै च साध्वी-सहस्रं शिष्यतया भगवान् प्रददौ । अथ जमालिमुनिः श्रीवर्धमानस्वामिना सह विहरन् दुश्चरं तपस्तेपे, एकादशाङ्गानि चाधीतवान् ।

ये पति थे । एक दिन की बात है कि वीर श्रीवर्धमान स्वामी क्षत्रिय-कुण्डपुर में पधारे । जमालि अपनी पत्नी प्रियदर्शना के साथ उनको वंदना करने के लिये आये । भगवान् ने इनको धर्मदेशना दी । दिव्य धर्मदेशना का पान कर जमालि को वैराग्य जाग्रत हो गया । घर पर आकर इन्होंने अपने माता पिता से आज्ञा लेकर पांचसौ क्षत्रिय-कुमारों के साथ दीक्षा अंगीकार करली । उस समय भगवान् को केवल ज्ञान प्राप्त हुए को चौदह वर्ष व्यतीत हो चुके थे । पति को दीक्षित देखकर प्रियदर्शना ने भी एक हजार स्त्रियों के साथ दीक्षा अंगीकार करली । प्रभु ने पांचसौ मुनियों को जमालिमुनि की नेस-राय में करदिये, एवं एक हजार साध्वियों को प्रियदर्शना साध्वी की नेसराय में कर दी । पांचसौ जमालि के शिष्य और एक हजार साध्वियां प्रियदर्शना की शिष्याएँ हुई । जमालिमुनि ने श्री वर्धमान-

पति होता. એક સમયની વાત છે કે, શ્રી વીર વર્ધમાનસ્વામી દીક્ષા લીધા પછી ક્ષત્રિયકુન્ડપુરમાં પધાયો. જમાલિ પોતાની પત્ની પ્રિયદર્શનાની સાથે તેમને વંદના કરવા માટે આવ્યા. ભગવાને તેમને ધર્મદેશના આપી. દિવ્ય ધર્મ દેશનાનું પાન કરતાં જમાલિને વૈરાગ્ય જાગૃત થયો. ઘર આવી પોતાનાં માતાપિતાની આજ્ઞા લઈ તેમણે પાંચસો ક્ષત્રિય કુમારો સહિત દીક્ષા અંગીકાર કરી. આ સમયે ભગવાનને કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થયા ને ચૌદ વર્ષ વિતી ગયાં હતાં. પતિને દીક્ષિત થયેલા બેઠ પ્રિયદર્શનાએ પણ એક હજાર સ્ત્રીઓ સહિત દીક્ષા અંગીકાર કરી. પ્રભુએ પાંચસો મુનિઓને જમાલિ મુનિની નેસરાયમાં કરી લીધા. અને એક હજાર સાધ્વીઓને પ્રિયદર્શના સાધ્વીની નેસરાયમાં કરી લીધી. જમાલિના પાંચસો શિષ્ય થયા અને એક હજાર સાધ્વીઓ પ્રિયદર્શનાની શિષ્યા થઈ. જમાલિ મુનિએ શ્રી વર્ધમાન સ્વામીની

अथान्यदा जमालिमुनिर्भगवतः श्रीवीरवर्धमानस्वामिनं वन्दित्वा नमस्कृत्य कृताञ्जलिः सन् पप्रच्छ-भगवन् ! भवदाज्ञयाऽन्यत्र विहर्तुमिच्छामि ? तदा भगवता पृथग्विहारे जमालेर्लाभादर्शनात् मौनमवलम्बितम् । जमालिस्तु अप्रतिपिद्धमनुमतं भवतीति मत्वा भगवन्तं वन्दित्वा नमस्कृत्य पञ्चशतशिष्यैः सह तदन्तिकात् प्रतिनिष्क्रामति ।

अथाऽसौ पञ्चशतैरनगारैः सह ग्रामानुग्रामं विहरन् श्रावस्तीनगर्यां कोष्ठकनामके उद्याने समागतः । तत्र यथाप्रतिरूपमवग्रहं गृहीत्वा संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन् विहरति ।

स्वामी के साथ विहार करते २ खूब तो तपश्चर्या की और ग्यारह अंगों का अध्ययन भी कर लिया ।

किसी समय जमालि मुनि ने भगवान् श्री वर्धमानस्वामी को दोनों हाथ जोड़कर वन्दना एवं नमस्कार कर के पूछा कि हे भगवान् ! आपकी आज्ञा से मैं दूसरी जगह विहार करना चाहता हूँ । जमालि की बात सुनकर भगवान् ने इस अभिप्राय से कि इनका पृथग् विहार लाभकारी नहीं है, उनको कुछ भी उत्तर नहीं दिया किन्तु मौन रहे । भगवान् ने जब जमालि से कुछ भी नहीं कहा तो उन्होंने ने यह समझकर कि “अप्रतिपिद्धं अनुमतम्” अप्रतिपिद्ध अनुमत होता है, वहाँ से प्रभु को वन्दना नमस्कार करके अपने पांचसौ शिष्यों को साथ लेकर विहार कर दिया ।

पांचसो शिष्यों के साथ ग्रामानुग्राम विहार करते हुए वे श्रावस्ती

साथे विहार करतां करतां भूष तपश्चर्या करी अने अग्यार अंगोने अभ्यास पबु करी दीधो.

कोई एक समये जमालिमुनिअे भगवान् श्री वर्धमान स्वामीने जे हाथ जोडीने वंदना नमस्कार करीने पृथुं के, हे भगवन्त ! आपनी आज्ञाथी हुं भीअ जग्याअे विहार करवा छिछुं छुं. जमालिनी आ बात सांलगिने भगवान् जेमनो जुहो विहार लाभकारी नथी. जेवा अलिप्रायधी मौन रखा अने उत्तर न आप्यो. भगवाने ज्यारे जमालिने कांछि कछुं नडीं त्यारे तेभजे जेम समअ दीधुं के, “अप्रतिपिद्धं अनुमतं भवति” मौन जे अनुमती छे, जेम समअने त्यांथी प्रभुने वंदना नमस्कार करीने पोताना पांचसो शिष्यो साथे प्रभुथी अवग विहार करी दीधो.

पांचसो शिष्यानी साथे ग्रामानुग्राम विहार करतां करतां तेअो श्रावस्ती

ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरोऽन्यदा कदाचित् पूर्वानुपूर्व्याचरन् यावत् सुखंसुखेन विहरन् यत्रैव चम्पानगरी यत्रैव पूर्णभद्रनामकमुद्यानं तत्रैवोपागतः, उपागत्य यथाप्रतिरूपमवग्रहं गृहीत्वा संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन् विहरति।

ततः खलु तस्य जमालेरनगारस्य शरीरेऽन्तर्प्रान्तरूक्षतुच्छाहारैरन्यदा कदाचित् विपुलरोगातङ्कः प्रादुर्भूतः। तदा स उपवेष्टुमशक्तः सन्ननगारान् ग्राह-मम संस्तारकः शीघ्रं क्रियताम्। ते मुनयः संस्तारकं कर्तुं प्रवृत्ताः। जमालिस्तान् पुनः पुनः पृच्छति-संस्तारकः कृतो नो वा भवद्भिः? त ऊचुः-संस्तारकः कृतो

नगरी के कोष्ठक नामक उद्यान में आये। वहां वनपाल से वसति की आज्ञा ग्रहण कर संयम एवं तप से अपनी आत्मा को भवित करते हुए विचरने लगे।

श्रमण भगवान् महावीर ने भी कोई समय पूर्वानुपूर्वी से ग्रामानुग्राम विहार करते हुए ये चंपानगरी के पूर्णभद्रनामक उद्यान में पधारे और यथाप्रतिरूप अवग्रह (वसति की आज्ञा) ग्रहण कर संयम एवं तप से आत्मा को भवित करते हुए विचरने लगे।

इधर जमालि के शरीर में अन्तर्प्रान्त रूक्ष एवं तुच्छ आहार के लेने से अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो गये। इससे ये बैठने में भी अशक्त बन गये। इस स्थिति में इन्होंने अपने शिष्यों से कहा-मेरे लिए संस्तारक शीघ्र कर दो। मुनियों ने संस्तारक करना प्रारंभ कर दिया।

नगरीना कोष्ठक नामना आगमां आवी पडोऽन्या-त्यां वनपाल पासेथी आज्ञा लधने उतथां. अने ते स्थणे संयम अने तपथी पोतानी आत्माने लावित करतां करतां विचरवा लाग्या.

श्रमण भगवान् महावीर पणु कोष्ठक संयम पूर्वानुपूर्वींथी ग्रामानुग्राम विहार करता करता चंपानगरीना पूर्णभद्र नामना आगमां पधार्या. अने यथाप्रतिरूप अवग्रह (वसतीनी आज्ञा) लधने संयम अने तपथी आत्माने लावित करतां करतां विचरवा लाग्या.

आ तरक्ष जमालिना शरीरमां अन्त, प्रान्त, रूक्ष तेमज तुच्छ आहार लेवाथी अनेक प्रकारना रोगो उत्पन्न थया, आ रोगोना कारखे तेओ जेसवामां पणु अशक्त जनी गया। आ स्थितिमां तेमखे पोतानी शिष्योने कहुं के, भारे माटेजवही संस्तारक (पयारी) करी हो. मुनियो संस्तारकनी तैयारी करवा लाग्या जमालिओ तेमने वारंवार पूछवा भाड्युं के, संस्तारक क - नही?

નાસ્તિ, કિં તુ ક્રિયતે, પદ્યુક્તે સતિ સ જમાલિર્મિથ્યાત્વમોહનીયોદયાત્ સમ્ય-
ક્ષપરિષ્રદ્ધઃ સન્ વ્યચિન્તયત્-ક્રિયમાણં કૃતમિતિ જિનોક્તં સત્યં ન ભવિતુમર્હતિ,
યતોઽયં સંસ્તારકઃ ક્રિયમાણો ન કૃતઃ સંસ્તીર્યમાણોઽપિ ન સંસ્તૃતઃ. ઇત્યુચ્યતે ।
इति मनसि विचिन्त्य तत्र सर्वान् मुनीनाहूय जमालिः प्राह—यत् क्रियमाणं तत्
कृतम्, यच्चलत् तच्चलितम्, यदुदीर्यमाणं तदुदीरितम्, इत्यादि श्रीमहावीरस्वा-
मिना यद् भाषितं तत् खलु मिथ्या, क्रियमाणे संस्तारके शयनरूपार्थसाधकत्वा-
भावेन कृतत्वाभावात् ।

जमालि ने उनसे चार २ पूछना शुरू किया कि संस्तारक किया या नहीं ?
उन्होंने ने कहा संस्तारक अभी नहीं किया है कर रहे हैं । इस
प्रकार जब उन्होंने ने कहा तब मिथ्यात्वमोहनीय के उदय से
सम्यक्त्व से पतित होकर जमालि ने विचार किया कि “ क्रियमाणं
कृतम् ” जो किया जा रहा है वह “ किया गया ” ऐसा जो जिन
भगवान ने कहा है वह सत्य नहीं हो सकता है, क्यों कि संस्तारक
क्रियमाण है वह “ कृतः ” किया गया ऐसा नहीं कहा जा सकता है ।
उसी तरह यह तो अभी “ संस्तीर्यमाण ” है विछाया जा रहा है, इसे
“ संस्तृतः ” विछ गया है, ऐसे कैसे कह सकते हैं । इस प्रकार विचार
कर उन्होंने ने अपने समस्त शिष्यों को बुलाकर कहा कि देखो भगवान्
वीर प्रभु जो ऐसा कहते हैं कि “ क्रियमाणं कृतम् ” “ यच्चलत् तत्
चलितम् ” “ यदुदीर्यमाणं तदुदीरितम् ” जो क्रियमाण है वह
किया गया है, जो चल रहा है वह चल चुका है, जो उदय में आ

શિષ્યોએ કહ્યું કે, સંસ્તારક હજી કરેલ નથી પરંતુ કરીએ છીએ આ પ્રકારે
ન્યારે શિષ્યોએ કહ્યું, ત્યારે મિથ્યાત્વ મોહનીયતા ઉદયથી સમ્યક્ત્વથી પતિત
થઈને જમાલિએ વિચાર કર્યો કે, “ ક્રિયમાણં કૃત ” ને કરવામાં આવે છે તે
“ થઈ ચૂક્યું ” એવું ને જીન ભગવાને કહ્યું છે તે સત્ય કરતું નથી. કેમ કે
સંસ્તારક ક્રિયમાણ છે તે “ કૃતઃ ” થઈ ચૂક્યું છે એમ કહી શકાય નહિ.
આ પ્રમાણે આ ને હમણાં “ સંસ્તીર્યમાણ ” છે—ખીછાવવામાં આવે છે એને
ખીછાવી દીધલ છે એમ કેમ કહી શકાય ? આ પ્રમાણે વિચાર કરીને તેમણે
પોતાના સમસ્ત શિષ્યોને બોલાવીને કહ્યું કે, જુઓ ભગવાન વીર પ્રભુ ને એમ
કહે છે કે, “ ક્રિયમાણં કૃતમ્ ” “ યચ્ચલત્ તત્ ચલિતમ્ ” “ યદુદીર્યમાણં તદુ-
દીરિતમ્ ” ને ક્રિયમાણ છે તે થઈ ચૂક્યું છે, ને ચાલી રહ્યું છે, તે ચાલી

તતઃ સ્વલુ શ્રમણો ભગવાન્ મહાવીરોઽન્યદા કદાચિત્ પૂર્વાનુપૂર્વાચરન્ યાવત્ સુલંસુલેન વિહરન્ યત્રૈવ ચમ્પાનગરી યત્રૈવ પૂર્ણભદ્રનામકમુદ્યાનં તત્રૈવોપાગતઃ, ઉપાગત્ય યથાપતિરૂપમવગ્રહં ગૃહીત્વા સંયમેન તપસાઽન્તિમાનં ભાવયન્ વિહરતિ ।

તતઃ સ્વલુ તસ્ય જમાલેરનગારસ્ય શરીરેઽન્તપ્રાન્તરૂક્ષતુચ્છાહારૈરન્યદા કદાચિત્ વિપુલરોગાતઃ પ્રાદુર્ભૂતઃ । તદા સ ઉપવેદ્યુમશક્તઃસન્નનગારાન્ પ્રાહ-મમ સંસ્તારકઃ શીઘ્રં ક્રિયતામ્ । તે મુનયઃ સંસ્તારકં કર્તું મટ્ટતાઃ । જમાલિસ્તાન્ પુનઃ પુનઃ પૃચ્છતિ-સંસ્તારકઃ કૃતો નો વા ભવદ્વિઃ ? ત ઋતુઃ-સંસ્તારકઃ કૃતો

નગરી કે કોષ્ઠક નામક ઉદ્યાન મેં આયે । વહાં વનપાલ સે વસતિ કી આજ્ઞા ગ્રહણ કર સંયમ एवं તપ સે અપની આત્મા કો ભવિત કરતે હુણ વિચરને લગે ।

શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર ને બી કોઈ સમય પૂર્વાનુપૂર્વી સે ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતે હુણ વે ચંપાનગરી કે પૂર્ણભદ્રનામક ઉદ્યાન મેં પધારે ઔર યથાપતિરૂપ અવગ્રહ (વસતિ કી આજ્ઞા) ગ્રહણ કર સંયમ एवं તપ સે આત્મા કો ભવિત કરતે હુણ વિચરને લગે ।

ઈધર જમાલિ કે શરીર મેં અન્ત પ્રાન્ત રૂક્ષ एवं તુચ્છ આહાર કે છેને સે અનેક પ્રકાર કે રોગ ઉત્પન્ન હો ગયે । ઇસસે યે બેઠને મેં બી અશક્ત વન ગયે । ઇસ સ્થિતિ મેં ઇન્હોં ને અપને શિષ્યોં સે કહા-મેરે લિણ સંસ્તારક શીઘ્ર કર દો । મુનિયોં ને સંસ્તારક કરના પ્રારંભ કર દિયા ।

નગરીના કોઠક નામના બાગમાં આવી પહોંચ્યા ત્યાં વનપાલ પાસેથી આજ્ઞા લઈને ઉતર્યા. અને તે સ્થળે સંયમ અને તપથી પોતાની આત્માને ભવિત કરતાં કરતાં વિચરવા લાગ્યા.

શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પણ કોઈ સમય પૂર્વાનુપૂર્વીથી ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા કરતા ચંપાનગરીના પૂર્ણભદ્ર નામના બાગમાં પધાર્યા. અને યથાપતિરૂપ અવગ્રહ (વસતિની આજ્ઞા) લઈને સંયમ અને તપથી આત્માને ભવિત કરતાં કરતાં વિચરવા લાગ્યા.

આ તરફ જમાલિના શરીરમાં અન્ત, પ્રાન્ત, રૂક્ષ તેમજ તુચ્છ આહાર લેવાથી અનેક પ્રકારના રોગો ઉત્પન્ન થયા, આ રોગોના કારણે તેઓ ખેસવામાં પણ અશક્ત બની ગયા. આ સ્થિતિમાં તેમણે પોતાના શિષ્યોને કહ્યું કે, મારે માટે જલ્દી સંસ્તારક (પચારી) કરી દો. મુનિઓ સંસ્તારકની તૈયારી કરવા લાગ્યા જમાલિએ તેમને વારંવાર પૂછવા માડ્યું કે, સંસ્તારક કયો કે નહીં ?

હત્યાદિ; તત્સર્વમસંવદ્ધમેવેતિ । एवं मिथ्यात्वमोहनीयोदयात् जमालिमुन्मार्गगतं
જાતા સ્થવિરા અવદન્-જમાલે । भगवत आशयं न जानासि; भगवान् आप्तः,
વિગતદોષસત્યવક્તા; તન્મતમનેકાન્તવાદાત્મકમ્, ; एकोपि प्रदार्थः अपेक्षाभेदेन
અનેકરૂપો ભવતિ; यथा एक एव पुरुषः अपेक्षाभेदेन जामाता इयालकः पुत्रः
પિતા ચ । तथैव प्रकृतेऽपि क्रियमाणत्वेपि संस्तारके कृतत्वं संभवति । पटस्य
ક્રિયમાણતાયાં 'કૃતઃ પટઃ' હત્યાદિવત્ । ननु कथं क्रियमाणं पटादिकं कृतं स्यादिति
ચેત્ત્રોચ્યતે-પટસ્યોત્પદ્યમાનતાકાલે પ્રયમતન્તુપ્રવેશે ઉત્પદ્યમાન એવ- પટ ઉત્પન્નો

—'હત્યાદિ' સો યહ શ્રદ્ધેય નહીં-હૈ । इस प्रकार भाग्यदोष से
જમાલિ કો વિપરીત માર્ગ મેં જાતે હુણ્ દેવકર-સ્થવિરા ને કહા-હે
જમાલિ ! आप भगवान के आशय को नहीं जानते हो । भगवान सर्व
દોષ-રહિત-યથાર્થવક્તા હૈ । भगवान का मत अनेकान्तरूप है । एक
હી પદાર્થ અપેક્ષા-ભેદ સે અનેકરૂપ હોતા હૈ । जैसे एक ही पुरुष शशुर
કી અપેક્ષા સે જામાતા કહલાતા હૈ, वहनोई की अपेक्षा साला कहलाता है
પિતા કી અપેક્ષા સે પુત્ર કહલાતા હૈ, पुत्र की अपेक्षा से पिता कह-
लाता है । उसी प्रकार प्रकृत में आपका विस्तर हो भी रहा है, हो भी
गया है, ऐसा कह सकते हैं । जैसे कि पट की क्रियमाणता में भी
કૃતત્વ કા વ્યવહાર હોતા હૈ उसी तरह । पुनः प्रश्न करता है कि जो
ક્રિયમાણ હૈ वह कृत कैसे हो सकता है ? इसका उत्तर देते हैं-पट के
ઉત્પત્તિકાલ મેં પ્રથમ તંતુ કે પ્રવેશ સમય મેં भी वह उत्पन्न होता ही है

તે શ્રદ્ધા-કરૂણા-શોભ્ય નથી. આ પ્રમાણે ભાગ્યદોષથી વિપરીત-માર્ગે જતા
જમાલીને ભેઈ તે સ્થવિરોએ તેઓને કહ્યું કે-હે જમાલિ ! तमे भगवानना
આશયને બણુતા નથી. भगवान सर्वदोष रहित सायु फोलवावाणा છે.
ભગવાનનો મત અનેકાન્ત રૂપ છે. એક જ પદાર્થ અપેક્ષા ભેદથી અનેકરૂપ થાય
છે. જેમ એક જ પુરુષ સસરાની આગળ જમાઈ કહેવાય છે. અનેવીની આગળ સાળો
કહેવાય છે. અને પિતા આગળ પુત્ર કહેવાય છે. અને તે જ પુરુષ પુત્ર આગળ
પિતા કહેવાય છે. એવી જ રીતે પ્રસ્તુતમાં આપની યથાસ્રી યદ્, રૂઢી છે. યદ્ પછુ
ગદ્ છે. એવું કહેવામાં આવે છે. જેવી રીતે, પદ્મની, ક્રિયમાણતામાં કૃતત્વનો
વ્યવહાર થાય છે. તેવી જ રીતે.

...કરીથી પ્રશ્ન કરે છે કે-જે ક્રિયમાણ છે તે કૃત્ કેવી રીતે થઈ શકે ?
એનો ઉત્તર આપતાં કહે છે કે-પદ્મ-ઉત્પત્તિકાળમાં પ્રથમ તન્તુના પ્રવેશ
અથવા પટ ને ઉત્પન્ન થાય છે. કેમકે પ્રથમ તન્તુપ્રવેશ કાળથી જ " પટ

કૃતે સંસ્તારકે શયનાર્થક્રિયાકારિત્વં વિધતે, કરણસમયે તુ નાસ્તિ તાદૃશી અર્થક્રિયા, અતઃ ક્રિયમાણં કૃતમિતિ વ્યપદેશઃ કથં સ્યાત્ ? । કિંચ-ક્રિયમાણમિતિ વર્તમાનવ્યપદેશઃ, કૃતમિતિ ચ ભૂતવ્યપદેશઃ, વર્તમાનત્વં ભૂતત્વં ચ પરસ્પરવિરુદ્ધમિતિ પરસ્પરવિરુદ્ધયોસ્તયોરેકતા ન સ્યાત્, વર્તમાનધ્વંસપ્રતિયોગિત્વસ્ય ભૂતત્વાદિતિ મહાવીરસ્વામિના યત્ પ્રતિપાદિતમ્-“ કરેમાણે કઢે ચલમાણે ચલિય ”

રહા હૈ વહ ઉદય મેં આચુકા હૈ ” સો વહ સય મિથ્યા હૈ, કારણ કિ ક્રિયમાણ સંસ્તારક મેં શયનરૂપ અર્થક્રિયા કે પ્રતિ સાધકત્વ કા અભાવ હોને સે વહાં કૃતત્વ નહીં આ સકના હૈ ।

સંસ્તારક (વિસ્તર) કરને કે યાદ હી ઉસમેં શયનાદિરૂપ અર્થ ક્રિયાકારિતા આતી હૈ, પરંતુ સંસ્તારક કરને કે સમય મેં ઉસમેં ઉસ પ્રકાર કી અર્થક્રિયાકારિતા નહીં હૈ, ફિર “ ક્રિયમાણં કૃતમ્ ”-ક્રિયમાણ કૃત હોતા હૈ-યહ વ્યપદેશ કૈસે હો સકતા હૈ ? ।

ઑર ભી-“ ક્રિયમાણમ્ ” યહ વર્તમાન કાલ કા કથન હૈ ઑર “ કૃતમ્ ” યહ ભૂતવ્યપદેશ હૈ । ભૂત ઑર વર્તમાન પરસ્પર વિરુદ્ધ હૈ, ઑર પરસ્પર વિરુદ્ધ દો પદાર્થો કી એકતા નહીં હો સકતી હૈ, ક્યોં કિ વર્તમાન કાલ મેં વિચમાન જો ધ્વંસ ઉસકે વિરોધી કા નામ હૈ ભૂત, એતાદૃશ ભૂત ઑર વર્તમાન યે દોનોં એક અધિકરણ મેં નહીં રહ સકતે હૈ । ફિર જો મહાવીર સ્વામી ને કહા હૈ કિ ક્રિયમાણં કૃતમ્, ચલત્ ચલિતમ્

ચુકયું છે, જે ઉદયમાં આવી રહેલ છે તે ઉદયમાં આવી ચુકેલ છે, એ બધું સઘળું મિથ્યા છે. અરણ્ય કે, કિયમાણ સંસ્તારકમાં શયનરૂપ અર્થ ક્રિયામાં સાધકત્વના અભાવથી ત્યાં કરેલ છે એમ આવી શકતું નથી.

સંસ્તારક (પથારી) ક્યાં પછી જ તેમાં શયનાદિરૂપ “ ક્રિયાકારિતા ” આવે છે. પરંતુ સંસ્તારક કરતી વખતે તો તેમાં તેવા પ્રકારની ‘ અર્થક્રિયા કારિતા ’ આવતી નથી. તો પછી ક્રિયમાણં કૃતમ્-કિયમાણું કૃત થાય છે, એવો વ્યવહાર કેવી રીતે થઈ શકે ?

વળી “ ક્રિયમાણમ્ ” એ વર્તમાનકાળનું કથન છે. અને “ કૃતમ્ ” એ ભૂતકાળનો વ્યવહાર છે. ભૂત (કાળ) અને વર્તમાન એ બન્ને પરસ્પર વિરુદ્ધ અર્થવાળાં છે. એટલે પરસ્પર વિરુદ્ધ એવા બે પદાર્થોની એકતા થઈ શકતી નથી. કેમકે વર્તમાનકાળથી વિરુદ્ધ ભૂત (કાળ) છે, એવા પ્રકારનો ભૂત અને વર્તમાન એ બન્ને એકે અધિકરણમાં રહી શકતા નથી. તો પછી મહાવીર સ્વામીએ જે કહ્યું છે કે, “ ક્રિયમાણં કૃતમ્ ” “ ચલત્ ચલિતમ્ ”-વિગેરે

પ્રવેશે પટસ્યોત્પત્તિરિતિ પ્રથમસમયાદારમ્ય કિન્નિત્તુ કાર્ય સર્વેરપિ ક્ષણેઃ કૃતમિતિ મન્તવ્યમ્ । યદિ પ્રથમક્રિયા નોત્પન્નઃ પટસ્તદા ઉત્તરક્રિયાપિ નોત્પન્નઃ સ્યાદિતિ સર્વદૈવ પટાનુત્પત્તિપ્રસંગઃ, સ ચ ન કસ્યાપિ ઇષ્ટઃ, અતઃ પ્રથમતન્તુપ્રવેશકાલે એવ કિન્નિદુત્પન્નપટસ્ય યાવાન્ અંશો નોત્પન્નઃ સ યવાંશઃ ઉત્તરક્રિયા ઉત્પાદ્યતે યદિ પુનરુત્પદ્યેત તદા એકદેશેનૈવ ઉત્પાદનં ક્રિયાયા ઇતિ સ્વીકર્તવ્યમ્ । યદિ પ્રથમા-
શોત્પાદનનિરપેક્ષા દ્વિતીયાદિક્રિયા તદૈવ દ્વિતીયા ફલવતી સ્યાત્, નાન્યથા, તતથ યથા ઉત્પદ્યમાન એવ પટ ઉત્પન્નઃ, તથા ક્રિયમાણમેવ સંસ્તારકં કૃતમિતિ-

અન્તિમ તન્તુ કે પ્રવેશ હોને પર પટ કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ હસલિયે 'પટ ઉત્પન્નઃ' -એસા વ્યવહાર હોતા હૈ, અતઃ એસા માનો કિ પ્રથમ સમય સે લેકર કુછર કાર્ય સભી ક્ષણોં મેં હોતા હૈ । યદિ કદોચિત્ પ્રથમ ક્રિયા સે પટ ઉત્પન્ન નહીં છુઆ તો દ્વિતીય સે ખી ઉત્પન્ન નહીં હોગા, તૃતીય સે ખી નહીં હોગા, હસ પ્રકાર અન્તિમ ક્રિયા સે ખી નહીં હોગા તો પટ કી કભી ખી ઉત્પત્તિ નહીં હોગી । પરન્તુ યહ કિસી કો ખી ઇષ્ટ નહીં હૈ । અતઃ પ્રથમતન્તુપ્રવેશકાલ મેં ખી યોડા પટ ઉત્પન્ન છુઆ, ઓર જો અંશ અનુત્પન્ન હૈ વહ દ્વિતીયાદિ ક્ષણોં મેં હોતા હૈ । હસ પ્રકાર યહ સિદ્ધાન્ત હોતા હૈ કિ ક્રિયા કો એક દેશ સે હી ઉત્પાદકત્વ હૈ, ઓર યહ આપકો ખી માનના પડેગા । યદિ પ્રથમ અંશ કે ઉત્પાદન સે નિરપેક્ષ દ્વિતીય ક્રિયા કો માનોગે તખી દ્વિતીયાદિ ક્રિયાયે સાર્વક હોંગી, અન્યથા નહીં । તય જૈસે પ્રથમ ક્રિયા સે ઉત્પન્ન હોતે છુપ પટ કી ઉત્પત્તિ દ્વિતીયાદિ ક્રિયા સે હોતી હૈ ડસી પ્રકાર

તન્તુના પ્રવેશ થતાની સાથે જ પટની ઉત્પત્તિ થાય છે. એટલા માટે "પટઃ ઉત્પન્નઃ" એવો વ્યવહાર થાય છે. એટલે એવું માનવું બોધ્યે કે પ્રથમ સમયથી લઇને દરેક ક્ષણે કંઈક કંઈક કાર્ય થાય છે જ. બે કદાચ પ્રથમ ક્રિયાથી પટ ઉત્પન્ન ન થયું તો બીજીથી પણ ઉત્પન્ન થયે. નહીં. અને ત્રીજીથી પણ ઉત્પન્ન થયે નહિ. તેવી જ રીતે અન્તિમ ક્રિયાથી પણ થયે નહીં, અને એ રીતે તો પટની કોઈ રીતે ઉત્પત્તિ થયે જ નહીં. પરંતુ એ વાત કોઈ માની શકે તેમ નથી. એટલે પ્રથમતન્તુપ્રવેશકાળમાં પણ પટનો થોડો ભાગ ઉત્પન્ન થયો, અને બે અંશ ઉત્પન્ન નથી થયો, તે બીજી ત્રીજી વિગેરે ક્ષણોમાં થાય છે. આ રીતે એ વાત સિદ્ધ થાય છે કે ક્રિયાના એક દેશથી જ ઉત્પાદ-
કત્વ છે. અને એ વાત તમારે પણ માનવી પડયે. બે પ્રથમ અંશના ઉત્પાદનથી નિરપેક્ષ દ્વિતીય ક્રિયાને માનશે ત્યારે જ દ્વિતીયાદિક્રિયાઓ સાર્વક થશે. અન્ય રીતે નહીં. તો જેવી રીતે પ્રથમ ક્રિયાથી ઉત્પન્ન થતા પટની ઉત્પત્તિ દ્વિતીયાદિ

મન્વતિ, ઉત્પન્નમાનતા ચ પટસ્ય પ્રથમતન્તુપ્રવેશકાન્તદારમ્બ્યેવ મન્વતિ તદૈવ 'પટ ઉત્પન્ન'તે
 इति व्यवहारदर्शनात् । उत्पन्नत्वमपि तस्य पटस्य तत्काले एव, तथाहि-उत्पत्ति-
 क्रियाकाले-प्रथमतन्तुप्रवेशे एवासौ उत्पन्नोऽभूत्, अन्यथा उत्पत्तिक्रियाकाले यदि
 तस्य पटस्योत्पत्तिर्न स्वीक्रियेत तदा प्रथमक्रिया निरर्थिका स्यात्, कार्यकरणमेव
 धर्मः क्रियायाः । यदि प्रथमक्रिया उत्पत्तिरूपं कार्यं न कुर्यात् तदा सा निरर्थिकैव
 स्यात्, उत्पाद्योत्पादनमेव क्रियाया धर्मः । एवं यथा प्रथमक्षणे पटो नोत्पन्नस्तथा
 द्वितीयक्षणेऽपि नोत्पन्न एव, तृतीयादावपि क्षणे नोत्पन्न इति अन्तिमक्रिययापि अनु-
 त्पन्न एव स्यात्, युक्तैः सर्वत्र समानत्वात् । यदा तु प्रथमादिक्रियया न किमपि
 फलमुत्पादितं तदा अन्त्यया फलं स्यादिति मत्पाशामात्रमेव, दृश्यते चान्त्यतन्तु'

કયોં કિ પ્રથમતંતુપ્રવેશ-કાલ સે હી 'પટ ઉત્પન્ન' હોતા હૈ' ऐसा
 व्यवहार देखने में आता है । तथा उत्पन्नत्व भी उस पट में उस काल
 से ही है, कयों कि उत्पत्तिक्रियाकाल में प्रथम तन्तु के प्रवेश होने पर
 ही पट उत्पन्न हो गया, यदि उस पट की उत्पत्ति स्वीकार नहीं करें तो
 वह प्रथम क्रिया निरर्थक हो जायगी, कारण कि कार्योत्पाद ही क्रिया
 का धर्म है । यदि ऐसा मानें कि प्रथम क्षण में पट उत्पन्न नहीं हुआ
 तो इसी तरह द्वितीय क्षण में भी उत्पन्न नहीं होगा, तृतीय क्षण में
 भी उत्पन्न नहीं होगा, इस तरह से अन्तिम क्रिया तक पट की उत्पत्ति
 नहीं होगी, कयों कि युक्ति सर्वत्र समान है ।

‘यदि प्रथम क्रिया से कुछ भी फल नहीं हुआ तो अन्तिम क्रियासे
 भी उत्पादक फल का होना असंभव ही है, परन्तु देखने में आता है कि

ઉત્પન્ન થાય છે" એવો વ્યવહાર જોવામાં આવે છે. તથા ઉત્પન્ન થવાપણું
 પણ તે પટમાં તે કાળથી જ છે, કેમકે ઉત્પત્તિક્રિયાકાળમાં પ્રથમતન્તુના પ્રવેશ
 થતાની સાથે જ પટ ઉત્પન્ન થઈ ગયું, જો તે પટની ઉત્પત્તિનો સ્વીકાર ન
 કરીએ તો તે પ્રથમક્રિયા નિરર્થક થઈ જશે. કારણ કે કાર્યની ઉત્પત્તિ જ
 ક્રિયાનો ધર્મ છે. કહાય જો એમ માનીએ કે પ્રથમ ક્ષણમાં પટ ઉત્પન્ન થયું
 નથી. તો એવી જ રીતે બીજા ક્ષણમાં પણ ઉત્પન્ન નહિ થાય, તેમ જ ત્રીજા
 ક્ષણમાં પણ ઉત્પન્ન થશે નહીં. એવી જ રીતે અંતિમક્રિયા સુધી પટની ઉત્પત્તિ
 થશે નહીં, કેમકે ક્રિયા સર્વત્ર એકસરખી હોય છે.

જો પ્રથમ ક્રિયાથી કંઈ પણ ફલ ન થયું તો અન્તિમ ક્રિયાથી પણ
 ઉત્પાદક ફલનું થવું અસંભવ જ છે. પરંતુ જોવામાં આવે છે કે અન્તિમ

અથ યસ્મિન્નેવ સમયે ઘટાદિકાર્ય પ્રારમ્ભ્યતે, તસ્મિન્નેવ સમયે નિષ્પન્નતે, અતો નિષ્પન્નમેવ તત્ ક્રિયતે-ઇતિ ચેન્નૈવમ્, યસ્માત્ ઘટાદિકાર્યાણામુત્પદ્યમાના-નામસંન્ધેયસમયરૂપો દીર્ઘ एव નિર્વર્તનક્રિયાકાલો દૃશ્યતે, અતો ન યસ્મિન્નેવ

-અવસ્થા મેં અવિદ્યમાન રહતા હૈ, કુંભકારાદિક કે વ્યાપાર કે વાદ હી વહ ઉત્પન્ન હુઆ માના જાતા હૈ । ઇસલિયે જો અકૃત હોતા હૈ વહી ક્રિયા જાતા હૈ કૃત નહીં ક્રિયા જાતા, એસા માનના ચાહિયે । વહ તીસરા પક્ષ હૈ ।

યદિ કોઈ “કૃતં ક્રિયતે” ઇસ વ્યવહાર કો સત્ય સાવિત કરને કે લિયે એસા કહે કિ-જિસ સમય મેં ઘટાદિક કાર્ય બનના પ્રારંભ હોતા હૈ વહ ઉસી સમય મેં નિષ્પન્ન હો જાતા હૈ ઇસલિયે જવ નિષ્પન્ન હી ઘટ ક્રિયા જાતા હૈ તય “કૃતમેવ ક્રિયતે” ઇસ પ્રકાર કે વ્યવહાર મેં કૌનસી યાચા આતી હૈ ? સો એસા કહના બી ઠીક નહીં હૈ, કયોં કિ ઉત્પદ્યમાન ઘટાદિક કાર્યોં કી ઉત્પત્તિરૂપ ક્રિયા કા વહ સમય અસં-ખ્યાતસમયરૂપ ઘટુત ભારી કાલ હૈ । એસા નહીં હૈ કિ જિસ સમય ઘટ બનના પ્રારંભ હોતા હૈ વહ ઉસી સમય નિષ્પન્ન હો જાતા હૈ । ઇસકે બનને મેં તો ઘટુત સમય લગતા હૈ । મિટ્ટી કા લાના, ઉસકા પિંડ બનાના, ઉસે ચક્ર પર રલ્લના શિવક આદિ પર્યાય મેં ઉસે પરિણમિત કરના, ઇસ પ્રકાર ઘટ કી ઉત્પત્તિ હોને મેં ઘટુત અધિક સમય લગ જાતા હૈ,

અવસ્થામાં ઘટ તરીકે તો અવિદ્યમાન રહે છે. કુંભકારાદિકના વ્યાપાર બાદ જ તે ઉત્પન્ન થયેલ માનવામાં આવે છે. આ માટે જે અકૃત હોય છે તેજ કરવામાં આવે છે. કૃત નથી કરાતું એવું માનવું બોધ્યું. આ ત્રીજો મુદ્દો છે. ॥ ૩ ॥

જો કોઈ “કૃતં ક્રિયતે” આ વ્યવહારને સાચો સાબીત કરવા માટે એવું કહે કે જે સમયમાં ઘટાદિક બનાવવાના કાર્યનો પ્રારંભ થાય છે તે એ સમયમાં પુરું થાય છે માટે બ્યારે નિષ્પન્ન જ ઘટ કરવામાં આવે છે. ત્યારે “ક્રિયતે” આ પ્રકારના વ્યવહારમાં કઈ બાધા આવે છે ? તેથી એમ કહેવું એ યજ્ઞ ઠીક નથી. કેમકે, ઉત્પદ્યમાન ઘટાદિક કાર્યોની ઉત્પત્તિરૂપ ક્રિયાનો તે સમય અસં-ખ્યાત સમયરૂપ ઘણો ભારે કાળ છે. એવું નથી કે, જે સમયે ઘટ બનવાનો પ્રારંભ થાય છે તે તેજ સમયે નિષ્પન્ન થઈ જાય છે. તેના બનવામાં તો ઘણો સમય લાગે છે. માટીને લાવવી, તેને કચરીને તેનો પિંડ બનાવવો, તે પછી તેને ચાકડા ઉપર ચઢાવવો, તેને આકાર આપવો, આ રીતે ઘટની ઉત્પત્તિ થવામાં ઘણો જ લાંબો સમય લાગે છે. આથી જે સમયે ઘટને બનાવવાનો

यदि कृतमपि क्रियते, तदाऽन्येऽपि दोषाः सन्ति, तथाहि—यदि कृतमपि क्रियते, अर्थात्—क्रियमाणं कृतं मन्यते तदा घटादिकार्योत्पादनार्थं मृन्मर्दनचक्र-
भ्रमणादिकायाः क्रियाया वैफल्यं स्यात्, तस्मिन् काले कार्यस्य घटस्य कृतत्वा-
स्युपगमात्, तस्य प्रागेव सत्त्वात् ॥ २ ॥

किञ्च—कृतं क्रियते इति यन्मन्यते तत्र, प्रत्यक्षविरोधः, यस्मादुत्पत्तेः
पूर्वं मृत्पिण्डावस्थायामवિद्यमानं, पश्चात् कुम्भकारादिव्यापारे घटादिकार्यजायमानं
दृश्यते उत्पत्तिकाले, तस्मादकृतमेव क्रियमाणं भवति ॥ ३ ॥

સદ્ભાવ સે કમી 'મી' વહાં 'મન્ય-હોને-રૂપ' ક્રિયા કી પરિસમાપ્તિ નહીં
હો સકને કે કારણ કિસી 'મી' કાર્ય કી પૂર્ણરૂપ સે નિષ્પત્તિ નહીં હો
સકેગો । યહ કાર્યઅનિષ્પત્તિરૂપ પ્રથમ દોષ હૈ ॥ ૧ ॥

यदि कृत 'मी' "क्रियते" ऐसा माना जाय अर्थात् जो हो चुका
है वह 'मी' किया जाता है ऐसा ही पक्ष स्वीकार किया जाय तो इसका
यह 'मी' तात्पर्य होता है कि जो क्रियमाण है—हो रहा है—वह हो चुका
ऐसा कहा जाता है तो इस पक्ष में यह सय से प्रचल दोष उपस्थित
होता है कि घटादि कार्य की उत्पत्ति के लिये जो मिट्टा का मर्दन चाक
का भ्रमण आदि क्रियाएँ की जा रही हैं ये सय निष्फल हो जाती हैं, क्योंकि
कि क्रियमाण अवस्था में 'मी' घट कृत तो हो चुका तब उसके वर्तमान
होनेसे निष्पन्न करने की क्या आवश्यकता रही? यह दूसरा पक्ष है ॥ २ ॥

और 'मा'—"कृतं क्रियते" यह व्यवहार इसलिये भी दूषित साबित
होता है कि जबतक घट उत्पन्न नहीं हो जाना है तब तक वह मृत्पिण्ड

તર ઘટોત્પત્તિરૂપ ક્રિયાના સદ્ભાવથી કદી પણ ત્યાં ભવત-થવારૂપ ક્રિયાની
પરિસમાપ્તિ ન થઈ શકવાના કારણે કોઈ પણ કાર્યની પૂર્ણરૂપથી નિષ્પત્તિ
થઈ શકશે નહીં. આ કાર્ય અનિષ્પત્તિરૂપ પ્રથમ દોષ છે. ॥ ૧ ॥

જો કૃત પણ "ક્રિયતે" એમ માનવામાં આવે અર્થાત જે 'ખની' ગયેલ
છે તે પણ કરવામાં આવી રહ્યું છે તેવો સ્વીકાર કરવામાં આવે તો તેનું એ
તાત્પર્ય થાય છે કે, જે ક્રિયામાણ છે ખની રહ્યું છે તે ખની ચુક્યું એમ કહે-
વામાં આવે છે તો આ પક્ષમાં એ બધાથી મોટો દોષ ઉપસ્થિત થાય છે.
ઘટાદિકાર્યની ઉત્પત્તિ માટે જે માટીનું મર્દન અને ચાકનું ભ્રમણ આદિ
ક્રિયાઓ કરવામાં આવે છે તે બધી નિષ્ફળ ખની જાય છે. કેમકે, ક્રિયામાણ
અવસ્થામાં પણ ઘટ કૃત તો થઈ ગયો તો એનું વર્તમાન થવાથી નિષ્પન્ન
કરવાની કઈ આવશ્યકતા રહી? આ બીજો સુદો. ॥ ૨ ॥

વળી—"કૃતં ક્રિયતે" આ વ્યવહાર એટલા માટે પણ દૂષિત. સાબીત
થાય છે કે, જ્યાં સુધી ઘટ ઉત્પન્ન નથી થતો ત્યાં સુધી તે માટીના પિંડની

તદાનીમદર્શનાત્ । દીર્ઘક્રિયાકાલસ્યાન્તે તુ કાર્યં ભવિતુમર્હતિ, તદાનીમેવ તસ્ય દર્શનાત્ । તદેવં ન નિર્વર્તનક્રિયાકાલે કાર્યમસ્તિ, અનુપલભ્યમાનત્વાત્, કિંતુ તન્નિષ્ઠાકાલ એવ તદસ્તિ, તૈવોપલભ્યમાનત્વાત્, ક્રિયાકાલનિષ્ઠાકાલયોથાત્પન્ત-
ભેદાત્, અતઃ ક્રિયમાણં કૃતં ન ભવતિ । સર્વલોકપ્રત્યક્ષાનુભવસિદ્ધમેવૈતત્ ॥૫॥
इति जमालेः पूर्वपक्षः ।

एवं मार्गविच्युतं जमालिं प्रति स्थविराः प्रोचुः—आर्य ! किं विरुद्धवचनं
वदसि ?, रागद्वेषपरहितानां सर्वज्ञानां जिज्ञानां वचने दोषलेशोऽपि नास्ति, नहि ते
मृषा भाषन्ते । आर्य ! “ कृतं न क्रियते, कृतत्वात्, कृतघटवत् ” इति कुतर्कमा-

नहीं हो सकता है, अतः “ अनुपलभ्यमानत्वात् निर्वर्तनक्रियाकाले
विवक्षितघटरूपं कार्यं नास्ति इति मन्तव्यम् ” जब यह बात निश्चित
हो जाती है तो यह बात भी स्वतः मान लेनी पड़ती है कि कार्य अपने
निष्ठाकाल में ही बनकर तयार होता है, क्यों कि वहीँ पर उसकी उप-
लब्धि होती है । क्रियाकाल एवं निष्ठाकाल इन दोनों में अत्यन्त भेद है
इसलिये क्रियमाण कृत नहीं कहा जा सकता । यह बात सर्वजन
साक्षिक भी है । यह पांचवा पक्ष है, यह हुवा जमालि का पूर्व पक्ष॥५॥

इस प्रकार जमालि द्वारा स्थापित इस पूर्वपक्ष का सुनकर स्थविरो
ने उनको मार्ग से च्युत जाना और इसलिये वे उनसे कहने लगे कि-
हे आर्य ! विरुद्ध वचन आप क्यों कहते हैं ? रागद्वेषरहित सर्वज्ञ जिन
भगवान के वचन अन्यथा नहीं होते हैं उनमें दोष का अंश भी
संभवित नहीं हो सकता है । साधारण पुरुषों की तरह वे मिथ्याभाषी

“ अनुપલભ્યમાનત્વાત્ નિર્વર્તનક્રિયાકાલે વિવક્ષિતઘટરૂપં કાર્યં નાસ્તિ ”
આને આ નિશ્ચિત બની જાય છે તો એ વાત પણ આપ મેળે માની લેવી પડે
છે કે, કાર્ય પોતાના યોગ્ય વખતે જ બનીને તૈયાર થાય છે. કેમકે, તે સ્થળે
તેની ઉપલબ્ધિ થાય છે. ક્રિયાકાળ અને નિષ્ઠાકાળ આ બન્નેમાં અત્યંત ભેદ
છે. આ માટે ક્રિયમાણ કૃત કહી શકાય નહીં. આ વાત સર્વજનથી સાક્ષીભૂત
છે. આ પાંચમો સુદ્ધો. આ થયો જમાલિનો પૂર્વપક્ષ. ॥ ૫ ॥

આ પ્રકારે જમાલિ દ્વારા સ્થાપિત એ પૂર્વપક્ષને સાંભળીને સ્થવિરેએ બીજું
કે જમાલીમુનિ ભગવાનના માર્ગથી ચલિત થયા છે. અને તે માટે તેઓ તેમને કહેવા
લાગ્યા કે, હે આર્ય ! વિરોધ વચન આપ કેમ કહો છો ? રાગદ્વેષરહિત સર્વજ્ઞ જન
ભગવાનનું વચન અન્યથા થતું નથી. તેમાં દોષનો અંશ પણ સંભવિત થતો નથી.
સાધારણ પુરુષોની માફક તે મિથ્યાભાષી પણ નથી. આપે જે અસતકાર્યવાદને

સમયે ઘટાદિ પ્રારમ્ભ્યતે, તસ્મિન્નેવ સમયે નિષ્પદ્યતે; ઘટાનયનતત્પિન્ધવિધાન-
ચકારોપણશિયંકાદિવિધાનાદિભિશ્ચિરકાલેનૈવ તદુત્પત્તિર્ભવતિ ॥ ૪ ॥

અસ્તુ દીર્ઘઃ કાર્યનિર્વર્તનક્રિયાકાલઃ ક્રિયાયાઃ પ્રથમસમય એવ કાર્ય
નિષ્પદ્યતે, ઇતિ ચેન્ન, યદિ ક્રિયાયાઃ પ્રથમસમય એવ કાર્ય નિષ્પદ્યત, તદિ
તત્ તત્રૈયોપલભ્યેત, ન ચારમ્ભસમય એવ ઘટાદિરૂપં કાર્ય દૃશ્યતે, નાપિ શિવક-
સ્થાસ-કોશ-કુશલાદિસમયે દૃશ્યતે । કિંતુ દીર્ઘક્રિયાકાલસ્પાન્તે ઘટાદિરૂપં કાર્ય
દૃશ્યતે, તસ્માત્ ક્રિયાયા આરમ્ભકાલે કાર્ય નિષ્પદ્યતે, ઇતિ કથનં ન યુક્તમ્, તસ્ય

અતઃ “ જિસ સમય મેં ઘટ કા યનના પ્રારંભ હોતા હૈ વહ, उसी समय
મેં યન જાતા હૈ ” યહ કહના અનુચિત્ હૈ । યહ ચોથા પક્ષ હૈ ॥૪॥

યદિ કોઈ ફિર ખી એસા કહે, કિ કર્મ કો નિર્વર્તન કરને બાલી
ક્રિયા કા કાલ ખલે હી અધિક હો હસમેં હમેં, કોઈ આપસિ નહીં હૈ,
પરંતુ ક્રિયા સે જો કાર્ય નિષ્પન્ન-હોના હોતા હૈ વહ उस ક્રિયા કે પ્રથમ
સમય મેં હી નિષ્પન્ન હો જાતા હૈ, સો એસા કહના ખી ઠીક નહીં હૈ ।
કારણ કિ યદિ ક્રિયા કે પ્રથમ સમય મેં હી કાર્ય નિષ્પન્ન હો જાતા હૈ
તો વહ उस સમય હી દિખનાં ચાહિયે-પરંતુ એસા તો હોતા નહીં હૈ,
ઑર ન વિવક્ષિત કાર્ય કોશ કુશલ શિવક સ્થાસક ઑદિ સમયોં મેં
પ્રતીત હોતા હૈ, કિન્તુ દીર્ઘક્રિયાકાલ કે અન્ત મેં હી નિષ્પન્ન હુઆ
દિખલાઈ દેતા હૈ । હસલિયે એસા માનનાં કિ ક્રિયાકે આરંભકાલ મેં હી
ઘટ યનકર તયાર હો જાતા હૈ, યહ કથમપિ-કિસી તરહ ખી યુક્તિયુક્ત

પ્રારંભ થાય છે એમ સમયે તે બની જાય છે એમ કહેવું અનુચિત છે. આ
થોથો મુદ્દો છે. ॥ ૪ ॥

જો કોઈ ફરી પણ એમ કહે કે, કર્મને નિર્વર્તન કરવાવાળી ક્રિયાનો
કાળ બલે અધિક હોય એમાં અમને કોઈ વાંધો નથી. પરંતુ ક્રિયાથી જે
કાર્ય નિષ્પન્ન થયું એટલે તે એ ક્રિયાના પ્રથમ સમયમાં જ નિષ્પન્ન બની
જાય છે. તેમ કહેવું પણ ઠીક નથી. કારણ કે, જો ક્રિયાના પ્રથમ સમયમાં જ
કાર્ય નિષ્પન્ન થઈ જાય છે, તો તે તે સમયે જ દેખાવું એટલે પરંતુ એવું તો
બનતું નથી. અને વિવક્ષિત કાર્ય, કોશ, કોશાળી, આકાર, સ્થાસક આદિ
સમયોમાં પ્રતીત થતો નથી. પરંતુ લીધે ક્રિયાકાળના અંતમાં જ નિષ્પન્ન થયેલ
દેખાય છે. આ માટે એવું માનીએ કે ક્રિયાના આરંભ કાળમાં જ ઘટ બનીને
તયાર થઈ જાય છે. તો આ કોઈ પણ રીતે માની શકાય તેવું આથી

તદાનીમદર્શનાત્ । દીર્ઘક્રિયાકાલસ્યાન્તે તુ કાર્યં ભવિતુમર્હતિ, તદાનીમેવ તસ્ય દર્શનાત્ । તદેવં ન નિર્વર્તનક્રિયાકાલે કાર્યમસ્તિ, અનુપલભ્યમાનત્વાત્, કિંતુ તન્નિષ્ઠાકાલ એવ તદસ્તિ, તત્રૈવોપલભ્યમાનત્વાત્, ક્રિયાકાલનિષ્ઠાકાલયોથ્વાત્યન્ત-
ભેદાત્, અતઃ ક્રિયમાણં કૃતં ન ભવતિ । સર્વલોકપ્રત્યક્ષાનુભવસિદ્ધમેવૈતત્ ॥૫॥
इति जमालेः पूर्वपक्षः ।

एवं मार्गविच्युतं जमालिं प्रति स्थविराः प्रोचुः—आर्य ! किं विरुद्धवचनं
वदसि ?, रागद्वेषरहितानां सर्वज्ञानां जिज्ञानां वचने दोषलेशोऽपि नास्ति, नहि ते
मृषा भाषन्ते । आर्य ! “ कृतं न क्रियते, कृतत्वात्, कृतघटवत् ” इति कुतर्कमा-

नहीं हो सकता है, अतः “ अनुपलभ्यमानत्वात् निर्वर्तनक्रियाकाले
विवक्षितघटरूपं कार्यं नास्ति इति मन्तव्यम् ” जब यह बात निश्चित
हो जाती है तो यह बात भी स्वतः मान लेनी पड़ती है कि कार्य अपने
निष्ठाकाल में ही बनकर तयार होता है, क्यों कि वहीं पर उसकी उप-
लब्धि होती है । क्रियाकाल एवं निष्ठाकाल इन दोनों में अत्यन्त भेद है
इसलिये क्रियमाण कृत नहीं कहा जा सकता । यह बात सर्वजन
साक्षिक भी है । यह पांचवा पक्ष है, यह हुवा जमालि का पूर्व पक्ष॥५॥

इस प्रकार जमालि द्वारा स्थापित इस पूर्वपक्ष को सुनकर स्थविरों
ने उनको मार्ग से च्युत जाना और इसलिये वे उनसे कहने लगे कि—
हे आर्य ! विरुद्ध वचन आप क्यों कहते हैं ? रागद्वेषरहित सर्वज्ञ जिन
भगवान के वचन अन्यथा नहीं होते हैं उनमें दोष का अंश भी
संभवित नहीं हो सकता है । साधारण पुरुषों की तरह वे मिथ्याभाषी

“ अनुપલભ્યમાનત્વાત્ નિર્વર્તનક્રિયાકાલે વિવક્ષિતઘટરૂપંકાર્યં નાસ્તિ ઇતિ મન્તવ્યમ્ ”
ન્યાયે આ નિશ્ચિત બની જાય છે તે બે વાત પણ આપ મેળે માની લેવી પડે
છે કે, કાર્ય પોતાના ચોગ્ય વખતે જ બનીને તૈયાર થાય છે. કેમકે, તે સ્થળે
તેની ઉપલબ્ધિ થાય છે. ક્રિયાકાળ અને નિષ્ઠાકાળ આ બન્નેમાં અત્યંત ભેદ
છે. આ માટે ક્રિયમાણ કૃત કહી શકાય નહીં. આ વાત સર્વજનથી સાક્ષીભૂત
છે. આ પાંચમો મુદ્દો. આ થયો જમાલિનો પૂર્વપક્ષ. ॥ ૫ ॥

આ પ્રકારે જમાલિ દ્વારા સ્થાપિત એ પૂર્વપક્ષને સાંભળીને સ્થવિરોએ બપયું
કે જમાલીમુનિ ભગવાનના માર્ગથી ચલિત થયા છે. અને તે માટે તેઓ તેમને કહેવા
લાગ્યા કે, હે આર્ય ! વિરોધ વચન આપ કેમ કહો છો ? રાગદ્વેષરહિત સર્વજ્ઞ જન
ભગવાનનું વચન અન્યથા થતું નથી. તેમાં દોષનો અંશ પણ સંભવિત થતો નથી.
સાધારણ પુરુષોની માફક તે મિથ્યાભાષી પણ નથી. આપે જે અસત્કાર્યવાદને

સમયે ઘટાદિ પ્રારમ્ભ્યતે, તસ્મિન્નેય સમયે નિષ્પદ્યતે; મૃદાનયનતત્ત્વિષ્ઠવિધાન-
ચક્રારોપણશિવકાદિવિધાનાદિભિથિરકાલેનૈવ તદુત્પત્તિર્ભવતિ ॥ ૪ ॥

અસ્તુ દીર્ઘઃ કાર્યનિર્વર્તનક્રિયાકાલઃ ક્રિયાયાઃ પ્રથમસમય એવ કાર્ય
નિષ્પદ્યતે, ઇતિ चेन्न, यदि क्रियायाः प्रथमसमय एव कार्य निष्पद्येत, तर्हि
तत् तत्रैवोपलभ्येत, न चारम्भसमय एव घटादिरूपं कार्य दृश्यते, नापि शिवक-
स्यास-कोश-कुशलादिसमये दृश्यते । किंतु दीर्घक्रियाकालस्यान्ते घटादिरूपं कार्य
दृश्यते, तस्मात् क्रियाया आरम्भकाले कार्यं निष्पद्यते, इति कथनं न युक्तम्, तस्य

અતઃ “ જિસ સમય મેં ઘટ કા બનના પ્રારંભ હોતા હૈ વહ, उसी समय
में बन जाता है ” यह कहना अनुचित है । यह चौथा पक्ष है ॥ ४ ॥

यदि कोई फिर भी ऐसा कहे, कि कर्म को निर्वर्तन करने वाली
क्रिया का काल भले ही अधिक हो इसमें हमें कोई आपत्ति नहीं है,
परन्तु क्रिया से जो कार्य निष्पन्न होना होता है वह उस क्रिया के प्रथम
समय में ही निष्पन्न हो जाता है, सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है ।
कारण कि यदि क्रिया के प्रथम समय में ही कार्य निष्पन्न हो जाता है
तो वह उस समय ही दिखना चाहिये—परन्तु ऐसा तो होता नहीं है,
और न विवक्षित कार्य कोश कुशल शिवक स्थासक आदि समयों में
प्रतीत होता है, किन्तु दीर्घक्रियाकाल के अन्त में ही निष्पन्न हुआ
दिखलाई देता है । इसलिये ऐसा मानना कि क्रियाके आरंभकाल में ही
घट बनकर तयार हो जाता है, यह कथमपि—किसी तरह भी युक्तियुक्त

પ્રારંભ થાય છે એજ સમયે તે બની જાય છે એમ કહેવું અનુચિત છે. આ
ચોથો મુદ્દો છે. ॥ ૪ ॥

જો કોઈ ફરી પણ એમ કહે કે, કર્મને નિર્વર્તન કરવાવાળી ક્રિયાના
કાળ ભલે અધિક હોય એમાં અમને કોઈ વાધો નથી. પરંતુ ક્રિયાથી જે
કાર્ય નિષ્પન્ન થવું જોઈએ તે એ ક્રિયાના પ્રથમ સમયમાં જ નિષ્પન્ન બની
જાય છે. તેમ કહેવું પણ ઠીક નથી. કારણ કે, જે ક્રિયાના પ્રથમ સમયમાં જ
કાર્ય નિષ્પન્ન થઈ જાય છે, તે તે તે સમયે જ દેખાવું જોઈએ પરંતુ એવું તો
બનતું નથી. અને વિવક્ષિત કાર્ય, કોશ, કોશાળી, આકાર, સ્થાસક આદિ
સમયોમાં પ્રતીત થતો નથી. પરંતુ લઘુ ક્રિયાકાળના અંતમાં જ નિષ્પન્ન થયેલ
દેખાય છે. આ માટે એવું માનીએ કે ક્રિયાના આરંભ કાળમાં જ ઘટ બનીને
તયાર થઈ જાય છે. તો આ કોઈ પણ રીતે માની શકાય તેવું આથી

વેતિ દોષદ્વયં યદુક્તં, તદ્ ભવન્મતેઽપિ શક્યતે વક્તુમ્, યથાઽસ્મત્સ્વીકૃતે કૃત-
પક્ષે દોષા ભવતા પ્રદીયન્તે, તથા ભવદક્ષીકૃતે અપ્યકૃતપક્ષેઽપિ એતે દોષાઃ આપ-
તન્તિ । તથાદિ-યદ્યકૃતમ્-(અવિધમાનં) ક્રિયતે, તર્હિ નિત્યમેવ ક્રિયતામ્, શશ
વિપાળકલ્પસ્યાસતઃ કરણં કથમ્પરમેત । તાદૃશે કાર્યે સમુત્પાદ્યે ક્રિયાયા વૈફલ્ય-
મપિ તવ દુર્વારમ્, અસતઃ કદાપ્યુત્પત્યભાવાત્ ।

इससे प्रथम तो करण-क्रिया की वहां कभी भी समाप्ति नहीं हो
सकती है १, दूसरा वहां करणक्रिया की विफलता भी आती है २ ।
जब पदार्थ स्वयं मौजूद है तो वहां करनेरूप क्रिया सफलित कैसे हो
सकती है ? इस प्रकार कृत करण मानने पर आपने ये जो क्रिया की
असमाप्ति १ और क्रिया की विफलता २ ये दो दोष दिये हैं सो ये दोनों
दोष आपके मन्तव्य में भी आते हैं, और वे इस प्रकार से-यदि
“अविद्यमान ही क्रिया जाता है” यह बात ही एकान्ततः स्वीकार की
जाय तो उसको भी नित्य ही होते रहना चाहिये, क्यों कि जो शश
विपाण की तरह सर्वथा असत् है उसकी करनेरूप क्रिया का विराम
कैसे हो सकता है । दूसरे असत् की जब उत्पत्ति ही नहीं होती है तो
असत्कार्य की उत्पत्ति में क्रिया की सफलता भी कैसे हो सकती है ? ।
वह तो वहां बिल्कुल निष्फल ही होगी, क्यों कि उसकी उससे
उत्पत्ति तो हो नहीं सकती है, कारण वह असत् है इसलिये ।

અતિ પ્રસંગ પ્રાપ્ત થાય છે. તેનાથી પ્રથમ તો કરણ ક્રિયાની ત્યાં કદી પણ
સમાપ્તિ થતી નથી. બીજી ત્યાં કરણ ક્રિયાની વિફળતા પણ આવે છે ? જ્યારે
પદાર્થ સ્વયં મોજૂદ છે તો ત્યાં કરવારૂપ ક્રિયા ક્ષણભૂત કેમ થઈ શકે ? આ
પ્રકારથી કૃતને કરણ માનવાથી આપે જે ક્રિયાની અસમાપ્તિ અને ક્રિયાની
વિફળતારૂપ બે દોષ આવેલ છે તો આ બન્ને દોષ આપના મંતવ્યમાં પણ આવે
છે. અને તે આ પ્રકારથી-જે “અવિધમાન જ કરવામાં આવે છે” આ વાત
જ એકાન્તતઃ સ્વીકાર કરવામાં આવે તો તેને પણ નિત્ય જ બની રહેવું જોઈએ.
કેમકે, જે શશવિપાણની (સસલાના શીંગ) માફક સર્વથા અસત્ છે. તેના
કરવારૂપ કરવાનો વિરામ કઈ રીતે હોઈ શકે ? બીજા અસત્તરી જ્યારે ઉત્પત્તિ
થતી નથી તો અસત કાર્યની ઉત્પત્તિમાં ક્રિયાની સફળતા પણ કેવી રીતે હોઈ
શકે ? એ તો તદ્દન નિષ્ફળ જ થવાની. કેમકે, તેનાથી ઉત્પત્તિ તો બની શકતી
નથી. કારણ તે અસત છે માટે.

શ્રિત્યાઽસત્કાર્યવાદિનો ભવતાઽભિધીયતે, અકૃતં સ્વલુ ક્રિયમાણં ભવતીતિ, તથા
 ધ્યં સત્કાર્યવાદિનો દ્રુમઃ-નિષ્પમાણમેતદ્વચ્ચદીયવચનમ્। અકૃતમ્ (અવિદ્યમાનં)
 ઘટાદિકાર્યં ન ક્રિયતે, અસત્ત્વાત્, આકાશકુસુમવત્। યદિ અકૃતમ્ (અવિદ્યમા-
 નમ્) અપિ ક્રિયતે, તર્હિ શશવિષાણમપિ ક્રિયતામ્, અકૃતત્વાવિશેષાત્ (અવિદ્ય-
 માનત્વાવિશેષાત્)। અપિ ચ-યે નિત્યકરણાદયો દોષાઃ સત્કાર્યવાદે પ્રદત્તાસ્તે
 સ્વલ્પસત્કાર્યવાદેઽપિ તથા સન્તિ। વિદ્યમાને વસ્તુનિ કરણક્રિયાયા અંગીકારે પુનઃ-
 પુનરનવરતં કરણક્રિયાયા અતિપ્રસંગાત્, ક્રિયાયા અપરિસમાપ્તિઃ ક્રિયાયા વૈફલ્યં

નહીં હૈં। આપને જો અસત્કાર્યવાદ કો લેકર કૃતકર્ત્ત્વ કા આશ્રય કરતે
 હુપ્ એસા કહા હૈ કિ-‘કૃતં ન ક્રિયતે કૃતત્વાત્, કૃતઘટવત્’ અર્થાત્-
 કૃત હોનેસે કૃત ક્રિયા નહીં જાતા હૈ જૈસે કૃત ઘટ, અકૃતં સ્વલુ ક્રિયમાણં
 ભવતિ’ અર્થાત્ અકૃત હી ક્રિયમાણ હોતા હૈ સો આપકા યહ કથન કથંચિત્
 સત્કાર્યવાદી હમલોગોં કે ચિત્ત મેં ઉતરતા નહીં હૈ બલા આપ કો યહ
 વિચારના ચાહિયે જો સર્વથા અસત્ હોતા હૈ-દ્રવ્ય દૃષ્ટિ સે भी जिसकी
 સત્તા કાયમ નહીં હૈ એસા અસત્ પદાર્થ કभी भी નિષ્પન્ન નહીં હો
 સકતા હૈ। યદિ હિસ પ્રકાર કા भी પદાર્થ નિષ્પન્ન હોને લગે તો શશ
 વિષાણ કો भी ઉત્પન્ન હોના ચાહિયે। દૂસરે દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સત્ કો
 કાર્ય માનને પરં જો આપને નિત્યકરણ હોને કી પ્રસત્તિરૂપ દોષ દિયે હૈ
 સો યે સમી દોષ આપકે અસત્કાર્યવાદ મેં भी આતે હૈ, આપને જો
 યહ કહા હૈ કિ વિદ્યમાન વસ્તુ મેં કરનેરૂપ ક્રિયા કો અંગીકાર કરને
 પર પુનઃ પુનઃ અનવરત ઉસ કરનેરૂપ ક્રિયા કા અતિપ્રસંગ પ્રાપ્ત હોતા હૈ

સ્વીકારી કૃતકર્ત્ત્વના આશ્રય લઈને એવું કહ્યું છે કે, કૃતં ન ક્રિયતે કૃતત્વાત્
 કૃત ઘટવત્ અર્થાત્ કૃત થવાથી કૃત કરેલ બનાવું નથી જેવી રીતે કૃત ઘટ,
 અકૃતં સ્વલુ ક્રિયમાણં ભવતિ અર્થાત્ જ્યારે અકૃત જ ક્રિયમાણ હોય છે, જેથી
 આપવું આ કથન કથંચિત્ સત્કાર્યવાદી અમારા લોકોના દિલમાં ઉતરતું નથી.
 આપે એ વિચારવું બેઠોએ કે, જે સર્વથા અસત્ હોય છે દ્રવ્યદૃષ્ટિથી પણ જેની
 સત્તા કાયમ નથી એવા અસત્ પદાર્થ કદી તૈયાર થઈ શકતા નથી. જો કદી
 આ પ્રકારના પણ પદાર્થ પુરા થયેલા માનવામાં આવે તો ખરવિષાણ (ગધેડાંને
 શીંગડાં) પણ ઉત્પન્ન થવાં બેઠોએ. દ્રવ્યની અપેક્ષા સત્ને કાર્ય માનવાથી
 જે આપે નિત્યકરણ હોવાનો પ્રશસ્તીરૂપ દોષ આપ્યો છે, તે સઘળા દોષ આપના
 અસતકાર્યવાદમાં પણ આવે છે. આપે જે એમ કહ્યું કે, વિદ્યમાન વસ્તુમાં
 કરવારૂપ ક્રિયાને અંગિકાર કરવાથી ફરી ફરી અનવરત એ ક. નો

દુર્વારઃ, તથાહિ-યદિ પૂર્વમ્ (કારણાવસ્થાયाम્) અસત્ (અવિદ્યમાનં) કાર્યં જાયતે, તર્હિ મૃત્પિંડાદ્ કુમ્ભવત્, શશશૃંગમપિ જાયમાનં કિં ન દૃશ્યતે, અસત્ત્વા વિશેષાત્ ? । અથ શશશૃંગમુત્પદ્યમાનમપિ ન દૃશ્યતે, તર્હિ ઘટોઽપિ તથૈવાસ્તુ, ઉત્પદ્યમાનત્વાવિશેષાત્ । અથવા-મૃત્પિંડાત્ પટોઽપિ ઉત્પદ્યતામ્, અસત્ત્વાવિશેષાત્ ॥ ૩ ॥

અપેક્ષા ભી કાર્ય અસત્ હૈ, ઓર વહ ઉસસે ઉત્પન્ન હોતા હૈ તો જિસ પ્રકાર મૃતપિંડ સે ઘટ ઉત્પન્ન હોતા હૈ ડસી તરહ શશશૃંગ ભી ઉસસે ઉત્પન્ન હોતે દિલ્ખના ચાહિયે, ક્યોં કિ જિસ પ્રકાર મૃત્પિંડ મેં ઘટ વિદ્યમાન નહીં હૈ ડસી પ્રકાર શશવિપાળ ભી વહાં વિદ્યમાન નહીં હૈ ફિર અવિદ્યમાન કી અવિશેષતા હોને પર ભો મૃત્પિંડ સે ઘટ હી ક્યોં ઉત્પન્ન હોતા હૈ શશશૃંગ ક્યોં નહીં ? । યદિ હસકે ડપર ંસા કહા જાય કિ શશશૃંગ ભી મૃત્પિંડસે ઉત્પન્ન હોતા હૈ પરન્તુ વહ દિલ્ખતા નહીં હૈ તો હમ ભી યહ કહ સકતે હૈં કિ ડસી તરહ ઉસસે જાયમાન ઘટ ભી નહીં દિલ્ખના ચાહિયે, અતઃ યહ માનના હી ચાહિયે કિ અપને કારણ મેં કિસી અપેક્ષા કાર્ય રહા હુઆ હૈ તભી જાકર વહ ઉસસે હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ અન્ય સે નહીં । નહીં તો ફિર ક્યા હૈ ચાહે જિસસે ચાહે જૈસા પદાર્થ ઉત્પન્ન હોને લગેગા । ંસી સ્થિતિ મેં મૃત્તિકા સે પટ કી ભી ઉત્પત્તિ માનની પડેગી ॥ ૩ ॥

અપેક્ષાથી કાર્ય અસત છે અને તે એનાથી ઉત્પન્ન થાય છે. તો જે રીતે માટીના પિંડથી ઘટ ઉત્પન્ન થાય છે. એજ રીતે સસલાને શીંગડાં પણ થતાં દેખાવાં જોઈએ. કેમકે જે રીતે માટીના પિંડમાં ઘટ વિદ્યમાન નથી એજ રીતે સસલાને પણ શીંગડાં વિદ્યમાન નથી. પછી અવિદ્યમાનની અવિશેષતા હોવાથી પણ મૃત પિંડથી ઘટ જ કેમ ઉત્પન્ન થાય છે ? સસલાનાં શીંગડેમ નહીં ? જો આ અંગે એમ કહેવામાં આવે કે, સસલાનાં શિંગ પણ માટીના પિંડાથી ઉત્પન્ન થાય છે પરંતુ તે દેખતાં નથી તો અમે પણ એમ કહી શકીએ કે, એ રીતે એનાથી તૈયાર થનાર ઘટ પણ ન દેખાવો જોઈએ. આથી એ માનવું જોઈએ કે, પોતાના કારણમાં કોઈ અપેક્ષા કાર્ય રહેલ છે ત્યારે જ તે તેમાંથી ઉત્પન્ન થાય છે. બીજાથી નહીં. એમ ન હોય તો પછી ગમે તે ચીજથી ગમે તે પદાર્થ ઉત્પન્ન થવા લાગશે. આવી સ્થિતિમાં માટીથી પટની પણ ઉત્પત્તિ માનવી પડશે. ॥૩॥

આયુષ્કર્મેપુદ્ગલાનર્જરણેન, 'ભવસ્વર્ણ' ભવક્ષયેણ=દેવભવસમ્બન્ધકર્મેણાં
ગત્યાદીનાં નિર્જરણેન ઠિડ્કસ્વર્ણ' સ્થિતિક્ષયેણ=દેવભવસમ્બન્ધ શરીરાવસ્થાન-
ક્ષયેણ, અનન્તરં ચયં=દેવભવસમ્બન્ધશરીરં ત્યક્ત્વા કુત્ર ગમિષ્યતિ ?
કુત્રોત્પત્સ્યતે ? હે ગૌતમ ! મહાવિદેહે વર્ષે=મહાવિદેહક્ષેત્રે સિજ્ઞિહિ' સેત્સ્યતિ
સકલકાર્યકારિતયા સિદ્ધો ભવિષ્યતિ, બુજ્ઞિહિ' ભોત્સ્યતે=વિમલકેવલા-
લોકેન સકલલોકાલોકં જ્ઞાસ્યતિ, 'મુચ્ચિહિ' મોક્ષ્યતિ=સર્વકર્મભ્યો મુક્તો
ભવિષ્યતિ, 'પરિનિવ્વાહિ' પરિનિર્વાસ્યતિ=સમસ્તકર્મકૃતવિકારરહિતત્વેન
સ્વસ્થો ભવિષ્યતિ, 'સવ્વદુઃસ્વાણમન્તં કરેહિ' સર્વદુઃસ્વાનામન્તં કરિષ્યતિ=
સમસ્તલેશનાં નાશં વિધાસ્યતિ, અવ્યાવાયસુખમોગી ભવિષ્યતીત્યર્થઃ। અધ્ય-

દેવે તાઓ દેવલોયાઓ આઠસ્વર્ણં ભવસ્વર્ણં ઠિડ્કસ્વર્ણં અણંતરં
ચયં ચક્ષતા કહિં ગચ્છિહિ કહિં ઉચ્ચજ્ઞિહિ ?) इस प्रकार प्रभु के
मुखारविन्द से मेघकुमार की उत्पत्ति का स्थान सुन कर गौतमने पुनः
उनसे यह पूछा कि हे भदंत ! अब ये मेघकुमार देव उस देवलोकसे
आयु के क्षय से, भव के क्षय से, स्थिति के क्षय से देवभव संघन्धी
शरीर का त्याग कर कहाँ जावेगे। कहाँ उत्पन्न होंगे ! (गोयमा ! महा-
विदेहे वासे सिज्झिह्मि, बुज्झिह्मि, मुच्चिह्मि, परिनिव्वाहि सव्वदुवखाण
मन्तं करेहि) इस प्रकार गौतम द्वारा पुनः पूछने पर प्रभुने उनसे कहा-
गौतम ये मेघकुमार देव महाविदेह में उत्पन्न हो कर वहीं से सिद्ध होंगे
विमल केवल ज्ञानरूप आलोक से समस्तलोक और आलोक का ज्ञाता होंगे।
समस्त ज्ञानावरणादिक अष्ट कर्मों से रहित होंगे, कर्मकृत समस्त विकारों से

સાગર જેટલી સ્થિતિ કહેવામાં આવી છે. (પસણં મંતે મેહે દેવે તાઓ દેવલો-
યાઓ આઠસ્વર્ણં ભવસ્વર્ણં ઠિડ્કસ્વર્ણં અણંતરં ચયં ચક્ષતા કહિં-
ગચ્છિહિ કહિં ઉચ્ચજ્ઞિહિ ?) આ પ્રમાણે મેઘકુમારની ઉત્પત્તિ વિષેના સ્થા-
નની વાત સાંભળીને ગૌતમે ફરી પ્રશ્ન કર્યો-કે હે-ભદ્રંત ! મેઘકુમારદેવ તે દેવલોકથી આયુષ્ય
ક્ષયથી, ભવક્ષયથી, સ્થિતિક્ષયથી દેવભવના શરીરનો ત્યાગ કરીને ક્યાં જશે ? ક્યાં
ઉત્પન્ન થશે ? (ગોયમા ! મહાવિદેહે વાસે સિજ્ઞિહિ બુજ્ઞિહિ, મુચ્ચિહિ,
પરિનિવ્વાહિ, સવ્વદુઃસ્વાણમન્તે કરેહિ) આ પ્રમાણે ગૌતમના પ્રશ્નને
સાંભળીને પ્રભુએ તેમને કહ્યું કે-હે ગૌતમ ! આ મેઘકુમાર દેવ મહાવિદેહમાં ઉત્પન્ન
થઈને ત્યાંથી સિદ્ધ થશે. વિમળ અને કેવળજ્ઞાનરૂપ આલોકથી સમસ્તલોક અને આ
લોકના બધાનારા થશે. તેઓ સમસ્ત જ્ઞાનાવરણ વગેરે આઠ કર્મોં રહિત થશે અને
વિકારો રહિત થઈને સ્વસ્થતા પામશે. તેઓ બધાં દુઃખોનો નાશ કરશે

यनार्थमुपसहरन् अ. सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामिनमाह-एव खलु हे जम्बूः।
श्रमणेन भगवता महावीरेण आदिकरेण तीर्थकरेण यावत्संप्राप्तेन आत्मोपा-
लम्भनिमित्तं-आप्तेन हितेन गुरुणेत्यर्थः, विनेयम्याविहितविधायिनः उपालम्भः-
आत्मोपालम्भः तन्निमित्तं=तदर्थः प्रथमस्य ज्ञाताध्ययनस्य अर्थः=पूर्वोक्तः=
मेघकुमारचरितरूपोऽर्थः प्रज्ञप्तः=कथितः। अविधिप्रवृत्तस्य शिष्यस्य गुरुणा मोक्ष-
मार्गे स्थापनाय हितसारगर्भितवचनेन प्रतिबोधनम् उपालम्भः स दातव्यः,
यथा भगवता दत्तो मेघकुमाराय, इत्येवमर्थं प्रथममध्ययनमिति भावः ॥

रहित होकर स्वस्थ होंगे, ममस्त दुःखों का नाश करेंगे अव्याघाधं सुख के
भाक्तावने'गे अब सूत्रकार श्री सुधर्मास्वामी इस अध्ययन के अर्थ का उपसंहार
करते हुए श्री जंबूस्वामी से कहते हैं। (एवं खलु जंबू। समणे णं भगवया महा-
वीरेण आइगरेण तित्थगरेण जाव संपत्तेण अप्पोपालंभनिमित्तं पदमस्स नायज्झ
णस्स अयमट्ठे पन्नत्ते तिवेमि) कि हे जंबू। आदिकर तीर्थकर श्री श्रमण
भगवान् महावीरने कि जो सिद्धिस्थान को प्राप्त हो चुके हैं अविहित
विधायी शिष्य को आप्तोपालंभनिमित्त यह मेघकुमार के चरित्ररूप प्रथम
ज्ञाताध्ययन का अर्थ प्रज्ञप्त (प्ररूपित) किया है। अविधि में प्रवृत्त हुए शिष्य
को गुरु देव मोक्षमार्ग में स्थापन करने के लिये जो हित सारगर्भित वचनों
द्वारा समझाया है। इसी का नाम आप्तोपालंभ है। आप्तजन के द्वारा दिया
गया उपालंभ यही आप्तोपालंभ का अर्थ है। मेघकुमार के साथ यही
कार्य प्रयुक्त किया है। यही विषय इस अध्ययन द्वारा समझाया गया है।
अतः इस अध्ययन का नाम भी आप्तदत्त परोपालंभ है। स्वोपालंभ परोपालंभ

अने अव्याघाध सुखने लोगवनाश थये. अहीँ हुवे सूत्रकार श्री सुधर्मास्वामी आ
अध्ययनना अर्थने उपसंहार करता जंबूस्वामीने कहे छे. (एवं खलु जंबू! सम-
णेणं भगवया महावीरेण आइगरेण तित्थगरेण जाव संपत्तेण अप्पोपालंभ-
निमित्तं पदमस्स नायज्झणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते तिवेमि) छे जंबू, आदिकर तीर्थ-
कर श्री श्रमण भगवान् महावीर जेभले सिद्धिस्थानने भेलथ्युं. छे-जेवा तेभले अवि-
हित विधायी शिष्यने आप्तोपालंभना भाटे आ मेघकुमारना चरित्ररूप प्रथम ज्ञाताध्य-
यनने अर्थ प्ररूपित कयौं छे. अवधिमां प्रवृत्त थयेव शिष्यने गुरुदेव मोक्षमार्गमां
वाणवा भाटे जे हितसार युक्त वचने द्वारा समझवे छे. ते आप्तोपालंभ कहेवाय छे.
आप्तजन वटे आप्तवामां आवेले उपालंभ जे ज आप्तोपालंभने अर्थ छे मेघकुमारनी
साथे पद्य भगवाने आ प्रभावे ज व्यवहार कयौं छे. आ अध्ययन द्वारा जे ज
विषय समझववामां आवेल्ये छे. ओथी आ अध्ययननु नाम 'आप्तदत्त परोपालंभ'

आयुष्कमेपुद्गलानर्जरेण, 'भवस्वर्ण' भवक्षयेण=देवभवसम्बन्धकर्मणां गत्यादीनां निर्जरेण ठिइक्खणं' स्थितिक्षयेण=देवभवसम्बन्ध शरीरावस्थान-क्षयेण, अनन्तरं चयं=देवभवसम्बन्धशरीरं त्यक्त्वा कुत्र गमिष्यति ? कुत्रोत्पत्स्यते ? हे गौतम ! महाविदेहे वर्षे=महाविदेहक्षेत्रे सिज्झिहिइ' सेत्स्यति सकलकार्यकारितया सिद्धो भविष्यति, वुज्झिहिइ' भोत्स्यते=विमलकेवल-लोकेन सकललोकालोकं ज्ञास्यति, 'मुच्चिहिइ' मोक्ष्यति=सर्वकर्मभ्यो मुक्तो भविष्यति, 'परिनिव्वाहिइ' परिनिर्वास्यति=समस्तकर्मकृतविकाररहितत्वेन स्वस्थो भविष्यति, 'सव्वदुःखाणमंतं करेहिइ' सर्वदुःखानामन्तं करिष्यति=समस्तक्लेशानां नाशं विधास्यति, अव्यावाधिसुखभोगी भविष्यतीत्यर्थः। अथ-

देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खणं भवक्खणं ठिइक्खणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छहिइ कहिं उववज्झिहिइ ?) इस प्रकार प्रभु के सुखारविन्द से मेघकुमार की उत्पत्ति का स्थान सुन कर गौतमने पुनः उनसे यह पूछा कि हे भदंत ! अब ये मेघकुमार देव उस देवलोकसे आयु के क्षय से, भव के क्षय से, स्थिति के क्षय से देवभव संबन्धी शरीर का त्याग कर कहाँ जावेगे । कहाँ उत्पन्न होंगे ! (गोयमा ! महा-विदेहे वासे सिज्झिहिइ, वुज्झिहिइ, मुच्चिहिइ, परिनिव्वाहिइ सव्वदुःखाण मंतं करेहिइ) इस प्रकार गौतम द्वारा पुनः पूछने पर प्रभुने उनसे कहा—गौतम ये मेघकुमार देव महाविदेह में उत्पन्न हो कर वहीं से सिद्ध होंगे विमल केवल ज्ञानरूप आलोक से समस्तलोक और आलोक का ज्ञाता होंगे। समस्त ज्ञानावरणादिक अष्ट कर्मों से रहित होंगे, कर्मकृत समस्त विकारों से सागर जेटली स्थिति छडेनाभां आपी छे. (एसणं भंते मेहे देवे ताओ देवलो-याओ आउक्खणं भवक्खणं ठिइक्खणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं-गच्छहिइ कहिं उववज्झिहिइ ?) आ प्रभाए मेघकुमारणी उत्पत्ति विधेना स्थान-नी पात सांलणीने गौतमे इरी प्रश्न क्यो—के-डे-सइतं । मेघकुमारदेव ते देवलोकथी आयुष्य क्षयथी, अवक्षयथी, स्थितिक्षयथी देवलवना शरीरना त्याग करीने कथां जथे ? कथां उत्पन्न थथे ? (गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ वुज्झिहिइ, मुच्चिहिइ, परिनिव्वाहिइ, सव्वदुःखाणमंतं करेहिइ) आ प्रभाए गौतमना प्रश्नने सांलणीने प्रभुए तेभने कहुं के-डे गौतम ! आ मेघकुमार देव महाविदेहभां उत्पन्न थछने त्यांथी सिद्ध थथे. विमण अने केवणज्ञानइय आवेकथी समस्तलोक अने आ लोकना जलुनारा थथे. तेओ समस्त ज्ञानावरण वगेरे आठ कर्मो रहित थथे अने विकारो रहित थछने स्वस्थता पावथे. तेओ जथां दुःखोना नाथ करथे

तदुभयोपालम्भो यथा—

अज्ञानिनोऽमी निजजीवितस्य,

हेतोः किमर्थं बहु जीव कोटीः ।

संस्थापयन्तीह च दुःखगर्तो

किं जीवनं शाश्वतमस्ति तेषाम् ? ॥ ३ ॥

अत्र आप्तदत्तपरोपालम्भाधिकारः—

अयमत्राभिप्रायः—प्राप्तस्वतन्त्रयक्षणस्य विचक्षणस्यापि विनेयस्य प्रमाद-
वशात्स्वलनायां सत्यां तं सन्मार्गं स्थापनाय भगवता मेघमुनेरिव गुरुणो-
पालम्भो देय इति ।

परोपालम्भ में अविधि में प्रवृत्त हुए जीव को गुर्वादि आप्त जन सम-
झाते हैं—जैसे हे चत्स । तुम्हारा जन्म विशुद्ध वंश में हुआ है, और तुम
जिनेन्द्र प्रभु के धर्म में दीक्षितहुए हो । सदा तुम उत्तम ज्ञानादि गुणों से
युक्त हो रहे हो—तो फिर ऐसी क्या बात है जो तुम सहसा इस प्रकार
के अविहित कार्य में प्रवृत्ति करने की ओर झुक रहे हो । यह कार्य तुम्हें शोभा
नहीं देता है अतः इससे विरक्त होकर विहित कर्तव्य की ओर ही प्रवृत्ति करो ॥२॥

तदुभयोपालम्भमें इस प्रकार बोध दिया जाता है—ये अज्ञानी जीव
अपने स्वयं के जीवन के लिये अनेक जीवों की कोटियों को दुःखरूपी
खड्गों में न मालूम क्यों पटकते रहेते हैं । तो क्या वे अपने जीवन को
शाश्वत मान रहे हैं ॥ ३ ॥

मेघकुमार को महावीर प्रभुने जो यह उपालम्भ दिया है—वह परोपा-
लम्भ रूप है । जिस अपने शिष्यने स्तनत्रयरूप मुक्ति का मार्ग प्राप्त कर

परोपालम्भ अविधिमा प्रवृत्त यता एवने शुरु वगेरे आप्तजनो समजवे छे-
नेमके छे जेटा । तमारो जन्म विशुद्ध वंशमां थयो छे अने तमे जिनेन्द्र प्रभुनी
दीक्षा पाग्या छे दुमेथां तमे श्रेष्ठज्ञान वगेरे शुद्धोत्थी युक्त थय रह्या छे,
तो पछी ओवुं शुं थय गयुं छे ओकदम तमे आप्ततानां न करवा थोअ
(अविहित) कार्यमां प्रवृत्ति करवा तैयार थया छे आ काम तमने शोभतुं नथी
ओटवे ओनाथी वि-कत थयने विहित (विहित) कर्तव्यमां प्रवृत्त थोअो ॥२॥

तदुभयोपालम्भमां आ प्रमाद्ये बोध अपाय छे—के आ अज्ञानी एवो पोताना
एवन माटे घण्टा एवोने दु ओइपी आकांक्षां इस नाभता रहे छे ? शुं ओवा माद्यो
पोताना एवनने शाश्वत मानीने जेका छे ॥३॥

मेघकुमारने महावीर प्रभुओ के उपालम्भ आप्यो छे ते परोपालम्भ छे, ने शिष्ये
स्तनत्रय रूप मुक्तिमार्ग मेजल्यो छे, अने दुवे प्रमादवश यतां ते मुक्तिमार्गाथी भ्रष्ट

સ્વોપાલમ્ભો યથા—

લઘ્વા જનુર્માનુપમઘ્ર દુર્લભં,

રે જીવ ! કલ્પદુમવત્પમોદમ્ ।

જૈનેન્દ્રધર્મં ન કરોપિ સાદરં,

સ્વસ્થાત્મનઃ શઙ્ગ રહો ! પરોઽસ્તિકઃ ? ॥ ૧ ॥

પરોપાલમ્ભો યથા—

વિશુદ્ધવંશે ચ તવાસ્તિ જન્મ,

જિનેન્દ્રધર્મે સ્વલુ દીક્ષિતોઽસિ ।

સદોત્તમજ્ઞાનગુણાદય ! વત્સ ।

કથં ત્વમેવં સહસા પ્રવૃત્તઃ ? ॥ ૨ ॥

તથા, તદુભયોપાલમ્ભ કે એક સે ઉપાલમ્ભ૩ પ્રકાર કા કહા ગયાહે—સ્વોપાલમ્ભ
મેં જીવ અપને આપકો ઉપાલમ્ભ દેતા હૈ—જૈસે—જબ કિસી અવિહિત કાર્ય
મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હુઆ જૈનેન્દ્ર ધર્મ મેં પ્રવૃત્તિ નહી કરતા હૈ—તય અપને
આપ અન્તરાત્મા સે જો એસી આવાજ આતી હૈ કિ હે જીવ હસ પરિભ્રમણ
રૂપ સંસાર મેં કિસી વઢે મારો પુણ્ય કે ઉદય સે તુજે યહ મનુષ્ય ભવ
પાપ્ત હુઆ હૈ—સો હસમેં યદિ કોઈ પ્રમોદદાયક વસ્તુ તુજે મિલી હૈ તો
વહ એક જિનેન્દ્ર દેવ દ્વારા પ્રતિષ્ઠાપિત ધર્મ હી હૈ। તું જિસ તરહ અન્ય
સંસારિક કાર્યો કો વઢે આદર કે સાથ કરતા હૈ ડસી તરહ હસે વ્યો
નહી કરતા। યાદ રલ્લ યદિ હસકે કરને સે તું વંચિત હો રહા હૈ તો
તું સ્વયં નિજ કા શત્રુ હૈ દુસરા નહી હૈ। ॥ ૧ ॥

છે.—સ્વોપાલમ્ભ, પરોપાલમ્ભ, તેમજ તદુભયોપાલમ્ભના લેદથી ઉપાલમ્ભના ત્રણ પ્રકાર
કહેવામાં આવ્યા છે. સ્વોપાલમ્ભમાં માણસ પોતાની જાતને ઉપાલમ્ભ આપે છે. જેમકે
છવ બ્યારે કોઈ અવિહિત (ન કરવા યોગ્ય) કાર્યમાં પ્રવૃત્તિ કરતા જૈનેન્દ્ર ધર્મમાં
પ્રવૃત્ત થતો નથી ત્યારે પોતાની મેળેજ અન્તરથી જે આવાજ ઉઠે છે કે હે છવ!
આ પરિભ્રમણરૂપ સંસારમાં કોઈ મહા પુણ્યના ઉદયથી તને મનુષ્યભવ મળ્યો છે.
આ ભવ જે કંઈ એક પ્રમોદ આપનારી વસ્તુ તને મળી છે તે કક્ષત જિનેન્દ્ર દેવ
વઢે પ્રતિષ્ઠાપિત ધર્મ જ છે. તું જેમ બીજા સંસારિક કાર્યો બહુજ ખુશીથી કરે છે તેમ
તું આ ધર્મમાં પ્રવૃત્ત કેમ થતો નથી? બરોબર યાદ રાખજે કે આ ધર્મમાં તું
પ્રવૃત્તિ કરીશ નહિ, તો તું પોતે પોતાની જાતનો શત્રુ બની ગયો છે. તારો બીજો
કોઈ શત્રુ નથી. ૫૧૫

જો યહ સંગ્રહ ગાથા ઉદ્ધત કી ગઈ હૈ—અમકા અભિપ્રાય યહ હૈ—જો મુલકે અભિલાષી હૈં, ઉનકા યહ પ્રધાન કર્તવ્ય હૈ કિ વે શ્રુતજ્ઞાન કા અવિનય ન હો એસા સદા ધ્યાનમેં રહેં । અપને મનસે કલ્પિત કર આગમ કી કોઈ વાત ન કહેં, વયોં કિ છદ્ધસ્યાવસ્થામે દૃષ્ટિ ચરૂણ રહતો હૈ યહી વિષય (તિવેમી) ઇન પદોં સે સુચિત કિયા ગયા હૈ ।

જૈનાચાર્ય જૈન ધર્મદિવાકર પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત
પ્રાતાધર્મકથાગમૂત્રકી અનગારધર્મામૃતવર્ણીટીકા કે
ઉત્કૃષ્ટ નામક પ્રથમ અધ્યયન સંપૂર્ણ ॥ ૧ ॥

મેં તમને કહ્યો છે. આ અર્થે વિષે જે આ અંગકુગાથા ટાંકવામાં આવી છે તેનો અભિપ્રાય આ પ્રમાણે છે કે—જે સુખની ઇચ્છા ધરાવે છે તેમની આ સુખ્ય રૂપે ફરજ હોય છે કે તેઆથી શ્રુતજ્ઞાનનો અવિનય થાય નહિ આ વિષયમાં હંમેશાં સાવચેત રહે. પોતાના મનથી કંઈપીને આગમની કોઈ વાત કહે નહિ. કેમકે છદ્ધસ્યાવસ્થામાં દૃષ્ટિ અપૂર્ણ રહે છે, એજ વિષય (તિવેમિ) પહોંથી સૂચવવામાં આવ્યો છે.

જૈનાચાર્ય જૈનધર્મ દિવાકર પૂજ્ય શ્રી. ઘાસીલાલ મહારાજ કૃત
પ્રાતા ધર્મકથાગમૂત્રકી અનગારધર્મામૃતવર્ણી ટીકાતું
ઉત્કૃષ્ટ નામક પહેલું અધ્યયન સમાપ્ત. ॥૧॥

‘તિ વેમિ’ इति=उत्तरूपं तत्त्वं यथा तीर्थंकरस्य भगवतो महावीरस्य
सहाशान्मया श्रुतं न तु स्वबुद्ध्या कल्पितं, यतः स्वबुद्ध्या कथने श्रुत-
ज्ञानस्य चिनयो भवति, किं च छद्मस्थानां दृष्टयोऽप्यपूर्णा भवन्ति, तस्माद्
यथा भगवत्प्रतिपादितमेव त्वां ब्रवीमि=उपदिशामीत्यर्थे इदार्थे चेयं संग्रहगाथा—

सुअणणस्स अन्निणओ परिहरणिज्जो परिहरणिज्जो सुहादिलासीदि ।

छउमत्थाणं दिट्ठी, पुब्बाणत्थित्ति सुइयं इदणा ॥ इति ॥ मूत्र. ५० ॥

॥ इति श्री चिन्मयिख्यात-जगद्गुरु-पसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललित

कलापालापक-मणिशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक श्री

शाह छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-‘जैनशास्त्राचार्य’-पद-

भूषित-कोल्हापुरराजगुरु चालब्रह्मचारि जैनाचार्य-

जैनधर्मदिवाकर=पूज्यश्री घासीलालव्रति-विर-

चितायां श्री ज्ञानाधर्मकथाङ्गमूत्रस्याऽनगार

धर्मामृतवर्षिणी टीकायाम् उत्ति-

सनामकं प्रथममध्ययनं

समाप्तम् ॥१॥

लिया है, और वह अब प्रमादवशवर्ती होकर उससे स्वल्पित हो रहा है-
या हो चुका है- तो उसे पुनः सन्मार्ग में स्थापित करने के लिये गुरु
महाराज का कर्तव्य है कि वे उसे उपालम्भ दें। जिस प्रकार महावीर
प्रभुने मेघकुमार मुनिराज को दिया है (तिवेमि) इस प्रकार यह उक्त
रूप तत्त्व जिस तरह तीर्थंकर भगवान् महावीर प्रभुके पाससे मैंने सुना
है, उसी तरह यह तुमसे कहा है। अपनी बुद्धिसे कल्पित कर यह नहीं
कहा है। क्योंकि कि बुद्धिसे कल्पित कर कहनेमें श्रुत ज्ञान की आशा
तना होती है दूसरी बात यह भी है कि छद्मास्थजोत्रों की दृष्टियां
अपूर्ण होती हैं। अतः वे वस्तु का पूर्णरूप प्रतिपादिन नहीं कर सका
हैं। इस लिये प्रभु प्रतिपादित अर्थ ही यह तुम से कहा है। इस अर्थमें

થઈ રહ્યો છે, અથવા તો તે સુક્તિમાર્ગથી બ્રષ્ટ થઈ ચૂક્યો છે એવી વ્યક્તિને
કરી સન્માર્ગમાં વાળવા માટે ગુરુમહારાજની ફરજ છે કે તેને ઉપાલંભ આપે. જે
પ્રમાણે પ્રભુએ મુનિ-રાજ મેઘકુમારને ઉપાલંભ આપ્યો છે. (તિવેમિ) આ રીતે ઉચ્ચ
શક્ત તત્ત્વ મેં જેવી રીતે તીર્થંકર ભગવાન મહાવીરની પાસેથી સાંભળ્યું છે તેવી
જ રીતે મેં તમને કહ્યું છે. મેં પેતાની બુદ્ધિથી કલ્પના કરીને કહ્યું નથી. કેમકે
બુદ્ધિથી કલ્પિતકરીને કહેવાથી શ્રુતજ્ઞાનની આશાતના હોય છે. બીજી વાત એ છે
કે છદ્મસ્વ છવોની દૃષ્ટિઓ અપૂર્ણ હોય છે. એટલા માટે પ્રભુ પ્રતિપાદિત અર્થ જ

ज्ञाताध्ययनस्य कोऽर्थः पत्रसः १ । श्री सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामिनमाह-

‘एवं खलु जम्बू’ ति-एवं खलु जम्बूः ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरमासीत् वर्णकः, तस्य खलु राजगृहस्य नगरस्य वहिरुत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे गुणशिलकं नामं चैत्यमासीत् वर्णकः, तस्य खलु

इस अध्ययन का पहिले अध्ययन के साथ इस प्रकार संबन्ध रहा हुआ है-कि पहिले अध्ययन में यह विषय समझाया गया है कि अनुचित मार्ग में प्रवृत्त हुए शिष्य को गुरु का कर्तव्य है कि वह उसे उपालम्भ देवे। इस अध्ययन में यह समझाया जावेगा कि मैं तथा अनुचित मार्ग में प्रवृत्त होते हैं उन्हें अपने अपने कृत कर्मानुसार अर्थ तथा अनर्थ की प्राप्ति परंपरा भोगनी पडती है। इसी निमित्त से यह अध्ययन पहिले के बाद प्रारंभ किया गया है इस अध्ययन का यह प्रथम सूत्र है-‘जइणं भंते ! इत्यादि ।

टीका—जंबू स्वामी सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं—(जइ) यदि (णं) निश्चय से (भंते) हे भद्रेत ! (समणेणं भगवया महावीरेणं पढमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते) श्रमण भगवान् महावीरने प्रथम ज्ञाताध्ययन का यह पूर्वोक्त अर्थ प्रदिपादित किया है तो (वीयस्सणं भंते ! नायज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते) द्वितीय ज्ञाताध्ययन का उन्होंने क्या भाव अर्थ कहा है ? इस प्रकार जंबू स्वामी के पूछने पर श्री सुधर्मा स्वामीने उनसे कहा—(एवं खलु जंबू) हे जंबू सुनी—इस प्रकार है—(तेणं कालेणं तेणं समणं रायगिहे नामं नयरे हात्था) उस काल उस समय में राजगृह नामका नगर था (वन्नओ) इसका

अध्ययनना पडेला अध्ययननी साथे संबन्ध आ रीते छि-के पडेला अध्ययनभां आ विषयनुं स्पष्टीकरखु करवाभां आब्युं छि के अनुचित मार्गभां प्रवृत्त शिष्यने भाटे खुनुनी करख छि के ते तेभने उपालंभ आपे. आ अध्ययन वडे समजववाभां आवथे के के अनुचित अथवा तो उचित मार्गभां प्रवृत्त थांछ छि, तेभने पोताना करेलां केभी अनुसार अर्थ तेभज अनर्थनी प्राप्ति परंप । लोगववी पडे छि. आ करखुथी न आ अध्ययन पडेला अध्ययन पछी आरंभवाभा आब्युं छि. आ भीज अध्ययनना पडेखुं सत्र आ छि—‘जइणं भंते’ ! इत्यादि !

टीका—जंबूस्वामी सुधर्मास्वामीने पूछे छि—(जइ) जे (णं) निश्चित रूपे (भंते) हे भद्रेत । (समणेणं भगवया महावीरेणं पढमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते) श्रमण भगवान् महावीर पडेला ‘ज्ञाताध्ययन’ ने अर्थ उपर कहा सुजण स्पष्ट क्यो छि, तो (वीयस्सणं भंते ! नायज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते) भीज ज्ञाताध्ययनना तेभजे कछ रीते लावार्थ समजव्यो छि ? जंबूस्वामीने आ प्रश्नने प्रश्न सांभलीने श्री सुधर्मास्वामीजे तेभने कहुं के (एवं खलु जंबू) हे जंबू तेभास प्रश्नने जवाब

अथ द्वितीयमध्ययनं प्रारम्भ्यते

व्याख्यातं प्रथममध्ययनं, साम्प्रतं द्वितीयमारम्भ्यते, अस्य पूर्वेषु सहाऽ-
यममिसम्बन्धः—पूर्वस्मिन्नध्ययने भगवताऽनुचितमार्गप्रवृत्तास्य शिष्यस्योपा-
लम्भः प्रोक्तः, अत्र तु अनुचितोचितमार्गप्रवृत्तानामनर्थार्थप्राप्तिपरम्परा
प्रोच्यते, इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यास्येदमादिममवयवम् ।

मूलम्—जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं पढमस्स
नयज्झयणस्स अयमद्वे पन्नत्ते वीयस्स णं भंते ! नायज्झयणस्स के
अद्वे पन्नत्ते ? एवं खलु ! जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रागगिहे
णामं नयरे होत्था वन्नओ तस्स णं रायगिहस्स नयरस्स वहिया-
उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए गुणसिलए नामं चेइए होत्था वन्नओ,
तस्सणं गुणसिलयस्स चेइयस्स अदुरसामंते एत्थणं महं एगे जि-
ण्णुज्जाणे यावि होत्था, विण्णुदेवउले परिसडियतोरणवरे
नाणाविहगुच्छगुल्मलयावल्लिवच्छच्छाइए अणेगवालसयसंकणिजे
यावि होत्था । तस्सणं जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थणं महं
एगे भग्गकूवए यावि होत्था, तस्सणं भग्गकूवस्स अदुरसामंते एत्थणं
महं एगे मालुयाकच्छए यावि होत्था, किण्हे किण्होभासे जाव रम्मे
महामेहनिउरंवभूए बहुहि रुक्खेहि य गुच्छेहि य गुम्मेहि य लयहि य
वल्लीहि य कुसेहि य खाणुएहि य संच्छन्ने पलिच्छन्ने अंतो झुसिरे वहि
गंभीरे अणेग वालस संकणिजे यावि होत्था ॥सू०१॥

टीका—‘जइणं भंते !’ इत्यादि—यदि खलु भदन्त ! अमणेन भगवता
महावीरेण प्रथमस्य ज्ञाताध्ययनस्य, अयमर्थः प्रज्ञप्त द्वितीयस्य खलु भदन्त !

दूसरा अध्ययन प्रारम्भ

प्रथम अध्ययन संपूर्ण हो चुका है। अब द्वितीय अध्ययन प्रारंभ

गीर्णु अध्ययन प्रारंभ

पडेडु अध्ययन पुरुं थडं गयुं छि डवे गीर्णु अध्ययन शुरु थया छि. आ

ज्ञाताध्ययनस्य कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? । श्री सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामिनमाह-

‘एवं खलु जम्बू’ ति-एवं खलु जम्बू ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरमासीत् वर्णकः, तस्य खलु राजगृहस्य नगरस्य वहिरुत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे गुणशिलकं नामं चैत्यमासीत् वर्णकः, तस्य खलु

इस अध्ययन का पहिले अध्ययन के साथ इस प्रकार संबन्ध रहा हुआ है-कि पहिले अध्ययन में यह विषय समझाया गया है कि अनुचित मार्ग में प्रवृत्त हुए शिष्य को गुरु का कर्तव्य है कि वह उसे उपालम्भ देवे । इस अध्ययन में यह समझाया जावेगा कि मैं तथा अनुचित मार्ग में प्रवृत्त होते हैं उन्हें अपने अपने कृत कर्मानुसार अर्थ तथा अनर्थ की प्राप्ति परंपरा भोगनी पडती है । इसी निमित्त से यह अध्ययन पहिले के बाद प्रारंभ किया गया है इस अध्ययन का यह प्रथम सूत्र है-‘जइणं भंते ! इत्यादि ।

टीका—जंबू स्वामी सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं—(जइ) यदि (णं) निश्चय से (भंते) हे भर्तृ ! (समणेणं भगवया महावीरेणं पढमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते) श्रमण भगवान् महावीरने प्रथम ज्ञाताध्ययन का यह पूर्वोक्त अर्थ प्रदिपादित किया है तो (वीयस्सणं भंते ! नायज्झयणस्स के अट्ठे पणत्ते) द्वितीय ज्ञाताध्ययन का उन्होंने क्या भाव अर्थ कहा है ? इस प्रकार जंबू स्वामी के पूछने पर श्री सुधर्मा स्वामीने उनसे कहा—(एवं खलु जंबू) हे जंबू सुनो—इस प्रकार है—(तेणं कालेणं तेणं समणं रायगिहे नामं नयरे हात्था) उस काल उस समय में राजगृह नामका नगर था (वन्नओ) इसका

अध्ययनना पहिला अध्ययननी साथे संघर्ष आ रीते छे-के पहिला अध्ययनमां आ विषयतुं स्पष्टीकरवु करवामां आयुं छे के अनुचित मार्गमां प्रवृत्त शिष्यने भाटे युनुनी करवु छे के ते तेमने उपाखंल आपे. आ अध्ययन वडे समजववामां आवये के के अनुचित अथवा तो उचित मार्गमां प्रवृत्त थाय छे, तेमने मैताना करेलां केमो अनुसार अर्थ तेमज अनर्थनी प्राप्ति परंप. लोगववी पडे छे. आ करवुथी के आ अध्ययन पहिला अध्ययन पछी आरंभवामा आयुं छे. आ भील अध्ययनने पहिलुं सत्र आ छे:—‘जइणं भंते’ ! इत्यादि !

टीका—जंबूस्वामी सुधर्मास्वामीने पूछे छे—(जइ) जे (णं) निश्चित रूपे (भंते) हे भर्तृ ! (समणेणं भगवया महावीरेणं पढमस्स नायज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते) श्रमण भगवान् महावीर पहिला ‘ज्ञाताध्ययन’ ने अर्थ उपर कहेला सुजण स्पष्ट कये छे, तो (वीयस्सणं भंते ! नायज्झयणस्स के अट्ठे पणत्ते) भील ज्ञाताध्ययनने तेमजे कइ रीते लावार्थ समजववो छे ? जंबूस्वामीने आ प्रश्नने अश्र सांख्यीने श्री सुधर्मास्वामीजे तेमने कहुं के (एवं खलु जंबू) हे जंबू तंगारा प्रश्नने जवाब

गुणशिलकस्य चैव्यस्य 'अदूरसामंते' नातिदूरे नात्यासन्नं, अत्र खलु
महदेकं जीर्णोद्यानं चाप्यासीत्, तन्कीदृशमित्याह—'विणट्टदेवउले' विनट्ट
देवकुलं—विनट्टव्यन्तरायतनं, 'परिसडियतोरणघरे' परिशटिततोरण
गृहं—परिशटिता नि नष्टमायाणि तोरणानि बहिर्योराणि गृहाणि, 'माकार
द्वारव्यन्तरायतनसम्बन्धीनि गृहाणि यत्र तत्तथा । 'नाणविहगुच्छगुल्मलया-
वल्लिवच्छच्छादए' नानाविधगुच्छगुल्मलयावल्लीवृक्षच्छादितं—नानाविधा
ये गुच्छाः=कार्पासी जपाकुसुमप्रभृतयः, गुल्माः=वंशजाली प्रभृतयः, लताः
अशोकलतादयः, वभ्यः=त्रपुपीप्रभृतयः वृक्षाः=आम्राश्यः तैश्छादितं यत्तत्तथा ।
'अणेगवालमयसंकणिज्जे' अनेकव्यालशतशङ्कनीयम्, अनेकैः=नानाविधे व्याल-
शतैः=सर्पादि श्वापदशतैः शङ्कनीयं=मयावहं चाप्यासीत् ।

वर्णन पहिले क्रिया गया है। (तस्स गं रायगिहस्स नयरस्स बहिया उत्तर-
पुरत्थिमे दिस्सीभाए गुणसिलए नामं चेइए होत्था) उस राजगृह नगर के
बाहर की ओर उत्तर पूर्व के दिग्विभाग में अर्थात् ईशानकोणमें गुणशिलक
नामका उद्यान था। (वन्नओ) इसका वर्णन पहिले क्रिया गया है। (तस्स
गं गुणसिलयस्स चेइयस्स अदूरसामंते एत्थणं महंएगे जिणुज्जाणे यावि
होत्था) उस गुणशिलक उद्यान के न अति समीप और न अति दूर एक
और भी बड़ा भारी जीर्ण उद्यान था। (विणट्टदेवउले परिसडियतोरणघरे
नाणाविहगुच्छगुल्मलयावल्लीवच्छच्छादए अणेगवालसयसंकणिज्जे या
वि होत्था) इसमें जो देवकुल था वह कभी का नष्ट हो चुका था।

सांकेयि—(तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नयरे होत्था) तेक्षणे अने ते समये
राजगृह नामे ओक नगर હતું (વન્નઓ) તે નગરનું વર્ણન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે.
(તસ્સ ગં રાયગિહસ્સ નયરસ્સ બહિયા ઉત્તરપુરત્થિમે દિસીંભાએ ગુણસિલए
નામં ચેइए होत्था) રાજગૃહ નગરની બહાર ઉત્તર પૂર્વ દિશામાં એટલે ઇશાનકોણમાં
ગુણશીલક નામે ઉદ્યાન હતો. (વન્નઓ) આ ઉદ્યાનનું વર્ણન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે.
(તસ્સગં ગુણસિલયસ્સ ચેइયસ્સ અદૂરસામંતે એત્થણં મહંએગે જિણુજ્જાણે યાવિ હોત્થા)
ગુણશીલક ઉદ્યાનની વધારે પાસે પણ નહિ અને વધારે દૂર પણ નહિ એવું એક
બીજો બહુ ઉદ્યાન હતું. (વિણટ્ટદેવઉલે પરિસડિયતોરણઘરે નાનાવિહગુચ્છ
ગુલ્મલયાવલ્લિવચ્છાદए અણેગવાલસયસંકણિજ્જે યાવિ હોત્થા) આખાું દેવકુળ
અંતરાયન ક્યારનું એ નાશ પામ્યું હતું. દેવકુળનો અર્થ અહીં અન્તરનું આયતન

तस्य खलु जीर्णोद्यानस्य बहुमध्यदेशभागे अत्र खलु महानेको भग्नकुशापीन् तस्य खलु भग्नरूपस्य अदूरसामंते अत्र खलु महानेः 'मालुया कच्छए' मालुहा कक्षकः मालुकाः एकास्थिफल वृक्षविशेषास्तेषां कक्षकः=गानं वनम् चाप्यासीत् । मकोदशः १ इत्याह—'किण्हे किण्ढो भासे' कृष्णः कृष्णावभासः, तत्र-कृष्णः=कृष्णवर्ण-

देवकुल का अर्थ यहां व्यंतर का आयतन है। इस व्यन्तरायतन संवन्धी जितने घर थे उन सबके भी यहाँ चहिद्द्वार नष्टपाय हो चुके थे। यह जीर्ण उद्यान अनेक प्रकार के गुच्छों से कपास के जपा पुष्पों आदि के गुच्छों से—वंशजाली आदि गुल्मों से अशोकलता आदि लताओं से त्रपुगी (करुड़ो) आदि वृक्षों से, आम्र आदि वृक्षों से, आच्छादित हो रहा था। इसमें अनेक प्रकार के सँकड़ों सर्प इधर से ऊधर फिरते रहते थे अतः उनके द्वारा यह विशेष भयंकर बना हुआ था। (तस्स णं जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे भग्गकूवए यावि होत्था) इस जीर्ण उद्यान के ठीक मध्य भाग में एक बड़ा भारी भग्न जीर्ण हुआ कुँआ भी था (तस्स णं भग्गकूवस्य अदूरसामंते एत्थ णं महं एगे मालुया कच्छए यावि होत्था) उस भग्न कुँए के न अति समीप और न अति दूर—पास में मालुका वृक्षों का बहुत बड़ा गहन वन था। एकास्थिरुत्त वाजे वृक्ष विशेषों का नाम मालुका है (किण्हे किण्ढो भासे जाव रम्मे महामेहनिउरंवभूए बहूहि रुक्खे हि य गुच्छे हि य गुम्मे

छे. आ व्यन्तरायतनानां जेटलां घर हुतां, ते अधाना जडारना इरवान नष्टप्राय थध गया हुता. जूतु' उद्यान धणी लानना शुब्धि.—जेटले के पक्षु अने जपापुष्प वगेरेना शुब्धि—वंशजाली वगेरे शुब्धो अशोकलता वगेरे लताओ, त्रपुली (झकडी) वगेरेनी वेधो, आम्र वगेरे वृक्षाथी ढंअओलो हुतो. धणी लतना सेंकडो साप आ उद्यानभां आभथी तेम विचरता रहेता हुता. ओथी आ उद्यान सविशेषलयंकर लागतुं हुतुं. (तस्सणं जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थणं एगे भग्गकूवए यावि होत्था) आ जूता उद्याननी ठीक मज्झोवज्ज ओक मोटो लअकूप नामे ओक एवुं थयेवो कूवो हुतो. (तस्स णं भग्गकूवस्स अदूरसामंते एत्थणं महं एगे मालुया कच्छए याविहोत्था) ते लअ कूवानी वधारे हर पक्षु नडि अने वधारे नएक पक्षु नडि कडेवाय ओवुं पासे मालुका वृक्षानुं मोटुं सधन वन हुतुं. ओकास्थिरुत्त वृक्ष विशेषतुं नाम मालुका छे. (किण्हे किण्ढो भासे जाव रम्मे महामेहनिउरंवभूए बहूहि रुक्खे हि य गुच्छे हि य

गुणशिलकस्य चैत्यस्य 'अदूरसामंते' नातिदूरं नात्यासन्ने, अथ खलु
महदेकं जीर्णोद्यानं चाप्यासीत्, तन्कीदृशमित्याह—'विणट्टदेवउले' विनष्ट
देवकुलं—विनष्टव्यन्तरायतनं, 'परिसडियतोरणघरे' परिस्रष्टिततोरण
गृहं—परिस्रष्टिता नि नष्टमायाणि तोगणानि बहिर्याराणि गृहाणि, माकार
द्वारव्यन्तरायतनसम्बन्धीनि गृहाणि यत्र तत्तथा । 'नाणाविहगुच्छगुल्मलया
वह्लिवच्छच्छाडए' नानाविधगुच्छगुल्मलयावह्लीवृक्षच्छादितं—नानाविधा
ये गुच्छाः=कार्पासी जपाकुसुमप्रभृतयः, गुदनाः=वंशजाली प्रभृतयः, लताः
अशोकलतादयः, वभ्यः=त्रपुपीप्रभृतयः वृक्षाः=आम्रादयः तैश्छादितं यतस्तथा ।
'अणेगवालमयसंकणिज्जे' अनेकग्यालशतशङ्कनीयम्, अनेकैः=नानाविधै व्याल-
शतैः=सर्पादि श्वापदशतैः शङ्कनीयं=मयावहं चाप्यासीत् ।

वर्णन पहिले क्रिया गया है। (तस्स णं रायगिहस्स नयरस्स बहिया उत्तर-
पुरत्थिमे दिसीभाए गुणसिलए नामं चेइए होत्था) उस राजगृह नगर के
बाहर की और उत्तर पूर्व के दिग्विभाग में अर्थात् ईशानकोणमें गुणशिलक
नामका उद्यान था। (वन्नओ) इसका वर्णन पहिले किया गया है। (तस्स
णं गुणसिलयस्स चेइयस्स अदूरसामंते एत्थणं महंगे जिणुज्जाणे यावि
होत्था) उस गुणशीलक उद्यान के न अति समीप और न अति दूर एक
और भी बड़ा भारी जीर्ण उद्यान था। (विणट्टदेवउले परिसडियतोरणघरे
नाणाविहगुच्छगुल्मलयावह्लीवच्छच्छाडए अणेगवालसयसंकणिज्जे या
वि होत्था) इसमें जो देवकुल था वह कभी का नष्ट हो चुका था।

सांभणे—(तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नयरे होत्था) तेक्षणे अने ते सभये
राजगृह नामे ओक नगर इत्तुं (वन्नओ) ते नगरत्तुं पव्वुन पडेवां करवाभां आण्णुं छे।
(तस्स णं रायगिहस्स नयरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए गुणसिलए
नामं चेइए होत्था) राजगृह नगरणी जडार उत्तर पूर्व दिशाभां ओटवे ध्यानकोणभां
गुणशीलक नामे उद्यान इत्तो. (वन्नओ) आ उद्यानत्तुं पव्वुन पडेवां करवाभां आण्णुं छे।
(तस्स णं गुणसिलयस्स चेइयस्स अदूरसामंते एत्थणं महंगे जिणुज्जाणे यावि होत्था)
गुणशीलक उद्यानणी वधारे पासे पव्वु नडि अने वधारे इर पव्वु नडि ऐवुं ओक
पीणे जूत्तुं उद्यान इत्तुं. (विणट्टदेवउले परिसडियतोरणघरे नाणाविहगुच्छ
गुल्मलयावह्लिवच्छाडए अणेगवालसयसंकणिज्जे यावि होत्था) आभात्तु देवकुल
व्यंतरायन क्यारत्तुं ओ नाथ पाण्णुं इत्तुं. इवकुणने अर्थ अड्डी व्यन्तरत्तुं आयतन

तस्य खलु जीर्णोद्यानस्य बहुमध्यदेशभागे अत्र खलु महानेको भग्नकुशाधीनं तस्य खलु भग्नकूपस्य अदूरसामंते अत्र खलु महानेः 'मालुया कच्छए' मालुका कक्षकः मालुकाः एकास्थिफल वृक्षविशेषास्तेषां कक्षकः=गहनं वनम् चाप्यासीत् । मकोदशः १ इत्याह—'किण्हे किण्ठो भासे' कृष्णः कृष्णावभासः, तत्र-कृष्णः=कृष्णवर्ण-

देवकुल का अर्थ यहां व्यंतर का आयतन है । इस व्यन्तरायतन संवन्धी जितने घर थे उन सबके भी यहां चहिद्द्वार नष्टप्राय हो चुके थे । यह जोर्ण उद्यान अनेक प्रकार के गुच्छों से कपास के जपा पुष्पों आदि के गुच्छों से—वंशजाली आदि गुल्मों से अशोकलता आदि लनाओं से चपुती (करुड़ो) आदि वेगैले, आम्र आदि वृक्षों से, आच्छादित हो रहा था । इसमें अनेक प्रकार के सँकड़ों सर्प इधर से ऊधर फिरते रहते थे अतः उनके द्वारा यह विशेष भयंकर बना हुआ था । (तस्स णं जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे भग्नकूपए यावि होत्था) इस जीर्ण उद्यान के ठीक मध्य भाग में एक बड़ा भारी भग्न जीर्ण हुआ कुंआ भी था (तस्स णं भग्नकूपस्य अदूरसामंते एत्थ णं महं एगे मालुया कच्छए यावि होत्था) उस भग्न कुँए के न अति समीप और न अति दूर—पास में मालुका वृक्षों का बहुत बड़ा गहन वन था । एकास्थिकरुक् यात्रे वृक्ष विशेषों का नाम मालुका है (किण्हे किण्ठो भासे जाव रम्मे महामेहनिउरंवभूए बह्विं रुक्खे हि य गुच्छे हि य गुम्मे

छे. आ व्यन्तरायतननां जेट्ठां धर इत्तां, ते जधाना जहारना इत्थाना नष्टप्राय यथ गथा इत्ता. जूतुं उद्यान धरणी जलना गुच्छा.—जेट्ठे के वधु अने जपापुष्प वगेरेना गुच्छा—वंशजाली वगेरे गुच्छेमा अशोकलता वगेरे लताओ, त्रपुली (झकड़ी) वगेरेनी वेदो, आम्र वगेरे वृक्षोथी ढंकाओलो इतो. धरणी जलना सेंकडो साप आ उद्यानमां आभथी तेम विथरता रहेता इत्ता. ओथी आ उद्यान सविशेषलयंकर लागतुं इत्तुं. (तस्सणं जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थणं एगे भग्नकूपए यावि होत्था) आ जूता उद्याननी ठीक वत्थोवत्थ ओक मोटो भग्नकूप नामे ओक लुब्धं थयेवो दूवो इतो. (तस्स णं भग्नकूपस्य अदूरसामंते एत्थणं महं एगे मालुया कच्छए यावि होत्था) ते भग्न दूवानी वधारे दूर पल्लु नहि अने वधारे नल्लु पल्लु नहि डडेवाय ओवुं पासे मालुका वृक्षानुं मोटुं सधन वन इत्तुं. ओकास्थिकरुक् वृक्ष विशेषणुं नाम मालुका छे. (किण्हे किण्ठो भासे जाव रम्मे महामेहनिउरंवभूए बह्विं रुक्खे हि य गुच्छे हि य

गुणशिलकस्य चैत्यस्य 'अदूरसामंते' नातिदूरे नात्यासन्ने, अत्र खलु
महदेकं जीर्णोद्यानं चाप्यासीत्, तत्कीदृशमित्याह—'विणट्टदेवउले' विनष्ट
देवकुलं—विनष्टव्यन्तरायतनं, 'परिसडियतोरणघरे' परिस्रष्टिततोरण
गृहं—परिस्रष्टिता नि नष्टमायाण त्तोणानि बहिर्याणि गृहाणि, माकार
द्वारव्यन्तरायतनसम्बन्धीनि गृहाणि यत्र तत्तथा । 'नाणाविहगुच्छगुल्मलया
वलिक्कच्छाए' नानाविधगुच्छगुल्मलयावलीवृक्षच्छादितं—नानाविधा
ये गुच्छाः=कापीसी जपाकुसुमप्रभृतयः, गुल्माः=वंशजाली प्रभृतयः, लताः
अशोकलतादयः, वन्ध्याः=त्रपुपीप्रभृतयः वृक्षाः=आम्रादयः तैश्छादितं यत्तत्तथा ।
'अणेगवालसयसंक्कणिज्जे' अनेकग्यालगतशङ्कुनीयम्, अनेकैः=नानाविधै व्याल-
शतैः=सर्पादि श्वापदशतैः शङ्कुनीयं=भयावहं चाप्यासीत् ।

वर्णन पहिले क्रिया गया है। (तस्स णं रायगिहस्स नयरस्स बहिया उत्तर-
पुरत्थिमे दिसीभाए गुणसिलए नामं चेइए होत्था) उस राजगृह नगर के
बाहर की ओर उत्तर पूर्व के दिग्विभाग में अर्थात् ईशानकोणमें गुणशिलक
नामका उद्यान था। (वन्नओ) इसका वर्णन पहिले क्रिया गया है। (तस्स
णं गुणसिलयस्स चेइयस्स अदूरसामंते एत्थणं महंएगे जिणुज्जाणे यावि
होत्था) उम गुणशीलक उद्यान के न अति समीप और न अति दूर एक
और भी बड़ा भारी जीर्ण उद्यान था। (विणट्टदेवउले परिसडियतोरणघरे
नाणाविहगुच्छगुल्मलयावलीवच्छाए अणेगवालसयसंक्कणिज्जे या
वि होत्था) इसमें जो देवकुल था वह कभी का नष्ट हो चुका था।

सांभणो—(तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नयरे होत्था) तेक्षणे अने तेसअये
राजगृह नामे ओक नगर उतुं (वन्नओ) ते नगरतुं वल्लुन पडेलो करवाभां आबुं छे.
(तस्स णं रायगिहस्स नयरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए गुणसिलए
नामं चेइए होत्था) राजगृह नगरनी गहारे उत्तर पूर्व दिशाभां ओटले छथानकोणभां
गुलुशीलक नामे उद्यान उतो. (वन्नओ) आ उद्यानतुं वल्लुन पडेलो करवाभां आबुं छे.
(तस्सणं गुणसिलयस्स चेइयस्स अदूरसामंते एत्थणं महंएगे जिणुज्जाणे यावि होत्था)
गुलुशीलक उद्याननी बधारे पासे पल्लु नडि अने बधारे दूर पल्लु नडि ओतुं ओक
भीले अबुं उद्यान उतुं. (विणट्टदेवउले परिसडियतोरणघरे नाणाविहगुच्छ
गुल्मलयावलिक्कच्छाए अणेगवालसयसंक्कणिज्जे यावि होत्था) आभातु देवकुल
अंतस्थान कथारतुं ओ नाथ पाबुं उतुं. देवकुलनो अर्थ अडीं अन्तरतुं आयतन

तस्य खलु जीर्णोद्यानस्य बहुमध्यदेशभागे अत्र खलु महानेको भग्नकुशामीन् तस्य खलु भग्नरूपस्य अदूरसामंते अत्र खलु महानेः 'मालुया कच्छए' मालुहा कक्षकः मालुकाः एकास्थिफल वृक्षविशेषास्तेषां कक्षकः=गहनं वनम् चाप्यासीत् । मकोदशः १ इत्याह—'किण्हे किण्डो भासे' कृष्णः कृष्णावभासः, तत्र-कृष्णः=कृष्णवर्ण-

देवकुल का अर्थ यहां व्यंतर का आयतन है। इस व्यन्तरायतन संवन्धी जितने घर थे उन सबके भी यहां चहिद्वार नष्टपाय हो चुके थे। यह जीर्ण उद्यान अनेक प्रकार के गुच्छों से कपास के जपा पुष्पों आदि के गुच्छों से—वंशजाली आदि गुल्मों से अशोकलता आदि लताओं से त्रपुली (करुड़ो) आदि वृक्षों से, आम्र आदि वृक्षों से, आच्छादित हो रहा था। इसमें अनेक प्रकार के सँकड़ों सर्प इधर से ऊधर फिरते रहते थे अतः उनके द्वारा यह विशेष भयंकर बना हुआ था। (तस्स णं जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेमभाए एत्थ णं महं एगे भग्गकूवए यावि होत्था) इस जीर्ण उद्यान के ठीक मध्य भाग में एक बड़ा भारी भग्न जीर्ण हुआ कुंआ भी था (तस्स णं भग्गकूवस्य अदूरसामंते एत्थ णं महं एगे मालुया कच्छए यावि होत्था) उस भग्न कुँए के न अति समीप और न अति दूर—पास में मालुका वृक्षों का बहुत बड़ा गहन वन था। एकास्थिरूप वाले वृक्ष विशेषों का नाम मालुका है (किण्हे किण्डो भासे जाव रस्से महामेहनिउरंवभूए बहूहि रुक्खे हि य गुच्छे हि य गुम्मे

छे. आ व्यन्तरायतननां जेटलां घर इत्यां, ते जधाना जडारना हरवाज नष्टप्राय थछ गया होता. जूतुं उद्यान धव्णी जानना शुब्धे. —जेटले के पक्षु अने जपापुष्प वगेरेना शुब्धे—वंशजाली वगेरे गुम्मे अशोकलता वगेरे लताओ, त्रपुली (करुड़ी) वगेरेनी वेवो, आम्र वगेरे वृक्षोथी ढंअओलो हुतो. धव्णी जतना सेंडो साय आ उद्यानभां आभथी तेम विचरता रहता हुता. ओथी आ उद्यान सविशेषलयंकर लागतुं हुतुं. (तस्सणं जिन्नुज्जाणस्स बहुमज्झदेमभाए एत्थणं एगे भग्गकूवए यावि होत्था) आ जूता उद्याननी ठीक मज्झोवज्ज ओक मोटो लज्जकूप नामे ओक लुब्धं थयेवो हुवेो हुतो. (तस्सणं भग्गकूवस्स अदूरसामंते एत्थणं महं एगे मालुया कच्छए यावि होत्था) ते लज्ज हुवानी वधारे हर पक्षु नडि अने वधारे नलुक पक्षु नडि डडेवाय ओतुं पासे मालुका वृक्षोतुं मोटुं सधन वन हुतुं. ओकास्थिरूप वृक्ष विशेषतुं नाम मालुका छे. (किण्हे किण्डो भासे जाव रस्से महामेहनिउरंवभूए बहूहि रुक्खे हि य गुच्छे हि य

अञ्जनवत्, कृष्णावभासः=कृष्णप्रभः स्वरूपेण कृष्णवर्णएवावभासते, यावद्
 रम्यः=सुन्दरः 'महामेघनिउरंवभूण' महामेघनिकुम्भवभूतः, महामेघः=वर्षाकाल
 भावि मेघस्तस्य निकुम्भवः=समूहः तथाभूतः-यनीभूतः नूतनधनोपम इत्यर्थः
 नीलधर्मसाम्यात् । बहुभिर्दृष्टैश्च, गुच्छैश्च, गुल्मैश्च, लताभिश्च, वल्लीभिश्च,
 कुशैश्च=रश्मिभ्यश्च, स्थाणुकैश्च=ऊर्ध्वकीलकैश्च 'डुंठाइति भाषायाम्' संज्ञाः=
 व्यासः, परिच्छन्नः=विशेषेण समाच्छादितः 'अंतो जुसिरे' अन्तः=मध्ये
 शुशिरः सावकाशत्वात् 'वाहि गंभीरे' बाहिर्गम्भीरः, अतिगहनत्वेन दष्टेरपसृत-
 त्वात्, अनेक न्यालशतशङ्कुनीयः-अनेकशतसर्पादिभिः शङ्कुनीयः-मयजनकश्चा-
 प्यासीत् ॥ सू. १॥

मूलम्—तत्थ णं रायगिहे नयरेधण्णे नामं सत्थवाहे अञ्जुं दित्तं
 जाव विच्छड्डियविउलभत्तपाणे, तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स
 भद्दा नामं भारिया होत्था, सुकुमालपाणिपाया अहीणपडिपुण्णपंचि-

हि य लया हि य वल्लि हि य कुए हि य खाणुएहि य मच्छन्ने पलिच्छन्ने
 अंतो जुसिरे बाहि गंभीरे अणेगवालसयसंकणिज्जे यावि होत्था) यह
 गहन वन कज्जल की तरह कृष्ण वर्णवाला था स्वरूप से ही इसकी प्रमा
 कृष्ण थी। यावत् यह सुन्दर था। वर्षाकाल भावी मेघ के समूह जैसा
 यह नीला था। अनेक प्रकार के वृक्षों से, अनेक प्रकार के गुल्मों से, अनेक
 प्रकार की लताओं से, अनेक प्रकार की वल्लियों से, अनेक प्रकार के कुशों
 से, अनेक विध स्थाणुओं से यह बहुत अधिक रूप में आच्छादित हो रहा था।

बीच में यह सावकाश होने से पोला था। बाहिर गहन होनेकी वजह
 से गंभीर था। अनेक प्रकार के सैकड़ों सर्पों से यह भी महान भया-
 नक था। सूत्र "१"

गुम्मे हि य लया हि य वल्ली हि य खाणुएहि य सच्छन्ने पलिच्छन्ने अंतो जुसिरे
 बाहि गंभीरे अणेगवालसयसंकणिज्जे यावि होत्था) आ सधनवन मेघनी
 जेम काणा रंगतुं हुतुं. आनी प्रभा स्वइपथी ज काणी हुती. वपोकाणना मेघ जेवा
 ते नीला रंगतुं हुतुं. धल्ली अतनां दुहो, धल्ली अतना गुल्मो, धल्ली अतनी लताओ
 धल्ली अतनी वल्लीओ, धल्ली अतना इलो धल्ली अतना स्थाणुओथी आ उद्यान
 सधन इपे ढंकायेतुं हुतो. वच्चे भावी जच्चा हुती पल्लु आगूणांजू येमेर वृक्षावली-
 ने दीधे ते सधन हुतुं. धल्ली अतना सेंडेडा सापोथी आ पूण ज भयकारी लागतुं
 हुतुं. सूत्र ॥ १ ॥

दियसरीरा लक्खणवंजणगुणोववेया माणुम्माणप्पमाणपडिपुन्न-
सुजायसव्वंगसुंदरंगा ससिसोमोगारा कंता पियदंसणा सुरूवा
करयल-परिमियतिवलियमज्झा कुंडल्लुल्लिहियगंडलेहा कोमुइ-रय-
णियर-पडिपुण्णसोमवयणा सिंगारागारचारुवेसा जाव पडिरूवा
वंझा आवयाउरी जाणुकोप्परमाया यावि होत्था ॥सू. २॥

टीका-‘तएणं रायगिहे’ ति-तत्र खलु राजगृहे नगरे धन्यनामा
सार्थवाहः=जनसमूहनायकः गरिम-धरिम-मेय, परिच्छेद्यरूपं क्रयाणकद्रव्य-
जातं गृहीत्या लाभार्थमन्यदेशं व्रजन् सहागतवणिगूजनस्य योगक्षेमचिन्तया
परिपालक इति भावः अड्ढे ‘आदयः-ऋद्ध्यादिपूर्णः ‘दित्ते’ दीप्तः-सच्चरित्रेण
उज्ज्वलः यावद् विच्छर्दितविपुलभक्तपानः। यावच्छब्देनायमर्थो ग्रहीतव्यः-
विस्तीर्णविपुल भवनशयनासनयानवाहनाकीर्णः, बहुधनयद्भुजातरपरजनः, आयो-

तत्थ णं रायगिहे नगरे इत्यादि

टीकार्थ- (तत्थ णं रायगिहे नगरे) उस राजगृह नगरमें (धन्नेनामं सत्थवा
हे) धन्य नाम के सार्थवाह थे। जब ये गरिम धरिम मेय एवं परिच्छेद्य
रूप क्रयाणक द्रव्य समूह लेकर लाभप्राप्ति की इच्छा से परदेश जाते थे
तो इनके साथ जो और भी वर्णकजन होते उनके ये योगक्षेमकारक
होते थे। उनकी हरएक प्रकार की चिन्ता रखते थे। ये (अड्ढे)
ऋद्ध्यादि से परिपूर्ण थे। (दित्ते) सच्चरित्र से उज्ज्वल थे। (जाव विच्छ-
द्वियविपुलभक्तपाणे) यावत् विच्छर्दित विपुलभक्तपानवाले थे--
यहां यावत् शब्द से इनके विषय में इतना और समझ लेना चाहिये कि
इनके भवन बहुत विस्तीर्ण थे, शयन, आसन, यान, वाहन, भी इनके

‘तत्थणं रायगिहे नगरे’ इत्यादि ॥

टीकार्थ- (तत्थणं रायगिहे नगरे) तेसज गृह नगरमां (धन्ने नामं सत्थवाहे)
धन्य नामे सार्थवाह होता. न्यारे तेओ गरिम, धरिम, मेय अने परिच्छेद्य रूप क्रयाणक द्रव्य-
नधि लधने लाभनी छिन्नाथी विदेश जाता होता त्यारे ओमनी साथे जे पीला वलुं कजन
रहेता तेमना भाटे तेधन्य सार्थवाह अधी रीते कुशण करनार होता. तेमनी दरेक नतानी
संभाण सभता होता होता. ओ (आड्ढे) ऋद्धि वगेरेथी संपूर्ण पळे पूर्ण होता.
(दित्ते) सच्चरित्र्यथी उज्ज्वल होता, (जाव विच्छर्द्वियविपुलभक्तपाणे) यावत्
विच्छर्दित विपुल भक्त पान वा. होता. अड्ढा जे यावत् शब्द आओ छे तेने
अर्थ आ प्रभाछे छे के ओमनां भवन गहुव विशाण होतां. शयन, आसन, यान,

अञ्जनवत्, कृष्णावभासः=कृष्णप्रभः स्वरूपेण कृष्णवर्णपद्मावभासते, यावद्
 रम्यः=सुन्दरः 'महामेघनिउरंवभूत्' महामेघनिकुम्भवभूतः, महामेघः=वर्षाकाल
 भावि मेघस्तस्य निकुम्भवः=समूहः तथाभूतः-घनीभूतः नूतनधनोपम इत्यर्थः
 नीलधर्मसाम्यात् । घट्टभिर्दृष्टैश्च, गुच्छैश्च, गुल्मैश्च, लताभिश्च, वल्लीभिश्च,
 कुशैश्च=द्वैभ्यश्च, स्थाणुकैश्च=ऊर्ध्वकीलकैश्च 'कुंठादिति भाषायाम्' संछन्नाः=
 व्याप्तः, परिच्छन्नः=विशेषेण समाच्छादितः 'अंतो जुसिरे' अन्तः=मध्ये
 शुशिरः सावकाशत्वात् 'वाहिं गंभीरे' यद्भिर्गंभीरः, अतिगहनत्वेन दृष्टेरपसृत-
 त्वात्, अनेक व्यालशतशङ्कुनीयः-अनेकशतसर्पादिभिः शङ्कुनीयः-मयजनकश्चा-
 प्यासीत् ॥ सू. १॥

मूलम्—तत्थ णं रायगिहे नयरेधण्णे नामं सत्थवाहे अहं दित्तं
 जाव विच्छड्डियविउलभत्तपाणे, तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स
 भद्वा नामं भारिया होत्था, सुकुमालपाणिपाया अहीणपडिपुण्णपंचि-

हि य लया हि य वल्लि हि य कुण हि य खाणुएहि य मच्छन्ने पलिच्छन्ने
 अंतो जुसिरे वाहिं गंभीरे अणेगवालसयसंकणिज्जे यावि होत्था) यह
 गहन वन कज्जल की तरह कृष्ण वर्णवाला था स्वरूप से ही इसकी प्रभा
 कृष्ण थी। यावत् यह सुन्दर था। वर्षाकाल भारी मेघ के समूह जैसा
 यह नीला था। अनेक प्रकार के वृक्षों से, अनेक प्रकार के गुल्मों से, अनेक
 प्रकार की लताओं से, अनेक प्रकार की वल्लियों से, अनेक प्रकार के कुशों
 से, अनेक विध स्थाणुओं से यह बहुत अधिक रूप में आच्छादित हो रहा था।

धीच में यह नावकाश होने से पोला था। बाहिर गहन होनेकी वजह
 से गंभीर था। अनेक प्रकार के सैकड़ों सर्पों से यह भी महान भया-
 नक था। सूत्र "१"

गुम्मे हि य लया हि य वल्ली हि य खाणुएहि य सच्छन्ने पलिच्छन्ने अंतो जुसिरे
 वाहिं गंभीरे अणेगवालसयसंकणिज्जे यावि होत्था) आ सधनवन भेशनी
 नेम डाणा रंगत्तुं हत्तुं. आनी प्रसा स्वइपथी न डाणी हत्ती. वर्षाडाणना मेघ नेवा
 ते नीला रंगत्तुं हत्तुं. धल्ली अतनां दृक्षे, धल्ली अतना गुल्मे, धल्ली अतनी लताओ
 धल्ली अतनी वल्लीओ, धल्ली अतना द्वयो. धल्ली अतना स्थाणुओथी आ उद्यान
 सधन इपे ढंअयेत्तुं हत्तो. वच्चे आदी नच्चा हत्ती पत्तुं आणूणाणू येमेर वृक्षावली-
 ने वीधि ते सधन हत्तुं. धल्ली अतना सेकडा सापोथी आ थूल न सधकारी लागत्तुं
 हत्तुं. सूत्र ॥ १ ॥

ફરેવારુપાણિ, 'વંજન' વ્યજ્જનાનિ, વ્યજ્યન્તે-સૂચ્યન્તે ભાગ્યોદયા યેન્નાનિ
તિલમપારીનિ 'ગુણ' ગુણાઃ સૌશીલ્યપાતિવ્રત્યાદયમ્તૈઃ ઉવવેયા' ઉપપે ૧-
સમન્વિતા, તત્ર ઉપ અપદ્વિયુપસર્ગયોઃ 'અપ' ઇત્યત્રાઘટ કારસ્યપૃષ્ઠાદરાદિ-
ત્વાદ્રોષઃ। 'માણુમ્માણપ્પમાણપહિપુન્નસુજાયસચ્ચંગસુંદરંગા' માનોન્માન-
પ્રમાગપનિર્ગુણતપર્યાફુન્દરાદ્વી, તત્ર= 'માગ' માનં=જલદ્રોણપ્રમાણતા,
તથાહિ-પરિપૂર્ણજઞ્ઞકુણ્ડે યસ્ય પુરુષસ્ય યસ્યાઃ સ્ત્રિયો વા પ્રવેશે સ્તિ યદિ
દ્રોણપરિમિતં જલ યદિર્નિસ્સરતિ તદા સ પુરુષઃ સા સ્ત્રી વા માનપાત્તો-
ચ્યતે, માનપાત્તયાઃ શરીરાવગાહનાવિશેષો માનમિત્યુચ્યતે। 'ઉન્માગ'
ઉન્માનપ્, અર્ધમારપ્રમાણતા સાચેત્યમ્-તુલાયામારોપિતો નરો નારી વા યથ
ધેમારપ્રમાણા મવનિ તદા સ પુરુષઃ સા સ્ત્રી વા ઉન્માનપાત્તા નિગદ્યતે
'પ્રમાગ' પ્રમાણ સ્વાનુકેરપ્તોત્તરગતોચ્છાયઃ, ઇત્યં ચ-માનં ચોન્માનં ચ પ્રમાણં
યુક્ત ધા। (લક્ષણ) સે ત્રિગ્ધા, ધન આદિ કી સૂચક કરસ્થશુભ રેત્વા રૂપ
ગિહ્તો સે, તથા ભાગ્યોદય સૂચક તિલમસા આદિ રૂપ વ્યંજનોં સે યદ
સમન્વિત ધી। સુશીલતા તથા પાતિવ્રત આદિ ગુણોં કા યદ ઘર ધી।
(માણુમ્માણપ્પમાણપહિપુન્નસુજાયસચ્ચંગસુંદરંગા) માન, ઉન્માન ઔર પ્રમાણ
ઇન કે અનુસાર ઇસકે સમસ્ત અંગપૂર્ણ થે। પર્ણિ પૂર્ણ જઞ્ઞ કુણ્ડ મેં પ્રવેશ
કરને પર દ્રોણ પરિમિત જલ યદિ ઉસ કુંડ સે વાહર નિકલ આવે
તો વદ પુરુષ અથવા સ્ત્રી માન વાલી કહી જાતી હૈ। અર્થાત્ ઇસકે શરીર
ધી અવગાહના ઇતને માન પ્રમાણ ધી। તુલા પર આરોપિત હોને પર જિમ
સ્ત્રી અથવા પુરુષ કા વજન અર્ધમાર પ્રમાણ નિકલતા હૈ। તો વદ ઉન્માન
પ્રાપ્ત કહલાતા હૈ। અને અંગુલોંતે ૧૦૮ અંગુલ વાલી વતે હૂર કુંવાઈ
ધન વગેરેને સૂચવનારી હાથની શુભરેખાઓથી તેમજ ભાગ્યોદયના સૂચક તલમપા
વગેરે રૂપ વ્યંજનોથી તે સંપન્ન હતી. શાલીનતા તેમજ પાતિવ્રત્ય વગેરે ગુણોંતુ
તે ઘર હતી. (માણુમ્માણપ્પમાણપરિપુન્નસુજાયસચ્ચંગસુંદરંગા) માન,
ઉન્માન અને પ્રમાણ સહિત તેનાં ગદાં અંગો પૂર્ણ હતાં. સંપૂર્ણ રૂપથી ભરેલા
પાણીના કુંડમાં પ્રવેશ્યા બાદ જો દ્રોણ પરિમાણ જેટલું પાણી તે કુંડમાંથી બહાર
નીકળે તો તે પુરુષ અથવા સ્ત્રી 'માન' વાળી કહેવામાં આવે છે. જેટલે કે તેમના
શરીરની અવગાહના અમુક જેટલા માન પ્રમાણવાળી હતી. ત્રાજવાં ઉપર ચઢીને
જે સ્ત્રી અથવા પુરુષ પોતાનું વજન કરાવતાં તેમનું વજન અર્ધમાર પ્રમાણ જેટલું
થાય તો તે ઉન્માન પ્રાપ્ત કહેવાય છે. પોતાના આંગળથી જ માપ કરવામાં આવે
અને તે પુરુષ કે સ્ત્રી એકસો આઠ જેટલા આંગળના માપ જેટલી થાય તો તે
પ્રમાણ પ્રાપ્ત કહેવાય છે. એવી રીતે માન, ઉન્માન અને પ્રમાણ યુક્ત તેમના દરેકે

ગમયોગસમયુક્તઃ, આયોગેન દ્વિગુણાદિલિપ્સયા પ્રયોગઃ અધર્મણાં સચિત્રે દ્રવ્યસ્ય વિતરણં, તેન યુક્તઃ। વિચ્છર્દિતવિપુલભક્તપાનઃ=યસ્ય ગૃહે ભોજના-વશિષ્ટૈર્વદ્ભિરન્નપાનૈઃ શુધાર્તાનામનેકહીનદીનાનાં પરિપોષણમ્ભૂદિત્યર્થઃ।

તસ્ય સ્વલુ ધન્યસ્ય સાર્થવાહસ્ય મદ્રા નામભાર્યાઽભવત સા કીદ્રશીત્યાહ-
'સુકુમાલપાણિપાયા' સુકુમારપાણિપાદા, તત્ર સુકુમારૌ કોમલૌ પાણી ચ પાદૌ યસ્યા
સા અતિકોમલકરચરણવતીત્યર્થઃ। 'અહીળપટ્ટિપુણ્ણ પંચિદિયસરીરા' અહોન
પ્રતિપૂર્ણપંચેન્દ્રિયશરીરા, તત્ર-'અહીળ' અહીનાનિ લક્ષણસ્વરૂપાભ્યામ્ 'પટ્ટિ-
પુણ્ણ' પ્રતિપૂર્ણાનિ, 'પંચિદિય' પંચેન્દ્રિયાણિ યસ્મિન્ તાદૃશં શરીરં યસ્યાઃ
સા તથા 'લલ્લવજંજળગુણોવવેયા' લક્ષણવ્યજ્જનગુણોવવેતા, તત્ર-'લલ્લવજં' લક્ષ-
ણાનિ લક્ષ્યન્તે દૃશ્યન્તે પ્રાયન્તે યૈસ્તાનિ શુભચિહ્નાનિ-કરસ્થવિદ્યાધનાદિ સ્વચ-

પાસ નાના પ્રકાર કે વહુત અધિક થે। ગાય ખૈસ આદિ ધન તથા ચાંદી સોના ખી इनके पास वहुत अधिक मात्रामें था। आयोग प्रयोग से ये युक्त थे-अर्थात् कर्जदारों के लिये ये द्विगुणित लेने की अभिलाषा से कर्ज दिया करते थे। भोजन के बाद जो विविध प्रकार की भोजन सामग्री बचती-थी उसे ये बुभुक्षित, भूखे अनेक हीन प्राणियों में वितरित करवा दिया करते थे। अथवा भोजन करते समय इनके यहां इतना अधिक खाना उच्छिष्ट रूप में बचता था कि जिससे अनेक दीनहीनबुभुक्षित प्राणियों का पालन-पोषण हो जाता था (तस्स णं धण्णस्स सत्थवाहस्स भद्रा नामं भारिया होत्था) उन धन्य सार्थवाह की भद्रा नाम का धर्मपत्नी थी। (सुकुमाल पाणिपाया अहीणपट्टिपुण्णपंचिदियसरीरा लल्लवजंजणगुणोववेया) इनका शरीर सुकुमार हाथ चरण वाला था लक्षण एवं स्वरूप इन दोनों से इनका शरीर

વાહન પશુ એમની પાસે ઘણી ભતનાં અને પુષ્કળ પ્રમાણમાં હતાં. ગાય ભૈસ વગેરે, પશુ ધન તેમજ ચાંદી સોનું પશુ તેમની પાસે પુષ્કળ પ્રમાણમાં હતું. આયોગ પ્રયોગથી તેઓ યુક્ત હતા એટલે કે ઋણ આપતા હતા. ઋણ પછી જે ઘણી ભતની લોજનની સામગ્રીઓ વધતી તે સામગ્રીને તેઓ ભૂખ્યા ઘણા હીન, દીન, પ્રાણીઓમાં વહેંચાવી દેતા હતા. અથવા તો એમને ત્યાં એટલું બધું ખાધા પછી એટું વધતું કે જેથી ઘણા ગરીબ, હીન, ભૂખ્યા પ્રાણીઓનું ભરણ પોષણ થઈ જતું હતું. (તસ્સ ણં ધણ્ણસ્સ સત્થવાહસ્સ મદ્રા નામં ભારિયા હોત્થા) તે ધન્ય સાર્થવાહની મદ્રા નામે ધર્મપત્ની હતી. (સુકુમાલપાણિપાયા અહીળપટ્ટિપુણ્ણ-પંચિદિયસરીરા લલ્લવજંજળગુણોવવેયા) તે સુકુમાળ હાથપગ વાળી હતી તેમજ લક્ષણ અને સ્વરૂપ આ બનેથી તેમનું શરીર યુક્ત હતું. (લલ્લવજં) વિદ્યા,

કરેવારુપાણિ, 'વંજન' વ્યજ્જનાનિ, વ્યજ્જન્તે-સૂચ્યન્તે ભાગ્યોદયા યન્તાનિ તિલમપાદીનિ 'ગુણ' ગુણાઃ મૌશીલ્યપાતિવ્રત્યાદયસ્તૈઃ ઉવવેયા' ઉપવે ૥-સમન્વિતા, તત્ર ઉપ અપદ્યુપસર્ગયોઃ 'અપ' इत्यत्राद्यङ्कारस्यपृषादरादि-त्वाद्धोपः। 'માણુમ્માણપ્પમાણપડિપુન્નસુજાયસવ્વંગસુંદરંગા' માનોન્માન-પ્રમાગપનિર્દૂર્ગાનુતાતપર્ણાફુન્દરાદ્વી, તત્ર= 'માગ' માનં=જલદ્રોણપ્રમાણતા, તથાહિ-પરિપૂર્ણજઞ્ઞકુણ્ડે यस्य पुरुषस्य यस्याः स्त्रियो वा प्रवेशे सति यदि द्रोणपरिमितं जलं बहिर्निस्सरति तदा स पुरुषः सा स्त्री वा मानमाप्नो-च्यते, માનપાપ્તાયાઃ શરીરાવગાહનાવિશેષો માનમિત્યુચ્યતે। 'ઉન્માગ' ઉન્માનપ્, અર્ધભારપ્રમાણતા સાવેત્યમ્-તુલાયામારોપિતો નરો નારી વા યથ ધેનુભારપ્રમાણા ભવન્તિ તદા સ પુરુષઃ સા સ્ત્રી વા ઉન્માનપાપ્તા નિગદ્યતે 'પ્રમાગ' પ્રમાણ સ્વાર્થુઠૈરપ્રોત્તરગતોચ્છાયઃ, इत्थं च-मानं चोन्मानं च प्रमाणं युक्तं था। (લજ્જન) સે ત્રિયા, ધન આદિ કી મૂલક કરસ્થશુભ રેત્વા રૂપ ધિહોં સે, તથા ભાગ્યોદય મૂલક તિલમસા આદિ રૂપ વ્યંજનોં સે યહ સમન્વિત થી। મુશીલતા તથા પાતિવ્રત આદિ ગુણોં કા યહ પર થી। (માણુમ્માણપ્પમાણપડિપુન્નસુજાયસવ્વંગસુંદરંગા) માન, ઉન્માન ઓર પ્રમાણ इन के अनुसार इसके समस्त अंगपूर्ण थे। परिपूर्ण जल कुण्ड में प्रवेश करने पर द्रोण परिमित जल यदि उस कुंड से बाहर निकल आवे तो वह पुरुष अथवा स्त्री मान वाली कही जाती है। अर्थात् इसके शरीर थी अवगाहना इतने मान प्रमाण थी। तुला पर आरोपित होने पर जिन स्त्री अथवा पुरुष का वजन अर्धभार प्रमाण निकलता है। तो वह उन्मान प्राप्त कहलाता है। અને અંગુઠોંતે ૧૦૮ અંગુઠ વાલી વને હૂર ઝૂંચાઈ ધન વગેરેને સૂચવનારી હાથની શુભરેખાઓથી તેમજ ભાગ્યોદયના સૂચક તલભયા વગેરે રૂપ વ્યંજનોથી તે સંપન્ન હતી. શાલીનતા તેમજ પાતિવ્રત્ય વગેરે શુભોત્તે તે ધર હતી. (માણુમ્માણપ્પમાણપરિપુન્નસુજાયસવ્વંગસુંદરંગા) માન, ઉન્માન અને પ્રમાણ સહિત તેનાં ગંધાં અંગો પૂર્ણ હતાં. સંપૂર્ણ રૂપથી ભરેલા પાણીના કુંડમાં પ્રવેશ્યા બાદ બે દ્રોણ પરિમાણ બેટલું પાણી તે કુંડમાંથી બહાર નીકળે તો તે પુરુષ અથવા સ્ત્રી 'માન' વાળી કહેવામાં આવે છે. બેટલે કે તેમના શરીરની અવગાહના અચુક બેટલા માન પ્રમાણવાળી હતી. ત્રાજવાં ઉપર ચઢીને બે સ્ત્રી અથવા પુરુષ પોતાનું વજન કરાવતાં તેમનું વજન અર્ધભાર પ્રમાણ બેટલું થાય તો તે ઉન્માન પ્રાપ્ત કહેવાય છે. પોતાના આંગળથી જ માપ કરવામાં આવે અને તે પુરુષ કે સ્ત્રી એકસો આઠ બેટલા આંગળના માપ બેટલી થાય તો તે પ્રમાણ પ્રાપ્ત કહેવાય છે. એવી રીતે માન, ઉન્માન અને પ્રમાણ યુક્ત તેમના દરેકે

ગમયોગસમયુક્તઃ, આયોગેન દ્વિગુણાદિલિપ્સયા પ્રયોગઃ અધમર્ણાનાં સવિદે
દ્રવ્યસ્ય વિતરણં, તેન યુક્તઃ। વિચ્છર્દિતવિપુલભક્તપાનઃ=યસ્ય ગૃહે ભોજના-
વશિષ્ટૈર્વદ્ભિરન્નપાનૈઃ શુધાર્તાનામનેકહીનદીનાનાં પરિપોષણમભૂદિત્યર્થઃ।

તસ્ય સ્વલુ ધન્યસ્ય સાર્થવાહસ્ય મદ્રા નામભાર્યાઽભવત્ સ્મા કીદ્રશીત્યાહ-
'સુકુમાલપાણિપાયા' સુકુમારપાણિપાદા, તત્ર સુકુમારૌ કોમલૌ પાણી ચ પાદૌ યસ્યા
સા અતિકોમલકરચરણવતીત્યર્થઃ। 'અદીળપટ્ટિપુણ પંચિદિયસરીરા' અહોન
પ્રતિપૂર્ણપચ્છેન્દ્રિયશરીરા, તત્ર-'અદીળ' અદીનાનિ લક્ષણસ્વરૂપાભ્યામ્ 'પટ્ટિ-
પુણ' પ્રતિપૂર્ણાનિ, 'પંચિદિય' પચ્છેન્દ્રિયાણિ યરિમન્ તાદૃશં શરીરં યસ્યાઃ
સા તર્થા'લક્ષણવંજનગુણોચવેયા' લક્ષણવ્યજ્જનગુણોપપેતા, તત્ર-'લક્ષણ' લક્ષ-
ણાનિ લક્ષ્યન્તે દૃશ્યન્તે જ્ઞાયન્તે યૈસ્તાનિ શુભચિહ્નાનિ-કરસ્થત્રિધાધનાદિ સ્વ-

પાસ નાના પ્રકાર કે વહુત અધિક થે। ગાય ખેમ આદિ ધન તથા ચાંદી
સોના મી इनके पास बहुत अधिक मात्रामें था। आयोग प्रयोग से ये युक्त
थे-अर्थात् कर्जदारों के लिये ये द्विगुणित लेने की अभिलाषा से कर्ज दिया
करते थे। भोजन के बाद जो विविध प्रकार की भोजन सामग्री बचती-
थी उसे ये बुभुक्षित, भूखे अनेक हीन प्राणियों में वितरित करवा दिया करते
थे। अथवा भोजन करते समय इनके यहां इतना अधिक खाना उच्छिष्ट
रूप में बचता था कि जिससे अनेक दीनहीनबुभुक्षित प्राणियों का पालन-
पोषण हो जाता था (तस्स णं घण्णस्स सत्थवाहस्स भद्धानामं भारिया होत्था)
उन धन्य सार्थवाह की भद्रा नाम को धर्मपत्नी थी। (सुकुमाल पाणिपाया
अदीणपट्टिपुण्णपंचिदियसरीरा लवखणवंचनगुणोचवेया) इनका शरीर
सुकुमार हाथ चरण वाला था लक्षण एवं स्वरूप इन दोनों से इनका शरीर

વાહન પણ એમની પાસે ઘણી ભતનાં અને પુષ્કળ પ્રમાણમાં હતાં. ગાય ભેંસ
બગેરે, પણ ધન તેમજ ચાંદી સોતું પણ તેમની પાસે પુષ્કળ પ્રમાણમાં હતું. આયોગ
પ્રયોગથી તેઓ યુક્ત હતા એટલે કે ઋણ આપતા હતા. જમ્યા પછી જે ઘણી
ભતની શ્રોજનની સામગ્રીઓ વધતી તે સામગ્રીને તેઓ ભૂખ્યા-ઘણા હીન, દીન,
પ્રાણીઓમાં વહેંચાવી દેતા હતા. અથવા તો એમને ત્યાં એટલું બધું ખાધા પછી
એંટું વધતું કે જેથી ઘણા ગરીબ, હીન, ભૂખ્યા પ્રાણીઓનું ભરણ પોષણ થઈ
જતું હતું. (તસ્સ ણં ઘણ્ણસ્સ સત્થવાહસ્સ ભદ્ધા નામં ભારિયા હોત્થા) તે ધન્ય
સાર્થવાહની ભદ્રા નામે ધર્મપત્ની હતી. (સુકુમાલપાણિપાયા અદીળપટ્ટિપુણ-
પંચિદિયસરીરા લવખણવંજનગુણોચવેયા) તે શુક્રેમળ હાથપગ વાળી હતી
તેમજ લક્ષણ અને સ્વરૂપ આ બનેથી તેમનું શરીર યુક્ત હતું. (લ વિદ્યા,

કરેવારૂપાણિ, 'વંજન' વ્યજ્જનાનિ, વ્યજ્યન્તે-સૂચ્યન્તે ભાગ્યોદય યન્માનિ તિલમપાદીનિ 'ગુણ' ગુણાઃ સૌશીલ્યપાતિવ્રત્યાદયમ્તૈઃ ઉવચેયા' સપ્પે ૧૧-સમન્વિતા, તત્ત્વ ઉપ અપઙ્ગત્યુપસર્ગયોઃ 'અપ' ઇત્યગ્રાઘઙ કારસ્ય પૃષ્ઠાદરાદિ-ત્વાઙોપઃ। 'માણુમ્માણપ્પમાણપહિપુન્નસુજાયસન્વંગમુદંરંગા' માનોન્માન-પ્રમાગપનિર્ણુજાતપર્વાઙ્ગમુદંરાઙ્ગી, તત્ત્વ= 'માગ' માનં=જલદ્રોણપ્રમાણતા, તથાહિ-પરિપૂર્ણજઙ્ગુઙ્ગે યસ્ય પુરુષસ્ય યત્પ્યાઃ સ્ત્રિયો વા પ્રવેશે સ્તિ યદિ દ્રોણપરિમિતં જલં વહિર્નિસ્સરતિ તદા સ પુરુષઃ સા સ્ત્રી વા માનમાત્તો-ચ્યતે, માનપાત્તયાઃ શરીરાવગાહનાવિશેષો માનમિત્યુચ્યતે। 'ઉન્માગ' ઉન્માનમ્, અર્ધમાપ્રમાણતા સાચેત્થમ્-તુલાયામારોપિતો નરો નારી વા યદ્ય ધેનાપ્રમાણા ભવન્તિ તદા સ પુરુષઃ સા સ્ત્રી વા ઉન્માનપાત્તા નિગદ્યતે 'પનાગ' પ્રમાણ સ્વાર્થુઙ્ગૈરપ્રોત્તરગોચ્છાયઃ, ઇત્યં ચ-માનં ચોન્માનં ચ પ્રમાણં

યુક્ત થા। (લક્ષણ) સે વિદ્યા, ધન આદિ કી મૂલક કરસ્યશુભ રેલા રૂપ ધિહોં સે, તથા ભાગ્યોદય મૂલક તિલમપા આદિ રૂપ વ્યંજનોં સે યદ્ધ સમન્વિત થી। સુશીલતા તથા પાતિવ્રત આદિ ગુણોં કા યદ્ધ ઘર થી। (માણુમ્માણપ્પમાણપહિપુન્નસુજાયસન્વંગમુદંરંગા) માન, ઉન્માન ઓર પ્રમાણ ઇન કે અનુસાર ઇસકે સમસ્ત અંગપૂર્ણ યે। પર્ણ જઙ્ગુઙ્ગ મેં પ્રવેશ કરને પર દ્રોણ પરિમિત જલ યદિ ઉસ કુંડ સે વાહર નિકલ આવે તો વદ્ધ પુરુષ અથવા સ્ત્રી માન વાલી કહી જાતી હૈ। અર્થાત્ ઇસકે શરીર કી અવગાહના ઇતને માન પ્રમાણ થી। તુલ્યા પર આરોપિત હોને પર જિન સ્ત્રી અથવા પુરુષ કા વ્રજન અર્ધમાપ્રમાણ નિકલતા હૈ। તો વદ્ધ ઉન્માન પ્રાપ્ત કહલાતા હૈ। અને અંગુર્જાલે ૧૦૮ અંગુઠ વાલી વતે દૂર ઝૂંચાઈ

ધન વગેરેને સૂચવનારી હાથની શુભરેખાઓથી તેમજ ભાગ્યોદયના સૂચક તિલમપા વગેરે રૂપ વ્યંજનોથી તે સંપન્ન હતી. શાલીનતા તેમજ પાતિવ્રત્ય વગેરે શુભાતુ' તે ધર હતી. (માણુમ્માણપ્પમાણપરિપુન્નસુજાયસન્વંગમુદંરંગા) માન, ઉન્માન અને પ્રમાણ સહિત તેનાં બધાં અંગો પૂર્ણ હતાં. સંપૂર્ણ રૂપથી ભરેલા પાણીના કુંડમાં પ્રવેશ્યા બાદ જો દ્રોણ પરિમાણ જેટલું પાણી તે કુંડમાંથી બહાર નીકળે તો તે પુરુષ અથવા સ્ત્રી 'માન' વાળી કહેવામાં આવે છે. જેટલે કે તેમના શરીરની અવગાહના અમુક જેટલા માન પ્રમાણવાળી હતી. ત્રાજવાં ઉપર ચઢીને જે સ્ત્રી અથવા પુરુષ પોતાનું વજન કરાવતાં તેમનું વજન અર્ધભાર પ્રમાણ જેટલું થાય તો તે ઉન્માન પ્રાપ્ત કહેવાય છે. પોતાના આંગળથી જ માપ કરવામાં આવે અને તે પુરુષ કે સ્ત્રી એકસો આઠ જેટલા આંગળના માપ જેટલી થાય તો તે પ્રમાણ પ્રાપ્ત કહેવાય છે. એવી રીતે માન, ઉન્માન અને પ્રમાણ યુક્ત તેમના દરેકે

ચેત્યેવાં દ્વદ માનાન્માનવમાણાનિ તેઃ પ્રાતર્પૂર્ણાનિ-સંવન્નાનિ, અતएव
 'સુજાતૃ' સુજાતાનિ યથોચિતાઅવયવમ્નિવેશયન્તિ 'સવ' સર્વાણિ
 સકલાનિ, 'અંગ' અઙ્ગાનિ-અઙ્ગયતે અઙ્ગયતે પાગો યૈસ્તાનિ મસ્ત-
 કાદારમ્ય ચરણાન્તાનિ યસ્મિન્સ્તત્. અતएव 'સુંદરંગા' સુંદરાઙ્ગી-સુંદરમઙ્ગ-
 વપુર્વસ્થાઃ સા તથા, 'સસિસોમાગારા' શશિમીમ્યાકાન્તા-શશી=ચન્દ્રસ્તદ્વત્
 સૌમ્યો-રમણીય આકારઃ-સ્વરૂપં યસ્યાઃ સા 'કંતા' કાન્તા કમનીયા। 'પિય
 દંસણા' પ્રિયદર્શના પ્રિયં દર્શકજનમનોહ્લાદકં દર્શનમવલોકનં યસ્યાઃ સા, અત ए
 'સુરુવા' સુરૂપા સર્વાતિશાયિરૂપલાવણ્યવતીત્યર્થઃ 'કરયલપરિમિય-તિ ત્રલિય-
 મજ્જા' કરતલ પરિમિતત્રિવલિકમધ્યા કરતલપરિમિતઃ=મુષ્ટિગ્રાહ્યઃ, ત્રિવલિકઅ-
 વલિકત્રયોપેતઃ રેલાઅયવાન્ 'મજ્જા' મધ્યભાગો યસ્યાઃ સા, કુશોદરી
 તન્નુ કટિશ્ચેત્યર્થઃ 'કુંડલુલ્લિહિયગંડલેહા' કુંડલોલ્લિલિતગંડલેહા કુંડલાભ્યા-
 મુલ્લિલિતા-ત્ર્યદ્દશગંડલેહા-કપોલાવસ્થિતચન્દનાદિ રેલા યસ્યાઃ સા, કુંડલ
 શોભાસમ્પન્નેત્યર્થઃ। 'કોમુદ-રયણિયરપડિ પુણ્ણસોમ્મવયણા' કૌમુદી=કાર્તિકી

વાલા જિસ પુરુષ અથવા સ્ત્રી કા શરીર હોતા હૈ વહ પ્રમાણ માત્ર કહલાતા
 હૈ। હમ તરફ માન ઉન્માન ઇવં પ્રમાણ કે અનુસાર હસકે સમસ્ત શારીરિક
 અવયવ હૈ અતएव હૈ યથોચિત સન્નિવેશ ત્રિશિષ્ટ હૈ। મસ્તક સે લેકર ચરણ
 પર્યન્ત ઉપાંગ અવયવ કહલાતે હૈ। હસી કારણ હનકા શરીર વહુત અધિક
 સુંદર થા। (સસિસોમાગારા કંતા પ્રિયદંસણા સુરૂપા કરયલપરિમિય તિર્વાલય-
 મજ્જા) ચન્દ્રમા કે સમાન હસકા આકાર સૌમ્ય થા। અતઃ વહુત હી કમનીય
 થી। દર્શક જનોં કે મન કો હનકા અવલોકન આહ્લાદકારક થા। યહ સર્વાતિશાયી-
 રૂપ લાવણ્ય સે યુક્ત થી હનકા ત્રિવલી યુક્ત મધ્ય ભાગ હતના અધિક
 પતલા થા કિ મુષ્ટિ ગ્રાહ્ય હો જાતા થા। (કુંડલુલ્લિહિય ગંડલેહા કોમુદરયણિયર-
 પડિપુણ્ણસોમ્મવયણા સિંગારાગારચારુવેસા જાવ પડિરુવા વંજા અરિયાઝરી

દરેક અવયવો સપ્રમાણ અને યોગ્ય હતા. મસ્તકથી માંડીને પગ સુધી ઉપાંગ
 અવયવ કહેવાય છે. એટલા માટે જ એમનું શરીર ખૂબજ સુંદર હતું. (સસિ
 સોમાગારા . કંતા પ્રિયદંસણા સુરૂપા કરયલપરિમિયત્રિવલિયમજ્જા)
 તેમની આકૃતિ ચન્દ્ર જેવી સૌમ્ય હતી. એથી તે ખૂબ જ કમનીય હતી. જોનારા
 એ માટે તેમનું દર્શન આહ્લાદકારક હતું. તે અતિશય રૂપ અને લાવણ્ય સંપન્ન
 હતી. તેમની ત્રિવલી યુક્ત કમર (મધ્ય ભાગ) એટલી બધી પાતળી હતી કે તેને
 સમાવેશ મૂઠીમાં પણ થઈ શકતો હતો. (કુંડલુલ્લિહિયગંડલેહા કોમુદ-
 રયણિયરપડિપુણ્ણસોમ્મવયણા સિંગારાગારચારુવેસા જાવ પડિરુવા વંજા

पौर्णिमासी तस्याः रजनीकरश्चन्द्रस्तद्वत् प्रतिष्ठा—सौम्यं=आर्द्धादजनकं वदनं—
मुखं यस्याः सा तथा 'सिंगारगारचारुवेसा,' शृङ्गारगारचारुवेसा, शृङ्गाराख्य
प्रथमरसस्य अगारमिव-गृहमिव चारुवेपो यस्याः सा, ५३५ शृङ्गारो
भूषणाटोपस्तत्प्रधान आकारो यस्याः सा तथा मनोहरनेपथ्या, अत्र पद
द्वयस्य कर्मधारयः। 'जाव' यावत् 'पडिस्वा' प्रतिस्वा 'वंझा' बन्ध्या—
अत्यक्तशपेक्षया निष्कृता, एतवार संतानसंज्ञाता ननरमपत्यमरणेनापि
फलतो बन्ध्या भवति, अतएव 'अविया उरी' देशी शब्दः, अविजनयित्री
सर्वथा संतानाऽजननशीला संतानजननशक्तिरहिता, इत्यतः 'जाणु-
कोप्परमाया' जानु कूर्परमाता, 'जाणु' जानुनी चरणयोर्मध्यभागा 'कोप्पर'
कूर्परी कयोर्मध्यभागा तेषामेव 'माया' माता-जननी चाप्यासीत् ॥सू. २॥

मूलम्—तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स पंथए नामं दासचेडे
होत्था, सव्वंगसुंदरंगे मंसोवचिएवालकीलावण कुसले यावि होत्था,
तएणं से धण्णे सत्थवाहे रायगिहे नयरे वहूणं नयरनियगसेट्ठि
सत्थवाहाणं अट्टारसण्ह य सेणिप्पसेणीणं वट्सु कज्जेसु य कुडुवेसु य
मंतेसु य जाव चक्खुभूए यावि होत्था, नियगस्स विय णं कुडुवस्स
वहसु य कज्जेसु जाव चक्खुभूए यावि होत्था ॥सू. ३॥

जाणुकोप्परमाया यावि होत्था) उसके कपोल मंडल पर जो चन्द्रनादिक की
रेखा लगी रहती थी वह दोनों कानों के कुंडलों से घर्षित होती रहती
थी। कर्तिही पूर्णमासी के पूर्ण चन्द्र मंडल के समान इनका सौम्य-आर्द्धाद-
जनक-मुख था। इसका सुन्दर वेव शृंगाररस के वर जैसा था। फिर भी
यह इतनी त्रिभुवन सुन्दरी होने पर भी बन्ध्या थी। ऐसी बन्ध्या थी—कि
इसके प्रारंभ से ही संतान नहीं हुई थी—संतान जननशक्ति से यह बिलकुल
रहित थी। यह तो केवल जानु और कूर्पर—करके मध्यभाग टेढ़नी की
माता थी। ॥अत्र २॥

अवियाउरी (जाणुकोप्परमाया यावि होत्था) तेमना कपोल उपर अनःपवाभां
आपेली चन्दन रेखाये, जने धनोभां पडेरला कुंडलोथी घसाती હતી. કાર્તિક
પૂનમના ચન્દ્રમંડળની જેમ તેમનું મોં સૌમ્ય અને આદ્યાદજનક હતું. ત્રિભુવન
સુંદરી હોવા છતાં તે બંધ્યા હતી. શરૂઆતથી જ તેને એકે સંતાન થયું ન હતું.
સંતાન જનન શક્તિ તેમનામાં સદંતર સમૂળ રૂપે હતી નહિ. એને તો સંતાન
રૂપે ફક્ત દીવ્યજ અને કોણી જ હતાં. ॥ સૂત્ર ૨ ॥

ચેત્યપાં દ્વદ માનોન્માનવમાનાનિ તેઃ પ્રાતર્પૂર્ણાનિ-સંવન્નાનિ, અતएव
 'મુજામુ' મુજાતાનિ યથોચિતાવયવમન્નિવેશયન્તિ 'સંવ' સર્વાણિ સકલાનિ, 'અંગ' અઙ્ગાનિ-અઙ્ગયતે વ્યઙ્ગયતે પાપાં યૈસ્તાનિ મસ્ત-
 કાદારમ્ય ચરણાન્તાનિ યર્મિસ્તત્, અતएव 'મુંદરંગા' મુંદરાઙ્ગી-મુંદરમઢ્ઠં
 વપુર્યસ્યાઃ સા તથા, 'સસિસોમાગારા' શશિર્મામ્યાકાગ-શશી=ચન્દ્રસ્તદ્વત્
 સૌમ્યો-રમણીય આકારઃ-સ્વરૂપં યસ્યાઃ સા 'કંતા' કાન્તા કમનીયા। 'પિય
 દંસણા' પ્રિયદર્શના પ્રિયં દર્શકજનમનોહ્લાદકં દર્શનમવલોકનં યસ્યાઃ સા, અત एવ
 'સુરુવા' સુરુવા સર્વાતિશાયિરૂપલાવણ્યવતીત્યર્થઃ 'કરયલપરિમિય-તિ ત્રિવલીય-
 મઙ્ગલા' કરતલ પરિમિતત્રિવલિકમઘ્ઘ કરતલપરિમિતઃ=મુષ્ટિગ્રાહ્યઃ, ત્રિવલિકશ્ચ-
 વલિકત્રયોપેતઃ રેલાત્રયવાન્ 'મઙ્ગલા' મધ્યભાગો યસ્યાઃ સા, કુશોદરી
 તન્નુ કટિશ્ચેત્યર્થઃ 'કુંડલુલ્લિહિયગંડલેહા' કુંડલોલ્લિખિતગંડલેહા કુંડલાભ્યા-
 મુલ્લિખિતા-ત્રયદૃષ્ટાગંડલેહા-કપોલાચસ્થિતચન્દનાદિ રેલા યસ્યાઃ સા, કુંડલ
 શોભાસમ્પન્નેત્યર્થઃ। 'કોમુદ-રયણિયરપડિ પુણ્ણસોમ્મવયણા' કૌમુદી=કાર્તિકી

વાલા જિસ પુરુષ અથવા સ્ત્રી કા શરીર હોતા હૈ વહ પ્રમાણ માત્ર કહલાતા
 હૈ। ઇસ તરફ માન ઉન્માન ઇવં પ્રમાણ કે અનુસાર ઇસકે સમસ્ત શારીરિક
 અવયવ યે અતएવ હૈ યથોચિત સન્નિવેશ ત્રિશિષ્ટ થૈ। મસ્તક સે લેકર ચરણ
 પર્યન્ત ઉપાંગ અવયવ કહલાતે હૈં। ઇસી કારણ ઇનકા શરીર વહુત અધિક
 સુંદર થા। (સસિસોમાગારા કંતા પ્રિયદંસણા સુરુવા કરયલપરિમિય તિર્વાલય-
 મઙ્ગલા) ચન્દ્રમા કે સમાન ઇસકા આકાર સૌમ્ય થા। અતઃ વહુત હી કમનીય
 થી। દર્શક જનોં કે મન કો ઇનકા અવલોકન આહ્લાદકારક થા। યહ સર્વાતિશાયી-
 રૂપ લાવણ્ય સે યુક્ત થી ઇનકા ત્રિવલી યુક્ત મધ્ય ભાગ ઇતના અધિક
 પતલા થા કિ મુષ્ટિ ગ્રાહ્ય હો જાતા થા। (કુંડલુલ્લિહિય ગંડલેહા કોમુદરયણિયર-
 પડિપુણ્ણસોમ્મવયણા સિંગારાગારચારુવેસા જાવ પડિરુવા ચંદ્રા અવિયાતરી
 દરેક અવયવો સપ્રમાણ અને યોગ્ય હતા. મસ્તકથી માંડીને પગ સુધી ઉપાંગ
 અવયવ કહેલાય છે. એટલા માટે જ એમનું શરીર ખૂબજ સુંદર હતું. (સસિ
 સોમાગારા કંતા પ્રિયદંસણા સુરુવા કરયલપરિમિયતિર્વાલયમઙ્ગલા)
 તેમની આકૃતિ ચન્દ્ર જેવી સૌમ્ય હતી. એથી તે ખૂબ જ કમનીય હતી. બેનારા
 એ માટે તેમનું દર્શન આહ્લાદકારક હતું. તે અતિશય રૂપ અને લાવણ્ય સંપન્ન
 હતી. તેમની ત્રિવલી યુક્ત કમર (મધ્ય ભાગ) એટલી બધી પાતળી હતી કે તેને
 સમાવેશ મૂઠીમાં પણ થઈ શકતો હતો. (કુંડલુલ્લિહિયગંડલેહા કોમુદ-
 રયણિયરપડિપુણ્ણસોમ્મવયણા સિંગારાગારચારુવેસા જાવ પડિરુવા ચંદ્રા

मथोननेषु च कुटुम्बेषु च परिवारेषु च 'मनेषु' मन्त्रेषु-कर्तव्यनिश्चयार्थं सुसं-
विचारेषु यावत्सुभी मार्गदर्शकत्वाप्यासीन् 'नियमस्तत्रि' निजकस्याधि-स्वकी-
यस्यापि च खलु कुटुम्बस्य बहुषु च कार्येषु यावत्सुभी तत्त्वाप्यासीन् ॥ सूत्र ३॥

मन्त्र-तत्त्व पां रायगिहे नयरे विजए नामं तकरे होत्था, पावे

चडालहवे भीमतररुदकम्मे आरुसियदित्तरत्तनयणे खरफरुस-
महलविगयत्रीभत्थदाडिण असंपुडियउठे उद्धयपइन्नलवंतमूद्धए
भमरराहुवन्ने निरणुकोसे निरणुतावे दारुणे पइभए निसंसइए
निरणु हंपे अहिब्व एगंतदिट्टिए खुरेव.एगंतधारए गिद्धेव आमिस
तल्लिच्छे अगिमिव सव्वभक्खी जलमिव सव्वगाही उक्कवण-वंच-
णमाया-नियडि-कूड-कवड-साइ-संपओग-बहुले, चिरनगर विणट्ट
हुट्टुसीलायारचरित्ते जूयवसंगी मज्जपसंगी, भोजपसंगी मंसपसंगी
दारुणे हियपदारए साहसिय संविच्छेयए उवहिए विसंभवाई आली-
यगतित्थमेयलहुहत्थसंपउए परस्स दव्वहराणम्मि निच्चं अणुवच्छे
तिव्ववेरे, रायगिहस्स नयरस्स वहुणि अइगमणाणि य निग्गमणा-
णिय दाराणि य अत्रदाराणि य छिंडीओ य खंडीओ य नगरनिद्धम-
णाणिय संवट्टणाणि य निवट्टणाणि य जूवखलयाणि य पाणागाराणि-
वेस्सेगाराणि य तदारट्टाणाणि य तकरट्टाणाणि य तकरघराणिय सिंगाड-
गाणि य तियाणि य चउत्ताणि य चच्चगाणि य नागवराणि य भूयघराणि
य जक्खदेउलाणि य सभाणि य पराणि य पणियसालाणिय सुन्न-

प्रश्नेगी शब्द से यहाँ ली गई हैं। (नियमस्तत्रि यणं कुटुम्बस्स चहुत्तु य
कज्जेसु जाव चक्खुभूए यावि होत्था) तथा अने निज कुटुम्ब के भी अनेक
कार्यआदि में चक्षुभूत थे मार्गदर्शक थे। ॥ सूत्र ३॥

विपणं, कुटुम्बस्स चहुत्तु य कज्जेसु जाव चक्खुभूए यावि होत्था) तेभन्
प्राप्तानां कुटुम्बानां येषां कर्मणां तेभ्यो मार्गदर्शनं तरीके इत्यादि ॥ सूत्र ३ ॥

टीका—तस्स ण इति—तस्य खलु धन्यस्य सार्थवाहस्य पन्थकनामा दासचेदकः—दासपुत्र आसीत् सर्वाङ्गसुन्दराङ्गः, मांसोपवितः—पुष्टशरीरः, बालक्रीडन्कुशलः—बालान् क्रीडयितुं दक्षश्चाप्यभवत् । तदनु खलु स धन्यः सार्थवाहस्तस्मिन् राजगृहे नगरे बहूनां 'नयरनिगमसेट्ठिसत्थवाहाणं' नगर निगमश्रेष्ठिसार्थवाहानाम्, तत्र 'नयर' नगरस्य=राजगृहस्य, 'निगम' निगमस्य=वणिग्ग्रामस्य, 'सेट्ठि' श्रेष्ठिनः—सार्थवाहाश्च, एतेषां च पुनः 'अट्टारसण्ह य' अट्टादशानाम् 'सेणिप्पसेणीयं' श्रेणिमश्रेणीनाम्, तत्र 'सेणि' श्रेणयः कुम्भकारादिजातयः 'प्पसेगो' मश्रेणयः—अगान्तरजातयस्नामां बहुषु कार्येषु—

'तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तस्स णं धणस्स) उस धन्य सार्थवाह के यहाँ (पंथण नामं दासचेडे होत्था) पंथक नामका एक दास पुत्र था (सन्वंगसुदरंगे) यह सर्वाङ्ग सुन्दर था । (मंसोवचिए) पुष्टशरीर वाला था । (बालक्रीलावणकुसले यावि होत्था) बालकों के खिलाने में बड़ा चतुर था । (तण्णं से धण्णे सत्थवाहे रायगिहे नयरे बहू णं नयरनियगसेट्ठिसत्थवाहाणं अट्टारसण्ह य सेणिप्पसेणीयं बहुसु कज्जेसु य कुडुवेषु य मंतेसु य जाव चक्खुभूए यावि होत्था) वह धन्य । सार्थवाह राजगृह नगर में अनेक नगर निवासी वणिकजनों को—श्रेष्ठिजनों को सार्थवाहों को तथा अट्टारह श्रेणी मश्रेणियों को बहुत से कार्यों में अनेक परिवारों में अनेक मंत्रणाओं में—गुप्त विचारों में यात्रा चक्षुभूत थे मार्ग दर्शक थे । कुम्भकार आदि जातियां श्रेणी शब्द से और अवान्तरजातियां

'तस्स णं धणस्स सत्थवाहस्स' इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तस्स णं धणस्स) ते धन्य सार्थवाहने त्यां (पंथण नामं दास चेडे होत्था) पंथक नामे एक दास पुत्र होतो. (सन्वंगसुदरंगे) ते सर्वाङ्ग सुन्दर होतो. (मंसोवचिए) सुडोण शरीर बाणो होतो. (बालक्रीलावणकुसले यावि होत्था) बालकोंने रमाउवामां तेजहुं न कुथण होतो. (तण्णं से धण्णे सत्थवाहे रायगिहे नयरे बहू णं नयरनियगसेट्ठिसत्थवाहाणं अट्टारसण्ह य सेणिप्पसेणीयं बहुसु कज्जेसु य कुडुवेषु य मंतेसु य जाव चक्खुभूए यावि होत्था) ते धन्य सार्थवाह राजगृह नगरमां धण्ण नगरना वणिक्का, श्रेष्ठिज्जेना, सार्थवाहा तेम न अट्टार श्रेणी मश्रेणीज्जेने धण्ण कम्मामां धण्ण कुटुम्बामां, अनेक जतनी मंत्रण्णामां, गुप्त विचारामां यावत् चक्षुभूत हुता ओट्ठे के मार्गदर्शक हुता. कुम्भार वगेरेनी जतने अही अण्णी शण्हधी अने पेटा जतने मश्रेणी शण्ह दास जताववामां आवी छे. (नियगस्स

फलत्रयवृद्धिगिरवीभन्वरादि' खरपरुषमहापिकुादीभत्सदंष्ट्रिकः, तत्र-
'खापुरुषे=अतिकर्कशे 'मदल्ल' मदत्यो=अतिविशाले 'विमय' विकृते=शोभा
वर्जिते 'बीमत्थ' बीमत्से=वृणाजनके 'दादि' दंष्ट्रिके=दादिके हनुवर्द्धितकेशयु
च्छरूपे वा यस्य सः-कर्मविकृतवृणितदादिकायुक्तः, खापरुषमहापिकुावोभत्स-
दन्तो वा। 'असंपुडियउट्टे' असंपुडिनौष्ठः, असंपुडितो, अमंशतो वा परस्पर-
सांमिलितो स्फाटितो ओष्ठलघुवाहजनदीर्घत्वाच्चीष्ठी यस्य सः स्फाटित-
मुख इत्यर्थः। 'उद्धयपङ्गनलंघंतमुद्धए' उद्धे प्रकीर्णलम्बमानमूर्धनः, तत्र-
'उद्धेय' उद्धेनाः=पापुमम्पर्कात्प्रचलिता अत एव-'पङ्गन' प्रकीर्णाः=इतस्ततो
विक्षिप्ताः 'लंघंत' लम्बमानाः=अधः प्रसर्पन्तः 'मुद्धए' मूर्धजाः=केशा यस्य
स तथा। 'भमरराहुवन्ने' भमरराहुवर्णः-भमरराहुवर्ण इव वर्णो यस्य सः-
अत्यन्तकृष्णवर्ण इत्यर्थः। 'निरणुकोसे' निरनुकोशः=निर्दयः, निरणुतावे'
'निरनुतावे' पापं कृत्वा पश्चात्तारदितः अनएव 'दारुणे' दारुणः=क्रूरः। 'उद्ध-

की अतिशय कठोर थीं; बहुत विज्ञान थीं, शोभा रहित थीं, तथा घृणा-
जनक थी-अथवा इस की दाढ़ी के बाज कठोर थे, बड़ा-
घने थे, शोभासे रहित थे और घृणा उत्पन्नक थे। (असंपुडिय-
उट्टे उद्धेय, पङ्गनलंघंतमुद्धए, भमरराहुवन्ने, निरणुकोसे, निरणुतावे दारुणे
पङ्गनए) दाढ़ी को दीर्घ होने के कारण इसके ओष्ठ परस्पर में मिले हुए
नहीं थे-किन्तु खुले हुए थे। इसके मस्तक पर जो केश थे-वे पवन में
इधर-उधर उड़ते, इसलिये फैले हुए थे बंधे हुए नहीं थे। तथा बहुत
बड़े हुए थे। इसका गारीरिक वर्ण राहु तथा भ्रमर जैसा अत्यन्त काला
था। दया से यह सर्वथा रहित था। पाप करके भी इसके हृदय में
पश्चात्ताप का भाव उत्पन्न नहीं होता था। इसलिये क्रूर प्रकृति का था।

महालयंकर उती. तेनी दादो भूगज कठोर उती, घण्टी मोटी उती, शोला वगरनी
उती. तेभज घृणाजनक उती, अथवा तो तेनी दादीना बाण कठोर उता, सघन उता,
शोला वगरना उता, अने घृणाजनक उता. (असंपुडियउट्टे उद्धयपङ्गनलंघंत
मुद्धए, भमरराहुवन्ने निरणुकोसे, निरणुतावे दारुणे पङ्गनए) तेना दांत
बाण उता. तेथी अने ओठ ओठ पीचन स्पर्श वगर हर न रडेता उता. ते
उमेथां पुड्या न रडेता उता. तेना माथाना बाण पवनने लीधे अस्तव्यस्त थडने
उता उता, ओथी तेओ इलाध जता उता. तेना बाण गांधेला रडेता न न उता
अने ते भुङ्ग न वधेला उता, तेना शरीरने रंभ राहु अने लभरा नेयो कणो
मेंश नेयो उतो. ते तदन निर्दय उतो. पाप करवा छाता तेना मनमां पस्तावे
थतो न उतो. ओटवा मटे ते क्रूर प्रकृतिने उतो. तेने ओतानी साथे न माणीओनां

घराणि य आभोऽमाणीर मग्गमाणे गवेसमाणे बहुजणस्स छिद्देसु य
 विसमेसु य विहुरेसु य वसगेसु य अग्गुदएसु य उस्सत्तेसु य पत्तत्तेसु य
 तिहीसु य छणेसु य जन्नेसु य पव्वणीसु य मत्त-पमत्तस्स य विक्खि-
 त्तस्स य वाउलस्स य र हिदस्स य दुक्खियस्स विदेसत्थस्स य विप्प-
 वसियस्स य मग्गं च छिदं च विरहं च अंतरं च मग्गमाणे गवेस-
 माणे एवं च णं विहरइ, बहिस्सो वि य णं रायगिहस्स नगरस्स आरा-
 म्मे तु य उज्जाणेषु य वावि पोक्खरिणा-दीहि रागुं जालिया सरेसु य
 सरपंतिवासु य सरसरपंतिवासु य जिणगुज्जाणेषु य भग्गहूवणेषु य
 मालुयाकच्छणेषु य सुसाणणेषु य गिरेकंदरलेगउवग्गणेषु य
 बहुजणस्स छिद्देसु य जाव एवं च णं विहरइ ॥सू. ४॥

टीका—‘तत्थ णं’ इत्यादि । तत्र खलु राजगृहे नगरे विजयनामा
 तक्करः=चौरः होत्था=आसीत् । स कीदृशः ? इत्याह—‘पावे’ इति, पापः=
 पापकर्मा चाण्डालरूपः=चाण्डालसदृशः, भीमतरुदकम्मे’ भीमतरुदकर्मा-
 चाण्डालकर्मपेक्षयाऽपि भीमतराणि=भयङ्कराणि रौद्रकर्माणि हिंसादिक्रूरकर्माणि
 यस्य स तथा, ‘आरुसियदित्तरत्तनयणे’ आरुपित दीप्तरत्तनयनः, तत्र-‘आरुसिय’
 आरुपितम्येव ‘दित्त’ दीप्ते=विकराले ‘रत्त’ रक्ते नयने यस्य स तथा, ‘वर-

‘तत्थ ण रायगिहे नगरे विजए नामं तक्करे होत्था’ इत्यादि ।

टीका—(तत्थ णं रायगिहे नगरे) उसी राजगृह नगर में विजय नामको
 चौर था (पावे चाण्डालहूवे भीमतरुदकम्मे आरुसियदित्तरत्तनयणे, वरफरुस
 मडल्लविगयचीमत्थदादिणं) यह पापी था । चाण्डाल जैसा था । इसके हिंसा
 दिक्रूर कर्म चाण्डाल के कार्य की अपेक्षा भी बहुत भयंकर थे । इसके
 नेत्र क्रीयो पुरुष के नेत्र जैसे लाल थे, और महा विकराल था दाढ़े इस

टीका—(तत्थ णं रायगिहे नगरे) ते राजगृहनगरम् (विजयनामं
 तक्करे होत्था) विजय नामे चौर रहते होता । (पावे चाण्डालहूवे भीमतरु
 रुदकामे आरुसियदित्तरत्तनयणे, वरफरुस-मडल्ल-विगय-चीमत्थ
 दादिणं) ते पापी होता । चाण्डाल जैसा होता । हिंसा नगरे तनी क्रूर कर्म चाण्डाल
 करता पक्ष भयंकर होता । तनी आंखें क्रीयो आरुसिय जैसी दाढ़े होती अने ते

કલત્તવડ્ડિવિગયવીમત્થસાદિય' સ્વરસુવનદ્વાપિક્તચીમત્સદંદિક્કઃ, તત્ત-
'લાપુરુપે=અતિકર્કશે 'મદ્દલ' મદ્દત્તયી=અતિવિશાલે 'વિમય' મિક્કુતે=શોભા
વર્જિતે 'વીમત્થ' વીમત્સે=વૃગાજનકે 'દાદિ' દ્રષ્ટિકે=દાદિકે હનુવર્ધિતકેશયુ
રુરુપે વા યસ્ય સઃ-સ્કર્કર્થિકૃતયુગ્મિનદાદિકાપુતઃ, લાપસુવનદ્વાપિક્તચીમત્સ-
દન્તો વા। 'અસંપુડિયઉદ્દે' અસંપુડિનૌઠઃ, અસંપુડિનો, અમંડુતો વા પરસ્પ-
રાસંમિલિતો સ્ફાટિતો ઓઠ્ઠલપુવાદશનદીર્ઘત્વાચ્છૌઠી યસ્ય સઃ સ્ફાટિત-
મુચ્ચ इत्यर्थः। 'ઉદ્દેયપડ્ડનલંચંતમુદ્દય' ઉદ્દેય પ્રકીર્ણલમ્બમાનમૂર્ધજઃ, તત્ત-
'ઉદ્દેય' ઉદ્દેનાઃ=ચાયુમમ્પર્કાત્પ્રચલિતા અત एव-'પડ્ડન' પ્રકીર્ણાઃ=ઇતસ્તતો
વિસિષ્ઠાઃ 'લંચંત' લમ્બમાનાઃ=અથઃ પ્રમર્ષન્તઃ 'મુદ્દય' મૂર્ધજાઃ=કેશા યસ્ય
સ તથા। 'ભમરરાદુવન્ને' ભમરરાદુવર્ણઃ-ભમરરાદુર્વેગ इव वर्णो યસ્ય સઃ-
અત્યન્તકૃષ્ણવર્ણ इत्यर्थः। 'નિરણુકોસે' નિરણુકોશઃ=નિર્દેશઃ, નિરણુતાવે
'નિરણુતાવે' પાપં કૃત્વા પશ્ચાત્તારદિતઃ યતएव 'દારુણે' દારુણઃ=ક્રૂરઃ। 'અ-

ધી અતિશય કઠોર થી; વહુન વિશાળ થી, શોભા રહિત થી, તથા ધૃગા-
જનક થી-અથવા રસ કી દાઢી કે વાળ કઠોર થે, વહુ-
ધને થે, શોભાસે રહિત થે ઓર ધૃગા ઉત્પાદક થે। (અસંપુડિય-
ઉદ્દે ઉદ્દેય, પડ્ડનલંચંતમુદ્દય, ભમરરાદુવન્ને, નિરણુકોસે, નિરણુતાવે દારુણે
પદ્મભર) દાંતો કો દીર્ઘ હોને કે કાળા રંગે ઓઠ પરસ્પર મેં મિલે હુય
નહીં થે-કિન્તુ સ્પર્શે હુય થે। રસકે મસ્તક પર જો કેશ થે-થે પવન મેં
રૂપર, ઉધાર ઉડતે, રસલિયે ફેલે હુય થે વધે હુય નહીં થે। તથા વહુત
મદે હુય થે। રસકા શારીરિક વર્ણ રાહુ તથા ભમર જેવા અત્યન્ત કાળા
થા। દયા સે વહુ સર્વથા રહિત થા। પાપ કરકે મી રસકે હૃદય મેં
પશ્ચાત્તપ કા માત્ર ઉત્પન્ન નહીં હોતા થા। રસલિયે ક્રૂર પ્રકૃતિ કા થા।

મહાભયંકર હતી. તેની દાદો ખૂબજ કઠોર હતી, ઘણી ઓટી હતી, શોભા વગરની
હતી. તેમજ ધૃગાજનક હતી, અથવા તો તેની દાદીના વાળ કઠોર હતા, સધન હતા,
શોભા વગરના હતા, અને ધૃગાજનક હતા. (અસંપુડિયઉદ્દે ઉદ્દેયપડ્ડનલંચંત
મુદ્દય, ભમરરાદુવન્ને નિરણુકોસે, નિરણુતાવે દારુણે પદ્મભર) તેના દાંત
લાંબા હતા. તેથી બને ઓઠ એક બીજાના સ્પર્શ વગર રૂર જ રહેતા હતા. તે
હોયેલાં ખુદ્દા, જ રહેતા હતા. તેના માથાના ત્રાગ પવનને લીધે અસ્તવ્યસ્ત થઈને
હોતા હતા, એથી તેઓ દેવાઈ જતા હતા. તેના વાળ બાંધેલા રહેતા જ ન હતા
અને તે બહુ જ વધેલા હતા, તેના શરીરનો રંગ રાહુ અને ભમર જેવો કાળો
મેંથ જેવો હતો. તે તંબૂન નિર્દેય હતો. પાપ કરવા છતાં તેના મનમાં યસ્તાવે
થતો ન હતો. એટલા માટે તે ક્રૂર પ્રકૃતિનો હતો. તેને બેતાની સાથે જ પ્રાણીઓનાં

भय' प्रतिभयः=भयोत्पादकः। 'निसंसिपे' नृशंसकः। 'निगणुकंपे' निरनु-
कम्पः=दयागुणवर्जितः। 'अहिंवएगंतदिट्ठिए' अहिरिवैकान्तदृष्टिकः, भुजङ्ग-
इव क्रूरकर्मकरणे एकाग्रतालक्षणः एकान्ता=एक निश्चया दृष्टिः=विचारसरणि-
र्यस्य स तथा। खुरेव एगंतधारए'धुर इव एकान्तधारकः, धुरो=नामितश-
ब्दविशेषः 'उम्तरा' इति भाषायाम्, तद्वत् 'एगंत' एकान्तेन=तीव्रत्वात्सर्व-
प्रकारेण परवस्तुधारणे 'धारा' धारा=परोपतापनरूपा परिणामधारा यस्य सः,
सर्वस्वापहारीत्यर्थः। 'गिद्धेव आमिसतल्लिच्छे' गृद्ध इव-आमिष तल्लिप्सः गृद्ध-
इव-गृह्यभिवत् 'आमिस, आमिपे=शब्दादिविषये 'तल्लिच्छे' तल्लिच्छः=
तत्परः'तल्लिच्छे' इति तत्परार्थो देही शब्दः। अथवा आमिपे=विषयभोगादिके
सा=अत्युत्कटा लिप्सा यस्य सः-कान्भोगे तोत्राभिलाषोत्यर्थः। 'अग्गिमिव
सव्वभवल्ली' अग्निरिव सर्वभक्षी=भक्ष्याभक्ष्यसर्वभोजी सर्वजनलुण्ठको

इसे देखते ही जीवाँ के हृदयमें भय का संचार हो जाता था। (निसमइए
निरनुकंपे अहिंवएगंतदिट्ठिए, खुरेव एगंतधारए, गिद्धेव आमिसतल्लिच्छे)
यह स्वभावतः नृशंसक (घातक) था निरनुकंपे-दयागुण वर्जित था। सर्प
की तरह क्रूर कर्म करने में इस की विचारसरणि एक निश्चयावाली होती
थी, धुरा-उम्तरा के समान वह सर्व प्रकार से परकीय वस्तुओं के हरण
करने में परोपतापनरूप परिणाम धारावाला था। गिद्धपक्षी की तरह यह
शब्दादि विषयरूप आमिष में अथवा कामवासना में तत्पर रहा करता था।
(अग्गिमिव सव्वभवल्ली जलमिव सव्वग्गाही उक्कंवण, वंचण, माया नियडि,
कूड, कवड, साइ, संगओग, बहुले, चिरणगरविणट्ठुद्ध सीलायारचरित्ते,
जूयपसंगी, मज्जपसंगी, भोज्ज, पसंगी, मंसपसंगी दारुणे हिययदारए)
अग्नि के समान यह सर्व भक्षी था, अथवा लक्षण से सर्व जीवों को

भय लयभीतें थीं जतां होता। (निसमइए निरनुकंपे, अहिंव एगंतदिट्ठिए
खुरेव एगंतधारए, गिद्धेव आमिसतल्लिच्छे) स्वभावधी ज ते नृशंसक अने
घातक होता। (निरनुकंपे) निर्दय होता। सापनी जेभ क्रूर कर्ममें प्रवृत्त थनाश
तेना विचारो दृढ निश्चयवाला होता अस्तरानी जेभ ते जधी सीते जीअओली
वस्तुओने डरी लेवाभां परोपतापन रूप परिष्ठाभ वाजो होता। गीधनी जेभ शब्द
वगेरे विषय रूप आमिषभां अथवा कामवासना जेवी जाअतभां ते डमेथां तयार
रहेतो होता। (अग्गिमिव सव्वभवल्ली जलमिव सव्वग्गाही उक्कंवण, वंचण,
माया नियडि, कूड, कवड, साइसंपओग, बहुले, चिरणपरविणट्ठुद्ध
सीलायारचरित्ते, जूयपसंगी, मज्जपसंगी भोज्जपसंगी मंसपसंगी दारुणे हियय
दारए) अग्निना जेवे ते सर्वभक्षी होता अथवा ते जपां प्राणीओने बंटनार

चा । 'जलमिव सन्वग्मादी' जलमिव सर्वग्राही—यथा जलं स्वविषयमाप्तं
 सर्वं स्वान्वर्णनं करोति तथैवापी मयं सर्वस्मादपहरति । 'उक्चंण-
 चंयगनायानियडि कूडकवडमाइसंभोगवहुले' उत्तञ्चनवञ्चनमाया-
 निकृति कूडकपटमातिसंपयोगवहुलः, तत्र—'उक्चंण' उत्कञ्चनं=स्वपरगुणा-
 भावेऽपि गुणोत्कीर्तनम्, 'चंयण' वञ्चनं=छलकरणं, माया=परवञ्चनम्, 'नियडि'
 निकृतिः=मायाऽऽच्छादनार्थं पुनर्मायाकरणं—वक्रवृत्त्या गर्तककृत्तिधारणम्,
 'कूड' कूटं परवञ्चनार्थं तुलादेन्युनाधिककरणम्, 'कवड' कपटम्=वेपभा-
 षादिविपर्ययकरणम्, एभिस्तत्कञ्चनादिभिः सह 'साइसंभोग' सानिसंभ-
 योगः—अतिगमेन योगस्तेन यो बहूलः=व्याप्तः सकलकूटकपटादि भण्डागार-
 इत्यर्थः । 'चिानगरविणदुदुमीलायारचरित्ते' चिानगरविनष्टदुष्टशीलाचार-

कूटने वाला था । जल की तरह सर्वग्राही था अर्थात् जल जिस प्रकार
 अपने में पड़े हुए पदार्थ को अपने भीतर ले जाता है—उसी प्रकार यह
 भी दूसरों के पास से समस्त चीजों का अग्रहण कर आने पास रख
 लेता था । अपने भीतर जो गुण नहीं थे उनकी भी यह अपने में हैं इस
 तरह की प्रशंसा किया करता था । वंचना—छल करने में यह विशेषपटु—वतुर था,
 माया परवंचन में बहुत होशियार था—निकृति अपने मायावारीको दवाने में
 दुबारा माया करने में बड़ा ही सिद्धहस्त था । तुला आदि का न्यूनाधिक
 करना इसका नाम व्युड है, वेप आदि को बदलना इसका नाम कपट है।
 इन सबके करने में यह प्रहयान था । अर्थात् इन उत्कंचन माया, निकृति
 कूट, कपट का यह भण्डार था। चिरकाल से यह नगर से बाहर रहता
 था । इसलिये इसका स्वभाव दुष्ट हो गया था । आचार—कुल मर्यादाह्व

हूतो. पाण्डुनी जेम ते सर्वग्राही हूतो— अेटवे के पाण्डुनी जेम तेमां पडी गयेला
 जधा पदार्थो ते पोतानी अंहर लक्ष्मि जय छ, ते प्रभावे ज ते चार पयु भीज-
 ओनी पासेथी जधी वस्तुओ चोरिने तेनी पासे सअडी राणतो हूतो. जे शुष्णो
 तेमां हूता तेमनी पयु भीजओनी सामे प्रशंसा करतो रहेतो हूतो. भीजने छि-
 रवाभां ते पावधी हूतो. माया—अेटवे के भीजने छगवाभां ते भूम ज कुथण हूतो.
 निकृति—अेटवे के माया चोरिने पराजित करवाभां ते भीज वणत माया (पर
 वंचन) करवाभां गहु ज यतुर हूतो. ग्राजवां वगेरेने आवाडीथी न्यूनाधिक करतुं
 तेनुं नाम व्युड छ. वेपलूषा वगेरे जहलवी ते कपट छेववाय छ. आ भाटे ते
 प्रण्णात हूतो. अेटवे के छिंचन, वंचन, माया, निकृति, कूट, कपटने ते जलने
 हूतो. लांणा वणतथी ते नगरनी जहार ज रह्या करतो हूतो. अेटला भाटे स्वभावे

भय' प्रतिभयः=भयोत्पादकः। 'निसंसिपे' नृशंसकः। 'निगुणकपे' निरनु-
 कम्पः=दयागुणवर्जितः। 'अहिंवाएगंतदिद्विए' अहिंरिवैकान्तदृष्टिकः, भुजङ्ग-
 इव क्रूरकर्मकरणे एकाग्रतालक्षणः एकान्ता=एक निश्चया दृष्टिः=विचारसरणि-
 र्यस्य म तथा। खुरेव एगंतधारए'धुर इव एकान्तधारकः, धुरो=नामितश-
 श्वविशेषः 'उमतरा' इति भाषायाम्, तद्वत् 'एगंत' एकान्तेन=तीव्रतात्सर्व-
 प्रकारेण परवस्तुधारणे 'धारा' धारा=परोपतापनरूपा परिणामधारा यस्य सः,
 सर्वस्यापहारीत्यर्थः, 'गिद्वेव आमिसतल्लिच्छे' गृद्ध इव-आमिष तल्लिप्सः गृद्ध
 इव-गृहपतिवत् 'आमिस, आमिपे=शब्दादिविषये 'तल्लिच्छे' तल्लिच्छः=
 तत्परः 'तल्लिच्छे' इति तत्परार्थो देशी शब्दः। अथवा आमिपे=विषयभोगादिके
 सा=अत्युत्कटा लिप्सा यस्य सः-कामभागे तोत्रामिलापोत्यर्थः। 'अग्गमिव
 सव्वभवल्ली' अग्निगि व सर्वभक्षी=भक्ष्याभक्ष्यसर्वभोजी सर्वजनलुण्ठको

इसे देखते ही जीवों के हृदयमें भय का संचार हो जाता था। (निसमइए
 निरनुकपे अहिंवाएगंतदिद्विए, खुरेव एगंतधारए, गिद्वेव आमिसतल्लिच्छे)
 यह स्वभावतः नृशंसक (घातक) या निरनुकपे-दयागुण वर्जित था। सर्प
 की तरह क्रूर कर्म करने में इस की विचारसरणि एक निश्चयवाली होती
 थी, धुरा-उमतरा के समान वह सर्व प्रकार से परकीय वस्तुओं के हरण
 करने में परोपतापनरूप परिणाम धारावाला था। गिद्धपक्षी की तरह यह
 शब्दादि विषयरूप आमिष में अथवा कामवासना में तत्पर रहा करता था।
 (अग्गमिव सव्वभवल्ली जलमिमज्जग्गाही उक्कंचण, वंचण, माया नियडि,
 कूड, कवड, साइ, संओग, बहुले, चिरणपरविणट्टुट्ट सीलायारचरित्ते,
 जूयपसंगी, मज्जपसंगी, भोज्ज, पसंगी, संसपसंगी दारुणे हिययदारए)
 अग्नि के समान यह सर्व भक्षी था, अथवा लक्षणे से सर्व जीवों को
 भय अवलीत था होता हुआ। (निसमइए निरनुकपे, अहिंवा एगंतदिद्विए
 खुरेव एगंतधारए, गिद्वेव आमिसतल्लिच्छे) स्वभावशील ते नृशंस अने
 घातक होता। (निरनुकपे) निर्दय होता। सापणी जेम क्रूर कर्मों में प्रवृत्त बनाता
 तेना विचारो ह्द निश्चयवाला होता। अस्तशानी जेम ते गंधी रीते जीवज्जीवानी
 वस्तुज्जीवने हरी देवाओं परोपतापन रूप परिणाम धारा होता। गीधनी जेम शब्द
 वगेरे विषय रूप आमिषों अथवा कामवासना जेवी जाणतों में ते हुमेयां, तयार
 रहेतो होता। (अग्गमिव सव्वभवल्ली जलमिव सव्वग्गाही उक्कंचण, वंचण,
 माया नियडि, कूड, कवड, साइसंपओग, बहुले, चिरणपरविणट्टुट्ट
 सीलायारचरित्ते, जूयपसंगी, मज्जपसंगी भोज्जपसंगी संसपसंगी दारुणे हियय
 दारए) अग्निना जेयो ते सर्वभक्षी होता अथवा ते जया प्राणीज्जीवने बंटनार

मान्तकं पदं प्राकृतत्वात् 'नित्यभेयलघुहस्तसंप्रयुक्तं' तीर्थभेदलघुहस्तसंप्रयुक्तः,
'नित्यभेय' तीर्थभेदे=धर्मध्वंसने धर्मस्थानध्वंसने वा लघुहस्तसंप्रयुक्तः=
हस्तलाघवयुक्तः अतिकुशल इत्यर्थः। 'परस्स दन्वहरणम्मि निच्चं अणुवद्धे'
परस्य द्रव्यहरणे नित्यमणुवद्धः=आसक्तः। 'तिव्ववेरे' तीव्रवैरः= उत्कट
विरोधवान् स राजगृहस्य नगरस्य बहूनि 'अइगमणाणिय' अतिगमनानि=
च प्रवेशमार्गाः 'निग्गमणाणि' निर्गमनानि=निस्सरणमार्गाः, 'दाराणि' द्वाराणि=
नगरद्वाराणि, 'अदाराणि' अद्वाराणि-लघुद्वाराणि गुप्तद्वाराणि वा, 'छिंडीओ'
छिण्डोः=घृतिछिद्रारूपाः कण्टक प्राकारछिद्राणीत्यर्थः, 'खंडीओ' खण्डोः=
दुर्गछिद्राणि, 'नगरनिद्धमणाणि' नगरनिर्द्धमनानि=नगरजलनिर्गमनद्वाराणि,
'संवट्टणाणि' संवर्त्तनानि=अनेकमार्गसङ्गमस्थानानि, 'निव्वट्टणाणि' निर्वर्त्तनानि=
नूतननिर्मितमार्गरूपाणि, 'जुव्वलयाणि' ज्वनखलकानि=घृतक्रीडास्थानानि,
'पाणाणि' 'पानागाराणि' मदिरास्थानानि, 'वेस्सागाराणि' वेश्यागाराणि=

तीर्थ भेद लघु हस्त संप्रयुक्त था-अर्थात् धर्मस्थान को नष्ट करने में यह
अति कुशल था। (परस्स दन्वहरणम्मि निच्चं अणुवद्धे) दूसरों के द्रव्य
हरण में यह आसक्त रहता था। (तिव्ववेरे) तीव्र वैर वाला था।
(रायगिहस्स नयरस्स बहूणि अइगमणाणि य निग्गमणाणि य दाराणि य अवा
गिय छिंडीओ य खंडीओ य नगरनिद्धमणाणि य) यह राजगृहनगरके अनेक
प्रवेशमार्गों को जाने के मार्गों को वहां के अनेक द्वारों को छोटे-छोटे द्वारों
को-अथवा गुप्त द्वारों को कांटों की लगी हुई बाड़के छिद्रों को जल के
निकलने की नालियों को (संवट्टणाणि) अनेक मार्गों के संगमस्थानों को
(निवट्टणाणि) नूतननिर्मित मार्गों को (जुव्वलयाणि) जूवा के खेलने के
स्थानों को (पाणागाराणि) मदिरा पीने के स्थानों को (वेस्सागाराणि)

विचार पण उत्पन्न थतो हुतो हे ॥ हुं हेपुं कृत्य करी रह्यो छुं. ते ' तीर्थभेद
लघुहस्त संप्रयुक्त ' हुतो—अटले के धर्मस्थानने नष्ट करवाभां ते अतिकुशल हुतो.
(परस्सदन्व हरणम्मि निच्चं अणुवद्धे) परस्सना द्रव्यने हरवाभां न ते आसक्त
रह्य करतो हुतो. (तिव्ववेरे) ते लयंकर रीते वेर (दुश्मनावट) राखनार हुतो.
(रायगिहस्स नयरस्स बहूणि अइगमणाणि निग्गमणाणि य दाराणि य अवा
गाराणि य छिंडीओ य खंडीओ य नगरनिद्धमणाणि य) राजगृह नगरना
धर्या प्रवेश मार्गोंने अवर अवरना रस्ताओने, त्यां ना धर्या दरवाज्योने, नाना
दरवाज्योने अथवा तो गुप्त दरवाज्योने, फोटोने, बाडना छिद्रोने, छिद्राना
छिद्रोने, पाछीनी नणीओने. (संवट्टणाणि) धर्या रस्ताओ. लेगा थता डाय तेवा
स्थानोने. (निवट्टणाणि) नवा जनाववाभां आवेदा रस्ताओने. (जुव्वलयाणि)
जुव्वारना अइओने, (पाणागाराणि) दाडु पीवाना स्थानोने, (वेस्सागाराणि)

चरित्रः, तत्र-‘चिर’ चिरं=बहुकालं यावत् ‘नगर’ नगरात् ‘विणद्र’ विनष्टः=
 लपितः, अत एव ‘दुष्ट’ दुष्टं शीलं=स्वभावः, आचारः कुलमर्षादालम्बणः,
 चरित्रं=जीवनव्यवहाररूपं यस्य स तथा । ‘ज्योत्संगी’ घृणमङ्गी=घृणक्रीडा-
 सक्तः ‘मज्ज्यसंगी’ मद्यप्रसङ्गी=मद्यपायी, ‘भोज्यसंगी’ भोज्यप्रसङ्गी=खण्ड-
 खाद्यादिरसलोत्पन्नः । ‘भोगमसङ्गी’ इति पाठ गणिकापरायण इति । ‘मंसपसंगी’
 मांसप्रसङ्गी=मांसाहारी, उपलक्षणात् सप्तव्यसनसेवी । ‘दारुणे’ दारुणः=कठोर-
 हृदयः । ‘हृदयदारण’ हृदयदारकः-अन्वेषणं हृदयविदारकः । साहसिण् साह-
 सिकः=अविचारकारी । ‘संचिच्छेपण्’ संचिच्छेदकः-क्षत्रखानकः=गृहादिभित्ति-
 भेदकः ‘उबहिण्’ औपधिकःसमायित्वेन प्रच्छन्नचारी । ‘विसंभवाई’ विसंभ-
 वाती=विश्वासघातकः । ‘आलीयग’ आदीपकः=ग्रामादिप्रज्वालकः ‘लुप्रमथ

व्यवहार इसका बिलकुल नष्ट भ्रष्ट हो गया था, और चरित्र इसका बिल्कुल पतित बन गया था । यह घृण संगी-जुआ खेलने में आसक्त मद्य पाने में प्रसक्त भोज्य प्रसंगी-मिष्टान्न आदिरस का लोलुपी, और गणिकाओं के सेवन करने में सदा तल्लीन रहता था । यह मांसाहारी था-उल्लभ से सातों ही व्यसनों का सेवन करने वाला था । कठोर हृदय था-अन्य माणियों के हृदय विदारक था (साहसिण्) बड़ा साहसिक था बिना विचारे हर एक काम कर डालता था । (संचिच्छेपण्, उबहिण्, विसंभवाई, आलीयगतिरथभेयलहृदयसंपण्डण्) मकानों में सेव (खात) लगाने में उनकी भित्तियों को तोड़ने में-यह प्रख्यात था, औपधिक था-मायावारी होने के कारण यह अपना वेत परिवर्तित कर इधर उधर फिटा करता था । विश्वासघातक था । आदीपक-ग्राम आदि के जंगल में उसे कोई विचार नहीं होता था ।

ते दुष्ट यथ गथे इतो. आचार-ओटवे के कुणनी मयांदा इप तेनो व्यवहार संहार नाथ पान्थो इतो अने तेनुं आरिन्ध साव भ्रष्ट यथ गथुं इतुं ते घुत प्रसंगी गुणारभां आसक्त, भवणी-दादु पीताभां प्रसक्त, लोभ्य प्रसंगी-मिष्टान्न वजरे गथुं आवाभां लोलुप अने गबुकिओ वजरेना सेवनभां ते इमेयां तल्लीन रह्य करतो इतो ते मांस लक्षक इतो. उपद्रवजोथी ते साते सात व्यसनोने आचरनार इतो. कठोर हृदय वाणो इतो. शील भावसेना हृदयने दुःशी जनानार इतो (साहसिण्) ते शूर साहसिक इतो. विवेक वगरनो यधने ते गमे ते काम करतो इतो. (‘संचिच्छेपण्’ उबहिण् विसंभवाई आलीयगतिरथभेयलहृदयसंपण्डण्) घरभां भातर पाडवाभां ते प्रख्यात इतो. ते औपधिक इतो-ओटवे के माया थारी होवा जडव ते येतानो वेत जडवीने आभ तेम जडया करतो इतो. ते विश्वास घात करनार इतो. आदीपक-ओटवे के आभ ने खणगावतां तेने

रूपेषु 'विहरेषु' विधुरेषु व्याकुलावधारूपेषु 'वसणेषु' व्यसनेषु-विपत्तृ
'अम्बुदपेषु' अम्बुदपेषु राज्यलक्ष्म्यादिप्राप्तिरूपेषु 'उत्सवेषु' उत्सवेषु
विवाहादिप्रसङ्गरूपेषु 'पमवेषु' प्रपवेषु-पुत्रादिजन्मोत्सवेषु 'तिहिषु' तिथिषु-
सांवत्सरिकादिरूपासु 'छणेषु' क्षणेषु आनन्दजनकव्यापाररूपेषु 'जन्नेषु'
यज्ञेषु नागाद्युत्सवेषु 'पव्वणीसु' पर्वणीषु-कार्तिकपूर्णिमादिपर्वतिथिषु 'मत्त-
पमत्तस्य' मत्तप्रमत्तस्य तत्र 'मत्त' उन्मत्तः 'पमत्त' प्रमत्तः-प्रमादवान् यः म
तस्य 'विविक्खत्तस्स' विक्षिप्तस्य प्रयोगविशेषेण भ्रान्तचित्तस्य 'वाडलस्स'
वातुलस्य वातरोगयुक्तस्य अन्यमनस्कस्य वा 'सुहियस्स' सुखितस्य
सकलेन्द्रियानुकूलविषयप्राप्तत्वात्सुखमग्नस्य 'दुक्खियस्स' दुःखितस्य इष्ट
वियोगानिष्टसंयोगादिना दुःखनिमग्नस्य 'विदेसत्थस्स' विदेशस्थस्य परदेश-
स्थितस्य 'विप्पवसियस्स' विप्रोषितस्य-इष्टजनवियोगिनः इत्यादि यद्बुज-

विहरेषु) व्याकुल अवस्था में होता था (वाणेषु) किसी और विपत्ति से
ग्रस्त होता था उस समय में तथा (अम्बुदपेषु) राज्यलक्ष्मी आदि की
प्राप्तिरूप उत्सवों में (उत्सवेषु य पमवेषु य तिहीषु य छणेषु य जन्नेषु य
पव्वणीसु य) विवाह आदि प्रसंगों में पुत्रादि जन्मोत्सवों में सांवत्सरिक
तिथियों में, आनंद जनक व्यापाररूप क्षणों में नागादि उत्सवरूप यज्ञों में
कार्तिक पूर्णिमा आदिरूप पर्वतिथियों में, (मत्त-पमत्तस्स विविक्खत्तस्स वाड-
लस्स य सुहियस्स य दुक्खियस्स य विदेसत्थस्स य विप्पवसियस्स य) जब
कोई जन मत्त हो जाता था प्रमादवशगत हो जाता था, प्रयोग विशेष
से भ्रान्त चित्त बन जाता था, वातव्याधि से युक्त हो जाता था। या
अन्यमनस्क हो जाता था, सकल इन्द्रियों के अनुकूल विषयों की प्राप्ति
से आनन्द युक्त बन जाता था इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग आदि से दुःख-

(वसणेषु) भील कोष्ठ आकृतियों द्वारा बंधे, ते समय तेमज (अम्बुदपेषु)
संन्य लक्ष्मी वगेरेनी प्राप्तिरूप उत्सवों में (उत्सवेषु य पमवेषु य तिहीषु य
छणेषु य जन्नेषु य पव्वणीसु य) लज वगेरेनी प्रसंगों में, पुत्र वगेरेना जन्मो-
त्सवों में, सांवत्सरिक तिथियों में, आनन्दनी क्षणों में, नाग वगेरेना उत्सव इय
यशों में कार्तिक पूनम वगेरे इय पर्व तिथियों में (मत्त-पमत्तस्स विविक्खत्तस्स वाडलस्स य
सुहियस्स य दुक्खियस्स य विदेसत्थस्स य पयत्तस्स विक्खयस्स विप्पवसियस्स य)
न्यारे कोष्ठ भाषुस गांठो यथं जतो, प्रमादी यथं जतो, (तत्र भ्रान्त) प्रयोग विशेषथी
भ्रान्तचित्त यथं जतो, वातना रोगथी पीडित यथं जतो, सुख मनस्क यथं जतो,
अधी इन्द्रियोने सुख प्राप्ति थाय कोषो संयोग यतां न्यारे कोष्ठ आनंद भजन
यथं जतो, इष्ट वियोग तथा अनिष्ट संयोग वगेरेथी दुःखी यथं जतो, परदेशों में

गणिकागृहाणि 'तद्दारद्वाराणि' तद्द्वारस्थानानि=गणिकागृहाद्वाराणीत्यर्थः, 'तत्तद्द्वाराणि य' तत्तद्द्वारस्थानानि च=चोरनिवासस्थानानि, 'सिंघाडगाणि' शृङ्गाटकानि=शृङ्गाटकाकृतित्रिकोणस्थानानि, 'तिपाणि' त्रिकोणानि मार्गत्रयसंमीलनस्थानानि, 'चउकाणि' चतुष्कोणानि=चतुष्कोणस्थानानि, चच्चराणि चन्वराणि=चतुष्पथरूपाणि. 'नागघराणि' नागगृहाणि 'भूयघराणि' भूतगृहाणि 'जक्खदेउलानि' यक्षदेवकुलानि=यक्षायतनानि 'सभाणि' सभाः 'पवाणि' प्रपाः—पानीयशाला 'पणियसालानि' पणितशालानि—कृष्यधिक्रयस्थानानि 'सुन्नघराणि' शून्यगृहाणि 'आभोएमाणेर' अ(भोगयन्त्र-सोपयोग)प्रेक्षमाणः 'मग्गमाणे' मार्गमाणः—अन्विष्यन् । 'गवेसमाणे' गवेयमाणः, मृक्षपरीत्या विलोकमानः—बहुजनस्य 'छिदेसु' छिद्रेषु स्खलनारूपेषु 'विसमेसु' निषेधेषु—रोगाद्यवस्था-वेश्याओं के गृहों को (तद्दारद्वाराणि) उनके दरवाजों को (तत्तद्द्वाराणि) चोरों के निवासस्थानों को (सिंघाडगाणि) शृङ्गाटक जैसे त्रिकोण वाले स्थानों को (तिपाणि) तीन मार्ग जहाँ मिले हों ऐसे स्थानों को (चउकाणि) चतुष्कोण वाले स्थानों को (चच्चराणि) चतुष्पथ रूप स्थानों को (नागघराणि) नागगृहों को, (भूयघराणि) भूतगृहों को, (जक्खदेउलानि) यक्ष के देरलों को (पवाणि) सभाओं को (पराणि) व्याऊँओं को, (पणियसालाणि) कृष्यधिक्रय के स्थानों को (सुन्नघराणि) शून्य घरों को (आभोएमाणेर) उपयोग देकर बारबार देखता था । (मग्गमाणे) उन्हें बार-बार तलाशता । (गवेसमाणे) मृक्षमहृष्टि से उन की गवेयणा करता था (बहुजनस्स छिदेसु य) जब कोई किसी प्रकार के कष्ट में होता था (विसमेसु) रोगादि अवस्था संज्ञान

वेश्याओंनां धरने, (तद्दारद्वाराणि) ते वेश्याओंना दरवाजोंने, (तत्तद्द्वाराणि) चोरोंना अश्रयोंने (सिंघाडगाणि) शृङ्गाटक-ओटले के त्रय रस्ता लेगा थता होय तेवा स्थानोंने, (चउकाणि) चतुष्कोणवाणा स्थानोंने (चच्चराणि) चार रस्ताओ लेगा थता होय तेवा स्थानोंने, (नागघराणि) नागनां गृहोंने, (भूयघराणि) भूतियां धरने, (जक्ख देउलानि) यक्षोंना देवालथीने (मग्गणि) सभाओंने (पवाणि) परोंने, (पणिय सालाणि-कृष्य पिकठयना स्थानोंने, (सुन्नघराणि) आशी पीडी रहला धरने, (आभोएमाणे) बहुत आशीने वारे धरीओ नेतो हतो (मग्गमाणे) ते स्थानोंने बार-बार तलासता रहे तो हतो. (गवेसमाणे) मृक्षमहृष्टि तेभने नेतो रहतो हतो. (बहुजनस्स छिदेसु य) न्याये कोष भाष्यस कोष पण्य ज्ञातना कष्टभां पीडतो रहे छे. (विसमेसु) रोग वगैरेथी मुक्त रहतो,

रूपेषु 'विहरेषु' विहरेषु व्याकुलान्तर्याम्यारूपेषु 'वसनेषु' वसनेषु-विपत्तु
'अम्बुदण्डेषु' अम्बुदण्डेषु राज्यलक्ष्म्यादिमाप्तिरूपेषु 'उत्सवेषु' उत्सवेषु
विवाहादिपङ्क्त्यारूपेषु 'पर्वण्येषु' पर्वण्येषु-पुत्रादिजन्मोत्सवेषु 'तिथिषु' 'तिथिषु'-
सांघत्सरिकादिरूपासु 'छण्डेषु' छण्डेषु आनन्दजनकव्यापाररूपेषु 'जन्मेषु'
यज्ञेषु नागाद्युत्सवेषु 'पञ्चमीषु' पञ्चमीषु-कार्तिकपूर्णिमादिपर्वतिथिषु 'मत्त-
पमत्तस्य' मत्तपमत्तस्य तत्र 'मत्त' उन्मत्तः 'पमत्त' प्रमत्तः-प्रमादवान् यः स
तस्य 'विविक्तस्य' विविक्तस्य प्रयोगविशेषेण भ्रान्तचित्तस्य 'वाउलस्य'
वातुलस्य वातरोगयुक्तस्य अन्यमनस्कस्य वा 'सुहियस्य' सुखितस्य
सकलैन्द्रियानुकूलविषयप्राप्तत्वात्सुखमग्नस्य 'दुःखितस्य' दुःखितस्य इष्ट
वियोगानिष्टसंयोगादिना दुःखनिमग्नस्य 'विदेसत्थस्य' विदेशस्थस्य परदेश-
स्थितस्य 'विप्वसियस्य' विप्रोषितस्य-इष्टजनवियोगिनः इत्यादि बहुज-

विहरेषु) व्याकुल अवस्था में होता था (वाणेषु) किसी और विपत्ति से
ग्रस्त होता था उस समय में तथा (अम्बुदण्डेषु) राज्यलक्ष्मी आदि का
प्राप्तिरूप उत्सवों में (उत्सवेषु य वसनेषु य विहरीषु य छण्डेषु य जन्मेषु य
पञ्चमीषु य) विवाह आदि प्रसंगों में पुत्रादि जन्मोत्सवों में सांघत्सरिक
तिथियों में, आनन्द जनक व्यापाररूप क्षणों में नागादि उत्सवरूप यज्ञों में
कार्तिक पूर्णिमा आदिरूप पर्वतिथियों में, (मत्त-पमत्तस्य विविक्तस्य वाउ-
लस्य य सुहियस्य य दुःखितस्य य विदेसत्थस्य य विप्वसियस्य य) जब
कोई जन मत्त हो जाता था प्रमादवशतः हो जाता था, प्रयोग विशेष
से भ्रान्त चित्त बन जाता था, वातव्याधि से युक्त हो जाता था। या
अन्यमनस्क हो जाता था, सकल इन्द्रियों के अनुकूल विषयों की प्राप्ति
से आनन्द युक्त बन जाता था इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग आदि से दुःख-

(वसनेषु) पीछे कोष्ठ आश्रयों में इसाथले रहते, ते समये तेमज (अम्बुदण्डेषु)
सन्ध्य लक्ष्मी वगेरेनी प्राप्तिरूप उत्सवों में (उत्सवेषु य वसनेषु य विहरीषु य
छण्डेषु य जन्मेषु य पञ्चमीषु य) वज्र वगेरेनी प्रसंगों में, पुत्र वगेरेना जन्मो-
त्सवों में, सांघत्सरिक तिथियों में, आनन्दनी क्षणों में, नाग वगेरेना उत्सव रूप
यज्ञों में, कार्तिक पूनम वगेरे रूप पर्व तिथियों में (मत्त-पमत्तस्य विविक्तस्य वाउलस्य य
सुहियस्य य दुःखितस्य य विदेसत्थस्य य पमत्तस्य विविक्तस्य विप्वसियस्य य)
न्याये कोष्ठ भाषुस गांडो यथैवतो, प्रमादी यथैवतो, (तत्र भ्रमना) प्रयोग विशेषथी
भ्रान्तचित्त यथैवतो, वातना रोगथी पीडित यथैवतो, शून्य मनस्क यथैवतो,
गंधी छिन्द्रेथोने सुख प्राप्ति थाय एवेा संयोग यथा न्याये कोष्ठ आनन्द भग्न
यथैवतो, छष्ट वियोग तथा अनिष्ट संयोग वगेरेथी दुःखी यथैवतो, परदेशों में

नस्य 'मगं' मार्गम् अवसरम् 'छिद्' छिद्रम्-स्खलनारूपम् विरहं' वियोगम्
 'अंतरं' स्थानान्तरगमनरूपं सायंकालादिरूपं वा 'मगमाणे' मार्गयमाणः
 विलोकमानः 'गवेसमाणे' अन्विष्यन् एवं च णं उक्तरीत्या 'विहरइ'
 विहरति विजयतश्करोऽवतिष्ठते इत्यर्थः, चकारः समुचयार्थः, णं वाक्या-
 लङ्कारे । 'बहिया वि य णं' बहिरपि च खलु राजगृहनगरस्य 'आरामेसु' आरा-
 मेषु-पुष्पफलादि समृद्धवृक्षलतासंकुलक्रीडास्थानेषु 'उज्जाणेसु' उद्यानेषु=
 पत्रपुष्पफलच्छायोपशोभितनगरासनवर्तिक्रीडास्थानेषु 'वावीपोक्खरिणी-
 दीहियागुंजालियासरेसु' वापीपुष्करिणीदीर्घिकागुञ्जालिकासरस्तु,
 तत्र 'वावी' वापी चतुष्कोणयुक्ता 'पोक्खरिणी' पुष्करिणी-कमल युक्तगो-
 लाकारा 'दीहिया' दीर्घिका=दीर्घाकार वापी. 'गुंजालिया' गुञ्जालिका=वक्रा-
 कारवापी 'सरः'=तडागः, 'सरपंतियासु' सरःपार्श्वकासु=सरोवरभेणिसु

मग्न हो जाता था, परदेश में गये हुए जनों का, इष्ट जनों से वियुक्त
 होता था-तब यह उनके (मगं च छिद् च विरहं च अंतरं च मगमाणे,
 गवेसमाणे एवं च णं विहरइ) अवसर की, स्खलनारूप छिद्रको, वियोग को
 स्थानान्तर गमनरूप अथवा सायंकाल आदिरूप अंतर को ताकता रहता था-
 उनकी खोज में रहता था इस प्रकार से यह जब नगर में रहता था तब
 अपना समय व्यतीत करता था । तथा (बहियावि य णं रायगिहस्स नयरस्स
 आरामेसु य उज्जाणेसु य वाविपोक्खरिणी-दीहिया गुंजालिया-सरेसु य
 सरपंतियासु य सरसरपंतियासु य जिणुज्जाणेसु य मगकूवेसु य मालुया
 कच्छएसु य सुसाणएसु य गिरिकंदलेणउवट्ठाणेसु य बहुजणस्स छिदेसु य
 जाव एवं च णं विहरइ) राजगृह नगरके बाहर वहाँ के आरामों में पुष्पफल

गयेला भाषुसोने तेमना धृष्टनोथी वियोग थई जतो त्यारे ते (थि.) तेमना
 (मगं च छिद् च विरहं च अंतरं च मगमाणे, गवेसमाणे एवं च णं विहरइ)
 उपर आपत्ती नजर आभतो. वियोग, स्थानान्तर गमन, सायंकाल वगेरेना अव-
 सरनी तेमनी असावधानीनी अरापर तकनो लाल लेवा तैयार रहैतो. आवा अवसरानी
 ते तथासमां रहे तो. आ रीते नगरमां रहीने, ते पोतानो वण्णत पसार करते.
 डतो. तेम ज (बहिया वि य णं रायगिहस्स नयरस्स आरामेसु य उज्जाणेसु य
 वाविपोक्खरिणीदीहिया गुंजालिया,सरेसु य सरपंतियासु य सरसर-
 पंतियासु य जिणुज्जाणेसु य मगकूवेसु य मालुया कच्छएसु य सुसाण-
 एसु य गिरिकंदलेणउवट्ठाणेसु य बहुजणस्स छिदेसु य जाव एवं च णं
 विहरइ) राजनगरनी अहार त्यांना आरामोमां, पुष्पइण्णी अभुद्धि युक्त तथा

‘सरसरपंतिवासु’ सरःसरःपंक्तिं कामु=परस्परं संलग्नेषु बहुषु तडागेषु येषु सरःषु पङ्क्त्या व्यवस्थितेषु एरुस्नात्सरसोऽन्यस्मिन् सरसि ततोऽन्यत्र, एवं जलसंचारदायादकेन जलं संचरति । अथवा ऊर्ध्वाधः क्रमेण पंक्तिरूपेण व्यवस्थितेषु सरससु स्वन एव सुतरां जलं संचरति, तत्रेत्यर्थः । ‘जिष्णुज्जाणेषु’ जीर्णोद्यानेषु=शुष्कप्रायतरुज्जतादियुक्तवनखण्डेषु ‘भग्नकूपेषु’ भग्न-कूपकेषु=खण्डितकूपकेषु ‘मालुकाकच्छेषु’ मालुकाकक्षकेषु सुमाणेषु’ इमशानकेषु गिरिकंदरलेणोवट्टाणेषु’ गिरिकंदरलयनोपस्थानेषु=तत्र-गिरिकंदरेषु=पर्वतरन्ध्रेषु ‘लेज’ लयनेषु=गिरिस्थितपापाणगृहेषु ‘उवट्टाणेषु’ उपस्थानेषु=लतादिमण्डपेषु बहुजनस्थ=जनसमुदायस्य छिद्रेषु अत आरभ्य यावत्-अनन्तरं गवेपयमाणोऽसौ तस्करः एवं प्रकारेण विचरति ॥ सू० ४ ॥

मूलम्—तण्णं तीसे भदाए भारियाए अन्नया कयाइं पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंवजागरियं जागरमाणीए अयमे-यारूवे अज्झत्थिए जाव समुपज्जित्था—अहं धणणेण सत्थवाहेण सद्धिं वहूणि वासाणि सदफरिसरसगंधरूवाणि माणुस्सगाइं काम-

आदि से समृद्ध वृक्षों वाले तथा लता से युक्त ऐसे क्रीडास्थानों में—उद्यानों में नगरासन्नवर्ती ऐसे क्रीडा के स्थलों में जो पत्र पुष्प फल एवं छाया वाले वृक्षों से शोभित होते हैं, वावडियों में, पुष्करणियों में दीर्घिकाओं में गुंजालि काओं में तालाव में सरोवरश्रेणियों में परस्पर संलग्न अनेक तालावों में जीर्ण उद्यानों में, भग्नकुंओं में, मालुकाकच्छों में इमशानों में, पर्वत की गुहाओं में पर्वत ऊपर रहे हुए पापाणगृहों में और लतादि मंडपों में छुपर कर यह जन समुदाय के छिद्रों की विरह की अंतरआदि की ताक में रहा करता था उन की गवेपणामें लगा रहता था । सू. ४।

लता विनोदनी दंडाश्लेषां क्रीडा स्थानेषां, उद्यानेषां—नगरनी पासना पत्र, पुष्प इण्ण अने छायादावाणा वृक्षाथी शोभित क्रीडा स्थानेषां, वावोभां पुष्करणीयोभां, दीर्घिकायोभां ‘गुंजालिकायोभां, तपावोभां, सरोवरेशनी श्रेणियोभां, नेभनां पाष्ठी ओक थर्ग रहं छे. ओवां वल्लं तणावोभां नूना भगीयाओभां, नूना भग्न कूपाओभां, मालुका कच्छेषां, इमशानोभां, पर्वतनी गुहाओभां, पर्वत उपरना थिदा भट्टोनी वत्थेना पापाणु गृहोभां अने लता भंडोभां छुपाधने ते (आर) जन समुदायनी असावधानता तेम न तेओ क्यारे पोताना घरथी विभूटा थाय छे तेनी शोधमां रहतेो इतो, तेनी भरोवर तपास राभतो इतो. ॥ सूत्र ४ ॥

नस्य 'मगं' मार्गम् अवसरम् 'छिद्' छिद्रम्-स्वलनारूपम् विरहं वियोगम्
 'अंतरं' स्थानान्तरगमनरूपं सायंकालादिरूपं वा 'मगमाणे' मार्गयमाणः
 विलोकमानः 'गवेसमाणे' अन्विष्यन् 'एवं च णं' उक्तरीत्या 'विहरइ'
 विहरति विजयतस्करोऽवतिष्ठते इत्यर्थः, चकारः समुच्चयार्थः, णं वाक्या-
 लङ्कारे । 'बहिया वि य णं' बहिरपि च खलु राजगृहनगरस्य 'आरामेसु' आरा-
 मेषु-पुष्पफलादि समृद्धसलतासंकुलक्रीडास्थानेषु 'उज्जाणेषु' उद्यानेषु=
 पत्रपुष्पफलच्छायोपशोभितनगरासन्नवर्त्तिक्रीडास्थानेषु 'वापीपोक्खरिणी-
 दीहिया गुंजालियासरेसु' वापीपुष्करिणीदीर्घिकागुञ्जालिकासरस्सु,
 तत्र 'वापी' वापी चतुष्कोणयुक्ता 'पोक्खरिणी' पुष्करिणी-कमल युक्तगो-
 लाकारा 'दीहिया' दीर्घिका=दीर्घाकार वापी, 'गुंजालिया' गुञ्जालिका=वक्रा-
 कारवापी 'सरः'=:तडागः, 'सरपंतियासु' सरःपार्श्वेकासु=सरोवरभेगिषु

मग्न हो जाता था, परदेश में गये हुए जनों का, इष्ट जनों से वियुक्त
 होता था-तब यह उनके (मगं च छिद् च विरहं च अंतरं च मगमाणे,
 गवेसमाणे एवं च णं विहरइ) अवसर की, स्वलनारूप छिद्रको, वियोग को
 स्थानान्तर गमनरूप अथवा सायंकाल आदिरूप अंतर को ताकता रहता था-
 उनकी खोज में रहता था इस प्रकार से यह जब नगर में रहता था तब
 अपना समय व्यतीत करता था। तथा (बहिया वि य णं रायगिहस्स नयरस्स
 आरामेसु य उज्जाणेषु य वाविपोक्खरिणी-दीहिया गुंजालिया-सरेसु य
 सरपंतियासु य सरसरपंतियासु य जिण्णुज्जाणेषु य भग्गकूवेसु य मालुया
 कच्छएसु य सुसाणएसु य गिरिकंदलेणउवद्वाणेषु य बहुजणस्स छिद्देसु य
 जाव एवं च णं विहरइ) राजगृह नगरके बाहर वहाँ के आरामों में पुष्पफल

गयेला भाष्यसेने तेमना छल्लनोथी वियोग थल्ल जतो त्यारे ते (थो-) तेमना
 (मगं च छिद् च विरहं च अंतरं च मगमाणे, गवेसमाणे एवं च णं विहरइ)
 उपर थापती नजर राखतो. वियोग, स्थानान्तर गमन, सायंकाल वगेरेना अव-
 सरनी तेमनी असावधानीनी भराभर तकनो लास लेवा तैयार रहेतो. आवा अवसरानी
 ते तपासमां रहे तो. आ रीते नगरमां रहिने, ते पोतानो वयत पसार करते.
 डतो. तेम ज (बहिया वि य णं रायगिहस्स नयरस्स आरामेसु य उज्जाणेषु य
 वाविपोक्खरिणीदीहिया गुंजालिया,सरेसु य सरपंतियासु य सरसर-
 पंतियासु य जिण्णुज्जाणेषु य भग्गकूवेसु य मालुया कच्छएसु य सुसाण-
 एसु य गिरिकंदलेणउवद्वाणेषु य बहुजणस्स छिद्देसु य जाव एवं च णं
 विहरइ) राजनगरनी पहार त्यांना आरामोमां, पुष्पफल थी समृद्धि युक्त तथा

अहं देवाणुप्पिया ! तुव्मेहिं सद्धिं बहुइं वासाइं जाव देंति समुल्ला-
वण सुमहुरे पुणे मंजुलप्पभणिणं तण्णं अहं अहन्ता अपुन्ना
अलक्खणा एत्तो एगमवि न पत्ता, तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया !
तुव्मेहिं अव्वणुन्नाया समाणी विपुलं असणं ४ जाव अणुवड्ढेमि
(त्तिकट्ठु) उवाइयं करेत्तए । तण्णं धण्णे सत्थवाहे भइं भारयं
एवं वयासी—ममां प य णं खल्ल देवाणुप्पिया ! एस चेव मणोरहे
—कहं णं तुमं दारग दारिणं वा पयाएज्जसि ? भद्दाए सत्थवाहीए
एयमट्ठमगुजाणइ । तए गं सा भद्दा सत्थवाही धण्णेणं सत्थवाहेणं
अव्वणुन्नाया समाणी हट्ठुत्तु जाव हियया विपुलं असणपाण
खाइमसाइमं उवक्खडावेइ उवक्खड्ढावित्ता सुवहुं पुप्फगंधवत्थम-
ल्लालंकारं गेण्हइ गेण्हित्ता सयाओ गिहाओ निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता
रायगिहं नयरं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव पोक्ख-
रिणी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पुक्खरिणीए तीरे सुवहु
पुप्फजाव मल्लालंकारं ठवेइ, ठवित्ता पुक्खरिणिं ओगाहइ, ओगा-
हित्ता जलमज्जणं करेइ जलकीडं करेइ, करित्ता ण्हाया कयवलिकम्मा
उल्लपडसाडिगा जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं
णिण्हइ गिण्हित्ता पुक्खरिणीओ पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता जेणमेव
नागघरए य जाव वेसमणघरइ य तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
तत्थ णं नागपडिमाण य जाव वेसमणपडिमाण य आलोए पणाम-
करेइ करित्ता ईसिं पच्चुन्नमइ पच्चुन्नमित्ता लोमहत्थगं परामुसइ
परामुसित्ता नागपडिमाओ य जाव वेसमणपडिमाओ य लोमहत्थ-

भोगाइं पच्चणुभवमाणी विहरामि, नो चेव णं अहं दारगं वा दारिगं
 पयायामि, तं धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव सुलद्वेणं माणुस्सए
 जम्मजीवियफले तासिं अम्मयाणं जासिं मन्ने णियगकुच्छिसंभूयाइं
 थणदुद्धलु द्दयाइं महुरसमुत्तावगाइं मम्मंणपयंपियाइं थणमूलकं-
 कखदेसभागं अभिसरमाणाइं मुद्धयाइं थणयं पिवंति, तओ य
 कोमलकमलोवमेहिं हत्थेहिं गिणिहंउणं उच्छंगे निवेसियाइं देति
 समुल्लावए पिए सुमदुरे पुणोर मंजुलप्पभणिए, तं अहन्नं अधन्ना
 अपुत्ता अलकखणा अकयपुन्ना एत्तो एगमवि नं पत्ता, तं सेयं मम
 कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलंते धणं सत्थवाहं आपुच्छित्ता
 धणणेणं सत्थवाहेणं अब्भणुन्नाया समाणी सुवहुं विपुलं असण-
 पाणखाइमसाइमं उवकखंडावेत्ता सुवहुं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं
 गहाय बहूहिं मित्तनाइनियगसयणसंबंधिपरिजणमहिलाहिं सद्धि संप-
 रिबुडा जाइं इमाइं रायगिहस्स नयरस्स बहिया णागाणि य भूयाणि य
 जकखाणि य इंदाणि य खंदाणि य रुद्धाणि य सिवाणिय वेसमणाणि
 य तत्थ णं य बहूणं नागपडिमाण य जाव वेसमणपडिमाण य मह-
 रिहं पुप्फच्चणियं करेत्ता जाणुपायवडियाए एवं वडत्तए—जइ णं अहं
 देवाणुप्पया ! दारगं वा दारिगं वा पयायामि तो णं अहं तुब्भं
 जायं च दायं च मायं च अकखयणिहिं च अणुवड्ढेमि त्ति कहुं उव-
 याइयं उवयाइत्तए, एवं संपेहित्ता कल्लं जाव जलंते जेणामेव धणो
 सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एवं वयासी—एवं खलु

अहं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं सद्धिं बहुइं वासाइं जाव देंति समुल्ला-
वण सुमहुरे पुणे मंजुलप्पभणिए तण्णं अहं अहन्ता अपुन्ना
अलक्खणा एत्तो एगमवि न पत्ता, तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया !
तुब्भेहिं अब्भणुन्नाया समाणी विपुलं असणं ४ जाव अणुवड्ढेमि
(त्तिकट्ठु) उवाइयं करेत्तए । तण्णं धण्णे सत्थवाहे भइं भारयं
एवं वयासी—ममं।प य णं खल्ल देवाणुप्पिया ! एस चेव मणोरहे
—कहं णं तुमं दारग दारिगं वा पयाएज्जसि ? भद्दाए सत्थवाहीए
एयमट्ठमणुजाणइ । तएगं सा भद्दा सत्थवाही धण्णेणं सत्थवाहेणं
अब्भणुन्नाया समाणी हट्ठुत्तु जाव हियया विपुलं असणपाण
खाइमसाइमं उवक्खडावेइ उवक्खड्डावित्ता सुवहुं पुप्फगंधवत्थम-
ल्लालंकारं गेणहइ गेण्हित्ता सयाओ गिहाओ निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता
रायगिहं नयरं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव पोक्ख-
रिणी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पुक्खरिणीए तीरे सुवहु
पुप्फजाव मल्लालंकारं ठवेइ, ठवित्ता पुक्खरिणि ओगाहइ, ओगा-
हित्ता जलमज्जणं करेइ जलकीडं करेइ, करित्ता ण्हाया कयवलिकम्मा
उल्लपडसाडिगा जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं
गिण्हइ गिण्हित्ता पुक्खरिणीओ पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता जेणमेव
नागघरए य जाव वेसमणघरए य तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
तत्थ णं नागपडिमाण य जाव वेसमणपडिमाण य आलोए पणाम-
करेइ करित्ता ईसिं पच्चुन्नमइ पच्चुन्नमित्ता लोमहत्थगं परामुसइ
परामुसित्ता नागपडिमाओ य जाव वेसमणपडिमाओ य लोमहत्थ-

भोगाइं पच्चणुभवमाणी विहरामि, नो चेव णं अहं दारगं वा दारिणं
 पयायामि, तं धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव सुलद्धेणं माणुस्सए
 जम्मजीवियफले तासिं अम्मयाणं जासिं मन्ने णियगकुच्छिसंभूयाइं
 थणदुल्लु छयाइं महरसमुल्लावगाइं मम्मणपयंपियाइं थणमूलक-
 कखदेसभागं अभिसरमाणाइं मुद्धयाइं थणयं पिवंति, तओ य
 कोमलकमलोवमेहिं हत्थेहिं गिण्हउणं उच्छंगे निवेसियाइं देति
 ससुल्लावए पिए सुमदुरे पुणो२ मंजुलप्पभणिए, तं अहन्नं अधन्ना
 अपुत्ता अलक्खणा अकयपुत्ता एत्तो एगमवि न पत्ता, तं सेयं मम
 कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलंते धणं सत्थवाहं आपुच्छित्ता
 धण्णेणं सत्थवाहेणं अब्भणुन्नाया समाणी सुवहुं विपुलं असण-
 पाणखाइमसाइमं उवक्खंडावेत्ता सुवहुं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारं
 गहाय बहूहिं मित्तनाइनियगसयणसंवंधिपरिजणमहिलाहिं सद्धिसंप-
 रिबुडा जाइं इमाइं रायगिहस्स नयरस्स बहिया णागाणि य भूयाणि य
 जक्खाणि य इंदाणि य खंदाणि य रुद्धाणि य सिवाणिय वेसमणाणि
 य तत्थ णं य बहूणं नागपडिमाण य जाव वेसमणपडिमाण य मह-
 रिहं पुप्फच्चणियं करेत्ता जाणुपायवडियाए एवं वडित्तए—जइं णं अहं
 देवाणुप्पिया ! दारगं वा दारिणं वा पयायामि तो णं अहं तुब्भं
 जायं च दायं च मायं च अक्खयणिहिं च अणुवड्ढेमि त्ति कहु उव-
 याइयं उवयाइत्तए, एवं संपेहित्ता कल्लं जाव जलंते जेणामेव धण्णे
 सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एवं वयासी—एवं खल्लु

आध्यात्मिकः=आत्मनि विचारः यावत् समुपपद्यत—अहं खलु धन्येन सार्थं
वाहेन सादं वह्निं वर्षाणि तावत्—वहुवर्षपर्यन्तं शब्दस्पर्शरसरूपात्मकान्
मानुष्यकान् कामभोगान् 'पञ्चगुणभवमाणी' मत्त्यनुभवन्ती=परिशुज्जाना
विहरामि=तिष्ठामि किन्तु नोचैव खलु अहं दारकं वा दारिकां वा प्रजन-
यामि, तत्—धन्याः खलु ता अम्वा यावत् सुलब्धं खलु मानुष्यकं जन्म-
जीवितफलं तासामम्बानां यासां मन्ये निजककुक्षिसम्भूताः स्तनदुग्धलुब्धा
मधुरसमुल्लापका 'मम्मणपजंपिघाई' मम्मणपजलिताः— 'मम्मण' इति
स्वलत् प्रजलितं येषां ते 'तथा यणमूलकवत्त्वदेसभागं अभिसरमाणाई'
स्तनमूलकक्षदेशभागमभिमरन्तः— स्तनमूलात्=स्तनमूलभागात् कक्षदेश-

रूपे अङ्गतिथि ए जाव समुपज्जित्वा) इस प्रकार यह आध्यात्मिक यावत्
मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ कि (अहं) मैं (धन्येन सत्यवाहेन सद्धिं) धन्य
सार्थवाह के साथ (वह्निं) बहुत वर्षों से (सद्धफरिसरसगंधरूपाणि माणुस्स-
गाईं कामभोगईं पञ्चगुणभवमाणी विहरामि) शब्द, स्पर्श, रस, गंध,
और रूप स्वरूप मनुष्यभव संयन्धी काम भोगों को भोग रही हुई हूँ।
(नो चैव णं अहं दारगं वा दारिगां वा पयायामि) परन्तु अभी तक मेरे
न लड़का ही हुआ है और न लड़की ही (तं धन्नाओ णं ताओ अम्म-
याओ जाव सुलदेणं माणुस्सए मण्णे जम्मजी वियफलेतासि अम्मयाओ)
अतः मैं उन माताओं को धन्य मानती हूँ, उन्हीं का जीवन सफल
समजती हूँ, और यह मानती हूँ कि उन्हींने अपने मनुष्य भव सम्बन्धी
जन्म का और जीवन का फल पाया है। (जासि णियगकुच्छिसंभूयाईं-
यणदुद्धलुद्धयाईं मधुरसमुल्लावगाईं मम्मणयं पिघाईं यणमूलकवत्त्वदेसभागं

धन्य सार्थवाहनी साथे (वह्निं वासाणि) बहुत वर्षोंથી (सद्धफरिसरसगंध-
रूपाणि माणुस्सगाईं कामभोगाईं, पञ्चगुणभवमाणी विहरामि)
शब्द, स्पर्श, रस, गंध અને रूपના मनुष्यभावना कामभोगों को भोग रही हूँ।
(नो चैव णं अहं दारगं वा दारिगां वा पयायामि) પણ अत्यार सुधी मारे पुत्र કે,

पुत्रीकंधनं यथुं नथी। (तं धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव सुलदेणं माणुस्सए
मण्णे जम्मजीवियफले तासि अम्मयाओ) हूँ ते माताओंने धन्य समजुं
हुं, तेमना एवनेने न सद्धण भातुं हुं, કે એમને મનુષ્યભાવના જન્મ
અને એવનેનાં સદ્ગુણ ફળ મળ્યાં છે (जासि णियगकुच्छिसंभूयाईं यण
दुद्धलुद्धयाईं मधुरसमुल्लावगाईं मम्मणयं पिघाईं यणमूल-कवत्त्वदेसभागं अभिसरमाणाईं

एणं पमज्जइ पमज्जित्ता उदगधाराए अच्चुम्बुखेइ, अच्चुम्बुखित्ता
 पम्हलसुकुमालाए गंधकासाइयाए गायाइं ल्हहेइ, ल्हहित्ता महरिहं
 वत्थारुहणं च मल्लारुहणं च गंधारुहणं च चुन्नारुहणं च करेइ, करित्ता
 जाव धूवं उहइ, उहित्ता जाणुपायवडिया पंजलिउडा एवं वयासी-
 जइणं अहं दारगं वा दारिगं वा पयायामि तो णं अहं आयं च जाव
 अणुवड्ढेमि त्तिकट्ठं उवाइयं करेइ, करित्ता जेणेव पोक्खरिणी तेणेव
 उवागच्छइ, उवागच्छित्ता विउलं असणं४ आसाएमाणी जाव विह-
 रइ, जिमेया जाव सुईभूया जेणेव सए गिहे तेणेव उवागया, अदु-
 त्तर च णं भद्दा सत्थवाही चाउदसट्ठमुद्धिट्ठपुन्नमासिणीसु विउलं
 असणं४ उवक्खडेइ, उवक्खडित्ता वहवे नागा य जाव वेसमणा य
 उवायमाणी जाव एवं च णं विहरइ ॥सु० ५॥

टीका—‘तएणं तीसे’ इत्यादि । ततः खलु तस्याः भद्राया भार्याया अन्यदा
 कदाचित् ‘पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि’ पूर्वरात्रापररात्रकालसमये=रात्रेः पश्चिमे
 भागे ‘कुडुं वजागरियं’ कुडुम्बजागरिकां=कुडुम्बसम्बन्धिविन्त्या निद्रासयरूपां
 जागरणम् ‘जागरमाणीए’ जाग्रत्याः=कुर्वत्याः अयमेतद्रूपः ‘अज्झत्थिए’

‘तएणं तीसे भद्दाए भारियाए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (तीसे भद्दाए भारियाए) उस भद्दा भार्या
 को (अन्नया कयाइं) किसी एक समय (पुव्वरत्तावरत्तकालं समयंसि) रात्रि
 के पूर्वभाग के बाद पश्चाद्भाग में (कुडुं वजागरियं जागरमाणीए) कुडुम्ब
 की विन्ता से निद्रा नही आने के कारण जगती हुई स्थिति में (अयमेया-

‘तएणं तोसे भद्दाए भारियाए’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएणं) त्वात् आह (तीसे भद्दाए भारियाए) भद्दा भार्याने
 (अन्नया कयाइं) कोष्ठं वण्ते (पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि
 रात्रिना पूर्वं भागानीं पछी पश्चाद्भागं भां (कुडुं वजागरि यं जागरमाणीए)
 कुडुं भनीं चित्ताने दीधे छिं ध न आवतां न्ययत्तावस्थाभां (अय-
 मेयारुवे अज्झत्थिए नाव समुपजित्था) आ जतने आध्याभिक यावत्
 भनोगत संकटं उद्भवो के (अहं) हुं (धन्नेण सत्थवाहेण सद्धिं)

सञ्चितपुण्याऽग्नि 'एतो' इतः पूर्वमद्यावधि=एपां मध्याद् एकमपि शिथुं
चेष्टनकलापादेकमपि चेष्टनमेकमपि शिथुं वा न प्राप्ता 'तं'तत्=तस्मात्का-
रणात् 'सेयं' श्रेयः=श्रेयस्करं शोभनं मम कल्ये पादुष्प्रभातायां रज्ज्यां
यावत् 'जलन्ति' ज्वलन्ते=सूर्योदये सति धन्यं सार्थवाहमापृच्छथ धन्येन सार्थवाहेन
'अम्भणुन्नाया' अम्भणुज्ञाता=प्राप्तनिदेशा सती 'सुबहुं'=प्रकारबहुलं 'विपुलं'
विपुलं=पचुरम् अशनपानस्वाद्यस्वाद्यम् 'उक्खल्लडावेत्ता=उपस्कार्यं चतुर्विध-
माहारं निष्पाद्य 'सुबहु' सुबहुम्=बहुप्रकारकं पुष्पवस्त्रगन्धमाल्यालंकारं गृहीत्वा
बहुभिर्भिन्नज्ञातिनिजकस्वजनसम्बन्धिपरिजनमहिलाभिः सार्द्धं संपरिवृता

है ऐसी हूँ जो अभी तक इस प्रकार की चेष्टा संपन्न बालों में से एक भी चेष्टा
विशिष्ट और मीठी तोतली चाणी बोलने वाले शिथु को नहीं पा सकी हूँ। (तं सेयं
मम कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलन्ते धण्णं सत्थवाहं आपुच्छित्ता
धण्णेणं सत्थवाहेणं अम्भणुन्नाया समाणी सुबहुं विपुलं असणपाण-
खाइमसाइमं उक्खल्लडावेत्ता) तो अब मुझे यही श्रेयस्कर है कि मैं कल
प्रभात होते ही— सूर्यके उदित होने पर धन्यमार्थवाह से पूछकर और
उनकी आज्ञा प्राप्त कर अशन, पान, स्वाद्य और स्वाद्य इस तरह चार
प्रकार का आहार निष्पन्न करा कर (सुबहुं पुष्पवस्त्रगंधमल्लालंकारं गहाय
बहूहिं मित्त नाइ-नियग-सयण-संवंधि-परिजनमहिलाहिं सद्धिं संपरिवुडा-
जाइं इमाइं रायगिहस्स नयरस्स बहिया णागाणि य भूयाणि य जक्खाणि य
इंदाणि य खंदाणि य रुदाणि य) और पुष्प, वस्त्र, गंध, माला, एवं
अलंकार को लेकर अपने अनेक मित्र, ज्ञाति निजक, स्वजन संवन्धी

हुं छुं, डेभडे डल्ल येवी णाण येलाओ करनार णाणोभांथी मे' ओके पल्लु णाणके
भेणु' नथी. (तं 'सेयं मम कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलं-
ते धणं सत्थवाहं आपुच्छित्ता धण्णेणं सत्थवाहेणं अम्भणुन्नाया समाणी
सुबहुं विपुले असणपाणखाइमसाइमं उक्खल्लडावेत्ता) येवी स्थितिभां
भने येव उचित्त दागे छे डे आवती डावे सवारे सूरज उदय पामतां धन्य
सार्थवाहने पूछीने तेमनी आज्ञा भेणवीने अशन, पान पाद्य अने स्वाद्य आ रीते
थार नतने आहार तैयारकरावडावीने (सुबहुं पुष्पवस्त्रगंधमल्लालंकारं
गहाय बहूहिं मित्तनाइनियगसयणसंवंधिपरिजनमहिलाहिं सद्धिं
संपरिवुडा जाइं इमाइं रायगिहस्स नयरस्स बहिया णागाणि य भूयाणि य
जक्खाणि य 'दाणि य खंदाणि य रुदाणि य वेसमणाणि य) अने पुष्प वस्त्र,
गंध भाणा अने धरेणुंओ साथे वधने अनेक मित्र, ज्ञाति, निजक स्वजन संवन्धी

ભાગમ્ ધ્રમિનન્તઃ=મમ્મુલ્લં સત્ત્વરન્તઃ સન્તઃ 'મુદ્રયાઈ' મુગ્ધાઃ=મનોહરાઃ
 શિશવઃ 'ધનયં' પિવંતિ, સ્તનજં=દૂધં પિવન્તિ સ્તન્યપાનં કુર્વન્તીત્યર્થઃ ।
 તતથ તે 'કોમલકમલોવમેહિ' કોમલકમલોપમાભ્યાં=મુકુમાલકમલ-
 સદૃશાભ્યાં હસ્તાભ્યાં ઘૃહીસ્વા 'ઉચ્છંગનિવેસિયાઈ' ઉત્સન્નનિવેસિતાઃ=મદ્દે-
 સ્થાગિતાઃ સન્તઃ સ્તનન્ધયા માતૃભ્યઃ 'દેતિ' દદતિ, કિમિત્યાહ—'સમુ-
 દ્લાવે' સમુદ્લાપકાન્, સંજલ્પાન્ કીદશાન્ ? इत्याह—'પિ' મિયાન્ પ્રીતિ-
 જનકાન્ 'સુમહુરે' સુમધુરાન્=કર્ણસુલ્લજનકાન્ 'પુણો પુણો મંજુલપ્પમણિ'
 પુનઃ પુનર્મંજુલપ્પમણિતાન્=વારંવારં કોમલાક્ષરમયુક્તજલ્પિતાન્ દદતિ પ્રિયમ-
 જ્ઞાપયમાપયા માપન્તે ધન્યા इत्यर्थः । 'તં' તત્-કિન્તુ અહં લલ્તુ 'અધન્ના'
 અધન્યા=અકૃતાર્યા 'અપુણ્ણા' અપુણ્યા=પુણ્યહીના, 'અલક્ષણા'='અનક્ષણા
 =કુલક્ષણા 'અકયપુણ્ણા' અકૃતપુણ્યા=ન કૃતં પૂર્વભવે પુણ્યં યયા સા પૂર્વભવાઽ

અભિસરમાણાઈ મુદ્રયા ધનયં પિવંતિ) કિ જિનકી કુક્ષિસે ઉત્પન્ન સ્તન
 કે દૂધ મેં 'લુબ્ધ, મીઠી' રેનોતલી ચોલતે હુણ ચાલક શિશુ, સ્તન કે
 મૂલ ભાગ સે કક્ષ દેશ પર્યન્ત સરક કર દૂધ પીતે હૈં । (તઓ ય
 કોમલકમલોવમેહિં इत्येहिं गिण्डिकुणं उच्छंगे निवेसियाई) और माता
 उन्हे अपने सुकुमार तथा कमल जैसा दोनों हाथों से पकड़ कर उत्संग
 में बैठाती है । और वे स्तनन्धय-बालक (समुल्लावणं देति) उन अपनी
 माताओं को इस प्रकार के आलापों को देते हैं (पि स्रमहुरे पुणो २
 मंजुलपपमणि) जो मोति जनक होते हैं, कर्ण सुखजनक होते हैं
 और जिनमें बार-बार कमल अक्षरवाली वाणी होती है । (तं अहन्नं अधन्ना
 अपुण्णा अलक्खणा अकयपुण्णा एत्तो एगमवि न पत्ता) किन्तु मैं तो अधन्य
 हूँ, पुण्यहीन हूँ-कुलक्षणा हूँ अकृत पुण्या हूँ-पूर्वभवं में पुण्यजितने नहीं हिता

મુદ્રયાઈ ધનયં પિવંતિ) એવું માતૃ છે કે જેમના ઉદરે જન્મેલું, સ્તન પાન
 માટે ઉલ્કડિત, મીઠું મીઠું અને તોતડું બોલતું બાળક સ્તનો સુધી—પડખા સુધી
 ધસી આવીને દૂધ પીવે છે. (તઓ ય કોમલકમલોવમેહિં इत्येहिं
 गिण्डिकु उच्छंगे निवेसियाई) અને માતા તેને કમળ જેવા અને હાથોમાં
 ઉચ્છંગે બેસાડે છે. તે બાળકે પણ (સમુલ્લાવણં દેતિ) માતાએની
 સાથે એવી રીતે કાલુ કાલુ બોલે છે કે (પિ સુમહુરે પુણો ૨ મંજુલપ્પમણિ)
 જે અત્યન્ત પ્રેમ જનક હોય છે, કાનોને સુખકર હોય છે. તેની વાણી કોમલ
 અક્ષરોથી યુક્ત હોય છે. (તં અહન્નં અધન્ના અપુણ્ણા અલક્ષણા
 અકયપુણ્ણા एतो एगमवि न पत्ता) પણ હું તો અભાગી છું, પુણ્ય હીન છું,
 કુલક્ષણ છું, અકૃત પુણ્ય છું, જેણે પૂર્વભવ જન્મમાં પુણ્ય ક્યો જ નથી એવી

‘दायच’ दायं=दानम् अभयदानादकं, पचदिवसादिदानं वा, ‘भायंच’ भारं
वर्द्धयामि—प्रभूतद्रव्यमर्पयिष्यामीत्यर्थः, ‘तिवहु’ इति कृत्वा=इत्युक्त्वा
‘उवाइयं’ उपयाचितम्=अपत्यमाप्तिपार्थनारूपां मान्यतां ‘मनौती’ इति
प्रसिद्धाम् ‘उवायइत्तर’ उपयाचतुं=कर्तुं ‘श्रयः’ इति पूर्वेण सम्बन्धः । एवं
सम्प्रेक्षते, सम्प्रेक्ष्य कलये याचञ्ज्वळति यत्रैव धन्यः सार्थवाहस्तौवोपा-
गच्छति, उपागम्य एवमवादीत—एवं खलु अहं देवानुप्रियाः ! युष्माभिः

अणुवहुमि) यदि मैं हे देवानुप्रियों ! अपनी कुक्षिसे पुत्र या पुत्री
को जन्म दूंगी तो मैं आपकी सेवा करूंगी—आपके निमित्त अभय-
दानादिकका वितरण करूंगी, अथवा पूरे दिनों में दान आदि वांटने
की व्यवस्था करदूंगी । अपने हिस्सेमें आपके लिये विभाग अलग
तथा आपके अक्षय कोष की वृद्धि करवादूंगी—तात्पर्य इसका यह है
कि मेरी मनो कामना पूर्णहोने पर मैं प्रभूत द्रव्य आप सबके लिये
अर्पित करूंगी । (त्ति कु उवायाइयं उवायाइत्तर) इस तरह की मुझे
उनके पास मनौती—मानता—मानाने में मेरी भलाई है। (एवं संपेहेइ)
इस प्रकार का उसने विचार किया । (संपेहिता) और विचार कर (कल्लं-
जावजलंते जेणामेव धण्णे सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ) वह दूसरे दिन
(उसी दिन) मातः काल होते ही सूर्य के प्रकाशित होने पर जहां
अपने पति धन्य सार्थवाह थे वहां गई । (उवागच्छिता एवं वयासी)
वहां जाकर उसने उनसे ऐसा कहा—(एवं खलु अहं देवानुप्रिया !

याणिहिं च अणुवहुमि) हे देवानुप्रियो ! मे भारा उद्दरथी पुत्र के पुत्री जन्मसे
तो हुं आपनी पूज करीश. आपना निमित्ते अभयदान वगेरे करीश, अथवा
तो पड़ेखाना दिवसोभां दान वगेरे पड़ेखानी व्यवस्था करीश. भारा हिस्साभां मे
कंधं आवशे तेभांथी तभारे लाग जुद्धे भूझवडावीश. तेभज तभारा अक्षय निधिनी
पणु हुं वृद्धि करीश. मतलब ये छे के मे भारी मनोकामना पूरी थशे तो हुं
प्रभूत द्रव्य तभारा थरखोभां लेट रेपे अर्पणु करीश. (त्तिकहुं उवायाइयं उवाया
इत्तर) आ जतनी मान्यताभां ज भने हुवे भारुं श्रेय जणुथ छे. (एवं संपेहेइ)
आ प्रभाखे तेखे विचार कर्यो. (संपेहिता) अने विचार करीने (कल्लं जाव जलंते
जेणामेव धण्णे सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ) भीजे दिवसे सवारे सूयोदय
थतां ज नयां पोताना पति धन्य सार्थवाह हुता त्यां गछ. (उवागच्छिता
एवं वयासी) त्यां जधने तेने आम कहुं—(एवं खलु अहं देवानुप्रिया !

યાનીમાનિ રાત્રગૃહસ્ય નગરસ્ય વદિઃ 'નાગાણિ ચ' નાગાનિચ-નાગગૃહાણાં-
ત્યર્થઃ, एवं सर्वत्र विज्ञेयम्: भूतानि च-भूतगृहाणि, यक्षाणि च यक्षगृहाणि,
इन्द्राणि च-इन्द्रगृहाणि, स्कन्दानि च-स्कन्दगृहाणि, रुद्राणि च-रुद्रगृहाणि
शिवानि च-शिवगृहाणि, वैश्रमणानि च-वैશ्रमणगृहाणि सन्ति, तत्र खलु बहूनां
नागप्रतिमानां च यावत् वैશ्रवणप्रतिमानां च 'महरिहं' महाहं
बहुमूल्यां 'पुष्पचणियं' पुष्पार्चनिकां=कुसुमसेवां कृत्वा, जाणुपायवडियाए
जानुपादपतितायाः—पादयोः पतिता-पादपतिता. जानुभ्यां पादपतिता जानु-
पादपतिता=जानुनी भूमौ विन्यस्य प्रणेत्यर्थः. तस्या मम एवं वक्ष्यमाण-
प्रकारेण चक्तुं=पार्थयितुं श्रेयः 'श्रेयः' इति पूर्वेण सम्बन्धः । तदेव दर्श-
यति--'जइ णं अहं' इत्यादिना,—यदि खलु अहं देवानुप्पिया ! 'दारगं
दारकं=निजकुक्षिसंजातं पुत्रं दारिकां वा=पुत्रीं वा, पयायामि' प्रजनयामि
प्रजनयिष्यामीत्यर्थः 'तो णं' तर्हि खलु अहं युष्मभ्यं 'जायं' यागं=सेवां

परिजनોં કી મહિલાઓં કે સાથ મિલકર રાત્રગૃહનગર કે બાહર જિતને
भी नागघर हैं, जितने भी भूत घर हैं, जितने भी यक्ष घर हैं,
जितने भी इन्द्र घर हैं, जितने भी स्कन्द घर हैं, जितने भी रुद्र घर
हैं, जितने भी शिवघर हैं, जितने भी वैश्रमणघर हैं— और
(तत्थणं वयणं नागपडिमाणं य जाय वेसमणपडिमाणं य) उनमें जितनी
नाग देव की प्रतिमाएँ हैं यावत् वैश्रवण देव प्रतिमाएँ हैं उन सबको
(महरिहं पुष्पचणियं करिना) बहुमूल्य पुष्पां से अर्वा करके (जाणुपाय-
वडियाए एवं वइणए) उनके पैरों में दोनों छुटने झुकाकार पडजाउँ ओर
उनसे ऐसी पार्थना करूं (जइणं अहं देवानुप्पिया ! दारगं वा दारिगं वा
पयायामि तो णं अहं तुम्हें जायं च दायं च मायं च अक्खयणिहं च

પરિજનોની મહિલાઓની સાથે રાત્રગૃહ નગરની બહાર જેટલાં નાગ ઘરો છે, જેટલાં
ભૂતઘરો છે, જેટલાં યક્ષ ઘરો છે, જેટલાં રુદ્ર ઘરો છે, જેટલાં ઇન્દ્ર ઘરો છે,
જેટલાં યક્ષ ઘરો છે, જેટલાં રુદ્ર ઘરો છે, જેટલાં શિવઘરો છે, અને જેટલાં
વૈશ્રમણ ઘરો છે તેમજ (તત્થણં વહૂણં નાગપાડિમાણં ય જાવ વેસમણ
પડિમાણં ય) તેઓમાં જેટલાં નાગ દેવથી માંડીને વૈશ્રમણ દેવ સુધીની પ્રતિમાઓ
છે, તે બધી પ્રતિમાઓની (મહરિહં પુષ્પચ્ચણિયં કરિત્તા) બહુમૂલ્ય પુષ્પોથી પૂજા કરીને
(જાણુપાયવડિયાए एवं वइणए) તેમના ચરણોમાં બંને પાંદળ ટેકીને પડી
બાઉં અને તેમને વિનંતી કરું કે (જइणं अहं देवानुप्पिया ! दारगं वा
दारिगां वा पायायामि तो णं अहं तुम्हें जायं च दायं च मायं च अक्ख-

‘दायच’ दायं=दानम् अभयदानादिकं, पचाद्विसादिदानं वा, ‘भायच’ भारं
वर्द्धयामि-प्रभूतद्रव्यमर्पयिष्यामीत्यर्थः, ‘तिवहु’ इति कृत्वा=इत्युक्त्वा
‘उवाइयं’ उपयाचितम्=अपत्यमाप्तिपार्थनारूपां मान्यतां ‘मनौती’ इति
प्रसिद्धाम् ‘उवायइत्तर’ उपयाचितुं=कर्तुं ‘अयः’ इति पूर्वेण सम्बन्धः । एवं
सम्प्रेक्षते, सम्प्रेक्ष्य कल्पे यावज्ज्वलति यत्रैव धन्यः सार्थवाहस्तत्रैवोपा-
गच्छति, उपागम्य एवमवादीत—एवं खलु अहं देवानुप्पियाः ! युष्माभिः

अणुवहुमि) यदि मैं हे देवानुप्पियों ! अपनी कुक्षिसे पुत्र या पुत्री
को जन्म दूंगी तो मैं आपकी सेवा करूंगी—आपके निमित्त अभय-
दानादिकका वितरण करूंगी, अथवा पूर्व दिनों में दान आदि बांटने
की व्यवस्था करदूंगी । अपने हिस्सेमें आपके लिये विभाग अलग
तथा आपके अक्षय कोष की वृद्धि करवादूंगी—तात्पर्य इसका यह है
कि मेरी मनो कामना पूर्णहोने पर मैं प्रभूत द्रव्य आप सबके लिये
अर्पित करूंगी । (त्ति कु उवायइयं उवायइत्तर) इस तरह की मुझे
उनके पास मनौती—मानता—मानाने में मेरी भलाई है । (एवं संपेहेइ)
इस प्रकार का उसने विचार किया । (संपेहिता) और विचार कर (कल्लं-
जावजलंते जेणामेव धण्णे सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ) वह दूसरे दिन
(उसी दिन) मातः काल होते ही सूर्य के प्रकाशित होने पर जहां
अपने पति धन्य सार्थवाह थे वहां गई । (उवागच्छिता एवं वयासी)
वहां जाकर उसने उनसे ऐसा कहा—(एवं खलु अहं देवानुप्पिया !

याणिहिं च अणुवहुमि) हे देवानुप्पिया ! मे भारा उदरथी पुत्र के पुत्री जन्मसे
तो हूं आपनी पूज करीश. आपना निमित्ते अभयदान वगेरे करीश, अथवा
तो पंडेदाना द्विसोभां दान वगेरे वहेयवानी व्यवस्था करीश. भारा हिस्साभां मे
कंध आवशे तेभांथी तभारे लाग जुहो भूखवडावीश. तेभज तभारा अक्षय निधिनी
पणु हूं वृद्धि करीश. मतवण मे छे के मे भारी मनोकाभना पूरी थसे तो हूं
प्रभूत द्रव्य तभारा थरखोभां लेट इपे अर्पणु करीश. (त्तिकहु उवायइयं उवाय
इत्तर) आ नतनी मान्यताभां ज भने हुवे भाउं श्रेय जणुथ छे. (एवं संपेहेइ)
आ प्रभाणु तेणु विचार कथों. (संपेहिता) अने विचार करीने (कल्लं जाव जलंते
जेणामेव धण्णे सत्थवाहे तेणामेव उवागच्छइ) नीले द्विसे अवारे सुथीदथ
थतां ज नथां पोताना पति धन्य सार्थवाह हुता त्यां गछ. (उवागच्छिता
एवं वयासी) त्यां जधने तेने आम कहुं— (एवं खलु अहं देवानुप्पिया !

સાદ્ર વહ્નિ વર્ષાણિ યાવદ્ દદતિ સમુલ્લાપકાન્ સુમધુરાન્ પુનઃપુનર્મઞ્જુલ-
મમણિતાન્ તત્ સ્વલુ અહમધન્યા, અપુણ્યા, અકૃતલક્ષણા, इत एकमपि न
प्राप्ता, तद् इच्छामि स्वलु देवानुप्रिय ! युष्माभिरभ्यनुज्ञाता सती विपुल-
म-
शनं ४ યાવદ્ અનુવર્દ્ધયામિ, (તિાદુ) इतिकृत्वा=इत्युक्त्वा उपयाचितं
तुम्हेहिं सद्धिं वह्निं वासा जाव देति समुल्लावए सुमहुरे) हे देवानु-
प्रिय ! आपके साथ बहुत वर्षों से मैं मनुष्य भवसंवन्धी काम भाग
भोग रही हूं परन्तु अभी तक मेरे यहां न कोई लडका हुआ है और
न कोई लडकी वे माताएँ धन्य हैं जो संतान से युक्त हैं एवं उनकी
तोतली मधुर बोली से जो अपने को प्रसन्न रखती हैं—इत्यादि कह
कर फिर उसने कहा (अहं अहन्नाअपुण्णा अलवखणा एत्तो एगमवि न पत्ता)
मैं अधन्या हूं अपुण्णा हूं पूर्व में मैंने कोई भी ऐसा पुण्य नहीं किया
है, जिससे मेरे यहां तो लडका लडकी मंसे कोईभी नहीं है—
(तं इच्छामि णं देवानुप्रिया ! तुम्हेहिं अब्भणुन्नाय समाना विपुलं
असणं ४ जाव अणुवड्ढेमि तिकद्दु उवयाइयं करेत्तए) इसलिए हे देवानु-
प्रिय ! मैं आपसे आज्ञापित होकर यह चाहती हूं। की चारों प्रकार
का आहार विपुल मात्रा में तैयार कराकर तथा गंध पुष्पादिलेकर
अनेक मात्रादिक महिलाओं के साथ यहां के जितने भी इन्द्रादिकों के
घर हैं उन सब की पुष्पार्चाकर उन के चरणों में पड़कर संतान होने
की मनौती (मानता) मनाऊँ—। इस इच्छा के पूर्ण होने पर फिर मैं
तुम्हेहिं सद्धिं वह्निं वासाइं जाव देति समुल्लावए सुमहुरे)
हे देवानुप्रिय ! तमारी साथे बहुत लांछा वषतथी हूं मनुष्यलवना कामलोगे।
लोगवी रही छुं, पण्डु छलु भारे पुत्र के पुत्री भांथी कंछ थयुं नथी. आ संसारमां
संतानवाणी भाताओ ४ लाव्यथाणी गणाय छे. के जेभनां नानां नानां जाणके।
तोतडी मधुर वाणी द्वारा तेभने शुभ सजे छे. (अहं अहन्ना अपुण्णा
अलवखणा एत्तो एगमवि न पत्ता) हूं तो अलागी छुं, पापिछी छुं, पूर्वलवमां
में संतान थाय आबुं कंछ पुण्य कार्य कथुं नथी. (तं इच्छामि णं देवानुप्रिया !
तुम्हेहिं अब्भणुन्नाया समाना विपुलं असणं जाव अणुवड्ढेमि त्ति कद्दु
उवयाइयं करेत्तए) हूं तमारी आज्ञाथी पुच्छण प्रमाणमां थारे नतना आहार
जनावजवीने तेभज गंध पुष्प वगेरे लघने अनेक महिलाओणी साथे अडिंयां
जेठलां छन्द्र वगेरे देवोना धरे छे ते अधांनी पुष्प वगेरेथी पूज करी तेभना
अरखोमां पडीने संतानवती थवानी मानता राखुं. न्यारे मारी आ मनोकाभना

कर्तुं श्रेयः । ततः खलु धन्यः सार्थवाही भद्रां भायामेवमवादात्-ममपि च खलु हे देवानुप्रिये ! एष एव मनोरथः' यथा—'कहं णं' कथं खलु केनोपायेन त्वं दारकं वा दारिकां च प्रजनयिष्यसि ? इति कथयित्वा सार्थवाह्यः 'एयं' एतत्प्रमनोरथरूपम् अर्थम् 'अणुजाणइ' अनुजानाति=अनुमोदयति । ततः खलु सा भद्रा सार्थवाही धन्येन सार्थवाहेन अभ्यनुज्ञाता सती 'हट्ठतुट्ठा जाव हियया' हट्ट तुष्ट यावत्-हट्टतुष्ट चिन्तानन्दिता हर्षवशविसर्प-दृढदया विपुलमशनपानखाद्यस्वाद्यमुपस्कारयति, उपस्कार्य सुबहुं

अभयदानादिक का वितरण करूं इत्यादि । इस तरह उपयुक्त सब अपनी भावना उस भद्रा भार्याने धन्य सार्थवाह से निवेदित की । (तए णं धन्ने सत्थवाहे भदं भारियं एवं वयासी) इस प्रकार धन्य सार्थवाह ने अपनी भद्राभार्या की भावना सुनकर उससे ऐसा कहा—(ममपि णं खलु देवानुप्रिया ! एस चेव मनोरहे) हे देवानुप्रिये मेरा भी ही मनोरथ है किं (कहं णं तुमं दारगं दारियं वा पयाएज्जसि) तुम किस उपाय से दारक या दारिका को जन्म दोगी ! इस प्रकारकहकर (भद्राए सत्थवाहीए एयमट्ठमणुजाणइ) धन्य सार्थवाहने उस भद्रा सार्थवाही के इस मनोरथरूप अर्थ को स्वीकार कर लिया उसकी अनुमोदना की । (तए णं सा भद्रा सत्थवाही धन्नेणं सत्थवाहेणं अब्भणुन्नाया समाणी हट्ठतुट्ठा जाव) इसके बादभद्रा सार्थवाहीने अपने पति धन्यसार्थवाह से आज्ञा प्राप्त कर बहुत अधिक हर्षित एवं सन्तुष्ट चित्त होते हुए (विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उव्वखडावेइ) विपुलमात्रा में अशन पान खादिम और

सङ्गण थध नथ त्थारे हुं अलथदान वगेरे वडेंथुं आ प्रभाणु लद्दा लार्थांये तेना पति धन्यसार्थवाहने विनंती करी. (तए णं धन्ने सत्थवाहेभदं भारियं एवं वयासी) आ प्रभाणु धन्य सार्थवाहे तेमनी लद्दा लार्थांनी वात सांलणीने तेने आ प्रभाणु कहुं:— ममपि खलु देवानुप्रिया ! एसचेव मनोरहे) हे देवानुप्रिये ! भारी पणु छंछांयेवी न. छे के (कहं णं तुमं दारगं दारियं वा पयाएज्जसि) केवी रीते तमे पुत्र के पुत्रीने जन्म आपी थके ? आ रीते कहीने (भद्राए सत्थवाहीए एयमट्ठमणुजाणइ) धन्यसार्थवाहे तेमनी लद्दा लार्थांनी वात स्वीकारी अने तेने अनुमति आपी. (तए णं सा भद्रा सत्थवाही धन्नेणं सत्थवाहेणं अब्भणुन्नाया समाणी हट्ठ तुट्ठा जाव) त्थारणाड लद्दासार्थवाहींये तेमना पति सार्थवाहनी आज्ञा भेणवीने अत्थंत प्रसन्नता : अनुलवीने अने सन्तुष्ट थधने तेणु (विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उव्वख-डावेइ) पुष्कण प्रभाणुमां अशन, पान, आदिम स्वादिम आहार त्थार करवडांये

પુષ્પગન્ધવાત્પાલ્યાલહારં યુક્તાંતિ, યુક્તેષા સ્વભાદ યુક્તાનિર્ગચ્છતિ. નિર્મલ્ય રાજયુઃ નગરં મધ્યમધ્યેન નિર્ગચ્છતિ, નિર્મલ્ય યથૈવ પુષ્કરિણી તૈથૈવોપાગચ્છતિ, ઉપગત્ય પુષ્કરિણ્યાસ્તીરે સુચદ્મં પુષ્પગન્ધવસ્ત્રમાલ્યાલહારં સ્થાપયતિ, સ્થાપયિત્વા પુષ્કરિણીમવગાહતે, આગાય જલમજ્જનં કરોતિ, કૃત્વા જલક્રીડાં કરોતિ, કૃત્વા સ્નાતા કૃતચલિકર્મા 'ઉલ્લપડસાડિયા' આર્દ્રપટશાટિકા=જલાવગાહનેન આર્દ્રે પટશાટિકે=ઉત્તરીયપરિધાનવસ્ત્રે યસ્યાઃ સા તથ, તાદૃશી સા યાનિ તત્ર 'ઉપ્પલાઈ' ઉત્પલાનિ=કમળાનિ 'જાવ સહસ્સપત્તાઈ' યાવસહસ્રપત્રાણિ=સહસ્રદલકલિતાનિ મહાપત્રાણિ સન્તિ તાનિ

સ્વાદિમ આહાર તૈયાર કરાયા-(ઉવક્ષલ્પડાવિત્તા સુચદ્મં 'પુષ્પગન્ધવત્થમલ્લાલંકારં ગેઠ્ઠઈ) યાદ મેં પુષ્પ ગંધ વસ્ત્ર માલા અલંકાર કો લિયા ઓર (ગેઠ્ઠિત્તા) લેકર (સયાઓ ગિહાઓ) અપને વર સે (નિગચ્છઈ) વહ (નિકળી-નિગ્ગચ્છિત્તા રાયગિહં નગરં મજ્જાં મજ્જાગં ણિગચ્છઈ) નિકલ કર રાજયુહ નગર કે ઠીક વીચોવોચ માર્ગ સે હો કર વહ ચલી (નિગ્ગચ્છિત્તા જેણેવ પોક્સરણીતેણેવ-ઉવાગચ્છઈ) ચલતેર વહ વહાં પહુંચી જહાં પુષ્કરિણી થી। (ઉવાગચ્છિત્તા પુષ્કરિણીપતીરેસુચદ્મં પુષ્પજાવમલ્લાલંકારં ઠવેઈ) પહુંચતે હી उसने उस पुष्करिणी के तीर पर वह चारों प्रकार के आहार की सामग्री तथा पुष्प आदि सब वस्तुएँ रख दी (ઠવિત્તા પુક્સરિણિ ઓગાહઈ) રજ કર ફિર उसने उस में अवगाहन किया (ઓગાહિત્તા જલમજ્જનં કરેઈ) अवगाहन कर स्नान किया (જલક્રીડ કરેઈ) जल क्रीडा को करिचा ण्हाया कयचलिकर्मा उल्लपडसाडिगा जाई तथ उप्पलाई जाव सहस्सपत्ताई ताई-

(ઉવક્ષલ્પડાવિત્તા સુચદ્મં પુષ્પગન્ધવત્થમલ્લાલંકારં ગેઠ્ઠઈ) ત્યારપછી પુષ્પ, વસ્ત્ર, માળા અને અલંકારોને લીધા અને (ગેઠ્ઠિત્તા) લઈને (સયાઓ ગિહાઓ) પોતાના ઘેરથી (નિગચ્છઈ) તે બહાર નીકળી (નિગ્ગચ્છિત્તા રાયગિહં નગરં મજ્જાં મજ્જેણં ણિગચ્છઈ) નીકળીને રાજગૃહ નગરની ઠીક વચ્ચે વસ્ત્ર રસ્તેથી તે ચાલી (નિગ્ગચ્છિત્તા જેણેવ પોક્સરણી તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) ચાલતાં ચાલતાં ત્યાં પુષ્કરિણી હતી ત્યાં પહોંચી. (ઉવાગચ્છિત્તા પુક્સરિણીપતીરે સુચદ્મં પુષ્પ જાવ મલ્લાલંકાર ઠવેઈ) ત્યાં પહોંચીને તેણે પુષ્કરિણીના કાંઠે ચારે બાતના આહારની સામગ્રી વગેરે બધી વસ્તુઓ મૂકી દીધી. (ઠવિત્તા પુક્સરિણિ ઓગાહઈ) મૂકીને તે પુષ્કરિણીમાં ઉતરી (ઓગાહિત્તા જલમજ્જનં કરેઈ) ત્યાં ઉતરીને તેણે સ્નાન કર્યું (જલક્રીડ કરેઈ) બળક્રીડ કરી (કરિચા ણ્હાયા કયચલિકર્મા ઉલ્લપડસાડિગા-જાઈ) તથા ઉપ્પલાઈ જાવ સહસ્સપત્તાઈ તાઈ ગિહઈ) ત્યાર પછી ત્યારે તેણે

गृह्णन्ति, गृहीत्वा पुष्पां णांतः प्रत्यवरोहति, प्रत्यवरुह्य तं सुवह्नुं पुष्पगन्ध-
वस्त्रमालयालङ्कारं गृह्णन्ति, गृहीत्वा यत्रैव नागगृहं च यावद् वैश्रमण-
गृहं च तद्यैवोपागच्छति, उपागत्य तत्र खलु नागप्रतिमानां च यावद्
वैश्रमणप्रतिमानांच. 'आलोए' आलोके=दृष्टिपथमागते सति प्रणामं
करोति, कृत्या 'ईसि पच्चुन्नमइ' ईपत्प्रत्युन्नमति=स्तोकं प्रणमति, प्रत्युन्नम्य
'लोमहत्थगं' लोमहस्तकं=मयूरपिच्छप्रमार्जनकं 'परामुसइ' परामुसति=गृह्णाति

गिण्हइ) वाद में जब वह अच्छी तरह स्नान कर चुकी और काकादि
पक्षी को अन्नादि को दिया तब गीली पटशाटिका पहिने हुए ही उसने
वहां जितने कमल थे यावत् सहस्रपत्र युक्त महाकमल थे उन सबको उस
पुष्पकरिणी से लिया और (गिह्णित्ता पुक्खरिणीओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता
तं सुवह्नुं पुष्प गंधवत्थमल्लालंकारं गेण्हइ, गिण्ह १ जेणामेवनागघरए
य जाव वेसमणएण तेणेव उवागच्छइ) लेकर वह उस पुष्पकरिणी से
बाहर नीकली-निकल कर उसने समस्त उन पुष्प, गंध वस्त्र, माला,
अलंकार आदि को लिया-और लेकर जहां नागघर यावत् वैश्रमण का घर
था वहां गई (उवागच्छित्ता तत्थणं नागपडिमाण य जाव वेसमणपडिमाण य
आलोए पणामं करेइ वहां पहुँच कर उसने वहां नाग प्रतिमाओं को यावत्
वैश्रमण प्रतिमाओं को दृष्टिपथ होते ही प्रणाम किया। (करित्ता ईसि पच्चु-
न्नमइ) प्रणाम कर फिर वह कुछ सुकी-(पच्चुन्नमिन्ना लोमहत्थग परामुसइ-
परामुसित्ता नागपडिमाओ य जाव वेसमणपडिमाओ य लोमहत्थएणं पम-

सारी रीते स्नान करी लीधुं' अने डागडा वगेरे पक्षीओने अन्न वगेरेने। लाग
आप्ये। त्थारणाह बीनी साडी पड़ेरीने ज तेहे त्यां जेटलां कमणो, सडुख पत्रवाणा
भडा कमणो हुतां ते गंधाने पुष्प-खीभांथी लध लीधां अने (गिण्हित्ता पुक्खरि-
णीओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता तं सुवह्नुं पुष्पगंधवत्थमल्लालंकारं गेण्हइ-
गिण्हित्ता जेणामेव नागघरए य जाव वेसमणघरए य तेणेव उवागच्छइ)
लधने ते पुष्पखीणीनी जडार नीकणी-नीकणीने तेहे गंधां पुष्प वस्त्र, गंध, भाणा
अलंकार वगेरे लीधां अने लधने न्यां नागघर वैश्रमण घर वगेरे हुतां त्यां गंध-
(उवागच्छित्ता तत्थणं नागपडिमाण य जाववेसमणपडिमाण य आलोए पणामं
करेइ) त्यां पछोन्हीने तेहे नाग अने वैश्रमण वगेरेनी प्रतिमाओने जेतां ज प्रणाम कर्थां.
(करित्ता ईसि पच्चुन्नमइ) प्रणाम करीने ते नीत्थी नभी (पच्चुन्नमिन्ना लोम
हत्थगं परामुसइ परामुसित्ता नागपडिमाओ य जाव वेसमणपडिमाओ य

पुष्पगन्धवस्त्रमाख्यालङ्कारं गृह्णाति, गृहीत्या स्वकाद् गृह्णातिर्गच्छति।
निर्मत्य राजगृहं नगरं मध्यमध्येन निर्गच्छति, निर्मित्य यत्रैव पुष्करिणी
तत्रैवोपागच्छति, उपगत्य पुष्करिण्यास्तीरे सुवह्नुं पुष्पगन्धवस्त्रमाख्यालङ्कारं
स्थापयति, स्थापयित्वा पुष्करिणीमवगाहते, अवगाह्य जलमज्जनं करोति,
कृत्वा जलक्रीडां करोति, कृत्वा स्नाना कृतचलिक्रमां 'उल्लपडसाडिगा'
आर्द्रपटशाटिका=जलावगाहनेन आर्द्रे पटशाटिके=उत्तरीयपरिधानवद्मे यस्याः
सा तथ, तादृशी सा यानि तत्र 'उप्पलाइं' उत्पलानि=कमलानि 'जाव स-
हस्सपत्ताइं' जाव=सहस्रपत्राणि=सहस्रदलकलितानि महापत्राणि सन्ति तानि

स्वादिम आहार तैयार कराया-(उवक्खडाविचा सुवह्नुं पुष्पगन्धवस्त्रमल्ला-
लकारं गेह्णइ) चाद् में पुष्प गंध वस्त्र माला अलंकार को लिया और (गेण्हिता)
लेकर (सयाओ गिहाओ) अपने घर से (निगच्छइ) वह (निकली-निग्ग-
च्छिता रायगिहं नगरं मज्झं मज्झगं निग्गच्छइ) निकल कर राजगृह
नगर के ठीक बीचोबीच मार्ग से हो कर वह चली (निग्गच्छिता जेणेव
पोक्खरणीतेणेव-उवागच्छइ) चलतेर वह वहां पहुँची जहां पुष्करिणी थी।
(उवागच्छिता पुक्खरिणीएतीरे सुवह्नुं पुष्पजावमल्लालंकारं ठवेइ) पहुँचते ही
उसने उस पुष्करिणी के तीर पर वह चारों प्रकार के आहार की सामग्री
तथा पुष्प आदि सब वस्तुएँ रख दी (ठविचा पुक्खरिणि ओगाहइ) रख
कर फिर उसने उस में अवगाहन किया (ओगाहिता जलमज्जनं करेइ)
अवगाहन कर स्नान किया (जलक्रीडा करेइ) जल क्रीडा को (करिता ण्हाया
कयचलिक्कमा उल्लपडसाडिगा जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं-

(उवक्खडाविचा सुवह्नुं पुष्पगन्धवस्त्रमल्लालंकारं गेह्णइ) तैयारपड़ी पुष्प,
वस्त्र, भाणा अने अलंकारोने लीधा अने (गेण्हिता) लधने (सयाओ गिहाओ)
घेताना घेसथी (निगच्छइ) ते ण्हार नीकणी (निग्गच्छिता रायगिहं नगरं मज्झं
मज्झगं निग्गच्छइ) नीकणीने राजगृह नगरनी ठीक वस्से वस्स रस्तेथी ते आली
(निग्गच्छिता जेणेव पोक्खरणी तेणेव उवागच्छइ) आलतां आलतां न्यां पुष्क-
रिणी छती त्यां पडोन्थी. (उवागच्छिता पुक्खरिणीए तीरे सुवह्नुं पुष्प जाव
मल्लालंकार ठवेइ) त्यां पडोन्थीने तेले पुष्कणिणीनां कोडे आरे नतना आहारनी
सामग्री वगेरे ण्धी वस्तुओ भूडी दीधी. (ठविचा पुक्खरिणि ओगाहइ) भूडीने ते
पुष्करिणीमां उतरी (ओगाहिता जलमज्जनं करेइ) त्यां उतरीने तेले स्नान छुं
(जलक्रीडा करेइ) ण्णक्रीडा करी (करिता ण्हाया कयचलिक्कमा उल्लपडसाडिगा-
जाइं तत्थ उप्पलाइं जाव सहस्सपत्ताइं ताइं गिण्हइ) तैयार पड़ी न्यारे तेले

धूपं दहति, दग्धा जाणुपादपतिता 'पंजलिउडा' प्राञ्जलिपुंटा=संयोजित-
कादया एवमादीन—'यदि खलु अहं दारकं वा दारिकां वा 'पयायामि=
प्रजनयामि=प्रजनयिष्यामि तदा खलु अहं यागं च यावत् अनुवक्ष्यामि
=संवर्द्धयिष्यामि ! 'तिरुट्टु' इति कृत्वा=इत्युक्त्वा उपवाचितं करोति.
कृत्वा यत्रै पुष्करिणी तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य त्रिपुलमशनं पानं खाद्यं
स्वाद्यमास्वादयन्ती यावद् विहरति। तदनन्तरं सा 'जिमिया' जिमिता=
भुक्ता यावद् 'सुईभूया' भुवीभूता=प्रक्षालितहस्तमुखा सती यत्रैव स्वकं

चंदनादि गंध द्रव्यों को रखा अथवा उनके ऊपर चंदनादि तेल को छिड़का
अगरतगर आदि सुगंधिद्रव्यों का उन्हें समर्पण किया विलेपनद्रव्य उन पर
लगाया। (करिन्ता जाव धूव डहइ डहिन्ता जाणुपायपडिया पंजलिउडा एवं वयासी)
इन सब वस्तुओं का समर्पण करने के बाद फिर उसने वहां धूप
को जला कर फिर वह उनके समक्ष दोनों घुटने टेक कर नीचे जमीन
पर झुक गई और दोनों हाथ जोड़ कर इस प्रकार प्रार्थना करने लगी
(जइणं अहं दारगं वा दारिगं वा पायायामि तो णं अहं जायं च जाव अणुवड्ढेमि
तिरुट्टु उवाइयं करेइ) यदि मैं पुत्र अथवा पुत्री को जन्म दूंगी तो
आपकी सेवा पूजा करूंगी यावत् आपके कोप की वृद्धि कहूंगी—इस
प्रकार उसने प्रार्थना रूपमें मनौती मानता मनाई (करिन्ता जेणेव पोक्खरिणी
तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता विउलं असणं ४ आसाएमाणी जाव विहरइ)
मनौती मना कर फिर वह उस पुष्करिणी पर आई आकर वहां उसने
उस त्रिपुल खाने पीने की सामग्री का आहार किया (जिमिया जाव सुई-
भूया जेणेव सएगिहे तेणेव उवागया) आहार कर के फिर उसने हाथ

धुंधे. अगरतगर वगैरे सुगंधित द्रव्यों अर्पण कर्था. अने सुगंधित वेषोने वेष कर्था.
(करिन्ता जाव धूवडहइ डहिन्ता जाणुपायपडिया पंजलिउडा एवं वयासी)
आ भधी वस्तुओनुं समर्पण करीने तेण्हे धूपसणी सणगावी अने सणगावीने ते तेमनी
साभे अने धूटण्हे टेकीने नीचे पृथ्वी उपर नमी अने अने हाथ जोडीने आ प्रभाण्हे
प्रार्थना करवा लागी (जइणं अहं दारगं वा दारिगं वा पायायामि तोणं अहं जायं
च जाव अणुवड्ढेमि तिरुट्टु उवाइयं करेइ) जे हुं पुत्र के पुत्रीने जन्म आपीश
तो आपनी सेवा-पूजा करीश अने आपना निधिनी अक्षिपृद्धि करीश. आ रीते तेण्हे
प्रार्थना करतां मानता राणी. करिन्ता जेणेव पोक्खरिणी तेणेव उवागच्छइ उवा-
गच्छित्ता विउलं असणं ४ आसाएमाणी जाव विहरइ) मानता मानीनीने ते
पुष्करिणीना कोठे आनी अने जथां तेण्हे पूज व सारी पेठे खोजन कथु. (जिमिया
जाव सुईभूया जेणेव सए गिहे तेणेव उवागया) आहार वगैरे करीने तेण्हे हाथ

परामृश्य नागप्रतिमां यावद् वैश्रमण प्रतिमां लाभहस्तकेन प्रमार्जयति
 रजोऽपनयति, प्रमार्ज्य उदगधाराया 'अम्भुक्खेइ' अम्भुक्षति=अभिषिञ्चति,
 अभ्युक्ष्य 'पम्भलसुकुमालाए' पक्ष्मलसुकुमारया=पक्ष्मवती सुकुमारा तथा
 'गंधकासाइयाए' गन्धकापायिकया= गन्धप्रधानकपायरागेण रक्ता शारिका=
 लघुवस्त्रं तथा 'गायाइ' गात्राणि 'लूहेइ' क्लृप्तयति मोहयति, रूक्षयित्वा
 'महरिहं महारिहं=बहुमूल्यं 'वत्थारुहणं च मल्लारुहणं च वस्त्रसमर्पणम्, ए।
 'मल्लारुहणं' माल्यारोहणं च=पुष्पसमर्पणं, गंधारुहणं' गंधारोहणं च=वन्दना-
 दिगन्धसमर्पणं, 'चुन्नारुहणं' चूर्णारोहणं च=अगरतगरादिगन्धद्रव्यचूर्ण-
 समर्पणं, 'वन्नारुहणं' वर्णारोहणं च=विलेपनद्रव्यसमर्पणं च करोति यावद्

ज्जइ) झुक कर वहां रखी हुई उसने मयूर पिच्छ की प्रमार्जनी को उठाया-
 उठा कह नागप्रतिमाओं का यावत् वैश्रमण प्रतिमाओं का उस प्रमार्जनी से
 प्रमार्जन किया। (पमज्जिता उदगधाराए अम्भुक्खेइ) प्रमार्जन कर फिर
 उसने उनके ऊपर पानी की धारा छोड़ी-(अम्भुक्खिन्ना पम्भलसुकुमालाए
 गंधकासाइयाए) पानी की धारा से सिञ्चित कर के फिर उसने उनकां
 पक्ष्मल, सुकुमार गंध कपाय से रंगी हुई वस्त्र से (गायाइ लूहेइ) उनके
 शरीर को पोंछा (लूहिन्ना) पोंछ कर (महरियं वत्थारुहणं च मल्लारुहणं च
 गंधारुहणं च चुन्नारुहणं च वन्नारुहणं च करेइ) फिर उसने उन पर वस्त्र
 का आरोपण किया- माल्य का आरोपण किया, गंध द्रव्य का आरोपण
 किया चूर्ण का आरोपण किया, विलेपन द्रव्य का आरोपण किया अर्थात्
 जब वह उनके शरीर को पोंछ चुकी तब बाद में उसने उनको वेश-
 कीमती-बहुमूल्य वस्त्र पहिराये-उन्हें बहुमूल्य मालाएँ पहिराई, उनके समस्त

लोमहत्थणं पमज्जइ) नभीने तेष्से त्या भूकेली भोरना पीछांनी प्रभाज्जनी ठपाडी
 ठपाडीने नाग वैश्रवण वगेरेनी प्रतिभाज्जोत्तं प्रभाज्जनीथी प्रभाज्जं कथुं. (पम-
 ज्जिता उदगधाराए अम्भुक्खेइ) प्रभाज्जं कथां णाह तेष्से ते प्रतिभाज्जो ठपर
 णणधारा वडे सिञ्चनं कथुं (अम्भुक्खिन्ना पम्भलसुकुमालाए गंध कासाइयाए)
 णणधाराथी अभिषिक्त करीने तेष्से ते प्रतिभाज्जोने पक्ष्मल, सुकुमार, गंध, कपायथी
 रंगाज्जेल्ले वस्त्रथी (गायाइ लूहेइ) तेभन्ना शरीरने वस्त्रं. (लूहिन्ना) लूछीने
 (महरियं वत्थारुहणं च मल्लारुहणं च गंधारुहणं च चुन्नारुहणं च वन्नारुहणं
 च करेइ) त्यार पछी तेष्से प्रतिभाज्जो ठपर वस्त्रो यद्धायां, भाजाज्जो पडेरवी, गंध-
 द्रव्यो यद्धायां, चूर्णं यद्धायां, सुगन्धित वेष यद्धायां जेट्ठे के ज्ज्यारे तेष्से प्रतिभाज्जोने
 वस्त्रथी लूछी लीछी त्यार पछी तेष्से ते प्रतिभाज्जोने णहु किमती वस्त्रो पडेरवायां,
 णहु मूल्य भाजाज्जो पडेरवी तेभन्नी साजे यद्धन वगेरेना सुगन्धित तेवत्तं सिञ्चन

गच्छित्ता पोक्खरिणीं ओगाहन्ति, ओगहित्ता ण्हायाओ कयवल्लिक्-
 म्माओ सव्वालंकारविभूसियाओ विपुलं असणं ४ आसाएमाणीओ
 जाव परिभुंजेमणीओ दोहलं विणेइ । एवं संपेहेइ संपहित्ता कल्लं
 जाव जलंते जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता
 धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी-एवं खल्ल देवाणुप्पिया ! मम तस्स
 गव्वस्स जाव विणेइ तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुव्वेहिं अव्व-
 णुन्नायासमाणी जाव विहरित्ते, अहा सुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिवधं
 करेह, तएणं सा भद्दा सत्थवाही धण्णेणं सत्थवाहेणं अव्वणुन्नाया
 समाणी हट्ठुट्ठा जाव विपुलं असणं ४ जाव ण्हाया जाव उड्डपड
 साडिया जेणेव नागघरण जाव धूवं डहइ, डहित्ता पणामं करेइ
 पणामं करित्ता जेणेव पोक्खरिणी तेणेव उवागच्छइ । तएणं ताओ
 मित्तनाइ जाव नगरमहिलाओ भदं सत्थवाहिं सव्वालंकारविभूसियं
 करेति, तएणं सा भद्दा सत्थवाही ताहिं मित्तनाइ नियगसयणसं-
 वंधिपरिजणणगरमहिलाहिं सद्धिं तं विपुलं असणं ४ जाव परिभुंज-
 माणी य दोहलं विणेइ विणेइत्ता जामेव दिसिं पाउव्वभूया तामेव दिसिं
 पडिगयां । तएणं सा भद्दा सत्थवाही संपुन्नडोहला जाव तं गव्वं
 सुहं सुहेणं परिवहइ, तएणं सा भद्दा सत्थवाही णवण्हं मासाणं
 बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण राइंदियाणं सुकुमालपाणिपायं जाव दारगं
 पयाया, तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे जाय-
 कम्मं करेति करित्ता तहेव जाव विपुलं असणं ४ उवक्खडावेति
 उवक्खडावित्तां तहेव मित्तनाइ निजकसयणसंवंधिपरिजणे भोयावेइ

गृह तत्रोपागता । अदुत्तरं=तदनन्तरं 'दशा शब्दाऽयम्, गृहपमनानन्तरं च खलु सा भद्रा सार्थवाही 'चाउदसद्वृद्धिपुन्नमासिणी' चतुर्दशपट्टम्वृद्धिपु-
र्णमासीषु 'उद्विष्ट' उद्विष्ट'-इत्यमावास्या, चतुर्दश्यादिदिवसेषु त्रिपुलमशन-
पानखाद्यस्वाद्यमुपस्करोति, उपस्कृत्य चतुर् नागांश्च यावद् वैश्रवणांश्च
'उवायमाणी' उवायचमाना यावद् एवं च खलु 'विहरइ' विहरति=
विण्ठति । म० ५ ॥

मूलम्--तएण सा भद्रा सत्थवाही अन्नया कयाइं केणइ
कालंतरेणं आवन्नसत्ता जाया यावि होत्था, तएणं तीने भद्राए
सत्थवाहीए दोसु मासेसु वीइकंतेसु तइए मासे वट्टमाणे इमेयारुवे
दोहले पाउव्भूए धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव कयलक्ख-
णाओ णं ताओ अम्मयाओ जाओ णं विउलं असणं ४ सुवहुयं पुक्क-
वत्थगधमल्लाकारं गहाय मित्तनाइ नियगसयणसंघं विपरियणमहिला
हि य सद्धिं संपरिखुडाओ राधगिहस्स नयरस्स मज्झ मज्झेणं
निगंच्छंति, निगच्छित्ता जेणेव पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छंति, उवा-

वगैरह का प्रक्षालन किया इस प्रकार भुचोभूत होकर फिर वह वहां से
जहां अपना घर था वहां आ गई । (अदुत्तरं भद्रा सत्थवाही चाउदसद्वृद्धि-
पुणमासिणीसु' विउलं असणं ४ उवक्खडेइ-उवक्खडिन्ना वहवे नागा य
जाव वेसमणा य उवायमाणी जाव एवं च णं विहरइ इसके बाद वह भद्रा-
सार्थवाही चतुर्दशी अष्टमी अमावस्या और पूर्णमासी के दिनों में त्रिपुल
चारों प्रकार के आहार बनाती और बनाकर उन अनेक नाग यावत्
वैश्रवण की पूजा सेवाकरती हुई उनसे मनींती मनाती रहती । ॥ मूत्र ५ ॥

मां धियां आ प्रमाखे शुद्ध यद्धने ते त्यांथी पोताने घेर आवी. (अदुत्तरं च णं
भद्रा सत्थवाही चाउदसद्वृद्धिपुणमासिणीसु विउलं असणं ४ उवक्खडेइ-
उवक्खडित्ता वहवे नागाय जात्र वेसमणाय उवायमाणी जाव एवं च णं विहरइ)
त्यारणाए भद्रा सार्थवाही चोदश, आठम, अमावस्य અને પૂનમના દિવસોમાં પુણ્ય
પ્રમાણમાં ચારે જાતના આહાર બનાવણવતી અને બનાવણવીને નાગ અને વૈશ્રવણ
વગેરે બધા દેવોની પૂજા કરતી અને માનતા રાખતી હતી. ॥ સૂત્ર. ૫ ॥

गृह तत्रोपागता । अदुत्तरं=तदनन्तरं 'दशा शब्दाऽयम्, गृहगमनानन्तरं च खलु सा भद्रा सार्धवाही 'चाउदसद्वृद्धिपुन्नमासिणीषु' चतुर्दशपुष्टिपुष्टिपुष्पमासीषु 'उद्धि' उद्धिष्ट'-इत्यमाचास्या, चतुर्दश्यादिदिवसेषु विपुलमशन-पानस्वाद्यस्वाद्यपुष्करोति, उवक्लृप्त्य च पुनर् नागांश्च यावद् वैश्रवणांश्च 'उवायमाणी' उवायचमाना यावद् एवं च खलु 'विहरइ' विहरति= तिष्ठति । ॥ सू० ५ ॥

मूलम्--तएण सा भद्रा सत्थवाही अन्नया कयाइं केणइ कालंतरेणं आवन्नसत्ता जाया यावि होत्था, तएणं तीमे भद्राए सत्थवाहीए दोसु मासेसु वीइकंतेसु तइए मासे वट्टमाणे इमेयारूवे दोहले पाउब्भूए धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव कयलक्खणाओ णं ताओ अम्मयाओ जाओ णं विउलं असणं ४ सुवहुयं पुक्कवत्थगधमल्लाकारं गहाय मित्तनाइ नियगसयणसंबंधिपरियणमहिला हि य सद्धिं संपरिवुडाओ राधगिहस्स नयरस्स मज्झ मज्झेणं निगच्छंति, निगच्छित्ता जेणेव पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छंति, उवा-

गौरह का प्रक्षालन किया इस प्रकार शुचोभूत होकर फिर वह वहां से जहां अपना घर था वहां आ गई । (अदुत्तरं भद्रा सत्थवाही चाउदसद्वृद्धिपुष्पमासिणीषु' विउलं असणं ४ उवक्खडेइ-उवक्खडित्ता वहवे नागा य जाव वेसमणा य उवायमाणी जाव एवं च णं विहरइ इसके बाद वह भद्रा-सार्धवाही चतुर्दशी अष्टमी अमावस्या और पूर्णमासी के दिनों में विपुल चारों प्रकार के आहार बनाती और बनाकर उन अनेक नाग यावत् वैश्रवण की पूजा सेवाकरती हुई उनसे मनींती मनाती रहती । ॥ सूत्र ५ ॥
 में धियां आ प्रभाणु शुद्ध भूने ते त्यांथी पोताने घेर आवी. (अदुत्तरं च णं भद्रा सत्थवाही चाउदसद्वृद्धिपुष्पमामिणीसु विउलं असणं ४ उवक्खडेइ-उवक्खडित्ता वहवे नागाय जाव वेसमणा य उवायमाणी जाव एवं च णं विहरइ)
 त्यारणाद भद्रा सार्धवाही आदश, आठम, अमावस्या और पूनमना द्विवसोभां पुष्पण प्रभाणुभां यादे जतना आहार जनावडावती अते जनावडावीने नाग अने वैश्रवण वगेरे गधा देवानी पूजा करती अने मानता राजती हुती । ॥ सूत्र. ५ ॥

લ્હુ વિપુલમશનં પાનં પ્વાયં સ્વાયં, સુવહુયં પુષ્પવત્સગન્ધમાલ્યાલંકારં ઘટીત્વા
મિત્રજ્ઞાનિનિજઋસ્વજનસમ્બન્ધિપરિજનમઢિલાભિથ સાદૃ સંપરિવૃતા રાજગૃ-
રસ્ય નગરસ્ય મધ્યમધ્યેન નિર્ગચ્છન્તિ, નિર્ગત્ય યત્રવ પુષ્કરિણી તૈવોપાગચ્છન્તિ,
ઉપાગત્ય પુષ્કરિણીમવગાહન્તે, અવ ગાહ્ય સ્નાતા કૃતવલિકર્માણઃ સર્વાલંકારચિમ્-
પિતાઃ તદ્ઃ વિપુલમશનપાનસ્વાયસ્વાયમાસ્વાદયન્ત્યઃ યાત્ પરિમુજ્જાના દોહદં વ્યપ-

(જાઓ નં વિઝલં અસળ ૪ સુવહુયં-પુષ્પ-વત્થ-ગંધ-મલ્લાલંકારં ગહાય
મિત્તનાઈ-નિયગ-પયણ-સંબંધિપરિયણમઢિલાહિ ય સદ્ધિ સંપરિવૃહાઓ
રાયગિહસ્ત નયરસ્ત મઝ્ઞં મઝ્ઞેગં નિગચ્છન્તિ) જો માતાળ વિપુલ અશન
પાનાદિ ૪ પ્રકાર કે આહાર કો ઓર વહુત અધિક પુષ્પ વત્ત ગંધ, માલા
અલંકાર કો લેકર મિત્રજ્ઞાતિ, નિજઋ, સ્વજન, સંબન્ધી-પરિજન કી મઢિલાઓ
કે સાથર ધિરી હુઈ હોકર રાજગૃહ નગર કે ઠીક વીચો વીચ કે માર્ગ
સે નિકલતી હૈં। (નિગચ્છિત્તા જેનેવ પુષ્કરિણી તેનેવ ઉવાગચ્છિન્તિ ઉવા-
ગચ્છિત્તા પુષ્કરિણી ઓગાહન્તિ, ઓગાહિત્તા ણ્ઢાયાઓ કયવલિકર્મ્માઓ
સન્ધાલંકારવિમ્ભૂસિયાઓ વિઝલં અસળ આસાળમાણોઓ જાવ પરિમુજે-
માણીઓ દોહલં વિણેઈ) ઓર નિકલ કર જહાં પુષ્કરિણી હૈ વહાં જાતી હૈં
જા કર ઉસમેં અવગાહન કરતી હૈં, અવગાહન કર સ્નાન કરતી હૈં-સ્નાત
હોકર વલિકર્મ ગાયસાદિ કો અન્નાદિ કા ભાગ દેકર સમસ્ત ઝલંકારોં
સે શરીર કો વિમ્ભૂપિત કરતી હૈં ઓર ફિર ઉસ વિપુલ માત્રા મેં નિવ્વન્ન

તે માતાઓનાં જ સામુદ્રિક થાસ પ્રમાણેના શારીરિક લક્ષણો સક્ષળ થયાં છે,
(જાઓ નં વિઝલં અસળ ૪ સુવહુયં પુષ્પવત્થગંધમલ્લાલંકારં ગહાય
મિત્તનાઈ-નિયગ-પયણ-સંબંધિપરિયણમઢિલાહિ ય સદ્ધિ સંપરિવૃહાઓ
રાયગિહસ્ત નયરસ્ત મઝ્ઞં મઝ્ઞેગં નિગચ્છન્તિ) જે માતાઓ પુષ્કળ પ્રમાણમાં
અશન પાન વગેરે ચાર બલને આહાર અને ખૂબ જ પુષ્પ, વસ્ત્ર, ગંધ, માળા
અને અલંકારોને લઈને મિત્ર, જ્ઞાતિ, નિજઋ, સ્વજન સંબંધી પરિજનની મઢિલા
ઓની સાથે રાજગૃહ નગરના વચ્ચે વચ્ચે ભાગોમાં થઈને પસાર થાય છે.
(નિગચ્છિત્તા જેનેવ પુષ્કરિણી તેનેવ ઉવાગચ્છિન્તિ ઉવાગચ્છિત્તા,
પુષ્કરિણી ઓગાહન્તિ, ઓગાહિત્તા ણ્ઢાયાઓ કયવલિકર્મ્માઓ સન્ધા-
લંકારવિમ્ભૂસિયાઓ વિઝલં અમળ આનાળમાણોઓ જાવ પરિમુજે
માણીઓ દોહલં વિણેઈ) અને પસાર થઈને બધાં પુષ્કરિણી છે ત્યાં બાય છે.
ત્યાં જઈને તેમાં ઉતરે છે, ઉતરીને નહાય છે. નહાઈને કાગડા વગેરે પક્ષીઓને
અન્નને ભાગ અપીને બલિકર્મ કરે છે, અને શરીરનાં બધાં અંગોને ઘરેણાંઓથી
અલંકૃત કરે છે. અને ફરી તે પુષ્કળ પ્રમાણમાં તૈયાર કરવામાં આવેલા અશન

भोयावेत्ता अयमेयारूवं गोणं गुणानिप्फन्न नामधेज्जं करेति जम्हाणं अम्हं इमे दारए वडूणं नागपडिमाण य जाव वेसमण— पडिमाण य उवाइयलद्धे, तं होउ णं अम्हं इमे दारए देवदिन्ने नामेणं, तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधिज्जं करेति देवदिन्नेत्ति। तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो जायं चदायं च मायं च अक्खयनिहिं च अणुवडूति ॥सू ६॥

टीका—‘तएणं सा’ इत्यादि—ततः खलु सा भद्रा सार्थवाही अन्यदा कदाचित् ‘केणइकालंतरेणं’ केनापि कालान्तरेण=क्रियता कालान्तरेण ‘आवन्नसत्ता जाया’ आपन्नसत्त्वा जाता, आपन्नः=उत्पन्नः सत्त्वः=जीवो गर्भे यस्याः सा तथा गर्भवती जाता चाप्यासीत्। ततः खलु तस्याः भद्रायाः सार्थवाहा द्वयोर्मसयोर्व्यतिक्रान्तयोः सनोः तृतीये मासे वर्तमानेऽयमेतद्रूपो दोहदः प्रादुर्भूतः—धन्याः खलु ता अम्याः यावत् कृतलक्षणाः खलु ता अम्याः, याः

‘तएणं सा भद्रा सत्थवाही’ इत्यादि।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (सा भद्रा सत्थवाही) वह भद्रा सार्थवाही (अन्नया कयाइ) किसी समय (केणइकालंतरेणं) कितने काल के अनन्तर (आवन्नसत्ता जाया यावि होत्या) गर्भवती हुई। (तएणं तीसे भद्राए सत्थवाहीए) इससे उस भद्रासार्थवाही के (दोसु मासेसु वीइक्कंतेसु) दो मास व्यतीत होने पर (तईए मासे वट्टमाणे) जब तीसरा मास प्रारम्भ हुआ तब (इमेयारूवे दोहले पाउब्भूए) इस तरह का यह वक्ष्यमाण दोहला उत्पन्न हुआ—(धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ) वे माताएँ धन्य हैं (जाव कयलक्खणाओ णं ताओ अम्मयाओ) यावत् वे माताएँ कृत लक्षणा हैं

‘तएणं सा भद्रा सत्थवाही’ इत्यादि।

टीकार्थ—(तएणं) त्पार पछी (सा भद्रा सत्थवाही) लद्दा सार्थवाही (अन्नया कयाइ) डोई वधू केणइ कालंतरेणं) डेलाउट समय ग्हाइ (आवन्नसत्ता जाया यावि होत्या) गर्भवती थई। (तए णं से भद्राए सत्थवाहीए) सगलाव. स्थाभां न न्यारे लद्दा सार्थवाहीने (दोसु मासेसु वीइक्कंतेसु) ने भडिना पूरा थया (तईए मासे वट्टमाणे) अने त्रीन्ने भडिने। जेठो त्त्यारे (इमेयारूवे दोहले पाउब्भूए) आ प्रभाणु दोहद थयुं डे—(धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ) ते माताओ ने धन्य ते (जाव कयलक्खणाओ णं ताओ अम्मयाओ)

भद्रा सार्थवाही धन्येन सार्थवाहेनाभ्यनुज्ञाता सती हृष्टतुष्टा यावद् विपुलम् अशनं
पानं स्वाद्यं स्वाद्यं यावत् स्नाता यावत् आर्द्रपट्याटिका यत्रव नागगृहं
यावत् धूपं दहति, दग्ध्वा प्रणामं करोति, प्रणामं कृत्वा यत्रैव पुष्करिणी
तत्रैवोत्तामगच्छति। ततः खलु ता मित्रजाति यावत् नगरमहिला भद्रा सार्थ
वाही सर्वालंकारविभूषितां कुर्वन्ति। ततः खलु सा भद्रा सार्थवाही ताभिर्मित्रजाति
निजकस्यजनसम्बन्धपरिजननगरमहिलाभिः सार्थं तद् विपुलमशनं पानं स्वाद्यं
स्वाद्यं यावत् परिशुद्धानां च दोहदं व्यपनयति, व्यपनीय यस्या दिशः प्रादु-

(भद्रासुहृद् देवाणुषिया ! मा पडिवंधं करेइ) हे देवानुषिये ! तुम्हें जैसे सुख
हो वैसा करो इसमें देरी मत करो (तएणं सा भद्रा सत्थवाही धन्नेणं
सत्थवाहेणं अन्नगुन्नाया समानी हट्ट तुट्ठा) उसके बाद उस भद्रा सार्थ-
वाहीने धन्य सेठ से अनुमति प्राप्त कर बहुत ही अधिक हर्षित और
सन्तुष्ट चित्त हो (जाव) यावत् (विपुलं अशनं ४ जाव ह्याया) विपुलमात्रा
में चारों प्रकार का आहार नैवार किया—यावत् उसने पुष्करिणी में स्नान किया
(जाव उल्लपडसाडिया जेणेव नागघरए जाव धूपं डहइ) यावत् गीली साड़ी
पहिने हुए ही फिर उसने उस पुष्करिणी से कमलों को लिया और जहाँ
नागघर आदि थे वहाँ गई—बहुमूल्य पुष्पावां कर उनके समक्ष धूप दिलाई।
इस प्रकार यहाँ पांचवें मूत्र में जो वर्णन है वह समझ लेना (उडित्ता पणामं
करेइ—पणामं करित्ता जेणेव पोस्वरिणी तेणेव उवागच्छइ) धूप दिखा चुकने
पर उसने उन्हें प्रणाम किया प्रणाम कर फिर वह पुष्करिणी पर चारिम
आ गई (तएणं ताओ मित्तनाइ निग्गसग्गसंबधिपटिण्णगगामहिलावहिं

वंधं करेइ) छे देवातुं प्रिये ! तमने जेम भुण थाय तेम करे, मोडुं करे नडि.
(तए णं सा भद्रा सत्थवाही धन्नेणं सत्थवाहेणं अन्नगुन्नाया समानी
हट्ट तुट्ठा) त्थार णाह ते लद्धा सार्थवाही धन्य सार्थवाहीनी पासेथी आत्ता भेणवीने
भूण न प्रसन्नं अने संतुष्ट थं. (जाव) यावत् (विपुलं अशनं ४ जाव ण्हाया)
पुष्क ॥ प्रमाणमां आरे प्रकारेण आहार णावराज्ये. अने त्थार पछीं तेण्ण पुष्करि-
णीमां स्नानं कथं (जाव उल्लपडसाडिया जेणेव नागघरए जाव धूपं
डहइ) बीना लुगडे न तेण्ण पुष्करिणीमांथी कमणे लीधां अने नागघर वगेरेता
देवस्थानमां गथं. भूण न डिंभति पुण्णे वगेरेथी ते णधा देवांनी पूण करी तेमनी
सामे धूपसणी सणगावी. आगणत्तं वल्लुंन पाडेअये पांथमां सूद प्रमाणे न
वत्थुपुं नेधये. (उडित्ता पणामं करेइ पणामं करित्ता जेणेव पोस्वरिणी ते-
णेव उवागच्छइ) धूप कर्यो णाह तेण्ण तेमने प्रणाम कथं. प्रणाम कथो णाह
इरीने पुष्करिणीना डिंनारे आवी गथं. (तए णं ताओ मित्तनाइ निग्गसग्ग

નયન્તિ । एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य कल्पे यावज्ज्वलति यत्रैव धन्यः सार्थवाहस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य धन्यं सार्थवाहमेवमवादीत=एवं खलु देवानुप्रियाः । मम तस्य गर्भस्य (प्रभावेण) यावत् व्यपनयन्ति, तद् इच्छामि खलु देवानुप्रियाः ! भवद्विरभ्यनुज्ञाता सतो यावद् विहर्तुम् । यथा मुखं देवानुप्रिये! मा प्रतिवन्द्यं कुरु ततः खलु स

હુણ અદાન પાનાદિક ચારોં પ્રકાર કે આઠાર કરતી હું—દસરોં કો કરાતી હું—ઇમ તરહ જો અપને દોહલે કી પૂર્તિ કરતી હું । (एवं संपेक्षे) इस प्रकार उस दोहले में उसने विचार किया (संपेक्षित्ता कल्लं जाव जलंते जेणेव सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) विचार करके फिर चढ प्रातः होते ही जब सूर्य चमकने लग गया—तब जहां धन्य सार्थवाह था वहां गई । (उवागच्छिता धणं सत्थवाहे एवं वयासी) जाकर उसने धन्यसार्थवाह से इस प्रकार कहा (एवं खलु देवानुप्रिया ! मम तस्स गम्भस्स जाव विणेइ-तं इच्छामि णं देवानुप्रिया तुम्हेहिं अब्भणुन्नाया समाणी जाव विहरित्तए) हे देवानुप्रिय ! मुझे उस गर्भ के प्रभाव से इस प्रकार का दोहला उत्पन्न हुआ है कि जो माताएं ऐसा २ करती हैं और अपने गर्भके मनोरथ की पूर्ति करती हैं वे धन्य हैं कृत लक्षणाहैं इत्यादि । अतः मैं आपके द्वारा आज्ञापित हो कर इसी रूप से अपना दोहलासंपन्न करना चाहती हूँ (इस प्रकार उसने अपना सब विचार धन्य सार्थवाह से निवेदित कर दिया) । धन्य सार्थवाहने उसका ऐसा अभिप्राय सुनकर उससे कहा—

પાન વગેરે ચારે ભાતને આઠાર પોતે કરે છે. અને બીજાઓને કરાવે છે. આ પ્રમાણે જે માતાઓ પોતાના દોહડની પૂર્તિ કરે છે તે માતાઓને ધન્ય છે (एवं संपेक्षे) આ પ્રમાણે તેણે પોતાના દોહડ માટે વિચાર કર્યો. (संपेक्षित्ता कल्लं जाव जलंते जेणेव सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) વિચાર કરીને તેણે સવારમાં બીજા સૂરજ પૂર્વ દિશામાં પ્રકાશિત થયો ત્યારે બીજાં ધન્યવાર્થવાહ બીજા હતા ત્યાં ગઈ. (उवागच्छिता धणं, सत्थवाहं एवं वयासी) ત્યાં જઈને તેણે ધન્ય સાર્થવાહને આ પ્રમાણે કહ્યું—(एवं खलु देवानुप्रिया ! मम तस्स गम्भस्स जाव विणेइ तं इच्छामि णं देवानुप्रिया तुम्हेहिं अब्भणुन्नाया समाणी जाव विहरित्तए) હે દેવાનુપ્રિય ! ગર્ભાવસ્થાને લીધે મને દોહડ થયું છે. જે માતાઓ આ ભાતનું પોતાનું દોહડ પુરું કરી ચકે છે. પોતાની ગર્ભેશ્વ પૂરી કરે છે તે માતાઓ ખરેખર ધન્ય છે. અને કૃતલક્ષણ છે વગેરે વગેરે. એટલા માટે હું આપની આજ્ઞા મેળવીને આ રીતે જ મારું દોહડ પુરું કરવા ઇચ્છું છું. (આ રીતે તેણે પોતાની ઇચ્છા ધન્ય સાર્થવાહની સામે પ્રકટ કરી). ધન્ય સાર્થવાહે તેની વાત સાંભળીને કહ્યું કે (अहामुहं देवानुप्रिया ! मा पडि

तथैव मित्रज्ञातिनिजकम्बजनमम्यन्धिपरिजनान् भोजयित्वा इममेतदूषं 'गोणं'
गोणं=गुणैर्निर्वृत्तं गोणं=यथार्थं, 'गुणनिष्कन्नं' गुणनिष्पन्नं=गुणसञ्जातं नाम-
धेयं कुरुतः-यस्मात् खलु आवगोरयं दारको बहूनां नागप्रतिमानां च यावत्
वैश्रवणप्रतिमानां च 'उवाइयलद्धे-य' उपवाचिनलब्धः=प्रार्थनया प्राप्तः तद्
भवतु खलु आवगोरयं दारकः 'देवदिन्ने नामेण' देवदत्तो नाम्ना। ततः
खलु तस्य दारकस्याम्मापितरो नामधेयं कुरुतः 'देवदत्तः' इति। ततः खलु
तस्य दारकस्याम्मापितरौ यागं च दायं च भागं च अक्षयनिधिं चानु-
वर्द्धवतः ॥ सूत्र ६॥

बालक के माता पिताने प्रथम दिन बालक का जात कर्म किया
करके उसी तरह यावत् विपुल मात्रा में अशन आदिचारों प्रकार का आहार
तैयार किया। (उचखलुडावित्ता तहेव मित्तनाइनिजकमयणसंवधिपरिजणे
भोयावेत्ता अयमेयारुवं गोणं गुणनिष्कन्नं नामधेज्जं करेति) आहार
तैयार करके फिर उन्होंने उसे मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन संबंधिजन
और परिजनों को खिलाया-खिलाकर उन्होंने वच्चे का नाम यथार्थरूपं
में गुणों से निष्पन्न होने के कारण इस तरह वक्ष्यमाणरूप से रक्खा।
(जम्हाणं अम्हं इमे दारए बहूणं नागपडिमाणय जाव वेसमणपडिमाणय
उवाइयलद्धे तं होउणं अम्हं इमे दारए देवदिन्ने नामेण) यह हमारा पुत्र-
नाग प्रतिमा यावत् वैश्रवण प्रतिमाओं की मनौती से उत्पन्न हुवा है इसलिये
इसका नाम देवदत्त हो। (तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधेज्जं
करेति) इस प्रकार कहकर उस दारक के माता पिताने उसका नाम देव-
दत्त रख दिया। (तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो जायं च भायं च

आणकनां मातापिताये जन्मना पड़ेला द्विसे पुष्कण प्रमाणां अशन वगेरे
आरे आर प्रकारेना आहार तैयार कराव्यो। (उचखलुडावित्ता तहेव मित्तनाइ-
निजकमयणसंवधिपरिजणे भोयावेत्ता अयमेयारुवं गोणं गुण
निष्कन्नं नामधेज्जं करेति) आहार तैयार कराव्यो तेभने मित्र, ज्ञाति,
निजक, स्वजन संबंधिजन अने परिजनोने जमाइयां जमाइने तेभले आणकनुं
नाम तेना शुल्लो प्रमाणे राभ्युं (जम्हाणं अम्हं इमे दारए बहूणं नागपडिमा-
णय जाव वेसमणपडिमाणय उवाइयलद्धे तं होउणं अम्हं इमे दारए
देवदिन्ने नामेण) दोऊनी सामे आणकनां मातापिताये कहुं के आ अमावे
पुत्र नाग वैश्रवण वगेरे देव प्रतिमाओनी मानता राणवाथी थयो छे, ओथी
आनुं नाम देवदत्त राणवाभां आओं छे। (तए णं तस्स दारगस्स अम्मा-
पियरो नामधेज्जं करेति) आ प्रमाणे आणकनां मातापिताये भजीने आण-
कत्तं नाम देवदत्त पाओं। (तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो जायं च

भूता तामेव दिशं प्रतिगता । ततः खलु सा भद्रा सार्धवाही सम्पूर्ण दोहदा
यावत् तं गर्भं सुखं सुखेन परिवहति । ततः खलु सा भद्रा सार्धवाही नवमु
मासेषु बहुमतिपूर्णेपु अर्द्धाष्टमेपु रात्रिन्दिवेषु (व्यतीतेषु) सुकुमारपाणिपादं
यावत् दारकं प्रजनिता । ततः खलु तस्य दारकस्य अम्बापितरौ प्रथमे दिसे जातवर्म
कुरुनः कृत्वा तथैव यावत् विपुलमशनं पानं स्नायं स्वायमुपस्कारयतः, उपस्कार्य

य सद्धि तं विपुलं असणं ४ जाव परिभुञ्जमाणी य दोहलं विणेइ) इसके
बाद उन मित्र ज्ञाति निजक, स्वजन, संवन्धी, परिजन की नगर महिलाओं
के साथ २ उस ४ चारों प्रकार के आहार को किया कराया-और अपने
दोहले की पूर्ति की । (विणिइत्ता जामेव दिस्सि पाउब्भूया तामेव दिस्सि पडिगया)
दोहले की पूर्ति कर वह फिर जिस दिशा से पकड़ हुई थी-आई थी
उसी दिशा की ओर चली गई । अर्थात् अपने घर पहुँच गई (तएणं सा
भद्रा सत्थवाही संपुन्नडोहला जाव त गव्भं सुहं सुहेणं परिवहइ) इसके अन-
न्तर उस भद्रा सार्धवाहीने कि जिसका गर्भ मनोरथ भच्छो तरह परिपूर्ण
हो गया है यावत् अपने गर्भ को भलीभाँति से सुख पूर्वक परिवहन किया ।
(तएणं सा भद्रा सत्थवाही णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धइराइंदियाणं
सुकुमालपाणिपायं दारगं पयाया) बाद में जब गर्भ के ठीक नौ मास ७।
साढ़े सात दिन समाप्त हो चुके तब उसने सुकुमार कर चरणवाला पुत्र
को जन्म दिया । (तएणं तस्स दारगस्स अम्मापिगरो पदमे दिवसे जाय
कम्मं करेति, करित्ता तदेव विउलं असणं ४ उवक्खडावेति) इसके बाद

संवधिपरियण्णनगरमहिलाहिं य सद्धि तं विपुलं असणं ४ जाव
परिभुञ्जमाणी य दोहलं विणेइ) त्थार आइ तेहे पोताना सण्धीनी नगरनी
श्रीओ साथे थारे नतने आहार क्यो. अने करावडाओ. आ रीते तेहे पोताना
दोहदनी पूर्ति करी. (विणेइत्ता जामेव दिस्सि पाउब्भूया तामेव दिस्सि
पडिगया) दोहद पूर्ति क्यो आइ ते न्याथी आवी छती. त्यां आली गछ. ओटवे
ते तेना घेर पडोन्नी गछ. (तए णं सा भद्रा सत्थवाही संपुन्नडोहला जाव
तं गव्भं सुहं सुहेणं परिवहइ) त्थार पछी पूछो दोहदा भद्रा सार्धवाही सुजेथी
पोताना गभने परिवहन करती रहेवा लागी. (तए णं सा भद्रा सत्थवाही
णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धइराइंदियाणं सुकुमालपाणि
पायं दारगं पयाया) आ प्रभाहे गभो न्यारे णराणर नव मास अने साडा सात
दिवस रातने थयो. त्थारे भद्रासार्धवाहीओ सुकोमल हाथ पग बाणा पुत्रने
जन्म आप्थो (तए णं तस्स दारगस्स अम्मापिगरो पदमे दिवसे जायकम्मं
करेति करित्ता तदेव जाव विउलं असणं ४ उवक्खडावेति) त्थार पछी

તથૈવ મિત્રજ્ઞાતિનિજકમ્વજનમમ્યન્ધિપરિજનાન્ ભોજયિત્વા ઇમમેતદ્દૂપં 'ગોળં'
ગોળં=ગુણૈર્નિર્વૃત્તં ગોળં=યથાર્થ, 'ગુણનિષ્કન્નં' ગુણનિષ્પન્નં=ગુણસંજ્ઞાતં નામ-
ધેયં કુરુતઃ-યસ્માત્ સ્વલુ આવયોરયં દારકો વહૂનાં નાગપ્રતિમાનાં ચ યાવત્
વૈશ્રવણપ્રતિમાનાં ચ 'ઉવાઙ્મલદ્વે-ય' ઉપવાચિતલબ્ધઃ=પ્રાર્થનયા પ્રાપ્તઃ તદ્
ભવતુ સ્વલુ આવયોરયં દારકઃ 'દેવદિન્ને નામેણં' દેવદત્તો નામ્ના । તતઃ
સ્વલુ તસ્ય દારકસ્યામ્વાપિતરૌ નામધેયં કુરુતઃ 'દેવદત્તઃ' ઇતિ । તતઃસ્વલુ
તસ્ય દારકસ્યામ્વાપિતરૌ યાગં ચ દાયં ચ ભાગં ચ અક્ષયનિધિં ચાનુ-
વર્દ્ધયતઃ ॥મુચ્ચ ૬॥

બાલક કે માતા પિતાને પ્રથમ દિન બાલક કા જાત કર્મ ક્રિયા
કરકે उसी तरह यावत् विपुल मात्रा में अशन आदिचारों प्रकार का आहार
तैयार किया (उवाङ्मलडावित्ता तदेव मित्रनाइनिजकमयणसंवधिपरिजणे
भोयावेत्ता अयमेयारूढं गोलं गुणनिष्कन्नं नामधेज्जं करेति) आहार
तैयार करके फिर उन्होंने उसे मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन संबंधिजन
और परिजनों को खिलाया-खिलाकर उन्होंने वच्चे का नाम यथार्थरूपं
में गुणों से निष्पन्न होने के कारण इस तरह वक्ष्यमाणरूप से रक्खा !
(जम्हाणं अम्हं इमे दारए वहुणं नागपडिमाणय जाव वेसमणपडिमाणय
उवइपालद्वे तं होउणं अम्हं इमे दारए देवदिन्ने नामेणं) यह हमारा पुत्र-
नाग प्रतिमा यावत् वैश्रवण प्रतिमाओं की मनोती से उत्पन्न हुआ है इसलिये
इसका नाम देवदत्त हो । (तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधेज्जं
करेति) इस प्रकार कहकर उस दारक के माता पिताने उसका नाम देव-
दत्त रख दिया । (तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो जायं च भायं च

બાળકનાં માતાપિતાએ જન્મના પહેલા દિવસે પુષ્કળ પ્રમાણમાં અશન વગેરે
ચારે ચાર પ્રકારનો આહાર તૈયાર કરાવ્યો. (ઉવાઙ્મલડાવિત્તા તદેવ મિત્રનાઇ-
નિજકમયણસંવધિપરિજણે ભોયાવેત્તા અયમેયારૂઢં ગોળં ગુણ
નિષ્કન્નં નામધેજ્જં કરેતિ) આહાર તૈયાર કરાવીને તેમને મિત્ર, જ્ઞાતિ,
નિજક, સ્વજન સંબંધિજન અને પરિજનોને જમાડ્યાં. જમાડીને તેમણે બાળકનું
નામ તેના ગુણો પ્રમાણે રાખ્યું (જમ્હાણં અમ્હંં હમે દારણ વહૂણં નાગપડિમા-
ણય જાવ વેસમણપડિમાણય ઉવહ્યાલદ્વે તં હોઉણં અમ્હંં હમે દારણ
દેવદિન્ને નામેણં) લોકોની સાથે બાળકનાં માતાપિતાએ કહ્યું કે આ અમારો
પુત્ર નાગ વૈશ્રવણ વગેરે દેવ પ્રતિમાઓની માનતા રાખવાથી થયો છે, એથી
આનું નામ દેવદત્ત રાખવામાં આવ્યું છે. (તણં તસ્સ દારગસ્સ અમ્મા-
પિયરો નામધેજ્જં કરેતિ) આ પ્રમાણે બાળકનાં માતાપિતાએ મળીને બાળ-
કનું નામ દેવદત્ત પાડ્યું. (તણં તસ્સ દારગસ્સ અમ્માપિયરો જાયં ચ

मूलम्—तएणं से पंथए दासचेडए देवदिन्नस्स दारगस्स
 वालग्गाही जाए, देवदिन्नंदारयं कडीए गेणहइ, गेण्हत्ता वट्ठहिं डिंभ
 एहि य डिंभयाहि य दारएहि य दारियाहि य कुमारएहि य कुमारियाहिय
 सद्धि संपरिवुडे अभिरमइ। तए णं भद्दा सत्थवाही अन्नया कयाइं देव-
 दिन्नं दारयं ण्हायं कयवलिकम्मं कयकोउलपायच्छित्तं सव्वालंकार-
 विभूसियं करेइ, करित्ता पंथयस्स दासचेटयस्स हत्थयंसि दलइ। तएणं
 से पंथए दासचेडए भद्दाए सत्थवाहीए हत्थाओ देवदिन्नं दारगं
 कडिए गिणहइ, गिण्हत्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ, पडिनि-
 क्खमित्ता वट्ठहिं डिंभएहि य डिंभियाहि य कुमारएहि य कुमारियाहि
 य सद्धि संपरिवुडे जेणेव गयमग्गे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
 देवदिन्नं दारगं एगंते ठावेइ, ठावित्ता वट्ठहिं डिंभएहि य जाव
 कुमारियाहिय सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि विहरइ। इमं च णं विजए तक्करे
 रायगिहस्स वट्ठणि दाराणि य अवदाराणि य तहेव जाव आभोएमाणे
 मग्गेमाणे गवेसेमाणे जेणेव देवदिन्ने दारए तेणेव उवागच्छइ, उवा-
 गच्छित्ता देवदिन्नंदारगं सव्वालंकारविभूसियं पासइ पासित्ता देवदिन्नस्स
 दारगस्स आभरणालंकारेसु मुच्छिए गडिए गिद्धे अज्झोववन्ने पंथयं

अक्खयनिहिं च अणुवट्ठेति) बालक के नाम संस्कार होने के पश्चात् मातापिता ने
 उन नाग आदि प्रतिमाओं की खूब सेवा की—दान दिया—अपने हिस्से में से खूब
 द्रव्य का वितरण किया और उनके कोप की खूब वृद्धि की ॥ सूत्र ६॥

दायं च भाय च अक्खयनिहिं च अणुवट्ठेति) गाणकनां नाम संस्कार गाढ
 गाणकनां मातापिताओ नाग वगेरें प्रतिमाओनी पूज व सारी, पेठे पूज करी,
 पुच्छ प्रभाषुमां दान आय्थुं, पोताना लागना द्रव्यहुं बहु व प्रभाषुमां वितरण
 क्युं अने देवताओना डोपनी पूज अलिपृच्छ करी ॥ सू ६ ॥

दासचेडं पमत्तं पासइ, पासित्ता दिसालोय करेइ करेत्ता देवदिन्नं
 द्वारगं गेण्हइ, गेण्हित्ता कक्खंसि अल्लियावेइ अल्लियावित्ता उत्तरिजेणं
 पिहेइ, पिहित्ता सिग्घं तुरियं चवलं चेइयं रायगिहस्स नगरस्स अव-
 द्वारेणं निग्गच्छइ, निगच्छित्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव
 भग्गकूवए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं जीवि
 याओ ववरोवेइ, ववरोवित्ता आभरणालंकारे गिण्हइ गिण्हित्ता देव-
 दिन्नस्स दारगस्स सरीरगं निप्पाणं निच्चेट्ठं जीवियविप्पजढं भग्गकू-
 वए पक्खिवइ, पक्खिवित्ता जेणेव मालुयाकच्छए तेणेव उवागच्छइ
 उवागच्छित्ता मालुयाकच्छयं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता निच्चले
 निप्फंदे तुसिगीए दिवसं खवेमाणे चिट्ठइ ॥सू. ७॥

टीका—‘तएणं से पंथए’ इत्यादि—‘तएणं’ ततः खलु=तदनन्तरं ‘से’
 अस्मै पान्थकनामा ‘दासचेडए’ दासचेटकः= दासपुत्रो यो धन्यसार्थवाहस्य
 गृहे कर्मकरत्वेन स्थित आसीत्—स देवदत्तस्य दारकस्य ‘बालग्राही’ बाल-
 ग्राही बालं गृहीतुं शीलमस्यास्तीति बालग्राही=शिशुसंरक्षको जातः । अस्मै देव-
 दत्तं दारकं कट्यां गृह्णाति, गृहीत्वा बह्वभिः ‘डिम्भएहि य’ डिम्भकैश्च,

‘तएणं से पंथए दासचेडए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (से पंथए दासचेडए) यह पान्थकनाम
 का दास पुत्र जो धन्य सार्थवाह के घर पर—नौकर—था (देवदिन्नस्स दारगस्स
 बालग्राही जाए) वह देवदत्त का बालग्राही—शिशु अवस्था का संरक्षक—
 हुआ । (देवदिन्नं दारयं कडीए गेण्हइ) यह देवदत्त को अपनी कमर=गोद में
 लिये रहता था । (गेण्हित्ता) यह उसे अपनी गोद में लेकर (बह्वहिं

तए णं से पंथए दासचेडए इत्यादि ॥

टीका—(तए णं) त्वां पथी (से पंथए दासचेडए) पान्थक नामे दास
 पुत्र—के धन्यसार्थवाहना घर लेकर हुतो— (देवदिन्नस्स दारगस्स बालग्राही
 जाए) पाण्डे देवदत्तना संरक्षक भाटे नियुक्त करवाभां आये। (देवदिन्नं दारयं
 कडीए गेण्हइ) ते देवदत्तने केड=जोण्णभां जेसाडीने राखतो हुतो. (गेण्हित्ता) अने

મૂલમ્—તણં સે પંથણ દાસચેડણ દેવદિન્નસ્સ દારગસ્સ

વાલગ્ગાહી જાણ, દેવદિન્નંદારયં કઢીણ ગેણહણ, ગેણિહત્તા વહૂહિં ડિંમ
 ણહિ ય ડિંમયાહિ ય દારણહિ ય દારિયાહિ ય કુમારણહિ ય કુમારિયાહિ ય
 સદ્ધિ સંપરિવુડે અભિરમણ. તણં ભદ્દા સત્થવાહી અન્નયા કયાણં દેવ-
 દિન્નં દારયં ણહાયં કયવલિકમ્મં કયકોઝલપાયચ્છિત્તં સવ્વાલંકાર-
 વિભૂસિયં કરેણ, કરિત્તા પંથયસ્સ દાસચેટયસ્સ હત્થયંસિ દલણ. તણં
 સે પંથણ દાસચેડણ ભદ્દાણ સત્થવાહીણ હત્થાઓ દેવદિન્નં દારગં
 કઢીણ ગિણહણ, ગિણિહત્તા સયાઓ ગિહાઓ પડિનિવલ્લમણ, પડિનિ-
 વલ્લમિત્તા વહૂહિં ડિંમણહિ ય ડિંમયાહિ ય કુમારણહિ ય કુમારિયાહિ
 ય સદ્ધિ સંપારવુડે જેણેવ ગયમગ્ગે તેણેવ ઝવાગચ્છણ, ઝવાગચ્છિત્તા
 દેવદિન્નં દારગં ણગંતે ઠાવેણ, ઠાવિત્તા વહૂહિં ડિંમણહિ ય જાવ
 કુમારિયાહિ ય સદ્ધિ સંપરિવુડે પમત્તે યાવિ વિહરણ. ઇમં ચ ણં વિજણ તક્રરે
 રાયગિહસ્સ વહૂણિ દારાણિ ય અવદારાણિ ય તહેવ જાવ આભોણમાણે
 મગ્ગેમાણે ગવેસેમાણે જેણેવ દેવદિન્ને દારણ તેણેવ ઝવાગચ્છણ, ઝવા-
 ગચ્છિત્તા દેવદિન્નં દારગં સવ્વાલંકારવિભૂસિયં પોસણ પોસિત્તા દેવદિન્નસ્સ
 દારગસ્સ આભરણાલંકારેસુ મુચ્છિણ ગઢિણ ગિચ્છે અજ્ઞોવવન્ને પંથયં

અવલ્લયનિર્હિં ચ અણુવહુડેતિ) વાલક્ર કે નામ સંસ્કાર હોને કે પશ્ચાત્ માતાપિતાને
 ઝન નાગ વાદિક પ્રતિમાઓં કી સૂવ સેવા કી—દાન દિયા—અપને હિસ્સે મેં સે સૂવ
 દ્રવ્ય કા વિતરણ કિયા ઓર ઝને કોષ કી સૂવ વૃદ્ધિ કી ॥ સૂત્ર ૬ ॥

દાયં ચ માય ચ અવલ્લયનિર્હિંચ અણુવહુડેતિ) બાળકનાં નામ સંસ્કાર બાદ
 બાળકનાં માતાપિતાએ નાગ વગેરે પ્રતિમાઓની ખૂબ જ સારી, પેઠે પૂજા કરી,
 પુષ્કળ પ્રમાણમાં દાન આપ્યું; પોતાના ભાગના દ્રવ્યનું બહુ જ પ્રમાણમાં વિતરણ
 કર્યું અને દેવતાઓના કોપની ખૂબ અભિવૃદ્ધિ કરી ॥ સૂ. ૬ ॥

दासचेडं पमत्तं पासइ, पासित्ता दिसालोय करेइ करेत्ता देवदिन्नं
 दारगं गेण्हइ, गेण्हित्ता कक्खंसि अल्लियावेइ अल्लियावित्ता उत्तरिज्जेणं
 पिहेइ, पिहित्ता सिग्गं तुरियं चवलं वेइयं रायगिहस्स नगरस्स अव-
 दारेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव
 भग्गकूवए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं जीवि
 याओ ववरोवेइ, ववरोवित्ता आभरणालंकारे गिण्हइ गिण्हित्ता देव-
 दिन्नस्स दारगस्स सरीरगं निप्पाणं निच्चेटं जीवियविप्पजठं भग्गकू-
 वए पक्खिवइ, पक्खिवित्ता जेणेव मालुयाकच्छए तेणेव उवागच्छइ
 उवागच्छित्ता मालुयाकच्छयं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता निच्चले
 निष्कंदे तुसिगीए दिवसं खवेमाणे चिट्ठइ ॥सू. ७॥

टीका—‘तएणं से पंधए’ इत्यादि—‘तएणं’ ततः खलु=तदनन्तरं ‘से’
 असौ पान्थकनामा ‘दासचेडए’ दासचेटकः= दासपुत्रो यो धन्यसार्थवाहस्य
 गृहे कर्मकरत्वेन स्थित आसीत्—स देवदत्तस्य दारकस्य ‘वालगाही’ वाल
 ग्राही वालं ग्रहीतुं शीलमस्यास्तीति वालग्राही=शिशुसंरक्षको जातः । असौ देव-
 दत्तं दारकं कट्यां गृह्णाति, गृहीत्वा बहुभिः ‘डिभएहि य’ डिम्भकैश्च,

‘तएणं से पंधए दासचेडए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (से पंधए दासचेडए) यह पान्थकनाम
 का दास पुत्र जो धन्य सार्थवाह के घर पर-नौकर-था (देवदिन्नस्स दारगस्स
 वालगाही जाए) वह देवदत्त का वालग्राही—शिशु अवस्था का संरक्षक-
 हुआ । (देवदिन्नं दारयं कडीए गेण्हइ) यह देवदत्त को अपनी कमर=गोद में
 लिये रहता था । (गेण्हित्ता) यह उसे अपनी गोद में लेकर (वहूहिं

तए णं से पंधए दासचेडए इत्यादि ॥

टीकार्थ (तए णं) त्थार पडी (से पंधए दासचेडए) पान्थक नामे दास
 पुत्र-के धन्यसार्थवाहना घर नौकर हुतो— (देवदिन्नस्स दारगस्स वालगाही
 जाए) जाण्ड देवदत्तना संरक्षण भाटे नियुक्त करवाभां आव्यो (देवदिन्नं दारगं
 कडीए गेण्हइ) ते देवदत्तने केड=जोणाभां जेसाडीने राखतो हुतो. (गेण्हित्ता) अने

मूलम्—तएणं से पंथए दासचेडए देवदिन्नस्स दारगस्स

वालगाही जाए, देवदिन्नंदारयं कडीए गेणहइ, गेण्हत्ता वट्ठहिं डिंभ
एहि य डिंभयाहिय दारएहि य दारियाहिय कुमारएहि य कुमारियाहिय
सद्धि संपरिवुडे अभिरमइ। तए णं भद्दा सत्थवाही अन्नया कयाइं देव-
दिन्नं दारयं ण्हायं कयवलिकम्मं कयकोउलपायच्छित्तं सव्वालंकार-
विभूसियं करेइ, करित्ता पंथयस्स दासचेटयस्स हत्थयंसि दलइ। तएणं
से पंथए दासचेडए भद्दाए सत्थवाहीए हत्थाओ देवदिन्नं दारगं
कडिए गिणहइ, गिण्हत्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ, पडिनि-
क्खमित्ता वट्ठहिं डिंभएहि य डिंभियाहिय कुमारएहि य कुमारियाहि
य सद्धि संपरिवुडे जेणेव गयमग्गे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
देवदिन्नं दारगं एगंते ठावेइ, ठावित्ता वट्ठहिं डिंभएहि य जाव
कुमारियाहिय सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि विहरइ। इमं च णं विजए तक्करे
रायगिहस्स वट्ठणि दाराणि य अवहाराणि य तहेव जाव आभोएमाणे
मग्गेमाणे गवेसेमाणे जेणेव देवदिन्ने दारए तेणेव उवागच्छइ, उवा-
गच्छित्ता देवदिन्नं दारगं सव्वालंकारविभूसियं पासइ पासित्ता देवदिन्नस्स
दारगस्स आभरणालंकारेसु मुच्छिए गडिए गिद्धे अज्झोववन्ने पंथयं

अवखयनिहिं च अणुवड्ढेति) बालक के नाम संस्कार होने के पश्चात् मातापिताने
उन नागवादि ऋषिप्रतिमाओं की खूब सेवा की—दान दिया—अपने हिस्से में से खूब
द्रव्य का वितरण किया और उनके कोष की खूब वृद्धि की ॥ सूत्र ६॥

दायं च भाय च अज्जयनिहिं च अणुवड्ढेति) जाण्डनां नाम संस्कार जाण्ड
जाण्डनां मातापिताओ नाग वज्रे प्रतिमाओनी पूज ज सारी, पेठें पूज करी,
पुष्प प्रमाणुमां दान आयुं, पोताना सागना द्रव्यं जहू ज प्रमाणुमां वितरण
कयुं अने देवताओना आपनी पूज अविवृद्धि करी ॥ सू. ६ ॥

कृत्वा पाण्डकस्य दासचेदकस्य हस्ते ददाति । ततः खलु स पाण्डको दास-
चेदको भद्रायाः सार्धवाद्या हस्ताद् देवदत्तं दारकं कट्यां गृह्णाति, गृहीत्वा
म्वकाद् गृहात् प्रतिनिष्कामति, प्रतिनिष्क्रम्य बहुभिः डिम्भकैश्च डिम्भिकाभिश्च
दारकैश्च दारिकाभिश्च, कुमारकैश्च कुमारिकाभिश्च सार्द्धं संपरिवृतो यत्रैव राज-
मार्गस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य देवदत्तदारकमेतन्ते 'ठवेड' स्थापयति=उपवेशयति
उपवेश्य बहुभिः डिम्भकैश्च यावत्कुमारिकाभिश्च सार्द्धं संपरिवृतः 'पमते'
पमतः=तद्रक्षणं प्रमादवान् चापि 'विहरइ' विहरति=यावत्कचालिकादिभिः
सहान्यत्र रमते ।

चरित कर समस्त अलंकारों से विभूषित किया (करिचा पंथयस्स दासचेद
यस्म हत्थयंसि दलयइ) विभूषित करके बाद में उसने उसे पांथक दाम
चेदथ के हाथमें दे दिया । (तएणं से पंथए दासचेदए भद्दाए मत्थवा
हीए हत्थाओ देवदिन्न दारयं कडिए गिणइ) उस पांथकदासचेदकने भद्रा
सार्धवादीके हाथ से लेकर देवदत्त को अपनी कटी=गोद में ले लिया ।
(गिण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ) और लेकर वह अपने घर
से बाहर निकला । (पडिनिक्खमित्ता बहूहि डिम्भिएहि डिम्भयाहिय कुमा-
रएहि य कुमारियाहि य सद्धि संपरिवुडे जेणेव रायमग्गे तेणेव उवा-
गच्छइ) निकल कर वह अनेक डिम्भिकों से अनेक डिम्भिकाओं से कुमार
और कुमारिकाओं से घिरा हुआ होकर जहां राजमार्ग था वहां पर गया
(उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं एगंते ठवेइ, ठावित्ता बहूहि डिम्भिएहि
जाय कुमारियारि य सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि विहरइ। जाकर उसने

अलंकृत कथीं. (करिचा पंथयस्स दासचेदयस्स हत्थयंसि दलयइ) आणकने
घरेण्णोओथी अलंकृत कथीं. आह माताओ नेने पांथक दास चेदकने सोंपी दीधो.
(तए णं से पंथए दासचेदए भद्दाए मत्थवाहीए हत्थाओ देवदिन्नं
दारयं कडिए गिणइ) पांथक दासचेदके भद्रा सार्धवादीना हाथमांथी आणकने
लधने पोताना आणामां लधं दीधो. (गिण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्ख-
मइ) अने लधने ते घरेथी जडार निज्जो. (पडिनिक्खमित्ता बहूहि डिम्भ
एहि डिम्भियाहि य कुमारयाहि य कुमारियाहि य सद्धि संपरिवुडे जेणेव
रायमग्गे तेणेव उवागच्छइ) नीकणीने ते घण्ण डिङ्किओ-माणओ-डिङ्कि-
ओओ-आणाओ, तेमज्ज कुमार अने कुमारीओनी साथे न्यां राज-
मार्ग उतो त्यां गयो. (उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं एगंते ठवेइ
ठावित्ता बहूहि डिम्भिएहि जाय कुमारियाहि य सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि

डिम्भाः=अल्पकालिकाः शिश्वाः. डिम्भा एव डिम्भकास्तैः, डिम्भिकाभिश्च= अल्पकालिकचालिकाभिश्च. 'दारएहि य, दारकैश्च=बहुकालिकचालकैः, दारिकाभिश्च=चालिकाभिः सद्धिं संपरिपुष्टः=सहितः 'अभिरममाणे' अभिरममाणः= छोडन् सन् 'अभिरमइ' अभिरमति=तिष्ठति । ततः खलु सा भद्रा सार्थवाही अन्यदा कदाचित् देवदत्तं दारकं 'ह्याय' स्नातं कारितस्नानं, 'कयचलिकम्मं' कृतचालिकर्माणम्=अरिष्टादि निवारणाय पशुपदपादि सर्वपापनिमित्तं कारिताद्योत्सर्गम् 'कयकोउयमंगलपायाच्छित्तं' कृतकौतुकमङ्गलपायश्चित्तं=दृष्टिरोपादिनिवारणार्थं कृतमप्यो तिलकारिकं सर्वाङ्कारविभूषितं करोति.

डिम्भएहि य डिम्भियाहि य दारएहि य दारियाहि य कुमारेहि य कुमारियाहि य सद्धिं संपरिपुष्टे अभिरममाणे अभिरमइ) अनेक डिम्भकों के—छोटे-बालकों के साथ अनेक छोटी-२ चालिकाओं के साथ, अनेक दारकों के साथ—डिम्भकों की अपेक्षा कुछ अधिक उमरवाले बालकों के साथ कुछ अधिक अनेक दारिकाओं के साथ, अनेक कुमार और कुमारिकाओं के साथ उनसे युक्त होकर क्रीडा किया करता था । अर्थात् उन सबके साथ मिलकर वह उस देवदत्त बालक को खिलाया करता था । (तएणं सा भद्रा सत्थवाही अन्नया कयाइं देवदिन्नं दारयं ण्हायं कयचलिकम्मं कयकोउयमंगलपायाच्छित्तं सञ्चालंकारविभूसियं करेइ) एक दिन की बात है कि उस भद्रा सार्थवाही उस देवदत्त नामके अपने पुत्र को स्नान करावा कर तथा उसके निमित्त से वायसादि पक्षियों को अन्नादि का भागरूप चालिकर्म कर एवं कौतुक, मंगल और प्रायश्चित्त विधि समा-

आजाभां आजाहीने (यहहिं डिम्भएहि य डिम्भियाहे य दारएहि य दारियाहि य कुमारेहि य कुमारियाहि य सद्धिं संपरिपुष्टे अभिरममाणे अभिरमइ) अनेके डिलडो-नाना नानां धण्डां आणडोनी साथे-नानी नानी आजा-आनी साथे, धण्डा दारडोनी साथे ओटवे डे डिलडो कत्तां जरा मोठी डंभर बाणा आणडोनी साथे—धण्डा दारिआओनी साथे, धण्डा कुमार अने कुमारिआओनी साथे भणीने रभतो रमाडतो हुतो. ओटवे डे पांथक जधां आणडोनी साथे भणीने देवदत्त रमाडतो हुतो. (तए णं सा भद्रा सत्थवाही अन्नया कयाइं देवदिन्नं दारयं ण्हायं कयचलिकम्मं कयकोउयमंगलपायाच्छित्तं सञ्चालंकार-विभूसियं करेइ) ओके दिवस भद्रा सार्थवाहीओ पोताना आणक देवदत्तने नय-आवोने ते निमित्ते आगअ वगेरे पक्षीओने अन्न वगेरेनो भाग अर्पिने, कौतुक, मंगल अने प्रायश्चित्त विधि पूरी करी अने त्यार आद आणकने सुंदर धरेणांओथी

कृत्वा पाण्ड्यकस्य दासचेटकस्य हस्ते ददाति । ततः खलु स पाण्ड्यको दास-
चेटको भद्रायाः सार्धवाद्या हस्ताद् देवदत्तं दारकं कट्यां गृह्णाति, गृहीत्वा
स्वकाद् गृहात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य बहुभिः डिम्भकैश्च डिम्भिकाभिश्च
दारकैश्च दारिकाभिश्च, कुमारकैश्च कुमारिकाभिश्च सार्द्धं संपरिवृतो यत्रैव राज-
मार्गस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य देवदत्तदारकमेतन्ते 'उवेड' स्थापयति=उपवेशयति
उपवेश्य बहुभिः डिम्भकैश्च यावत्कुमारिकाभिश्च सार्द्धं संपरिवृतः 'पमते'
'पमतः'=तद्रक्षणे प्रमादवान् चापि 'विहरइ' विहरति=वालकवालिकादिभिः
सहान्यत्र रमते ।

चरित कर समस्त अलंकारों से विभूषित किया (करित्ता पंथयस्स दासचेट
यस्म हत्थयंसि दलयइ) विभूषित करके बाद में उसने उसे पाण्ड्य दास
चेट के हाथ में दे दिया ! (तएणं से पंथए दासचेडए भद्दाए मत्थवा
हीए हत्थाओ देवदिन्न दारयं कडिए गिण्डइ) उस पाण्ड्यदासचेटकने भद्रा
सार्धवादीके हाथ से लेकर देवदत्त को अपनी कटी=गोद में ले लिया ।
(गिण्डित्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ) और लेकर वह अपने घर
से बाहर निकला । (पडिनिक्खमित्ता वह्हि डिम्भएहि डिम्भयाहि य कुमार
एहि य कुमारियाहि य सद्धि संपरिवुडे जेणेव रायमग्गे तेणेव उवा-
गच्छइ) निकल कर वह अनेक डिम्भिकों से अनेक डिम्भिकाओं से कुमार
और कुमारिकाओं से घिरा हुआ होकर जहाँ राजमार्ग था वहाँ पर गया
(उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं एगंते ठावेइ, ठावित्ता वह्हि डिम्भएहि
जाव कुमारियारि य सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि विहरइ) जाकर उसने

अलंकृत कथीं. (करित्ता पंथयस्स दासचेटयस्स हत्थयंसि दलयइ) पाण्ड्यने
धरेणुंओथी अलंकृत कथीं. गाढ माताओ नेने पांथक दास चेटकने सोपी दीधो.
(तए णं से पंथए दासचेडए भद्दाए मत्थवाहीए हत्थाओ देवदिन्नं
दारयं कडिए गिण्डइ) पांथक दासचेटके भद्रा सार्धवादीना हाथमांथी पाण्ड्यने
लधने पोताना ओणाभां लध दीधो. (गिण्डित्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्ख-
मइ) अने लधने ते घेरथी णडार निक्खथो. (पडिनिक्खमित्ता वह्हि डिम्भ
एहि डिम्भियाहि य कुमारयाहि य कुमारियाहि य सद्धि संपरिवुडे जेणेव
रायमग्गे तेणेव उवागच्छइ) नीकणीने ते धणु डिंकिडे-माणडे-डिंकि-
डोओ-णाणाओ, तेभण कुमार अने कुमारीओनी साथे न्थां राज-
मार्ग डतो त्यां गथो. (उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारयं एगंते ठावेइ
ठावित्ता वह्हि डिंएहि जाव कुमारियादि य सद्धि संपरिवुडे पमत्ते यावि

डिम्भाः=अल्पकालिकाः शिशवः. डिम्भा एव डिम्भकास्तैः, डिम्भिकाभिश्च= अल्पकालिकवालिकाभिश्च. 'दारएहि य, दारकैश्च=चटुकालिकवालकैः, दारिकाभिश्च=वालिकाभिः सार्द्धं संपरिघृतः=सद्दिनः 'अभिरममाणे' अभिरममाणः= क्रीडन् सन् 'अभिरमइ' अभिरमनि=तिष्ठति। ततः खलु सा भद्रा सार्थवाही अन्यदा कदाचित् देवदत्तं दारकं 'छाया' स्नातं कारितस्नानं, 'कयवलिकम्मं' कन्यावलिकर्माणम्=अरिष्टादि निवारणाय पशुपदयादि सर्वपापनिमिश्रं कारिताद्योत्सर्गम् 'कयकोउयमंगलपायच्छित्तं' कृतकौतुकमङ्गलपायश्चित्तं=इष्टिरोपादिनिवारणार्थं कृतमपीतिलकादिकं सर्वालंकारविभूषितं करोति.

डिम्भएहि य डिम्भियाहि य दारएहि य दारियाहि य कुमारेहि य कुमारियाहि य सद्दिं संपरिघुडे अभिरममाणे अभिरमइ) अनेक डिम्भकों के—छोटेऽवालकों के साथ अनेक छोटी २ वालिकाओं के साथ, अनेक दारकों के साथ—डिम्भकों की अपेक्षा कुछ अधिक उमरवाले वालकों के साथ कुछ अधिक अनेक दारिकाओं के साथ, अनेक कुमार और कुमारिकाओं के साथ उनसे युक्त होकर क्रीडा किया करता था। अर्थात् उन सबके साथ मिलकर वह उस देवदत्त बालक को खिलाया करता था। (तएणं सा भद्रा सत्थवाही अन्नया कयाइं देवदिन्नं दारयं ण्हायं कयवलिकम्मं कयकोउयमंगलपायाच्छित्तं सञ्चालंकारविभूसियं करेइ) एक दिन की बात है कि उस भद्रा सार्थवाही उस देवदत्त नामके अपने पुत्र को स्नान करवा कर तथा उसके निमित्त से वायसादि पक्षियों को अन्नादि का भागरूप बलिकर्म कर एवं कौतुक, मंगल और प्रायश्चित्त विधि समा-

जोणामां जेसादीने (बहूहिं डिम्भएहिं य डिम्भियाहे य दारएहि य दारियाहि य कुमारियाहि य कुमारियाहि य सद्दिं संपरिघुडे अभिरममाणे

अभिरमइ) अनेक डिंबडे—नाना नानां घण्टां जाणकेनी साथे—नानी नानी जाणाओनी साथे, घण्टा दारकेनी साथे ओटखे डे डिंबडे क-तां जरा मोटी ठंभर जाणा जाणकेनी साथे—घण्टी दारिकाओनी साथे, घण्टा कुमार अने कुमारिकाओनी साथे भणीने रमतो रमाडतो हुतो. ओटखे डे पांथक ण्धां जाणकेनी साथे भणीने देवदत्त रमाडतो हुतो. (तए णं सा भद्रा सत्थवाही अन्नया कयाइं देवदिन्नं

दारयं ण्हायं कयवलिकम्मं कयकोउयमंगलपायाच्छित्तं सञ्चालंकार-विभूसियं करेइ) ओक दिवस भद्रा सार्थवाहीजे पोताना जाणक देवदत्तने नव-अवने ते निमित्ते काजडा वगेरे पक्षीओने अन्न वगेरेने लाग अर्पिने, कौतुक, मंगल अने प्रायश्चित्त विधि पूरी करी अने त्यार जाड जाणकने सुंदर धरेणुओथी

चेटं 'पमतं' प्रमतम् अन्यत्र संज्ञानचित्त पश्यति, दृष्ट्वा दिमाश्लोपं दिशाश्लो
कम्— 'अस्मिन्नवसरे कस्यापि गमनागमनमस्ति न वा ?' इति सकलदिशा
निरीक्षणं करोति, कृत्वा देवदत्तं दारकं गृह्णाति, गृहीत्वा 'कक्खं' कक्षे=
चाहुमूले 'अल्लियावेइ' आलीनयति=अन्तर्धानं करोति आलीनयित्वा 'उत्त-
रिज्जेणं' उत्तरीयेण=उपरिचस्त्रण 'दुपट्ठा' इति भाषायां, तेन 'पिहेइ' पिद-
धाति,=प्रच्छादयति, प्रच्छाद्य शीघ्रं त्वरितं चपलं वेगितं=शीघ्रातिशीघ्रमित्यर्थः
राजगृहस्य नगरस्यापद्वारेण निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव जीर्णोद्यान. यत्रैव
भग्नकूपकस्तत्रैवोपागच्छति. उपागत्य देवदत्तं दारकं 'जीवियाओ' जीविनात्

छित्त हा गया—प्रायत हा गया—उनमें एकाग्र बन गया, अथवा गृह—
लुब्ध हो गया—इन्हें मैं छेल्' इस स्थिति से युक्त हुए उसने साथ
में पंथक दास चेटक का भी अन्यत्र संलग्न चित्तवाला देवा (पासित्ता
दिसाश्लोपं करेइ करित्ता देवदिन्नं दारयं गेण्हइ) देखकर फिर उसने दिशा-
वलोकन किया—आजू वाजू को ओर इधर उधर देखा की कहीं से कोई
आता जाता तो नहीं है, जब कोई कहीं नहीं दिखाईपड़ा तो उसने
उसी समय उस देवदत्त दारक को उठा लिया। (गेहिन्ता कक्खंभि
अल्लियावेइ, अल्लियाविता उत्तरिज्जेणं पिहेइ) उठाकर फिर उसने उसे
अपनी काँख में छुपा लिया। छुपाकर बाद में उसे दुपट्ट से ढक लिया
(पिहिन्ता सिग्घं, तुरियं चवलं चेइयं रायगिहस्स नगरस्स अवदारेणं निग्गच्छइ)
ढक कर वह फिर वहाँ से शीघ्र, त्वरित, जल्दी जल्दी राजगृह नगर के
अन्दार पिछले द्वार २ से बाहर निकला (निग्गच्छित्ता जेणेव जिणुज्जाणे जेणेव

पासइ) देवदत्तने अहु भूय धरेणुंओथी अलंकृत लेधने ते मोडवथ थधं गथे,
तेनुं अित्त धरेणुंओमां अ थोटी गथुं अथवा तो ते बोलाध गथे. आ धरेणु-
ओने हुं हुरी लडं आ लतने विचार तेना भनभा स्कुथी. थारे दास चेटक
पंथकने पथु त्यां थोडे हर रमतमां तव्वीन लेथे. (पासित्ता दिमाश्लोपं करेइ करित्ता
देवदिन्नां दारयं गेण्हइ) पंथकने लेथे पथी तेणु थोभेर लेथुं के कोध आवतुं
तो नथी ? अथारे तेने कोध देणायुं नहि. त्यारे तेणु तरत आणक देवदत्तने उपाटी
दीधे. (गेहिन्ता कक्खंभि अल्लियावेइ अल्लियाविता उत्तरिज्जेणं पिहेइ) उपाटीने
तेणु आणकने पडणामां छुपावीने तेने दुपट्ठाथी ढांडी दीधे. (पिहिन्ता सिग्घं तुरियं
चाउं चेइयं रायगिहस्स नगरस्स अवदारेणं निग्गच्छइ) ढांडीने ते सत्वर
त्वरित गतिथी राजगृह नगरना अपद्वारथी अद्वार नीकणी गथे. (निग्गच्छित्ता
जेणेव जिणुज्जाणे जेणेव भग्नकूप तेणेव उवागच्छइ) नीकणीने ते
ते अथां भूतुं उद्यान अने लग्न द्वये इतो त्यां पहेंओ. (उवागच्छित्ता

अयं च खलु विजयस्तस्करो राजगृहस्य नगरस्य बहूनि दाराणि च
 'अवदाराणि य' अपदाराणि=लघुदाराणि च 'तदेव तथैव=पूर्वदेवात्र सर्वस्था-
 नानि वाच्यानि यावत् 'आभोएमाणे अभोगयन्=सोपयोगमवलोकयन् मार्ग
 यमाणो गवेपयमाणो यथैव देवदत्तो दारकस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य देवः तं
 दारकं सर्वालङ्कारविभूषितं पश्यति, दृष्ट्वा देवदत्तस्य दारकस्याभरणालङ्कारेषु
 'मुच्छिष्टे' मूर्च्छितः=कर्तव्यव्यापारशून्यः 'गदिए' ग्रथितः=एकाग्रतामाप्नोति,
 'गिद्वे' गृद्धः=लुब्ध 'अज्झोचवन्ने' अध्युपपन्नः=ममत्वबहुलः पान्थकं दाम

उस देवदत्त दारक को एकांत में छोड़ दिया और स्वयं उन दिम्भत
 यावत् कुमारिकाओं के साथ बिरा हुआ होकर प्रमादवान् बन गया—
 अर्थात् उन बालक बालिका आदिकों के—साथ अन्यत्र खेलने लग गया।
 (इमंच णं विजए तक्करे रायगिहस्स नगरस्स बहूणि दाराणि य अवदाराणि
 य तहेव जाव आभोएमाणे मग्गेमाणे गवेसेमाणे जेणेव—देव
 दिन्ने दारए तेणेव उवागच्छइ) इतने में विजय तस्कर राजगृह नगर के
 अनेक द्वारों को अनेक छोटे २ द्वारों को पहिले की तरह उपयोग पूर्वक
 देखता हुआ उन्हें चार २ तपासता हुआ, मूर्खदृष्टि से उनकी गवे-
 पणा करता हुआ जहाँ वह देवदत्त दारक था वहाँ आया। (उवागच्छित्ता
 देवदिन्नं दारगं सव्वालङ्कारविभूषियं पासइ) आकर उसने देवदत्त दारक
 को समस्त अलंकारों से विभूषित हुआ देखा। (पासित्ता देवदिन्नस्स
 दारगस्स आभरणालङ्कारेसु मुच्छिष्टे गदिए गिद्वे अज्झोचवन्ने पंथयं दास-
 चेडं पमत्तं पासइ) देखकर के वह देवदत्त के आभरण और अलंकारों में मू-
 विहरइ) त्यां पढोत्थिने तेष्से देवदत्तने प्रमाद वश थधने ओकांत जग्गाओ भूझी
 दीथो अने पोते ने जधा डिलक, डिलिका कुमार अने कुमारिकाओनी साथे
 रमतमां पडी जये। ओटवे के तेमनी साथे रभवो लाजये। (इमंच णं विजए
 तक्करे रायगिहस्स नगरस्स बहूणि दाराणि य अवदाराणि य तहेव जाव
 आभोएमाणे गवेसमाणे जेणेव देवदिन्ने दारए तेणेव उवागच्छइ)
 ओटलाभां विजय नामे ते तस्कर (थार) राजगृह नगरना अनेक दरवान्ओ,
 अनेक नाना दरवान्ओने पढेलांणी जेभ ज थोरीनी ताकमां जीव्ही नजरे तपासतो
 नेतो—ज्यां जाणक देवदत्त हतो त्यां आओ। (उवागच्छित्ता देवदिन्नं दारगं
 सव्वालङ्कारविभूषियं पासइ) त्यां आवतांणी साथे ज तेष्से जाणक देवदत्तने
 सवालङ्कारेथी अवधूत थयेवो जये। (पासित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स आभरणा-
 लङ्कारेसु मुच्छिष्टे गदिए गिद्वे अज्झोचवन्ने पंथयं दासचेडं पमत्तं

मूलम्--तएणं से पंथए दासचेडे तओ मुहुत्तंतरस्स जेणेव
 देवदिन्ने दारए ठविए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता देवदिन्नं
 दारगं तंसि ठाणंसि अपासमाणे रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे देव-
 दिन्नस्स दारगस्स सब्बओ समंता मग्गणगवेसणं करेइ करित्ता देव-
 दिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा खुइं वा पउत्तिं वा अलभमाणे
 जेणेव सए गिहे जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ, उवाग-
 च्छित्ता धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी-एवं खलु सामी ! भद्दा सत्थ-
 वाही देवदिन्नं दारयं ण्हायं जाव मम हत्थंसि दलयइ, तएणं अहं
 देवदिन्नं दारयं कडीए गिण्हामि गिण्हित्ता जाव, मग्गणगवेसणं करेमि
 तं न णज्जइ णं सामि ! देवदिन्ने दारए केणइ हये वा अवहिए वा
 अवखित्ते वा पायवडिए धण्णस सत्थवाहस्स एयमट्ठं निवेदेइ, तं
 से धण्णे सत्थवाहे पंथयदासचेडयस्स एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म तेण य
 महया पुत्तसोएणाभिभूये समाणे परसुणियत्तं चंपगपायवे धसत्ति
 धरणीतलंसि सब्बंगेहिं सन्निवइए, तएणं मे धण्णे सत्थवाहे तओ
 मुहुत्तंतरस्स आसत्थे पच्छागयपाणे देवदिन्नस्स दारगस्स सब्बओ
 समंता मग्गणगवेसणं करेइ देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा
 खुइं वा पउत्तिं वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ,
 उवागच्छित्ता महत्थं पाहुडं गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेव नगरगुत्तिया
 तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तं महत्थं पाहुडं उवणेइ, उवणित्ता
 एवं वयासी एवं खलु देवाणुप्पिया ! मम पुत्ते भद्दाए भारियाए अत्तए
 देवदिन्ने नाम दारए इट्ठे जाव उंवरपुप्फंपिव दुल्लहे सवणयाए किमंग

માણેભ્યઃ વવરોવેદ' વપરોપયાત=પૃથક્કરાતિ મરયતાત્યથઃ, જોવિતા-
 દ્વયપરોપ્ય આભરણાલંકારાન્ ગૃહ્ણતિ, ગૃહ્ણીત્વા દેવદત્તામ્ય દારવ્યકસ્ય શરીરં
 'નિષ્પાણં' નિષ્પાણમ્=આસોચ્છ્રામાદિ માણરક્તિં 'નિચ્ચેદં' નિષ્કેષ્ટં=જીવનવ્યાપાર-
 રહિતં 'જીવચિષ્પજઢં' 'જીવચિપ્રત્યક્તમ્=આત્મમદેશરહિતં દેવદત્તાદારકશરીરં ભગ્નકૂપે
 પ્રક્ષિપતિ, પ્રક્ષિપ્ય યત્રૈવ માલુકાકક્ષકસ્ત્રેવોપાગચ્છતિ, ઉપાગત્ય માલુકાકક્ષ-
 કમનુપ્રવિશતિ, અનુપ્રવિશ્ય 'નિચ્ચલે' નિશ્ચલઃ=ગમનાગમનાદિવર્જિતઃ 'નિષ્કંદે'
 નિષ્કંદઃ=હસ્તપાદાદ્યવયવચલનરહિતઃ 'તુસિનીષ' તૂષ્ણીકઃ=વચનવ્યાપાર-
 હિતઃ સન્ દિવસં=તદિનં 'ત્વેમાણે' ક્ષપયન્=ગમયન્ તિષ્ઠતિ ॥સૂ. ૭॥

ભગ્નકૂવણ, તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) નિકલ કર વહાં ગયા કિં જહાં વહ જીર્ણ
 ઉદ્યાન ઓર ભગ્ન કૂપ થા । (ઉવાગચ્છિત્તા દેવદિન્નં દારવ્યં જીવિયાઓ
 વવરોવેદ) વહાં પહુંચ કર ઉસને ઉસ દેવદત્ત દારક કો માર ઢાલા ।
 (વવરોવેત્તા આભરણાલંકારે ગિઠ્ઠઈ, ગિઠ્ઠિત્તા દેવદિન્નસ્સ દારગસ્સ સરીરં
 નિષ્પાણં નિચ્ચેદં જીવિયચિષ્પજઢં ભગ્નકૂવણ પક્કિલવઈ) માર કર ઉસકે
 મમ્મતઆધૂપણ ઉતાર લિયે--ઔર દેવદત્ત દારક કે ઉસ નિષ્પાણ, નિષ્કેષ્ટ
 તથા આત્મમદેશોં સે વિહીન ચને હુણ શરીર કો ભગ્નકૂપ મેં ઢાલ દિયા ।
 (પક્કિલવિત્તા જેણેવ માલુયા કચ્છણ તેણેવ ઉવાગચ્છઈ ઉવાગચ્છિત્તા
 માલુયા કચ્છણ અણુપવિસઈ, અણુપવિસિત્તા નિચ્ચલે નિષ્કંદે તુસિનીષ
 દિવસં ત્વેમાણે ચિટ્ઠઈ) ઢાલકર ફિર વહ જહાં માલુકા કક્ષ થા વહાં
 આયા । આકર વહ જસમેં પ્રવિષ્ટ હુઆ--ઔર ઉસી મે ચુપવાપ છુસે
 ઉમને નિશ્ચલ ઔર નિષ્કેષ્ટ હોકર વહ અપના દિન વ્યતીત--કિયા । ॥સૂત્ર ૭॥

દેવદિન્નં દારવ્ય જીવિયાઓ વવરોવેદ) ત્યાં પહોંચીને તેણે બાળકં દેવદત્તને મારી
 નાખ્યો. (વવરોવેત્તા આભરણાલંકારે ગિઠ્ઠઈ ગિઠ્ઠિત્તા દેવદિન્નસ્સ દારગસ્સ
 સરીરં નિષ્પાણં નિચ્ચેદં જીવિયચિષ્પજઢં ભગ્નકૂવણ પક્કિલવઈ) મારીને
 તેનાં બધાં ઘરેણાંઓ તેણે ઉતારી લીધાં અને તેના નિષ્પાણ, નિષ્કેષ્ટ તેમજ આત્મ
 પ્રદેશો વગરના શરીરને ભગ્ન કૂવામાં ફેંકી દીધું. (પક્કિલવેત્તા જેણેવ માલુયા
 કચ્છણ તેણેવ ઉવાગચ્છઈ ઉવાગચ્છિત્તા માલુયાકચ્છણ અણુપવિસઈ
 અણુપવિસિત્તા નિચ્ચલે નિષ્કંદે તુસિનીષ દિવસં ત્વેમાણે ચિટ્ઠઈ).
 (ફેંકીને તે ત્યાં માલુકા કક્ષ હતો ત્યાં ગયો. જ્યાં તેમાં પ્રવેશીને તેણે ચુપ
 વાપ નિશ્ચળ અને નિષ્કેષ્ટ થઈને પોતાનો દિવસ પસાર કર્યો. ॥ સૂત્ર ૭ ॥

मूलम्--तएणं से पंथए दासचेडे तओ मुहुत्तंतरस्स जेणेव
 देवदिन्ने दारए ठविए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता देवदिन्नं
 दारगं तंसि ठाणंसि अपासमाणे रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे देव-
 दिन्नस्स दारगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेइ करित्ता देव-
 दिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा खुइं वा पउत्ति वा अलभमाणे
 जेणेव सए गिहे जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ, उवाग-
 च्छित्ता धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी--एवं खलु सामी ! भद्दा सत्थ
 वाही देवदिन्नं दारयं ण्हायं जाव मम हत्थंसि दलयइ, तएणं अहं
 देवदिन्नं दारयं कडीए गिण्हामि गिण्हित्ता जाव, मग्गणगवेसणं करेमि
 तं न णज्जइ णं सामि ! देवदिन्ने दारए केणइ हये वा अवहिए वा
 अवखित्ते वा पायवडिए धण्णस सत्थवाहस्स एयमट्ठं निवेदेइ, त . णं
 से धण्णे सत्थवाहे पंथयदासचेडयस्स एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म तेण य
 महया पुत्तसोएणाभिभूये समाणे परसुणियत्तव चंपगपायवे धसत्ति
 धरणीतलंसि सव्वंगेहिं सन्निवइए, तएणं मे धण्णे सत्थवाहे तओ
 मुहुत्तंतरस्स आसत्थे पच्छागयपाणे देवदिन्नस्स दारगस्स सव्वओ
 समंता मग्गणगवेसणं करेइ देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा
 खुइं वा पउत्ति वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ,
 उवागच्छित्ता महत्थं पाहुडं गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेव नगरयुत्तिया
 तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तं महत्थं पाहुडं उवणेइ, उवणित्ता
 एवं वयासी एवं खलु देवाणुप्पिया ! मम पुत्ते भद्दाए भारियाए अत्तए
 देवदिन्ने नाम दारए इट्ठे जाव उंवरपुप्फपिव दुल्लहे सवणयाए किमंग

पुण पासण्याए?, तएणं सा भद्दा देवदिन्नं दारयं सव्वालंकारविभू-
 सियं पंथगस्स हत्थे दलाइ जाव पायवडिए तं मम निवेदेइ, तं इच्छा
 मिणं देवाणुप्पिया! देवदिन्नदारगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं
 काउं। तएणं ते नगरयुत्तिया धण्णेणं सत्थवाहेणं एवं उत्ता समाणा
 सन्नद्धवद्धवम्मियकवया उप्पीलियसरासणवट्टिया जाव गहियाउयप-
 हरणा धण्णेणं सत्थवाहेणं सद्धिं रायगिहस्स नगरस्स बहूणि अइ-
 गमणाणि य जाव पवासु य मग्गणगवेसणं करेमाणा रायगिहाओ
 नगराओ पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमिन्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव
 भग्गकूवए तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स
 सरीरगं निप्पाणं जीवविप्पजढं पासंति, पासित्ता हा हा अहो अक-
 ज्जमितिकहु देवदिन्नं दारगं भग्गकूवाओ उत्तारंति उत्तारित्ता धण्णस्स
 सत्थवाहस्स हत्थे दलयंति ॥सू० ८॥

टीका—‘तएणं से पंथए’ इत्यादि। ततःखलु स पांथको दासचेटकः,
 .तओ मुहुत्तंतरस्स’ ततो मुहुत्तान्तरस्य=मुहुत्तान्तरं यत्र देवदत्तो दारकस्थापि
 तस्तत्रैवोपागच्छंति, उपागत्य देवदत्तं दारकं तस्मिन् स्थाने ‘अपासमाणे’ अपश्यन्

‘तएणं से पंथए दासचेडे’ इत्यादि ।

टीकार्थ—इसके बाद (से पंथए दासचेडे) वह पांथकदासचेटक
 (तओ) वहां से (मुहुत्तंतरस्स जेणेव देवदिन्ने दारए ठविए तेणेवाउवग-
 च्छइ) एक मुहुत्त के बाद जहां देवदत्त को बैठाया था वहां—गया
 (उवागच्छित्ता देवदिन्न दारगं तंसि ठाणंसि अपासमाणे रोयमाणे कंद-

तएणं से पंथए दासचेडे इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएणं) त्वात्त एव (से पंथए दासचेडे) पांथक दास चेटक (तओ
 त्यांथी (मुहुत्तंतरस्स जेणेव देवदिण्णे दारए ठविए तेणेव उवागच्छइ)
 ओक मुहुत्त पछी जयां देवदत्तने जेसाउथे हुते त्यां गथे. (उवागच्छित्ता
 देवदिन्नं दारगं तंसि ठाणंसि अपासमाणे रोयमाणे कंद

‘रोयमाणे’ रुदन=साश्रुपातमार्तनाद कुर्वन्, ‘कंदमाणे’ क्रन्दन्=उच्चैः स्वरेण रुदन ‘विलवमाणे’ विलपन्=‘कगतो दारकः ? तमन्तरेण कीदृशोऽनर्थो भविष्यति किं करोमि ? क गच्छामि ?’ इति जल्पन् देवदत्तस्य दारकस्य सर्वतः समन्तान् मार्गणगवेपणां करोति कृत्वा देवदत्तस्य दारकस्य कुत्रापि ‘सुइं वा’ श्रुतिं वा=दारकवृत्तान्तं ‘सुइं वा’ श्रुतिं वा छिक्काव्यक्तं तच्चिह्नम्, ‘पउत्तिवा’ मवृत्तिं वा=प्रकटतरवार्ताम् ‘अलभमाणे’ अलभमानः=अप्राप्तुवन् यत्रैव स्वकं गृहं यत्रैव धन्यः सार्थवाहस्तत्रैवोपागच्छति

माणे विलवमाणे देवदिक्कास्त दारगस्त सन्वाओ समता मगगणगवेसणं करेइ) जाकर उसने उस स्थानपर देवदत्त दारक को नहीं देखा—तो रो पड़ा अश्रु पात करता हुआ आर्तनाद करने लग गया जोर २ से चिल्ला चिल्ला कर रोने लगा, विलाप करने लगा— देवदत्त दारक कहाँ गया—अव—उसके बिना कैसा अनर्थ होगा, क्या कहूँ—कहाँ—जाऊँ—इस प्रकार बड़बड़ाने लगा—बाद में उसने उन् देवदत्त की वहाँ सब तरफ चारों ओर मार्गणा की गवेपणा की। (करित्ता देवदिन्नस्त दारगस्त कत्थइ सुइं वा खुइंवा पउत्तिं वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे जेणेव धन्ने सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) करके जब उसे उस देवदत्त दारक की कोई श्रुति नहीं सुनाई दी, छिक्कादि अव्यक्त चिन्ह भी नहीं ज्ञात हो सका तथा स्पष्ट उसकी किसी बात का पता नहीं पड़ा तो वह जहाँ अपना घर था— और जहाँ धन्य सार्थवाह थे— वहाँ आया (उवागच्छित्ता धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी) आकर धन्य सार्थ-

देवदिन्नस्त दारगस्त सन्वाओ समता मगगणगवेसणं करेइ) त्यां जधने ते भाणक देवदत्तने नहि नेतां उवा भांउये. विलाप करवा लाउये. “भाणक देवदत्त कथां जतो रह्यो ? ते वगर हुवे शुं थये ? शुं कडुं ? हुवे कथां नठं ? “ आ प्रभाणे ते दुःखी थधने विचार करवा लाउये. त्थार पछी तेणे थोभेर भाणक देवदत्तनी तपास करी अने शोध करी. (करित्ता देवदिन्नस्त दारगस्त कत्थइ सुइं वा खुइंवा पउत्तिंवा अलभमाणे जेणेव सए गिहे जेणेव धन्ने सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) शोध करवाभां ज्यारे तेने देवदत्तने उवा वगेरेने अवाज तेभज छीं वगेरेनी अव्यक्त ध्वनी संलणाध नहि अने भाणकने कोध पछु रीते पत्तो भेजवी शक्यो नहि त्थारे ते जथां तेहुं घर हुतुं अने धन्य सार्थवाहु हुता त्यां आउये (उवागच्छित्ता धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी)

पुण पासण्याए?, तएणं सा भद्दी देवदिन्नं दारयं सव्वालंकारविभू-
 सियं पंथगस्स हत्थे दलाइ जाव पायवडिए तं मम निवेदेइ, तं इच्छा
 मिणं देवाणुप्पिया! देवदिन्नदारगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं
 काउं। तएणं ते नगरगुत्तिया धण्णेणं सत्थवाहेणं एवं वुत्ता समाणा
 सन्नद्धवद्धवम्मियकवया उप्पीलियसरासणवट्टिया जाव गहियाउयप-
 हरणा धण्णेणं सत्थवाहेणं सद्धिं रायगिहस्स नगरस्स बहूणि अइ-
 गमणाणि य जाव पवासु य मग्गणगवेसणं करेमाणा रायगिहाओ
 नगराओ पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमित्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव
 भग्गकूवए तेणेव उवागच्छंते उवागच्छित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स
 सरीरगं निप्पाणं जीवविप्पजढं पासंति, पासित्ता हो हा अहो अक-
 ज्जमितिकहु देवदिन्नं दारगं भग्गकूवाओ उत्तारंति उत्तारित्ता धण्णस्स
 सत्थवाहस्स हत्थे दलयंति ॥सू० ८॥

टीका—‘तएणं से पंथए’ इत्यादि। ततः खलु स पान्यको दासचेटकः,
 ,तओ मुहुत्तंतरस्स’ ततो मुहुत्तान्तरस्य=मुहुत्तान्तरं यत्र देवदत्तो दारकस्थापि
 नस्तत्रैवोपागच्छंति, उपागत्य देवदत्तं दारकं तस्मिन् स्थाने ‘अपासमाणे’ अपश्यन्

‘तएणं से पंथए दासचेडे’ इत्यादि ।

टीकार्थ—इसके बाद (से पंथए दासचेडे) वह पांथकदासचेटक
 (तओ) वहाँ से (मुहुत्तंतरस्स जेणेव देवदिन्ने दारए ठविए तेणेवाउवग-
 च्छइ) एक मुहुत्त के बाद जहाँ देवदत्त को बैठाया था वहाँ—गया
 (उवागच्छित्ता देवदिन्न दारगं तंसि ठाणंसि अपासमाणे रोयमाणे कंद-

तएणं से पंथए दासचेडे इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएणं) त्वां पण्ड (से पंथए दासचेडे) पांथक दास चेटक (तओ
 त्यांथी) (मुहुत्तंतरस्स जेणेव देवदिन्ने दारए ठविए तेणेव उवागच्छइ)
 ओक मुहुत्त पछी जथा देवदत्तने जेसाथे उतो त्यां गथे. (उवागच्छित्ता
 देवदिन्नं दारगं तंसि ठाणंसि अपासमाणे रोयमाणे कंदमाणे विलवमाणे

‘रोयमाणे’ रुदन=साश्रुपातमार्चनाद् कुर्वन्, ‘कंदमाणे’ क्रन्दन्=उच्चैः स्वरेण रुदन ‘विलवमाणे’ विलपन्=‘कगतो दारकः ? तमन्तरेण कीदृशोऽनर्थो भविष्यति किं करोमि ? क गच्छामि ?’ इति जल्पन् देवदत्तस्य दारकस्य सर्वतः समन्तान् मार्गणगवेषणां करोति कृत्वा देवदत्तस्य दारकस्य कुत्रापि ‘सुइं वा’ श्रुतिं वा=दारकटत्तान्तं ‘सुइं वा’ श्रुतिं वा छिक्काव्यक्तं तच्चिह्नम्, ‘पउत्तिवा’ प्रवृत्तिं वा=पकटतरवारताम् ‘अलभमाणे’ अलभमानः=अप्राप्तुवन् यत्रैव स्वकं गृहं यत्रैव धन्यः सार्थवाहस्तत्रैवोपागच्छति

माणे विलवमाणे देवदिक्कस्स दारगस्स सव्वाओ समता मग्गणगवेसणं करेइ) जाकर उसने उस स्थानपर देवदत्त दारक को नहीं देखा—तो रो पड़ा अश्रु पात करता हुआ आर्तनाद करने लग गया जोर २ से चिल्ला चिल्ला कर रोने लगा, विलाप करने लगा— देवदत्त दारक कहाँ गया—अब-उसके बिना कैसा अनर्थ होगा, क्या करूँ—कहाँ—जाऊँ—इस प्रकार बड़बड़ाने लगा—बाद में उसने उम् देवदत्त की वहां सब तरफ चारों ओर मार्गणा की गवेषणा की। (करिच्चा देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा खुइं वा पउत्ति वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे जेणेव धन्ने सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) करके जब उसे उस देवदत्त दारक की कोई श्रुति नहीं सुनाई दी, छिक्कादि अव्यक्त चिन्ह भी नहीं ज्ञात हो सका तथा स्पष्ट उसकी किसी बात का पता नहीं पड़ा तो वह जहाँ अपना घर था— और जहाँ धन्य सार्थवाह थे— वहाँ आया (उवागच्छित्ता धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी) आकर धन्य सार्थ-

देवदिन्नस्स दारगस्स सव्वाओ समता मग्गणगवेसणं करेइ) त्यां नधने ते णाणक देवदत्तने नहि जेतां रउवा भांडये. विलाप करवा लाग्यो. “णाणक देवदत्त कथां जेतो रह्यो ? ते वगर हुवे शुं थये ? शुं कुटुं ? हुवे कथां नठिं ? “आ प्रमाणो ते दुःखी थधने विचार करवा लाग्यो. तयार पछी तेरो थोभेर णाणक देवदत्तनी तपास करी अने शोध करी. (करिच्चा देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइं वा खुइं वा पउत्तिवा अलभमाणे जेणेव सए गिहे जेणेव धन्ने सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ) शोध करवाभां ज्यारे तेने देवदत्तनी रउवा वगेरेनो अवाज तेमज छीक वगेरेनी अव्यक्त ध्वनी संभणार्थ नहिं अने णाणकनो डेअ पणु सीते पत्तो भेणवी शक्यो नहिं त्यारे ते जथां तेहुं घर हुतुं अने धन्य सार्थवाह हुता त्यां आये. (उवागच्छित्ता धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी)

उपगत्य धन्यं सार्थवाहमेवमवादीत्—एवं—खलु ! स्वामिन् भद्रा सार्थवाही देवदत्तं दारकं स्नातं यावन्मम हस्ते ददाति, नतः खलु अहं देवदत्तं दारकं कट्यां गृह्णामि, गृहीत्वा यावत्—मार्गणगवेषणां करोमि, तन्न ज्ञायते खलु स्वामिन् ! देवदत्तो दारकः केनापि 'णीएवा' नीतः= मित्रादिना कुत्रापि गुप्तस्थाने प्रापितः 'अवहिण वा' अपहृतः=चोरादिना चोरितः 'अवखिचने वा' अवक्षिप्तः=अधोगर्तादिषु क्षिप्तो वा ! इति मोक्ष्य 'पायवडिण' पादपतितः=चरणलग्नः सन् धन्यस्य सार्थवाहस्य एतमर्थं 'निवेदेद्' निवेदयति=दारकवृत्तान्तं कथयति । ततः खलु स धन्यः सार्थवाहः

वाह से इस प्रकार कहा—(एवं खलु सामी भद्रा सत्यवाही देवदिन्नं दारयं ण्हायं जाव मम हस्थंसि दलयइ) हे स्वामिन् ? मेरी बात सुनिये भद्रा सार्थवाहीने देवदत्त दारक को स्नान करा कर तथा वेप भूपा से खुसजित कर मेरे हाथ में दिया— (तएण अहं देवदिन्नं दारयं कडीए गिण्हामि) मैंने उसे कटि भाग पर ले लिया (गिण्हित्ता जाव मग्गणगवेषणं करेमि तं न णज्जइ) उसे लेकर मैं कोई कुमार कुमारिका—आदिकों के साथ खेलनेमें लग—गया—खेलने के थोड़ी देर बाद ज्यों ही मैंने उस स्थान पर आकर देखा तो मुझे वहाँ देवदत्त दारक नहीं मिला है । (णं सामि ! देवदिन्ने दारए केणइ हयेवा अवहिण वा अवखिचने वा पायवडिण घण्णस्स सत्यवाहस्स एयमइ निवेदेद्) अतः हे स्वामिन् ? नहीं मालूम कि—देवदत्त दारक को वहाँ से किसी मित्रनेकहीं अन्यत्र रक्ख दिया है या किसी चोर ने उसे वहाँ से हर लिया है या किसी खड्डे

आवीने धन्यसार्थवाहने आ प्रभाषे कहुं—(एवं खलु सामी भद्रा सत्यवाही देवदिन्नं दारयं ण्हायं जाव मम हस्थंसि दलयइ) हे स्वामी ! आणक देवदत्तने नवरावीने सुंदर वस्त्रो तेभञ्ज घरेष्ठांओथी अवकृत करीने, लद्रा सार्थवाहीओ भने सोंओ उतो. (तए णं अहं देवदिन्नं दारयं कडीए गिण्हामि) भे तेने डेउमां वीधि. (गिण्हित्ता जाव मग्गणगवेषणं करेमि ण जज्जइ) आणकने लधने हुं डेट्लाक कुमार कुमारिओ वगेरेनी साथे राजभार्ज उपर गथे. त्यां आणकने ओक तरइ जेसाडीने हुं ते गथा आणक अने आणओनी साथे रमतमां ओक यित्त थइ गथे. रमतमां रमतमां थोटावणत पसार थयो त्यारे भे ओ स्थाने आणकने जेसा उथे उतो. त्यां लधने जेथुं तो भने आणक देवदत्त मळ्ये नहि. (णं सामि ! देवदिन्ने दारए केणइ हयेवा अवहिण वा अवखिचने वा पायवडिण घण्णस्स सत्यवाहस्स एयमइ निवेदेद्) तेथी हे स्वामी ! कंथ जणर पडती नथी. हे आणकने आपणा कोथं ओ भिने लधने कंथ जीओ भूझी वीधि छे डेउओ चोरे

पान्थकदासचेदकस्य एतमथ श्रुत्वा निशम्य ततः च महता पुत्रशोकन
, अभिभूय' अभिभूतः=आक्रान्तः सन् 'परसुणियत्तेव' परशुनिकृत्त इव
परशुना=कुठारेण निकृत्तः=छिन्नः 'चंपगपायनेव' चम्पकपादप इव=चम्पक
वृक्ष इव 'धमन्ति धरणीयलमि' 'यस' इति शब्देन भूमितले 'सन्वर्गेहि'
सर्वाङ्गैः 'संनिवड्ण' संनिपतितः । ततः ननु स धन्यः सार्थवाहः 'ततो
मुहुत्तंतरस्स' ततो मुहुर्तान्तरस्य=मुहूर्तस्य पश्चात् मुहूर्तान्तरमित्यर्थः
'आसत्थे' आश्वस्थः, आश्वस्तो वा=पासवेष्टः 'पच्छागयपाणे' पश्चादाग-
तप्राणः=पूर्व मृतप्राण इव भूत्वा पुनर्जागरितप्राणः सन् देवदत्तस्य दारकस्य
'सन्ववओ समन्ता' सर्वतः समन्तान्=सर्वासु दिशासु मार्गगवेषणं करोति,

आदि में डाल दिया है । इस प्रकार कह कर वह धन्य सार्थवाह के
पैरोंपर गिर पड़ा । (तएणं से धण्णे सत्थवाहे पंथयदासचेडयस्स एयमट्ठं
सोच्चा णिसम्म तेणय महया पुत्तसोयेणाभि भूये समाणे परसुणियत्ते चंपगपायवे
धसत्ति धरणीतलमि सन्वर्गेहि संनिवड्ण) इस प्रकार वह धन्य सार्थवाह
पांथक दासचेटक से इस अर्थ-ममाचार-को सुनकर और उसे हृदय में अव-
धृतकर उस महान् पुत्र शोक से युक्त होता हुआ परशु कुठार से काटे गये चंपक
वृक्षके समान समस्त अंगों से इकदम जमीन पर गिर पड़ा । (तएणं
से धण्णे सत्थवाहे ततो मुहुत्तंतरस्स आसत्थे पच्छागयपाणे
देवदिन्नस्स दारगरस्स सन्ववओ समन्ता मग्गणगवेस्सणं करेइ) बाद में
वह धन्य सार्थवाह १ मुहुत्त के बाद आश्वस्त हुआ ऐसा उस समय
मालूम हुआ कि मानों इसमें प्राण लौटकर पुनः आ गये हैं--
अपने पुत्र देवदत्त की सब तरफ चारों दिशाओं में मार्गणा गवेषणा
तेनु अपहरणु कथुं छि. अथवा णाणकने कोणं दुप्पे आअ वगेरेभां हे'की दीधि छि.
आ रीते कहेतां ते धन्यसार्थवाहना पगे पडयो. (तए णं से धण्णे सत्थवाहे
पंथयदासचेडयस्स एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म तेणय महया पुत्तसोयेणाभि
भूये समाणे परसुणियत्तेव चंपगपायवे धसत्ति धरणीतलमि सन्वर्गेहि
संनिवड्ण) आ प्रमाणे धन्य सार्थवाहे पांथकदास चेटकना मोढेथी गधी विगत
सांलणीने तेने जराजर हृदयभां धारणुक्कीने महान् पुत्रशोकथी पीडतो कुडा-
दीथी क्षपेला य'पाना वृक्षणी जेम ते पृथ्वी उपर पडी गयो, (त एणं से धण्णे
सत्थवाहे ततो मुहुत्तंतरस्स आसत्थे पच्छागयपाणे देवदिन्नस्स दार
गस्स सन्ववओ समन्ता मग्गणगवेस्सणं करेइ) त्थार आह ओक सुहुत्तं
पडी धन्य सार्थवाह लानभां आव्यो. ते वणते नल्ले इरी तेज्जोभां प्राणुतुं स'य-
'युं डोय तेम वायुं. जिलो यधने ते पोताना पुत्र देवदत्तनी जेमेर तपास

દેવદત્તસ્ય દારકમ્ય કુત્રાપિ યુતિ વા ક્ષુતિ વા પ્રવૃત્તિ વા અલભમાનો
 યત્રૈવ મ્વકં ગૃહં તત્રૈવોપાગચ્છતિ, ઉપાગત્ય 'મહત્થં' મહાર્થે=મહુમૂલ્યં
 'પાહુહં' પ્રાપ્તમ્=ઉપહારં ગૃહ્ણતિ, ગૃહ્ણીત્વા યત્રૈવ 'નગરગુણિયા' નગર
 ગોપ્ત્રકાઃ=નગરરક્ષકાઃ કોટપાલા इत्यर्थः. તત્રૈવોપાગચ્છતિ, ઉપાગત્ય તન્મ-
 હાર્થે પ્રાપ્તમ્ 'ઉવણેહ' ઉપનયતિ તેષાં સમીપે સ્થાપયતિ, ઉપનીય એવમ-
 વાદીત્વં એવં સ્વલુ દેવાનુષ્ણિયાઃ ! મમ પુત્રો મદ્રાયા માર્યાયા આત્મજો
 દેવદત્તો નામ દારકઃ 'હદ્દે હદ્દઃ=અભિલપિતઃ યાવત્ 'ઉંચરપુષ્કંપિવ'
 દુલ્લહે સવળયાણ કિમંગપુણપાસળયાણ' લુદુમ્બરપુષ્પમિત્ર દુર્લભઃ શ્રવ-

કારને મેલગ ગયા-પરન્તુ (દેવદિન્નસ્સ દારગસ્સ કત્થઈ સુહં વા સુહં વા પવૃત્તિ વા
 અલભમાણે જેણેવ સળ મિદ્દે તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) દેવદત્તદારક કી ઉસે
 કહીં પર મી કુછ મી સ્વચર નહીં મિલી, છિકા આદિ ચિદ્દ મી
 ઉસકા ઉસે કહીં દિસલ્લાઈ નહીં દિયા--ઘ્રોર ન ઉસકી કિસી વાત
 કા હી ઠીક ૨ ઉસે પતા પડા । ઇસ તરહ નિરાશ હોકર વહ અપને
 ઘર પર આ ગયા । (ઉવાગચ્છિત્તા મહત્થં પાહુહં ગેહ્હઈ, ગેહ્હિત્તા જેણેવ
 નગરગુણિયા, તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) ઘર આકર ઉસને વહુમૂલ્ય પ્રાપ્ત લિયા
 ઓર લેકર જહાં નગર કે રક્ષક કોટપાલ થે વહાં ગયા-(ઉવાગચ્છિત્તા
 તં મહત્થં પાહુહં ઉવણેહ, ઉવણિત્તા એવં વયાસી)-જાકર ઉસને વહ
 વહુમૂલ્ય નજરાના ઉન્હે' ખેટમેં દિયા--દેકર ફિર ઇસ પ્રકાર ચોલા
 (એવં સ્વલુ દેવાનુષ્ણિયા ! મમ પુત્રો મદ્રાયા માર્યાયા અત્તણ-દેવદિન્ને
 નામં દારણ હદ્દે જાવ ઉંચરપુષ્કંપિવ દુલ્લહે મવળયાણ કિમંગ પુણ

કરવા લાગ્યે. પણ (દેવદિન્નસ્સ દારગસ્સ કત્થઈ સુહં વા સુહં વા પવૃત્તિ વા
 અલભમાણે જેણેવ સળ મિદ્દે તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) આજક દેવદત્ત તેને ક્યાંય
 દેખાયો નહિ. આજકના છીંક વગેરેના અત્યકત ચિદ્દો પણ કોઇપણ સ્થાને સંભળાયા
 નહિ. આ રીતે ધન્ય સાર્થવાહને આજક દેવદત્ત વિશેની થોડી પણ માહિતી મળી
 થકી નહિ. અંતે નિરાશ થઈને તે પોતાને ઘેર પાછા ફર્યે. (ઉવાગચ્છિત્તા 'મહત્થં'
 પાહુહં' ગેહ્હઈ, ગેહ્હિત્તા જેણેવ નગર ગુણાયા, તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) ઘેર આવીને
 તેણે ખહું દ્રવ્ય લીધું અને નગરરક્ષક કોટવાળની પાલે ગયે. (ઉવાગચ્છિત્તા તં
 મહત્થં પાહુહં ઉવણેહ, ઉવણિત્તા એવં વયાસી) જઈને તેણે ખહુંકિંમતી
 નજરાણાં કોટવાળને લેટમાં આપ્યાં અને કહ્યું--(એવં સ્વલુ દેવાનુષ્ણિયા ! મમ
 પુત્ર મદ્રાયા મર્યાયા અત્તણ દેવદિન્ને નામ દારણ હદ્દે જાવ ઉંચરપુષ્કં
 પિવ દુલ્લહે સવળયાણ કિમંગપુણપાસળયાણ ?) હે દેવાનુષ્ણિયા ! સંભળો-

गतया किम्पु पुनर्दर्शनतया=अयमुदुम्बरपुष्पवत् श्रवणमाचरतया दुर्लभः
किं पुनर्दर्शनेन. तस्य नाम श्रवणमपि दुर्लभं वर्तते दर्शनस्य का कथे
ति भावः । ततः खलु=एकदा सा भद्रा भार्या देवदत्तं दारकं स्नातं
सर्वालङ्कारविभूषितं पान्थकस्य हस्ते ददाति यावत् पादपतितस्तन्मम निवे-
दयति. तत्=तस्मात् कारणात् इच्छामि खलु हे देवानुमियाः देवदत्तस्य
दारकस्य सर्वतः समन्तान्मार्गणगवेपणं कर्तुम् । ततः खलु ते नगर-

पासण्याए) हे देवानुमियों ! सुनो ! भद्रा भार्या की कुक्षि से उत्पन्न
हुआ देवदत्त नामक मेरा एक पुत्र है जो विशेष इष्ट यावत् उदुंबर
पुष्प के समान सुनने के लिये भी मुझे दुर्लभ था । उसके देखने
को तो बात ही क्या है (तएणं सा भद्रा देवदिन्नं दारयं ण्हायं सव्वा-
लंकारविभूसियं पंथगस्स हत्थे दलाइ) उस देवदत्त दारक को भद्रा भार्याने
स्नान करा कर और समस्त अलंकारों से विभूषित कर पांथक के
हाथमें दिया । (जाव पायपडिए तं मम निवेदेइ) वह उसे गोद में
लेकर क्रीडा के लिये राजमार्ग ले गया साथ में और भी कई बालक
बालिकाये थीं--उसने वहाँ जाकर उसे एक तरफ एकान्त स्थान में
रख दिया और स्वयं उन बालक बालिकाओं के साथ खेलने लग गया ।
थोड़ा समय बाद जब वह वहाँ आया तो क्या देखता है कि वहाँ देवदत्त
नहीं हैं आकर उसने मेरे पैरों में पडकर मुझसे यह समाचार
निवेदित किया है । अतः (इच्छामि णं देवानुप्पिया ! देवदिन्नदारगस्स
सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं काउ) अतः मैं चाहता हूँ कि हे देवा

भारी पत्नी भद्राना उदरथी जन्मेवो देवदत्त नामे भादे पुत्र इतो. जे भने अहु ज
छु इतो. तेने जेवानी बात तो हर रही पछु उहुं भरना पुष्पनी जेभ तेनुं नाम श्रवण
पछु असंभव इतुं. (तएणं सा भद्रा देवदिन्नं दारयं ण्हायं सव्वालंकार-
विभूसियं पंथगस्स हत्थे दलाइ) देवदत्तने भद्राभार्याजे नवअवीने अधां धरेछां-
ओथी सुसज्ज क्यो अने पांथकने सोथ्यो. (जाव पायपडिए, तं मम निवेदेइ)
आणकने ते डेउमां लधने राजमार्ग उपर रमाउवा लई गयो. तेनी साथे धछां
आणके अने आणाओ इती. त्यां जईने तेछु आणक देवदत्तने ओक तरइ भेसाडी
दीधो. अने जाते ते जीव आणकेनी साथे रमतमां पडी गयो. थोउ वपत पडी
ज्यारे ते त्यां आओ त्यारे आणक देवदत्त तेने जउयो नहि. भारी पासे आवीने
तेछु आ अधी बात करी छे. (इच्छामि णं देवानुप्पिया ! देवदिन्न
दारगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं काउ) हुं आहुं छे डे आणक देव-

देवदत्तस्य दारकस्य कुत्रापि श्रुतिं वा क्षुतिं वा प्रवृत्तिं वा अलभमानो यत्रैव स्वयं गृहं तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य 'महत्थं' महार्थं=बहुमूल्यं 'पाहुडं' प्राप्तम्=उपहारं गृह्णाति, गृहीत्वा यत्रैव 'नगरगुप्तिया' नगर गोप्तृकाः=नगररक्षकाः कोट्टपाला इत्यर्थः तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य तन्महार्थं प्राप्तम् 'उवणेइ' उपनयति तेषां समीपे स्थापयति, उपनीय एवमद्यादीत् एवं खलु देवानुप्पियाः ! मम पुत्रो भद्राया भार्याया आत्मजो देवदत्तो नाम दारकः 'इहे इष्टः=अभिलषितः यावत् 'उंवरपुष्कंपिव' दुल्लहे सवणयाए किमंगपुणपासणयाए' उदुम्बरपुष्पमिव दुर्लभः श्रव-

करने में लग गया—परन्तु (देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइ वा खुं वा पउत्तिं वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ) देवदत्तदारक की उसे कहीं पर भी कुछ भी खबर नहीं मिली, छिक्का आदि चिह्न भी उसका उसे कहीं दिखलाई नहीं दिया—और न उसकी किसी बात का ही ठीक २ उसे पता पड़ा। इस तरह निराश होकर वह अपने घर पर आ गया। (उवागच्छत्ता महत्थ पाहुडं गेहइ, गेहत्ता जेणेव नगरगुप्तिया, तेणेव उवागच्छइ) घर आकर उसने बहुमूल्य प्राप्त लिया और लेकर जहाँ नगर के रक्षक कोट्टपाल थे वहाँ गया—(उवागच्छत्ता तं महत्थं पाहुडं उवणेइ, उवणित्ता एवं वयासी)—जाकर उसने वह बहुमूल्य नजराना उन्हें भेंटमें दिया—देकर फिर इस प्रकार बोला (एवं खलु देवानुप्पिया ! मम पुत्तो भद्राए भारियाए अत्तए—देवदिन्ने नामं दारए इहे जाव उंवरपुष्कंपिव दुल्लहे सवणयाए किमंग पुण

करवा लाये। पण (देवदिन्नस्स दारगस्स कत्थइ सुइ वा खुइ वा पउत्तिं वा अलभमाणे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ) आणक देवदत्त तेने कथांय हेभाये नहि, आणकना छींके वगेरेना अव्यक्त थिद्रो पणु कोष्ठपणु स्थाने संभणाय नहि, आ दाते धन्य सार्थवाहुने आणक देवदत्त विशेषी थोडी पणु भाडिती भणी थकी नहि, अत्ते निराश यधने ते पोटाने घेर पाछे इथीं, (उवागच्छत्ता महत्थं पाहुडं गेहइ, गेहत्ता जेणेव नगर गुप्ताया, तेणेव उवागच्छइ) घेर आवीने तेखे अहुं द्रव्य वीधुं अने नगररक्षक कोट्टवाणनी पावे गये। (उवागच्छत्ता तं महत्थं पाहुडं उवणेइ, उवणित्ता एवं वयासी) यधने तेखे अहुंकिंमती नज्जालां कोट्टवाणने सेटभां आभ्यां अने कल्लु—(एवं खलु देवानुप्पिया ! मम पुत्तं भद्राए भरियाए अत्तए देवदिन्ने नाम दारए इहे जाव उंवरपुष्कंपिव दुल्लहे सवणयाए किमंगपुणपासणयाए ?) छे देवानुप्पिया ! संभणो-

यथेव भग्नकूपस्थवापागच्छन्ति, उपागत्य देवदत्तस्य दारकस्य शरीरकं निष्प्राणं निश्चेष्टं जीवविप्रत्यक्तं पश्यति. दृष्ट्वा 'हा ! हा ! अहो ! अकज्ज' हा ! हा ! अहो अकार्यवृत्तिं मज्जातम् ? इति कृत्वा इति प्रोच्य देवदत्तं दारकं भग्नकूपात् 'उत्तारेति' उत्तारयन्ति=वर्द्धिर्निष्काशयन्ति उत्तार्य धन्यस्य सार्थवाहस्य हस्ते ददति. ॥ सू. ८ ॥

मूलम्—तए णं ते नगरगुत्तिया विजयस्स तक्करस्स पयमग्गमणुगच्छमाणा जेणेव मालुयाकच्छए तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता मालुयाकच्छयं अणुपविसंति अणुपविसित्ता विजयं तक्करं ससक्खं सहोढं सगेवेज्जं जीवग्गाहं गिण्हति गिण्हित्ता अट्ठिमुट्ठिजाणुकोप्परपहारसंभग्गमहियगत्तं करेति, करित्ता अवउडग वंधणं करेति कारित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स आभरणं गेण्हति गेण्ह-

(पडिनिक्खमित्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव भग्नकूपे तेणेव उवागच्छइ) निकल कर वे फिर वहाँ भागे जहाँ वह जीर्ण उद्यान और वह भग्नकूप था । उवागच्छित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स सरीरकं निष्प्राणं निश्चेष्टं जीव विप्पजढं पासंति पासित्ता हा हा अहो अकज्जमिति कट्टुदेवदिन्नं दारगं भग्नकूपाओ उत्तारेति उत्तारित्ता धणस्स सत्थवाहस्स हत्थे दलयंति) आकर के उन लोगोंने देवदत्त दारक के शरीरको निष्प्राण निश्चेष्ट और जीव से विप्रमुक्त देखा देखकर "हाय हाय यह महान् अनर्थ हुआ" इस प्रकार कहकर देवदत्त दारक को उस भग्नकूप से बाहर निकाला । बाहर निकाल कर फिर उसे धन्य सार्थवाह के हाथ में सौंप दिया । सूत्र ॥ ८ ॥

शेष कस्ता राजगृह नगरनी गडार नीकल्या (पडिनिक्खमित्ता जेणेव जिण्णुज्जाणे जेणेव भग्नकूपे तेणेव उवागच्छइ) गडार नीकलीने तेथो कस्ता कस्ता लुण्ठ उद्यान तेभज्ज भज्ज कूपाणी पासे आव्या. (उवागच्छित्ता देवदिन्नस्स दारगस्स सरीरकं निष्प्राणं निश्चेष्टं जीवविप्पजढं पासंति पासित्ता हा हा अहो अकज्जमिति कट्टु देवदिन्नं दारगं भग्नकूपाओ उत्तारेति उत्तारित्ता धणस्स सत्थवाहस्स हत्थे दलयंति) त्यां तेथोथे गाणक देवदत्तना शरीरने निष्प्राण, निष्प्राण अने निश्चेष्ट जेथुं अने जेथीने "अरे ! अरे !! गडुं जोडुं थयुं" आ प्रभाणु कडीने तेथोथे गाणक देवदत्तना शरीरने भज्ज कूपाभांथी गडार कडयुं. गडार कडीने धन्य सार्थवाहने ते शरीर सोंपी दीधुं. ॥ सूत्र ॥ ८ ॥

गोप्तृका धन्येन सार्धवाहेन एवमुक्ताः सन्तः 'सन्नद्धवद्धवर्मियकवचा' संनद्धवद्धवर्मितकवचाः संनद्धः=कृतमन्नाह्लाः=चन्धनोपयोगिसाधनेः सज्जभूताः, वद्धाकशाचन्धनेन, वर्मिताः=शरीरे परिभूताः कवचा यैस्ते तथा, 'उप्लीलियसरासनपट्टिया' उत्पीडितशरासनपट्टिकाः—'उप्लीलिय' उत्पीडिताः=गुणारोपणेन नमिताः 'सरासनपट्टिया' शरासनपट्टिकाः=धनुः पट्टिका यैस्ते तथा, यावत् 'गहियाउपहरणा' गृहीतायुधप्रहरणाः 'गहिय' गृहीतानि 'भाउह' आयुधानि=धनुरादीनि 'पहरणा' पहरणानि=असिकुन्तादीनि यैस्ते तथा, एवम्भूताः सन्तो नगरगोप्तृकाः धन्येन सार्धवाहेन सार्द्धं राजगृहस्य नगरस्य चहूनि 'अइगमणाणि य' अनिगमनानि च प्रवेशमार्गाः, इत्यादि—स्थानानि तेषु यावत् प्रवासु च मार्गगवेपणं कुर्वन्तो राजगृहान्नगरात्प्रतिनिष्क्रामात्, प्रतिनिष्क्रम्य यथैव जीर्णोद्यानं

नुप्रियो ! आप लोक उस देवदत्त दारक कां सब आर चार। दशार्थों में मार्गणकरें गवेपण करें। (तपणं से नगरगुप्तिया धण्णेण सत्थवाहेण एवं वुत्ता समाणा सन्नद्धवद्धवर्मियकवचा उप्लीलियसरासनवट्टिया जाव गहियाउपहरणा धन्नेणं सत्थवाहेणं मद्धिं रायगिहस्स वट्टणि अइगमणाणि य जाव पवासु य मग्गणगवेसणं करेमाणा रायगिहाओ नगराओ पड्डिणिवत्तमंति) धन्य सार्धवाह से इस प्रकार कहे वे नगर रक्षक जन बंधनोपयोगी साधनों से सज्ज भूत हुए कशाबंधन से बद्ध हुए और शरीर पर कवचों को पहिन २ कर अपने २ धनुषों पर प्रत्यंचा आरोहित कर यावत् आयुध और पहरणों को लेले कर धन्यसार्धवाह के साथ राजगृह नगर के गमनागमनों के स्थानों की यावत् प्रवा (पियाउ) आदि स्थलोंकी मार्गणा गवेपणा करते हुए राजगृहनगर से निकले।

इत्तनी तमे जथा भणीने थेमेर तथास करे। (तपणं मे नगरगुप्तिया धण्णेणं सत्थवाहेण एवं वुत्ता समाणा सन्नद्धवद्धवर्मियकवचा उप्लीलियसरासनवट्टिया जाव गहियाउपहरणा धन्नेणं सत्थवाहेणं मद्धिं रायगिहस्स वट्टणि अइगमणाणि य जाव पवासु य मग्गणगवेसणं करेमाणा रायगिहाओ नगराओ पड्डिणिवत्तमंति) धन्य-सार्धवाहनी आरीते वात सांलणीने ते जथा नगर रक्षकोंके और वगेरे शुनेगारेने आंधवा थेअ सधनो साथे दीध, तेमज्ज डोरशओ आंध्या अने शरीरे कवओ पहिरीने पोतपोताना धनुओ उपर प्रत्यंचा बद्धावी आ प्रभाओ तेओ जथा आयुधा तेमज्ज पहरणो लधने धन्य सार्धवाहनी साथे राजगृह नगरना अपर जवरना स्थानोनी तेमज्ज परओ वगेरे स्थणोभां

ચરણવિહ 'અણુગચ્છમાણા' અણુગચ્છન્તો યત્રેવ માલુયાકક્ષકમ્તત્રૈયોપાગચ્છન્ત, ઉપાગત્ય માલુયાકક્ષકમનૂપ્રવિશન્તિ, અણુપ્રવિશ્ય વિજયં તત્કરં 'સસવલ્લં' સસાક્ષ્ય સસાક્ષિકમિત્યર્થઃ 'સઠોઢં' સઠોઢં=સમોષં ચૌર્યાપહનવસ્તુમહિતં દેવદત્તદાર-કાઠ્ઠાણ્યુક્તમિત્યર્થઃ, 'સમેવેજ્ઞં' સમેવેજ્ઞં=ગ્રીવાબન્ધનસહિતં ગલવન્ધન-વદ્ધં ગલે રઙ્ગું વદ્ધેત્યર્થઃ, તં 'જીવગ્ગાહં' જીવગ્ગાહં=જીવન્તં 'ગિહ્નંતિ' ગૃહ્ણન્તિ' ગૃહીત્વા 'અદ્દિમુદ્દિજાણુકોપ્પરપહાર સમગ્ગમહિયગતં' અસ્થિમુદ્દિજાણુકૂર્પરપહાર સંમગ્ગ મયિતગાત્રમ્-અસ્થિ ચ મુદ્દિશ્ચ જાણુની ચ કૂર્પરાં ચ-અસ્થિમુદ્દિજાણુકૂર્પરાઃ, તેપુ તૈર્વાં યે પ્રહારાન્તૈઃ 'સમગ્ગ' મમ્મમ્ગનં=ચૂર્ણિતં 'મહિય' મયિતં=ઝર્જરિતમ્ 'ગત્તં' ગાત્ર=શરીરં યસ્ય સ તં=મગ્ગસકલશરીરમન્ધિસ્થાનં કુર્વન્તિ. કૃત્વા 'અવડ્ઢગધંધણં' અવકોટકવન્ધનમ્-અવકોટકેન વાહોઃ શિરસશ્ચ પશ્ચાદ્ધાગા-

તત્કરસ્સ પયમગ્ગમણુગચ્છમાણા જેનેવ માલુયાકચ્છણ તેણેવ ઉવાગચ્છન્તિ) વિજયતસ્કર કે પાદ ચિદ્ધાં કા અણુમરણ કરતે હુણ વહાં પહુચે જહાં વહ (માલુયા કાચ્છથા ઉવાગચ્છિતા માલુયાકચ્છયં અણુપવિસંતિ) પહુચહર વે ઉસમેં ઘુસે (અણુપવિસિત્તા વિજયં તત્કરં સસવલ્લં સઠોઢં સમેવેજ્ઞં જીવગ્ગાહં ગિહ્નંતિ) ઘુસકર ઉન્ઠોને ઉસકે ગલેમેં રમ્સી વાંધકર જીતા દી મસાક્ષ્ય દેવદત્ત દારક કે અલંકાર રૂપ સાક્ષ્ય સહિત પકડ લિયા । ગિહ્નિત્તા અદ્દિમુદ્દિ જાણુકોપ્પરપહારમંમગ્ગમહિયગત કરેંતિ) પકડકર ઉન્ઠોને ઉસકી હદ્ધિંયોં મેં મુઠિયોં મેં. ઘુટનોં મેં, કુહનિયો મેં. સૂવ પ્રહાર કિયે--ઇસસે ઉસકા શરીર કા ચૂર ૨ હો ગયા--ઝર્જરિત હો ગયા । તાત્પર્ય યહ કિ ઉસે ઇતની વુરી તરહ ઉન લોગોંને પીટા કિ જિસસે ઉસકે શરીર કી સમગ્ગ સંધિયાં મગ્ગ હો ગઈ । (કરિત્તા અવડ્ઢગધંધણં, કરેંતિ

તત્કરસ્સ પયમગ્ગમણુગચ્છમાણા જેનેવ માલુયાકચ્છણ તેણેવ ઉવાગચ્છન્તિ) વિજય નામના ચોરનાં પગના ચિહ્નોને અણુસરતાં માલુયા કક્ષમાં પહોંચ્યા. (ઉવાગચ્છિતા માલુયાકચ્છયં અણુપવિસંતિ અને માલુયા કક્ષમાં પેહા. અણુપવિસિત્તા વિજયં તત્કરં સસવલ્લં સઠોઢં સમેવેજ્ઞં જીવગ્ગાહં ગિહ્નંતિ) પેસીને તેઓએ વિજય નામના ચોરને સસાક્ષ્ય એટલે બાળક દેવ-દત્તના ધરેણુંઓની સાથે જ ગળામાં ઘેરી બાંધીને છવતો જ પકડી લીધા. (ગિહ્નિત્તા અદ્દિમુદ્દિજાણુકોપ્પરપહારં સમગ્ગમહિયગતં કરેંતિ) પકડીને તેઓએ ચોરના હાડકાં, મૂઠીઓ, ઢીંચણો અને કાળીઓ ઉપર ખૂબ પ્રહારો કર્યાં. એથી તેનું શરીર શિથિલ અને બૂકા જેવું થઈ ગયું. મતલબ એ છે તેને એવો અખત માર પડ્યો કે એથી તેના શરીરના બધા સાંધાઓ તૂટી ગયા.

ता विजयस्त तकरस्त गीवाए वंधंति वंधित्ता मालुया कच्छगाओ
 पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमित्ता जेणेव रायगिहे नयरे तेणंवा उवा
 गच्छंति उवागच्छित्ता रायगिहं नगरं अणुपविसंति अणुपविसित्ता
 रायगिहे नयरे सिंघाडगतिवचउक्कचच्चरमहापहपहेसु कसप्पहारे य
 लयप्पहारे य छिवापहारे य निवाएमाणा २ छारं च धूलिं च कय-
 वरं च उवरिं पक्किरमाणा २ महया २ सदेणं उग्घोसेमाणा एवं
 वयंति,—एसणं देवाणुप्पिया ! विजए नामं तकरे जाव गिद्धे
 विव आमिसभक्खी वालघायए वालमारए, तं नो खलु देवा
 णुप्पिया ! एयस्स केइ राया वा रायपुत्ते वा रायमच्च वा अवरज्झइ
 एत्थट्ठे अप्पणो सयाइं कम्माइं अवरज्झंति तिकट्ठु जेणामेव चार
 गसाला तेणामेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता हडिवंधणं करेति
 करित्ता भत्तपाणनेरोहं करेति, करित्ता तिसंअं कसप्पहारे य जाव
 निवाएमाणा २ विहरंति । तएणं से धण्णे सत्थवाहे मित्तनाइ
 नियगसयणसंबंधिप रयणेणं सद्धि रोयमाणे जाव विलवमाणे
 देवदिन्नस्त दारगस्त सरीरस्त महया इट्ठिसक्कारसमुदएणं नीह-
 रणं करेइ, करित्ता बहूइं लोइयाइं मयगकिच्चाइं करेइ करित्ता
 केणइ कालंतरेणं अवगयसोए जाए यावि होत्था ॥ सू. ८ ॥

टीका—‘तएणं ते’ इत्यादि । ततः खलु तदनु=सज्जीभूतानन्तरं जिगमिषवो
 ते नगरगोप्तृणाः=नगररक्षकाः विजयस्य तस्करस्य ‘ययमगं’ पदमार्गं=पद-यासम्

नए णं ते नगर गुत्तिया इत्यादि ॥

ट्ठ कर्थ—(नएणं) इसके बाद (ते नगर गुत्तिया) वे नगर रक्षक (विजयस्य)

तएणं ते नगरगुत्तिया इत्यादि !

टीका—(नएणं) त्वां आह (ते नगरगुत्तिया) नगर रक्षक (विजयस्य)

चरणविह 'अणुगच्छमाणा' अनुगच्छन्तो यत्रैव मालुकाकक्षकस्तत्रैवोपागच्छन्ति,
उपागत्य मालुकाकक्षकमनुप्रविशन्ति, अनुप्रविश्य विजयं तत्करं 'ससक्खं' ससाक्ष्यं
ससाक्षिकमित्यर्थः 'सदोढं' सदोढं=समोपं चौर्यापहनवस्तुमदितं देवदत्तदार-
कादङ्कारयुक्तमित्यर्थः, 'सगेवेज्जं' सग्रेवेयकं=ग्रीवावन्धनसहितं गलवन्धन-
बद्धं गले रज्जुं बद्धेत्यर्थः, तं 'जीवगाहं' जीवगाहं=जीवन्तं 'गिहंति' गृह्णन्ति'
गृहीत्वा 'अट्टिमुट्ठिजाणुकोप्परपहारसभगमहियगत्तं' अस्थिमुट्ठिजानुकूर्पप्रहार
संभग्न मयितगात्रम् अस्थि च मुट्ठिश्च जानुनी च कूर्परी च-अस्थिमुट्ठिजानुकूर्पराः,
तेषु तैर्वा ये प्रहारास्तैः 'सभग' सम्भग्नं=चूर्णितं 'महिय' मयितं=जर्जरितम्
'गत्तं' गात्र=शरीरं यस्य स तं=भग्नसकलशरीरमन्विस्थानं कुर्वन्ति. कृत्वा
'अवउड्ढगंधणं' अवकोटकवन्धनम्-अवकोटकेन बाहोः शिरसश्च पश्चाद्वागा-

तत्करस्स पयमग्गमणुगच्छमाणा जेणेव मालुयाकच्छण तेणेव उवागच्छन्ति)
विजयतस्कर के पाद चिह्नों का अनुसरण करते हुए वहां पहुँचे जहाँ
वह (मालुका काच्छया उवागच्छिता मालुयाकच्छयं अणुपविसन्ति)
पहुँचकर वे उसमें घुसे (अणुपविसित्ता विजयं तत्करं ससक्खं सदोढं
सगेवेज्जं जीवगाहं गिहंति) घुसकर उन्होंने उसके गलेमें रस्सी बांधकर जीता
ही मसाक्ष्य देवदत्त दारक के अलंकार रूप साक्ष्य सहित पकड़ लिया । गिह्णित्ता
अट्टिमुट्ठि जाणुकोप्परपहारसंभगमहियगत्तं करेति) पकड़कर उन्होंने उसकी
हड्डियों में मुठियों में, घुटनों में, कुहनिधो में, खूब प्रहार किये--इससे
उसका शरीर का चूर २ हो गया--जर्जरित हो गया । तात्पर्य यह
कि उसे इतनी दुरी तरह उन लोगोंने पीटा कि जिससे उसके शरीर
की समस्त संधियां भग्न हो गई । (करित्ता अवउड्ढगंधणं, करेति

तत्करस्स पयमग्गमणुगच्छमाणा जेणेव मालुयाकच्छण तेणेव उवागच्छन्ति)
विजय नाभना योरनां पगना चिह्नेने अनुसरतां मालुका कक्षमां पडोन्था.
(उवागच्छिता मालुयाकच्छयं अणुपविसन्ति) अने मालुका कक्षमां पेडा.
अणुपविसित्ता विजयं तत्करं ससक्खं सदोढं सगेवेज्जं जीवगाहं
गिहंति) पेसीने तेओओ विजय नाभना योरने ससाक्ष्य ओटले आणक देव-
दत्तना धरेणुंओनी साथे ७ गणाभां दोरी आंधीने एवतो ७ पडडी दीधा.
(गिह्णित्ता अट्टिमुट्ठिजाणुकोप्परपहारं संभगमहियगत्तं करेति)
पडडीने तेओओ योरना छाड्डीं, भूडीओ, दींओओ अने डोलीओ उपर पूष प्रहारे
क्यां. ओथी तेनु शरीर शिथिल अने भूडा नेपुं थछ गयुं. भतलण ओ छ तेने
ओवो सणत मार पडयो ३ नेथी तेना शरीरना गधा सांधाओ तूटी गया.

નગનપૂર્વકે વચ્ચન ગમ્ય સ તં કુર્વન્તિ. કૃત્વા દ્વયત્તમ્ય દારકમ્યામરણં
 મૃદ્ધન્તિ, મૃદ્ધીત્વા વિજસ્ય તસ્કરમ્ય ગ્રીવાયાં વચ્ચન્તિ વચ્ચા માલુકા ક્ષકાત્
 પ્રતિનિષ્કામન્તિ, પ્રતિનિષ્કમ્ય યથૈવ રાજમૃદ્ધં નગરં તથૈવાગચ્છન્ત. ઉપા-
 ગત્ય રાજમૃદ્ધં નગરમનુપવિશન્તિ. અનુપવિશ્ય રાજમૃદ્ધં નગરે શ્રુદ્ધાટ્કૃત્કિત્વુષ્ક-
 ચત્વરમહાપથપથેષુ 'કયવ'હારે ય કશાપહારાંશ્ચ 'ચાલુક' इति મોષાપામ,
 'લય'પહારે ય' લતાપહારાંશ્ચ યદિપ્રહારાન્ 'છિવાપહારે ય' છિવાપહારાંશ્ચ=
 ચિક્ષણકશાપહારાં શ્ચ 'નિવાપમાણા' નિવાપન્તઃ=પુનઃ પુનઃ કુર્વન્તઃ છારં 'ધારં'=
 ભસ્મ ધૂલિ=રજઃ, કયવરં, કચવરં=તુળધૂલ્યાદિપુઙ્ગં ચ 'ઉવરિં' ઉપરિ
 તસ્યોપરિ 'પક્ષિરમાણા ૨' પ્રકીર્યમાણાઃ ૨=પુનઃ પુનઃ ઉત્તિક્ષપન્તો મહતા
 મહતા શબ્દેન ઉદ્ધોષયન્ત એવં વદન્તિ એવં ચલુ દેવાનુપ્રિયાઃ !

કરિત્તા દેવદિન્નમ્સ આમરણં ગેહ્લંતિ) માર માર કર ફિર ઉન્હોને ઉસકે
 દોનોં હાથોં કો કમર કે પીછે કરકે વાંધ લિયા ઓર વાંધ કર ઉસકે
 પાસ સે દેવદત દારક કે આમરણોં કો લે લિયા । (ગેહ્લિત્તા ત્રિજયમ્
 તક્કરમ્સ ગીવાપ વંધંતિ વંધિત્તા માલુયા કચ્છગાઓ નિવલ્લમંતિ) લેપર
 ફિર ઉન્હોને ઉપ વિજય ચોર કો ગ્રીવામેં વાંધા ઓર વાંધકર ફિર વે
 ઉસ માલુયાકચ્છક સે વાહર નિકલે । (પદિનિલ્લમિત્તા જેગે ૧ રાજ ગિહે નયરે
 તેજેવ ઉવાગચ્છંતિ) વાહર નિરુલ કર ફિર-વે સવકે સવ રાજમૃદ્ધ નગાકી ઓર
 ચલ દિયે (ઉવાગચ્છિત્તા રાયગિહે નયરં અણુપવિસંતિ) ચલકર વે રાજમૃદ્ધ
 નગર આવે ૮ અણુપવિસિત્તા રાયગિહે નયરે સિંધાડગતિયચ્ચકચ્ચરમહા
 પહપહેસુ કસપ્પહારે ય લયપ્પહારે છિવાપહારે ય નિવાપમાણા ૨ છારં ચ
 ધૂલિં ચ કયવરં ચ ઉવરિં પક્ષિરમાણા ૨ મહયાર સોણં ઉગ્ધોસેમાણા

(કરિત્તા અવડગવંધણં કરેંતિ, કરિત્તા દેવદિન્નમ્સ દારગસ્સ આમ
 રણં ગેહ્લંતિ) આમ ભારી પીટીને તેના બંને હાથ પાછળ બાંધ્યા અને
 તેની પાસેથી બાળક દેવદત્તનાં ઘરેણાંઓ પોતાના કબજે કર્યા. (ગેહ્લિત્તા ત્રિજયમ્
 તક્કરમ્સ ગીવાપ વંધંતિ વંધિત્તા માલુયાકચ્છગાઓ પદિનિલ્લમંતિ)
 કબજે કરીને તેઓએ ચોર વિલ્લયને બીજી વખત ગળામાં બાંધ્યા અને પછી તેઓ
 માલુકા કચ્છથી બહાર નીકળ્યા. (પદિનિલ્લમિત્તા જેગેવ રાયગિહે નયરે તેજેવ
 ઉવાગચ્છંતિ) ત્યાંથી તેઓ રાજમૃદ્ધ નગર તરફ ગયા (ઉવાગચ્છિત્તા રાયગિહે
 નયરં અણુપવિસંતિ) અને રાજમૃદ્ધ નગરમાં પ્રવેશ્યા (મણુપવિસિત્તા રાયગિહે
 નયરે સિંધાડગતિયચ્ચકચ્ચરમહાપહપહેસુ કસપ્પહારેય લયપ્પહારે
 છિવાપહારે ય નિવાપમાણા ૨ છારં ચ વલિં ચ કયવરં ચ ઉવરિં પક્ષિરમાણા
 ૨ મહયાર સોણં ઉગ્ધોસેમાણા એવં વયંતિ) રાજમૃદ્ધ નગર વેશીને

'वजयो नाम नन्दरः यावद् गृध्र इवामिषभक्षो चालघातको चालमारकोऽस्मि
 त्वं=तस्मान्कारणान् नो खलु देवानुमियाः ! एतस्य कोऽर्जः राजा वा राज-
 पुत्रो वा राजानात्यो वा 'अवरज्जड' अपराध्यनि=न 'कोऽप्यन्य एनं
 पीडयतीत्यर्थः. किन्तु 'एत्यष्ट्रे अत्रार्थे=एतद्विषये 'अप्यजो' आत्मनः=
 निजस्य 'सयाङ्कम्माइ' स्वकानि कर्माणि=स्वकृतान्येव कर्माणि 'भवर-
 ज्जति' अराराध्यन्ति=एनं पीडयन्ति, 'उक्कु' इति मांश्च यत्रैव 'चांगसाला'
 एवं वयंति) राजगृह नगर में आकरके वहां के भृगाटक, त्रिक वनुरुक्त
 चत्वर और मद्रापथ इन सब मार्गों में उन्होंने उस विजय चार को
 कोड़ों से चेतों से चिकने किये हुए कोड़ों--से चार चार और भी
 बुती तरह पीटते हुए उसके ऊपर भस्म धूली और तृण आदि रू।
 कड़ा करकट चार २ डालते हुए फिर इस प्रकार जोर जोर से घोषण-
 की--(एएणं देवाणुमिया विजय नामं तक्करे जाव गिद्धे विव आमिप-
 भक्षो चालघायए चालमारए) हे देवानुमियों ! यह विजय नाना
 चोर है। यह गृध्र पक्षी की तरह आमिप (मांस) का भक्षो है चाल
 घातक है और चाल मारक है। (तं नो खलु देवानुमिया ! एयस्स
 केइ राया वा रायपुरिसे वा रागमब्बे वा अवरज्जड) सो हे देवानुमियों !
 इस विषय में इनका न कोई राजा अपराधी है, न राजपुत्र अपराधी है
 न राजा का प्रधान अपराधी है। (एयमष्ट्रे अप्यजो सयाङ्कं कम्मं

નયનપૂર્વકં ચન્ધન યમ્ય સ તં કુર્વન્તિ. કૃત્વા દ્વદત્તમ્ય દારકમ્યાભરણં
 ગૃહ્ણન્તિ, ગૃહીત્વા વિજયમ્ય તસ્કારમ્ય ગ્રીવાયાં વધનન્તિ વચ્છા માલુકા ક્ષત્કાત્
 પ્રતિનિષ્ક્રામન્તિ, પ્રતિનિષ્ક્રમ્ય યત્રેવ રાજગૃહં નગરં તત્રૈવાગચ્છન્ત, ઉપા-
 ગત્ય રાજગૃહં નગરમનુવિશન્તિ. અનુપવિશ્ય રાજગૃહે નગરે શ્રુદ્ધાટ કૃત્તિકા મૃત્ક-
 ચત્વરમ્હાપથપથેષુ 'કયવ'હારે ય કશાપહારાંશ્ચ 'ચાવુક' इति મોષાયામ્,
 'લયવ'હારે ય' લતાપહારાંશ્ચ યદિપ્રહારાન્ 'છિવાપહારે ય' છિવાપહારાંશ્ચ=
 ચિક્ષણકશાપહારાંશ્ચ 'નિવાપમાણા' નિવાયન્તઃ=પુનઃ પુનઃ કુર્વન્તઃ છારં 'ધારં'=
 ભસ્મ ધૂલિ=રત્નઃ, કયવરં, કચવરં=વૃણધૂલ્યાદિપુઙ્ગં ચ 'ઉવરિં' ઉપરિ
 તસ્યોપરિ 'પક્ષિરમાણા ૨' પ્રકીર્યમાણાઃ ૨=પુનઃ પુનઃ ઉત્તિષ્ઠવન્તો મહતા
 મહતા શબ્દેન ઉદ્ધોષયન્તે એવં વદન્તિ એવં સ્વલુ દેવાનુમિયાઃ !

કરિતા દેવદિન્નન્મસ આભરણં ગેહંતિ) માર માર કર ફિર ઉઢોને ઉસકે
 દોનોં હાથોં કો કમર કે પીછે કરકે વાંધ લિયા ઓર વાંધ કર ઉસકે
 પાસ સે દેવદત્ત દારક કે આભરણોં કો લે લિયા । (ગેહિતા વિજયમ્
 ત્વકરમ્સ ગીત્રાપ વંધંતિ વંધિતા માલુયા કચ્છગાઓ નિવસ્થમંતિ) લેખર
 ફિર ઉઢોને ઉપ વિજય ચોર કો ગ્રીવામેં વાંધા ઓર વાંધકર ફિર વે
 ઉસ માલુયાકચ્છક સે વાહર નિકલે । (પડિનિવસ્થમિના જેજે રાજગહે નયરે
 તેજેવ ઉવાગચ્છંતિ) વાહર નિકલ કર ફિર-વે સવકે મવ રાજગૃહ નગાકી ઓર
 ચલ દિયે (ઉવાગચ્છિતા રાયગિહે નયરં અણુપવિસંતિ) ચલકર વે રાજગૃહ
 નગર આવે ૮ અણુવિસિતા રાયગિહે નયરે સિંધાડગતિપચ્ચકચ્ચરમહા
 પહપહેસુ કસપ્પહારે ય લયપ્પહારે છિવાપહારે ય નિવાપમાણા ૨ છારં ચ
 ધૂલિં ચ કયવરં ચ ઉવરિં પક્ષિરમાણા ૨ મહ્યાર સ્થેણં ઉગ્ધોસેમાણા

(કરિતા અવડહગવંધનં કરેંતિ, કરિતા દેવદિન્નન્મસ દારગસ્સ આભ-
 રણં ગેહંતિ) આભ ભારી પીટીને તેના બને હાથ પાછળ બાંધ્યા અને
 તેની પાસેથી બાળક દેવદત્તનાં ઘરેણાંઓ પોતાના કબજે કર્યા. (ગેહિતા વિજયમ્
 ત્વકરમ્સ ગીત્રાપ વંધંતિ વંધિતા માલુયાકચ્છગાઓ પડિનિવસ્થમંતિ)
 કબજે કરીને તેઓએ ચોર વિજયને બીજી વખત ગળામાં બાંધ્યા અને પછી તેઓ
 માલુકા કચ્છથી બહાર નીકળ્યા. (પડિનિવસ્થમિતા જેજેવ રાયગિહે નયરે તેજેવ
 ઉવાગચ્છંતિ) ત્યાંથી તેઓ રાજગૃહ નગર તરફ ગયા (ઉવાગચ્છિતા રાયગિહે
 નયરં અણુપવિસંતિ) અને રાજગૃહ નગરમાં પ્રવેશ્યા (મણુપવિસિતા રાયગિહે
 નયરે સિંધાડગતિપચ્ચકચ્ચરમહાપહપહેસુ કસપ્પહારેય લયપ્પહારે
 છિવાપહારે ય નિવાપમાણા ૨ છારં ચ વલિં ચ કયવરં ચ ઉવરિં પક્ષિરમાણા
 ૨ મહ્યાર સ્થેણં ઉગ્ધોસેમાણા એવં વયંતિ) રાજગૃહ નગરમાં- પ્રવેશીને

‘વિજયો નામ તત્કરઃ યાવદ્ ગૃધ્ર ઇવામિષમક્ષી ચાલવાતકો ચાલમારકોઽસ્મિ
તત્=તસ્માત્કાણાન્ નો સ્વલુ દેવાનુપિયાઃ ! એતસ્ય કોઽર્ષી રાજા વા રાજ-
પુત્રો વા રાજામાત્યો વા ‘અવરજ્ઞઙ્’ અપરાધ્યન્તિ=ન ‘કોઽપ્યન્ય એનં
પીડયતોત્યર્થઃ. કિન્તુ ‘એતદ્વે અત્રાર્યે=એતદ્વિપચે ‘અપ્પણો’ આત્મનઃ=
નિજસ્ય ‘સયાઈ કમ્માઈ’ સ્વકાનિ કર્માણિ=સ્વકૃતાન્યેવ કર્માણિ ‘અવર-
જ્ઞન્તિ’ અપરાધ્યન્તિ=એનં પીડયન્તિ, ‘ઉકટ્ટુ’ ઈતિ પ્રોચ્ય યત્રેવ ‘ચાગસાલા’

એવં વર્ણંતિ) રાજગૃહ નગર મેં આકરકે વહાં કે શૃંગાટક, ત્રિક ચતુષ્ક
ચત્વર ઓર મહાપથ એન સઘ માર્ગોં મેં ઉઠોને ઉસ વિજય ચોર કો
કોઢોં સેં વેતોં સે ચિકને કિયે હુણ કોઢોં—સે વાર વાર ઓર ઓ
ચુરી તરફ પીટતે હુણ ઉસકે ઉપર અસ્મ ધૂલી ઓર તૂંગ આદિ રૂા
કૂડા કરકટ વાર ૨ ઢાલતે હુણ ફિર એમ પ્રકાર જોર જોર સે ઘોષણ
કી—(એણં દેવાનુપિયા વિજય નામં તત્કરે જાવ ગિદ્ધે વિવ આમિષ-
મક્ષી ચાલવાયણ ચાલમારણ) હે દેવાનુપિયોં ! એહ વિજય નાનકા
ચોર હૈ. એહ ગૃધ્ર પક્ષી કી તરફ આમિષ (માંસ) કા મક્ષો હૈ ચાલ
વાતક હૈ ઓર ચાલ મારક હૈ. (તં નો સ્વલુ દેવાનુપિયા ! એયસ્સ
કેઈ રાયા વા રાયપુરિસે વા રાયમચ્ચે વા અવરજ્ઞઙ્) મો હે દેવાનુપિયોં !
એમ પિય મેં એનકા ન કોઈ રાજા અપરાધો હૈ. ન રાજપુત્ર અપરાધી હૈ
ઓર ન રાજા કા પ્રધાન અપરાધો હૈ. (એમદ્વે અપ્પણો સયાઈ કમ્માઈ
અવરજ્ઞન્તિ) કિન્તુ એમકે નિજ કૃત કર્મ હી અપરાધી બને હુણ હૈં.
(તિકટ્ટુ) એના કહ્કર (જેગામેવ ચાગસાલા તેનામેવ ઉગાગચ્છંતિ) વે

શૃંગાટક, ત્રિક, ચતુષ્ક ચત્વર અને મહાપથ આ બધા માર્ગોં ઉપર ઢોરડા, વેતો
અને ચીકણા કરાએલા ઢોરડાએથી સજાત રીતે વિજયચોરને મારતાં અને વારંવાર
તેના ઉપર રાખ, માટી અને કચરો વગેરે નાખતાં રક્ષકોએ મોટેથી ઘોષણા (ઢંઢેરો)
કરી (એણુ દેવાનુપિયા વિજય નામં તત્કરે જાવ ગિદ્ધે વિવ આમિષ
મક્ષી ચાલવાયણ ચાલમારણ) હે દેવાનુપિયો ! આ વિજય નામે ચોર છે.
ગીધની જેમ આ માંસ ખાનારો છે, ખાળ ઘાતી છે અને ખાળ હત્યારો છે.
(તં નો સ્વલુ દેવાનુપિયા ! એયસ્સ કેઈ રાયા વા રાયપુત્રે વા રાયમચ્ચે
વા અવરજ્ઞઙ્) એટલે હે દેવાનુપિયો ! આ વિષે કોઈપણ રીતે રાજા અપરાધી
નથી, રાજપુત્ર અપરાધી નથી, તેમજ રાજના પ્રધાન પણ અપરાધી નથી.
(એમદ્વે અપ્પણો સયાઈ કમ્માઈ અવરજ્ઞન્તિ) પણ ખરી રીતે એના પોતાના
કર્મો જ એને અપરાધી સાબિત કરે છે. (તિકકટ્ટુ) આમ કહીને (જેગામેવ

નગનપૂર્વેકં ચન્ધન યમ્ય સ તં કુર્વન્તિ. કૃત્વા દ્વદત્તમ્ય દારકમ્યાભરણં
 ગૃહ્ણન્તિ, ગૃહીત્વા વિજયસ્ય તસ્કરમ્ય ગ્રીવાયાં વંધનન્તિ વચ્છા માલુયા કચ્છગા
 પ્રતિનિષ્ક્રામન્તિ, પ્રતિનિષ્ક્રમ્ય યથૈવ રાજગૃહં નગરં તત્રૈવાગચ્છન્ત, ઉપા-
 ગત્ય રાજગૃહં નગરમનુપવિશન્તિ. અનુપવિશ્ય રાજગૃહે નગરે શ્રુદ્ધાટ્ઠક્રિકાનુષ્ક-
 ચત્વરમહાપથપથેષુ 'કચ્છપહારે ય' કશાપહારાંશ્ચ 'ચાલુક' इति મોષાયામ્,
 'લયન્પહારે ય' લતાપહારાંશ્ચ યદ્દિપ્રહારાન્ 'છિવાપહારે ય' છિવાપહારાંશ્ચ=
 ચિક્કણકશાપહારાં શ્ચ 'નિવાપમાણા' નિવાપમન્તઃ=પુનઃ પુનઃ કુર્વન્તઃ છારં 'શારં'=
 મસ્મ ધૂલિ=રજઃ, કચ્ચરં, કચ્ચરં=તુળધૂલ્યાદિપુદ્ગલં ચ 'ઉવરિં' ઉપરિ
 તસ્યોપરિ 'પક્કિરમાણા ૨' પ્રકીર્યમાણાઃ ૨=પુનઃ પુનઃ ઉત્તિક્ષપન્તો મહતા
 મહતા શબ્દેન ઉદ્ઘોષયન્ત એવં વદન્તિ એપ મ્વલુ દેવાનુપ્રિયાઃ !

કરિત્તા દેવદિન્નસ્મ આભરણં ગેહંતિ) માર માર કર ફિર ઉન્હોને ઉસકે
 દોનોં હાથોં કો કમર કે પીછે કરકે વાંધ લિયા ઓર વાંધ કર ઉસકે
 પાસ સે દેવદત્ત દારક કે આભરણોં કો લે લિયા । (ગેહિત્તા વિજયસ્મ
 તક્કરસ્મ ગીવાપ વંધંતિ વંધિત્તા માલુયા કચ્છગાઓ નિવલ્લમંતિ) લેપર
 ફિર ઉન્હોને ઉપ વિજય ચોર કો ગ્રીવામેં વાંધા ઓર વાંધકર ફિર વે
 ઉપ માલુયાકચ્છક સે બાહર નિકલે । (પદિનિવલ્લમિત્તા જોગે) રાજ ગેહે નયરે
 તેગેવ ઉવાગચ્છંતિ) વાહર નિરુલ કર ફિર—વે સવકે મવ રાજગૃહ નગાંકી ઓર
 ચલ દિયે (ઉવાગચ્છિત્તા રાયગિહં નયરં અણુપવિસંતિ) ચલકર વે રાજગૃહ
 નગર આવે ૮ અણુપવિસિત્તા રાયગિહે નયરે સિંધાડગતિયચ્ચકચ્ચરમહા
 પહપહેસુ કસપ્પહારે ય લયન્પહારે છિવાપહારે ય નિવાપમાણા ૨ છારં ચ
 ધૂલિં ચ કચ્ચરં ચ ઉવરિં પક્કિરમાણા ૨ મહયા ૨ સ્પોગેં ઉગ્ધોસેમાણા

(કરિત્તા અવડહમવંધ્રણં કરેતિ, કરિત્તા દેવદિન્નસ્મ દારગસ્સ આભ-
 રણં ગેહંતિ) આમ આરી પીટીને તેના બંને હાથ પાછળ બાંધ્યા અને
 તેની પાસેથી બાળક દેવદત્તનાં ધરેણુંઓ પોતાના કબજે કર્યા. (ગેહિત્તા વિજયસ્મ
 તક્કરસ્મ ગીવાપ વંધંતિ વંધિત્તા માલુયાકચ્છગાઓ પદિનિવલ્લમંતિ)
 કબજે કરીને તેઓએ ચોર વિલ્લયને બીજી વખત ગળામાં બાંધ્યા અને પછી તેઓ
 માલુકા કચ્છથી બહાર નીકળ્યા. (પદિનિવલ્લમિત્તા જોગેવ રાયગિહે નયરે તેગેવ
 ઉવાગચ્છંતિ) ત્યાંથી તેઓ રાજગૃહ નગર તરફ ગયા (ઉવાગચ્છિત્તા રાયગિહં
 નયરં અણુપવિસંતિ) અને રાજગૃહ નગરમાં પ્રવેશ્યા (મણુપવિસિત્તા રાયગિહે
 નયરે સિંધાડગતિયચ્ચકચ્ચરમહાપહપહેસુ કસપ્પહારેય લયન્પહારે
 છિવાપહારે ય નિવાપમાણા ૨ છારં ચ વલિં ચ કચ્ચરં ચ ઉવરિં પક્કિરમાણા
 ૨ મહયા ૨ સ્પોગેં ઉગ્ધોસેમાણા એવં વયંતિ) રાજગૃહ નગરમાં પ્રવેશીને

‘વિજયો નામ તસ્કરઃ’ યાવદ્ ગૃહ્ણ ઇવામિપમક્ષી ચાલવાતકો ચાલમારકોઽસ્મિ
 તત્=તસ્માત્કાણાન્ નો સ્વલુ દેવાનુપિયાઃ ! એતસ્ય કોઽર્જા રાજા વા રાજ-
 પુત્રો વા રાજામાત્યો વા ‘અવરજ્ઞઙ્ગ’ અપરાધ્યન્તિ=ન ‘કોઽપ્યન્ય એનં
 પીડયતોત્યર્થઃ. કિન્તુ ‘એત્યદ્દે અત્રાર્યે=એતદ્વિપચે ‘અપ્પણો’ આત્મનઃ=
 નિજસ્ય ‘સયાઈકમ્માઈ’ સ્વકાનિ કર્માણિ=સ્વકૃતાન્યેવ કર્માણિ ‘અવર-
 જ્ઞન્તિ’ અપરાધ્યન્તિ=એનં પીડયન્તિ, ‘ઉકટ્ટુ’ ઇતિ પ્રોચ્ય યત્રેવ ‘ચાગસાલા’

એવં વર્ણયંતિ) રાજગૃહ નગર મેં આકરકે વઠાં કે શૃંગાટક, ત્રિક ચતુષ્ક
 ચત્વર ઓર મહાપથ ઇન સર્વ માર્ગોં મેં ઉઠ્ઠાંને ઉસ વિજય ચોર કોં
 કોડોં સેં વેતોં સેં ચિકને કિયે હુણ કોડોં--સેં ચાર ચાર ઓર ઓ
 ઘુરી તરહ પીટતે હુણ ઉસકે ઉપર અસ્મ ધૂલી ઓર તુગ આદિ રૂા
 કુડા કરકટ ચાર ૨ ડાલતે હુણ ફિર ઇમ પ્રકાર જોર જોર સેં ઘોષણ-
 કી--(એણં દેવાનુપિયા વિજય નામં તસ્કરે જાવ ગિદ્ધે વિવ આમિમ-
 મક્ષી ચાલવાયણ ચાલમારણ) હે દેવાનુપિયોં ! યહ વિજય નામના
 ચોર હૈ. યહ ગૃહ્ણ પક્ષી કી તરહ આમિપ (માંસ) કા મક્ષો હૈ ચાલ
 વાતક હૈ ઓર ચાલ મારક હૈ. (તં નો સ્વલુ દેવાનુપિયા ! એયસ્સ
 કેઈ રાયા વા રાયપુરિસે વા રાયમચ્ચે વા અવરજ્ઞઙ્ગ) મો હે દેવાનુપિયોં !
 ઇમ પિપ મેં ઇનકા ન કોઈ રાજા અપરાધોં હૈ. ન રાજપુત્ર અપરાધી હૈ
 ઓર ન રાજા કા પ્રધાન અપરાધી હૈ. (એયમદ્દે અપ્પણો સયાઈ કમ્મ ઇં
 અવરજ્ઞન્તિ) કિન્તુ ઇમકે નિજ કૃત કર્મ હો અપરાધી ચને હુણ હૈં.
 (તિરહુ) એગ કહ્કર (જેગામેવ ચાગસાલા તેગામેવ ઉવાગચ્છંતિ) વે

શૃંગાટક, ત્રિક, ચતુષ્ક ચત્વર અને મહાપથ આ બધા માર્ગોં ઉપર ડોરડા, વેતો
 અને ચીકણા કરાએલા ડોરડાઓથી સજ્જત રીતે વિજયચોરને મારતાં અને વારંવાર
 તેના ઉપર રાખ, માટી અને કચરો વગેરે નાખતાં રક્ષકોએ ઘોટેથી ઘોષણા (ઢંઢેરો)
 કરી (એણુ દેવાનુપિયા વિજય નામં તસ્કરે જાવ ગિદ્ધ વિવ આમિમ
 મક્ષી ચાલવાયણ ચાલમારણ) હે દેવાનુપિયો ! આ વિજય નામે ચોર છે.
 ગીધની જેમ આ માંસ ખાનારો છે, બાળ ઘાતી છે અને બાળ હત્યારો છે.
 (તં નો સ્વલુ દેવાનુપિયા ! એયસ્સ કેઈ રાયા વા રાયપુત્રે વા રાયમચ્ચે
 વા અવરજ્ઞઙ્ગ) એટલે હે દેવાનુપિયો ! આ વિષે કોઈપણ રીતે સબ અપરાધી
 નથી, રાજપુત્ર અપરાધી નથી, તેમજ સબના પ્રધાન પણ અપરાધી નથી.
 (એયમદ્દે અપ્પણો સયાઈ કમ્મ ઇં અવરજ્ઞન્તિ) પણ ખરી રીતે એના પોતાના
 કર્મો જ એને અપરાધી સાબિત કરે છે. (તિકકટ્ટુ) આમ કહીને (જેગામેવ

ચારકશાલા=પારાપારગૃહં તત્રાપાગચ્છાન્ત, ઉપાગત્ય તન્ય 'હૃદિવંધનં' હૃદયવંધનં=પાટાંગણેવંધનં 'વેડી' इति भाषाप्रसिद्धे हृदियन्त्रे वन्धनं कुर्वन्ति, कृत्वा 'भक्तपाणनिरोहं' भक्तपाणनिरोधम्=अशनपाणप्रतिषेधं कुर्वन्ति कृत्वा 'तिसंज्ञं' त्रिसन्ध्यं=प्रातर्मध्याह्नसायंस्वरूपे कालत्रये कशाप्रहारान्थ यावद् निपातयन्तो निपातयन्तो विहरन्ति। 'तण्णं' ततः खलु=इतः स धन्यः सार्थवाहो मित्रज्ञातिनिजकस्वजनसम्बन्धिपरिजनेन सार्द्धं रुदन् यावद् विलपन् देवदत्तस्य दारकस्य शरीरस्य 'महया इड्डोसकारसमुदणं' महता कृद्धिमस्कारसमुदयेन=महता=विस्तीर्णेन कृद्धया=रुखादि सामग्रा सत्कारः=मृतशरीरसम्मानं तेन, समुदयेन=जनसङ्गेन च 'नीहरणं' निर्हरणं=शवस्य श्मशानभूमिनयनं करोति. कृत्वा मृतकशरीरदहनक्रियानन्तरं बहूनि कारागार (कैदखाना) जहां था। वहां गये उवागच्छिता हृदिवंघनं करे(ति) यहां जाकर वे उसे हृदियत्र में बांध देते हैं। (करित्ता भक्तपाणनिरोहं करे(ति) करित्ता तिसंज्ञं कसप्पहारे य जाव निवाएमाणा २ विहरंति) बाद में उसे खानापीना देना बंध कर देते हैं। और तीनों संध्या के समय (सुबह दो पहर तथा सांयकाल) उसे कोठे आदि के प्रहारों से जर्जरित शरीर कर देते हैं। (तण्णं से धन्ने सत्थवाहे मिणनाइ नियगसयणसंबंधिपरियणेणं सद्धि रोयमाणे जाव विलवमाणे देवदिन्नस्स दारगस्स सरीरस्स महया इड्डोसकारसमुदणं नीहरणं करेइ) इसके बाद उस धन्य सार्थवाहने मित्र, ज्ञाति, निजक स्वजन, सम्बन्धी और परिजनों से युक्त होकर रोते हुए यावत् विलाप करते हुए अपने देवदत्त दारक के शरीरकी बड़े भारी उत्सव के साथ अर्घी निकाली। --

चारगमालા તેણાએવ ઉવાગચ્છંતિ તેઓ જેલ તરફ ગયા. (ઉવાગચ્છિન્તા હૃદિવંધનં કરે(તિ) ત્યાં બંધને તેઓએ ચોરને હૃદિયંત્ર (લાકડાની બેડી)માં બંધન કર્યો 'કરિત્તા ભક્તપાણનિરોહં' કરે(તિ) કરિત્તા તિસંજ્ઞં કસપ્પહારે ય જાવ નિવાએમાણા ૨ વિહરંતિ' ત્યાર બાદ તેઓ ચોર ને ખાવા પીવાની બધી વસ્તુઓ આપવાની બંદ કરે છે અને સવાર, બપોર અને સાંજ ત્રણે સંધ્યાના સમયે કોરડા વગેરેના પ્રહારોથી તેના શરીરને શિથિલ અને જર્જરિત કરી નાખે છે. (ત ણ્ણં સે ધન્ને સત્થવાહે મિણેનાઇનિયગસયણસંબંધિપરિ-યણેણં સદ્ધિ રોયમાણે જાવ વિલવમાણે દેવદિન્નસ દારગસ્સ સરીરસ્સ મહયા ઇડ્ડોસકારસમુદણં નીહરણં કરેइ) ત્યાર પછી ધન્ય સાર્થવાહે મિત્ર, જ્ઞાતિ, નિજક, સ્વજન, સંબંધી અને પરિજનોની સાથે મળીને ૨૪તાં ૨૪તા અને કરુણ કેંદન કરતાં બાળક દેવદત્તના શરીરની બહુ મોટા ઉત્સવ રૂપે શ્મશાનયાત્રા કરી. શ્મશા-

लौ ककानि=रोकमन्वन्वीनि 'मयगहिचाइ' मृतककृत्यानि=मृतकगिरुस
मन्वन्विकार्याणि करोति, कृत्वा 'केगइ कालंतरेणं' केनचित्कालान्तरेण=कतिप
यकालान्तरेण 'अवगयसोए' अवगतशोकः=तोकरुडिनो जानथाप्यासीत् ॥ सू. ९ ॥

मूलम्— तएणं धणणे सत्थवाहे अन्नया कयाइं लहूसयंसि
ययावराहंसि संपलत्ते जाए यावि होत्था, तएणं ते नगरगुत्तिया
धणणं सत्थवाहं गेण्हंति गेण्हत्ता जेणेव चारगे तेणेव उवागच्छंति,
उवागच्छत्ता चारगं अणुपविसंति, अणुपविसित्ता विजएणं तकरेणं
सद्धि एगयओ हडिवंधणं करेति । तएणं सा भद्दा भारिया कल्लं
जाव जलंते विउलं असणं ४ उवक्खडेइ, उवक्खडित्ता भोयणपिडयं
करेइ, करित्ता भोयणाइं पक्खिबइ लंछियमुद्धियं करेइ, करित्ता
एगंच सुरभिवरवारिपडिपुन्नं दगवारयं करेइ, करित्ता पंथयं दास-
चेडं सदाविइ, सदावित्ता एवं वयासी गच्छ णं तुमं देवाणुप्पिया!
इमं विउलं असणं ४ गहाय चारगसालाए धणणस्स सत्थवाहस्स
उवणेहि, तएण से थए दासचेडए भद्दाए सत्थवाहीए एवं वुत्त
समाणे हट्ठुट्ठे तं भोयणपिडयं तं च सुरभिवरवारिपडिपुन्नं
दगवारयं गेण्हइ, गेण्हत्ता सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमइ,
पडिनिक्खमित्ता रायगिहे नगरे मज्झं मज्झेणं जेणेव चारगसाला

इसमें बहुत अधिक जन समूह सम्मिलित हुआ था । (करित्ता बहूईं लोड-
या 'मयगहिच्चाइ' करेइ, करित्ता कालंतरेणं अवगयस ए जाए यावि होत्था)
बाद में उमने अनेक और भी लौकिक कृत्य किये । कर के, फिर
धीरे २ बहू अपने पुत्र के ओक से भी रुडिन हो गया । मूत्र ॥ ९ ॥

नयात्राभां धणु भाणुसो ओकडा यथा उता. (करित्ता बहूइं लोडयाइं मयगहि-
च्चाइं करेइ, करित्ता कालंतरेणं अवगयसोएजाए यावि होत्था) त्थारपणी धन्य-
सार्थवाडे पुत्रनी अन्त्येष्टी भरखु पछीनी उत्तर किया अणंधी धणु लौकिक
कर्मो कर्था. अने आम ते वणत पत्तार थतां धीमे धीमे पुत्र शोकने पणु लूली गयो. ॥ सू. ६ ॥

जेणेव धण्णे सत्थवाहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता भोय-
 णपिडयं ठावेइ, ठावित्ता उल्लंछेइ, उल्लंछित्ता भायणाइं गेण्हइ
 गेण्हित्ता भायणाइं धोवेइ, धोवित्ता हत्थसोयं दलयइ, दलयित्ता
 धण्णं सत्थवाहं तेणं विउलेणं असणं ४ परिवेसइ, तएणं मे
 विजए तक्करे धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी—तुमण्णं देवाणुप्पिया !
 मम एयाओ विउलाओ असण० ४ संविभागं करेहि, तएणं से
 धण्णे सत्थवाहे विजयं तक्करं एवं वयासी अविद्याइं अहं विजया !
 एयं विउलं असणं ४ कायाणं वा सुणगाणं वा दलएज्जा उक्कुरु-
 डियाए वा णं छुट्ठेज्जा नो चेव णं तव पुत्तघायगस्स पुत्तमारगस्स
 अरिस्सवेरियस्स पडिणीयस्स पच्चामित्तस्स एत्तो विउलाओ
 असण० ४ संविभागं करेज्जामि, तएणं से धण्णे सत्थवाहे तं
 विउल असणं ४ आहारेइ, आहारित्ता तं पंथयं पडिविसज्जेइ,
 तएणं से पंथए दासचेडे तं भोयणपिडगं गिण्हइ, गिण्हित्ता जामेव
 दिस्सिं पाउव्भूए तामेव दिस्सिं पडिगए, तएणं तस्स धण्णस्स सत्थ-
 वाहस्स तं विउलं असणं ४ आहारियस्स समाणस्स उच्चारपासवणे
 णं उव्वाहित्था, तएणं से धण्णे सत्थवाहे विजयं तक्करं एवं वयासी
 —एहि ताव विजया ! एगंतमवक्कमामो जेणं अहं उच्चारपासणं
 परिट्ठवेमि, तएण से विजए तक्करे धण्णं सत्थवाहं एवं वयासी—
 तुव्भं देवाणुप्पिया ! विउलं असणं ४ आहारियस्स अत्थि उच्चारे वा
 पासवणे वा ममंणं देवाणुप्पिया ! इमेहिं वहुहिं कसप्पहारेहि
 य जाव लयापहारेहि य तण्हाए य लुहोय य परव्वमाणास्स णत्थि
 केइ उच्चारे वा पासवणे वा तं छंदेणं तुमं देवाणुप्पिया ! एगंते

अवक्रमित्ता उच्चारपासवणं परिट्टवेइ, तएणं से धणणे सत्थवाहे
विजएणं तकरेणं एवं वुत्ते समाणे तुसिणीए संचिट्टेइ, तएणं से
धणणे सत्थवाहे मुहुत्ततरस्स वलियतराणं उच्चारपासवणेणं उट्वाहिज्ज-
माणे विजयं तकरं एवं वयासी—एहि ताव विजया ! जाव अव-
क्रमामो, तएणं से विजए धणणं सत्थवाहं एवं वयासी—जइणं
तुमं देवाणुप्पिया ! तओ विउलाओ असणं ४ संविभागं करेहि
तओहं तुब्भेहिं सद्धि एगंतं अवक्रमामि, तएणं से धणणे सत्थवाहे
विजयं एवं वयासी—अहणं तुब्भं तओ विउलाओ असणं ४
संविभागं करिस्सामि, तएणं से विजए धणणस्स सत्थवाहस्स एय-
मढं पडिसुणेइ, तएणं से विजए धणणेणं सद्धि एगंते अवक्रमेइ
उच्चारपासवणं परिट्टवेइ, परिट्टवित्ता आयंते चोक्खे परमसुईभूए
तमेव ठाणं उवसंकमित्ता विहरइ, तएणं सा भ । कहं जाव
जलंते विउलं असणं ४ जाव परिवेसेइ, तएणं से धणणे सत्थ
वाहे विजयस्स तकरस्स तओ विउलाओ असणं ४ संविभागं
करेइ, तएणं से पंथए भोयणपिडयं गहाय चारगाओ पडिनिक्ख-
मइ, पडिनिक्खमित्ता रायगिहं नगरं मज्झं मज्झेणं जेणेव सए
गिहे जेणेव भद्दा भारिया सत्थवाही तेणेव उवागच्छइ, उवा
गच्छित्ता भदं सत्थवाहिणिं एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिए !
धणणे सत्थवाहे तव पुत्तघायगस्स जाव पच्चामित्तस्स ताओ
विउलाओ असणं ४ संविभागं करेइ । तएणं सा भद्दा सत्थ-
वाही पंथयस्स दासचेडयस्स अंतिएएयमढं सोच्चा आसुरुत्ता रुट्ठा जाव
मिसिमित्तेमाणा धणणस्स सत्थवाहस्स पओसमावज्जइ ॥सू. १०॥

टीका—तए णं से इत्यादि । ततः खलु स धन्यः सार्धवाहोऽन्यथा कदाचित्—एकस्मिन् कस्मिंश्चित्समये 'लहसयंसि रायावराहंसि' लघुस्त्रके राजापराधे=स्तोके राजकगामदानरूपे भूपापराधे सति केनाऽपि पिशुनेन भूपाय 'संपलत्ते' संपलपितः=अपराधित्वेन कथितो जातश्चाप्यासीत् । ततः खलु=पैशुन्यप्रत्यपनानन्तरं ते नगरगोप्तृका धन्यं सार्धवाहं गृह्णन्ति, गृहीत्वा यत्रैव चारकः=कारागारस्तत्रैवोपागच्छन्ति उपागत्य चारकमनुप्रवेशयन्ति. अनुप्रवेश्य विजयेन तत्करणे सार्द्धम् 'एगयओ' एकतः=एकत्र तेन सहैव एकस्मिन् हडिगन्धे 'वेढी' इति भाषामसिद्धे हडिगन्धनं कुर्वन्ति । ततः खलु सा भद्रा भार्या कल्ये यावज्ज्वलति=धन्यश्रेष्ठिनी हडिगन्धनस्य द्वितीयदिवसे नृपौदये सति विपुलं=विस्तीर्णं स्वपतिभोजनाहम् अन्नं पानं वाणं ध्याणं=नानाविधमशनादिकम् 'उक्कल्लहेड' उपपत्ति=गीरकहिड-

तए णं से धण्णे सत्थवाहे इत्यादि ।

टीका—(तएणं) इसके बाद (से धण्णे सत्थवाहे) वह धन्यसार्धवाह (अन्नया कयाई) किसी एक समय (लहसयंसि रायावराहंसि) टेक्स न देने के छोटे अपराध में (संलग्ने जाए यावि होत्या) राजा के पास किसी चुगल खोरने कमा हुआ कद्व दिया । (तएणं ते नगरगुत्तिया धण्णं सत्थवाहं गेह्णन्ति) इसके बाद नगरक्षकीने उस धन्य सार्धवाह को पकड़ लिया । (गेह्णित्ता जेणेव चारगे तेणेव उवाग्गच्छन्ति उवागच्छित्ता चारगं अणुपविसन्ति) पकड़ कर के उसे जहां कारागार था, वहां ले गये, लेजाकर उन्होंने उसे कारागार में बन्द कर दिया । (अणुपविसित्ता विजएणं तक्करेणं सद्धि एगयओ हडिगन्धं करेन्ति) बन्द करके उसे जहां वह विजयचोर था वही उसीकी वेढी से बांध दिया । (तएणं सा भद्रा भारिया कल्यं

'(त एणं से धण्णे सत्थवाहे' इत्यादि !

टीका—(तएणं) त्थार पछी (से धण्णे सत्थवाहे) धन्यसार्धवाह (अन्नया कयाई) कैध ओक वण्ठे (लहसयंसि रायावराहंसि) ऊर न आपवा इपी नाना अपराध अहल (संपलत्ते जाए यावि होत्या) कैध आडियाओ राजनी पास पड़ोयाडी दीया. (त एणं ते नगरगुत्तिया धण्णं सत्थवाहं गेह्णन्ति) त्थार आहं नगर रक्षकओ धन्य सार्धवाहने पकडयो. (गेह्णित्ता जेणेव चारगे तेणेव उवागच्छन्ति उवागच्छित्ता चारगं अणुपविसन्ति) पकडीने तेओ तेने जेलमां लध अथा अने तेमां पूरी दीया. (अणुपविसित्ता विजएणं तक्करेणं सद्धि एगयओ हडिगन्धं करेन्ति) न्यां विजय नामे थार हुता त्यां ओ धन्यसार्धवाहने पधु मेडीथी ओधी दीया. (तएणं सा भद्रा

ग्रादिना संस्कारपूर्वकं पतति, उपस्कृत्य 'भोयणपिडयं' भोजनपिटकं=भोजन
भरणाय पिटकं=सम्पुटकम् 'पिटारा' 'कटोरदान' 'ढब्बा' इति. सम्प्रति
काळे 'टीफनबोयस' इति च प्रसिद्धं 'करेइ' करोति=सज्जयति, कृत्वा=
मज्जयित्वा तस्मिन् 'भोयणाइ' भोजनानि=खाद्यपदार्थानि 'पक्खिवइ' पक्षिः
पति=स्थायति, पक्षिष्व 'लंछियमुद्धियं' लाच्छिआमुद्धियं लाच्छित्तं=रेखादिचिह्नः
युक्तं, मुद्रितं=शिक्षादिमुद्रासादितं, 'करेइ' करोति=सज्जयति, कृत्वा एकं
'सुरभिवरवारिपडिपुल्लं' सुरभिवरवारिप्रतिपूर्णं-सुरभि=केतकीपाटलादि
सुगन्धवासितं वरं श्रेष्ठं स्वच्छं वारि=जल, तेन प्रतिपूर्णं=भृतं 'दगवारयं'
दकवारकं=जलपात्रविशेषं 'झारी' इति भाषा प्रसिद्धं जलपात्रं 'करेइ'
करोति=सज्जयति, कृत्वा. पांथकं दासचेटकं शब्दयति शब्दयित्वा एवमवादीव-गच्छ-

जाव जलंते विउलअसणं ४ उववखडेइ) डमके बाद उस भद्रा सार्थ-
वाहीने दूसरे दिन मातः काल जय सूर्यप्रकाशित हो चुका तब ४
प्रकारका आहार तैयार किया—(उववखडित्ता भोयणपिडयं करेई—
करित्ता भोयणाइं पक्खिवइ, लंछियमुद्धियं करेइ,—करित्ता एगं च सुरभि-
वरवारिपडिपुल्लदगवारयं करेइ) जब आहार निष्पन्न हो चुका तब उसने
उसके रखने के लिये एक कटोरदान तैयार किया। जब कटोरदान
साफ सुथरं रूप से तैयार हो चुका तब उसमें उसने आहार को
रख दिया—आहार रखकर फिर उसे लाख की मुद्रा से मुद्रित कर
दिया। कटोरदान को मुद्रित करने के बाद फिर उसने एक सुगन्धित
उत्तम जल से प्रतिपूर्ण झारी को तैयार किया। (करित्ता पंथयं दास-
चेडं सदावेइ, सदाविता एवं वयासी) झारी तैयार कर उसने फिर
पांथक दास चेटक को बुलाया—और बुलाकर उसने इस प्रकार कहा—

भरिया कल्लं जाव जलंते विउलअसणं ४ उववखडेइ) त्थार जाइ भद्राभायां
सार्थवाहीये जीअ दिवसे सवादे सूरज उदय पाभतां थार जातने आहार तैयार करावअव्यो.
(उववखडित्ता भोयणपिडयं करेई करित्ता भोयणाइं पक्खिवइ, लंछियमुद्धियं
करेइ, करित्ता एगं च सुरभिवरवारिपडिपुल्लदगवारयं करेइ) आहार न्यारे तैयार
थई अथे त्थारे तेहे आहारने भूइवा भाटे अणे तैयार क्येई न्यारे साइ पाणीथी अणे
घोपांठने साइ थई अथे त्थारे तेमां आहार भूई दीधा. आहार भूईने लाण वगेरे
लगावीने तेने जलणेर जंध करी दीधा. अणायु "सील" करीने तेहे अइ सुवास
युआ जणथी पुणं लरेवी आरी तैयार करी.(करित्ता पंथयं दासचेडं सदावेइ,
सदाविता एवं वयासी) आरी तैयार करीने तेहे पांथकदास चेटकने बोलाव्ये. अने

શ્વલુ ત્વં દેવાનુપ્રિયાં ઇદં વિપુલ-પ્રચુરમ્ અગ્નનં પાનં શ્વાધં સ્વાધં ગૃહીત્વા ચાર-
કશાલાયાં ધન્યસ્ય સાર્થવાહસ્ય 'ઉવણેહિ' ઉપનય-સમીપે પ્રાપયં તતઃ શ્વલુ
સ પાન્યકો દાસચેટકો મદ્રયા સાર્થવાહા એવમુક્તઃ સન્ હૃષ્ટતુષ્ટસ્તદ-
ભોજનપિટકં, તચ સુરભિવરવારિપ્રતિપૂર્ણદકવારકં ગૃહ્ણતિ, ગૃહીત્વા
સ્વકાદ ગૃહાત્ પ્રતિનિષ્ક્રામતિ, પ્રતિનિષ્ક્રમ્ય રાજગૃહે નગરં મધ્યમધ્યેન
યજેવ ચારકશાલા, યજેવ ધન્યઃ સાર્થવાહસ્ત્રેવોપાગચ્છતિ, ઉપાગત્ય

(ગચ્છળં તુમ દેવાણુપ્પયા । વિઝલં અસળં ૪ ગઘાય ચારગસાલાય ધન્નસ્સ
મત્થવાહસ્સ ઉવણેહિ) હે દેવાનુપ્રિય ! તુમ ઇસ વિપુલ અગ્નન, પાન, શ્વાધ
ઔર સ્વાધ—આહાર કા લેકર કારાગાસ મેં ધન્ય સાર્થવાહ ક પાસ
પહુંનાઆઓ । (તણ સે પંથણ દાસચેટક મદ્રાય મત્થવાહીણ એવં વુત્તો
સમાણે હટ્ઠવુદ્ધે તે ભોયણપિટકં તે ચ સુરભિવરવારિપટ્ટિપુત્તં દગવારયં
ગેહ્ણહ) મદ્રા સાર્થવાહી કે ઇસ કયન કો સુનકર વહ પાંચક દાસ ચેટક
વહુત અધિક હર્પિત હુઆ ઔર સંતુષ્ટ હુઆ । તથા ઉસ ભોજન કે ખરે
હુણ ડિગ્ગ્વેકો એવં સુગન્ધિત ઉત્તમ જલ સે પરિપૂર્ણ ઉસ જ્ઞારી કો
ઉસને લે લિયા । (ગોહ્ણના સયાઓ ગિહાઓ પટ્ટિનિકલ્લમહ) લેકર વહ
અપને ઘર સે નિકલા—(પટ્ટિનિકલ્લમિત્તા રાયગિહે નયરે મજ્ઞં મજ્ઞેણ
જેણેવ ચારગસાલા જેણેવ ધન્ને સત્થવાહે તેણેવ ઉવાગચ્છહ) નિકલ કર
વહ રાજગૃહ નગર કે ઠીક થોવો વીચ કે માર્ગ સે હાતા હુઆ જહાં
વહ કારાગાસ એવં ધન્ય સાર્થવાહ થા વહાં ગયા—(ઉવાગચ્છિત્તા ભોયણ

તેને આ પ્રમાણે તેહુ—(ગચ્છળં તુમ દેવાણુપ્પયા । વિઝલં અસળં ૪ ગઘાય
ચારગસાલાય ધન્નસ્સ મત્થવાહસ્સ ઉવણેહિ) હે દેવાનુપ્રિય ! તમે આ
પુષ્કળ પ્રમાણમાં બનાવેલા અગ્નન, પાન, શ્વાધ અને સ્વાધ આહારને લઈને જેલમાં
ધન્યસાર્થવાહની પાસે પહોંચ્યો કે? (તેણે પંથણ દાસચેટક મદ્રાય મત્થ-
વાહીણ એવં વુત્તો સમાણે હટ્ઠવુદ્ધે તે ભોયણપિટકં તે ચ સુરભિવરવારિ-
પટ્ટિપુત્તં દગવારયં ગેહ્ણહ) મદ્રા સાર્થવાહીની આજ્ઞા સાંભળીને પાંચકદાસ ચેટક
બહુ જ પ્રસન્ન થયો—અને સંતુષ્ટ થયો. ત્યાર પછી તેણે ભોજનથી પરિપૂર્ણ બનાવે
તેમજ સુવાસિત જળથી પૂર્ણ બરેલી અરીને તેણે લઈ લીધી. (ગેહ્ણિત્તા સયાઓ
ગિહાઓ પટ્ટિનિકલ્લમહ) લઈને તે પોતાને ઘેરથી નીકળ્યો. (પટ્ટિનિકલ્લમિત્તા
રાયગિહે નયરે મજ્ઞં મજ્ઞેણ જેણેવ ચારગસાલા જેણેવ ધન્ને સત્થવાહે
તેણેવ ઉવાગચ્છહ) નીકળીને રાજગૃહ નગરની ઠીક વચ્ચેના માર્ગથી પસાર થઈને
તે ત્યાં જેલ અને ધન્યસાર્થવાહ હતો ત્યાં પહોંચ્યો. (ઉવાગચ્છિત્તા ભોયણ

भोजनपिटकं स्थापयति, स्थापयित्वा 'उल्लंछे' उल्लंछयति= निर्लाञ्छितं करोति=उद्वाटयतीत्यर्थः, उल्लंछय 'भायणाणि' भाजनानि= स्थाली कटोरादीनि गृह्णाति, गृहीत्वा भाजनानि 'धोवेड' धावति=पञ्चालयति, धावयित्वा=पात्रपञ्चालनानन्तरं 'हृत्थसोयं दलयड' हस्तशौचं ददाति, श्रेष्ठिनो हस्ती धावयति, हस्तशौचानन्तरं धन्यं सार्थं वाहं तेन विपुलेन— अशन-पान-खाद्यस्वाद्येन 'परिवेसड' परिवेषयति=श्रेष्ठिनो भोजनपात्रेऽशनादीनि निदधातीत्यर्थः 'तएणं' तदान्वलु=श्रेष्ठिभोजनसमये स विजयस्तस्करो धन्यं सार्थं वाहमेवमवादीत्-त्वं खलु देवानुप्रिय ! मम एतस्माद् विपुलाद् अशन-पान-खाद्य-स्वाद्यात् संविभागं कुरु । ततः खलु म धन्यः सार्थं वाहस्तस्य वाक्यं श्रुत्वा विजयं तस्करमेवमवादीत् अपि 'आइ' वाक्या-

पिडगं ठवेड) जाकर उसने उस भोजन के डिब्बे को वहां रख दिया । (ठवित्ता उल्लंछेड) रखकर फिर उसने उस डिब्बे को खोला (उल्लंछित्ता भायणाइं गोहड गोहत्ता भायणाइं धोवेड धोवित्ता हृत्थसोयं दलयड) खोलकर उसने थाली-कटोरी आदि को उठाया-उठा कर उन्हें धोया, (दलयित्ता धणं सत्यवाहं तेणं अमणं ४ परिवेसड) धुलाकर उस सेठ धन्य सार्थवाह के लिये वह विविध आहार परोसा (तएणं से विजयं तस्करे धणं सत्यवाहं एवं वयासी) इसी बीच में उस विजय चौरने धन्य सार्थवाह से इस प्रकार कहा— (तुमणं देवाणुप्पिया मम एयाओ विउलाओ असणं ४ संविभागं करेहि) हे देवानुप्रिय ! तुम इस अशन, पान खाद्य, एवं स्वाद्यरूप चार प्रकार के आहार में से विभाग करो (तएणं से धन्ने सत्यवाहे विजयं तस्करं एवं वयासी) विजय चौर की इस प्रकार बात सुनकर धन्य सार्थवाहने उस विजय चौर

पिडगं ठवेड) અને ત્યાં પહોંચીને ભોજનના ડબ્બાને તેણે ત્યાં મૂકી દીધો. (ઠવિત્તા ઉલ્લંછેડ) ત્યાં મૂકીને તેણે એ ઉઘાડ્યો. (ઉલ્લંછિત્તા ભાયણાઈ ગેપાઈ ગોહત્તા ભાયણાઈ ધોવેડ ધોવિત્તા હૃત્થસોયં દલયડ) ઉઘાડીને તેણે થાળી અને વાડકીને લીધી અને લઈને પાણીથી ધોઈ. ત્યાર બાદ તેણે શેઠના બંને હાથ ધાવડાવ્યા. (દલયિત્તા ધણં સત્થવાહં તેણં વિઉલેણં અમણં ૪ પરિવેસડ) ધાવડાવીને તેણે ધન્યસાર્થવાહને માટે વિવિધ જાતના આહારો પીરસ્યા. (તણે સે વિજયતસ્કરે ધણં સત્થવાહં એવં વયાસી) એ જ વખતે તે વિજય ચોરે ધન્યસાર્થવાહને આ પ્રમાણે કહ્યું—(તુમણં દેવાણુપ્પિયા મમ એયાઓ વિંઉલાઓ અસણં ૪ સંવિભાગં કરેહિ) હે દેવાનુપ્રિય ! તમે આ અશન, પાન ખાદ્ય અને સ્વેદ્ય આહારમાંથી મારો પથ્થુ હિસ્સો કરો. (તણે સે ધન્ને સાર્થવાહે વિજયં તસ્કરં એવં વયાસી) વિજય ચોરની આ જાતની વાત સાંભળીને

लङ्कारे अहं हे विजय ! एतद् विपुलमशनं स्वाद्यं स्वाद्यं काकेभ्यो वा
 मुनकेभ्यो वा दद्याम्, 'उत्कुरुडियाए' उत्कुरुडिकायां=रुचवरपुठननिक्षेपस्थाने
 वा खलु=निश्चयेन 'छडेज्जा' त्यजेयं=प्रक्षिपेयं किन्तु नैव खलु=तुभ्यं पुत्र-
 वातकाय, पुत्रमारकाय, 'अरिस्स' अरये=अनिष्टकारिणं 'वेरियस्स' वैरिकाय=
 परिणतशत्रुभावाय, 'पडिणीयस्स' प्रत्यनीकाय=प्रतिकूलविधायिने, 'पच्चा-
 मित्तस्स' प्रत्यामित्राय=हार्दिकशत्रवे 'एत्तो' एतस्माद् विपुलाद् अशनपान-
 स्वाद्यस्वाद्यात् 'संविभाग' संविभागम्=अशरूपेण पृथकरणं 'करेज्जामि'
 कुर्वामि। अस्मादशनादिकातुभ्यं किञ्चिदपि न दास्यामीति भावः। ततः खलु=
 इत्युपत्त्वासं धन्यः सार्थवाहस्तद् विपुलमशनपानस्वाद्यस्वाद्यम् आहारेद् 'आहारयति=
 भुङ्क्ते, आहारयित्वा तं पान्यकं 'पडिविमज्जेइ' प्रतिविसर्जयति=पृष्टमपि

से इस प्रकार कहा—(अविद्या) अहं विजय ! एवं विउलं असणं ४ कायाणं
 वा मुणगाणं वा दलएज्जो उत्कुरुडियाए वा णं छडेज्जा नो चेव णं तव पुत्तघायगस्स
 पुत्रमारगस्स अरिस्सवेरियस्स पडिणीयस्स पच्चामित्तस्स एत्तो विउलाओ असणं ४
 संविभागं करेज्जामि) हे विजय चौ ! मैं चाहे इस विपुल अशन, पान,
 स्वाद्य, स्वाद्य, रूप चतुर्विध आहार को कौनों के लिये, अथवा कुत्तों के
 लिये दे दूंगा—या इसे उकड़े पर—कूड़ा करकट डालनेके स्थान पर—डाल-
 दूंगा परन्तु पुत्रघातक, पुत्रमारक, अनिष्टकारी, शत्रुभाव से परिणत, प्रति-
 कूल विधायी तथा हार्दिक शत्रु ऐसे तुम्हारे लिये इसमें से विभाग तुम्हें
 नहीं दूंगा। (तएणं से धन्ने सार्थवाहे तं विउलं असणं ४ आहारेइ,
 आहारित्ता तं पंथयं पडिविमज्जेइ) इस प्रकार उस विजय नन्दर से
 कह कर धन्य सार्थवाहने उस विविध प्रकार के अशनादिरूप चतुर्विध

धन्यसार्थवाहे ते विजय योरने आ प्रभाण्णे कलुं—(अविद्या) अहं विजय !
 एवं विउलं असणं ४ कायाणं वा मुणगाणं वा दलएज्जो उत्कुरुडियाए
 वा णं छडेज्जा नो चेव णं तव पुत्तघायगस्स पुत्रमारगस्स अरिस्स वेरियस्स
 पडिणीयस्स पच्चामित्तस्स एत्तो विउलाओ असणं ४ संविभागं करेज्जामि)
 हे विजय योर ! आ युञ्जण प्रभाण्णुमां भनाववामां आवेलां यार भतना आहार
 हुं कागज्जो अथवा दूताराज्जेने भवअववा तैयार हुं के छिरअनी नय्याज्जे नाभीथ
 पणु तारा जेवा पुत्रना हत्थारा पुत्र मारनारा, अनिष्ट करनार शत्रु बध गयेला,
 जोदुं करनान तेमज्ज हार्दिक शत्रुने आमांथी हत्थो मणी न शके, तमार
 जेवा हुण्टने तो जोक छडो पणु आमांथी मणी शके तेम नथी। (तएणं से धन्ने
 तं विउलं असणं ४ आहारेइ, आहारित्ता तं पंथयं पडिविमज्जेइ)
 आ प्रभाण्णे विजय योरने ज्वाण आपीने धन्य सार्थवाह ते अशन, पान, वगेरेना

प्रपयति । ततः खलु स पाण्डको दासवेष्टास्तं भोजनपिटकं गृह्णाति, गृहीत्वा यस्या दिशः प्रादुर्भूतस्तस्यामेव दिशि प्रतिगतः, येन मार्गेणागतस्तेनैव मार्गेण गतवानित्यर्थः । ततः खलु=तदनु तस्य धन्यस्य सार्थवाहस्य तद् विपुलमशने पानं खाद्यं स्वाद्यम् 'आहारियस्स' आहारितरूप=भुक्तस्य सतः 'उच्चारपासवणेण' उच्चारप्रसवणे खलु=उच्चारंच=विष्टाप्रसवणेच=मूत्रमित्युच्चार=प्रसवणे, ते उवाहित्या' उद्वाधपतां पीडयतः स्मेत्यर्थः । 'तएणं' ततः खलु=तदनु स धन्यः सार्थवाहो विजयं तस्करमेवमवादीत-एहि=आगच्छ तावत्-प्रथमं हे विजय ! आगाम् 'एगंतमवक्रमामो' एकान्तमपक्रामावः=उच्चार-प्रसवणनिवृत्त्यर्थं निर्जने स्थाने गच्छावः, येनाहमुच्चारप्रसवणे 'परिट्टवेमि' परिष्ठापयामि=उच्चारप्रसवणोत्सर्गं करोमि । ततः खलु स विजयस्तस्करो धन्यं

आहार कोया-आहार कर बादमें उस पांथक को वहां से खाना कर दिया । (तएणं से पयए दासचेडे तं भोजनपिटकं गिह्णइ गिह्णित्ता जायेव दिस्सि पाउन्धूप तामेव दीसि पडिगए) खाना खाते समय उस पांथकदास चेटकने उस भोजन के डिब्बे को ले लिया और लेकर जहां से आया था वहीं पर चला गया (तएणं तस्स धणस्स सत्थवाहस्स तं विउलं असणं ४ आहारियस्स समाणस्स उच्चारपासवणे णं उवाहित्या) इसके बाद धन्यसार्थवाह को उस ४ प्रकार के अशन आदि खाने से बड़ी नीत और लघुनीत की बाधा उपस्थित हुई (तएणं से धन्ने सत्थवाहे विजयं तक्करं एव वयासी) सो उस धन्यसार्थवाहने विजय चौर से इस प्रकार कहा-(एहि ताव विजया ! एगंतं अवक्रमामो जेणं अहं उच्चारपासवणं परिट्टवेमि) आओ-विजय चौर तुम और हम दोनों निर्जन एकान्त-स्थान में चले । मुझे उच्चारप्रसवण की बाधा हो रही है सो मैं वहां उच्चार प्रसवण से निवृत्त होऊंगा ।

आर नातना आहारने जग्ग्या जग्ग्या पछी तेखे पांथकने त्यांधी जगानी आरा आपी. (तएणं से पयए दासचेडे तं भोजनपिटकं गिह्णइ गिह्णित्ता जायेव दिस्सि पाउन्धूप तामेवदिस्सि पडिगए) जग्ग्या पछी पांथकदास चेटके ते उआने दीधो अने वधने जग्ग्या थीआओये हुतो त्यां जतो रथो. (तएणं तस्स धणस्स सत्थवाहस्स तं विउलं असणं ४ आहारियस्य समाणस्स उच्चारपासवणे णं उवाहित्या) त्थार आद धन्यसार्थवाहने आर नातना आहारो जग्ग्या पछी दीधं थंअ तेभज वधु थंअनी मुशेदी वधो थंअ. (तएणं से धन्ने सत्थवाहे विजयं तक्करं एव वयासी त्थारे धन्य सार्थवाहे विजय्य थोरने वधुं—(एहि ताव विजया ! एगंतं अव-क्रमामो जेणं अहं उच्चारपासवणं परिट्टवेमि) विजय्य थोर थावो आपणे अने निर्जन एकान्त स्थानमां जग्ग्या अने उच्चार प्रसवणानी मुशेदी वधो

लङ्कारे अहं हे विजय ! एतद् विपुलमशनं त्वाद्यं स्वाद्यं काकेभ्यो वा
 मुनकेभ्यो वा दद्याम्, 'उक्कुरुडियाए' उक्कुरुडिकायां=रुक्मवरपुष्पनिक्षेपणस्थाने
 वा खलु=निश्चयेन 'छडेज्जा' त्यजेयं=प्रक्षिपेयं किन्तु नैव खलु=तुभ्यं पुत्र-
 घातकाय, पुत्रमारकाय, 'अरिस्स' अरये=अनिष्टकारिणे 'वेरियस्स' वैरिकाय=
 परिणतशत्रुभावाय, 'पडिणीयस्स' प्रत्यनोकाय=मतिकूलविधायिने, 'पच्चा-
 मित्तस्स' प्रत्यामित्राय= हार्दिकशत्रवे 'एत्तो' एतस्माद् विपुलाद् अशनपान-
 स्वाद्यस्वाद्यात् 'संविभागं' संविभागम्=अंशरूपेण. पृथकरणं 'करेज्जामि'
 कुर्वाणम्। अस्मादशनादिकानुभ्यं किञ्चिदपि न दास्यामीति भावः। ताः खलु=
 न्युपेत्यास धन्यः सार्थवाहस्तद् विपुलमशनपानस्वाद्यस्वाद्यम् आहारेद् 'आहारयति=
 भुङ्क्ते, आहारयित्वा तं पान्यकं 'पडिविसज्जेइ' प्रतिविसर्जयति=गृहं प्रति

से इस प्रकार कहा—(अवियाइ अहं विजय ! एयं विउलं असणं ४ कायाणं
 वा मुणगाणं वा दलएज्जो उवक्कुरुडियाए वा णं छडेज्जा नो चेव णं तव पुत्तघायगस्स
 पुत्तमारगस्स अरिस्सवेरियस्स पडिणीयस्स पच्चामित्तस्स एत्तो विउलाओ असणं ४
 संविभागं करेज्जामि) हे विजय चौ ! मैं चाहे इस विपुल अशन, पान,
 स्वाद्य, स्वाद्य, रूप चतुर्विध आहार को कौनों के लिये अथवा कुतों के
 लिये दे दूंगा—या इसे उकड़े पर—कूड़ा करकट डालनेके स्थान पर—डाल-
 दूंगा परन्तु पुत्रघातक, पुत्रमारक, अनिष्टकारी, शत्रुभाव से परिणत, प्रति-
 कूल विधायी तथा हार्दिक शत्रु ऐसे तुम्हारे लिये इसमें से विभाग तुम्हें
 नहीं दूंगा। (तएणं से धन्ने सत्थवाहे तं विउलं असणं ४ आहारेइ,
 आहारित्ता तं पथयं पडिविसज्जेइ) इस प्रकार उस विजय नरेश से
 कह कर धन्य सार्थवाहने उस विविध प्रकार के अशनादिरूप चतुर्विध

धन्यसार्थवाहने ते विजय औरने आ प्रभाछे कहुं—(अवियाइ अहं विजय !
 एयं विउलं असणं ४ कायाणं वा मुणगाणं वा दलएज्जो उवक्कुरुडियाए
 वाणं छडेज्जा नोचेव णं तव पुत्तघायगस्स पुत्तमारगस्स अरिस्स वेरियस्स
 पडिणीयस्स पच्चामित्तस्स एत्तो विउलाओ असणं ४ संविभागं करेज्जामि)
 हे विजय और ! आ पुक्कण प्रभाछुमां जनाववाभां आवेलां यार जतनां आहार
 हुं कागडाओ अथवा कूतराओने भवसववा तैयार छुं हे छिंकराणी जज्याओ नाभीय
 पणु तारा जेवा पुत्तना हत्थारा पुत्त मारनारा, अनिष्ट करनार शत्रु घट भयेला,
 जोहुं करनान तेमज्ज कडिंठ शत्रुने आभांथी । छइस्सो भणी न शके, तभारा
 जेवा हुंठने तो ओक कडो पणु आभांथी भणी शके तेम नथी। (तएणं से धन्ने
 तं विउलं असणं ४ आहारेइ, आहारित्ता तं पथयं पडिविसज्जेइ)
 आ प्रभाछे विजय औरने जवाण आभीने धन्य सार्थवाह, ते अशन, पान, वगेरेना

सार्धवाहमेवमवादीत-हे देवानुप्रियाः ! हे श्रेष्ठिर्नर्याः ! सुप्माकं 'विउलं' विपुलं=प्रचुरमंशानादिकमाहारितानामस्ति-उच्चारं वा, प्रसवणं वा, मम खलु हे देवानुप्रियाः ! एतैर्वहुभिः कशाप्रहारैश्च यावत्-लताप्रहारैश्च तृष्णया च क्षुधया च 'परम्भवमाणस्स' परामभवतः=पीडितस्याऽनाहारितस्य च नास्ति किमपि उच्चारं वा प्रसवणं वा, का नाम वुमुक्षाप्रहार-पीडितस्योच्चारप्रसवणवाद्ये ? ति भावः, 'तं' तस्मात्कारणात् 'छंदेण' छन्देन=स्वेच्छया युयं हे देवानुप्रियाः ! एकान्ते उपक्रम्योच्चारप्रसवणे परि-

(तएणं से विजयतक्करे धणं सत्थवाहं एवं वयासी) धन्यसार्धवाह की इस बात को सुनकर उस विजय चौरने उनसे ऐसा कहा-(तुम्हें देवानुप्रिया ! 'विउलं' असणं ४ आहारियस्स' अतिथि उच्चारं वा पासवणे वा) हे देवानुप्रिय ! इस विपुल अंशनादिरूप ४ प्रकार का आहार करने वाले आप को बड़ा नाच लघुनीत की बाधा भले हो गई है। परन्तु (ममणं देवानुप्रिया ! इमेहिं वहुहिं कसप्पहारेहि य जाव लयापहारेहि य तण्हाए य छुहाए य परामभवमाणस्स णत्थि केइ उच्चारं वा पासवणे वा तं छंदेण देवानुप्रिया ! तुम एगं तं अवक्कामित्ता उच्चारपासवणं परिद्वेइ) हे देवानुप्रिय ! इन अनेक कशा के प्रहारों से यावत् लता-पण्डि-के प्रहारों से तथा क्षुधा और प्यास से पीडित हुए मूझ अनाहारी को उच्चार प्रसवण की कोई बाधा ही नहीं है। अर्थात् मुझ पर जो मार पड़ी है उससे भूख और प्यास सब शांत हो गई है। उच्चार और प्रसवण की बाधा मुझे कहां से हो सकती है। भवः हे देवानुप्रिय ! आप ही अपनी इच्छा से एकान्त में जाकर उच्चार और

थध छे भाटे भारे तेनाथी निवृत्त थधुं छे (तएणं से विजयतक्करे धणं सत्थवाहं एवं वयासी) धन्यसार्धवाहनी आ बात सांलगिने विजय चोरे तेने कहुं--(तुम्हें देवानुप्रिया ! विउलं असणं ४ आहारियस्स' अतिथि उच्चारं वा पासवणे वा) हे देवानुप्रिय ! पुष्कण प्रमाणमां अशन वगेरे थार लताना आहारने करनार तमने दीधं शंका अने लघुः शंकांनी सुशेकी-ठापी थध थके छे, पणु (ममणं देवानुप्रिया ! इमेहिं वहुहिं कसप्पहारेहि य जाव लयापहारेहि य तण्हाए य छुहाए य परामभवमाणस्स णत्थि केइ उच्चारं वा पासवणे वा तं छंदेण देवानुप्रिया ! तुम एगं तं अवक्कामित्ता उच्चार पासवणं परिद्वेइ) हे देवानुप्रिय ! डोरडा अने लाकडीयो वगेरेना सभत भारथी तेमण भूण्या अने तरस्या भारा जेवा निराहारी भाणुसने उच्चार प्रसवण लुनी भाधा क्यांथी होय ? ओटवे के सभत भारपीट तेमण भूण्या अने तरसने दीधि दीधं शंका अने लघुशंकाओ ओकदम शांत पडी गछ छे, ओथी उच्चार प्रसवणुनी सुशेकी उत्पन्न थवानी संभावना न देणाती नथी. ओटवा भाटे हे देवानुप्रिय ! तमे न तमारी धंथा

'जाव जलने' = यावच्चलति = यावत्-प्रादुर्भूतायां रजण्यां = प्रभातसमये दिन-
करे जायति सूर्योदये सति पुनर्विपुलमशनं ४ यावत्- उपस्कृत्य पान्थकाय
दामचेटाय भोजनपिटकं ददाति, स चारकशालायां गत्वा धन्यस्य सार्थ-
चाहम्य भोजनपात्रे 'परिवेसेइ' परिवेषयति = निदधानि । ततः खलु स धन्यः
सार्थवाहो विज्ञयस्य तस्करस्त तस्माद् विपुलाद् अशनपानप्राथम्याद्वात्
संविभागं करोति, स्वयं च भुङ्क्ते । ततः खलु स धन्यः सार्थवाहः पान्थकं
दासचेटं 'विमज्जेइ' विमर्जयति = गृहगमनायाऽऽदिगति । ततः खलु स
पान्थको भोजनपिटकं गृह्णन्वा 'चारगाओ' चारकात् = रात्रागागन् प्रतिनिष्क्रा-
मति, प्रतिनिष्क्रम्य राजगृहं नगरं मध्यमध्यं यत्रैव स्वकं गृहं यत्रैव भद्रा

चोखे हुए और परमशुचीभूत हो कर उसी अपने स्थान पर आ गये । (तएणं
या भद्रा कल्लं जाव जलने विउलं अम्मणं ४ जाव परिवेसेइ) दूसरे दिन
जब प्रातःकाल हुआ और सूर्य प्रकाशित हो चुका तब उस भद्राने अशनादि
रूप चतुर्विध आहार को विपुलमात्रा में बनाकर उसे भोजन के डिल्ले में
रख पान्थकदास चेटक के हाथ धन्यसार्थवाह के पास कारागार में भेजा-
पान्थकदासचेटकने पहिलेकी ही तरह होकर उसे थालीमें भोजन के लिये
परोसा-परोस कर उमने सेठ के दोनों हाथों को धुलाया-(तएणं से धण्णे
सत्थवाहे विज्ञयस्स तस्करस्स तओ विउलाओ अम्मणं संविभागं करेइ)
बाद में उस धन्यसार्थवाहने विज्ञय चौर के लिये उम अपने चार प्रकार
के आहार में से विभाग कर दिये (तएणं से धण्णे सत्थवाहे पंथगं दास
चेडयं विमज्जेइ) धन्य सार्थवाहने बाद में उस पान्थक दाम चेटक को
वहां से वापिस कर दिया । (तएणं से पंथए भोगणपिडगं गहाय चारगाओ

४ जाव परिवेसेइ) गीत द्विसे अवार थयुं अने सूर्य उदय पायेथे त्यादे
भद्रा लायाथे पुच्छण प्रमाणुमां अशन पगेदे चार वतना आहार जनावी ते ओक
स्वच्छ उभाभां भूमीने पान्थकदास चेटकने जेलभां धन्य सार्थवाहनी पास पडोआउवा
आज्ञा करी, पडोवांनी जेम ४ पान्थक दास चेटके त्यां जधने थणीमां जमवत्तुं
पीरस्थुं पीरस्त्रीने तेहे शेठना जने साथ धावडाल्या. (तएणं से धण्णे सत्थवाहे
विज्ञयस्स तस्करस्स तओ विउलाओ अम्मणं ४ संविभागं करेइ) त्थार पछी
धन्य सार्थवाहे विज्ञय ओरने भाटे चार वतना आहारमांथी लाग करी आयेथे.
(तएणं से धण्णे सत्थवाहे पंथगं दासचेडयं विमज्जेइ) त्थार पछी धन्य
सार्थवाहे पान्थक दास चेटकने घेर पाछे वल्लेथे. (तएणं से पंथए भोगण-
पिडगं गहाय चारगाओ पडिनिक्खमइ) पान्थक दास चेटक ओचनना उज्जाने

વિપુલાદ અશનપાનલાઘ્વાદ્યાન સંવિભાગમ્=અંશરૂપેણ પૃથક્કરણં કર્યામ્ તદાઽહં
 યુષ્માભિઃ સાર્દ્ધમેકાન્તમપક્રમામિ । તતઃ સ્વલુ=તદનુ સ ધન્યઃ સાર્થવાહે
 વિજયમેયમવાદીત્-અહં સ્વલુ તુભ્યં તસ્માદ વિપુલાદ અશનપાનલાઘ-મ્વાદ્યાન
 સંવિભાગં કરિણ્યામિ । તતઃ સ્વલુ મ વિજયો ધન્યસ્ય સાર્થવાહસ્યૈતમ્=
 સંવિભાગસ્વીકરણરૂપમર્થ 'પહિમુણેઙ્' પ્રતિશૃણોતિ=સ્વીકરોતિ । તતઃ સ્વલુ=
 અશનાદિ સંવિભાગસ્વીકારાનન્તરં મ વિજયો ધન્યેન સાર્દ્ધમેકાન્તમપક્રમામિ,
 શ્રેષ્ઠી ઉચ્ચારમસ્રવણે પરિષ્ઠાપયતિ, પરિષ્ઠાપ્ય 'આયંતે' આગમિતઃ=કૃત-
 શુદ્ધિકઃ 'ચોક્ષ્વે' ચોક્ષઃ=સચ્ચઃ 'પરમસુદ્ભૂષ' પરમશુચીભૂતઃ=મહાશક્તિ-
 મુલ્લહસ્તઃ સન્ તદેવ સ્થાનમ્ 'ઉવસંકમિત્તા' ઉપસંક્રમ્ય=તંપ્રાપ્ય 'વિહરત્'
 વિહરતિ=તિષ્ઠતિ । તતઃ સ્વલુ=ઇતથ સા મદ્રા 'કલ્' કલ્પે=દ્વિતીયદિવસે

અશનાદિરૂપ ચતુર્વિધ આહાર મેં સે વિભક્ત મુઝે યાનેકો દો અર્થાત્-ઉસમેં
 મેરા વિભાગ રખલો-તો મેં તુમ્હારે માથે એકાન્ત મેં ચલતા હું । (તણં સે
 ધણે સત્થવાહે વિજયં એવં વયાસી-અહણં તુભં તઓ વિપુલાઓ અસણ ૪ સંવિ-
 ભાગં કરિસ્સામિ તણં સે વિજય ધણસ્સ સત્થવાહસ્સ એમઢં પહિમુણેઙ્)
 તથ ધન્ય સાર્થવાહને ઉસ વિજય ચૌર સે હમ પ્રકાર કહ્યા-હાં મેં તેરે લિયે
 ઉસ વિપુલ આહાર મેં સે વિભાગ કર દંગા-। હમકે વાદ ઉસ વિજયને ધન્ય
 સાર્થવાહ કે હસ અર્થ કો-કહને કો માનલિયા-(તણં સે વિજય ધણેણં
 સદ્ધિ એગંતે અવક્રમેઙ્ ઉચ્ચારપાસવણં પરિટ્ઠવેઙ્) વાદ મેં થહ વિજય ધન્ય
 સાર્થવાહ કે સાથ એકાન્ત મેં ગયા-વહાં જાકર સેઠ ધન્યને ઉચ્ચાર ઔર
 મસ્રવણ કી પરિષ્ઠાપન કી । (પરિટ્ઠવિત્તા આયંતે ચોક્ષ્વે પરમસુદ્ભૂષ તમેવ
 ઠાણ ઉવસંકમિત્તા વિહરત્) પરિષ્ઠાપના કે વાદ આગમન કર ધન્યસાર્થવાહ

એ તમે હવે તમારા માટે આવતા અશન, પાન, વગેરે એના જાતના
 આહારમાંથી હિસ્સો મને પણ આપવાની બાંહેધરી આપો તો હું તમારી સાથે
 એકાંતમાં આવવા તૈયાર છું. (તણં સે ધણે સત્થવાહે વિજયં એવં વયાસી
 અહણં તુભં તઓ વિપુલાઓ અસણ ૪ સંવિભાગં કરિસ્સામિ તણં
 સે વિજય ધણસ્સ સત્થવાહસ્સ એમઢં પહિમુણેઙ્) એના જવાબમાં ધન્ય
 સાર્થવાહે વિજય ચોરને કહ્યું-સારું અશન, પાન, વગેરે ચાર જાતના વિપુલ
 આહારમાંથી તને પણ ભાગ આપીશ. ત્યાર પછી વિજય ચોરે ધન્ય સાર્થવાહની
 વાત સ્વીકારી (તણં સે વિજય ધણેણં સદ્ધિ એગંતે અવક્રમેઙ્ ઉચ્ચાર-
 પાસવણં પરિટ્ઠવેઙ્) અને તે ધન્ય સાર્થવાહની સાથે એકાંતમાં ગયો. ત્યાં જઈને
 ધન્ય સાર્થવાહે ઉચ્ચાર અને પ્રસ્રવણની પરિષ્ઠાપના કરી. (પરિટ્ઠવિત્તા આયંતે
 ચોક્ષ્વે પરમસુદ્ભૂષ તમેવ ઠાણ ઉવસંકમિત્તા વિહરત્) પરિષ્ઠાપના પછી
 ધન્ય સાર્થવાહે શુદ્ધી કરી અને આ પ્રમાણે તેઓ શુદ્ધ અને નિર્મળ થઈને ફરી
 પોતાના સ્થાને આવી ગયા. (તણં સા મદ્રા કલ્લં જાવ જલંતે વિઝલં અસણ

'जाय जलंने' = यावत्तलति = यावत्-पादुप्पभातायां रजन्यां = पभातसमये दिन-
करे जाति सूर्योदये सति पुनर्विपुलमशनं ४ यावत्- उपस्कृत्य पान्थकाय
दामचेटाय भोजनपिटकं ददाति, स चारकशालायां गत्वा धन्यस्य सार्थ-
वाहस्य भोजनपात्रे 'परिवेसेइ' परिवेपयनि = निदधानि । ततः खलु स धन्यः
सार्थवाहो विजयस्य तस्करस्य तस्माद् विपुलाद् अशनपानग्राह्यग्राह्यात्
संविभागं करोति, स्वयं च भुङ्के । ततः खलु स धन्यः सार्थवाहः पान्थकं
दासवेदं 'विमज्जेइ' विमज्जयनि = वृद्धगमनायाऽऽदिगति । ततः खलु स
पान्थको भोजनपिटकं गृह्णात्वा 'चारगाओ' चारकात् = रागगागात् प्रतिनिष्का-
मति, प्रतिनिष्क्रम्य राजगृहं नगरं मध्यमध्येन द्वात्रैव स्वकं वृष्टं यत्रैव भद्रा

चोखे हुए और परमशुचीभूत हो कर उसी अपने स्थान पर आ गये। (तएणं
गा भद्रा कल्लं जाय जलंने विउलं अमणं ४ जाय परिवेसे।) दूसरे दिन
जब प्रातःकाल हुआ और सूर्य प्रकाशित हो चुका तब उस भद्राने अशनादि
रूप चतुर्विध आहार को विपुलमात्रा में बनाकर उसे भोजन के डिब्बे में
रख पांथकदास चेटक के हाथ धन्यसार्थवाह के पास कारागार में भेजा-
पांथकदासचेटकने पहिलेकी ही तरह होकर उसे थालीमें भोजन के लिये
परोसा-परोस कर उमने सेट के दोनों हाथों को धुलाया-(तएणं से धण्णे
सत्थवाहे विजयस्स तस्करस्स तओ विउलाओ अमणं ४ संविभागं करेइ)
बाद में उस धन्यसार्थवाहने विजय वौर के लिये उम अपने चार प्रकार
के आहार में से विभाग कर दिये (तएणं से धण्णे सत्थवाहे पंधगं दास
चेडयं विमज्जेइ) धन्य सार्थवाहने बाद में उम पांथक दास चेटक को
चहां से वापिस कर दिया। (तएणं से पंधए भोजणपिटगं गहाय चारगाओ

४ जाय परिवेसेइ) पीछे दिवसे सवार थयुं अने सूर्य उदय पाग्यो त्थारे
भद्रा आयाओ पुण्ण प्रमाळुमां अशन वजेरे आर जतना आहार जनावी ते ओइ
स्वच्छ उगाभां भूणीने पांथकदास चेटकने जेतमां धन्य सार्थवाहणी भासे पडोआउवा
आत्ता करी. पडेजांनी जेम ७ पांथक दास चेटके त्यां जधने थणीमां जभवत्तुं
पीरत्थुं पीरसीने तेणे शेडना अने हाथ धावडाव्या. (तएणं से धण्णे सत्थवाहे
विजयस्स तस्करस्स तओ विउलाओ अमणं ४ संविभागं करेइ) त्थार पछी
धन्य सार्थवाहे विजय खेरने भाटे आर जतना आहारमांथी लाग की आग्यो.
(तएणं से धण्णे सत्थवाहे पंधगं दासचेडयं विमज्जेइ) त्थार पछी धन्य
सार्थवाहे पांथक दास चेटकने घेर पाछी गज्यो. (तएणं से पंधए भोजण-
पिटगं गहाय चारगाओ पडिनिक्खमइ) पांथक दास चेटक खोजनना उज्जाने

ભાર્યા=ધન્યસાર્થવાહપત્ની તત્રીત્રીપાગગચ્છતિ, ઉપાગત્ય ભદ્રાં સાર્થવાહીમેયમવા-
 દીત-एवं खलु हे देवानुप्रिये ! धन्यः सार्थवाहस्तत्रपुत्रघातकस्य यावत्
 प्रत्यामित्रस्य तस्माद् विपुलाद् अशनपानखाद्यस्वाद्यात् संविभागं करोति ।
 ततः=तदनन्तरं खलु सा भद्रा सार्थवाही पान्थकस्य दासचेटकस्य 'अंति'ए'
 अन्तिके=समीपे 'एवं' एतम् पान्थककथितम् 'अद्र' अर्थम्=धन्यसार्थवाहस्य
 विजयतस्करार्थं स्वस्थाशनादेः संविभागकरणरूपवृत्तान्तं श्रुत्वा 'आसुरुक्ता'
 आशुरुक्ता, आशुरक्ता=आशु=शीघ्रं रुक्ता=कोपोदयाद् विमृष्टा, यथा आशु=शीघ्रं
 पडिनिक्खमइ) वह पांथक दासचेटक भोजन पिटक को लेकर कारावास
 से निकला (पडिनिक्खमिच्चा रायगिह नयरं मज्झं मज्झे णं जेणेव सएगिहे
 जेणेव भद्दा भारिया सत्थवाही तेणेव उवागच्छइ) निकल कर। राजगृह नगर
 के ठीक बीचों बीच मार्ग से होता हुआ जहाँ अपना घर और वह
 भद्रा सार्थवाहीथी वहां आया—(उवागच्छित्ता भद्रं सार्थवाहीणि एवं वयासी)
 आकर उसने भद्रा सार्थवाहीनी से ऐसा कहा—एवं खलु देवाणुप्पिए
 घण्णे सत्थवाहे तव पुत्तघायगस्स जाव पच्चामित्तस्स ताओ विउलाओ
 असण ४ संविभागं करेइ) हे देवानुप्रिये ! धन्य सार्थवाह तुम्हारे पुत्र
 घातक यावत् हार्दिक शत्रु विजय चौर को विपुल अशन आदि रूप चार
 प्रकार के आहारमें से हिस्सा देते हैं। (तएणं सा भद्दा सत्थवाही
 पंथयस्स दासचेडयस्स अंति ए एयमं सोच्चा आसुरुक्ता रुद्धा जाव मिस-
 मिसेमाणा घणस्स सत्थवाहस्स पओसमावज्जइ) इस तरह पांथक

લઈને બેલમાંથી બહાર નિકળ્યો (પડિનિક્કમિત્તા રાયગિહં નયરં મજ્ઞં
 મજ્ઞેણં જેણેવ સપગિહે જેણેવ ભદ્દા ભારિયા સત્થવાહી તેણેવ ઉવાગચ્છઈ)
 નીકળીને રાજગૃહ નગરની ઠીક વચ્ચેના માર્ગમાં પસાર થઈને બંધાં પોતાના
 ઘર અને ભદ્રા સાર્થવાહી હતી ત્યાં આવ્યો (ઉવાગચ્છિત્તા ભદ્રં સત્થ
 વાહીણિં એવં વયાસી) આવીને તેણે ભદ્રા સાર્થવાહીને આ પ્રમાણે કહ્યું
 (એવંખલુ દેવાણુપ્પિયે ! ઘણે સત્થવાહે તવ પુત્તઘાયગસ્સ જાવ પચ્ચામિત્ત
 સ્સતાઓ વિઉલાઓ અસગ ૪ સંવિભાગં કરેઈ) હે દેવાણુ પ્રિયે ! ધન્ય સાર્થવાહ
 તમારા પુત્રના ઘાતક અને શત્રુ વિજય ચોરને બહુ જ વધારે અશન વગેરેના
 ચાર પ્રકારના આહારમાંથી હિસ્સો ખાવા માટે આવે છે. (તણં સા ભદ્દા ભારિયા
 સત્થવાહી પંથયસ્સ દાસચેડયસ્સ અંતિયે એયમદ્ધં સોચ્ચા આસુરુક્તા
 રુદ્ધા જાવ મિસમિસેમાણા ઘણસ્સ સત્થવાહસ્સ પઓસમાવજ્જઈ)

रक्ता=कोपावेशाद् रक्तमुखनेत्रा. 'रुद्धा' रुष्टा=रोषयुक्ता यावत् 'मिमिमिसे-
माणा' मिसमिसन्ती=क्रोधज्वालायाऽन्तर्दाहममनिता सती धन्यस्य सार्ध-
वाहस्योपरि 'पशोसं' पद्वेपं=प्रकृष्टद्वेषम् 'भावज्ज' आपद्यते=णमोति॥ सू० १०॥

मूलम्— से धण्णे सत्थवाहे अन्नया कयाइं मित्तनाइं
नियगसयणसंबंधिपरियणेणं सएण य अत्थसारेणं रायकज्जाओ
अप्पाणं मोयावेइ, मोयावित्ता चारगसालाओ पडिनिक्खमइ पडि
निक्खमित्ता जेणेव अलंकारियसभा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
अलंकारियकम्मं कारवेइ, कारवित्ता जेणेव पुक्करिणी तेणेव उवा-
गच्छइ, उवागच्छित्ता अह धोयमट्टीयं गेण्हइ, गिण्हित्ता पोक्खरिणीं
ओगाहइ, आगाहित्ता जलमज्जणं करेइ करित्ता ण्हाए कयवलिकम्मे
जाव रायगिहं नगरं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता रायगिहनगरस्स
मज्झंमज्जेणं जेणेव सए गिहे तेणेव पहारेत्थ गमणाए । तएणं
तं धण्णं सत्थवाहं एज्जमाणं पासित्ता रायगिहे नगरे वहवे नियग
सेट्ठिसत्थवाहपभियओ आढंति परिजाणंति सक्कारेति सम्माणेति
अवमुट्ठेति सरीरकुसलं पुच्छंति । तएणं से धण्णे सत्थवाहे जेणेव
सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जा वि य से तत्थ
वाहिरिया परिसा भवइ, तंजहा—दासाइ वा पेस्साइ वा भियगाइ

दासचेट्ठक के मुख से इस ममाचार को सुनकर वह भद्रा सार्धवाही
एकदम क्रोध से लाल मुख नेत्रवाली बन गई, और रोष से युक्त होती
हुई क्रोध की तीव्र ज्वाला से भीतर ही भीतर जलने लगी । इस
तरह उसने धन्यसार्धवाह के ऊपर प्रकृष्ट द्वेष भाव को धारण कर लिया । सूत्र १० ।

आ रीते पांधक दासचेट्ठकना मोधी सभाचार सांखणीने लद्दा लायां ओद्धम
क्रोधधी लाल ओण थछ गछ, अने ते ओधनी न्वाण्णोओधी सणजवा लागी. आ
प्रभावे तेना मनभां धन्य सार्धवाह ऊपर सभत दोष लाव जाये. ॥ सूत्र १० ॥

भार्या=धन्यसार्थवाहपत्नी तत्रीनोपागच्छति, उपागत्य भद्रां सार्थवाहीमेवमवा-
दीत्-एवं खलु हे देवानुमिये ! धन्यः सार्थवाहस्तवपुत्रघातकस्य यावत्
प्रत्यामित्रस्य तस्माद् विपुलाद् अशनपानखाद्यस्वाघात् संविभागं करोति ।
ततः=तदनन्तरं खलु सा भद्रा सार्थवाही पान्थकस्य दासचेटकस्य 'अंतिए'
अन्तिके=समीपे 'एवं' एतम् पान्थककथितम् 'अद्' अर्थम्=धन्यसार्थवाहस्य
चिजयतस्करार्थं स्वस्थाशनादेः संविभागकरणरूपट्टान्तं श्रुत्वा 'आसुरुक्ता'
आशुरुक्ता, आशुरक्ता=आशु=शीघ्रं रक्ता=कोपोदयाद् विमूढा, यदा आशु=शीघ्रं

પડિનિક્ષમઢ) વહ પાંથક દાસચેટક ભોજન પિટક કો લેકર કારાવાસ
સે નિકલા (પડિનિક્ષમિત્તા રાયગિહ નયરં મઝ્ઝં મઝ્ઝે નં જેનેવ સર્ણિહે
જેનેવ ભદ્રા ભારિયા સત્થવાહી તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) નિકલ કર) રાતગૃહ નગર
કે ઠીક વીચી વીચ માર્ગ સે હોતા હુઆ જહાં અપના ઘર ઓર વહ
મદ્રા સાર્થવાહીથી વહાં આયા—(ઉવાગચ્છિત્તા મદ્રં સાર્થવાહીણિં एवं वयासी)
આકર ઉસને મદ્રા સાર્થવાહીની સે દેવા કહા—एवं खलु देवाणुप्पिए
धण्णे सत्थवाहे तव पुत्तघायगस्स जाव पच्चामित्तस्स ताओ विउलाओ
असण ४ संविभागं करेइ) હે દેવાનુમિયે ! ધન્ય સાર્થવાહ તુમ્હારે પુત્ર
ઘાતક યાવત્ હાર્દિક શત્રુ વિજય ચૌર કો વિપુલ અશન આદિ રૂપ ચાર
પ્રકાર કે આઠારમેં સે હિસ્સા દેતે હૈં । (તણં સા મદ્રા સત્થવાહી
પંથયસ્સ દાસચેટકયસ્મ અંતિએ એયમં સોચ્વા આસુરુક્તા રક્તાજાવ મિસ-
મિસેમાણા ધણસ્સ સત્થવાહસ્સ પઞ્ઞોસમાવજ્ઞઈ) इस तरह पान्थक

લઈને જેલમાંથી બહાર નિકળ્યો (પડિનિક્ષમિત્તા રાયગિહં નયરં મઝ્ઝં
મઝ્ઝેણં જેનેવ સર્ણિહે જેનેવ ભદ્રા ભારિયા સત્થવાહી તેણેવ ઉવાગચ્છઈ)
નીકળીને રાતગૃહ નગરની ઠીક વચ્ચેના માર્ગમાં પસાર થઈને ત્યાં પોતાના
ઘર અને ભદ્રા સાર્થવાહી હતી ત્યાં આબે (ઉવાગચ્છિત્તા મદ્રં સત્થ-
વાહીણિં एवं वयासी) આવીને તેણે ભદ્રા સાર્થવાહીને આ પ્રમાણે કહ્યું
(एवं खलु देवाणुप्पिए ! धण्णे सत्थवाहे तव पुत्तघायगस्स जाव पच्चामित्त
स्स ताओ विउलाओ असण ४ संविभागं करेइ) હે દેવાનુ પ્રિયે ! ધન્ય સાર્થવાહ
તમારા પુત્રના ઘાતક અને શત્રુ વિજય ચોરને બહુ જ વધારે અશન વગેરેના
ચાર પ્રકારના આઠારમાંથી હિસ્સો ખાવા માટે આવે છે. (તણં સા મદ્રા ભારિયા
સત્થવાહી પંથયસ્સ દાસચેટકયસ્સ અંતિએ એયમદ્રં સોચ્વા આસુરુક્તા
રક્તા જાવ મિસમિસેમાણા ધણસ્સ સત્થવાહસ્સ પઞ્ઞોસમાવજ્ઞઈ)

एवं वृत्त। समाणी हट्ट जाव आसणाओ अचमुट्टेइ अचमुट्टिता
कंठाकंठि अवयासइ खेमकुसलं पुच्छइ पुच्छिता पहाया जाव
पायच्छिता विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरइ ॥ सू. ११ ॥

टीका—तए

अन्यदा कदाचित् द्वारा स्वकेन च 'अन्धमारेण' अन्धमारेण=बहुमूल्यरत्नादिना बहुमूल्यरत्नादि
समर्पणेनेत्यर्थः 'रायकज्जाओ' राजकार्यान्=राजसङ्कटात् आत्मानं=स्वकं
'मोयावेइ' मोचयति, मोचयित्वा=मुक्तो भूत्वा चारुगसालायाः प्रतिनिष्का-
मति, प्रतिनिष्क्रम्य यत्रैव 'अलंकारियसभा' अलङ्कारिकसभा=नापितशाला-
क्षीरकर्मादिशरीरमङ्गलारम्भानमित्यर्थः, तत्रैवापागच्छति, उपागत्य 'अलंकारि-
यकम्मं' अलङ्कारिककर्म=नखकेशमण्डनादिकर्म 'कावेइ' कारयति, कारयित्वा
यत्रैव 'पुक्खरिणी' पुष्करिणी=वर्तुलवापी तत्रैवापागच्छति, उपागत्य=अथ

'तए णं से धण्णे मन्थवाहे अन्नया कयाइ' इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (से णं से धण्णे मन्थवाहे) अन्नया कयाइ (अन्नया कयाइ) किसी एक समय (नि नत्तमिधमन्नयसंघाधपरिपणेणं)
मित्र, ज्ञाति, निजक स्वजन संबंधी परिजनों द्वारा (स्वकेन
अन्धमारेण) अपने वह मूल्य रत्नादि भेट राजा को समर्पण करा कर
(रायकज्जाओ अयाणं मोयावेइ) राज्य संकट से अपने आपको मुक्त करा
लिया। (मोयावित्ता चारुगसालाओ पडिनिक्खमइ) जब वह मुक्त होपि
हो चुका—तब कारागार से बाहर निकला (पडिनिक्खमिता जेणेव
अलंकारियसभा तेणेव उवागच्छइ) बाहर निकल कर वह जहां नापित
की दुकान थी—वहां गया—(उवागच्छिता अलंकारियकम्मं कारवेइ)

'तएणं से धण्णे मन्थवाहे अन्नया कयाइ' इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएणं) त्थार पछी (से धण्णे मन्थवाहे) धन्य साथवाले (अन्नया
कयाइ) डेढ थोडा पणते (मित्रनाइनियगसयणमवधिपरिपणेणं)
प्राप्ताना मित्र, ज्ञाति स्वजन, संबंधी अने परिजनों द्वारा (स्वकेन अन्धमारेणं)
जहु किंमती रत्ना वगैरे समर्पण करवावेने (रायकज्जाओ अयाणं मोयावेइ)
राज्य संकटमांथी प्राप्तानी जतने छिडवी (मोयावित्ता चारुगसालाओ पडिनि-
क्खमइ) त्थारे ते भुक्त थोडा जेहेर करवायां आये, त्थारे ते जेदमांथी
जहार निक्खये। (पडिनिक्खमिता जेणेव अलंकारियसभा तेणेव उवागच्छइ)
जहार नीकणीने ते जेवमनी दुकान उपर गये। (उवागच्छिता अलंकारियकम्मं

वा भाइलगाइ वा, सा वि य णं धणं सत्थवाहं एज्जंतं पासइ,
 पासित्ता पायवडियाए खेमकुलं पुच्छंति, जावि य से तत्थ
 अब्भंतरिया . परिसा भवइ तं जहा—मायाइ वा पियाइ वा
 भायाइ वा भगिणीइ वा, सावि य णं धणं सत्थवाहं एज्जमाणं
 पासंति पासित्ता आसणाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता कंठाकठियं अव-
 यासिय वाहण्णमोक्खणं करेति तएणं धण्णे सत्थवाहे जेणेव
 भद्दा भारिया तेणेवं उवागच्छइ तएणं सा भद्दा धणं सत्थवाहं
 एज्जमाणं पासइ पासित्ता णो आढाइ नो परियाणाइ नो सक्कारेइ,
 नो सम्माणेइ, नो अब्भुट्ठेइ नो सरीरकुसलं पुच्छइ, अणाढा
 यमाणी अपरिजाणमाणी असक्कारेमाणी, असम्माणेमाणी, अणब्भु
 ट्ठेमाणी सरीरकुसलं अपुच्छमाणी तुसिणीया परम्मुही संचिट्ठइ,
 तएणं से धण्णे सत्थवाहे भद्दं भारियं एवं वयासी—किण्णं
 तुब्भं देवाणुप्पिए ! न तुट्ठी वा न हरिसे वा नाणंदे वा जं मए
 सएणं अत्थसारेणं रायकज्जाओ अप्पा विमोइए, तएणं सा भद्दा
 धणं सत्थवाहं एवं वयासी—कहण्णं देवाणुप्पिया ! मम तुट्ठी
 वा जाव आणंदे वा भविस्सइ, जेणं तुभं मम पुत्तघायगस्स जाव
 पच्चामित्तस्स तओ विउलाओ असणपाणत्ताइमं साइमाओ४ संविभागं
 करेसि, तएणंमे धण्णे भद्दं एवं वयासी—नो खलु देवाणुप्पिए !
 धम्मेत्ति वा तवोत्ति वा कयपडिकइयाइ वा लोगजत्ताइ वा घाडि-
 एइ वा सहाएइ वा सुहि वा तओ विपुलाओ असण०४ संविभागे
 कए नन्नत्थ सरीरचित्ताए, तएणं सा भद्दा धण्णेणं सत्थवाहेण

एवं वृत्तः समाणी हट्ट जाव आसणाओ अवमुट्टेइ अवमुट्टित्ता
कंठाकंठि अवयासइ खेमकुसलं पुच्छइ पुच्छित्ता पहाया जाव
पायच्छित्ता विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरइ ॥ सू. ११ ॥

टोका—‘तएणं से धण्णे’ इत्यादि—ततः खलु म धन्यः सार्थवाहः
अन्यदा कदाचित् मित्रज्ञानिनिजकस्वजनमम्यन्धिपरिजनेन=मित्रज्ञानिपभृति-
द्वारा स्वकेन च ‘अन्धमारेण’ अर्थसारेण=बहुमूल्यरत्नादिना बहुमूल्यरत्नादि
समर्पणेनेत्यर्थः ‘रायकज्जाओ’ राजकार्यात्=राजसङ्कटात् आत्मान=स्वकं
‘मोयावेइ’ मोचयति, मोचयित्वा=मुक्तो भूत्वा चारकशालायाः प्रतिनिष्का-
मति, प्रतिनिष्कम्य यत्रैव ‘अलंकारियसभा’ अलङ्कारिकसभा=नापिनशाला-
क्षौरगर्मादिशरीरसम्भारस्थानमित्यर्थः, तत्रैवापागच्छति. उपागत्य ‘अलंकारि
यकम्मं’ अलङ्कारिककर्म=नखकेसमण्डनादिकर्म ‘कारवेइ’ कारयति, कारयित्वा
यत्रैव ‘पुक्खणि’ पुष्करिणी=वर्चुलवापी तत्रैवापागच्छति. उपागत्य—अथ

‘तए णं से धण्णे मत्थवाहे अन्नया कयाइं’ इत्यादि ॥

टीका—(तएणं) इसके बाद (से धण्णे सार्थवाहे) उस धन्यसार्थवाहने
(अन्नया कयाइं) किसी एक समय (मित्रनाइनियगमयणसंबंधिपरियणेणं)
मित्र. ज्ञानि, निजक स्वजन संबंधी परिजनों द्वारा (स्वकेन
अन्धमारेणं) अपने बहु मूल्य रत्नादि भेट राजाको समर्पण करवा कर
(रायकज्जाओ अप्पाणं मोयावेइ) राज्य संकट से अपने आपको मुक्त करा
लिया। (मोयावित्ता चारगसालाओ पडिणिक्खमइं) जब वह मुक्त होपि
हो चुका—तब कारागार से बाहर निकला (पडिनिक्खमित्ता जेणेव
अलंकारियसभा तेणेव उवागच्छइं) बाहर निकल कर वह जहां नापिन
की दुकान थी—वहां गया—(उवागच्छित्ता अलंकारियकम्मं कारवेइ)

‘तएणं से धण्णे मत्थवाहे अन्नया कयाइं’ इत्यादि ॥

टीका—(तएणं) त्थार पछी (से धण्णे मत्थवाहे) धन्य सार्थवाहे (अन्नया
कयाइं) डोह ओक पणते (मित्रनाइनियगमयणसंबंधिपरियणेणं)
प्रेतात्मा मित्र. ज्ञानि स्वजन, संबंधी अने परिजनों द्वारा (स्वकेन अन्धमारेणं)
बहु डिंभती रत्ना वगेरे समर्पण करावीने (रायकज्जाओ अप्पाणं मोयावेइ)
राज्य संकटमांधी प्रेतात्मा नतने छोडवी (मोयावित्ता चारगसालाओ पडिणि-
क्खमइं) न्याये ते मुक्त थयेवो न्हरेर करवाभां आल्यो, त्यारे ते जेलमांधी
गहार निकल्यो. (पडिनिक्खमित्ता जेणेव अलंकारियसभा तेणेव उवागच्छइं)
गहार नीकणीने ते दुकाननी दुकान उपर गयो. (उवागच्छित्ता अलंकारियकम्मं

वा भाइल्लागइ वा, सा वि य णं धणं सत्थवाहं एजंतं पासइ,
पासित्ता पायवाडियाए खेमकुलं पुच्छंति, जावि य से तत्थ
अब्भंतरीया . परिसा भवइ तं जहा--मायाइ वा पियाइ वा
भायाइ वा भगिणीइ वा, सावि य णं धणं सत्थवाहं एजमाणं
पासंति पासित्ता आसणाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता कंठाकटियं अव-
यासिय वाहप्पमोक्खणं करेति . तएणं धण्णे सत्थवाहे जेणेव
भद्दा भारिया तेणेव उवागच्छइ तएणं सा . भद्दा धणं सत्थवाहं
एजमाणं पासइ पासित्ता णो आढाइ नो परियाणाइ नो सक्कारेइ,
नो सम्माणेइ, नो अब्भुट्ठेइ नो सरीरकुसलं पुच्छइ, अणाढा-
यमाणी अपरिजाणमाणी असक्कारेमाणी, असम्माणेमाणी, अणब्भु-
ट्ठेमाणी सरीरकुसलं अपुच्छमाणी तुसिणीया परम्मुही संचिट्ठइ,
तएणं से धण्णे सत्थवाहे भद्दं भारियं एवं वयासी--किण्णं
तुब्भं देवाणुप्पिए ! न तुट्ठी वा न हरिसे वा नाणंदे वा जं मए
सएणं अत्थसारेणं रायकज्जाओ अप्पा विमोइए, तएणे सा भद्दा
धणं सत्थवाहं एवं वयासी--कहण्णं देवाणुप्पिया ! मम तुट्ठी
वा जाव आणंदे वा भविस्सइ, जेणं तुब्भं मम पुत्तघायगस्स जाव
पच्चामित्तस्स तओ विउलाओ असणपाणखाइमं साइमाओ४ संविभागं
करेसि, तएणंमे धण्णे भद्दं एवं वयासी--नो खलु देवाणुप्पिए !
धम्मेत्ति वा तवोत्ति वा कयपडिकइयाइ वा लोगजत्ताइ वा घाडि-
एइ वा सहाएइ वा सुहि वा तओ विपुलाओ असण०४ संविभागे
कए नन्नत्थ सरीरचित्ताए, तएणं सा भद्दा धण्णेणं सत्थवाहेण

‘आहंति’ आद्रियन्ते हृदयेन ‘परिजायंति’ परिजानन्ति=सुस्वागतं श्रेष्ठिनः’ इति तस्यागमनमनुमोदयन्ति ‘सत्कारंति’ सत्कारयन्ति मधुरवचनैः, सम्मानेति’ सम्मानयन्ति विविधवस्तुसमर्पणेन, ‘अव्मुद्धेति’ अभ्युत्तिष्ठन्ति विनयार्थमभिमुखमुत्तिष्ठन्ति शरीरकुशलं च पृच्छन्ति। ततः खलु=तदनन्तरं स धन्यः सार्थवाहो यत्रैव स्वकं गृहं तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य यापि च तस्य तत्र बाह्या परिपद=गृहवर्तिवर्जितजनसमुदायः, ‘तंजहा’ तद्यथा- मयथा ‘दामाइवा’ दामा इतिवा. दासाः=गृहदासी पुत्राः. ‘पेस्ताइ वा’

चला- (तएणं त धणं सत्थवाहं एज्जमाणं पासित्ता रायगिहे नगरे बह्वे नियगसेट्ठिसत्थवाहपभियओ आहंति परिजाणंति सत्कारंति सम्मानेति अव्मुद्धेति शरीरकुशलं पुच्छंति) घर को आते हुए उस धन्य सार्थवाह को जब राजगृह नगर में निजः श्रेष्ठी. सार्थवाह आदि लोगोंने देखा तो उन लोगों ने उसका हृदयसे खूब आदर किया-“आपका स्वागत हो” इस प्रकार कहकर उसके आगमन की खूब अनुमोदनाकी मधुर वचनों द्वारा उसका खूब सत्कार किया। अने वस्तुओंको भेंट में देकर खूब सम्मान किया। अपनी विनय प्रकट करने के लिये उसके सम्मुख आने पर उठ बैठे शरीर में कुशल समाचार पूछे। (तएणं से धणं सत्थवाहे जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ) इसके बाद धन्य सार्थवाह जहां अपना घर था गया (उवागच्छित्ता) जावि य से तत्थ बाहिरिया परिसा भवइ) वहां जाकर उसका जो बरक बाहर के लोगों का समुदाय था-(तं जहा) जैसा-(दामाइ वा पेस्ताइ

एज्जमाणं पासित्ता रायगिहे नगरे बह्वे नियगसेट्ठि सत्थवाहपभियओ आहंति परिजाणंति सत्कारंति सम्मानेति अव्मुद्धेति शरीरकुशलं पुच्छंति) राजगृह नगरना निजः श्रेष्ठीओ, सार्थवाहो वगैरेओ ज्यारे धन्य सार्थवाहुने घर पदइ जतां जेया त्यारे तेओ जधाओ भणीने तेभनुं उदय पूर्वकं भूण ज सरस रीते सम्मान कयुं. “तमाइं स्वगत छि.” आ रीते तेना आगमनने अनुमोदन आभ्युं मधुर वचनोशी बोडोओ धन्य सार्थवाहुनो सत्कार क्यो. तेने बोडोओ अनेक वस्तुओ लेटमां आपी. विनय जताववा भाटे ज्यारे धन्य सार्थवाहु बोडोनी सामे पडोअ्या त्यारे तेओ जिला थइ गथा अने तेमखे शरीरनी कुशलता पूछी. (तएणं से धणं सत्थवाहे जेणेव सए गेहे तेणेव उवागच्छइ) त्यार जाइ जथां तेनुं घर उतुं त्यां ज्यो. (उवागच्छित्ता जावि य से तत्थ बाहिरिया परिसा भवइ) त्यां घरनी जहार तेना घरना भाणुसोना समुदाय ओकडो थयो उतो. (तं जहा)

‘धोयमट्टियं’ धौतमृत्तिकां=शुद्धसुगन्धितमृत्तिकां गृह्णाति, गृहीत्वा पुष्करिणीम्
 ‘ओगाहइ’ अवगाहते=प्रविशति, अवगाह्य ‘जलमज्जनं’ जलमज्जनं=जलेन-
 शरीरशुद्धिं करोति, कृत्वा ‘झाप’ स्नातः=सर्वतः कृतस्नानः ‘कयवलिकम्मे’
 कृतवलिकर्मा कृतं स्नानान्तमवश्यकरणीय-पशुपक्ष्यादिनिमित्तमन्नदानादिरूप-
 चलार्थं येन सः, कृतदानकृत्य इत्यर्थः, यावद् राजगृहं नगरमनुप्रविशति,
 अनुप्रविश्य राजगृहनगरस्य मध्यमध्येन यत्रैव एकं गृहं तत्रैव ‘गमणाए’
 गमनाय ‘पहारेत्थ’ प्रधारयति=विचारयति, गृहं प्रति गमनायोद्यतो भवती-
 त्यर्थः, गृहं गच्छतीति भावः। ततःतल्लु तं धन्यं सार्थवाहम् ‘एज्जमागं’
 एज्जमानम्=आगच्छन्तं दृष्ट्वा राजगृहे नगरे बह्वा निजकप्रेष्ठिसार्थवाहमभ्युप-
 जाकर

उसने वहाँ वाल बनवाये । (कारवित्ता जेणेव पुक्खरिणी तेणेव
 उवागच्छइ) दाढी मूछ आदि के वाल बनवा कर फिर वह जहाँ पुष्करि-
 णी थी वहाँ गया । (उवागच्छित्ता अह धोयमट्टियं गेणइ) जाकर
 उसने वहाँ से शुद्ध सुगन्धित मिट्टी को लिया—(गिण्हित्ता पोक्खरिणी
 ओगाहइ) लेकर वह वाद में उस पुष्करिणी में प्रविष्ट हुआ । (ओगा-
 हित्ता जलमज्जनं करेइ, करित्ता ण्हाए कयवलिकम्मे जाव रायगिहं नयरं
 अणुपविसइ) प्रविष्ट होकर वहाँ उसने स्नान किया स्नानकर वायसादि
 पक्षियों के लिये अन्नादि देने रूप वलिकर्म किया । यावत् राजगृह
 नगरमें वह प्रविष्ट हुआ । (अणुपविसित्ता रायगिहनगरस्स मज्झं मज्झेणं जेणेव
 सए गिहे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) प्रविष्ट होकर फिर वह ठीक राजगृह नगर के
 बीचो बीचवाले मार्ग से होता हुआ—जहाँ अपना घर था उस तरफ
 कारवेइ) त्यों बंधने तेण्हे वाण क्खाव्या. (कारवित्ता जेणेव पुक्खरिणी तेणेव
 उवागच्छइ) दाढी मूछ अने भाथा वगेरेना वाण साइ कसवीने ते पुक्खरिणी तरइ
 गये. (उवागच्छित्ता अह धोयमट्टियं गेणइ) त्यों बंधने तेण्हे सुवासित भाटी
 वीधी (गिण्हित्ता पोक्खरिणी ओगाहइ) भाटी बंधने तेण्हे पुक्खरिणीमां प्रवेश क्यो.
 (ओगाहित्ता जलमज्जनं करेइ करित्ता ण्हाए कयवलिकम्मे जाव रायगिहं
 नयरं अणुपविसइ) प्रवेशीने तेण्हे स्नान कथुं. स्नान करीने तेण्हे कागडा वगेरे
 पक्षीयोने भाटे अन्न वगेरेना वाण आपीने णत्ति कम कथुं. त्थार णाह ते राजगृह
 नगरमां आव्या. (अणुपविसित्ता रायगिहनगरस्स मज्झं मज्झेणं जेणेव सए गिहे
 तेणेव पहारेत्थ गमणाए) नगरमां आवीने ते ठीक राजगृह नगरनी बन्धेना
 मार्गथी पसार थधने न्यां तेणुं घर इतुं त्यों गये. (तण्णं त धण्णं सत्थवाहं

१५१
 धनगारधर्मांमृतवर्णिणीटीका अ.२ धन्यस्य विजयेन सह हृदयन्धनादिकम्

दिल्लोऽऽभ्यन्तरपरिपद धन्यं सार्थवाहमेजमानं पश्यति, दृष्ट्वा 'आसणाओ'
 आमानात्=स्वस्वोपवेशनस्यानात् 'अम्बुदेइ' अम्बुजिह्वाति=संसु वम्बुर्ध्वी
 भवति, अम्बुत्थाय 'कंठाकंठियं' कण्ठाकण्ठिकं=कण्ठे च कण्ठे च
 गृहीत्वा यत्प्रवृत्तन तत् कण्ठद्वयसंमिलनपूर्वकम् 'अवयासिय' आश्लिष्य=
 समालिङ्ग्य 'वाहपमोक्खणं' वाहप्रमोक्षणं=चिरवियुक्तप्रियसमागमजन्य-
 हर्षाश्रुमोचनं करोति । ततः खलु=नदनु सं धन्यः सार्थवाहो यन्नैव भद्रा
 भार्या तत्रैवोपागच्छति । ततः खलु सा भद्रा धन्यं सार्थवाहम् 'एजमाणं'
 एजमानं=स्वसमीपे समायातं पश्यति, दृष्ट्वा नो आदिगने, नो परिजानानि,

(पासित्ता) तय देखकर (आसणाओ अम्बुदेइ अम्बुजित्ता कंठाकंठियं अवया-
 सिय वाहपमोक्खणं करेति) ने अपने २ अधिष्ठित स्थान से उठ बैठे
 और उठकर परस्पर मे गले से गला लगाकर मिले । सघने उससे भेंट
 की । आलिङ्गनक्रिया । तथा बहुत दिनों के बाद मिलने से उन लोगों
 ने आनंद जन्य हर्षाश्रुओं का मोचन भी किया अर्थात् हर्षाश्रु
 वरमाये (तएणं से धण्णे सत्थवाहे जेजेव भद्रा भारिया, तेणेव उवा-
 गच्छइ) इसके बाद वह धन्य सार्थवाह जहां भद्रा सार्थवाही थी वहां
 गया (तएणं सा भद्रा धण्णं सत्थवाहं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता
 णो आढाइ, नो परिघाणाइ, नो सक्कारेइ, नो सम्माणेइ, णो
 अम्बुदेइ, नो सरीरकुसलं पुच्छइ) भद्रा सार्थवाहीने आते हुए धन्य
 सार्थवाह को देखा भी परन्तु उसने उस का आदर नहीं किया उसका
 स्वागत नहीं किया, मधुर वचनों से उसका सत्कार नहीं किया विविध
 वस्तुओंके समर्पण से उसने उसका सम्मान नहीं किया । वह उसके

सार्थवाहने धर तरक्ष आवतो ज्ये. (पासित्ता) जेधने (आसणाओ अम्बुदेइ
 अम्बुजित्ता कंठा कंठियं अवयासिय वाहपमोक्खणं करेति) तेजो गथा
 पोतपोतानी ज्ययाओथी जिला थया अने जिला थधने ओइ गीलना गणाथी ग्रेभ.
 पूर्वकं लेट्या. धन्य सार्थवाहने गथा भावसे भल्या. अने तेहुं आलिङ्गन कथुं
 धव्वा द्विसे पथी धन्य सार्थवाहने ज्ये. अने मिलन थयुं ओटवे गथानी आंजोभां
 धर्षनां आंसुओ वरसवा लाय्वां. (तएणं से धण्णे सत्थवाहे जेजेव भद्रा
 भारिया, तेणेव उवागच्छइ) त्यार पथी धत्य सार्थवाह न्यां लद्रा लायों
 डनी-ल्यां गयो. (तएणं सा भद्रा धण्णं सत्थवाहं एज्जमाणं पासइ,
 पासित्ता णो आढाइ, नोसम्माणेइ, णो अम्बुदेइ, नो सरीरकुसलं
 पुच्छइ) लद्रा सार्थवाही ओ धन्य सार्थवाहने आवतां ज्ये. पथु तेजु तेभने
 आदर क्यो नहि, तेभनुं स्वागत कथुं नहि, मधुर वाणी वडे तेभने सत्कारो नहि,

मेण्या इति वा, मेण्याः=मयोजनविशेषे ये नगरान्तरादिषु मेण्वन्ते ते, मिय गाइ वा' भृत्यका इति वा, भृत्याः=आचालपोषिता 'माइल्लागा वा' भागिका इति वा, भागिकाः=भागवन्तः चतुर्थांशादिलाभेन कृप्यादिकारिणां वा यस्यां पण्डिदि साऽपिच खलु-वाद्या परिपद् धन्यं सार्थवाहमेजमानं पश्यति, दृष्ट्वा 'पायवडिया' पादपविता=पादसंलग्ना पादस्पर्शपूर्वकं नग्रीभूता 'खेम-कुशलं' क्षेमकुशलम्, अनर्थानुत्पत्तिः क्षेमम्, अनर्थप्रतिघातः कुशलं, तद् 'पुच्छइ पृच्छति। अग्रे अयि--च तस्य तत्र 'अव्वंभंतरिया' आभ्यन्तरिका=गृहाभ्यन्तरवर्तिनो परिपद् भवति=अस्ति, 'तयथा-तथाहि-मातेति वा पितेति वा भ्रातर इति वा भगिन्य इति वा, साऽपि च खलु मातापित्रा- वा मियगाइवा माइल्लागाइ वा साविष्यणं धणं सत्थवाहं एजंतं पासइ) दास-गृहदासी पुत्र-दास्य-जो काम पडने पर नगरान्तरों में भेजे जाते थे वे भृत्य-जो बालक अवस्थासे ही इस के घर पड़े पुसे थे--भागिक-चौधार्ड हिस्सा लेकर जो कृप्यादि कर्म करते थे वह सब धन्यसार्थवाह को जब आते हुए देखा--तब (पासित्ता पायवडियाए खेमकुशलं पुच्छंति) देखकर उसके पैरों पर गिर पड़ा और उसकी क्षेम कुशल की बात पूछने लगा। अनर्थ की निवृत्तिका नाम क्षेम, और अनर्थ के प्रतिघात का नाम कुशल है (जा वि य से तत्थ अव्वंभंतरिया परिसा-भवइ--तं जहा-मायाइ वा पियाइ वा भायाइ वा भगिनेइ वा सा विणं धणं सत्थवाहं एज्जमाणं पासंति) इसी तरह उस धन्य सार्थवाह की जो भीतरी सभा थी--जसे माता, पिता, भाई, और बहिने--सो इन माता पिता भाई और भगिनो रूप सभाने जब धन्य सार्थवाह को आते हुए देखा जेम डे--दासाइ वा पेस्साइ वा मियगाइ वा माइल्लागाइ वा सा विष्यणं धणं सत्थवाहं एजंतं पासइ) दास-धरना दासी पुत्र, दास्य-डोई पशु आतना काम भाटे जीजा नगरोगां भोक्खवा भाटेना भोक्खे, नृत्य-जे नानपल्लुथी तेने घेर पोपल्लु मेजवीने भोटा थया डोई, भागिक-थोथा भाग वधने जेती वगेरे करता हुता आ गंधाये धन्यसार्थवाहने आवतो जेधने (पासित्ता पायवडियाए खेमकुशलं पुच्छंति) तेना पगे पड्या अने तेनी कुशल क्षेम पूछवा लाया. अनर्थ द्वर थाय ते क्षेम, अने अनर्थने प्रयत्न पूर्वक दृष्ट्वापुं ते कुशल छे. (जावि य से तत्थ अव्वंभंतरिया भवइ तं जहा-मायाइ वा पियाइ वा भायाइ वा भगिनेइ वा सा विणं धणं सत्थवाहं एज्जमाणं पासंति) आ प्रभाळे ज धन्य सार्थवाहना घरमां रहेनाश कुटुंबना भायुसो-माता, पिता, भाई अने जडेनो-वगेरेये धन्य

दिरुपाऽऽभ्यन्तरपरिपद् धन्यं सार्थवाहमेजमानं पश्यति, दृष्ट्वा 'आसणाओ' ग्रामनात्=स्वस्वोपवेशनस्थानात् 'अम्बुद्वेइ' अम्बुनिष्ठाति=संसु वम्बुर्ध्वी भवति, अभ्युत्थाय 'कंठाकंठियं' कंठाकण्टिकं=कण्ठे च कण्ठे च गृहीत्वा यत्पवतन तत् कण्ठद्वयसंमिलनपूर्वकम् 'अवयासिय' आश्लिष्य=समालिङ्ग्य 'वाहपमोक्खणं' वापरममोक्षणं=चिरविपुक्तप्रियसमागमजन्य-हर्षाश्रुमोचनं करोति । ततः खलु=नदनु सं धन्यः सार्थवाहो यत्रैव भद्रा भार्या तत्रैवोपागच्छति । ततः खलु सा भद्रा धन्यं सार्थवाहम् 'एजमाणं' एजमानं=स्वसमीपे समायातं पश्यति, दृष्ट्वा नो आद्रिगते, नो परिजानानि,

(पासित्ता) तय देखकर (आसणाओ अम्बुद्वेइ अम्बुद्वित्ता कंठाकंठियं अवया-सिय वाहपमोक्खणं करेति) ने अपने २ अधिष्ठित स्थान से उठ बैठे और उठकर परस्पर मे गले से गला लगाकर मिले । सबने उससे भेंट की । आलिङ्गन किया । तथा बहुत दिनों के बाद मिलने से उन लोगों ने आनंद जन्य हर्षाश्रुओं का मोचन भी किया अर्थात् हर्षाश्रु वरमाये (तएणं से घण्णे सत्थवाहे जेणेव भद्रा भारिया, तेणेव उवा-गच्छइ) इसके बाद वह धन्य सार्थवाह जहां भद्रा सार्थवाही थी वहां गया (तएणं सा भद्रा घण्णं सत्थवाहं एजमाणं पासइ, पासित्ता णो आढाइ, नो परिगणाइ, नो सक्कारेइ, नो सम्माणेइ, णो अम्बुद्वेइ, नो सरीरकुसलं पुच्छइ) भद्रा सार्थवाहीने आते हुए धन्य सार्थवाह को देखा भी परन्तु उसने उस का आदर नहीं किया उसका स्वागत नहीं किया, मधुर वचनों से उसका स्तुकार नहीं किया विविध वस्तुओंके समर्पण से उसने उसका सम्मान नहीं किया । वह उसके

सार्थवाहने घर तरफ आवतो ज्ये। (पासित्ता) जेधने (आसणाओ अम्बुद्वेइ अम्बुद्वित्ता कंठा कंठियं अवयासिय वाहपमोक्खणं करेति) तेज्ये। अथा पोतपोतानी ज्ययाज्योथी जिला यथा अने जिला यधने जेक पीनना गणाथी प्रेम पूर्वक लेटया. धन्य सार्थवाहने अथा भाषुसे भल्या. अने तेहुं आलिङ्गन क्युं घण्ण दिवसे पछी धन्य सार्थवाहने ज्ये। अने मिलन यधुं जेटले अधानी आंजोभां दुर्णनां आंसुज्यो वरसवा लाज्यां. (तएणं से घण्णे सत्थवाहे जेणेव भद्रा भारिया, तेणेव उवागच्छइ) त्यार पछी धन्य सार्थवाह न्यां भद्रा भार्या उनी. त्यां ज्ये। (तएणं सा भद्रा घण्णं सत्थवाहं एजमाणं पासइ, पासित्ता णो आढाइ, नो सम्माणेइ, णो अम्बुद्वेइ, नो सरीरकुसलं पुच्छइ) भद्रा सार्थवाही जे धन्य सार्थवाहने आवतां ज्ये। पछु तेज्ये तेभने आदर क्यो नहि, तेभनुं स्वागत क्युं नहि, मधुर वाणी वडे तेभने स्तुकाथो नहि,

નો સત્કરોતિ, નો સમ્માનયતિ, નો અન્યુત્તિષ્ઠતિ, નો શરીરકુશલં પૃચ્છતિ, અનાદ્રિયમાણા, અપરિજાનન્તી, અસત્કુર્યન્તી, અસમ્માનયન્તી, અનન્યુત્તિષ્ઠન્તી, શરીરકુશલમપૃચ્છન્તી 'તુસિણીયા' તૂષ્ણીકા=મૌનાચલમ્બિની 'પરમ્મુહી' પરાદ્મુહી=પતિફૂલા મુસં પરાત્ય સંતિષ્ઠતીત્યર્થઃ । તત્ત્વં સ્વલુ સ ધન્યઃ સાર્થવાદો ભદ્રાં માર્યામેવમવાદીત્— કિણ્ણ' કિં સ્વલુ=કિમર્થ તવ હે દેવાનુપ્રિયે ! ન તુટ્ટી વા' ન તુટ્ટિઃ=સન્તોષો ન વર્તતે ન હર્ષો વા નાનન્દો વા, યન્મયા સ્વકેન=સ્વકીયેન અર્થસારેણ=વહુમૂલ્યરત્નાદિ દાનેન 'રાયકજ્ઞાઓ રાજકાર્યાત્=રાજસક્કટાદ્ આત્મા સ્વલુ વિમોચિતઃ ? ।

સન્મુલ્લ નહીં ગઈ— ઉઠી નહીં, ઓર ન ઉત્તને ઉત્તકી કુશલ ક્ષેમ પૂછી । (અણાઢાયમાણી, અપરિજાણમાણી, અસવકારેમાણી, અસમ્માણેમાણી, અણ-વ્યુદ્દેમાણી, સરીરકુશલં અપુચ્છમાણી તુસિણીયા, પરમ્મુહી સંચિદ્વડ) ઇમ તરહ અપને પતિ અનાદર કા ભાવ પ્રદર્શિત કરને વાલી અપના— સ્વાગત નહીં કરને વાલી સત્કાર નહીં કરને વાલી સન્માન નહીં કરને વાલી, ઉઠકર અપને સન્મુલ્લ નહીં આનેવાલી, શરીર કી કુશલ ક્ષેમ નહીં પૂછને વાલી એસી ભદ્રાસાર્થવાદી કો ચુપચાપ મુંહ-ફેરકર વૈઠી હુઈ જય ધન્ય સાર્થવાદને દેલા તો (તણં સે ધણે સત્થવાહે ભદ્રા મારિયં एवं વયાસી) ઉસ ધન્ય માર્થવાદ ને ઉસ ભદ્રા માર્યા સે ઇમ પ્રકાર કહા—(કિણ્ણં તુઠ્ઠમં દેવાણુપ્પણ ! ન તુટ્ટી વા ન હરિસે વા, નાણં દે વા જં મણ સણં અત્થસારે ણં રાયકજ્ઞાઓ અપ્પાણં વિમોહણ) હે દેવાનુપ્રિયે ! વયા તુટ્ટે સન્તોષ નહીં હુઆ હૈ, હર્ષ નહીં હુઆ હૈ, જાં મૈને વહુ મૂલ્ય રત્નાદિરૂપ અર્થસાર દેકર રાજ્ય સકટ સે અપને કો મુક્ત કરવાયા હૈ

લેટમાં અનેક વસ્તુઓ આપીને સન્માન કહ્યું નહિ. ભદ્રા ભાર્યા તેમની સામે ગઇ નહિ, ઊભી પણ ન હોતી થઇ તેમ જ તેણે શેઠની કુશળ ક્ષેમ વિશેનો પ્રશ્ન કયો ન હતો. (અણાઢાયમાણી અપરિજાણમાણી, અસકારેમાણી, અમમ્માણેમાણી, અણવ્યુદ્દેમાણી, સરીરકુશલં અપુચ્છમાણી તુસિણીયા પરમ્મુહી, સંચિદ્વડ) આ રીતે ધન્ય સાર્થવાદે તેમના પ્રત્યે અનાદરનો ભાવ બતાવનારી, સ્વાગત નહિ કરનારી, સત્કાર નહિ કરનારી, સન્માન નહિ કરનારી, ઊભી થઇને સામે સત્કાર માટે નહિ આવનારી, તેમના શરીરની કુશળ અને ક્ષેમની વાત નહિ પૂછનારી પોતાના પત્ની ભદ્રા સાર્થવાદીને બોધ ત્યારે (નણં સે ધણે સત્થવાહે ભદ્રા મારિયં एवं વયાસી) તેમણે ભદ્રા સત્થવાદીને કહ્યું (કિણ્ણં તુઠ્ઠમં દેવાણુપ્પિયાણ ! ન તુટ્ટી વા ન હરિસેવા નાણંદેવા જં મણ સણં અત્થસારેણં રાય-કજ્ઞાઓ અપ્પાણં વિમોહણ) હે દેવાનુપ્રિયે ! શું તને સન્તોષ થયો નથી, એ તને વગેરે બહુ કિંમતી દ્રવ્ય આપીને સંત્ય સંકટથી મુક્તિ મેળવી છે, શું તને

ततः खलु सा भद्रा धन्यं सार्थवाहमेवमवादीत्—कथं खलु मां देवानुप्रिय ! मम तुष्टिर्वा यावदानन्दो वा भविष्यति 'जैणं' यः खलु त्वं मम पुत्रघातकाय यावत्प्रत्यामित्राय तस्माद् विपुलाद् अशनपानस्वाद्य-
स्वाद्यात् संविभागं करोषि ? । ततः खलु= तदनु तच्छ्रुत्वा स धन्या भद्रामेव
मवादीत्—हे देवानुप्रिये ! नो खलु=नैव 'धम्मोत्ति वा' धर्म इति भा

(तएणं सा भद्रा सत्थवाहं एवं वयासी) इस प्रकार सुनकर भद्रा सार्थ-
वाहीने धन्य सार्थवाह से ऐसा कहा— (कहणं देवाणुप्पिया ! मम तुट्ठी
वा जाव आणंदे वा भविस्सइ जेणं तुमं मम पुत्रघायगस्स जाव पच्चामि
चास्स तओ विउलाओ असण ४ संविभागं करेसि) हे देवानुप्रिय ! मुझे तुष्टि
यावत् आनंद कैसे होगा जो तुमने (कारावत्त में) मेरे पुत्रघातक यावत् हार्दिक
शत्रु उम विजय के लिये विपुल मात्रा वाले उस चतुर्विध आहार को विभक्त
कर दिया है। (तएणं से घण्णे भइं एवं वयासी) ऐसा सुनकर धन्यमार्थ-
वाहने भद्रा सार्थवाही से ऐसा कहा—(नो खलु देवाणुप्पियाए ! धम्मोत्ति वा
तवोत्ति वा कयपडिकयाइ वा लोगज्जाइ वा नायएत्ति वा घाडिए
वा सहाएइ वा सुहिइ वा तओ विपुलाओ असण ४ संविभागे
कए नन्नत्थ सरীরचिताए) हे देवानुप्रिये ! मैंने जो उस
चतुर्विध अशन, पान, स्वाद्य एवं स्वाद्य रूप चतुर्विध आहार में से विभाग
कर जो विजय चौर को हिस्सा (कारावासमें) दिया है वह संविभागकरण-

आ गधुं गभ्युं नधी ? (तएणं सा भद्रा सत्थवाहं एवं वयासी) आ रीते
धन्य सार्थवाहनी जात सांभणीने भद्रा सार्थवाहीअे तेभने कहुं—(कहणं देवाणु-
प्पिया ! मम तुट्ठी वा जाव आणंदे वा भविस्सइ जेणं तुमं मम पुत्र-
घायगस्स जाव पच्चामिचस्स तओ विउलाओ अमण ४ संविभागं करेसि)
हे देवानुप्रिय ! भने आनंद थाय न डेम ? कअेषु डे जथादे तये जेदमां भारा
पुत्रना हत्थाराने ते पुच्छण प्रमाणुमां जनाववाभां आवेला आहारमांथी लाग
आपत्ता हत्ता. (त एणं से घण्णे भइं एवं वयासी) त्थारे धन्य सार्थवाह
भद्रा साथीने कहुं—(नो खलु देवाणुप्पिए ! धम्मोत्ति वा तवोत्तिवा कय
पडिकइयाहवा लोगज्जाइ वा नायएत्ति वा घाडिए वा सहाएइ वा सुहिइ वा
तओ विउलाओ असण ४ संविभागे कए नन्नत्थ सरীরचिताए)
हे देवानुप्रिये ! भे जे विजय थारने पुच्छण प्रमाणुमां जनाववा आवेला
आर नतना अशन, पान, स्वाद्य अने स्वाद्य रूप आहारमांथी जे कंथ पयु लाग
आथी छे ते तेने लाग आपवेा जेधअे आ नतना संविभागअरुण ३५ धर्मथी

‘સંવિભાગરૂપા ધર્મઃ સ્યાત્’ ઇતિ મત્વા, ‘તચોત્તવા’ ‘ત’ ઇતિ વા= સ્વમ્યા-ડર્નોદારિકં તથો ભવિષ્યતિ’ ઇતિ મત્વા, ‘કયપટિકડયાડવા’ કૃત- પ્રતિકૃતિતેતિ વા= ‘કૃતસ્ય પ્રત્યુપકારોડયમ્’ ઇતિ હેતુમુપાદાય, ‘લોગજનાદ વા’ લોકયાગેતિ વા ‘લોકવ્યવહારોડયમ્’ ઇતિ મત્વા, લોકલગ્નયા વા, ‘નાય- એતિ વા’ જ્ઞાતક ઇતિ વા= ‘પૂર્વાપરસમ્બન્ધિજનઃ ઇતિ જ્ઞાત્વા, ‘નાયક’ ઇતિ ચ્છાયાપક્ષે ‘સ્વામી’ તિ, ‘ન્યાયદઃ ઇતિ પક્ષે ‘ન્યાયદાતા’ ઇતિ ચ મત્વા ‘ઘાટિએતિ વા’ ઘાટિક ઇતિ વા= ‘સહજાતમિત્રં’ ચાલમિત્રમિત્યર્થઃ, ઇતિ કૃત્વા, ‘સહાયેતિ વા’ સહાય ઇતિ વા, સહાયકઃ=સહચારીતિ મત્વા, ‘મુહિત્તિ વા’ મુહિદિતિ વા=પ્રિયમિત્રમયમ્, ઇતિ મત્વા મયા તસ્માદ્ વિપુલાદ્ અશનવાન- સ્વાધસ્વાધાત્ સંવિભાગો ન કૃતઃ, કિન્તુ ‘નન્નત્થસરીરચિત્તા’ નાન્યત્રશરીર- ચિન્તાયાઃ, ઉચ્ચારપ્રસવણપરિવ્ષાવનરૂપશરીરચિંતાં વિદાય ન મયા સંવિભાગઃ

રૂપ ધર્મ માનકર નહીં દિયા છે, મુક્તે ઝનોદર તપ કી પ્રાપ્તી होगी ऐसा मानकर भी नहीं दिया है, अथवा प्रत्युपकार के रूपमें भी नहीं दिया है, लोगव्यवहार की दृष्टि से भी नहीं दिया है, लोकलाजके खयाल से भी नहीं दिया है, यह हमारा पूर्वपरसंबंधी है इस भाव से भी नहीं दिया है, अथवा यह न्याय प्रदाता है ऐसा जानकर भी नहीं दिया है, यह हमारा घाटिका है चाल मित्र है, ऐसा मानकर भी नहीं दिया है, यह हमें सहायता देनेवाला है ऐसा समझ कर भी नहीं दिया है, यह हमारा प्रिय मित्र है ऐसा जानकर भी नहीं दिया है किन्तु केवल शारिरिक चिन्ता के भाव से ही दिया है। अर्थात् मुझे कारावासमें उच्चार प्रसवण की बाधासे सताया था, सो उसकी

પ્રેરાધને આપ્યો નથી, મને તેથી ઊનોદર તપની પ્રાપ્તિ થશે આમ બાણીને પણ મેં તેને ભાગ આપ્યો નથી, પ્રત્યુપકારના રૂપમાં પણ મેં તેને ભાગ આપ્યો નથી લોકલાજની દૃષ્ટિએ પ્રેરાધને પણ મેં તેને ભાગ આપ્યો નથી, તે મારે પૂર્વપર સજાંધી છે, આમ બાણીને પણ લોજનમાંથી મેં તેને ભાગ આપ્યો નથી, તે ન્યાય આપનાર છે આવું બાણીને પણ તેને ભાગ આપ્યો નથી, તે અમારે ઘાટિક છે બાળ સખા છે. આવું બાણીને પણ તેને મેં ભાગ આપ્યો નથી, તે મને સહાયતા કરે છે આમ સમજીને પણ મેં તેને ભાગ આપ્યો નથી. તે અમારે પ્રિય મિત્ર છે. આ બાણીને પણ તેને લોજનમાંથી ભાગ આપ્યો નથી. પણ ચારીરિક ચિંતા દર દવાના વિચારથી જ મેં તેને પોતાના લોજનમાંથી ભાગ આપ્યો છે, જેલમાં હોતાં મને ઉચ્ચાર પ્રસવણની મુશ્કેલી સતાવ્યા કરતી હતી તેથી તે બાધાથી

कृतः, शरीरचिन्ताथेमेव तस्म संविभागः कृत इति भावः। ततः खलु मा भद्रा धन्येन सार्थवाहेन एवमुक्ता सती 'हृद जाव' हृष्टयावत्=हृष्टतुष्टचित्तानन्दिता हर्षवशविसर्गहृदया आपनात् अभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थ्या। 'कंठाकंठे' कंठा-कण्ठि=कण्ठेन कण्ठं संमेलयेत्यर्थः 'अवयासेइ' आश्लिष्यति=आलिङ्गति, आदर-सकारादिकं करोति क्षेमकुशलं=कुशलवार्तां पृच्छति च। कुशलपञ्चमोपृच्छयः 'ण्हाया' स्नाता=कृतस्नाना 'जाव' यावत् 'कयवलिकम्मा' कृतवर्तिकर्मा=कृतं=सम्पादितं बलिकर्म्म=प्रियागमननिमित्तं पशुपद्मादिप्राणिभ्योऽन्नादिदानरूपं यया सा तथा, 'कयकोउयमंगलपायच्छिता' कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्ता कृतं कौतुकं=दृष्टिदोषादिनिवारणार्थं मपीपुण्ड्रादिकं, मङ्गलं=दुस्स्वप्नादिफलस्याग-

निवृत्ति के भाव से उसे हमने उस चतुर्विध आहार में से विभक्त कर उसे हिस्सा दिया है (नएणं सा भद्रा धण्णेणं सत्थवाहेणं एवं वुत्ता समाणी, हृदजाव आसणाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठिता कंठाकंठि अवयासेइ, खेमकुशलं पुच्छइ) इसके बाद धन्य सार्थवाह के द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर हर्षित और संतुष्ट हृदय होती हुई वह भद्रा सार्थवाही भामन से उठ कर बैठो, उठकर उपका उसने कंठसे आलिङ्गन किया और दुःख प्रादिक क्षेमकुशलकी बात पूछी। (पुच्छित्ता ण्हाया जाव पायच्छिता विउलाइं भोगाभोगाइं भुंजमाणी विहरइ) पूछकर फिर उसने स्नान किया यावत् प्रयश्चित्त किया। और विपुल भोगोंको भोगते हुए वह अना समय आनन्द से व्यतीत करने लगी। यहां "जाव" पद से (कयवलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छिता) "इन पदों का सूचन किया गया है। इनका भाव यह है कि—प्रिय आगमन के निमित्त को लेकर उमने पशु पक्षी

निवृत्त तथा भाटे तेने हुं पोताना यार जतना आहारभांथी आहार आपतो डतो. (तएणं सा भद्रा धण्णेणं सत्थवाहेणं एवं वुत्ता समाणी हृदजाव आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठिता कंठाकंठि अवयासेइ, खेमकुशलं पुच्छइ) त्थार णाह भद्रा सार्थवाही ये धन्य सार्थवाहणी आ वात सांलणीने डुपित्तं अने संतुष्ट हृदया थएने तेण्हे धन्य सार्थवाहणुं आदिगन कथुं अने तेनी क्षेम कुशलीनी वात पूछी. (पुच्छित्ता ण्हाया जाव पायाच्छिता विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरइ) पूछीने तेण्हे स्नान अने प्रायश्चित्त कथुं. तेमज धन्य सार्थवाहणी साथे विपुल भोग भोगवतां तेण्हे पोतानो वणत सुजेथी पसार करवा मांडये. अही 'जाव' पदथी ('कयवलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छिता') आ पदोतुं सूचन करवाभां आब्भुं छे. ओनो अर्थ आ प्रभाण्हे छे डे तेण्हे प्रिय आगमनत

‘સંવિભાગકરણરૂપા ધર્મઃ સ્યાત્’ ઠાત મત્વા, ‘તત્ત્વોત્તવા’ ‘ત’ ઠાત વા= સ્વમ્યા-ડનોદારિકં તપો ભવિષ્યતિ’ ઇતિ મત્વા, ‘કયપટિકાયાડવા’ કૃત- પ્રતિકૃતિતેનિ વા=‘કૃતસ્ય પ્રત્યુપકારોડયમ્’ ઠાત હેતુમુખાદાય, ‘લોગજનાદ વા’ લોકગ્યાગેતિ વા ‘લોકગ્યવહારોડયમ્’ ઇતિ મત્વા, લોકલજ્ઞયા વા, ‘નાય- પત્તિ વા’ જ્ઞાતક ઇતિ વા=‘પૂર્વાપરસમ્બન્ધિજનઃ ઇતિ જ્ઞાત્વા, ‘નાયક’ ઇતિ ચ્છાયાપક્ષે ‘સ્વામી’ તિ, ‘ન્યાયદઃ ઇતિ પક્ષે ‘ન્યાયદાતા’ ઇતિ ચ મત્વા ‘ઘાટિપત્તિ વા’ ઘાટિક ઇતિ વા=‘સહજાતમિત્રં’ ચાલમિત્રમિત્યર્થઃ, ઇતિ કૃત્વા, ‘સહાયપત્તિવા’ સહાય ઇતિવા, સહાયકઃ=સહચારીતિ મત્વા, ‘મુહિત્તિ વા’ મુહદિતિ વા=પ્રિયમિત્રમયમ્, ઇતિ મત્વા મયા તસ્માદ્ વિપુલાદ્ અશનપાન- ત્વાધસ્વાધાત્ સંવિભાગો ન કૃતઃ, કિન્તુ ‘નન્નત્યસરીરચિંતાપ’ નાન્યવ્રસરીર- ચિન્તાયાઃ, ઉચ્ચારપ્રસવળપરિષ્ઠાપનરૂપશરીરચિંતાં વિહાય ન મયા સંવિભાગઃ

રૂપ ધર્મ માનકમર નહીં દિયા હૈ, મુક્કે ક્કનોદર તપ કી પ્રાપ્તી હોગી એસા માનકર ખી નહીં દિયા હૈ, અથવા પ્રત્યુપકાર કે રૂપમેં ખી નહીં દિયા હૈ, લોગવ્યવહાર કી દૃષ્ટિ સે ખી નહીં દિયા હૈ, લોકલાજકે રુચાલ સે ખી નહીં દિયા હૈ, યહ હમારા પૂર્વોપરસંબધી હૈ ઇસ ખાવ સે ખી નહીં દિયા હૈ, અથવા યહ ન્યાય પ્રદાતા હૈ એસા જાનકર ખી નહીં દિયા હૈ, યહ હમારા ઘાટિકા હૈ ચાલ મિત્ર હૈ, એસા માનકર ખી નહીં દિયા હૈ, યહ હમે સહાયતા દેનેવાલા હૈ એસા સમજ્ઞ કર ખી નહીં દિયા હૈ, યહ હમારા પ્રિય મિત્ર હૈ એસા જાનકર ખી નહીં દિયા હૈ કિન્તુ કેવલ શારિરિક ચિન્તા કે ખાવ સે હી દિયા હૈ। અર્થાત્ મુક્કે કારાવાસમેં ઉચ્ચાર પ્રસવળ કી વાધાને સતાયા થા, સો ડસકી

પ્રેરાધને આપ્યો નથી, મને તેથી ઉનોદર તપની પ્રાપ્તિ થશે આમ બાણીને પણ મેં તેને ભાગ આપ્યો નથી, પ્રત્યુપકારના રૂપમાં પણ મેં તેને ભાગ આપ્યો નથી લોકલાજની દૃષ્ટિએ પ્રેરાધને પણ મેં તેને ભાગ આપ્યો નથી, તે મારો પૂર્વોપર સંબધી છે, આમ બાણીને પણ ભોજનમાંથી મેં તેને ભાગ આપ્યો નથી, તે ન્યાય આપનાર છે આવું બાણીને પણ તેને ભાગ આપ્યો નથી, તે અમારો ઘાટિક છે બાળ સખા છે. આવું બાણીને પણ તેને મેં ભાગ આપ્યો નથી, તે મને સહાયતા કરે છે આમ સમજીને પણ મેં તેને ભાગ આપ્યો નથી, તે અમારો પ્રિય મિત્ર છે. આ બાણીને પણ તેને ભોજનમાંથી ભાગ આપ્યો નથી. પણ શારીરિક ચિંતા દૂર કરવાના વિચારથી જ મેં તેને પોતાના ભોજનમાંથી ભાગ આપ્યો છે, જેલમાં હોતાં મને ઉચ્ચાર પ્રસવળની મુશ્કેલી સતાવ્યા કરતી હતી તેથી તે બાધાથી

वधैः=यष्ट्यादिना ताडनरूपैः 'कसपप्रहारेभ्यः' कशाप्रहारैश्च दिवसेऽनेकवार
कशाघातरूपैः 'जाव' यावत् एवं लतादिपरिघातरूपैश्च प्रहारैः, तृष्ण्या
च क्षुधया च 'परम्भवमाणे' पराभवन्=परिपीड्यमानो जर्जरितशरीरः
सन् कालमासे=मृत्युसमये कालं कृत्वा 'नरएषु' नरके पापकर्मिणां
यातनास्थाने 'सूत्रे' माकृतत्वाद् बहुवचनम् 'नेरइयत्ताए' नैरधिकतया
नारकत्वेन 'उववन्ने' उपपन्नः=उत्पन्नः । स खलु तत्र=नरके नैरधिको जातः,
कीदृशः ? इत्याह— 'काले' इत्यादि, 'काले' कालः=कृष्णवर्णः 'कालोभासे'
कालावभासः=द्रष्टव्यः काल इव=मृत्युरिव अवभासते, यद्वा कालः=श्यामः
अवभासः=दीप्तिर्यस्य स तथा 'जाव' यावत् यावच्छब्देन—'गंभीर
लोमहरिसे भीमे उत्तासणए परमकण्हे वण्णेण' से णं तत्थे निच्चं भीए,

य परम्भवमाणे कालमासे कालं किञ्चा नरएषु नेरइयत्ताए उववन्ने)
उन पूर्व प्रदर्शित रज्ज्वादि द्वारा दहनियंत्रणरूप बंधों से यष्ट्यादि द्वारा
ताडन रूप बंधों से, दिवस में अनेक बार कृत कशाघातरूप प्रहारों
से— लतादि परिघात रूप प्रहारों से भूख और प्यास से परिपीडित
होना हुआ—जर्जरित-शरीर होता हुआ काल अवसर काल कर
के और पाप कर्मों के यातना स्थानका नरकमें नारकी
की पर्याय से उत्पन्न हुआ । (से णं तत्थ नेरइए जाए) वह वहाँ
ऐसा नैरधिक हुआ कि जो (काले कालोभासे जाव वेणणं पच्चणुमावमाणे
विहरइ) शरीर में कृष्ण वर्ण वाला देखने वालों को मृत्यु जैसा प्रतीत
होता था—अथवा कालो दीप्तिवाला । या यावत् शब्द से इस पाठ का
यहां और संग्रह किया गया है । (गंभीरलोमहरिसे, भीमे, उत्तासणए
परमकण्हे वण्णेणं से तत्थ निच्चं भीए, निच्चं तत्थे, निच्चं तत्थिए,

परम्भवमाणे कालमासे कालं किञ्चा नरएषु नेरइयत्ताए उववन्ने) पड़ेलां
वर्णन करवायां आख्या भुञ्जन् दोरीज्योना सभत्त बंधनो लाकडीज्यो पगेरेनो
भार अने द्विपसमां घण्टीवार करवाया आवेला डोरज्योना प्रहारो, लता पगेरेना
प्रहारो लूण अते तरसथी दुःखी थतो शिथिल शरीरवाणो थधने आभरे मृत्यु
पाग्यो अने पापकर्मोना यातना स्थानइप नरकमां नारकीनी पर्यायमां ननभ्यो.
(से णं तत्थ नेरइए जाए) नैरधिकनी पय... (काले कालोभासे जाव
वेणणं पच्चणुमावमाणे विहरइ) शरीरे ओ भोथ ज्येओ अने जेनाराज्यो
ते मृत्युं ज्येओ अयंड लागतो डतो. अही (यावत्) शब्दथी आ पाठनो संग्रह
थयो छे.— (गंभीरलोमहरिसे भीमे उत्तासणए परमकण्हे वण्णेणं से

नुकारिष्टादेश निवारणाय दध्यक्षतादिग्रहणं तदेव प्रायश्चित्तम्=भवश्यंकरणी-
यत्वेन यया सा विपुलान् भोगभोगान् भुञ्जाना सती विहरति=आस्ते स्म॥सू० ११॥
मूलम्—तएणं से विजए तक्करे चारगसालाए तेहिं वंधेहिं वहेहिं
कसप्पहारेहि य जाव तण्हाए य लुहाए य परवभवमाणे कालमासे
कालं किच्चा नरएसु नेरइयत्ताए उववन्ने । सेणं तत्थ नेरइए जाएकाले
कालोभासे जाव वेयणं पच्चणुभवमाणे विहरइ । से णं ताओ उवव
ट्ठित्ता अणाइयं अणवदग्गं दीहमच्चं चाउरंतसंसारकंतरं अणुपरिअट्ठि-
स्सइ । एवामेव जंबू ! जेणं अम्हं निग्गंथो वा निग्गंथी वा आय
रियउवज्झायाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्व-
इए समाणे विपुलमणिमुत्तिय धणकणगरयणसारेणं लुब्भइ से
वि य एवं चेव ॥सू० १२॥

टीका—तएणं से विजय' इत्यादि ।

ततः खलु=इतश्च स विजयस्तत्स्करः 'चारगसालाए' चारकशालायां=
कारागारे तैः पूर्वप्रदर्शितैः 'बंधेहिं' बन्धैः रज्ज्वादिदृढनियन्त्रणरूपैः, 'वहेहिं'
आदि प्राणियों के लिये अन्नादि देनेरूप बलिर्कर्म किया । तथा दृष्टि दोष
आदि को निवारण करने के लिये उसने मपोपुंड्र आदि किये तथा
स्वप्नके फल रूप आगन्तुक अरिष्ट आदिके निवारण करने के लिये
उसने दध्यक्षत आदिक ग्रहण किया । ॥सू० ११॥

'तएणं से विजए तक्करे' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (विजए तक्करे) विजय तत्स्कर—(चारग सालाए)
कारावासमें (तेहिं वंधेहिं वहेहिं कसप्पहारेहिं य जाव तण्हाए य लुहाए
निमित्त पशु पक्षी वगेरे प्राणीओने अन्न वगेरे अभीने अलिक्कं कथुं. तेभज्ज
दृष्टि दोषथी निवृत्ति भाटे तेखे मपीपुंडं वगेरे कथो. स्वप्नना इणना इपमां
अविध्यमां थनार अनिष्ट वगेरेनी निवृत्ति भाटे तेखे द्दही अक्षत वीधां. (सू. ११)

'तएणं से विजए तक्करे' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) त्थार पथी (से विजए तक्करे) विजयओरे (चारगसालाए)
ओवमां (तेहिं वंधेहिं वहेहिं कसप्पहारेहिं य जाव तण्हाए य लुहाए य

રૂપં સંસાર એ કાગતારં=મહાડરણ્યં, તત્=મવાટીમિત્યર્થઃ, 'અણુપરિવટિ-
સ્મદ' અણુપરિવટિપ્યતિ=નિરન્તરં પરિભ્રમિત્યતિ । 'एवमेव' એવમેવ=અનેનેવ
પ્રકારેણ હે જન્મ્યુઃ ! યઃશ્વલુ અસ્માકં નિર્ગ્રન્થો વા નિર્ગ્રન્થી વા આચાર્યો-
પાઠ્યપાનામન્તિકે 'મુંડો' મુણુઃ, દ્રવ્યતો માવતથ મુંડિતો મૂલ્યા અગારાત્=
અનગારિતાં પ્રવ્રજિતઃ=પાપ્તઃસન્ વિપુલમણિમૌક્તિકથનકનકરત્નસારેણ
'લુબ્ધ' લુબ્ધતિ=મણિમૌક્તિકથનાદિ લુબ્ધો ભવતિ 'સે વિ ય' સોડિય ચ
સાધુ વર્ધા સાધી વા 'एवंचेव' એવમેવ=વિજયનસ્કરવદેવ ચાતુરન્તસંસાર-
કાન્તારે ભ્રમિત્યતીતિ ભાવઃ ॥મુ૦ ૧૨॥

મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં ધમ્મઘોસા થેરા મગ-
વંતો જાહ સંપન્ના જાવ પુઠ્ઠાણુપુઠ્ઠિવ ચરમાણા ગામાણુગામં દૂહજમાણા
જેણેવ રાયગિહે નગરે જેણેવ ગુણસિલણ ચેહણ તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ,
ઉવાગચ્છિત્તા અહાપડિરૂવં ઉગ્ગહં ઉગ્ગિણિહત્તા સંજમેણં તવસા અ-

માર્ગં વહુત લંવા ચોડા હે અથવા ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી રૂપ કાલ
જિસતા વહુત દીર્ઘ હે—પરિભ્રમણ કરેગા । (एवमेव जंवू । जे णं अम्हं
निगंथो वा निगंथी वा आयरियउवज्झायाणं अंतिणं मुंडे भवित्ता
अगाराओ अणगारियं पव्वइए समाणे विपुलमणिमुत्तयधणकणग
रणसारेणं लुब्भइ से वि य एवं चेव) इसी प्रकार से हेजंवू । जो
हमारे निर्ग्रन्थ अथवा निर्ग्रन्थी साधु साध्वी जन आचार्य, उपाध्याय के
पास द्रव्य भाा रूासे मुंडित होकर अगर से अनगारी अवस्था को
प्राप्त करते हुए विपुल मणिमौक्तिक, धन, कनक, रत्न आदि में
लुभा जाते हैं वे भी इसी तरह चतुर्गतिरूप इस संसार अटवी में भ्रमण
करते रहेंगे । ॥मु० १२॥

ખડુ જ લાંબો અને વિસ્તાર પામેલો છે અથવા ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી રૂપ કાળ
જેમનો ખડુ દીર્ઘ છે—પરિભ્રમણ કરશે. (एवमेव जंवू ! जे णं अम्हं निगंथो वा
निगंथी वा आयरियउवज्झायाणं अंतिणं मुंडे भवित्ता अगाराओ
अणगारियं पव्वइए समाणे विपुलमणिमुत्तयधणकणगरणसारेणं लुब्भइ
से वि य एवं चेव) આ સીતે જ જાણુ ! જે અમારા નિર્ગ્રંથ કે નિર્ગ્રંથી સાધુ
સાધ્વીજન આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયની પાસે દ્રવ્ય ભાવ રૂપથી મુંડિત થઈને અગારથી
અવસ્થાને મેળવતાં ખૂબ જ મણિ, મૌકિક, ધન, કનક રત્ન વગેરેમાં લોહુપ
થઈ લાય છે તેઓ પણ આ વિજય તસ્કર જેવા જ છે. અને તેઓ પણ આ
પ્રભાણે જ ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસાર રૂપી અટવીમાં પરિભ્રમણ કરતા રહેશે. સ્ત્ર. ૧૨ ।

નિચ્ચં તત્થે, નિચ્ચં તસિણ, નિચ્ચં પરમસુહસંવદ્ધં નરગઃ' इत्येतेषां सं
 ग्रहः, तत्र-‘गंभीर’ गम्भीरः=प्रचुरः ‘लोमहरिसे’ रामहर्षः=भयजनितरोमांचो
 यस्य सः, ‘भीमे’ भीमः=भयङ्करः, अत एव ‘उत्तासणाए’ उत्तासकः=
 भयजनितदुःखजनकः, वर्णेन परमकृष्णः-असौ तत्र नित्यं भीतः, नित्यं ‘तसिण’
 त्रसितः=परमाधर्मिभिश्चासं प्रापितः सन् ‘परमसुहसंयद्’ परमाधुमसम्बद्धाम्
 =उत्कृष्टपापकर्मोपनीतां ‘नरगवेयण’ नरकवेदनां= नरकसम्बन्धिघोरयातनां
 ‘पचणुभयसाणे’ प्रत्यनुभवन्=आत्मनः प्रतिप्रदेशतोऽनुभवन् ‘विहरइ’ विहरति=
 उपतिष्ठते । स खलु=विजयतस्करजीवः ‘तओ’ तस्मान् नरकस्थानात् ‘उव्वट्ठिता’
 उद्घृत्य=निस्तृत्य ‘अणाइयं’ अनादिकम्=आदि रहितम् ‘अणवदग्गं’ अनवदग्रम्=
 ‘दीहमद्दं’ दीर्घाश्चानं=दीर्घमार्गं चतुर्गेतिलक्षणम्, दीर्घाद्धम्’ इति
 च्छायापक्षे तु दीर्घा=अद्वा=कालः उत्सर्पिष्यवसर्पिणी लक्ष्मणी यत्र तत्र दीर्घका-
 लिकामेत्यर्थः ‘चाउरंतं संसारकंतारं’ चातुरन्तं संसारस्थान्तारं-चातुरन्तं=चतुर्गति-

નિચ્ચં પરમસુહસંવદ્ધં નરગ) इन पदों का अर्थ इस प्रकार है--इसे वहां
 सदा भय रहेता है इसलिये सर्वदा इसे भयजनित रोमांच बना रहता
 है-यह नरक स्वयं भयंकर है-इसलिये भय से उत्पन्न होनेवाले दुःख
 का यह उत्पादक है । वर्ण की दृष्टि से यह परम कृष्ण है । यह वहां
 नित्य भयशील और त्रस्त बना रहता है । परमाधार्मिक देव इसे वहां
 नित्य त्रास दिया करते है । उत्कृष्ट पाप कर्म के उदय से प्राप्त हुई
 नरक संघन्धी घोर यातनाओं को आत्माके प्रति प्रदेश से वह भोगता
 है (से णं ताओ उव्वट्ठिता अणाइयं अणवदग्गं दीहमद्दं चाउरंतसं-
 सारकंतारं अणुपरिअट्ठिस्सइ) इसके बाद वह विजय तस्कर का जीव
 उस नरक स्थान से निकल कर अनादि--आदि रहित नाश रहित
 -अनन्त रूप ऐसी चतुर्गति रूप भवाटवी में जिसका कि चतुर्गति रूप

નિચ્ચં મીણ નિચ્ચં તત્થે, નિચ્ચં તસિણ, નિચ્ચં પરમસુહસંવદ્ધં નરગં)
 આ પદોનો અર્થ આ પ્રમાણે છે— તેને નરકમાં બીક રહે છે. એથી સદા તે
 ભયજનક રોમાંચ યુક્ત રહે છે. તે પોતે ભયથી ઉત્પન્ન દુઃખને તે ઉત્પન્ન કરનાર
 છે. રંગે તે સાવકળો છે. હંમેશાં તે નરકમાં ભયશીલ અને સંત્રસ્ત બની રહે છે.
 પરમાધાર્મિક દેવ તેને સદા ત્યાં નરકમાં ત્રાસ આપતા રહે છે. ઉત્કૃષ્ટ પાપકર્મોને
 લીધે પ્રાપ્ત થયેલી નરકની ભયંકર મુશ્કેલીઓને તે આત્માના દરેકે દરેક પ્રદેશથી
 ભોગવે છે. (સે ણં તાઓ ઉવ્વટ્ઠિત્થા અણાઇયં અણવદગ્ગં દીહમદ્દં ચાઉરંત-
 સંસારકંતારં અણુપરિઅટ્ઠિસ્સઇ) ત્યાર બાદ વિજય ચારનો છવ તે નરકસ્થાનથી
 બહાર નીકળીને અનાદિ આદિરહિત નાશરહિત, અનંતરૂપ એવી ચતુર્ગતિરૂપ ભાગ

मर्यादया विचरन्तः 'गामाणुगाम' ग्रामानुग्रामम्=एक ग्रामादव्यवधानेनान्य-
ग्रामं 'दृङ्जमाणा' द्रवन्तः=गच्छन्तः यत्रैव राजगृहं नगरं यत्रैव गुणशिलकं
'चेइए' चैत्यम्=उद्यानं तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागम्य 'अहापडिरुवं' यथाप्रति-
रूपं=यथायोग्यं=साधुमर्यादाहम् 'उगगहं' अत्रग्रहं=तमतेराज्ञाम् 'उगिगिहत्ता'
अवगृह्य=वनपालसकाशान्मार्गयित्वा संयमेन तपसाऽऽत्मानं 'भावेमाणा'
भावयन्तः=वासयन्तो विहरन्ति=तिष्ठन्ति। परिपन्निर्गता। धर्मः कथितः।
ततः खलु तस्य धन्यस्य सार्थवाहस्य बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निश्चय
अयमेतद्रूप आध्यात्मिको यावत् समुदपद्यत एव खलु स्थविरा भगवन्तो

पुत्राणुपुत्रि चरमाणा गामाणुगामं दृङ्जमाणा जेणेव रायगिहे नयरे
गुणसिलए चेइए तेणेव उवागच्छन्ति) जो कि विशुद्ध मातृवंशवाले थे
यावत् तीर्थंकरों की परम्परा के अनुसार विहार करते थे। वे एक ग्राम से
दूसरे ग्राम में विहार करते हुए जहां राजगृह नगर और गुणशिलक चैत्य
था वहां आये (उवागच्छन्ति अहापडिरुवं उगगहं उगिगिहत्ता संजमेणं तवसा
अप्याणं भावेमाणाविहरन्ति) वहां आकर वे साधुजन की मर्यादा के अनुसार
वसति की आज्ञा वहां के वनपालक से मांग कर संयम और तपसे अपनी आत्मा
को भावित करते हुए टहर गये। (परिस्ता निगया, धम्मो कहिओ तएणं तस्स
धणस्स सत्थवाहस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म इमेयारुवे अज्झत्थिए
जाव समुपज्जित्था) राजगृह नगर से परिपद यहां आई-भगवान् ने उसे धर्म की
देखना दी। इसके बाद उस धन्य सार्थवाह ने अनेक जनों के मुख से इस
अर्थ-भगवदागमन रूप समाचार-को सुनकर-उसे हृदय में अवधारित

पुत्रि चरमाणा गामाणुगामं दृङ्जमाणा जेणेव गुणसिलए चेइए तेणेव
उवागच्छन्ति) के जेओ विशुद्ध मानवंशवाला हत्ता, अने तीर्थंकरानी परंपरागत
प्रथा मुज्जम विहार करता हत्ता तेओ ओक गाभथी पीले गाभ विहार करतां जथां
राजगृह नगर अने शुष् शिवळ येइए हत्तुं त्यां आव्या. (उवागच्छन्ति अहा
पडिरुवं उगगहं उगिगिहत्ता संजमेणं तवसा अप्याणं भावेमाणा विहरन्ति)
त्यां आवीने तेओ साधुज्जनेयित मर्यादाने अनुसरतां त्यांना वन पालकनी पांसेथी
वात्त करवानी आज्ञा भेजवीने तप अने संयमथी पोताना आत्माने लाविक करतां
त्यां शेकाया. (परिस्ता निगया धम्मो कहिओ तएणं तस्स धणस्स सत्थवा-
हस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म इमेयारुवे अज्झत्थिए जाव
समुपज्जित्था) राजगृह नगरथी त्यां परिपद ओकडी थत्त. भगवाने परिपदने संभाधी
ओटवे के धर्म देशना आपी. त्यार पछी धन्य सार्थवाहे धावा भाषुसेना मोदिथी
भगवाने पधारवानी समाचार सांभलीने, तेने हृदयमां अवधारित करतां तेना

પ્પાણં ભાવેમોળા વિહરંતિ, પરિસા નિગ્ગયા ધમ્મો કહિઓ, તएणं
 તસ્સ ધણસ્સ સત્થવાહસ્સ વહુજણસ્સ અંતિए. एयમટ્ઠં સોચ્છા ણિ
 સમ્મ ઇમેયારૂપે અજ્ઞતિए જાવ સમુપજિતથા—एवं खलु थेरा भग-
 वंतो जाइसंपन्ना इहमागया इहसंपत्ता तं इच्छामि णं थेरे भग-
 वंते वंदामि नमंसामि एहाए जाव सुद्धप्पवेसाइं मङ्गल्लाइं वत्थाइं
 पवरपरिहिए पायविहारचारेणं जेणेव गुणसिले चेइए जेणेव थेरा
 भगवंतो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता वंदइ नमंसइ। तएणं
 थेरा भगवंतो धणस्स सत्थवाहस्स विचित्तं धम्ममाइकखंति, तएणं
 से धन्ने सत्थवाहे धम्मं સોચ્છાં एवં वयासी—सइहामि णं भंते!
 निग्गंथे पावयणे जाव पव्वइए जाव वहूणि वासाणि सामन्नपरियाणं
 पाउणित्ता भत्तं पच्चक्खाइ, पच्चक्खित्ता मासियाए संलेहणाए सट्ठિं
 भत्ताइं अणसणाए छेदेइ, छेदित्ता કાલમાસે કાલં કિચ્છા સોહમ્મે
 કप्પે દેવત્તાए उववन्ने, તત્થણં અત્થેગइया णं देवाणं चत्तारि पलि-
 ओवमाइं ठिई पन्नत्ता, તત્થ णं धणस्स देवस्स चत्तारि पलिओ-
 वमाइं ठिई पणत्ता, સે णं धणे देवे ताओ देवलोयाओ आउक्ख-
 एणंभवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता महाविदेहे वासे
 सिज्झिहिइ जाव सब्बदुक्खाणामंतं करेहिइ ॥સૂ, ૧૩॥

ટીકા—તેણં કાલેણં ઇત્યાદિ તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે ધર્મધોષા નામ સ્થ-
 વિરા ભગવંતો જાતિસમ્પન્ના યાવત્ 'પુન્નાણુપુન્નિ' પૂર્વાનુ પૂર્વ્યા ચરન્તઃ=તીર્થઢ્ઢર-

'તેણં કાલેણં તેણં સમए णં' ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(તેણં કાલેણં તેણં સમાएणं) उस काल, उस समय में (धम्मधोसा
 नामं थेरा) धर्मधोष नामके स्थविर (भगवंतो) भगवान (जाइसंपन्ना जाव

(તેણં કાલેણં તેણંસમएणं) ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(તેણં કાલેણં તેણં સમएणं) તે કાલે અને તે સમયે (ધમ્મધોસા નામં
 थेરા) ધર્મધોષનામેસ્થવિર (ભગવંતો) ભગવાન (જાઈસંપન્ના જાવ પવ્વાણુ-

मर्पाद्या विचरन्तः 'गामाणुगाम' ग्रामानुग्रामम्=एक ग्रामादव्यवधानेनान्य-
ग्रामं 'दृडज्जमाणा' द्रवन्तः=गच्छन्तः यत्रैव राजगृहं नगरं यत्रैव गुणशिलकं
'चेइए' चैत्यम्=उद्यानं तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागम्य 'अहापडिरुवं' यथामति-
रूपं=यथायोग्यं=साधुमर्पादाहं 'उग्गहं' अग्रहं=यतेराज्ञाम् 'उग्गिह्मिन्ता'
अवगृह्य=वनपालसकाशान्मार्गयित्वा संयमेन तपसाऽऽत्मानं 'भावेमाणा'
भावयन्तः=वासयन्तो विहरन्ति=तिष्ठन्ति। परिपन्निर्गता। धर्मः कथितः।
ततः खलु तस्य धन्यस्य सार्थवाहस्य बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निश्चम्य
अयमेतदुप आध्यात्मिको यावत् समुपपद्यत एव खलु स्थविरा भगवन्तो

पुत्राणुपुत्रि चरमाणा गामाणुगामं दृडज्जमाणा जेणेव रायगिहे नयरे
गुणसिलए चेइए तेणेव उवागच्छन्ति) जो कि विशुद्ध मातृवंशवाले थे
यावत् तीर्थंकरों की परम्परा के अनुसार विहार करते थे। वे एक ग्राम से
दूसरे ग्राम में विहार करते हुए जहां राजगृह नगर और गुणशिलक चैत्य
था वहां आये (उवागच्छन्ता अहापडिरुवं उग्गहं उग्गिह्मिन्ता संजमेणं तवमा
अप्पाणं भावेमाणाविहरन्ति) वहां आकर वे साधुजन की मर्पादा के अनुसार
वसति की आज्ञा वहां के वनपालक से मांग कर संयम और तपसे अपनी आत्मा
को भावित करते हुए ठहर गये। (परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ तएणं तस्स
धणस्स सत्थवाहस्स बहुजनस्स अंतिए एयमद्वं सोच्चा णिसम्म इमेयारुवे अज्झत्थिए
जाव समुपज्जित्था) राजगृह नगर से परिपद यहां आई-भगवान ने उसे धर्म की
देखना दी। इसके बाद उस धन्य सार्थवाह ने अनेक जनों के मुख से इस
अर्थ-भगवदागमन रूप समाचार-को सुनकर-उसे हृदय में अवधारित

पुत्रि चरमाणा गामाणुगामं दृडज्जमाणा जेणेव गुणसिलए चेइए तेणेव
उवागच्छन्ति) के जेओ विशुद्ध भानवंशना हुता, अने तीर्थंकरानी परंपरागत
प्रथा मुज्ज विहार करता हुता तेओ ओक गाभथी बीजे गाभ विहार करतां जथां
राजगृह नगर अने गुण शिलक चैत्य हुतुं त्यां आव्या. (उवागच्छन्ता अहा
पडिरुवं उग्गहं उग्गिह्मिन्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरन्ति)
त्यां आवीने तेओ साधुजनोचित मर्पादाने अनुसरतां त्यांना वन पालकनी पांसेथी
पास करवानी आज्ञा मेणवीने तप अने संयमथी पोताना आत्माने भाविक करतां
त्यां देखाया. (परिसा निग्गया धम्मो कहिओ तएणं तस्स धणस्स सत्थवा-
हस्स बहुजनस्स अंतिए एयमद्वं सोच्चा णिसम्म इमेयारुवे अज्झत्थिए जाव
समुपज्जित्था) राजगृह नगरथी त्यां परिपद ओकठी थध. भगवाने परिपदने संघोधी
ओटवे के धर्म देखना आपी. त्यार पछी धन्य सार्थवाहे धणु भाणुसोना मोढेथी
भगवाने पधारवानी समाचार सांभलीने, तेने हृदयमां अवधारित करतां तेना

જાતિસંપન્ના ઇહાગતા, ઇહસંપ્રાપ્તા, તદ્ ઇચ્છામિ સ્વલુ સ્થવિરાન ભગવંતો
વન્દે નમસ્યામિ। સ્નાનઃ યાવત્ શુદ્ધ પ્રવેશ્યાનિ માહુશ્યાનિ વસ્ત્રાણિ 'પવર-
પરિહિણ' પ્રવરપરિહિતાનપ્રવરં યથાસ્યાતથા મૃત્યુનયેત્યર્થઃ પરિહિતઃ=પૃતઃ
પરિહિતપ્રવરવસ્ત્રઃ સન્ 'પાયવિહારચારેણ' પાદવિહારચારેણ=પાદાભ્યાં
સશ્ચરણેન યત્રેવ ગુણશિલકં ચૈત્યં યત્રેવ સ્થવિરા ભગવન્તસ્તત્રૌપાગચ્છતિ,
ઉવાગત્ય વન્દતે નમસ્યતિ। તતઃસ્વલુ સ્થવિરા ભગવન્તો ધન્યસ્ય સાર્થવા
હસ્ય વિચિત્રં ધર્મમાભ્યાસ્યતિ। તતઃ સ્વલુ સ ધન્યઃ સાર્થવાહો ધર્મં શ્રુત્વા
પ્રવચનાદીત્-શ્રદ્ધામિ સ્વલુ ભદન્ત। નિર્ગ્રન્થં પ્રવચનં યાવત્ મગ્નજિતઃ યાવદ્

કર-ઇસ પ્રકાર કો યહ આધ્યાત્મિક યાવત્ મનોગત સંકલ્પ ઉત્પન્ન હુધા।
(एवं स्वलु थेरा-भगवंतो जाइसंपन्ना इहमागया इहसंपत्ते, तं इच्छामि णं थेरे-
भगवन्ते वंदामि नमंसामि) સ્થવિર ભગવંત જો જાતિ સંપન્ન હૈ યહાં આપે
હુપ હૈ-યહાં સમ્પ્રાપ્ત હુપ હૈ। અતઃ મૈં ચાહતા હૂં કિ મૈં ઉન્હેં વંદ-નમન
કરૂં। એસા વિચાર કર ઉસને (હાપ, જાવ મુદ્દપ્પવેસાઈ મંગલ્લાઈ વત્થાઈં પવર-
પરિહિણ) સ્નાન કિયા-યાવત્ શુદ્ધ પ્રવેશ કરને યોગ્ય, મંગલ રૂપ વસ્ત્રોં કો
પહિના (પાય વિહારચારેણ જેણેવ ગુણસિલે ચેડણ જેણેવ થેરા ભગવંતો. તેણેવ
ઉવાગચ્છઈ, ઉવાગચ્છિત્તા વંદઈ નમંસઈ) પઢિન કર ફિર વહ પૈદલ હી નહાં
ગુણશિલક ચૈત્ય ઔર સ્થવિર ધર્મઘોષ ભગવંત વિરાજમાન થે વહાં ગયા।
જાકર ઉસને ઉન્હેં વંદન કિયા નમસ્કાર કિયા। (तएणं थेरा भगवंतो धण्णस्स सत्थवाइस्स विविचं धम्ममाइक्खंति) इसके बाद उन स्थविरं भगवंतने
धन्य सार्थवाहको विचित्र धर्म का उपदेश दिया। (तएणं से धण्णे सत्थवाहे

મનમાં આ જાતનો આધ્યાત્મિક અને મનોગત સંકલ્પ ઉદ્ભવ્યો—(एवं स्वलु
थेरा भगवंतो जाइसंपन्ना इहमागया इहसंपत्ते तं इच्छामि णं थेरे
भगवन्ते वंदामि नमंसामि) જાતી સંપન્ન સ્થવિર ભગવંત અક' પધાદલા છે.
સંપ્રાપ્ત થયા છે. એથી મને ઇચ્છા થાય છે કે હું તેમને વંદુ અને નમન કરું.
આ પ્રમાણે વિચાર કરીને તેમણે (पहाए, जाव, मुदपपवेसाईं मंगल्लाईं वत्थाईं
पवरपरिहिए) સ્નાન કર્યું ભગવાન પાસે જ્યાં યોગ્ય શુદ્ધ વસ્ત્રો પહેધો.
(पायविहारचारेणं जेणेव गुणसिले चेडए जेणेव थेरा भगवंतो तेणेव उवा-
गच्छई उवागच्छित्ता वंदई नमंसई) પહેરીને તેઓ પગથી ચાલીને જ્યાં ગુણશિલક
અત્ય અને સ્થવિર ધર્મઘોષ ભગવંત વિરાજમાન હતા ત્યાં ગયા. પહોંચીને તેઓએ
ભગવાનને વંદન અને નમસ્કાર કર્યો. (तएणं थेरा भगवंतो धण्णस्स सत्थ-
वाइस्स विविचं धम्ममाइक्खंति) ત્યાર પછી તે સ્થવિર ભગવતે ધન્ય સાર્થવાહને
અદ્ભુત રીતે ધર્મ-દેશના આપી. (तएणं से धण्णे सत्थवाहे) સોચા

वहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयित्वा भक्तं प्रत्याख्ययति, प्रत्याख्यय मासिकया संलेखनया पट्टि भक्तानि अनशनेन छिनत्ति, छित्त्वा कालमासे कालं कृत्वा सौधर्मे कल्पे देवत्वेन उपपन्नः। तत्र खलु अस्त्येककानां देवानां चत्वारि पर्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता, तत्र खलु धन्यस्य देवस्य चत्वारि पर्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। स खलु धन्यो देवस्तस्माद्देवलोकात् आयुः

ધર્મ સોચા (અં ચયાસી) ઇમકે વાદ ઉસ ધન્યસાર્થવાદને ધર્મ મુનક (ઇસ પ્રકાર કહા—(સદ્દામિ ણં મંતે નિર્ગમંથે પાવયણે જાવ પઞ્ચઇણ જાવ વહૂણિ વાસાણિ સામન્નપરિયાગં પાઝણિત્તા મત્તં પચ્ચલાઇ) હે મદંત ! મેં નિર્ગમ્થ પ્રવચન કો શ્રદ્ધા કરતા હું। યાવત્ વહ પ્રવ્રજિત હો ગયા। વહુત વર્ષો તક ઉસને શ્રામણ્ય પર્યાય કા પાલન કિયા—વાદ મેં ઉસને ચતુર્વિધ ભક્ત કો પ્રત્યાખ્યાન કર દિયા।—(પચ્ચલિખત્તા માસિયાણ સંલેહણાણ સદ્દિ-મત્તાઈ અણસણાણ છેદેઈ) પ્રત્યાખ્યાન કરકે ૧ એક માસ કી સંલેખના સે ઉમને ૬૦ ભક્તો કો અનશન દ્વારા છેદ દિયા—(છેદિત્તા કાલ માસે કાલં કિચ્ચા-સોહમ્મે કપ્પે દેવતાણ ઉવવન્ને) છેદકર ફિર વહ મૃત્યુ કે અવમર આને પર મરા—ઘોર મર કર સૌધર્મ કલ્પ મેં દેવ કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હો ગયા। (તત્થણં અત્થેગइयाणं देवाणं चत्तारिपलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता) वहां कितनेक देवों की चार पर्योपमप्रमाणस्थिति कही गई है सो (तत्थणं धण्णस्स देवस्स चत्तारिपलओवमाइं ठिई पण्णत्ता) इसमें धन्यकुमार देवकी वहां चार

एवं चयासी त्थार पछी धर्म-देशनानुं अवलु करीने धन्य सार्थवाडे कथुं—
सददामि णं मंते निर्गमंथे पावयणे जाव पञ्चइण जाव वहुणि वासाणि सामन्नपरियागं पाउणिता मत्तापच्चलाइ) हे मदंत ! निर्गमंथ प्रवचनमां हुं सारी पेटे श्रद्धा धरावुं छुं. आ रीते धन्य सार्थवाड प्रव्रजित થઇ ગયા. ધણું વર્ષો સુધી તેઓએ શ્રામણ્ય પર્યાયનું પાલન કર્યું. ત્યાર બાદ તેમણે ચતુર્વિધ ભક્તનું પ્રત્યાખ્યાન કર્યું. (પચ્ચલિખત્તા માસિયાણ સંલેહણાણ સદ્દિ મત્તાઈ અણ-સણાણ છેદેઈ) પ્રત્યાખ્યાન કરીને એક મહિનાની સંલેખના વડે તેમણે સાધક ભક્તોનું અનશન વડે છેદન કર્યું. (છેદિત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા સોહમ્મે કપ્પે દેવતાણ ઉવવન્ને) છેદન કર્યા બાદ મૃત્યુનો વખત બ્યારે આવ્યો ત્યારે તેઓ મરણ પામ્યા અને મરણ પામીને સૌધર્મ કલ્પમાં દેવની પર્યાયથી તેઓ ઉત્પન્ન થયા. (તત્થ ણં અત્થેગइयाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता) ત્યાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચારપર્યોપમ પ્રમાણ બેટલી છે. (તત્થ ણં ચ ધણ્ણસ્સ દેવસ્સ ચત્તારિપલિઓમાઈ ઠિઈ પણ્ણત્તા) આ રીતે ધન્યકુમાર દેવની સ્થિતિ ત્યાં ચાર

क्षयेण स्थितिक्षयेण भवक्षयेण 'अणंतरं' अनन्तरम्-अन्तररहितं व्यवधान-
रहितं चयं=शरीरं 'चइत्ता' त्यक्त्वा महाविदेहे वासं सेत्स्यति यावत्-यावच्छ-
ब्देन भोत्स्यते भोक्ष्यति परिनिर्वास्यति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यति । मृ. १३।

मूलम्— जहा णं जंजु ! धण्णेणं नो धम्मो ति वा जाव
विजयस्स तक्करस्स तओ विउलाओ असणपाणखाइमसाइमाओ
संविभागे कए, नन्नत्थ सरीरसारक्खणट्ठाए । एवामेव जंजु ! जेणं
अम्हं निग्गंथे वा निग्गंथी वा जाव पठ्वइए समाणे ववगयणहा-
णुम्मइणपुप्फगंधमल्लालंकारविभूसे इमस्स ओरालियसरीरस्य नो वन्न-
हेउं वा रूवहेउंविसयहेउं वा असणं पाणं खाइमं साइमं आहार-
माहारेइ, नन्नत्थ णाणदंसणचरित्ताणं वहणयाए, से णं इहलोए
चेव वहुणं समणाणं समणीणं सावगाण य साविगाण य अच्चणिजे
वंदणिज्ज, पूयणिज्जे, पज्जुवासणिज्जे भवइ, परलोए वि य णं नो
वहुणि हत्थच्छेयणाणि य कन्नेच्छेयणाणि य नासाच्छेयणाणि य,

पद्यों की स्थिति हुई। (से णं धन्ने देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं भव
क्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ जाव
सव्वदुक्खानमंतं करेहिइ) वे धन्यदेव उस देवलोक से आयु के क्षय से,
स्थिति के क्षय से भव के क्षय से, अनंतर शरीर को छोड़कर महाविदेह
क्षेत्र में (उत्पन्न होकर वहां से सिद्ध पद प्राप्त करेंगे)। यहाँ यावत् पद से
'भोत्स्यते भोक्ष्यति, परिनिर्वास्यति सर्वं दुःखानामन्तं करिष्यति' इस पाठका
संग्रह हुआ है। ॥मृ. १३॥

पद्य लोटदी थछ. (सेणं धन्ने देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं भवक्खएणं
ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ जाव सव्व-
दुक्खानमंतं करेहिइ) ते धन्यदेव ते बोद्धी आयुष्य क्षय, स्थिति क्षय अने भावना
क्षय थया पछी शरीरने त्याग करीने महाविदेह क्षेत्रमां उत्प. १. ७३. १३. १३
पद भेजवये. अही 'यावत्' पद्यी 'भोत्स्य ते भोक्ष्यति, परिनिर्वास्यति सर्वदुःखा
नामन्तं करिष्यति' आ पाठने संग्रह थयो छे. ॥ मृ. १३ ॥

एवं हियय उप्पाडणाणि य, वसणुप्पाडणाणि य, उल्लंघणाणि य
पाविहिइ, अणाइयं च णं अणवदगं दीहमच्चं चाउरंतसंसागकंतारं
वीइवइस्सइ जहा व से धण्णे सत्थवाहे। एवं खलु जंबू! समणेणं जाव
संपत्तेणं दोच्चस्स णायज्झयस्स अयमट्ठे पणत्ते—त्तिवेमि। सू. १४।
॥ विइयं णायज्झयणं समत्तं ॥ २ ॥

टीका—‘जहाण जंबू’ इत्यादि। ‘जहाणं’ यथा खलु=येन प्रकारेण हे
जम्बू! धन्येन सार्थवाहेन ‘नो’ न ‘धम्मोत्ति वा’ धर्मइति वा मत्वा यावत्
‘सुइद्’ इति वा मत्वा विजयाय तस्कराय तस्माद् विपुलाद् अशनपानत्वा-
धस्वाद्यात् संविभागः कृतः, नान्यत्र शरीरसंरक्षणार्थाय-शरीरसंरक्षणं विहाय
अशनादि संविभागो न कृत इत्यर्थः एवमेव हे जम्बू! यः खलु अस्माकं
निर्गन्धो वा निर्गन्धी वा ‘जाव’ यावत्-आचार्योपाध्यायानामन्तिके मुण्डो
भूत्वा अगाराद् अणगारितां प्रव्रजितः सन् ‘ववगयन्नाणुम्मदणपुप्फगंधम-

‘जहा णं जंबू!’ इत्यादि।
टीकार्थ—(जहाणं जंबू!) हे जंबू जिस प्रकार (धण्णेणं सत्थवाहेणं)
धन्य सार्थवाहेन (नो धम्मोत्ति वा जाव विजयस्स तक्करस्स तओ विउलाओ
असणपाणलाइमसाइमाओ संविभागं कए) धर्म नहीं मानकर यावत् मित्र
नहीं मानकर विजय तस्कर के लिये उस विपुल अशन, पान, खाद्य स्वाद्य
रूप आहार में से विभाग किश (नन्तथ सरीरसारक्खणद्वारे) केवल
अपने शरीर की रक्षा के निमित्त। (एवमेव जंबू! जेणं अम्हं निर्गन्धे
वा निर्गन्धी वा जाव पव्वइए समाणे ववगयन्नाणुम्मदणपुप्फगंधमल्लालंकार-
विभूसे) इसी तरह हे जंबू! जो हमारे निर्गन्ध साधु वा निर्गन्धी साध्वियां

‘जहा णं जंबू!’ इत्यादि।
टीकार्थ—(जहाणं जंबू!) हे जंबू! जेवी रीते (धण्णे णं सत्थवाहेणं)
धन्यसार्थवाहे (नो धम्मोत्ति वा जाव विजयस्स तक्करस्स तओ विउलाओ
असणपाणलाइमसाइमाओ संविभागं करेइ) पोटानी इरअ के पोटानो मित्र
ओपुं कंधं न आधुतां विजय तस्करने भाटे विपुल अशन पान, खाद्य अने स्वाद्यइए
अडारुमांथी भाग करी आओ। (नन्तथ सरीरसारक्खणद्वारे) ते इकंत पोटाना
शरीरनी रक्षा भाटे ए (एवमेव जंबू! जेणं अम्हं निर्गन्धे वा निर्गन्धी वा
जाव पव्वइए समाणे ववगयन्नाणुम्मदणपुप्फमल्लालंकारविभूसे) आ प्रभाजे
ए जंबू हे! जेअभास निर्गन्ध साधु के निर्गन्ध साध्वीओ आचार्य के उपाध्यायनी

क्षयेण स्थितिक्षयेण भवक्षयेण 'अणंतरं' अनन्तरम्-अन्तररहितं व्यवधान-
रहितं चयं=शरीरं 'चइत्ता' त्यक्त्वा महाविदेहे वणे' सेत्स्यति यावत्-यावच्छ-
ब्देन भोत्स्यते मोक्षयति परिनिर्वास्यति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यति । सू. १३।

मूलम्— जहा णं जंवू ! धण्णेणं नो धम्मो सि वा जाव
विजयस्स तद्धरस्स तओ विउलाओ असणपाणखाइमसाइमाओ
संविभागे कए, नन्नत्थ सरीरसारक्खणट्ठाए। एवामेव जंवू ! जेणं
अम्हं निगंथे वा निगंथी वा जाव पव्वइए समाणे ववगयणहा-
णुम्मइणपुप्फगंधमल्लालंकारविभूसे इमस्स ओरालियसरीरस्य नो वन्न-
हेउं वा रूवहेउं विसयहेउं वा असणं पाणं खाइमं साइमं आहार-
माहारेइ, नन्नत्थ णाणदंसणचरित्ताणं वहणयाए, से णं इहलोए
चेव वहूणं समणाणं समणीणं सावगाण य साविगाण य अच्चणिजे
वंदणिज्ज, पूयणिजे, पज्जुवासणिजे भवइ, परलोए वि य णं नो
वहूणि हत्थच्छेयणाणि य कन्नेच्छेयणाणि य नासाच्छेयणाणि य,

पक्ष की स्थिति हुई। (से णं धन्ने देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं भव
क्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ जाव
सव्वदुक्खाणमंतं करेहिइ) वे धन्यदेव उस देवलोक से आयु के क्षय से,
स्थिति के क्षय से भव के क्षय से, अन्तर शरीर को छोड़कर महाविदेह
क्षेत्र में (उत्पन्न होकर वहां से सिद्ध पद प्राप्त करेंगे)। यहाँ यावत् पद से
'भोत्स्यते मोक्षयति, परिनिर्वास्यति सर्व दुःखानामन्तं करिष्यति' इस पाठका
संग्रह हुआ है। ॥ सूत्र १३॥

पक्ष ७८वीं थछ. (सेणं धन्ने देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं भवक्खएणं
ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ जाव सव्व-
दुक्खणमंतं करेहिइ) ते धन्यदेव ते बोद्धी आधुप्य क्षय, स्थिति क्षय अने भावना
क्षय थया पछी शरीरने त्याग करीने महाविदेह क्षेत्रमां उत्प-न-ने त्यां सिद्ध
पद भेणवथे. अही 'यावत्' पद्धी 'भोत्स्य ते मोक्षयति, परिनिर्वास्यति सर्वदुःखा
नामन्तं करिष्यति' आ पाठने संग्रह थये छे. ॥ सू. १३ ॥

गिज्जे' अर्चनीयः=माननीयोऽभ्युत्थनादिना, वंदणिज्जे' वन्दनीयः स्तुतियोग्यो
गुणोन्नीर्तनादिना, 'पूयणिज्जे' पूजनीयः=आदरणीयश्चरणस्पर्शादिना, 'पज्जु-
वासणिज्जे' पर्युपासनीयः=सेवनीय आहार वस्त्रपात्रादिभिर्भवति । परलोकं
ऽपि च खलु=भवान्तरेऽपि 'वहूणि' वहूनि=बहुविधानि 'हत्थच्छेयणाणि य'
हस्तच्छेदनानि=करकृन्तनानि, 'कण्णच्छेयणाणि य' कर्णच्छेदनानि च 'नासा-
छेयणाणि य' नासाच्छेदणाणि च, एवं 'हिययउप्पाडणाणि य' हृदयोत्पाट-
नानि च=हृदयचिदारणानि 'वसणुप्पाडणाणि य' वृषणोत्पाटनानि च=अण्ड-
कोपचिदारणानि 'उल्लंघणाणि य' उल्लंघनानि च उत=ऊर्ध्वप्रदेशे वृक्षशोखादौ
लम्बनानि=वन्धनानि उद्धन्यनानीत्यर्थः 'नो' न 'पाविहिइ' प्राप्स्यति पूर्वोक्त-
दुःखानि न लप्स्यतइति भावः । 'अणाइयं' अनादिकम्=आदिरहितं च खलु
'अणवदग्गं' अनवदग्रम्=अनन्तम्, दीहमद्धं' दीर्घाध्वानं=चतुर्गतिलक्षणं दीर्घमार्गम्,

गाग य साविगाण य अचणिज्जे वंदणिज्जे, पूयणिज्जे, पज्जुवासणिज्जे
भवइ, परलोए वि य णं नो वहूणि हत्थच्छेयणाणि य कण्णच्छेयणाणि य ना-
साच्छेयणाणि य एवं हिययउप्पाडणाणिय वसणुप्पाडणाणि य उल्लं-
घणाणि य पाविहिइ) वे निर्घन्थ साधु और निर्घन्थ साध्वि या महाराज
इस लोकमे अनेक श्रमण और श्रमणीयों के श्रावक और श्राविकाओं के
माननीय होते हैं, वंदनीय होते हैं, पूजनीय होते हैं पर्युपासनीय होते
हैं तथा परलोकमे वे हस्तच्छेदसे कर्णच्छेदसे, नासिकाच्छेदसे वचते हैं ।
उनके हृदय नहीं चिदारें जाते हैं, अण्डकोप उनके नहीं विदारें जाते हैं । इस
न वे ऊर्ध्व प्रदेशरूप वृक्षादिकों की शाखा पर ही लटकाये जाते हैं । इस
पूर्वोक्त समस्त दुःखोंसे वे परे रहते हैं । (अणाइयं च णं अणवदग्गं दी

वंदणिज्जे, पूयणिज्जे, पज्जुवासणिज्जे भवइ, परलोए वि य णं नो वहूणि
हत्थच्छेयणाणि य कण्णच्छेयणाणि य नासाच्छेयणाणि य एवं हिययउप्पा-
डणाणिय वसणुप्पाडणाणि य उल्लंघणाणि य पाविहिइ) ते निर्ग्रन्थ साधु अने
निर्ग्रन्थ साध्वीओ (महाराज) आ जगतमां श्रमणु अने ब्रह्मीओना तेभज श्रावक अने
श्राविकाओनी वच्चे सम्मान युक्त पह भेजवे छे अने तेओ वंदनीय, पूजनीय अने
पर्युपासनीय होय छे । तथा परलोकमां तेवा साधु-साध्वीओ हस्तच्छेदशी गच्छी भय छे ।
तेभना हृदय अने अण्डकोपो विदीर्घु करवामां आवतां नथी अने तेभने जेओ वृक्षेनी
शाखाओ उपर पणु लटकाववामां आवता नथी । उपर छेवामां आवेलां अधां दुःखेथी
तेओ युक्त रहे छे । (अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसारकंतारं

મહાલંકારવિભૂષે' વ્યપગતસ્નાનોન્મર્દનપુષ્પગન્ધમાલ્યાન્ઢકારવિભૂષઃ, તત્ર-
 'વ્યવગદ' વ્યપગતા=પરિત્યક્તા-હાણુસ્મદ્ગ'સ્નાનમ્=દેશતઃ સર્વતો વા શરીર
 સંસ્કારરૂપમ્ ઉન્મર્દનં=તૈલાદિભિઃ શરીરસંમર્દનમ્ 'પુષ્ક' પુષ્પાણિ=ત્રપાદિ-
 કુસુમાનિ, 'મહુ' માલ્યં=પુષ્પમાલા 'અલંકાર' અલંકારાણિ=મણિમુક્તાદ્યામ-
 ગાનિ, તૈર્વિભૂષા=શરીરશોભા યેન સ તથોક્તઃ-પરિત્યક્તસ્નાનાદિસર્વશ્રદ્ધાર-
 શોભા इत्यर्थः अस्यौदारिकशरीरस्य 'वर्णहेतुं वा' वर्णहेतवे=कान्त्यार्थम्,
 'रूपहेतुं वा' रूपहेतवे=आकृति सौन्दर्यार्थम्, 'विसयहेतुं वा' विषयभोगार्थ-
 મશનં પાનં સ્વાદ્યં સ્વાદ્યમ્, एतद्रूपं चतुर्विधमाहारं 'नो' न 'आहारेड' आह-
 રતિ, औदारिकशरीरस्य वर्णादिनिमित्तमाहारं न करोतीति भावः 'नन्त्य-
 णाणदंसणचरित्ताणं वहण्याण' नान्यत्र ज्ञानदर्शनचरित्राणां वहनतायाः=
 જ્ઞાનાદિરત્નત્રયાગાધનાયા અન્યત્ર ન, જ્ઞાનાધારાધનં વિદ્યાગ્રાહારં ન કરોતિ
 किन्तु संयमयात्रानिर्वाहार्थमेव करोतीति तात्पर्यम् । सः खलु निर्ग्रन्थो वा
 निर्ग्रन्थी वा इहलोके चैव बहूनां श्रमणानां श्रमणीनां श्रावकाणां च 'अच-

૬ વે આચાર્ય ઉપાધ્યાય કે સમીપ આગારઅવસ્થા સે અનગાર અવસ્થા
 ધારણ કર સ્નાન, ઉન્મર્દન, પુષ્પ, ગન્ધ, માલા, અલંકાર इन से शारीरिक
 શોભા કરને કા પરિત્યાગ કર (इमस्स ओरालियसरीरस्स नो
 વન્નહેડં વા રૂપહેડં વા વિસયહેડં વા અસણં, પાણં, સ્વાઈમં, સાઈમં
 આહારમાહારેઈ નન્નત્થ ણાણદંસણ ચારિત્તાણં વહળયાણ) इस औदारिक
 શરીર કી કાંતિ કે નિમિત્ત, આકૃતિ કી સુન્દરતા કે નિમિત્ત, અથવા
 વિષયભોગોં કો ભોગને કે નિમિત્ત અજ્ઞાન, પાન, સ્વાદ્ય ઓર સ્વાદ્ય રૂપ
 ચતુર્વિધ આહાર નહીં કરતે હૈં किन्तु ज्ञान दर्शन और चारित्र को वहन
 કરને કે લિપે કરતે હૈં (सेण इहलोके चैव बहूनां श्रमणानां श्रमणीनां श्रावकाणां च 'अच-

પાસેથી આગાર અવસ્થામાંથી અનગાર અવસ્થા ધારણ કરીને સ્નાન, ઉન્મર્દન, પુષ્પ,
 ગન્ધમાળા ધરેણુંએ વગેરેથી શરીરને શણગારવું છોડીને (इमस्स ओरालियसरी-
 રસ્સ નો વન્નહેડં વા રૂપહેડં વા વિસયહેડં વા અસણં, પાણં,
 સ્વાઈમ, સાઈમં આહારમાહારેઈ નન્નત્થ ણાણદંસણચારિત્તાણં વહળયાણ)
 આ ઔદારિકસાપને કાંતિવાળું બનાવવા માટે, આકૃતિને સુંદર બનાવવા માટે અથવા વિષય
 ભોગો ભોગવવા માટે અજ્ઞાન, પાન, આદ્ય અને સ્વાદ્યરૂપ આ બાતના આધારે કરતા
 નથી, પણ જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્ર્યની સિદ્ધિ માટેજ એએ આધાર વગેરે કરે છે,
 'નેનં ઇહલોકે ચૈવ બહૂનાં શ્રમણાણં શ્રમણીણં સાવગાણય સાવિગાણય અચ્ચણિજ્જે

જિજ્ઞે' અર્ચનીયઃ=માનનીયોઽપ્યુત્થનાદિના, વંદણિજ્ઞે' વન્દનીયઃ સ્તુતિયોગ્યો
ગુણોન્કીર્તનાદિના, 'પૂયણિજ્ઞે' પૂજનીયઃ=આદરણીયશ્રવણસ્પર્શાદિના, 'પજ્જુ-
વાસણિજ્ઞે' પર્યુપાસનીયઃ=સેવનીય આહાર વસ્ત્રપાત્રાદિભિર્ભવતિ । પરલોકે
ઽપિ ચ સ્વલુ=ભવાન્તરેઽપિ 'વહૂણિ' વહૂનિ=વહુવિધાનિ 'હૃત્યચ્છેયણાણિ ય'
હૃતચ્છેદનાનિ=કરકૃન્તનાનિ, 'કર્ણચ્છેયણાણિ ય' કર્ણચ્છેદનાનિ ચ 'નાસા
છેયણાણિ ય' નાસાચ્છેદનાણિ ચ, 'અર્ધચ્છેયણાણિ ય' અર્ધચ્છેદનાણિ ચ
નાનિ ચ=હૃદયવિદારણાણિ 'વસણુપ્પાડણાણિ ય' વૃષણોત્પાટનાનિચ=અણ્ડ-
કોપવિદારણાણિ 'ઉલ્લંચણાણિ ય' ઉલ્લંચનાનિ ચ ઉત્=ઋત્વમદેશે વૃક્ષશાખાદૌ
લમ્બનાનિ=વન્ધનાનિ ઉલ્લંચનાનોત્પર્યઃ 'ના'ન 'પાવિહિ' પ્રાપ્સ્યતિ પૂર્વોક્ત-
દુઃસ્વાનિ ન લપ્સ્યતિત્વેતિ ભાવઃ । 'અણાઈયં' અનાદિકમ્=આદિરહિતં ચ સ્વલુ
'અણવદગ્ગં' અનવદગ્ગમ્=અનન્તમ્, દીહમદ્દં' દીર્ઘાધ્વાનં=ચતુર્ગતિલક્ષણં દીર્ઘમાર્ગમ્,

ગાય ય સાધિગાણ ય અચણિજ્ઞે વંદણિજ્ઞે, પૂયણિજ્ઞે, પજ્જુવાસણિજ્ઞે
ભવઈ, પરલોપ વિ ય ણં નો વહૂણિ હૃત્યચ્છેયણાણિ ય કર્ણચ્છેયણાણિ ય ના-
સાચ્છેયણાણિ ય 'અર્ધચ્છેયણાણિ ય' ઉલ્લંચણાણિ ય 'વસણુપ્પાડણાણિ ય' ઉલ્લં-
ચણાણિ ય પાવિહિ) વે નિર્ગ્રન્થ સાધુ ઔર નિર્ગ્રન્થ સાધિ યા મહારાજ
સ લોકમે અનેક થ્રમણ ઔર થ્રમણીયોં કે શ્રાવક ઔર શ્રાવિકાઓં કે
માનનીય હોતે હૈ, વંદનીય હોતે હૈ, પૂજનીય હોતે હૈ પર્યુપાસનાંય હોતે
હૈ તથા પરલોકમે વે હૃતચ્છેદસે કર્ણચ્છેદસે, નાસિકાચ્છેદસે વચતે હૈ ।
ઉનકે હૃદય નહીં વિદારેં જાતે હૈ, અંડકોપ ઉનકે નહીં વિદારે જાતે હૈ । સ
ન વે ઉર્ધ્વ પ્રદેશરૂપ વૃક્ષાદિકોં કી શાખા પર હી લટકાયે જાતે હૈ । સ
પૂર્વોક્ત સમસ્ત દુઃસ્વોસે વે પરે રહતે હૈ । (અણાઈયં ચ ણં અણવદગ્ગં દી

વંદણિજ્ઞે, પૂયણિજ્ઞે, પજ્જુવાસણિજ્ઞે ભવઈ, પરલોપ વિ ય ણં નો વહૂણિ
હૃત્યચ્છેયણાણિ ય કર્ણચ્છેયણાણિ ય નાસાચ્છેયણાણિ ય 'અર્ધચ્છેયણાણિ ય' ઉલ્લંચણાણિ ય 'વસણુપ્પાડણાણિ ય' ઉલ્લં-
ચણાણિ ય પાવિહિ) તે નિર્ગ્રન્થ સાધુ અને
નિર્ગ્રન્થ સાધીઓ (મહારાજ) આ જગતમાં થ્રમણ અને શ્રાણીઓના તેમજ શ્રાવક અને
શ્રાવિકાઓની વચ્ચે સન્માન યુક્ત પદ મેળવે છે અને તેઓ વંદનીય, પૂજનીય અને
પર્યુપાસનીય હોય છે. તથા પરલોકમાં તેવા સાધુ-સાધીઓ હૃતચ્છેદથી કર્ણચ્છેદથી
નાસિકાચ્છેદથી અને અંડકોપો વિદીર્ષ્ય કરવામાં આવતાં નથી અને તેમને જો આ વૃક્ષોની
તેમના હૃદય અને અંડકોપો વિદીર્ષ્ય કરવામાં આવતાં નથી. ઉપર કહેવામાં આવેલાં બધાં દુઃખોથી
તેઓ મુક્ત રહે છે. (અણાઈયં ચ ણં અણવદગ્ગં દીહમદ્દં ચાઉરંતસંસારકંતારં

દીર્ઘાદિં વા=દીર્ઘકાલિકમ્, 'ચાતુરંતં સંસારકંતારં' ચાતુરંતં સંસારકાન્તારં=ચાતુરંતં=ચતુર્ગતિરૂપં સંસાર એવં દાન્તારં=મહારણ્યં, તત્-અટવીમિત્યર્થઃ 'વીઃ-વઙ્ઙસસ' વ્યતિવૃજ્ઞિવ્યતિ=વ્યતિક્રમિવ્યતિ મોક્ષં યાસ્યતીતિ ભાવઃ, કયમ્? યથા સ ધન્યઃ સાર્થવાદઃ । અત્ર દૃષ્ટાન્તયોજના ચૈવમ્—

इह मनुष्यक्षेत्रं राजगृहनगररूपम्, तत्र साधुजीवो धन्यसार्थवाटस्वरूपः। शरीर शब्दादिविषयमवृत्तं सदविजयचौरः। अनुपमानन्दजनकत्वेन संयमः पुत्रः। समितिगुप्तिवपः शीलान्याभरणानि। संसारो जीर्णोऽन्यान्। आसन्नरूपो भग्नकूपः। तत्र=अवसन्नपार्श्वस्थत्वादि प्रवृत्तिरूपनिकुञ्जपरिवृतो मायामृषादिरूपो मालुकाकक्षः। अष्टादशपापभेद प्रभेदाः सर्पाः। जीवशरीरयोरविभागे

इमदं चातुरंतसंसारकंतारं वीइवइससइ जहा व से धण्णे सत्थवाहे एवं खलु जंबू । समणेणं जाव संपत्तेणं दोच्चस्स णायज्झयणस्स आयमद्वे पणत्ते-त्तिवेमि) ऐसे जीव ही अनादि-अनंत इस चतुर्गतिरूप दीर्घमार्ग वाली भवाटवी को उध्वन कर देगे । जैसे धन्यसार्थवाह करेगा । इस दृष्टान्त को योजना यहां इस प्रकार करनी चाहिये । यह मनुष्य क्षेत्र राजधानी के नगर के समान है । इसमें धन्य सार्थ की तरह ये साधुरूप जीव हैं । शब्दादिरूप विषयोंमें प्रवृत्त हुआ यह शरीर विजय चौर के स्थानापन्न हैं । अनुपम आनंद का जनक होने से संयम ही यहां पुत्र है । समिति, गुप्ति, तप तथा शील ये सब आभरण हैं । जीर्ण उद्यान की तरह यह संसार है । आसन्नही इसमें जीर्णरूप जैसा है । अवसन्न पासस्थ आदिकों की प्रवृत्तिरूप निकुंज से परिवृत हुआ मायामृषादिरूप मालुका कक्ष है । इसमें १८ पापस्थान के भेद प्रभेद ही सर्प हैं । जीव और शरीर का अविभाग

વીइવइસસ જહા વ સે ધણે સત્થવાહે એવં ખલુ જંબૂ ! સમણેણં જાવ સંપત્તેણં દોચ્ચસ્સ ણાયજ્ઞયણસ્સ અયમદ્વે પણત્તે ત્તિવેમિ) એવા છવેા જ અનાદિ અનંત રૂપ ચતુર્ગતિના દીર્ઘમાર્ગવાળા ભવાટવીને ઓળંગશે જેમ કે ધન્ય સાર્થવાહ પોતાના સદાયરણુથી સિદ્ધિ મેળવશે. આ દૃષ્ટાંત અહીં આરીતે રજૂ કરવામાં આવે છે— આ મનુષ્ય જગત પાટનગર જેવું છે આ જગતમાં ધન્યસાર્થવાહની જેમ સાધુ-રૂપ છવેા છે. શબ્દ વગેરે વિષયોમાં પ્રવૃત્ત થતું શરીર વિજય ચોરની જેમ છે. ઉત્તમ ગુણ આપનાર હોવા બદલ સંયમ જ આ મનુષ્ય જગત માટે પુત્રરૂપ છે. સમિતિ, ગુપ્તિ, તપ તેમજ શીલ આ બધા આભરણો છે. જગત છલ્લું ઉદ્યાન જેવું છે. આ જગત આશ્રવધર્મો છે તે જ છલ્લું ફૂલો છે. અવસન્ન, પાસસ્થ વગેરેની પ્રવૃત્તિરૂપ નિકુંજથી વીંટળાયેલા માયામૃષાવગેરે રૂપ-માલુકાકક્ષ છે. આમાં અઢાર પાપસ્થાનોમાં લેહ અને ઉપલેહ જ સાપ છે. છવ અને શરીરનું અવિભાજન રૂપે — ન છે

નાવસ્થાનં દૃઢિબંધનમ્, કર્મપરિણામો મૂપઃ કર્મપ્રકૃતચો રાજપુરુષઃ, મનુ-
પ્યાયુષ્કવંધૈતવઃ સ્વરૂપાપરાધાઃ, પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયા મલમૂત્રપરિત્યાગરૂપાઃ,
પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાર્થે હિ શરીરં પ્રવર્તેતે, તચ્ચાઽઽહારાદિદાનં વિના પ્રવર્તિતું
ન પ્રભવતિ, અતો વિજયચોરસ્થાનીયસ્ય શરીરસ્યાઽઽહારાદિદાનં પ્રતિલેખનાદિ
ક્રિયાર્થમેવેતિ । પન્થકદાસચેટકસ્થાનીયઃ—પ્રકૃતિભદ્રકઃ સાધુઃ । યતઃ—સ
મક્તાદિકમાનીય દદાતિ । મદ્રાસાર્થવાહીરૂપા આચાર્યાઃ । તે હિ આહારા-
દિભિઃ શરીરપોષણપરં સાધુમુપાલમ્ભયન્તિ, તદા સાધુર્મોજનકારણં ક્ષુધાવે-

રૂપ સે જો અવસ્થાન હૈ વહી દૃઢિબંધન હૈ । કર્મપરિણામ રાજા ઔર
કર્મ કી પ્રકૃતિયાં રાજપુરુષ હૈ । સ્વરૂપ અપરાધ મનુપ્યાયુ કે વંધ કે હેતુ
હૈ મલમૂત્ર પરિત્યાગરૂપ પ્રતિ લેખનાદિ ક્રિયાઈ હૈ । પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયા
કરનેકે લિયે શરીર હૈ પ્રવર્તિત હોતા હૈ । પરન્તુ જવતક હસે આહારાદિ
ન દિયા જાય તચતક હસકી પ્રવૃત્તિ ઉનકે કરને કે લિયે નહીં હો સકતી
હૈ । હસ લિયે વિજયચોર કે સ્થાનાપન્ન હસ શરીર કો જો આહારાદિ કા
દેના હોતા હૈ વહ ઉસસે પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયા કરાને કે લિયે હી હોતા
હૈ । પન્થકદાસચેટક કે જૈસા પ્રકૃતિ સે મદ્ર પરિણામ ચાલા સાધુજન હૈ ।
કયોં કિ વહ મક્તાદિ લાકર દેતા હૈ । મદ્રા સાર્થવાહી કી તરહ આચાર્ય
મહારાજ હૈ । કયોંકિ વે આહારાદિક્ષારા શરીર કે પોષણમેં તત્પર હુણ
સાધુઓંકો ઉપાલંભ—ઉલહના દેતે હૈ । ઉસ સમય સાધુજન હસકા કારણ

બે જ 'હૃડિબંધન' છે. અહીં કર્મનું પરિણામ રાજા અને કર્મની પ્રકૃતિઓ રાજપુરુષ છે.
સ્વરૂપ અપરાધ મનુષ્યના આયુષ્યના બંધનો હેતુ છે. મળમૂત્ર પરિત્યાગરૂપ પ્રતિલેખ-
ના વગેરે ક્રિયાઓ છે. શરીર જ પ્રતિલેખના વગેરે ક્રિયાઓ કરવા માટે પ્રવૃત્ત થાય
છે. પણ જ્યાં સુધી આ શરીરને આહાર વગેરે અપાતો નથી ત્યાં સુધી આ શરીર
મળમૂત્રના ત્યાગ માટે પ્રવૃત્ત થતું નથી. વિજયચોરના સ્થાને મૂકાયેલા આ શરીરને
જે આહાર વગેરે આપનામાં આવે છે, તે પ્રતિલેખના વગેરે ક્રિયાઓ કરાવવા માટે
જ આપવામાં આવે છે. પાંચકદાસ ચેટક જેવો ઉત્તમ સ્વભાવવાળો માણસ સાધુજ-
નના સ્થાને મૂકી શકાય. કેમકે તે ભોજન વગેરે લાવીને આપે છે. ભદ્રા સાર્થવા-
વાહીની જેમ આચાર્ય મહારાજ છે. કેમકે તેઓ આહાર વગેરેથી પોતાના શરીરને
પુષ્ટ બનાવનારા સાધુઓને ઉપાલંભ (ઉપકૃતિ) આપે છે. તે વખતે સાધુઓ આહારનું
કારણક્રુધા (ભૂખ) વેદનાથી નિવૃત્તિ બતાવે છે ત્યારે તેઓ (આચાર્ય) સંતુષ્ટ થઈ જાય
છે. સંયમ યાત્રાના નિર્વાહ માટે ચેટલે કે સંયમથી જીવન ચલાવ કરવા માટે જ સાધુઓ
આહાર કરે છે. આ પ્રમાણે સંપૂર્ણ બીજા અધ્યયનનો આ નિષ્કર્ષો રૂપે અર્થ સ્પષ્ટ

નાદિ નિવેદયતિ, एवं निवेदिते सत्याचार्याः परितुष्टा भवन्ति, साधवः संय-
मयात्रा निर्वाहार्थमेतद्धारं कुर्वन्तीति समग्राध्ययनस्य निष्कण्ठोऽर्थः ।

एवं खलु हे जम्बू ! यमणेन भगवता यावत् मोक्षं सम्पाप्तेन द्वितीयस्य=
संघाटाख्यस्य ज्ञाताध्ययनस्यायमर्थः प्रज्ञप्तः 'त्तिवेमि' इति त्रयीमि, पूर्ववत् । सू. १४।

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचकपठचंद्रशा भापाक-
लितललितकलापालापर-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-
वादिमानमर्दकक श्री शाहूच्छत्रपति कोल्हापुर राजप्रदत्त-'जैन-
शास्त्राचार्यपदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालहस्त
चारी-जैनाचार्य-जैनधर्मद्विवाकरपूज्यश्री-
घासीलालव्रतिचिरचितायां 'ज्ञाताधर्मकथा'

सूत्ररूपानुसारधर्माश्रितवर्षिण्या-

हयां व्याख्यायां द्वितीय-

मध्यगने सम्पूर्णम् । २ ।

ધુધા વેદના આદિ હૈં એસા જવ કહ દેતે હૈં તો વે સંતુષ્ટ હો જાતે હૈં ।
સંયમ યાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે હી સાધુજન આહાર કરતે હૈં । ઇસ
પ્રકાર ઉસ સમગ્ર અધ્યયન કા યહ નિષ્કર્ષાર્થ નિકલતા હૈ ।

इस तरह हे जम्बू ! मोक्षमे संप्राप्त हुए अमण भगवान महावीरने
संघाटाख्य ज्ञाताध्ययन का यह अर्थ प्ररूपित किया है ऐसा मैं कहता हूँ ।
“त्तिवेमि” इन पदों की व्याख्या पहिले अध्ययनमे की ही जा चुकी है ।
अतः यहाँ नही की गई है । “सूत्र १४”

જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી-ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત 'જ્ઞાતાધ-
ર્મકથા' સૂત્ર' કી અનુસારધર્માશ્રિતવર્ષિણી વ્યાખ્યાકા
દૂસરા અધ્યયન સમાપ્ત ॥ ૨ ॥

કરવામાં આવ્યો છે.

આ રીતે હે જંબૂ ! મોક્ષમાં સંપ્રાપ્ત થયેલા અમણ ભગવાન મહાવીરે સંઘાટાખ્ય
જ્ઞાતાધ્યયનનો ઉપર લખ્યા મુજબ અર્થ બતાવ્યો છે. આ હું તને કહું છું. 'ત્તિવેમિ'
આ પદોની વ્યાખ્યા પ્રથમ અધ્યયનમાં કરવામાં આવી છે. ॥ સૂત્ર ૧૪ ॥

જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી-ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત
'જ્ઞાતાધર્મકથા' સૂત્ર, ની અનુસારધર્માશ્રિતવર્ષિણી વ્યાખ્યા
તું બીજું અધ્યયન સમાપ્ત ॥ ૨ ॥

તૃતીયાધ્યયનમારમ્બયતે.

દ્વિતીયાધ્યયને વિષયકપાયાદાવાસક્તસ્ય દોષા, અનાસક્તસ્ય ગુણા ઉપદિષ્ટાસ્તેન ચારિત્રશુદ્ધિઃ કર્તવ્યેતિ પ્રતિબોધયિતુમ્, અથાસ્મિન્નધ્યયને સશક્લ્લનિઃશક્લ્લયોર્દોષગુણા ઉપદિશ્યન્તે, તેન સંયમશુદ્ધિકારણીભૂત— સમ્યક્ત્વશુદ્ધિઃ કર્તવ્યનયા પ્રતિબોધયતિ, તત્રેદ મુખ્યેષસૂત્રમાહ—

મૂલમ્—જહ્ણં મંતે ! સમણે ણં ભગવયા મહાવીરેણં વિઙ્ગય અજ્ઞપ્પણસ્સ ણાયાધમ્મકહાણં અયમદ્દે પન્નત્તે, તદ્વિઅસ્સ ણં મંતે ણાયજ્ઞપ્પણસ્સ કે અદ્દે પપ્પણત્તે ? ॥સૂ. ૧ ॥

ટીકા—‘જહ્ણં મંતે !’ इत्यादि

यदि खलु भदन्त ! श्रमणेन भगवता महावीरेण द्वितीयस्याध्ययनस्य ज्ञाताधर्मकथानामयमर्थः प्रज्ञप्तः, तृतीयस्य खलु भदन्त ! ज्ञाताध्ययनस्य कोऽर्थः प्रज्ञप्तः ? । सर्वं सुगमम् ॥सूत्र १ ॥

તીસરા અધ્યયન પ્રારંભ

દ્વિતીય અધ્યયનમાં, વિષય કપાય આદિ મેં આસક્ત હુએ વ્યક્તિ કે દોષ તથા ઉનમેં આસક્ત હુએ વ્યક્તિ કે ગુણ ઉપદિષ્ટ હુએ હેં । હસતે વહાં યહી સમજાયા હૈ કિ ચારિત્ર કી શુદ્ધિ અવશ્ય હી કરની ચાઢિયે અવ હસ તૃતીય અધ્યયનમેં જો શંકા સહિત હૈ ઓર જો શંકા રહિત હૈ’ ઉન દોનોં કે દોષ ઓર ગુણ કહતે હૈ । હસતે સંયમ કી શુદ્ધિમેં કારણી-ભૂત જો સમ્યક્ત્વ કી શુદ્ધિ હૈ વહ કર્તવ્ય હૈ યહ વાન પ્રતિબોધિત હોતી હૈ । યહ વાત યહાં સૂત્રકાર સમજાતે હેં—હસકે લિયે વે હસ આરંભ વોધક સૂત્ર કો કહતે હેં—જહ્ણં મંતે ! इत्यादि

તૃતીય અધ્યયન પ્રારંભ

બીજા અધ્યયનમાં વિષયકપાય વગેરેમાં આસક્ત થયેલા માણસના દોષો તેમજ અસક્ત થયેલા માણસના શુભો બતાવવામાં આવ્યા છે. આ રીતે બીજા અધ્યયનમાં મુખ્યરૂપે એજ વાત સમજાવવામાં આવી છે કે ચારિત્રની શુદ્ધિ યોગ્ય કરવી જોઈએ. આ ત્રીજા અધ્યયનમાં જે માણસો શંકાશીલ અથવા શંકા રહિત છે, તે બંનેના શુભો કહેવામાં આવ્યા છે. એથી સંયમની શુદ્ધિ માટે કારણરૂપ જે સમ્યક્ત્વની શુદ્ધિ છે તે જ કર્તવ્ય છે, આ વાત સમજાય છે. સૂત્રકાર અહીં એજ વાત સમજાવે છે. તેઓ સમજાવતાં આરંભ બોધક પહેલું સૂત્ર કહે છે—જહ્ણં. મંતે ! इत्यादि ।

નાદિ નિવેદયતિ. एवं निवेदिते सत्याचार्याः परितुष्टा भवन्ति, साधवः संय-
मयात्रा निर्वाहार्थमेतद्धारं कुर्वन्तीति समग्राध्ययनस्य निष्कृष्टोऽर्थः ।

एवं खलु हे जम्बू ! श्रमणेन भगवता यावत् मोक्षा सम्प्राप्तेन द्वितीयस्य=
संघाटाख्यस्य ज्ञाताध्ययनस्यायमर्थः प्रज्ञप्तः ‘चित्तेमि’ इति त्रयीमि, पूर्ववत् ॥ १४ ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचस्पत्यचarya भाषा-
वितललितकलापालापर-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-

वादिमानमर्दक श्री शाहच्छापति कोल्हापुर राजप्रदत्त-‘जैन-

शास्त्राचार्यपदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालहर

चारी-‘जैનાचार्य-‘जैनधर्म’-‘દિવાકર પૂજ્યશ્રી-

ધાસીલાલગ્રંથિવિરચિતાયાં ‘જ્ઞાતાધર્મકથા’

સૂત્રરૂપાનગારધર્મામૃતવર્ષિણા-

સ્વાધ્યાયાધ્યાયાંદિતીય-

મધ્યયન સંમ્પૂર્ણમ્ ॥ ૨ ॥

ધુધા વેદના આદિ હૈં એસા જવ કહ દેતે હૈં તો વે સંતુષ્ટ હો જાતે હૈં ।
સંયમ યાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે હી સાધુજન આદાર કરતે હૈં । ઇસ
પ્રકાર ઉસ સમગ્ર અધ્યયન કા યહ નિષ્કર્ષાર્થ નિકલતા હૈં ।

इस तरह हे जम्बू ! मोक्षमे संप्राप्त हुए श्रमण भगवान महावीरने
संघाटाख्य ज्ञाताध्ययन का यह अर्थ प्ररूपित किया है ऐसा मैं कहता हूँ ।
“चित्तेमि” इन पदों की व्याख्या पहिले अध्ययनमे की ही जा चुकी है ।

अतः यहाँ नहीं की गई है । “सूत्र १४”

જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી-ધાસીલાલજી મહારાજકૃત ‘જ્ઞાતાધ-
ર્મકથા’ સૂત્ર’ કી અનગારધર્મામૃતવર્ષિણી વ્યાખ્યાના
દૂસરા અધ્યયન સમાપ્ત ॥ ૨ ॥

કરવામાં આવ્યો છે.

આ રીતે હે જંબૂ ! મોક્ષમાં સંપ્રાપ્ત થયેલા શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે સંઘાટાખ્ય
જ્ઞાતાધ્યયનનો ઉપર લખ્યા મુજબ અર્થ બતાવ્યો છે. આ હું તને કહું છું. ‘ચિત્તેમિ’
આ પદોની વ્યાખ્યા પ્રથમ અધ્યયનમાં કરવામાં આવી છે. ॥ સૂત્ર ૧૪ ॥

જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી-ધાસીલાલજી મહારાજ કૃત
‘જ્ઞાતાધર્મકથા’ સૂત્ર, ની અનગારધર્મામૃતવર્ષિણી વ્યાખ્યા
નું બીજું અધ્યયન સમાપ્ત ॥ ૨ ॥

नगर्यां वहिर्नृत्तरपौरस्थे दिग्भागे सुभूमिभागं नामोद्यानमासीत् तत्
कीदृशमित्याह—‘सन्वोऽयपुष्पफलसमिद्धे’ : सर्वैर्तूकपुष्पफलसमृद्धम्—
चसन्तादिवङ्कृतुजनितपुष्पफलादिसम्पन्नम्, सुरम्यम्—अतिशयरमणीयं,
नन्दनवनवत् ‘सुहसुरभिसीयलच्छायाए’ शुभसुरभि-शीतलछायाया-तत्र
‘सुह’ शुभा-शोभना ‘सुरभि’ मृगन्धिः ‘सीयलं’ शीतला च या छाया
तया ‘समणुवद्धे’ समनुवद्धम्—युक्तम्, तस्य खलु सुभूमिभागस्योद्यानस्य
‘उत्तरओ’ उत्तरतः—उत्तरदिशायामित्यर्थः ‘एग देसंमि, एकदेशे—एकस्मिन्

‘एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं इत्यादि ।

टीका—(जंबू ! एवं खलु) हे जंबू ! तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस
प्रकार है—(तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था) उस कालमें उस
समयमें चंपा नामकी नगरी थी (वन्नओ) इसका वर्णन पहिले किया जा
चुका है। (तीसेणं चंपाए नयरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए सु-
भूमिभाए नामं उज्जाणे होत्था) उस चंपा नगरी के बाहर ईशान कोणमें
सुभूमिभाग नामका उद्यान था। (सन्वोऽयपुष्पफलसमिद्धे सुरम्ये नंदनवणे
इव) यह समस्त ऋतुओं की शोभासे समृद्ध था—आर्थात् समस्त ऋतु
संवन्धी फलपुष्पादिकों से यह सम्पन्न था। अतिशय रमणीय था। नंदन-
वन के समान यह (सुहसुरभि सीयलच्छायाए समणुवद्धे) शुभ, सुरभि
और शीतल छायासे युक्त था। (तस्स णं सुभूमिभागस्स उज्जा-
णस्स उत्तरओ एगदेसंमि मालुयाकच्छए वन्नओ) उस सुभूमिभाग उद्यान की

‘एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं’ इत्यादि ॥

टीका—(जंबू ! एवं खलु) जंबू ! तमारा प्रश्नको जवाब आ प्रमाणो छे—(तेणं-
कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था) ते क्षणेअने ते समये चंपा नामे
नगरी छती. (वन्नओ) ते नगरीछुं वल्लुन पहिलां करवाभां आवुं छे.
(तीसेणं चंपाए नयरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए सुभूमिभाए नामं
उज्जाणे होत्था) ते चंपानगरीनी गडार ध्यान कोणुमां सुभूमिभाग नामे उद्यान छते।
(सन्वोऽयपुष्पफलसमिद्धे सुरम्ये नंदनवणे इव) ते उद्यान समस्त ऋतुओनी
शोभाथी युक्त छतुं ओठवे के गधी ऋतुओनां क्षणेअने पुष्पोथी ते संपन्न छतुं
अने ते गहुं ज रमणीय छतुं. नंदन वननी जेम ते (सुहसुरभिसीयलच्छायाए
समणुवद्धे) शुभ सुरभिअने शीतल छायावाणुं छतुं. (तस्स णं सुभूमिभागस्स उज्जा-
णस्स उत्तरओ एगदेसंमि मालुयाकच्छए वन्नओ) ते सुभूमि भाग उद्याननी
उत्तर दिशाअे ओके तरफ मालुका कच्छनाअे वन छतुं. ते मालुका कच्छनुं वल्लुन

सुधर्मास्वामी जम्बू स्वामिनमाह—‘एवं खलु जम्बू इत्यादि—

मूलम्—एव खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समणं चपा-
नामं नयरी होत्था वन्नओ, तीसेणं चपाए नयरीए वहिया उत्तर
पुरत्थिमे दिसिभाए सुभूमिभाए नामं उज्जाणे होत्था, सब्बोउय
पुप्फफलसमिद्धे सुरस्से नंदणवणे इव सुह सुरभिस्सीयलच्छायाए
समणुवद्धे, तस्स णं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स उत्तरओ एगदेसंमि
माल्लया कच्छए वन्नओ, तत्थ णं एगा वणमऊरी दो पुट्ठे परि-
यागये पिड्डुडी पंडुरे निव्वणे निरुवहए भिन्नमुट्ठिप्पमाणे मऊरी
अंडए पसवइ पसवित्ता सएणं पक्खवाएणं सारक्खमाणी संगो-
वमाणी संविट्ठेमाणी विहरइ. ॥ सू. २ ॥

‘एवं खलु जम्बूः, इत्यादि

टीका—तस्मिन् काले तस्मिन् समये चम्पानाम नगरी आसीत्,
वर्णकः=वर्णनग्रन्थः चम्पानगर्या वणनं प्रागुक्तम्, ‘तीसेणं’ तस्याश्चम्पाया

टीकार्थ—(भंते) हे भदंत (जइणं समणेणं भगवया महावीरेणं) यदि
श्रमण भगवान् महावीरने (ण्हायाधम्मकहाणं विइय अज्झयणस्स) ज्ञाता धर्म
कथा के द्वितीय अध्ययन का (अयमट्ठे पण्णत्ते) यह भाव-अर्थ प्ररूपित
किया है तो (तइअस्स णं भंते ! णायज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते) तृतीय
ज्ञाताध्ययन का क्या अर्थ प्रकट किया है। इस प्रकार जंबू स्वामी की
वात सुनकर सुधर्मा स्वामीने उनसे कहा कि—“सू. १”

टीकाथ—(भंते) हे भदंत ! (जइणं समणेणं भगवया महावीरेणं
श्रमण भगवान् महावीरे (ण्हायाधम्मकहाणं विइयअज्झयणस्स) ज्ञाता धर्म
कथाया पीठ अध्ययनने (अयमट्ठे पण्णत्ते) आ भाव-अर्थ निरूपित कथो छ, तो
(तइअस्स णं भंते ! णायज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते) त्रीन ज्ञाता अध्ययनने
शो अर्थ ज्ञातो छ ? आ रीते जंबू स्वामीनी वात सांख्यीने सुधर्मास्वामीने
तेभने कहु-हे प्रत्युत ॥

नगर्यां बहिरुत्तरपौरस्थे दिग्भागे सुभूमिभागं नामोद्यानमासीत् तत्
कीदृशमित्याह—‘सन्वोउयपुष्पफलसमिद्धे’ : सर्वैर्तू रपुष्पफलसमृद्धम्—
चसन्तादिवद्भुवनितपुष्पफलादिसम्पन्नम्, सुरम्यम्—अतिशयरमणीयं,
नन्दनवनवत् ‘सुहसुरभिसीयलच्छायाए’ शुभसुरभि-शीतलछायाया-तत्र
‘सुह’ शुभा-शोभना ‘सुरभि’ मृगन्धिः ‘सीयल’ शीतला च या छाया
तया ‘समणुवद्धे’ समनुवद्धम्—युक्तम्, तस्य खलु सुभूमिभागस्योद्यानस्य
‘उत्तरओ’ उत्तरतः—उत्तरदिशायामित्यर्थः ‘एग देसंमि, एकदेशे—एकस्मिन्

‘एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं इत्यादि ।

टीकार्थ—(जंबू ! एवं खलु) हे जंबू ! तुम्हारे प्रश्न का उत्तर इस
प्रकार है—(तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था) उस कालमें उस
समयमें चंपा नामकी नगरी थी (वन्नओ) इसका वर्णन पहिले किया जा
चुका है । (तीसेणं चंपाए नयरीए बहिया उत्तरपुरस्थिमे दिसिभाए सु-
भूमिभाए नामं उज्जाणे होत्था) उस चंपा नगरी के बाहर ईशान कोणमें
सुभूमिभाग नामका उद्यान था । (सन्वोउय पुष्पफलसमिद्धे सुरम्मे नंदणवणे
इव) यह समस्त ऋतुओं की शोभासे समृद्ध था—आर्थात् समस्त ऋतु
संवन्धी फलपुष्पादिकों से यह सम्पन्न था, अतिशय रमणीय था । नंदन-
वन के समान यह (सुहसुरभि सीयलच्छायाए समणुवद्धे) शुभ, सुरभि
और शीतल छायासे युक्त था । (तस्स णं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स
उत्तरओ एगदेसंमि मालुयाकच्छए वन्नओ) उस सुभूमिभाग उद्यान की

‘एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(जंबू ! एवं खलु) जंबू ! तमारा प्रश्नको जवाब आ प्रमाणों से—(तेणं-
कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था) ते कालेअने ते समये चंपा नामे
नगरी હતી. (वन्नओ) ते नगरीतुं વર્ણન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે.
(तीसेणं चंपाए नयरीए बहिया उत्तरपुरस्थिमे दिसिभाए सुभूमिभाए नामं
उज्जाणे होत्था) ते ચંપાનગરીની બહાર ઈશાન કોણમાં સુભૂમિભાગ નામે ઉદ્યાન હતો.
(સન્વોઉયપુષ્પફલસમિદ્ધે સુરમ્મે નંદણવણે ઇવ) તે ઉદ્યાન સમસ્ત ઋતુઓની
શોભાથી યુક્ત હતું એટલે કે બધી ઋતુઓનાં ફળો અને પુષ્પોથી તે સંપન્ન હતું
અને તે બહુ જ રમણીય હતું. નંદન વનની જેમ તે (સુહસુરભિસીયલચ્છાયાए
સમણુવદ્ધ) શુભ સુરભિ અને શીતળ છાયાવાળું હતું. (તસ્સ ણં સુભૂમિભાગસ્સ ઉજ્જા-
ણસ્સ ઉત્તરओ एगदेसंमि मालुयाकच्छए वन्नओ) તે સુભૂમિ ભાગ ઉદ્યાનની
ઉત્તર દિશાએ એક તરફ માલુકા કચ્છનામે વન હતું. તે માલુકા કચ્છનું વર્ણન

भागे मालुकाकक्षकः आसीत्, वर्णकः वर्णनः=मालुकाकक्षकस्य वर्णन-
मत्रैव द्वितीयाध्ययनेऽभिहितम् ।

‘तत्थ णं तत्र खलु एका वनमयूरी द्वे-द्विसंख्यके ‘पुट्टे’ पुट्टे-वदिते
‘परियागए’ पर्यायागते-पर्यायेण प्रवृत्तिकालक्रमेण आगते प्रवृत्तिकालमाप्ते
इत्यर्थः, परियागए-इत्यत्र यकारलोपः प्राकृतत्वात् ‘पिट्ठुं डी पंडुरे’
पिट्ठोण्डी पाण्डुरे तत्र-‘पिट्ठ’ पिट्ठस्य-ताण्डुलचूर्णस्य ‘उंडी’ पिट्ठो तद्वत्
पाण्डुरे भवत्ये ये ते तथा ‘निव्वणे’ निर्व्वणे-क्षतरहिते ‘निरुवहते-उपद्रव-
-रहिते ‘भिन्नमुट्ठिप्पमाणे’ भिन्नमुट्ठिप्पमाणे तत्र ‘भिन्नं’ भिन्ना मध्यरिक्ता
या मुट्ठिः सा प्रमाणं यगोस्ते तथा ‘मऊरी अंडए’ मयूराण्डके मयूरो
त्पादके अंडे ‘पसवइ’ प्रसूते-जनयति, प्रसूय-जनयित्वा ‘सएणं’ पक्व
वाएण’ स्वकेन पक्षपातेन अण्डोपरि स्वकीयपक्षाच्छादनेन ‘सारक्खमाणी’

उत्तर दिशामें एक ओर मालुक कच्छनाम का वन था । इस मालुका कच्छ
का वर्णन इसी शास्त्र के द्वितीय अध्ययनमें किया जा चुका है । (तत्थ
णं एवा वणमऊरी दो पुट्टे मऊरी अंडए पसवइ परियागए) उस कक्षकमें एक
वन मयूरी ने दो पुट्ट मयूर उत्पादक अंड उत्पन्न किये । ये दोनों अंडे
उसने भिन्न भिन्न समयमें अर्थात् एक पहिले और एक दूसरा उनके
उसी समय बादमें प्रसुत किये थे । (पिट्ठुं डी पंडुरे) ये दोनों ही तंदुल
चूर्ण को पिठी-पिण्डी-के समान भवत्ये । (निव्वणे निरुवहये भिन्न
मुट्ठिप्पमाणे) बिना किसी क्षत के थे । उपद्रव रहित थे । और मध्यरिक्त
पोशो मुट्ठि के बराबर थे । (पसवित्ता सएणं पक्ववाएण सारक्खमाणी
संगोवमाणी सवड्डेमाणी विहरइ) प्रसव करके उसने उन दोनों मयू-
रोत्पादक अंडों की अपने पंखों के द्वारा आच्छादन करके अर्थात् उन
दोनों अंडों को अपने पंखों के नीचे रख और उन पर पंखों को पसार

आता सूत्रना जीव अध्ययनमां करवामां आबुं छे । (तत्थणं एवा वणमऊरी दो-
पुट्टे मऊरी अंडए पसवइ परियागए) ते मालुका कक्षमां ओक वननीढेवे जे सुडोण
भोरिने उत्पन्नकरनास ओवा जे छंडा भूझ्यां आ छंडा तेहे ओक पछी नूने ओटवे डे
ओक पडेलां जेम जुद्ध जुद्ध वणते भूझ्यां हतां । (पिट्ठुं डी पंडुरे) जेने छंडाओ जेआना
लोटना पींडनी जेम धोणा हता । (निव्वणे निरुवहये भिन्नमुट्ठिप्पमाणे) ते जेने
छंडाओ क्षत वगरना, उपद्रव रहित जेने वच्चे पोली भूझीनी जराजर हता ।
(पसवित्ता सएणं पक्ववाएण सारक्खमाणी संगोवमाणी सवडेमाणी विहरइ)
छंडां भूझ्या जाह जेने मयूरोत्पादक तेडेवे पांजे प्रसारीने जेने पांजेथी

संरक्षन्ती रक्षां कुर्वन्ती, 'संगोवेमाणी' संगोपायन्तो-उपद्रवतः परिरक्षन्ती 'संठे-
माणी' सम्वेष्टयन्ती पोषयन्ती समन्तात् पक्षीराट्य वर्धयन्ती विहरति । सू. २ ।

मूलम्—तत्थणं चंपाए नयरीए दुवे सत्थवाहदारगा परि-
वसन्ति तं जहा—जिनदत्तपुत्ते य सागरदत्तपुत्ते य सह जायया सहवर्द्धि-
यया सहपंसुकीलियया सहदारदरिसी अन्नमन्नमणुरत्तया अन्नमन्नमणु-
व्वयया अन्नमन्नच्छंदाणुवत्तया अन्नमन्नहियइच्छियकारया अन्नम-
न्नेसु गिहेसु किच्चाइं करणिज्जाइं पच्चणुभवमाणा विहरन्ति ॥ सू. ३ ॥

'तत्थणं' इत्यादि,

टीका—तत्र खलु चम्पायां नगर्यां द्वौ सार्थवाहदारकौ परिवसतः तद्यथा
—जिनदत्तपुत्रश्च सागरदत्तपुत्रश्च, तौ विशेषयति 'सहजायया' सहजातकौ
—समानजन्मकालत्वात् 'सह वर्द्धियया' सहवर्द्धितकौ—सार्धमेव वृद्धिमुपगतत्वात्
'सहपंसुकीलियया' सह पांशुकीलितकौ समानकाले बूली क्रीडाकरत्वात्
'सहदारदरिसी' सहद्वारदर्शिनीं सह द्वारदर्शिनीं सह सार्धमेव परस्परं
गृहयोद्वारे दृष्टुं शीलं ययोः तौ तथा—सहदारदर्शिनी—इति छायापक्षे
समानकालकृतविवाहौ 'अन्नमन्नमणुरयया' अन्योऽन्यमनुरक्तकौ—पर-

कर रक्षा कौ—उपद्रवौ से उन्हे बचाया चारों तरफ से उन्हे पंखों से
आवृत कर उनका पोषण क्रिया ॥ सू. २ ॥

टीकार्थ—(तत्थणं चंपाए नयरीए) उस चंपा नामकी नगरीमें (दुवे सत्थ-
वाहदारगा परिवसन्ति) दो सार्थवाह दारक रहते थे । (तं जहा) वे ये
हैं—(जिनदत्तपुत्ते य सागरदत्तपुत्ते य) एक जिनदत्त का पुत्र दूसरा
सागरदत्त का पुत्र (सहजायया सहवर्द्धियया सहपंसुकीलियया सहदार-
दरिसी अन्नमन्नमणुरत्तया अण्णमन्नमणुव्वयया अण्णमन्नच्छंदाणुवत्तया

ढांडीने तेमनी रक्षा करी. उपद्रवोथी ध'अने भयाव्यां; थोमेर ध'अने पांजोथी ढांडीने-
यावृत्त करीने—तेओतुं पोषणु क्युं. ॥ सूत्र २ ॥

'तत्थणं चंपाए नयरीए' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तत्थणं चंपाए नयरीए) ते चंपा नामे नगरीमां (दुवे सत्थ-
वाहदारगा परिवसन्ति) जे सार्थवाह दारके (पुत्रे) रहैता उता. (तं जहा)
तेओ आ प्रभावे छे—(जिनदत्तपुत्ते य सागरदत्तपुत्ते य) ओके जिनदत्तने
पुत्र अने जीजे सागरदत्तने पुत्र (सह जायया सह वर्द्धियया सह पुंसुकीलियया
सहदारदरिसी अन्नमन्नमणुरत्तया अण्णमन्नमणुव्वयया अण्णमन्नच्छंदाणुव-

तन्नं अम्हेहि एगयओ समेच्चा णित्थरियव्वं त्तिकहु अन्नमन्न
मेयारूव्वं संगारं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता सकम्मसपउत्ता जाया
यावि होन्था. ॥ सू. ४ ॥

टीका—‘तत्थ णं इत्यादि—तत्र खलु तयोः सार्थवाहदारकयोरन्यदा
कदाचित् ‘एगयओ’ एकतः कस्मिंश्चित् एकस्मिन्स्थाने ‘सहिंयाणं’ सहितयोः
—मिलितयोः ‘समुवागयाणं’ समुपागतयोः एकतरस्य गृहे प्राप्तयोः ‘सन्निम-
न्नाणं’ सन्निपण्णयो’ उपविष्टयो ‘सन्निविट्ठाणं’ सन्निविष्टयोः एकस्मिन्
स्थले संमिलिततया स्थिरमुत्वासनतयाच स्थितयोः ‘इमेयारूवे’ अयमे
तूयः वक्ष्यमाणस्वरूपः ‘मिहो कहासमुल्लावे’ मिथः कथासमुल्लापः, तत्र
‘मिहो कहा’ मिथः कथा—परस्परकथा तभ्यां ‘समुल्लाव’ समुल्लापः जल्पो यस्य
स तथा ‘समुप्पज्जित्था’ समुपपद्यत अभवत् ‘जणं’ यत् खलु देवानुप्रियः
‘अम्हं’ आवयोः मुखं वा दुःखं वा ‘पव्वज्जा’ प्रवज्ज्या वा पर्यटन—तसेता-

‘तएणं तंसि सत्थवाहदारगाणं’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (अन्नया कयाइं) किसी समयमें
(एगयओ सहिया णं) किसी एक स्थलमें मिले हुए (समुवागयाणं)
एक दूसरे के घरमें प्राप्त हुए (सन्निमन्नाणं, सन्नि विट्ठागइमेयारूपे
मिहो कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था) अच्छी तरह बैठे हुए, अच्छी तरह
एक स्थल पर मिलकर सुग्वरूप से स्थित हुए । (तंसि सत्थवाहदारगाणं)
उन सार्थवाह पुत्रों को (इमेयारूवे मिहो कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था) इस
तरह यह वक्ष्यमाण मिथो कथा समुल्लाप उत्पन्न हुआ ।—परस्पर की गों.प्लीं
उन लोगोंने इस प्रकार विचार किया (अम्हं सुहं वा दुक्खं वा पव्वज्जा
वा विदेसगमणं वा समुप्पज्जइ) अपन दोनों चाहे सुखमें रहें या दुःखमें

‘तएणं तंसि सत्थवाहदारगाणं’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) त्थार भाव (अन्नया कयाइं) कौठक पथते (एगयओ सहि-
याणं) कौठ एक स्थाने संयुक्त थयेला (समुवागयाणं) एक जीवना घरमां एकहा
थया. (सन्निमन्नाणं सन्निविट्ठाणं) इमेयारूवेमिहो कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था)
तेजो गने त्यां सारी रीते गेहा अने एकज् स्थाने एक जीवन्थी भणीने प्रसन्नता
अनुभवी (तंसि सत्थवाहदारगाणं) ते सार्थवाह पुत्रोने (इमेयारूवे मिहोकहा-
समुल्लावे समुप्पज्जित्था) आ प्रभाळे एक जीवन्थी आये प्रेमपूर्वक वार्तालाप करतां विचार
उद्भव्यो—अटवे हे तेजो गनेजे आ प्रेमाळे विचार क्यो हे—(अम्हं सुहं वा दुक्खं
वा पव्वज्जा वा विदेसगमणं वा समुप्पज्जइ) अमे गने बले सुभमां न्हीशुं

સ્પરં સ્નેહવન્તો 'અન્નમન્નમનુવચયા' અન્યોઽન્યાનુવ્રજકી-પરસ્પરાનુગામિનો
'અન્નમન્નચ્છંદાણુવચયા' અન્યોઽન્યચ્છન્દાનુવર્તકી-પરસ્પરામિપ્રાયાનુવ-
તિનો 'અન્નમન્નહિયઃચ્છિયકારયા અન્યોઽન્યહૃદયેમિતકારકી પરસ્પર
ચિત્તાનુકૂલકારિણો 'અન્નમન્નેષુ ગિદેષુ. અન્યોઽન્યગૃહયોઃ 'કિચ્ચાઈં કરણિ-
જ્ઞાઈં' કૃત્યાનિ કરણીયાનિ કૃત્યાનિ=ઉચિતકાર્યોણિ, કરણીયાનિ=આશ્વર્ય-
કાર્યાનિ ગૃહસંવન્ધોનિ 'પચણુભવમાણે' પ્રત્યનુભવન્તી કુર્વન્તી વિહરન્તઃ ।મ્. ૩।

મૂલમ્— તથા ણં તેસિં સત્થવાહદારગાણં અન્નયા
કયાઈં યગયઓ સહિયાણં સમુવાગયાણં સન્નિ સન્નાણં સન્નિવિટ્ઠાણં
ઇમેયારૂઘે મિહો કહાસમુલાઘે સમુપ્પજિતથા જં ણં દેવાણુપ્પિયા!
અહં સુહં વા નુકલં વા પઠ્ઠજાવા વિદેસગમણં વા સમુપ્પજઈં-

અન્નમન્નહિયઃચ્છિયકારયા અન્નમન્નેષુ ગિદેષુ કિચ્ચાઈં કરણિજ્ઞાઈં પચ્ચણુ-
ભવમાણા વિહરંતિ) એ દોનોં એક સાથે હી ઉત્પન્ન હુયે । એક સાથે
હી ઘડે હુયે । સાથે હી સાથે રહે કૂદે થે । સાથે હી સાથે ઇન દોનોં
કા ચિવાહ હુમા થા । અતઃ ઇન્દી સવ વાતોં કો લેકર ઇન દોનોં કા
આપસમેં વઢા અધિક સ્નેહ થા । જહાં કહોં મી એક જાતા થા તો દુસર
મી ઉમકે સાથે જાતા થા । કોઈ કિસી કી ઇચ્છા કે વિરુદ્ધ કામ નહીં
કરતા થા અર્થાત એ દોનોં પરસ્પરમેં એક દુસરે કે અભિપ્રાયાનુસાર વર્તન
કરતે થે । પરસ્પરમેં એ દોનોં એક દુસરે કે ચિત્ત કે અનુકૂલ હો પ્રવૃત્તિ
કરતા કરતે થે । યહાં તક ઇન દોનોં કે સ્નેહ કી અનુવૃત્તિ વઢા
હુઈ થી કિ એ આપસ મેં એક દુસરે કે ઘરકે કરને યોગ્ય કાર્યોં કો
મી કર દિયા કરતે થે । મ્. ૩ ॥

તાયા અન્નમન્નહિયઃચ્છિયકારયા અન્નમન્નેષુ ગિદેષુ કિચ્ચાઈં કરણિ-
જ્ઞાઈં પચ્ચણુભવમાણા વિહરંતિ) તે બંને એકી સાથે જનમ્યા હતા. એકી સાથે
મોટા થયા હતા, અને એકી સાથે રમ્યા હતા. તેઓ બંનેનાં હાથ પાંચ સાથે સાથે જ
થયા હતાં. આ બધી વાતોને લીધે તે બંનેમાં એક બીજા ઉપર ખંડુજ પ્રેમ હતો
જમે ત્યાં એકને જવાનું હોય ત્યારે બીજા પાંચ તેની સાથે ચાંદ્રસ ગયો જ હોય બંને
માંથી-કોઈ પણ એકબીજાને વિપરીત કામ કરતા જ ન હતા. એટલે કે તેઓ એક બીજાના
મન મુજબ વર્તતા હતા. એક બીજાના ચિત્તને અનુકૂળ જ તેઓ કામ કરતા હતા.
આ બંનેનો પ્રેમ એટલે સુધી પહોંચ્યો હતો કે તેઓ બંને એક બીજાના ઘરનું
કરવા યોગ્ય કામ પણ કરી આપતા હતા. ॥સ્ક. ૩॥

टोक—‘तत्थणं इत्यादि तत्र खलु चम्पायां नगरीं देवदत्ता नाम गणिका परिवसति, सा च आद्या यावद् अपरिभूता ‘चउसट्टिकलापंडिया’ चतुष्पष्टि कला पण्डिता-चतुष्पष्टिसंख्यकाः कलाः नृत्यादि फलवृष्टि पर्यन्ताः तत्र पण्डिता-निपुणा ‘चउसट्टिगणिगुणोववेया’ चतुष्पष्टि-गणिकागुणोपवेता चतुष्पष्टिसंख्यकाः गणिकागुणाः शृङ्गारचेष्टारूपः तैरुपपेता-युक्ता ‘अउणतीसं विसेसे रममाणी’ एकोनत्रिंशद् विशेषान् रममाणा-एकोनत्रिंशद्विशेषान् कामशास्त्रप्रसिद्धान् अधिकृत्य रममाणा-विलासं कुर्वाणा ‘एक्कवीसरइगुणप्पहाणा’ एकविंशति रतिगुणप्रधाना एक-विंशति सख्यकाः रतिगुणाः, तै प्रधाना ‘वत्तीसपुरिसोवयारकुसला’ द्वात्रिंशत् पुरुषोपचारकुशला द्वात्रिंशत् सख्यकाः पुरुषोपचाराः कामशास्त्रप्रसिद्धास्तेषु कुशला-दक्षा ‘णवंगमुत्तपडिबोहिया’ नवाङ्गमुत्त प्रतिबोधितानि—

‘तत्थ णं चंपाए नयरीए’ इत्यादि ॥

टीकार्थ—(तत्थणं चंपाए नयरीए) उसी चंपा नगरीमें (देवदत्ता नाम गणिया परिवसइ) देवदत्ता नाम की एक गणिका रहती थी । (अड्डाजाव अपरिभूया चउसट्टिकलापंडिया, चउसट्टिगणियागुणोववेया अउणतीसं विसेसे रममाणी) यह धन संपन्न थी । यावत् अपरिभूत थी—कोई इसका तिरस्कार नहीं कर सकता था । नृत्यादि में लेकर फलवृष्टि पर्यंत की ६४ कलाओं में यह निपुण थी । शृंगार चेष्टारूप जो ६४ गणिकागुण होते हैं उनसे यह भरपूर थी । कामशास्त्र प्रसिद्ध २५ विशेषों को लक्ष्य में रख कर यह विलास करती थी । (एक्कवीसरइगुणप्पहाणा) २५ प्रकार के रति गुणों से यह समन्वित थी । (वत्तीसपुरिसोवयारकुसला) ३२ प्रकार के कामशास्त्र प्रसिद्ध पुरुषोपचारों में यह कुशल थी । (णवंगमुत्तपडिबोहिया)

‘तत्थणं चंपाए नयरीए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तत्थणं चंपाए नयरीए) ते चंपा नगरीमां देवदत्ता नाम गणिया परिवसइ) देवदत्ता नामे गणिका रहती હતી. (अड्डाजाव अपरिभूया चउस-ट्टिकलापंडिया, चउसट्टिगणियागुणोववेया अउणतीसं विसेसे रममाणी) ते धन संपन्न હતી. अपरिभूत હતી—એટલે કે કોઈપણ વ્યક્તિની એવી તાકાત ન હતી કે તેના તિરસ્કાર કરી શકે. નૃત્ય વગેરેથી માંડીને ફળવૃષ્ટિ સુધીની ચોસઠ કલાઓમાં તે કુશળ હતી. શૃંગારની એષ્ટાદ્શ જે ચોસઠ ગણિકા ગુણો હોય છે, તેમના ગુણો તેમાં વિद्यમાન હતા. કામશાસ્ત્રમાં પ્રસિદ્ધ એગણત્રીસ (૨૫) વિશેષોને લક્ષ્યમાં રાખીને તે વिलास કરતી હતી. (एक्कवीसरइगुणप्पहाणा) એકવીસ બીજાના રતિગુણોથી તે યુક્ત હતી. (वत्तीस पुरिसोवयारकुसला) બત્રીસ (૩૨) બીજાના કામશાસ્ત્રમાં પ્રસિદ્ધ પુરુષો પચાસમાં

धर्मं विदेशगमनं-व्यापाराद्यर्थे वा 'गमृप्पज्ज' समुत्पद्येत भवेत् 'तन्न'
तत्खलु 'अम्हेहि' आवाग्भाः 'एगयओ' एकनः एकत्र 'समेच्चा' समेत्य
मिलित्वा कार्यं, 'णित्थरियव्वं' निस्तरितव्यम् पारयितव्यं कर्तव्यमि-
त्यर्थः, 'तिकट्ठु' इति कृत्वा अन्योन्यं परस्परं, एतद्द्वयं-एतादृशम् 'संगारं'
सङ्केतम् 'पडिसुणे'ति' प्रतिश्रुतः स्वीकृतः प्रतिश्रुत्य-स्वीकृत्य 'सकम्म-
संपज्जा' स्वकर्मसम्पत्तौ-स्वकार्यपरायणौ जातौ चाप्पभूताम्, स्व स्वकार्य
करणोत्सुकौ स्वगृहं जगत्पुरित्यर्थः ॥ सूत्र ४ ॥

मूलम्—तत्स्थणं चंपाए नयरीए देवदत्ता नामं गणिया
परिवसइ अट्ठा जाव अपरिभूया चउसट्ठिकलापंडिया चउसट्ठि-
गणियागुणोववेया अउणतीसंविसेसे रप्पमाणी एकवीस रइ
गुणप्पहाणा वत्तीसपुरिसोवयारकुसला णवंगसुत्तपडिचोहिया अट्ठा-
रसदेसीभासा विसारया सिंगारागारचारुवेत्ता संगयगयहसियं उसि-
यझया सहस्सलंभा विदिन्नछत्तचामर वालवियणिआकन्नी रहप्पयाया
यावि होत्थावहूणं गणिया सहस्साणं आहेवच्चं जाव विहरइ।सू. ५।

रहे, प्रव्रज्या प्रव्रज करे या व्यापार आदि के लिये परदेशमें जावे (तन्नं
अम्हेहि एगयओ समेच्चा णित्थरियव्वं ति कट्ठु अन्नमन्नमेयाख्वं संगारं पडि-
सुणे'ति) फिर भी अपने दोनों जो कुछ काम करे वह मिलकर ही
करें। इस प्रकार उन दोनों ने परस्परमें संकेत स्वीकृत कर लिया। (पडि-
सुणित्ता सकम्मसंपज्जा जाया यावि होत्था) इस तरह परस्परमें संकेत
पद्धत होकर वे दोनों अपने २ कार्य करनेमें उत्कंठित बनकर वहांसे अपने
२ घर को चल दिये। सू. ४ ॥

६ दुःखमां रडीथुं, प्रमत्त्या अडलु करीथुं ६ वेपार भाटे परदेश जेडीथुं (तन्नं
अम्हेहि एगयओ समेच्चा णित्थरियव्वं ति कट्ठु अन्नमन्नमेयाख्वं संगारं पडि-
सुणे'ति) यलु अगे जने जे काममां पडीथुं ते भणीने ज करीथुं आ प्रमाहे
तेओ जनेओ परस्पर संकेत (थरत्त) स्वीकारी लीधे। (पडिसुणित्ता सकम्म संपज्जा
जाया यावि होत्था) आ रीते परस्पर संकेत (थरत्त) भद (प्रतिज्ञाभद) यधने तेओ
जने पोतपोताना काममां उत्सुक जनीने त्यांथी जने पोतपोताने घेइ गया, ॥सूत्र ४ ॥

यस्याः सा तथा चाप्यभवत् गणिक्साहस्रस्याधिपत्यं कुर्यान्ती यावद्विहरति॥ सू. ५ ॥

मृदु--तएणं तेसिं सत्थवाहदारगाणं अन्नया कयाइ पुब्बा-
वरण्हकालसमयंसि जिमियभुत्तुत्तरागयाणं समाणाणं आयन्ताणं
चोक्खाणं परमसुइभूयाणं सुहासणवरगयाणं इमेयारूवे मिहो-
कहासमुल्लावे समुप्पजित्था, तं सेयं खल्ल अम्हं देवाणुप्पिया !
कल्लं जाव जलंते विउलं असणं ४ उवक्खडावेत्ता तं विउलं असणं
४ धूव पुप्फगंधवत्थं गहाय देवदत्ताए गणियाए सद्धिं सुभूमिभा-
गस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिंरिं पच्चणुभवमाणाणं विहरित्ते ए तिकड्ड
अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणोति पडिसुणित्ता कल्लं पाउप्पभायाए
रयणीए कोड्डविय पुरित्ते सदावेत्ति सदावित्ता एवं वयासी-गच्छह
णं देवाणुप्पिया ! विउलं असणं ४ उवक्खडेह तं विउलं असणं
४ धूवपुप्फवत्थं गहाय जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे जेणेव गंदा-
पुक्खरिणी तेणामेव उवागच्छह, गंदा पुक्खरिणीतो अदूरसामंते
थूणा मंडवं आहणह. । आसित्त सम्मज्जियोवलित्तं सुगंधं जाव कलियं
करेह, अम्हे पडिवालेमाणा २ चिट्ठह जाव चिट्ठंति. ॥सू. ६ ॥

पालकी-तामजाम-पर बैठ कर यह चलती थी। (नरवाहयान विशेष का नाम
कर्गीरथ है) ऐसी यह गणिका (बहूणं गणियासहस्राणं आहेवच्चं जाव
विहरइ) और हजार गणिका जनों का आधिपत्य करती हुई अपने समय
को आनन्दके साथ व्यतीत करती थी। । सूत्र ४॥

‘तएणं तेसिं सत्थवाहदारगाणं’ इत्यादि ।

तामजाम-उपर सवार थडने ते अवरणवर करती, नरवाहयान विशेषतुं नाम कर्गीरथ
छे. जेवी ते गळिडा (बहूणं गणियासहस्राणं आहेवच्चं जाव विहरइ) उल्लर
गळिडाओतुं आधिपत्य करती पोताना वणतने ते सुजेथी पसार करती छती. ॥सूत्र ५॥

નવાદ્વાનિ દે શ્રોત્રે, દે નયને, દે નામિકે, ત્રિશ્ચાસ્ત્ર! મનશ્રેત્યેતાનિ સુષ્ણ-
 નોચ સુષ્ણાનિ તાનિ યોચનપ્રાપ્ત્યા પ્રતિયોધિતાનિ સ્વસ્વલિપ્યગ્રહણપદુર્થાં
 પ્રાપિતાનિ યયા સા તથા 'અદ્વારસદેસમાસવિસારયા' અષ્ટાદશદેશ
 આપાવિસારદા--અષ્ટાદશદેશમાપાસુ વિસારદા-કુશલા 'સિંગારાગાર-
 ચારુવેસા' શૃંગારાગારચારુવેપા-શૃંગારસ્યાગારમિવ ચારુ મનોહરો વેષો
 યસ્યાઃ સા તથા 'સંગત-ગત-હસિત-અભિત-ચેદિત્વિહિત-વિલાસ-સંલાલુ-
 હાવનિઉણ્ણુત્તોચચારકુશલા' મદ્ગત-ગત હસિત-ભાણિતવેદિત્વિવિધ
 --વિલાસસંહાપોલાપનિપુણયુક્તોપચારકુશલા इति तु व्याख्याતपूर्वम्
 'ઉસિયજ્ઞયા' ઉચ્છિન્નધ્વજા-ઉચ્છિન્ના ધ્વજા યસ્યાઃ સા તથા 'સહસ્ત-
 લંભા' સહસ્તલંભા શુલ્કેન સહસ્તલંભો લાભો યસ્યાઃ સા તથા 'વિદિન્નછત્ત-
 ચામરવાલવિયણિયા' વિતીર્ણછત્રચામરવાલવ્યજનિકા વિતીર્ણાનિ=ભૂપેન દત્તાનિ
 છત્રચામરાણિ ચાલ વ્યજનિકાચામરવિજેષો યદ્વાઃ સઃ તથા 'કન્નીરહપ્પયાયા'
 કર્ણીરથપયાતા-કર્ણીરથઃ પ્રવહણં નરવાહ્યાનવિશેષસ્તેન' પયાયા પ્રયાતં-ગમનં

દો શ્રોત્ર, દો નયન દો નાસિકા કે છિદ્ર ૬ જિહ્વા ૭ સ્પર્શ ૮ તથા મન ૯ આ
 સુષ્ણ નવાંગોં કી યદ પ્રતિયોધક થી । (અદ્વારસદેસમાસા વિસારયા) અષ્ટાદશ
 દેશોં કી માગામેં યદ વિસારદા-નિપુણ થી । (સિંગારાગારચારુવેસા સંગતગત
 હસિય૦ ડસિયજ્ઞયા) શૃંગાર કે આગાર કે સમાન હસકા સુન્દર વેષ થા ।
 સંગત યાવત્ નિપુણ યુક્તોપચાર મેં યદ કુશલ થી । સંગત, ગત, હસિત,
 અભિત હત્યાદિ નિપુણયુક્તોપચાર પર્યન્ત પદોં કી વ્યાખ્યા પઢિલે કી જા
 ચુકી હૈ । ઇમકી ધ્વજા ફહરાતી થી । (સહસ્તલંભા) એક હજાર રુપ્યા ઇમ
 કી કીમ થી (વિદિન્નછત્રચામરવાલવિયણિયા) રાજાને હસકે લિયે છત્ર,
 ચામર, ઓર ચાલવ્યજનિયેં વિતીર્ણે કિયે થે । (કન્નીરહપ્પયાયા ગાવિહોત્યા)

તે નિપુણ હતી. (જાવંગસુત્તપઢિવોદિયા) જે કાન, જે આંખો, જે નાકના કાણાં
 જીભ, સ્પર્શ અને મન આ નવ સુષ્ણ અંગોની તે પ્રતિયોધક હતી. (અદ્વારસદેસ-
 માસાવિસારયા) અદ્વાર દેશોની ભાષામાં તે પડિત હતી. (સિંગારાગારચારુવેસા
 સંગતગતહસિય ડસિયજ્ઞયા) શૃંગારના નિવાસસ્થાનની જેમ તેનો વેષ સુંદર
 હતો. સંગત અને જીભ યુક્તોપચારમાં તે નિપુણ તેમજ કુશળ હતી. સંગત, ગત,
 હસિત, ભણિત, વગેરે નિપુણ યુક્તોપચાર સુધીના પદોની વ્યાખ્યા પહેલાં કરવામાં
 આવી છે. તે શુભિકાની ધ્વજ લહેરાતી હતી. (સહસ્તલંભા) એકહજાર રૂપિયા તેની
 કી હતી. (વિદિન્નછત્રચામરવાલવિયણિયા) રાજાએ તેના માટે છત્ર, ચામર અને
 ચાલવ્યજનિકાઓ (વીંજણી) આપી હતી. (કન્નીરહપ્પયાયાગાવિહોત્યા) પાલખી-

यस्याः सा तथा चाप्यभवत् गणिकासहस्रस्याधिपत्यं कुर्वन्ती यावद्विहरति॥ सू. ५ ॥

मूलम्--तएणं तेसिं सत्थवाहदारगाणं अन्नया कयाइ पुच्चा-
वरण्हकालसमयंसि जिमियभुत्ततरागयाणं समाणाणं आयन्ताणं
चोक्खाणं परमसुइभूयाणं सुहासणवरगयाणं इमेयारूवे मिहो-
कहासमुद्भावे समुप्पजित्था, तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया !
कल्लं जाव जलंते विउलं असणं ४ उवक्खडावेत्ता तं विउलं असणं
४ धूव पुप्फगंधवत्थं गहाय देवदत्ताए गणियाए सद्धिं सुभूमिभा-
गस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिरिं पच्चणुभवमाणाणं विहरित्तेए तिकट्ठु
अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणोति पडिसुणिता कल्लं पाउप्पभायाए
रयणीए कोड्विय पुरिसे सदावेति सदावित्ता एवं वयासी-गच्छह
णं देवाणुप्पिया ! विउलं असणं ४ उवक्खडेह तं विउलं असणं
४ धूवपुप्फवत्थं गहाय जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे जेणेव णंदा-
पुक्खरिणी तेणामेव उवागच्छह, णंदा पुक्खरिणीतो अदूरसामंते
थूणा मंडवं आहणह. । आसित्त सम्मज्जियोवलित्तं सुगंध जाव कलियं
करेह, अम्हे पडिवालेमोणा २ चिट्ठह जाव चिट्ठंति. ॥सू. ६ ॥

पालकी-तामजाम-पर बैठ कर यह चलती थी। (नरवाहयान विशेष का नाम
कर्णीरथ है) ऐसी यह गणिका (बहूणं गणियासहस्राणं आहेवच्चं जाव
विहरइ) और हजार गणिका जनों का आधिपत्य करती हुई अपने समय
को आनन्दके साथ व्यतीत करती थी। । सूत्र ४॥

‘तएणं तेसिं सत्थवाहदारगाणं’ इत्यादि ।

तामजाम-उपर सवार थडने ते अवरणपर करती, नरवाहयान विशेष का नाम कल्लुस्थि
छे. ओवी ते गल्लिका (बहूणं गणियासहस्राणं आहेवच्चं जाव विहरइ) उन्नर
गल्लिकाओत्तुं आधिपत्य करती पोत्ताना वणतने ते सुभेथी पसार करती હતી. ॥सूत्र ५॥

નવાદ્વાનિ દ્વે શ્રોત્રે, દ્વે નયને, દ્વે નામિકે, ત્રિણા, સ્વઃ મનશ્રેત્યેતાનિ સુતા-
 નોચ સુતાનિ તાનિ યોચનપ્રાપ્ત્યા પ્રતિયોધિતાનિ સ્વસ્વધિવયગ્રહણપદુર્ગા
 માપિતાનિ યયા સા તથા 'અદ્વારસદેસભાસવિસારયા' અષ્ટાદશદેશ
 'ભાષાવિસારદા--અષ્ટાદશદેશભાષાસુ' વિસારદા-કુશલા 'સિંગારાગાર-
 ચારુવેસા' શ્રૃંગારાગારચારુવેસા- શ્રૃંગારસ્યાગારમિત્ર ચારુ મનોહરો વેષો
 યસ્યાઃ સા તથા 'સંગય-ગય-દમિય' અગિય-ચેદિય વિહિય વિલાસ-સંલાહ-
 હાવનિઉણજુત્તોચયારકુશલા' સંગત-ગત હસિત-ભાણિતચેષ્ટિતવિવિધ
 —વિલાસસંહાપોલાપનિપુણયુક્તોપચારકુશલા' ઇતિ તુ વ્યાખ્યાતપૂર્વમ્
 'ઉસિયજ્ઞયા' ઉચ્છિન્નધ્વજા-ઉચ્છિન્ના ધ્વજા યસ્યાઃ સા તથા 'સહસ્ત-
 લંભા' સહસ્તલંભા શુલ્કેન સહસ્તલંભો લાભો યસ્યાઃ સા તથા 'વિદિન્નછત્ત-
 ચામરવાલવિયગિયા' વિતીર્ણછત્તચામરવાલવ્યજનિકા વિતીર્ણાનિ=ભૂપેન દક્ષાનિ
 છત્તચામરાણિ ચાલ વ્યજનિકાચામરવિશેષો યદ્વાઃ સા તથા 'કન્નીરહપ્પયાયા'
 કર્ણીરથપયાતા-કર્ણીરથઃ પ્રવહણં નરવાહયાનવિશેષસ્તેન 'પયાયા' પ્રયાતં-ગમનં
 દો શ્રોત્ર, દો નયન દો નાસિકા કે છિદ્ર ૬ જિહ્વા ૭ સ્પર્શ ૮ તથા મન ૯. આ
 સુસ નવાંગોં કી યહ પ્રતિયોધક થી । (અદ્વારસદેસભાસા વિસારયા) અષ્ટાદશ
 દેશોં કી ભાષામેં યહ વિસારદા-નિપુણ થી । (સિંગારાગારચારુવેસા સંગયગય
 હસિય૦ ઝસિયજ્ઞયા) શ્રૃંગાર કે આગાર કે સમાન હસકા સુન્દર વેષ થા ।
 સંગત યાવત્ નિપુણ યુક્તોપચાર મેં યહ કુશલ થી । સંગત, ગત, હસિત,
 ભણિત હત્યાદિ નિપુણયુક્તોપચાર પર્યન્ત પદોં કી વ્યાખ્યા પઢિલે કી જા
 ચુકી હૈ । હમકી ધ્વજા ફઢરાતી થી । (સહસ્તલંભા) એક હજાર રૂપ્યા હમ
 કી કીમ થી (વિદિન્નછત્તચામરવાલવિયગિયા) રાજાને હસકે લિયે છત્ર,
 ચામર, ઓર ચાલવ્યજનિયેં વિતીર્ણે કિયે થે । (કન્નીરહપ્પયાયા નાવિદ્યોત્થા)
 તે નિપુણ હતી. (ગવંગસુત્તપડિવોદિયા) બે કાન, બે આંખો, બે નાકના કાણાં
 છલ, સ્પર્શ અને મન આ નવ સુસ અંગોની તે પ્રતિયોધક હતી. (અદ્વારસદેસ-
 ભાસાવિસારયા) અદ્વાર દેશોની ભાષામાં તે પડિત હતી. (સિંગારાગારચારુવેસા
 સંગયગયહસિય ઝસિયજ્ઞયા) શ્રૃંગારના નિવાસસ્થાનની જેમ તેના વેષ સુંદર
 હતો. સંગત અને બીજા યુક્તોપચારમાં તે નિપુણ તેમજ કુશળ હતી. સંગત, ગત,
 હસિત, ભણિત, વગેરે નિપુણ યુક્તોપચાર સુધીના પદોની વ્યાખ્યા પઢેલાં કરવામાં
 આવી છે. તે શુભિકાની ધન લહેરાતી હતી. (સહસ્તલંભા) એક હજાર રૂપિયા તેની
 ફી હતી. (વિદિન્નછત્તચામરવાલવિયગિયા) રાજાએ તેના માટે છત્ર, ચામર અને
 પાલવ્યજનિકાઓ (વીંજણી) આપી હતી. (કન્નીરહપ્પયાયાયાવિ દ્યોત્યા) પાલખી-

पुष्पगन्ध वस्त्रं गृहीत्वा देवदत्तया गणिकया सार्द्धं सुभूमिभागस्योद्यानस्य
उद्यानश्रियम्—उद्यानशोभां पत्यनुभवतोः—उपवनशोभादर्शनादिना
प्रमोदयतोः विहर्तुं=विलासितुम् इति कृत्वा अन्योऽन्ययोरेतमर्थं प्रतिश्रुणुतः
प्रतिश्रुत्य निश्चित्येत्यर्थः 'कल्लं' कल्ये 'पाउप्पभाया रयणीए' पाउप्पमानायां
रजण्यां राज्यन्ते प्राच्यां दिशि प्रकाशोदये कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयतः
शब्दयित्वा एवमवादिष्टाम् गच्छत खलु यूयं देवानुप्पियाः ! विपुलमशन-

(तं सेयं खलु अहं देवानुप्पिया) हे देवानुप्पिय ! हम दोनोंका अब यह
अच्छा है कि (कल्लं जाव जलंते विउलं असणं उववखडाविच्चा तं विउलं
असणं ४ धूव, पुष्प, गंधवत्थं गहाय देवदत्ताए गणियाए सद्धिं
सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिंरि पच्चणुभवमाणणं विहरित्ते)
हम दोनों कल जब कि प्रभात हो जाय और सूर्य प्रकाश हो
जाय तब विपुलमात्रा में अशन पान, स्नाय, और स्वाद्य चारों प्रकार
का आहार निष्पन्न करा कर उस निष्पन्न हुए अशन आदि ४ चारों प्रकार
के आहारको तथा धूप, पुष्प, गंध, और वस्त्र को लेकर देवदत्त गणिका
के साथ सुभूमिभाग उद्यान की उद्यान श्री का अनुभव करते हुए विच-
रण करें। (त्तिकट्ठं अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेति) ऐसा विचार उन दोनोंने किया
परस्पर के इस विचारको स्वीकार कर लिया (पडिसुणिच्चा कल्लं पाउप्प-
भायाए रयणीए कौटुम्बियपुरिसे सदावेति) विचार स्वीकृत हो चुकने के
बाद कल जब रात्रि प्रभात प्राय हो चुकी और सूर्य प्रकाशित हो चुका
तब उन दोनोंने अपने-कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया (सदाविच्चा एवं

(तं सेयं खलु अहं देवानुप्पिया) हे देवानुप्पिये ! आपणों अपने भाटे से बात
सुभक्ष्य थये है (कल्लं जावजलंते विउलं असणं ४ उववखडावेच्चा तं विउलं
असणं ४ धूव, पुष्प, गंधवत्थं गहाय देवदत्ताए गणियाए सद्धिं सुभूमिभाग-
स्स उज्जाणस्स उज्जाणसिंरि पच्चणुभवमाणणं विहरित्ते) आपसी भावे न्याये
सवार थाय अपने सूर्य प्रकाशतो थाय त्यारे पुष्पगन्ध प्रमाणभां अशन, पान, स्नाय,
अने स्वाद्य चारों प्रकारने आहार भनावडावीने ते चारों बातना आधारने तेमन् धूप,
पुष्प, गंध अने वस्त्रने लधने देवदत्ता गणिकानी साथे सुभूमि भाग उद्याननी
उद्यानश्रीने अनुभवता विहार करीये। (त्तिकट्ठं अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेति)
आ विचारने अपनेसे स्वीकार की थी। (पडिसुणिच्चा कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए
कौटुम्बिय पुरिसे सदावेति) विचारनी स्वीकृति बाद न्याये रात्रि पसार थछ
प्रभात थछ अपने सूर्यने प्रकाश चोभेर प्रसथी त्यारे अपनेसे पोतपोताना कौटुम्बिक
पुरुषोंने बोलाव्या। (सदाविच्चा एवं वयासी) बोलावीने छछु—(गच्छह णं देवा-

टीका—‘तएणं तेसिं इत्यादि—ततः खलु तयोः सार्धवाहदारकयोरन्यदा कदानित् पूर्वापराह कालसमये पश्चिमप्रदरे ‘जिमियभुनुतरागयाणं’ जिमित भुक्तं—आस्वादानेन अनुभूतम् उत्तरं—तत्पश्चात् आगतयोः ‘समाणाणं’ सतोः ‘आयंताणं’ आचमितयोः—कृतचुलुकयोः ‘चोक्खाणं’ चोक्षयोः अन्नादिले-पापनयनेन शुद्धयोः अतएव ‘परमसुईभूयाणं’ परमशुची भूतयोः हस्तमुखादि प्रक्षालनेन परमपवित्रयोः ‘सुहासणवरगयाणं’ सुखासनवरगतयोः सुखा-सनावस्थितयोः ‘इमेयारूवे’ अयमेतद्रूपे वक्ष्यमाणलक्षणः ‘मिहो कहासमुल्लावे’ मिथः कथासमुल्लापः विलासविषयकवार्ता संल्लापः ‘समुपज्जित्था’ समुदपगत अभवत् तत्प्रेयः खलु आवयोः देवानुमिय! कल्ये यावज्जलति विपुल-मदान पानं खाद्यस्वाद्यमुपस्कार्य तं विपुलमशनभानखाद्यस्वाद्यं धूप-

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (अन्नया कयाइं) किसी एक समयकी (तेसिं सत्थवाहदारगाणं) उन दोनों सार्धवाह पुत्रों की (जिमियभुनुतरागयाणं) जब कि वे जीम कर और खाकर कुल्ला करने के लिये अपने स्थान से उठ चुके थे और (आयंताणं) अच्छी तरह कुल्लाभी कर चुके थे। (चोक्खाणं) तथा धोती आदि वस्त्रों पर खाते समय पड़े हुए अन्नादिकों के सीतों को जब वे साफ कर शुद्ध हो चुके थे। परमसुईभूयाणं) हस्तमुख आदि के प्रक्षालन से उनके मुख आदि अवयव जब शुद्ध हो चुके थे तब (पुन्नावरह कालसमयसिं) पश्चिम प्रदर में (सुहासणवरगयाणं) जब वे एक स्थान पर आनन्द के साथ बैठे हुए थे—(इमेयारूवे मिहो कहासमुल्लावे समुपज्जित्था) इस प्रकार का यह बातचीत करते हुए विचार बांधा—

‘तएणं तेसिं सत्थवाहदारगाणं’ इत्यादि।

टीकार्थ—(तएणं) त्पार भाह (अन्नया कयाइं) दोनो ओक वधतनी बात छि. (तेसिं सत्थवाहदारगाणं) ते अने सार्धवाह पुत्रोने (जिमिय भुनुतरागयाणं)—के न्यारे तेज्जो जमीने घेताना जमवाना स्थानेथी डोगणा करवा भाटे उल्ला थल बूझ्या उता, अने (आयंताणं) सारी रीते तेगणे डोगणा यल्लु करी लीधा उता (चोक्खाणं) तेमन घाती वगेरे वस्त्रो उपर जमती वधते पडेला अन्न वगेरेना कल्लेने साइ करीने शुद्ध गनी बूझ्या उता. (परमसुईभूयाणं) हाथ भों वगेरेना प्रक्षालनथी तेमना भों वगेरे अवयवो न्यारे स्वच्छ गनी बूझ्य. उता. (पुन्नावरह कालसमयसिं) द्विवसना छेलेला पडोरमां (सुहासणवरगयाणं) न्यारे तेज्जो ओक स्थाने आनंदपूर्वक भेडा उता. (इमेयारूवे मिहो कहासमुल्लावे समुपज्जित्था) त्पारे बातचीतनो विचार उल्लेख्यो

२ पुनः पुनः प्रतीक्षमाणाः इत्यर्थः 'चिद्वि' तिष्ठत यावत्ते कौटुम्बिक-
पुरुषाः तदाज्ञानुसारेण कार्यं सम्पाद्य तिष्ठन्तः ॥ सू. ६ ॥

मूलम्—तए णं ते सत्थवाहदारगा दोच्चं पि कौटुम्बिय-
पुरिसे सदावेति सदावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव लहुकरण जुत्त
जोयं समखुरवालिहाणसमलिहियतिक्खग्गसिगएहिं रययमय-
घंटसुत्तरज्जुपवरकंचणखचियणत्थपग्गहोवग्गहिंएहिं नील्लुप्पलकया-
मेलएहिं पवरगोणजुवाणएहिं नाणामणिरयणकंचणघंटिया जाल-
परिक्खित्तं पवरलक्खणोववेयं जुत्तमेव पवहणं उवणेह तेऽवि
तहेव उवणेति ॥ सू. ७ ॥

टीका—'तएणं ते सत्थवाहदारगा दोच्चं पि' इत्यादि—ततः खलु तौ सार्थ-
वाहदारकौ द्वितीयवारमपि कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयतः शब्दयित्वा एव-

वहां का सब अच्छी तरह साफ करो। उसे अच्छे रूपमें गोमय आदि से
लीपो। अगरवत्ती, काला गुरु आदि सुगंधित द्रव्यों से उसे वासित करो।
पश्चात् हमारी वहां प्रतीक्षा करो। इस प्रकार उन सार्थवाह पुत्रों की बात
सुनकर उन कौटुम्बिक पुरुषोंने जैसा उन्होंने कहाथा वैसा ही सब कार्य
संपादित कर दिया और उनकी प्रतीक्षा करते हुए वहां बैठ रहे ॥ सूत्र ६ ॥

'तएणं ते सत्थवाहदारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) उन दोनों सार्थ
वाह पुत्रोंने (दोच्चं पि) दुवारा भी कौटुम्बियपुरिसे) कौटुम्बिकपुरुषों को
(सदावेति) बुलाया (सदावित्ता) बुलाकर उनसे (एवं वयासी) इस प्रकार कहा—

वगेरे, त्यांथी साक्ष करी नाओ। ते स्थानने छाज्जा भाटी वगेरेथी सरस रीते वी'पो
धूप सणी, कालागुरु, वगेरे सुवासित द्रव्येथी ते स्थानने सुगंधित बनायो। त्थार ग्राह
तमे अमारी त्यां व नहीने प्रतीक्षा करे। आ रीते ते सार्थवाह पुत्रोनी बात सांल-
जीने ते कौटुम्बिक पुरुषोन्ने तेमण्णे जेम आजा आपी इती तेमण्णे काम पुरु' करी
दीधुं. अने तेमनी प्रतीक्षा करता त्यां व जेसी रह्या ॥ सूत्र. ६ ॥

'तए णं ते सत्थवाहदारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(त एणं) त्थार ग्राह (ते सत्थवाहदारगा) ते अने सार्थवाह पुत्रोन्ने
(दोच्चं पि) भील वार (कौटुम्बियपुरिसे) कौटुम्बिक पुरुषोने (सदावेति) जेलाव्या

પાનસ્વાદસ્વાદ 'ઉવલકહે' ઉપસ્કારયત ઉપસ્કાર્ય તં વિપુલમશનપાનસ્વાદ
સ્વાદ ધૂપપુષ્પગન્ધવસ્ત્રં ગૃહીત્વા યત્રેવ સુભૂમિમાગમુષ્પાનં યત્રેવ
નન્દા પુષ્કરિણી તત્રૈવોપાગચ્છત ઉપાગત્ય નન્દાપાઃ પુષ્કરિણ
અદૂરસામન્તે 'થૂળામંડવં' સ્થૂળામંડપં છાદનાદિ સ્તમ્ભનાથં
વહ્ની કા પ્લંથૂળા સ્થૂળા, તત્પથાનો વસ્ત્રાચ્છાદિતમણ્ડપઃ સ્થૂળા મંડપસ્તમ્ 'આહ-
ળ' આહત-નિવેશયત કુરુતેત્યર્થઃ 'આસિત્તસમ્મજ્જિયોવલિત્તં' આસિત્ત
સંમાર્જિતોપલિત્તં, તત્ર-'આસિત્ત' આસિત્ત-જલેન સિત્તં 'સમ્મજ્જિય'
સંમાર્જિતં કચરાપનયનેન પ્રમાર્જિતં 'ઉવલિત્તં' ઉપલિત્ત-ગોમયાદિના સંલિ-
સમ્ સુગન્ધ યાવત્ કલિયમ્--અગરવાર્તિ કાલાગુરુપ્રભૃતિસુગન્ધિદ્રવ્યૈઃ,
કલિત્તં-યુક્તમ્ 'કરેહ' કુરુત 'અમ્હે પઢિવાલેમાણા' આવાં પ્રતિપાલયમાના
વયાસી) બુલાકર રૂપ પ્રકાર કહા-(ગચ્છહ જં દેવાણુપિયા)હે દેવાનુપિયો!
તુમ જાઓ ઓર (વિઝલં અસણં ૪ ઉવલકહે) વિપુલ માત્રા મેં અશન, પાન,
સ્વાદ, ઓર સ્વાદ આહાર નિષ્પન્ન કરો (તં વિઝલં અસણં ૪ ધૂવ પુષ્પવત્થં ગદાય
જેણેવ સુભૂમિમાગે ઉજ્જાણે જેણેવ જંદા પુષ્કરિણી તેણામેવ ઉવાગચ્છહ) નિષ્પન્ન
હોને કે ચાદ વિપુલ અશનાદિરૂપ ચતુર્વિધ આહાર કો ધૂપ, પુષ્પ, વસ્ત્રો લેકર
જહાં સુભૂમિ માગ નામકા ઉધાન હૈ ઓર જહાં નંદા નામકી પુષ્કરિણી હૈ, વહાં
જાઓ-(નંદાપુષ્કરિણી અદૂરસામંતે થૂળામંડવં આહળહ) વહાં જાકર તુમ
નંદાપુષ્કરિણી સે ન ચિલકુલ પાસ ઓર ન વહુત દૂર કિન્તુ ઉચિત પ્રદેશ
મેં એક સ્થૂળામંડપ કો ર્ચો-વનાઓ-તૈયાર કરો. (આસિત્તસમ્મજ્જિયોવ-
લિત્તં સુગંધ જાવ કલિયં કરેહ, અમ્હે પઢિવાલેમાણા ૨ ચિટ્ટહ જાવ ચિટ્ટંતિ)
જવ વહ તૈયાર હો જાવે તત્ર ઉસે જલ સે સિઝિચત કરો, કચરા વગેરહ

ગુપિયા) હે દેવાનુપિયો! તમે જાઓ (વિઝલં અસણં ૪ ઉવલકહે) અને પુષ્કળ
પ્રમાણમાં અશન, પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ આહાર તૈયાર કરો. (તં વિઝલ અસણ ૪
ધૂવપુષ્પવત્થં ગદાય જેણેવ સુભૂમિમાગે ઉજ્જાણે જેણેવ જંદા પુષ્કરિણી
તેણામેવ ઉવાગચ્છહ) અને જ્યારે અશન, પાન, ખાદ્ય વગેરે તૈયાર થાય ત્યારે ચતુર્વિધ આહાર તેમજ ધૂપ, પુષ્પ અને વસ્ત્રોને લઈને જ્યાં સુભૂ-
મિમાગ નામે ઉધાન છે અને જ્યાં નંદા નામની પુષ્કરિણી (વાવ) છે ત્યાં જાઓ.
(નંદા પુષ્કરિણીતો અદૂરસામંતે થૂળામંડવં આહળહ) ત્યાં જઈને નંદા
પુષ્કરિણીથી વધારે દૂર પણ નહિ તેમજ તેનાથી વધારે નજીક પણ નહિ એવા યોગ્ય
સ્થાને તમે સ્થૂળા મંડપ તૈયાર કરો. (અસિત્ત સમ્મજ્જિયોવલિત્તં સુગંધ જાવ
કલિયં કરેહ અમ્હે પઢિવાલે માણા ૨ ચિટ્ટહ જાવ ચિટ્ટંતિ) સ્થૂળા મંડપ
જ્યારે તૈયાર થઈ જાય ત્યારે તમે પાણી છાંટીને તે જગ્યાને સિંચિત કરો, કથરો

२ पुनः पुनः प्रतीक्षमाणाः इत्यर्थः 'चिद्वि' तिष्ठत यावत्तौ कौटुम्बिक-
पुरुषाः तदाज्ञानुसारेण कार्यं सम्पाद्य तिष्ठन्तः ॥ सू. ६ ॥

मूलम्—तए णं ते सत्थवाहदारगा दोच्चंपि कोडुंभिय-
पुरिसे सदावेति सदावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव लहुकरण जुत्त
जोयं समखुरवालिहाणसमलिहियतिक्खग्गसिंघएहिं रययमय-
घंटसुत्तरज्जुपवरकंचणखचियणत्थपग्गहोवग्गहिंएहिं नीलुप्पलकया-
मेलएहिं पवरगोणजुवाणएहिं नाणामणिरयणकंचणघंटिया जाल-
परिक्खित्तं पवरलक्खणोववेयं जुत्तमेव पवहणं उवणेह तेऽवि
तहेव उवणेति ॥ सू. ७ ॥

टीका—'तएणं ते सत्थवाहदारगा दोच्चंपि' इत्यादि—ततः खलु तौ सार्थ-
वाहदारकौ द्वितीयवारमपि कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयतः शब्दयित्वा एव-

वहां का सब अच्छी तरह साफ करो। उसे अच्छे रूपमें गोमय आदि से
लीपो। अगरवत्ती, काला गुरु आदि सुगंधित द्रव्यों से उसे वासित करो।
पश्चात् हमारी वहां प्रतीक्षा करो। इस प्रकार उन सार्थवाह पुत्रों की बात
सुनकर उन कौटुम्बिक पुरुषोंने जैसा उन्होंने कहाथा वैसा ही सब कार्य
संपादित कर दिया और उनकी प्रतीक्षा करते हुए वहां बैठ रहे ॥ सूत्र ६॥

'तएणं ते सत्थवाहदारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) उन दोनों सार्थ
वाह पुत्रोंने (दोच्चंपि) दुवारा भी कौटुंभियपुरिसे) कौटुम्बिकपुरुषों को
(सदावेति) बुलाया (सदावित्ता) बुलाकर उनसे (एवं वयासी) इस प्रकार कहा—

वगेरे, त्यांथी साक्ष करी नाओ। ते स्थानने छाज्जा भाटी वगेरेथी सरस रीते वी'पे
धूप सणी, ढाढाशुद्ध, वगेरे सुवासित द्रव्येथी ते स्थानने सुगंधित बनायो। त्थार ग्राह
तमे अभासी त्यां न रहीने प्रतीक्षा करो। आ रीते ते सार्थवाह पुत्रोनी बात सांल-
णीने ते डौटुंभिक पुत्रोने तेमछे जेम आजा आपी हुती तेमछे काम पुरु' करी
दीधु' अने तेमनी प्रतीक्षा करता त्यां न भेसी रह्या ॥ सूत्र. ६ ॥

'तए णं ते सत्थवाहदारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(त एणं) त्थार ग्राह (ते सत्थवाहदारगा) ते न'ने सार्थवाह पुत्रोने
(दोच्चंपि) नील वार (कौटुंभियपुरिसे) कौटुंभिक पुत्रोने (सदावेति) वेदाव्या

पानखाद्यस्वाद्यं 'उवखडेह' उपस्कारयत उपस्कार्यं तं विपुलमशनपानखाद्य
 स्वाद्यं धूपपुष्पगन्धवस्त्रं गृह्यत्वा यत्रैव सुभूमिभागमुपानं यत्रैव
 नन्दा पुष्करिणी तत्रैवोपागच्छत उपागत्य नन्दायाः पुष्करिण्या
 अदूरसामन्ते 'धूणामंडवं' स्थूणामंडपं छादनादि स्तम्भनार्थं
 बह्वी काष्ठं 'धूणा' स्थूणा, तत्प्रधानो वस्त्राच्छादितमण्डपः स्थूणा मण्डपस्तम् 'आह-
 णह' आहत-निवेशयत कुरुतेत्यर्थः 'आसित्तसम्मज्जियोवलितं' आसित्त
 संमार्जितोपलिप्तं, तत्र-'आसित्त' आसित्तं-जलेन सिक्तं 'सम्मज्जिय'
 संमार्जितं कचवरापनयनेन प्रमार्जितं 'उवलितं' उपलिप्तं-गोमयादिना संलि-
 प्तम् सुगन्धं याचन् कलियम्--अगरत्नं कालागुरुमभृति सुगन्धिद्रव्यैः,
 कलितं-युक्तम् 'करेह' कुरुत 'अम्हे पडिवालेमाणा' आवां प्रतिपालयमाना

वयासी) बुलाकर इस प्रकार कहा-(गच्छह णं देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिया! तुम जाओ और (विउलं असणं ४ उवखडेह) विपुल मात्रा में अशन, पान, खाद्य, और स्वाद्य आहार निष्पन्न करो (तं विउलं असणं ४ धूव पुष्कवत्थं गहाय जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे जेणेव णंदा पुष्करिणी तेणामेव उवागच्छह) निवृत्त होने के बाद विपुल अशनादिरूप चतुर्विध आहार को धूप, पुष्प, वस्त्रों लेकर जहाँ सुभूमि भाग नामका उद्यान है और जहाँ नन्दा नामकी पुष्करिणी है, वहाँ जाओ-(नन्दापुष्करिणी अदूरसामन्ते धूणामंडवं आहणह) वहाँ जाकर तुम नन्दापुष्करिणी से न बिलकुल पास और न बहुत दूर किन्तु उचित प्रदेश में एक स्थूणामंडप को रचो-बनाओ-तैयार करो। (आसित्तसम्मज्जियोवलितं सुगंधं जाव कलियं करेह, अम्हे पडिवालेमाणा २ चिट्ठह जाव चिट्ठंति) जब वह तैयार हो जावे तब उसे जल से सिञ्चित करो, कचरा वगैरह

णुप्पिया) हे देवानुप्रिया! तमे ज्ञेयो (विउलं असणं ४ उवखडेह) अने पुष्पण प्रमाणुमां अशन, पान, भाद्य अने स्वाद्य आहार तैयार करे। (तं विउल असण ४ धूवपुष्कवत्थं गहाय जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे जेणेव णंदा पुष्करिणी तेणामेव उवागच्छह) अने ज्ञाये अशन, पान, भाद्य वजेने चार जतने आहार तैयार थणं ज्ञय त्वाये चतुर्विध आहार तेमज धूप, पुष्प अने वस्त्रोने लधने ज्ञयां सुभूमिभाग नामे उद्यान छे अने ज्ञयां नन्दा नामकी पुष्करिणी (वाव) छे त्यां ज्ञेय।

(नन्दा पुष्करिणीतो अदूरसामन्ते धूणामंडवं आहणह) त्यां जधने नन्दा पुष्करिणीथी वधारे दूर पणु नडि तेमज तेनाथी वधारे नल्लक पणु नडि जेवा योर्थ स्थाने तमे स्थूणा मंडप तैयार करे। (असित्त सम्मज्जियोवलितं सुगंधं जाव कलियं करेह अम्हे पडिवाले माणा २ चिट्ठह जाव चिट्ठंति) स्थूणा मंडप ज्ञाये तैयार थणं ज्ञय त्वाये तमे पाणी छांटीने ते ज्ञायेने सिञ्चित करे, कचरे

મવાદિષ્ટામ્. આશાપયતઃ 'લિપ્યામેવ' ક્ષિપમેવ 'લઘુકરણજુતે જોડ્યં' લઘુકરણયુક્તયોજિતમ્ તત્ર-લઘુકરણેન-ગમનાદિક્રિયાદાર્થેન યુક્તાઃ યે પુરુષાસ્તૈઃ, યોજિતં યન્નયૂપાદિમિઃ સમ્બન્ધિતમ્. અસ્ય પ્રવહણમિત્યનેન સમ્બન્ધઃ 'સમસુરવાલિહાણસમલિહિયતિકલ્ગસિગર્હિ' સમસુર ચાલધાનસમલિખિતતીક્ષ્ણાગ્રશૃઙ્ગકાખ્યામ્. તત્ર-સમ=સમૌ-સમાનો સુરૌ, ચાલધાનો=પુચ્છૌ, સમસુરચાલધાનો તથા સમ=સમે-તુલ્યે, લિખિતે=શસ્ત્રા પસારિતવાદ્યત્વચે, તીક્ષ્ણાગ્રશૃઙ્ગે યયોઃ સૌ, તથા સમસુરચાલધાનો ચ સમલિખિતતીક્ષ્ણાગ્રશૃઙ્ગકૌ ચેતિ કર્મધારયઃ તાખ્યામ્ 'રયયમયઘંટસુત્તરજ્જુ પવરકંચણસ્વચિયણત્થપગ્ગહોવગ્ગહિર્ણિ' રજતમયઘંટાપ્રત્તરજ્જુપવરકાઠચન-સ્વચિતનસ્તપ્રગ્ગહોપગ્ગહીતાખ્યામ્ તત્ર-રજતમયે=રુપ્યનિર્મિતે ઘંટે=શુદ્ધઘટિકે ગલપ્રદેશે ઘંટે યયોસ્તૌ તથા-સૂત્તરજ્જૂ=કાર્પાસિક-તન્તુ નિર્મિતે રજ્જુ-મયે પ્રવરકાઠચનસ્વચિતે યે 'નત્યે।' નસ્તે-તયોઃ પ્રગ્ગહી=રમીનસ્ત-

(લિપ્યામેવ લઘુકરણ જુત જોડ્યં પવહણં ઉવણેહ) તુમલોગ શીઘ્ર હી લઘુકરણ યુક્ત પુરુષોં દ્વારા યંત્રયૂપાદિ સે સંયંધિત કિયે હુણ્ એક પવહણ-શકટકો લે આઓ માપા મેં ઇસે સેજ-ગાડી કહતે હૈં। જો (પવરમોળ જુવાણર્ણિ જુત મેવ) તરુણ એવં ઉત્તમ વૈલોં સે સર્વથા યુક્ત હો (સમસુર ચાલિહાણ સમ-લિહિયતિકલ્ગસિગર્હિ) યે વૈલ મી સમાન સુરોં વાલે હો એક સી પૂછોંવાલે હોં તથા શસ્ત્ર સે ડપર કી લાલ ઊલિ. જાને સે જિનકે અગ્રભાગ ટુકીલે વને રહે હૈં એસે એક સે સીંગોં વાલે હોં (રયયમયઘંટ, સુત્તરજ્જુપવરકંચણ-સ્વચિયણત્થપગ્ગહોવગ્ગહિર્ણિ) વૌદી કે ઘંટિકાઈ જિનકે ગલે મેં વેંધી હુઈ

(સદાવિત્તા) બાલાવીરે તેમને (એવં વયાસી) આ પ્રમાણે કહ્યું (લિપ્યામેવ લઘુકરણ જુતજોડ્યં પવહણં ઉવણેહ) તમે સત્વરે લઘુકરણ યુક્ત પુરુષો વડે યંત્ર યૂપ વગેરેથી સંપન્ન એક પ્રવહણ-આડને લાવો. બાપામાં પ્રવહણ-શકટને 'સેજગાડી' કહે છે. (ધાડગાડીની જેમ આવી 'સેજગાડી' પણ એમર અને ઉપર એમ સરસ આવરણથી આન્ધાદિત રહે છે માણસ આરામથી આમાં અવરજવર કરી શકે છે એટલા માટે એને 'સેજગાડી' કહે છે.) તે સેજગાડી (પવરમોળજુવાણર્ણિ જુતમેવ) જુવાન અને ઉત્તમ બળદોવાળી હોવી હોવી બોધ્યો. (સમસુરચાલિહાણસમલિહિય-તિકલ્ગસિગર્હિ) બળદો સરખી પૂછડી વાળા તેમજ એનાર વડે ઉપર ઉપરથી જેમનું આમંડુ ઊઠી નંખાયું છે અને તેથી જેમનાં શિંગડાંનાં આગળના ભાગ અણીદાર થઈ ગયા ગયા છે તેવા સરખા શિંગડાંવાળા હોવા બોધ્યો. (રયયમયઘંટસુત્તરજ્જુપવરકંચણસ્વચિયણત્થપગ્ગહોવગ્ગહિર્ણિ) આંદીની

દેવદત્તાયાઃ ગણિકાયાઃ ગૃહ વર્તતે તૈચોપાગચ્છતઃ, ઉપાગત્ય પ્રવહ્ણાન્ પ્રત્યચ-
રોહનઃ પ્રત્યચરુઃ દેવદત્તાયાઃ ગણિકાયાઃ ગૃહમનુપ્રવિશતઃ તતસ્તદનન્તરં સ્વલુ-
સા દેવદત્તા ગણિકા તૌ સાર્થવાહદારકૌ એજમાનૌ-આગચ્છન્તૌ પશ્યતિ,
દૃષ્ટ્વા હૃદયતુષ્ટા=અતિશયેન પ્રમુદિતા, અથ મમ ભાગ્યોદયો જાતો યત્ એતાવિશ્ય-
પુત્રૌ મમ ગૃહે આગતાવિતિ વિચાર્ય મ્વાસનાદભ્યુત્તિષ્ઠતિ, અભ્યુત્થાય સમા-
પ્તપદાન્યત્પાચ્છતિ=અભિગચ્છતિ અનુગમ્ય, તયોઃ સંગ્રુસ્થં ગત્વા તૌ સાર્થવાહ-
દારકૌ પ્રત્યેયં વક્ષ્યમાણપ્રકારેણાવાદીત્વં 'સંદિસંતુ ણં' સન્દિદન્તુ આદેશં

હે (પ્રવહ્ણં દુરુહંતિ) ઉસ પ્રવહ્ણ પર સવાર હુણ. (દુરુહિતા જેણેવ દેવદત્તાણ
ગણિયાણ મિહં તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ) સવાર હોકર જહાં દેવદત્તાકા ઘર થા વહાં
પહુંવે. (ઉવાગચ્છિતા પ્રવહ્ણાઓ પચ્ચોરુહંતિ) પહુંવ કર વે ઉસે પ્રવહ્ણ સે
નીચે ઉતરે. (પચ્ચોરુહિતા દેવદત્તાણ ગણિયાણ મિહં અણુપવિસંતિ) નીચે
ઉતરકર દેવદત્તા ગણિકા કે ઘરમેં પ્રવેશ કિયા (તણં સા દેવદત્તા ગણિયા
સત્થવાહદારણ એજમાણે પાસઈ) દેવદત્તા ગણિકાને ઉન દોનોં સાર્થવાહ પુત્રોંકો
આતે હુણ દેખા (પાસિત્તા હૃદયતુષ્ટ આસનાઓ અભ્યુદયેઈ) દેખકર વહી
અધિક પ્રસન્ન હુઈ ઉસને વિચારા આજ મેરે ભાગ્ય કા ઉદય હુઆ હૈ, જો
યે દોનોં અભ્યુપુત્ર મેરે ઘર પર આયે હૈ-હસ પ્રકાર વિચાર કર વહ અપને
આસન સે ઉઠી-(અભ્યુદિતા સત્તદ્વપયાઈ અણુગચ્છઈ) ઉઠ કર વહ સાત
આઠ પૈર ઝૌર સામને ગઈ (અણુગચ્છિતા તે સત્થવાહદારણ એવં વયાસી)
જાકર ઉસને ઉન સાર્થવાહ દારકોં સે હસ પ્રકાર કહા (સંદિસંતુ ણં દેવાણુ-

વચ્ચો ધારણ કયાં. (પ્રવહ્ણં દુરુહંતિ) અને પ્રવહ્ણ (સિજગાડી) માં બેઠા (દુરુહિતા
જેણેવ દેવદત્તાણ ગણિયાણ મિહં તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ) બેસિને તેઓ દેવદત્તાને
ઘેર પહોંચ્યા. (ઉવાગચ્છિતા પ્રવહ્ણાઓ પચ્ચોરુહંતિ) ત્યાં પહોંચીને તેઓ પ્રવ-
હ્ણ માંથી નીચે ઉતર્યાં (પચ્ચોરુહિતા દેવદત્તાણ ગણિયાણ મિહં અણુપવિસંતિ)
નીચે ઉતરીને ગણિકા દેવદત્તાના ઘરમાં પ્રવિષ્ટ થયા. (તણં સા દેવદત્તા ગણિયા
સત્થવાહદારણ એજમાણે પાસઈ) ગણિકા દેવદત્તાએ બને સાર્થવાહ પુત્રોને આવતા
બોલા. (પાસિત્તા હૃદય તુષ્ટ આસનાઓ અભ્યુદયેઈ) બોધને તે ખૂબ જ પ્રસન્ન
થઈ અને તેને થયું કે આજે મારો ભાગ્યોદય થયો છે કેમકે આ બંને ઇશ્યપુત્રો
(શિડિયાના પુત્રો) મારે ઘેર આવ્યા છે. આ રીતે વિચાર કરીને તે પોતાના આસન
પરથી બેઠી થઈ (અભ્યુદિતા સત્તદ્વપયાઈ) બેઠી થઈને તે સાત-આઠ પગલાં સામે
ગઈ. અણુગચ્છિતા તે સત્થવાહદારણ એવં વયાસી) સામે જઈને તેણે સાર્થવાહ
પુત્રોને કહ્યું-- (સંદિસંતુ ણં દેવાણુપિયા! કિમિદાગમણપ્પઓયણ)

भूलक्ष—तए णं ते सत्थवाहदारगा ण्हाया जाव सरीरा पवहणं दुरुहंति दुरुहित्ता जेणेव देवदत्ताए गणियाए गिहं तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता पवहणाओ पच्चोरुहंति, पच्चोरुहित्ता देवदत्ताए गणियाए गिहं अणुप्पविसंति, तएणं सा देवदत्ता गणिया सत्थवाहदारए एज्जमाणे पासइ पासित्ता हट्टुट्टु आसणाओ अब्भुट्टेइ अब्भुट्टित्ता सत्तट्टुपयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता ते सत्थवाहदारए एवं वयासी—सदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! किमिहागमणप्पओयणं ? तएणं ते सत्थवाहदारगा देवदत्तं गणियं एवं वयासी—इच्छामो णं देवाणुप्पिए ! तुब्भेहिं सद्धिं सुभुमिभागस्स उज्जाणस्स उज्जाणसिं पच्चणुब्भवमाणा विहरित्ते । तएणं सा देवदत्ता तोस सत्थवाहदारगाणं एयमट्ठं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता ण्हाया कयकिच्चा कित्ते पवर जाव सिरिसमाणवेसा जेणेव सत्थवाहदारगा तेणेव समागया ॥ सू. ८ ॥

टीका—‘तएणं ते सत्थवाहदारगा ण्हाया’ इत्यादि—ततस्तदनन्तरं खलु तौ सार्थवाहदारकौ स्नातौ—स्नानानन्तरं कृतबलिकर्माणौ यावदाभरणालङ्कृतशरीरौ परिहितशुद्धवस्त्रौ प्रवहणं दूरोहतः आरोहतः दूरस्थ यत्रैव

‘तएणं से सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) वे दोनों सार्थवाहदारक (हाया) कि जिन्होंने पहिले से स्नान कर लिया है (जाव सरीरा) स्नान के बाद वागसादि पक्षियों के लिये अन्नादिका भागरूपबलिकर्म कर जिन्होंने अपने शरीरको आभरण से अलंकृत किया है और शुद्ध वस्त्रों को पहिना

‘तएणं से सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) त्थार पछी (ते सत्थवाहदारगा) अने सार्थवाह पुत्रोअे (ण्हाया) स्नान करीने (जाव सरीरा) अने स्नान कथी आइ कागडा वगेरे पक्षीअोने अन्न भाग अथीने अविकर्म्म करीने पोताना शरीरे सुंदर आभरण्हे तेभन शुद्ध

देवदत्ताया गणिकाया गृहं वर्तते तत्रैवोपागच्छतः, उपागत्य प्रवहणान् प्रत्यव-
रोहनः प्रत्यवरुह्य देवदत्ताया गणिकाया गृहमनुप्रविशतः ततस्तदनन्तरं खलु
सा देवदत्ता गणिका तौ सार्धवाहदारकौ एजमानौ-आगच्छन्तौ पश्यति,
दृष्ट्वा दृष्टतुष्टा=अतिप्रयेन प्रमुदिता, अथ मम भाग्योदयो जातो यत एताविभ्य-
पुत्रौ मम गृहे आगताविति विचार्य स्वासनादभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय सप्ता-
ऽष्टपदान्यनुगच्छति=अभिगच्छति अनुगम्य, तयोः संमुखं गत्वा तौ सार्धवाह-
दारकौ प्रत्येवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत् 'संदिसंतु णं' सन्दिदन्तु आदेशं

है (प्रवहणं दुरुहंति) उस प्रवहण पर सवार हुए। (दुरुहिता जेणेव देवदत्ताए
गणियाए मिहं तेणेव उवागच्छंति) सवार होकर जहां देवदत्ताका घर था वहां
पहुंचे। (उवागच्छिता प्रवहणाओ पच्चोरुहंति) पहुँच कर वे उसे प्रवहण से
नीचे उतरे। (पच्चोरुहिता देवदत्ताए गणियाए मिहं अणुप्रविसंति) नीचे
उतरकर देवदत्ता गणिका के घरमें प्रवेश किया (तएणं सा देवदत्ता गणिया
सत्थवाहदारए एज्जमाणे पासइ) देवदत्ता गणिकाने उन दोनों सार्धवाह पुत्रोंको
आते हुए देखा (पासित्ता दृष्टतुष्ट आसणाओ अभ्युद्वेइ) देखकर बड़ी
अधिक प्रसन्न हुई उसने विचारा आज मेरे भाग्य का उदय हुआ है, जो
ये दोनों इभ्यपुत्र मेरे घर पर आये हैं-इस प्रकार विचार कर वह अपने
आसन से उठी-(अभ्युद्विता सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ) उठ कर वह सात
आठ पैर और सामने गई (अणुगच्छिता ते सत्थवाहदारए एवं वयासी)
जाकर उसने उन सार्धवाह दारकों से इस प्रकार कहा (संदिसंतु णं देवाणु-

पओ धारणु कथां. (प्रवहणं दुरुहंति) अने प्रवहणु (सेवगाडी) मां भेका (दुरुहिता
जेणेव देवदत्ताए गणियाए मिहं तेणेव उवागच्छंति) भेसिने तेओ देवदत्ताने
घेर पछोन्थ्या. (उवागच्छिता प्रवहणाओ पच्चोरुहंति) त्यां पछोन्थीने तेओ प्रव-
हणु मांथी नीचे उतर्यो (पच्चोरुहिता देवदत्ताए गणियाए मिहं अणुप्रविसंति)
नीचे उतरिने गळिंका देवदत्ताना घरमां प्रविष्ट थया. (तए णं सा देवदत्ता गणिया
सत्थवाहदारए एज्जमाणे पासइ) गळिंका देवदत्ताओ भने सार्धवाहु पुत्रोने आवता
लोया. (पासित्ता दृष्ट तुष्ट आसणाओ अभ्युद्वेइ) भेधने ते पूण न प्रसन्न
थअ अने तेने थयुं के आणे भारे लाग्योदय थयो छे केभके आ भने धव्यपुत्रो
(शिठ्ठियाना पुत्रो) भारे घेर आव्या छे. आ रीते विचार करीने ते पोताना आसन
परथी बसी थअ (अभ्युद्विता सत्तट्ठपयाइं) बसी थधने ते सात-आठ पगलां सामे
गअ. अणुगच्छिता ते सत्थवाहदारए एवं वयासी) सामे नधने तेणे सार्धवाहु
पुत्रोने क्खुं-- (संदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! किमिदागमणप्पओयणं)

कुर्वन्तु खलु देवानुप्रियाः किं-रूपमिहागमनप्रयोजनं जातं? ममोपरि भव-
द्भ्यां महती कृपा कृता यतो मदृष्टे भवन्तीं समागतौ ततस्तदनन्तरं तौ सार्धवाह-
दारकौ देवदत्तां गणिकां प्रत्येवमवादिष्टाम् 'इच्छामोणं' आशामिच्छावः खलु
देवानुप्रिये युष्माभिः सार्द्धं सुभूमिभागस्योद्यानस्योद्यानश्रियं प्रत्यनुभवन्ती-
विहर्तुम् त्वया सार्द्धमावागुपवनदर्शनादिसुखं कर्तुमिच्छामोऽतस्त्वमावाभ्यां सार्द्धं
प्रागच्छ, इति भावः। ततस्तदनन्तरं खलु सा देवदत्ता तयोः सार्धवाहदारकयो-
रेतमर्थं प्रतिशृणोति, प्रतिश्रुत्य स्नाता स्नानानन्तरं कृतकृत्या 'किं ते' किं
तेन अलं तेन वर्णनेन 'पवरपरिहिता' पवरपरिहिता=पवरं यथा स्यात्तथा
परिहिता, वस्त्रपरिधानकलाऽभिप्रायतया सुपटुपरिधाना यावत् श्रीसमानवेषा-
वेषप्रिया साक्षाद्भूमौवत् प्रणिभासमाना यत्रैव सार्धवाहदारकौ तत्रैव समागता । सू. ८।

प्रिया ! किमिहागमनप्रयोजनं हे देवानुप्रियो ! कहिये किस प्रयोजन से
यहाँ आना हुआ है? (तएणं ते सत्यवाहदारगा देवदत्तां गणियं एवं वयासी)
देवदत्तागणिकाकी ऐसी बात सुनकर उन दोनों सार्धवाह पुत्रोंने उससे ऐसा
कहा-(इच्छामो णं देवाणुप्पिए ! तुम्हेहिं सद्धिं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स
उज्जाणसिरिं पच्चणुग्भवमाणा विहरित्तए) हे देवाणुप्रिय हमलोग यह चाहते
हैं कि तुम्हारे साथ सुभूमिभाग उद्यान की शोभा का अनुभव करते हुए
विचरण करें। (तएणं सा देवदत्ता तेसिं सत्यवाहदारगाणं एयमट्ठं पडिसुणेइ)
इसके बाद उस देवदत्ताने उन सार्धवाहदारकों के इस कथन रूप अर्थ
को स्वीकार कर लिया। (पडिसुणिता ह्याया कयकिच्चा किं ते पार जाव
सिरिसमाणवेसा जेणेव सत्यवाहदारगा तेणेव समागया) इसके पश्चात्
उसने स्नान किया स्नान कर वह कृत कृत्य हुई अब इस विषय में और

हे देवानुप्रियो ! आज्ञा करो शाश्वत की ओर। आप पधार्यो छ। (तएण ते
सत्यवाहदारगा देवदत्तां गणियं एवं वयासी) गणिका देवदत्तानी बात सांभलीने
तेओओे कहुं--(इच्छामो णं देवाणुप्पिए ! तुम्हेहिं सद्धिं सुभूमिभागस्स
उज्जाणस्स उज्जाणसिरिं पच्चणुग्भवमाणा विहरित्तए) हे देवानुप्रियो ! तमारी
साथ सुभूमिभाग उद्याननु सौहार्द पान करतां करतां त्यां विहार करीओ ओवी तमारी
धन्य छ। (तएणं सा देवदत्ता तेसिं सत्यवाहदारगाणं एयमट्ठं पडिसुणेइ)
त्यारे देवदत्ताओ सार्धवाह पुत्रोनी बात स्वीकारी लीधी। (पडिसुणिता ह्याया कय
किच्चा किं ते पार जाव सिरिसमाणवेसा जेणेव सत्यवाहदारगा तेणेव
समागया) त्यार गाह देवदत्ताओ स्नान कहुं अने स्नान क्यो पछी आ विषे

मूलम्—तएणं ते सत्थवाहदारगा देवदत्ताए गणियाए सद्धिं
जाणं दुरुहंति दुरुहित्ता चंपाए नयरीए मज्झं मज्झेणं जेणेव सुभूमि-
भागे उज्जाणे जेणेव नंदा पुक्खरिणी तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता
पवहणातो पच्चोरुहंति पच्चोरुहित्ता नंदा पोक्खरिणी ओगाहंति ओगाहित्ता
जलमज्जणं करेति, करित्ता जलकीडं करेति, करित्ता पहाया देवदत्ताए
सद्धिं पच्चुत्तरंति पच्चुत्तरित्ता जेणेव थूणामंडवे तेणेव उवा
गच्छंति, उवागच्छित्ता थूणामंडवे अणुपविसंति अणुपविसित्ता सव्वा-
लंकारविभूसिया आसत्था विसत्था सुहासणवरगया देवदत्ताए सद्धिं
तं विउलं असणं ४ धूवपुप्फगंधवत्थं आसाएमाणा वीसाएमाणा
परिभुंजेमाणा एवं च णं विहरंति जिमिय् भुत्तुत्तरागयावि य णं समाणा
देवदत्ताए सद्धिं विपुलाइं माणुस्सगाइं कामभोगइं भुंजमाणा
विहरंति ।सू. ९।

टीका—‘तएणं ते’ इत्यादि—ततस्तदनन्तरं खलु तौ सार्थवाहदारकौ
देवदत्तया गणिकया सार्द्धं यानं—रथं दूरोहतः, आरोहतः, दूरुह्य=आरुह्य चम्पा-

अधिकवर्णन क्या करें—उसने अच्छी तरह वस्त्र पहिरे यावत् अपना वेपथ्री केजैसा
धनाया—और जहां वे दोनों सार्थवाह पुत्र थे, वही आनंद के साथ गई । ॥ध्रुव ८॥

‘तएणं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) वे दोनों सार्थ-
वाह पुत्र (देवदत्ताए गणियाए सद्धिं) देवदत्ता गणिका के साथ (जाणं दुरुहंति)

वधारे शुं डहीये तेणे सुंदर वस्त्रो पहियो अने तेणे पोतानो देह लक्ष्मी जेयो
सुंदर जनावीने ते ज्यो जने सार्थवाह पुत्रो हुता त्यांआनंद अनुभवती पडोन्थी । सू. ८ ।

‘तए णं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) त्थार पछी (ते सत्थवाहदारगा) जने सार्थवाह पुत्रो
(देवदत्ताए गणियाए सद्धिं) गणिका देवदत्तानी साथे (जाणं दुरुहंति) ते स्थानं

कुर्वन्तु खलु देवानुप्रियाः किं-कथमिहागमनप्रयोजनं जातं? ममोपरि भव-
द्गथां महती कृपा कृता यतो मदृष्टे भवन्तीं समागतौ ततस्तदनन्तरं तौ सार्धं वाह-
दारकौ देवदत्तां गणिकां प्रत्येयमवादिष्ट्वा 'इच्छामोऽणं' आवाभिच्छावः खलु
देवानुप्रिये युष्माभिः सार्द्धं सुभूमिभागस्योद्यानस्योद्यानश्रियं प्रत्यनुभवन्ती-
विहर्तुम् त्वया सार्द्धमावाप्तुमनर्शनादिसुखं कर्तुमिच्छामोऽतस्त्वमावाभ्यां सार्द्ध-
मागच्छ, इति भावः। ततस्तदनन्तरं खलु सा देवदत्ता तयोः सार्धं वाहदारकयो-
रेतमर्थं प्रतिशृणोति, प्रतिश्रुत्य स्नाता स्नानानन्तरं कृतकृत्या 'किं ते' किं
तेन अलं तेन वर्णनेन 'पवरपरिहिता' पवरपरिहिता=पवरं यथा स्यात्तथा
परिहिता, वस्त्रपरिधानकलाऽभिज्ञतया सुदृढपरिधाना यावत् श्रीसमानवेपा=
वेपथ्रिया साक्षादक्षमीवत् प्रणिभासमाना यत्रैव सार्धं वाहदारकौ तत्रैव समागता। सू. ८।

प्रिया ! किमिहागमनप्रयोजनं हे देवानुप्रियो ! कहिये किस प्रयोजन से
यहाँ आना हुआ है? (तएण ते सत्यवाहदारगा देवदत्तं गणियं एवं वयासी)
देवदत्तागणिकाकी ऐसी बात सुनकर उन दोनों सार्धं वाह पुत्रोंने उससे ऐसा
कहा—(इच्छामो णं देवानुप्रिय ! तुम्हेंहि सद्धिं सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स
उज्जाणसिं पच्चणुभवमाणा विहरित्तणं) हे देवानुप्रिय हमलोग यह चाहते
हैं कि तुम्हारे साथ सुभूमिभाग उद्यान की शोभा का अनुभव करते हुए
विचरण करें। (तएण सा देवदत्ता तेसि सत्यवाहदारगाणं एयमहं पडिसुणेइ)
इसके बाद उस देवदत्ताने उन सार्धं वाहदारकों के इस कथन रूप अर्थ
को स्वीकार कर लिया। (पडिसुणिता ह्याया कयकिच्चा किं ते पार जाव
सिरिसमाणवेसा जेणेव सत्यवाहदारगा तेणेव समागया) इसके पश्चात्
उसने स्नान किया स्नान कर वह कृत कृत्य हुई अब इस विषय में और

हे देवानुप्रियो ! आता करे था क्षणभूमी अही, आप पधार्या छे। (तएण ते
सत्यवाहदारगा देवदत्तं गणियं एवं वयासी) गच्छिआ देवदत्तानी वातं सांलणीने
तेओओ क्खु—(इच्छामो णं देवानुप्रिय ! तुम्हेंहि सद्धिं सुभूमिभागस्स
उज्जाणस्स उज्जाणसिं पच्चणुभवमाणा विहरित्तणं) हे देवानुप्रियो ! तमारी
साथ सुभूमिभाग उद्याननुं सौदर्थ पान करतां करतां त्यां विहार करीओ ओवी अमारी
धन्धा छे। (तएण सा देवदत्ता तेसि सत्यवाहदारगाणं एयमहं पडिसुणेइ)
त्यारे देवदत्ताओ सार्धं वाह पुत्रोनी वात स्वीकारी वीधी। (पडिसुणिता ह्याया कय
किच्चा किं ते पवर जाव सिरिसमाणवेसा जेणेव सत्यवाहदारगा तेणेव
समागया) त्यार णाह देवदत्ताओ स्नान क्खु अने स्नान क्खी पथी आ विपे

भरणशोभितौ, 'असत्था' आस्वस्थौ परिश्रमापनयनेन स्वस्थौभूतौ, प्रसन्नचित्तौ इत्यर्थः
 'वीसत्था'विस्वस्थौ विशेषेण स्वस्थौभूतौ सर्वथाऽपगतश्रमौ, सुखासनवरगतौ
 सुखप्रदपर्यङ्काद्यासनोपविष्टौ, देवदत्तया सार्द्धं तं विपुलं विस्तीर्णम् अशनं पानं खाद्यं-
 स्वाद्यं धूपं पुष्पं गन्धं वस्त्रं च, 'असाएमाणा' आस्वादयन्तौ-ईषत्स्वादयन्तौ
 'वीसाएमाणा' विस्वादयन्तौ-विशेषेण वारं वारमास्वादयन्तौ, 'परिभुंजिमाणा'
 परिभुञ्जानौ-परिभोगं कुर्वानौ एवं च अनेन प्रकारेण खलु विहरतः आसाते।
 अपि च खलु 'जिमिय भुत्तुत्तरागया' जिमित भुक्तोत्तरागतौ जिमितं=खादितं,
 भुक्तम्=आस्वादितं ताभ्यामुत्तरं=अनन्तरम् आगतौ सुखासनं पर्यङ्कादिकं प्राप्तौ,
 जिमितमुक्तानन्तरम्-आचान्तौ शुद्धोदकेन कृताचमनौ, लेपाद्यपनयनेन चोष्णौ

आकर वे उसमें प्रविष्ट हुए (अणुप्रविसिक्ता सञ्चालंकारविभूसिया आसत्था
 वीसत्था सुहासनवरगया देवदत्ताए सद्धि) प्रविष्ट होकर सर्व अलंकारो
 से विभूषित बने हुए वे आश्वस्त-परिश्रम के अपनयन से स्वस्थचित्त हुए
 विश्वस्त हुए-सर्वथा परिश्रम से रहित हुए और सुखप्रदपर्यङ्क (पलंग) आदि
 आसन पर जाकर बैठ गये। बाद में उन्होंने उस देवदत्ता के साथ (तं
 विउल' असणं ४ धूपपुष्पगंधवस्त्रं आसाएमाणा, वीसाएमाणा परिभुंजे
 माणा एवं च णं विहरंति) उस विपुलमाश्रमं निष्पन्न हुए अशन, पान, खाद्य,
 स्वाद्य, रूप चारों प्रकार के आहार को किया रुचर कर उसका स्वाद लिया-
 धूप, पुष्प, गंध, वस्त्र का वितरण किया-(जिमियभुत्तुत्तरागया वि य णं समाणा
 देवदत्ताए सद्धि विउलाइ'माणस्सगाइ' कामभोगाइ' भुंजमाणा विहरंति) जब
 वे अच्छी तरह खा पी चुके-तब देवदत्ता के साथ वे पर्यङ्क आदि आसन
 पर आकर बैठ गये वहां इतना संवन्ध और इसप्रकार जोड़ लेना चाहिये-

(अणुप्रविसिक्ता सञ्चालंकारविभूसिया आसत्था वीसत्था सुहासनवरगया
 देवदत्ताए सद्धि) प्रवेशीने सर्व अलंकारोत्थी विभूषित थयेला तेजो आश्वस्त-थाक वगर
 स्वस्थचित्त बन्या. विश्वस्त थया-सर्वथा श्रम रहित थया, अने सुप्रेथी भोसाय तेवा
 पलंग (पर्यङ्क) वगेरे आसनो पर भेसी गया. त्यांरणाह तेमण्हे देवदत्ता गुणिकानी साथे
 (तं विउल' असण धूपपुष्पगंधवस्त्रं आसाएमाणा, वीसाएमाणा परि-
 भुंजिमाणा एवं च णं विहरंति) पुष्कण प्रमाणुमां तैयार करावीने त्यां पडोऽया-
 ऽवाभां आवेला अशन, पान, भाद्य अने स्वाद्य इष आर नतना आहारने यथारुचि
 नभ्या. तेमन् धूप, पुष्प, गंध अने वस्त्रोद्यं वितरणकुर्थुं. (जिमिय भुत्तुत्तरागया
 वि य णं समाणा देवदत्ताए सद्धि विउलाइ' माणस्सगाइ' कामभोगाइ' भुंजमाणा
 विहरंति) नभ्या पडी तेजो पलंग वगेरे सरस आसनो पर आवीने देवदत्ता
 गुणिकानी साथे भेसी गया. अही आटली विगत पधारांनी नष्टी लेवी लेधये हे-

नगर्या मध्य-मध्येन-मध्ये भूत्वा यत्रैव सुभूमिभागप्रधानमस्ति यत्रैव नन्दा नाम्नी
 पुष्करिणी तत्रैवोपागच्छतः, उपागत्य पवहणात्=रथात् प्रत्यवरोहतः-प्रत्यवरोहतः
 वेद्यापि यानादुत्तीर्णा, ततः पश्चात्, नन्दा पुष्करिणीमवगाहन्ते, अवगाह्य=प्रवेशं
 कृत्वा देवदत्तया सार्द्धं जलमज्जनं-स्नानं कुरुतः स्नानं कृत्वा जलक्रीडां कुरुतः
 कृत्वा स्नात्वा (स्नातौ) देवदत्तया गणिकया सार्द्धं प्रभू प्रत्युत्तरतः नन्दापुष्क-
 रणीतो चर्हिर्निस्सरतः प्रत्युत्तीर्य यत्रैव स्थूणामण्डपो वस्त्राच्छादितमण्डपस्तत्रैवो-
 पागच्छतः, उपागत्य स्थूणामण्डपमनुप्रविशतः,=मण्डपमध्ये देवदत्तया सार्द्धं तौ
 सार्धं वाददरकीं प्रवेशं कुरुत इत्यर्थः । अनुप्रविश्य सर्वालंकारविभूषितौ वस्त्रा-

उस रथ पर आरुढ़ हुए (दुरुहिता चंपाए नयरोए) आरुढ़ होकर चंपा-
 नगरी के (मज्झं मज्झेणं) ठीक बीचोबीच से होकर (जेणेव सुभूमिभागे
 उज्जाणे) जहां सुभूमि भाग नाम का उद्यान और उसमें भी (जेणेव नन्दा-
 पुष्करिणी) जहां नन्दा नाम की पुष्करिणी (यावडी) थी (तेणेव उवागच्छंति)
 वहां पहुँचे । (उवागच्छिता पवहणातो पच्चोरुहंति) पहुँच कर फिर वे रथ
 से नीचे उतरे । (पच्चोरुहिता नन्दापोषखरिणीं ओगाहंति) उतर कर नन्दा
 पुष्करिणी में प्रवेश किया (ओगाहिता जलमज्जनं करेंति) प्रवेश कर वहां
 उन्होंने स्नान किया (करिता जलक्रीडां करेंति) स्नान करके जलक्रीडा की
 (करिता ह्याया देवदत्ताए सार्द्धं पच्चुत्तरंति) जलक्रीडा करके वे दोनों देव-
 दत्ता गणिका के साथ उस पुष्करिणी से बाहर निकले (पच्चुत्तरिता जेणेव
 थूणामंडवे तेणेव उवागच्छंति) बाहर निकल कर जहां वह स्थूणामंडप-
 वस्त्राच्छादितमंडप-था-वहां आये-(उवागच्छिता थूणामंडवं अणुपविसंति)

सवार तथा. (दुरुहिता चंपाए नयरीए) सवार होने चंपानगरीनी (मज्झं
 मज्झेणं) ठीक मध्ये मध्ये (जेणेव सुभूमिभागे उज्जाणे) जहाँ सुभूमिभाग उद्यान
 तेमण (जेणेव नन्दा पुष्करिणी) जहाँ नन्दा नामे पुष्करिणी (कभण जेमां डोय
 तेवी स्वच्छ पाणीनी नानी सुंदर वाव) હતી (तेणेव उवागच्छंति) त्यां પહોંચ્યા.
 (उवागच्छिता पवहणातो पच्चोरुहंति) પહોંચીને તેઓ રથમાંથી નીચે ઉતર્યા.
 (પच्चોરુहिता નન્દા પોષ્કરિણીં ઓગાહંતિ) ઉતારીને નન્દા પુષ્કરિણી (વાવ) માં પેહા
 અને (ઓગાહિતા જલમજ્જનં કરેંતિ) પ્રવેશીને તેઓએ સ્નાન કર્યું. (કરિતા
 જલક્રીડાં કરેંતિ) સ્નાન કરીને તેઓએ જલ ક્રીડાઓ કરી. (કરિતા હ્યાયા દેવ-
 દત્તાએ સર્દિ પચ્ચુત્તરંતિ) જલ ક્રીડા કરીને તેઓ બંને દેવદત્તા ગણિકાની સાથે
 પુષ્કરિણીમાંથી બહાર નીકળ્યા. (પચ્ચુત્તરિતા જેણેવ થૂણામંડવે તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ
 બહાર નીકળીને જ્યાં સ્થૂણા મંડપ (વસ્ત્રથી આચ્છાદિત મંડપ) અર્થાત્ તથા હતો ત્યાં ગયાં.
 (ઉવાગચ્છિતા થૂણામંડવં અણુપવિસંતિ) ત્યાં જઈને તેઓ મંડપમાં પ્રવિષ્ટ થયા.

भरणशोभितौ, 'असत्था' आस्वस्थौ परिश्रमापनयनेन स्वस्थौ भूतौ, प्रसन्नचित्तौ इत्यर्थः
 'वीसत्था' विस्वस्थौ विशेषेण स्वस्थौ भूतौ सर्वथाऽपगतश्रमौ, सुखासनवरगतौ
 सुखप्रदपर्यङ्कायासनोपविष्टौ, देवदत्तया साद्धं तं विपुलं विस्तीर्णम् अशनं पानं स्वाद्यं-
 स्वाद्यं धूपं पुष्पं गन्धं वस्त्रं च, 'असाएमाणा' आस्वादयन्तौ-ईषत्स्वादयन्तौ
 'विसाएमाणा' विस्वादयन्तौ-विशेषेण वारं वारमास्वादयन्तौ, 'परिभुंजेमाणा'
 परिभुजानौ-परिभोगं कुर्वानौ एवं च अनेन प्रकारेण खलु विहरतः आसाते।
 अपि च खलु 'जिमिय भुत्तुत्तरागया' जिमित भुक्तोत्तरागतौ जिमितं=खादितं,
 भुक्तम्=आस्वादितं ताभ्यामुत्तरं=अनन्तरम् आगतौ सुखासनं पर्यङ्कादिकं माप्नौ,
 जिमितमुक्तानन्तरम्-आचान्तौ शुद्धोदकेन कृताचमनौ, लेपाद्यपनयनेन चोक्षौ

आकर वे उसमें प्रविष्ट हुए (अणुप्रविसिक्ता सञ्चालंकारविभूसिया आसत्था
 वीसत्था सुहासणवरगया देवदत्ताए सद्धि) प्रविष्ट होकर सर्व अलंकारों
 से विभूषित बने हुए वे आश्वस्त-परिश्रम के अपनयन से स्वस्थचित्त हुए
 विश्वस्त हुए-सर्वथा परिश्रम से रहित हुए और सुखप्रदपर्यङ्क (पलंग) आदि
 आसन पर जाकर बैठ गये। बाद में उन्होंने उस देवदत्ता के साथ (तं
 विउलं असणं ४ धूपपुष्पगंधवस्त्रं आसाएमाणा, वीसाएमाणा परिभुंजे
 माणा एवं च णं विहरंति) उस विपुलमात्रामें निष्पन्न हुए अशन, पान, स्वाद्य,
 स्वाद्यरूप चारों प्रकार के आहार को किया रुचर कर उसका स्वाद लिया-
 धूप, पुष्प, गंध, वस्त्र का वितरण किया-(जिमियभुत्तुत्तरागया वि णं समाणा
 देवदत्ताए सद्धि विउलाइंमाणुस्सगाइं कामभोगाइं भुंजमाणा विहरंति) जब
 वे अच्छी तरह खा पी चुके-तब देवदत्ता के साथ वे पर्यङ्क आदि आसन
 पर आकर बैठ गये वहां इतना संवन्ध और इसप्रकार जोड़ लेना चाहिये-

(अणुप्रविसिक्ता सञ्चालंकारविभूसिया आसत्था वीसत्था सुहासणवरगया
 देवदत्ताए सद्धि) प्रवेशीने सर्व अलंकारोशी विभूषित थयेला तेओ आश्वस्त-थाइ वगर
 स्वस्थचित्त बन्या. विश्वस्त थया-सर्वथा श्रम रहित थया, अने सुषेधी णेसाथ तेवा
 पलंग (पर्यङ्क) वगेरे आसने। पर णेसी गया. त्यारणाइ तेमळे देवदत्ता गुणिकानी साथे
 (तं विउलं असणं धूपपुष्पगंधवस्त्रं आसाएमाणा, वीसाएमाणा परि-
 भुंजेमाणा एवं च णं विहरंति) पुष्कण प्रमाणुमां तैयार करावीने त्यां पडोआ-
 उवाभां आवेला अशन, पान, आद्य अने स्वाद्य रूप चार जातना आहारने यथारुचि
 णभ्या. तेमज धूप, पुष्प, गंध अने वस्त्रोछं पितरलुक्थुं. (जिमिय भुत्तुत्तरागया
 वि णं समाणा देवदत्ताए सद्धि विउलाइं माणुस्सगाइं कामभोगाइं भुंजमाणा
 विहरंति) णभ्या पछी तेओ पलंग वगेरे सरस आसने। पर आवीने देवदत्ता
 गुणिकानी साथे णेसी गया. अहीं आटली विगत वधारानी जाली लेवी जेथे हे-

स्वच्छौ, अत एव परमशुचिभूतो सुखासनं प्राप्योपविष्टौ इत्यर्थः । 'समाणा' सन्तौ देवदत्ताया गणिकया साद्ध विपुलान्-रीस्तीर्णान् मानुष्यदान्-मनुष्य-संबन्धिनः कामभोगान् शब्दादीन् पञ्चेन्द्रियविषयान् भुञ्जानौ विहरत आसातेस्मात् १

मूलम्—तएणं ते सत्थवाहदारगा पुब्बावरण्हकालसमयंसि देवदत्ताए गणियाए सद्धिं थूणामंडवाओ पडिनिक्खमंति पडिनिक्खमित्ता हत्थ संगेह्ठीए सुभूमिभागे उज्जाणे बहुसु आलिघरएसु य कयलीघरेसु य लयाघरएसु य अच्छणघरएसु य पेच्छणघरएसु य पसाहणघरएसु य मोहणघरएसु य सालघरएसु य जालघरएसु य कुसुमघरएसु य उज्जाणसिरिं पच्चणुभवमाणा विहरंति ॥सू. १०॥

टीका—ततस्तदनन्तरं स्वच्छौ सार्धवाहदारकौ पूर्वापराह्णकालसमये-पश्चिमे महरे देवदत्तया गणिकया साद्धं स्थूणामण्डपात् प्रतिनिष्क्रामतः बहि-

‘भोजन करने के बाद उन्होंने आचमन-शुद्ध जल से कुल्ला किया। खाते समय जो अन्नादि के सीत उनके पैर आदि अवयवों पर गिर गये थे उन्हें उन्होंने दूर कर उन अवयवों को साफ किया। इस तरह परमशुचि भूत होकर सुखासन पर आकर बैठ गये’ बैठने के बाद उन्होंने उस देवदत्ता गणिका के साथ विपुल मनुष्यभवं संबंधी कामभोगों को शब्दादिक पांचों इन्द्रियों के विषयों को सेवन किया। ॥सूत्र ९॥

‘तएणं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) वे सार्धवाह दारक (पुब्बावरण्ह-काल समयंसि) पश्चिम महर में (देवदत्ताए गणियाए सद्धिं) देवदत्ता

जन्मा पडी तेज्जोअे शुद्ध पाण्णीथी डोगणा कयां. जन्मती वणते अन्न वज्जेरेना कल्लु। तेमना डाय पग उपर पडी गया हुता तेमने तेज्जोअे साद्ध कयां. अने आ प्रमाणे पोताना अवयवोने स्वच्छ बनाव्या. शुद्ध थया. णाह तेज्जो सरस सुण्ह आसन पर आवीने णेहा. जेसीने तेज्जोअे गल्लिका देवदत्तानी साथे पुच्छण मनुष्यभवनना कामभोगो तेमनं शण्ह वज्जेरे पांचे छिन्द्रियोना विषयोनुं सेवन कथुं. ॥सूत्र. ९॥

‘त एणं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि !

टीकार्थ—(तएणं) त्यागणाह (ते सत्थवाहदारगा) सार्धवाहना पुत्री (पुब्बावर-हकालसमयंसि) पाण्ड्या पंडारना वणते (देवदत्ताए गणियाए सद्धिं) देवदत्ता शु-छिकानी साथे (थूणामंडवाओ पडिनिक्खमंति) स्थूला मंडपनी गडार नीकल्या.

નિઃસરતઃ પ્રતિવિક્રમ્ય 'હત્યસંગેહિના-અન્યોન્યં હસ્તાવલમ્બનેન સુભૂમિભાગે ઉદ્યાને
વહુષુ 'આલિઘરણ્મુ' આલિગૃહકેષુ શ્રેણિચદ્વગૃહાકારપરિણતવનસ્પતિવિશેષ-
નિકુઞ્જેષુ ચ-પુનઃ 'કયલીઘરેષુ' કદલી ગૃહકેષુ-કદલી નિકુઞ્જેષુ ચ 'લયા-
ઘરણ્મુ' લતાગૃહકેષુ-ચંપકાશોકાદિલતાગૃહેષુ ચ 'અચ્છળઘરણ્મુ'
આસનગૃહકેષુ આસન-ઉપવેશનમ્ તેષાં ગૃહેષુ યદા તદા જના આગત્ય સુસ્વા-
સિકયોપવિશન્તિ યત્ર તત્ર ચ 'પેચ્છળઘરણ્મુ' પ્રેક્ષણગૃહકેષુ-પ્રેક્ષણ-પ્રેક્ષણકં
તસ્યગૃહેષુ-યત્રાગત્ય જના નાટકાદિકં કુર્વન્તિ પ્રેક્ષન્તે ચ તેષુ 'પસાહળઘર-
ણ્મુ ય' પ્રસાધનગૃહકેષુ પ્રસાધન મળ્ડનં યત્રાગત્ય જના સ્વં પેરં ચ મળ્ડયન્તિ તેષાં
ગૃહેષુ 'મોહળઘરણ્મુ' મોહનગૃહકેષુ-વિલાસગૃહેષુ 'સાલઘરણ્મુ' શાલા-
ગૃહકેષુ શાલા શાલા તાસાં ગૃહેષુ વહુષુગૃહેષુ વા' જાલઘરણ્મુ' જાલગૃહકેષુ—
જાલિકાન્વિતગૃહેષુ યત્રાભ્યન્તરસ્થિતા ચહિઃ સ્થિતૈ ન દશ્યન્તે કિન્તુ અન્તઃ

ગણિકા કે સાથ (ધૂળામંડવાઓ પહિનિવલ્લમંતિ) ઉસ સ્થળામંડપ સે
ચાહર નિકલે (પહિનિવલ્લમિત્તા) ચાહર નિકલ કર (હત્યસંગેલીએ) હાથ મેં
હાથ મિલાએ હુએ ને (સુભૂમિભાગે ઉજ્જાણે વહુષુ આલિઘરણ્મુય) ઉસ
સુભૂમિભાગ ઉદ્યાન મેં અનેક શ્રેણિચદ્વ ગૃહાકાર પરિણત હુએ વનસ્પતિ
વિશેષોં કે નિકુઞ્જોં મેં (કયલીઘરણ્મુ ય લયાઘરણ્મુય) કદલીગૃહોં મેં ઓર લતાગૃહોં
(અચ્છળ ઘરણ્મુય) યદા કદા આઈ હુઈ જનતા કો વેઠને કે લિયે વનાયે હુએ આસન
ગૃહોં મેં (પેચ્છળઘરણ્મુય) જહાં પર આકર કે જન નાટક આદિ કરતે હૈં ઓર દેવલે હૈં
ઉન પ્રેક્ષણ ઘરોં મેં (પસાહળઘરણ્મુ ય) પ્રસાધન ગૃહોં મેં—જહાં આકર કે
મનુષ્ય અપને કો ઓર દુસરો કો અલંકારો સે વિભૂષિત કરતે હૈં એસે
ઘરોં મેં (મોહળઘરણ્મુય) વિલાસ ગૃહોં મેં (સાલઘરણ્મુ ય શાલા ઘરોં
મેં (જાલઘરણ્મુ ય) જાલિકાન્વિત ઘરોં મેં—જિનકેં ભીતર રહે હુએ

(પહિનિવલ્લમિત્તા) બહાર નીકળીને (હત્યસંગેલીએ) હાથમાં હાથ નાખીને તેઓ
(સુભૂમિભાગે ઉજ્જાણે વહુષુ આલિઘરણ્મુ ય) સુભૂમિભાગ ઉદ્યાનમાં આવેલા
ઘણા શ્રેણિચદ્વ ઘરના આકાર જેવા વનસ્પતિ વિશેષોથી બનાવવામાં આવેલા નિકુઞ્જોંમાં
(કયલીઘરણ્મુ ય લયાઘરણ્મુ ય) કદલી ગૃહોંમાં, લતાગૃહોંમાં, (અચ્છળઘર-
ણ્મુ ય) અવારનવાર આવતા સામાજિકોંને બેસવા માટે બનાવવામાં આવેલા આસનગૃહોંમાં
(પેચ્છળઘરણ્મુ ય) માણસોં ન્યાં આવીને નાટક વગેરે કરે છે અને બુઝે છે તેવા
પ્રેક્ષાગૃહોંમાં (પસાહળઘરણ્મુ ય) પ્રસાધન ગૃહોંમાં એટલે કે ન્યાં માણસોં પોતાની
બાતને અને બીજાઓને શણગારે છે, તેવા ઘરોંમાં, [મોહળઘરણ્મુ ય] વિલાસગૃહોંમાં
(સાલઘરણ્મુ ય) શાળાગૃહોંમાં (જાલઘરણ્મુ ય) જાલિકાન્વિત ઘરોંમાં એટલે કે

स्थितैर्धहिःस्था दृश्यन्ते तादृशेषु च 'कुसुमघरएसु' कुसुमगृहकेषु=पुष्पगृहकेषु, इत्यादिषु, स्थानेषु 'उज्जाणसिरिं' उद्यानश्रियं, उपवनस्य शोभां मुखं च 'पञ्चणु भवमाणा' प्रत्यनुभवन्ती देवदत्ताया सार्द्धमनुभवन्ती विहरतः=विचरतः । सू. १०।

मूलम्—तए णं ते सत्थवाह दारया जेणेव से मालुया कच्छए तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तएणं सा वणमऊरी ते सत्थहदारए एज्जमाणे पासइ पासित्ता भीया तत्था तसिया उट्ठिग्गा पलाया महया महया सइणं केकारवं विणिम्मुयमाणी २ मालुयाकच्छाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता एगसि रुक्खडालयंसि ठिच्चा ते सत्थ वाहदारए मालुयाकच्छयं च अणिमिसाए दिट्ठिए पेहमाणी २ चिट्ठइ ॥सू० ११॥

टीका—'तएणं ते' इत्यादि—ततस्तदनन्तरं खलु तदुद्यानशोभासु-
खानुभवानन्तरं तौ सार्धवाहदारकौ यत्रैव स मालुकाकक्षकः पूर्वोक्त एका-
स्थिकफलानां वृक्षविशेषाणां काननं वर्तते तत्रैव 'पहारेत्थ गमणाए' आधार यतां

मनुष्य बाहिर रहे हुए मनुष्यों की दृष्टि में न आवे किन्तु बाहिर मनुष्य उन भीतर में रहे हुए मनुष्यों को दिखलाई पड़ते रहे ऐसे घरों में—(कुसुमघरएसु य) पुष्प गृहों (उज्जाणसिरिं पञ्चणुभवमाणा विहरन्ति) देवदत्ता के साथ २ उद्यानश्री का निरीक्षण करता हुआ आनन्द भोग करते हुए विचरते रहे । सूत्र १० ॥

'तएणं ते सत्थवाहदारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) वे दोनों सार्धवाह दारक (जेणेव मालुयाकच्छए) जहाँ वह मालुका कच्छ था (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) उस ओर जानेके लिये उत्कण्ठित हुए (तएणं सा वणमऊरी ते

येवा धरेमां के जेमनी अंदर भेटेला भाणुसेने सारी पेठे जेष्ठ थके पणु जडाएना भाणुसे अंदरना भाणुसेने जेष्ठन थके, (कुसुमघरएसु य) पुष्प गृहोमां, (उज्जाणसिरिं पञ्चणुभवमाणा विहरन्ति) उद्याननी शोभा जेता देवदत्तानी साथे सुण अनुभवता विचरता रह्य। ॥सूत्र १०॥

'तएणं ते सत्थवाह-दारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(त एणं) त्पारणाए (ते सत्थवाह दारगा) अने सार्धवाह पुत्रे (जेणेव से मालुया कच्छए) जे तरई मालुका कच्छ हतो. (तेणेव पहारेत्थ गमणाए)

गमनाय=तत्र गन्तुमुत्कण्ठितौ गतौ च, ततस्तदनन्तरं खलु सा वनमयूरी
तौ सार्धवाहदारकौ 'एजमाणे' एजमानौ प्रत्यागच्छन्तौ पश्यति दृष्ट्वा च'
'भीया' भीताः अकस्माद् भयजनकवस्तुदर्शनेन भयं प्राप्ता 'तत्था' अस्ता-
'भयजनितदुःखं प्राप्ता स्तब्धा वा क्षणमात्रं भयेन निश्चला जाता 'तसिया'
अन्तर्भावितव्यर्थः, त्रासिता आत्मनः प्रतिप्रदेशं भयेन संक्रान्ता जाता 'उद्विग्ना'
उद्विग्ना-त्रोणशरणरहितत्वेनोद्वेगं प्राप्ता 'पलाया' पलायिता-उद्वेगनोद्युक्ता
'महया २ सदेणं' महता २ शब्देन उच्चस्वरेण 'केकारवं' मयूरशब्दं 'विणि-
म्भुयमाणी २' विनिर्मुञ्चन्ती=पुनःपुनः कुर्वन्ती मालुकारुक्ता 'पडिनिक्ख-
मइ' प्रतिनिष्क्रामति-निस्सरति 'पडिनिक्खन्ता' प्रतिनिष्क्रम्य निस्सृत्य स्वस्था-
नादुद्धीय 'एगंसि' एकस्यां वृक्षशाखायां 'ठिचा' स्थित्वा तौ सार्धवाहदारकौ तं

स्तथवाहदारए एजमाणे पासइ) उस वनमयूरीने उन दोनों सार्धवाह
दारकों का उपों ही आते हुए देखा-तो (पासित्ता) देखकर (भीया तत्था
तसिया उद्विग्ना पलाया) भयभीत हो गई अस्त हो गई--अकस्मात्
भयजनक वस्तु को देखने से भय जनित दुःखको प्राप्त हुई-अथवा क्षण
मात्र के लिये भयसे निश्चल हो गई-आत्मा के प्रतिप्रदेश में भय
से युक्त हो गई, उद्वेग वी प्राप्त हो गई-और उस स्थान से उड़ी (महया २ सदेणं
केकारवं विणिम्भुयमाणी २ मालुयारुक्काओ पडिनिक्खमइ) उड़ती २ बड़े जोर २ से
केकारव (शब्द) बारबार करती करती वह उस मालुका कच्छरु से बाहर हो गई
(पडिनिक्खमिता एगंसि रुक्खडलयंसि ठिचा ते सत्थवाहदारए मालुया-
कच्छयं च अणिमिसाए दिट्ठिए पेहमाणी २ चिइइ) बाहर होकर एक

ते गान्धु ज्वा आगण वत्था (तएणं सा वणमऊरी ते सत्थवाहदारए एजमाणे पासइ)
ते ठेवे जने सार्धवाहोने जेया अने (पासित्ता) जेधने (भीया तत्था तसिया उद्विग्ना
पलाया) ठरी गछ, संनस्त थछ गछ आश्रित्ता लय पभाउनारी वस्तुने जेधने ते
दुःख पाभी, अथवा तो ते लयभीत थधने थोडा वणत भाटे स्तब्ध थछ गछ, तेना
आत्मप्रदेशोभां लय प्रसरती गथो. ते उद्विग्न थछ गछ तेनी सामे रक्षानो कोछ पछु
जतनो उपाय हुतो नहि तेथी ते व्याकुण जनी गछ अने ते स्थानेथी उड़ी
(महया २ सदेणं केकारवं विणिम्भुयमाणी २ मालुया कच्छाओ पडिनिक्खमइ)
अने मोटा स्वरेथी टड्डकती २ उडती ते मालुका कच्छथी जहार नीकणी गछ. (पडिनि-
क्खमिता एगंसि रुक्खडलयंसि ठिचा ते सत्थवाहदारए मालुया
कच्छयं च अणिमिसाए दिट्ठिए पेहमाणी २ चिइइ) मालुका कच्छनी जहार नीकणीने ते

स्थितैर्धर्माःस्था दृश्यन्ते तादृशेषु च 'कुसुमघरएसु' कुसुमगृहकेषु=पुष्पगृहकेषु, इत्यादिषु, स्थानेषु 'उज्जाणसिरि' उद्यानश्रियं, उपवनस्य शोभां सुखं च 'पञ्चणु भवमाणा' प्रत्यनुभवन्ती देवदत्ताया सार्द्धमनुभवन्ती विहरतः=विनरतः । मू. १०।

मूलम्—तए णं ते सत्थवाह दारया जेणेव से मालुया कच्छए तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तएणं सा वणमऊरी ते सत्थहदारए एज्जमाणे पारुइ पासित्ता भीया तत्था तसिया उट्ठिग्गा पलाया महया महया सइणं केकारवं विणिम्मुयमाणी २ मालुयाकच्छाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता एगसि रुक्खडालयंसि ठिच्चा ते सत्थ वाहदारए मालुयाकच्छयं च अणिमिसाए दिट्ठिए पेहमाणी २ चिट्ठइ ॥सू० ११॥

टीका—'तएणं ते' इत्यादि—ततस्तदनन्तरं खलु तदुद्यानशोभासु खानुभवानन्तरं तौ सार्धवाहदारकौ यत्रैव स मालुकाकक्षकः पूर्वोक्त एका स्थिकफलानां वृक्षविशेषाणां काननं वर्तते तत्रैव 'पहारेत्थ गमणाए' प्राधार यतां

मनुष्य बाहिर रहे हुए मनुष्यों की दृष्टि में न आवे किन्तु बाहिर मनुष्य उन भीतर में रहे हुए मनुष्यों को दिखलाई पड़ते रहे ऐसे घरों में—(कुसुमघरएसु य) पुष्प गृहों (उज्जाणसिरि पञ्चणुभवमाणा विहरन्ति) देवदत्ता के साथ २ उद्यानश्री का निरीक्षण करता हुआ आनंद भोग करते हुए विचरते रहे । सूत्र १० ॥

'तएणं ते सत्थवाहदारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) वे दोनों सार्धवाह दारक (जेणेव मालुयाकच्छए) जहां वह मालुका कच्छ था (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) उस ओर जानेके लिये उत्कंठित हुए (तएणं सा वणमऊरी ते

ओवा धरोमां डे जेमनी अंदर भेटेला भाणुसोने सारी पेटे जेध थके यलु जडारना भाणुसो अंदरना भाणुसोने जेधन थके, (कुसुमघरएसु य) पुष्प गृहोमां, (उज्जाणसिरि पञ्चणुभवमाणा विहरन्ति) उद्याननी शोभा जेत्या देवदत्तानी साथे सुख अनुभवता विचरता रह्या ॥सूत्र १०॥

'तएणं ते सत्थवाह-दारगा' इत्यादि ।

टीकार्थ—(त एणं) त्पारणाद (ते सत्थवाह दारगा) अने सार्धवाह पुत्रे (जेणेव से मालुया कच्छए) जे तरक्ष भावुका कच्छ हतो. (तेणेव पहारेत्थ गमणाए)

ટાકા—‘તણં તે’ તતસ્તદનન્તરં—મયૂર્વા ઉર્ઘ્યનાન્તરં તો સાર્થવાહ-
દારકો અન્યોડન્યં=પરસ્પરં શબ્દયતઃ=પ્રાપ્યતઃ=સંમુક્ષી કૃત્તઃ ‘સદ્વાચિતા’
શબ્દયિત્વા=અન્યોન્યમાહૃય વક્ષ્યમાણપ્રકારેણાવાદિષ્ટામ્ ‘જઠાણં’ યથા શ્વલુ
દેવાનુપ્રિય ! ણયા વનમયૂરી આવામેજમાનો આગચ્છન્તો દદ્ધા ચ ભીતા, ત્રસ્તા,
ત્રસિતા, ઉદ્વિગ્ના પલાયિતા—સ્વસ્થાનં ત્યક્ત્વાડન્યસ્થાનં ગતા મહતા શબ્દેન
કેકારવં મુઠ્ઠવન્તી મતી યાવદાવાં માલુકાકચ્છકં ચ પુનઃ પુનઃ પ્રેક્ષમાણી
તિષ્ઠતિ ‘તં’ તત્—તસ્માત્ ‘મવિચય્વં’ મવિતવ્યમ્ ‘પથ’ અત્ર કેનાપિ કાર-

‘તણં તે સત્થવાહદારગા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(તણં) इसके बाद (ते सत्थवाहदारागा) उन दोनों सार्थवाह
दारगोंने (अन्नमणं सदावेति) परस्पर में विचार किया बानचीन की (सदा-
विता) बातचीत कर के (एवं वयासी) फिर वे इस प्रकार करने लगे—
(जठाणं देवाणुप्पिया ! एसा वणमज्जरी अम्हे एज्जमाणा पासित्ता भीया
तत्था तसिया उद्विगगा पलाया महया २ सदेणं जाव अम्हे मालुयाक
च्छयं च पेच्छमाणी २ चिद्धइ) जिस कारण हे देवानुप्रिय ! यह वनमयूरी
हम लोगों को आता हुआ—देखकर भयभीत, त्रस्त और त्रसित होकर
उद्विग्न बनी और यहां से उड़ गई—उड़ती २ उसने बड़े जोर २ से के-
कारव किया—और इस मालुकाकच्छक से बाहर होकर एक वृक्ष की
डाल पर बैठी २ यह हम लोगों की ओर और मालुकाकच्छक की ओर
घार २ देख रही है (तं मवियव्वं पथ कारणेणं त्तिरुहु मालुयाकच्छयं अंतो
अणुपविसंति) तो इसमें कोई न कोई कारण अवश्य होना चाहिये—ऐसा

‘તણં તે સત્થવાહ દારગા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—(તણં) त्याख्याद (ते सत्थवाह दारागा) अने सार्थवाह पुत्रोअ
(अन्नमणं सदावेति) अक्षणीन साथे बातो करी (सदाविता) बातचीत करीने
(एवं वयासी) तेअो कडेवा लाअ्या (जठाणं देवाणुप्पिया ! एसा वणमज्जरी अम्हे
एज्जमाणा पासित्ता भीया तत्था तसिया उद्विगगा पलाया महया २ सदेणं जाव
अम्हे मालुयाकच्छयं च पेच्छमाणी २ चिद्धइ) डे देवानुप्रिय ! आ देल आपणुने
आपता नेधने लयलीत संत्रस्त, त्रसित, अने व्याकुल थधने अड्डीथी डडी, अने
न्यारे ने डडी त्यारे तेणु मोटा अवाजे डेकारव क्यो. अने ते मालुकाकच्छनी गडार
नीकणीने अक आङनी शाभा उपर बेसी गछ छि अने त्यांथी पणु ते आपणुने अने
मालुकाकच्छने बारबार नेध रही छि. (तं मवियव्वं पथ कारणेणं त्तिरुहु मालुया
कच्छयं अंतो अणुपविसंति) तो अनी पाछण कंधने कंध रहस्य थोअस डोपु

मालुकाकक्षकं च 'अणिमिसाए' अनिमेषया निश्चलया 'दिट्ठीए' दृष्ट्या 'पेहमाणी २' प्रेक्षमाणी २-पुनः पुनः पश्यन्ती 'चिद्ध' तिष्ठति ॥ सू० ११॥

भूलू—तएणं ते सत्थवाहदारगा अण्णमण्णं सदावेत्ति सदावित्ता : एवं वयासी जहाणं देवानुप्पिया ! एसा वणमऊरी अम्हे एज्जमाणा पासित्ता भीया तत्था तसिया उव्विग्गा पलाया महया महया सद्देणं जाव अम्हे मालुया कच्छयं च पेच्छमाणी रचिट्ठइ, तं भयियव्वमेत्थ कारणेणं त्तिक्क मालुयाकच्छयं अंतो अणुपविसंति अणुपविसित्ता तत्थ दो पुढे परियागये जाव पासित्ता अब्रमन्नं सदावेत्ति, सदावित्ता एवं वयासी-सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमे वणमऊरी अंडए साणं २ जाइमंताणं कुक्कुडियाणं अंडएसुअ पक्खिवावित्तए तएणं ताओ जाइमंताओ कुक्कुडियाओ एए अंडए सएणं पक्खिवाएणं सारक्खमाणीओ संगेवेमाणीओ विहरिस्संति, तएणं अम्हं एत्थं दो कीलामणगा मऊरीपोयगा भविस्संतित्ति कहुं अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणति, पडिसुणित्ता सए सए दासवेडए सदावेत्ति सदावित्ता एवं वयासी गच्छह णं तुव्वमेदेवाणुप्पिया ! इमे अंडए गहाय सयाणं जाइमंताणं कुक्कुडीणं अंडएसु पक्खिवह जाव-तेवि पक्खिवेत्ति ॥ सू. १२॥

वृक्ष की डाल पर जाकर बैठ गई और बैठी २ वहीं से उन दोनों सार्थवाहदारकों को और मालुका कक्षक की ओर बार बार अनिमिष दृष्टि से देखने लगी । सूत्र । ११ ।

એક આડની શાખા ઉપર બેસી ગઈ, અને ત્યાંથી જ તે બંને સાર્થવાહોને તેમજ માલુકા કચ્છની તરફ વારંવાર એકી નજરે બોલા લાગી. ॥સૂત્ર ૧૧॥

टाका—‘तएणं ते’ ततस्तदनन्तरं—प्रयुषा उर्ध्वयनान्तरां तौ सार्धवाह-
दारकां अन्योऽन्ये=परस्परं शब्दयतः=भावयतः=संमुखी कुरुतः ‘सद्वाविता’
शब्दयित्वा=अन्योन्यमाहूय वक्ष्यमाणप्रकारेणावादिष्टाम् ‘जहाणं’ यथा खलु
देवानुप्रिय ! एषा वनमयूरी आवामेवमानौ आगच्छन्तौ दष्टा च भीता, व्रस्ता,
व्रसिता, उद्विग्ना पञ्चायिता—स्वस्थानं त्यक्त्वाऽन्यत्स्थानं गता महता शब्देन
केकारवं मृच्छन्ती मती यावदावां मालुकाकच्छकं च पुनः पुनः प्रेक्षमाणी
तिष्ठन्ति ‘तं’ तत्-तस्मात् ‘भवियच्च’ भवितव्यम् ‘एत्थ’ अत्र केनापि कार-

‘तएणं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) इसके बाद (ते सत्थवाहदारगा) उन दोनों सार्धवाह
दारगोंने (अन्नमणं सद्वावेति) परस्पर में विचार किया वानच्चीन की (सद्वा-
विता) वातचीत कर के (एवं वयासी) फिर वे इस प्रकार कहने लगे—
(जहाणं देवाणुप्पिया ! एसा वणमऊरी अम्हे एज्जमाणा पासित्ता भीया
तत्था तसिया उद्विग्गा पलाया महया २ सहेणं जाव अम्हे मालुयाक
कच्छयं च पेच्छमाणी २ चिट्ठइ) जिस कारण हे देवानुप्रिय ! यह वनमयूरी
हम लोगों को आता हुआ—देखकर भयभीत, व्रस्त और व्रसित होकर
उद्विग्न बनी और यहां से उड़ गई—उड़ती २ उसने बड़े जोर २ से के-
कारव किया—और इस मालुकाकच्छक से बाहर होकर एक वृक्ष की
डाल पर बैठी २ यह हम लोगों की ओर और मालुकाकच्छक की ओर
घार २ देख रही है (तं भवियच्च एत्थ कारणेणं त्तिरुद्दु मालुयाकच्छयं अंतो
अणुपविसंति) तो इसमें कोई न कोई कारण अवश्य होना चाहिये—ऐसा

‘तएणं ते सत्थवाहदारगा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(तएणं) त्यागणा (ते सत्थवाहदारगा) उनके सार्धवाह पुत्रोच्चे
(अन्नमणं सद्वावेति) ऐकशील साथे बातें करी (सद्वाविता) वातचीत करीने
(एवं वयासी) तेओ कहेवा लाओ (जहाणं देवाणुप्पिया ! एसा वणमऊरी अम्हे
एज्जमाणा पासित्ता भीया तत्था तसिया उद्विग्गा पलाया महया २ सहेणं जाव
अम्हे मालुयाकच्छयं च पेच्छमाणी २ चिट्ठइ) हे देवानुप्रिय ! आ देख आपणुने
आपता नेछने लयलीत संव्रस्त, व्रसित, अने व्याकुल थछने अडीथी डडी, अने
न्यारे ने डडी त्यारे तेछु मोटा अवाले डेकारव कथे अने ते मालुकाकच्छनी गडार
नीकणीने ऐक आङनी शाणा उपर भेसी गछ छे अने त्यांथी पणु ते आपणुने अने
मालुकाकच्छने वारंवार नेछ रही छे. (तं भवियच्च एत्थ कारणेणं त्तिरुद्दु मालुया
कच्छयं अंतो अणुपविसंति) तो ऐनी पाछण कंधेने कंधे रहस्य बोझस डोवुं

मालुकाकक्षकं च 'अणिमिसाए' अनिमेषया निधलया 'दिहीए' दृष्ट्या
'पेहमाणी २' प्रेक्षमाणी २-पुनः पुनः पश्यन्ती 'चिद्द' तिष्ठति ॥४०॥ ११॥

भूलम्—तएणं ते सत्थवाहदारगा अणमणं सदावेति
सदावित्ता एवं वयासी जहाणं देवानुप्पिया ! एसा वणमऊरी अम्हे
एजमाणा पासित्ता भीया तत्था तसिया उव्विग्गा पलाया महया
महया सदेणं जाव अम्हे मालुया कच्छयं च पेच्छमाणी रचिट्ठइ, तं
भयिव्वमेत्थ कारणेणं त्तिक्क मालुयाकच्छयं अंतो अणुपविसंति
अणुपविसित्ता तत्थ दो पुढे परियागये जाव पासित्ता अन्नमन्नं
सदावेति, सदावित्ता एवं वयासी-सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं
इमे वणमऊरी अंडए साणं २ जाइमंताणं कुकुडियाणं अंडएसुअ
पक्खिवावित्तए तएणं ताओ जाइमंताओ कुकुडियाओ एए अंडए
सएणं पक्खिवाएणं सारक्खमाणीओ संगेवेमाणीओ विहरिस्संति,
तएणं अम्हं एत्थं दो कीलामणगा मऊरीपोयगा भविस्संतित्ति कहुं
अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणति, पडिसुणित्ता सए मए दासचेडए
सदावेति सदावित्ता एवं वयासी गच्छह णं तुव्वेदेवाणुप्पिया ! इमे
अंडए गहाय सयाणं जाइमंताणं कुकुडीणं अंडएसु पक्खिवह जाव-
तेवि पक्खिवेति ॥सू. १२॥

दृक्ष की डाल पर जाकर बैठ गई और बैठी २ वही से उन दोनों
सार्थवाहदारकों को और मालुका कक्षक की ओर बार बार अनिमिष
दृष्टि से देखने लगी । सूत्र । ११ ।

એક આડની શાખા ઉપર બેસી ગઈ, અને ત્યાંથી જ તે બંને સાર્થવાહીને તેમજ
માલુકા કક્ષકની તરફ વારંવાર એકી નજરે બોલા લાગી ॥સૂત્ર ૧૧॥

स्थाने स्वगृहे एवं अ(नेन प्रकारेण) 'दो कीलावणगा' द्वौ क्रीडनकौ-क्रीडा कारकौ द्वौ मयूरपोतकौ मयूरीशावकौ भविष्यत इति कृत्वा-इति विचार्य, अन्योऽन्यस्यैतमर्थं प्रतिश्रुणुतः मनसि धोरयतः, प्रतिश्रुत्य 'सए सए' स्वकान् स्वकान्-दासचेष्टकान् शब्दयतः शब्दयित्वा चैवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादिष्टाम् हे देवानुप्पियाः गच्छत स्खलु यूयं इमे-एने अण्डके मयूरी अण्डके गृहीत्वा स्वकानां जातिमतीनां कुक्कुटीनामण्डकेषु प्रक्षिपत, इति वचनं श्रुत्वा यावत्ते दासा अपि तथैवाण्डके प्रक्षिपन्ति ॥ सू. १२ ॥

वाली हम दोनों की कुक्कुटिकाएं उन हम लोगों के द्वारा लाये हुए मयूरी के अंडों की अपने २ अंडों की रक्षा तथा उनकी परकृत उपद्रवों से प्रतिपालना करती हुई रक्षा और प्रतिपालना करलेगी। (तएणं अम्हं एत्थं दो कीलामणगा मऊरपोयगा भविस्संति तिकट्टु अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेति) इस प्रकार हम लोगों के अपने २ घर पर दो क्रीडा कारक मयूरी पोत (वच्चे) हो जावेंगे ऐसा विचार कर उन दोनोंने आपसमें एक दूसरे का विचार स्वीकार कर लिया (पडिसुणिच्चा सए सए दासचेडए सदावेति) स्वीकार कर फिर उन्होंने अपने २ नौकरों को बुलाया (सदा-वित्ता एवं वयासी) बुलाकर ऐसा कहा—(गच्छहं तुम्हे देवानुप्पिया !) हे देवानुप्पियो ! तुम लोग जाओ और (इमे अण्डए गहाय सयाणं जाइमंताणं कुक्कुडीणं अण्डएसु पक्खिवह जाव ते वि पक्खिवेति) इन मयूरी के दोनों अंडोंको ले जाकर अपनी २ जातीवाली कुक्कुटिकाओं के अंडों में रख दो। इस प्रकार के उनके कथन को सुनकर " यावत् उन दासोंने भी उस तरह उन दोनों अंडों को ले जाकर उन कुक्कुटिकाओं के अंडों में रख दिया ॥ सू. १२ ॥

गडारना उपद्रवोत्थी वक्ष्य करती देखना छ'अनु' पक्ष वक्ष्य करशे अने पालन पोषण करशे (तएणं अम्हं एत्थं दो कीलामणगा मऊरपोयगा भविस्संति तिकट्टु अन्नम-न्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेति)आ रीते आपण्णु जनेनां धरोमां डीडमयूरना जय्याओ थध जये, आभ तेओ जने ओक णीजना विचारोत्थी सहमत थया. (पडिसुणिच्चा सए सए दासचेडए सदावेति) सहमत थधने तेओओ पोतपोताना नोकराने ओलाव्या (सदावित्ता एवं वयासी) ओलावीने आ प्रमाणु कहुं (गच्छहं तुम्हे देवानु-प्पिया !) हे देवानुप्पियो ! तमे जयेओ अने (इमे अण्डए गहाय सयाणं जाइमंताणं कुक्कुडीणं अण्डएसु पक्खिवह जाव ते वि पक्खिवेति) आ देखना जने छ'अने, आभारी भरधीओना छ'अओनी वच्चे भूझी हो. आ रीते तेभनी वात सांखणीने नोकराओ जने छ'अने लधने सार्थबाहु पुत्रीनी भरधीओना छ'अओनी वच्चे भूझी दीधां सू. १२५

વિનશ્યન્તીત્યર્થઃ, एवं 'परित्ता जीवयणा उपपज्जित्ता उपपज्जित्ता निलीयन्ति' परीताः असंख्याताः प्रत्येकशरीराः अतीतानागत सन्तानानपेक्षया वा संक्षिप्ताः जीवयणाः उत्पद्य उत्पद्य निलीयन्ते विनश्यन्ति । अनेन असंख्यातप्रदेशात्मके लोके अनन्तानां रात्रि दिवानाम्, परीतानाम् असंख्यातानां च रात्रिदिवानां समावेशो भवतीति सिद्धम् । यतोऽनन्त-परीतजीवसम्बन्धात् कालविशेषा अपि अनन्ताः, परीताश्च व्यपदिश्यन्ते अतः असंख्यातप्रदेशात्मके लोके अनन्तानाम् असंख्यातानां च रात्रि दिवानां कथं समावेशो भवतीति विरोधोऽपि परिहृतो भवति । अथ लोकमेव स्वरूपतः प्रतिपादयति- 'से णूणं भूए, उप्पन्ने, विगए, परिणए, अजीवेहिं लोकइ, पल्लोकइ' स लोकः नूनं निश्चितं भूतः, यत्र जीवयणा-

કહા છે । (પરિત્તા જીવયણા ઉપ્પજ્જિત્તા ઉપ્પજ્જિત્તા નિલીયન્તિ) પરીત-અસંખ્યાત-પ્રત્યેક શરીર કી અપેક્ષા કે અસંખ્યાત જીવયન, અથવા અતીત અનાગત સન્તાન કી અપેક્ષા સે સંક્ષિપ્ત જીવયન ઉત્પન્ન હો હો નષ્ટ હોતે હિં । હસ કારણ અસંખ્યાતપ્રદેશાત્મક લોક મેં અનન્તરાતદિનોં કા સમાવેશ હો જાતા હે યહ વાન સિદ્ધ હો જાતી હે । ક્યોં કિ અનન્ત ઓર પરીત જેસે જીવોં કે સમ્બન્ધ સે કાલવિશેષ ખી અનન્ત ઓર પરીત હસ રૂપ સે કહે જાતે હિં । અતઃ અસંખ્યાત પ્રદેશાત્મક હસ લોક મેં અનન્ત ઓર અસંખ્યાત રાતદિનોં કા સમાવેશ કેસે હો સકતાં હે જેસા વિરોધ ખી પરિહત્ત હો જાતા હે । અથ સૂત્રકાર સ્વરૂપ કી અપેક્ષા લેકર લોક કા હી પ્રતિપાદન કરતે હિં-(સે ણૂણં ભૂએ ઉપ્પન્ને, વિગએ,

સૂક્ષ્માદિ સાધારણ શરીરોને અનુલક્ષીને અથવા અવસન્તતિની સપર્થવસાનતાને અનુલક્ષીને કરાયેલ છે. તથા અવ જ્ઞાનાદિક અનંત પર્યાયોના સમુદાય રૂપ છે, અથવા અસંખ્યાત પ્રદેશોના એક પિન્દરારૂપ છે, તેથી તેને “અવયન” કહેલ છે. (પરિત્તા જીવયણા ઉપ્પજ્જિત્તા ઉપ્પજ્જિત્તા નિલીયન્તિ) પરીત-અસંખ્યાત-પ્રત્યેક શરીરની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત અવયન, અથવા અતીત અનાગત સાન્તતાની અપેક્ષાએ સંક્ષિપ્ત અવયન ઉત્પન્ન થઈ થઈને નષ્ટ થયાં કરે છે. આ કારણે અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળા લોકમાં અનંત રાત્રિદિવસનો સમાવેશ થઈ જાય છે, એ વાત સિદ્ધ થઈ જાય છે. કારણ કે અનંત અને પરીત એવાં અવેશના સંબંધથી કાળવિશેષને પણ અનંત અને પરીત રૂપે સ્વીકારી શકાય છે. આ રીતે “અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળા આ લોકમાં અનંત અને અસંખ્યાત રાત્રિદિવસોનો સમાવેશ કેવી રીતે થઈ શકે” એવી જે વિરોધાત્મક શંકા બતાવવામાં આવી છે, તેનું પણ સમાધાન થઈ જાય છે. હવે સૂત્રકાર સ્વરૂપની અપેક્ષાએ લોકનું પ્રતિપાદન કરે છે-“સે ણૂણં ભૂએ ઉપ્પન્ને, વિગએ,

ઉત્પન્ન ઉત્પન્ન વિલીયન્તે સ લોકો ભૂતઃ ભવનધર્મયોગાન્ સદ્ભૂતઃ, સ ચ ભૂતઃ
અનુત્પત્તિકોઽપિ સ્પાત્ પથા નયમતેન ગગનમ્, અત આદ-ઉત્પન્નઃ-ઉત્પાદયુક્તઃ,
ઉત્પન્નથ ઘટાભાવયત્ અવિનશ્વરોઽપિ સ્પાત્ અત આદ-વિગતઃ-વિનશ્ટઃ વિનાશ-
યુક્તઃ, વિગતથ નિરન્વયોઽપિ ભવતિ અત આદ-પરિણતઃ, પર્યાયાન્તરાખ્યાષ્ઠનઃ, ન
તુ નિરન્વયનાશ નષ્ટઃ । અથ તસ્યૈવંવિધસ્ય લોકસ્ય નિશ્ચયાર્થમાદ-અર્જીવૈઃ

પરિણ, અર્જીવેહિં લોકદ્વ, પલોકદ્વ) જહાં પર પાર ૨ જીવધન ઉત્પન્ન
હો હોકર નષ્ટ હોતે રહતે હેં એસા વહ લોક ભવનધર્મ કે યોગ સે સદ્
■ ભૂતસ્વરૂપ હૈ-અસદ્ભૂતરૂપ નહીં હું અર્થાત્ દ્રવ્ય કા લક્ષણ ઉત્પાદ વ્યય
ઔર ધ્રોવ્યાત્મક માના ગયા હૈ લોક ભી એક દ્રવ્ય હૈ-અતઃ યહ ભી
ઉત્પાદ વ્યય ઔર ધ્રોવ્ય લક્ષણ ચાલા હૈ-યહી વાત સૂત્રકાર ને (ભૂત
ઉત્પન્ને વિગત) ઇન પદોં દ્વારા પ્રકટ કી હૈ-ભૂતપદ સે સૂત્રકાર ને લોક
મેં ધ્રોવ્ય ધર્મ પ્રકટ કિયા હૈ જો પદાર્થ અનુત્પન્ન હોતા હૈ વહ ભી નૈયા-
યિકમતમેં આકાશકી તરહ ભૂતધર્મવાલા હોતા હૈ-સો લોક પદાર્થ એસા
ભૂત ધર્મવાલા નહીં હૈ કિન્તુ વહ (ઉત્પન્ને) ઉત્પત્તિ ધર્મવાલા-ઉત્પાદ-
ધર્મવાલા હૈ-જો ઉત્પાદ ધર્મવાલા હોતા હૈ વહ ઘટાભાવ અર્થાત્ ઘટપ્ર-
ધ્વંસાભાવ કી તરહ અવિનશ્વર ભી હોતા હૈ-અતઃ યહ લોકપદાર્થ એસા
નહીં હૈ, કિન્તુ (વિગત) વિનાશ-વ્યય-ધર્મ વાલા હૈ જો વિનાશધર્મ-
યુક્ત હોતા હૈ વહ નિરન્વય ભી હોતા હૈ-અર્થાત્ વિનાશ કો નિરન્વય

પરિણ, અર્જીવેહિં લોકદ્વ, પલોકદ્વ ” ત્યાં વારંવાર જીવધન ઉત્પન્ન થઇ થઇને
નાશ થયા કરે છે એવો આ લોક ભવનધર્મથી યુક્ત હોવાને કારણે સદ્ભૂત
સ્વરૂપ છે. પણ અસદ્ભૂત-સ્વરૂપ નથી. એટલે કે દ્રવ્યનું લક્ષણ ઉત્પાદ, વ્યય
અને ધ્રોવ્યાત્મક મનાય છે લોક પણ એક દ્રવ્ય છે, તેથી તે પણ ઉત્પાદ,
વ્યય અને ધ્રોવ્યના લક્ષણવાળો છે. એજ વાત સૂત્રકારે “ ભૂત ઉત્પન્ને વિગત ”
છત્યાદિ પદો દ્વારા પ્રકટ કરી છે. ‘ ભૂત ’ પદથી સૂત્રકારે લોકમાં ધ્રોવ્ય ધર્મ
પ્રકટ કર્યો છે. જે પદાર્થ અનુત્પન્ન હોય છે તેને પણ નૈયાયિક મતાનુસાર
ભૂત-ધર્મવાળો કહ્યો છે, જેમકે આકાશને નૈયાયિક મત પ્રમાણે ભૂતધર્મવાળું
કહ્યું છે. પરંતુ લોકપદાર્થ આકાશના જેવા ભૂતધર્મવાળો નથી, તે તો
“ ઉત્પન્ને ” ઉત્પત્તિ ધર્મવાળો (ઉત્પાદ ધર્મવાળો) છે. ઉત્પાદ ધર્મવાળો
પદાર્થ ઘટાભાવ (ઘટપ્રધ્વંસાભાવ) ની જેમ અનિશ્ચર પણ હોઈ શકે છે,
પરંતુ આ લોકપદાર્થ એવો નથી, આ લોક તો “ વિગત ” વિનાશ (વ્યય)
ધર્મવાળો છે. વિનાશ ધર્મયુક્ત પદાર્થ નિરન્વય પણ હોઈ શકે છે (ખીદ
મતની આ પ્રકારની માન્યતા છે.) પરંતુ આ લોક નિરન્વય વિનાશથી

પુદ્ગલાદિભિઃ, જીવૈશ્વ સત્તાં ધારયદ્ભિઃ, ઉત્પન્નમાનૈઃ, વિનશ્યદ્ભિઃ, પરિણમદ્ભિશ્ચ
લોકાનન્યભૂતૈઃ લોક્યતે-નિશ્ચીયતે, પ્રલોભ્યતે પ્રકર્ષેણ નિશ્ચીયતે ભૂતાદિધમ-
કોડયં લોક ઇતિ વિનીશ્યતે, અતઃ પચાન્વર્થતયા યથાર્થસંજ્ઞકોડસો ઇતિ દર્શયતિ
-‘ જે લોકકહ સે લોપ ? ’ યો લોક્યતે પ્રમાણેન સ લોકઃ પશ્ચાસ્તિકાયાત્મક

પૌદ્વોં ને સ્વીકાર ક્રિયા હૈ-એસે નિરન્વયવિનાશ સે યુક્ત યહ લોક નહીં
હૈ, કિન્તુ (પરિણા) યહ લોક વિનાશ ધર્મવાલા હોકર મી અપને
મૂલરૂપ સે નષ્ટ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ પર્યાયાન્તરોં કો પ્રાપ્ત કરતા રહતા
હૈ જો નિરન્વયનાશ ધર્મવાલા હોતા હૈ વહ અપને મૂલરૂપ સે મી નષ્ટ
હો જાતા હૈ ઓર જય વહ મૂલરૂપ સે હી નષ્ટ હો જાતા હૈ-તવ પર્યાયા-
ન્તરોં કો પ્રાપ્ત કૌન કર સકતા હૈ અતઃ યહ લોક એસા નહીં હૈ, કિન્તુ
પર્યાયાન્તરોં કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ અતઃ નિરન્વયનાશ ધર્મયોગી નહીં હૈ ।
હસ પ્રકાર કે લોક કા નિશ્ચય કેસે હોતા હૈ તો હસકે લિયે સૂત્રકાર
કહતે હૈ કિ-(અજીવેહિં લોકકહ પરલોકકહ) સત્તા કો ધારણ કરનેવાલે
-ધ્રૌવ્યરૂપ-ઉત્પાદ ધર્મવાલે, વિનાશ ધર્મવાલે, પરિણમનશીલ ઓર
લોક સે અનન્યભૂત-અભિન્ન-એસે અજીવ પુદ્ગલોં સે તથા જીવોં સે હસ
લોક કા નિશ્ચય ક્રિયા જાતા હૈ તથા યહ લોક ભૂતાદિ ધર્મવાલા હૈ
એસા પ્રકર્ષરૂપ સે નિશ્ચય ક્રિયા હૈ હસલિયે હસકા લોકએસા નામ
સાર્થક હૈ હસ વાત કો દિશાતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ (જે લોકકહ

નથી, “ પરિણા ” આ લોક વિનાશ ધર્મવાળો હોવા છતાં પણ પોતાના મૂળ
રૂપમાંથી નાશ પામતો નથી, પણ અન્ય પર્યાયોને (પર્યાયાન્તરોને) પ્રાપ્ત
કરતો રહે છે. નિરન્વયનાશ ધર્મવાળો પદાર્થ તો પોતાના મૂળ રૂપમાંથી પણ
નષ્ટ થઈ જાય છે, આ રીતે મૂળ રૂપનો નાશ પામ્યા પછી અન્ય પર્યાયો
પ્રાપ્ત કરવાની વાત જ સંભવી શકતી નથી આ લોક તો પર્યાયાન્તરોને પ્રાપ્ત
કરતો રહે છે, તેથી તે નિરન્વયનાશ ધર્મવાળો નથી. આ પ્રકારનો લોક છે
એનો નિશ્ચય કેવી રીતે કરી શકાય છે ? સૂત્રકાર હવે એજ પ્રશ્નનું નીચેનાં
સૂત્રો દ્વારા સમાધાન કરે છે. (અજીવેહિં લોકકહ પરલોકકહ) સત્તાને ધારણ
કરનારા-ધ્રૌવ્યરૂપ (ઉત્પાદ ધર્મવાળાં,) વિનાશ ધર્મવાળા, પરિણમનશીલ અને
લોકથી અલિન્ન એવાં અણવ પુદ્ગલોથી તથા છવોથી આ લોકનો નિશ્ચય
કરી શકાય છે, તથા આ લોક ભૂતાદિ ધર્મવાળો છે એવો પ્રકર્ષરૂપે નિશ્ચય
કરી શકાય છે. તેથી તેનું “ લોક ” એવું નામ સાર્થક છે. એજ વાતનું પ્રતિ-
પાદન કરતા સૂત્રકાર કહે છે-“ જે લોકકહ સે લોપ ” એને પ્રમાણ દ્વારા

મગનલ્ખંડો લોકપદવાચ્યઃ, ઇતિ સત્યં કિમ્ ? તતઃ ઉક્તરીત્યા લોકસ્વરૂપાઽભિ-
ધાયકપાર્શ્વજિનવચનસંસ્મરણદ્વારા મગવાન્ સ્વવચનં સમર્થિતવાનિતિ ' સ્થવિરા
આહુઃ ' હંતા, મગવં ' હેમદન્ત ! હન્ત, સત્યં ભવતા યદ્ લોકસ્વરૂપં પ્રતિપાદિતં
તત્ સર્વથા સત્યમેવેત્યર્થઃ ।

મગવાનાહ-‘ સે તેણદ્દેણં અજ્ઞો ! एवं घुच्चइ-असंखेज्जे तं चेव ’ हे आर्या !
સ્થવિરા ! તત્ તેનાર્થેન તસ્માદ્દેતોઃ एवम् ઉક્તરીત્યા ઉચ્યતે-અસંખયેયે લોકે
તદેવ પૂર્વવદેવ અનન્તાનિ રાત્રિદિવાનિ પરીતાનિ ચ ઉદ્પદ્યન્ત ’ ઇત્યાદિ વોધ્યમ્
‘ તપ્પમિહં ચ ણં તે પાસાવચ્ચેજ્ઞા થેરા મગવંતો સમણં મગવં મહાવીરં ’ સઘ્વન્નૂ
સે લોણ) જો પ્રમાણ કે દ્વારા ચિલોકિત કિયા જા સકે ઉસકા નામ
લોક હૈ યહ લોક મગન કા પંચાસ્તિકાય રૂપ ઇક લખંડ હૈ કહો આર્યો
યહ યાત સત્ય હૈ ન ? હિસ પ્રકાર પાર્શ્વનાથ મગવાન કે લોકસ્વરૂપ કે
અભિધાયક વચનોં કો યાદ કરાકર મગવાન્ ને અપને વચનોં કો સમ-
ર્થન કિયા તથ સ્થવિરોં ને (હંતા મગવં) હાં મગવાન્ ! એસા હી હૈ-
અર્થાત્ આપને જો લોક કે સ્વરૂપ કા પ્રતિપાદન કિયા હૈ વહ સર્વથા
સત્ય હી હૈ એસા કહા-તથ પ્રભુ ને ડનસે (સે તેણદ્દેણં અજ્ઞો एवं घुच्चइ
असंखेज्जे तं चेव) એસા કહા કિ હે આર્યો ! હસી કારણ મૈને એસા
કહા હૈ કિ અસંખ્યાત લોક મેં અસંખ્યાત ઓર અનંત રાત્રિદિન ઉત્પન્ન
હુણ હૈ, ઉત્પન્ન હોતે હૈ ઓર આગે બી ઉત્પન્ન હોતે રહેંગે ઇત્યાદિ સવ
કથન યહાંપર પૂર્વોક્ત રૂપ સે લગાહેના ચાહિયે । (તપ્પમિહં ચ ણં તે
પાસાવચ્ચેજ્ઞા થેરા મગવંતો સમણં મગવં મહાવીરં સઘ્વન્નૂ સઘ્વદરિસી

વિદ્વાદી શકાય (જોઈ શકાય) છે, તેનું નામ જ લોક છે. આ લોક મગનને
(આપાશને) પંચાસ્તિકાય રૂપ એક ખંડ છે. “ કહો આર્ય ! આ વાત સત્ય
છે ને ? ” આ પ્રમાણે પાર્શ્વનાથ ભગવાનના લોક-સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરનારાં
વચનોને યાદ કરાવીને બ્યારે ભગવાન મહાવીરે પોતાનાં વચનોનું સમર્થન
કયું, ત્યારે સ્થવિરોએ કહ્યું “ હંતા મગવ ” હા, ભગવાન ! એવું જ છે.
એટલે કે લોકના સ્વરૂપનું આપે જે પ્રતિપાદન કયું છે તે સર્વથા સત્ય છે.
ત્યારે મહાવીર પ્રભુએ તેમને કહ્યું-(સે તેણદ્દેણં અજ્ઞો ! एवं घुच्चइ, असंखेज्जं
तं चेव) હે આર્યો ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા
લોકમાં અનંત અને અસંખ્યાત રાત્રિદિવસ ઉત્પન્ન થયાં છે, ઉત્પન્ન થાય છે
અને ભવિષ્યમાં પણ ઉત્પન્ન થશે, ઇત્યાદિ સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન અહીં અંકલુ કરવું.

“ તપ્પમિહં ચ ણં તે પાસાવચ્ચેજ્ઞા થેરા મગવંતો સમણં મગવં મહાવીરં
સઘ્વન્નૂ સઘ્વદરિસી ચિ પચ્ચમિજ્ઞાણંતિ ” આ પ્રમાણે શ્રમણ ભગવાન મહા-

સર્વદર્શી ' સ્તિ પચ્ચભિજાણંતિ' તત્પ્રથુતિ તત્કાલાદારમ્પ ચ તે પાર્શ્વપત્નીયાઃ પાર્શ્વનાથશિષ્યશિષ્યાઃ સ્થવિરાઃ ભગવન્તઃ ધમણં ભગવન્તં મહાવીરં ' સર્વજ્ઞઃ, સર્વ-
દર્શી ' ઇતિ અનેન રૂપેણ પ્રત્યભિજાણન્તિ નિથિન્વન્તિ ! 'તણં તે થેરા ભગવંતો
સમણં ભગવં મહાવીરં વંદંતિ, નમંસંતિ,' તતઃ તદનન્તરં તે સ્થવિરાઃ ભગવન્તઃ
ધમણં ભગવન્તં મહાવીરં વન્દન્તે, નમસ્યન્તિ, ' વંદિત્તા, નમંસિત્તા, एवं वयासी '
વન્દિત્વા, નમસ્યિત્વા, एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादिषुः—' इच्छामो णं भंते !
तुव्मं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंच महव्वयाइं, सपडिक्कमणं धम्मं उवसंप-
ज्जित्ताणं विहरित्ताए ' हे भदन्त ! इच्छामः खलु वयं पुष्पाकम् भवताम् अन्तिके
समीपे चातुर्यामाद् धर्माद् चातुर्यामधर्मं परित्यज्येत्यर्थः पञ्चमहाव्रतानि समप्ति-

સ્તિ પચ્ચભિજાણંતિ) દસ પ્રકાર સે શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કે મુખ સે
લોકવિપયક સત્ય પ્રતિપાદન શ્રવણકર ડન પાર્શ્વપત્નીય સ્થવિરો ને
ડન શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કો સર્વજ્ઞ ઓર સર્વદર્શીરૂપ સે નિશ્ચિત
કિયા (તણં તે થેરા ભગવંતો સમણં ભગવં મહાવીરં વંદંતિ, નમંસંતિ)
તપ ડન સ્થવિર ભગવંતો ને શ્રમણભગવાન્ મહાવીર કો વંદના કી
અર્ધાત્ ગુણોકી સ્તુતિ કી ઓર ફિર ડન્હે પંચાગજીકાકર નમસ્કાર કિયા ।
(વંદિત્તા નમંસિત્તા एवं वयासी) વંદના નમસ્કાર કર ફિર ડન્હો ને
પેસા કહા (इच्छामो णं भंते ! तुव्मं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ
पंचमहव्वयाइं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्ताए) हे भदन्त !
हमलोग यह चाहते हैं कि चातुर्याम धर्म को छोड़ कर प्रतिक्रमण
सहित पंचमहाव्रतरूप धर्म को धारण करें—आदि जिन और अन्तिम

વીરને મુખેથી લોકવિપયક સત્ય પ્રતિપાદનને સાંભળીને તે પાર્શ્વપત્નીય
(પાર્શ્વનાથના પ્રશિષ્ય) સ્થવિરોએ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને સર્વજ્ઞ અને
સર્વદર્શી રૂપે નિશ્ચિત કર્યા—ત્યારથી તેઓ તેમને સર્વજ્ઞ અને સર્વદર્શી માનવા
લાગ્યા. “ તણં તે થેરા ભગવંતો સમણં ભગવં મહાવીરં વંદંતિ, નમંસંતિ ”
ત્યારણાં તે સ્થવિર ભગવંતોએ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદણા કરી ઝોટલે
કે શુભોની સ્તુતિ કરી, અને ત્યારણાં પાંચ અંગે જીકાવીને તેમણે તેમને
નમસ્કાર કર્યા. “ વંદિતા નમંસિત્તા एवं वयासी ” વંદણા નમસ્કાર કરીને તેમણે
તેમને આ પ્રમાણે કહ્યું—(इच्छामो णं भंते ! तुव्मं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ
पंचमहव्वयाइं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्ताए) हे भदन्त ! अमे
यार यामयुक्ता (यार महांव्रतोवाणा) ' धर्म'ने पहिले, आपनी समक्ष पंच
महांव्रतोने અને પ્રતિક્રમણ યુક્ત ધર્મને ધારણ કરવા માગીયે છીએ. આદિ

ક્રમણં પ્રતિક્રમણસહિતં ધર્મં ચ ઉપસંપન્ન અત્રીકૃત્ય સ્વલુ વિહર્તુ સ્પાતુમ્ 'શ્ચામઃ' શ્ચિ પૂર્વેણાન્વયઃ । તથા આદિમાન્તિમજિનયોરાદિનાથ-મહાવીરયોરેવ નિયમેના-વશ્યં કર્તવ્યઃ સપ્રતિક્રમણો ધર્મઃ, અન્યેષાં તુ મધ્યમાનાં દ્વાવિંશતિતીર્થકરાણાં કદાચિત્ક એવ સહેતુકઃ પ્રતિક્રમણધર્મઃ, ઉક્તચ્છ—

“ સપટ્ટિક્રમણો ધર્મો, પુરિમસ્સ ય પચ્છિમસ્સ ય જિણસ્સ ।

મજ્ઞિમમગાણ જિણાણં, કારણજાણ પટ્ટિક્રમણં ” ॥ ૧ ॥

“ સપ્રતિક્રમણો ધર્મઃ પૂર્વસ્ય ચ પચ્છિમસ્ય ચ જિનસ્ય ।

મધ્યમકાનાં જિનાનાં કારણજાતે પ્રતિક્રમણમ્ ” ॥ ૨ ॥

તતો મગધાનાહ—‘ અહામુહં દેવાણુપિયા ! મા પટ્ટિબંધં કરેહ ’ ઓ દેવા-નુપ્રિયાઃ ! યથામુલં યથા મુલં ભવેત્તથા ક્રિયન્તામ્, કિન્તુ પ્રતિબંધં ચિલમ્બં

જિન-આદિનાથ ઓર મહાવીર કો હી નિયમ સે પ્રતિક્રમણ સહિત ધર્મ અવશ્ય કરણીય હૈ ઓર અન્ય ૨૨ તીર્થકરોં કો ચહ પ્રતિક્રમણ અતિચોર લગને પર કરને કા હૈ-કહા હૈ કિ—

“ સપટ્ટિક્રમણો ધર્મો પુરિમસ્સ ય પચ્છિમસ્સ ય જિણસ્સ ।

મજ્ઞિમમગાણ જિણાણં કારણજાણ પટ્ટિક્રમણં ॥૧॥ ”

પ્રતિક્રમણ સહિત ધર્મ આદિજિન ઓરઅન્તિમ જિનકો હોતા હૈ ઓર મધ્ય જિનકે કારણ હોને પર પ્રતિક્રમણકિયા જાતા હૈ ।

જવ ઉન સ્થવિરોં ને એસા કહા-તથા શ્રમણ મગધાન મહાવીર ને ઉનસે કહા-‘ અહામુહં દેવાણુપિયા ! મા પટ્ટિબંધં કરેહ ’ હે દેવાણુપ્રિયો ! જૈસા આપકો રુચે વૈસા આપલોગ કરોં પરન્તુ હસ કાર્ય મેં ચિલમ્બ કરના

જિન (આદિનાથ ભગવાન) અને અન્તિમ જિન (મહાવીર ભગવાન) ને નિયમથી જ પ્રતિક્રમણ યુક્ત ધર્મ અવશ્ય કરવા યોગ્ય છે, એ સિવાયના ૨૨ તીર્થકરોને ક્યારેક કારણસર જ પ્રતિક્રમણ સહિત આવશ્યક યોગ્ય છે. કહું પણ છે:—

“ સપટ્ટિક્રમણો ધર્મો પુરિમસ્સ ય પચ્છિમસ્સ ય જિણસ્સ ।

મજ્ઞિમમગાણ જિણાણં કારણજાણ પટ્ટિક્રમણં ” ॥ ૧ ॥ ”

પ્રતિક્રમણ સહિત ધર્મ પહેલા જીન તથા છેલ્લા જીન ભગવાનને આદ્ય થાય છે અનેમધ્યમ જીનને કોઈ પણ કારણ હોય તેજ પ્રતિક્રમણ કરાય છે.

અ્યારે તે સ્થવિરોએ આ પ્રમાણે કહું ત્યારે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે તેમને કહું-(અહામુહં દેવાણુપિયા ! મા પટ્ટિબંધં કરેહ) હે દેવાણુપ્રિયો ! આપને જેમ મુખ ઉપરે તેમ કદે, પણ આવા કામમાં વિશ્વળ કરવો જોઈએ

ન કુસ્ત । 'તણં તે પાસાવચ્ચિજ્જા થેરા ભગવંતો જાવ-ચરમેહિં ઉસ્સાસનિસ્સા-
સેહિં સિદ્ધા' તતસ્તે પાર્શ્વપત્તીયાઃ-પાર્શ્વશિષ્યશિષ્યાઃ સ્થવિરાઃ ભગવન્તઃ યાવત્
ચરમેરુચ્છવાસ-નિઃશ્વાસૈઃ સિદ્ધાઃ સંજાતાઃ 'જાવ-સન્વદુક્ખપ્પહીણા, અત્યેગઈયા
દેવલોપ્પમુ ઉત્તન્ના' યાવત્-સર્વદુઃખપ્રહીણાઃ સર્વદુઃખરહિતાઃ અસ્ત્વેકે અવશિષ્ટ-
શુભકર્માણઃ અન્યતમાઃ કેચિદ્ સ્થવિરા દેવલોકેષુ દેવરૂપેણ ઉત્પન્નાઃ દેવાઃ સંજાતા
इत्यर्थः प्रथमयावत्करणत् संलेखनादिकं कृत्वा, इत्यादि संग्राहम् । द्वितीययाव-
त्करणत् 'बुद्धा मुक्ता परिनिर्वाता' इति संग्राहम् ॥ सू० ४ ॥

દેવલોકવક્તવ્યતા

પૂર્વ દેવલોકેષુ ઉત્તન્ના ઇત્યુક્તમ્ અતો દેવલોકં નિરૂપયિતુમાહ-'કઙ્કિવિહાણં
મંતે' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-કઙ્કિવિહાણં મંતે ! દેવલોગા પન્નત્તા ? ગોયમા!
ચડવિહાણં દેવલોગા પન્નત્તા, તં જહા-ભવણવાસી-વાણમંતર-
જોતિસિય-વેમાણિય-ભેયેણં । ભવણવાસીવાણમંતરા અટ્ટવિહાણં,

उचित नहीं है । (तणं ते पासावच्चिज्जा थेरा भगवंतो जाव चरमेहिं
उस्सासनिस्सासेहिं सिद्धा) इसके बाद वे पार्श्वपत्तीय स्थविर भग-
वन्त यावत् अंतिम श्वासों से सिद्ध हो गये (जाव सन्वदुक्खप्पहीणा)
यावत् वे समस्त दुःखों से रहित हो गये तथा कितनेक स्थविर ऐसे भी
थे कि जिनका शुभकर्म अवशिष्ट था सो वे देवरूप से देवलोकों में
उत्पन्न हो गये । यहां पहिले यावत् पद से (संलेखनादिक करके) इत्यादि
पाठ ग्रहण किया गया है और द्वितीय यावत्पद से (बुद्धा, मुक्ता, परि-
निर्वाता) ऐसा पाठ ग्रहण किया गया है ॥ सू० ४ ॥

નહીં. (તણં તે પાસાવિચ્ચિજ્જા થેરા ભગવંતો જાવ ચરમેહિં ઉસ્સાસનિસ્સા-
સેહિં સિદ્ધા) ત્યારબાદ પંચમહાવ્રતરૂપ ધર્મની સંયમ પૂર્વક આરાધના કરીને
તે પાર્શ્વનાથ ભગવાનના કેટલાક શિષ્ય સ્થવિર ભગવંતો (યાવત્) અંતિમ
શ્વાસોથી સિદ્ધપદને પામ્યા. " જાવ સન્વદુક્ખપ્પહીણા " (યાવત્) તેઓ
સમસ્ત દુઃખોથી રહિત થઈ ગયા, તથા કેટલાક સ્થવિરો એવા પણ હતા કે
જેમનાં શુભ કર્મ અવશિષ્ટ (બાકી) હતાં. એવા સ્થવિરો દેવલોકમાં દેવ-
પર્યાયે ઉત્પન્ન થયા. અહીં પહેલા " યાવત્ " પદથી " સંલેખના આદિ
કરીને " ઇત્યાદિ પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે, અને બીજા " યાવત્ " પદથી " બુદ્ધા,
" મુક્તા, પરિનિર્વાતા " આ પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે. ॥ સૂત્ર ૪ ॥

જોતિસિયા પંચવિહા, વેમાણિયા દુવિહા, ગાહા-કિમિયં રાય-
ગિહં તિ ય, ઉઝ્જોણ, અંધયાર, સમય ય પાસંતિવાસિપુચ્છા,
રાઈંદિયદેવલોગા ય, સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! તિ ॥ સૂ૦૫ ॥

છાયા-કવિચિધાઃ સ્વરુ મદન્ત ! દેવલોકાઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! ચતુર્વિધાઃ
દેવલોકાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા-ભવનવાસિ-વાનવ્યન્તર-જ્યોતિષ્ક-વૈમાનિક-ભેદેન ।
ભવનવાસિનો દશવિધાઃ, વાનવ્યન્તરાઃ અષ્ટવિધાઃ, જ્યોતિષ્કાઃ પંચવિધાઃ
વૈમાનિકા દ્વિવિધાઃ,

દેવલોક ચત્તવ્યતા-

(કહવિહા ણં) ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(કહવિહા ણં મંતે ! દેવલોગા પન્નતા) હે મદન્ત ! દેવલોક
કિતને પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં ? (ગોયમા ! ચતુર્વિહા દેવલોગા પન્નતા)
હે ગૌતમ ! દેવલોક ચાર પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં । (તં જહા) વે ઇસ
પ્રકાર સે હૈં (ભવનવાસી-વાણમંતર-જોહસિય-વેમાણિય મેણં) ભવ-
નવાસી ? વાણવ્યન્તર ૨, જ્યોતિષિક ૩, ઔર વૈમાનિક ૪ (ભવનવાસી
દસવિહા પન્નતા) ભવનવાસીદેવ દસ પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં (વાણમંતરા
અદુવિહા) વાણ વ્યન્તરદેવ આઠ પ્રકાર કે હૈં । (જોહસિયા પંચવિહા)
જ્યોતિષિક દેવ પાંચ પ્રકાર કે હૈં (વેમાણિયા દુવિહા) વૈમાનિક દેવ દો
પ્રકાર કે હોતે હૈં । (કિમિયં રાયગિહં તિ ય ઉઝ્જોણ અંધયારસમય ય,
પાસંતિ વાસિપુચ્છા રાઈંદિય દેવલોગા ય) ઇસ ઉદ્દેશક મેં પ્રતિપાદિત
વિષય કી સંગ્રહ ગાથા યહ હૈ-ઇસમેં યહ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ-કિ

દેવલોકની વસ્તુવ્યતાઃ—

“કહવિહાણ” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—(કહવિહાણં મંતે ! દેવલોગા પન્નતા ?) હે મદન્ત ! દેવ-
લોકના પ્રકાર કેટલા છે ? (ગોયમા ! ચતુર્વિહા દેવલોગા પન્નતા) હે ગૌતમ !
દેવલોક ચાર પ્રકારનાં કહ્યાં છે. (તં જહા) તે ચાર પ્રકારો આ પ્રમાણે છે—
(ભવનવાસી, વાણમંતર, જોહસિયવેમાણિય મેણં) (૧) ભવનવાસી, (૨)
વાનવ્યન્તર, (૩) જ્યોતિષિક અને (૪) વૈમાનિક એ બેદથી (ભવનવાસી દસ-
વિહા પન્નતા) ભવનવાસી દેવો દસ પ્રકારના કહ્યા છે, (વાણમંતરા અદુવિહા)
વાનવ્યન્તરો આઠ પ્રકારના કહ્યા છે, (જોહસિયા પંચવિહા) જ્યોતિષિક દેવો
પાંચ પ્રકારના કહ્યા છે અને (વેમાણિયા દુવિહા) વૈમાનિક દેવો બે પ્રકારના
કહ્યા છે (કિમિયં રાયગિહં તિ ય ઉઝ્જોણ અંધયાર સમય ય, પાસંતિવાસિ પુચ્છા
રાઈંદિય દેવલોગા ય) આ ઉદ્દેશકમાં જેનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે, એ

ગાયા—' કિમિદં રાજગૃહમિતિ ચ ઉદ્યોતોઽન્ધકારઃ સમયથ,
પાર્શ્વન્તેયાસિપૃચ્છા, રાત્રિં દિવાનિ દેવલોકાશ્ચ ॥

તદેવં ભદન્ત ! તદેવં ભદન્ત ! ઇતિ ॥ સુલ ૫ ॥

ટીકા—' કઙ્કિદા ણં મંતે ! દેવલોગા પળ્ણત્તા ' ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—હે
ભદન્ત ! કતિવિધાઃ કિયત્પકારાઃ સ્વલુ દેવલોકાઃ પ્રણ્ણાઃ કથિતાઃ ? ભગવાનાહ
—' ગોયમા ! ચત્ત્વિહા દેવલોગા પન્નત્તા ' હે ગૌતમ ! ચતુર્વિધાઃ ચતુઃપ્રકારાઃ
સ્વલુ દેવલોકાઃ પ્રણ્ણાઃ કથિતાઃ ' તં જહા મવળવાસી—વાળમંતર—જોડસિય—

“ રાજગૃહ નગર યહ કયા હૈ ? દિનમેં ડ્યોત ઓર રાત્રિમેં અંધકાર કયોં
હોતા હૈ ? સમય આદિ રૂપ કાલ કા જ્ઞાન કિન જીવોં કો હોતા હૈ ઓર
કિન જીવોં કો નહીં હોતા હૈ ? રાત્રિ ઓર દિવસ કે પ્રમાણ મેં શ્રી
પાર્શ્વનાથ જિન કેં પ્રશિષ્યોં કે પ્રશ્ન ? દેવલોક સંબંધી પ્રશ્ન ” ઇતને વિષય
હસ ઉદ્દેશક મેં આપે હૈં । (સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ) હે ભદન્ત !
આપકા કહા હુઆ ભાવ સર્વથા સત્ય હી હૈ—સર્વથા સત્ય હી હૈ ।

ટીકાર્થ—(દેવલોકોં મેં ઉત્પન્ન હુવ) એસી યાત પહિલે કહી ગઈ હૈ
—સો દેવલોક કે સ્વરૂપ કો નિરૂપણ કરને કે લિયે સૂત્રકાર યહાં પર
કહતે હૈં હસમેં ગૌતમ ને ડનસે યહ પૂછા હૈ કિ (કઙ્કિદા ણં મંતે !
દેવલોગા પન્નત્તા) હે ભદન્ત ! દેવલોક કિતને પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં ?
હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ને ડનસે કહા—(ગોયમા ! ચત્ત્વિહા દેવલોગા
પળ્ણત્તા) હે ગૌતમ ! દેવલોક ચાર પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં—મવળવાસી

વિષયની સંબંધ ગાથાનેા અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે—“ રાજગૃહ નગર કયો
પદાર્થ છે ? દિવસે પ્રકાશ અને રાત્રે અંધકાર કેમ હોય છે ? સમય આદિ-
રૂપ કાળનું જ્ઞાન કયા જીવોને હોય છે અને કયા જીવોને હોતું નથી ? રાત્રિ
અને દિવસ વિષયક શ્રી પાર્શ્વનાથ જિનેન્દ્રના પ્રશિષ્યોના પ્રશ્ન ? દેવલોક
સંબંધી પ્રશ્ન ” આટલા વિષયોનું આ ઉદ્દેશકમાં નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે.
“ સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ ” હે ભદન્ત ! આપની વાત સર્વથા સત્ય છે,
આપે આ વિષયનું બે પ્રતિપાદન કર્યું તે યથાર્થ જ છે.

ટીકાર્થ—પૂર્વ પ્રકરણનું અંતિમ વાક્ય “ દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયા ” એવું
છે. તેથી દેવલોકના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવાને માટે સૂત્રકારે નીચેના પ્રશ્નોત્તરો
આપ્યા છે:—

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને પૂછે છે—(કઙ્કિદાણં મંતે ! દેવલોગા
પન્નત્તા ?) હે ભદન્ત ! દેવલોક કેટલા પ્રકારના કહ્યાં છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ચત્ત્વિહા દેવલોગા પળ્ણત્તા ” હે ગૌતમ ! દેવલોક

વૈમાણિયભેષણ ' તથા-ભવનવાસિ-વાનવ્યન્તર-જ્યોતિષ્ક-વૈમાનિક મેદેન તત્ર-' ભવનવાસી દસવિદા ' ભવનવાસિનોઽસુરકુમારાદિકાઃ દશવિદાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, ' વાણમંતરા અદ્વિદા ' વાનવ્યન્તરાઃ પિશાચાદિકા અદ્વિદાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, एवं ' જોડસિયા પંચવિદા ' જ્યોતિષ્કાઃ ચન્દ્રસૂર્યાદયઃ પશ્ચવિદાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, 'વૈમાણિયા દુવિદા ' વૈમાનિકાઃ કલ્પોપન્ન-કલ્પાતીતમેદેન દ્વિવિદાઃ પ્રજ્ઞતાઃ- ઉદેશકાર્ય સંગ્રહાય ગાથામાહ—

ગાથા—“ કિમિદં રાયગિદં તિ ય ડગ્ગો અંધપાર-સમણ ય,
પાસંતિ વાસિપુચ્છા રાંદિય દેવલોગા ય ” ॥ ૧ ॥

કિમિદં રાજગૃહં નગરમિતિ ચ ઇદં રાજગૃહં કિમ્ પૃથિવી ? રૂપાદિવિચાર-ચર્ચા, તતઃ કથમ્ ઉદ્ધોતઃ દિવસે પ્રકાશઃ, રાત્રી ચ અન્ધકારઃ ? અત્ર કિં-વાણવ્યન્તર, જ્યોતિષિક ઓર વૈમાનિક રૂનમે ભવનવાસી-દશ પ્રકાર કે હે-અનેકે નામ યે હે ? અસુરકુમાર ૨ નાગકુમાર ૩ સુવર્ણકુમાર ૪ વિશુકકુમાર ૫ અગ્નિકુમાર ૬ ક્ષીપકુમાર ૭ ઉદધિકુમાર ૮ દિવકુમાર ૯ વાયુકુમાર ઓર ૧૦ સ્તનિતકુમાર વાણવ્યન્તર આઠ પ્રકાર કે હે, અનેકે નામ યે હે-૧ પિશાચ, ૨ ભૂત, ૩ યક્ષ, ૪ રાક્ષસ, ૫ કિન્નર, ૬ કિં પુરુષ, ૭ મહોરગ, ઓર ૮ ગન્ધર્વ ।

જ્યોતિષિક ૫ પાંચ પ્રકાર કે હે-સૂર્ય ૧ ચન્દ્રમા ૨, ગ્રહ ૩ નક્ષત્ર તારા યે અનેકે નામ હે ।

વૈમાનિક દેવ દો પ્રકાર કે હોતે હે-કલ્પોપપન્ન ૨ ઓર દૂસરે કલ્પાતીત અવશિષ્ટ પદોં કા અર્થ મૂલાર્થ મેં લિખ દિયા ગયા હે રૂસી પ્રકાર સંગ્રહ ગાથા કા ભી અર્થ મૂલ કા અર્થ કરતે સમય લિખા જા

ચાર પ્રકારનાં કથાં છે. તે ચાર પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(૧) ભવનવાસી, (૨) વાનવ્યન્તર, (૩) જ્યોતિષિક અને (૪) વૈમાનિક.

ભવનવાસી દેવોના નીચે પ્રમાણે દસ પ્રકાર છે-(૧) અસુરકુમાર, (૨) નાગકુમાર, (૩) સુવર્ણકુમાર (૪) વિશુકકુમાર (૫) અગ્નિકુમાર (૬) ક્ષીપકુમાર (૭) ઉદધિકુમાર, (૮) દિશાકુમાર (૯) પવનકુમાર (૧૦) સ્તનિતકુમાર.

વાણવ્યન્તર દેવોના આઠ પ્રકાર છે-(૧) પિશાચ (૨) ભૂત (૩) યક્ષ (૪) રાક્ષસ (૫) કિન્નર (૬) કિંપુરુષ (૭) મહોરગ (૮) ગન્ધર્વ.

જ્યોતિષિક દેવોનાં પાંચ પ્રકાર આ પ્રમાણે છે-(૧) સૂર્ય, (૨) ચન્દ્ર, (૩) ગ્રહ, (૪) નક્ષત્ર અને (૫) તારાઓ.

વૈમાનિક દેવોના બે પ્રકાર છે-(૧) કલ્પોપપન્ન, (૨) કલ્પાતીત.

આડીનાં પદોનો અર્થ સૂત્રાર્થમાં આપી દીધો છે. સંગ્રહગાથાનો અર્થ

કારણમ્ ઇતિ પ્રશ્નોત્તરમ્ । તતઃ સમપથ, સમયાદિકાલપરિજ્ઞાનં કેષાં જીવાનાં
મવતીતિ પ્રશ્નોત્તરમ્ । તદનન્તરમ્ પાર્શ્વાન્તેવાસિનાં પાર્શ્વનાથશિષ્ય-શિષ્યાણામ્
સ્થવિરાણામ્, અસંખ્યાતપ્રદેશે કથમનન્તાનિ રાત્રિદિવાનિ સંભવન્તિ, ઇત્યાદિ
રાત્રિ દિવવિપયે પૃચ્છા પ્રશ્નોત્તરમ્, અન્તે દેવલોકાથ-દેવલોકભેદાનાં પ્રતિપા-
દનમિત્યર્થઃ । અન્તે ગૌતમઃ સત્યાપયતિ-તદેવં મદન્ત ! તદેવં મદન્ત ઇતિ । હે
મદન્ત ! તદેવં મવદુક્તં સર્વં સત્યમેવ, -તદેવં સત્યમેવેત્યર્થઃ । ઇતિ કથયિત્વા
ભગવાન્ ગૌતમઃ સંયમેન તપસા આત્માનં ભાવયન્ વિહરતિ ॥ સુ૦ ૫ ॥

શિવિત્રી-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર-પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલ ત્રિવિરચિતાયાં ભગવતી
સૂત્રસ્ય પ્રમેયચન્દ્રિકાસ્વાયાં વ્યાખ્યાયાં પञ્ચમશતકસ્ય નવમોદેશકઃ સમાપ્તઃ । ૧૫-૧ ।

જુકા હૈ । અન્ત મેં ગૌતમ પ્રભુ સે કહતે હૈં કિ હે મદન્ત ! આપ દેવાનુ-
પ્રિય દારા પ્રતિપાદિત યહ સર્વ વિષય સર્વથા સત્ય હી હૈ । હે મદન્ત !
સર્વથા સત્ય હી હૈ । હસ પ્રકાર કહકર વે ભગવાન્ ગૌતમ સંયમ ઓર
તપ સે આત્મા કો ભાવિત કરતે હુણ અપને સ્થાન પર વિરાજમાન હો
ગયે ॥ સુ૦ ૫ ॥

શ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત “ભગવ-
તીસૂત્ર” કી પ્રમેયચન્દ્રિકાસ્વ વ્યાખ્યાકે પાંચવે શતકકા નવવા
ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૫-૧ ॥

પણ સૂત્રાર્થમાં આપી હીધો છે. સૂત્રને અન્તે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને
કહે છે હે મદન્ત ! આપ દેવાનુપ્રિય દારા આ વિષયનું જે પ્રતિપ્રાદન કરવામાં
આવ્યું છે તે સર્વથા સત્ય જ છે । હે મદન્ત ! તે સર્વથા સત્ય અને યથાર્થ
છે. આ પ્રમાણે કહીને ભગવાન મહાવીરને વંદણા નમસ્કાર કરીને, સંયમ
અને તપથી આત્માને ભાવિત કરતા ગૌતમ સ્વામી પોતાને સ્થાને વિરાજ-
માન થઈ ગયા. ॥ સૂત્ર ૫ ॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ‘ભગવતીસૂત્ર’ની પ્રમેયચન્દ્રિકા
વ્યાખ્યાનો. પાંચમાં શતકનો તપશ્ચ ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૫-૬ ॥

॥ दशमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

चन्द्रवक्तव्यता

अनन्तरैतदुद्देशकान्ते देवाः प्रतिपादिताः, अतो देवविशेषभूतो चन्द्रमसो समुद्दिश्य दशमोद्देशकमाह—‘तेणं कालेण’ इत्यादि ।

मूलम्—तेणं कालेणं, तेणं समएणं चंपा नामं नयरी, जहा पढमिल्लो उद्देसओ तहा नेयव्वो एसो वि, नवरं—चंदिमा भाणियव्वा ॥ सू० १ ॥

छाया—तस्मिन् काले, तस्मिन् समये खलु चम्पा नाम नगरी आसीत्, यथा प्रथम-उद्देशकस्तथा ज्ञातव्य एषोऽपि, नवरं चन्द्रमसो भणितव्याः ॥ १ ॥

टीका—‘तेणं कालेणं, तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था’ तस्मिन् काले, तस्मिन् समये खलु चम्पा नाम नगरी आसीत्—‘जहा पढमिल्लो उद्देसओ तहा

पंचम शतक १० वां उद्देशक

चन्द्रवक्तव्यता—

(तेणं कालेणं तेणं समएणं) इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी) उस काल और उस समय में चंपा नाम की नगरी थी (जहा पढमिल्लो उद्देसओ तहा नेयव्वो एसो वि नयरं—चंदिमा भाणियव्वा) जैसा प्रथम उद्देशक कहा है उसी प्रकार से यह उद्देशक भी समझना चाहिये, विशेष यह कि यहाँ चन्द्रमा कहना चाहिये ।

टीकार्थ—अभी अभी इस उद्देशक के पास के उद्देशक के अन्त में देवों का कथन किया गया है सो देवविशेषभूत चन्द्रमाको लेकर ही सूत्रकार ने इस दशवें उद्देशक का कथन किया है (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय में (चंपा नामं नयरी होत्था) चंपा

पांचम शतकने दसवो उद्देशक—

चन्द्रनी वक्तव्यता—

“तेणं कालेणं तेणं समएणं” इत्यादि—

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी) ते काले अने ते समये चंपा नामनी नगरी હતી. (जहा पढमिल्लो उद्देसओ तहा नेयव्वो एसो वि नवरं चंदिमा भाणियव्वा) જે પ્રમાણે પહેલો ઉદ્દેશક કહેવામાં આવ્યો.

નેયવ્વો एसो वि' यथा प्रथमः उद्देशकः प्रतिपादितः, तथा एषोऽपि दशमोद्देशकः ज्ञातव्यः वक्तव्यः, 'णवरं-चंदिमा भाणियव्वा' नवरं चन्द्रमसौ भणितव्यौ, विशेषः पुनरेतावानेव यद् दशमोद्देशकः चन्द्राभिलापेन पञ्चमशतकस्य प्रथमोद्देशक-गत सूर्यवर्णनचन्द्रवर्णनपरतया विज्ञेयः ।

तथा च चन्द्रविषयकाभिलाषकाकारश्चेत्थम्—' तस्मिन् काले, तस्मिन् समये चंपा नाम नगरी आसीत्, वर्णकः स्वामी समयस्ततः यावत्-पर्यत् प्रतिगता, तस्मिन् नाम की नगरी थी (जहा पढमिल्लो उद्देशओ तहा नेयव्वो एसो वि) जिस प्रकार से प्रथम उद्देशक प्रतिपादित हुआ है उसी तरह से यह दशवां उद्देशक भी जानना चाहिये (णवरं चंदिमा भाणियव्वा) यहाँ यही केवल विशेष है कि पांचवें शतक में जिस तरह से प्रथम उद्देशक कहा गया है उसी तरह से यह उद्देशक चन्द्रमा के अभिलाप से कह-लेना चाहिये—

तथा च—चन्द्रविषयक अभिलाप का आधार इस प्रकार से है (तस्मिन् काले तस्मिन् समये चंपा नाम नगरी आसीत्, वर्णकः तस्यां चंपाया नगर्यां पूर्णभद्रं नाम उद्यानं आसीत् वर्णकः इत्यादि—उस काल

છે, એ જ પ્રમાણે આ ઉદ્દેશક પણ સમજવો. પણ વિશેષતા જ છે કે, એટલી આ ઉદ્દેશકમાં 'સૂર્ય'ની 'જગ્યા'એ 'ચન્દ્રમા' કહેવો જોઈએ.

ટીકાથે—નવમાં ઉદ્દેશકના છેલ્લા સૂત્રમાં દેવોનું કથન કરવામાં આવ્યું છે. ચન્દ્રમા પણ જ્યોતિષિક દેવ ગણાય છે. તેથી સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં ચન્દ્ર-માનું નિરૂપણ નીચેના પ્રશ્નોત્તરો દ્વારા કર્યું છે—

“ તેણં કાલેણં તેણં સમયણં ” તે કાળે અને તે સમયે “ ચંપા નામ નયરી હત્યા ” ચંપા નામે નગરી હતી “ જહા પઢમિલ્લો ઉદ્દેસઓ તહા નેયવ્વો एसो वि ” જે રીતે હોલા ઉદ્દેશકનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે, એ જ પ્રમાણે આ દસમાં શકનું પણ પ્રતિપાદન કરવું જોઈએ. “ ણવરં ચંદિમા ભાણિયવ્વા ” અહીં ક્રૂષ્ટા એટલી જ વિશેષતા છે કે પાંચમાં શતકના પહેલા ઉદ્દેશકમાં જે આલાપકો આપ્યા છે, તે આલાપકોમાં 'સૂર્ય'ને બદલે 'ચન્દ્રમા' શબ્દ વાપરીને પ્રશ્નોત્તરોનું કથન થવું જોઈએ.

ચન્દ્ર વિષયક આલાપકોની રચના આ પ્રકારની થયે—(તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે ચંપા નામ નગરી આસીત્, વર્ણકઃ તસ્યાં ચંપાયાં નગર્યાં પૂર્ણભદ્ર નામ ઉદ્યાનં આસીત્ વર્ણકઃ) ઇત્યાદિ. તે કાળે અને તે સમયે ચંપા નામે

કાલે, તસ્મિન્ સમયે શ્રમણસ્ય મગધતો મહાવીરસ્ય ઝ્યેષ્ઠોઽન્તેવાસી ઇન્દ્રભૂતિર્નામ
અનગારઃ ગૌતમગોત્રો યાવત્-પવમ્ અવાદીત્-જમ્બૂદ્વીપે મગધન્ । દ્વીપે દ્વયોમ્બદ્ર-
મસૌઃ સદ્ભાત્રાત્-ચન્દ્રમસૌ ઉદીચીપ્રાચ્યામ્ ઉદ્ગત્ય પ્રાચીદક્ષિણસ્યામ્ આગચ્છતઃ ?
પ્રાચીદક્ષિણસ્યામ્ ઉદ્ગત્ય દક્ષિણમતીચ્યામ્ આગચ્છતઃ ? ૨ દક્ષિણમતીચ્યામ્ ઉદ-
ગત્ય મતીચ્યુદીચ્યામ્ આગચ્છતઃ ? ૩ મતીચ્યુદીચ્યામ્ ઉદ્ગત્ય ઉદીચીપ્રાચ્યામ્

और उस समय में चंपा नाम की नगरी थी उस नगरी का वर्णन
औपपातिक सूत्र से जानना चाहिये उस नगरीमें पूर्णभद्र नामका उद्यान
था वर्णक-श्रमण भगवान् महावीर प्रभु उस उद्यान में विहार करते हुए
पधारें, धर्म का उपदेश सुनने के लिये जनता वहाँ पर एकत्रिय हुई,
प्रभुने श्रुतचारित्ररूप धर्म का उपदेश दिया, उपदेश सुनकर जनता वहाँ
से वापिस गई । उस काल में और उस समय में श्रमण भगवान् महा-
वीर के प्रधान शिष्य ने जिनका नाम इन्द्रभूति अनगार था, और गोत्र
जिनका गौतम था प्रभु से याचत इस प्रकार पूछा-हे भद्रन् ! जम्बूद्वीप
नामके इस द्वीप में दो चंद्रमा हैं ये उत्तर और पूर्वदिशाके अन्तरालवर्ती
ईशानकोणसे उदित होकर पूर्व और दक्षिणदिशाके अन्तरालवर्ती अग्नि-
कोण में अस्त होते हैं क्या ? अग्निकोणसे उदित होकर नैऋत्यकोण में
अस्त होते हैं क्या ? नैऋत्यकोणसे उदित होकर वायव्यकोणमें अस्त होते
हैं क्या ? और वायव्यकोणसे उदित होकर ईशानकोणमें अस्त होते हैं क्या ?

નગરી હતી. તે નગરીનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રમાંથી જાણી લેવું. તે નગરીમાં
પૂર્ણભદ્ર નામે ઉદ્યાન હતું. તે ઉદ્યાનનું વર્ણન પણ ઔપપાતિક સૂત્રમાંથી
જાણી લેવું. શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિહાર કરતાં કરતાં એ ઉદ્યાનમાં પધાયા.
ધર્મોપદેશ સાંભળવાને લોકો ત્યાં એકઠાં થયા. પ્રભુએ શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મને
ઉપદેશ દીધો. ઉપદેશ સાંભળીને લોકો પોતપોતાને સ્થાને પાછા ફર્યા. તે કાળે
અને તે સમયે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના મુખ્ય શિષ્ય ઇન્દ્રભૂતિ અણગાર
હતા. તેઓ ગૌતમ ગોત્રના હતા. અહીં ગૌતમના મુણ્ડનું વર્ણન થયેલું હતું.
ગૌતમ સ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પૂછ્યું-હે ભદ્રન્ ! જમ્બૂદ્વીપ નામના
આ દ્વીપમાં બે ચન્દ્રમા છે. તેઓ શું પૂર્વ અને ઉત્તર દિશાની વચ્ચેના ઇશાન
કોણમાંથી ઉદય પામીને પૂર્વ અને દક્ષિણ દિશાની વચ્ચેના અગ્નિકોણમાં
અસ્ત પામે છે ? અથવા અગ્નિકોણમાંથી ઉદય પામીને નૈઋત્ય કોણમાં અસ્ત
પામે છે ? અથવા નૈઋત્ય કોણમાંથી ઉદય પામીને વાયવ્ય કોણમાં અસ્ત પામે
છે ? અથવા વાયવ્ય કોણમાંથી ઉદય પામીને ઇશાન કોણમાં અસ્ત પામે છે ?

આગચ્છતઃ ૪ ? હન્ત, ગૌતમ ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપેચન્દ્રમસી ઉદીચી-પ્રાચ્યામુદ્ગત્ય યાવત્-ઉદીચી-પ્રાચ્યામાગચ્છતઃ । યદા સ્વત્તુ ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ, તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ રાત્રિર્ભવતિ, યદા ઉત્તરાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ, તદા જમ્બૂ-દ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે પશ્ચિમે ચ દિવસો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધેઽપિ રાત્રિર્ભવતિ તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ રાત્રિર્ભવતિ, યદા ઉત્તરાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ, તદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્ય પશ્ચિમે-દિવસો ભવતિ ।

યદા સ્વત્તુ ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે રાત્રિર્ભવતિ, તદા પશ્ચિમેઽપિ રાત્રિર્ભવતિ, યદા પશ્ચિમે રાત્રિર્ભવતિ તદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દ-

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! પેસા હી હોતા હૈ—જમ્બૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં દો ચન્દ્રમા ઈશાનકોણ સેડિત હોકર યાવત્ ઈશાનકોણ મેં અસ્ત હોતે હૈં ।

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જય જમ્બૂદ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં રાત્રિ હોતી હૈ, ઉસ સમય ઉત્તરાર્ધ મેં બી રાત્રિ હોતી હૈ ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં રાત્રિ હોતી હૈ તય જમ્બૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વપશ્ચિમદિશા મેં દિવસ હોતા હૈ કયા ?

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! જય જમ્બૂદ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં રાત્રિ હોતી હૈ તય ઉત્તરાર્ધ મેં બી રાત્રિ હોતા હૈં । ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં રાત્રિ હોતી હૈ, તય જમ્બૂદ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વપશ્ચિમદિશા મેં દિવસ હોતા હૈં ।

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જય જમ્બૂદ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વ દિશામેં રાત્રિ હોતી હૈ તય પશ્ચિમ મેં બી રાત્રિ હોતી હૈ ઓર જય પશ્ચિમ મેં

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એવું જ અને છે. “ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં જે ચન્દ્રમા ઇશાન કોણમાં ઉદય પામીને અગ્નિ કોણમાં અસ્ત પામે છે, ત્યાંથી શરૂ કરીને ઇશાન કોણમાં અસ્ત પામે છે. ” ત્યાં સુધીનું પૂર્વોક્ત સમસ્ત કથન અહીં ગ્રહણ કરવું.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જ્યારે જંબૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ રાત્રિ હોય છે ? અને જ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું જંબૂદ્વીપમાં મંદર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં દિવસ હોય છે ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! જ્યારે જંબૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં રાત્રિ હોય છે ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ રાત્રિ હોય છે, અને જ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે જંબૂદ્વીપમાં મંદર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં દિવસ હોય છે.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જ્યારે જંબૂદ્વીપમાં મંદર પર્વતની પૂર્વ દિશામાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું પશ્ચિમ દિશામાં પણ રાત્રિ હોય છે ? અને જ્યારે

રસ્ય પર્વતસ્ય ઉત્તર-દક્ષિણે દિવસો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરપૌરસ્થ્યે રાત્રિર્ભવતિ, તદા પશ્ચિમેઽપિ રાત્રિર્ભવતિ, યદા પશ્ચિમે રાત્રિર્ભવતિ તદા ઉત્તર-દક્ષિણે દિવસો ભવતિ । યદા મદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે ઉત્કૃષ્ટાઽષ્ટાદશમુહૂર્તો રાત્રિર્ભવતિ તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ ઉત્કૃષ્ટાઽષ્ટાદશમુહૂર્તો રાત્રિર્ભવતિ, યદા ઉત્તરાર્ધે ઉત્કૃષ્ટાઽષ્ટાદશમુહૂર્તો રાત્રિર્ભવતિ તદા મન્દરસ્ય પૌરસ્થ્યપશ્ચિમે જઘન્યેન દ્વાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ ? હન્ત ગૌતમ ! યદા જમ્બૂદ્વીપે યાવત્-દ્વાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ । યદા મદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે મન્દર-પૌરસ્થ્ય રાત્રિ હોતી હૈ તથ જંબૂદ્વીપ મેં મંદર પર્વત કી ઉત્તરદક્ષિણ દિશા મેં દિવસ હોતા હૈ કયા ?

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! જય જંબૂદ્વીપ મેં મન્દરપર્વત કી પૂર્વદિશા મેં રાત્રિ હોતી હૈ તથ પશ્ચિમ મેં બી રાત્રિ હોતી હૈ ઓર જય પશ્ચિમ મેં બી રાત્રિ હોતી હૈ તથ ઉત્તર-દક્ષિણ દિશા મેં દિવસ હોતા હૈ ।

પ્રશ્ન—હે મદન્ત ! જય જમ્બૂદ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં ઉત્કૃષ્ટ ૧૮ અઠારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ તથ ઉત્તરાર્ધ મેં બી ૧૮ અઠારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ ? ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં બી ૧૮ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ તથ મન્દરપર્વત કી પૂર્વ પશ્ચિમ દિશા મેં જઘન્ય સે ૧૨ ચારહ મુહૂર્ત કા દિન હોતા હૈ કયા ?

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! તથ જંબૂદ્વીપ મેં યાવત્ ૧૨ ચારહ મુહૂર્ત કા દિન હોતા હૈ ?

મન્દર પર્વતની પશ્ચિમ દિશામાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું જંબૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશામાં દિવસ હોય છે ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! જ્યારે જંબૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ દિશામાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે પશ્ચિમ દિશામાં પણ રાત્રિ હોય છે, અને જ્યારે પશ્ચિમમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે ઉત્તર દક્ષિણ દિશામાં દિવસ હોય છે.

પ્રશ્ન—હે ભદ્રન્ત ! જ્યારે જંબૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં પણ ૧૮ મુહૂર્તની જ રાત્રિ હોય છે ? અને જ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં વધારેમાં વધારે ૧૮ મુહૂર્તની જ રાત્રિ હોય છે, ત્યારે મન્દર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં શું ટુંકામાં ટુંકો ૧૨ મુહૂર્તનો દિવસ થાય છે ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એ પ્રમાણે જ અને છે. (અહીં પ્રશ્નોક્ત કથનજ શરૂ કર્યું.)

પશ્ચિમે ઉત્કૃષ્ટાષ્ટાદશમુહૂર્તો રાત્રિર્ભવતિ, તદા ઉત્તર-દક્ષિણે જયન્ત્યેન દ્વાદશ મુહૂર્તો દિવસો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા પૌરસ્ત્યપશ્ચિમેષ્ટાદશમુહૂર્તો રાત્રિ સ્વદોત્તરદક્ષિણે દ્વાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યાવત્ દ્વાદશમુહૂર્તો દિવસો ભવતિ, इत्यादिरोत्या स्वप्नमूढम् । तथा ' यदा खलु भदन्त ! जम्बूद्वीपे द्वीपे दक्षिणार्धे वर्षाणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते तदा उत्तरार्धेऽपि वर्षाणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते, यदा उत्तरार्धेऽपि वर्षाणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते तदा जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पौरस्त्यपश्चिमेऽनन्तरपुरस्कृतसमये अन्यव-हितोत्तरकाले वर्षाणां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते ! हन्त, गौतम ! यदा जम्बूद्वीपे

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જય જંબૂદ્વીપ મેં મન્દરપર્વત કી પૂર્વપશ્ચિમ દિશા મેં ઉત્કૃષ્ટ અઠારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ, તય ઉત્તર દક્ષિણ દિશા મેં જયન્ત્ય સે કયા ૧૨ ચારહ મુહૂર્ત કા દિન હોતા હૈ ? હાં ગૌતમ ! જય પૂર્વપશ્ચિમ મેં ૧૮ અઠારહ મુહૂર્ત કી રાત્રિ હોતી હૈ, તય ઉત્તર દક્ષિણ મેં ચારહ મુહૂર્ત કા દિન હોતા હૈ । इत्यादि रीति से सब विषय प्रथम उद्देशक में कहे हुए अनुसार अपने आप समझलेना चाहिये ।

તથા—પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જંબૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં જય દક્ષિણાર્ધ મેં વર્ષાઋતુ કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ—તય ઉત્તરાર્ધ મેં ભી વર્ષા કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ, ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં ભી વર્ષા કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ તય જંબૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં મન્દરપર્વત કી પૂર્વપશ્ચિમ દિશા મેં અન્યવહિત ઉત્તરકાલ મેં વર્ષા કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ કયા ?

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! ત્યારે જંબૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં લાંબામાં લાંબી ૧૮ મુહૂર્તની રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું ઉત્તર દક્ષિણ દિશામાં ટુંકામાં ટુંકા ૧૨ મુહૂર્તનો દિવસ હોય છે ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! ત્યારે પૂર્વ-પશ્ચિમમાં લાંબામાં લાંબી ૧૮ મુહૂર્તની રાત્રિ હોય છે, ત્યારે ઉત્તર-દક્ષિણમાં ટુંકામાં ટુંકા ૧૨ મુહૂર્તનો દિવસ હોય છે.

इत्यादि समस्त विषयं कथन पठेत्वा उद्देशकમાં કહ્યા પ્રમાણે સમજવું.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! ત્યારે જંબૂદ્વીપમાં દક્ષિણાર્ધમાં વર્ષાઋતુનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ વર્ષાઋતુનો પ્રથમ સમય હોય છે ? અને ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે મન્દર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં અન્યવહિત (આંતરા રહિત) ઉત્તર કાળમાં શું વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે ?

દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે વર્ષાનાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે, તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ વર્ષાનાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે, યદા ઉત્તરાર્ધે વર્ષાનાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે તદા મન્દર-પૌરસ્ત્યપથિમેઽનન્તરપુરસ્કૃતસમયે વર્ષાનાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે । યદા ભદન્ત । જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરપર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે વર્ષાનાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે, તદા પથિમેઽપિ વર્ષાનાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે, યદા પથિમેઽપિ વર્ષાનાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે તદા મન્દરપર્વતસ્ય ઉત્તરદક્ષિણેઽનન્તરપુરસ્કૃતસમયે વર્ષાનાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યન્તો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે વર્ષાનાં પ્રથમઃ સમયઃ પ્રતિપદ્યતે તદા પથિમેઽપિ પ્રથમઃ સમયઃ,

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! જવ જંબૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ, તવ ઉત્તરાર્ધ મેં બી વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ ઓર જવ ઉત્તરાર્ધ મેં વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ તવ મન્દર પર્વત કી પૂર્વપશ્ચિમ દિશા મેં અવ્યવહિત ઉત્તરકાલ મેં વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ ।

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જવ જંબૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં મન્દરપર્વત કી પૂર્વદિશા મેં વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ, તવ પશ્ચિમ મેં બી વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ, ઓર જવ પશ્ચિમ મેં બી વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ તવ મન્દર પર્વત કી ઉત્તર દક્ષિણદિશા મેં અનન્તર પશ્ચાત્કૃત સમય મેં અવ્યવહિત પૂર્વકાલ મેં—વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ કયા ?

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! જવ જમ્બૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વદિશા મેં વર્ષાં કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ તવ પશ્ચિમ મેં બી વર્ષાં કા

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! જ્યારે જંબૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, અને જ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે મન્દર પર્વતની પૂર્વ પશ્ચિમ દિશામાં અવ્યવહિત ઉત્તરકાળમાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જ્યારે જંબૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ દિશામાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે શું પશ્ચિમ દિશામાં પણ વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે ? અને જ્યારે પશ્ચિમમાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે શું મન્દર પર્વતની ઉત્તર દક્ષિણ દિશામાં અનન્તર પશ્ચાત્કૃત (ત્યારબાદના સમયમાં) સમયમાં અવ્યવહિત (આંતરા રહિત) પૂર્વકાળમાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! જ્યારે જંબૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ દિશામાં વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે પશ્ચિમમાં પણ વર્ષાનો પ્રથમ સમય હોય

યદા પશ્ચિમે પ્રથમઃ સમયઃ, તદા મન્દરસ્ય ઉત્તરદક્ષિણેડનન્તરપુરસ્કૃતસમયે
વર્ષાણાં પ્રથમઃ સમયઃ પતિપદ્યો ભવતિ । एवं यथा समयेन अभिलापो भणितो
वर्षाणां तथा आवलिकयाऽपि भणितव्यः । एवम्-आनप्राणाभ्यामपि, स्तोकेनापि,
लवेनापि, गृहर्तेनापि, अहोरात्रेणापि, पक्षेणापि. मासेनापि, ऋतुनाऽपि, एतेषां
सर्वेषां यथा समयस्याभिलापस्तथा भणितव्यः । यदा खलु भदन्त ! जम्बूद्वीपे द्वीपे
हेमन्तानां प्रथमः समयः प्रतिपद्यते० ? यथैव वर्षाणाम् अभिलापः, तथैव हेमन्ता-
नामपि, ग्रीष्माणामपि भणितव्यो यावत्-ऋतुना, एवं ग्रीणि अपि । एतेषां
त्रिंशद् आलापका भणितव्याः । यदा भदन्त ! जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य

પ્રથમ સમય હોતા હૈ ઓર જય પશ્ચિમ મેં ભી પ્રથમ સમય હોતા હૈ તય
મન્દર પર્વત કી ઉત્તર દક્ષિણદિશા મેં અનન્તર પશ્ચાત્કૃત સમય મેં વર્ષા
કા પ્રથમ સમય હોતા હૈ । જિસ પ્રકાર સે વર્ષા કા યહ અભિલાપ સમય
કો લેકર કહા ગયા હૈ—ઉસી પ્રકાર સે આવલિકા કો લેકર ભી વર્ષા
કા અભિલાપ કહલેના ચાહિયે તથા આનપ્રાણ કો, સ્તોક કો, લવ કો,
ગૃહર્ત્ત કો, અહોરાત્ર કો, પક્ષ કો માસ કો ઓર ઋતુ કો ભી લેકર
હસી પ્રકાર સે અભિલાપ વર્ષા કા કહલેના ચાહિયે ।

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં દક્ષિણ મેં જય હેમન્ત-
ઋતુ કા પ્રથમ સમય પ્રારંભ હોતા હૈ, તય ઉત્તર મેં ભી હેમન્ત ઋતુ કા
પ્રથમ સમય પ્રારંભ હોતા હૈ ઓર જય ઉત્તર મેં ભી હેમન્ત ઋતુ કા પ્રથમ
સમય પ્રારંભ હોતા હૈ તય જમ્બૂદ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વ પશ્ચિમદિશા
મેં કયા અનન્તપુરસ્કૃત સમય મેં હેમન્ત ઋતુ કા પ્રારંભ હોતા હૈ ?

છે અને ન્યારે પશ્ચિમમાં પાંત્રી પ્રથમ સમય હોય છે, ત્યારે મન્દર પર્વતની
ઉત્તર દક્ષિણ દિશામાં અનન્તર (ત્યારબાદના સમયમાં) સમયમાં વર્ષાનો
પ્રથમ સમય હોય છે. જેવી રીતે સમયની અપેક્ષાએ વર્ષાનો આ આલાપક
(પ્રશ્નોત્તર ૩૫ સૂત્રો) કહ્યો છે, એજ પ્રમાણે આવલિકા, આનપ્રાણ, સ્તોક,
લવ, ગૃહર્ત્ત, રાત્રિ-દિવસ, પક્ષ, માસ અને ઋતુઓની અપેક્ષાએ પણ વર્ષાના
આલાપક કહેવા ભેદ છે.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં દક્ષિણ દિશામાં ન્યારે
હેમન્ત ઋતુના પ્રથમ સમયનો પ્રારંભ થાય ત્યારે શું ઉત્તરમાં પણ હેમન્ત
ઋતુના પ્રથમ સમયનો પ્રારંભ થાય છે ? અને ન્યારે ઉત્તરમાં હેમન્ત ઋતુના
પ્રથમ સમયનો પ્રારંભ થાય છે, ત્યારે જમ્બૂદ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ-
પશ્ચિમ દિશામાં શું (ત્યારબાદના સમયમાં) હેમન્ત ઋતુના પ્રારંભ થાય છે ?

દક્ષિણાર્ધે પ્રથમમ્ અયનં પ્રતિપદ્યતે તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ પ્રથમમ્ અયનં પ્રતિપદ્યતે ! યથા સમયેનાભિલાપસ્તથૈવ અયનેનાપિ ભણિતવ્યઃ, યાવત્-અનન્તરપશ્ચાત્કૃતસમયે પ્રથમમ્ અયનં પ્રતિપન્નં ભવતિ । યથાઽયનેનાભિલાપસ્તથા સંવત્સરેણાપિ ભણિતવ્યઃ પુનેના.

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! હસ સંયંધી સમસ્ત કથન અર્થાત્ હેમંત સંયંધ અભિલાપ વર્ષા કે અભિલાપ કી તરહ કહ લેના યાદિયે—હસી તરહ સે ઘીષ્મ ક્રતુ સંયંધી અભિલાપ ખી જાનના યાદિયે તથા હેમંત ઔર ઘીષ્મ કે પ્રથમ સમય કી તરહ ડનકી પ્રથમ આયલિકા આદિ સબ ક્રતુ તક સમજના યાદિયે, હસ તરહ ડન તીન ક્રતુઓં કે વિષય મેં ઇક સરીલા કથન જાનના યાદિયે યે સય મિલકર ૩૦ તીસ આલાપક હો જાતે હેં ।

પ્રશ્ન—હે મદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપ નામકે દ્વીપ મેં મન્દરપર્વત કે દક્ષિણાર્ધ મેં જય પ્રથમ અયન પ્રારંભ હોના હૈ, તય ઉત્તરાર્ધ મેં ખી પ્રથમ અયન પ્રારંભ હોતા હૈ યથા ? હૅ ગૌતમ ! જિસ પ્રકાર સે સમયકે સમ્બન્ધ મેં કહા જા ચુકા હૈ ડસી તરહ સે અયન કે સમ્બન્ધમેં ખી જાનના યાદિયે । ઔર યહ કથન હસ વિષયમેં “યાવત્ અનન્તર પશ્ચાત્કૃતસમયે પ્રથમં અયનં પ્રતિપન્નં ભવતિ યહાં તક હી ગ્રહણ કરનાં યાદિયે । જિસ પ્રકાર સે અયન કો લેકર અભિલાપ કહા હૈ ડસી તરહ

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! વર્ષાના આલાપકો જેવાં જ હેમંતના આલાપકો પણ સમજવા. જેજ પ્રમાણે શ્રીમન્ક્રતુ સંયંધી આલાપકો પણ સમજવા. તથા વર્ષાન્ક્રતુના સમય, આવલિકા આદિની અપેક્ષાએ જેવા આલાપકો કહ્યા છે એવાં આલાપકો હેમંત અને શ્રીમ્મના સમયથી ક્રતુ પર્યંતના કાળને અનુલક્ષીને કહેવા બેઠાએ. આ રીતે આ ત્રણે ક્રતુઓતું કથન એકસરખું સમજવું. ત્રણે ક્રતુના એકંદર ૩૦ આલાપકો બને છે.

પ્રશ્ન—હે મદન્ત ! જંબુદ્વીપના મન્દર પર્વતના દક્ષિણાર્ધમાં ન્યારે પહેલા અયનની શરૂઆત થાય છે, ત્યારે શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ પહેલા અયનની શરૂઆત થાય છે ?

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! સમયના વિષે જેમ કહેવામાં આવ્યું છે તેમ અયનના વિષયમાં પણ સમજવું. અને તે કથન “અનન્તરપશ્ચાત્કૃતસમયે પ્રથમં અયનં પ્રતિપન્નં ભવતિ ” અહીં સુધી જ અડધું કરવું. જેવી રીતે અયન વિષેના આલાપકો કહ્યા છે જેજ પ્રમાણે સંવત્સર વિષેના આલાપકો પણ કહેવા

પિ, વર્ષશતેનાપિ વર્ષસહસ્રેણાપિ, વર્ષશતસહસ્રેણાપિ, પૂર્વાદ્વેણાપિ, પૂર્વેણાપિ, ત્રુટિતા-
દ્વેનાપિ ત્રુટિતેનાપિ, અવગ્-અટટાદ્વમ્, અટટમ્, અવવાદ્વમ્, અવવમ્, હુહુકાદ્વમ્,
હુહુકમ્, ઉત્પલાદ્વમ્, ઉત્પલમ્, પદ્માદ્વમ્, પદ્મમ્, નલિનાદ્વમ્, નલિનમ્, અર્થનિ-
પુરાદ્વમ્, અર્થનિપુરમ્, અયુતાદ્વમ્, અયુતમ્, નયુતાદ્વમ્, નયુતમ્, પ્રયુતાદ્વમ્,
પ્રયુતમ્, ચૂલિકાદ્વમ્, ચૂલિકા, શીર્ષપ્રહેલિકયા, પલ્યોપમેન, સાગરોપમેણાપિ
મણિતવ્યઃ । યદા ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે પ્રથમાવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે,
તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ પ્રથમાવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે યદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ પ્રથમાવસર્પિણી
પ્રતિપદ્યતે તદા જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે મન્દરસ્ય પર્વતસ્ય પૌરસ્ત્યે પશ્ચિમે નૈવાસ્તિ અવસ-
ર્પિણી, નૈવાસ્તિ ઉત્સર્પિણી, અવસ્થિતસ્તત્ર કાલઃ પ્રક્ષપ્તઃ, શ્રમણાયુષ્મન્ ! હન્ત,

સે સંવત્સરકો લેકર 'મી અમિલા' કહલેના 'ચાહિયે' હસી તરહ સે યુગ,
વર્ષરાત વર્ષસહસ્ર, વર્ષશતસહસ્ર, પૂર્વાદ્, પૂર્વ ત્રુટિતાદ્વ, ત્રુટિત, અટટાદ્વ,
અટટ, અવવાદ્વ, અવવ, હુહુકાદ્વ, હુહુક, ઉત્પલાદ્વ ઉત્પલ, પદ્માદ્વ, પદ્મ નલિ-
નાદ્વ, નલિન, અર્થનિપુરાદ્વ, અર્થનિપુર, અયુતાદ્વ, અયુત, નયુતાદ્વ, નયુત,
પ્રયુતાદ્વ, પ્રયુત, ચૂલિકાદ્વ, ચૂલિકા, શીર્ષપ્રહેલિકાદ્વ, શીર્ષપ્રહેલિકા, પલ્યો-
પમ ઓર સાગરોપમ હન કો લેકર 'મી અમિલા' કહલેના 'ચાહિયે' ।

પ્રશ્ન— હે ભદન્ત ! જમ્બૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં દક્ષિણાર્ધ મેં જવ પ્રથમ
અવસર્પિણી પ્રારંભ હોતી હૈ, તવ ઉત્તરાર્ધ મેં 'મી' પ્રથમ અવસર્પિણી
પ્રારંભ હોતી હૈ ઓર જવ ઉત્તરાર્ધ મેં 'મી' પ્રથમ અવસર્પિણી પ્રારંભ હોતી
હૈ તો કયા જમ્બૂદ્વીપ નામ કે દ્વીપ મેં મન્દર પર્વત કી પૂર્વ પશ્ચિમ દિશા
મેં જવ અવસર્પિણી નહીં હૈ ઓર ઉત્સર્પિણી 'મી' નહીં હૈ તો કયા હૈ
દીર્ઘજીવિન્ ! શ્રમણ ! વહાં પર કાલ અવસ્થિત કહા ગયા હૈ ?

જોઇએ. એજ પ્રમાણે યુગ, વર્ષસહસ્ર, પૂર્વાદ્, પૂર્વ, ત્રુટિતાદ્વ, ત્રુટિત, અટ-
ટાદ્વ, અટટ, અવવાદ્વ, અવવ, હુહુકાદ્વ, હુહુક, ઉત્પલાદ્વ, ઉત્પલ, પદ્માદ્વ, પદ્મ,
નલિનાદ્વ, નલિન, અર્થનિપુરાદ્વ, અર્થનિપુર, અયુતાદ્વ, અયુત, નયુતાદ્વ, નયુત,
પ્રયુતાદ્વ, પ્રયુત, ચૂલિકાદ્વ, ચૂલિકા, શીર્ષપ્રહેલિકાદ્વ, શીર્ષપ્રહેલિકા, પલ્યોપમ
અને સાગરોપમના વિષયમાં પણ આલાપક કહેવા જોઇએ.

પ્રશ્ન— હે ભદન્ત ! ત્યારે જમ્બૂદ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં પ્રથમ અવસર્પિણી
શરૂ થાય છે, ત્યારે શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ પ્રથમ અવસર્પિણી શરૂ થાય છે ?
અને ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ અવસર્પિણી શરૂ થાય છે, ત્યારે શું જમ્બૂદ્વીપમાં
મન્દર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં ઉત્સર્પિણી પણ હોતી નથી અને અવ-
સર્પિણી હોતી નથી ? તો હે ભદન્ત ! હે દીર્ઘજીવન ! શું ત્યાં અવસ્થિત
કાળ કહ્યો છે ?

ગૌતમ ! તદેવ ગાયત્ર-ઉચારયિત્યમ્, યાવત્-શ્રમણાયુષ્મન્ ! યથા અવસર્પિણ્યા આલાપકો મણિતઃ, એવમ્ ઉત્સર્પિણ્યાઽપિ મણિત્યવ્યઃ ।

તથા ચન્દ્રવિષયકસ્તૃતીયાલાપકમેત્યમ્-લવણે ભદન્ત ! સમુદ્રે ચન્દ્રો ડરીથી -પાચ્યામ્ ઉદ્ગત્ય પ્રાચી-દક્ષિણાયામ્ આગચ્છતઃ ? પ્રાચી-દક્ષિણાયામ્ ઉદ્ગત્ય દક્ષિણ-પ્રતીચ્યામ્ આગચ્છતઃ ? દક્ષિણ-પ્રતીચ્યામ્ ઉદ્ગત્ય પ્રતીચ્યુદીચ્યા માગચ્છતઃ ? પ્રતીચ્યુદીચ્યુદ્ગત્ય ડરીથી-પાચ્યામાગચ્છતઃ ? લવણસમુદ્રે ચલારશ્ચન્દ્રા ભવન્તિ તેષુ પ્રતિદિનં તત્ર ભાગદ્વયં ડ્રો ચન્દ્રો આગચ્છતઃ, તદપેક્ષયા 'દ્રો' ઇત્યુક્તમ્, યા એવ જમ્બુદ્વીપસ્ય ચક્તવ્યતા મણિતા સા એવ અપરિશેષિકા

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! એસા હી હૈ-પૂર્વ કી તરહ સે હી યહાં સબ કહ-લેના ચાહિયે-યાવત્ હે શ્રમણાયુષ્મન્ ! જિસ પ્રકાર સે અવસર્પિણી કે સંબંધ મેં આલાપક કહા હૈ-ઉસી પ્રકાર સે ઉત્સર્પિણી કે વિષય મેં બી આલાપક જાનના ચાહિયે ।

તથા—ચન્દ્ર કે વિષય મેં તૃતીય આલાપક હસ પ્રકાર સે હૈ-પ્ર-હે ભદન્ત ! લવણસમુદ્ર મેં દો ચંદ્રમા દૈશાન કોણ મેં ઉદિત હોકર અગ્નિકોણ મેં જાતે હૈં કયા ? અગ્નિકોણ મેં ઉદિત હોકર નૈઋત્ય કોણ મેં જાતે હૈં કયા ? નૈઋત્ય કોણ મેં ઉદિત હોકર વાયવ્ય કોણ મેં જાતે હૈં કયા ? વાયવ્યકોણ મેં ઉદિત હોકર દૈશાન કોણ મેં જાતે હૈં કયા ? લવ-ણસમુદ્ર મેં ચાર ચંદ્રમા હૈં । ઊનમેંસે પ્રતિદિન વહાં પર દો ભાગમેં દો ચંદ્ર ઉદિત હોતે હૈં-હસી અપેક્ષા કો લેકર (દો) એસા પાઠ કહા ગયા હૈ ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એવું જ છે. એટલે કે પ્રશ્નસૂત્ર પ્રમાણે જ અહીં સમસ્ત કથન સમજવું. જે પ્રકારે અવસર્પિણીના વિષયમાં આલાપક કહે છે, એ જ પ્રમાણે ઉત્સર્પિણીના વિષયમાં પણ આલાપક સમજવો. તથા ચન્દ્રના વિષયમાં ત્રીજો આલાપક આ પ્રમાણે છે:—

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! લવણ સમુદ્રમાં જે ચન્દ્રમા દૈશાન કોણમાં ઉદય પામીને શું અગ્નિકોણમાં જાય છે ? અગ્નિકોણમાં ઉદય પામીને શું નૈઋત્ય કોણમાં જાય છે ? નૈઋત્ય કોણમાં ઉદય પામીને શું વાયવ્ય કોણમાં જાય છે ? વાયવ્ય કોણમાં ઉદય પામીને શું દૈશાન કોણમાં જાય છે ? (લવણ સમુદ્રમાં ચાર ચન્દ્રમા છે. તેમાંથી પ્રતિદિન ત્યાં જે ભાગમાં જે ચન્દ્ર ઉદય પામે છે, તે કારણે સૂત્રપાઠમાં 'જે ચન્દ્ર' કહ્યા છે.)

લવણસમુદ્રસ્યાપિ ભણિતવ્યા, નવરમ્-અભિલાષોઽયં જ્ઞાતવ્યઃ-યદા ભદન્ત ! લવણે સમુદ્રે દક્ષિણાર્દે રાત્રિર્ભવતિ, તદેવ યાવત્-તદા લવણસમુદ્રે પૌરસ્ત્ય-પશ્ચિમે દિવસો ભવતિ, एतेन અભિલાષેન જ્ઞાતવ્યમ્ । યદા ભદન્ત ! લવણસમુદ્રે દક્ષિણાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે, તદા ઉત્તરાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે ? યદા ઉત્તરાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે તદા લવણસમુદ્રે પૌરસ્ત્ય-પશ્ચિમે નૈવાસ્તિ અવસર્પિણી નૈવાસ્તિ ઉત્સર્પિણી શ્રમણાયુષ્મન્ ! । હન્ત, ગૌતમ ! યાવત્-શ્રમણાયુષ્મન્, ધાત-

ઉત્તર-હે ગૌતમ ! જંબૂદ્વીપ કી જો વક્તવ્યતા કહી હૈ, ચહી પૂરી વક્તવ્યતા લવણસમુદ્ર કી મી કહની ચાહિયે । વિશેષતા કેવલ ઉસમેં યહી હૈ કિ યહાં અભિલાપ ઇસ પ્રકાર સે જાનના-(હે ભદન્ત ! જિસ સમય લવણ સમુદ્ર કે દક્ષિણાર્ધ મેં દિવસ હોતા હૈ ઇત્યાદિ સય ઉસી પ્રકાર સે કહના ચાહિયે-યાવત્ તય લવણ સમુદ્ર મેં પૂર્વ પશ્ચિમ મેં રાત્રિ હોતી હૈ ” । ઇસ પ્રકાર કે અભિલાપ દ્વારા ઇસ વિષય સે સંબંધ રાખને વાલે પ્રશ્નોત્તર કહના ચાહિયે ।

પ્રશ્ન-હે ભદન્ત ! લવણ સમુદ્ર મેં જય દક્ષિણાર્ધ મેં પ્રથમ અવસર્પિણી કાલ હોતા હૈ તય ઉત્તરાર્ધ મેં મી પ્રથમ અવસર્પિણી કાલ હોતા હૈ ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં મી પ્રથમ અવસર્પિણી કાલ હોતા હૈ, તય લવણસમુદ્ર મેં પૂર્વ ઓર પશ્ચિમમેં ન અવસર્પિણીકાલ હોતા હૈ ઓર ન ઉત્સર્પિણીકાલ હી હોતા હૈ તો કયાવહાં કાલ અવસ્થિત પ્રકટ કિયા ગયા હૈ ?

ઉત્તર-હે ગૌતમ ! જંબૂદ્વીપના વિષયમાં જે વક્તવ્યતા કહી છે, એજ પ્રમાણેની પૂરેપૂરી વક્તવ્યતા લવણ સમુદ્રના વિષયમાં પણ સમજવી. વિશેષતા એટલી જ છે કે ત્યાં સૂત્રપાઠમાં આવતા ‘જંબૂદ્વીપને’ બદલે અહીં ‘લવણ સમુદ્ર’ સમજવો. જેમકે-“ હે ભદન્ત ! જ્યારે લવણસમુદ્રના દક્ષિણાર્ધમાં દિવસ હોય છે ” ઇત્યાદિ સમસ્ત કથન એ પ્રમાણે જ કહેવું. “ ત્યારે લવણ સમુદ્રમાં પૂર્વ-પશ્ચિમે રાત્રિ હોય છે, ” પર્યન્તનું કથન અહીં ગ્રહણ કરવું. આ પ્રકારના આલાપકો દ્વારા આ વિષય સાથે સંબંધ રાખતા પ્રશ્નોત્તરો અહીં કહેવા જોઈએ.

પ્રશ્ન-હે ભદન્ત ! લવણ સમુદ્રના દક્ષિણાર્ધમાં જ્યારે પ્રથમ અવસર્પિણી કાળ હોય છે, ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ પ્રથમ અવસર્પિણી કાળ હોય છે, અને ઉત્તરાર્ધમાં પ્રથમ અવસર્પિણી કાળ હોય છે, ત્યારે લવણ સમુદ્રની પૂર્વ અને પશ્ચિમમાં અવસર્પિણી કાળ પણ હોતો નથી અને ઉત્સર્પિણી કાળ પણ હોતો નથી. તો શું ત્યાં અવસ્થિત કાળ કહ્યો છે ?

ગૌતમ ! તદેવ ગાયત્ર-ઉચારયિતવ્યમ્, યાવત્-શ્રમણાયુષ્મન્ ! યથા અવસર્પિण्या આલાપકો મણિતઃ, એવમ્ ઉત્સર્પિण्याઽપિ મણિતવ્યઃ ।

તથા ચન્દ્રવિષયકસ્તૃતીયાલાપકથેત્યમ્-લ્ઘણે ભદન્ત ! સમુદ્રે ચન્દ્રો ઉદીચી-પ્રાચ્યામ્ ઉદ્ગત્ય પ્રાચી-દક્ષિણાયામ્ આગચ્છતઃ ? પ્રાચી-દક્ષિણાયામ્ ઉદ્ગત્ય દક્ષિણ-પ્રતીચ્યામ્ આગચ્છતઃ ? દક્ષિણ-પ્રતીચ્યામ્ ઉદ્ગત્ય પ્રતીચ્યુદીચ્યા માગચ્છતઃ ? પ્રતીચ્યુદીચ્યુદ્ગત્ય ઉદીચી-પ્રાચ્યામાગચ્છતઃ ? લઘણસમુદ્રે ચત્વારશ્વદ્રા ભવન્તિ તેષુ પ્રતિદિનં તત્ર ભાગદ્વયે ઢ્રો ચન્દ્રો આગચ્છતઃ, તદપેક્ષયા ' ઢ્રો ' ઇત્યુક્તમ્, યા એવ જમ્બુદ્વીપસ્ય વક્તવ્યતા મણિતા સા એવ અપરિશેષિકા

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! એસા હી હૈ-પૂર્વે કી તરહ સે હી યહાં સય કહ-લેના ચાહિયે-યાવત્ હે શ્રમણાયુષ્મન્ ! જિસ પ્રકાર સે અવસર્પિણી કે સંબંધ મેં આલાપક કહા હૈ-ઉસી પ્રકાર સે ઉત્સર્પિણી કે વિષય મેં બી આલાપક જાનના ચાહિયે ।

તથા—ચન્દ્ર કે વિષય મેં તૃતીય આલાપક હસ પ્રકાર સે હૈ-પ્ર૦-હે ભદન્ત ! લઘણસમુદ્ર મેં દો ચંદ્રમા ઈશાન કોણ મેં ઉદિત હોકર અગ્નિકોણ મેં જાતે હૈં કયા ? અગ્નિકોણ મેં ઉદિત હોકર નૈઋત્ય કોણ મેં જાતે હૈં કયા ? નૈઋત્ય કોણ મેં ઉદિત હાકર વાયવ્ય કોણ મેં જાતે હૈં કયા ? વાયવ્યકોણ મેં ઉદિત હોકર ઈશાન કોણ મેં જાતે હૈં કયા ? લઘ-ણસમુદ્ર મેં ચાર ચંદ્રમા હૈં । ઉનમેંસે પ્રતિદિન વહાં પર દો ભાગમેં દો ચંદ્ર ઉદિત હોતે હૈં-હસી અપેક્ષા કો લેકર (દો) એસા પાઠ કહા ગયા હૈ ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એવું જ છે. એટલે કે પ્રશ્નસૂત્ર પ્રમાણે જ અહીં સમસ્ત કથન સમજવું. જે પ્રકારે અવસર્પિણીના વિષયમાં આલાપક કહ્યો છે, એ જ પ્રમાણે ઉત્સર્પિણીના વિષયમાં પણ આલાપક સમજવો. તથા ચન્દ્રના વિષયમાં ત્રીજો આલાપક આ પ્રમાણે છે:—

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! લઘણ સમુદ્રમાં જે ચન્દ્રમા ઈશાન કોણમાં ઉદય પામીને શુ' અગ્નિકોણમાં જાય છે ? અગ્નિકોણમાં ઉદય પામીને શુ' નૈઋત્ય કોણમાં જાય છે ? નૈઋત્ય કોણમાં ઉદય પામીને શુ' વાયવ્ય કોણમાં જાય છે ? વાયવ્ય કોણમાં ઉદય પામીને શુ' ઈશાન કોણમાં જાય છે ? (લઘણ સમુદ્રમાં ચાર ચન્દ્રમા છે. તેમાંથી પ્રતિદિન ત્યાં જે ભાગમાં જે ચન્દ્ર ઉદય પામે છે, તે કારણે સૂત્રપાઠમાં 'જે ચન્દ્ર' કહ્યા છે.)

લવણસમુદ્રસ્યાપિ ભણિતવ્યા, નવરમ્-અભિજ્ઞાપોઽયં જ્ઞાતવ્યઃ-યદા ભદન્ત ! લવણે સમુદ્રે દક્ષિણાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ, તદેવ યાવત્-તદા લવણસમુદ્રે પૌરસ્ત્ય-પશ્ચિમે દિવસો ભવતિ, एतेन અભિજ્ઞાપેન જ્ઞાતવ્યમ્ । યદા ભદન્ત ! લવણસમુદ્રે દક્ષિણાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે, તદા ઉત્તરાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે ? યદા ઉત્તરાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી પ્રતિપદ્યતે તદા લવણસમુદ્રે પૌરસ્ત્ય-પશ્ચિમે નૈવાસ્તિ અવસર્પિણી નૈવાસ્તિ ઉત્તર્સર્પિણી શ્રમણાયુષ્મન્ ! । હન્ત, ગૌતમ ! યાવત્-શ્રમણાયુષ્મન્, યાત-

ઉત્તર-હે ગૌતમ ! જંબૂદ્વીપ કી જો વક્તવ્યતા કહી હૈ, વહી પૂરી વક્તવ્યતા લવણસમુદ્ર કી ખી કહની ચાહિયે । વિશેષતા કેવલ ઉસમેં યહી હૈ કિ યહાં અભિલાપ હસ પ્રકાર સે જાનના-(હે ભદન્ત ! જિસ સમય લવણ સમુદ્ર કે દક્ષિણાર્ધ મેં દિવસ હોતા હૈ ઇત્યાદિ સય ઉસી પ્રકાર સે કહના ચાહિયે-યાવત્ તય લવણ સમુદ્ર મેં પૂર્વ પશ્ચિમ મેં રાત્રિ હોતી હૈ " । હસ પ્રકાર કે અભિલાપ દ્વારા હસ વિષય સે સંબંધ રાખને ઘાહે પ્રશ્નોત્તર કહના ચાહિયે ।

શ્રુત-હે ભદન્ત ! લવણ સમુદ્ર મેં જય દક્ષિણાર્ધ મેં પ્રથમ અવસર્પિણી કાલ હોતા હૈ તય ઉત્તરાર્ધ મેં ખી પ્રથમ અવસર્પિણી કાલ હોતા હૈ ઓર જય ઉત્તરાર્ધ મેં ખી પ્રથમ અવસર્પિણી કાલ હોતા હૈ, તય લવણસમુદ્ર મેં પૂર્વ ઓર પશ્ચિમમેં ન અવસર્પિણીકાલ હોતા હૈ ઓર ન ઉત્તર્સર્પિણીકાલ હી હોતા હૈ તો કયાવહાં કાલ અવસ્થિત પ્રકટ કિયા ગયા હૈ ?

ઉત્તર-હે ગૌતમ ! જંબૂદ્વીપના વિષયમાં જે વક્તવ્યતા કહી છે, એજ પ્રમાણેની પૂરેપૂરી વક્તવ્યતા લવણ સમુદ્રના વિષયમાં પણ સમજવી. વિશેષતા એટલી જ છે કે ત્યાં સૂત્રપાઠમાં આવતા 'જંબૂદ્વીપને' બદલે અહીં 'લવણ સમુદ્ર' સમજવો. જેમકે-" હે ભદન્ત ! જ્યારે લવણસમુદ્રના દક્ષિણાર્ધમાં દિવસ હોય છે " ઇત્યાદિ સમસ્ત કથન એ પ્રમાણે જ કહેવું. " ત્યારે લવણ સમુદ્રમાં પૂર્વ-પશ્ચિમે રાત્રિ હોય છે, " પર્યંતનું કથન અહીં ગ્રહણ કરવું. આ પ્રકારના આલાપકો દ્વારા આ વિષય સાથે સંબંધ રાખતા પ્રશ્નોત્તરો અહીં કહેવા નોંધજો.

શ્રુત-હે ભદન્ત ! લવણ સમુદ્રના દક્ષિણાર્ધમાં જ્યારે પ્રથમ અવસર્પિણી કાળ હોય છે, ત્યારે ઉત્તરાર્ધમાં પણ પ્રથમ અવસર્પિણી કાળ હોય છે, અને ઉત્તરાર્ધમાં પ્રથમ અવસર્પિણી કાળ હોય છે, ત્યારે લવણ સમુદ્રની પૂર્વ અને પશ્ચિમમાં અવસર્પિણી કાળ પણ હોતો નથી અને ઉત્તર્સર્પિણી કાળ પણ હોતો નથી. તો શું ત્યાં અવસ્થિત કાળ કહ્યો છે ?

કીલ્ખણે મદન્ત ! ચન્દ્રો ઉદીચી-પ્રાચ્યામુદ્ગત્ય યાવત્ - પ્રતીચ્યુદીચ્યા મુદ્ગત્ય ઉદીચી-પ્રાચ્યામાગચ્છતઃ ? ગૌતમ ! યથૈવ જમ્બૂદ્વીપસ્ય વક્તવ્યતા મણિતા, સા એવ ધાતકીલ્ખણસ્યાપિ મણિતવ્યા, નવરમ્-અનેન અભિલાપેન સર્વે અભિલાપાઃ મણિતવ્યાઃ- યદા મદન્ત ! ધાતકીલ્ખણે દ્વીપે દક્ષિણાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ ? યદા ઉત્તરાર્ધે રાત્રિર્ભવતિ તદા ધાતકીલ્ખણે દ્વીપે મન્દરાણાં પર્વતાનાં પૌરસ્ત્ય-પશ્ચિમે દિવસો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! એવમેવ યાવત્-પૌરસ્ત્ય-

હે ગૌતમ ! હાં, વહાં પર इसी प्रकार से है यावत् हे अमणा-युष्मन् ! इत्यादि ।

પ્રશ્ન-હે મદન્ત ! ધાતકીલ્ખણમાં દ્વાદશ ચંદ્રમા ઈશાનકોણે ઉદિત હોઈને અગ્નિકોણે જાય છે કે નહીં ? અગ્નિકોણે ઉદિત હોઈને નૈઋત્યકોણે જાય છે કે નહીં ? નૈઋત્યકોણે ઉદિત હોઈને વાયવ્યકોણે જાય છે કે નહીં ? વાયવ્યકોણે ઉદિત હોઈને ઈશાનકોણે જાય છે કે નહીં ?

ઉત્તર-હે ગૌતમ ! હસ વિષયમાં જૈસી વક્તવ્યતા જમ્બૂદ્વીપ કો લેઈને કહી ગઈ છે તેવી પ્રકારે વક્તવ્યતા યહાં પર ખી કહલેની ચાહિયે. વિશેષતા કેવલ હસ વક્તવ્યતામાં તેસ વક્તવ્યતા કી અપેક્ષા હતની હી છે કે જમ્બૂદ્વીપ કે સ્થાન પર હસ વક્તવ્યતામાં (ધાતકીલ્ખણ) શબ્દ કા ઉચ્ચારણ કરના ચાહિયે

પ્રશ્ન-હે મદન્ત ! જય ધાતકીલ્ખણદ્વીપમાં દક્ષિણાર્ધમાં રાત્રિ હોતી છે, તય ઉત્તરાર્ધમાં ખી રાત્રિ હોતી છે ઓર જય ઉત્તરાર્ધમાં રાત્રિ હોતી છે, તય ધાતકીલ્ખણ દ્વીપમાં મન્દરપર્વતો કી પૂર્વપશ્ચિમ દિશામાં દિવસ હોતા છે કે નહીં ?

ઉત્તર-હા, ગૌતમ ! ત્યાં એ પ્રમાણે જ છે. (હે શ્રમણ આયુષ્મન્ ! યથાન્તરું સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન અહીં અહણ કરવું.)

પ્રશ્ન-હે ભદ્રન્ત ! ધાતકીખંડમાં બાર ચન્દ્રમા શું ઈશાન કોણમાં ઉદય પામીને અગ્નિ કોણમાં જાય છે ? અગ્નિ કોણમાં ઉદય પામીને શું નૈઋત્ય કોણમાં જાય છે ? નૈઋત્યમાં ઉદય પામીને શું વાયવ્યમાં જાય છે ? વાયવ્ય કોણમાં ઉદય પામીને શું ઈશાન કોણમાં જાય છે ?

ઉત્તર-હા, ગૌતમ ! આ વિષયમાં જમ્બૂદ્વીપની વક્તવ્યતા એવી જ વક્તવ્યતા સમજવી. તે વક્તવ્યતામાં ' જમ્બૂદ્વીપની ' જગ્યાએ ' ધાતકીખંડ ' પણ મૂકવાથી ધાતકીખંડ વિષેના પ્રશ્નોત્તરો તૈયાર થશે. જેમકે-“ હે ભદ્રન્ત ! જ્યારે ધાતકીખંડના દક્ષિણાર્ધમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ રાત્રિ હોય છે ? અને જ્યારે ઉત્તરાર્ધમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે ધાતકીખંડ દ્વીપમાં મન્દર પર્વતની પૂર્વ-પશ્ચિમે શું દિવસ હોય છે ? ”

પશ્ચિમે દિવસો ભવતિ । યદા ભદન્ત ! ધાતકીઁલ્લંદે દ્વીપે મન્દરયોઃ પર્વતયોઃ પૌરસ્ત્યે રાત્રિર્ભવતિ, તદા પશ્ચિમેઽપિ રાત્રિર્ભવતિ ? યદા પશ્ચિમેઽપિ તદા ધાતકીઁલ્લંદે દ્વીપે મન્દરયોઃ પર્વતયોઃ ઉત્તરે દક્ષિણે દિવસો ભવતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! યાવત્-ઉત્તર-દક્ષિણે દિવસો ભવતિ, એમ્ એતેન અભિગ્રાપેન જ્ઞાતવ્યં યાવત્, યદા ભદન્ત ! દક્ષિણાર્ધે પ્રથમા અવસર્પિણી તદા ઉત્તરાર્ધેઽપિ ? યદા ઉત્તરાર્ધે તદા ધાતકીઁલ્લંદે દ્વીપે મન્દરયોઃ પર્વતયોઃ પૌરસ્ત્ય પશ્ચિમે નાસ્તિ અવસર્પિણી યાવત્-શ્રમણાયુષ્મન્ !

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! એસા હી હોતા હૈ । યાવત્ પૂર્વપશ્ચિમદિશા મેં દિવસ હોતા હૈ ।

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! ધાતકી ઇલ્લંદ દ્વીપ મેં જય દો મન્દરપર્વતોં કી પૂર્વદિશા મેં રાત્રિ હોતી હૈ તય પશ્ચિમ મેં બી કયા રાત્રિ હોતી હૈ ? ઔર જય પશ્ચિમ મેં રાત્રિ હોતી હૈ તય ધાતકીઁલ્લંદ દ્વીપ મેં મન્દરપર્વતોં કી ઉત્તર ઔર દક્ષિણ દિશા મેં દિવસ હોતા હૈ કયા ?

ઉત્તર—હાં ગૌતમ ! યાવત્ ઉત્તર ઔર દક્ષિણ દિશા મેં દિવસ હોતા હૈ । હસ તરહ હસ અભિલાપ દ્વારા જાનના ચાહિયે યાવત્—

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! જય દક્ષિણાર્ધ મેં પ્રથમ અવસર્પિણી હોતી હૈ તય ઉત્તરાર્ધ મેં બી પ્રથમ અવસર્પિણી હોતી હૈ । ઔર જય ઉત્તરાર્ધ મેં પ્રથમ અવસર્પિણી હોતી હૈ, તય ધાતકીઁલ્લંદ દ્વીપ મેં મન્દર પર્વતોં કી પૂર્વપશ્ચિમ દિશા મેં અવસર્પિણી નહીં હોતી, ઉત્સર્પિણી બી નહીં હોતી—તો કયા હૈ શ્રમણાયુષ્મન્ વહાં કાલ અવસ્થિત માના ગયા હૈ ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એવું જ બને છે. એટલે કે પ્રશ્નમાં કહ્યા પ્રમાણે જ સમસ્ત કથન અહીં ગ્રહણ કરવું.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! ધાતકીજંડ દ્વીપના બે મન્દર પર્વતોની પૂર્વ દિશામાં જ્યારે રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું પશ્ચિમમાં પણ રાત્રિ હોય છે ? અને જ્યારે પશ્ચિમમાં રાત્રિ હોય છે, ત્યારે શું ધાતકીજંડ દ્વીપના મન્દર પર્વતોની ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશામાં દિવસ હોય છે ?

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એ પ્રમાણે જ હોય છે. એટલે કે " ઉત્તર દક્ષિણ દિશામાં દિવસ હોય છે, " ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન અહીં ગ્રહણ કરવું.

હે ભદન્ત ! જ્યારે ધાતકીજંડ દ્વીપના દક્ષિણાર્ધમાં પ્રથમ અવસર્પિણી હોય છે, ત્યારે શું ઉત્તરાર્ધમાં પણ પ્રથમ અવસર્પિણી હોય છે ? અને ઉત્તરાર્ધમાં પ્રથમ અવસર્પિણી હોય છે, ત્યારે મન્દર પર્વતોની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં અવસર્પિણી પણ હોતી નથી અને ઉત્સર્પિણી પણ હોતી નથી. તો હે શ્રમણાયુષ્મન્ ! શું ત્યાં અવસ્થિત કાળ કહ્યો છે ?

इन्त, गौतम ! यावत्-श्रमणायुष्मन् ! यथा-लवणसमुद्रस्य वक्तव्यता तथा कालो-
दस्यापि वक्तव्यता भणितव्या, नवरम्-कालोदस्य नाम भणितव्यम्, अभ्यन्तर-
पुष्करार्धे भदन्त ! चन्द्रो उदीची - प्राच्याम् उद्गस्य यावत्-उदीची-प्राच्या
मागच्छतः ? गौतम ! यथैव धातकीखण्डस्य वक्तव्यता तथैव अभ्यन्तरपुष्करार्ध-
स्यापि भणितव्या, नवरम्-अभिलोपो ज्ञातव्यः, यावत्-तदा अभ्यन्तरपुष्करार्धे
मन्दरयोः पर्वतयोः पौरस्त्य-पश्चिमे नैवास्ति अवसर्पिणी, नैवास्ति उत्सर्पिणी,

उत्तर—हां गौतम ! इसी तरह से है यावत् श्रमणायुष्मन् ! जिस प्रकार से लवणसमुद्र की यह वक्तव्यता कही है, उसी प्रकार से कालोद संबंधी वक्तव्यता भी जाननी चाहिये । विशेषता केवल यही है कि लवणसमुद्र के स्थानपर पाठ के उच्चारण करते समय (कालोद) इस शब्द का प्रयोग करना चाहिये ।

प्रश्न—हे भदन्त ! आभ्यन्तरपुष्करार्ध में दो चन्द्रमा ईशानकोण से उदित होकर अग्निकोण में जाते हैं क्या ? अग्निकोण से उदित होकर नैऋत्यकोण में जाते हैं क्या ? नैऋत्यकोण से उदित होकर वायव्यकोण में जाते हैं क्या ? वायव्य कोण से उदित होकर ईशान कोण में जाते हैं क्या ? हे गौतम ! इस विषय में जैसी धातकीखण्ड को लेकर कही गई है वैसी ही वक्तव्यता आभ्यन्तर पुष्पकरार्धके विषय में भी जाननी चाहिये । विशेषता केवल यही है । कि धातकीखण्ड शब्दके बदले इस वक्त-

ઉત્તર—હા, ગૌતમ ! એવું જ છે. શ્રમણાયુષ્મન્ પર્યન્તનું સમસ્ત કથન અહીં અહંણ કરવું. લવણ સમુદ્રની આ વક્તવ્યતા પ્રમાણે જ કાલોદની વક્તવ્યતા પણ સમજવી. વિશેષતા એટલી જ છે કે સૂત્રપાઠમાં લવણ સમુદ્રને બદલે ' કાલોદ ' શબ્દનો પ્રયોગ કરવો.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધમાં જો ચન્દ્રમા શું ઈશાન કોણમાંથી ઉદય પામીને અગ્નિ કોણમાં જાય છે ? અગ્નિ કોણમાં ઉદય પામીને શું નૈઋત્યમાં જાય છે ? નૈઋત્યમાં ઉદય પામીને શું વાયવ્ય કોણમાં જાય છે ? શું વાયવ્યમાં ઉદય પામીને ઈશાનમાં જાય છે ?

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! આ વિષયને અનુલક્ષીને ધાતકીખંડના વિષયમાં જે પ્રમાણે કહ્યું છે, એ જ પ્રમાણે આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધના સંબંધમાં પણ સમજવું. આ કથનમાં વિશેષતા એટલી જ છે કે ' ધાતકીખંડ ' શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તેને બદલે અહીં " આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધ " શબ્દનો પ્રયોગ કરવો. આ પ્રમાણે ફેરફાર કરીને પ્રશ્નોત્તરો બનાવવા ભેષજો. ક્યાં સુધી તે કથનને અહંણ

અવસ્થિતસ્ત્ર કાલઃ પ્રજ્ઞસઃ શ્રમણાયુષ્મન્ । સૂત્રે વહુવચન કથનેન લવણસમુદ્રે
ચત્વારઃ સૂર્યાઃ ચત્વારચન્દ્રાઃ, તથા ધાતકીલ્ખંડે દ્વાદશસૂર્યા દ્વાદશ ચન્દ્રાશ્વ
વક્તવ્યાઃ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

इति पञ्चमशतकस्य दशमोद्देशकः समाप्तः ॥ ५-१०

इति श्री चिन्धविख्यात - जगद्वल्लभ - प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलि-
तललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैरुग्रन्यनिर्मापक-वादिमानमर्दक-
श्रीशाह छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित-
कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री
घासीलालव्रतिविरचितार्या श्री भगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां पञ्चमं शतकं समाप्तम् ॥१०॥

વ્યતા મેં આમ્યન્તર પુષ્કરાર્ધ શબ્દ કા ઉચ્ચારણ કર પાઠ બોલના
ચાહિયે । યાવત્ આમ્યન્તર પુષ્કરાર્ધ મેં મંદરો કી પૂર્વ પશ્ચિમદિશા મેં
અવસર્પિણી કાલ નહીં હોતા હૈ ઓર ઉત્સર્પિણી કાલ મી નહીં હોતા હૈ
ક્યોં કિ વહાં પર કોલ અવસ્થિત કહા ગયા હૈ । સૂત્રમેં વહુવચનકે કથન
સે લવણસમુદ્ર મેં ચાર સૂર્ય ચંદ્રમા હૈં તથા ધાતકી લ્ખંડ મેં ૧૨ વારહ
સૂર્ય ૧૨ વારહ ચંદ્રમા હૈં યહ વાત પ્રતિપાદિત હુઈ હૈ ॥ સૂ૦૧ ॥

શ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મ દિવાકર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત " ભગવ-
તીસૂત્ર " કી પ્રમેયચન્દ્રિકા વ્યાખ્યાકે પાંચવે શતકકા દશવા
ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૫-૧૦ ॥

કરવું, તે બતાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે-“ આમ્યન્તર પુષ્કરાર્ધમાં મન્દર
પર્વતોની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં અવસર્પિણી કાળ હોતો નથી અને ઉત્સર્પિણી
કાળ પણ હોતો નથી, કારણ કે ત્યાં અવસ્થિત કાળ કહ્યો છે, ” અહીં સુધીનું
કથન ગ્રહણ કરવું. સૂત્રમાં બહુવચનનો પ્રયોગ થયેલો હોવાથી એ વાતનું
પ્રતિપાદન થાય છે કે લવણ સમુદ્રમાં ચાર સૂર્ય અને ચાર ચન્દ્રમા છે, તથા
ધાતકી ખંડમાં બાર સૂર્ય અને બાર ચન્દ્રમા છે. ॥ સૂત્ર ૧ ॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ભગવતી સૂત્રની પ્રમેયચ-
ન્દ્રિકા વ્યાખ્યાના પાંચમા શતકનો દશમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૫-૧૦॥

અન્ત, ગૌતમ ! યાવત્-શ્રમણાયુષ્મન્ ! યથા-લવણસમુદ્રસ્ય વક્તવ્યતા તથા કાલોદ-
 દસ્યાપિ વક્તવ્યતા મણિતવ્યા, નવરમ્-કાલોદસ્ય નામ મણિતવ્યમ્, અભ્યન્તર-
 પુષ્કરાર્ધે ભદન્ત ! ચન્દ્રો ઉદીચી - માઘ્યામ્ ઉદ્ગત્ય યાવત્-ઉદીચી-માઘ્યા
 માગચ્છતઃ ? ગૌતમ ! યથૈવ ધાતકીલ્ખંડસ્ય વક્તવ્યતા તથૈવ અભ્યન્તરપુષ્કરાર્ધ-
 સ્યાપિ મણિતવ્યા, નવરમ્-અભિલોપો જ્ઞાતવ્યઃ, યાવત્-તદા અભ્યન્તરપુષ્કરાર્ધે
 મન્દરયોઃ પર્વતયોઃ પૌરસ્ત્ય-પથિમે નૈવાસ્તિ અવસર્પિણી, નૈવાસ્તિ ઉત્સર્પિણી,

ઉત્તર--હાં ગૌતમ ! इसी तरह से है यावत् श्रमणायुष्मन् ! जिस
 प्रकार से लवणसमुद्र की यह वक्तव्यता कही है, उसी प्रकार से कालोद
 संबंधी वक्तव्यता भी जाननी चाहिये। विशेषता केवल यही है कि
 लवणसमुद्र के स्थानपर पाठ के उच्चारण करते समय (कालोद) इस
 शब्द का प्रयोग करना चाहिये।

પ્રશ્ન-હે ભદન્ત ! આભ્યન્તરપુષ્કરાર્ધે મેં દો ચન્દ્રમા ઈશાનકોણ સે
 ઉદિત હોકર અગ્નિકોણ મેં જાતે હું કયા ? અગ્નિકોણ સે ઉદિત હોકર
 નૈઋત્યકોણ મેં જાતે હું કયા ? નૈઋત્યકોણ સે ઉદિત હોકર વાયવ્યકોણ
 મેં જાતે હું કયા ? વાયવ્ય કોણ સે ઉદિત હોકર ઈશાન કોણ મેં જાતે હું
 કયા ? હે ગૌતમ ! इस विषय में जैसी धातकीलखंड को लेकर कही गई
 है वैसी ही वक्तव्यता आभ्यन्तर पुष्पकरार्धके विषय में भी जाननी
 चाहिये। विशेषता केवल यही है। कि धातकीलखंड शब्दके बदले इस वक्त-

ઉત્તર--હા, ગૌતમ ! એવું જ છે. શ્રમણાયુષ્મન્ પર્યન્તતું સમસ્ત કથન
 અહીં અહંબુ કરવું. લવણ સમુદ્રની આ વક્તવ્યતા પ્રમાણે જ કાલોદની વક્ત-
 વ્યતા પણ સમજવી. વિશેષતા એટલી જ છે કે સૂત્રપાઠમાં લવણ સમુદ્રને
 બદલે 'કાલોદ' શબ્દનો પ્રયોગ કરવો.

પ્રશ્ન--હે ભદન્ત ! આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધમાં જે ચન્દ્રમા શુ' ઈશાન કોણ-
 માંથી ઉદય પામીને અગ્નિ કોણમાં જાય છે ? અગ્નિ કોણમાં ઉદય પામીને શુ'
 નૈઋત્યમાં જાય છે ? નૈઋત્યમાં ઉદય પામીને શુ' વાયવ્ય કોણમાં જાય છે ?
 શુ' વાયવ્યમાં ઉદય પામીને ઈશાનમાં જાય છે ?

ઉત્તર--હે ગૌતમ ! આ વિષયને અતુલક્ષીને ધાતકીલખંડના વિષયમાં જે
 પ્રમાણે કહ્યું છે, એ જ પ્રમાણે આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધના સંબંધમાં પણ સમજવું.
 આ કથનમાં વિશેષતા એટલી જ છે કે 'ધાતકીલખંડ' શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો
 છે તેને બદલે અહીં "આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધ" શબ્દનો પ્રયોગ કરવો. આ
 પ્રમાણે ફરકાર કરીને પ્રશ્નોત્તરો બનાવવા લેઈએ. કયાં સુધી તે કથનને અહંબુ

અવસ્થિતસ્તત્ર કાલઃ પ્રશ્નઃ શ્રમણાયુષ્મન્ । સૂત્રે વહુવચન કથનેન લવણસમુદ્રે
ચત્વારઃ સૂર્યાઃ ચત્વારશ્ચન્દ્રાઃ, તથા ધાતકીલ્ખંડે દ્વાદશસૂર્યા દ્વાદશ ચન્દ્રાશ્ચ
વક્તવ્યાઃ ॥ સુ૦ ૧ ॥

इति पञ्चमशतकस्य दशमोद्देशकः समाप्तः ॥ ५-१०

इति श्री विश्वविख्यात - जगद्वल्लभ - प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलि-
तललितकलापालापक-प्रविशुद्भगवत्प्रनैरुग्रन्यनिर्मापक-वादिमानमर्दक-
श्रीशाह छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित-
कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री
घासीलालप्रतिचिरचितायां श्री भगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां पञ्चमं शतकं समाप्तम् ॥१०॥

વપતા મેં આખ્યન્તર પુષ્કરાર્થ શબ્દ કા ઉચ્ચારણ કર વાઠ યોલના
ચાહિયે । યાવત્ આખ્યન્તર પુષ્કરાર્થ મેં મંદરો કી પૂર્વ પશ્ચિમદિશા મેં
અવસર્પિણી કાલ નહીં હોતા હૈ ઓર ઉત્સર્પિણી કાલ ખી નહીં હોતા હૈ
કયોં કિ વહાં પર કાલ અવસ્થિત કહા ગયા હૈ । સૂત્રમેં વહુવચનકે કથન
સે લવણસમુદ્ર મેં ચાર સૂર્ય ચંદ્રમા હૈં તથા ધાતકી લ્ખંડ મેં ૧૨ ચારહ
સૂર્ય ૧૨ ચારહ ચંદ્રમા હૈં યહ વાત પ્રતિપાદિત હુઈ હૈ ॥ સુ૦ ૧ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर श्री घासीलालजी महाराजकृत “भगव-
तीसूत्र”की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके पांचवे शतकका दशवा

उद्देशक समाप्त ॥ ५-१०॥

કરવું, તે બતાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે-“ આખ્યન્તર પુષ્કરાર્થમાં મન્દર
પર્વતોની પૂર્વ-પશ્ચિમ દિશામાં અવસર્પિણી કાળ હોતો નથી અને ઉત્સર્પિણી
કાળ પણ હોતો નથી, કારણ કે ત્યાં અવસ્થિત કાળ કહ્યો છે, ” અહીં સુધીનું
કથન ગ્રહણ કરવું. સૂત્રમાં બહુવચનનો પ્રયોગ થયેલો હોવાથી એ વાતનું
પ્રતિપાદન થાય છે કે લવણ સમુદ્રમાં ચાર સૂર્ય અને ચાર ચન્દ્રમા છે, તથા
ધાતકી ખંડમાં બાર સૂર્ય અને બાર ચન્દ્રમા છે. ॥ સૂત્ર ૧ ॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ભગવતી સૂત્રની પ્રમેયચ-

ન્દ્રિકા વ્યાખ્યાના પાંચમા શતકનો દશમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૫-૧૦॥

इन्त, गौतम ! यावत्-श्रमणायुष्मन् ! यथा-लवणसमुद्रस्य वक्तव्यता तथा कालो-
दस्यापि वक्तव्यता भणितव्या, नवरम्-कालोदस्य नाम भणितव्यम्, अभ्यन्तर-
पुष्करार्थे भदन्त ! चन्द्रो उदीची - माघ्याम् उद्गस्य यावत्-उदीची-माघ्या
मागच्छतः ? गौतम ! यथैव धातकीखण्डस्य वक्तव्यता तथैव अभ्यन्तरपुष्करार्थ-
स्यापि भणितव्या, नवरम्-अभिलोपो ज्ञातव्यः, यावत्-तदा अभ्यन्तरपुष्करार्थे
मन्दरयोः पर्यतयोः पौरस्त्य-पथिमे नैवास्ति अवसर्पिणी, नैवास्ति उत्सर्पिणी,

उत्तर--हां गौतम ! इसी तरह से है यावत् श्रमणायुष्मन् ! जिस
प्रकार से लवणसमुद्र की यह वक्तव्यता कही है, उसी प्रकार से कालोद
संबंधी वक्तव्यता भी जाननी चाहिये। विशेषता केवल यही है कि
लवणसमुद्र के स्थानपर पाठ के उच्चारण करते समय (कालोद) इस
शब्द का प्रयोग करना चाहिये।

प्रश्न-हे भदन्त ! आभ्यन्तरपुष्करार्थ में दो चन्द्रमा ईशानकोण से
उदित होकर अग्निकोण में जाते हैं क्या ? अग्निकोण से उदित होकर
नैऋत्यकोण में जाते हैं क्या ? नैऋत्यकोण से उदित होकर वायव्यकोण
में जाते हैं क्या ? वायव्यकोण से उदित होकर ईशान कोण में जाते हैं
क्या ? हे गौतम ! इस विषय में जैसी धातकीखण्ड को लेकर कही गई
है वैसी ही वक्तव्यता आभ्यन्तरपुष्करार्थके विषय में भी जाननी
चाहिये। विशेषता केवल यही है। कि धातकीखंड शब्दके बदले इस वक्त-

उत्तर--હા, ગૌતમ ! એવું જ છે. શ્રમણાયુષ્મન્ પર્યન્તનું સમસ્ત કથન
અહીં અહંણુ કરવું. લવણ સમુદ્રની આ વક્તવ્યતા પ્રમાણે જ કાલોદની વક્ત-
વ્યતા પણ સમજવી. વિશેષતા એટલી જ છે કે સૂત્રપાઠમાં લવણ સમુદ્રને
બદલે 'કાલોદ' શબ્દનો પ્રયોગ કરવો.

પ્રશ્ન--હે ભદન્ત ! આભ્યન્તર પુષ્કરાર્થમાં બે ચન્દ્રમા શુ' ઈશાન કોણ-
માંથી ઉદય પામીને અગ્નિ કોણમાં જાય છે ? અગ્નિ કોણમાં ઉદય પામીને શુ'
નૈઋત્યમાં જાય છે ? નૈઋત્યમાં ઉદય પામીને શુ' વાયવ્ય કોણમાં જાય છે ?
શુ' વાયવ્યમાં ઉદય પામીને ઈશાનમાં જાય છે ?

ઉત્તર--હે ગૌતમ ! આ વિષયને અનુલક્ષીને ધાતકીખંડના વિષયમાં જે
પ્રમાણે કહ્યું છે, એ જ પ્રમાણે આભ્યન્તર પુષ્કરાર્થના સંબંધમાં પણ સમજવું.
આ કથનમાં વિશેષતા એટલી જ છે કે 'ધાતકીખંડ' શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો
છે તેને બદલે અહીં "આભ્યન્તર પુષ્કરાર્થ" શબ્દનો પ્રયોગ કરવો. આ
પ્રમાણે ફેરફાર કરીને પ્રશ્નોત્તરો બનાવવા બેઠાએ. ક્યાં સુધી તે કથનને અહંણુ

॥ પષ્ટં શતકમ્ ॥

॥ પષ્ટશતકે પ્રથમોદ્દેશકસ્ય સંક્ષિપ્તવિષયવિચરણમ્ ॥

પ્રથમં પષ્ટશતકસ્થસર્વોદ્દેશકાર્થસંગ્રહાય ગાથાયાઃ પ્રતિપાદનમ્—

વેદના ૧ આહાર ૨ મહાસ્રવ ૩ સંપ્રદેશ ૪ તમસ્કાય ૫ ભવ્ય ૬ શાલિ
પૃથિવીકર્મ ૭-અન્યતીર્થિકા ૧૦ એતે વિષયાપ્રતિપાદિતા સન્તિ ।

અથ પ્રથમોદ્દેશકાર્થ માહ-મહાવેદનાવન્તો મહાનિર્જરાવન્તો ભવન્તિ, મહાનિ-
ર્જરાવન્તો મહાવેદનાવન્તો ભવન્તિ ? इति प्रश्नोत्तरम् ।

છટ્ટાશતક કે પહલા ઉદ્દેશા કા પ્રારંભ

इस छठे शतक के प्रथम उद्देशक में जो विषय प्रतिपादित किया गया है-उसका संक्षिप्त विचरण इस प्रकार से है-सब से पहिले इसमें (वेद्य-आहार) यह गाथा कही गई है-इसमें वेदना (१) आहार (२) महास्रव (३) सम्प्रदेश (४) तमस्काय (५) भव्य (६) शालि (७) पृथिवी (८) कर्म (९) अन्यतीर्थिक (१०) ये विषय जो कि दश उद्देशकों में प्रतिपादित किये गये हैं उनका संग्रह किया गया है (वेदना) यह प्रथम शब्द है इसका अर्थ ऐसा है-कि जो महावेदना वाले होते हैं वे महानिर्जरा वाले होते हैं या नहीं होते हैं-तथा जो महानिर्जरा वाले होते हैं वे महावेदनावाले होते हैं, या नहीं होते हैं ऐसा प्रश्न-और फिर

છટ્ટા શતકનો પ્રારંભ

શતક-૬ ઉદ્દેશક-૧

છટ્ટા શતકના ઉદ્દેશકમાં જે વિષયનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે, તેનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન નીચે પ્રમાણે છે-સૌથી પહેલાં તેમાં “ વેદના-આહાર ” આદિ ગાથા કહી છે. આ ગાથામાં દસ ઉદ્દેશાઓમાં જે દસ વિષયોનું પ્રતિ-
પાદન કરવામાં આવ્યું છે, તે વિષયો કહ્યા છે. તે દસ વિષયો નીચે પ્રમાણે છે.

(૧) વેદના, (૨) આહાર, (૩) મહાસ્રવ, (૪) સંપ્રદેશ, (૫) તમસ્કાય, (૬) ભવ્ય, (૭) શાલિ, (૮) પૃથ્વી, (૯) કર્મ અને (૧૦) અન્યતીર્થિક.

“ વેદના ઉદ્દેશક ” નામના પહેલા ઉદ્દેશકમાં એવો પ્રશ્ન પૂછ્યો કે “ જેઓ મહાવેદનાવાળા હોય છે, તેઓ શું મહાનિર્જરાવાળા હોય છે કે નથી હોતા ? તથા જેઓ મહાનિર્જરાવાળા હોય છે, તેઓ મહાવેદનાવાળા હોય છે કે નથી હોતા ? આ પ્રશ્નનો જવાબ આપ્યો છે :—

તતો મહાવેદના-અલ્પવેદનયોર્મધ્યે પ્રશસ્તનિર્જરાવાન્ શ્રેષ્ઠઃ इति प्रतिपादनम् ।
 તતઃ પૃષ્ઠી-સમ્પ્રયોઃ પૃથિવ્યોર્નિવાસિનાં નૈરયિકાણાં મહાવેદનાવચ્ચપ્રતિપાદનમ્ ।
 મહાવેદનાવતામપિ નૈરયિકાણાં શ્રમણનિર્ગ્રન્થાપેક્ષયા અલ્પનિર્જરત્વકથનમ્, તત્ત્વ
 કર્દમરાગરક્તપત્તરાગરક્તવસ્ત્રયોર્દૃષ્ટાન્તયોપન્યાસઃ । નૈરયિકાણાં પાપકર્મણાં
 ચિક્ષ્ણત્વેન દુર્ધાવ્યત્વે અયોધનસ્ય દૃષ્ટાન્તીકરણમ્ । શ્રમણનિર્ગ્રન્થાનાં તુ કર્મણાં
 શુક્તજપુણ્ણાન્યોઃ, જલચિન્દુ-સંતપ્તાયસ્કટાહયોથ દૃષ્ટાન્તવયા પ્રતિપાદનમ્,
 તતો મનોવચઃકાયકર્મરૂપકરણાનાં ચતુર્વિધાનામ્ પ્રતિપાદનમ્ । નૈરયિકાણાં
 પંચેન્દ્રિયાણાં ચ જીરાનામ્ ઉપર્યુક્તચતુર્વિધકરણપ્રતિપાદનમ્ । એકેન્દ્રિ-
 યાણાં કાય-કર્મરૂપદિકરણકથનમ્ । વિકલેન્દ્રિયાણાં વચન-કાય-કર્મરૂપત્રિક-

इसका उत्तर महावेदनावालों और अल्पवेदनो वालों के बीच में प्रश-
 स्तनिर्जरावाला श्रेष्ठ है, ऐसा कथन छद्मी और सान्त्विके नारकोंके महा-
 वेदना का कथन; महावेदनावाले नारकों में श्रमणनिर्ग्रन्थों की अपेक्षा
 अल्पनिर्जरावच्च का प्रतिपादन, कर्दमराग से रक्त और पतङ्गरागसे
 रक्त वस्त्र का दृष्टान्त प्रदर्शन नारक जीवों के पापकर्म चिकने
 होते हैं इस कारण वे दुर्धाव्य होते हैं अर्थात्-कर्मका धोना बहुत
 ही कठिन होता है इस विषय में एरण का दृष्टान्त-श्रमणनिर्ग्र-
 न्थों के कर्म-क्षपण के विषयमें शुक्लतृणपुञ्ज और अग्नि का, जलचि-
 न्दु का, संतप्त लोहे के कटाह का दृष्टान्त, मन, वचन, काय और कर्म
 इन चार प्रकार के करणों का कथन, नारकों के और पंचेन्द्रिय जीवों
 के इन चार करणों का प्रतिपादन एकेन्द्रिय जीवों के काय और कर्म-
 रूप दो करण होते हैं ऐसा कथन विकलेन्द्रिय जीवों के वचन, काय

કથું છે કે મહાવેદનાવાળા અને અલ્પ વેદનાવાળા કરતાં પ્રશસ્ત નિર્જરાવાળા
 શ્રેષ્ઠ છે. છદ્મી અને સાત્ત્વિકી પૃથ્વી (નરકો) ના નારકોની મહાવેદનાતું કથન,
 મહાવેદનાવાળા નારકોમાં શ્રમણ નિર્ગ્રંથોની અપેક્ષાએ અલ્પ નિર્જરાયુક્ત
 કથન, કર્દમરાગથી રક્ત અને (પાંચનરાગ) પતંગ રાગથી રક્ત અને મદ્ધિન
 વસ્ત્રનું દૃષ્ટાંત, નારકોના પાપકર્મ ચિક્ષણ હોય છે અને તે કારણે તે કર્મોને
 ધોઈ નાખવાનું કાય કથન કઠિન હોય છે, આ વિષયના પ્રતિપાદન માટે
 એણનું દૃષ્ટાંત. શ્રમણ નિર્ગ્રંથોના કર્મોને ક્ષય કેવી રીતે થાય છે તે બતા-
 વવા માટે સૂકા તૃણપુણ્ણું, અગ્નિનું, જળચિન્દુનું અને તપાવેલી લોખંડની કડાહીનું
 દૃષ્ટાંત. મન, વચન, અને કર્મ, એ ચાર પ્રકારનાં કરણોનું કથન. નારકો અને
 પંચેન્દ્રિય જીવોનાં તે ચાર કરણોનું પ્રતિપાદન એકેન્દ્રિય જીવોને કાય અને
 કર્મરૂપ એ કરણ હોય છે એવું કથન, વિકલેન્દ્રિય જીવોને વચન, કાય અને

॥ पण्डं शतकम् ॥

॥ पण्डશતકે પ્રથમોદ્દેશકસ્ય સંક્ષિપ્તવિષયવિવરણમ્ ॥

પ્રથમં પણ્ડશતકસ્યસર્વોદ્દેશકાર્થસંગ્રહાય ગાથાયાઃ પ્રતિપાદનમ્—

વેદના ૧ અહાર ૨ મહાસ્રવ ૩ સંપ્રદેશ ૪ તમસ્કાય ૫ ભવ્ય ૬ શાલિ
પૃથિવીકર્મા ૯-અન્યતીર્થિકા ૧૦ एते विषयाप्रतिपादिता सन्ति ।

અથ પ્રથમોદ્દેશકાર્થ માહ-મહાવેદનાવન્તો મહાનિર્જરાવન્તો ભવન્તિ, મહામિ-
ર્જરાવન્તો મહાવેદનાવન્તો ભવન્તિ ? इति प्रश्नोत्तरम् ।

छद्वाशतक के पहला उद्देश का प्रारंभ

इस छठे शतक के प्रथम उद्देशक में जो विषय प्रतिपादित किया गया है-उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार से है-सब से पहिले इसमें (वेयण-आहार) यह गाथा कही गई है-इसमें वेदना (१) आहार (२) महोस्रव (३) संप्रदेश (४) तमस्काय (५) भव्य (६) शालि (७) पृथिवी (८) कर्म (९) अन्यतीर्थिक (१०) ये विषय जो कि दश उद्देशकों में प्रतिपादित किये गये हैं उनका संग्रह किया गया है (वेदना) यह प्रथम शब्द है इसका अर्थ ऐसा है-कि जो महावेदना वाले होते हैं वे महानिर्जरा वाले होते हैं या नहीं होते हैं-तथा जो महानिर्जरा वाले होते हैं वे महावेदनावाले होते हैं, या नहीं होते हैं ऐसा प्रश्न-और फिर

छठ्ठा शतकનો પ્રારંભ

શતક-૬ ઉદ્દેશક-૧

છઠ્ઠા શતકના ઉદ્દેશકમાં જે વિષયનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે, તેનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન નીચે પ્રમાણે છે-સૌથી પહેલાં તેમાં " વેયણ-આહાર " આદિ ગાથા કહી છે. આ ગાથામાં દસ ઉદ્દેશાઓમાં જે દસ વિષયોનું પ્રતિ-
પાદન કરવામાં આવ્યું છે, તે વિષયો કહ્યા છે. તે દસ વિષયો નીચે પ્રમાણે છે.

(૧) વેદના, (૨) આહાર, (૩) મહાસ્રવ, (૪) સંપ્રદેશ, (૫) તમસ્કાય, (૬) ભવ્ય, (૭) શાલિ, (૮) પૃથ્વી, (૯) કર્મ અને (૧૦) અન્યતીર્થિક.

" વેદના ઉદ્દેશક " નામના પહેલા ઉદ્દેશકમાં એવો પ્રશ્ન પૂછયો કે " જેઓ મહાવેદનાવાળા હોય છે, તેઓ શું મહાનિર્જરાવાળા હોય છે કે નથી હોતા ? તથા જેઓ મહાનિર્જરાવાળા હોય છે, તેઓ મહાવેદનાવાળા હોય છે કે નથી હોતા ? આ પ્રશ્નનો હેતુ આપ્યો છે; તથા એક પ્રતિપાદન

પશ્ચમે શતકં વિવિધવર્ણનતયા વ્યાખ્યાતમ્, અથ અવસર સંગત્યા માપ્તં
પષ્ટં શતકમપિ વિવિધવર્ણનતયૈવ વિવિચ્યતે, તસ્ય ચ પષ્ટશતકસ્ય દશો-
દેશકાર્થસંગ્રહગાથામાહ- 'વેયણ' इत्यादि ।

મૂલ-વેયણ-આહાર-મહસ્સવે ચ. સપણસં-તમુયાણ-ભવિસણ ચ ।

સાલી પુદ્ગલી કમ્મં, અન્નઉત્થિં દસ છટ્ટગમ્મિ સણ" ॥૧॥

છાયા-વેદના ૧-ડડહાર ૨-મહાસ્રવાથ ૩-સપ્રદેશ ૪-તમસ્કાયો ૫ ભવ્યશ્ચ ૬ ।
શાક્ષિ: ૭, પૃથ્વી ૮, કર્મ ૯ અન્યયુથિકા ૧૦ દશ પષ્ટકે શતકે ।

ટીકા-વેદના મહાવેદના મહાનિર્જરા इत्याद्यર્થપ્રતિપાदनપરતયા પ્રથમ: ઉદે-
શક: ૧, આહાર:-ગ્રાહારાચર્યાભિધાપકો દ્વિતીય: ૨ મહાસ્રવથ-મહાસ્રવ-

વેદના ૧, આહાર ૨, મહાઆસ્રવ ૩, સપ્રદેશ ૪, તમસ્કાય ૫, ભવ્ય
૬, શાક્ષી ૭, પૃથ્વી ૮, કર્મ ૯ ઓર અન્યયુથિક વક્તવ્યતા ચે ૧૦
ઉદેશક હસ છટે શતક મેં હેં ।

વિચત્ર અર્થવાળે પાંચવેં શતક કી વ્યાખ્યા હો ચુકી અથ અવ-
સર પ્રાપ્ત છટે શતક કા કિ ત્રિસમેં વિવધ પ્રકાર કા વર્ણન હૈ
વિવેચન પ્રારંભ હોતા હૈ-હસ છટે શતક મેં દસ ૧૦ ઉદેશક હેં । इन
दस १० उद्देशकों में क्या २ विषय प्रतिपादिन हुआ है इस बात को
कहने वाली यह संग्रह गथा है-प्रथम उद्देशक का नाम वेदना है-इसमें
महावेदना महानिर्जरा इत्यादि अर्थ का प्रतिपादन किया गया है इस
कारण इसका नाम वेदना उद्देशक ऐसा हुआ है । आहार-इस उद्देशक

આ છટ્ટા શતકમાં નીચે પ્રમાણે હસ ઉદેશકો છે-(૧) વેદના (૨) આહાર,
(૩) મહાઆસ્રવ, (૪) સપ્રદેશ, (૫) તમસ્કાય, (૬) ભવ્ય, (૭) શાક્ષી,
(૮) પૃથ્વી, (૯) કર્મ અને (૧૦) અન્યયુથિક વક્તવ્યતા.

ટીકા-વિચિત્ર અર્થવાળા પાંચમાં શતકની વ્યાખ્યા પૂરી થઈ. હવે
છટ્ટા શતકની શરૂઆત થાય છે. આ શતકમાં વિવિધ વિષયોનું પ્રતિપાદન થયું
છે છટ્ટા શતકના હસ ઉદેશક છે. હસે ઉદેશકમાં કયા કયા વિષયનું પ્રતિપાદન
કરવામાં આવ્યું છે, એ ઉપયુક્ત સંગ્રહ ગાથામાં કહ્યું છે. પહેલા ઉદેશકનું
'વેદના' છે, કારણ કે તેમાં મહાવેદના, મહાનિર્જરા વગેરે વિષયોનું પ્રતિ-
પાદન કરવામાં આવ્યું છે. બીજા ઉદેશકને 'આહાર ઉદેશક' કહ્યો છે, કારણ

રણાનિ । તતો નૈરયિકાગાં કરણદ્વારા અશાતાવેદના, અસુરકુમારાદિ યાત્રત્
સ્તનિતકુમારપર્યન્તાનાં તુ કરણદ્વારા શાતાવેદના । પૃથિવીકાયાનામ્, ઔદારિ-
કશરીરચતાં દેવાનાં ચ વિપયે તદ્વિચારચર્ચા, । તતો મહાવેદના-મહાનિર્જરા,-
મહાવેદના-અલ્પનિર્જરા, અલ્પવેદના-મહાગુનીનાં મહાવેદના-મહાનિર્જરા, પૃષ્ઠી-
સપ્તમ્યોઃ પૃથિવ્યોઃ વાસિનાં નૈરયિકાણાત્ મહાવેદના-અલ્પનિર્જરા, શૈલેશીકરણ-
યોગચતામ્ અનગારાણામ્ અલ્પવેદના-મહાનિર્જરા, અનુત્તરોપપાતિકદેવાનામ્ અલ્પ-
વેદના-અલ્પનિર્જરા ભવન્તીતિ પ્રતિપાદનમ્ । તતો ગૌતમસ્ય ભગવદ્વાન્યસ્વીક-
રણમ્ । સંગ્રહગાથા, ઉદ્દેશસમાપ્તિશ્ચ ॥

और कर्म ये तीन करण होते हैं ऐसा कथन नारक जीवों के करणद्वारा
आशातावेदना, असुरकुमार से लेकर स्तनितकुमारों तक के दोनों के
करण द्वारा शातावेदना पृथिवीकायों के औदारिक शरीरवालों के और
देवों के विषय में इसके विचार की चर्चा महावेदना, महानिर्जरा, महा-
वेदना अल्पनिर्जरा, अल्पवेदना महानिर्जरा अल्पवेदना अल्पनिर्जरा,
ऐसा कथन, प्रतिमाधारी मुनियों के महावेदना महानिर्जरा, और सात-
वीं पृथिवीमें रहने वाले नारकोंमें महावेदना और अल्पनिर्जरा, शैलेशी-
करण योगवाले अनगारों के अल्पवेदना महानिर्जरा और अनुत्तरोप-
पातिक देवों के अल्पवेदना अल्पनिर्जरा होती है ऐसा कथन गौतमद्वारा
भगवान् के वचनों का स्वीकरण, संग्रह गाथा उद्देशसमाप्ति ।

સંગ્રહ ગાથા—

“ वेयण १ आहार २ महस्सवे ३ य सपपस ४ तमुयाए ५ भविए ६ य ।
साली ७ पुढवी ८ कम्म ९ अन्नउत्थि १० दस छट्ठगम्मिसए ॥ १॥ ”

કર્મરૂપ ત્રણ કરણ હોય છે એવું કથન. નારક જીવોને કરણ દ્વારા અશાતા
વેદના, અસુરકુમારોથી સ્તનિતકુમારો પર્યન્તના દેવોને કરણ દ્વારા શાતા વેદના.
પૃથિવિકાયો, ઔદારિક શરીરવાળા અને દેવોના વિષયમાં આ બાબત (કરણ)
ની ચર્ચા. મહાવેદના મહાનિર્જરા, મહાવેદના અલ્પ નિર્જરા, અલ્પ વેદના
મહાનિર્જરા, અલ્પ વેદના અલ્પનિર્જરા, ઇત્યાદિનું કથન. પ્રતિમાધારી મુનિ-
ઓમાં મહાવેદના મહાનિર્જરા, છઠ્ઠી અને સાતમી નરકના નારકોમાં મહાવેદના
અને અલ્પનિર્જરા, શૈલેશીકરણ યોગવાળા અણુગારોમાં અલ્પ વેદના અને મહા-
નિર્જરા. અનુત્તરોપપાતિક દેવોમાં અલ્પ વેદના અને અલ્પનિર્જરા થાય છે એવું
કથન. ગૌતમ દ્વારા ભગવાનનાં વચનોનો સ્વીકાર, સંગ્રહ ગાથા, ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ.

સંગ્રહગાથા—

वेयण १, आहार २, महस्सवे ३, य सपपस ४, तमुयाए ५, भविए ६ य, ।
साली ७, पुढवी ८, कम्म ९, अन्नउत्थि १०, दस छट्ठगम्मिसए ॥ १ ॥

વેદના-નિર્જરા-વ્રતવ્યતા

મહાવેદનાં મહાનિર્જરાં ચ સ્વરૂપતઃ કલતથ નિરૂપયિતુમાદ 'સે ણૂં ભંતે' ૬૦

મૂલમ્—સે ણૂં ભંતે ! જે મહાવેયણે સે મહાનિજરે, જે મહાનિજરે સે મહાવેયણે, મહાવેયણસ્સ ય, અપ્પવેયણસ્સ ય સે સેએ જે પસત્થનિજરાણ ? હંતા, ગોયમા ! જે મહાવેયણે એવંચેવ । છટ્ટિ-સત્તમાસુ ણં ભંતે! પુઢવીસુ નેરડયા મહાવેયણા ? હંતા મહાવેયણા તેણં ભંતે! સમણેહિંતો નિગંથેહિંતો મહાનિજરતરા ?! ગોયમા! ણો ઇણદે સમદે । સે કેણદેણં ભંતે ! એવં વુચ્ચડ-જે મહાવેયણે, જાવ-પસત્થનિજરાણ ?! ગોયમા ! સે જહા નામણ દુવે વત્થા સિયા, એગેવત્થે કદ્દમરાગરત્તે, એગે વત્થે યંજણરાગરત્તે, એણિ ણં ગોયમા! દોણં વત્થાણં કયરે વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચેવ, દુવામતરાણ ચેવ, દુપ્પરિકમ્મતરાણ ચેવ, કયરે વા વત્થે સુદ્ધોયતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ, સુપરિકમ્મતરાણ ચેવ, જે વા સે વત્થે કદ્દમરાગરત્તે, જે વા સે વત્થે યંજણરાગરત્તે ? । ભયવં ! તત્થ ણં જે વત્થે કદ્દમરાગરત્તે, સે ણં ભંતે ! વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચેવ, દુવામતરાણ ચેવ, દુપ્પરિકમ્મતરાણ ચેવ । એવામેવ ગોયમા ! નેરડયા-ણં પાવાઈં કમ્માઈં ગાઢીકયાઈં, ચિક્કણીકયાઈં, સિલિટ્ટીકયાઈં, ચિલીભૂયાઈં ભવંતિ, સંપગાઢં પિ ય ણં તે વેયણં વેણમાણાણો મહાનિજરા, નો મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ । સે જહા વા કેડ પુરિસે

કરને વાલા અન્યયૂથિક નામકા ૧૦ વાં ઉદ્દેશક હૈ । હસ પ્રકાર યે ૧૦ દસ ઉદ્દેશક હસ છઠે શતક મેં કહે ગયે હૈં ।

તીર્થિકાની વ્રતવ્યતાનું નિરૂપણ કર્યું છે તેથી તેને 'અન્યયૂથિક' ઉદ્દેશક કહ્યો છે. આ પ્રકારના હસ ઉદ્દેશાઓ આ છઠ્ઠા શતકમાં છે.

સમ્પન્નસ્ય પુદ્ગલા વ્યવન્તે, इत्याद्यर्थाभिधानपरतया तृतीयः ३, सप्रदेशः-स-
प्रदेशो जीवः, अप्रदेशो वा ? इत्याद्यर्थाभिधायकतया चतुर्थः ४, तमस्कायः-तम-
स्कायार्थाभिधानपरतया पञ्चमः ५, भव्यः-मनुष्यत्वेन नैयिकस्यादिना वा
उत्पत्तियोग्यस्य निरूपणपरतया षष्ठः ६, शालिः-शाल्यादिधान्यवस्तव्यता परतया
सप्तमः ७, पृथिवी-रत्नप्रभादिपृथिवीवस्तव्यतापरोऽष्टमः ८, कर्म-कर्मवन्धा-
भिधायकतया नवमः ९, अन्ययुधिकाः-अन्यतीर्थिकवस्तव्यतानिरूपणार्थो दशमः १०
उद्देशकाः प्रतिपादिताः षष्ठके शतके ॥ १ ॥ इति

મેં આહાર આદિ કા વર્ણન ક્રિયા ગયા છે ફસલિયે ફસકા નામ આહાર
ઉદ્દેશક છે યહ દૂસરા ઉદ્દેશક છે મહાશ્વ વાલે કે પુદ્ગલોં કા વંધ હોતા
છે ફસ અર્થ કો કહને વાલા મહાશ્વ ઉદ્દેશક છે યહ તૃતીય ઉદ્દેશક છે ।
જીવ પ્રદેશ સહિત છે યા અપ્રદેશ-પ્રદેશ રહિત છે ફત્યાદિ અર્થકા કથન
કરને વાલા સપ્રદેશ ઉદ્દેશક છે યહ ચતુર્થ ઉદ્દેશક છે । તમસ્કાય સંબંધી
અર્થ કા વિવેચન કરને વાલા યહ તમસ્કાય ઉદ્દેશક છે યહ પાંચવાં
ઉદ્દેશક છે, જો જીવ મનુષ્યરૂપ સે અથવા નારકરૂપ સે ઉત્પન્ન હોને કે
યોગ્ય હોતા છે યહ ભવ્ય કહા ગયા છે-ફસ ભવ્ય કા કથન કરને વાલે
યહ ભવ્ય. ઉદ્દેશક છે-યહ છઠા ઉદ્દેશક છે । શાલિ આદિ ધાન્ય કી
વસ્તવ્યતા કરને વાલા શાલિ ઉદ્દેશક છે-યહ સાતવાં ઉદ્દેશક છે । રતન-
પ્રભા આદિ પૃથિવીયોં કા કથન કરને વાલા પૃથિવી ઉદ્દેશક છે યહ
આઠવાં ઉદ્દેશક છે । કર્મવન્ધ કા કથન કરને વાલા કર્મ ઉદ્દેશક છે,
યહ નવવાં ઉદ્દેશક છે ઓર અન્યતીર્થિક જનોં કી વસ્તવ્યતા કા નિરૂપણ

કે તેમાં આહાર વગેરેનું વર્ણન કરાયું છે. ત્રીજા ઉદ્દેશકને ‘મહા આશ્વ
ઉદ્દેશો’ કહ્યો છે, કારણ કે આ ઉદ્દેશમાં એ વાતનું પ્રતિપાદન થયું છે કે મહા
આશ્વવાળા એવા કર્મનો બંધ કરતા હોય છે. ચોથા ઉદ્દેશને ‘સપ્રદેશ
ઉદ્દેશ’ કહ્યો છે, કારણ કે આ ઉદ્દેશમાં એવ પ્રદેશ સહિત છે કે પ્રદેશરહિત
છે એ બતાવ્યું છે. તમસ્કાય સંબંધી અર્થનું વિવેચન કરનાર પાંચમા ઉદ્દે-
શનું નામ ‘તમસ્કાય ઉદ્દેશ’ છે. જે એવ મનુષ્ય રૂપે અથવા નારક રૂપે
ઉત્પન્ન થવાને યોગ્ય હોય છે, તેને ભવ્ય કહે છે. છઠા ઉદ્દેશમાં તે ભવ્યનું
પ્રતિપાદન કર્યું છે, તેથી તેને ‘ભવ્ય ઉદ્દેશક’ કહ્યો છે. સાતમા ઉદ્દેશમાં
શાલિ (એક બીજાના ચોખા) આદિ ધાન્યનું વર્ણન કર્યું છે. તેથી તેને
‘શાલિ ઉદ્દેશક’ કહ્યો છે. આઠમાં ઉદ્દેશમાં રતનપ્રભા આદિ પૃથ્વીચોખાનું નિરૂ-
પણ કર્યું છે તેથી તેને પૃથ્વી ઉદ્દેશક કહ્યો છે. નવમાં ઉદ્દેશકમાં કર્મવંધનું
વર્ણન કર્યું છે, તેથી તેને કર્મ ઉદ્દેશક કહ્યો છે. દસમાં ઉદ્દેશમાં અન્ય

દન્ત, ગૌતમ ! યો મહાવેદનઃ એવમેવ । પૃથ્વી-સપ્તમ્યોઃ ભદન્ત ! પૃથિવ્યોઃ નૈરપિકા મહાવેદનાઃ ? દન્ત, મહાવેદનાઃ, તે સ્વલુ ભદન્ત ! ત્રમણેભ્યો નિર્ગંથેભ્યો મહાનિર્જરતરાઃ ? ગૌતમ ! નો અયમર્થઃ સમર્થઃ । તત્ કેનાર્થેન ભદન્ત ! એવમ્

વેદના-નિર્જરા-વસ્ત્ર વક્તવ્યતા-

‘ સે જૂણં મંતે ! ’ इत्यादि ॥

સૂત્રાર્થ—(સે જૂણં મંતે ! જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે, જે મહાનિજ્જરે સે મહાવેયણે, મહાવેયણસ્સ ય અપ્પવેયણસ્સ ય સે સેણ જે પસત્થનિજ્જરાણ ?) હે ભદન્ત ! જો મહાવેદના વાલા હોતા હૈં વહ મહાનિર્જરા વાલા હોતા હૈં કયા ? તથા જો મહાનિર્જરાવાલા હોતા હૈં વહ મહાવેદના વાલા હોતા હૈં કયા ? તથા જો મહાવેદનાવાલા એવં અલ્પવેદના વાલા હૈં—ઝનમેં કયા વહ જીવ ઉત્તમ હૈં જો પ્રશસ્ત નિર્જરા વાલા હોતા હૈં ? (હંતા, ગોયમા ! જે મહાવેયણે એવં ચેવ) હાં ગૌતમ ! જો મહાવેદના વોલા હોતા હૈં ઝસી પ્રકાર જાનના ચાહિયે હૈં । (છટ્ટિ-સત્તમાસુ ણં મંતે ! પુઢવીસુ નેરહ્યા મહાવેયણા) હે ભદન્ત ! છટ્ટી ઔર સાતવી પૃથિવી મેં નારક જીવ કયા મહાવેદના વાલે હોતે હૈં ? (હંતા, મહાવેયણા) હાં ગૌતમ ! છટ્ટી ઔર સાતવી પૃથિવી મેં નારક જીવ મહાવેદન વાલે હોતે હૈં । (તેણં મંતે ! સમણેહિતો નિગ્ગંથેહિતો મહાનિજ્જરતરા) હે ભદન્ત ! છટ્ટી ઔર સાતવી પૃથિવી મેં રહને વાલે નારક

વેદના-નિર્જરા-વસ્ત્રવક્તવ્યતા—

“ સે જૂણં મંતે ! ” इत्यादि.

સૂત્રાર્થ—(સે જૂણં મંતે ! જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે જે મહાનિજ્જરે સે મહાવેયણે, મહાવેયણસ્સ ય અપ્પવેયણસ્સ ય સે સેણ જે પસત્થનિજ્જરાણ ?) હે ભદન્ત ! જે એવ મહાવેદનાવાણો હોય છે તે શું મહાનિર્જરાવાણો હોય છે ? તથા જે એવ મહાનિર્જરાવાણો હોય છે તે શું મહાવેદનાવાણો હોય છે ? તથા મહાવેદનાવાણા અને અલ્પવેદનાવાણા એવાની અપેક્ષાએ શું એ એવ ઉત્તમ છે કે જે પ્રશસ્ત નિર્જરાવાણો હોય છે ? (હંતા ગોયમા ! જે મહાવેયણે એવં ચેવ) હા, ગૌતમ ! એવું જ અને છે. “ જે મહાવેદનાવાણો હોય છે ” ત્યાંથી લઇને સમસ્ત પ્રશ્નોક્ત કથન અહીં અહણ કરવું. (છટ્ટી-સત્તમાસુ ણં મંતે ! પુઢવીસુ નેરહ્યા મહાવેયણા ?) હે ભદન્ત ! છટ્ટી અને સાતમી નરકના નારકો શું મહાવેદનાવાણા હોય છે ? (હંતા મહાવેયણા) હા, ગૌતમ ! છટ્ટી અને સાતમી નરકના નારકો મહાવેદનાવાણા હોય છે. (તેણં મંતે ! સમણેહિતો નિગ્ગંથેહિતો મહાનિજ્જરતરા

अहिगरणि आउडेमाणे महया महया सवेणं, महया महया
घोसेणं, महया महया परंपराघाएणं णो संचाएइ तीसे अहि-
गरणीए केई अहावायरे पोग्गले परिसाडित्तए, एवामेव गोयमा !
नेरइयाणं पावाइं कम्माइं गाढीकयाइं, जाव-णो महापज्जव-
साणा भवंति । भयवं ! तत्थ जे से वत्थे खंजणरागरत्ते से
णं वत्थे सुद्धोयतराए चेव, सुवामतराए चेव, सुपरिकम्मताराए
चेव । एवामेव गोयमा ! समणाणं निगंथाणं अहावायराइं
कम्माइं सिढिलीकयाइं, निट्टियाइं कडाइं त्रिप्परिणामियाइं
खिप्पामेव विद्धत्थाइं भवंति, जाव तियं तावतियं पि ते वेयणं
वेएमाणा महानिज्जरा, महापज्जवसाणा भवंति । से जहा नामए
केइ पुरिसे सुक्कं तणहत्थयं जायतेयंसि पक्खिवेज्जा, से णूणं
गोयमा ! से सुक्कं तणहत्थए जायतेयंसि पक्खित्ते समाणे
खिप्पामेव मसमसाविज्जइ ? हंता, मसमसाविज्जइ । एवामेव
गोयमा ! समणाणं निगंथाणं अहावायराइं कम्माइं, जाव-
महापज्जवसाणा भवंति । से जहा नामए केइ पुरिसे तत्तंसि
अयकवेल्लुयंसि उदगविंदुं, जाव-हंता, विद्धंसं आगच्छइ । एवा-
मेव गोयमा ! समणाणं निगंथाणं, जाव - महापज्जवसाणा
भवंति, से तेणट्ठेणं जे महावेयणे से महानिज्जरे जाव-
पसत्थनिज्जराए ॥ सू० १ ॥

छाया-तद् नूनं भदन्त ! यो महावेदनः स महानिर्जरः यो, महानिर्जरः स
महावेदनः, महावेदनस्य च, अल्पवेदनस्य च स श्रेयान् यः प्रशस्तनिर्जरकः ?

યદા તદ્ વચ્ચં કર્દમરાગસ્ત્વં, યદા તદ્ વચ્ચં સ્વજનરાગસ્ત્વમ્? । મદન્ત ! તત્ર યત્ તદ્ વચ્ચં કર્દમરાગસ્ત્વં તન્ સ્વલુ મદન્ત ! વચ્ચં દુર્ધૌતતરકં ચૈવ, દુર્વામ્પતરકં ચૈવ, દુષ્પરિકર્મતરકં ચૈવ । एवमेव गौतम ! नैरयिकाणां पापानि कर्माणि गाढीकृतानि, चिकणीकृतानि, श्लिष्टीकृतानि, खिलीभूतानि, भवन्ति, संपगाढमपि च

તરાણ ચેવ) કૌનસા વચ્ચ સુધૌતતર, સુવામ્પતર ઓર સુપરિકર્મતર હોગા (જે વા સે વત્થે કર્દમરાગસ્ત્વે જે વા સે વત્થે સ્વજનરાગસ્ત્વે ?) અર્થાત્ હે ગૌતમ ! જો વચ્ચ કર્દમરાગ સે રક્ત હો ઓર જો વચ્ચ સ્વજનરાગ સે રક્ત હો તો इनमें कौन सा दुःशोध्य और कौन सा सुशोध्य होगा-कहो- (भगवं । तत्थ णं जे से वत्थे कर्दमरागस्ते, से णं भंते ! वत्थे दुद्धोयतराण चैव, दुवामतराण चैव, दुष्परिकम्मताराण चैव) हे भगवन् ! इन दोनों वच्चों में से जो वच्च कर्दमरंग से रंगा हुआ होगा हे भदन्त ! वही वच्च दुर्धौततर, दुर्वाम्पतर और दुष्परिकर्मतर होगा, (एवमेव गोयमा ! नैरइयाणं पाचाइं कम्माइं गाढीकपाइं चिकणीकयाइं, सिलिटीकयाइं खिलीभूयाइं भवन्ति) इसी तरह से हे गौतम ! नैर-यिकों के पापकर्म गाढीकृत होते हैं, चिकणीकृत होते हैं, श्लिष्टीकृत होते हैं, और खिलीभूत होते हैं । (संपगाढं पि य णं ते वेयणं वेयमाणा

રાણ ચેવ, સુપરિકર્મતરાણ ચેવ ?) કથુ' વચ્ચ ધોવામાં વધારે સરલતા રહેશે ? કયા વચ્ચ ઉપરના ડાઘ કાઢવા સરળ પડશે ? કયા વચ્ચ પર ચિત્રાલેખન આદિ કરવું સરળ થઈ પડશે ? (જે વા સે વત્થે કર્દમરાગસ્ત્વે જે વા સે વત્થે સ્વજનરાગસ્ત્વે ?) એટલે કે હે ગૌતમ ! કીચડથી ખરડાયેલા અને ખંજનરાગથી રંગેલા વસ્ત્રોમાંથી કથુ' વચ્ચ દુઃશોધ્ય (મુશ્કેલીથી ધોઈ શકાય એવું) હશે, અને કથુ' વચ્ચ સુશોધ્ય (સરળતાથી સાફ કરી શકાય એવું) હશે ? (ભગવં તત્ત્વળં જે સે વત્થે કર્દમરાગસ્ત્વે, સે ણં ભંતે ! વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચેવ, દુવામતરાણ ચેવ, દુષ્પરિકર્મતરાણ ચેવ) હે ભગવાન ! તે જાનને વસ્ત્રોમાંથી જે વચ્ચ કીચડથી ખરડાયેલું હશે, તે મુશ્કેલીથી ધોઈ શકાય તેવું, મુશ્કેલીથી ડાઘ દૂર કરાય તેવું અને મુશ્કેલીથી ચિત્રાલેખન કરી શકાય એવું હશે. (एवमेव गोयमा ! नैरइयाणं पाचाइं कम्माइं गाढीकयाइं, चिकणीकयाइं, सिलिटीकयाइं, खिलीभूयाइं भवन्ति) હે ગૌતમ ! એજ પ્રમાણે નારકોનાં પાપ કર્મ ગાઢી કૃત (હૃદતાથી સંબદ્ધ) ચીકણા, શ્લિષ્ટીકૃત (એકએકથી અલગ ન કરી શકાય તેવા) અને ખિલીભૂત (ભોગવ્યા વિના જેનો નાશ ન થઈ શકે તેવા) હોય છે. (संपगाढं पि य णं ते वेयणं वेयमाणा जो महानिज्जरा, जो महापज्जवसाणा भवन्ति)

ઉચ્ચતે-પો મહાવેદનઃ યાવત્-મગ્ધસ્તનિર્જરકઃ ? ગૌતમ ! તદ્ યયા નામ દ્વે વચ્ચે
 સ્યાતામ્, એકં વચ્ચં કર્દમરાગરક્તમ્, એકં વચ્ચં સ્વજનરાગરક્તમ્, એતયોઃ સ્વલુ ગૌતમ !
 દ્વયોઃ વચ્ચયોઃ કતરદ્ વચ્ચં દુર્ધોતતરકં ચૈવ, દુર્ધોમ્પતરકં ચૈવ, દુષ્પરિકર્મતરકં
 ચૈવ, કતરદ્ વા વચ્ચં સુધોતતરકં ચૈવ, સુધામ્પતરકં ચૈવ, સુપરિકર્મતરકં ચૈવ

જીવ કયા શ્રમણનિર્ગ્રન્થોં કી અપેક્ષા મહાનિર્જરાચાલે હોતે હેં ? (ગોયમા !
 નો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ. (સે કેળદ્દેળં
 મંતે ! એવં વુચ્ચહ જે મહાવેયણે જાવ પસથનિજ્જરાણ) હે ભદન્ત ! એસા
 આપ કિસ કારણ સે કહતે હેં કિ જો મહાવેદનાચાલા હોતા હૈ યાવત્
 પ્રશસ્ત નિર્જરાચાલા હોતા હૈ ? (ગોયમા ! સે જહાનામણ દુવે વત્થા સિયા,
 એગે વત્થે કદ્દમરાગરક્તે, એગે વત્થે સ્વજનરાગરક્તે, એણસિ ણં ગોયમા !
 દોણહં વત્થાણં કયરે વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચૈવ, દુધામતરાણ ચૈવ) હે ગૌતમ !
 જૈસે દો વચ્ચ હોં-ઇનમેં એક વચ્ચ કર્દમરાગ સે રંગા હુઆ હો ઓર દુસરા
 વચ્ચ સ્વજન રંગ સે રંગા હુઆ હો તો કહો ગૌતમ ! ઇન દોનોં મેં સે કોન
 સા વચ્ચ દુર્ધોતતર-વહી સુધિકલ સે જિસકા રંગ ધોકર દૂર કિયા જા
 સકે એસા હોતા, હૈ દુર્ધોમ્પતર-જિસકે ધવ્વે દુઃખ સે દૂર કિયે જા
 સકે એસા હોગા (દુષ્પરિકર્મતરાણ ચૈવ) ઓર દુષ્પરિકર્મતર-જિસમેં
 કઠિનાઈ સે ચિત્ર કી અઢ્ઢન આદિ ક્રિયાઈ કી જા સકેં એસા હોગા ?
 તથા (કયરે વા વત્થે સુદ્ધોયતરાણ ચૈવ, સુધામતરાણ ચૈવ, સુપરિકર્મ-

હે ભદન્ત ! શુ' છઠ્ઠી અને સાતમી નરકના નારકો શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો કશતાં મહા
 નિર્જરાવાળા હોય છે ? (ગોયમા ! નો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! એવું હે.તું
 નથી. એટલે કે તેઓ શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો કશતાં મહા નિર્જરાવાળા હોતા નથી.
 (સે કેળદ્દેળં મંતે ! એવં વુચ્ચહ ? જે મહાવેયણે જાવ પસથનિજ્જરાણ) હે
 ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે “ જે મહાવેદનાવાળા હોય છે ”
 (યાવત્) “ પ્રશસ્ત નિર્જરાવાળા હોય છે ?)

(ગોયમા ! સે જહાનામણ દુવે વત્થા સિયા, એગે વત્થે કદ્દમરાગરક્તે, એગે
 વત્થે સ્વજનરાગરક્તે, એણસિ ણં ગોયમા ! દોણહં વત્થાણં કયરે વત્થે દુદ્ધોયતરાણ
 ચૈવ, દુધામતરાણ ચૈવ) હે ગૌતમ ! ધારો કે જે વચ્ચ છે, તેમાંનું એક વચ્ચ
 કીચડથી ખરડાયેલું છે અને બીજું વચ્ચ (ખજનરાગથી રંગેલું)
 પતંગ રંગથી, તો હે ગૌતમ ! તે બન્ને વચ્ચમાંથી કયા વચ્ચને ધોવામાં
 વધારે મુશ્કેલી પડશે ? અને કયા વચ્ચપરના ડાઘ દૂર કરવામાં વધારે
 મુશ્કેલી પડશે ? (દુષ્પરિકર્મતરાણ ચૈવ) અને કયા વચ્ચપર ચિત્રાલેખન આદિ
 કરવું વધારે મુશ્કેલ થશે ? તથા (કયરે વા વત્થે સુદ્ધોયતરાણ ચૈવ, સુધામત-

યદા તદ્ વશ્વં કર્દમરાગસ્તત્, યદા તદ્ વશ્વં સ્વજનરાગસ્તત્? । ભદન્ત । તત્ યત્ તદ્ વશ્વં કર્દમરાગસ્તત્ તત્ સ્વજન ભદન્ત! વશ્વં દુર્ધૌતતરકં ચૈવ, દુર્વામ્યતરકં ચૈવ, દુષ્પરિકર્મતરકં ચૈવ । एवमेव गौतम ! नैरयिकाणां पापानि कर्माणि गाढीकृतानि, चिकणीकृतानि, श्लिष्टीकृतानि, खिलीभूतानि, भवन्ति, संपगाढामपि च

તરાણ ચેવ) કૌનસા વચ્ચ સુધૌતતર, સુવામ્યતર ઓર સુપરિકર્મતર હોગા (જે વા સે વત્યે કર્દમરાગસ્તે જે વા સે વત્યે સ્વજનરાગસ્તે?) અર્થાત્ હે ગૌતમ ! જો વચ્ચ કર્દમરાગ સે રક્ત હો ઓર જો વચ્ચ સ્વજનરાગ સે રક્ત હો તો इनमें कौन सा दुःशोध्य और कौन सा सुशोध्य होगा-कहो-(भगवं । तत्थ णं जे से वत्थे कर्दमरागस्ते, से णं भंते ! वत्थे दुदोयतराण चैव, दुवामतराण चैव, दुष्परिकर्मतराण चैव) हे भगवन् ! इन दोनों वच्चों में से जो वच्च कर्दमरंग से रंगा हुआ होगा हे भदन्त ! वही वच्च दुर्धौततर, दुर्वाम्यतर और दुष्परिकर्मतर होगा, (एवामेव गोयमा ! नैरइयाणं पावाइं कम्माइं गाढीकयाइं चिकणीकयाइं, सिलिढ्ठीकयाइं खिलीभूयाइं भवन्ति) इसी तरह से हे गौतम ! नैर-पिकी के पापकर्म गाढीकृत होते हैं, चिकणीकृत होते हैं, श्लिष्टीकृत होते हैं, और खिलीभूत होते हैं । (संपगाढं पि य णं ते वेयणं वेएमाणा

રાણ ચેવ, સુપરિકર્મતરાણ ચેવ ?) કયું વચ્ચ ધોવામાં વધારે સરલતા રહેશે ? કયા વચ્ચ ઉપરના ડાઘ કાઢવા સરળ પડશે ? કયા વચ્ચ પર ચિત્રાલેખન આદિ કરવું સરળ થઈ પડશે? (જે વા સે વત્યે કર્દમરાગસ્તે જે વા સે વત્યે સ્વજનરાગસ્તે?) એટલે કે હે ગૌતમ ! કીચડથી ખરડાયેલા અને ખંજનરાગથી રંગેલા વસ્ત્રોમાંથી કયું વચ્ચ દુઃશોધ્ય (મુશ્કેલીથી ધોઈ શકાય એવું) હશે, અને કયું વચ્ચ સુશોધ્ય (સરળતાથી સાફ કરી શકાય એવું) હશે ? (ભગવં તત્ત્વર્ણં જે સે વત્યે કર્દમરાગસ્તે, સે ણં ભંતે । વત્યે દુદોયતરાણ ચેવ, દુવામતરાણ ચેવ, દુષ્પરિકર્મતરાણ ચેવ) હે ભગવાન ! તે બન્ને વસ્ત્રોમાંથી જે વચ્ચ કીચડથી ખરડાયેલું હશે, તે મુશ્કેલીથી ધોઈ શકાય તેવું, મુશ્કેલીથી ડાઘ દૂર કરાય તેવું અને મુશ્કેલીથી ચિત્રાલેખન કરી શકાય એવું હશે. (एवामेव गोयमा ! नैरइयाणं पावाइं कम्माइं गाढीकयाइं, चिकणीकयाइं, सिलिढ्ठीकयाइं, खिलीभूयाइं भवन्ति) હે ગૌતમ ! એજ પ્રમાણે નારકોનાં પાપ કર્મ ગાઢી કૃત (હૃદતાથી સંબદ્ધ) ચીકણા, શ્લિષ્ઠીકૃત (એકએકથી અલગ ન કરી શકાય તેવા) અને ખિલીભૂત (ભોગવ્યા વિના જેનો નાશ ન થઈ શકે તેવા) હોય છે. (संपगाढं पि य णं ते वेयणं वेएमाणा णो महापिञ्जरा, णो महापञ्चवसाणा भवन्ति)

સ્વલ્પ તે વેદનાં વેદ્યમાના નો મહાનિર્જરાઃ, નો મહાપર્યવસાના ભવન્તિ । તદ્ યથા
યાં કોઽપિ પુરુષોઽધિકરણીય્ આકુટ્યન્ મહતા મહતા શ્વેદન, મહતામહતા ગોપેષ,
મહતા મહતા પરંપરાઘાતેન નો શ્વનોતિ, તસ્યાઃ અધિકરણ્યાઃ કાનપિ
યથાવાદરાન્ પુદ્ગલાન્ પરિશટયિતુમ્, પૂનમેવ ગૌતમ ! નૈરયિકાર્ણાં
પાપાનિ કર્મણિ ગાદીકૃતાનિ, યાવત્-નો મહાપર્યવસાના ભવન્તિ । મદન્ત ! તથ
યત્ તદ્ વદ્ધં સ્વઝનરાગસ્ત્કમ્ તદ્ યત્તં સુધૌતતરકં ચૈવ, સુધામ્યતરકં ચૈવ,

જો મહાનિઝ્જરા નો મહાપજ્જવસાણા ભવન્તિ) ફસ કારણ વે સમ્પ્રગાઢ
મી વેદના કો ભોગતે હુણ મહાનિર્જરા વાલે નહીં હોતે હિ ઓર ન મહા
પર્યવસાન (અન્ત) વાલે હોતે હિ । (સે જહા વા કેઈ પુરિસે અહિગરણિ
આઝહેમાણે મહયા ૨ સદ્દેણં, મહયા ૨ ઘોસેણં મહયા ૨ પરંપરાઘાણં
જો સંચાપહ્ તીસે અહિગરણીય કેઈ અહાવાયરે પોગલે પરિસાહિત્તણ)
અથવા-જૈસે કોઈ પુરુષ જોર ૨ સે શબ્દોં કા ઉચ્ચારણ કરતા હુઆ,
ભયંકર શબ્દોં કો ઘોલતા હુઆ ણરણ કે ઉપર નિરન્તર હથોડા સે
આઘાત કરે તો મી વહ ઉસ ણરણ કે યથાવાદર-સ્થૂલ પુદ્ગલોં કો ઉસસે
નિકાલ કર ઉન્હે નષ્ટ કરને કે લિયે સમર્થ નહીં હો સકતા હૈ (ણવામેવ
ગોયમા ! નેરહયા ણં પાવાઈં કમ્માઈં ગાદીકયાઈં જાવ જો મહાપજ્જવ-
સાણાઈં ભવન્તિ) ફસી તરહ સે હૈ ગૌતમ ! નારક જીવોં કે જો પાપ
કર્મ હોતે હૈ વે ગાદીકૃત હોતે હિ યાવત્ વે મહાપર્યવસાનવાલે નહીં હોતે હિ
(તત્થ જે સે વત્થે સુદ્ધોપતરાણ ચેવ, સુધામતરાણ ચેવ સુપરિકમ્મતરાણ

તે કારણે બયંકરમાં બયંકર વેદના ભોગવવા છતાં તેઓ મહા નિર્જરાવાળા
હોતા નથી અને પર્યવસાનવાળા (સર્વથા કર્મથી રહિત) પણ હોતા નથી.

“ સે જહા વા કેઈ પુરિસે અહિગરણિ આઝહેમાણે મહયોર સદ્દેણં, મહયાર, ઘોસેણં,
મહયાર, પરંપરાઘાણં જો સંચાપહ્ તીસે અહિગરણીય કેઈ અહાવાયરે પોગલે
પરિસાહિત્તણ ં ધારે કે કોઈ એક માણસ બેર બેરથી હોંકારા પડકારા કરતો
કરતો, અને બયંકર શબ્દો બોલતો બોલતો હથોડા વડે એરણુ ઉપર નિરંતર
ધા કર્યા કરે, તો પણ તે માણસ એરણુના સ્થૂલ પુદ્ગલોને તેમાંથી બહાર
ઠાલીને તેમનો નાશ કરવાને શક્તિમાન થતો નથી, “ ણવામેવ ગોયમા ! નેર-
હયાણં પાવાઈં કમ્માઈં ગાદીકયાઈં જાવ જો મહાપજ્જવસાણાઈં ભવન્તિ ” એજ
પ્રમાણે હે ગૌતમ ! નારક, જીવોનાં જે પાપકર્મો હોય છે તે ગાદીકૃત (દહ-
તાથી વળગેલાં) હોય છે, તેથી તેઓ મહાનિર્જરાવાળા હોતા નથી અને તે
કર્મોના સર્વથા નાશ કરવાને તેઓ સમર્થ હોતા નથી. (તત્થ જે સે વત્થે

સુપરિકર્મતરકં ચૈવ, પ્રથમેવ ગૌતમ ! શ્રમણાનાં નિર્ગ્રન્થાનાં યથાચાદરાણિ કર્માણિ વિચિત્રીકૃતાનિ, નિષ્ઠિતાનિ કૃતાનિ, વિપરિણામિતાનિ ક્ષિપ્રમેવ વિધ્વસ્તાનિ ભવન્તિ, યાવતિકાં તાવતિકામપિ વેદનાં વેદયમાના મહાનિર્જરાઃ મહાપર્યવસાનાઃ ભવન્તિ, તદ્ યથા નામ કોઽપિ પુરુષઃ શુષ્કં તુગદસ્તકં જાતતેજસિ પ્રતિષેત્, તદ્નૂનં ગૌતમ ! સ શુષ્કઃ તુળદસ્તકો જાતતેજસિ પ્રક્ષિપ્તઃ સન્ ક્ષિપ્રમેવ મસમસાપ્યતે ? । હન્ત, મસમસાઽપ્યતે । પ્રથમેવ ગૌતમ ! શ્રમણાનાં નિર્ગ્રન્થા-

ચૈવ-પ્રથમેવ ગોયમા ! સમણાણં નિર્ગંથાણં અહાવાયરાઈં કમ્માઈં સિદ્ધિ-લીકયાઈં નિદ્ધિયાઈં કઢાઈં વિપ્પરિણામિયાઈં ક્ષિપ્પામેવ વિદ્ધત્થાઈં ભવંતિ) તથા જો વસ્ત્ર સંજનરાગ સે રક્ત હોતા હૈં વહ વસ્ત્ર સુધૌતતર હી હોતા હૈં, સુવામ્યતર હી હોતા હૈં ઓર સુપરિકર્મતર હી હોતા હૈં, ઇસી તરહ સે હૈં ગૌતમ ! શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોંકે જો સ્થૂલ સ્કન્ધરૂપ કર્મ હોતે હૈં-વે શિથિ-લીકુન હોતે હૈં, અર્થાત્ મંદવિપાક વાલે હોતે હૈં, નિષ્ઠિત હોતે હૈં સત્તા વિનાકે હોતે હૈં, વિપરિણામ વાલે હોતે હૈં ઇસલિયે વે શીઘ્ર હી વિધ્વસ્ત હો જાતે હૈં (જોચડ્યં તાવડ્યં વિ તે વેયણં વેણમાણા, મહાનિજ્જરા મહાપ-જ્જવસાણાં ભવંતિ) જિતની જિતની બી-કુહ બી-વેદના કો ભોગતે દુષ્ટ વે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ મહાનિર્જરાવાલે ઓર મહાપર્યવાસન વાલે હોતે હૈં. (સે જહા નામણ્ કેહ પુરિસે સુક્કં તણહત્થણં જાયતેયંસિ પક્ખિલ્લેજ્જા સે પૂણં ગોયમા ! સે સુક્કે તણહત્થણં જાયતેયંસિ પક્ખિલ્લે સમાણે ક્ષિપ્પામેવ મસમસાવિજ્જહ) જૈસે કોઈ પુરુષ શુષ્ક ઘાસકે પૂલેકો અગ્નિ

સંજનરાગરક્તે સે ણં વરથે સુદ્ધોચતરાણ ચૈવ, સુવામતરાણ ચૈવ, સુપરિકર્મતરાણ ચૈવ-પ્રથમેવ ગોયમા ! સમણાણં નિર્ગંથાણં અહાવાયરાઈં કમ્માઈં સિદ્ધિલીકયાઈં નિદ્ધિયાઈં કઢાઈં વિપ્પરિણામિયાઈં ક્ષિપ્પામેવ વિદ્ધત્થાઈં ભવંતિ)

જેવી રીતે ખંજનરાગથી ખરડાયેલું વસ્ત્ર સરળતાથી ઘોષ શકાય તેવું સરળતાથી ડાઘ ફર કરી શકાય એવું અને સરળતાથી ચિત્રાલેખન આદિ કરી શકાય તેવું હોય છે, એજ પ્રમાણે હે ગૌતમ ! શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોના જે સ્થૂલ-તર સ્કન્ધરૂપ કર્મ હોય છે, તે શિથિલીકૃત હોય છે-એટલે કે વિપાકવાળાં હોય છે. તેથી તે કર્મેના જલદીથી નાશ થઈ જતો હોય છે. (જાવડ્યં તાવડ્યં વિ તે વેયણં વેણમાણા, મહાનિજ્જરા મહાપજ્જવાસાણાં ભવંતિ) જેટલી તેટલી પણુ-એટલે કે નાની સરળી પણુ વેદનાને ભોગવતા તે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો મહાનિર્જરાવાળા અને મહાપર્યવસાનવાળા (કર્મેના અન્ત કરનારા) હોય છે. (સે જહા નામણ્ કેહ પુરિસે સુક્કં તણહત્થણં જાયતેયંસિ પક્ખિલ્લેજ્જા-સે પૂણં ગોયમા ! સે સુક્કે તણહત્થણં જાયતેયંસિ પક્ખિલ્લે સમાણે ક્ષિપ્પામેવ મસમસાવિજ્જહ) હે

નાં યથાવાદરાણિ કર્માણિ-યાવત્-મહાપર્યવસાના ભવન્તિ । તદ્ગથાનામ કોઽ
પિ પુરુષસ્તપ્તે અયસ્કપાલે ઉદગચ્છિન્દુમ્, યાવત્-હન્ત, વિધ્વંસમ્ આગચ્છતિ ।
एवमेव गौतम ! श्रमणानां निर्ग्रन्थानाम्, यावत्-महापर्यवसाना भवन्ति, तद्
तेनार्थेन यो महावेदनः सः महानिर्जरः यावत्-प्रवृत्तिर्निर्जराकः ॥ ५० १ ॥

મેં ઢાલ દે-તો હે ગૌતમ ! વહ શુષ્ક ઘાસ કા પૂલા અગ્નિ મેં ઢાલતે હી
શીઘ્ર હી જલ જાતા હૈ ન ? (હંતા, મસમસાવિજ્જહ) હાં, 'મદન્ત ! વહ
શીઘ્ર હી જલ જાતા હૈ (એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિર્ગંધાણં અહા
યાયરાહં કમ્માહં જાવ મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ) હસી તરહ સે હે ગૌતમ !
શ્રમણ નિર્ગંધોં કે સ્થૂલતર સ્કન્ધરૂપ કર્મ જલ જાતે હું યાવત્ વે શ્રમણ
નિર્ગંધ મહાપર્યવસાનવાલે હોતે હું (સે જહા નામણ કેદ્દ પુરિસે તત્તંસિ
અયકવેલ્લુંસિ ઉદગચ્છિન્દું જાવ હંતા વિદ્વંસં આગચ્છહ) જૈસે કોઈ પુરુષ
તપાવે-લાલ હુણે ગરમ-તવે પર જલ કે વિન્દુ કો ઢાલે તો વહ શીઘ્ર હી
વિધ્વસ્ત હો જાતા હૈ ન ? હાં, પ્રશુ શીઘ્ર હી વહ વિધ્વસ્ત હો જાતા હૈ
(એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિર્ગંધાણં જાવ મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ)
હસી તરહ સે હે ગૌતમ ! શ્રમણ નિર્ગંધોં કે સ્થૂલતર સ્કન્ધરૂપ કર્મ
શીઘ્ર હી વિધ્વસ્ત હો જાતે હું-યાવત્ વે મહાપર્યવસાનવાલે હોતે હું ।
(સે તેણદ્દેણં જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે જાવ પસત્થનિજ્જરાણ) હસ

ગૌતમ ! કોઈ પુરુષ કોઈ સૂકા ઘાસના પૂજાને અગ્નિમાં નાખી દે તો તે સૂકા
ઘાસના પૂજા અગ્નિમાં નાખતાની સાથે જ બળી બળ્ય છે કે નહીં ? (હંતા
મસમસાવિજ્જહ) હા, તે તુરત જ બળી બળ્ય છે. (એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં
નિર્ગંધાણં અહાયાયરાહં કમ્માહં જાવ મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ) હે ગૌતમ !
એજ પ્રમાણે શ્રમણ નિર્ગંધોના સ્થૂલતર સ્કન્ધરૂપ કર્મ બળી બળ્ય છે, તે
કારણે તેઓ મહાનિર્જરાવાળા અને મહા પર્યવસાનવાળા હોય છે. (સે જહા
નામણ કેદ્દ પુરિસે તત્તંસિ અયકવેલ્લુંસિ ઉદગચ્છિન્દું જાવ હંતાવિદ્વંસં આગચ્છહ)
એમ કોઈ પુરુષ તપાવેલી લાલચોળ જેવી કઢાહી પર પાણીનું ટીપું નાખે, તો
તે ટીપું તુરત જ નષ્ટ થઈ બળ્ય છે કે નહીં ? “ હા, પ્રશુ ! તે તુરત જ નષ્ટ
થઈ બળ્ય છે. ” (એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિર્ગંધાણં મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ)
હે ગૌતમ ! એજ પ્રમાણે શ્રમણ નિર્ગંધોના સ્થૂલતર સ્કન્ધરૂપ કર્મ નષ્ટ
નષ્ટ થઈ બળ્ય છે, તે કારણે તેઓ મહા નિર્જરાવાળા અને મહા પર્યવસાન-
વાળા હોય છે. (સે તેણદ્દેણં જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે જાવ પસત્થનિજ્જરાણ)

ટીકા—‘ સે જૂળં મંતે ! જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે, જે મહાનિજ્જરે સે મહાવેયણે ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—હે ભદ્રન્ત ! તદ્ નૂનં નિશ્ચયેન કિમ્ યો મહાવેદનઃ મહતી વેદના દુઃખં યસ્ય સઃ ઉપસર્ગાદિસમુત્પન્નવિશિષ્ટદુઃખવાન્ ભવતિ સઃ મહાનિર્જરઃ મહતીનિર્જરા યસ્ય ઇવંવિપ્રવિશિષ્ટકર્મક્ષયવાન્ ભવતિ । અનયોથ તાદૃશવેદનનિર્જરયોઃ પરસ્પરમવિનાભાવસમ્બન્ધઘોતનાય=પ્રાહ—યો મહાનિર્જરઃ વિશિષ્ટકર્મક્ષયવાન્ સ કિમ્ મહાવેદનો ભવતિ ? इति प्रथमः प्रश्नः अथ द्वितीयं प्रश्नप्राह—“ महावेयणस्त य, अप्यवेयणस्त य से सेए जे पसत्यनिर्जराए ? ”

કારણ હે ગૌતમ ! મને જેસા કહ્યા હે કિ જો મહાવેદનાવાલા હોતા હે વહ મહાનિર્જરાવાલા હોતા હે યાવત્ વહ પ્રશસ્ત નિર્જરાવાલા હોતા હે ।

ટીકાર્થ—સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર દ્વારા મહાવેદના ઓર મહાનિર્જરા કા સ્વરૂપ ફલ કી અપેક્ષા સે નિરૂપણ કિયા હૈ—હસમેં ગૌતમ પ્રશ્ન સે જેસા પૂછ રહે હૈં કિ—(સે જૂળં મંતે ! જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે જે મહાનિજ્જરે સે મહાવેયણે) હે ભદ્રન્ત ! જો મહાવેદના વાલા હોતા હે વહ કયા મહાનિર્જરાવાલા હોતા હે ? તાત્પર્ય કહનેકા યહ હૈ કિ જો ઉપસર્ગ આદિસેં ઉદ્ભૂત વિશિષ્ટ દુઃખોવાલા હોતા હે—યહ કયા વિશિષ્ટ કર્મક્ષય રૂપ નિર્જરાવાલા હોતા હે ? હસ પ્રકારકી હન દોનોં વેદના ઓર નિર્જરા મેં કયા પરસ્પર અવિનાભાવ સંબંધ હૈ ? હસ વાતકો પ્રકટ કરનેકે લિયે પૂછા ગયા હૈ કિ “જો મહાનિર્જરાવાલા હોતા હે વહ મહાવેદનાવાલા હોતા હૈ” હસ પ્રકાર યહ પ્રથમ પ્રશ્ન હૈ । દ્વિતીય પ્રશ્ન હસ પ્રકાર સે હૈ—(મહા

હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે જે મહાવેદનાવાળો હોય છે તે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે, (યાવત્) તે પ્રશસ્ત નિર્જરાવાળો હોય છે.

ટીકાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા મહાવેદના અને મહાનિર્જરાનું સ્વરૂપ ફળની અપેક્ષાએ નિરૂપણ કર્યું છે—

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (સે જૂળં મંતે ! જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે, જે મહાનિજ્જરે સે મહાવેયણે) હે ભદ્રન્ત ! જે એવ મહાવેદનાવાળો હોય છે, તે શું મહાનિર્જરાવાળો હોય છે ? પ્રશ્નનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

જે એવ ઉપસર્ગ આદિથી જનિત વિશિષ્ટ દુઃખોવાળો હોય તે શું વિશિષ્ટ કર્મક્ષયરૂપ નિર્જરાવાળો હોય છે ? આ પ્રકારની વેદના અને નિર્જરા વચ્ચે શું અવિનાભાવ સંબંધ છે ? એ વાત બહુવાને માટેજ આ પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યો છે કે “ જે મહાનિર્જરાવાળો હોય તે શું મહાવેદનાવાળો હોય છે ? ” બીજો પ્રશ્ન આ પ્રમાણે પૂછ્યો છે—

મ્યો નિર્ગ્રન્થેમ્યો નિર્ગ્રન્થશ્રમણાપેક્ષયા, इत्यर्थः किम् महानिर्जरतराः ? अतिव्यय
विशिष्टकर्म क्षयवन्तो भवन्ति ?

મગધનાહ—‘ ગોયમા ! ગો ઇણદ્દે સમદ્દે ’ હે ગૌતમ ! નાપમયઃ સમર્થઃ, નેવં
ભવિતુમર્હતિ મહાવેદનાવાન્ શ્રમણનિર્ગ્રન્થસ્તુ દૂરેઽપાસ્તામ્ કિન્તુ અલ્પવેદનસ્યાપિ
શ્રમણનિર્ગ્રન્થસ્યાપેક્ષયા મહાવેદનાવતોઽપિ નૈરપિકસ્ય મહાનિર્જરત્વાસંભવાત્ ।
ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—“ સે કેણદ્દેણં મંતે ! एवं वुचइ जे महावेयणे, जाव पसत्थ
निज्जराए ? हे भदन्त ! तत् केनार्थेन एवम् उपर्युक्तरीत्या उच्यते यद् यो महा-
वेदनः, स यावत्-महानिर्जराकः, यत्र महानिर्जराकः स महावेदनः, अथ च म-
हावेदना-अल्प वेदनयोर्मध्ये प्रशस्तनिर्जरः श्रेयान् ? इति,

હોતે હું ? इसके उत्तर में प्रभु गौतम से कहते हैं कि (गोयमा) हे
गौतम ! (गो इणद्वे समद्वे) यह अर्थ समर्थ नहीं है । महावेदनावाले
श्रमण निर्ग्रन्थ की तो बात ही क्या है, पर जो अल्पवेदनावाले भी
श्रमण निर्ग्रन्थ है उसकी अपेक्षा से भी नैरपिक जीव में महानिर्जरा-
वत्त्व असंभव है । अब इस विषय में कारण की जिज्ञासा से गौतम
प्रभु से पूछते हैं—कि (से केणद्वेणं मंते ! एवं वुचइ जे महावेयणे जाव
पसत्थनिज्जराए) हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि जो
महावेदनावाला होता है वह यावत् महानिर्जरावाला होता है और जो
महानिर्जरावाला होता है वह महावेदनावाला होता है तथा महावेदना-
वाले और अल्पवेदनावाले जीव के बीच में प्रशस्तनिर्जरावाला जीव

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનું સમાધાન કરતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે,
(ગોયમા ! ગો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! એવું બનતું નથી. મહાવેદનાવાળા
શ્રમણ-નિર્ગ્રન્થની વાત જ થું કરવી ! એટલે કે મહાવેદનાવાળા શ્રમણનિર્ગ્રન્થો
તો નારકો કરતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે જ. એટલું જ નહીં પણ અલ્પ-
વેદનાવાળા શ્રમણ-નિર્ગ્રન્થો પણ છઠ્ઠી અને સાતમી નરકના નારકો કરતાં મહા-
નિર્જરાવાળા હોય છે—તે નારકોમાં શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો કરતાં મહાનિર્જરાયુક્તતા
સંભવી શકતી નથી. તેનું કારણ બાણવાની જ્ઞાસાથી ગૌતમ સ્વામી મહા-
વીર પ્રભુને પૂછે છે—

(સે કેણદ્દેણં મંતે ! एवं वुचइ जे महावेयणे जाव पसत्थनिज्जराए ?)
હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જે મહાવેદનાવાળો હોય છે
તે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે, અને જે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે તે મહા-
વેદનાવાળો હોય છે, તથા મહાવેદનાવાળા અને અલ્પવેદનાવાળા જીવોની અપે-
ક્ષાએ પ્રશસ્ત-નિર્જરાવાળો જ એ શ્રેષ્ઠ હોય છે ?

भगवानाह—‘गोयमा ! से जहा नामए दुवे वत्था सिया’ हे गौतम ! तद् यथा ‘नाम’ इति वाक्यालङ्कारे द्वे वस्त्रे स्याताम्, तयोर्मध्ये ‘एगे वत्थे कद्दमरागत्ते’ एकं वस्त्रं कर्दमरागरक्तं स्यात् पट्टपुञ्जेन लिप्तं भवेत् अथ ‘एगे वत्थे खंजनरागत्ते’ एतम् अथरं वस्त्रं खञ्जनरागरक्तं स्यात् पतङ्गरागे रक्तं भवेत्, अथ खञ्जनरागशब्देन पतङ्गरागो गृह्यते । एएसि णं गोयमा ! दोण्हं वत्थाणं कपरे वत्थे दुद्धोयतराए चैव’ हे गौतम ! एतयोः उपर्युक्तयोः द्वयोर्वस्त्रयोः कर्दमखञ्जनरागरक्तयोर्मध्ये कतरद् वस्त्रं, कर्दमरागरक्तं वा, खञ्जनरागरक्तं वा, दुधोयतरकं चैव, अनिशयदुष्करमभालनप्रक्रियं स्यात् ? ‘दुवामतराए चैव’ दुर्वाभ्यतरकं चैव ? दुस्त्याज्यतरमलं स्यात् ? दुःशोध्यमलमित्यर्थः, ‘दुप्परिकम्मताराए चैव’ दुष्परिकर्मतरकं चैव, कष्टसाध्यचित्रोल्लेखनभङ्गकरणादिप्रक्रियम्

उत्तम होता है ? इसके उत्तर में प्रभु गौतम से कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (से जहा नामए दुवे वत्था सिया) जैसे कोई दो वस्त्र हों (एगे वत्थे कद्दमरागत्ते) इनमें एक वस्त्र कर्दमराग से रक्त हो—अर्थात् कीचड़ से मलिन हो—और दूसरा (एगे वत्थे खंजनरागत्ते) दूसरा वस्त्र खंजनराग से पतंगरंग से रक्त हो (एएसि णं गोयमा ! दोण्हं वत्थाणं कपरे वत्थे दुद्धोयतराए चैव) तो हे गौतम ! हम तुमसे यह पूछते हैं कि इन दोनों वस्त्रों के बीच में कौन सा वस्त्र दुधोयतरक—जिसकी प्रक्षालन क्रिया अत्यन्त कठिन होगी (दुवामतराए) दुर्वाभ्यतरक—जिसका कलङ्क धुवने चगौरह—बड़ी कठिनाई से धोयेजा सकेगा होगा तथा (दुप्परिकम्मताराए चैव) दुष्परिकर्मतरक—जिसमें चित्रोल्लेखन क्रिया एवं भङ्गकरणादिरूप क्रिया—विशेष प्रकार की रचना करने रूप क्रिया कष्ट

तेना जवाण आपत्ता भडापीर प्रभु कहे छे—“गोयमा !” हे गौतम ! (से जहा नामए दुवे वत्था सिया) जेभके कोण जे वस्त्र होय, (एगे वत्थे कद्दमरागत्ते) तेभानुं जेक वस्त्र कद्दमरागथी रक्त होय—जेठले के डीयडथी मलिन थयेवुं होय, अने ग्रीणुं “एगे वत्थे खंजनरागत्ते” ग्रीणुं वस्त्र णंजनरागथी रक्त होय—जेठले के पतंग रंगथी रंगायेवुं जेठले मलिन थयेवुं होय, (ए एसि णं गोयमा ! दोण्हं वत्थाणं कपरे वत्थे दुद्धोयतराए चैव) हे गौतम ! ते जन्ने वस्त्रोभांथी कथुं वस्त्र “दुधोयतरक” होय—जेठले के कथा वस्त्रने धोवानुं पधारे भुशकेल जनशे ? “दुवामतराए” दुर्वाभ्यतरक जेठले के जेना उपरथी अथ अठवा भुशकेल पडे तेवुं होय ? “दुप्परिकम्मताराए” दुष्परिकर्मतरक होय—जेठले के जेभां चित्रालेखन अने लंकारेषुादि रूप क्रियाजो (विशेष प्रकारनी रचना करवा रूप क्रिया) करवामां भुशकेली पडथे ? आ नखे

મ્યો નિર્ગ્રન્થેમ્યો નિર્ગ્રન્થશ્રમણાપેક્ષયા, इत्यर्थः किम् महानिर्जरतराः ? अतिशय विशिष्टकर्म क्षमवन्तो भवन्ति ?

મગધાનાહ—‘ ગોયમા ! જો ઇળદે સમદે ’ હે ગૌતમ ! નાપમર્થઃ સમર્થઃ, નૈવં ભવિતુમર્હતિ મહાવેદનાવાન્ શ્રમણનિર્ગ્રન્થસ્તુ દૂરેડવાસ્તામ્ કિન્તુ અલ્પવેદનસ્યાપિ શ્રમણનિર્ગ્રન્થસ્યાપેક્ષયા મહાવેદનાવતોડપિ નૈરયિકસ્ય મહાનિર્જરતાસંભવાત્ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—“ સે કેળદેળં મંતે ! एवं युचइ जे महावेयणे, जान पसत्य निज्जराए ? हे भदन्त ! तत् केनार्थेन एवम् उपर्युक्तरीत्या उच्यते यद् यो महावेदनः, स यावत्-महानिर्जराकः, यत्र महानिर्जराकः स महावेदनः, अथ च महावेदना-अल्प वेदनयोर्मध्ये प्रशस्तनिर्जरः श्रेयान् ? इति,

હોતે હું ? इसके उत्तर में प्रभु गौतम से कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (जो इणद्वे समद्वे) यह अर्थ समर्थ नहीं है । महावेदनावाले श्रमण निर्ग्रन्थ की तो बात ही क्या है, पर जो अल्पवेदनावाले भी श्रमण निर्ग्रन्थ है उसकी अपेक्षा से भी नैरयिक जीव में महानिर्जरा-वत्त्व असंभव है । अब इस विषय में कारण की जिज्ञासा से गौतम प्रभु से पूछते हैं—कि (से केणद्वेणं मंते ! एवं युचइ जे महावेयणे जाव पसत्यनिज्जराए) हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि जो महावेदनावाला होता है वह यावत् महानिर्जरावाला होता है और जो महानिर्जरावाला होता है वह महावेदनावाला होता है तथा महावेदना-वाले और अल्पवेदनावाले जीव के बीच में प्रशस्तनिर्जरावाला जीव

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનું સમાધાન કરતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે, (ગોયમા ! જો ઇળદે સમદે) હે ગૌતમ ! એવું બનતું નથી. મહાવેદનાવાળા શ્રમણ-નિર્ગ્રન્થની વાત જ શું કરવી ! એટલે કે મહાવેદનાવાળા શ્રમણનિર્ગ્રન્થો તો નારકો કરતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે જ. એટલું જ નહીં પણ અલ્પ-વેદનાવાળા શ્રમણ-નિર્ગ્રન્થો પણ છઠ્ઠી અને સાતમી નરકના નારકો કરતાં મહા-નિર્જરાવાળા હોય છે—તે નારકોમાં શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો કરતાં મહાનિર્જરાયુક્તતા સંભવી શકતી નથી. તેનું કારણ બધુવાની જિજ્ઞાસાથી ગૌતમ સ્વામી મહા-વીર પ્રભુને પૂછે છે—

(સે કેળદેળં મંતે ! एवं युचइ जे महावेयणे जाव पसत्यनिज्जराए ?) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જે મહાવેદનાવાળો હોય છે તે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે, અને જે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે તે મહા-વેદનાવાળો હોય છે, તથા મહાવેદનાવાળા અને અલ્પવેદનાવાળા જીવોની અપે-ક્ષાએ પ્રશસ્ત-નિર્જરાવાળો જીવ શ્રેષ્ઠ હોય છે ?

યત્ તદ્ વત્તં કર્દમરાગરક્તં સ્યાત્, ' સે ણં મંતે ! વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચેવ ' હે મદન્ત ! તત્ત્વ સ્વલ્પ કર્દમરાગરક્તં વત્તં દુર્ધોતતરકં ચેવ સ્યાત્ ' દુવામતરાણ ચેવ ' દુર્વામ્વતરકં ચેવ દુસ્તપાઝ્યકલ્લકલ્લં સ્યાત્, ' દુપ્પરિકમ્મતરાણ ચેવ ' દુપ્પરિકર્મ-તરકં ચેવ, કપટસાધ્યવિચોલ્લેક્ષન-મદ્ગરુણાદિપ્રતિક્રિયં સ્યાત્ ।

મગવાનાહ-' એવામેવ ગોયમા ! નેરડયાણં પાવાઈં કમ્માઈં ગાઢીકયાઈં ' હે ગૌતમ ! એવામેવ કર્દમદ્દરાગરક્તમ્વત્તદેવ નૈરયિકાણાં પાપાનિ પાપરૂપાણિ કર્માણિ ગાઢીકૃતાનિ ગુણસુવ્રદ્ધવદ્ધસુચોકટાપવત્ આત્મપ્રદેશૈઃ સહ અત્યન્તગાઢ-

કર્દમરાગ સે યુક્ત હોગા (સે ણં મંતે ! વત્થે દુદ્ધોયતરાણ ચેવ) વહી વલ્લ દુર્ધોતતરક હોગા, (દુવામતરાણ ચેવ) દુર્વામતરક હોગા, ઓર (દુપ્પરિકમ્મતરાણ) દુપ્પરિકર્મતરક હોગા, -જય ગૌતમ ને એસા અપના અભિ-પ્રાય પ્રકટ કર દિયા તપ પ્રભુ ને ડનસે કહા- (એવામેવ ગોયમા) હે ગૌતમ ! ઇસી તરહ સે (નેરડયાણં પાવાઈં કમ્માઈં) નારક જીવોં કે જો પાપરૂપ કર્મ હોતે હું, વે કર્દમ કે દ્વદ રાગ સે રક્ત હુણ વલ્લ કી તરહ હી ગાઢી કૃત હોતે હું-અર્થાત્ જિસ પ્રકાર સે શણ કી સૂનલી સે લૂચ મજબૂતી કે સાથ સુદ્યોં કા સન્નુદાય કસકર વાંધ દિયા જાતા હૈં ડસી પ્રકાર જો પાપરૂપ કર્મ આત્મા કે પ્રદેશોં કે સાથ અત્યન્ત ગાઢરૂપ સે દ્વદરૂપ મેં સંવદ્ધ હોતે હું વે ગાઢીકૃત પાપરૂપ કર્મ કહલાતે હું, એસે હી ગાઢીકૃત પાપરૂપ કર્મ નારક જીવોંકે હોતે હું, (ચિક્કણીકયાઈં) જિસ પ્રકાર

ગૌતમ સ્વામીએ કહ્યું " મગવં " હે પ્રભો ! " તત્થ ણં જે સે વત્થે કર્દમરાગરક્તે " તે બન્નેમાંથી જે વસ્ત્ર કીચડથી ખરડાયેલું હશે (સે ણં મંતે ! વત્થે દુદ્ધોયત-રાણ ચેવ) તે વસ્ત્ર દુર્ધોતતર (ધોવામાં ખુશ્કેલ હશે, (દુદ્ધામતરાણ ચેવ) દુર્વામતરક (ડાઘ કાઢવા ખુશ્કેલ પડે એવું) હશે, અને " દુપ્પરિકમ્મતરાણ " દુપરિકર્મતરક (ચિત્રાલેખન આદિ કરવામાં ખુશ્કેલી પડે એવું) હશે. ગૌત-મનો આ પ્રકારનો જવાબ સાંભળીને મહાવીર પ્રભુ તેમને કહે છે- " એવામેવ ગોયમા ! " હે ગૌતમ ! એજ પ્રમાણે " નેરડયાણં પાવાઈં કમ્માઈં " નારક જીવોનાં જે પાપકર્મો હોય છે, તે કર્દમના (કીચડના) ગાઢ રંગથી ખરડા-યેલા વસ્ત્રની જેમ ગાઢીકૃત હોય છે. જેમ શણની સૂતળી પડે સોયોના સમુ-દાયને જૂઠા મજબૂતીથી બાંધી દેવામાં આવે છે, તેમ પાપકર્મ કર્મ આત્મ-પ્રદેશોની સાથે અત્યન્ત દૃઢતાથી સંબદ્ધ હોય છે, એવાં પાપકર્મોને ગાઢીકૃત પાપકર્મ કહે છે. નારક જીવોનાં પાપકર્મો એવા ગાઢીકૃત હોય છે. " ચિક્ક-ણીકયાઈં " જેવી રીતે ચીકણી માટીનો બનેલો પિંડ તેની ચીકણને કારણે

મહેતુ ? એતાવતા વિશેષણત્રયેણાપિ દુર્વિશોધ્યત્વમુક્તમ્ । અપરાધમાદ-‘ કયરે
વા વત્યે સુદ્યોયતરાણ ચેવ ’ કતરદ્ વા વ કર્દમરાગરક્તં વા, સન્નનરાગરક્તં
વા, સુધોતતરકં ચેવ, સુપ્રકાશિતતરં સ્યાત્ ? ‘ સુવામતરાણ ચેવ ’ સુવામ્પતરકં
ચેવ, સુપ્રકાશ્યરુલક્ર સ્યાત્ ? ‘ સુપરિક્રમ્મનરાણ ચેવ ’ સુપરિક્રમ્મતરકં ચેવ,
સુસાધ્યચિત્રલેખનમજ્જકરણાદિપ્રક્રિયં સ્યાત્ ? ઉક્તવિકલ્પાવિષયમાદ-‘ જે વા
સે વત્યે કદમરાગરક્તે, જે વા સે વત્યે સંજનરાગરક્તે ? ’ યદ્ વા તદ્ વદ્યં કર્દમ-
રાગરક્તમ્ ? યદ્વા તદ્વદ્યં સન્નનરાગરક્તમ્ ? અનર્ગોમધ્યે કિમ્ દુઃશોધ્યં કિઞ્ચ
સુશોધ્યં મહેદિતિ મગધત આશયઃ । ઉપર્યુક્તં મગધવ્યવચનં શ્રુત્વા ગૌતમઃ કથયતિ
‘ મગધં તત્થ ણં જે સે વત્યે કદમરાગરક્તે ’ હે મગધન્ ! તત્ર તર્ગોર્વદ્યર્ગોર્મધ્યે લલ્હ

સાધ્ય હો-હોગી इन तीन विशेषणों द्वारा ऐसे वस्त्र में दुर्विशोध्यता
प्रकट की गई है तथा (कयरे वा वत्ये) कौनसा वस्त्र- (सुद्योयतराण
चेव) सुधौततरक होगा-जिसकी सफाई करना सरल हो-ऐसा होगा,
(सुवामतराण चेव) सुवामतरक होगा-जिसमें से धब्बे आदि रूप
कलङ्क सरलता से निकाला जा सके ऐसा होगा तथा (सुपरिक्रमतराण
चेव) जिसमें चित्रोल्लेखन क्रिया एवं विशेष प्रकार की रचना करनेल्ल
क्रिया सुसाध्य हो ऐसा होगा अर्थात् (जे वा से वत्ये कदमरागस्ते, जेवा
से वत्ये खंजनरागस्ते) इन वस्त्रों के बीच में जो वस्त्र कर्दमराग से
रक्त है और जो वस्त्र खंजनराग से रक्त है, कौन सा वस्त्र दुःशोध्य
होगा और कौन सा वस्त्र सुशोध्य होगा इस प्रकार से मगधान् के द्वारा
पूछे गये वचन को सुन करके गौतम ने उनसे कहा- (मगधं) हे मग-
धन् (तत्थ णं जे से वत्ये कदमरागस्ते) इन दोनों वस्त्रों में से जो वस्त्र

विशेषणों द्वारा जेवा वस्त्रમાં दुर्विशोध्यता (તેની સફાઈ કરવામાં અશકેલી)
પ્રકટ કરી છે. તથા (કયરે વા વત્યે સુદ્યોયતરાણ ચેવ) કયું વસ્ત્ર સુધોતતરક
હશે-એટલે કે કયા વસ્ત્રને સાફ કરવામાં સરળતા રહેશે ? “ સુવામતરાણ ચેવ ”
કયા વસ્ત્રપરથી સરળતાથી ડાઘ દૂર કરી શકાયે ? “ સુપરિક્રમ્મતરાણ ચેવ ”
કયા વસ્ત્ર ઉપર ચિત્રાલેખન અને વિશેષ પ્રકારની રચના કરવી સુગમ થઈ
પડશે ? પ્રશ્નનો બાવાર્થ એ છે કે “ જે વા સે વત્યે કદમરાગસ્તે, જે વા સે
વત્યે સંજનરાગસ્તે ” એક વસ્ત્ર કે બે ક્રિયાઓ અરસાયેલું છે અને બીજું
વસ્ત્ર કે બે પતંગ રંગથી અરસાયેલું છે, તેમાંથી કયું વસ્ત્ર દુઃશોધ્ય
(અશકેલીથી સફાઈ કરી શકાય તેવું) હશે અને કયું સુશોધ્ય (સુગમતાથી
સફાઈ કરી શકાય તેવું) હશે ?

વ્યાપિ નિકાચિતાનીત્યર્થઃ, एतेनापि विशेषणचनुष्टयेन नैरयिकापापानि दुर्विशो-
 ध्यानि भवन्ति, इति प्रतिपादितम्, तथा च नैरयिकाणां पापानामपि कर्मणां
 दुर्विशोध्यत्वेन 'एवामेव' इत्याद्युपनयवाक्यं सुघटितं भवति । एवं च 'संपगा-
 ढं पि य णं ते वेयणं वेण्माणा णो महानिज्जरा, णो महापज्जवसाणा भवन्ति' तस्मात्
 हे गौतम ! संपगाढामपि अत्यन्तदृढीभूतामपि च तां वेदनां वेदयमानाः अनुभवन्तः
 ते नैरयिका नो महानिर्जराः नात्यन्तविशिष्टकर्मक्षयवन्तो. नो वा महापर्ववसाना

ટીકા કી પંક્તિ દ્વારા સમજાઈ ગઈ છે—અર્થાત્ જિસ પ્રકાર અગ્નિ મેં લૂચ
 તપા તપા કર લોહે કે સુદ્ધર સે કૂટ ૨ કર પિણ્ડીભૂત કરલી જાતી હૈં,
 હસી પ્રકાર જો કર્મ આપસ મેં ઇસ રૂપ સે મિલકર પિણ્ડીભૂત હો જાતે
 હૈં વે કર્મ નિકાચિત લિલીભૂત કહે જાતે હૈં । ઇન ચાર વિશેષણો દ્વારા
 યહ સમજાયા ગયા છે કિ નારક જીવોં કે પાપકર્મ દુર્વિશેધ્ય હોતે હૈં
 ઇસી કારણ વે મેલે સે મેલે વલ્લકે સમાન યહાં પ્રકટ કિયે ગયે હૈં અતઃ
 (એવામેવ) એસા જો યહ ઉપનય વાક્ય છે વહ સુઘટિત હો જાતા છે ।
 અવ આગે સૂત્રકાર યહ પ્રકટ કરતે હૈં કિ નારક જીવોં કે પાપકર્મ એસે
 દુર્વિશેધ્ય હોતે હૈં—ઇસી કારણ વે ઉન્હેં અત્યન્તવેદનાકે કારણ વનતે હૈં
 (સંપગાઢં પિ ય ણં તે વેયણં વેણ્માણા ણો મહાનિજ્જરા, ણો મહાપજ્જ-
 વસાણા ભવન્તિ) હે ગૌતમ ! વે નારક જીવ ઇસી નિમિત્ત સે અત્યન્ત
 દૃઢીભૂત ભયદ્ધર સે બી ભયદ્ધર વેદનાં કો ભોગતે હુઅે બી અત્યન્તવિ-

“ અગ્નિસંતપ્તહોદસુદ્ગરકુટ્વિત સૂચીકલાપવત્ પિણ્ડીભૂતાનિ ભવન્તિ ”
 ઉપર્યુક્ત વાત જ આ લીંટીઓ દ્વારા સમજાવી છે—જેમ લોહાની સોયોને
 અગ્નિમાં ખૂબ તપાવી તપાવીને તેમના પર લોહાના ઘણુનો ઘા મારી મારીને
 તેમને એક પિંડરૂપ બનાવી દેવામાં આવે છે, એવી જ રીતે જે કર્મો એક-
 મેકની સાથે મળી જઈને પિંડરૂપ બની જાય છે, એવાં કર્મોને નિકાચિત અથવા
 ખિલીભૂત કહેવામાં આવે છે. ઉપર્યુક્ત ચાર વિશેષણો દ્વારા એ સમજાવવામાં
 આવ્યું છે કે નારકોનાં પાપકર્મો દુર્વિશેધ્ય હોય છે તે કારણે તેમને અહીં
 મેલામાં મેલા વચ્ચે જેવાં કહ્યાં છે. “ એવામેવ ” તે પાપકર્મો મલિનમાં મલિન
 વચ્ચની જેમ દુર્વિશેધ્ય હોય છે. હવે સૂત્રકાર નીચેના સૂત્રો દ્વારા એ વાત
 પ્રકટ કરે છે કે નારક જીવોનાં પાપકર્મો ઉપર કહ્યા પ્રમાણે દુર્વિશેધ્ય હોવાને
 લીધે તેમને અત્યન્ત વેદના કરાવવામાં કારણભૂત બને છે. (સંપગાઢં પિ ય ણં
 તે વેયણં વેણ્માણા ણો મહાનિજ્જરા, ણો મહાપજ્જવસાણા ભવન્તિ) હે ગૌતમ !
 આ કારણે તે નારક જીવો અત્યંત દૃઢીભૂત (ભયંકરમાં ભયંકર) વેદનાને

ત્વેન દ્વતયા સંવદાતિ, 'ચિફળીકયાઈ' નિકળીકૃતાનિ, અત્યન્તસ્નિગ્ધતયા
 દુર્ભેદમૃત્પિણ્ડવત્ સૂક્ષ્મકર્મસ્કન્ધાનાં સરસતયા પરસ્પરં રસમ્બન્ધકરણતો દુર્ભેદી-
 કૃતાનિ 'સિલિટ્ટીકયાઈ' શ્લિટ્ટીકૃતાનિ લોહમુદ્રવદ્વાગ્નિતપ્તલોહમુદ્રકાકલા-
 પવત્ નિધત્તાનીત્યર્થઃ 'ચિલીભૂયાઈ' ચિલીભૂતાનિ, અગ્નિસંતપ્તલોહમુદ્રકુટ્ટિત
 સૂચીકલાપવત્ પિણ્ડીભૂતાનિ ભવન્તિ, યાનિ ભોગં વિના ઉપાયાન્તરેણ ક્ષપયિતુમશ્ન-

સે ચિક્કનાઈ-ચિકાશકે સંબંધસે અત્યન્ત સ્નિગ્ધ હોને કે કારણ નૃત્તિકા
 ફા પિણ્ડ દુર્ભેદ્ય હો જાતા હૈ उसी प्रकार से जो कर्म सूक्ष्मकर्मा के रस
 के साथ परस्परगाढ संबंध करने के कारण दुर्भेद्य हो जाते हैं वे चिक-
 णीकृत पापकर्म कहलाते हैं-ऐसे ही चिकणीकृत पापकर्म नारक जीवों के
 होते हैं। (सिलिट्टीकयाई) जिस प्रकार लोहे के तार से मजबूत बांध-
 फर अग्नि में तपायी गईं लोहे की शलियों परस्पर चिपक जाती हैं-
 फिर वे अलग नहीं हो सकती हैं, उसी प्रकार से जो कर्म आपस में
 एकमेक हो जाते हैं-जुदे नहीं किये जा सकते हैं-अर्थात् निधत्त हों वे
 पापकर्म श्लिष्टीकृत कहलाते हैं-ऐसे श्लिष्टीकृत पापकर्म नारक जीवों के
 होते हैं। (चिली भूयाई) जो कर्म भोगे विना और किसी उपाय से
 नष्ट न किये जा सके अर्थात् निकाचित हो वे पापकर्म चिलीभूत कह-
 लाते हैं ऐसे चिलीभूत पापकर्म नारक जीवों के होते हैं (अग्नि संतप्त
 लोहमुद्रकुकुटित सूचीकलापवत् पिण्डीभूतानि भवन्ति) यही बात इस

દુર્ભેદ બની બાય છે, એજ પ્રમાણે જે કર્મો સૂક્ષ્મકર્મોના રસની સાથે પરસ્પર
 ગાઢ સંબંધ થવાને કારણે દુર્ભેદ બની બાય છે, એવાં કર્મોને ચીકણા પાપ-
 કર્મો કહે છે. નારક જીવોનાં પાપકર્મો એવાં ચીકણાં હોય છે.

“સિલિટ્ટીકયાઈ” જેવી રીતે લોઢાના તારથી મજબૂત બાંધીને અગ્નિમાં
 તપાવેલી લોઢાની સળીઓ એક બીજા સાથે ચોટી બાય છે-અને તેમને પછી
 જુદી પાડી શકાતી નથી-એટલે કે જે પાપકર્મો નિધત્ત હોય છે તેને શ્લિષ્ટી-
 કૃત પાપકર્મો કહે છે. નારક જીવોનાં પાપકર્મો એવાં શ્લિષ્ટીકૃત હોય છે.
 “ચિલી ભૂયાઈ” જે કર્મોને ભોગવ્યા વિના-બીજા કોઈ પણ ઉપાયથી નાશ
 થતો નથી, એવાં નિકાચિત્ત કર્મોને ચિલીભૂત કહે છે. નારકોનાં કર્મો એવાં
 ચિલીભૂત હોય છે.

વ્યાપિ નિકાચિતાનીત્યર્થઃ, एतेनापि विशेषणचतुष्टयेन नैरयिकपापानि दुर्विशो-
 ध्यानि भवन्ति, इति प्रतिपादितम्, तथा च नैरयिकाणां पापानामपि कर्मणां
 दुर्विशोध्यत्वेन 'एवामेव' इत्याद्युपनयवाक्यं सुघटितं भवति । एवं च 'संपगा-
 ढं पि य णं ते वेयणं वेयमाणा णो महानिज्जरा, णो महापज्जवसाणा भवन्ति' तस्मात्
 हे गौतम ! संपगाढामपि अत्यन्तदृढीभूतामपि च तां वेदनां वेदयमानाः अनुभवन्तः
 ते नैरयिका नो महानिर्जराः नात्यन्तविशिष्टकर्मक्षययन्तो. नो वा महापर्ववसाना

ટીકા કી પંક્તિ દ્વારા સમજાઈ ગઈ છે—અર્થાત્ જિસ પ્રકાર અગ્નિ મેં લૂવ
 તપા તપા કર લોહે કે સુદ્ધર સે કૂટ ૨ કર વિણ્ડીભૂત કરલી જાતી હેં,
 હસી પ્રકાર જો કર્મ આપસ મેં ઇસ રૂપ સે મિલકર વિણ્ડીભૂત હો જાતે
 હેં વે કર્મ નિકાચિત લિલીભૂત કહે જાતે હેં । ઇન ચાર વિશેષણોં દ્વારા
 યહ સમજાયા ગયા છે કિ નારક જીવોં કે પાપકર્મ દુર્વિશોધ્ય હોતે હેં
 ઇસી કારણ વે મેલે સે મેલે વજ્રકે સમાન યહાં પ્રકટ કિયે ગયે હેં અતઃ
 (एवामेव) ऐसा जो यह उपनय वाक्य है वह सुघटित हो जाता है ।
 अब आगे सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि नारक जीवों के पापकर्म ऐसे
 दुर्विशोध्य होते हैं—इसी कारण वे उन्हें अत्यन्तवेदनाके कारण बनते हैं
 (संपगाढं पि य णं ते वेयणं वेयमाणा णो महानिज्जरा, णो महापज्ज-
 वसाणा भवन्ति) हे गौतम ! वे नारक जीव इसी निमित्त से अत्यन्त
 दृढीभूत भयङ्कर से भी भयङ्कर वेदना को भोगते हुए भी अत्यन्तवि-

“ अग्निसत्तप्तलोहमुद्गरकुट्टित सूचीकलापवत् विण्डीभूतानि भवन्ति ”
 ઉપયુક્ત વાત જ આ લીંટીઓ દ્વારા સમજાવી છે—જેમ લોહાની સોયોને
 અગ્નિમાં ખૂણ તપાવી તપાવીને તેમના પર લોહાના ઘણુનો ઘા મારી મારીને
 તેમને એક પિંડરૂપ ણનાવી દેવામાં આવે છે, એવી જ રીતે જે કર્મો એક-
 મેકની સાથે મળી જઈને પિંડરૂપ ણની બને છે, એવાં કર્મોને નિકાચિત અથવા
 ખિલીભૂત કહેવામાં આવે છે. ઉપયુક્ત ચાર વિશેષણો દ્વારા એ સમજાવવામાં
 આવ્યું છે કે નારકોનાં પાપકર્મો દુર્વિશોધ્ય હોય છે તે કારણે તેમને અહીં
 મેલામાં મેલા વજ્ર જેવાં કહ્યાં છે. “ एवामेव ” તે પાપકર્મો મલિનમાં મલિન
 વજ્રની જેમ દુર્વિશોધ્ય હોય છે. હવે સૂત્રકાર નીચેના સૂત્રો દ્વારા એ વાત
 પ્રકટ કરે છે કે નારક જીવોનાં પાપકર્મો ઉપર કહ્યા પ્રમાણે દુર્વિશોધ્ય હોવાને
 લીધે તેમને અત્યન્ત વેદના કરાવવામાં કારણભૂત બને છે. (સંપગાઢં પિ ય ણં
 તે વેયણં વેયમાણા ણો મહાનિજ્જરા, ણો મહાપજ્જવસાણા ભવન્તિ) હે ગૌતમ !
 આ કારણે તે નારક જીવો અત્યંત દૃઢીભૂત (ભયંકરમાં ભયંકર) વેદનાને

ત્વેન દ્વત્તવા સંવદાતિ, 'ચિક્ષીકયાઈ' ચિક્ષીકૃતાનિ, અત્યન્તસ્નિગ્ધતવા
 દુર્મેધમૃત્પિન્ડવત્ સૂક્ષ્મકર્મસ્કન્ધાનાં સરસતવા પરસ્પરં દ્વત્તસ્નિગ્ધત્તરણતો દુર્મેદો-
 કૃતાનિ 'સિલિટ્ટીકયાઈ' શ્લિટ્ટીકૃતાનિ લોહમુગ્ધવદ્દાગ્નિતત્ત્વોદયલાઠાકલા-
 પવત્ નિધત્તાનીત્યર્થઃ 'ચિલીભૂયાઈ' ચિલીભૂતાનિ, અગ્નિસંતત્ત્વોદયમુદ્ગરકુટિત
 સૂચીકલાપવત્ પિન્ડીભૂતાનિ ભવન્તિ, યાનિ મોમં વિના ઉપાયાન્તરેણ ક્ષપયિતુમશ-

સે ચિક્ષનાઈ-ચિકાશકે સંયંધસે અત્યન્ત સ્નિગ્ધ હોને કે કારણ નૃત્તિકા
 કા પિન્ડ દુર્મેધ હો જાતા હૈ उसी प्रकार से जो कर्म सूक्ष्मकर्मों के रस
 के साथ परस्परगाढ संयंघ करने के कारण दुर्मेध हो जाते हैं वे चिक-
 णीकृत पापकर्म कहलाते हैं-ऐसे ही चिक्णिकृत पापकर्म नारक जीवों के
 होते हैं। (सिलिट्टीकयाई) जिस प्रकार लोहे के तार से मजबूत बांध-
 कर अग्नि में तपायीं गईं लोहे की शलियों परस्पर चिपक जाती हैं-
 फिर वे अलग नहीं हो सकती हैं, उसी प्रकार से जो कर्म आपस में
 एकमेक हो जाते हैं-जुदे नहीं किये जा सकते हैं-अर्थात् निधत्त हों वे
 पापकर्म श्लिष्टीकृत कहलाते हैं-ऐसे श्लिष्टीकृत पापकर्म नारक जीवों के
 होते हैं। (चिली भूयाई) जो कर्म भोगे विना और किसी उपाय से
 नष्ट न किये जा सकें अर्थात् निकाचित हों वे पापकर्म चिलीभूत कह-
 लाते हैं ऐसे चिलीभूत पापकर्म नारक जीवों के होते हैं (अग्नि संतप्त
 लोहमुद्गरकुटित सूचीकलापवत् पिन्डीभूतानि भवन्ति) यही बात इस

હુર્મેધ બની જાય છે, એજ પ્રમાણે જે કર્મો સૂક્ષ્મકર્મોના રસની સાથે પરસ્પર
 ગાઢ સંયંધ થવાને કારણે હુર્મેધ બની જાય છે, એવાં કર્મોને ચીકણા પાપ-
 કર્મો કહે છે. નારક જીવોનાં પાપકર્મો એવાં ચીકણાં હોય છે.

“સિલિટ્ટીકયાઈ” જેવી રીતે લોઢાના તારથી મજબૂત બાંધીને અગ્નિમાં
 તપાવેલી લોઢાની સળીઓ એક બીજા સાથે ચોટી જાય છે-અને તેમને પછી
 બીજી પાડી શકાતી નથી-એટલે કે જે પાપકર્મો નિધત્ત હોય છે તેને શ્લિષ્ટી-
 કૃત પાપકર્મો કહે છે. નારક જીવોનાં પાપકર્મો એવાં શ્લિષ્ટીકૃત હોય છે.
 “ચિલી ભૂયાઈ” જે કર્મોના ભોગવ્યા વિના-બીજા કોઈ પણ ઉપાયથી નાશ
 થતો નથી, એવાં નિકાચિત કર્મોને ચિલીભૂત કહે છે. નારકોનાં કર્મો એવાં
 ચિલીભૂત હોય છે.

દૃષ્ટાન્તાન્તરમાદ--'સે જહા વા કેડ પુરિસે અદિગરણિ આઉઢેમાણે મહયા મહયા સદેણં' તદ્-અથવા યયા કોડપિ પુરુષઃ અધિકરણીમ્ અધિકરણી-લોહકારા યજ્ઞ-યોગેને 'હયોડા' इति भाषाप्रसिद्धेन लोहानि आकुट्टयन्ति सा तामित्यर्थः 'एरण' इति प्रसिद्धाम् आकुट्टयन् महता महता अतिदीर्घेण शब्देन अयोधनवात-जन्यध्वनिना, पुरुषहुंकारेण वा, 'महया महया घोसेणं' महता महता घोषेण अतिभङ्गपररवेण प्रतिध्वनिना वा 'महया महया परंपराघाएणं' महता महता पर-म्पराघातेन अतिदीर्घनिरन्तरोप्युपरिघातेन 'अधिकरणीम् आकुट्टयन्' इति

यहां २ पर महावेदनावत्त्व हो ही क्यों कि कोई २ अयोगिकेवली ऐसे भी होते हैं जो महानिर्जरा वाले होकर भी महावेदना वाले कदाचित् नहीं भी होते हैं।

દૃષ્ટાન્ત સે સૂત્રકાર હસી પૂર્વોક્ત વાત કો સમજાતે હું--(સે જહા વા કેડ પુરિસે અદિગરણિ આઉઢેમાણે મહયા ૨ સદેણં) છુહાર જિસ પર લોહા રાખકર હયોડા સે કૂટતા હૈ-ઉસકા નામ (ઇરણ) હૈ તો જૈસે કોઈ પુરુષ છુહાર-ઇરણ કો વઢે જોર ૨ સે હું હું એસે શબ્દ કા ઉચ્ચારણ કરતા હુઆ કૂટે અથવા-વહ્ હસ રૂપ સે ઉસે કૂટે કિ જિસસે ઉસસે કૂટને કા વઢે જોર કા શબ્દ હોવે, (મહયા ૨ ઘોસેણં) કૂટતે સમય ઉસકે મુલસે એસા શબ્દ નિકલે કિ જો ઘડા ભયફૂર હો-અથવા કૂટને કે શબ્દ કો વહાં પ્રતિધ્વનિ હો રહી હો હસ રૂપ સે ઉસ ઇરણ કો વહ્ કૂટે (મહયા ૨ પરંપરાઘાણં) એક હી ચાર વહ્ ઉસે નહીં કૂટે

નિર્જરાયુક્તતા હોય ત્યાં ત્યાં મહાવેદનાયુક્તતા પણ હોવી જ નોંધએ, કારણ કે કોઈ કોઈ અયોગિ-કેવલી એવા પણ હોય છે કે જે મહાનિર્જરાવાળા હોવા છતાં ક્યારેક મહાવેદનાવાળા હોતા નથી.

હવે સૂત્રકાર બીજા દૃષ્ટાન્તો દ્વારા પૂર્વોક્ત વાતનું વધારે સ્પષ્ટીકરણ કરે છે--" સે જહા વા વેડ પુરિસે અદિગરણિ આઉઢેમાણે મહયાર સદેણં " જેમકે કોઈ પુરુષ (છુહાર) ઘણા જોરથી હોંકારા અને પડકારા કરતો કરતો જોરણ પર ઘણુના પ્રહાર કરે-અથવા તો તે એવા જોરથી જોરણ પર હથોડાના પ્રહાર કરે કે તેના આઘાતથી ઘણો ભારે ધ્વનિ થતો હોય, " મહયા ૨ ઘોસેણં " આ રીતે ઘણુનો જોરણ પર પ્રહાર કરતી વખતે તેના મુખમાંથી એવો ધ્વનિ નીકળતો હોય કે જે ઘણો ભયંકર લાગતો હોય-અથવા જોરણ પર ઘણુનો ઘા પડવાથી ત્યાં અવાજનો પ્રતિધ્વનિ ઉઠતો હોય એવી રીતે તે જોરણ પર ઘણુના ઘા મારતો હોય " મહયાર પરંપરાઘાણં " આ પ્રમાણે

ભવન્તિ, સર્વથા કર્મરહિતાઃ ન ભવન્તીત્યર્થઃ । एतेन महानिर्जराया अभावस्य निर्वाणाभावस्वरूपफलं प्रतिपादितम् । एवञ्च 'यो महावेदनः स महानिर्जरः' इति प्रायुक्तो नियमः विशिष्टात्मापेक्षो वेदितव्यः, नतु नैरयिकादिविलष्टकर्मजीवापेक्ष इति, एवं 'यो महानिर्जरः स महावेदनः' इति नियमोऽपि प्रायिको बोध्यः, अयोगिकेवलिनो महानिर्जरस्त्वेऽपि महावेदनत्वस्य अनेकान्वितकत्वात् अयोगिकेवली महानिर्जरो भवत्येव, महावेदनस्तु कदाचित् स्थात्, कदाचित् नापि स्यादिति भावः ।

શિષ્ટ કર્મક્ષયરૂપ નિર્જરાવાળે નહીં હોતે હું ઓર ન સર્વથા કર્મ સે હી રહિત હોતે હું । इससे सूत्रकार ने यह प्रकट किया है कि जब उनमें महानिर्जरा का ही अभाव रहता है तब इस महानिर्जरा के अभाव का फल तो निर्वाणभाव (मोक्ष का अभाव) है वह उनमें है ही यह स्पष्ट है अतः इस कथन से सूत्रकार ने यह प्रमाणित किया है कि (यो महावेदनः स महानिर्जरः) यह जो पहिले कहा गया है " जो महावेदनावाला होता है वह महानिर्जरावाला होता है " सो यह कथन विशिष्ट आत्मा की अपेक्षा से कहा गया ही जानना चाहिये । क्लिष्ट कर्मवाले नारक जीवों की अपेक्षा से नहीं । इसी तरह से " जो महानिर्जरावाला होता है वह महावेदनावाला होता है " यह कथन भी-नियम भी प्रायिक जानना चाहिये क्योंकि अयोगि केवली जो होते हैं वे महानिर्जरावाले होकर भी महावेदनावाले नहीं भी होते हैं । तात्पर्य कहने का यह है कि ऐसा नियम नहीं बन सकता है कि जहां २ पर महानिर्जरावत्त्व हो

લોગવવા છતાં પણ વિશિષ્ટ કર્મક્ષયરૂપ નિર્જરાવાળા હોતા નથી, અને તેઓ કર્મથી સર્વથા રહિત હોતા નથી. આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે એ વાત પ્રકટ કરી છે કે નારકોમાં મહાનિર્જરાનો અભાવ હોય છે, તે કારણે મહાનિર્જરાના ક્ષણ સ્વરૂપ નિર્વાણનો પણ અભાવ હોય છે. સૂત્રકારે આ કથન દ્વારા એ સિદ્ધાન્તનું પ્રતિપાદન કર્યું છે કે " યો મહાવેદનઃ સ મહાનિર્જરઃ " જે મહાવેદનાવાળો હોય છે તે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે. એવું જે પહેલા કહેવામાં આવ્યું છે તે વિશિષ્ટ આત્માને અનુલક્ષીને જ કહેવામાં આવ્યું છે, ક્લિષ્ટ કર્મોવાળા નારકાદિ જીવોને આ કથન લાગુ પડતું નથી. એજ પ્રમાણે " જે મહાનિર્જરાવાળો હોય છે, તે મહાવેદનાવાળો હોય છે. "

આ કથન પણ પ્રાયિક સામાન્યતઃ સમજવું, કારણ કે અયોગિકેવલી મહાનિર્જરાવાળા હોવા છતાં પણ મહાવેદનાવાળા નથી-પણ હોતા. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે એવો કોઈ નિયમ સંભવી શકતો નથી કે જ્યાં જ્યાં મહા-

શિલીભૂતાનિ ભવન્તિ, સંપગાદામપિ ચ તાં તે વેદનાં વેદયમાના નો મહાનિર્જરાઃ
નો વા મહાપર્યવસાના ભવન્તિ । તથા ચાત્રાપિ ' ગાદીકૃતાનિ ' इत्यादिविशेष-
णचतुष्टयेन दुष्परिशादनीयानि भवन्ति, इति प्रतिपादितम् ।

અથ સ્વંજનરાગરક્તવસ્ત્રવિપયે પૃષ્ઠો ગૌતમ આહ-‘ ભયવં ! તત્થ જે સે વત્થે
સ્વંજનરાગરક્તે સે ણં વત્થે સુધોયતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ, સુપરિકમ્મતરાણ
ચેવ ’ હે ભદન્ત ! તત્થ તયોઃ કર્દમરાગરક્તસ્વંજનરાગરક્તયોઃ વસ્ત્રયોર્મધ્યે યત્
તદ્ વસ્ત્રં સ્વંજનરાગરક્તં પતંગરાગેણ રજિતં તદ્ વસ્ત્રં સુધૌતતરકં ચૈવ સુપ્રક્ષાલિતવરં
સ્પાત્, સુવામ્પતરકંચૈવ સુત્પાઝ્યકલકલં સ્પાત્, ‘ સુપરિકર્મતરં ચૈવ-અનાયાસચિ-

(દૃઢતા સે આત્મા મેં લગે હુણ) હોતે હેં તથા ઇસી કારણ જો નારક
જીવ ભયદૂરસે ખી ભયદૂર વેદનાકો ભોગા કરતે હેં-એસે વે નારક જીવ
મહાનિર્જરાચાહે નહોં હોતે હેં ઓર ન મહાપર્યવસાનવાહે હી હોતે હેં ।
યહાં પર “ ગાદીકૃતાનિ ” આદિ ચાર વિશેષણોં દ્વારા યહ સમજાયા
ગયા હૈ કિ ડન નારક જીવોં કે પાપકર્મ દુષ્પરિશાદનીય હોતે હેં ।

અય સ્વંજનરાગસે રક્ત હુણ વસ્ત્રકે વિપયમેં પ્રભુ દ્વારા પૂછેગયે ગૌતમ
ને ડનસે કહા-(‘ ભયવં ! તત્થ જે સે વત્થે સ્વંજનરાગરક્તે સે ણં વત્થં સુધો-
યતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ સુપરિકમ્મતરાણ ચેવ) હે ભગવન્ ! જો વસ્ત્ર
સ્વંજનરાગ સે-પતંગરાગ સે રંગા હુઆ હોતા હૈ અર્થાત્-કર્દમરાગ ઓર
પતંગરાગ સે રંગે હુણ વસ્ત્રોં કે વીચ મેં જો પતંગરાગ સે રંગા ગયા વસ્ત્ર
હૈ-વહ સુધૌતતરક હોતા હૈ-અચ્છીતરહ સે ઘોઘો જા સકે એસા હોતા

(દૃઢ રૂપે આત્મામાં લાગેલા) હોય છે, અને જે પાપકર્મોને કારણે નારક
જીવો ભયંકરમાં ભયંકર વેદનાને ભોગવતા હોય છે, એવા તે નારક જીવો
મહાનિર્જરાવાળા અને મહાપર્યવસાનવાળા (કર્મોનો સંદંતર ક્ષય કરનારા)
હોતા નથી. સૂત્રમાં વપરાયેલાં “ ગાદીકૃત ” આદિ ચાર વિશેષણો દ્વારા એ
સમજાવવામાં આવેલ છે કે તે નારક જીવોનાં પાપકર્મો દુષ્પરિશાદનીય (જેનો
ક્ષય મહા મુશ્કેલીએ કરી શકાય તેવાં) હોય છે.

ખંજનરાગથી રક્ત એવા વસ્ત્રના વિષયમાં જે પ્રશ્ન મહાવીર પ્રભુ દ્વારા
પૂછવામાં આવ્યો હતો. તેના જવાબરૂપે ગૌતમ સ્વામી કહે છે-(‘ ભયવં !
તત્થ જે સે વત્થે સ્વંજનરાગરક્તે સે ણં વત્થં સુધોયતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ,
સુપરિકમ્મતરાણ ચેવ) હે પ્રભો, જે વસ્ત્રને ખંજનરાગથી (પતંગરાગથી)
રંગેલું હોય છે-એટલે કે કર્દમરાગ (ક્રીચક) અને પતંગરાગથી રંગેલા
વસ્ત્રોમાંથી જે વસ્ત્ર પતંગરાગથી રંગેલું હોય છે તે સુધૌતતરક (સુગમતાથી

પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ 'જો સંચાવદ્ તીસે અહિગરણીય કેઈ અહાવાયરે પોગણે પરિસાહિત્તપ્' નો જ્ઞવનોતિ નો પારયનિ, તસ્યા અધિકરણ્યાઃ કાનપિ યથાવાદ-
રાન્ યથાસ્થૂલાન્ પુદ્ગલાન્ પરિસાટયિતું પૃથક્ત્વમ્ અધિકરણ્યાઃ સ્થૂલાન્ પુદ્ગલાન્
લોહકણરૂપાન્ પૃથક્કૃત્વા ધ્વંસયિતું સમર્થો ન ભવતીતિ ભાવઃ । એવદેવ મગવાન્
દાર્પાન્તિકે યોજયતિ-‘એવામેવ ગોયમા । નેરહ્યાણં પાવાઈં કમ્માઈં ગાદીકયાઈં’
હે ગૌતમ ! એવામેવ મહતા આઘાતેન પરિહન્યમાનાયા અપિ અધિકરણ્યાઃ સ્થૂલપુદ્-
ગલવદેવ નૈરપિકાણાં પાપાનિ કર્માણિ ગાદીકૃતાનિ ઘટતપા અત્તમપ્રદેસીઃ સદ્ સં-
વદ્ધાનિ યાવત્-ચિક્ષણીકૃતાનિ અતિસ્નિગ્ધતાપ્રાપદિતાનિ, શ્લિષ્ટીકૃતાનિ,

કિન્તુ લગાતાર વહ ઉસે કૂટતા જાવે તૌ મી વહ (જો સંચાવદ્ તીસે અહિ-
ગરણીય કેઈ અહાવાયરે પોગણે પરિસાહિત્તપ્) હસ સ્થિતિ મેં ઉસ
પરણ કે યથાવાદર પુદ્ગલોં કો-લોહ કે કળોં કો-ઉસસે અલગ કરકે
નષ્ટ કરને કે લિપે સમર્થ નહીં હોતા હૈ, (એવામેવ ગોયમા) હસી તરહ
સે હે ગૌતમ ! (નેરહ્યાણં પાવાઈં કમ્માઈં) નારક જીવોં કે જો પાપરૂપ
કર્મ હોતે હૈં વે (ગાદીકયાઈં જાવ જો પજ્જવસાણાઈં ભવંતિ) ગાદીકૃત
હોતે હૈં યાવત્ વે નારક જીવ મહાપર્યવસાનવાલે નહીં હોતે હૈં-અર્થાત્
ફહને કા તાત્પર્ય એસા હૈ કિ જિસ પ્રકાર સે વડેભારી આઘાતોં દ્વારા
ધાર ૨ કૂટે જાને પર મી પરણ કે સ્થૂલ પુદ્ગલ ઉસસે પૃથક્ હોકર નષ્ટ
નહીં કિયે જા સકતે હૈ, ઉસી પ્રકાર સે નૈરપિક જીવોં કે પાપકર્મ મી
જો કિ આત્મપ્રદેશોં કે સાથ ગોઢતરૂપ સે સંબદ્ધ હોતે હૈં, યાવત્-ચિક્ષ-
ણીકૃત-અતિસ્નિગ્ધતા કો લિપે છુપ હોતે હૈં શ્લિષ્ટીકૃત એવં તિલીભૂત

લગાતાર એરણુ પર જોરથી ધા મારવા છતાં પણ (જો સંચાવદ્ તીસે અહિ-
ગરણીય કેઈ અહાવાયરે પોગણે પરિસાહિત્તપ્) તે એરણુના સ્થૂલ પુદ્ગલોને
(લોઢાના કણોને) તેનાથી અલગ પાડીને તેમનો નાશ કરવાને તે શક્તિમાન
થતો ગયો. “ એવામેવ ગોયમા ” હે ગૌતમ ! એજ પ્રમાણે “ નેરહ્યાણં પાવાઈં
કમ્માઈં ” નારક જીવોનાં જે પાપરૂપ કર્મો હોય છે “ ગાદીકયાઈં ” જાવ જો
પજ્જવસાણાઈં ભવંતિ ” તે ગાદીકૃત હોય છે, તેથી તે નારક જીવો મહાપર્યવ-
સાનવાળા (કર્મોના સર્વથા નાશ કરનારા) હોતા નથી. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે
કે જેવી રીતે એરણુ ઉપર ઘણું વડે ઘણું જોરથી વારંવાર ધા મારવા છતાં
એરણુનાં સ્થૂળ પુદ્ગલોને એરણુમાંથી અલગ પાડીને તેમનો નાશ કરી શકાતો
નથી, એવી જ રીતે નારક જીવોનાં પાપકર્મો કે જે આત્મપ્રદેશોની સાથે દં-
તર રૂપે સંબદ્ધ હોય છે, જે ચીકણાં હોય છે, જે એકમેકની સાથે શ્લિષ્ટી-
કૃત (સંબન્ધ રીતે ચોટેલા) હોય છે અને જે નિકાચિત અથવા તિલીભૂત

શિલીભૂતાનિ ભવન્તિ, સંપગાદામપિ ચ તાં તે વેદનાં વેદ્યમાના નો મહાનિર્જરાઃ
નો વા મહાપર્યવસાના ભવન્તિ । તથા ચાત્રાપિ ' ગાઢીકૃતાનિ ' ઇત્યાદિવિશેષ-
ણચતુષ્ટયેન દુષ્પરિશાટનીયાનિ ભવન્તિ, ઇતિ પ્રતિપાદિતમ્ ।

અથ સ્વંજનરાગરક્તવદ્વિષયે પૃષ્ઠો ગૌતમ આહ-‘ ભયવં ! તત્થ જે સે વત્થે
સ્વંજનરાગરક્તે સે ણં વત્થે સુધોયતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ, સુપરિકમ્મતરાણ
ચેવ ’ હે ભદન્ત । તત્થ તયોઃ કર્દમરાગરક્તસ્વંજનરાગરક્તયોઃ વસ્ત્રયોર્મધ્યે યત્
તદ્ વસ્ત્રં સ્વંજનરાગરક્તં પતંગરાગેણ રજિતં તદ્ વસ્ત્રં સુધૌતતરકં ચૈવ સુપ્રસાલિતવરં
સ્યાત્, સુવામ્પતરકંચૈવ સુત્પાઞ્યકલકું સ્યાત્, ‘ સુપરિકર્મતરં ચૈવ-અનાયાસચિ-

(દૃઢતા સે આત્મા મેં લગે હુણ) હોતે હૈં તથા ઇસી કારણ જો નારક
જીવ ભયદ્ગરસે ‘મી’ ભયદ્ગર વેદનાકો ભોગા કરતે હૈં-એસે વે નારક જીવ
મહાનિર્જરાવાલે નહોં હોતે હૈં ઓર ન મહાપર્યવસાનવાલે હી હોતે હૈં ।
યહાં પર “ ગાઢીકૃતાનિ ” આદિ ચાર વિશેષણોં દ્વારા યહ સમસ્રાયા
ગયા હૈં કિં ઉન નારક જીવોં કે પાપકર્મ દુષ્પરિશાટનીય હોતે હૈં ।

અય સ્વંજનરાગસે રક્ત દ્રુણ વસ્ત્રકે વિષયમેં પ્રભુ દ્વારા પૂછેગયે ગૌતમ
ને ઉનસે કહા-(ભયવં ! તત્થ જે સે વત્થે સ્વંજનરાગરક્તે સે ણં વત્થે સુધો-
યતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ સુપરિકમ્મતરાણ ચેવ) હે ભગવન્ ! જો વસ્ત્ર
સ્વંજનરાગ સે-પતંગરાગ સે રંગા હુઆ હોતા હૈં અર્થાત્-કર્દમરાગ ઓર
પતંગરાગ સે રંગે હુણ વસ્ત્રોં કે બીચ મેં જો પતંગરાગ સે રંગા ગયા વસ્ત્ર
હૈં-વહ સુધૌતતરક હોતા હૈં-અચ્છીતરહ સે ધોયોં જા સકે એસા હોતા

(દૃઢ રૂપે આત્મામાં લાગેલા) હોય છે, અને જે પાપકર્મોને કારણે નારક
જીવો ભયદ્ગરમાં ભયદ્ગર વેદનાને ભોગવતા હોય છે, એવા તે નારક જીવો
મહાનિર્જરાવાળા અને મહાપર્યવસાનવાળા (કર્મોનો સંદંતર ક્ષય કરનારા)
હોતા નથી. સૂત્રમાં વપરાયેલાં “ ગાઢીકૃત ” આદિ ચાર વિશેષણો દ્વારા એ
સમજાવવામાં આવેલ છે કે તે નારક જીવોનાં પાપકર્મો દુષ્પરિશાટનીય (જેનો
ક્ષય મહા મુશ્કેલીએ કરી શકાય તેવાં) હોય છે.

ખંજનરાગથી રક્ત એવા વસ્ત્રના વિષયમાં જે પ્રશ્ન મહાવીર પ્રભુ દ્વારા
પૂછવામાં આવ્યો હતો. તેના જવાબરૂપે ગૌતમ સ્વામી કહે છે-(ભયવં !
તથા જે સે વત્થે સ્વંજનરાગરક્તે સે ણં વત્થે સુધોયતરાણ ચેવ, સુવામતરાણ ચેવ,
સુપરિકમ્મતરાણ ચેવ) હે પ્રભો, જે વસ્ત્રને ખંજનરાગથી (પતંગરાગથી)
રંગેલું હોય છે-એટલે કે કર્દમરાગ (ક્રોધ) અને પતંગરાગથી રંગેલા
વસ્ત્રોમાંથી જે વસ્ત્ર પતંગરાગથી રંગેલું હોય છે તે સુધૌતતરક (સુગમતાથી

ત્રોલ્લેખન-મજ્જકરણાદિમક્રિયં રયાત્ । एवं गौतमेन कथितं सति भगवान् एतं दृष्ट्वा-
न्तं दाष्टान्तिके योजयति-^१ एवमेव गोयमा । समणाणं निर्गंथाणं अहावायराइं
कम्माइं सिद्धिलीकयाइं, निद्वियाइं कयाइं, विप्परिणामियाइं खिप्पामेव विद्वत्थाइं
भवन्ति^२ हे गौतम ! एवमेव खञ्जनरागस्त्वस्य सुवशात्तीयत्वादिवदेव श्रमणानां
निर्ग्रन्थनाम् यथावादराणि स्थूलतरस्करुणानि स्थूलप्रकाराणि असाराणि कर्माणि
शिथिलीकृतानि श्लथत्वमापादितानि भवन्ति, निष्ठितानि कृतानि, निःसत्तकानि

હે, સુવામ્યતરફ-ધવ્વે ચગૈરહ્ જિસકે અચ્છી તરહ્ સે ધોયે જા સકે એસા
હોતા હૈ ઓર સુપરિકર્મતરફ અનાયાસ જિસમેં ચિત્રોલ્લેખન ઓર
રચના કરને રૂપ આદિ ક્રિયાઓં કી જા સકે એસા હોતા હૈ એસા જબ
ગૌતમ ને કહા-તો इसी दृष्टान्त को दाष्टान्त में योजित करते हुए प्रभु
ने उन्हें समझाया-(एवमेव गोयमा) इसी तरह से हे गौतम ! (सम-
णाणं निर्गंथाणं अहावायराइं कम्माइं सिद्धिलीकयाइं निद्वियाइं कयाइं
विप्परिणामियाइं खिप्पामेव विद्वत्थाइं भवन्ति) श्रमण निर्ग्रन्थों के जो
यथावादा कर्म होते हैं, वे शिथिलीकृत होते हैं, निष्ठित होते हैं और
विपरिणामित होते हैं-इसी कारण वे शीघ्र ही विध्वस्त हो जाते हैं-
तात्पर्य कहने का यह है कि श्रमण निर्ग्रन्थों की आत्मा सम्यग्दर्शन से
वासित रहा करती है इस कारण उनके कर्म जैसे मिथ्यादृष्टियों की
आत्मा में गाढरूप आदि विशेषणों से विशिष्ट होते हैं वैसे वे यहाँ
नहीं होते हैं-यहाँ तो वे खंजनराग से रंगे हुए वस्त्र की तरह शिथिल
आदि विशेषणों वाले होते हैं-जैसे खंजन (पतंग) रंग से रंगे हुए वस्त्र

પોઈ શકાય એવું) હોય છે, સુવામ્યતરફ (સુગમતાથી અથ ધ્રુવ કરી શકાય
તેવું) હોય છે, અને સુપરિકર્મતરફ (સરળતાથી ચિત્રાલેખન, વિશિષ્ટ રચના
આદિ કરી શકાય તેવું) હોય છે. હવે આ દૃષ્ટાન્તને આધારે શ્રમણ નિર્ગં-
થોના કર્મોને પણ ખંજનરાગથી રંગેલા વસ્ત્રની જેમ સુવિશેષ્ય બતાવવાને
માટે મહાવીર પ્રભુ કહે છે-“ एवमेव गोयमा ! ” એજ પ્રમાણે હે ગૌતમ !
(समणाणं निर्गंथाणं अहावायराइं कम्माइं सिद्धिलीकयाइं, निद्वियाइं कयाइं,
विप्परिणामियाइं खिप्पामेव विद्वत्थाइं भवन्ति) શ્રમણ નિર્ગંથોનાં જે સ્થૂલ
કર્મો હોય છે, તે શિથિલીકૃત હોય છે, નિષ્ઠિત-દૃઢ હોય છે, તે કારણે તેમનો
જન્મી નારા થઈ જાય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે શ્રમણ નિર્ગંથોના આત્મા
સમ્યગ્દર્શનથી યુક્ત હોય છે. તેથી તેમનાં કર્મ મિથ્યાદૃષ્ટિઓની જેમ આત્માની
સાથે ગાઢીકૃત (દૃઢ રૂપે અંબદ્ધ) હોતાં નથી. પણ તેમના કર્મો તો ખંજન

વિદિતાનિ વિપરિણામિતાનિ સ્થિતિઘાત-રસઘાતાદિભિઃ વિપરિણામં પ્રાપ્તાનિ, સિમમેવ સ્પટિત્યેવ વિધ્વસ્તાનિ ભવન્તિ, एतैश्च विशेषणैः सुविशोध्यानि, इत्युक्तम् । શ્રમણાનાં મહાવેદનત્યાડલ્પવેદનત્વે આદિ-‘જાવડ્યં તાવડ્યંપિ તે વેયણં વેણ-માણા મહાનિજ્જરા, મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ’ તે શ્રમણનિર્ગ્રન્થાઃ યાવતિકાં તાવ-તિકામપિ યાવત્તાવત્પરિમિતામપિ અલ્પાં વર્ધાં વા વેદનાં વેદ્યમાનાઃ મહાનિર્જરાઃ, મહાપર્યવસાનાશ્ચ ભવન્તિ સર્વકર્મણાં ક્ષપિતત્વેન મહાનિર્જરત્યાપાદનેન સકલકર્મ-

મેં સે ઉસકા રંગ યદ્રુત હી જલ્દી ધોને પર નિકલ જાતા હૈ ક્યોં કિ ઉસકે પ્રદેશોં મેં અત્યન્તરૂપ સે સંસક્ત નહીં હોતા, ઉસી પ્રકાર વે કર્મ મ્હી સમ્યગ્દર્શન કે પ્રભાવ સે સ્થિતિઘાત, રસઘાત આદિ રૂપ સે વિપરિણામ કો વહાં પ્રાપ્ત હોતે રહતે હૈં-અતઃ વે સત્તા સે રહિત બનકર શીઘ્ર હી કટે હુણ વૃક્ષ કી તરહ આત્મા સે પૃથક્ હો જાતે હૈં । इन विशेषणों द्वारा सूत्रकार ने यही प्रकट किया है कि जो ऐसे असारूप कर्म होते हैं वे सुविशोध्य होते हैं । इसी कारण वे श्रमण निर्ग्रन्थ (जावड्यं तावड्यं पि ते वेयणं वेणमाणा महानिज्जरा महापज्जवसाणा भवन्ति) थोड़ी यद्द्रुत किसी भी प्रकार की चाहे वेदना को भोग रहे हो तब भी महानिर्जरावाले और महापर्यवसानवाले होते हैं-तात्पर्य कहने का यह है कि सम्यग्दर्शन के हो जाने पर पदार्थ का यथार्थ बोध उनकी आत्मा में हो जाता है-अतः वे अल्प वा महावेदना को भोगते हुए भी उस अवस्था में रागद्वेषरूप कलुषित परिणामवाले नहीं बनते हैं-क्यों कि उन्हें यह

રાગથી રંગેલા વસ્ત્રની જેમ શિથિલ આદિ વિશેષણોવાળાં હોય છે. જેવી રીતે ખંજનરાગથી રંગેલા વસ્ત્રને ઘોતાની સાથે જ તેનો રંગ સુગમતાથી દૂર કરી શકાય છે, કારણ કે તે રંગ તેના પ્રદેશોમાં અધિક રૂપે સંસક્ત હોતો નથી, એજ પ્રમાણે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોના કર્મ પણ સમ્યગ્દર્શનના પ્રભાવથી સ્થિતિઘાત, રસઘાત આદિરૂપે વિપરિણામને પ્રાપ્ત કરતાં રહે છે તે કારણે તે કર્મો સત્તાથી રહિત બનીને જલ્દીથી કપાયેલા વૃક્ષની જેમ આત્માથી અલગ થઈ નાથ છે. આ વિશેષણો દ્વારા સૂત્રકારે એજ વાત પ્રકટ કરી છે કે તેમનાં તે શિથિલી-કૃત કર્મો સુવિશોધ્ય હોય છે.

એજ કારણે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ (જાવડ્યં તાવડ્યં પિ તે વેયણં વેણમાણા મહાનિજ્જરા મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ) ઓછી કે વધારે, ગમે તે પ્રકારની વેદનાને ભોગવતા હોય છતાં પણ મહાનિર્જરાવાળા અને મહાપર્યવસાનવાળા

ક્ષયવન્તો ભવન્તીતિ ભાવઃ । તદેવ દૃષ્ટાન્તદ્વારા દૃઢયતિ-‘ સે જહાનામણ કેઈ પુરિસે સુવકં તળહત્યયં જાયતેયંસિ પચિસવેજ્ઞા ’ હે ગૌતમ ! તત્-અથ યથા નામ કોડપિ પુરુષઃ શુલ્કં તળહસ્તકં ઘાસપૂલકં જાતતેજસિ અગ્ની મશ્નિષેત્, ‘ સે

યથાર્થરૂપ સે જ્ઞાત હોને લગ જાતા હૈ કિ યહ જો વૃદ્ધ હો રહા હૈ વહ એસો હી હોના થા સો હો રહા હૈ-મેરે દર્શિવિષોદ કરને સે યહ કમતી પદતી નહીં હો સકતા હૈ-એસા કરને સે તો ઉલ્લા કર્મ કા હી આગામી બંધ હોગા અતઃ મધ્યસ્થ ભાવ રાખકર વે ઉસ આગતિત થોડી બાહે ઘટતુ મી વેદના કો સમતાભાવ સે ભોગતે રહતે હૈં । ડનકી આત્મા મેં યહ દૃઢશ્રદ્ધા જમી રહતી હૈ કિ (અનહોની કોઈ યાત હોતી નહીં હૈ ઓર જો હોતી હૈ વહ (હોને લાયક) હસલિયે હોતી હૈ-અતઃ એસી સ્થિતિ મેં અધીર બનના યહ કપમપિ ઉચિત નહીં હૈ હસ તરહ કે દૃઢ સાહસ કે સાથ રાગદ્વેષ રહિત સમતાભાવ ધારણ કરને સે આત્મા મેં નવીન કર્મો કા બંધ હોતા નહીં હૈ ઓર જો સંચિત કર્મ હોતે હૈં, ડનકી નિર્જરા હોતે રહને સે અન્ત મેં વે સર્વ કર્મો સે વિપ્રમુક્ત હોતે હૈં । હસી યાત કો સૂત્ર-કાર દૃષ્ટાન્ત દ્વારા પુષ્ટ કરને કે નિમિત્ત ગૌતમ સે (સે જહા નામણ કેઈ

(કર્મોના સર્વથા અન્ત કરનારા) હોય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સમ્ય-ગ્દર્શનની પ્રાપ્તિ થઈ ગયા પછી તેમને પદાર્થનું યથાર્થ જ્ઞાન પ્રાપ્ત થઈ શકતું હોય છે, તે કારણે અદ્ય અથવા મહાવેદનાનું વેદન કરવા છતાં પણ તેઓ એ પરિસ્થિતિમાં રાગદ્વેષ રૂપ કલુષિત પરિણામવાળા બનતા નથી, કારણ કે તેમને તે યથાર્થ રૂપે સમજવા લાગે છે કે જે બનવાનું હતું એજ બની રહ્યું છે. મારા દ્વારા હવે અથવા શોક કરવાથી તેમાં કંઈ પણ ફરક પડી શકે તેમ નથી. એમ કરવાથી ઉદ્ભવે કર્મોના વધુ બંધ બંધાશે. તે કારણે તેઓ તેમના પર આવી પડેલ દુઃખને અથવા થોડી કે વધારે વેદનાને સમતાભાવે સહન કર્યા કરે છે. એમના આત્મામાં એવી પાકી શ્રદ્ધા બંધાયેલી રહે છે કે “ ન બનવા લાયક કોઈ વાત બનતી નથી અને જે કંઈ બને છે તે બનવાને લાયક હોવાથી જ બન્યા કરે છે ” તેા એવી પરિસ્થિતિમાં અકળાઈ જવું અથવા સમતાવૃત્તિના ત્યાગ કરવો તે બિલકુલ ઉચિત નથી. આ પ્રકારનો રાગદ્વેષ રહિતનો સમતાભાવ રાખવાથી આત્મામાં નવીન કર્મોના બંધ થતો નથી અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા થતી રહે છે અને અન્તે એવો જીવ સમસ્ત કર્મોના બંધોને મોક્ષ પામી શકે છે.

પૂર્ણ ગોયમા ! તે સુષ્કે તળહૃદય જાયતેયંસિ પક્ષિલ્લે સમાણે સ્વિષ્મામેવ મસ-
મસા વિજ્જઈ ? ' હે ગૌતમ ! તત્ત્વ નૂનં નિશ્ચયેન ત શુષ્કઃ તળહૃદયઃ યાસપૂલકઃ
જાતતેજસિ અગ્ની પ્રસિષ્તઃ સન્ન સિપ્રમેવ ઘટિત્યેવ મસમસાપ્યતે ? દહ્યતે ભસ્મી
ભવતિ લલુ ? । ગૌતમઃ સ્વીકરોતિ- ' હંતા, મસમસાવિજ્જઈ ' હે મદન્ત ! હન્ત,
સત્યમ્ મસમસાપ્યતે, સઘ એવ દગ્ધો ભવતિ । તમેવ ભગવાન્ દાષ્ટાન્તિકે યોજ-
યતિ - ' એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિર્ગંધાણં : અહાવાયરાઈં કમ્માઈં, જાવ-
પજ્જવસાણા ભવંતિ ' હે ગૌતમ ! એવમેવ અગ્નિપ્રસિષ્તશુષ્કતળપૂલકવદેવ શ્રમ-
ણાનાં નિર્ગંધાનાં યથાવાદરાણિ યાવત્-શિથિલીકૃતાનિ નિષ્ઠિતાનિ કૃતાનિ,
વિપરિણામિતાનિ સિપ્રમેવ વિધ્વસ્તાનિ ભવન્તિ, યાવત્ તાવત્પરિમિતામપિ વેદનાં
વેદ્યમાના નિર્ગંધાઃ શ્રમણાઃ મહાનિર્જરાઃ મહાપર્યવસાના ભવન્તીત્પાશયઃ ।

પુરિસે સુષ્કં તળહૃદયં જાયતેયંસિ પક્ષિલ્લેજ્જા) એસા કહ રહે હું કિ-
હે ગૌતમ ! જૈસે કોઈ એક પુરુષ શુષ્ક યાસ કે પૂલે કો ધવકતી હુઈ
અગ્નિ મેં ડાલતા હૈ-તો (સે પૂર્ણ ગોયમા ! સે સુષ્કે તળહૃદય જાયતે-
યંસિ પક્ષિલ્લે સમાણે સ્વિષ્મામેવ મસમસાવિજ્જઈ) હે ગૌતમ ! કયા વહ
શુષ્ક યાસ કા પૂલા દેલતે ૨ ઉસ ધવકતી હુઈ જ્વાલા મેં જલ નહીં
જાતા હૈ કયા ? (હંતા મસમસાવિજ્જઈ) હાં, મદન્ત ! જલ જાતા હૈ તો
(એવામેવ ગોયમા) ઇસી તરહ સે હે ગૌતમ ! (સમણાણં નિર્ગંધાણં)
શ્રમણ નિર્ગંધોં કે (અહાવાયરાઈં કમ્માઈં) યથાવાદર-અસાર કર્મ
(જાય પજ્જવસાણા ભવંતિ) યાવત્ શિથિલીકૃત, નિષ્ઠિત, એવં વિપરિ-
ણામિત હોકર શીઘ્ર હી વિધ્વસ્ત હો જાતે હું વે ચાહે ધોડી યો વહુત
કૈસે હી વેદના કયોં ન ભોગેં અન્ત મેં મહાનિર્જરાવાલે વનકર વે સમસ્ત
કર્મોં કો નષ્ટ કર દેતે હું ।

હવે સૂતકાર એજ વાતની દૃષ્ટાંતો દ્વારા પુષ્ટિ કરે છે-“ સે જહા નામપ
કેઈ પુરિસે સુષ્કં તળહૃદયં જાયતેયંસિ પક્ષિલ્લેજ્જા ” હે ગૌતમ ! કેઇ પુરુષ
સૂક્ષ્મ યાસના પૂજાને પ્રબલિત અગ્નિમાં નાખે તો “ સે પૂર્ણ ગોયમા ! સે
સુષ્કે તળહૃદય જાયતેયંસિ પક્ષિલ્લે સમાણે સ્વિષ્મામેવ મસમસાવિજ્જઈ ” હે
ગૌતમ ! શુ તે સૂક્ષ્મ યાસનો પૂજો ભોતભોતામાં તે પ્રબલિત આગમાં બળી
જતો નથી ? “ હંતા મસમસાવિજ્જઈ ” હા, પ્રભો ! તે જરૂર બળી જાય છે.
“ એવામેવ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! એજ પ્રમાણે “ સમણાણં નિર્ગંધાણં ”
શ્રમણ નિર્ગંધાના “ અહાવાયરાઈં કમ્માઈં ” અસાર કર્મ “ જાવ પજ્જવસાણા
ભવતિ ” શિથિલીકૃત, નિષ્ઠિત અને વિપરિણામિત થઇને જલ્દી નષ્ટ થઇ જાય
છે. ભલે તેઓ થોડી વેદના ભોગવતા હોય કે વધારે વેદના ભોગવતા હોય,
પણ અંતે મહાનિર્જરાવાળા બનીને સમસ્ત કર્યોનો ક્ષય કરી નાખે છે.

ક્ષયન્તો ભવન્તીતિ ભાવઃ । તદ્દેવ દૃષ્ટાન્તદ્વારા દૃઢયતિ-‘ સે જહાનામણ કેઈ પુરિસે સુવકં તળદત્થયં જાયતેયંસિ પવિસવેજ્ઞા ’ હે ગૌતમ ! તત્-અથ યથા નામ કોડપિ પુરુષઃ શુલ્કં તળદસ્તકં ઘાસપૂત્રકં જાતતેનસિ અગ્ની પશિપેન્, ‘ સે

યથાર્થરૂપ સે જ્ઞાત હોને લગ જાતા હૈ કિ યહ જો કૃષ્ણ હો રહ્યા હૈ વહ એસો હી હોના ધા સો હો રહ્યા હૈ-મેરે હર્ષવિપાદ કરને સે યહ કમતી ષઢતી નહીં હો સક્તા હૈ-એસા કરને સે તો ઉલ્ટા કર્મ કા હી આગામી બંધ હોગા અતઃ મધ્યસ્થ ભાવ રાખકર વે उस आपतित थोड़ी बाह्य षઢત હી વેદના કો સમતાભાવ સે ભોગતે રહતે હું । ડનકી આત્મા મેં યહ દૃઢશ્રદ્ધા જમી રહતી હૈ કિ (અનહોની કોઈ યાત હોતી નહીં હૈ ઓર જો હોતી હૈ વહ (હોને લાયક) ફસલિયે હોતી હૈ-અતઃ એસી સ્થિતિ મેં અધીર બનના યહ કપમપિ ઉચિત નહીં હૈ ફસ તરહ કે દૃઢ સાહસ કે સાથ રાગદ્વેષ રહિત સમતાભાવ ધારણ કરને સે આત્મા મેં નવીન કર્મોં કા બંધ હોતા નહીં હૈ ઓર જો સંચિત કર્મ હોતે હું, ડનકી નિર્જરા હોતે રહને સે અન્ત મેં વે સર્વ કર્મોં સે વિપ્રમુક્ત હોતે હું । ફસી યાત કો સૂત્ર-કાર દૃષ્ટાન્ત દ્વારા પુષ્ટ કરને કે નિમિત્ત ગૌતમ સે (સે જહા નામણ કેઈ

(કર્મેણો સર્વથા અન્ત કરનારા) હોય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સમ્ય-ગર્શનની પ્રાપ્તિ થઈ ગયા પછી તેમને પદાર્થનું યથાર્થ જ્ઞાન પ્રાપ્ત થઈ શકતું હોય છે, તે કારણે અલ્પ અથવા મહાવેદનાનું વેદન કરવા છતાં પણ તેઓ એ પરિસ્થિતિમાં રાગદ્વેષ રૂપ કલુષિત પરિણામવાળા બનતા નથી, કારણ કે તેમને તે યથાર્થ રૂપે સમજવા લાગે છે કે જે બનવાનું હતું એજ બની રહ્યું છે. મારા દ્વારા હવે અથવા થોડક કરવાથી તેમાં કંઈ પણ ફરક પડી શકે તેમ નથી. એમ કરવાથી ઉલ્ટા કર્મના વધુ બંધ બંધાશે. તે કારણે તેઓ તેમના પર આવી પડેલ દુઃખને અથવા થોડી કે વધારે વેદનાને સમતાભાવે સહન કર્યા કરે છે. એમના આત્મામાં એવી પાકી શ્રદ્ધા બંધાયેલી રહે છે કે “ ન બનવા લાયક કોઈ વાત બનતી નથી અને જે કંઈ બને છે તે બનવાને લાયક હોવાથી જ બન્યા કરે છે. ” તેા એવી પરિસ્થિતિમાં અકળાઈ જવું અથવા સમતાવૃત્તિના ત્યાગ કરવો તે બિલકુલ ઉચિત નથી. આ પ્રકારનો રાગદ્વેષ રહિતનો સમતાભાવ રાખવાથી આત્મામાં નવીન કર્મેણો બંધ થતો નથી અને સંચિત કર્મેણી નિર્જરા થતી રહે છે અને અન્તે એવો જીવ સમસ્ત કર્મેણો ક્ષય કરીને ચોક્ષ પામી શકે છે.

પૂર્ણ ગોયમા ! તે સુષ્કે તળહૃદય જાયતેયંસિ પક્ષિલ્લે સમાણે લિપ્પામેવ મસ-
મસા વિજ્જહ ? ' હે ગૌતમ ! તત્ત્વ નૂનં નિશ્ચયેન સ શુષ્કઃ તળહૃદયઃ વાસપૂલકઃ
જાતેજસિ અગ્ની પ્રક્ષિપ્તઃ સન્ શિપ્રમેવ શ્વિત્યેવ મસમસાપ્યતે ? દહતે ભસ્મી
ભવતિ લલુ ? । ગૌતમઃ સ્વીકરોતિ- ' હંતા, મસમસાવિજ્જહ ' હે ભદન્ત ! હન્ત,
સત્યમ્ મસમસાપ્યતે, સદ્ય એવ દગ્ધો ભવતિ । તમેવ ભગવાન્ દ્રાષ્ટાન્તિકે યોજ-
યતિ - ' એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિર્ગંધાણં : અહાવાયરાઈં કમ્માઈં, જાવ-
પજ્જવસાણા ભવંતિ ' હે ગૌતમ ! એવમેવ અગ્નિપ્રક્ષિપ્તશુષ્કતળપૂલકવદેવ શ્રમ-
ણાનાં નિર્ગંધાનાં યથાવાદરાણિ યાવત્-શિથિલીકૃતાનિ નિષ્ઠિતાનિ કૃતાનિ,
વિપરિણામિતાનિ શિપ્રમેવ વિધ્વસ્તાનિ ભવન્તિ, યાવત્ તાત્પરિમિતામપિ વેદનાં
વેદ્યમાના નિર્ગંધાઃ શ્રમણાઃ મહાનિર્જરાઃ મહાપર્યવસાના ભવન્તીત્યાશયઃ ।

પુરિસે સુષ્કં તળહૃદયં જાયતેયંસિ પક્ષિલ્લેજ્જા) એસા કહ રહે હું કિ-
હે ગૌતમ ! જેસે કોઈ એક પુરુષ શુષ્ક વાસ કે પૂલે કો ધધકતી હુહ
અગ્નિ મેં ઢાલતા હૈ-તો (સે પૂર્ણ ગોયમા ! સે સુષ્કે તળહૃદય જાયતે-
યંસિ પક્ષિલ્લે સમાણે લિપ્પામેવ મસમસાવિજ્જહ) હે ગૌતમ ! કયા વહ
શુષ્ક વાસ કા પૂલા દેખતે ૨ ઉસ ધધકતી હુહ જ્વાલા મેં જલ નહીં
જાતા હૈ કયા ? (હંતા મસમસાવિજ્જહ) હાં, ભદન્ત ! જલ જાતા હૈ તો
(એવામેવ ગોયમા) હસી તરહ સે હે ગૌતમ ! (સમણાણં નિર્ગંધાણં)
શ્રમણ નિર્ગંધોં કે (અહાવાયરાઈં કમ્માઈં) યથાવાદર-અસાર કર્મ
(જાવ પજ્જવસાણા ભવંતિ) યાવત્ શિથિલીકૃત, નિષ્ઠિત, એવં વિપરિ-
ણામિત હોકર શીઘ્ર હી વિધ્વસ્ત હો જાતે હું વેં ચાહે થોડી યો વહુત
ફૈસે હી વેદના કયોં ન ભોર્મે અન્ત મેં મહાનિર્જરાવાલે યનકર વે સમસ્ત
કર્મોં કો નષ્ટ કર દેતે હું ।

હવે સૂત્રકાર એજ વાતની દૃષ્ટાંતો દ્વારા પુષ્ટિ કરે છે- " સે જહા નામય
ફેહ પુરિસે સુષ્કં તળહૃદયં જાયતેયંસિ પક્ષિલ્લેજ્જા " હે ગૌતમ ! કોઇ પુરુષ
સૂક્ષ્મ વાસના પૂણાને પ્રબલિત અગ્નિમાં નાખે તો " સે પૂર્ણ ગોયમા ! સે
સુષ્કે તળહૃદય જાયતેયંસિ પક્ષિલ્લે સમાણે લિપ્પામેવ મસમસાવિજ્જહ " હે
ગૌતમ ! શું તે સૂક્ષ્મ વાસનો પૂણો ભેતભેતામાં તે પ્રબલિત આગમાં બળી
જતો નથી ? " હંતા મસમસાવિજ્જહ " હા, પ્રભો ! તે જરૂર બળી જાય છે.
" એવામેવ ગોયમા ! " હે ગૌતમ ! એજ પ્રભાણે " સમણાણં નિર્ગંધાણં "
શ્રમણુ નિર્ગંધોના " અહાવાયરાઈં કમ્માઈં " અસાર કર્મ " જાવ પજ્જવસાણા
ભવતિ " શિથિલીકૃત, નિષ્ઠિત અને વિપરિણામિત થઇને જલ્દી નષ્ટ થઇ જાય
છે. ભલે તેઓ થોડી વેદના ભોગવતા હોય કે વધારે વેદના ભોગવતા હોય,
પણ અંતે મહાનિર્જરાવાળા બનીને સમસ્ત કર્મોનો ક્ષય કરી નાખે છે.

તમેનાપરદષ્ટાન્તેન દદતરં કરોતિ-‘ સે જહા નામણ કેહ પુરિસે તત્તંસિ અય કવેલ્લુપંસિ ઉદગચિંદું, જાવ-દંતા, ચિદંસં આગચ્છદ્ ’ હે ગૌતમ ! તત્તંસિ નામ કોડપિ પુરુષ તત્તે અય કવેલ્લુકે-લોહકટાદે ઉદકચિન્દું યાવત્-પશિંગત્, તત્તં નૂતં સ ઉદકચિન્દુઃ તત્તે લોહકટાદે પશિન્નઃ સન્ન શિપમેવ વિધ્વંસમાગચ્છતિ ? હન્ત, ભદન્ત ! શિપમેવ વિધ્વંસમાગચ્છતિ નાદં પ્રાપ્નોતિ । મગચાન્ તં દાર્ઘ્ય-ન્ટિકે યોજયતિ-‘એવામેવ ગોયમા ! સમણાણં નિગ્ગંયાણં, જાવ-મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ ’ હે ગૌતમ ! એવામેવ તત્તલોહકટાદપશિન્નોદકચિન્દુવદેવ શ્રમણાનાં નિર્ગ્ર-ન્યાના યાવત્-યથાવાદરાણિ કર્માણિ શિથિલીકૃતાનિ નિષ્ઠિતાનિ કૃતાનિ, વિપરિણામિતાનિ શિપમેવ વિધ્વંસમાગચ્છન્તિ, યાવતિકાં તાવતિકામપિ ચ વેદનાં

इसी बात को दूसरे दृष्टान्त से ददतर करते हुए वे गौतम से कहते हैं-(से जहा नामण केइ पुरिसे) गौतम ! जैसे कोई एक पुरुष (तत्तंसि अयकवल्लुंसि) अत्यन्त गरम हुए लोहे के तवे पर (उदग चिन्दुं) जल की चिन्दु को डाले-तो क्या गौतम ! उस लोहे के अत्यन्त गर्म हुए तवे पर डाला गया वह जल का चिन्दु वहां नष्ट नहीं होगा क्या ? इसके उत्तर में गौतम स्वामी प्रभु से कहते हैं-क्यों नहीं-भदन्त ! वह वहां अवश्य ही शीघ्र नष्ट हो जायगा-(एवामेव गोयमा) तो हे गौतम ! इसी तरह से (समणाणं निगगंथाणं) श्रमण निर्ग्रन्थों के (जाव महापज्जवसाणा भवन्ति) श्रमण, निर्ग्रन्थोंके यथावादर कर्म शिथि-लीकृत, निष्ठित, एवं विपरिणामित होकर शीघ्र ही आमूलचूल(बिल्कुल) नष्ट हो जाते हैं । वे चाहें थोड़ी या बहुत-कैसी ही वेदना क्यों न भोगें अन्त में वे महानिर्जरा शाली होकर वे समस्त कर्मों के विध्वंस कर्त्ता

એજ વાતને બીજા દૃષ્ટાન્ત દ્વારા વધારે પુષ્ટિ આપવા માટે મહાવીર સ્વામી ગૌતમ સ્વામીને કહે છે-“ સે જહા નામણ કેહ પુરિસે ” હે ગૌતમ ! કેઇ એક પુરુષ “ તત્તંસિ અયકવલ્લુંસિ ” અતિથય તપાવેલા લોહાના તાવડા ઉપર “ ઉદગ ચિન્દુ ” પાણીનું ટીપું નાખે, તો હે ગૌતમ ! શું તે પાણીનું ટીપું નાશ નહીં પામે ? તેનો જવાબ આપતા ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને કહે છે “ હે ભદન્ત ! તે ટીપું તુરંત જ અવશ્ય નાશ પામશે.

“ એવામેવ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! એજ પ્રમાણે “ સમણાણં નિગ્ગંયાણં ” શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોના “ જાવ મહાપજ્જવસાણા ભવંતિ ” સ્થૂલ પુદ્ગલો અસાર કર્મો શિથિલીકૃત, નિષ્ઠિત અને વિપરિણામિત થઇને તુરંત જ સર્વથા નષ્ટ થઇ જાય છે. તેઓ ભલે થોડી વેદના ભોગવે કે વધારે વે ગુણે, પણ તેઓ અન્તે મહાનિર્જરાવાળા બનીને સમસ્ત કર્મોના

વેદ્યમાનાસ્તે નિર્ગ્રન્થાઃ શ્રમણાઃ મહાનિર્જરાઃ મહાપર્યવસાનાથ ભવન્તિ । ભગ-
વાન્ ઉપસંહરન્નાહ—‘ સે તેજઢેળં જે મહાવેયણે સે’ મહાનિજ્જરે જાવ-પસત્થ
નિજ્જરાણે ’ હે ગૌતમ ! તત્ તેનાર્યેન એવમુચ્યતે—યે મહાવેદનાસ્તે મહાનિર્જરા
ભવન્તિ । યાવત્—યે મહાનિર્જરાસ્તે મહાવેદનાઃ ભવન્તિ, મહાવેદનસ્ય અલ્પવેદન-
સ્ય ચ મધ્યે સ શ્રેયાન્ ભવતિ, યઃ પ્રશસ્તનિર્જરાભવતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

જીવકરણવક્તવ્યતા ।

પૂર્વ જીવાનાં વેદના પ્રતિપાદિતા, સા ચ વેદના કરણતો ભવતીતિ કરણ
પદાર્થ નિરૂપયિતુમાહ—‘ કઙ્કિવિહેળં ભંતે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કઙ્કિવિહેળં ભંતે ! કરણે પપ્પણત્તે ? ગોયમા ! ચડઢ્વિહે
કરણે પપ્પણત્તે, તં જહા—મળકરણે, વઙ્કરણે, કાયકરણે, કમ્મ-
કરણે । ણેરઙ્કયાણં ભંતે ! કઙ્કિવિહેળં કરણે પપ્પણત્તે ? ગોયમા !
ચડઢ્વિહેળં પપ્પણત્તે, તં જહા — મળકરણે, વઙ્કરણે, કાયકરણે,
કમ્મકરણે । પંચિદિયાણં સઢ્વેસિં ચડઢ્વિહેળં કરણે પપ્પણત્તે ।
પર્ગિદિયાણં ઢુવિહેળં—કાયકરણે ય, કમ્મકરણે ય । વિગલિંદિયાણં
તિવિહેળં વઙ્કરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે ય । નેરઙ્કયાણં ભંતે ! કિં
કરણઑ અસાયં વેયણં વેયંતિ, અકરણઑ અસાયં વેયણં વેયંતિ ?

હી યત્તે હિં । અપ ભગવાન્ હસ વિષય કા ઉપસંહાર કરતે હુણ કહતે
હિં (સે તેજઢેળં જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે જાવ પસત્થનિજ્જરાણે) હે
ગૌતમ ! હસી કારણ સે મેંને એસા કહા હે કિં જો મહાવેદનાવાલે હોતે
હિં વે મહાનિર્જરાવાલે હોતે હિં—યાવત્—જો મહાનિર્જરાવાલે હોતે હિં—વે
મહાવેદનાવાલે હોતે હિં । મહાવેદનાવાલે એવં અલ્પવેદનાવાલે કે વીચ
મેં વહી ઉત્તમ હોતા હિં જો પ્રશસ્ત નિર્જરાવાલા હોતા હિં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ખને છે. હવે મહાવીર પ્રભુ આ વિષયનો ઉપસંહાર કરતા ગૌતમ સ્વામીને
કહે છે—(સે તેજઢેળં જે મહાવેયણે સે મહાનિજ્જરે, જાવ પસત્થનિજ્જરાણે) હે
ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે જે મહાવેદનાવાળા હોય છે, તે મહા-
નિર્જરાવાળા હોય છે અને મહાનિર્જરાવાળા હોય છે, તે મહાવેદનાવાળા હોય
છે. પણ મહાવેદનાવાળા અને મહાનિર્જરાવાળાની અપેક્ષાએ પ્રશસ્ત નિર્જરા-
વાળા એવ ઉત્તમ હોય છે. ॥ સૂત્ર ૧ ॥

ગોયમા ! નેરડ્યા ણં કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, નો અક-
 રણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ । સે કેણદ્દેણં ? । ગોયમા ! નેર-
 ડ્યાણં ચડવ્વિહે કરણે પળ્લત્તે, તં જહા-મળકરણે, વયકરણે,
 કાયકરણે, કમ્મકરણે, ઇચ્છેણં ચડવ્વિહેણં અસુભેણં કરણેણં
 નેરડ્યા કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, ણો અકરણઓ, સે
 તેણદ્દેણં ० । અસુરકુમારાણં કિં કરણઓ અકરણઓ ? ગોયમા !
 કરણઓ, ણો અકરણઓ । સે કેણદ્દેણં ? । ગોયમા ! અસુરકુ-
 મારાણં ચડવ્વિહે કરણે પળ્લત્તે, તં જહા-મળકરણે, વયકરણે,
 કાયકરણે, કમ્મકરણે, ઇચ્છેણં સુભેણં કરણેણં અસુરકુમારાણં
 કરણઓ સાયં વેયણં વેયંતિ, ણો અકરણઓ । एवं जाव-
 थणियकुमाराणां । पुढवीकाइयाणं एवामेव पुच्छा ? णवरं-
 इच्छेएणं सुभाऽसुभेणं करणेणं पुढविक्काइया करणओ वेमायाए
 वेयणं वेयंति, णो अकरणओ । ओरालियसरीरा सव्वे सुभा-
 ऽसुभेणं वेमायाए, देवा सुभेणं सायं ॥ सू० २ ॥

છાયા-કતિવિધેં સ્વભદન્ત ! કરણં પ્રજ્ઞપ્તમ્ ! ગૌતમ ! ચતુર્વિધં કરણં પ્રજ્ઞપ્તમ્,
 તથા-મનસ્કરણમ્, વચસ્કરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણમ્ । નૈરયિકાણાં

जीवकरण वक्तव्यता-

‘કહિવિહેણં મંતે !’ ઇત્યાદિ-।

સૂત્રાર્થ—(કહિવિહેણં મંતે ! કરણે પળ્લત્તે) હે ભદન્ત ! કરણ
 કિતને પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (ચડવ્વિહે

जीवकरण वक्तव्यता—

“કહ વિહેણં મંતે” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—(કહ વિહેણં મંતે ! કરણે પળ્લત્તે ?) હે ભદન્ત ! કરણ કેટલાં
 પ્રકારનાં કહ્યાં છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (ચડવ્વિહે કરણે પળ્લત્તે) કરણ
 ચાર પ્રકારનાં કહ્યાં છે. (તંજહા) તે ચાર પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—(મળકરણે

મદન્ત ! કતિવિધં કરણં પ્રજ્ઞસમ્ ? ગૌતમ ! ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞસમ્, તથા-મનસ્કરણમ્, વચસ્કરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણમ્ । પચ્ચેન્દ્રિયાણાં સર્વેણાં ચતુર્વિધં કરણં પ્રજ્ઞસમ્ । એકેન્દ્રિયાણામ્ દ્વિવિધમ્-કાયકરણં ચ, કર્મકરણં ચ વિકલેન્દ્રિયાણાં ત્રિવિધમ્-વચસ્કરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણમ્ । નૈરયિકાઃ સ્વહ ભદન્ત ! કિં કરણતોઽસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ, અકરણતોઽસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ ! ગૌતમ !

કરણે પળ્ણત્તે) કરણ ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તં જહા) વે ચાર પ્રકાર વે હૈ—(મળકરણે, વઙ્કરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ ઓર ચૌથાકર્મકરણ । (નેરહ્યાણં મંતે ! કઙ્કવિહે કરણે પળ્ણત્તે) હે મદન્ત ! નારકોં કે કિતને કરણ કહે ગયે હૈ ? (ગોયમા-ચત્તવિહે પળ્ણત્તે) હે ગૌતમ ! ચારકરણ કહે ગયે હૈ । (તંજહા) જૈસે—(મળકરણે, વઙ્કરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ ઓર કર્મકરણ (પંચિંદિયાણં સવ્વેસિં ચત્તવિહે કરણે પળ્ણત્તે) સમસ્ત પચ્ચેન્દ્રિય જીવોં કે ચાર કરણ કહે ગયે હૈ (એગિંદિયાણં દુવિહે કાયકરણે કમ્મકરણે ચ) એકેન્દ્રિય જીવોં કે દો કરણ કહે ગયે હૈ—એક કાયકરણ ઓર દુસરા કર્મકરણ (વિગલેંદિયાણં તિવિહે-વઙ્કરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે) વિકલેન્દ્રિયોં કે ત્રીન કરણ કહે ગયે હૈ—એક-વચનકરણ દુસરા કાયકરણ ઓર ત્રીસરા કર્મકરણ । (નેરહ્યાણં મંતે ! કિં કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, અકરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ) હે મદન્ત ! નારક જીવ કયા કરણ સે અશાતાવેદના કો વેદતે

વઙ્કરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ. (નેરહ્યાણં મંતે ! કઙ્કવિહે કરણે પળ્ણત્તે ?) હે ભદન્ત ! નારક જીવોનાં કેટલા કરણ કહ્યાં છે ? (ગોયમા ! ચત્તવિહે પળ્ણત્તે) હે ગૌતમ ! નારકોનાં ચાર કરણ કહ્યાં છે. (તંજહા) જેવાં કે (મળકરણે, વઙ્કરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ. (પંચિંદિયાણં સવ્વેસિં ચત્તવિહે કરણે પળ્ણત્તે) સમસ્ત પચ્ચેન્દ્રિય જીવોનાં ચાર કરણ કહ્યાં છે (એગિંદિયાણં દુવિહે કાયકરણે કમ્મકરણે ચ) એકેન્દ્રિય જીવોનાં બે કરણ કહ્યાં છે—(૧) કાયકરણ અને (૨) કર્મકરણ. (વિગલેંદિયાણં તિવિહે-વઙ્કરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે) વિકલેન્દ્રિયોને ત્રણ કરણ કહ્યાં છે—(૧) વચનકરણ, (૨) કાયકરણ અને કર્મકરણ.

(નેરહ્યાણં મંતે ! કિં કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, અકરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ ?) હે ભદન્ત ! નારક જીવો શું કરણથી અશાતાવેદનાનું વેદન

નૈરયિકાઃ કરણતોડસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ, નો અકરણતોડસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ । તત્ કેનાર્થેન ? । ગૌતમ ! નૈરયિકાણાં ચતુર્વિધં કરણં પ્રજ્ઞતમ્, તદધ્યા-ગનસ્કરણમ્, વચસ્કરણમ્, કાયકરણમ્, રૂપેતેન ચતુર્વિધેન અશુભેન કરણેન નૈરયિકાઃ કરણતોડસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ, નો અકરણતઃ, તત્ તેનાર્થેન૦ । અસુરકુમારાઃ કિં કરણતઃ, અકરણતઃ ? ગૌતમ ! કરણતઃ, નો અકરણતઃ, તત્-કેનાર્થેન ? ।

હે ? યા અકરણ સે અશાતાવેદના કો વેદતે હું ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (નેરહ્યાણં કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, નો અકરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ) નારક જીવ કરણ સે અશાતાવેદના કા વેદન કરતે હું, વે અકરણ સે અશાતાવેદના કા વેદન નહીં કરતે હું । (સે કેણદ્દેણં) હે ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હું ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (નેરહ્યાણં ચઙ્ગિવિદ્દે કરણે પણ્ણત્તે) નારક જીવોં કે ચાર કરણ કહે ગયે હું (તં જહા) જૈસે—(મળકરણે, વડકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ ઓર કર્મકરણ (રૂપેતેન ચઙ્ગિવિદ્દેણં અશુભેણં કરણેણં નેરહ્યા કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, નો અકરણઓ સે તેણદ્દેણં૦) હન ચાર પ્રકાર કે અશુભ કરણોં સે નારક જીવ અશાતાવેદના કા વેદન કરતે હું અતઃ વે કરણ સે અશાતાવેદના કા વેદન કરતે હું—અકરણ સે નહીં હસ કારણ મૈને એસા કહા હૈ । (અસુરકુમારાણં કિં કરણઓ, અકરણઓ) હે ભદન્ત ! અસુરકુમાર કયા કરણ સે શાતાવેદના કરતે હું, યા અકરણ સે શાતાવેદના કા વેદન કરતે હું ?

કરે છે, કે અકરણથી અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (નેરહ્યાણં કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, નો અકરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ) નારક જીવોં કરણથી અશાતા વેદનાનું વેદન કરે છે, તેઓ અકરણથી અશાતા વેદનાનું વેદન કરતા નથી. (સે કેણદ્દેણં) હે ભદન્ત ! એવું આપ શા કારણે કહો છો ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! નેરહ્યાણં ચઙ્ગિવિદ્દે કરણે પણ્ણત્તે) નારક જીવોનાં ચાર કરણ કહ્યા છે, (તં જહા) જેવાં કે (મળકરણે વડકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ.

(રૂપેતેન ચઙ્ગિવિદ્દેણં અશુભેણં કરણેણં નેરહ્યા કરણઓ અસાયં વેયણં વેયંતિ, નો અકરણઓ—સે તેણદ્દેણં) આ ચાર પ્રકારનાં અશુભ કરણોથી નારક જીવોં અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે. તેથી તેઓ કરણથી અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, અકરણથી અશાતાવેદનાનું વેદન કરતા નથી. હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે. (અસુરકુમારાણં કિં કરણઓ, અકરણઓ ?) હે ભદન્ત ! અસુરકુમારો જીવ કરણથી શાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, કે અકરણથી શાતાવેદનાનું વેદન કરે

ગૌતમ ! અસુરકુમારાણાં ચતુર્વિધં કરણં પ્રાપ્તમ્, તદ્વથા-મનસ્કરણમ્, વચસ્ક-
રણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણમ્, ઇત્યેતેન શુભેન કરણેન અસુરકુમારાઃ કરણતઃ
સાતાં વેદનાં વેદયન્તિ, નો અકરણતઃ । એવં યાવત્-સ્તનિતકુમારાણામ્ । પૃથિવી-
કાયિકાનામ્-પયમેવ પુચ્છા ? નવામ્-ઇત્યેતેન શુભાશુભેન કરણેન પૃથિવીકા-

(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (કરણઓ જો અકરણઓ) અસુરકુમાર કરણ સે
શાતાવેદનાકા વેદન કરતે હૈં-અકરણ સે વે શાતાવેદના કા વેદન નહીં
કરતે હૈં । (સે કેળદ્વેળ) હે ભદન્ત ! જેસા આપ કિસ કારણ સે
કહતે હૈં ? (ગોયમા ! અસુરકુમારાણં ચતુર્વિધે કરણે પળાતે) હે ગૌતમ
અસુરકુમારોં કે ચાર પ્રકાર કે કરણ કહે ગયે હૈં (તં જહા) જો ઇસ
પ્રકાર સે હૈં (મળકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કર્મકરણે) મનકરણ,
વચનકરણ, કાયકરણ ઓર કર્મકરણ (ઈચ્છેણં સુખેણં કરણેણં અસુ-
રકુમારાણં કરણઓ સાયં વેયણં વેયંતિ) ઇન શુભ કરણોં સે અસુરકુ-
માર શાતાવેદનાકા વેદન કરતે હૈં ઇસ કારણ વે કરણસે શાતાવેદન કા
વેદન કરતે હૈં (જો અકરણઓ) અકરણ સે શાતાવેદના કા વે વેદન
નહીં કરતે હૈં (એવં જાવ ધણિયકુમારાણં) ઇસી તરહ સે યાવત્ સ્તનિ-
તકુમારોં કે ખી જાનના ચાહિયે । (પુઢવીકાઈયાણં ઇવામેવ પુચ્છા)
હે ભદન્ત ! પૃથિવીકાયિક જીવ વરણ સે શાતા ઓર અશાતારૂપ વેદના
કા અનુભવ કરતે હૈં ? યા અકરણ સે શાતા ઓર અશાતા વેદના કા

છે ? (ગોયમા ! કરણઓ, જો કરણઓ) હે ગૌતમ ! કરણથી શાતાવેદનાનું
વેદન કરે છે, તેઓ અકરણથી શાતાવેદનાનું વેદન કરતા નથી. (સેકેળદ્વેળ)
હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહેા છે ? (ગોયમા ! અસુરકુમારાણં ચત-
ુર્વિધે કરણે પળાતે) હે ગૌતમ ! અસુરકુમારોનાં ચાર પ્રકારનાં કરણ કહ્યાં
છે, (તંજહા) જેવાં કે (મળકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કર્મકરણે) મન
કરણ, વચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ. (ઈચ્છેણં સુખેણં કરણેણં અસુર-
કુમારાણં કરણઓ સાયં વેયણં વેયંતિ) તે શુભ કરણોથી અસુરકુમારો શાતા-
વેદનાનું વેદન કરે છે. તે કારણે તેઓ કરણોથી શાતાવેદનાનું વેદન કરે છે.
(જો અકરણઓ) અકરણથી શાતાવેદનાનું વેદન કરતા નથી. (એવં જાવ ધણિ-
યકુમારાણં) સ્તનિતકુમાર પર્યન્તના દેવોના વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું.
(પુઢવીકાઈયાણં ઇવામેવ પુચ્છા) હે ભદન્ત ! પૃથ્વીકાય જીવો કરણથી શાતા
વેદના અને અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, કે અકરણથી શાતાવેદના અને
અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે ?

યિકાઃ કરણતો વિમાત્રયા વેદનાં વેદયન્તિ, નો મહાન્તઃ । ઓદારિકઃ
સર્વે શુભાશુભેન વિમાત્રયા । દેવાઃ શુભેન ॥

ટીકા—‘કહિહે જાં મંતે ! કરણે પળતે ?’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—હે મહા-
કતિવિધં ક્રિયત્પ્રકારમ્ સ્વલ્પ કરણં સુલ્પદુઃસાનુમનિમિત્તભૂતં પ્રાપ્તમ્ ? મગધ

અનુભવ કરતે હું ? (જવરં-ચ્છેષણં સુમાસુમેળં કરણેણં પુદ્વિકા
કરણઓ વેમાયાણ વેયણં વેયંતિ, જો અકરણઓ) હે ગૌતમ ! પૃથ્વી
યિક જીવ શુભાશુભ કિતને ભેદ કદાચિત્ જ્ઞાતારૂપ ઓર કદા
અજ્ઞાતારૂપ વેદના કા અનુભવ કરતે હું । અકરણ સે-કરણ કે યિ
નહીં । યહી યહાં પર વિશેષતા હૈ । (ઓરાલિય સરીરાસન્વે સુમાસુમે
કરણેણં વેમાયાણ-દેવા સુમેળં સાયં) જિતને બી ઓદારિક શરીરવા
જીવ હું વે સવ હી શુભ ઓર અશુભરૂપ કરણ સે હી દોનો પ્રકાર
વેદના કા અનુભવ કરતે હું દેવ શુભકરણ સે કેવલ જ્ઞાતાવેદના ક
અનુભવ કરતે હૈ ।

ટીકાર્થ—પહિલે જીવોં કો વેદના કા કથન ક્રિયા ગયા હૈ । વર
વેદના કરણ દ્વારા હોતી હૈ । સ્વકારણ સૂત્રકાર સ્વ સૂત્ર સે ડસી કા
નિરૂપણ કર રહે હૈ—સમં ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે યેસા પૂછા હૈ કિ—“કહિ-
હેજાં મંતે ! કરણે પળતે ?” હે મહન્ત ! કરણ કિતને પ્રકાર કા હોતા
હૈ ? સુલ્પ ઓર દુઃલ્પ કે અનુભવ કરને મેં જો નિમિત્ત ભૂત હોતા હૈ
ડસકા નામ કરણ હૈ સો સ્વ કરણ કે કિતને ભેદ હૈ ? સ્વ

(જવરં-ચ્છેષણં સુમાસુમેળં કરણેણં પુદ્વિકા-દ્વારા કરણઓ વેમાયાણ વેયણં વેયંતિ,
જો અકરણઓ) હે ગૌતમ ! પૃથ્વીકાય જીવો શુભાશુભ કરણથી જ ક્યારેક
જ્ઞાતાવેદનાનું વેદન કરે છે અને ક્યારેક અજ્ઞાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, અક-
રણથી તેઓ તેનું વેદન કરતા નથી, એટલી જ અહીં વિશેષતા છે. (ઓરાલિય
સરીરા સન્વે સુમાસુમેળં કરણેણં વેમાયાણ-દેવા સુમેળં સાયં) સમસ્ત ઔદારિક
શરીરવાળા જીવો શુભ અને અશુભરૂપ કરણથી જ અને પ્રકારની વેદનાનું
વેદન કરે છે. દેવો શુભકરણથી ફક્ત જ્ઞાતાવેદનાનો જ અનુભવ કરે છે.

ટીકાર્થ—આગલા પ્રકરણમાં જીવોની વેદનાનું કથન કરવામાં આવ્યું છે.
તે વેદના કરણ દ્વારા થતી હોય છે. તે કારણે સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં કરણનું
નિરૂપણ કરે છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને જોવો પ્રશ્ન પૂછે કે “કહિહેજાં મંતે !
કરણે પળતે ?” હે મહન્ત ! કરણ કેટલાં પ્રકારનાં કયાં છે ? (સુખ અને
દુઃખનો અનુભવ કરવામાં જે નિમિત્તરૂપ હોય છે, તેને કરણ કહે છે.)

—‘ગોયમા ! ચતુર્વિદ્ધે કરણે પળ્લત્તે’ હે ગૌતમ ! ચતુર્વિધં—ચતુઃપ્રકારં કરણં પ્રજ્ઞ-
પ્તમ્, ‘તં જહા—મળકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે’ તથા—મનઃકરણમ્,
વચઃકરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણં ચ—તત્ર મનોવાકાયવિપયકં કરણં તત્ત્વકર-
ણમ્, કર્મકરણં ચ કર્મવિપયકં કરણં, વન્ધન—સંક્રમણાદિનિમિત્તભૂતં જીવચીર્યં
કર્મકરણમ્ । ગૌતમઃપૃચ્છતિ—‘નેરહયાણં મંતે ! કહ્વિદ્ધે કરણે પળ્લત્તે ?’ હે ભદન્ત !
નેરયિકાણાં કતિવિધં ક્કરણં પ્રજ્ઞપ્તમ્ ? મગયાનાહ—‘ગોયમા ! ચતુર્વિદ્ધે પળ્લત્તે’ હે
ગૌતમ ! નેરયિકાણાં ચતુર્વિધં કરણં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તં જહા—મળકરણે, વહ્કરણે, કાય-
કરણે, કમ્મકરણે’ તથા—મનઃકરણમ્, વચઃકરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણમ્,

ગૌતમ કે પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હૈં કિ—(ગોયમા)
હે ગૌતમ ! (ચતુર્વિદ્ધે કરણે પળ્લત્તે) કરણ ચાર પ્રકાર કા હોતા હૈં (તં
જહા) જૈસે—(મળકરણે) મનકરણ, (વહ્કરણે) વચ્ચનકરણ, (કાયકરણે)
કાયકરણ, (કમ્મકરણે) કર્મકરણ, કર્મોં કે વંધન મેં. ઉનકે સંક્રમણ
આદિમેં જો નિમિત્તભૂત જીવ કાં ચીર્યવિશેષ હૈં વહ કર્મકરણ હૈં ।

અવ ગૌતમ પ્રશ્ન સે પુનઃ પૂછતે હૈં કિ—(નેરહયાણં મંતે ! કહ્વિદ્ધે
કરણે પળ્લત્તે) હે ભદન્ત ! નારક જીવોં કે કિતને કરણ હોતે હૈં—અર્થાત્
પૂર્વોક્ત ઇન ચાર કરણોં મેં સે ચાર હી કરણ હોતે હૈં યા કુછ કમ કરણ
હોતે હૈં ? તો ઇસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હૈં કિ (ગોયમા)
હે ગૌતમ ! નારક જીવોં કે (ચતુર્વિદ્ધે પળ્લત્તે) ચારોં પ્રકાર
કે હી કરણ હોતે હૈં । (તં જહા) જૈસે (મળકરણે, વહ્કરણે,
કાયકરણે, કમ્મકરણે) મનકરણ, વચ્ચનકરણ, કાયકરણ, ઓર કર્મકરણ

મહાવીર પ્રશ્ન તેના જવાબ આપતા કહે છે—“ ગોયમા ! ચતુર્વિદ્ધે કરણે
પળ્લત્તે ” હે ગૌતમ ! કરણ ચાર પ્રકારનાં હોય છે, “ તં જહા ” જેવાં કે—
“ મળકરણે ” મનકરણ, “ વહ્કરણે ” વચ્ચનકરણ, “ કાયકરણે ” કાયકરણ
અને “ કમ્મકરણે ” કર્મકરણ. કર્મોનાં વંધન અને તેમના સંક્રમણ આદિનાં
નિમિત્તભૂત (કારણરૂપ) જે જીવનું વીર્ય વિશેષ છે તેને કર્મકરણ કહે છે

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—(નેરહયાણં મંતે ! કહ્વિદ્ધે કરણે પળ્લત્તે ?)
હે ભદન્ત ! નારક જીવોનાં કેટલાં કરણ હોય છે ? એટલે કે પૂર્વોક્ત ચાર
ચાર કરણ હોય છે, કે તેથી ઓછાં કરણો હોય છે ?

મહાવીર પ્રશ્ન તેના જવાબ આપતા કહે છે—“ ચતુર્વિદ્ધે પળ્લત્તે ” હે
ગૌતમ ! નારકોનાં ચાર કરણ હોય છે, “ તં જહા ” જેવાં કે (મળકરણે, વહ્-
કરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે) મનકરણ, વચ્ચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ.

યિકાઃ કરણતો વિમાત્રયા વેદનાં વેદયન્તિ, નો અકરણતઃ । ઔદારિકસરીરાઃ સર્વે શુભાશુભેન વિમાત્રયા । દેવાઃ શુભેન ॥

ટીકા—‘કઠ્ઠિવિદે જં મંતે ! કરણે પળ્લત્તે ?’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—હે ભદ્રન્ત ! કતિવિધં ક્રિયત્પ્રકારમ્ સ્વલ્પ કરણં સુલ્પદુઃસ્વાનુભવનિમિત્તભૂતં પ્રશ્નતમ્ ? મગવાનાર

અનુભવ કરતે હિં ? (જવરં-ઇચ્છેર્ણં સુમાસુભેર્ણં કરણેર્ણં પુદ્ગલીકાદ્યા કરણભો વેમાયાપ વેયર્ણં વેયંતિ, જો અકરણભો) હે ગૌતમ ! પૃથિવીકા-યિક જીવ શુભાશુભ કિતને ભેદ કદાચિત્ જ્ઞાતારૂપ ઓર કદાચિત્ અજ્ઞાતારૂપ વેદના કા અનુભવ કરતે હિં । અકરણ સે-કરણ કે ત્રિના નહીં । યહી યહાં પર વિશેષતા હૈ । (ઓરાલિય સરીરાસન્વે સુમાસુભેર્ણં કરણેર્ણં વેમાયાપ-દેવા સુભેર્ણં સાયં) જિતને ભી ઔદારિક શરીરવાળે જીવ હિં વે સવ હી શુભ ઓર અશુભરૂપ કરણ સે હી દોનો પ્રકાર કી વેદના કા અનુભવ કરતે હિં દેવ શુભકરણ સે કેવલ જ્ઞાતાવેદના કા અનુભવ કરતે હૈ ।

ટીકાર્થ—પહિલે જીવોં કી વેદના કા કથન ક્રિયા ગયા હૈ । વહ વેદના કરણ દ્વારા હોતી હૈ । સ્વ કારણ સૂત્રકાર સ્વ સૂત્ર સે ડસી કા નિરૂપણ કર રહે હિં—સમ્મં ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે એસા પૂછા હૈ કિ—“કઠ્ઠિવિ-દેર્ણં મંતે ! કરણે પળ્લત્તે ?” હે ભદ્રન્ત ! કરણ કિતને પ્રકાર કા હોતા હૈ ? સુલ્પ ઓર દુઃલ્પ કે અનુભવ કરને મેં જો નિમિત્ત ભૂત હોતા હૈ ડસકા નામ કરણ હૈ સો સ્વ કરણ કે કિતને ભેદ હિં ? સ્વ

(જવરં-ઇચ્છેર્ણં સુમાસુભેર્ણં કરણેર્ણં પુદ્ગલીકાદ્યા કરણભો વેમાયાપ વેયર્ણં વેયંતિ, જો અકરણભો) હે ગૌતમ ! પૃથ્વીકાય જીવો શુભાશુભ કરણથી જ ક્યારેક જ્ઞાતાવેદનાનું વેદન કરે છે અને ક્યારેક અજ્ઞાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, અકરણથી તેઓ તેનું વેદન કરતા નથી, એટલી જ અહીં વિશેષતા છે. (ઓરાલિય સરીરા સન્વે સુમાસુભેર્ણં કરણેર્ણં વેમાયાપ-દેવા સુભેર્ણં સાયં) સમસ્ત ઔદારિક શરીરવાળા જીવો શુભ અને અશુભરૂપ કરણથી જ બન્ને પ્રકારની વેદનાનું વેદન કરે છે. દેવો શુભકરણથી શક્ત જ્ઞાતાવેદનાનો જ અનુભવ કરે છે.

ટીકાર્થ—આગલા પ્રકરણમાં જીવોની વેદનાનું કથન કરવામાં આવ્યું છે. તે વેદના કરણ દ્વારા થતી હોય છે. તે કારણે સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં કરણનું નિરૂપણ કરે છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે કે “કઠ્ઠિવિદેર્ણં મંતે ! કરણે પળ્લત્તે ?” હે ભદ્રન્ત ! કરણ કેટલાં પ્રકારનાં કયાં છે ? (સુખ અને દુઃખનો અનુભવ કરવામાં જે નિમિત્તરૂપ હોય છે, તેને કરણ કહે છે.)

અશુભાત્મિકાં વેદનાં વેદયન્તિ ? અનુભવન્તિ ? અથવા ‘અકરણઔ અસાયં વેચયં વેયંતિ ?’ અકરણતઃ કરણં વિના અસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ ? । મગવાનાહ—
‘ગોયમા ! નેરહ્યાણં કરણઔ અસાયં વેચયં વેયંતિ, હે ગૌતમ ! નૈરયિકાઃ સ્વલુ કરણતો મનોવચનાદિદ્વારા અસાતામ્ દુઃસ્વરૂપાં વેદનાં વેદયન્તિ, ‘જ્ઞો અકરણઔ અસાયં વેચયં વેયંતિ’ નો અકરણતઃ કરણં વિના અસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ । ગૌતમ આહ—‘ સે કેણદ્વેષં ’ હે મદન્ત ! તત્ કેનાર્થેન નૈરયિકાઃ કરણતોડસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ, નો અકરણતઃ ? કિં તત્ત્ર કારણમિતિ પ્રશ્નાશયઃ ? મગવાનાહ—
‘ગોયમા ! નેરહ્યાણં ચઙ્ગિહે કરણે પ્પણ્ણત્તે’ હે ગૌતમ ! નૈરયિકાણાં ચતુર્વિધં કરણં પ્રજ્ઞસમ્, ‘તં જહા-મણકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે’ તથથા-

આશાતાવેદના કા અનુભવ કરતે રહતે હૈં સો વે મનવચન કાયાદિ દ્વારા ઉસ અશુભાત્મક અશાતા કા અનુભવ કરતે હૈં ? યા કરણ કે વિના હી અસાતાવેદના કા અનુભવ કરતે હૈં ? હસ પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હૈં કિ (ગોયમા) હૈં ગૌતમ ! (નેરહ્યાણં કરણઔ અસાયં વેચયં વેયંતિ) નારક જીવ નરકોં મેં જો અશુભાત્મક અસાતા કા વેદન કરતે હૈં-વે મનવચન કાય આદિ કરણ દ્વારા ઉસકા વેદન કરતે હૈં, કરણ-વિના ઉસકા વેદન નહીં કરતે હૈં । નારક જીવ નરકોં મેં કરણદ્વારા હી અશાતાવેદના કા અનુભવ કરતે હૈં કરણ કે વિના નહીં ઈસા જો આપને કહા હૈ સો (સે કેણદ્વેષં) ઈસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હૈં કિ (ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! (નેરહ્યાણં ચઙ્ગિહે કરણે પ્પણ્ણત્તે) નારક જીવોં મેં અબી મનકરણ, વચનકરણ,

વેદન કરે છે, તે શુ’ મન, વચન, કાય અને કર્મરૂપ કરણો વડે અશુભાત્મક અશાતાનું વેદન કરે છે, કે અકરણથી (કરણ વિના જ) અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! (નેરહ્યાણં કરણઔ અસાયંવેચયં વેયંતિ) નારકો નરકોની અંદર જે અશુભાત્મક અશાતાનું વેદન કરે છે, તે મન, વચન, કાય આદિ કરણો દ્વારા જ કરે છે, કરણ વિના તેઓ તેનું વેદન કરતા નથી.

પ્રશ્ન—“ સે કેણદ્વેષં ” હે મદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે નારક જીવો કરણ દ્વારા જ અશાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, કરણ વિના તેઓ તેનું વેદન કરતા નથી ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! (નેરહ્યાણં ચઙ્ગિહે કરણે પ્પણ્ણત્તે) મેં આગળ કહ્યું તે પ્રમાણે નારક જીવોમાં મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ

एवं 'पंचिन्द्रियाणं सत्त्वेति चउच्चिहे करणे पण्णत्ते' पञ्चेन्द्रियाणां तिर्यग्योनिकादि-
मनुष्यपर्यन्तानां सर्वेषां चतुर्विधं करणं प्रज्ञप्तम्, तत्र मनोवचःकायकर्मरूपं
बोध्यम् 'एगिन्द्रियाणं दुविहे-कायकरणे य, कम्मकरणे य' एकेन्द्रियाणां द्विवि-
धम् करणम् प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-कायकरणं च, कर्मकरणं च, विगल्लिन्द्रियाणं त्रिविहे-
वदकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे य 'विकलेन्द्रियाणां त्रिचतुरिन्द्रियाणां जीवानां
त्रिविधं करणं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-वचःकरणम्, कायकरणम्, कर्मकरणं च । गौतमः
पुनः पृच्छति—' नेरइयाणं भंते ! किं करणओ असायं वेयणं वेयंति ?
हे भदन्त ! नैरयिकाः खलु किम् करणतः-मनोवचनकायादिद्वारा असाताम्

-ये चारों ही करण नारक जीवों में पाये जाते हैं । (एवं) इसी तरह से
(पंचिन्द्रियाणं सत्त्वेति चउच्चिहे करणे पण्णत्ते) जितने भी पंचेन्द्रियजीव
-संज्ञी पंचेन्द्रिय प्राणी हैं-तिर्यग्योनि के संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों से
लेकर मनुष्यपर्यन्त उन सबके ये मनवचन काय और कर्मरूप चारों
प्रकार के ही करण होते हैं । (एगिन्द्रियाणं दुविहे कायकरणे य कम्मक-
रणे य) एकेन्द्रिय जीवों के कायकरण और कर्मकरण ये दो ही करण
होते हैं । (विगल्लेन्द्रियाणं त्रिविहे वदकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे य)
दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय जीवों के वचनकरण, कायकरण,
और कर्मकरण ये तीन प्रकार के करण होते हैं । अब गौतम प्रभु से
पुनः पूछते हैं कि-(नेरइयाणं भंते ! किं करणओ असायं वेयणं वेयंति,
अकरणओ असायं वेयणं वेयंति) हे भदन्त ! नारक जीव नरकों में जो

આ ચારે કારણો નારક જીવોમાં જોવામાં આવે છે. “ એવં ” એ જ પ્રમાણે
(પંચિન્દ્રિયાણં સત્ત્વેતિ ચઉચ્ચિહે કરણે પણ્ણત્તે) સમસ્ત પંચેન્દ્રિય જીવોને
સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોને-મન, વચન, કાય અને કર્મરૂપ ચારે કારણો હોય
છે. એટલે કે તિર્યગ્યોનિના સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોથી લઈને મનુષ્ય પર્યન્તના
સમસ્ત પંચેન્દ્રિય જીવો મન, વચન, કાય અને કર્મરૂપ ચારે કારણોવાળા
હોય છે. (એગિન્દ્રિયાણં દુવિહે કાયકરણે ય કમ્મકરણે ય) એકેન્દ્રિય જીવોને
એ જ કરણ હોય છે-(૧) કાયકરણ અને (૨) કર્મકરણ.

(વિગલેન્દ્રિયાણં ત્રિવિહે વદકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે) વિકલેન્દ્રિય જીવોને
(દ્વિન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોને) ત્રણ કરણ હોય છે-(૧) વચન
કરણ, (૨) કાયકરણ અને (૩) કર્મકરણ.

પ્રશ્ન—“ નેરइयाणं भंते ! किं करणओ असायंवेयणं वेयंति, अकरणओ
असायंवेयणं वेयंति ? ” હે ભદન્ત ! નારક જીવો નરકોમાં જે અશાતાવેદનાનું

વેદનામ્ અનુભવન્તિ, નો અકરણતસ્તામનુભવન્તિ ? ગૌતમ આહ-‘સે કેળદ્વેળં ?’ હે ભદન્ત ! તત્ કેનાર્થેન અમુરકુમારાઃ કરણત एव, નો અકરણતઃ સાતાં વેદનાં વેદયન્તિ ? । ભગવાનાહ-‘ ગોયમા ! અમુરકુમારાણં ચઽવિવિદે કરણે પ્ણક્તે ’ હે ગૌતમ ! અમુરકુમારાણામ્ ચતુર્વિધં કરણં પ્રજ્ઞમ્, ‘તં જઘા-મણકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે’ તત્રયા-મનઃકરણમ્, વચઃકરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણં ચ, ‘ ઇચ્છેણં સુમેણં કરણેણં અમુરકુમારાણં કરણઓ સાયં વેયણં વેયંતિ ’ इत्येतेन ઉપર્યુક્તેન મનોવચઃશ્રાયાદિના શુભેન કરણેન અમુરકુમારાઃ સ્વલ્લુ કરણત एव સાતાં વેદનાં વેદયન્તિ, ‘ જો અકરણઓ ’ નો અકરણતઃ સાતાં વેદનાં તે વેદયન્તિ, ‘ એવં જાવ-થણિયકુમારાણં ’ एवम्-અમુરકુમારવદેવ યાવત્-નાગકુમાર

उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (करणओ नो अकरणओ) असुर-
रकुमार करणद्वारा ही सुखरूप शातावेदना का अनुभव करते हैं अक-
रण-करण के बिना नहीं, अब गौतम स्वामी प्रभु से ऐसे कथन में
कारण क्या है ? इस विषय को जानने की इच्छा से पूछते हैं (से केण-
द्वेणं) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं ? इसके उत्तर में
प्रभु कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (असुरकुमाराणं चउविविहे करणे
पणक्ते तं जहा मणकरणे, वचकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे-इच्चेणं
सुमेणं करणेणं असुरकुमाराणं करणओ सायं वेयणं वेयंति) असुरकु-
मारों के मनकरण, वचनकरण, कायकरण और कर्मकरण ये चार होते
हैं ऐसा अभी २ प्रकट किया गया है सो इन चार शुभ करणों से युक्त
होने के कारण ये करण से ही सुखरूप शातावेदना का अनुभव करते
हैं (जो अकरणओ) करण के सिवाय नहीं ऐसा मैंने कहा है (एवं जाव

કુમારો કરણ દ્વારા જ શાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, તેઓ કરણ વિના તેનું વેદન કરતા નથી. તેનું કરણ બાણવા માટે ગૌતમ સ્વામી આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછે છે.

“ સે કેળદ્વેળં ” હે ભદન્ત ! આપ શા કરણે એવું કહો છો ?

ઉત્તર-“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! ” (અસુરકુમારાણં ચઽવિવિદે કરણે પ્ણક્તે-તં જઘા ” અમુરકુમારોને નીચે પ્રમાણે ચાર કરણો હોય છે-(મણકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ.

(ઇચ્છેણં સુમેણં કરણેણં અમુરકુમારાણં કરણઓ સાયં વેયણં વેયંતિ) આ શુભ કરણોથી યુક્ત હોવાને કારણે તેઓ કરણ દ્વારા જ સુખરૂપ શાતા-વેદનાનો અનુભવ કરે છે, “ જો અકરણઓ ” કરણ વિના તેઓ તેનો અનુભવ કરતા નથી.

મનઃકરણમ્, વચઃકરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણં ન 'ઈચ્છેણં ચત્ત્વિદ્ધેણં' અસુમેણં કરણેણં નેરહ્યા કરણમ્પો અસાયં વેયણં વેયંતિ, ' દ્વયેતેન ઉપર્ગુવતેન મનોવચનાદિરુપેણ ચતુર્વિધેન અશુમેણ કરણેન નૈરયિકાઃ કરણત एव असातां वेदनां वेदयन्ति, ' જો અકરણમ્ ' નો અકરણતઃ કરણં વિના નૈરયિકાઃ અસાતાં વેદનાં ન વેદયન્તિ—સ્થર્થઃ । ઉપસંહરતિ—' સે તેજદ્વેણં ' હે ગૌતમ ! તત્ તેનાર્થેન યત્ નૈરયિકાઃ કરણત एव, નો અકરણતઃ અસાતાં વેદનાં વેદયન્તીત્યુચ્યતે । ગૌતમઃ પૂછતિ—' અસુરકુમારાણં કિં કરણમ્ ? ' અસુરકુમારાઃ સ્વહુ કિમ્ કરણતઃ, અકરણતો વા સાતાં સુખરૂપાં વેદનાં વેદયન્તિ ? મગધાનાહ —' ગોયમા ! કરણમ્, નો અકરણમ્ ' હે ગૌતમ ! અસુરકુમારાઃ કરણત एव સાતાં સુખરૂપાં

કાયકરણ, ઔર કર્મકરણ ये चार प्रकार के करण होते हैं ऐसा प्रकट किया गया है सो (इच्छेणं चतुर्विद्वेणं असुमेणं करणेणं नेरह्या करणमपो असायं वेयणं वेयंति) वे नारक जीव इन पूर्वोक्त चार करणों वाले होते हैं—इस कारण वे करण द्वारा आशातावेदना का अनुभव करते हैं (जो अकरणो) करण के बिना वे उस वेदना का अनुभव नहीं करते हैं (से तेजद्वेणं) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि नारक जीव करण से ही अशाता का अनुभव करते हैं करण के बिना नहीं । अब गौतम स्वामी प्रभु से पुनः ऐसा पूछते हैं कि—(असुरकुमाराणं किं करणमो अकरणमो) हे भदन्त ! असुरकुमार क्या करण द्वारा ही शाता—सुखरूप वेदना का अनुभव करते हैं या करण के बिना ही सुखरूप शाता वेदना का अनुभव करते हैं ? इसके उत्तर में प्रभु

અને કર્મકરણ, એ ચાર પ્રકારનાં કરણ હોય છે. (ઇચ્છેણં ચત્ત્વિદ્ધેણં અસુમેણં કરણેણં નેરહ્યા કરણમ્પો અસાયં વેયણં વેયંતિ) એ ચાર પ્રકારનાં અશુભ કરણો દ્વારા તેઓ અશાતાવેદનાનો અનુભવ કરે છે, “ જો અકરણમ્ ” તેઓ અકરણથી (કરણો વિના) તે વેદનાનો અનુભવ કરતા નથી. “ સે તેજદ્વેણં ” હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે નારક જીવો કરણથી જ અશાતા વેદનાનો અનુભવ કરે છે, કરણ વિના તેઓ અશાતાવેદનાનો અનુભવ કરતા નથી.

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(અસુરકુમારાણં કિં કરણમ્પો અકરણમ્પો ?) હે ભદન્ત ! શું અસુરકુમાર દેવો કરણ દ્વારા જ શાતા—સુખરૂપ—વેદનાનો અનુભવ કરે છે, કે અકરણ દ્વારા (કરણ વિના) જ સુખરૂપ શાતાવેદનાનો અનુભવ કરે છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! (કરણમ્પો નો અકરણમ્પો) અસુર-

વેદનામ્ અનુભવન્તિ, નો અકરણતસ્તામનુભવન્તિ ? ગૌતમ આહ—‘સે કેળદ્વેળં ?’ હે ભદન્ત ! તત્ કેનોર્થેન અમુરકુમારાઃ કરણત એવ, નો અકરણતઃ સાતાં વેદનાં વેદયન્તિ ? । મગયાનાહ—‘ ગોયમા ! અમુરકુમારાણં ચઽત્ત્વિહે કરણે પ્ણક્તે ’ હે ગૌતમ ! અમુરકુમારાણામ્ ચતુર્વિધં કરણં પ્રજ્ઞપ્તમ્, ‘તં જહા—મળકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે’ તત્તથા—મનઃકરણમ્, વચઃકરણમ્, કાયકરણમ્, કર્મકરણં ચ, ‘ ઇચ્છેણં સુમેળં કરણેણં અમુરકુમારા ણં કરણઓ સાયં વેયણં વેયંતિ ’ इत्येतेन उपर्युक्तेन मनोवचःकायादिना शुभेन करणेन अमुरकुमाराः खलु करणत एव सातां वेदनां वेदयन्ति, ‘ णो अकरणओ ’ नो अकरणतः सातां वेदनां ते वेदयन्ति, ‘ एवं जाव—थणियकुमाराणं ’ एवम्—अमुरकुमारवदेव यावत्—नागकुमार

उनसे कहते हैं (गौतम) हे गौतम ! (करणओ नो अकरणओ) असुरकुमार करणद्वारा ही सुखरूप शातावेदना का अनुभव करते हैं अकरण—करण के बिना नहीं, अथ गौतम स्वामी प्रभु से ऐसे कथन में कारण क्या है ? इस विषय को जानने की इच्छा से पूछते हैं (से केणद्वेणं) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं ? इसके उत्तर में प्रभु कहते हैं कि (गौतम) हे गौतम ! (असुरकुमाराणं चउत्त्विहे करणे प्णक्ते तं जहा मणकरणे, वचकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे—इच्छेएणं सुमेणं करणेणं असुरकुमाराणं करणओ सायं वेयणं वेयंति) असुरकुमारों के मनकरण, वचनकरण, कायकरण और कर्मकरण ये चार होते हैं ऐसा अभी २ प्रकट किया गया है सो इन चार शुभ करणों से युक्त होने के कारण ये करण से ही सुखरूप शातावेदना का अनुभव करते हैं (णो अकरणओ) करण के सिवाय नहीं ऐसा मैंने कहा है (एवं जाव

કુમારો કરણ દ્વારા જ શાતાવેદનાનું વેદન કરે છે, તેઓ કરણ વિના તેનું વેદન કરતા નથી. તેનું કરણ બહુવા માટે ગૌતમ સ્વામી આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછે છે.

“ સે કેળદ્વેળં ” હે ભદન્ત ! આપ શા કરણે એવું કહો છો ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! ” (અસુરકુમારાણં ચઽત્ત્વિહે કરણે પ્ણક્તે—વંજહા ” અસુરકુમારોને નીચે પ્રમાણે ચાર કરણો હોય છે—(મળકરણે, વચકરણે, કાયકરણે, કમ્મકરણે) મનકરણ, વચનકરણ, કાયકરણ અને કર્મકરણ.

(ઇચ્છેણં સુમેળં કરણેણં અમુરકુમારાણં કરણઓ સાયં વેયણં વેયંતિ) આ શુભ કરણોથી યુક્ત હોવાને કારણે તેઓ કરણ દ્વારા જ સુખરૂપ શાતાવેદનાનો અનુભવ કરે છે, “ ણો અકરણઓ ” કરણ વિના તેઓ તેનો અનુભવ કરતા નથી.

સુવર્ણકુમાર-વિદ્યુત્કુમાર - અગ્નિકુમાર - દ્રીપકુમારો-દધિકુમાર-દિશાકુમાર-
પવનકુમારાણાં સ્તનિતકુમારાણાં ચ ભવનપતીનામપિ નોધ્યમ્, તથા ચ નાગકુમા-
રદિ-સ્તનિતકુમારપર્યન્તા અપિ દેવાઃ કરણતઃ एव सातां वेदनां वेदयन्ति, नो
अकरणत इति । 'पुढवीकाइयाणं एवामेव पुच्छा ?' पृथिवीकायिकानामपि
जीवानाम् एवमेव नैरपिकादिवदेव पृच्छा प्रश्नः, तथा च-पृथिवीकायिका जीवाः
किं करणतः अकरणतो वा साताम् असातां वा वेदनां वेदयन्ति ? इति प्रश्न उद्-
नीयः, भगवान् तत्र विशेषतां प्रतिपादयति-'णवरं-इच्छेएणं सुभासुभेणं कर-
णेणं पुढवीकाइया करणओ वेमायाए वेयणं वेयंति, णां अकरणओ' नवरम्-

યણિયકુમારાણં) અસુરકુમારોં કોં તરહ સે હી યાવત્-નાગકુમાર,
સુવર્ણકુમાર, વિદ્યુત્કુમાર, અગ્નિકુમાર, દ્રીપકુમાર, ઉદધિકુમાર,
દિશાકુમાર, પવનકુમાર, ઓર સ્તનિતકુમાર इन भवनपतिषों के भी
જાનના ચાહિયે। इस तरह नागकुमारदि स्तनितकुमारतक के सब ही
देव भवनपतिदेव-करणद्वारा ही सातावेदना का अनुभव करते हैं अक-
रण द्वारा नहीं। (पुढवीकाइयाणं एवामेव पुच्छा) पृथिवीकायिक जीवों
के भी नारक जीवों की तरह से ही प्रश्न करना चाहिये-तथा च हे भदन्त !
पृथिवीकायिक जीव क्या करण द्वारा, या करण के बिना ही साता
असातारूप वेदना का अनुभव करते हैं ? ऐसा प्रश्न अपने आप
समझलेना चाहिये-तब इस प्रश्न के उत्तर में प्रभु विशेषता का प्रति-
पादन करते हैं (णवरं इच्छेएणं सुभासुभेणं करणेणं पुढवीकाइया कर

(एवં જાવ યણિયકુમારાણં) એ જ પ્રમાણે (અસુરકુમારોની જેમજ)
સ્તનિતકુમાર પર્યન્તના દેવો પણ ચાર કરણ દ્વારા જ અનુભવ કરે છે. એટલે
કે અસુરકુમાર, નાગકુમાર, સુવર્ણકુમાર, વિદ્યુત્કુમાર, અગ્નિકુમાર, દ્રીપકુમાર,
ઉદધિકુમાર, દિશાકુમાર, પવનકુમાર, અને સ્તનિતકુમાર, એ ભવનપતિ દેવો
પણ ચાર કરણો વડે જ સુખરૂપ સાતાવેદનાનું વેદન કરે છે. તેઓ અકરણ
દ્વારા સાતાવેદનાનો અનુભવ કરતા નથી.

(પુઢવિકાઈયાણં એવમેવ પુછ્યા) કે ભદન્ત ! પૃથ્વીકાય જીવોના વિષ-
યમાં પણ હું એજ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછવા માગું છું-શું પૃથ્વીકાય જીવો કરણ
દ્વારા સાતાવેદના અને અસાતાવેદનાનો અનુભવ કરે છે, કે અકરણ દ્વારા તેનો
અનુભવ કરે છે ?

આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ તેમના વિષયમાં કેટલીક
વિશેષતાનું પ્રતિપાદન કરે છે-(ણવરં ઇચ્છેएणं सुभासुभेणं करणेणं काइया

વિશેષઃ પુનરેતાવાનેચ યત્ ઇત્યેતેન ઉપરિ વર્ણિતેન શુભાશુભેન કરણેણ પૃથિવી
કાપિકાઃ કરણતો વિમાત્રયા-વિવિધયા માત્રયા કદાચિત્ સુખાત્મિકાં સાતાં
વેદનાં વેદયન્તિ, કદાચિચ્છ દુઃખાત્મિકામ્ અસાતાં વેદનાં વેદયન્તિ કિન્તુ નો
અકરણતઃ કરણં વિના તથાવિધવેદનાં શુભામશુભાં વા વેદયન્તિ । તથા
'ઓરાલિયસરીરા સવ્વે સુભાસુભેણં વેમાયાણ' ઔદારિકશરીરાઃ સર્વે જીવાઃ
શુભાશુભેન કરણેન વિમાત્રયા કદાચિત્ સાતાં વેદનાં વેદયન્તિ, કદાચિત્ અસાતાં
વેદનાં વેદયન્તિ । 'દેવા સુમેણં સાયં' દેવાઃ શુભેન કરણેન સાતાં સુખરૂપાં
વેદનાં વેદયન્તિ, નો દુઃખરૂપામ્ અસાતાં વેદનાં વેદયન્તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ળઓ વેમાયાણ વેયણં વેયંતિ, ણો અકરણઓ) એ કહતે હૈં કિ જો
પૃથિવીકાપિક ણકેન્દ્રિય જીવ હૈં વે પૂર્વોક્ત શુભાશુભ કરણ દ્વારા,
વિમાત્રા સે-ભજના સે કમી સુખરૂપ શાતાવેદના કા ઓર કમી દુઃખ-
રૂપ અશાતાવેદના કા-ઇસ પ્રકાર કી વિવિધમાત્રા સે-વેદના કા અનુભવ
કરતે હૈં-કરણ કે વિના તથાવિધ શુભાશુભ વેદના કા અનુભવ નહીં
કરતે । તથા-(ઓરાલિયસરીરા સવ્વે સુભાસુભેણં વેમાયાણ) જિતને
મી ઔદારિક શરીરવાલે-ણકેન્દ્રિય સે લેકર સમસ્ત પંચેન્દ્રિય મનુષ્ય
ઓર તિર્યચ જીવ હૈં વે સવ શુભ ઓર અશુભકરણ દ્વારા હી વિમાત્રા
સે કદાચિત્ સાતાવેદના કા ઓર કદાચિત્ આસાતાવેદના કા અનુભવ
કરતે હૈં । (દેવા સુમેણં સાયં) દેવ શુભકરણ દ્વારા સાતા સુખરૂપ
વેદનાકા હી અનુભવ કરતે હૈં, દુઃખરૂપ અસાતાવેદના કા નહીં ॥સૂ૦ ૨॥

કરણઓ વેમાયાણ વેયણં વેયંતિ) હે ગૌતમ ! જે પૃથ્વીકાયિક એકેન્દ્રિય જીવો
છે તેઓ ઉપયુક્ત શુભાશુભ કરણો વડે ક્યારેક દુઃખરૂપ અશાતાવેદનાનો
અનુભવ કરે છે, તેઓ કરણ વિના શાતાવેદના અને અશાતાવેદનાનો અનુભવ
કરતા નથી. આ રીતે પૃથ્વીકાયોમાં વિકલ્પે શાતાવેદના અને અશાતાવેદનાના
વેદનનું પ્રતિપાદન કરાયું છે.

(ઓરાલિયસરીરા સવ્વે સુભાસુભેણં વેમાયાણ) જેટલા ઔદારિક શરીર-
વાળા જીવો છે, (જેટલે કે એકેન્દ્રિયથી લઈને સમસ્ત પંચેન્દ્રિય મનુષ્ય અને
તિર્યંચો) તેઓ શુભ અને અશુભ કરણ દ્વારા વિકલ્પે શાતાવેદના અને
અશાતાવેદનાનો અનુભવ કરે છે-જેટલે કે ક્યારેક શાતાવેદનાનો અનુભવ કરે
છે અને ક્યારેક અશાતાવેદનાનો અનુભવ કરે છે. "દેવા સુમેણં સાયં"
દેવો શુભ કરણ વડે સુખરૂપ શાતાવેદનાનો જ અનુભવ કરે છે. તેઓ દુઃખ-
રૂપ અશાતાવેદનાનો અનુભવ કરતા નથી. ॥ સૂત્ર ૨ ॥

वेदना-निर्जरयोः सादृश्यवक्तव्यता ।

वेदना-निर्जरयोरधिकारात् तयोः सादृश्यं प्रणिपादयितुमाह—'जीवाणं भंते !' इत्यादि ।

मूलम्—“ जीवा णं भंते ! किं महावेयणा महानिज्जरा, महावेयणा अप्पनिज्जरा, अप्पवेयणा महानिज्जरा, अप्पवेयणा अप्पनिज्जरा ? गोयमा ! अत्थेगइया जीवा महावेयणा महानिज्जरा, अत्थेगइया जीवा महावेयणा अप्पनिज्जरा, अत्थेगइया जीवा अप्पवेयणा महानिज्जरा, अत्थेगइया जीवा अप्पवेयणा अप्पनिज्जरा । से केणट्ठेणं ? गोयमा ! पडिमा पडिवन्नए अणगारे महावेयणे महानिज्जरे, छट्ठि-सत्तमासु पुढवीसु नेरइया महावेयणा अप्पनिज्जरा । सेलेसि पडिवन्नए अणगारे अप्पवेयणे महानिज्जरे । अणुत्तरोववाइया देवा अप्पवेयणा अप्पनिज्जरा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति,

‘महावेयणे य वत्थ कहूम-खंजणकए य अहिगरणी । तणहत्थे य कवल्ले, करण महावेयणा जीवा ” ॥सू०३॥

छाया- जीवाः खलु भदन्त ! किं महावेदनाः-महानिर्जराः १, महावेदनाः अल्पनिर्जराः २, अल्पवेदनाः-महानिर्जराः, ३, अल्पवेदनाः-अल्पनिर्जराः ४,

वेदना और निर्जरा में सादृश्यवक्तव्यता-

‘जीवाणं भंते !’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(जीवा णं भंते ! किं महावेयणा, महानिज्जरा, महावेयणा अप्पनिज्जरा, अप्पवेयणा महानिज्जरा, अप्पवेयणा अप्पनिज्जरा)

वेदना અને નિર્જરામાં સાદૃશ્ય વક્તવ્યતા—

“ जीवाणं भंते ! इत्यादि—

सूत्रार्थ—(जीवाणं भंते ! किं महावेयणा महानिज्जरा, महावेयणा अप्पनिज्जरा, अप्पवेयणा महानिज्जरा, अप्पवेयणा अप्पनिज्जरा ?) हे भदन्त ! ७१

ગૌતમ ! સન્ત્યેકકે જીવાઃ મહાવેદનાઃ-મહાનિર્જરાઃ ૧, સન્ત્યેકકે જીવાઃ મહાવેદનાઃ-અલ્પનિર્જરાઃ ૨, સન્ત્યેકકે જીવાઃ અલ્પવેદનાઃ-મહાનિર્જરાઃ ૩, સન્ત્યેકકે જીવાઃ અલ્પવેદનાઃ-અલ્પનિર્જરાઃ ૪ । તત્ કેનાર્થેન ? । ગૌતમ ! પઞ્ચમાપતિપદ્મકોડનગારો મહાવેદનો-મહાનિર્જરઃ । પૃષ્ઠી-સપ્તમ્યોઃ પૃથિવ્યોઃ

હે ભદ્રન્ત ! જો જીવ મહાવેદના વાળે હોતે હૈં ? વે કયા મહાનિર્જરાવાલે હોતે હૈં ? તથા-જો જીવ મહાવેદના વાળે હોતે હૈં, વે કયા અલ્પનિર્જરા વાળે હોતે હૈં ! તથા-જો જીવ અલ્પવેદના વાળે હોતે હૈં, વે કયા મહાનિર્જરાવાલે હોતે હૈં ? તથા-જો જીવ અલ્પવેદનાવાલે હોતે હૈં વે કયા અલ્પનિર્જરાવાલે હોતે હૈં ? (અત્યેગદ્યા જીવા મહાવેયણા મહાનિર્જરા મહાવેયણા અપ્પનિર્જરા, અત્યેગદ્યા જીવા અપ્પવેયણા મહાનિર્જરા, અત્યેગદ્યા જીવા અપ્પવેયણા અપ્પનિર્જરા) હે ગૌતમ ! કિતનેક જીવ એસે હોતે હૈં જો મહાવેદનાવાલે હોતે હૈં ઓર મહાનિર્જરાવાલે હોતે હૈં । કિતનેક જીવ એસે હોતે હૈં જો મહાવેદનાવાલે હોતે હૈં ઓર અલ્પનિર્જરાવાલે હોતે હૈં । કિતનેક જીવ એસે હોતે હૈં જો અલ્પવેદનાવાલે હોતે હૈં ઓર મહાનિર્જરાવાલે હોતે હૈં ? ઓર કિતનેક જીવ એસે હોતે હૈં જો અલ્પવેદના વાળે હોતે હૈં ઓર અલ્પનિર્જરા વાળે હોતે હૈં ? (સે કેળદ્વેળં) હે ભદ્રન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં ? (ગોચમા) હે ગૌતમ ! (પઞ્ચમાપતિપદ્મ અણગારે મહાવેયણે મહાનિર્જરે, છદ્ધસત્તમાસુ પુઢવીસુ નેરહયા

અવ મહાવેદનાવાળા હોય તેઓ શું મહાનિર્જરાવાળા હોય છે ? અથવા જે અવ મહાવેદનાવાળા હોય તેઓ શું અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે ? તથા જે અવ અલ્પવેદનાવાળા હોય તેઓ શું મહાનિર્જરાવાળા હોય છે ? અથવા જે અવ અલ્પવેદનાવાળા હોય તેઓ શું અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે ?

(અત્યેગદ્યા જીવા મહાવેયણા મહાનિર્જરા મહાવેયણા અપ્પનિર્જરા, અત્યેગદ્યા જીવા અપ્પવેયણા મહાનિર્જરા, અત્યેગદ્યા જીવા અપ્પવેયણા અપ્પનિર્જરા) હે ગૌતમ ! કેટલાક અવ એવા હોય છે કે જે મહાવેદનાવાળા હોય છે અને મહાનિર્જરાવાળા હોય છે. કેટલાક અવ એવાં હોય છે કે જે મહાવેદનાવાળા હોય છે અને અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે. કેટલાક અવ એવાં હોય છે કે જે અલ્પવેદનાવાળા હોય છે અને મહાનિર્જરાવાળા હોય છે. અને કેટલાક અવ એવા હોય છે કે જે અલ્પવેદનાવાળા હોય છે અને અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે.

(સે કેળદ્વેળં) હે ભદ્રન્ત ! એવું આપ શા કારણે કહો છો ! (ગોચમા) હે ગૌતમ ! (પઞ્ચમાપતિપદ્મ અણગારે મહાવેયણે મહાનિર્જરે, છદ્ધ સત્તમાસુ

વેદના-નિર્જરણોઃ સાદર્ભ્ય-વક્તવ્યતા ।

વેદના-નિર્જરણોરધિકારાન્ તથોઃ સાદર્ભ્ય મનિષાદયિતુમાદ-‘ જીવાણં મંતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-“ જીવા ણં મંતે ! કિં મહાવેયણા મહાનિજ્જરા, મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા, અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા ? ગોચમા ! અત્થેગદ્ધયા જીવા મહાવેયણા મહાનિજ્જરા, અત્થેગદ્ધયા જીવા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, અત્થે ગદ્ધયા જીવા અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા, અત્થેગદ્ધયા જીવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા । સે કેણટ્ટેણં ? ગોચમા ! પડિમા પડિવન્નપ્પ અણગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે, છટ્ઠિ-તત્તમાસુ પુઢવીસુ નેરદ્ધયા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા । સેલેસિ પડિવન્નપ્પ અણગારે અપ્પવેયણે મહાનિજ્જરે । અણુત્તરોવવાદ્ધયા દેવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા । સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ,

‘મહાવેયણે ય વત્થ કહ્મ-લ્લંકણકપ્પ ય અહિગરણી । તણહત્થે ય કવલ્લે, કરણ મહાવેયણા જીવા ” ॥સૂ.૦૩॥

છાયા- જીવાઃ સ્વભૂત મદન્ત ! કિં મહાવેદનાઃ-મહાનિર્જરાઃ ૧, મહાવેદનાઃ અલ્પનિર્જરાઃ ૨, અલ્પવેદનાઃ-મહાનિર્જરાઃ, ૩, અલ્પવેદનાઃ-અલ્પનિર્જરાઃ ૪,

વેદના ઓર નિર્જરા મેં સાહચર્યવક્તવ્યતા-

‘ જીવાણં મંતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ- (જીવા ણં મંતે ! કિં મહાવેયણા, મહાનિજ્જરા, મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા, અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા)

વેદના અને નિર્જરામાં સાહચર્ય વક્તવ્યતા-

“ જીવાણં મંતે ! ઇત્યાદિ--

સૂત્રાર્થ- (જીવાણં મંતે ! કિં મહાવેયણા મહાનિજ્જરા, મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા, અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા, અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા ?) હે ભદ્રન્ત ! ૭

અતિશય વેદનાચન્તઃ, અતિશય નિર્જરાચન્તઃ?, અથવા ‘મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા’ મહાવેદનાઃ અલ્પનિર્જરા ભવન્તિ ૨, ‘અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા?’ અલ્પવેદનાઃ મહાનિર્જરા વા ભવન્તિ? ૩, ઉતાહો ‘અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા?’ અલ્પવેદનાઃ અલ્પનિર્જરા ભવન્તિ? ૪। મગવાનાહ-‘ગોયમા! અત્યેગદ્યા ઝીવા મહાવેયણા-મહાનિજ્જરા’ હે ગૌતમ! સન્તિ એકે કેવન ઝીવાઃ મહાવેદનાઃ મહાનિર્જરા-ચન્તઃ?, ઇત્યાદિવ્યાખ્યા નિગદસિદ્ધા, ગૌતમ આહ-‘સે કેળદ્દેણં?’ હે ભદન્ત! તત્ કેનાર્થેન એવમ્-પૂર્વોક્તપ્રકારેણ ઉચ્યતે? મગવાનાહ-‘ગોયમા! પઢિમાપઢિવચ્છણ અણગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે’ હે ગૌતમ! પ્રતિમાપતિ-પન્નકઃ પ્રતિમાધારી અનગારઃ મહાવેદનાવાન્ મહાનિર્જરાવાંશ્ચ ભવતિ। ‘છટ્ઠિ-સત્તમાસુ પુઢવીસુ નેરડ્યા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા’ પઠી-સમ્પન્નોઃ પૃથિવ્યોઃ

મહાનિજ્જરા?) હે ભદન્ત! ઝીવ એસે બી હોતે હું ક્યા? જો મહાવેદના-વાળે હોકર બી મહાનિર્જરાવાળે હોતે હું? અથવા-(મહાવેયણા અપ્પ-નિજ્જરા) જો મહાવેદનાવાળે હોકર બી અલ્પનિર્જરાવાળે હોતે હું? અથવા (અપ્પવેયણા મહાનિર્જરા) અલ્પવેદનાવાળે હોકર બી જો મહાનિર્જરા-વાળે હોતે હું? અથવા (અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) અલ્પવેદનાવાળે હોકર બી જો અલ્પ હી નિજ્જરાવાળે હોતે હું? એસે યે ચાર પ્રશ્ન ગૌતમ-સ્વામી ને પ્રશ્ન સે પૂછે હું। હન પ્રશ્નોં કા ઉત્તર દેતે દુષ્ પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હું કિ-(ગોયમા) હે ગૌતમ! (પઢિમાપઢિવચ્છણ અણગારે મહાવે-યણે મહાનિજ્જરે) જો, પ્રતિમા કો જિસને ધારણ કર રહ્યા હૈ એસા અનગાર હોતા હૈ વહ મહાવેદના કો બી સહન કરતા હૈ ઓર મહાનિ-ર્જરા અતિશય નિર્જરાવાલા બી હોતા હૈ। (છટ્ઠિસત્તમાસુ પુઢવીસુ નેર-

મહાનિજ્જરા?) હે ભદન્ત! શું એવાં પણ છવો હોય છે કે જે મહાવેદના-વાળા હોવા છતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા) જે મહાવેદનાવાળા હોવા છતાં અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (અપ્પ-વેયણા મહાનિજ્જરા) જે અલ્પનિર્જરાવાળા હોવા છતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) જે અલ્પવેદનાવાળા હોવા છતાં અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે? ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રમાણે ચાર પ્રશ્નો મહા-વીર પ્રભુને પૂછ્યા છે.

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નોના જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—
“ગોયમા!” હે ગૌતમ! (પઢિમાપઢિવચ્છણ અણગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે) પ્રતિમાધારી અણગાર મહાવેદનાનું પણ વેદન કરતો હોય છે અને મહાનિર્જ-રાવાળા (અતિશય નિર્જરા કરનાર) પણ હોય છે. (છટ્ઠિસત્તમાસુ પુઢવીસુ

નૈરયિકાઃ મહાવેદનાઃ-અલ્પનિર્જરાઃ । શૈલેશીં પ્રતિપન્નકઃ અનગારઃ અલ્પવેદનો-
મહાનિર્જરઃ । અનુત્તરોપપાતિકા દેવા અલ્પવેદનાઃ અલ્પનિર્જરાઃ । તદેવં ભદન્ત !
તદેવં ભદન્ત ! ઇતિ ॥ “મહાવેદનથ, વયમ્, કર્દમ-સગ્ગનકૃતં નાધિકરણી । ત્વ
હસ્તકથ કવલ્લં, કરણ-મહાવેદના ગીતાઃ ” ॥ ૫૦ ૩ ॥

ટીકા— ‘જીવા ણં મંતે ! કિં મહાવેયણા - મહાનિજ્જરા ? ’ ગૌતમઃ
પૃચ્છતિ—હે ભદન્ત ! જીવાઃ સલુ કિમ્ મહાવેદનાઃ મહાનિર્જરાશ્ર મવન્તિ,

મહાવેયણા અલ્પનિજ્જરા સેલેસિં પઢિવન્નપ્પ અણગારે અલ્પવેયણે મહાનિ-
જ્જરે અણુત્તરોપપાદિયા દેવા અલ્પવેયણા અલ્પનિજ્જરા । સેવં મંતે ! સેવં
મંતે ! ત્તિ) જો અનગાર પ્રતિમાપ્રતિપન્ન હોતા હૈ, વહ મહાવેદનાવાલા
ઔર મહાનિર્જરાવાલા હોતા હૈ, છટ્ટી ઔર સાતવીં પૃથિવી મેં જો નારક
જીવ હોતે હૈં વે મહાવેદનાવાલે ઔર અલ્પનિર્જરાવાલે હોતે હૈં । શૈલેશી
અવસ્થા પ્રાપ્ત જો અનગાર હોતા હૈ, વહ અલ્પવેદનાવાલા ઔર મહાનિ-
ર્જરાવાલા હોતા હૈ । તથા અનુત્તરોપપાતિક જો દેવ હોતે હૈં, વે અલ્પ-
વેદના ઔર અલ્પનિર્જરાવાલે હોતે હૈં । હે ભદન્ત ! જૈસા આપને વહ
કહા હૈ વહ ંસા હી હૈ-હે ભદન્ત ! વહ ંસા હી હૈ । ંસા કહકર વે
ગૌતમ યાવત્ અપને સ્થાન પર વિરાજમાન હો ગયે ।

ટીકાર્થ—વેદના ઔર નિર્જરા કા અધિકાર ચલ રહા હૈં હસસે યહાં
પર સૂત્રકાર ને હન દોનોં કા સાહચર્ય પ્રતિપાદન કિયા હૈં-ગૌતમ ને
પ્રશ્ન સે હસ વિષય મેં ંસા પૂછા હૈ કિ-(જીવાણં મંતે ! કિં મહાવેયણા

પુલ્લસુ નેરડ્યા મહાવેયણા અલ્પનિજ્જરા, સેલેસિં પઢિવન્નપ્પ અણગારે અલ્પવેયણે
મહાનિજ્જરે, અણુત્તરોપપાદિયા દેવા અલ્પવેયણા અલ્પનિજ્જરા) પ્રતિમા ધારણ કર-
નારે અણુગાર મહાવેદનાવાળો અને મહાનિર્જરાવાળો હોય છે, છટ્ટી અને
સાતમી નરકના નારકો મહાવેદનાવાળા અને અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે.
શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનાર અણુગાર અલ્પવેદનાવાળો અને મહાનિર્જરાવાળો
હોય છે, અને અનુત્તર વિમાનવાસી દેવો અલ્પવેદનાવાળા અને અલ્પનિર્જરા-
વાળા હોય છે. (સેવં મંતે ! સેવં મંતે ત્તિ) હે ભદન્ત ! આપે કહ્યા પ્રમાણે જ
છે. આપની વાત સત્ય અને યથાર્થ છે. આ પ્રમાણે કહીને વંદણા નમસ્કાર
કરીને ગૌતમ સ્વામી તેમને સ્થાને બેસી ગયા.

ટીકાર્થ—વેદના અને નિર્જરાનો અધિકાર આવી રહ્યો છે. તેથી સૂત્રકારે
આ સૂત્રમાં તે બંનેના સાહચર્યનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. આ વિષયમાં ગૌતમ
સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (જીવાણં મંતે ! કિં મહાવેયણા

અતિશય વેદનાચન્તઃ, અતિશય નિર્જરાચન્તઃ?, અથવા ‘મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા’ મહાવેદનાઃ અલ્પનિર્જરા ભવન્તિ ૨, ‘અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા?’ અલ્પવેદનાઃ મહાનિર્જરા વા ભવન્તિ? ૩, ઉતાહો ‘અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા?’ અલ્પવેદનાઃ અલ્પનિર્જરા ભવન્તિ? ૪। મગવાનાહ-‘ગોયમા! અધેગદ્યા જીવા મહાવેયણા-મહાનિજ્જરા’ હે ગૌતમ! સન્તિ એકેકે કેવન જીવાઃ મહાવેદનાઃ મહાનિર્જરા-ચન્તઃ?, ઇત્યાદિવ્યાख्या નિગદસિદ્ધા, ગૌતમ આહ-‘સે કેળદ્વેળ?’ હે ભદન્ત! તત્ કેનાર્થેન એવમ્-પૂર્વોક્તપ્રકારેણ ઉચ્યતે? મગવાનાહ-‘ગોયમા! પઢિમાપઢિવન્નણ અળગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે’ હે ગૌતમ! પ્રતિમાપ્રતિ-પન્નકઃ પ્રતિમાધારી અનગારઃ મહાવેદનાચાન્ મહાનિર્જરાવાંશ્ચ ભવતિ। ‘છદ્ધિ-સત્તમાસુ પુઢવીસુ નેરડ્યા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા’ પઠી-સત્તન્યોઃ પૃથિવ્યોઃ

મહાનિજ્જરા?) હે ભદન્ત! જીવ એસે ‘ભી હોતે હેં કયા? જો મહાવેદના-વાળે હોકર ‘ભી મહાનિર્જરાવાળે હોતે હેં? અથવા-(મહાવેયણા અપ્પ-નિજ્જરા) જો મહાવેદનાવાળે હોકર ‘ભી અલ્પનિર્જરાવાળે હોતે હેં? અથવા (અપ્પવેયણા મહાનિર્જરા) અલ્પવેદનાવાળે હોકર ‘ભી જો મહાનિર્જરા-વાળે હોતે હેં? અથવા (અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) અલ્પવેદનાવાળે હોકર ‘ભી જો અલ્પ હી નિજ્જરાવાળે હોતે હેં? એસે યે ચાર પ્રશ્ન ગૌતમ-સ્વામી ને પ્રશ્ન સે પૂછે હેં। इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि-(गोयमा) हे गौतम! (पडिमापडिवन्नण अणगारे महावे-यणे महानिज्जरे) जो, प्रतिमा को जिसने धारण कर रखा है ऐसा अनगार होता है वह महावेदना को ‘भी सहन करता है और महानि-र्जरा अतिशय निर्जरावाला भी होता है। (छद्विसत्तमासु पुढवीसु नेर-

મહાનિજ્જરા?) હે ભદન્ત! શું એવાં પણ જીવો હોય છે કે જે મહાવેદના-વાળા હોવા છતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા) જે મહાવેદનાવાળા હોવા છતાં અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (અપ્પ-વેયણા મહાનિજ્જરા) જે અલ્પનિર્જરાવાળા હોવા છતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) જે અલ્પવેદનાવાળા હોવા છતાં અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે? ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રમાણે ચાર પ્રશ્નો મહા-વીર પ્રભુને પૂછ્યા છે.

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નોના જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—
“ગોયમા!” હે ગૌતમ! (પઢિમાપઢિવન્નણ અળગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે) પ્રતિમાધારી અણગાર મહાવેદનાનું પણ વેદન કરતો હોય છે અને મહાનિર્જ-રાવાળો (અતિશય નિર્જરા કરનારો) પણ હોય છે. (છદ્વિસત્તમાસુ પુઢવીસુ

નૈરયિકાઃ મહાવેદનાઃ—અલ્પનિર્જરાઃ । શૈલેશીં પ્રતિપન્નકઃ અનગારઃ અલ્પવેદનો-
મહાનિર્જરઃ । અનુત્તરોપપાતિકા દેવા અલ્પવેદનાઃ અલ્પનિર્જરાઃ । તદેવં ભદન્ત ।
તદેવં ભદન્ત ! ॥ “મહાવેદનથા, વયમ્, કર્દમ-લગ્નનકૃતં નાપિકરણી । તથા
હસ્તકથ કચલ્લં, કરણ-મહાવેદના ઝીવાઃ ” ॥ મૂ० ૩ ॥

ટીકા— ‘ઝીવા ણં મંતે ! કિં મહાવેયણા — મહાનિજ્જરા ? ’ ગૌતમઃ
પૃચ્છતિ—હે ભદન્ત ! ઝીવાઃ સ્વલુ કિમ્ મહાવેદનાઃ મહાનિર્જરાશ્ચ ભવન્તિ,

મહાવેયણા અલ્પનિજ્જરા સેલેસિં પઢિવચ્છણ અણગારં અલ્પવેયણે મહાનિ-
જ્જરે અણુત્તરોપચાડ્યા દેવા અલ્પવેયણા અલ્પનિજ્જરા । સેવં મંતે ! સેવં
મંતે ! ત્તિ) જો અનગાર પ્રતિમાપ્રતિપન્ન હોતા હૈ, વહ મહાવેદનાવાલા
ઔર મહાનિર્જરાવાલા હોતા હૈ, છટ્ટી ઔર સાતવીં પૃથિવી મેં જો નારક
જીવ હોતે હૈં વે મહાવેદનાવાલે ઔર અલ્પનિર્જરાવાલે હોતે હૈં । શૈલેશી
અવસ્થા પ્રાપ્ત જો અનગાર હોતા હૈ, વહ અલ્પવેદનાવાલા ઔર મહાનિ-
ર્જરાવાલા હોતા હૈ । તથા અનુત્તરોપપાતિક જો દેવ હાતે હૈં, વે અલ્પ-
વેદના ઔર અલ્પનિર્જરાવાલે હોતે હૈં । હે ભદન્ત ! જૈસા આપને વહ
કહા હૈ વહ એસા હી હૈ—હે ભદન્ત ! વહ એસા હી હૈ । એસા કહકર વે
ગૌતમ યાવત્ અપને સ્થાન પર વિરાજમાન હો ગયે ।

ટીકાર્થ—વેદના ઔર નિર્જરા કા અધિકાર ચલ રહા હૈં હસસે યહાં
પર સૂત્રકાર ને હન દોનોં કા સાહચર્ય પ્રતિપાદન કિયા હૈં—ગૌતમ ને
પ્રશ્ન સે હસ વિષય મેં એસા પૂછા હૈ કિ—(ઝીવાણં મંતે ! કિં મહાવેયણા

પુલ્લોસુ નૈરડ્યા મહાવેયણા અલ્પનિજ્જરા, સેલેસિં પઢિવચ્છણ અણગારે અલ્પવેયણે
મહાનિજ્જરે, અણુત્તરોપચાડ્યા દેવા અલ્પવેયણા અલ્પનિજ્જરા) પ્રતિમા ધારણ કર-
નારે અણુગાર મહાવેદનાવાળો અને મહાનિર્જરાવાળો હોય છે, છટ્ટી અને
સાતમી નરકના નારકો મહાવેદનાવાળા અને અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે.
શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનાર અણુગાર અલ્પવેદનાવાળો અને મહાનિર્જરાવાળો
હોય છે, અને અનુત્તર વિમાનવાસી દેવો અલ્પવેદનાવાળા અને અલ્પનિર્જરા-
વાળા હોય છે. (સેવં મંતે ! સેવં મંતે ત્તિ) હે ભદન્ત ! આપે કહ્યા પ્રમાણે જ
છે. આપની વાત સત્ય અને યથાર્થ છે. આ પ્રમાણે કહીને વંદણા નમસ્કાર
કરીને ગૌતમ સ્વામી તેમને સ્થાને બેસી ગયા.

ટીકાર્થ—વેદના અને નિર્જરાનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે. તેથી સૂત્રકારે
આ સૂત્રમાં તે બન્નેના સાહચર્યનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. આ વિષયમાં ગૌતમ
સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (ઝીવાણં મંતે ! કિં મહાવેયણા

અતિશય વેદનાવન્તઃ, અતિશય નિર્જરાવન્તથ?, અથવા ‘મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા’ મહાવેદનાઃ અલ્પનિર્જરા ભવન્તિ ૨, ‘અપ્પવેયણા મહાનિજ્જરા?’ અલ્પવેદનાઃ મહાનિર્જરા વા ભવન્તિ? ૩, ઉતાહો ‘અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા?’ અલ્પવેદનાઃ અલ્પનિર્જરા ભવન્તિ? ૪। મગવાનાહ-‘ગોયમા! અત્યેગદયા જીવા મહાવેયણા-મહાનિજ્જરા’ હે ગૌતમ! સન્તિ એકકે કેવન જીવાઃ મહાવેદનાઃ મહાનિર્જરા-વન્તથ?, ઇત્યાદિવ્યારૂપા નિગદસિદ્ધા, ગૌતમ આહ-‘સે કેળદ્દેખં?’ હે ભદન્ત! તત્ કેનાર્થેન એવમ્-પૂર્વોક્તપ્રકારેણ ઉચ્ચતે? મગવાનાહ-‘ગોયમા! પઢિમાપહિવન્નપ્પ અણગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે’ હે ગૌતમ! પ્રતિમાપતિ-પત્તકઃ પ્રતિમાધારી અનગારઃ મહાવેદનાવાન્ મહાનિર્જરાવાંથ ભવતિ! ‘છટ્ઠિ-સત્તમાસુ પુઢવીસુ નેરડયા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા’ પઠી-સમન્થોઃ પૃથિવ્યોઃ

મહાનિજ્જરા?) હે ભદન્ત! જીવ એસે બી હોતે હૈં કયા? જો મહાવેદના-વાળે હોકર બી મહાનિર્જરાવાળે હોતે હૈં? અથવા-(મહાવેયણા અપ્પ-નિજ્જરા) જો મહાવેદનાવાળે હોકર બી અલ્પનિર્જરાવાળે હોતે હૈં? અથવા (અપ્પવેયણા મહાનિર્જરા) અલ્પવેદનાવાળે હોકર બી જો મહાનિર્જરા-વાળે હોતે હૈં? અથવા (અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) અલ્પવેદનાવાળે હોકર બી જો અલ્પ હી નિજ્જરાવાળે હોતે હૈં? એસે યે ચાર પ્રશ્ન ગૌતમ-સ્વામી ને પ્રશ્ન સે પૂછે હૈં। હન પ્રશ્નોં કા ઉત્તર દેતે દૃષ્ટ પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ-(ગોયમા) હે ગૌતમ! (પઢિમાપહિવન્નપ્પ અણગારે મહાવે-યણે મહાનિજ્જરે) જો, પ્રતિમા કો જિસને ધારણ કર રખા હૈં એસા અનગાર હોતા હૈં વહ મહાવેદના કો બી સહન કરતા હૈં ઓર મહાનિ-ર્જરા અતિશય નિર્જરાવાલા બી હોતા હૈં। (છટ્ઠિસત્તમાસુ પુઢવીસુ નેર-

મહાનિજ્જરા?) હે ભદન્ત! શું એવાં પણ જીવો હોય છે કે જે મહાવેદના-વાળા હોવા છતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા) જે મહાવેદનાવાળા હોવા છતાં અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (અપ્પ-વેયણા મહાનિજ્જરા) જે અલ્પનિર્જરાવાળા હોવા છતાં મહાનિર્જરાવાળા હોય છે? અથવા (અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) જે અલ્પવેદનાવાળા હોવા છતાં અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે? ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રમાણે ચાર પ્રશ્નો મહા-વીર પ્રભુને પૂછ્યા છે.

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નોના જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—
“ગોયમા!” હે ગૌતમ! (પઢિમાપહિવન્નપ્પ અણગારે મહાવેયણે મહાનિજ્જરે) પ્રતિમાધારી અણગાર મહાવેદનાનું પણ વેદન કરતો હોય છે અને મહાનિર્જ-રાવાળો (અતિશય નિર્જરા કરનારો) પણ હોય છે. (છટ્ઠિસત્તમાસુ પુઢવીસુ

નૈરપિકાઃ મહાવેદનાવન્તોઽલ્પ નિર્જરાવન્તથ માન્તિ મેવાં સર્વથા અશુભકર્મ
સમ્યન્થસદ્ભાવાત્, । 'સેલેસિં પઢિવન્નપ્ અણગારે અપ્પવેયણે મહાનિજ્જરે'
સૈલેશીં ચતુર્દશગુણસ્વાનાવસ્થાયામ્, મતિવન્નપ્ઃ પ્રાપ્તઃ કેવલી અનગારઃ અલ્પ-
વેદનો મહાનિર્જરાવાન્ ભવતિ । 'અણુત્તરોચ્ચાદ્યા દેવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા,'
અણુત્તરોપપાતિકા દેવાઃ અલ્પવેદનાઃ અલ્પનિર્જરાથ ભવન્તિ । ગૌતમ આદ-સેવં
ભંતે ! સેવં ભંતે ! સિ 'હે ભદ્રન્ત ! તદેવં મવદુક્તં સત્પમેવ, હે ભદ્રન્ત ! મવદુક્તં
સત્પમેવેતિ ? અપૈતદુદેશકાર્યસંગ્રહ ગાથામાહ-'મહાવેયણે' ઇત્યાદિ । ગાયાર્યઃ
પૂર્વમકરણેનૈવ વ્યાખ્યાત એવ ॥ મૂ. ૩ ॥

इतिश्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-वृज्यश्रीयासीलालप्रतिप्रिचितायां भगवती
सूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां पष्ठशतकस्य प्रथमोद्देशकः समाप्तः । ६-१।

इयां महावेयणा अप्पनिज्जरा) तथा छद्दी और सातवीं पृथिवी में जो
नारक जीव रहते हैं, वे वहां पर महावेदना को भोगते हुए भी अल्प
ही निर्जरावाले होते हैं । क्योंकि वहां पर उनके सर्वथा अशुभकर्म का
ही उदय चलता रहता है (सेलेसिं पडिवन्नप अणगारे अप्पवेयणे महा-
निज्जरे) तथा-जो अनगार शैलेशी अवस्था को-चौदहवें गुणस्थान
को प्राप्त हो जाता है-ऐसा वह केवलज्ञानी अनगार अल्पवेदनावाला
होकर भी महानिर्जरावाला होता है । (अणुत्तरोचचाइया देवा अप्पवेयणा
अप्पनिज्जरा) तथा जो देव अनुत्तरविमानों में रहते हैं, वे अल्पवेद-
नावाले होते हैं और अल्प ही निर्जरावाले होते हैं । इस प्रकार का
कथन प्रभु के मुख से सुनकर गौतम ने (सेवं भंते ! सेवं भंते ! सि)

નેરદ્યા મહાવેયણા અપ્પનિજ્જરા) છદ્દી અને સાતમી નરકોમાં રહેનારા નારકો
ત્યાં મહાવેદના ભોગવતા હોય છે. છતાં પણ તેઓ અલ્પનિર્જરાવાળા જ હોય
છે, કારણ કે ત્યાં તેમના અશુભ કર્મોનો જ ઉદય લગભગ આદ્યા કરે છે.
(સેલેસિં પઢિવન્નપ્ અણગારે અપ્પવેયણે મહાનિજ્જરે) શૈલેશી અવસ્થા (ચૌદમું
ગુણસ્થાન પ્રાપ્ત કરનાર કેવળજ્ઞાની અણગાર અલ્પવેદનાવાળો હોવા છતાં મહા-
નિર્જરાવાળો હોય છે. (અણુત્તરોચ્ચાદ્યા દેવા અપ્પવેયણા અપ્પનિજ્જરા) તથા
જે દેવો અનુત્તર વિમાનોમાં રહે છે, તેઓ અલ્પવેદનાવાળા હોય છે અને
અલ્પનિર્જરાવાળા હોય છે.

આ પ્રકારનું પ્રતિપાદન મહાવીર પ્રભુને શ્રીગુણે સાંભળીને ગૌતમ સ્વામી
તેમના વચનોમાં પોતાની શ્રદ્ધા પ્રકટ કરતા કહે છે-(સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે !

પેતા પ્રભુ સે કહા-હે ભદન્ત ! આપકા કહા હુઆ સય સત્ય હી હે હે
ભદન્ત ! આપકા કહા હુઆ સય સત્ય હી હે ।

હસ ઉદ્દેશક કે અર્થ કા સંગ્રહ કરનેવાલી (મહાવેયણે ય વત્થે કહ-
મલ્લંજનકપ્પ ય અહિકરણી, તણહરયે ય કવલ્લે કરણ મહાવેયણા જીવા)
યહ ગાથા હૈ-હસકે દ્વારા યહ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ કિ હસ ઉદ્દેશક મેં
મહાવેદના, કર્દમરાગ ઓર લંજનરાગ સે રક્ત ચક્ષુ, ઇરણ તૃણ કા પૂળા,
લોહેકા ગરમ તથા, કરણ ઓર મહાવેદના ઓર નિર્જરા કા સાહચર્ય
યે સબ વિષય પ્રતિપાદિત હુવે હૈ ॥ સુ. ૩ ॥

શ્રી જૈનચાર્ય જૈનધર્મ દિવાકર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત " ભગવ-
તીસૂત્ર " કી પ્રમેયચન્દ્રિકા વ્યાખ્યાકે છઠ્ઠે શતકકા પહલા
ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૬-૧ ॥

વિ) હે ભદન્ત ! આપે આ વિષયનું જે પ્રતિપાદન કર્યું તે સવંથા સત્ય છે.
આ પ્રમાણે કહીને વંદણા નમસ્કાર કરીને તેઓ તેમને સ્થાને બેસી ગયા.

આ ઉદ્દેશકના વિષયોનો સંગ્રહ કરનારી ગાથા--

(મહાવેયણે ય વત્થે કહમલ્લંજનકપ્પ ય અહિકરણી, તણહરયે ય કવલ્લુકરણ
મહાવેયણા જીવા) આ ગાથા દ્વારા એ વાત બતાવવામાં આવી છે કે આ
ઉદ્દેશકમાં મહાવેદના, કર્દમરાગ અને ખંજનરાગથી રંગેલું વસ્ત્ર, ઐરણ, ઘાસનો
પૂળા, લોહાનો ગરમ તાવડો, કરણ, મહાવેદના અને નિર્જરાનું સાહચર્ય એ
બધા વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂત્ર ૩ ॥

તૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત 'ભગવતીસૂત્ર'ની પ્રમેયચન્દ્રિકા
બ્યાખ્યાનો છઠ્ઠા શતકનો પહલો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૬-૧ ॥

॥ पष्ठशतकस्य द्वितीयोद्देशकः ॥

आहारपक्षव्यता

पूर्वोद्देशके येषां जीवानां वेदनावस्त्वं प्रतिपादितम् ते च जीवाः आहारका अपि भवन्ति अतस्तेषामाहारं निरूपयितुं द्वितीयोद्देशकमारभते—‘ रायगिहं ’ इत्यादि ।

मूलम्—रायगिहं नगरं जाव-एवं वयासी — आहारुद्देशओ पञ्चवणाए सो सव्वो नेयव्वा, सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति । ” ॥ १ ॥

छट्सयस्स वीओ उद्देशो समत्तो ॥ ६-२ ॥

छाया—राजगृहं नगरं यावत्-एवम् अवादीत्-आहारोद्देशको यः प्रज्ञाप-
नायां स सर्वो ज्ञातव्यः, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त इति ॥ सू० १ ॥

पष्ठशतकस्य द्वितीय उद्देशः समाप्तः ॥ ६-२ ॥

टीका—‘ रायगिहं नगरं जाव-एवं वयासी- आहारुद्देशओ पञ्चवणाए
सो सव्वो नेयव्वो ’ तस्मिन् काले, तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरमासीत्

छट्टे शतक के दूसरे उद्देशक का प्रारंभ

‘ रायगिहं नगरं जाव एवं वयासी ’

सूत्रार्थ—(रायगिहं नगरं जाव एव वयासी-आहारुद्देशओ जो पञ्चव-
णाए सो सव्वो नेयव्वो) राजगृह नगर यावत् इस प्रकारसे बोले-आहार
उद्देशक, जो प्रज्ञापना सूत्र में कहा गया वह सब यहाँ जानना चाहिये
(सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति) हे भदन्त ! आपका कहा हुआ सब सत्य
है, हे भदन्त ! आप का कहा हुआ सब सत्य ही है ।

टीकाथ—पूर्व उद्देशक में जिन जीवों में वेदनावस्त्वं प्रतिपादित
किया गया है-वे जीव आहारक भी होते हैं, इसलिये उनके आहार

छट्टे शतकने पीले उद्देशक

“ रायगिहं नगरं जाव एवं वयासी ” इत्यादि—

सूत्रार्थ—(रायगिहं नगरं जाव एवं वयासी-आहारुद्देशओ जो पञ्चवणाए
सो सव्वो नेयव्वो) “ राजगृह नगर ” थी तबने “ आ प्रभावे ज्ञातव्यां ”
त्यां सुधीनुं प्रज्ञापना सूत्रना आहार उद्देशकनुं समस्त कथन अर्द्धी अक्षु करवुं.
(सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति) हे भदन्त ! आपनी बात तबन सीधी छे.
हे भदन्त ! आ विषयनुं आपे ने प्रतिपादन कथुं छे ते यथार्थ छे.

टीकाथ—पडेला उद्देशकभां ने लोकोभां वेदनावस्त्वं प्रतिपादन कर-
वामां आयुं छे ते लोको आहारक (आहार वेनारा) पछु डोय छे. ते कारणे

યાવત્-સ્વામી સમવસ્યતઃ, નિર્ગચ્છતિ પર્ષત્, પ્રતિગતા પર્ષત્, તતઃ શ્રમ-
ણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય જ્યેષ્ઠઃ અન્તેવાસી ગાતમગોત્રીયઃ ઇન્દ્રભૂતિઃ પ્રથુ-
ષમાણો નમસ્યન્ અભિપ્રુક્તં વિનયેન પ્રાત્રલિપુટઃ ત્રિવિધયા પર્યુપાસનયા પર્યુપા-
સીનઃ एवं વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ અવાદીત્-પૃષ્ટવાન્, અત્ર આહારોદ્દેશકો યઃ પ્રજ્ઞાપ-
નાયાં પ્રતિપાદિતઃ । સર્વઃ અત્ર જ્ઞાતવ્યઃ,

અન્તે ગૌતમો ભગવદ્વાક્યં યથાર્થત્વેન સ્વીકુર્વન્નાહ-‘ સેવં મંતે ! સેવં મંતે
તિ ’ હે મદન્ત ! તદેવં-ભવદુક્તં સત્યમેવ હે વદન્ત મવદુક્તં સત્યમેવ ॥ સૂ૦ ૧ ॥
પૃષ્ઠશતકસ્ય દ્વિતીય ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૬-૨ ॥

કા નિરૂપણ કરને કે લિયે યહ દ્વિતીય ઉદ્દેશક સૂત્રકાર ને પ્રારંભ કિયા
હે-(રાયગિહં નયરં જાવ-एवं वयासी-आहारुद्देसओ जो पन्नवणाए सो
सव्वो नेयव्वो) उस काल में उस समय में राजगृह नामका नगर था
यावत्-महावीर स्वामी पधारे, परिपटा अपने २ स्थान से निकली
फिर वापिस अपने २ स्थान पर वह गई इस के बाद श्रमण भगवान्
महावीर के प्रधानशिष्य गौतमगोत्रीय इन्द्रभूति जो कि धर्म के उप-
देश को सुनने के अभिलाषा वाले थे प्रभु को नमस्कार कर फिर उन्होंने
ने प्रभु से ऐसा पूछा-इत्यादि आहारक उद्देशक जो प्रज्ञापना सूत्र के
अद्वाइस वे पद में प्रतिपादित हुआ है वह सब यहां जानना चाहिये ।

अन्त में गौतम ने भगवान् के कथन को यथार्थस्वरूप से स्वीकार
करते हुए उनसे कहा-(सैवं मंते ! सैवं मंते ! त्ति) हे भदन्त ! आपके
द्वारा कहा गया सब विषय सत्य ही है वह सब सत्य ही है ॥ सू० १ ॥

સૂત્રકારે આ બીજા ઉદ્દેશકમાં તેમના આહારનું નિરૂપણ કર્યું છે. (રાયગિહં
નયરં જાવ એવં વયાસી-આહારુદ્દેસઓ જો પન્નવણાએ સો સવ્વો નેયવ્વો) તે
કાળે અને તે સમયે રાજગૃહ નામે નગર હતું. ત્યાં મહાવીર સ્વામી પધાર્યા.
ધર્મોપદેશ શ્રવણ કરવાને પરિપટા પોતાપોતાને સ્થાનેથી નીકળી, અને ધર્મોપદેશ
સંભળીને પરિપટા વિખરાઈ ગઈ. ત્યારબાદ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના પ્રધાન
શિષ્ય ગૌતમ ગોત્રીય ઇન્દ્રભૂતિ (ગૌતમ સ્વામી) કે જે ધર્મોપદેશ
સંભળવાની તીવ્ર જિજ્ઞાસાવાળા હતા, તેમણે મહાવીર પ્રભુને વંદણા નમસ્કાર
કરીને આ પ્રમાણે પૂછ્યું-ઇત્યાદિ ઉદ્દેશક કે જેનું પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના ૨૮ માં
પદમાં પ્રતિપાદન કરાયું છે તે સમસ્ત કથન અહીં શ્રદ્ધા કરવું.

ઉદ્દેશકને અન્તે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુના કથનમાં પોતાનો વિશ્વાસ
પ્રકટ કરતાં કહે છે-“ સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ ” હે ભદન્ત ! આપના દ્વારા
આ વિષયનું જે પ્રતિપાદન કરાયું છે તે સર્વથા સત્ય અને યથાર્થ જ છે. ॥સૂ૦ ૧॥

॥ છઠ્ઠા શતકને બીજા ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥

अथ तृतीयोद्देशकः

पष्ठशतके तृतीयोद्देशकस्य संक्षिप्तविषयविवरणम्

तत्र प्रथमं तृतीयोद्देशकार्यं संप्रदग्गायामयम्—‘बहुकम्म’ इत्यादि ।

ततो महाकर्मवतो जीवस्य सर्वतः कर्मपुद्गलाः बध्यन्ते, ? सर्वतः कर्मपुद्गलाधीयन्ते ? सर्वतः कर्मपुद्गला उपचीयन्ते ? निरन्तरं कर्मपुद्गलाः बध्यन्ते, निरन्तरं कर्मपुद्गलाधीयन्ते ? निरन्तरं कर्मपुद्गला उपचीयन्ते ? तस्य च महाकर्मवतो जीवस्य शरीराणि बाह्यात्मरूपाणि दुरूपतया, दुर्बलतया, बध्नुमतया, अनिष्टतया भूयोभूयः परिणमन्ति ? इति गौतमस्य प्रश्नः, स्वीकारात्मकं भगवत उत्तरं

छठे शतके के उद्देशक प्रारंभ

छठे शतके के इस तीसरे उद्देशे का विषयविवरण संक्षेप से इस प्रकार से है—सम से पहिले इस उद्देशक में प्रतिपादित विषयको संप्रष्ट करके प्रगट करनेवाली दो गाथाएँ कही गई हैं—उनमें प्रभरूप से यह प्रकट किया गया है कि महाकर्मवाले जीव के क्या सर्व प्रकार से कर्म पुद्गलों का बंध होता है ? सर्व प्रकार से उसके क्या कर्मपुद्गलों का चय होता है ? सर्व प्रकार से क्या उसमें कर्मपुद्गलों का उपचय होता है ? या निरन्तर कर्मपुद्गल क्या उस जीव के बंधते रहते हैं ? निरन्तर कर्मपुद्गलों का क्या उसके चय होता रहता है ? निरन्तर कर्मपुद्गलों का क्या उसके उपचय होता रहता है ? उस महाकर्मवाले जीव की बाह्यशरीर रूप आत्मा कुत्सितरूप से, कुत्सितवर्ण से, कुत्सित दुर्मेध आदिरूप से, अशुभरूप से, अनिष्टरूपसे, क्या बार २ परिणमित होती रहती है ?

छठे शतके की त्रिलो उद्देशक—

आ उद्देशकना विषयनुं संक्षिप्त विवरण—

“ आ उद्देशकनी श्रुआतमां आ उद्देशकमां जे विषयनुं प्रतिपादन करायुं छ ते विषयने प्रकट करनारी जे संग्रह गाथाओ आपी छे—ते गाथाओमां प्रश्नरूपे जे प्रकट करवामां आयुं छे हे—महाकर्मवाणा एवो शुं सर्व प्रकारे कर्मपुद्गलोना बंध करे छे ? शुं ते सर्व प्रकारे कर्मपुद्गलोना चय करे छे ? शुं ते सर्व प्रकारे कर्मपुद्गलोना उपचय करे छे ? शुं ते एवोनां कर्मपुद्गल निरन्तर बंधातां रहे छे ? शुं तेमना कर्मपुद्गलोना निरन्तर चय यतो रहे छे ? शुं तेमनां कर्मपुद्गलोना निरन्तर उपचय यथा करे छे ? ते महाकर्मवाणा एवोना गाढा शरीररूप आत्मा शुं कुत्सितरूपे, कुत्सित वर्णधी, कुत्सित दुर्मेध आदि रूपे, अशुभ रूपे, अने अनिष्ट रूपे बार २ परिणमित यथा

ચ, । તત્રહેતુપ્રદર્શનપ્રસન્ને અદત ધૌત-તન્નૂદગત વસ્ત્રસ્ય દૃષ્ટાન્તોક્તરણમ્ । તતઃ
અલ્પકર્મવાતો જીવસ્ય સર્વતઃ કર્મપુદ્ગલાઃ મિથ્યન્તે ? સર્વતઃ કર્મપુદ્ગલાઃ યાવત્-
પરિવિધ્વસ્યન્તે ? તસ્ય ચાલ્પકર્મવાતો જીવસ્ય વાઘાત્માનઃ શરીરાણિ સુરુપતયા,
શુભતયા, યાવત્-દૃષ્ટતયા, સુખતયા નો દુઃખતયા ભૂયોભૂયઃ વરિણમન્તિ ? इति
પ્રશ્નસ્ય સ્વીકારાત્મકમુત્તરમ્ । તત્ર હેતુકથને જહ્લિત-પદ્ધિત-મલિન-ધૂલિધૂસરિ-
તસ્યાપિ વસ્ત્રસ્ય જલેન પ્રક્ષાલ્યમાનસ્ય દૃષ્ટાન્તતયોપન્યાસઃ । તતો વસ્ત્રે પુદ્ગલાના-

इस प्रकार से ये गौतम के प्रश्न हैं-इनका स्वीकारात्मक प्रश्न का उत्तर
है । इसमें कारण क्या है ? इस विषय में हेतु का प्रदर्शन इसी प्रसङ्ग
में अर्हति, धौत और यन्त्रोद्गत वस्त्र का उदाहरण अल्पकर्मवाले जीव
के सर्वप्रकार से क्या कर्मपुद्गल भेद को प्राप्त होते हैं ? सर्वप्रकार से
क्या कर्मपुद्गल यावत् उसके परिविध्वस्त होते हैं ? उस अल्पकर्मवाले
जीव की बाह्यशरीररूप आत्मा क्या अच्छे रूप से शुभरूप से यावत्
दृष्टरूप से सुखरूप से, दुःखरूप से नहीं-यार २ परिणमित होती
रहती है ? इन प्रश्नों का स्वीकारात्मक उत्तर इस विषय में क्या कारण
है ? इस प्रश्न में हेतु का कथन इसी प्रसङ्ग में जह्लित, पद्विहित, मलिन
और धूलि से धूसरित हुए वस्त्र का जो कि जल से प्रक्षालित किया जा
रहा है उदाहरण ।

वस्त्र में पुद्गलों का उपचय प्रयोग से होता है या स्वभाव से होता

કરે છે ? ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નોનો પ્રભુ હકારમાં (સ્વીકારાત્મક) જવાબ
આપે છે તેનું કારણ શું છે ? કારણનું પ્રતિપાદન કરવા માટે અહત (વપરાયા
વિનાના) ઘોયેલા અને સાળ ઉપર તૈયાર કરેલા નવા વસ્ત્રનું ઉદાહરણ.

અલ્પકર્મવાળા જીવનાં કર્મપુદ્ગલ શું સર્વ પ્રકારે ભેદને પ્રાપ્ત કરે છે ?
એટલે કે અલગ થઈ જાય છે ? શું અલ્પકર્મવાળા જીવનાં કર્મપુદ્ગલ સર્વ
પ્રકારે પરિવિધ્વસ્ત (બિલકુલ નષ્ટ) થઈ જાય છે ? તે અલ્પકર્મવાળા જીવનો
બાહ્યશરીર રૂપ આત્મા શું સુંદર રૂપે, શુભરૂપે, (યાવત્) ઈષ્ટરૂપે અને સુખ-
રૂપે વારંવાર પરિણમિત થયા કરે છે ? આ પ્રશ્નોનો પ્રભુ દ્વારા સ્વીકારાત્મક
ઉત્તર-તેનું કારણ જાણવાની ગૌતમની જિજ્ઞાસા-કારણનું પ્રતિપાદન કરવા માટે
પરસેવાથી કાદવથી, મેલથી અને ધૂળથી મેલા થયેલા વસ્ત્રને પાણીથી સ્વચ્છ
કરાય છે, તેવું દૃષ્ટાન્ત.

પ્રશ્ન-વસ્ત્રમાં પુદ્ગલોનો ઉપચય પ્રયોગથી થાય છે કે સ્વભાવથી થાય છે ?

મુપચયઃ પ્રયોગેણ વિસ્રસયા ય, જીવે કર્મપુત્રલાનામુપચયસ્ય પ્રયોગેણ, નો વિસ્ર-
સયા, સ્વભાવેન । તતઃ પચેન્દ્રિયાણાં જીવાનાં મનઃપ્રયોગઃ, વચ્નઃ પ્રયોગઃ,
કાયપ્રયોગથ, પૃથિવ્યાદિ-યાવત્-વનસ્પતિપર્યન્ત જીવાનાં કાયપ્રયોગ એવ, વિકલ્પે-
ન્દ્રિયાણાં વચનપ્રયોગઃ, કાયપ્રયોગથ, દેવાનાં મનઃપ્રયોગાદિત્રિપ્રયોગા મયન્તિ,
ઇતિ કથનમ્ । તતો વચ્ચે વચ્ચમાનઃ પુત્રલોપચયઃ કિં સાદિઃ સાન્તઃ ? સાદિરન્તો
વા ? અનાદિ સાન્તો વા ? અનાદિરનન્તો વા ? ઇતિ પ્રશ્નસ્ય સાદિઃ સાન્ત એવ
વચ્ચે પુત્રલોપચયઃ ઇત્યુત્તરમ્ । વચ્ચવદેવ જીવાનાં વચ્ચમાનકર્મપુત્રલોપચયવિષયે

હૈં એસા પ્રશ્ન?—દોનો પ્રકાર સે બી હોતા હૈં એસા ઉત્તર—જીવ મેં કર્મ-
પુત્રલોં કા ઉપચય પ્રયોગ સે હોતા હૈં યા સ્વભાવ સે હોતા હૈં ? તો હસ
પ્રશ્ન કા ઉત્તર યહ હૈં કિ જીવ મેં કર્મપુત્રલોં કા ઉપચય પ્રયોગ સે હી
હોતા હૈં, સ્વભાવ સે નહીં એસા કથનઃ જીવ કે ત્રીન પ્રકાર કે પ્રયોગોં
કા કથન કરતે હુઅ પંચેન્દ્રિય જીવોં મેં મનપ્રયોગ, વચનપ્રયોગ ઓર
કાય પ્રયોગ હન ત્રીન પ્રયોગોં સે કર્મ કે ઉપચય હોને કા કથન પૃથિવી
કાયિક જીવ સે છેકર વનસ્પતિકાયિક તક કે જીવોં કે કાયપ્રયોગ
સે હી કર્મપુત્રલોં કા ઉપચય હોતા હૈં એસા કથન વિકલ્પેન્દ્રિય જીવોં કે
વચનપ્રયોગ, તથા દેવોં કે મનઃ પ્રયોગ અદિ ત્રીનોં પ્રયોગ કર્મપુત્રલોં
કે ઉપચય હોને મેં કારણ હોતે હૈં એસા કથન વચ્ચ મેં વચ્ચમાન પુત્રલોં
પચય કયા સાદિ સાન્ત હૈં ? યા સાદિ અનન્ત હૈં ? યા અનાદિસાન્ત હૈં ?
યા અનાદિ અનન્ત હૈં ? હસ પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં, “વચ્ચમેં પુત્રલોપચય સાદિ

ઉત્તર—મન પ્રકારે થાય છે.

પ્રશ્ન—જીવમાં કર્મપુત્રલોના ઉપચય પ્રયોગથી થાય છે કે સ્વભાવથી થાય છે ?

ઉત્તર—જીવમાં કર્મપુત્રલોના ઉપચય પ્રયોગથી જ થાય છે, સ્વભાવથી
થતો નથી. જીવના ત્રણ પ્રકારના પ્રયોગનું કથન—પચેન્દ્રિય જીવોમાં મનપ્રયોગ,
વચનપ્રયોગ અને કાયપ્રયોગ, આ ત્રણ પ્રયોગોથી કર્મનો ઉપચય થાય છે
એવું કથન. પૃથ્વીકાયિક જીવોથી લઈને વનસ્પતિ કાયિક પર્યન્તના જીવોમાં
કાયપ્રયોગથી જ કર્મનો ઉપચય થાય છે એવું પ્રતિપાદન. વિકલ્પેન્દ્રિય જીવોમાં
વચનપ્રયોગ અને કાયપ્રયોગથી અને દેવોમાં મનપ્રયોગ આદિ ત્રણ પ્રયોગોથી
કર્મપુત્રલોના ઉપચય થાય છે એવું કથન.

વચ્ચમાં થતો પુત્રલોપચય શું સાદિ સાન્ત (આદિ સહિત અને અન્ત
સહિત) હોય છે ? કે સાદિ અનન્ત હોય છે ? કે અનાદિ સાન્ત હોય છે ?
કે અનાદિ અનન્ત હોય છે ?

પ્રશ્નઃ, ઈર્વાપથબન્ધકજીવસ્ય કર્મપુદ્ગલોપચયઃ સાદિઃ સ્થાન્તઃ, ભવ્યસ્ય અનાદિઃ સ્થાન્તઃ, અભવ્યસ્ય અનાદિરનન્તઃ, નતુ કથિત્ કર્મપુદ્ગલોપચયઃ સાદિરનન્તઃ, ઇત્યુત્તરમ્। તતો વચ્ચં સાદિ-સ્થાન્તમ્ ? સાદિ-અનન્તમ્ ? અનાદિ-સ્થાન્તમ્ ? અનાદિ-અનન્તં વા ? ઇતિ પ્રશ્નઃ, વચ્ચં સાદિ સ્થાન્તમેવ, નાન્યત્, ઇત્યુત્તરમ્। તતો વચ્ચવદેવ જીવ વિષયે પ્રશ્નઃ। નૈરયિક-તિર્યગ્-મનુષ્ય-દેવાઃ સાદયઃ સ્થાન્તાઃ, સિદ્ધઃ સાદિરનન્તઃ, ભવ્યોઽનાદિઃ સ્થાન્તઃ, અભવ્યોઽનાદિરનન્તઃ, ઇત્યુત્તરમ્, તતઃ કર્મ પ્રકૃતીનાં પ્રણાનાં જ્ઞાનાવરણયાવત્-અન્તરાયિકાનામ્ અવાધાકાલસહિતવન્ધસ્થિતિ પ્રતિપાદનમ્। તેષાં કર્મણાં બન્ધકત્વેન સ્ત્રીપુરુષનપુંસકાનાં કથનમ્, તદ્ભિન્નાનાં તુ કદાચિત્

સ્થાન્ત હી હૈ” એસા, ઉત્તર વચ્ચ સાદિ સ્થાન્ત હૈ ? કિ-સાદિ અનન્ત હૈ ? અથવા-અનાદિ સ્થાન્ત હૈ ? યા અનાદિ અનન્ત હૈ ? એસા પ્રશ્ન-“ વચ્ચ-સાદિસ્થાન્ત હી હૈ એસા ઉત્તર, વચ્ચ કી તરહ હી જીવ કે વીષય મેં પ્રશ્ન નૈરયિક, તીર્યજ્ઞ, મનુષ્ય એવં દેવ ચે સય જીવ તો સાદિસ્થાન્ત હૈ, સિદ્ધ સાદિ અનન્ત હૈ, ભવ્યજીવ અનાદિ સ્થાન્ત હૈ, ઓર અભવ્યજીવ અનાદિ અનન્ત હૈ એસા ઉત્તર।

જ્ઞાનાવરણસે લેકાર અન્તરાયતક આઠ કર્મપ્રકૃત્તિયોંકી અવાધાકાલ સહિત બન્ધસ્થિતિ કા પ્રતિપાદન ઇન કર્મોં કે બન્ધક હોને કે કારણ સ્ત્રી, પુરુષ ઓર નપુંસક જીવોં કા કથન જો જીવ સ્ત્રી, પુરુષ ઓર નપુંસક નહીં હૈ ચે ઇન કર્મોં કો વાંધે ભી ઓર નહીં ભી વાંધે એસા કથન સ્ત્રી આદિકોં મેં કદાચિત્ આયુષ્ક કર્મ કા બન્ધકત્વ ઓર કદાચિત્

ઉત્તર-વચ્ચમાં પુદ્ગલોપચય સાદિ સ્થાન્ત જ હોય છે.

પ્રશ્ન-વચ્ચ સાદિ સ્થાન્ત છે ? કે સાદિ અનન્ત છે ? અથવા અનાદિ સ્થાન્ત છે ? કે અનાદિ અનન્ત છે ?

ઉત્તર-વચ્ચ સાદિ સ્થાન્ત જ છે.

વચ્ચની જેમ જ જીવના વિષયમાં પ્રશ્નો-નારડો, તિર્યંચો મનુષ્યો અને દેવો સાદિ સ્થાન્ત જ છે; સિદ્ધ સાદિ અનન્ત છે, ભવ્ય જીવ અનાદિ સ્થાન્ત છે અને અભવ્ય જીવ અનાદિ અનન્ત છે, એવો ઉત્તર.

જ્ઞાનાવરણથી લઇને અન્તરાય પર્વન્તની આઠ કર્મપ્રકૃતિઓની અવાધાકાલ સહિત બન્ધસ્થિતિનું પ્રતિપાદન, સ્ત્રી, પુરુષ, નપુંસક આદિ જીવોએ કર્મના બાંધનાર હોવાથી તેમનું કથન. જે જીવો સ્ત્રી, પુરુષ કે નપુંસક હોતા નથી, તેઓ કર્મના બાંધક હોય છે પણ ખરાં અને નથી પણ હોતા. સ્ત્રી આદિ-કર્મમાં ક્યારેક આયુષ્યકર્મના બાંધકત્વનું અને ક્યારેક અબન્ધકત્વનું કથન.

अपन्धकत्वं कदाचिदपन्धकत्वं च । स्यादीनां कदाचिद् आयुष्यकर्मवन्धकत्वं, कदा-
चिन्ना । ततः संयतासंयतादीनां कर्मवन्धकत्वे प्रश्नोत्तरम् । तथा सम्यग्दृष्टि मिथ्या-
दृष्टि-सम्यग्मिथ्यादृष्टि-संशयसंश्लि-नोसंश्लि नोभसंश्लि, -भवसिद्धिका-भवसिद्धिक-
नोतदुभयसिद्धिक-चक्षुर्दर्शन्यचक्षुर्दर्शनि-केवलदर्शनि-पर्याप्त-पर्याप्त-नोतदुभय-
भाषका-भाषक-परित्त-परित्त -नोतदुभय-मतिज्ञानि-श्रुतज्ञान्यवधिज्ञानि-मनः
पर्यवज्ञानि-केवलज्ञानि - मतिश्रुतावध्यज्ञानि - मनोयनः काययोग्ययोग्याकारोप-
योगि-निराकारोपयोग्याहारका-नाहारक-सूक्ष्म-बादर नोतदुभय - चरमाचर-
माणाम्कर्मवन्धविचारः, स्त्री-पुरुष-नपुंसकवेदका-वेदक जीवालपबहुत्वकयनम् ।

अपन्धकत्व का कथन संयतासंयतादिकों के कर्मवन्ध होने में प्रश्नोत्तर
इसके बाद-सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, संज्ञी, असंज्ञी,
नो संज्ञी, नो असंज्ञी, भवसिद्धक, अभवसिद्धिक, नो भवसिद्धिक, नो
अभवसिद्धिक, चक्षुर्दर्शनी, अचक्षुर्दर्शनी, अवधिदर्शनी, केवलदर्शनी,
पर्याप्त, अपर्याप्त, नो पर्याप्त, नो अपर्याप्त, भाषक, अभाषक, परित्त,
अपरित्त, नो परित्त, नो अपरित्त, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, मनः पर्यवज्ञानी
केवलज्ञानी, मति अज्ञानी, श्रुत अज्ञानी, विभक्त अज्ञानी मनोयोगी,
वचोयोगी, काययोगी, अयोगी, साकारोपयोगी निराकारोपयोगी, आ-
हारक, अनाहारक, सूक्ष्म, बादर, नो सूक्ष्म, नो बादर, चरम और
अचरम इन सब के कर्मवन्ध का विचार तथा अन्त में स्त्री, पुरुष, एवं
नपुंसक इन वेदवालों के और अवेदवालों के अल्प-बहुत्व का कथन ।

संयतासंयत आदिकोर्मां कर्मवन्ध यथा विधेना प्रश्नोत्तराः । त्वाभासं सम्यग्-
दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, संज्ञी, असंज्ञी, नो असंज्ञी, भवसिद्धिक,
अभवसिद्धिक, नो भवसिद्धिक, नो अभवसिद्धिक, चक्षुर्दर्शनी, अचक्षुर्दर्शनी,
अवधिदर्शनी, केवलदर्शनी, पर्याप्त, अपर्याप्त, नो पर्याप्त, नो अपर्याप्त, भाषक,
अभाषक, परित्त, अपरित्त, नो परित्त, नो अपरित्त, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी,
मनः पर्यवज्ञानी, केवलज्ञानी, मतिअज्ञानी, श्रुतअज्ञानी, अवधिअज्ञानी, मनो-
योगी, काययोगी, अयोगी, साकारोपयोगी, निराकारोपयोगी, आहारक, अना-
हारक, सूक्ष्म, बादर, नो सूक्ष्म, नो बादर, चरम अने अचरम, अने अधाना
कर्मवन्धनो विचार अन्ते स्त्री, पुरुष अने नपुंसक अने अवेदवाणानां
अल्प-बहुत्व कथन ।

द्वितीयोद्देशके पुद्गलानामाहारतो निरूपणं कृतम् अथ वन्धादित-
स्मान्निरूपयितुमादौ तृतीयोद्देशकार्यसंग्रहाय गाथाद्वयमाह— 'बहुकम्म' इत्यादि,
'भविष्य' इत्यादि च—

मूलम्—गाथा

'बहुकम्मे वत्थ पोग्गल पओगसा वीससा ये सादीए ।

कम्मट्ठिई तिथे संजये सम्मदिट्ठी ये सन्नी य ॥ १ ॥

भविष्य दंसण—पज्जत्त—भासअ—परित्त,—नाण—जोगे य ।

उवओगा—ऽऽहारक—सुहुम—चरिम—वंधे ये अप्पवहु ॥ २ ॥

गाथा छाया—बहुकर्म, वत्थ पुद्गलाः प्रयोगेन विस्रसया च सादिकः ।

कर्मस्थिति—स्त्री—संयत—सम्यग्दृष्टिश्च संज्ञी च ॥ १ ॥

भविको दर्शन—पर्याप्त—भाषक—परीताज्ञान—योगाश्च ।

उपयोगा—ऽऽहारक—सूक्ष्म—चरमवन्धश्चाल्पबहुत्वम् ॥ २ ॥

टीका—'बहुकर्म' महाकर्मणो जीवस्य सर्वतः पुद्गला वध्यन्ते
इत्यादिनिरूपणम् १, 'वत्थपोग्गलपओगसा वीससा ये' 'वस्त्रे पुद्गलाः प्रयो-

'बहुकम्म' इत्यादि ।

बहुकर्म १, वस्त्रपुद्गल प्रयोग से या स्वभाव से २, सादिक ३, कर्म-
स्थिति ४, स्त्री ५, संयत ६, सम्यक् दृष्टि ७, संज्ञी, भव्य, दर्शन,
पर्याप्त, भाषक, परित्त, ज्ञान, योग, उपयोग, आहारक, सूक्ष्म, चरम
बंध ८, अल्पबहुत्व ९,

टीकार्थ—द्वितीय उद्देशक में आहार की अपेक्षा से पुद्गलों का निरू-
पण किया जा चुका है अथ उन्हीं पुद्गलों का वंधादिककी अपेक्षा लेकर
इस उद्देशक में निरूपण करने के लिये, सब से प्रथम सूत्रकार ने इस

"बहुकम्म" इत्यादि—

संग्रहगाथा—(१) बहुकर्म, (२) वस्त्रपुद्गल प्रयोगात्थी के स्वभाववत्थी,
(३) सादिक, (४) कर्मस्थिति, (५) स्त्री, (६) संयत, (७) सम्यग्दृष्टि, (८)
संज्ञी, भव्य, दर्शन, पर्याप्त, भाषक, परित्त, ज्ञान, योग, उपयोग, आहारक,
सूक्ष्म, चरम, बंध, (९) अल्पबहुत्व.

टीकार्थ—जीवा उद्देशकभां आहारनी अपेक्षाये पुद्गलानां निरूपणं करवानां
आवृत्ति छे. इवे जेन पुद्गलानां वंधादिकनी अपेक्षाये निरूपणं करवाने भाटे

મેળ વિસ્રસયા ચ ' યથા તસ્યે પુદ્ગલાઃ પ્રયોગેન-મયોગદ્વારા વિસ્રસયા સ્વભાવિક તયા ચ વધ્યન્તે તથા જીવાનામપિ કિમ્ કર્મપુદ્ગલાઃ પ્રયોગેન વિસ્રસયા ચ વધ્યન્તે ?' ઇત્યાદિ વિવેચનમ્ ૨, ' સાદીપ ' ' સાદિકઃ ' -યથા વસ્ત્રસ્ય સાદિઃ પુદ્ગલચયઃ, एवं जीवानामपि किम् सादिः कर्मपुद्गलचयः ?' ઇત્યાદિનિરૂપણમ્ ૩, ' કમ્મદ્વિઃ ' કર્મસ્થિતિઃ કર્મણાં સ્થિતિનિરૂપણમ્ ૪, ' ઇત્થી ' સ્ત્રી ' કિમ્ સ્ત્રી.

ઉદ્દેશક કે અર્થ કો સંગ્રહ કરને ચાલી ફન દો ગાથાઓં કો કહા ફે- (બહુકમ્મ) ઇત્યાદિ તથા (ભવિપ્) ઇત્યાદિ-(બહુકર્મ) ફસ પદ સે પ્રશ્નરૂપ મેં યહ પ્રકટ કિયા ગયા ફે કિ જિસ જીવ કે કર્મ બહુત ફેં-ઉસ કે કયા કર્મપુદ્ગલોં કા સર્વ પ્રકાર સે બંધ હોતા ફે ? ઇત્યાદિ (વત્થ-પોગ્ગલ પઓગસા ઘોસસા ય) ફસ પદ દ્વારા પ્રશ્ન રૂપમેં યહ પ્રકટ કિયા ગયા ફે કિ જિસ પ્રકાર સે વત્થ મેં પુદ્ગલ પ્રયોગદ્વારા ઓર સ્વભાવિક રીતિ સે બંધતે ફેં, ઉસી તરફ સે કયા જીવોં કે બી કર્મપુદ્ગલ પ્રયોગ ઓર સ્વભાવ સે બંધતે ફેં ? ઇત્યાદિ (સાદિકઃ) ફસ પદ દ્વારા પ્રશ્નરૂપ મેં યહ પ્રકટ કિયા ગયા ફે કિ જિસ પ્રકાર સે વત્થ મેં સાદિ પુદ્ગલોં કા ચય હોતા ફે, ઉસી પ્રકાર સે કયા જીવોં કો બી સાદિ કર્મ પુદ્ગલોં કા ચય હોતા ફે ? ઇત્યાદિ (કમ્મદ્વિઃ) ફસ પદ દ્વારા કર્મ કી સ્થિતિ કા વિચાર પ્રકટ કિયા ગયા ફે (ઈત્થી) ફસ પદ દ્વારા યહ પૂછા ગયા

સૂત્રકારે આ ઉદ્દેશકની શરૂઆતમાં બે સંબંધગાથાઓ આપી છે. તે ગાથાઓ આ ઉદ્દેશકમાં આવતા વિષયને પ્રકટ કરે છે. પહેલી ગાથા “બહુકમ્મ” ઇત્યાદિ, બીજી ગાથા “ભવિપ્” ઇત્યાદિ છે. “બહુકર્મ” આ પદથી પ્રશ્નરૂપે બે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે જે જીવનાં કર્મ બધાં જ છે એવો બહુકર્મ-જીવ શું સર્વ પ્રકારે કર્મનો ખંધ કરે છે ? ઇત્યાદિ.

“વત્થ-પોગ્ગલ-પઓગસા ઘોસસા ય” આ પદ દ્વારા પ્રશ્નરૂપે બે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે જેવી રીતે વસ્ત્રમાં પુદ્ગલ પ્રયોગદ્વારા અને સ્વભાવિક રીતે ખંધાય છે, એજ પ્રમાણે શું જીવોનાં કર્મપુદ્ગલ પણ પ્રયોગ અને સ્વભાવથી ખંધાય છે ? ઇત્યાદિ.

“સાદિકઃ” આ પદ દ્વારા પ્રશ્નરૂપે બે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે જેમ વસ્ત્રમાં સાદિ (આદિ યુક્ત) પુદ્ગલોનો ચય થાય છે, તેમ શું જીવોમાં પણ સાદિ કર્મપુદ્ગલોનો ચય થાય છે.

“કમ્મદ્વિઃ” આ પદ દ્વારા કર્મની સ્થિતિનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

“ઈત્થી” આ પદ દ્વારા બે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું કે શું સ્ત્રી અથવા

પુરુષાદિર્વાં કર્મવધ્નાતિ ? इत्यादिविचारः ५ 'संजय' संयतः 'कः संय-
तादिः ? इत्यादिनिरूपणम् ६ 'सम्मदिट्ठी' 'सम्यग्दृष्टिः' 'कः सम्यग्-
दृष्ट्यादिः ? इत्यादिनिरूपणम् ७ । एवं 'सत्ती' 'इत्यादि । 'संज्ञी, भव्यः,
दर्शनी, पर्याप्तकः, भाषकः, परीतः, ज्ञानी योगी, उपयोगी, आहारकः, सूक्ष्मः,
चरमः' एतान् समाश्रित्य 'बन्धश्च' बन्धविषयकं निरूपणम् ८, 'अल्पबहु'
'अल्पबहुत्वम्' एतेषामेव उपर्युक्तानां स्त्रीप्रभृतीनां कर्मबन्धकानां परस्परम्
अल्प-बहुत्वविवेचनं प्रतिपादितम् ॥ २ ॥

મહાકર્મા—લ્પકર્મવક્તવ્યતા ।

મહાકર્માલ્પકર્માદીનાં જીવાનાં દુઃખસુખાદિવન્ધતારતમ્યં વસ્તુદૃષ્ટાન્તેન

हे कि क्या स्त्री अथवा पुरुष आदि जीव कर्म का बंध करते हैं ? इत्यादि
(संजय) पद से संयत आदि कोन हैं ? इत्यादि विचार प्रकट किया
गया है । (सम्मदिट्ठी) पद यह प्रकट करता है कि सम्यग्दृष्टि आदिकौन
हैं ? (सत्ती) संज्ञी-(भविए) भव्य (दंसण) दर्शनी, (पज्जत्त) पर्याप्तक
(भासय) भाषय (परित्ते) परीत, (नाण) ज्ञानी, (जोगे) योगी,
(उवओगाऽऽहारग) उपयोगी, आहारक, (सुहुम, चरिम) सूक्ष्म, चरम
ये सब पद यह बतलाते हैं कि इनको अश्रित करके (बंधेय) बन्धवि-
षयक निरूपण हुआ है (अल्पबहुं) यह पद यह कहता है कि इन्हीं
उपर्युक्त स्त्री आदि कर्मबन्ध जीवों का परस्पर में अल्प बहुत्व का विचार
किया गया है ।

પુરુષ આદિ જીવો કર્મના બંધ કરે છે ? ઇત્યાદિ.

“સંજય” આ પદથી સંયત આદિનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે.

“સમ્મદિટ્ઠી” આ પદ એ પ્રકટ કરે છે કે સમ્યગ્દૃષ્ટિ આદિ કોણ છે ?

“સત્તી” સંજી, “ભવિય” ભવ્ય, “દંસણ” દર્શની, “પજ્જત”
પર્યાપ્તક, “ભાસય” ભાષક, “પરિત્તે” “નાણ” જ્ઞાની, “જોગે” યોગી,
“ઉવઓગાઽઽહારગ” ઉપયોગી, આહારક, “સુહુમ, ચરિમ” સૂક્ષ્મ, ચરમ આ
બધાં પદો એ બતાવે છે કે તે બધાને અનુલક્ષીને “બંધેય” બંધવિષયક
નિરૂપણ આ ઉદ્દેશકમાં કરાયું છે.

“અલ્પબહું” આ પદ એ પ્રકટ કરે છે કે આ ઉદ્દેશકમાં સ્ત્રી આદિ
કર્મબંધક જીવોમાં કોણ વધારે છે અને કોણ અલ્પ પ્રમાણમાં છે. આ રીતે
તેમના અલ્પબહુત્વનું આ ઉદ્દેશકમાં પ્રતિપાદન કરાયું છે.

મેણ વિસ્રસયા ચ ' યથા નસ્તે પુદ્ગલાઃ પ્રયોગેન-પ્રયોગદ્વારા વિસ્રસયા સ્વભાવિક તયા ચ વધ્યન્તે તથા જીવાનામપિ કિમ્ કર્મપુદ્ગલાઃ પ્રયોગેન વિસ્રસયા ચ વધ્યન્તે ?' ઇત્યાદિ વિચેચનમ્ ૨, ' સાદીપ્ ' ' સાદિકઃ ' -યથા વક્ત્રસ્ય સાદિઃ પુદ્ગલચયઃ, એવં જીવાનામપિ કિમ્ સાદિઃ કર્મપુદ્ગલચયઃ ?' ઇત્યાદિનિરૂપણમ્ ૩, ' કમ્મટ્ઠિઃ ' કર્મસ્થિતિઃ કર્મણાં સ્થિતિનિરૂપણમ્ ૪, ' ઇત્થી ' સ્ત્રી ' કિમ્ સ્ત્રી,

ઉદ્દેશક કે અર્થ કો સંગ્રહ કરને ચાલી દુન દો ગાથાઓ કો કહા હૈ- (બહુકમ્મ) ઇત્યાદિ તથા (ભવિષ્ય) ઇત્યાદિ-(બહુકર્મ) હસ પદ સે પ્રશ્નરૂપ મેં યહ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ કિં જિસ જીવ કે કર્મ બહુત હૈ-ઉસ કે કયા કર્મપુદ્ગલોં કા સર્વ પ્રકાર સે બંધ હોતા હૈ? ઇત્યાદિ (વત્થ-પોગ્ગલ પઓગસા ચીસસા ય) હસ પદ દ્વારા પ્રશ્ન રૂપમેં યહ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ કિં જિસ પ્રકાર સે વત્થ મેં પુદ્ગલ પ્રયોગદ્વારા ઓર સ્વભાવિક રીતિ સે બંધતે હૈ, ઉસી તરહ સે કયા જીવોં કે બી કર્મપુદ્ગલ પ્રયોગ ઓર સ્વભાવ સે બંધતે હૈ? ઇત્યાદિ (સાદિકઃ) હસ પદ દ્વારા પ્રશ્નરૂપ મેં યહ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ કિં જિસ પ્રકાર સે વત્થ મેં સાદિ પુદ્ગલોં કા ચય હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર સે કયા જીવોં કો બી સાદિ કર્મ પુદ્ગલોં કા ચય હોતા હૈ? ઇત્યાદિ (કમ્મટ્ઠિઃ) હસ પદ દ્વારા કર્મ કો સ્થિતિ કા વિચાર પ્રકટ કિયા ગયા હૈ (ઇત્થી) હસ પદ દ્વારા યહ પૂછા ગયા

સૂત્રકારે આ ઉદ્દેશકની શરૂઆતમાં બે સંગ્રહગાથાઓ આપી છે. તે ગાથાઓ આ ઉદ્દેશકમાં આવતા વિષયને પ્રકટ કરે છે. પહેલી ગાથા "બહુકમ્મ" ઇત્યાદિ. બીજી ગાથા "ભવિષ્ય" ઇત્યાદિ છે. "બહુકર્મ" આ પદથી પ્રશ્નરૂપે એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે જે જીવનાં કર્મ બધાં જ છે એવો બહુકર્મ-જીવ શું સર્વ પ્રકારે કર્મનો બંધ કરે છે? ઇત્યાદિ.

"વત્થ-પોગ્ગલ-પઓગસા ચીસસા ય" આ પદ દ્વારા પ્રશ્નરૂપે એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે જેવી રીતે વત્થમાં પુદ્ગલ પ્રયોગદ્વારા અને સ્વાભાવિક રીતે બંધાય છે, એજ પ્રમાણે શું જીવોનાં કર્મપુદ્ગલ પણ પ્રયોગ અને સ્વાભાવિકી બંધાય છે? ઇત્યાદિ.

"સાદિકઃ" આ પદ દ્વારા પ્રશ્નરૂપે એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે જેમ વત્થમાં સાદિ (આદિ ચુક્ત) પુદ્ગલોનો ચય થાય છે, તેમ શું જીવોમાં પણ સાદિ કર્મપુદ્ગલોનો ચય થાય છે.

"કમ્મટ્ઠિઃ" આ પદ દ્વારા કર્મની સ્થિતિનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

"ઇત્થી" આ પદ દ્વારા એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું કે શું સ્ત્રી અથવા

વા, રહિયસ્સ વા, આણુપુર્વીય પરિકમ્મિજ્ઞમાણસ્સ સુદ્ધેણં
વારિણા ધોવ્વેમાણસ્સ સવ્વઓ પોગ્ગલા મિજ્ઞંતિ, જાવ
પરિણમતિ, સે તેણદ્દેણં ॥ સૂ. ૧ ॥

છાયા—તદ્ નૂનં ભદન્ત ! મહાકર્મણઃ, મહાક્રિયસ્ય, મહાસ્રવસ્ય, મહાવેદ-
નસ્ય, સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલાશ્રીયન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલા ઉપચીયન્તે,
સદાસમિતં પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલાશ્રીયન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલા
ઉપચીયન્તે, સદાસમિતં ચ સ્વલુ તસ્ય આત્મા દૂરુપતયા, દુર્વર્ણતયા, દુર્ગન્ધ-
તયા, દુરસતયા, દુસ્પર્શતયા, અનિષ્ટતયા, અકાન્તા-Sપ્રિયા-Sશુભા-Sનોદ્ધા-Sમ-

મહાકર્માલ્પકર્મ વક્તવ્યતા

‘સે જૂણં મંતે !’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(સે જૂણં મંતે ! મહાકર્મસ્સ, મહાક્રિયસ્સ, મહાસ્રવસ્સ,
મહાવેયણસ્સ, સવ્વઓ પોગ્ગલા વજ્ઞંતિ, સવ્વઓ પોગ્ગલા ચિજ્ઞંતિ,
સવ્વઓ પોગ્ગલા ઉવચિજ્ઞંતિ) હે ભદન્ત ! યહ નિશ્ચિત હૈ કયા કિ જો
જીવ મહાકર્મવાલા હોતા હૈ, મહાક્રિયાવાલા હોતા હૈ, મહા આસ્રવવાલા
હોતા હૈ ઓર મહાવેદનાવાલા હોતા હૈ, ઇસકે સચ તરફ સે પુદ્ગલોં કા
બંધ હોતો હૈ ? સચ તરફ સે ઇનકે પુદ્ગલોં કા ચય હોતો હૈ ? સચ તરફ
સે ઇસકે પુદ્ગલોં કા ઉપચય હોતો હૈ ? (સયા સમિયં પોગ્ગલા વજ્ઞંતિ,
સયા સમિયં પોગ્ગલો ચિજ્ઞંતિ, સયા સમિયં પોગ્ગલા ઉવચિજ્ઞંતિ,
સયા સમિયં ચ જં તસ્સ આયા દુરુવત્તાય દુવણ્ણતાય દુર્ગંધત્તાય, દુર-

મહાકર્મ અને અલ્પકર્મ વક્તવ્યતા—

“સે જૂણં મંતે !” इत्यादि—

સૂત્રાર્થ—(સે જૂણં મંતે ! મહાકર્મસ્સ, મહાક્રિયસ્સ, મહાસ્રવસ્સ, મહા-
વેયણસ્સ, સવ્વઓ પોગ્ગલા વજ્ઞંતિ, સવ્વઓ પોગ્ગલા ચિજ્ઞંતિ, સવ્વઓ પોગ્ગલા
ઉવચિજ્ઞંતિ ?) હે ભદન્ત ! શું એ વાત નિશ્ચિત છે કે એ જીવ મહાકર્મ,
પાણો હોય, મહાક્રિયાવાળો પણ હોય છે, મહાઆસ્રવવાળો હોય છે અને
મહાકર્મવાળો હોય છે, તે બધી દિશાઓમાંથી કર્મપુદ્ગલોનો બંધ કરતો રહે
છે ? શું તે બધી દિશાઓમાં કર્મપુદ્ગલોનો ચય કરતો હોય છે ? શું તેને
બધી દિશાઓમાંથી કર્મપુદ્ગલોનો ઉપચય થતો હોય છે ? (સયા સમિયં
પોગ્ગલા વજ્ઞંતિ, સયાસમિયં પોગ્ગલા ચિજ્ઞંતિ, સયા સમિયં પોગ્ગલા ઉવચિજ્ઞંતિ,
સયા સમિયં ચ જં તસ્સ આયા દુરુવત્તાય દુવણ્ણતાય દુર્ગંધત્તાય, દુરસત્તાય, દુફા-

प्रतिपादयति—' से णूणं भंते ! ' इत्यादि ।

मृद्व्—से णूणं भंते ! महाकम्मस्स, महाकिरियस्स महासवस्स, महावेयणस्स सव्वओ पोग्गला वज्झंति, सव्वओ पोग्गला चिज्जंति, सव्वओ पोग्गला उवचिज्जंति ? । सया समिअं पोग्गला वज्झंति, सयासमियं पोग्गला चिज्जंति, सया समियं पोग्गला उवचिज्जंति, सया समियं चं णं तस्स आया दूरुवत्ताए, दुव्वणत्ताए, दुग्गं-धत्ताए, दूरसत्ताए, दुप्फासत्ताए, अणिट्ठत्ताए, अकंत-अप्पिय-असुभ-अमणुन्न-अमणामत्ताए, अणिव्वच्छियत्ताए, अभिज्झि-यत्ताए, अहत्ताए--णो उड्डत्ताए, दुक्खत्ताए नो सुहत्ताए, भुज्जो भुज्जो परिणमइ ? । हंता, गोयमा ! महाकम्मस्स तं चेव । से केणट्ठेणं ? गोयमा ! से जहा नामए वत्थस्स अहयस्स वा, धोयस्स वा, तंतुग्गयस्स वा आणुपुव्वीए परिभुज्जमाणस्स सव्वओ पोग्गला वज्झंति, सव्वओ पोग्गला चिज्जंति, जाव-परिणमइ, से तेणट्ठेणं । से णूणं भंते ! अप्प-कम्मस्स, अप्पकिरियस्स, अप्पासवस्स अप्पवेयणस्स सव्वओ पोग्गला भिज्जंति, सव्वओ पोग्गला छिज्जंति, सव्वओ पोग्गला विद्धंसंति, सव्वओ पोग्गला परिविद्धंसंति, सया समियं पोग्गला भिज्जंति, सया समियं पोग्गला छिज्जंति, विद्धस्संति, परिवि-द्धस्संति, सया समियं च णं तस्स आया सुरूवत्ताए पसत्थं नेयव्वं, जाव-सुहत्ताए णो दुक्खत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ ? हंता गोयमा ! जाव--परिणमइ । से केणट्ठेणं ? गोयमा ! से जहा नामए वत्थस्स जल्लियस्स वा, पांकियस्स वा, मइल्लियस्स

શીયન્તે, યાત્-પરિણમતિ, તત્ તેનાર્થેન૦, । તદ્ નૂનં મદન્ત ? અલ્પકર્મણઃ, અલ્પકિરિયસ્ય, અલ્પાસ્રવસ્ય, અલ્પવેદનસ્ય, સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ મિથ્યન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલા િશ્ચન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ વિઘ્વંસન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ પરિવિઘ્વંસન્તે, સદા સમિતં

તંતુગયસ્સ વા આણુપુન્ઘવીણ પરિમુજ્જમાણસ્સ સન્ઘ્વાઓ પોગ્ગલા વજ્જંતિ સન્ઘ્વાઓ પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ, જાવ પરિણમંતિ, સે તેણદ્દેણં) હે ગૌતમ ! જેસે કોઈ એક નવીન અદત્ત-અક્ષત-અપરિમુક્ત-નહીં પહિરા દુઆ એસા વચ્છ હો અથવા એસા વચ્છ હો જો પહિન કરકે ફિર સાફ કિયા ગયા હો અથવા એસે વચ્છ હો જો તુરીયેમાદિરૂપ તન્નર સે અમી ૨ ઉતારા ગયા હો તો એસે વદ્ વચ્છ જેસે અપને પહિરને કે કામ મેં આતા રહતા હૈ -તૈસે ૨ વદ્ મલિન હોતા રહતા હૈ-અર્થાત્ સય તરફ સે પુદ્ગલ આ આકર ઉસમેં સંવંદિત હોતે રહતે હૈં, સય તરફ સે આ આ કરકે પુદ્ગલ ઉસમેં નિધત્તા હોતે રહતે હૈં, યાવત્ વે પુદ્ગલ ઉસમેં પર્યાયાન્તરોં કો પાંતે રહતે હૈં-इसी कारण वह कालान्तर में रसोई घर में दाल शाक आदि के वर्तनों को सिंगड़ी ऊपर से उतारने आदि के काम में आने वाले वच के समान मैला हो जाता है । इसी कारण हे गौतम ! मैंने महा-कर्म आदि विशेषणोंवाले जीव के विषय में पूर्वोक्त रूप से कहा है । (સે જૂણં મંતે ! અપ્પકમ્મસ્સ, અપ્પકિરિયસ્સ અપ્પાસસવસ્સ, અપ્પવે-યણસ્સ, સન્ઘ્વાઓ પોગ્ગલા વિઘ્વંસંતિ, સન્ઘ્વાઓ પોગ્ગલા પરિવિઘ્વંસંતિ,

માણસ્સ સન્ઘ્વાઓ પોગ્ગલા વજ્જંતિ, સન્ઘ્વાઓ પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ, જાવ પરિણમંતિ, સે તેણદ્દેણં) હે ગૌતમ ! જેમકે કોઈ એક નવીન (વાપર્યા વિનાનું) વચ્છ હોય, અથવા એવું વચ્છ હોય કે જેને પહેરીને સાફ કરવામાં આન્યું હોય, અથવા એવું વચ્છ હોય કે જેને સાણ આદિ ઉપર તાણાવાણાથી વણીને તૈયાર કરવામાં આન્યું હોય. એવાં તે વચ્છને જેમ જેમ પહેરવાના ઉપયોગમાં લેવામાં આવે તેમ તેમ તે વધારેને વધારે મલિન થતું જાય છે-એટલે કે બધી દિશામાંથી પુદ્ગલો આવી આવીને તેની ઉપર ચોટતાં રહે છે, તેના ઉપર જમા થતાં રહે છે, (યાવત્) તે પુદ્ગલો તેમાં પર્યાયાન્તરો (એક પર્યાયમાંથી બીજી પર્યાયમાં) પરિણમન પામતાં રહે છે, તે કારણે કાળાન્તરે તે વચ્છ મસોતાના એવું મલિન થઈ જાય છે. હે ગૌતમ ! તે કારણે મહાકર્મ આદિથી યુક્ત જીવના વિષયમાં મેં ઉપર પ્રમાણે કહ્યું છે.

(સે જૂણં મંતે ! અપ્પકમ્મસ્સ, અપ્પકિરિયસ્સ, અપ્પાસસવસ્સ, અપ્પવેય-ણસ્સ સન્ઘ્વાઓ પોગ્ગલા વિઘ્વંસંતિ, સન્ઘ્વાઓ પોગ્ગલા પરિવિઘ્વંસંતિ, સદા સમિયં

નોડમતયા, અનિચ્છિતયો, અભિધ્યનતયા, અપસ્તયા, નો ઝર્ચતયા, દુઃસ્વતયા, નો સુસ્વતયા ધૂયો ધૂયઃ પરિણમતિ ? હન્ત, ગૌતમ ! મહાકર્મણસ્તદેવ । તત્કેના-
ર્યેન૦ ? ગૌતમ ! તદ્ યથા નામ-વસ્તુસ્ય અહતસ્ય વા, ધૌતસ્ય વા, તન્મોદ-
ગતસ્ય વા, આનુપૂર્વ્યાં પરિમુજ્યમાનસ્ય સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલ-

સત્તાણ, દુષ્પાસત્તાણ અણિદ્ધત્તાણ, અકંત, અપિય-અસુખઅમણુજ્ઞ અમ-
ણામત્તાણ અણિવ્યચ્છિયત્તાણ, અભિજ્ઞિયત્તાણ અહત્તાણ, ણો ઉદ્ધત્તાણ, દુક્ખત્તાણ, નો સુહત્તાણ મુજ્જો ૨ પરિણમદ્ધ) કયા એસે જીવ કે નિત્ય
નિરંતર પુદ્ગલોં કા વંધ હોતા રહતા હૈ ? નિરંતર ઉસકે કયા પુદ્ગલોં કા
વચ્ચ હોતા રહતા હૈ ? નિરંતર કયા ઉસકે પુદ્ગલોં કા ઉપવચ્ચ હોતા રહતા
હૈ ? ઉસકા આત્મા-શરીરરૂપ યાદ્દ આત્મા-કયા સદા નિરંતર દુરૂપ
રૂપ સે, દુર્વર્ણરૂપ સે, દુર્ગંધરૂપ સે, સ્વોદે રસરૂપ સે, સ્વોદેસ્પર્શરૂપ સે,
અનિદ્ધરૂપ સે, અકાન્તરૂપ સે, અપ્રિયરૂપ સે, અમનામરૂપ સે, અનીપ્પિ-
ત્તરૂપ સે, અભિપ્પિસત્તરૂપ સે, જઘન્યરૂપ સે, અનૂર્ધ્વરૂપ સે, દુઃખરૂપ સે
ઔર અસુખરૂપ સે, વારંવાર પરિણમિત હોતા રહતા હૈ ? (હંતા ગોયમા !
મહાકર્મસ્સ તં વેવ) હાં, ગૌતમ ! મહાકર્મવાલે જીવ કી યહી પૂર્વાક્ત
સય કુદ્ધ સ્થિતિ હોતી હૈ । (સે કેળદ્દેણં) હે ભદન્ત ! એસા આપ કિસ
કારણ સે કહતે હૈ ? (સે જહાનામણ વસ્થસ્સ અહયસ્સ વા ધોયસ્સ વા,

સત્તાણ અણિદ્ધત્તાણ અકંત, અપિય-અસુખ, અમણુજ્ઞ અમણામત્તાણ અણિવ્યચ્છિય-
ત્તાણ, અભિજ્ઞિયત્તાણ અહત્તાણ, ણો ઉદ્ધત્તાણ, દુક્ખત્તાણ, નો સુહત્તાણ મુજ્જો ૨
પરિણમદ્ધ) શું એવો જીવ નિત્ય નિરંતર પુદ્ગલોના વંધ કરતો રહે છે ?
શું તે નિરંતર પુદ્ગલોના ચચ કયા કરે છે ? શું નિરંતર તેનાં પુદ્ગલોનાં
ઉપચચ થતો રહે છે ? તેના આત્મા-શરીરરૂપ બાદ્દ આત્મા-શું નિરંતર કુદ્ધે
ખરાળ વર્ણરૂપે, દુર્ગંધરૂપે, ખરાળ રસરૂપે, ખરાળ સ્પર્શરૂપે, અનિદ્ધરૂપે,
અકાન્તરૂપે, અપ્રિયરૂપે, અમનામરૂપે, (અમનાસરૂપે), અનીપ્પિસતરૂપે, અભિ-
પ્પિસતરૂપે, જઘન્યરૂપે, અનૂર્ધ્વરૂપે, દુઃખરૂપે અને અસુખરૂપે વારંવાર પરિભ્રમન
ચામ્યા કરે છે ?

(હંતા ગોયમા ! મહાકર્મસ્સ તં વેવ) હા, ગૌતમ ! મહાકર્મવાળા જીવની
એવી જ દશા થાય છે.

(સે કેળદ્દેણં) હે ભદન્ત ! એવું આપ શા કારણે કહેા છે ? (સે જહા
નામણ વસ્થસ્સ અહયસ્સ વા ધોયસ્સ વા, સંતુમાયસ્સ વા આણુપુગ્ગીય પરિમુજ્જ-

કેનાર્થેન ? ગૌતમ ! તદ્ યથા નામ વસ્તુસ્ય જલ્હિતસ્ય વા પક્લિતસ્ય વા મલિ-
તસ્ય વા, રજસ્કિતસ્ય વા, આનુપૂર્વ્યાં પરિકર્મ્યમાણસ્ય શુદ્ધેન ચારિણા ધોવ્ય-
માણસ્ય સર્વતઃ પુદ્ગલા ભિજ્જન્તે, યાવત્-પરિણમતિ, તત્ તેનાર્થેન૦ ॥ સ્લોક ૧ ॥

ટીકા—‘ સે પૂર્ણં મંતે ! મહાકર્મસ્ય, મહાકિરિયસ્સ, મહાસવસ્સ, મહાવેયણસ્સ સન્વઓ પોગ્ગલા યજ્ઞંતિ ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ — હે ભદન્ત !

જાવ પરિણમંતિ) હાં, ગૌતમ ! યાવત્ પરિણમતા રહતા હૈ । (સે કેળ-
દ્દેણં) હે ભદન્ત ! આપ એસા કિસ કારણ સે કહતે હૈં ? (સે જહા
નામપ વત્થસ્સ જલ્હિયસ્સ વા પંકિયસ્સ વા મહલ્હિયસ્સ વા રહલ્હિયસ્સ
વા આણુપુચ્વીપ પરિકર્મિજ્જમાણસ્સ સુદ્દેણં ચારિણા ધોવ્વેમાણસ્સ
સન્વઓ પોગ્ગલા ભિજ્જંતિ, જાવ પરિણમંતિ, સે તેળદ્દેણં૦) હે ગૌતમ !
જેસે કોઈ એક વસ્ત્ર એસા હો કિ જો શારીરિક મેલ સે યુક્ત હો, જિસ
મેં મીલી કીચડ લગી હુઈ હો, રજ સહિત હો, તો વહ જેસે ધીરે ૨ સાફ
કિયે જાને પર, શુદ્ધપાનીસે ધોયે જાને પર સાફ-શુદ્ધ હો જાતા હૈ અર્થાત્
ઉસમેં સંસક્ત હુપ મલિન પુદ્ગલ ઉસસે સવ તરફ સે પૃથક્ક હો જાતે હૈં
યાવત્ વહ વસ્ત્ર અપને રૂપમેં પરિણમ જાતા હૈ-ઈસકા કારણ હે ગૌતમ !
મેંને અલ્પકર્માદિ વિશેષણોંવાલે જીવકે વિષયમેં પૂર્વોક્તરૂપસે કહા હૈ ।

ટીકાર્થ—મહાકર્મ ઓર અલ્પકર્મ આદિ વાછે જીવોં કે દુઃખ સુખ
આદિ બંધ કી તરત્તમતા (ભેદ) ઈસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર પ્રકટ કર

હા, ગૌતમ ! તેના આત્મા તે રૂપે વારંવાર પરિણુમન પામ્યા કરે છે.

(સે કેળદ્દેણં) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો ? (સે જહા
નામપ વત્થસ્સ જલ્હિયસ્સ વા, પંકિયસ્સ વા, મહલ્હિયસ્સ વા, રહલ્હિયસ્સ વા, આણુ-
પુચ્વીપ પરિકર્મિજ્જમાણસ્સ સુદ્દેણં ચારિણા ધોવ્વેમાણસ્સ સન્વઓ પોગ્ગલા ભિજ્જંતિ
જાવ પરિણમંતિ, સે તેળદ્દેણં)

હે ગૌતમ ! કોઈ એક વસ્ત્ર શરીરના પરસેવાથી યુક્ત હોય, જેના ઉપર
ખીની માટી લાગી હોય (કાદવથી જે ખરકાયેલું હોય) જેના ઉપર ખૂણની
રજ જમા થયેલી હોય, એવાં વસ્ત્રને ધીમે ધીમે સાફ કરવાથી, અને શુદ્ધ
પાણીમાં ધોવાથી તે સાફ થઈ જાય છે—એટલે કે તેને વળગેલાં મલિન પુદ્ગલો
તેમાંથી તદ્દન અલગ થઈ જાય છે, અને તે વસ્ત્ર શુદ્ધરૂપે પરિણુમન પામે છે.
હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં અલ્પકર્મ આદિથી યુક્ત જીવોના વિષયમાં
પૂર્વોક્ત કથન કર્યું છે.

ટીકાર્થ—મહાકર્મ, અલ્પકર્મ આદિથી યુક્ત જીવોના દુઃખ, મુખ આદિ
બંધના સેદોનું સૂત્રકાર આ સૂત્રદ્વારા નિરૂપણ કરે છે—ગૌતમ સ્વામી મહાવીર

પુદ્ગલાઃ ઉપચીયન્તે નિષેકરચનતઃ ઉપચિતા ભવન્તિ કિમ્ ? અથવા વધનતો વધ્યન્તે, નિષત્તતથીયન્તે, નિકાચનત ઉપચીયન્તે કિમ્ ? ‘સયા સમિયં પોગ્ગલા વજ્ઞંતિ’ સદા-સર્વદા-નિત્યમ્, સમિતં-નિરન્તરં પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે ? સદાત્વં તુ વ્યવહારતોઽસાતત્યેઽપિ સ્યાત્ અત આઢ-સમિતપ્રિતિ’ ‘સયા સમિયં પોગ્ગલા

ઉપચિત્ હોતે હૈં કયા ? અથવા-(વજ્ઞંતિ, ચિજ્ઞંતિ, ઉવચિજ્ઞંતિ) પેસી ઇન તોન ક્રિયાઓં કા જો સૂત્રકાર ને પાઠ રખા હૈં સો ઉસકા અભિપ્રાય પેસા બી હો સકતા હૈં કિ પ્રકૃતિ, સ્થિતિ, અનુભાગ ઓર પ્રદેશ ઇન ચાર પ્રકાર કે વંધોં કી અપેક્ષા લેકર (વજ્ઞંતિ) પેસા પ્રશ્ન કિયા ગયા હૈં કર્મવન્ધન કે વાદ કર્મોં મેં દસ ૧૦ પ્રકાર કી અવસ્થાએં હોતી હૈં ઉનમેં ઇક અથવા નિષત્ત હૈં સો ઇસ અવસ્થા કો લેકર (ચિજ્ઞંતિ) પેસા પ્રશ્ન કિયા ગયા હૈં ઓર નિકાચિત્ અવસ્થા કો લેકર (ઉવચિ-જ્ઞંતિ) પેસા પ્રશ્ન કિયા હૈં (સયા સમિયં પોગ્ગલા વજ્ઞંતિ) પેસા જો પૂછા ગયા હૈં-સો ઉસકા અભિપ્રાય પેસા હૈં કિ (જીવો સમયવબદ્ધં વજ્ઞંતિ) ઇસ સિદ્ધાન્ત સ્વીકૃત માન્યતા કો ધ્યાન મેં રલ્લકર હી પૂછા ગયા હૈં-અર્થાત્ જીવ કયા સમયાસમય કર્મકા વંધ કરતા હૈં ? યર્હા જો (સમિયં) યહ પદ દિયા ગયા હૈં વહ ઇસ વાત કો દૂર કરને કે લિયે દિયા ગયા હૈં કિ નિરંતરતા કે અભાવ મેં બી જો લોકરુદ્ધિ સે (સદા)

છે ? “સવ્વજો પોગ્ગલા ઉવચિજ્ઞંતિ” શું એવો જીવ સમસ્ત દિશાઓમાંથી કર્મવંધાં રૂપ પુદ્ગલોને ઉપચય કરે છે ? (વજ્ઞંતિ, ચિજ્ઞંતિ, ઉવચિજ્ઞંતિ) આ ત્રણે ક્રિયાઓનો એવો પણ અર્થ થાય છે કે પ્રકૃતિ, સ્થિતિ, અનુભાગ અને પ્રદેશ આ ચાર પ્રકારના બંધોની અપેક્ષાએ “વજ્ઞંતિ” એવો પ્રશ્ન કરાયો છે.

કર્મવન્ધન થયા પછી કર્મોમાં દસ પ્રકારની અવસ્થાઓ થાય છે, તેમાંની એક નિષત્ત અવસ્થા છે, અને તે નિષત્ત અવસ્થાને અનુલક્ષીને “ચિજ્ઞંતિ” એવો પ્રશ્ન પૂછાયો છે, અને નિકાચન અવસ્થાને અનુલક્ષીને “ઉવચિજ્ઞંતિ” એવો પ્રશ્ન પૂછાયો છે. “સયાસમિયં પોગ્ગલા વજ્ઞંતિ” આ પ્રશ્ન પૂછવા પાછાનો હેતુ એવો છે કે “જીવો સમયવબદ્ધં વજ્ઞંતિ” શું જીવ પ્રત્યેક સમયે કર્મોનો બંધ કરે છે ? સૂત્રમાં જે “સમિયં” પદ આપવામાં આવ્યું છે તે એ વાતને દૂર કરવાને માટે આપવામાં આવ્યું છે કે નિરંતરતાનો અભાવ હોવા છતાં લોકો “સદા” પદનો ઉપયોગ કરતા હોય છે. અહીં તો સૂત્રકાર એમ બતાવવા માગે છે કે જીવ સદા (હંમેશા) નિરંતર (અવધાન

તદ્ અથ, નૂનં નિશ્ચયેન કિમ્ મહાકર્મણઃ સ્થિત્યાદ્યપેક્ષાયાં વહુત્કર્મવતઃ મહાક્રિયસ્ય કાપિક્યાદિમહાક્રિયાયુક્તસ્ય, મહાસવસ્ય — કર્મવંધહેતુમૂત-મહામિથ્યાત્વમહારમ્મમહાપરિગ્રહાદિમતઃ, મહાવેદનસ્ય — મહાદ્રાહજ્વરાદિજનિત-પીડાયુક્તસ્ય જીવસ્ય, સર્વતઃ સર્વાણિ દિશુઃ સર્વાં વા જીવમદેશાન્ અશ્રિત્ય પુદ્ગલાઃ કર્મપરમાણવઃ વધ્યન્તે ? ' સર્વઓ પોગલા ચિજ્જંતિ ' સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ ચીપન્તે ? વંધનરુપેણ સંઘટાન્તે કિમ્ ? ' સર્વઓ પોગલા ઉવચિજ્જંતિ ' સર્વતઃ

રહે છે-ઈસમેં ગોતમ પ્રશ્ન સે પૂછ રહે છે કિ (સે જૂળં મંતે !) હે મદન્ત ! કયા યહ નિશ્ચિત પાત હૈ કિ (મહાકમ્મસ્સ) જિસ જીવ કે કર્મ કી સ્થિતિ વગેરહ વહુત અધિક પઢી એસે મહાકર્મવાલે જીવ કે અર્પાત્ અધિક સ્થિતિવાલે, અધિક અનુભાગવાલે ઓર અધિક પ્રદેશવાલે કર્મો સે સહિત જીવ કે (મહાકિરિયસ્સ મહાસવસ્સ) જિસવી કાપિકી આદિ ક્રિયાઈ વહુત પઢી ચઢી હુઈ છે ઈસી કારણ જો કર્મવંધ કે હેતુમૂત મહામિથ્યાત્વ, મહારમ્મ મહાપરિગ્રહ મેં ફેસા હુઆ હૈ (મહાવેયણસ્સ) મહાદ્રાહજ્વર આદિ જનિત વ્યથા સે જો વહુત યુરી તરહ તકફડ રહા હૈ એસે જીવ કે (સર્વઓ પોગલા ચિજ્જંતિ) સમસ્ત દિશાઓં મેં સે અથવા જીવ કે સર્વ પ્રદેશોં કો આશ્રિત કરકે પુદ્ગલ-કર્મપરમાણુઓં કા સંકલનરૂપ વંધ હોતા હૈ ? (સર્વઓ પોગલા ચિજ્જંતિ) સમસ્ત દિશાઓં મેં સે અથવા જીવ કે સર્વ પ્રદેશોં કા આશ્રિત કરકે કર્મ વર્ગણારૂપ પુદ્ગલ એસે જીવ દ્વારા વંધનરૂપ સે ગ્રહણ ક્રિયે જાતે છે કયા ? (સર્વઓ પોગલા ઉવચિજ્જંતિ) સર્વતઃ નિપેક્ષ રચના કી અપેક્ષા સે વે

પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે “ સે જૂળં મંતે ! ” હે મદન્ત ! શું એ વાત નિશ્ચિત છે કે “ મહાકમ્મસ્સ ” ને જીવનાં કર્મની સ્થિતિ વગેરે બહુ જ વધારે હોય છે એવા મહાકર્મવાળા જીવના-એટલે કે અધિક સ્થિતિવાળા, અધિક અનુભાગવાળા અને અધિક પ્રદેશવાળા કર્મથી યુક્ત જીવ કે જેની “ મહાકિરિયસ્સ મહાસવસ્સ ” કાપિકી આદિ ક્રિયાઓ લક્ષી જ વધારે પ્રમાણમાં અને તે કારણે જ કર્મવંધના કારણરૂપ મહામિથ્યાત્વ, મહાઆરંભ, મહા-પરિગ્રહ આદિમાં ઈસાચેલો હોય છે, “ મહાવેયણસ્સ ” અને જો મહાદ્રાહ જ્વર આદિથી જનિત વ્યથાથી (પીડાથી) બચકર વેદનાનો અનુભવ કરતો હોય છે, એવો જીવ “ સર્વઓ પોગલા ચિજ્જંતિ ” શું સમસ્ત દિશાઓમાંથી અથવા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોથી પુદ્ગલ એટલે કે કર્મપરમાણુઓના સંકલનરૂપ વંધ કરે છે ખરો ? “ સર્વઓ પોગલા ચિજ્જંતિ ” શું એવો જીવ સમસ્ત દિશાઓમાંથી અથવા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોથી કર્મવર્ગણારૂપ પુદ્ગલોના અંત કરે

દુષ્કાસત્તાઈ ' દુર્ગન્ધતયા-દુર્ગન્ધત્વેન, દૂરસતયા કદુકટશાદિરસત્વેન દુસ્પર્શતયા-
કર્કશકઠોરાદિસ્પર્શતયા, ' અણિઢત્તાઈ ' અણિઢતયા કસ્યાપિ ઇચ્છાયા અવિપય-
ત્વેન ' અકંત-અપ્પિય-અસુખ-અમણુન્ન-અમણામત્તાઈ, અણિચ્છિયેત્તાઈ ' અકાન્ત
તયા અરમણીયતયા, અપ્રિયતયા પ્રેમરાહિત્યેન અમનોજ્ઞત્વેન, અમુન્દરતયા, અબુખ-
ત્વેન-અમદ્ગત્તયા, અમનોઽમતયા મનસા પ્રાપ્તુમવાઞ્ઞિતતયા, અનિચ્છિતતયા-
પ્રાપ્તુમનભિવાઞ્ઞિતત્વેન ' અભિજ્ઞિયત્તાઈ અદત્તાઈ-જો ઉદ્ધત્તાઈ ' અભિધ્યતતયા

(દૂરસત્તાઈ) કુત્તિસતરસવાલા (દુષ્કાસત્તાઈ) કુત્તિસતસ્પર્શવાલા, -ક-
ર્કશ કઠોર આદિસ્પર્શવાલા હોતા હૈ કયા ? (અણિઢત્તાઈ) કિસી કી
મી ઇચ્છા કા વિપય ભૂત વહ નહીં ઘનતા હૈ કયા ? અર્થાત્ એસે શરીર
ધારી કો કોઈ મી નહીં ચાહતા હૈ કયા (અકંત-અપ્પિય-અસુખ-અમ-
ણુન્ન-અમણામત્તાઈ અણિચ્છિયત્તાઈ) વહ સુન્દર નહીં હોતા હૈ કયા ?
કોઈ મી ઉસસે પ્યાર નહીં કરતા હૈ કયા ? કિસી કે મી મન કો વહ
નહીં ગમતા હૈ કયા ? કોઈ મી જીવ કયા એસે વ્યક્તિ કી મન સે મી
કમી વાદ નહીં કરતા હૈ કયા ? અભિજ્ઞિયત્તાઈ અદત્તાઈ " નો ઉદ્ધ-
ત્તાઈ " દુક્ખત્તાઈ " નો સુહત્તાઈ મુજ્જો ૨ પરિણમઈ " એસી સ્થિતિ
કો પ્રાપ્ત કરને કા કિસી કો લોભ મી નહીં હોતા હૈ કયા ? વહ સર્વ
પ્રકાર સે કયા ઘિલકુલ જઘન્યરૂપ (નીચે પરિસ્થિતિ) મેં હી રહતા હૈ ?
કમી મી કયા વહ ઉત્કૃષ્ટ નહીં માના જા સકતા હૈ ? સદા ઉસમેં
દુઃખોં કા હી વાસ રહતા હૈ કયા ? કમી મી કયા ઉસમેં સુખરૂપતા
કો ભાસતક મી નહીં હોતા હૈ ? ઇસ રૂપ સે હી વહ કયા પ્રત્યેક ક્ષણ
૨ મેં પરિણામિત હોતા રહતા હૈ ? તાત્પર્ય પૂછને કા કેવલ યહી હૈ કિ

પરાણ સ્પર્શવાળું (કર્કશ, કઠોર, આદિ સ્પર્શવાળું) થાય છે ખરું ? (અણિ-
ઢત્તાઈ) શું એવા જીવને કોઈ પણ ચાહતું નથી ? (અકન્ત, અપ્પિય, અસુખ,
અમણુન્ન, અમણામત્તાઈ અણિચ્છિયત્તાઈ) શું તે સુંદર હોતો નથી ? શું કોઈ પણ
તેના પર પ્રેમ રાખતું નથી ? શું કોઈના મનને તે ગમતો નથી ? શું કોઈ
પણ વ્યક્તિ એવા જીવને મનથી પણ કદી યાદ કરતી નથી ? (અભિજ્ઞિયત્તાઈ
અદત્તાઈ, નો ઉદ્ધત્તાઈ, દુક્ખત્તાઈ નો સુદ્ધત્તાઈ મુજ્જો મુજ્જો પરિણમઈ) એવી
સ્થિતિને પ્રાપ્ત કરવાનો શું કોઈને પણ લોભ થતો નથી ? શું તે સર્વ પ્રકારે
અધમ દશામાં જ રહે છે ? શું કદી પણ તેની ઉન્નતિ થતી નથી ? શું સદા
તેને દુઃખો જ સહન કરવા પડે છે ? શું તેને કદી પણ સુખનો ભાસમાત્ર
પણ થતો નથી ? આ પ્રકારે જ શું તે સદા પરિણમિત થતો રહે છે ?

ચિજ્જંતિ ? ' સદા સમિતં પુદ્ગલાઃ ધીયન્તે ? ' સયા સમિયં પોગ્ગલા ઉચ્ચિજ્જંતિ ' સદા સમિતં પુદ્ગલા ઉપધીયન્તે ? ' સયા સમિયં ચ ણં તસ્સ આયા ' સદા સર્વદા સમિતં સતતં ચ સ્વતુ તસ્ય મહાકર્માદિમત્તો જીવસ્ય આત્મા, યસ્ય જીવસ્ય પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે તસ્ય આત્મા-શરીરરૂપવાદાત્મા ' દુરુવત્તાણ, દુવ્વગ્ગત્તાણ ' દુરુ-પતયા કુત્તિસતરૂપતયા, દુર્ગ્ગણતયા કુત્તિસતવર્ણતયા ' દુર્ગ્ગંધત્તાણ, દુરસત્તાણ એસા વ્યવહાર હો જાતા હૈ સો એસી યાત યદાં નહીં સમક્ષની ચાહિયે અર્થાત્ એસા જીવ તો-સદા-દમેશા-નિરન્તર હી અન્તર-વ્યવધાન-પદે વિના હી-કર્મોં કા વંધ કરતા રહતા હૈ કયા ? ઉત્તકા જયતક વદ સંસારદશા મેં હસ સ્થિતિવાલા યના રહતા હૈ એસા એક ભી સમય નહીં નિકલતા હૈ કયા કિ જિસમેં ઉત્તકે કર્મવંધ ન હોતા રહતા હો ? કર્મ-વંધ હો જાને કે વાદ (સયા સમિયં પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ) નિરન્તર ઉત્ત કે વે વંધદશા કો પ્રાપ્ત હુણ કર્મવર્ગનારૂપ પુદ્ગલ ચપરૂપ મેં ઓર (સયા-સમિયં પોગ્ગલા ઉચ્ચિજ્જંતિ) ઉપચયરૂપ અવસ્થા મેં આતે રહતે હૈં કયા ? (સયા સમિયં ચ ણં તસ્સ આયા) જિસ મહાકર્મ આદિ વિશેષર્ગોવાળે જીવ કે નિરન્તર કર્મપુદ્ગલ વંધતે રહતે હૈં ઉત્ત જીવ કા આત્મા-બોદ્ય શરીરરૂપ આત્મા (દુરુવત્તાણ, દુવ્વગ્ગત્તાણ) કુત્તિસતરૂપતા કે કુત્તિ-તવર્ણતા સે યુક્ત હોતા રહતા હૈ કયા ? તાત્પર્ય પૂછને કા યદ હૈ કિ એસે કર્મવંધનાદિરૂપ ભાર સે અધિક વજનદાર બને હુણ જીવ કા શરીર કુત્તિસતરૂપવાલા કુત્તિસતવર્ણવાલા, (દુર્ગ્ગંધત્તાણ) કુત્તિસત દુર્ગ્ગંધવાલા

પકયા વિના) કર્મેનો બંધ કરે છે. પ્રશ્નકાર એ બાણના માગે છે કે મહા-કર્મ આદિથી યુક્ત જીવ શું સદા નિરંતર કર્મેનો બંધ કરતો રહે છે ? ત્યાં સુધી તે સંસારદશામાં એજ સ્થિતિવાળો રહે ત્યાં સુધી તે એક પણ એવો સમય વ્યતીત કરતો નથી કે જ્યારે તેના દ્વારા કર્મબંધ બંધાતો ન હોય. કર્મબંધ થઈ ગયા પછી (સયા સમિયં પોગ્ગલા ચિજ્જંતિ) તે જીવના બંધદશાને પામેલાં કર્મવર્ગોણરૂપ પુદ્ગલો શું નિરંતર ચય અને (સયા સમીયં પોગ્ગલા ઉચ્ચિજ્જંતિ) ઉપચયરૂપ અવસ્થામાં આવતાં રહે છે ? (સયા સમિયં ચ ણં તસ્સ આયા) જે મહાકર્મ આદિ વિશેષણોવાળા જીવનાં કર્મપુદ્ગલ નિર-ન્તર બંધદશાને પ્રાપ્ત કરતાં રહેતાં હોય છે, તે જીવના આત્મા-બોદ્યશરીર રૂપ આત્મા- (દુરુવત્તાણ, દુવ્વગ્ગત્તાણ) કુરૂપતાથી અને દુર્વણુતાથી (ખરાબ વણુથી) શું યુક્ત થતો રહે છે ? આ પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એ છે કે એવાં કર્મ-બંધનાદિરૂપ ભારથી અધિક વજનદાર બનેલા જીવનું શરીર શું ખરાબ રૂપ-વાળું, (દુર્ગ્ગંધત્તાણ) દુર્ગ્ગંધવાળું, (દુરસત્તાણ) ખરાબ રસવાળું,

દુષ્કાસત્તાઈ ' દુર્ગન્ધતયા-દુર્ગન્ધત્વેન, દૂરસતયા કટુકટ્ટાદિરસત્વેન દુસ્પર્શતયા-
કર્કશકઠોરાદિસ્પર્શતયા, ' અણિટ્ઠત્તાઈ ' અણિટ્ઠતયા કસ્યાપિ ઇચ્છાયા અવિપય-
ત્વેન ' અકંત-અપ્પિય-અસુમ-અમણુજ્ઞ-અમણામત્તાઈ, અણિચ્છિયત્તાઈ ' અકાન્ત
તયા અરમણીયતયા, અમિયતયા પ્રેમરાહિત્યેન અમનોજ્ઞત્વેન, અમુન્દરતયા, અશુભ-
ત્વેન-અમદ્ગતતયા, અમનોડમતયા મનસા પ્રાપ્તુમવાઙ્ઠિતતયા, અનિચ્છિતતયા-
પ્રાપ્તુમનભિવાઙ્ઠિતત્વેન ' અભિજ્ઞિયત્તાઈ અદત્તાઈ-જો ઉદ્ઘત્તાઈ ' અભિધિયતતયા

(દૂરસત્તાઈ) કુત્તિસતરસવાલા (દુષ્કાસત્તાઈ) કુત્તિસતસ્પર્શવાલા, -ક-
ર્કશ કઠોર આદિસ્પર્શવાલા હોતા હૈ કયા ? (અણિટ્ઠત્તાઈ) કિસી કી
મી ઇચ્છા કા વિપય ભૂત વહ નહીં ઘનતા હૈ કયા ? અર્થાત્ એસે શરીર
ધારી કો કોઈ મી નહીં ચાહતા હૈ કયા (અકંત-અપ્પિય-અસુમ-અમ-
ણુજ્ઞ-અમણામત્તાઈ અણિચ્છિયત્તાઈ) વહ સુન્દર નહીં હોતા હૈ કયા ?
કોઈ મી ડસસે પ્યોર નહીં કરતા હૈ કયા ? કિસી કે મી મન કો વહ
નહીં ગમતા હૈ કયા ? કોઈ મી જીવ કયા એસે વ્યક્તિ કી મન સે મી
કમી વાદ નહીં કરતા હૈ કયા ? અભિજ્ઞિયત્તાઈ અદત્તાઈ " નો ઉદ્ઘ-
ત્તાઈ " દુક્લત્તાઈ "નો સુહત્તાઈ મુજ્જો ૨ પરિણમઈ " એસી સ્થિતિ
કો પ્રાપ્ત કરને કા કિસી કો લોભ મી નહીં હોતા હૈ કયા ? વહ સર્વ
પ્રકાર સે કયા ચિલકુલ જઘન્યરૂપ (નીચે પરિસ્થિતિ) મેં હી રહતા હૈ ?
કમી મી કયા વહ ઉત્કૃષ્ટ નહીં માના જા સકતા હૈ ? સદા ડસમેં
દુઃખોં કા હી વાસ રહતા હૈ કયા ? કમી મી કયા ડસમેં સુખરૂપતા
કો ભાસતક મી નહીં હોતા હૈ ? ઇસ રૂપ સે હી વહ કયા પ્રત્યેક ક્ષણ
૨ મેં પરિણામિત હોતા રહતા હૈ ? તાત્પર્ય પૂછને કા કેવલ યહી હૈ કિ

અરાણ સ્પર્શવાણું (કર્કશ, કઠોર આદિ સ્પર્શવાણું) થાય છે ખરું ? (અણિ-
ટ્ઠત્તાઈ) શું એવા જીવને કોઈ પણ આહતું નથી ? (અકન્ત, અપ્પિય, અસુમ,
અમણુજ્ઞ, અમણામત્તાઈ અણિચ્છિયત્તાઈ) શું તે સુંદર હોતો નથી ? શું કોઈપણ
તેના પર પ્રેમ રાખતું નથી ? શું કોઈના મનને તે ગમતો નથી ? શું કોઈ
પણ વ્યક્તિ એવા જીવને મનથી પણ કદી યાદ કરતી નથી ? (અભિજ્ઞિયત્તાઈ
અદત્તાઈ, નો ઉદ્ઘત્તાઈ, દુક્લત્તાઈ નો સુદ્ધત્તાઈ મુજ્જો મુજ્જો પરિણમઈ) એવી
સ્થિતિને પ્રાપ્ત કરવાનો શું કોઈને પણ લોભ થતો નથી ? શું તે સર્વ પ્રકારે
અધમ દશામાં જ રહે છે ? શું કદી પણ તેની ઉત્તિ થતી નથી ? શું સદા
તેને દુઃખો જ સહન કરવા પડે છે ? શું તેને કદી પણ સુખનો ભાસમાત્ર
પણ થતો નથી ? આ પ્રકારે જ શું તે સદા પરિણમિત થતો રહે છે ?

મિધ્યા લોભઃ સા સંજાતાઽસ્મિન્ ઇતિ મિધ્યિતસ્તસ્ય માવસ્તદુરાદિત્યેન સર્વ-
યાઽવાબ્જનીયત્વેન અલોભનીયતયા, અપસ્તયા યપન્યત્વેન, નો ઝર્ધતયા નોત્ક-
ણત્વેન ' દુઃસ્વચાપ, ણો મુહચાપ ' દુઃસ્વતયા દુઃસ્વત્વેન, નો મુહતયા નો મુહ-
ત્વેન ' યુજ્જો યુજ્જો પરિણમઃ ? ' ભૂયો ભૂયઃ વારં વારં પરિણમતિ ? એવં મહા-
કર્માદિજીવસ્વાત્મા દૂરુપદુર્વણાદિયુક્તો ભવતિ કિમિતિ માયઃ ।

મગવાન્ આહ—' હંતા, ગોયમા ! મહાકર્મસ્સ તં ચેવ ' હે ગોતમ ! હન્ત, સત્યમ્ મહાકર્મણઃ તદેવ પૂર્વોક્તચદેવ મહાક્રિયસ્સ મહાસ્રવસ્ય મહાવેદનસ્ય જીવસ્ય સર્વતઃ પુદ્ગલા વધ્યન્તે, ઇત્યાદિ સર્વં સંગ્રાહ્યમ્ ।

ગોતમ આહ—' સે કેળદ્દેણં ? ' હે ભદન્ત ! તત્ કેનાર્યેન એવં પૂર્વોક્તહ-
્યતે યત્-મહાકર્મણઃ મહાક્રિયસ્ય મહાસ્રવસ્ય મહાવેદનસ્ય ચ જીવસ્ય પુદ્ગલા
વધ્યન્તે ઇત્યાદિ । મગવાન્ સદૃશાન્તમાહ—' ગોયમા ! સે જહા નામણં વત્થસ્સ

મહાકર્માદિ યુક્ત જીવ કા શરીર દુરુપ દુર્વણાદિ સે યુક્ત હોતા હૈ કયા ?
ઉ. (હંતા, ગોયમા ! મહાકર્મસ્સ તં ચેવ) હાં, ગોતમ ! મહાકર્મવાળે
જીવ કે વહી પૂર્વોક્તરૂપ સે સવ કુછ હોતા હૈ । અર્થાત્ જો જીવ મહાક-
ર્મવાળા હોતા હૈ, મહાક્રિયાવાળા હોતા હૈ, મહાસ્રવવાળા હોતા હૈ, મહા-
વેદનાવાળા હોતા હૈ, ઉસ જીવ કે સર્વતઃ પુદ્ગલો કા બંધ હોતા હૈ
ઇત્યાદિ સવ કથન યહાં પર લગા લેના ચાહિયે । (સે કેળદ્દેણં) હૈ
ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં કિ જો જીવ મહાકર્મ
હોતા હૈ, મહાક્રિયાવાળા હોતા હૈ, મહાસ્રવવાળા હોતા હૈ, ઓર મહાવે-
દનાવાળા હોતા હૈ એસે જીવ કે પુદ્ગલ બંધતે હૈં ઇત્યાદિ । મગવાન્ ઇસ
પ્રશ્ન કા ઉત્તર દૃષ્ટાન્ત દેકર દેતે હૈં-વે વતલાતે હૈં કિ (ગોયમા) હૈં

આ પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એટલું જ છે કે મહાકર્મ આદિથી યુક્ત જીવનું
શરીર શું કુત્રણું, કુરૂપ આદિથી યુક્ત હોય છે ?

મહાવીર પ્રભુ તેના જવાબ આપતા કહે છે—(હંતા ગોયમા ! મહાક-
ર્મસ્સ તં ચેવ) હા, ગોતમ ! મહાકર્મવાળા જીવની એવીજ દશા હોય છે.
એટલે કે જીવ મહાકર્મવાળો, મહાક્રિયાવાળો, મહાસ્રવવાળો અને મહા-
વેદનાવાળો હોય છે, એ જીવ સમસ્ત દિશાઓમાંથી-આત્મપ્રદેશોમાંથી
કર્મના બંધ કરે છે, ઇત્યાદિ કથન અહીં ગ્રહણ કરવું. (સે કેળદ્દેણં)
હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જે જીવ મહાકર્મવાળો હોય
છે, મહાક્રિયાવાળો હોય છે, મહાસ્રવવાળો-હોય છે અને મહાવેદનાવાળો
હોય છે, એવો જીવ કર્મબંધ કરતો રહે છે ?

અહ્યસ્સ વા, ધોયસ્સ વા ' હે ગૌતમ ! તદ્ યથા નામ વસ્ત્રસ્ય અહતસ્ય નૂતનસ્ય સર્વયા અપરિહિનસ્ય વા વસ્ત્રસ્ય ધૌતસ્ય પરિધાયાપિ પ્રક્ષાલિતસ્ય વા, તથા 'તંતુ-ગયસ્સ વા, અણુપુન્વીર્ પરિભુજ્જમાણસ્સ ' તન્ત્રોદ્ગતસ્ય, તન્ત્રાત્-તુરી-વેમાદેઃ સઘઃ ઉદ્ધૃતમાત્રસ્ય નિષ્કાશિતમાત્રસ્ય આનુપૂર્વ્યાં અનુક્રમેણ પરિભુજ્યમાનસ્ય પરિધીયમાનસ્ય ' સન્વઓ પોગલા વજ્જંતિ ' સર્વતઃ સર્વાભ્યો દિશાભ્યઃ પુદ્ગલા દ્રવ્યાદિપરમાણવઃ વચ્ચન્તે-સંગદ્ધાઃ ભવન્તિ ' સન્વઓ પોગલા ચિજ્જંતિ ' સર્વતઃ પુદ્ગલાધીયન્તે નિષત્તાઃ ભવન્તિ, ' જાવ-પરિણમતિ ' યાવત્-પરિણમતિ પર્યાપાન્તરાણિ પ્રાપ્નુવન્તિ, યાવત્ કરણાત્- ' સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ ઉપચીયન્તે, સદા-

ગૌતમ ! (સે જહા નામણ વત્થસ્સ અહ્યસ્સ વા ધોયસ્સ વા, તંતુગયસ્સ વા અણુપુન્વીર્ પરિભુજ્જમાણસ્સ સન્વઓ પોગલા વજ્જંતિ, સન્વઓ પોગલા ચિજ્જંતિ, જાવ પરિમંતિ-સે તેણટ્ટેણ) જૈસે કોઈ વસ્ત્ર હો ઓર વહ કામ મેં આયા હુઆ નહીં હો-ચિલકુલ નયા હો, અથવા કામ મેં આયા હુઆ હોને પર ખી ફિર સે વહ ચિલકુલ સાફ-સ્વચ્છ કર દિયા ગયા હો અથવા-તુરીવેમાદિરૂપ તાને ઉપર સે વસી વસ્ત્ર ઉતારા ગયા હો-તો એસા વહ તાજા વસ્ત્ર જય ક્રમ ૨ સે પહિરને આદિ કે કામ મેં આતા રહતા હૈ-તપ ધીરે ૨ વસકે ઉપર સર્વ દિશાઓં કી તરફ સે મલિન પુદ્ગલ આ ૨ કર ચિપકતે રહતે હૈં-ઉસ પર વે વચ્ચ હો જાતે હૈં-યાવત્ વહી સાફ સુધરા નવીન વસ્ત્ર કાલાન્તર મેં ચિલકુલ મલિન હો જાતા હૈ-ઉસસે દુગંધ આને લગતી હૈં-ઉસકે સ્પર્શ આદિ સય મેં ભિન્નતા આ જાતી હૈ-યર્હા યાવત્ શબ્દ સે " સર્વતઃ પુદ્ગલા

તેના જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ !

(સે જહા નામણ વત્થસ્સ અહ્યસ્સ વા ધોયસ્સ વા, તંતુગયસ્સ વા અણુપુન્વીર્ પરિભુજ્જમાણસ્સ સન્વઓ પોગલા વજ્જંતિ, સન્વઓ પોગલા ચિજ્જંતિ, જાવ પરિણમંતિ-સે તેણટ્ટેણ) જેમકે કોઈ એક વસ્ત્ર હોય, તેને બિલકુલ ઉપયોગમાં લીધું ન હોય-એટલે કે તે બિલકુલ નવું હોય, અથવા તેના ઉપયોગ કર્યા પછી તેને ધોઈને બિલકુલ સ્વચ્છ કરેલું હોય, અથવા તેને સાબુઉપરથી તાબું જ ઉતારેલું હોય, એવું તે વસ્ત્ર બ્યારે વારંવાર પહેરવાના કામમાં આવતું રહે છે અથવા ખીજા ઉપયોગમાં આવતું રહે છે ત્યારે ધીરે ધીરે તેના ઉપર સમસ્ત દિશાઓમાંથી મલિન પુદ્ગલો આવી આવીને ચોટી બાય છે-તેના ઉપર તેમનો ચચ (જમાવ) થતો રહે છે, અને ઉપચય થતો રહે છે. તે વસ્ત્ર કાલાન્તરે એટલું બધું મલિન થઈ બાય છે કે તે મસોતા જેવું દેખાય છે, તેમાંથી દુગંધ નીકળતી હોય છે, તેના સ્પર્શદિમાં પણ ભિન્નતા દેખાય છે. અહીં ' યાવત્ ' પદથી (સર્વતઃ

મિથ્યા લોભઃ સા સંજાતાઽસ્મિન્ રૂતિ મિથ્યિતસ્તસ્ય માવસ્તદ્રાદિશ્યેન સર્વ-
યાઽવાઙ્મનીયત્વેન અલોભનીયતયા, અપસ્તયા જયન્યત્વેન, નો ઝર્થતયા નોક્ક-
પ્ત્વેન 'દુઃસ્વત્તાપ, ણો મુદ્ધત્તાપ' દુઃસ્વતયા દુઃસ્વત્વેન, નો મુલ્લતયા નો મુલ્લ-
ત્વેન 'મુજ્જો મુજ્જો પરિણમઃ ?' મૂયો મૂયઃ વારં વારં પરિણમતિ ? એવં મહા-
કર્માદિજીવસ્વાત્મા દૂરુપદુર્વળાદિયુક્તો મવતિ કિમિતિ માવઃ ।

મગધાન્ આહ—'હંતા, ગોયમા ! મહાકર્મસ્સ તં ચેવ' હે ગોતમ ! હન્ત, સત્યમ્ મહાકર્મણઃ તદેવ પૂર્વોક્તવદેવ મહાક્રિયસ્સ મહાસ્રવસ્ય મહાવેદનસ્ય જીવસ્ય સર્વતઃ પુદ્ગલા વધ્યન્તે, રૂપાદિ સર્વં સંપ્રાપ્તમ્ ।

ગોતમ આહ—'સે કેળદ્દેણં ?' હે મદન્ત ! તત્ કેનાર્યેન એવં પૂર્વોક્તહ-
ચ્યતે યત્-મહાકર્મણઃ મહાક્રિયસ્ય મહાસ્રવસ્ય મહાવેદનસ્ય ચ જીવસ્ય પુદ્ગલા વધ્યન્તે રૂપાદિ । મગધાન્ સદ્દણ્ણન્તમાહ—'ગોયમા ! સે જહા નામણ વત્થસ્સ

મહાકર્માદિ યુક્ત જીવ કા શરીર દુરુપ દુર્વળાદિ સે યુક્ત હોતા હૈ કયા ?
હ. (હંતા, ગોયમા ! મહાકર્મસ્સ તં ચેવ) હાં, ગોતમ ! મહાકર્મવાળે
જીવ કે વહી પૂર્વોક્તરૂપ સે સઘ કુછ હોતા હૈ । અર્થાત્ જો જીવ મહાક-
ર્મવાળા હોતા હૈ, મહાક્રિયાવાળા હોતા હૈ, મહાસ્રવવાળા હોતા હૈ, મહા-
વેદનાવાળા હોતા હૈ, ડસ જીવ કે સર્વતઃ પુદ્ગલોં કા બંધ હોતા હૈ
રૂપાદિ સઘ કથન યહાં પર લગા લેના ચાહિયે । (સે કેળદ્દેણં) હૈ
મદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં કિ જો જીવ મહાકર્મા
હોતા હૈ, મહાક્રિયાવાળા હોતા હૈ, મહાસ્રવવાળા હોતા હૈ, ઓર મહાવે-
દનાવાળા હોતા હૈ એસે જીવ કે પુદ્ગલ બંધતે હૈં રૂપાદિ । મગધાન્ રૂપ
પ્રશ્ન કા ઉત્તર દ્દણ્ણન્ત દેકર દેતે હૈં-વે ચતલાતે હૈં કિ (ગોયમા) હૈ

આ પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એટલું જ છે કે મહાકર્મ આદિથી યુક્ત જીવનું
શરીર શું કુતર્ણ, કુરૂપ આદિથી યુક્ત હોય છે ?

મહાવીર પ્રભુ તેના જવાબ આપતા કહે છે—(હંતા ગોયમા ! મહાક-
ર્મસ્સ તં ચેવ) હા, ગોતમ ! મહાકર્મવાળા જીવની એવીજ દશા હોય છે.
એટલે કે જીવ મહાકર્મવાળો, મહાક્રિયાવાળો, મહાસ્રવવાળો અને મહા-
વેદનાવાળો હોય છે, એ જીવ સમસ્ત દિશાઓમાંથી—આત્મપ્રદેશોમાંથી
કર્મનો બંધ કરે છે, ઇત્યાદિ કથન અહીં અહીં કરવું. (સે કેળદ્દેણં)
હે મદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જે જીવ મહાકર્મવાળો હોય
છે, મહાક્રિયાવાળો હોય છે, મહાસ્રવવાળો હોય છે અને મહાવેદનાવાળો
હોય છે, એવા જીવ કર્મબંધ કરતો રહે છે ?

અલ્પકર્મવતઃ, અલ્પક્રિયસ્ય કાપિચ્યાઘલ્પક્રિયાયુક્તસ્ય, અલ્પાસ્રવસ્ય-કર્મચન્ધ-
 હેતુ ભૂતાલ્પમિધ્યાત્વાદિયુક્તસ્ય, અલ્પવેદનસ્ય રૂપજ્જ્વરાદિજનિતપીડાયુક્તસ્ય,
 જીવસ્ય સર્વતઃ સર્વાનુ દિશુ સર્વેભ્યો જીવપ્રદેશેભ્યો વા પુદ્ગલાઃ મિચ્ચન્તે પ્રાક્ત-
 નસમ્બન્ધવિશેષપરિત્યાગાત્ પૃથક્ ભવન્તિ ' સબ્બથો પોગ્ગલા છિજ્જન્તિ ? '

કરતે હું- હે ભદ્રન્ત ! યહ યાત નિશ્ચિત હૈ કયા ? કિ જો જીવ અલ્પ-
 કર્મા હોતા હૈ-કર્મ કી અલ્પસ્થિતિવાલા, કર્મ કે અલ્પપ્રદેશોવાલા-હોતા
 હૈ, તથા-અલ્પક્રિયાવાલા-કાપિક આદિ થોડી ક્રિયાઓ વાલા હોતા હૈ,
 અલ્પઆસ્રવવાલા-કર્મચંધ કે હેતુભૂત અલ્પમિધ્યાત્વવાલા-હોતા હૈ,
 ઓર અલ્પવેદનાવાલા-રૂપત્ જ્વરાદિ જનિતપીડાવાલા-હોતા હૈ એસે
 ઉસ જીવ કે સર્વતઃ-સમસ્ત દિશાઓ મેં સે અથવા સમસ્ત જીવ પ્રદેશો
 સે પુદ્ગલ-કર્મ પરમાણુ (મિચ્ચન્તે) ભેદ કો પ્રાપ્ત હોતે હું ? અર્થાત્ પહિછે
 વે જિસ સંબંધ વિશેષ કો લેકર ઘંધતે થે-અપ વે ઉસ સંબંધ વિશેષ
 સે વહાં પરિત્યક્ત હો જાતે હું કયા ? તાત્પર્ય-હસ કા યહ હૈ કિ મહા-
 કર્માદિ સે યુક્ત હોને કી સ્થિતિ મેં જીવકે સાથ જિસ સ્થિતિ અનુભાગ
 આદિ કો લેકર ગાઢ આદિ રૂપ મેં કર્મપુદ્ગલોં કા વંધ હોતા થા-અપ
 અલ્પકર્માદિ સે યુક્ત હોને કી સ્થિતિ મેં જીવ કે સાથ ઉસ સ્થિતિ
 અનુભાગ કો લેકર ગાઢ આદિ રૂપ મેં કર્મપુદ્ગલોં કા વંધ નહીં હોતા હૈ
 યહી ઉનકા ભેદન હૈ યહી યાત ગૌતમ ને યહાં પ્રમુ સે પ્રશ્ન કે રૂપ મેં

શું એ વાત તો નિશ્ચિત છે કે જે જીવ અલ્પકર્મવાળો હોય છે-એટલે કે
 કર્મની અલ્પ સ્થિતિવાળો, કર્મના અલ્પ અનુભાગવાળો અને કર્મના અલ્પ
 પ્રદેશોવાળો હોય છે, તથા અલ્પ ક્રિયાવાળો (કાપિક આદિ થોડી ક્રિયાઓ-
 વાળો) હોય છે, અલ્પ આસ્રવવાળો (કર્મચંધના કારણે રૂપ મિધ્યાત્વ જેનામાં
 ઓછું છે એવો) હોય છે, અને અલ્પ વેદનાવાળો (જ્વર વગેરેથી જનિત
 પીડા ભાગ્યે જ ભોગવનારો) હોય છે, એવાં જીવના કર્મપરમાણુઓ શું સમસ્ત
 દિશાઓમાંથી અથવા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોમાંથી " મિચ્ચન્તે " ભેદતાં રહે છે ?
 એટલે કે પહેલાં જે કારણે તેમનો બંધ પડતો હતો તે કારણો નહીં રહેવાથી
 તેમનું ભેદન થવા માંડે છે ખરું ?

આ પ્રશ્નનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-મહાકર્મઆદિથી યુક્ત હોય એવી
 સ્થિતિમાં જીવની સાથે જે સ્થિતિ, અનુભાગ આદિની અપેક્ષાએ ગાઢ આદિ
 રૂપે કર્મપુદ્ગલોનો જે બંધ થતો હતો, તે અલ્પકર્મ આદિથી યુક્ત જીવને
 શું થતો નથી ? એનું નામ જ તેમનું ભેદન છે. એજ વાત ગૌતમ સ્વામીએ

સમિતં પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલાશ્ચીયન્તે ' इत्यादि संग्राहम् ।
 अन्ते उपसंहरति—' से तेणट्ठेणं ' हे गौतम ! तत् तेनार्येन तेन पूर्वोक्तेन कारणेन
 महाकर्मणो यावत् महावेदनस्य जीवस्य सर्वतः कर्मपुद्गलाः वध्यन्ते, चीयन्ते,
 उपचीयन्ते यावत्—दुःखतया नो सुखतया भूयो भूयः परिणमति इति भावः ।
 ' वध्यन्ते ' इत्यादि पदत्रयेणात्र वस्त्रस्य पुद्गलानां चोत्तरोत्तरं सम्बन्धमकर्षः
 प्रतिपादितः । अथाल्पकर्मादियुक्तस्य जीवस्य स्वरूपं पृच्छन्ति—' से णूणं भंते !
 अप्पकम्मस्स, अप्पकिरियस्स अप्पासवस्स अप्पवेयणस्स, सव्वओ पोग्गला
 भिज्जंति' हे भदन्त ! तत्—अथ नूनं निश्चयेन किम् अल्पकर्मणः, स्थित्याद्यपेक्षया

उपचीयन्ते, सदा समितं पुद्गलाः वध्यन्ते, सदा समितं पुद्गलाश्चीयन्ते ''
 इत्यादि पाठका ग्रहण हुआ है । अब अन्त में इस विषय का उपसंहार
 करने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं—गौतम ! इसी पूर्वोक्त कारण को
 लेकर मैं ने ऐसा कहा है कि महाकर्मवाले यावत् महावेदनावाले जीव के
 सर्वतः कर्मपुद्गल बंधते हैं, चय होते हैं, उपचित होते हैं यावत् उसका
 बाह्य शरीररूप आत्मा दुःखरूप से, सुखरूप से नहीं, क्षण २ में परिण-
 मता रहता है । " वध्यन्ते, चीयन्ते, उपचीयन्ते " इत्यादि इन तीन
 क्रियापदों से सूत्रकार ने वस्त्र और पुद्गलों का उत्तरोत्तर संबंध का
 प्रकर्ष बतलाया है, अब गौतम प्रभु से अल्पकर्मादि से युक्त जीव के
 स्वरूप को पूछते हुए उनसे (से णूणं भंते ! अप्पकम्मस्स अप्पकिरिय-
 स्स अप्पासवस्स अप्पवेयणस्स सव्वओ पोग्गला भिज्जंति) ऐसा प्रश्न

પુદ્ગલા ઉપચીયન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલાઃ વધ્યન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલાશ્ચીયન્તે)
 ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠને શ્રદ્ધા કરવામાં આવ્યો છે. હવે સૂત્રને ઉપસંહાર કરતા
 સૂત્રકાર કહે છે કે હે ગૌતમ ! ઉપર કહ્યા પ્રમાણેના કારણે મેં એવું કહ્યું છે
 કે મહાકર્મવાળો, મહાક્રિયાવાળો, મહાઆસ્રવવાળો અને મહાવેદનાવાળો જીવ
 સમસ્ત દિશાઓમાંથી કર્મપુદ્ગલ બાંધતો રહે છે, કર્મપુદ્ગલનો ચય અને ઉપ-
 ચય કરતો રહે છે, અને તેનો બાહ્યશરીરરૂપ આત્મા દુઃખરૂપે—નહીં કે સુખ
 રૂપે—ક્ષણે-ક્ષણે પરિણમતો રહે છે " વધ્યન્તે, ચીયન્તે, ઉપચીયન્તે " આ ત્રણ
 ક્રિયાપદોનો પ્રયોગ કરીને સૂત્રકારે વસ્ત્ર અને પુદ્ગલોના સંબંધનો ઉત્તરોત્તર
 પ્રકર્ષ બતાવ્યો છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી અલ્પકર્માદિથી યુક્ત જીવનું સ્વરૂપ બાજીવાને માટે
 મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—(સે ણૂણં મંતે ! અપ્પકમ્મસ્સ, અપ્પ-
 કિરિયસ્સ, અપ્પાસવસ્સ અપ્પવેયણસ્સ સવ્વઓ પોગ્ગલા ભિજ્જંતિ) હે ભદન્ત !

‘સયા સમિયં પોગ્ગલા છિજ્જંતિ’ સદા સમિતં પુદ્ગલાશ્ચિદ્ધન્તે ? ‘ચિદ્ધસ્સંતિ, પરિચિદ્ધસ્સંતિ ?’ સદા સમિતં પુદ્ગલાઃ ચિદ્ધંસન્તે ? પરિચિદ્ધંસન્તે ? ‘સયા-સમિયં ચ ણં તસ્સ આયા સુહવચ્ચાણ પસત્થં નેયવ્વં’ સદા સમિતં ચ સલ્લ તસ્ય અલ્પકર્મણઃ, અલ્પક્રિયસ્ય, અલ્પાસ્રવસ્ય, અલ્પવેદનસ્ય જીવસ્ય આત્મા સુરૂપતયા પ્રગસ્તં જ્ઞાતવ્યમ્, અન્ન વર્ણાદિપદાનિ પ્રગસ્તરૂપેણ વ્યાખયેયાનિ, તથા ચ સુવર્ણતયા

મેં અકર્મપર્યાય સે ઉસ આત્મામેં સ્થિત રહતે આતે હેં યહી સિદ્ધાન્તકી ઘાત (સવ્વઓ પોગ્ગલા પરિચિદ્ધંસંતિ) હસ પદ દ્વારા પુટ કી ગઈ હૈ—સો હસી ઘાત કો ગૌતમ ને પ્રભુ સે પ્રશ્ન કે રૂપ મેં પૂછા હૈ । (સયા સમિયં પોગ્ગલા મિજ્જંતિ) સદા નિરન્તર કર્મપુદ્ગલ ભેદ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં કયા ? (સયા સમિયં પોગ્ગલા છિજ્જંતિ) સદા નિરન્તર કર્મપુદ્ગલ ભેદ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં કયા ? (ચિદ્ધંસંતિ પરિચિદ્ધંસંતિ) ચિદ્ધંસ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં કયા, સમસ્ત રૂપ સે નાશ હોતે હૈં કયા ? હન પ્રશ્નોં કો કરને કી આવશ્યકતા હસલિયે હુઈ કિ જવ પૂર્વાક્ત રૂપ સે આત્મા સે કર્મ-પુદ્ગલોં કા ભેદન છેદન પૂછા ગયા હૈ તો વહાં નિરન્તર છેદન ભેદન આદિ હોને કી ઘાત નહીં પૂછી ગઈ હૈ અતઃ હન પ્રશ્નોં દ્વારા યહી ઘાત યહાં પૂછી ગઈ હૈ (સયા સમિયં ચ ણં તસ્સ આયા સુહવચ્ચાણ પસત્થં નેયવ્વં) અલ્પકર્મ આદિ વિશેષણોં સે વિશિષ્ટ ઉસ જીવ કા આત્મા વાહ્ય શરીર રૂપ આત્મા-ક્ષણ ૨ મેં કયા અચ્છેરૂપ મેં, અચ્છેવર્ણ મેં, અચ્છે ગંધ મેં,

આવે છે કે ન્યારે તે કર્મપુદ્ગલો સર્વથા અકર્મપર્યાયરૂપે તે આત્મામાં રહેવા લાગે છે. એ જ સિદ્ધાન્તની વાત (સવ્વઓ પોગ્ગલા પરિચિદ્ધંસંતિ) આ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરી છે.

ગૌતમ સ્વામીએ પ્રશ્ન દ્વારા એ જ વાત પ્રભુને પૂછી છે, (સયા સમિયં પોગ્ગલા મિજ્જંતિ) હે ભદ્રન્ત ! અલ્પકર્મ આદિથી યુક્ત જીવનાં કર્મપુદ્ગલો શું સદા નિરન્તર ભેદાતાં રહે છે ? (સયા સમિયં પોગ્ગલા છિજ્જંતિ) શું તેના કર્મપુદ્ગલો સદા નિરન્તર ભેદાતાં રહે છે ? (ચિદ્ધંસંતિ પરિચિદ્ધંસંતિ) શું તેનાં કર્મપુદ્ગલો આ પ્રકારના પ્રશ્નો પૂછવાની આવશ્યકતા એ છે કે પૂર્વેક્ત પ્રશ્નોમાં કર્મપુદ્ગલોનું નિરન્તર ભેદન, છેદન આદિ થવાની વાત પૂછવામાં આવી નથી. છેદન, ભેદન આદિ નિરન્તર થયા કરે છે કે નહીં, તે બાબુવાને માટે (સયાસમિયં પોગ્ગલા મિજ્જંતિ) ઇત્યાદિ પ્રશ્નો પૂછવામાં આવ્યા છે. (સયા-સમિયં ચ ણં તસ્સ આયા સુહવચ્ચાણ પસત્થં નેયવ્વં) અલ્પકર્મ આદિથી યુક્ત જીવનો આત્મા-બાહ્યશરીર રૂપ આત્મા શું ક્ષણે ક્ષણે સુરૂપતા, સુવર્ણયુક્તતા,

સર્વતઃ પુદ્ગલાશ્ચિજ્જન્તે ? ' સન્વઓ પોગગ્ગા વિદ્ધંમંતિ ' સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ વિઘ્વંસન્તે ? તેમ્બો જીવપદેશેમ્બોઞ્ચો ધ્રંજન્તે ? ' સન્વઓ પોગગ્ગા પરિવિદ્ધંસંતિ ' સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ પરિઘ્વંસન્તે ? તજ્જીવ પદેશેમ્બો નિઃશેપતયા પરિધ્રંજન્તે ? ' સયા સમિયં પોગગ્ગા મિજ્જંતિ ' સદા સમિતં નિરન્તરં પુદ્ગલાઃ મિયન્તે ?

પૂછી છે (સન્વઓ પોગગ્ગા ઇજ્જંતિ) વે પુદ્ગલ સર્વતઃ હેદ કો પ્રાપ્ત થા જાતે હું કયા ? અર્થાત્-જય વે કર્મપુદ્ગલ શિથિલ આદિ અવસ્થા મેં અલ્પસ્થિતિ અનુભાગ આદિ કો લેકર ઉસ આત્મા મેં વંધેંગે-તો વહ નિશ્ચિત હૈ કિ વે હેદ કો પ્રાપ્ત હોકર-ધીરે ૨ નષ્ટ હી હોતે રહેંગે-વહી વાત યહાં ગૌતમ ને પ્રભુ સે પ્રશ્ન કે રૂપ મેં પૂછી છે ? (સન્વઓ પોગગ્ગા વિદ્ધંસંતિ) કયા વે જીવ કે પ્રદેશોં સે અધઃ પતિત થો જાતે હું ? તાત્પર્ય વહ હૈ-કિ કર્મપુદ્ગલોં કા ધીરે ૨ નષ્ટ હોના અર્થાત્ ભિર્જરા હોને સે હસકા વહ મતલબ નહોં હૈ કિ વે કર્મપુદ્ગલ ઉસ આત્મા સે ધિલકુલ અપને મૂલરૂપ સે હી નષ્ટ હો જાતે હું-કારણ દ્રવ્ય કા તો કમી નાશ હોતા હી નહોં હૈ-અતઃ “ વે જીવ કે પ્રદેશોં સે અધઃ પતિત થો જાતે હું ” સો હસકા તાત્પર્ય પેસા હૈ કિ વે વહાં અલ્પમાત્રા મેં અકર્મરૂપ પર્યાય સે આક્રાન્ત હોને લગ જાતે હું-પેસી સ્થિતિ હોતે ૨ એક સમય પેસા મી આતા હૈ કિ જય કે કર્મપુદ્ગલ ધિલકુલ હી રૂપ મેં-સર્વથા રૂપ

મહાવીર પ્રભુને આ પ્રશ્ન દ્વારા પૂછી છે. (સન્વઓ પોગગ્ગા ઇજ્જંતિ ?) શું તે પુદ્ગલોનું સર્વથા હેદન થાય છે ? એટલે કે-જ્યારે તે કર્મપુદ્ગલો શિથિલ આદિ અવસ્થામાં અલ્પસ્થિતિ, અનુભાગ આદિથી યુક્ત થઈને તે આત્મામાં બંધાય છે-જમા થાય છે-તો એ વાત નહીં જ છે કે તેઓનું ધીરે ધીરે હેદન થતું રહેશે-તેઓ ધીરે ધીરે નષ્ટ થતાં રહેશે. એ જ વાત ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રશ્નરૂપે પૂછી છે. (સન્વઓ પોગગ્ગા વિદ્ધંસંતિ) શું તે કર્મપુદ્ગલો જીવના આત્મપ્રદેશોમાંથી ખરી ડે છે ખરાં ?

આ પ્રશ્નનો બાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—કર્મપુદ્ગલોનું ધીરે ધીરે નષ્ટ થવું એટલે કે નિર્જરા થવી. પણ તેનો એવો અર્થ નથી થતો કે તે કર્મપુદ્ગલો તે આત્મામાંથી બિલકુલ પોતાના મૂળ રૂપમાંથી નષ્ટ થઈ જાય છે, કારણ કે દ્રવ્યનો તો કદી નાશ જ થતો નથી. એટલે “ તે જીવના પ્રદેશોમાંથી અધઃ પતિત થઈ જાય છે. ”

આ કથનનું તાત્પર્ય એવું સમજવું કે તેઓ ત્યાં અલ્પમાત્રામાં અકર્મરૂપ પર્યાયમાં આવી જવા માંડે છે, આમ થતાં થતાં એક સ - એવો પણ

‘સે કેળટ્ટેણં’ હે ભદન્ત ! તત્ કેનાર્યેન એવં પૂર્વોક્તમુચ્યતે યત્ તસ્યાત્મા યાવત્-સુખતયા નો દુઃખતયા પરિણમતિ ? ભગવાનાહ-‘ ગોયમા ! સે જહાનામણ વત્થસ્સ જહ્ણિયસ્સ વા, પંકિયસ્સ વા ’ હે ગૌતમ ! તત્ યથા નામવસ્થસ્ય જહ્ણિતસ્ય શરીરમલોપેતસ્ય વા, પદ્ધિતસ્ય-આર્દ્રમલોપેતસ્ય વા ‘ મહ્ણિયસ્સ વા, રહ્ણિયસ્સ વા ’ મલિતસ્ય-કઠિનમલયુક્તસ્ય વા, રજસ્કિતસ્ય-રજોયુક્તસ્ય ધૂલિધૂમરિત સ્ય વા, ‘ આણુપુર્વ્વીણ પરિકમ્મિજ્જમાણસ્સ ’ આણુપૂર્વ્યાં અનુક્રમેણ પરિકર્મ્ય-માણસ્ય મલાપનયનાર્યે ક્ષારાદિદ્રવ્યેણ શોધ્યમાનસ્ય ‘ સુદ્ધેણં વારિણા ધોવ્વેમાણસ્સ ’ સુદ્ધેન નિર્મલેન સ્વચ્છેન વારિણા જલેન ધાવ્યમાનસ્ય પ્રક્ષાલ્યમાનસ્ય વસ્ત્રસ્ય

પરિણમ જાતા હૈ ! અચ ગૌતમ હસ વિષય મેં પ્રભુ સે કારણ જાનને કી રૂચ્છા સે (સે કેળટ્ટેણં) એસા પ્રશ્ન કરતે હેં વે પૂછતે હેં કિ હે ભદન્ત ! ઓપેસા કિસ કારણ કો લેકર કહતે હેં કિ ઉસકા આત્મા-શરીર યાવત્ સુખરૂપ સે-દુઃખરૂપ સે નહીં પરિણમતા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ઉનસે કહતે હેં કિ (ગોયમા સે જહા નામણ વત્થસ્સ જહ્ણિયસ્સ વા, પંકિયસ્સ વા) હે ગૌતમ ! જૈસે કોઈ એક વસ્ત્ર હો ઓર ઉસકે ઉપર શરીર કા મલ લગા હો, અથવા કોઈ તાજી મીલી કીચડ લગી હો મહ્ણિયસ્સ વા, રહ્ણિયસ્સ વા) યા કોઈ ઉસકે ઉપર કઠિન મૈલ લગા હો, યા ધૂલ ઉસ પર ચિપકી હો-ધૂલસે ધૂસરિત થનાં હુઆ હો એસા વહ વસ્ત્ર હો-તો વહ જવ (અણુપુર્વ્વીણ પરિકમ્મિજ્જમાણસ્સ) વાર ૨ ધો ધાકર સાફ કિયા જાતા હૈ અર્થાત્-ક્ષારદ્રવ્ય સે જવ મૈલ દૂર કરને કે લિયે વહ ધોયા જાતા હૈ (સુદ્ધેણં વારિણા ધોવ્વેમાણસ્સ) ઓર નિર્મલ-સાફ-જલ સે જવ વહ નિલારા જાતો હૈ, તો (સવ્વઓ પોગગલા

હોય છે. તેમનો આત્મા સુખરૂપે પરિણમે છે, ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન શ્રદ્ધા કરવું “ સે કેળટ્ટેણં ” હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો ?

આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતાં મહાવીર પ્રભુ નીચેનું દષ્ટાંત આપે છે— (ગોયમા ! સે જહા નામણ વત્થસ્સ જહ્ણિયસ્સ વા, પંકિયસ્સ વા) હે ગૌતમ ! કોઈ એક વસ્ત્રને શરીરનો મેલ, યરસેવો વગેરે લાગેલાં હોય, અથવા તેના ઉપર તાજી બીની માટી લાગી હોય, “ મહ્ણિયસ્સ વા, રહ્ણિયસ્સ વા ” અથવા તેના ઉપર ધૂળનાં રજકણો ચોંટ્યાં હોય, એવાં વસ્ત્રને જ્યારે “ આણુપુર્વ્વીણ પરિકમ્મિજ્જમાણસ્સ ” વારંવાર ધોઈને સાફ કરવામાં આવે છે-એટલે કે સોડા જેવા ક્ષારયુક્ત પાણીથી તેનો મેલ દૂર કરવામાં આવે છે, (સુદ્ધેણં વારિણા ધોવ્વેમાણસ્સ) અને નિર્મળ પાણીમાં જ્યારે તેને તારવવામાં આવે છે, ત્યારે

સુગન્ધતયા, સુરસતયા, સુસ્પર્શતયા, રૂપતયા, કાન્તતયા, પ્રિયતયા, શુભતયા, મનોજ્ઞતયા, મનોઽમતયા, રૂપિતતયા, ગિષ્પિતતયા, ઉત્કૃષ્ટતયા, નો અધમ-તયા, સુખતયા, નો દુઃખતયા, ભૂયો ભૂયઃ પરિણમતિ ક્ષિમિતિ । મગવાનાદ—
'હંતા, ગોયમા ! જાવ-પરિણમઈ' હે ગૌતમ ! હન્ત, સત્યમ્ અલ્પકર્માદિમતો જીવસ્ય સર્વતઃ કર્મપુદ્ગલાઃ યાવત્-પરિધ્વંસન્તે, તસ્ય ચ જીવસ્યાત્મા યાવત્ સુખતયા નો દુઃખતયા પરિણમતિ, ઇતિ મગવદુત્તરમ્ । ગૌતમસ્ત્વ કારણં વૃચ્છતિ

અच्छे रक्त में, अच्छे स्पर्श में, परिणमता है ? तथा इष्टरूप से, कान्तरूप से, प्रियरूप से, शुभरूप से, मनोमरूप से, रूपांतरूप से, पुनः प्राप्त करने के लोभरूप से, उत्कृष्टरूप से, अधमरूप से नहीं—सुखरूप से, दुःखरूप से नहीं—परिणमता है क्या ? तात्पर्य इस प्रश्न का यही है कि जो जीव अल्पकर्मवाला है, अल्पक्रियावाला है, अल्प-आस्रववाला है, अल्पवेदनावाला है, उसका शरीर क्या अच्छेरूपादि विशेषणों वाला होता है क्या ? तथा वह इच्छा आदि का विषयभूत बनता है क्या ? इसके उत्तर में प्रभु गौतम से कहते हैं कि—(हंता गौयमा ! जाव परिणमन्ति) हां गौतम ! यावत् उसका पाछा शरीर रूप आत्मा परिणमता है । अर्थात् हे गौतम ! जो अल्पकर्म आदि विशेष-णोपेत जीव होता है उसके कर्मपुद्गल सर्वतः यावत् विलकुल नष्ट हो जाते हैं, और उस जीव का शरीर यावत् सुखरूप से, दुःखरूप से नहीं

સુગંધયુક્તતા, સુરસતા, અને સુસ્પર્શતા રૂપે પરિણમતો રહે છે ? તથા શુ' તેવા જીવનો આત્મા ઇષ્ટરૂપે, કાન્તરૂપે, પ્રિયરૂપે, શુભરૂપે, મનોજ્ઞરૂપે, મનો-મરૂપે, રૂપિતરૂપે, પુનઃ પ્રાપ્ત કરવાની લાલચ થાય એવી રીતે, ઉત્તરરૂપે (નહીં કે અધમરૂપે) સુખરૂપે (નહીં કે દુઃખરૂપે) પરિણમતો રહે છે ?

આ પ્રશ્નનો લાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જે જીવ અલ્પકર્મવાળો, અલ્પ ક્રિયાવાળો, અલ્પઆસ્રવવાળો અને અલ્પવેદનાવાળો હોય છે, તેનું 'શરીર શુ' સુંદર રૂપ, વર્ણ આદિથી યુક્ત હોય છે ? તથા શું તે બીજાને ઇષ્ટ, પ્રિય આદિ થઈ પડે છે ?

મહાવીર પ્રભુ તેનો જવાબ આપતા કહે છે—(હંતા ગોયમા ! જાવ પરિ-ણમન્તિ) હા, ગૌતમ ! અલ્પકર્મ આદિથી યુક્ત જીવનાં કર્મપુદ્ગલોના વિષયમાં એવું જ બને છે. અહીં પ્રશ્નોક્ત સમસ્ત કથનનો સ્વીકાર થયો છે તેમ સમ-જનું. એટલે કે એવાં જીવોનાં કર્મપુદ્ગલોનું છેદન, ભેદન, વિધ્વંસ આદિ થયા ફરે છે અને તેમનો આત્મા-બાહ્યશરીર રૂપ આત્મા-સુરૂપતા આદિથી યુક્ત

ભાવાર્થ—ઇસ સૂત્ર મેં શુદ્ધવસ્ત્ર ઓર મલિનવસ્ત્ર કે દૃષ્ટાન્ત સે સૂત્ર-
કાર ને યહ સમજાયા હૈ કિ જિમ પ્રકાર સે શુદ્ધ વસ્ત્ર મૈલા હો
જાતા હૈ उसी प्रकार से महाकर्मादि विशेषणों वाला जीव सतत रूप से
कर्मरूप परिणमने योग्य पुद्गल द्रव्य का-कार्मणवर्गणाओं का योग और
कषाय से युक्त होने के कारण आकर्षण करता रहता हॆ और बंधादि-
रूप में उन्हें चिपका लेता हॆ उसको शरीर भी अशुभ रूप से ही परि-
णमता रहता हॆ—अर्थात् उसकी मानसिक, वाचनिक और कायिक ये
सब क्रियाएँ अशुभरूप में ही चलनी रहनी हैं। इससे वह प्रत्येक
समय में कर्मों का बंध आदि क्रिया करता हॆ—अतः ऐसा जीव अशुद्ध-
वस्त्र की तरह से जानना चाहिये यहां पर ऐसी आशंका हो सकती हॆ
कि जिस प्रकार से वस्त्र मूल में तो शुद्ध हॆ—परन्तु निमित्त आदि के
सम्बन्ध से वह अशुद्ध—मलिन बन जाता हॆ ऐसा क्या यह जीव हॆ ?
तो इसका समाधान भी यही हॆ कि यह जीव मूलमें ऐसा ही हॆ पर
अनादिकाल से अपनी ही भूल से यह अज्ञानी बनकर पर पदार्थों को
अपना मानता हुआ और उनमें रागद्वेष करना हुआ कर्म के बंधन
आदि से जकड़ा चला आ रहा हॆ अतः यह मूल में शुद्ध बुद्ध होने पर

ભાવાર્થ—આ સૂત્રમાં શુદ્ધ વસ્ત્ર અને અશુદ્ધ વસ્ત્રના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા સૂત્ર-
કારે એ વાત સમજાવી છે કે જેમ શુદ્ધ વસ્ત્ર મેલું થઈ બય છે, તેજ પ્રમાણે
મહાકર્મ આદિથી યુક્ત જીવ પણ યોગ અને કષાયોથી યુક્ત હોવાને કારણે કર્મરૂપ
પરિણમનને યોગ્ય પુદ્ગલ દ્રવ્યનું—કાર્મણ વર્ગનાઓનું સમસ્ત દિશાઓમાંથી
(આત્મપ્રદેશો દ્વારા) આકર્ષણ કરતો રહે છે અને કર્મબંધ બાંધતો રહે છે,
તેનું શરીર પણ અશુભરૂપે પરિણમતું રહે છે—એટલે કે તેની માનસિક વાચ-
નિક અને કાયિક ક્રિયાઓ અશુભ રૂપે જ ચાલતી રહે છે. તે કારણે તે પ્રત્યેક
સમયે કર્મોના બંધ કરતો રહે છે. એવાં જીવને સૂત્રકારે અશુદ્ધ વસ્ત્રની ઉપમા
આપી છે. જેવી રીતે વસ્ત્ર પહેલાં શુદ્ધ હતું, એજ પ્રમાણે જીવ (આત્મા)
પણ મૂળ તો શુદ્ધ જ હતો. જેવી રીતે વસ્ત્ર પર ધીરે ધીરે રજ, મેલ આદિ
જમા થવાથી વસ્ત્ર મલિન થઈ બય છે, એવી જ રીતે શુદ્ધ આત્મા પણ રાગ
દ્વેષ આદિને કારણે કર્મબંધન આદિથી જકડાતો રહે છે. અનાદિ કાળથી
પોતાની જ ભૂલથી તે અજ્ઞાની બનીને પર પદાર્થોમાં આસક્ત બનેલો છે. તેથી
મૂળ જે શુદ્ધ હતો એવો આત્મા ક્યે ક્યે અશુદ્ધ અને અપુદ્ધ બનેલો છે.
જેવી રીતે મલિન વસ્ત્રને ધોઈને શુદ્ધ કરી શકાય છે એજ પ્રમાણે પોતાના

‘સર્વજો પોગલા મિજ્જંતિ’ સર્વતઃ સર્વાંશુ દિશુ સર્વેભ્યો વસ્તુપદેભ્યો વા પુદ્ગલા મિથન્તે પૃથગ્ભવન્તિ, ‘જાવ-પરિણમદ્’ યાવત્-પરિણમતિ, યાવત્ કરણાત્ સર્વતઃ પુદ્ગલાશ્ચિદ્યન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ પરિવિધ્વંસન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલાઃ મિથન્તે, સદાસમિતં પુદ્ગલાશ્ચિદ્યન્તે, સદાસમિતં પુદ્ગલાઃ વિધ્વંસન્તે પરિવિધ્વંસન્તે, સદા સમિતં ચ સ્વતઃ તસ્ય વગ્ગસ્માત્મા તદ્વસ્તુમિત્યર્થઃ સ્વરૂપતયા સુવર્ણતયા ઇત્યાદિ યાવત્-ગુણતયા નો દુઃસ્વતયા પરિણમતિ, ઇતિ સંપ્રાપ્તમ્, ‘સે તેણદ્દેણં’ હે ગૌતમ ! તન્-તેનાર્યેન અલ્પકર્મણઃ યાવત્ અલ્પવેદનસ્ય જીવસ્ય યાવત્-સર્વતઃ કર્મપુદ્ગલાઃ પરિવિધ્વંસન્તે, તસ્ય ચ જીવસ્ય આત્મા યાવત્-સ્વતઃ નો દુઃસ્વતયા પરિણમતીતિ ॥ ૫૫ ॥

મિજ્જંતિ) उस पर जो मैल के पुद्गल जमे हुए होते हैं वे उस वस्त्र से सब ओर से दूर होने लग जाते हैं, (जाव परिणमद्) यावत् वह वस्त्र पिलकुल साफ स्थिति में परिणम जाता है। यहां (यावत्) शब्द से (सर्वतः पुद्गलाः छिद्यन्ते, सर्वतः पुद्गलाः विध्वंस्यन्ते, सर्वतः पुद्गलाः परि-विध्वंसन्ते, सदा समितं पुद्गला म्रियन्ते, सदा समितं पुद्गलाश्चिद्यन्ते, सदा समितं पुद्गलाः विध्वंसन्ते, परिविध्वंसन्ते, सदा समितं च तस्य वस्त्रस्य आत्मा स्वरूपतया) इत्यादि सब पूर्वोक्त पाठ यहां ग्रहण किया गया है ऐसा जानना चाहिये। (से तेणद्वेणं) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि अल्पकर्मवाले यावत् अल्पवेदनवाले जीव के यावत् सर्वतः कर्मपुद्गल पिलकुल नष्ट हो जाते हैं और उस जीव का आत्मा यावत् स्वतः से दुःस्वरूप से नहीं-परिणम जाता है।

“સર્વજો પોગલા મિજ્જંતિ” તે વસ્ત્રને વળગેલાં મેલનાં પુદ્ગલો વસ્ત્રમાંથી અલગ થઈ જાય છે, “જાવ પરિણમદ્” અને તે વસ્ત્ર તદ્દન સ્વચ્છ થઈ જાય છે. અહીં “યાવત્” પદથી “સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ છિદ્યન્તે, સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ વિધ્વંસ્યન્તે સર્વતઃ પુદ્ગલાઃ પરિવિધ્વંસ્યન્તે, સદા સમિતં પુદ્ગલા મિથન્તે, સદાસમિતં પુદ્ગલાઃશ્ચિદ્યન્તે, સદાસમિતં પુદ્ગલાઃ વિધ્વંસન્તે, પરિવિધ્વંસન્તે, સદા સમિતં ચ તસ્ય વસ્ત્રસ્ય આત્મા સુરૂપતયા” ઇત્યાદિ પૂર્વોક્ત સૂત્રપાઠ અહીં અડધુ કરવામાં આવ્યો છે.

“સે તેણદ્દેણં” હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે અલ્પકર્મથી અલ્પવેદના પદ્યન્તના વિશેષણવાળા જીવના કર્મપુદ્ગલોનું છેદન, ભેદન આદિ થયા કદે છે અને તેમનો આત્મા સુરૂપતા યુક્ત અને છે અને ઈંટ, કાંત, પ્રિય આદિ રૂપે પરિણમતો રહે છે. એવો આત્મા દુઃખરૂપે પરિણમતો નથી.

છાયા-વત્સ્ય સ્વત્વ મદન્ત ! પુદ્ગલોપચયઃ કિં પ્રયોગેન, વિસ્રસયા ? ગૌતમ ! પ્રયોગેનાપિ, વિસ્રસયાપિ । યથા સ્વત્વ મદન્ત ! વત્સ્ય સ્વત્વ પુદ્ગલોપચયઃ પ્રયોગેનાપિ, વિસ્રસયાપિ, તથા સ્વત્વ જીવાનાં કર્મોપચયઃ કિં પ્રયોગેન વિસ્રસયા ? । ગૌતમ ! પ્રયોગેન, ન વિસ્રસયા । તન્ કેનાર્થેન ? । ગૌતમ ! જીવાનાં ત્રિવિધઃ પ્રયોગઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ,

જીવકર્મ વસ્તુવ્યત્યા

(વત્સ્યસ્ય ણં મંતે !) इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(વત્સ્યસ્ય ણં મંતે ! પોગલોચવચયે કિં પ્રયોગસા વીસસા) હે મદન્ત ! વત્સ્ય કે પુદ્ગલોં કા જો ઉપચય હોતા હૈ વહ કયા પ્રયોગ સે હોતા હૈ ? યા સ્વાભાવિકરૂપ સે હોતા હૈ ? (ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! (પઓગસા વિ વીસસા વિ) પ્રયોગ સે—પુરુષપ્રયત્ન સે મી હોતા હૈ ઓર સ્વાભાવિકરૂપ સે મી હોતા હૈ । (જહાં ણં મંતે ! વત્સ્યસ્ય ણં પોગલોચવચયે પયોગસા વિ વીસસા વિ, તહા ણં જીવા ણં કર્મોવગણ કિં પ્રયોગસા વીસસા) હૈ મદન્ત ! જિસ પ્રકાર સે વત્સ્ય કે પુદ્ગલોં કા ઉપચય પ્રયોગ સે મી ઓર સ્વાભાવિકરૂપ સે મી હોતા હૈ, ઉસી તરહ સે કયા જીવોં કે કર્મ કા ઉપચય મી પ્રયોગ સે ઓર સ્વાભાવિકરૂપ સે હોતા હૈ ? (ગોયમા ! પઓગસા નો વીસસા) હૈ ગૌતમ ! જીવોં કે જો કર્મ કા ઉપચય હોતા હૈ વહ પ્રયોગ સે હી હોતા હૈ—સ્વાભાવિકરૂપ સે નહીં હોતા । (સે કેળદ્દેણં) હૈ મદન્ત ! મેસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં કિ જીવ કે જો કર્મકા ઉપચય હોતા હૈ વહ પ્રયોગસે હી હોતા હૈ—સ્વાભાવિકરૂપ

છવકર્મવસ્તુવ્યત્યા—

(વત્સ્યસ્ય ણં મંતે !) इत्यादि

સૂત્રાર્થ—(વત્સ્યસ્ય ણં મંતે ! પોગલોચવચયે કિં પ્રયોગસા વીસસા) હે મદન્ત ! વત્સ્યનાં પુદ્ગલોનાં જે ઉપચય થાય છે તે શું પ્રયોગથી થાય છે, કે સ્વાભાવિક રૂપે થાય છે ? (ગોયમા !) હૈ ગૌતમ ! (પ્રયોગસા વિ વીસસા વિ) પ્રયોગથી—પુરુષ પ્રયત્નથી પણ થાય છે અને સ્વાભાવિક રૂપે પણ થાય છે. (જહાં ણં મંતે ! વત્સ્યસ્ય ણં પોગલોચવચયે પ્રયોગસા વિ વીસસા વિ, તહાં જીવાં કર્મોવગણ કિં પ્રયોગસા વીસસા ?) હે મદન્ત ! જેમ વત્સ્યનાં પુદ્ગલોનાં ઉપચય પ્રયોગથી પણ થાય છે અને સ્વાભાવિક રૂપે પણ થાય છે ? (ગોયમા ! પ્રયોગસા નો વીસસા) હૈ ગૌતમ ! છવોનાં કર્મોનાં ઉપચય પ્રયોગથી જ થાય છે, સ્વાભાવિક રૂપે થતો નથી.

(સે કેળદ્દેણં) હે મદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે છવોનાં કર્મોનાં જે ઉપચય થાય છે તે પ્રયોગથી જ થાય છે, સ્વાભાવિક રૂપે થતો

જીવમૈવતત્ત્વવ્યત્તા

વસપુદ્ગલોપવચ્છાન્તેન જીરામૈવુગ્મોપવચ્છ પ્રતિષ્ઠાદગિતુમાદ-‘વત્થ-
સ્સ ણં મંતે’ इत्यादि ।

મૂલ્ય—વત્થસ્સ ણં મંતે ! પોગ્ગલોવચ્ચયે કિં પયોગસા
વીસસા ? ગોયમા ! પઓગસા વિ, વીસસા વિ જહાણં મંતે !
વત્થસ્સ ણં પોગ્ગલોવચ્ચ પઓગસાવિ, વીસસાવિ, તહા ણં
જીવાણંકમ્મોવચ્ચે કિં પયોગસા, વીસસા ? । ગોયમા ! પયો-
ગસા નો વીસસા । સે કેણદ્દેણં ? । ગોયમા ! જીવાણં તિવિહે
પઓગે પળ્લન્તે તં જહા--મળ્લપ્પઓગે, વહ્લ્લપ્પઓગે, કાયપ્પ-
ઓગે । ઇચ્છેણં, તિવિહેણં પઓગેણં જીવાણં કમ્મોવચ્ચયે
પયોગસા ણો વીસસા । एवं सवेसि पंचिदियाणं तिविहे
પઓગે ભાણિયઢ્ઢે પુદ્ધવીકાદ્યાણં ઇગવિહેણં પઓગેણં,
एवं जाव-वणस्तइकादियाणं । विगल्लिदियाणं दुविहे पओगे
પળ્લન્તે, તં જહા-વહ્લ્લપ્પઓગે, કાયપ્પઓગે ચ । ઇચ્છેણં
દુવિહેણં પઓગેણં કમ્મોવચ્ચે પયોગસા, ણો વીસસા, ।
સે તેણદ્દેણં જાવ-ણો વીસસા । एवं जस्स जो पओगो,
जाव-वेमाणियाणं ॥ सू० २ ॥

भी व्यवहार की दृष्टि से अशुद्ध और अवुद्ध बना हुआ है । परन्तु
जिस प्रकार मलिन वस्त्र साफ हो जाता है उसी प्रकार यह आत्मा भी
अपने पुरुषार्थ के बलपर कर्मरूपी मैल को धोकर के अपने मूल रूप में
आ सकता है । जैसे कि मलिन वस्त्र साफ करने की प्रक्रिया से अपने
मूल रूप में आ जाता है ॥ सू० १ ॥

પુરુષાર્થથી કર્મરૂપી મેલને ધોઈ ધોઈને આત્મા પણ તેના મૂળ શુદ્ધ સ્વરૂપમાં
આવી શકે છે. જેમ મલિન વસ્ત્રને સાફ કરવાની પ્રક્રિયા દ્વારા મૂળ રૂપમાં
લાવી શકાય છે, એવી જ રીતે આત્મા પણ શુદ્ધ થઈ શકે છે. ॥ સૂત્ર ૧ ॥

પ્રયોગથ । इत्येतं द्विविधेन प्रयोगेण कर्मोपचयः प्रयोगेण, न विस्रसया, तत्
तेनार्थेन यावत्-नो विस्रसया, एवं यस्य यः प्रयोगः यावत्-वैमानिकानाम् ॥ सू० ॥ २

ટીકા—‘વત્થસ્સ ણં મંતે ! પોગ્ગલોવચ્ચે કિં પયોગસા, વીસસા ?’
ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે મદન્ત ! વત્થસ્ય સ્વલુ પુદ્ગલનામ્ ઉપચયઃ-ટુદ્ધિઃ કિમ્
પ્રયોગેણ પુરુષવ્યાપારેણ ? આદોસ્વિત્ વિસ્રસયા=સ્વભાવેન, પુરુષવ્યાપારમન્તરાડપિ

વચનપ્રયોગ ઓર દૂસરા કાપપ્રયોગ (इच्छेपणं द्विविधेण पओगेणं कम्मो-
वचणं पओगसा णो वीससा) इन दो प्रकार के प्रयोगों से कर्म का उप-
चय विकलेन्द्रिय जीवों के होता है अतः वह स्वाभाविकरूप से नहीं
होता है (से तेणट्ठेणं जाव णो वीससा) इस कारण है गौतम ! मंते
ऐसा कहा है जीवों के कर्म का उपचय यावत् स्वाभाविकरूप से नहीं
होता है (एवं जस्स जो पओगो-जाव वेमाणियाणं) इस तरह जिस
जीव के जो प्रयोग हो वह उस तरह से यावत् वैमानिक देवों तक
कहना चाहिये ।

ટીકાર્થ—સૂત્રકાર, इस सूत्र द्वारा वल्लपुद्गलोपचय के दृष्टान्त से
जीव और कर्मपुद्गलों के उपचय का प्रतिपादन कर रहे हैं-इसमें गौतम
ने प्रभुसे ऐसा पूछा है कि (वत्थस्स णं मंते ! पोग्गलોवचये किं पयोगसा
वीससा ?) हे मदन्त ! वल्ल के पुद्गलों का जो उपचय-वृद्धि होता है,
वह क्या प्रयोग से-पुरुषप्रयत्न से होता है या स्वाभाविकरूप से होता

(वइपओगे, कायपओगे य) (१) वचनप्रयोग અને (२) કાયપ્રયોગ. (इच्छेपणं
द्विविधेण पओगेणं कम्मोवचणं पओगसा णो वीससा) આ બે પ્રયોગથી વિકલેન્દ્રિય
જીવોને કર્મનો ઉપચય થાય છે. તેથી સ્વાભાવિક રૂપે તેમને કર્મનો ઉપચય થતો
નથી. (સે તેણટ્ઠેણં જાવ ણો વીસસા) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે
જીવોને પ્રયોગથી કર્મનો ઉપચય થાય છે, સ્વાભાવિક રૂપે થતો નથી. (एवं
जस्स जो पओगो-जाव वेमाणियाणं) આ રીતે જે જીવના જે પ્રયોગ હોય,
તે પ્રયોગથી તે જીવ કર્મનો ઉપચય કરે છે. વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવોના
વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું.

ટીકાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં વચના પુદ્ગલોપચયના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા જીવ
અને કર્મપુદ્ગલોના ઉપચયનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને
એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (વત્થસ્સ ણં મંતે ! પોગ્ગલોવચયે કિં પયોગસા વીસસા ?)
હે મદન્ત ! વચના પુદ્ગલોના જે ઉપચય (જમાવટ, વૃદ્ધિ) થાય છે, તે શું
પ્રયોગથી (પુરુષ પ્રયત્નથી) થાય છે, કે સ્વાભાવિક રીતે થાય છે ? એટલે
કે પુરુષ પ્રયત્ન વિના થાય છે ?

તથા-મનઃપ્રયોગઃ, વચઃપ્રયોગઃ, કાયપ્રયોગઃ, રૂપેતેન ત્રિવિધેન પ્રયોગેન જીવનાં કર્મોપચયઃ પ્રયોગેન, ન વિસ્રસ્યા । एवं सर्वेषां पञ्चेन्द्रियाणां त्रिविधः प्रयोगो भणितव्यः । पृथ्वीकायिकानाम् एकविधेन प्रयोगेन । एवं यावत्-वनस्पतिकायिकानाम् । विकलेन्द्रियाणां द्विविधः प्रयोगः मनुष्यः, तथા-વચઃપ્રયોગઃ, કાય-

સે નહીં હોતા હૈ ? (ગોયમા ! જીવાણં તિવિહં પઓગે પળ્લત્તે) હૈ ગૌતમ ! જીવોં કે ત્રીન પ્રયોગ કહે ગયે હૈં । (તં જહા) વે ત્રીન પ્રયોગ યે હૈં (મળપ્પઓગે, વહપ્પઓગે, કાયપ્પઓગે, રૂચ્ચેણં તિવિહેણં પઓગેણં જીવાણં કમ્મોવચ્ચયે પઓગસા ણો વીસસા) મનઃ પ્રયોગ, વચઃ પ્રયોગ ઓર કાયપ્રયોગ इन त्रिन प्रकार के प्रयोगों (व्यापारों) से जीवों के कर्म का उपचय होता है, अतः जीवों के कर्म का उपचय प्रयोग से होता है स्वाभाविकरूप से नहीं होता ऐसा कहा गया है । (एवं सव्वे सि पंचिंदियाणं तिविहे पओगे भाणियव्वे) इसी तरह से समस्त पंचेन्द्रिय जीवों के त्रिन प्रकार का प्रयोग कहना चाहिये (पृथ्वीकाइयाणं एगविहेणं पओगेणं एवं जाव वणस्सइ काइयाणं) पृथ्वीकायिक जीवों के केवल एक प्रकार-का ही प्रयोग होता है-इसी प्रकार से यावत् वनस्पतिकायिक जीवों के भी जानना चाहिये । (विगल्लिंदियाणं दुविहे पओगे पण्णत्ते) विकलेन्द्रिय जीवों के दो प्रकार का प्रयोग होता है ऐसा कहा गया है (तं जहा) जैसे-(वहप્પઓગે, કાયપ્પઓગે ય) एक

નથી ? (ગોયમા !) હૈ ગૌતમ ! (જીવાણં તિવિહે પઓગે પળ્લત્તે તં જહા) જીવોનાં ત્રીણે પ્રમાણે ત્રણ પ્રયોગ કહ્યા છે-(મળપ્પઓગે, વહપ્પઓગે, કાયપ્પઓગે, રૂચ્ચેણં તિવિહેણં પઓગેણં જીવાણં કમ્મોવચ્ચયે પઓગસા ણો વીસસા) મનઃપ્રયોગ, વચનપ્રયોગ અને કાયપ્રયોગ. આ ત્રણ પ્રકારના પ્રયોગોથી (વ્યાપારોથી-પ્રવૃત્તિઓથી) જીવોને કર્મોનો ઉપચય થતો હોય છે. તે કારણે જ એવું કહ્યું છે કે જીવોને કર્મોનો ઉપચય પ્રયોગથી થાય છે, સ્વાભાવિક રૂપે થતો નથી. (एवं सव्वे सि पंचिंदियाणं तिविहे पओगे भाणियव्वे) એજ પ્રમાણે સમસ્ત પંચેન્દ્રિય જીવોના ત્રણ પ્રકારના પ્રયોગ સમજવા. (પૃથ્વીકાઈયાણં એગવિહેણં પઓગેણં એવં જાવ વણસ્સઈકાઈયાણં) પૃથ્વીકાયિક જીવોને એક જ પ્રકારનો પ્રયોગ-કાયપ્રયોગ હોય છે. વનસ્પતિકાય પર્યંતના વિષયમાં પણ એજ પ્રમાણે સમજવું. (વિગલ્લિંદિયાણં દુવિહે પઓગે પળ્લત્તે) દ્વિન્દ્રિયથી ચતુન્દ્રિય પર્યંતના વિકલેન્દ્રિય જીવોના બે પ્રયોગ કહ્યા છે. (તજહા) જેવાં કે

પ્રયોગથ । इत्येतेन द्विविधेन प्रयोगेण कर्मोपचयः प्रयोगेण, न विस्रसया, तत् तेनार्थेन यावत्-नो विस्रसया, एवं यस्य यः प्रयोगः यावत्-वैमानिकानाम् ॥ सू० ॥ २

ટીકા—‘વત્થસ્સ પં મંતે ! પોગ્ગલોવચયે કિં પયોગસા, વીસસા ?’
ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદ્રન્ત ! વત્થસ્ય સ્વલુ પુદ્ગલનામ્ ઉપચયઃ-વૃદ્ધિઃ કિમ્ પ્રયોગેણ પુરુષવ્યાપારેણ ? આહોસ્વિત્ વિસ્રસયા=સ્વભાવેન, પુરુષવ્યાપારમન્તરાડપિ

વચનપ્રયોગ ઓર દૂસરા કાપપ્રયોગ (इच्छेपणं दुविहेणं पओगेणं कम्मो-
वचणं पओगसा णो वीससा) इन दो प्रकार के प्रयोगों से कर्म का उप-
चय विकल्हेन्द्रिय जीवों के होता है अतः वह स्वाभाविकरूप से नहीं
होता है (से तेणट्ठेणं जाव णो वीससा) इस कारण हे गौतम ! मैंने
ऐसा कहा है जीवों के कर्म का उपचय यावत् स्वाभाविकरूप से नहीं
होता है (एवं जस्स जो पओगो-जाव वैमाणियाणं) इस तरह जिस
जीव के जो प्रयोग हो वह उस तरह से यावत् वैमानिक देवों तक
कहना चाहिये ।

ટીકાર્થ—સૂત્રકાર, इस सूत्र द्वारा वस्त्रपुद्गलोपचय के दृष्टान्त से
जीव और कर्मपुद्गलों के उपचय का प्रतिपादन कर रहे हैं-इसमें गौतम
ने प्रभुसे ऐसा पूछा है कि (वत्थस्स पं मंते ! पोग्गलोवचये किं पयोगसा
वीससा ?) हे भदन्त ! वस्त्र के पुद्गलों का जो उपचय-वृद्धि होता है,
वह क्या प्रयोग से-पुरुषप्रयत्न से होता है या स्वाभाविकरूप से होता

(वश्यओगे, कायप्पओगे च) (१) वचनप्रयोग અને (२) કાયપ્રયોગ. (इच्छेपणं
दुविहेणं पओगेणं कम्मोवचणं पओगसा णो वीससा) આ બે પ્રયોગથી વિકલ્હેન્દ્રિય
જીવોને કર્મનો ઉપચય થાય છે. તેથી સ્વાભાવિક રૂપે તેમને કર્મનો ઉપચય થતો
નથી. (સે તેણટ્ઠેણં જાવ ણો વીસસા) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે
જીવોને પ્રયોગથી કર્મનો ઉપચય થાય છે, સ્વાભાવિક રૂપે થતો નથી. (एवं
जस्स जो पओगो-जाव वैमाणियाणं) આ રીતે જે જીવના જે પ્રયોગ હોય,
તે પ્રયોગથી તે જ કર્મનો ઉપચય કરે છે. વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવોના
વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું.

ટીકાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં વસ્ત્રના પુદ્ગલોપચયના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા જીવ
અને કર્મપુદ્ગલોના ઉપચયનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને
એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (વત્થસ્સ પં મંતે ! પોગ્ગલોવચયે કિં પયોગસા વીસસા ?)
હે ભદ્રન્ત ! વસ્ત્રના પુદ્ગલોનો જે ઉપચય (જમાવટ, વૃદ્ધિ) થાય છે, તે શું
પ્રયોગથી (પુરુષ પ્રયત્નથી) થાય છે, કે સ્વાભાવિક રીતે થાય છે ? એટલે
કે પુરુષ પ્રયત્ન વિના થાય છે ?

સ્વાભાવિકઃ ? મગવાનાહ-‘ ગોયમા ! પયોગસાવિ વીસસાવિ ’ હે ગૌતમ ! વસ્ત્રસ્ય પુદ્ગલોપચયઃ પ્રયોગેનાપિ - પુરુષાદિવ્યાપારેનાપિ, વિસ્ત્રસયાઽપિ સ્વભાવેનાપિ । તતો ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘ જહાણં મંતે ! વત્થસ્સ ણં પોગલોવચણં પયોગસાવિ, વીસસાવિ ’ હે મદન્ત ! યથા સ્વલુ વસ્ત્રસ્ય પુદ્ગલોપચયઃ પ્રયોગેનાપિ, -પુરુષવ્યાપારેનાપિ, વિસ્ત્રસયાઽપિ-સ્વભાવેનાપિ, ‘ તદા ણં જીવાણં કમ્મોવચણં કિં પયોગસા, વીસસા ? ’ તથા સ્વલુ જીવાણં કમ્મોપચયઃ ક્કિમ્ પ્રયોગેનાપિ પુરુષાદિવ્યાપારેનાપિ વિસ્ત્રસયા સ્વભાવેનાપિ ભવતિ ? મગવાનાહ-‘ ગોયમા ! પયોગસા, ણો વીસસા । ’ હે ગૌતમ ! જીવાણં કર્મ પુદ્ગલોપચયઃ પ્રયોગેનાપિ

હે અર્થાત્ પુરુષવ્યાપાર કે વિના હી હોતા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રમુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પયોગસા વિ વીસસા વિ) વસ્ત્ર કે પુદ્ગલોં કા જો ઉપચય હોતા હૈ વહ પુરુષાદિ કે વ્યાપાર સે બી હોતા હૈ ઓર પુરુષાદિ કે વ્યાપાર કે વિના બી હોતા હૈ, અવ ગૌતમસ્વામી પુનઃ હસી વિષય કો લેકર પ્રમુ સે પ્રશ્ન કરતે હેં કિ-(જહા ણં મંતે ! વત્થસ્સ ણં પોગલોવચણં પયોગસા વિ વીસસા વિ) હે મદન્ત ! જિસ તરહ વસ્ત્ર કે પુદ્ગલોં કા ઉપચય પ્રયોગ સે બી હોતા હૈ ઓર પ્રયોગ કે વિના-સ્વાભાવિક રીતિ સે બી હોતા હૈ (તદા ણં જીવાણં કમ્મોવચણં કિં પયોગસા વીસસા) હસી તરહ સે કયા જીવોં કે જો કર્મ કા ઉપચય હોતા હૈ વહ કયા પ્રયોગ સે બી હોતા હૈ ? યા પ્રયોગ કે વિના બી હોતા હૈ ? હસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રમુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ -(ગોયમા) ગૌતમ ! (પયોગસા ણો વીસસા) જીવોં કે જો કર્મ કા

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રમુ કહે છે-(ગોયમા ! પયોગસા વિ વીસસા વિ) હે ગૌતમ ! વસ્ત્રનાં પુદ્ગલોનાં જે ઉપચય થાય છે તે પ્રયોગથી (પુરુષાદિની પ્રવૃત્તિથી) પણ થાય છે અને સ્વાભાવિક રીતે પણ થાય છે, એટલે કે પુરુષાદિની પ્રવૃત્તિ વિના પણ થાય છે.

ગૌતમ સ્વામી જીવોનાં પુદ્ગલોપચયના વિષયમાં એવો પ્રશ્ન કરે છે કે (જહાણં મંતે ! વત્થસ્સ ણં પોગલોવચણં પયોગસા વિ વીસસા વિ) હે મદન્ત ! જેવી રીતે વસ્ત્રનાં પુદ્ગલોનાં ઉપચય પ્રયોગથી પણ થાય છે અને પ્રયોગ વિના સ્વાભાવિક રીતે પણ થાય છે, (તદા ણં જીવાણં કમ્મોવચણં કિં પયોગસા વીસસા ?) એજ પ્રમાણે શું જીવોનાં પુદ્ગલોનાં ઉપચય પ્રયોગથી પણ થાય છે અને સ્વાભાવિક રીતે (પ્રયોગ વિના) પણ થાય છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રમુ કહે છે-(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (પયોગસા ણો વીસસા) જીવોનાં કર્મોનાં જે ઉપચય થાય

પાદિવ્યાપારેણૈવ ભવતિ નો વિત્તસયા સ્વભાવેન, અન્યથા અયોગિનોઽપિ કર્મ-
 વન્ધાપત્તિઃ સ્વાત્ । ગૌતમસ્તત્ર કારણં પૃચ્છતિ—‘ સે કેળદ્દેણ ’ હે ભદન્ત !
 તત્ કેનાર્થેન કથં તાવત્ જીવાનાં કર્મોપચયઃ પ્રયોગેણૈવ, નો સ્વભાવેન ? ભગવા-
 નાહ—‘ ગોયમા ! જીવાણં તિવિદ્દે પયોગે પળ્લત્તે હે ગૌતમ ! જીવાનાં ત્રિવિધઃ
 પ્રયોગઃ, પ્રજ્ઞસઃ, ‘ તં જહા—મળ્લપ્પઓગે, વહ્પ્પઓગે, કાય્લ્લપ્પઓગે ’ તથથા—મનઃ
 પ્રયોગઃ, માનસિકશુભાશુભચિન્તનાદિવ્યાપારઃ, વચઃપ્રયોગઃ—શબ્દોચારણાદિ-
 વચનવ્યાપારઃ, કાયપ્રયોગશ્ચ ચેષ્ટા, પરતાડનહિંસનાદિકામિકવ્યાપારઃ, ‘ ઇચ્છે-
 ણં તિવિદ્દેણં પઓગેણં જીવાણં કર્મ્મોવચ્છે પયોગસા, નો વીસસા ’ इत्यनेन
 ઉપચય હોતા હે વહ પ્રયોગ સે હી—પુરુષ આદિ વ્યાપાર સે હી હોતા હૈ,
 સ્વભાવ સે નહીં હોતા હૈ । યદિ સ્વભાવ સે હી જીવોં કે કર્મપુદ્ગલોં કા
 ઉપચય હોના માના જાય તો અયોગિ જીવોં કે ખી કર્મબંધ હોને કી
 આપત્તિ આ જાવેગી । અવ ગૌતમ ઇસ વિષય મેં કારણ જાનને કી ઇચ્છા
 સે પૂછતે હું કિ (સે કેળદ્દેણં) હે ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે
 કહતે હું કિ જીવોં કે કર્મોપચય પ્રયોગ સે હી હોતા હૈ—સ્વભાવ સે નહીં
 હોતા—ઇસકા ઉત્તર વેતે છુપ પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હું કિ—(ગોયમા) હે
 ગૌતમ ! (જીવાણં તિવિદ્દે પઓગે પળ્લત્તે) જીવોં કે ત્રીન પ્રકાર કે
 પ્રયોગ કહે ગયે હું—(તં જહા) જો ઇસ પ્રકાર સે હું—(મળ્લપ્પઓગે, વહ્-
 પ્પઓગે, કાય્લ્લપ્પઓગે) મનઃ પ્રયોગ—માનસિક શુભાશુભ ચિન્તન આદિ
 વિચાર, વચઃ પ્રયોગ—શબ્દોચારણ આદિરૂપ વચન વ્યાપાર, ઓર કાયપ્ર-
 યોગ—ચેષ્ટા કરને, દૂસરોં કો તાડને ઓર હિંસા આદિ કરને રૂપ શરીર
 કા વ્યાપાર (ઇચ્છેણં તિવિદ્દેણં પઓગેણં જીવાણં કર્મ્મોવચ્છે પઓ-

(પુરુષાદિના વ્યાપારથી) જ થાય છે, સ્વાભાવિક રીતે થતો નથી. જો સ્વભા-
 વથી જ હવેને કર્મપુદ્ગલોના ઉપચય થાય છે એમ માનવામાં આવે તો
 અયોગિ હવેને પણ કર્મબંધ થવાની વાત સ્વીકારવી પડશે. તેનું કારણ
 બાહ્ય માટે ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે કે (સે કેળદ્દેણં) હે ભદન્ત ! આપ શા
 કારણે એવું કહો છો કે હવેને કર્મના ઉપચય પ્રયોગથી જ થાય છે,
 સ્વભાવથી થતો નથી ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જીવાણં તિવિદ્દે પઓગે પળ્લત્તે)
 હવેના ત્રણ પ્રકારના પ્રયોગ કહ્યા છે—“ તં જહા ” જે આ પ્રમાણે છે—
 (મળ્લપ્પઓગે, વહ્પ્પઓગે, કાય્લ્લપ્પઓગે)—(૧) મનપ્રયોગ—માનસિક શુભ-
 શુભ ચિન્તન આદિ વિચાર, (૨) વચનપ્રયોગ—શબ્દોચારણ આદિ રૂપ વ્યાપાર,
 અને (૩) કાયપ્રયોગ—શારીરિક ચેષ્ટા, મારપીટ આદિ રૂપ શારીરિક વ્યાપાર.
 (ઇચ્છેણં તિવિદ્દેણં પઓગેણં જીવાણં કર્મ્મોવચ્છે પઓગસા નો વીસસા) આ

ઉપર્યુક્તેન ત્રિવિધેન પ્રયોગેન જીવાનાં કર્મોપચયઃ—કર્મબંધો ભવતિ પ્રયોગેજૈવ,
 નો વિદ્યસયા સ્વભાવેન । ‘ एवं सत्त्वेति पंचिन्द्रियाणं त्रिविहे पञ्चोमे भाणियव्वे ’
 एवं-તયૈવ સર્વેષાં પંચેન્દ્રિયાણાં જીવાનાં ત્રિવિધઃ પ્રયોગઃ મનોવચઃકાયભેદેન
 ત્રિપ્રકારો વ્યાપારો ભણિતવ્યઃ । ‘ पुढ्वीकाइयाणं एगविहेणं पओगेणं ’ પૃથ્વી-
 કાયિકાનાં જીવાનામ્ એકવિધેન પ્રયોગેજૈવ કાયવ્યાપારરૂપેન કર્મોપચયો વક્તવ્યઃ,
 ‘ एवं जाव-वणस्सइकाइयाणं ’ एवं પૃથ્વીકાયિકવદેવ યાવત્-અપ્કાયિક-
 તેજસ્કાયિક-વાયુકાયિકાનાં વનસ્પતિકાયિકાનામપિ એકવિધેન કાયવ્યાપાર
 લક્ષણેન પ્રયોગેજૈવ કર્મોપચયો बोध्यः । ‘ विगलेंदियाणं दुविहे पओगे पणत्ते ’

મસા, નો ચોસસા) इस तीन प्रकार के प्रयोग से जीवों के कर्मोपचय
 होता है अतः इस कर्मोपचय-कर्मबंध में कारण जीव का त्रिविधरूप
 प्रयोग पड़ता है इसलिये वह कर्मोपचय प्रयोग से होता है स्वाभाव से
 नहीं, ऐसा मानना चाहिये (एवं सत्त्वेति पंचिन्द्रियाणं त्रिविहे पञ्चोमे
 भाणियव्वे) जितने भी पंचेन्द्रिय जीव हैं, उन सब के यह तीन प्रकार
 का प्रयोग होता है (पुढ्वीकाइयाणं एगविहेणं पओगेणं) पृथ्वीकायिक
 जो एकेन्द्रिय जीव हैं-उनके एक कायप्रयोग ही होता हैं-उससे वे कर्मो-
 पचय किया करते हैं । (एवं जाव वणस्सइ काइयाणं) इसी तरह से
 अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुत्तायिक और वनस्पतिकायिक ये एके-
 न्द्रिय जीव भी एक केवल कायप्रयोग से ही कर्मोपचय करते रहते हैं
 ऐसा जानना चाहिये । अब रहे दोइन्द्रिय तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय जीव
 सो ये (विगलेंदियाणं दुविहे पओगे पणत्ते) इन विकलेन्द्रिय जीवों के

ત્રણ પ્રકારના પ્રયોગથી જીવોને કર્મોપચય થાય છે. તેથી આ કર્મોપચયના
 (કર્મબંધના) કારણ રૂપ જીવના એ ત્રિવિધ પ્રયોગ ગણાય છે. તેથીજ એવું
 કહ્યું છે કે કર્મોપચય પ્રયોગથી જ થાય છે, સ્વભાવથી થતો નથી.

(एवं सत्त्वेति पंचिन्द्रियाणं त्रिविहे पञ्चोमे भाणियव्वे) એજ પ્રમાણે બધાં પંચે-
 ન્દ્રિય જીવોનાં પણ એજ ત્રણ પ્રયોગ હોય છે. (पुढ्वीकाइयाणं एगविहेणं
 पओगेणं) પૃથ્વીકાયિક જીવોને એક કામપ્રયોગ જ હોય છે. તેઓ તે પ્રયોગ
 દ્વારા જ કર્મોપચય કરે છે. (एवं जाव वणस्सइकाइयाणं) એજ પ્રમાણે
 અપ્કાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય અને વનસ્પતિકાય, એ એકેન્દ્રિય જીવોને પણ
 ફક્ત એક જ પ્રયોગ-કાયપ્રયોગ હોય છે, અને તેઓ કાયપ્રયોગથી જ કર્મો-
 પચય કરતા રહે છે. (विगलेंदियाणं दुविहे पओगे पणत्ते) દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય
 અને ચતુરિન્દ્રિય, એ વિકલેન્દ્રિય, જીવોના એ પ્રયોગ હોય છે.

વિક્ષેપિન્દ્રિયાણાં દ્વિ-ત્રિ-ચતુરિન્દ્રિયાણાં જીવાનાં દ્વિવિધઃ પ્રયોગઃ પ્રજ્ઞઃ, 'તં જઞા-વદ્વપ્પ્રયોગે, કાયપ્પ્રયોગે ચ' તથા-વચઃપ્રયોગઃ, કાયપ્રયોગઃ, 'ઇચ્છે-
 ણં દુવિદ્ધેણં પપ્પોગેણં કમ્મોવચર પપ્પોગમા, નો વીમસા' इत्येतेन उपर्युक्तरूपेण
 દ્વિવિધેન પ્રયોગેણ કર્મોપચયઃ વિક્ષેપિન્દ્રિયાણાં પ્રયોગેણં, નો વિસ્રમયા-સ્વભાવેન
 'સે તેણટ્ટેણં, જાવ-નો વીમસા' હે ગૌતમ । તત્ તેનાર્થેન યાવત્-જીવાનાં
 કર્મોપચયઃ પ્રયોગેણં, નો વિસ્રમયા-સ્વભાવેન, 'એવં જસ્સ જો પપ્પોગો, જાવ-
 વેમાણિયાણં' એવં તથૈવ પૂર્વોક્તદેવં યસ્ય જીવસ્ય ચઃ પ્રયોગઃ માનસિકો વા,
 વાચિકો વા, કાયિકો વા, તસ્ય તથૈવ વક્તવ્યઃ, યાવન્-વૈમાનિકાનામ્-વૈમાનિક-
 દેવપર્યન્તાનામ્ યોધ્યઃ, યાવત્કરણાન્-નૈરપિકામુકુમારાદિમત્તપતિ-સાનવ્ય-
 ન્તર-જ્યોતિપિદ્ધેવાઃ સંગ્રાયાઃ ॥ સૂ. ૨ ॥

દો પ્રકાર કા પ્રયોગ હોતા હૈ (તં જઞા) જૈસે કિ (વદ્વપ્પ્રયોગે, કાય-
 પ્પ્રયોગે) વચનપ્રયોગ ઓર કાયપ્રયોગ (ઇચ્છેણં દુવિદ્ધેણં પપ્પોગેણં
 કમ્મોવચર પપ્પોગમા નો વીમસા) इन दो प्रकार के प्रयोग से ये विक-
 क्षेन्द्रिय जीव कर्मोपचय करते हैं-अतः इनका कर्मोपचय प्रयोगद्वारा ही
 होता है स्वभाव से नहीं (से तेणट्टेणं जाव, नो वीमसा) इसी कारण
 हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि जीवों के जो कर्मोपचय होता है, वह
 प्रयोग से ही होता है-स्वभाव से नहीं, (एवं जस्स जो पपोगो जाव
 वेमाणियाणं) इस तरह जिस जीव के जो प्रयोग हो-चाहे वह मान-
 सिक प्रयोग हो, चाहे वह वाचनिक प्रयोग हो, चाहे वह कायिक हो
 उसके उसी प्रयोग से कर्मबंध होता है-ऐसा यावत् वैमानिक देवों तक

“તંજઞા” એવાં કે (વદ્વપ્પ્રયોગે, કાયપ્પ્રયોગે)-(૧) વચનપ્રયોગ અને
 કાયપ્રયોગ. (ઇચ્છેણં દુવિદ્ધેણં પપ્પોગેણં કમ્મોવચર પપ્પોગમા, નો વીમસા)
 તે બે પ્રકારના પ્રયોગોથી વિક્ષેપિન્દ્રિય જીવો કર્મોપચય કરે છે. તેથી તેમના
 કર્મોપચય પ્રયોગથી જ થાય છે, પ્રયોગ વિના (સ્વાભાવિક રીતે) થતો નથી.
 (સે તેણટ્ટેણં જાવ નો વીમસા) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે
 જીવોને જે કર્મોપચય થાય છે તે પ્રયોગ દ્વારા થાય છે, સ્વાભાવિક રીતે
 (પ્રયોગ વિના) થતો નથી. (એવં જસ્સ જો પપ્પોગો જાવ વેમાણિયાણં) એજ
 પ્રમાણે જે જીવના જે પ્રયોગ હોય છે તે પ્રયોગ દ્વારા જ તે કર્મોપચય કરે
 છે-કર્મબંધ કરે છે. એટલે કે માનસિક, કાયિક અથવા વાચિક, જે પ્રકારનો
 જીવનો પ્રયોગ (વ્યાપાર) હોય તે પ્રકારના પ્રયોગ દ્વારા જ કર્મોનો બંધ
 કરતો રહે છે. એજ પ્રમાણે વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવો વિષે સમજવું.

જીવાનાં કર્મપુદ્ગલોપવચસ્ય સાર્દસાન્તત્વવિષયે વસ્તુપુદ્ગલોપવચસ્ય
ન્તેન વિશેષં પ્રરૂપયિતુનાદ-‘વત્થસ્સ પં મંતે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-વત્થસ્સ પં મંતે ! પોગ્ગલોવચણ કિં સાહણ, સપ-
જ્જવસિણ, સાહણ અપજ્જવસિણ, અણાહણ સપજ્જવસિણ, અણાહણ અપજ્જવસિણ ? । ગોયમા ! વત્થસ્સ પં પોગ્ગલો
વચણ સાહણ-સપજ્જવસિણ, પો સાહણ-અપજ્જવસિણ, પો
અણાહણ-સપજ્જવસિણ, પો અણાહણ-અપજ્જવસિણ જહાણ
મંતે ! વત્થસ્સ પોગ્ગલોવચણ સાહણ સપજ્જવસિણ ? નો
સાહણ અપજ્જવસિણ, નો અણાહણ સપજ્જવસિણ, નો
અણાહણ અપજ્જવસિણ, તહા પં જીવાણં કમ્મો-
વચણ પુચ્છા ? ગોયમા ! અત્થેગહયાણં જીવાણં કમ્મો-
વચણ, સાહણ સપજ્જવસિણ, અત્થેગહયાણં અણાહણ
સપજ્જવસિણ, અત્થે ગહયાણં અણાહણ અપજ્જવસિણ,
પો ચેવ પં જીવાણં કમ્મોવચણ સાહણ અપજ્જવ-
સિણ । સે કેણટ્ટેણં ? । ગોયમા ! ઇરિયાવહિયંબંધયસ્સ
કમ્મોવચણ સાહણ સપજ્જવસિણ, ભવસિદ્ધિયસ્સ કમ્મોવ-
વચણ અણાહણ સપજ્જવસિણ, અભવસિદ્ધિયસ્સ કમ્મોવ-
વચણ અણાહણ અપજ્જવસિણ, સે તેણટ્ટેણં ગોયમા ! एवं
બુચ્છઈ અત્થેગહયાણં જીવાણં કમ્મોવચણ સાહણ પો ચેવ પં
જીવાણં કમ્મોવચણ સાહણ અપજ્જવસિણ । વત્થે પં મંતે !

કહનાં चाहिये, यहां यावत् शब्द से नैरयिक, असुरकुमार आदि भव-
नपति, वानव्यन्तर और ज्योतिषिक देव इनका ग्रहण हुआ है ॥ सू० २ ॥

અહીં ‘યાવત્’ પદ્યથી નાસ્તકો, અસુરકુમારો, વાનવ્યન્તરો અને જ્યોતિષિક
દેવોને શ્રદ્ધા કરવામાં આવ્યા છે. ॥ સૂત્ર ૨ ॥

કિં સાદૈ સપજ્જવસિણ, ચત્થમંગો । ગોયમા ! વત્થે
સાદૈ સપજ્જવસિણ, અવસેસા તિન્નિવિ પહિસેહેયવ્વા, ।
જહા પં મંતે ! વત્થે સાદૈ સપજ્જવસિણ, પો સાદૈ અપ-
જ્જવસિણ, પો અણાદૈ સપજ્જવસિણ, પો અણાદૈ અપ-
જ્જવસિણ, તહા પં જીવા પં કિં સાદૈયા સપજ્જવસિયા ?,
ચત્થમંગો પુચ્છા ? । ગોયમા ! અત્થેગદૈયા સાદૈયા સપજ્જ-
વસિયા, ચત્તારિ વિ ભાણિયવ્વા । સે કેણદ્દેણં ? ગોયમા !
નેરદૈયા તિરિક્ખજોણિયા મણુસ્સા, દેવા ગદ્દમાગદ્દં પહુચ્ચ
સાદૈયા સપજ્જવસિયા । સિદ્ધા ગદ્દં પહુચ્ચ સાદૈયા અપજ્જવ-
સિયા । ભવસિદ્ધિયા લલ્લિં પહુચ્ચ અણાદૈયા સપજ્જવસિયા,
અભવસિદ્ધિયા સંસારં પહુચ્ચ અણાદૈયા અપજ્જવસિયા,
સે તેણદ્દેણં ॥ સૂં ૩ ॥

છાયા—વત્થસ્ય ચલ્લ મદન્ત ! પુદ્ગલોપચયઃ કિં સાદિકઃ—સપર્યવસિતઃ ૧,
સાદિકઃ—અપર્યવસિતઃ ૨, અનાદિકઃ—સપર્યવસિતઃ ૩, અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ ૪?,
ગૌતમ ! વત્થસ્ય ચલ્લ પુદ્ગલોપચયઃ સાદિકઃ સપર્યવસિતઃ, નો સાદિકઃ અપર્ય-

(વત્થસ્સ પં મંતે !) इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(વત્થસ્સ પં મંતે ! પોગ્ગલોવચણ કિં સાદૈ સપજ્જવ-
સિણ, સાદૈ અપજ્જવસિણ, અણાદૈ સપજ્જવસિણ, અણાદૈ અપજ્જ-
વસિણ) હે મદન્ત ! વત્થ કે જો પુદ્ગલોપચય હોતા હૈ, વહ કયા સાદિ
સાન્ત હૈ ? અથવા સાદિ અનન્ત હૈ ? યા અનાદિ સાન્ત હૈ ? કિ—અનાદિ
અનન્ત હૈ ? (ગોયમા—વત્થસ્સ પં પોગ્ગલોવચણ સાદૈ સપજ્જવસિણ,

(वत्थस्स पं मंते !) इत्यादि—

સૂત્રાર્થ—(વત્થસ્સ પં મંતે ! પોગ્ગલોવચણ કિં સાદૈ, સપજ્જવસિણ,
સાદૈ અપજ્જવસિણ અણાદૈ સપજ્જવસિણ, અણાદૈ અપજ્જવસિણ) હે મદન્ત !
પચ્ચાનાં પુદ્ગલોનાં જે ઉપચય થાય છે, તે શું આદિ (આદિયુક્ત) સાન્ત
(અન્તયુક્ત) હોય છે ? કે સાદિ અનન્ત હોય છે ? કે અનાદિ સાન્ત હોય
છે ? કે અનાદિ અનન્ત હોય છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (વત્થસ્સ પં પોગ્ગલોવચણ સાદૈ સપજ્જવસિણ, પો

વસિતઃ, નો અનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ, નો અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ । યથા સ્વલુ
ભદન્ત ! વત્સસ્ય પુદ્ગલોપચયઃ, સાદિકઃ સપર્યવસિતઃ ૧, નો સાદિકોઽપર્યવ-
સિતઃ ૨, નો અનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ ૩, નો અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ ૪, તથા સ્વલુ
જીવાનાં કર્મોપચયઃ પૃચ્છા ? ગૌતમ ! અસ્ત્યેકેષાં જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ
સપર્યવસિતઃ, અસ્ત્યેકેષામ્ અનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ અસ્ત્યેકેષામ્ અનાદિકઃ

ળો સાદૃષ્ અપજ્જવસિણ, નો અણાદૃષ્ સપજ્જવસિણ, ણો અણાદૃષ્ અપ-
જ્જવસિણ) હે ગૌતમ ! વત્સ કે જો પુદ્ગલોપચય હોતા હૈ વહ સાદિ સાન્ત
હૈ, સાદિ અનન્ત નહીં હૈ, ન અનાદિ સાન્ત હૈ ઓર ન વહ અનાદિઅનન્ત
હૈ । (જહાળં મંતે ! વત્સસ્ય પોગલોવચણ સાદૃષ્ સપજ્જવસિણ ણો સાદૃષ્
અપજ્જવસિણ, નો અણાદૃષ્ સપજ્જવસિણ, ણો અણાદૃષ્ અપજ્જવસિણ,
તહા ણં જીવાણં કર્મોવચણ પુચ્છા) હે ભદન્ત ! જિસ પ્રકાર વત્સ કા
પુદ્ગલોપચય સાદિ સાન્ત હૈ । સાદિ અનન્ત નહીં, અનાદિ સાન્ત નહીં હૈ
ઓર અનાદિ અનન્ત મી નહીં હૈ, ડસી પ્રકાર વ્યા જીવોં કા કર્મોપ-
ચય મી સાદિ સાન્ત હૈ સાદિ અનન્ત નહીં હૈ ? અનાદિ સાન્ત નહીં હૈ ?
ઓર અનાદિ અનન્ત મી નહીં હૈ ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અત્યેગહ-
યાણં જીવાણં કર્મોવચણ સાદૃષ્ સપજ્જવસિણ) કિતનેક જીવ એસે હૈં
કિ જિનકા કર્મોપચય સાદિ સાન્ત હૈ (અત્યેગહયાણં અણાદૃષ્ સપજ્જ-
વસિણ) કિતનેક જીવ એસે હૈં કિ જિનકા કર્મોપચય અનાદિ સાન્ત હૈ
(અત્યેગહયાણં આણાદૃષ્ અપજ્જવસિણ) તથા કિતનેક જીવ એસે હૈં

સાદૃષ્ અપજ્જવસિણ, ણો અણાદૃષ્ સપજ્જવસિણ, ણો અણાદૃષ્ અપજ્જવસિણ) વચ્ચનાં
પુદ્ગલોનો જે ઉપચય થાય છે તે સાદિ સાન્ત હોય છે, સાદિ અનન્ત હોતો નથી
અનાદિ સાન્ત હોતો નથી અને અનાદિ અનન્ત પણ હોતો નથી. (જહાળં મંતે !
વત્સસ્ય પોગલોવચણે સાદૃષ્ સપજ્જવસિણ, ણો સાદૃષ્ અપજ્જવસિણ, ણો અણાદૃષ્
અપજ્જવસિણ, તહાળં જીવાણં કર્મોવચણ પુચ્છા) હે ભદન્ત ! જેવી રીતે વચ્ચનાં
પુદ્ગલોનો ઉપચય સાદિ સાન્ત હોય છે, સાદિ અનન્ત હોતો નથી, અનાદિ
સાન્ત હોતો નથી અને અનાદિ અનન્ત હોતો નથી, એજ પ્રમાણે શું જીવોનાં
પુદ્ગલોનો ઉપચય પણ સાદિ સાન્ત હોય છે ? શું તે સાદિ અનન્ત, અનાદિ
સાન્ત અને અનાદિ અનન્ત હોતો નથી ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અત્યેગ-
હયાણં જીવાણં કર્મોવચણ સાદૃષ્ સપજ્જવસિણ) હે ગૌતમ ! કેટલાક જીવો
એવાં હોય છે કે તેમનો કર્મોપચય સાદિ સાન્ત હોય છે, (અત્યેગહયાણં
અણાદૃષ્ સપજ્જવસિણ) કેટલાક જીવોનો કર્મોપચય અનાદિ સાન્ત હોય છે,
(અત્યેગહયાણં આણાદૃષ્ અપજ્જવસિણ) કેટલાક જીવોનો કર્મોપચય અનાદિ

અપર્યવસિતઃ, નો ચૈવ સ્વલુ જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકોઽપર્યવસિતઃ । તત્
કેનાર્થેન ? । ગૌતમ ! એવાપથિકવન્ધકસ્ય કર્મોપચયઃ સાદિકઃ સપર્યવસિતઃ ।
મવસિદ્ધિકસ્ય કર્મોપચયોઽનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ, અમવસિદ્ધિકસ્ય કર્મોપચયઃ
અનાદિકોઽપર્યવસિતઃ, તત્ તેનાર્થેન ગૌતમ ! એવમુચ્યતે-અસ્ત્યેકેપાં જીવાનાં

કિં જિનકા કર્મોપચય અનાદિ અનન્ત હિં (જો ચૈવ જં જીવા જં કર્મો-
વચ્ચ સાદ્દા અપજ્જવસિં) પરન્તુ એસા કોઈ મી જીવ નહીં હિં કિ
જિસકા કર્મોપચય સાદિ ઓર અનન્ત હો । (સે કેળદ્દેણં) હે મદન્ત !
એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હિં ? (ગોચમા) હે ગૌતમ ! (ઈરિયા
વહિયવંધયસ્સ કર્મોવચ્ચ સાદ્દા સપજ્જવસિં) એવાપથિકવન્ધક કે
૧૧ વે ૧૨ વે ઓર ૧૩ વે ગુણસ્થાનવર્તી જીવ કે કર્મોપચય સાદિ ઓર
સાન્ત હોતા હિં (મવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચ્ચ અણાદ્દા સપજ્જવસિં)
મવસિદ્ધિક જીવ કા કર્મોપચય અનાદિ સાન્ત હોતા હિં । (અમવસિ-
દ્ધિયસ્સ કર્મોવચ્ચ અણાદ્દા અપજ્જવસિં) અમવસિદ્ધિક જીવ કા
કર્મોપચય અનાદિ અનન્ત હોતા હિં । (સે તેળદ્દેણં ગોચમા ! એવં વુચ્છહ)
હિસ કારણ હે ગૌતમ ! મેને પૂર્વોક્ત રૂપ સે એસા કહા હિં કિ (અત્યેગ-
હ્યાણં જીવાણં) કિત્તનેક જીવોં કા (કર્મોવચ્ચ) કર્મોપચય (સાદ્દા ૦
જો ચૈવ જં જીવાણં કર્મોવચ્ચ સાદ્દા અપજ્જવસિં) સાદિ સાન્ત
હોતા હિં, કિત્તનેક જીવોં કા કર્મોપચય અનાદિ સાન્ત હોતા હિં કિત્તનેક
જીવોં કા કર્મોપચય અનાદિ અનન્ત હોતા હિં-પરન્તુ એસા કોઈ સા મી

અનંત હોય છે, (જો ચૈવ જં જીવાણં કર્મોવચ્ચ સાદ્દા અપજ્જવસિં) પણ
એવો કોઈ પણ જીવ નથી કે જેનો કર્મોપચય સાદિ અને અનંત હોય.
(સે કેળદ્દેણં) હે મદન્ત ! એવું આપ શા કારણે કહો છો ?

(ગોચમા !) હે ગૌતમ ! (ઈરિયાવહિયવંધયસ્સ કર્મોવચ્ચ સાદ્દા સપ-
જ્જવસિં) એવાપથિક વંધકનો-૧૧ માં, ૧૨માં અને ૧૩માં ગુણસ્થાનવર્તી
જીવનો કર્મોપચય સાદિ અને સાન્ત હોય છે. (મવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચ્ચ અણા-
દ્દા સપજ્જવસિં) મવસિદ્ધિક જીવનો કર્મોપચય અનાદિ સાન્ત હોય છે.
(અમવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચ્ચ અણાદ્દા અપજ્જવસિં) અમવસિદ્ધિક જીવનો કર્મો-
પચય અનાદિ અનંત હોય છે. (સે તેળદ્દેણં ગોચમા ! એવં વુચ્છહ) હિં
ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે (અત્યેગહ્યાણં જીવાણં) કેટલાક
જીવોનો (કર્મોવચ્ચ) કર્મોપચય (સાદ્દા ૦ જો ચૈવ જં જીવાણં કર્મોવચ્ચ
સાદ્દા અપજ્જવસિં) સાદિ સાન્ત હોય છે, કેટલાક જીવોનો કર્મોપચય અનાદિ
સાન્ત હોય છે અને કેટલાક જીવોનો કર્મોપચય અનાદિ અનંત હોય છે.
પરંતુ એક પણ એવો જીવ નથી હોતો કે જેનો કર્મોપચય સાદિ અનંત હોય.

કર્મોપચયઃ સાદિકઃ, નો ચૈવ સ્વલુ જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ અપર્યવસિતઃ । ચત્તં સ્વલુ ભદન્ત ! કિં સાદિકમ્-સપર્યવસિતમ્, ચતુર્ભંગમ્ ? ગૌતમ ! ચત્તં સાદિકં સપર્યવસિતમ્, અચ્ચેવાત્તયોઽપિ પ્રતિષેધયિતવ્યાઃ યથા સ્વલુ ભદન્ત ! ચત્તં સાદિકં સપર્યવસિતમ્, નો સાદિકમ્ અપર્યવસિતમ્, નો અનાદિકં સપર્યવસિતમ્, નો અનાદિકમ્ અપર્યવસિતં તથા જીવાઃ કિં સાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ, ચતુર્ભંગમ્ પુચ્છા ? ગૌતમ ! અસ્ત્યેકકે સાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ, ચત્વારોઽપિ મણિતવ્યાઃ ।

જીવ નહીં હૈ કિ જિસકા કર્મોપચય સાદિ ઓર અનન્ત હો (વત્થે ણં મંતે ! કિં સાહણ સપજ્જવસિણ, ચતુર્ભંગો) હૈ ભદન્ત ! વચ્છ કયા સાદિસાન્ત હૈ ? કિ સાદિ અનન્ત હૈ ? યા અનાદિ સાન્ત હૈ ? કિ અનાદિ અનન્ત હૈ ? હસ પ્રકાર યે યહાં ચાર ભંગ હોતે હૈં કયા ? (ગોયમા ! વત્થે સાહણ સપજ્જવસિણ, અવસેસા તિન્નિ વિ પહિસેહે યવ્વા) હૈ ગૌતમ ! વચ્છ સાદિ સાન્ત હૈ યાકી કે તોન ભંગ વચ્છ મેં પ્રતિષેધ્ય હૈં । (જહા ણં મંતે ! વત્થે સાહણ સપજ્જવસિણ, ણો સાહણ અપજ્જવસિણ, ણો અણાહણ સપજ્જવસિણ, ણો અણાહણ અપજ્જવસિણ-તહાણં જીવાણં કિં સાહયા સપજ્જવસિયા ? ચતુર્ભંગો પુચ્છા) હૈ ભદન્ત ! વચ્છ જિસ તરહ સે સાદિ સાન્ત હૈ, વહ સાદિ અનન્ત નહીં હૈ, અનાદિ સાન્ત નહીં હૈ, ઓર અનાદિ અનન્ત મી નહીં હૈ, ડસી પ્રકાર સે કયા જીવ મી સાદિ સાન્ત હૈં ? યે સાદિ અનન્ત નહીં હૈં કયા ? અનાદિ સાન્ત નહીં હૈં ? કયા ? અનાદિ અનન્ત નહીં હૈં કયા ? (ગોયમા !) હૈ

(વત્થે ણં મંતે કિં સાહણ સપજ્જવસિણ ચતુર્ભંગો) હૈ ભદન્ત ! વચ્છ સાદિ (આદિધી યુક્ત) સાન્ત (અન્તથી યુક્ત) છે, કે સાદિ અનંત છે ? અથવા અનાદિ સાન્ત છે, કે અનાદિ અનંત છે ? શું વચ્છને આ ચારે ભંગ (વિકલ્પો) લાગુ પડે છે ?

(ગોયમા ! વત્થે સાહણ સપજ્જવસિણ, અવસેસા તિન્નિ વિ પહિસેહેયવ્વા) હૈ ગૌતમ ! વચ્છ આદિ સાન્ત છે, આકીના ત્રણે ભંગને અસ્વીકાર થયો સમજવો એટલે કે વચ્છ સાદિ અનંત નથી, અનાદિ સાન્ત નથી અને અનાદિ અનંત નથી.

(જહાણં મંતે ! વત્થે સાહણ સપજ્જવસિણ, ણો સાહણ અપજ્જવસિણ, ણો અણાહણ સપજ્જવસિણ, ણો અણાહણ અપજ્જવસિણ-તહાણં જીવાણં કિં સાહયા સપજ્જવસિયા ? ચતુર્ભંગો પુચ્છા) હૈ ભદન્ત ! જેમ વચ્છ સાદિ સાન્ત છે, તે સાદિ અનંત નથી, તે અનાદિ સાન્ત નથી અને અનાદિ અનંત પણ નથી. એજ પ્રમાણે શું હવે પણ સાદિ સાન્ત છે ? શું હવે સાદિ અનંત, અનાદિ સાન્ત અને અનાદિ અનંત નથી ?

તત્ કેનાર્થેન ? ગૌતમ ! નૈરયિક-તિર્યગ્ચોનિક-મનુષ્ય-દેવાઃ, ગતિમ્-આગતિ પ્રતીત્ય સાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ, સિદ્ધા ગતિ પ્રતીત્ય સાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ, ભવસિદ્ધિકા લઙ્ઘિ પ્રતીત્ય અનાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ, અભવસિદ્ધિકાઃ સંસારં પ્રતીત્યાનાદિકા અપર્યવસિતાઃ, તત્ તેનાર્થેન૦ ॥ મુ. ૩ ॥

ગૌતમ ! (અત્યેગદ્યા સાદ્યા સપજ્જવસિયા, ચત્તારિ વિ ખાણિયવ્વા) કિતનેક જીવ એસે હૈં જો સાદિ સાન્ત હૈં, કિતનેક જીવ એસે હૈં જો સાદિ અનન્ત હૈં । કિતનેક જીવ એસે હૈં જો અનાદિ સાન્ત હૈં ઓર કિતનેક જીવ એસે હૈં જો અનાદિ અનન્ત હૈં । ઇસ પ્રકાર સે યહાં ચારોં ભંગ કહના ચાહિયે । (સે કેળદ્દેણં) હે ભદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં ? (ગોયમા ! નેરદ્યા તિરિચ્છજોણિયા મણુસ્સા દેવા ગદ્દમાગદ્દં પહુચ સાદ્યા, સપજ્જવસિયા સિદ્ધા ગદ્દં પહુચ સાદ્યા અપજ્જવસિયા, ભવસિદ્ધિયા લઙ્ઘિ પહુચ અણાદ્યા સપજ્જવસિયા, અભવસિદ્ધિયા સંસારં પહુચ અણાદ્યા અપજ્જવસિયા સે તેળદ્દેણં) હે ગૌતમ ! નૈરયિક, તિર્યચ્છયોનિક, મનુષ્ય ઓર દેવ ગતિ આગતિ કી અપેક્ષા સે સાદિ સાન્ત હૈં । સિદ્ધ જીવ સિદ્ધ ગતિ કી અપેક્ષા સે સાદિ અનન્ત હૈં । ભવસિદ્ધિક જીવ લઙ્ઘિ કી અપેક્ષા સે અનાદિ સાન્ત હૈં ઓર અભવસિદ્ધિક જીવ સંસાર કી અપેક્ષા સે અનાદિ અનન્ત હૈં ।

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અત્યેગદ્યા સાદ્યા સપજ્જવસિયા, ચત્તારિ વિ ખાણિયવ્વા) કેટલાક જીવો સાદિ સાન્ત હોય છે, કેટલાક જીવો સાદિ અનન્ત હોય છે, કેટલાક જીવો અનાદિ સાન્ત હોય છે અને કેટલાક જીવો અનાદિ અનન્ત હોય છે. આ રીતે અહીં ચારે ભંગ (વિઠ્ઠો) કહેવા જોઈએ. (સે કેળદ્દેણં ?) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો ?

(ગોયમા ! નેરદ્યા તિરિચ્છજોણિયા મણુસ્સા દેવા ગદ્દમાગદ્દં પહુચ સાદ્યા સપજ્જવસિયા, સિદ્ધા ગદ્દં પહુચ સાદ્યા અપજ્જવસિયા, ભવસિદ્ધિયા લઙ્ઘિ પહુચ અણાદ્યા સપજ્જવસિયા, અભવસિદ્ધિયા સંસારં પહુચ અણાદ્યા અપજ્જવસિયા સે તેળદ્દેણં) હે ગૌતમ ! નારકો, તિર્યચ્છો, મનુષ્યો અને દેવગતિના જીવોને નારક આદિ ગતિમાં આવવાને કારણે સાદિ કહ્યા છે અને નારક આદિ ગતિઓમાંથી તેઓ નીકળવાના હોવાથી તેમને સાન્ત કહ્યા છે. સિદ્ધ જીવ સિદ્ધ ગતિની અપેક્ષાએ સાદિ અનન્ત છે, ભવસિદ્ધિક જીવ લઙ્ઘિની અપેક્ષાએ અનાદિ સાન્ત છે અને અભવસિદ્ધિક જીવ સંસારની અપેક્ષાએ અનાદિ અનન્ત છે. હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે.

ટીકા—‘વત્થસ્સ ણં મતે ! પોગ્ગલોવચણં કિં સાદ્દણ સપજ્જવસિણ ?’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘હે મદન્ત ! વત્થસ્ય સહ પુદ્ગલોપચયઃ કિં સાદિકઃ આદિના સહિતઃ, સપર્યવસિતઃ પર્યવસિતેન પર્યવસાનેન સહિતઃ સાન્તઃ ?? અથવા ‘સાદ્દણ અપજ્જવસિણ’ સાદિકઃ—અપર્યવસિતઃ અન્તરહિતઃ ૨ ?, અથવા ‘અણાદ્દણ સપજ્જવસિણ’ અનાદિકઃ—આદિરહિતઃ, સપર્યવસિતઃ સાન્તઃ ૩ ?, અથવા ‘અણાદ્દણ અપજ્જવસિણ !’ અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ ૪ કિમ્ ? મગધનાદ—‘ગોયમા ! વત્થસ્સ ણં પોગ્ગલોવચણં

ટીકાર્થ—સૂત્રકાર ને જીવોં કે કર્મપુદ્ગલોપચય કે દૃષ્ટાન્તત્વ કે વિષય મેં વસ્તુપુદ્ગલોપચય કે દૃષ્ટાન્ત સે વિશેષતા પ્રરૂપિત કરને કે લિયે (વત્થસ્સ ણં મતે !) इत्यादि सूत्र कहा है—इसमें गौतम ने प्रभु से ऐसा पूछा है कि (वत्थस्स णं मते ! पोग्गलોवचणं किं साद्दण सपज्जवसिण) हे भदन्त ! वस्तु का जो पुद्गलोपचय है वह क्या सादि सान्त है ? अथवा—(साद्दण अपज्जवसिण) सादि अनन्त है ? अथवा—(अणादद्दण सपज्जवसिण) अनादि सान्त है ? अथवा—(अणादद्दण अपज्जवसिण) अनादि अनन्त है ? जो आदि-प्रारम्भ-सहित होता है उसका नाम सादि और जो पर्यवसान-अन्त सहित होता है वह सपर्यवसित होता है । तथा जो अन्त रहित होता है वह अपर्यवसित होता है तात्पर्य यह है कि यहां परवस्तु विषय में ऐसे ये चार प्रश्न गौतमस्वामी ने प्रभु से पूछे हैं । इनका उत्तर देने के लिये प्रभु ने उनसे कहा (गौयमा) हे

ટીકાર્થ—જીવોનાં કર્મપુદ્ગલોપચયની સાદિ સાન્તતા આદિનું સૂત્રકારે વસ્તુનાં પુદ્ગલોપચયના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા આ સૂત્રમાં નિરૂપણ કર્યું છે, અને જીવોનાં કર્મપુદ્ગલોપચયમાં રહેલી વિશેષતાનું આ સૂત્રમાં નિરૂપણ કર્યું છે.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—(વત્થસ્સ ણં મતે ! પોગ્ગલોવચણં કિં સાદ્દણ સપજ્જવસિણ ?) હે ભદન્ત ! વસ્તુનાં પુદ્ગલોનો ઉપચય (વૃદ્ધિ, જન્માદિ) શું સાદિ સાન્ત હોય છે ? અથવા (સાદ્દણ અપજ્જવસિણ ?) સાદિ અનન્ત હોય છે ? અથવા (અણાદ્દણ સપજ્જવસિણ ?) અનાદિ સાન્ત હોય છે ?

અથવા (અણાદ્દણ અપજ્જવસિણ ?) અનાદિ અનન્ત હોય છે ? (સાદિ ’ એટલે આદિ (પ્રારંભ) સહિત અને ‘ સપર્યવસિત અથવા સાન્ત ’ એટલે અન્ત સહિત, (અપર્યવસિત ’ એટલે અન્ત રહિત) અહીં વસ્તુનાં પુદ્ગલોપચયને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામીએ ઉપર મુજબ ચાર પ્રશ્નો મહાવીર પ્રભુને પૂછ્યા છે. હવે તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—

સાદૃષ સપજ્જવસિણ ' હે ગૌતમ ! વત્થસ્ય સ્વલુ પુદ્ગલોપચયઃ સાદિકઃ સપર્યવસિતઃ ' જો સાદૃષ અપજ્જવસિણ ' નો સાદિકઃ અપર્યવસિતઃ ' જો અણાદૃષ સપજ્જવસિણ ' નો યા અનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ, ' જો અણાદૃષ અપજ્જવસિણ ' નાપિ અનાદિકઃ અપર્યવસિતો યા વત્થસ્ય પુદ્ગલોપચયો ભવતિ, ગૌતમઃ પૃચ્છતિ- ' જહા ણં મંતે ! વત્થસ્સ પોગ્ગલોવચણ સાદૃષ સપજ્જવસિણ ' હે ભદન્ત ! યથા સ્વલુ વત્થસ્ય પુદ્ગલોપચયઃ સાદિકઃ-સપર્યવસિતો ભવતિ, ' જો સાદૃષ

ગૌતમ ! ' વત્થસ્સ ણં પોગ્ગલોવચણ સાદૃષ સપજ્જવસિણ) વત્થ કા જો પુદ્ગલોપચય હૈ વહ સાદિ સાન્ત હૈ ' જો સાદૃષ અપજ્જવસિણ ' સાદિ અનન્ત નહીં હૈ ' જો અણાદૃષ સપજ્જવસિણ ' અનાદિ સાન્ત નહીં હૈ (જો અણાદૃષ અપજ્જવસિણ) ઓર અનાદિ અનન્ત ઓ નહીં હૈ । કહને કા ભાવ યહ હૈ કિ વત્થ મેં જો પુદ્ગલોપચય હૈ વહ પ્રારંભ હોને કે કારણ તો સાદિ હૈ ઓર ભવિષ્ય મેં વહ નષ્ટ હો જાને વાલા હૈ ઇસલિયે સાન્ત હૈ સાદિ અપર્યવસિત વહ ઇસલિયે નહીં હૈ કિ પ્રારંભ હોને પર ઓ વહ શાશ્વત-ધ્રુવ-રૂપ મેં નહીં રહા હૈ, અનાદિ સપર્યવસિત ઉસે ઇસ લિયે નહીં કહા ગયા હૈ કિ વત્થ મેં ઉસ પુદ્ગલોપચય કી શુરુઆત હુઈ હૈ અનાદિ અપર્યવસિત વહ ઇસલિયે અમાન્ય હુઆ હૈ કિ વહ પ્રારંભસહિત હૈ ઓર અન્તસહિત હૈ । અવ ગૌતમ પ્રશ્ન સે પુનઃ પૂછતે હૈં કિ (જહા ણં મંતે ! વત્થસ્સ પોગ્ગલોવચણ સાદૃષ સપજ્જવસિણ) હે ભદન્ત જિસ પ્રકાર સે આપને વત્થ કે પુદ્ગલોપચય કો સાદિ ઓર સાન્ત કહા હૈ (જો

(ગોયમા ! વત્થસ્સ ણં પોગ્ગલોવચણ સાદૃષ સપજ્જવસિણ) હે ગૌતમ ! વચ્ચનાં પુદ્ગલોનો ઉપચય (વૃદ્ધિ) સાદિ સાન્ત હોય છે. (જો સાદૃષ અપજ્જવસિણ) તે સાદી અન્ત હોતો નથી. (જો અણાદૃષ સપજ્જવસિણ) તે સાદિ અન્ત હોતો નથી, (જો અણાદૃષ સપજ્જવસિણ) તે અનાદિ સાન્ત હોતો નથી, (જો અણાદૃષ અપજ્જવસિણ) તે અનાદિ અન્ત પશુ હોતો નથી. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-વચ્ચનો પુદ્ગલોપચય પ્રારંભથી યુક્ત હોય છે, તેથી તેને સાદિ કહ્યો છે. ભવિષ્યમાં તેનો નાશ થતો હોય છે, તેથી તેને સાન્ત કહ્યો છે. તેનો પ્રારંભ થયા પછી તે શાશ્વત (નિત્ય) રહેતો નથી તેથી તેને સાદિ અન્ત કહ્યો નથી. તે પુદ્ગલોપચયને અનાદિ સાન્ત એ કારણે કહ્યો નથી કે વચ્ચમાં તે પુદ્ગલોપચયનો પ્રારંભ થયેલો છે. તેને અનાદિ અન્ત કહ્યો નથી કારણ કે તે પ્રારંભ સહિત અને અન્ત સહિત છે.

ગૌતમ સ્વામી હવે બીજો પ્રશ્ન પૂછે છે—(જહા ણં મંતે ! વત્થસ્સ પોગ્ગલો વચ્ચે સાદૃષ સપજ્જવસિણ) હે ભદન્ત ! જેમ વચ્ચનાં પુદ્ગલોનો ઉપચય સાદિ

અપજ્જવસિણ' નો સાદિકઃ-અપર્યવસિતઃ, 'ખો અણાદ્દ સપજ્જવસિણ' નો અનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ, 'ખો અણાદ્દ અપજ્જવસિણ' નો વા અનાદિકઃ અપર્યવસિતો ભવતિ ' તદ્વા પં જીવાણં કમ્મોવચણ પુચ્છા ? ' તથા સત્તુ જીવાણાં કર્મોપચયઃ કિં સાદિકઃ સપર્યવસિતઃ, નો સાદિકઃ અપર્યવસિતઃ, નો વા અનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ ન વા અનાદિકઃ અપર્યવસિતો ભવતિ ? इति पृच्छा प्रश्नः । भगवानाह- ' गोयमा ! अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचण साद्रे सपज्जवसिण, ' हे गौतम !

સાદ્દ અપજ્જવસિણ) સાદિ અનન્ત નહીં કહા હૈ (ખો અણાદ્દ સપજ્જવસિણ) અનાદિ સાન્ત નહીં કહા હૈ ઓર (ખો અણાદ્દ અપજ્જવસિણ) ન અનાદિ અનન્ત હી કહા હૈ (તદ્વા પં જીવાણં કમ્મોવચણ પુચ્છા) વસી તરહ સે જીવોં કે જો કર્મોપચય-કર્મબંધ હોતા હૈ-ઁસ વિષય મેં મી મેરા પેસા હી પૂછના હૈ કિ જીવોં કા કર્મોપચય કયા સાદિ સાન્ત હી હોતા હૈ? સાદિ અપર્યવસિત નહીં હોતા હૈ? અનાદિ સપર્યવસિત નહીં હોતા હૈ? ઓર અનાદિ અપર્યવસિત નહીં હોતા કયા? ઁસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રમુ ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ (ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! વચ્છ કે પુત્રલોપચય કો અપેક્ષા જીવ કે કર્મબંધ મેં વિશેષતા હૈ-જો ઁસ પ્રકાર સે હૈ-(અત્યેગइयाणं જીવાણં કમ્મોવચણ સાદ્દ સપજ્જવસિણ) કિત્ત-નેક જીવ પેસે હૈં કિ જિનકા કર્મોપચય-કર્મબંધ સાદિ ઓર સાન્ત હૈ, યચપિ સિદ્ધાન્ત કી દ્રષ્ટિ સે સમસ્ત જીવોં કા કર્મોપચય અનાદિ કહા

સાન્ત હોય છે, (ખો સાદ્દ અપજ્જવસિણ) સાદિ અનન્ત હોતો નથી, (ખો અણાદ્દ સપજ્જવસિણ) અનાદિ સાન્ત હોતો નથી, અને (ખો અણાદ્દ અપજ્જવસિણ) અનાદિ અનન્ત હોતો નથી, (તદ્વાણં જીવાણં કમ્મોવચણ પુચ્છા) એજ પ્રમાણે જીવોના કર્મોપચય (કર્મબંધ) વિષે પણ હું એજ બાબુવા માશું છું કે શું જીવોના કર્મોપચય સાદિ સાન્ત હોય છે? શું તે સાદિ અનન્ત હોતો નથી? શું તે અનાદિ સાન્ત હોતો નથી? શું તે અનાદિ અનન્ત હોતો નથી?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-“ ગોયમા ! ” હૈ ગૌતમ ! વચ્છનાં પુરૂષલોપચય કરતાં જીવોના કર્મબંધમાં નીચે પ્રમાણે વિશેષતા છે- (અત્યેગइयाणं જીવાણં કમ્મોવચણ સાદ્દ સપજ્જવસિણ) કેટલાક જીવો એવાં હોય છે કે તેમનો કર્મોપચય (કર્મબંધ) સાદિ અને સાન્ત હોય છે, જો કે

ગપા છે-જ્યોં કિ કર્મવંધ કો સાદિ માનને મેં અનેક દૂષણ આતે હેં
 उनमें से सब से जघर्दस्त दूषण एक तो यह आता है कि कर्मबंध यदि
 સાદિ માના જાવેગા-તો इसके पहिले जीव को बिलकुल सिद्ध के समान
 હી માનના પડેગા ફિર એસી સ્થિતિ મેં કર્મવંધ હોગા મી કૈસે જ્યોંકિ
 કર્મવંધકે કારણભૂત મિથ્યાત્વ અચિરતિ તો વહાં હે નહીં-ફિર મી યદિ
 કર્મવંધ વહાં હોતા હે એસા કહા જાવે તો સિદ્ધોં કે મી કર્મ કા વંધ
 હો જાના ચાહિયે-પરંતુ હોતા નહીં હે-અતઃ સામાન્યરૂપ સે યહી
 માન્યતા હે કિ જીવકે સાથ કર્મોં કા વંધ અનાદિકાલ કા હે, પર યહાં
 જો ઉસે સાદિરૂપ મેં પ્રકટ કિયા ગયા હે વહ કિસી કર્મપ્રકૃતિ કે વંધ
 કી અપેક્ષા સે હી કિયા ગયા હે જૈસે જિસ જીવ કો પહિલે કે ગુણ-
 સ્થાનોં મેં જિસ કર્મપ્રકૃતિ કા વંધ નહીં હોતા હે વહ જીવ યદિ આગે
 કે ગુણસ્થાનોં પર ચઢતા હે તો ઉસે ઉસ પ્રકૃતિ કા વંધ હો જાતા હે
 હસ અપેક્ષા યહ વેધ સાદિ માના ગયા ઓર જય વહ જીવ ઉસ સ્થાન
 સે નીચે ઉતર આતા હે તો ઉસ પ્રકૃતિ કા વંધ ઉસસે છૂટ જાતા હે અતઃ
 ઉસકા અન્ત હો જાતા હે હસલિયે એસા કર્મવંધ સાદિ ઓર સાન્ત હોતા

સિદ્ધાન્તની દૃષ્ટિએ તો સમસ્ત જીવોના કર્મોપચયને (કર્મબંધને) અનાદિ
 કહ્યો છે, કારણ કે કર્મબંધને સાદિ (પ્રારંભ યુક્ત) માનવામાં અનેક બાધા
 રહેલ છે. સૌથી મોટી બાધા તો એ નડે છે કે કર્મબંધને એ સાદિ (પ્રારંભ
 સહિત) માનવામાં આવે તો એ કર્મબંધ થયા પહેલાં જીવને બિલકુલ સિદ્ધ
 સમાન માનવો પડશે અને એ એ વાત માની લેવામાં આવે તો એ સ્થિતિમાં
 કર્મબંધ કેવી રીતે સંભવી શકે ?

કારણ કે કર્મબંધના કારણરૂપ મિથ્યાત્વ અને અચિરતિનો તો તેમનામાં
 અભાવ હોય છે. છતાં પણ ‘ ત્યાં કર્મબંધ થાય છે, ’ એવું કહેવામાં આવે
 તો સિદ્ધોમાં પણ કર્મબંધ સ્વીકારવો પડે; પણ એવું બનતું નથી તેથી
 સામાન્ય રીતે એવી માન્યતા છે કે જીવોની સાથે કર્મોના બંધ અનાદિકાળથી
 અસ્તિત્વ ધરાવે છે. પરંતુ અહીં એ કર્મબંધને ‘ સાદિ ’ કહેવામાં આવેલો
 છે તે કોઈ કર્મપ્રકૃતિના બંધની અપેક્ષાએ જ કહેલ છે. જેમ કે એ જીવને
 આગલા ગુણસ્થાનોમાં એ કર્મપ્રકૃતિના બંધ હોતો નથી, તે જીવ એ પછીના
 ગુણસ્થાનો પર ચડે છે તો તેને તે પ્રકૃતિનો બંધ થઈ જાય છે, તે દૃષ્ટિએ
 તે બંધને સાદિ માનવામાં આવેલ છે. જ્યારે જીવ તે સ્થાનથી નીચે ઉતરી
 જાય છે ત્યારે તે પ્રકૃતિના બંધ તેને છૂટી જાય છે, તેથી તેનો અન્ત આવી
 જાય છે, તે કારણે તે કર્મબંધ સાદિ અને સાન્ત હોય છે. આ વાતને
 ધ્યાનમાં રાખીને કેટલાક જીવોના કર્મબંધરૂપ પુદ્ગલોપચયને સાદિ સાન્ત

અસ્તિ એકેષાં કતિપયાનાં જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ સર્પર્થવસિતો ભવતિ । ‘અત્યેગદ્યાણં અણાદૃષ્ સપજ્જવસિષ્’ એકેષાં કતિપયાનાં જીવાનાં તુ કર્મોપચયઃ અનાદિકઃ સર્પર્થવસિતઃ સાન્તોઽસ્તિ ‘અત્યેગદ્યાણં અણાદૃષ્ અપજ્જનવસિષ્’ અસ્તિ એકેષાં કતિપયાનાં જીવાનાં કર્મોપચયઃ અનાદિકઃ અર્પર્થવસિતઃ અનન્તઃ, કિન્તુ ‘જો ચેવ ણં જીવાણં કર્મોવચ્ચ સાદૃષ્ અપજ્જવસિષ્’ તો ચેવ સત્તુ-નૈવ ક્યમપિ જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ અર્પર્થવસિતઃ અનન્તો ભવતિ । ‘ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘કેણદ્દેશં?’ હે ભદન્ત ! તત્ત્વ હૈં હસી અપેક્ષા કો ધ્યાન મેં રાખકર યહાં કર્મચંધરૂપ પુદ્ગલોપચય કો કિસી જીવ કી અપેક્ષા સે સોદિ સાન્ત કહ દિયા ગયા હૈં એસા જાનનાં ચાહિયે સૂત્રકાર હસ વિષય કો સ્વયં આગે સ્પષ્ટ કરનેવાલે હૈં-અતઃ વિશેષરૂપ મેં હસ પર કુછ નહીં લિખા જાતા હૈં-હસી કારણ (અત્યેગદ્યાણં જીવાણં કર્મોવચ્ચ સાદૃષ્ સપજ્જવસિષ્) એસા કહા હૈં । (અત્યેગદ્યાણં જીવાણં અણાદૃષ્ સપજ્જવસિષ્) તથા કિતનેક જીવ એસે બી હૈં કિ જિનકા કર્મચંધરૂપ પુદ્ગલોપચય અનાદિ હોકર બી સાન્ત હોતા હૈં । એસે વે જીવ અન્તરાત્મા-સમ્બન્ધદૃષ્ટિ હોતે હૈં । (અત્યેગદ્યાણં અણાદૃષ્ અપજ્જવસિષ્) કિતનેક જીવ એસે બી હૈં કિ જિનકા કર્મચંધરૂપ કર્મોપચય અનાદિ અનન્ત હોતા એસે જીવ અભવ્યશ્રેણી કે હોતે હૈં । કિન્તુ (જો ચેવ ણં જીવાણં કર્મોવચ્ચ સાદૃષ્ અપજ્જવસિષ્) એસે જીવ કોઈ બી નહીં હૈં કિ જિનકા કર્મોપચય સાદિ હોકર બી અનન્ત હી યના રહે ક્યોં કિ એસી માન્યતા મેં મુક્તિ કે અભાવ કા પ્રસન્ન પ્રાપ્ત હોતા હૈં । અથ ગૌતમ હસી વિષય કો વિશેષરૂપ સે સ્પષ્ટ સમજાને કે લિયે પ્રશ્ન

કહેલ છે આ વિષયનું સૂત્રકારે પહેલાં વધારે સ્પષ્ટીકરણ કરેલું છે, તેથી અહીં તેનું વધુ પિષ્ટવેપણ કયું નથી. એ જ કારણે (અત્યેગદ્યાણં જીવાણં કર્મોવચ્ચ સાદૃષ્ સપજ્જવસિષ્) કેટલાક જીવોને સાદિ સાન્ત કહ્યા છે.

(અત્યેગદ્યાણં જીવાણં અણાદૃષ્ સપજ્જવસિષ્) કેટલાક જીવો એવાં હોય છે કે જેમનો કર્મચંધરૂપ પુદ્ગલોપચય અનાદિ હોવા છતાં સાન્ત (પ્રારંભ સહિત) હોય છે. એવાં જીવો (અન્તરાત્માઓ) સમ્યક્દૃષ્ટિ હોય છે. (અત્યેગદ્યાણં અણાદૃષ્ અપજ્જવસિષ્) કેટલાંક જીવો એવા હોય છે કે જેમનો કર્મચંધરૂપ પુદ્ગલોપચય અનાદિ અને અનન્ત હોય છે. એવાં જીવો અભવ્ય શ્રેણિના હોય છે. પરંતુ (જો ચેવ ણં જીવાણં કર્મોવચ્ચ સાદૃષ્ અપજ્જવસિષ્) કેટલાં પણ જીવો એવાં હોતા નથી કે જેમનો કર્મોપચય સાદિ અને અનન્ત હોય, કારણ કે આ પ્રકારની માન્યતાના સ્વીકારથી મુક્તિના અભાવ - સ્વીકાર

કેનાર્થેન કેન કારણેન વ્યવચ્યતે ? કેપાશ્ચિત્ જીવાનાં તથાવિધવર્ણિતઃ ત્રિવિધઃ કર્મોપચયો ભવતિ, ન તુ સાદિકઃ સપર્યવસિતઃ કર્મોપચયો ભવતિ ? ભગવાનાદ-
'ગોયમા ! શ્રિયાવહિયવંધયસ્સ કમ્મોવચણ સાદ્દણ સપજ્જવસિણ' હે ગૌતમ !
એર્યાપથિકવન્ધકસ્ય, એર્યાપથિકં કેવલયોગપ્રત્યયં કર્મ, તદ્વન્ધકસ્ય, ઉપ-
શાન્તમોદસ્ય ધીજમોદસ્ય સયોગિકેવલિનથ કર્મોપચયઃ સાદિકઃ સપર્યવસિતઃ
સાન્તો ભવતિ, એર્યાપથિકર્મણો હિ જીવસ્ય અવદ્ધપૂર્વસ્ય વન્ધનાત્ કર્મોપચયસ્ય

સે પૂછતે હું કિ-(સે કેળટ્ટેણં) હે ભદન્ત ! આપ એસા કિસ આધાર કો
હેકર કહતે હું કિ કિન્હીં જીવોં કા કર્મોપચય સાદિ સાન્ત હૈ, કિન્હીં
જીવોં કા કર્મોપચય અનાદિ સાન્ત હૈ ઓર કિન્હીં જીવોં કા કર્મોપચય
અનાદિ અનન્ત હૈ-પર સાદિ અનન્ત કર્મોપચય કિસીં મી જીવ કા નહીં
હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ડનસે કહતે હું કિ-(ગોયમા) હે ગૌતમ !
(શ્રિયાવહિયવંધયસ્સ કમ્મોવચણ સાદ્દણ સપજ્જવસિણ) જો કર્મ
કેવલ યોગ કે હી નિમિત્ત સે આતા હૈ-કપાય કે નિમિત્ત સે નહીં-
વહ એર્યાપથિક હૈ હસ એર્યાપથિક કર્મ કા વંધ કરનેવાલા જો
જીવ હૈ-જૈસે ગ્યારહવેં ૧૧ વોરહવેં ૧૨ ઓર તેરહવેં ગુણસ્થાનવર્તી જીવ
ડસકે જો કર્મોપચય હોતા હૈ વહ સાદિક ઓર સપર્યવસિત હોતા હૈ ।
હસમેં સાદિતા હસલિયે કહી ગઈ હૈ કિ વહ કર્મ જીવ કો નીચેકે ગુણ-
સ્થાનોં મેં રહને પર નહીં વંધતા હૈ-કયોં કિ વહાં પર કપાય કા સદ્ગાવ

રવો પડશે. હવે આ વિષયના વધારે સ્પષ્ટીકરણને માટે ગૌતમ સ્વામી મહા-
વીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—

(સે કેળટ્ટેણં ?) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે કેટ-
લાક જીવોનો કર્મોપચય સાદિ સાન્ત હોય છે, કેટલાક જીવોનો કર્મોપચય
અનાદિ સાન્ત હોય છે અને કેટલાક જીવોનો કર્મોપચય અનાદિ અનંત હોય
છે, પણ કોઈ પણ જીવનો કર્મોપચય સાદિ અનંત હોતો નથી ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—(ગોયમા !) હે ગૌતમ !
(શ્રિયાવહિયવંધયસ્સ કમ્મોવચણ સાદ્દણ સપજ્જવસિણ) જે કર્મબંધ યોગને
કારણે જ થાય છે, કપાયને કારણે થતો નથી, એવાં કર્મબંધને “ઐર્યાપથિક
બંધ” કહે છે. એ પ્રકારના ઐર્યાપથિક કર્મોના બંધ કરનાર જીવોનો કર્મો-
પચય સાદિ અને સાન્ત હોય છે. જેમકે—અગિયાર, બાર અને તેરમા ગુણ-
સ્થાને રહેલા જીવ આ પ્રકારનો હોય છે, એટલે કે તે જીવોનો કર્મોપચય
સાદિ અને સાન્ત હોય છે. તેને સાદિ કહેવાનું કારણ એ છે કે જીવ આ
કર્મબંધ નીચેનાં ગુણસ્થાનોમાં રહે ત્યારે બાંધતો નથી, કારણે કે નીચેનાં

અસ્તિ એકેષાં કતિપયાનાં જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ સપર્યવસિતો ભવતિ । 'અત્યેગદ્યાણં અણાદૈ સપજ્જવસિ' એકેષાં કતિપયાનાં જીવાનાં તુ કર્મોપચયઃ અનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ સાન્તોઽસ્તિ 'અત્યેગદ્યાણં અણાદૈ અપજ્જવસિ' અસ્તિ એકેષાં કતિપયાનાં જીવાનાં કર્મોપચયઃ અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ અનન્તઃ, કિન્તુ 'જો ચેવ ણં જીવાણં કર્મોવચણ સાદૈ અપજ્જવસિ' નો ચેવ સ્વલુ-નૈવ કથમપિ જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ અપર્યવસિતઃ અનન્તો ભવતિ । 'ગૌતમઃ પુચ્છતિ- 'કેણદ્ટ્ઠં ? ' હં ભદન્ત ! તત્

હૈ इसी अपेक्षा को ध्यान में रखकर यहां कर्मबंधरूप पुद्गलोपचय को किसी जीव की अपेक्षा से सादि सान्त कह दिया गया है ऐसा जानना चाहिये सूत्रकार इस विषय को स्वयं आगे स्पष्ट करनेवाले हैं-अतः विशेषरूप में इस पर कुछ नहीं लिखा जाता है-इसी कारण (अत्येग-दयाणं जीवाणं कम्मोवचण सादए सपज्जवसि) ऐसा कहा है । (अत्ये-गदयाणं जीवाणं अणादए सपज्जवसि) तथा कितनेक जीव ऐसे भी हैं कि जिनका कर्मबंधरूप पुद्गलोपचय अनादि होकर भी सान्त होता है । ऐसे वे जीव अन्तरात्मा-सम्यग्दृष्टि होते हैं । (अत्येगदयाणं अणा-दए अपज्जवसि) कितनेक जीव ऐसे भी हैं कि जिनका कर्मबंधरूप कर्मोपचय अनादि अनन्त होता ऐसे जीव अभवपत्रेणी के होते हैं । किन्तु (जो चैव णं जीवाणं कम्मोवचण सादए अपज्जवसि) ऐसे जीव कोई भी नहीं हैं कि जिनका कर्मोपचय सादि होकर भी अनन्त ही बना रहे क्योंकि ऐसी मान्यता में मुक्ति के अभाव का प्रसङ्ग प्राप्त होता है । अब गौतम इसी विषय को विशेषरूप से स्पष्ट समझने के लिये प्रभु

કહેલ છે આ વિષયનું સૂત્રકારે પહેલાં વધારે સ્પષ્ટીકરણ કરેલું છે, તેથી અહીં તેનું વધુ પિષ્ટપેપણ કર્યું નથી. એ જ કારણે (અત્યેગદ્યાણં જીવાણં કર્મોવચણ સાદૈ સપજ્જવસિ) કેટલાકે જીવોને સાદિ સાન્ત કહ્યા છે.

(અત્યેગદ્યાણં જીવાણં અણાદૈ સપજ્જવસિ) કેટલાકે જીવો એવાં હોય છે કે જેમનો કર્મબંધરૂપ પુદ્ગલોપચય અનાદિ હોવા છતાં સાન્ત (પ્રારંભ સહિત) હોય છે. એવાં જીવો (અન્તરાત્માઓ) સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોય છે. (અત્યેગદ્યાણં અણાદૈ અપજ્જવસિ) કેટલાકે જીવો એવા હોય છે કે જેમનો કર્મબંધરૂપ પુદ્ગલોપચય અનાદિ અને અનંત હોય છે. એવાં જીવો અલભ્ય શ્રેણિના હોય છે. પરંતુ (જો ચેવ ણં જીવાણં કર્મોવચણ સાદૈ અપજ્જવસિ) કોઈ પણ જીવ એવાં હોતા નથી કે જેમનો કર્મોપચય સાદિ અને અનંત હોય, કારણ કે આ પ્રકારની માન્યતાના સ્વીકારથી મુક્તિના અભાવને સ્વીકાર

સાદિત્વમ્ અયોગ્યવસ્થાયાં, શ્રેણિપતિપાતે વા અવન્યનાત્ સપર્યવસિતત્વં સાન્તત્વં
 ચ વોધ્યમ્ 'ભવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણાદિ સપજ્જવસિણ' ભવસિદ્ધિકસ્ય
 ભવે ભવેષુ વા સિદ્ધિર્યસ્ય તસ્ય ભવ્યસ્ય જીવસ્ય કર્મોપચયઃ અનાદિકઃ સપર્યવ-

કે કારણ જો કર્મવંધ હોગા વહ બી અપૂર્વે હી હોગા-ઔર યોગ.નિમિત્તક
 હી હોગા, શરીરજન્ય યા વાણીજન્ય હી હોગા । હસ નિમિત્ત કો લેકર
 હસ કર્મવંધ મેં સાદિતા પ્રકટ કી ગઈ હૈ ઔર જય વહી આત્મા તેરહવે
 મે ચૌદહવે ગુણસ્થાન પર આરૂઢ હો જાવેગા-યા ગ્યારહવે સે વહ જીવ
 પતિત હો જાવેગા-તો એસી સ્થિતિ મેં ઉસ વંધ કિયે હુએ કર્મ કા અંત
 હો જાવેગા અતઃ ઉસમેં સપર્યવસિતતા આ જાવેગી હસી કારણ યહાં
 પર "કિતનેક જીવોં કા કર્મવંધ સાદિ સાન્ત હોતા હૈ" એસા કહા
 ગયા હૈ (ભવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણાદિ સપજ્જવસિણ) ઇક ભવ
 મેં અથવા અનેક ભવોં મેં જિસ જીવ કો સિદ્ધિ કી પ્રાપ્તિ હોગી વહ
 જીવ ભવસિદ્ધિક હૈ એસે ભવસિદ્ધિક-ભવ્ય-જીવ કે જો કર્મોપચય હૈ
 વહ અનાદિ હોતા હુઆ બી સાન્ત હોતા હૈ-હસકા કારણ યહ હૈ કિ
 જયતક ઉસકી આત્મા મેં સમ્યગ્દર્શન ગુણ પ્રકટ નહીં હુઆ હૈ તયતક
 કર્મવંધ અનાદિ હૈ ઔર હસકે હોતે હી ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હો જાને પર
 હસકા નાશકર વહ મુક્તિ મેં ચલા જાતા હૈ અતઃ ઉસ જીવ કા કર્મ-

પ્રમાણે પ્રારંભાં શુભસ્થાનમાં પણ કપાયોની ક્ષીણતા થઈ જવાને કારણે જે
 કર્મબંધ થશે તે પણ અપૂર્વ જ હશે અને યોગનિમિત્તક જ હશે એટલે કે
 શરીરજન્ય કે વાણીજન્ય જ હશે. આ કારણે આ કર્મબંધમાં સાદિતા (પ્રારંભ
 યુક્તતા) બતાવી છે. અને જ્યારે એ જ આત્મા તેરમાં શુભસ્થાનેથી ચૌદમાં
 શુભસ્થાને થી જશે, અથવા અગિયારમાં શુભસ્થાનેથી નીચેની શ્રેણિના શુભ-
 સ્થાને ઉતરી જશે, ત્યારે તે બાંધેલા કર્મોના અંત આવી જશે. તે કારણે
 તેમાં સપર્યવસિતતા (સાન્તતા-અન્ત યુક્તતા) બતાવી છે. તે કારણે એવું
 કહ્યું છે કે "કેટલાક જીવોના કર્મબંધ સાદિ અને સાન્ત હોય છે."

(ભવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણાદિ સપજ્જવસિણ) જે જીવને એક ભવમાં
 અથવા અનેક ભવમાં સિદ્ધિની પ્રાપ્તિ થવાની હોય એવા જીવને 'ભવસિદ્ધિક'
 કહે છે. ભવસિદ્ધિક-ભવ્ય-જીવનો જે કર્મોપચય હોય છે તે અનાદિ હોવા
 છતાં પણ સાન્ત (અન્ત સહિત) હોય છે. તેનું કારણ એ છે કે જ્યાં સુધી
 તેના આત્મામાં સમ્યગ્દર્શન શુભ પ્રકટ થયો નથી ત્યાં સુધી કર્મબંધ અનાદિ
 છે, પણ સમ્યગ્દર્શન પ્રકટ થતાં જ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થઈ જાયથી તેના કર્મોના)

રહતા હૈ અતઃ અવદ્ધ પૂર્વે હોને કે કારણ હસ કર્મ કા યંધ હોને સે યહ કર્મવંધ સાદિ માના ગયા હૈ ઓર અયોગી અવસ્થા હોને પર અર્થાત્ ચૌદહવે ગુણસ્થાન મેં ચલે જાને પર અથવા શ્રેણિ સે પતિત હોને પર ડસકા યંધ છૂટ જાતા હૈ, હસલિયે વહ સ્થાન્ટ માના જાતા હૈ તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ કર્મવંધ કા જય વિચાર કિયા ગયા હૈ તો વહાં પર (જોગા પયડિપપસા ઠિઠ્ઠિ અણુભાગા કસાયઓ હોતિ) એસા કહા ગયા હૈ અર્થાત્ પ્રકૃતિ યંધ ઓર પ્રદેશવંધ યે દો યંધ યોગ સે હોતે હૈ ઓર સ્થિતિયંધ તથા અણુભાગ યંધ યે દો યંધ કપાય સે હોતે હૈ—હસતરહ કર્મવંધ કે દો મુખ્યકારણ હૈ—એક યોગ ઓર દૂસરા કપાય જો કર્મવંધ કેવલ ગમનાગમનાદિક ક્રિયાઓં કે નિમિત્ત સે હી હોતા હૈ વહ એયાં પથિક કર્મ કહલાતા હૈ હસ કર્મ કો યાંધને વાલા જીવ એયાંપથિક વંધક કહા ગયા હૈ—દસવેં ગુણસ્થાનતક હી કપાય કા સદ્ભાવ કહા ગયા હૈ હસકે ડપર કે ગુણસ્થાનોં મેં કપાય તો હોની નહીં હૈ કેવલ યોગ હી રહતા હૈ—ગ્યારહવેં ગુણસ્થાન મેં કપાય બિલકુલ ઉપશાન્ત રહ-સી હૈ અતઃ વહ નહોં કે ચરાપર વહાં હૈ યહાં જો કર્મપ્રકૃતિ કા યંધ હોગા હસી તરહ વારહવેં ગુણસ્થાન મેં શી કપાયોં કી ક્ષીણતા હો જાને

શુભસ્થાનોમાં કપાયનો સદ્ભાવ રહે છે તેથી અબદ્ધ પૂર્વ (પૂર્વે નહીં બંધાયેલો) હોવાને કારણે આ કર્મબંધને સાદિ (પ્રારંભ યુક્ત) કહ્યો છે. અયોગી અવસ્થામાં એટલે કે સૌંદર્યમાં શુભસ્થાને સહી જવાથી અથવા શ્રેણિથી નીચે ઉતરતા તેના બંધ છૂટી જાય છે, તે કારણે તેને સ્થાન્ત (અન્ત સહિત) માનેલો છે.

કર્મબંધનો જ્યારે વિચાર કરવામાં આવે ત્યારે એ વાત ધ્યાનમાં રાખવા જેવી છે કે (જોગા પયડિપદેશા ઠિઠ્ઠિ અણુભાગા કસાયઓ હોતિ) પ્રકૃતિબંધ અને પ્રદેશબંધ એ બંને બંધ યોગથી થાય છે, અને સ્થિતિબંધ તથા અણુભાગબંધ કપાયથી થાય છે. આ રીતે કર્મબંધનાં મુખ્ય બે કારણ છે—

(૧) યોગ અને (૨) કપાય.

જે કર્મબંધ ગમનાગમન આદિ ક્રિયાઓને કારણે થાય છે તે કર્મબંધને ઐર્યાપથિક કર્મબંધ કહે છે, અને એવાં કર્મને બાંધનાર જીવને ઐર્યાપથિક બંધક કહ્યો છે. હસમાં શુભસ્થાન સુધી જ કપાયનો સદ્ભાવ કહ્યો છે, ત્યાર પછીનાં શુભસ્થાનોમાં કપાયનો અભાવ હોય છે પણ યોગનો સદ્ભાવ હોય છે. અગિયારમાં શુભસ્થાનમાં કપાય બિલકુલ ઉપશાન્ત રહે છે. તેથી ત્યાં તે નહીં જેવી જ હોય છે. ત્યાં જે કર્મપ્રકૃતિનો બંધ થશે તે અપૂર્વ

સાદિત્વમ્ અયોગ્યવસ્થાયાં, શ્રેણિપ્રતિપાતે વા અવન્ધનાત્ સપર્યવસિતત્વં સાન્તત્વં
 ચ બોધ્યમ્ 'ભવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણાદિ સપજ્જવસિણ' ભવસિદ્ધિકસ્ય
 ભવે ભવેષુ વા સિદ્ધિર્યસ્ય તસ્ય ભવ્યસ્ય જીવસ્ય કર્મોપચયઃ અનાદિકઃ સપર્યવ-

કે કારણ જો કર્મબંધ હોગા વહ્ બી અપૂર્વહી હોગા-ઔર યોગ,નિમિત્તક
 હી હોગા, શરીરજન્ય યા વાણીજન્ય હી હોગા । હસ નિમિત્ત કો હેકર
 હસ કર્મબંધ મેં સાદિતા પ્રકટ કી ગઈ હૈ ઔર જય વહી આત્મા તેરહવેં
 મેં ચૌદહવેં ગુણસ્થાન પર આરુઢ્ઢ હો જાવેગા-યા ગ્યારહવેં સે વહ જીવ
 પતિત હો જાવેગા-તો એસી સ્થિતિ મેં 'સ' વંધ કિયે હુણ કર્મ કા અંત
 હો જાવેગા અતઃ 'સ'મ્ સપર્યવસિતતા આ જાવેગી હસી કારણ યહાં
 પર "કિતનેક જીવોં કા કર્મબંધ સાદિ સાન્ત હોતા હૈ" એસા કહા
 ગયા હૈ ('ભવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણાદિ સપજ્જવસિણ) એક ભવ
 મેં અથવા અનેક ભવોં મેં જિસ જીવ કો સિદ્ધિ કી પ્રાપ્તિ હોગી વહ
 જીવ ભવસિદ્ધિક હૈ એસે ભવસિદ્ધિક-ભવ્ય-જીવ કે જો કર્મોપચય હૈ
 વહ અનાદિ હોતા હુઆ બી સાન્ત હોતા હૈ-હસકા કારણ યહ હૈ કિ
 જયતક 'સ'કી આત્મા મેં સમ્યગ્દર્શન ગુણ પ્રકટ નહીં હુઆ હૈ તવતક
 કર્મબંધ અનાદિ હૈ ઔર હસકે હોતે હી ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હો જાને પર
 હસકા નાશકર વહ સુક્તિ મેં ચલા જાતા હૈ અતઃ 'સ' જીવ કા કર્મ-

પ્રમાણે બારમાં ગુણસ્થાનમાં પણ કપાયોની ક્ષીણતા થઈ જવાને કારણે જે
 કર્મબંધ થશે તે પણ અપૂર્વ જ હશે અને યોગનિમિત્તક જ હશે એટલે કે
 શરીરજન્ય કે વાણીજન્ય જ હશે. આ કારણે આ કર્મબંધમાં સાદિતા (પ્રારંભ
 ચુકતતા) બતાવી છે. અને જ્યારે એ જ આત્મા તેરમાં ગુણસ્થાનેથી ચૌદમાં
 ગુણસ્થાને થી જશે, અથવા અગિયારમાં ગુણસ્થાનેથી નીચેની શ્રેણિના ગુણ-
 સ્થાને ઉતરી જશે, ત્યારે તે બાંધેલા કર્મનો અંત આવી જશે. તે કારણે
 તેમાં સપર્યવસિતતા (સાન્તતા-અન્ત ચુકતતા) બતાવી છે. તે કારણે એવું
 કહ્યું છે કે "કેટલાક જીવોનો કર્મબંધ સાદિ અને સાન્ત હોય છે."

(ભવસિદ્ધિયસ્સ કર્મોવચણ અણાદિ સપજ્જવસિણ) જે જીવને એક ભવમાં
 અથવા અનેક ભવમાં સિદ્ધિની પ્રાપ્તિ થવાની હોય એવા જીવને 'ભવસિદ્ધિક'
 કહે છે. ભવસિદ્ધિક-ભવ્ય-જીવનો જે કર્મોપચય હોય છે તે અનાદિ હોવા
 છતાં પણ સાન્ત (અન્ત સહિત) હોય છે. તેનું કારણ એ છે કે જ્યાં સુધી
 તેના આત્મામાં સમ્યગ્દર્શન ગુણ પ્રકટ થયો નથી ત્યાં સુધી કર્મબંધ અનાદિ
 છે, પણ સમ્યગ્દર્શન પ્રકટ થતાં જ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થઈ જાયથી તેનો (તે કર્મનો)

સિતઃ સાન્તો ભવતિ, 'અભવસિદ્ધિયસ્સ કમ્મોવચણ અણાદિણ અપજ્જવસિણ' અભ-
વસિદ્ધિકસ્ય ન વિધતે ભવે મરણે વા સિદ્ધિર્યસ્ય તસ્ય અભવસ્ય જીવસ્ય કર્મો-
પચયઃ અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ અનન્તો મવતિ, 'સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं
વુચ્છદ-અત્યેગદ્ધયાણં જીવાણં કમ્મોવચણ સાદિણં ણો ચેવ ણં જીવાણં કમ્મોવચણ
સાદિણ અપજ્જવસિણ' હે ગૌતમ ! તત્ તેનાર્થેન एवम् ઉક્તરીત્યા ઉચ્યતે-યત્-
અસ્તિ એકેવાં જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ, સપર્યવસિતઃ-સાન્તઃ, કેવાચ્છિત્ત
અનાદિકઃ સપર્યવસિતઃ સાન્તઃ, કેવાચ્છિત્ત અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ કર્મોપચયઃ
કિન્તુ નો ચૈવ સ્વલુ જીવાનાં કર્મોપચયઃ સાદિકઃ અપર્યવસિતઃ અનન્તઃ સંભવતિ ।
ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-'વત્થે ણં મંતે ! કિં સાદિણ સપજ્જવસિણ, ચડમંગો ?' હે

બંધ અનાદિ હોને પર મી સાન્ત પ્રકટ કિયા ગયા હૈ । 'અભવસિદ્ધિય-
સ્સ કમ્મોવચણ અણાદિણ અપજ્જવસિણ) તથા જો અભવસિદ્ધિક જીવ
હૈ-કિસી મી ભવ મેં જિસે મુક્તિ પ્રાપ્ત નહીં હોતી હૈ એસે અભવ્ય જીવ
કા જો કર્મોપચય હૈ વહ અનાદિ હોકર મી અનન્ત હોતા હૈ । (સે
તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं વુચ્છદ, અત્યેગદ્ધયાણં જીવાણં કમ્મોવચણ સાદિ-
ણં, ણો ચેવ ણં જીવાણં કમ્મોવચણ સાદિણ અપજ્જવસિણ) હસી કારણ
હે ગૌતમ ! મૈને એસા કહા હૈ કિ કિતનેક જીવોં કા કર્મોપચય સાદિ
સાન્ત હોતા હૈ ઇત્યાદિ પરન્તુ કિસી મી જીવ કા વહ કર્મોપચય સાદિ
ઔર અપર્યવસિત નહીં હોતા હૈ ।

અવ ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન સે પુનઃ એસા પૂછતે હૈં કિ (વત્થેણં મંતે !
કિં સાદિણ સપજ્જવસિણ, ચડમંગો) હે ભદન્ત ! વહ કયા સાદિ હોકર

નાશ કરીને તે મોક્ષ લાય છે, તે કારણે તે જીવનો કર્મબંધ અનાદિ હોવા
છતાં પણ સાન્ત (અન્ત સહિત) કહ્યો છે. (અભવસિદ્ધિયસ્સ કમ્મોવચણ અણા-
દિણ અપજ્જવસિણ) જે જીવને કોઈ પણ ભવમાં મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી એવાં
અભવ્ય જીવોનો કર્મબંધ (કર્મોપચય) અનાદિ હોવા છતાં અનંત કહ્યો છે.
(સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं વુચ્છદ અત્યેગદ્ધયાણં જીવાણં કમ્મોવચણ સાદિણં ણો
ચેવ ણં કમ્મોવચણ સાદિણ અપજ્જવસિણ) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું
છે કે કેટલાક જીવોનો કર્મોપચય સાદિ સાન્ત હોય છે, કેટલાકનો અનાદિ
સાન્ત હોય છે અને કેટલાકનો અનાદિ અનંત હોય છે, પરંતુ કોઈ પણ
જીવનો કર્મોપચય સાદિ અને અનંત હોતો નથી.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (વત્થેણં મંતે !
કિં સાદિણ સપજ્જવસિણ, ચડમંગો) હે ભદન્ત ! શું પણ સાદિ સા-

મદન્ત ! વત્તં खलु किम् सादिकम्-सपर्यवसितम् सान्तम् ? १, चतुर्भङ्गम् ?-
चत्वारो भङ्गा भवन्ति किम् ? सादिकम् अपर्यवसितम्-अनन्तम् २. अनादिकम्-
सपर्यवसितम् सान्तम् ३ ? अनादिकम्-अपर्यवसितमनन्तं ४ ? भवति किम् ? भग-
वान् आह-‘ गोयमा ! वत्थे साइए सपज्जवसिए, ’ हे गौतम ! वत्तं सादिकं-
सपर्यवसितम् सान्तं भवति ‘ अवसेसा तिन्नि वि पडिसेहेयव्वा ’ अवशेषाः
सादिसान्तमिन्नास्त्रयोऽपि भङ्गाः प्रतिषेधयितव्याः न वाच्या इत्यर्थः । तथा च
वत्तं नो सादिकम् अनन्तम्, नो वा अनादिकम्-सान्तम्, नापि अनादिकम्-
अनन्तम्-इति भावः । गौतमः पुनः पृच्छति-‘ जहा णं भंते ! वत्थे साइए सप-
ज्जवसिए ’ हे मदन्त ! यथा खलु वत्तं सादिकं सपर्यवसितम् सान्तम्, नो
साइए अपज्जवसिए ’ नो सादिकम् अनन्तम्, ‘ णो अणाइए सपज्जवसिए ’ नो

મો સાન્ત હૈ ? યો સાદિ હોકર મી અનન્ત હૈ ? યા અનાદિ સાન્ત હૈ ?
યા અનાદિ અનન્ત હૈ ? इस प्रकार से वत्त के विषय में गौतम ने ये चार
भंग प्रश्न से पूछे-इसके उत्तर में प्रभु ने उनसे कहा (गोयमा ! वत्थे
साइए सपज्जवसिए) हे गौतम ! वत्त सादि सान्त है । (अवसेसा
तिन्नि वि पडिसेहेयव्वा) सादि अनन्त वह नहीं है, अनादि सान्त वह
नहीं है और न वह अनादि अनन्त ही है-इस प्रकार से अवशेष
तीन भङ्गों का यहां प्रभु ने प्रतिषेध किया अब इसी दृष्टान्त से गौत-
मस्वामी प्रभु से यह पूछते हैं कि-(जहा णं भंते ! वत्थे साइए सपज्ज-
वसिए) हे मदन्त ! जिस प्रकार से आपने वत्त को सान्त कहा है (नो
साइए अपज्जवसिए) सादि अनन्त नहीं कहा है, (णो अणाइए सप-

કે સાદિ અનંત હોય છે ? કે અનાદિ સાન્ત હોય છે ? કે અનાદિ અનંત
હોય છે ? વચ્ચના વિષે આ પ્રકારના ચાર ભંગો (વિકલ્પો) ગૌતમ સ્વામીએ
મહાવીર પ્રભુને પૂછ્યા.

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-(ગોયમા !) હે ગૌતમ !
(વત્થે સાઈય સપજ્જવસિય) વચ્ચ સાદિ સાન્ત હોય છે, (અવસેસા તિન્નિ વિ
પડિસેહેયવ્વા) તે સાદિ અનંત હોતું નથી, અનાદિ સાન્ત હોતું નથી અને
અનાદિ અનંત પણ હોતું નથી. આ રીતે બાકીના ત્રણ વિકલ્પોનો નકારાત્મક
જવાબ આપ્યો છે હવે એ જ દષ્ટાન્તને આધારે ગૌતમ સ્વામી શ્રવેના વિષ-
યમાં નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે—

(જહાણં મંતે ! વત્થે સાઈય સપજ્જવસિય) હે ભદ્રન્ત ! જેમ આપે વચ્ચને
સાદિ અને સાન્ત કહ્યું છે, (નો સાઈય અપજ્જવસિય) સાદિ અનંત કહ્યું નથી,
(ણો અણાઈય સપજ્જવસિય) અનાદિ સાન્ત કહ્યું નથી, અને (ણો અણાઈય

સિતઃ સાન્તો મવતિ, 'અમવસિદ્ધિયસ્ત કમ્મોવચણ અણાદિ અપજ્જવસિણ' અમ-
વસિદ્ધિકત્ત્વ ન વિધતે મવં મવેપુ વા સિદ્ધિર્યસ્ય તસ્ય અમવ્યસ્ય જીવસ્ય કર્મો-
પચયઃ અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ અનન્તો મવતિ, 'સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं
वुच्चइ-अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचणं साइए० णो चेव णं जीवाणं कम्मोवचणं
साइए अपज्जवसिण' हे गौतम ! तत् तेनार्थेन एवम् उक्तरीत्या उच्यते-यद्-
अस्ति एकेषां जीवानां कर्मोपचयः सादिकः, सपर्यवसितः-सान्तः, केषाञ्चित्
अनादिकः सपर्यवसितः सान्तः, केषाञ्चित् अनादिकः अपर्यवसितः कर्मोपचयः
किन्तु नो चैव खलु जीवानां कर्मोपचयः सादिकः अपर्यवसितः अनन्तः संभवति ।
गौतमः पृच्छति-' वत्ये णं भन्ते ! किं साइए सपज्जवसिण, चउमंगो ? ' हे

बंध अनादि होने पर भी सान्त प्रकट किया गया है । 'अमवसिद्धि-
स्त कम्मोवचण अणादिए अपज्जवसिए) तथा जो अमवसिद्धिक जीव
है-किसी भी भव में जिसे मुक्ति प्राप्त नहीं होती है ऐसे अमव्य जीव
का जो कर्मोपचय है वह अनादि होकर भी अनन्त होता है । (से
तेणद्वेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचणं साइ-
ए०, णो चेव णं जीवाणं कम्मोवचणं साइए अपज्जवसिए) इसी कारण
हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि कितनेक जीवों का कर्मोपचय सादि
सान्त होता है इत्यादि परन्तु किसी भी जीव का वह कर्मोपचय सादि
और अपर्यवसित नहीं होता है ।

अब गौतम स्वामी प्रभु से पुनः ऐसा पूछते हैं कि (वत्येणं भन्ते ।
किं साइए सपज्जवसिए, चउमंगो) हे भदन्त ! वह क्या सादि होकर

નાશ કરીને તે મોક્ષે જાય છે, તે કારણે તે જીવનો કર્મબંધ અનાદિ હોવા
છતાં પણ સાન્ત (અન્ત સહિત) કહ્યો છે. (અમવસિદ્ધિયસ્ત કમ્મોવચણ અણા-
દિ અપજ્જવસિણ) જે જીવને કોઈ પણ ભવમાં મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી એવાં
અભવ્ય જીવનો કર્મબંધ (કર્મોપચય) અનાદિ હોવા છતાં અન્ત કહ્યો છે.
(સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं वुच्चइ अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचणं साइए० णो
चेव णं कम्मोवचणं साइए अपज्जवसिण) हे गौतम ! ते कारण्ये भे' એવું' કહ્યું
છે કે કેટલાક જીવોનો કર્મોપચય સાદિ સાન્ત હોય છે, કેટલાકનો અનાદિ
સાન્ત હોય છે અને કેટલાકનો અનાદિ અન્ત હોય છે, પરંતુ કોઈ પણ
જીવનો કર્મોપચય સાદિ અને અન્ત હોતો નથી.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (વત્યેણં ભન્તે !
કિં સાઈ સપજ્જવસિણ, ચઉમંગો) હે ભદન્ત ! શું પણ સાદિ સા-

મદન્ત ! વત્તં સ્વલુ કિમ્ સાદિકમ્-સપર્યવસિતમ્ સાન્તમ્ ? ૧, ચતુર્થમ્ ?-
 ચત્વારો મદ્વા ભવન્તિ કિમ્ ? સાદિકમ્ અપર્યવસિતમ્-અનન્તમ્ ૨. અનાદિકમ્-
 સપર્યવસિતમ્ સાન્તમ્ ૩ ? અનાદિકમ્-અપર્યવસિતમનન્તં ૪ ? ભવતિ કિમ્ ? મગ-
 વાન્ આહ-‘ ગોયમા ! વત્થે સાદિણ સપજ્જવસિણ, ’ હે ગૌતમ ! વત્થં સાદિકં-
 સપર્યવસિતમ્ સાન્તં ભવતિ ‘ અવસેસા તિન્નિ વિ પહિસેહેયવ્વા ’ અવશેષાઃ
 સાદિસાન્તમિન્નાસ્રયોઽપિ મદ્વાઃ પ્રતિપેધયિતવ્યાઃ ન વાચ્યા इत्यर्थः । तथा च
 वत्तं नो सादिकम् अनन्तम्, नो वा अनादिकम्-सान्तम्, नापि अनादिकम्-
 अनन्तम्-इति भावः । गौतमः पुनः पृच्छति-‘ जहा णं भंते ! वत्थे सादिए सप-
 ज्जवसिए ’ हे मदन्त ! यथा स्वलु वत्तं साદિકં સપર્યવસિતમ્ સાન્તમ્, નો
 સાદિ અપજ્જવસિણ ’ નો સાદિકમ્ અનન્તમ્, ‘ જો અણાદિ સપજ્જવસિણ ’ નો

મો સાન્ત હૈ ? યા સાદિ હોકર મી અનન્ત હૈ ? યા અનાદિ સાન્ત હૈ ?
 યા અનાદિ અનન્ત હૈ ? હસ પ્રકાર સે વલ્લ કે વિપય મેં ગૌતમ ને ચે ચાર
 મંગ પ્રશ્ન સે પૂછે-હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ને ડનસે કહા (ગોયમા ! વત્થે
 સાદિણ સપજ્જવસિણ) હે ગૌતમ ! વલ્લ સાદિ સાન્ત હૈ । (અવસેસા
 તિન્નિ વિ પહિસેહેયવ્વા) સાદિ અનન્ત વહ નહીં હૈ, અનાદિ સાન્ત વહ
 નહીં હૈ ઓર ન વહ અનાદિ અનન્ત હી હૈ-હસ પ્રકાર સે અવશેષ
 ત્રીન મદ્વોં કા યહાં પ્રશ્ન ને પ્રતિપેધ કિયા અથ હસી દૃષ્ટાન્ત સે ગૌત-
 મસ્વામી પ્રશ્ન સે વહ પૂછતે હેં કિ-(જહા ણં મંતે ! વત્થે સાદિણ સપજ્જ-
 વસિણ) હે મદન્ત ! જિસ પ્રકાર સે આપને વલ્લ કો સાન્ત કહા હૈ (નો
 સાદિણ અપજ્જવસિણ) સાદિ અનન્ત નહીં કહા હૈ, (જો અણાદિ સપ-

દે સાદિ અનંત હોય છે ? કે અનાદિ સાન્ત હોય છે ? કે અનાદિ અનંત
 હોય છે ? વત્થના વિષે આ પ્રકારના ચાર લગેા (વિકલ્પો) ગૌતમ સ્વામીએ
 મહાવીર પ્રશ્નને પૂછ્યા.

તેના જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે-(ગોયમા !) હે ગૌતમ !
 (વત્થે સાદિણ સપજ્જવસિણ) વત્થ સાદિ સાન્ત હોય છે, (અવસેસા તિન્નિ વિ
 પહિસેહેયવ્વા) તે સાદિ અનંત હોતું નથી, અનાદિ સાન્ત હોતું નથી અને
 અનાદિ અનંત પણ હોતું નથી. આ રીતે બાકીના ત્રણ વિકલ્પોનો નકારાત્મક
 જવાબ આપ્યો છે હવે એ જ દૃષ્ટાન્તને આધારે ગૌતમ સ્વામી જીવોના વિષ-
 યમાં નીચેના ત્રણ પૂછે છે—

(જહાણં મંતે ! વત્થે સાદિણ સપજ્જવસિણ) હે મદન્ત ! જેમ આપે વત્થને
 સાદિ અને સાન્ત કહું છે, (નો સાદિણ અપજ્જવસિણ) સાદિ અનંત કહું નથી,
 (જો અણાદિ સપજ્જવસિણ) અનાદિ સાન્ત કહું નથી, અને (જો અણાદિ

સિતઃ સાન્તો મવતિ, 'અમવસિદ્ધિયસ્ત કમ્મોવચણ અણાદણ અગ્ગવસિણ' અમ-
વસિદ્ધિકસ્ય ન વિધતે મવે મંતેપુ વા સિદ્ધિર્યસ્ય તસ્ય અમવ્યસ્ય જીવસ્ય કમ્મો-
પચયઃ અનાદિકઃ અપર્યવસિતઃ અનન્તો મવતિ, 'સે તેણદ્દેણં મોયમા ! एवं
वुच्चइ-अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचणं साइए० णो चेव णं जीवाणं कम्मोवचणं
साइए अपज्जवसिण' हे गौतम ! तत् तेनार्थेन एवम् उक्त्वा उच्यते-यत्-
अस्ति एकेषां जीवानां कर्मोपचयः सादिकः, सपर्यवसितः-सान्तः, कैवाचित्
अनादिकः सपर्यवसितः सान्तः, कैवाचित् अनादिकः अपर्यवसितः कर्मोपचयः
किन्तु नो चैव खलु जीवानां कर्मोपचयः सादिकः अपर्यवसितः अनन्तः संभवति ।
गौतमः पृच्छति-'वत्ये णं भंते ! किं साइए सपज्जवसिण, चउमंगो ?' हे

બંધ અનાદિ હોને પર મી સાન્ત પ્રકટ કિયા ગયા હૈ । 'અમવસિદ્ધિય-
સ્ત કમ્મોવચણ અણાદણ અપજ્જવસિણ) તથા જો અમવસિદ્ધિક જીવ
હૈ-કિસી મી 'મવ મેં જિસે મુક્તિ પ્રાપ્ત નહીં હોતી હૈ' એસે અમવ્ય જીવ
કા જો કમ્મોપચય હૈ વહ અનાદિ હોકર મી અનન્ત હોતા હૈ । (સે
તેણદ્દેણં મોયમા ! एवं वुच्चइ, अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचणं साइ-
ए०, णो चेव णं जीवाणं कम्मोवचणं साइए अपज्जवसिण) इसी कारण
हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि कितनेक जीवों का कर्मोपचय-सादि
सान्त होता है इत्यादि परन्तु किसी भी जीव का वह कर्मोपचय सादि
और अपर्यवसित नहीं होता है ।

અવ ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન સે પુનઃ એસા પૂછતે હૈં કિ (વત્યેણં મંતે !
કિં સાઈએ સપજ્જવસિણ, ચઉમંગો) હૈ મદન્ત ! વહ્ન કયા સાદિ હોકર

નાશ કરીને તે મોક્ષ લાય છે, તે કારણે તે જીવને કર્મબંધ અનાદિ હોવા
છતાં પણ સાન્ત (અન્ત સહિત) કહ્યો છે. (અમવસિદ્ધિયસ્ત કમ્મોવચણ અણા-
દણ અપજ્જવસિણ) જે જીવને કોઈ પણ સવમાં મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી એવાં
અલબ્ધ જીવને કર્મબંધ (કર્મોપચય) અનાદિ હોવા છતાં અનંત કહ્યો છે.
(સે તેણદ્દેણં મોયમા ! एवं वुच्चइ अत्येगइयाणं जीवाणं कम्मोवचणं साइए० णो
चेव णं कम्मोवचणं साइए अपज्जवसिण) हे गौतम ! ते कारणें मे' जेवुं कहुं
छे के डेटलाके जिवोने कर्मोपचय सादि सान्त होय छे, डेटलाकेने अनादि
सान्त होय छे अने डेटलाकेने अनादि अनंत होय छे, परंतु कोछ'पल्ल
जिवोने कर्मोपचय सादि अने अनंत होतो नथी.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (વત્યેણં મંતે !
કિં સાઈએ સપજ્જવસિણ, ચઉમંગો) હૈ મદન્ત ! શું વહ્ન સાદિ સાન્ત

અપર્યવસિતાઃ અનન્તાઃ ભવન્તિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘ સે કેણદ્વેષં ? ’ હે ભદ્રન્ત ! ત્વં કેનાર્થેન-કેન કારણેન ઇવામુચ્યતે કતિપયે સાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ યાવત્-કતિપયે અનાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ ભવન્તિ ? ભગવાનાહ-‘ ગોયમા ! નેરહ્ય-તિરિક્ષલ-જોણિય-મણુસ્સ-દેવા ગદ્માગઈં પહુચ્ચ માહ્યા સપ્પજ્જવસિયા ’ હે ગૌતમ ! નૈરયિક - તિર્યગ્યોનિક - મનુષ્ય - દેવાઃ ગતિમ્ નરકાશુદ્ધર્ત્તનાદિકમાશ્રિત્ય સાદિકઃ આગતિમ્-નરકાર્દો ગમનમાશ્રિત્ય સપર્યવસિતાઃ સાન્તા ભવન્તિ, ‘ સિદ્ધા ગઈં પહુચ્ચ સાહ્યા અપ્પજ્જવસિયા ’ સિદ્ધાઃ જીવાઃ સિદ્ધગતિં પ્રતીત્ય આશ્રિત્ય સાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ અનન્તાઃ ભવન્તિ । ‘ ભવસિદ્ધિયા લલ્હિં પહુચ્ચ અણાહ્યા સપ્પજ્જવસિયા, ’ ભવસિદ્ધિકાઃ ભવ્યાઃ જીવાઃ લલ્હિં પ્રતીત્ય અનાદિકાઃ

કયા કારણ હૈં इस बात को जानने के अभिप्राय से उनसे पूछा-(से केणद्वेष्णं) हे भद्रन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि कितनेक जीव सादि सान्त हैं यावत् कितनेक जीव अनादि अनन्त हैं ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु ने उनसे कहा-(गोयमा ! नेरह्य-तिरिक्खजोणिय मणुस्स देवा गदमागईं पहुच्च साह्या सप्पज्जवसिया) हे गौतम ! नारक, तिर्यग्योनिक, मनुष्य और देव ये नरक आदिगति में आने की अपेक्षा से सादि और आगति-उस २ गति से निकलने की अपेक्षा से सान्त माने गये हैं । (सिद्धा गईं पहुच्च साह्या अप्पज्जवसिया) सिद्ध जीव सिद्ध गति की अपेक्षा से सादि अनन्त माने गये हैं । (भवसिद्धि या लल्लि पहुच्च अणाह्या सप्पज्जवसिया) भव्यजीव लल्लि की अपेक्षा अनादि सान्त माने गये हैं-क्यों कि भवसिद्धिक जीवों की भव्यत्वलल्लि

હવે છવોના વિષયમાં આ પ્રકારનું પ્રતિપાદન સાંભળીને તેનું કારણ બાણવાની જ્ઞાનાસાધી ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પૂછે છે— (સે કેણદ્વેષં) હે ભદ્રન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે કેટલાક જીવો સાદિ સાન્ત હોય છે, કેટલાક સાદિ અનંત હોય છે, કેટલાક અનાદિ સાન્ત હોય છે, અને કેટલાક અનાદિ અનંત હોય છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! નેરહ્યતિરિક્ખજોણિય, મણુસ્સ દેવા ગદ્માગઈં પહુચ્ચ સાહ્યા સપ્પજ્જવસિયા) હે ગૌતમ ! નારક, તિર્યગ્યોનિક, મનુષ્ય અને દેવ, એ નરક આદિ ગતિમાં આવવાની અપેક્ષાએ સાદિ છે અને નરક આદિ ગતિ-ઓમાંથી નીકળવાની અપેક્ષાએ સાન્ત છે. (સિદ્ધા ગઈં પહુચ્ચ સાહ્યાં અપ્પજ્જવસિયા) સિદ્ધ જીવોને સિદ્ધ ગતિની અપેક્ષાએ સાદિ અનંત માનવામાં આવેલા છે. (ભવસિદ્ધિયા લલ્હિં પહુચ્ચ અણાહ્યા સપ્પજ્જવસિયા) ભવસિદ્ધિક ભવ્ય જીવોને લલ્હિની અપેક્ષાએ અનાદિ સાન્ત કહ્યા છે, કારણ કે ભવ-

અનાદિકમ્ સપર્યવસિતં સાન્તમ્, ' ણો અણાદ્ અપજ્જવસિણ્ ' નો અનાદિકમ્ અપર્યવસિતમ્ અનન્તમ્, ' તદ્દા ણં જીવા ણં કિં સાદ્ધયા સપજ્જવસિયા, ચત્તમંગો પુચ્છા ? ' તથા સ્વલુ જીવાઃ કિમ્ સાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ સાન્તાઃ ? ચતુર્થમ્— નો સાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ અનન્તાઃ ? નો વા અનાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ સાન્તાઃ ? ન વા અનાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ અનન્તાઃ ભવન્તિ કિમ્ ? ઇતિ પૂચ્છા પ્રશ્નઃ ? મગધાનાહ— ' ગોયમા ! અત્યેગદ્ધયા સાદ્ધયા સપજ્જવસિયા, ચત્તારિ વિ માણિયવ્વા ' હે ગૌતમ ? સન્તિ યત્—એકે કતિપપે જીવાઃ સાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ સાન્તાઃ ભવન્તિ, ચત્તારોડપિ મણિતવ્વાઃ તથા ચ કનિપપે જીવાઃ સાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ અનન્તાઃ, કતિપપે ચ અનાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ સાન્તાઃ, કતિપપે તુ અનાદિકાઃ

ઉજ્જવસિણ્) અનાદિ સાન્ત નહીં કહ્યા (ણો અણાદ્ અપજ્જવસિણ્)
 ઓર ન અનાદિ અનન્ત હી કહ્યા હૈ (તદ્દા ણં જીવાણં કિં સાદ્ધયા સપ-
 જ્જવસિયા ચત્તમંગો પુચ્છા) તો કયા ઇસી તરહ સે જીવ ખી કેવલ
 સાદિ સાન્ત હી હું ? વે સાદિ અનન્ત નહીં હું ? અનાદિ સાન્ત નહીં હું ?
 અનાદિ અનન્ત નહીં હું ? ઇસ પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં પ્રભુ ને ઉનસે કહ્યા
 —(ગોયમા) હે ગૌતમ ! જીવોં કે વિષય મેં એસી વાત નહીં હૈ—કપોં કિ
 (અત્યેગદ્ધયા સાદ્ધયા સપજ્જવસિયા) કિતનેક જીવ એસે ખી હું જો
 સાદિ સાન્ત હું, (ચત્તારિ વિ માણિયવ્વા) કિતનેક જીવ એસે હું જો
 સાદિ અપર્યવસિત—અનન્ત હું । કિતનેક જીવ એસે ખી હું જો અનાદિ
 સાન્ત હું ઓર કિતનેક જીવએસે હું જો અનાદિ અનન્ત હું । ઇસ પ્રકાર
 સે જીવ કે વિષય મેં પ્રભુ કા પ્રતિપોદન સુનકર ગૌતમ ને એસે કથન કા

અપજ્જવસિણ્) અનાદિ અનન્ત કહ્યું નથી, (તદ્દા ણં જીવાણં કિં સાદ્ધયા સપજ્જ-
 વસિયા, ચત્તમંગો પુચ્છા) એજ પ્રમાણે શું હવેા પણ માત્ર સાદિ સાન્ત જ
 છે ? શું તેઓ સાદિ અનન્ત નથી ? શું તેઓ અનાદિ સાન્ત નથી ? શું તેઓ
 અનાદિ અનન્ત નથી ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુએ કહ્યું—(ગોયમા !) હવેાનાં વિષ-
 યમાં એવી વાત નથી. (અત્યેગદ્ધયા સાદ્ધયા સપજ્જવસિયા) કેટલાક હવેા એવાં
 હોય છે કે જે સાદિ સાન્ત હોય છે, (ચત્તારિ વિ માણિયવ્વા) કેટલાક હવેા
 એવાં હોય છે કે જે સાદિ અનન્ત હોય છે, કેટલાક હવેા એવાં પણ હોય
 છે કે જે અનાદિ સાન્ત હોય છે, અને કેટલાક હવેા એવાં હોય છે કે જે
 અનાદિ અનન્ત હોય છે.

ન સંભવતિ, તથાપિ કાલસ્યાનાદિત્વાનુસારેણ અહોરાત્રાદેરનાદિત્વેऽપિ ઉત્પત્તિ-
માશ્રિત્ય સાદિત્વવ્યવહારત્ સિદ્ધેઃ સિદ્ધજીવરહિત્વાભાવેન અનાદિત્વેऽપિ
સિદ્ધસ્ય ઉત્પત્તિમાશ્રિત્ય સાદિત્વમ્ અનન્તત્વમુક્તમ્, તથા ચોક્તમ્

“ સઘ્વં સાઙ્ સરીરં ન ય, નામાઽઽમય દેહસઘ્ભાવો ।

કાલાઽનાદિત્તણઞ્ જહા વ રાઙ્-દિયાઙ્ ॥ ૧ ॥

“ સર્વં સાદિ શરીરં ન ચ નામાઽઽદિમયઃ દેહસદ્ભાવઃ ।

કાલાઽનાદિત્વાન્ યથા વા રાત્રિદિવાદીનામ્ ॥ ૧ ॥

ગતિ કી અપેક્ષા અનાદિ અનન્તતા હી ઘટિત હોતી હૈ-માદિ અનન્તતા
નહીં ? તો ઇસ શંકા કા સમાધાન યદ્ હૈ કિ સિદ્ધાન્ત કે ઇસ પ્રકાર
કે કથન સે યદ્યપિ સિદ્ધોં મેં સિદ્ધિગતિ કી અપેક્ષા લેકર સાદિ અન-
ન્તતા ઘટિત નહીં હો સકતી હૈ-ફિર ખી જૈસે કાલ અનાદિ માના ગયા
હૈ-ઔર ઇસી કારણ ઇસ કાલ કે પરિણમન રૂપ રાત ઔર દિવસ ખી
અનાદિ સિદ્ધ હોતે હું, કયોં કિ-કાલ ઇનસે કમી શૂન્ય રહા હો સો ઇસી
યાત વનતી નહીં હૈ-ફિર ખી ઉત્પત્તિ કી અપેક્ષા લેકર જૈસે રાતદિનોં
કો સાદિ કહા જાતા હૈ ઇસી તરહ સે નવીન સિદ્ધ જીવોં કી ઉત્પત્તિકી
અપેક્ષા સિદ્ધ જીવોં કો સાદિ ઔર અનન્ત કહા ગયા હૈ । તથા ચોક્તમ્

સઘ્વં સાઙ્ સરીરં ન ય નામાઽઽમય દેહસઘ્ભાવો ।

કાલાનાદિત્તણઞ્ જહા વ રાઙ્ દિયાઙ્ ॥ ૧ ॥ ”

એવું કહ્યું છે કે ભૂતકાળમાં કદી પણ સિદ્ધગતિ સિદ્ધ એવાથી રહિત રહી
નથી. આ સિદ્ધાન્તના કથન અનુસાર તો સિદ્ધ એવામાં સિદ્ધ ગતિની અપે-
ક્ષાએ અનાદિ અનંતતા જ ઘટાવી શકાય છે-સાદિ અનંતતા ઘટાવી શકાતી નથી.

સમાધાન—સિદ્ધાન્તના આ કથન પ્રમાણે જો કે સિદ્ધોમાં સિદ્ધગતિની
અપેક્ષાએ સાદિ અનંતતા ઘટાવી શકાતી નથી, પણ જેવી રીતે કાળને અનાદિ
માન્યો છે અને તે કારણે તે કાળના પરિણમન રૂપ રાત અને દિવસ પણ
અનાદિ સિદ્ધ થાય છે, કારણ કે કાળ કદિ પણ રાત અને દિવસથી રહિત
રહ્યો નથી. છતાં પણ ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ જેમ રાત્રિ દિવસને સાદિ કહેવામાં
આવે છે, એજ પ્રમાણે નવિન સિદ્ધ એવાની ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ સિદ્ધ
એવાને સાદિ અને અનંત કહ્યા છે. કહ્યું પણ છે કે—

“ સઘ્વં સાઙ્ સરીરં ન ય નામાઽઽમય દેહસઘ્ભાવો ।

કાલાનાદિત્તણઞ્ જહા વ રાઙ્ દિયાઙ્ ॥ ૧ ॥ ”

સપર્યવસિતાઃ સાન્તા ભવન્તિ, ભવતિદ્વિજાનાં જીવાનાં મગ્ધત્વલ્લિધઃ સિદ્ધત્વે સતિ નિર્વર્તેતે ઇતિ કૃતા અનાદિકાઃ સપર્યવસિતાઃ સાન્તાઃ ભવન્તિ । 'અમગ્ધ-સિદ્ધિયા સંસારં પઙ્કચ્ચ અણાદ્યા અપજ્જવસિયા' અમગ્ધસિદ્ધિયા અમગ્ધા જીવાઃ સંસારં પ્રતોત્પ આશ્રિત્ય અનાદિકાઃ અપર્યવસિતાઃ અન્તરહિતા ભવન્તિ ? 'સે તેજ્ઞેણ' તત્ તેનાર્થેન હે ગૌતમ ! ઉપર્યુક્તરીત્યા એવમુચ્યતે જીવાથતુર્વિધા ભવન્તિ, યથાપિ ।

‘સાઈ અપજ્જવસિયા, સિદ્ધા ન ય નામ તીયકાલમ્મિ ।

આસિ કયાઈ વિ સુળ્લા, સિદ્ધી સિદ્ધેહિં સિદ્ધંતે’ ॥ ૧ ॥

સાદયઃ અપર્યવસિતાઃ સિદ્ધા ન ચ નામાડ્ઠીતકાલે । ॥ ૧ ॥

આતીત્ કદાચિદપિ શૂન્યા સિદ્ધિઃ સિદ્ધૈઃ સિદ્ધાન્તે’ ઇતિ વચનપ્રમાણ્યાત્ ભૂતકાલે સિદ્ધજીવરહિતસિદ્ધેરભાવપ્રતિપાદનેન સિદ્ધસ્યાનાદિત્યાત્ સાદિત્વં

સિદ્ધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કર લેને પર દૂર હો જાતી છે । ફસલિયે ફસ અપેક્ષા ઉઠ્ઠે અનાદિ સાન્ત પ્રકટ કિયા ગયા છે । (અમગ્ધસિદ્ધિયા સંસારં પઙ્કચ્ચ-અણાદ્યા અપજ્જવસિયા) જો અમગ્ધ હોતે હું વે સંસાર સે કમ્મી મ્મી પાર નહીં હોતે હું-અતઃ સંસાર કી અપેક્ષા લેકર અમગ્ધજીવ અનાદિ અનન્ત કહે ગયે હું । (સે કેજ્ઞેણ) ફસ કારણ હે ગૌતમ ! મેંને ઉપર્યુક્ત રૂપ સે એસા કહ્વા છે કિ જીવ ચારોં પ્રકાર કે હોતે હું । યથાપિ ।

સાઈ અપજ્જવસિયા સિદ્ધા ન ય નામ તીય કાલમ્મિ, ।

આસિ કયાવિ સુળ્લા સિદ્ધી સિદ્ધેહિં સિદ્ધંતે ॥ ૧ ॥

યહાં પર કોઈ એસી આદાંકા કર સકના છે કિ આપ સિદ્ધ જીવોં કો સિદ્ધિગતિ કી અપેક્ષા સે સાદિ અનન્ત કૈસે પ્રકટ કર રહે હું-કયાં કિ સિદ્ધાન્ત કા એસા વચન છે કિ અતીત કાલમેં કમ્મી મ્મી સિદ્ધિ સિદ્ધ જીવોંસે શૂન્ય રહી નહીં છે । તો ફસ સિદ્ધાન્તવચનસે તો સિદ્ધજીવોંમે સિદ્ધ-

સિદ્ધિક્ક જીવોની ભવ્યત્વ-લ્લિધિ સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરતા જ દૂર થઈ જાય છે, તે રીતે વિચાર કરતા તેમને અનાદિ સાન્ત કહ્યા છે । (અમગ્ધસિદ્ધિયા સંસારં પઙ્કચ્ચ અણાદ્યા અપજ્જવસિયા) જે અભવ્ય જીવો હોય છે તેઓ કદિ પણ સંસારને તરી જઈ શકતા નથી, તે કારણે સંસારની અપેક્ષાએ તેમને અનાદિ અનન્ત કહ્યા છે । (સે તેજ્ઞેણ) હે ગૌતમ ! ઉપર્યુક્ત કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે કેટલાક જીવો સાદિ સાન્ત હોય છે, ઇત્યાદિ । જે કે

સાઈ અપજ્જવસિયા સિદ્ધા ન ય નામ તીયકાલમ્મિ,

આસિ કયાવિ સુળ્લા સિદ્ધિ સિદ્ધેહિં સિદ્ધંતે ॥ ૧ ॥

અહીં કોઈને એવી શકા ઉદ્ભવી શકે કે આપ સિદ્ધ જીવોને સિદ્ધ-ગતિની અપેક્ષાએ સાદિ અનન્ત કેવી રીતે કહો છો ? કારણ કે સિદ્ધાન્તમાં

ન સંભવતિ, તથાપિ કાલસ્યાનાદિત્વાનુસારેણ અહોરાત્રાદેરનાદિત્વેઽપિ ઉત્પત્તિ-
માશ્રિત્ય સાદિત્વવ્યવહારયન્ સિદ્ધેઃ સિદ્ધજીવરક્ષિત્વાભાવેન અનાદિત્વેઽપિ
સિદ્ધસ્ય ઉત્પત્તિમાશ્રિત્ય સાદિત્વમ્ અનન્તત્વમુક્તમ્, તથા ચોક્તમ્

“ સઘ્વં સાહ સરીરં ન ય, નામાઽઽમય દેહસઘ્માવો ।

કાલાઽનાદિત્તણઞ્ચો જહા વ રાહં-દિવાર્દ્ધં ॥ ૧ ॥

“ સર્વં સાદિ શરીરં ન ચ નામાઽઽદિમયઃ દેહસદ્ભાવઃ ।

કાલાઽનાદિત્વાત્ યથા વા રાત્રિદિવાદીનામ્ ॥ ૧ ॥

ગતિ કી અપેક્ષા અનાદિ અનન્તતા હી ઘટિત હોતી હૈ-માદિ અનન્તતા
નહીં ? તો ઇત્ત શંકા કા સમાધાન યહ હૈ કિ સિદ્ધાન્ત કે ઇસ પ્રકાર
કે કથન સે યથાપિ સિદ્ધોં મેં સિદ્ધિગતિ કી અપેક્ષા લેકર સાદિ અન-
ન્તતા ઘટિત નહીં હો સક્તી હૈ-ફિર ખી જૈસે કાલ અનાદિ માના ગયા
હૈ-ઔર ઇસી કારણ ઇત્ત કાલ કે પરિણમન રૂપ રાત ઔર દિવસ ખી
અનાદિ સિદ્ધ હોતે હૈ, કયોં કિ-કાલ ઇનસે કંબી શૂન્ય રહા હો સો પેસી
ઘાત ઘનતી નહીં હૈ-ફિર ખી ઉત્પત્તિ કી અપેક્ષા લેકર જૈસે રાતદિનોં
કો સાદિ કહા જાતા હૈ ઇસી તરહ સે નવીન સિદ્ધ જીવોં કી ઉત્પત્તિકી
અપેક્ષા સિદ્ધ જીવોં કો સાદિ ઔર અનન્ત કહા ગયા હૈ । તથા ચોક્તમ્

સઘ્વં સાહ સરીરં ન ય નામાઽઽમય દેહસઘ્માવો ।

કાલાનાદિત્તણઞ્ચો જહા વ રાહં દિવાર્દ્ધં ॥ ૧ ॥”

એવું કહ્યું છે કે ભૂતકાળમાં કદી પણ સિદ્ધગતિ સિદ્ધ જીવોથી રક્ષિત રહી
નથી. આ સિદ્ધાન્તના કથન અનુસાર તો સિદ્ધ જીવોમાં સિદ્ધ ગતિની અપે-
ક્ષાએ અનાદિ અનંતતા જ ઘટાવી શકાય છે-સાદિ અનંતતા ઘટાવી શકાતી નથી.

સમાધાન—સિદ્ધાન્તના આ કથન પ્રમાણે જો કે સિદ્ધોમાં સિદ્ધગતિની
અપેક્ષાએ સાદિ અનંતતા ઘટાવી શકાતી નથી, પણ જેવી રીતે કાળને અનાદિ
માન્યો છે અને તે કારણે તે કાળના પરિણમન રૂપ રાત અને દિવસ પણ
અનાદિ સિદ્ધ થાય છે, કારણ કે કાળ કદિ પણ રાત અને દિવસથી રક્ષિત
રહ્યો નથી. છતાં પણ ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ જેમ રાત્રિ દિવસને સાદિ કહેવામાં
આવે છે, એજ પ્રમાણે નવિન સિદ્ધ જીવોની ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ સિદ્ધ
જીવોને સાદિ અને અનંત કહ્યા છે. કહ્યું પણ છે કે—

“ સઘ્વં સાહ સરીરં ન ય નામાઽઽમય દેહસઘ્માવો ।

કાલાનાદિત્તણઞ્ચો જહા વ રાહં દિવાર્દ્ધં ॥ ૧ ॥”

“ સર્વો સાઈ સિદ્ધો ન યાદિમો વિજ્ઞહ તદ્દા તં ચ ।

સિદ્ધી સિદ્ધા ય સયા નિદ્વિદ્ધા રોહપુચ્છામ્ ” ॥ ૨ ॥

“ સર્વઃ સાદિઃ સિદ્ધઃ ન ચાદિમો વિચિતે તથા તચ ।

સિદ્ધિઃ સિદ્ધાથ સદા નિર્દિષ્ટા રોહપૃચ્છાયામ્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ । મુ. ૩ ॥

॥ કર્મસ્થિતિવક્તવ્યતા ॥

પૂર્વે કર્મોપચયસ્ય સાદિસાન્તત્વમુક્તમ્, તત્સમ્બન્ધાન્ કર્મણઃ ભેદાન્ સ્થિતિ
ચ મરુપયિતુમાહ—‘ કઙ્ઠ ણં મંતે ! ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—કઙ્ઠ ણં મંતે ! કમ્મપ્પયડીઓ પળણત્તાઓ ?

ગોચમા ! અટ્ટકમ્મપ્પયડીઓ પળણત્તાઓ તં જહા—

સર્વો સાઈ સિદ્ધો ન યાદિમો વિજ્ઞહ તદ્દા તં ચ ॥

સિદ્ધી સિદ્ધા ય સયા નિદ્વિદ્ધા રોહપુચ્છામ્ ॥ ૨ ॥ ”

તાત્પર્યં યદ્દ હૈ કિ—કાલ અનાદિ હૈ—હમ કારણ કિસી કા બી એસે
શરીર કા સજ્જાવ નહીં હૈ કિ જો સચ સે પહિલા હો, ફિર બી શરીર
સાદિ હૈ એસા કહા હી જાતા હૈ હસી પ્રકાર સે રાતદિન મેં બી એસા હી
સમજ્ઞના ચાહિયે અર્થાત્ કોઈ રાતદિવસ બી એસા નહીં હૈ જો સચ સે
પહિલા હો—ફિર બી રાતદિવસ સાદિ પ્રકટ કિયે ગયે હૈ હસી પ્રકાર સે
સિદ્ધિ કિસીબી સમય સિદ્ધોં રહિત નહીં હોતી હૈ હસી કારણ અમુક
જીવ સર્વ પ્રથમ સિદ્ધ હુઆ હૈ એસા નિશ્ચય નહીં હોતા હૈ ફિર બી ઉત્પત્તિ
કો હેકર સિદ્ધોં કો સાદિ અનન્ત કહા ગયા ગયા હૈ । હસી કારણ રોહક
અનગારકે પ્રશ્નોંમેં સિદ્ધિ ઓર સિદ્ધ અનાદિ પ્રકટ કિયે ગયે હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

“ સર્વો સાઈ સિદ્ધો ન યાદિમો વિજ્ઞહ તદ્દા તં ચ ।

સિદ્ધિ સિદ્ધા ય સયા નિદ્વિદ્ધા રોહપુચ્છામ્ ॥ ૨ ॥ ”

ભાવાર્થ—કાળ અનાદિ છે, તે કારણે એવું કોઈ પણ શરીર સંભવી
શકતું નથી કે જે સૌથી પહેલું હોય । છતાં પણ “ શરીર સાદિ છે, ” એવું
કહેવામાં આવે છે. રાતદિવસ વિષે પણ એવું જ સમજવું. એટલે કે કોઈપણ
રાત્રિદિવસ એવાં નથી કે જેને સૌથી પહેલા માની શકાય । છતાં પણ રાત્રિ
દિવસને સાદિ કહેવાં છે. એજ પ્રમાણે સિદ્ધિ કોઈ પણ સમયે સિદ્ધોથી
રહિત હોતી નથી. તે કારણે એવો નિશ્ચય કરી શકાતો નથી કે અમુક જીવ
સૌથી પહેલો સિદ્ધ થયો છે. છતાં પણ ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ સિદ્ધોને સાદિ
અનંત કહ્યા છે. એજ કારણે રોહક અણગારના પ્રશ્નોમાં સિદ્ધિ અને સિદ્ધને
અનાદિ પ્રકટ કરેલ છે. ॥ સૂત્ર ૩ ॥

નાનાવરણિજ્જં, દરિસનાવરણિજ્જં, જાવ-અંતરાઈયં । નાના
વરણિજ્જસ્સ ણં મંતે ! કમ્મસ્સ કેવઈયં કાલં વંધટ્ઠિઈ
પણ્ણત્તા ? ગોયમા ! જહણ્ણેણં અંતોમુહુત્તં, ઉક્કોસેણં તીસં
સાગરોવમકોડાકોડીઓ, તિન્નિ યં વાસમ્હસ્સાઈં અવાહા,
અવાહૂણિયા કમ્મટ્ઠિઈ-કમ્મનિસેઓ, એવં દરિસનાવરણિજ્જં
વેયણિજ્જં જહણ્ણેણં દો સમયા ઉક્કોસેણં જહા નાનાવરણિજ્જં,
મોહણિજ્જં જહણ્ણેણં અંતોમુહુત્તં, ઉક્કોસેણં સત્તરિ સાગરોવમ-
કોડાકોડીઓ, સત્તય વાસ સહસ્સાણિ અવાહા અવાહૂણિયા
કમ્મટ્ઠિઈ કમ્મનિસેઓ, આઊગં જહણ્ણેણં અંતોમુહુત્તં,
ઉક્કોસેણં તેત્તીસં સાગરોવમાણિ પુઠ્ઠવકોડિતિભાગો અવાહા,
અવાહૂણિયા કમ્મટ્ઠિઈ-કમ્મનિસેઓ, નામ-ગોયાણં જહણ્ણેણં
અઢ મુહુત્તા, ઉક્કોસેણં વીસં સાગરોવમકોડાકોડીઓ, દોણિ
ય વાસસહસ્સાણિ અવાહા, અવાહૂણિયા કમ્મટ્ઠિઈ-કમ્મનિ-
સેઓ, અંતરાઈયં જહા-નાનાવરણિજ્જં ॥ સૂ ૪ ॥

છાયા—કતિ સ્વલ્પ મદન્ત ! કર્મપ્રકૃતયઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! અષ્ટ કર્મ-
પ્રકૃતયઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા-જ્ઞાનાવરણીયમ્, દર્શનાવરણીયમ્, યાવત્-અન્તરાયિકમ્ ।

કર્મસ્થિતિ વક્તવ્યતા—

‘કહણં મંતે ! કમ્મપ્પગહીઓ’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(કહણં મંતે ! કમ્મપ્પયહીઓ પળ્ણત્તાઓ) હે મદન્ત !
કર્મપ્રકૃતિયાં કિતનો કહી ગઈ છે ? (ગોયમા ! અઢ કમ્મપ્પયહીઓ પળ્ણ-

કર્મસ્થિતિ વક્તવ્યતા—

“કહણં મંતે ! કમ્મપ્પગહીઓ” इत्यादि—

સૂત્રાર્થ—(કહણં મંતે ! કમ્મપ્પયહીઓ પળ્ણત્તાઓ) હે ભદન્ત ! કર્મ-
પ્રકૃતિઓ કેટલા પ્રકારની હશે ? (ગોયમા ! અઢ કમ્મપ્પયહીઓ પળ્ણત્તાઓ)

“ સર્વો સાઈ સિદ્ધો ન યાદિમો વિજ્ઞાં તદ્વા તં ન ।

સિદ્ધી સિદ્ધા ય સયા નિવિદ્વા રોહપુચ્છાણ ” ॥ ૨ ॥

“ સર્વે સાદિઃ સિદ્ધઃ ન વાદિમો વિગતે તથા તચ ।

સિદ્ધિઃ સિદ્ધાથ સદા નિર્દિષ્ટા રોહપુચ્છાયામ્ ॥ ૨ ॥ ૩૧૧ । મૂ૦ ૩ ॥

॥ કર્મસ્થિતિવક્તવ્યતા ॥

પૂર્વે કર્મોપચયસ્ય સાદિસાન્તત્યમુક્તમ્, તત્સમ્બન્ધ્યાન્ કર્મણઃ ભેદાન્ સ્થિતિં
ચ પ્રરૂપયિતુમાહ—‘ કદ્ જં મંતે ! ’ इत्यादि ।

મૂલ્ય—કદ્ જં મંતે ! કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લન્તાઓ ?
ગોયમા ! અદુકમ્મપ્પયડીઓ પળ્લન્તાઓ તં જહા—

સર્વો સાઈ સિદ્ધો ન યાદિમો વિજ્ઞાં તદ્વા તં ચ ॥

સિદ્ધી સિદ્ધા ય સયા નિવિદ્વા રોહપુચ્છાણ ॥ ૨ ॥ ”

તાત્પર્યં યદ્દ હૈ કિ—કાલ અનાદિ હૈ—इम कारण किसी का भी ऐसे
शरीर का सञ्जाव नहीं है कि जो सब से पहिला हो, फिर भी शरीर
सादि हैं ऐसा कहा ही जाता है इसी प्रकार से रातदिन में भी ऐसा ही
समझना चाहिये अर्थात् कोई रातदिवस भी ऐसा नहीं है जो सब से
पहिला हो—फिर भी रातदिवस सादि प्रकट किये गये हैं इसी प्रकार से
सिद्धि किसीभी समय सिद्धों रहित नहीं होती है इसी कारण अमुक
जीव सर्व प्रथम सिद्ध हुआ है ऐसानिश्चय नहीं होता है फिर भी उत्पत्ति
को लेकर सिद्धोंको सादि अनन्त कहा गया गया है । इसी कारण रोहक
अनगारके प्रश्नोंमें सिद्धि और सिद्ध अनादि प्रकट किये गये हैं ॥ सू० ३ ॥

“ સર્વો સાઈ સિદ્ધો ન યાદિમો વિજ્ઞાં તદ્વા તં ચ ।

સિદ્ધિ સિદ્ધા ય સયા નિવિદ્વા રોહપુચ્છાણ ॥ ૨ ॥ ”

ભાવાર્થ—કાળ અનાદિ છે, તે કારણે એવું કોઈ પણ શરીર સંભવી
શકતું નથી કે જે સૌથી પહેલું હોય । છતાં પણ “ શરીર આદિ છે, ” એવું
કહેવામાં આવે છે. રાતદિવસ વિષે પણ એવું જ સમજવું. એટલે કે કોઈપણ
રાત્રિદિવસ એવાં નથી કે જેને સૌથી પહેલા માની શકાય । છતાં પણ રાત્રિ
દિવસને સાદિ કહેવાં છે. એજ પ્રમાણે સિદ્ધિ કોઈ પણ સમયે સિદ્ધોથી
રહિત હોતી નથી. તે કારણે એવો નિશ્ચય કરી શકાતો નથી કે અમુક જીવ
સૌથી પહેલો સિદ્ધ થયો છે. છતાં પણ ઉત્પત્તિની અપેક્ષાએ સિદ્ધોને સાદિ
અનંત કહ્યા છે. એજ કારણે રોહક અણુગારના પ્રશ્નોમાં સિદ્ધિ અને સિદ્ધને
અનાદિ પ્રકટ કરેલ છે. ॥ સૂત્ર ૩ ॥

નાનર્મુહર્તમ્, ઉત્કર્ષેણ સપ્તસાગરોપમકોટીકોટયઃ, સપ્ત ચ વર્ષસહસ્રાણિ અવાધા, અવાધોનિકા કર્મસ્થિતિઃ કર્મનિપેકઃ આયુષ્કં જઘન્યેનાનર્મુહર્તમ્, ઉત્કર્ષેણ ત્રયશ્ચિન્ન સાગરોપમાણિ, પૂર્વકોટીત્રિમાગઃ અવાધા, અવાધોનિકા, કર્મસ્થિતિઃ-કર્મનિપેકઃ । નામ-ગોચરોઃ જઘન્યેનાષ્ટ મુહૂર્તાનિ, ઉત્કર્ષેણ વિશતિસાગરોપમકોટી

નીય કર્મની જઘન્ય સ્થિતિ અકપાય આત્માની અપેક્ષા દો સમયની છે અને ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મની જેમની ત્રીસ ૩૦ કોટાકોટી સાગરોપમની છે । (મોહણિજ્ઞં જહ્વણેણં, અંતોમુહુત્તં ચક્રોસેણં સત્તરિસાગરોપમકોટાકોટીઓ) મોહનીય કર્મની વંધસ્થિતિ જઘન્ય તો અન્તર્મુહર્તની છે અને ઉત્કૃષ્ટ ૭૦ સત્તર કોટાકોટી સાગરોપમની છે । (સત્ત ય વાસ સહસ્સાણિ અવાધા-અવાહુણિયા ક્ષમ્મઠ્ઠિં ક્ષમ્મનિસેઓ) ૭૦૦૦ વર્ષના આવાધાકાલ છે આ અવાધાકાલમાં રહિત જો કર્મસ્થિતિ છે તો આ કર્મનિપેક છે । (આઝં જહ્વણેણં અંતોમુહુત્તં, ચક્રોસેણં તેત્તીસં સાગરોપમાણિ પુન્નકોટિતિમાગો અવાધા અવાહુણિયા ક્ષમ્મઠ્ઠિં ક્ષમ્મનિસેઓ) આયુષ્કર્મની જઘન્યસ્થિતિ અન્તર્મુહર્તની છે -ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ત્રીસ ૩૩ સાગરોપમની છે અને આવાધાકાલમાં રહિત જો કર્મસ્થિતિ છે, તો આ કર્મનિપેકકાલ છે । (નામ-ગોચરં જહ્વણેણં અદ્દમુહુત્તા,

જઘન્ય સ્થિતિ અકપાય આત્માની અપેક્ષાએ જે સમયની છે અને ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મના બેટલી જ-ત્રીસ કોટાકોટી સાગરોપમની છે । (મોહણિજ્ઞં જહ્વણેણં અંતોમુહુત્તં ચક્રોસેણં સત્તરિસાગરોપમકોટાકોટીઓ) મોહનીય કર્મની વંધસ્થિતિ આવાધામાં આવી અન્તર્મુહુત્તની અને વધારેમાં વધારે ૭૦ કોટાકોટી સાગરોપમની છે ।

(સત્ત ય વાસ સહસ્સાણિ અવાધા-અવાહુણિયા ક્ષમ્મઠ્ઠિં ક્ષમ્મનિસેઓ) તેનો આવાધકાલ ૭૦૦૦ વર્ષનો છે. તે આવાધકાલ સિવાયની જે કર્મસ્થિતિ છે તે તેનો કર્મનિપેક (કર્મવેદનાનો કાળ) છે.

(આઝં જહ્વણેણં અંતોમુહુત્તં ચક્રોસેણં તેત્તીસં સાગરોપમાણિ પુન્નકોટિતિમાગો અવાધા, અવાહુણિયા ક્ષમ્મઠ્ઠિં ક્ષમ્મનિસેઓ) આયુષ્કર્મની સ્થિતિ આવાધામાં આવી અન્તર્મુહુત્તની અને વધારેમાં વધારે ૩૩ સાગરોપમની છે, અને તેનો આવાધકાલ પૂર્વ કોટિના ત્રીસ ભાગ બેટલી છે, તે આવાધકાલ સિવાયની જે કર્મસ્થિતિ છે, તે તેનો કર્મનિપેક (કર્મવેદનાનો કાળ) છે.

(નામ-ગોચરં જહ્વણેણં અદ્દમુહુત્તા, ચક્રોસેણં વીસં સાગરોપમકોટાકોટીઓ

જ્ઞાનાવરણીયસ્ય સ્વત્ત્વ મદન્ત ! કર્મણઃ કિયન્તં કાન્તં વંધસ્થિતિઃ પ્રપ્ત્તા ? ગૌતમ !
જયન્તેનાન્તર્મુહૂર્તમ્, ઉત્કૃષ્ટેન ત્રિસરતાગરોપમકોટીકોટયઃ, ધ્રીણિ ચ વર્ષ
સહસ્રાણિ અવાધા, અવાધોનિકા કર્મસ્થિતિઃ-કર્મનિષેઠઃ પયં દર્શનાવરણીય-
મપિ, વેદનીયં જયન્તેન દ્વૌ સમયાં ઉત્કૃષ્ટેન યથા જ્ઞાનાવરણીયમ્, મોહનીયં જયન્તે-

ત્તોઓ) હે ગૌતમ ! કર્મપ્રકૃતિયાં આઠ કહી ગઈ હું । (તં જહા) જો હસ
પ્રકાર સે હું (જાણાવરણિજ્જં, દરિસણાવરણિજ્જં જાવ અંતરાયં) જ્ઞાના
વરણીય, દર્શનાવરણીય, યાવત્ અન્તરાય । (જાણાવરણિજ્જસ્સ જં
મંતે ! કમ્મસ્સ કેવદ્દયં કાલં વંધદ્વિદ્ પળ્લણ્ણા) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવર-
ણીય કર્મ કી વંધ સ્થિતિ કિત્તને કાલતક કી કહી ગઈ હું ? (ગોયમા)
હે ગૌતમ ! (જહણ્ણેણં અંતો મુહુત્તં, ઉકોસેણં તીસં સાગરોવમકોઢાકો-
ઢીઓ-તિન્નિય વાસસહસ્સાઈં આવાહા) જયન્ત સે અન્તમુહૂત્તં કી
ઔર ઉત્કૃષ્ટ સે તીસ સાગરોપમ કોઢાકોઢી કી જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કી
વંધસ્થિતિ કહી ગઈ હે । તથા હસ કા અવાધાકાલ તીન હજાર વર્ષ કા
કહા ગયા હે (અવાહુણિયા કમ્મદ્વિદ્ કમ્મનિસેઓ) તથા અવાધાકાલ
સે રહિત જો કર્મસ્થિતિ હે વહ કર્મનિષેઠ હે (પયં દરિસણાવરણિજ્જં-
પિ) હસી તરહ સે દર્શનાવરણીય કર્મ કે વિષય મેં શ્રી જાનના ચહિયો
(વેયણિજ્જં જહન્નેણં દો સમયા, ઉકોસેણં જહા જાણાવરણિજ્જં) વેદ-

હે ગૌતમ ! કર્મપ્રકૃતિઓ આઠ કહી છે (તં જહા) તે આઠ પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે.

(જાણાવરણિજ્જં, દરિસણાવરણિજ્જં જાવ અંતરાયં) જ્ઞાનાવરણીય, દર્શના-
વરણીય, વેદનીય, મોહનીય, આયુષ્ક, નામ, ગોત્ર અને અન્તરાય.

(જાણાવરણિજ્જસ્સ જં મંતે ! કમ્મસ્સ કેવદ્દયં કાલં વંધદ્વિદ્ પળ્લણ્ણા ?)
હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મની બંધ સ્થિતિ કેટલા કાળ પર્યંતની કહી છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જહણ્ણેણં અંતોમુહુત્તં ઉકોસેણં તીસં સાગરોવમ-
કોઢાકોઢીઓ-તિન્નિય વાસસહસ્સાઈં આવાહા) જ્ઞાનાવરણીય કર્મની બંધસ્થિતિ
જયન્તની અપેક્ષાએ (ઓછામાં ઓછી) અન્તર્મુહૂર્તની અને ઉત્કૃષ્ટની અપે-
ક્ષાએ (વધારેમાં વધારે) ત્રીસ સાગરોપમ કોઢાકોઢી કાળની કહી છે. તથા
તેના આખાધાકાળ (કર્મબંધ થયા પછી કર્મ ઉદયમાં ન આવે ત્યાં સુધીનો
કાળ) ત્રણ હજાર વર્ષનો કહ્યો છે. (અવાહુણિયા કમ્મદ્વિદ્ કમ્મનિસેઓ) તથા
આખાધાકાળ સિવાયની જે કર્મસ્થિતિ છે તેને કર્મનિષેઠ કહે છે. (પયં દરિ-
સણાવરણિજ્જંપિ) એજ પ્રમાણે દર્શનાવરણીય કર્મના વિષયમાં પણ સમજવું.
(વેયણિજ્જં જહન્નેણં દો સમયા ઉકોસેણં જહા જાણાવરણિજ્જં) વેદનીય કર્મની

નાન્તર્મુહૂર્તમ્, ઉત્કર્ષેણ સત્તરિસાગરોપમકોટીકોટયઃ, સત્ત ચ વર્ષસહસ્રાણિ અવાધા, અવાધોનિકા કર્મસ્થિતિઃ કર્મનિપેકઃ આયુષ્કં જઘન્યેનાન્તર્મુહૂર્તમ્, ઉત્કર્ષેણ ત્રયલ્લિ-
શ્વ સાગરોપમાણિ, પૂર્વકોટીત્રિમાગઃ અવાધા, અવાધોનિકા, કર્મસ્થિતિઃ-કર્મ-
નિપેકઃ । નામ-ગોચરોઃ જઘન્યેનાષ્ટ ગુહૂર્તાનિ, ઉત્કર્ષેણ વિશતિસાગરોપમકોટી

નીય કર્મ કી જઘન્ય સ્થિતિ અકપાય આત્મા કી અપેક્ષા દો સમય કી
હૈ ઓર ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે જૈસી તીસ ૩૦ કોડાકોડી
સાગરોપમ કી હૈ । (મોહણિજ્ઞં જહ્ણણેણં, અંતોમુહુત્તં ઉક્ષોસેણં સત્ત-
રિસાગરોપમકોડાકોડીઓ) મોહનીય કર્મ કી વંધસ્થિતિ જઘન્ય તો
અન્તર્મુહૂર્ત કી હૈ ઓર ઉત્કૃષ્ટ ૭૦ સત્તર કોડાકોડી સાગરોપમ કી હૈ ।
(સત્ત ય વાસ સહસ્સાણિ અવાદા-અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિં કમ્મનિસેઓ)
૭૦૦૦ વર્ષ કા ઇસકા અવાધાકાલ હૈ ઇસ અવાધાકાલ સે રહિત જો
કર્મસ્થિતિ હૈ વહ ઇસકા કર્મનિપેક હૈ । (આડગં જહ્ણણેણં અંતોમુહુત્તં,
ઉક્ષોસેણં તેત્તીસં સાગરોપમાણિ પુન્નવકોડિતિમાગો અવાદા અવાહુણિયા
કમ્મટ્ઠિં કમ્મનિસેઓ) આયુકર્મ કી જઘન્યસ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્ત કી હૈ
-ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ તંતીસ ૩૩ સાગરોપમ કી હૈ ઓર ઇસકા અવાધાકાલ
પૂર્વકોટિ કા ત્રિમાગ પ્રમાણ હૈ ઇસ અવાધાકાલ સે રહિત જો કર્મસ્થિતિ
હૈ, વહ ઇસકા કર્મનિપેકકાલ હૈ । (નામ-ગોચરણં જહ્ણણેણં અદ્દમુહુત્તા,

જઘન્ય સ્થિતિ અકપાય આત્માની અપેક્ષાએ જે સમયની છે અને ઉત્કૃષ્ટ
સ્થિતિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મના બેટલી જ-ત્રીસ કોડાકોડી સાગરોપમની છે.
(મોહણિજ્ઞં જહ્ણણેણં અંતોમુહુત્તં ઉક્ષોસેણં સત્તરિસાગરોપમકોડાકોડીઓ) મોહ-
નીય કર્મની વંધસ્થિતિ ઓછામાં ઓછી અન્તર્મુહૂર્તની અને વધારેમાં વધારે
૭૦ કોડાકોડી સાગરોપમની છે.

(સત્ત ય વાસ સહસ્સાણિ અવાદા-અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિં કમ્મનિસેઓ)
તેના આબાધકાલ ૭૦૦૦ વર્ષનો છે. તે આબાધકાળ સિવાયની બે કર્મસ્થિતિ
છે તે તેના કર્મનિપેક (કર્મવેદનાનો કાળ) છે.

(આડગં જહ્ણણેણં અંતોમુહુત્તં ઉક્ષોસેણં તેત્તીસં સાગરોપમાણિ પુન્નવકોડિતિમાગો
અવાદા, અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિં કમ્મનિસેઓ) આયુકર્મની સ્થિતિ ઓછામાં
ઓછી અન્તર્મુહૂર્તની અને વધારેમાં વધારે ૩૩ સાગરોપમની છે, અને તેના
આબાધકાળ પૂર્વ કોટિના ત્રીજા ભાગ બેટલો છે, તે આબાધકાળ સિવાયની
બે કર્મસ્થિતિ છે, તે તેના કર્મનિપેક (કર્મવેદનનો કાળ) છે.

(નામ-ગોચરણં જહ્ણણેણં અદ્દમુહુત્તા, ઉક્ષોસેણં વીસં સાગરોપમકોડાકોડીઓ

કોટથઃ, હે ચ વર્ષસદસે અવાધા, અવાપોનિક્તા કર્મસ્થિતિઃ—કર્મનિપેકઃ ॥ ખાન્ત-
રાપિકં યથા જ્ઞાનાવરણીયમ્ ॥ ૫૦ ૪ ॥

ટીકા — 'કઙ્ઘં મંતે ! કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લન્નાઓ' ગૌતમઃ વૃચ્છતિ-હે
મદન્ત ! કતિ કિમત્યઃ સ્વલુ કર્મપ્રકૃતયઃ કર્મભેદાઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? કથિતાઃ ?, મગ-
વાનાહ-ગોચમા ! અદ્ધ કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લન્નાઓ' હે ગૌતમ ! અદ્ધ કર્મપ્રકૃતયઃ

ઉપોસેણં ચીસં સાગરોત્તમકોડાકોડીઓ-દોણિય ય વાસસહસ્સણિ
અચાહા, અચાહ્ણિયા કમ્મટ્ઠિઈ કમ્મનિસેઓ-અંતરાહ્યં જહા ણાણાવર-
ણિજ્ઞં) નામ ઓર ગોત્ર જન દો કર્મોં કી જગન્યસ્થિતિ આઠ મુહૂર્ત્ત કી
હે ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ચીસ ૨૦ કોડાકોડી સાગરોત્તમ કી હે દો હજારવર્ષ કી
જનકી અચાધા હે જન અચાધા સે રહિત જો કર્મસ્થિતિ હે વહ કર્મ-
નિપેકકાલ હે । અંતરાયકર્મ કે વિષય મેં સ્થિતિ આદિ કા કથન જ્ઞાના-
વરણીય કર્મ કે સમાન જાનના ચાલિયે ।

ટીકાર્થ—પહિછે કર્મોપચય-કર્મબંધ-કો સાદિ સાન્ત કહ્યા ગયા હે
સો હસી સંવંધ કો લેકર સૂત્રકાર હસ સૂત્રદ્વારા કર્મ કે ભેદોં કી ઓર
જનકી સ્થિતિ કી પ્રરૂપણા કર રહે હે—હસમેં ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે એસા
પૂછા હે કિ—(કઙ્ઘં મંતે ! કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લન્નાઓ) હે મદન્ત !
કર્મ કે કિતને ભેદ કહે ગયે હે ? ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ને કહ્યા—(ગોચમા) હે
ગૌતમ ! (અદ્ધ કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લન્નાઓ) કર્મ કે ભેદ આઠ કહે ગયે

દોણિય ય વાસસહસ્સણિ અચાહા, અચાહ્ણિયા કમ્મટ્ઠિઈ કમ્મનિસેઓ અંતરાહ્યં
જહા ણાણાવરણિજ્ઞં) નામકર્મ અને ગોત્રકર્મની સ્થિતિ ઓછામાં ઓછી આઠ
મુહૂર્ત્તની અને વધારેમાં વધારે ૨૦ કોડાકોડી સાગરોત્તમની છે. તેમને
આળાધકાળ બે હજાર વર્ષનો છે, આ આળાધકાળ સિવાયની બે કર્મસ્થિતિ
છે તે તેના કર્મનિપેક કાળ છે. અંતરાય કર્મની જગન્ય, ઉત્કૃષ્ટ આદિ
સ્થિતિના વિષયમાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મ પ્રમાણે જ સમજવું.

ટીકાર્થ—પહેલાના સૂત્રમાં કર્મોપચયને (કર્મબંધને) સાદિ સાન્ત કહ્યો
બે કર્મબંધને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર આ સૂત્ર દ્વારા કર્મના પ્રકારોની અને
તેમની સ્થિતિની પ્રજ્ઞા કરી રહ્યા છે—આ વિષયને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી
મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (કઙ્ઘં મંતે ! કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લન્નાઓ ?)
હે મદન્ત ! કર્મના કેટલા ભેદ કહ્યા છે ?

ઉત્તર—(ગોચમા) હે ગૌતમ ! (અદ્ધ કમ્મપ્પયડીઓ પળ્લન્નાઓ) કર્મના
આઠ પ્રકાર કહ્યા છે (તંજહા) તે આઠ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—

પ્રજ્ઞા: 'તં જહા-જ્ઞાનાવરણિજ્જં, દરિસણાવરણિજ્જં, જાવ-અંતરાયં' તથા-
જ્ઞાનાવરણીયમ્, દર્શનાવરણીયમ્, યાવત્-આન્તરાયિકમ્ ! યાવત્ કરણાત્-વેદની-
યમ્, મોહનીયમ્, આયુષ્કમ્, નામ, ગોત્રમ્, ઇતિ સંગ્રાહ્યમ્ । તત્ત્વ જ્ઞાનાવરણીયાદિ-
કર્મણો વન્ધસ્થિત્યાદિવિષયે પૃચ્છતિ-'જ્ઞાનાવરણિજ્જસ્સ ણં મંતે ! કમ્મસ્સ
કેવહયં કાલં વંધટ્ઠિઈ પળ્લત્તા ? હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયસ્ય સ્વલુ કર્મણઃ
કિયન્તં કાલં કિયત્કાલપર્યન્તમ્ વન્ધસ્થિતિઃ પ્રજ્ઞા ? મગવાન્ ઉત્તરયતિ-
'ગોયમા ! જહણ્ણેણં અંતોમુદ્ધુત્તં, ઉક્કોસેણં તીસં સાગરોવમકોઢાકોઢીઓ
ગૌતમ ! કર્મણો વન્ધસ્થિતિઃ વન્ધનકાલઃ જઘન્યેન અન્તર્મુદ્ધુત્તંપરિમિતા,
ઉત્કર્ષેણ ત્રિસન્સાગરોપમકોટીકોટયઃ, અથ ચ 'તિન્નિ ય વાસસહસ્સાઈ
અવાહા, અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિઈ કમ્મનિસેઓ ' ત્રીણિ ચ વર્ષસહસ્રાણિ

હૈં ? (તં જહા) જો હસ પ્રકાર સે હૈં-(જ્ઞાનાવરણિજ્જં, દરિસણાવરણિજ્જં
જાવ અંતરાયં) જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય યાવત્-વેદનીય, મોહ-
નીય, આયુષ્ક, નામ, ગોત્ર ઓર અન્તરાય । અથ ગૌતમસ્વામી હન
જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કી વંધસ્થિતિ આદિ કે વિષય મેં પૂછતે હૈં કિ
-(જ્ઞાનાવરણિજ્જસ્સ ણં મંતે ! કમ્મસ્સ કેવહયં કાલં વંધટ્ઠિઈ પળ્લત્તા) હે
ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય જો કર્મ હૈં-ઉસકી વંધસ્થિતિ કિતને કાલ કી
કહી ગઈ હૈં ? હસકા ઉત્તર દેતે છુપ પ્રશુ ઉનસે કહતે હૈં-(ગોયમા) હે
ગૌતમ ! (જહણ્ણેણં અંતોમુદ્ધુત્તં, ઉક્કોસેણં તીસં સાગરોવમકોઢાકો-
ઢીઓ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કી વંધસ્થિતિ જઘન્ય સે તો એક અન્તર્મુદ્ધુત્તં
કી હૈં ઓર ઉત્કૃષ્ટ સે તીસ ૩૦ સાગરોપમ કોઢા કોઢી કી હૈં । (તિન્નિ
ય વાસસહસ્સાઈ અવાહા અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિઈ કમ્મનિસેઓ) હસકા

“જ્ઞાનાવરણિજ્જં, દરિસણાવરણિજ્જં, જાવ અંતરાયં” જ્ઞાનાવરણીય,
દર્શનાવરણીય, વેદનીય, મોહનીય, આયુષ્ક, નામ, ગોત્ર અને અન્તરાય.

હવે ગૌતમ સ્વામી તે કમોની વંધસ્થિતિ આદિ વિષે પ્રશ્ન પૂછે છે—
(જ્ઞાનાવરણિજ્જસ્સ ણં મંતે ! કમ્મસ્સ કેવહયં કાલં વંધટ્ઠિઈ પળ્લત્તા ?) હે
હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મની વંધસ્થિતિ કેટલા કાળની કહી છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જહણ્ણેણં અંતોમુદ્ધુત્તં ઉક્કોસેણં તીસં
સાગરોવમકોઢાકોઢીઓ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મની વંધસ્થિતિ આઠામાં આઠી
અંતર્મુદ્ધુત્તંની છે અને અધિકમાં અધિક ત્રીસ સાગરોપમ કોઢાકોઢી કાળથી છે.
(તિન્નિ ય વાસસહસ્સાઈ અવાહા, અવાહુણિયા કમ્મટ્ઠિઈ કમ્મનિસેઓ) તેનો
આઠાધકાળ ત્રણ હજાર વર્ષનો છે, અને તે આઠાધકાળથી રહિત તે કર્મની
જે સ્થિતિ છે, તે તેનો નિષેધકાળ (વેદનકાળ) છે.

સહસ્રત્રયવર્ષાણિ અવાધા, વાપતે इति वाधा, વાપનં વા વાધા-કર્મણઃ ઉદયઃ, ન વાધા, અવાધા, કર્મણો વંધકાલાદારમ્ય ઉદયકાલવર્ગ્યન્તો યઃ કાલઃ કર્મણો વંધસ્ય ઉદયસ્ય ચ મધ્યકાલઃ અવાધાવદાર્યઃ કથ્યતે, તત્કાલત્ર સહસ્રત્રય-

અવાધાકાલ ત્રીસ હજાર વર્ષે કા હૈ તથા ઇસ અવાધાકાલ સે રહિત જો ઇસ કર્મ ફી સ્થિતિ હૈ વહ-ઇસ કર્મ કા નિષેકકાલ હૈ । અવાધા કિસે કહતે હૈં ? સો અવ ઇસકા વિચાર કિયા જાતા હૈ-કર્મ કે ઉદય કા નામ વાધા હૈ ઇસ વાધા કા ન હોના ઇસકા નામ અવાધા હૈ । અર્થાત્ કર્મ કે વંધકાલ સે લેકર વહ કર્મ જયતક ઉદય મેં નહીં આના હૈ-ઇસી કા નામ અવાધાકાલ હૈ અર્થાત્ કર્મ કે વંધ ઓર ઉદય કે વીચ કા જો કાલ હૈ યહી અવાધાકાલ હૈ-કર્મ કે વંધ હો જાને પર ઉસી સમય સે ઉદય મેં નહીં હૈ કિન્તુ કુછ કાલ વાદ હી વહ ઉદય મેં આતા હૈ-કિતને કાલ વાદ ઉદય મેં આતા હૈ ? યહ સવ શાસ્ત્રકારોં ને નિર્ધારિત કિયા હૈ-સો જિતને સમય તક, કર્મસ્થિતિ વંધ ચુકને કે વાદ ખી ઉદય મેં કર્મ નહીં આતા હૈ ઉસ સમય કા નામ અવાધાકાલ હૈ । જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સે ત્રીસ ૩૦ સાગરોપમ કોડાકોડી કા વંધા-તો ઇસમેં અવાધાકાલ ત્રીસ હજાર વર્ષે કા પડતા હૈ ક્યોં કિ એસા સિદ્ધાન્ત કા કથન હૈ કિ કર્મસ્થિતિ જિતને કોડાકોડી સાગરોપમ ફી હોતી હૈ ઉતને સૌ વર્ષે કા ઉસકા અવાધાકાલ હોતા હૈ ઇસ હિસાબ સે જવ યહાં

અજાધાકાળનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—કર્મના ઉદયને વાધા કહે છે. આ વાધાના અભાવને અજાધા કહે છે. કર્મના બંધ થયા પછી તે કર્મ ત્યાં સુધી ઉદયમાં આવતું નથી ત્યાં સુધીના કાળને તે કર્મના અજાધાકાળ કહે છે, એટલે કે કર્મના બંધ અને ઉદયની વચ્ચેનો જે કાળ છે તેને અજાધાકાળ કહે છે. કર્મના બંધ થયા પછી કર્મ તુરત જ એજ સમયે ઉદયમાં આવતું નથી, પણ કેટલાક કાળ પછી જ તે ઉદયમાં આવે છે. કેટલા કાળ પછી તે કર્મ ઉદયમાં આવે છે તે શાસ્ત્રકારોએ નિર્ધારિત કરી બતાવેલું છે. અજાધાકાળનો અર્થ આ પ્રમાણે બતાવ્યો છે—

“ તેમણે કર્મના બંધ થઈ ગયા પછી પણ જેટલા સમય સુધી કર્મ ઉદયમાં આવતું નથી તેટલા સમયને તે કર્મના અજાધાકાળ કહે છે. ” જેમકે જ્ઞાનાવરણીય કર્મની ઉત્કૃષ્ટ (અધિકમાં અધિક) સ્થિતિ ત્રીસ સાગરોપમ કોડાકોડી કાળની કહી છે, તેમાં અજાધાકાળ ત્રણ હજાર વર્ષનો કહ્યો છે. સિદ્ધાન્તોમાં એવું કહ્યું છે કે “ જેટલા કોડાકોડી સાગરોપમની કર્મસ્થિતિ

રૂપઃ પ્રતિપાદિત એવં । અયં ચ અવાધોનિકા, અવાધયા પૂર્વોક્તસ્વરૂપયા ક્રીનિકા
ન્યૂના કર્મસ્થિતિઃ - સદસ્રવર્ષત્રય ન્યૂનઃ ઉપર્યુક્તત્રિશત્સગરોપમકોટીકોટીલક્ષણઃ
કર્માવસ્થાનકાલઃ કર્મનિપેકો ભવતિ, તત્ર કર્મનિપેકો હિ કર્મદલિકસ્યાનુભવના-
ત્મકમોગાર્થો રચનાવિશેષ ઉચ્યતે, તત્ર ચ પ્રથમસમયે અધિકં નિપિશ્ચતિ રચ-
યતિ, દ્વિતીયસમયે વિશેષહીનં કરોતિ, તૃતીયસમયે વિશેષહીનમ્, એવં વાવત્-
ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિકં કર્મદલિકં તાવદ્ વિશેષહીનં નિપિશ્ચતિ,

તીસ ૩૦ સાગરોપમ કોડાકોડી કી કર્મસ્થિતિ હૈ-તો ઉતને સૌ વર્ષ
કા અર્થાત્ તીસ ૩૦ સૌ વર્ષ કા-તીન હજાર વર્ષ કા-અવાધાકાલ હસ
કર્મ કા હોગા-ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ છેકર જય યહ કર્મ બંધ જાતા હૈ તો હતને
હજાર વર્ષ વાદ વહ અપના ફલ દેના પ્રારંભ કર દેતા હૈ, તીન ૩ હજાર
વર્ષતક તો યહ કેવલ સત્તામેં હી રહેગા યે તીન હજાર વર્ષ જો તીસ ૩૦
કોડાકોડી સાગરોપમ સે કમ હો જાતે હૈ-અર્થાત્ ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ મેં સે
જો અવાધાકાલ કમ હો જાતા હૈ-ઉસકા નામ કર્મનિપેક હૈ હસ કર્મ-
નિપેક મેં કર્મદલિકોં કી અનુભવ કરને કે નિમિત્ત એક તરહ કી રચના
વિશેષ હોતી હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ-ઉદયયોગ્ય કર્મદલિકોં
કી જો રચના હોતી હૈ ઉસકા નામ કર્મનિપેક હૈ । ઉદય કે પ્રથમ સમય
મેં કર્મદલિકોં કા અધિકમાત્રા મેં નિપેક હોતા હૈ હસકે વાદ દ્વિતીય
સમય મેં વિશેષહીન કર્મદલિકોં કા નિપેક હોતા હૈ તૃતીય સમય મેં
મી વિશેષહીન-ચયહીન-કર્મદલિકોં કા નિપેક હોતા હૈ હસ તરહ

હોય છે, એટલાં સો વર્ષનો તેનો અખાધાકાળ હોય છે. ” આ હિસાબ
મમાણે જ્ઞાનાવરણીય કર્મની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રીસ સાગરોપમ કોડાકોડીની છે,
તેથી તેટલા સો વર્ષનો એટલે કે ત્રીસસો (ત્રણ હજાર) વર્ષનો તેનો અખા-
ધાકાળ હોય છે. ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ લઇને જો આ કર્મ બંધાઇ બાય છે, તો
ત્રણ હજાર વર્ષ પછી તે તેનું ફળ દેવા માંડે છે, ત્રણ હજાર વર્ષ સુધી તો
તે ફક્ત રસ્તામાં જ રહેશે. ત્રીસ કોડાકોડી સાગરોપમમાંથી અખાધાકાળના
આ ત્રણ હજાર વર્ષ બાદ કરતાં જે કાળ બાકી રહે છે તેને કર્મનિપેક (કર્મ
વેદનકાળ) કહે છે. આ કર્મનિપેકમાં અનુભવ (વેદન) કરવાને નિમિત્તે
કર્મદલિકોની એક પ્રકારની ખાસ રચના થાય છે કહેતાનું તાત્પર્ય એ છે કે
ઉદય યોગ્ય કર્મદલિકોની જે રચના થાય છે તેનું નામ કર્મનિપેક છે. ઉદયના
પ્રથમ સમયમાં કર્મદલિકોનો અધિક માત્રામાં નિપેક થાય છે, ત્યારબાદ બીજા
સમયમાં વિશેષહીન કર્મદલિકોનો નિપેક થાય છે, ત્રીજે સમયે પણ વિશેષહીન

એકસમયમમાણાસુ કર્મણો દ્વિતીયતૃતીયાદિસમયેષુ વિશેષહીનવિશેષહીન કર્મદલિકાનાં નિપેકો ભવતિ, સ ચ તાવદ્ ભવતિ યાવત્ તત્તત્સમયવધ્યમાન- કર્મણામુત્કૃષ્ટા સ્થિતિર્ભવેત્, વદ્ધકર્મસ્થિતેશ્વરમસમયપર્યન્તમયં નિપેકો ભવ- તીતિ ભાવઃ । અયં ચાવાધાં મુક્ત્વા દલિકનિપેકવિધિઃ આયુર્વર્જશેષસસકર્મણાં વિષયે વેદિતવ્યઃ । આયુષ્કર્મયપિ નિપેકસ્તુ ભવત્યેવ કિન્તુ તત્ત સ નિપેકઃ આયુષ્કર્મવંધસ્ય પ્રથમસમયાદેવ પ્રારંભ્યતે ન તત્રાવાધાકાલપૂર્ણતાયા આવશ્ય-

હીન ૨ કર્મદલિકોં કા નિપેક હોતા હૈં ઓર યહ નિપેક વદ્ધકર્મસ્થિતિ કે ચરમ સમયતક હોતા હૈ । અવાધા કો છોડકર યહ દલિક નિપેક- વિધિ આયુ કર્મ કે સિવાય સાતકર્મોં કે ઘિપય મેં હી જાનના ચાહિયે આયુકર્મમેં બી નિપેકતો હોતા હી હૈં કિન્તુ વહાં વહ નિપેક આયુકર્મવંધ પ્રથમસમય સે લેકર હી પ્રારંભ હો જાતા હૈં-યહાં નિપેકરચના મેં અવા- ધાકાલ કે પૂર્ણ હોને કી આવશ્યકતા નહીં હૈં । યદ્યપિ આયુકર્મ કા બી અવાધાકાલ હોતા હૈં । પરંતુ આયુકર્મ કે ઇસ નિપેક કે પ્રસન્ન પર અવાધાકાલ કો છોડને કી જો આવશ્યકતા નહીં હૈં ઉસકા કારણ યહ હૈં કિ આયુકર્મ કે વંધ કે પ્રથમ સમય મેં હી આયુકર્મ કે વહુત અધિક દલિકોં કા નિપેક હોના પ્રારંભ હો જાતા હૈં અર્થાત્ પ્રથમ સમય મેં હી આયુકર્મ કે વહુત દલિકોં કા નિપેક હો જાતા હૈં ઓર ઇસકે વાદ દ્વિતીય આદિ સમયોં મેં તો ઉત્તરોત્તર-આગે ૨ વિશેષ ૨ હીન હી નિપેક હોતા હૈં ઓર યહ નિપેક અન્તિમ દલિકોં તક ઇસી પ્રકાર સે

આદિ સમયોમાં વિશેષ હીન વિશેષહીન કર્મદલિકોનો નિપેક થાય છે, અને તે નિપેક બદ્ધકર્મ સ્થિતિના અન્તિમ સમય પર્યન્ત થાય છે. અવાધા સિવા- યની આ દલિક નિપેક વિધિ : આયુકર્મ સિવાયના સાત કર્મોના વિષયમાં જ સમજવી. આયુકર્મમાં પણ નિપેક તો થાય છે જ; પણ ત્યાં તે નિપેક આયુ- કર્મવંધના પ્રથમ સમયથી જ શરૂ થઈ જાય છે, આયુકર્મની નિપેક રચનામાં અવાધાકાળ પૂરો થવાની આવશ્યકતા રહેતી નથી. જો કે આયુકર્મનો પણ અવાધાકાળ હોય છે, પણ આયુકર્મના આ નિપેક વખતે અવાધાકાળને ખાદ કરવાની જરૂર રહેતી નથી તેનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે—

આયુકર્મનો બંધ થયા પછી પ્રથમ સમયે જ આયુકર્મનાં ઘણાં જ અધિક દલિકોનો નિપેક થવાનો પ્રારંભ થઈ જાય છે—એટલે કે પ્રથમ સમયમાં જ આયુકર્મનાં ઘણાં દલિકોનો નિપેક થઈ જાય છે, અને ત્યારબાદ દ્વિતીય, તૃતીય આદિ સમયોમાં તો ઉત્તરોત્તર વિશેષને વિશેષ હીન નિપેક થતો રહે છે, અને આ નિપેક અન્તિમ દલિકો પર્યન્ત વધુ ને વધુ હીન થતો રહે છે,

ઉક્તञ્ચ—‘ મોત્તૂળ સગમવાહં, પદમાદ ટિઙ્ગ ચદ્વયરં દવ્યં ।

સેસે વિસેસહીળં જા ઉક્કોસંતિ સવ્વાસિં ” ॥ ૧ ॥

મુક્ત્વા સ્વકામ અવાધાં પ્રથમાયાં સ્થિતી ચદ્વયરં દ્રવ્યમ્ ।

શેષે વિશેષ હીનં યાવદ્ ઉત્કૃષ્ટમિતિ સર્વેષામ્ ॥ ૨ ॥

અર્થ ભાવઃ—સર્વેષુ અપ્તવિધેષ્વપિ વધ્યમાનેષુ કર્મણુ તત્તત્કર્મણઃ અવાધાકાલં મુક્ત્વા તદનન્તરં દલિકનિપેક્કો ભવતિ,

પ્રત્યેકકર્મવન્ધાનન્તરં તત્તત્કર્મણઃ ઉદ્યે—તત્તત્કર્મણઃ પ્રવાધાકાલે પૂર્ણે સત્તિ કર્માનુભવનસ્ય પ્રથમસમયોદારભ્યેત્યર્થઃ ચદ્વયરં દલિકેષ્યો વેદિતું શક્યાનાં વેદનયોગ્યાનાં દલિકાનાં નિપેક્કો ભવતિ, તથા ચ—ઉદયસ્ય પ્રથમ-સમયે તેષુ ચદ્વયરં દલિકાનાં નિપેક્કો ભવતિ, તદનન્તરં દ્વિતીયાદિસ્થિતિષુ

વિશેષહીન કર્મદલિકોં કા નિપેક્ક યાવત્ ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિવાલે કર્મદલિકોં તક હોતા હૈ, કહા બી હૈ—

“ મોત્તૂળ સગમવાહં પદમાદ ટિઙ્ગ ચદ્વયરં દવ્યં ।

સેસે વિસેસહીળં જો ઉક્કોસંતિ સવ્વાસિં ॥ ”

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ—આઠો પ્રકાર કે કર્મ જય બંધ ચુકતે હૈ—ઔર અપની ૨ અવાધા કે યાદ જય વે ઉદય મૈ આને લગ જાતે હૈ તય્ઞ ડન કર્મોં કે વેદને યોગ્ય દલિકોં કી નિપેક્ક રચના હોતી હૈ અર્થાત્—કર્માનુ-ભવ કે પ્રથમ સમય સે લેકર ચદ્વયરં દલિકોં મૈ સે વેદને યોગ્ય દલિકોં કા નિપેક્ક હોતા હૈ હસમેં ઉદય કે પ્રથમ સમય મૈ હનમેં સે ચદ્વયરં દલિકોં કા નિપેક્ક હોતા હૈ, હસકે યાદ ઇક સમય પ્રમાણવાલી દ્વિતીય આદિ સ્થિતિમેં, ક્રમ ૨ સે દ્વિતીય તૃતીયાદિ સમયોં મૈ વિશેષ-

અયહીન—કર્મદલિકોને નિપેક્ક થાય છે, આ રીતે વિશેષહીન કર્મદલિકોને નિપેક્ક ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિવાળાં કર્મદલિકો પર્યન્ત થયા કરે છે. કહું પણ છે—

“ મોત્તૂળ સગમવાહં પદમાદ ટિઙ્ગ ચદ્વયરં દવ્યં ।

સે સે વિસેસહીળં જો ઉક્કોસંતિ સવ્વાસિં ॥ ”

ભાવાર્થ—આઠે પ્રકારનાં કર્મ બ્યારે બંધાય ચુકે છે, અને પોતપોતાના અપાધાકાળ પછી બ્યારે તેઓ ઉદયમાં આવવા માંડે છે, ત્યારે તે કર્મના વેદનાયોગ્ય દલિકોની નિપેક્ક રચના થાય છે, એટલે કે કર્માનુભવના પ્રથમ સમયથી લઈને બદ્ધ કર્મોનાં દલિકોમાંથી વેદનાયોગ્ય દલિકોને નિપેક્ક થાય છે. તેમાં ઉદયના પ્રથમ સમયે તેમાંના અધિક દલિકોને નિપેક્ક થાય છે, ત્યારબાદ એક એક સમય પ્રમાણવાળી દ્વિતીય આદિ સ્થિતિમાં ક્રમશઃ દ્વિતીય ત્રીય

કાલઃ ત્રિંશત્સાગરોપમકોટીકોટીપ્રમાણથ વાધાકાલઃ, એતદ્વયસ્યાપિ અવાધાવાધાકાલસ્ય મિથ્રણાત્મકઃ કર્મસ્થિતિકાલઃ, અવાધાકાલવર્જિતો વાધા-કલાત્મકઃ કર્મનિપેક્કાલ ઇત્યાहुः । एवमन्यकर्मस्वपि अवाधाकालो विज्ञेयः, विशेषस्तु आयुषि त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि निपेक्षकालः, पूर्वकोटितृतीयभागश्च अवाधाकाल इति । स च पूर्वकोटित्रिभागः,—त्रयस्त्रिंशल्लक्षं त्रयस्त्रिंशत्सहस्रत्रयस्त्रिंशदुत्तरत्रिंशत् (૩૩૦૦૦૦૦, ૩૩૦૦૦, ૩૩૩) पूर्वत्रयोविंशतिलक्ष-द्विप-ञ्चाशत्સહસ્ર (૨૩૦૦૦૦૦૦, ૫૨૦૦૦) વર્ષકોટિપરિમિતો ભવતિ । ‘ एवं दरिसणावरणिज्जं ’ एवम् ज्ञानावरणीयकर्मवदेव दर्शनावरणीयमपि कर्म-बोध्यम् । ‘ वेयणिज्जं जहण्णेणं दो समया, उक्कोसेणं जहा-णाणावरणिज्जं ’

અવાધાકાલ ઓર ત્રીસ ૩૦ સાગરોપમ કોડાકોડી પ્રમાણ વાધાકાલ, ઇન દોનોં કો મિલા દેને સે જો પ્રમાણ નિકલતા હૈ વહ કર્મસ્થિતિકાલ હૈ તથા અવાધાકાલ સે રહિત જો વાધાકાલ હૈ વહ કર્મનિપેક્ક કાલ હૈ ” । इसी तरह से दूसरे कर्मों के विषय में भी अवाधाकाल जान लेना चाहिये—आयुर्कर्म में तैंतीस ३३ सागरोपम का निपेक्षकाल है । तथा इस में जो अवाधाकाल है वह पूर्व कोटि का तृतीयभागप्रमाण है। पूर्वकोटि तृतीय भाग तैंतीस ३३ लाख, तैंतीस ३३ हजार, तीनसौ तैंतीस, पूर्व और २३ तेवीस लाख, वाचन ५२ हजार कोटि वर्षप्रमाण होता है । (एवं दरिसणावरणिज्जं) ज्ञानावरणीय कर्म की तरह दर्शनावरणीय कर्म को भी जानना चाहिये । (वेयणिज्जं जहण्णेणं दो समया उक्कोसेणं जहा णाणावरणिज्जं) वेदनीयकर्म की जघन्यस्थिति दो

અને ત્રીસ સાગરોપમ કોડાકોડી પ્રમાણ વાધાકાલ, એ બન્નેનો સરવાળો કરવાથી જે પ્રમાણ આવે છે તે કર્મસ્થિતિકાલ છે, તથા અવાધાકાલ સિવાયનો જે વાધાકાલ છે, તે કર્મનિપેક્ક કાલ છે. ”

એજ પ્રમાણે બીજાં કર્મોનો આવાધકાલ પણ સમજવો જોઈએ આયુ-કર્મનો નિપેક્કકાલ (વેદનકાલ) ૩૩ સાગરોપમનો કહ્યો છે, તથા તેનો આવા-ધકાલ પૂર્વકોટિના ત્રીજા ભાગ પ્રમાણ છે. પૂર્વકોટિનો ત્રીજો ભાગ તેત્રીસ લાખ તેત્રીસ હજાર ત્રણસો તેત્રીસ (૩૩૩૩૩૩૩) પૂર્વ અને તેવીસ લાખ આપન હજાર (૨૩૫૨૦૦૦) કોટિવર્ષ પ્રમાણ છે.

(एवं दरिसणावरणिज्जं) જ્ઞાતાવરણીય કર્મની સ્થિતિ પ્રમાણે જ દર્શ-નાવરણીય કર્મની પણ સ્થિતિ સમજવી.

(वेयणिज्जं जहण्णेणं दो समया, उक्कोसेणं जहा णाणावरणिज्जं) वेदनीय कर्मની

કતા વર્તે, યદપિ આયુષ્કર્મણોઽપિ અવાધાકાલસ્તુ મનસ્યેવ કિન્તુ ન તત્ત્વ-
વર્જનસ્યાવશ્યકતા ભવતિ । આયુષ્કર્મચયન્યસ્ય પ્રથમસમય ઇત્યાયુષઃ પ્રભૂતદલ્લિકાનાં
નિષેકો ભવતિ, દ્વિતીયાદિસમયેષુ તુ ઉત્તરોત્તરં વિશેષદીનો ભવતિ યાન-
ચરમસમય ઇતિ ।

તથા ચૈવાવતા વદ્મપિ જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ સદસ્યર્પણત્રયં યાત્ત્વં અવેષ-
માનતયા તિષ્ઠતિ, તતઃ સદસ્યર્પણત્રયન્યૂનશ્ચિન્તસાગરોપમકોટીકોટીપમાણસ્તાન્ત્વ
જ્ઞાનાવરણીયકર્માનુભવકાલો ચેદિતલ્પઃ, કેનિતુ-સદસ્યર્પણત્રયપ્રમાણઃ આવાધા-

વિશેષ ૨ હીન હોતા રહતા હૈ । इस तरह पंधा हुआ भी ज्ञानावरणीय
कर्म तीन हजार वर्षतक अवेद्यमान अवस्था में रहता है, बाद में वह
अनुभवन-उदय में आता है-इस प्रकार उसका अनुभवन काल तीन
३ हजार वर्ष कम तीस ३० कोड़ाकोड़ी सागरोपम का है ऐसा जानना
चाहिये, तात्पर्य कहने का यह है कि कर्म की स्थिति के दो प्रकार हैं-
एक तो उसे कर्मरूप में रहना और दूसरी उसे अनुभव योग्य कर्मरूप
में घनना, यहाँ जो उत्कृष्ट अथवा जयन्यरूप से कर्मस्थिति कही गई है
यह कर्मरूप से रहने वाली कर्मस्थिति कही गई है और जब अवाधा-
काल के बाद कर्म उदय में आने लग जाता है-तब की स्थिति अनुभव
योग्य कर्मस्थिति कही गई है कर्म की स्थिति में से अवाधाकाल घटाने
से जो स्थिति बचती है वही अनुभव योग्य कर्मस्थिति है ऐसा
जानना चाहिये ।

કોઈ આચાર્ય ऐसा करहते हैं कि “ तीन ३ हजार वर्ष प्रमाण

આ રીતે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ થયા પછી પણ ત્રણ હજાર વર્ષ
ભુખી તે અવેદ્યમાન અવસ્થામાં જ રહે છે અને ત્યારબાદ તે ઉદયમાં આવે
છે. આ રીતે તેનો વેદનકાળ ત્રીસ કોડાકોડી સાગરોપમ કરતાં ત્રણ હજાર
વર્ષ ન્યૂન (ઓછા) છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કર્મની સ્થિતિના બે
પ્રકાર છે-(૧) કર્મરૂપે રહેવાની સ્થિતિ અને (૨) અનુભવવા (વેદવા) યોગ્ય
કર્મરૂપ બનવાની સ્થિતિ. અહીં બે ઓછામાં ઓછી કે વધારેમાં વધારે કર્મ
સ્થિતિ કહી છે, તે કર્મરૂપે રહેનારી કર્મસ્થિતિ કહી છે, અને બધારે અમા-
ધાકાળ પૂરો થયા પછી કર્મ ઉદયમાં આવવા લાગી જાય છે ત્યારની સ્થિતિને
અનુભવયોગ્ય કર્મસ્થિતિ કહી છે. કર્મની સ્થિતિમાંથી અમાધાકાળ બાદ કરતા
બે સ્થિતિ બાકી રહે છે એજ અનુભવયોગ્ય કર્મસ્થિતિ છે એમ સમજવું.

કોઈ કોઈ આચાર્ય એવું કહે છે કે “ ત્રણ હજાર વર્ષ ” પ્રમાણ,

મોહનીયકર્મણો જઘન્યેન અન્તર્મુહતં વંધસ્થિતિઃ, ઉત્કર્ષેણ સપ્તતિસાગરોપમ-
કોટીકોટયઃ 'સત્ત ચ વાસસદસાણિ અવાહા' સપ્ત ચ વર્પસદસાણિ અવાધા
મોહનીયકર્મવંધોદયાન્તકાલઃ, 'અવાહૃણિયા કમ્મટ્ઠિર્-કમ્મનિસેઓ' અવાધો
નિકા અવાધયા સપ્ત સઃસવર્પસ્થયા ઝનિકા ન્યૂના કર્મસ્થિતિઃ સપ્તસદસ-
વર્પન્યૂનઃ સપ્તતિસાગરોપમકોટીકોટીમાનલક્ષણો મોહનીયકર્માવસ્થાનકાલઃ નિપેકો
ભવતિ । 'આઝં જહ્ણેણં અંતોમુહુત્તં, ડકોસેણં તેત્તીસં સાગરોવમાણિ' આયુ-
ક્કમ્ આયુક્કયકર્મણો જઘન્યેન અન્તર્મુહતંમ્, ઉત્કર્ષેણ ત્રયસ્થિત્ત્વ સાગરોપમાણિ
'પુવ્વકોટિતિમાગો અવાહા, અવાહૃણિયા કમ્મટ્ઠિર્-કમ્મનિસેઓ' પૂર્વકોટીત્રિ-
માગઃ પૂર્વકોટીયતૃતીયમાગઃ અવાધાકાલઃ, અવાધોનિકા-અવાધાકાલેન ન્યૂના
ત્રયસ્થિત્ત્વસાગરોપમાણિ કર્મસ્થિતિઃ આયુક્કયકર્માવસ્થાનકાલઃ કર્મનિપેકો ભવતિ ।
પૂર્વકોટિત્રિમાગસ્ય સંખ્યામાનમત્રેવ સૂત્રે પૂર્વમવાધાકાલપ્રકરણે પ્રદર્શિતમેવેતિ
અંતોમુહુત્તં, ડકોસેણં સત્તરિસાગરોવમકોટીકોટીઓ) મોહનીય કર્મ
કી જઘન્ય વંધસ્થિતિ અન્તર્મુહતં કી હૈ ઉત્કૃષ્ટ વંધસ્થિતિ ૭૦ સત્તર
કોટીકોટી સાગરોપમ કી હૈ, હિસકા અવાધાકાલ ૭૦૦૦ હજાર વર્ષ કા
હૈ અત્કૃષ્ટસ્થિતિ મેં અવાધા કાલ કો ઘટાને પર જો સ્થિતિ વચે વહ
મોહનીય કા અવસ્થાનકાલ રૂપ કર્મનિપેકકાલ હૈ । (આઝં જહ્ણેણં
અંતોમુહુત્તં ડકોસેણં તેત્તીસં સાગરોવમાણિ) આયુક્કય કર્મ કી જઘન્યસ્થિતિ
અન્તર્મુહતં કી હૈ ઓર ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ૩૩ સાગરોપમ કી હૈ (પુવ્વકોટિ
તિ માગો અવાહા) પૂર્વ કોટિ કે ત્રિમાગપ્રમાણ અવાધાકાલ હૈ (અવા-
હૃણિયા કમ્મટ્ઠિર્-કમ્મનિસેઓ) અવાધાકાલ સે હીન જો કર્મસ્થિતિ
હૈ વહ હિસ કર્મ કા નિપેક કાલ હૈ । પૂર્વકોટિ કે ત્રિમાગ કી સંખ્યા
કા પ્રમાણ પહિલે અવાધકાલ કે પ્રકરણ મેં દિશા હી દિયા હૈ (નામ-

ડકોસેણં સત્તરિસાગરોવમકોટીકોટીઓ) મોહનીય કર્મની જઘન્ય વંધસ્થિતિ
અન્તર્મુહતંની અને ઉત્કૃષ્ટ વંધસ્થિતિ ૭૦ કોટીકોટી સાગરોપમની છે. તેનો
અવાધકાળ ૭૦૦૦ વર્ષનો છે. ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમાંથી અવાધકાળને બાદ કર-
વાથી બેટલો કાળ બાકી રહે તેટલો મોહનીય કર્મનો કર્મનિપેક કાળ (કર્મ
વેદનકાળ) સમજવો. (આઝં જહ્ણેણં અંતોમુહુત્તં, ડકોસેણં તેત્તીસં સાગરોવમાણિ)
આયુક્કય કર્મની જઘન્ય સ્થિતિ અન્તર્મુહતંની છે અને ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ૩૩ સાગ-
રોપમની છે. (પુવ્વકોટિ તિમાગો અવાહા) તેનો અવાધકાળ પૂર્વ કોટિના
ત્રીજા ભાગ પ્રમાણ છે. (અવાહૃણિયા કમ્મટ્ઠિર્-કમ્મનિસેઓ) અવાધકાળ
સિવાયની બે કર્મસ્થિતિ છે, તે આ કર્મનો નિપેકકાળ સમજવો. પૂર્વકોટિના
ત્રીજા ભાગનું પ્રમાણ આ સૂત્રમાં જ અવાધકાળનું વર્ણન કરતી વખતે આપી
મ ૧૧૦

તથા વેદનીયં કર્મ જઘન્યેન ક્ષીં સમયો, તથા ચ કેવલયોગમત્યયવ્યભાષેષ્યા
વેદનીયં કર્મ દ્વિમમયસ્થિતિકં ભવતિ, તત્ત્વ પરિમિત્ત સમયે વ્યવર્તે, દ્વિતીયે તુ
વેદને યત્તુ “ વેયણિયસ્સ જહણ્ણા વારસ, નામ-ગોયાણ અદ્ધ મુદ્ધત્તા ” વેદનીયસ્ય
જઘન્યા ઢાદશ, નામ-ગોત્રયોઃ અદ્ધમુદ્ધર્તાં ક્ષયુક્તમ્ તત્ સકળાયસ્થિતિ વ્યવ-
માથિત્ય વેદિતવ્યમિતિ ન તદ્વિશેષઃ ઉત્કૃષ્ટેણ યથા જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ તથૈવ
વેદનીયમપિ કર્મ વોધ્યમ્, તથા ચ વેદનીયસ્યાપિ કર્મણઃ ઉત્કૃષ્ટતઃ સ્થિતિકાલઃ
ત્રિસહસ્રાર્પણ્યૂત્તરિશ્વત્સાગરોપમ કોટીકોટીપ્રમાણઃ । ‘ મોહણિજ્જં જહણ્ણેજં
અંતોમુદ્ધત્તં, ઉપકોત્તેણં સત્તરિશ્વત્સાગરોપમકોટાકોટીઓ ’ મોહનીયં કર્મ

સમય કી હૈ ઓર ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ જ્ઞાનાવરણીય કે સમાન તીસ ૨૦
કોટાકોટી સાગરોપમ કી હૈ । યહાં જો વેદનીય કર્મ કી જઘન્ય સ્થિતિ
દો સમય કી કહી ગઈ હૈ વહ કેવલ યોગ કે નિમિત્તા સે હોને વાલે વંધ
કી અપેક્ષા સે કહી ગઈ હૈ-એસી સ્થિતિ મેં વેદનીય કર્મ કી જઘન્ય
સ્થિતિ દો સમય કી હોતી હૈ એક સમય મેં વહ વંધતા હૈ, ઓર દ્વિતીય
સમય મેં વહ વેદા જાતા હૈ જો (વેયણિયસ્સ જહણ્ણા વારસ, નામ
ગોયાણ અદ્ધ મુદ્ધત્તા) વેદનીય કર્મ કે વિષય મેં એસા કહા ગયા હૈ કિ
વેદનીયકર્મ કી જઘન્ય સ્થિતિ ૧૨ મુહૂર્ત કી હોતી હૈ સો યહ કથન
કપાયસહિત જીવોં કી અપેક્ષા સે હી જાનના ચાહિયે-કયોં કિ કપાય-
યુક્ત જીવોં કે જો વેદનીય કર્મ કા જઘન્ય સ્થિતિ વંધ હોતા હૈં વહ ૧૨
મુહૂર્ત કા હોતા હૈ ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કાલ વેદનીય કર્મ કા ત્રીન હજાર વર્ષ
કમ તીસ સાગરોપમ કોટાકોટી પ્રમાણ કા હૈ (મોહણિજ્જં જહણ્ણેજં

આછામાં આછી સ્થિતિ જે સમયની અને વધારેમાં વધારે સ્થિતિ જ્ઞાનાવર-
ણીય કર્મના બેટલી જ (ત્રીસ કોટાકોટી સાગરોપમની) છે. અહીં જે વેદનીય
કર્મની જઘન્ય (આછામાં આછી) સ્થિતિ જે સમયની કહી છે તે માત્ર
યોગને કારણે થનારા બંધને અનુલક્ષીને કહી છે-બેટલે કે એવી પરિસ્થિતિમાં
વેદનીય કર્મની જઘન્ય સ્થિતિ જે સમયની હોય છે-એક સમયમાં તે બંધાય
છે અને બીજે સમયે તેનું વેદન થાય છે. (વેયણિયસ્સ જહણ્ણા વારસ, નામ
ગોયાણ અદ્ધમુદ્ધત્તા) આ કથન પ્રમાણે વેદનીય કર્મની જે બાર મુહૂર્તની જઘન્ય
સ્થિતિ કહી છે તે કપાય યુક્ત જીવોની અપેક્ષાએ જ સમજી, કારણ કે
કપાયયુક્ત જીવોના વેદનીય કર્મનો જે જઘન્ય સ્થિતિ બંધ થાય છે, તે બાર
મુહૂર્તનો હોય છે, વેદનીય કર્મનો ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિકાળ ત્રીસ સાગરોપમ કોટા-
કોટી કરતાં ત્રણ હજાર વર્ષ આછો હોય છે. (મોહણિજ્જં જહણ્ણેજં અંતોમુદ્ધત્તં,

कर्मनाम	उत्कृष्टा स्थितिः	जघन्या स्थितिः	उत्कृष्टः अ- वाधाकालः	जघन्यः अवा- धाकालः	उत्कृष्टः वाधा- काल कर्मनिपेक्षः	जघन्यः वाधाकाल कर्मनिपेक्षः
मोहनीय कर्म	सप्तति सागरो- पम कोटीकोटयः	अन्तर्मुहूर्तम्	७००० सप्तति वर्षशतानि	अन्तर्मुहूर्तम्	सप्तसहस्रवर्षन्यूना सप्तति सागरोपम कोटीकोटयः	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनम् + अन्तर्मुहूर्तम्
ज्ञानावरणीय कर्म	त्रिंशत्सागरो- पम कोटीकोटयः	"	३००० सहस्र वर्षत्रयम्	"	त्रिसहस्रवर्षन्यूनाः त्रिंशद् सागरोपम कोटी कोटयः	"
दर्शनावरणीय कर्म	"	"	"	"	"	"
सकापायात्म बद्ध वेदनीय कर्म	"	द्वादश मुहूर्तानि	"	"	"	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनानि एकादश मुहूर्तानि
अन्तरायिकं कर्म	"	अन्तर्मुहूर्तम्	"	"	"	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनम् अन्तर्मुहूर्तम्
नामकर्म	विंशति सागरोपम कोटीकोटयः	अष्टौ मुहूर्तानि	२००० वर्षाणि	"	विंशति शतन्यूनानि विंशति सागरोपम कोटीकोटयः	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनानि सप्तमुहूर्तानि
गोत्रकर्म	"	"	"	"	"	"
आयुष्यकर्म	पूर्वकोटि त्रिभागा धिकानि त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमाणि	अन्तर्मुहूर्तम्	पूर्वकोटि त्रिभागा	"	पूर्वकोटि त्रिभाग न्यूनानि त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमाणि	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनम् अन्तर्मुहूर्तम्

कर्मनाम	उत्कृष्टा स्थितिः	जघन्या स्थितिः	उत्कृष्टः अ- याथाकालः	जघन्यः अवा- याकालः	उत्कृष्टः याथा- काल कर्मेनिपेक्षः	जघन्यः याथाकाल कर्मेनिपेक्षः
सौहृदीय कर्म	सत्तति सागरो- पम कोटीकोटयः	अन्तर्मुहूर्तम्	७००० सत्तति वर्षशतानि	अन्तर्मुहूर्तम्	सत्तसरसवर्षन्यूना सत्तति सागरोपम कोटीकोटयः	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनम् + अन्तर्मुहूर्तम्
ज्ञानावरणीय कर्म	त्रिशत्सागरो- पम कोटीकोटयः	"	३००० सहस्र वर्षत्रयम्	"	त्रिसहस्रवर्षन्यूनाः त्रिशद् सागरोपम कोटी कोटयः	"
दर्शनावरणीय कर्म	"	"	"	"	"	"
सत्कापायात्म बद्धं वेदनीय कर्म	"	द्वादश मुहूर्तानि	"	"	"	"
अन्तराधिकं कर्म	"	अन्तर्मुहूर्तम्	"	"	"	"
नामकर्म	विंशति सागरोपम कोटीकोटयः	अष्टौ मुहूर्तानि	२००० वर्षाणि	"	विंशति शतन्यूनाविंशति सागरोपम कोटीकोटयः	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनानि एकादश मुहूर्तानि अन्तर्मुहूर्तं न्यूनम् अन्तर्मुहूर्तम्
गोत्रकर्म	"	अन्तर्मुहूर्तम्	"	"	"	"
आयुष्यकर्म	पूर्वकोटि त्रिभागा धिकानि त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमाणि	पूर्वकोटि त्रिभाग न्यूनाः त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमाणि	पूर्वकोटि त्रिभाग	पूर्वकोटि त्रिभाग न्यूनाः त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमाणि	"	अन्तर्मुहूर्तं न्यूनम् अन्तर्मुहूर्तम्

॥ स० ४॥

+ अन्तर्मुहूर्तं शब्दो भिन्नं ज्ञातीय कालवाचकोऽत्रावगन्तव्यः ।

—णो नपुंसओ वंधइ ? । गोयमा ! इत्थीवि वंधइ, पुरिसो वि वंधइ, नपुंसओ वि वंधइ, णोइत्थीणोपुरिसणोनपुंसओ सिय वंधइ, सिय णो वंधइ । एवं आउगवज्जाओ सत्त कम्म-
 प्ययडीओ । आउगं णं भंते ! कम्मं किं इत्थी वंधइ, पुरिसो वंधइ, नपुंसओ वंधइ०, पुच्छा ? गोयमा ! इत्थी सिय वंधइ, सिय णो वंधइ । एवं तिन्नि वि भाणियत्वा, णोइत्थी णो-
 पुरिस-णोनपुंसओ न वंधइ । णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं संजए वंधइ, असंजए वंधइ, संजयाऽसंजए वंधइ, णो संजय-णोअसंजय-णोसंजयाऽसंजए वंधइ ? । गोयमा ! संजए सिय वंधइ, सिय णो वंधइ, असंजए वंधइ, संजयाऽसंजए वि वंधइ, नोसंजय-णोअसंजय-णोसंजयासंजए ण वंधइ । एवं आउगवज्जाओ सत्तवि, आउगे हेट्ठिला तिण्णि भयणाए, उवरिह्हे णं वंधइ । णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं सम्मदिट्ठी वंधइ, मिच्छदिट्ठी वंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी वंधइ ? गोयमा ! सम्मदिट्ठी सिय वंधइ, सिय णो वंधइ, मिच्छदिट्ठी वंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी वंधइ, एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउए हेट्ठिला दो भयणाए, सम्मामिच्छदिट्ठी न वंधइ । णाणा-
 वरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं सन्नी वंधइ, णोसन्नि-णोअसन्नी वंधइ ? गोयमा ! सन्नी सिय वंधइ, सिय णो वंधइ, असन्नी वंधइ, णोसन्नि-णोअसन्नी न वंधइ, एवं वेयणिज्जाऽऽउगोवज्जाओ छ कम्मप्ययडीओ, वेयणिज्जं हेट्ठिला दो वंधंति, उवरिह्हे

न वंधइ । णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं भवसिद्धिए
 वंधइ ? अभवसिद्धिए वंधइ, णो भवसिद्धिय-णो अभवसिद्धिए
 वंधइ ? गोयमा ! भवसिद्धिए भयणाए, अभवसिद्धिए वंधइ,
 णो भवसिद्धिय-णो अभवसिद्धिए न वंधइ, एवं आउगवज्जाओ
 सत्तवि, आउगं हेट्ठिछा दो भयणाए, उपरिल्ले न वंधइ ।
 णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं चक्खुदंसणी वंधइ ?,
 अचक्खुदंसणी वंधइ ? ओहिदंसणी वंधइ ? केवल दंसणी
 वंधइ ? गोयमा ! हेट्ठिछा तिणिण भयणाए, उवरिल्ले
 न वंधइ, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि, वेयणिज्जं हेट्ठिछा
 तिन्नि वंधंति, केवलदंसणी भयणाए । णाणावरणिज्जं णं
 भंते ! कम्मं किं पज्जत्तओ वंधइ, अपज्जत्तओ वंधइ,
 णोपज्जत्तय-णोअपज्जत्तओ वंधइ ? गोयमा ! पज्जत्तओ
 भयणाए, अपज्जत्तओ वंधइ, णोपज्जत्तय-णोअपज्ज-
 त्तओ न वंधइ, एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउगं हेट्ठिछा
 दो भयणाए, उवरिल्ले न वंधइ । णाणावरणिज्जं णं भंते !
 कम्मं किं भासए वंधइ, अभासए वंधइ ? गोयमा ! दो वि
 भयणाए, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि, वेयणिज्जं भासए
 वंधइ, अभासए भयणाए । णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं
 किं परित्ते वंधइ, अपरित्ते वंधइ, णोपरित्ते णो अपरित्ते वंधइ ?
 गोयमा ! परित्ते भयणाए, अपरित्ते वंधइ, णोपरित्तणोअप-
 रित्ते न वंधइ, एवं आउगवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ,
 आउयं परित्तो वि, अपरित्तो वि भयणाए, णोपरित्त णो-

अपरितो न बंधइ । पाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं
 आभिणिबोहियणाणीं बंधइ, सुयणाणी, ओहिणाणी, मण-
 पज्वनाणी, केवलणाणी बंधइ ? गोयमा ! हेट्टिल्ला चत्तारि
 भयणाए, केवलणाणी न बंधइ, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त
 वि, वेयणिज्जं हेट्टिल्ला चत्तारि बंधंति, केवलणाणी भयणाए ।
 पाणा वरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं मइअन्नाणी बंधइ, सुय-
 अन्नाणी बंधइ, विभंगअन्नाणी बंधइ ? गोयमा ! आउग
 वज्जाओ सत्त वि बंधंति, आउगं भयणाए । पाणवरणिज्जं णं
 भंते ! कम्मं किं मणजोगी बंधइ, वयजोगी बंधइ, कायजोगी
 बंधइ, अजोगी बंधइ ? गोयमा ! हेट्टिल्ला तिन्नि भयणाए,
 अजोगी न बंधइ, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि। वेयणिज्जं
 हेट्टिल्ला तिणिण बंधंति, अजोगी न बंधइ । पाणा वरणिज्जं णं
 भंते ! कम्मं किं सागरोवउत्ते बंधइ, अणागारोवउत्ते बंधइ ?
 गोयमा ! अट्टसुवि भयणाए । पाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं
 किं आहारए बंधइ, अणाहारए बंधइ ? गोयमा ! दो वि
 भयणाए, एवं वेयणिज्जाऽऽउगवज्जाणं छण्हं, वेयणिज्जं
 आहारए बंधइ, अणाहारए भयणाए, आउए आहारए भयणाए
 अणाहारए न बंधइ ? पाणा वरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं
 सुहुमे, बंधइ वायरे बंधइ णो सुहुम-णो वायरे बंधइ ? गोयमा !
 सुहुमे बंधइ, वायरे भयणाए, णो सुहुमणो वायरे न बंधइ,
 एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउए सुहुमे, वायरे भयणाए,

ગોસુહૃમણોવાયરે ન વંધઈ । ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે !
કમ્મં કિં ચરિમે વંધઈ, અચરિમે વંધઈ ? ગોયમા ! ંઠ વિ
મયણાણ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ઝાયા—જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ મદન્ત ! કર્મ કિં સ્ત્રી વધ્નાતિ, પુરુષો વધ્નાતિ,
નપુંસકો વધ્નાતિ ? નોસ્ત્રીનોપુરુષનોનપુંસકો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! સ્ત્રી અપિ વધ્નાતિ,
પુરુષોઽપિ વધ્નાતિ નપુંસકોઽપિ વધ્નાતિ, નોસ્ત્રીનોપુરુષનોનપુંસકઃ સ્વાદ વધ્નાતિ,
સ્વાદ નો વધ્નાતિ, एवम् આયુષ્કવર્જાઃ સત્ત્વ કર્મપ્રકૃતયઃ । આયુષ્કં સ્વલુ

કર્મવ્યવસ્થા વક્તવ્યતા

‘ ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ઇત્યી વંધઈ, પુરિસો
વંધઈ, નપુંસકો વંધઈ ?) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા સ્ત્રી વાંધતી
હૈ ? યા પુરુષ વાંધતા હૈ ? યા નપુંસક વાંધતા હૈ ? કૌન વાંધતા હૈ ?
અથવા—(ગોઇત્યી ગોપુરિસ — ગોનપુંસકો વંધઈ) સ્ત્રી નહીં વાંધતી
હૈ ? પુરુષ નહીં વાંધતા હૈ ? નપુંસક નહીં વાંધતા હૈ ? તો કૌન વાંધતા
હૈ ? (ગોયમા ! ઇત્યી વિ વંધઈ, પુરિસો વિ વંધઈ, નપુંસકો વિ વંધઈ)
હે ગૌતમ ! સ્ત્રી મી જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વાંધતી હૈ । પુરુષ મી જ્ઞાનાવર-
ણીય કર્મ વાંધતા હૈ । નપુંસક મી જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વાંધતા હૈ । (ગો
ઇત્યી ગો પુરિસ—ગો નપુંસકો સિય વંધઈ, સિય ગો વંધઈ) તથા જો
જીય નોસ્ત્રી હોતા હૈ—સ્ત્રી નહીં હોતા હૈ, નોપુરુષ હોતા હૈ—પુરુષ નહીં

કર્મવ્યવસ્થા વક્તવ્યતા—

“ ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! ” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—(ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ઇત્યી વંધઈ, પુરિસો વંધઈ,
નપુંસકો વંધઈ ?) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ શું સ્ત્રી બાંધે છે ? કે પુરુષ
બાંધે છે ? કે નપુંસક બાંધે છે ? અથવા—(ગોઇત્યી, ગોપુરિસ, ગોનપુંસકો
વંધઈ ?) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ શું સ્ત્રી બાંધતી નથી ? પુરુષ બાંધતો નથી ?
નપુંસક બાંધતો નથી ? (ગોયમા ! ઇત્યી વિ વંધઈ, પુરિસો વિ વંધઈ, નપુંસકો
વિ વંધઈ) હે ગૌતમ ! સ્ત્રી પણ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે, પુરુષ પણ
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે. અને નપુંસક પણ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે.
(ગોઇત્યી, ગોપુરિસ, ગોનપુંસકો સિય વંધઈ, સિય ગો વંધઈ) તથા જે
છવ ‘ નો સ્ત્રી ’ હોય છે—સ્ત્રી હોતી નથી, ‘ નો પુરુષ ’ હોય છે—પુરુષ હોતો

મદન્ત ! કર્મ કિં છી વધ્નાતિ, પુરુષો વધ્નાતિ, નપુંમકો વધ્નાતિ પૃચ્છા ?
 ગૌતમ ! છી સ્યાદ્ વધ્નાતિ, સ્યાદ્ નો વધ્નાતિ, एवं प्रयोऽपि भणितव्याः, नो
 स्त्रीनोपुरुषनोनपुंसको वध्नाति । ज्ञानावरणीयं सत्यु मदन्त ! કર્મ કિં સંયતો
 વધ્નાતિ, અસંયતો વધ્નાતિ, સંયતાઃસંયતો વધ્નાતિ, નોસંયતનોઅસંયતનો-

હોતા હૈ, નોનપુંસક-નપુંમક નહીં હોતા હૈ, વહ્ જીવ જ્ઞાનાવરણીય
 કર્મ યાંધતા મી હૈ ઓર નહીં મી યાંધતા હૈ । (एवं आउगवज्जाओ
 सत्त कम्मप्पगढीओ) इसी प्रकार का कथन आयु कर्म को छोडकर
 ઘાકી કે સાતોં કર્મોં કે વિષયમેં મી જાનના ચાહિયે । (अउगं णं भंते!
 कम्मं किं इत्थी बंधइ, पुरिसो बंधइ, नपुंसओ बंधइ०पुच्छा) हे मदन्त !
 आयु कर्म का बंध क्या स्त्री करती है ? पुरुष करता है ? नपुंसक करता
 है ? इस प्रकार से पहिले के जैसा प्रश्न यहां पर भी करना चाहिये ।
 (गोयमा ! इत्थी सिय बंधइ, सिय णो बंधइ, एवं तिन्नि वि भाणिय-
 व्वा) हे गौतम ! आयु कर्म का बंध स्त्री करती भी है और नहीं भी
 करती है । इसी प्रकार से पुरुष और नपुंसक के विषय में भी ऐसा
 ही कथन कर लेना चाहिये । (णोइत्थी, णोपुरिस, णो नपुंसओ
 न बन्धइ) जो नोस्त्री है नोपुरुष है ओ नोनपुंसक है वह आयु कर्म
 का बन्ध नहीं करना है । (णाणावरणिज्जं णं भन्ते ! कम्मं
 किं संजए बंधइ, असंजए बंधइ, संजयासंजए बंधइ, णो संजय,

नथी, ' नो नपुंसक ' डोय छे-नपुंसक डोतो नथी, ते एव ज्ञानावरणीय
 કર્મ બાંધે છે પણ ખરો અને નથી પણ બાંધતો. (एवं आउगवज्जाओ सत्त-
 कम्मप्पगढीओ) આયુકર્મ સિવાયના બાકીનાં સાતે કર્મોના વિષયમાં પણ આ
 પ્રકારનું કથન જ સમજવું.

(આઝગં ણં મંતે ! કર્મમેં કિં ઇત્થી બંધઈ, પુરિસો બંધઈ, નપુંસઓ બંધઈ,
 પુચ્છા) હે મદન્ત ! આયુકર્મનો બંધ શું સ્ત્રી કરે છે ? પુરુષ કરે છે ?
 નપુંસક કરે છે ? આ પ્રમાણે પહેલાંની જેવાં જ પ્રશ્નો અહીં સમજવા.

(ગોયમા ! ઇત્થી સિય બંધઈ, સિય ણો બંધઈ एवं તિન્નિ વિ ભાણિયવ્વા)
 હે ગૌતમ ! આયુકર્મનો બંધ સ્ત્રી કરે પણ છે અને નથી પણ કરતી. પુરુષ
 અને નપુંસકના વિષયમાં પણ એવું જ કથન થવું લેઈએ. (णोइत्थी, णो
 पुरिस, णोनपुंसओ न बंधइ) નો સ્ત્રી-સ્ત્રી ન હોય. એવો જીવ, નો પુરુષ-
 પુરુષ ન હોય એવો જીવ અને નો નપુંસક-નપુંસક ન હોય એવો જીવ
 આયુકર્મનો બંધ કરતો નથી. (णाणावरणिज्जं णं भंते ! किं संजए बंधइ, असं-

સંયતાસંયતો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! સંયતઃ સ્યાદ્ વધ્નાતિ, સ્યાદ્ ન વધ્નાતિ' અસંયતો વધ્નાતિ, સંયતાસંયતોઽપિ વધ્નાતિ, નોસંયતનોઅસંયત-નોસંયત્રા સંયતો ન વધ્નાતિ, एवम् आयुष्कर्मजाः सप्तापि, आयुष्कम् अधस्तनास्त्रयो

ણો અસંજય-ણો સંજયાસંજય વંધઈ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા સંયત જીવ વાંધતા હૈ ? અસંયત જીવ વાંધતા હૈ ? યા સંયતાસંયત જીવ વાંધતા હૈ ? અથવા-જો નો સંયત હોના હૈ વહ વાંધતા હૈ ? યા જો નો અસંયત યા નો સંયતાસંયત જીવ હોતા હૈ વહ વાંધતા હૈ । (ગોયમા) હૈ ગૌતમ । (સંજય સિય વંધઈ, સિય ણો વંધઈ, અસંજય વંધઈ, સંજ-યાસંજય વિ વંધઈ, ણો સંજય, ણો અસંજય ણો સંજયાસંજય ણ વંધઈ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ સંયત વાંધના મી હૈ ઓર નહીં મી વાંધતા હૈ । પર જો અસંયત હોતા હૈ વહ વાંધતા હૈ તથા જો સંયતાસંયત હોતા હૈ વહ મી વાંધતા હૈ । તથા જો નો સંયત હોતા હૈ, નો અસંયત હોતા હૈ, નો સંયતાસંયત હોતા હૈ, વહ નહીં વાંધતા હૈ । (एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउगे हेद्विछा तिणिण भयणाए, उवरिल्ले ण वंधइ) इसी तरह से आयुर्कर्म को छोड़कर शेष सात कर्म प्रकृतियों के विषय में भी जानना चाहिये । आयुर्कर्म के विषय में ऐसा जानना चाहिये कि जो जीव संयत हो, असंयत हो, या संयतासंयत हो वह आयुर्कर्म को बांधता भी है

જય વંધઈ, સંજયાસંજય વંધઈ, ણો સંજય, ણો અસંજય, ણો સંજયાસંજય વંધઈ ?) હે ભદન્ત ! શું સંયત જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? શું અસંયત જીવ તે કર્મ બાંધે છે ? શું સંયતાસંયત જીવ તે કર્મ બાંધે છે ? અથવા શું નો સંયત જીવ તે કર્મ બાંધે છે ? નો અસંયત જીવ તે કર્મ બાંધે છે ? શું નો સંયતાસંયત જીવ તે કર્મ બાંધે છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સંજય સિય વંધઈ સિય ણો વંધઈ, અસંજય વંધઈ, સંજયાસંજય વિ વંધઈ, ણો સંજય, ણો અસંજય ણો સંજયાસંજય ણ વંધઈ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ સંયત જીવ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતો, પણ અસંયત જીવ તથા સંયતાસંયત જીવ બાંધે છે, નો સંયત, નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી.

(एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउगे हेद्विछा तिणिण भयणाए, उवरिल्ले ण वंधइ) आयुर्कर्म सिवायની સાતે કર્મપ્રકૃતિઓના વિષયમાં પણ આ પ્રમાણે જ સમજવું. આયુકર્મના વિષયમાં એવું સમજવું કે જે જીવ સંયત હોય, અસંયત હોય, અથવા તે સંયતાસંયત હોય તે આયુકર્મ બાંધે છે પણ ખરે અને નથી પણ બાંધતો. પરંતુ જે જીવ નો સંયત હોય, નો અસંયત

મદન્ત ! કર્મ કિં છી વધ્નાતિ, પુરુષો વધ્નાતિ, નપુંમકો વધ્નાતિ પૃચ્છા ?
ગૌતમ ! સ્ત્રી સ્યાદ વધ્નાતિ, સ્યાદ નો વધ્નાતિ, एवं प्रयोऽपि भणितव्याः, नो
स्त्रीनोपुरुषनोनपुंसको वध्नाति । ज्ञानावरणीयं सन्तु भदन्त ! कर्म किं संयतो
वध्नाति, असंयतो वध्नाति, संयताऽसंयतो वध्नाति, नोसंयतनोअसंयतनो-

હોતા હૈ, નોનપુંસક-નપુંસક નહીં હોતા હૈ, વહ જીવ જ્ઞાનાવરણીય
કર્મ યાંધતા મી હૈ ઓર નહીં મી યાંધતા હૈ । (एवं आउगवज्जाओ
सत्त कम्मप्पगहीओ) इसी प्रकार का कथन आयु कर्म को छोड़कर
बाकी के सातों कर्मों के विषयमें भी जानना चाहिये । (अउगं णं भंते !
कम्मं किं इत्थी बंधइ, पुरिसो बंधइ, नपुंसओ बंधइ०पुच्छा) हे भदन्त !
आयुर्कर्म का बंध क्या स्त्री करती है ? पुरुष करता है ? नपुंसक करता
है ? इस प्रकार से पहिले के जैसा प्रश्न यहां पर भी करना चाहिये ।
(गोयमा ! इत्थी सिय बंधइ, सिय णो बंधइ, एवं तिज्जि वि भाणिय-
व्वा) हे गौतम ! आयुर्कर्म का बंध स्त्री करती भी है और नहीं भी
करती है । इसी प्रकार से पुरुष और नपुंसक के विषय में भी ऐसा
ही कथन कर लेना चाहिये । (णोइत्थी, णोपुरिस, णो नपुंसओ
न बन्धइ) जो नोछी है नोपुरुष है ओ नोनपुंसक है वह आयुर्कर्म
का बन्ध नहीं करता है । (णाणावरणिज्जं णं भन्ते ! कम्मं
किं संजए बंधइ, असंजए बंधइ, संजयासंजए बंधइ, णो संजय,

नथी, 'नो नपुंसक' डोय छे-नपुंसक डोतो नथी, ते एव ज्ञानावरणीय
કર્મ બાંધે છે પણ ખરો અને નથી પણ બાંધતો. (एवं आउगवज्जाओ सत्त-
कम्मप्पगहीओ) आयुर्कर्म सिवायना બાકીનાં સાતે કર્મોના વિષયમાં પણ આ
પ્રકારનું કથન જ સમજવું.

(આગં ણં મંતે ! કર્મ કિં ઇત્થી બંધઈ, પુરિસો બંધઈ, નપુંસઓ બંધઈ,
પુચ્છા) હે ભદન્ત ! આયુર્કર્મનો બંધ શું સ્ત્રી કરે છે ? પુરુષ કરે છે ?
નપુંસક કરે છે ? આ પ્રમાણે પહેલાંની જેવાં જ પ્રશ્નો અહીં સમજવા.

(ગોયમા ! ઇત્થી સિય બંધઈ, સિય ણો બંધઈ एवं तिज्जि वि भाणियव्वा)
હે ગૌતમ ! આયુર્કર્મનો બંધ સ્ત્રી કરે પણ છે અને નથી પણ કરતી. પુરુષ
અને નપુંસકના વિષયમાં પણ એવું જ કથન થવું જોઈએ. (ણોइत्थी, णो
पुरिस, णोनपुंसओ न बंधइ) નો સ્ત્રી-સ્ત્રી ન હોય એવો જ, નો પુરુષ-
પુરુષ ન હોય એવો જ અને નો નપુંસક-નપુંસક ન હોય એવો જ
આયુર્કર્મનો બંધ કરતો નથી. (णाणावरणिज्जं णं भंते ! किं संजए बंधइ, असं-

વધ્નાતિ, અસંજી વધ્નાતિ, નોમઙ્ગિ નોઅસંજિ વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! સંજી સ્યાદ્ વધ્નાતિ, સ્યાદ્ ન વધ્નાતિ, અસંજી વધ્નાતિ, નોસંજિ-નોઅસંજી ન વધ્નાતિ, एवं वेदनीया-ऽऽयुष्कवर्जाः पट् कर्मप्रकृतयः, वेदनीयम् अधस्तनौ द्वौ वध्नीतः, उपरितनो भजनया, आयुष्कम् अधस्तनौ द्वौ भजनया, उपरितनो न वध्नाति ।

હોતા હે વહ્ હસ સ્થિતિ મેં આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતા હે । (જાણા-વરણિજ્ઞં ણં ભંતે । કર્મં કિં સન્ની વંધઈ, અસન્ની વંધઈ, જો સન્ની, જો અસન્ની વંધઈ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કૌન જીવ કરતા હે-કયા જો જીવ સંજી હોના હે વહ્ કરતા હે ? યા જો જીવ અસંજી હોતા હે વહ્ કરતા હે ? (નો અસન્ની વંધઈ) અથવા જો નો સંજી હોતા હે વહ્ યા જો અસંજી હોતા હે વહ્ કરતા હે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સન્ની સિય વંધઈ, સિય નો વંધઈ, અસન્ની વંધઈ, નો સન્ની, નો અસન્ની ન વંધઈ) જો સંજી જીવ હોતા હે વ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા ભી હે, ઓર નહીં ભી કરતા હે । જો અસંજી જીવ હોતા હે વહ્ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે । પર જો નો સંજી અસંજી જીવ ૨ હેં વે હસ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હેં । (एवं वेयणिज्जाउगवज्जाओ छ कम्मप्पयडोओ, वेयणिज्जं हेट्ठिल्ला दो वंधंति, उवरिल्ले भयणाए, आउगं हेट्ठिल्ला दो भयणाए, उवरिल्ले न वंधइ) इसी तरह से वेदनीय और आयु के सिवाय छ कर्म प्रकृतियों के विषय में भी कथन जानना चाहिये । वेदनीय कर्म का वंध

(જાણાવરણિજ્ઞં ણં ભંતે ! કર્મં કિં સન્ની વંધઈ, અસન્ની વંધઈ, જો સન્ની, જો અસન્ની વંધઈ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ શું સંજી જીવ બાંધે છે ? કે અસંજી જીવ બાંધે છે ? અથવા બે નો સંજી બાંધે છે તે બાંધે છે ? કે બે નો અસંજી બાંધે તે બાંધે છે ?

(ગોયમા ! (સન્ની સિય વંધઈ, સિય નો વંધઈ, અસન્ની વંધઈ, નો સન્ની, નો અસન્ની ન વંધઈ) સંજી જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતો, અસંજી જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, પણ નો સંજી અને નો અસંજી જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી.

(एवं वेयणिज्जाउगवज्जाओ छ कम्मप्पयडोओ, वेयणिज्जं हेट्ठिल्ला दो वंधंति, उवरिल्ले भयणाए, आउगं हेट्ठिल्ला दो भयणाए, उवरिल्ले न वंधइ) આ પ્રકારે કથન વેદનીય અને આયુકર્મ સિવાયની છ કર્મપ્રકૃતિઓના વિષયમાં પણ સમજવું. સંજી જીવો વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે, અસંજી જીવો વેદનીય

भजनया, उपरितनो न वध्नाति । ज्ञानावरणीयं खलु भदन्त ! कर्म किं सम्पग्-
दृष्टिर्वध्नाति, मिथ्यादृष्टिर्वध्नाति, सम्पग्मिथ्यादृष्टिर्वध्नाति ? गौतम ।
सम्पग्दृष्टिः स्याद् वध्नाति, स्याद् न वध्नाति, मिथ्यादृष्टिर्वध्नाति, सम्पग्
मिथ्यादृष्टिर्वध्नाति, एवम्-आयुष्कवर्जाः सप्ताऽपि, आयुष्कम् अभस्तनौ द्वौ भव-
नया, सम्पग्मिथ्यादृष्टिर्न वध्नाति । ज्ञानावरणीयं खलु भदन्त ! कर्म किं संज्ञी

और नहीं भी बांधता है । पर जो जीव नो संयत, नो असंयत या नो
संयतासंयत होते हैं वे नहीं बांधते हैं । (गाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं
किं सम्मदिट्ठी बंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ) हे
भदन्त ! ज्ञानावरणीय कर्म क्या सम्पग्दृष्टि जीव बांधता है ? या मिथ्या-
दृष्टि जीव बांधता है ? (गोयमा ! सम्मदिट्ठी सिय बंधइ, सिय
णो बंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ) हे गौतम !
जो जीव सम्पग्दृष्टि होता है वह ज्ञानावरणीय कर्म बांधता भी
है और नहीं भी बांधता है । पर जो जीव मिथ्यादृष्टि या सम्पक्
मिथ्यादृष्टि होता है वह तो बांधता ही है । (एवं आउगवज्जाओ सत्त
वि आउए हेट्ठिल्ला दो भयणाए, सम्मामिच्छदिट्ठी न बंधइ) इसी तरह
से आयुकर्म को छोड़कर बाकी के सातकर्मों को बांधने के विषय में भी
जानना चाहिये । आयुकर्म के विषय में ऐसा समझना चाहिये कि
जो जीव सम्पग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टि होता है वह आयुकर्म का बंध
करता भी है-और नहीं भी करता है परन्तु जो सम्पग्मिथ्यादृष्टि जीव

डाय, अथवा तो नो संयतासंयत डाय, तेओ आयुकर्म बांधता नथी.

गाणावरणिज्जं णं भंते ! किं सम्मदिट्ठी बंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामि-
च्छदिट्ठी बंधइ ?) :डे भदन्त ! शुं ज्ञानावरणीय कर्म सम्पग्दृष्टि एव बांधे
छे ? के मिथ्यादृष्टि -एव बांधे छे ? के सम्पग्मिथ्यादृष्टि -एव बांधे छे ?

(गोयमा !) :डे गौतम ! (सम्मदिट्ठी सिय बंधइ, सिय णो बंधइ,
मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ) हे गौतम ! सम्पग्दृष्टि एव क्यारेक
ज्ञानावरणीय कर्म बांधे छे अने क्यारेक नथी बांधतो, परंतु मिथ्यादृष्टि एव
अथवा तो सम्पक् मिथ्यादृष्टि एव तो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे छे न.

(एवं आउगवज्जाओ सत्त वि, आउए हेट्ठिल्ला दो भयणाए, सम्मामि-
च्छदिट्ठी न बंधइ) आयुकर्म सिवायना साते कर्मबंध विसे आ प्रभाणे न
समज्जुं. आयुकर्मना बंध विसे नीचे प्रभाणे समज्जुं—ने एव सम्पग्दृष्टि
डाय छे अथवा तो मिथ्यादृष्टि डाय छे ते आयुकर्मना बंध क्यारेक बांधे
छे अने क्यारेक नथी बांधतो. परंतु ने एव सम्पक् मिथ्यादृष्टि डाय छे ते
आयुकर्मना बंध करतो नथी.

વધ્નાતિ, અસંજી વધ્નાતિ, નોમચ્છિ નોઅસંજિ વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! સંજી સ્પાદ વધ્નાતિ, સ્પાદ ન વધ્નાતિ, અસંજી વધ્નાતિ, નોસંજિ-નોઅસંજી ન વધ્નાતિ, एवं वेदनीया-ऽऽयुष्कवर्जाः पट् कर्मप्रकृतयः, वेदनीयम् अधस्तनौ द्वौ वध्नीतः, उपरितनो भजनया, आयुष्कम् अधस्तनौ द्वौ भजनया, उपरितनो न वध्नाति ।

હોતા હે વહ્ હસ સ્થિતિ મેં આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈ । (ણાણા-વરણિજ્ઞં ણં ભંતે ! કર્મં કિં સન્ની વંધઃ, અસન્ની વંધઃ, ણો સન્ની, ણો અસન્ની વંધઃ) હૈ ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કૌન જીવ કરતા હૈ-કયા જો જીવ સંજી હોના હૈ વહ્ કરતા હૈ ? યા જો જીવ અસંજી હોતા હૈ વહ્ કરતા હૈ ? (નો અસન્ની વંધઃ) અથવા જો નો સંજી હોતા હૈ વહ્ યા જો અસંજી હોતા હૈ વહ્ કરતા હૈ ? (ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! (સન્ની સિય વંધઃ, સિય નો વંધઃ, અસન્ની વંધઃ, નો સન્ની, નો અસન્ની ન વંધઃ) જો સંજી જીવ હોતા હૈ વ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા ભી હૈ, ઓર નહીં ભી કરતા હૈ । જો અસંજી જીવ હોતા હૈ વહ્ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ । પર જો નો સંજી અસંજી જીવ ૨ હૈં વે હસ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈં । (एवं वेयणिज्जाउगवज्जाओ छ कम्मप्पयड्डीओ, वेयणिज्जं हेट्ठिल्ला दो वंधंति, उवरिल्ले भयणाए, आउगंहेट्ठिल्ला दो भयणाए, उवरिल्ले न वंधइ) इसी तरह से वेदनीय और आयु के सिवाय छ कर्म प्रकृतियों के विषय में भी कथन जानना चाहिये । वेदनीय कर्म का वं

(ણાણાવરણિજ્ઞં ણં ભંતે ! કર્મં કિં સન્ની વંધઃ, અસન્ની વંધઃ, ણો સન્નો, ણો અસન્નો વંધઃ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ શું સંજી જીવ બાંધે છે ? કે અસંજી જીવ બાંધે છે ? અથવા બે નો સંજી હોય છે તે બાંધે છે ? કે બે નો અસંજી હોય તે બાંધે છે ?

(ગોયમા ! (સન્નો સિય વંધઃ, સિય નો વંધઃ, અસન્નો વંધઃ, નો સન્નો, નો અસન્નો ન વંધઃ) સંજી જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતો, અસંજી જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, પણ નો સંજી અને નો અસંજી જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી.

(एवं वेयणिज्जाउगवज्जाओ छ कम्मप्पयड्डीओ, वेयणिज्जं हेट्ठिल्ला दो वंधंति, उवरिल्ले भयणाए, आउगं हेट्ठिल्ला दो भयणाए, उवरिल्ले न वंधइ) આ પ્રકારું કથન વેદનીય અને આયુકર્મ સિવાયની છ કર્મપ્રકૃતિઓના વિષયમાં પણ સમજવું. સંજી જીવો વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે, અસંજી જીવો વેદનીય

જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ ભદન્ત ! કર્મ કિં ભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, અભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! ભવસિદ્ધિકો મજ્જનયા, અભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકો ન વધ્નાતિ,

જો જીવ સંજી હોતે હું વે તો કરતે હું પર જો જીવ ન સંજી હું ઓર ન અસંજી હું, વે વેદનોય કર્મ કા વંધ કરતે મી હું ઓર નહીં મી કરતે હું । આયુકર્મ કા વંધ જો જીવ સંજી હોતે હું વે અથવા જો અસંજી હોતે હું વે કરતે મી હું ઓર નહીં મી કરતે હું તથા જો જીવ ન સંજી હું ઓર ન અસંજી હું વે આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતે હું । (જાનાવરણિ-જ્ઞં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ભવસિદ્ધિય વંધહ, અભવસિદ્ધિય વંધહ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ જો જીવ ભવસિદ્ધિક હોતા હે વંધ કરતા હે ? યા જો જીવ અભવસિદ્ધિક-અભવ્ય હોતા હે વહ કરતા હે । યા જો (જો ભવસિદ્ધિય, જો અભવસિદ્ધિય વંધહ) જીવ નો ભવ-સિદ્ધિક હોતા હે, નો અભવસિદ્ધિક હોતા હે વહ કરતા હે ? (ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય મયણાણ, અભવસિદ્ધિય વંધહ, જો ભવસિદ્ધિય, જો અભ-વસિદ્ધિય ન વંધહ) હે ગૌતમ ! જો જીવ ભવસિદ્ધિક હોતા હે, વહ હસ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા મી હું ઓર નહીં મી કરતા હું । પર જો અભવસિદ્ધિક હોતા હે, વહ તો વંધ કરતા હી હું ; તથા જો જીવ ન ભવસિદ્ધિક હું, ન અભવસિદ્ધિક હું વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં

કર્મનો બંધ કરે છે, પરંતુ નો સંજી અને નો અસંજી હોયો વેદનીય કર્મનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા. આયુકર્મનો બંધ સંજી તથા અસંજી હોયો કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા, પરંતુ નો સંજી હોયો આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

(જાનાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ભવસિદ્ધિય વંધહ, અભવસિદ્ધિય વંધહ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ભવસિદ્ધિક (ભવ્ય હવ) બાંધે છે કે અભ-વસિદ્ધિક (અભવ્ય હવ) બાંધે છે ? અથવા (જો ભવસિદ્ધિય, જો અભ-વસિદ્ધિય વંધહ ?) જે હવ નો ભવસિદ્ધિક હોય છે તે બાંધે છે ? કે જે હવ નો અભવસિદ્ધિક હોય છે તે બાંધે છે ?

(ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય મયણાણ, અભવસિદ્ધિય વંધહ, જો ભવસિદ્ધિય જો અભવસિદ્ધિય ન વંધહ) હે ગૌતમ ! જે હવ ભવસિદ્ધિક હોય છે તે જ્ઞાના-વરણીય કર્મ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતો, પણ જે હવ અભ-વસિદ્ધિક હોય છે તે તો આ કર્મ બાંધે ન છે. નો ભવસિદ્ધિક અને નો અભવસિદ્ધિક હોયો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી.

એવમ્ આયુષ્ક વર્ગાઃ સપ્તાપિ, આયુષ્કમ્ અથસ્તનો દ્વો મજનયા, ઉપરિતનો ન વંધનાતિ, જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ ભદન્ત ! કર્મ કિં ચક્ષુર્દર્શની વંધનાતિ, અચક્ષુર્દર્શની વંધનાતિ અવધિર્દર્શની વંધનાતિ, કેવલર્દર્શની વંધનાતિ ? ગૌતમ ! અથસ્તનાત્તયો મજનયા, ઉપરિતનો ન વંધનાતિ, એવં વેદનીયવર્ગાઃ સપ્તાપિ, વેદનીયમ્ અથ-

કરતે હું. (એવં આઝગજ્ઞાઓ સત્ત્વિ, આઝગં હેટ્ઠિલા દો મયળાણ ઉવરિલ્લે ન વંધઈ) इसी तरह सैं आयुर्कर्म को छोड़कर बाकी के सात कर्मों के बंध करने के विषय में जानना चाहिये। आयु कर्म का बंध जो भव-सिद्धिक है वे तंत्रां जो अभवसिद्धिक हैं वे करते भी हैं और नहीं भी करते हैं। पर जो भवसिद्धिक हैं, नो अभवसिद्धिक हैं वे आयुर्कर्म का बंध नहीं करते हैं। (जाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं चक्खुदंसणी बंधइ, ? अचक्खुदंसणी बंधइ, ओहिदंसणी बंधइ ? केवलदंसणी बंधइ ?) हे भदन्त ! ज्ञानावरणीय कर्म का बंध क्या चक्षु दर्शनवाला जीव करता है ? या जो अचक्षुदर्शनवाला जीव है वह करता है ? या जो अवधिदर्शनवाला जीव है वह करता है ? या केवलदर्शनवाला जो जीव है वह करता है ? (हेट्ठिळा तिणिण भयणाए, उवरिल्ले न बंधइ, एवं वेयणि-ज्जवज्जाओ सत्त वि) हे गौतम ! नीचे के तीन-चक्षुदर्शनी, अचक्षु-दर्शनी और अवधिदर्शनी-ये तीन-ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करते भी हैं, नहीं भी करते हैं। तथा ऊपर का जो केवलदर्शनजीव है वह ज्ञाना-

(એવં આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત વિ, આઝગં હેટ્ઠિલા દો મયળાણ, ઉવરિલ્લે ન વંધઈ) આયુકર્મ ત્રિવાયના સાતે કર્મોના બંધ વિષે પણ આ પ્રમાણે જ સમજવું. ભવસિદ્ધિક અને અભવસિદ્ધિક ભવો આયુકર્મનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા. પણ નો ભવસિદ્ધિક ભવો અને નો અભવસિદ્ધિક ભવો આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

(જાણાવરણિજ્જં ણં ભંતે ! કમ્મં કિં ચક્ષુદંસણી વંધઈ ? અચક્ષુદંસણી વંધઈ ? ઓહિદંસણી વંધઈ ? કેવલદંસણી વંધઈ ?) हे भदन्त ! ज्ञानावरणीय कर्मोना बंधं शु चक्षु-दर्शनवाणो भव करे छे ? के अचक्षु-दर्शनवाणो भव करे छे ? के अवधि-दर्शनवाणो भव करे छे ? के केवण-दर्शनवाणो भव करे छे ?

(હેટ્ઠિલા તિણિ મયળાણ, ઉવરિલ્લે ન વંધઈ, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि) हे गौतम ! चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी અને अवधिदर्शनी ભવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મોના બંધ કરે છે પણ ખરાં અને નથી પણ કરતા. પરંતુ કેવલ દર્શનવાળો

જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ ભદન્ત ! કર્મ કિં ભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, અભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! ભવસિદ્ધિકો મજનયા, અભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકો ન વધ્નાતિ,

જો જીવ સંજી હોતે હિં વે તો કરતે હિં પર જો જીવ ન સંજી હિં ઓર ન અસંજી હિં, વે વેદનોય કર્મ કા વંધ કરતે મી હિં ઓર નહીં મી કરતે હિં । આયુકર્મ કા વંધ જો જીવ સંજી હોતે હિં વે અથવા જો અસંજી હોતે હિં વે કરતે મી હિં ઓર નહીં મી કરતે હિં તથા જો જીવ ન સંજી હિં ઓર ન અસંજી હિં વે આયુકર્મકા વંધ નહીં કરતે હિં । (જાનાવરણિ-જ્ઞં ણં મંતે ! કર્મ્મ કિં ભવસિદ્ધિય વંધઈ, અભવસિદ્ધિય વંધઈ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ જો જીવ ભવસિદ્ધિક હોતા હે વંધ કરતા હે ? યા જો જીવ અભવસિદ્ધિક-અભવ્ય હોતા હે વંધ કરતા હે । યા જો (જો ભવસિદ્ધિય, જો અભવસિદ્ધિય વંધઈ) જીવ નો ભવસિદ્ધિક હોતા હે, નો અભવસિદ્ધિક હોતા હે વંધ કરતા હે ? (ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય મયણાણ, અભવસિદ્ધિય વંધઈ, જો ભવસિદ્ધિય, જો અભવસિદ્ધિય ન વંધઈ) હે ગૌતમ ! જો જીવ ભવસિદ્ધિક હોતા હે, વંધ હસ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા મી હે ઓર નહીં મી કરતા હે । પર જો અભવસિદ્ધિક હોતા હે, વંધ તો વંધ કરતા હી હે; તથા જો જીવ ન ભવસિદ્ધિક હિં, ન અભવસિદ્ધિક હિં વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં

કર્મના બંધ કરે છે, પરંતુ નો સંજી અને નો અસંજી હોવા વેદનીય કર્મના બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા. આયુકર્મના બંધ સંજી તથા અસંજી હોવા કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા, પરંતુ નો સંજી હોવા આયુકર્મના બંધ કરતા નથી.

(જાનાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કર્મ્મ કિં ભવસિદ્ધિય વંધઈ, અભવસિદ્ધિય વંધઈ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ભવસિદ્ધિક (ભવ્યં હવ) બાંધે છે કે અભવસિદ્ધિક (અભવ્યં હવ) બાંધે છે ? અથવા (જો ભવસિદ્ધિય, જો અભવસિદ્ધિય વંધઈ ?) જે હવ નો ભવસિદ્ધિક હોય છે તે બાંધે છે ? કે જે હવ નો અભવસિદ્ધિક હોય છે તે બાંધે છે ?

(ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય મયણાણ, અભવસિદ્ધિય વંધઈ, જો ભવસિદ્ધિય જો અભવસિદ્ધિય ન વંધઈ) હે ગૌતમ ! જે હવ ભવસિદ્ધિક હોય છે તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતો, પણ જે હવ અભવસિદ્ધિક હોય છે તે તો આ કર્મ બાંધે ન છે. નો ભવસિદ્ધિક અને નો અભવસિદ્ધિક હોવા જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી.

એવમ્ આયુષ્ક વર્જાઃ સપ્તાપિ, આયુષ્કમ્ અથસ્તનો દ્રો મંજનયા, ઉપરિતનો ન વધ્નાતિ, જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ મદન્ત ! કર્મ કિં ચક્ષુર્દર્શની વધ્નાતિ, અચક્ષુર્દર્શની વધ્નાતિ અવધિર્દર્શની વધ્નાતિ, કેવલદર્શની વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! અથસ્તનાસ્ત્રયો મંજનયા, ઉપરિતનો ન વધ્નાતિ, એવં વેદનીયવર્જાઃ સપ્તાઽપિ, વેદનીયમ્ અથ-

કરતે હું. (એવં આઝગજ્ઞાઓ સત્તવિ, આઝગં હેટ્ઠિલા દો મયણાણ ઉવરિલ્લે ન વંધઈ) હસીં તરહ સેં આયુકર્મ કોં ઢોઢકર વાકી કે સાત કર્મોં કે વંધ કરને કે વિષય મેં જાનના ચાહિયે. આયુ કર્મ કા વંધ જો મવસિદ્ધિક હૈં વે તયાં જો અમવસિદ્ધિક હૈં વે કરતે મીં હૈં ઓર નહીં મીં કરતે હૈં. પર જો મવસિદ્ધિક હૈં, નો અમવસિદ્ધિક હૈં વે આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈં. (જાણાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ચક્ષુર્દંસણી વંધઈ, ? અચક્ષુર્દંસણી વંધઈ, ઓહિદંસણી વંધઈ ? કેવલદંસણી વંધઈ ?) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કયા ચક્ષુ દર્શનવાલો જીવ કરતા હૈં ? યા જો અચક્ષુર્દર્શનવાલો જીવ હૈં વહ કરતા હૈં ? યા જો અવધિદર્શનવાલો જીવ હૈં વહ કરતા હૈં ? યા કેવલદર્શનવાલો જો જીવ હૈં વહ કરતા હૈં ? (હેટ્ઠિલા તિણિ મયણાણ, ઉવરિલ્લે ન વંધઈ, એવં વેયણિ-વજ્જવજ્ઞાઓ સત્ત વિ) હે ગૌતમ ! નીચે કે તોન-ચક્ષુર્દર્શની, અચક્ષુર્દર્શની ઓર અવધિર્દર્શની-વે તોન-જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતે મીં હૈં, નહીં મીં કરતે હૈં. તથા ડપર કા જો કેવલદર્શનજીવ હૈં વહ જ્ઞાના-

(એવં આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત વિ, આઝગં હેટ્ઠિલા દો મયણાણ, ઉવરિલ્લે ન વંધઈ) આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મોના બંધ વિષે પણ આ પ્રમાણે જ સમજવું. ભવસિદ્ધિક અને અભવસિદ્ધિક એવો આયુકર્મનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા. પણ નો ભવસિદ્ધિક એવો અને નો અભવસિદ્ધિક એવો આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

(જાણાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ચક્ષુર્દંસણી વંધઈ ? અચક્ષુર્દંસણી વંધઈ ? ઓહિદંસણી વંધઈ ? કેવલદંસણી વંધઈ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ શું ચક્ષુ-દર્શનવાળો એવ કરે છે ? કે અચક્ષુ-દર્શનવાળો એવ કરે છે ? કે અવધિ-દર્શનવાળો એવ કરે છે ? કે કેવલ-દર્શનવાળો એવ કરે છે ?

(હેટ્ઠિલા તિણિ મયણાણ, ઉવરિલ્લે ન વંધઈ. એવં વેયણિવજ્જવજ્ઞાઓ સત્ત વિ) હે ગૌતમ ! ચક્ષુર્દર્શની, અચક્ષુર્દર્શની અને અવધિર્દર્શની એવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે પણ ખરાં અને નથી પણ કરતા. પરંતુ કેવલ દર્શનવાળો

જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ ભદન્ત ! કર્મ કિં ભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, અભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! ભવસિદ્ધિકો ભજનયા, અભવસિદ્ધિકો વધ્નાતિ, નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકો ન વધ્નાતિ,

જો જીવ સંજી હોતે હું વે તો કરતે હું પર જો જીવ ન સંજી હું ઓર ન અસંજી હું, વે વેદનોય કર્મ કા વંધ કરતે મી હું ઓર નહીં મી કરતે હું । આયુકર્મ કા વંધ જો જીવ સંજી હોતે હું વે અથવા જો અસંજી હોતે હું વે કરતે મી હું ઓર નહીં મી કરતે હું તથા જો જીવ ન સંજી હું ઓર ન અસંજી હું વે આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતે હું । (જાણાવરણિ-
જ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ભવસિદ્ધિય વંધઈ, અભવસિદ્ધિય વંધઈ ?)
હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ જો જીવ ભવસિદ્ધિક હોતા હૈ વંધ કરતા હૈ ? યા જો જીવ અભવસિદ્ધિક-અભવ્ય હોતા હૈ વંધ કરતા હૈ । યા જો (જો ભવસિદ્ધિય, જો અભવસિદ્ધિય વંધઈ) જીવ નો ભવ-
સિદ્ધિક હોતા હૈ, નો અભવસિદ્ધિક હોતા હૈ વંધ કરતા હૈ ? (ગોયમા !
ભવસિદ્ધિય મયણાઈ, અભવસિદ્ધિય વંધઈ, જો ભવસિદ્ધિય, જો અભ-
વસિદ્ધિય ન વંધઈ) હે ગૌતમ ! જો જીવ ભવસિદ્ધિક હોતા હૈ, વંધ હસ
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા મી હું ઓર નહીં મી કરતા હૈ । પર
જો અભવસિદ્ધિક હોતા હૈ, વંધ તો વંધ કરતા હી હૈ, તથા જો જીવ ન
ભવસિદ્ધિક હું, ન અભવસિદ્ધિક હું વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં

કર્મનો બંધ કરે છે, પરંતુ નો સંજી અને નો અસંજી હોવા વેદનીય કર્મનો
બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા. આયુકર્મનો બંધ સંજી તથા અસંજી
હોવા કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા, પરંતુ નો સંજી હોવા આયુકર્મનો
બંધ કરતા નથી.

(જાણાવરણિજ્ઞં ણં મંતે ! કર્મં કિં ભવસિદ્ધિય વંધઈ, અભવસિદ્ધિય વંધઈ ?)
હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ભવસિદ્ધિક (ભવ્યં ભવ) બાંધે છે કે અભ-
વસિદ્ધિક (અભવ્યં ભવ) બાંધે છે ? અથવા (જો ભવસિદ્ધિય, જો અભવ-
સિદ્ધિય વંધઈ ?) જે ભવ નો ભવસિદ્ધિક હોય છે તે બાંધે છે ? કે જે ભવ
નો અભવસિદ્ધિક હોય છે તે બાંધે છે ?

(ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય મયણાઈ, અભવસિદ્ધિય વંધઈ, જો ભવસિદ્ધિય જો
અભવસિદ્ધિય ન વંધઈ) હે ગૌતમ ! જે ભવ ભવસિદ્ધિક હોય છે તે જ્ઞાના-
વરણીય કર્મ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધેતા, પણ જે ભવ અભવ-
સિદ્ધિક હોય છે તે તો આ કર્મ બાંધે ન છે. નો ભવસિદ્ધિક અને નો
અભવસિદ્ધિક હોવા જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધેતા નથી.

કર્મ કિમ્ આભિનિવોધિકજ્ઞાની વધ્નાતિ, શ્રુતજ્ઞાની, અવધિજ્ઞાની, મનઃ પર્યવજ્ઞાની, કેવલજ્ઞાની વધ્નાતિ? ગૌતમ ! અથસ્તનાથત્વારો મજનયા, કેવલજ્ઞાની ન વધ્નાતિ, एवं वेदनीयवर्जाः सप्ताऽपि, वेदनीयम् अथस्तनाथत્वारोऽपि वध्नन्ति, કેવલજ્ઞાની મજનયા । જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ ભદન્ત । કર્મ કિં મત્યજ્ઞાની વધ્નાતિ, શ્રુતાજ્ઞાની

કા વંધ મજના સે પરિત્ત મી ઓર અપરિત્ત મી યે દોનોં જીવ મી કરતે હેં । પરન્તુ જો નો પરિત્ત ઓર નો અપરિત્ત જીવ હેં વે આયુ કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હેં । (જાણાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કર્મં કિં આભિનિવોદિય-જ્ઞાણી વંધઈ, સુચણાણી, ઓહિનાણી, મણપજ્જવનાણી, કેવલજ્ઞાણી વંધઈ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કયા આભિનિવોધિકજ્ઞાની-મતિ-જ્ઞાનવાલા જીવ કરતા હે ? કિં શ્રુતજ્ઞાની કરતા હે ? અથવા કિં અવધિ-જ્ઞાનવાલા જીવ કરતા હે, યા મનઃ પર્યવ જ્ઞાનવાલા જીવ કરતા હે ? યા કેવલજ્ઞાનવાલા જીવ કરતા હે ? (ગોયમા ! હેઢિલા ચત્તારિ મચ્છાણ, કેવલજ્ઞાણી ન વંધઈ) હે ગૌતમ ! મતિજ્ઞાનવાલા, શ્રુતજ્ઞાનવાલા, અવધિ-જ્ઞાનવાલા ઓર મનઃ પર્યવજ્ઞાનવાલા જીવ મજના સે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે । પરન્તુ જો કેવલ જ્ઞાનવાલા જીવ હોતા હે વહ જ્ઞાનાવ-રણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હે । (एवं वेदनीयकर्म को छोड़कर सातकर्मप्रकृतियों के वंध करनेके

પરંતુ જે નો પરિત્ત અને નો અપરિત્ત જીવો છે તેઓ આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

(જાણાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કિં કર્મં અભિનિવોદિયજ્ઞાણી વંધઈ, સુચણાણી, ઓહિનાણી, મણપજ્જવનાણી, કેવલજ્ઞાણી વંધઈ ?) હે ભદન્ત ! શું જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ આભિનિવોધિકજ્ઞાની (મતિજ્ઞાનવાળો) જીવ કરે છે ? કે શ્રુત-જ્ઞાની કરે છે ? કે અવધિજ્ઞાનવાળો જીવ કરે છે ? કે મનઃપર્યવજ્ઞાનવાળો જીવ કરે છે ? કે કેવલજ્ઞાનવાળો જીવ કરે છે ?

(ગોયમા ! હેઢિલા ચત્તારિ મચ્છાણ, કેવલજ્ઞાણી ન વંધઈ) હે ગૌતમ ! મતિજ્ઞાનવાળો, શ્રુતજ્ઞાનવાળો, અવધિજ્ઞાનવાળો અને મનઃપર્યવજ્ઞાનવાળો જીવ વિકલ્પે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. એટલે કે તેઓ તે કર્મનો બંધ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતા. પરંતુ કેવલજ્ઞાની જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી.

(एवं वेदनीयकर्मं सिवायनी साते कर्म-प्रकृतियोना कर्मवंधना विषयमां પણ એ જ પ્રમાણે સમજવું.

મદન્ત ! કર્મ કિં પરીતો વધ્નાતિ ? અપરીતો વધ્નાતિ ? નોપરીત-નોઅપરીતો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! પરીતો મજનયા, અપરીતો વધ્નાતિ, નોપરિત-નોઅપરીતો ન વધ્નાતિ, एवम् आयुष्मन्वर्जाः सप्त कर्मप्रकृतयः, आयुष्कं पરીतोऽपि, अपरी-
तोऽपि મજનયા, નોપરીત-નોઅપરીતો ન વધ્નાતિ । જ્ઞાનાવરણીયં સત્ત્વ મદન્ત !

હૈ । (જાણાવરણિજ્ઞં જ્ઞં મંતે ! કમ્મં કિં પરિત્તે વંધઃ, અપરિત્તે વંધઃ, જો પરિત્ત જો અપરિત્તે વંધઃ ?) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ પરિત્ત-પ્રત્યેક શરીર ચાલા જીવ, અથવા જિસકા સંસાર નિકટ હૈ તેસા ભવ્યજીવ કરતા હૈ ? કિં અપરિત્ત જીવ કરતા હૈ ? અથવા નો પરિત્ત જીવ કરતા હૈ કિં નો અપરિત્ત જીવ કરતા હૈ ? (ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! (પરિત્તે મયણાપ, અપરિત્તે વંધઃ, જો પરિત્ત જો અપરિત્તે ન વંધઃ) જો પરિત્ત જીવ હૈ વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ મજના સે કરતા હૈ-અર્થાત્ કરતામી હૈ ઓર નહીં મી કરતા હૈ । અપરિત્ત જીવ જ્ઞાનાવર-
ણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ । જો જીવ નો પરિત્ત ઓર નો અપરિત્ત હૈં વે હમકા વંધ નહીં કરતે હૈં । (एवं आउगावज्जाभो सत्तकम्मप्पयडीओ)
इसी तरह का कथन आयुष्मं को छोड़कर शेष सातकर्मप्रकृतियों के वंघ करने के विषय में भी जानना चाहिये । (आउयं परित्तो वि अपरित्तो वि मयणाप, जो परित्त जो अपरित्तो न वंघइ) आयु कर्म

(જાણાવરણિજ્ઞં જ્ઞં મંતે ! કિં પરિત્તે વંધઃ, અપરિત્તે વંધઃ, જો પરિત્ત-
જો અપરિત્તે વંધઃ ?) હૈ મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ પરિત્ત (પ્રત્યેક
શરીરવાળો) જીવ, અથવા જેનો સંસાર પરિત્ત-મયાદિત્ત હૈ એવો ભવ્ય જીવ)
કરે છે ? કે અપરિત્ત જીવ કરે છે ? કે નો પરિત્ત જીવ કરે છે ? કે નો
અપરિત્ત જીવ કરે છે ?

(ગોયમા !) હૈ ગૌતમ ! (પરિત્તે મયણાપ, અપરિત્તે વંધઃ, જો પરિત્ત
જો અપરિત્તે ન વંધઃ) જે પરિત્ત જીવ છે તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ
નિકટ્તે કરે છે-એટલે કે એવો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે પણ ખરો
અને નથી પણ બાંધતો, અપરિત્ત જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, પરંતુ
નો પરિત્ત જીવો અને નો અપરિત્ત જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી.
(एवं आउगावज्जाभो सत्त कम्मप्पयडीओ) आयु कर्म सिवायती साते कर्मप्र-
कृतियोतो बंध करवाना विषयमां पण्ण अथ प्रभाषे सुमवदु (आउयं परित्तो
वि, अपरित्तो वि मयणाप, जो परित्त जो अपरित्तो न वंघइ) परित्त અને
अपरित्त जेवो आयु कर्मનો બંધ બાંધે છે પણ ખરા અને નથી પણ

एवं वेदनीयवर्जाः सप्ताऽपि, वेदनीयम् अधस्तना बध्नन्ति, अयोगी न बध्नाति । ज्ञानावरणीयं खलु भदन्त ! कर्म किम् साकारोपयुक्तो बध्नाति, अनाकारोपयुक्तो बध्नाति ? गौतम ! अष्टमु अपि भजनया । ज्ञानावरणीयं खलु भदन्त ! कर्म किम् आहारको बध्नाति, अनाहारको बध्नाति ? गौतम ! द्वावपि भजनया, एवं वेद-

જો યોગવાળે નહીં હેં વે કરતે હેં ? (ગોયમા ! હેઠ્ઠિલા તિણિ ભયણા, અજોગી ન વંધહ, एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि, वेयणिज्जं हेठ्ठिला, तिणिणं वंधंति, अजोगी न वंधह) हे गौतम ! मनयोगी वचनयोगी और काययोगी ये तीन योगवाले जीव ज्ञानावरणीय कर्म का बंध भजना से करते हैं-और जो अयोगी जीव होते हैं वे नहीं करते हैं । इसी तरह से वेदनीय कर्म को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों को बांधने के विषय में भी जानना चाहिये वेदनीय कर्म का बंध नीचे के ये मनयोगी, वचनयोगी और काययोगी जीव करते हैं । अयोगी जीव इसका बंध नहीं करते हैं । (णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं सागारोवउत्ते वंधह ? अणागारोवउत्ते वंधह ?) हे भदन्त ! ज्ञानावरणीय कर्मका बंध जो साकार उपयोगवाला जीव होता है-वह बांधता है कि जो अनाकारोपयोगवाला होता है वह बांधता है ? (अट्ठसु वि भयणाए) हे गौतम ! आठों कर्म-प्रकृतियों को ऐसा जीव भजनो से बांधता है । (णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं आहारए वंधह ? अणाहारए वंधह ?) हे भदन्त ! ज्ञानावरणीयकर्म का

જાઓ સત્ત વિ, વેયણિજ્જં હેઠ્ઠિલા તિણિ વંધંતિ અજોગી ન વંધહ) હે ગૌતમ ! મનયોગી, વચનયોગી અને કાયયોગી જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે અને અયોગી જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી. વેદનીય કર્મ સિવાયની સાતે કર્મપ્રકૃતિયાના બંધ વિષે પણ એજ પ્રમાણે સમજવું. વેદનીય કર્મનો બંધ મનયોગી, વચનયોગી અને કાયયોગી જીવો કરે છે, પરંતુ અયોગી જીવ તેનો બંધ કરતા નથી.

(ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં સાગારોવઉત્તે વંધહ ? અણાગારોવઉત્તે વંધહ ?) હે ભદન્ત ! શું સાકાર ઉપયોગવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે ? કે અનાકાર ઉપયોગવાળો જીવ તે કર્મનો બંધ કરે છે ?

(અટ્ઠસુ વિ ભયણાએ) હે ગૌતમ ! સાકાર ઉપયોગવાળો અને અનાકાર ઉપયોગવાળો જીવ આઠે કર્મોના બંધ વિકલ્પે બાંધે છે.

(ણાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં આહારએ વંધહ, આણાહારએ વંધહ ?) હે ભદન્ત ! શું જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ આહારકે જીવ કરે છે ? કે અના-
હારકે જીવ કરે છે ?

વધ્નાતિ, વિમજ્જજ્ઞાની વધ્નાતિ, ? ગૌતમ ! આયુષ્કવર્જાઃ સપ્તાઽપિ વધ્નન્તિ, આયુષ્કં ભજનયા । જ્ઞાનાવરણીયં સ્વભદન્ત । કર્મં કિં મનોયોગી વધ્નાતિ, વચોયોગી વધ્નાતિ, અયોગી વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! અધસ્તનાસ્ત્રયો ભજનયા, અયોગી ન વધ્નાતિ,

વિષય મેં મી જાનના ચાહિયે । (વેયણિજ્જં હેટ્ઠિહા વસ્તારિ વંધંતિ, કેવલણાણી ભયણા) વેદનીય કર્મ કા વંધ ચાર ક્ષાયોપશમિક મતિજ્ઞાન આદિવાલે જીવ કરતે હૈં । કેવલજ્ઞાનવાલા જીવ વેદનીય કર્મ કા વંધ કરતા મી હૈં ઓર નહીં મી કરતા હૈં । (જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે । કર્મં કિં મદ્ અન્નાણી વંધદ્ ? સુય અન્નાણી વંધદ્ ? ચિમ્ભંગ અન્નાણી વંધદ્ ?) હૈં ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા મતિ અજ્ઞાનવાલા જીવ વાંધતા હૈં ? કિં શ્રુતઅજ્ઞાનવાલા જીવ વાંધતા હૈં ? કિં ચિમ્ભંગજ્ઞાની વાંધતા હૈં ? (ગોયમા ! આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ વંધંતિ, આઝગં ભયણા) આયુકર્મ કો છોડકર સાતોં કર્મો કો યે ત્રીન અજ્ઞાનવાલે જીવ વાંધતે હૈં । તથા આયુકર્મ કા વંધ યે ભજના સે કરતે હૈં । (જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે । કર્મં કિં મજ્જોગી વંધદ્, વયજોગી વંધદ્, કાયજોગી વંધદ્, અજોગી વંધદ્ ?) હૈં ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કયા મનયોગવાલે જીવ કરતે હૈં ? યા વચનયોગવાલે જીવ કરતે હૈં ? યા કાયયોગવાલે જીવ કરતે હૈં ? યા

(વેયણિજ્જં હેટ્ઠિહા વસ્તારિ વંધંતિ, કેવલણાણી ભયણા) વેદનીય કર્મને બંધ પડેલા આર પ્રકારના જીવો-એટલે કે ક્ષાયોપશમિક મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યાયજ્ઞાનવાળા જીવો કરે છે, પણ કેવલજ્ઞાની જીવ વેદનીય કર્મને બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરેતા.

(જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે । કર્મં કિં મદ્ અન્નાણી વંધદ્, સુય અન્નાણી વંધદ્, વિમ્ભંગ અન્નાણી વંધદ્ ?) હૈં ભદન્ત ! શું જ્ઞાનાવરણીય કર્મ મતિ અજ્ઞાનવાળો જીવ બાંધે છે ? કે શ્રુત અજ્ઞાનવાળો જીવ બાંધે છે ? કે વિમ્ભંગ અજ્ઞાનવાળો જીવ બાંધે છે ?

(ગોયમા ! આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ વંધંતિ, આઝગં ભયણા) હૈં ગૌતમ ! આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મોને બંધ આ ત્રણ અજ્ઞાનવાળા જીવો બાંધે છે, તથા તેઓ આયુકર્મને બંધ વિકલ્પે બાંધે છે.

(જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે । કર્મં કિં મજ્જોગી વંધદ્, વયજોગી વંધદ્, કાયજોગી વંધદ્, અજોગી વંધદ્ ?) હૈં ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મને બંધ શું મનયોગવાળા જીવ કરે છે ? કે વચનયોગવાળા કરે છે ? કે કાયયોગવાળા જીવો કરે છે ? કે ચોગરહિત જીવો કરે છે ?

(ગોયમા ! હેટ્ઠિહા તિત્થો મયણા, અજોગી ન વંધદ્, एवं વેયણિજ્જવ-

ગૌતમ ! સૂક્ષ્મો વધ્નાતિ, વાદરો ભજનયા, નોમૂક્ષમ-નોવાદરો ન વધ્નાતિ, એવમ્ આપુષ્કવર્ત્તાઃ સત્તાઽપિ, આયુષ્કં મુક્ષમો, વાદરો ભજનયા, નોમુક્ષમ-નો વાદરો ન વધ્નાતિ ? જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ ભદન્ત ! કર્મ કિં ચરમો વધ્નાતિ, અચરમો વધ્નાતિ ? ગૌતમ ! અઘ્રાઽપિ ભજનયા ॥ મુગ્રાં ૫ ॥

ટીકા-જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં રૂપી વંધઃ ? ' ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-
હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ કર્મ કિમ્ સ્ત્રી વધ્નાતિ ? ' પુરિસો વંધઃ ? '

કા વંધ સૂક્ષ્મજીવ કરતા હૈ વાદર જીવ તો ભજના સે રૂસકા વંધ કરતા હૈ, જો નો સૂક્ષ્મ ઓર નો વાદર હૈં વે રૂસકા વંધ નહીં કરતે હૈં । (એવં સત્ત વિ, આગ્ન સુહુમે, વાયરે ભયણા, ણો સુહુમ ણો વાયરે ન વંધહ)
રૂસી પ્રકાર સે વે જીવ આયુકર્મ કો ઓઢકર રૂપ સાત કર્મ પ્રકૃતિયોં કા વંધ કરતે હૈં રૂસા જાનના ચાહિયે । વે દોનોં સૂક્ષ્મ વાદર જીવ આયુ કર્મ કા વંધ ભજના સે કરતે હૈં । તથા જો નો સૂક્ષ્મજીવ હૈં ઓર નો વાદર જીવ હૈં વે આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈં । (જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં ચરિમે વંધઃ, અચરિમે વંધહ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ જો ચરમ જીવ હોતા હૈ વહ કરતા હૈ કિ જો અચરમ જીવ હોતા હૈ વહ કરતા હૈ ? (ગોયમા ! અઘ્ર વિ ભયણા) હે ગૌતમ ! રૂસે જીવ આઠોં કર્મપ્રકૃતિયોં કા વંધ ભજના સે કરતા હૈ ।

ટીકાર્થ-જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મ કે પ્રસ્તાવ સે સૂત્રકાર રૂસ સૂત્ર દ્વારા ડન જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કે વાંધનેવાલોં કા નિરૂપણ કરને કે રૂલિયે સર્વપ્રથમ સ્ત્રી આદિ દ્વારા કા કથન કર રહે હૈં-રૂસમેં ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે રૂસા પ્રશ્ન કિયા કિ (જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં રૂપી

કરતા નથી. (એવં આગ્નવજ્ઞાઓ સત્ત વિ, આગ્ન સુહુમે, વાયરે ભયણા, ણો સુહુમ ણો વાયરે ન વંધહ) ઓજ પ્રમાણે તે રૂવો આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મોના બંધ કરે છે તેમ સમજવું. સૂક્ષ્મ અને વાદર રૂવો આયુકર્મનો બંધ કરે છે પરંતુ નોસૂક્ષ્મ અને નોવાદર રૂવો આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી. (જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં ચરિમે વંધઃ, અચરિમે વંધહ ?) હે ભદન્ત ! શું ચરમ શરીરી રૂવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે ? હે અચરમ શરીરી રૂવ કરે છે ? (ગોયમા ! અઘ્ર વિ ભયણા) હે ગૌતમ ! રૂવો રૂવ આઠે કર્મપ્રકૃતિયોના બંધ વિકલ્પે કરે છે.

ટીકાર્થ-આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે જ્ઞાનાવરણીય આઠ કર્મોના બંધકોનું નિરૂપણ છે. સૌથી પહેલાં સૂત્રકાર સ્ત્રી આદિ દ્વારનું કથન પ્રશ્નોત્તરો દ્વારા કરે છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્ને રૂવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે " જ્ઞાનાવરણિજ્જં

નીયાયુક્તવર્જનાં પળામ્, વેદનીયમ્ આહારકો વધ્નાતિ, અનાહારકો ભજનયા, આયુક્તમ્ આહારકો ભજનયા, અનાહારકો ન વધ્નાતિ । જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલ્લ ભદન્ત । કર્મ કિં સૂક્ષ્મો વધ્નાતિ યાદરો વધ્નાતિ ? નોમૂક્ષમ નોવાદરો વધ્નાતિ ?

વંધ કયા આહારક જીવ કરતા હૈ કિ અનાહારક જીવ કરતા હૈ ? (દો વિ ભયળા) હૈ ગૌતમ ! યે દોનો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ ભજના સે કરતે હૈ । (એવં વેયણિજ્જાગવજ્જાણં છળહં) ઇસી તરહ સે યે જીવ વેદનીય ઓર આયુકર્મ કો છોડકર ડોપ કર્મો કા વંધ ભજના સે કરતે હૈ (વેયણિજ્જં આહારણ વંધહ) વેદનીય કર્મ કા વંધ આહારક જીવ કરતા હૈ । (અનાહારણ ભયળા) પર જો અનાહારક જીવ હૈ વહ વેદનીય કર્મ કા વંધ કરતા ખી હૈ ઓર નહીં ખી કરતા હૈ (આડણ આહારણ ભયળા, અનાહારણ ન વંધહ) આયુ કર્મ કા વંધ જો જીવ આહારક હોતા હૈ વહ ભજના સે કરતા હૈ ઓર જો અનાહારક હોતા હૈ વહ ડસકા વંધ નહીં કરતા હૈ । (જાણાવરણિજ્જં જં મંતે ! કર્મં કિં સુદ્ધમે વંધહ, યાયરે વંધહ, જો સુદ્ધમ જો યાયરે વંધહ) હૈ ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કયા સૂક્ષ્મજીવ કરતા હૈ ? કિ યાદર જીવ કરતા હૈ ? અથવા-નો સૂક્ષ્મ કરતા હૈ કિ નો યાદર કરતા હૈ ? (ગોયમા ! સુદ્ધમે વંધહ, યાયરે ભયળા, જો સુદ્ધમ જો યાયરે ન વંધહ) હૈ ગૌતમ ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ

(દો વિ ભયળા) હૈ ગૌતમ ! તે બન્ને પ્રકારના જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે. (એવં વેયણિજ્જાગવજ્જાણં છળહં) એજ પ્રમાણે તે બન્ને પ્રકારના જીવો વેદનીય અને આયુકર્મ સિવાયના છ કર્મોનો બંધ વિકલ્પે કરે છે. (વેયણિજ્જં આહારણ વંધહ) આહારક જીવ વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે, (અનાહારણ ભયળા) પણ અનાહારક જીવ વિકલ્પે તેનો બંધ કરે છે—એટલે કે અનાહારક જીવ વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે પણ ખરો અને નથી પણ કરતો. (આડણ આહારણ ભયળા અનાહારણ ન વંધહ) આહારક જીવ આયુકર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે, પણ અનાહારક જીવ તેનો બંધ કરતો નથી.

(જાણાવરણિજ્જં જં મંતે ! કર્મં કિં સુદ્ધમે વંધહ, યાયરે વંધહ, જો સુદ્ધમ જો યાયરે વંધહ ?) હૈ ભદન્ત ! શું જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ સૂક્ષ્મ જીવ કરે છે ? કે બાદર (સ્થૂળ) જીવ કરે છે ? અથવા નો સૂક્ષ્મ જીવ કરે છે ? કે નો બાદર જીવ કરે છે ?

(ગોયમા ! સુદ્ધમે વંધહ, યાયરે ભયળા, જો સુદ્ધમ જો યાયરે ન વંધહ) હૈ ગૌતમ ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ સૂક્ષ્મ જીવ કરે છે, બાદર જીવ તે કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે, પણ નો સૂક્ષ્મ અને નો બાદર જીવો તેનો બંધ

સ્યાત્ કદાચિત્ જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ વધ્નાતિ, સ્યાત્-કદાચિત્ ન વધ્નાતિ, અયં
માવ.-ન સ્ત્રી ન પુરુષઃ, ન નપુંસકઃ વેદોદયરહિતઃ અનિવૃત્તિવાદરમૂક્તસંપરા-
યાલ્પનત્રય-દશમ-ગુણસ્થાનવર્તી ભવતિ, તત્ર ચાનિવૃત્તિવાદરસંપરાય-મૂક્ત-
સંપરાયી જીવી સપ્તવિધ-પશ્ચિધકર્મવન્ધકતયા જ્ઞાનાવરણીયસ્ય વન્ધકૌ
ભવતઃ, ઉપશાન્તમોહાદારમ્યાયોગિકેવલિપર્યન્તગુણસ્થાનવર્તી જીવસ્તુ એકવિધ-

નપુંસકો) ન સ્ત્રી છે, ન પુરુષ છે અને ન નપુંસક છે વહ (સિય વંધક,
સિય જો વંધક) કદાચિત્ આ કર્મકા વંધ કરતા ખી છે અને કદાચિત્
નહીં ખી કરતા છે. તાત્પર્ય કહને કા યહ છે કિ-જો જીવ વેદ કે ઉદય
સે રહિત હોતા છે-અર્થાત્-અજ્ઞોપાત્ર નામ કર્મ કે ઉદય સે જીવ કે
શરીર મેં સ્ત્રી કા આકાર, પુરુષ કે શરીર મેં પુરુષ કા આકાર અને
નપુંસક કે શરીર મેં નપુંસક કા આકાર ભલે હી વના હુઆ હો-પરંતુ
વેદ સંબંધી વિકાર પરિણતિ ઉસ આત્મામેં ન હો તો એસા જીવ વેદોદય
સે રહિત માના જાતા છે આ કા નામ (નો સ્ત્રી, નો પુરુષ અને ન નપું-
સક) આ રૂપ સે યહાં પ્રકટ કિયા ગયા છે. એસા જીવ નૌવેં અનિવૃત્તિ
વાદર અને દશવેં સૂક્ષ્મસાંપરાય આ દો ગુણસ્થાનો મેં રહને વાલા હોતા
છે. આ દો ગુણસ્થાનો વાલા વહ નો સ્ત્રી, નો પુરુષ અને નો નપુંસક
જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધક હોતા છે-ક્યોં કિ વહ સાત પ્રકાર કે
જો ૬ પ્રકાર કે કર્મ કા વંધક વાંધને વાલા કહા ગયા છે. તથા ગ્યારહવેં

“ નો સ્ત્રી હોય છે ”-સ્ત્રી હોતો નથી, “ નો પુરુષ હોય છે ”-પુરુષ હોતો
નથી, અને “ નો નપુંસક હોય છે ”-નપુંસક હોતો નથી તે (સિય વંધક,
સિય જો વંધક) ક્યારેક આ કર્મનો બંધ કરે છે અને ક્યારેક નથી કરતો.
આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-જે જીવ વેદનાના ઉદયથી રહિત હોય
છે. એટલે કે અજ્ઞોપાંત્ર નામકર્મના ઉદયથી સ્ત્રીના શરીરમાં સ્ત્રીનો આકાર,
પુરુષના શરીરમાં પુરુષનો આકાર અને નપુંસકના શરીરમાં નપુંસકનો આકાર
ભલે બનેલો હોય, પરંતુ વેદ સંબંધી પરિણતિ તે આત્મામાં ન હોય તો
એવા જીવને વેદોદયથી રહિત માનવામાં આવે છે, અને એવા જીવને જ
અહીં “ નો સ્ત્રી નો પુરુષ અને નો નપુંસક ” રૂપે બતાવવામાં આવ્યો છે.
એવા જીવ નવમાં અનિવૃત્તિ વાદર અને દશમાં સૂક્ષ્મ સાંપરાય, જે જે
શુદ્ધસ્થાનોમાં રહેનારો હોય છે. આ જે શુદ્ધસ્થાનોવાળો નો સ્ત્રી, નો પુરુષ
અને નો નપુંસક જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે, કારણ કે તેને સાત અથવા
તે ૭ પ્રકારના કર્મોનો બંધક (બાંધનાર) કહ્યો છે. પરંતુ અગિયારમાં

પુરુષો વધ્નાતિ ? ' નપુંસઓ વંધઈ ? ' નપુંસકો વધ્નાતિ ? જોઈત્યો-જોપુરિસ-જોનપુંસઓ વંધઈ ? ' નોસ્ત્રી - નોપુરુષ - નોનપુંસકો વધ્નાતિ ? યો જીવઃ ન સ્ત્રી, ન પુરુષઃ, નાપિ નપુંસકો વર્તેતે સોઽપિ કિં જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ વધ્નાતિ ? इत्याशयः, મગાનાહ - ' ગોયમા ! इत्थी वि बंधइ, पुरिसो वि बंधइ, नपुंसओ वि बंधइ ' हे गौतम ! स्त्री अपि ज्ञानावरणीयं कर्म वध्नाति, पुरुषोऽपि तत्कर्म वध्नाति, नपुंसकोऽपि जीवः तत्कर्म वध्नाति, किन्तु ' नोइत्थी-जो-पुरिस-जोनपुंसओ सिय बंधइ, सिय जो बंधइ ' नो स्त्री-नोपुरुष-नोनपुंसको जीवः

बंधइ) हे भदन्त ! आत्मा के ज्ञानगुण को आवरणकरने के स्वभाववाले ज्ञानावरणीय कर्म का बंध कौन करता है ? क्या इस कर्म का बंध स्त्री करती है ? या (पुरिसो बंधइ) पुरुष करता है ? या (नपुंसओ बंधइ) नपुंसक करता है ? अथवा-ऐसा जीव करता है कि जो (जोइत्थी) न स्त्री है ? (जोपुरिस जोनपुंसओ) न पुरुष है ? न नपुंसक है ? इसके उत्तर में प्रभु उनसे कहते हैं-(गौयमा) हे गौतम ! (इत्थि वि बंधइ, पुरिसो वि बंधइ, नपुंसओ वि बंधइ) ज्ञानावरणीय कर्म के बंध करने में ऐसी कोई रुकावट नहीं है कि स्त्री ही इस कर्मका बंध करे-पुरुष न करे अथवा पुरुष ही करे-नपुंसक न करे-तीनों ही वेदवाले इस कर्म का बंध करते हैं-" स्त्री भी इस कर्म का बंध करती है, पुरुष भी इस कर्म का बंध करता है और नपुंसक भी इस कर्म का बंध करता है । पर हां, यह बात अवश्य है कि जो जीव (जोइत्थी, जोपुरिस, जो

જો બંધે ! કર્મ કિં इत्थो बंधइ ? " હે ભદન્ત ! આત્માના જ્ઞાનગુણનું આવરણ કરવાના સ્વભાવવાળા જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કોણ કરે છે ? શું આ કર્મનો બંધ સ્ત્રી કરે છે ? અથવા " પુરિસો બંધइ " પુરુષ કરે છે ? અથવા " નપુંસઓ બંધइ ? " નપુંસક કરે છે ? અથવા જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ શું એવો હવ કરે છે કે ને " જો इत्थी " સ્ત્રી નથી ? " જો પુરિસે " પુરુષ નથી ? " જો નપુંસઓ " અને નપુંસક નથી ?

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (इत्थी वि बंधइ, पुरिसो वि बंधइ, नपुंसओ वि बंधइ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ સ્ત્રી પણ કરે અથવા પુરુષ પણ કરે અને નપુંસક પણ કરે છે ત્રણે વેદવાળા હવો આ કર્મનો બંધ કરે છે-" જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ સ્ત્રી પણ કરે છે, પુરુષ પણ કરે છે અને નપુંસક પણ કરે છે. " પરંતુ એવું અવશ્ય બને છે કે ને હવ (जोइत्थी, जोपुरिस, जोनपुंसओ सिय बंधइ, सिय जो बंधइ)

ભગવાનાહ-‘ગોયમા ! ઇત્યી સિય વંધઈ, સિય નો વંધઈ, હે ગૌતમ ! સ્ત્રી સ્યાત્
કદાચિત્ વધ્નાતિ, સ્યાત્ કદાચિન્ન વધ્નાતિ, एवं तिन्नि वि भाणियव्वा’ एवं રીત્યા
અનયા ત્રયોઽપિ સ્વપિ પુરુષોઽપિ, નપુંસકોઽપિ કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન
વધ્નાતિ, इति रीत्या मणितव्याः वक्तव्याः ‘‘णोइत्थी-णोपुरिस-णोनपुंसओ
न वंधइ’ नोस्त्री-नोपुरुष-नोनपुंसको जीवः आयुष्यं कर्म न वध्नाति, अयं
भावः-एकत्र भवे स्रुदेव आयुषो वन्धात् स्त्रीपुरुषादिवयं वन्धकाले वध्नाति,
अवन्धकाले तु न वध्नाति अत एवोक्तम्-‘सिय वंधइ सिय नो वंधइ’ इति ।

વંધઈ, પુચ્છા) હે ભદ્રન્ત ! આયુકર્મ કા વંધ કૌન કરતા હૈ? કયા સ્ત્રી
આયુકર્મ કા વંધ કરતી હૈ? યા પુરુષ આયુકર્મ કા વંધ કરતા હૈ?
યા નપુંસક આયુકર્મ કા વંધ કરતા હૈ? इस प्रकार से यह गौतम का
प्रश्न है। इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि (गोयमा)
हे गौतम ! (इत्थी सिय वंधइ, सिय नो वंधइ) स्त्री आयुर्कर्म का कदा-
चित् वंध करती है और कदाचित् वंध नहीं भी करती है । (एवं ति-
न्नी वि भाणियव्वा) इसी तरह से पुरुष और नपुंसक के विषय में भी
जानना चाहिये। अर्थात् पुरुष आयुर्कर्म का वंध करता भी है और नहीं
भी करता है-तथा नपुंसक भी आयुर्कर्म का वंध करता भी है और नहीं
भी करता है। इसका भाव यह है कि एक भव में आयुर्कर्म जीव एक
ही बार बांधता है अतः जब आयुर्कर्म के वंध होने का समय आता है-
तब ही आयुर्कर्म का वंध जीव करता है। और जब वंध का समय नहीं
होता-तब आयुर्कर्म का जीव वंध नहीं करता है। इसी भाव को लेकर

પુચ્છા) હે ભદ્રન્ત ! આયુકર્મનો બંધ કોણ કરે છે? શું સ્ત્રી આયુકર્મનો
બંધ કરે છે? કે પુરુષ આયુકર્મનો બંધ કરે છે? કે નપુંસક તેનો બંધ કરે છે?
આ પ્રકારના ગૌતમના પ્રશ્નનો જવાબ આપતા ભગવાન પ્રભુ કહે છે—
‘‘ગોયમા !’’ હે ગૌતમ ! (‘‘ઇત્યી સિય વંધઈ, સિય નો વંધઈ’’) સ્ત્રી આયુ-
કર્મનો બંધ ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક નથી પણ કરતી, (‘‘એવં તિન્ની વિ
માણિયવ્વા’’) એજ પ્રમાણે પુરુષ અને નપુંસકના વિષે પણ સમજવું. એટલે
કે પુરુષ આયુકર્મનો બંધ કરે છે પણ ખરો અને નથી પણ કરતો, નપુંસક
પણ આયુકર્મનો બંધ ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક કરતો નથી. તેનું
તાત્પર્ય એ છે કે-એક ભવમાં આયુકર્મ એવું એક જ વાર બાંધે છે,
તેથી જ્યારે આયુકર્મનો બંધ થવાનો સમય આવે છે ત્યારે જ એવ
આયુકર્મનો બંધ કરે છે, અને જ્યારે બંધનો સમય હોતો નથી ત્યારે એવ
આયુકર્મનો બંધ કરતો નથી. એજ ભાવને અનુલક્ષીને ‘‘સિય વંધઈ, સિય

વન્ધકત્વાત્ જ્ઞાનાવરણીયસ્ય અવન્ધકો ભાતિ, અતઃ આશ્-સ્વાદ્ વન્ધનાતિ, સ્યાત્ ન વન્ધનાતિ-ઈતિ । 'એવં આઝગચ્જાઓ સત્ત કમ્મપ્પગડીઓ' એવં તથેવ આયુક્ક-વર્જાઃ આયુક્કભિન્નાઃ આપુણ્યં વર્જપિત્થા-ઈત્યર્થઃ સપ્ત કર્મપ્રકરણયઃ જ્ઞાનાવરણીયઃ સાન્નિત્ય દર્શનાવરણીયાદયઃ સપ્તવેદિનિવ્યાઃ, દર્શનાવરણીયાદીનિ કર્માણ્યપિ આયુક્ક-વર્જાનિ સ્ત્રી પુરુષાદયઃ વન્ધનાતિ, નોસ્ત્રો-નોપુરુષ-નોનપુંસકસ્તુ કદાચિન્ વન્ધનાતિ, કદાચિન્ વન્ધનાતિ-ઈત્યર્થઃ । ગૌતમઃ પુનઃ પૃચ્છતિ-આઝગં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ઇત્થી વંધઈ, પુરિસો વંધઈ, નપુંસઓ વંધઈ, પૃચ્છા ? 'હે મહન્ત ! આયુક્કં કર્મ કિં સ્ત્રી વન્ધનાતિ, પુરુષો વન્ધનાતિ, નપુંસકો વન્ધનાતિ ?' ઇતિ પૃચ્છા-ગૌતમસ્ય પ્રશ્નઃ,

ગુણસ્થાન સે છેકર અધોગિકેવલી નામ કે ચીદહર્વે ગુણસ્થાન તક કે જીવ નો સ્ત્રી, નો પુરુષ, ઓર નો નપુંસક હોતે, હુણ મી જ્ઞાનાવરણીય કર્મકે વંધક નહીં હોતે હૈં, ક્યોં કિં યે જીવ એકવિધકર્મ (સાતાવેદનીય) કે વંધક કહે ગયે હૈં । હસી કારણ એસા કહા ગયા હૈં કિં જો (નો સ્ત્રી નો પુરુષ ઓર નો નપુંસક) હોતા હૈં વહ હસ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા મી હૈં ઓર નહીં મી કરતા હૈં । (એવં આઝગચ્જાઓ સત્તકમ્મ-પ્પગડીઓ) હસી પ્રકાર સે યહ મી જાનનાં ચાહિયે કિં જો જીવ નો સ્ત્રી, નો પુરુષ ઓર નો નપુંસક હૈં વહ જીવ આયુક્કર્મ કો છોડકર શેષ દર્શનાવરણીય આદિ કર્મોં કો વાંધતા હૈં । પરન્તુ જો સ્ત્રી, પુરુષ ઓર નપુંસક વેદનવાલે જીવ હૈં વે તો દર્શનાવરણીય આદિ સાત કર્મોં કા વંધ કરતે હી હૈં । અય ગૌતમ પ્રશ્ન સે આયુ કે વંધ કે વિષય મેં પૂછતે હૈં કિં-(આઝગં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ઇત્થી વંધઈ, પુરિસો વંધઈ, નપુંસઓ

ગુણસ્થાનથી લઈને અધોગી કેવલી નામના ચૌદમાં ગુણસ્થાન સુધીના જીવ નો સ્ત્રી, નો પુરુષ અને નો નપુંસક હોવા છતાં પણ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી કારણ કે તે જીવોને એક જ પ્રકારના કર્મોં-સાતાવેદનીય કર્મના બંધક કહ્યા છે તે કારણે એવું કહ્યું છે કે "નો સ્ત્રી, નો પુરુષ, અને નપુંસક જ્ઞાનાવરણીય કર્મોંને બંધ કયારેક કરે છે અને કયારેક કરતા નથી." (એવં આઝગચ્જાઓ સત્ત કમ્મપ્પગડીઓ) એ જ પ્રમાણે જો જીવ નો સ્ત્રી, નો પુરુષ અને નો નપુંસક હોય છે તે આયુક્કર્મ સિવાયના બાકીનાં સાત કર્મોંનાં બંધ કયારેક બાંધે છે અને કયારેક બાંધતા નથી. પરંતુ જો સ્ત્રી, પુરુષ અને નપુંસક વેદનાળા જીવો છે તેઓ આયુક્કર્મ સિવાયના (દર્શનાવરણીય આદિ) સાતે કર્મોંના બંધ કરે જ છે.

ગૌતમ સ્વામી આયુના બંધ વિષે મહાવીર પ્રશ્નને પ્રશ્ન પૂછે છે—
(આઝગં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ઇત્થી વંધઈ, પુરિસો વંધઈ, નપુંસઓ વંધઈ,

મંગવાનાહ-‘ગોયમા ! ઇત્થી સિય વંધઈ, સિય નો વંધઈ, હે ગોતમ ! સ્ત્રી સ્યાત્
કદાચિત્ વંધ્નાતિ, સ્યાત્ કદાચિત્ વંધ્નાતિ, एवं तिन्नि वि भाणियन्वा ! एवं સીત્યા
અનયા ત્રયોડપિ સ્વપિ પુરુષોડપિ, નપુંસકોડપિ કદાચિત્ વંધ્નાતિ, કદાચિત્
વંધ્નાતિ, इति सीत्याः प्रणितव्याः वक्तव्याः । ‘‘નોઈત્થી-નોપુરિસ-નોનપુંસઓ
ન વંધઈ ? નોહી-નોપુરુષ-નોનપુંસકો જીવઃ આયુષ્યં કર્મ ન વંધ્નાતિ, અય-
માયઃ-એકચ મથે સરુદેવ આયુષો વંધ્નાત્ સ્ત્રીપુરુષાદિત્રયં વંધકાલે વંધ્નાતિ,
અવંધકાલે તુ ન વંધ્નાતિ અત-‘‘એવોક્તમ્-‘‘ સિય વંધઈ સિય નો વંધઈ. ’’ ઇતિ ।

વંધઈ, પુચ્છા) હે અદન્ત ! આયુકર્મ-કા વંધ કૌન કરતા હૈ ? કયા સ્ત્રી
આયુકર્મ કા વંધ કરતી હૈ ? યા પુરુષ આયુકર્મ કા વંધ કરતા હૈ ?
યા નપુંસક આયુકર્મ કા વંધ કરતા હૈ ? इस प्रकार से यह गौतम का
प्रश्न है । इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि (गोयमा)
हे गौतम ! (इत्थी सिय वंघई, सिय नो वंघई) स्त्री आयुर्कर्म का कदा-
चित् वंघ करती है और कदाचित् वंघ नहीं भी करती है । (एवं ति-
न्नी वि भाणियन्वा) इसी तरह से पुरुष और नपुंसक के विषय में भी
जानना चाहिये । अर्थात् पुरुष आयुर्कर्म का वंघ करता भी है और नहीं
भी करता है-तथा नपुंसक भी आयुर्कर्म का वंघ करता भी है और नहीं
भी करता है । इसका भाव यह है कि एक भव में आयुर्कर्म जीव एक
ही बार बांधता है अतः जब आयुर्कर्म के वंघ होने का समय आता है-
तब ही आयुर्कर्म का वंघ जीव करता है । और जब वंघ का समय नहीं
होता-तब आयुर्कर्म का जीव वंघ नहीं करता है । इसी भाव को लेकर

પુચ્છા) હે અદન્ત ! આયુકર્મનો બંધ કોણ કરે છે ? શું સ્ત્રી આયુકર્મનો
બંધ કરે છે ? કે પુરુષ આયુકર્મનો બંધ કરે છે ? કે નપુંસક તેનો બંધ કરે છે ?
આ પ્રકારના ગૌતમના પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહેાવીર પ્રભુ કહે છે—
“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! (ઇત્થી સિય વંધઈ, સિય નો વંધઈ) સ્ત્રી આયુ-
કર્મનો બંધ ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક નથી પણ કરતી, (एवं तिन्नी वि
भाणियन्वा) એજ પ્રમણે પુરુષ અને નપુંસકનાં વિષે પણ સમજવું. એટલે
કે પુરુષ આયુકર્મનો બંધ કરે છે પણ ખરી અને નથી પણ કરતો, નપુંસક
પણ આયુકર્મનો બંધ ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક કરતો નથી. તેનું
તાત્પર્ય એ છે કે-એક ભવમાં આયુકર્મ એવું એક જ વાર બાંધે છે,
તેથી જ્યારે આયુકર્મનો બંધ થવાનો સમય આવે છે ત્યારે જ એવ
આયુકર્મનો બંધ કરે છે, અને જ્યારે બંધનો સમય હોતો નથી ત્યારે એવ
આયુકર્મનો બંધ કરતો નથી. એજ ભાવને અનુલક્ષીને ‘‘ સિય વંધઈ, સિય

નિવૃત્તિવાદરસંપરાયાદિગુણસ્થાનકેષુ આયુર્વન્ધસ્ય વ્યવચ્છેદાત્ સ્વ્યાદિવેદ-
રહિતો જીવો ન યદ્નાતિ, इति । पठं संयतद्वारमाश्रित्याह—‘जाणावरणिज्जं णं
भंते । कम्मं किं संजए बंधइ, असंजए, संजयाऽसंजए बंधइ’ हे भदन्त ! ज्ञाना-
वरणीयं कर्म किं संयतो यदनाति ? असंयतो वा यदनाति ? संयताऽसंयतो वा

(સિય બંધइ, સિય નો બંધइ) ऐसा कहा गया है । तथा जो जीव न स्त्री
वेदवाले हैं, न पुरुषवेदवाले हैं और न नपुंसक वेदवाले हैं—अर्थात् जिन
जीवों के कर्मों की सत्ता में से स्त्री आदि वेदों को उदय निकल गया
है—उन वेदों के बंध की व्युच्छित्ति जिन जीवों के हो गई है, ऐसे वे
निवृत्त वादर संपराय आदि गुणस्थानक वाले जीव स्व्यादि वेद से रहित
हुए आयुर्कर्म के बंध का व्युच्छेद हो जाने के कारण आयुर्कर्म का बंध
नहीं करते हैं । कारण आयुर्कर्म का व्यवच्छेद भी तो निवृत्तिवादर संप-
राय आदि गुणस्थानों में हो जाता है ।

छઢે સંયતદ્વારકી અપેક્ષા લેકર અય સૂત્રકાર કહતે હૈ—इसमें गौतम
प्रभु से पूछते हैं कि—(जाणावरणिज्जं णं भंते । कम्मं किं संजए बंधइ,
असंजए संजया संजए बंधइ) हे भदन्त! ज्ञानावरणीय कर्मका बंध कौनसा
जीव करता है ? क्या जो संयतजीव होता है वह ज्ञानावरणीय कर्म का
बंध करता है ? या जो असंयत जीव होता है वह ज्ञानावरणीय कर्म का
बंध करता है ? या जो संयतासंयत जीव होता है, वह ज्ञानावरणीय

નો બંધइ ” એવું કથન કરવામાં આવ્યું છે. તથા જે જીવ ન સ્ત્રી વેદવાળો
છે, ન પુરુષ વેદવાળો છે અને ન નપુંસક વેદવાળો છે—એટલે કે જે જીવોનાં
કર્મોની સત્તામાંથી સ્ત્રી આદિ વેદોનો ઉદય નીકળી ગયો છે—તે વેદોના બંધોની
વ્યુચ્છિત્તિ (વિચ્છેદ) જે જીવોને થઈ ગઈ છે, એવાં તે નિવૃત્તિવાદર સંપ-
રાય આદિ ગુણસ્થાનકવાળા જીવો સ્ત્રી આદિ વેદથી રહિત થઈને આયુર્કર્મના
બંધોનો વિચ્છેદ થઈ જવાના કારણે, આયુર્કર્મનો બંધ કરતા નથી. કારણ કે
નિવૃત્તિવાદર આદિ-ગુણસ્થાનોમાં આયુર્કર્મનો વિચ્છેદ થઈ જતો હોય છે.

હવે સૂત્રકાર છઠ્ઠા સંયતદ્વારને અનુલક્ષીને નીચે પ્રમાણે પ્રશ્નોત્તરો દ્વારા
કર્મબંધનું નિરૂપણ કરે છે—गौतम स्वामी महावीर प्रभुने એવો પ્રશ્ન પૂછે છે
કે (जाणावरणिज्जं णं भंते । कम्मं किं संजए बंधइ, असंजए संजयासंजए
बंधइ) हे भदन्त ! ज्ञानावरणीय कर्मનો બંધ કયો જીવ કરે છે ? શું સંયત
જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે ? કે અસંયત જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો
બંધ કરે છે ? કે સંયતાસંયત જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે ?

વધ્નાતિ ? અથવા ‘ જોસંજય—જોઅસંજય—જોસંજયાસંજય વંધ ? ’ નો સંયત—નોઅસંયત — નોસંયતાસંયતો વધ્નાતિ ? ભગવાનાહ—‘ ગોયમા ! સંજય સિય વંધ, સિય જો વંધ, ’ હે ગૌતમ ! સંયતઃ આદ્યસંયમચતુષ્ટયવૃત્તિર્જ્ઞાનાવરણં સ્યાત્ કદાચિદ્ વધ્નાતિ, યથાહ્યાતસંયતસ્તુ ઉપશાન્ત મોહાદિઃ સ્યાત્ કદાચિત્ નો વધ્નાતિ, ‘ અસંજય વંધ ’ અસંયતો મિથ્યાદૃષ્ટ્યાદિઃ જ્ઞાનાવરણં કર્મ વધ્નાતિ, ‘ સંજયાસંજય વિ વંધ ’ સંયતાસંયતોઽપિ દેશવિર-

કર્મકા વંધકરતા હૈ ? (જોસંજય—જોઅસંજય જોસંજયાસંજય વંધ) જો જીવ ન સંયત હૈ, ન અસંત હૈ ઓર ન સંયતાસંયત હૈ વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મકા વંધ કરતા હૈ કયા ? હસકા ઉત્તર દેતે હ્રુણ પ્રભુ ગૌતમસે કહતે હૈં કિ,(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સંજય સિય વંધ, સિય જો વંધ) સંયત જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા ખી હૈ ઓર નહી ખી કરતા હૈ—હસકા ભાવ યહ હૈ કિ જો જીવ સામાયિક, છેદોપસ્થાપનીય, પરિહારવિશુદ્ધ ઓર સૂક્ષ્મસાંપરાય હન આદિ કે ચાર સંયમ મેં રહનેવાલા હૈ વહ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ ઓર જો યથાહ્યાત સંયમવાલા જીવ હૈ વહ ઉપશાન્ત મોહ આદિ ગુણસ્થાનોં મેં રહનેવાલા હોનેકે કારણ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈ । હસી યાત કો લક્ષ્ય મેં લેકર (સંજય સિય વંધ, સિય જો વંધ) એસા કહા ગયા હૈ । (અસંજય વંધ) અસંયમી જો મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિ જીવ હૈ—વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ

અથવા—(જોસંજય—જોઅસંજય જોસંજયાસંજય વંધ ?) જે જીવનો સંયત છે, નો અસંયત છે અને નો સંયતાસંયત છે, તે શું જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! (સંજય સિય વંધ, સિય જો વંધ) સંયત જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કયારેક કરે છે અને કયારેક નથી કરતો. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—જે જીવ સામાયિક, છેદોપસ્થાપનીય, પરિહાર વિશુદ્ધિ અને સૂક્ષ્મ સાંપરાય આદિ ચાર સંયમમાં રહેનાર હોય છે, તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, પણ જે યથાહ્યાત સંયમવાળો જીવ હોય છે તે ઉપશાન્ત મોહ આદિ ગુણસ્થાનોમાં રહેનારો હોવાથી જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. એજ વાતને અનુવક્ષીને “ સંજય સિય વંધ, સિય જો વંધ ” એવું કહેવામાં આવ્યું છે.

“ અસંજય વંધ ” અસંયમી મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, (સંજયાસંજય વિ વંધ) તથા સંયતાસંયત જીવ

તાદિઃ જ્ઞાનાવરણં કર્મં વધ્નાતિ, કિન્તુ 'જોસંજય-જોઅસંજય-જોસંજયા-સંજય' ન બંધઈ 'નોસંયત-નોઅસંયત-નોસંયતાસંયતો' નિપિદ્ધસંયમાદિભાવઃ સિદ્ધો ન વધ્નાતિ હેત્વભાવાત્ । 'एवं आउगवज्जाओ सत्तवि' एवम् अनेन प्रकारेण आयुष्कवर्जाः ज्ञानावरणवदेव सप्तापि कर्मप्रकृतयो विद्येयाः तथा च आयुष्कवर्जितानि दर्शनावरणीयादि कर्माण्यपि संयतः कदाचिद् वध्नाति, कदाचिन्न वध्नाति । असंयतो वध्नाति । संयतासंयतोऽपि वध्नाति, किन्तु 'अउगे हेट्ठिल्ला तिणिणं भयणाए' आयुष्कं कर्म अधस्तनाः आद्यास्त्रयः संयतः, असंयतः, संयतासंयतश्च

કા બંધ કરતા હૈ (સંજયાસંજય વિ. બંધઈ) તથા જો સંયતાસંયત-દેશ-વિરત-પંચમગુણસ્થાનવર્તી, જીવ હૈ-વહ્ ભી જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતા હૈ । તથા-જો જીવ, (જો, સંજય-જો, અસંજય) , રહ્યાદિ હૈ-અર્થાત્ જિસકે સંયમાદિભાવ નિપિદ્ધ હૈ, એસે, સિદ્ધજીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ-બંધ કે કારણ કા અભાવ હો જાને સે નહીં કરતે હૈ । (एवं आउ-गवज्जाओ सत्त. वि) इसी तरह से संयतदार में जीव-संयत, असंयत और संयतासंयत जीवों में से संयतजीव आयुर्कर्म को छोड़कर दर्शना-वरणीय आदि कर्मप्रकृतियों को कदाचित् बांधता, भी है और कदाचित् नहीं भी बांधता है, इस विषय में समस्तकथन संयतजीव के ज्ञानावर-णीय कर्म के बांधने, न बांधने के, जैसा समझना चाहिये । (असंयत) जीव आयुर्कर्म को छोड़कर शेष दर्शनावरणीय आदि कर्मप्रकृतियों को बांधता है इसी तरह से जो पंचमगुणस्थानवर्ती जीव है उसे भी जानना चाहिये । किन्तु ('आउगे हेट्ठिल्ला तिणिणं भयणाए') अधस्तन तीन जो ये संयत, असंयत और संयतासंयत जीव हैं वे आयुर्कर्म का बंध भजना

એટલે કે દેશવિરતિવાળો, પાંચમાં ગુણસ્થાને રહેલો ૭૧-૫૯ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, તથા (જો સંજય, જો અસંજય, જો સંજયાસંજય ન બંધઈ) નો સંયત, નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત એવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી-એટલે કે જેમના સંયમાદિ ભાવ નિપિદ્ધ છે એવા સિદ્ધ એવા જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી કારણ કે ત્યાં કર્મબંધનાં કારણોનું અભાવ હોય છે. (एवं आउगवज्जाओ सत्त. वि) એજ પ્રમાણે સંયત, અસંયત અને સંયતાસંયત એવા કર્મપ્રકૃતિઓનો બંધ ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક બાંધતા નથી, અસંયત એવું આયુર્કર્મ સિવાયની સાતે કર્મપ્રકૃતિઓનો બંધ બાંધે છે. એજ પ્રમાણે પાંચમાં ગુણસ્થાને રહેલા એવા વિષયમાં પણ સમજવું. પરંતુ ('आउगे हेट्ठिल्ला तिणिणं भयणाए') પહેલા ત્રણ પ્રકારનાં એવા એટલે કે સંયત, અસંયત અને સંયતાસંયત એવા આયુર્કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે

એતે ત્રયોઽપિ ભજનયા-કદાચિદ્ વધ્નન્તિ, કદાચિન્નઃ વધ્નન્તિ; આયુર્વન્ધકાલે
વધ્નન્તિ તદ્ભિન્નકાલે આયુષ્યં ન વધ્નન્તીત્યર્થઃ; 'ઉવરિલ્લે ન વંધઈ' ઉપરિતનઃ
અન્તિમઃ નોસંયત-નોઅસંયત-નોસંયતાસંયતઃ સિદ્ધોઃ જીવઃ આયુર્ન વધ્નાતિ ।
અથ સપ્તમં દૃષ્ટિદ્વારમાહ-(નાનાવરણિજ્જં ણં મંતે) ! કમ્મં, કિં સમ્મદિટ્ઠી વંધઈ ?
હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ કર્મ કિં સમ્યગ્દૃષ્ટિર્વધ્નાતિ ? 'અથવા મિચ્છ-
દિટ્ઠી વંધઈ ?' મિથ્યાદૃષ્ટિર્વધ્નાતિ ? 'સમ્મામિચ્છદિટ્ઠી વંધઈ ?' સમ્યગ્મિથ્યા-
દૃષ્ટિર્વધ્નાતિ ? ભગવાનાહ—'ગોયમા ! સમ્મદિટ્ઠી સિય વંધઈ, સિય ણો
વંધઈ' હે ગૌતમ ! સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ વીતરાગઃ, તદ્ભિન્નથ મયતિ, તત્ર વીતરાગ-

સે કરતે હું-અર્થાત્ જય આયુર્કર્મ કે વંધ કા સમય હોતા હૈ-તય કરતે
હું ઓર જય ઉસકે વંધ કા સમય નહીં હોતા તય નહીં કરતે હું । (ઉવ-
રિલ્લે ન વંધઈ) તથા જો "નો સંયત, નો અસંયત ઓર નો સંયતાસંયત
સિદ્ધ જીવ હું" વે આયુર્કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હું ।

"અથ સાતવે દૃષ્ટિદ્વાર કી અપેક્ષા સૂત્રકાર કથન કરતે હું-ઇસમેં
ગૌતમને પ્રશ્નસે પૂછા હૈ કિ-(નાનાવરણિજ્જં ણં મંતે) ! કમ્મં કિં સમ્મદિટ્ઠી
વંધઈ) હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા સમ્યગ્દૃષ્ટિ વાંધતા હૈ ? અથવા
(મિચ્છદિટ્ઠી વંધઈ) મિથ્યાદૃષ્ટિ વાંધતા હૈ ? યા (સમ્મામિચ્છદિટ્ઠી
વંધઈ) સમ્યગ્ મિથ્યાદૃષ્ટિ વાંધતા હૈ ? ઇસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રશ્ન
ગૌતમ સે કહતે હું કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સમ્યદિટ્ઠી સિય વંધઈ,
સિય ણો વંધઈ) સમ્યગ્દૃષ્ટિ જો જીવ હોતા હૈ વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મકો
વાંધતા ખી હૈ ઓર નહીં ખી વાંધતા હૈ-ઇસ કથન કા તાત્પર્ય એ હૈ કિ

છે-એટલે કે જ્યારે આયુર્કર્મના બંધને સમય હોય છે ત્યારે તેઓ આયુ-
કર્મના બંધ કરે છે, પણ જ્યારે તેના બંધને સમય ન હોય ત્યારે તેઓ
તેના બંધ કરતા નથી, "ઉવરિલ્લે ન વંધઈ" તથા જે "નો સંયત, નો અસં-
યત અને નો સંયતાસંયત સિદ્ધ જીવો છે તેઓ આયુર્કર્મના બંધ કરતા નથી.
હવે સૂત્રકાર સાતમાં દૃષ્ટિદ્વારની અપેક્ષાએ નીચે પ્રમાણે પ્રશ્ન કરે છે-ગૌતમ
સ્વામી! મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે-(નાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં, કિં
સમ્મદિટ્ઠી વંધઈ) હે ભદ્રન્ત ! શું સમ્યગ્દૃષ્ટિ, એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મના બંધ
કરે છે ? અથવા, "મિચ્છદિટ્ઠી વંધઈ", મિથ્યાદૃષ્ટિ બાંધે છે ? અથવા "સમ્મા-
મિચ્છદિટ્ઠી વંધઈ", સમ્યગ્ મિથ્યાદૃષ્ટિ બાંધે છે ?
ગૌતમ ઉત્તર- "ગોયમા !", હે ગૌતમ ! (સમ્મદિટ્ઠી, સિય વંધઈ, સિય ણો
વંધઈ), સમ્યગ્દૃષ્ટિ એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મના બંધ બાંધે છે, પણ જ્યારે અને

ભિન્નઃ સમ્યગ્દૃષ્ટિર્જ્ઞાનાવરણં કર્મ વધ્નાતિ, વીતરાગશ્ચ સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ શાતા-
વેદનીયરૂપૈકવિષકર્પવન્ધકત્વાત્ જ્ઞાનાવરણં કર્મ ન વધ્નાતિ ઇત્યભિપ્રાયેનાહ-
સ્વાત્ કદાચિત્ અવીતરાગાવસ્થાયાં જ્ઞાનાવરણં કર્મ વધ્નાતિ, સ્વાત્ કદાચિત્-
વીતરાગાવસ્થાયાં જ્ઞાનાવરણં કર્મ ન વધ્નાતિ, 'મિચ્છાદિદ્વિ વંધઃ, સમ્મામિચ્છા-
દિદ્વિ વંધઃ' મિધ્યાદૃષ્ટિર્વધ્નાતિ, સમ્યગ્મિધ્યાદૃષ્ટિઃ મિશ્રદૃષ્ટિરપીત્યર્થઃ વધ્નાતિ
'એવં આગમચ્છાઓ સત્ત વિ' એવમ્ અનેન પ્રકારેણ આયુષ્યવર્જાઃ સપ્તાપિ
કર્મપ્રકૃતયો વિજેયાઃ દર્શનાવરણાદિકર્માણ્યપિ આયુષ્યવર્જિતાનિ સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ

સમ્યગ્દૃષ્ટિ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ એક વીતરાગ સમ્યગ્દૃષ્ટિ ઓર દૂસરા
વીતરાગભિન્ન સમ્યગ્દૃષ્ટિ; इनमें जो वीतरागभिन्न सत्यगृष्टि जीव है
वह तो ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करता है और जो वीतराग सत्यगृ-
ष्टि जीव है वह ज्ञानावरणीय कर्म का बंध नहीं करता है। वह तो
केवल एक विध-शातावेदनीयरूप-कर्मका ही बंध करता है-इसी कारण
ऐसा कहा है कि जो सत्यगृष्टि जीव अवीतराग है-अर्थात् सरागस-
म्यगृष्टि है-वह ज्ञानावरण कर्म का बंध करता है और जो सत्यगृष्टि
वीतराग है-वह ज्ञानावरणीय कर्म का बंध नहीं करता है। (मिच्छादिद्वि
बंधः, सम्मामिच्छादिद्वि बंधः) परन्तु जो मिध्यादृष्टि जीव है वह और
जो मिश्र दृष्टि जीव है वह ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करता है। (एवं
आगमचछाओ सत्त वि) इस द्वार में ज्ञानावरणीय कर्म का बंध की
तरह से ही आयु को छोड़कर शेष-दर्शनावरणीय आदि कर्मों के बांधने

નથી પણ બાંધતો. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-સમ્યગ્દૃષ્ટિ બે પ્રકારના હોય છે-વીતરાગ સમ્યગ્દૃષ્ટિ અને વીતરાગ ભિન્ન સમ્યગ્દૃષ્ટિ. આ બંને પ્રકારના સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવોમાંનો વીતરાગ ભિન્ન સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, પણ વીતરાગ સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. તે તો માત્ર શાતાવેદનીય કર્મનો જ બંધ કરે છે. તે કારણે એવું કહ્યું છે કે જે સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ અવીતરાગ છે-એટલે કે સરાગ સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે, તે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, પણ જે સમ્યગ્દૃષ્ટિ વીતરાગ જીવ હોય છે તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. (મિચ્છાદિદ્વો વંધઃ, સમ્મામિચ્છાદિદ્વો વંધઃ) પરંતુ મિધ્યાદૃષ્ટિ જીવ તથા મિશ્રદૃષ્ટિ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. (એવં આગમચ્છાઓ સત્ત વિ) આ દ્વારમાં આયુકર્મ સિવાયના સાતે કર્મોનો બંધ બાંધવા વિષેનું સમસ્ત કથન જ્ઞાના-

કદાચિત્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, મિથ્યાદૃષ્ટિર્મિશ્રદૃષ્ટિશ્ચ વધ્નાત્યેવેત્યર્થઃ, કિન્તુ 'આઉએ હેઢિલ્લા દો મયણા' આયુષ્યં કર્મ અધરતર્નો આઘી દ્વો સમ્પગ્દૃષ્ટિ-મિથ્યાદૃષ્ટિરૂપો ભજનયા કદાચિત્ આયુર્વન્ધકાલે વધ્નીતઃ કદાચિત્ તદ્-મિન્નકાલે ન વધ્નીતઃ, પરન્તુ 'સમ્મામિચ્છદિદ્ધી ન વંધહ' સમ્પગ્મિથ્યાદૃષ્ટિઃ મિશ્રદૃષ્ટિરિત્યર્થઃ આયુષ્યં કર્મ ન વધ્નાતિ, અયં ભાવઃ-અપૂર્વકરણાદો સમ્પગ્દૃષ્ટિઃ આયુષ્યં કર્મ ન વધ્નાતિ, તદ્મિન્નસ્તુ સમ્પગ્દૃષ્ટિરપિ આયુર્વન્ધકાલે આયુર્વધ્નાતિ, તદ્મિન્નકાલે ન વધ્નાતિ, તથા મિથ્યાદૃષ્ટિરપિ આયુર્વન્ધકાલે તદ્ વધ્નાતિ. અન્યદા

કે વિષય મેં ખી કથન જાનનાં ચાહિયે-અર્થાત્ આયુર્કર્મ કો છોડકર સમ્પગ્દૃષ્ટિ જીવ દર્શનાવરણીય આદિ કર્મોં કો ખી કદાચિત્ વાંધનાં હૈં ઓર કદાચિત્ નહીં વાંધતા હૈં । તથા જો મિથ્યાદૃષ્ટિ ઓર મિશ્રદૃષ્ટિ જીવ હૈં, વેં જન કર્મોં કા વંધ કરતે હીં હૈં । કિન્તુ (આઉએ હેઢિલ્લા દો મયણા) આયુ જો કર્મ હૈં ઉસે આદિ કે યે સમ્પગ્દૃષ્ટિ ઓર મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ ભજનાં સે વાંધતે હૈં-જય આયુ કે વંધ હોને કા સમય હોતા હૈં-તય ઉસકા વંધ કરતે હૈં ઓર જય સમય નહીં હોતા તય નહીં વંધ કરતે હૈં । ઓર જો (સમ્મામિચ્છદિદ્ધી ન વંધહ) મિશ્રદૃષ્ટિ જીવ હૈં વજ આયુર્કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈં । હસકા તાત્પર્ય એસા હૈં કિ-અપૂર્વકરણ આદિ ગુણસ્થાનવર્તી સમ્પગ્દૃષ્ટિ જીવ આયુર્કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈં ઓર જનસે ભિન્ન જો સમ્પગ્દૃષ્ટિ હૈં વજ આયુ કે વંધ કાલ મેં આયુ કો વાંધનાં હૈં ઓર ભિન્નકાલ મેં નહીં વાંધતા હૈં । મિથ્યાદૃષ્ટિ ખી એસા હીં કરતા

પરણીય કર્મનાં કથન પ્રમાણે જ સમજવું. એટલે કે સમ્પગ્દૃષ્ટિ જીવ આયુ-કર્મ સિવાયના સાતે કર્મોનાં બંધ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતા, તથા મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ અને મિશ્રદૃષ્ટિ જીવ આયુર્કર્મ સિવાયના સાતે કર્મોનાં બંધ કરે જ છે. પણ (આઉએ હેઢિલ્લા દો મયણા) આયુર્કર્મનાં બંધ પહેલાં બે પ્રકારનાં જીવો એટલે કે સમ્પગ્દૃષ્ટિ અને મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવો વિકલ્પે બાંધે છે, એટલે કે જ્યારે આયુનો બંધ બાંધવાનો સમય થાય છે, ત્યારે તેઓ તે કર્મનાં બંધ બાંધે છે, પણ જ્યારે તે બંધ બાંધવાનો સમય હોતો નથી ત્યારે તેઓ તે બંધ બાંધતા નથી. અને (સમ્મામિચ્છદિદ્ધી ન વંધહ) સમ્પગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ (મિશ્રદૃષ્ટિ) જીવ આયુર્કર્મનાં બંધ બાંધતા નથી તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-અપૂર્વકરણ આદિ ગુણસ્થાનમાં રહેલો સમ્પગ્દૃષ્ટિ જીવ આયુ-કર્મનાં બંધ કરતો નથી, પણ તે સિવાયનાં જ સમ્પગ્દૃષ્ટિ હોય છે તેઓ આયુનાં બંધકાળે આયુર્કર્મનાં બંધ બાંધે છે પણ તે સિવાયનાં કાળે તેઓ આયુર્કર્મ બાંધતા નથી. મિથ્યાદૃષ્ટિ પણ એવું જ કરે છે, તથા સમ્પગ્મિથ્યા-

न वेध्नाति सम्पग्मदृष्टिस्तु आयुष्यं कर्म न वेध्नाति, तद्वेध्नाध्यवसाय-
स्थानाभावात् । गौतमः पुनरुक्तं संज्ञादिवन्धद्वारमाधित्य पृच्छति-
‘‘जाणावरणिज्जं णं भंते । कम्मं किं सन्नी वंधइ, असन्नी वंधइ ?’’ हे भदन्त । ज्ञानावरणीयं खलु कर्म
किं संज्ञी वेध्नाति ? असंज्ञी वा वेध्नाति ? णोसन्नि-णोअसन्नी वंधइ ? नो-
सन्नि-नोअसंज्ञी वा वेध्नाति ? भगवान् उत्तरयति-‘‘गोयमा । सन्नी सिय वंधइ,
सिय णो वंधइ’’ हे गौतम । संज्ञी मनःपर्याप्तियुक्तः स्यात् कदाचिद् वेध्नाति,
स्यात् कदाचिन्न वेध्नाति, अवीतरागश्चेतदा ज्ञानावरणं वेध्नाति, अवीतरागश्चेतदा

है । तथा सम्पग्मदृष्टि जीव जो है, वह आयुर्कर्म का बंध नहीं करता है
ऐसा जो कहा गया है उसका कारण यह है कि उसके आयु के बंध के
अध्यवसाय स्थान का अभाव रहता है ।

अब गौतम आठवें संज्ञी आदि बन्धद्वारको लेकर प्रभुसे पूछते हैं कि
(जाणावरणिज्जं णं भंते) कम्म किं सन्नी वंधइ, असन्नी वंधइ ? हे भदन्त ।
ज्ञानावरणीय कर्म क्या संज्ञी जीव बांधता है ? या असंज्ञी जीव बांधता है ?
अथवा (णो सन्नी, णो असन्नी वंधइ) जो जीव न संज्ञी है और न
असंज्ञी है, वह बांधता है ? भगवान् इस प्रश्न का उत्तर देते हुए गौतम
से कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (सन्नी सिय वंधइ, सिय णो
बंधइ) संज्ञी जीव-मनः पर्याप्त सहित जो जीव है वह कदाचित् ज्ञाना-
वरणीय कर्म का बंध करता भी है, और कदाचित् नहीं भी करता है ।
यदि संज्ञी जीव अवीतराग है, तो ज्ञानावरणीय कर्म का वह बंध करता

हृष्टि, एव, आयुर्कर्मनो बंधं करोति, नथी तेन कारणं ये, ये के तेना आयुता
बंधना, अध्यवसाय स्थाननो अभाव, रडे, छे, नि नन्व पत्तं मुं कोइइनि ।
इदं गौतमस्याभी आहमां संज्ञी आदि बंधद्वारे अनुवक्ष्यामि, महावीरप्रभुने, येवा
अक्ष पछे, छे, के (जाणावरणिज्जं णं भंते) कम्म किं सन्नी वंधइ ? हे भदन्त ।
शुं, संज्ञी एव ज्ञानावरणीय कर्म बांधे छे ? ‘‘असंज्ञी वंधइ ?’’ हे असंज्ञी
एव, ज्ञानावरणीय कर्म बांधे छे ? अथवा (णो सन्नी, णो असंज्ञी वंधइ ?)
हे एव, नो, संज्ञी छे, येवे के संज्ञी नथी, अने, नो, असंज्ञी छे, येवे के
असंज्ञी नथी, येवे, एव शुं, ते, कर्मनो, बंधं करे छे ? (असंज्ञी) ।

उत्तर-‘‘गोयमा !’’ हे गौतम ! (सन्नी, सिय वंधइ, सिय णो
बंधइ) संज्ञी एव, (मनःपर्याप्त सहित नो, एव) क्यारेक ज्ञानावरणीय
कर्मनो बंधं करे, छे, अने, क्यारेक करोति, नथी, नो, संज्ञी, एव, अवीतराग
होय, ते, ज्ञानावरणीय कर्मनो बंधं करे, छे, पछे, नो, ते, अवीतराग होय

તન્ન વધ્નાતીત્યર્થઃ, અન એવ ' સ્યાદિ ' ત્યુક્તમ્, ' અસન્ની વંધઃ ' અસંજીઃ
મનઃ પર્યાપ્તિરહિતો જીવઃ વધ્નાત્યેવ, ' ણોસન્નિ-ણોઅસન્ની ન વંધઃ ' કિન્તુ
નોસંજિ-નોઅસંજી કેવલી સિદ્ધથ હેત્વભાવાત્ ન વધ્નાતિ, ' એવં વેયણિ-
જ્ઞાઽઽગ્ગવજ્ઞાથો છ કમ્મપ્પયહીઓ ' એવમ્-અનેન પ્રકારેણ વેદનીયાઽઽયુક્ત-
વર્જાઃ પદ્ કર્મપ્રકૃતયો વિજ્ઞેયઃ, તથા ચ દર્શનાવરણાદિકર્માણપિ વેદનીયાઽઽ-
યુક્તવર્જિતાનિ સંજી કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, અસંજી તુ વધ્નાત્યેવ,
નોસંજિ - નોઅસંજી કેવલી સિદ્ધથ વન્ધકારણાભાવાત્ તાનિ ન વધ્નાત્યેવે

હૈ-और यदि वह संज्ञी जीव वीतराग है तो ज्ञानावरणीय कर्म का वंध
नहीं करता है इसी कारण (स्यात्) ऐसा कहा है । (असन्नी वंधः)
जो जीव मनः पर्याप्त से शून्य है, वह ज्ञानावरणीय कर्म का वंध करता
ही है । (णोसन्नी णोअसन्नी वंधः) किन्तु जो जीव न संज्ञी है और
न असंज्ञी है अर्थात् जो केवलज्ञानी है और जो सिद्ध है-ऐसा जीव
कर्मबंध के कारणों के अभाव के कारण ज्ञानावरणीय कर्म का वंध नहीं
करता है (एवं वेयणिज्जाऽऽगवज्जाथो छ कम्मप्पयहीओ) ज्ञानावरणीय
कर्म की तरह ही इस द्वार में वेदनीय और आयु को छोड़कर ६ कर्मप्र-
कृतियों के विषय में भी जानना चाहिये, तथा च-वेदनीय और आयु
को छोड़कर दर्शनावरणादि ६ कर्मप्रकृतियों को भी संज्ञी जीव कदाचित्
पांशता भी है और कदाचित् नहीं भी पांशता है । तथा जो असंज्ञी जीव
है वह तो पांशता ही है और जो न संज्ञी है, न असंज्ञी है-ऐसे केवली

તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. એજ કારણે એવું કહ્યું છે કે
“ સંજી એવ ક્યારેક જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે અને ક્યારેક કરતો
નથી. ” “ અસન્ની વંધઃ ” અસંજી એવ (મનઃપર્યાપ્તિથી રહિત એવ)
જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. (ણો સન્ની ણો અસન્ની ન વંધઃ) પરંતુ
જે એવ નો સંજી હોય છે અથવા તો નો અસંજી હોય છે-એટલે કે
કેવળજ્ઞાની અથવા સિદ્ધ એવ, એવા એવને કર્મબંધનાં કારણોનો અભાવ
હોવાથી તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. (એવં વેયણિજ્ઞાઽઽ અગ્ગ-
વજ્ઞાથો છ કમ્મપ્પયહીઓ) સંજી આદિ એવોના વેદનીયકર્મ અને આયુકર્મ
સિવાયના છ કર્મોના બંધનું કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મબંધના કથન પ્રમાણે જ
સમજવું. એટલે કે સંજી એવ વેદનીય અને આયુકર્મ સિવાયના છ કર્મ
પ્રકૃતિયોનો બંધ ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક બાંધતો નથી, અસંજી એવ
તે છ કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ બાંધે જ છે, પણ નો સંજી અને નો અસંજી

વધ્નાતિ ? મગવાન્ ઉત્તરયતિ-‘ગોયમા ! ભવસિદ્ધિય મયણા’ હે ગૌતમ ! ભવ-
સિદ્ધિકો મજનયા-કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, વીતરાગમિત્રો મવ-
સિદ્ધિકો જ્ઞાનાવણં વધ્નાતિ, વીતરાગસ્તુ ન વધ્નાતિ, અતઃ ‘મજનયા’ इत्युक्तम्,
‘અમવસિદ્ધિય વંધ’ અમવસિદ્ધિકો જ્ઞાનાવણીયં કર્મ વધ્નાત્યેવ, કિન્તુ

યા જો જીવ ન ભવસિદ્ધિક હોતા હૈં ઓર ન અમવસિદ્ધિક હોતા હૈં વહ
બંધતા હૈં ? હસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ
(ગોયમા) હૈં ગૌતમ ! (ભવસિદ્ધિય મયણા) જો ભવસિદ્ધિક જીવ
હોતા હૈં વહ મજના સે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતા હૈં અર્થાત્-
કદાચિત્ વહ હસ કર્મ કા બંધ કરતા મી હૈં ઓર કદાચિત્ વહ નહીં
મી કરતા હૈં । હસકા કારણ યહ હૈં કિ ભવસિદ્ધિક જીવ દો પ્રકાર કે
હોતે હૈં-એક વે જો વીતરાગ હોતે હૈં દસરે વે જો વીતરાગ નહીં હોતે હૈં ।
વીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતે ઓર
જો અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ હૈં વે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ
કરતે હી હૈં । ગ્યારહવેં ચારહવેં ઓર તેરહવેં ગુણસ્થાનવર્તી જીવ ભવસિ-
દ્ધિક વીતરાગ હૈં ઓર હનકે નીચે કે ચતુર્થ ગુણસ્થાનતક કે જીવ
અવીતરાગભવસિદ્ધિક જીવ હૈં । હસી અભિપ્રાય સે યહાં (મજના) પદ
કા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈં । તથા જો જીવ અમવસિદ્ધિક-અભવ્ય હૈં વહ
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતા હી હૈં-હસી કારણ-(અમવસિદ્ધિય
વંધ) એસા વાઠ કહા ગયા હૈં । કિન્તુ જો જીવ એસે હૈં કિ ન ભવસિ-

જે ૭૫ ન ભવસિદ્ધિક અને ન અભવસિદ્ધિક હોય છે, તે આ કર્મ બાંધે છે ।
આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે-“ભવસિદ્ધિય
મયણા” ભવસિદ્ધિક ૭૫ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે-એટલે કે
ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક બાંધતો નથી, તેનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે-
ભવસિદ્ધિક ૭૫ બે પ્રકારના હોય છે-(૧) વીતરાગ ભવસિદ્ધિક અને
(૨) અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક. તેમાંનો વીતરાગ ભવસિદ્ધિક ૭૫ તે કર્મનો બંધ
કરતો નથી, પણ અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક ૭૫ તેનો બંધ કરે છે. અગિયારમાં,
બારમાં અને તેરમાં ગુણસ્થાનનો ૭૫ વીતરાગ ભવસિદ્ધિક હોય છે પણ
ચારથી દસ સુધીના ગુણસ્થાને રહેલો ૭૫ અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક હોય છે.
તે વાતને ધ્યાનમાં રાખીને અહીં એવું કહ્યું છે કે “ભવસિદ્ધિક ૭૫ વિકલ્પે
જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ બાંધે છે. પરંતુ ‘અમવસિદ્ધિય વંધ’ અભવસિદ્ધિક
(અભવ્ય) ૭૫ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે જ છે. (જો ભવસિદ્ધિય

જોભવસિદ્ધિય - જોઅભવસિદ્ધિય ન વંધ૨' નોભવસિદ્ધિક-નોઅભવસિદ્ધિકઃ
સિદ્ધો જીવો ન વધ્નાતિ, 'એવં આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ' એવં જ્ઞાનાવરણવદેવ
આયુષ્કવર્જાઃ સપ્તાપિ કર્મપ્રકૃતયો વિજ્ઞેયાઃ તથા ચ આયુષ્કવર્જિતાનિ દર્શના-
વરણાદિકર્માગ્યપિ ભવસિદ્ધિકઃ કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, અભવ-
સિદ્ધિકસ્તુ વધ્નાત્યેવ, નોભવસિદ્ધિકઃ-નોઅભવસિદ્ધિકઃ સિદ્ધસ્તુ ન વધ્નાત્યેવેતિ
ભાવઃ । 'આઝગં હેટ્ઠિલ્લા દો ભયણાણ' આયુષ્કં કર્મ અધસ્તનો આદ્યો દ્વો
ભવ્યોઽભવ્યથ ભવસિદ્ધિકપદવાચ્યઃ, અભવસિદ્ધિકપદવાચ્યથેત્યર્થઃ ભજનયા

દ્વિક-ભવ્ય હું ઓર અભવસિદ્ધિક-અભવ્ય હું- ઇન દોનોં પ્રકાર કે
પારિણામિક ભાવોં સે રહિત હું એસે વે સિદ્ધ પરમાત્મારૂપ જીવ જ્ઞાનાવ-
રણીય કર્મ કાં વંધ નહીં કરતે હું યહી ચાત (જો ભવસિદ્ધિય જો અભ-
વસિદ્ધિય ન વંધ૨) ઇસ સૂત્ર દ્વારા પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈ । (એવં આઝગ-
વજ્જાઓ સત્ત વિ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કી તરહ હી આયુષ્કવર્જ સાત
કર્મપ્રકૃતિયોં કો જાનના ચાહિયે-અર્થાત્ જો ભવસિદ્ધિક જીવ હોતા હૈ
વહ આયુષ્કવર્જ દર્શનાવરણીયાદિ કર્મોં કા વંધ કરતા 'ભી હૈ ઓર નહીં
ભી કરતા હૈ । તથા જો અભવસિદ્ધિક જીવ હોતા હૈ વહ તો નિયમ સે
આયુષ્કવર્જ દર્શનાવરણીયાદિ કર્મોં કા વંધ કરતા હૈ । પરન્તુ જો એસે
જીવ હોતે હું કિ ન વે ભવસિદ્ધિક હૈ ઓર ન અભવસિદ્ધિક હૈ તો વે
આયુષ્કવર્જ દર્શનાવરણીયાદિ કર્મપ્રકૃતિયોં કા વંધ નહીં કરતે હું । કારણ
એસે જીવોં મેં ઇન કર્મોં કો વંધ કરને કે કારણોં કા સર્વથા અભાવ હો
જાતા હૈ । (આઝગં હેટ્ઠિલ્લા દો ભયણાણ) ભવસિદ્ધિક ઓર અભવસિદ્ધિક

જો અભવસિદ્ધિય ન વંધ૨) નો ભવસિદ્ધિક (ભવ્ય ન હોય એવો ભવ)
અને નો અભવસિદ્ધિક (અભવ્ય ન હોય એવો ભવ) ભવ-આ બન્ને પ્રકારના
પારિણામિક ભાવોથી રહિત એવા સિદ્ધ પરમાત્મા રૂપ ભવ જ્ઞાનાવરણીય
કર્મોના બંધ કરતો નથી. " એવં આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ " આ ભવોના
આયુષ્કર્મ સિવાયના સાતે કર્મોના બંધનું કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મોના કથન
પ્રમાણે જ સમજવું એટલે કે ભવસિદ્ધિક ભવ આયુષ્કર્મ સિવાયના સાતે
કર્મોના બંધ વિકલ્પે કરે છે, અભવસિદ્ધિક ભવ તે સાતે કર્મોના બંધ અવશ્ય
કરે છે, અને નો ભવસિદ્ધિક અને નો અભવસિદ્ધિક ભવો આયુષ્કર્મ સિવાયના
સાતે કર્મોના બંધ કરતા નથી, કારણ કે તે ભવોમાં એ કર્મોના બંધ
કરવાનાં કારણોના અભાવ હોય છે.

(આઝગં હેટ્ઠિલ્લા-દો ભયણાણ) ભવસિદ્ધિક અને અભવસિદ્ધિક ભવો

વધ્નાતિ ? મગધાન્ ઉત્તરયતિ-‘ગોયમા ! ભવસિદ્ધિર્ મગધાણ’ હે ગૌતમ ! ભવ-
સિદ્ધિકો ભજનયા-કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, વીતરાગભિન્નો ભવ-
સિદ્ધિકો જ્ઞાનાવર્ણં વધ્નાતિ, વીતરાગસ્તુ ન વધ્નાતિ, અતઃ ‘ભજનયા’ इत्युक्तम्,
-અભવસિદ્ધિર્ બંધહ’ અભવસિદ્ધિકો જ્ઞાનાવર્ણીયં કર્મ વધ્નાત્યેવ, કિન્તુ ‘

યા જો જીવ ન ભવસિદ્ધિક હોતા હે ઓર ન અભવસિદ્ધિક હોતા હે વહ
બાંધતા હે ? હસ પ્રશ્ન ફા ઉત્તર દેતે છુઃ પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હેં ફિ
(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (ભવસિદ્ધિર્ મગધાણ) જો ભવસિદ્ધિક જીવ
હોતા હે વહ ભજના સે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ફા બંધ કરતા હે અર્થાત્-
કદાચિત્ વહ હસ કર્મ ફા બંધ કરતા ઓ હે ઓર કદાચિત્ વહ નહીં
ઓ કરતા હે. હસકા કારણ યહ હે ફિ ભવસિદ્ધિક જીવ દો પ્રકાર ફે
હોતે હેં-એક વે જો વીતરાગ હોતે હેં દસરે વે જો વીતરાગ નહીં હોતે હેં.
વીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ફા બંધ નહીં કરતે ઓર
જો અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ હેં વે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ફા બંધ
કરતે હી હેં. ગ્યારહવેં વારહવેં ઓર તેરહવેં ગુણસ્થાનવર્તી જીવ ભવસિ-
દ્ધિક વીતરાગ હેં ઓર હનકે નીચે ફે ચતુર્થ ગુણસ્થાનતક ફે જીવ
અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક જીવ હેં. હસી અભિપ્રાય સે યહાં (ભજના) પદ
ફા પ્રયોગ કિયા ગયા હે. તથા જો જીવ અભવસિદ્ધિક-અભવ્ય હે વહ
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ફા બંધ કરતા હી હે-હસી કારણ-(અભવસિદ્ધિર્
બંધહ) એસા પાઠ કહા ગયા હે. કિન્તુ જો જીવ એસે હેં ફિ ન ભવસિ-

જે એવ ન ભવસિદ્ધિક અને ન અભવસિદ્ધિક હોય છે, તે આ કર્મ બાંધે છે ?
આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે—“ભવસિદ્ધિર્
મગધાણ” ભવસિદ્ધિક એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે-એટલે કે
ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક બાંધતો નથી. તેનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે—
ભવસિદ્ધિક એવ બે પ્રકારના હોય છે—(૧) વીતરાગ ભવસિદ્ધિક અને
(૨) અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક. તેમાંનો વીતરાગ ભવસિદ્ધિક એવ તે કર્મનો બંધ
કરતો નથી, પણ અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક એવ તેનો બંધ કરે છે. અગિયારમાં,
બારમાં અને તેરમાં ગુણસ્થાનનો એવ વીતરાગ ભવસિદ્ધિક હોય છે પણ
સારથી દસ સુધીના ગુણસ્થાને રહેલો એવ અવીતરાગ ભવસિદ્ધિક હોય છે.
તે વાતને ધ્યાનમાં રાખીને અહીં એવું કહ્યું છે કે “ભવસિદ્ધિક એવ વિકલ્પે
જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ બાંધે છે. પરંતુ ‘અભવસિદ્ધિર્ બંધહ’ અભવસિદ્ધિક
(અભવ્ય) એવ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે જ છે. (જો ભવસિદ્ધિર્

મગવાનાહ—'ગોયમા ! હેટ્ટિલા તિણિ મયણા' 'હે ગૌતમ ! અપસ્તનાઃ આઘાસ્યયથશ્ચુદર્શની, અચશ્ચુદર્શની, અવધિદર્શની ચ, ઇત્યેતે જ્ઞાનાવરણં કર્મ ભજનયા કદાચિદ્ વધ્નન્તિ, કદાચિન્નો વધ્નન્તિ, ચશ્ચુરચશ્ચુરવધિદર્શનિનો યદિ સરાગા ભવન્તિ તદા જ્ઞાનાવરણં વધ્નન્તિ યદા તુ છદ્મસ્થવીતરાગા પ્કાદશગુણસ્થાન વર્તિનો જીવાસ્તદા જ્ઞાનાવરણં કર્મ ન વધ્નન્તિ, છદ્મસ્થવીતરાગાણાં વેદનીયસ્યૈવ વધ્નકત્વાન્, અત એવ 'ભજનયા' ઇત્યુક્તમ્, 'ઉવરિલ્લે ન વંધઈ' ઉપરિતનઃ અન્તિમઃ કેવલદર્શની ભવસ્થઃ સયોગિકેવલી અયોગિકેવલી ઇત્યર્થઃ સિદ્ધો વા હેત્વભાવાત્ ન વધ્નાતિ । 'એવં વેયણિજ્જવજ્ઞાઓ સત્ત વિ' એવં જ્ઞાનાવરણવદેવ વેદનીયવર્ગાઃ

(કેવલદંસણી વંધઈ) કેવલદર્શનવાલા જીવ વાંધતા હૈ? કૌન સે દર્શનવાલા જીવ વાંધતા હૈ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હું— (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (હેટ્ટિલા તિણિ મયણા) જો જીવ ચક્ષુદર્શનવાલા, અચક્ષુદર્શનવાલા ઓર અવધિદર્શનવાલા હૈ, વહ જીવ જ્ઞાનાવરણકર્મ કા વંધ ભજના સે કરતા હૈ—અર્થાત્ કમી વાંધતા મી હૈ, ઓર કમી નહીં મી વાંધતા હૈ । યદિ ઇન દર્શનો વાલા જીવ સરાગ હૈ તો વહ જ્ઞાનાવરણ કર્મ કા વંધ નિયમ સે કરતા હૈ ઓર યદિ વહ છદ્મસ્થ વીતરાગ—ગ્યારહવે ઓર ચારહવે ગુણસ્થાનવાલા હૈ તો વહ જ્ઞાનાવરણ કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈ ક્યોં કિ જો છદ્મસ્થ વીતરાગ હોતા હૈ ઉસકે વેદનીય કર્મ કા હી વંધ હોતા હૈ ઇસીલિયે યહાં (ભજનયા) એસા પદ કહા હૈ (ઉવરિલ્લે ન વંધઈ) તથા જો કેવલદર્શની જીવ હૈ અર્થાત્ ભવસ્થ સયોગ કેવલી ઓર અયોગકેવલી હૈ—વે યા જો સિદ્ધ જીવ હૈ વહ વંધહેતુ કે અભાવ હો જાને કે કોરણ જ્ઞાનાવરણીયકર્મ

ઉત્તર—“ગોયમા !” હે ગૌતમ ! “હેટ્ટિલા તિણિ મયણા” અક્ષુ દર્શનવાણો છવ. અચક્ષુ દર્શનવાણો છવ અને અવધિ દર્શનવાણો છવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે—એટલે કે બાંધે છે પણ ખરાં અને નથી પણ બાંધતા. જો આ દર્શનવાણા છવે સરાગ હોય તો તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ અવશ્ય બાંધે છે, પણ જો તે છદ્મસ્થ વીતરાગ અગિયારમાં અને બારમાં ગુણસ્થાનવાણો હોય તો તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતો નથી, કારણ કે છદ્મસ્થ વીતરાગને તો વેદનીય કર્મ જ બંધાય છે. તે કારણે એવું કહ્યું છે કે “પહેલા ત્રણ દર્શનવાણો છવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે.” “ઉવરિલ્લે ન વંધઈ” પરંતુ કેવળ દર્શની છવ—એટલે કે ભવસ્થ સયોગ કેવલી અને અયોગ કેવલી અથવા તો સિદ્ધ છવ—જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી, કારણ કે એવા છવને બંધનાં કારણોનો જ સર્વાથ અભાવ હોય

કદાચિદ્ વધ્નીતઃ, કદાચિન્ન વધ્નીતઃ, ઉભાવપિ તૌ આયુર્વન્ધકાલે આયુષ્યં વધ્નીતઃ, તદ્વધ્નિકાલે આયુષ્યં ન વધ્નીત ઇતિ ભાવઃ, અતएव 'મજનયા' ઇત્યુક્તમ્ 'ઉવરિલ્લે ન વંધઈ' ઉપરિતનઃ નોમવસિદ્ધિક-નોમવસિદ્ધિક પદ-વાચ્યઃ સિદ્ધો ન વધ્નાતીત્યર્થઃ ।

અથ દર્શનવિષયકવન્ધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘જાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ચક્કુદંસણી વંધઈ અચક્કુદંસણી વંધઈ, ઓહિદંસણી વંધઈ, કેવલદંસણી વંધઈ?’ હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કમ્મે કિં ચક્ષુર્દર્શની વધ્નાતિ ? અચક્ષુર્દર્શની વા કિં વધ્નાતિ ? અધિદર્શનો વા કિં વધ્નાતિ ? કેવલદર્શનો વા કિં વધ્નાતિ ?

ये दोनों जीव आयु कर्म का बंध करते भी हैं और नहीं भी करते हैं। इसका कारण यह है कि गृहीतभव में आयु कर्म का बंध जीव को एक ही बार अपने बंध काल में होता है अबंधकाल में नहीं। अतः इसी भाव को लेकर ऐसा कहा गया है। (उवरिल्ले न बंधइ) जो जीव न भव-सिद्धिक हैं और न अभवसिद्धिक हैं ऐसे वे सिद्ध जीव इस आयु कर्म का बंध नहीं करते हैं।

અથ દર્શન વિષયવન્ધદ્વારકો આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રશ્નસે પૂછતે હૈં કિ (જાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ચક્કુદંસણી વંધઈ, અચક્કુદંસણી વંધઈ ઓહિદંસણી વંધઈ કેવલદંસણી વંધઈ) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયકર્મ કો કયા ચક્ષુર્દર્શનવાલા જીવ બાંધતા હૈં ? યા અચક્ષુર્દર્શનવાલા જીવ બાંધતા હૈં ? યા અવધિદર્શનવાલા જીવ બાંધતા હૈં ? યા

આયુકર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે. એટલે કે તેઓ તેનો બંધ કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા. તેનું કારણ એ છે કે ગૃહીત ભવમાં જીવને આયુકર્મનો બંધ એક જ વાર પોતાના બંધકાળમાં બાંધાય છે, અબંધકાળમાં એ બંધ બાંધતો નથી. “ઉવરિલ્લે ન વંધઈ” નો ભવસિદ્ધિક અને નો અભવસિદ્ધિક એવાં સિદ્ધ પરમાત્મા આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

હવે ગૌતમસ્વામી-દર્શનવિષય બંધદ્વારને અનુલક્ષીને નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (જાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં ચક્કુદંસણી વંધઈ, અચક્કુદંસણી વંધઈ, ઓહિદંસણી વંધઈ, કેવલદંસણી વંધઈ ?). હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ શું ચક્ષુ દર્શનવાળો જીવ બાંધે છે ? કે અચક્ષુ દર્શનવાળો જીવ બાંધે છે ? કે અવધિ દર્શનવાળો જીવ બાંધે છે ? કે કેવળ દર્શનવાળો જીવ બાંધે છે ? આ ચારમાંથી કયા દર્શનવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ?

ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે! કમ્મં કિં પજ્જત્તઓ વંધઈ? અપજ્જત્તઓ વંધઈ જોપજ્જત્ત—જો અપજ્જત્તઓ વંધઈ’ હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિમ્ પર્યાપ્તકો વધ્નાતિ? અપર્યાપ્તકો વધ્નાતિ? નોપર્યાપ્તક—નોઅપર્યાપ્તકો વધ્નાતિ? ! ભગવાનાહ—‘ ગોયમા ! પજ્જત્તણ્ મયણાણ ’ હે ગૌતમ ! પર્યાપ્તકઃ ભજનયા કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, સરાગઃ પર્યાપ્તકો જ્ઞાનાવરણં વધ્નાતિ, વીતરાગઃ પર્યાપ્તકસ્તુ જ્ઞાનાવરણં ન વધ્નાતિ, અતો ‘ ભજનયા ’ इत्युक्तम् । ‘ અપજ્જત્તણ્ વંધઈ ’ અપર્યાપ્તકસ્તુ જ્ઞાનાવરણં વધ્નાત્યેવ ‘ જોપજ્જત્તય—

અવ પર્યાપ્તક વિષયકવ્યવસ્થાદ્વારકો આશ્રિત કરકે ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્નસે પૂછતે હેં કિં—(જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં પજ્જત્તઓ વંધઈ ? અપજ્જત્તઓ વંધઈ ? જોપજ્જત્તઓ વંધઈ જો અપજ્જત્તઓ વંધઈ) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા પર્યાપ્તક જીવ વાંધતા હૈ ? યા જો અપર્યાપ્તક જીવ હોતા હૈ વહ વાંધતા હૈ ? યા જો ન પર્યાપ્તક હોતા હૈ ઓર ન અપર્યાપ્તક હોતા હૈ વહ વાંધતા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હેં કિં—(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પજ્જત્તણ્ મયણાણ) જો જીવ પર્યાપ્તક હોતા હૈ વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ ભજના સે કરતા હૈ—અર્થાત્ કદાચિત્ કરતા મી હૈ ઓર કદાચિત્ નહીં મી કરતા હૈ । પર્યાપ્તક—ત્રીન શરીર ૩ પર્યાપ્તિયોં કે યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓં કો ગ્રહણ કરને વાલાં જીવ—યદિ સરાગ હૈ તો વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ અવશ્ય હી કરતા હૈ । ઓર યદિ વહ પર્યાપ્તક જીવ વીતરાગ હૈ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ વહ નહીં કરતા હૈ । હસી અભિપ્રાય સે

હવે પર્યાપ્તક વિષયકબંધદ્વારની અપેક્ષાએ ગૌતમસ્વામી નીચે પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે (જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં પજ્જત્તઓ વંધઈ ? અપજ્જત્તઓ વંધઈ ? જો પજ્જત્તઓ—જો અપજ્જત્તઓ વંધઈ ? ” હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ થું પર્યાપ્તક એવ કરે છે ? કે અપર્યાપ્તક એવ કરે છે ? કે નોપર્યાપ્તક એવ કરે છે ? કે નોઅપર્યાપ્તક એવ કરે છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! “ પજ્જત્તણ્ મયણાણ ” પર્યાપ્તક એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે, એટલે કે ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક કરતો નથી. પર્યાપ્તક—ત્રણ શરીર અને છ પર્યાપ્તિઓને યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓને ગ્રહણ કરનારો એવ—જો સરાગ હોય તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ અવશ્ય કરે છે, પણ જો તે પર્યાપ્તક એવ વીતરાગ હોય તો તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. તેથી જ “ તેઓ વિકલ્પે કરે છે ” એવું

સંસારપિ કર્મપ્રકૃતયો વિજ્ઞેયાઃ, તથા ચ વેદનીયવર્જિતાનિ દર્શનાવરણાદિકર્મા-
પ્યપિ ચક્ષુરચક્ષુરવધિદર્શનિનઃ કદાચિદ્ વધનન્તિ, કદાચિન્ન વધનન્તિ, કેવલ-
દર્શની ભવસ્થઃ સિદ્ધો વા ન વધનાતીત્યર્થઃ, 'વેયણિજ્ઞં હેદ્વિહ્લા તિગ્નિ વંધંતિ'
વેદનીયં કર્મ અધસ્તનાઃ આઘાઃ ચક્ષુરચક્ષુરવધિ દર્શનિનસ્રયોઽપિ ઇમસ્થ-વીતરાગાઃ
સરાગાશ્ચ વધનત્યેવ, કિન્તુ 'કેવલદંસણી મયણાણ' કેવલદર્શની મત્તનયા કદા-
ચિદ્ વેદનીયં વધનાતિ, કદાચિન્ન વધનાતિ, સયોગિકેવલી વેદનીયં વધનાતિ,
અયોગિકેવલી, સિદ્ધશ્ચ વેદનીયં ન વધનાતીતિ માત્રઃ । અયં પર્યાપ્તકદ્ધારમાશ્રિય

કા વંધ નહીં કરતા હૈ । (एवं वेयणिज्ज्ञवज्जाओ सत्त वि) જ્ઞાનાવરણ
ફી તરહ હી વેદનીય કર્મ વર્જ સાતકર્મ પ્રકૃતિયોં કો-અર્થાત્ ૬ કર્મ
પ્રકૃતિયોં કો જાનના ચાહિયે-તથા ચ વેદનીય કર્મ કો છોડકર દર્શના
વરણીયાદિ કર્મોં કો બી ચક્ષુદર્શની, અચક્ષુદર્શની ઓર અવધિદર્શની
જીવ કદાચિત્ વાંધતે હૈ ઓર કદાચિત્ નહીં વાંધતે હૈ । પરન્તુ જો
મધસ્થ કેવલદર્શની હૈ-અથવા જો સિદ્ધ કેવલદર્શની હૈ વહ્ જન દર્શ-
નાવરણીયાદિ ૬ કર્મપ્રકૃતિયોં કો નહીં વાંધતા હૈ । (वेयणिज्ज्ञं हेद्विह्ला तिग्नि वंधंति). વેદનીય કર્મ કા વંધ ચક્ષુદર્શની આદિ ત્રીન દર્શનવાછે
જીવ કરતે હી હૈ-ચાહે યે સરાગ હોં, ચાહે છદ્મસ્થ વીતરાગ હોં, સર્વ
હી હસ કર્મ કા વંધ કરતે હી હૈ । કિન્તુ જો (કેવલ દંસણી મયણાણ)
કેવલદર્શની જીવ હૈ વહ્ અયોગી કેવલી કો અપેક્ષા સે યા સિદ્ધ જીવ
ફી અપેક્ષા સે તો હસ વેદનીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈ ઓર
સયોગી કેવલી ફી અપેક્ષાસે વેદનીય કર્મ કા વહ વંધ કરતા હૈ ।

છે (एवं वेयणिज्ज्ञवज्जाओ सत्त वि) દર્શનદ્વારને અનુલક્ષીને વેદનીય
કર્મ સિવાયની સાતે કર્મપ્રકૃતિયોના બંધનું સમસ્ત કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના
દ્વયન પ્રમાણે જ સમજવું. એટલે કે દર્શનાવરણીય આદિ બીજાં છ કર્મોના
બંધ પણ ચક્ષુ દર્શની, અચક્ષુ દર્શની અને અંધિ દર્શની જીવ ક્યારેક કરે
છે અને ક્યારેક કરતા નથી. પરંતુ જે ભવસ્થ કેવલ દર્શની અથવા તો સિદ્ધ
કેવલ દર્શની જીવ હોય છે તે તો દર્શનાવરણીય આદિ છ કર્મોના બંધ કરતો નથી.
(वेयणिज्ज्ञं हेद्विह्ला तिग्नિ वंधंति) વેદનીય કર્મોના બંધ ચક્ષુદર્શની, અચક્ષુ-
દર્શની અને અવધિદર્શની જીવ કરે છે; તે જીવો ભલે સરાગ હોય કે છદ્મસ્થ
વીતરાગ હોય પણ તેઓ વેદનીય કર્મોના બંધ અવસ્થ કરે છે. પરંતુ " કેવ-
લદંસણી મયણાણ " કેવલદર્શની જીવ વિકલ્પે વેદનીય કર્મોના બંધ કરે છે.
આ કથનને ભાવ નીચે પ્રમાણે છે-કેવલદર્શની જીવ જો અયોગી કેવલી હોય
અથવા તો સિદ્ધ પરમાત્મા હોય તો તે વેદનીય કર્મોના બંધ કરતો નથી,
પણ સયોગી કેવલી હોય તો તે વેદનીય કર્મોના બંધ કરે છે.

આયુર્વધ્નીતઃ, તદન્યકાલે આયુર્ન વધ્નીતઃ ઇતિ ભાવઃ, 'ઉવરિલ્લે ન વંધઈ' ઉપરિતનઃ અન્તિમઃ નોપર્યાસક નોઅપર્યાસકઃ-સિદ્ધો ન વધ્નાતિ । અથ ભાપકવિપયકવંધ દ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ 'જ્ઞાનાવરણં મંતે ! ભાસઈ વંધઈ ? અભાસઈ વંધઈ ?' હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણં કર્મ કિં ભાપકો વધ્નાતિ ? અભાપકો વા વધ્નાતિ ? મગ-વાન્ ઉત્તરયતિ-' મોયમા ! દો વિ મયજ્ઞાઈ ' હે ગૌતમ ! દ્વાવપિ ભાપકઃ ભાપા-લઙ્ઘિમાન્ તદન્યઃ અભાપકથેતિ દ્વૌ મજનયા કદાચિદ્ જ્ઞાનાવરણં કર્મ વધ્નીતઃ, કદાચિન્ન વધ્નીતઃ, તથાહિ-સરાગો ભાપકઃ જ્ઞાનાવરણીયં વધ્નાતિ, વીતરાગસ્તુ ભાપકો ન વધ્નાતિ, અભાપકઃ અયોગી સિદ્ધઃ ન વધ્નાતિ, પૃથિવ્યાદયો વિગ્રહ-

કાલ મેં હી આયુ કર્મ કા વંધ કરતે હું--અવંધકાલ મેં નહીં કરતે હું । (ઉવરિલ્લે ન વંધઈ) જો જીવ સિદ્ધ હું--અર્થાત્ ન પર્યાસક હું ઓર ન અપર્યાસક હું--વે આયુ કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હું ।

અવ ભાપાકવિપયકવંધદ્વારકો આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રશ્ન સે પૂછતે હું કિ-(જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કર્મં કિં ભાસઈ વંધઈ ? અભાસઈ વંધઈ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કો વ્યા ભાપક જીવ વાંધતા હૈ યા અભાપક જીવ વાંધતા હૈ ? હિસકા ઉત્તર દેતે હુઈ પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હું કિ (મોયમા) હે ગૌતમ ! (દો વિ મયજ્ઞાઈ) વે દોનોં હી જીવ-અર્થાત્ જો ભાપાલઙ્ઘિવાલા હૈ એસા ભાપક જીવ ઓર જા ભાપક સે મિત્ર-અભાપકભાપાલઙ્ઘિવાલા નહીં હૈ-એસે દોનોં હી જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કદાચિત્ કરતે મી હું ઓર કદાચિત્ નહીં મી કરતે હું । ભાપક યદિ સરાગ હૈ તો વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ

ખાંધતા નથી. તેઓ આયુકર્મના બંધકાળે જ આયુકર્મનો બંધ કરે છે, અબંધ-કાળે કરતા નથી. " ઉવરિલ્લે ન વંધઈ " એ એવ સિદ્ધ હોય છે-એટલે કે ન પર્યાસક અને ન અપર્યાસક હોય છે-તેઓ આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી.

હવે ભાપકવિપયકવંધદ્વારને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને નીચે પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે-(જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કર્મં કિં ભાસઈ વંધઈ ? અભાસઈ વંધઈ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મભાપક એવ ખાંધે છે ? કે અભાપક એવ ખાંધે છે ?

મહાવીર પ્રશ્ન તેનો જવાબ આપતા કહે છે-" દો વિ મયજ્ઞાઈ " હે ગૌતમ ! ભાપાલઙ્ઘિવાળો ભાપક એવ તથા ભાપાલઙ્ઘિ વિનાનો અભાપક એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ખાંધે છે પણ ખરો અને નથી પણ ખાંધતો. ભાપક જો સરાગ હોય તો તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ અવશ્ય ખાંધે છે, પણ જો તે

‘નોપર્યાસક-નોઅપર્યાસક: સિદ્ધો ન વધ્નાત્યેવ, ‘અન્-
આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ’ એવં જ્ઞાનાવરણવદેર આયુષ્કવર્જા: સત્તાપિ કર્મ પ્રકતયો
વેદિતવ્યા: । તથા ચ આયુષ્યાર્જિતાનિ દર્શનાવરણાદિકર્માણ્યપિ પર્યાસક:
કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, અપર્યાસકસ્તુ વધ્નાત્યેવ, નોપર્યાસક-નો
અપર્યાસક: સિદ્ધસ્તુ ન વધ્નાત્યેવેતિ ભાવ: । ‘આઝગં હેઢિલ્લા દો મયણા’
આયુષ્કં કર્મ અપસ્તનો આઘો દો પર્યાસકાઽપર્યાસકો મજનયાઆયુષો વન્ધકાલે

(મજનયા) યહાં એસા કહ્વા હૈ । (અપજ્જતણ વંધઈ) તથા જો જીવ
અપર્યાસક હૈ-પર્યાસક નહીં હૈ-વહ તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ
કરતા હી હૈ । (નોપજ્જતણ-નોઅપજ્જતણ ન વંધઈ) પરન્તુ જો
જીવ ન પર્યાસક કી કોટિ મેં હૈ ઓર ન અપર્યાસક કી હી કોટિ મેં
હૈ-એસા વહ સિદ્ધ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હી નહીં હૈ
(અન્ આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ) જ્ઞાનાવરણ કી તરહ હી આયુષ્કવર્જ
સાતકર્મપ્રકૃતિયોં કો અર્થાત્ જ્ઞાનાવરણીયકો કહ્ ચુકે હૈ ઓર
આયુષ્કકા નિવેધ હૈ, અતઃ ૬ કર્મપ્રકૃતિયોં કો જાનના ચાહિયે-તથા
જીવ આયુષ્ક વર્જિત દર્શનાવરણીય આદિ કર્મ મી પર્યાસક જીવ કદાચિત્
વાંધતા હૈ । ઓર કદાચિત્ નહીં વાંધતા હૈ । પરન્તુ જો અપર્યાસક
હોતા હૈ વહ તો વાંધતા હી હૈ । એવં જો ન પર્યાસક હોતા હૈ ઓર ન
અપર્યાસક હોતા હૈ અર્થાત્ જો સિદ્ધ જીવ હૈ, વહ મી નહીં વાંધતા હૈ ।
(આઝગં હેઢિલ્લા દો મયણા) આયુષ્કર્મ કે પર્યાસક ઓર અપર્યાસક
યે દો જીવ વિકલ્પ સે-મજના સે-વાંધતે હૈ અર્થાત્-આયુષ્કર્મ કે વંધ

કહ્યું છે. “અપજ્જતણ વંધઈ” તથા જે જીવ અપર્યાસક હોય છે તે તે જ્ઞાના-
વરણીય કર્મનો બંધ અવશ્ય કરે છે. (નોપજ્જતણ નોઅપજ્જતણ ન વંધઈ)
પણ જે જીવ નોપર્યાસકની કોટિમાં હોય છે, અને નોઅપર્યાસકની કોટિમાં
હોય છે, એવો સિદ્ધ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો જ નથી (અન્
આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ) પર્યાસક દ્વારની, અપેક્ષાએ આયુષ્કર્મ સિવાયના સાતે
કર્મબંધનું કયન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કયત પ્રમાણે જ સમજવું એટલે કે
આયુષ્કર્મ સિવાયના સાતે કર્મોનો બંધ પર્યાસક જીવ બાંધે છે પણ ખરો
અને નથી પણ બાંધતો. અપર્યાસક જીવ તો તે આયુષ્કર્મ સિવાયના સાતે
કર્મોનો બંધ અવશ્ય બાંધે જ છે અને જે ન પર્યાસક અને ન અપર્યાસક
હોય છે એટલે કે સિદ્ધ જીવ હોય છે તે આયુષ્કર્મ સિવાયના સાતે કર્મોનો
બંધ કરતો નથી. (આઝગં હેઢિલ્લા દો મયણા) પર્યાસક અને અપર્યાસક
જીવ આયુષ્કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે-એટલે કે ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક

કદાચિદ્ વેદનીયં કર્મ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, પૃથિવ્યાદિકઃ અભાપકઃ વધ્નાતિ, અયોગી, સિદ્ધ અભાપકો ન વધ્નાતિ, અત આહ-‘ભજનયા’ ઇતિ । અય પરીતદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ - ‘જાણાવરણિજ્ઞં જં મંતે કમ્મં કિં પરિત્તે વંધઃ અપરિત્તે વંધઃ જોપરિત્ત-જોઅપરિત્તે વંધઃ’ હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં સ્વલુ કર્મ કિં પરીતો વધ્નાતિ ? અપરીતો વધ્નાતિ ? નોપરીત-નોઅપરીતો વધ્નાતિ ? મગવાનાહ-‘ગોયમા ! પરિત્તે ભયણાણ’ હે ગૌતમ ! પરીતઃ પ્રત્યેકશરીરવનસ્પતિકાયઃ અલ્પસંસારો વા ભજનયા જ્ઞાનાવરણં કદાચિદ્ વધ્નાતિ,

હું ઓર કદાચિત્ નહીં વાંધતે હું-એસા જો કહા ગયા હૈ-સો ઉસકા અભિપ્રાય એસા હૈ કિ જય અભાપકપદ અયોગી ઓર સિદ્ધોં કો રહ્યા જાતા હૈ તય વે વેદનીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હું । ઓર જય વિગ્રહ-ગત્યાપન્ન પૃથિવ્યાદિક જીવોં કો ગ્રહણ કિયા જાતા હૈ તય વે વેદનીય કર્મ કા વંધ કરતે હું । ઇસી કારણ યહાં પર ભજના પ્રકટ કો ગઈ હૈ ।

અય પરીતદ્વાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમ પ્રભુ સે પૂછતે હું કિ- (જાણાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કમ્મં કિં પરિત્તે વંધઃ, અપરિત્તે વંધઃ ? જો પરિત્ત જો અપરીત્તે વંધઃ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કો કયા પરીત જીવ વાંધતા હૈ કિ અપરીત જીવ વાંધતા હૈ-અથવા જો જીવ ન પરીત હૈ ઓર ન અપરીત હૈ વહ વાંધતા હૈ ? ઇસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હું કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પરિત્તે ભયણાણ) પરીત પ્રત્યેક શરીરવાલા વનસ્પતિ કાયિક જીવ અથવા અલ્પસંસાર વાલા

ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક બાંધતો નથી. આ કથનનો ભાવ નીચે પ્રમાણે છે-અભાપક અયોગી અને સિદ્ધ પરમાત્માઓ વેદનીય કર્મનો બંધ કરતા નથી, પણ વિગ્રહ ગતિમાં રહેલા પૃથ્વીકાય આદિ જીવો વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે.

હવે પરીત દ્વારની અપેક્ષાએ ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે-(જાણાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કમ્મં કિં પરિત્તે વંધઃ ? અપરિત્તે વંધઃ ? જો પરિત્ત-જો અપરિત્તે વંધઃ ?) હે ભદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ શું પરીત (પ્રત્યેક શરીરવાળો વનસ્પતિકાય જીવ અથવા અલ્પ સંસારવાળો જીવ) જીવ બાંધે છે ? કે અપરીત જીવ બાંધે છે ? કે નોપરીત જીવ બાંધે છે ? કે નોઅપરીત જીવ બાંધે છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-(ગોયમા ! પરિત્તે ભયણાણ) હું ગૌતમ ! પરીત જીવ (પ્રત્યેક શરીરવાળો વનસ્પતિકાયિક જીવ અથવા

મર્યાસપન્નાશ્ચાભાપકા વધનન્તિ, અતઃ પચ 'દોષિ ભયળાઈ' ઇત્યુક્તમ્ । एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि' एवं ज्ञानावरणवदेव वेदनीयवर्गाः सप्तापि कर्म प्रकृतयो वेदितव्याः, तथा च वेदनीयवर्जितानि दर्शनावरणादिकर्माण्यपि भापका-भापकौ भजनया कदाचिद् वध्नीतः, कदाचिन्न वध्नीतः, 'वेयणिज्जं भासए बंधइ' वेदनीयं कर्म भापकः भापालब्धिमान् वध्नाति, सयोग्यवसानस्यापि भापालब्धिमतः शातवेदनीयवन्धकत्वात्, 'अभासए भयणए' अभापकः भजनया

અવશ્ય હી કરતા હૈ । ઓર ભાપક યદિ ચીતરાગ હૈ તો વહ જ્ઞાનાવર-
ણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતા હૈ । હસી તરહ અગોમી જીવ ઓર સિદ્ધ
જીવ યે અભાપક હૈ તો યે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતે હૈ ।
તથા પૃથિવી આદિ જીવ જપ વિગ્રહ ગતિ મેં રહતે હૈ તથ યે ભી અભા-
પક માને જાતે હૈ-સો યે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતે હી હૈ ।
હસી કારણ યહાં દોનોં મેં જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે બંધ કરને કી ભજના
કહી ગઈ હૈ । (एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि) હસી તરહ સે અર્થાત્
જ્ઞાનાવરણ કર્મ કી તરહ હી-વેદનીય વર્જ સાતકર્મપ્રકૃતિયોં કો જાનના
ચાહિયે-તથા ચ-વેદનીય વર્જિત દર્શનાવરણીય આદિ કર્મ ભી ભાપક
ઔર અભાપક યે દોનોં જીવ ભજના સે બાંધતે હૈ । (वेयणिज्जं भासए
बंधइ) વેદનીય કર્મ કો ભાપક જીવ બાંધતા હૈ-કારણ કિ સયોગિ
કે અવસાનવાલા ભી ભાપક-ભાપાલબ્ધિવાલા-શાતાવેદનીય કર્મ કા
બંધ કરતા હૈ । (अभासए भयणए) અભાપક જીવ કદાચિત્ બાંધતે

વીતરાગ હોય તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતો નથી. એજ પ્રમાણે અયોગી જીવ
અને સિદ્ધ જીવ અભાપક હોય છે. તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી.
તથા પૃથ્વીકાય આદિ જીવ જ્યારે વિગ્રહ ગતિમાં રહેતા હોય છે, ત્યારે તેમને
પણ અભાપક ગણવામાં આવે છે. પણ તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ અવશ્ય બાંધતા
હોય છે. તે કારણે જ એવું કહ્યું છે કે " ભાપક અને અભાપક વિકલ્પે જ્ઞાના-
વરણીય કર્મ બાંધે છે. " (एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि) ભાપક તથા
અભાપક જીવોના વેદનીય કર્મ સિવાયના સાતે કર્મ બંધનું કથન જ્ઞાનાવરણીય
કર્મ પ્રમાણે સમજવું. એટલે કે વેદનીય કર્મ સિવાયના સાતે કર્મોના બંધ
ભાપક અને અભાપક જીવો બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતા. (वेयणिज्जं
भासए बंधइ) વેદનીય કર્મ ભાપક જીવ બાંધે છે, કારણ કે સયોગિ અવસ્થા-
વાળો ભાપક (ભાપાલબ્ધિવાળો જીવ) પણ શાતાવેદનીયનો બંધ કરે છે.
" अभासए भयणए " અભાપક જીવ વેદનીય કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે. એટલે કે

અપરીતોઽપિ દ્વાયપિ ભજનયા કદાચિદ્ વચ્નીતઃ, કદાચિન્ન વચ્નીતઃ, પ્રત્યેકકાયઃ સાધારણકાયઃ, પરીતઃ, અપરીતઃ અલ્પસંસાર, અનન્તસંસારો વા આયુર્વચ્ચકાલે એવ આયુર્વચ્ચનાતિ, તદ્ભિન્નકાલે ન આયુર્વચ્ચનાતિ, અતો ' ભજનયા ' ઇત્યુક્તમ્, કિન્તુ ' જોપરિત્ત-જોઅપરિત્તો ન વંધઈ ' નોપરીત-નોઅપરીતઃ સિદ્ધસ્તુ ન વચ્ચનાત્યેવ ।

અથ જ્ઞાનવિષયકવંધદ્વારમધિકૃત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—' જાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં અભિણિચોદિયણાણી વંધઈ ? સુચણાણી, ઓદિણાણી, મળપજ્જવણાણી, કેવલણાણી વંધઈ ? ' હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ ક્ષિપ્ત્ આભિનિચોધિકજ્ઞાની

સિદ્ધ જીવ હું, વે કમ્મો નહીં વાંધતે હું । (આડગં પરિત્તો ચિ અપરિત્તો ચિ મયણાણ) આયુષ્ક કર્મ કો પરીત મ્મી ઓર અપરીત મ્મી ભજના સે વાંધતે હું । પ્રત્યેક કાયવાલા જીવ પરીત ઓર સાધારણ કાયવાલા જીવ અપરીત, અથવા અલ્પસંસારવાલા પરીત જીવ ઓર અનન્તસંસાર વાલા અપરીત જીવ વે દોનોં હી પ્રકાર કે જીવ આયુ કે વંધ કાલ મેં હી આયુ કા વંધ કરતે હું ઓર આયુ કે વંધકાલ કે અસમય મેં આયુ કા વંધ નહીં કરતે હું—ઇસ કારણ ભજના યહાં કહી ગઈ હૈ । કિન્તુ (જોપરિત્ત જોઅપરિત્તો ન વંધઈ) એસા જો કહા ગયા હૈ સો સિદ્ધ જીવ ન પરીત હું ઓર ન અપરીત હી હું—ઇસ કારણ વે સિદ્ધ જીવ આયુકર્મ કા વંધ નહીં કરતે હું ।

અથ જ્ઞાનવિષયકવંધદ્વારકો આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રશ્નસે પૂછતે હું કિ—(જાનાવરણિજ્જં સ્વલુ મંતે ! કમ્મં કિં અભિણિચોદિયણાણી વંધઈ સુચણાણી, ઓદિણાણી, મળપજ્જવણાણી, કેવલણાણી વંધઈ ?) હે મદન્ત !

કહી કરતો નથી. (આડગં પરિત્તો ચિ અપરિત્તો ચિ મયણાણ) પરીત અને અપરીત એવો આયુકર્મનો બંધ વિકલ્પે બાંધે છે. પ્રત્યેક કાયવાળો પરીત એવ અને સાધારણ કાયવાળો અપરીત એવ, અથવા અલ્પ સંસારવાળો પરીત એવ અને અનંત સંસારવાળો અપરીત એવ, એ બન્ને પ્રકારના એવ આયુના બંધકાળે ન આયુકર્મનો બંધ કરે છે પણ આયુના અબંધકાળે આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી, તે કારણે “ વિકલ્પે કર્મબંધ ” કહ્યો છે. પરંતુ (જો પરિત્ત જો અપરિત્તો ન વંધઈ) નોપરીત અને નોઅપરીત એવો સિદ્ધ એવ આયુકર્મનો બંધ કરતો નથી.

હવે ગૌતમસ્વામી જ્ઞાનવિષયકવંધદ્વારને અનુલક્ષીને નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે—(જાનાવરણિજ્જં સ્વલુ મંતે ! કમ્મં કિં અભિણિચોદિયણાણી વંધઈ ? સુચણાણી, ઓદિણાણી, મળપજ્જવણાણી, કેવલણાણી વંધઈ ?) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા જ્ઞાનવાળો એવ બાંધે છે ? શું આભિનિચોધિક જ્ઞાની (મતિજ્ઞાની)

કદાચિન્ન વધ્નાતિ, સરાગપરીતો જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ વધ્નાતિ, વીતરાગપરીતસ્તુ તન્નવધ્નાતિ, અતો ' ભજનયા ' ઇત્યુક્તમ્ ' અપરિત્તે વંધઃ ' અપરીતઃ સાધારણ-વનસ્પતિકાયઃ અનન્તસંસારો વા વધ્નાત્યેવ, ' જ્ઞોપરિત્ત-જ્ઞોઅપરિત્તે ન વંધઃ ' નોપરીત-નોઅપરીતઃ સિદ્ધો ન વધ્નાતિ । ' एवं आउगवज्जाओ सत्त कम्मप्पयडीओ ' एवं જ્ઞાનાવરણાદેવ આયુષ્કવર્જનાઃ સત્ત કર્મપ્રકૃતયો જ્ઞાતવ્યાઃ તથાહિ-આયુષ્કવર્જિતાનિ દર્શનાવરણાદિકર્માણ્યપિ પરીતઃ કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્નવધ્નાતિ, અપરીતસ્તુ વધ્નાત્યેવ, નોપરીત-નોઅપરીતઃ સિદ્ધસ્તુ ન કયમપિ વધ્નાતીતિ ભાવઃ । 'આઉગં પરિત્તો વિ અપરિત્તો વિ ભયણાપ' આયુષ્કં કર્મ પરીતોઽપિ,

જીવ ભજના સે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતા હૈ । इसका भाव यह है कि यदि परीत जीव सराग है तो वह ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करता है और यदि वह वीतराग है तो वह ज्ञानावरणीय कर्म का बंध नहीं करता है । (अपरित्ते वंधः) साधारण वनस्पतिकारूप जीव अथवा जीसका संसार अनन्त है ऐसा जीव-ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करता है (ज्ज्ञो परित्त ज्ज्ञो अपरित्ते न वंधः) जो न परीत है और न अपरीत है ऐसा सिद्ध जीव ज्ञानावरणीय कर्म का बंध नहीं करता है (एवं आउगवज्जाओ सत्त कम्मप्पयडीओ) ज्ञानावरण कर्म की तरह से ही आयुष्कवर्ज सात कर्मप्रकृतियों को जानना चाहिये-तथा च-आयुष्कवर्जित दर्शनावरणीयादि कर्मों को भी परीत जीव कदाचित् बांधता है और कदाचित् नहीं बांधता है । पर जो अपरीत जीव है, वह तो बांधता ही है । जो नो परीत नो अपरीत हैं अर्थात् ऐसे जो

અદ્ય સંસારવાળો (જીવ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે આ કથનનો ભાવ નીચે પ્રમાણે છે-જો પરીત જીવ સરાગ હોય તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે, પણ જો તે પરીત જીવ વીતરાગ હોય, તો તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતો નથી. " અપરિત્તે વંધઃ " સાધારણ વનસ્પતિકાય રૂપ જીવ અથવા જોનો સંસાર અનંત હોય છે એવો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે જ છે. (જ્ઞોપરિત્ત-જ્ઞોઅપરિત્તે ન વંધઃ) પરંતુ નોપરિત્ત અને નોઅપરીત એવો સિદ્ધ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી. (' एवं आउगवज्जाओ सत्त वि कम्मप्पयडीओ) પરીત દ્વારની અપેક્ષાએ આયુકર્મ સિવાયની સાતે કર્મ-પ્રકૃતિઓનો બંધનું સમસ્ત કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કથન પ્રમાણે જ સમજવું. એટલે કે પરીત જીવ આયુકર્મ સિવાયની દર્શનાવરણીય આદિ સાતે કર્મ-પ્રકૃતિઓનો બંધ વિકલ્પે બાંધે છે, અપરીત જીવ તો તે કર્મોનો બંધ અવશ્ય બાંધે છે, પણ ન પરીત અને ન અપરીત રૂપ સિદ્ધ જીવ તે કર્મોનો બંધ

નીયવર્ગાઃ સત્તાપિ કર્મપ્રકૃતયો વેદિતવ્યાઃ, તથાહિ-વેદનીયવર્જિતાનિ દર્શના-
વરણાદિકર્માગ્યપિ આભિનિયોધિકજ્ઞાનિ પ્રભૃતયથત્વાગો જ્ઞાનિનઃ કદાચિત્ સરાગા-
વસ્થાયાં વધ્નન્તિ, કદાચિદ્ વીતરાગાવસ્થાયાં ન વધ્નન્તિ, કેવલજ્ઞાની તુ ન
વધ્નાતિ । વેયણિજ્ઞં હેટ્ઠિલ્લા ચત્તારિ વંધંતિ ' વેદનીયં કર્મ અધરતનાઃ આદ્યા-
થત્વાર આભિનિયોધિકજ્ઞાનિપ્રભૃતયોઽપિ વધ્નન્તિ, છદ્ધસ્થાનાં જ્ઞાતાજ્ઞાતવેદનીયસ્ય
વીતરાગાણાં ચ જ્ઞાતવેદનીયસ્ય વન્ધકત્વાત્ । ' કેવલજ્ઞાની ભયણાપ્' કેવલજ્ઞાની
ભજનયા કદાચિદ્ વધ્નાતિ વેદનીયમ્, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, સયોગિકેવલિનાં વેદ-
નીયવન્ધકત્વાત્ અયોગિકેવલિનાં સિદ્ધાનાં ચાવન્ધકત્વાત્ ' ભજનયા ' ઇત્યુક્તમ્ ।

કે સર્વથા ક્ષય સે હી કેવલજ્ઞાનપ્રાપ્ત હોતા હૈ (એવં વેયણિજ્ઞ-
વજ્જાઓ સત્ત વિ) જ્ઞાનાવરણ કર્મ કી તરહ સે હી વેદનીયવર્જ સાત
કર્મ પ્રકૃતિયાં જાનની ચાહિયે-તથા ચ-વેદનીયકર્મ સે રહિત દર્શના-
વરણીય આદિ કર્મોં કા ભી આભિનિયોધિક આદિ ચારજ્ઞાનવાલે જીવ
કદાચિત્ વંધ કરતે હૈં ઓર કદાચિત્ નહીં કરતે હૈં । જય યે સરાગાવ-
સ્થાપન્ન હોતે હૈં-તથ તો કરતે હૈં ઓર જય યે વીતરાગાવસ્થાપન્ન હોતે
હૈં તથ નહીં કરતે હૈં । કેવલજ્ઞાની તો इनका વંધ કરતે હી નહીં હૈ ।
(વેયણિજ્ઞં હેટ્ઠિલ્લા ચત્તારિ વંધંતિ) આદિ કે ચાર જ્ઞાનવાલે જીવ વેદ-
ની કર્મ કા વંધ કરતે હૈં । ક્રયોં કિ છદ્ધસ્થોં કે જ્ઞાતાવેદનીય કા ઓર
અજ્ઞાતાવેદનીયકા વંધ હોતા હૈ ઓર વીતરાગોંકે કેવલ એક જ્ઞાતાવેદનીય
કા હી વન્ધ હોતા હૈ । (કેવલજ્ઞાની ભયણાપ્) કેવલજ્ઞાની જીવ કે
વેદનીય કર્મ કા વંધ વિકલ્પ સે હોતા હૈ એસા જો કહા ગયા હૈ ઉસકા
કારણ યહ હૈ કિ જય કેવલજ્ઞાની જીવ તેરહવે ગુણસ્થાન મેં રહતા

વિનાશ થવાથી તો કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત થતું હોય છે. (એવં વેયણિજ્ઞવજ્જાઓ
સત્ત વિ) વેદનીય કર્મ સિવાયની સાતે કર્મપ્રકૃતિયોના કર્મવંધ વિષેનું કથન
જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કથન પ્રમાણે જ સમજવું. એટલે કે વેદનીય કર્મ સિવા-
યના સાતે કર્મો મતિજ્ઞાની, શ્રુતજ્ઞાની, અવધિજ્ઞાની અને મનઃપર્યયજ્ઞાની
ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક બાંધતા નથી-ક્યારે તેઓ સરાગ અવસ્થાવાળા
હોય છે ત્યારે કરે છે પણ વીતરાગ અવસ્થાવાળા હોય ત્યારે કરતા નથી.
કેવલજ્ઞાની આત્મા તો તેમનો બંધ કરતો જ નથી. (વેયણિજ્ઞં હેટ્ઠિલ્લા ચત્તારિ
વંધંતિ) વેદનીય કર્મનો બંધ પહેલા ચાર જ્ઞાનવાળા જીવ કરે છે, કારણ કે
છદ્ધસ્થોને જ્ઞાતાવેદનીયનો અને અજ્ઞાતાવેદનીયનો બંધ હોય છે, પણ વીત-
રાગોને માત્ર જ્ઞાતાવેદનીયનો જ બંધ હોય છે. (કેવલજ્ઞાની ભયણાપ્) કેવલ-
જ્ઞાની જીવ વેદનીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે બાંધે છે. આમ કહેવાનું કારણ એ

મતિજ્ઞાની કિં જ્ઞાનવરણીયં કર્મ વધ્નાતિ ? । મગધનાદ-‘ ગોયમા । હેદ્વિલ્લા
 ચત્તારિ મયણાણે ’ હે ગૌતમ ! અવસ્તના આગ્રાધસ્વારઃ અભિનિવોધિક-
 શ્રુતા-વધિ-મનઃપર્યવજ્ઞાનિનઃ ભજનયા કદાચિદ્ જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ વધ્નન્તિ,
 કદાચિન્ન વધ્નન્તિ, સરાગાવસ્થાયાં વધ્નન્તિ, વીતરાગાવસ્થાયાં જ્ઞાનાવરણીયં
 કર્મ ન વધ્નન્તિ, અતો ‘ ભજનયા ’ ક્વયુક્તમ્, ‘ કેવલજ્ઞાણી ન વંધઈ ’ કેવલ-
 જ્ઞાની ન વધ્નાતિ । ‘ એવં વેયણિજ્ઞવજ્ઞાઓ સત્તવિ ’ એવં જ્ઞાનાવરણવદેવ વેદ-

જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કૌન સે જ્ઞાનવાલા જીવ બાંધતા હૈ ? કયા આભિનિ-
 વોધિકજ્ઞાની-મતિજ્ઞાની જીવ બાંધતા હૈ । યા શ્રુતજ્ઞાની જીવ બાંધતા હૈ ?
 યા અવધિજ્ઞાની જીવ બાંધતા હૈ યા મનઃ પર્યવજ્ઞાનો બાંધતા હૈ ? યા
 કેવલજ્ઞાની બાંધતા હૈ ? ફસ્કે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હું કિ
 (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (હેદ્વિલ્લા ચત્તારિ મયણાણે) આદિ કે ચાર જીવ
 મતિજ્ઞાની-શ્રુતજ્ઞાની, અવધિજ્ઞાની ઓર મનઃ પર્યવજ્ઞાની જીવ-કેવલ-
 જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ ભજના સે કરતે હું-અર્થાત્ યે ચાર જીવ
 કદાચિત્ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતે બી હું ઓર કદાચિત્ નહીં
 બી કરતે હું । જય યે સરાગાવસ્થા મેં રહતે હું, તવ તો જ્ઞાનાવરણીય
 કર્મ કા બંધ કરતે હું ઓર જય યે વીતરાગાવસ્થા મેં રહતે હું-તવ જ્ઞાના
 વરણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતે હું । ફસીલિયે યહાં (ભજના) પદ
 પ્રયુક્ત કિયા ગયા હૈ । (કેવલજ્ઞાણી ન વંધઈ) કેવલજ્ઞાની આત્મા
 જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતા હૈ-કયોં કિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ

અવ બાંધે છે ? કે શ્રુતજ્ઞાની અવ બાંધે છે ? કે અવધિજ્ઞાની અવ બાંધે છે ?
 કે મનઃપર્યવજ્ઞાની અવ બાંધે છે ? કે કેવલજ્ઞાની અવ બાંધે છે ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે કે (ગોયમા ।) હે ગૌતમ ।
 (હેદ્વિલ્લા ચત્તારિ મયણાણે) પહેલા આર પ્રકારનાં જીવો-મતિજ્ઞાની, શ્રુતજ્ઞાની,
 અવધિજ્ઞાની અને મનઃપર્યવજ્ઞાની જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે
 કરે છે-એટલે કે તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક
 બાંધતા નથી. બ્યારે તેઓ સરાગ અવસ્થાવાળા હોય છે ત્યારે તો જ્ઞાના-
 વરણીય કર્મ બાંધે છે, પરંતુ બ્યારે વીતરાગ અવસ્થાવાળા હોય છે, ત્યારે
 તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી. તે કારણે અહીં “ વિકલ્પે કર્મ બાંધે
 છે ” એવું કહ્યું છે. (કેવલજ્ઞાણી ન વંધઈ). પરંતુ કેવલજ્ઞાની આત્મા તો
 જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતો જ નથી, કારણ કે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો સર્વથા

અવ યોગવિપયકચંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘(નાનાવરણિજ્જં ણં મંતે કમ્મં કિં મણજોગી વંધં ? વયજોગી વંધં ? કાયજોગી વંધં ? અયોગી વંધં ?) હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિમ્ મનોયોગી વધ્નાતિ ? કિં વચોયોગી વધ્નાતિ ? કિં કાય-યોગી વધ્નાતિ ? કિં વા અયોગી વધ્નાતિ ? । મગયાનાહ-‘ ગોયમા ! હેઢિલ્લા તિન્નિ મયણાણ ’ હે ગૌતમ ! અધસ્તનાઃ આચાર્યઃ મનોવચઃકાયયોગિનઃ મજનયા કદાચિદ્ વધ્નન્તિ, કદાચિન્ન વધ્નન્તિ, યે તાવત્ મનોવચઃકાય-વે અજ્ઞાની જીવ મજના સે કરતે હિં-અર્થાત્ આયુકર્મ કે વંધકાલ મેં આયુ કા વંધ કરતે હિં ઓર ભિન્ન કાલમેં ઉસકા વંધ નહીં કરતે હિં ।

અવ યોગવિપયકચંધદ્વાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમ પ્રશ્ન સે પૂછતે હિં કિ-‘(નાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં મણજોગી વંધં ? વયજોગી વંધં ? કાયજોગી વંધં ? અયોગી વંધં ?) હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ યોગદ્વાર કી અપેક્ષા વિચાર કરને પર કૌનસા જીવ કરતા હૈ-‘કયા મનોયોગ વાલા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ ? યા વચનયોગવાલા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ ? યા જો કાયજોગવાલા જીવ હૈ વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ ? યા જિસકે ઇન ત્રીનોં યોગોં મેં સે એક ભી યોગ નહીં હૈ એસા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હિં કિ-‘(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (હેઢિલ્લા તિન્નિ મયણાણ) આદિ કે ત્રીનોં

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે-‘(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (બાઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ વંધંતિ) મતિ અજ્ઞાની આદિ એવો આયુકર્મ સિવાયના સાતે કમોનો વંધ બાંધે છે. પરંતુ (આર્ય મયણાણ) અજ્ઞાની એવો આયુકર્મનો વંધ વિકલ્પે કરે છે. તેઓ આયુકર્મના વંધકાળે આયુનો વંધ કરે છે, અધકાળે તેઓ તેનો વંધ કરતા નથી.

હવે યોગવિપયકવંધદ્વારની અપેક્ષાએ ગૌતમસ્વામી મહાવીરપ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે-‘(નાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં મણજોગી વંધં ? વયજોગી વંધં ? કાયજોગી વંધં ? અયોગી વંધં ?) યોગદ્વારની દૃષ્ટિએ વિચાર કરતા કયા યોગવાળો એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? શું મનોયોગવાળો એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? કે વચનયોગવાળો એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? કે કાયયોગવાળો એવ બાંધે છે ? કે અયોગી એવ (આ ત્રણે યોગમાંથી એક પણ યોગ ન હોય એવો એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે-‘(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (હેઢિલ્લા તિન્નિ મયણાણ) પહેલા ત્રણ યોગવાળા એવો-મનયોગી, વચન-

અથ અજ્ઞાનવિપયકવંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં જં મંતે કમ્મં કિં મહંઅન્નાણિ વંધહં સુયઅન્નાણી વંધહં ?’ હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કમ્મં કિં મત્યજ્ઞાની વંધ્નાતિ ? કિમ્ શ્રુતાજ્ઞાની વંધ્નાતિ ? કિં વિભજ્ઞજ્ઞાની વંધ્નાતિ ? । મગવાનાહ — ગોયમા ! આઝગવજ્ઞાઓ સત્તવિ વંધંતિ ’ હે ગૌતમ ! આયુષ્કવર્ત્તાઃ સત્તાઽપિ કર્મપ્રકૃતોઃ મત્યજ્ઞાનિપ્રમૃતયો વંધન્તિ । ‘આઝગં મયણાપ’ આયુષ્કં મજનયા કદાચિદ્ આયુષ્કવંધનકાલે વંધન્તિ, કદાચિત્ તદ્ભિન્નકાલે આયુર્ન વંધન્તીત્યર્થઃ ।

હૈ તપ તો વહ શાતાવેદનીય કર્મ કા વંધ કરતા હી હૈ ઓર જબ વહી ચૌદહવે ગુણસ્થાનમેં વિરાજમાન હો જાતા હૈ યા સિદ્ધ બનજાતા હૈ તખં ઉસકે વેદનીય કર્મ કાં વંધ નહીં હોતા હૈ ।

અવ અજ્ઞાનવિપયકવંધદ્વાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રશ્ન સે પૂછતે હૈં કિ—(જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કમ્મં કિં મહં અન્નાણી વંધહં, સુય અન્નાણી વંધહં, વિભંગ અન્નાણી વંધહં) હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ જબ અજ્ઞાન કી અપેક્ષા લેકર વિચાર કરતે હૈં તો કૌન સાં અજ્ઞાની જીવ વાંધતા હૈં—વયા મતિ અજ્ઞાની વાંધતા હૈ ? યા શ્રુત અજ્ઞાની વાંધતાં હૈ ? યા વિભંગજ્ઞાની—જિસકા અવધિજ્ઞાન મિધ્યાત્વ કે સંબંધ સે વિપરીત બના હુઆ હૈ—એસા જીવ વાંધતા હૈ ? ઉસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમે સે કહતે હૈં કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (આઝગવજ્ઞાઓ સત્ત વિ વંધંતિ) આયુ કો છોડકર વાકી કી સાતોં હી કર્મપ્રકૃતિયોં કો મત્યજ્ઞાની આદિ જીવ વાંધતે હૈં । (આઝગં મયણાપ) આયુકર્મ કા વંધ

છે કે જ્યારે કેવળજ્ઞાની જીવ તેરમાં શુભસ્થાને રહે છે, ત્યારે તો તે શાતાવેદનીય કર્મને બાંધ કરે જ છે, પણ જ્યારે તે ચૌદમાં શુભસ્થાને વિરાજમાન થઈ જાય છે અથવા તો સિદ્ધિપદને પ્રાપ્ત કરી લે છે, ત્યારે તે વેદનીય કર્મ બાંધતો નથી.

હવે અજ્ઞાનવિપયકવંધદ્વારની અપેક્ષાએ ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કમ્મં કિં મહં અન્નાણી વંધહં, સુય અન્નાણી વંધહં, વિભંગ અન્નાણી વંધહં ?) હે મહન્ત ! અજ્ઞાનીની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો કયો અજ્ઞાની જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? શું મતિ અજ્ઞાની બાંધે છે ? કે શ્રુત અજ્ઞાની બાંધે છે ? કે વિભંગ અજ્ઞાની બાંધે છે ? (જેનું અવધિજ્ઞાન મિધ્યાત્વના સંબંધથી વિપરીત બનેલું હોય એવા જીવને વિભંગ અજ્ઞાની કહે છે.)

અથ યોગનિપયકવંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે કમ્મં
કિં મણજોગી વંધઃ? વયજોગી વંધઃ? કાયજોગી વંધઃ? અયોગી વંધઃ? હે ભદ્રન્ત !
જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિમ્ મનોયોગી વધ્નાતિ ? કિં વચોયોગી વધ્નાતિ ? કિં કાય-
યોગી વધ્નાતિ ? કિં વા અયોગો વધ્નાતિ ? । મગવાનાહ-‘ ગોયમા ! હેટ્ઠિલ્લા
તિન્નિ મયણાણ ’ હે ગૌતમ ! અથસ્તનાઃ આદ્યાસ્રયઃ મનોવચઃકાયયોગિનઃ
મજનયા કદાચિદ્ વધ્નન્તિ, કદાચિન્ન વધ્નન્તિ, યે તાવત્ મનોવચઃકાય-
વે પ્રજ્ઞાની જીવ મજના સે કરતે હે-અર્થાત્ આયુકર્મ કે વંધકાલ મેં
આયુ કા વંધ કરતે હેં ઓર ભિન્ન કાલમેં ઉસકા વંધ નહીં કરતે હેં ।

અથ યોગનિપયકવંધદ્વાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમ પ્રશ્ન સે પૂછતે
હેં કિ-‘(જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં મણજોગી વંધઃ? વયજોગી
વંધઃ? કાયજોગી વંધઃ? અયોગી વંધઃ?) હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય
કર્મ કા વંધ યોગદ્વાર કી અપેક્ષા વિચાર કરને પર કૌનસા જીવ કરતા
હે-અથા મનોયોગ ચાલા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે? યા
વચનયોગચાલા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે? યા જો
કાયજોગચાલા જીવ હે વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે? યા
જિસકે ઇન તીનોં યોગોં મેં સે એક મી યોગ નહીં હે એસા જીવ જ્ઞાના-
વરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે
હેં કિ-(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (હેટ્ઠિલ્લા તિન્નિ મયણાણ) આદિ કે તીનોં

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે-(ગોયમા !) હે ગૌતમ !
(જાઘગવજ્જાઓ સત્ત વિ વંધંતિ) મતિ અજ્ઞાની આદિ જીવો આયુકર્મ
શિવાયના સાતે કમોનો બંધ બાંધે છે. પરંતુ (આજ્ઞં મયણાણ) અજ્ઞાની
જીવો આયુકર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે. તેઓ આયુકર્મના બંધકાળે આયુનો
બંધ કરે છે. અધકાળે તેઓ તેનો બંધ કરતા નથી.

હવે યોગનિપયકવંધદ્વારની અપેક્ષાએ ગૌતમસ્વામી મહાવીરપ્રશ્નને એવો
પ્રશ્ન પૂછે છે કે-(જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં મણજોગી વંધઃ? વયજોગી
વંધઃ? કાયજોગી વંધઃ? અયોગી વંધઃ?) યોગદ્વારની દૃષ્ટિએ વિચાર કરતા
કયા યોગવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે? શું મનોયોગવાળો જીવ
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે? કે વચનયોગવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે
છે? કે કાયયોગવાળો જીવ બાંધે છે? કે અયોગી જીવ (આ ત્રણે યોગબાંધી
એક પણ યોગ ન હોય એવો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે-(ગોયમા !) હે ગૌતમ !
(હેટ્ઠિલ્લા તિન્નિ મયણાણ) પહેલા ત્રણ યોગવાળા જીવો-મનયોગી, વચન-

યોગિનઃ ઉપરાન્તમોદગુણસ્થાનકાર્તિનઃ ધોણમોદગુણસ્થાનસ્વર્તિનઃ સયોગિ-
કેવલિનશ્ચ વર્તન્તે તે જ્ઞાનાવરણં ન વધન્તિ, તદન્યે તુ વધન્ત્યેવ, અનો ' ભજ-
નયા ' ઇત્યુક્તમ્ । 'અનોગી ન વંધઈ' 'અયોગી અયોગિકેવલી, સિદ્ધશ્ચ ન વધ્નાતિ,
' एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्तवि ' एवं જ્ઞાનાવરણવદેવ વેદનીયવર્જાઃ સપાપિ
કર્મપ્રકૃતયો વેદિતવ્યાઃ, તથાહિ--વેદનીયવર્જાનિ દર્શનાવરણીયાદિ કર્માણિ
મનોવચઃ કાયયોગિનઃ કદાચિદ્ વધન્તિ, કદાચિન્ન વધન્તિ, અયોગી ન વધ્ના-

હી યોગવાલે-મન વચન ઓર કાય યોગવાલે જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ
કા વંધ ભજના સે કરતે હૈ-અર્થાત્ કદાચિત્ વે કરતે બી હૈ ઓર
કદાચિત્ વે નહીં બી કરતે હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા એસા હૈ કિ જો મન,
વચન, કાય યોગવાલે જીવ જયતક ગ્યારહવે, ચારહવે ઓર તેરહવે ગુણ-
સ્થાન મેં વર્તમાન રહતે હૈ વે વહાં પર જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં
કરતે હૈ । ઇન ગુણસ્થાનોં સે ભિન્ન નીચે કે ગુણસ્થાનોં મેં જો જીવ રહતે
હૈ વે અવશ્ય ૨ હી જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતે હૈ । ઇસી બાત
કો સૂચિત કરને કે લિયે સૂત્રકારને યહાં ભજના પદ કા પ્રયોગ કિયા
હૈ । અયોગિ કેવલી ઓર સિદ્ધ જીવ ઇન યોગોં સે રહિત હો જાને કે
કારણ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈ । (एवं वेयणिज्जवज्जा-
ओ सत्त वि) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કી તરહ સે હી વેદનીયવર્જ સાતોં હી
કર્મપ્રકૃતિયોં કે વિષય મેં બી જાનના ચાહિયે-તથા ચ-વેદનીય કર્મ
કો છોડકર દર્શનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોં કા વંધ યે મન, વચન,
કાયયોગવાલે જીવ કબી કરતે હૈ ઓર કબી નહીં બી કરતે હૈ । તથા

યોગી અને કાયયોગી જીવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે એટલે
કે ક્યારેક તેઓ તેનો બંધ કરે છે અને ક્યારેક નથી કરતા. આ કથનનો
ભાવ નીચે પ્રમાણે છે-મન, વચન અને કાયયોગવાળાં જીવો ત્યાં સુધી
અગિયારમાં, બારમાં અને તેરમાં ગુણસ્થાનોમાં રહેલા હોય છે, ત્યાં સુધી તેઓ
જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી, પણ તે ગુણસ્થાનો કરતાં નીચિના ગુણસ્થાનોમાં
રહેલા જ્ઞાનાવરણીય કર્મ અવશ્ય બાંધે છે. એ વાત પ્રકટ કરવાને માટે
" વિકલ્પે બાંધે છે, " એવું કથન કર્યું છે. અયોગી કેવલી અને સિદ્ધ જીવ
આ યોગોથી રહિત થઈ જવાને કારણે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધતા નથી.

(एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त वि) વેદનીય કર્મ સિવાયના સાતે કર્મોના
બંધ વિષેનું કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કથન પ્રમાણે જ સમજવું. એટલે કે
મન, વચન અને કાયયોગવાળા જીવો વેદનીય કર્મ સિવાયના સાતે કર્મોના
બંધ ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક કરતા નથી, તથા અયોગી જીવો આ સાતે

તિની ભાવઃ । 'વેપણિજ્જં હેટ્ઠિહા વંધંતિ' વેદનીયં કર્મ અધસ્તનાઃ આઘાત્તયો મનોવચઃ કાયયોગિનઃ વધ્નન્તિ, સયોગાનાં વેદનીયવન્ધકત્વાત્, 'અજોગી ન વંધઈ' અયોગી વેદનીયં કર્મ ન વધ્નાતિ, અયોગિનઃ સર્વકર્માવન્ધકત્વાત્ ।
અથ ઉપયોગવિપયકવંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—'જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે કમ્મં કિં સાગારોવઉત્તે વંધઈ' હે ભગવન્ ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિમ્ સાકારોપયુક્તો વધ્નાતિ ?
'અજાગારોવઉત્તે વંધઈ ?' અનાકારોપયુક્તો વા વધ્નાતિ ? ભગવાનાહ—'ગોયમા !

અયોગી જીવ હન કર્મપ્રકૃતિયોં કા વંધ નહીં કરતા હૈ (વેપણિજ્જં હેટ્ઠિહા વંધંતિ) વેદનીય કર્મ કા વંધ તીનોં યોગ ચાલે કરતે હૈં । કયોં કિ તીનોં યોગચાલોં કો વેદનીય કર્મ કા વંધક માના ગયા હૈં । (અજાગી ન વંધઈ) અયોગી જીવ વેદનીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતા હૈ । કયોં કિ અયોગી જીવ કે કિસી ઓ કર્મ કા વંધ નહીં હોતા હૈ ।

અથ સૂત્રકાર ઉપયોગ વિપયકવંધદ્વારકો આશ્રિત કરકે જ્ઞાનાવરણીય આદિકર્મોંકે વાંધનેકે વિપયમેં કથન કરતે હૈં—હસમેં ગૌતમપ્રશ્નસે એસા પૂછતે હૈં કિ—(જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં સાગારોવઉત્તે વંધઈ ? અજાગારોવઉત્તે વંધઈ ?) હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કૌન સે ઉપયોગ ચાલા જીવ કરતા હૈ ?—કયા જો સાકારોપયોગ સે યુક્ત હોતા હૈ અર્થાત્ જ્ઞાનોપયોગચાલા હોના હૈ—વહ કરતા હૈ ? યા અનાકારોપયોગચાલા હોતા હૈ—અર્થાત્ દર્શનોપયોગચાલા હોતા હૈ—વહ કરતા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ—(ગોયમા) હે ગૌતમ !

કર્મપ્રકૃતિયોના બંધ કદી પણ કરતા નથી. (વેપણિજ્જં હેટ્ઠિહા વંધંતિ) વેદનીય કર્મનો બંધ ત્રણે યોગવાળા જીવો કરે છે, કારણ કે ત્રણે યોગવાળા જીવોને વેદનીય કર્મના બંધક માનવામાં આવેલા છે, (અજોગી ન વંધઈ) પણ અયોગી જીવ વેદનીય કર્મનો બંધ કરતો નથી, કારણ કે અયોગી જીવને કોઈ પણ કર્મનો બંધ થતો નથી.

હવે ગૌતમ સ્વામી ઉપયોગ દ્વારને અનુલક્ષીને જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના બંધના વિષયમાં મહાવીર પ્રશ્નને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—(જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં સાગારોવઉત્તે વંધઈ ? અજાગારોવઉત્તે વંધઈ ?) હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કયા પ્રકારના ઉપયોગવાળો જીવ કરે છે ? શું સાકાર ઉપયોગવાળો જીવ (જ્ઞાનોપયોગવાળો જીવ દર્શનોપયોગવાળો જીવ) તેનો બંધ કરે છે ?

અટ્ટસુ વિ મયણાણ' હે ગૌતમ ! અટ્ટસ્યપિ કર્મપ્રકૃતિષુ ભજનયા ચન્થો મચ્ચતિ, તથાદિ-અટ્ટાવપિ કર્મપ્રકૃતીઃ જ્ઞાનાવરણીયાદિપ્રકૃતીઃ, સાકારોપયુક્તઃ અનાકારોપ-યુક્તો વા ભજનયા-કદાચિદ્ વચ્ચનાતિ, કદાચિન્ન વચ્ચનાતિ, સાકારાનાકારો સયોગાનામ્ અયોગાનાં ચ ઉપયોગી સ્થાતામ્, તત્રોપયોગદ્રવ્યેઽપિ સયોગા જ્ઞાનાવરણાદિકર્મપ્રકૃતીઃ યથાયથં વચ્ચન્તિ, અયોગાસ્તુ ન વચ્ચન્તિ, અતો ' ભજનયા ' ઇત્યુક્તમ્ ।

અથ આહારવિષયકવંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—' જાણાવરણિજ્જં જં મંતે ! કર્મં કિં આહારણ વંધઈ ? ' હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણોયં કર્મં કિમ્ આહારકો વચ્ચનાતિ ? ' અણાહારણ વંધઈ ' કિમ્ અનાહારકો વચ્ચનાતિ ? મગધાનાહ—' ગોયમા ! દોવિ મયણાણ' હે ગૌતમ ! દ્વો અપિ આહારકઃ, અનાહારકથ્ચ ભજન- (અટ્ટસુ વિ મયણાણ) આઠોં ભી કર્મપ્રકૃતિયોં કે વિષય મેં યહાં ભજના સે વંધ કરના કહા ગયા હૈ—ઇસ વિષય મેં ખુલાશા ઇસ પ્રકાર સે હૈ—સયોગ ઓર અયોગ ઇન દોનોં કે સાકાર ઓર અનાકાર દોનોં પ્રકાર કા ઉપયોગ હોતા હૈ । સયોગ અર્થાત્ યોગસહિત જીવ ઇન દોનોં ભી ઉપયોગોં મેં જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોં કા યથાયોગ્ય વંધ કરતે હૈ । ઓર જો યોગ સે રહિત જીવ હૈં વે ઇન જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોં કા વંધ નહીં કરતે હૈં ।

અથ આહારવિષયકવંધદ્વાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમપ્રશ્નસે પૂછતે હૈં કિં (જાણાવરણિજ્જં જં મંતે ! કર્મં કિં આહારણ વંધઈ ?) હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા આહારક જીવ વાંધતે હૈં યા (અણાહારણ વંધઈ) અનાહારક જીવ વાંધતે હૈં ? ઇસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે

ઉત્તર—(ગોયમા ! અટ્ટસુ વિ મયણાણ) હે ગૌતમ ! તે બન્ને પ્રકારના જીવો આઠે કર્મોનો બંધ વિકલ્પે કરે છે—કયારેક કરે છે અને કયારેક કરતા નથી આ વિષયમાં નીચે પ્રમણે સ્પષ્ટીકરણ કરી શકાય—સયોગ અને અયોગ એ બન્નેના સાકાર અને અનાકાર એ બન્ને પ્રકારનો ઉપયોગ હોય છે. સંયોગ જીવ એટલે કે યોગયુક્ત જીવ એ બન્ને ઉપયોગોમાં જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠે કર્મપ્રકૃતિયોનો યથાયોગ્ય બંધ કરે છે, પણ જે જીવો યોગથી રહિત હોય છે, તેઓ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ કરતા નથી.

હવે આહારક દ્વારે અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(જાણાવરણિજ્જં જં મંતે ! કર્મં કિં આહારણ વંધઈ ? અણાહારણ વંધઈ ?) હે મહન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ શું આહારક જીવ બાંધે છે ? કે અનાહારક જીવ બાંધે છે ?

નપા કદાચિદ્ વધ્નીતઃ, કદાચિન્ન વધ્નીતઃ, આહારકો વીતરાગોઽપિ ભવતિ, નાસી જ્ઞાનાવરણં વધ્નાતિ, સરાગસ્તુ આહારકો વધ્નાતિ, इति भजनया आहारको वध्नाति । तथा अनाहारकः समुद्धातगतकेवली, विग्रहगत्याऽऽपन्नश्च भवेत्, तत्र समुद्धातगतकेवली अनाहारको न वध्नाति, विग्रहगत्यापन्नस्तु अनाहारको वध्नाति, इति भजनया अनाहारको वध्नाति, । ' एवं वेद्यजिज्जाऽऽउगवज्जाणं छण्हं ' एवं જ્ઞાનાવરણવદેવ વેદનીયાયુક્તવર્જિનાં પળ્લામપિ કર્મપ્રકૃતીનામ્ આલપકાઃ સ્વયમૂદ્ધનીયાઃ, તથાહિ-વેદનીયાયુક્તવર્જિતાનિ દર્શનાવરણાદિકર્માણ્યપિ

हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (दो वि भयणाए) आहारक और अनाहारक जीव भजना से ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करते हैं । यदि आहारक जीव चीतराग है तो वह ज्ञानावरणीय कर्म का बंध नहीं करता है, और यदि वह सराग है तो अवश्य ही ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करता है । इसलिये भजना से आहारक जीव ज्ञानावरणीय कर्म का बंध करता है ऐसा कहा है । जिस समय केवली भगवान् समुद्धान करते हैं उस समय वे, तथा विग्रहगति में रहा हुआ जीव ये अनाहारक होते हैं । अनाहारक समुद्धातगत केवली ज्ञानावरणकर्म का बंध नहीं करता है और विग्रहगतिवाला अनाहारक जीव ज्ञानावरणकर्म का बंध करता है-इसलिये भजना से अनाहारक जीव ज्ञानावरण कर्म का बंध करता है ऐसा कहा है । (एवं वेद्यजिज्जा आउगवज्जाणं छण्हं) જ્ઞાનાવરણકર્મ કી તરહ સે હી વેદનીય ઓર આયુક્ત કર્મ કો છોડકાર

તેને ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-(ગોયમા ! દો વિ ભયનાએ) આહારક અને અનાહારક એ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ વિકલ્પે કરે છે એટલે કે ક્યારેક કરે છે અને ક્યારેક કરતા નથી. જો આહારક એવ વીતરાગ હોય તો તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતો નથી, પણ જો તે સરાગ હોય તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ અવશ્ય કરે છે. તેથી જ એવું કહ્યું છે કે " આહારક એવ વિકલ્પે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. " જે સમયે કેવલી ભગવાન સમુદ્ધાત કરે છે ત્યારે તેઓ અનાહારક હોય છે, અને વિગ્રહ ગતિમાં રહેલા એવ અનાહારક હોય છે. અનાહારક સમુદ્ધાતગત કેવલી ભગવાન જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી, પણ વિગ્રહ ગતિરાજો અનાહારક એવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. તેથી જ એવું કહ્યું છે કે " અનાહારક વિકલ્પે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે. (एवं वेद्यजिज्जा आउगवज्जाणं छण्हं) આહારક અને અનાહારક એવાના વેદનીય અને આયુ-

અદ્ભુત્ત્વિ ભયણા' હે ગૌતમ ! અદ્ભુત્ત્વિ કર્મપ્રકૃતિષુ ભજનયા વન્તો મવન્તિ, તથાહિ-અદ્ભુત્ત્વિ કર્મપ્રકૃતીઃ જ્ઞાનાવરણીયાદિપ્રકૃતીઃ, સાકારોપયુક્તઃ અનાકારોપયુક્તો વા ભજનયા-કદાચિદ્ વન્નાતિ, કદાનિન્ન વન્નાતિ, સાકારજ્ઞાકારૌ સયોગાનામ્ અયોગાનાં ચ ઉપયોગી સ્થાતામ્ . તત્રોપયોગદ્વયેઽપિ સયોગા જ્ઞાનાવરણાદિકર્મપ્રકૃતીઃ યથાપયં વન્નન્તિ, અયોગાસ્તુ ન વન્નન્તિ, અતો ' ભજનયા ' इत्युक्तम् ।

અથ આહારવિષયકવંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૂચ્છતિ- ' જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં આહારણ વંધઈ ? ' હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મં કિમ્ આહારકો વન્નાતિ ? ' અણાહારણ વંધઈ ' કિમ્ અનાહારકો વન્નાતિ ? મગધનાહ- ' ગોયમા ! દોવિ ભયણા' હે ગૌતમ ! દ્વો અપિ આહારકઃ, અનાહારકથ મન- (અદ્ભુત્ત્વિ ભયણા) આઠોં ભી કર્મપ્રકૃતિયોં કે વિષય મેં યહાં ભજના સે વંધ કરના કહા ગયા હૈ-ઇસ વિષય મેં સુલાશા ઇસ પ્રકાર સે હૈ-સયોગ ઓર અયોગ ઇન દોનોં કે સાકાર ઓર અનાકાર દોનોં પ્રકાર કા ઉપયોગ હોતા હૈ । સયોગ અર્થાત્ યોગસહિત જીવ ઇન દોનોં ભી ઉપયોગોં મેં જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોં કા યથાયોગ્ય વંધ કરતે હૈં । ઓર જો યોગ સે રહિત જીવ હૈં વે ઇન જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોં કા વંધ નહીં કરતે હૈં ।

અથ આહારવિષયકવંધકદ્વાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમપ્રશ્નસે પૂછતે હૈં કિં (જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં આહારણ વંધઈ ?) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કયા આહારક જીવ વાંધતે હૈં વા (અણાહારણ વંધઈ) અનાહારક જીવ વાંધતે હૈં ? ઇસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે

ઉત્તર-(ગોયમા ! અદ્ભુત્ત્વિ ભયણા) હે ગૌતમ ! તે બન્ને પ્રકારના જીવો આઠે કબોના બંધ વિકલ્પે કરે છે-કયારેક કરે છે અને કયારેક કરતા નથી આ વિષયમાં નીચે પ્રમજ્ઞુ સ્પષ્ટીકરણ કરી શકાય-સયોગ અને અયોગ એ બન્નેના સાકાર અને અનાકાર એ બન્ને પ્રકારના ઉપયોગ હોય છે. સયોગ જીવ એટલે કે યોગયુક્ત જીવ એ બન્ને ઉપયોગોમાં જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠે કર્મપ્રકૃતિયોના યથાયોગ્ય બંધ કરે છે, પણ જે જીવો યોગથી રહિત હોય છે, તેઓ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપ્રકૃતિયોના બંધ કરતા નથી.

હવે આહારક દ્વારને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવા પ્રશ્ન પૂછે છે કે- (જાણાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કર્મં કિં આહારણ વંધઈ ? અણાહારણ વંધઈ ?) હે મદન્ત ! જ્ઞાનાવરણીય કર્મ શું આહારક જીવ બાંધે છે ? કે અનાહારક જીવ બાંધે છે ?

અથ સૂક્ષ્મવિષયકવંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં જં મંતે કર્મ્મં કિં સુદ્રુમે, વંધઈ વાયરે વંધઈ ?’ હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિં સૂક્ષ્મઃ વધ્નાતિ વાદરો વા વધ્નાતિ ? ‘જો સુદ્રુમ-જો વાયરે વંધઈ ?’ નો સૂક્ષ્મ-નો વાદરો વા કિં વધ્નાતિ ? મગયાનાહ-‘ગોયમા ! સુદ્રુમે વંધઈ’ હે ગૌતમ ! સૂક્ષ્મો વધ્નાતિ, ‘વાયરે મયળાણ’ વાદરો મજનયા કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ત વધ્નાતિ, ધીતરાગવાદરાણાં જ્ઞાનાવરણાવન્ધકત્વાત્, સરાગવાદરાણાં ચ તદ્વન્ધ-

હારક જીવ-સમુદ્ધાનગત કેવલી ઓર વિગ્રહગતિ વાલે જીવ-આયુકર્મ કા વંધ નહોં કરતે હેં. કયોં કિં ઇસ અવસ્થા મેં વે આયુ કર્મ કે અવન્ધક માને ગયે હેં.

અથ સૂક્ષ્મવિષયકવંધદ્વારકા આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રશ્નસે પૂછતે હેં. કિં-(જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કર્મ્મં કિં સુદ્રુમે વંધઈ, વાયરે વંધઈ ?) હે ભદ્રન્ત ! સૂક્ષ્મદ્વાર ધી અપેક્ષા વિચાર કરનેપર કૌનસા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હેં ? કયા જો સૂક્ષ્મનામકર્મ કે ઉદયવાલા જીવ હેં વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હેં ? યા જો વાદર નામ કર્મ કે ઉદયવાલા જીવ હેં, વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હેં ? (જો સુદ્રુમ જો વાયરે વંધઈ) જો જીવ ન સૂક્ષ્મ હેં ઓર ન વાદર હેં વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હેં ? ઇસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હેં (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સુદ્રુમે વંધઈ) સૂક્ષ્મ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હેં (વાયરે મયળાણ) વાદર જીવ મજના સે

હારણ જો વંધઈ) અનાહારકે જીવ ઓટલે કે સમુદ્ધાનગત કેવલી અને વિગ્રહ ગતિવાળા જીવો. આયુકર્મનો બંધ કરતા નથી, કારણ કે આ અવસ્થામાં તેમને આયુકર્મના અવન્ધક માનવામાં આવેલા છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી સૂક્ષ્મદ્વારને અનુલક્ષીને મહાત્મીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (જ્ઞાનાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કર્મ્મં કિં સુદ્રુમે વંધઈ ?) હે ભદ્રન્ત ! સૂક્ષ્મદ્વારની અપેક્ષાએ વિચાર કરતા કયો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? શું સૂક્ષ્મનામકર્મના ઉદયવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? કે “વાયરે વંધઈ ?” બાદર (સ્થૂળ) નામકર્મના ઉદયવાળો જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? અથવા (જો સુદ્રુમ જો વાયરે વંધઈ) જે જીવ ન સૂક્ષ્મ અને ન બાદર હોય છે, તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ?

ઉત્તર-(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સુદ્રુમે વંધઈ) સૂક્ષ્મ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરે છે, (વાયરે મયળાણ) બાદર (સ્થૂળ) જીવ તે કર્મનો

આહારક; અનાહારક્ય કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાનિન્ન વધ્નાતિ 'વેયણિજ્જં આહારણ વંધઈ' વેદનીયં કર્મ આહારકો વધ્નાતિ, અયોગિર્જાનાં સર્વેણાં વેદનીયકર્મ-વન્ધકત્વાત્, 'અણાહારણ ભયણાણ' અનાહારકો મજનયા વિગ્રહગત્યાપન્ન; સમુદ્ધાતગતકેવલી ચ વેદનીયં વધ્નાતિ, અયોગી, સિદ્ધશ્ચ ન વધ્નાતીતિ માયઃ । 'આઉણ આહારણ ભયણાણ' આયુષ્કં કર્મ આહારકો મજનયા, આયુર્વન્ધકાલે ઇવાયુષ્કવન્ધકત્વાત્, તદ્ભિન્નકાલે ચ તદ્વન્ધકત્વાત્, 'અણાહારણ ણ વંધઈ' અનાહારકો ન વધ્નાતિ, સમુદ્ધાતગતકેવલિનાં વિગ્રહગતિગતાનાં ચ આયુષ્કા-વન્ધકત્વાત્ ।

દર્શનાવરણ આદિ છ કર્મપ્રકૃતિયોં કે આલાપક-હૃદય-અપને આપ વિચાર લેના યાદિયે જૈસે-વેદનીય ઓર આયુષ્ક કો છોડકર દર્શનાવરણ આદિ કર્મોં કો ઓ આહારક જીવ ઓર અનાહારક જીવ કદાચિત્ વાંધતા હૈ ઓર કદાચિત્ નહીં વાંધતા હૈ । (વેયણિજ્જં આહારણ વંધઈ) વેદનીય કર્મ કો આહારક જીવ વાંધતા હૈ । ક્યોં કિ અયોગી કો છોડકર સવ હી જીવ વેદનીય કર્મકે વંધક માને ગયે હૈ । (અણાહારણ ભયણાણ) અનાહારક જીવ મજના સે વેદનીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ-અર્થાત્ વિગ્રહગતિવાલા અનાહારક જીવ ઓર સમુદ્ધાતગત કેવલી તો વેદનીય કર્મ કા વંધ કરતે હૈ ઓર અયોગી જીવ તથા સિદ્ધપરમાત્મા યે વેદનીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈ । (આઉણ આહારણ ભયણાણ) આહારક જીવ આયુષ્કર્મ કા વંધ ઉસકે વંધ હોને કે સમય મેં હી કરતા હૈ ઓર ભિન્ન સમય મેં નહીં કરતા હૈ । (અણાહારણ ણ વંધઈ) અના-

કર્મ સિવાયના છ કર્મખંધોનું કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કથન પ્રમાણે જ સમજવું. એટલે કે આયુષ્કર્મ સિવાયના છ કર્મોના બંધ આહારક અને અનાહારક જીવો વિકલ્પે બાંધે છે-બાંધે છે પણ ખરું અને નથી પણ બાંધતા. (વેયણિજ્જં આહારણ વંધઈ) વેદનીય કર્મ આહારક જીવ બાંધે છે. આનું કારણ એ છે કે અયોગી સિવાયના સઘળા જીવોને વેદનીય કર્મના બંધક માનવામાં આવેલા છે. (અણાહારણ ભયણાણ) અનાહારક જીવ વેદનીય કર્મ વિકલ્પે બાંધે છે-આ કથનનો ભાવ નીચે પ્રમાણે છે—

વિગ્રહ ગતિવાળો અનાહારક જીવ અને સમુદ્ધાતગત કેવલી તો વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે, પરંતુ અયોગી જીવ તથા સિદ્ધ પરમાત્મા વેદનીય કર્મનો બંધ કરતા નથી. (આઉણ આહારણ ભયણાણ) આહારક જીવ આયુષ્કર્મના બંધ વિકલ્પે કરે છે-એટલે કે આયુષ્કર્મના બંધકાળે તે આયુષ્કર્મનો બંધ કરે છે, પણ અબંધકાળે તેઓ આયુષ્કર્મનો બંધ કરતા નથી. (અણા-

અથ સૂક્ષ્મવિપયકબંધદ્વારમાશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૂછતિ—‘જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે કમ્મં કિં સુદ્ધમે, વંધઈ વાયરે વંધઈ ?’ હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ કિં સૂક્ષ્મઃ વધ્નાતિ વાદરો વા વધ્નાતિ ? ‘જો સુદ્ધમ-જો વાયરે વંધઈ ?’ નો સૂક્ષ્મ-નો વાદરો વા કિં વધ્નાતિ ? મગવાનાહ—‘ગોયમા ! સુદ્ધમે વંધઈ’ હે ગૌતમ ! સૂક્ષ્મો વધ્નાતિ, ‘વાયરે મયણાણ’ વાદરો મજનયા કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાનિ, વીતરાગવાદરાણાં જ્ઞાનાવરણાવન્ધકત્વાત્, સરાગવાદરાણાં ચ તદવન્ધ-

દારક જીવ-સમુદ્ધાનગત કેવલી ઓર ચિગ્રહગતિ વાળે જીવ-આયુર્કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હિં । કયોં કિં ઇસ અવસ્થા મેં વે આયુ કર્મ કે અવન્ધક માને ગયે હિં ।

અથ સૂક્ષ્મવિપયકબંધદ્વારકા આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રશ્નસે પૂછતે હિં-કિં-(જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં સુદ્ધમે વંધઈ, વાયરે વંધઈ ?) હે ભદ્રન્ત ! સૂક્ષ્મદ્વાર ધી અપેક્ષા વિચાર કરનેપર કૌનસા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે ? કયા જો સૂક્ષ્મનામકર્મ કે ઉદયવાલા જીવ હે વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે ? યા જો વાદર નામ કર્મ કે ઉદયવાલા જીવ હે, વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હિં ? (જો સુદ્ધમ જો વાયરે વંધઈ) જો જીવ ન સૂક્ષ્મ હે ઓર ન વાદર હે વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હે ? ઇસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હિં (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સુદ્ધમે વંધઈ) સૂક્ષ્મ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મકા વંધ કરતા હે (વાયરે મયણાણ) વાદર જીવ મજના સે

દારણ જો વંધઈ) અનાહારક ઇવ એટલે કે સમુદ્ધાનગત કેવલી અને વિશદ ગતિવાળા ઇવે । અયુર્કર્મના બંધ કરતા નથી, કારણ કે આ અવસ્થામાં તેમને આયુર્કર્મના અવન્ધક માનવામાં આવેલા છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી સૂક્ષ્મદ્વારને અનુલક્ષીને મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (જ્ઞાનાવરણિજ્જં ણં મંતે ! કમ્મં કિં સુદ્ધમે વંધઈ ?) હે ભદ્રન્ત ! સૂક્ષ્મદ્વારની અપેક્ષાએ વિચાર કરતા કયો ઇવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? શું સૂક્ષ્મનામકર્મના ઉદયવાળો ઇવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? કે “વાયરે વંધઈ ?” બાદર (સ્થૂળ) નામકર્મના ઉદયવાળો ઇવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ? અથવા (જો સુદ્ધમ જો વાયરે વંધઈ) જે ઇવ ન સૂક્ષ્મ અને ન બાદર હોય છે, તેઓ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ બાંધે છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સુદ્ધમે વંધઈ) સૂક્ષ્મ ઇવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મના બંધ કરે છે, (વાયરે મયણાણ) બાદર (સ્થૂળ) ઇવ તે કર્મના

ફત્વાત્, અર્થો 'ભજનયા' इत्युक्तम्, किन्तु 'नोगुहम्-नोवायरे न बंध' नोसूक्ष्म-नोवायोरो हि सिद्धो न बध्नाति, सिद्धस्य बन्धकत्वाभावात्, 'एवं आउगवज्जाओ सत्तवि' एवं ज्ञानावरणवदेव आयुष्कवर्जाः सप्तापि कर्ममकृतयो वेदितव्याः, तथाहि आयुष्कवर्जितानि दर्शनावरणादिकर्माण्यपि सूक्ष्मो बध्नाति, वायोरो भजनया कदाचिद् बध्नाति, कदाचिन्न बध्नाति, नोसूक्ष्म-नोवायोस्तु सिद्धो न बध्नात्येवेत्यर्थः । 'आउए सुहुमे, वायरे भयणाए' आयुष्कं सूक्ष्मः वादरथ भजनया कदाचिद् बध्नाति, कदाचिन्न बध्नाति, आयुर्वन्धकाले आयुर्व-

જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતા હૈ અર્થાત્ જો વાદર જીવ વીતરાગ હૈ વે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતે હૈ-ઑર જો વાદર જીવ સરાગ હૈ વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ કરતે હૈ । (જો સુહુમ જો વાયરે ન બંધઈ) સિદ્ધ જીવ જો કિ ન સૂક્ષ્મ હૈ ઑર ન વાદર હૈ, વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતે હૈ । કયો કિ સિદ્ધ જીવ કિસી ઑી કર્મ કા બંધ કરને વાલે નહીં હોતે હૈ । (એવં આઉગવજ્જાઓ સત્ત વિ) જ્ઞાનાવરણ કી તરહ સે હી આયુષ્કવર્જ સાત કર્મો કો ઑી જાનનાં ઑાહિયે । તથા ચ-આયુષ્કવર્જ દર્શનાવરણ આદિ કર્મો કો ઑી સૂક્ષ્મ જીવે વાંધતે હૈ । વાદર ઇન્હે ભજનાં સે વાંધતા હૈ । ઑર જો સૂક્ષ્મ વાદર નહીં હૈ એસે સિદ્ધ જીવ ઇન્હે નહીં વાંધતે હૈ । (આઉએ સુહુમે, વાયરે ભયણાએ) આયુષ્કર્મ કો સૂક્ષ્મ ઑર વાદર જીવ ભજનાં સે વાંધતા હૈ-અર્થાત્ આયુષ્કે બંધકાલે મેં આયુ કા બંધ કરતા હૈ ઑર ભિન્નકાલે મેં-

બંધ કરે છે પણ અરે અને નથી પણ કરતો. વીતરાગ બાદર એવ તે કર્મનો બંધ કરતો નથી; પણ સરાગ બાદર એવ તેનો બંધ કરે છે. (જો સુહુમ, જો વાયરે ન બંધઈ) સિદ્ધ એવ કે જે સૂક્ષ્મ પણ નથી અને બાદર પણ નથી, તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી, કારણ કે સિદ્ધ એવ કોઈ પણ કર્મનો બંધ કરતા નથી. (એવં આઉગવજ્જાઓ સત્ત વિ) આ દ્વારની અપેક્ષાએ આયુષ્કર્મ સિવાયની સાતે કર્મપ્રકૃતિઓના બંધનું કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કથન પ્રમાણે સમજવું

એટલે કે આયુષ્કર્મ સિવાયના દર્શનાવરણીય આદિ સાતે કર્મો પણ સૂક્ષ્મ એવા બાંધે છે, બાદર એવા તે સાતે કર્મો વિકલ્પે બાંધે છે, અને જે એવા સૂક્ષ્મ કે બાદર નથી એવા સિદ્ધગતિના એવા તેમનો બંધ કરતા નથી. (આઉએ સુહુમે વાયરે ભયણાએ) આયુષ્કર્મનો બંધ સૂક્ષ્મ અને બાદર એવા વિકલ્પે બાંધે છે. એટલે કે તેઓ આયુના બંધકાળે આયુનો બંધ કરે છે,

ન્યક્ત્વાત્, તદ્ભિન્નકાલે તદવન્ધકત્વાત્ । ' જોસુદ્ધમ જો પાયરે ન વંધઈ ' જોસુદ્ધમ-જોવાયરે દિ સિદ્ધો જીવો ન આયુષ્કં કર્મ વધ્નાતિ । અથ ચરમદ્વાર-માશ્રિત્ય ગૌતમઃ પૂછતિ—' જાણાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કર્મં કિં ચરિમે વંધઈ અચરિમે વંધઈ ? ' જ્ઞાનાવરણીયં સ્વત્વ કર્મ કિં ચરમો વધ્નાતિ ? કિં ના અચરમો વધ્નાતિ ? મગવાનાહ—' ગોયમા ! અદ્ધ વિ મયણાણ ' હે ગૌતમ ! ચરમઃ, અચરમથ અદ્ધાપિ કર્મપ્રકૃતીઃ મજ્જનયા કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, અત્રેદં બોધ્યમ્—યસ્ય ચરમો ભવોભવિણ્યતિ સઃ ચરમઃ, યસ્ય ત્વ કદાપિ ચરમો ભવો ન

અવંધકાલ મેં-આયુ કા વંધ નહીં કરતા હૈ । (જો સુદ્ધમ જો પાયરે ન વંધઈ) સિદ્ધ જીવ મી આયુ કા વંધ નહીં કરતે હૈં ।

અથ ચરમવંધદ્વાર કો આશ્રિત કરકે ગૌતમસ્વામી પ્રશ્નસે પૂછતે હૈં કિ જાણાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કર્મં કિં ચરિમે વંધઈ, અચરિમે વંધઈ) હે મદન્ત ! જય ચરમદ્વાર કી અપેક્ષા સે જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કે વંધને કા વિચાર કિયા જાતા હૈં તો કોન સા જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ ? કયા જો ચરમ જીવ હૈં વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ ? યા જો અચરમ જીવ હૈં વહ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ ? મગવાનાહ સકા ઉત્તર દેતે હુણ ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અદ્ધવિ મયણાણ) ચાહે ચરમ જીવ હો—ચાહે અચરમ જીવ હો યે દોનોં હી મજ્જના સે આઠોં મી કર્મ પ્રકૃતિયોં કા વંધ કરતે હૈં । જિસ જીવ કા અન્તિમ ભવ હોગા વહ ચરમ જીવ હૈં ઓર જિસકા કમી મી અન્તિમ-

પણ અવંધકાળે આયુનો વંધ કરતા નથી (જોસુદ્ધમ જોવાયરે ન વંધઈ) સિદ્ધ જીવ પણ આયુનો વંધ કરતા નથી.

હવે ગૌતમ સ્વામી ચરમદ્વારને અનુલક્ષીને મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (જાણાવરણિજ્ઞં જં મંતે ! કર્મં કિં ચરિમે વંધઈ, અચરિમે વંધઈ ?) હે મદન્ત ! ચરમદ્વારની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કોણ : વંધે છે ? શું ચરમ જીવ (અન્તિમ ભવ કરીને મોક્ષ જનાર જીવ) જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો વંધ કરે છે ? કે અચરમ જીવ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો વંધ કરે છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અદ્ધવિ મયણાણ) ચરમ જીવ એને અચરમ જીવ આઠે કર્મ પ્રકૃતિયોનો વંધ કરે છે—એટલે કે તેઓ આઠે કર્મ પ્રકૃતિયોનો વંધ કરે છે પણ ખરાં અને, નથી પણ કરતા.

કર્તાત્, અતો 'મજનયા' ઇત્યુક્તમ્, કિન્તુ 'નોમુદ્ધમ-નોવાયરે ન વંધ' નોમુદ્ધમ-નોવાદરો હિ સિદ્ધો ન વધ્નાતિ, સિદ્ધસ્ય વંધકત્વાભાવાત્, 'એવમ્ આઝગવજ્જાઓ સત્તવિ' એવં જ્ઞાનાવરણવદેવ આયુષ્કવર્જાઃ સન્નાપિ કર્મપ્રકૃતયો વેદિતવ્યાઃ, તથાદિ આયુષ્કવર્જિતાનિ દર્શનાવરણાદિકર્માણ્યપિ સૂક્ષ્મો વધ્નાતિ, વાદરો મજનયા કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, નોમુદ્ધમ-નોવાદરસ્તુ સિદ્ધો ન વધ્નાત્યેવેત્યર્થઃ । 'આઝે સુદ્ધમે, વાયરે મયણા' આયુષ્કં મુદ્ધમઃ વાદરથ મજનયા કદાચિદ્ વધ્નાતિ, કદાચિન્ન વધ્નાતિ, આયુર્વંધકાલે આયુર્વં-

જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતા હૈ અર્થાત્ જો વાદર જીવ વીતરાગ હૈ વે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈ-ઔર જો વાદર જીવ સરાગ હૈ વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ કરતે હૈ । (જો સુદ્ધમે જો વાયરે ન વંધ) સિદ્ધ જીવ જો કિ ન સૂક્ષ્મ હૈ ઔર ન વાદર હૈ, વે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા વંધ નહીં કરતે હૈ । ક્યો કિ સિદ્ધ જીવ કિસી મી કર્મ કા વંધ કરતે વાલે નહીં હોતે હૈ । (એવં આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ) જ્ઞાનાવરણ કી તરહ સે હી આયુષ્કવર્જ સાત કર્મો કી મી જાનનાં વાંહિયે । તથા ચ-આયુષ્કવર્જ દર્શનાવરણ આદિ કર્મો કી મી સૂક્ષ્મ જીવ વાંધતે હૈ । વાદર ઇન્હે મજનાં સે વાંધતા હૈ । ઔર જો સૂક્ષ્મ વાદર નહીં હૈ એસે સિદ્ધ જીવ ઇન્હે નહીં વાંધતે હૈ । (આઝે સુદ્ધમે, વાયરે મયણા) આયુષ્કર્મ કી સૂક્ષ્મ ઔર વાદર જીવ મજના સે વાંધતા હૈ-અર્થાત્ આયુષ્ક વંધકાલે મેં આયુ કા વંધ કરતા હૈ ઔર મિત્રકાલ મેં-

બંધ કરે છે પણ ખરો અને નથી પણ કરતો. વીતરાગ બાદર એવ તે કર્મનો બંધ કરતો નથી, પણ સરાગ બાદર એવ તેનો બંધ કરે છે. (જો સુદ્ધમે, જો વાયરે ન વંધ) સિદ્ધ એવ કે જે સૂક્ષ્મ પણ નથી અને બાદર પણ નથી, તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો બંધ કરતા નથી, કારણ કે સિદ્ધ એવ કોઈ પણ કર્મનો બંધ કરતા નથી. (એવં આઝગવજ્જાઓ સત્ત વિ) આ દ્વારની અપેક્ષાએ આયુષ્કર્મ સિવાયની સાતે કર્મપ્રકૃતિઓના બંધનું કથન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના કથન પ્રમાણેજ સમજવું

એટલે કે આયુષ્કર્મ સિવાયના દર્શનાવરણીય આદિ સાતે કર્મો પણ સૂક્ષ્મ એવા બાંધે છે, બાદર એવા તે સાતે કર્મો વિકલ્પે બાંધે છે, અને જે એવા સૂક્ષ્મ કે બાદર નથી એવા વિદગતિના એવા તેમનો બંધ કરતા નથી. (આઝે સુદ્ધમે વાયરે મયણા) આયુષ્કર્મનો બંધ સૂક્ષ્મ અને બાદર એવા વિકલ્પે બાંધે છે. એટલે કે તેઓ આયુના બંધકાળે આયુનો બંધ કરે છે,

અપ્પા વા, વહુયા વા, તુલ્લા વા, વિસેસાહિયા વા ? ગોયમા !
સત્ત્વત્થોવા જીવા પુરિસવેયગા, ક્કથિવેયગા સંલેજ્જગુણા,
અવેયગા અણંતગુણા, નપુંસગવેયગા અણંતગુણા, ઇણંસિં
સલ્લેસિં પયાણં અપ્પ-વહુગાઈં ઉચ્ચારેયઠ્ઠાઈં, જાવ-સલ્લ-
ત્થોવા જીવા અચરિમા, ચરિમા અણંતગુણા, સેવં ભંતે !
સેવં ભંતે ! ત્તિ ॥ સૂ. ૬ ॥

॥ છટ્ટસપ્પ તદ્દાઓ ઉદ્દેસો સમત્તો ॥ ૬-૩ ॥

છાયા—એતેણાં લખતુ મદન્ત ! જીવાનાં સ્ત્રીવેદકાનામ્, પુરુષવેદકાનામ્,
નપુંસકવેદકાનામ્, અવેદકાનાં ચ કયરે કયરેભ્યઃ અલ્પા વા, વહુકા વા તુલ્યા
વા, વિશેષાધિકા વા ? ગોતમ ! સર્વસ્ત્રોકાઃ જીવાઃ પુરુષવેદકાઃ, સ્ત્રીવેદકાઃ

વેદવાલે જીવોં કે અલ્પ-વહુત્વ કા કથન

‘ ઇણંસિણં ભંતે ! ક્કથાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(ઇણંસિણં ભંતે ! જીવાણં ક્કથીવેયગાણં, પુરિવેયગાણં,
નપુંસગવેયગાણં, અવેયગાણં ય કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, વહુયા વા
તુલ્લા વા વિસેસાહિયા વા) હે મદન્ત ! સ્ત્રીવેદક, પુરુષવેદક, નપુંસકવે-
દક ઓર અવેદક ફન સઘ મેં કૌન ૨ જીવ કિન ૨ જીવોં કો અપેક્ષા
સે અલ્પ હું ? કૌન ૨ જીવ કિન ૨ જીવોં કો અપેક્ષા સે વહુત હું ?
કૌન ૨ જીવ કિન ૨ જીવોં કો અપેક્ષા સમાન હું ? ઓર કૌન ૨ જીવ
કિન ૨ જીવોં કો અપેક્ષા વિશેષાધિક હું ? (ગોયમા ? સત્ત્વત્થો

વેદવાળા જીવોની અલ્પતા અને વહુતાનું નિરૂપણ—

“ ઇણંસિણં ભંતે ! ” ક્કથાદિ—

સૂત્રાર્થ—(ઇણંસિણં ભંતે ! જીવાણં ક્કથીવેયગાણં, પુરિસવેયગાણં, નપું-
સગવેયગાણં, અવેયગાણં ય કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, વહુયા વા, તુલ્લા વા,
વિસેસાહિયા વા ?) હે ભદન્ત ! સ્ત્રી વેદક, પુરુષ વેદક, નપુંસક વેદક અને
અવેદક જીવોમાંથી કયા કયા જીવો કયા કયા જીવો કરતાં અલ્પ છે ? કયા
કયા જીવો કયા કયા જીવો કરતાં અધિક છે ? કયા કયા જીવો કયા કયા જીવોની
અપેક્ષાએ સમાન છે ? અને કયા કયા જીવો કયા કયા જીવો કરતાં વિશેષાધિક
છે ? (ગોયમા ! સત્ત્વત્થોવા જીવા પુરિસવેયગા, ક્કથિવેયગા સંલેજ્જગુણા, અવેયગા

ભવિષ્યતિ સ અચરમઃ અભવ્યઃ સંસારી, સિદ્ધઃ અચરમઃ, તસ્ય ચરમ ભવામાવાત્, તત્ર ચરમો યથાસંભવમ્ અપ્ટાપિ કર્મપ્રકૃતીઃ વધ્નાતિ, અયોગિત્વે ન વધ્નાતિ, ઇતિ મજના તત્ર વોધ્યા, અચરમસ્તુ સંસારી અપ્ટાપિ કર્મપ્રકૃતીઃ વધ્નાતિ, સિદ્ધસ્તુ ન વધ્નાતીત્યગ્રાપિ મજના ॥ સૂ. ૫ ॥

વેદકજીવાલ્પવદુત્તવક્તવ્યતા ।

કર્મવેદાધિકારાત્ વેદકજીવાનામ્ અલ્પવદુત્તવક્તવ્યતાં નિરૂપયિતુમાર્-
'પ્રસિ નં મંતે ।' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—પ્રસિ નં મંતે ! જીવાણં ઇત્થીવેયગાણં, પુરિસ-
વેયગાણં નપુંસગવેયગાણં, અવેયગાણં ય કયરે કયરેહિતો

ભવ નહીં હોગા વહ અચરમ જીવ હૈ, અચરમ પદ સે અભવ્ય સંસારી
કા મી ગ્રહણ હોતા હૈ ઓર સિદ્ધ જીવ કા મી ગ્રહણ હોતા હૈ કયોં કિ
સિદ્ધ જીવ કે સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત હો જાને કે ઘાદ ચરમભવ કા અભાવ હૈ ।
इनमें जो चरम जीव है— अभी जिसका अन्तिम भव नहीं है वह तो
यथासंभव आठों भी कर्मप्रकृतियों को बांधता है और जो चरम जीव
अयोगी है—जिसका अभी यही अन्तिम भव है—तो वह किसी भी कर्म-
प्रकृति का बांध नहीं करता है । इसी तरह अचरमपद के जब अभव्य-
संसारी जीव का ग्रहण करते हैं तो वह भी आठों कर्मप्रकृतियों का बांध
करता है और जब अचरमपद से सिद्ध जीव का ग्रहण करते हैं तो वह
किसी भी कर्मप्रकृति का बांध नहीं करता है—इस तरह से उभयप्र
चरम अचरम दोनों जगहे । भजना जाननी चाहिये ॥ सू. ५ ॥

જે જીવનો ભવ અન્તિમ હોય તેને ચરમ જીવ કહે છે, અને જેનો
અન્તિમ ભવ કદી પણ થવાનો નથી તેને અચરમ જીવ કહે છે. અચરમ પદ
અભવ્ય સંસારીને માટે પણ વપરાય છે, અને સિદ્ધ જીવોને માટે પણ વપ-
રાય છે કારણ કે સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કર્યા પછી તેમને ચરમભવનો અભાવ હોય
છે. આ બંને પ્રકારના જીવોમાંથી જે ચરમ જીવ છે—અત્યારે જ જેનો અન્તિમ
ભવ ચાલુ નથી, તે તો યથા સંભવ આઠે કર્મોના બાંધ કરે છે, પણ જે
ચરમ જીવ અયોગી છે—જેનો અન્તિમ ભવ અત્યારે જ ચાલુ છે તે તો કોઈ
પણ કર્મોના બાંધ કરતો નથી. એજ પ્રમાણે અચરમ પદને અભવ્ય સંસારી
જીવની અપેક્ષાએ પ્રયોગ કરવામાં આવે ત્યારે તે પ્રકારનો જીવ (અભવ્ય
સંસારી જીવ) આઠે પ્રકારના કર્મોના બાંધ કરે છે, પણ અચરમ પદનો પ્રયોગ
સિદ્ધ જીવને માટે કરવામાં આવે, ત્યારે તેઓ કોઈ પણ કર્મોના બાંધ કરતા નથી. તે
કારણે “તેઓ વિકલ્પે આઠે કર્મોના બાંધ કરે છે” એવું કથન કર્યું છે. ॥ સૂ. ૫ ॥

અપ્પા વા, વહુયા વા, તુલ્લા વા, વિસેસાહિયા વા ? ગોયમા !
સવ્વત્થોવા જીવા પુરિસવેયગા, इत्थिवेयगा संखेज्जगुणा,
અવેયગા અણંતગુણા, નપુંસગવેયગા અણંતગુણા, एएसिं
સવ્વેણિં પયાણં અપ્પ-વહુગાઈં ઉચ્ચારેયઠ્ઠાઈં, જાવ-સવ્વ-
ત્થોવા જીવા અચરિમા, ચરિમા અણંતગુણા, સેવં ભંતે !
સેવં ભંતે ! ત્તિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

॥ છટ્ટસણ તદ્દઓ ઉદેસો સમત્તો ॥ ૬-૩ ॥

છાયા—એતેપાં સલુ ભદન્ત ! જીવાનાં સ્ત્રીવેદકાનામ્, પુરુષવેદકાનામ્,
નપુંસવેદકાનામ્, અવેદકાનાં ચ કતરે કતરેભ્યઃ અલ્પા વા, વહુકા વા તુલ્યા
વા, વિશેષાધિકા વા ? ગોતમ ! સર્વસ્તોકાઃ જીવાઃ પુરુષવેદકાઃ, સ્ત્રીવેદકાઃ

વેદવાલે જીવોં કે અલ્પ-વહુત્વ કા કથન

‘એસિણં ભંતે !’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(એસિણં ભંતે ! જીવાણં ઇત્થીવેયગાણં, પુરિવેયગાણં,
નપુંસગવેયગાણં, અવેયગાણ ય કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, વહુયા વા
તુલ્લા વા વિસેસાહિયા વા) હે ભદન્ત ! સ્ત્રીવેદક, પુરુષવેદક, નપુંસકવે-
દક ઓર અવેદક ફન સઘ મેં કૌન ૨ જીવ કિન ૨ જીવોં કો અપેક્ષા
સે અલ્પ હેં ? કૌન ૨ જીવ કિન ૨ જીવોં કો અપેક્ષા સે વહુત હેં ?
કૌન ૨ જીવ કિન ૨ જીવોં કો અપેક્ષા સમાન હેં ? ઓર કૌન ૨ જીવ
કિન ૨ જીવોં કો અપેક્ષા વિશેષાધિક હેં ? (ગોયમા ? સવ્વત્થો

વેદવાળા જીવોની અલ્પતા અને બહુતાનું નિરૂપણ—

“એસિણં ભંતે !” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—(એસિણં ભંતે ! જીવાણં ઇત્થીવેયગાણં, પુરિસવેયગાણં, નપું-
સગવેયગાણં, અવેયગાણ ય કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, વહુયા વા, તુલ્લા વા,
વિસેસાહિયા વા ?) હે ભદન્ત ! સ્ત્રી વેદક, પુરુષ વેદક, નપુંસક વેદક અને
અવેદક જીવોમાંથી કયા કયા જીવો કયા કયા જીવો કરતાં અલ્પ છે ? કયા
કયા જીવો કયા કયા જીવો કરતાં અધિક છે ? કયા કયા જીવો કયા કયા જીવોની
અપેક્ષાએ સમાન છે ? અને કયા કયા જીવો કયા કયા જીવો કરતાં વિશેષાધિક
છે ? (ગોયમા ! સવ્વત્થોવા જીવા પુરિસવેયગા, इत्थिवेयगा संखेज्जगुणा, અવેયગા

સંખ્યેયગુણાઃ, અવેદકાઃ અનન્તગુણાઃ, નપુંસકવેદકા અનન્તગુણાઃ, एतेषां सर्वेषां
पदानाम् अक्ष-बहुत्वकानि उच्चारयितव्यानि, यावत्-सर्वस्तोका जीवा अचरमाः,
चरमाः अन्तगुणाः, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥ मू० ५ ॥

ટીકા—'एएसि णं भंते ! जीवाणं इत्थीवेयमाणं, पुरिसवेयमाणं,
अवेयमाणं य कयरे कयरेरितो अप्पा वा, यहुया वा तुल्ला वा, विसंसारिया
वा जीवा पुरिसवेयगा, इत्थि वेयगा संखेज्जगुणा, अवेयगा अणं-
तगुणा, नपुंसगवेयगा अणंतगुणा) हे गौतम ! सब से कम पुरुषवेदक
जीव हैं । इनसे संख्यातगुणे स्त्रीवेदक जीव हैं । अवेदक जीव अनन्तगुणे
हैं । नपुंसकवेदक भी अनन्तगुणे हैं । (एएसिं सव्वेसिं पयाणं अप्पबहु-
गाइं उच्चारयेयवाइं जाय सव्वत्थोवा जीवा अचरिमा, चरिमा, अणंत
गुणा सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति) इन सब पदों का अल्प बहुत्व कहना
आहिषे यावत् सब से कम अचरम जीव हैं और चरम जीव अनन्त-
गुणे हैं । हे भदन्त ! जैसा आपने कहा है—वह सब ऐसा ही है—हे
भदन्त ! वह सब ऐसा ही है । इस प्रकार कहकर गौतम अपने स्थान-
पर बैठ गये ।

ટીકાર્થ—કર્મ ઓર વેદ કે અધિકાર સે સૂત્રકાર હસ સૂત્ર દ્વારા
વેદક જીવોં ફી અલ્પ-બહુત્વ વાક્યવ્યતા કા નિરૂપણ કર રહે હૈ—હસમેં
ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે એસા પૂછા હૈ કિ—(एएसि णं भंते ! जीवाणं इत्थी-
वेयमाणं पुरिसवेयमाणं, नपुंसगवेयमाणं, अवेयमाणं य कयरे कयरे-

अणंतगुणा, नपुंसगवेयगा अणंतगुणा) पुरुष वेदकाणां लवो सौधी ओछां छे,
स्त्री वेदकाणां लवो तेभना करतां सञ्ख्यातगण्ठा छे, अवेदकाणां लवो अनंत-
गण्ठा छे, नपुंसक वेदकाणां लवो पक्ष अनंतगण्ठा छे. (ए एसिं सव्वेसिं
पयाणं अप्पबहुगाइं उच्चारयेयवाइं जाय सव्वत्थोवा जीवा अचरिमा, चरिमा अणंत
गुणा, सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति) आ मथा पढोतुं अल्प बहुत्व कहेतुं
जોधजे सौधी ओछां अचरम लवो छे अने चरम लवो अनंतगण्ठा छे,
अडो सुधीतुं समस्त कथन करवुं जોधजे. हे भदन्त ! आपनी बात साची न
छे. हे भदन्त ! आ विषयतुं आपे ने प्रतिपादन कयुं ते यथार्थ न छे. आ
भ्रमाछे कहीने गौतम स्वामी तेभने स्थाने जेसी गया.

ટીકાર્થ—કર્મ અને વેદનો અધિકાર આલી રહ્યો છે. સૂત્રકાર આ સૂત્ર
દ્વારા વેદક (જુદા જુદા વેદકાણા) જીવોની અલ્પ-બહુતાનું પ્રતિપાદન કરે છે.
ગૌતમ સ્વામી આ વિષયને અનુવક્ષીને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(ए एसिं णं
भंते ! जीवाणं इत्थीवेयमाणं, पुरिसवेयमाणं, नपुंसगवेयमाणं, अवेयमाणं य कयरे

વા ? ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદ્રન્ત ! એતેષાં સ્વલ્પ જીવાનાં સ્ત્રીવેદકાનામ્ , પુરુષવેદકાનાં, નપુંસકવેદકાનામ્ , અવેદકાનામ્ અનિવૃત્તિવાદરમુક્ષમસંપરા-
યગુણસ્થાનવર્તિમમૃતીનાં સિદ્ધાનાં ચ મધ્યે કતરે જીવાઃ કતરે જીવેભ્યોઃ
અલ્પા વાં, વહુકા વા, તુલ્યા વા, વિશેષાધિકા વા ભવન્તિ ? મગવાનહ-‘ગોયમા !
સંવત્થોવાં જીવા પુરિસવેયગા ’ ગૌતમ ! સર્વસ્તોકાઃ સર્વેભ્યો જીવેભ્યોઽલ્પાઃ
પુરુષવેદકાઃ ‘હૃત્થિવેયગા :સંલેજ્જગુણા ’ સ્ત્રીવેદકાઃ સંલેયગુણાઃ ભવન્તિ,
યતો દિં દેવપુરુષેભ્યો દેવસ્ત્રિયઃ ક્ષાત્રિયદ્ગુણાઃ ભવન્તિ, મનુષ્યપુરુષેભ્યો મનુ-
ષ્યસ્ત્રિયઃ સંસંવિશતિગુણાઃ ભવન્તિ, તિર્યક્પુરુષેભ્યસ્તિર્યક્સ્ત્રિયઃ ત્રિગુણાઃ ભવન્તિ,

હિંસો અળાં વા, વહુયા વા, તુલ્યા વા વિસેસાહિયા વા) હે ભદ્રન્ત ! જન
સ્ત્રીવેદક, પુરુષવેદક, નપુંસકવેદક ઓર અવેદક-અનિવૃત્તિવાદર સૂક્ષ્મ
સાંપરાય આદિ ગુણસ્થાનવર્તી જીવ ઓર સિદ્ધ જનકે વીંચ મેં કૌન
જીવ કિસ જીવ સે અલ્પ હૈ ? કૌન જીવ કિમ જીવ સે અધિક હૈ ?
કૌન જીવ કિસ જીવ સે વરાયર હૈ ઓર કૌન જીવ કિસ જીવ સે
વિશેષાધિક હૈ ? મગવાન જસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે હુવ ગૌતમ સે કહતે
હૈ કિ-(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સંવત્થોવા જીવા પુરિસવેયગા) પુરુષવેદ
વાલે જો જીવ હૈ, વે સપ જીવોં સેં કમ હૈ. (હૃત્થિવેયગા સંલેજ્જગુણા)
સ્ત્રીવેદક-સ્ત્રીવેદવાલે-જીવ સંલ્યાતગુણે હૈ. વયોં કિ-દેવ, પુરુષ ઓર
તિર્યંચ રુપ પુલ્લિંગ જન કી અપેક્ષા ક્રમશઃ જનકી સ્ત્રિયો વત્તીસ ગુણી,
સંસાંઈસગુણી, ઓર તિગુની હોતી હૈ. અર્થાત્ દેવોં કી અપેક્ષા દેવિયોં
કા પ્રમાણ વત્તીસ ગુણા હોતા હૈ-મનુષ્ય પુરુષોં કી અપેક્ષા મનુષ્યાણિયોં

કયરેહિંતો અળા વાં, વહુયા વા, તુલ્યા વા વિસેસાહિયા વા ?) હે ભદ્રન્ત ! આ
સ્ત્રી વેદક, પુરુષ વેદક, નપુંસક વેદક, અને અવેદક-અનિવૃત્તિ વાદર સૂક્ષ્મ
સાંપરાય આદિ ગુણસ્થાનવર્તી જીવો અને સિદ્ધ જીવોમાંથી કયા કયા જીવો
કયાં કયાં જીવો કરતાં ઓછાં છે ? કયા જીવો કયા જીવો કરતાં અધિક છે ? કયા
જીવો કયા જીવોની બરાબર છે ? અને કયા જીવો કયા જીવો કરતાં વિશેષાધિક છે ?
તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે (ગોયમા !) હે ગૌતમ !
(સંવત્થોવા જીવા પુરિસવેયગા) પુરુષ વેદવાળા જીવો ઓછી ઓછાં છે. (હૃત્થિ-
વેયગાં સંલેજ્જગુણા) સ્ત્રી વેદવાળા જીવો તેમના કરતાં સંખ્યાતગણા છે,
કારણ કે દેવ, પુરુષ, અને તિર્યંચરૂપ પુલ્લિંગ (નરનતિ) કરતાં તે નતિની
ઓછા અનુક્રમે બત્રીસગણી, સત્યાવીશગણી અને ત્રણગણી હોય છે. એટલે
કે દેવો કરતાં દેવીઓ બત્રીસગણી છે, માણસો કરતાં સ્ત્રીઓ સત્યાવીશગણી છે;

‘અવેયગા અણંતગુણા’ અવેદકાઃ અનિવૃત્તિ યાદર સૂક્ષ્મસંપરાયગુણસ્થાનવર્તિ પ્રથૃતયઃ, સિદ્ધાથ જીવાઃ અનન્તત્વાત્ સ્ત્રીવેદકેભ્યોઽનન્તગુણા ભવન્તિ. ‘નપુંસગ-વેયગા અણંતગુણા’ નપુંસકવેદકાઃ અનન્તગુણા ભવન્તિ, અનન્તકાવિકાનાં સિદ્ધે-ભ્યોઽનન્તગુણત્વાત્ । એપ્સિ સર્વેસિ પદાણં અપ્પ-વહુગાઈં ઉચ્ચારેયન્વાઈં ’ એતેષાં પૂર્વોક્તાનાં સર્વેષામ્ સંયતાદિચરમાન્તાં ચતુર્દશાનાં પદાનાં દ્વારાણામ્ તદ્ગતમેદા-પેક્ષયા અલ્પવહુત્વમ્ ઉચ્ચારયિત્વં વક્તવ્યમ્, તથા ‘એપ્સિ ણં મંતે ! સંજ-યાણં, અસંજયાણં, સંજયાસંજયાણં, ણોસંજય ણોઅસંજય - ણોસંજયાસંજયાણં કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, વહુયા વા, તુલ્લા વા, વિસેસાહિયા વા ? ગોયમા ।

(મનુષ્યચ્છિન્ને) કા પ્રમાણ ૨૭ ગુણા હોતા હૈ ઓર તિયંચ પુરુષોંકી અપેક્ષા તિયંચનિયોંકા પ્રમા ગ તિગુના હોતા હૈ । ઈસી કારણ સ્ત્રીવેદક જીવ પુરુષ વેદકોંકી અપેક્ષા સંખ્યાતગુણિત પ્રકટ કિયે ગયે હૈં । (અવેયગા અણંતગુણા અનિવૃત્તિ યાદર સૂક્ષ્મસંપરાય આદિ ગુણસ્થાનવર્તી જીવ તથા સિદ્ધ જીવ યે સ્ત્રીવેદકોં સે અનન્તગુણે હૈં । (નપુંસગવેયગા અણંતગુણા) નપુંસક વેદવાલે જીવ ભી અનન્તગુણે હૈં । કયોં કિ સિદ્ધોં સે અનન્તગુણે અનન્તકાવિક જીવ હૈં । (એપ્સિ સર્વેસિ પયાણં અપ્પવહુગાઈં ઉચ્ચારેયન્વાઈં) ઇન સવ પૂર્વોક્ત સંયત સે લેકર ચરમ તક કે ૧૪ દ્વારોં કા અલ્પ વહુત્વ તદ્ગત મેદોં કી અપેક્ષા સે કહ લેના ચાહિયે-વહ ઇસ પ્રકાર સે હૈ-“એપ્સિ ણં મંતે ! સંજયાણં, અસંજયાણં, સંજયા સંજયાણં ણો સંજય ણો અસંજય-ણો સંજયા સંજયાણં કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા,

અને તિયંચ નર કરતાં તિયંચ માદા (નારી બતિ) ત્રણગણી હોય છે. તે કારણે પુરુષ વેદવાળા જીવોના પ્રમાણ કરતાં સ્ત્રી વેદવાળા જીવોનું પ્રમાણ સંખ્યાતગણું કહ્યું છે.

(અવેયગા અણંતગુણા) અનિવૃત્તિ યાદર સૂક્ષ્મ સંપરાય આદિ ગુણ-સ્થાનવર્તી જીવ તથા સિદ્ધ જીવની સંખ્યા સ્ત્રી-વેદવાળા જીવો કરતાં અનંત ગણી છે. (નપુંસગવેયગા અણંતગુણા) અવેદક જીવો કરતાં નપુંસક વેદવાળા જીવો પણ અનંતગણા છે, કારણ કે સિદ્ધોથી અનંતગણા અનંતકાવિક જીવો છે. (એપ્સિ સર્વેસિ પયાણં અપ્પવહુગાઈં ઉચ્ચારેયન્વાઈં.) પૂર્વોક્ત સંયતથી લઈને ચરમ પર્યન્તના ૧૪ દ્વારોનું અલ્પ વહુત્વ તેમના જોદોની અપેક્ષાએ કહેવું બોધ્યું. તે આ પ્રમાણે કહી શકાય—

(એપ્સિ ણં મંતે ! સંજયાણં અસંજયાણં, સંજયાસંજયાણં ણો સંજય ણો અસંજય ણો સંજયાસંજયાણં કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, વહુયા વા, તુલ્લા વા,

સવ્વત્થોવા સંજયા, સંજયાસંજયા અસંલેજ્જગુણા, ણોસંજય-ણોઅસંજયા ણોસંજયા-સંજયા અણંતગુણા, અસંજયા અણંતગુણા " ઇત્યાદિ પ્રજ્ઞાપનાયાં તૃતીયાલ્પચલુત્વ પદાનુસારેણ વક્તવ્યમ્, યાવત્-ચરમાન્તાલ્પચલુત્વમ્, તદેવાઢ-‘જાવ-સવ્વત્થોવાં જીવા અચરિમા ચરિમા અણંતગુણા’ યાવત્-સર્વતોકાઃ જીવા અચામાઃ, ચરમાઃ અનન્તગુણાઃ ભવન્તિ, તત્ર અચરમાઃ અભવ્યાઃ, ચરમાશ્ચ વે મવ્યાશ્વરમ્ ભવં પ્રાપ્સ્યન્તિ=સિદ્ધિ મદિપ્સ્યન્તિ, તે અચરમેભ્યોઽભવ્યેભ્યોઽનન્તગુણા ભવન્તિ, યતઃ

ઘટ્ટુયા વા, તુલ્લા વા, વિસેસાહિયા વા) હે ભદન્ત ! સંયત, અસંયત, સંયતાસંયત, નો સંયત-નો અસંયત-નો સંયતાસંયત ઇન સવ મેં કૌન જીવ કિસ જીવ ફી અપેક્ષા કમ હૈ ? ઘટ્ટુત હૈ ? તુલ્પ હૈ ? ઓર વિશેષાધિક હૈ ? (મોચમા) હૈ ગૌતમ ! (સવ્વત્થો વા સંજયા) સવ સે કમ સંયત જીવ હિં । (સંજયાસંજયા અસંલેજ્જગુણા) સંયતાસંયત (દેશવિરતિ) જીવ સંયત (સર્વવિરતિ) જીવોં ફી અપેક્ષા અસંલ્પાતગુણે હિં । (ણોસંજય-ણોઅસંજય-ણોસંજયાસંજય અણંતગુણા) નોસંયત નોઅસંયત નોસંયતાસંયત જીવ ઇનસે ખી અનંતગુણે હિં । ઓર (અસંજયા અણંતગુણા) અસંયત જીવ ઇનસે ખી અનંતગુણે હિં । " ઇત્યાદિ પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર કે અનુસાર ચરમ તક કે અલ્પ ઘટ્ટુત્વ તક કથન કર લેના ચાહિયે । જૈસે કિ-‘ જાવ સવ્વત્થોવા જીવા અચરિમા, ચરિમા અણંતગુણા " ઇત્યાદિ, અચરમ-અર્થાત્ અભવ્ય ઓર ચરમ-અન્તિમ ભવ કો જો પાવેંગે અર્થાત્-સિદ્ધ હોંગે વે સો

વિસેસાહિયા વા) હે ભદન્ત ! સંયત, અસંયત, સંયતાસંયત, નો સંયત, નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત હવેભાંથી કયા હવે કોના કરતાં અલ્પ છે ? કયા હવે કોના કરતાં અધિક છે ? કયા હવે કયા હવે બેટલાં જ છે ? કયા હવે કયા હવે કરતાં વિશેષાધિક છે ?

ઉત્તર—(મોચમા !) હે ગૌતમ ! (સવ્વત્થો વા સંજયા) સંયત હવ સૌથી ઓછાં છે, (સંજયાસંજયા અસંલેજ્જગુણા) સંયત હવે કરતાં સંયતા-સંયત હવે સંખ્યાતગણ છે. (ણોસંજય-ણોઅસંજય-ણો સંજયાસંજયા અણંતગુણા) સંયતાસંયત હવે કરતાં નોસંયત, નોઅસંયત અને નો સંયતાસંયત, હવે અનંતગણ છે, (અસંજયા અણંતગુણા) તેમના કરતાં પણ અસંયત હવે અનંતગણ છે, ઇત્યાદિ સમસ્ત કથન પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર અનુસાર જ કરવું બેઠબે. આ રીતે ચરમ અને અચરમ હવેના અલ્પ બંધુત્વના કથન પર્યન્તનું ચીદે દારેનું કથન કરવું. જેમકે (જાવ સવ્વત્થોવા જીવા અચરિમા,

‘અવેયગા અણંતગુણા’ અવેદકાઃ અનિવૃત્તિ યાદરમુદ્દમસંપરાયગુણસ્થાનવર્તિ પ્રમૃતપઃ, સિદ્ધાથ જીવાઃ અનન્તત્વાત્ સ્ત્રીવેદકેભ્યોઽનન્તગુણા ભવન્તિ, ‘નપુંસગ-વેયગા અણંતગુણા’ નપુંસકવેદકાઃ અનન્તગુણા ભવન્તિ, અનન્તકાવિકાનાં સિદ્ધે-ભ્યોઽનન્તગુણત્વાત્ । એસિં સવ્વેસિં પદાણં અપ્પ-ચહુગાઈં ઉચ્ચારેયન્વાઈં’ એતેષાં પૂર્વોક્તાનાં સર્વેષામ્ સંયતાદિચરમાન્તાં ચતુર્દશાનાં પદાનાં ઢારાણામ્ તદ્ગતભેદા-પેક્ષયા અલ્પવહુત્વમ્ ઉચ્ચારયિતવ્યં વક્તવ્યમ્, તથા ‘એસિં ણં મંતે ! સંજ-યાણં, અસંજયાણં, સંજયાસંજયાણં, ણોસંજય ણોઅસંજય - ણોસંજયાસંજયાણં કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, ચહુયા વા, તુલ્લા વા, વિસેસાહિયા વા ? ગોયમા !

(મનુષ્યચિત્તે) કા પ્રમાણ૨૭ ગુણા હોતા હૈ ઓર તિયંચ પુરુષોંકી અપેક્ષા તિયંચનિર્ણોકા પ્રમાણ તિગુણા હોતા હૈ । ઈસી કારણ સ્ત્રીવેદક જીવ પુરુષ વેદકોંકી અપેક્ષા સંખ્યાતગુણિત પ્રકટ કિયે ગયે હૈ । (અવેયગા અણંતગુણા અનિવૃત્તિ યાદર સૂક્ષ્મસંપરાય આદિ ગુણસ્થાનવર્તી જીવ તથા સિદ્ધ જીવ યે સ્ત્રીવેદકોં સે અનન્તગુણે હૈ । (નપુંસગવેયગા અણંતગુણા) નપુંસક વેદવાલે જીવ મી અનન્તગુણે હૈ । કયોં કિ સિદ્ધોં સે અનન્તગુણે અનન્તકાવિક જીવ હૈ । (એસિં સવ્વેસિં પયાણં અપ્પચહુગાઈં ઉચ્ચારેયન્વાઈં) ઇન સય પૂર્વોક્ત સંયત સે લેકર ચરમ તક કે ૧૪ દારોં કા અલ્પ વહુત્વ તદ્ગત ભેદોં કી અપેક્ષા સે કહ લેના ચાહિયે-વહ ઈસ પ્રકાર સે હૈ-“એસિં ણં મંતે ! સંજયાણં, અસંજયાણં, સંજયા સંજયાણં ણો સંજય ણો અસંજય-ણો સંજયા સંજયાણં કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા,

અને તિયંચ નર કરતાં તિયંચ માદા (નારી જાતિ) ત્રણગણી હોય છે, તે કારણે પુરુષ વેદવાળા જીવોના પ્રમાણ કરતાં સ્ત્રી વેદવાળા જીવોનું પ્રમાણ સંખ્યાતગણું કહ્યું છે.

(અવેયગા અણંતગુણા) અનિવૃત્તિ યાદર સૂક્ષ્મ સંપરાય આદિ ગુણ-સ્થાનવર્તી જીવ તથા સિદ્ધ જીવની સંખ્યા સ્ત્રી-વેદવાળા જીવો કરતાં અનંત ગણી છે. (નપુંસગવેયગા અણંતગુણા) અવેદક જીવો કરતાં નપુંસક વેદવાળા જીવો પણ અનંતગણા છે, કારણ કે સિદ્ધોથી અનંતગણા અનંતકાવિક જીવો છે. (એસિં સવ્વેસિં પયાણં અપ્પચહુગાઈં ઉચ્ચારેયન્વાઈં) પૂર્વોક્ત સંયતથી લઈને ચરમ પર્થન્તના ૧૪ દારોનું અલ્પ બહુત્વ તેમના ભેદોની અપેક્ષાએ કહેવું જોઈએ. તે આ પ્રમાણે કહી શકાય—

(એસિં ણં મંતે ! સંજયાણં અસંજયાણં, સંજયાસંજયાણં ણો સંજય ણો અસંજય ણો સંજયાસંજયાણં કયરે કયરેહિંતો અપ્પા વા, ચહુયા વા, તુલ્લા વા,

અથ ચતુર્થોદ્દેશકઃ પ્રારમ્ભ્યતે—

પઞ્ચશતકે ચતુર્થોદ્દેશકસ્ય સંક્ષિપ્તવિષયવિવરણમ્—

एकत्वेन जीवः कालापेक्षया सप्रदेशः किं वा अप्रदेशः इति प्रश्नः, नियमतः सप्रदेश एव नो अप्रदेश इत्युत्तरम् । तथा नैरर्थिकः कालापेक्षया सप्रदेशः अप्रदेशो वा ? इति प्रश्नः, कदाचित् सप्रदेशः कदाचित् अप्रदेशश्च, इत्युत्तरम् । ततो बहुत्वेन जीवाः कालापेक्षया सप्रदेशाः अप्रदेशा वा ? नियमतः सप्रदेशा एव, नो

છટ્ટે શતક કે ચૌથા ઉદ્દેશકકા પ્રારમ્ભ—

इस शतक के इस चतुर्थ उद्देशक का विषय विवरण संक्षेप से इस प्रकार है—एक जीव काल की अपेक्षा से क्या प्रदेशों से सहित है कि प्रदेशों से रहित है ? ऐसा प्रश्न—इसका “नियम से जीव प्रदेशों से सहित ही है प्रदेशों से रहित नहीं है” ऐसा उत्तर एक नारक जीव काल की अपेक्षा से क्या प्रदेशसहित है कि प्रदेशरहित है ? ऐसा प्रश्न इसका “कदाचित् वह प्रदेशसहित है और कदाचित् वह प्रदेशरहित है” ऐसा २ उत्तर, अनेक जीव काल की अपेक्षा से सप्रदेश हैं कि प्रदेशों से रहित हैं ? ऐसा प्रश्न, इसका “नियम से वे सब प्रदेशसहित ही हैं” ऐसा उत्तर, अनेक नारक जीव—सब नारक जीव—काल की अपेक्षा से प्रदेशसहित हैं कि प्रदेशों से रहित हैं ऐसा प्रश्न—इसका

છટ્ઠા શતકનો ચોથો ઉદ્દેશક

છટ્ઠા શતકના ચોથા ઉદ્દેશકના વિષયનું સંક્ષિપ્ત વિવરણ—

પ્રશ્ન—એક જીવ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશો સહિત છે કે પ્રદેશોથી રહિત છે ?

ઉત્તર—નિયમથી જ જીવ પ્રદેશોથી યુક્ત છે, પ્રદેશોથી રહિત નથી.

પ્રશ્ન—એક નારક જીવ શું કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશો સહિત છે કે પ્રદેશોથી રહિત છે ?

ઉત્તર—ક્યારેક તે પ્રદેશોથી યુક્ત છે અને ક્યારેક પ્રદેશોથી રહિત છે.

પ્રશ્ન—અનેક (સઘળા) જીવ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશોથી યુક્ત છે કે પ્રદેશોથી રહિત છે ?

ઉત્તર—નિયમથી જ તેઓ બધાં પ્રદેશોથી યુક્ત છે.

પ્રશ્ન—અનેક (સઘળા) નારક જીવ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશયુક્ત છે કે પ્રદેશ રહિત છે ?

અમન્યેભ્યઃ સિદ્ધા અનન્તગુણાઃ મતિપાદિતાઃ, યાવન્નશ્ર સિદ્ધાસ્તાન્ત એવ ચરમાઃ
 યસ્માદ્ યાવન્તઃ સિદ્ધાઃ અતીતાદ્યાપાં તાવન્ત એવ અનાગતાદ્યાપી સિદ્ધિં ગમિષ્યન્તિ,
 અન્તે ગૌતમો મગવદ્વાપ્યં સ્વીકૃર્વન્નાદ-‘ સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ તદેવં
 મવદુક્તં સત્યમેવ, હે મદન્ત ! મવદુક્તં સત્યમેવેત્યર્થઃ ॥ મુ. ૬ ॥

इति श्री विश्वविख्यात - जगदवल्लभ-मसिद्धनाचक - पञ्चदशभाषाकलि-
 तललितकलापालापक-मविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-
 श्रीशाहू छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-
 कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री
 घासीलालव्रतिविरचितायां श्रीमगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
 व्याख्यायां पष्ठशतकस्य तृतीयो शकः समाप्तः ॥ ६-३ ॥

इन दोनों में से चरम जीव अचरम जीवों की अपेक्षा अनन्तगुणे हैं।
 क्यों कि अभव्यों की अपेक्षा सिद्ध जाव सिद्धान्त में अनन्तगुणे कहे
 जाये हैं। जितने सिद्ध हैं उतने ही चरम जीव हैं। क्यों कि जितने जीव
 भूतकाल में सिद्ध हो चुके हैं उतने ही जीव भविष्यत्काल में सिद्ध
 होंगे। अब अन्त में गौतम प्रभु के वचनों को स्वीकार करते हुए कहते
 हैं कि (सेवं मंते ! सेवं मंते ! त्ति) हे भदन्त ! आपका कहा हुआ
 सर्वथा सत्य ही है-हे भदन्त ! सर्वथा सत्य ही है ॥ सू. ६ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर श्री घासीलालजी महाराजकृत “मगव-
 तीसूत्र”की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके छठे शतकका तीसरा

उद्देशक समाप्त ॥ ६-३॥

ચરિમા અનંતગુણા) અચરમ (અમન્ય) અને ચરમ (અન્તિમ બવ કરીને સિદ્ધપદ
 પ્રાપ્ત કરનારા) જીવોમાંથી ચરમ જીવો અચરમ જીવો કરતાં અનંતગુણા છે, કારણ
 કે અમન્ય જીવો કરતાં સિદ્ધ જીવ સિદ્ધાંતમાં અનંતગુણા કહ્યા છે. જેટલાં સિદ્ધ છે
 એટલાં જ ચરમ જીવ છે, કારણ કે જેટલાં જીવો ભૂતકાળમાં સિદ્ધપદ પામી
 ચૂક્યા છે, એટલાં જ જીવો ભવિષ્યકાળમાં પણ સિદ્ધપદ પામશે. સૂત્રનો
 ઉપસંહાર કરતા ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુનાં વચનોનો સ્વીકાર કરતા કહે
 છે-(સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ) હે ભદન્ત ! આપે આ વિષયનું જે મતિ-
 પાદન કયું તે સર્વથા સત્ય છે. હે ભદન્ત ! આપ જે કહો છો તે યથાર્થ જ છે. સૂ. ૬

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત મગવતી સૂત્રની પ્રમેયચ-

ન્દ્રિકા વ્યાખ્યાના છઠ્ઠા શતકનો ત્રીજો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૬-૩॥

કાલાપેક્ષયા સામાન્યજીવસમુચયવન્ ભદ્રદ્વયં, ભદ્રત્રયં ચ । નોભવસિદ્ધિક-નો
અભવસિદ્ધિકાનાં ભદ્રત્રયમ્ । સંજ્ઞિનામ્ અસંજ્ઞિનાં ચ કાલાપેક્ષયા ભદ્રત્રયમ્ । નૈર-
યિક-દેવ - મનુષ્યાણામ્ અસંજ્ઞિનાં ભદ્રપદ્મકમ્ । નોસંજ્ઞિ-નોઅસંજ્ઞિનાં ભદ્ર-
ત્રિકમ્ । ઔચિકજીવત્ લેશ્યાવતામ્ एको भद्रः, ततः कृष्णलेश्या-नीललेश्या-
कापोतलेश्या-तेजोलेश्या-पद्मलेश्या-शुक्ललेश्या-ऽलेश्यैः सम्यग्दृष्टि-मिथ्या-
दृष्टि-सम्यग्मिथ्यादृष्टिभिः, संयता-ऽसंयत-संयतासंयत - नोसंयत नोअसं-
यतनोसंयतासंयत, सकपायि - क्रोधकपायि-मानकपायि - लोभकपायकपा-

જીવો, અભવસિદ્ધિક જીવો કે કાલ કી અપેક્ષા સે સામાન્ય જીવ કી
તરહ દો ભંગ ઓર ત્રીન ભંગ, નો ભવસિદ્ધિક નો અભવસિદ્ધિક જીવો
કે ત્રીન ભંગ, સંજ્ઞિ જીવો કે ઓર અસંજ્ઞિ જીવો કે કાલ કી અપેક્ષા
સે ત્રીન ભંગ, નારક, દેવ, મનુષ્ય ઓર અસંજ્ઞિ જીવ इनके ६ भंग, नो
संज्ञी नो असंज्ञी इनके तीन भद्र होते हैं ऐसा कथन, सामान्य जीव की
तरह लेश्यावाले जीवों के एक भद्र होता है ऐसा विचार, याद में-
कृष्णलेश्या, वाले नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, तेजोलेश्यावाले
पद्मलेश्यावाले, शुक्ललेश्यावाले जीवों के साथ तथा इन लेश्याओं से
रहित जीवों के साथ, सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, संय-
त, असंयत, संयतासंयत, नोसंयत नोअसंयत नोसंयतासंयत
जीवों के साथ, कपायसहित-क्रोधसहित, मानकपायसहित, मायाकपा-
यसहित, लोभकपायसहित जीवों के साथ तथा कपायरहित जीवों के

જીવોના કાળની અપેક્ષાએ સામાન્ય જીવોની જેમ બે ભંગ અને ત્રણ ભંગ,
નો ભવસિદ્ધિક અને નો અભવસિદ્ધિક જીવોના ત્રણ ભંગ, સંજ્ઞી જીવોના
તથા અસંજ્ઞી જીવોના કાળની અપેક્ષાએ ત્રણ ભંગ, નારક, દેવ, મનુષ્ય અને
અસંજ્ઞી જીવોના ૬ ભંગ, અને નો સંજ્ઞી અને નો અસંજ્ઞી જીવોના કાળની
અપેક્ષાએ ત્રણ ભંગ થાય છે એવું કથન.

સામાન્ય જીવની જેમ લેશ્યાવાળા જીવોના એક ભંગ થાય છે એવું
કથન, કૃષ્ણ લેશ્યાવાળા, નીલ લેશ્યાવાળા, કાપોત લેશ્યાવાળા, તેજો લેશ્યા-
વાળા, પદ્મ લેશ્યાવાળા અને શુક્લ લેશ્યાવાળા જીવોની સાથે તથા તે લેશ્યા-
ઓથી રહિત જીવોની સાથે, તથા સમ્યગ્દૃષ્ટિ, મિથ્યાદૃષ્ટિ, સમ્યગ્ મિથ્યાદૃષ્ટિ,
સંયત, અસંયત, સંયતાસંયત, નો સંયત, નો અસંયત, અને નો સંયતા-
સંયત જીવોની સાથે, કપાયયુક્ત (ક્રોધ, માન, માયા, લોભથી યુક્ત) જીવોની

અપ્રદેશાઃ । વહુત્વેન નૈરયિકાઃ કાલાપેક્ષયા સપ્રદેશાઃ, અપ્રદેશા ના ? સર્વેઽપિ કદાચિત્ સપ્રદેશાઃ, કદાચિદ્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ, અલ્પઃ અપ્રદેશઃ' વા-અથવા 'વહવઃ સપ્રદેશા, વહવઃ અપ્રદેશઃ' इति मदनोत्तरम् । एवं यावन्-स्तनितकुमारा अपि बोध्याः । ततः पृथिवीकायिकादीनां यावत् वनस्पतिपर्यन्तानां कालापेक्षया सप्रदेशमप्रदेशत्वविषये प्रश्नोत्तरम् । शेषाणां विकलेन्द्रियादारभ्य सिद्धपर्यन्तानां जीवानां नैरयिकयत् सप्रदेशमप्रदेशत्वविषयकविचारः । ततः आहारकार्णा कालापेक्षया सप्रदेशत्वादिभद्गत्रयम्, अनाहारकाणाम् कालापेक्षया सप्रदेशत्वादिभद्ग-पट्कम्, सिद्धस्य कालापेक्षया भद्गविरुद्धम्, भवसिद्धिकामवसिद्धिकानाम्

“ સમસ્ત નારક જીવ કદાચિત્ પ્રદેશોં સે સહિત હું ઓર કદાચિત્ કિતનેક નારક જીવ પ્રદેશોં સે સહિત હું ” તથા કોઈ એક નારક જીવ પ્રદેશોં સે રહિત હું, અથવા કિતનેક નારક જીવ પ્રદેશોં સે સહિત હું ઓર કિતનેક નારક જીવ પ્રદેશોં સે રહિત હું ” એસા ઉત્તર, હસી તરહ સે સ્તનિતકુમારોં તક જાનના ચાહિયે એસા કથન પૃથિવીકાયિક આદિ સે લગાકર વનસ્પતિકાયિક તક કાલ કી અપેક્ષા સે સપ્રદેશત્વ ઓર અપ્રદેશત્વ કી ચર્ચા શેષ વિકલેન્દ્રિયોં સે લેકર સિદ્ધતક કે જીવોં મેં નૈરયિક જીવોં કી તરહ સપ્રદેશત્વ ઓર અપ્રદેશત્વ વિષયક વિચાર; આહારક જીવોં કે કાલ કી અપેક્ષા સે સપ્રદેશત્વ આદિ ત્રીન ભંગ હોતે હું તથા અનાહરકોં કે કાલ કી અપેક્ષા સે સપ્રદેશત્વ આદિ ૬ ભંગ, સિદ્ધ જીવ કે કાલ કી અપેક્ષા સે ત્રીન ભંગ, ભવસિદ્ધિક

ઉત્તર—“ અયાં નારક ઇવ ક્યારેક પ્રદેશોથી યુક્ત હોય છે, અને ક્યારેક કેટલાક નારક ઇવ પ્રદેશોથી યુક્ત હોય છે ” તથા કોઈક નારક ઇવ પ્રદેશોથી રહિત છે, અથવા કેટલાક નારક ઇવ પ્રદેશોથી યુક્ત છે. અને કેટલાક નારક ઇવ પ્રદેશોથી રહિત છે. એ જ પ્રમાણે સ્તનિતકુમારો. પર્યન્તના વિષે સમજવું.

પૃથ્વીકાયિક આદિથી લઈને વનસ્પતિકાય પર્યન્તના જીવોના કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વની ચર્ચા, બાકીના વિકલેન્દ્રિય (દ્વિન્દ્રિયથી ચતુરિન્દ્રિય સુધીના જીવો) થી લઈને સિદ્ધ સુધીના જીવોના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વનો નારકોના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વની જોમ વિચાર, કાળની અપેક્ષાએ આહારક જીવોમાં સપ્રદેશત્વ આદિ ત્રણ ભંગ (વિકલ્પ) થાય છે, અનાહારકોના કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશત્વ આદિ ૬ ભંગ થાય છે, સિદ્ધ જીવોના કાળની અપેક્ષાએ ત્રણ ભંગ, ભવસિદ્ધિક જીવોના અને અભવસિદ્ધિક

નાપ્રત્યાહ્યાનિત્વપ્રતિપાદનમ્, एवमेव नैरगिकादि-यान्-चतुरिन्द्रिय-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-मनुष्यैः सह प्रत्याह्यानविचारवर्चा, जीवानां प्रत्याह्यानाप्रत्याह्यानज्ञानप्रश्नः । पञ्चेन्द्रियाणां तज्ज्ञानित्वम्, तद्भिन्नानां तदज्ञानित्वं च, ततो जीवानां प्रत्याह्यानाऽप्रत्याह्यानकरणविचारः ततः प्रत्याह्यानाऽप्रत्याह्यान-निर्वर्तितायुष्यबन्धकथनम् दण्डकचतुष्टयम्, गौतमस्य सर्वसमर्थनं च ।

जीवस्य सपदेशाऽप्रदेशवक्तव्यता ।

મૂલમ્—જીવે પાં ભંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણસે, અપણસે ?
ગાયમા ! નિયમા સપણસે । નેરહણ પાં ભંતે ! કાલાદેસેણં કિં

ભવ્ય, સંજી, લેશ્યા, દટ્ટિ, સંયત, કપાય, યોગ, ઉપયોગ, વેદ, શરીર, પર્યાસિ, એ દ્વારે હૈં એસા કથન જીવોં કે પ્રત્યાહ્યાની અપ્રત્યાહ્યાની ઔર પ્રત્યાહ્યાના પ્રત્યાહ્યાની કા પ્રતિપાદન इसी तरह नैरगिकसे लेकर चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च और मनुष्यों के साथ प्रत्याह्यान के विचारकी चर्चा, जीवों को प्रत्याह्यान अप्रत्याह्यान आदिका ज्ञान होता है क्या ? ऐसा प्रश्न; पंचेन्द्रियों को इनका ज्ञान होता है और इनसे भिन्न जीवों को इनका ज्ञान नहीं होता है ऐसा कथन क्या जीव प्रत्याह्यान, अप्रत्याह्यान आदि करते हैं ऐसा प्रश्न, हां करते हैं ऐसा उत्तर प्रत्याह्यान और अप्रत्याह्यान आदिसे आयुष्क का बंध होता है क्या ? हां होता है ऐसा उत्तर, इस विषयक चार दण्डक गौतमकी ओर से सर्व समर्थन ।

સંબ્રહ્મગાથા—તેમાં સપ્રદેશત્વ, આહારક, ભવ્ય, સંજી, લેશ્યા, દટ્ટિ, સંયત, કપાય, યોગ, ઉપયોગ, વેદ, શરીર અને પર્યાસિ, એ દ્વારે છે એવું કથન. જીવોની પ્રત્યાહ્યાની. અપ્રત્યાહ્યાની, અને પ્રત્યાહ્યાના-પ્રત્યાહ્યાની-તાનું પ્રતિપાદન, એજ પ્રમાણે નારકોથી લઈને ચતુરિન્દ્રિ, પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ અને મનુષ્યોના પ્રત્યાહ્યાનાદિનું કથન.

પ્રશ્ન—જીવોને પ્રત્યાહ્યાન અપ્રત્યાહ્યાન આદિનું જ્ઞાન હોય છે ખરું ?

ઉત્તર—પંચેન્દ્રિયોને તેનું જ્ઞાન હોય છે, તે સિવાયના જીવોને તેનું જ્ઞાન હોતું નથી એવું કથન.

પ્રશ્ન—શું જીવ પ્રત્યાહ્યાન, અપ્રત્યાહ્યાન આદિ કરે છે ?

ઉત્તર—હા કરે છે.

પ્રશ્ન—શું પ્રત્યાહ્યાન અને અપ્રત્યાહ્યાન આદિથી આયુનો બંધ થાય છે ?

ઉત્તર—હા, થાય છે. આ વિષેના ચાર દંડક. ગૌતમ દ્વારા તેનું સમર્થન.

યિમિઃ, ઔધિકજ્ઞાનાઽઽભિનિચોધિકજ્ઞાન-ધ્રુતજ્ઞાના-અવધિજ્ઞાન-મનઃપર્યયજ્ઞાન-
કેવલજ્ઞાનૈઃ, ઔધિકજ્ઞાન-મત્યજ્ઞાન-ધ્રુતાજ્ઞાન-ચિમ્નજ્ઞાનૈઃ, સયોગિ-મનોયોગિ-
વચનયોગિ-કાયયોગ્યયોગિમિઃ, સાકારોપયુક્તા-નાકારોપયુક્તૈઃ, સવેદક-સ્ત્રીવેદક-
પુરુષવેદક-નપુંસકવેદકા-ઽવેદકૈઃ, સશરીરોદારિકવૈક્રિયા - ઽઽહારક-તૈજસ-
કાર્મણાઽશરીરૈઃ, આહારપર્યાસિ-શરીરપર્યાસી -ન્દ્રિયપર્યાપ્ત્યાનપ્રાણપર્યાસિભાષા-
મનઃપર્યાસિમિઃ, આહારપર્યાસિ-શરીરપર્યાસી - ન્દ્રિયાપર્યાપ્ત્યાનપ્રાણપર્યાસિ-
ભાષા-મનોઽપર્યાસિમિઃ સહ કાલાપેક્ષયા સપ્રદેશત્વાપ્રદેશત્વાદિવિચારઃ સંગ્રહ-
ગાથા, સપ્રદેશાહારક-ભવ્ય-સંત્તિ-લેહ્યા-દૃષ્ટિ-સંયત-કંપાય-યોગો-પયોગ-
વેદ-શરીર-પર્યાસયઃ, તત્તો જીવાનાં પ્રત્યાલ્પાનિત્વાઽપ્રત્યાલ્પાનિત્વ-પ્રત્યાલ્પા-

સાથ, ઔધિકજ્ઞાન-આભિનિચોધિકજ્ઞાન, ધ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન, મન
પર્યયજ્ઞાન, કેવલજ્ઞાન इन ज्ञानोंके साथ, ઔધિક અજ્ઞાન-મતિ અજ્ઞાન,
ધ્રુતઅજ્ઞાન, ચિમ્નજ્ઞાન इन तीन अज्ञानों के साथ, સયોગી, મનોયોગી,
વચનયોગી, કાયયોગી, इनके साथ तथा अयोगियों के साथ, સાકાર
ઉપયોગવાળે અનાકાર ઉપયોગવાળોં કે સાથ, સવેદક-સ્ત્રીવેદક, પુરુષ-
વેદક, નપુંસકવેદક, इन वेदवालों के साथ और वेदरहित जीवों के
સાથ, સશરીર-ઔદારિક વૈક્રિય-આહારક-તૈજસ-કાર્મણ-અશરીર,
આહારપર્યાસિ, શરીરપર્યાસિ, इन्द्रियपर्यासि, आनप्राणपर्यासि, भाषा-
પર્યાસિ, મન પર્યાસિ इन सबके साथ काल की अपेक्षा से सप्रदेशत्व
और अप्रदेशत्व आदिका विचार, संग्रहगाथा इसमें सप्रदेशत्व, आहारक,

સાથે તથા કથાય રહિત જીવોની સાથે, ઔધિકજ્ઞાન (આભિનિચોધિક જ્ઞાન)
શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યયજ્ઞાન, અને કેવલજ્ઞાનની સાથે, ઔધિક અજ્ઞાન
(મતિ અજ્ઞાન), શ્રુત અજ્ઞાન અને વિભંગજ્ઞાન (વિપરીત જ્ઞાન) આ ત્રણ
અજ્ઞાનોની સાથે, સયોગી, મનોયોગી, વચનયોગી અને કાયયોગીની સાથે તથા
અયોગીઓની સાથે, સાકાર ઉપયોગવાળા અને અનાકાર ઉપયોગવાળા સાથે,
સવેદક (સ્ત્રી વેદક, પુરુષ વેદક અને નપુંસક વેદક) સાથે તથા વેદરહિત
જીવોની સાથે, સશરીર (ઔદારિક, વૈક્રિય, આહારક, તૈજસ અને કાર્મણ
શરીરવાળા) જીવોની સાથે અને અશરીર જીવોની સાથે, આહાર પર્યાસિ,
શરીર પર્યાસિ, इन्द्रिय पर्यासि, आनप्राण पर्यासि, भाषा पर्यासि અને મનઃ-
પર્યાસિ, આ બધા જીવોની સાથે કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશત્વ અને
અપ્રદેશત્વનો વિચાર.

भंगो । अलेसेहिं जीव-सिद्धेहिं त्रियभंगो । मणुएसु छवभंगो ।
 सम्मादिद्धिहिं जीवाइओ त्रियभंगो । विगलिदिएसु छवभंगो ।
 मिच्छदिद्धीहिं एगिंदियवज्जो त्रियभंगो । सम्मामिच्छदिद्धीहिं
 छवभंगा । संजएहिं जीवाइओ त्रियभंगो । असंजएहिं एगि-
 दियवज्जो त्रियभंगो । संजयासंजएहिं त्रियभंगो जीवाइओ ।
 णोसंजय-णोअसंजय-णोसंजयामंजय-जाव सिद्धेहिं त्रियभंगो ।
 सकसाईहिं जीवाइओ त्रियभंगो । एगिदिएसु अभंगकं । कोह-
 कसाइहिं जीव-एगिंदियवज्जो त्रियभंगो । देवेहिं छवभंगा,
 माणकसाई मायाकसाई जीवे गिंदियवज्जो त्रियभंगो । नेरइय-
 देवेहिं छवभंगा । लोभकसाईहिं जीव-एगिंदियवज्जो त्रिय-
 भंगो । नेरएसु छवभंगा । अकसाई-जीव-मणुएहिं, सिद्धेहिं
 त्रियभंगो । ओहियणाणे, अभिणिबोहियणाणे, सुयणाणे, जीवा-
 इओ त्रियभंगो । विगलिदिएहिं छवभंगा । ओहिणाणे, मण-
 पज्जवणाणे केवलणाणे जीवाइओ त्रियभंगो । ओहिय-अण्णाणे,
 मइ-अन्नाणे, सुय-अन्नाणे, एगिंदियवज्जो त्रियभंगो । विभंगं
 अण्णाणे जीवाइओ त्रियभंगो । सजोगी जहा-ओहिओ ।
 मणजोगि-वयजोगि-कायजोगिहिं जीवाइओ त्रियभंगो, नवरं-
 कायजोगी एगिंदिया, तेसु अभंगयं । अजोगी जहां-अलेस्ता ।
 सागरोवउत्त-अणागारोवउत्तेहिं जीव-एगिंदियवज्जो त्रियभंगो ।
 सवेयगा य जहा-सकसाई । इत्थिवेयगं-पुरिसवेयगं-नपुंसगं-
 वेयगेसु जीवाइओ त्रियभंगो, नवरं नपुंसगंवेदे एगिदिएसु

सपएसे अपएसे ? गोयमा ! सिय सपएसे, सिय अपएसे, एवं
जाव-सिद्धे । जीवा णं भंते ! कालादेसेणं किं सपएसा, अप-
एसा ? गोयमा ! नियमा सपएसा । नेरइया णं भंते ! काला-
देसेणं किं सपएसा, अपएसा ? गोयमा ! सव्वे वि ताव होज्जा
सपएसा, अहवा सपएसा य, अपएसे य, अहवा सपएसा य
अपएसा य, एवं असुरकुमारा जाव थणियकुमारा । पुढवीका-
इया णं भंते ! किं सपएसा, अपएसा ? गोयमा ! सपएसा वि,
अपएसा वि, एवं जाव-वणस्सकाइया, सेसा जहा नेरइया
तहा, जाव-सिद्धा, आहारगाणं जीव-एगिंदियवज्जो तियभंगो ।
अणाहारगाणं जीवेगिंदियवज्जा छव्वंभा एवं भाणियव्वा-
सपएसा १, अपएसा २, अहवा सपएसे य, अपएसेय ३, अहवा
सपएसे य अपएसा य ४, अहवा सपएसा य अपएसे य,
अहवा सपएसा य अपएसा य, सिद्धेहिं तियभंगो । भवसि-
द्धिया, अभवसिद्धिया, जहा-ओहिया । णोभवसिद्धिय-णो-
अभवसिद्धियजीवसिद्धेहिं तियभंगो । सन्नीहिं जीवाइओ
तियभंगो । असन्नीहिं एगिंदियवज्जो तियभंगो । नेरइय-देव-
मणुएहिं छव्वंभा । णोसन्नि - णोअसन्नि-जीवमणुयसिद्धेहिं
तियभंगो । सलेसा जहा ओहिया । कण्हलेस्सा, नीललेस्सा,
काउलेस्सा जहा आहारओ, नवरं जस्स अत्थि एयाओ । तेउ-
लेस्साए जीवाइओ तियभंगो, नवरं-पुढविव्काइएसु, आउव-
णस्सईसु छव्वंभा । पम्हलेस्स-सुक्कलेस्साए जीवाइओ तिय-

ગૌતમ ! સ્યાન્ સપ્રદેશઃ, સ્યાદ્ અપ્રદેશઃ । एवं यावत्-सिद्धः । जीवाः खलु भदन्त । कालादेशेन किं संप्रदेशाः, अप्रदेशाः ? गौतम ! नियमात् संप्रदेशाः, नैरपेक्षाः खलु भदन्त । कालादेशेन किं संप्रदेशाः, अप्रदेशाः ? गौतम ! सर्वेऽपि तावद् भवेयुः संप्रदेशाः, अथवा संप्रदेशाश्च अप्रदेशश्च, अथवा संप्रदेशश्च अप्रदेशश्च, एवम् अमुरकुमारा यावत्-स्तनितकुमाराः । पृथिवीकायिकाः खलु भदन्त !

પ્રદેશરહિત હૈ ? (ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! (સિય સપણસે સિય અપણસે) નારકજીવ કાલકી અપેક્ષાસે કદાચિત્ પ્રદેશસહિત હૈ ઓર કદાચિત્ પ્રદેશરહિત હૈ (एवं जाव सिद्धे) इसी तरह से यावत् सिद्ध भी कदाचित् प्रदेशसहित हैं और कदाचित् प्रदेशरहित हैं । (जीवा णं भंते । कालादेसेणं किं सपणसा अपणसा) हे भदन्त ! समस्त जीव क्या काल की अपेक्षा से प्रदेशरहित हैं कि प्रदेशरहित हैं ? (गोयमा) हे गौतम ! समस्त जीव काल की अपेक्षा से (नियमा) नियम से (सपणसा) प्रदेशसहित हैं । (नेरइया णं भंते ! कालादेसेणं किं सपणसा अपणसा) हे भदन्त ! समस्त नारक जीव काल की अपेक्षा क्या प्रदेशसहित हैं कि प्रदेशरहित हैं ? (गोयमा) हे गौतम ! (सव्वे वि ताव होज्जा सपणसा, अहवा सपणसा य अपणसे, अहवा-सपणसा य अपणसा य एवं असुरकुमारा जाव धणियकुमारा) समस्त नारक जीव भी काल की अपेक्षा प्रदेशसहित हैं । अथवा कितनेक नारक जीव प्रदेशर-

(ગોયમા ! સિય સપણસે સિય અપણસે) હૈ ગૌતમ ! નારક જીવ કાળની અપેક્ષાએ ક્યારેક સપ્રદેશી છે અને ક્યારેક અપ્રદેશી છે.

(एवं जाव सिद्धे) એજ પ્રમાણે સિદ્ધ થઈતેના જીવ ક્યારેક સપ્રદેશી છે અને ક્યારેક અપ્રદેશી છે.

(जीवाणं भंते ! कालादेसेणं सपणसा अपणसा) હૈ ભદન્ત ! સમસ્ત જીવો કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશી છે કે અપ્રદેશી છે ?

(गोयमा !) હૈ ગૌતમ ! સમસ્ત જીવો કાળની અપેક્ષાએ (नियमा सपणसे) નિયમથી જ સપ્રદેશી છે.

(नेरइया णं भंते ! कालादेसेणं किं सपणसा अपणसा ?) હૈ ભદન્ત ! સમસ્ત નારક જીવો શું કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશસહિત છે કે પ્રદેશરહિત છે ?

(गोयमा !) હૈ ગૌતમ ! (सव्वे वि ताव होज्जा सपणसा, अहवा सपणसा य अपणसे, अहवा-सपणसा य अपणसाय एवं असुरकुमारा जाव धणियकुमारा) સમસ્ત નારક જીવો પણ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશસહિત છે. અથવા

અભંગયં । અવેયગા જહા--અવસાઈ । સસરીરી જહા ઓહિઓ ।
 ઓરાલિય-વેડવિયસરીરેહિં જીવ-ર્ણિદિયવજ્જો તિયભંગો ।
 આહારગસરીર-જીવ-મણુપ્પસુ છવ્વમંગા । તેયગ-કમ્મમેહિં જહા
 ઓહિયા । અસરીરેહિં જીવ-સિદ્ધેહિં તિયભંગો । આહારપજ્જત્તીપ્પ,
 સરીરપજ્જત્તીપ્પ, ઇંદિયપજ્જત્તીપ્પ આળપાળપજ્જત્તીપ્પ, જીવ-
 ઈર્ણિદિયવજ્જો તિયભંગો । ભાસા-મણપજ્જત્તીપ્પ જહા સત્તી ।
 આહાર-અપજ્જત્તીપ્પ જહા -અણાહારગા । સરીર-અપજ્જત્તીપ્પ,
 ઇંદિયઅપજ્જત્તીપ્પ, આળપાળ અપજ્જત્તીપ્પ, જીવ-ઈર્ણિદિય-
 વજ્જો તિયભંગો । નેરહય-દેવ-મણુર્ણિં છવ્વમંગા ॥ સંગહગાહા-
 સપપ્પસા આહારગ ભવિય-સન્નિ-લેસા-દિટ્ઠિ-સંજય-કસાયા ।
 ણાળે જોયુ-વઓમે વેદે ય સરીર-પજ્જત્તી ॥ સૂ૦? ॥

છાયા—જીવઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કાલાદેશેન કિં સપ્પદેશઃ, અપ્પદેશઃ, ? ગૌતમ !
 નિયમાત્ સપ્પદેશઃ નૈરયિકઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કાલાદેશેન કિં સપ્પદેશઃ, અપ્પદેશઃ ?

જીવ કે સપ્પદેશ ઓર અપ્પદેશ કી વક્તવ્યતા—

‘જીવે ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(જીવે ણં મંતે ! કાલાદેશેણં કિં સપ્પદેસે, અપ્પદેસે) હે
 ભદન્ત ! જીવ કાલ કી અપેક્ષા સે કયા પ્રદેશસહિત હૈ ? કિં પ્રદેશ-
 રહિત હૈ ? (ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! (નિયમા સપ્પદેસે) નિયમ સે જીવ
 પ્રદેશસહિત હૈ । (નેરહયણં મંતે ! કાલાદેશેણં કિં સપ્પદેસે અપ્પદેસે)
 હૈ ભદન્ત ! નારક જીવ કયા કાલ કી અપેક્ષા સે પ્રદેશ સહિત હૈ ? કિં

અવના સપ્પદેશત્વ અને અપ્પદેશત્વનું નિરૂપણ—

“જીવે ણં મંતે ! ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—(જીવેણં મંતે ! કાલાદેશેણં સપ્પદેસે અપ્પદેસે ?) હે ભદન્ત ! શું
 અવ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશસહિત છે કે પ્રદેશરહિત છે ?

(ગોયમા ! નિયમા સપ્પદેસે) હે ગૌતમ ! અવ નિયમથી કે પ્રદેશરહિત છે.

(નેરહયણં મંતે ! કાલાદેશેણં કિં સપ્પદેસે અપ્પદેસે ?) હે ભદન્ત ! નારક
 અવ શું કાળની અપેક્ષાએ સપ્પદેશી છે કે અપ્પદેશી છે ?

ત્રત્યા:-સપ્રદેશા ચા ૧, અપ્રદેશા ચાં ૨, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૩, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશાથ ૪, અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશથ ૫, અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ૬ । સિદ્ધેષુ ત્રયો ભદ્રાઃ । ભવસિદ્ધિકાઃ, અભવસિદ્ધિકા યથા ઔઘિકાઃ । નોભવસિદ્ધિક-નોત્રભવસિદ્ધિકજીવ-સિદ્ધયોસ્તયો ભદ્રાઃ, સંત્રિષુ જીવાદિકા-

૧, અપણસા ચા ૨, અહવા-સપણસે ચ અપણસે ચ ૩, અહવા સપણસે ચ અપણસા ૪ અહવા-સપણસા ચ અપણસે ચ, અહવા સપણસા ચ અપણસા ચ-સિદ્ધેર્હિં તિય ભંગો, ભવસિદ્ધિયાં અભવસિદ્ધિયા જહા ઓહિયા) અનાહારક જીવોં કે જીવ ઓર એકેન્દ્રિય કો છોડકર છ ભંગ હસ પ્રકાર સે કહનાં ચાહિયે-કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતે હૈં (૧), કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશરહિત હોતે હૈં (૨) અથવા-કોઈ એક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતા હૈં ઓર કોઈ એક અનાહારક જીવ પ્રદેશરહિત હોતા હૈં (૩) કોઈ એક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતા હૈં ઓર કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશરહિત હોતે હૈં (૪) કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતે હૈં ઓર કોઈ એક પ્રદેશરહિત હોતા હૈં (૫) કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશસહિત હોતે હૈં ઓર કિતનેક અનાહારક જીવ પ્રદેશરહિત હોતે હૈં ૬ । સિદ્ધ જીવોં કે ત્રીન ભંગ હોતે હૈં । સામાન્ય જીવોં કી તરહ ભવસિદ્ધિક ભવ્યજીવ ઓર અભવ્યસિદ્ધિક

(૩) અહવા-સપણસે ચ અપણસે ચ, (૪) અહવા-સપણસે ચ. અપણસા ચ, (૫) અહવા-સપણસા ચ અપણસે ચ (૬) અહવા-સપણસા ચ અપણસા ચ-સિદ્ધેર્હિં તિય ભંગો, ભવસિદ્ધિયા અભવસિદ્ધિયા જહા ઓહિયા) એવ અને એકેન્દ્રિય સિવાયના અનાહારક એવાના ત્રીયે પ્રમાણે ૬ ભંગ સમજવા-(૧) કેટલાક અનાહારક એવા પ્રદેશસહિત હોય છે. (૨) કેટલાક અનાહારક એવા પ્રદેશરહિત હોય છે. (૩) અથવા કોઈક અનાહારક એવ પ્રદેશસહિત હોય છે અને કોઈક અનાહારક પ્રદેશરહિત હોય છે. (૪) કોઈક અનાહારક એવ પ્રદેશસહિત હોય છે અને કેટલાક અનાહારક એવા પ્રદેશરહિત હોય છે. (૫) કેટલાક અનાહારક એવા પ્રદેશસહિત હોય છે અને કોઈક નારક એવ પ્રદેશરહિત હોય છે. (૬) કેટલાક અનાહારક એવા પ્રદેશસહિત હોય છે અને કેટલાક અનાહારક એવા પ્રદેશરહિત હોય છે. સિદ્ધ એવાના ત્રણ ભંગ (વિકલ્પ) થાય છે. સામાન્ય એવાની ત્રણ ભવસિદ્ધિક (ભવ્ય એવ) અને અભવસિદ્ધિક (અભવ્ય એવ) ના વિષયમાં પણ સમજવું.

કિં સપ્રદેશઃ અપ્રદેશઃ ? ગૌતમ ! સપ્રદેશ અપિ, અપ્રદેશ અપિ, एवं यावत्-
वनस्पतिकायिकाः, शेषाः यथा नैरयिहास्तथा, यावत्-सिद्धाः । आहारकाणां
जीवै-केन्द्रियवर्जस्तिकमङ्गः । अनाहारकाणां जीवैकेन्द्रियवर्जाः गङ्मङ्गा एवं भणि-

हित हैं और कोई एक नारक जीव प्रदेशरहित हैं अथवा-कितनेक
नारक जीव प्रदेशसहित हैं और कितनेक नारक जीव प्रदेशरहित हैं ।
इसी तरह असुरकुमारों से लेकर यावत् स्तनितकुमारों तक जानना
चाहिये । (पुढविकाइया णं भंते ! किं सपपसा अपपसा) हे भदन्त !
पृथिवीकायिक जीव क्या प्रदेशसहित हैं कि प्रदेशरहित हैं ? (गोयमा)
हैं गौतम ! (सपपसा वि अपपसा वि) पृथिवीकायिक जीव प्रदेशसहित
भी हैं और प्रदेशरहित भी हैं । (एवं जाव वणस्सइकाइया सेसा जहा
नेरइयां तथा जाव सिद्धा) इसी तरह से यावत् वनस्पतिकायिक तक के
जीवों के विषय में जानना चाहिये । जिस तरह से नैरयिक जीवों के
विषय में कहा है, उसी तरह से सिद्धतक के बाकी के जीवों के विषय
में जानना चाहिये । (आहारगाणं जीव-एगिंदियवज्जो तियमंगो) जीव
और एकेन्द्रियको छोड़कर आहारक जीवों के तीनभंग होते हैं । (अणा-
हारगा णं जीव-एगिंदियवज्जा छवमंगा एवं भाणियव्वा-सपपसा वा

કેટલાક નારક જીવો પ્રદેશસહિત છે અને કેટલાક નારક જીવ પ્રદેશરહિત છે.
અથવા કેટલાક નારક જીવો પ્રદેશસહિત છે અને કેટલાક નારક જીવો પ્રદેશ-
રહિત છે. એજ પ્રમાણે, અસુરકુમારો થી સ્તનિતકુમારો પર્યન્તના
વિષયમાં સમજવું.

(પુઢવિકાઈયા ણં ભંતે ! કિં સપપસા અપપસા) હે ભદન્ત ! પૃથ્વીકાયિક
જીવો શું પ્રદેશસહિત છે કે પ્રદેશરહિત છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સપપસા વિ અપપસા વિ) પૃથ્વીકાયિક જીવો
પ્રદેશસહિત પણ છે અને પ્રદેશરહિત પણ છે. (एवं जाव वणस्सइकाइया
सेसा जहा नेरइयां तथा, जाव सिद्धा) એજ પ્રમાણે વનસ્પતિકાય સુધીના
જીવો વિષે સમજવું. એ પ્રમાણે નારક જીવોના વિષયમાં કહ્યું છે, એજ
પ્રમાણે, સિદ્ધજીવો પર્યન્તના બાકીના વિષયમાં પણ સમજવું.

(આહારગાણં, જીવ-એગિંદિયવજ્જો, તિયમંગો) જીવ અને એકેન્દ્રિય
સિવાયના આહારક જીવોના ત્રણ ભંગ (વિકલ્પ) થાય છે. (અણાહારગાણં
જીવ-એગિંદિયવજ્જા, છવમંગા, एवं-ભાણિયવ્વા (૧) સપપસા વા, (૨) અપપસા વા,

તેન્યાઃ-સપ્રદેશાં વા ૧, અપ્રદેશાં વાં ૨, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૩, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૪, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૫, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૬ । સિદ્ધેષુ ત્રયો મજ્ઞાઃ । મંવસિદ્ધિકાઃ, અમંવસિદ્ધિકા યથા ઔચિતાઃ । નોમંવસિદ્ધિક-નોઅમંવસિદ્ધિકઝીવ-સિદ્ધયોસ્તયો મજ્ઞાઃ, સંત્રિપુ ઝીવાદિકા-

૧, અપ્રદેશાં વા ૨, અહવા-સપ્રદેશે ય અપ્રદેશે ય ૩, અહવા સપ્રદેશે ય અપ્રદેશા ૪ અહવા-સપ્રદેશા ય અપ્રદેશે ય, અહવા સપ્રદેશા ય અપ્રદેશા ય-સિદ્ધેહિં તિય મંગો, મંવસિદ્ધિયાં અમંવસિદ્ધિયાં જહા ઔહિયા) અનાહારક ઝીવોં કે ઝીવ ઔર ઔકેન્દ્રિય કો છોડકર છ મંગ હસ પ્રકાર સેં કહનાં ચાહિયે-કિતનેક અનાહારક ઝીવ પ્રદેશસહિત હોતે હેં (૧), કિતનેક અનાહારક ઝીવ પ્રદેશરહિત હોતે હેં (૨) અથવા-કોઈ ઔક અનાહારક ઝીવ પ્રદેશસહિત હોતા હેં ઔર કોઈ ઔક અનાહારક ઝીવ પ્રદેશરહિત હોતા હેં (૩) કોઈ ઔક અનાહારક ઝીવ પ્રદેશસહિત હોતા હેં ઔર કિતનેક અનાહારક ઝીવ પ્રદેશરહિત હોતે હેં (૪) કિતનેક અનાહારક ઝીવ પ્રદેશસહિત હોતે હેં ઔર કોઈ ઔક પ્રદેશરહિત હોતા હેં (૫) કિતનેક અનાહારક ઝીવ પ્રદેશસહિત હોતે હેં ઔર કિતનેક અનાહારક ઝીવ પ્રદેશરહિત હોતે હેં ૬ । સિદ્ધ ઝીવોં કે ત્રીન મંગ હોતે હેં । સામાન્ય ઝીવોં કી તરહ મંવસિદ્ધિક મંવ્યઝીવ ઔર અમંવ્યસિદ્ધિક

(૩) અહવા-સપ્રદેશે ય અપ્રદેશે ય, (૪) અહવા-સપ્રદેશે ય. અપ્રદેશા ય, (૫) અહવા-સપ્રદેશા ય અપ્રદેશે ય (૬) અહવા-સપ્રદેશા ય અપ્રદેશા ય-સિદ્ધેહિં તિય મંગો, મંવસિદ્ધિયાં અમંવસિદ્ધિયાં જહા ઔહિયા) ઔવ અને ઔકેન્દ્રિય સિવાયના અનાહારક ઔવોના નીચે પ્રમાણે ૬ ભંગ સમજવા-(૧) કેટલાક અનાહારક ઔવો પ્રદેશસહિત હોય છે. (૨) કેટલાક અનાહારક ઔવો પ્રદેશરહિત હોય છે. (૩) અથવા કોઈક અનાહારક ઔવ પ્રદેશસહિત હોય છે અને કોઈક અનાહારક પ્રદેશરહિત હોય છે. (૪) કોઈક અનાહારક ઔવ પ્રદેશસહિત હોય છે અને કેટલાક અનાહારક ઔવો પ્રદેશરહિત હોય છે. (૫) કેટલાક અનાહારક ઔવો પ્રદેશસહિત હોય છે અને કોઈક નારક ઔવ પ્રદેશરહિત હોય છે. (૬) કેટલાક અનાહારક ઔવો પ્રદેશસહિત હોય છે અને કેટલાક અનાહારક ઔવો પ્રદેશરહિત હોય છે. સિદ્ધ ઔવોના ત્રણ ભંગ (વિકલ્પ) થાય છે. સામાન્ય ઔવોની જેમ ભવસિદ્ધિક (ભવ્ય ઔવ) અને અભવસિદ્ધિક (અભવ્ય ઔવ) નો વિષયમાં પણ સમજવું.

છત્રો મહાઃ। અસંજિપુ એકેન્દ્રિયવર્ગાસ્રગો મહાઃ, નૈરયિક-દેવ-મનુજેપુ ૫૩ મહાઃ, નોસંજિ-નોઅસંજિ-જીવ-મનુજસિદ્ધેપુ ૫૪ મહાઃ। સલેશ્યા યથા ઓધિઃ। કૃષ્ણલેશ્યાઃ, નીલલેશ્યાઃ, કાપોતલેશ્યાઃ, યથા આહારકઃ, નવરમ્-પત્ય સન્તિ ઇતાઃ। તેજોલેશ્યાયાં જીવાદિકાશ્રયો મહાઃ, નવરમ્-પૃથિરીકાયકેપુ, અન્-

અભવ્યજીવ જાનના ચાહિયે (જો મવસિદ્ધિય જો અમવસિદ્ધિ ય જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો) નો મવસિદ્ધિક નો અમવસિદ્ધિક, જીવ ઓર સિદ્ધોં મેં ત્રીન મંગ હોતે હેં। (સન્નીહિં જીવાઈઓ તિયમંગો) સંજી જીવોં મેં જીવાદિક ત્રીન મંગ હોતે હેં। (અસન્નીહિં એકિન્દ્રિયવર્ગો તિયમંગો) અસંજી જીવોં મેં એકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીન મંગ હોતે હેં। (નૈરયિક-દેવ-મનુજેહિં છમંગો) નૈરયિક દેવ ઓર મનુષ્ય મેં છહ મંગ હોતે હેં। (જોસણિ નોઅસન્નિ જીવમનુયસિદ્ધેહિં તિયમંગો) નોસંજી, નોઅસંજી જીવ, મનુષ્ય ઓર સિદ્ધોં મેં ત્રીન મંગ હોતે હેં। (સલેસા જહા ઓહિયા) સામાન્ય જીવોં કી તરહ લેશ્યા-વાલે જીવોં કો જાનના ચાહિયે। (કણ્હલેસા, નીલલેસા, કાઝલેસા જહા-આહારઓ) કૃષ્ણલેશ્યાવાલે, નીલલેશ્યાવાલે ઓર કાપોતલેશ્યા-વાલે જીવ આહારક જીવોં કી તરહ સે જાનના ચાહિયે। (નવરં જસ અત્થિયાઓ) વિશેષતા યહ હે કિ જિસ જીવ કે જો લેશ્યા હોતી હેં ઉસ જીવ કે ઉસ લેશ્યા કો કહના ચાહિયે। (તેજલેસાજીવાઈઓ

(જો મવસિદ્ધિય જો અમવસિદ્ધિય જીવસિદ્ધેહિં તિયમંગો) નો ભવ-સિદ્ધિક, નો અભવસિદ્ધિક અને સિદ્ધિ એવોના ત્રણ ભંગ થાય છે. (સન્નીહિં જીવાઈઓ તિયમંગો) સંજી એવોમાં એવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. (અસન્નીહિં એકેન્દ્રિય સિવાયના અસંજી એવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. (નૈરયિક, દેવ, મનુજેહિં છમંગો) નારક દેવ અને મનુષ્યોં માં ૩ ભંગ થાય છે. (જોસણી જોઅસણિ જીવમનુયસિદ્ધેહિં તિયમંગો) નો, સંજી, નો અસંજી, એવ, મનુષ્ય અને સિદ્ધોંમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. (સલેસા જહા ઓહિયા) સામાન્ય એવોની જેમ જ લેશ્યાવાળા એવોના વિષયમાં ૫૫ સમજવું. (કણ્હલેસા, નીલલેસા, કાઝલેસા, જહા આહારઓ) કૃષ્ણ લેશ્યાવાળા, નીલ લેશ્યાવાળા અને કાપોત લેશ્યાવાળા એવોના વિષયમાં આહારક એવો પ્રમાણે સમજવું. (નવરં જસ અત્થિયાઓ) ૫૫ તેમાં કોટલી જ વિશેષતા છે કે જે એવની જે લેશ્યા હોય છે, તે એવની તે લેશ્યા

વનસ્પતિષુ પદ્ મહ્નાઃ । પદ્મલેશ્ય-પદ્મલેશ્યયોઃ જીવાદિકાશ્ચયો મહ્નાઃ ।
અલેશ્યેષુ જીવસિદ્ધેષુ ત્રયો મહ્નાઃ । મનુજેષુ પદ્મમહ્નાઃ । સમ્યગ્દષ્ટિષુ જીવા-
દિકાશ્ચયો મહ્નાઃ । વિકલેન્દ્રિયેષુ પદ્મમહ્નાઃ । મિથ્યાદષ્ટિષુ એકેન્દ્રિયવર્જાશ્ચયો
મહ્નાઃ, સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિષુ પદ્ મહ્નાઃ । સંયતેષુ જીવાદિકાશ્ચયો મહ્નાઃ । અસંયતેષુ
એકેન્દ્રિયવર્જાશ્ચયો મહ્નાઃ । સયતાઽસંયતેષુ ત્રયો મહ્ના જીવાદિકાઃ । નોસંયત-

તિયમંગો, નવરં-પુદ્ગલિકાણસુ આઠ-વળસ્સર્ગસુ છઠ્ઠમંગા) તેજોલેશ્યા મેં
જીવાદિક ત્રીન મંગ હોતે હેં એસા જાનના ચાહિયે । નવરં-વિશેષતા
યહ હેં કિ પૃથિવીકાયિકાં મેં, અપ્કાયિકાં મેં ઓર વનસ્પતિ કાયિકાં મેં
છહ મંગ હોતે હેં । (પમ્હલેસ સુક્લેસાણ જીવાઈઓ તિયમંગો) પદ્મ-
લેશ્યા મેં ઓર શુક્લલેશ્યા મેં જીવાદિક ત્રીન મંગ હોતે હેં । (અલેસેહિં
જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો) લેશ્યા સે રહિત અલેશ્યાવાલોં મેં જીવ ઓર
સિદ્ધોં મેં ત્રીન મંગ હોતે હેં । (મણુણસુ છઠ્ઠમંગા) મનુષ્યોં મેં છહ મંગ
હોતે હેં । (સમ્મદિદ્ધીહિં જીવાઈઓ તિયમંગો) સમ્યક્ દષ્ટિયોં મેં જીવા-
દિક ત્રીન મંગ હોતે હેં । (વિગલિંદિણસુ છઠ્ઠમંગા) વિકલેન્દ્રિય જીવોં
મેં છહ મંગ હોતે હેં । (મિચ્છાદિદ્ધીહિં ઇર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો) મિથ્યા-
દષ્ટિયોં મેં એકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીન મંગ હોતે હેં । (સમ્મામિચ્છ-
દિદ્ધીહિં છઠ્ઠમંગા) સમ્યક્મિથ્યાદષ્ટિ જીવોં મેં છહ મંગ હોતે હેં ।
(સંજણહિં જીવાઈઓ તિયમંગો) સંયતોં મેં જીવાદિક ત્રીન મંગ હોતે
હેં । (અસંજણહિં ઇર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો) અસંયત જીવોં મેં એકેન્દ્રિય

કહેવી નેહએ. (તેજલેસાણ જીવાઈઓ તિયમંગો, નવરં પુદ્ગલિકાણસુ આઠ-
વળસ્સર્ગસુ છઠ્ઠમંગા) તેજોલેશ્યામાં જીવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે એમ સમજવું.
પણ તેમાં એ વિશેષતા છે કે પૃથ્વીકાયિકામાં, અપ્કાયિકામાં અને વનસ્પતિ
કાયિકામાં છ ભંગ થાય છે. (પમ્હલેસ સુક્લેસાણ જીવાઈઓ તિયમંગો)
પદ્મ લેશ્યામાં અને શુક્લ લેશ્યામાં જીવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. (અલેસેહિં
જીવ-સિદ્ધેહિં તિયમંગો) અલેશ્યાવાળામાં (લેશ્યાથી રહિત જીવોમાં) જીવ
અને સિદ્ધોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. (મણુણસુ છઠ્ઠમંગા) મનુષ્યોમાં છ ભંગ
થાય છે. (સમ્મદિદ્ધીહિં જીવાઈઓ તિયમંગો) સમ્યક્દષ્ટિ જીવોમાં જીવાદિક
ત્રણ ભંગ થાય છે (વિગલિંદિણસુ છઠ્ઠમંગા) વિકલેન્દ્રિય જીવોમાં છ ભંગ
થાય છે. (મિચ્છાદિદ્ધીહિં ઇર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો) એકેન્દ્રિય સિવાયના મિથ્યા-
દષ્ટિઓમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. (સમ્મામિચ્છદિદ્ધીહિં છઠ્ઠમંગો) સમ્યક્ મિથ્યા-
દષ્ટિ જીવોમાં છ ભંગ થાય છે. (સંજણહિં જીવાઈઓ તિયમંગો) સંયતોમાં

નોસંયત-નો સંયતાસંયત-ઝીવ-સિદ્ધેષુ પ્રયોમદ્વાઃ । સકળાણિષુ ઝીવાદિકા-
સુયો મદ્વાઃ । એકેન્દ્રિયેષુ મમદ્વક્ષ્યમ્ । ક્રોધકળાણિષુ ઝીવેકેન્દ્રિયવર્જાશ્રિયો મદ્વાઃ ।
દેવેષુ પદ્મદ્વાઃ । માનકળાણિ માયાકળાણિષુ ઝીવેકેન્દ્રિયવર્જાશ્રિયો મદ્વાઃ, નૈરયિક-
દેવેષુ પદ્મદ્વાઃ । લોભકળાણિષુ ઝીવેકેન્દ્રિયવર્જાશ્રિયો મદ્વાઃ, નૈરયિકેષુ પદ્મદ્વાઃ ।

વર્જ ત્રીન ભંગ હોતે હિં (સંજયા સંજઈદિં તિયમંગો ઝીવાઈઓ) સંય-
તાસંયત ઝીવોં મેં ઝીવાદિક ત્રીન ભંગ હોતે હિં । (ણો સંજય ણો અસંજય
ણો સંજયાસંજય ઝીવસિદ્ધેહિં તિયમંગો) નો સંયત નો અસંયત નો
સંયતાસંયત ઝીવસિદ્ધોં મેં, ત્રીન ભંગ હોતે હિં । (સકસાઈદિં ઝીવાઈઓ
તિયમંગો) કપાય સહિત છુપ ઝીવોં મેં ઝીવાદિક ત્રીન ભંગ હોતે હિં ।
(ઇગિંદિયસુ અમંગકં) એકેન્દ્રિય ઝીવોં મેં એક ભંગ હોતા હૈ-ત્રીનભંગ
નહીં હોતે । (કોહકસાઈદિં ઝીવ-ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) ક્રોધ કળા-
યવાલોં મેં ઝીવ ઓર એકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીન ભંગ હોતે હિં । (દેવેહિં
છવ્મંગો) દેવોં મેં છહ ભંગ હોતે હિં । (માળકસાઈ માયાકસાઈ ઝીવ
ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) માનકપાયવાલોં મેં માયાકપાયવાલોં મેં ઝીવ
ઓર એકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીનભંગ હોતે હિં । (નેરહય-દેવેહિં છવ્મંગા)
નારક ઓર દેવોં મેં છહ ભંગ હોતે હિં । (લોભકસાઈદિં ઝીવ-ઇગિંદિય-
વજ્જો તિયમંગો) લોભકપાયવાલોં મેં ઝીવ ઓર એકેન્દ્રિય કો છોડકર
ત્રીન ભંગ હોતે હિં । (નેરણસુ છવ્મંગા) નારકોં મેં છહ ભંગ હોતે હિં

અવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. (અસંજઈદિં-ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) અસંયત
અવોમાં એકેન્દ્રિય વર્જિત ત્રણ ભંગ થાય છે. (સંજયા સંજઈદિં તિયમંગો
ઝીવાઈઓ) સંયતાસંયત અવોમાં અવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. (ણો સંજય,
ણો અસંજય, ણો સંજયાસંજય ઝીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો નો સંયત, નો અસંયત,
નો સંયતાસંયત અવસિદ્ધોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. (સકસાઈદિં ઝીવાઈઓ
તિયમંગો) કપાયયુક્ત અવોમાં અવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. (ઇગિંદિયસુ
અમંગકં) એકેન્દ્રિય અવોમાં એક ભંગ થાય છે-ત્રણ ભંગ થતા નથી. (કોહ-
કસાઈદિં ઝીવ-ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો). અને એકેન્દ્રિય-સિવાયના ક્રોધ,
કપાયવાળા અવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે.

(દેવેહિં છવ્મંગો) દેવોમાં છ ભંગ થાય છે. (માળકસાઈ માયાકસાઈ ઝીવ-
ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો), માન કપાયવાળામાં અને માયા કપાયવાળામાં અવ,
અને એકેન્દ્રિય વર્જિત ત્રણ ભંગ થાય છે. (નેરહય-દેવેહિં છવ્મંગા), નારક
અને દેવોમાં છ ભંગ થાય છે. (લોભકસાઈદિં ઝીવ-ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો)
અવ અને એકેન્દ્રિય સિવાયના લોકકપાયવાળા અવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે.

અકળાપિ-જીવ-મનુજેષુ સિદ્ધેષુ ત્રયો ભદ્રાઃ । ઔધિકજ્ઞાને, આભિનિવોધિક-
જ્ઞાને, શ્રુતજ્ઞાને જીવાદિકાસ્ત્રયો ભદ્રાઃ । વિકલેન્દ્રિયેષુ પદ્ ભદ્રાઃ । અવધિજ્ઞાને,
મનઃપર્યવજ્ઞાને કેવલજ્ઞાને જીવાદિકાસ્ત્રયો ભદ્રાઃ । ઔધિકાજ્ઞાને, મત્યજ્ઞાને,
શ્રુતાજ્ઞાને એકેન્દ્રિયવર્જાસ્ત્રયો ભદ્રાઃ । વિભદ્રાજ્ઞાને જીવાદિકાસ્ત્રયો ભદ્રાઃ । સયોગી-
યથા ઔધિકઃ । મનોયોગિ-તત્ત્વોયોગિ-કાયયોગિષુ જીવાદિકાસ્ત્રયો ભદ્રાઃ, નવ-

(અકસાર્દ-જીવ-મણુપર્દિ સિદ્ધેર્દિ તિયમંગો) કપાયરહિત જીવોં મેં
મનુષ્યોં મેં ઔર સિદ્ધોં મેં તોન ભંગ હોતે હું । (ઓહિયણાણે-અભિણિ-
વોહિયણાણે સુચણાણે જીવાદો તિયમંગો) ઔધિક જ્ઞાન મેં, આભિ-
નિવોધિક જ્ઞાન મેં, શ્રુતજ્ઞાન મેં જીવાદિક તોન ભંગ હોતે હું । (વિગ-
લિંદિપર્દિ છઠ્ઠમંગા) વિકલેન્દ્રિયોં મેં છહ ભંગ હોતે હું । (ઓહિયાણે
મણપડજવણાણે, કેવલણાણે જીવાદો તિયમંગો) ઔધિક જ્ઞાનમેં મનઃ-
પર્યય જ્ઞાન મેં, કેવલ જ્ઞાન મેં જીવાદિક તોન ભંગ હોતે હું । (ઓહિય
અણાણે મદ્ અન્નાણે, સુચ અન્નાણે, ઇર્ગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) ઔધિક
અજ્ઞાન મેં, મતિ અજ્ઞાન શ્રુત અજ્ઞાન મેં એકેન્દ્રિય વર્જ તોન ભંગ હોતે
હું । (વિભંગ અણાણે જીવાદો તિયમંગો) વિભંગ જ્ઞાન મેં જીવાદિક
તોન ભંગ હોતે હું । (સજોગી જહા ઓહિઓ) ઔધિક કી તરહ સયોગી
હોતે હું । (મણ-જોગિ-વચ્ચજોગિ-કાયજોગિર્દિ જીવાદો તિયમંગો)
મનોયોગી મેં, વચ્ચનયોગી મેં ઔર કાયયોગી મેં જીવાદિક તોન ભંગ

(નેરૂપસુ છઠ્ઠમંગા) અને નારકોમાં છ ભંગ થાય છે. (અકસાર્દ જીવમણુ-
પર્દિ, સિદ્ધેર્દિ તિયમંગો) કપાય રહિત જીવોમાં, મનુષ્યોમાં અને સિદ્ધોમાં
ત્રણ ભંગ થાય છે. (ઓહિયાણે આભિનિવોહિયાણે સુચણાણે જીવાદો તિય-
મંગો) ઔધિક જ્ઞાનમાં-આભિનિવોધિક જ્ઞાનમાં અને શ્રુતજ્ઞાનમાં જીવાદિક
ત્રણ ભંગ થાય છે, (વિગલિંદિપર્દિ છઠ્ઠમંગા) વિકલેન્દ્રિયોમાં છ ભંગ થાય
છે. (ઓહિયાણે મણપડજવણાણે, કેવલજ્ઞાણે જીવાદો તિયમંગો) ઔધિક જ્ઞાનમાં;
મનઃપર્યય જ્ઞાનમાં અને કેવલ જ્ઞાનમાં જીવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. (ઓહિય
અણાણે મદ્અણાણે સુચઅણાણે, ઇર્ગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) ઔધિક અજ્ઞા-
નમાં, મતિ અજ્ઞાનમાં અને શ્રુત અજ્ઞાનમાં એકેન્દ્રિય વર્જિત ત્રણ ભંગ થાય
છે. (વિભંગઅણાણે જીવાદો તિયમંગો) વિભંગજ્ઞાનમાં જીવાદિક ત્રણ
ભંગ થાય છે. (સજોગી જહા ઓહિઓ) ઔધિકની જેમ સયોગીના વિષયમાં
અમળું. (મણજોગિ, વચ્ચજોગિ, કાયજોગિર્દિ જીવાદો તિયમંગો) મનોયોગી,

નો અસંયત-નો સંયતાસંયત-જીવ-સિદ્ધેષુ પ્રથોમજ્ઞાઃ । સકળાણિષુ જીવાદિકા-
સૂયો મજ્ઞાઃ । એકેન્દ્રિયેષુ પ્રમદ્વરુપ્ । ક્રોધકળાણિષુ ત્રીવૈકેન્દ્રિયવર્જાસૂયો મજ્ઞાઃ ।
દેવેષુ પદ્મજ્ઞાઃ । માનકળાણિ માયાકળાણિષુ ત્રીવૈકેન્દ્રિયવર્જાસૂયો મજ્ઞાઃ, નૈરયિક-
દેવેષુ પદ્મજ્ઞાઃ । લોભકળાણિષુ ત્રીવૈકેન્દ્રિયવર્જાસૂયો મજ્ઞાઃ, નૈરયિકેષુ પદ્મજ્ઞાઃ ।

ઘર્જ ત્રીન ભંગ હોતે હિં (સંજયા સંજયહિં તિયમંગો જીવાઈઓ) સંય-
તાસંયત જીવોં મેં જીવાદિક ત્રીન ભંગ હોતે હિં । (નો સંજય નો અસંજય
નો સંજયાસંજય જીવસિદ્ધેહિં તિયમંગો) નો સંયત નો અસંયત નો
સંયતાસંયત જીવસિદ્ધોં મેં, ત્રીન ભંગ હોતે હિં । (સકસાઈહિં જીવાઈઓ
તિયમંગો) કપાય સહિત છુળ જીવોં મેં જીવાદિક ત્રીન ભંગ હોતે હિં ।
(ઇગિંદિયસુ અમંગકં) એકેન્દ્રિય જીવોં મેં એક ભંગ હોતા હૈ-ત્રીન ભંગ
નહીં હોતે । (કોહકસાઈહિં જીવ-ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) ક્રોધ કળા-
યવાલોં મેં જીવ ઓર એકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીન ભંગ હોતે હિં । (દેવેહિં
છન્મંગો) દેવોં મેં છહ ભંગ હોતે હિં । (માળકસાઈ માયાકસાઈ જીવ
ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) માનકપાયવાલોં મેં માયાકપાયવાલોં મેં જીવ
ઓર એકેન્દ્રિય-કો છોડકર ત્રીન ભંગ હોતે હિં । (નેરજય-દેવેહિં છન્મંગા)
નારક ઓર દેવોં મેં છહ ભંગ હોતે હિં । (લોભકસાઈહિં જીવ-ઇગિંદિય-
વજ્જો તિયમંગો) લોભકપાયવાલોં મેં જીવ ઓર એકેન્દ્રિય કો છોડકર
ત્રીન ભંગ હોતે હિં । (નેરયસુ છન્મંગા) નારકોં મેં છહ ભંગ હોતે હિં

જીવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. (અસંજયહિં-ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) અસંયત
જીવોમાં એકેન્દ્રિય વર્જિત ત્રણ ભંગ થાય છે. (સંજયા સંજયહિં તિયમંગો
જીવાઈઓ) સંયતાસંયત જીવોમાં જીવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. (નો સંજય,
નો અસંજય, નો સંજયાસંજય જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો નો સંયત, નો અસંયત,
નો સંયતાસંયત જીવસિદ્ધોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. (સકસાઈહિં જીવાઈઓ
તિયમંગો) કપાયયુક્ત જીવોમાં જીવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. (ઇગિંદિયસુ
અમંગકં) એકેન્દ્રિય જીવોમાં એક ભંગ થાય છે-ત્રણ ભંગ થતા નથી. (કોહ-
કસાઈહિં જીવ-ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો). અને એકેન્દ્રિય સિવાયના ક્રોધ-
કપાયવાળા જીવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે.
(દેવેહિં છન્મંગો) દેવોમાં છ ભંગ થાય છે. (માળકસાઈ માયાકસાઈ જીવ-
ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) માન-કપાયવાળામાં અને માયા-કપાયવાળામાં જીવ,
અને એકેન્દ્રિય વર્જિત ત્રણ ભંગ થાય છે. (નેરજય-દેવેહિં છન્મંગા) નારક
અને દેવોમાં છ ભંગ થાય છે. (લોભકસાઈહિં જીવ-ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો)
જીવ અને એકેન્દ્રિય સિવાયના લોભકપાયવાળા જીવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે.

શરીર-જીવ-મનુજેષુ પઢ્ મદ્વાઃ । તૈજસ-કાર્મણેષુ યથોધિકાઃ । અશરીરેષુ જીવ-
સિદ્ધેષુ પ્રયો મદ્વાઃ । આહારપર્યાપ્તો, શરીરપર્યાપ્તો, ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તો, આનમાણ-
પર્યાપ્તો, જીવેકેન્દ્રિયવર્જાસ્ત્રિયો મદ્વાઃ । મપામનઃપર્યાપ્તો યથા સંતી । આહારાઽ-
પર્યાપ્તો યથા અનાહારકાઃ । શરીરાપર્યાપ્તો, ઇન્દ્રિયાપર્યાપ્તો, આન-માણાઽપર્યાપ્તો
જીવેકેન્દ્રિયવર્જાસ્ત્રિયોમદ્વાઃ । નૈરયિક-દેવ-મનુજેષુ પઢ્ મદ્વાઃ । સંગ્રહગાથા—

સરી જહા ઓહિઓ) સામાન્ય જીવ કી तरह શરીરવાળે જીવો કો
જાનના ચાહિયે । (ઓરાલિય-વેઝવિય-સરીરેહિં જીવ ઇગિંદિયવજ્જો
તિયમંગો) ઔદારિક શરીરવાળોં મેં વૈક્રિય શરીરવાળોં મેં જીવ ઇકેન્દ્રિય
કો છોડકરં ત્રીનમંગ હોતે હિં (આહારગસરીર જીવ મણુણસુ છબંગા) આહાર
શરીર મેં, જીવ ઓર મનુષ્યોં મેં છહ મંગ હોતે હિં । (તેયગકમ્મ-
ગેહિં જહા ઓહિયા) ઔધિક કી तरह તૈજસ ઓર કાર્મણ શરીરવાળોં
કો જાનના ચાહિયે । (અસરીરેહિં જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો) અશરીરી
જીવ ઓર સિદ્ધોં મેં ત્રીન મંગ હોતે હિં । (આહારપજ્જત્તીણ, સરીરપજ્જ-
ત્તીણ, ઇંદિયપજ્જત્તીણ, આણપાણપજ્જત્તીણ જીવ ઇગિંદિયવજ્જો
તિયમંગો) આહારપર્યાપ્તિ મેં, શરીરપર્યાપ્તિ મેં, ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિ મેં, શ્વાસો-
ચ્છવાસપર્યાપ્તિ મેં, જીવ ઓર ઇકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીન મંગ હોતે હિં ।
(ભાસામણપજ્જત્તીણ જહા સન્ની) ભાપાપર્યાપ્તિ મેં ઓર મનઃપર્યાપ્તિ
મેં સંજી કી तरह જાનના ચાહિયે । (આહાર અપજ્જત્તીણ જહા અણા-
હારગા) અનાહારક જીવોં કી तरह આહાર અપર્યાપ્તિવાળે જીવોં

જહા ઓહિઓ) શરીરવાળા જીવોના વિષયમાં સામાન્ય જીવોના કથન પ્રમા
ણેનું જ કથન સમજવું. (ઓરાલિય-વેઝવિય-સરીરેહિં જીવ ઇગિંદિયવજ્જો
તિયમંગો) ઔદારિક શરીરવાળામાં અને વૈક્રિય શરીરવાળામાં જીવ એકેન્દ્રિય
વર્જિત ત્રણ ભાગ થાય છે. (અહારગસરીર જીવ મણુણસુ છબંગા) આહારક
શરીરમાં, જીવ અને મનુષ્યના છ ભાગ થાય છે. (તેયગકમ્મગેહિં જહા ઓહિયા)
તૈજસ અને કાર્મણ શરીરવાળા જીવોના વિષયમાં ઔધિકના બેવું જ કથન
સમજવું. (અસરીરેહિં જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો) અશરીરી જીવ અને સિદ્ધોમાં
ત્રણ ભાગ થાય છે. (આહાર પજ્જત્તીણ, સરીરપજ્જત્તીણ, ઇંદિયપજ્જત્તીણ, આણ-
પાણપજ્જત્તીણ જીવ ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંગો) આહાર પર્યાપ્તિમાં, શરીર પર્યા-
પ્તિમાં, ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિમાં અને શ્વાસોચ્છવાસ પર્યાપ્તિમાં જીવ અને એકેન્દ્રિય
વર્જિત ત્રણ ભાગ થાય છે. (ભાસામણપજ્જત્તીણ જહા સન્ની) ભાપા પર્યાપ્તિમાં
અને મના પર્યાપ્તિમાં સંજી પ્રમાણે જ સમજવું. (આહાર અપજ્જત્તીણ જહા
અણાહારગા) અહાર અપર્યાપ્તિવાળા જીવોના વિષયમાં અનાહારક જીવો

સ્-કાયયોગિતઃ એકેન્દ્રિયાસ્તેષુ અમંગ્લકમ્ । અયોગિનો યથા અલેશ્યાઃ । સાકારોપયુક્તાઽનાકારોપયુક્તેષુ જીવેકેન્દ્રિયવર્ગાદયો મદ્ભાઃ । સવેદકાષ્ટ્ર યથા સક્ષ્યાયિણઃ । સ્ત્રીવેદક-પુરુષવેદક-નપુંસકવેદકેષુ જીવાદિકાસયો મદ્ભાઃ । નવરમ્-નપુંસકવેદકે એકેન્દ્રિયેષુ અમંગ્લકમ્ । અવેદકા યથા અરુપાયિણઃ । સન્નરીતી યથા ઔઘિકાઃ । બૌદ્ધારિક-વૈક્રિયસરીરેષુ જીવેકેન્દ્રિયવર્ગાદયો મદ્ભાઃ । આદારક

હોતે હું । (નવરં-કાયજોગી ઇન્દ્રિયા તેસુ અમંગલ) વિશેષતા યહ હૈ કિ એકેન્દ્રિય જીવ કાયયોગવાલે હોતે હૈ-ફસલિયે ડનમેં અધિક ભંગ નહીં હોતે હૈ-એક ભંગ હોતા હૈ । (અજોગી જહા અલેસા) જૈસે અલેશ્યાવાલે જીવ કહે ગયે હું વૈસે હી અયોગી જીવ જાનના ચાહિયે । (સાગરોવત્ત-અળાગારોવત્તેહિં જીવ ઇન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો) સાકારોપયુક્ત અનાકારોપયુક્ત જીવોં મેં જીવ એકેન્દ્રિય કો છોડકર ત્રીન ભંગ હોતે હૈ । (સવેયગા ય જહા સક્સાઈ) કપાયવાલે જીવોં કી તરહ વેદવાલે જીવોં કો જાનના ચાહિયે । (ઇતિવેયગ-પુરિસવેયગ-નપુંસગવેયગેસુ જીવાહો તિયમંગો) સ્ત્રીવેદકોં મેં, પુરુષવેદકોં મેં ઓર નપુંસકવેદકોં મેં જીવાદિક ત્રીન ભંગ હોતે હૈ । (નવરં-નપુંસગવેદે ઇન્દ્રિયસુ અમંગલ) વિશેષતા યહ હૈ કિ નપુંસક વેદ મેં, એકેન્દ્રિય મેં અધિક ભંગ નહીં હોતે હૈ-ફિન્તુ એક ભંગ હોતા હૈ (અવેયગા જહા અકસાઈ) જૈસે કપાયરહિત જીવ હોતે હૈ વૈસે હી વેદરહિત જીવ હોતે હૈ । (સસ-

વચ્ચનયોગી અને કાયયોગીમાં જીવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે (નવરં-કાયજોગી ઇન્દ્રિયા તેસુ અમંગલ) વિશેષતા એટલી જ છે કે એકેન્દ્રિય જીવ કાયયોગવાળા જ હોય છે, તેથી તેમાં એક જ ભંગ થાય છે, વધારે ભંગ થતા નથી. (અજોગી જહા અલેસા) અયોગી જીવના વિષયમાં અલેશ્યાવાળા જીવો પ્રમાણે જ સમજવું. (સાગરોવત્ત, અળાગારોવત્તેહિં જીવ ઇન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો) સાકાર ઉપયોગવાળા અને અનાકાર ઉપયોગવાળા જીવોમાં જીવ એકેન્દ્રિય વર્જિત ત્રણ ભંગ થાય છે (સવેયગા ય જહા સક્સાઈ) વેદવાળા જીવોમાં વિષયમાં કપાયયુક્ત જીવો પ્રમાણે જ સમજવું. (ઇતિવેયગ-પુરિસવેયગ-નપુંસગવેયગેસુ જીવાહો તિયમંગો) સ્ત્રી વેદવાળા, પુરુષ વેદવાળા અને નપુંસક વેદવાળા જીવોમાં જીવાદિક ત્રણ ભંગ થાય છે. (નવરં-નપુંસગવેદે ઇન્દ્રિયસુ અમંગલ) તેમાં એટલી જ વિશેષતા છે કે નપુંસક વેદવાળા એકેન્દ્રિયમાં અધિક ભંગ થતા નથી, પણ એક જ ભંગ થાય છે. (અવેયગા જહા અકસાઈ) વેદરહિત જીવોના વિષયમાં કપાય રહિત જીવો પ્રમાણે જ સમજવું. (સસરી

સહિતઃ ? અથવા અપ્રદેશઃ પ્રદેશરહિતો ભવતિ ? । મગવાનાહ—‘ ગોયમા ! નિયમા સપણસે ’ હે ગૌતમ ! જીવઃ કાલાપેક્ષયા નિયમાત્-નિયમતઃ સપ્રદેશઃ પ્રદેશસહિતો ભવતિ, જીવસ્થાનાદિતયા અનન્તસમયસ્થિતિકત્વેન સપ્રદેશત્વ નિયમાત્, તથા ચ યઃ એકસમયસ્થિતિકઃ સ એવ અપ્રદેશઃ, દ્વયાદિસમયસ્થિતિ-કસ્તુ સપ્રદેશ એવ ભવતીતિ કલિતમ્ । ઉક્તચ્ચ—

ફર રહે હૈં—इसमें गौतम ने प्रभुसे ऐसा पूछा ‘जीवे णं भंते ! काला-
देसेणं किं सपणसे अपणसे ?’ हें भदन्त । जीव काल की अपेक्षा से
यया प्रदेशसहित हैं कि प्रदेशरहित हैं ? भगवान् इस प्रश्न का उत्तर
देते हुए गौतम से कहते हैं कि—(गोयमा) हे गौतम ! जीव (नियमा
सपणसे) नियम से प्रदेश सहित हैं, तात्पर्य कहने का यह है कि
जब काल की अपेक्षा लेकर जीव के प्रदेशसहित और प्रदेश
रहित होने का विचार किया जाता है तो वह नियम से काल की
अपेक्षा प्रदेशसहित ही है, प्रदेशरहित नहीं है यही बात सिद्ध होती
है । कारण कि जीव अनादि काल का है और अनन्तसमय की उसकी
स्थिति है, इसलिये वह सप्रदेश है जो ऐसा नहीं होता है—अर्थात् जो
एकसमय की स्थितिवाला होता है, वही काल की अपेक्षा प्रदेशरहित
अप्रदेश— होता है । दो आदि समय की स्थितिवाला नहीं क्योंकि जो
दो आदि समय की स्थितिवाला होता है वह काल की अपेक्षा प्रदेश
सहित ही होता है । कहा भी है—“ जो जस्स ” इत्यादि ।

સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે “ જીવેણં મંતે ! કાલાદેસેણં
કિં સપણસે અપણસે ! ” હે ભદ્રન્ત ! શું કાળની અપેક્ષાએ એવ પ્રદેશ સહિત
છે કે પ્રદેશ રહિત છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! એવ (નિયમા સપણસે) નિયમથી જ
પ્રદેશ સહિત છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જો કાળની અપેક્ષાએ એવના
સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વનો વિચાર કરવામાં આવે, તો તે નિયમથી જ
કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશ સહિત છે, પ્રદેશ રહિત નથી એ વાત નિશ્ચય થાય
છે. કારણ કે એવ અનાદિ કાળનો છે અને અનંત સમયની તેની સ્થિતિ છે,
તે કારણે તે પ્રદેશ સહિત છે. જો એવ એવો ન હોય—એટલે કે જો તે એક
સમયની સ્થિતિવાળો હોય તો તે પ્રદેશ રહિત હોઈ શકે છે. એ ત્રણ આદિ
સમયની સ્થિતિવાળો એવ અપ્રદેશી હોતો નથી, કારણ કે જો આદિ સમયની
સ્થિતિવાળો તો કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશયુક્ત જ હોય છે. કહ્યું પણ છે કે—

“ જો જસ્સ ” ઇત્યાદિ

સપ્રદેશ આહારક-ભવ્ય-સંજ્ઞિ-લેશ્યા-દૃષ્ટિ-સંયત-કપાયાઃ, જ્ઞાન યોગો-
પયોગી વેદ્ય શરીરપર્યાપ્તિઃ ॥ સુ. ૧ ॥

તૃતીયોદ્દેશકે જીવઃ પ્રરુપિતઃ, અથ ચતુર્થોદ્દેશકેઽપિ તમેવ પ્રકારાન્તરેણા-
'જીવે નં મંતે' इत्यादि ।

ટીકા—'જીવે નં મંતે ! કાળાદેસેનં કિં સપ્રસે, પ્રપ્રસે ?' ગૌતમઃ
પૃચ્છતિ-હે મદન્ત ! જીવઃ સ્વલુ કાલાદેશેન કાળાપેક્ષાયા કિમ્ સપ્રદેશઃ-પ્રવેશ-

કો જાનના ચાહિયે । (સરીર અપજ્જત્તીણ, હંદિય અપજ્જત્તીણ આણવાણ અપજ્જત્તીણ જીવ ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંજો) શરીરપર્યાપ્તિ સે રહિત, ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિ સે રહિત, શ્વાસોચ્છવાસપર્યાપ્તિ સે રહિત જીવોં મેં જીવ ઓર ઇકેન્દ્રિય કો છોદ્ધકર તીન ભંગ હોતે હેં । (નેરહ્ય-દેવ-મણુઈ છવ્ભંગા) નેરયિક, દેવ ઓર મનુષ્યોં મેં છવ્ભંગ હોતે હેં । સંગ્રહ ગાથા

સપ્રસા આહારગ ભવિય-સન્નિ-લેસા-દિટ્ઠિ-સંજય-કસાયા ।

જાણે જોગુ-વઓગે વેદેય સરીર-પજ્જત્તી ॥ ૧ ॥

સપ્રદેશ, આહારક, ભવ્ય, સંજ્ઞી, લેશ્યા, દૃષ્ટિ, સંયત, કપાય, જ્ઞાન, યોગ, ઉપયોગ, વેદ, શરીર ઓર પર્યાપ્તિ ॥

ટીકાર્થ—પ્રીછે કે ઉદ્દેશક મેં જીવ કા નિરૂપણ કિયા ગયા હૈ-હસ ચતુર્થ ઉદ્દેશક મેં બી ઉસી જીવ કા સૂત્રકાર પ્રકારાન્તર સે નિરૂપણ

જેવું જ સમજવું. (સરીર અપજ્જત્તીણ, હંદિય અપજ્જત્તીણ આણવાણ અપજ્જત્તીણ જીવ ઇગિંદિયવજ્જો તિયમંજો) શરીર પર્યાપ્તિથી રહિત, ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિથી રહિત, અને શ્વાસોચ્છવાસ પર્યાપ્તિથી રહિત જીવોમાં જીવ અને એકેન્દ્રિય સિવાયના ત્રણ ભંગ થાય છે. (નેરહ્ય, દેવ, મણુઈ છવ્ભંગા) નારકો, દેવો અને મનુષ્યોમાં છ ભંગ થાય છે. સંગ્રહગાથા—

“ સપ્રસા આહારગ-ભવિય-સન્નિ-લેસા-દિટ્ઠિ-સંજય-કસાયા ”

જાણે જોગુ-વઓગે વેદેય સરીર-પજ્જત્તી ॥ ૧ ॥

સપ્રદેશ, આહારક, ભવ્ય, સંજ્ઞી, લેશ્યા, દૃષ્ટિ, સંયત, કપાય, જ્ઞાન, યોગ, ઉપયોગ, વેદ, શરીર અને પર્યાપ્તિ.

ટીકાર્થ—આગલા ઉદ્દેશકમાં જીવનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. આ ઉદ્દેશકમાં પણ સૂત્રકાર બીજી રીતે જીવનું નિરૂપણ કરી રહ્યા છે-તેમાં ગૌતમ

અપ્રદેશો ભવતિ, તત્ર ક્વચાદિસમયોત્પન્નો નૈરયિકઃ સપ્રદેશઃ, પ્રથમસમયોત્પન્નસ્તુ
અપ્રદેશો ભવતીતિ ભાવઃ । एवम् नैरयिकवदेव यावत्-सिद्धः कदाचित् सप्रदेशः,
कदाचित् अप्रदेशो भवति । यावत्कृष्णात्-असुरकुमारादिभवनपतिदशक १०-
पृथ्वीकायादिस्थावरापञ्चक-विकलेन्द्रियत्रिक- - तिर्यक्पञ्चेन्द्रिय-मनुष्य-
-वृक्ष-ज्योतिषिक-वैमानिक-रूपाणां त्रयोविंशति दण्डकानां संग्रहः ।
अथ तदेव पुनस्तथैव बहुत्वेन निरूपयितुमाह-‘ जीवाणं भंते ! कालादेसेणं किं
सपण्या ? अपण्या ? ’ गौतमः पृच्छति-हे भदन्त ! जीवाः खलु कालादेशेन
कालापेक्षया किं सपदेशाः भवन्ति ? अथवा अप्रदेशाः ? भवन्ति ? भगवानाह-
‘ गोयमा ! नियमा सपण्या ’ हे गौतम ! जीवाः सर्वे नियमात् कालापेक्षया

હી સમય હુઆ હૈ વહ નારક જીવ કાલ કી અપેક્ષા અપ્રદેશ હૈ ઓર
ઘઠી નારક જીવ જય દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં વર્તતા રહના હૈ તો કાલકી
અપેક્ષા વહી સપ્રદેશ । (एवं जाव सिद्धे) નારક કી તરહ હી યાવત્
સિદ્ધ કદાચિત્ સપ્રદેશ ઓર કદાચિત્ અપ્રદેશ હૈં એસા જાનના ચાહિયે
યહાં યાવત્ પદ સે “અસુરકુમાર આદિ ભવનપતિ ૧૦, કા પૃથિવી
કાદિક પાંચ સ્થાવરોં કા વિકલેન્દ્રિયત્રિક કા, તિર્યક્ પંચેન્દ્રિય ૧, મનુ-
ષ્ય ૧, જ્યોતિષિક ૧ ઓર વૈમાનિક ૧ ઇન કા ” ઇસ તરહ ૨૩ દણ્ડ-
કોં કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । (जीवा णं भंते ! कालादेसेणं किं सपण्या ?
अपण्या ?) અથ ગૌતમ ઇમ સૂત્ર દ્વારા પ્રશ્ન સે એસા પૂછ રહે હૈં કિ હે
‘ ભદન્ત ! જીવકાલ કી અપેક્ષા કયા સપ્રદેશ હૈં ? યા અપ્રદેશ હૈં ઇસકે
ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ (गोयमा) હૈ ગૌતમ ! (नियमा
सपण्या) સમુચય-સમસ્ત જીવ નિયમ સે કાલ કી અપેક્ષા સપ્રદેશ હૈં,

થયો છે તે નારક છવ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશ રહિત છે, પણ ત્યારે એજ
નારક છવને ઉત્પન્ન થયાને બે, ત્રણ આદિ સમયો વ્યતીત થઈ વાય છે,
ત્યારે તે કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશયુક્ત કહેવાય છે. (एवं जाव सिद्धे) નારક
છવની જેમ જ સિદ્ધ પર્યન્તના છવ પણ ક્યારેક અપ્રદેશ હોય છે. અહીં
‘ જાવ ’ (पर्यन्त) પદથી અસુર કુમાર આદિ ભવનપતિના દસ, પૃથ્વીકાયિક
આદિ સ્થાવરોના પાંચ, વિકલેન્દ્રિયના ત્રણ (દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુ-
રિન્દ્રિય એ ત્રણ) પંચેન્દ્રિય તિર્યચનું એક, મનુષ્યનું એક, જ્યોતિષિકનું એક
અને વૈમાનિકનું એક એમ ૨૨ દંડકોને શ્રદ્ધણ કરવામાં આવ્યા છે. આ
દિવાયના નારક અને સિદ્ધ એ બે દંડકની વાત તો ઉપર કહેવામાં આવી છે.

‘ જો જસા પદમસમય, વટ્ટા ભાવસા સો ડ અપણો ।

અણમ્મિ વટ્ટમાણો, કાલાપસેગ સપણો ॥ ૧ ॥ ”

યો યસ્ય પ્રથમસમયે વર્તસે ભાવસ્ય સ તુ અપદેશઃ ।

અન્યસ્મિન્ વર્તમાનાઃ કાલાદેશેન સપદેશઃ ” ઇતિ ॥ ૧ ॥

ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘ નેરઙ્ગણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણસે, અપણસે ? ’

હે મહન્ત ! નૈરયિકઃ સ્વહ કાલાદેશેન કાલાપેક્ષયા કિમ્-સપ્રદેશઃ ? કિં ચ અપ્રદેશઃ ? મગધાનાહ-‘ ગોચમા ! સિય સપણસે, સિય અપણસે, એવં જાન-સિદ્ધે ’

હે ગૌતમ ! નૈરયિકઃ કાલાપેક્ષયા સ્વાત્ કદાચિત્ સપ્રદેશઃ, સ્વાત્ કદાચિત્

જો જીવ જિસ ભવ કે પ્રથમ સમય મેં વર્તતા હૈ, વહ જીવ અપ્રદેશ પ્રદેશરહિત કહલાતા હૈ ઓર જો જીવ પ્રથમ સમય કે અતિરિક્ત દૂસરે, ત્રીસરે, આદિ સમયોં મેં વર્તતા હૈ વહ કાલ કી અપેક્ષા સપ્રદેશ કહલાતા હૈ હસ તરહ સે વહ સપ્રદેશ ઓર અપ્રદેશ કા સ્વરૂપ હસ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કિયા ગયા હૈ ।

ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન સે પૂછતે હૈ કિ-(નેરઙ્ગણં મંતે કાલાદેસેણં કિં સપણસે અપણસે) હૈ મહન્ત ! એક નારક જીવ કાલ કી અપેક્ષા સે કયા સપ્રદેશ હૈ કિ અપ્રદેશ હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હૈ કિ (ગોચમા) હૈ ગૌતમ ! (સિય સપણસે સિય અપણસે) હૈ ગૌતમ ! નારક જીવ કાલ કી અપેક્ષા સે કદાચિત્ સપ્રદેશ હૈ ઓર કદાચિત્ અપ્રદેશ હૈ । અર્થાત્ જિસ નારક જીવ કો ઉત્પન્ન હુવ અમી પહિલા

જે છવ જે ભવના પ્રથમ સમયમાં રહેલો હોય છે, તે છવ અપ્રદેશી (પ્રદેશ રહિત) કહેવાય છે, અને જે છવ પ્રથમ સમય સિવાયના સમયમાં એટલે કે બીજા, ત્રીજા આદિ સમયમાં રહેલો હોય છે, તે છવ કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશી (પ્રદેશ સહિત) કહેવાય છે. આ રીતે સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વનું સ્વરૂપ આ ગાથામાં બતાવવામાં આવ્યું છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્ન પૂછે છે કે (નેરઙ્ગણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપણસે અપણસે ?) હે મહન્ત ! એક નારક છવ શું કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશયુક્ત છે કે પ્રદેશ રહિત છે ?

ઉત્તર-(ગોચમા !) હે ગૌતમ ! (સિય સપણસે સિય અપણસે) એક નારક છવ ક્યારેક કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ હોય છે અને ક્યારેક અપ્રદેશ હોય છે, એટલે કે જે નારક છવને ઉત્પન્ન થયાને હજી પહેલો જ સમય

અપ્રદેશો ભવતિ, તત્ર દ્વાદશમયોત્પન્નો નૈરયિકઃ સપ્રદેશઃ, પ્રથમસમયોત્પન્નસ્તુ અપ્રદેશો ભવતીતિ ભાવઃ । एवम् नैरयिकवदेव यावत्-सिद्धः कदाचित् सप्रदेशः, कदाचित् अप्रदेशो भवति । यावत्स्रणात्-असुरकुमारादिभवनपतिदशक १०-पृथिवीकायादिस्थावरपञ्चक-विकलेन्द्रियत्रिक-तिर्यक्पञ्चेन्द्रिय-मनुष्य-व्यन्तर-ज्योतिषिक-वैमानिक-रूपाणां त्रयोविंशति दण्डकानां संग्रहः । अयं तदेव पुनस्तथैव बहुभवेन निरूपयितुमाह-‘जीवाणं भन्ते ! कालादेसेणं किं सपएसा ? अपएसा ?’ गौतमः पृच्छति-हे भदन्त ! जीवाः खलु कालादेशेन कालापेक्षया किं सप्रदेशाः भवन्ति ? अथवा अप्रदेशाः ? भवन्ति ? भगवानाह-‘गोपमा ! नियमा सपएसा’ हे गौतम ! जीवाः सर्वे नियमात् कालापेक्षया

હી સમય હુઆ હૈ વહ નારક જીવ કાલ કી અપેક્ષા અપ્રદેશ હૈ ઓર ઘઘી નારક જીવ જય દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં વર્તતા રહના હૈ તો કાલકી અપેક્ષા વહી સપ્રદેશ । (एवं जाव सिद्धे) નારક કી તઘ્હ હી યાવત્ સિદ્ધ કદાચિત્ સપ્રદેશ ઓર કદાચિત્ અપ્રદેશ હૈં એસા જાનના ચાહિયે ઘઘાં યાવત્ પદ સે “અસુરકુમાર આદિ ભવનપતિ ૧૦, કા પૃથિવી કાદિક પાંચ સ્થાવરોં કા વિકલેન્દ્રિયત્રિક કા.તિર્યક્ પંચેન્દ્રિય ૧, મનુષ્ય ૧, જ્યોતિષિક ૧ ઓર વૈમાનિક ૧ ઇન કા ” ઇસ તરહ ૨૨ દણ્ડ-કોં કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । (जीवा णं भन्ते ! कालादेसेणं किं सपएसा ? अपएसा ?) અવ ગૌતમ ઇસ સૂત્ર દ્વારા પ્રશ્ન સે એસા પૂછ રહે હૈં કિ હે ભદન્ત ! જીવકાલ કી અપેક્ષા કયા સપ્રદેશ હૈં ? યા અપ્રદેશ હૈં ઇસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ (गोपमा) હૈ ગૌતમ ! (नियमा सपएसा) સમુચય-સમસ્ત જીવ નિયમ સે કાલ કી અપેક્ષા સપ્રદેશ હૈં,

થયો છે તે નારક ૭૫ કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશ રહિત છે, પણ ક્યારે એજ નારક ૭૫ને ઉત્પન્ન થયાને એ, ત્રણ આદિ સમયો વ્યતીત થઈ ગય છે, ત્યારે તે કાળની અપેક્ષાએ પ્રદેશયુક્ત કહેવાય છે. (एवं जाव सिद्धे) નારક ૭૫ની જેમ જ સિદ્ધ પર્યન્તના ૭૫ પણ ક્યારેક અપ્રદેશ હોય છે. અહીં ‘जाव’ (पर्यन्त) પદથી અસુર કુમાર આદિ ભવનપતિના દસ, પૃથ્વીકાયિક આદિ સ્થાવરોના પાંચ, વિકલેન્દ્રિયના ત્રણ (દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુન્દ્રિય એ ત્રણ) પંચેન્દ્રિય તિર્યચનું એક, મનુષ્યનું એક, જ્યોતિષિકનું એક અને વૈમાનિકનું એક એમ ૨૨ ઠંડકોને થકણ કરવામાં આવ્યા છે. આ સિવાયના નારક અને સિદ્ધ એ એ ઠંડકોની વાત તો ઉપર કહેવામાં આવી છે.

સપ્રદેશા ભવન્તિ નતુ અપ્રદેશાઃ તેષામનાદિચ્ચેન અનન્તસમયસ્થિતિક્રતયા સપ્રદેશત્વનિયમાત્ । ગૌતમઃ પૂચ્છતિ—‘ નેરઙ્ગાણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપ્પણ્ણા; અપ્પણ્ણા ? ’ હે ભદ્રન્ત ! નૈરિયિકાઃ સઙ્ગુ કાલાદેસેન—કાલાપેક્ષયા કિં સપ્રદેશાઃ ? આહોસ્થિત્ અપ્રદેશા ભવન્તિ ? મગવાનાદ—‘ ગોયમા ! સંવે વિ તાવ હોજ્જા સપ્પણ્ણા ’ હે ગૌતમ ! સર્વેઽપિ નૈરિયિકા સ્માયત્ ’ ઇતિ વાચચાલક્રૂરે સપ્રદેશા મન્થન્તિ, ઉત્પાદવિરહકાલે અસંખ્યાતપૂર્વોત્પન્નનૈરિયિકાણાં સપ્રદેશત્વેન વિધમાનત્વાત્ । ઇતિ પ્રથમો ભક્તઃ ? । અથ દ્વિતીયમાદ—‘ અહવા સપ્પણ્ણા ય—અપ્પણ્ણેય, ’ અથવા

અપ્રદેશ નહીં હું । કયોં કિ સમસ્ત જીવ અનાદિ હું ઓર અનન્તકાલતકની સ્થિતિચાહે હું । અથ ગૌતમસ્વામી પ્રશ્નુ સે સમસ્ત નારક જીવોં કી અપેક્ષા લેકર પેસા પૂછતે હું કિ (નેરઙ્ગાણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપ્પણ્ણા ? અપ્પણ્ણા ?) હે ભદ્રન્ત ! સમસ્ત નારકકયા કાલકી અપેક્ષા સપ્રદેશ હું ? યા અપ્રદેશ હું ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્નુ ગૌતમ સે કહતે હું કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સંવે વિ હોજ્જા સપ્પણ્ણા) સમસ્ત નારક જીવ મો સપ્રદેશ હું । “સમસ્ત નારક જીવ મો સપ્રદેશ હું” હસકા કારણ યહ હે કિ ઉત્પાદ વિરહકાલ મેં પૂર્વોત્પન્ન નારક જીવોં કી સંખ્યા—અસંખ્યાત પ્રમાણ મેં રહા કરતી હૈ યહ પહિલા ભક્ત હૈ । તથા દ્વિતીય ભગ્ન હસ પ્રકાર સે હૈ—(અહવા સપ્પણ્ણા ય અપ્પણ્ણેય) જય હન્હીં પૂર્વોત્પન્ન અસંખ્યાત નારકોં મેં કોઈ નારક જીવ આકર ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ—તય વહ પ્રથમ

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્ન—(જીવા ણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપ્પણ્ણા ? અપ્પણ્ણા ?) હે ભદ્રન્ત ! સમસ્ત જીવો કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ છે કે અપ્રદેશ છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! નિયમા સપ્પણ્ણા) હે ગૌતમ ! સમસ્ત જીવો કાળની અપેક્ષાએ નિયમથી જ સપ્રદેશ છે, અપ્રદેશ (પ્રદેશ રહિત) નથી કારણ કે સમસ્ત જીવ અનાદિ છે અને અનન્તકાળની સ્થિતિવાળા છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી સમસ્ત નારક જીવોની અપેક્ષાએ મહાવીર પ્રશ્નુને જીવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (નેરઙ્ગાણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપ્પણ્ણા, અપ્પણ્ણા ?) હે ભદ્રન્ત ! સમસ્ત નારક જીવો શું કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ છે ? કે અપ્રદેશ છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સંવે વિ તાવ હોજ્જા સપ્પણ્ણા) સમસ્ત નારક જીવો પશું સપ્રદેશ છે. “સમસ્ત નારક જીવો સપ્રદેશ છે,” એમ કહેવાનું કારણ એ છે કે ઉત્પાદ વિરહ કાળમાં પૂર્વોત્પન્ન (પહેલાં ઉત્પન્ન થયેલા) નારક જીવોની સંખ્યા અસંખ્યાત પ્રમાણમાં રહ્યા કરે છે. આ રીતે પહેલા ભગ (વિકટપ) થાય છે. “સમસ્ત નારક જીવો સપ્રદેશ છે.” બીજે ભગ આ પ્રમાણે થાય છે—(અહવા સપ્પણ્ણા ય અપ્પણ્ણેય)

વહ્યો નૈરયિકાઃ સપ્રદેશાથ ભવન્તિ, એકઃ અપ્રદેશઃ ૨ પૂર્વોત્પન્નાનાં દ્વયાદિસમય-
સ્થિતિકત્વેન સપ્રદેશત્વાદ વહ્યઃ સપ્રદેશાઃ, પૂર્વોત્પન્નેષુ વિષમાનેષ્વેવ એકોઽ-
પ્યન્યો નૈરયિક ઉત્પદ્યતે તદા તસ્ય પ્રથમસમયોત્પન્નત્વેનાપ્રદેશત્વાદેકોઽપ્રદેશ
ઇતિ દ્વિતીયો ભક્તઃ ૨ । અથ તૃતીયભક્તમાહ—‘ અહવા સપ્પસાય અપ્પસાય ’
અથવા વહ્યઃ સપ્રદેશાથ, વહ્યઃ અપ્રદેશાથ ભવન્તિ, યદા પૂર્વોત્પન્નાદ્વયાદિ સમ-

સમય કી અપેક્ષા સે અપ્રદેશ હૈં ઓર વાકી વે સમસ્ત નારક જીવ
સપ્રદેશ હૈં । હસ દ્વિતીય ભક્ત કા અભિપ્રાય એસા હૈં-કિ પ્રથમ ભક્ત મેં
તો સમસ્ત નારક જીવોં કો સપ્રદેશ પ્રકટ કિયા હૈં ઓર હસ દ્વિતીયભક્ત
મેં સમસ્ત નારક જીવોં કો સપ્રદેશ પ્રકટ નહીં કિયા ગયા હૈં કિન્તુ
અધિકાંશ નારક જીવોં કો હી સપ્રદેશ પ્રકટ કિયા હૈં ઓર કોઈ એક
નારક જીવોં કો અપ્રદેશ ભી પ્રકટ કિયા હૈં-અસમેં કારણ યહ હૈં કિ
યહાં પૂર્વોત્પન્ન જિતને ભી નારક જીવ હૈં વે સવ તો દ્વયાદિ સમયોં મેં
વર્તતે રહને કી સ્થિતિવાલે હોને કે કારણ સપ્રદેશ હૈં ઓર વહીં પર જો
નયા કોઈ એક નારક જીવ ઉત્પન્ન હુઆ હૈં વહ પ્રથમ સમય મેં ઉત્પન્ન
હોને કે કારણ અપ્રદેશ હૈં । તૃતીયભંગ હસ પ્રકાર સે હૈં-(અહવા સપ-
પસા ય અપપસા ય) પૂર્વોત્પન્ન જિતને ભી વહાં નારક જીવ હૈં વે સવ
તો દ્વયાદિ સમયોં મેં વર્તમાન રહને કે કારણ સપ્રદેશ હૈં ઓર કિતનેક
નારક જીવ વહાં જો ઉત્પન્ન હો રહે હૈં-વે સવ એક સમય કી ભી
સ્થિતિવાલે હૈં સો હસ અપેક્ષા વે અપ્રદેશ હૈં-તાત્પર્ય હસ તૃતીયભંગ કા

છે. " કારણ કે પૂર્વોત્પન્ન અસંખ્યાત નારકોમાં કોઈ નવો જીવ ઉત્પન્ન થઇને
આવી મળે છે, ત્યારે તે આવનાર જીવ પ્રથમ સમયની અપેક્ષાએ અપ્રદેશ
હોય છે અને સમસ્ત નારકો સપ્રદેશ હોય છે. પ્રથમ ભંગમાં તો સમસ્ત
નારકોને સપ્રદેશ કહ્યા છે પણ આ બીજા ભંગમાં સમસ્ત નારકોને સપ્રદેશ
કહ્યા નથી પણ અધિકાંશ નારક જીવોને જ સપ્રદેશ કહ્યા છે અને કોઈક નારક
જીવને અપ્રદેશ પણ કહ્યા છે. આ પ્રમાણે જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું
કારણ નીચે પ્રમાણે છે—

નારકોમાં પૂર્વોત્પન્ન જેટલા નારકો છે તેઓ તો જે, ત્રણ આદિ સમ-
યોથી ત્યાં રહેલા હોવાને કારણે સપ્રદેશી છે, પણ ત્યાં જે કોઈ નવો નારક
જીવ ઉત્પન્ન થયેલો હોય છે તેને ઉત્પન્ન થયાને પ્રથમ સમય જ ચાલતો હોય
છે તેથી તે અપ્રદેશ છે.

ત્રીજો ભંગ આ પ્રમાણે છે—(અહવા સપપસા ય અપપસા ય) કેટલાક
નારક જીવો સપ્રદેશ છે અને કેટલાક નારક જીવો અપ્રદેશ છે. કારણ કે

સપ્રદેશા ભવન્તિ નતુ અપ્રદેશાઃ તેષામનાદિચ્ચેન અનન્તસમગસ્થિતિક્રતયા સપ્રદેશત્વનિયમાત્ । ગૌતમઃ પૂચ્છતિ-‘ નેરદ્યાણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપ્પણ્ણા, અપ્પણ્ણા ? ’ હે ભદ્રન્ત ! નૈરયિકાઃ સન્નુ કાલાદેશેન-કાલાપેક્ષયા કિં સપ્રદેશાઃ ? આહોસ્થિત્ અપ્રદેશા ભવન્તિ ? મગવાનાદ-‘ ગોયમા ! સન્ને વિ તાવ હોજ્જા સપ્પણ્ણા ’ હે ગૌતમ ! સર્વંડપિ નૈરયિકા સ્તાયત્ ’ ઇતિ વાક્યાલક્ષ્ણે સપ્રદેશા ભવન્તિ, ઉત્પાદચિરહકાલે અસંખ્યાતપૂર્વોત્પન્નનૈરયિકાણાં સપ્રદેશત્વેન વિધમાનત્વાત્ । ઇતિ પ્રથમો ભક્તઃ ? । અથ દ્વિતીયમાદ-‘ અહવા સપ્પણ્ણા ય-અપ્પણ્ણેય, ’ અથવા

અપ્રદેશ નહીં હું । કયોં કિં સમસ્ત જીવ અનાદિ હું ઓર અનન્તકાલતક કી સ્થિતિચાહે હું । અથ ગૌતમસ્વામી પ્રશ્ન સે સમસ્ત નારક જીવોં કી અપેક્ષા લેકર એસા પૂછતે હું કિં (નેરદ્યાણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપ્પણ્ણા ? અપ્પણ્ણા ?) હે ભદ્રન્ત ! સમસ્ત નારકકયા કાલકી અપેક્ષા સપ્રદેશ હું ? યાં અપ્રદેશ હું ? ઇસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હું કિં (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સન્ને વિ હોજ્જા સપ્પણ્ણા) સમસ્ત નારક જીવ મો સપ્રદેશ હું ! “સમસ્ત નારક જીવ મો સપ્રદેશ હું” ઇસકા કારણ યહ હૈ કિં ઉત્પાદ ચિરહકાલ મેં પૂર્વોત્પન્ન નારક જીવોં કી સંખ્યા-અસંખ્યાત પ્રમાણ મેં રહા કરતી હૈ યહ પહિલા ભક્ત હૈ । તથા દ્વિતીય ભગ્ન ઇસ પ્રકાર સે હૈ-(અહવા સપ્પણ્ણા ય અપ્પણ્ણેય) જપ્ત ઇન્હીં પૂર્વોત્પન્ન અસંખ્યાત નારકોં મેં કોઈ નારક જીવ આકર ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ-તથ વહ પ્રથમ

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્ન—(જીવા ણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપ્પણ્ણા ? અપ્પણ્ણા ?) હે ભદ્રન્ત ! સમસ્ત એવો કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ છે કે અપ્રદેશ છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! નિયમા સપ્પણ્ણા) હે ગૌતમ ! સમસ્ત એવો કાળની અપેક્ષાએ નિયમથી જ સપ્રદેશ છે, અપ્રદેશ (પ્રદેશ રહિત) નથી કારણ કે સમસ્ત એવ અનાદિ છે અને અનન્તકાળની સ્થિતિવાળા છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી સમસ્ત નારક એવાની અપેક્ષાએ મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (નેરદ્યાણં મંતે ! કાલાદેસેણં કિં સપ્પણ્ણા, અપ્પણ્ણા ?) હે ભદ્રન્ત ! સમસ્ત નારક એવો શું કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ છે ? કે અપ્રદેશ છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સન્ને વિ તાવ હોજ્જા સપ્પણ્ણા) સમસ્ત નારક એવો પશું સપ્રદેશ છે. “સમસ્ત નારક એવો સપ્રદેશ છે,” એમ કહેવાતું કારણે એ છે કે ઉત્પાદ ચિરહ કાળમાં પૂર્વોત્પન્ન (પહેલાં ઉત્પન્ન થયેલા) નારક એવાની સંખ્યા અસંખ્યાત પ્રમાણમાં રહ્યા કરે છે. આ રીતે પહેલો ભગ્ન (વિકલ્પ) થાય છે. “સમસ્ત નારક એવો સપ્રદેશ છે.” બીજો ભગ્ન આ પ્રમાણે થાય છે—(અહવા સપ્પણ્ણા ય અપ્પણ્ણેય)

યાવત્કરણાન્-નાગકુમારાઃ સુર્યકુમારાઃ, વિદ્યુત્કુમારાઃ, અગ્નિકુમારાઃ, દ્વીપકુ-
મારાઃ ઉદધિકુમારાઃ દિવકુમારાઃ પવનકુમારાઃ ' ઇતિ સંગ્રાહમ્ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-
' પુદવિક્ષાદયા ણં મંતે ! કિં સપણ્સા, અપણ્સા ? ' હે મદન્ત ! પૃથિવીકાયિકાઃ
સહ જીવાઃ કિમ્ કાલાપેક્ષયા સપ્રદેશાઃ ભવન્તિ ? આતોસ્તિત્ અપ્રદેશા ભવન્તિ ?
ભગવાનાહ- ' ગોયમા ! સપણ્સા વિ, અપણ્સા વિ ' હે ગૌતમ ! પૃથિવીકાયિકા
જીવાઃ સપ્રદેશા અપિ ભવન્તિ, અપ્રદેશા અપિ ભવન્તિ, વહૂનાં પૂર્વોત્પન્નત્વેન દ્વયાદિ
સમયસ્થિતિકાનાં, વહૂનાં ચ ઉત્પદ્યમાનત્વેન એકસમયસ્થિતિકાનાં ચ તેપાં સદ્-

કિતનેક સપ્રદેશ મી હૈં ઓર કિતનેક અપ્રદેશ મી હૈં । યહાં યાવત્ પદ
સે (નાગકુમાર, સુર્યકુમાર, વિદ્યુત્કુમાર, અગ્નિકુમાર, દ્વીપકુમાર,
ઉદધિકુમાર, દિવકુમાર, વાયુકુમાર, इन अवशेष भवनपतिभेदों का
ग्रहण हुआ है ।

અપ ગૌતમ પ્રશ્ન સે પૃથિવીકાયિક જીવોં કે સપ્રદેશ અપ્રદેશ કે
વિષય મેં પ્રશ્ન કરતે હૈં-કિ-(પુદવિક્ષાદયાણં મંતે ! કિં સપણ્સા, અપ-
ણ્સા ?) હે મદન્ત ! પૃથિવીકાયિક જો જીવ હૈં વે કયા સપ્રદેશ હૈં કિ
અપ્રદેશ હૈં ? હસકે ઉત્તરમેં પ્રશ્ન ગૌતમસે કહતે હૈં કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ !
પૃથિવીકાયિક જીવ (સપણ્સા વિ અપણ્સા વિ) સપ્રદેશ મી હૈં ઓર
અપ્રદેશ મી હૈં । હસકા તાત્પર્ય એસા હૈં કિ યહાં પૂર્વોત્પન્ન જીવ મી
અનેક હૈં ઓર ઉત્પદ્યમાન જીવ મી અનેક હૈં અતઃ પૂર્વોત્પન્ન જીવોં કી
અપેક્ષા પૃથિવીકાયિક જીવ સપ્રદેશ હૈં ઓર ઉત્પદ્યમાન પૃથિવીકાયિક

પહેલો ભાગ- " સમસ્ત ભવનપતિ દેવો સપ્રદેશ છે. " બીજો ભાગ આ
પ્રમાણે છે- " બધાં ભવનપતિ દેવો સપ્રદેશ નથી, પણ અધિકાંશ સપ્રદેશ છે
અને ઠોઠક અપ્રદેશ છે. "

હસ ભવનપતિના નામ-(૧) અસુરકુમાર (૨) નાગકુમાર (૩) સુપણ્ડ-
કુમાર (૪) વિદ્યુત્કુમાર (૫) અગ્નિકુમાર (૬) દ્વીપકુમાર (૭) ઉદધિકુમાર (૮)
દિક્કુમાર (૯) વાયુકુમાર (૧૦) સ્તનિતકુમાર.

હવે ગૌતમ સ્વામી પૃથ્વીકાયિક જીવોના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વના
વિષયમાં મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (પુદવિક્ષાદયાણં મંતે ! કિં
સપણ્સા, અપણ્સા ?) હે મદન્ત ! પૃથ્વીકાયિક જીવો સપ્રદેશ છે કે અપ્રદેશ છે ?

ઉત્તર-(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! પૃથ્વીકાયિક જીવો (સપણ્સા વિ
અપણ્સા વિ) સપ્રદેશ પણ હોય છે અને અપ્રદેશ પણ હોય છે. કારણ કે
પૃથ્વીકાયોમાં પૂર્વોત્પન્ન જીવ પણ અનેક હોય છે અને નવા ઉત્પન્ન થનારા
જીવો પણ અનેક હોય છે. તેથી પૂર્વોત્પન્ન જીવોની અપેક્ષાએ પૃથ્વીકાયિકોને
સપ્રદેશ કહ્યા છે, અને ઉત્પદ્યમાન પૃથ્વીકાયિકોની અપેક્ષાએ તેમને અપ્રદેશ

યસ્થિતિમન્તો વહ્યઃ સપ્રદેશાઃ સન્તિ. વહ્યથ-ઉત્પન્નમાનાઃ; એકસમયસ્થિતિમન્તો-
અપ્રદેશા મવન્તિ તદા વહ્યઃ સપ્રદેશાઃ વહ્યથાપ્રદેશા મવન્તોતિ । તૃતીયો મદ્ધઃ ૨।

‘એવં અસુરકુમારા જાવ-યણિયકુમારા’ એવં નૈરયિકવદેન અસુરકુમારા
યાવત્-સ્તનિતકુમારા અપિ કદાચિન્ સર્વે સપ્રદેશાઃ સ્પુઃ, કદાચિન્ વહ્યઃ સપ્ર-
દેશાઃ, એકઃ અપ્રદેશથ, કદાચિન્ વહ્યઃ સપ્રદેશાઃ, વહ્યઃ અપ્રદેશથ મવન્તિ

પદ્ય હૈ કિ વહ્યાં નરકોં મેં જિતને બી જીવ પહિલે સે હી નારકાવસ્થા મેં
ચલે આરહે જેં વે સય કે સય સપ્રદેશ હૈં ઓર જિન જીવોં કી અબી ૨
નારકાવસ્થાપ્રારંભ હોને કે પ્રથમ સમય મેં હૈં વે સય અપ્રદેશ હૈં-હસ
તરહ વહ્યાં અધિકાંશ જીવ સપ્રદેશ હૈં ઓર અધિકાંશ જીવ અપ્રદેશ હૈં
(એવં અસુરકુમારા જાવ યણિયકુમારા) ઈસી તરહ કા કથન-નારક
જીવોં કે જૈસા વિવેચન અસુરકુમારોં સે લેકર સ્તનિતકુમારોં તક
જાનનાં ચાહિયે-અસુરકુમાર આદિ ૧૦ ભેદ ભવનપતિ દેવોં કે હૈં-સો
પૂર્વોક્તરૂપ સે જૈસા વર્ણન સપ્રદેશ અપ્રદેશ કા નારક જીવોં મેં પ્રથમ
ભંગ દ્વિતીયભંગ ઓર તૃતીયભંગદ્વારા કિયા ગયા હૈં ઈસી પ્રકાર કા
સપ્રદેશ અપ્રદેશ કા વર્ણન અસુરકુમાર સે લેકર સ્તનિતકુમાર તક
જાનનાં ચાહિયે-નિષ્કર્ષ ઈસકા યહી હૈં-કિ પ્રથમ ભંગ કી અપેક્ષા સમ-
સ્ત સ્તનિતકુમાર સપ્રદેશ હૈં । દ્વિતીયભંગ કી અપેક્ષા સય નહીં, કિન્તુ
અધિકાંશ સપ્રદેશ હૈં ઓર કોઈ અપ્રદેશ હૈં । તૃતીય ભંગ કી અપેક્ષા

પૂર્વોક્તમ જેટલાં નારક જીવો છે તેઓ તો બે, ત્રણ આદિ સમયોથી ત્યાં ઉત્પન્ન
થઈ રહ્યા છે, તેઓ બધાં એક સમયની સ્થિતિવાળા પશુ હોય છે, તેથી
તેઓ અપ્રદેશ છે. આ કથનનો ભાસાર્થ એવો છે કે જેટલાં નારક જીવો
પહેલેથી જ નારકાવસ્થામાં આવી ગયેલા છે તેઓ બધાંસપ્રદેશ છે, પણ જે
જીવોની નારકાવસ્થાનો હજી પ્રારંભ જ થયેલો છે-એટલે કે જે નારકોની
નારકાવસ્થા પ્રારંભ થયાનો પ્રથમ સમય જ આવી રહ્યો છે, એવાં જે નારકો
છે તેઓ અપ્રદેશી છે. આ રીતે ત્યાં અધિકાંશ જીવો સપ્રદેશ છે અને અધિ-
કાંશ જીવો અપ્રદેશ છે.

(એવં અસુરકુમારા જાવ યણિયકુમારા) નારકોનાં જેવું જ કથન અસુર-
કુમારોથી સ્તનિતકુમારો સુધીનાં દેવો વિષે સમજવું. ભવનપતિ દેવોના અસુર-
કુમાર આદિ ૧૦ ભેદ છે. નારક જીવોના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વ વિષેના
ઉપયુક્ત જે ત્રણ ભંગ (વિકલ્પો) કહ્યા છે, એજ પ્રમાણે અસુરકુમારોથી
લઈને સ્તનિતકુમારો સુધીનાં દસ ભવનપતિ દેવોના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વ
વિષેના પણ ત્રણ ભંગ સમજવા. એ ત્રણ ભંગ નીચે પ્રમાણે છે—

વક્તવ્યાઃ, તથા ચ-દ્વીન્દ્રિયાદયોઽપિ યાવત્-સિદ્ધાઃ કદાચિત્ સર્વેસપ્રદેશાઃ, કદા-
ચિદ્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ, એકઃ અપ્રદેશઃ કદાચિત્તુ વહવઃ સપ્રદેશાઃ વહવઃ અપ્રદે-
શઃ ભવન્તિ, ઉક્તરીત્યા સર્વેષામેષાં વિરહસંભવાત્, દ્વિચ્યુત્પત્તેષ્વ, યાવત્કરણાત્
દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિય-ચતુરિન્દ્રિય-પંચેન્દ્રિય-તિર્યગ્ચોનિક-મનુષ્ય-વાનવ્યન્તરજ્યો-
તિપિક-વૈમાનિકાઃ સંગ્રાહાઃ । ‘ આહારગણં જીવ-દ્વિન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો ’
આહારગણામ્ આહારક જીવૈકેન્દ્રિયવર્જાસ્યોભક્તાઃ, જીવપદમ્, એકેન્દ્રિયપૃથિવી-
કાયાદિપદપંચકં ચ વર્જયિત્વા ભક્ત્રિકમ્, અયં ભાવઃ-‘ જીવો નિયમાત્સપ્રદેશઃ’ इति
જીવે એક એવ ભક્તઃ તસ્ય સદા સર્વપ્રદેશત્વાત્ । એકેન્દ્રિયે ‘ સપ્રદેશો અપિ
પર્યન્ત જીવ મ્હી કદાચિત્ સય સપ્રદેશ હે, કદાચિત્ કિતને સપ્રદેશ હે
ઔર કોई एक जीव अप्रदेश है-और कदाचित् अनेक सप्रदेश हें और
अनेक अप्रदेश हें । इसका कारण यह है कि यहां पर इन सब का विरह
संभवित है । इस तरह यहां पर ये तीन भंग हें ऐसा जानना चाहिये
यहां यावत् पद से-तेन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रियतिर्यग्योनिक, मनुष्य,
वानव्यन्तर, ज्योतिषिक और वैमानिक इन सब का संग्रह हुआ है ।
(आहारगणं जीव द्विन्द्रियवज्जो तियमंगो) एक जीवपद को और
एकेन्द्रिय के पांच पद को छोड़कर आहारकों के तीन भंग होते हैं ।
जीवपद को छोड़कर कहने का भाव यह है कि जीव नियम से सप्रदेश
होता है । इसलिये जीव में एक ही भंग है-सप्रदेश ही होने का कारण
उसकी अनादिता और अनन्तकालतकस्थितिमत्ता है । तथा एकेन्द्रिय
के पांचपद को छोड़कर कहने का भाव यह है कि एकेन्द्रिय जीवों में

જવા. એટલે કે (૧) દ્વીન્દ્રિયથી લઇને સિદ્ધ પર્યન્તના બધા જીવો પણ ક્યારેક
પ્રદેશયુક્ત હોય છે. (૨) ક્યારે કેટલાક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કોઈક
જીવ અપ્રદેશ હોય છે. અને ક્યારેક અનેક સપ્રદેશ હોય છે અને અનેક
અપ્રદેશ હોય છે. તેનું કારણ એ છે કે આ પર્યાયોમાં એ સૌનો વિરહ
સંભવિત છે. આ રીતે તેમના ત્રણ ભંગ (વિકલ્પ) સમજવા.

અહીં ‘ જાવ ’ (પર્યન્ત) પદથી તેન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય, પંચેન્દ્રિય તિયમંગો
મનુષ્ય, વાનવ્યન્તર, જ્યોતિષિક અને વૈમાનિકોને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે.

(આહારગણં જીવ દ્વિન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો) એક જીવ પદને અને
એકેન્દ્રિયના પાંચ પદને છોડીને બાકીના આહારક જીવોના ત્રણ ભંગ થાય
છે. જીવ પદને છોડવાનું કારણ એ છે કે જીવ નિયમથી જ સપ્રદેશ હોય છે.
તેથી જીવમાં એક જ ભંગ છે-જીવને સપ્રદેશી કહેવાનું કારણ એ છે કે જીવ
અનાદિ છે અને તેની સ્થિતિ અનંતકાળની હોય છે. એકેન્દ્રિયના પાંચ પદોને

ભાવાત્, ' एवं जाव-वणस्सइकाइया ' एवं पृथिवीकायिकादेव यावत्-अएका-
यिकाः, तेजस्कायिकाः, वायुकायिकाः, वनस्पतिकायिकाः अपि बहवः सप्रदेशाः
बहवः अप्रदेशाश्च भवन्ति, सर्वेषामेकेन्द्रियाणामेक एव भद्रः, उत्पत्तिमरणविरहा
भावात् । ' सेसा जहा नेरइया तहा जाव सिद्धा ' शेषाः क्षीन्द्रियादारभ्य सिद्ध-
पर्यन्ताः जीवाः यथा नेरयिकाः अभिलाषप्रयेण प्रतिपादितास्तथैव अभिलाषप्रयेण

जीवों की अपेक्षा वे अप्रदेश हैं-इसीलिये " सप्रदेश भी और अप्रदेश
भी वे हैं " ऐसा कहा है । (एवं जाव वणस्सइकाइया) पृथिवीकायिक
जीवों की तरह ही-अएकायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्प-
तिकायिक जीवों के विषय में सप्रदेश अप्रदेश की चर्चा जाननी चाहिये ।
अर्थात् जिस प्रकार से पृथिवीकायिक जीवों में कितनेक जीव सप्रदेश
और कितनेक अप्रदेश हैं उसी प्रकार से यहां अएकायिकादिकों में भी
कितनेक जीव सप्रदेश हैं और कितनेक जीव अप्रदेश हैं । इस तरह से
यहां इन सब एकेन्द्रिय जीवों में उत्पत्तिमरण के विरह के अभाव से
एक ही भंग सप्रदेशवाला होता है ऐसा जानना चाहिये । (सेसा जहा
नेरइया तहा जाव सिद्धा) शेष-क्षीन्द्रिय जीवों से लेकर सिद्धांतक में
कथन-सप्रदेश अप्रदेश का विवेचन-जैसा तीन अभिलाषों द्वारा पहिले
नारकों में हो चुका है-उसी प्रकार से जानना चाहिये । अर्थात्
प्रथम भंग सप्रदेश, द्वितीय भंग अप्रदेश, तृतीय भंग सप्रदेश अप्रदेश
इस तरह से जानना चाहिये । तथा च-क्षीन्द्रिय से लेकर यावत् सिद्ध-

કહ્યાં છે. તે કારણ એવું કહ્યું છે કે " પૃથ્વીકાયિકો સપ્રદેશ પણ છે અને
અપ્રદેશ પણ છે. " (एवं जाव वणस्सइकाइया) पृथ्वीकायिक, एवेना એવું જ
કથન અપૂકાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિક એવોના વિષ-
યમાં પણ સમજવું. એટલે કે જેમ પૃથ્વીકાયિક એવોમાં કેટલાક સપ્રદેશ
હોય છે અને કેટલાક અપ્રદેશ હોય છે, તેમ અપૂકાયિક આદિમાં પણ કેટલાક
એવો સપ્રદેશ હોય છે અને કેટલાક અપ્રદેશ હોય છે. આ રીતે અહીં બધાં
એકેન્દ્રિય એવોમાં ઉત્પત્તિ-મરણના વિરહના અભાવે એક જ ભંગ સપ્રદેશ-
વાળો થાય છે એમ સમજવું.

(સેસા જહા નેરइया तहा जाव सिद्धा) બાકીના (ક્ષીન્દ્રિયથી લઇને
સિદ્ધ પર્યન્તના) એવોના સપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વનું કથન નારકોના કથન
પ્રમાણે જ સમજવું. નારકોના સપ્રદેશત્વનું કથન ત્રણ આલાપકો (અભિલાષો)
દ્વારા આગળ આપવામાં આવ્યું છે. એટલે કે પહેલો ભંગ સપ્રદેશ, બીજો
ભંગ અપ્રદેશ અને ત્રીજો ભંગ સપ્રદેશઅપ્રદેશ, આ પ્રકારના ત્રણ ભંગ સમ-

વક્તવ્યાઃ, તથા ચ-દ્વીન્દ્રિયાદયોઽપિ યાવત્-સિદ્ધાઃ કદાચિત્ સર્વેસપ્રદેશાઃ, કદા-
ચિદ્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ, एकः अप्रदेशश्च कदाचित्तु वहवः सप्रदेशाः वहवः अप्रदे-
शाश्च भवन्ति, उक्तरीत्या सर्वेषामेषां विरहसंभवात्, एकाद्युत्पत्तेश्च, यावत्કરणात्
દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિય-ચતુરિન્દ્રિય-પંચેન્દ્રિય-તિર્યગ્યોનિક-મનુષ્ય-વાનવ્યન્તરજ્યો-
તિપિક-વૈમાનિકાઃ સંગ્રાહાઃ । ' આહારગાળં જીવ-ઈર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો '
આહારગાળામ્ આહારક જીવેકેન્દ્રિયવર્જાસ્ત્રયોભક્તાઃ, જીવપદમ્, એકેન્દ્રિયશૃતિત્રી-
કાયાદિપદપદ્ધત્ત્વં ચ વર્જયિત્વા ભદ્રવિક્રમ્, અયં ભાવઃ- 'જીવો નિયમાત્સપ્રદેશઃ' इति
જીવે એક એવ ભદ્રઃ તસ્ય સદા સર્વપ્રદેશત્વાત્ । એકેન્દ્રિયે ' સપ્રદેશા અપિ
પર્યન્ત જીવ ખી કદાચિત્ સઘ સપ્રદેશ હૈ, કદાચિત્ કિતને સપ્રદેશ હૈ
और कोई एक जीव अप्रदेश है-और कदाचित् अनेक सप्रदेश हॆँ और
अनेक अप्रदेश हॆँ । इसका कारण यह है कि यहां पर इन सव का विरह
संभवित है । इस तरह यहां पर ये तीन भंग हॆँ ऐसा जानना चाहिये
यहां यावत् पद से-तेन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रियतिर्यग्योनिक, मनुष्य,
वानव्यन्तर, ज्योतिषिक और वैमानिक इन सव का संग्रह हुआ है ।
(आहारगाणं जीव इर्गिदियवज्जो तियमंगो) एक जीवपद को और
एकेन्द्रिय के पांच पद को छोड़कर आहारकों के तीन भंग होते हैं ।
जीवपद को छोड़कर कहने का भाव यह है कि जीव नियम से सप्रदेश
होता है । इसलिये जीव में एक ही भंग है-सप्रदेश ही हाने का कारण
उसकी अनादिता और अनन्तकालतकस्थितिमत्ता है । तथा एकेन्द्रिय
के पांचपद को छोड़कर कहने का भाव यह है कि एकेन्द्रिय जीवों में

જવા. એટલે કે (૧) દ્વીન્દ્રિયથી લઈને સિદ્ધ પર્યન્તના બધા જીવો પણ ક્યારેક
પ્રદેશયુક્ત હોય છે. (૨) ક્યારે કેટલાક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કેટલક
જીવ અપ્રદેશ હોય છે. અને ક્યારેક અનેક સપ્રદેશ હોય છે અને અનેક
અપ્રદેશ હોય છે. તેનું કારણ એ છે કે આ પર્યાયોમાં એ સૌનો વિરહ
સંભવિત છે. આ રીતે તેમના ત્રણ ભંગ (વિકલ્પ) સમજવા.

અહીં ' જાવ ' (પર્યન્ત) પદથી તેન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય, પંચેન્દ્રિય તિય'જો
મનુષ્ય, વાનવ્યન્તર, જ્યોતિષિક અને વૈમાનિકોને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે.

(આહારગાળં જીવ ઈર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો) એક જીવ પદને અને
એકેન્દ્રિયના પાંચ પદને છોડીને બાકીના આહારક જીવોના ત્રણ ભંગ થાય
છે. જીવ પદને છોડવાનું કારણ એ છે કે જીવ નિયમથી જ સપ્રદેશ હોય છે.
તેથી જીવમાં એક જ ભંગ છે-જીવને સપ્રદેશી કહેવાનું કારણ એ છે કે જીવ
અનાદિ છે અને તેની સ્થિતિ અનંતકાળની હોય છે. એકેન્દ્રિયના પાંચ પદોને

અપ્રદેશા અપિ ' इत्येक एव भङ्गः तत्र-उत्पत्तिमरणविरहाभावात्, अत एवोक्तम् जीवैकेन्द्रियवर्जं भङ्गविक्रमिति । तथाहि ' सप्रदेशाः १, ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशश्च २ ' सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ३ इति भङ्गत्रयम्, सिद्धपदं तत्र न वक्तव्यं, तेषामनाहार-कत्वात् । तथाहि-आहारकपदविशेषिता एकत्वद्वन्द्वविषयदण्डकी अवस्तन प्रदर्शितरीत्या चेदित्यग्री, तत्र प्रथमम् एकत्वदण्डकाभिज्ञापनाह-‘आहारकं न भंते !

उत्पत्ति और मरण के विरह का अभाव रहता है इस कारण उसमें “ सप्रदेशा अपि अप्रदेशा अपि ” ऐसा एक ही भंग-तीसरा ही भङ्ग बनता है । इसी कारण “ जीवैकेन्द्रियवर्जं भङ्गविक्रमम् ” ऐसा सूत्रकार ने कहा है । आहारक जीवों में भङ्गविक्रम इस प्रकार से हैं-(१) आहारक जीव सप्रदेश होते हैं ऐसा यह प्रथम भंग है । “ सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च कितनेक पूर्वोत्पन्न आहारक जीव सप्रदेश होते हैं और कोई एक नया उत्पद्यमान आहारक जीव अप्रदेश होता है । यह द्वितीय भंग है । “ सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च ” कितनेक पूर्वोत्पन्न आहारक जीव सप्रदेश भी होते हैं और कितनेक उत्पद्यमान आहारक जीव अप्रदेश भी होते हैं, यह तृतीयभङ्ग है । “ सिद्धपदं तत्र न वक्तव्यम् ” का तात्पर्य यह है कि सिद्ध जीव अनाहारक होते हैं इस कारण यहां उन्हें ग्रहण नहीं किया गया है । इस विषय में विशेषरूप से स्पष्टीकरण इस प्रकार से है-आहारक पद से विशेषित हुए दो दण्डक कि जो एक आहारक जीव

છોડવાનું કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવોમાં ઉત્પત્તિ અને મરણના વિરહનો અભાવ રહે છે, તે કારણે તેમનો (સપ્રદેશા અપિ અપ્રદેશા અપિ) એવો એક જ ભંગ-ત્રીજો ભંગ જ બને છે. તે કારણે સૂત્રકારે એવું કહ્યું છે કે (જીવૈકેન્દ્રિયવર્જં ભંગવિક્રમ) એક જ પદને અને એકેન્દ્રિયને છોડીને પાકીના આહારક જીવોના ત્રણ ભંગ થાય છે. તે ત્રણ ભંગ નીચે પ્રમાણે છે-

(૧) આહારક જીવો સપ્રદેશ હોય છે. (૨) (સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ) કેટલાક પૂર્વોત્પન્ન આહારક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કેટલક નવો ઉત્પન્ન થયેલો આહારક જીવ અપ્રદેશ હોય છે. (૩) “ સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ” કેટલાક પૂર્વોત્પન્ન આહારક-જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કેટલાક નવા ઉત્પન્ન થતા આહારક જીવો અપ્રદેશ હોય છે. (સિદ્ધપદંત્ર ન વક્તવ્ય) સિદ્ધ જીવ અના-હારક હોય છે, તે કારણે ઉપરજણ આહારક જીવોમાં તેમનો સમાવેશ થતો નથી. આ વિષયનું વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે-

‘જીવે કાલાપ્સેનં કિં સપપ્સે, અપપ્સે? ગોયમા! સિય સપપ્સે, સિય અપપ્સે’
 इत्यादि । ‘आहारकः खलु मरन्त । जीवः कालादेशेन किं सप्रदेशः? अप्रदेशः?
 गौतम ! स्यात् सप्रदेशः, स्यात् अप्रदेशः, तत्र यदा विग्रहगती केवलिसमुद्घाते
 वा यो जीतोऽनाहारतो भूत्वा पुनराहारकत्वं प्राप्नोति तदा स आहारकत्वप्राप्ति-
 मयसमये अप्रदेशः, द्रव्यादिमये तु सप्रदेशो भवति, उपर्युक्तैकत्वामिलापः सर्व-
 णपि सादिभावेषु बोध्यः, अनादिभावेषु तु ‘नियमा सपपप्से’ ति ‘नियमात्

और अनेक आहारक जीवों की अपेक्षा से कहे गये हैं वे इस प्रकट की
 गई रीतिके अनुसार हैं—उनमेंसे एक आहारक जीव की अपेक्षासे प्रथम
 दण्डक “आहारणं भन्ते । जीवे कालापसेणं किं सपपप्से । अपपप्से
 गोयमा । सिय सपपप्से सिय अपपप्से ” इत्यादि यह है—गौतम ने प्रश्न
 किया—कि हे भदन्त ! आहारक जीव काल की अपेक्षा सप्रदेश है कि
 अप्रदेश है ? इसका उत्तर प्रभुने “कदाचित् वह सप्रदेश है और कदा-
 चित् वही अप्रदेश है इत्यादिरूप से दिया—जीव जब विग्रहगति में
 अथवा केवलिसमुद्घातमें अनाहारक होकर पुनः आहारक अवस्थावाला
 बनता है, उस समय वह आहारक अवस्था प्राप्त करने के प्रथम समय
 में अप्रदेश है और जब वही जीव द्रव्यादिसमयों में वर्तमान होता है
 तब वह सप्रदेश है, उपर्युक्त एकत्व विषयक अभिलाप समस्त सादि-

આહારક જીવોને આધારે બે દંડક કહ્યા છે. એક દંડક એક આહારક
 જીવની અપેક્ષાએ કહ્યું છે અને બીજું દંડક અનેક આહારક જીવોની અપે-
 ક્ષાએ કહ્યું છે. તે બંને દંડકો નીચે બતાવ્યા પ્રમાણે છે—આહારક જીવની
 અપેક્ષાએ પ્રથમ દંડક આ પ્રમાણે છે—(આહારણં ભન્તે ! જીવે કાલાપ્સેનં કિં
 સપપ્સે અપપ્સે ? ગોયમા ! સિય સપપ્સે સિય અપપ્સે) ઇત્યાદિ.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! આહારક જીવ કાળની અપેક્ષાએ
 સપ્રદેશ છે કે અપ્રદેશ છે ?

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! ક્યારેક તે સપ્રદેશ હોય છે અને ક્યારેક એજ
 અપ્રદેશ હોય છે. જીવ જ્યારે વિગ્રહ ગતિમાં અથવા કેવલિ સમુદ્ઘાતમાં
 અનાહરક થઇને ફરીથી આહારક અવસ્થામાં આવે છે, ત્યારે આહારક અવસ્થા
 પ્રાપ્ત કરવાના પ્રથમ સમયે તે અપ્રદેશ હોય છે, અને જ્યારે એજ જીવ બે
 ત્રણ આદિ સમયો સુધી એજ અવસ્થામાં રહે છે, ત્યારે તે સપ્રદેશ હોય છે.
 ઉપર્યુક્ત એકત્વ વિષયક અભિલાપ (આલાપક) સમસ્ત સાદિ ભાવો-

અપ્રદેશ અપિ ' સ્ત્યેક એ મદ્ગઃ તત્ર-ઉત્પન્નિમરણચિરદામાનાત્, અત્ત્વોક્તમ્
 જીવૈવેન્દ્રિયવર્જ મદ્ગત્રિકમિતિ । તથાદિ ' સપ્રદેશઃ૨, ' સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ૨
 ' સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ૨ ઇતિ મદ્ગત્રયમ્, સિદ્ધપદં તત્ર ન વક્તવ્યં, તેષામનાદાર-
 કતાત્ । તથાદિ-આહારરૂપદિશેષિતો એકત્વચતુત્વનિયમકળ્પકો અવસ્તન
 પ્રદર્શિતરીત્યા વેદિતવ્યો, તત્ર પ્રથમમ્ એકત્વકળ્પકાભિગ્નાપમાહ-'આહારણ ગં મંતે !

ઉત્પત્તિ ઓર મરણ કે ચિરહ્ કા અભાવ રહતા હૈ इस कारण उसमें
 " सप्रदेशा अपि अप्रदेशा अपि " ऐसा एक ही भंग-तीसरा ही भङ्ग
 पनता है । इसी कारण " जीवैकेन्द्रियवर्ज भङ्गत्रिकम् " ऐसा सूत्रकार
 ने कहा है । आहारक जीवों में भङ्गत्रिक इस प्रकार से हैं-(१) आहारक
 जीव सप्रदेश होते हैं ऐसा यह प्रथम भंग है । " सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च
 कितनेक पूर्वोत्पन्न आहारक जीव सप्रदेश होते हैं और कोई एक नया
 उत्पद्यमान आहारक जीव अप्रदेश होता है । यह द्वितीय भंग है ।
 " सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च " कितनेक पूर्वोत्पन्न आहारक जीव सप्रदेश
 भी होते हैं और कितनेक उत्पद्यमान आहारक जीव अप्रदेश भी होते
 हैं, यह तृतीयभङ्ग है । " सिद्धपदंत्वत्र न वक्तव्यम् " का तात्पर्य यह
 है कि सिद्ध जीव अनाहारक होते हैं इस कारण यहां उन्हें ग्रहण नहीं
 किया गया है । इस विषय में विशेषरूप से स्पष्टीकरण इस प्रकार से
 है-आहारक पद से विशेषित हुए दो दण्डक कि जो एक आहारक जीव

છોડવાનું કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવોમાં ઉત્પત્તિ અને મરણના ચિરહનો
 અભાવ રહે છે, તે કારણે તેમનો (સપ્રદેશા અપિ અપ્રદેશા અપિ) એવો
 એક જ ભંગ-ત્રીજો ભંગ જ બને છે. તે કારણે સૂત્રકારે એવું કહ્યું છે કે
 (જીવૈકેન્દ્રિયવર્જ ભંગત્રિકમ્) એક જ પદને અને એકેન્દ્રિયને છોડીને
 બાકીના આહારક જીવોના ત્રણ ભંગ થાય છે. તે ત્રણ ભંગ નીચે પ્રમાણે છે-

(૧) આહારક જીવો સપ્રદેશ હોય છે. (૨) (સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ)
 કેટલાક પૂર્વોત્પન્ન આહારક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કોઈક નવો ઉત્પન્ન
 થયેલો આહારક જીવ અપ્રદેશ હોય છે. (૩) " સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ " કેટલાક
 પૂર્વોત્પન્ન આહારક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કેટલાક નવા ઉત્પન્ન થતા
 આહારક જીવો અપ્રદેશ હોય છે. (સિદ્ધપદંત્ર ન વક્તવ્ય) સિદ્ધ જીવ અના-
 હારક હોય છે, તે કારણે ઉપયુક્ત આહારક જીવોમાં તેમનો સમાવેશ થતો
 નથી. આ વિષયનું વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે-

વિકલ્પત્રયેણ વાચ્યાઃ, તથાદિ—‘ આહારયાણં મંતે ! નેરઙ્ગ્યા જીવા કાલાણ્સેણં કિં સપણ્સા, અપણ્સા ? ગોયમા ! સઘ્વે વિ તાવ હોજ્જા સપણ્સા, અહવા સપ-
ણ્સા ય અપણ્સે ય, અહવા સપણ્સા ય અપણ્સા ય ’ ત્તિ ‘ આહારકાઃ સ્વલુ મદ-
ન્ત્વ ! નૈરયિકાઃ જીવાઃ કાલાદેશેન કિં સપ્રદેશાઃ ? અપ્રદેશા વા ? ગૌતમ ! સર્વે
પિ તાવત્ ભવન્તિ સપ્રદેશાઃ, અથવા સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ, અથવા સપ્રદેશાશ્ચ અપ્ર-
દેશાશ્ચ’ ઇતિ, એતદભિપ્રાયેનોક્તમ્—‘ આહારયાણં જીવ-ર્ણિદિયવજ્જો તિયમંગો ’

ન્દ્રિય અવસ્થાવાળે હું વે પૂર્વોત્પન્ન રૂપ સે સપ્રદેશ હું ઓર વિગ્રહગતિ સે
નિકલકર જય વે આહારકરૂપ સે એકેન્દ્રિય અવસ્થાવાળે ઘનતે હું ઉસ
સમય પ્રથમ સમય મેં આહારક હોને કે કારણ વે અપ્રદેશ હું ! નૈરયિક
આદિ જીવોં કો તો તોન વિકલ્પોં દ્વાગા ઇસ પ્રકાર સે કહના ચાહિયે—
(આહારયા ણં મંતે ! નેરઙ્ગ્યા જીવા કાલાણ્સેણં કિં સપણ્સા અપણ્સા
ગોયમા ! સઘ્વે વિ તાવ હોજ્જા સપણ્સા, અહવા-સપણ્સાય અપણ્સે ય
અહવા-સપણ્સા ય, અપણ્સા ય) ગૌતમ ને જય પ્રશ્ન સે એસા પૂછા કિ
હે મદન્ત ! જો આહારક નારક જીવ હું વે કાલકો અપેક્ષા કયા સપ્રદેશ
હું ? યા અપ્રદેશ હું ? તવ ઇસકા ઉત્તર પ્રશ્નને ઉન્હેં એસા દિયા કિ ગૌત-
મ ! આહારક અવસ્થાવાળે જિતને મી પૂર્વોત્પન્ન નારક જીવ હું વે સવકે
સવ મી સપ્રદેશ હું ! અથવા—ઉનમેં કિતનેક સપ્રદેશ હું ઓર કોઈ એક
અપ્રદેશ હું અથવા—કિતનેક સપ્રદેશ હું ઓર કિતનેક અપ્રદેશ હું ! ઇસી

આદિના વિષયમાં ‘પણુ સમજવું’. એટલે કે જે આહારક જીવો પૃથ્વીકાય
આદિ એકેન્દ્રિય અવસ્થાવાળા હોય છે, તેઓ પૂર્વોત્પન્નરૂપે સપ્રદેશ હોય છે,
પણુ વિગ્રહ ગતિમાંથી નીકળીને જ્યારે તેઓ આહારક રૂપે એકેન્દ્રિય અવ-
સ્થાવાળા બને છે, ત્યારે પ્રથમ સમયે આહારક હોવાને કારણે તેઓ અપ્રદેશ
હોય છે. નારક આદિ જીવોના વિષયમાં આ પ્રમાણે ત્રણ વિકલ્પ (ભંગ)
સમજવા—(આહારયા ણં મંતે ! નેરઙ્ગ્યા જીવા કાલાણ્સેણં કિં સપણ્સા અપણ્સા ?)
(ગોયમા ! સઘ્વે વિ તાવ હોજ્જા સપણ્સા, અહવા-સપણ્સા ય અપણ્સા ય,
અહવા-સપણ્સા ય અપણ્સા ય) ગૌતમસ્વામીનો પ્રશ્ન—“ હે ભદ્રન્ત ! આહારક
નારક જીવો કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશક કે અપ્રદેશ છે ? ” તેનો ઉત્તર
આપતાં મહાવીર પ્રભુ કહે છે—“ હે ગૌતમ ! આહારક અવસ્થાવાળા જેટલાં
પૂર્વોત્પન્ન નારક જીવો છે તેઓ બધાં સપ્રદેશ છે. અથવા તેમનામાંથી કેટલાક
સપ્રદેશ છે અને કેટલાક અપ્રદેશ છે. અથવા કેટલાક સપ્રદેશ છે. અને કેટ-

સપ્રદેશ: ' શિતિ વાચ્યમ્ । યદુત્વદ્વડકાભિલાપસ્ત્વેવં ચોધ્ય:—'આહારયાજં મંતે !
 જીવા કાલાણસેણં અપણસા ? ગોયમા । સપણસા વિ, અપણસા વિ ' તિ ' આહાર-
 રકા: સ્વલુ મદન્ત ! જીવા: કાલાદેશેન કિં સપ્રદેશ: ? અપ્રદેશ: ? ગૌતમ !
 સપ્રદેશા અપિ, અપ્રદેશા અપિ ' શિતિ, તત્ર ચહુનામાહારકત્વેનાસ્થિતસ્માત્ સપ્ર-
 દેશત્વમ્, ચહુનાં ચ વિગ્રહગતેરનન્તરં પ્રથમસમયે આહારકત્વસંમયેન આહારકા-
 ણામ્ અપ્રદેશત્વં ચ ચોધ્યમ્ । एवं પૃથિવ્યાદયોઽપિ વક્તવ્યા:, નૈરપિકાદયસ્તુ

ભાવોં મેં જાનના ચાહિયે ઓર અનાદિભાવોં મેં તો “ નિયમા સપણસે
 તિ ” નિયમ સે આહારક અવસ્થાવાલા પૂર્વોત્પન્ન જીવ સપ્રદેશ હી હૈ
 પેસા જાનના ચાહિયે । ચહુત્વ ચહુવચન વિષયક દ્વડાભિલાપ પેસા હૈ
 (આહારયાજં મંતે ! જીવા કાલાણસેણં કિં સપણસા, અપણસા ? ગોય-
 મા ! સપણસા વિ અપણસા વિ તિ) ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે પેસા પૂછા હૈ
 કિં મદન્ત ! અનેક આહારક જીવ કાલ કી અપેક્ષા સે કયા સપ્રદેશ હૈ
 કિં અપ્રદેશ હૈ ? હિસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હૈ કિં હે ગૌતમ !
 અનેક આહારક જીવ સપ્રદેશ મોં હૈ ઓર અપ્રદેશ મીં હૈ । અર્થાત્
 પૂર્વોત્પન્ન જિતને મીં આહારક જીવ હૈં વે સય તો સપ્રદેશ હૈં ઓર વિગ્ર-
 હગતિ સે નિકલ કર જમ અનેક જીવ આહારક અવસ્થાવાલે બનતે હૈં
 તવ વે પ્રથમ સમય મેં અપ્રદેશ હૈં । ક્ષણોં કિં પ્રથમ સમય મેં વે અના-
 હારક નહોં રહતે હૈં—આહારક હી હોતે હૈં । હિસી તરહ સે પૃથિવ્યાદિકોં
 કો મીં જાનના ચાહિયે, અર્થાત્ જો આહારક જીવ પૃથિવ્યાદિકરૂપ એક-

ને જ લાગુ પડે છે એમ સમજવું, અનાદિ ભાવોંમાં તો (નિયમા સપણસે તિ)
 આહારક અવસ્થાવાળો પૂર્વોત્પન્ન જીવ નિયમથી જ સપ્રદેશ છે એમ સમજવું.

બહુત્વ (બહુવચન) વિષયક અભિલાપ નીચે પ્રમાણે છે—(આહારયાજં
 મંતે ! જીવા કાલાણસેણં કિં સપણસા, અપણસા ? ગોયમા । સપણસા વિ
 અપણસા વિ તિ) ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે
 મદન્ત ! આહારક એવો કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ છે કે અપ્રદેશ છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—“ હે ગૌતમ ! અનેક
 આહારક એવો સપ્રદેશ પણ હોય ” અને અપ્રદેશ પણ હોય છે. “ કહેવાતું
 તાત્પર્ય ” એ છે કે પૂર્વોત્પન્ન જેટલાં આહારક એવો છે તેઓ તો સપ્રદેશ છે,
 પણ વિગ્રહગતિમાંથી નીકળીને ન્યારે અનેક એવો આહારક અવસ્થાવાળો
 બને છે, ત્યારે તેઓ પ્રથમ સમયે અપ્રદેશ હોય છે, કારણ કે પ્રથમ સમયે
 તેઓ અનાહારક રહેતા નથી—આહારક જ હોય છે. એજ પ્રમાણે પૃથ્વીકાય

વિકલ્પત્રયેણ વાચ્યાઃ, તથાદિ-‘ આહારયાણં મંતે ! નેરડ્યા જીવા કાલાણસે ણં કિં સપણસા, અપણસા ? ગોયમા ! સવ્વે વિ તાવ હોજ્જા સપણસા, અહવા સપ-
ણસા ય અપણસે ય, અહવા સપણસા ય અપણસા ય ’ તિ ‘ આહારકાઃ સ્વલુ ભદ-
ન્ત । નૈરયિકાઃ જીવાઃ કાલાદેશેન કિં સપ્રદેશઃ ? અપ્રદેશા વા ? ગૌતમ ! સર્વે
પિ તાવત્ ભવન્તિ સપ્રદેશાઃ, અથવા સપ્રદેશાથ્ર અપ્રદેશથ્ર, અથવા સપ્રદેશાથ્ર અપ્ર-
દેશાથ્ર’ ઇતિ, એતદભિપ્રાયેણોક્તમ્-‘ આહારયાણં જીવ-અર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો ’

ન્દ્રિય અવસ્થાવાળે હું વે પૂર્વોત્પન્ન રૂપ સે સપ્રદેશ હું ઓર વિગ્રહગતિ સે
નિકલકર જય વે આહારકરૂપ સે એકેન્દ્રિય અવસ્થાવાળે વનતે હું ઉસ
સમય પ્રથમ સમય મેં આહારક હોને કે કારણ વે અપ્રદેશ હું । નૈરયિક
આદિ જીવોં કો તો ત્રીન વિકલ્પોં દ્વાા । ઇસ પ્રકાર સે કહનાં ચાહિયે-
(આહારયા ણં મંતે ! નેરડ્યા જીવા કાલાણસેણં કિં સપણસા અપણસા
ગોયમા ! સવ્વે વિ તાવ હોજ્જા સપણસા, અહવા-સપણસાય અપણસે ય
અહવા-સપણસા ય, અપણસા ય) ગૌતમ ને જય પ્રશ્ન સે એસા પૂછા કિ
હે ભદન્ત ! જો આહારક નારક જીવ હું વે કાલકી અપેક્ષા કયા સપ્રદેશ
હું ? યા અપ્રદેશ હું ? તવ ઇસકા ઉત્તર પ્રશ્નને ઉન્હેં એસા દિયા કિ ગૌત-
મ ! આહારક અવસ્થાવાળે જિતને બી પૂર્વોત્પન્ન નારક જીવ હું વે સવકે
સવ બી સપ્રદેશ હું । અથવા-ઉનમેં કિતનેક સપ્રદેશ હું ઓર કોઈ એક
અપ્રદેશ હું અથવા-કિતનેક સપ્રદેશ હું ઓર કિતનેક અપ્રદેશ હું । ઇસી

આદિના વિષયમાં પણ સમજવું. એટલે કે જે આહારક જીવો પૃથ્વીકાય
આદિ એકેન્દ્રિય અવસ્થાવાળા હોય છે, તેઓ પૂર્વોત્પન્નરૂપે સપ્રદેશ હોય છે,
પણ ત્રિગ્રહ ગતિમાંથી નીકળીને ત્યારે તેઓ આહારક રૂપે એકેન્દ્રિય અવ-
સ્થાવાળા બને છે, ત્યારે પ્રથમ સમયે આહારક હોવાને કારણે તેઓ અપ્રદેશ
હોય છે. નારક આદિ જીવોના વિષયમાં આ પ્રમાણે ત્રણ વિકલ્પ (ભંગ)
સમજવા- (આહારયા ણં મંતે ! નેરડ્યા જીવા કાલાણસેણં કિં સપણસા અપણસા ?)
(ગોયમા ! સવ્વે વિ તાવ હોજ્જા સપણસા, અહવા-સપણસા ય અપણસા ય,
અહવા-સપણસા ય અપણસા ય) ગૌતમસ્વામીનો પ્રશ્ન-“ હે ભદન્ત ! આહારક
નારક જીવો કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશક કે અપ્રદેશ છે ? ” તેનો ઉત્તર
આપતાં મહાવીર પ્રભુ કહે છે-“ હે ગૌતમ ! આહારક અવસ્થાવાળા જેટલાં
પૂર્વોત્પન્ન નારક જીવો છે તેઓ બધાં સપ્રદેશ છે. અથવા તેમનામાંથી કેટલાક
સપ્રદેશ છે અને કોઈક અપ્રદેશ છે. અથવા કેટલાક સપ્રદેશ છે. અને કેટ-

તિ । એવમ્ અનાહારકપદવિશેષિતાયપિ એકત્વ-પદ્ધતિ-વિષયકદણ્ડકો વિશેષો, તત્ર પદ્ધત્યદણ્ડકાલાપકે વિશેષં મૂલે વક્ષ્યતિ, સમ્પતિ એકતાદણ્ડકાલાપકવિષયે ઉત્પત્તે-અનાહારકો વિગ્રહગત્યાપન્નઃ । સમુદ્ધાતકેવલી, અયોગી સિદ્ધો ચ અનાહારકત્વપ્રથમસમયે અપ્રદેશઃ, દ્વયાદિપ્રથમે તુ સપ્રદેશો વેદિતઃ ।

અથ અનાહારકપદ્ધત્યદણ્ડકે મતિરાદ્યિતુમાદ-અનાહારગાણં જીવ એગિદિય વજ્જા ઉબ્ભંગા એવં ભાણિયન્ના ' અનાહારગાણાં જીવાનાં જીવેકેન્દ્રિયવર્ગાઃ સમુ-

અભિપ્રાય કો લેકર " આહારગાણં જીવએગિદિયવજ્જો તિયમંગા " સૂત્રકાર ને એસા કહ્યા હૈ કિ એક જીવ પદ કો ઓર એકેન્દ્રિય કે પાંચ પદો કો છોડકર આહારક જીવો કે ત્રીન ભંગ કહે ગયે હૈ । इसी तरह से अनाहारक पद से विशेषित करके अनाहारक जीवों के भी एक वचन और बहुत वचन की विवक्षा से दो दण्डक कहना चाहिये । पद्धत्यदण्डक में-पद्धत अनाहारक जीव विषयक द्वितीय दण्डक में-" क्या विशेषता है ? " यह बात तो सूत्रकार स्वयं ही मूलपाठ में प्रकट करेंगे यहां तो हम एकत्वदण्डक के आलाप के विषय में कहते हैं-जो इस प्रकार से है-विग्रहगति में रहा हुआ जीव, समुद्घातगतकेवली, अयोगी एवं सिद्ध-ये सब अनाहारक होते हैं । सो ये सब जब अनाहारक अवस्था के प्रथम समय में रहते हैं, तब तो अप्रदेश कहे गये हैं और जब ये द्वितीय आदि समयों में रहते हैं, तब सप्रदेश कहे गये हैं । अनाहारक के बहुत्वदण्डक में जो विशेषता है उसे प्रकट करनेके लिये सूत्रकार कहते हैं कि-(अणाहारगाणं जीव-एगिदियवज्जा उबभंगा एवं

લાક અપ્રદેશ છે. એ જ વાતને ધ્યાનમાં રાખીને સૂત્રકારે કહ્યું છે કે " આહારગાણં જીવએગિદિયવજ્જો તિયમંગો " એક જીવપદને છોડીને તથા એકેન્દ્રિયનાં પાંચ પદોને છોડીને બાકીના આહારક જીવોના ત્રણ ભંગ કહ્યા છે. " એ જ પ્રમાણે અનાહારક જીવોના પણ એકવચન અને બહુવચનની વિવક્ષાથી બે દંડક કહેવા બેઠા. બહુવચનવાળા દંડકમાં (અનેક અનાહારક જીવો વિષેના બીજા દંડકમાં) શી વિશેષતા છે તે સૂત્રકારે મૂળ સૂત્રપાઠમાં આગળ બતાવ્યું છે, અહીં તો એકત્વદંડકના આલાપક વિષે નીચે પ્રમાણે સ્પષ્ટતા કરવામાં આવે છે. વિગ્રહગતિમાં રહેલો જીવ; સમુદ્ધાત કેવલી, અયોગી અને સિદ્ધ અનાહારક હોય છે. તેઓ ત્યારે અનાહારક અવસ્થાના પ્રથમ સમયમાં રહેલા હોય છે, ત્યારે તો અપ્રદેશ જ કહેવાય છે, પણ ત્યારે તેઓ તે અવસ્થાના, બીજા, ત્રીજા આદિ સમયોમાં રહેલા હોય છે, ત્યારે તે સપ્રદેશ કહેવાય છે.

હવે સૂત્રકાર અનાહારક જીવોના બહુત્વદંડકમાં જે વિશેષતા રહેલી છે તે પ્રકટ કરતા કહે છે—" અનાહારગાણં જીવ - એગિદિયવજ્જા ઉબ્ભંગા એવં

ચયજીવપદવત્, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપञ्ચકપદં ચ વર્જયિત્વા પદ્મજ્ઞાઃ એવં વક્ષ્ય-
માણપ્રકારેણ મણિતવ્યાઃ વક્તવ્યાઃ જીવપદે, એકેન્દ્રિયપદે ચ 'સપણસા ય અપ-
ણસા ય' 'સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ' इत्येवंरूप एको भङ्गो बोध्यः, વહુનાં વિપ્રહ-
ગત્યાપન્નાનાં સપ્રદેશાનામ્ અપ્રદેશાનાં ચ સદ્ભાવાત્ । અથ તાનેવ પદ્મજ્ઞાનાહ-
'સપણસા વા ૧, અપણસા વા ૨, અહવા સપણસે ય અપણસે ય ૩, અહવા સપ-
ણસે ય, અપણસા ય ૪, અહવા સપણસા ય અપણસે ય ૫ અહવા સપણસા ય,
અપણસા ય ૬' સપ્રદેશ વા ૧, અપ્રદેશ વા ૨, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૩
અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૪, અથવા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૫ અથવા સપ્રદેશથ
અપ્રદેશથ ૬ અનાહારકા જીવા ભવન્તિ । આદ્યો તત્ર દ્વૌ बहुवचनान्तौ, તૃતીયश्चैक

भाणियव्या) अनाहारक जीवों के छह भंग, जीवपद को और एकेन्द्रिय
पृथिवी आदिकों के पांच पदों को छोड़कर के इस प्रकार से कहते हैं-
जीवपद में और एकेन्द्रियपद में 'सपणसा य अपणसा य' 'सप्रदेशाः'
और 'अप्रदेशाः' ऐसा एक ही भंग होता है-क्योंकि वहां पर विप्रहगति
में रहे हुए अनेक जीव द्वितीयादि समय वाले होने के कारण सप्रदेश
होते हैं अनेक जीव प्रथम समय वर्ती होने के कारण अप्रदेश होते हैं ।
अल्पतर नैरयिकों का अल्पतर अवनपतियों का तथा अल्पतर दो इन्द्रिय
आदिकों का उत्पाद होता है सो इनमें एक दो आदि अनाहारक होते
हैं-इसी कारण यहाँ छह भंग हैं-वे छह भंग इस प्रकार से हैं-" सप-
णसा वा १, अपणसा वा २, अहवा-सपणसे य, अपणसे य ३, अहवा-
सपणसे य, अपणसा य ४, अहवा-सपणसा य अपणसे य ५, अहवा-

भाणियव्या " એક જીવ પદને અને એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ પદને
છોડીને બાકીના અનાહારકોના બે ભંગ (વિકલ્પ) થાય છે. જીવપદમાં અને
એકેન્દ્રિય પદમાં " સપણસા ય અપણસા ય " " સપ્રદેશ પણ હોય છે અને
અપ્રદેશ પણ હોય છે " એવો એક જ ભંગ થાય છે. કારણ કે ત્યાં વિપ્રહ-
ગતિમાં રહેતા જીવો દ્વિતીય આદિ સમયવાળા હોવાને કારણે સપ્રદેશ હોય
છે, અને અનેક જીવ પ્રથમ સમયમાં વર્તમાન હોવાને લીધે અપ્રદેશ હોય
છે. અલ્પતર અવનપતિઓનો તથા દ્વીન્દ્રિય આદિ કોનો ઉત્પાદ થાય છે, તેથી
તેઓમાં એક, બે આદિ અનાહારક હોય છે. તે કારણે અહીં નીચે પ્રમાણે છ
ભંગ (વિકલ્પ) થાય છે-(૧) સપણસા વા, (૨) અપણસા વા (૩) અહવા-સપણસે
ય અપણસે ય, (૪) અહવા-સપણસે ય અપણસા ય, (૫) અહવા-સપણસા ય અપ-
ણસે ય, (૬) અહવા-સપણસા ય અપણસા ય " આ છ ભંગમાંથી પહેલો અને
બીજો ભંગ બહુવચનાન્ત છે, અને ત્રીજો, એક વચનવાળો છે. ચોથો અને

વચનાન્તઃ, એકવચન-વહુવચનસંયોગાત્ ટ્રી ત્રયુષ્ પદ્યની, પદ્યો મહો વહુ-
 વચનાન્તઃ ૬। રિતિ। તત્ર સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૧, સ્ત્યેયંરૂપં કેવલેકવચન-
 ગર્ભિતોમહોઽથ ન સંભવતિ વહુત્વસ્પાધિકારાત્। એવં ચ નૈરપિકાળાં ભવન-
 પતીનાં ટ્રીન્દ્રિયાદીનાં ચ અલ્પતરાણામુત્પત્તેઃ પદ્મપદ્યાદીનામ્ અનાશરકાળાં
 ભાવાત્ ઉપર્યુક્તાઃ પર મહાઃ માન્તીતિ, 'સિદ્ધેર્હિ તિયમંગો' સિદ્ધેષુ ત્રયો
 મહાઃ - કદાચિત્ સર્વે સિદ્ધાઃ સપ્રદેશાઃ ૧, કદાચિત્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ ૧ઃ
 અપ્રદેશથ ૨, કદાચિત્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ વહવઃ અપ્રદેશથ ભવન્તિ ૩, સપ્રદેશપદસ્ય
 વહુવચનાન્તસ્યૈવ સિદ્ધેષુ સંમગત્। 'ભવસિદ્ધિયા, અભવસિદ્ધિયા જહા ઓહિયા'
 ભવસિદ્ધિકાઃ ભવ્યાઃ, અભવસિદ્ધિકાઃ અભવ્યાથ જીમાઃ યથા ઔપિકાઃ સામાન્ય
 જીવાસ્તથા જ્ઞાતવ્યાઃ, તથાહિ ઔચિકદ્વંડવત્ પતેષાં ભવસિદ્ધિકાનામ્ અભવ-
 સપણસા ય અપણસા ય"। इनमें दो भंग प्रथमभंग और द्वितीयभंग
 ये बहुवचनान्त हैं तीसरा एक वचनान्त है और शेष २ भंग-४था पांचवां
 ये एकवचन और बहुवचन के संयोग से होते हैं। और छट्ठा बहुवचनान्त
 है। (सप्रदेशश्च अप्रदेशश्च) ऐसे केवल एकवचनगर्भित भंग यहां नहीं
 हैं। (कारण कि यहाँ पर बहुवचनका अधिकार है। (सिद्धेर्हि त्रियमंगो)
 सिद्धोंमें तीनभंग होते हैं-“कदाचित् समस्त सिद्ध सप्रदेश होते हैं ?”
 कदाचित् अनेक सिद्ध सप्रदेश होते हैं और कोई एक सिद्ध अप्रदेश होता
 है २, कदाचित् अनेक सिद्ध सप्रदेश होते हैं और कदाचित् अनेक सिद्ध
 अप्रदेश होते हैं” इस प्रकार से ये तीन भंग हैं। यहां पर जो सप्रदेश
 पद है वह बहुवचनान्त ही है 'भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, जहा ओहिया'
 भवसिद्धिक-भव्य, अभवसिद्धिक-अभव्य, ये दोनों जीव सामान्य
 (समुच्चय) जीव की तरह से जानना चाहिये-अर्थात् सामान्य जीव के
 दण्डक की तरह भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक इन दोनों में से प्रत्येक

પાંચમો ભંગ એકવચન અને બહુવચનના સંયોગથી બનેલ છે. અને છઠ્ઠો ભંગ
 બહુવચનવાળો છે. “ સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ ” એવો એકવચનદર્શક ભંગ અહીં
 સંભવિત નથી કારણ કે અહીં બહુવચનનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે. “સિદ્ધેર્હિ ત્રિય
 મંગો” સિદ્ધોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે-(૧) ક્યારેક સમસ્ત સિદ્ધ સપ્રદેશ હોય
 છે, (૨) ક્યારેક અનેક સિદ્ધ સપ્રદેશ હોય છે અને કેટલક સિદ્ધ અપ્રદેશ હોય છે.
 (૩) ક્યારેક અનેક સિદ્ધ સપ્રદેશ હોય છે અને અનેક સિદ્ધ અપ્રદેશ હોય છે,
 આ રીતે સિદ્ધ પદને અનુલક્ષીને ત્રણ ભંગ થાય છે અહીં જે સપ્રદેશ પદ છે તે
 બહુવચનમાં જ વપરાયું છે તેમ સમજવું. “ભવસિદ્ધિયા, અભવસિદ્ધિયા, જહા
 ઓહિયા” ભવસિદ્ધિક (ભવ્ય) અભવસિદ્ધિક (અભવ્ય) એ બંને જીવના
 વિષયમાં સામાન્ય જીવ જેવું જ કથન સમજવું. એટલે કે સામાન્ય જીવના

સિદ્ધિકાનાં અભવ્યાનાં મુક્તિગમનરહિતાનામ્ ચ પ્રત્યેકમ્ એકત્વવહુત્વ-
વિપયકતયા દણ્ડકદ્વયં बोध्यम्, તત્ર ચ ભવ્યોઽભવ્યો વા જીવો નિયમાત્
સપ્રદેશઃ । एवं बहुत्वेऽपि भव्या अभव्या वा नियमात् सप्रदेशः, નૈરયિ-
કાદિસ્તુ ભવ્યોઽભવ્યો વા સપ્રદેશઃ, અપ્રદેશો વા, વહવસ્તુ ભવ્યા અભવ્યા
વા જીવાઃ સપ્રદેશ એવ । નૈરયિકાયાસ્તુ વહવો ભવ્યા અભવ્યા વા મજ્જ-
વપવન્તઃ—સર્વે સપ્રદેશા એવ કદાચિદ્ ભવેયુઃ ૧ કદાચિદ્ વહવઃ સપ્રદેશાથ,
એકઃ અપ્રદેશાથ ૨, કદાચિદ્ વહવઃ સપ્રદેશાથ વહવઃ અપ્રદેશાથ,
ભવન્તિ ૩, ઇતિમાત્રઃ । एकेन्द्रियाः पुनर्भव्या अभव्या वा पृथिवीकायिकादयः

કે દો દણ્ડક હૈ । इनमें कोई एक भव्य और कोई एक अभव्य जीव
નિયમ સે સપ્રદેશ હોતા હૈ । यह एकवचनवाला दण्डक है । इसी तरह
સે વહુવચનનાન્ત ભવ્ય ઓર અભવ્ય મી નિયમ સે સપ્રદેશ હોતે હૈ ।
नैरयिक आदिकों में जो कोई एक भव्य अथवा अभव्यजीव है वह तो
સપ્રદેશ અથવા અપ્રદેશ હોતા હૈ । अनेक भव्य अथवा अनेक अभव्य
जीव सप्रदेश ही होते हैं । नैरयिक आदिकों में जो अनेक भव्य अथवा
અભવ્ય જીવ હૈ, વે ત્રીનમંગ વાળે હોતે હૈ । कदाचित् सव सप्रदेश ही
હોતે હૈ ૧, कदाचित् अनेक सप्रदेश होते हैं और कोई एक अप्रदेश
હોતા હૈ ૨, कदाचित् अनेक सप्रदेश होते हैं और कदाचित् अनेक
અપ્રદેશ હોતે હૈ ૩ । एकेन्द्रियपृथिवीकायिक आदि जीवों में जो भव्य
અથવા અભવ્ય જીવ હૈ વે “ સપ્રદેશ ઓર અપ્રદેશ હોતે હૈ ” इस तरह

દ'ડકના જેવાં જ ભવસિદ્ધિકના બે દ'ડક અને અભવસિદ્ધિકના બે દ'ડક સમ-
જવા. તેમાંનો એકવચનવાળો અભિલાપ ખતાવે છે કે કોઈક ભવ્ય જીવ અને
કોઈક અભવ્ય જીવ નિયમથી સપ્રદેશ હોય છે. બહુવચનવાળો અભિલાપ એ
ખતાવે છે કે અનેક ભવ્ય જીવો અને અનેક અભવ્ય જીવો સપ્રદેશ અથવા
અથવા અપ્રદેશ હોય છે.

નારક આદિકોમાં કોઈક ભવ્ય અથવા અભવ્ય જીવ સપ્રદેશ અથવા
અપ્રદેશ હોય છે. અનેક ભવ્ય અથવા અનેક અભવ્ય જીવો સપ્રદેશજ હોય છે.
નૈરયિક આદિકોમાં જે અનેક ભવ્ય અથવા અભવ્ય જીવ છે, તેઓ ત્રણ ભંગ
વાળા હોય છે—(૧) ક્યારેક બધાં સપ્રદેશ જ હોય છે, (૨) ક્યારેક અનેક
સપ્રદેશ હોય છે અને કોઈક અપ્રદેશ જ હોય છે, (૩) ક્યારેક અનેક સપ્ર-
દેશ હોય છે અને ક્યારેક અનેક અપ્રદેશ હોય છે તથા એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય
આદિ જીવોમાં જે ભવ્ય અથવા અભવ્ય જીવો હોય છે તેઓ “ સપ્રદેશ
અને અપ્રદેશ હોય છે.” આ રીતે તેમને એક જ ભંગવાળા કહ્યા છે. અહીં

વચનાન્તઃ, એકવચન-વહુવચનસંયોગાત્ ક્ત્વો ચતુર્થ પદ્યમી, પછો મજ્ઞો વહુ-
વચનાન્તઃ ૬। રતિ। તથા સપ્રદેશથ અપ્રદેશથ ૧, રત્યેવંરૂપં કેવલેકવચન-
ગર્ભિતોમજ્ઞોઽથ ન સંભવતિ વહુત્વસ્યાધિકારાત્। એવં ચ નૈરયિકાણાં ભવન-
પતીનાં ક્ષીન્દ્રિયાદીનાં ચ અલ્પતરાણામુત્પત્તેઃ પદ્મદ્વયાદીનામ્ અનાશરકાણાં
ભાવાત્ ઉપર્યુક્તાઃ પદ્મ મજ્ઞાઃ ભવન્તીતિ, 'સિદ્ધેર્હિ તિયમંગો' સિદ્ધેષુ ત્રયો
મજ્ઞાઃ - કદાચિત્ સર્વે સિદ્ધાઃ સપ્રદેશાઃ ૧, કદાચિત્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ એકઃ
અપ્રદેશથ ૨, કદાચિત્ વહવઃ સપ્રદેશાઃ વહવઃ અપ્રદેશથ ભવન્તિ ૩, સપ્રદેશપદસ્ય
વહુવચનાન્તસ્યેવ સિદ્ધેષુ સંભવાત્। 'ભવસિદ્ધિયા, અભવસિદ્ધિયા જહા ઓહિયા'
ભવસિદ્ધિકાઃ ભવ્યાઃ, અભવસિદ્ધિકાઃ અભવ્યાઃ જીવાઃ યથા ઔચિકાઃ સામાન્ય
જીવાસ્તથા જ્ઞાતવ્યાઃ, તથાહિ ઔચિકદણ્ડદ્વયવત્ એતેવાં ભવસિદ્ધિકાનામ્ અભવ-

સપણસા ય અપણસા ય"। इनमें दो भंग प्रथमभंग और द्वितीयभंग
ये बहुवचनान्त हैं तीसरा एक वचनान्त है और शेष २ भंग-४था पांचवां
ये एकवचन और बहुवचन के संयोग से होते हैं। और छद्वा बहुवचनान्त
है। (सप्रदेशश्च अप्रदेशश्च) ऐसे केवल एकवचनगर्भित भंग यहां नहीं
हैं। (कारण किय हां पर बहुवचनका अधिकार है। (सिद्धेर्हि तियमंगो)
सिद्धोंमें तीनभंग होते हैं-"कदाचित् समस्त सिद्ध सप्रदेश होते हैं?"
कदाचित् अनेक सिद्ध सप्रदेश होते हैं और कोई एक सिद्ध अप्रदेश होता
है २, कदाचित् अनेक सिद्ध सप्रदेश होते हैं और कदाचित् अनेक सिद्ध
अप्रदेश होते हैं" इस प्रकार से ये तीन भंग हैं। यहां पर जो सप्रदेश
पद है वह बहुवचनान्त ही है 'भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, जहा ओहिया'
भवसिद्धिक-भव्य, अभवसिद्धिक-अभव्य, ये दोनों जीव सामान्य
(समुच्चय) जीव की तरह से जानना चाहिये-अर्थात् सामान्य जीव के
दण्डक की तरह भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक इन दोनों में से प्रत्येक

પાંચમો ભંગ એકવચન અને બહુવચનના સંયોગથી બનેલ છે. અને છઠ્ઠો ભંગ
બહુવચનવાળો છે. "સપ્રદેશશ્ચ અપ્રદેશશ્ચ" એવો એકવચનદર્શક ભંગ અહીં
સંભવિત નથી કારણ કે અહીં બહુવચનનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે. "સિદ્ધેર્હિ તિય
મંગો" સિદ્ધોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે-(૧) ક્યારેક સમસ્ત સિદ્ધ સપ્રદેશ હોય
છે, (૨) ક્યારેક અનેક સિદ્ધ સપ્રદેશ હોય છે અને કોઈક સિદ્ધ અપ્રદેશ હોય છે,
(૩) ક્યારેક અનેક સિદ્ધ સપ્રદેશ હોય છે અને અનેક સિદ્ધ અપ્રદેશ હોય છે,
આ રીતે સિદ્ધ પદને અનુલક્ષીને ત્રણ ભંગ થાય છે અહીં જે સપ્રદેશ પદ છે તે
બહુવચનમાં જ વપરાયું છે તેમ સમજવું. "ભવસિદ્ધિયા, અભવસિદ્ધિયા, જહા
ઓહિયા" ભવસિદ્ધિક (ભવ્ય) અભવસિદ્ધિક (અભવ્ય) એ બંને જીવના
વિષયમાં સામાન્ય જીવ જેવું જ કથન સમજવું. એટલે કે સામાન્ય જીવના

અથ વહુત્વવિષયકદણ્ડકે મદ્વકચમચસેયમ્, તથાહિ-‘ નોભવસિદ્ધિય-નો-
અમવસિદ્ધિયા ણં મંતે ! જીવા કિં સપણસા અપણસા ? ગોયમા ! સર્વે સપણસા?,
વહુયા સપણસા, એવો અપણસેય ૨, વહુયા સપણસા વહુયા અપણસા ય૩ તિ’
‘ સંત્રીહિં જીવાઃઓ તિયમંગો ’ સંત્રિપુ જીવાદિકાસ્ત્રયો મદ્વાઃ, સંત્રિપુ યૌ એકત્વ-
વહુત્વવિષયકો દણ્ડકો તયોર્વહુત્વવિષયકે દ્વિતીયદણ્ડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેપુ

વચનવાલે દણ્ડક કા ખી અભિલાપ કહ લેના યાદિયે-ઇસ વહુવચનવાલે
દણ્ડક મેં ત્રીનભંગ હોતે હે-એ ઇસ પ્રકાર સે-(જો ભવસિદ્ધિય નો
અમવસિદ્ધિયા ણં મંતે ! કિં સપણમા અપણસા ? ગોયમા !) સર્વે સપ્ર-
દેશાઃ ૧, વહવઃ સપ્રદેશાઃ, એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ ૨, વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ
અપ્રદેશાશ્ચ ૩ હેં । યહાં ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે પ્રશ્ન કિયા કિ હે મદન્ત ! જો
જીવ એસે હેં કિ ન વે મવ્ય ઓર ન વે અમવ્ય હેં તો કયા વે સપ્રદેશ
હોતે હેં યા અપ્રદેશ હોતે હેં ? ઇસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર યહાં ત્રીનભંગરૂપ સે
દિયા હે-અન્હોં ને કહા હે ગૌતમ ! એસે જીવ યા તો સવ સપ્રદેશ હોતે
હેં । કિતનેક સપ્રદેશ હોતે હેં ઓર કોઈ એક અપ્રદેશ હોતા હેં । યા
કિતનેક સપ્રદેશ હોતે હેં ઓર કિતનેક અપ્રદેશ હોતે હેં । “ સંત્રીહિં
જીવાઃઓ તિયમંગો ” સંત્રિયોં મેં જીવાદિક ત્રીન ભંગ હોતે હેં અર્થાત
સંત્રિ જીવોં મેં જો એકત્વ એવં વહુત્વ વિષયક દો દણ્ડક હેં, અનમેં સે

અપ્રદેશ હોય છે. એ જ પ્રમાણે બહુવચનવાળા દંડકને અભિલાપ પણ કહેવો
એવો. આ બહુવચનવાળા દંડકમાં ત્રણ ભાગ થાય છે. તે ત્રણ ભાગ નીચે
પ્રમાણે છે-(જો ભવસિદ્ધિય નો અમવસિદ્ધિયા ણં મંતે ! જીવા કિં સપણસા
અપણસા ?) “ ગોયમા ! સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧, વહવઃ સપ્રદેશાઃ એક અપ્રદેશાશ્ચ ૨,
વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ ૩ ।)

આ વિષયમાં ગૌતમ સ્વામી એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે હે ભદ્રન્ત ! ન ભવ્ય
અને ન અભવ્ય એવા જીવો શું સપ્રદેશ હોય છે કે અપ્રદેશ હોય છે ?

આ પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપે મહાવીર ત્રણએ નીચે પ્રમાણે ત્રણ ભાગ
(વિકલ્પ) કહ્યા છે—

(૧) એવાં બધાં જીવો કાં તો સપ્રદેશ હોય છે, (૨) અથવા અનેક
સપ્રદેશ હોય છે અને કોઈક અપ્રદેશ હોય છે, (૩) અથવા અનેક સપ્રદેશ
હોય છે અને અનેક અપ્રદેશ હોય છે.

(સંત્રીહિં જીવાઃઓ તિયમંગો) સંત્રી જીવોમાં જીવાદિક ત્રણ ભાગ થાય
છે. એટલે કે સંત્રી જીવોમાં જે એકત્વ અને બહુત્વ વિષયક બે દંડક છે,

સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ, ઇતિ એકમદ્વારંત એવં । સિદ્ધપદં તત્ર ન વક્તવ્યમ્
 સિદ્ધાનાં મળ્યામળ્યત્વવિશેષણાનુપલબ્ધઃ । ‘ જોમવસિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-
 જીવસિદ્ધિર્હિ તિયમંગો ’ નો મવસિદ્ધિક-નો અમવસિદ્ધિક-જીવ સિદ્ધયોમ્વયો
 મદ્વા વેદિતવ્યાઃ, તથાદિ-એતદ્ નોમવસિદ્ધિક નોમવસિદ્ધિક વિશેષણવિશ્લિ-
 ણ્મ ઉપર્યુક્તજીવસિદ્ધદ્વંડકદ્વયં પઠિતવ્યમ્ એકત્વાભિલાપાકારથેત્યમ્-’ જોમવ-
 સિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-
 સિય સપણસે સિય અપણસે ’ ઇત્યાદિ । એવં ચક્રત્વદ્વંડકાલાપોઽપિ વક્તવ્યઃ,

કે જે એક ભંગવાળે હી કહે ગયે હૈં । યહાં મળ્ય અમળ્ય કે પ્રકરણ મેં
 સિદ્ધપદ નહીં કહના चाहिये-—કયોં કિ સિદ્ધોં મેં મળ્ય અમળ્ય इन दोनों
 વિશેષણોં का अभाव हो गया है । (જો મવસિદ્ધિય-જો અમવસિદ્ધિય
 -જીવસિદ્ધિર્હિ તિયમંગો ” નો મવસિદ્ધિક નો અમવસિદ્ધિક જીવ એવં
 સિદ્ધોં મેં ત્રીન ભંગ હોતે હૈં-તાત્પર્ય યહ હૈ કિ “ મળ્ય નહીં, અમળ્ય
 નહીં ” એસે વિશેષણોં વાલે જીવાદિક દો દ્વંડક કહના चाहिये-इनसे
 लगता हुआ एकत्व अभिलाप का आकार इस प्रकार से हैं-(જો મવ-
 સિદ્ધિય જો અમવસિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-
 યહાં એસા પ્રશ્ન કિયા હૈ કિ હે મદન્ત ! જો જીવ ન મવસિદ્ધિક હૈ ઓર
 ન અમવસિદ્ધિક હૈ એસા વહ જીવ કયા સપ્રદેશ હોતા હૈ યા અપ્રદેશ
 હોતા હૈ ? હસકે વત્તર મેં પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ (ગોયમા) હૈ
 ગૌતમ ! (સિય સપણસે સિય અપણસે) ઇત્યાદિ-એસા જીવ કદાચિત્
 સપ્રદેશ હોતા હૈ ઓર કદાચિત્ અપ્રદેશ હોતા હૈ । હસી તરહ સે યહ-

અમળ્ય અમળ્યના પ્રકરણમાં સિદ્ધનો સમાવેશ કરવો જોઈએ નહીં, કારણ કે
 સિદ્ધમાં અમળ્ય અને અમળ્ય એ બંને વિશેષણો સંભવી શકતા નથી “ જો
 મવસિદ્ધિય, જો અમવસિદ્ધિય-જીવ સિદ્ધિર્હિ તિયમંગો ” નો અવસિદ્ધિક, નો
 અમવસિદ્ધિક એવ અને સિદ્ધોમાં ત્રણ ભાગ થાય છે. આ કથનનું તાત્પર્ય
 એ છે કે “ અમળ્ય નહીં, અમળ્ય નહીં ” એવાં વિશેષણોવાળાં અવાકિક બે
 દ્વંડક કહેવા જોઈએ. તેમને લાગુ પડતો એકત્વ વિષયક અભિલાપ આ પ્રમાણે
 છે—“ જો મવસિદ્ધિય જો અમવસિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-જોમવસિદ્ધિય-
 ગૌતમસ્વામી આહીં એવો પ્રશ્ન કરે છે કે “ હે મદન્ત ! જે એવ ન અવસિદ્ધિક
 અને ન અમવસિદ્ધિક છે, તે શું સપ્રદેશ હોય છે કે અપ્રદેશ હોય ? તેનો
 જવાબ આપતાં મહાવીરપ્રભુ કહે છે — “ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! ” સિય
 સપણસે, સિય અપણસે ” એવો એવ ક્યારેક સપ્રદેશ હોય છે અને ક્યારેક

एकेन्द्रियवर्जः — पृथिव्यान्नेकेन्द्रियपदानि बहुलविषयरुद्धितीव्रदण्डके वर्जयित्वा विक्रमज्ञः=पूर्वपदशित भङ्गवयं बोध्यम् । एकेन्द्रियपृथिव्यादिपदेषु तु 'सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च' इत्येक एव भङ्गो वेदितव्यः, तत्र सदा बहूनाम् उत्पत्त्या तेषाम् अप्रदेशत्वस्यापि बहुत्वसंभवात् । 'नैरइय-देव-मणुएहिं छब्भंगो' नैरयिक-देव-मनुजेषु पङ् भङ्गाः भवमेयाः । तत्र असंज्ञिनोजपि जीवाः प्रथमनरके भवनपतिवानव्यन्तरेषु च उत्पद्यन्ते अतः प्रथमनरकनैरयिकाणां भवनपतिवानव्यन्तराणां च संज्ञिनामपि पूर्वमधीयासंज्ञिभ्यः उत्पादात् भूतपूर्वगत्या असंज्ञित्वमवसेयम् । तथा

असंज्ञी सम्यग्धी बहुत्व विषयक द्वितिय दण्डक में तीन भंग होते हैं ऐसा जानना चाहिये-ये भङ्ग तीन अभी २ ऊपर दिखला ही दिये गये हैं । यहां जो पृथिवी आदिक एकेन्द्रियों को छोड़ने के लिये कहा गया है, सो उसका कारण यह है कि इन एकेन्द्रिय पृथिवी आदिक पदों में "सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च" ऐसा एक ही भङ्ग होता है । इसका कारण उन पृथिव्यादिकों में अनेक जीवों की उत्पत्ति होती है इस कारण उत्पद्यमान अनेक जीव अपनी उत्पत्ति के प्रथम समय में अप्रदेश होते हैं अतः वहां पूर्वोत्पन्न अनेक जीव सप्रदेश और उत्पद्यमान अनेक जीव अप्रदेश हैं ऐसा जानना चाहिये ।

"नैरइय-देव मणुएहिं छब्भंगो" नैरयिक, देव और मनुष्यों में छह भंग होते हैं-असंज्ञी जीव भी प्रथम नरक में भवनपति देवों में और वानव्यन्तर देवों में उत्पन्न होते हैं । इसलिये संज्ञी भी प्रथम नरक के नारकियों को, भवनपतिदेवों को, और वानव्यन्तरदेवों को, पूर्वम-

કર્માં ત્રણ ભંગ થાય છે, એમ સમજવું. એ ત્રણ ભંગો ઉપર બતાવ્યા પ્રમાણે (સંજ્ઞી જીવોના ત્રણ ભંગ પ્રમાણે) સમજવા. એકેન્દ્રિય જીવોના તેમાં સમાવેશ નહીં કરવાનું કારણ એ છે કે પૃથ્વીપ્રાય આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં "સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ" એવો એક જ ભંગ થાય છે તેનું કારણ એ છે કે તે પૃથ્વીપ્રાય આદિ કોમાં અનેક જીવોની ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયે અપ્રદેશ હોય છે, તેથી ત્યાં પૂર્વોત્પન્ન અનેક જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને ઉત્પદ્યમાન (ઉત્પન્ન થતા) અનેક જીવો અપ્રદેશ હોય છે, એમ સમજવું.

"નૈરઇય-દેવ મણુએહિં છબ્ભંગો" નારક, દેવ અને મનુષ્યોમાં છ ભંગ થાય છે-અસંજ્ઞી જીવો પણ પહેલી નરકમાં, ભવનપતિ દેવોમાં અને વાનવ્યન્તર દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. તેથી સંજ્ઞી હોવા છતાં પણ પહેલી નરકના નારકોને, ભવનપતિ દેવોને અને વાનવ્યન્તર દેવોને

હત્યર્થઃ ત્રયો ભદ્રા ભવન્તિ । તથાદિ-સંશ્ચિનો જીવાઃ પૂર્વોત્પન્નાન્ દ્રવ્યાદિસમય-
સ્થિતિકાન્ અપેક્ષ્ય કાલતઃ સપ્રદેશાઃ મરન્તિ ૧, ઉત્પાદિરિહાનન્તરં ચ એક-
સ્યોત્પન્નો તસ્ય પ્રથમસમયસ્થિતિદશાયાં - વહવઃ સપ્રદેશાઃ, પુનઃ અપ્રદેશ ૨,
વહનામુત્પત્તિસમયપ્રમાથમ્યે તુ વહવઃ સંશ્ચિનઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ
ભવન્તિ ૩, इति રીત્યા ભદ્રત્રયં ચોદ્યમ્ । एवं सर्वपदेषु विज्ञेयम् । केवलमेतयो
दण्डकयोः एकेन्द्रिय-विकलेन्द्रिय-सिद्ध-पदानि न वक्तव्यानि तेषां संज्ञिविशे-
षगत्तासंभवात् । ‘ असत्त्वोर्हि एगिदियवज्जो तियभंगो ’ असंज्ञिषु असंज्ञिविषये

ચતુત્વ વિષયક દ્વિતીય દણ્ડક મેં જીવાદિક પદોં મેં ત્રીન ભદ્ર હોતે હે
વે હસ પ્રકાર સે હોતે હે-સંજી જીવ દ્રવ્યાદિક સમય કી સ્થિતિ વાલે
પૂર્વોત્પન્ન સંજી જીવોં કી અપેક્ષા લેકર કાલ કી અપેક્ષા સે સપ્રદેશ
હોતે હે । ઓર ઉત્પાદ વિાદ કે અનન્તર જય એક જીવ કી ઉત્પત્તિ
હોતી હે તય ઉસકી પ્રથમ સમય કી સ્થિતિદશા મેં અનેક સંજી જીવ
સપ્રદેશ ઓર એક સંજી જીવ અપ્રદેશ એસા કહા જાતા હે । તથા જબ
અનેક સંજી જીવોં કી ઉત્પત્તિ કે સમય કી પ્રથમતા રહતી હે તબ
અનેક સંજી જીવ સપ્રદેશ, ઓર અનેક સંજી જીવ અપ્રદેશ હે એસા
કહા જાના હે । હસ તરહ સે યહાં યે ત્રીન ભંગ હે । હસી તરહ સે સર્વ
પદોં મેં જાનનાં ચાહિયે । કેવલ હન દો દણ્ડકોં મેં એકેન્દ્રિય, વિકેલેન્દ્રિ-
ય ઓર સિદ્ધ હન પદોં કો કહનાં ચાહિયે । કયોં કિ હન સવ મેં (સંજી)
હસ વિશેષણ કા અભાવ હે । “ असत्त्वोर्हि एगिदियवज्जो तियभंगो ”
અસંજી જીવોં મેં અર્થાત્ પૃથિવી આદિક એકેન્દ્રિય પદોં કો છોડકર

તેમાંના બહુતર વિષયક જીવના દંડકમાં, જીવાદિક પદોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે.
તે ત્રણ ભંગ નીચે પ્રમાણે સમજવા-(૧) જે ત્રણ આદિ સપ્રયોની સ્થિતિ-
વાળા પૂર્વોત્પન્ન સંજી જીવોની અપેક્ષાએ સંજી જીવો અપ્રદેશ હોય છે.
(૨) અને ઉત્પાદ વિરહ બાદ જ્યારે એક જીવની ઉત્પત્તિ થાય છે, ત્યારે તેની
પ્રથમ સમયની સ્થિતિદશામાં અનેક સંજી જીવો સપ્રદેશ હોય છે પણ એક જ
સંજી જીવ અપ્રદેશ હોય છે. (૩) તથા જ્યારે અનેક સંજી જીવોની ઉત્પ-
ત્તિના સમયની પ્રથમતા રહે છે, ત્યારે અનેક સંજી જીવો સપ્રદેશ હોય છે
અને અનેક સંજી જીવો અપ્રદેશ હોય છે. આ પ્રકારના ત્રણ ભંગ અહીં
બને છે, એજ પ્રમાણે બધાં પદોમાં સમજવું પરંતુ આ જે દંડકોમાં એકે-
ન્દ્રિય, વિકલેન્દ્રિય અને સિદ્ધનો સમાવેશ કરવો નહીં, કારણ કે તેમને ‘સંજી’
વિશેષણ લાગુ પડતું નથી. “ असत्त्वोर्हि एगिदियवज्जो तियभंगो ” પૃથ્વી-
કાયિક આદિ એકેન્દ્રિય સિવાયના અસંજી જીવોમાં બહુવચનવાળા જીવના દંડ-

તિયમંગો ' નોસંજિ-નોઅસંજિ-જીવ-મનુજ-સિદ્ધેષુ ત્રયો મજ્ઞાઃ, ' નોસંજિ-નોઅસંજિ- ' ઇતિવિશેષણવિશિષ્ટયોરેકત્વબહુત્વવિપયકદ્વંડકયોર્મધ્યે બહુત્વ-વિપયકદ્વંડકે જીવ-મનુજ-સિદ્ધપદેષુ પૂર્વોક્તરૂપં મજ્ઞત્રિકં ભવતિ । ' સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧ ' ' વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ ૨ ' ' વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ ૩ ' ઇતિ મજ્ઞત્રયમ્ તેષુ વહનામ્ અવસ્થિતાનાં વ્યાભાત્, ઉત્પદ્યમાનાનાં ચ એકાદીનાં સંભવાત્ । એતયોશ્ચ નોસંજિ-નોઅસંજિવિપયકયોરેકત્વબહુત્વદ્વંડકયોઃ જીવ-મનુજ-સિદ્ધપદાન્યેવ ભવન્તિ ન નૈરયિકાદિપદાનિ, તેષાં નો સંજિ-નો અસંજિત્વવિશેષણસ્વાસંભવાત્ । સહેસા જહા-ઓહિયા ' સહેશ્વયાઃ હેશ્વયાવન્તો જીવાઃ પથા ઓષિતાઃ સામાન્યજીવાઃ પૂર્વે સપ્રદેશત્વાદિના પ્રતિપાદિતાસ્તથા

યહાં ગૃહીત નહીં હૈં । કયોં કિ હનમેં અસંજિત્વ કા અભાવ હૈં । (જો સંજિ, જો અસંજિ જીવ મનુજસિદ્ધેર્હિ તિયમંગો) નો સંજી નો અસંજી હન વિશેષણોં સે વિશિષ્ટ એકત્વ બહુત્વવિપયક દો દ્વંડકોં મેં-સે બહુત્વ વિપયક દ્વિતીયદ્વંડક મેં જીવપદ, મનુષ્યપદ ઓર સિદ્ધ મેં પૂર્વોક્ત રૂપ સે યે ત્રીન મંગ હોતે હૈં-“ સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧, વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ, એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ ૨ વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ, વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ । ” કારણ યહાં પર પૂર્વોત્પન્ન અનેક રહતે હૈં ઓર ઉત્પદ્યમાન કોઈ એકાદિ રહતા હૈં । હન દો નો સંજી નો અસંજી વિપય એકત્વ બહુત્વ દ્વંડકોં મેં જીવ, મનુષ્ય ઓર સિદ્ધપદ હી હોતે હૈં, નૈરયિક આદિ પદ નહીં । કયોં કિ હનમેં નો સંજિ-નો અસંજી વિશેષણ સંભવતા નહીં હૈં । (સહેસા જહા ઓહિયા) હેશ્વયાવાલે જીવોં કે કથન, પહિલે જૈસે સામાન્ય જીવ સપ્રદેશત્વ આદિ દ્વારા પ્રતિપાદિત કિયે ગયે હૈં, વૈસા હી જાનના ચાહિયે-

અભાવ હોય છે. (જો સંજી, જો અસંજી જીવ મનુજસિદ્ધેર્હિ તિયમંગો) નો સંજી, નો અસંજી એ વિશેષણોવાળા એકત્વ બહુત્વ વિપયક એ દ્વંડકોનાં બહુત્વ વિપયક બીજા દ્વંડકમાં જીવ પદ, મનુષ્ય પદ અને સિદ્ધમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભાગ થાય છે—

(૧) સર્વે સપ્રદેશાઃ (૨) વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ, (૩) વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ, વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ) કારણ કે અહીં પૂર્વોત્પન્ન અનેક રહે છે અને ઉત્પદ્યમાન કોઈ એકાદિ રહે છે. નો સંજી, નો અસંજી વિપયક એકત્વ અને બહુત્વ દર્શન એ દ્વંડકોમાં જીવ, મનુષ્ય અને સિદ્ધ એ ત્રણ પદો જ હોય છે, નારક આદિ પદ હોતાં નથી, કારણ કે નારક આદિમાં નો સંજી અને નો અસંજી વિશેષણ સંભવતા નથી. “ સહેસા જહા ઓહિયા ” હેશ્વયાવાળા જીવોના સપ્રદેશત્વ આદિનું કથન સામાન્ય જીવોના સપ્રદેશત્વ આદિના કથન

નૈરયિકાદિપુ અસંશ્લિત્વસ્ય કાદાચિરકલ્પેન એકત્વ-વદૃશસંભવાન્ પદ્મજ્ઞા મયન્તિ, તથાહિ-સપ્રદેશા વા ૧, અપ્રદેશા વા ૨, અથવા સપ્રદેશા અપ્રદેશા ૩, અથવા સપ્રદેશા અપ્રદેશા ૪, અથવા સપ્રદેશા અપ્રદેશા ૫, અથવા સપ્રદેશા અપ્રદેશા ૬, ઇતિ । કિન્તુઅ નૈરયિકપદેન પ્રથમનરકનૈરયિકાઃ, દેવપદેન ચ મયનપતિ-વાનવ્યન્તરાણા ગ્રાહ્યાઃ નતુ દ્વિતીયાદિ નરકનીવાઃ, ઝયોતિષિક-વૈમાનિકાઃ, તથા સિદ્ધાશ્ચ, તેષામ્ અસંશ્લિત્વસ્પાસંભવાન્ । 'જોતન્નિ-જોખતન્નિ-જીત-મણુગ-સિદ્ધિર્દિ

ઘીય અસંજી જીવોં કે ઉત્પાદ કી અપેક્ષા સે અર્થાત્ અસંજી જીવ યહાં ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઇસ ભૂતપૂર્વ પ્રજ્ઞાપન નય કી અપેક્ષા સે-ભૂતપૂર્વગતિ કો ધ્યાન મેં રાખકર અર્થાત્ યે પહિલે ભવ મેં અસંજી યે-ઇસ વાત કો માનકર અસંજી માન લિયા જાતા હૈ । તથા નૈરયિક આદિકોં મેં અસંજીપન કાદાચિત્ક હૈ ઇસસે ઇનમેં એકત્વ વદૃશ્વ કી સમ્ભાવના સે છહ ભંગ હોતે હૈં યે ઇસ પ્રકાર સે-“ સપ્રદેશા વા ૧, અપ્રદેશા વા ૨ સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ૩, સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ૪, સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ૫, સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ ૬ ” ઇન છહ ભંગો મેં પ્રથમભંગ ઓર દ્વિતીયભંગ યદુવચનાન્ત હૈં । તથા અવશિષ્ટ ચાર ભંગ એકવચન ઓર વદુવચન કે સંયોગ સે જન્મ હૈં । (જેરહય, દેવમણુગર્હિ) મેં નૈરયિક પદ સે યહાં પ્રથમ નરક કે નારક જીવ હી ગૃહીત છુગ હૈં, દ્વિતીયાદિક નરકોં કે નારક જીવ નહીં । દેવ પદ સે મયનપતિ દેવ ઓર વાનવ્યન્તર દેવ હી ગૃહીત છુગ હૈં, ઝયોતિષિક દેવ ઓર વૈમાનિક દેવ નહીં । તથા સિદ્ધ મી

પૂર્વભવીય અસંજી જીવોના ઉત્પાદનની અપેક્ષાએ-એટલે કે અસંજી જીવ અહીં ઉત્પન્ન થાય છે એવા ભૂતપૂર્વ પ્રજ્ઞાપન નયની અપેક્ષાએ-ભૂતપૂર્વ ગતિને ધ્યાનમાં રાખીને-એટલે કે તેઓ આગળના ભવમાં અસંજી હતા એ વાતને માનીને, અસંજી માની લેવામાં આવે છે. તથા નારક આદિકોમાં અસંજીત્વ ક્યારેક હોય છે, તેથી તેઓમાં એકત્વ બહુત્વની સંભાવનાથી નીચે પ્રમાણે છ ભંગ થાય છે.

(૧) સપ્રદેશ વા (૨) અપ્રદેશ વા (૩) સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ, (૪) સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ (૫) સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ, (૬) સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ. આ છ ભંગોમાંના પહેલો અને બીજો ભંગ બહુવચનાન્ત છે, અને જાકીના ચાર ભંગ એકવચન અને બહુવચનના સંયોગથી બન્યા છે. “ જેરહય, દેવ, મણુગર્હિ ” માં નારક પદથી પહેલી નરકના નારકોને જ ગ્રહણ કરવા, બીજી, ત્રીજી આદિ નારકોને ગ્રહણ કરવા જોઈએ નહીં. દેવપદથી ભવનપતિ દેવો તથા વાનવ્યન્તરોને જ ગ્રહણ કરવા-ઝયોતિષિક અને વૈમાનિકોને નહીં, તથા અહીં સિદ્ધ જીવોને પણ ગ્રહણ કરવાના નથી, કારણ કે તેમનામાં અસંજીત્વનો

प्रमेषवन्निष्का टी० शं ६ स० ४ सू० १ जीवस्य सप्रदेशाप्रदेशनिरूपणम् ९८१

प्रमैषवन्द्रिका टी० श ६ व० ४ सू० १ जीवैस्व तत्रैव
पादितस्तथा प्रत्येकम् एकत्वबहुत्वविषयकदण्डकद्वयेन वाच्याः ते च ' सर्वे सप्र-
देशाः ' ' बहवः सप्रदेशाश्च एकः अप्रदेशश्च ' ' बहवः सप्रदेशाश्च बहवः अप्रदे-
शाश्च ' इति भद्रत्रयं नैरयिकादिषु बोध्यम् । जीवैकेन्द्रियेषु तु ' सप्रदेशाश्च अप्रदे-
शाश्च ' इत्येको भद्रः । ' नवरं-जस्त अतिवैयाजो ' नवरं विशेषस्तु एतावा-
नेव यत्-पस्य जीवनैरयिकादेः एता लेश्याः सन्ति स एव जीवनैरयिकादिः
वक्तव्यः, एताश्च तिस्रः कृष्ण-नील-कापोतलेश्याः ज्योतिषिक-वैमानिकानां न
भवन्ति, सिद्धानां तु सर्वा अपि न भवन्ति, इति तेऽत्र न वक्तव्याः । ' तेऽलेसा ए
जीवाश्चो तियमंगो ' तेजोलेस्यायाम्-तेजोलेस्यावतां बहुत्वविषयकदण्डके जीवा-
दिकः जीवादिपदेषु त्रयो भद्राः-ते एव पूर्वोक्ताः-सर्वे सप्रदेशाः १ बहवः सप्रदेशाः

दिकः जीवादिपदेषु त्रयो भन्नाः—त एव पूर्वोक्तः । त्रयः भन्नाः
द्वारा कहना चाहिये । बहुत्वविषयक दण्डक में तीन भंग है—वे इस
प्रकारसे हैं—“ सर्वे सप्रदेशाः ” यहवः सप्रदेशाः एकः अप्रदेशश्च यहवः
सप्रदेशश्च, यहव अप्रदेशश्च ” । जीव और एकेन्द्रियों में “ सप्रदेशश्च
अप्रदेशश्च ” ऐसा एक ही भंग है । “ नवरं जस्स अत्थि एयाओ ”
यहां विशेषता केवल इतनी ही है कि जिस जीव नैरयिक आदिके ये
लेखाएँ हैं वही जीव नैरयिक आदि यहां कहना चाहिके । ये कृष्ण,
नील और कापोत लेखाएँ ज्योतिषिक और वैमानिकदेवों के नहीं होती
हैं । तथा जो सिद्ध जीव हैं उनके तो छहलेखाओं में से कोई भी
लेखा नहीं होती है । इस कारण इन्हें यहां ग्रहण नहीं करना चाहिये ।
(तेजलेखाए जीवाओ तियभंगो) तेजो लेखावालों के बहुत्वविषयक
द्वितीय दण्डक में जीवादिपदों में पूर्वोक्त ये “ सर्वे सप्रदेशाः १,
“ यहवः सप्रदेशाः, एकः अप्रदेशश्च २ ” “ यहवः सप्रदेशाः यहवः
“ यहवः सप्रदेशाः, एकः अप्रदेशश्च २ ” “ यहवः सप्रदेशाः ”

“વહવઃ સપ્રદેશાઃ, એકઃ અપ્રદેશઃ”
ખડુત્વ વિષયક હંડકોમાં આ પ્રમાણે ત્રણ ભંગ થાય છે—“ સર્વે સપ્રદેશાઃ ”
“ વહવઃ સપ્રદેશાઃ એકઃ અપ્રદેશઃ, ” “ વહવઃ સપ્રદેશાઃ વહવઃ અપ્રદેશાઃ ”
શુભ અને એકેન્દ્રિયમાં “ સપ્રદેશાઃ અપ્રદેશાઃ ” એવો એક જ ભંગ થાય
છે. “ નવરં જસ્ય અસ્થિ યયાઓ ” અહીં વિશેષતા એટલી જ કે જે નારક
આદિ જીવોની લેશ્યા હોય છે, તે નારકાદિ જીવોના સપ્રદેશત્વ આદિનું અહીં
પ્રતિપાદન કરવું જોઈએ. જ્યોતિષિક અને વૈમાનિક દેવોમાં કૃષ્ણ, નીલ અને
કાપોત લેશ્યાઓ હોતી નથી, તથા સિદ્ધ જીવોમાં તો છ લેશ્યાઓમાંની એક
પણ લેશ્યા હોતી નથી. તે કારણે અહીં તેમને ચક્રણ કરવા જોઈએ નહીં.
(તેડલેષ્ટાચ જીવાદ્યો વિયમંગો) તેજ લેશ્યાવાળા જીવોના ખડુત્વ વિષયક
ખીન હંડકમાં જીવાદિક પદોમાં આ પ્રમાણે ત્રણ ભંગ હોય છે,

પ્રતિપત્ત્યાઃ, લેશ્યાવતામેકત્વવહુત્વવિપયકદ્વયે જીવતામાન્યરૂપીવિક
 દળ્ડકત્વદ્ જીવનૈરયિકાદયો વક્તવ્યાઃ તથાદિ-એકત્વલેશ્યાદળ્ડકે 'નિયમતઃ સપ્ર-
 દેશઃ' इत्येको भङ्गः, बहुत्वदण्डके नियमतः सप्रदेशाः' इति, जीवतस्य अनादि-
 त्ववत् लेश्याया अपि अनादितया सलेश्यतायां विशेषाऽनृत्यादान् केवलं सिद्धपदं न
 वाच्यम्, सिद्धानां लेश्यारहितत्वात्। 'कण्ठलेस्सा, नीललेस्सा, काउलेस्सा, जहा आ-
 हारओ' कृष्णलेश्याः-कृष्णलेश्यावन्तः, नीललेश्याः-नीललेश्यावन्तः, कापोतलेश्याः
 कापोतलेश्यावन्तो जीव नारकादयो यथा आहारकः-आहारकजीवादिः पूर्वं प्रति-

તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ લેશ્યાવાલે જીવોં કે એકત્વ મહુત્વવિપયક
 દો દળ્ડકોં મેં જીવ ઓર નૈરયિક આદિ જીવ સામાન્ય દળ્ડક કી તરહ
 વક્તવ્ય હોતે હૈં કારણ હસકા યહ હૈ કિ જીવત્વ કી તરહ સલેશ્યના
 મી અનાદિ સે હૈ। એકત્વલેશ્યાદળ્ડક મેં " નિયમ સે કોઈ એક જીવ
 સપ્રદેશ હોતા હૈ " એસા એક ભંગ હૈ યદુત્વદળ્ડક મેં નિયમ સે પૂર્વોત્પન્ન
 સલેશ્યા જીવ સપ્રદેશ હોતે હૈં। હસ તરહ ઓધિક દળ્ડક મેં ઓર હસ
 દળ્ડક મેં કોઈ અન્તર નહીં હૈ। હસ લેશ્યાદળ્ડક મેં કેવલ સિદ્ધપદ કો
 નહીં કહના ચાહિયે-કયોં કિ સિદ્ધ જીવ લેશ્યા સે રહિત હોતે હૈં।
 (કળ્હલેસ્સા નીલલેસ્સા કાઝલેસ્સા જહા આહારઓ) કૃષ્ણલેશ્યા વાલે
 જીવોં મેં નીલલેશ્યાવાલે જીવોં મેં ઓર કપોત લેશ્યાવાલે જીવોં મેં
 ઓર નારક આદિ જીવોં મેં, પ્રત્યેક લેશ્યાવાલે જીવ પૂર્વ મેં પ્રતિપાદિત
 હુએ અહારક જીવાદિક કી તરહ એકત્વ ઓર મહુત્વવિપયક દોદળ્ડકોં

પ્રમાણે જ સમજવું. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે લેશ્યાવાળા જીવોના એકત્વ
 બહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાં જીવ અને નારક આદિ જીવનું વક્તવ્ય સામાન્ય
 જીવોના વક્તવ્ય પ્રમાણે જ થાય છે, કારણ કે જેમ જીવત્વ અનાદિ છે તેમ
 સલેશ્યતા અનાદિ છે. એકત્વ વિષયક લેશ્યા દંડકમાં " નિયમથી જ કોઈક
 જીવ સપ્રદેશ હોય છે, " એવો એક જ ભંગ છે. બહુત્વ દંડકમાં " નિયમથી
 પૂર્વોત્પન્ન સલેશ્ય જીવ સપ્રદેશ હોય છે. આ રીતે સામાન્ય જીવોના દંડકમાં
 કોઈ તફાવત નથી. આ લેશ્યા દંડકમાં માત્ર 'સિદ્ધ' પદને અહણ કરવું
 નહીં, કારણ કે સિદ્ધ જીવો લેશ્યા રહિત હોય છે. " કળ્હલેસ્સા, નીલલેસ્સા,
 કાઝલેસ્સા જહા આહારઓ " કૃષ્ણ લેશ્યાવાળા, નીલ લેશ્યાવાળા, કપોત લેશ્યા-
 વાળા અને નારક આદિ જીવોમાંના પ્રત્યેક લેશ્યાવાળા જીવનું કથન આહારક
 જીવાદિકની જેમ એકત્વ અને બહુત્વ વિષયક બે દંડકો દ્વારા કરવું જોઈએ.
 આહારક જીવોના સપ્રદેશત્વ આદિનું પ્રતિપાદન આગળ આવી ગયું છે.

પાદિતત્તથા પ્રત્યેકમ્ એકત્વવહુત્વવિપયકદ્વંડકદ્વયેન વાચ્યાઃ તે ચ 'સર્વે સપ્રદેશાઃ' 'વહવઃ સપ્રદેશાથ એકઃ અપ્રદેશશ્ચ' 'વહવઃ સપ્રદેશાથ વહવઃ અપ્રદેશશ્ચ' એતિ ભદ્રત્રયં નૈરયિકાદિષુ વોધ્યમ્ । જીવૈકેન્દ્રિયેષુ તુ 'સપ્રદેશાથ અપ્રદેશશ્ચ' એત્યેકો ભદ્રઃ । 'નવરં-જસ્સ અત્થિ ઇયાઓ' નવરં વિશેષસ્તુ એતાવા-નેવ યત્-યસ્ય જીવનૈરયિકાદેઃ એતા લેશ્યાઃ સન્તિ સ એવ જીવનૈરયિકાદિઃ વક્તવ્યઃ, એતાથ તિસ્રઃ કૃષ્ણ-નીલ-કાપોતલેશ્યાઃ જ્યોતિષિક-વૈમાનિકાનાં ન ભવન્તિ, સિદ્ધાનાં તુ સર્વા અપિ ન ભવન્તિ, એતિ તેઽન્ન ન વક્તવ્યાઃ । 'તેઽલેસ્તાય જીવાહઓ તિયમંગો' તેજોલેશ્યાવામ્-તેજોલેશ્યાવતાં વહુત્વવિપયકદ્વંડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રયો ભદ્રાઃ-તે એવ પૂર્વોક્તાઃ-સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧ વહવઃ સપ્રદેશાઃ

દ્વારા કહના ચાહિયે । વહુત્વવિપયક દ્વંડક મેં તોન મંગ હૈ-વે હસ પ્રકારસે હૈં-"સર્વે સપ્રદેશાઃ" વહવઃ સપ્રદેશાઃ એકઃ અપ્રદેશશ્ચ વહવઃ સપ્રદેશાથ, વહવ અપ્રદેશશ્ચ" । જીવ ઓર એકેન્દ્રિયોં મેં "સપ્રદેશાથ અપ્રદેશશ્ચ" એસા એક હી મંગ હૈ । "નવરં જસ્સ અત્થિ ઇયાઓ" યહાં વિશેષતા કેવલ હતની હી હૈ કિ જિસ જીવ નૈરયિક આદિકે યે લેશ્યાઈ હૈં વહી જીવ નૈરયિક આદિ યહાં કહના ચાહિકે । યે કૃષ્ણ, નીલ ઓર કાપોત લેશ્યાઈ જ્યોતિષિક ઓર વૈમાનિકદેવોં કે નહીં હોતી હૈં । તથા જો સિદ્ધ જીવ હૈં ડનકે તો છહલેશ્યાઓં મેં સે કોઈ મી લેશ્યા નહીં હોતી હૈ । હસ કારણ હન્હેં યહાં ગ્રહણ નહીં કરના ચાહિયે । (તેઽલેસ્તાય જીવાહઓ તિયમંગો) તેજો લેશ્યાવાલોં કે વહુત્વવિપયક દ્વિતીય દ્વંડક મેં જીવાદિકપદોં મેં પૂર્વોક્ત યે "સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧, "વહવઃ સપ્રદેશાઃ, એકઃ અપ્રદેશશ્ચ ૨" "વહવઃ સપ્રદેશાઃ વહવઃ

બહુત્વ વિપયક દ્વંડકોમાં આ પ્રમાણે ત્રણ ભાગ થાય છે-"સર્વે સપ્રદેશાઃ" "વહવઃ સપ્રદેશાઃ એકઃ અપ્રદેશશ્ચ," "વહવઃ સપ્રદેશાથ વહવઃ અપ્રદેશશ્ચ" એવ અને એકેન્દ્રિયમાં "સપ્રદેશાથ અપ્રદેશશ્ચ" એવો એક જ ભાગ થાય છે. "નવરં જસ્સ અત્થિ ઇયાઓ" અહીં વિશેષતા એટલી જ કે જે નારક આદિ જીવોની લેશ્યા હોય છે, તે નારકાદિ જીવોના સપ્રદેશત્વ આદિનું અહીં પ્રતિપાદન કરવું જોઈએ. જ્યોતિષિક અને વૈમાનિક દેવોમાં કૃષ્ણ, નીલ અને કાપોત લેશ્યાઓ હોતી નથી, તથા સિદ્ધ જીવોમાં તો છ લેશ્યાઓમાંની એક પણ લેશ્યા હોતી નથી. તે કારણે અહીં તેમને ગ્રહણ કરવા જોઈએ નહીં. (તેઽલેસ્તાય જીવાહઓ તિયમંગો) તેજો લેશ્યાવાળા જીવોના બહુત્વ વિપયક બીજા દ્વંડકમાં જીવાદિક પદોમાં આ પ્રમાણે ત્રણ ભાગ હોય છે,

एकः अप्रदेशश्च २, बहवः सप्रदेशाः नहवः अप्रदेशश्च ३, इत्येवंरूपास्तयो मन्त्रा बोध्याः, किन्त्वत्र नैरयिक-तेजस्काय-वायुकाय-विकलेन्द्रिय-सिद्धपदानि न वक्तव्यानि, तेषां तेजोलेइयाया अभावात् सिद्धानां च सर्वाणामपि छेइयानाम-भावात् । विशेषमाह-‘नवरं-पुढविकाइएसु, आउवणसईसु छम्भंगा’ नवरं-विशेषः पुनस्तेजोलेइयायामयमेव यत् - पृथिवीकायिकेषु अक्-वनस्पतिषु पद् भङ्गाः वक्तव्याः यतो हि एतेषु पृथिव्यादिषु तेजोलेइयाः एकद्वयादयो देवाः पूर्वोत्पन्नाः, उत्पद्यमानाधोपलभ्यन्ते इति तत्र सप्रदेशानाम् अप्रदेशानां च एकत्व-बहुत्व संभवात् । ते च पद् भङ्गा अनाहारकजीवादिवद् विशेषाः, तथाहि-सप्रदेशा वा १, अप्रदेशा वा २, अथवा सप्रदेशश्च अप्रदेशश्च ३, अथवा सप्रदेशश्च अप्रदेशश्च ४,

अप्रदेशाश्च ३ तीन भंग हैं । किन्तु यहाँ पर नैरयिक, तेजस्काय, वायु-काय, विकलेन्द्रिय और सिद्ध पद नहीं कहना-क्यों कि इनके तेजोलेइया नहीं होती । तथा सिद्धों के तो कोई भी लेइया नहीं होती । (नवरं पुढविकाइएसु आउवणसईसु छम्भंगा) इस तेजोलेइया में जो विशेषता है वह इतनी ही है कि पृथिवीकायिकों में, अप्कायिकों में और वनस्पतिकायिकों में छह भंग है-क्योंकि इन पृथिवी कायादिकों में, तेजो-लेइयावाले एक दो आदिक पूर्वोत्पन्न देव तथा उत्पद्यमान देव पाये जाते हैं -इस कारण यहाँ सप्रदेशोंका और अप्रदेशोंका एकत्व एवं बहुत्व संभ-विन है । यहाँ अनाहारक जीवादिककी तरह ही छह भंग जानना चाहिये । उनमें दो भंग बहुवचनान्त और एक भंग एक वचनान्त शेष ३ भंग एकवचन और बहुवचनके संयोगजन्य हैं-वे इस प्रकारसे हैं-सप्रदेशाः

(१) सर्वे सप्रदेशाः (२) बहवः सप्रदेशाः एकः अप्रदेशश्च, (३) बहवः सप्रदेशाः पहवः अप्रदेशाश्च । પણ તેમાં 'નારકો', તેજસ્કાય, વાયુકાય, વિકલેન્દ્રિય અને સિદ્ધોનો સમાવેશ થતો નથી, કારણ કે તેમને તેજોલેશ્યા હોતી નથી, તથા સિદ્ધોને તો એક પણ લેશ્યા હોતી નથી. (નવરં પુઢવિકાઈએસુ આઝવણસઈસુ છમ્ભંગા) આ તેજોલેશ્યામાં જે વિશેષતા છે તે આ પ્રમાણે છે-પૃથ્વીકાયિકોમાં, અપ્કાયિકોમાં અને વનસ્પતિ કાયિકોમાં ૬ ભંગ થાય છે, કારણ કે આ પૃથ્વીકાયાદિકોમાં તેજોલેશ્યાવાળા એક, જે આદિક પૂર્વોત્પન્ન દેવ તથા ઉત્પ-દ્યમાન દેવ પણ હોઈ શકે છે, તે કારણે ત્યાં સપ્રદેશોનું એકત્વ અને બહુત્વ સંભ-વિત છે. અહીં અનાહારક છવાદિકના છ ભંગના જેવાં જ છ ભંગો સમજવા. તેમાંના પહેલા જે ભંગ બહુવચનનાં છે અને બીજું એક વચનનાં છે. બાકીના ત્રણ ભંગ એકવચન અને બહુવચનના સંયોગથી બન્યા છે. તે છ ભંગ આ પ્રમાણે

અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ૫, અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ૬, ઇતિ । ‘પમ્હલેસ્સ-સુફલેસ્સાણ જીવાદ્ભો તિયમંગો’ પદ્યલેશ્ય-શુબલેશ્યયોર્વહુત્વવિષયકે દળકે જીવાદિકઃ જીવાદિપુ પદેપુ પૂર્વોક્તા એવ ગ્રન્થે મદ્ના વક્તવ્યાઃ, કિન્ત્વત્ર પદ્યેન્દ્રિયતિર્યગ્-મનુષ્ય-વૈમાનિકપદાન્યેવ વક્તવ્યાનિ, અન્યેપુ નૈરયિકાદિપુ એતયોઃ પદ્યશુબલેશ્યયોર્ભાવાત્ । અલેસ્સેદ્દિ જીવસિદ્દેદ્દિ તિયમંગો, મણુપસુ છન્મંગો ’ અલેશ્યેપુ-લેશ્યારહિતેપુ જીવસિદ્ધેપુ ત્રયો મદ્નાઃ, તથાદિ-‘સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧, અથવા સપ્રદેશા અપ્રદેશાથ ૨, અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથે ૩ ઇતિ । મનુજેપુ તુ અનાહારકપસદ્ધોક્તાઃ પદ્મદ્ના વેદિતવ્યાઃ । અત્ર અલેશ્યસમ્બન્ધિનો-રેકત્વવહુત્વવિષયકદળકયોઃ જીવ-મનુષ્ય-સિદ્ધપદાન્યેવ વક્તવ્યાનિ, ન તુ નૈરયિકાદિપદાનિ, તેપામ્ અલેશ્યત્વાસંભવાત્, તત્રાપિ ચ જીવસિદ્ધયોઃ

વા ૧,” અપ્રદેશાઃ વા ૨, સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ૩, સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ૪, સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ૫, સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ૬ ।

“પમ્હલેસ્સ-સુફલેસ્સાણ જીવાદ્ભો તિયમંગો” પદ્યલેશ્યા ઓર શુબલેશ્યા કે વહુત્વવિષયક દળક મેં જીવાદિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત હી તોન ભંગ હોતે હેં-યહાં પર પદ્યેન્દ્રિયતિર્યગ્, મનુષ્ય, વૈમાનિક इन પદોં કા હી ઉચ્ચારણ કરનાં, નૈરયિક આદિ પદોં કા નહીં-કયોં કિ इनમેં યે દો લેશ્યાઈ નહીં હોતી હેં । “અલેસ્સેદ્દિ જીવસિદ્ધેદ્દિ તિયમંગો મણુપસુ છન્મંગો” લેશ્યા રહિત જીવ, સિદ્ધોં મેં યે તોન ભંગ હોતે હેં-(સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧, અથવા-સપ્રદેશાઃ અપ્રદેશાથ ૨, અથવા-સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ૩)” । મનુષ્યોંમેં અનાહારક પ્રકરણકી તરહસે હી ૬ ભંગ હોતે હેં । યહાં અલેશ્યા સંબંધી એકત્વ વહુત્વ વિષયક દો દળકોં મેં

છે-(૧) સપ્રદેશાઃ વા, (૨) અપ્રદેશાઃ વા, (૩) સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ (૪) સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ (૫) સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ (૬) સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ)

(પમ્હલેસ્સ-સુફલેસ્સાણ જીવાદ્ભો તિયમંગો) પદ્યલેશ્યા અને શુકલ લેશ્યાના બહુત્વ વિષયક દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભાગ જ થાય છે. અહીં પદ્યેન્દ્રિય તિર્યગ્, મનુષ્યો અને વૈમાનિકોને જ ગ્રહણ કરવા, પરંતુ નારક આદિને ગ્રહણ કરવા બેધગ્ને નહીં, કારણ કે તેમનામાં આ બે લેશ્યાઓ હોતી નથી. (અલેસ્સેદ્દિ જીવ સિદ્ધેદ્દિ તિયમંગો, મણુપસુ છન્મંગો) લેશ્યારહિત જીવ અને સિદ્ધોમાં ત્રણ જ ભાગ થાય છે.

(૧) સર્વે સપ્રદેશાઃ (૨) અથવા સપ્રદેશાઃ અપ્રદેશાથ, (૩) અથવા સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ) મનુષ્યોમાં અનાહારક પ્રકરણની જેમ ૬ ભાગ થાય છે. અહીં અલેશ્યા સંબંધી એકત્વ બહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાં જીવ, મનુષ્ય અને

ઔચિકજીવાદિવદેવ ભક્તક્રમ્યં વક્તવ્યમ્, કિન્તુ મનુષ્યેષુ ગદ્ મજ્ઞા વક્તવ્યાઃ
અલેશ્યતાં પ્રતિપદાનાં પ્રતિપદમાનાનાં ચ પદ્મજ્ઞાદીનાં મનુષ્યાણાં સંપન્નેન સપ-
દેશાનામ્ અપદેશાનાં ચ એકત્વચતુત્વસંભવાત્ । 'સમ્મત્તિદ્વીહિં જીવાઈઓ તિય-
મંગો, વિગલિંદિપસુ છન્મંગા' સમ્મગ્દ્દિપ્પુ સમ્મગ્દ્દિપ્પક્રમ્યોઃ વહુત્વવિપયક
દ્વંડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રયો મજ્ઞાઃ, ઔચિકજીવાદિવદેવ ભક્તક્રમ્યમ્
વક્તવ્યમ્ । વિકલેન્દ્રિયેષુ તુ પદ્મજ્ઞાઃ વાચ્યાઃ, યતો હિ તેષુ સાસાદનસમ્મગ્દ્દ-
િપઃ એકાદયઃ પૂર્વોત્પન્નાઃ, ઉત્પદ્યમાનાથ લભ્યન્તે, અતઃ સપદેશાપદેશત્વયોરે-

જીવ, મનુષ્ય ઓર સિદ્ધ રૂપ પદોં કો હો કહના ચાહિયે-નૈરાયક આદિ
પદોં કો નહીં-કયોં કિ યે લેશ્યા સે રહિત નહીં હું । લેશ્યા સે રહિત
જીવ ઓર સિદ્ધ મેં સામાન્ય જીવાદિ ફી તરહ સે હી તીન મંગ
જાનના-પરંતુ મનુષ્યોં મેં ૬ ઉહ મંગ જાનના-કારણ કિ જો અલેશ્યા-
વસ્થા કો પ્રાપ્ત હો ચુકે હું, અથવા પ્રાપ્ત હો રહે હું એસે વહાં એક દો
આદિ મનુષ્યોં કા સદ્ભાવ હો સકને કે કારણ સપ્રદેશોં કા ઓર અપ્ર-
દેશોં કા એકત્વ ઓર વહુત્વ ધન સકના હે (સમ્મત્તિદ્વીહિં જીવાઈઓ
તિયમંગો વિગલિંદિપસુ છન્મંગા) સમ્મગ્દ્દિપ્પજીવોં કે એકત્વવિપયક
ઓર વહુત્વવિપયક દો દ્વંડકોં મેં સે વહુત્વવિપયક દ્વંડક મેં જીવા-
દિક પદોં મેં સામાન્ય જીવાદિક ફી તરહ સે હી તીન મંગ કહના તથા
વિકલેન્દ્રિય જીવોં મેં ૬ મંગ કહના-કયોં કિ વિકલેન્દ્રિયોં મેં એકાદિ
માસાદન સમ્મગ્દ્દિપ્પ જીવ પૂર્વોત્પન્નરૂપ સે ઓર ઉત્પદ્યમાનરૂપ સે પાપે
જાતે હું । હસ કારણ યહાં સપ્રદેશોં કા ઓર અપ્રદેશોં કા એકત્વ ઓર

મિદ્ધને જ ગ્રહણ કરવા નારકાદિકને ગ્રહણ કરવા ભેદજે નહીં, કારણ કે તેઓ
લેશ્યાથી રહિત હોતા નથી. લેશ્યાથી રહિત જીવ અને સિદ્ધમાં સામાન્ય
જીવાદિની જેમ જ ત્રણ ભંગ સમજવા, પરંતુ મનુષ્યોમાં છ ભંગ સમજવા,
કારણ કે અલેશ્ય અવસ્થાને પામી ચુકેલા અથવા પામી રહ્યા હોય એવાં
એક, બે આદિ મનુષ્યોના સદ્ભાવ હોઈ શકે છે અને તે કારણે સપ્રદેશોતું
અને અપ્રદેશોતું એકત્વ અને બહુત્વ સંભવી શકે છે.

(સમત્તિદ્વીહિં જીવાઈઓ તિયમંગો વિગલિંદિપસુ છન્મંગા) સમ્મગ્દ્દિપ્પ
જીવોના એકત્વ વિષયક અને બહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના બહુત્વ વિષયક
દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં સામાન્ય જીવ દિકના જેવાં જ ત્રણ ભંગ સમજવા,
કારણ કે વિકલેન્દ્રિયોમાં એકાદિ સાસાદન સમ્મગ્દ્દિપ્પ જીવ પૂર્વોત્પન્ન રૂપે અને
ઉત્પદ્યમાન રૂપે વિદ્યમાન હોય છે. તે કારણે તે જીવોમાં સપ્રદેશોતું અને
અપ્રદેશોતું એકત્વ અને બહુત્વ સંભવી શકે છે. પરંતુ આ સમ્મગ્દ્દિપ્પ દોરમાં

વત્ત્વવહુત્વસંભવાત્, કિન્તિવદ્ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદાનિ ન વક્તવ્યાનિ, તેષાં સમ્યગ્દર્શનાભાવાત્ તથા ચ સમ્યગ્દર્શનપ્રતિપત્તિપ્રથમસમયે અપ્રદેશત્વમ્, તત્પ્રતિપત્તિદ્વયાદિસમયે તુ રપ્રદેશત્વં વિજ્ઞેયમ્ । ' મિચ્છદ્વિટ્ઠીર્દિં ઇર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો ' મિથ્યાદદિષ્ટિપુ મિથ્યાદદિષ્ટિદ્વકયોર્વહુત્વવિપયકદણ્ડકે એકેન્દ્રિય-વર્જઃ એકેન્દ્રિયપદાનિ વર્જયિત્વા જીવાદિપદેષુ ત્રિકભજ્ઞઃ ઉપર્યુક્તઃ ઔઘિકજીવા દિવદેવ ત્રયો ભક્ત્વાઃ વક્તવ્યાઃ એકેન્દ્રિયપદેષુ તુ પૂર્વોત્પન્નાનામ્ ઉત્પદ્યમાનાનાં ચ વહુનામેવ સંભવાત્ ' સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ' ઇતિ એક એવ ભજ્ઞો ભવતિ । ઇહ ચ

વહુત્વ વન જાતા હૈ । પરન્તુ ઇસ સમ્યગ્દદિષ્ટિદ્વાર મેં એકેન્દ્રિય પૃથિવી આદિક પદોં કા ઉચ્ચારણ નહીં કરના ચાહિયે-કયોં કિં ઉનમેં સમ્યગ્દર્શન કા અભાવ રહતા હૈ । તથા ચ સમ્યગ્દર્શન કી પ્રતિપત્તિ કે પ્રથમ સમય મેં ઇસ દણ્ડક મેં અપ્રદેશત્વ ઔર આગે કે દો આદિ સમયોં મેં સપ્રદેશત્વ હૈ એસા જાનના ચાહિયે-(મિચ્છદ્વિટ્ઠીર્દિં ઇર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો) મિથ્યાદદિષ્ટિ કે દો દણ્ડકોં મેં સે વહુત્વવિપયક દ્વિતી-યદણ્ડક મેં એકેન્દ્રિય પદ કો છોડ કર ત્રીન ભંગ હું । એકેન્દ્રિયપદોં મેં ત્રીન ભંગ નહીં હું-કારણ કિં વહાં તો પૂર્વોત્પન્ન ઔર ઉત્પદ્યમાન જીવ વહુત્ત હોતે હું ઇસલિયે (સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ) એસા એક હી ભંગ હૈ । તથા-મિથ્યાદદિષ્ટિ કે દ્વિતીય ત્રીન ભંગ કહે ગયે હું । સો ઉસકા કારણ યદ્દ હૈ કિં વહાં પર મિથ્યાત્વ કો પ્રતિપન્ન હુએ જીવ તો અનેક હોતે હું ઔર સમ્યક્ત્વ સે ભ્રષ્ટ હોને કે બાદ મિથ્યાત્વ કો પ્રતિપદ્યમાન-પ્રાપ્ત કરને વાલે-જીવ કોઈ એક દો આદિ હી હોતે હું ।

એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય અદિકોને ગ્રહણ કરવાના નથી, કારણ કે તેઓમાં સમ્યગ્ દર્શનને અભાવ હોય છે. વળી સમ્યગ્ દર્શનની પ્રાપ્તિના પ્રથમ સમયમાં આ દંડકમાં અપ્રદેશત્વ છે અને પછીના બે, ત્રણ આદિ સમયોમાં સપ્રદેશત્વ છે એમ સમજવું.

(મિચ્છદ્વિટ્ઠીર્દિં ઇર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો) એકેન્દ્રિય સિવાયના મિથ્યા-દદિષ્ટિના બે દંડકોમાંના ગ્રહુત્વ વિપયક બીજા દંડકમાં ત્રણ ભંગ છે. એકેન્દ્રિય પ્રદેશમાં ત્રણ ભંગ થતા નથી કારણ કે ત્યાં તો પૂર્વોત્પન્ન અને ઉત્પદ્યમાન જીવો ઘણા હોય છે, તે કારણે (સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ) આ એક જ ભંગ થાય છે. તથા મિથ્યાદદિષ્ટિના બીજા દંડકમાં સામાન્ય જીવાદિકની જેમ જ ત્રણ ભંગ કદા છે તેવું કારણ એ છે કે ત્યાં મિથ્યાત્વની જેમણે પ્રાપ્તિ કરી છે એવાં જીવો તો અનેક હોય છે અને સમ્યક્ત્વથી જાણ થઈને મિથ્યાત્વ પ્રાપ્ત કરનારા જીવો તો એક, બે આદિ જ હોય છે. આ મિથ્યાદદિષ્ટિ દ્વારમાં સિદ્ધને

ઓષિકજીવાદિવદેવ મદ્વક્તવ્યમ્, કિન્તુ મનુષ્યેષુ વદ્ મદ્વા વક્તવ્યાઃ
 અલેક્ષ્યતાં પ્રતિપજ્ઞાનાં પ્રતિપજ્ઞમાનાનાં ચ એકદ્વાદીનાં મનુષ્યાણાં સંમત્રેન સપ-
 દેશાનામ્ અપ્રદેશાનાં ચ એકત્વવદ્વત્સંભવાન્ । 'સમ્મદિટ્ઠીદિં જીવાઈઓ તિય-
 મંભો, વિગલિદિપ્પસુ છન્નંગા' સમ્પગ્ઢિપ્પુ સમ્પગ્ઢિદ્વંડકયોઃ વદ્વત્વવિપયક
 દ્વંડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ પ્રયો મજ્ઞાઃ, ઓષિકજીવાદિવદેવ મદ્વક્તવ્યમ્
 વક્તવ્યમ્ । વિકલેન્દ્રિયેષુ તુ વદ્ મદ્વાઃ વાચ્યાઃ, યતો હિ તેષુ સાસાદનસમ્પગ્ઢ-
 ઇયઃ એકાદયઃ પૂર્વોત્પન્નાઃ, ઉત્પજ્ઞમાનાશ્ચ લભ્યન્તે, ઝનઃ સપ્રદેશાપ્રદેશત્વયોરે-

જીવ, મનુષ્ય ઓર સિદ્ધ ઇન પદોં કો હોં કહના ચાહિયે-ભૈરાયિક આદિ
 પદોં કો નહીં-કયોં કિં યે લેશ્યા સે રહિત નહીં હું । લેશ્યા સે રહિત
 જીવ ઓર સિદ્ધ મેં સામાન્ય જીવાદિ કીં તરહ સે હીં ત્રીન ભંગ
 જાનના-પરંતુ મનુષ્યોં મેં ૬ છહ ભંગ જાનના-કારણ કિં જો અલેશ્યા-
 વસ્થા કો પ્રાપ્ત હોં ચુકે હેં, અથવા પ્રાપ્ત હોં રહે હેં એસે વહાં એક દો
 આદિ મનુષ્યોં કા સદ્ભાવ હોં સકને કે કારણ સપ્રદેશોં કા ઓર અપ્ર-
 દેશોં કા એકત્વ ઓર વદ્વત્વ વન સકતા હૈ (સમ્મદિટ્ઠીદિં જીવાઈઓ
 તિયમંભો વિગલિદિપ્પસુ છન્નંગા) સમ્પગ્ઢિપ્પીજીવોં કે એકત્વવિપયક
 ઓર વદ્વત્વવિપયક દો દ્વંડકોં મેં સે વદ્વત્વવિપયક દ્વંડક મેં જીવા-
 દિક પદોં મેં સામાન્ય જીવાદિક કીં તરહ સે હીં ત્રીન ભંગ કહના તથા
 વિકલેન્દ્રિય જીવોં મેં ૬ ભંગ કહના-કયોં કિં વિકલેન્દ્રિયોં મેં એકાદિ
 સાસાદન સમ્પગ્ઢિપ્પી જીવ પૂર્વોત્પન્નરૂપ સે ઓર ઉત્પજ્ઞમાનરૂપ સે પાપે
 જાતે હેં । ઇસ કારણ વહાં સપ્રદેશોં કા ઓર અપ્રદેશોં કા એકત્વ ઓર

નિદ્ધને જ અકુલ કરવા નારકાદિકને અકુલ કરવા ભેદએ નહીં, કારણ કે તેઓ
 લેશ્યાથી રહિત હોતા નથી. લેશ્યાથી રહિત જીવ અને સિદ્ધમાં સામાન્ય
 જીવાદિની જેમ જ ત્રણ ભંગ સમજવા, પરંતુ મનુષ્યોમાં છ ભંગ સમજવા,
 કારણ કે અલેશ્ય અવસ્થાને પામી ચુકેલા અથવા પામી રહ્યા હોય એવાં
 એક, બે આદિ મનુષ્યોના સદ્ભાવ હોઈ શકે છે અને તે કારણે સપ્રદેશોનું
 અને અપ્રદેશોનું એકત્વ અને બહુત્વ સંભવી શકે છે.

(સમદિટ્ઠીદિં જીવાઈઓ તિયમંભો વિગલિદિપ્પસુ છન્નંગા) સમ્પગ્ઢિપ્પી
 જીવોના એકત્વ વિપયક અને બહુત્વ વિપયક બે દંડકોમાંના બહુત્વ વિપયક
 દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં સામાન્ય જીવ દિગ્ના જેવાં જ ત્રણ ભંગ સમજવા,
 કારણ કે વિકલેન્દ્રિયોમાં એકાદિ સાસાદન સમ્પગ્ઢિપ્પી જીવ પૂર્વોત્પન્ન રૂપે અને
 ઉત્પજ્ઞમાન રૂપે વિદ્યમાન હોય છે. તે કારણે તે જીવોમાં સપ્રદેશોનું અને
 અપ્રદેશોનું એકત્વ અને બહુત્વ સંભવી શકે છે. પરંતુ આ સમ્પગ્ઢિપ્પી દ્વારમાં

વક્તવ્યો ન નૈરયિકાદયસ્તેષાં સંયતત્વામાભાત્, 'અસંજર્ણિં એગિદિયવજ્જો તિયમંગો તિ' અસંયતેષુ-અસંયતપદવિશિષ્ટદણ્ડકયોર્મધ્યે વહુત્વવિષયકદણ્ડકે એકેન્દ્રિય વર્જઃ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદાનિ વર્જયિત્વા જીવાદિપદેષુ ત્રિકમજ્ઞઃ પૂર્વોક્તાત્ત્રયો ભક્ત્યા વક્તવ્યાઃ, અસંયતત્વં પ્રતિપન્નાનાં સંયતત્વાદિપ્રતિપાનેન અસંયતત્વં પ્રતિપદ્યમાનાનાં ચ એકાદીનાં સંભવાત્, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદીનાં તુ પૂર્વોક્તીત્યા 'સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ' ઇતિ એક એવ મજ્ઞો વાચ્યઃ, કિન્ત્વત્ર સિદ્ધપદં

એસે સંયમ પ્રતિપદ્યક જીવ વહુત હોતે હૈં, તથા જો જીવ સંયમ કો પ્રાપ્ત કર રહે હૈં એસે સંયમ પ્રતિપદ્યમાન જીવ એક દો આદિ હી હોતે હૈં। હિસ દ્વાર મેં જીવ ઔર મનુષ્ય પદ કા હી ઉચ્ચારણ કરના ક્યોં કિ હિન્હીં મેં સંયમ હોતા હૈ, નારક આદિ પદોં કા ઉચ્ચારણ નહીં કરના-ક્યોં કિ હિનમેં સંયમ નહીં હોના હૈ। 'અસંજર્ણિં એગિદિય વજ્જો તિયમંગો' અસંયત દ્વારમેં અસંયત પદ વિશિષ્ટ એકત્વ ઔર વહુત્વ વિષયક દો દણ્ડકોં મેં સે વહુત્વવિષયક દ્વિતીય દણ્ડકમેં એકેન્દ્રિય કે પાંચ પદોંકે છોડકર જીવાદિ પદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હૈં। ક્યોં કિ અસંયત અવસ્થાકો પહિલેસે પાચે દુણ જીવ તો અનેક હોતે હૈં ઔર સંયત આદિ અવસ્થા સે પડકર અસંયત અવસ્થા કો પ્રતિપદ્યમાન હોનેવાલે જીવ એક દો આદિ હી હો સકતે હૈં। યહાં જો એકેન્દ્રિય પાંચ પદોં કા છોડના કહા ગયા હૈ સો હિસકા કારણ યહ હૈ કિ હિનમેં ત્રીન ભંગ નહીં હોતે હૈં કિન્તુ " સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ " એસા એક હી ભંગ હોતા હૈ। ક્યોં

હવે તો ઘણા જ હોય છે, પણ સંયમને પ્રાપ્ત કરી રહ્યા હોય એવાં સંયમ પ્રતિપદ્યમાન હવે તો એક, બે આદિ જ હોય છે. આ દ્વારમાં હવે અને મનુષ્ય પદને જ અહણ કરવા, કારણ કે એ હવે જ સંયત હોઈ શકે છે. નારક આદિને આ દ્વારમાં સમાવેશ થતો નથી કારણ કે તેઓમાં સંયમનો અભાવ હોય છે. (અસંજર્ણિં એગિદિયવજ્જો તિયમંગો) અસંયત દ્વારમાં અસંયત સંજર્ણી એકત્વ અને બહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં એકેન્દ્રિયના પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ પદો સિવાયના હવાદિ પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે, કારણ કે પહેલેથી જ અસંયત અવસ્થામાં હોય એવાં હવે તો ઘણા જ હોય છે, પણ સંયત આદિ અવસ્થામાંથી પતન પામીને અસંયત અવસ્થા પામી રહ્યાં હોય એવાં હવે તો એક, બે આદિ જ સંભવી શકે છે. અહીં એકેન્દ્રિયના પાંચ પદને અહણ કરવાનો નિયેધ કરવાનું કારણ એ છે કે તે હવેમાં ત્રણ ભંગ થતા નથી, પરંતુ (સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ) આ એક જ ભંગ થાય છે. કારણ કે તે પર્યાયમાં બધાં જ હવે

સિદ્ધા ન ચાચ્યાસ્તેષાં મિથ્યાત્વાભાવાત્ 'સમ્મામિચ્છદિટ્ઠીહિં છમ્મંગા' સમ્યગ્-
મિથ્યાદષ્ટિપુ સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિસમ્યન્ધિવદ્વત્વવિપયકદળકે પડ્ મજ્ઞાઃ વેદિ-
ત્ત્વ્યાઃ, યતઃ સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિત્વં પ્રતિપન્નાઃ પ્રતિપદમાનાથ એકદ્વયાદયોઽપિ
લભ્યન્તે અતસ્તેષુ સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિત્વં પ્રતિપન્નાઃ પ્રતિપદમાનાથ એકદ્વયાદયોઽપિ
લભ્યન્તે અતસ્તેષુ સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિપુ પડ્ મજ્ઞા મવન્તિ, અથ ચ એકેન્દ્રિય-વિક-
લેન્દ્રિય-સિદ્ધપદાનિ ન વક્તવ્યાનિ તેષાં સમ્યગ્મિથ્યાદર્શનાસંભવાત્ । 'સંજપહિં
જીવાહો તિયમંગો' સંયતેષુ સંયતશબ્દવિશિષ્ટદળકયોર્મધ્યે વદ્વત્વવિપયક-
દળકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રયો મજ્ઞાઃ ઉપર્યુક્તા વક્તવ્યાઃ, સંયમં પ્રતિપન્નાનાં
વહનામ્ પ્રતિપદમાનાનાં ચ એકાદીનાં સન્નાચાત્, કિન્ત્વત્ર જીન-મનુષ્યો એવ

ઇસ મિથ્યાદષ્ટિદ્વાર મેં સિદ્ધ પદ કા ઉચ્ચારણ નહીં કરના, ક્યોં કિ
સિદ્ધ જીવોં મેં મિથ્યાત્વ નહીં હોતા હૈ । (સમ્મામિચ્છદિટ્ઠીહિં-છમ્મંગા)
સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિ કે વદ્વત્વવિપયક દિતીય દળક મેં છહ મંગ હોતે
હૈં-સો ઇસકા કારણ યહ હૈં કિ સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિ અવસ્થા કો
જિન જીવોં ને પહિલે સે પ્રાપ્ત કર રહ્યા હૈં એસે જીવ ઓર જો ઇસ
અવસ્થા પ્રાપ્ત કર રહે હૈં એસે જીવ સય હી નહીં હોતે હૈં, કિન્તુ એક દો
આદિ જીવ મી હોતે હૈં । ઇસસે ઇસ સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિ દ્વારમેં ભમંગ કહે
ગયે હૈં । ઇસ દ્વાર મેં એકેન્દ્રિય વિકલેન્દ્રિય ઓર સિદ્ધોંકા ઉચ્ચારણ નહીં
કરના ક્યોં કિ-ઇનમેં સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિરૂપ મિથ્ર અવસ્થા નહીં હોતી હૈ ।
'સંજપહિં જીવાહો તિયમંગો' સંયતશબ્દસે વિશેષિત હુએ દો દળકોં
મેં સે વદ્વત્વ વિપયક દિતીય દળક મેં જીવાદિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત તીન
મંગ હોતે હૈં । કારણ કિ સંયમ કો જિન્હોંને પહિલે પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ

પણુ સમાવેશ કરવાનો નથી કારણ કે સિદ્ધ જીવોમાં મિથ્યાત્વ હોતું જ
નથી. (સમ્મામિચ્છદિટ્ઠીહિં છમ્મંગા) સમ્યગ્ મિથ્યાદષ્ટિના બદ્ધત્વ વિપયક
બીજા દંડકમાં છ ભાગ થાય છે. તેનું કારણ એ છે કે સમ્યગ્ મિથ્યાદષ્ટિ
અવસ્થા જેમણે પહેલેથી જ પ્રાપ્ત કરેલી હોય એવાં જીવો અને એ અવસ્થાને
પ્રાપ્ત કરી રહ્યા હોય એવાં જીવો બધાં હોતા નથી, પણ એક, બે આદિ
જીવો જ હોય છે. તેથી આ સમ્યગ્ મિથ્યાદષ્ટિ દ્વારમાં છ ભાગ કહ્યા છે. આ
દ્વારમાં એકેન્દ્રિય, વિકલેન્દ્રિય અને સિદ્ધોનો સમાવેશ થતો નથી, કારણ કે
તેઓમાં સમ્યગ્ મિથ્યાદષ્ટિ રૂપ મિથ્ર અવસ્થા હોતી નથી. (સંજપહિં જીવા-
હો તિયમંગો) સંયત વિશેષણવાળા બે દંડકોમાંના બદ્ધત્વ વિપયક બીજા
દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભાગ થાય છે, તેનું કારણ એ છે કે
સંયમને પહેલાં પ્રાપ્ત કરી લીધે હોય એવાં સંયમ પ્રતિપક્ષક (સંયમી)

સંજગાસંત્રય - જીવસિદ્ધેર્દિ તિયમંગો ' નોસંયત - નોઅસંયત - નોસંયતાસંયત-
પદવિશિષ્ટજીવસિદ્ધિવિષયકત્વવદ્વત્ત્વદ્વડકયોર્મધ્યે વદ્વત્ત્વદ્વડકે જીવાદિપદેષુ
પૂર્વોક્તાશ્ચયો ભક્ષા વક્તવ્યાઃ પૂર્વોક્તસીત્યા । વિશેષત્તુ અત્ર જીવ-સિદ્ધાવેવ
વક્તવ્યો, ન મનુષ્યનૈરચિકાદયસ્તેષાં નોસંયતત્વાચસંભવાત્, અતઃ एवात्र
' જીવ-સિદ્ધેર્દિ ' इत्येवોક્તम् । ' સકસાઈર્દિ જીવાઈઓ તિયમંગો ' સકપાયિપુ
સકપાયશબ્દવિશિષ્ટદ્વડકયોર્મધ્યે વદ્વત્ત્વદ્વડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિકમત્તઃ
પૂર્વોક્તાશ્ચયો ભક્ષા વાચ્યાઃ, તથા ચ સકપાયાણાં સર્વદાઽવસ્થાનાત્ તે સકપાયાઃ
' સપ્રદેશાઃ ' इत्येवો ભક્ષાઃ, एवम् उपशमश्रेणीतઃ પ્રચ્યવમાનતાદશાયાં સકપાયત્વં

સંયત-નો અસંયત-નો સંયતાસંયત પદ વિશિષ્ટ જીવ ઓર સિદ્ધ
સમ્યન્ધી એકત્વ ષષ્ટત્વવિષયક દો દ્વડકોં મેં સે વદ્વત્ત્વવિષયક દ્વડક
મેં જીવાદિ પદોં મેં પૂર્વોક્ત રીતિ કે અનુસાર પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં
યહાં કેવલ જીવ ઓર સિદ્ધપદ કા હી ઉચ્ચારણકરના ચાહિયે । મનુષ્ય
નારક આદિ પદોં કા નહીં । ક્યોં કિં ઝનમેં નો સંયતત્વાદિ અવસ્થા
નહીં હોતી હેં । હસી કારણ યહાં " જીવ સિદ્ધેર્દિ " એસા હી કહા
ગયા હેં । " સકસાઈર્દિ જીવાઈઓ તિયમંગો ' સકપાયદ્વાર મેં સકપાય
શબ્દ વિશિષ્ટ દો દ્વડકોં મેં સે વદ્વત્ત્વવિષયક દ્વિતીય દ્વડકમેં જીવા-
દિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત હી ત્રીન ભંગ હોતે હેં ક્યોં કિં કપાયસહિત જીવ
સંદાં અવસ્થિત રહતે હેં-અર્થાત્ કપાયવાલે જીવ હમેશા પાયે જાતે હેં
હસ લિયે વે કપાયવાલે જીવ સપ્રદેશ હેં યહ એક ભંગ હુઆ, તથા ઉપ-
શમ શ્રેણી સે ગિર કર કપાયસહિત અવસ્થા કો પાનેવાલે જીવ કોહ

સંબંધી એકત્વ ષષ્ટત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના ષષ્ટત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં
જીવાદિ પદોમાં પૂર્વોક્ત રીત પ્રમાણેના જ પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે, આ
દ્વારમાં ફક્ત એવ પદ અને સિદ્ધ પદનો જ પ્રયોગ થાય છે, મનુષ્ય, નારક
આદિ પદોને દ્વારમાં ગ્રહણ કરવાનો નિષેધ કર્યો છે કારણ કે તેમનામાં નો
સંયત આદિ અવસ્થામાં હોતી નથી. તે કારણે અહીં (જીવ સિદ્ધેર્દિ) આ
પ્રમાણે કહ્યું છે.

(સકસાઈર્દિ જીવાઈઓ તિયમંગો) સકપાય દ્વારમાં સકપાય શબ્દયુક્ત બે
દંડકોમાંના ષષ્ટત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ
જ રહ્યા છે, કારણ કે કપાયવાળા જીવો હંમેશા નજરે પડતાં હોય છે. તે
કારણે તે કપાયવાળા જીવો સપ્રદેશ હોય છે, આ પહેલો ભંગ છે. તથા
ઉપશમ શ્રેણીથી પતન પામીને કપાયયુક્ત અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનાર જીવ તે.

ન વક્તવ્યં, તસ્ય અસંયતસ્યામાનાન્ । ' સંજયાસંજપદિં તિયમંગો જીવાઈઓ ' સંયતા - સંયતેષુ સંયતાસંયતપદવિશિષ્ટેષ્વત્ત્વદ્વયોર્મયે વદ્યત્વદ્વયકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ વિક્રમજઃ પૂર્વોક્તારાગો મજ્ઞા વાચ્યાઃ, દેશચિરતિં પ્રતિ- પજાનાં વહૂનાં, સંયમાદ્ અસંયમાદ્ વા નિટ્યત્વ દેશચિરતિં પ્રતિપચમાનાનાં ચ એકાદીનાં સદ્ભાવાત્, પરન્તુત્ર જીવ-પદ્ધેન્દ્રિયતિર્યગ્-મનુષ્યા એવ પઠિતવ્યાઃ ન તુ નૈરયિકાદયઃ, તેષાં સંયતાસંયતત્વચિરતાન્, ' જોસંજય-જોઅસંજય-જો-

કિ યહાં સચ હી દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં અસંયમ અવસ્થાવાલે હોતે હૈં ઓર અસંયમ અવસ્થા કો ધારણ કરનેવાલે વે હી સચ જીવ પ્રથમ સમય મેં મી હોતે હૈં । હસ કારણ યહાં એક હી ભંગ કહાં ગયા હૈ । હસ દ્વાર મેં સિદ્ધ પદ નહીં કહના-કયોં કિ સિદ્ધોં મેં અસંયત અવસ્થા નહીં હોતી હૈ । ' સંજયા સંજપદિં તિયમંગો જીવાઈઓ ' સંયતાસંયત દ્વાર મેં-સંયતાસંયતપદ વિશિષ્ટ એકત્વ વદ્યત્વ વિષયક દો દળકોં મેં સે વદ્ય-ત્વવિષયક દ્વિતીય દળકમેં જીવાદિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હૈં । કયોં કિ દેશચિરતિરૂપ ચારિત્ર કો જિન્હોં ને પહિલે સે પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ એસે જીવ તો અનેક હોતે હૈં, ઓર સંયમ સે અથવા અસંયમ નિવૃત્ત હો કર પુનઃ દેશચિરતિરૂપ ચારિત્ર કો પ્રાપ્ત કરનેવાલે કોઈ એક દો આદિ જીવ હી હોતે હૈં । હસ દ્વારમેં જીવ પદ્ધેન્દ્રિય તિર્યગ્ ઓર મનુષ્ય હન પદોં કો હી પ્રયોગ કરના કયોં કિ હનકે સિચાય ઓર જગહ દેવનારક આદિ મેં યહ અવસ્થા સંભવિત નહીં હોતી હૈ ' જો સંજય-જો અસંજય-જો સંજયાસંજય જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો ' નો

દ્વિતીયાદિ સમયોમાં અસંયમ અવસ્થાવાળા હોય છે અને તે બધાં જીવો પ્રથમ સમયમાં પણ અસંયમ અવસ્થાવાળા જ હોય છે. આ કારણે એકેન્દ્રિય વિષયક એક જ ભંગ અસંયતને અનુલક્ષીને કહ્યો છે. આ દ્વારમાં સિદ્ધને સમાવેશ થતો નથી કારણ કે તેઓમાં અસંયત અવસ્થા હોતી જ નથી. (સંજયાસંજપદિં તિયમંગો જીવાઈઓ) સંયતા સંયત દ્વારમાં-સંયતા સંયત સંબંધી એકત્વ બહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થય છે. કારણ કે દેશચિરતિરૂપ ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરનારા જીવો તો કોઈ જ હોય છે. આ દ્વારમાં જીવ, પદ્ધેન્દ્રિય તિર્યગ્ અને મનુષ્ય આટલાં પદોનો જ પ્રયોગ કરવો. આ સિચાયના નારક દેવ આદિમાં આ અવસ્થા સંભવી શકતી જ નથી.

(જોસંજય-જોઅસંજય-જોસંજયાસંજય જીવ સિદ્ધેહિં તિયમંગો) નો સંયત, નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત પદ વિશિષ્ટ જીવ અને સિદ્ધ

સંયતસંયત - ઝીવસિદ્ધિર્દિ તિયમંગો ' નોસંયત - નોઅસંયત - નોસંયતાસંયત-
પદવિશિષ્ટઝીવસિદ્ધિવિષયકૈકત્વવહુત્વદળ્ડકયોર્મધ્યે વહુત્વદળ્ડકે ઝીવાદિપદેષુ
પૂર્વોક્તાશ્ચયો ભક્ષા વક્તવ્યાઃ પૂર્વોક્તરીત્યા । વિશેષત્તુ અત્ર ઝીવ-સિદ્ધાવેવ
વક્તવ્યો, ન મનુષ્યનૈરચિકાદયસ્તેષાં નોસંયતત્વાદ્યસંભવાત્, અતઃ ઇવાત્ર
' ઝીવ-સિદ્ધિર્દિ ' ઇત્યેવોક્તમ્ । ' સકસાર્દિર્દિ ઝીવાઈઓ તિયમંગો ' સકપાયિષુ
સરૂપાયશ્ચવિશિષ્ટદળ્ડકયોર્મધ્યે વહુત્વદળ્ડકે ઝીવાદિકઃ ઝીવાદિપદેષુ ટ્રિકભક્ષઃ
પૂર્વોક્તાશ્ચયો ભક્ષા વાચ્યાઃ, તયા ચ સકપાયાણાં સર્વદાઝવસ્થાનાત્ તે સકપાયાઃ
' સપ્રદેશઃ ' ઇત્યેવો ભક્ષઃ, ઇવમ્ ઉપશમશ્રેણીતઃ પ્રચ્યવમાનતાદશાયાં સકપાયત્વં

સંયત-નો અસંયત-નો સંયતાસંયત પદ વિશિષ્ટ ઝીવ ઓર સિદ્ધ
સમ્યન્ધી એકત્વ વહુત્વવિષયક દો દળ્ડકોં મેં સે વહુત્વવિષયક દળ્ડક
મેં ઝીવાદિ પદોં મેં પૂર્વોક્ત રીતિ કે અનુસાર પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં
યહાં કેવલ ઝીવ ઓર સિદ્ધપદ કા હી ઉચ્ચારણ કરના ચાહિયે । મનુષ્ય
નારક આદિ પદોં કા નહીં । કયોં કિ ઉત્તમેં નો સંયતત્વાદિ અવસ્થા
નહીં હોતી હે । હસી કારણ યહાં " ઝીવ સિદ્ધિર્દિ " ઇસા હી કહા
ગયા હે । " સકસાર્દિર્દિ ઝીવાઈઓ તિયમંગો ' સકપાયદ્વાર મેં સકપાય
શબ્દ વિશિષ્ટ દો દળ્ડકોં મેં સે વહુત્વવિષયક દ્વિતીય દળ્ડકમેં ઝીવા-
દિકં પદોં મેં પૂર્વોક્ત હી ત્રીન ભંગ હોતે હેં કયોં કિ કપાયસહિત ઝીવ
સંદાં અવસ્થિત રહતે હેં-અર્થાત્ કપાયવાલે ઝીવ હમેશા પાયે જાતે હેં
હસ લિયે વે કપાયવાલે ઝીવ સપ્રદેશ હેં યહ એક ભંગ હુઆ, તથા ઉપ-
શમ શ્રેણી સે ગિર કર કપાયસહિત અવસ્થા કો પાનેવાલે ઝીવ કોઈ

સંબંધી એકત્વ બહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં
જીવાદિ પદોમાં પૂર્વોક્ત રીત પ્રમાણેના જ પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે, આ
દ્વારમાં ફક્ત એવ પદ અને સિદ્ધ પદનો જ પ્રયોગ થાય છે, મનુષ્ય, નારક
આદિ પદોને દ્વારમાં ગ્રહણ કરવાનો નિષેધ કર્યો છે કારણ કે તેમનામાં નો
સંયત આદિ અવસ્થામાં હોતી નથી. તે કારણે અહીં (ઝીવ સિદ્ધિર્દિ) આ
પ્રમાણે કહ્યું છે.

(સકસાર્દિર્દિ ઝીવાઈઓ તિયમંગો) સકપાય દ્વારમાં સકપાય શબ્દયુક્ત બે
દંડકોમાંના બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ
જ રહ્યા છે, કારણ કે કપાયવાળા જીવો હંમેશા નજરે પડતાં હોય છે. તે
કારણે તે કપાયવાળા જીવો સપ્રદેશ હોય છે, આ પહેલો ભંગ છે. તથા
ઉપશમ શ્રેણીથી પતન પામીને કપાયયુક્ત અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનાર જીવ તો

ન વક્તવ્યં, તસ્ય અસંયતસ્વાભાવાન્ । 'સંજયાસંજર્ણિં તિયમંગો જીવાઈઓ' સંયતા - સંયતેષુ સંયતાસંયતમ્વિશિષ્ટેષ્ટાવદ્વૃત્તયોર્મજ્જે વદ્વૃત્તદ્વંકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિભુવનઃ પૂર્વોક્તારાણો મજ્ઞા વાચ્યાઃ, દેશવિરતિં પ્રતિ-પન્નાનાં વહુનાં, સંયમાદ્ અસંયમાદ્ વા નિષ્કૃત્ય દેશવિરતિં પ્રતિપન્માનાનાં ચ એકાદીનાં સદ્ભાવાત્, પરન્ત્યત્ર જીવ-પદ્ધેન્દ્રિયતિર્દગ્-મનુષ્યા एव पठिनव्याः ન તુ નૈરવિકાદયઃ, તેષાં સંયતાસંયતત્વચિરં, 'જોસંજય-જોઅસંજય-જો-

કિ યહાં સય હી દ્વિતીયાદિ સમયો મેં અસંયમ અવસ્થાવાલે હોતે હેં ઓર અસંયમ અવસ્થા કો ધારણ કરનેવાલે વે હી સય જીવ પ્રથમ સમય મેં મી હોતે હેં । હસ કારણ યહાં એક હી ભંગ કહાં ગયા હૈ । હસ દ્વાર મેં સિદ્ધ પદ નહીં કહના-ચયોં કિ સિદ્ધોં મેં અસંયત અવસ્થા નહીં હોતી હૈ । 'સંજયા સંજર્ણિં તિયમંગો જીવાઈઓ' સંયતાસંયત દ્વાર મેં-સંયતાસંયતપદ વિશિષ્ટ એકત્વ વદ્વૃત્ત્ય વિષયક દો દ્વંકોં મેં સે વદ્વૃત્ત્યવિષયક દ્વિતીય દ્વંકમેં જીવાદિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં । કયોં કિ દેશવિરતિરૂપ ચારિત્ર કો જિન્હોં ને પહિલે સે પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ એસે જીવ તો અનેક હોતે હેં, ઓર સંયમ સે અથવા અસંયમ નિવૃત્ત હો કર પુનઃ દેશવિરતિરૂપ ચારિત્ર કો પ્રાપ્ત કરનેવાલે કોઈ એક દો આદિ જીવ હી હોતે હેં । હસ દ્વારમેં જીવ પદ્ધેન્દ્રિય તિર્યચ્છ ઓર મનુષ્ય હન પદોં કો હી પ્રયોગ કરના કયોં કિ હનકે સિવાય ઓર જગહ દેવનારક આદિ મેં યહ અવસ્થા સંભવિત નહીં હોતી હૈ 'જો સંજય-જો અસંજય-જો સંજયાસંજય જીવ સિદ્ધેર્હિં તિયમંગો' નો

દ્વિતીયાદિ સમયોમાં અસંયમ અવસ્થાવાળા હોય છે અને તે બધાં જીવો પ્રથમ સમયમાં પણ અસંયમ અવસ્થાવાળા જ હોય છે. આ કારણે એકેન્દ્રિય વિષયક એક જ ભંગ અસંયતને અનુસક્ષીને કહ્યો છે. આ દ્વારમાં સિદ્ધનો સમાવેશ થતો નથી કારણ કે તેઓમાં અસંયત અવસ્થા હોતી જ નથી. (સંજયાસંજર્ણિં તિયમંગો જીવાઈઓ) સંયતા સંયત દ્વારમાં-સંયતા સંયત સંયતી એકત્વ બહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. કારણ કે દેશવિરતિરૂપ ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરનારા જીવો તો કોઈ જ હોય છે. આ દ્વારમાં જીવ, પદ્ધેન્દ્રિય તિર્યચ્છ અને મનુષ્ય આટલાં પદોનો જ પ્રયોગ કરવો. આ સિવાયના નારક દેવ આદિમાં આ અવસ્થા સંભવી શકતી જ નથી.

(જોસંજય-જોઅસંજય-જોસંજયાસંજય જીવ સિદ્ધેર્હિં તિયમંગો) નો સંયત, નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત પદ વિશિષ્ટ જીવ અને સિદ્ધ

સંજયાસંજય - જીવસિદ્ધેર્હિ તિયમંગો ' નોસંયત - નોઅસંયત - નોસંયતાસંયત-
 પદવિશિષ્ટજીવસિદ્ધવિષયકત્વવહુત્વદણ્ડકર્મોર્મ્યે વહુત્વદણ્ડકે જીવાદિપદેષુ
 પૂર્વોક્તાસૂત્રો ભક્ત્વા વક્તવ્યાઃ પૂર્વોક્તરીત્યા । વિશેષસ્તુ અત્ર જીવ-સિદ્ધાવેવ
 વક્તવ્યો, ન મનુષ્યનૈરયિકાદયસ્તેષાં નોસંયતત્વાદ્યસંભવાત્ , અતઃ એવાત્ર
 ' જીવ-સિદ્ધેર્હિ ' इत्येवોક્તમ્ । ' સકસાર્દર્હિ જીવાઈઓ તિયમંગો ' સકપાયિષુ
 સરુપાયશ્ચવિશિષ્ટદણ્ડકર્મોર્મ્યે વહુત્વદણ્ડકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિકમત્રઃ
 પૂર્વોક્તાસૂત્રો ભક્ત્વા વાચ્યાઃ, તથા ચ સરુપાયણાં સર્વદાઽવસ્થાનાત્ તે સકપાયાઃ
 ' સપ્રદેશઃ ' इत्येवો ભક્ત્વા, એવમ્ ઉપશમશ્રેણીતઃ પ્રત્યવમાનતાદશાયં સકપાયત્વં

સંયત-નો અસંયત-નો સંયતાસંયત પદ વિશિષ્ટ જીવ ઓર સિદ્ધ
 સમ્યન્ધી એકત્વ વહુત્વવિષયક દો દણ્ડકોં મેં સે વહુત્વવિષયક દણ્ડક
 મેં જીવાદિ પદોં મેં પૂર્વોક્ત રીતિ કે અનુસાર પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં
 યહાં કેવલ જીવ ઓર સિદ્ધપદ કા હી ઉચ્ચારણ કરના ચાહિયે । મનુષ્ય
 નારક આદિ પદોં કા નહીં । ક્યોં કિ ડનમેં નો સંયતત્વાદિ અવસ્થા
 નહીં હોતી હે । ઇસી કારણ યહાં " જીવ સિદ્ધેર્હિ " એસા હી કહા
 ગયા હે । " સકસાર્દર્હિ જીવાઈઓ તિયમંગો ' સકપાયદ્વાર મેં સકપાય
 શબ્દ વિશિષ્ટ દો દણ્ડકોં મેં સે વહુત્વવિષયક દ્વિતીય દણ્ડકમેં જીવા-
 દિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત હી ત્રીન ભંગ હોતે હેં ક્યોં કિ કપાયસહિત જીવ
 સંદાં અવસ્થિત રહતે હેં-અર્થાત્ કપાયવાલે જીવ હમેશા પાયે જાતે હેં
 ઇસ લિયે વે કપાયવાલે જીવ સપ્રદેશ હેં યહ એક ભંગ હુમા, તથા ઉપ-
 શમ શ્રેણી સે મિર કર કપાયસહિત અવસ્થા કો પાનેવાલે જીવ કોઈ

સંબંધી એકત્વ વહુત્વ વિષયક બે દંડકોમાંના વહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં
 જીવાદિ પદોમાં પૂર્વોક્ત રીત પ્રમાણેના જ પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે, આ
 દ્વારમાં ફક્ત એવ પદ અને સિદ્ધ પદનો જ પ્રયોગ થાય છે, મનુષ્ય, નારક
 આદિ પદોને દ્વારમાં ગ્રહણ કરવાનો નિષેધ કર્યો છે કારણ કે તેમનામાં નો
 સંયત આદિ અવસ્થામાં હોતી નથી. તે કારણે અહીં (જીવ સિદ્ધેર્હિ) આ
 પ્રમાણે કહ્યું છે.

(સકસાર્દર્હિ જીવાઈઓ તિયમંગો) સકપાય દ્વારમાં સકપાય શબ્દયુક્ત બે
 દંડકોમાંના વહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ
 જ દશા છે, કારણ કે કપાયવાળા જીવો હંમેશા નજરે પડતાં હોય છે. તે
 કારણે તે કપાયવાળા જીવો સપ્રદેશ હોય છે, આ પહેલો ભંગ છે. તથા
 ઉપશમ શ્રેણીથી પતન પામીને કપાયયુક્ત અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનાર જીવ તે

પ્રતિપચમાનાનામ્ એકાદીનાં જ્ઞાનાન્ 'સપ્રદેશાથ ચદયઃ, એકઃ અપ્રદેશઃ' इति
 દ્વિતીયો મતઃ, 'ચદયઃ સપ્રદેશાથ ચદયઃ અપ્રદેશઃ' इति તૃતીયો મતઃ । નૈ-
 યિકસકપાયચતુરદણ્ડકે મત્તરૂપયં પૂર્વપતિવાદિતમેતન્નાપિ ચોચ્યમ્ । 'एगि-
 दिएसु अभंगकं' एकेन्द्रियेषु सकपायैकेन्द्रियपृथिव्यादिवद्वृत्तविषयकदण्डके
 અમજ્જાતમ્ વહનાં મજ્જાતાનામ્ અમારઃ કિન્તુ 'સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ' इति એક-
 એવ મજ્જો ચોચ્યઃ, યદ્યપિ પૂર્વે પૃથિવ્યાદિષુ મયં મત્તઃ પ્રતિપાદિત એવ તથાપિ તસ્ય
 સકપાયાવિષયકતયોક્તત્વેનાચ સકપાયવસદ્ગત્યાન્ પ્રતિપાદિતઃ, સકપાયૈકેન્દ્રિ-
 યાણાં વહનામ્ વદ્વૃત્તમયાવસ્થિતાનામ્ એકસમયસ્થિતિકાનાં ચોપલમ્ભાન્ ।

एक दो आदि मिलते हैं इसलिये " यहचः सप्रदेशाः, एक अप्रदेशश्च "
 ऐसा यह दूसरा भंग हुआ तथा " यहचः सप्रदेशश्च यहचः अप्रदेशश्च "
 अनेक सप्रदेश हैं और अनेक अप्रदेश हैं, यह तीसरा भंग हुआ ।
 नैरयिक जीवोंके कपायसहित चतुर्व दण्डकमें जिस प्रकारसे तीन भंग
 पहिले प्रतिपादित किये गये हैं इसी तरह से वे ही तीन भंग यहां पर
 भी जानना चाहिये । इस कपायद्वारमें " एगिदिएसु अभंगकं " एके-
 न्द्रिय पदों में अर्थात् कपायसहित एकेन्द्रिय पृथिव्यादिकों के बहुत्व
 विषयकदण्डक में अनेक भंग नहीं हैं, किन्तु " सप्रदेशश्च अप्रदेशश्च "
 ऐसा यह एक ही भंग है । यद्यपि पहिले पृथिव्यादि पदों में यह भंग
 कहा जा चुका है फिर भी यहां जो यह कहा जा रहा है वह कपाय के
 प्रसङ्ग को ले कर कहा जा रहा है-पहिले कपाय के प्रसङ्ग को लेकर यह
 नहीं कहा गया है । एकेन्द्रिय जीवों में कपायसहित जीव पूर्वोत्पन्न

કોઇક જ હોય છે, તેથી (વહવઃ સપ્રદેશાથ એક અપ્રદેશાથ) ઘણા સપ્રદેશ
 હોય છે અને કોઇક અપ્રદેશ હોય છે, એવો ખીલો ભંગ બને છે. તથા
 "વહવઃ સપ્રદેશાથ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાથ્ચ" અનેક સપ્રદેશ હોય છે અને અનેક
 અપ્રદેશ હોય છે, એવો ત્રીજો ભંગ બને છે. નારક જીવોના કપાયસહિત બહુત્વ
 દંડકમાં આગળ જેનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે એવાં જ ત્રણ ભંગ સમ-
 જવા. આ કપાયદ્વારમાં (એગિદિએસુ અમંગકં) એકેન્દ્રિય પદોમાં એટલે કે
 કપાયસહિત પૃથ્વીકાય આદિકોના બહુત્વ વિષયક દંડકમાં અનેક ભંગ થતા
 નથી, પણ એક જ ભંગ થાય છે. તે એક ભંગ આ પ્રમાણે છે. "સપ્રદેશાથ
 અપ્રદેશાથ" એ કે પહેલાં પૃથ્વીકાય આદિ પદોમાં આ ભંગ કહેવામાં આવી
 ગયો છે, છતાં પણ તે ભંગને અહીં જે ફરીથી કહેવામાં આવ્યો છે તે
 કપાય અવસ્થાને અનુલક્ષીને કહેવામાં આવેલ છે, પહેલાં કપાય અવસ્થાને
 અનુલક્ષીને આ ભંગ કહ્યો ન હતો. એકેન્દ્રિય જીવોમાં સકપાય પૂર્વોત્પન્ન જીવ

કિન્ત્વત્ર સિદ્ધો ન વક્તવ્યઃ, તસ્ય અરૂપાયિત્વાત્ । 'ક્રોધકસાહર્દિ જીવ-પ્રતિદિય-વજ્જો તિયમંગો' ક્રોધરૂપાયિષુ ક્રોધરૂપાયિવિશિષ્ટવહુત્વદણ્ડકે જીવે-કેન્દ્રિય-વર્જઃ જીવપદમ્ પૃથિવ્યાદ્યેકેન્દ્રિયપદાનિ ચ વર્જયિત્વા અન્યેષુ મનુષ્યનૈરયિકા-દિષુ વિકભજ્ઞઃ પૂર્વોક્તં ભદ્રત્રયં વાચ્યમ્, કિન્ત્વત્રાપિ સિદ્ધો ન વાચ્યઃ, તસ્ય ક્રોધરૂપાયિવિરહાત્ । ક્રોધરૂપાયિજીવપદ-પૃથિવ્યાદ્યેકેન્દ્રિયપદેષુ ચ 'સપ્રદે-શાથ' ઇતિ એક એવ ભદ્રો વક્તવ્યઃ । સરૂપાયજીવસ્વોપર્યુક્તભદ્રત્રયવત્ કથમ-ત્રાપિ ક્રોધરૂપાયિજીવ-પૃથિવ્યાદિષુ ન ભદ્રત્રયમિતિ ચેદાહ-ઉપશમશ્રેણીતઃ પ્રત્યવમાનાનાં સરૂપાયિત્વં પ્રતિપચ્ચમાનાનામ્ એકાદીનામુપલમ્બેન તત્ર ભદ્રત્રયસંભ-

ઔર ઉત્પચ્ચમાન અનેક પાયે જાતે હૈં । યહાં ઇસ દ્વાર મૈં સિદ્ધોં કો ગ્રહણ નહીં કરના ચાહિયે-કયોં કિ વે કપાયસહિત નહીં હોતે હૈં । 'ક્રોધ-કસાહર્દિ જીવ પ્રતિદિય વજ્જો તિયમંગો' ક્રોધકપાય વિશિષ્ટ વહુત્વ દણ્ડકમૈં જીવપદ કો ઔર પૃથિવ્યાદિક પાંચ પદોં કો છોડકર અન્ય મનુષ્ય ઔર નૈરયિક આદિ પદોં મૈં પૂર્વાક્ત ત્રીન મંગ હોતે હૈં । યહાં પર-ભી સિદ્ધપદકા ગ્રહણ નહીં હુઆ હૈ કયોં કિ ઊનમૈં ક્રોધકપાય કા વિરહ રહતા હૈ । ક્રોધકપાયવાલે જીવપદ મૈં ઔર પૃથિવ્યાદિક એકેન્દ્રિય પદોં મૈં "સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ" એસાં એક હી મંગ હોતા હૈ । યદિ યહાંપર એસી આશંકા કી જાવે કિ કપાયવિશિષ્ટ જીવ કે અમી આપને ત્રીન મંગ કહે હૈં, ફિર યહાં પર ક્રોધકપાયવિશિષ્ટ જીવ ઔર પૃથિવ્યા-દિકોં મૈં ત્રીન મંગ ન કહ્ કાર એક હી મંગ કયોં કહા ગયા હૈ ? તો ઇસકા ઉત્તર યહ્ હૈ કિ ઉપશમ શ્રેણી સે નીચે ગિરને વાલે જીવોં મૈં

પણ અનેક હોય છે અને ઉત્પદ્યમાન હોવો પણ અનેક હોય છે. આ દ્વારમાં સિદ્ધોનો સમાવેશ થતો નથી કારણ કે તેઓ કપાયવાળા હોતા નથી. (ક્રોધ-કસાહર્દિ જીવ પ્રતિદિયવજ્જો તિયમંગો) ક્રોધકપાય પદવાળા અહુત્વવિપયક દંડકમાં હવ પદને તથા પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિયોને છોડીને તે સિવાયના નારક, મનુષ્ય આદિ પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. અહીં પણ સિદ્ધોને ગ્રહણ કરવા ભેદબે નહીં, કારણ કે તેમનામાં ક્રોધકપાયનો અભાવ હોય છે. ક્રોધકપાયવાળા હવ પદમાં અને પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય પદોમાં (સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ) એવો એક જ ભંગ થાય છે ને અહીં કોઈ ને એવી શંકા થાય કે કપાયશુક્ત હવના હમણાં જ આપે ત્રણ ભંગ કહ્યા છે, તો અહીં ક્રોધકપાયવાળા હવ અને પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય હોવાનો એક જ ભંગ કહેવાનું કારણ શું છે ? તો તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે સમજવું-ઉપશમ શ્રેણીથી પતન પામનાર હોવામાં કપાયવાળા કેઈક હવ (એકાદિ

વેડપિ માન-માયા-લોભેભ્યો નિવૃત્તાનો ક્રોધં મનિપયમાનાનાં તુ મહનામેવોપસ્મ-
 મ્મેન પ્રત્યેકં ક્રોધકપાયિરાશોનાનનન્તતથાઽપ્ત્ર એકાદીનામનુપસ્મ્મેન મદ્મત્રયા-
 સંમયાત્, કિન્તુ 'દેવેહિ છન્મંગા' દેવેષુ ક્રોધકપાયિદેવવિશિષ્ટચત્ત્વરદ્વંકે
 પદ્મ મજ્જાઃ ચક્તવ્યાઃ, ત્રયોદશાનામપિ દેવપદ્માચ્યાનામ્ અગુરુમારાદિદશમ્બવન-
 પતિ-વાનવ્યન્તર-ઝ્યોતિષિક-વૈમાનિકાન્તાનાં મધ્યે ક્રોધોદયશાલિના મલ્પતયા
 એકત્વે, ચતુત્વે ચ સપ્રદેશ-પ્રદેશત્વયોઃ સંભવેન પૂર્વોક્તદ્વિભક્તસંમયાત્ ।
 'માણકસાઈ-માયાકસાઈ-જીવ-ઈન્દિયવજ્જો તિયમંગો' માનકપાયિ-માયા-

કપાયવિશિષ્ટ કોઈ એક આદિ જીવ પાયા જાતા હૈં इस कारण कपाय-
 वार में जीवपद में तीन भंग कहे गये हैं परन्तु यहां पर मान, माया
 और लोभ से निवृत्त होकर क्रोधकपाय में प्रवृत्त हुए ऐसे अनेक जीव
 पाये जाते हैं । क्योंकि कि इन प्रत्येक मानादि कपायवालों में क्रोधकपाय
 वालों की राशि अनन्त कही गई है इस कारण यहां पर एकादि जीव
 का उपलंभ नहीं होने के कारण तीन भंग नहीं होते हैं ऐसा कहा गया है ।
 (देवैहि छन्मंगा) किन्तु क्रोध कपायवाले देवों के चतुत्वविषयक द्वितीय
 दण्डक में ६ भंग कहे गये हैं । असुरकुमार आदि दस भवनपति देवों
 में वानव्यन्तर देवों में, ज्योतिषिक देवों में और वैमानिक देवों में इन
 तेरह देवपद वाच्य देवों में क्रोधकपाय के उदयवाले देव अल्प पाये
 जाते हैं-इसलिये एकत्व और चतुत्व में सप्रदेशत्व और अप्रदेशत्व का
 संभव होने के कारण यहां पूर्वोक्त ६ भंग होते हैं । 'माणकसाई-माया-
 कसाई जीव इन्दियवज्जो तियमंगो' मानकपायवालों में और माया-

૭૫) તેા હોય છે, તે કારણે કપાય દ્વારમાં ૭૫ પદમાં ત્રણ ભંગ કહ્યા છે
 પરંતુ માન, માયા અને લોભમાંથી નિવૃત્ત થઈને ક્રોધકપાયમાં પ્રવૃત્ત થતા
 હોય છે વળી માનાદિ પ્રત્યેક કપાયોવાળા કરતાં ક્રોધકપાયવાળાની રાશિ અનંત
 કહેલી છે. તે કારણે ક્રોધકપાયવાળા એકાદિ ૭૫ની પ્રાપ્તિ થતી નથી પણ
 એવાં તેા અનેક ૭૫ હોય છે. તે કારણે અહીં ત્રણ ભંગ કહ્યા નથી પણ
 એક જ ભંગ કહ્યો છે. (દેવેહિ છન્મંગા) પરંતુ ક્રોધકપાયવાળા દેવોના બહુત્વ-
 વિષયક દંડકમાં ૬ ભંગ કહ્યા છે. અસુરકુમાર આદિ દસ ભવનપતિ દેવોમાં
 વાનવ્યન્તર દેવોમાં, જ્યોતિષિક દેવોમાં અને વૈમાનિક દેવોમાં આ તેર દેવ
 પદ વાચ્યદેવોમાં ક્રોધકપાયના ઉદયવાળા દેવો એવાં હોય છે. તે કારણે એકત્વ
 અને બહુત્વમાં અપ્રદેશત્વ અને અપ્રદેશત્વનો સંભવ હોવાને કારણે અહીં
 પૂર્વોક્ત ૬ ભંગ થાય છે.

કપાયિપુ માન-માયાકપાયિપદવિશિષ્ટવદ્વત્ત્વદ્વંડકે જીવૈ-કેન્દ્રિયવર્જઃ જીવપદમ્,
 એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદાનિ ચ વર્જયિત્વા ત્રિકભજ્ઞઃ પૂર્વોક્તાસ્યયો ભક્ષાઃ વક્તવ્યાઃ;
 જીવપદે-એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદેષુ તુ અત્રાપિ ઉપર્યુક્તક્રોધકપાયિવત્ 'સપ્રદે-
 શાથ અપ્રદેશાથ' ઇતિ એક એવં ભક્ષો વક્તવ્ય ઉક્તરીત્યા । કિન્તુ 'નેરહ્ય-દેવેર્હિ
 છન્મંગા' નૈરયિક-દેવેષુ માનકપાયિ-માયાકપાયિનૈરયિકદેવવદ્વત્ત્વદ્વંડકે પદ્
 ભક્ષાઃ પૂર્વોક્તાઃ વક્તવ્યાઃ, નૈરયિકાણાં દેવાનાં ચ માનમાયાકપાયિણાં મધ્યે
 અભ્યાનામેવ માન-માયોદ્યવતાં સંભવેન પૂર્વોક્તપુત્ર્યા પદ્મસંભવાત્ । 'લોભ-
 કસાર્હિં જીવ-ઈન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો' લોભકપાયિપુ લોભકપાયિપદવિશિષ્ટ
 વદ્વત્ત્વદ્વંડકે જીવૈ-કેન્દ્રિયવર્જઃ જીવપદમ્, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદાનિ ચ,
 વર્જયિત્વા ત્રિકભજ્ઞઃ પૂર્વોક્તક્રોધકપાયિત્ ભક્ષત્રયં વાચ્યમ્, જીવૈકેન્દ્રિયેષુ તુ એક-
 કપાયવાલોં મેં-વદ્વત્ત્વવિષયક દ્વિતીય દ્વંડક મેં જીવ પદકો ઓર એકે-
 ન્દ્રિય પૃથિવ્યાદિક પાંચ પદોં કો છોડકર પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં ।
 જીવપદ મેં ઓર એકેન્દ્રિય પૃથિવ્યાદિક પાંચ પદોં મેં ક્રોધકપાયવાલે.
 જીવોં કી તરહ 'સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ' એસા એક હી ભંગ હોતા હૈ ।
 કિન્તુ 'નેરહ્ય દેવેર્હિ છન્મંગા' માનકપાયવાલે ઓર માયાકપાયવાલે
 જો નૈરયિક ઓર દેવ હેં ડનકે દ્વિતોય દ્વંડક મેં ૬ ભંગ હોતે હેં । ક્યોં
 કિ માન ઓર માયાકપાયવાલે દેવોં ઓર નારકોં મેં માન ઓર માયાકે
 ઉદયવાલે દેવ નારક અત્પ હી હોતે હેં, ઇસ લિયે યહાં પર પૂર્વોક્ત ૬
 ભંગ કહે ગયે હેં । 'લોભકસાર્હિં જીવ-ઈન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો' લોભ
 કપાયવાલોં કે વદ્વત્ત્વવિષયક દ્વિતીય દ્વંડકમેં જીવપદ કો ઓર પૃથિ-
 વ્યાદિક એકેન્દ્રિયપદોં કો છોડકર ક્રોધકપાયવાલોં કી તરહ ત્રીન ભંગ

(માનકસાર્હ-માયાકસાર્હ જીવ ઈન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો) માનકપાયવાળાં,
 માયાકપાયવાળાં બહુત્વ વિષયક બીજા દ્વંડકમાં જીવપદને અને પૃથ્વી ાય
 આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય પદોને છોડીને પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. જીવપદમાં
 અને પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય પદોમાં ક્રોધકપાયવાળા જીવોના જેવોજ
 (સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ) આ એક ભંગ થાય છે, પરંતુ (નેરહ્યદેવેર્હિ છન્મંગા)
 માનકપાયવાળા અને માયાકપાયવાળા જે નારકો અને દેવો હોય છે તેમના બીજા
 દ્વંડકમાં છ ભંગ થાય છે. કારણ કે માન અને માયાકપાયવાળા દેવો અને
 નારકોમાં માન અને માયાના ઉદયવાળા દેવો અને નારકો ઓછાં હોય છે.

(લોભકસાર્હિં જીવ ઈન્દ્રિયવજ્જો તિયમંગો) લોભકપાયવાળાના બહુત્વ
 વિષયક બીજા દ્વંડકમાં જીવપદને અને પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય પદોને
 છોડીને ક્રોધકપાયવાળાના જેવાં જ પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. પરંતુ જીવ

एव भद्रः उक्तरीत्या । किन्तु 'नेरइएसु छम्भंगा' नैरयिकेण नैरयिकलोभकपायि बहुत्वदण्डके पूर्वोक्ताः पद् भद्राः चास्याः, लोभकपायिनैरयिकेषु लोभोदयवता-मल्पका उपर्युक्तपद्भद्रसंगमात्, उक्तम्—

“कोहे माणे माया, सोधव्या सुसगणेहिं छम्भंगा ।

माणे माया लोभे, नेरइएहिं पि छम्भंगा' ॥ १ ॥ इति ॥

“क्रोधे माने मायायां बोद्धव्याः सुसगणेषु पद् भद्राः ।

माने मायायां लोभे नैरयिकेणापि पद् भद्राः ॥ १ ॥ इति व्याख्या,

देवाः लोभमचुरा भवन्ति नैरयिकाश्च क्रोधमचुरा भवन्तीति । 'अकसाई-जीव-मणुएहिं तियभंगो' अकपायिसंघन्धिवहुत्वदण्डके जीव-मनुजेषु सिद्धेषु त्रिक भद्र पूर्वोक्तास्तयो भद्राः चतुष्वाः, ननु नैरयिकादिषु, तेषाम् अकपायित्वासंभवात्,

होते हैं । जीव और एकेन्द्रियों में एक ही भंग होता है । किन्तु 'नेर-इएसु छम्भंगो' लोभवाले नारक जीवों में—बहुत्वविषयक द्वितीयदण्डक में—पूर्वोक्त छह भंग होते हैं । क्योंकि लोभकपायवाले नारकों में लोभो-दयवाले नारक जीव अल्प होते हैं । इसलिये यहां छह भंग हो जाते हैं ।

क्रोध, मान, माया इनमें देवों के छह भंग होते हैं । तथा मान माया एवं लोभ में नारकों के छह भंग होते हैं । देवों में लोभ अधिक होता है और नारकों में क्रोध अधिक होता है । (अकसाई जीव मणुएहिं सिद्धेहिं तियभंगो) अकपायिसंघन्धी बहुत्वदण्डक में जीवपद में मनुष्य पद में, और सिद्ध पद में तीन भंग होते हैं । नैरयिक आदिपदों में नहीं क्योंकि इनमें अकपायित्व का संभव ही नहीं है । (ओहियणाणे,

અને એકેન્દ્રિયમાં એક જ ભંગ થાય છે (નેરइएसु छम्भंगो) લોભવાળા નારક જીવોમાં બહુત્વવિષયક બીજા દંડકમાં પૂર્વોક્ત છ ભંગ થાય છે, કારણ કે લોભકપાયવાળા નારકોમાં લોભના ઉદયવાળા નારક જીવો આછાં હોય છે તેથી ત્યાં છ ભંગ થાય છે. કહ્યું પણ છે—“કોહેમાણે” ઇત્યાદિ.

ક્રોધ, માન અને માયામાં દેવોના છ ભંગ થાય છે, તથા માન, માયા અને લોભમાં નારકોના છ ભંગ થાય છે. દેવોમાં લોભ અધિક હોય છે અને નારકોમાં ક્રોધ અધિક હોય છે.

(અકસાઈ જીવ મણુએહિં સિદ્ધેહિં તિયમંગો) અકપાય સંઘન્ધી બહુત્વ દંડકમાં જીવ પદમાં, મનુષ્ય પદમાં અને સિદ્ધ પદમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. નારક આદિમાં ત્રણ ભંગ થતા નથી, કારણ કે તેમનામાં કપાય રહિતતા સંભવિત નથી.

‘ઓદિયણાણે, આભિણિવોદિયણાણે, સુયણાણે જીવાદ્વિતિયમંગો’ ઔચિકજ્ઞાને, મત્યાદિભેદૈરવિનિવૃત્તજ્ઞાનમ્ ઔચિકજ્ઞાનમ્ તસ્મિન્, આભિણિવોચિકજ્ઞાને મતિજ્ઞાને શ્રુતજ્ઞાને ચ વદૃત્વવિષયકદ્વિતીય દળકમે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિરુભક્તઃ પૂર્વોક્તા-સ્વયોભક્તા વક્તવ્યાઃ, તત્ર સામાન્યજ્ઞાનાન્મહોચિકજ્ઞાનિ-મતિ-શ્રુતજ્ઞાનિના સર્વદા-સ્વસ્થિતત્ત્વેન સપ્રદેશત્વસંભવાત્ ‘સર્વે સપ્રદેશાઃ’ इति प्रथमो भङ्गः । एवं मिथ्या-જ્ઞાનાત્ મત્યાદિજ્ઞાનમાત્રમ્, મત્યજ્ઞાનાત્ મતિજ્ઞાનમ્, શ્રુતાજ્ઞાનાચ્ચ શ્રુતજ્ઞાનં પ્રતિષ્ઠમાનાનાં ચ એકાદીનાં સંભવાત્, ‘વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ’ इति द्वितीयो भङ्गः । तथा ‘वहवः सप्रदेशाश्च, वहवः अप्रदेशाश्च’ इति तृतीयो भङ्गो वेदितव्यः, किन्तु ‘विगल्लिदिग्धिं छन्मंगा’ विगल्लेन्द्रियेषु द्वित्रिचतुरिन्द्रियेषु આભિણિવોદિયણાણે, સુયણાણે જીવાદ્વિતિયમંગો) ઔચિકજ્ઞાન મેં મતિ આદિ ભેદ રહિત સામાન્યજ્ઞાન મેં, -આભિણિવોચિક જ્ઞાન મેં-મતિ જ્ઞાન મેં ઓર શ્રુતજ્ઞાનમેં, વદૃત્વ વિષયકદ્વિતીય દળકમે જીવાદિકપદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં । કયોં કિ સામાન્યજ્ઞાનચાલે તથા મતિશ્રુત જ્ઞાનચાલે જીવ સર્વદા પામે જાતે હેં, હસલિયે ડનમેં સપ્રદેશત્વ વન જાને કે કારણ “સર્વે સપ્રદેશાઃ” यह प्रथम भंग, तथा मिथ्याज्ञान से हट-कर मात्र मति आदि ज्ञान को पाने वाला तथा मति अज्ञान के अभाव से मतिज्ञान को प्राप्त करने वाला, श्रुत अज्ञान के अभाव से श्रुतज्ञान को प्राप्त करनेवाला कोई एकादि जीव होता है-इसलिये ‘वहवः सप्र-देशाश्च एकः अप्रदेशाश्च’ यह द्वितीय भंग, और (वहवः सप्रदेशाश्च, वहवः अप्रदेशाश्च) ऐसा तीसरा भंग घट जाता है । किन्तु “विगल्लि-दिग्धिं छन्मंगा” जो विकलेन्द्रिय जीव हैं उनमें तीन भंग न होकर छह

(ઓદિયણાણે, આભિણિવોદિયણાણે, સુયણાણે જીવાદ્વિતિયમંગો) ઔચિક જ્ઞાનમાં-મતિ આદિ લેદરહિત સામાન્ય જ્ઞાનમાં, આભિણિવોચિક જ્ઞાનમાં (મતિ જ્ઞાનમાં) અને શ્રુત જ્ઞાનમાં વદૃત્વ વિષયક બીજાં દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. કારણ કે સામાન્ય જ્ઞાનવાળા તથા મતિ અને શ્રુત જ્ઞાનવાળા જીવો સર્વદા મળી આવે છે, તે કારણે તેમનામાં સપ્ર-દેશત્વ સંભવી શકવાને કારણે (સર્વે સપ્રદેશાઃ) આ પ્રથમ ભંગ, તથા મિથ્યા-જ્ઞાનથી નિવૃત્ત થઈને માત્ર મતિજ્ઞાન આદિ પ્રાપ્ત કરનારો, તથા મતિ અજ્ઞા-નને અભાવે મતિ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરનારો, શ્રુત અજ્ઞાનને અભાવે શ્રુત જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરનારો કોઈ એકાદ જીવ તો હોય છે. તેથી (વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ, એક અપ્રદેશાશ્ચ) આ બીજો ભંગ પણ સંભવી શકે છે, અને (વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ, વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ) આ ત્રીજો ભંગ પણ બની શકે છે. પરંતુ (વિગલિ-દિગ્ધિં

સાસાદનસમ્યક્ત્વસંભવેન અભિનિચોધિક્ષાદિજ્ઞાનિનામ્ એકાદીનાં સંભવેન પૂર્વોક્તા-
 એવ પદ્ મહા વક્તવ્યાઃ, ૬૬ ન યથાયોગમ્ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદયઃ સિદ્ધાશ્ચ ન
 વક્તવ્યાઃ તેષાં તદસંભવાત્ । ‘ઓહિણાણે મળ-કેવલજ્ઞાણે જીવાદ્ઓ તિયમંગો’
 અવધિજ્ઞાને, મનઃ પર્યવજ્ઞાને કેવલજ્ઞાને વહુત્વચિપયકદ્વિતીય દળકે જીવાદિકઃ જીવાદિ-
 પદેષુ ચિકમદ્વઃ, પૂર્વોક્તાગ્રયો મહાઃ વક્તવ્યાઃ કિન્તુ અવધિજ્ઞાનૈકત્વ વહુત્વદળક-
 કયોઃ પૃથિવ્યાદ્યેકેન્દ્રિય-વિકલેન્દ્રિયાઃ સિદ્ધાશ્ચ ન વક્તવ્યાઃ, મનઃપર્યવદળક-
 કયોશ્ચ જીવાઃ, મનુષ્યાશ્ચ વક્તવ્યાઃ, નનુ નૈરચિક-પૃથિવ્યાદયઃ, તેષાં તદસંભવાત્ ।

સંગ હોતે હૈં । ક્યોં કિં ઇનમેં દો ઇન્દ્રિય, તેદ્વન્દ્રિય ઓર ચોદ્વન્દ્રિયરૂપ
 વિકલેન્દ્રિયોં મેં-સાસાદન સમ્યક્ત્વ હોને કે કારણે એકાદિ અભિનિચો-
 ધિક્ જ્ઞાનવાલે જીવ કી સંભવતા હોતી હૈ-ઇસસે યહાં પર પૂર્વોક્ત છહ
 ભંગ કહે ગયે હૈં । ઇસ દ્વાર મેં યથાયોગ એકેન્દ્રિયપદ્ પૃથિવ્યાદિક
 પાંચપદ તથા સિદ્ધ ઇનકો છોડ્ દેનાં ચાહિયે-ક્યોં કિં યે વિકલેન્દ્રિયોં
 મેં પરિગણિત નહીં હુએ હૈં । (ઓહિણાણે મળપજ્જવળાણે કેવલજ્ઞાણે
 જીવાદ્ઓ તિયમંગો) અવધિજ્ઞાન મેં, મનઃપર્યવજ્ઞાનમેં, એવં કેવલજ્ઞાન
 મેં વહુત્વચિપયક દ્વિતીય દળક મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હૈં । કિન્તુ
 અવધિજ્ઞાન કે એકત્વ ઓર વહુત્વદળક મેં પૃથિવ્યાદિક પાંચ પદ વિક-
 લેન્દ્રિય ઓર સિદ્ધ ઇન્હેં સંગ્રહીત નહીં કરનાં ચાહિયે તથા મનઃપર્યવજ્ઞાન
 કે દોનોં દળકોં મેં જીવ ઓર મનુષ્ય ઇનકા-હી ગ્રહણ કરનાં ચાહિયે
 નારક એવં પૃથિવ્યાદિકોં કા નહીં ક્યોં કિં ઇનમેં મનઃ પર્યવ જ્ઞાન નહીં

છમ્મંતા) વિકલેન્દ્રિય એવામાં છ ભાગ થાય છે. કારણ કે દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય
 અને ચતુરિન્દ્રિય ૩૫ વિકલેન્દ્રિય એવામાં સાસાદન સમ્યક્ત્વ હોવાને લીધે
 એકાદ અભિનિચોધિક્ષા જ્ઞાનવાળા એવની સંભવિતતા હોઈ શકે છે. તેથી
 અહીં પૂર્વોક્ત છ ભાગ કહ્યા છે. આ દ્વારમાં પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય
 પદોનો તથા સિદ્ધપદનો સમાવેશ કરવાનો નથી, કારણ કે વિકલેન્દ્રિયમાં
 તેઓની ગણતરી થતી નથી.

(ઓહિણાણે, મળપજ્જવળાણે, કેવલજ્ઞાણે જીવાદ્ઓ તિયમંગો) અવધિ
 જ્ઞાનમાં, મનઃપર્યવજ્ઞાનમાં અને કેવલજ્ઞાનમાં બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં
 એવાદિ પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભાગ થાય છે. પરંતુ અવધિજ્ઞાનના એકત્વ અને
 બહુત્વ દંડકમાં પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય પદોનો, વિકલેન્દ્રિયનો અને
 સિદ્ધપદનો સમાવેશ કરવો નહીં, તથા મનઃપર્યવજ્ઞાનના બન્ને દંડકોમાં એવ
 અને મનુષ્યને જ ગ્રહણ કરવા, નારક, પૃથ્વીકાય આદિ કોને ગ્રહણ કરવાના
 નથી, કારણ કે તેમનામાં મનઃપર્યવ જ્ઞાન હોતું નથી.

સપ્રદેશાથ ચતુઃ અપ્રદેશાથ ' રૂપિ ત્તોયો મજ્ઞો ચોરુપઃ । એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપૃ
તુ ' સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ' રૂપિ એક પદ મજ્ઞોઽપરોપઃ, કિન્તુ-પ્રિવ્યપિ ઉપ-
ર્યુક્તાજ્ઞાનેષુ સિદ્ધા ન વક્તવ્યાઃ, તેષાં તાદૃશજ્ઞાનાસંભવાન્ । ' વિભંગગણે જીવા-
રૂપો તિયમંગો ' વિમજ્જજ્ઞાને ચતુરારૂપકે જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ વિક્રમજ્ઞઃ
પૂર્વોક્તાલ્લપો મજ્ઞા વક્તવ્યાઃ, તથા ચ મત્વજ્ઞાનાદિવન્ વિમજ્જજ્ઞાનમાવના ભાવ-
નીયા, કેાલમત્ર એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિ-વિકલેન્દ્રિયાઃ, સિદ્ધાથ ન વક્તવ્યાઃ,
તેષાં વિમજ્જજ્ઞાનાસંભવાન્ । ' સજોગી જહા ઓહિમો ' સયોગી યથા ઔષિકસ્તથા
વક્તવ્યઃ, તથા ચ યથા ઔષિકો જોગાદિઃ મતિપાદિતસ્તથા જીવાદિદણ્ડક દ્વયે

સપ્રદેશાથ એકઃ અપ્રદેશાથ) એસા દ્વિતીય ભંગ ઓર "વહવઃ સપ્રદેશાથ,
વહવઃ અપ્રદેશાથ" એસા ત્રીસરા ભંગ પન જાતા હૈ । ઇસ દ્વારમેં એકેન્દ્રિય
પૃથિવ્યાદિકૌ છોડને કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિં ઇન એકેન્દ્રિયોમેં ત્રીન ભંગ
નહીં હોતે હૈ કિન્તુ "સપ્રદેશા અપ્રદેશાથ" એસા એક હી ભંગ હોતા હૈ ।
યહાં સિદ્ધપદકા પ્રયોગ નહીં કરના ચાહિયે-ક્યોંકિ ઇનમેં મતિ અજ્ઞાન
કી પ્રાપ્તિ અસંભવ હૈ । (વિભંગગણે જીવારૂપો તિયમંગા) વિભંગજ્ઞાનમેં
ઘટુત્વ વિષયક દ્વિતીય દણ્ડક મેં જીવાદિકપદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ
હોતે હૈં । મતિ અજ્ઞાન આદિ કી તરહ હી યહાં ત્રીન ભંગોં કે વનને કી
ભાવના જાનની ચાહિયે; ઇસ દ્વાર મેં એકેન્દ્રિય પૃથિવી આદિ પાંચ પદ,
વિકલેન્દ્રિયપદ, ઓર સિદ્ધપદ ઇનકા પ્રયોગ નહીં કરના ચાહિયે-ક્યોં
કિ ઇન સવ મેં વિભંગજ્ઞાન નહીં હોતા હૈ । (સજોગી જહા ઓહિમો)

ભંગ પણ બની શકે છે. અને (વહવઃ સપ્રદેશાથ વહવઃ અપ્રદેશાથ) આ
ત્રીજો ભંગ બની જાય છે. આ દ્વારમાં પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય જીવોને
શક્ય નહીં કરવાનું કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિયોમાં ત્રણ ભંગ થતા નથી પણ
(સપ્રદેશા અપ્રદેશાથ) આ એકજ ભંગ થાય છે. વળી આ દ્વારમાં સિદ્ધ-
પદનો પણ પ્રયોગ કરવો જોઈએ નહીં કારણ કે તેમને મતિ અજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ
સંભવી શકતી નથી । (વિભંગગણે જીવારૂપો તિયમંગા) વિભંગ જ્ઞાન સંભધી
બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય તે
(વિપરીત જ્ઞાનને વિભંગ જ્ઞાન કહે છે) મતિ અજ્ઞાન આદિના ત્રણ ભંગ થવા
વિષે જે સ્પષ્ટીકરણ ઉપર ક્યું છે, તે સ્પષ્ટીકરણ વિભંગ જ્ઞાનના ત્રણ ભંગ
માટે પણ સમજાવું. આ દ્વારમાં પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય પદોનો,
વિકલેન્દ્રિય પદનો અને સિદ્ધ પદનો પ્રયોગ કરવો જોઈએ નહીં કારણ કે તેમ-
નામાં વિભંગ જ્ઞાન હોતું નથી.

અપિ સયોગી વક્તવ્યઃ, તદભિલાષધૈરુત્વેડયમ્-‘સયોગી જીવો નિયમાત્ સપ્રદેશઃ, નૈરયિકાન્તુ સયોગી સપ્રદેશઃ, અપ્રદેશો વા’ । વહુત્વદણ્ડકે ‘વહવો જીવાઃ સયોગિનઃ સપ્રદેશા એવ, નૈરયિકાદયસ્તુ સયોગિનઃ ‘સર્વે સપ્રદેશાઃ ૧ વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ ૨ ’ ‘વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ, વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ ૩ ’ ઇતિ-

જિસ પ્રકાર સે ઔચિક જીવાદિક પ્રતિપાદિત હુવ હૈં ડસી પ્રકાર સે જીવાદિક કે દોનોં દણ્ડકોં મેં ઘી સયોગી પ્રતિપાદિત કરલેના ચાહિયે इनके एकत्वविषयक दण्डक में अभिलाष का आकार इस तरह से है- ‘‘सजोगी जीवो नियमात् सप्रदेशः, नैरयिकादिस्तु सयोगी सप्रदेशः, अप्रदेशो वा’’ सयोगी जीव नियम से सप्रदेश है, परन्तु जो सयोगी नैरयिक आदि जीव है वह सप्रदेश भी है और अप्रदेश भी है । वहु-त्वविषयक दण्डकमें (वहवो जीवाः सयोगिनः सप्रदेशा एव, नैरयिका-दयस्तु सयोगिनः) ‘‘सर्वे सप्रदेशाः, वहवः सप्रदेशाश्च एकः अप्रदेशश्च, वहवः सप्रदेशाश्च वहवःअप्रदेशाश्च’’ ऐसा कथन जानना चाहिये कि अनेक सयोगी जीव सप्रदेश ही होते हैं-परन्तु जो सयोगी नैरयिक आदि जीव हैं वे तीनों भंगवाले होते हैं-प्रथम भंग में सब सयोगी नारक आदि जीव सप्रदेश होते हैं । द्वितीयभंग में कितनेक सयोगी नारक आदि जीव सप्रदेश होते हैं और कोई एक सयोगी नारक आदि जीव अप्रदेश भी होता है । तृतीयभंग में सब ही पूर्वोत्पन्न सयोगी

(સજોગી જહા બોદિઓ) જે રીતે ઔચિક (સામાન્ય) જીવાદિકનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે એજ રીતે જીવાદિકના બનને દંડકોમાં પણ સયોગીનું પ્રતિપાદન કરવું જોઈએ. તેમના એકત્વ વિષયક દંડકમાં આ પ્રમાણે અભિલાષ બને છે—

(સજોગી જીવો નિયમાત્ સપ્રદેશઃ, નૈરયિકાદિસ્તુ સયોગી સપ્રદેશઃ અપ્રદેશો વા) સયોગી જીવ નિયમથી જ સપ્રદેશ છે, પરંતુ સયોગી નારકાદિ જીવ સપ્રદેશ પણ હોય અને અપ્રદેશ પણ હોય છે ” બહુત્વ વિષયક દંડકમાં (વહવો જીવાઃ સયોગિનઃ એવ, નૈરયિકાદયસ્તુ સયોગિનઃ) (સર્વે સપ્રદેશાઃ, વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ એકઃ અપ્રદેશાશ્ચ, વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ) એવું કથન સમજવું કે અનેક સયોગી જીવ સપ્રદેશ જ હોય છે, પરંતુ જે સયોગી નારક આદિ જીવો છે તેઓ ત્રણ ભંગવાળા હોય છે. પહેલા ભંગમાં સમસ્ત સયોગી નારક આદિ જીવો સપ્રદેશ હોય છે. બીજા ભંગમાં કેટલાક સયોગી નારક આદિ જીવો સપ્રદેશ હોય છે અને કેટલાક સયોગી નારક આદિ જીવ અપ્રદેશ પણ હોય છે ત્રીજા ભંગમાં સમસ્ત પૂર્વોત્પન્ન નારક આદિ જીવો સપ્રદેશ

રીત્યા મદ્ગત્રયવન્તઃ । એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદયઃ સયોગિનઃ કેવલં 'ચત્વઃ સપ્રદેશાઃ
 ચત્વઃ અપ્રદેશાઃ' इत्येकमद्वयत्वं एव बोध्याः, किन्तु प्र मिद्धो न वक्तव्यः, तस्य
 सयोगित्वाभावात् । 'मणजोगी वयजोगी कायजोगी जीवाइओ तियभंगो'
 मनोयोगिनि योगत्रयवति संज्ञिनि, वनोयोगिनि एकेन्द्रिपर्यज, काययोगिनि सर्व-
 स्मिन्नपि एकेन्द्रियादी जीवादिकः जीवादिपदेषु त्रिकमद्वः, मद्गत्रयं वाच्यम्, तथा-
 च मनोयोगादीनां सदाऽऽस्थितत्वे सप्रदेशा इति पूर्वोक्तः प्रथमो मद्गः, अमनोयो-
 गित्वादिपरित्यागाच्च मनोयोगित्वादिनोत्पद्यमानानाम् एकादीनां संभवेन अप्रदे-
 नारक आदि जीव सप्रदेश होते हैं और कितनेक उत्पद्यमान सयोगी
 नारक आदि जीव अप्रदेश भी होते हैं । परन्तु जो एकेन्द्रियपृथिवी
 आदिक सयोगी जीव हैं वे केवल (चतुः सप्रदेशाश्च चतुः अप्रदेशाश्च)
 ऐसे एक ही भंगवाले होते हैं-तीन भंगवाले नहीं होते हैं । इस द्वार
 में सिद्ध पद का उच्चारण नहीं करना चाहिये-क्यों कि वे सिद्ध जीव
 योगातीत होते हैं । (मणजोगि, वयजोगि, कायजोगि, जीवाइओ तिय-
 भंगो) मनोयोगवाले अर्थात् तीनों योगवाले संज्ञी जीवोंमें, वचनयोग-
 वाले अर्थात् एकेन्द्रिय जीवों को छोड़कर बाकी के जीवोंमें और काय-
 योगवाले अर्थात् समस्त एकेन्द्रियादिक जीवोंमें, तीनभंग होते हैं ये
 मनोयोगी आदि जीव सदा अवस्थित रहते हैं इस कारण तो इनमें
 (सर्वे सप्रदेशाः) ऐसा प्रथम भंग बन जाता है तथा अमनोयोगी आदि
 के परित्याग से जब जीव मनोयोगी आदिरूप से उत्पद्यमान होते हैं
 तब ऐसा आदेशरूप एकादि जीव मिल जाता है-इस कारण यहां द्वितीय

હોય છે અને કેટલાક ઉત્પદ્યમાન સયોગી નારક આદિ જીવો અપ્રદેશ પણ
 હોય છે, પરન્તુ પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય સયોગી જીવો (ચત્વઃ સપ્રદેશાઃ
 ચત્વઃ અપ્રદેશાઃ) આ એક જ ભંગવાળા હોય છે. તેઓ ત્રણ ભંગવાળા
 હોતા નથી. વળી આ દ્વારમાં સિદ્ધપદનો પણ પ્રયોગ કરવો જોઈએ નહીં,
 કારણ કે સિદ્ધ જીવમાં સયોગીતા સંભવી શકતી નથી.

(મણજોગિ, વયજોગિ, કાયજોગિ જીવાઈઓ તિયભંગો) મનોયોગવાળા
 એટલે કે ત્રણે યોગવાળા સંજ્ઞી જીવોમાં, વચન યોગવાળા એટલે કે એકેન્દ્રિય
 સિવાયના જીવોમાં, અને કષાયયોગવાળા જીવોમાં એટલે કે સમસ્ત એકેન્દ્રિય
 આદિક જીવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. આ મનોયોગી આદિ જીવોનું અવસ્થાન
 (અસ્તિત્વ) સદા રહે છે તે કારણે તેમને અનુલક્ષીને (સર્વે સપ્રદેશાઃ) આ
 પ્રથમ ભંગ બનતી જાય છે. તથા અમનોયોગી આદિ અવસ્થાનો પરિત્યાગ
 કરીને બ્યારે જીવો, મનોયોગી આદિ રૂપે ઉત્પદ્યમાન થાય એવી છે ત્યારે

શત્વલાભે ' સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ' ' સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ ' इत्यन्यभङ्गकद्वयम् ।
 अत्र विशेषतामाह—' नवरं-कायजोगी एगिंदिया, तेसु अभंगयं ' नवरम्-काय-
 योगिनी वे एकेन्द्रियाः पृथिव्यादयो जीवास्तेषु अभङ्गकम् बहुनां भङ्गानाम् अभावो
 वक्तव्यः, किन्तु ' सप्रदेषाथ अप्रदेषाथ ' इत्येक एव भङ्गो बोध्यः । एतेषु च
 मनोवचःकायरूपयोगत्रयदण्डकेषु जीवादिवदानी यथायोगं वक्तव्यानि, किन्तु
 सिद्धपदं न वक्तव्यम्, तस्य मनोवचःकाययोगासंभवात् । ' अजोगी जहा
 अलेस्सा ' अयोगिनः यथा अलेस्याः उक्तास्तथा ज्ञातव्याः, तथा च अयोगिनां
 दण्डकद्वयेऽपि अलेश्यसमवक्तव्यतया अलेश्येषु बहुत्वदण्डके जीव-सिद्धपदयोः
 भङ्गत्रयस्य, मनुष्यपदेषु च भङ्गपट्टकस्योक्तत्वेन अत्रापि बहुत्वदण्डके अयोगिषु

भंग घन जाता है और " सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च " ऐसा तृतीयभंग
 भी घन जाता है (नवरं कायजोगी एगिंदिया तेसु अभंगयं) यहाँ
 विशेषता इस प्रकार से है कि जो जीव काययोगवाले एकेन्द्रिय हैं उन
 में तीन भंग नहीं हैं, किन्तु (सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च) ऐसा एकहीभंग
 है । इन मन वचन और कायरूप योगत्रयके दण्डकों में यथायोग जीवा-
 दिक पदों का ही कथन करना चाहिये । सिद्धपद का कथन नहीं करना
 चाहिये । क्यों कि सिद्धों में कोई भी योग नहीं होता है । (अजोगी
 जहा अलेस्सा) लेइया रहित जीवों के समान अयोगिजीवों की वक्त-
 व्यता जाननी चाहिये । कहनेका आशय यह है कि अयोगियों के दोनों
 दण्डकों में लेइयारहित जीवों के जैसी वक्तव्यता कही गई होने के का-
 रण लेइयारहित जीवों में बहुत्वविषयक द्वितीय दण्डक में जीव और

અવસ્થાવાળો એકાદિ જીવ પણ મળી આવે છે, તેથી (વહ્વઃ સપ્રદેશાશ્ચ
 एकः अप्रदेशाश्च) આ બીજો ભંગ પણ બની શકે છે, અને (સપ્રદેશાશ્ચ
 अप्रदेशाश्च) આ ત્રીજો ભંગ પણ બની શકે છે (નવરં કાયજોગી એગિંદિયા
 તેસુ અભંગયં) અહીં વિશેષતા એ છે કે કાયયોગવાળા એકેન્દ્રિય જીવોમાં
 ત્રણ ભંગ થતા નથી, પરંતુ (સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ) આ એક જ ભંગ
 થાય છે. આ મન, વચન અને કાયયોગના દંડકોમાં યથાયોગ્ય જીવાદિક
 પદોનો જ પ્રયોગ થવો જોઈએ. અહીં સિદ્ધપદનો પ્રયોગ કરવો જોઈએ નહીં
 કારણ કે સિદ્ધોમાં કોઈ પણ યોગનો અભાવ હોય છે.

(અજોગી જહા અલેસ્સા) લેશ્ય રહિત જીવોના જેવું જ કથન અયોગી
 જીવોના વિષયમાં સમજવું. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—લેશ્યારહિત
 જીવોના બહુત્વ વિષયક દંડકમાં જીવ અને સિદ્ધપદમાં ત્રણ ભંગ, મનુષ્યોમાં

જીવ-સિદ્ધયોર્ભક્ત્રયમ્, મનુષ્યેષુ ચ પદ્મ-મહાઃ વક્ત્ર્યા સ્વાગ્રયઃ । તે ચ મહાઃ
 પૂર્વોક્તા એવ વિશેષાઃ । ' સાગારોવત્ત-અનાગારોવત્તેહિ જીવ-અગ્નિદિયવજ્જો-
 તિયમંગો ' સાકારોપયોગેષુ અનાકારોપયોગેષુ નૈરપિકાદિષુ જીવે-કેન્દ્રિયવર્જઃ
 વિક્રમહઃ, જીવપદ્મ, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદ્માનિ ચ વર્જયિત્વા વદુત્તરદૃષ્ટકે
 પૂર્વોક્તાશ્ચો મહા વક્ત્ર્યાઃ । જીવપદ્મ, એકેન્દ્રિયપદ્મેષુ ન ' સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદે-
 શાશ્ચ ' इत्येक एव भक्तो वाच्यः, तत्र च साकारोपयोगान् अनाकारोपयोगगमने, अना-
 कारोपयोगाद् वा साकारोपयोगगमने प्रथमसमये अप्रदेशस्य, द्रव्यादिसमये तु
 सप्रदेशत्वं बोध्यम् । सिद्धान्तानां तु एकसमयोपयोगित्वेऽपि साकारस्य अनाकारस्य च
 उपयोगद्वयत्वात्कृत् मात्स्या सप्रदेशत्वं, सकृत्मात्स्या चाप्रदेशत्वं विज्ञेयम्,
 सिद्धपદમે ત્રીન ભંગ, તથા મનુષ્યો-અયોર્ગી મનુષ્યો મેં છદ્દ ભંગ હોતે હેં
 એસા સમજના ચાહિયે । યે છદ્દ ભંગ પહિલે કદ્દ દિયે ગયે હેં । (સાગારોવત્ત-
 અનાગારોવત્તેહિ જીવઅગ્નિદિયવજ્જો તિયમંગો) સાકાર ઉપયોગવાલે
 અનાકાર ઉપયોગવાલે નૈરપિક આદિ જીવોં મેં જીવપદ્મ ઓર એકેન્દ્રિય
 પૃથિવ્યાદિક પદોં કો છોડકર વદુત્તર વિપયક દ્વિતીય દૃષ્ટક મેં પૂર્વોક્તિ
 ત્રીન ભંગ હોતે હેં । જીવપદ્મ મેં ઓર એકેન્દ્રિય પદોં મેં (સપ્રદેશાશ્ચ
 અપ્રદેશાશ્ચ) એસા એક હી ભંગ હોતા હે । સાકાર ઉપયોગ સે અનાકાર
 ઉપયોગ મેં આને મેં ઓર અનાકાર ઉપયોગ સે સાકાર ઉપયોગ મેં આને
 મેં પ્રથમ સમય મેં અપ્રદેશતા ઓર દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં સપ્રદેશતા
 જાનના ચાહિયે । સિદ્ધોં કે યદ્યપિ એક સમયોપયોગિતા હે, તો ભી
 સાકાર ઉપયોગ ઓર અનાકાર ઉપયોગ કી વાર વાર પ્રાપ્તિ હોને કે

છ ભંગ કહ્યા છે, એ જ પ્રમાણે અયોગીના વિષયમાં પણ અહીં સમજવું
 તે છ ભંગ આગળ કહેવામાં આવ્યા છે.

(સાગારોવત્ત અનાગારોવત્તેહિ જીવ અગ્નિદિયવજ્જો તિયમંગો) એવપદ્મ
 અને એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ પદો સિવાયના સાકાર ઉપયોગવાળા
 અને અનાકાર ઉપયોગવાળા નારક આદિ એવામાં બહુત્વ વિષયક બીજા
 દૃષ્ટકમાં પૂર્વોક્તિ ત્રણ ભંગ થાય છે. એવપદ્મમાં અને એકેન્દ્રિય પદોમાં
 (સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ) આ એક જ ભંગ થાય છે. સાકાર ઉપયોગમાંથી
 અનાકાર ઉપયોગમાં અને અનાકાર ઉપયોગમાંથી સાકાર ઉપયોગમાં આવવાના
 પ્રથમ સમયે અપ્રદેશતા અને દ્વિતીય આદિ સમયોમાં સપ્રદેશતા સમજવી.
 સિદ્ધોમાં જો કે એક સમયોપયોગિતા છે, છતાં પણ સાકાર ઉપયોગ અને
 અનાકાર ઉપયોગની વારંવાર પ્રાપ્તિ થવાને કારણે તેમનામાં સપ્રદેશતા અને
 તેમની એક વારંવાર પ્રાપ્તિ થવાને કારણે અપ્રદેશતા છે, એમ સમજવું. આ

તથા ચ વહુત્વદ્વંડકે અસકૃત્માત્ત્વનાકારોપયોગાન્ વહુન્ જીવાનાશ્રિત્ય ' સપ્ર-
દેશાઃ ' इति प्रथमो भङ्गः, तानेव असकृत्माप्तसाकारोपयोगान् वहून् जीवान्,
सकृत्माप्तसाकारोपयोगं च एकमाश्रित्य ' वहवः सप्रदेशाश्च एकः अप्रदेशश्च ' इति द्वितीयो भङ्गः, तानेव सकृत्माप्तसाकारोपयोगान् वहून् आश्रित्य ' वहवः सप्र-
देशाश्च वहवः अप्रदेशाश्च ' इति तृतीयो भङ्गः । अनाकारोपयोगे तु असकृदवाप्ता-
नाकारोपयोगान् वहून् आश्रित्य प्रथमो भङ्गः, तान् असकृदवाप्तानाकारोपयोगान्
वहून्, सकृदवाप्तानाकारोपयोगं चैकमाश्रित्य द्वितीयो भङ्गः, उभयेषामपि असकृ-

कारण उनमें सप्रदेशता और उनकी एक बार बार प्राप्ति होने के कारण
उनमें अप्रदेशता है ऐसा जानना चाहिये । तथा च-वहुत्वविषयक
द्वितीय द्वाण्डकमें बारंबार प्राप्त साकार उपयोगवाले अनेक सिद्ध जीवोंको
आश्रित करके (सप्रदेशाः) ऐसा प्रथम भंग, तथा इन्हीं बारंबार प्राप्त
साकार उपयोगवाले एक सिद्ध जीव को आश्रित करके " वहवः सप्र-
देशाः, एकः अप्रदेशश्च) ऐसा द्वितीय भंग, तथा एक बार प्राप्त साकार
उपयोगवाले अनेक जीवोंको आश्रित करके (वहवः सप्रदेशाश्च, वहवः
अप्रदेशाश्च) ऐसा तृतीय भंग जानना चाहिये । अनाकार उपयोग द्वारमें
भी तीन भंग इसी प्रकार से होते हैं-अर्थात्-बारंबार प्राप्त अनाकार-
उपयोगवाले अनेक जीवोंको आश्रित करके अनाकार उपयोग में प्रथम-
भंग, तथा इन्हीं बारंबार प्राप्त अनाकार उपयोगवाले अनेक जीवों को
आश्रित करके और एक बार प्राप्त अनाकार उपयोगवाले एक जीव को

આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે બહુત્વ વિષયક બીજા દ્વંડકમાં વારંવાર પ્રાપ્ત
એવા સાકાર ઉપયોગવાળા અનેક સિદ્ધ જીવોને અનુલક્ષીને (સપ્રદેશાઃ) એવો
પ્રથમ ભંગ બને છે. તથા જેમને વારંવાર સાકાર ઉપયોગની પ્રાપ્તિ થઈ છે
એવાં અનેક સિદ્ધ જીવોને તથા જેને એક જ વાર સાકાર ઉપયોગની પ્રાપ્તિ
થઈ છે એવા એક સિદ્ધ જીવને અનુલક્ષીને બીજો ભંગ આ પ્રમાણે બને છે.
(વહવઃ સપ્રદેશાઃ, એકઃ અપ્રદેશશ્ચ) તથા જેમને એક વાર સાકાર ઉપયોગની
પ્રાપ્તિ થઈ છે એવા અનેક સાકાર ઉપયોગવાળા જીવોને અનુલક્ષીને ત્રીજો
ભંગ આ પ્રમાણે સમજવો- (વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ) અનાકાર
ઉપયોગ દ્વારમાં પણ ત્રણ ભંગ એજ પ્રમાણે થાય છે. એટલે કે વારંવાર
પ્રાપ્ત અનાકાર ઉપયોગવાળા અનેક જીવોને અનુલક્ષીને અનાકાર ઉપયોગમાં
પ્રથમ ભંગ, તથા એજ વારંવાર પ્રાપ્ત અનાકાર ઉપયોગવાળા અનેક જીવોને
અને એક વાર પ્રાપ્ત અનાકાર ઉપયોગવાળા એક જીવને અનુલક્ષીને બીજો

જીવ-સિદ્ધયોર્મદ્વયમ્, મનુષ્યેષુ ચ પૃથ્વ્યભક્ત્યા ચક્તવ્યા હયાગ્રયઃ । તે ચ મદ્ધાઃ
 પૂર્વોક્તા एव विज्ञेयाः । 'सागारोवउत्त-अणागारोवउत्तेहि जीव-एगिदियवज्जो-
 तियभंगो' साकारोपयोगेषु अनाकारोपयोगेषु नैरयिकादिषु जीव-केन्द्रियवर्जः
 प्रिकभङ्गः, जीवपदम्, एकेन्द्रियपृथिव्यादिपदानि च पर्जयित्वा बहुतादण्डके
 पूर्वोक्ताद्ययो भङ्गा चक्तव्याः । जीवपदे, एकेन्द्रियपदेण 'सप्रदेशाश्च अपदे-
 शश्च' इत्येक एव भङ्गो वाच्यः, तत्र च साकारोपयोगान् अनाकारोपयोगगमने, अना-
 कारोपयोगाद् वा साकारोपयोगगमने प्रथमसमये अपदेशस्यम्, द्रव्यादिसमये तु
 सप्रदेशत्वं बोध्यम् । सिद्धानां तु एकसमयोपयोगित्वेऽपि साकारस्य अनाकारस्य च
 उपयोगद्वयस्यासकृन् माप्या सप्रदेशत्वं, सकृत्माप्या चापदेशत्वं विज्ञेयम्,
 सिद्धपदमेतीन भंग, तथा मनुष्यों-अयोर्गी मनुष्यों में छह भंग होते हैं
 ऐसा समझना चाहिये । ये छह भंग पहिले कह दिये गये हैं । (सागारोवउत्त-
 अणागारोवउत्तेहि जीवएगिदियवज्जो तियभंगो) साकार उपयोगवाले
 अनाकार उपयोगवाले नैरयिक आदि जीवों में जीवपद और एकेन्द्रिय
 पृथिव्यादिक पदों को छोडकर बहुत्व विषयक द्वितीय दण्डक में पूर्वोक्त
 तीन भंग होते हैं । जीवपद में और एकेन्द्रिय पदों में (सप्रदेशाश्च
 अपदेशाश्च) ऐसा एक ही भंग होता है । साकार उपयोग से अनाकार
 उपयोग में आने में और अनाकार उपयोग से साकार उपयोग में आने
 में प्रथम समय में अपदेशतो और द्वितीयादि समयों में सप्रदेशता
 जानना चाहिये । सिद्धों के यद्यपि एक समयोपयोगिता है, तो भी
 साकार उपयोग और अनाकार उपयोग की बार बार प्राप्ति होने के

છ ભંગ કહ્યા છે, એ જ પ્રમાણે અયોગીના વિષયમાં પણ અહીં સમજવું
 તે છ ભંગ આગળ કહેવામાં આવ્યા છે.

(સાગારોવઉત્ત ળનાગારોવઉત્તહિં જીવ ઇગિંદિયવજ્જો તિયભંગો) જીવપદ
 અને એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ પદો સિવાયના સાકાર ઉપયોગવાળા
 અને અનાકાર ઉપયોગવાળા નારક આદિ જીવોમાં બહુત્વ વિષયક બીજા
 દંડકમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. જીવપદમાં અને એકેન્દ્રિય પદોમાં
 (સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ) આ એક જ ભંગ થાય છે. સાકાર ઉપયોગમાંથી
 અનાકાર ઉપયોગમાં અને અનાકાર ઉપયોગમાંથી સાકાર ઉપયોગમાં આવવાના
 પ્રથમ સમયે અપ્રદેશતા અને દ્વિતીય આદિ સમયોમાં સપ્રદેશતા સમજવી.
 સિદ્ધોમાં બે કે એક સમયોપયોગિતા છે, છતાં પણ સાકાર ઉપયોગ અને
 અનાકાર ઉપયોગની વારંવાર પ્રાપ્તિ થવાને કારણે તેમનામાં સપ્રદેશતા અને
 તેમની એક વારંવાર પ્રાપ્તિ થવાને કારણે અપ્રદેશતા છે, એમ સમજવું. આ

સ્ત્રીવેદક-પુરુષવેદક-નપુંસકવેદકેષુ જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિકમજ્ઞઃ પૂર્વાક્તા-
સ્ત્રયોમજ્ઞાઃ વિજ્ઞેયાઃ । અગ્રવેદાત્ વેદાન્તરસંક્રમણે પ્રથમસમયે અપ્રદેશત્વમ્, દ્વયા-
દિસમયેષુ ચ સપ્રદેશત્વં વિજ્ઞાપ્ય મજ્ઞકત્રયં વિજ્ઞેયમ્ । કિન્ત્વત્ર ‘નવરં-નપુંસગવેયે
અનિદિયેષુ અભંગયં’ નવરં વિશેષસ્તુ નપુંસકવેદે એકેન્દ્રિયેષુ અમજ્ઞકમ્ વહૂનાં
મજ્ઞાનામ્ પ્રમાણઃ, અપિતુ એક એવ મજ્ઞઃ, તથા ચ નપુંસકવેદકદણ્ડકે પૃથિવ્યા-
ધેકેન્દ્રિયેષુ ‘સાદેશાથ અપ્રદેશાથ’ इत्येक एव मज्ज्ञो वाच्यः पूर्वाक्तरीत्या ।
સ્ત્રીવેદકદણ્ડક-પુરુષવેદકદણ્ડકેષુ દેવ-પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્-મનુષ્ય-પદાન્યેવ વાચ્યાનિ,
નપુંસકવેદકદણ્ડકયોસ્તુ દેવવર્જાનિ પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્-મનુષ્યપદાનિ વક્તવ્યાનિ,
સિદ્ધપદં ચ ત્રિણપિ વેદકેષુ ન વક્તવ્યમ્ તત્ર વેદાભાવાત્ । ‘અવેયગા જહા અક-

વેદમેં, પુરુષવેદમેં ઓર નપુંસકવેદ દ્વાર મેં જીવાદિક પદોમેં ત્રીન ભંગ
હેં । જય એક વેદસે દુસરે વેદમેં સંક્રમણ હોતા હેં તય પ્રથમ સમય મેં
અપ્રદેશત્વ ઓર દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં સપ્રદેશત્વ સમજ્ઞકર પહિલે કી
તરહ યહાં ત્રીન ભંગ સમજ્ઞના ચાહિયે । નપુંસક વેદકે દોનોં દણ્ડકોં મેં
તો એકેન્દ્રિયોં મેં એકહી ભંગ હોતા હેં ‘અભંગયં’ પદ યહ સમજ્ઞતા હેં કિ
યહાં એકેન્દ્રિયોં મેં અનેક ભંગોં કા હી અભાવ હેં-એક મજ્ઞ જો (સપ્ર-
દેશાથ અપ્રદેશાથ) યહ હેં ઇસ્કા અભાવ નહીં હેં । અતઃ યહાં પર એક
હી ભંગ હેં । સ્ત્રીવેદ દણ્ડકોં મેં પુરુષવેદ દણ્ડકોં મેં દેવ, પંચેન્દ્રિય તિર્યચ
ઓર મનુષ્ય ઇન પદોં કા હી પ્રયોગ કરના ચાહિયે, તથા નપુંસક વેદકે
દોનોં દણ્ડકોં મેં દેવ પદકો છોડકર પંચેન્દ્રિય તિર્યચ ઓર મનુષ્ય ઇન
પદોં કા પ્રયોગ કરના ચાહિયે । સિદ્ધ પદકા પ્રયોગ ત્રીનોં વેદોં મેં સે
કિસી બી વેદકે દણ્ડક મેં નહીં કરના ચાહિયે-કયોં કિ ચે વેદરહિત

પુરુષવેદમાં અને નપુંસક-વેદદ્વારમાં જીવાદિક પદોમાં ત્રણ ભંગ છે. બ્યારે
એક વેદમાંથી બીજા વેદમાં સંક્રમણ થાય છે, ત્યારે પ્રથમ સમયે અપ્રદેશત્વ
અને દ્વિતીય આદિ સમયોમાં સપ્રદેશત્વ સમજીને આગળ બતાવ્યા પ્રમાણેના
ત્રણ ભંગ સમજવા. નપુંસક વેદકના બંને દંડકોમાં તો એકેન્દ્રિયમાં એકજ
ભંગ થાય છે. (અભંગયં) પદ એ બતાવે છે કે અહીં એકેન્દ્રિયોમાં અનેક
ભંગો થતા નથી, પણ (સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ) આ એકજ ભંગ થાય છે.
સ્ત્રીવેદ દંડકોમાં, અને પુરુષવેદ દંડકોમાં દેવ, પંચેન્દ્રિય તિર્યચ અને મનુષ્યો
આ ત્રણ પદોનો જ પ્રયોગ કરવો. નપુંસક વેદના બંને દંડકોમાં દેવપદને
જતું કરીને પંચેન્દ્રિય તિર્યચ અને મનુષ્યોનો જ પ્રયોગ કરવો. સિદ્ધપદનો
પ્રયોગ ત્રણ વેદોમાંથી એક પણ વેદના દંડકમાં કરવા બોધ્યો નહીં, કારણ

સ્ત્રીવેદક-પુરુષવેદક-નપુંસકવેદકેષુ જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિકભક્તઃ પૂર્વોક્તા-
સ્ત્રયોભક્તાઃ વિજ્ઞેયાઃ । અત્રવેદાત્ વેદાન્તરસંક્રમણે પ્રથમસમયે અપ્રદેશત્વમ્, દ્વિત્યા-
દિસમયેષુ ચ સપ્રદેશત્વં વિજ્ઞાપ્ય ભક્તકત્રયં વિજ્ઞેયમ્ । કિન્ત્વત્ર ‘નવરં-નપુંસગવેયે
એનિદિયેસુ અભંગયં’ નવરં વિશેષસ્તુ નપુંસકવેદે એકેન્દ્રિયેષુ અભક્તકમ્ વહૂનાં
ભક્તાનામ્ અભાવઃ, અપિતુ એક એવં ભક્તઃ, તથા ચ નપુંસકવેદકદ્વંડકે પૃથિવ્યા-
દ્યેકેન્દ્રિયેષુ ‘સાદેશાથ અપ્રદેશાથ’ इत्येक एव भक्तो वाच्यः पूर्वोक्तरीत्या ।
સ્ત્રીવેદકદ્વંડક-પુરુષવેદકદ્વંડકેષુ દેવ-પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્-મનુષ્ય-પદાન્યેવ વાચ્યાનિ,
નપુંસકવેદકદ્વંડકયોસ્તુ દેવવર્જાનિ પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્-મનુષ્યપદાનિ વક્તવ્યાનિ,
સિદ્ધપદં ચ ત્રિષ્વપિ વેદકેષુ ન વક્તવ્યમ્ તત્ર વેદાભાવાત્ । ‘અવેયગા જહા અક-

વેદમેં, પુરુષવેદમેં ઓર નપુંસકવેદ દ્વાર મેં જીવાદિક પદોમેં ત્રીન ભંગ
હેં । જય એક વેદસે દુસરે વેદમેં સંક્રમણ હોતા હૈ તય પ્રથમ સમય મેં
અપ્રદેશત્વ ઓર દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં સપ્રદેશત્વ સમજકર પહિલે કી
તરહ યહાં ત્રીન ભંગ સમજના ચાહિયે । નપુંસક વેદકે દોનોં દ્વંડકોં મેં
તો એકેન્દ્રિયોં મેં એકહી ભંગ હોતા હૈ ‘અભંગયં’ પદ યહ સમજતા હૈ કિ
યહાં એકેન્દ્રિયોં મેં અનેક ભંગોં કા હી અભાવ હૈ-એક ભક્ત જો (સપ્ર-
દેશાથ અપ્રદેશાથ) યહ હૈ હસકા અભાવ નહીં હૈ । અતઃ યહાં પર એક
હી ભંગ હૈ । સ્ત્રીવેદ દ્વંડકોં મેં પુરુષવેદ દ્વંડકોં મેં દેવ, પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ
ઓર મનુષ્ય इन पदों का ही प्रयोग करना चाहिये, तथा नपुंसक वेदके
दोनों द्वाण्डकों में देव पदको छोड़कर पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्य इन
पदों का प्रयोग करना चाहिये । सिद्ध पदका प्रयोग तीनों वेदों में से
किसी भी वेदके द्वाण्डक में नहीं करना चाहिये-क्यों कि ये वेदरहित

પુરુષવેદમાં અને નપુંસક-વેદદ્વારમાં જીવાદિક પદોમાં ત્રણ ભંગ છે. જ્યારે
એક વેદમાંથી બીજા વેદમાં સંક્રમણ થાય છે, ત્યારે પ્રથમ સમયે અપ્રદેશત્વ
અને દ્વિતીય આદિ સમયોમાં સપ્રદેશત્વ સમજીને આગળ જતાવ્યા પ્રમાણેના
ત્રણ ભંગ સમજવા. નપુંસક વેદકના જાનને દંડકોમાં તો એકેન્દ્રિયમાં એકજ
ભંગ થાય છે. (અભંગયં) પદ એ જતાવે છે કે અહીં એકેન્દ્રિયોમાં અનેક
ભંગો થતા નથી, પણ (સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ) આ એકજ ભંગ થાય છે.
સ્ત્રીવેદ દંડકોમાં, અને પુરુષવેદ દંડકોમાં દેવ, પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ અને મનુષ્યો
આ ત્રણ પદોનો જ પ્રયોગ કરવો. નપુંસક વેદના જાનને દંડકોમાં દેવપદને
જતું કરીને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ અને મનુષ્યોનો જ પ્રયોગ કરવો. સિદ્ધપદનો
પ્રયોગ ત્રણ વેદોમાંથી એક પણ વેદના દંડકમાં કરવા બોધ્યો નહીં, કારણ

સાર્થ 'અવેદકતા યથા બ્રહ્માયિનસ્તથા વક્તવ્યાઃ, एवं च ब्रह्मायिणां जीव-
मनुष्यसिद्धपदेषु भद्रवयस्य मणिपादितत्वेन अवेदकानामपि बहुत्वदण्डके जीव-
मनुष्य-सिद्धपदेष्वेव भद्रवयं पूर्वोक्तं वक्तव्यम् । ' સરીરી જહા ઓહિઓ ' શરીરી
યથા ઔચિત્તઃ સામાન્યજીવઃ મણિપાદિતસ્તથા ચિણ્ણેયઃ, तथा च औचिददण्डक-
वत् शरीरिणाम् एकत्वबहुत्वदण्डकयोः जीवपदे तपदेशना एव वक्तव्या, नत्व-
प्रदेशता, सशरीरित्वस्यानादित्वात्, नैरयिक्तादिषु तु बहुत्वदण्डके भद्रवयम्,
एकेन्द्रियपृथिव्यादिषु केवलं तृतीयो भद्रः । ' ઓરાલિય-વેડવિય-સરીરાણં
જીવ-एगिदियवज्जो तियभंगो ' ઔદારિક-वैक्रियशरीरेषु जीवैकेन्द्रियवर्जः जीव-
पदम् एकेन्द्रियपृथिव्यादिपदानि वर्जयित्वा त्रिकभद्रः, पूर्वोक्ताद्वयोभद्राः याच्या,
तथा च औदारिक-वैक्रिय-सशरीरिणां बहुत्वदण्डके जीवपदं, एकेन्द्रियपृथिव्या-
दिपदेषु च केवलम् 'सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च' इति तृतीय एव भागो चिण्णैयः, तेषु

होते हैं । (अवेदकता जहा अकसाई) जीव मनुष्य और सिद्ध इन तीन
पदों में ही अवेदकता का आश्रय करके अकषायवाले जीवों की तरह
तीन भंग होते हैं । 'सत्तरीरी जहा ओहिओ' सामान्य जीव दंडककी तरह
सशरीरी के दोनों दण्डकोंमें जीव पदमें सप्रदेशकताका ही कथन करना
चाहिये, अप्रदेशता का नहीं-क्यों कि सशरीरता अनादि काल से है ।
नैरयिक आदिकों में तो बहुत्वविषयक द्वितीय दण्डक में तीन भद्र होते
हैं । तथा एकेन्द्रिय पृथिव्यादिकों में केवल तीसरा भंग होता है । (ओरा-
लिय-वेडविय सरीराणां जीव एगिदियवज्जो तियभंगो) औदारिक
शरीरवालों में वैक्रिय शरीरवालों में जीव पद और एकेन्द्रिय को छोड़
कर पूर्वोक्त तीन भंग होते हैं । तथा च-औदारिक और वैक्रिय शरीर
वाले जीवों के बहुत्व दण्डकमें और एकेन्द्रिय पृथिव्यादिक पदों में केवल

કે સિદ્ધો વેદરહિત હોય છે. (અવેદકતા જહા અકસાઈ) જીવ, મનુષ્ય અને
સિદ્ધ આ ત્રણ પદોમાં જ અવેદકતાને અનુવક્ષીને અકષાયવાળા જીવોની જેમ
ત્રણ ભંગ થાય છે.

(સતરીરી જહા ઓહિઓ) સામાન્ય જીવ દંડકની જેમ સશરીરીના બન્ને
દંડકોમાં જીવપદમાં સપ્રદેશતાનું જ કથન કરવું જોઈએ, અપ્રદેશતાનું કથન
કરવું જોઈએ નહીં, કારણ કે સશરીરતા અનાદિ કાળથી હોય છે. નારક
આદિમાં તો બહુત્વ વિષયક બીજા દંડકમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. પણ પૃથ્વીકાય
આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં તો માત્ર ત્રીજો ભંગ જ થાય છે. (ઓરાલિય-વેડ-
વિય સરીરાણાં જીવ એગિદિયવજ્જો તિયભંગો) ઔદારિક શરીરવાળામાં અને
વૈક્રિય શરીરવાળામાં જીવપદ અને એકેન્દ્રિયને છોડીને પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય
છે. ઔદારિક અને વૈક્રિય શરીરવાળા જીવોના બહુત્વ દંડકમાં જીવપદમાં તથા

દહનામેવ પ્રતિક્ષણં પ્રતિપન્નાનાં પ્રતિપદ્યમાનાનાં ચોપલમ્ભાત્, શોપેષુ મનુષ્યા-
દિપુ પૂર્વોક્તં મદ્ગત્રયમવસેયમ્, તેષુ દહનાં પ્રતિપન્નાનામ્, ઔદારિક-વૈક્રિય-
પરિત્યાગેત ઔદારિકં વૈક્રિયં ચ પ્રતિપદ્યમાનાનામ્ એકાદીનાં સદ્ભાવાત્,
કિન્ત્વત્ર ઔદારિકૈકત્વચત્ત્વદણ્ડકયોઃ નૈરયિકાઃ દેવાશ્ચ ન વક્તવ્યાઃ,
વૈક્રિયદણ્ડકયોઃ પૃથિવ્યત્તેજોવનસ્પતિ-ચિકલેન્દ્રિયાઃ ન વક્તવ્યાઃ, અત્ર વૈક્રિય-
દણ્ડકે એકેન્દ્રિયપદે તૃતીયમદ્ગત્રયને કથં ન વિરોધઃ? इति चेदाह-असंख्यातानां

(સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ) એસા એક ત્રીસરા હી ભંગ હોતા હૈ । કયોં
કિં ઉનમેં પ્રતિક્ષણ પ્રતિપન્ન ઓર અપ્રતિપદ્યમાન અનેક જીવોં કી પ્રાપ્તિ
હોતી હૈ । શોપ મનુષ્યાદિકોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હૈ । કયોં કિં
હનમેં અનેક પ્રતિપન્ન જીવોં કા ઓર ઔદારિક વૈક્રિય શરીર કો છોડ
કર પુનઃ ઔદારિક ઓર વૈક્રિય શરીર કો પાનેવાલે એકાદિ જીવ કા
સદ્ભાવ પાયા જાતા હૈ । યહાં ઔદારિક કે એકત્વ ઓર ચત્ત્વ દણ્ડક
મેં નૈરયિક ઓર દેવ હન પદોં કા પ્રયોગ નહીં કરના ચાહિયે-કયોં કિં
હનકો ઔદારિક શરીર નહીં હોતા હૈ । વૈક્રિય કે દોનોં દણ્ડકોંમેં પૃથિવી
અપ્, તેજ, વનસ્પતિ ઓર ચિકલેન્દ્રિય હન પદોં કા પ્રયોગ નહીં કરના
ચાહિયે-અયોં કિં હન જીવોંકો વૈક્રિય શરીર નહીં હોતા હૈ । યહાં એસી આશં-
કા નહીં કરની ચાહિયે કિ-વૈક્રિયદણ્ડક મેં એકેન્દ્રિય પદ મેં જો આપને
ત્રીસરા ભંગ કહા હૈ સો ઉસમેં વિરોધ કયોં નહીં આવેગા ? નહીં આવેગા

પાંચે એકેન્દ્રિય પદોમાં (સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ) આ એક જ ભંગ (ત્રીજો
ભંગ) થાય છે. કારણ કે તેમાં પ્રત્યેક ક્ષણે પ્રતિપન્ન (પૂર્વોત્પન્ન) અને
પ્રતિપદ્યમાન અનેક જીવોની પ્રાપ્તિ થતી હોય છે. એ સિવાયના મનુષ્ય
આદિ જીવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે, કારણ કે તેમનામાં અનેક પૂર્વોત્પન્ન જીવોના
અને ઔદારિક કે વૈક્રિય શરીરોના પરિત્યાગ કરીને ફરીથી ઔદારિક કે વૈક્રિય
શરીર પ્રાપ્ત કરનાર કોઈક (એકાદિ) જીવનો સદ્ભાવ રહે છે. અહીં
ઔદારિકના એકત્વ અને બહુત્વ દંડકમાં નારક અને દેવનો પ્રયોગ થતો નથી,
કારણ કે તેમને ઔદારિક શરીર હોતું નથી. વૈક્રિયના બન્ને દંડકોમાં પૃથ્વી-
કાય, અપકાય, તેજસ્કાય, વનસ્પતિકાય અને ચિકલેન્દ્રિયોનો પ્રયોગ કરવો
નહીં, કારણ કે તે જીવોને વૈક્રિય શરીર હોતું નથી. અહીં એવી આશંકા
કરવી જોઈએ નહીં કે વૈક્રિય એકેન્દ્રિય જીવોને આપે ત્રીજો ભંગ લાગી પડશે
છે. તો શું અહીં વિરોધાભાસ લાગતો નથી ? આ શંકાનું સમાધાન નીચે

ઘ જીવૈકેન્દ્રિયવર્ગઃ જીવપદમ્ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદાનિ ચ વર્મણિયા મનુષ્યા-
 દિપુ ત્રિકમજ્ઞઃ, પૂર્વોક્તાશ્ચયોમજ્ઞા વક્તવ્યાઃ. જીવપદે, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદેષુ તુ
 બહુનામ્ આહાર-શરીરે-ન્દ્રિયા-ડડનપ્રાણપર્યાપ્તીઃ પ્રતિપદ્માનાં, બહુનામેવ ચ આહાર-
 રાષપર્યાસિપરિત્યગેન આહારાદિપર્યાસિમિઃ પર્યાસિભાવં પ્રતિપદ્માનાનાં સદ્ભાત્રાત્
 'વહવઃ સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ' इति तृतीयो मन्त्र एव वक्तव्यः, इत्याश्रयः
 'भासा-मणपञ्जत्तीए जहा सत्री' भाषामनसोः पर्याप्तिः भाषामनःपर्या-
 प्तिस्त्वस्याम् बहुश्रुताभिमतत्वादेकत्वं विवक्षितम् भाषा-मनःपर्याप्सोरित्यर्थः
 पर्याप्तिमन्तो जीवाः यथासंज्ञिनः पूर्वं प्रतिपादितास्तथा सप्रदेशत्वादिना वक्तव्याः.

એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિકપદો મેં છોડકર મનુષ્યાદિકોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ
 હોતે હૈં. જીવપદ મેં એવં એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિક પદોં મેં તો અનેક જીવોં
 કા જો કિ આહાર, શરીર, ઇન્દ્રિય ઓર શ્વાસોચ્છવાસ इन पर्याप्तिर्यो
 કો પહિલે સે હી પ્રતિપદ કિયે હુપ હોતે હૈં સદ્ભાવ રહતા હૈ, તથા આહાર-
 રાદિ અપર્યાસિ ભાવ કે પરિત્યાગ સે આહારાદિ પર્યાસિર્યો સે જો પર્યા-
 સિભાવ કો પ્રતિપદ્યમાન હોતે હૈં એસે મી અનેક જીવોં કા સદ્ભાવ
 રહતા હૈ-इस कारण “वहवः सप्रदेशाश्च वहवः अप्रदेशाश्च” यहाँ
 ऐसा एक तीसरा ही भंग होता है। तथा याकी के अन्य जीवों में तीन
 भंग होते हैं। (भाषामणपञ्जत्तीए जहा सत्री) भाषा और मन की
 जो पर्याप्ति है वह भाषामनः पर्याप्ति है। भाषापर्याप्ति और मन्त्रः पर्याप्ति
 इस प्रकार की ये दो पर्याप्तियां अलग २ हैं-फिर भी जो यहाँ उन्हें
 एकरूप जैसा विवक्षित किया गया है उसका कारण बहु श्रुतजनों को

પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ એકેન્દ્રિય પદોને છોડીને બાકીના મનુષ્ય આદિકોમાં
 પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. જીવપદમાં અને એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિક
 પદોમાં તો આહાર, શરીર, ઇન્દ્રિય અને શ્વાસોચ્છવાસ આ પર્યાસિઓને
 પહેલેથી જ પ્રાપ્ત કરી હોય એવાં અનેક જીવોના સદ્ભાવ રહે છે, તથા
 આહારાદિ અપર્યાસક અવસ્થાનો ત્યાગ કરીને આહારાદિ પર્યાસક અવસ્થામાં
 આવતા હોય એવા અનેક જીવોના પણ સદ્ભાવ રહે છે, તે કારણે (વહવઃ
 સપ્રદેશાશ્ચ વહવઃ અપ્રદેશાશ્ચ) અહીં આ એક ત્રીજો ભંગ જ થાય છે, અને
 બાકીના જીવોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. (ભાષામણ પજ્જત્તીએ જહા સત્રી) ભાષા
 અને મનની જે પર્યાપ્તિ છે તેને ભાષામન પર્યાપ્તિ કહે છે. ભાષા પર્યાપ્તિ અને
 મન પર્યાપ્તિ, એ બન્ને જુદી જુદી પર્યાપ્તિઓ છે, છતાં પણ અહીં તેમને
 એકરૂપ જેવી પ્રતાવવામાં આવી છે, તેનું કારણ એ છે કે પ્રજા વિદ્વાનોએ

તથા ચ સંજ્ઞિનાં જીવાદિષુ ભદ્રત્રયસ્યોક્તત્વેન અત્રાપિ સર્વપદેષુ ભદ્રત્રયં વક્તવ્યમ્, પંચેન્દ્રિયપદાન્વેવાત્ર વક્તવ્યાનિ, અન્યેષાં મિશ્રિતભાષામનઃપર્યાપ્તિવિરહાત્ । ‘આહાર અપજ્જત્તીણ જહા અણાહારગા’ આહારાપર્યાપ્તૌ યથા અનાહારકા ઉક્તા-સ્તથા વક્તવ્યાઃ; તથા ચ-અનાહારકેષુ જીવૈકેન્દ્રિયવર્જિતેષુ ભદ્રપદ્મકસ્યોક્તત્વેના-ત્રાપિ પદ્ ભદ્રા ભણિતવ્યાઃ, આહારપર્યાપ્તિમતામલ્પત્વાત્ । જીવૈકેન્દ્રિયેષુ ચ ભદ્રૈકસ્યોક્તત્વેન જીવપદે, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદેષુ ચ ‘સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ’ इत्येक एव तृतीयो भद्रः, सततं विग्रहगतिमताम् आहारपर्याप्तिमतां बहूनां सद्-

इनमें एकत्वं मान्य है । भाषापर्याप्ति और मनः पर्याप्ति से पर्याप्ति हुए जीव संज्ञी जीवों की तरह सप्रदेशत्व आदि रूप से कहे गये हैं ऐसा जानना चाहिये । तथा-संज्ञी जीवों की तरह समस्त पदों में तीन भंग होते हैं । यहां पर पञ्चेन्द्रिय पदों का ही प्रयोग करना चाहिये । क्योंकि अन्य जीवों को मिश्रित भाषामनः पर्याप्ति का अभाव रहता है । “आहार अपज्जत्तीण जहा अणाहारगा” जिस तरह से अनाहारक जीव कहे गये हैं उसी प्रकार से आहार अपर्याप्ति में भी जानना चाहिये-जीव और एकेन्द्रियवर्जित अनाहारकों में छह भंग कहे गये हैं, सो यहां पर भी छह भंग कहना चाहिये-क्यों कि आहारक पर्याप्ति वाले जीव अल्प होते हैं । जीवपद में और एकेन्द्रियपृथिवी आदिकपदों में “सप्रदेशाश्च अप्रदेशाश्च” ऐसा एक तीसरा ही भंग होता है । क्योंकि आहार अपर्याप्तिवाले विग्रहगत्यापन्न जीव निरन्तर अनेक मिलते

તેમના એકત્વને માન્ય કરેલું છે. ભાષા પર્યાપ્તિ અને મનઃપર્યાપ્તિની પર્યાપ્તિ થયેલા જીવોના સપ્રદેશત્વ આદિનું કથન સંજ્ઞી જીવોના કથન પ્રમાણે જ સમજવું. અહીં પણ સંજ્ઞી જીવોની જેમ સમસ્ત પદોમાં ત્રણ ભંગ થાય છે. આ બંને પર્યાપ્તિઓના કંડકોમાં પંચેન્દ્રિય પદોનો જ પ્રયોગ કરવો, કારણ કે તે સિવાયના જીવોમાં મિશ્રિત ભાષામન પર્યાપ્તિનો અભાવ હોય છે.

(આહાર અપજ્જત્તીણ જહા અણાહારગા) અનાહારક જીવોના કથન પ્રમાણે જે આહાર અપર્યાપ્તિવાળા જીવોનું કથન સમજવું. જીવ અને એકેન્દ્રિય સિવાયના અનાહારકોમાં છ ભંગ કહ્યા છે, તે અહીં પણ છ ભંગ સમજવા, કારણ કે આહાર પર્યાપ્તિવાળા જીવો ઓછાં હોય છે. જીવપદમાં એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિકોમાં (સપ્રદેશાશ્ચ અપ્રદેશાશ્ચ) એ એક જ (ત્રીજો ભંગ) ભંગ થાય છે. તેનું કારણ એ છે કે આહાર અપર્યાપ્તિવાળા વિગ્રહગતિ પ્રાપ્ત કરી હોય એવા જીવો નિરન્તર અનેક મળી શકે છે.

ભાવાત્ । 'સરીરઅવજ્જત્તીણ, ઇંદિય-અવજ્જત્તીણ, આણ-પાણ-અવજ્જત્તીણ
 જીવ-ઈગિંદિયવજ્જો તિયમંગો' શરીરઅપર્યાપ્તો, ઇન્દ્રિયાઅપર્યાપ્તો પ્રાણપ્રાણઅપર્યાપ્તો
 જીવકેન્દ્રિયવર્ગઃ જીવપદમ્ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદાનિ ચ વર્જયિત્વા અન્યેષુ
 પદેષુ ત્રિકમજઃ પૂર્વોક્તાસ્યો મદ્દાઃ, શરીરેન્દ્રિયાનપ્રાણાઅપર્યાપ્તિભાવાં કાલા-
 પેક્ષયા સપ્રદેશાનાં સર્વદેવ લાભાત્, અપ્રદેશાનાં ચ કદાચિત્ પદ્મદીનાં લાભાત્ ।
 જીવપદે, એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિપદેષ્વ તૃતીયો મદ્દઃ, કિન્તુ- 'નેરહ્ય-દેવ-મણુ-
 ઈહિ છબ્ભંગા' નૈરયિક-દેવ-મનુજેષુ પૂર્વોક્તાઃ પડ્નત્તાઃ । 'માસા-મણ-અવજ્જત્તી-
 ણ જીવાહો તિયમંગો' ભાસા-મનોજ્યપર્યાપ્તો જીવાદિકઃ જીવાદિપદેષુ ત્રિકમજઃ
 પૂર્વોક્તાસ્યો મદ્દાઃ વક્તવ્યાઃ, તથા ચ-જીવે, પંચેન્દ્રિયતિર્યક્તુ ચ વહનાં ભાપા-

હેં । (સરીરઅવજ્જત્તીણ, ઇંદિય અવજ્જત્તીણ, આણપાણ અવજ્જત્તીણ
 જીવ-ઈગિંદિયવજ્જો) જીવપદ ઓર એકેન્દ્રિયપદોં કો છોડકર શરીર
 અપર્યાપ્તિ મેં, ઇન્દ્રિય અપર્યાપ્તિ મેં, શ્વાસોચ્છ્વાસ અપર્યાપ્તિ મેં, અન્ય-
 પદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં । કારણ કિ શરીર, ઇન્દ્રિય ઓર
 શ્વાસોચ્છ્વાસ સે અપર્યાપ્ત અવસ્થાવાલે જીવ કાલ કી અપેક્ષા સે સપ્ર-
 દેશ સર્વદા મિલતે હેં ઓર અપ્રદેશ કદાચિત્ પદાદિ મિલતા હેં । જીવ
 પદ મેં ઓર એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદિક પદોં મેં યહાં એક ત્રીસરા હી ભંગ હેં ।
 કિન્તુ (નેરહ્ય-દેવ-મણુઈહિ છબ્ભંગા) નૈરયિક જીવોં મેં, દેવોં મેં ઓર
 મનુષ્યોં મેં છહ ભંગ હોતે હેં । (માસા-મણ-અવજ્જત્તીણ જીવાહો
 તિયમંગો) ભાપાઅપર્યાપ્તિ ઓર મનઃ પર્યાપ્તિ સે અપર્યાપ્ત દ્વાર મેં જીવા-
 દિક પદોં મેં પૂર્વોક્ત ત્રીન ભંગ હોતે હેં । તથા ચ-જીવ ઓર પંચેન્દ્રિય
 તિર્યકોં મેં ભાપા ઓર મન કી અપર્યાપ્તિ કો પ્રતિપન્ન હુએ અનેકજીવોંકાં

(સરીર અવજ્જત્તીણ, ઇંદિય અવજ્જત્તીણ, આણપાણ અવજ્જત્તીણ, જીવ
 ઈગિંદિયવજ્જો) જીવપદ અને એકેન્દ્રિય પદો જિવાયના શરીર અપર્યાપ્તિવાળા,
 ઇન્દ્રિય અપર્યાપ્તિવાળા અને શ્વાસોચ્છ્વાસ અપર્યાપ્તિવાળા બાકીના પદોમાં
 પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. કારણ કે શરીર, ઇન્દ્રિય અને શ્વાસોચ્છ્વાસમાં
 અપર્યાપ્તિ અવસ્થાવાળા જીવો કાળની અપેક્ષાએ સપ્રદેશ સદા મળી શકે છે
 અને અપ્રદેશ ક્યારેક એકાદ જીવ જ મળી શકે છે. જીવપદમાં અને એકેન્દ્રિય
 પદોમાં અહીં ત્રીજો ભંગ જ થાય છે. પરંતુ (નેરહ્ય, દેવ, મણુઈહિ છબ્ભંગા)
 નારકોમાં, દેવોમાં અને મનુષ્યોમાં છ ભંગ થાય છે.

(માસા-મણ-અવજ્જત્તીણ જીવાહો તિયમંગો) ભાપામન અપર્યાપ્તિ દ્વારમાં
 જીવાદિક પદોમાં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે ભાપા

મનોઽપર્યાપ્તિપ્રતિપન્નાનામ્ તાદૃશાપર્યાપ્તિ પ્રતિપચ્ચમાનાનાં ચૈકાદીનાં સદ્ભાવાત્
પૂર્વોક્તમેવ ભદ્રત્રયમવસેયમ્, કિન્તુ-‘ નૈરયિક-દેવ-મનુષ્યમ્ છન્નંગા ’ નૈરયિક-
દેવ-મનુજેષુ મનોઽપર્યાપ્તિકેષુ પૂર્વોક્તાઃ પદ્ ભદ્રાઃ વક્તવ્યાઃ, તથા ચ નૈરયિક-
દેવ-મનુષ્યેષુ મનોઽપર્યાપ્તિજ્ઞાનામ્ અલ્પતરત્વેન સપ્રદેશાનામ્ અપ્રદેશાનાં ચૈકાદીનાં
સદ્ભાવાત્ । एषु च पर्याप्त्यपर्याप्तिदण्डकेषु सिद्धो न वाच्यः, तस्त तदसंभवात् ।

‘ સંગ્રહગાદા ’ ઉપર્યુક્તાનાં દ્વાદશાનામપિ સપ્રદેશાદિદ્વારાણાં વિષયે સંગ્રહ-
ગાથા વર્તેતે । તામેવાદ—

‘ સપણસા, આહારાગ-ભવિય-સન્નિ-હેતા-દિદ્ધિ-સંજય-કસાણ ।

ળાળે જોગુ-વ્રબોગે, વેય સરીસ્ત-પજતી ॥ ૧ ॥ ’

‘ સપ્રદેશાઃ ’ કાઝાપેક્ષયા જીવાઃ સપ્રદેશાથ અપ્રદેશાથ એકત્વ વહુત્વદણ્ડ-
કામ્યાં પ્રતિપાદિતાઃ, ‘ આહારકાઃ ’ ‘ અનાહારકાથ તથૈવ ’ ‘ મન્યાઃ ’

और भाषा एवं मन की अपर्याप्ति को प्रतिपच्यमान होरहे कोई एकादिजीव
पाये जाने के कारण पूर्वोक्त तीन भंग ही यहां होते हैं ऐसा जानना चाहिये
तथा मनोऽपर्याप्तिवाले नैरयिक, देव और मनुष्यों में छह भंग होते हैं ।
कारण नैरयिक, देव और मनुष्यों में मनोऽपर्याप्तिवालों की अल्पतरता
होने से एकादि सप्रदेशों का, और एकादि अप्रदेशोंका सद्भाव रहता
है इस कारण छह भंग कहे गये हैं । इन पर्याप्ति और अपर्याप्ति के
दण्डकों में सिद्ध पदका प्रयोग नहीं करना चाहिये क्यों कि ये न पर्याप्ति
होते हैं और न अपर्याप्ति होते हैं । उपर्युक्त इन सप्रदेशादि द्वारों के
विषयमें यह (सपणसा आहारा०) इत्यादि संग्रह गाथा है—इसके द्वारा इस
प्रकरण में आये हुए विषयों को संग्रह करके प्रकट किया गया है—

અને મનની અપર્યાપ્તિને પ્રાપ્ત કરી રહ્યા હોય એવા કેઇક એકાદ જીવનો
સદ્ભાવ હોવાને કારણે અહીં પૂર્વોક્ત ત્રણ ભંગ થાય છે, એમ સમજવું.
તથા મનઃ અપર્યાપ્તિવાળા નારકો, દેવો અને મનુષ્યોમાં છ ભંગ થાય છે.
તેનું કારણ એ છે કે નારક દેવ અને મનુષ્યોમાં મનઃ અપર્યાપ્તિવાળાની
અલ્પતરતા હોવાથી એકાદ સપ્રદેશોનો અને એકાદ અપ્રદેશોનો સદ્ભાવ રહે
છે. તેથી તેમના છ ભંગ કહ્યા છે. આ પર્યાપ્તિ અને અપર્યાપ્તિના દંડકોમાં
સિદ્ધપદનો પ્રયોગ કરવો જોઇએ નહીં, કારણ કે તેઓ પર્યાપ્તિ પણ હોતા
નથી અને અપર્યાપ્તિ પણ હોતા નથી.

ઉપર જેમનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે તે બાર સપ્રદેશ આદિ
દારોના વિષયમાં (સપણસા આહારા૦) ઇત્યાદિ સંગ્રહગાથા આપી છે. તે ગાથા
દ્વારા આ પ્રકરણમાં આવેલા વિષયોનો સંગ્રહ કરીને પ્રકટ કરવામાં આવેલ

‘અભવ્યાઃ’ તદુભવનિષેવાય તથૈવ, ‘સંજ્ઞિનઃ’ ‘પ્રસંજ્ઞિનઃ’ ‘નો સંજ્ઞિ-નો’ અસંજ્ઞિતથ તથૈવ, ‘સહેશ્યાઃ’ કૃષ્ણાદિગદ્ગેશ્યાઃ, ‘અલેશ્યાઃ’ તથૈવ, ‘દષ્ટિઃ’ સમ્યગ્દષ્ટિઃ, મિથ્યાદષ્ટિઃ, મિશ્રદષ્ટિથ તથૈવ, ‘સંયતાઃ’ અસંયતાઃ, સંયતાસંયતાઃ, નોસંયત-નોભસંયત-નોસંયતાસંયતાથ તથૈવ, ‘કપાયિણઃ’ ક્રોધ-માન-માયા-લોભકપાયિણઃ, અહ્યાયિણથ તથૈવ, ‘જ્ઞાનિનઃ’ મતિ-

(સપણસા) હસ પ્રકરણમેં કાલ કી અપેશ્તાસે જીવ સપ્રદેશ મી હેં ઓર અપ્રદેશ મી હેં યહ યાત એકત્વ ઓર બહુત્વ દળડકોં દ્વારા પ્રતિપાદિત કી ગઈ હૈ । (આહારગ) હસ પ્રકરણમેં આહારક જીવ ઓર અનાહારક જીવ સપ્રદેશ મી હેં ઓર અપ્રદેશ મી હેં યહ યાત એકત્વ બહુત્વ દળડકોં દ્વારા પ્રતિપાદિત કી ગઈ હૈ । ‘ભવ્ય જીવ, અભવ્ય જીવ, તથા નો ‘ભવ્ય નો અભવ્યજીવ પ્રકરણમેં ‘ભવ્ય જીવ, અભવ્ય જીવ તથા નો ‘ભવ્ય નો અભવ્ય જીવ મી હસી તરહ સે હેં યહ યાત પ્રતિપાદિત કી ગઈ હૈ, સંજ્ઞી અસંજ્ઞી તથા નો સંજ્ઞી નો અસંજ્ઞી પ્રકરણ મેં સંજ્ઞી જીવ અસંજ્ઞી જીવ ઓર નો સંજ્ઞી નો અસંજ્ઞી જીવ મી હસી તરહ સે હેં યહ યાત પ્રતિપાદિત કી ગઈ હૈ, સંયત જીવ, અસંયત જીવ, સંયતાસંયત જીવ મી હસી તરહ સે હેં, સમ્યગ્દષ્ટિ, મિથ્યાદષ્ટિ ઓર મિશ્ર દષ્ટિવાલે જીવ મી હસી તરહ સે હેં, કપાયિણ જીવ, અકપાયિણ જીવ, ક્રોધ-માન-માયા-લોભકપાયિણ જીવ મી હસી તરહ સે હેં, જ્ઞાનિન જીવ, અજ્ઞાનિન જીવ, મતિ-અમતિ જીવ મી હસી તરહ સે હેં, સંયત જીવ, અસંયત જીવ, સંયતાસંયત જીવ

છે-(સપણસા) આ પ્રકરણમાં કાળની અપેક્ષાએ જીવ સપ્રદેશ પણ છે અને અપ્રદેશ પણ છે એ વાતનું એકત્વ અને બહુત્વ હંડકો દ્વારા પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. (આહારગ) આ પ્રકરણમાં આહારક જીવ અને અનાહારક જીવ સપ્રદેશ પણ છે અને અપ્રદેશ પણ છે એ વાતનું એકત્વ અને બહુત્વ હંડકો દ્વારા પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. (ભવિય) આ પ્રકરણમાં ભવ્ય જીવ અભવ્ય જીવ, નો ભવ્ય જીવ અને નો અભવ્ય જીવો પણ એવાં જ છે એવું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

(સંજ્ઞિ) આ પ્રકરણમાં સંજ્ઞી, અસંજ્ઞી, નો સંજ્ઞી અને નો અસંજ્ઞી જીવો પણ એવાં જ છે, એ વાતનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

(લેશ્યા) કૃષ્ણાદિ છ લેશ્યાવાળા જીવો અને લેશ્યાઓથી રહિત જીવો પણ એવાં જ છે, એવું આ પ્રકરણમાં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

(દિટ્ટી) આ પ્રકરણમાં સમ્યગ્દષ્ટિ, મિથ્યાદષ્ટિ અને મિશ્ર દષ્ટિવાળા જીવો પણ એવાં જ છે, એ વાતનું પ્રતિપાદન કરાયું છે.

(સંયત) આ પ્રકરણમાં સંયત, અસંયત, સંયતાસંયત, નો સંયત,

શ્રતાઽવધિ-મનઃ પર્યવકેવલજ્ઞાનિનઃ, અજ્ઞાનિનો મત્યાઘજ્ઞાનિનશ્ચ તથૈવ, 'સયોગાઃ' મનોવચઃકાયયોગિનઃ, અયોગિનશ્ચ તથૈવ, 'ઉપયોગાઃ' સાકારાઽનાકારોપયોગાશ્ચ તથૈવ, 'સવેદાઃ' સ્ત્રીપુરુષનપુંસકવેદવન્તઃ, અવેદાશ્ચ તથૈવ, 'સશરીરાઃ' ઔદારિક-વૈક્રિયશરીરવન્તઃ, અશરીરાશ્ચ તથૈવ, 'પર્યાપ્તાઃ' આહારશરીરેન્દ્રિયાનપ્રાણ-ભાષા-મનઃપર્યાપ્તિમન્તશ્ચ તથૈવ સપ્રદેશાપ્રદેશતયોક્તા इति ॥ સુ૦ ૧ ॥

તથા નો સંયત નો અસંયત જીવ મી ઇસી તરહ સે હૈં, ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ કપાયવાલે જીવ ઓર અકપાયી જીવ મી ઇસી તરહસે હૈં, મતિ જ્ઞાનવાલે, શ્રુત જ્ઞાનવાલે, અવધિ જ્ઞાનવાલે, મનઃપર્યય જ્ઞાનવાલે ઓર કેવલજ્ઞાનવાલે જીવ તથા મતિ આદિ અજ્ઞાનવાલે જીવ મી ઇસી તરહ સે હૈં, સયોગ-મન, વચન એવં કાય ઇન ત્રીન યોગવાલે જીવ ઓર અયોગી જીવ મી ઇસી તરહ સે હૈં, સાકાર ઉપયોગવાલે ઓર અનાકાર ઉપયોગવાલે જીવ મી ઇસી તરહ સે હૈં, સ્ત્રીવેદવાલે, પુરુષવેદવાલે, નપુંસક વેદવાલે જીવ ઓર વેદ સે રહિત હુએ જીવ મી ઇસી તરહસે હૈં, ઔદારિક, વૈક્રિય શરીરવાલે જીવ તથા શરીરરહિત હુએ જીવ, મી ઇસી તરહ સે હૈં । આહાર, શરીર ઇન્દ્રિય ઓર શ્વાસોચ્છ્વાસ એવં ભાષા મનઃ પર્યાપ્તિ વાલે જીવ ઓર પર્યાપ્તિયોં સે રહિત હુએ જીવ મી ઇસી તરહ સે હૈં

નો અસંયત અને નો સંયતાસંયત હોવો પણ એવાં જ છે, એ વાતનું પ્રતિપાદન કરવામાં આંચું છે.

(કસાયા) આ પ્રકરણમાં ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ કપાયવાળા અને અકપાયી હોવાનું પણ એજ પ્રમાણે પ્રતિપાદન કર્યું છે.

(ગાળે) આ પ્રકરણમાં મતિજ્ઞાનવાળા, શ્રુતજ્ઞાનવાળા, અવધિજ્ઞાનવાળા, મનઃપર્યાય જ્ઞાનવાળા અને કેવળજ્ઞાનવાળા તથા મિતિ આદિ અજ્ઞાનોવાળા હોવાનું એજ પ્રમાણે પ્રતિપાદન કર્યું છે.

(જોગુવઓ) આ પ્રકરણમાં મન, વચન અને કાયના યોગવાળા સયોગી હોવાનું તથા અયોગી હોવાનું એજ પ્રમાણે પ્રતિપાદન કરાયું છે. સાકાર ઉપયોગવાળા અને નિરાકાર ઉપયોગવાળા હોવાનું પણ એજ પ્રમાણે તેમાં પ્રતિપાદન કરાયું છે.

(વેદેય) સ્ત્રી વેદવાળા, પુરુષ વેદવાળા અને નપુંસક વેદવાળા હોવાનું તથા અવેદક હોવાનું આ પ્રકરણમાં એજ પ્રમાણે પ્રતિપાદન કરવામાં આંચું છે.

(સરીર પદ્મર્ત્ત) ઔદારિક આદિ સશરીરી હોવાનું તથા અશરીરી હોવાનું તથા આહાર, શરીર, ઇન્દ્રિય, શ્વાસોચ્છ્વાસ અને ભાષામન પર્યાપ્તિ-

જીવા ય, વેમાણિયા ય પચ્ચક્ખાણિઠ્ઠત્તિયાઉયા,
તિન્નિ વિ । અવસેસા અપચ્ચક્ખાણિઠ્ઠત્તિયાઉયા ।
ગાહા--‘પચ્ચક્ખાણં જાણઙ્, કુઠ્ઠઙ્, તિન્નેવ આઉનિઠ્ઠત્તી ।’
સપણસુદેસમ્મિ ય, એમેણ દંડગા ચઉરો ॥ ૧ ॥
સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે ! ત્તિ ’ ॥ ૨ ॥

॥ છટ્ઠમણ ચઉત્થો ઉદેસો ॥ ૬--૪ ॥

છાયા—જીવાઃ ત્વલુ ભદન્ત ! કિં પ્રત્યાખ્યાનિનઃ, અપ્રત્યાખ્યાનિનઃ,
પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનઃ ? ગૌતમ ! જીવાઃ પ્રત્યાખ્યાનિનોઽપિ, અપ્રત્યાખ્યા-
નિનોઽપિ, પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનોઽપિ । સર્વજીવાનામ્ એવમ્ પૃચ્છા ? ગૌતમ !

॥ પ્રત્યાખ્યાનાદિવક્તવ્યતા ॥

‘જીવાણં ભંતે’ इत्यदि ॥

સૂત્રાર્થ—(જીવાણં ભંતે ! કિં પચ્ચક્ખાણી, અપચ્ચક્ખાણી પચ્ચ-
ક્ખાણાપચ્ચક્ખાણી) હે ભદન્ત ! જીવ કયા પ્રત્યાખ્યાની હૈં ? યા
અપ્રત્યાખ્યાની હૈં ? યા પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાની હૈં ? (ગોયમા ! જીવા
પચ્ચક્ખાણી વિ અપચ્ચક્ખાણી વિ, પચ્ચક્ખાણાપચ્ચક્ખાણી વિ) હે
ગૌતમ ! જીવ પ્રત્યાખ્યાની ભી હૈં, અપ્રત્યાખ્યાની ભી હૈં ઓર પ્રત્યાખ્યા-
નાપ્રત્યાખ્યાની ભી હૈં । (સવ્વજીવાણં એવં પુચ્છા) ઇસી તરહ કે પ્રશ્ન હે
ભદન્ત ! મેરે, સવ જીવોં કે વિષય મેં ભી હૈં ? (ગોયમા ! નેરહયા અપ

પ્રત્યાખ્યાનાદિ વક્તવ્યતા—

“જીવાણં ભંતે !” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—(જીવાણં ભંતે ! કિં પચ્ચક્ખાણી, અપચ્ચક્ખાણી, પચ્ચક્ખાણા
પચ્ચક્ખાણી ?) હે ભદન્ત ! એવ શું પ્રત્યાખ્યાની (સર્વં વિરતિવાણા) છે ?
હે અપ્રત્યાખ્યાની (સર્વં વિરતિથી રહિત) છે ? કે પ્રત્યાખ્યાના પ્રત્યાખ્યાની
(અંશતઃ વિરતિવાણા) છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જીવા પચ્ચક્ખાણી વિ, અપચ્ચક્ખાણી વિ, પચ્ચક્ખા-
ણાપચ્ચક્ખાણીવિ) હે ગૌતમ ! એવ પ્રત્યાખ્યાની પણ હોય છે, અપ્રત્યાખ્યાની પણ
હોય છે અને પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાની પણ હોય છે (સવ્વં જીવાણં એવં પુચ્છા)
હે ભદન્ત ! અધાં એવેના વિષયમાં પણ હું એજ પ્રશ્ન પૂછતા માણું છું.

નૈરયિકાઃ અપ્રત્યાહ્યાનિનઃ, યાચત્-ચતુરિન્દ્રિયાઃ, શેષો દ્વૌ પ્રતિપેધયિતવ્યો, પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્ગોનિકા નો પ્રત્યાહ્યાનિનઃ અપ્રત્યાહ્યાનિનોઽપિ, પ્રત્યાહ્યાનાઽપ્રત્યાહ્યાનિનોઽપિ, । મનુષ્યામ્મયોઽપિ । શેષા યથા નૈરયિકાઃ, । જીવાઃ સ્વદુઃખદન્તઃ ! કિં પ્રત્યાહ્યાનં જ્ઞાનન્તિ, અપ્રત્યાહ્યાનં જ્ઞાનન્તિ, પ્રત્યાહ્યાનાઽપ્રત્યાહ્યાનં જ્ઞાનન્તિ ? ગૌતમ ! યે પંચેન્દ્રિયાસ્તે ગ્રીણપિ જ્ઞાનન્તિ, અશેષાઃ પ્રત્યા-

ચ્ચક્ષ્ણાણી, જાત્ર ચતુરિન્દ્રિયા, સેસા દ્વૌ પડિસેદ્દેયવ્વા) હે ગૌતમ ! નારકજીવ અપ્રત્યાહ્યાની હું-યાચત્ ચૌરિન્દ્રિયજીવોં તક કે જીવોં કો અપ્રત્યાહ્યાની જાનના ચાહિયે । યાકી કે દો ભંગો-પ્રત્યાહ્યાની ઔર પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાની કા इनमें निषेध कर देना चाहिये ! (पंचिन्द्रियतिरिक्खजोणिया णो पच्चक्खणाणी, अपच्चक्खणाणी वि, पच्चक्खणाणापच्चक्खणाणी वि, मणूसा तिण्णि वि, सेसा जहा नेरइया) पंचेन्द्रियतिर्यंच प्रत्याह्यानी नहीं हैं किन्तु अप्रत्याह्यानी भी हैं, प्रत्याह्यानाप्रत्याह्यानी भी हैं । मनुष्यों में ये तीनों भंग होते हैं । अवशिष्ट जीवों को नारकजीवों के समान समझना चाहिये । (जीवाणं भंते ! किं पच्चक्खणाणं जाणंति, अपच्चक्खणाणं जाणंति, पच्चक्खणाणापच्चक्खणाणं जाणंति ?) हे भदन्त ! जीव कया प्रत्याह्यान को जानते हैं ? अप्रत्याह्यान को जानते हैं ? प्रत्याह्यानाप्रत्याह्यान को जानते हैं ? (गोयमा) हे गौतम ! (जे पंचिन्द्रिया ते तिञ्चि वि जाणंति, अवसेसा पच्चक्खणाणं

(ગોયમા ! નેરહ્યા અપચક્ષ્ણાણી, જાત્ર ચતુરિન્દ્રિયા સેસા દ્વૌ પડિસેદ્દેયવ્વા) હે ગૌતમ ! નારકો અપ્રત્યાહ્યાની હોય છે. ચતુરિન્દ્રિય પર્યન્તના જીવો પણ અપ્રત્યાહ્યાની હોય છે. તેઓ પ્રત્યાહ્યાની પણ હોતા નથી અને પ્રત્યાહ્યાના પ્રત્યાહ્યાની પણ હોતા નથી આ રીતે બાકીના બે વિકલ્પોનો અહીં સ્વીકાર થતો નથી. (પંચિન્દ્રિયતિરિક્ષજોણિયા ણો પચ્ચક્ષ્ણાણો અપચ્ચક્ષ્ણાણો વિ, પચ્ચક્ષ્ણાણાપચ્ચક્ષ્ણાણો વિ, મણૂસા તિણ્ણિ વિ, સેસા જહા નેરહ્યા) પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો પ્રત્યાહ્યાની નથી પરંતુ અપ્રત્યાહ્યાની પણ છે અને પ્રત્યાહ્યાના-પ્રત્યાહ્યાની પણ છે. મનુષ્યોને તો ત્રણે ભંગ (વિકલ્પ) લાગુ પડે છે. બાકીના જીવોના વિષયમાં નારકોની જેમ જ સમજવું.

(જીવાણં ભંતે ! કિં પચ્ચક્ષ્ણાણં જાણંતિ, અપચ્ચક્ષ્ણાણં જાણંતિ, પચ્ચક્ષ્ણાણાપચ્ચક્ષ્ણાણં જાણંતિ ?) હે ભદન્ત ! જીવો શું પ્રત્યાહ્યાનને જાણે છે ? અપ્રત્યાહ્યાનને જાણે છે ? પ્રત્યાહ્યાના-પ્રત્યાહ્યાનને જાણે છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જે પંચિન્દ્રિયા તે તિજ્જિ વિ જાણંતિ, અવસેસા

અધ્યાનં ન જાનન્તિ । જીવાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કિં પ્રત્યાખ્યાનં કુર્વન્તિ, અપ્રત્યાખ્યાનં કુર્વન્તિ, પ્રત્યાખ્યાનાઽપ્રત્યાખ્યાનં કુર્વન્તિ ? યથા ઔધિકસ્તથા કરણમ્ । જીવાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કિં પ્રત્યાખ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાઃ, અપ્રત્યાખ્યાનનિર્વર્તિતા યુષ્કાઃ, પ્રત્યાખ્યાનાઽપ્રત્યાખ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાઃ ? ગૌતમ ! જીવાથ વૈમાનિકાથ પ્રત્યા-

ન જાણંતિ) જો જીવ પંચેન્દ્રિય હૈં વે તીનોં કો જાનતે હૈં । વાકી કે જીવ પ્રત્યાખ્યાન કો નહીં જાનતે હૈં । ઇસી તરહ સે વે અપ્રત્યાખ્યાન કો નહીં જાનતે હૈં ઓર પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાન કો ખા નહીં જાનતે હૈં । (જીવાણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષ્ણાણં કુલ્લંતિ, અપચ્ચક્ષ્ણાણં કુલ્લંતિ, પચ્ચક્ષ્ણાણાપચ્ચક્ષ્ણાણં કુલ્લંતિ) હે ભદન્ત ! જીવ કયા પ્રત્યાખ્યાન કરતે હૈં ? અપ્રત્યાખ્યાન કરતે હૈં ? પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાન કરતે હૈં ? (જહા ઓહિયા તહા કુલ્લના) હે ગૌતમ ! જિસ પ્રકારસે ઔધિક દણ્ડક કહા હૈં ડસી પ્રકાર સે પ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા જાનના ચાહિયે । (જીવાણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા, અપચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા પચ્ચક્ષ્ણાણાપચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા ?) હે ભદન્ત ! જીવ કયા પ્રત્યાખ્યાન સે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હૈં કયા ? અપ્રત્યાખ્યાનસે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હૈં કયા ? પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાન સે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હૈં કયા ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (જીવા ય વૈમાણિયા ય પચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા, તિન્નિ વિ, અવસેસા અપચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા)

પચ્ચક્ષ્ણાણં ન જાણંતિ) પંચેન્દ્રિય એવે ત્રણેને જાણે છે. બાકીના એવે પ્રત્યાખ્યાનને જાણતા નથી અને પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાનને પણ જાણતા નથી.

(જીવાણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષ્ણાણં કુલ્લંતિ, અપચ્ચક્ષ્ણાણં કુલ્લંતિ, પચ્ચક્ષ્ણાણાપચ્ચક્ષ્ણાણં કુલ્લંતિ ?) હે ભદન્ત ! એવે શું પ્રત્યાખ્યાન કરે છે ? અપ્રત્યાખ્યાન કરે છે ? પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાન કરે છે ?

(જહા ઓહિયા તહા કુલ્લના) હે ગૌતમ ! ઔધિક (સામાન્ય એવ) દંડકમાં જે પ્રમાણે કહ્યું છે એજ પ્રમાણે પ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાના વિષયમાં પણ સમજવું. (જીવાણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા, અપચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા, પચ્ચક્ષ્ણાણાપચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા ?) હે ભદન્ત ! એવે શું પ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા થાય છે ? શું એવે અપ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા થાય છે ? શું એવે પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા થાય છે ?

(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (જીવા ય વૈમાણિયાય પચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા, તિન્નિ વિ અવસેસા અપચ્ચક્ષ્ણાણનિવ્વત્તિયાડયા) એવ અને વૈમાનિક દેવે

રૂપાનિર્વર્તિતાયુષ્માઃ, ધ્રુવોઽપિ । અવશેષાઃ પ્રપત્યારૂપાનિર્વર્તિતાયુષ્માઃ ॥

(ગાથા)—પ્રત્યારૂપાનં જાનાતિ, કરોતિ, પ્રીયમેવ, પ્રાયુર્નિર્ણુતિઃ ।

સપ્રદેશોદેશો ચ પચમેતે દણ્ડકાધત્વારઃ, ॥ ૧ ॥

તદેવં ભદન્ત ! તદેવં ભદન્ત ! ઇતિ ॥ મુ ૨ ॥

પચ્ચક્ષ્ણકે ચતુર્થઉપેશઃ ॥ ૬-૪

ટીકા— ' જીવાણં મંતે । કિં પચ્ચક્ષ્ણાણી, પ્રપત્યાક્ષ્ણાણી, પચ્ચક્ષ્ણાણા-પચ્ચક્ષ્ણાણી ? ' ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—હે ભદન્ત ! જીવાઃ સ્વત્તુ કિં પ્રત્યારૂપાનિનઃ—જીવ ઓર વૈમાનિક દેવ પ્રત્યારૂપાન સે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હૈં । અપ્રત્યારૂપાન સે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હૈં । પ્રત્યારૂપાનાપ્રત્યારૂપાન સે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હૈં । તથા ચાકી કે જીવ અપ્રત્યારૂપાન સે નિર્વર્તિત આયુવાલે હોતે હૈં । (ગાઠા-પચ્ચક્ષ્ણાણં જાણઈ, કુવ્વઈ તિન્નેવ આઽનિવ્વત્તી । સપ્પસુદ્દેસમ્મિય પમેવ દંડગા ચરો) “ પ્રત્યા-રૂપાન ” યહ એક દણ્ડક હૈં । “ જાનાતિ ” યહ દિત્તીયદણ્ડક હૈં । “ કુ-વ્વઈ ” યહ તીસરા દણ્ડક હૈં । પ્રત્યારૂપાન, અપ્રત્યારૂપાન ઓર પ્રત્યા-રૂપાનાપ્રત્યારૂપાન इन तीनों को जानता है, करता है तथा आयुष्क की निवृत्ति करता है—ऐसा यह चतुर्थ दण्डक है सप्रदेश उद्देशक में इस प्रकार से ये चार दण्डक हैं । (सेवं मंते ! सेवं मंते ! ति) हे भदन्त ! जैसा आपने कहा है वह ऐसा ही है, हे भदन्त ! वह ऐसा ही है ।

ટીકાર્થ—જીવ કા અધિકાર હોને કે કારણ સૂત્રકાર इनके प्रत्या-रूपान आदि का निरूपण इस सूत्र द्वारा कर रहे हैं—इसमें गौतम ने

પ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા થાય છે, અપ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુ-વાળા થાય છે, અને પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા થાય છે, તથા બાકીના જીવો અપ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા થાય છે.

(ગાઠા-પચ્ચક્ષ્ણાણં જાણઈ, કુવ્વઈ તિન્નેવ આઽનિવ્વત્તી સપ્પસુદ્દેસમ્મિય પમેવ દંડગા ચરો) “ પ્રત્યાખ્યાન ” આ એક દંડક છે, “ જાનાતિ (જાણે છે) ” આ બીજું દંડક છે, “ કુવ્વઈ (કરે છે) ” આ ત્રીજું દંડક છે. “ પ્રત્યા-ખ્યાન, અપ્રત્યાખ્યાન અને પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનને જાણે છે, કરે છે તથા આયુષ્કની નિવૃત્તિ કરે છે, ” એવું ચોથું દંડક છે. સપ્રદેશ ઉદ્દેશકમાં આ પ્રકારના આ ચાર દંડક છે.

(સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! તિ) હે ભદન્ત ! આપે કહ્યા પ્રમાણે જ છે. હે ભદન્ત ! આપની વાત સર્વથા સત્ય જ છે.

ટીકાર્થ—જીવને અધિકાર ચાલી રહ્યો છે. તેથી સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં પ્રશ્નોત્તરો દ્વારા જીવનાં પ્રત્યાખ્યાન આદિનું નિરૂપણ કરે છે—

સર્વવિરતિમન્તઃ, અથવા અપ્રત્યાખ્યાનિનઃ વિરતિરહિતાઃ ‘ પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યા-
નિનો દેશવિરતિમન્તો વા ભવન્તિ ? ભગવાનાહ-‘ ગોયમા ! જીવા પચ્ચક્ષણી
વિ, અપચ્ચક્ષણી વિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણી વિ ’ હે ગૌતમ ! જીવાઃ કેચિત્
પ્રત્યાખ્યાનિનોઽપિ સર્વવિરતા અપિ ભવન્તિ, કેચિદ્ જીવા અપ્રત્યાખ્યાનિનોઽપિ
અવિરતા અપિ ભવન્તિ, કેચિચ્ચ જીવાઃ પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનોઽપિ દેશવિરતા

પ્રશ્ન સે એસા પૂછા હૈ કિ-“ જીવાણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષણી, અપચ્ચ-
ક્ષણી, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણી ? ” હે મહન્ત ! જીવ કયા પ્રત્યાખ્યા
ની-સર્વવિરતિવાલે હોતે હૈં ? અથવા-અપ્રત્યાખ્યાની-સર્વવિરતિ સે રહિત
હોતે હૈં ? યા પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાની-દેશવિરતિવાલે હોતે હૈં ? હસ ગૌત-
મકે પ્રશ્નકે ઉત્તારમેં પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હૈં કિ-(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (જીવા)
જીવ (પચ્ચક્ષણી વિ, અપચ્ચક્ષણી વિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચ-
ક્ષણી વિ) પ્રત્યાખ્યાની ભી હોતે હૈં, અપ્રત્યાખ્યાની ભી હોતે હૈં ઓર
પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાની ભી હોતે હૈં । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ હસ
સંસાર મેં કિતનેક એસે ભી જીવ હૈં, જો સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રવાલે
હોતે હૈં-કિતનેક એસે ભી જીવ હૈં કિ જીનકે કિસી ભી પ્રકાર કી
વિરતિ નહીં હોની હૈ-અવિરત હોતે હૈં । ઓર કિતનેક જીવ એસે ભી
હોતે હૈં કિ જો દેશવિરતિરૂપ શ્રાવકાચાર કો ધારણ કિયે હુપ હોતે હૈં ।

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે-(જીવાણં મંતે !
કિં પચ્ચક્ષણી, અપચ્ચક્ષણી, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણી ?) હે મહન્ત ! એવો
શુ પ્રત્યાખ્યાની-સર્વ વિરતિવાળા-હોય છે ? કે અપ્રત્યાખ્યાની-સર્વ વિરતિ
રહિત-હોય છે ? કે પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાની-દેશવિરતિવાળા (અંશતઃ
વિરતિયુક્ત) હોય છે ?

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-
(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જીવા) એવો (પચ્ચક્ષણી વિ, અપચ્ચક્ષણી
વિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણી વિ) પ્રત્યાખ્યાની પણ હોય છે, અપ્રત્યાખ્યાની
પણ હોય છે, અને પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાની પણ હોય છે. આ કથનનો
ભાવાર્થ એ છે કે આ સંસારમાં કેટલાક એવાં જીવો હોય છે કે જેઓ
સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રવાળા હોય છે, કેટલાક એવાં પણ જીવો હોય છે કે
જેઓ કોઈ પણ પ્રકારની વિરતિથી રહિત-અવિરત હોય છે, અને કેટલાક
એવાં પણ જીવો હોય છે કે જેમણે દેશવિરતિરૂપ શ્રાવકાચારને અંગીકાર
કરેલ હોય છે.

અપિ ભવન્તિ, ' સઙ્ગજીવાણં एवં પુચ્છા ' સઙ્ગજીવાણાં નૈરપિદ્ધાદીનામપિ એવમ્-
જીવતામાન્યવદેવ પુચ્છા ગૌતમસ્ય પ્રશ્નો વિજેયઃ । મગધનાદ- ' ગોયમા ! નેર-
હયા અપચ્ચક્ષ્ણાણી જાવ-ચત્તરિંદિયા ' હે ગૌતમ ! નૈરપિદ્ધાઃ અપ્રત્યાહ્યાનિનો-
વિરતિરહિતા ભવન્તિ, યાવત્-ચત્તરિંદ્રિયા અપિ અપ્રત્યાહ્યાનિનઃ અવિસ્તા ભવન્તિ,
યાવત્-રૂપાત્-ભાવપત્તય એકેન્દ્રિયાઃ પૃથિવ્યાદયઃ પદ્મ સ્વારાઃ, દ્વીન્દ્રિયાઃ
ત્રીન્દ્રિયાઃ સંગ્રાહાઃ, કિન્તુ ' સેતા દો પડિસેદ્દેપગ્ગા ' નૈરપિદ્ધાદિચત્તરિંદ્રિયપર્થ-

અવ ગૌતમ હસી પાતકો જાનને કે લિપે નારક આદિ જીવોંકે વિષયમેં
પ્રશ્નુ સે એસા કહતે હેં ફિ હે ભદન્ત ! " સઙ્ગજીવાણં एवં પુચ્છા "
મેરી ઇચ્છા ઇસાં પ્રકાર સે સવ જીવોં કે પ્રત્યાહ્યાન આદિ કો જાનને કે
લિપે હો રહી હેં સો આપ મુદ્દે સમજાઈયે-કયોં ફિ અમી તક તો આપને
હમેં સામાન્યરૂપ સે જીવ કે વિષય મેં પ્રત્યાહ્યાન આદિ કો સમજાયા
હેં । ગૌતમકે હસ પ્રશ્ન કા સમાધાન કરને કે નિમિત્ત પ્રશ્નુ ડનસે કહતે
હેં ફિ- ' ગોયમા ' હે ગૌતમ ! (નેરહયા અપચ્ચક્ષ્ણાણી જાવ ચત્તરિંદિયા)
નારક જીવ અપ્રત્યાહ્યાની હોતે હેં-કયોં ફિ ડનકે કિસી મી
પ્રકાર કો વિરતિ કા ઉદય નહોં હો સકતા હેં । ઇસી પ્રકાર સે
ચૌદન્દ્રિય જીવ મી અપ્રત્યાહ્યાની હોતે હેં । યહાં પર યાવત્ શબ્દ સે-
" ભવનપતિ, એકેન્દ્રિય જીવ-અર્થાત્ પૃથિવ્યાદિક પાંચ સ્થાવર, દ્વીન્દ્રિય,
તેજન્દ્રિય " ઇન સવકા ગ્રહણ હુઆ હેં । અતઃ જય યે સવ જીવ અપ્રત્યા-

હવે ગૌતમ સ્વામી નારકાદિ જીવોના વિષયમાં પણ આ પ્રકારનો જ
પ્રશ્ન પૂછે છે- (સઙ્ગજીવાણં एवં પુચ્છા) હે ભદન્ત ! સમસ્ત જીવોના
પ્રત્યાહ્યાન આદિના વિષયમાં પણ મારો એજ પ્રકારનો પ્રશ્ન છે. આપે
સામાન્ય રૂપે જીવના પ્રત્યાહ્યાન આદિ વિષે તો સમજાવ્યું, પણ હવે નારક
આદિ પ્રત્યેક પર્થાયના જીવોના પ્રત્યાહ્યાન આદિ વિષે જાણવાની મારી ઈચ્છા છે.

મહાવીર પ્રશ્નુ ગૌતમ સ્વામીને આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે- (ગોયમા !)
હે ગૌતમ ! (નેરહયા અપચ્ચક્ષ્ણાણી જાવ ચત્તરિંદિયા) નારક જીવો અપ્રત્યા-
હ્યાની હોય છે, કારણ કે તેઓમાં કોઈ પણ પ્રકારની વિરતિનો ઉદય સંભવી
શકતો નથી. એજ પ્રમાણે ચત્તરિંદ્રિય પર્થાન્તના જીવો પણ અપ્રત્યાહ્યાની
હોય છે. અહીં " જાવ (પર્થાન્ત) " પદ્યથી " ભવનપતિ, એકેન્દ્રિય જીવો
(પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ સ્થાવર) દ્વીન્દ્રિય અને તેજન્દ્રિય " આટલા જીવોને
ગ્રહણ કરવા. આ રીતે એ બધાં જીવો અપ્રત્યાહ્યાની (અવિસ્ત) હોવાથી.
તેમને પ્રત્યાહ્યાની પણ કહ્યા નથી અને પ્રત્યાહ્યાના-પ્રત્યાહ્યાની પણ કહ્યા

ન્તાનાં શેષો દ્વી પ્રત્યાખ્યાન-પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનાત્મકો પ્રતિપેદયિતવ્યો, તથાદિ-નૈરપેક્ષાદિચતુરિન્દ્રિયાન્તા નો પ્રત્યાખ્યાનિનઃ સર્વવિરતાઃ, નો વા પ્રત્યા-
ખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનો દેશવિરતા ભવન્તિ તેપામવિસ્તૃત્વાત્, ' પંચિદિયતિરિક્ષ-
જોગિયા ણો પચ્ચક્ષણી, અપચ્ચક્ષણી વિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણીવિ,' પચ્ચ-
ન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિકાઃ નો પ્રત્યાખ્યાનિનઃ ન સર્વવિરતા ભવન્તિ કિન્તુ અપ્રત્યા-
ખ્યાનિનોઽપિ કેચિદ્ અવિરતા અપિ ભવન્તિ, કેચિત્ પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનો

ખ્યાની-અવિરત હોતે હૈં તો હસી કારણ સે યદાં પર (સેસા દો પહિસે
હેયઠ્ઠા) પ્રત્યાખ્યાની હોને કા ઓર પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાની હોને કા
પ્રતિપેદ કિયા ગયા હૈં । ચારિત્રમોહનીય કર્મકી પ્રકૃતિ જો પ્રત્યાખ્યાના-
ચરણ ક્રોધ માન માયા લોભ હૈં ઉસકે અભાવસે તો સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યા-
ખ્યાન હોતા હૈં ઓર અપ્રત્યાખ્યાનચરણ ક્રોધ માન માયા લોભકે અભાવ
સે શ્રાવકકા દેશવિરતિરૂપ ચારિત્ર હોતા હૈં-સો નારક જીવોં મેં યાવત્
ચૌદિન્દ્રિય જીવોંમેં હનકા અભાવ નહીં હોના હૈં । કારણ કિ નારક આદિ
જીવોં મેં એસી યોગ્યતા નહીં હૈં ઓર એકેન્દ્રિયાદિક જીવોં મેં મન કા
અભાવ હૈં । સંજી પંચેન્દ્રિય પર્યાસ જીવોં કે હી ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હોના
કહા ગયા હૈં । ' પંચિદિયતિરિક્ષ જોગિયા ણો પચ્ચક્ષણી અપચ્ચ-
ક્ષણી વિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણી વિ ' પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્યોં કે સર્વ
વિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન નહીં હોતા હૈં । કારણ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કે
નિયમોં કા પ્રતિપાલન ઉનસે અપની અવસ્થા મેં પૂર્ણરૂપ સે યથાવત્ હો

નથી. એજ વાત (સેસા દો પહિસેહેયઠ્ઠા) આ સૂત્રમાં પ્રકટ કરી છે એટલે
કે અપ્રત્યાખ્યાની સિવાયના બંને વિકલ્પોનો અહીં અસ્વીકાર સમજવો.
ચારિત્ર મોહનીય કર્મની પ્રકૃતિ જે પ્રત્યાખ્યાનાવરણ ક્રોધ, માન, માયા અને
લોભ છે, તેના અભાવથી તો સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન થાય છે, અને અપ્ર-
ત્યાખ્યાનાવરણ ક્રોધ, માન, માયા અને લોભના અભાવથી શ્રાવકનું દેશવિરતિ
રૂપ ચારિત્ર સંભવે છે. પણ નારકથી ચતુરિન્દ્રિ પર્યાન્તના જીવોમાં તેમનો
અભાવ હોતો નથી. કારણ કે નારક આદિ જીવોમાં એવી યોગ્યતા હોતી નથી
અને એકેન્દ્રિયથી ચતુરિન્દ્રિય પર્યાન્તના જીવોમાં મનનો અભાવ હોય છે.
સંજી પંચેન્દ્રિય પર્યાસ જીવોમાં જ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ સંભવી શકે છે.

(પંચિદિયતિરિક્ષજોગિયા ણો પચ્ચક્ષણી, અપચ્ચક્ષણી વિ, પચ્ચક્ષણા
પચ્ચક્ષણી વિ) પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્યોમાં સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન થતા નથી.
કારણ કે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રના નિયમોનું પ્રતિપાલન તે અવસ્થામાં યોગ્ય

અપિ ભવન્તિ, ' સઙ્ગજીવાણં एवં પુચ્છા ' તર્વજીવાનાં નૈરગિહાદીનામપિ એવમ્-
જીવતામાન્યરૂપેણ પૃચ્છા ગૌતમસ્ય પ્રશ્નો વિગ્રયઃ । મગધનાદ- ' ગોયમા ! નેર-
હયા અપચ્ચક્ષણી જાવ-ચત્તરિંદિયા ' હે ગૌતમ ! નૈરગિહાઃ અપ્રત્યાહ્યાનિનો-
ધિરતિરહિતા ભવન્તિ, યાવત્-ચત્તરિંદ્રિયા અપિ અપ્રત્યાહ્યાનિનઃ અવિરતા ભવન્તિ,
યાવત્-રૂપણાત્-ભવનપતિ પકેન્દ્રિયાઃ પૃથિગ્વાદયઃ પદ્મ સ્વામરાઃ, દ્વીન્દ્રિયાઃ
ત્રીન્દ્રિયાઃ સંગ્રાહાઃ, કિન્તુ ' સેતા દો પડિસેહેપચ્છા ' નૈરગિહાદિચત્તરિંદ્રિયપર્ય-

અવ ગૌતમ હસી પાતકો જાનને કે લિપે નારક આદિ જીવોંકે વિષયમેં
પ્રશ્ન સે એસા કહતે હેં ફિ હે ભદન્ત ! " સઙ્ગજીવાણં एवં પુચ્છા "
મેરી ઇચ્છા હસી પ્રકાર સે સવ જીવોંકે પ્રત્યાહ્યાન આદિ કો જાનને કે
લિપે હો રહી હેં સો આપ મુક્તે સમજાઈયે-કર્ગોં ફિ અમી તક તો આપને
હમેં સામાન્યરૂપ સે જીવ કે વિષય મેં પ્રત્યાહ્યાન આદિ કો સમજાપા
હેં । ગૌતમકે હસ પ્રશ્ન કા સમાધાન કરને કે નિમિત્ત પ્રશ્ન ઉનસે કહતે
હેં ફિ- ' ગોયમા ' હે ગૌતમ ! (નેરહયા અપચ્ચક્ષણી જાવ ચત્તરિંદિયા)
નારક જીવ અપ્રત્યાહ્યાની હોતે હેં-કર્ગોં ફિ ઉનકે કિસી મી
પ્રકાર કી વિરતિ કા ઉદય નહીં હો સકતા હેં । હસી પ્રકાર સે
ચૌદન્દ્રિય જીવ મી અપ્રત્યાહ્યાની હોતે હેં । યહાં પર યાવત્ શબ્દ સે-
" ભવનપતિ, પકેન્દ્રિય જીવ-અર્થાત્ પૃથિગ્વાદિક પાંચ સ્થાવર, દ્વીન્દ્રિય,
તેજન્દ્રિય " હન સવકા ગ્રહણ હુઆ હેં । અતઃ જય યે સવ જીવ અપ્રત્યા-

હવે ગૌતમ સ્વામી નારકાદિ જીવોના વિષયમાં પણ આ પ્રકારનો જ
પ્રશ્ન પૂછે છે- (સઙ્ગજીવાણં एवં પુચ્છા) હે ભદન્ત ! સમસ્ત જીવોના
પ્રત્યાહ્યાન આદિના વિષયમાં પણ મારો એજ પ્રકારનો પ્રશ્ન છે. આપે
સામાન્ય રૂપે જીવના પ્રત્યાહ્યાન આદિ વિષે તો સમજાવ્યું, પણ હવે નારક
આદિ પ્રત્યેક પર્યાયના જીવોના પ્રત્યાહ્યાન આદિ વિષે જાણવાની મારી ઇચ્છા છે.

મહાવીર પ્રશ્ન ગૌતમ સ્વામીને આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે- (ગોયમા !)
હે ગૌતમ ! (નેરહયા અપચ્ચક્ષણી જાવ ચત્તરિંદિયા) નારક જીવો અપ્રત્યા-
હ્યાની હોય છે, કારણ કે તેઓમાં કોઈ પણ પ્રકારની વિરતિનો ઉદય સંભવી
શકતો નથી. એજ પ્રમાણે ચત્તરિંદ્રિય પર્યંતના જીવો પણ અપ્રત્યાહ્યાની
હોય છે. અહીં " જાવ (પર્યંત) " પદથી " ભવનપતિ, એકેન્દ્રિય જીવો
(પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ સ્થાવર) દ્વીન્દ્રિય અને તેજન્દ્રિય " આટલા જીવોને
ગ્રહણ કરવા. આ રીતે એ જાણાં જીવો અપ્રત્યાહ્યાની (અવિરત) હોવાથી.
તેમને પ્રત્યાહ્યાની પણ કહ્યા નથી અને પ્રત્યાહ્યાના-પ્રત્યાહ્યાની પણ કહ્યા

ત્વાનાં શેષો દ્વૌ પ્રત્યાખ્યાન-પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનાત્મકૌ પ્રતિષેધયિતવ્યૌ,
ત્યાદિ-નૈરયિકાદિચતુરિન્દ્રિયાન્તા નો પ્રત્યાખ્યાનિનઃ સર્વવિરતાઃ, નો વા પ્રત્યા-
ખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનો દેશવિરતા ભવન્તિ તેષામવિરતત્વાત્, ' પંચિદિયતિરિક્લ-
જોગિયા ણો પચ્ચક્ષ્ણાણી, અપચ્ચક્ષ્ણાણી ચિ, પચ્ચક્ષ્ણાણાપચ્ચક્ષ્ણાણીચિ, ' પચ્ચ-
ન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિકાઃ નો પ્રત્યાખ્યાનિનઃ ન સર્વવિરતા ભવન્તિ કિન્તુ અપ્રત્યા-
ખ્યાનિનોઽપિ કેચિદ્ અવિરતા અપિ ભવન્તિ, કેચિત્ પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનિનો

અપ્રત્યાખ્યાની-અવિરત હોતે હૈં તો ઇમી કારણ સે યદાં પર (સેસા દો પહિસે
હેયઠ્ઠા) પ્રત્યાખ્યાની હોને કા ઓર પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાની હોને કા
પ્રતિષેધ કિયા ગયા હૈં । ચારિત્રમોહનીય વર્મકી પ્રકૃતિ જો પ્રત્યાખ્યાના-
વરણ ક્રોધ માન માયા લોભ હૈં ઉસકે અભાવસે તો સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યા-
ખ્યાન હોતા હૈં ઓર અપ્રત્યાખ્યાનવરણ ક્રોધ માન માયા લોભકે અભાવ
સે શ્રાવકકા દેશવિરતિરૂપ ચારિત્ર હોતા હૈં-સો નારક જીવોં મેં યાવત્
ચૌદિન્દ્રિય જીવોંમેં ઇનકા અભાવ નહીં હોતા હૈં । કારણ કિ નારક આદિ
જીવોં મેં એસી યોગ્યતા નહીં હૈં ઓર એકેન્દ્રિયાદિક જીવોં મેં મન કા
અભાવ હૈં । સંસી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત જીવોં કે હી ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હોના
કહા ગયા હૈં । ' પંચિદિયતિરિક્લ જોગિયા ણો પચ્ચક્ષ્ણાણી અપચ્ચ-
ક્ષ્ણાણી ચિ, પચ્ચક્ષ્ણાણાપચ્ચક્ષ્ણાણી ચિ ' પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્યોં કે સર્વ
વિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન નહીં હોતા હૈં । કારણ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કે
નિયમોં કા પ્રતિપાલન ઉનસે અપની અવસ્થા મેં પૂર્ણરૂપ સે યથાવત્ હો

નથી. એજ વાત (સેસા દો પહિસેહેયઠ્ઠા) આ સૂત્રમાં પ્રકટ કરી છે એટલે
કે અપ્રત્યાખ્યાની સિવાયના બંને વિકલ્પોના અહીં અસ્વીકાર સમજવો.
ચારિત્ર મોહનીય કર્મની પ્રકૃતિ જે પ્રત્યાખ્યાનાવરણ ક્રોધ, માન, માયા અને
લોભ છે, તેના અભાવથી તો સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન થાય છે, અને અપ્ર-
ત્યાખ્યાનાવરણ ક્રોધ, માન, માયા અને લોભના અભાવથી શ્રાવકનું દેશવિરતિ
રૂપ ચારિત્ર સંભવે છે. પણ નારકથી ચતુરિન્દ્રિય પર્યાપ્તના જીવોમાં તેમનો
અભાવ હોતો નથી. કારણ કે નારક આદિ જીવોમાં એવી યોગ્યતા હોતી નથી
અને એકેન્દ્રિયથી ચતુરિન્દ્રિય પર્યાપ્તના જીવોમાં મનનો અભાવ હોય છે.
સંસી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત જીવોમાં જ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ સંભવી શકે છે.

(પંચિદિયતિરિક્લજોગિયા ણો પચ્ચક્ષ્ણાણી, અપચ્ચક્ષ્ણાણી ચિ, પચ્ચક્ષ્ણા-
ણાપચ્ચક્ષ્ણાણી ચિ) પંચેન્દ્રિય તિર્યગ્યોમાં સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન થતા નથી.
કારણ કે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રના નિયમોનું પ્રતિપાલન તે અવસ્થામાં યોગ્ય

જીવાઃ સ્વલુ કિમ્ પ્રત્યાહ્યાનં જ્ઞાનન્તિ, અપ્રત્યાહ્યાનં જ્ઞાનન્તિ પ્રત્યાહ્યાનામપ્રત્યાહ્યાનં જ્ઞાનન્તિ ? મગધનાહ—‘ ગોયમા ! જે પંચેદિયા તે તિણિવિ જાણંતિ ’ હે ગૌતમ ! જે પંચેન્દ્રિયાઃ તિયંગ્યોનિકા મનુષ્યાશ્ચ તથા નૈરયિકાદયશ્ચ તે ગ્રીષ્યપિ પ્રત્યાહ્યાનામ્, અપ્રત્યાહ્યાનં, પ્રત્યાહ્યાનામપ્રત્યાહ્યાનં ચ જ્ઞાનન્તિ, તેવાં સમનસ્કતયા સમ્પર્ગદ્દિષ્ટિચે જ્ઞપરિજ્ઞયા પ્રત્યાહ્યાનાદિત્રયજ્ઞાનસંભવાત્, કિન્તુ ‘ અવસેસા પચ્ચક્ષણં ન જાણંતિ ’ અવશેષાઃ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદયઃ, વિકલેન્દ્રિયા અસંજ્ઞિપંચેન્દ્રિયાશ્ચ પ્રત્યાનાદિત્રયં ન જ્ઞાનન્તિ, તેવામમનસ્કત્વાત્ । પ્રત્યાહ્યાનં

જાણંતિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણં જાણંતિ ’ હે મદન્ત । જીય કયા પ્રત્યાહ્યાન કો જાનતે હું ? અપ્રત્યાહ્યાન કો જાનતે હું ? પ્રત્યાહ્યાનપ્રત્યાહ્યાનકો જાનતે હું ? ઉત્તરમે પ્રશ્નુ ડનસે કહતે હું—‘ ગોયમા ! હે ગૌતમ ! (જે પંચેદિયા તે તિણિ વિ જાણંતિ) જો પંચેન્દ્રિય તિયંચ ઓર મનુષ્ય નારક આદિ જીવ હું વે તો પ્રત્યાહ્યાન, અપ્રત્યાહ્યાન, ઇવં પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાન ઇન તીનોંકો જાનતે હું । ક્યોંકિ યે સય સમનસ્ક હોતે હું ઇસ કારણ ઇનકે સમ્પર્ગદર્શન હો સકતા હૈ—ઓર ડસ સમય યે જ્ઞપરિજ્ઞા દ્વારા પ્રત્યાહ્યાન આદિ તીનોંકો જાનતે હું । ‘ અવસેસા પચ્ચક્ષણં ન જાણંતિ ’ અવશિષ્ટ જો એકેન્દ્રિય પૃથિવ્યાદિક જીવ હું વે તથા વિકલેન્દ્રિય ઇવં અસંજ્ઞી જો જીવ હું વે પ્રત્યાહ્યાન આદિ ત્રયકો નહીં જાનતે હું । ક્યોં કિ ઇન સય કે જાનને કા સાધનભૂત મન નહીં હોતા હૈ । યે સય અમનસ્ક હોતે હું । પ્રત્યાહ્યાન તપ હોતા હૈ કિ જય વહ કિયા

હવે પ્રત્યાખ્યાનને જાણે છે ? અપ્રત્યાખ્યાનને જાણે છે ? પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાનને જાણે છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્નુ કહે છે—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જે પંચેદિયા તે તિણિ વિ જાણંતિ) જે પંચેન્દ્રિય તિયંચ, અને મનુષ્ય નારક આદિ હવ છે તેઓ તો પ્રત્યાખ્યાન, અપ્રત્યાખ્યાન અને પ્રત્યાખ્યાના પ્રત્યાખ્યાન, એ ત્રણેને જાણે છે, કારણ કે તેઓ બધાં સમનસ્ક હોય છે તેથી તેમને સમ્યગ્દર્શન સંભવી શકે છે, અને તે સમયે તેઓ જ્ઞપરિજ્ઞા દ્વારા પ્રત્યાખ્યાન આદિ ત્રણેને જાણે છે. (અવસેસા પચ્ચક્ષણં ન જાણંતિ) બાકીના હવે—એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિ હવે તથા વિકલેન્દ્રિય હવે તથા અસંજ્ઞી હવે પ્રત્યાખ્યાન આદિ ત્રણેને જાણતા નથી, કારણ કે તે ત્રણેનાં જાણવાના સાધનરૂપ મનને અભાવ હોય છે. પ્રત્યાખ્યાન ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે તે કરવામાં આવે છે. એ વાતને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે—

ચ તદા ભવેત્ યદા કૃતં સ્યાત્ અતસ્તત્કરણં પ્રતિપાદયિતુમાહ—‘ જીવા ણં
મંતે ! કિં પચ્ચક્કલાણં કુવ્વંતિ, અપચ્ચક્કલાણં કુવ્વંતિ પચ્ચક્કલાણાપચ્ચ-
ક્કલાણં કુવ્વંતિ ? ’ ગૌતમઃ પૂચ્છતિ-હે મદન્ત ! જીવાઃ સ્વલુ કિમ્ પ્રત્યા-
ખ્યાનં કુર્વન્તિ, અપ્રત્યાખ્યાનં વા કુર્વન્તિ, પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનં કુર્વન્તિ, ?
ભગવાનાહ—‘ જહા ઓહિયા તદા કુવ્વણા ’ હે ગૌતમ ! યથા ઔધિકાઃ સમુચ્ચય
જીવાઃ પ્રતિપાદિતાઃ તથા કરણં પ્રત્યાખ્યાનાદિકરણમપિ વિજ્ઞાતવ્યમ્, તથા ચ
સામાન્યજીવેષુ પ્રત્યાખ્યાનિત્વાદિત્રિતયસ્યાપિ પૂર્વં પ્રતિપાદિતત્વેન અત્રાપિ પ્રત્યા-
ખ્યાનાદિત્રયસ્ય કરણમપિ વોધ્યમ્, एवं ચ કેચિદ્ જીવાઃ પ્રત્યાખ્યાનમપિ
કુર્વન્તિ, કેચિત્ અપ્રત્યાખ્યાનમપિ કુર્વન્તિ પ્રત્યાખ્યાનં ન કુર્વન્તિ, કેચિત્ પ્રત્યા-
ખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનમપિ કુર્વન્તિ, પ્રત્યાખ્યાનમ્ આયુષ્યવંધકારણમપિ ભવતીતિ

જાતા હૈ—અતઃ इसी बात को गौतमस्वामी प्रभु से पूछते हैं कि—(जीवा
णं मंते ! किं पचचक्खाणं कुव्वंति अपचचक्खाणं कुव्वंति पचचक्खाणा
पचचक्खाणं कुव्वंति) हे भदन्त ! जीव क्या प्रत्याख्यान करते हैं ?
अप्रत्याख्यान करते हैं ? प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यान करते हैं ? इसके उत्त-
रमें प्रभु उनसे कहते हैं कि—हे गौतम ! (जहा ओहिया तदा कुव्वणा)
जिस प्रकार से सामान्य जीव प्रतिपादित हुए हैं उसी प्रकार से प्रत्या-
ख्यान आदिका करना भी जानना चाहिये । इस तरह से यह समझ
लेना चाहिये कि कितनेक जीव ऐसे भी हैं जो प्रत्याख्यान को भी करते
हैं । कितनेक जीव ऐसे हैं जो प्रत्याख्यान को नहीं अप्रत्याख्यानको भी
करते हैं । कितनेक जीव ऐसे हैं जो प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यान को भी करते
हैं । प्रत्याख्यान आयुष्यबंध का भी कारण होता है इसलिये प्रत्याख्यान
करण के बाद अब गौतम इसके द्वारा जीव आयुष्क का भी क्या बंध

(जीवाणं मंते ! किं पचचक्खाणं कुव्वंति ? अपचचक्खाणं कुव्वंति
पचचक्खाणा पचचक्खाणं कुव्वंति) हे भदन्त ! एवं तुं प्रत्याખ્યાન કરે છે ?
અપ્રત્યાખ્યાન કરે છે ? પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાન કરે છે :

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—(ગોયમા !) હે ગૌતમ !
(જહા ઓહિયા તદા કુવ્વણા) જે રીતે સામાન્ય જીવના પ્રત્યાખ્યાન આદિનું
પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે, એજ પ્રમાણે પ્રત્યાખ્યાન આદિ કરવાના વિષ-
યમાં પણ સમજવું, કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કેટલાક જીવો એવાં હોય છે
કે જે પ્રત્યાખ્યાન કરે છે, કેટલાક જીવો એવાં હોય છે કે જે પ્રત્યાખ્યાન
કરતા નથી પણ અપ્રત્યાખ્યાન કરે છે, અને કેટલાક જીવો એવાં હોય છે કે
જે પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાન પણ કરે છે.

પ્રત્યાખ્યાન આયુષ્યબંધમાં પણ કારણરૂપ બને છે, તેથી પ્રત્યાખ્યાનકરણનું
પ્રતિપાદન કર્યો પછી હવે ગૌતમ સ્વામી એ બધુવા માગે છે કે પ્રત્યાખ્યાન

જીવાઃ સ્વલુ કિમ્ પ્રત્યાહ્યાનં જ્ઞાનન્તિ, અપ્રત્યાહ્યાનં જ્ઞાનન્તિ પ્રત્યામયાનાપ્રત્યાહ્યાનં જ્ઞાનન્તિ ? મગધનાદ-^૧ ગોયમા ! જે પંચેન્દ્રિયા તે તિષ્ઠિન્તિ જાણંતિ ' હે ગૌતમ ! જે પંચેન્દ્રિયાઃ તિર્યગ્યોનિકા મનુષ્યાશ્ચ તથા નૈરયિકાદયશ્ચ તે ગ્રીભ્યપિ પ્રત્યાહ્યાનામ્, અપ્રત્યાહ્યાનં, પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાનં ન જ્ઞાનન્તિ, તેવાં સમનસ્કતયા સમ્યગ્દર્શિસ્વે સુપરિજ્ઞયા પ્રત્યાહ્યાનાદિત્રયજ્ઞાનસંભવાત્, કિન્તુ ' અવસેસા પચ્ચક્ષણં ન જાણંતિ ' અવશેષાઃ એકેન્દ્રિયપૃથિવ્યાદયઃ, વિકલેન્દ્રિયા અસન્નિપથેન્દ્રિયાશ્ચ પ્રત્યાનાદિત્રયં ન જ્ઞાનન્તિ, તેવામમનસ્કત્વાત્ । પ્રત્યાહ્યાનં

જાણંતિ, પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણં જાણંતિ ' હે ભદ્રન્ત ! જીવ કયા પ્રત્યાહ્યાન કો જાનતે હું ? અપ્રત્યાહ્યાન કો જાનતે હું ? પ્રત્યાહ્યાનપ્રત્યાહ્યાનકો જાનતે હું ? ઉત્તરમેં પ્રશ્ન ઉત્તરે કહતે હું-^૨ 'ગોયમા ! હે ગૌતમ ! (જે પંચેન્દ્રિયા તે તિષ્ઠિન્તિ વિ જાણંતિ) જો પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ ઓર મનુષ્ય નારક આદિ જીવ હું જે તો પ્રત્યાહ્યાન, અપ્રત્યાહ્યાન, એવં પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાન હન ત્રીનોંકો જાનતે હું । ક્યોંકિ જે સય સમનસ્ક હોતે હું હસ કારણ હનકે સમ્યગ્દર્શન હો સકતા હૈ-ઓર ઉસ સમય જે સુપરિજ્ઞા દ્વારા પ્રત્યાહ્યાન આદિ ત્રીનોંકો જાનતે હું । ' અવસેસા પચ્ચક્ષણં ન જાણંતિ ' અવશિષ્ટ જો એકેન્દ્રિય પૃથિવ્યાદિક જીવ હું જે તથા વિકલેન્દ્રિય એવં અસંજી જો જીવ હું જે પ્રત્યાહ્યાન આદિ ત્રયકો નહીં જાનતે હું । ક્યોંકિ હન સય કે જાનને કા સાધનભૂત મન નહીં હોતા હૈ । જે સય અમનસ્ક હોતે હું । પ્રત્યાહ્યાન તપ હોતા હૈ કિ જય વહ કિયા

હવે પ્રત્યાખ્યાનને જાણે છે ? અપ્રત્યાખ્યાનને જાણે છે ? પ્રત્યાખ્યાના-પ્રત્યાખ્યાનને જાણે છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે-^૩ (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જે પંચેન્દ્રિયા તે તિષ્ઠિન્તિ વિ જાણંતિ) જે પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ, અને મનુષ્ય નારક આદિ જીવ છે તેઓ તો પ્રત્યાખ્યાન, અપ્રત્યાખ્યાન અને પ્રત્યાખ્યાના પ્રત્યાખ્યાન, એ ત્રણેને જાણે છે, કારણ કે તેઓ બધાં સમનસ્ક હોય છે તેથી તેમને સમ્યગ્દર્શન સંભવી શકે છે, અને તે સમયે તેઓ સુપરિજ્ઞા દ્વારા પ્રત્યાખ્યાન આદિ ત્રણેને જાણે છે. (અવસેસા પચ્ચક્ષણં ન જાણંતિ) બાકીના જીવો-એકેન્દ્રિય પૃથ્વીકાય આદિ જીવો તથા વિકલેન્દ્રિય જીવો તથા અસંજી જીવો પ્રત્યાખ્યાન આદિ ત્રણેને જાણતા નથી, કારણ કે તે ત્રણેમાં જાણવાના સાધનરૂપ મનનો અભાવ હોય છે. પ્રત્યાખ્યાન ત્યાં જ થાય છે કે જ્યાં તે કરવામાં આવે છે. એ વાતને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે—

અપ્રત્યાખ્યાનનિર્વર્તિતાયુક્તિઃ, પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાનનિર્વર્તિતાયુક્તિઃ જીવાઃ
વૈમાનિકા ભાન્તીત્યાશયઃ, વૈમાનિકેષુ પ્રત્યાખ્યાનાદિવ્યવતામ્ સ્વાદાત્ ।

આયુ કા બંધ ઉસને પહિલે યા તો પ્રત્યાખ્યાન સે કિયા હૈ, યા અપ્રત્યા-
ખ્યાન સે કિયા હૈ યા દેશવિરતિ સે કિયા હૈ, તમી વહ વર્તમાન પર્યાય
મેં ઉત્પન્ન હુઆ હૈ । ઇસ તરહ તીનોસે યહ બદ્ધાયુક્ત હો સકતા હૈ । ઇસી
તરહ વૈમાનિક દેવ હોતે હૈ ક્યોં કિ પ્રત્યાખ્યાન સે નિર્વર્તિત હૈ આયુષ્ય
(પ્રત્યાખ્યાન અવસ્થા મેં આયુષ્ય કો બંધ બાંધનેવાલે) જિન્હોં કા એસે
જીવ વૈમાનિક હોતે હૈ તથા અપ્રત્યાખ્યાન સે નિર્વર્તિત હૈ આયુક્ત
જિન્હોં કા એસે જીવ વૈમાનિક હોતે હૈ ઓર પ્રત્યાખ્યાનાપ્રત્યાખ્યાન સે
નિર્વર્તિત હૈ આયુક્ત જિન્હોં કા એસે જીવ વૈમાનિક હોતે હૈ—કહને કા
તાત્પર્ય યહ હૈ કિ અણુવ્રતી ઓર મહાવ્રતી જીવ દેવ આયુ કા હી બંધ
કરતા હૈ (અણુવ્યયમહવ્યયાદિં ન લહ્હદેવાડયં મોક્તું) અણુવ્રતોં ઓર
મહાવ્રતોં કો વહી જીવ પાલતા હૈ જિસે દેવાયુ કા બંધ હો ગયા હોતા
હૈ । એવ આયુક્તબંધ વાલે જીવ અણુવ્રતોં ઓર મહાવ્રતોં કો નહીં પાલ
સકતે હૈ એસા સિદ્ધાન્ત કા મત હૈ તથા ભોગ ભૂમિ કે જીવ જો કિ
પ્રત્યાખ્યાન કા પાલન નહીં કરતે હૈ—અપ્રત્યાખ્યાની હી હોતે હૈ વે મર
કર દેવગતિ મેં હી જાતે હૈ ક્યોં કિ (નિઃશીલવ્રતીત્વં ચ સર્વેષામ્)
એસા આગમ વાક્ય હૈ । ઇસી સવ વિચાર કો છેકર યહાં (તિણિ વિ)

અત્યારે જે પર્યાયમાં છે તે પર્યાયના આયુનો બંધ તેણે પહેલાં કાં તો પ્રત્યા-
ખ્યાનથી કર્યો હોય છે, કાં તો અપ્રત્યાખ્યાનથી કર્યો હોય છે, અથવા તો દેશ
વિરતિથી કર્યો હોય છે, ત્યારે તો તે વર્તમાન પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયો હોય
છે. આ રીતે ત્રણેથી તે બદ્ધાયુક્ત (આયુનો બંધ કરનાર) થઈ શકે છે.
એજ પ્રમાણે વૈમાનિક દેવાના વિષયમાં પણ સમજવું કારણ કે વૈમાનિક દેવો
પ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત (બદ્ધ) આયુવાળા પણ હોય છે અને દેશવિરતિથી
નિર્વર્તિત આયુવાળા એવો પણ વૈમાનિક હોય છે આ કથનનું તાત્પર્ય એ
છે કે અણુવ્રતી અને મહાવ્રતી એવ દેવ આયુનો જ બંધ કરે છે. (અણુવ્યય
મહવ્યયાદિં ન લહ્હદેવાડયં મોક્તું) અણુવ્રતો અને મહાવ્રતોનું પાલન એજ
એવ કરે છે કે જેને દેવ આયુનો બંધ થઈ ગયો હોય છે બાકીના આયુક્ત
બંધવાળા એવો અણુવ્રતો અને મહાવ્રતોને પાળી શકતા નથી, એવો સિદ્ધા-
ન્તનો મત છે—તેઓ અપ્રત્યાખ્યાની જ હોય છે. તેઓ મરીને દેવગતિમાં જ
જાય છે કારણ કે—(નિઃશીલવ્રતિત્વં ચ સર્વેષામ્) એવું આગમમાં કહ્યું છે. આ
વાતને ધ્યાનમાં રાખીને અહીં (તિણિ વિ) આ પદનો પ્રયોગ થયો છે કહેવાનું

પ્રત્યાહ્યાન કરણાનન્તરમ્ પ્રત્યાહ્યાનરદ્વાયુષ્યં મનિવાદ્યપિ—'જીવા ણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષણનિવ્વત્તિયાડયા ?' ગોતમઃ પુચ્છગ્ગિ—'હે મહન્ત ! જીવાઃ સન્નુ કિં પ્રત્યાહ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાઃ ? પ્રત્યાહ્યાનેન નિર્વર્તિતં નિષ્પાદિતમ્ વદમ્ આયુષ્કં વેપાં તે તથોક્તાઃ ભવન્તિ કિમ્ ? અથવા 'પચ્ચક્ષણાગ્ગમિવ્વત્તિયાડયા ?' અપ્રત્યાહ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાઃ અપ્રત્યાહ્યાનેન નિર્વર્તિતં વદમ્ આયુષ્કં વેપાં તે તથોક્તા ભવન્તિ કિમ્ ? અથવા 'પચ્ચક્ષણાગ્ગપચ્ચક્ષણનિવ્વત્તિયાડયા ?' પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કાઃ ? પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાનેન નિર્વર્તિતં વદમ્ આયુષ્કં વેપાં તે તથોક્તા ભવન્તિ કિમ્ ? ભગવાનાહ—'ગોપમા ! જીમા ય, વેમાણિયા ય પચ્ચક્ષણનિવ્વત્તિયાડયા તિણ્ણિ' હે ગોતમ ! જીમાથ પ્રત્યાહ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કા ભવન્તિ એવં વેમાનિકાથ પ્રત્યાહ્યાનનિર્વર્તિતાયુષ્કા ભવન્તિ, ત્રીણ્યપિ,

કરતે હિં ? હસ વાત કો મશુસે પૂછતે હિં—'જીવા ણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષણનિવ્વત્તિયાડયા' હે મહન્ત ! જીવ કયા પેસે મી હોતે હિં જો પ્રત્યાહ્યાન સે આયુષ્કકા વંધ કરતે હિં ? અથવા—(અપચ્ચક્ષણનિવ્વત્તિયાડયા) અપ્રત્યાહ્યાનસે વે વદ્ધાયુષ્ક હોતે હિં ? અથવા—(પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણનિવ્વત્તિયાડયા) પ્રત્યાહ્યાનાપ્રત્યાહ્યાન સે આયુષ્કર્મ કા વંધ કરતે હિં ? હસકે ઉત્તરમેં પ્રશ્નુ उनसे कहते हैं. (गोपमा) हे गोतम ! (जीवा य वेमाणिया य पचचक्खणनिव्वत्तियाडया तिण्णि वि) जीव प्रत्याह्यान से निर्वर्तित है—वद्ध है आयुष्य जिन्हों का ऐसा होता है, अप्रत्याह्यानसे निर्वर्तित आयुष्कवाले होते हैं और देशचरिति से निर्वर्तित आयुष्कवाले होते हैं। अर्थात् जीव अभी जिस पर्यायमें हूं उस पर्यायकी

આદિ દ્વારા જીવ શું આયુષ્કનો પણ બંધ કરે છે ? એજ, વિષયને અનુલક્ષીને ગોતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—

(જીવાણં મંતે ! કિં પચ્ચક્ષણનિવ્વત્તિયાડયા ?) હે મહન્ત ! શું એવાં પણ જીવો હોય છે કે જે પ્રત્યાહ્યાનથી આયુષ્કનો બંધ કરતા હોય છે ? અથવા—(અપચ્ચક્ષણનિવ્વત્તિયાડયા) શું તેઓ અપ્રત્યાહ્યાનથી આયુષ્યનો બંધ કરે છે ? અથવા (પચ્ચક્ષણાપચ્ચક્ષણનિવ્વત્તિયાડયા ?) શું તેઓ પ્રત્યાહ્યાના—પ્રત્યાહ્યાનથી આયુષ્કનો બંધ કરતા હોય છે ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે—(ગોપમા !) હે ગોતમ ! (જીવા ય વેમાણિયા ય પચ્ચક્ષણનિવ્વત્તિયાડયા તિણ્ણિ વિ) જીવ પ્રત્યાહ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુષ્યવાળા પણ હોય છે, અપ્રત્યાહ્યાનથી નિર્વર્તિત (બદ્ધ) આયુષ્યવાળા પણ હોય છે, અને પ્રત્યાહ્યાના—પ્રત્યાહ્યાનથી (દેશ વિરતિથી) બદ્ધ આયુષ્યવાળા પણ હોય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જીવ

‘પ્રત્યાખ્યાનમ્’ इत्येतदर्थः एको दण्डकः, तथा ‘जानाति’ इत्येतदर्थं द्वितीयो दण्डकः, एवम् ‘करोति’ इत्येतदर्थकस्तृतीयो दण्डकः, त्रीण्येव-प्रत्याख्यानम्, अप्रत्याख्यानम्, प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानं चेति त्रीणि जानाति, करोति, तथा ‘आयुष्कनिर्वृत्तिः’ इत्येतदर्थकचतुर्थो दण्डको विज्ञातव्यः, तदुपसंहरन्नाह-सप्र-देशोदेशो च एवम् उक्तप्रकारेण एते उपर्युक्ताः चत्वारो दण्डकाः प्रतिपादिताः॥१॥
अन्ते गौतमो भगवद्वाक्यं स्वीकुर्वन्नाह-‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! तदेवं भवदुक्तं सर्वं सत्यमेव, हे भदन्त ! तदेवं भवदुक्तं सर्वं सत्यमेवेति ॥ सू० २ ॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री-घासीलालव्रति विरचितायं श्री भग-
वतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां पष्ठशतकस्य चतुर्थोद्देशकः

कही है उससे सूत्रकारने यह समझाया है कि इस सप्रदेश उद्देशक में जो अभी प्रत्याख्यान आदि विषयक प्रकरण कहा है उसमें यह २ अर्थ संग्रहीत किया गया है—इसमें प्रत्याख्यान विषयक एक दण्डक है तथा अप्रत्याख्यानादिकों को जाननेरूप द्वितीय दण्डक है, प्रत्याख्यान आदि को करनेरूप तृतीय दण्डक है एवं प्रत्याख्यानादि द्वारा निर्वर्तिता-युष्क का चतुर्थ दण्डक है । अन्तमें गौतम भगवान के वाक्य को स्वीकार करते हुए उन से कहते हैं कि ‘सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति’ हे भदन्त ! आपके द्वारा कहा गया यह सब विषय सर्वथा सत्य ही है हे भदन्त ! सर्वथा सत्य ही है ॥ सू० २ ॥

चतुर्थ उद्देशक संपूर्ण ॥ ६-६ ॥

આદિ વિષયક પ્રકરણ અહીં આપ્યું છે તેમાં નીચેના વિષયોનો સંગ્રહ કર-
વામાં આવ્યો છે—(૧) તેમાં પ્રત્યાખ્યાન વિષયક એક દંડક છે. (૨) પ્રત્યા-
ખ્યાન આદિકોને જાણવા વિષેનું ત્રીજું દંડક છે, (૩) પ્રત્યાખ્યાન આદિ
કરવા રૂપ ત્રીજું દંડક છે. (૪) અને પ્રત્યાખ્યાન આદિ દ્વારા નિર્વર્તિતા-
યુક્તનું ચોથું દંડક છે.

અન્તે ગૌતમ સ્વામી મહાત્મીર પ્રભુનાં વચનો સ્વીકાર કરતાં કહે છે—
(‘સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે ! ત્તિ’) હે ભદન્ત ! આપે આ વિષયનું જે પ્રતિ-
પાદન કર્યું તે સત્ય છે. હે ભદન્ત ! આપનાં વચનો યથાર્થ જ છે. એમ કહીને
૧૬જી નમસ્કાર કરીને તેઓ તેમને સ્થાને વિરાજમાન થઇ ગયા. ॥ સૂ. ૨ ॥

॥ છઠ્ઠા શતકનો ચોથો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૬-૪ ॥

કિન્તુ-‘અવસેસા અપચ્ચક્ષણાણિવ્વત્તિયાડયા’ અવસેસા નૈરયિકાદયસ્સુ નૈરયિકાદારમ્મ ભવનપતિ-વાનવ્યન્તર-જ્યોતિષ્કપર્યન્તા અપ્રત્યાખ્યાનનિર્વર્તિતાયુક્કા એવ ભવન્તિ, નૈરયિકાદિયુ વસ્તુતો વિરતિરહિતાનામેવોત્પાદાત્, । અથ ઉત્કાર્ય-સંગ્રહગાથામાહ-‘પચ્ચક્ષણં જાણહ, કુચ્ચહ, તિન્નેવ આઝનિવ્વત્તી ।

સપ્પસુદ્ધેસમ્મિ ય, પમેવ દંડગા ચરો ॥ ૧ ॥ ઇતિ

એસા પદ કહા ગયા હે કિં વૈમાનિક દેવોં મેં પ્રત્યાખ્યાનાદિ ત્રીનોંવાલોં કા ઉત્પાદ હોતા હૈ । પરન્તુ (અવસેસા અપચ્ચક્ષણાણિવ્વત્તિયાડયા) ઘાકી કે જો નૈરયિક સે લેકર વાનવ્યન્તર એવં જ્યોતિષ્ક તક કે જીવ હેં વે અપ્રત્યાખ્યાન નિર્વર્તિતાયુક્ક હીં હોતે હેં । કયોં કિં ઇન મેં જિન જીવોં સે પહિલે ચિરતિ કા પાલન નહીં કિયા હોતા હૈ ઉનકા હી ઉત્પાદ હોતા હૈ । અતઃ નૈરયિક આદિ જીવરૂપ સે વે હી જીવ ઉત્પન્ન હોતે હેં જો પૂર્વ મેં ચિરતિ સે રહિત હોતે હેં । ઇસી કારણ યહાં (અવસેસા પચ્ચક્ષણાણિવ્વત્તિયાડયા) એસા કહા હૈ । ભાવાર્થ યહી હૈ કિં સામાન્યરૂપ જીવ ત્રીનોં દ્વારા નિર્વર્તિતાયુક્ક હોતે હેં-વૈમાનિક દેવ ઓ ઇસી તરહ કે હોતે હેં પરન્તુ નારક ભવનપતિ, વ્યન્તર ઓર જ્યોતિષિક જીવ એસે નહીં હોતે હેં વે તો અપ્રત્યાખ્યાનદ્વારા હી નિર્વર્તિતાયુક્ક હોતે હેં । યહાં જો (પચ્ચક્ષણં-જાણહ, કુચ્ચહ તિન્નેવ આઝનિવ્વત્તી) ઇત્યાદિ ગાથા

તાત્પર્ય એ છે કે વૈમાનિક દેવોમાં પ્રત્યાખ્યાનાદિ ત્રણેવાળા જીવોનો ઉત્પાદ થાય છે. પરન્તુ (અવસેસા અપચ્ચક્ષણાણિવ્વત્તિયાડયા) બાકીના જે નારકથી લઇને વાનવ્યન્તર અને જ્યોતિષિક પર્યન્તના જીવો છે તેઓ અપ્રત્યાખ્યાનથી નિર્વર્તિત આયુવાળા જ હોય છે-તેઓ અપ્રત્યાખ્યાનથી જ આયુનો ખંધ કરતા હોય છે, કારણ કે જે જીવોએ પહેલાં વિરતિનું પાલન કર્યું નથી એવાં જીવોનો જ તેમાં ઉત્પાદ થાય છે. તેથી નારક આદિ જીવોએ જીવો જ ઉત્પન્ન થાય છે કે પૂર્વભવમાં વિરતથી રહિત હોય છે. એજ કારણે અહીં (અવસેસા અપચ્ચક્ષણાણિવ્વત્તિયાડયા) એવું કહ્યું છે. કહેવાનું. તાત્પર્ય એ છે કે સામાન્ય રૂપ જીવ પ્રત્યાખ્યાન આદિ ત્રણ વડે આયુનો ખંધ કરે છે, વૈમાનિક દેવો પણ એવાં જ હોય છે, પરન્તુ નારક, ભવનપતિ, વ્યન્તર અને જ્યોતિષિક દેવો એવાં હોતા નથી. તેઓ તો અપ્રત્યાખ્યાન વડે જ આયુનો ખંધ કરતા હોય છે.

અહીં જે (પચ્ચક્ષણં જાણહ કુચ્ચહ તિન્નેવ આઝનિવ્વત્તી) ઇત્યાદિ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર એ સૂચનાવે છે કે આ સમગ્ર ઉદ્દેશમાં જે પ્રત્યાખ્યાન

વિષ્કંભ-પરિક્ષેપવિષયકઃ પ્રશ્નઃ, । સંખ્યેયસદ્વ્યયોજનવિસ્તૃતાડસંખ્યેયસદ્વ્ય-
યોજનવિસ્તૃતભેદેન તમસ્કાયસ્ય દ્વિવિધત્વપ્રતિપાદનમ્ । તત્ર સંખ્યેયસદ્વ્યયોજન-
વિસ્તૃતતમસ્કાયસ્ય અતિશોઘ્રદેવગત્યા ગમને પડ્માસૈઃ કથંચિત્ પ્રાપ્યત્વસંભવેડપિ
અસંખ્યાતયોજનવિસ્તૃતતમસ્કાયસ્ય સર્વથા અપ્રાપ્યત્વકથનદ્વારા તસ્ય દૈર્ઘ્યસ્થૂલત્વા-
દિવિષયકપ્રશ્નોત્તરમ્ । તમસ્કાયે ગૃહ-દટ્ટ-યાવત્-સન્નિવેશાન્તા ભવન્તિ કિમ્?, ડતિ
વિષયકપ્રશ્નસ્ય નિપેધાત્મકમુત્તરમ્ । તમસ્કાયે મહામેઘસ્ય સંસ્વેદનસંમૂર્ચ્છિતવર્ષણં
ભવતિ કિમ્? ઇતિ વિષયકપ્રશ્નસ્ય સ્વીકારાત્મકમુત્તરમ્ । સંસ્વેદનાદીનાં દેવાસુરનાગક-

તમસ્કાય કે વિષ્કંભ ઓર પરિક્ષેપ કે વિષયમેં પ્રશ્ન, સંખ્યાત હજાર
યોજન તક વિસ્તૃત ઓર અસંખ્યાત હજાર યોજન તક વિસ્તૃત હસ
પ્રકાર સે તમસ્કાય કે ડો ભેડોં કા કથન-સંખ્યાત હજાર યોજન વિસ્તૃત
તમસ્કાય ઇતની વડી દીર્ઘતા પવં સ્થૂલતાદિવાલા હૈ કિ અતિ શીઘ્રગતિ
વાલા દેવ યદિ હહ મહીને તક ચલે તો વહ ઉસે વડી મુશ્કિલ સે પ્રાસ
કર સકતા હૈ અર્થાત્ ઉસકા પાર પા સકતા હૈ પરન્તુ જો અસંખ્યાત
હજાર યોજન તકકા વિસ્તૃત તમસ્કાય હૈ ઉસકા તો કોઈ ભી પાર નહીં
પા સકતા હૈ-એસા ઉત્તારરૂપ કથન, તમસ્કાયમેં કયા ઘર હૈ, હાટ હૈ ?
ગાંવ હૈ ? યાવત્ સન્નિવેશ હૈ ? એસા પ્રશ્ન ઓર ઉસમેં સવ કુછ નહીં
હૈ એસા ઉત્તાર, તમસ્કાય મેં વડેર મેઘ કયા પસીજતે હૈ ? ઉસમેં વે કયા
સંમૂર્ચ્છિત હોતે હૈ ? વરસતે હૈ ? એસા પ્રશ્ન હાં ઉસમેં યહ સવ હોતા હૈ
એસા ઉત્તાર વે સંસ્વેદન તથા વર્ષણ આદિ કૌન કરતે હૈ ? દેવ કરતે હૈ ।

છે. તમસ્કાયના વિષ્કંભ (વિસ્તાર) અને પરિક્ષેપના વિષયમાં પ્રશ્ન, સંખ્યાત
હજાર યોજન સુધી વિસ્તૃત અને અસંખ્યાત હજાર યોજન સુધી વિસ્તૃત,
આ પ્રમાણે તમસ્કાયના બે ભેદોનું કથન. સંખ્યાત હજાર યોજન ॥ વિસ્તાર-
વાળો તમસ્કાય એવડી મોટી દીર્ઘતા અને સ્થૂલતા આદિથી યુક્ત છે કે
અતિશય શીઘ્રતાવાળો દેવ જે છ મહિના સુધી ચાલ્યા કરે તો મહા મુશ્કે-
લીથી તે તેનો પાર પામી શકે છે. પરન્તુ અસંખ્યાત હજાર યોજનના વિસ્તારનો
જે તમસ્કાય છે તેનો પાર પામવાનું કોઈનાથી શક્ય બનતું નથી.

પ્રશ્ન—શું તમસ્કાયમાં ઘર છે ? હાટ છે ? ગામ છે ? સન્નિવેશ
પર્યન્તનાં સ્થાનો છે ? ઉત્તર—તેમાં એવું કંઈ પણ નથી.

પ્રશ્ન—શું મોટા મોટા મેઘ તમસ્કાયમાં પસીજે (ભીંભાય) છે ખરાં ?
શું તેઓ તેમાં સંમૂર્ચ્છિત (એકત્રિત) થાય છે ? વરસે છે ?

ઉત્તર—હા, તેમાં એ બધું થાય છે.

પ્રશ્ન—તે સંસ્વેદન તથા વર્ષણ આદિ કોણ કરે છે ? ઉત્તર—દેવો કરે છે.

પંચમોદ્દેશકઃ પ્રારંભ્યતે—

પદ્યશતકે પંચમોદ્દેશકસ્ય સંક્ષિપ્તવિવચનિસૂત્રણમ્ ।

કોઽય તમસ્કાયપદાર્થઃ, કિમ્ પૃથિવી તમસ્કાયઃ ? આપો તા તમસ્કાય ક્વ-
ચ્યતે?, इति प्रश्नः, अप्कायिकपरिणामएव तमस्कायः इत्युत्तरम् । अप्काय-तमस्का-
ययोः समानस्वभावतायास्तत्र हेतुत्वकथनं च । ततः तमस्कायस्य प्रारम्भ-
समाप्तयोरवधिविषयकः प्रश्नः अरुणोदयसमुद्रात्तमस्कायस्य प्रारम्भः, ब्रह्मलोक-
तस्य समाप्तिरित्युत्तरम् । ततः तमस्कायस्याकारविषये प्रश्नः । अधोमाने शरीर-
बुध्नयत्, उपरिभागे कुक्कुटपञ्जराकारत्वं, इति उत्तरम् । ततः तमस्कायस्य

॥ छठे शतक के पांचवा उद्देशक प्रारंभ ॥

इस शतकके इस पंचम उद्देशक में जो विषय कहा है उसका वि-
वरण संक्षेप से इस प्रकार है—

तमस्काय क्या पदार्थ है ? क्या वह पृथिवीरूप है ? या जलरूप है ?
ऐसा प्रश्न—अप्कायिक का परिणाम ही तमस्काय है ऐसा उत्तर, तम-
स्काय और अप्कायकी समान स्वभावता का कथन और इसमें हेतु-
प्रदर्शन, तमस्काय के प्रारंभ होनेके विषय में और इसकी समाप्ति होने
के विषयमें प्रश्न, अरुणोदयसमुद्र से तमस्काय का प्रारंभ कथनरूप और
ब्रह्मलोक में समाप्ति कथनरूप उत्तर, तमस्काय का आकार कैसा होता
है ऐसा प्रश्न, नीचेमें इसका आकार शरीरबुध्नकी तरह होता है और
ऊपर भागमें कुक्कुट के पंजरके आकार जैसा होता है ऐसा उत्तर,

शतક છ ઉદ્દેશક પાંચમો—

આ ઉદ્દેશકમાં આવતા વિષયનું સંક્ષિપ્ત પ્રતિપાદન—

પ્રશ્ન—તમસ્કાય શું છે ? શું તે પૃથ્વીરૂપ છે કે જળરૂપ છે ?

ઉત્તર—અપ્કાયિકનું પરિણામ જ તમસ્કાય છે. તમસ્કાય અને અપ્કાયની
સમાન સ્વભાવતાનું કથન અને તેના કારણનું પ્રતિપાદન.

તમસ્કાયનો પ્રારંભ થવાને વિષે અને તેની સમાપ્તિ થવા વિષે પ્રશ્ન,
અરુણોદય સમુદ્રમાંથી તમસ્કાયનો પ્રારંભ થાય છે અને બ્રહ્મલોકમાં સમાપ્તિ
થાય છે એવું કથન. પ્રશ્ન—તમસ્કાયનો આકાર કેવો હોય છે ?

ઉત્તર—નીચેના ભાગમાં તેના આકાર શરીરબુધ્નના જેવો (માટીનાં કેટિ-
યાના તળિયા જેવો) હોય છે. અને ઉપરના ભાગમાં કુકુડાના પંજરા જેવો હોય

કથનમ્, પૃથિવીપરિણામનિગેયથ । તમસ્કાયે સમસ્તજીવાનામનન્તવારમુત્પાદઃ,
કિન્તુ નો વાદરપૃથિવીરૂપેણ, નો વાદરાગ્નિરૂપેણ વા । તતઃ અષ્ટવિધકૃષ્ણ-
રાજીનામભિધાનમ્ । તાસાં ચ સનત્કુમાર-માહેન્દ્રકલ્પયોરુપરિ વ્રહ્મલોક-
સ્યાધોમાગે ચ રિષ્ટવિમાનમસ્તટે સ્થિતિપ્રતિપાદનમ્ । આસાં ચ આકારઃ મહાક્રીડા-
સ્થાન (અલાહા) વત્ ચતુરસઃ । પૂર્વપશ્ચિમદક્ષિણોત્તરદિગ્ભાગેષુ ચતુર્ણાં પ્રત્યેકં
દ્વે દ્વે કૃષ્ણરાજી સ્તઃ । તાથ સર્વાઃ પરસ્પરં સ્પૃષ્ઠાઃ સમ્બદ્ધાથ સન્તિ । એતાસામા-
યામ-વિષ્કમ્ભ-પરિક્ષેપવિષયે વિચારઃ, કૃષ્ણરાજિણુ ગૃહાદિવિચારસ્તમસ્કાયવદેવ,
વિશેષઃ કેવલં તત્ર મેધાનાં સંસ્વેદનાદિકં દેવ એવ કરોતિ-ઇતિ । કૃષ્ણરાજીનામષ્ટ

પુદ્ગલ કા પરિણામ તમસ્કાય હૈ । પર પૃથિવી કા પરિણામ તમસ્કાય નહીં
હૈ એસા કથન તમસ્કાય મેં સમસ્ત જીવોં કા અનન્તવાર ઉત્પાદ હુઆ હૈ
પર उनका यहाँ वादर पृथिवीरूप से और वादर अग्निरूपसे उत्पान नहीं
हुआ हॆ ऐसा कथन आठ प्रकार की कृष्णराजियों का कथन इनका अव-
स्थान ऊपरमें सनत्कुमार माहेन्द्रकल्प में है और नीचे ब्रह्मलोक कल्पमें,
अरिष्टविमान के पाथडे में है ऐसा कथन इनका आकार अलाहके जैसा
चौकोर है पूर्व पश्चिम और उत्तर दक्षिण इन चार दिशाओंमें से प्रत्येक
दिशा में दो-दो कृष्णराजियां हैं । ये सब कृष्णराजियां आपस में स्पृष्ट
और संबद्ध हैं । इनके आयाम, विष्कंभ और परिक्षेप के विषयमें
विचार । तमस्काय की तरह ही इनमें कृष्णराजियां में गृहादि का विचार
यहां विशेषता केवल इतनी ही है कि इनमें मेघों का संस्वेदन आदि
देव ही करता है । कृष्णराजियां पृथिवी के परिणामरूप हैं । अप-जल

તમસ્કાયમાં સમસ્ત જીવોનો અનંતવાર ઉત્પાદ થયો છે, પણ તેમનો
ત્યાં બાદર પૃથ્વીરૂપે અને બાદર અગ્નિરૂપે ઉત્પાદ થયો નથી એવું કથન. આઠ
પ્રકારની કૃષ્ણરાજીઓનું કથન. તેમનું અવસ્થાન ઉપર સનત્કુમાર માહેન્દ્ર કલ્પમાં
છે અને નીચે બ્રહ્મલોક કલ્પમાં, અરિષ્ટ વિમાનના પાથડામાં છે એવું કથન.
આકાર તેમનો અખાડાના જેવો-ચતુષ્કોણ જેવો છે. પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર અને
દક્ષિણ એ ચારે દિશાઓમાંની પ્રત્યેક દિશામાં બે, બે કૃષ્ણરાજીઓ છે. તે
બધી કૃષ્ણરાજીઓ એક બીજી સાથે સ્પૃષ્ટ અને સંબદ્ધ છે. તમસ્કાયની જેમજ
એ કૃષ્ણરાજીઓમાં ઘર, દુકાન આદિનો વિચાર. અહીં વિશેષતા એટલી જ
છે કે તે કૃષ્ણરાજીઓમાં મેઘોનું સંસ્વેદન આદિ દેવ જ કરે છે. તે કૃષ્ણરાજી-
ઓના આયામ (લંબાઈ), વિષ્કંભ (પહોળાઈ) અને પરિક્ષેપ (પરિધી)
નો વિચાર. કૃષ્ણરાજીઓનાં આઠ નામ. તે કૃષ્ણરાજીઓ પૃથ્વીના પરિણામરૂપ

ર્ત્વક્રતયા પ્રતિપાદનં ચ। તતઃ તમસ્કાયે વાદરસ્તનિતસ્ય વાદરવિયુતમ્ દેવમમોત્પાદિ
તાયાઃ દેવકૃતત્વેન પ્રતિપાદનમ્। તમસ્કાયં વિગ્રહગત્યાવગ્નિજયોઃ વાદરપૃથિવી-
વાદરાગ્ન્યોર્નિગેષકરણમ્। તમસ્કાયં ચન્દ્રસૂર્યમગ્રીનામ્ પ્રતિપેઘઃ, તત્પાર્થં તેષાં
પ્રતિપાદનં ચ। તતઃ તમસ્કાયે ચન્દ્રસૂર્યાદિપ્રમાણમપિ તમસ્કાયરૂપતયા પરિણામેન
અભાવસદશ્વમેવેતિ પ્રતિપાદનમ્। તતઃ તમસ્કાયસ્ય કૃષ્ણઃ મહાકૃષ્ણઃ, અત્ય-
ધિકકૃષ્ણઃ વર્ણઃ, અતઃપ્રત્ય સ મહાભયદ્રઃ, દેવાનામપિ ભય-ક્ષોભોત્પાદકઃ। તતઃ
તમસ્કાયસ્ય ત્રયોદશનામકથનમ્। તતઃ તમસ્કાયસ્ય અસ્કાયગૌ-પુદ્ગલપરિણામ-

કૌન સે દેવ ! અસુરકુમાર વા નાગકુમાર ? વે સવ કરતે હું એસા કથન
ઉત્તર તમસ્કાય મેં વાદર સ્તનિત શબ્દ (ગર્જિત શબ્દ) ઓર વાદર
ચિદ્રુત્ત્વેન આને દેવ કરતે હું એસા કથન તમસ્કાય મેં વિગ્રહગતિ સમાપ્ત
સે મિત્ર વાદર પૃથ્વીકાય, વાદર અગ્નિકાય નહીં હૈ એસા પ્રતિપાદન
તમસ્કાયમેં ચન્દ્ર સૂર્ય આદિ કા પ્રતિપેઘ ઓર- આનેકા ઉસકી વાજુમેં
રહને કા કથન તમસ્કાય મેં ચન્દ્રસૂર્યાદિ કી પ્રમા મી તમસ્કાયરૂપ સે
પરિણામિત હો જાતી હૈ ફસલિયે વહ વહાં એક તરહ સે નહીં જૈસી હૈ ।
તમસ્કાયકા વર્ણ, કૃષ્ણ, મહાકૃષ્ણ, અત્યધિકકૃષ્ણ હૈ, અતઃ વહ મહા-
ભયપ્રદ હૈ, દેવોં કો મી ભય ઓર ક્ષોભ ઉત્પન્ન કરનેવાલા હૈ, એસા
તમસ્કાય કે તેરહ નામ । તમસ્કાય કિસકા પરિણામ હૈ ? પૃથ્વી કા ?
પાની કા ? વા જીવ વ પુદ્ગલ કા ? પાની કા પરિણામ તમસ્કાય હૈ, જીવ

પ્રશ્ન—કયા દેવો ? અસુરકુમાર કે નાગકુમાર ?

ઉત્તર—તે બધાં કરે છે. તમસ્કાયમાં બાદર સ્તનિત શબ્દ (ગર્જનાને
અવાજ) અને બાદર વિદ્યુત દેવો કરે છે, એવું કથન. તમસ્કાયમાં વિગ્રહગતિ
સમાપ્ત થવો સિવાયના બાદર પૃથ્વીકાય અને બાદર અગ્નિકાય એવો નથી
એવું પ્રતિપાદન. તમસ્કાયમાં ચન્દ્ર, સૂર્ય આદિનો પ્રતિપેઘ (ન હોવાનું) કથન)
અને તેઓ તેની બાજુમાં રહે છે એવું કથન, તમસ્કાયમાં ચન્દ્ર-સૂર્યાદિની
પ્રમા પણ તમસ્કાય રૂપે પરિણમન પામે છે, તે કારણે એક રીતે તો તે નહીં
જેવી જ હોય છે. તમસ્કાયનો વર્ણ કૃષ્ણ, મહાકૃષ્ણ અને અત્યધિક કૃષ્ણ
હોય છે, તેથી તે ઘણો ભયજનક લાગે છે, તે દેવોમાં પણ ભય અને ક્ષોભ
ઉત્પન્ન કરનાર હોય છે, એવું કથન. તમસ્કાયના તેર નામ.

પ્રશ્ન—તમસ્કાય કાનું પરિણામ છે ? શું પૃથ્વીનું પરિણામ છે ? કે પાણીનું
પરિણામ છે ? કે જીવ અથવા પુદ્ગલનું પરિણામ છે ?

ઉત્તર—તમસ્કાય પાણીનું પરિણામ છે, જીવ પુદ્ગલનું પરિણામ છે,
પણ પૃથ્વીનું પરિણામ તમસ્કાય નથી એવું કથન.

કથનમ્, પૃથિવીપરિણામનિષેધઃ । તમસ્કાયે સમસ્તજીવાનામનન્તવારમુત્પાદઃ, કિન્તુ નો વાદરપૃથિવીરૂપેણ, નો વાદરાગ્નિરૂપેણ વા । તતઃ અપૃથિક્કૃણ-રાજીનામભિધાનમ્ । તાસાં ચ સનત્કુમાર-માહેન્દ્રકલ્પયોરુપરિ બ્રહ્મલોક-સ્યાધોમાગે ચ સિદ્ધિમાનપ્રસ્તટે સ્થિતિપ્રતિપાદનમ્ । આસાં ચ આકારઃ મહાક્રીડા-સ્થાન (અલાડા) વત્ ચતુરસ્રઃ । પૂર્વપશ્ચિમદક્ષિણોત્તરદિગ્ભાગેષુ ચતુર્ણાં પ્રત્યેકં દ્વે દ્વે કૃણ્ણરાજી સ્તઃ । તાથ સર્વાઃ પરસ્પરં સ્પૃષ્ઠાઃ સમ્બદ્ધાથ સન્તિ । એતાસામા-યામ-વિષ્કંભ-પરિક્ષેપવિષયે વિચારઃ, કૃણ્ણરાજિણુ ગૃહાદિવિચારસ્તમસ્કાયવદેવ, વિશેષઃ કેવલં તત્ર મેધાનાં સંસ્વેદનાદિકં દેવ એવ કરોતિ-ઇતિ । કૃણ્ણરાજીનામપ

પુદ્ગલ કા પરિણામ તમસ્કાય હૈ । પર પૃથિવી કા પરિણામ તમસ્કાય નહીં હૈ એસા કથન તમસ્કાય મેં સમસ્ત જીવોં કા અનન્તવાર ઉત્પાદ હુઆ હૈ પર ઉનકા ઘઘાં વાદર પૃથિવીરૂપ સે ઓર વાદર અગ્નિરૂપસે ઉત્પાદ નહીં હુઆ હૈ એસા કથન આઠ પ્રકાર કી કૃણ્ણરાજિયોં કા કથન ઇનકા અવ-સ્થાન ઝપરમેં સનત્કુમાર માહેન્દ્રકલ્પ મેં હૈ ઓર નીચે બ્રહ્મલોક કલ્પમેં, અરિષ્ટવિમાન કે પાથડે મેં હૈ એસા કથન ઇનકા આકાર અલાડેકે જૈસા ચૌકોર હૈ પૂર્વ પશ્ચિમ ઓર ઉત્તર દક્ષિણ ઇન ચાર દિશાઓમેં સે પ્રત્યેક દિશા મેં દો-દો કૃણ્ણરાજિયાં હૈ । યે સવ કૃણ્ણરાજિયાં આપસ મેં સ્પૃષ્ઠ ઓર સંબદ્ધ હૈ । ઇનકે આયામ, વિષ્કંભ ઓર પરિક્ષેપ કે વિષયમેં વિચાર । તમસ્કાય કી તરહ હી ઇનમેં કૃણ્ણરાજિયાં મેં ગૃહાદિ કા વિચાર ઘઘાં વિશેષતા કેવલ ઇતની હી હૈ કિ ઇનમેં મેધોં કા સંસ્વેદન આદિ દેવ હી કરતા હૈ । કૃણ્ણરાજિયાં પૃથિવી કે પરિણામરૂપ હૈ । અપ્-જલ

તમસ્કાયમાં સમસ્ત જીવોના અનંતવાર ઉત્પાદ થયો છે, પણ તેમનો ત્યાં બાદર પૃથ્વીરૂપે અને બાદર અગ્નિરૂપે ઉત્પાદ થયો નથી એવું કથન. આઠ પ્રકારની કૃણ્ણરાજીઓનું કથન. તેમનું અવસ્થાન ઉપર સનત્કુમાર માહેન્દ્ર કલ્પમાં છે અને નીચે બ્રહ્મલોક કલ્પમાં, અરિષ્ટ વિમાનના પાથડામાં છે એવું કથન. આકાર તેમનો અખાડાના જેવો-ચતુષ્કોણ જેવો છે. પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર અને દક્ષિણ એ ચાર દિશાઓમાંની પ્રત્યેક દિશામાં બે, બે કૃણ્ણરાજીઓ છે. તે બધી કૃણ્ણરાજીઓ એક બીજી સાથે સ્પૃષ્ઠ અને સંબદ્ધ છે. તમસ્કાયની જેમજ એ કૃણ્ણરાજીઓમાં ઘર, દુકાન આદિનો વિચાર. અહીં વિશેષતા એટલી જ છે કે તે કૃણ્ણરાજીઓમાં મેધોનું સંસ્વેદન આદિ દેવ જ કરે છે. તે કૃણ્ણરાજીઓના આયામ (લંબાઈ), વિષ્કંભ (પહોળાઈ) અને પરિક્ષેપ (પરિધી) નો વિચાર. કૃણ્ણરાજીઓનાં આઠ નામ. તે કૃણ્ણરાજીઓ પૃથ્વીના પરિણામરૂપ

नामानि कृष्णराजयः पृथिवीपरिणामाः नो अपरिणामाः तत्र सर्वे प्राजन्त जीवसत्त्वा
अनन्तकृत्यः पूर्वमुत्पन्नाः आसन् स्मिन्तु वादरज्ज्वाग्निजस्यनिरूपेण नोत्पन्नत्वाः ।
एतासामवकाशान्तरेषु अग्निः, अग्निमाली, वैरोचनम्, प्रभङ्करः, चन्द्राभः, सूर्याभः,
शुक्राभः, सुप्रतिष्ठाभः, इत्येतानि अष्टौ विमानानि मध्ये मध्ये रिष्टाभविमानं च, तत्राष्टौ
लोकान्तिकदेवाः निवसन्ति, तथाहि-सारस्वतः१, आदित्यः२, वरुणः३, गर्दतोयः४,
तुषितः५, अग्न्यावाधः६, आग्नेयः, ७ वरिष्ठः, ८ । एतत्समन्विधिविमानान्तरं
च । वायोराधारेण विमानस्थितिः । जीवाभिगमानुसारेणात्रापि केषुचदेवस्य
विहाय सर्वे जीवाः पूर्वम् उत्पन्नाः, अप्सरागरोपमाणि लोकान्तिकदेवस्थितिः ।
लोकान्तिकविमानात् लोकस्यान्तिमसंक्षेपयोजनानि दूरमिति ॥

के परिणामरूप नहीं है । इनमें समस्त प्राण-समस्त भूत, समस्त जीव
और समस्त सत्त्व अनन्तवार पहिले उत्पन्न हो चुके हैं । परन्तु ये सब
वादर जलरूप से वादर अग्निरूप से और वादर वनस्पतिरूप से पहिले
यहां उत्पन्न नहीं हुए हैं । इन राजियों के आठ अवकाशान्तरों में अग्नि,
अग्निमाली, वैरोचन, प्रभङ्कर, चन्द्राभ, सूर्याभ, शुक्राभ, सुप्रतिष्ठाभ
ये आठ विमान और इन विमानों के बीच बीच में रिष्टाभविमान है
ऐसा कथन इनमें आठ लोकान्तिक देव रहते हैं-लोकान्तिक देवों के नाम
(सारस्वत, आदित्य, वरुण, गर्दतोय, तुषित, अग्न्यावाध, आग्नेय और
वरिष्ठ) ये हैं । इनके संबंध में और भी विचार वायु के आधार से
विमानस्थिति का कथन इन विमानों में भी जीवाभिगमनसूत्र के अनु-
सार देव की पर्याय को छोड़कर समस्त जीव पहिले उत्पन्न हो चुके हैं ।
आठ सागरोपम की सब लोकान्तिक देवों की स्थिति होती है । तथो

छे, जणना परिष्ठाभइय नथी. तेमां सभस्त प्राणु, सभस्त भूत, सभस्त एव
अने सभस्त सत्त्व अनंतवार उत्पन्न थई. युक्त्यां छे. परन्तु तेओ अधां पादर
जणइये, पादर अग्निइये अने पादर वनस्पतिइये पडेलां त्यां उत्पन्न थया
नथी ते राज्योना आठ अवकाशान्तरांमां - अग्नि; अग्निमाली, वैरोचन,
प्रभङ्कर, चन्द्राभ, सूर्याभ; शुक्राभ अने सुप्रतिष्ठाभ, ओ आठ विमान अने ते
विमानोनी वर्योवय्य रिष्टाभविमान - ओवुं कथन. ते विमानोमां आठ
लोकान्तिक देव रह छे लोकान्तिक देवोनां नाम-“ सारस्वत, आदित्य, वरुण,
गर्दतोय, तुषित, अग्न्यावाध, आग्नेय अने वरिष्ठ. ” तेमन्य विषयमां विशेष
विचार, वायुने आधारे विमानस्थितिनुं कथन, आ विमानोमां पण एवा-
लिगंभसूत्र अनुसार देवनी पर्यायने छोडीने सभस्त एव स पत्त थई

તમસ્કાયવક્તવ્યતા ।

ચતુર્થોદ્દેશકે જીવાનાં સપ્રદેશત્વાદિકં નિરૂપિતમ્ અથ પશ્ચમોદ્દેશકે સપ્રદેશ તમસ્કાયાદિકં નિરૂપયિતુમાહ—‘કિમયં ભંતે !’ ઇત્યાદિ ।

મૂળ—કિમયં ભંતે ! ‘તમુક્કાણ’ ત્તિ પવ્વુચ્ચઈ, કિં પુઢવી તમુક્કાણ ત્તિ પવ્વુચ્ચઈ, આઠ તમુક્કાણત્તિ પવ્વુચ્ચઈ ? ગોયમા ! ગો પુઢવી તમુક્કાણત્તિ પવ્વુચ્ચઈ, આઠ તમુક્કાણત્તિ પવ્વુચ્ચઈ । સે કેણટ્ટેણં ? ગોયમા ! પુઢવિકાણં અત્થેગઈણ સુભે દેસં પગાસેઈ, અત્થેગઈણ દેસં ગો પગાસેઈ—સે તેણટ્ટેણં । તમુક્કાણં ભંતે ! કહિં સમુટ્ટિણ, કહિં સંનિટ્ટિણ ? ગોયમા ! જંબૂદીવસ્સ વહિયાં તિરિયમસંખેજ્જે દીવસમુદ્દે વીર્ઠવઈત્તા, અરુણવરસ્સ દીવસ્સ વાહિરિહ્હાઓ વેડયંતાઓ અરુણોદયં સમુદ્દં વાયાલીસં જોયણસહસ્સાણિ ઓગાહિત્તા ઉવરિહ્હાઓ જલંતાઓ ઇગપણ-સિંયાણ સેઢીણ ઇત્થ ણં તમુક્કાણ સમુટ્ટિણ, સત્તરસ — ઇક્કવીસે જોયણસયાઈં ઉઢ્ઠં ઉપ્પઈત્તા તઓ પચ્છા તિરિયં પવિત્થરમાણે પવિત્થરમાણે સોહમ્મી—સાણ—સણંકુમાર—માહિંદે ચત્તારિ ત્રિ-કપ્પેઆવરિત્તા ણં, ઉઢ્ઠંપિ ય ણં વંભલોગે કપ્પે રિટ્ઠવિમાણપત્થઢં સંપત્તે—ઇત્થ ણં તમુક્કાણ ણં સંનિટ્ટિણ । તમુક્કાણં ભંતે ! કિં સંટિણ પળ્લણ્ણત્તે ? ગોયમા ! અહે મહ્લગમૂલસંટિણ, ઉપ્પિં કુલ્લકુંડપંજરગસંટિણ પળ્લણ્ણત્તે ! તમુક્કાણ ણં ભંતે ! કેવડયં વિકલ્લ-ભેણં, કેવડયં પરિકલ્લેવેણં પળ્લણ્ણત્તે ? ગોયમા ! તમુક્કાણ ણં દુવિહે પળ્લણ્ણત્તે, તં જહા—સંખેજ્જવિત્થડે ય, અસંખેજ્જવિત્થડે, ય । તત્થ

લોકાન્તિક વિમાન સે લોક કા અન્તિમમાર્ગ અસંખ્યાંત યોજન દૂર હૈ એસા કથન ॥

ચુકેલા છે. બધા લોકાન્તિક દેવોની સ્થિતિ આઠ સાગરોપમની હોય છે. તથા લોકાન્તિક વિમાનમાંથી લોકને અન્તિમ ભાગ અસંખ્યાંત યોજન દૂર છે એવું કથન.

णं जे से संखेज्जवित्थडे से णं संखेज्जाइं जोयणसहस्साइं विक्खं-
 भेणं, असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं परिकखेवेणं पण्णत्ते, तत्थ
 णं जे से असंखिज्जवित्थडे से णं असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं
 विक्खंभेणं, असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं परिकखेवेणं पण्णत्ते ।
 तमुक्काए णं भंते ! के महालग्ग पण्णत्ते ? गोयमा ! अयं णं
 जंबुदीवे दीवे सब्बदीव-समुद्धानं सब्बभंतराए, जाव-परि-
 कखेवेणं पण्णत्ते । देवेणं महिद्धीए, जाव-महाणुभावे इणामेव
 त्ति कट्ठु केवलकण्ठं जंबुदीवं दीवं तिहिं अच्छरानिवाएहिं
 तिसत्तखुत्तो अणुपरियट्ठित्ताणं हव्वं आगच्छिज्जा, से णं देवे ताए
 उक्किट्ठाए, लुरियाए, जाव-देवगईए वीईवयमाणे वीईवयमाणे
 जाव-एगाहं दुयाहं वा, तियाहं वा, उक्कोसेणं छम्मासे वीई-
 वइज्जा, अत्थेगइयं तमुक्कायं वीईवइज्जा, अत्थेगइयं तमुक्कायं
 णो वीईवएज्जा, एमहालएणं गोयमा ! तमुक्काए पण्णत्ते ।
 अत्थि णं भंते ! तमुक्काए गेहाइ वा, गेहावणा इ वा ? णो इणट्ठे
 समट्ठे । अत्थि णं भंते ! तमुक्काए गामा इ वा, जाव-सन्निवेसा
 इ वा ? णो इणट्ठे समट्ठे । अत्थि णं भंते ! तमुक्काए उराला
 वलाहया संसेयंति, संमुच्छंति, संवासंति वा ? हंता, अत्थि !
 तं भंते ! किं देवो पकरेइ, असुरो पकरेइ, नागो पकरेइ ?
 गोयमा ! देवो वि पकरेइ, असुरो वि पकरेइ, नागो वि पकरेइ ।
 अत्थि णं भंते तमुक्काए वायरे थणियसदे, वायरे विज्जुए ?
 हंता, अत्थि ! तं भंते ! किं देवो पकरेइ, असुरो पकरेइ, नागो

पकरेइ ? गोयमा ! तिणिणवि पकरेति । अत्थिणं भंते ! तमुक्काए वायरे पुढविकाए, वायरे अगणिकाए ? णो इणट्ठे संमट्ठे, णणत्थ विग्गहगइसमावन्नएणं । अत्थिणं भंते ! तमुक्काए चंदिमसूरिय-
 गहगण-णवसुत्त-तारारूवा ? णो इणट्ठे समट्ठे, पलिप्सुओ पुण अत्थि । अत्थिणं भंते ! तमुक्काए चंदाभा इ वा, सूरभा इ वा ? णो इणट्ठे समट्ठे, कादूसणिया पुण सा । तमुक्काए णं भंते !
 केरिसए वन्नएणं पणत्ते ? गोयमा ! काले कालोभासे, गंभीर-
 लोमहरिसजणणे, भीमे, उत्तासणए, परमकिण्हेवणणे पणत्ते, देवे णं अत्थेगइए जेणं तप्पढमयाए पासित्ता णं खुभाएज्जा, अहे णं अभिसमागच्छेज्जा, तओ पच्छा सीहं सीहं, तुरियं २ खिप्पायेव वीईवएज्जा । तमुक्कायस्स णं भंते ! कइ नामधेज्जा पणत्ता ? गोयमा ! तेरस्स नामधेज्जा पणत्ता, तं जहा-तमे इ वा १, तमुक्काए इ वा २, अंधयारे इ वा ३, महांधयारे इ वा ४, लोगंधयारे इ वा ५, लोगतमिस्से इ वा ६, देवंधयारे इ वा ७, देवतमिस्से इ वा ८, देवरण्णे इ वा ९, देववूहे इ वा १०, देवफ-
 लिहे इ वा ११, देवपडिक्खोभे इ वा १२, अरुणोदए इ वा, समुहे १३, तमुक्काएणं भंते ! किं पुढवि परिणामे, आउपरिणामे, जीव-
 परिणामे, पोग्गलपरिणामे ? गोयमा ! णो पुढविपरिणामे, आउपरिणामे वि, जीवपरिणामे वि, पोग्गलपरिणामे वि । तमुक्काएणं भंते ! सव्वे पाणा भूया, जीवा सत्ता पुढवीकाइ-
 यत्ताए, जावतसकाइयत्ताए उववन्नपुव्वा ? हंता, गोयमा !

અસઈં અદુવા અણંત-વસુત્તો, ણો ચેવ ણં વાદરપુઢવિકાઙ્ગ-
ત્તાણ, વાદરઅગણિકાઙ્ગત્તાણ વા ॥ સૂ. ૧ ॥

છાયા—કિમ્ અપમ્ ભદન્ત ! તમસ્કાય ઇતિ મોચ્યતે ? ઈં પૃથિવીતમસ્કાય
ઇતિ મોચ્યતે, આપઃ તમસ્કાય ઇતિ મોચ્યતે ? ગૌતમ ! નો પૃથિવીતમસ્કાય ઇતિ
મોચ્યતે, આપઃ તમસ્કાય ઇતિ મોચ્યતે । તન્ કેનાર્થેન ? ગૌતમ ! પૃથિવીઘાતો-
ઽસ્ત્યેકકઃ શુભોદેશં પ્રકાશયતિ, અસ્ત્યેકકો દેશં નો પ્રકાશયતિ, તન્ તેનાર્થેન ।

તમસ્કાય વ્યક્ત્યતા

‘ કિમયં મંતે । “ તમુક્કાણ ” ત્તિ પવુચ્ચઈ ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(કિમયં મંતે ! તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ, ઈં પુઢવિ
તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ, આઝ તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ) હે ભદન્ત ! વહ જો
તમસ્કાય હે વહ કયા પદાર્થ હૈ—અર્થાત્ કિસ પદાર્થરૂપ વહ તમસ્કાય
કહા ગયા હૈ ? કયા વહ તમસ્કાય પૃથ્વીરૂપ કહા ગયા હૈ યા વહ તમ-
સ્કાય અપ્-જલરૂપ કહા ગયા હૈ ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (ણો પુઢવિ
તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ, આઝ તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ) વહ તમસ્કાય
પૃથિવીરૂપ નહીં કહા ગયા હૈ કિન્તુ વહ તમસ્કાય અપ્-જલરૂપ કહા
ગયા હૈ । (સે કેળદ્દેણં) હે ભદન્ત ! આપ એસા કિસ કારણ સે કહતે
હૈં કિ તમસ્કાય પૃથિવીરૂપ નહીં કહા ગયા હૈં કિન્તુ અપ્-જલરૂપ કહા
ગયા હૈં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પુઢવિકાણં અત્થેગઈણ સુમે દેસં
પગાસેઈ અત્થેગઈણ દેસં ણો પગાસેઈ, સે તેળદ્દેણં) કિતનીક પૃથિવી-

તમસ્કાય વક્તવ્યતા—

“ કિ અયં મંતે ! “ તમુક્કાર ” ત્તિ પવુચ્ચઈ, ” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—(કિમયં મંતે ! “ તમુક્કાણ ” ત્તિ પવુચ્ચઈ, ઈં પુઢવો તમુક્કાણ
ત્તિ પવુચ્ચઈ, આઝ તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ) હે ભદન્ત ! આજે તમસ્કાય છે
તે કયો પદાર્થ છે—એટલે કે તમસ્કાય કયા પદાર્થરૂપ છે ? શું તમસ્કાયને
પૃથ્વીરૂપ કહેલ છે ? અથવા તો તેને જળરૂપ કહેલ છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (ણો પુઢવિ તમુક્કાણ ત્તિ પવુચ્ચઈ, આઝ તમુક્કાણ
ત્તિ પવુચ્ચઈ) તમસ્કાયને પૃથ્વીરૂપ કહું નથી, પણ તેને જળરૂપ કહું છે.

(સે કેળદ્દેણં ?) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે
તમસ્કાયને પૃથ્વીરૂપ કહું નથી પણ જળરૂપ કહું છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (પુઢવિકાણં અત્થેગઈણ સુમેદેસં પગાસેઈ,
અત્થેગઈણ દેસં ણો પગાસેઈ, સે તેળદ્દેણં) કેટલીક પૃથ્વીકાય એવી શુભ

તમસ્કાયઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કુતઃ સમુત્થિતઃ, કુત સંનિઘ્નિતઃ ? ગૌતમ ! જમ્બૂદ્વીપસ્ય દ્વીપસ્ય વહ્નિઃ તિર્યગસંસ્થેયાન્ દ્વીપ-સમુદ્રાન્ વ્યતિવ્રજ્ય અરુણવરસ્ય દ્વીપસ્ય વાહ્યાદ્ વેદિકાન્તાદ્ અરુણોદયં સમુદ્રં ઢાચત્વારિશ્દયોજનસહસ્રાણિ અવગાહ્ય ઉપરિતનાદ્ જલ્યાન્તાદ્ એકપ્રદેશિકયા શ્રેણ્યા-અત્ર સ્વલુ તમસ્કાયઃ સમુત્થિતઃ, સપ્ત-

કાય એસી શુભ હોતી હૈ કિ વહ્ દેશકો-એક ભાગ કો પ્રકાશિત કરતી હૈ । ઓર કિતનીક પૃથિવીકાય એસી હોતી હૈ જો વહ્ દેશ કો-એક ભાગ કો પ્રકાશિત નહીં કરતી હૈ । ઇસ કારણ મૈને એસા કહા હૈ કિ તમસ્કાય પૃથિવીરૂપ નહીં હૈ અપ્-જલરૂપ હૈ । (તમુક્ષાણં ભંતે) કહિં સમુદ્રિણ, કહિં સંનિઘ્નિણ ?) હે ભદન્ત ! યહ તમસ્કાય કહાં સે પ્રારંભ હોતા હૈ ? ઓર કહાં ઇસકા અન્ત હોતા હૈ ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (જંબૂદ્વીપસ્ય વહ્નિયા તિરિયમસંસ્થેજ્ઞે દીવસમુદે વીર્ઘ્વહૃત્તા, અરુણવરસ્ય દીવસસ વાહિરિલ્લાઓ વેદ્યંતાઓ અરુણોદયં સમુદ્રં વાયાલીસં જોયણ-સહસ્રાણિ ઓગહિત્તા ઉવરિહ્તાઓ જલંતાઓ ઇગપણસિયાણ સેઢીણ ઇત્થણં તમુક્ષાણ સમુદ્રીણ) જંબૂદ્વીપ કે વાહિર તિરછે અસંખ્યાત દ્વીપ સમુદ્રોં કો ઉત્તલંઘન-પાર કરને કે વાદ અરુણવર દ્વીપ આતા હૈ । ઇસ અરુણવર દ્વીપ કો ચારોં ઓર સે અરુણોદય સમુદ્ર વેરે હુણ હૈ । ઇસ સમુદ્ર કો વાહિરો વેદિકા કે અન્ત સે લેકર અરુણોદય સમુદ્ર મેં ૪૨ હજાર યોજન આગે જાને પર ઉપરિતન જલાન્ત આતા હૈ । ઇસ ઉપરિ-

(દેહીપ્યમાન) હોય છે કે તે દેશને (એક ભાગને) પ્રકાશિત કરે છે, અને કેટલીક પૃથ્વીકાય એવી હોય છે કે જે ક્ષેત્રના એક ભાગને પણ પ્રકાશિત કરતી નથી. હે ગૌતમ તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે તમસ્કાય પૃથ્વીરૂપ નથી પણ જળરૂપ છે.

(તમુક્ષાણં ભંતે ! કહિં સમુદ્રિણ કહિં સંનિઘ્નિણ ?) હે ભદન્ત ! આ તમસ્કાયને પ્રારંભ ક્યાંથી થાય છે અને ક્યાં તેની સમાપ્તિ થાય છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જંબૂદ્વીપસ્ય વહ્નિયા તિરિયમસંસ્થેજ્ઞે દીવસમુદે વીર્ઘ્વહૃત્તા, અરુણવરસ્ય દીવસસ વાહિરિલ્લાઓ વેદ્યંતાઓ અરુણોદયં સમુદ્રં વાયાલીસં જોયણસહસ્રાણિ ઓગહિત્તા ઉવરિહ્તાઓ જલંતાઓ ઇગપણસિયાણ સેઢીણ ઇત્થણં તમુક્ષાણ સમુદ્રીણ) જંબૂદ્વીપની બહાર તિરછા અસંખ્યાત દ્વીપ સમુદ્રોને પાર કર્યા પછી અરુણવર દ્વીપ આવે છે. આ અરુણવર દ્વીપને ઘેરીને ચારે તરફ અરુણોદય સમુદ્ર રહેલો છે. તે સમુદ્રની બહારની વેદિકાના અન્તથી લઇને અરુણોદય સમુદ્રમાં ગેતાલીય હજાર થે.જન આગળ જતાં ઉપરિતન જલાન્ત

દસૌકર્ણિશતિયોજનગત્તાનિ કુર્ધ્વમ્ ઉત્પત્ય તતઃ પથાન્ તિર્યક્ પ્રવિસ્તરન્, પ્રવિસ્ત-
રન્ સૌધર્મ-જ્ઞાન-સનત્કુમાર-માહેન્દ્રાન્ ચતુરોઽપિ કલ્પાન્ આગ્રત્ય કુર્ધ્વમપિ ચ તત્તુ
બ્રહ્મલોકે કલ્પે રિષ્ટિમાનપત્નયં સંપાત્તઃ-અપ તત્તુ તમસ્કાયઃ સંનિદ્વિષઃ। તમસ્કાયઃ
તત્તુ ભદન્ત ! કિંસંસ્થિતઃ પશ્યતઃ ? ગૌતમ ! અથો મહ્નમૂલપંસ્થિતઃ, ડારિકુવકુટપ-
અસ્કસંસ્થિતઃ પશ્યતઃ। તમસ્કાયઃ તત્તુ ભદન્ત ! કિયાન્ વિષ્ણુમ્બેજ, કિયાન્ પરિક્ષે-

તન જલાન્ત સે એક થેણિ એસી આતી હૈ જો ઉપર ઓર નીચે સપ્રદેશ-
વાલી હૈ-અર્થાત્ ભિત્તિ કે જૈસે નિત્તિ ऊपर नीचे मध्य में एकसी
होती है-इसी तरह की यह श्रेणी है-इस श्रेणि से तमस्काय प्रारंभ
होता है। (सत्तरस-एकवीसे जोयणसस उड्डुं उप्पइत्ता तथो पच्छा तिरियं
पवित्थरमाणे पवित्थरमाणे सोहम्मसीसाणसणंकुमारमाहिंदे चत्तारि
वि कप्पे आवरित्ता णं उड्डुं पिय णं पंभलोगे कप्पे रिट्ठविमाणपत्थडं
संपत्ते-एत्थ णं तमुक्काए णं संनिद्विए) यह तमस्काय यहाँ से प्रारंभ
होकर १७२१ योजन ऊँचे जाकर वहाँ से पीछे तिरछा विस्तृत होता
हुआ सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार इन चार कल्पों को आवृत्त आच्छा-
दित करके ऊँचे ब्रह्मलोककल्प में रिष्ट विमान के पाथडे तक पहुँचता
है-यहीं पर इस तमस्काय का अन्त है। (तमुक्काएणं भंते ! किं संठिए
पण्णत्ते) हे भदन्त ! इस तमस्काय का आकार कैसा है ? (गोयमा)
हे गौतम ! (अहे मल्लमूलसंठिए उप्पि कुक्कुडपंजरगसंठिए पण्णत्ते)

આવે છે. તે ઉપરિતન જલાન્તથી એક શ્રેણિ એવી આવે છે કે જે ઉપર અને
નીચે સમપ્રદેશવાળી છે-એટલે કે દિવાલના જેવી છે-જેવી રીતે દીવાલ ઉપર,
નીચે અને મધ્ય ભાગમાં એક સરખી હોય છે એજ પ્રકારની આ શ્રેણી છે.
તે શ્રેણિમાંથી તમસ્કાયનો પ્રારંભ થાય છે. (સત્તરસ-એકવીસે જોયણસસ ઉડ્ડુ
ઉપ્પવિત્તા તથોઈચ્છા તિરિયં પવિત્થરમાણે પવિત્થરમાણે સોહમ્મસીસાણસણંકુમારમાહિંદે
ચત્તારિ વિ કપ્પે આવરિત્તાણં ઉડ્ડું પિય ણં પંભલોગે કપ્પે રિટ્ઠવિમાણપત્થડં સંપત્તે
એત્થણં તમુક્કાએ ણં સંનિદ્વિએ) આ તમસ્કાય તે શ્રેણિમાંથી શરૂ થઈને ૧૭૨૧
યોજન ઊંચે જાય છે. ત્યારબાદ ત્યાંથી તે તિરછો વિસ્તૃત થઈને સૌધર્મ,
ઈશાન, સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર એ ચાર કલ્પોને આચ્છાદિત કરીને ઊંચે
બ્રહ્મલોક કલ્પમાં રિષ્ટ વિમાનના પાથડા સુધી પહોંચે છે અને ત્યાં જ તેને।
(તમસ્કાયનો) અન્ત આવી જાય છે.

(તમુક્કાએણં ભંતે ! કિં સંઠિએ પણ્ણત્તે ?) હે ભદન્ત ! તમસ્કાયનો
આકાર કેવો હોય છે ?

પેણ પ્રજ્ઞપ્તઃ ? ગૌતમ ! તમસ્કાયઃ સ્વલુ દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્વથા—સંખ્યેયવિસ્તૃતથ, અસંખ્યેયવિસ્તૃતથ, તત્ર સ્વલુ યઃ સ સંખ્યેયવિસ્તૃતઃ સ સ્વલુસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ વિષ્કંભેણ, અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ પરિક્ષેપેણ પ્રજ્ઞપ્તઃ । તત્ર સ્વલુ યઃ સોઽસંખ્યેયવિસ્તૃતઃ સઃ સ્વલુ અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ વિષ્કંભેણ, અસંખ્યે-

હે ગૌતમ ! તમસ્કાય કા નીચે કા આકાર મિટ્ટી કે દીપક કે નીચે કે ભાગ જૈસા કહા ગયા હૈં ઓર ડુપર કા આકાર મુર્ગા કે પિંજરેકે આકાર જૈસા કહા ગયા હૈં । (તમુક્ષાણ ણં મંતે ! કેવદ્દયં વિકલ્લંભેણ, કેવદ્દયં પરિકલ્લેવેણં પળ્લત્તે) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય કા વિસ્તાર કિતના હૈં ? ઓર પરિક્ષેપ કિતના હૈં ? (ગોયમા ! તમુક્ષાણં દુવિદ્દે પળ્લત્તે—તં જહા સંલેજ્જવિત્થડે ય અસંલેજ્જવિત્થડે ય) હે ગૌતમ ! તમસ્કાય દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈં—એક સંખ્યાત વિસ્તાર વાલા તમસ્કાય ઓર દુસરા અસંખ્યાત વિસ્તારવાલા તમસ્કાય (તત્થ ણં જે સે સંલેજ્જવિત્થડે સે ણં સંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિકલ્લંભેણં) હનમેં જો સંખ્યાત વિસ્તારવાલા તમસ્કાય હૈં વહ અપને વિષ્કંભ સે સંખ્યાત હજાર યોજન કા તથા (અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિકલ્લેવેણં પળ્લત્તે) પરિક્ષેપસે અસંખ્યાત હજાર યોજન કા કહા ગયા હૈં । (તત્થ ણં જે સે અસંલેજ્જવિત્થડે સે ણં

(ગોયમા ।) હે ગૌતમ ! (અહે મહામૂઝ સંઠિપ વપ્પિ કુક્કુડપંજરા-સંઠિપ પળ્લપ) તમસ્કાયના નીચેના ભાગને આકાર દીવો કરવાના માટીના કોડિયાના નીચેના ભાગ જેવો કહ્યો છે, અને તેના ઉપરના ભાગને આકાર કુકડાના પિંજરાના આકાર જેવો કહ્યો છે.

(તમુક્ષાણ ણં મંતે ! કેવદ્દયં વિકલ્લંભેણ, કેવદ્દયં પરિકલ્લેવેણં પળ્લત્તે ?) હે ભદન્ત ! તમસ્કાયનો વિસ્તાર કેટલો કહ્યો છે ? તેનો પરિક્ષેપ (પરિધી) કેટલો કહ્યો છે ?

(ગોયમા ! તમુક્ષાણં દુવિદ્દે પળ્લત્તે—તં જહા—સંલેજ્જવિત્થડે ય અસંલેજ્જવિત્થડે ય) હે ગૌતમ ! તમસ્કાયના બે પ્રકાર નીચે પ્રમાણે કહ્યા છે—(૧) સંખ્યાત વિસ્તારવાળો તમસ્કાય અને બીજો અસંખ્યાત વિસ્તારવાળો તમસ્કાય. (તત્થ ણં જે સે સંલેજ્જવિત્થડે સે ણં સંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિકલ્લંભેણં) તેમાંનો જે સંખ્યાત વિસ્તારવાળો છે તેનો વિષ્કંભ (વિસ્તાર) સંખ્યાત હજાર યોજનનો ; તથા (અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિકલ્લેવેણં પળ્લત્તે) પરિક્ષેપ (પરિધી) અસંખ્યાત હજાર યોજનનો કહ્યો છે.

(તત્થ ણં જે સે અસંલેજ્જવિત્થડે સે ણં અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં

યાનિયોગનસહસ્રાભિ પરિક્ષેપેણ પ્રગ્નપ્તઃ । તમસ્કાયઃ સન્તુ મદન્ત ! કિયન્મહાલયઃ
 પ્રગ્નપ્તઃ ? ગૌતમ ! અયં સન્તુ જમ્બૂદ્વીપો દ્વીપઃ સર્વદ્વીપ-ગણદ્વાર્ગાં સાર્વભ્યન્તરકઃ,
 યાવત્-પરિક્ષેપેણ પ્રગ્નપ્તઃ । દેવઃ સન્તુ મહર્ષિદ્ધઃ, યાત્-મહાનુભાવઃ, एतदेव
 एतदेव-इति कृत्वा केवलकर्मं जम्बूद्वीपं द्वीपं विभिरप्यगेनिर्वाणिः तिग्मविधपुटि-
 काभिः विसप्तकृत्यः अनुपर्यटयत्-शीघ्रम् भागच्छेत्. ता देवसाया उक्कट्या, तुरि-
 तया, यावत्-देवगत्या व्यभिजनन्तर यावत्-एकाहं वा, द्वयहं वा त्रयहं वा, उत्क-
 असंखेज्जाइं જોયણસહસ્સાઈં વિશ્વલંભેણ, असंखेज्जाइं જોયણસહસ્સાઈં
 પરિક્ષેવેણં પળ્લસે) ઓર જો અસંખ્યાત વિસ્તાર ચાલા તમસ્કાય હૈ
 વહ વિષ્કંભ સે અસંખ્યાત હજાર યોજન કા ઓર પરિક્ષેપ સે મી અસં-
 ક્યાતહજાર યોજન કા કહા ગયા હૈ । (તમુક્તાણ ણં મંતે ! કે મહાલણ
 પળ્લસે) હે મદન્ત ! તમસ્કાય કિતના યદ્ધા હૈ ? (ગોયમા) હે ગૌતમ !
 (અયં ણં જંબુદ્વીવે દીવે સવ્વદીવસમુદ્ધાણં સવ્વઞ્ઞનરાણ જાવ પરિક્ષે-
 વેણં પળ્લસે) સમસ્ત દ્વીપ ઓર સમસ્ત સમુદ્રોં કે ચીચ મેં યહ જંબુદ્વીપ
 નામ કા દ્વીપ-મધ્યજંબુદ્વીપ યાવત્ પરિક્ષેપચાલા કહા ગયા હૈ-અથ
 (દેવેણં મહિદ્વિણ જાવ મહાણુમાવે, ઇણામેવ ઇણામેવ તિક્કદ્ધુ કેવલ
 કર્પં જંબુદ્વીવં દીવં તિહિં તિહિં અચ્છરનિવાણહિં ત્તિસત્તલુત્તો અણુપરિ-
 યટ્ઠિત્તાણં હવ્વં આગચ્છિજ્જા-સે ણં દેવે તાણ ઉદ્ધિટ્ઠાણ તુરિયાણ જાવ દેવ-
 ગઈણ વીર્ઘવમાણે. જાવ ઇકાહં વા દુયાહં વા તિયાહં વા ઉક્કોસેણં છમ્માસે

વિશ્વલંભેણ, असंखेज्जाइं જોયણસહસ્સાઈં પરિક્ષેવેણં પળ્લસે) અને જે સંખ્યાત
 વિસ્તારવાળો તમસ્કાય છે તેનો વિષ્કંભ અસંખ્યાત હજાર યોજનનો અને
 પરિક્ષેપ પણ અસંખ્યાત હજાર યોજનનો કહ્યો છે

(તમુક્તાણ ણં મંતે ! કે મહાલણ પળ્લસે ?) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય
 કેટલો મોટો છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અયં ણં જંબુદ્વીવે દીવે સવ્વદીવસમુદ્ધાણં
 સવ્વઞ્ઞનરાણ જાવ પરિક્ષેવેણં પળ્લસે) સમસ્ત દ્વીપ અને સમસ્ત સમુદ્રોની
 વચ્ચે આવેલો આ જંબુદ્વીપ નામનો દ્વીપ-મધ્ય જંબુદ્વીપ એક લાખ યોજ-
 નના આયામ વિષ્કંભવાળો અને ૩૧૬૨૨૭ યોજન, ૩ કોસ, ૨૮૦૦ ધનુષ
 અને ૧૩૩૩ આંગળથી સહેજ અધિક પરિધીવાળો કહ્યો છે. (અહીં ' જાવ '
 પદ્ધતી ગ્રહણ કરવામાં આવેલ સૂત્રપાઠનો અર્થ આપ્યો છે) હવે (દેવેણં
 મહિદ્વિણ જાવ મહાણુમાવે, ઇણામેવ ઇણામેવ તિક્કદ્ધુ કેવલકર્મં જંબુદ્વીવં દીવં
 તિહિં તિહિં અચ્છરનિવાણહિં ત્તિ સત્તલુત્તો અણુપરિયટ્ઠિત્તાણં હવ્વં આગચ્છિજ્જા
 સે ણં દેવે તાણ ઉદ્ધિટ્ઠાણ તુરિયાણ જાવ દેવગઈણ વીર્ઘવમાણે, જાવ ઇકાહં વા

વેળ પળાસાન્ વ્યતિવ્રજેન્, અસ્ત્યેકકં તમસ્કાયં વ્યતિવ્રજેન્, અસ્ત્યેકકં તમ-
સ્કાયં નો વ્યતિવ્રજેન્, ઇન્દ્રમહાલયઃ સન્દુ ગૌતમ ! તમસ્કાયઃ પ્રજ્ઞાઃ ! અસ્તિ
સન્દુ ભદન્ત ! તમસ્કાયે ગેહાનિ વા, ગેહાવણા વા ? નો અયમર્થઃ, સમર્થઃ અસ્તિ
સન્દુ ભદન્ત ! તમસ્કાયે ગ્રામાઈતિ વા યાવત્સંનિવેસા ઇતિ વા ? નો અયમર્થઃ
વીર્વૈવજ્ઞા, અત્યેગદ્યં તમુસ્કાયં વીર્વૈવજ્ઞા, અત્યેગદ્યં તમુસ્કાયં ણો
વીર્વૈવજ્ઞા-અમહાલયં ગોયમા ! તમુક્ષાણ પળગત્તે) કોર્દિ વિશાલ-વઢી
ભારી-કદ્ધિવાલા યાવત્ સહાપ્રભાવવાલા દેવ “યહ મેં ચલા યહ મેં
ચલ” હસ તરહ કા ઉતાવલા ચનકર તીન ચુટકી વજતે હી ૨૧ વાર
ઉસ સમસ્ત જંબૂદ્વીપ કી પરિક્રમા દેકર શીઘ્ર આજાવે-હસ તરહ વહ
દેવ અપની દેવગતિસંબંધી ત્વરાદિ વિશેષણવાલી ગતિ સે એક દિન, દો
દિન યા તીન દિનતક ચલતા રહે ઓર અધિક સે અધિક હસ તરહ સે
વહ છહ માહ તક ચલે તો હસ પ્રકાર કી ચાલ સે ચલને વાલા વહ દેવ
તમસ્કાય કે કિતનેક અંશ કો પ્રાપ્ત કર સકતા હૈ ઓર કિતનેક તમ-
સ્કાય કે અંશ કો પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હૈ । હે ગૌતમ ! હતના વઢા
વિશાલ તમસ્કાય કહા ગયા હૈ । (અત્થિળં ભંતે ! તમુક્ષાણ ગેહાઈ વા,
ગેહાવણાઈ વા ?) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય મેં કયા ઘર હૈં ? ગૃહાવણ હૈં ?
(ણો ઇળદે ઇળદે) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ । (અત્થિળં
ભંતે ! તમુક્ષાણ ગામાઈ વા જાવ સન્નિવેસાઈ વા) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય

હવાઈ, તિયાઈ વા ઉકોસેળં છમ્માસે વીર્વૈવજ્ઞા, અત્યેગદ્યં તમુસ્કાયં વીર્વૈવજ્ઞા,
અત્યેગદ્યં તમુસ્કાયં ણો વીર્વૈવજ્ઞા-અમહાલયં ગોયમા ! તમુક્ષાણ પળગત્તે) કોર્દિ
વિશાળ કદ્ધિવાળો, મહાપ્રભાવ આદિથી યુક્ત હોય એવો દેવ “ આ ઉપડયો,
આ ઉપડયો ” એમ કહેતો ધણે ઉતાવળો ઉતાવળો ત્રણ વાર અપટ્ટી વગા-
ડતા તો સમસ્ત જંબૂદ્વીપની ૨૧ વાર પ્રદક્ષિણા કરીને પાછો આવી જાય છે,
આ પ્રકારની શીઘ્ર ગતિવાળો તે દેવ, પોતાની આ પ્રકારની ત્વરાદિ વિશેષણો-
વાળી દેવગતિથી એક દિવસ, બે દિવસ, અથવા ત્રણ દિવસ સુધી ચાલ્યા
કરે અને આ રીતે અધિકમાં અધિક છ માસ સુધી તે ચાલ્યા કરે, તો આ
પ્રકારની ગતિથી ચાલનારો તે દેવ તમસ્કાયના કેટલાક અંશને પાર કરી શકે
છે અને તમસ્કાયના કેટલાક અંશને તો પાર કરી શકે નથી પણ નથી હો
ગૌતમ ! તમસ્કાયને એટલો બધો મોટો અને વિશાળ કહ્યો છે.

(અત્થિળં ભંતે ! તમુક્ષાણ ગેહાઈ વા, ગેહાવણાઈ વા ?) હે ભદન્ત !
તમસ્કાયમાં શું ઘરો હોય છે ? ગૃહાવણો (હાટ) હોય છે ?
(ણો ઇળદે સમદે) હે ગૌતમ ! તેમાં એવું કંઈ પણ હોતું નથી.

યાનિયોજનસહસ્રાણિ પરિક્ષેપેન પ્રગ્નપ્તઃ । તમસ્કાયઃ વાચુ મદન્ત ! દિપ્યન્મહાલયઃ
 પ્રગ્નપ્તઃ ? ગૌતમ ! અયં સહ જમ્બૂદીપો દ્વીપઃ સર્વદીપ-સમુદ્રાનાં સર્વોચ્ચન્તરકાઃ,
 યાવત્-પરિક્ષેપેન પ્રગ્નપ્તઃ । દેવઃ સન્તુ મહદ્વિક્રમઃ, યાવત્-મહાનુભાવઃ, एतदेव
 एतदेव-इति कृत्वा केवलकल्पं जम्बूद्वीपं द्वीपं त्रिभिरप्यगोनिर्वाचं त्रिभिरभगुष्टि-
 काभिः त्रिसप्तकृत्यः अनुपर्यटयद् द्वीपम् आगच्छेत्, स देवताया उक्कट्या, तुरि-
 तया, यावत्-देवगत्या व्यतिव्रजन् र गावत्-एकाहं वा, दुग्धं वा व्यहं वा, उत्क-
 असंखेज्जाइं जोयणसहस्राइं चिक्खंભેણં, અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્રાઈં
 પરિક્ષેવેણં પળ્લસે) ઓર જો અસંખ્યાત વિસ્તાર ચાલા તમસ્કાય હૈ
 વહ વિષ્કંભ સે અસંખ્યાત હજાર યોજન કા ઓર પરિક્ષેપ સે મી અસં-
 ક્યાતહજાર યોજન કા કહા ગયા હૈ । (તમુક્કાપ ણં મંતે ! કે મહાલય
 પળ્લસે) હૈ મદન્ત ! તમસ્કાય કિતના ચટ્ટા હૈ ? (ગોયમા) હૈ ગૌતમ !
 (અયં ણં જંબુદ્વીવે દ્વીવે સવ્વદ્વીવસમુદ્દાણં સવ્વવ્રમન્તરાપ જાવ પરિક્ષે-
 વેણં પળ્લસે) સમસ્ત દ્વીપ ઓર સમસ્ત સમુદ્રોં કે વીચ મેં યહ જંબુદ્વીપ
 નામ કા દ્વીપ-મધ્યજંબુદ્વીપ યાવત્ પરિક્ષેપચાલા કહા ગયા હૈ-અથ
 (દેવેણં મહિદ્વિપ જાવ મહાણુભાવે, ઇણામેવ ઇણામેવ તિકદ્દદુ કેવલ
 કલ્પં જંબુદ્વીવં દ્વીવં તિહિં તિહિં અચ્છરનિવાપહિં તિસસસુત્તો અણુપરિ-
 યટ્ઠિત્તાણં હવં આગચ્છિજ્જા-સે ણં દેવે તાપ ઉક્કિટ્ટાપ તુરિયાપ જાવ દેવ-
 ગઈપ વીર્ઘવયમાણે, જાવ ઇકાહં વા દુગ્ધાહં વા તિપાહં વા ઉક્કોસેણં છન્માસે

વિક્કંભેણં, અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્રાઈં પરિક્ષેવેણં પળ્લસે) અને જે સંખ્યાત
 વિસ્તારવાળો તમસ્કાય છે તેનો વિષ્કંભ અસંખ્યાત હજાર યોજનનો અને
 પરિક્ષેપ પણ અસંખ્યાત હજાર યોજનનો કહ્યો છે

(તમુક્કાપ ણં મંતે ! કે મહાલય પળ્લસે ?) હૈ મદન્ત ! તમસ્કાય
 કેટલો મોટો છે ?

(ગોયમા !) હૈ ગૌતમ ! (અયં ણં જંબુદ્વીવે દ્વીવે સવ્વદ્વીવસમુદ્દાણં
 સવ્વવ્રમન્તરાપ જાવ પરિક્ષેવેણં પળ્લસે) સમસ્ત દ્વીપ અને સમસ્ત સમુદ્રોની
 વચ્ચે આવેલો આ જંબુદ્વીપ નામનો દ્વીપ-મધ્ય જંબુદ્વીપ એક લાખ યોજ-
 નના આયામ વિષ્કંભવાળો અને ૩૧૬૨૨૭ યોજન, ૩ કોસ, ૨૮૦૦ ધનુષ
 અને ૧૩૩૩ આંગળથી સહેજ અધિક પરિધીવાળો કહ્યો છે. (અહીં ' જાવ '
 પદ્ધતિ થકણ કરવામાં આવેલ સૂત્રપાઠનો અર્થ આપ્યો છે) હવે (દેવેણં
 મહિદ્વિપ જાવ મહાણુભાવે, ઇણામેવ ઇણામેવ તિકદ્દદુ કેવલકલ્પં જંબુદ્વીવં દ્વીવં
 તિહિં તિહિં અચ્છરનિવાપહિં તિ સસસુત્તો અણુપરિયટ્ઠિત્તાણં હવં આગચ્છિજ્જા
 સે ણં દેવે તાપ ઉક્કિટ્ટાપ તુરિયાપ જાવ દેવગઈપ વીર્ઘવયમાણે, જાવ ઇકાહં વા

અસુરઃ પ્રકરોતિ, નાગઃ પ્રકરોતિ ? ગૌતમ ત્રયોઽપિ પ્રકુર્વન્તિ । અસ્તિ खलु भदन्त !
તમસ્કાયે વાદરઃ પૃથિવીકાયઃ, વાદરોઽગ્નિકાયઃ ? નો અયમર્થઃ, સમર્થઃ, નાન્યત્ર
વિગ્રહગતિસમાપન્નકેન । સન્તિ खलु भदन्त ! તમસ્કાયે ચન્દ્ર-સૂર્ય-ગ્રહગણ-
નક્ષત્ર-તારારૂપા : ? નો અયમર્થઃ સમર્થઃ, પરિપાર્શ્વતઃ પુનઃ સન્તિ અસ્તિ खलु

સ્તનિત શબ્દ હોતા હૈ ? વાદર વિચુત્ત્ હોતી હૈ ? (હંતા અત્થિ) હાં ગૌત-
મ ! યહ સચ હોતા હૈ (તં મંતે ! કિં દેવો પકરેહ, અસુરો પકરેહ, નાગો
પકરેહ) હૈ ભદન્ત ! તો હસ વાદર સ્તનિત આદિ કો વહાં કૌન કરતા
હૈ-કયા દેવ કરતા હૈ ? યા અસુર કરતા હૈ ? યા નાગ કરતા હૈ ? (ગો-
યમા ! તિણિ વિ પકરેતિ) હૈ ગૌતમ ! તીનોં હી કરતે હૈં । (અત્થિ ણં
મંતે ! તમુક્કાયે વાયરે પુઢવિકાણ, વાયરે અગણિકાણ) હૈ ભદન્ત ! તમ-
સ્કાય મેં કયા વાદર પૃથિવીકાય હૈ ? વાદર અગ્નિકાય હૈ ? (ણો ઇણઢે
સમઢે) હૈ ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ । (ણણત્થ વિગ્ગહગહ-
સમાવજ્ઞણ) પરન્તુ વહાં પર વિગ્રહગતિસમાપન્ન વાદર પૃથિવી ઔર
વાદર અગ્નિ હૈ । અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાય ચંદિમ-સૂરિય-ગહગણ-
ણક્કલ્લ-તારાલ્લ) હૈ ભદન્ત ! તમસ્કાય મેં કયાં ચંદ્ર, સૂર્ય, ગ્રહગણ,
નક્ષત્ર ંવ તારારૂપ હૈં ? (ણો ઇણઢે સમઢે) હૈ ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ
નહીં હૈ । (પલિયસ્સઓ પુણ અત્થિ) પર ંવ સચ ઉસકે પાર્શ્વભાગ કી

(હંતા અત્થિ) હા, ગૌતમ ! તે બધું થાય છે.

(તં મંતે ! કિં દેવો પકરેહ, અસુરો પકરેહ, નાગો પકરેહ ?) હે ભદન્ત !
આ ધનગજાન આદિ ત્યાં કોણ કરે છે ? શું દેવ કરે છે ? શું અસુર કરે છે ?
શું નાગ કરે છે ?

(ગોયમા ! તિણિ વિ પકરેતિ) હે ગૌતમ ! ત્રણે કરે છે.

(અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાય વાયરે પુઢવિકાણ, વાયરે અગણિકાણ ?) હે
ભદન્ત ! તમસ્કાયમાં શું બાદર પૃથ્વીકાય છે ? બાદર અગ્નિકાય છે ?

(ણો ઇણઢે સમઢે) હે ગૌતમ ! તમસ્કાયમાં બાદર પૃથ્વીકાય પણ નથી
અને બાદર અગ્નિકાય પણ નથી. (ણણત્થ વિગ્ગહગહસમાવજ્ઞણ) પરન્તુ
તેમાં વિગ્રહગતિ સમાપન્ન બાદર પૃથ્વી અને બાદર અગ્નિ છે.

(અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાય ચંદિમ-સૂરિય ગહગણ-ણક્કલ્લ-તારાલ્લ) હે
ભદન્ત ! તમસ્કાયમાં ચન્દ્ર, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્ર અને તારાઓ હોય છે ખરાં ?

(ણો ઇણઢે સમઢે) હે ગૌતમ ! તમસ્કાયમાં ચન્દ્રાદિક બ્યોતિષક
દેવો હોતા નથી. (પલિયસ્સઓ પુણ અત્થિ) પરન્તુ તેઓ તેની બાબુમાં હોય છે.

સમર્થઃ । અસ્તિ સત્ત્વ મદન્ત ! તમસ્કાયે ઉદારા યત્નાદ્વાઃ સંશ્વિયન્તિ, સંમૂર્ચન્તિ, સંવર્ષન્તિ ? इन्त, अस्ति । तद् भदन्त ! किं देवः प्रकरोति, अगुरः प्रकरोति, नागः प्रकरोति ? गौतम ! देवोऽपि प्रकरोति, अगुरोऽपि प्रकरोति, नागोऽपि प्रकरोति । अस्ति सत्त्व મદન્ત ! તમસ્કાયે વાદરઃ સ્તનિતશબ્દઃ, વાદરા ચિયુન્ ? इन्त, अस्ति ताम् । भदन्त ! किं देवः प्रकरोति,

મેં કયા ગ્રામ હું, યાવત્ સન્નિવેશ હું ? (ગો ઇળટ્ટે સમટ્ટે) હે ગૌતમ ! યદ્ અર્થ સમર્થ નહીં હે । (અત્થિળં મંતે ! તમુક્કાપ્પ ઊરાલા વલાહ્યા સંસેયંતિ સંમુર્ચંતિ સંવાસંતિ વા) હે મદન્ત ! તમસ્કાય મેં કયા વડે ૨ મેઘ ગીલા કરને વાલા સ્નિગ્ધ પુદ્ગલોં દ્વારા ગીંઝે હો જાતે હું ? સંમૂર્ચિત-પરસ્પર મેં વે પકવિત-હોતે હું ! (હંતા, અત્થિ) હાં ગૌતમ ! એસા હોતા હૈ । (તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્, અસુરો પકરેદ્, નાગો પકરેદ્ ?) હે મદન્ત ! સંસ્વેદન આદિ કો દેવ કરતા હૈ ? યા અસુર કરતા હૈ ? યા નાગ કરતા હૈ ? (ગોયમા ! દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, નાગો વિ પકરેદ્) હે ગૌતમ ! ઉસ સંસ્વેદન આદિ કો દેવ ભી કરતા હૈ, અસુર ભી કરતા હૈ ઓર નાગ ભી કરતા હૈ । (અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાપ્પ વાયરે ધણિયસહે, વાયરે વિજ્જુપ્પ) હે મદન્ત તમસ્કાય મેં વાદર

(અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાપ્પ ગામાદ વા જાવ સન્નિવેસાદ વા) હે મદન્ત ! શું તમસ્કાયમાં ગામ હોય છે ? સન્નિવેશ પયેન્તનાં સ્થાનો હોય છે ?

(ગો ઇળટ્ટે સમટ્ટે) હે ગૌતમ ! તમસ્કાયમાં ગામ આદિ કંઈ પણ હોતું નથી.

(અત્થિ ણં મંતે ! ઊરાલા વલાહ્યા સંસેયંતિ, સંમુર્ચંતિ, સંવાસંતિ વા ?) હે મદન્ત ! શું વિશાળ મેઘ (વાદળાંઓ) તમસ્કાયમાં ભીંભવનારા સ્નિગ્ધ પુદ્ગલોં દ્વારા ભીંભાય છે ખરાં ? પરસ્પરમાં એકવિત થાય છે ખરાં ? પરસે છે ખરાં ? (હંતા અત્થિ) હા, ગૌતમ એવું થાય છે.

(તં મંતે ! કિં દેવોપકરેદ્, અગુરો પકરેદ્, નાગો પકરેદ્ ?) હે મદન્ત ! સંસ્વેદન આદિ દેવ કરે છે ? કે અસુર કરે છે ? કે નાગ કરે છે ?

(ગોયમા ! દેવો વિ પકરેદ્, અગુરો વિ પકરેદ્, નાગો વિ પકરેદ્) હે ગૌતમ ! તે સંસ્વેદન આદિ દેવ પણ કરે છે ? અસુર પણ કરે છે અને નાગ પણ કરે છે ?

(અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાપ્પ વાયરે ધણિયસહે, વાયરે વિજ્જુપ્પ) હે મદન્ત ! તે તમસ્કાયમાં શું વાદર સ્તનિત શબ્દ-ધનગજન થાય છે ? વાદર વિદ્યુત થાય છે ?

ચ્છેત્ તતઃ પથાત્ શીઘ્રં શીઘ્રમ્, ત્વરિતં ત્વરિતમ્ સ્તિપ્રમેવ વ્યતિવ્રજેત્ । તમસ્કાયસ્ય
 સ્તુ ભદન્ત ! કતિનામધેયાનિ પ્રજ્ઞતાનિ ! ગૌતમ ! ત્રયોદશનામધેયાનિ પ્રજ્ઞતાનિ,
 તથા-તમ ઇતિ વા, ૧ તમસ્કાય ઇતિ વા ૨, અન્ધકાર ઇતિ વા ૩, મહાન્ધકાર
 ઇતિ વા ૪, લોકાન્ધકાર ઇતિ વા ૫, લોકતમિસ્રમ્ ઇતિ વા ૬, દેવાન્ધકાર
 ઇતિ વા ૭, દેવતમિસ્રમ્ ઇતિ વા ૮, દેવારણ્યમ્ ઇતિ વા ૯, દેવવૃહ ઇતિ વા ૧૦,
 દેવપરિઘ ઇતિ વા ૧૧, દેવપ્રતિક્ષોમ ઇતિ વા ૧૨, અરુણોદક ઇતિ વા સમુદ્રઃ ૧૩ ।

જ્ઞા, સીંહં સીંહં, તુરિયં ૨ સ્તિપ્રમેવ વીરવણ્જ્ઞા) કદાચિત્ કોઈદેવ
 તમસ્કાય મેં પ્રવેશ કરે તો વહ ભય કે મારે વહાં સે વહુત હી જલ્દી-
 શરીર કી ત્વરા સે ઓર મન કી ત્વરાસે વહુત હી શીઘ્ર-ડસ તમસ્કાય
 કો ડલ્લંચન કરકે વાહર નિકલ જાતા હૈ । (તમુકાયસ્સ ણં મંતે ! કહ
 નામધેજ્ઞા પળ્લતા) હૈ ભદન્ત ! તમસ્કાય કે કિતને નામ કહે ગયે હૈં ?
 (ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! (તેરસનામધેજ્ઞા પળ્લતા) તમસ્કાય કે તેરહ
 નામ કહે ગયે હૈં । (તં જહા) જો ઇસ પ્રકાર સે હૈં- (તમેહ વા, તમુ-
 કાણ્હવા અંધયારેહ વા, મહાંધયારેહ વા, લોગંધયારેહ વા, લોગતમિસેહ
 વા, દેવંધયારેહ વા, દેવતમિસેહ વા, દેવરણ્ણેહ વા, દેવવૃહેહ વા દેવક્ર-
 લિહેહ વા, દેવપડિક્કલોમેહ વા, અરુણોદણ્ણ વા, સમુદ્દે) તમ ૧, તમ-
 સ્કાય ૨, અંધકાર ૩, મહાંધકાર ૪, લોકાંધકાર ૫, લોકતમિસ્ર ૬,
 દેવાંધકાર ૭, દેવતમિસ્ર ૮, દેવારણ્ય ૯, દેવવૃહ ૧૦, દેવ પરિઘ ૧૧,
 દેવપ્રતિક્ષોમ ૧૨, યં અરુણોદકસમુદ્ર ૧૩ । (તમુકાણ્ણ ણં મંતે ! કિં

(જહે ણં અમિસમાગચ્છેજ્ઞા, તઓ પચ્છા સીંહં સીંહં, તુરિયં તુરિયં સ્તિપ્રમેવ
 વીરવણ્જ્ઞા) જો કોઈ દેવ તમસ્કાયમાં પ્રવેશ કરે છે, તો તે બચને કારણે
 જલ્દીમાં જલ્દી-શરીર અને મનની ત્વરાથી ઘણી જ ઝડપથી-તે તમસ્કાયને
 પાર કરીને બહાર નીકળી બચ છે.

(તમુકાયસ્સ ણં મંતે ! કહ નામધેજ્ઞા પળ્લતા ?) હૈ ભદન્ત ! તમસ્કા-
 યના કેટલા નામ કહ્યાં છે ?

(ગોયમા !) હૈ ગૌતમ ! તમસ્કાયના (તેરસ નામધેજ્ઞા પળ્લતા) તેર
 નામ કહ્યાં છે, (તં જહા) જેમકે (તમેહ વા, તમુકાણ્ણ વા, અંધયારેહ વા,
 દેવરણ્ણેહ વા, દેવવૃહેહ વા, દેવક્રલિહેહ વા, દેવપડિક્કલોમેહ વા, અરુણોદણ્ણ વા
 સમુદ્દે) (૧) તમ, (૨) તમસ્કાય, (૩) અંધકાર, (૪) મહાંધકાર (૫) લોકાં-
 ધકાર, (૬) લોકતમિસ્ર, (૭) દેવાંધકાર, (૮) દેવતમિસ્ર, (૯) દેવારણ્ય, (૧૦)
 દેવવૃહ, (૧૧) દેવપરિઘ, (૧૨) દેવપ્રતિક્ષોમ અને (૧૩) અરુણોદક સમુદ્ર.

મદન્ત ! તમસ્કાયે ચન્દ્રાભેતિ ચા. સૂર્યાભેતિ ચા ? નો અર્થમર્થઃ મર્થઃ, કાદ્મણિ
 કા પુનઃ સા । તમસ્કાયઃ સ્વત્વ મદન્ત ! કીદન્તકો વર્ગેન પદ્મજઃ ? ગૌતમ ! કાલે,
 કાલોભાસઃ, ગંભીરોમહરિમજનકઃ, મીમઃ, ઉત્તાસનકઃ, પરમકૃષ્ણવર્ણઃ પદ્મજઃ,
 દેવઃ સ્વત્વ અસ્ત્યેકલો યઃ સ્વત્વ તત્પ્રથમતયા દ્વદ્વા ધુન્વેન્, અથ ગત્વ અમિતમાગ-

ઓર હૈં । (અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ચંદામાદ ચા સૂગમાદ ચા) હે
 મદન્ત ! તમસ્કાય મેં ચંદ્રમા ફી પ્રમા અથવા સૂર્ય ફી પ્રમા હે કયા ?
 (જો ણેદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હે । (કાદ્મણિયા
 પુણસા) અર્થાત્ તમસ્કાય મેં ચન્દ્રપ્રમા ઓર સૂર્યપ્રમા હે તો સહી-પર-
 ત્તુ વહ વહાં નહીં જિસી હે । વર્થોં કિ યહાં પર ઉસકા પરિણમન તમ-
 સ્કાયરૂપ સે હો જાતા હે । (તમુક્કાણ ણં મંતે ! કેરિસણ વજ્જણ ણં પંણ-
 સે) હે મદન્ત તમસ્કાય કા વર્ણ કેસે કરા ગયા હે ? (ગોયમા ! કાલે,
 કાલોભાસે ગંભીરલોમહરિમજનણે, મીમે, ઉત્તાસણણ, પરમકિણ્હે,
 વર્ણે પંણસે) હે ગૌતમ તમસ્કાય કા વર્ણકાલા. કાલીકાન્તિવાલા,
 ગંભીર, રોમરાજી કો સ્ત્રીકરદેનેવાલા, અગ્રહૂર ઓર કંપિત કર દેવે
 પેસા પરમકૃષ્ણ કહા ગયા હે । (દેવે ણં અત્થેગદ્દણ જે ણં તત્પદ્મમાણ
 પામિત્તા ણં સુમાણજ્ઞા) યદિ કોઈ દેવ સવ સે પહિછે હસે દેવલેતા હે
 તો વહ મી દેવલેતે હી ધુમિત હો ઉઠતા હે । (અદે ણં અમિસમાંગચ્છે-

(અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ચંદામાદ ચા સૂગમાદ ચા ?) હે મદન્ત !
 તમસ્કાયમાં ચન્દ્રની પ્રમા તથા સૂર્યની પ્રમા હોય છે ખરી ?

(જો ણેદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! તેમાં ચન્દ્ર અથવા સૂર્યની પ્રમા હોતી
 નથી. (કા દૂષણિયા પુણસા) ને કે તમસ્કાયમાં ચન્દ્ર અને સૂર્યની પ્રમા
 હોય છે ખરી, પણ તે ત્યાં નહીં જોવી હોય છે, કારણ કે ત્યાં તેનું તમસ્કાય
 રૂપે પરિણમન થઈ જાય છે.

(તમુક્કાણ ણ મંતે ! કેરિસણ વજ્જણ ણં પંણસે ?) હે મદન્ત ! તમસ્કાયના
 વર્ણ કયા કયા હોય છે ?

(ગોયમા ! કાલે, કાલોભાસે ગંભીરલોમ હરિમજનણે, મીમે, ઉત્તાસણણ
 પરમકિણ્હે, વર્ણે પંણસે) હે ગૌતમ ! તમસ્કાયનો વર્ણ કાળો, કાળી કાન્તિ-
 વાળો, ગંભીર, રોમરાજીને ખડી કંડી દેનારો, અગ્રહૂર અને અગ્રહી ધરધરાવી
 નાખે એવો પરમ કૃષ્ણ કહ્યો છે.

(દેવે ણં અત્થેગદ્દણ જે ણં તત્પદ્મમાણ પામિત્તા ણં સુમાણજ્ઞા) ને કોઈ
 દેવ સૌથી પહેલાં તેને જોવે છે તો તે પણ તેને જોતાં જ કોઈ અનુભવે છે.

ટીકા—‘ કિમયં મંતે ! તમુક્ષાણ્ ’ તિ પવ્યુચ્ચૈ ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ
 -હે ભદ્રન્ત ! અયં શાસ્ત્રપ્રસિદ્ધઃ ‘ તમસ્કાયઃ ’ તમસામ્ અન્ધકારપુદ્ગ-
 લાનાં કાયો રાશિઃ તમસ્કાયઃ ઇતિ કિમ્ વસ્તુ ? કઃ પદાર્થઃ પ્રોચ્યતે ?
 સ ચ તમસ્કાયઃ નિયત એવ પૃથિવીરજઃસ્કન્ધઃ, ઉદકરજસ્કન્ધો વા દ્વ દ્વિવસિતો
 મવિતુમર્હતિ, ન ત્યન્યઃ, તદુભયભિન્નાનાં સ્કન્ધાનાં તમસ્કાયસદૃશત્વાભાવાત્,
 ઇતિ પૃથિવી-જલવિપયકસંદેહાત્, હૃદયસ્થં વિકલ્પં પ્રક્લાશયતિ—‘ કિં પુઢવી તમુ-
 ક્ષાણ્ તિ પવ્યુચ્ચૈ ? ’ કિમ્ તમસ્કાયઃ પૃથિવી ઇતિ પૃથિવીસ્વરૂપઃ પ્રોચ્યતે ?
 અથવા ‘ આત્મતમુક્ષાણ્ તિ પવ્યુચ્ચૈ ? ’ તમસ્કાયઃ આપઃ જલમ્ ઇતિ જલસ્વરૂપો
 રૂપ સે ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈં । પર યે સપ વહાં વાદરપૃથિવીકાયિકરૂપ સે
 ઓર વાદર અગ્નિકાયિકરૂપ સે ઉત્પન્ન નહીં હુણ્ હૈં ।

ટીકાર્થ—ચતુર્થ ઉદ્દેશક મેં, જીવોં મેં સપ્રદેશતા આદિકા નિરૂપણ
 સૂત્રકાર ને કિયા હૈ—અથ વે હસ પંચમ ઉદ્દેશક મેં સપ્રદેશ તમસ્કાય
 આદિ કા નિરૂપણ કર રહે હૈં—હસમેં ગૌતમસ્વામી ને પ્રશ્ન સે એસા પૂછા
 હૈ કિ “ કિમયં મંતે ! તમુક્ષાણ્ તિ ” હે ભદ્રન્ત ! યહ શાસ્ત્રપ્રસિદ્ધ
 તમસ્કાય કયા હૈ ? અંધકારરૂપ પુદ્ગલોં કી રાશિ રૂપ જો યહ શાસ્ત્ર
 સંમત તમસ્કાય હૈ વહ કિસ પદાર્થરૂપ હૈ (કિ) કયા (પુઢવી તમુક્ષાણ્
 તિ-પવ્યુચ્ચૈ, આત્મતમુક્ષાણ્ તિ પવ્યુચ્ચૈ) વહ તમસ્કાય પુઢવીરૂપ
 હૈ ? યા અપ્કાયરૂપ હૈ ? હસ પ્રકાર કી જો યહ સંદેહ ભરી વાત પૂછી
 ગઈ હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ તમસ્કાય એક સ્કન્ધરૂપ પદાર્થ હૈ યહ

વાર અથવા અનંતવાર તે સમસ્ત પ્રાણાદિ પહેલાં ત્યાં પૂર્વોક્તરૂપે ઉત્પન્ન
 થઈ ચુક્યાં છે. પરન્તુ તેઓ ત્યાં બાહર પૃથ્વીકાયિક રૂપે અને બાહર અગ્નિ-
 કાયિક રૂપે ઉત્પન્ન થયા નથી.

ટીકાર્થ—ચોથા ઉદ્દેશકમાં જીવોની અપ્રદેશતા આદિનું સૂત્રકારે નિરૂપણ
 કર્યું છે. હવે સૂત્રકાર આ પાંચમાં ઉદ્દેશકમાં સપ્રદેશ તમસ્કાય આદિનું
 નિરૂપણ કરે છે—આ વિષયને અનુવક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો
 પ્રશ્ન પૂછે છે કે—

“ કિમયં મંતે ! તમુક્ષાણ્ તિ ” હે ભદ્રન્ત ! આ શાસ્ત્રપ્રસિદ્ધ તમસ્કાય
 શું છે ? એટલે કે અંધકારરૂપ પુદ્ગલોની રાશિરૂપ જે આ શાસ્ત્રસંમત તમસ્કાય
 છે તે કયા પદાર્થરૂપ છે ? “ કિં ” શું (પુઢવી તમુક્ષાણ્ તિ પવ્યુચ્ચૈ, આત્મતમુક્ષાણ્
 તિ પવ્યુચ્ચૈ ?) શું તમસ્કાય પૃથ્વીરૂપ છે ? અથવા અપ્કાયરૂપ (જળરૂપ) છે ?
 આ પ્રકારની સંદેહયુક્ત વાત પૂછવાનું કારણ એ છે કે તમસ્કાય એક
 સ્કન્ધરૂપ પદાર્થ છે એ તો ચોક્કસ છે, પરન્તુ એ વાત નિશ્ચિત નથી કે તે

તમસ્કાયઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કિં પૃથિવીપરિણામઃ, અપ્પરિણામઃ, ત્રીચરણામઃ, પુદ્ગલપરિણામઃ, ગૌતમ ! નો પૃથિવીપરિણામઃ, અપ્પરિણામોઽપિ, ત્રીચરણામોઽપિ, પુદ્ગલપરિણામોઽપિ । તમસ્કાયે સ્વલુ ભદન્ત ! સવ પાણાઃ, ભૂતાઃ, ત્રીચાઃ, સત્ત્વાઃ, પૃથિવીકાચિકૃતયા યાવત્-ત્રસકાચિકૃતયા ઉપપન્નપ્રાણાઃ ? હન્ત, ગૌતમ ! અસકૃત્, અથવા અનન્ત કૃત્વઃ, નો ચૈવ સ્વલુ ત્રાપરપૃથિવી કાચિકૃતયા, વાદરાગ્નિકાચિકૃતયા વા ” ॥ ૬૦ ॥ ૧ ॥

પુદ્ગલપરિણામે આત્મપરિણામે જીવપરિણામે, પોગ્ગલપરિણામે) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય કિસકા પરિણામ હે ? કયા પૃથિવી કા પરિણામ હે ? યા અપ્પકાય કા પરિણામ હે ? યા જીવ કા પરિણામ હે ? કિં પુદ્ગલ કા પરિણામ હે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (જો પુદ્ગલપરિણામે, આત્મપરિણામે ચિ, જીવપરિણામે ચિ, પોગ્ગલપરિણામે ચિ) તમસ્કાય પૃથિવી કા પરિણામ નહીં હે । વહ અશકાય કા મી પરિણામ હે જીવ કા મી પરિણામ હે તથા પુદ્ગલ કા મી પરિણામ હે । (તમુકાણં મંતે ! સવ્વે પાણા, ભૂયા, જીવા, સત્તા પુદ્ગલો કાઠ્ઠયત્તાણ જાવ તસકાઠ્ઠયત્તાણ ઉવવન્નપુઠ્ઠા) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય મેં સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્તધૂત, સમસ્ત જીવ સમસ્તસત્ત્વ પહિલે કયા પૃથિવી કાચિકૃતરૂપસે યાવત્-ત્રસકાચિકૃતરૂપ સે ઉત્પન્ન હોયુકે હે ? (હંતા, ગોયમા !) હાં, ગૌતમ ! (અસંદં અદુવા અણંતકલુત્તો જો ચેવ જં વાદરપુદ્ગલિકાઠ્ઠયત્તાણ વાદરઅગ્નિકાઠ્ઠયત્તાણ વા) હાં ગૌતમ ! અનેક વાર અથવા-અનંતવાર યે મય પ્રાણાદિ પહિલે વહાં પૂર્વોક્તઃ

(તમુકાણં મંતે ! કિં પુદ્ગલ પરિણામે આત્મપરિણામે જીવ પરિણામે, પોગ્ગલપરિણામે ?) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય કોનું પરિણામ છે ? શું પૃથ્વીનું પરિણામ છે ? અપ્પકાયનું પરિણામ છે ? શું જીવનું પરિણામ છે ? શું પુદ્ગલનું પરિણામ છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જો પુદ્ગલ પરિણામે, આત્મ પરિણામે ચિ, જીવ પરિણામે ચિ, પોગ્ગલ પરિણામે ચિ) તમસ્કાય પૃથ્વીકાયનું પરિણામ નથી, તે અપ્પકાયનું પણ પરિણામ છે, જીવનું પણ પરિણામ છે અને પુદ્ગલનું પણ પરિણામ છે.

(તમુકાણં મંતે ! સવ્વે પાણા, ભૂયા, જીવા, સત્તા, પુદ્ગલિકાઠ્ઠયત્તાણ જાવ તસકાઠ્ઠયત્તાણ ઉવવન્નપુઠ્ઠા ?) હે ભદન્ત ! તમસ્કાયમાં સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સત્ત્વ પહેલાં શું પૃથ્વીકાયથી લઈને ત્રસકાચિકૃત પરિણામના રૂપે ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યાં છે ?

(હંતા, ગોયમા !) હા, ગૌતમ ! (અસંદં અદુવા અણંતકલુત્તો, જો ચેવ જં વાદરપુદ્ગલિકાઠ્ઠયત્તાણ વાદરઅગ્નિકાઠ્ઠયત્તાણ વા) હા, ગૌતમ ! અનેક

મગવાનાહ—‘ ગોયમા ! પુઢવિકાણં અત્યેગદ્દુ સુમે દેસં પગાસેઢ ’ હે ગૌતમ !
 પૃથિવીકાયઃ સ્વલુ અસ્ત્યેકકઃ કથિત્ શુભો—ભાસ્વરો મળ્યાદિવત્ દેદીપ્યમાન-
 ત્વાન્, વિવક્ષિતક્ષેત્રસ્ય દેશમ્ એકભાગં પ્રકાશયતિ, અથ ચ ‘ અત્યેગદ્દુ દેસં જો
 પગાસેઢ ’ અસ્ત્યેકકઃ કથિત્ અપરઃ પૃથિવીકાયઃ યઃ પ્રકાશ્યમપિ દેશં ભાગાન્ત-
 રમ્ અભાસ્વરત્વાત્ કૃષ્ણપાપાણવત્ નો પ્રકાશયતિ, અપ્કાયસ્તુ સર્વોઽપિ અપ્રકા-
 શકત્વાત્ ન કમપિ ભાગં પ્રકાશ્યમપિ પ્રકાશયતિ, તમસ્કાયોઽપિ સર્વથૈવાપ્રકાશ-
 કત્વાત્ ન કમપિ પ્રકાશયતિ અતઃ અપ્કાયસ્ય તમસ્કાયસ્ય ચ સમાનસ્વભાવત્વાત્
 અપ્કાયપરિણામસ્વરૂપ એવ તમસ્કાયઃ । ‘ સે તેજદેણં ’ તત્ તેનાર્થેન હે ગૌતમ !

કિ—(ગોયમા ! પુઢવિકાણં અત્યેગદ્દુ સુમે દેસં પગાસેઢ અત્યેગદ્દુ
 દેસં જો પગાસેઢ) હે ગૌતમ ! કોઈ પૃથિવીકાય ભાસ્વર (દેદીપ્યમાન)
 મળિ આદિ કી તરહ એસા શુભ્ર ભાસ્વર (દેદીપ્યમાન) હોતા હૈ જો
 વિવક્ષિત ક્ષેત્ર કે અમુક ભાગ કો પ્રકાશિત કરતા હૈ । તથા કોઈ એક
 પૃથિવીકાય એસા હોતા હૈ જો પ્રકાશ કરને યોગ્ય સ્થાન કો ભી કૃષ્ણ-
 પાપાણ કી તરહ અભાસ્વર હોને કે કારણ પ્રકાશિત નહીં કરતા હૈ ।
 પરન્તુ એસા અપ્કાય નહીં હૈ—વહ તો પૂરા ભી એસા હી હૈ કિ પ્રકાશ્ય
 ભી કિસી ભી સ્થાન કો અપ્રકાશક હોને કે કારણ પ્રકાશિત નહીં કરતા
 હૈ તાત્પર્ય કહનેકા યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર કિસી એક પૃથિવી મેં ભાસ્વ-
 રરૂપતા ઓર કિસી એક પૃથિવી મેં અભાસ્વરરૂપતા હૈ ડસ પ્રકાર કી
 સ્થિતિ અપ્કાય મેં નહીં હૈ વહ તો પૂરા કા પૂરા હી અપ્રકાશક સ્વભા-
 વવાલા હૈ । અતઃ અપ્કાય મેં ઓર તમસ્કાય મેં સમાનસ્વભાવતા હોને

અત્યેગદ્દુ સુમેદેસં પગાસેઢ, અત્યેગદ્દુ દેસં જો પગાસેઢ ” હે ગૌતમ ! કોઈ
 પૃથ્વીકાય ભાસ્વર (દેદીપ્યમાન) મળિ આદિની જેમ એવું શુભ્ર (દેદીપ્યમાન)
 હોય છે કે તે ક્ષેત્રના અમુક ભાગને પ્રકાશિત કરે છે, અને કોઈ પૃથ્વીકાય
 એવું હોય છે કે જે પ્રકાશ કરવા યોગ્ય ક્ષેત્રના કોઈપણ ભાગને કૃષ્ણ-પાપા-
 ણની જેમ અભાસ્વર (પ્રભા રહિત) હોવાથી પ્રકાશિત કરતું નથી. પણ
 અપ્કાયનો સ્વભાવ એવો હોતો નથી. તે પોતે અપ્રકાશક (પ્રભા રહિત)
 હોવાથી પ્રકાશ્ય એવાં કોઈ પણ સ્થાનને પણ પ્રકાશિત કરતું નથી. કહેવાતું
 તાત્પર્ય એ છે કે જેમ પૃથ્વીકાયમાં પ્રભાચુક્તતા અને કોઈક પૃથ્વીકાયમાં
 પ્રભા-રહિતતા હોય છે, એ પ્રકારની સ્થિતિ અપ્કાયમાં હોતી નથી તે તો
 સંપૂર્ણપણે અપ્રકાશક સ્વભાવવાળું હોય છે. આ રીતે અપ્કાય અને તમસ્કા-
 યના સ્વભાવમાં સમાનતા હોવાને કારણે અપ્કાયના પરિણામ સ્વરૂપજ તમસ્કાય

મગવાનાહ-‘ ગોચમા ! પુઢવિકાણં અત્યેગદ્દુ સુમે દેસં પગાસેદ્ ’ હે ગૌતમ !
 પૃથિવીકાયઃ ત્વત્તુ અસ્ત્યેકકઃ કથિત્તુ શુભો-ભાસ્વરો મળ્યાદિવત્તુ દેદીપ્યમાન-
 ત્વાન્, વિવક્ષિતક્ષેત્રસ્ય દેશમ્ એકભાગં પ્રકાશયતિ, અથ ચ ‘ અત્યેગદ્દુ દેસં જો
 પગાસેદ્ ’ અસ્ત્યેકકઃ કથિત્તુ અપરઃ પૃથિવીકાયઃ યઃ પ્રકાશ્યમપિ દેશં ભાગાન્ત-
 રમ્ અભાસ્વરત્વાત્ કૃષ્ણપાપાણવત્તુ નો પ્રકાશયતિ, અપ્કાયસ્તુ સર્વોડપિ અપ્રકા-
 શકત્વાત્ ન કમપિ ભાગં પ્રકાશ્યમપિ પ્રકાશયતિ, તમસ્કાયોડપિ સર્વથૈવાપ્રકાશ-
 કત્વાત્ ન કમપિ પ્રકાશયતિ અતઃ અપ્કાયસ્ય તમસ્કાયસ્ય ચ સમાનસ્વભાવત્વાત્
 અપ્કાયપરિણામસ્વરૂપ એવ તમસ્કાયઃ । ‘ સે તેજદેનં ’ તત્તુ તેનાર્થેન હે ગૌતમ !

કિ-(ગોચમા ! પુઢવિકાણં અત્યેગદ્દુ સુમે દેસં પગાસેદ્ અત્યેગદ્દુ
 દેસં જો પગાસેદ્) હે ગૌતમ ! કોઈ પૃથિવીકાય ભાસ્વર (દેદીપ્યમાન)
 મળિ આદિ કી તરહ એસા શુભ્ર ભાસ્વર (દેદીપ્યમાન) હોતા હૈ જો
 વિવક્ષિત ક્ષેત્ર કે અમુક ભાગ કો પ્રકાશિત કરતા હૈ । તથા કોઈ એક
 પૃથિવીકાય એસા હોતા હૈ જો પ્રકાશ કરને યોગ્ય સ્થાન કો ભી કૃષ્ણ-
 પાપાણ કી તરહ અભાસ્વર હોને કે કારણ પ્રકાશિત નહીં કરતા હૈ ।
 પરન્તુ એસા અપ્કાય નહીં હૈ-વહ તો પૂરા ભી એસા હી હૈ કિ પ્રકાશ્ય
 ભી કિસી ભી સ્થાન કો અપ્રકાશક હોને કે કારણ પ્રકાશિત નહીં કરતા
 હૈ તાત્પર્ય કહનેકા યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર કિસી એક પૃથિવી મેં ભાસ્વ-
 રરૂપતા ઓર કિસી એક પૃથિવી મેં અભાસ્વરરૂપતા હૈ ડસ પ્રકાર કી
 સ્થિતિ અપ્કાય મેં નહીં હૈ વહ તો પૂરા કા પૂરા હી અપ્રકાશક સ્વભા-
 વચાલા હૈ । અતઃ અપ્કાય મેં ઓર તમસ્કાય મેં સમાનસ્વભાવતા હોને

અત્યેગદ્દુ સુમેદેસં પગાસેદ્, અત્યેગદ્દુ દેસં જો પગાસેદ્ " હે ગૌતમ ! કોઈ
 પૃથ્વીકાય ભાસ્વર (દેદીપ્યમાન) મળિ આદિની જેમ એવું શુભ્ર (દેદીપ્યમાન)
 હોય છે કે તે ક્ષેત્રના અમુક ભાગને પ્રકાશિત કરે છે, અને કોઈ પૃથ્વીકાય
 એવું હોય છે કે જે પ્રકાશ કરવા યોગ્ય ક્ષેત્રના કોઈપણ ભાગને કૃષ્ણ-પાપા-
 ણની જેમ અભાસ્વર (પ્રભા રહિત) હોવાથી પ્રકાશિત કરતું નથી. પણ
 અપ્કાયનો સ્વભાવ એવો હોતો નથી. તે પોતે અપ્રકાશક (પ્રભા રહિત)
 હોવાથી પ્રકાશ્ય એવાં કોઈ પણ સ્થાનને પણ પ્રકાશિત કરતું નથી. કહેવાનું
 તાત્પર્ય એ છે કે જેમ પૃથ્વીકાયમાં પ્રભાચક્રતા અને કોઈક પૃથ્વીકાયમાં
 પ્રભા-રહિતતા હોય છે, એ પ્રકારની સ્થિતિ અપ્કાયમાં હોતી નથી તે તો
 સંપૂર્ણપણે અપ્રકાશક સ્વભાવવાળું હોય છે. આ રીતે અપ્કાય અને તમસ્કા-
 યના સ્વભાવમાં સમાનતા હોવાને કારણે અપ્કાયના પરિણામ સ્વરૂપ તમસ્કાય

અપ્કાય એ તમસ્કાયઃ । ગૌતમઃ પૂછતિ—‘તમુક્ષાણં મંતે । કહિં સમુદ્વિષ્ કહિં સંનિદ્વિષ્ ?’ મદન્ત ! તમસ્કાયઃ સત્ત્વ કુપ્રેતિ કસ્મિન્ પ્રદેશે સમુત્પિતઃ ? કસ્મા-
ત્સ્થાનાદારભ્યઃ ? કુત્વ સંનિદ્વિષ્ઃ કસ્મિન્ પ્રદેશે સમાપ્તિં ગતઃ ? તસ્ય તમસ્કાયસ્ય
કસ્માત્ પ્રદેશાન્ આરભ્યઃ, કસ્મિન્ પ્રદેશે અન્તઃ ચર્તતે ? इति પ્રશ્નઃ । મગધાનાદ—
‘ ગોયમા ! જંબૂદીપસ્સ દીવસ્સ ચહિયા તિરિયમસંલેજ્જે દીવસમુદ્દે વીરૂંવહતા ’
હે ગૌતમ ! જંબૂદીપસ્ય દીપસ્ય મધ્યજંબૂદીપસ્ય ચહિર્ભાગે તિર્યગ્ અસંલંબ્યાન્
દ્વીપસમુદ્રાન્ અતિવ્રજ્ય—અતિક્રમ્ય ઉલ્લંઘ્ય ‘ અરુણવસ્સ દીવસ્સ ચાહિરિહ્લાઓ
વેદ્યંતાઓ ’ અરુણવસ્સ દીપસ્ય વાઘાત્ ચહિર્ભૂતાત્ વેદિકાન્તાત્ વેદિકા—જગતી,
તસ્યાઃ અન્તભાગાદારાભ્ય ‘ અરુણોદયં સમુદં વાપાલી સંજોયણસહસ્સાણિ ઓગહિતા’

કે કારણ અપ્કાય કા પરિણામ સ્વરૂપ હી તમસ્કાય હૈ । (સે તેળદેળ)
હસ કારણ હે ગૌતમ । મંતે એસા કહા હૈ કિ અપ્કાયરૂપ હી તમસ્કાય
હૈ । પ્રશ્ન કે હસ કથન કો સુનકર ગૌતમ કે ચિત્ત મેં પુનઃ એસી રીકા
ઉત્પન્ન હુઈ કિ (તમુક્ષાણં મંતે ! કહિં સમુદ્વિષ) હે મદન્ત ! યહ
તમસ્કાય કિસ પ્રદેશ સે સમુત્પિત હુઆ હૈ ? (કહિં સંનિદ્વિષ) ઓર
કહાં પર હસકી સમાપ્તિ હુઈ હૈ । હસ પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ને ડનસે
એસા કહા કિ—(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (જંબૂદીવસ્સ દીવસ્સ ચહિયા
તિરિયમસંલેજ્જે દીવસમુદ્દે વીરૂંવહતા) જંબૂદીપ—મધ્ય જંબૂદીપ કે
ચહિર્ભાગ મેં તિરછે અસંલંબ્યાત દ્વીપસમુદ્રોં કો ઉલ્લંઘન કરકે (અરુણ-
વસ્સ દીવસ્સ ચાહિરિહ્લાઓ વેદ્યંતાઓ) અરુણવર દ્વીપ આતા હૈ ડસ
દ્વીપ કી જો વાહિરી જગતી હૈ, ડસકે અન્તભાગ સે પ્રારંભ કર (અરુ-
ણોદયં સમુદં વાપાલીસં જોયણસહસ્સાણિ ઓગહિતા) ડસ દ્વીપ કો

હાય છે. (સે તેળદેળ) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે તમસ્કાય
અપ્કાયરૂપ જ છે. હવે ગૌતમ સ્વામી તમસ્કાયના ઉત્પત્તિસ્થાન અને સમાપ્તિ
સ્થાનના વિષયમાં આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછે છે—

(તમુક્ષાણં મંતે ! કહિં સમુદ્વિષ ?) હે મદન્ત ! આ તમસ્કાયનો
પ્રારંભ કયા પ્રદેશમાંથી થાય છે ? “ કહિં સંનિદ્વિષ ” અને કયા સ્થાનમાં
તેની સમાપ્તિ થાય છે ?

ઉત્તર— ‘ ગોયમા ! ’ હે ગૌતમ ! (જંબૂદીવસ્સ દીવસ્સ ચહિયા તિરિ-
યમસંલેજ્જે દીવસમુદ્દે વીરૂંવહતા) જંબૂદીપ—મધ્ય જંબૂદીપના બહારના ભાગમાં
તિરછા અસંલંબ્યાત દ્વીપ સમુદ્રોને ઓળંગીને (પાર કરીને) (અરુણવસ્સ
દીવસ્સ ચાહિરિહ્લાઓ વેદ્યંતાઓ) આગળ જતાં અરુણવર દ્વીપ આવે છે. તે
દ્વીપની જે બાજુ જગતી છે તેના અન્તભાગથી પ્રારંભ કરીને (અરુણોદયં

અરુણોદકં સમુદ્રં દ્વિત્વારિશ્વયોજનસહસ્રાણિ અવગાહ્ય ઉલ્લઙ્ઘ્ય અરુણોદક સમુદ્રસ્ય દ્વિત્વારિશ્વસહસ્રયોજનગમનાનન્તરમિત્યર્થઃ ‘ ઉવરિહ્લાઓ જલંતાઓ ઇગપ્પસિયાઈ સેડીઈ-ઈત્થ ણં તમુક્કાઈ સમુટ્ટિઈ ’ ઉપરિતનાદ્ જલાન્તાત્ જલાન્તિમભાગાત્ એકપ્રદેશિકાયાં એક એવ નદ્વચાદયઃ ઉપર્યંચઃ પ્રદેશો યસ્યાં સા તસ્યાં શ્રેણ્યાં સમભિચિતાયામિત્યર્થઃ નતુ એકપ્રદેશપ્રમાણાયાં, તથાત્વે જીવાનામ્ અસંખ્યાતપ્રદેશાવગાહસ્વભાવત્વેન એકપ્રદેશપ્રમાણાયાં શ્રેણીં જીવાવગાહાભાવપ્રજ્ઞાત્

ચારોં ઓર સે ઘેરે હુઈ અરુણોદય સમુદ્ર કો ૪૨ હજાર યોજન ઉલ્લંઘિત કરકે-અર્થાત્ અરુણચરદ્વીપ કી વાહ્યજગતી કે અન્તિમ ભાગ સે લગા-કર અરુણોદય સમુદ્ર કો ૪૨ હજાર યોજનપ્રમાણ પાર કરને કે વાદ (ઉવરિહ્લાઓ જલંતાઓ) ઉપરિતન જલાન્ત આતા હૈ જલ કે અન્તિમ-ભાગ કા નામ જલાન્ત હૈ । હસ જલાન્તકે ડુપર હી (ઇગપ્પસિયાઈ સેડીઈ ઇત્થ ણં તમુક્કાઈ સમુટ્ટિઈ) ડુપર નીચે સમાન હૈ-પ્રદેશ જિસમેં એસી દીવાલ કે જૈસી એક પ્રદેશિકા શ્રેણી હૈ યહાં પર “ એક પ્રદેશિકા શ્રેણિ ” કા અર્થ એસા નહીં કરના ચાહિયે કિ “ જિસમેં એક હી પ્રદેશ હો, દો આદિ પ્રદેશ ન હો-એસી જો શ્રેણી હૈ, વહ એક પ્રદેશિકા શ્રેણી હૈ ” ક્યોં કિ એસા અર્થ કરને મેં સિદ્ધાન્ત સે વાધા આની હૈ કારણ કિ જીવોં કા સ્વભાવ આકાશ કે અસંખ્યાત પ્રદેશોં મેં અવગાહન કરને કા હૈ અતઃ એકપ્રદેશ પ્રમાણ વાલી શ્રેણી મેં જીવોં કે અવગાહન હોને કા

સમુદ્રં વાયાલીસં જોયનસહસ્રાણી ઓગાહિતા) તે દ્વીપને ચારે તરફથી ઘેરીને રહેલા અરુણોદય સમુદ્રમાં ૪૨૦૦૦ યોજનનું અંતર પાર કરીને-એટલે કે અરુણવર દ્વીપની બાહ્ય જગતીના અન્તિમ ભાગથી શરૂ કરીને અરુણોદય સમુદ્રને ૪૨૦૦૦ યોજન પ્રમાણ પાર કરીને “ ઉવરિહ્લાઓ જલંતાઓ ” ઉપરિતન જલાન્ત આવે છે. (જળના અન્તિમ ભાગને જલાન્ત કહે છે.) તે જલાન્તની ઉપર જ (ઇગપ્પસિયાઈ સેડીઈ ઇત્થ ણં તમુક્કાઈ સમુટ્ટિઈ) ઉપર અને નીચેના ભાગમાં સમાન પ્રદેશવાળી, દીવાલના જેવી એક પ્રદેશિકા શ્રેણિ છે. અહીં “ એક પ્રદેશિકા શ્રેણિ ” નો એવો અર્થ કરવો બોધ્યો નહીં કે “ જેમાં એક જ પ્રદેશ હોય, જે ત્રણ આદિ પ્રદેશ ન હોય, એવી જે શ્રેણી છે તેને એકપ્રદેશિકા શ્રેણી કહે છે. ” કારણ કે એવો અર્થ કરવામાં સિદ્ધાન્તની દૃષ્ટિએ બાધા (મુશ્કેલી) નડે છે, કારણ કે આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાહના કરવાનો છવોનો સ્વભાવ છે. તેથી એક પ્રદેશ પ્રમાણવાળી શ્રેણીમાં છવોનું અવગાહન હોવાનું સંભવી શકતું નથી. તમસ્કાયને

તમસ્કાયમ્ય જલચુદ્વુદાશાગામ્યમ્પનાન્, નદ્વિમ્ભીર્નવાયામામેઽમિથાસ્ત-
માન્વાત્, યગેત્તમ્પદેનિશાથેળી તમસ્કાય શ્રેણી ભગ્નોદકમમુદ્ગમ્યોપરિમાગાન્
મમાનભિન્નિક્તયા વર્તેતે 'અથ ણં' ધ્રુવ જલ પ્રભોદક મમુદ્ગમ્યોપર્વુત્તે સ્થાને
તમસ્કાય ઉચિત તમસ્કાયમ્પાન્મો ભાનિ । મમાનામ્યનયા તમસ્કાયસ્યોર્ચ-
પ્રમગ્નતેજાન્નદઃ । મતમ-પર્વતીમે જોયગમ્ય ઉદ્ધં ઉપરિત્તા' પરુવિન-

અભાવ પ્રાપ્ત હોતા હૈં જ્યોં કિ તમસ્કાય જલીય ગુદ્ગુદ કે આકાર મેં
જલજીવરૂપ માના ગયા હૈં અનઃ જલગુદ્ગુદ આકારવાલે જલજીવરૂપ
તમસ્કાય કા રૂપ ત્તક પ્રદેશપ્રમાણ વાલી શ્રેણી મેં અચગાદન કેસે હો
સકતા હૈં કથમપિ નહીં હો સકતા હૈં, જ્યોં કિ જીવ અપની સ્થિતિ કે
નિમિત્ત આકાશ કે અસંલ્પાન પ્રદેશોં કો રોકતે હૈં । તમસ્કાય કી
ચિત્તીર્ણતા કિતની હૈં ત્ત યાન આગે કહી જાવેગી । ત્ત જો સમપ્રદેશોં
વાલી શ્રેણી હૈં ત્ત તમસ્કાય શ્રેણી હૈં । ત્ત શ્રેણી અરુણોદક સમુદ્ર કે
અન્તિમ જલ ઉપરિતન ભાગ સે પ્રારંભ હોતી હૈં ઓર ત્ત સમાન
ચિન્તાર વાલી બીન કે સમાન હૈં । અથ ણં) ટીક ત્તહીં પર-અર્થત્ત
અરુણોદક સમુદ્ર કે હમ પૂર્વોક્ત સ્થાન સે-તમસ્કાય કા આરંભ હોતા
હૈં । સમાન રૂપવાલી હોને કે કારણ ત્ત તમસ્કાય ઉપરમેં કહાંતક કૈલા
જોયગમ્ય ઉદ્ધં ઉપરિત્તા) ત્ત તમસ્કાય ઉપર મેં ૧૭૨? યોજન તક

પણીના ગુદ્ગુદ (પરપોટા) ના આકારના જલચુદ્વુદ (અપ્રકાશિક રૂપ તમસ્કા-
માનવામાં આવેલ છે. તે જલચુદ્વુદપુષ્પના આકારવાળા અપ્રકાશિક રૂપ તમસ્કા-
યની તે એક પ્રદેશવાળી શ્રેણીમાં અવગાહના જ કેવી રીતે સંભવી શકે ?
કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે એક પ્રદેશ પ્રમાણવાળી શ્રેણીમાં તે તમ-
સ્કાયની અવગાહના જ શક્ય નથી, કારણ કે જલ પોતાની સ્થિતિને નિમિત્તે
આકાશના અનન્યતા પ્રદેશોને રોકે છે. તમસ્કાય કેટલો બધો વિસ્તૃત છે તે
તો આજળ બત વગરમાં આવશે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે તે એક પ્રદેશિકા
શ્રેણી અનેક પ્રદેશોવાળી છે. તે જ સમપ્રદેશોવાળી શ્રેણી છે, એ જ તમસ્કાય,
શ્રેણી છે તે શ્રેણીને પ્રારંભ અરુણોદક સમુદ્રના અન્તિમ જળના ઉપરિતન
ભાગથી થાય છે, અને તે સમાન વિસ્તારવાળી દીવાલના જેવી છે. "અથ ણં"
બરાબર એજ સ્થાનેથી તમસ્કાયને પ્રારંભ થાય છે. સમાનરૂપ વાળો હોવાને
કારણે તે તમસ્કાય ઉપર કયાં સુધી બ્યાપેલો છે તે સત્રકાર પ્રકટ કરે છે-
(સત્રસ-પકવીસે જોયન સપ ઉદ્ધં ઉપરિત્તા) તે તમસ્કાય ઉપરની બાજુએ

ત્યધિક સપ્તદશમયોજનાનિ ઋર્ધ્વ ઉત્પત્ય ' તઓ પચ્છા તિરિયં પવિત્થરમાણે, પવિત્થરમાણે, સોહમ્મી-સાળ-સળંકુમાર-માહિંદે ચત્તારિ વિ કપ્પે આવરિત્તા ' તતઃ પથાન્ તિર્યક્ પ્રવિસરન્ પ્રવિસરન્ તિરથીનત્થયા વિસ્તારં પ્રાપ્નુવન્ સૌધર્મે-શાન-સનત્કુમાર-માહેન્દ્રાન્ ચતુરોડઠિ કલ્પાન્ આટલ્ય આચ્છાદ્ય 'ઉદ્ઘં પિ ય ણં ધંમલોગે કપ્પે રિદ્ધિમાણપત્થં સંપત્તે ' ઋર્ધ્વપિ ચ खलु ब्रह्मलોકे कल्पे रिष्ट-विमानप्रस्तुटं संप्राप्तोऽस्ति ' एत्थ णं तमुक्काए सन्निट्ठिए ' अत्र खलु ब्रह्मलोकस्य रिष्टनामंकविमानप्रस्तटे तमस्कायः तन्निष्ठितः-समाप्तिं गतोऽस्ति । ततो गौतमः पृच्छति- ' तमुक्काए णं भंते । किंसंठिए पणत्ते ? ' हे भदन्त ! तमस्कायः खलु किंसंस्थितः तस्य कीदृशं संस्थानं प्रप्तम् ? भगवानाह- ' गोयमा ! तमस्कायः खलु अधोभागे मल्लकमूलसंस्थितः शरावस्य मूलम्-अधोभागः, तत्सदृशसंस्थानो

ગયા હુઆ છે । (તઓ પચ્છા નિરિયં પવિત્થરમાણે પવિત્થરમાણે સોહમ્મી-સાળ સળંકુમાર-માહિંદે ચત્તારિ વિ કપ્પે આવરિત્તા) ઉસકે વાદ વહાંસે યહ તિરછા વિસ્તૃત હોતા હુઆ સૌધર્મ-ઈશાન, સનત્કુમાર ઓર માહેન્દ્ર હન ચાર કલ્પોંકો ઓ આવૃત્ત કરકે આગે યહ (ઉદ્ઘં પિ ય ણં ધંમલોગે કપ્પે રિદ્ધિમાણપત્થં સંપત્તે) ઋર્ધ્વમેં બ્રહ્મલોક કલ્પમેં રિષ્ટવિમાનકે પાથંડે (અંગને) મેં પઢુંચા છે । (એત્થ ણં તમુક્કાએ સંનિટ્ઠિએ) હસી બ્રહ્મલોક કલ્પ કે રિષ્ટ વિમાન કે પાથંડે મેં હી હસકા અન્ત હુઆ છે । અર્થાત્ હસસે આગે તમસ્કાય નહીં છે । “ તમુક્કાએ ણં ભંતે ! કિં સંઠિએ પણત્તે ” હે ભદન્ત ! તમસ્કાય કા આકાર કેસા કહા ગયા છે ? હસ ગૌતમ કે પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં પ્રભુ ને ડનસે કહા- (ગોયમા ! અહે મલ્લકમૂલસંઠિએ, ઉપ્પિ

૧૭૨૧ થોજન સુધી ગયેલો છે. (તઓ પચ્છા તિરિયં પવિત્થરમાણે પવિત્થરમાણે સોહમ્મીસાળ-સળંકુમાર-માહિંદે ચત્તારિ વિ કપ્પે આવરિત્તા) ત્યારબાદ ત્યાંથી તે તિરછો વિસ્તૃત થઈને સૌધર્મ, ઈશાન, સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર આ ચાર કલ્પોને આચ્છાદિત કરીને ત્યાંથી આગળ વધીને “ ઉદ્ઘં પિ ય ણં ધંમલોગે કપ્પે રિદ્ધિમાણપત્થં સંપત્તે ” તે જાણે બ્રહ્મલોક કલ્પના રિષ્ટ વિમાનના પાથ-ડામાં પહોંચ્યો છે. “ એત્થ ણં તમુક્કાએ સંનિટ્ઠિએ ” આ બ્રહ્મલોક કલ્પના રિષ્ટ વિમાનના પાથડામાં જ તેની સમાપ્તિ થાય છે. એટલે કે તેના કરતાં આગળ તમસ્કાય નથી. (તમુક્કાએ ણં ભંતે ! કિં સંઠિએ પણત્તે ?) હે ભદન્ત ! તમસ્કાયનો આકાર કેવો કહ્યો છે ?

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—
“ ગોયમા ! અહે મલ્લકમૂલસંઠિએ, ઉપ્પિં કુકુડપંજરાસંઠિએ ” હે ગૌતમ !

તમસ્કાયસ્ય જલબુદ્બુદાકારાપ્તાપ્તરૂપતાન્ , તદ્વિન્નીર્જનાયાથાપ્રેક્ષિભાસ્ય-
માનત્વાત્ । યમેવ મમપ્રદેશિકા શ્રેણી તમસ્કાય શ્રેણી અરુણોદકમમૃદુત્વોપરિભાગાત્
સમાનભિત્તિકતયા વર્ત્તે ' एत्थ णं ' અર જલુ પ્રક્લોદક મમૃદુત્વોપરિભાગે સ્થાને
તમસ્કાયઃ ઉત્થિતઃ, તમસ્કાયસ્યારમ્ભો ભવતિ । સમાનામ્યતયા તમસ્કાયસ્યોર્વ-
પ્રસરણયોગનાન્યાદ્-' सत्तरस-एकवीसे जोगयसए उड्डं उप्पइत्ता ' દર્શિત-

અભાવ પ્રાપ્ત હોતા હૈ ક્યોં ફિ તમસ્કાય જલીય બુદ્બુદ કે આકાર મેં
જલજીવરૂપ માના ગયા હૈ અતઃ જલબુદ્બુદ આકારવાલે જલજીવરૂપ
તમસ્કાય કા ઉત્ત એક પ્રદેશપ્રમાણ ચાલી શ્રેણી મેં અવગાહન કૈસે હો
સકતા હૈ કથમપિ નહીં હો સકતા હૈ, ક્યોં ફિ જીવ અપની સ્થિતિ કે
નિમિત્ત આકાશ કે અસંરૂપાત પ્રદેશોં કો રોકતે હૈ । તમસ્કાય કી
ચિરતીર્ણતા કિતની હૈ યહ ચાન આગે કહી જાવેગી । યહ જો સમપ્રદેશોં
વાલી શ્રેણી હૈ વહ તમસ્કાય શ્રેણી હૈ । યહ શ્રેણી અરુણોદક સમુદ્ર કે
અન્તિમ જલ ઉપરિતન ભાગ સે પ્રારંભ હોતી હૈ ઓર યહ સમાન
વિસ્તાર વાલી ભીત કે સમાન હૈ । (एत्थ णं) ઠીક યહીં પર-અર્થાત્
અરુણોદક સમુદ્ર કે ઇસ પૂર્વોક્ત સ્થાન સે-તમસ્કાય કા આરંભ હોતા
હૈ । સમાન રૂપવાલી હોને કે કારણ યહ તમસ્કાય ઉપરમેં કહાંતક ફેલા
હુઆ હૈ, ઇસ ચાન કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ ફિ-(सत्तरस-एकवीसे
जोगयसए उड्डं उप्पइत्ता) યહ તમસ્કાય ઉપર મેં ૧૭૨૧ યોજન તક

પાણીના બુદ્બુદ (પરપોટા) ના આકારના જલજીવરૂપ (અપ્પ્રાયિક જીવરૂપ)
માનવામાં આવેલ છે. તે જલબુદ્બુદના આકારવાળા અપ્પ્રાયિક રૂપ તમસ્કા-
યની તે એક પ્રદેશવાળી શ્રેણીમાં અવગાહના જ કેવી રીતે સંભવી શકે ?

કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે એક પ્રદેશ પ્રમાણવાળી શ્રેણીમાં તે તમ-
સ્કાયની અવગાહના જ શક્ય નથી, કારણ કે જીવ પોતાની સ્થિતિને નિમિત્તે
આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોને રોકે છે. તમસ્કાય કેટલો ઘણો વિસ્તૃત છે તે
તે આગળ બતાવવામાં આવશે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે તે એક પ્રદેશિકા
શ્રેણી અનેક પ્રદેશોવાળી છે. તે જે સમપ્રદેશોવાળી શ્રેણી છે, એ જ તમસ્કાય
શ્રેણી છે. તે શ્રેણીનો પ્રારંભ અરુણોદક સમુદ્રના અન્તિમ જળના ઉપરિતન
ભાગથી થાય છે, અને તે સમાન વિસ્તારવાળી હીવાલના જેવી છે. “ एत्थ णं ”
બરાબર એજ સ્થાનેથી તમસ્કાયનો પ્રારંભ થાય છે. સમાનરૂપ પાળો હોવાને
કારણે તે તમસ્કાય ઉપર કયાં સુધી બ્યાપેલો છે તે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે-
(सत्तरस-एकवीसे जोगयसए उड्डं उप्पइत्ता) તે તમસ્કાય ઉપરની બાબુએ

અસંલેખજિવિત્થડે ય ' હે મૌતમ ! તમસ્કાયઃ સ્વલુ દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞતઃ, તદ્વયા-
સંલેખયવિસ્તૃતથ, અસંલેખયવિસ્તૃતથ. તત્ર આદિત આરમ્બ ઊર્ધ્વ સંલેખયયોજન-
પર્યન્તં સંલ્યાતયોજનવિસ્તૃતઃ, તતઃ સંલેખયયોજનનન્તરમ્ ઊર્ધ્વ તસ્ય વિસ્તાર-
ગમિતયા પ્રતિશાદિતત્વેન અસંલ્યાતયોજનવિસ્તૃતથેત્યર્થઃ । 'તત્ત્વળં જે સે સંલેખજ-
વિત્થડે ' તત્ર તયોર્મધ્યે સ્વલુ યઃ સઃ સંલેખયવિસ્તૃતઃ તમસ્કાયઃ ' સે ળં સંલે-
ખજાઈ જોયણસહસ્સાઈ વિકલંભેળં ' સ સ્વલુ સંલેખયાનિ યોજનસહસ્ત્રાણિ વિષ્ક-
મ્ભેગ વિસ્તારેળ વર્તેતે, ' અસંલેખજાઈ જોયણસહસ્સાઈ પરિકલેવેળં પળ્લત્તે '
અસંલેખયાનિ યોજનસહસ્ત્રાણિ પરિક્ષેપેળ પરિધિના પ્રજ્ઞતઃ, તમસ્કાયસ્ય સંલ્યાત-

તમસ્કાય દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ—(તં જહા) વે દો પ્રકાર ડસકે વે
હૈ—(સંલેખજિવિત્થડે ય, અસંલેખજિવિત્થડે ય) ઇક સંલ્યાત વિસ્તારવાલા
તમસ્કાય ઓર દૂસરા અસંલ્યાત વિસ્તારવાલા તમસ્કાય આદિ સે લેકાર
ઊંચે સંલ્યાત યોજન તક તમસ્કાય વિસ્તૃત હૈ વહ સંલ્યાત વિસ્તાર
વાલા તમસ્કાય હૈ—ઇસકે ઘાદ અસંલ્યાત યોજન વિસ્તારવાલા તમસ્કાય
અસંલ્યાત વિસ્તારવાલા તમસ્કાય હૈ કારણ કિ ડપર મેં તમ-
સ્કાય કે વિસ્તાર ઊર્ધ્વગામીરૂપ સે કહા ગયા હૈ । ઇસી વાત કો સૂત્ર-
કાર પ્રકટ કરતે હૈ—(તત્ત્વળં જે સે સંલેખજિવિત્થડે) ઇન દોનોં તમસ્કાય
મેં જો તમસ્કાય સંલ્યાત વિસ્તૃત હૈ (સે ળં સંલેખજાઈ જોયણસહસ્સાઈ
વિકલંભેળં) વહ વિષ્કંભ કી અપેક્ષા તો સંલ્યાત યોજન સહસ્ત્ર તક
વિસ્તૃત હૈ (અસંલેખજાઈ જોયણસહસ્સાઈ પરિકલેવેળં પળ્લત્તે) ઓર

યના ળે પ્રકાર કહા છે. “ તંજહા ” તે ળે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે—
(સંલેખજિવિત્થડે ય, અસંલેખજિવિત્થડે ય) ઁક તમસ્કાય સંજ્યાત
વિસ્તારવાળો છે અને બીજો અસંજ્યાત વિસ્તારવાળો તમસ્કાય છે. શરૂઆતથી
માંડીને ડપર સંજ્યાત યોજનો સુધી જે તમસ્કાય વ્યાપેલો છે તેને સંજ્યાત
વિસ્તારવાળો તમસ્કાય કહે છે, ત્યારબાદ અસંજ્યાત યોજનના વિસ્તારમાં
વ્યાપેલા તમસ્કાયને અસંજ્યાત વિસ્તારવાળો તમસ્કાય કહે છે, કારણ કે
ડપર તમસ્કાયનો વિસ્તાર ઊર્ધ્વગામીરૂપે ખતાવ્યો છે. ઁજ વાત સૂત્રકાર આ
સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરે છે—
(તત્ત્વળં જે સે સંલેખજિવિત્થડે) તે બન્ને તમસ્કાયોમાંથી જે સંજ્યાત
વિસ્તારવાળો તમસ્કાય છે “ સે ળં સંલેખજાઈ જોયણસહસ્સાઈ વિકલંભેળં ”
તે વિષ્કંભની અપેક્ષા ઁ સંજ્યાત હબારે યોજન પર્યન્ત વ્યાપેલો છે, અને
(અસંલેખજાઈ જોયણસહસ્સાઈ પરિકલેવેળં પળ્લત્તે) અને પરિક્ષેપ (પરિધ)

વર્તે, યતો હિ સમજલાન્તસ્યોપરિમાણે પૂર્ણિત્યધિકમપદ્યગ્નયોજનાનિ
યાવત્ તમસ્કાયસ્ય ચક્ષપ્રત્યસંસ્થાનં વર્તે, ડારિ ડર્પે તુ કુમ્હટપચરણસંસ્થિતઃ
કુમ્હટસ્ય પચરણત્ સંસ્થાનમ્ આકારઃ પ્રકલ્પઃ । અયઃ સંકુચિતઃ, મધ્યે વિસ્તીર્ણઃ,
ઉપરિ પુનઃ સંકુચિતઃ, પ્તાદશાકારસ્તમસ્કાયઃ પ્રગ્નસ્ય ઇતિ । ગૌતમઃ પુનઃ પૃચ્છતિ-
'તમુક્ષાણં ણં મંતે ! કેવદ્યં વિકલ્પભેગં, કેવદ્યં પરિકલ્પેણં પળ્લત્તે ? મદન્ત !
તમસ્કાયઃ સ્વનુ કિયાન્ વિષ્કંભેણ વાદ્યેન સ્પૃહત્વેનેતર્થઃ, તથા કિયાંશ્ચ
કિયદ્શરિમિતઃ પરિક્ષેપેણ પરિધિના પર્થિમાશ્રિત્ય વિસ્તારઃ પ્રગ્નસ્ય પ્રતિપાદિતઃ ?
મગધાનઃ હ - 'ગોયમા ! તમુક્ષાણં દુવિદ્ધે પળ્લત્તે તં જદા-સંલેખનવિત્યદે ય,

કુમ્હટપંચરણસંકુચિત) હે ગૌતમ ! તમસ્કાય કા નીચે કા આકાર મહ્-
કમ્હલ-મિટ્ટીકે દીપકકે અગ્નિમાગકે જૈસા કહા ગયા હૈ-કયોં કિ સમ-
જલાન્તકે ઉપરમાગમેં ૧૭૨૧ ગોજન તક તમસ્કાય કા આકાર વલયકે
સમાન ગોલ હૈ ઓર ઉપરમેં તમસ્કાયકા સંસ્થાન આકાર-મુર્ગાકે પાંજરે
કે સમાન કહા ગયા હૈ-કયોંકિ મુર્ગાકા પાંજરા નીચેકે ભાગમેં સંકુચિત,
મધ્ય મેં વિસ્તીર્ણ ઓર ઉપર મેં સંકુચિત હોતા હૈ સો હસી તરહ કા
ઉપર કા આકાર તમસ્કાય કા હૈ । અય ગૌતમ સ્વામી પ્રભુ સે એસા
પૂછતે હૈ કિ-(તમુક્ષાણં મંતે ! કેવદ્યં વિકલ્પભેગં, કેવદ્યં પરિકલ્પ-
વેણં પળ્લત્તે) હે મદન્ત ! તમસ્કાય વિષ્કંભ-સ્થૂલતા-કી અપેક્ષા કિતના
વડા હૈ ઓર પરિક્ષેપ-પરિધિ કી અપેક્ષા કિતના વડા હૈ ? અર્થાત્ તમ-
સ્કાય કા વિષ્કંભ ઓર પરિક્ષેપ કિતના હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રભુ ને
ઉનસે એસા કહા કિ-(ગોયમા ! તમુક્ષાણં દુવિદ્ધે પળ્લત્તે) હે ગૌતમ !

તમસ્કાયના નીચેના ભાગનો આકાર માટીના દીપકના (કેડિયાના) તળિયા
જેવો કહ્યો છે-કારણ કે સમજલાન્તના ઉપરના ભાગમાં ૧૭૨૧ થોજન
સુધી તમસ્કાયના આકાર વલયના જેવો ગોળ છે અને ઉપરના ભાગનો
આકાર કૂકડાના પાંજરા જેવો કહ્યો છે, કારણ કે કૂકડાનું પાંજરું નીચેના
ભાગમાં સંકુચિત (સંકુચિત), મધ્યમાં વિસ્તીર્ણ અને ઉપરના ભાગમાં સંકુ-
ચિત હોય છે. તમસ્કાયના ઉપરના ભાગનો આકાર પણ એવો જ હોય છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી-તમસ્કાયના વિચાર આદિ વિષે મહાવીર પ્રભુને
નીચે પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—(તમુક્ષાણં મંતે ! કેવદ્યં વિકલ્પભેગં, કેવદ્યં
પરિકલ્પેણં પળ્લત્તે ?) હે મદન્ત ! તમસ્કાયનો વિસ્તાર કેટલો કહ્યો છે ?
તેનો પરિક્ષેપ (પરિધિ) કેટલો કહ્યો છે ?

ઉત્તર—“ગોયમા ! તમુક્ષાણં દુવિદ્ધે પળ્લત્તે” હે ગૌતમ ! તમસ્કા-

ગૌતમઃ પુનઃ પૃચ્છતિ—‘ તમુક્કાણં મંતે ! કેનઠાહણં પળ્લત્તે ? ’ હે મદન્ત ! તમસ્કાયઃ સ્વલુ કિયન્નમ્હાલયઃ કિયત્તારિમિતો વિશાલ ઇતિ મશ્તઃ । મગવાનાહ— ‘ ગોયમા ! અયં ણં જંબુદીવે દીવે સન્વદીવ—સમુદ્દાણં સન્વદ્મંતરાણં જાવ—પરિક્ખેવેણં પળ્લત્તે ’ હે ગૌતમ ! અયં સ્વલુ જમ્બુદ્વીપો દ્વીપઃ સર્વદ્વીપ—સમુદ્દાણાં સર્વામ્પન્તરકઃ સર્વામ્પન્તરે વર્તમાનઃ મધ્યજમ્બુદ્વીપ ઇત્યર્થઃ, યાવત્—પરિક્ષેપેણ પરિધિના મશ્તઃ, યાવત્કરણાન્—‘ એગં જોયણસયસહસ્સં આયામવિક્ખંભેણં, તિણિ જોયણસયસહસ્સાઈં સોલસસહસ્સાઈં દોણિયસત્તાવીસે જોયણસણં, તિણિ કોસે અઢ્ઢાવીસં ચ ધણુસયં તેરસ ય અંગુલાઈં અઢ્ઢંગુલં ચ કિંચિવિસેસાહિયં ’ ઇતિ સંગ્રાહમ્ । ‘ એકં યોજનશતસહસ્રમ્—આયામવિક્ખમેણ, ત્રીણિ યોજનશતસહસ્રાણિ પોઢશ સહસ્રાણિ, દે સપ્તવિંશતિઃ યોજનશતે, ત્રયઃ ક્રોશાઃ, અષ્ટાવિંશતિથ ધનુઃશતમ્, ત્રયોદશ ચાહુગાતિ, અર્ધાંગુલં ચ કિંચિદ્વિશેષાધિકમ્ ’ ઇતિચ્છાયા ‘ દેવેણં મહિદ્ધિણં,

અથ ગૌતમ પ્રશ્ન સે એસા પૂછતે હું કિ—(તમુક્કાણં મંતે કે મહાલયે પળ્લત્તે) હે મદન્ત ! યહ તમસ્કાય કિત્તના વડા—વિશાલ કહા ગયા હૈ ? ઇસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ઉગસે કહતે હું કિ—(ગોયમા ! અયં ણં જંબુદીવે દીવે સન્વદીવસમુદ્દાણં સન્વદ્મંતરાણં જાવ પરિક્ખેવેણં પળ્લત્તે) હે ગૌતમ ! સમસ્ત દ્વીપ ઓર સમસ્ત સમુદ્રોં કે બીચ મેં વર્તમાન યહ જંબુદ્વીપ નામકા દ્વીપ—મધ્ય જંબુદ્વીપ યાવત્ પરિક્ષેપ વાલા કહા ગયા હૈ—પહાં (યાવત્) શબ્દ સે—‘ એગં જોયણસયસહસ્સં આયામવિક્ખંભેણં, તિણિ જોયણસયસહસ્સાઈં સોલસસહસ્સાઈં દોણિય સત્તાવીસે જોયણસયાઈં તિણિ કોસે અઢ્ઢાવીસં ચ ધણુસયં તેરસ ય અંગુલાઈં અઢ્ઢંગુલં ચ કિંચિ વિસેસાહિયં ’ ઇસ પાઠ કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । ‘ દેવેણં મહિદ્ધિણં જાવ—

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે “ તમુક્કાણં મંતે ! કે મહાલયે પળ્લત્તે ? ” હે મદન્ત ! તમસ્કાયને કેટલો વિશાળ કહ્યો છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! (અયં ણં જંબુદીવે દીવે સન્વદીવસમુદ્દાણં સન્વદ્મંતરાણં જાવ પરિક્ખેવેણં પળ્લત્તે) સમસ્ત દ્વીપ અને સમસ્ત સમુદ્રોની વચ્ચે રહેલા આ જંબુદ્વીપ નામનો દ્વીપ—મધ્ય જંબુદ્વીપ..... યાવત્ પરિક્ષેપવાળો કહ્યો છે. અહીં “ જાવ (યાવત્) ” પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ અહણુ થયો છે—(એગં જોયણસયસહસ્સં આયામવિક્ખંભેણં, તિણિ જોયણસયસહસ્સાઈં સોલસસહસ્સાઈં દોણિય સત્તાવીસે જોયણસયાઈં તિણિ કોસે અઢ્ઢાવીસં ચ ધણુસયં તેરસ ય અંગુલાઈં અઢ્ઢંગુલં ચ કિંચિ વિસેસાહિયં) એક લાખ ચોળનની લંબાઈ અને પહોળાઈવાળા અને ૩૧૬૨૨૭ ચોળન, ૩ કોસ, ૧૨૮ એકસો અઢ્ઢાવીસ ધનુષ અને ૧૩૧૧ અંશુલથી સહેજ અધિક પરિધિવાળા આ સમસ્ત

યોજનવિસ્તૃતત્વેઽપિ અસંખ્યાતત્વમદ્વીપપરિક્ષેપનો મૃદુચક્ષુઃપાત્ પરિક્ષેપાય અસં-
 રૂપાતયોજનસત્ત્વપ્રમાણદર્શ, આખ્યન્તર-વડિઃપરિક્ષેપવિનામત્તુ નામોક્તઃ, ઉત્ત-
 ર્યાપિ અસંખ્યાતત્વયા સમાનતાત્, । અથ ચ 'તત્થ ણં જે સે અસંલિજ્જવિત્થડે'
 તત્ર તથોઃ સંખ્યાતાસંખ્યાનવિસ્તૃતપોર્મધ્યે સ્વલુ પઃ સઃ અસંલેખવિસ્તૃતો વર્તતે
 તમસ્કાયઃ 'સે ણં અસંલેખજ્ઞાઈ જોયગસહસ્સાઈ વિક્લંભેણ' સ્વલુ પ્રતંરુપેયાનિ
 યોજનસહસ્સાણિ વિપ્રલંભેણ વિસ્તારેણ વર્તતે 'અસંલેખજ્ઞાઈ જોયગસહસ્સાઈ
 પરિક્લેષેણં પગ્ગતે' અસંલેખયાનિ યોજનસહસ્સાણિ પરિક્ષેપેન પરિધિના પ્રાપ્તઃ ।

પરિક્ષેપ-પરિધિ કી અપેક્ષા વહ અસંરૂપાત યોજનસહસ્ત્ર તક વિસ્તાર
 ચાલા હૈ-અથપિ તમસ્કાય કા વિસ્તાર સંખ્યાત યોજન કા પ્રક્ટ ક્રિયા
 ગયા હૈ ફિર મી ઘઠાં જો પરિધિ કી અપેક્ષા ડાં અસંરૂપાત યોજન
 સહસ્ત્ર તક વિસ્તૃત કહા ગયા હૈ સો ડાં કા કારણ વહ હૈ કિ અસં-
 રૂપાતતમ દ્વીપકે પરિક્ષેપ સે હસમેં મૃદુત્વ તરતા આ જાતી હૈ હસ કારણ
 હસકે પરિક્ષેપકો અસંરૂપાત યોજનસહસ્ત્ર પ્રમાણચાલા કહા ગયા હૈ । ઘઠાં
 પર હસકે મીતર ઓર વાહરકે પરિક્ષેપકા વિભાગ તો કહાનહીં હૈ કારણ
 કિ અસંરૂપાતતાકો લેકર દોનોં મીતર ઓર વાહરકે પરિક્ષેપોમેં તુલ્યતા
 હૈ । (તત્થ ણં જે સે અસંલિજ્જવિત્થડે-સે ણં અસંલેખજ્ઞાઈ જોયગસહસ્સાઈ
 વિક્લંભેણ) હન દોનોં તમસ્કાયોં કે પીચ મેં જો તમસ્કાય અસંરૂપાત
 વિસ્તૃત હૈ, વહ વિક્લંભ-ચૌડાઈ કી અપેક્ષા અસંરૂપાત યોજનસહસ્ત્રતક
 વિસ્તૃત હૈ તથા (અસંલેખજ્ઞાઈ જોયગસહસ્સાઈ પરિક્લેષેણં) પરિક્ષેપ-પરિ-
 ધિકી અપેક્ષા વહ અસંરૂપાત યોજનસહસ્ત્ર તક કા વિસ્તાર ચાલા હૈ ।

ની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત હંબર યોજન મુધીના વિસ્તારવાળો છે. જે કે
 તમસ્કાયનો વિસ્તાર (વિષ્કંભ) સંખ્યાત યોજન પ્રમાણ કહ્યો છે, તો પણ
 તેનો પરિક્ષેપ (પરિધિ) અસંખ્યાત યોજન પ્રમાણ કહ્યો છે, તેનું કારણ એ
 છે કે અસંખ્યાતમ દ્વીપના પરિક્ષેપને લીધે તેના પરિક્ષેપની અધિકતા આવી
 જાય છે. તેથી જ સંખ્યાત યોજનના વિસ્તારવાળા તમસ્કાયનો પરિક્ષેપ
 અસંખ્યાત યોજનનો કહ્યો છે. અહીં તેના બહારના અને અંદરના પરિ-
 ક્ષેપનો વિભાગ કહ્યો નથી, તેનું કારણ એ છે કે અસંખ્યાતતાની અપેક્ષાએ
 બહારના અને અંદરના પરિક્ષેપમાં સમાનતા રહેલી છે. (તત્થ ણં જે સે
 અસંલિજ્જવિત્થડે-સે ણં અસંલેખજ્ઞાઈ જોયગસહસ્સાઈ વિક્લંભેણ) તે બંને
 તમસ્કાયોમાંનો જે અસંખ્યાત વિસ્તારવાળો તમસ્કાય છે, તે વિષ્કંભ
 (પહોળાઈ) ની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત હંબર યોજનના વિસ્તારવાળો છે,
 તથા (અસંલેખજ્ઞાઈ જોયગસહસ્સાઈ પરિક્લેષેણં) પરિક્ષેપ (પરિધિ) ની
 અપેક્ષાએ તે અસંખ્યાત હંબર યોજન પ્રમાણ વિસ્તારવાળો છે.

તિયાહં વા ' સ સ્વલુ દેવઃ તયા ઉપરિવર્ણિતયા ઉત્કૃષ્ટયા, ત્વરિતયા, યાવત્-
વેગવતયા ચપલયા વૈદ્યુતયા દેવગતયા વ્યતિવ્રજન્ વ્યતિવ્રજન્ પૌનઃપુન્યેન ગન્ધન્
યાવત્-૧કાહં વા ૧કદિનં વા, દ્વયહં વા દ્વિદિનં વા, ત્ર્યહં વા ત્રિદિનં વા ' ઉક્તો-
સેષં ઇમાસે વીર્ઘ્વજ્ઞા, અત્યેગદ્યં તમુક્કાયં વીર્ઘ્વજ્ઞા ' ઉત્કર્ષેણ પળમાસાન
યદા વ્યતિવ્રજેત્ નિરન્તરં ગચ્છેત્ તદા અસ્ત્યેકકં સંભવતિ યત્ ૧કં સંખ્યાત-

"અત્યેગદ્યં તમુક્કાયં વીર્ઘ્વજ્ઞા" તક કે પાઠ દ્વારા પ્રકટ કી ગઈ હૈ ।
(મહિદ્વિપ જાવ મહાણુભાવે) મેં જો યહ યાવત્ પદ આયા હૈ ઉસસે દેવ
સમ્યન્ધી "મહાશુતિકઃ, મહાયલઃ મહાયશાઃ" ઇન વિશેષણોં કા સંગ્રહ
હુમા હૈ । દેવ કે યે મહદ્વિર્યાદિક વિશેષણ જો યહાં પર કહે ગયે હૈં વે
ઉસકી ગમનસામર્થ્ય કે ઉત્કર્ષ કો પ્રતિપાદન કરને કે લિયે કહે ગયે
હૈં । "ઇણામેવ ઇણામેવ" એસે જો યે દો પદ કહે ગયે હૈં વે દેવ કે મન
મેં આઈ હુઈ ગમન કી શીઘ્રતા કો સૂચિત કરને કે લિયે કહે ગયે હૈં ।
ઇન પદોં કા શબ્દાર્થ "યહ અવ મેં ચલા યહ અવ મેં ચલા" એસા હૈ ।
"વહ દેવ ૩ ત્રીન ચુટકી વજને પ્રમાણ વાલે કાલ મેં ૨૧ ઇક્કીસ વાર
પૂરે જંબૂદ્વીપ કી પ્રદક્ષિણા દેકર આ જાવે" ઇસ કથન સે ઉસકે ગમન
કી અતિશીઘ્રતા સૂચિત કી ગઈ હૈ । વહ દેવ ઇતને કાલ મેં પૂરે જંબૂદ્વીપ
કી ૨૧ વાર પ્રદક્ષિણા કરકે આ જાતા હૈ-તો વહ ઇસી તરહ કી ગતિ
સે ૧ક દિન તક, દો દિન તક યા ત્રીન દિન તક ઓર અધિક સે
અધિક છહ મહિને તક નિરન્તર ચલતા રહે-તથ જાકર વહ-સંખ્યાત
યોજન પ્રમાણ વાલે કિસી ૧ક તમસ્કાય તક હી પહુંચ સકતા હૈ । તથા

દુવાહં વા) થી શરૂ કરીને (અત્યેગદ્યં તમુક્કાયં વીર્ઘ્વજ્ઞા) પર્યન્તના
સૂત્રપાઠ દ્વારા સૂત્રકારે પ્રકટ કરી છે. આ સૂત્રમાં દેવને માટે બે મહાદ્વિક
(મહા મહિવાળો) આદિ વિશેષણોના પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે તે તેની
આલવાની શક્તિના ઉત્કર્ષનું પ્રતિપાદન કરવા માટે કરવામાં આવ્યો છે.
"ઇણામેવ ઇણામેવ" આ બે પદો દેવના મનમાં શીઘ્ર ગમન કરવાનો બે
વિચાર થયો છે તે સૂચિત કરવાને માટે વપરાયાં છે. તે પદોનો શબ્દાર્થ
આ પ્રમાણે થાય છે-"આ ઉપડયો, આ ઉપડયો" તે દેવ ત્રણ ચપટી
વગાડતાં તો ૨૧ વાર આખા જંબૂદ્વીપની પ્રદક્ષિણા કરીને આવે છે. આ
કથનથી તે દેવના ગમનની અતિ શીઘ્રતા જતાવવામાં આવી છે. તે દેવ આ
પ્રકારની ગતિથી એક દિવસ, બે દિવસ અથવા તો ત્રણ દિવસ સુધી અને
વધારેમાં વધારે છ મહિના સુધી નિરન્તર ચાલ્યા કરે ત્યારે કદાચ તે સંખ્યાત
યોજન પ્રમાણવાળા કોઈક તમસ્કાય સુધી જ પહોંચી શકે છે-એટલે કે તેને

જાવ-મહાણુભાવે ઇનામેવ, ઇનામેવ નિ કદુ કેવલરૂપં જંબૂદીપં દીપં તિહિં અચ્છરા-
નિવાણહિં તિસત્તલ્લુત્તો અણુપરિયટ્ટિત્તાણં હન્વં આગચ્છિજ્જા' દેવો મહર્હિકઃ મહા-
સમૃદ્ધિશાલી યાવત્-મહાયુતિઃ મહાચલઃ મહાપનાઃ મહાનુભાવઃ મહાપભાવશાલી,
અત્ર દેવસ્ય મહદ્ગર્વાદિવિશેષણાનિ મમનસામર્થ્યેર્ત્થપતિપાદનાય ઉક્તાનિ, एत-
देव मगधम् अतिशीघ्रत्वमुनकछोटिकारूपद्वस्तव्यापापविपाद्यम्, अयमहं मस्थितः,
अयमहं मस्थितएव इति कृत्वा कथयित्वा शीघ्रतामूननायं द्विक्रिकिः, केवल रूपं-संपूर्ण
जम्बूद्वीपं द्वीपं तिरुग्भिः त्रिसंक्षपकाभिः त्रिवाराभिरित्यर्थः नप्पुट्टिकाभिः=छोटि-
काभिः मध्यमाऽहुष्टमयोगनन्यधरानिव्यञ्जकद्वस्तव्यापारविशेषरूपाभिः ' चुटकी '
इति भाषाप्रसिद्धाभिः त्रिसप्तकत्वः त्रिभिर्गुणिता सप्त त्रिप्तं त्रिप्तमासान् इति
त्रिसप्तकत्वः एकविंशतिवारानित्यर्थः, अनुपर्यटय अनुप्रदक्षिणीकृत्य शीघ्रं द्रष्टव्येव
परावृत्य यावता कालेन आगच्छति, यावता कालेन ' से णं देवे ताए उक्किट्वाए,
तुरियाए, जाव-देवगईए, चीइवयमाणे, चीइवयमाणे जाव-एगाहं वा, दुयाहं वा

મહાણુભાવે-ઇનામેવ ઇનામેવ ત્તિ કદુ કેવલરૂપં જંબૂદીપં દીપં તિહિં
અચ્છરાનિવાણહિં તિસત્તલ્લુત્તો અણુપરિયટ્ટિત્તાણં હન્વં આગચ્છિજ્જા ”
इस प्रकार की अर्थात् ३१६ २२७ योजन ३ कोस १२८ एकसो अट्ठाईस
धनुष और १३॥ अंगुल से कुछ अधिक परिधिवाले इस समस्त जंबू-
द्वीप को कोई महर्हिक यावत् महानुभाववाला देव ३तीन चुटकी बजते २
एकौस बार बार कर देवे और वह इसी तरहसे एकदिन, दो दिन, या
तीन दिनतक निरन्तर चले और अधिक से अधिक वह छह मास तक
निरन्तर चले तो कोई एक संख्यात योजन वाले तमस्काय तक वह
पहुँच सकता है-यही बात (से णं देवे ताए उक्किट्वाए तुरियाए जाव-
देवगईए चीइवयमाणे, चीइवयमाणे जाव एकाहं वा दुयाहं) से लेकर

જંબૂદ્વીપને (દેવેણં મહિહ્લ્લોપ જાવ મહાણુભાવે-ઇનામેવ ઇનામેવ ત્તિ કદુ કેવલ-
રૂપં જંબૂદીપં દીપં તિહિં અચ્છરાનિવાણહિં તિસત્તલ્લુત્તો અણુપરિયટ્ટિત્તાણં હન્વં-
આગચ્છિજ્જા) કોઈ મહર્હિક, મહાદૃતિસપ્ત, મહામળયુક્ત, મહાયશયુક્ત-
અને મહાપ્રભાવશાળી દેવ ત્રણ અપટી વગાડતાં તે ૨૧ વાર ૫૨ કરી-
શકતો હોય, એવો દેવ એજ પ્રકારની શીઘ્ર ગતિથી એક દિવસ, બે દિવસ
અથવા ત્રણ દિવસ સુધી નિરન્તર ચાલ્યા જ કરે અને અધિકમાં અધિક છ
માસ સુધી તે નિરન્તર ચાલ્યા કરે, તે મહામુશ્કેલીએ તે કોઈ એક સંખ્યાત
યોજનવાળા તમસ્કાયને ૫૨ પાચી શકે છે. એજ વાત (સે ણં દેવે તાએ
ઉક્કિટ્વાએ તુરિયાએ જાવ દેવગઈએ ચીइवयमाणे, ચીइवयमाणे जाव एकाहं वा

માર્ગઃ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ગામા ઇ વા, જાવ-સન્નિવેસા ઇ વા ? ’ હે ભદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલ્પ યત્ તમસ્કાયે ગ્રામાઃ ઇતિ વા યાવત્-સન્નિવેશઃ સમાગતસાર્થવાહાદિનિવાસસ્થાનાનિ ભવન્તિ કિમ્ ? યાવત્કરણાત્-આકર નગર-લેટ-કર્વટ-મહમ્મ-દ્રોણમુખ-પત્તન-નિગમાશ્રમ-સંવાહાનાં સંગ્રહઃ, તત્ર આકરાઃ સ્વર્ણરત્નાદ્યુત્પત્તિસ્થાનાનિ ઇતિ વા, નગરાણિ-અષ્ટાદશકરવર્જિતાનિ-ઇતિ વા, લેટાનિ-ધૂલિપ્રાકારવેષ્ટિતાનિ ઇતિ વા, કર્વટાનિ-કુલ્લિતગ્રામા ઇતિ વા, મહમ્વાનિ-સાર્થ-ક્રોશદ્રયાન્તરગ્રામાન્તરરહિતાનિ ઇતિ વા, દ્રોણમુખાનિ-જલસ્થલપથોપેતાનિ જનસ્થાનાનિ, પત્તનં સમસ્તવસ્તુ પ્રાપ્તિસ્થાનં નિગમાઃ-પ્રભૂતતરવણિગ્જનનિવાસા ઇતિ વા,

કરતે હૈં—(અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ગામા ઇ વા જાવ સન્નિવેસા ઇ વા) હે ભદન્ત ! કયા યહ યાત સંભવિત હોતી હૈ કિ ઉસ તમસ્કાય મૈં ગ્રામ યા યાવત્ સન્નિવેશ હૈં ? યહાં યાવત્ શબ્દ સે “ આકર, નગર નિગમ, લેટ, કર્વટ, મહમ્મ, દ્રોણમુખ, આશ્રમ ઓર સંવાહ ઇન કા સંગ્રહ છુઆ હૈ । જહાં પર સ્વર્ણ રત્ન આદિ પદાર્થ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઉસકા નામ આકર હૈ, ૧૮ અઠાર પ્રકાર કે ટેકસૌં સે રહિત જન સ્થાન કા નામ નગર હૈ, જિસમૈં અધિક સંખ્યામૈં વ્યાપારી જનોંકા નિવાસ હો ઉસકા નામ નિગમ હૈ । ધૂલ કે પ્રાકાર સે વેષ્ટિત જનસ્થાન કા નામ લેટ હૈ, છોટા ગાંવ કા નામ કર્વટ હૈ । જિસકી ચારોં દિશાઓં મૈં ૨૥ કોશ તક કોઈ ગાંવ ન હો ઉસકા નામ મહમ્મ હૈ । જલમાર્ગ ઓર સ્થલમાર્ગ ઇન દોનોં માર્ગોં સે હી જિસમૈં જાયા જાના હોવે ઉસકા નામ દ્રોણમુખ હૈ । તાપસ

પ્રશ્ન—(અત્થિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ ગામા ઇ વા, જાવ સન્નિવેસા ઇ વા ?) હે ભદન્ત ! શું તમસ્કાયમાં ગામ, આકર, નગર, નિગમ, ખેટ, કર્વટ, મહમ્મ, દ્રોણમુખ, પત્તન, આશ્રમ, સંવાહન અને સન્નિવેશ હોય છે ખરાં ? (જાવ) પદ્ધતી ગ્રંથે કસવામાં આવેલાં શબ્દો સહિત અર્થ આપ્યો છે.

જ્યાં સુવર્ણ રત્ન આદિ પદાર્થ ઉત્પન્ન થાય છે, એ સ્થળને આકર કહે છે. ૧૮ પ્રકારના કરાચી સહિત જનસ્થાનને નગર કહે છે. જ્યાં અધિક પ્રમાણમાં વ્યાપારીઓ રહેતા હોય એવાં સ્થાનને નિગમ કહે છે. ધૂળના કોટની ઘેરાયેલા જનસ્થાનને ખેટ કહે છે. નાના ગામને કર્વટ કહે છે. જેની ચારે દિશામાં ૨૫ કોશ પર્યન્તમાં કોઈ પણ ગામ ન હોય એવા સ્થાનને મહમ્મ કહે છે. જળમાર્ગ અને જમીન માર્ગે—એમ બન્ને માર્ગે—જે સ્થળે જઈ શકાય છે એવા સ્થળને દ્રોણમુખ કહે છે. જ્યાં તાપસો રહેતા હોય, તે સ્થાનને

યોજનમ્ તમસ્કાયે વ્યતિવ્રજેત્ વ્યતિક્રામેન્, 'અત્યેગદ્યં નો તમુક્કાયં ચીર્દ્વહજ્જા' અસ્ત્યેરુકં સંભવતિ યદ્વ દ્વિતીયમ્ અસંલયાતયોજનમાનં તુ તમસ્કાયં નો નૈવ તાદૃશ્યાપિ મર્યા વ્યતિવ્રજેત્ વ્યતિક્રમિતુમર્હેન્। પરં મહારેણ તમસ્કાયસ્ય વિશાલતા મુપસંહસ્માદ્—'અમહાત્મ્યં ણં ગોયમા ! તમુક્કાય પળ્લગ્તે' હે ગૌતમ ! ઇત્યન્મદાન્તયઃ પ્તાવાન્ વિશાલઃ તમસ્કાયઃ પ્રગતઃ । ગૌતમઃ પૂચ્છતિ—'અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાય મેદા ઇ વા, મેદાવળા ઇ વા ?' હે મદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ ત્વદ્વ તમસ્કાયે મેદાનિ મુદાણિ વા સન્તિ, મેદાવળાઃ મુદ્દશ વા સન્તિ કિમ્ ? મગવાનાદ્—'ખો ઇત્થદ્દે સમદ્દે' હે ગૌતમ ! નાયપર્યઃ સમર્યઃ, તમસ્કાયે મુદ્દા વા, મુદ્દાવળા વા ન ભવન્તીતિ

જો (અત્યેગદ્યં નો તમુક્કાયં ચીર્દ્વહજ્જા) અસંલયાત યોજન પ્રમાણ વાલા તમસ્કાય હૈં ઉસ તક તો મહ દેવ ઇતની અધિક વૃત્કૃષ્ટતા અને ત્વરા આદિ વિશેષણોં વાલી ગતિ સે ખીં નહીંં પઢુંં સક્તા હૈં। ઇસ-કથન સે પ્રભુ ને તમસ્કાય કી વિશાલતા કા વર્ણન કિયા હૈં ઇસી વાત કો ડુંહેંં ને (અ મહાત્મ્યં ણં ગોયમા ! તમુક્કાય પળ્લગ્તે) ઇમ સૂત્ર પાઠ દ્વારા ગૌતમ કો ઉપસંહારરૂપ મેં સમસાયા હૈં।

અય ગૌતમ સ્વામી પ્રભુ સે એસા પૂછતે હૈં કિ જન તમસ્કાય ઇતના અધિક વિશાલ હૈં તો (અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાય મેદાઈ વા, મેદાવળાઈ વા) હે મદન્ત ! ઉસમેંં કયા ઘર હૈંં યા મુદ્દાવળ-મુદ્દ હાર હૈંં ? ઇસકે ઉત્તર મેંં પ્રભુ ઉનસે કહતે હૈંં (ખો ઇત્થદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! ઉસ વિશાલ તમ તમસ્કાય મેંં ન ઘર હૈંં ઓર ન મુદ્દાવળ હૈંં। ગૌતમ પુનઃ પ્રભુ સે પ્રશ્ન

પાર કરી શકે છે. પરન્તુ “અત્યેગદ્યં નો તમુક્કાયં ચીર્દ્વહજ્જા” અસંલયાત યોજનતા વિસ્તારવાળો જે તમસ્કાય છે, ત્યાં સુધી તો તે દેવ આટલી બધી અધિક, ઉત્કૃષ્ટતા, ત્વરા આદિ વિશેષણોવાળી ગતિથી પણ પહોંચી શકતો નથી. આ કથન દ્વારા મહાવીર પ્રભુએ તમસ્કાયની વિશાળતાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. એજ વાતને તેમણે “અમહાત્મ્યં ણં ગોયમા ! તમુક્કાય પળ્લગ્તે” આ સૂત્રપાઠ દ્વારા ગૌતમ સ્વામીને ઉપસંહાર રૂપે સમજાવી છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી એ બાણવા માગે છે કે આટલા વિશાળ તમસ્કાયમાં ઘર, હાટ આદિ છે કે નહીં. (અત્યિ ણં મંતે ! તમુક્કાય મેદાઈ વા મેદાવળાઈ વા ?) હે મદન્ત ! જો તમસ્કાય આટલો બધો વિશાળ છે, તો તેમાં શું ઘર, છે ? મુદ્દાવળ (હાટ) છે ?

ઉત્તર—“ખો ઇત્થદ્દે સમદ્દે” હે ગૌતમ ! તે વિશાળ તમસ્કાયમાં ઘરો પણ નથી અને હાટ પણ નથી.

સંભવતિ યત્ તમસ્કાયે ઉદારા મેવાઃ સંસ્થિયન્તિ સમ્મૂર્ચ્છન્તિ, સંવર્ષન્તિ ચ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘ તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્, અસુરો પકરેદ્, ણાગો પકરેદ્ ? ’ હે ભદન્ત ! તત્ સંસ્વેદનં સંમૂર્ચ્છનં વર્ષણશ્ચ કિં દેવઃ પ્રકરોતિ, અથવા અસુરઃ પ્રકરોતિ, અથવા નાગઃ પ્રકરોતિ ? । મગવાનાહ—‘ ગોયમા ! દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, ણાગો વિ પકરેદ્ ’ હે ગૌતમ ! તત્ સ્વલુ સંસ્વેદનં સંમૂર્ચ્છનં વર્ષણં ચ દેવોઽપિ પ્રકરોતિ, અસુરોઽપિ પ્રકરોતિ, નાગોઽપિ પ્રકરોતિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘ અતિથિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે ધણિયસદે, વાયરે વિજ્ઞુણ ? ’ હે ભદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ તમસ્કાયે વાદરઃ સ્તનિતશબ્દઃ ઘનગર્જનમ્ ? તથા વાદરા વિદ્યુત્ ? , મગવા-

ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હેં કિ-હે ગૌતમ ! (હંતા અતિથિ) એસા હોતા હે કિ-ઉદાર મેવ ઉસ તમસ્કાય મેં સંસ્વેદ જનક પુદ્ગલ સ્નેહરૂપ સંપત્તિ સે મીલે હોતે હેં, પરસ્પર કે સંપોગરૂપ સે વે વર્હાં એકત્રિત હોતે હેં ઓર વરસતે હેં । અવ ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન સે પૂછતે હેં કિ-(તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્ અસુરો પકરેદ્, ણાગો પકરેદ્ ?) કિં હે ભદન્ત ! હસ સંસ્વેદન, સંમૂર્ચ્છન ઓર વર્ષણ કો કયા દેવ કરતા હે ? અથવા અસુર કરતા હે ? યા નાગ કરતા હે ? હસ કે ઉત્તર પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હેં કિ-(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, ણાગો વિ પકરેદ્) ઉસ સંસ્વેદન કો, સંમૂર્ચ્છન કો એવં વર્ષણ કો દેવ મી કરતા હે, અસુર મી કરતા હે ઓર નાગ મી કરતા હે ।

(અતિથિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે ધણિય સદે, વાયરે વિજ્ઞુણ) હે ભદન્ત ! ઉસ તમસ્કાય મેં વાદર સ્તનિત શબ્દ-ઘનગર્જન, તથા વાદર

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે-“ હંતા અતિથિ ” હે ગૌતમ ! એવું જ થાય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે વિશાળ મેઘ તમસ્કાયમાં સંસ્વેદ જનક પુદ્ગલોની સ્નિગ્ધતારૂપ સંપત્તિથી ભીંજાય છે, પરસ્પરના સંયોગથી તેઓ ત્યાં એકત્રિત થાય છે અને વરસે છે.

પ્રશ્ન-“ તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્, અસુરો પકરેદ્, ણાગો પકરેદ્ ? ” હે ભદન્ત ! તે સંસ્વેદન, સંમૂર્ચ્છન (એકત્રિત કરવાની ક્રિયા) અને વર્ષણ (વરસાવવાની ક્રિયા) થું દેવ કરે છે ? કે અસુરક્રમાર કરે છે ? કે નાગક્રમાર કરે છે ?

મહાવીર પ્રશ્નનો ઉત્તર-(દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, ણાગો વિ પકરેદ્) હે ગૌતમ ! તે સંસ્વેદન, સંમૂર્ચ્છન અને વર્ષણ દેવ પણ કરે છે; અસુર પણ કરે છે અને નાગ પણ કરે છે.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન-(અતિથિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે ધણિયસદે,

આશ્રમાઃ-તાપસજનનિવાસા ઇતિ વા, સંગ્રામાઃ-કૃપિચ્છેષાં-પરસ્પાર્ય નિર્મિતાનિ
 દુર્ગભૂમિસ્થાનાનિ-ઇતિ વા, એને કિં તમસ્કાયે સન્તિ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । મગવાનાહ-
 'જો ઇણદે સમદે' હે ગૌતમ ! તમસ્કાયે સમર્થઃ તમસ્કાયે ગ્રામાદિગમિત્વેન્નાત્માઃ
 ન મયન્તિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘અત્યિ જં મંતે ! તમુક્કાપ્પ ડરાલા ચલાહયા સંસેયંતિ,
 સંમુચ્છંતિ, સંવાસંતિ ?’ હે મદન્ત ! અસ્તિ સંવાસિ સત્તુ તમસ્કાયે ઉદારાઃ
 મહાન્તઃ ચલાહતાઃ-મેયાઃ સંસ્વિષ્ણિ સ્વિષ્ણન્તિ-સંસ્વેદજનદ્ધુદ્ધવસ્નેહસંવસ્થા
 આદ્રાં ભવન્તિ કિમ્ ? સંમુચ્છંતિ-ઉદ્ધિવા ભવન્તિ પરસ્પરસંયોગેન વૃક્ષિતા
 ભવન્તિ, વૃક્ષુદ્ધાનાં મીલનાન્ તદાહારતયા ઉત્પાદ્યન્તે કિમ્ ? સંયંન્તિ-વૃદ્ધિ
 કુર્વન્તિ કિમ્ ? । મગવાનાહ-‘હંતા, અત્યિ’ હે ગૌતમ ! હન્ત, સત્યમ્ અસ્તિ

જનો કે આશ્રમ સ્થાન का नाम आश्रम है । किसान लोग जहाँ पर
 अपने अनाज आदि की रक्षा के निमित्त जो दुर्गम भूमि स्थान बना
 लेते हैं उसका नाम संवाह है “ ये सब जनस्थान क्या उस तमस्काय
 में होते हैं ? इसके उत्तर में प्रभु गौतम से कहते हैं कि (जो इणदे
 समदे) हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है, अर्थात् उस तमस्काय में ये
 सब कुछ नहीं है । गौतम पुनः प्रभु से प्रश्न करते हैं कि (अतिय जं
 मंते ! तमुक्काप उराला चलाहया संसेयंति, संमुच्छंति संवासंति) हे
 मदन्त ! उस तमस्काय में क्या बड़े २ मेघ संस्वेद (पत्तीना) जनक पुद्गल
 स्नेह रूप संपत्ति से मीले होते हैं ? परस्पर के संयोग से क्या वे वृक्षित
 होते हैं ? अर्थात् मेघ के पुद्गलों के मिलने से उन पुद्गलों की मेघों के
 रूप में उत्पत्ति होती है क्या ? वे मेघ क्या उसमें वासते हैं ? इसके

આશ્રમ કહે છે. એટલે બધાં પોતાનાં અનાજ આદિની રક્ષા માટે દુર્ગમ
 ભૂમિસ્થાન બનાવી લે છે એવાં સ્થાનને સંવાહ કહે છે. શું આ બધાં જન-
 સ્થાનો તમસ્કાયમાં હોય છે ? એવો ગૌતમનો પ્રશ્ન છે.

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે-“ જો ઇણદે સમદે ” હે
 ગૌતમ ! તમસ્કાયમાં ગામ, આકર આદિ કશું પણ હોતું નથી.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (અત્યિજં મંતે !
 તમુક્કાપ્પ ડરાલા ચલાહયા સંસેયંતિ, સંમુચ્છંતિ સંવાસંતિ ?) હે મદન્ત !
 તે તમસ્કાયમાં શું વિશાળ મેઘ સંસ્વેદ (પરસેવો) જનક પુદ્ગલ સ્નેહરૂપ
 સંપત્તિથી ભીંજાય છે ખરા ? પરસ્પરના સંયોગથી શું તેઓ વૃક્ષિત થાય
 છે ખરા ? એટલે કે એવાં પુદ્ગલો સાથે સંયોગ પામવાથી તે પુદ્ગલોની
 એવાના રૂપમાં શું ઉત્પત્તિ થાય છે ખરી ? તે મેઘ શું તેમાં વસે છે ખરા ?

સંભવતિ યત્ તમસ્કાયે ઉદારા મેઘાઃ સંસ્થિયન્તિ સમ્પૂર્ણાન્તિ, સંવર્ષન્તિ ચ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્, અસુરો પકરેદ્, નાગો પકરેદ્ ?’ હે ભદન્ત ! તત્ સંસ્વેદનં સંમૂર્ચ્છનં વર્ષણં કિં દેવઃ પ્રકરોતિ, અથવા અસુરઃ પ્રકરોતિ, અથવા નાગઃ પ્રકરોતિ ? । ભગવાનાહ-‘ગૌતમા ! દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, નાગો વિ પકરેદ્’ હે ગૌતમ ! તત્ સ્વલુ સંસ્વેદનં સંમૂર્ચ્છનં વર્ષણં ચ દેવોઽપિ પ્રકરોતિ, અસુરોઽપિ પ્રકરોતિ, નાગોઽપિ પ્રકરોતિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘અતિથિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે ધણિયસદે, વાયરે વિજ્ઞુણ ?’ હે ભદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ તમસ્કાયે વાદરઃ સ્તનિતશબ્દઃ ઘનગર્જનમ્ ? તથા વાદરા વિદ્યુત્ ? , ભગવા-

ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હેં કિ-હે ગૌતમ ! (હંતા અતિથિ) એસા હોતા હેં કિ-ઉદાર મેઘ ઉસ તમસ્કાય મેં સંસ્વેદ જનક પુદ્ગલ સ્નેહરૂપ સંપત્તિ સે ગીલે હોતે હેં, પરસ્પર કે સંયોગરૂપ સે વે વર્ષા એકત્રિત હોતે હેં ઓર વરસતે હેં । અવ ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન સે પૂછતે હેં કિ-(તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્ અસુરો પકરેદ્, નાગો પકરેદ્ ?) કિં હે ભદન્ત ! હસ સંસ્વેદન, સંમૂર્ચ્છન ઓર વર્ષણ કો કયા દેવ કરતા હેં ? અથવા અસુર કરતા હેં ? યા નાગ કરતા હેં ? હસ કે ઉત્તર પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હેં કિ-(ગૌતમા) હે ગૌતમ ! (દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, નાગો વિ પકરેદ્) ઉસ સંસ્વેદન કો, સંમૂર્ચ્છન કો એવં વર્ષણ કો દેવ મી કરતા હેં, અસુર મી કરતા હેં ઓર નાગ મી કરતા હેં ।

(અતિથિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે ધણિય સદે, વાયરે વિજ્ઞુણ) હે ભદન્ત ! ઉસ તમસ્કાય મેં વાદર સ્તનિત શબ્દ-ઘનગર્જન, તથા વાદર

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે-“હંતા અતિથિ” હે ગૌતમ ! એવું જ થાય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે વિશાળ મેઘ તમસ્કાયમાં સંસ્વેદ જનક પુદ્ગલોની સ્તિગ્ધતારૂપ સંપત્તિથી ભીંજાય છે, પરસ્પરના સંયોગથી તેઓ ત્યાં એકત્રિત થાય છે અને વરસે છે.

પ્રશ્ન-“તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ્, અસુરો પકરેદ્, નાગો પકરેદ્ ?” હે ભદન્ત ! તે સંસ્વેદન, સંમૂર્ચ્છન (એકત્રિત કરવાની ક્રિયા) અને વર્ષણ (વરસાવવાની ક્રિયા) શું દેવ કરે છે ? કે અસુરકુમાર કરે છે ? કે નાગકુમાર કરે છે ?

મહાવીર પ્રશ્નનો ઉત્તર-(દેવો વિ પકરેદ્, અસુરો વિ પકરેદ્, નાગો વિ પકરેદ્) હે ગૌતમ ! તે સંસ્વેદન, સંમૂર્ચ્છન અને વર્ષણ દેવ પણ કરે છે; અસુર પણ કરે છે અને નાગ પણ કરે છે.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન-(અતિથિ ણં મંતે ! તમુક્કાણ વાયરે ધણિયસદે,

નાહ-‘ હંતા, સત્યમેવ તમસ્કાયે વાદઃ સ્તનિતશબ્દઃ વાદસા વિષુત્પદિત, અથ-
વાદરવિષુત્પદેન દેવપ્રભાવોત્પાદિતાઃ ભાસ્વરાઃ પુદ્ગલા ગ્રાણાઃ, નતુ વાદસ્તેમસ્કા-
યિકાઃ, તેનામિદેવાગ્રે પ્રતિષેત્સ્યમાનત્વાન્, ગૌતમઃ પૂચ્છતિ-, તં મંતે ! કિં દેવો
પકરેદ, અસુરો પકરેદ, નાગો પકરેદ, ? ’ હે મદન્ત ! તં વાદસ્તનિતશબ્દ વાદર-
વિષુતં ચ કિં દેવઃ પ્રકરોતિ અથવા અસુરઃ પ્રકરોતિ, નાગો વા પ્રકરોતિ ? પ્રશ્નઃ ।
મળવાનાહ-‘ તિન્નિવિ પકરેતિ ’ હે ગૌતમ ! વાદરસ્તનિતશબ્દાદિકં ત્રયોઽપિ
દેવાસુરનાગાઃ પ્રકુર્વન્તિ, ।

વિજલી होती है क्या ? इस गौतम के प्रश्न के उत्तर में प्रभु कहते हैं कि (हंता अत्थि) हां गौतम ! तमस्काय में वादर स्तनितशब्द और वादर विजली है । यहां पर वादरविषुत् शब्द से देवप्रभाव से उत्पादित भास्वर पुद्गल ही गृहीत हुए हैं । न कि वादर तेजस्कायिक, क्योंकि उसका यहां पर होना आगे निषिद्ध हुआ है (तं मंते ! किं देवो पकरेद, असुरो पकरेद, नागो पकरेद) हे मदन्त ! वादरस्तनित शब्द को और वादर विषुत् को वहां क्या देव करता है ? अथवा असुर करता है ? या नाग करता है ? इस गौतम के प्रश्न का उत्तर देनेके लिये प्रभु उनसे कहते हैं कि-(तिन्नि वि पकरेति) हे गौतम ! वादर स्तनित शब्द को एवं वादरविषुत् को वहां तीनों भी-देव, असुर एवं नाग ये

વાયરે વિજ્જુણ) હે મદન્ત ! તમસ્કાયમાં શું વાદર સ્તનિત શબ્દ (મેઘાનું ગર્જન) થાય છે ? શું તેમાં વાદર વિજળી થાય છે ?

મહાવીર પ્રભુ તેના જવાબ આપતા કહે છે-“ હંતા અત્થિ ” હા, ગૌતમ ! તમસ્કાયમાં મેઘાની ગર્જના અને વાદર વિજળી થાય છે. અહીં “ વાદર વિષુત ” પદ દ્વારા દેવ પ્રભાવથી ઉત્પન્ન કરવામાં આવેલા દેહીપ્રમાણ પુદ્ગલો જ ગ્રહણ કરવા. અહીં વાદર તેજસ્કાયિક પુદ્ગલો ગ્રહણ કરવા નોંધ્યે નહીં, કારણ કે તેમના તમસ્કાયમાં અસ્તિત્વનો આગળ સ્વીકાર કરવામાં આવ્યો છે.

પ્રશ્ન-(તં મંતે ! કિં દેવો પકરેદ, અસુરો પકરેદ, નાગો પકરેદ ?) ત્યાં વાદર સ્તનિત શબ્દો તથા વાદર વિષુત કોણ કરે છે ? શું દેવ કરે છે ? અસુર કરે છે ? કે નાગ કરે છે ?

ઉત્તર-(તિન્નિ વિ પકરેતિ) હે ગૌતમ ! ત્યાં તે વાદર સ્તનિત શબ્દ અને વાદર વિષુત ત્રણે કરે છે-દેવ પણ કરે છે, અસુર પણ કરે છે અને

ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘અતિથિ ણં ભંતે ! તમુક્કાપ વાયરે પુઢવિકાપ, વાયરે અગ્નિકાપ ? હે ભદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ खलु તમસ્કાયે વાદરઃ પૃથિવીકાયઃ ભવતિ ? તથા વાદરઃ અગ્નિકાયો ભવતિ ? ભગવાનાહ-‘જોડ્ઢણદ્વે સમદ્વે-જણ્ણત્થ વિગ્ગહગતિસમાવજ્ઞણં’ હે ગૌતમ ! નાયમર્યઃ સમર્યઃ, તમસ્કાયે વાદરઃ પૃથિવીકાયઃ, વાદરઃ અગ્નિકાયથ ન ભવતિ, કિન્તુ ‘ન’ ઇતિ શબ્દેન યોડ્ઢ્યં વાદર-પૃથિવી-તેજસોઃ નિપેથઃ કૃતઃ, સ વિગ્ગહગતિસમાવજ્ઞકેન અન્યત્ર ઘોઢ્યઃ। વિગ્ગહગતિ-સમાવજ્ઞકાન્ વાદરપૃથિવી તૈજસકાયાન્ વિહાય ઉક્તનિપેથો વિજ્ઞેય ઇત્યર્થઃ। વિગ્ગહ-ગત્યા વાદરપૃથિવીતેજસોઃ તમસ્કાયેડ્ઢપિ સંભવાત્। વાદરાઃ પૃથિવીકાયિકાઃ રત્નપ્રમાદ્યામુ અપ્પમુ પૃથિવીપુ ગિરિ-વિમાનેપુ ચ ભવન્તિ, વાદરતેજસ્કાયિકાસ્તુ મનુષ્યક્ષેત્રે એવ ભવન્તિ। ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘અતિથિ ણં ભંતે ! તમુક્કાપ ચંદિમ-સૂરિય-ગહગણ-જલ્લ-તારાહ્વા ?’ હે ભદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ खलु તમસ્કાયે ચન્દ્ર-

સષ હી કરતે હેં। (અતિથિ ણં ભંતે ! તમુક્કાપ વાયરે પુઢવિકાપ વાયરે અગ્નિકાપ) હે ભદન્ત ! તમસ્કાય મેં વાદર પૃથિવીકાય વાદર અગ્નિકાય હોતે હેં કયા ? ઇસ ગૌતમ કે પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં ભગવાન્ ડનસે કહતે હેં કિ-હે ગૌતમ ! (જો ડ્ઢણદ્વે સમદ્વે, જણ્ણત્થવિગ્ગહગહસમાવજ્ઞ-ણં) વિગ્ગહગતિસમાવજ્ઞક વાદર પૃથિવીકાય કો એવં તૈજસકાય કો ડોઢ્ઢકાર તમસ્કાય મેં વિગ્ગહગતિ અપ્રાપ્ત વાદર પૃથિવીકાય-ઑર વાદર અગ્નિકાય નહીં હેં। કયોં કિ વિગ્ગહગતિ મેં વર્તમાન વાદર પૃથિવી ઑર વાદર તૈજસકાયકા હી તમસ્કાયમેં ઓ સંભવ હો સકતા હેં। વાદર પૃથિ-વીકાયિક, રત્નપ્રમા આદિ આઠ પૃથિવીઓમેં ગિરિયોં મેં ઑર વિમાનોં મેં હી હોતે હેં। ઑર વાદર તૈજસ્કાયિક મનુષ્યક્ષેત્ર મેં હી હોતે હેં। “અતિથિ ણં ભંતે ! તમુક્કાપ ચંદિમ-સૂરિય-ગહગણજલ્લ તારાહ્વા)

પ્રશ્ન—(અતિથિ ણં ભંતે ! તમુક્કાપ વાયરે પુઢવીકાપ વાયરે અગ્નિકાપ ?) હે ભદન્ત ! તમસ્કાયમાં બાદર (સ્થૂળ) પૃથ્વીકાય અને બાદર અગ્નિકાય હોય છે ખરાં ?

ઉત્તર—“જો ડ્ઢણદ્વે સમદ્વે જણ્ણત્થવિગ્ગહગહસમાવજ્ઞણં” હે ગૌતમ ! ઓલું સંભવિત નથી. વિગ્ગહ ગતિમાં વર્તમાન બાદર પૃથ્વીકાયનો અને બાદર તૈજસ્કાયનો જ તમસ્કાયમાં સંભવ હોઈ શકે છે. વિગ્ગહગતિમાં વર્તમાન બાદર પૃથ્વીકાય અને બાદર તૈજસ્કાય સિવાયના વિગ્ગહગતિ અપ્રાપ્ત બાદર પૃથ્વીકાય અને બાદર તૈજસ્કાય તેમાં સંભવી શકતા નથી. બાદર પૃથ્વીકાયિક રત્નપ્રમા આદિ આઠ પૃથ્વીઓમાં, પર્વતોમાં અને વિમાનોમાં જ હોય છે, અને બાદર તૈજસ્કાયિક મનુષ્ય ક્ષેત્રમાં જ હોય છે.

ભાસઃ કૃષ્ણકાન્તિયુક્ત ઇતિ, તથા ચ યર્ણેન કાલઃ, કાલાવમાસમ્ તમસ્કાયઃ, અથવા અતિશયકૃષ્ણકાન્તિશ્ચ સ ઇતિ । તથા સ ગમ્મીર-રોમ-ઈર્ષનનનઃ, ગમ્મીર-ધાસી અત્યન્તભીષણત્વાત્ રોમઈર્ષનનનમેતિ ગમ્મીરરોમઈર્ષનનનઃ રોમાશોભ્યા-વકઃ । તસ્ય રોમઈર્ષનનને કારણમાહ-‘ મીમઃ ’ ઇતિ, ત્રિમેતિ અસ્માદિતિ મીમઃ મયદ્ધારઃ, તથા ઉત્ત્રાસનકઃ અત્યન્તગ્રાસનનકઃ પરમકૃષ્ણર્ણઃ સ તમસ્કાયઃ પ્રજ્ઞઃ । ‘ દેવે નં અત્યેગદ્દે જે નં તપ્પદમયાપ પાસિત્તા નં સુમાપજ્ઞા ’ હે ગૌતમ ! દેવઃ સ્વલુ અસ્ત્યેકકઃ, યઃ સ્વલુ વં તમસ્કાયં મયમતવા મયમવારં દદ્વા અલોચ્યેવ શુભ્વેન્ શોભં માપ્નુયાત્ । ‘ અદે નં અમિસમાગચ્છેજ્ઞા ’ અથ પ્રનન્તરં સ્વલુ અમિસમાગ-

હતના મયંદર હે ફિ દેવલે હી વદ્ધત પુરિ તરહ સે રોમરાજિ સ્વહી હો જાતી હે । રોમરાજિ સ્વહી હોને કા કારણ પદી હે ફિ વહ " મીમઃ " મયમદ્દ હે । અત્યન્ત ગ્રાસ જનક હે । એસે પરમકૃષ્ણ વર્ણવાલા વહ તમસ્કાય હે । (કાલોભાસે) એસા જો પદ્ દિયા ગયા હે વહ યહ પ્રકટ કરતા હે ફિ કોઈ પદાર્થ કાલા હોતર મી કિસી કારણ વશ કાલે રૂપ મેં અવભાસિત નહીં હોના હે પરન્તુ યહ એસા નહીં હે-યહ તો કૃષ્ણવર્ણવાલા હોતર મી કાલે હી રૂપ સે અવભાસિત હોતા હે । અથવા (કાલોભાસે) યહ તમસ્કાય અત્યન્તકૃષ્ણકાન્તિ સે યુક્ત હે । મનુષ્યાદિ જિસસે હરેં વહ (મીમ) હે । (દેવેનં અત્યેગદ્દે જે નં તપ્પદમયાપ પાસિત્તા નં સુમાપજ્ઞા) કોઈ એક દેવ એસા મી હોતા હે જો ડસ તમસ્કાય કો સર્વપ્રથમ દેવ કરકે હી છુમિત્ હો જાતા હે-પદિ કોઈ દેવ કદાચિત્ ડસ તમસ્કાય મેં (અમિસમાગચ્છેજ્ઞા) પાસ મેં જાકર પ્રવેશ

મધો ભયંકર હોય છે કે તેને ભેતાં જ પીકને કારણે રૂવાડા ઉભા થઇ જાય છે રૂવાડા ઉભા થવાનું કારણ એ છે કે તે " મીમઃ " ભયજનક છે-અત્યન્ત ગ્રાસજનક છે, આવાં પરમકૃષ્ણ-વર્ણવાળો તે તમસ્કાય છે. " કાલો-ભાસે " આ પદ આપવાનું કારણ એ છે કે કોઈ પદાર્થ કાળો હોવા છતાં પણ કોઇ કારણે કાળો અવભાસિત થતો નથી-દેખાતો નથી. પરન્તુ તમસ્કાય એવો નથી. તે તો કૃષ્ણ વર્ણવાળો છે એટલું જ નહીં પણ કાળો જ દેખાય છે. અથવા " કાલોભાસે " આ તમસ્કાય અત્યન્ત કૃષ્ણકાન્તિથી યુક્ત છે. મનુષ્યાદિ જેનાથી હરે તેને " મીમ " કહે છે. (દેવેનં અત્યેગદ્દે જે નં તપ્પદમયાપ પાસિત્તા નં સુમાપજ્ઞા) કોઇ કોઇ દેવ તો તેને પહેલી જ વાર દેખતાની સાથે જ ક્ષોભ પામી જાય છે. એ કોઇ દેવ ક્યારેક તે તમસ્કાયમાં " અમિ-સમાગચ્છેજ્ઞા " પાસે જઈને પ્રવેશ કરે છે, તો તે (તઓ પચ્છા સીદ્ધં સીદ્ધં

છેત્-સમીપં ગત્વા તમસ્કાયં પ્રવિશેત્ , 'તઓ પચ્છા સીહં સીહં તુરિયં તુરિયં સ્વિપ્પા-
મેવ વીહવણ્જા ' તતઃ પથાત્ તદનન્તરમ્ મયાન્ શીઘ્રં શીઘ્રમ્ અતિવેગેન ત્વરિતં
ત્વરિતમ્ મનોગતેરતિવેગાત્ ક્ષિપમેવ અતિસત્ત્વરમેવ વ્યતિવ્રજેત્ અતિક્રામેત્ , તમુ-
લ્લહ્સ્ય નિર્ગચ્છેત્ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ- 'તમુકાયસ્સ ણં મંતે ! કહ્ નામધેજ્જા પણ્ણત્તા ?'
હે ભદન્ત ! તમસ્કાયસ્ય ચત્તુ કતિ કિયન્તિ નામધેયાનિ નામાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ ?
મગવાનાહ- 'ગોયમા ! તેરસ નામધેજ્જા પણ્ણત્તા ' હે ગૌતમ ! તમસ્કાયસ્ય ત્રયો-
દશ નામધેયાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તાન્યેવાહ- 'તં જહા' -તથા- ' તમેહ વા ૧, તમુકાણ્ણ
વા ૨, અંધકારેહ વા ૩, મહંધકારેહ વા ૪, લોગંધકારેહ વા ૫, લોગતમિસ્સેહ વા ૬,
દેવંધકારેહ વા ૭, દેવતમિસ્સેહ વા ૮, દેવારન્નેહ વા ૯, દેવવૂહેહ વા ૧૦,
દેવફલિહેહ વા ૧૧, દેવપલિક્ખોમેહ વા ૧૨, અરુણોદણ્ણ તિ વા સમુદેહ ૧૩' इति ।

करता है तो वह " तओ पच्छा सीहं सीहं तुरियं तुरियं स्विप्पामेव
वीहवण्ज्जा " कायगति के अनिवेग से और मनोगति के अतिवेग से
अर्थात् बहुत ही शीघ्रता के साथ उस तमस्काय में से बाहर निकल
आता है । (तमुकायस्स णं मंते ! कह्नामधेज्जा पण्णत्ता) हे भदन्त !
तमस्काय के कितने नाम हैं ? इस गौतम के प्रश्न का उत्तर प्रभु इन्हें
यों देते हैं कि- (गोयमा) हे गौतम ! (तेरस नामधेज्जा पण्णत्ता)
तमस्काय के नाम तेरह हैं- (तं जहा) वे इस प्रकार से हैं- (तमेह वा
१ तमुकाण्ण वा, २ अंधकारेह वा, ३ महंधकारेह वा, ४ लोगंधकारेह वा ५,
लोगतमिस्सेह वा ६, देवंधकारेह वा ७, देवतमिस्सेह वा ८, देवारन्नेह
वा ९, देववूहेह वा १०, देवफलिहेह वा ११, देवपलिक्खोमेह वा १२, अरु-
णोदण्णत्ति वा समुदेह १३, अंधकाररूप होनेके कारण तमस्काय का पहला
नाम तम है, अंधकार की राशिरूप होने के कारण तमस्काय का दूसरा

તુરિયં તુરિયં સ્વિપ્પામેવ વીહવણ્જ્જા) કાયગતિના અતિવેગથી અને મનોગતિના
અતિવેગથી-એટલે કે ઘણી જ શીઘ્રતાથી તે તમસ્કાયમાંથી બહાર નીકળી બાહ્ય છે.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન- (તમુકાયસ્સ ણં મંતે ! કહ્ નામધેજ્જા પણ્ણત્તા ?)
હે ભદન્ત ! તમસ્કાયના કેટલાં નામ છે ? ઉત્તર- " ગોયમા ! " હે ગૌતમ !
(તેરસ નામધેજ્જા પણ્ણત્તા-તંજહા) તમસ્કાયના નીચે પ્રમાણે તેર નામ કહ્યાં છે-

(૧) તમેહ વા, (૨) તમુકાણ્ણ વા, (૩) અંધકારેહ વા, (૪) મહંધકારેહ
વા, (૫) લોગંધકારેહ વા, (૬) લોગતમિસ્સેહ વા, (૭) દેવંધકારેહ વા, (૮) દેવ-
તમિસ્સેહ વા, (૯) દેવારન્નેહ વા, (૧૦) દેવવૂહેહ વા, (૧૧) દેવફલિહેહ વા,
(૧૨) દેવપલિક્ખોમેહ વા, (૧૩) અરુણોદણ્ણ તિ વા સમુદેહ)

ભાસઃ કૃષ્ણકાન્તિયુક્ત ઇતિ, તથા ચ વર્ણેન કાલઃ, કાલારમામમ તમસ્કાયઃ,
અથવા અતિશયકૃષ્ણકાન્તિશ્ચ સ ઇતિ । તથા સ ગમ્મીર-રોમ-ર્શનનનઃ, ગમ્મીર-
ધાસો અત્યન્તમીયળ્વાન્ રોમર્શનનનનેતિ ગમ્મીરરોમર્શનનનઃ રોમાધોભ્યા-
વકઃ । તસ્ય રોમર્શનનને કારણમાદ- ' ભીમઃ ' ઇતિ, ચિમેતિ અસ્માદિતિ ભીમઃ
ભયકરઃ, તથા ઉત્ત્રાસનકઃ અત્યન્તપ્રાસનનકઃ પામકૃષ્ણાર્ણઃ સ તમસ્કાયઃ મત્તઃ ।
' દેવે નં અત્યેગદ્દ જે નં તપ્પદમયાપ પાસિત્તા નં રુમાપજ્ઞા ' હે ગીતમ । દેવઃ
સ્વત્વ અસ્ત્યેકકઃ, યઃ સ્વત્વ તં તમસ્કાયં પ્રથમતયા પ્રથમવારં રૂપા ભરતોત્યેવ શ્રુત્યેવ
શ્રોતં માનુયાત્ । ' અદે નં અભિસમાગચ્છેજ્ઞા ' મય ભવન્તરં સ્વત્વ અભિસમાગ-

હતના ભયંકર હૈં કિ દેવ્યતે હી પટ્ટત પુરી તરહ સે રોમરાજિ સ્વદી હો
જાતી હૈં । રોમરાજિ સ્વદી હોને કા કારણ યદી હૈં કિ વહ " ભીમઃ "
ભયમદ હૈં । અત્યન્ત ગ્રાસ જનક હૈં । એસે પરમકૃષ્ણ વર્ણવાલા વહ
તમસ્કાય હૈં । (કાલોભાસે) એસા જો પદ દિયા ગયા હૈં વહ યહ પ્રકટ
કરતા હૈં કિ કોઈ પદાર્થ કાલા હોકર ભી કિસી કારણ વશ કાલે રૂપ
મેં અવભાસિત નહીં હોના હૈં પરન્તુ યહ એસા નહીં હૈં-યહ તો કૃષ્ણવર્ણ-
વાલા હોકર ભી કાલે હી રૂપ સે અવભાસિત હોતા હૈં । અથવા
(કાલોભાસે) યહ તમસ્કાય અત્યન્તકૃષ્ણકાન્તિ સે યુક્ત હૈં । મનુષ્યાદિ
જિસસે હરે વહ (ભીમ) હૈં । (દેવેનં અત્યેગદ્દ જે નં તપ્પદમયાપ
પાસિત્તા નં રુમાપજ્ઞા) કોઈ એક દેવ એસા ભી હોતા હૈં જો વસ તમ-
સ્કાય કો સર્વપ્રથમ દેવ કરકે હી ધ્રુમિત હો જાતા હૈં-ચદિ કોઈ દેવ
કદાચિત્ વસ તમસ્કાય મેં (અભિસમાગચ્છેજ્ઞા) પાસ મેં જાકર પ્રવેશ

બધો ભયંકર હોય છે કે તેને બેતાં જ બીકને કારણે રૂવાડા બોલા થઇ
જાય છે રૂવાડા બોલા થવાનું કારણ એ છે કે તે " ભીમઃ " ભયજનક છે-
અત્યન્ત ગ્રાસજનક છે, આવાં પરમકૃષ્ણ-વર્ણવાળો તે તમસ્કાય છે. " કાલો-
ભાસે " આ પદ આપવાનું કારણ એ છે કે કોઈ પદાર્થ કાળો હોવા છતાં
પણ કોઈ કારણે કાળો અવભાસિત થતો નથી-દેખાતો નથી. પરન્તુ તમસ્કાય
એવો નથી. તે તો કૃષ્ણ વર્ણવાળો છે એટલું જ નહીં પણ કાળો જ દેખાય
છે. અથવા " કાલોભાસે " આ તમસ્કાય અત્યન્ત કૃષ્ણકાન્તિથી યુક્ત છે.
મનુષ્યાદિ બેનાથી હરે તેને " ભીમ " કહે છે. (દેવેનં અત્યેગદ્દ જે નં તપ્પ-
દમયાપ પાસિત્તાનં રુમાપજ્ઞા) કોઈ કોઈ દેવ તો તેને પહેલી જ વાર દેખાતાની
સાથે જ ક્ષોભ પામી જાય છે. જો કોઈ દેવ ક્યારેક તે તમસ્કાયમાં " અભિ-
સમાગચ્છેજ્ઞા " પાસે જઈને પ્રવેશ કરે છે, તો તે (ત્રણ પન્થા સીદં સીદં

‘દેવવ્યૂહઃ’ इति वा. देवानां दुर्भेद्यत्वात् चक्रादिव्यूह इव ‘देवव्यूहः’ इतिनाम १० । ‘देवपरिघः’ इति वा, देवानामातङ्गजनकतया मनोविघातहेतुत्वेन ‘देव-परिघः’ इति नाम ११. ‘देवप्रतिक्षोभ’ इति वा, देवानां महाक्षोभोत्पादकत्वात् ‘देवप्रतिक्षोभः’ इति नाम १२. ‘अरुणोदकः समुद्रः’ इति वा, अरुणोदकसमुद्रस्य विकारात्मकत्वात् ‘अरुणोदकसमुद्रः’ इति वा नाम १३. इति तमस्कायस्य त्रयो-दश नामानि प्रदर्शितानि ।

अथ तमस्कायपरिणाममाह—‘तमुक्काए णं भंते ! किं पुढविपरिणामे, आउ-परिणामे, जीवपरिणामे, पोगलपरिणामे ?’ हे भदन्त ! तमस्कायः खलु किं पृथिवीपरिणामः, अथवा अप्परिणामः, अथवा जीवपरिणामः, पुद्गलपरिणामो-प्य है । चक्रादिव्यूहकी तरह यह देवों द्वारा भी दुर्भेद्य होनेके कारण इसका दशवां नाम देवव्यूह है । देवों को आतंक जनक होनेके कारण इनके मन का विघात करने वाला होनेसे इसका ग्यारहवां नाम देवपरिघ है । देवों के लिये क्षोभ का कारण, होने से इसका १२ वां नाम देवप्रतिक्षो-भ है । तथा अरुणोदक समुद्र के जल का विकाररूप होने के कारण इसका तेरहवां नाम अरुणोदक समुद्र है । इस प्रकार से ये तेरह सार्थक नाम तमस्काय के कहे गये हैं ।

अथ गौतम प्रभु से ऐसा पूछते हैं कि यह तमस्काय किस पदार्थ का परिणाम है—(तमुक्काए णं भंते ! किं पुढविपरिणामे ? आउपरिणामे जीव परिणामे ? पोगलपरिणामे ?) हे भदन्त ! यह तमस्काय क्या पृथिवी का परिणाम है ? या जल का परिणाम है ? या जीव का परिणाम है ? या पुद्गल का परिणाम है ?—किसका परिणाम है ? इसके उत्तर में

(१०) ચક્રાદિ વ્યૂહને લેધવાનું કામ દેવો દ્વારા પણ અશક્ય હોય છે, તે કારણે તેનું કસમું નામ “દેવવ્યૂહ” છે. (૧૧) દેવોમાં આતંક (ભય) નો જનક હોવાને કારણે અને તેમના મનનો વિઘાત કરનારો હોવાને લીધે તેનું અગિયારમું નામ “દેવપરિઘ” છે. (૧૨) દેવોમાં ક્ષોભનો જનક હોવાને કારણે તેનું બારમું નામ “દેવપ્રતિક્ષોભ” છે. (૧૩) તથા અરુણોદક સમુ-દ્રના જળના વિકાર રૂપ હોવાથી તેનું તેરમું નામ “અરુણોદક સમુદ્ર” છે. આ રીતે તમસ્કાયના તેર સાર્થક (અર્થ પ્રમાણેનાં) નામ કહ્યાં છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે (તમુક્કાએ ણં ભંતે ! કિં પુઢવિપરિણામે ? આઉપરિણામે ? જીવપરિણામે ? પોગલપરિણામે ?) હે ભદન્ત ! આ તમસ્કાય શું પૃથ્વીકાયનું પરિણામ છે ? કે જળનું પરિણામ છે ? કે જીવનું પરિણામ છે ? કે પુદ્ગલનું પરિણામ છે ? તે કોના પરિણામરૂપ છે ?

તત્ર 'તમ' ઇતિ ચા તમસ્કાયસ્ય અન્ધકારરૂપતાન્ 'તમઃ' ઇતિ નામ વર્તતે?,
 'તમસ્કાયઃ' ઇતિ ચા, તસ્ય અન્ધકારરાગિરૂપતાન્ 'તમસ્કાયઃ' ઇતિ નામ૨,
 'અન્ધકારઃ' ઇતિ ચા, તસ્ય નમોક્ત્પતાન્ 'અન્ધકારઃ' ઇતિ નામ ૩। 'મહાન્ધ-
 કાર' ઇતિ ચા, તસ્ય મહાનમોક્ત્પતાન્ 'મહાન્ધકારઃ' ઇતિ ચા નામ વર્તતે ૪।
 'લોકાન્ધકારઃ' ઇતિ ચા, લોકરૂપસ્ય તાદૃશ્ય મન્યસ્ય અન્ધકારસ્ય પ્રમાવાન્
 'લોકાન્ધકારઃ' ઇતિ ચા નામ ૫। ૫। 'લોકનમિત્તમ્' ઇતિ ચા, લોકે ગાદાન્ધ-
 કારરૂપતાન્ ૬। 'દેવાન્ધકારઃ' ઇતિ ચા, દેવાનામપિ તમસ્કાયે મહાગામાત્રેન
 અન્ધકારરૂપતાન્ 'દેવાન્ધકારઃ' ઇતિ નામ ૭। તથા 'દેવતમિત્તમ્' ઇતિ ચા
 તસ્યૈવ ગાદરૂપતાન્ ૮। 'દેવારણ્યમ્' ઇતિ ૧૧, સ્વાપેક્ષયા ચલ્લવાં દેવાનાં મનાન્
 પલાયમાનાનાં દેવાનાં તાદૃશારણ્યમિત્ત શરણ્યતાન્ 'દેવારણ્યમ્' ઇતિ નામ ૯।

નામ તમસ્કાય છે-તમસ્કાયકા સ્વયં અંધકારરૂપ હોનેકે કારણ ત્રીસરા
 નામ અંધકાર છે। મહાનમ રૂપ હોને સે રૂપ કા ચૌથા નામ મહાન્ધકાર
 છે। લોક કે વીચ મેં પેસા દૂસરા ઓર કોઈ અંધકાર નહોં છે રૂપ કારણ
 રૂપકા પાંચવાં નામ લોકાન્ધકાર છે। છઠવાં નામ રૂપકા લોકતમિત્ત
 રૂપકા કારણ સે છે। ઉચોત કે ન હોને કે કારણ દેવોં કો શ્રી રૂપ તમ-
 સ્કાય અંધકારરૂપ ભાસિત હોતા છે રૂપ કારણ રૂપકા સાતવાં નામ
 દેવાન્ધકાર છે। રૂપકા તરફ સે દેવતમિત્ત રૂપ રૂપકા આઠવાં નામ છે।
 અપને સે ચલ્લવાં દેવોં કે ભય સે ભગતે હુમ દેવોં કે લિયે તથાવિધ
 જંગલ કો તરફ રૂપ શરણ્યભૂત છે રૂપ કારણ રૂપકા નૌવાં નામ દેવાર-

(૧) અંધકાર રૂપ હોવાને કારણે તમસ્કાયનું નામ 'તમ' છે. (૨)
 અંધકારની રાશિરૂપ હોવાથી તેનું બીજું નામ 'તમસ્કાય' છે. (૩) તે
 પોતે જ અંધકાર રૂપ હોવાથી તેનું નામ 'અંધકાર' પણ છે. (૪) મહા
 તમરૂપ (અંધકાર રૂપ) હોવાથી તેનું ત્રીજું નામ 'મહાન્ધકાર' છે. (૫)
 લોકમાં એવો બીજો કોઈ પણ અંધકાર ન હોવાથી તેનું પાંચમું નામ
 "લોકાન્ધકાર" છે. (૬) વળી ઉપર્યુક્ત કારણે જ તેનું છઠ્ઠું નામ "લોક-
 તમિત્ત" છે. (૭) ઉચોત (પ્રકાશ) ન હોવાને કારણે દેવાને પણ આ
 તમસ્કાય અંધકાર રૂપ લાગે છે, તે કારણે તેનું સાતમું નામ "દેવાન્ધકાર"
 (૮) એજ રીતે તેનું આઠમું નામ "દેવતમિત્ત" છે. (૯) પોતાના કરતાં
 વધારે બળવાન દેવાના સાચી ભાગતા દેવાને માટે અંધકારમય જંગલની
 જેમ તે આશ્રયધાયક બને છે, તેથી તેનું નવમું નામ "દેવારણ્ય" છે.

મદન્ત ! તમસ્કાયે સ્વલુ સર્વેપાણાઃ, ભૂતાઃ, જીવા, સત્ત્વાઃ પૃથિવીકાયિકતયા યાવત્-ત્રસકાયિકતયા ઉપપન્નપૂર્વાઃ પૂર્વમુત્પન્નાઃ ? યાવત્ કરણાત્-જલકાયિક-તયા, વાયુકાયિકતયા, વનસ્પતિકાયિકતયા, इति સંગ્રહમ્ । મગવાનાહ-‘ હંતા, ગોયમા ! અસદં અદુવા, અણંતક્લુત્તો, ણો ચેવ ણં વાયરપુઢવિકાઇયત્તાણ વા, વાયર-અગ્નિકાઇત્તાણ વા ’ હે ગૌતમ ! હન્ત, સત્યમ્ સર્વે પ્રાણાઃ, ભૂતાઃ જીવાઃ, સત્ત્વાઃ, તમસ્કાયે પૃથિવીકાયિકતયા યાવત્-ત્રસકાયિકતયા અસકૃત્ ભૂયોભૂયઃ અથવા અનન્તકૃતઃ અનન્તચારાન્ પૂર્વમુત્પન્નાઃ, કિન્તુ નો ચૈવ નૈવ કથમપિ વાદરપૃથિવીકા-યિકતયા, વાદરાગ્નિકાયિકતયા વા ઉત્પન્નાઃ, યતોહિ તમસ્કાયસ્ય અપ્કાયિકતયા તથ વાદરા વાયવો વનસ્પતયઃ ત્રસાથ ઉત્પદ્યન્તે અપ્કાયે તેપામુત્પત્તિસંભવાત્, इतरे तु पृथिवीजीवा अग्निजीवाश्च तत्र नोत्पत्तुमर्हन्ति तेषां तत्र स्वस्थानत्वा भावात् ॥ મુ૦ ૩ ॥ તમસ્કાયાકારઃ—



ત્રસકાયિકરૂપ સે ઉત્પન્ન હુણે હેં ? યહાં યાવત્ શબ્દ સે (જલકાયિકતયા તેજઃકાયિકતયા, વાયુકાયિકતયા, વનસ્પતિકાયિકતયા ” હિસ પાઠ કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । હિસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હેં—(હંતા, ગોયમા ! અસદં અદુવા અણંતક્લુત્તો, ણો ચેવ ણં વાયરપુઢવિકાઇયત્તાણ વા, વાયરઅગ્નિકાઇયત્તાણ વા ” હાં ગૌતમ ! સમસ્ત પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સ-ત્ત્વ, તમસ્કાય મેં પૃથિવીકાયિકરૂપ સે યાવત્ ત્રસકાયિકરૂપ સે ચાર ૨ અથવા અનન્તચાર પહિલે ઉત્પન્ન હુણે હેં પરન્તુ વે વહાં કમો મી વાદર પૃથિવીકાયિકરૂપ સે ઇવં વાદર અગ્નિકાયિકરૂપ સે ઉત્પન્ન નહીં હુણે હેં । કયોં કિ તમસ્કાય અપ્કાયરૂપ હોને કે કારણ ઉસમેં વાદરવાયુકાય, વનસ્પતિકાય ઓર ત્રસકાય ઉત્પન્ન હોતે હેં કયોં કિ વહાં ઉનકી

તમસ્કાયમાં પૂર્વે (પહેલાં) પૃથ્વીકાયિક, જલકાયિક, તૈજસ્કાયિક, વાયુકાયિક, વનસ્પતિકાયિક અને ત્રસકાયિક રૂપે ઉત્પન્ન થઇ ચુક્યાં છે ખરાં ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે—(હંતા, ગોયમા ! અસદં અદુવા અણંતક્લુત્તો, ણો ચેવ ણં વાયર પુઢવિકાઇયત્તાણ વા, વાયર અગ્નિકાઇ-યત્તાણ વા) હા, ગૌતમ ! સમસ્ત પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ તમસ્કાયમાં પૃથ્વીકાયિકથી લઇને ત્રસકાયિક પર્યન્તના રૂપે વારંવાર અથવા અનંતચાર પહેલાં ઉત્પન્ન થઇ ચુક્યાં છે, પણ તેઓ ત્યાં કદી પણ બાદર પૃથ્વીકાયિક રૂપે અને બાદર અગ્નિકાયિકરૂપે ઉત્પન્ન થયા નથી. કારણ કે તમસ્કાય અપ્-કાય રૂપ હોવાથી તેમાં બાદર વાયુકાય, વનસ્પતિકાય અને ત્રસકાય ઉત્પન્ન

વા તમસ્કાયઃ? इति प्रश्नः । भगवानाह—'गोयमा ! जो पृथ्विपरिणामे, आउप-
रिणामे चि, जीवपरिणामे चि, पोग्गळपरिणामे चि, हे गौतम ! तमस्कायः नो
पृथिवीपरिणामः, तस्य सर्वथा अन्यकारणवत्त्वात्, अत्रि तु अपरिणामोऽपि
तस्यास्वरूपवत्त्वात्, जीवपरिणामोऽपि भां जीवकत्वात्, पृथ्गलपरिणामो
ऽपि, तमसः पुद्गलरूपत्वात् । गौतमः पृच्छति—'तमुक्त्वा णं भंते ! सव्वे पाणा
भूया, जीवा, सत्ता पुढवीकाइयत्ताए जाव तसकाइ-
यत्ताए उववन्नपुग्वा ?' हे

પ્રશ્ન : કનસે કહતે હું કિ—(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (જો પૃથ્વી પરિણામે,
અઉપરિણામે ચિ, જીવપરિણામે ચિ, પોગ્ગલપરિણામે ચિ) તમસ્કાય
પૃથિવી કા પરિણામ-ચિકાર નહીં હૈ । કિન્તુ યહ અસ્કાય કા ભી પરિ-
ણામ હૈ, જીવ કા ભી પરિણામ હૈ ઓર પુદ્ગલ કા ભી પરિણામ હૈ ।
પૃથિવી કા પરિણામ યહ ઇસલિયે નહીં હૈ કિ યહ સર્વથા અંધકાર રૂપ
હૈ । જલકા પરિણામ ઇસે ઇસલિયે કહા ગયા હૈ કિ યહ જલરૂપ હોતા હૈ
ઓર જીવ કા પરિણામ ઇસલિયે ઇસે કહા ગયા હૈ કિ જલ સ્વયં જીવ
રૂપ હૈ, તથા પુદ્ગલ કા પરિણામ કહને કા કારણ યહ હૈ કિ તમસ્કાય
સ્વયં પુદ્ગલરૂપ હૈ । અય ગૌતમ પ્રશ્ન સે યો પૂછતે હું કિ (તમુક્કાણ ણં
ભંતે ! સવ્વે પાણા, ભૂયા, જીવા, સત્તા પુદ્ધવીકાઈયત્તાણ જાવ તસકાઈ-
યત્તાણ ઉવવન્નપુગ્વા) હે ભદન્ત ! સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત
જીવ, સમસ્ત સત્ત્વ કયા તમસ્કાય મેં પહિલે પૃથિવીકાયિકરૂપસે યાવત્

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે—(ગોયમા ! જો પૃથ્વીપરિણામે,
આઉપરિણામે ચિ, જીવપરિણામે ચિ, પોગ્ગલપરિણામે ચિ) હે ગૌતમ ! તમસ્કાય
પૃથ્વીના પરિણામ (ચિકાર) રૂપ નથી, પણ તે જળનું (અપૂકાયનું) પરિ-
ણામ પણ છે, જીવનું પરિણામ પણ છે અને પુદ્ગલનું પરિણામ પણ છે.
તે સર્વથા અંધકાર રૂપ હોવાથી તેને પૃથ્વીનું પરિણામ કહું નથી. તેને
જળના પરિણામ રૂપ કહેવાનું કારણ એ છે કે તે જળરૂપ હોય છે. તેને
જીવના પરિણામ રૂપ કહેવાનું કારણ એ છે કે જળ પોતે જ જીવરૂપ હોય
છે, તથા તેને પુદ્ગલના પરિણામ રૂપ કહેવાનું કારણ એ છે કે તમસ્કાય
પોતે જ પુદ્ગલરૂપ છે.

ગૌતમ સ્વામી હવે એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—(તમુક્કાણ ણં ભંતે ! સવ્વે
પાણા, ભૂયા, જીવા, સત્તા પુદ્ધવીકાઈયત્તાણ જાવ તસકાઈયત્તાણ ઉવવન્નપુગ્વા ?)
હે ભદન્ત ! સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત જીવ, સમસ્ત ભૂત અને સમસ્ત સત્ત્વ શું

दाहिणवाहिराओ कणहराईओ तंसाओ, दो पुरातिम-पच्च-
 थिमाओ अविंभतराओ कणहराईओ चउरंसाओ, दो उत्तरदा-
 हिणाओ अविंभतराओ कणहराईओ चउरंसाओ, “पुव्वाऽवरा
 छलंसा, तंसा पुणदाहिणुत्तरा वज्झा॥ अविंभतरचउरंसा सव्वावि
 यं कणहराईओ”॥१॥ कणहराईओ णं भंते ! केवइयाओ आयामेणं
 केवइयाओ विदखंभेणं, केवइयाओ परिक्खेवेणं पणत्ताओ ?
 गोयमा ! असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं आयामेणं, संखेज्जाइं जोय-
 णसहस्साइं विदखंभेणं, असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं परिक्खेवेणं
 पणत्ताओ ! कणहराईओ णं भंते ! केमहालियाओ पणत्ताओ ?
 गोयमा ! अयं णं जंबुदीवे दीवे जाव-अद्धमासं वीइवएज्जा,
 अत्थेगइयं कणहराईं वीइवएज्जा, अत्थेगइयं कणहराईं णो
 वीइवएज्जा, एमहालियाओ णं गोयमा ! कणहराईओ पण-
 त्ताओ । अत्थिणं भंते ! कणहराईसु गेहा इ वा, गेहावणा इ वा ?
 णो इण्ठे समट्ठे । अत्थिणं भंते ! कणहराईसु गामा इ वा ? । णो
 इण्ठे समट्ठे अत्थि णं भंते ! कणहराईसु उराला वलाहया संसेयंति,
 संमुच्छंति, संवासंति ? । हंता, अत्थि । तं भंते ! किं देवो पकरेइ,
 असुरो पकरेइ, नागो पकरेइ ? । गोयमा ! देवो पकरेइ, णो
 असुरो, णो नागो पकरेइ । अत्थि णं भंते ! कणहराईसु वायरे
 थणियसइ ? जहा उराला तहा । अत्थि णं भंते ! कणहराईसु
 वायरे आउकाए, वायरे अगणिकाए, वायरे वणस्सइकाए ?
 णो इण्ठे समट्ठे, णणत्थ विग्गहगइसमावन्नएणं । अत्थि णं भंते !
 चंदिम-सूरिय-गहगण-नवखत्त-तारारूवा ? । णो इण्ठे समट्ठे ।

કૃષ્ણગનિવક્તૃત્વા ।

તમસ્કાયસાદ્યન્નાન્ કૃષ્ણરાત્રિ પ્રસ્થાપિતુમાદ—‘કર્મ મંતે ! ‘કર્મરાઈઓ’
 ક્ત્યાદિ ।

મૂલ્ક-કર્મ પં મંતે ! કર્મરાઈઓ પળણત્તાઓ ? ગોયમા !
 અટ્ટ કર્મરાઈઓ પળણત્તાઓ કહિ પં મંતે ! મ્યાઓ અટ્ટ કર્મ-
 રાઈઓ પળણત્તાઓ ? ગોયમા ! ઊર્ણ સળંકુમારમાદિદાળં કળ્યાળં
 હિદિં વંમલોષ કળ્પે અરિદં વિમાળપત્થકે—પત્થ પં અવલાક
 ગસમ ચડરંસસંઠાળસંઠિયાઓ અટ્ટ કર્મરાઈઓ પળણત્તાઓ,
 તેંજહા—પુરત્થિમેળં દો, પચ્ચત્થિમેળં દો, દાહિળેળં દો, ઉત્તરેળં દો,
 પુરત્થિમઽમંતરા કર્મરાઈ દાહિળ-વાહિરં કર્મરાઈં પુટ્ટા, દાહિ-
 ણઽમંતરા કર્મરાઈ પચ્ચત્થિમ—વાહિરં કર્મરાઈં પુટ્ટા, પચ્ચ-
 ત્થિમઽમંતરા કર્મરાઈ ઉત્તર-વાહિરં કર્મરાઈં પુટ્ટા, ઉત્તરમઽ-
 મંતરા કર્મરાઈ પુરત્થિમવાહિરં કર્મરાઈં પુટ્ટા, દો પુરત્થિમ—
 પચ્ચત્થિમાઓ વાહિરાઓ કર્મરાઈઓ છલંસાઓ, દો ઉત્તર—
 ઉત્પત્તિ સંભવિત હૈ—વાકી કે પૃથિવી જીવ ઓર અગ્નિ જીવ વહાં પર
 ઉત્પન્ન નહીં હો સકતે હૈ—વયોં કિ વહાં પર ઊનકા સ્વંસ્થાન નહીં હૈ ।
 તમસ્કાય કા આકાર ઇસ પ્રકાર સે હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥



થાય છે, કારણ કે ત્યાં તેમની ઉત્પત્તિ સંભવિત છે. બાકીના પૃથ્વીકાયિક
 જીવો અને અગ્નિકાય જીવો તેમાં ઉત્પન્ન થઈ શકતા નથી, કારણ કે ત્યાં તેમનું
 સ્વસ્થાન નથી. તમસ્કાયનો આકાર નીચે પ્રમાણે છે. ॥ સૂ. ૧ ॥



સનત્કુમાર-માહેન્દ્રયોઃ કલ્પયોઃ, અયો વ્રહ્મલોકે કલ્પે સ્વલુ રિષ્ટેવિમાનપ્રસ્તટે અવ
અક્ષાટકસમચતુરસ્રસંસ્થાનસંસ્થિતા અટ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા-પૌરસ્ત્યે દ્વે,
પાશ્ચાત્યે દ્વે, દક્ષિણે દ્વે, ઉત્તરે દ્વે, પૌરસ્ત્યાભ્યન્તરા કૃષ્ણરાજિઃ દક્ષિણવાહ્યાં કૃષ્ણ-
રાજિ સ્પૃષ્ટા, દક્ષિણાભ્યન્તરા કૃષ્ણરાજિઃ પશ્ચિમવાહ્યાં કૃષ્ણરાજિ સ્પૃષ્ટા, પાશ્ચાત્યા-

ગઈ હેં ? અર્થાત્ યે કૃષ્ણરાજિયાં કહ્યાં પર હેં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ !
(ઉર્ષિ સળંગકુમારમાહિદાણં કપ્પાણં, હિટ્ઠિં ધંમલોષ કપ્પે અરિટ્ટવિમા-
ણપથ્થદે, પથ્થ ણં અવલાહગસમચરંસંઠાણસંઠિયાઓ અટ્ટકળ્હ-
રાઈઓ પળ્ણત્તાઓ) યે આઠ કૃષ્ણરાજિયાં ઉપર મેં સનત્કુમાર,
માહેન્દ્રકલ્પ મેં ઓર નીચે મેં વ્રહ્મલોકકલ્પ મેં અરિષ્ટવિમાન કે પાથદે
મેં હેં । इनका आकार समचतुरस्र-चौकोर-अखाडे के समान है । (तं
जहा) वे इस प्रकार से हैं- (पुरत्थिमेणं दो, पच्चत्थिमेणं दो, दाहिणेणं
दो, उत्तरेणं दो, पुरत्थिमऽभन्तरा कण्हराईं दाहिण-बाहिरं कण्हराईं
पुट्ठा, पच्चत्थिमऽभन्तरा कण्हराईं उत्तरबाहिरं कण्हराईं पुट्ठा, उत्तरमऽ-
भन्तरा कण्हराईं पुरत्थिमबाहिरं कण्हराईं पुट्ठा) दो कृष्णराजियां पूर्व-
दिशा में, दो कृष्णराजियां पश्चिमदिशा में, दो कृष्णराजियां दक्षिणदिशा
में, और दो कृष्णराजियां उत्तर दिशा में हैं । इनमें जो पूर्वदिग्भाग के
भीतर की कृष्णराजि है वह दक्षिणदिग्भाग के बाहिर की कृष्णराजि
को छूती है । दक्षिणदिग्भाग के भीतर की जो कृष्णराजि है, वह पश्चि-

મહન્ત । તે આઠ કૃષ્ણરાજિઓ ક્યાં આવેલી છે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ !
(ઉર્ષિ સળંગકુમારમાહિદાણં કપ્પાણં, હિટ્ઠિં ધંમલોષ કપ્પે અરિટ્ટવિમાણપથ્થદે,
પથ્થ ણં અવલાહગ સમચરંસંઠાણસંઠિયાઓ અટ્ટ કળ્હરાઈઓ પળ્ણત્તાઓ)
તે આઠ કૃષ્ણરાજિઓ ઉપરની બાજુએ સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર દેવલોકમાં
અને નીચે બ્રહ્મલોક કલ્પના અરિષ્ટ વિમાનના પાથડામાં (વિમાન પ્રસ્તટમાં)
તેનો આકાર સમચતુરસ્ર-ચતુષ્કોણ આપાડાના જેવો છે. (તં જહા) તે આ
પ્રમાણે આવેલી છે- (પુરત્થિમેણં દો, પચ્ચત્થિમેણં દો, દાહિણેણં દો, ઉત્તરેણં દો)
જે કૃષ્ણરાજિઓ પૂર્વ દિશામાં, જે કૃષ્ણરાજિઓ પશ્ચિમ દિશામાં, જે કૃષ્ણ-
રાજિઓ દક્ષિણ દિશામાં અને જે કૃષ્ણરાજિઓ ઉત્તર દિશામાં છે (પુરત્થિમઃ-
અન્તરા કળ્હરાઈ દાહિણ-બાહિરં કળ્હરાઈં પુટ્ઠા, પચ્ચત્થિમઃઅન્તરા કળ્હરાઈં
ઉત્તરબાહિરં કળ્હરાઈં પુટ્ઠા, ઉત્તરમઃઅન્તરા કળ્હરાઈં પુરત્થિમબાહિરં કળ્હરાઈં
પુટ્ઠા) તેમાંની જે પૂર્વ દિગ્ભાગની અંદરની કૃષ્ણરાજિ છે, તે દક્ષિણ
દિગ્ભાગની બહારની કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે છે, દક્ષિણ દિગ્ભાગની અંદરની જે

અરિથિ ણં કળહરાઈણં ચંદાભા ઇ વા, સૂરાભા ઇ વા ? ણો ઇણ્ટે
સમટ્ટે । કળહરાઈઓ ણં મંતે ! કેરિસિયાઓ વત્તેણં પળ્લન્તાઓ ?
ગોયમા ! કાલાઓ, જાવ-સિલ્પામેવ વોદ્વણ્ણા । કળહરાઈણં
મંતે ! કઈ નામધેજ્જા પળ્લન્તા ? ગોયમા ! અટ્ટ નામધેજ્જા
પળ્લન્તા, તં જહા-કળહરાઈ ઇ વા, મેહરાઈ ઇવા, મચા ઇ વા,
માઘવઈ ઇ વા, વાયફલિહા ઇ વા, વાયપલિલ્લોભા ઇ વા, દેવફ-
લિહા ઇ વા, દેવપલિલ્લોભા ઇ વા । કળહરાઈઓ ણં મંતે ! કિંપુઢવી
પરિણામાઓ, આડપરિણામાઓ, જીવપરિણામાઓ, પોગ્ગલ
પરિણામાઓ ? ગોયમા ! પુઢવીપરિણામાઓ, ણો આડપરિણામાઓ,
જીવપરિણામાઓ વિ, પુગ્ગલપરિણામાઓ વિ । કળહરાઈસુ ણં
મંતે ! સઘ્વે પાણા, મૂયા, જીવા, સત્તા ઉવવળ્ણપુઢ્વા ? હંતા,
ગોયમા ! અસઈ, અદુવા અણંતલ્લુત્તો, ણો ચેવ ણં વાયરઆડ-
કાઠયત્તાણ, વાયરઅગ્ગણિકાઠયત્તાણ વા, વાયરવળ્ણસસઈકાઠ
યત્તાણ વા ॥સૂ.૨॥

છાયા-કતિ સલ્લ મદન્ત ! કુલ્લરાજયઃ મજ્જતાઃ ? ગૌતમ ! અટ્ટ કુલ્લરાજયઃ
મજ્જતાઃ, કુલ્લ સલ્લ મદન્ત ! ઇતાઃ અટ્ટ કુલ્લરાજયઃ મજ્જતાઃ ? ગૌતમ ! ઉપરિ

કુલ્લરાજિ વત્તલ્લપ્પતા-

(કઈ ણં મંતે) ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ-કઈણં મંતે ! કળહરાઈઓ પળ્લન્તાઓ) હે મદન્ત ! કુલ્લરા-
જિયાં કિતની કહી ગઈ હૈં ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અટ્ટ કળહરાઈઓ
પળ્લન્તાઓ) કુલ્લરાજિયાં આઠ કહી ગઈ હૈં । (કહિ ણં મંતે ! ઇયાઓ અટ્ટ
કળહરાઈઓ પળ્લન્તાઓ) હે મદન્ત ! ચે આઠ કુલ્લરાજિયાં કહાં પર કહી

કુલ્લરાજિઓની વક્તવ્યતા-

“કઈણં મંતે ! કળહરાઈઓ પળ્લન્તાઓ” ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ- (કઈણં મંતે ! કળહરાઈઓ પળ્લન્તાઓ) હે મદન્ત ! કુલ્લરાજિઓ
કેટલી કહી છે ? (ગોયમા ! અટ્ટ કળહરાઈઓ પળ્લન્તાઓ) હે ગૌતમ ! કુલ્લરાજિઓ
આઠ કહી છે. (કહિ ણં મંતે ! ઇયાઓ અટ્ટ કળહરાઈઓ પળ્લન્તાઓ ?) હે

સનત્કુમાર-માહેન્દ્રયોઃ કલ્પયોઃ, અથો વ્રહ્મલોકે કલ્પે સ્થલુ રિષ્ટેવિમાનપ્રસ્તટે અથ
અક્ષવાટકસમચતુરસ્ત્રસંસ્થાનસંસ્થિતા અથ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા-પૌરસ્ત્યે દ્વે,
પાથાત્યે દ્વે, દક્ષિણે દ્વે, ઉત્તરે દ્વે, પૌરસ્ત્યાભ્યન્તરા કૃષ્ણરાજિઃ દક્ષિણવાહ્યાં કૃષ્ણ-
રાજિ સ્પૃષ્ટા, દક્ષિણાભ્યન્તરા કૃષ્ણરાજિઃ પશ્ચિમવાહ્યાં કૃષ્ણરાજિ સ્પૃષ્ટા, પાથાત્યા-

ગઈ હૈં ? અર્થાત્ એ કૃષ્ણરાજિયાં કહ્યાં પર હૈં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ !
(ઉર્ષિ સળંગકુમારમાહિદાણં કપ્પાણં, હિદ્વિં ચંમલોષ કપ્પે અરિદ્વિમા-
ણપથથ્થે, પથ્થ ણં અવલાઢગસમચરંસંઠાણસંઠિયાઓ અદ્વકળ્હ-
રાઈઓ પળ્ણત્તાઓ) એ આઠ કૃષ્ણરાજિયાં ઉપર મેં સનત્કુમાર,
માહેન્દ્રકલ્પ મેં ઓર નીચે મેં વ્રહ્મલોકકલ્પ મેં અરિદ્વિમાન કે પાથથે
મેં હૈં । इनका आकार समचतुरस्र-चौकोर-अखाडे के समान है । (तं
जहा) वे इस प्रकार से हैं- (पुरत्थिमेणं दो, पच्चत्थिमेणं दो, दाहिणेणं
दो, उत्तरेणं दो, पुरत्थिमऽभन्तरा कण्हराई दाहिण-बाहिरं कण्हराई
पुट्टा, पच्चत्थिमऽभन्तरा कण्हराई उत्तरबाहिरं कण्हराई पुट्टा, उत्तरमऽ-
भन्तरा कण्हराई पुरत्थिमबाहिरं कण्हराई पुट्टा) दो कृष्णराजियां पूर्व-
दिशा में, दो कृष्णराजियां पश्चिमदिशा में, दो कृष्णराजियां दक्षिणदिशा
में, और दो कृष्णराजियां उत्तर दिशा में हैं । इनमें जो पूर्वदिग्भाग के
भीतर की कृष्णराजि है वह दक्षिणदिग्भाग के बाहिर की कृष्णराजि
को छूती है । दक्षिणदिग्भाग के भीतर की जो कृष्णराजि है, वह पश्चि-

મહન્ત ! તે આઠ કૃષ્ણરાજિઓ ક્યાં આવેલી છે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ !
(ઉર્ષિ સળંગકુમારમાહિદાણં કપ્પાણં, હિદ્વિં ચંમલોષ કપ્પે અરિદ્વિમાણપથથ્થે,
પથ્થ ણં અવલાઢગ સમચરંસંઠાણસંઠિયાઓ અદ્વ કળ્હરાઈઓ પળ્ણત્તાઓ)
તે આઠ કૃષ્ણરાજિઓ ઉપરની બાબુઓ સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર દેવલોકમાં
અને નીચે પ્રદલોક કલ્પના અરિદ્વિમાનના પાથકમાં (વિમાન પ્રસ્તટમાં)
તેના આકાર સમચતુરસ્ર-ચતુષ્કોણ અખાડાના જેવો છે. (તં જહા) તે આ
પ્રમાણે આવેલી છે- (પુરત્થિમેણં દો, પચ્ચત્થિમેણં દો, દાહિણેણં દો, ઉત્તરેણં દો)
જે કૃષ્ણરાજિઓ પૂર્વ દિશામાં, જે કૃષ્ણરાજિઓ પશ્ચિમ દિશામાં, જે કૃષ્ણ-
રાજિઓ દક્ષિણ દિશામાં અને જે કૃષ્ણરાજિઓ ઉત્તર દિશામાં છે (પુરત્થિમઽ-
ભન્તરા કળ્હરાઈ દાહિણ-બાહિરં કળ્હરાઈ પુટ્ટા, પચ્ચત્થિમઽભન્તરા કળ્હરાઈ
ઉત્તરબાહિરં કળ્હરાઈ પુટ્ટા, ઉત્તરમઽભન્તરા કળ્હરાઈ પુરત્થિમબાહિરં કળ્હરાઈ
પુટ્ટા) તેમાંની જે પૂર્વ દિગ્ભાગની અંદરની કૃષ્ણરાજિ છે, તે દક્ષિણ
દિગ્ભાગની બહારની કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે છે, દક્ષિણ દિગ્ભાગની અંદરની જે

મ્યન્તરા કૃષ્ણરાજિઃ ઉત્તરવાયાં કૃષ્ણરાજિ સૃષ્ટા, ઉત્તરામ્યન્તરા કૃષ્ણરાજિઃ
 પૌરસ્ત્યવાયાં કૃષ્ણરાજિ સૃષ્ટા, દે પૌરસ્ત્યવાયાત્વે, વાગ્ને કૃષ્ણરાજી વદન્તે, દે
 ઉત્તર-દક્ષિણવાગ્ને કૃષ્ણરાજી સ્પષ્ટે, દે પૌરસ્ત્ય-વાયાત્વે અમ્યન્તરે કૃષ્ણરાજી
 ચતુરસ્તે, દે ઉત્તર-દક્ષિણે આમ્યન્તરિકે કૃષ્ણરાજી ચતુરસ્તે, "પૂર્વાપરે વદન્તે, સ્પષ્ટે
 પુનર્દક્ષિણોત્તરે વાગ્ને, આમ્યન્તરચતુરસ્યાઃ સર્વા અપિ ચ કૃષ્ણરાજયઃ॥૧॥ કૃષ્ણરાજયઃ

મદિગ્ધિભાગ-કે બાહિર-કી કૃષ્ણરાજિ-કા સ્પર્શ-કરતી-હે। પશ્ચિમ-દિ-
 ગ્ધિ-ભાગ-કે-भीतर-की-जो-कृष्णराजि-हे-यह-उत्तरदिग्ध-भाग-के-बाहर-की-
 कृष्णराजि-का-स्पर्श-करती-हे। और-उत्तर-दिशा-के-भीतर-की-जो-
 कृष्णराजि-हे-यह-पूर्वदिग्ध-भाग-के-बाहर-की-कृष्णराजि-को-छूती-हे।
 (दो-पुरत्थिमपच्चत्थिमाओ-बाहिराओ-कणहराईओ-छलंसाओ-दो-उत्तर-
 दाहिणबाहिराओ-कणहराईओ-तंसाओ, दो-पुरत्थिम-पच्चत्थिमाओ-
 अग्निमतराओ-कणहराईओ-चउरंसाओ, दो-उत्तरदाहिणाओ-अग्निम-
 राओ-कणहराईओ-चउरंसाओ,

“ पुष्वाञ्चरा छलंसा, तंसा पुण दाहिणुत्तरा यज्ज्ञा।

अग्निमतर चउरंसा सव्वा वि य कणहराईओ ” ४३)

पूर्व और पश्चिम-के-बाहर-की-जो-दो-कृष्णराजियां-हैं-वे-छह-खंडवाली-हैं।
 उत्तर और दक्षिण-के-बाहर-की-जो-दो-कृष्णराजियां-हैं-वे-तिल-दी-हैं।
 पूर्व और पश्चिम-के-भीतर-की-जो-कृष्णराजियां-हैं-वे-चौखंड-दी-हैं। तथा
 उत्तर और दक्षिण-के-भीतर-की-जो-दो-कृष्णराजियां-हैं-वे-भी-चौखंड-
 हैं। इसी-विषय-को-पुष्वाञ्चरा-‘इत्यादि’-गाथा-में-कहा-है-कि-पूर्व-और-पश्चिम

કૃષ્ણરાજિ-છ-તે-પશ્ચિમ-દિગ્ધ-ભાગની-ખડારની-કૃષ્ણરાજિને-સ્પર્શે-છે, પશ્ચિમ-
 દિગ્ધ-ભાગની-અંદરની-જે-કૃષ્ણરાજિ-છ-તે-ઉત્તર-દિગ્ધ-ભાગની-ખડારની-કૃષ્ણરા-
 જિને-સ્પર્શે-છે. અને-ઉત્તર-દિગ્ધ-ભાગની-ખડારની-જે-કૃષ્ણરાજિ-છ-તે-પૂર્વ-
 દિગ્ધ-ભાગની-ખડારની-કૃષ્ણરાજિને-સ્પર્શે-છે. (જો-પુરત્થિમપચ્ચત્થિમાઓ-બાહિરાઓ-
 કણહરાઈઓ-છલંસાઓ-દો-ઉત્તરદાહિણવાહિરાઓ-કણહરાઈઓ-તંસાઓ, દો-પુર-
 ત્થિમપચ્ચત્થિમાઓ-અગ્નિમતરાઓ-કણહરાઈઓ-ચઉરંસાઓ, દો-ઉત્તરદાહિણાઓ-
 અગ્નિમતરાઓ-કણહરાઈઓ-ચઉરંસાઓ, " પુષ્વાજ્જરા-છલંસા, તંસા-પુણ-દાહિણુ-
 ત્તરા-યજ્ઞા। અગ્નિમતર-ચઉરંસા-સવ્વા-વિ-ય-કણહરાઈઓ " ૪૩) પૂર્વા-અને-
 પશ્ચિમમાં-ખડારની-જે-જે-કૃષ્ણરાજિઓ-છ-તે-છ-ખૂણવાળી-છે, ઉત્તર-અને-
 દક્ષિણમાં-ખડારની-જે-જે-કૃષ્ણરાજિઓ-છ-તે-ત્રણ-ખૂણવાળી-છે, પૂર્વ-અને-
 પશ્ચિમમાં-અંદરની-જે-કૃષ્ણરાજિઓ-છ-તે-ચાર-ખૂણવાળી-છે, તથા-ઉત્તર-
 અને-દક્ષિણ-દિશામાં-અંદરની-જે-કૃષ્ણરાજિઓ-છ-તે-પણ-ચાર-ખૂણવાળી-છે

તલુ ભદન્ત ! ક્રિયત્યઃ આયામેન ? ક્રિયત્યો વિષ્કમ્બેન ! ક્રિયંત્યઃ પરિક્ષેપેન ? પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ આયામેન, સંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ વિષ્કમ્બેન, અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ પરિક્ષેપેન પ્રજ્ઞતાઃ । કૃષ્ણરાજયઃ તલુ ભદન્ત ! ક્રિયન્મહાલયાઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! અયં તલુ જમ્બૂદ્વીપો દ્વીપઃ, યાવત્-અર્ધમાસં વ્યતિવ્રજેત્ અસ્ત્યેકકાં કૃષ્ણરાજિં વ્યતિવ્રજેત્ અસ્ત્યેકકાં કૃષ્ણ-

કો કૃષ્ણરાજિયાં છહ્ સૂંટવાલી હૈં । દક્ષિણ ઓર ઉત્તર કો બાહિર કો કૃષ્ણરાજિયાં તિલ્હૂં ટી હૈં । ઓર સય અમ્યન્તર કો કૃષ્ણરાજિયાં ચોરસ હૈં । (કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કેવદ્યં આયામેણં, કેવદ્યં વિષ્કલ્મ્બેણં કેવદ્યં પરિક્ષેવેણં પળ્ણત્તાઓ) હે ભદન્ત ! ઇન કૃષ્ણરાજિયોંકા આયામ કિતના હૈં ? વિસ્તાર કિતના હૈં ? ઓર ઇનકા પરિક્ષેપ, કિતના હૈં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં આયામેણં સંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિષ્કલ્મ્બેણં અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિક્ષેવેણં પળ્ણત્તાઓ) ઇન કૃષ્ણરાજિયોં કા આયામ (લંબાપન) અસંખ્યાત હજાર યોજન કા હૈં । વિષ્કલ્મ્બ (ચૌડાઈ) સંખ્યાત હજાર યોજન કા હૈં । તથા પરિક્ષેપ ઇનકા અસંખ્યાત હજાર યોજન કા હૈં । (કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કે મહાલિયાઓ પળ્ણત્તાઓ) હે ભદન્ત ! યે કૃષ્ણરાજિયાં કિતની મોટી કહી ગઈં હૈં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અયં ણં જંબુદ્વીવે દોવે જાવ અદ્ધમાસં

એ જ વાતને “પુત્તવાડવરા” ઈત્યાદિ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કરી છે. ગાથાનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

પૂર્વ અને પશ્ચિમની કૃષ્ણરાજિઓ છ ખૂણીઆ વાળી છે, દક્ષિણ અને ઉત્તરની બહારની કૃષ્ણરાજિઓ ત્રિકોણીઆ છે, અને અંદરની બધી કૃષ્ણરાજિઓ ચોરસ છે. (કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કેવદ્યં આયામેણં, કેવદ્યં વિષ્કલ્મ્બેણં, કેવદ્યં પરિક્ષેવેણં પળ્ણત્તા ?) હે ભદન્ત ! તે કૃષ્ણરાજિઓ લંબાઈ કેટલી છે ? પહોળાઈ કેટલી છે ? અને તેમનો પરિક્ષેપ (પરિધિ) કેટલો છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં આયામેણં, સંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિષ્કલ્મ્બેણં, અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં પરિક્ષેવેણં પળ્ણત્તાઓ) તે કૃષ્ણરાજિઓની લંબાઈ અસંખ્યાત હજાર યોજન પ્રમાણુ છે, તેમની પહોળાઈ સંખ્યાત હજાર યોજન પ્રમાણુ છે અને તેમનો પરિક્ષેપ અસંખ્યાત હજાર પ્રમાણુ છે.

(કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કે મહાલિયાઓ પળ્ણત્તાઓ ?) હે ભદન્ત ! તે કૃષ્ણરાજિઓ કેવડી મોટી કહી છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અયં ણં

અન્યત્રા કૃષ્ણરાજિઃ ઉત્તરવાયાં કૃષ્ણરાજિ સૃષ્ટા, ઉત્તરાઅન્યત્રા કૃષ્ણરાજિઃ પૌરસ્ત્યવાયાં કૃષ્ણરાજિ સૃષ્ટા, દે પૌરસ્ત્યવાયાત્યે, વાયે કૃષ્ણરાજી પદમે, દે ઉત્તર-દક્ષિણવાયે કૃષ્ણરાજી ચપ્તે, દે પૌરસ્ત્ય-વાયાત્યે અન્યત્રે કૃષ્ણરાજી ચતુરમે, દે ઉત્તર-દક્ષિણેઆમ્યન્યત્રિકે કૃષ્ણરાજી ચતુરમે, "પૂર્વાપરે પદમે, અન્ને પુનર્દક્ષિણોત્તરે વાયો, આમ્યન્યત્રચતુરમાઃ સર્વાં અપિ ન કૃષ્ણરાજયઃ॥૧॥ કૃષ્ણરાજયઃ

મદિગ્ધિભાગ-કે બાહિર-કી કૃષ્ણરાજિ-કા સ્પર્શ-કરતી-હે । પશ્ચિમદિગ્ધિ-ભાગ-કે-भीतर-की जो कृष्णराजि-हे वह उत्तरदिग्भाग-के बाहर-की कृष्णराजि-का स्पर्श-करती-हे । और उत्तर-दिशा-के भीतर-की जो कृष्णराजि-हे वह पूर्वदिग्भाग-के बाहर-की कृष्णराजि-को छूती-हे । (दो पुरत्थिमपच्चत्थिमाओ बाहिराओ कण्हराईओ छलंसाओ दो उत्तर-दाहिणबाहिराओ कण्हराईओ तंसाओ, दो पुरत्थिमपच्चत्थिमाओ अन्निमतराओ कण्हराईओ चउरंसाओ, दो उत्तरदाहिणाओ अन्निम-तराओ कण्हराईओ चउरंसाओ,

“ પુન્વાડ્વરા છલંસા, તંસા પુણ દાહિણુત્તરા વજ્ઞા ।

અન્નિમતર ચરંસા સન્વા વિ ય કણ્ઠરાઈઓ ” ૪૩)

પૂર્વ-और-पश्चिम-के-बाहरी-की-जो-दो-कृष्णराजियां-हैं-वे-छह-खूंटी-हैं । उत्तर-और-दक्षिण-के-बाहरी-की-जो-दो-कृष्णराजियां-हैं-वे-तिखूटी-हैं । पूर्व-और-पश्चिम-के-भीतर-की-जो-कृष्णराजियां-हैं-वे-चौखूटी-हैं । तथा उत्तर-और-दक्षिण-के-भीतर-की-जो-दो-कृष्णराजियां-हैं-वे-भी-चौखूटी-हैं । इसी-विषयको-पुन्वाड्वा-‘इत्यादि’-गाथामें-कहा-है-कि-पूर्व-और-पश्चिम

કૃષ્ણરાજિ-છે-તે-પશ્ચિમ-દિગ્ધાગની-બહારની-કૃષ્ણરાજિ-ને-સ્પર્શે-છે, પશ્ચિમ-દિગ્ધાગની-અંદરની-જે-કૃષ્ણરાજિ-છે-તે-ઉત્તર-દિગ્ધાગની-બહારની-કૃષ્ણરાજિ-ને-સ્પર્શે-છે, અને-ઉત્તર-દિગ્ધાગની-બહારની-જે-કૃષ્ણરાજિ-છે-તે-પૂર્વ-દિગ્ધાગની-બહારની-કૃષ્ણરાજિ-ને-સ્પર્શે-છે. (દો-પુરત્થિમપચ્ચત્થિમાઓ-બાહિરાઓ-કણ્ઠરાઈઓ-છલંસાઓ-દો-ઉત્તરદાહિણબાહિરાઓ-કણ્ઠરાઈઓ-તંસાઓ, દો-પુરત્થિમપચ્ચત્થિમાઓ-અન્નિમતરાઓ-કણ્ઠરાઈઓ-ચરંસાઓ, દો-ઉત્તરદાહિણાઓ-અન્નિમતરાઓ-કણ્ઠરાઈઓ-ચરંસાઓ, “ પુન્વાડ્વરા છલંસા, તંસા પુણ દાહિણુત્તરા વજ્ઞા । અન્નિમતર ચરંસા સન્વા વિ ય કણ્ઠરાઈઓ ” ૪૩) પૂર્વ-અને-પશ્ચિમમાં-બહારની-જે-બે-કૃષ્ણરાજિઓ-છે-તે-છ-ખૂણવાળી-છે, ઉત્તર-અને-દક્ષિણમાં-બહારની-જે-બે-કૃષ્ણરાજિઓ-છે-તે-ત્રણ-ખૂણવાળી-છે, પૂર્વ-અને-પશ્ચિમમાં-અંદરની-જે-કૃષ્ણરાજિઓ-છે-તે-ચાર-ખૂણવાળી-છે, તથા-ઉત્તર-અને-દક્ષિણ-દિશામાં-અંદરની-જે-કૃષ્ણરાજિઓ-છે-તે-પણ-ચાર-ખૂણવાળી-છે

સહુ ભદન્ત ! કિયત્યઃ આયામેન ? કિયત્યો વિષ્કમ્ભેન ! કિયત્યઃ પરિક્ષેપેન ? પ્રજ્ઞાઃ ? ગૌતમ ! અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ આયામેન, સંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ વિષ્કમ્ભેન, અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ પરિક્ષેપેન પ્રજ્ઞાઃ । કૃષ્ણરાજયઃ સહુ ભદન્ત ! કિયન્મહાલયાઃ પ્રજ્ઞાઃ ? ગૌતમ ! અયં સહુ જમ્બૂદ્વીપો દ્વીપઃ, યાવત્-અર્ધમાસં વ્યતિવ્રજેત્ અસ્ત્યેકકાં કૃષ્ણરાજિં વ્યતિવ્રજેત્ અસ્ત્યેકકાં કૃષ્ણ-

કી કૃષ્ણરાજિયાં હ્રદ્ સ્વં ટવાલી હૈં । દક્ષિણ ઓર ઉત્તર કી બાહિર કી કૃષ્ણરાજિયાં તિલ્હૂં ટી હૈં । ઓર સય અબ્યન્તર કી કૃષ્ણરાજિયાં ચૌરસ હૈં । (કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કેવદ્યં આયામેણં, કેવદ્યં વિસ્વં મેણં કેવદ્યં પરિક્ષેવેણં પળ્ણત્તાઓ) હે ભદન્ત ! ઇન કૃષ્ણરાજિયોંકા આયામ કિતના હૈં ? વિસ્તાર કિતના હૈં ? ઓર ઇનકા પરિક્ષેપ, કિતના હૈં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્રાઈં આયામેણં સંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્રાઈં વિસ્વં મેણં અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્રાઈં પરિક્ષેવેણં પળ્ણત્તાઓ) ઇન કૃષ્ણરાજિયોં કા આયામ (લંબાપન) અસંખ્યાત હજાર યોજન કા હૈં । વિષ્કંમ (ચૌઢાઈ) સંખ્યાત હજાર યોજન કા હૈં । તથા પરિક્ષેપ ઇનકા અસંખ્યાત હજાર યોજન કા હૈં । (કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કે મહાલિયાઓ પળ્ણત્તાઓ) હે ભદન્ત ! યે કૃષ્ણરાજિયાં કિતની મોટી કહી ગઈં હૈં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અયં ણં જંબુદ્વીવે દોવે જાવ અદ્ધમાસં

એ જ વાતને “પુત્રાડવરા” ધર્યાદિ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કરી છે. ગાથાનો સાંવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

પૂર્વ અને પશ્ચિમની કૃષ્ણરાજિઓ છ ખૂણીઆ વાળી છે, દક્ષિણ અને ઉત્તરની બહારની કૃષ્ણરાજિઓ ત્રિકોણીઆ છે, અને અંદરની બધી કૃષ્ણરાજિઓ ચૌરસ છે. (કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કેવદ્યં આયામેણં, કેવદ્યં વિસ્વં મેણં, કેવદ્યં પરિક્ષેવેણં પળ્ણત્તાઓ) હે ભદન્ત ! તે કૃષ્ણરાજિઓ લંબાઈ કેટલી છે ? પહોળાઈ કેટલી છે ? અને તેમનો પરિક્ષેપ (પરિધિ) કેટલો છે ?

(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્રાઈં આયામેણં, સંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્રાઈં વિસ્વં મેણં, અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્રાઈં પરિક્ષેવેણં પળ્ણત્તાઓ) તે કૃષ્ણરાજિઓની લંબાઈ અસંખ્યાત હજાર યોજન પ્રમાણુ છે, તેમની પહોળાઈ સંખ્યાત હજાર યોજન પ્રમાણુ છે અને તેમનો પરિક્ષેપ અસંખ્યાત હજાર પ્રમાણુ છે.

(કળ્હરાઈઓ ણં મંતે ! કે મહાલિયાઓ પળ્ણત્તાઓ ?) હે ભદન્ત ! તે કૃષ્ણરાજિઓ કેવડી મોટી કહી છે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અયં ણં

રાજિ નો જ્યતિવ્રજેન્ । ઇપન્મહાલયાઃ સહુ ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજનયઃ મન્નસાઃ, । સન્તિ
સહુ મદન્ત । 'કૃષ્ણરાજિપુ મેહા ઇતિ વા, મેહાવળા ઇતિ વા ? નાયમર્થઃ સમર્થઃ ।
સન્તિ સહુ મદન્ત । કૃષ્ણરાજિપુ ગ્રામા ઇતિ વા, યાવત્-સન્નિવેશા ઇતિ વા ? નાયમર્થઃ
સમર્થઃ । અસ્તિ સહુ મદન્ત । કૃષ્ણરાજિપુ ઉદારા ચલાદઃકાઃ સંસ્થિપન્તિ, સંમૂ-

ધીર્વપજ્જા અત્યેગદ્ધં કળ્હરાઈ વીર્વવપજ્જા, અત્યેગદ્ધં કળ્હરાઈ ણો
ધીર્વવપજ્જા એમહાલિયાઓ નં ગોયમા કળ્હરાઈઓ પળ્ળસાઓ) હે
ગૌતમ ! ત્રીન ચુટકી પજાને મેં જિતના સમય લગતા હૈં ઉતને સમય મેં
કોઈ મંહદ્ધિક આદિ વિશેષણોં વાલા દેવ હસ સમસ્ત જંબુદ્વીપ કા
ઈવકીસ ૨૧ વાર ચક્કર લગા આવે ઓર વહ ઇસી તરહ સે નિરન્તર
પન્નહ દિન તક ચલતા રહે-તપ કહીં સંભવ હૈં કિ વહ દેવ કિસી એક
કૃષ્ણરાજિ કે પાસ તક પહુંચ સકે ઓર કિસી એક કૃષ્ણરાજિ કે પાસ
તક નહીં પહુંચ સકે । હે ગૌતમ ! ઇતની વિશાલ યે કૃષ્ણરાજિયાં હૈં ।
(અત્થિ નં મંતે ! કળ્હરાઈસુ મેહાઈ વા મેહાવળાઈ વા) હે-મદન્ત !
કૃષ્ણરાજિયોં કે ખીતર ગૃહ ઓર ગૃહહટ્ટ-ગૃહ યાજાર હૈં કયા ? ઉસર-
(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (ણો ઇળદ્ધે સમદ્ધે) વહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈં અર્થાત્
હન કૃષ્ણરાજિયોં મેં ઘર ઓર ઘર યાજાર પિલકુલ નહીં હૈં । (અત્થિ નં
મંતે ! કળ્હરાઈસુ ગામાઈ વા જાવ સંનિવેસાઈ વા) હે મદન્ત ! તો કયા
:હન કૃષ્ણરાજિયોં મેં ગ્રામ યાવત્ સન્નિવેશા હૈં ? (ણો ઇળદ્ધે સમદ્ધે) હૈં

જંબુદ્વીપે વીધે જાવ અદ્ધમાસં વીર્વવપજ્જા અત્યેગદ્ધં કળ્હરાઈ વીર્વવપજ્જા, અત્યે-
ગદ્ધં કળ્હરાઈ ણો વીર્વવપજ્જા-એમહાલિયાઓ નં ગોયમા । કળ્હરાઈઓ પળ્ળસાઓ)
હે ગૌતમ ! ત્રણ અપંટી વગાડતા બેટલોં સમય લાગે છે એટલા સમયમાં કોઈ
મહદ્ધિક આદિ વિશેષણોવાળો દેવ આ સમસ્ત જંબુદ્વીપની ૨૧ વાર પ્રદક્ષિણા
કરવાને ધારે છે સમર્થ છે તે દેવ એટલી જ શીઘ્રગતિથી નિરન્તર ૧૫ દિવસ
આવ્યા કરે, તો તે કદાચ કોઈ એક કૃષ્ણરાજની પાસે પહોંચી શકે છે અને
કોઈ એક કૃષ્ણરાજની પાસે પણ પહોંચી શકતો નથી. હે ગૌતમ ! તે કૃષ્ણ-
રાજો એટલી બધી વિશાળ છે । (અત્થિ નં મંતે ! કળ્હરાઈસુ મેહાઈ વા
મેહાવળાઈ વા) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં ધરો છે ? હાટ છે ? (ગોયમા !)
હે ગૌતમ ! (ણો ઇળદ્ધે સમદ્ધે) તે કૃષ્ણરાજિઓમાં ધર પણ નથી અને
હાટ પણ નથી.

(અત્થિ નં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ગામાઈ વા જાવ સંનિવેસાઈ વા ?) હે મદન્ત !
તો શું તેમાં ગામ આદિ સન્નિવેશ પર્યન્તનાં સ્થાનો છે અર્થાત્ ?

(ણો ઇળદ્ધે સમદ્ધે) હે ગૌતમ ! એવું કોઈ પણ સ્થાન તેમાં હોતું

છેન્તિ, સંવર્પન્તિ ? હન્ત, અસ્તિ । તત્ સ્વલુ મદન્ત ? કિં દેવઃ પ્રકરોતિ, અસુરઃ પ્રકરોતિ, નાગઃ પ્રકરોતિ ? ગૌતમ ! દેવઃ પ્રકરોતિ, નો અસુરઃ, નો નાગઃ પ્રકરોતિ । અસ્તિ સ્વલુ મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિષુ વાદરઃ સ્તનિતશબ્દઃ, યથા ઉદારાસ્તથા, ।

ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ—હન કૃષ્ણરાજિયોં મેં ન ગ્રામ હૈ, ન નિગમ હૈ, ન મહંય હૈ, ન કર્ચટ હૈ, ન પત્તન હૈ, ન દ્રોણમુખ હૈ, ન આશ્રમ હૈ ઓર ન સન્નિવેશ હૈ । (અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ણં ડરાલા વલાહયાં સંસેયંતિ, સંમુચ્છંતિ, સંવાસંતિ) હૈ મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં કયા ઉદાર-વિશાલ-મેઘ સંસ્વેદ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈ ? પરસ્પર કે સંઘટન સે કયા વે સંમૂર્ચ્છિત હોતે હૈ ? ઘૃષ્ટિ કરતે હૈ ? (હંતા અત્થિ) હાં ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં ઘડે ૨ મેઘ સંસ્વેદ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈ, સંમૂર્ચ્છિત હોતે હૈ ઓર ઘૃષ્ટિ કરતે હૈ । (તં મંતે ! કિં દેવો પકરેહ અસુરો પકરેહ, નાગો પકરેહ) હૈ મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં સંસ્વેદન સંમૂર્ચ્છન ઓર સંવર્પણ કયા દેવ કરતા હૈ ? યા અસુર કરતા હૈ ? નાગ કરતા હૈ ? (ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! (દેવો પકરેહ) દેવ હી કરતા હૈ (જો અસુરો પકરેહ જો નાગો પકરેહ) અસુર નહીં કરતા હૈ ઓર ન નાગ હી કરતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિં કૃષ્ણરાજિયોં મેં મેઘોં કા સંસ્વેદન આદિકાર્ય દેવ કરતા હૈ અસુર નાગ નહીં કરતે હૈ કયોં કિં અસુર નાગ કા વહાં ગમન હી નહીં હોતા હૈ ।

નથી ત્યાં ગામ પણ નથી, નિગમ પણ નથી, મહંય પણ નથી, કર્ચટ પણ નથી, પત્તન પણ નથી, દ્રોણમુખ પણ નથી, આશ્રમ પણ નથી અને સન્નિવેશ પણ નથી, (અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ણં ડરાલા વલાહયા સંસેયંતિ, સંમુચ્છંતિ, સંવાસંતિ ?) હૈ મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં વિશાળ મેઘોનું સંસ્વેદન થાય છે ખરું ? શું તેઓ ત્યાં પરસ્પરના સંયોગથી સંમૂર્ચ્છિત (એકત્રિત) થાય છે ? શું તેઓ ત્યાં વરસે છે ? (હંતા, અત્થિ) હા, ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજિઓમાં વિશાળ મેઘોનું સંસ્વેદન થાય છે, તેઓ ત્યાં સંમૂર્ચ્છિત થાય છે અને ઘૃષ્ટિ વરસાવે છે. (તં મંતે ! કિં દેવો પકરેહ, અસુરો પકરેહ, નાગો પકરેહ ?) હૈ મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં સંસ્વેદન, સંમૂર્ચ્છન અને વર્ષણ કોણ કરે છે ? શું દેવ કરે છે ? શું અસુરકુમાર કરે છે ? શું નાગકુમાર કરે છે ?

(ગોયમા !) હૈ ગૌતમ ! (દેવો પકરેહ) દેવ જ કરે છે, (જો અસુરો પકરેહ, જો નાગો પકરેહ) અસુરકુમાર કરતા નથી અને નાગકુમાર પણ કરતા નથી, કારણ કે અસુરકુમાર અને નાગકુમારનું ત્યાં ગમન જ થતું નથી.

અસ્તિ સ્વત્ત્વ મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિણુ ચાદરોડ્વકાયા, ચાદરોઽગ્નિકાયા, ચાદરોસ્વ-
સ્પતિકાયા ? નાયમર્થઃ સમર્થઃ, નાન્યપ્ર વિપ્રદગતિસમાવપ્તકેન । સન્તિ સ્વત્ત્વ
મદન્ત ! ચન્દ્ર-સૂર્ય-ગ્રહગણ-નક્ષત્ર-તારારૂપાઃ ? નાયમર્થઃ સમર્થઃ । અસ્તિ સ્વત્ત્વ
કૃષ્ણરાજિણુ ચન્દ્રામા ઇતિ ચા, સૂર્યામા ઇતિ ચા, ? નાયમર્થઃ સમર્થઃ । કૃષ્ણરાજવઃ

(અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ યાયરે યણિયસરે) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરા-
જિયોં મેં કયા ઘનગર્જનાત્મક ચાદર સ્તનિતશબ્દ હોતા હૈ ? (જહા-
વરાલા તંહા) હે ગૌતમ ! જિસ પ્રકાર સે ઉદાર મેય કહે ગયે હૈં-કહી
પ્રકાર સે જાનના ચાહિયે । (અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ યાયરે આઠ-
કાણ યાયરે અગણિકાણ, યાયરે ઘણસ્સકાણ ?) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરા-
જિયોં મેં કયા ચાદર જલકાણ હૈ ? ચાદર અગ્નિકાણ હૈ ? ચાદર વનસ્પતિ-
કાણ હૈ ? (જો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ, પર હાં
(ણણત્થ વિગ્ગહગ્ગઈસમાવન્નણં) વિપ્રદગતિસમાવપ્તક યે જીવ વહાં
પર હૈં । (અત્થિ ણં મંતે ચંદિમ-સૂરિય-ગહગણ-નક્ષત્ર-તારારૂપા) હે
મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં ચન્દ્રમા, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્ર ઓર તારારૂપ
હૈં કયા ? (જો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ ।
(અત્થિ ણં કળ્હરાઈણં ચંદ્રામાહ વા, સૂર્યામાહ વા ?) હે મદન્ત !
કૃષ્ણરાજિયોં મેં કયા ચંદ્રમા કી કાન્તિ હૈ ? સૂર્ય કી કાન્તિ હૈ ? (જો

(અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ યાયરે યણિય સરે ?) હે મદન્ત ! કૃષ્ણ-
રાજિઓમાં શું મેધોના ગળન રૂપ બાદર સ્તનિત શબ્દો યાય છે ખરાં ?
(જહા વરાલા તંહા) હે ગૌતમ ! વિશાળ મેધોના વિષયમાં કહ્યા પ્રમાણે જ
આ વિષયમાં પણ સમજવું. (અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ યાયરે આઠકાણ,
યાયરે અગણિકાણ, યાયરે ઘણસ્સકાણ ?) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં જળ શું
બાદર અપૂકાય, બાદર અગ્નિકાય અને બાદર વનસ્પતિકાય છે ?

(જો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! ત્યાં તે કંઈ પણ સંભવી શકતું
નથી. (ણણત્થ વિગ્ગહગ્ગઈ સમાવન્નણં) પણ ત્યાં વિપ્રદગતિપ્રાપ્ત તે જીવો હોય છે.

(અત્થિ ણં મંતે ! ચંદિમ, સૂરિય, ગહગણનક્ષત્ર, તારારૂપા) હે મદન્ત !
કૃષ્ણરાજિઓમાં શું ચન્દ્રમા, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્રો અને તારાઓ હોય છે ?

(જો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! તેમાં ચન્દ્રમા આદિ જ્યોતિષિક દેવો
હોતા નથી.

(અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈણં ચંદ્રામાહ વા, સૂર્યામાહ વા ?) હે મદન્ત !
કૃષ્ણરાજિઓમાં શું ચન્દ્રનો પ્રકાશ હોય છે ? સૂર્યનો પ્રકાશ હોય છે ?

સહુ ભદન્ત ! કીદશ્યો વર્ણેન પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! કૃષ્ણાઃ, યાવત્-ક્ષિપમેવ વ્યતિ-
જ્ઞેત્, કૃષ્ણરાજીનાં સહુ ભદન્ત ! કતિ નામધેયાઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? ગૌતમ ! અટ નામ-
ધેયાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા-કૃષ્ણરાજિરિતિ વા, મેઘરાજિરિતિ વા, મધા इति વા,
માઘવતી इति વા, યાતપરિધા इति વા, વાતપરિક્ષોભા इति વા, દેવપરિધા इति
વા, દેવપરિક્ષોભા इति વા । કૃષ્ણરાજયઃ સહુ ભદન્ત ! કિં પૃથિવીપરિણામાઃ,

ઈણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ । (કળહરાઈઓ ણં
મંતે । કેરિસિયાઓ વન્નેણં પળ્લન્તાઓ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં કા
વર્ણ કૈસા હૈ ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (કાલાઓ જાવ સિપ્પામેવ વીર્ડ-
વપજ્ઞા) યે કૃષ્ણરાજિયાં કાલીં હૈં । યાવત્ (તમસ્કાય કી તરહ ભયં-
કર હોને કે કારણ ઇન્હેં દેવ મી વઢુત હી શીઘ્રતા સે ઉલ્લંઘ જાતા હૈ
(કળહરાઈણં મંતે ! કહ નામધેજ્ઞા પળ્લન્તા) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં
કે કિતને નામ કહે ગયે હૈં । (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અટ નામધેજ્ઞા
પળ્લન્તા) આઠ નામ કહે ગયે હૈં । (તં જહા) વે યે હૈં (કળહરાઈહ વા,
મેહરાઈ હ વા, મધા હ વા, માઘવર્ડ હ વા, વાયફલિયા હ વા, વાયપલિ-
ક્ષોભા હ વા, દેવફલિયા હ વા, દેવપલિક્ષોભા હ વા) કૃષ્ણરાજિ ૧,
મેઘરાજિ ૨, મધા ૩ માઘવતી ૪, વાતપરિધા ૫, વાતપરિક્ષોભા ૬,
દેવપરિધા ૭ ઓર દેવપરિક્ષોભા ૮ । (કળહરાઈઓણં મંતે ! કિં

(જો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! તેમાં અન્ન કે સૂચનો પ્રકાશ
સંભવી શકતો નથી.

(કળહરાઈઓ ણં મંતે ! કેરિસિયાઓ વન્નેણં પળ્લન્તાઓ ?) હે ભદન્ત !
કૃષ્ણરાજિઓનો વણું કેવો હોય છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (કાલાઓ જાવ સિપ્પામેવ વીર્ડવપજ્ઞા) તે
કૃષ્ણરાજિઓ ઠાળી હોય છે. અહીં તમસ્કાયના વણુંના જેવું જ સમસ્ત વણું
સમજવું. તે કૃષ્ણરાજિઓનો વણું તમસ્કાયના જેવો ભયંકર હોવાથી દેવ
પણ ઘણી શીઘ્રતાથી તેમને પાર કરીને બહાર નીકળી જાય છે.

(કળહરાઈ ણં મંતે ! કહ નામધેજ્ઞા પળ્લન્તા ?) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણ-
રાજિઓનાં કેટલાં નામ કહ્યાં છે ?

(ગોયમા ! અટ નામધેજ્ઞા પળ્લન્તા-તં જહા) હે ગૌતમ ! તેમના નીચે
પ્રમાણે આઠ નામ કહ્યાં છે- (કળહરાઈહ વા, મેહરાઈહ વા, મધાહ વા, માઘવ-
ર્ડહ વા, વાયફલિક્ષોભાહ વા, દેવફલિયાહ વા, દેવપલિક્ષોભાહ વા) (૧)
કૃષ્ણરાજિ, (૨) મેઘરાજિ, (૩) મધા, (૪) માઘવતી, વાતપરિધા, (૬) વાત-
પરિક્ષોભા (૭) દેવપરિધા અને (૮) દેવપરિક્ષોભા.

અસ્તિ સ્વલ્પ ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિણુ ચાદ્રોઽપ્કાયા, ચાદ્રોઽગ્નિકાયા, ચાદ્રોઽનસ્પતિકાયા ? નાયમર્થઃ સમર્થઃ, નાન્યથ વિગ્રહગતિસમાવષ્ઠકેન । સન્તિ સ્વલ્પ ભદન્ત ! ચન્દ્ર-સૂર્ય-ગ્રહગણ-નક્ષત્ર-તારારૂપાઃ ? નાયમર્થઃ સમર્થઃ । અસ્તિ સ્વલ્પ કૃષ્ણરાજિણુ ચન્દ્રામા ઇતિ વા, સૂર્યામા ઇતિ વા, ? નાયમર્થઃ સમર્થઃ । કૃષ્ણરાજયઃ

(અત્થિ ણં મંતે । કળ્હરાઈસુ યાયરે થણિયસદે) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં કયા ઘનગર્જનાત્મક યાદર સ્તનિતશબ્દ હોતા હે ? (જહા-ઉરાલા તહા) હે ગૌતમ ! જિસ પ્રકાર સે ઉદાર મેંય કહે ગયે હૈ-ઉસી પ્રકાર સે જાનના ચાહિયે । (અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ યાયરે આઝ-કાપ યાયરે અગણિકાપ, યાયરે વણસસકાપ ?) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં કયા યાદર જલકાપ હે ? યાદર અગ્નિકાપ હે ? યાદર વનસ્પતિ-કાપ હે ? (જો ઇણદે સમઢે) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હે, પર હાં (જણણત્થ વિગ્રહગતિસમાવન્નણં) વિગ્રહગતિસમાવન્નક યે જીવ વહાં પર હૈ । (અત્થિ ણં મંતે ચંદિમ-સુરિય-ગ્રહગણ-નક્ષત્ર-તારારૂપા) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં ચન્દ્રમા, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્ર ઓર તારારૂપા હૈ કયા ? (જો ઇણદે સમઢે) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હે । (અત્થિ ણં કળ્હરાઈણં ચંદામાહ વા, સૂરામાહ વા ?) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં કયા ચંદ્રમા કી કાન્તિ હે ? સૂર્ય કી કાન્તિ હે ? (જો :

(અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ યાયરે થણિય સદે ?) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં શું મેંયોના ગળ્હન રૂપ બાદર સ્તનિત શબ્દો થાય છે ખરાં ? (જહા ઉરાલા તહા) હે ગૌતમ ! વિશાળ મેંયોના વિષયમાં કહ્યા પ્રમાણે જ આ વિષયમાં પણ સમજવું. (અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ યાયરે આઝકાપ, યાયરે અગણિકાપ, યાયરે વણસસકાપ ?) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં જળ શું બાદર અપૂકાય, બાદર અગ્નિકાય અને બાદર વનસ્પતિકાય છે ?

(જો ઇણદે સમઢે) હે ગૌતમ ! ત્યાં તે કંઈ પણ સંભવી શકતું નથી. (જણણત્થ વિગ્રહગતિસમાવન્નણં) પણ ત્યાં વિગ્રહગતિમાં તે જીવો હોય છે.

(અત્થિ ણં મંતે ! ચંદિમ, સુરિય, ગ્રહગણનક્ષત્ર, તારારૂપા) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં શું ચન્દ્રમા, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્રો અને તારાઓ હોય છે ?

(જો ઇણદે સમઢે) હે ગૌતમ ! તેમાં ચન્દ્રમા આદિ જ્યોતિષિક દેવો હોતા નથી.

(અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈણં ચંદામાહ વા, સૂરામાહ વા ?) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં શું ચન્દ્રનો પ્રકાશ હોય છે ? સૂર્યનો પ્રકાશ હોય છે ?

ટીકા—‘કદ્દળં મંતે કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદન્ત! કતિ કિયત્પઃ કતિસંખ્યકાઃ સ્વલુ કૃષ્ણરાજયઃ કૃષ્ણવર્ણપુદ્ગલરેલાઃ પ્રજ્ઞતાઃ? મગવાનાહ—‘ગોયમા ! અદ્દ કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ ’ હે ગૌતમ ! અદ્દ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞતા ! ગૌતમઃ પૃચ્છતિ —‘કદ્દિળં મંતે ! ઇયાઓ અદ્દ કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ ? હે ભદન્ત ! કુન્ન કસ્મિન્ પ્રદેશે ઇતાઃ ઉપરિવર્ણિતાઃ અદ્દ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? મગવાનાહ—‘ ગોયમા ! ઉર્પિ સળ્લકુમાર-માહિંદાળં કળ્પાળં ’ હે ગૌતમ ! સન્તકુમાર-માહેન્દ્રયોઃ કર્લપયોઃ

અથવા અનન્તચાર વહાં ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈં । પરંતુ વહાં વાદર અપ્રકાચિ-કરૂપ સે ઉત્પન્ન નહીં હુણ હૈં, ન વાદર અગ્નિકાચિકરૂપ સે ઉત્પન્ન હુણ હૈં ન વાદર વનસ્પતિકાચિકરૂપ સે હી ઉત્પન્ન હુણ હૈં ।

ટીકાર્થ—તમસ્કાચ કે સમાન હોને સે અય કૃષ્ણરાજિયોં કી પ્રહ-પ્ણા સૂત્રકાર કર રહે હૈં । હસમેં ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે એસા પ્રશ્ન કિયા હૈ કિ (કદ્દળં મંતે ! કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયાં કિતની કહી ગઈ હૈં । કૃષ્ણવર્ણવાલે પુદ્ગલોં કી રેલાઓં કા નામ કૃષ્ણ-રાજિયાં હૈં । સો યે કિતની હૈં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ને ડનસે એસા કહા (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અદ્દ કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ) કૃષ્ણરાજિયાં આઠ કહી ગઈ હૈં । અય ગૌતમ પ્રશ્ન સે એસા પૂછ રહે હૈં કિ (કદ્દિળં મંતે ! ઇયાઓ અદ્દ કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ) હે ભદન્ત ! યે પૂર્વવર્ણિત આઠ કૃષ્ણરાજિયાં કિસ પ્રદેશ મેં કહી ગઈ હૈં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ડનસે કહતે હૈં કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (ઉર્પિ સળ્લકુમારમાહિંદાળં કળ્પા-

‘આદર અગ્નિકાચ રૂપે પણ ઉત્પન્ન થયા નથી અને આદર વનસ્પતિકાચ રૂપે પણ ઉત્પન્ન થયા નથી.

ટીકાર્થ—કૃષ્ણરાજિઓ પણ તમસ્કાચના જેવી હોય છે. તે કારણે સૂત્ર-કાર હવે તેમનું નિરૂપણ કરે છે—આ વિષયને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહા-વીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (કદ્દળં મંતે ! કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ ?) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓ કેટલી કહી છે । (કૃષ્ણ વર્ણવાળાં પુદ્ગલોની રેખાઓને કૃષ્ણરાજિઓ કહે છે.)

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—(ગોયમા ! અદ્દ કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ) હે ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજિ આઠ કહી છે. તે કૃષ્ણરાજિઓનું સ્થાન જાણવાને માટે ગૌતમ સ્વામી આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછે છે—(કદ્દિળં મંતે ! ઇયાઓ અદ્દ કળ્હરાઈઓ પળ્ળતાઓ ?) હે ભદન્ત ! તે આઠ કૃષ્ણરાજિઓ કયા પ્રદેશમાં આવેલી છે ?

અપ્પરિણામાઃ, જીવપરિણામાઃ, પુદ્ગલપરિણામાઃ ? ગૌતમ ! પૃથિવીપરિણામાઃ, જો અપ્પરિણામાઃ, જીવપરિણામા અપિ, પુદ્ગલપરિણામા અપિ । કૃષ્ણરાજિણામ મદન્ત ! સર્વે પાણાઃ, ભૂતાઃ, જીવાઃ, સત્તા ઉપવણ્ણાપુણ્ણાઃ ? હન્ત ગૌતમ ! મત્તહ, અથવા અનન્તઠ્ઠસ્વઃ, નો ચેવ વાદરાધ્ધાપિકતયા, વાદરાનિકાપિકતયા વા, વાદરચનસ્પતિકાપિકતયા વા ॥ ૫૦ ૨ ॥

પુદ્ગલપરિણામાઓ, આત્મપરિણામાઓ, જીવપરિણામાઓ, પોગ્ગલપરિણામાઓ) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયાં ત્યાં પૃથિવી કે પરિણામરૂપ છે ? યા અપ્પકાય કે પરિણામરૂપ છે ? યા જીવ કે પરિણામરૂપ છે ? યા પુદ્ગલ કે પરિણામરૂપ છે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પુદ્ગલપરિણામાઓ) એ કૃષ્ણરાજિયાં પૃથિવી-કે પરિણામરૂપ છે । (જો આત્મપરિણામાઓ) અપ્પકાય કે પરિણામરૂપ નહીં છે । (જીવ પરિણામાઓ વિ, પુગ્ગલપરિણામાઓ વિ) જીવ કે પરિણામ રૂપ તો એ કૃષ્ણરાજિયાં છે ઓર પુદ્ગલ કે પરિણામરૂપ તો નહીં । (કળ્હરાઈસુ ણં મતે । સન્ને પાણા, ભૂતા, જીવા, સત્તા ઉવવણ્ણાપુણ્ણા) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયાં મેં સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, સમસ્ત સર્વજ્ઞતા પહિલે ઉત્પન્ન થોયુકે છે ? (હંતા, ગોયમા ! અસહં અદુવા અણંતકલ્લુત્તો, જો ચેવ ણં વાયર આત્કાદયત્તાવ વાયર અગ્નિકાદયત્તાવ વા વાયર વણ્ણસહકાદયત્તાવ વા) હાં ગૌતમ ! સમસ્તપ્રાણાદિ જીવ અનેક વાર

(કળ્હરાઈસુ ણં મતે ! કિં પુદ્ગલ પરિણામાઓ, આત્મપરિણામાઓ, જીવ પરિણામાઓ, પોગ્ગલપરિણામાઓ ?) હે મદન્ત ! શું કૃષ્ણરાજિઓ, પૃથ્વીના પરિણામ રૂપ છે ? કે અપ્પકાયના પરિણામ રૂપ છે ? કે ભવના પરિણામ રૂપ છે ? કે પુદ્ગલના પરિણામ રૂપ છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (પુદ્ગલ પરિણામાઓ) તે કૃષ્ણરાજિઓ પૃથ્વીના પરિણામ રૂપ છે, (જો આત્મપરિણામાઓ) અપ્પકાયના પરિણામ રૂપ નથી. (જીવ પરિણામાઓ વિ, પુગ્ગલપરિણામાઓ વિ) તે કૃષ્ણરાજિઓ ભવના પરિણામ રૂપ પણ છે અને પુદ્ગલના પરિણામ રૂપ પણ છે.

(કળ્હરાઈસુ ણં મતે । સન્ને પાણા, ભૂતા, જીવા, સત્તા, ઉવવણ્ણાપુણ્ણા ?) હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત ભવ અને સમસ્ત સર્વ શું પહેલાં ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યાં છે ?

(હંતા, ગોયમા ! અસહં, અદુવા અણંતકલ્લુત્તો, જો ચેવ ણં વાયર આત્કાદયત્તાવ વાયર અગ્નિકાદયત્તાવ વા, વાયર વણ્ણસહકાદયત્તાવ વા) હો, ગૌતમ ! સમસ્ત પ્રાણાદિ ભવ અનેકવાર અથવા અનંતવાર ત્યાં ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યા છે. પરંતુ તેઓ ત્યાં બાદર અપ્પકાયિક રૂપે ઉત્પન્ન થયા નથી,

ટીકા—‘કહ્ નં મંતે કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદન્ત! કતિ કિયત્પઃ કતિસંખ્યકાઃ સ્વલુ કૃષ્ણરાજયઃ કૃષ્ણવર્ણપુદ્ગલરેલાઃ પ્રજ્ઞતાઃ? મગવાનાહ—‘ગોયમા ! અદ્ધ કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ ’ હે ગૌતમ ! અદ્ધ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞતાઃ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ —‘કહિ નં મંતે ! ઇયાઓ અદ્ધ કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ ? હે ભદન્ત ! કુત્ત કસ્મિન્ પ્રદેશે ઇતાઃ ઉપરિવર્ગિતાઃ અદ્ધ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? મગવાનાહ—‘ ગોયમા ! ઉર્પિ સળંકુમાર-માહિંદાણં કળ્પાણં ’ હે ગૌતમ ! સન્તકુમાર-માહેન્દ્રયોઃ કલ્પયોઃ

અથવા અનન્તવાર વહાં ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈં । પરંવે વહાં વાદર અપ્કાયિ-કરૂપ સે ઉત્પન્ન નહીં હુપ હૈં, ન વાદર અગ્નિકાયિકરૂપ સે ઉત્પન્ન હુપ હૈં ન વાદર વનસ્પતિકાયિકરૂપ સે હી ઉત્પન્ન હુપ હૈં ।

ટીકાર્થ—તમસ્કાય કે સમાન હોને સે અવ કૃષ્ણરાજિયોં કી પ્રહ-પ્ણા સૂત્રકાર કર રહે હૈં । સમ્મં ગૌતમ ને પ્રશ્ન સે એસા પ્રશ્ન કિયા હૈ કિ (કહ્ નં મંતે ! કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયાં કિતની કહી ગઈ હૈં । કૃષ્ણવર્ણવાલે પુદ્ગલોં કી રેલાઓં કા નામ કૃષ્ણ-રાજિયાં હૈં । સો યે કિતની હૈં ? હસકે ઉત્તર મ્મં પ્રશ્ન ને ડનસે એસા કહા (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અદ્ધ કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ) કૃષ્ણરાજિયાં આઠ કહી ગઈ હૈં । અવ ગૌતમ પ્રશ્ન સે એસા પૂછ રહે હૈં કિ (કહિ નં મંતે ! ઇયાઓ અદ્ધ કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ) હે ભદન્ત ! યે પૂર્વવર્ણિત આઠ કૃષ્ણરાજિયાં કિસ પ્રદેશ મ્મં કહી ગઈ હૈં ? હસકે ઉત્તર મ્મં પ્રશ્ન ડનસે કહતે હૈં કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (ઉર્પિ સળંકુમારમાહિંદાણં કળ્પા-

ખાદર અગ્નિકાય રૂપે પશુ ઉત્પન્ન થયા નથી અને ખાદર વનસ્પતિકાય રૂપે પશુ ઉત્પન્ન થયા નથી.

ટીકાર્થ—કૃષ્ણરાજિઓ પશુ તમસ્કાયના જેવી હોય છે. તે કારણે સૂત્ર-કાર હવે તેમનું નિરૂપણ કરે છે—આ વિષયને અનુલક્ષીને ગૌતમ સ્વામી મહા-વીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (કહ્ નં મંતે ! કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ ?) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓ કેટલી કહી છે ! (કૃષ્ણ વર્ણવાળાં પુદ્ગલોની રૂપાઓને કૃષ્ણરાજિઓ કહે છે.)

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે—(ગોયમા ! અદ્ધ કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ) હે ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજિ આઠ કહી છે. તે કૃષ્ણરાજિઓનું સ્થાન જાણવાને માટે ગૌતમ સ્વામી આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછે છે—(કહિ નં મંતે ! ઇયાઓ અદ્ધ કળ્હરાઈઓ પળ્ગત્તાઓ ?) હે ભદન્ત ! તે આઠ કૃષ્ણરાજિઓ કયા પ્રદેશમાં આવેલી છે ?

ઉપરિ ' હેઢિં વંમલોળ કપ્પે રિદ્ધિવિમાળપત્થહે ' અથઃ અવસ્તાન્ ત્રણલોકે કલ્પે-
અરિષ્ટે અરિષ્ટનામકે વિમાનપસ્તટે ' એથ ણં અત્તાઢગમમનરસંસંઠાણસંઠિયાઓ
અદ્દ કંઠરાઈઓ પળ્ણત્તાઓ ' અન્ન સન્નુ સન્નરકુમાર-માહેન્દ્રકલ્પયોઃ ઉપરિણાત્
ત્રણલોકત્વપત્થ અવસ્તાન્ અરિષ્ટનામકવિમાનપસ્તટે, મહાઢાટકમવતુ (સસંસ્થાન
સંસ્થિતઃ, અત્તાઢકઃ મહાપુદસ્થાનવિશેષઃ તદ્વન્ સમચતુરણ્ણસંસ્થાનસંસ્થિતાઃ
સદયચતુરુક્તોનાકારેણ સ્થિતાઃ) અપ્પ હુન્નરાનવઃ મણ્ણતાઃ । તા અપ્પ કુળ્ણરાજીઃ
મદ્ધયિત્તિ-‘ તં જહા ’ તપયા-‘ પુરત્થિમેણં દો ’ પચત્થિમેણં દો, દાહિણેણં દો,
ઉત્તરેણં દો ’ પૌરસ્થ્યે-પૂર્વદિગ્માગે દે કુળ્ણરાજી, તથા પશ્ચાત્થ્યે પશ્ચિમદિગ્માગે દે
કુળ્ણરાજી, તથા દક્ષિણે દિગ્માગે દે કુળ્ણરાજી તથા ઉત્તરે-ઉત્તરદિગ્માગે દે
કુળ્ણરાજી વર્તેતે, ઇતિ સર્વાઃ સંમીલ્ય અપ્પે સંજાતાઃ । તન્ન ‘ પુરત્થિમઙ્ગમંતરા
કંઠરાઈ દાહિણવાહિરં કંઠરાઈ પુટ્ઠા ’ પૌરસ્થ્યામ્બન્તરા પૂર્વદિગ્માગામ્બન્તર-
વર્તિની કુળ્ણરાજિઃ દક્ષિણવાયાં દક્ષિણદિગ્માગાદિવર્તિની કુળ્ણરાજિ સ્થા
સ્પૃષ્ટવતીત્થયઃ, ‘ સ્પૃષ્ઠા ’ ઇત્યન્ન કર્ત્તરિપ્રયોગ આર્પત્વાન્ । એવમગ્રેણિ

ણં) સનત્કુમાર, માહેન્દ્ર સ્વર્ગ કે ઝંપર ઓર (હેઢિં વંમલોળ કપ્પે રીદ્ધિ
વિમાળપત્થહે) ત્રણલોક કલ્પ મેં નીચે રિષ્ટનામકે વિમાનપસ્તટ મેં
(એથ ણં અવસ્તાઢગસમચરસંસંઠાણસંઠિયાઓ અદ્દ કંઠરાઈઓ પળ્ણ-
ત્તાઓ.) જેવાંદિસ્થાન કે સમાન ચૌકોર આકાર સે-સમચતુરણ સંસ્થા-
ન સે-ચે આઠ કુળ્ણરાજિયાં-સ્થિત હેં । (તં જહા) વે ઇસ પ્રકાર સે હેં-
“ પુરત્થિમેણં દો, પચ્ચત્થિમેણં દો, દાહિણેણં દો, ઉત્તરેણં દો ” પૂર્વદિ-
ગ્માગ મેં દો કુળ્ણરાજિયાં, તથા પશ્ચિમદિગ્માગ મેં દો કુળ્ણરાજિયાં,
તથા દક્ષિણદિગ્માગ મેં દો કુળ્ણરાજિયાં, તથા ઉત્તરદિગ્માગ મેં દો
કુળ્ણરાજિયાં હેં । ઇસ તરહ વે સવ મિલકર આઠ કુળ્ણરાજિયાં હો
જાતી હેં । (પુરત્થિમઙ્ગમંતરા કંઠરાઈ દાહિણવાહિરં કંઠરાઈ પુટ્ઠા) હનમેં

ઉત્તર—(ગોચમા) । હે ગૌતમ ! (ડર્બિ સંજેકુમાર માહિંવાળં કંપ્પાણં)
સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર દેવલોકની ઉપર (હેઢિં વંમલોળ કપ્પે રિદ્ધે વિમાળ-
પત્થહે) અને પ્રલોક કલ્પની નીચે રિષ્ટ નામના વિમાન પ્રસ્તટમાં (એથ ણં
અવસ્તાઢગસમચરસંસંઠાણસંઠિયાઓ અદ્દ કંઠરાઈઓ પળ્ણત્તાઓ) અપ્પાઢાના
જેવા સમચારસ આકારે તે આઠ કુળ્ણરાજિઓ રહેલી છે. “ તં જહા ” તે
આ પ્રમાણે છે—(પુરત્થિમેણં દો) પૂર્વ દિશામાં બે કુળ્ણરાજિઓ, (પચ્ચત્થિમેણં દો)
પશ્ચિમ દિશામાં બે કુળ્ણરાજિઓ, (દાહિણેણં દો, ઉત્તરેણં દો) દક્ષિણમાં બે
કુળ્ણરાજિઓ અને ઉત્તરમાં બે કુળ્ણરાજિઓ છે. આ રીતે બધી મંળીને આઠ
કુળ્ણરાજિઓ થાય છે. (પુરત્થિમઙ્ગમંતરા કંઠરાઈ દાહિણવાહિરં કંઠરાઈ પુટ્ઠા)

વિજ્ઞેયમ્, एवं 'दाहिणऽन्तरा कण्हराई पचत्थिमवाहिरं कण्हराई पुट्टा' दक्षिणाभ्यन्तरा दक्षिणदिग्भागाभ्यन्तरवर्तिनी कृष्णराजिः पश्चिमवाह्यां पश्चिमदिग्भागवर्तिवर्तिनी कृष्णराजि स्पृष्टा, तथा—'पचत्थिमऽन्तरा कण्हराई उत्तरवाहिरं कण्हराई पुट्टा' पश्चिमाभ्यन्तरा पश्चिमदिग्भागाभ्यन्तरवर्तिनी कृष्णराजिः उत्तरवाह्याम् उत्तरदिग्भागवर्तिवर्तिनी कृष्णराजि स्पृष्टा, एवम्—उत्तरमऽन्तरा कण्हराई पुरत्थिमवाहिरं कण्हराई पुट्टा' उत्तराभ्यन्तरा उत्तरदिग्भागाभ्यन्तरवर्तिनी कृष्णराजिः पौरस्त्यवाह्यां पूर्वदिग्भागवर्तिवर्तिनी कृष्णराजि स्पृष्टा। 'दो पुरत्थिम—पचत्थिमाओ वाहिराओ कण्हराईओ छलंसाओ' द्वे पौरस्त्य—पश्चिमाह्ये पूर्वपश्चिमदिग्भागवर्तिवर्तिन्यो कृष्णराजी पडसे पइअत्ताः अंशाः ययोस्ते पट्-

જો પૂર્વદિશા કે भीतर की कृष्णराजि है वह दक्षिणदिशा के बाहिर रही हुई कृष्णराजि को छूनेवाली है। इसी तरह से आगे भी जानना चाहिये—(दाहिणऽन्तरा कण्हराई पचत्थिमवाहिरं कण्हराई पुट्टा) दक्षिणदिशा के भीतर की जो कृष्णराजी है वह पश्चिमदिशा के बाहिर की कृष्णराजी को छूनेवाली है। तथा—(पचत्थिमऽन्तरा कण्हराई उत्तरवाहिरं कण्हराई पुट्टा) पश्चिमदिशा के भीतर की जो कृष्णराजी है वह उत्तरदिशा के बाहिर की कृष्णराजी को छूनेवाली है (उत्तरमऽन्तरा कण्हराई पुरत्थिमवाहिरं कण्हराई पुट्टा) इसी प्रकार जो उत्तरदिशा के भीतर की कृष्णराजि है वह पूर्वदिशा के बाहिर की कृष्णराजी को छूनेवाली है। (दो पुरत्थिम—पचत्थिमाओ वाहिराओ कण्हराईओ छलंसाओ) पूर्वदिशा और पश्चिमदिशा के बाहिर की जो दो कृष्णरा-

તેમાં પૂર્વ દિશામાં અંદરની જે કૃષ્ણરાજિ છે, તે દક્ષિણ દિશાની બહારની કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે છે. એજ પ્રમાણે આગળ પણ સમજવું. (દાહિણઽન્તરા કણ્ઠરાઈ પચત્થિમવાહિરં કણ્ઠરાઈ પુટ્ટા) દક્ષિણ દિશામાં અંદરની જે કૃષ્ણરાજિ છે, તે પશ્ચિમ દિશામાં બહારની બાજુએ આવેલી કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે કરે છે, (પચત્થિમઽન્તરા કણ્ઠરાઈ ઉત્તરવાહિરં કણ્ઠરાઈ પુટ્ટા) પશ્ચિમ દિશામાં અંદરની જે કૃષ્ણરાજિ છે, તે ઉત્તર દિશામાં આવેલી બહારની કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે કરે છે, (ઉત્તરમઽન્તરા કણ્ઠરાઈ પુરત્થિમવાહિરં કણ્ઠરાઈ પુટ્ટા) એજ પ્રમાણે ઉત્તર દિશામાં અંદરની જે કૃષ્ણરાજિ છે, તે પૂર્વ દિશાની બહારની કૃષ્ણરાજિને સ્પર્શે કરે છે. (દો પુરત્થિમ—પચત્થિમાઓ વાહિરાઓ કણ્ઠરાઈઓ છલંસાઓ) પૂર્વ દિશા અને પશ્ચિમ દિશામાં બહારની જે બે કૃષ્ણરાજિઓ છે તે છ ખૂણવાળી (પટ્ટકોણના આકારની) છે, તથા (દો

કોણે સ્તઃ સ્તુત્યર્થઃ । તથા 'દો ઉત્તર-દાહિણવાહિરાઓ કળ્હરાઈઓ તંસાઓ' દે ઉત્તર-દક્ષિણવાહો ઉત્તર-દક્ષિણદિગમાગવર્ધિર્વર્તિન્યો કળ્હરાજીગ્ધસે પ્રયઃ મન્નાઃ અંશાઃ યયોસ્તે ત્રિકોણેસ્તઃ સ્તુત્યર્થઃ । તથા 'દો પુરત્થિમ-પન્નત્થિમાઓ અન્નિમતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચરંસાઓ' દે પૌરસ્ત્ય-પથિમાભ્યન્તરિકેપૂર્વ-પશ્ચિમદિગમાગા-ભ્યન્તરવર્તિન્યો કળ્હરાજી ચતુરસે ચત્વારઃ મન્નાઃ અંશાઃ યયોસ્તે ચતુષ્કોણે સ્તઃ સ્તુત્યર્થઃ । તથા 'દો ઉત્તર-દાહિણાઓ અન્નિમતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચરંસાઓ' દે 'ઉત્તર-દક્ષિણાભ્યન્તરિકે ઉત્તર-દક્ષિણદિગમાગાભ્યન્તરવર્તિન્યો કળ્હરાજી ચતુરસે ચત્વારોઽસાઃ અંશાઃ યયોસ્તે ચતુષ્કોણે સ્તઃ સ્તુત્યર્થઃ । ઉત્કાર્થઃ સંગ્રહાય ગાથામાહ—
'પુન્ના-વરા છલંસા તંસા પુન દાહિણુત્તરા વગ્ગા ।

અન્નિમતર ચરંસા, સન્ના વિ ય કળ્હરાઈઓ' ॥ ૧ ॥ શ્લોક, પૂર્વાઽપરે પૂર્વ-પશ્ચિમદિગમાગસ્થિતે વર્ધિર્વર્તિન્યો દે કળ્હરાજી પડસે પદ્મકોણે સ્તઃ, તથા દક્ષિણોત્તરે દક્ષિણોત્તરદિગમાગસ્થિતે વાહો વર્ધિર્વર્તિન્યો દે કળ્હરાજી ગ્ધસે જિયાં હેં વે છહ કોણોવાલી હેં । તથા દો ઉત્તર દાહિણ વાહિરાઓ કળ્હરાઈઓ તંસાઓ) ઉત્તરદિશા ઓર દક્ષિણદિશા કે બાહર કી જો દો કળ્હરજિયાં હેં, વે ત્રીન અંશો-કોનોવાલી હેં । તથા-(દો પુરત્થિમવચ્ચત્થિમાઓ અન્નિમતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચરંસાઓ) પૂર્વપશ્ચિમદિશા કી જો ખીતર કી દો કળ્હરાજિયાં હેં વે ચૌલ્હંટી હેં-ચાર કોનોવાલી હેં । (દો ઉત્તરદાહિણાઓ અન્નિમતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચરંસાઓ) ઉત્તર દક્ષિણદિશાકી જો ખીતર કી દો કળ્હરાજિયાં હેં વે ખી ચાર કોનોવાલી હેં હસી અર્થ કો સંગ્રહ કરનેવાલી યહ ગાથા હેં-(પુન્ના-વરા છલંસા હત્યાદિ । પૂર્વાપર-પૂર્વપશ્ચિમદિગમાગ બહિર સ્થિત દો કળ્હરાજિયાં છહ કોને વાલી હેં, તથા દક્ષિણ ઉત્તરદિગમાગબહિઃસ્થિત દો કળ્હરા-

ઉત્તરદાહિણ વાહિરાઓ કળ્હરાઈઓ તંસાઓ) ઉત્તર દિશા અને દક્ષિણ દિશામાં બહારની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે, તે ત્રણ ખૂણવાળી (ત્રિકોણાકારની) છે. તથા (દો પુરત્થિમ-પચ્ચત્થિમાઓ અન્નિમતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચરંસાઓ) પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિશામાં અંદરની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે, તે ચાર ખૂણવાળી (ચોરસાકારની) છે, (દો ઉત્તરદાહિણાઓ અન્નિમતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચરંસાઓ) અને ઉત્તર-દક્ષિણમાં અંદરની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે, તે પણ ચાર ખૂણવાળી છે. એજ અર્થનો સંગ્રહ કરનારી ગાથા નીચે પ્રમાણે છે—'પુન્નાવર' ઇત્યાદિ આ ગાથાનો ભાવાર્થ—પૂર્વાપર-પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિગમાગમાં બહાર આવેલી જે કૃષ્ણરાજિઓ છે ખૂણવાળી છે, દક્ષિણ અને ઉત્તર દિગમાગમાં

ત્રિકોણે સ્તઃ, શેષાઃ સર્વાઃ અપિ ચતુર્દિગ્ભાગાભ્યન્તરવર્તિન્યશ્વત્સોઽપિ કૃષ્ણરાજયઃ
ચતુરસ્રાઃ ચતુષ્કોણા एव सन्तीति संग्रहायार्थः ॥१॥

ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘કળ્પહરાર્દ્ધો ણં મંતે ! કેવદ્વયં આયામેણં, કેવદ્વયાઓ
વિકલ્પમેણં, કેવદ્વયાઓ પરિકલ્પેવેણં પળ્પત્તાઓ ? ’ હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજયઃ ત્વલુ
કિયત્યઃ—કિયત્પરિમાણા આયામેન દૈર્ઘ્યેણ પ્રવ્રજ્ઞાઃ ? , કિયત્યશ્ચ વિષ્કમ્ભેણ
વિસ્તારેણ પ્રવ્રજ્ઞાઃ કિયત્યશ્ચ પરિક્ષેપેણ પરિધિના પ્રવ્રજ્ઞાઃ ? મગવાનાહ—‘ગોયમા !
અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં આયામેણં ’ હે ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજયઃ આયામેન દૈર્ઘ્યેણ
અસંલેયયાનિયોજનસહસ્સાણિ વર્તન્તે, તથા ‘સંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં વિકલ્પમેણં ’
સંલેયયાનિ યોજનસહસ્સાણિ વિષ્કમ્ભેણ વિસ્તારેણ વર્તન્તે, एवम् ‘અસંલેજ્જાઈં
જોયણસહસ્સાઈં પરિકલ્પેવેણં પળ્પત્તાઓ ’ અસંલેયયાનિ યોજનસહસ્સાણિ પરિક્ષે-

જિયાં ત્રીન કોને ચાલી હેં—અર્થાત્ તિલ્હુંટી હેં । ચાકી કી ચારોં દિશાઓં
કી અભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિયાં સય ચાર કોનોં ચાલી હી હેં એસા હસ
ગાથા કા અર્થ હે ।

અથ ગૌતમ પ્રશ્નુ સે પૂછતે હેં કિ—(કળ્પહરાર્દ્ધો ણં મંતે ! કેવદ્વયં
આયામેણં, કેવદ્વયં વિકલ્પમેણં પળ્પત્તા) હે મદન્ત ! એ કૃષ્ણરાજિયાં
આયામ કી અપેક્ષા કિતની લંબી હેં ઓર વિષ્કમ્ભ કી અપેક્ષા કિતની
ચોડી હેં—તથા હનકા પરિક્ષેપ કિનના હે—હસકે ઉત્તર મેં મગવાન્ ને
ઉનસે કહા—(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં આયા-
મેણં) કૃષ્ણરાજિયાં આયામ—લંબાઈ કી અપેક્ષા સે અસંલયાત હજાર
યોજન કી હેં તથા—(વિકલ્પમેણં સંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં) વિસ્તાર
કી અપેક્ષા સે સંલયાત હજાર યોજન કી હેં । ઓર (અસંલેજ્જાઈં

મહાર આવેલી બે કૃષ્ણરાજિઓ ત્રણ ખૂણાવાળી છે, બાકીને એટલે કે ચારે
દિશાઓમાં અંદર આવેલી ચારે કૃષ્ણરાજિઓ ચાર ખૂણાવાળી છે.

હવે ગૌતમ તેમના વિસ્તાર આદિ વિષે આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—
(કળ્પહરાર્દ્ધો ણં મંતે ! કેવદ્વયં આયામેણં કેવદ્વયં વિકલ્પમેણં, પળ્પત્તાઓ ?)
હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓની લંબાઈ કેટલી છે ? તેમની પહોળાઈ કેટલી છે ?
તેમની પરિધિ (પરિમિતિ) કેટલી છે ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રણુ કહે છે—(ગોયમા !) હે ગૌતમ !
(અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં આયામેણં) કૃષ્ણરાજિઓની લંબાઈ અસંખ્યાત
હજાર યોજનની છે, (વિકલ્પમેણં સંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં) અને તેમની
પહોળાઈ સંખ્યાત હજાર યોજનની છે, અને (અસંલેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં

કોણે સ્ત: સ્તર્ય: । તથા ' દો ઉત્તર-દાહિણવાહિરાઓ કળ્હરાઈઓ તંસાઓ ' કે ઉત્તર-દક્ષિણવાગે ઉત્તર-દક્ષિણદિગ્માગચર્ચિર્વર્તિન્યો કળ્હરાજીગ્મ્ને ત્રય: અસ્તા: અંશા: યયોસ્તે ત્રિકોણેસ્ત: સ્તર્ય: । તથા ' દો પુરતિથમ-પચ્ચતિથમાઓ અન્નિતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચરંસાઓ ' કે પૌરસ્તવ-પશ્ચિમાભ્યન્તરિકેપૂર્વ-પશ્ચિમદિગ્માગા-ભ્યન્તરવર્તિન્યો કળ્હરાજી ચતુરસ્રે ચત્વાર: અસ્તા: અંશા: યયોસ્તે ચતુષ્કોણે સ્ત: સ્તર્ય: । તથા ' દો ઉત્તર-દાહિણાઓ અન્નિતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચરંસાઓ ' કે ઉત્તર-દક્ષિણાભ્યન્તરિકે ઉત્તર-દક્ષિણદિગ્માગાભ્યન્તરવર્તિન્યો કળ્હરાજી ચતુરસ્રે ચત્વારોઽસ્તા: અંશા: યયોસ્તે ચતુષ્કોણે સ્ત: સ્તર્ય: । ઉક્તાર્થ: સંગ્રહાય ગાયમાદ-
' પુઞ્વા-વરા છલંસા તંસા પુણ દાહિણુત્તરા વજ્ઞા ।

અન્નિતર ચરંસા, સઘ્વા વિ ય કળ્હરાઈઓ ' ॥ ૧ ॥ શ્લોક,
પૂર્વાઽપરે પૂર્વ-પશ્ચિમદિગ્માગસ્થિતે ચર્ચિર્વર્તિન્યો કે કળ્હરાજી પટ્ટસે પટ્ટકોણે સ્ત:, તથા દક્ષિણોત્તરે દક્ષિણોત્તરદિગ્માગસ્થિતે વાક્ષે ચર્ચિર્વર્તિન્યો કે કળ્હરાજી ત્ર્યસે ત્રિજ્યાં હૈં વે છહ કોણોવાલી હૈં । તથા દો ઉત્તર દાહિણ વાહિરાઓ કળ્હરાઈઓ તંસાઓ) ઉત્તરદિશા ઓર દક્ષિણદિશા કે બાહર કી જો દો કળ્હરજિયાં હૈં, વે ત્રીન અંશો-કોનોવાલી હૈં । તથા- (દો પુરતિથમ-પચ્ચતિથમાઓ અન્નિતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચરંસાઓ) પૂર્વપશ્ચિમદિશા કી જો ભીતર કી દો કળ્હરજિયાં હૈં વે ચૌહુંદી હૈં-ચાર કોનોવાલી હૈં । (દો ઉત્તરદાહિણાઓ અન્નિતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચરંસાઓ) ઉત્તર દક્ષિણદિશાકી જો ભીતર કી દો કળ્હરજિયાં હૈં વે ભી ચાર કોનોવાલી હૈં । હીસી અર્થ કો સંગ્રહ કરનેવાલી યહ ગાથા હૈં- (પુઞ્વા-વરા છલંસા સ્ત્યાદિ । પૂર્વાપર-પૂર્વપશ્ચિમદિગ્માગ ચહિર સ્થિત દો કળ્હરજિયાં છહ કોને વાલી હૈં, તથા દક્ષિણ ઉત્તરદિગ્માગચર્ચિ:સ્થિત દો કળ્હરા-

ઉત્તરદાહિણ વાહિરાઓ કળ્હરાઈઓ તંસાઓ) ઉત્તર દિશા અને દક્ષિણ દિશામાં બહારની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે, તે ત્રણ ખૂણવાળી (ત્રિકોણાકારની) છે. તથા (દો પુરતિથમ-પચ્ચતિથમાઓ અન્નિતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચરંસાઓ) પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિશામાં અંદરની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે, તે ચાર ખૂણવાળી (ચોરસાકારની) છે, (દો ઉત્તરદાહિણાઓ અન્નિતરાઓ કળ્હરાઈઓ ચરંસાઓ) અને ઉત્તર-દક્ષિણમાં અંદરની જે જે કૃષ્ણરાજિઓ છે, તે પણ ચાર ખૂણવાળી છે. એજ અર્થનો સંગ્રહ કરનારી ગાથા નીચે પ્રમાણે છે— ' પુઞ્વાવર ' ઇત્યાદિ આ ગાથાનો ભાવાર્થ—પૂર્વાપર-પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિગ્માગમાં બહાર આવેલી જે કૃષ્ણરાજિઓ છ ખૂણવાળી છે, દક્ષિણ અને ઉત્તર દિગ્માગમાં

અકાં સંખ્યાતયોજનસહસ્રવિસ્તારાં કૃષ્ણરાજિં વ્યતિવ્રજેત્ વ્યતિકામેત્ ; કિન્તુ 'અત્યેગદ્યં કળ્હરાઈંણો વીર્ઘવજ્જા' અસ્ત્યેકકામ્ અસંખ્યાતયોજનસહસ્રવિસ્તારાં કૃષ્ણરાજિં નો વ્યતિવ્રજેત્ નો વ્યતિકામેત્ ।

તદુપસંહરન્નાહ—'એમહાલિયાઓ જાં ગોયમા ! કળ્હરાઈઓ પળ્ણત્તાઓ' હે ગૌતમ ! ઇયદ્મહાલયાઃ ઇયદ્મહત્યઃ સ્વલુ કૃષ્ણરાજયઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—'અત્થિ જાં ભંતે ! કળ્હરાઈસુ ગેહાં ઇ વા, ગેહાવળ્ણાં ઇ વા ?' હે ભદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ કૃષ્ણરાજિણુ ગેહાનિ ગૃહાઃ ઇતિ વા ભવન્તિ ? ગેહાવળ્ણાઃ ગૃહહટ્ઠાઃ ઇતિ ભવન્તિ ? ભગવાન્નાહ—'જો ઇણદ્દે સમદ્દે' હે ગૌતમ ! નાયમર્થઃ સમર્થઃ, કૃષ્ણરાજિણુ ગૃહાઃ, ગૃહાવળ્ણા વા ન ભવન્તીતિભાવઃ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—'અત્થિ જાં ભંતે !

વીર્ઘવજ્જા) કિસી એક કૃષ્ણરાજી તક પહુંચ સકતા હૈ । અર્થાત્ સંખ્યાત હજાર યોજન વિસ્તાર વાલી કૃષ્ણરાજી તક જા સકતા હૈ । કિન્તુ (અત્યેગદ્યં કળ્હરાઈં જો વીર્ઘવજ્જા) અસંખ્યાત હજાર યોજન વિસ્તાર વાલી કૃષ્ણરાજિતક નહીં જા સકતા હૈ । (એમહાલિયાઓ જાં ગોયમા કળ્હરાઈઓ પળ્ણત્તાઓ) ઇતની મહાન હે ગૌતમ ! યે કૃષ્ણરાજિયાં હૈ । અથ ગૌતમસ્વામી પ્રશ્ન સે એસા પૂછતે હૈં કિ—(અત્થિ જાં ભંતે ! કળ્હરાઈસુ ગેહાં ઇ વા, ગેહાવળ્ણાં ઇ વા) હે ભદન્ત ! વ્યા યહ વાત સંભવિત્ હૈ કિ ઇન કૃષ્ણરાજિયોં મેં ઘર હોં ઓર ઘર હાટ હોં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન કહતે હૈં કિ હે ગૌતમ ! (જો ઇણદ્દે સમદ્દે) યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ—અર્થાત્ કૃષ્ણરાજિયોં મેં ન ઘર સંભવિત્ હૈં ઓર ન ગૃહાવળ્ણા હી સંભવિત્ હૈ । ઠીક હૈ—યે સવ વહાં પર નહીં હૈં તો (અત્થિ જાં ભંતે !

સંખ્યાત હજાર યોજનના વિસ્તારવાળી કૃષ્ણરાજિ સુધી તે બંધ શકે છે, પરંતુ (અત્યેગદ્યં કળ્હરાઈં જો વીર્ઘવજ્જા) અસંખ્યાત હજાર યોજનના વિસ્તારવાળી કૃષ્ણરાજિ સુધી તે બંધ શકતી નથી. (એમહાલિયાઓ જાં ગોયમા ! કળ્હરાઈઓ પળ્ણત્તાઓ) હે ગૌતમ ! એટલી બધી વિસ્તૃત (વિશાળ) તે કૃષ્ણરાજિઓ હોય છે.

આટલા બધા વિસ્તારવાળી કૃષ્ણરાજિઓમાં ઘર આદિ છે કે નહીં તે બાબત માટે ગૌતમ સ્વામી આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—(અત્થિ જાં ભંતે ! કળ્હરાઈસુ ગેહાં ઇ વા, ગેહાવળ્ણાં ઇ વા ?) હે ભદન્ત ! શું કૃષ્ણરાજિઓમાં ઘર, હાટ આદિ હોવાનું સંભવી શકે છે ખરું ?

ઉત્તર—(જો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! આ વાત સંભવિત નથી એટલે કે ત્યાં ઘર પણ નથી અને હાટ પણ નથી.

ગૌતમ સંવાગીનો પ્રશ્ન—ઘર, હાટ આદિ ત્યાં સંભવિત ન હોય, તો

પેણ પરિધિના તાઃ કૃષ્ણરાત્રયઃ પ્રજ્ઞાઃ । ગૌતમઃ પૂઞ્ઞતિ- 'કળહરાઈઓ જં મંતે !
 કે મહાલિયાઓ પળ્ળતાઓ ?' હે મદન્ત ! કૃષ્ણરાત્રયઃ સઘ્ન કિમ્માલયઃ
 કિયન્મહત્ત્વાઃ પ્રજ્ઞાઃ ? મગમાનહ- 'ગોયમા ! અયં જં જંબુદીવે દીવે, જાવ-મદ-
 માસં ચીરવપ્જા' હે ગૌતમ ! યદા કથિન્મહદિકો ગાન્-મહાનુભાવો દેવઃ મય્ય-
 માશુઠસંયોગાભિયાતજન્યધ્વનિમૂલકહસ્તવ્ગાવારક્ષ્યાઃ છોટિકા તામિઃ તિમ્મિઃ
 પૂર્વવર્ણિતમેને જમ્બુદીપં દ્વીપં યમા ત્વરિતયાચપલયા વેગવત્તયા યાન્-દિવ્યગત્યા
 એકવિંશતિવારાન્ પ્રદક્ષિણીકૃત્ય પુનરાગચ્છેન્ તયૈવ ગત્યા નિલ્તરમ્ અર્ધમાસં
 યાવત્ વ્યતિવ્રજેત્ તદા 'અત્યેગાયં કળહરાઈ ચીરવપ્જા' અસ્તિ સંભવતિ યદ-

જોયણસહસ્સાઈ પરિકલ્લેવેણં પળ્ળતાઓ) પરિક્ષેપ દ્વન સઘ્ન કા અસંલ્પ્યાત
 હજાર યોજનોં કા હે ।

અપ્ન ગૌતમ પ્રભુ સે પેસા પૂજતે હેં કિ- (કળહરાઈઓ જં મંતે ! કે મહા-
 લિયાઓ પળ્ળતાઓ) હે મદન્ત ! યે કૃષ્ણરાત્રિયાં કિત્તની મહી કહી ગાઈ
 હેં ? હસકે ઉત્તર મેં મગવાન્-ઉનસે કહતે હેં કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ !
 (અયં જં જંબુદીવે દીવે જાવ અદ્ધમાસં ચીરવપ્જા) જપ કોઈ મહદિક
 યાવત્ મહાનુભાવવાલા દેવ ત્રીન ચુટકી યજાને મેં જિતના સમય લગતા
 હેં હત્તે સમયરૂપ કાલ મેં પૂર્વ મેં વર્ણિત હસ સમસ્ત જંબુદીપ કો ત્વરા-
 વાલી યાવત્ દિવ્યગતિ દ્વારા ફક્કીસ વાર પ્રદક્ષિણા દેકર આ જાવે-
 અવ વહી દેવ હસી તરહ કી અપની દિવ્ય ગતિ દ્વારા નિરન્તર-પન્નહ
 ૧૫ દિન તક ચલતા રહે-તવ કહીં જાકર વહ (અત્યેગાયં કળહરાઈ

પરિકલ્લેવેણં પળ્ળતાઓ) તેમની પરિધિ (પરિમિતિ અસંખ્યાત હજાર
 યોજનોની કહી છે.

ગૌતમ સ્વામી હવે એવો પ્રશ્ન કરે છે કે (કળહરાઈઓ જં મંતે ! કે
 મહાલિયાઓ પળ્ળતાઓ ?) હે મદન્ત ! તે કૃષ્ણરાત્રિઓને કેટલી વિચાણ કહી છે ?
 તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે- (ગોયમા !) હે ગૌતમ !
 (અયં જં જંબુદીવે દીવે જાવ અદ્ધમાસં ચીરવપ્જા) કોઈ એક મહદિક આદિ
 વિશેષજ્ઞોવાળો દેવ, પ્રભુ સપટી વગાડતા જેટલો સમય લાગે એટલો સમયમાં
 પૂર્વ વર્ણિત (આ ઉદ્દેશકતા પહેલાં સૂત્રમાં જંબુદીપનો વિસ્તાર અને પરિ-
 ક્ષેપ બતાવ્યો છે) સમસ્ત જંબુદીપની એકત્રીસ વાર પ્રદક્ષિણા કરી લેવાને
 ધારો કે સમર્થ છે. એવો તે દેવ પોતાની તે ત્વરાયુક્ત અને દિવ્ય ગતિથી
 નિરન્તર ૧૫ દિવસ સુધી આશ્ચર્ય કરે, તે મહામુશ્કેલીએ તે (અત્યેગાયં
 કળહરાઈ ચીરવપ્જા) કોઈ એક કૃષ્ણરાત્રિ સુધી પહોંચી શકે છે, એટલે કે

કળ્હરાઈસુ ગામાઈ વા જાવ-સન્નિવેશાઈ વા ? ' હે મદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ કળ્હરાજિપુ ગ્રામાઈતિ વા, યાવત્-નિગમાઈતિ વા, મઢંચાઈતિ વા, કર્ષટાઈતિ વા, પત્તનાનિ ઈતિ વા, દ્રોણમુલાઈતિ વા, આશ્રમા ઈતિ વા, સન્નિવેશાઈતિ વા કિં ભવન્તિ ? મગધાનાહ-'જો ઇણદે સમદે ' હે ગૌતમ ! નાપમર્થઃ સમર્થઃ, કળ્હરાજિપુ ગ્રામાદયો યાવત્-સન્નિવેશા ન મચન્તીતિમાવઃ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ણં ઊરાલા ઘલાહયા સંસેયંતિ, સમ્પુચ્છંતિ, સંવાસંતિ ? ' હે મદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ કળ્હરાજિપુ ઊદારઃ વિશાલઃ ચચાહતાં ચારિવાહકા મેઘા ઇત્યર્થઃ સંસ્વેદન્તિ, સંસ્વેદં પ્રાપ્નુવન્તિ, સંપૃચ્છન્તિ પરસ્પરાઘટ્ટનેન સંપૃચ્છિતા મવન્તિ, સંવર્ષન્તિ ? વૃષ્ટિં કુર્યન્તિ ? મગધાનાહ-' હંતા, અત્થિ, ' હે ગૌતમ ! હન્ત, સત્તમ્

કળ્હરાઈસુ ગામાઈ વા જાવ સન્નિવેશાઈ વા) હે મદન્ત ! એ કળ્હરાજિપો મેં ગ્રામ યાવત્ સન્નિવેશ હેં કયા ? યહાં યાવત્ શબ્દ સે (આકર નગર નિગમ, મઢંચ, કર્ષટ, પત્તન, દ્રોણમુલ, આશ્રમ) હન સ્થાનોંકા સંગ્રહ હુઆ હેં હસકે ઉત્તર મેં પ્રશુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ હે ગૌતમ ! (જો ઇણદે સમદે) યહ અર્થ સમર્થ નહીં હે-અર્થાત્ કળ્હરાજિયાં મેં ગ્રામ સે છેકર સન્નિવેશ તકકે સ્થાન નહીં હેં । (અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ણં ઊરાલા ઘલાહયા સંસેયંતિ) હે-મદન્ત ! કળ્હરાજિયોં મેં કયા ઊદાર-વિશાલ-મેઘ સંસ્વેદ કો પ્રાપ્ત હોતે હેં ? પરસ્પર કે આઘટ્ટન સે કયા વે વહાં સંપૃચ્છિત હેં ? કયા વહાં વે વૃષ્ટિ કરતે હેં ? ઉત્તર મેં પ્રશુ કહતે હેં કિ (હંતા અત્થિ) હાં ગૌતમ ! વહાં પેસા હોતા હેં । ઊદારમેઘ વહાં સંસ્વેદ

(અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ગામાઈ વા જાવ સન્નિવેશાઈ વા ?) શુ. તે. કળ્હરાજિઓમાં ગામથી લઇને સન્નિવેશ પર્યન્તના જનસ્થાનો - હોય છે ? અહીં " જાવ (પર્યન્ત) " પદથી નિગમ, મઢંચ, કર્ષટ, પત્તન, દ્રોણમુલ, અને આશ્રમ " આ સ્થાનોને અહલ કરવામાં આવ્યા છે. તે દરેકનો અર્થ તમ સ્થાપના સૂત્રમાં આવ્યો છે.

મહાવીર પ્રશ્નને ઉત્તર—(જો ઇણદે સમદે) હે ગૌતમ ! આ વાત પણ સંભવિત નથી. કળ્હરાજિઓમાં ગામ આદિ કોઈ પણ સ્થાન સંભવી શકતું નથી.

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—(અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈસુ ણં ઊરાલા ઘલાહયા સંસેયંતિ) હે મદન્ત ! કળ્હરાજિઓમાં શું ઉદાર (વિશાળ) મેઘ સંસ્વેદન પામે છે ? પરસ્પરના આઘટ્ટન (સંયોગથી) શું તેઓ સંપૃચ્છિત (સંયોજિત એકત્રિત) થાય છે ? શું તેઓ ત્યાં વૃષ્ટિ વરસાવે છે ?

મહાવીર પ્રશ્નને ઉત્તર—" હંતા, અત્થિ ", હા, ગૌતમ ! ત્યાં એવું

કૃષ્ણરાજિપુ મહાન્તો મેઘાઃ સંસ્થિવન્તિ, સંમૂર્ચ્છન્તિ વર્ષન્તિ ચ, इति, गौतमः पृच्छति—‘ तं भन्ते । किं देवो पकरेइ, असुरो पकरेइ, नागो पकरेइ ? हे भदन्त ! कृष्णराजिपु तत्-संस्वेदनं. संमूर्च्छनं, संवर्षणं च किं देवः प्रकरोति, असुरः प्रकरोति, नागो वा प्रकरोति ? भगवानाह—‘ गोयमा । देवो पकरेइ, णो असुरो, णो नागो पकरेइ’ हे गौतम ! कृष्णराजिपु मेघानां संस्वेदनादिकं देवः प्रकरोति, असुरो नागश्च न प्रकुरुतः अमुरकुमारनागकुमाराणां तत्र गमनासंभवात् । गौतमः पृच्छति—‘अत्थि णं भन्ते ! कण्हराईसु वायरे धणियसदे’ हे भदन्त ! अस्ति संभवति खलु कृष्णराजिपु वादरः स्थूलः स्तनितशब्दः घनगर्जनात्मकः ? भगवानाह—‘ जहा उराला तहा ’ यथा उदारा मेघाः कृष्णराजिपु संस्थिद्यन्ति इत्यादि प्रति-

કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં, સંમૂર્ચ્છિત હોતે હૈં ઓર વૃષ્ટિ કરતે હૈં । હસ પર ગૌત-મસ્વામી પ્રશ્ન સે પેમા પૂછતે હૈં કિ—(તં ભંતે ! કિં દેવો પકરેइ, અસુરો પકરેइ, નાગો પકરેइ) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં વિશાલ મેઘો કા સંસ્વેદન સંમૂર્ચ્છન ઇવં-સંવર્ષણ કૌન કરતા હૈ—કયા દેવ કરતા હૈ, યા અસુર કરતા હૈ ? યા નાગ કરતા હૈ ? ઉત્તર દેતે હુએ પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હૈં કિ—(ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! મેઘોં કા સંસ્વેદન આદિ (દેવો) દેવ (પકરેइ) કરતા હૈ । (ણો અસુરો ણો નાગો પકરેइ) અસુર નહીં કરતા હૈ ઓર ન નાગ હી કરતા હૈ । કયોં કિ અસુરકુમાર ઓર નાગકુમાર કા વહાં ગમન હી સંભવતા નહીં હૈ । ગૌતમ પુનઃ પ્રશ્ન સે પૂછતે હૈં કિ—(અત્થિ ણં ભંતે ! કણ્ઠરાઈસુ વાયરે ધણિયસદે) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં મેં કયા વાદર સ્તનિત-મેઘનિર્ઘોષ હોતા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન

થાય છે-વિશાળ મેઘ ત્યાં સંસ્વેદન પામે છે, સંમૂર્ચ્છિત થાય છે અને વૃષ્ટિ વરસાવે છે.

પ્રશ્ન—(તં ભંતે ! કિં દેવો પકરેइ, અસુરો પકરેइ, નાગો પકરેइ ?) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં વિશાળ મેઘોનું સંસ્વેદન, સંમૂર્ચ્છન, અને સંવર્ષણ કેણુ કરે છે ? શું દેવ કરે છે ? અસુરકુમાર કરે છે ? કે નાગકુમાર કરે છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! મેઘોનું સંસ્વેદન આદિ (દેવો પકરેइ) દેવ કરે છે, (ણો અસુરો ણો નાગો પકરેइ) અસુરકુમાર કરતા નથી અને નાગકુમાર પણ કરતા નથી. તેનું કારણ એ છે કે અસુરકુમાર અને નાગકુમારનું ત્યાં ગમન જ સંભવિત નથી.

પ્રશ્ન—(અત્થિ ણં ભંતે ! કણ્ઠરાઈસુ વાયરે-ધણિય સદે ?) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં શું વાદર સ્તનિત શબ્દ એટલે કે મેઘ ગર્જનનો અવાજ થાય છે ?

પાદિતમ્ તથા તત્ર વાદરઃ સ્તનિતશબ્દોઽપિ યનગર્જનાદ્યકો માત્યેવેતિ માત્રઃ ।
 ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘ અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈંસુ વાયરે આઝકાણ, વાયરે અગણિ-
 કાણ, વાયરે વણસ્સહકાણ ? ’ મદન્ત ! અત્થિ સંભવતિ સન્નુ કુળ્ણરાજિણુ વાદરઃ
 અપ્પકાય, વાદરઃ અગ્નિકાય, વાદરો વનસ્પતિકાયઃ ? મગ્ગાનાહ—‘ ણો ઇણદ્દે
 સમંદ્દે ’ હે ગૌતમ ! નામમર્થઃ સમર્થઃ, કુળ્ણરાજિણુ વાદરાઃ અપ્પકાયાદયો ન સંમ-
 વન્તિ, તેષાં તત્ર સ્વસ્વસ્થનાત્વામાવાન્, કિન્નુ ‘ ણળ્ણતથ વિગ્ગહગહસમાવજ્જ-
 ણ’ ‘ ન ’ ઇતિશબ્દેન યોઽયં કુળ્ણરાજિણુ વાદરાપ્પકાયાદીનાં નિપેથઃ કૃતઃ, સ
 વિગ્ગહગતિસમાપન્નકેન અન્યત્ર ચોદ્વન્યઃ, તત્રાપિ વિગ્ગહગતિગમાવચ્ચા વાદરાપ્પકાયા-

વનસે કહતે હું કિ (જહા ઝરાલા તહા) હે ગૌતમ ! જિસ પ્રકાર સે હમને
 યહ કહા હે કિ ઇન કુળ્ણરાજિયોં મેં ઉદાર મેઘોં કા સંસ્વેદન આદિ
 કાર્ય હોતા હૈ—ઁસી પ્રકાર સે યહ ભી સમક્ષના ચાહિયે કિ ઇન કુળ્ણ-
 રાજિયોં મેં મેઘોં કા ગર્જનરૂપ શબ્દ ભી હોતા હૈ । અથ ગૌતમ પૂછતે હૈ
 (અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈંસુ વાયરે આઝકાણ વાયરે અગણિકાણ, વાયરે
 વણસ્સહકાણ) હે મદન્ત ! કુળ્ણરાજિયોંમેં વાદર અપ્પકાય, વાદર અગ્નિ-
 કાય ઓર વાદર વનસ્પતિકાય હૈ કયા ? ઉત્તર મેં પ્રશ્ન કહતે હૈ કિ
 (ણો ઇણદ્દે સમંદ્દે) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ—અર્થાત્ કુળ્ણ-
 રાજિયોં મેં વાદર અપ્પકાય આદિ સ્વસ્થાન કા અભાવ હોને સે નહીં હૈ ।
 (ણળ્ણતથ વિગ્ગહગહસમાવજ્જણ) પરન્તુ યેસા જો યહ નિપેથ વચન
 હૈ વહ વિગ્ગહગતિ સમાપન્ન જીવોં કે સિવાય હી કહા ગયા જાનના
 ચાહિયે । કયોં કિ વિગ્ગહગતિસમાપત્તિ સે વાદર અપ્પકાય આદિકોં કા

ઉત્તર—(જહા ઝરાલા તહા) હે ગૌતમ ! જેવી રીતે કુળ્ણરાજિઓમાં
 વિશાળ મેઘોનું સંસ્વેદન આદિ કાર્યો થાય છે, એજ પ્રમાણે કુળ્ણરાજિઓમાં
 મેઘોના ગર્જન રૂપ બાદર સ્તનિત શબ્દો પણ થાય છે, એમ સંભવું.

પ્રશ્ન—(અત્થિ ણં મંતે ! કળ્હરાઈંસુ વાયરે આઝકાણ, વાયરે અગણિકાણ,
 વાયરે વણસ્સહકાણ ?) હે મદન્ત ! કુળ્ણરાજિઓમાં શું બાદર અપ્પકાય, બાદર
 અગ્નિકાય અને બાદર વનસ્પતિકાય હોય છે ?

ઉત્તર—(ણો ઇણદ્દે સમંદ્દે) હે ગૌતમ ! એ વાત શક્ય નથી. એટલે
 કે કુળ્ણરાજિઓમાં બાદર અપ્પકાય આદિ હોતાં નથી કારણ કે ત્યાં તેમના
 સ્વસ્થાનનો અભાવ હોય છે. (ણળ્ણતથ વિગ્ગહગહસમાવજ્જણ) પરન્તુ
 આ નિપેધાત્મક કથન વિગ્ગહગતિમાં વર્તમાન જીવો સિવાયના જીવોને જ
 લાગુ પડે છે, કારણ કે વિગ્ગહગતિમાં વર્તમાન બાદર અપ્પકાય આદિનો
 ત્યાં સંભાવ હોઈ શકે છે.

દીનો સંભવાત્ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘અતિથિ ણં મંતે ! ચંદિમ-સૂરિય-ગહગણ-
નક્ષત્ર-તારારૂપા ? ’ હે ભદન્ત ! સન્તિ સ્વલુ કૃષ્ણરાજિષુ ચન્દ્ર-સૂર્ય-ગ્રહગણ-
નક્ષત્ર-તારારૂપાઃ ? ભગવાન્ આદ-‘જો ઇણદ્દે સમદ્દે ’ હે ગૌતમ ! નાયમર્થઃ
સમર્થઃ કૃષ્ણરાજિષુ ચન્દ્રાદયો ય્યોતિષ્કાન ભવન્તિ, કૃષ્ણરાજીનામત્યન્તાન્ધકાર-
મયત્વાત્ તત્ર તેષાં સ્વસ્થાનત્વાસંભવાત્ । ગૌતમઃ પુનઃ પૃચ્છતિ-‘અતિથિ ણં કણ્ઠ-
રાઈસુ ચંદામા ઇ વા, સૂરામા ઇ વા ? ’ હે ભદન્ત ! અસ્તિ સંભવતિ સ્વલુ કૃષ્ણ-
રાજિષુ ચન્દ્રામા, ચન્દ્રપ્રમા ઇતિ વા, સૂરામા સૂર્યપ્રમા ઇતિ વા ? ભગવાનાદ-‘જો ઇણદ્દે
સમદ્દે ’ હે ગૌતમ ! નાયમર્થઃ સમર્થઃ કૃષ્ણરાજિષુ ચન્દ્રપ્રમાદીનાં પ્રતિહતપ્રકાશ-

સદ્ભાવ વહાં હો સકતા હૈ । અવ ગૌતમ પ્રશ્નુ સે પૂછતે હૈં કિ (અતિથિ ણં
મંતે ! ચંદિમસૂરિયગહગણનક્ષત્રતારારૂપા) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિયોં
મેં ચન્દ્ર, સૂર્ય, ગ્રહગણ નક્ષત્ર એવં તારારૂપ હૈં કયા ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્નુ
ઉનસે કહતે હૈં કિ હે ગૌતમ ! (જો ઇણદ્દે સમદ્દે) કૃષ્ણરાજિયાં અત્યન્ત
અંધકાર મય હૈં-અતઃ હનમેં ચન્દ્રાદિક ય્યોતિષ્ક નહીં હૈ । કયોં કિ
હનકા હનમેં સ્વસ્થાન નહીં હૈ । (અતિથિ ણં કણ્ઠરાઈસુ ચંદામા ઇ વા,
સૂરામા ઇ વા) હે ભદન્ત ! તો કયા કૃષ્ણરાજિયોં મેં ચન્દ્ર કી પ્રમા ઓર
સૂર્ય કી પ્રમા બી નહીં હૈ ? હસ ગૌતમ કે પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં પ્રશ્નુ ઉનસે
કહતે હૈં કિ (જો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ-
અર્થાત્ કૃષ્ણરાજિયોં મેં ચન્દ્રપ્રમા એવં સૂર્યપ્રમા હૈં તો સહી પર વે પ્રતિ-
હત પ્રકાશ વાલી હોને કે કારણ ઉનકાં વહાં રહના બી નહીં રહને કે

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (અતિથિ ણં
મંતે ! ચંદિમ, સૂરિય, ગહગણનક્ષત્રતારારૂપા) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓમાં
શું ચન્દ્રમા, સૂર્ય, ગ્રહગણ, નક્ષત્રો, અને તારાઓ હોય છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! જો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજિઓ
અત્યંત અંધકારમય હોય છે, તેથી તેમાં ચન્દ્રમા આદિ જ્યોતિષિક દેવો
હોતા નથી, કારણ કે તેમનું ત્યાં સ્વસ્થાન નથી.

પ્રશ્ન—(અતિથિ ણં મંતે ! કણ્ઠરાઈસુ ચંદામા ઇ વા, સૂરામા ઇ વા ?) હે
ભદન્ત ! તો શું કૃષ્ણરાજિઓમાં ચન્દ્રની પ્રમા (પ્રકાશ) અને સૂર્યનો
પ્રકાશ હોય છે ?

ઉત્તર—(જો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! આ વાત પણ શક્ય નથી.
કૃષ્ણરાજિઓમાં ચન્દ્ર અને સૂર્યની પ્રમા હોય છે તો ખરી, પણ તેનું ત્યાં
અંધકાર રૂપે પરિણમન થઈ જવાને કારણે તે પ્રમા ત્યાં હોવા છતાં પણ
નહીં જેવી જ લાગે છે.

તયા વિષમાનત્વેઽપિ અભિનુમાનમાવતાન્ । ગૌતમઃ પૂછતિ—‘કળ્હરાઈઓ જાં મંતે ! કેરિસિયાઓ વન્નેણં પળ્ણત્તાઓ ?’ હે મદન્ત ! કુળ્હરાજયઃ તાડુ કોદશ્યો વર્ણેન પ્રજ્ઞતાઃ ? મંગવાનાહ—‘ગોયમા ! કાલાઓ, જાન-લિપ્પામેવ વીઈવણ્ણા ’ હે ગૌતમ ! કુળ્હરાજયો વર્ણેન કુળ્ણાઃ અન્ધકારમવતાન્, અવરુત્તમસ્કાયત્વ અતિમયદૂરતાત્ દેવોઽપિ યાવત્-તિપમે । વ્યતિપમેન્ રુટિમેન્ ઉલ્લહુવ મચ્છેન્, યાવત્કરણાત્-કાલાવભાતાઃ, ગમ્મીરોમહર્પજનન્યઃ, ભીમાઃ, ઉત્ત્રાસજનિકાઃ, પરમકુળ્ણાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, દેવોઽત્યેકકો યસાત્પથમતયા ટ્ઠ્ઠા શુભ્યેન્, અયામિસમાગ-

જેસા છે । ગૌતમ પ્રશ્ન સે પુનઃ પ્રશ્ન કરતે હું (કળ્હરાઈઓ જાં મંતે ! કેરિસિયાઓ વન્નેણં પળ્ણત્તાઓ) હે મદન્ત ! જે કુળ્હરાજિયાં વર્ણ સે ફેસી કહી ગઈ હું—અર્થાત્ જન કુળ્હરાજિયોં કા વર્ણ કેસા છે ? ઉત્તર મેં પ્રશ્ન કહતે હું કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (કાલાઓ જાવ લિપ્પામેવ વીઈ-વણ્ણા) જે કુળ્હરાજિયાં અન્ધકારમય હોને કે કારણ વર્ણ સે કાલી કહી ગઈ હું । અતેવ તમસ્કાય કી તરહ અતિમદૂર હોને કે કારણ હન્ને દેવ મી યાવત્ વહુત હી શીઘ્રતા કે સાથ ઉલ્લંઘિત કર ચલા જાતા છે । યહાં યાવત્પદ સે (કાલાવભાસાઃ ગમ્મીરોમહર્પજનન્યઃ ભીમાઃ ઉત્ત્રાસજનિકાઃ, પરમકુળ્ણા પ્રજ્ઞતાઃ) જન કુળ્હરાજિયોં મેં જન પૂર્વોક્ત વિશેષણોં કો મી ગૃહીત કરલેના ચાહિયે—યહ પ્રકટ કિયા ગયા છે । જન વિશેષણોં કા અર્થ તમસ્કાય કે પ્રકરણ મેં લિખા જા ચુકા છે । તાત્પર્ય કહને કા યહ છે કિ કોઈ એક દેવ યદિ હન્ને સર્વવ્રતમ દેવના છે તો વહ દેવલે હી ધ્રુમિત હો ઉઠતા છે । યદિ કશાચિત્ કોઈ દેવ જનકે સમક્ષ

ગૌતમ સ્વામીનો પ્રશ્ન—(કળ્હરાઈઓ જાં મંતે ! કેરિસિયાઓ વન્નેણં પળ્ણત્તાઓ ?) હે મદન્ત ! તે કુળ્હરાજિઓ વર્ણ કેવી છે ? એટલે કે કેવા વર્ણની છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (કાલાઓ જાવ લિપ્પામેવ વીઈવણ્ણા) તે કુળ્હરાજિઓ અન્ધકારમય હોવાથી વર્ણ કાળી કહી છે. તેનો વર્ણ તમસ્કાયના જેવો જ ભયંકર હોય છે, જેવું પશુ અતિથય શીઘ્રતાથી ઓળંગીને પાર કરીને ચાલ્યા જાય છે. અહીં “ જાવ (યાવત્) ” પદથી (કાલાવભાસાઃ ગમ્મીરોમહર્પજનન્યઃ, ભીમાઃ ઉત્ત્રાસજનિકાઃ પરમકુળ્ણા પ્રજ્ઞતાઃ) આ પૂર્વોક્ત વિશેષણો પણ અહણ કરવા ભેદજો, એમ બતાવવામાં આવ્યું છે. આ વિશેષણોનો અર્થ તમસ્કાયના પ્રકરણમાં આપવામાં આવ્યો છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે કોઈક દેવ જો તેમને સીધી પહેલીજવાર દેખે છે, તો તેમને ભોતા

છેત્, તતઃ પથાત્, શીઘ્રં શીઘ્રં, ત્વરિતં ત્વરિતમિતિ સંગ્રાહ્યમ્ । ગૌતમઃ પુચ્છતિ-
'કળ્હરાઈણં મંતે ! કતિ નામધેજ્ઞા પળ્ણત્તા ?' હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજીનાં લલુ
કતિ નામધેયાઃ પ્રત્તપ્તાઃ ? મગવાનાહ- 'ગોયમા ! અદ્ધ નામધેજ્ઞા પળ્ણત્તા' હે
ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજીનામ્ અદ્ધ નામધેયાઃ પ્રત્તપ્તાઃ, કૃષ્ણરાજીનામ્ અપ્પટ્ટી નામાનિ,
તાન્યેવાહ- 'તં જહા' તથથા- 'કળ્હરાઈં વા, મેહરાઈં વા, મેવાં વા, માઘવઈં વા,
વાયપલિહાં વા, વાયપલિલ્લોભાં વા, દેવપલિહાં વા, દેવપલિલ્લોભાં વા
વા' કૃષ્ણરાજિરિતિ વા, કૃષ્ણવર્ણરેલામયપુદ્ગલત્વાત્ 'કૃષ્ણરાજિઃ' ઇતિનામ
૧, મેઘરાજિરિતિ વા, કૃષ્ણમેઘરેલા સદૃશત્વાત્ 'મેઘરાજિઃ' ઇતિનામ ૨,
મઘા ઇતિ વા, અન્ધકારમયત્વાત્ પૃથ્વિનરુપૃથિવીસદૃશત્વાત્ 'મઘા' ઇતિનામ ૩,

જાકર ફનમેં પ્રવિષ્ટ હો જાતા હે તો શીઘ્ર હી વહ ફનમેં સે કાયગતિ કે
અતિવેગ સે ઓર મનોગતિ કે અતિવેગ સે યુક્ત હોકર બાહર નિકલ
આતા હે । અવ ગૌતમસ્વામી પ્રશ્ન સે (કળ્હરાઈણં મંતે !) ફન કૃષ્ણરા-
જિયોં કે હે ભદન્ત ! (કહનામધેજ્ઞા પળ્ણત્તા) કિતને નામ હેં, ઁસા
પૂછતે હેં ઓર પ્રશ્ન ફસ પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં ઁનસે (ગોયમા ! અદ્ધ નામધેજ્ઞા
પળ્ણત્તા) હે ગૌતમ ! ફન કૃષ્ણરાજિયોં કે આઠ નામ હેં-ઁસા કહતે હેં
(તં જહા) વે આઠ નામ ફસ પ્રકાર સે હેં-(કળ્હરાઈં વા) કૃષ્ણવર્ણ
વાલે પુદ્ગલોં કી રેલા સ્વરૂપ હોને કે કારણ ફનકા પહિલા નામ (કૃષ્ણ-
રાજિ) ઁસા હે । (મેહરાઈં વા) કૃષ્ણમેઘોં કી રેલા જૈસી હોને કે
કારણ ફનકા દૂસરા નામ (મેઘરાજિ) ઁસા હે । છઠવેં નરક કી પૃથિવી
કે સમાન અન્ધકાર મય હોને કે કારણ ફનકા તૈસરા નામ (મઘા)

તેના મનમાં ક્ષોભ અનુભવે છે. કહાચ કોઈ દેવ તે કૃષ્ણરાજિઓની પાસે
જઈને તેમાં પ્રવેશ કરે છે, તો તે કાયગતિ અને મનોગતિના અતિવેગથી
યુક્ત થઈને તે કૃષ્ણરાજિઓમાંથી શીઘ્રતાથી બહાર નીકળી આવે છે.

પ્રશ્ન—(કળ્હરાઈણં મંતે ! કહ નામધેજ્ઞા પળ્ણત્તા ?) હે ભદન્ત ! તે
કૃષ્ણરાજિઓનાં કેટલાં નામ કહ્યાં છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! અદ્ધ નામધેજ્ઞા પળ્ણત્તા) હે ગૌતમ ! તે કૃષ્ણરાજિ-
ઓનાં આઠ નામ કહ્યાં છે—(તં જહા) તે આઠ નામ નીચે પ્રમાણે છે—
(કળ્હરાઈં વા) (૧) તે કૃષ્ણરાજિઓ કાળાં વર્ણનાં પુદ્ગલોની રેખા રૂપ
હોવાથી તેમનું પહેલું નામ “કૃષ્ણરાજિ” છે. (૨) (મેહરાઈં વા) કૃષ્ણ
મેઘોની રેખા જેવી હોવાને કારણે તેમને “મેઘરાજિ” પણ કહે છે. (૩)
છઠ્ઠી નારકની પૃથ્વી જેવી અન્ધકારમય હોવાને લીધે તેનું ત્રીજું નામ (મઘા)

માધવતી રૂપિતિ વા, અત્યન્તાન્વકારાટ્ટત્વાન્ સપ્તમનારકવૃષિવિગ્રહાઃપાત્ ' માધ-
વતી ' રૂપિતિ નામ ૪, વાતપરિધા રૂપિતિ વા, વાત્યાવન્ અન્વકારમયત્વાન્ દુર્લ્લ-
ધ્યત્વાન્વ ' વાતપરિધા ' રૂપિતિ નામ ૫, -વાતપરિક્ષોભા રૂપિતિ વા, વાત્યાવદેવાન્વ-
કારાટ્ટત્વાન્ પરિક્ષોભદેવત્વાન્વવાતપરિક્ષોભા રૂપિતિ નામ ૬, ' દેવપરિધા ' રૂપિતિ વા,
દેવાનામ્ અર્ગલેવ દુર્લ્લધ્યત્વાન્ ' દેવપરિધા ' રૂપિતિ નામ ૭, દેવપરિક્ષોભા રૂપિતિ વા દેવાનાં

પેસા છે । (મધા) યહ છટ્થે નરક કા નામ છે । (માધવી) યહ સપ્તમ
નરક કા નામ છે-સો સપ્તમ નરક જૈસા ગાઢ અંધકાર સે આટ્ટ રહતા
છે ઉસી પ્રકાર યે કૃષ્ણરાજિયાં ભી અત્યન્ત-ગાઢ-અન્ધકાર સે આટ્ટ
રહતી હૈં અતઃ-ઇનકા ચૌથા નામ (માધવદૈવ વા) પેસા છે । (વાયપલિહાઈ
વા) જૈસે વધૂરા (આંધી) અન્ધકારમય હોતા છે ઓર દુર્લ્લધ્ય હોતા છે-
ઉસી પ્રકાર સે યે કૃષ્ણરાજિયાં ભી હૈં-અતઃ-ઉસકે સાદૃશ્ય સે ઇનકા
ભી પાંચવાં નામ (વાતપરિધા) પેસા છે । (વાયપલિક્ષોભાઈ વા) તથા
વાત્યા-વધૂરે કી તરહ હી અન્ધકાર સે આટ્ટ હોને કે કારણ ઓર
પરિક્ષોભ કી હૈતુભૂત હોને કે કારણ ઇનકા ૬ વાં નામ (વાતપરિક્ષોભા)
પેસા છે । (દેવપલિહાઈ વા) દેવોં કે લિયે યે અર્ગલા કી તરહ દુર્લ્લધ્ય
હોતી હૈં-ઇસ કારણ ઇનકા ૭ વાં નામ દેવ પરિધા પેસા છે । (દેવપલિ-
ક્ષોભાઈ વા) દેવોં કે લિયે પરિક્ષોભ કી કારણ હોને સે ઇનકા ૮ વાં
નામ (દેવપરિક્ષોભા) પેસા છે । ઇસ તરહ યે ઇનકે આઠ સાધક નામ હૈં ।

(મધા) છે. (૪) (માધવી) આ સાતમી નરકનું નામ છે. જેમ સાતમી
નરક અતિશય ગાઢ અંધકારથી છવાયેલી છે, તેમ આ કૃષ્ણરાજિઓ પણ ગાઢ
અંધકારથી આગ્રહિત હોય છે, તેથી તેનું ચાથું નામ (માધવદૈવ વા) ' માધવી '
છે. (૫) (વાયપલિહાઈ વા) જેવી રીતે વધૂરા (વંદાગિયો) અંધકારમય
અને દુર્લ્લધ્ય (જેને પાર જવું સુરકેલ થઈ પડે એવો) હોય છે, તેમ કૃષ્ણરાજિઓ
પણ અંધકારમય અને દુર્લ્લધ્ય હોય છે. તે કારણે તેમનું પાંચમું નામ
" વાતપરિધા " છે. (૬) (વાયપલિક્ષોભાઈ વા) તથા વધૂરાની જેમ અંધ-
કારથી વીરળાયેલ હોવાને કારણે પરિક્ષોભની જનક હોવાને લીધે-તેમને
" વાતપરિક્ષોભા " પણ કહે છે. (દેવપલિહાઈ વા) તે દેવાને માટે અર્ગલા
ની જેમ દુર્લ્લધ્ય હોવાને કારણે તેનું સાતમું નામ " દેવપરિધા " છે. (૮)
(દેવપલિક્ષોભાઈ વા) દેવામાં પણ પરિક્ષોભ ઉત્પન્ન કરનારી-હોવાથી તેનું
આઠમું નામ " દેવ પરિક્ષોભા " છે. આ રીતે તેના આઠ સાધક
(અર્થ પ્રમાણે જ) નામ છે.

પરિણોભદેતુત્વાત્ 'દેવપરિણોમા' इति नाम ८, इत्यष्टौ नामानि भवन्ति । गौतमः पृच्छति—' कण्हराईओ णं भंते ! किं पुढवीपरिणामाओ, आउपरिणामाओ, जीव परिणामाओ, पोग्गलपरिणामाओ ? ' हे भदन्त ! कृष्णराजयः खलु किम् पृथिवी-परिणामाः ? अथवा अपपरिणामाः ? जलपरिणामाः ? उताहो जीवपरिणामाः ? अथवा पुद्गलपरिणामाः भवन्ति ? भगवानाह—'गोयमा ! पुढवीपरिणामाओ, हे' गौतम ! कृष्णराजयः पृथिवीपरिणामाः सन्ति, एवम् 'जीवपरिणामाओ वि' जीव-परिणामाः अपि सन्ति, तथा ' पोग्गलपरिणामाओ वि, पुद्गलपरिणामाः अपि सन्ति, किन्तु ' णो आउपरिणामाओ ' नो अपपरिणामाः कृष्णराजयो भवन्ति । गौतमः पृच्छति—' कण्हराईसु णं भंते ! सव्वे पाणा, भूया, जीवा, सत्ता उववण्ण-पुब्बा ! ' हे भदन्त ! कृष्णराजिषु सर्वे प्राणाः, भूताः, जीवाः, सत्त्वाः, किम्

अथ गौतमस्वामी पूछते हैं कि—(कण्हराईओ णं भंते ! किं पुढवी परिणामाओ, आउपरिणामाओ, जीवपरिणामाओ, पोग्गलपरिणामाओ) हे भदन्त ! ये कृष्णराजियां किस के परिणामरूप हैं—यथा पृथिवी के ये परिणामरूप हैं ? या जलके परिणामरूप हैं ? या जीव के परिणामरूप हैं ? या पुद्गल के परिणामरूप हैं ? इसके उत्तर में प्रभु उनसे कहते हैं—(गोयमा) हे गौतम ! (पुढविपरिणामाओ) ये कृष्णराजियां पृथिवी के परिणामरूप हैं, (जीवपरिणामाओ वि) जीव के परिणामरूप भी हैं । तथा (पोग्गलपरिणामाओ वि) पुद्गल के परिणामरूप भी हैं । परन्तु ये कृष्णराजियां (णो आउपरिणामाओ) जलके परिणामरूप नहीं हैं । अथ गौतमस्वामी प्रभु से ऐसा पूछते हैं कि—(कण्हराईसु णं भंते ! सव्वे पाणा, भूया, जीवा, सत्ता, उववण्णपुब्बा) हे भदन्त ! इन कृष्णराजियां

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન કરે છે કે (કણ્ઠરાઈઓ ણં ભંતે ! કિં પુઢવી પરિણામાઓ, આઉ પરિણામાઓ, જીવ પરિણામાઓ, પોગ્ગલ પરિણામાઓ ?) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણરાજિઓ કેના પરિણામ રૂપ છે—સુ તેઓ પૃથ્વીના પરિણામ રૂપ છે ? કે જળના પરિણામ રૂપ છે ? કે જીવના પરિણામ રૂપ છે ? કે પુદ્ગલના પરિણામ રૂપ છે ?

તેનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને કહે છે કે (ગોયમા ! હે ગૌતમ ! (પુઢવિ પરિણામાઓ) તે કૃષ્ણરાજિઓ પૃથ્વીના પરિણામ રૂપ છે, (જીવ પરિણામાઓ વિ) જીવના પરિણામ રૂપ છે, (પોગ્ગલ પરિણામાઓ વિ) અને પુદ્ગલના પરિણામ રૂપ પણ છે, પરન્તુ તેઓ (આઉ પરિણામાઓ) જળના પરિણામ રૂપ નથી.

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે (કણ્ઠરાઈસુ ણં

ઉત્પન્નપૂર્વાઃ ? પૂર્વમ્ઉત્પન્નાઃ ? મગધાનાહ—‘ હંતા, ગોયમા ! અસદ્, અદુવા અણંત-
ક્ષુત્તો ’ હે ગૌતમ ! કૃષ્ણરાજિણુ સર્વે પ્રાણાદયો જીવાઃ અપ્કત્ ભૂયો ભૂયઃ,
અથવા અનન્તકૃત્વઃ અનન્તવારાન્ પૂર્વમ્ ઉત્પન્નાઃ ‘ જો ચેવ ણં વાયરઆઝકાઈય-
ત્તાણ, વાયરઅગ્નિકાઈયત્તાણ વા, વાયરવણસસાઈકાઈયત્તાણ વા ’ કિન્તુ નો ચેવ
સલ્લુ વાદરાપ્કાધિકૃતયા, નો વા વાદરાગ્નિકાધિકૃતયા, નૈવ વા વાદરવનસ્પતિ-
કાધિકૃતયા, તે પ્રાણાદયઃ પૂર્વમ્ ઉત્પન્નાઃ ઉત્પન્નંતે, ઉત્પન્નંતે વા તેવાં તથા
સ્વસ્થાનત્વાભાવાત્ । ઇતિ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

લોકાન્તિકદેવવક્તવ્યતા ।

કૃષ્ણરાજિપસ્તાવાત્ તન્નિકૃત્વર્તિલોકાન્તિક દેવચિમાનાદિવક્તવ્યતામાહ—
‘ એસિણં મંતે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એસિ ણં અટ્ટુપ્પહં કળહરાઈણં અટ્ટુસુ ઉવાસંતરેસુ
અટ્ટ લોગંતિયચિમાણાપણ્ણત્તા, તંજહા—અચ્ચી?, અચ્ચિમાલી?,

મેં સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, સમસ્ત સત્ત્વ કયા પહિલે
ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈ ? ઉત્તર મેં પ્રશ્ન કહતે હૈં કિ—(હંતા ગોયમા ! અસદ્,
અદુવા અણંતક્ષુત્તો’ હાં, ગૌતમ ! અનેક વાર અથવા અનન્તવાર સમ-
સ્તપ્રાણ આદિજીવ વહાં પૂર્વ મેં ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈં । (જો ચેવ ણં વાયર
આઝકાઈયત્તાણ, ‘વાયરઆગ્નિકાઈયત્તાણ વા, વાયરવણસસાઈકાઈય-
ત્તાણ વા) પરન્તુ વે વહાં વાદર અપ્કાધિક રૂપ સે વાદર અગ્નિકાધિક
રૂપ સે ઓર વાદર વનસ્પતિકાધિક રૂપ સે ન પહિલે ઉત્પન્ન હુણ હૈં,
ન ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઓર ન ઉત્પન્ન હોંગે । કયોં કિ ઉનકા વહાં પર
સ્વસ્થાન નહીં હૈ ॥ સૂ૦૨ ॥

મંતે ! સવ્વે પાણા, ભૂયા, જીવાં સત્તા ઉત્તરણા પુત્તરા ?) હે ભદન્ત ! તે કૃષ્ણ-
રાજિઓમાં શુ’ સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સત્ત્વ
પૂર્વ (પહેલાં) ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યાં છે ?

ઉત્તર—(હંતા, ગોયમા ! અસદ્ અદુવા અણંતક્ષુત્તો વા) હા, ગૌતમ !
સમસ્ત પ્રાણ આદિ જીવો અનેકવાર અથવા અનંતવાર તેમાં ઉત્પન્ન થઈ
ચુક્યાં છે । (જો ચેવ ણં વાયર આઝકાઈયત્તાણ, વાયર અગ્નિકાઈયત્તાણ વા,
વાયરવણસસાઈકાઈયત્તાણ વા) પરન્તુ તેઓ ત્યાં વાદર અપ્કાધિક રૂપે વાદર
અગ્નિકાધિક રૂપે અને વાદર વનસ્પતિકાધિક રૂપે પહેલાં કદી પણ ઉત્પન્ન થયાં
નથી, ઉત્પન્ન થતાં નથી અને ઉત્પન્ન થશે પણ નહીં, કારણ કે ત્યાં તેમનું
સ્વસ્થાન નથી. ॥ સૂત્ર ૨ ॥

वइरोयणे३, पभंकरे४, चंदाभे५, सूराम्भे६, सुक्राम्भे७, सुपइट्टाम्भे८,
मज्झे रिट्टाम्भे । कहि णं भंते ! अच्ची-विमाणे पण्णत्ते ? गोयमा !
उत्तर-पुरत्थिमेणं । कहि णं भंते ! अच्चिमाली विमाणे पण्णत्ते ?
गोयमा ! पुरत्थिमेणं । एवं परिवाडीए णेयव्वं, जाव--कहि णं
भंते ! रिट्टे विमाणे पण्णत्ते ? गोयमा ! बहुमज्झदेसभाए ।
एएसु णं अट्टसु लोगंतियविमाणेसु अट्ठविहा लोगंतिया देवा
परिवसंति, तं जहा—

“ सारस्सयमाइच्चा, वण्ही वरुणा य गइतो या य ।

तुसिया अव्वा वाहा, अग्गिच्चा चेव रिट्टा य ॥ १ ॥ ”

कहि णं भंते ! सारस्सया देवा परिवसंति ? गोयमा !
अच्चिम्मि विमाणे परिवसंति । कहि णं भंते ! आइच्चा देवा
परिवसंति ? गोयमा ! अच्चिमालिम्मि विमाणे । एवं णेयव्वं
जहाऽऽणुपुव्वाए, जाव--कहि णं भंते ! रिट्टा देवा परिवसंति ?
गोयमा ! रिट्ठम्मि विमाणे । सारस्सयमाइच्चाणं भंते ! देवाणं
कइ देवा, कइ देवसया परिवारे पण्णत्ते ? गोयमा ! सत्त-देवा,
सत्तदेवसया परिवारे पण्णत्ते । वणिह-वरुणाणं देवाणं चउइस-
देवा, चउइस देवसहस्सा परिवारे पण्णत्ते । गइतोय-तुसियाणं
देवाणं सत्तदेवा, सत्तदेवसहस्सा परिवारे पण्णत्ते । अवसेसाणं
नव देवा, नव देवसया परिवारे पण्णत्ते ।

“ पढम-जुयलम्मि सत्त उ सयाणि, बीयम्मि चउइस सहस्सा ।
तइए सत्त सहस्सा, नव चेव सयाणि सेसेसु ॥ १ ॥ ”

તથા—“ સારસ્વતા ૧-ડડિત્યા ૨ વહ્નિ ૩ વરુણ ૪ ગર્દતોયા ૫

તુષિતા, ૬ અગ્ન્યાબાધ, ૭ આગ્નેયાથ ૮ રિષ્ટાથ.” ॥ ૧ ॥

કુપ્ત સહુ ભદન્ત ! સારસ્વતાઃ દેવાઃ પરિવસન્તિ ? ગૌતમ ! અર્ચિષિ વિમાને પરિવસન્તિ । કુપ્ત સહુ ભદન્ત ! આદિત્યા દેવાઃ પરિવસન્તિ ? ગૌતમ ! અર્ચિ-
માલૌ વિમાને, એવં જ્ઞાતવ્યં અપાડ્ડનુપૂર્વાં યાવત્-કુપ્ત સહુ ભદન્ત ! રિષ્ટાઃ

(તં જહા) ડડિત્યાનાં લોકાન્તિક દેવોંકે નામ્ ઇસ પ્રકાર સં હં-(સારસ્વતયામાહ-
ચ્ચા) ઇત્યાદિ સારસ્વત, આદિત્ય, વહ્નિ, વરુણ, ગર્દતો ય, તુષિતા અગ્ન્યા-
બાધ આગ્નેય ઓર ઇન્કે પીથ મેં રિષ્ટ દેવ । (કહિ ણં મંતે ! સારસ્વતયા
દેવા પરિવસન્તિ) હે ભદન્ત ! સારસ્વત દેવ કહાં પર રહતે હે ? (ગોયમા)
હે ગૌતમ ! (અર્ચિમ્મિ વિમાણે પરિવસન્તિ) અર્ચિનામકે વિમાનમેં સાર-
સ્વત દેવ રહતે હે । (કહિ ણં મંતે આહચ્ચા દેવા પરિવસન્તિ) હે ભદન્ત !
આદિત્ય દેવ કહાં પર રહતે હે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અર્ચિમાલિમ્મિ
વિમાણે) અર્ચિમાલૌ નામકે વિમાન મેં આદિત્ય દેવ રહતે હે । (એવં
જેયન્ત્વં જહાડ્ડનુપૂર્વીય) ઇસીં તરહ સે યયાનુપૂર્વી રિષ્ટ વિમાન તક
જાનનાં ચાહિયે । (જાવ-કહિ ણં મંતે ! રિષ્ટા પરિવસન્તિ) હે ભદન્ત !
યાવત્ રિષ્ટ દેવ કહાં પર રહતે હે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (રિષ્ટમ્મિ

આઠ પ્રકારનાં લોકાન્તિક દેવ રહે છે. (તં જહા) તે લોકાન્તિક દેવોનાં નામ
આ પ્રમાણે છે—(સારસ્વતયામાહચ્ચા વહ્નિવરુણા ય ગર્દતોયા ય, તુષિયા, અગ્ન્યાબાધ,
અર્ચિચ્ચા ચેવ રિષ્ટા ય.) (૧) સારસ્વત, (૨) આદિત્ય, (૩) વહ્નિ (૪) વરુણ
(૫) ગર્દતોય, (૬) તુષિતા, (૭) અગ્ન્યાબાધ, (૮) આગ્નેય અને તે આઠ
વિમાનોની વચ્ચેના વિમાનમાં રિષ્ટ દેવ.

(કહિ ણં મંતે ! સારસ્વતયા દેવા પરિવસન્તિ ?) હે ભદન્ત ! સારસ્વત
દેવ કયાં રહે છે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અર્ચિમ્મિ વિમાણે પરિવસન્તિ)
સારસ્વત દેવ અર્ચિ નામના વિમાનમાં રહે છે. (કહિ ણં મંતે ! આહચ્ચા દેવા
પરિવસન્તિ ?) હે ભદન્ત ! આદિત્ય દેવ કયાં રહે છે ?

(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અર્ચિમાલિમ્મિ વિમાણે) આદિત્ય દેવ
અર્ચિમાલૌ વિમાનમાં રહે છે. (એવં જેયન્ત્વં જહાડ્ડનુપૂર્વીય) એજ પ્રમાણે
અનુક્રમે રિષ્ટ વિમાન પર્યન્ત સમન્વયુ-એટલે કે વહ્નિદેવ વૈશાચન વિમાનમાં,
વરુણ દેવ પ્રહર વિમાનમાં, ગર્દતોય દેવ ચન્દ્રાલ વિમાનમાં, તુષિતા દેવ
સૂર્યોલ વિમાનમાં, અગ્ન્યાબાધ દેવ શુક્રાલ વિમાનમાં, અને આગ્નેય દેવ
સુપ્રતિષ્ઠાલ વિમાનમાં વસે છે. (જાવ કહિ ણં મંતે ! રિષ્ટા પરિ-
ભદન્ત ! રિષ્ટદેવ કયાં રહે છે ?

દેવાઃ પરિચસન્તિ ? ગૌતમ ! રિષ્ટે વિમાને । સારસ્વતાદિત્યાનાં ભદન્ત ! દેવાનાં કતિ દેવાઃ, કતિ દેવશતાનિ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ? ગૌતમ ! સપ્ત દેવાઃ, સપ્ત દેવશતાનિ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, વહ્નિ-વરુણાનાં દેવાનાં ચતુર્દશ દેવાઃ, ચતુર્દશદેવસહસ્રાણિ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ । ગર્દતોય-તુષિતાનાં દેવાનાં સપ્ત દેવાઃ, સપ્ત દેવસહસ્રાણિ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ । અવશેષાનાં નવ દેવશતાનિ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ ।

વિમાણે) રિષ્ટ વિમાનમેં રિષ્ટ દેવ રહતે હેં । (સારસ્વતમાહચ્ચા ણં મંતે ! દેવાણં કઙ્ઘ દેવા, કઙ્ઘ દેવસયા પરિવારે પળ્લસે) હે ભદન્ત ! સારસ્વત દેવ ઓર આદિત્ય દેવેં હન દો દેવોં કે કિતનેં દેવ હેં ? ઓર કિતનેં સૌ દેવોં કા હનકા પરિવાર હે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સત્ત દેવા, સત્ત દેવસયા પરિવારે પળ્લસે) સારસ્વત ઓર આદિત્ય હન દો દેવોં કે સાત દેવ હેં ઓર હનકા પરિવાર સાત સૌ દેવોં કા હે । (વણિહ વરુણાણં દેવાણં ચત્ત્વસદેવા, ચત્ત્વસ દેવસહસ્તા પરિવારે પળ્લસે) વહ્નિ ઓર વરુણ હન દેવોં કે ચૌદહ દેવ હેં, ઓર હનકા પરિવાર ચૌદહ હજાર દેવોં કા હે । (ગર્દતોય-તુષિયાણં દેવાણં સત્તદેવા, સત્તદેવ-સહસ્તા પરિવારે પળ્લસે-અવશેષાણં નવ દેવા નવ દેવસયા પરિવારે પળ્લસે) ગર્દતોય ઓર તુષિત હનકે સાત દેવ હેં ઓર પરિવાર હનકા સાત હજાર દેવોં કા હે । યાકી કે દેવોં કે નૌ ૯ દેવ હેં ઓર હનકે પરિવાર મેં નૌ ૯ સૌ દેવ હેં । હન દેવોં કી પરિવાર સંખ્યા હી હસ ગાથા દ્વારા સૂચિત.

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (વિદુમ્મિ વિમાણે) રિષ્ટ વિમાનમાં રિષ્ટદેવ વસે છે.

(સારસ્વતમાહચ્ચા ણં મંતે ! દેવાણં કઙ્ઘ દેવા, કઙ્ઘ દેવસયા પરિવારે પળ્લસે ?) હે ભદન્ત ! સારસ્વત દેવ અને આદિત્ય દેવ, એ બન્ને દેવોના આધિપત્યમાં કેટલા દેવો છે ? અને કેટલા સૌ દેવોનો તેમનો પરિવાર કલ્પો છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સત્તદેવા, સત્તદેવસયા પરિવારે) સારસ્વત અને આદિત્ય એ બન્ને દેવોના સાત દેવ છે, અને તેમનો પરિવાર ૭૦૦ દેવોનો છે. (વણિહ વરુણાણં દેવાણં ચત્ત્વસદેવા, ચત્ત્વસદેવસહસ્તા પરિવારે પળ્લસે) વહ્નિ અને વરુણ, એ બન્ને દેવોના ૧૪ દેવ છે, અને ૧૪૦૦૦ દેવોનો તેમનો પરિવાર છે. (ગર્દતોય-તુષિયાણં દેવાણં સત્તદેવા, સત્તદેવ-સહસ્તા પરિવારે પળ્લસે-અવશેષા ણં નવ દેવા નવ દેવસયા પરિવારે પળ્લસે) ગર્દતોય અને તુષિતાના સાત દેવ છે, અને તેમનો પરિવાર ૭૦૦ દેવોનો કલ્પો છે. બાકીના દેવોના નવ દેવ છે, અને તેમનો પરિવાર ૯૦૦ દેવોનો છે. તે દેવોના પરિવારની સંખ્યા જ આ ગાથામાં બતાવવામાં આવી છે.

તથા—“ સારસ્વતા ૧-ઽઽદિત્યા ૨ વદ્વયો ૩ વરુણાધ ૪ ગર્દતોયામ ૫ ।

તુષિતા, ૬ અગ્ન્યાવાધા, ૭ આગ્નેયાધ ૮ રિષ્ટાધ ૯ ” ॥ ૧ ॥

કુત્ર સહુ ભદન્ત ! સારસ્વતાઃ દેવાઃ પરિવસન્તિ ? ગૌતમ ! અર્ચિવિમાને પરિવસન્તિ । કુત્ર સહુ ભદન્ત ! આદિત્યા દેવાઃ પરિવસન્તિ ? ગૌતમ ! અર્ચિ-
માલી વિમાને, એવં શતવ્યં અથાઽઽનુપુર્વાં યાવત્-કુત્ર સહુ ભદન્ત ! રિષ્ટાઃ

(તં જહા) ડન લોકાન્તિક દેવોકે નામ ઇસ પ્રકાર સે હે—(સારસ્વતયામ-
આધ) ઇત્યાદિ સારસ્વત, આદિત્ય, વહ્નિ, વરુણ, ગર્દતો ય, તુષિત અગ્ન્યા-
વાધ આગ્નેય ઓર ઇનકે ધીચ મેં રિષ્ટ દેવ । (કહિ ણં મંતે ! સારસ્વતા
દેવા પરિવસન્તિ) હે ભદન્ત ! સારસ્વત દેવ કહાં પર રહતે હે ? (ગોયમા)
હે ગૌતમ ! (અર્ચિમ્મિ વિમાણે પરિવસન્તિ) અર્ચિનામકે વિમાનમે સાર-
સ્વત દેવ રહતે હે । (કહિ ણં મંતે આદિત્યા દેવા પરિવસન્તિ) હે ભદન્ત !
આદિત્ય દેવ કહાં પર રહતે હે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અર્ચિમાલિમ્મિ
વિમાણે) અર્ચિમાલી નામકે વિમાન મેં આદિત્ય દેવ રહતે હે । (એવં
પેયવ્વં જહાઽઽનુપુર્વીય) ઇસી તરહ સે યથાનુપૂર્વો રિષ્ટ વિમાન તક
જાનનાં ચાહિયે । (જાવ-કહિ ણં મંતે ! રિષ્ટા પરિવસન્તિ) હે ભદન્ત !
યાવત્ રિષ્ટ દેવ કહાં પર રહતે હે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (રિદ્ધિમ્મિ

આઠે પ્રકારના લોકાન્તિક દેવ રહે છે. (તં જહા) તે લોકાન્તિક દેવોનાં નામ
આ પ્રમાણે છે—(સારસ્વતયામઆધ વર્ણીવરુણા ય ગર્દતોયા ય, તુષિતા, અગ્ન્યાવાધ,
અર્ચિચ્ચા-ચેત્ રિષ્ટા ય) (૧) સારસ્વત, (૨) આદિત્ય, (૩) વહ્નિ (૪) વરુણ
(૫) ગર્દતોય, (૬) તુષિત, (૭) અગ્ન્યાવાધ, (૮) આગ્નેય અને તે આઠે
વિમાનોની વચ્ચેના વિમાનમાં રિષ્ટ દેવ.

(કહિ ણં મંતે ! સારસ્વતા દેવા પરિવસન્તિ ?) હે ભદન્ત ! સારસ્વત
દેવ કયાં રહે છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અર્ચિમ્મિ વિમાણે પરિવસન્તિ)
સારસ્વત દેવ અર્ચિ નામના વિમાનમાં રહે છે (કહિ ણં મંતે ! આદિત્યા દેવા
પરિવસન્તિ ?) હે ભદન્ત ! આદિત્ય દેવ કયાં રહે છે ?

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અર્ચિમાલિમ્મિ વિમાણે) આદિત્ય દેવ
અર્ચિમાલી વિમાનમાં રહે છે. (એવં પેયવ્વં જહાઽઽનુપુર્વીય) એજ પ્રમાણે
અનુક્રમે રિષ્ટ વિમાન પર્યન્તે સમજવું—એટલે કે વહ્નિદેવ વૈરોચન વિમાનમાં,
વરુણ દેવ પ્રભાકર વિમાનમાં, ગર્દતોય દેવ ચન્દ્રાલ વિમાનમાં, તુષિત દેવ
સૂર્યોલ વિમાનમાં, અગ્ન્યાવાધ દેવ શુકાલ વિમાનમાં, અને આગ્નેય દેવ
સુપ્રતિષ્ઠાલ વિમાનમાં વસે છે. (જાવ કહિ ણં મંતે ! રિદ્ધિ પરિવસન્તિ
ભદન્ત ! રિષ્ટદેવ કયાં રહે છે ?

નેપુ । લોકાન્તિકવિમાનેષુ ત્વહુ ભદન્ત ! કિયન્તં કાલં સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞાતા ? ગૌતમ ! અપ્ત સાગરોપમાણિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞાતા । લોકાન્તિકવિમાનેભ્યો ભદન્ત ! કિયત્કમ્ અવાધયા લોકાન્તઃ પ્રજ્ઞન્તઃ ? ગૌતમ ! અસંખ્યેયાનિ યોજનસહસ્રાણિ અવાધયા લોકાન્તઃ પ્રજ્ઞન્તઃ, તદેવં ભદન્ત ! તદેવં ભદન્ત ! ઇતિ ॥ સુ૦ ૩ ॥

॥ પૃથ્વતકે પચ્ચમો શ્લોકઃ સમાપ્તઃ ॥ ૬-૫ ॥

લોગંતિયવિમાણેસુ ' યાવત્ હાં ગૌતમ ! અનેક ચાર અથવા અનન્તવારં પહિલે જીવ ઉત્પન્ન હો ચુકે હૈં-પરન્તુ યહાં પર-લોકાન્તિક વિમાનોં મેં જીવ અનેકવાર અથવા અનન્ત ચાર દેવરૂપ સે ઉત્પન્ન નહીં છુપે હૈં । 'લોગંતિયવિમાણેસુ ણં મંતે ! કેવહ્યં કાલં ઠિઈ પળ્ણત્તા ' હે ભદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાનોં મેં કિતની સ્થિતિ કહી ગઈ હૈ ? ' ગોયમા ! અદ્ધ-સાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્ણત્તા ' હે ગૌતમ ! લોકાન્તિક વિમાનોં મેં આઠ સાગરોપમ કી સ્થિતિ કહી ગઈ હૈ । ' લોગંતિય વિમાણેહિંતો ણં મંતે ! કેવહ્યં અવાહાણ લોગંતે પળ્ણત્તે ' હે ભદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાનોં સે કિતની દૂર લોકાન્ત કહા ગયા હૈ ? ' ગોયમા ' હે ગૌતમ ! લોકાન્તિક વિમાનોં સે ' અસંખેજ્ઞાઈ જોયણસહસ્સાઈ અવાહાણ લોગંતે પળ્ણત્તે ' અસંખ્યાત હજાર યોજન દૂર લોકાન્ત કહા ગયા હૈ । ' સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ ' હે ભદન્ત ! જૈસા આપને યહ કહા હૈ વહ એસા હી હૈ હે ભદન્ત ! જૈસા આપને કહા હૈ વહ એસા હી હૈ । ઇતિ ।

કલુસો-ગો ચેવ ણં દેવતાણ લોગંતિય વિમાણેસુ) આ વક્તવ્યતા " હા ગૌતમ ! અનેકવાર અથવા અનંતવાર પહેલાં એવો અહીં ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યાં છે, પરન્તુ અહીં (લોકાન્તિક વિમાનોમાં) એવ અનેકવાર અથવા અનંતવાર દેવરૂપે ઉત્પન્ન થયા નથી, " ત્યાં સુધીનું શ્રવણ કરવું.

(લોગંતિય વિમાણેસુ ણં મંતે ! કેવહ્યં કાલં ઠિઈ પળ્ણત્તા ?) હે ભદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાનોના દેવોની સ્થિતિ કેટલા કાળની કહી છે ? (ગોયમા ! અદ્ધ સાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્ણત્તા) હે ગૌતમ ! ત્યાં આઠસાગરોપમની સ્થિતિ કહી છે. (લોગંતિય વિમાણેહિંતો ણં મંતે ! કેવહ્યં અવાહાણ લોગંતે પળ્ણત્તે ?) હે ભદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાનોથી કેટલે દૂર (અંતરે) લોકાન્ત કહ્યો છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! લોકાન્તિક વિમાનોથી (અસંખેજ્ઞાઈ જોયણ-સહસ્સાઈ અવાહાણ લોગંતે પળ્ણત્તે) અસંખ્યાત હજાર યોજન દૂર લોકાન્ત કહ્યો છે. (સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ) હે ભદન્ત ! આપની વાત સાચી છે. હે ભદન્ત ! આપે કહ્યા પ્રમાણે જ છે. એમ કહીને વંદણા નમસ્કાર કરીને ગૌતમ સ્વામી તેમને સ્થાને બેસી ગયા.

“ પ્રથમયુગલે સપ્ત તુ શતાનિ, દ્વિતીયે ચતુર્દશ સદસ્રાણિ ।

તૃતીયે સપ્ત સદસ્રાણિ નવચૈવ શતાનિ શ્રેણેષુ ॥ ૧ ॥ ”

લોકાન્તિકૃષિમાનાનિ સ્વલુ ભદન્ત ! કિંપતિષ્ઠિતાનિ પ્રાપ્તાનિ ? ગૌતમ ! વાયુપતિષ્ઠિતાનિ પ્રાપ્તાનિ, एवं શાત્વર્ણ્યમ્ વિમાનાનાં પ્રતિષ્ઠાનમ્ વાહુલ્યોચ્ચત્તમેવ સંસ્થાનમ્, વ્રાહ્મલોકચત્તવ્યતા શાત્વર્ણ્યા, યથા જીવાભિગમે દેવોદેશકે યાત્-
હન્ત, ગૌતમ ! અસકૃત્, અપ્રાજ્ઞાન્તકૃતઃ, નો ચૈવ દેવતયા લોકાન્તિકૃષિમા-

કી ગર્હૈ હૈ—(પદમ જુગલમ્મિ સત્ત ઉ સયાણિ, યોયમ્મિ ચત્તસસહસ્સા, તદ્દપ્પ સત્તસહસ્સા નવ ચૈવ સયાણિ સેસેસુ) પ્રથમયુગલ મેં સાતસૌ દેવોં કા પરિવાર હૈ, દ્વિતીયયુગલ મેં ૧૪ હજાર દેવોં કા પરિવાર હૈ । તૃતીય યુગલ મેં સાત હજાર દેવોં કા પરિવાર હૈ । બાકી કે દેવોં મેં નૌ ૯ સૌ દેવોં કા પરિવાર હૈ ।

(લોગંનિય વિમાણા ણં મંતે । કિં પદ્ધિયા પળ્લણ્ણા) હૈ ભદન્ત ! લોકાન્તિક દેવોંકે વિમાનોંકા કયા આધાર હૈ ? અર્થાત્ લોકાન્તિક દેવોંકે વિમાન કિસકે આધાર પર હૈં ? (ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! (વાત્પદ્ધિયા પળ્લણ્ણા) લોકાન્તિક દેવોંકે વિમાન વાયુ કે આધાર પર હૈં । (एवं યોયવ્વં વિમાણાણપદ્ધિયા) હસ પ્રકાર સે વિમાનોંકા પ્રતિષ્ઠાન જાનનાં ચાહિયે । (વાહુલ્લુચ્ચત્તમેવ સંઠાણં, વંમલોયવત્તવ્વયા યોયવ્વા—જહા જીવાભિગમે દેવુદેસપ્) વિમાનોંકા વાહુલ્ય, ફનકી ઝંચાઈ તથા ફનકા સંસ્થાન—આકાર જિસ પ્રકાર સે વ્રાહ્મલોક કી ચત્તવ્યતા જીવાભિગમે સૂત્ર મેં જીવ ઉદેશ મેં કહી ગર્હૈ હૈ ઊસી પ્રકાર સે જાનના ચાહિયે । (જાવ હંતા ગોયમા ! અસંદ્ધં અદુવા અણંતદુક્કલુત્તો—જો ચૈવ ણં દેવસાપ

(પદમ જુગલમ્મિ સત્ત ઉ સયાણિ, યોયમ્મિ ચત્તસસહસ્સા, તદ્દપ્પ સત્ત-
સહસ્સા નવચૈવ સયાણિ સેસેસુ) પહેલા યુગલમાં (એના સમૂહમાં) સાતસૌ દેવોનો, બીજા યુગલમાં ચૌદ હજાર દેવોનો, ત્રીજા યુગલમાં સાત હજાર દેવોનો અને બાકીનામાં નવસૌ દેવોનો પરિવાર છે.

(લોગંનિય વિમાણા ણં મંતે । કિં પદ્ધિયા પળ્લણ્ણા ?) હૈ ભદન્ત ! લોકાન્તિક દેવોનાં વિમાન કેના આધારે રહેલાં છે ?

(ગોયમા !) હૈ ગૌતમ ! (વાત્પદ્ધિયા પળ્લણ્ણા) લોકાન્તિક દેવોનાં વિમાનો વાયુના આધારે રહેલાં છે. (एवं યોયવ્વં વિમાણાણપદ્ધિયા) આ પ્રમાણે તેમના પ્રતિષ્ઠાન (આધારે) ના વિષે સમજવું. (વાહુલ્લુચ્ચત્તમેવ સંઠાણં, વંમલોયવત્તવ્વયા યોયવ્વા—જહા જીવાભિગમે દેવુદેસપ્) વિમાનોની વિશાળતા, ઊંચાઈ અને આકાર, બ્રાહ્મલોકની જીવાભિગમે સૂત્રના જીવઉદેશકમાં કેહેલી વસ્તુવ્યતા પ્રમાણે સમજવા. (જાવ હંતા ગોયમા ! અસંદ્ધં અ

રિષ્ટામઃ । તત્ર ઉત્તરપૂર્વવર્તિન્યોઃ કૃષ્ણરાજ્યોરભ્યન્તરે પ્રથમમ્ અર્ચિનામકં વિમાનં પ્રપ્તમ્ ૧, પૂર્વવર્તિન્યોસ્તયોર્વાહ્યમધ્યે દ્વિતીયમ્ અર્ચિમાલિનામકં વિમાનમ્ ૨, પૂર્વદક્ષિણવર્તિન્યોસ્તયોરભ્યન્તરે તૃતીયં વૈરોચનામકં વિમાનમ્ ૩, દક્ષિણવર્તિન્યોસ્તયોર્મધ્યે વહિઃપ્રત્યુર્થ પ્રમંકરનામકં વિમાનમ્ ૪, દક્ષિણ-પશ્ચિમવર્તિન્યોસ્તયોરભ્યન્તરે પશ્ચમં ચન્દ્રાભનામકં વિમાનમ્ ૫. પશ્ચિમવર્તિન્યોસ્તયોર્મધ્યે વહિઃ પઠં સૂર્યા-

હૃદ્ કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં પ્રથમ અર્ચિનામ કા વિમાન હૈ । પૂર્વદિશા મેં રહી હૃદ્ વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં દ્વિતીય અર્ચિમાલિ નામ કા-વિમાન હૈ । પૂર્વદિશા ઓર દક્ષિણદિશા કી કૃષ્ણ રાજિયોં કે વીચ મેં તીસરા વૈરોચન નામકા વિમાન હૈ । દક્ષિણદિશા મેં રહી હૃદ્ કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં ચૌથા પ્રમંકર નામકા વિમાન હૈ । દક્ષિણ ઓર પશ્ચિમ કી કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં પાંચવાં ચન્દ્રાભ નામ કા વિમાન હૈ । પશ્ચિમદિશા કી દો કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચમેં વાહિર કી ઓર છઠા સૂર્યાભ નામ કા વિમાન હૈ । પશ્ચિમ ઓર ઉત્તર કી કૃષ્ણ-રાજિયોં કે વીચ મેં સાતવાં શુક્રાભ નામ કા વિમાન હૈ । તથા ઉત્તર-દિશા કી કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં આઠવાં સુપ્રતિષ્ઠાભ નામકા વિમાન હૈ । ઓર સર્વ કે મીતર રિષ્ટાભ નામકા નૌધાં વિમાન હૈ । યહાં પર એસી આશંકા નહીં કરની चाहिये कि “ यहाँ तो दो दो कृष्णराजियों के बीच में अर्चि आदि आठ विमानों की वक्तव्यता को कथन

(૩) વૈરોચન, (પમંકરે) (૪) પ્રમંકર, (ચંદ્રાભે) (૫) ચન્દ્રાભ, (સુર્યાભે) (૬) સૂર્યાભ (શુક્રાભે) (૭) શુક્રાભ, (સુપ્રતિષ્ઠાભે) અને (૮) સુપ્રતિષ્ઠાભ. તે આઠેની વચ્ચે રિષ્ટાભ નામનું વિમાન છે. ઉત્તર દિશા અને પૂર્વ દિશામાં રહેલી કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે પહેલું અર્ચિ નામનું વિમાન છે. પૂર્વ દિશામાં રહેલી બાહ્ય (બહારની) અને આભ્યન્તર (અંદરની) કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે બીજું અર્ચિમાલી નામનું વિમાન છે. પૂર્વ દિશા અને દક્ષિણ દિશાની કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે ત્રીજું વૈરોચન નામનું વિમાન છે. દક્ષિણ દિશાની બાહ્ય અને આભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે ચોથું પ્રમંકર વિમાન છે. દક્ષિણ દિશાની અને પશ્ચિમ દિશાની કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે પાંચમું ચન્દ્રાભ નામનું વિમાન છે. પશ્ચિમ દિશાની બાહ્ય અને આભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે છઠ્ઠું સૂર્યાભ નામનું વિમાન છે. પશ્ચિમ અને ઉત્તર દિશા વચ્ચેની, કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે સાતમું શુક્રાભ નામનું વિમાન છે. અને ઉત્તર દિશાની બાહ્ય અને આભ્યન્તર કૃષ્ણ-રાજિઓની વચ્ચે આઠમું સુપ્રતિષ્ઠાભ નામનું વિમાન છે. અને તે બધાંની વચ્ચે રિષ્ટાભ નામનું નવમું વિમાન છે.

અહીં એવી આશંકા કરવી જોઈએ નહીં કે “ અહીં તો બે, બે કૃષ્ણ-રાજિઓની વચ્ચે રહેલાં અર્ચિ આદિ આઠ વિમાનોની વક્તવ્યતા યાદી રહી

टीका—एषसिणं अट्टहं कण्हराणं अट्ठसु उवासंतरेसु अट्ठ लोगतियविमाना पण्णत्ता
 एतासां खलु पूर्ववर्गितानाम् अट्ठानां कण्हराणीनाम् अट्ठसु अवकाशान्तरेषु द्वयोरन्तरं
 मच्चम् अवकाशान्तरं तेषु इत्यर्थः, अट्ठ लोकान्तिकविमानानि लोकस्य पञ्चम-
 ब्रह्मलोकस्य अन्ते समीपे भवानि लोकान्तिकानि, तानि च तानि विमानानि
 चेति लोकान्तिकविमानानि । अथवा लोकान्तिकाः तज्जातीयादेवास्तेषां विमाना-
 नीति लोकान्तिकविमानानि प्राप्तानि । तान्येवाह—‘तं जहा’—तयथा—
 ‘अच्ची १, अच्चिमाली २, वड्ढोयणे ३, पभंकरे ४, चंदाभे ५, सुराभे ६,
 सुक्काभे ७, सुपइट्ठाभे, मज्जे सिट्ठाभे’ अग्निः १,—अग्निमालिः २,—वैरोचनः ३,—
 प्रभंकरः ४,—चन्द्राभः ५,—सूर्याभः ६,—शुक्राभः ७,—सुप्रतिष्ठाभः ८, मध्ये

टीका—कृष्णराजी के प्रस्तावसे उसके समीपवर्ती लोकान्तिक देवों
 के विमान आदि की चक्षुष्यता को इस सूत्र द्वारा सूत्रकार कह रहे हैं
 कि—‘एषसिणं अट्टहं कण्हराणं अट्ठसु उवासंतरेसु अट्ठलोगतिय
 विमाना पण्णत्ता’ इन आठ कृष्णराजियों के आठ अवकाशान्तरों में
 अर्थात् दो दो कृष्णराजियों के बीच में—आठ लोकान्तिक विमान कहे
 गये हैं। ये लोकान्तिक विमान इसलिये कहलाते हैं कि ये पञ्चम ब्रह्म-
 लोक के अन्त-समीप में हैं। अथवा—लोकान्तिक देवों के ये विमान हैं
 इसलिये इन्हें लोकान्तिक कहा गया है। ‘तं जहा’ इनके नाम इस
 प्रकार से हैं—‘अच्ची १, अच्चिमाली २, वड्ढोयणे ३, पभंकरे ४, चंदाभे
 ५, सुराभे ६, सुक्काभे ७, सुपइट्ठाभे ८ मज्जे सिट्ठाभे’ अग्नि १, अग्नि-
 माली २, वैरोचन ३, प्रभंकर ४, चन्द्राभ ५, सूर्याभ ६, शुक्राभ ७,
 सुप्रतिष्ठाभ ८ और बीच में रिट्ठाभ। उत्तरदिशा और पूर्वदिशा में रही

टीका—कृष्णराजियों की समीपमां रहेवां लोकान्तिक विमानों सुत्रकार
 आ सूत्रमां निरूपयु करे—(एषसिणं अट्टहं कण्हराणं अट्ठसु उवासंतरेसु
 अट्ठ लोगतिय विमाना पण्णत्ता) ते आठ कृष्णराजियों की आठ अवकाशान्त-
 रोंमां (जे, जे कृष्णराजियों की पञ्चे) आठ लोकान्तिक विमानों कहाँ छे-
 तेभने लोकान्तिक विमान कहैवानुं करैलु ओं छे के तेओ अथवा लोकान्तिक विमानों
 पांयमां देवलोकना अन्त भागमां (समीपमां) छे, अथवा लोकान्तिक देवोंनां
 ते विमानों होवाथी तेभने लोकान्तिक विमानों कहाँ छे, (तं जहा) ते
 आठ लोकान्तिक विमानोंनां नाम नीचे प्रमाण छे—

(अच्ची) (१) अग्नि, (अच्चिमाली) (२) अग्निमाली, (वड्ढोयणे)

રિષ્ટાભઃ । તત્ર ઉત્તરપૂર્વવર્તિન્યોઃ કૃષ્ણરાજ્યોરભ્યન્તરે પ્રથમમ્ અર્ચિનામકં વિમાનં મજ્જન્તમ્ ૧, પૂર્વવર્તિન્યોસ્તયોર્વાહ્યમધ્યે દ્વિતીયમ્ અર્ચિમાલિનામકં વિમાનમ્ ૨, પૂર્વદક્ષિણવર્તિન્યોસ્તયોર્ભ્યન્તરે તૃતીયં વૈરોચનનામકં વિમાનમ્ ૩, દક્ષિણવર્તિન્યોસ્તયોર્મધ્યે વહિશ્ચતુર્થં પ્રમદ્ધરનામકં વિમાનમ્ ૪, દક્ષિણ-પશ્ચિમવર્તિન્યોસ્તયોર્ભ્યન્તરે પશ્ચમં ચન્દ્રાભનામકં વિમાનમ્ ૫. પશ્ચિમવર્તિન્યોસ્તયોર્મધ્યે વહિઃ પટ્ટં સૂર્યા-

હૃદ્ કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં પ્રથમ અર્ચિનામ કા વિમાન હૈ । પૂર્વદિશા મેં રહી હૃદ્ વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં દ્વિતીય અર્ચિમાલિ નામ કા-વિમાન હૈ । પૂર્વદિશા ઓર દક્ષિણદિશા કી કૃષ્ણ રાજિયોં કે વીચ મેં તૈસરા વૈરોચન નામકા વિમાન હૈ । દક્ષિણદિશા મેં રહી હૃદ્ કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં ચૌથા પ્રમદ્ધર નામકા વિમાન હૈ । દક્ષિણ ઓર પશ્ચિમ કી કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં પાંચવાં ચન્દ્રાભ નામ કા વિમાન હૈ । પશ્ચિમદિશા કી દો કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચમેં બાહિર કી ઓર છઠા સૂર્યાભ નામ કા વિમાન હૈ । પશ્ચિમ ઓર ઉત્તર કી કૃષ્ણ-રાજિયોં કે વીચ મેં સાતવાં શુક્રાભ નામ કા વિમાન હૈ । તથા ઉત્તર-દિશા કી કૃષ્ણરાજિયોં કે વીચ મેં આઠવાં સુપ્રતિષ્ઠાભ નામકા વિમાન હૈ । ઓર સર્વ કે ખીતર રિષ્ટાભ નામકા નૌથાં વિમાન હૈ । યહાં પર એસી આશંકા નહીં કરની चाहिये कि “ यहाँ तो दो दो कृष्णराजियों के बीच में अर्चि आदि आठ विमानों की वक्तव्यता को कथन

(૩) વૈરોચન, (પમદ્ધર) (૪) પ્રમદ્ધર, (ચંદ્રાભ) (૫) ચન્દ્રાભ, (સુર્યાભ) (૬) સૂર્યાભ (શુક્રાભ) (૭) શુક્રાભ, (સુપ્રતિષ્ઠાભ) અને (૮) સુપ્રતિષ્ઠાભ. તે આઠેની વચ્ચે રિષ્ટાભ નામનું વિમાન છે. ઉત્તર દિશા અને પૂર્વ દિશામાં રહેલી કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે પહેલું અર્ચિ નામનું વિમાન છે. પૂર્વ દિશામાં રહેલી બાહ્ય (બહારની) અને આભ્યન્તર (અંદરની) કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે બીજું અર્ચિમાલી નામનું વિમાન છે. પૂર્વ દિશા અને દક્ષિણ દિશાની કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે ત્રીજું વૈરોચન નામનું વિમાન છે. દક્ષિણ દિશાની બાહ્ય અને આભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે ચોથું પ્રમદ્ધર વિમાન છે. દક્ષિણ દિશાની અને પશ્ચિમ દિશાની કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે પાંચમું ચન્દ્રાભ નામનું વિમાન છે. પશ્ચિમ દિશાની બાહ્ય અને આભ્યન્તર કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે છઠ્ઠું સૂર્યાભ નામનું વિમાન છે. પશ્ચિમ અને ઉત્તર દિશા વચ્ચેની, કૃષ્ણરાજિઓની વચ્ચે સાતમું શુક્રાભ નામનું વિમાન છે. અને ઉત્તર દિશાની બાહ્ય અને આભ્યન્તર કૃષ્ણ-રાજિઓની વચ્ચે આઠમું સુપ્રતિષ્ઠાભ નામનું વિમાન છે. અને તે બધાંની વચ્ચે રિષ્ટાભ નામનું નવમું વિમાન છે.

અહીં એવી આશંકા કરવી જોઈએ નહીં કે “ અહીં તો બે, બે કૃષ્ણ-રાજિઓની વચ્ચે રહેલાં અર્ચિ આદિ આઠ વિમાનોની વક્તવ્યતા થાલી રહી

મનામકં વિમાનમ્, પશ્ચિમોત્તરવર્તિન્યોસ્તગોરગ્યન્તરે સપ્તમં શુકામનામકં વિમાનમ્ ૭, ઉત્તરવર્તિન્યોસ્તગોર્મધ્યે અષ્ટમં મુખતિષ્ઠામનામકં વિમાનમ્ ૮, સર્વામ્યન્તરે ચ રિષ્ટામનામકં વિમાનં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । અથ દ્વયોરગ્યન્તરવર્તિયુ અષ્ટમુ અર્ચિઃ પ્રભૃતિયુ વિમાનેયુ ચક્તવ્યેયુ-યત્ સર્વકૃત્તરાજીનાં મધ્યમાગર્વિતયા રિષ્ટામનામકં નવમં વિમાનમુક્તમ્ તય્ વિમાન-પ્રધનાવાદસેયમિતિ ન તસ્ય અર્થાન્તરપ્રસ્તર-શૃંગ્લાકાર્યા । ‘કહિ ણં મંતે ! અચિ-વિમાણે પળ્લવે ?’ ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-હે ભદન્ત ! કુય કસ્મિન્ પદેશે સ્વલુ અર્ચિનામકં વિમાનં પ્રજ્ઞપ્તમ્ ? મગવાનાદ-‘ગોયમા ! ઉત્તર-પુરત્થિમેણં’ હે ગૌતમ ! ઉત્તર-પૌસ્ત્યે-ઉત્તરપૂર્વદિગન્તરાલે અર્ચિર્વિમાનં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘કહિ ણં મંતે ! અચ્ચિમાલી વિમાણે પળ્લવે ।’ હે ભદન્ત ! કુય સ્વલુ અર્ચિર્ગાલિનામકં વિમાનં પ્રજ્ઞપ્તમ્ ? મગવાનાદ-

ચલ રહા હૈ ફિર યહાં નૌચે રિષ્ટામ વિમાન કા કથન કર્યો ક્રિયાં ગયા ’) “કર્યો કિ રિષ્ટામ નામકા વિમાન સય કૃષ્ણરાજિયોં કે મધ્ય-ભાગ મેં રહા હુઆ હૈ-અતઃ વિમાન કે પ્રસ્તાવ સે યહાં પર ઉસકે કથન કરને મેં કોઈ અસંગતિ નહીં હૈ ।

અવ ગૌતમસ્વામી પ્રશ્ન સે હસી પૂર્વોક્ત વિમાનોં કે રહને કે સ્થાન કો પૂછતે હેં કિ-‘કહિ ણં મંતે ! અચ્ચિવિમાણે પળ્લવે’ હે ભદન્ત ! અર્ચિનામ કા વિમાન કિસ સ્થાન પર કહા ગયા હૈ ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ઉનસે કહતે હેં કિ ‘ગોયમા’ હૈ ગૌતમ ! ‘ઉત્તરપુરત્થિમેણં’ ઉત્તરદિશા ઓર પૂર્વદિશા કે અન્તરાલ મેં યહ અર્ચિ નામકા વિમાન હૈ એસા જાનના ચાહિયે । ‘કહિ ણં મંતે ! અચ્ચિમાલીવિમાણે પળ્લવે’ હે ભદન્ત ! અર્ચિમાલી નામ કા જો દૂસરા વિમાન હૈ વહ કહાં પર હૈ ?

છે, તો અહીં નવમાં રિષ્ટામ વિમાનનું કથન કરવાની શી જરૂર છે ?”

સમાધાન—રિષ્ટામ વિમાન તે આઠે વિમાનોની તથા આઠે કૃષ્ણરાજિ-ઓની વચ્ચે આવેલું છે. અહીં તે આઠ લોકાન્તિક વિમાનોની વક્તવ્યતા ચાલતી હોવાથી, તેમની વચ્ચે રહેલા રિષ્ટામ વિમાનનું કથન કરવામાં કોઈ પણ પ્રકારની અસંગતતા જણાતી નથી.

હવે ગૌતમ સ્વામી તે લોકાન્તિક વિમાનોનાં સ્થાનના વિષયમાં પ્રશ્ન પૂછે છે-‘કહિ ણં મંતે ! અચ્ચિવિમાણે પળ્લવે ?’ હે ભદન્ત ! અર્ચિ-નામનું વિમાન કયા સ્થાને આવેલું છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (ઉત્તરપુરત્થિમેણં) ઉત્તર અને પૂર્વ દિશાની વચ્ચે અર્ચિ નામનું વિમાન રહેલું છે, એમ સમજવું.

પ્રશ્ન—(કહિ ણં મંતે ! અચ્ચિમાલી વિમાણે પળ્લવે ?) હે ભદન્ત ! અર્ચિ-માલી નામનું બીજું લોકાન્તિક વિમાન કયા સ્થાને છે ?

‘ગોયમા ! પુરત્થિમેણં’ હે ગૌતમ ! પૌરસ્ત્યે-પૂર્વવાહ્યભાગે અર્ધિર્માલિનામકં વિમાનં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । ‘એવં પરિવાડીય ણોયઙ્વં જાવ’ એવંપરિવાટયા ક્રમેણેવ અન્યાન્યપિ અવ-શિષ્ટાનિ પડ્ વિમાનાનિ યથાપથં વિજ્ઞેયાનિ યાવત્-વૈરોચનાદિસુપ્રતિષ્ઠાભવિમાન-પર્યન્તમ્ । તાનિ ચ યથાક્રમં પ્રતિપાદિતાન્વેવ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘કહિણં મંતે ! રિદ્ધે વિમાણે પળ્લન્તે !’ હે મદન્ત ! કુત્ર કસ્મિન્ પ્રદેશે સ્વલુ રિદ્ધં રિષ્ટાભનામકં વિમાનં પ્રજ્ઞપ્તમ્ ? મગરાનાહ-‘ગોયમા ! વહુમજ્ઞદેસમાણ’ હે ગૌતમ ! રિષ્ટાભં વિમાનં વહુમધ્યભાગે સર્વાભ્યન્તરભાગે પ્રજ્ઞપ્તમ્ । ‘એમ્મુ ણં અદ્ધસુ લોગંતિયવિમાણેસુ અદ્ધવિહા લોગંતિયા દેવા પરિવસંતિ’ એતેપુ ઉપરિવર્ણિતેપુ અદ્ધસુ લોકાન્તિકવિમા-નેપુ અપ્પવિધાઃ અપ્પકારકાઃ લોકાન્તિકાઃ દેવાઃ પરિવસન્તિ । ગાથયા તાનાહ-

હસ ગૌતમ કે પ્રશ્ન કે સમાધાન નિમિત્ત પ્રશ્નુ ડનસે કહતે હૈં કિ હે ગૌતમ ! ‘પુરત્થિમે ણં’ અર્ધિનાલી નામ કા વિમાન પૂર્વદિશા કે થાહ્ય-ભાગ મેં કહા ગયા હૈ । ‘એવં પરિવાડિય ણોયઙ્વં જાવ’ હસી ક્રમ સે સુપ્રતિષ્ઠાભ વિમાન તક છહ વિમાનોં કે રહને કે સંબંધ મેં જાનના ચાહિયે । કૌન વિમાન કહાં પર હૈં યહ પહિલે યથાક્રમ પ્રકટ કર હી દિયા ગયા હૈ । અવ ગૌતમસ્વામી પ્રશ્નુ સે પૂછતે હૈં કિ-‘કહિ ણં મંતે ! રિદ્ધે વિમાણે પળ્લન્તે’ હે મદન્ત ! રિષ્ટ અર્થાત્ રિષ્ટાભ નામ કા વિમાન કિસ સ્થાન પર હૈં ? ઉત્તર મેં પ્રશ્નુ ડનસે કહતે હૈં કિ-‘ગોયમા ! વહુમ-જ્ઞદેસમાણ’ હે ગૌતમ ! રિષ્ટાભ નામ કા વિમાન વહુમધ્યભાગ મેં-સવ કે યીચ મેં હૈ । ‘એમ્મુ ણં અદ્ધસુ લોગંતિય વિમાણેસુ અદ્ધવિહા લોગંતિયા દેવા પરિવસંતિ’ ડપર મેં વર્ણિત હન આઠ લોકાન્તિક વિમા-નોં મેં આઠ પ્રકાર કે લોકાન્તિક દેવ રહતે હૈં । હસ ગાથા દારા સુત્રકાર

(પુરત્થિમેણં) હે ગૌતમ ! તે વિમાન પૂર્વ દિશાના બાહ્ય ભાગમાં છે એમ સમજવું. (એવં પરિવાડિય ણોયઙ્વં જાવ) આજ ક્રમ અનુસાર વૈરોચનથી સુપ્રતિષ્ઠાભ પર્યન્તના બાકીના છ વિમાનોનું સ્થાન સમજવું. કયું વિમાન કયા સ્થાને છે તે આજ પાનામાં ઉપર અનુક્રમે પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે-(કહિ ણં મંતે ! રિદ્ધે વિમાણે પળ્લન્તે) હે ભદન્ત ! રિદ્ધ (રિષ્ટાભ) નામનું વિમાન કયાં છે ?

ઉત્તર-(ગોયમા ! વહુમજ્ઞદેસમાણ) હે ગૌતમ ! રિષ્ટાભ નામનું વિમાન તે આઠેની વચ્ચે આવ્ય છે.

(એમ્મુ ણં અદ્ધસુ લોગંતિયવિમાણેસુ અદ્ધવિહા લોગંતિયા દેવા પરિવસંતિ) ઉપર્યુક્ત આઠ લોકાન્તિક વિમાનોમાં આઠ પ્રકારના લોકાન્તિક દેવ રહે છે. નીચેની ગાથામાં સુત્રકારે તે આઠ લોકાન્તિક દેવોનાં નામ પ્રકટ કર્યાં છે.

‘તં જહા’ તથા—“સારસ્વતમાહૃચ્ચા, વહ્નિ વરુણ ચ ગર્દતોયા ય ।

તુસિયા અવ્યાબાધા, અગ્નિચ્ચા નેવ રિદ્ધા ય ॥ ૧ ॥”

સારસ્વતા—સદિત્યા વહ્નયો વહ્નિયા ગર્દતોયાથ,

તુપિતા અવ્યાબાધા આગ્નેયાથૈવ રિદ્ધાથ ॥ ૧ ॥

ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘કહિ ણં મંતે ! સારસ્વતયા દેવા પરિવસંતિ ?’ હે મદન્ત !
કુત્ર કસ્મિન્ વિમાને સ્થલુ સારસ્વતાઃ દેવાઃ પરિવસન્તિ ? મગધનાહ—‘ગોયમા !
અચ્ચિમ્મિ વિમાણે પરિવસંતિ’ હે ગૌતમ ! અર્ચિમિ વિમાને સારસ્વતા દેવાઃ પરિ-
વસન્તિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘કહિ ણં મંતે ! આહૃચ્ચા દેવા પરિવસંતિ ?’ હે મદન્ત !
કુત્ર કસ્મિન્ વિમાને સ્થલુ આદિત્યાઃ દેવાઃ પરિવસન્તિ ? મગધનાહ—‘ગોયમા !
અચ્ચિમાલિમ્મિ વિમાણે’ હે ગૌતમ ! અર્ચિમાલો વિમાને આદિત્યાઃ દેવાઃ પરિ-
વસન્તિ । ‘અંયં ણેયન્વં જહાસસુપુન્ડીણ જાવ’ અંયં યથાસસુપુન્ડીયા યથાક્રમેણ
ને ઇન્દ્રીં લોકાન્તિક દેવોંકો કહ્વા હં । જૈસે—“સારસ્વતમાહૃચ્ચા ઇત્યાદિ ।

સારસ્વત, આદિત્ય, વહ્નિ, વરુણ, ગર્દતોય, તુપિત, અવ્યાબાધ, આગ્નેય ઓર રિષ્ટ । અય ગૌતમસ્વામી પ્રશ્નુ સે જેસા પૂછતે હેં કિ—‘કહિ ણં મંતે ! સારસ્વતયા દેવા પરિવસંતિ’ હે મદન્ત ! સારસ્વત દેવ કહાં પર રહતે હેં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્નુ ડનસે કહતે હેં—‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘અચ્ચિમ્મિ વિમાણે પરિવસંતિ’ અર્ચિ નામ કે વિમાન મેં સારસ્વત દેવ રહતે હેં । ગૌતમ પુનઃ પ્રશ્નુ સે પૂછતે હેં કિ—‘કહિ ણં મંતે ! આહૃચ્ચા દેવા પરિવસંતિ’ હે મદન્ત ! આદિત્ય દેવ કહાં પર રહતે હેં ? ઉત્તર મેં પ્રશ્નુ કહતે હેં કિ ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘અચ્ચિમાલિમ્મિ વિમાણે’

‘સારસ્વતમાહૃચ્ચા’ ઇત્યાદિ ।

(૧) સારસ્વત, (૨) આદિત્ય (૩) વહ્નિ, (૪) વરુણ, (૫) ગર્દતોય, (૬) તુપિત, (૭) અવ્યાબાધ, (૮) આગ્નેય અને રિષ્ટાન્ત વિમાનમાં રિષ્ટ દેવ.

તે દેવો કયા કયા વિમાનમાં રહે છે, તે બાણુવા માટે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નુને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછે છે—(કહિ ણં મંતે ! સારસ્વતયા દેવા પરિવસંતિ ?) હે મદન્ત ! સારસ્વત દેવ કયાં (કયા વિમાનમાં) રહે છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અચ્ચિમ્મિ વિમાણે પરિવસંતિ) સારસ્વત દેવ અર્ચિ નામના પહેલા વિમાનમાં રહે છે.

પ્રશ્ન—(કહિ ણં મંતે ! આહૃચ્ચા દેવા પરિવસંતિ ?) હે મદન્ત ! આદિત્ય દેવ કયાં રહે છે ?

ઉત્તર—(અચ્ચિમાલિમ્મિ વિમાણે) હે ગૌતમ ! આદિત્ય દેવ અર્ચિમાલો વિમાનમાં રહે છે. (અંયં ણેયન્વં જહાણુપુન્ડીણ જાવ) એજ કમે ધને

યાવત્-વહ્નિપ્રમૃતીનામાગ્નેયાન્તાનામપિ પળ્લાં નિવાસસ્થાનં વિજ્ઞાતવ્યમ્ । તથાહિ-
વહ્નયો દેવાઃ વૈરોચને વિમાને, વરુણઃ દેવઃ પ્રભક્કરે વિમાને, ગર્દતોયાઃ દેવાઃ
ચન્દ્રાભે વિમાને, તુષિતા દેવાઃ સૂર્યાભે વિમાને, અવ્યાયાધા દેવાઃ શુક્રાભે વિમાને,
આગ્નેયાથ દેવાઃ સુપતિષ્ઠાભે વિમાને પરિવસન્તિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘કહિ ણં મંતે !
રિદ્ધા દેવા પરિવસંતિ ? ’ હે ભદન્ત ! કુત્વ કસ્મિન્ વિમાને સ્થિ રિષ્ટાઃ દેવાઃ
પરિવસન્તિ ? ભગવાનાહ-‘ ગોયમા । રિદ્ધમ્મિ વિમાણે ’ હે ગૌતમ ! રિષ્ટે રિષ્ટામ-
નામકે સર્વમધ્યવર્તિનિ વિમાને રિષ્ટા દેવાઃ પરિવસન્તિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-
‘ સારસ્સયમાઙ્ચાણં મંતે ! દેવાણં કઙ્ક દેવા કઙ્ક દેવસયા પરિવારે પળ્ણતે ? ’ હે

અર્ચિમાલી વિમાન મેં આદિત્ય દેવ રહતે હેં । ‘ એવં ણેયવ્વં જહાણુપુલ્લીય
જાવ ’ હસી ક્રમ સે વહ્નિ સે લેકર આગ્નેય દેવોં તક કે નિવાસસ્થાન
કે વિષય મેં જાનનાં ચાહિયે-જેસે વહ્નિ દેવ વૈરોચન વિમાન મેં રહતે
હેં, વરુણદેવ પ્રભંકર વિમાન મેં રહતે હેં, ગર્દતોય દેવ ચન્દ્રાભ વિમાન મેં
રહતે હેં-તુષિતદેવ સૂર્યાભવિમાન મેં રહતે હેં, અવ્યાયાધદેવ શુક્રાભ
વિમાન મેં રહતે હેં ઓર અગ્નેય દેવ સુપતિષ્ઠાભ વિમાન મેં રહતે હેં ।
હસ પ્રકાર સે યે આઠ લોકાન્તિક દેવોં કે રહને કે આઠ વિમાન કહે
ગયે હેં । અય ગૌતમ પ્રશ્ન સે એસા પૂછતે હેં કિ ‘કહિ ણં મંતે ! રિદ્ધા
દેવા પરિવસંતિ ’ હે ભદન્ત ! રિષ્ટ દેવ કિસ વિમાન મેં રહતે હેં ? ઉત્તર
મેં ગૌતમસે પ્રશ્ન કહતે હેં કિ-‘ ગોયમા ! રિદ્ધમ્મિ વિમાણે ’ સર્વમધ્યવર્તી
રિષ્ટાભ નામકે વિમાન મેં રિષ્ટ દેવ રહતે હેં । અય ગૌતમસ્વામી પ્રશ્ન સે
એસા પૂછતે હેં કિ-‘ સારસ્સયમાઙ્ચાણં મંતે ! દેવાણં કઙ્કદેવા કઙ્ક

આગ્નેય દેવો પર્થ-તના દેવોના નિવાસસ્થાન વિષે સમજવું. કહેવાનું તાત્પર્ય
એ છે કે વહ્નિ દેવ વૈરોચન વિમાનમાં રહે છે, વરુણ દેવ પ્રભંકર વિમાનમાં
રહે છે, ગર્દતોય દેવ ચન્દ્રાભ વિમાનમાં રહે છે, તુષિત દેવ સૂર્યાભ વિમાનમાં
રહે છે, અવ્યાયાધ દેવ શુક્રાભ વિમાનમાં રહે છે અને આગ્નેય દેવ સુપતિ-
ષ્ઠાભ વિમાનમાં રહે છે. આ રીતે તે આઠ લોકાન્તિક દેવોનાં નિવાસસ્થાન રૂપ
આઠ વિમાનો કહ્યાં છે.

પ્રશ્ન-“ કહિ ણં મંતે ! રિદ્ધા દેવા પરિવસંતિ ? ” હે ભદન્ત ! રિષ્ટદેવ
કયા વિમાનમાં રહે છે ?

ઉત્તર-“ ગોયમા ! રિદ્ધમ્મિ વિમાણે ” હે ગૌતમ ! સર્વ મધ્યવર્તી રિષ્ટાભ
નામના વિમાનમાં રિષ્ટ દેવ રહે છે.

હવે લોકાન્તિક દેવોના પરિવાર આદિના વિષયમાં ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન
પૂછે છે-“સારસ્સયમાઙ્ચાણં મંતે ! દેવાણં કઙ્ક દેવા કઙ્ક દેવસયા પરિવારે પળ્ણતે ? ”

મદન્ત ! સારસ્વતાદિત્યયોરુપયોર્દેવયોઃ કનિદેવાઃ-પરિવારઃ પ્રગ્નઃ? મગધાનાર-
હે ગૌતમ ! સમુદિતયોરેવ સારસ્વતાદિત્યયોર્દેવયોઃ સપ્ત દેવાઃ-પરિવારદેવસ્વામિનઃ
પ્રગ્નતાઃ । અથ ત્રિવચનેન કથનં સંગ્રહગાથાયાં યુગલરૂપેન પ્રતિપાદનાત્ । સપ્ત ચ
દેવસત્તાનિ સપ્તગતસંખ્યકાથ દેવાઃ પરિવારઃ પ્રગ્નઃ પરિવારતથા કથિતા
इत्यर्थः, सप्तगतसंख्यकदेवानामुपरि प्रत्येकगतस्य एकैका देवः स्वामितया
वर्तते तेन सप्त देवाः सप्तगतसंख्यकपरिवारोपरि स्वामित्वेन गन्तीति भावः ।
एवमग्रेऽपि विज्ञेयम् । एवं 'वह्नि-वरुणाणं देवाणं चउदस देवा चउदस देवसहस्रा
परिवारे पण्णत्ते' वह्नि-वरुणयोर्देवयोः समुदितयोरेव चउदस देवाः परिवारदेव-

દેવસયા પરિવારે પણ્ણત્તે' । હે મદન્ત ! સારસ્વત ઓર આદિત્ય ફન દો
દેવોં કે દેવ-પરિવાર કે સ્વામી, તથા ફનકે પરિવાર કે દેવ કિતને સૌ
કહે ગયે હેં ? ઉત્તર મેં પ્રશ્ન કહતે હેં કિ-હે ગૌતમ ! સમુદિત હી સાર-
સ્વત ઓર આદિત્ય દેવોં કે દેવ સાત તો પરિવાર કે સ્વામીરૂપ સે કહે
ગયે હેં ઓર ફન દોનોં દેવોં કે પરિવાર કે દેવ સાત સૌ કહે ગયે હેં ।
ફસ તરહ કે કથન સે યહ સમજના ચાહિયે કિ સૌ-સૌ પરિવારભૂત
દેવોં કે ડપર ઇક-ઇક દેવ સ્વામીરૂપ સે હૈ-અતઃ સાત સૌ પરિવારભૂત
દેવોં કે સ્વામી સાત દેવ હેં । ફસી તરહ સે આગે મી જાનના ચાહિયે ।
સંગ્રહ ગાથા મેં યુગલરૂપ સે પ્રતિપાદન કિયા ગયા હૈ-ફસી કારણ યહાં
સૂત્ર મેં મી-ત્રિવચન સે પ્રતિપાદન કિયા હૈ । 'વહ્નિવરુણાણં દેવાણં
ચઉદસ દેવા ચઉદસ દેવસહસ્રા પરિવારે પણ્ણત્તે' વહ્નિ ઓર વરુણ
ફન દોનોં સમુદિત દેવોં કે પરિવાર કે સ્વામીભૂત દેવ ચૌદહ કહે ગયે હેં

હે ભદન્ત ! સારસ્વત અને આદિત્ય આ બંને દેવોનાં દેવ (પરિવારના સ્વામી)
તથા તેમના પરિવારનાં દેવોની સંખ્યા કેટલાં સૌ કહી છે ?

ઉત્તર-હે ગૌતમ ! સારસ્વત અને આદિત્ય એ દેવયુગલનાં સાત દેવો
તો પરિવારના સ્વામીરૂપ કહ્યાં છે, અને તે બંને દેવોના પરિવાર રૂપ ૭૦૦
દેવો કહ્યાં છે. આ કથનને આધારે એ વાત ધ્યાનમાં રાખવી કે પ્રત્યેક સૌ
પરિવાર રૂપ દેવો પર એક એક દેવ સ્વામીરૂપે હોય છે, એ રીતે ૭૦૦
પરિવારભૂત દેવોના સ્વામી સાત દેવો છે. એજ પ્રમાણે આગળ પણ સમજવું.
સંગ્રહ ગાથામાં યુગલ રૂપે (બન્ને દેવોને સાથે લઈને) પ્રતિપાદન
કરવામાં આવ્યું છે, તે કારણે અહીં સૂત્રમાં પણ બહુવચન રૂપે પ્રતિપાદન કર્યું છે.

“વહ્નિવરુણાણં દેવાણં ચઉદસ દેવા, ચઉદસદેવસહસ્રા પરિવારે પણ્ણત્તે”

‘વહ્નિ અને વરુણ’ આ દેવયુગલના પરિવારના દેવોની સંખ્યા ચૌદ

સ્વામિનઃ સન્તિ, પ્રત્યેકસ્ય સદસ-સદસસંખ્યકદેવપરિવારસદ્ભાવાત્ દેવસ્વામિનઃ
સપ્ત દેવાઃ સન્તીતિ ભાવઃ । ચતુર્દશસદસાણિ ચ પરિવારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, એકેકસ્ય દેવસ્ય
સદસ - સદસમંખ્યકદેવપરિવારસદ્ભાવાત્ । તથા-‘ ગદતોય-તુસિયાણં દેવાણં
સત્ત દેવસદસસા પરિવારે પળ્ણત્તે ’ ગદતોય-તુપિતયોઃ સમુદિતયોઃ દ્વયોર્દેવયોઃ
સપ્ત દેવાઃ સ્વામિનઃ, સપ્ત ચ દેવસદસાણિ સપ્તસદસસંખ્યકા દેવાઃ પરિવારસ્તયા
પ્રજ્ઞપ્તાઃ । ‘ અવસેસાણં નવ દેવા, નવ દેવસયા પરિવારે પળ્ણત્તે , અવશેષાણામ્-
અવ્યાવાયાઽઽગ્નેપરિષ્ઠાનાં ત્રયાણાં દેવાનાં સમુદિતાનામેવ નવ દેવાઃ પરિવારદેવ-
સ્વામિનઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, એકેકસ્ય દેવત્રય-દેવત્રય સદ્ભાવાત્ , તથા નવ દેવશતાનિ-
નવશત સંખ્યકા દેવાઃ પરિવારરૂપેણ પ્રજ્ઞપ્તાઃ । અવ્યાવાધાદીનાં ત્રયાણાં દેવાનામે-

ઔર પરિવાર કે દેવ ચૌદહ હજાર કહે ગયે હૈં । યહાં પર એક-એક
હજાર દેવોં કે ઝપર-૧-૧ દેવ ડનકા સ્વામી હૈ-હસ તરહ ચૌદ દેવ
સ્વામીરૂપ સે કહે ગયે હૈં । તથા-‘ ગદતોય તુસિયાણં દેવાણં સત્તદેવાં
સત્તદેવસદસસા પરિવારે પળ્ણત્તે ’ ગદતોય ઔર તુપિત ઇન ડોનોં સમુ-
દિત દેવોંકે પરિવારભૂત દેવોંકે સ્વામી તો સાત હૈં ઔર પરિવારભૂત સાત
હજાર હૈં ‘ અવસેસા ણં નવ દેવા નવ દેવસયા પરિવારે પળ્ણત્તે ’ વાકી
કે અવ્યાવાધ, આગ્નેય, ઔર રિષ્ઠ ઇન સમુદિત ત્રીન દેવોંકે પરિવારભૂત
દેવોં કે સ્વામી નૌ દેવ હૈં, ઔર ઇન કે પરિવાર મેં નૌ સૌ દેવ હૈં અર્થાત્
એક એક દેવ કે ત્રીન-ત્રીન દેવ તો ત્રીન સૌ ૩૦૦-ત્રીન સૌ ૩૦૦ પરિ-
વાર ભૂત દેવોં કે સ્વામી હૈં ઔર એક ૨ દેવ કે ૩૦૦-૩૦૦ પરિવાર કે

હજારની કહી છે અને તે પરિવારના સ્વામિભૂત દેવો ૧૪ કહ્યા છે. અહીં
એક એક હજાર ઉપર એક એક દેવ સ્વામીરૂપે છે, તેથી ૧૪૦૦૦ દેવોના
સ્વામી રૂપ દેવો ચૌદ કહ્યા છે. તથા “ ગદતોયતુસિયાણં દેવાણં સત્તદેવા,
સત્તદેવસદસસા પરિવારે પળ્ણત્તે ” ગદતોય અને તુપિત નામના દેવયુગલના
પરિવારના દેવો ૭૦૦૦ કહ્યા છે, અને તે પરિવારના સ્વામીરૂપ દેવો સાત
કહ્યા છે. “ અવસેસા ણં નવ દેવસયા પરિવારેપળ્ણત્તે ” બાકીના દેવોના એટલે
કે અવ્યાવાધ, આગ્નેય અને રિષ્ઠ એ ત્રણ દેવોના મળીને કુલે ૯૦૦ પરિવાર
ભૂત દેવો છે અને પરિવારના સ્વામીરૂપ દેવો નવ કહ્યા છે. એટલે કે અવ્યા-
વાધ આદિ પ્રત્યેક દેવના પરિવારભૂત દેવો ૩૦૦-૩૦૦ છે, અને પરિવારના
સ્વામીરૂપ દેવો ત્રણ ત્રણ છે. નીચેની ગાંથામાં તે નવ દેવોના પરિવાર રૂપ
દેવોની સંખ્યા બતાવી છે.

અદન્ત ! સારસ્વતાદિત્યયોરુપોર્દેવોઃ કનિદેવાઃ-પરિવારઃ પત્ન્યાઃ? મગધનાદ-
હે ગૌતમ ! સમુદિતયોરેવ સારસ્વતાદિત્યયોર્દેવોઃ સપ્ત દેવાઃ-પરિવારદેવસ્વામિનઃ
પત્ન્યાઃ । અથ દ્વિવચનેન કથનં સંગ્રહગાથાયાં યુગલરૂપેન પ્રતિપાદનાત્ । સપ્ત ચ
દેવશત્તાનિ સપ્તશતસંખ્યકાશ્ચ દેવાઃ પરિવારઃ પત્ન્યાઃ પરિવાસ્તયા કથિતા
इत्यर्थः, सप्तशतसंख्यकरुदेवानामुपरि प्रत्येकगतरूप एकैको देवः स्वामितया
वर्तते तेन सप्त देवाः सप्तशतसंख्यकरुपरिवारोपरि स्वामित्वेन सन्तीति भावः ।
एवमग्रेऽपि विज्ञेयम् । एवं 'वण्हि-वरुणाणं देवाणं चउदस देवा चउदस देवसहस्सा
परिवारे पण्णत्ते' वह्नि-वरुणयोर्देवयोः समुदितयोरेव चउदस देवाः परिवारदेव-

દેવસયા પરિવારે પણ્ણત્તે' હે અદન્ત ! સારસ્વત ઓર આદિત્ય इन दो
देवों के देव-परिवार के स्वामी, तथा इनके परिवार के देव कितने सौ
कहे गये हैं? उत्तर में प्रभु कहते हैं कि-हे गौतम ! समुदित ही सार-
स्वत और आदित्य देवों के देव सात तो परिवार के स्वामीरूप से कहे
गये हैं और इन दोनों देवों के परिवार के देव सात सौ कहे गये हैं ।
इस तरह के कथन से यह समझना चाहिये कि सौ-सौ परिवारभूत
देवों के ऊपर एक-एक देव स्वामीरूप से है-अतः सात सौ परिवारभूत
देवों के स्वामी सात देव हैं । इसी तरह से आगे भी जानना चाहिये ।
संग्रह गाथा में युगलरूप से प्रतिपादन किया गया है-इसी कारण यहाँ
सूत्र में भी द्विवचन से प्रतिपादन किया है । 'वण्हिवरुणाणं देवाणं
चउदस देवा चउदस देवसहस्सा परिवारे पण्णत्ते' वह्नि और वरुण
इन दोनों समुदित देवों के परिवार के स्वामीभूत देव चौदह कहे गये हैं

હે અદન્ત ! સારસ્વત અને આદિત્ય આ બંને દેવોના દેવ (પરિવારના સ્વામી)
તથા તેમના પરિવારના દેવોની સંખ્યા કેટલા સો કહી છે ?

ઉત્તર--હે ગૌતમ ! સારસ્વત અને આદિત્ય એ દેવયુગલના સાત દેવો
તો પરિવારના સ્વામીરૂપે કહ્યા છે, અને તે બંને દેવોના પરિવાર રૂપે ૭૦૦
દેવો કહ્યાં છે. આ કથનને આધારે એ વાત ધ્યાનમાં રાખવી કે પ્રત્યેક સો
પરિવાર રૂપ દેવો પર એક એક દેવ સ્વામીરૂપે હોય છે, એ રીતે ૭૦૦
પરિવારભૂત દેવોના સ્વામી સાત દેવો છે. એજ પ્રમાણે આગળ પણ સંગ્રહ
સંગ્રહ ગાથામાં યુગલ રૂપે (બંને દેવોને સાથે લઇને) પ્રતિપાદન
કરવામાં આવ્યું છે, તે કારણે અહીં સૂત્રમાં પણ બહુવચન રૂપે પ્રતિપાદન કર્યું છે.

“વણિહવરુનાણં દેવાણં ચઉદસ દેવા, ચઉદસદેવસહસ્સા પરિવારે પણ્ણત્તે”

બહ્નિ અને અરુણ આ દેવયુગલના પરિવારના દેવોની સંખ્યા ચૌદ

કેકસ્ય ત્રિશત-ત્રિશતદેવપરિવારસદ્માનાત્ ।

અય-ઉપરિચિન્તિતદેવપરિવારસંગ્રાહિકાં ગાથામાર—

“ પદમ-જુગલમ્મિ સત્ત ડ, સયાણિ ત્રીયમ્મિ-ચડ્ડત્ત સદ્દસ્સા ।

તડ્ડ સત્તસદ્દસ્સા, નવ ચેવ સયાણિ સેસેયુ ” ॥ ૧ ॥

પ્રથમયુગલે સારસ્વતાઽઽદિસ્વાત્મકે સપ્ત ગતાનિ દેવપરિવારઃ,

દ્વિતીયે બહ્નિ-વરુણદેવાત્મકે ચતુર્દશ સદ્સાણિ દેવપરિવારઃ, તૃતીયે ગર્દતો-
યતુપિતદેવાત્મકે સપ્તસદ્સાણિ દેવપરિવારઃ, શેષેયુ અગ્ન્યાવાયાઽઽગ્નેય-રિષ્ટદેવેષુ
નવ ચેવ ગતાનિ પરિવારોઽસ્તીતિગાથાર્થઃ ॥૧॥

યતુસમવાયાગ્નમૂત્રે સપ્તસપ્તતિતમે સમવાયે ગર્દતોય-તુપિતયોર્દેવયોઃ સપ્ત-
સપ્તતિસદ્સસંખ્યકા દેવાઃ પરિવારતયા મોક્તાઃ । જ્ઞાતાધર્મકથાગ્નમૂત્રસ્યાઽપ્તમા-
ધ્યયને ચ લોકાન્તિકદેવાનામેકેકસ્ય ચતુશ્ચતુઃસદ્સપરિમિતાઃ સામાનિકદેવાઃ,

દેવ હૈં । इन्हों परिवारभूत देवों को संग्रह करके प्रकट करने वाली
यह गाथा है—“ पदमजुगलमि ” इत्यादि ।

સારસ્વત ઓર આદિત્ય રૂપ પ્રથમ યુગલ મેં સાત સૌ દેવોં કા
પરિવાર હૈ । દૂસરે બહ્નિ ઓર વરુણરૂપ યુગલ મેં ચૌદહ ૧૪ હજાર દેવોં
કા પરિવાર હૈ । તિસરે ગર્દતોય ઓર તુપિતરૂપ યુગલ મેં સાત હજાર
દેવોં કા પરિવાર હૈ । ચાકી અગ્ન્યાવાધ, આગ્નેય ઓર રિષ્ટ દેવોં મેં નૌ
સૌ દેવોં કા પરિવાર હૈ । હસ પ્રકાર સે યહ ગાથા કા અર્થ હૈ—

જો સમવાયાંગ સૂત્ર મેં ૭૭ વેં સમવાય મેં ગર્દતોય ઓર તુપિતઃ
હન દેવોં કે પરિવાર ભૂત દેવ ૭૭ હજાર કહે ગયે હૈં, જ્ઞાતાધર્મકથાગ્ન
સૂત્ર કે આઠવેં અધ્યયન મેં લોકાન્તિક દેવોં કે એક એક દેવ કે ચાર ૨
હજાર સામાનિક દેવ કહે ગયે હૈં, તથા ૩-૩ પરિષદાઈ કહી ગઈ હૈં,

‘ પદમજુગલમ્મિ ’ ઇત્યાદિ ।

સારસ્વત અને આદિત્યના પ્રથમ યુગલના પરિવાર ૩૫ દેવો ૭૦૦ છે.
બહ્નિ અને વરુણના બીજા યુગલના પરિવાર ૩૫ દેવો ૧૪૦૦૦ છે. ગર્દતોય
અને તુપિતના ત્રીજા યુગલના પરિવાર ૩૫ દેવો ૭૦૦૦ છે. બાકીના અગ્ન્યા-
વાધ, આગ્નેય અને રિષ્ટ દેવોના કુલ પરિવાર ૬૦૦ દેવોનો છે

સમવાયાંગ સૂત્રના ૭૭ માં સમવાયમાં ગર્દતોય અને તુપિત, આ બે
દેવોના પરિવાર ૩૫ ૭૭૦૦૦ દેવો કહ્યા છે, જ્ઞાતાધર્મ-કથાંગસૂત્રના આઠમાં
અધ્યયનમાં લોકાન્તિક દેવોમાંના પ્રત્યેક દેવના ચાર ચારહજાર સામાનિક દેવ કહ્યા
છે, તથા ત્રણ ત્રણ પરિષદાઓ કહી છે, સાત સાત અનીક અને અનીકાધિપ,

તિસસ્તિસપરિપદઃ, સપ્તપત્તાનીકાનિ, સપ્ત સપ્તન ાનીકાધિપનયઃ પોડશ-પોડશસહસ્ર-
પરિમિતા આત્મરક્ષકદેવાઃ, અન્યેઽપિ ચ વદવો લોકાન્તિકા દેવાઃ પરિવારતયા
પ્રોક્તાઃ, ક્ત્યાદિવર્ણનં લખ્યતે તત્ત્વ સામાન્યપરિવારતયા પ્રોક્તમ્ । ઇદં વિશેષ-
રૂપતયા કથિતમિતિ વોધ્યમ્ ' ?

ગૌતમઃ પૂછતિ—‘ લોગંતિયવિમાણા ણં ંતે ! કિંપહ્દિયા પ્ણત્તા ? ’
હે ભદ્રન્ત ! લોકાન્તિકવિમાનાનિ કિંપતિષ્ઠિતાનિ કસ્મિન્ આધારે પ્રતિષ્ઠિતાનિ
સ્થિતાનિ પ્રજ્ઞાનિ ? મગધાનાહ—‘ ગોયમા । વાઽપહ્દિયા પ્ણત્તા ’ હે ગૌતમ !
લોકાન્તિકવિમાનાનિ વાયુપ્રતિષ્ઠિતાનિ વાયોરાપ્રારેણસ્થિતાનિ સન્તિ । ‘ એવં
ણેયઘ્વં વિમાણાણં પહ્દુણં, વાદુલ્લુચ્ચત્તમેવ સંઠાણં ’ એવમ્ અનેન પ્રકારેણ

સાત સાત અનીક, અનીકાધિપ, ૧૬-૧૬ હજાર આત્મરક્ષક દેવ,
તથા ઓર ઓ વદ્રુત સે લોકાન્તિક દેવ પરિવારરૂપ સે કહે ગયે હૈં સો
ક્યાદિ યહ સઽ વર્ણન સામાન્યરૂપ સે કિયા ગયા હૈં એસા જાનના
ચાહિયે—તથા યહાં જો વર્ણન કિયા ગયા હૈં વહ વિશેષ રૂપ સે કિયા
ગયા હૈં—એસા સમજના ચાહિયે ।

અથ ગૌતમ પ્રશ્ન સે પૂછતે હૈં કિ (લોગંતિય વિમાણાણં ંતે ! કિં
પહ્દિયા પ્ણત્તા) હે ભદ્રન્ત ! લોકાન્તિક દેવોં કે જો વિમાન હૈં વે
આધાર સહિત હૈં કિ વિના આધારકે હૈં ? યદિ આધાર સહિત હૈં તો ઇનકા
કયા આધાર હૈં ? અર્થાત્ કિસ આધારરૂપ પદાર્થ પર યે પ્રતિષ્ઠિત હૈં ?
ઉત્તર મેં પ્રશ્ન કહતે હૈં કિ—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (વાઽપહ્દિયા પ્ણત્તા)
યે લોકાન્તિક દેવોં કે વિમાન સાધાર હૈં ઓર ઇનકા આધારરૂપ પદાર્થ
વાયુ કહા ગયા હૈં । અર્થાત્ વાયુ કે આધાર સે પ્રતિષ્ઠિત હૈં । (એવં

૧૬-૧૬ હજાર આત્મરક્ષક દેવો તથા ળીળ પશુ અનેક દેવોનો પરિવાર
કહ્યો છે. પશુ તે સમસ્ત વર્ણન સામાન્ય રૂપે કરેલું સમજવું. અહીં જે વર્ણન
કરવામાં આવ્યું છે, તે વિશેષ રૂપે કરવામાં આવ્યું છે તેમ સમજવું.

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો પ્રશ્ન પૂછે છે કે—“ લોગંતિય
વિમાણાણં ંતે ! કિં પહ્દિયા પ્ણત્તા ? ” હે ભદ્રન્ત ! લોકાન્તિક દેવોનાં જે
વિમાનો છે તે આધાર સહિત છે કે આધાર રહિત છે ? જો તેઓ આધાર
સહિત હોય તો તેઓ કયા પદાર્થના આધારે રહેલાં છે ?

તેનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે કે—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ !
“ વાઽપહ્દિયા પ્ણત્તા ” તે લોકાન્તિક દેવોનાં વિમાનો આધારયુક્ત છે. અને
તેમના આધાર રૂપ પદાર્થ વાયુ કહ્યો છે, એટલે કે તેઓ વાયુને આધાર

લોકાન્તિકવિમાનાનાં પ્રતિષ્ઠાનં સ્થિત્યધિકરણં વાયુરૂપં પ્રદર્શિતમેવ, ચારસ્યં સંસ્થાનં ચ પંચવિંશતિયોજનસત્તાનિ, ઉચ્ચત્તં સમયોત્તનગત્તાનિ, સંસ્થાનમ્ આકારસ્તુ એતેષાં વિમાનાનાં નાનામહારકં ચોધ્યમ્ અનાવલિકાપ્રવિષ્ટાન્, આવલિકાપ્રવિષ્ટાનિ તુ ટુચ્ચ-વ્યસ્ત-ચતુરસ્રરૂપાણિ ત્રીણિ સંસ્થાનાન્યેવ મયન્તીત્યવશે-યમ્ । તદેવાદ-‘વંમલોચવત્તવ્યા ણેયવ્યા, જહા-ઝીનાભિગમે દેવુદેસમ્’ ત્રાવ-

ણેયવ્યં વિમાણાણં પદ્મઢાણં, વાદુલ્લુચ્ચત્તમેવ સંઠાણં) હસ તરહ કી સ્થિતિ કા અધિકરણ વાયુરૂપ હૈ ચહ તો પ્રદર્શિત હી કર દિયા ગયા હૈ અવ રહી इनके वाहल्य और संस्थान के विषय की बात सो इनका वाहल्य-विमानों की पृथिवी स्थूलता-२५०० योजन की है और ऊंचाई ७०० योजन की है । तथा इनका आकार एक रूप से नहीं है भिन्न २ प्रकार से है क्योंकि ये अनावलिका में प्रविष्ट हैं । जो आवलिका में प्रविष्ट होते हैं वे या तो गोल होते हैं, या त्रिकोण होते हैं, या चतुष्कोण होते हैं । इसलिये ये आवलिका में प्रविष्ट न होनेके कारण नियत आकार वाले नहीं कहे गये हैं प्रत्युत अनेक प्रकार के आकार वाले कहे गये हैं । इसी बात को सूचित करने के निमित्त सूत्रकार ने (वंमलोच वत्तव्यता णेयव्या, जहा जीवाभिगमे देवुदेसम) ऐसा कहा है कि ब्रह्म-लोक में रहने वाले विमानों और देवों के विषय में जो वक्तव्यता जीवाभिगम सूत्र में कही है, वही वक्तव्यता यहां पर भी इन लोकांतिक

રહેલાં છે. “ एवं ણેયવ્યં વિમાણાણં પદ્મઢાણં, વાદુલ્લુચ્ચત્તમેવ સંઠાણં ” આ રીતે વિમાનોની સ્થિતિના આધાર રૂપ વાયુને તે ઉપર બતાવવામાં આવેલ છે, હવે તેમના વિસ્તાર, ઊંચાઈ, આકાર આદિનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે-

તે વિમાનોની પૃથ્વીની સ્થૂળતા-એટલે કે તેમનો વિસ્તાર ૨૫૦૦ યોજનનો અને ઊંચાઈ ૭૦૦ યોજનની છે. તેથી તેમનો આકાર એકસરખો નથી. પણ જુદા જુદા પ્રકારનો છે, કારણ કે તેઓ આવલિકામાં પ્રવિષ્ટ નથી. જે વિમાનો આવલિકામાં પ્રવિષ્ટ હોય છે, તેઓ ગોળાકારના અથવા ત્રિકોણાકારના કે ચતુષ્કોણાકારના હોય છે. પરંતુ આ લોકાન્તિક વિમાનો આવલિકામાં પ્રવિષ્ટ ન હોવાને કારણે કોઈ નિયત આકારના નથી પણ જુદા જુદા આકારના છે. એ જ વાતને પ્રકટ કરવાને માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રપાઠ આપ્યો છે. “ વંમલોચ વત્તવ્યા ણેયવ્યા, જહા जीवाभिगमे देवुदेसम ” બ્રહ્મલોક કલ્પમાં રહેલાં વિમાનો અને દેવોના વિષયમાં જે પ્રતિપાદન જીવાભિગમ સૂત્રના દેવોદેશકમાં કરવામાં આવેલું છે, એ જ પ્રમાણેનું પ્રતિપાદન અહીં પણ લોકાન્તિક દેવોના વિષયમાં શ્રદ્ધા કરવું. તે જગ્યાએ આપેલું કથન કયાં સુધી :

હંતા, ગોયમા ! અસહ્યં, અદુવા અણંતચ્ચુત્તો, ણો ચેવ ણં દેવત્તાણ લોગંતિયવિમા-
ણેસુ । વ્રહ્મલોકે યા વક્તવ્યતા જીવાભિગમે દેવોદેશકે વિમાનાનામ્, દેવાનાં ચ
પ્રતિપાદિતા, સા અત્રાઽપિ લોકાન્તિકદેવેષુ નેતવ્યા જ્ઞાતવ્યા । તદવધિમાહ-
' જાવ-હંતા ' ઇત્યાદિ । હે ગૌતમ ! હન્ત સત્યમ્ યાવત્ અસકૃત્ ભૂયોભૂયઃ, અથવા
અનન્તકૃત્વઃ, અનન્તવારાન્ તે સર્વે પ્રાણાઃ, ભૂતાઃ જીવાઃ, સત્ત્વાઃ પૃથિવ્યાદિકાચિ-
ક્તવ્યા ઉપપન્નપૂર્વોઃ પૂર્વમ્ ઉત્પન્નાઃ કિન્તુ લોકાન્તિકવિમાનેષુ દેવતયા અનન્ત-
કૃત્વઃ અનન્તવારાન્ તે જીવાઃ નો ચેવ નૈવ સ્વલુ ઉત્પન્નાઃ ઇતિભાષ્યઃ । જીવાભિગમ
વક્તવ્યતા ચ કિન્ચિત્પદ્મદર્શયતે- ' લોગંતિયવિમાણા ણં મંતે ! કહ્વણ્ણા પળ્ણત્તા ?
ગોયમા ! તિવણ્ણા-લોહિયા, હાલિદ્દા, સુક્કિલ્લા, એવં પમાણ નિચ્ચા લોયા, ગંધેણ
ઇદ્ધગંધા, એવં ઇદ્ધકાસા, એવં સન્વરયણામયા, તેસુ દેવા સમચરંસા, અહ્મમહુ-
ગવણ્ણા, પમ્હલેસ્સા । લોગંતિયવિમાણેસુ ણં મંતે ! સન્વે પાણા, ભૂયા, જીવા, સત્તા

દેવોં મેં જાનનીં ચાહિયે । યહ વક્તવ્યતા કહાં તક જાનનીં ચાહિયે તો
હસકે લિયે કહા ગયા હૈ કિ (જાવ હંતા ! અસહ્યં અદુવા અણંતચ્ચુત્તો,
ણો ચેવ ણં દેવત્તાણ લોગંતિયવિમાણેસુ) હે ગૌતમ ! સત્ય હૈ યાવત્-
ચાર વાર અનંતવાર વે સવ પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ પૃથિવીકાચિક રૂપ
સે પહિલે ઉત્પન્ન હુણ હૈં, કિન્તુ લોકાન્તિક વિમાનોં મેં દેવરૂપ સે વે જીવ
પહિલે કમ્મીં નહીં ઉત્પન્ન હુણ હૈં । યહાં તક જાનનીં ચાહિયે । ” યહાં પર
જીવાભિગમ વક્તવ્યતા થોડે સે રૂપ મેં પ્રકટ કી જાતી હૈ- (લોગંતિ ય
વિમાણા ણં મંતે ! કહ્વણ્ણા પળ્ણત્તા ? ગોયમા ! તિવણ્ણા-લોહિયા,
હાલિદ્દા, સુક્કિલ્લા એવં પમાણ નિચ્ચાલોયા ગંધેણ ઇદ્ધગંધા એવં ઇદ્ધકાસા,
એવં સન્વરયણામયા, તેસુ દેવા સમચરંસા, અહ્મમહુગવણ્ણા, પમ્હલેસ્સા,

અહંતુ કરતું બોધએ, તે બતાવવાને માટે સૂત્ર ૧૨ કહે છે કે “ જાવ હંતા !
અસહ્યં અદુવા અણંતચ્ચુત્તો, ણો ચેવ ણં દેવત્તાણ લોગંતિયવિમાણેસુ ” “ હે
ગૌતમ ! સત્ય છે, (યાવત્) તે સમસ્ત પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ વારંવાર
અથવા અનંત વાર પૃથ્વીકાચિકરૂપે પહેલાં ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યા છે, પરંતુ
લોકાન્તિક વિમાનોમાં દેવરૂપે તે જીવો પહેલાં કદી પણ દેવરૂપે ઉત્પન્ન થયા
નથી ” અહીં સુધીનું કથન અહંતુ કરવું.

હવે અહીં જીવાભિગમસૂત્રની વક્તવ્યતાનો સારાંશ પ્રકટ કરવામાં આવે છે-

“ લોગંતિય વિમાણાં મંતે ! કહ્વણ્ણા પળ્ણત્તા ? ” ગોયમા ! તિવણ્ણા-
લોહિયા, હાલિદ્દા, સુક્કિલ્લા એવં પમાણ નિચ્ચાલોયા, ગંધેણ ઇદ્ધગંધા એવં ઇદ્ધકાસા,
એવં સન્વરયણામયા, તેસુ દેવા સમચરંસા, અહ્મમહુગવણ્ણા, પમ્હલેસ્સા, લોગં-

લોકાન્તિકવિમાનાનાં પ્રતિષ્ઠાનં સ્થિત્યધિકરણં વાયુરૂપં પ્રદર્શિતમેવ, ચારસ્યં સંસ્થાનં ચ પંચવિંશતિયોગનગતાનિ, ઉચ્ચત્વં સત્તયોગનગતાનિ, સંસ્થાનમ્ આકારસ્તુ એતેષાં વિમાનાનાં નાનાપ્રકારકં ચોષ્પમ્ અનાવલિકાપ્રવિષ્ટતાત્, આવલિકાપ્રવિષ્ટાનિ તુ ઘૃત-ગ્ર્યસ-ચતુસ્ત્વરુપાણિ ત્રીણિ સંસ્થાનાન્વેય મયન્તીત્યવસ્થેયમ્ । તદેવાદ-‘વંમલોયવત્તવ્યયા ણેયન્વા, જહા-ઝીવામિગમે દેવુદેસય’ ત્રાવ-

ણેયવ્યં વિમાણાણં પદ્મઢાણં, પાદુલ્લુચ્ચત્તમેય સંઢાણં) ઇસ તરહ્ કી સ્થિતિ કા અધિકરણ વાયુરૂપ હૈ ચહ્ તો પ્રદર્શિત હી કર દિયા ગયા હૈ અથ રહી ઇનકે વાહલ્ય ઓર સંસ્થાન કે વિષય કી યાત સો ઇનકા વાહલ્ય-વિમાનોં કી પૃથિવી સ્થૂલતા-૨૫૦૦ યોજન કી હૈ ઓર ઝંબાર્ ૭૦૦ યોજન કી હૈ । તથા ઇનકા આકાર ણકરૂપ સે નહીં હૈ મિન્ન ૨ પ્રકાર સે હૈ ક્યોં કિ યે અનાવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ હૈં । જો આવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ હોતે હૈં વે યા તો ગોલ હોતે હૈં, યા ત્રિકોણ હોતે હૈં, યા ચતુષ્કોણ હોતે હૈં । ઇસલિયે યે આવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ ન હોનેકે કારણ નિયત આકાર વાલે નહીં કહે ગયે હૈં પ્રત્યુત અનેક પ્રકાર કે આકાર વાલે કહે ગયે હૈં । ઇસી વાત કો સૂચિત કરને કે નિમિત્ત સૂત્રકાર ને (વંમલોય વત્તવ્યતા ણેયન્વા, જહા ઝીવામિગમે દેવુદેસય) એસા કહા હૈ કિ બ્રહ્મલોક મેં રહને વાલે વિમાનોં ઓર દેવોં કે વિષય મેં જો વત્તવ્યતા ઝીવામિગમ સૂત્ર મેં કહી હૈ, વહી વત્તવ્યતા યહાં પર મી ઇન લોકાન્તિક

રહેલાં છે. “એવં ણેયવ્યં વિમાણાણં પદ્મઢાણં, પાદુલ્લુચ્ચત્તમેય સંઢાણં” આ રીતે વિમાનેની સ્થિતિના આધાર રૂપ વાયુને તે ઉપર બતાવવામાં આવેલ છે, હવે તેમના વિસ્તાર, ઊંચાઈ, આકાર આદિનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે-

તે વિમાનેની પૃથ્વીની સ્થૂળત-એટલે કે તેમનો વિસ્તાર ૨૫૦૦ યોજનનો અને ઊંચાઈ ૭૦૦ યોજનની છે. તેથી તેમનો આકાર એકસરખો નથી. પણ બુદા બુદા પ્રકારનો છે, કારણ કે તેઓ આવલિકામાં પ્રવિષ્ટ નથી. જે વિમાનો આવલિકામાં પ્રવિષ્ટ હોય છે, તેઓ ગોળાકારના અથવા ત્રિકોણાકારના કે ચતુષ્કોણાકારના હોય છે. પરંતુ આ લોકાન્તિક વિમાનો આવલિકામાં પ્રવિષ્ટ ન હોવાને કારણે કોઈ નિયત આકારના નથી પણ બુદા બુદા આકારના છે. એ જ વાતને પ્રકટ કરવાને માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રપાઠ આપ્યો છે- “વંમલોય વત્તવ્યયા ણેયન્વા, જહા ઝીવામિગમે દેવુદેસય” બ્રહ્મલોક કદમમાં રહેલાં વિમાનો અને દેવોના વિષયમાં જે પ્રતિપાદન જીવામિગમ સૂત્રના દેવોદેશકમાં કરવામાં આવેલું છે, એ જ પ્રમાણેનું પ્રતિપાદન અહીં પણ લોકાન્તિક દેવોના વિષયમાં ગ્રહણ કરવું. તે જગ્યાએ આવેલું કથન કયાં સુધી

ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘લોગંતિયવિમાણેષુ ણં મંતે ! કેવદ્દયં કાલં ઠિઈં પળ્લપ્પા ?’
 હે મદન્ત ! લોકાન્તિકવિમાણેષુ કિયન્તં કાલં સ્થિતિઃ પ્રવ્રપ્તા ? મગવાનાહ—
 ‘ગોયમા ! અદ્ધ સાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લપ્પા ’ હે ગૌતમ ! અદ્ધસાગરોપમાણિ સ્થિતિઃ
 પ્રવ્રપ્તા । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘ લોગંતિયવિમાણેહિંતો ણં મંતે ! કેવદ્દયં અવાહાણ
 લોગંતે પળ્લપ્પે ’ હે મદન્ત ! લોકાન્તિકવિમાણેભ્યઃ કિયત્તકં કિયદ્દુમ્ અવાધયા
 અન્તરેણ વ્યવધાનેનેત્યર્થઃ લોકાન્તઃ પ્રવ્રપ્તઃ ? મગવાનાહ—‘ ગોયમા !
 અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં અવાહાણ લોગંતે પળ્લપ્પે ’ હે ગૌતમ ! અસંખયેયાનિ

યિક રૂપ સે, તેજસ્કાયિકરૂપ સે, વાયુકાયિક રૂપ સે, વનસ્પતિકાયિક
 રૂપ સે દેવ એવં દેવીરૂપ સે ઉત્પન્ન હુણ હૈં ? તવ હસકે ઉત્તર મેં (જાવ
 હંતા, ગોયમા ! અસહં અદ્ધુવા) હત્યાદિ રૂપ સે પ્રશ્ન ને ઉત્તર દિયા હૈં ।

અથ ગૌતમ પ્રશ્ન સે એસા પૂછ રહે હૈં કિ—(લોગંતિયવિમાણેષુ ણં
 મંતે ! કેવદ્દયં કાલં ઠિઈં પળ્લપ્પા) હે મદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાણોં મેં
 કિતની સ્થિતિ હૈં ? હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ ‘ગોયમા’
 ગૌતમ ! (અદ્ધસાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લપ્પા) આઠ સાગરોપમ કી સ્થિતિ
 લોકાન્તિક વિમાણોં મેં હૈં । અથ ગૌતમ પ્રશ્ન સે એસા પૂછતે હૈં કિ—
 (લોગંતિય વિમાણેહિંતો ણં મંતે ! કેવદ્દયં અવાહાણ લોગંતે પળ્લપ્પે) હે
 મદન્ત ! લોકાન્તિકવિમાણોં સે લોકાન્ત કિતની દૂર હૈં ? ઉત્તર મેં પ્રશ્ન
 કહતે હૈં કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં અવા-
 હાણ લોગંતે પળ્લપ્પે) લોકાન્તિક વિમાણોં સે લોકાન્ત અસંખ્યાત હજાર

પૃથ્વીકાયિક્કે, અઘ્કાયિક્કે, તૈજસ્કાયિક્કે, વાયુકાયિક્કે, વનસ્પતિકાયિક્કે
 ક્કે, દેવ અને દેવીકે ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યાં છે ? ઉત્તર—“ હા, ગૌતમ ! તેઓ
 ત્યાં અનેકવાર અથવા અનંતવાર પૃથ્વીકાયિકથી વનસ્પતિકાયિક પર્યંતનાકે
 ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યા છે, પણ તેઓ ત્યાં દેવકે કદી પણ ઉત્પન્ન થયા નથી.”

ગૌતમસ્વામીનો પ્રશ્ન—“ લોગંતિયવિમાણેષુ ણં મંતે ! કેવદ્દયં કાલં ઠિઈં
 પળ્લપ્પા ? ” હે મદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાણ નિવાસી દેવોની સ્થિતિ કેટલા
 કાળની કહી છે ? ઉત્તર—“ ગોયમા ! અદ્ધસાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લપ્પા ” હે ગૌતમ !
 તે વિમાણો દેવોની સ્થિતિ આઠ સાગરોપમની કહી છે.

પ્રશ્ન—“ લોગંતિય વિમાણેહિંતો ણં મંતે ! કેવદ્દયં અવાહાણ લોગંતે
 પળ્લપ્પે ? ” હે મદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાણોથી લોકાન્ત કેટલે અંતરે છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! અસંખેજ્જાઈં જોયણસહસ્સાઈં અવાહાણ લોગંતે પળ્લપ્પે ”
 હે ગૌતમ ! લોકાન્તિક વિમાણોથી લોકાન્ત અસંખ્યાત હજાર યોજન દૂર છે.

પુદ્ગિકાઈયત્તાણ, આઝકાઈયત્તાણ, તેઝકાઈયત્તાણ, વાઝકાઈયત્તાણ, વળસસકાઈય-
ત્તાણ, દેવત્તાણ, દેવિત્તાણ ઉવચન્નપુગ્ગા ? ' સ્થન્તં માનસ્યદેન સંપ્રાણમ્ ।

લોગંતિયવિમાણેસુ ણં મંતે ! સવ્વે પાળા, ખૂયા, જીવા, સત્તા પુદ્ગિકા-
ઈયત્તાણ, આઝકાઈયત્તાણ, તેઝકાઈયત્તાણ, વાઝકાઈયત્તાણ, વળસસકા-
ઈયત્તાણ દેવત્તાણ દેવિત્તાણ ઉવચન્નપુગ્ગા ?) યહાં તક કા પાઠ યાવત્
પદ સે યહાં ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ ગૌતમ
ને પ્રશ્ન સે ંસા પૂછા કિ હૈ 'મદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાનોં કે કિત્તને વર્ણ
હૈં ? ઉત્તર મેં પ્રશ્ન ને કહા કિ હૈ ગૌતમ ! લોકાન્તિક વિમાનોં કે ત્રીન
વર્ણ હૈં—લોહિત વર્ણ, હારિદ્ર વર્ણ ઓર શુક્રવર્ણ અર્થાત્ લોકાન્તિક
વિમાન ત્રીન વર્ણવાલે હૈં યહ પાત પ્રશ્ન ને ગૌતમ મે પ્રકટ કી હસી તરહ યે
અપની પ્રમા સે સદા આલોકિત (પ્રકાશિત) રહતે હૈં, ગંધ ઇનકા ઇષ્ટ
હોતા હૈ, સ્પર્શ બી ઇનકા મન કો રુચિકારક હોતા હૈ યે સમસ્ત રસનોં
કે બને હુણ હૈં । ઇનમેં જો દેવ રહતે હૈં ડનકા સમચતુરચ્ચસંસ્થાન હોતા
હૈ । વર્ણ ઇનકા ગીલે મહુઆ કે જેમા હોતા હૈ લેહ્યા ઇનકી પદ્મ હોતી
હૈ । હૈ 'મદન્ત ! કયા ઇન લોકાન્તિક વિમાનોં સે સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત
ભૂત, સમસ્ત જીવ, સમસ્ત સત્ત્વ પૂર્વ મેં પૃથિવીકાયિક રૂપ સે, અપ્કા-

તિયવિમાણેસુ ણં મંતે ! સવ્વે પાળા, ખૂયા, જીવા, સત્તા પુદ્ગિકાઈયત્તાણ, આઝકા-
ઈયત્તાણ, તેઝકાઈયત્તાણ, વાઝકાઈયત્તાણ, વળસસકાઈયત્તાણ, દેવત્તાણ દેવિત્તાણ
ઉવચન્નપુગ્ગા ? ”

અહીં સુધીનો 'પાઠ 'યાવત્' પદથી શ્રદ્ધા કરવામાં આવ્યો છે. હવે આ
સૂત્રપાઠનું તાત્પર્ય સમજાવવામાં આવે છે—ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને એવો
પ્રશ્ન પૂછે છે કે “ હે ભદન્ત ! લોકાન્તિક વિમાનોના કેટલા વર્ણ હોય છે ?
તેનો જવાબ આપતા મહાવીરપ્રભુ કહે છે કે “ હે ગૌતમ ! લોકાન્તિક
વિમાનના ત્રણ વર્ણ છે—લોહિત વર્ણ, હરિદ્રવર્ણ (હળદરના જેવો વર્ણ)
અને શુકલવર્ણ આ રીતે લોકાન્તિક વિમાનોને ત્રણ વર્ણવાળાં કહેલાં છે. તેઓ
પોતાની પ્રભાથી સદા દેહીઅમાન રહે છે, તેમની ગંધ છંટ હોય છે અને
તેમનો સ્પર્શ રુચિકારક હોય છે. તે વિમાનો સમસ્ત રસોનાં બનેલાં હોય
છે. તે વિમાનોમાં જે દેવો રહે છે તેઓ સમચતુરચ્ચ સંસ્થાનવાળા હોય છે.
અને તેમનો વર્ણ લીનાં મહુઆ જેવો હોય છે, તેઓ પદ્મલેશ્યાવાળા હોય
છે.” ગૌતમસ્વામીનો પ્રશ્ન—“ હે ભદન્ત ! તે લોકાન્તિક વિમાનોમાં શું
સમસ્ત પ્રાણ, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સત્ત્વ પૂર્વે (પડેલાં)

આપણા ખાતર નહીં તે આપણી ભવિષ્યની પેઢી
ખાતર પણ આ કાર્ય પૂર્ણ કરવું જ પડશે.

૩૨ જૈન સિદ્ધાંતોનું સંશોધન કરી ચાર ભાષામાં પ્રસિદ્ધ કરવાનું જે
મહત્ત્વ કાર્ય આ સમિતિ લગભગ વીસ વર્ષ થયાં કરી રહી છે. તે ખીના
સમાજના દરેક અંગમાં જગ-જાહેર છે.

અત્યાર સુધીમાં પૂજ્ય આચાર્યશ્રીએ ત્રીસ શાસ્ત્રોનું સંશોધન પૂર્ણ
કર્યું છે અને બાકીના ત્રણ સૂત્રોનું કાર્ય આ વર્ષમાં પૂર્ણ કરી નાખશે,
તેમ અમારી ધારણા છે.

બત્રીસમાંના વીસ શાસ્ત્રો તથા તેના ભાગો પ્રસિદ્ધ થઈ ગયા છે
બાકીનાં શાસ્ત્રો કેટલાંક છપાય છે. અને કેટલાંકના અનુવાદ કરવાનું કાર્ય
ચાલુ છે.

અસહ્ય મોંઘવારીને લીધે સમિતિએ શરૂઆતમાં ધારેલા ખર્ચ કરતાં
ત્રણ ગણો ખર્ચ થવાનો અંદાજ છે આથી બાકીના કાર્યને પહેાંચી વળવા
રૂપિયા ત્રણ લાખની તાકીદે જરૂર છે. અને તે વીરના લક્ષ્મીનંદન પુત્રો પાસે
અમારી ટહેલ છે. તેમના તરફથી બાકીના સૂત્રો માટે રૂપિયા ૫૦૦૧ આપ-
નારાની અમે રાહ જોઈએ છીએ.

योजनसहस्राणि लोकान्तिकविमानेभ्यः अवापया अन्तरेण व्यवधानेन लोकान्तः
प्रप्लुतः कथितः । अन्ते गौतमो भगवद्वाक्यं प्रमाणिकतया स्वीकरोति—' सेवं
भंते ! सेवं भंते चि ' हे भदन्त ! तदेवं भवदुक्तं सत्यमेव, हे भदन्त ! तदेवं
भवदुक्तं सत्यमेवेति ॥ सू० ३ ॥

इति श्री विश्वविख्यात - जगद्गुरु - प्रसिद्धाचार्य-पञ्चदशभागाकलि-
तललितकलापालापरु-प्रविशुद्गद्यपथनैरुग्रन्यनिर्माणक-त्रादिमानमर्दक-
श्रीशाह छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित-
कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री
घासीलालप्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां षष्ठं शतकस्य पञ्चमोद्देशकः समाप्तः ॥ ६-५ ॥

योजन दूर है । अब अन्त में गौतम प्रभु के वचनों को प्रामाणिक रूप
से स्वीकार करते हुए कहते हैं कि (सेवं भंते ! सेवं भंते ! चि) हे
भदन्त ! आपके द्वारा कहा हुआ यह सब ऐसा ही है-सत्य ही है-हे
भदन्त ! सत्य ही है ॥ सूत्र ३ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर श्री घासीलालजी महाराजकृत "भगव-
तीसूत्र"की प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके छठे शतकका पांचवा
उद्देशक समाप्त ॥ ६-५ ॥

सूत्रने अन्ते गौतमस्वामी भडावीर प्रभुनां वचनाने प्रमाणबलुत गणीने कहे
छे—“ सेवं भंते ! सेवं भंते ! चि ” “ हे भदन्त ! आपे आ विषयनुं जे
प्रतिपादन कथुं ते सत्य न छे, हे भदन्त ! आपनी बात सर्वथा सत्य छे ”
आम कहीने भडावीर प्रभुने वदवु नमस्कार करीने तेज्जा तेभने स्थाने
बेसी गया. ॥ सू० ३ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज कृत भगवती सूत्रनी प्रमेयच-
न्द्रिका व्याख्याना पांचमो शतको. तीजे उद्देशक समाप्त ॥ ६-५ ॥

શાસ્ત્રોની સંપૂર્ણ માહિતી

અદારમા વાર્ષિક રિપોર્ટમાં જતાવેલ ૨૪ યાત્રી પ્રતિદિન મળ્યા પા
નીચે મુજબ કામગામ થયેલ છે.

(૧) ભગવતી ભાગ ત્રીજે ૩ બદાર પડી ચુક્યો છે અને તે મેમ્બરે
મોકલવાનું કામ ચાલુ છે.

(૨) ભગવતી ભાગ ચોથો તથા પાંચમો છપાઈ ગયો છે. અને તે
બાઈન્ડીંગ કામ ચાલે છે.

(૩) જ્ઞાતા સૂત્રના કુલ ત્રણે ભાગ છપાય છે જે એકાદ માસ
પૂરા થઈ જશે.

(૪) ભગવતી ભાગ છઠ્ઠો તથા સાતમો છપવાનું કામ ચરૂ થઈ ગયું છે.

(૫) કુલે લગભગ ૩૦ સૂત્રો પૂર્ણ ચુરુદેવે લખીને પૂરાં કરેલાં છે
તેમાંના છપાયા વગરનાં જે સૂત્રો બાકી છે તેનું અનુવાદનું તેમજ સંશોધન
કેટલુંક કામ ચાલુ છે, અને કેટલુંક બાકી છે.

(૬) નિશીથ સૂત્ર સૂર્યપત્તતી તથા ચંદ્રપત્તતી સૂત્ર એ બાકી રહેલ
ત્રણ સૂત્રો લખવાનું કામ અત્યારે ચાલે છે.

શ્રી અખિલ ભારત ટ્રસ્ટ. સ્થા.

જેન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

રાજકોટ

તા. ૧૫-૭-૬૩

નમ્ર સેવક

સાકરચંદ બાઈચંદ શેઠ

મંત્રી.

